

'प्रत्येक क्षेत्र, प्रत्येक संत की वानी ।
सम्पूर्ण विश्व में घर-घर है पहुँचानी ॥'

प्रथम संस्करण—१९७८-७९ ई०

पृष्ठसंख्या—$\frac{१८\times२२}{८}$—८+१३२८=१३३६

मूल्य— ८०·०० रुपया

मुद्रक

वाणी प्रेस

'प्रभाकर निलयम्', ४०५/१२८, चौपटियाँ रोड, लखनऊ-२२६००३

विषय-सूची



भुवन वाणी ट्रस्ट द्वारा प्रयुक्त

तेलुगु वर्णमाला का देवनागरी रूपान्तर

तेलुगु-देवनागरी वर्णमाला

అ अ ఆ आ ఇ इ ఈ ई ఉ उ
क का कि की कु

ఊ ऊ ఋ ऋ ౠ ॠ ఌ ऌ ౡ ॡ
कू कृ कॄ

ఎ ऎ ఏ ए ఐ ऐ ఒ ऒ ఓ ओ
कॆ के कै कॊ को

ఔ औ అం अं అః अः
कौ कं कः

క क ఖ ख గ ग ఘ घ ఙ ङ

చ च ఛ छ జ ज ఝ झ ఞ ञ

ట ट ఠ ठ డ ड ఢ ढ ణ ण

త त థ थ ద द ధ ध న न

ప प ఫ फ బ ब భ भ మ म

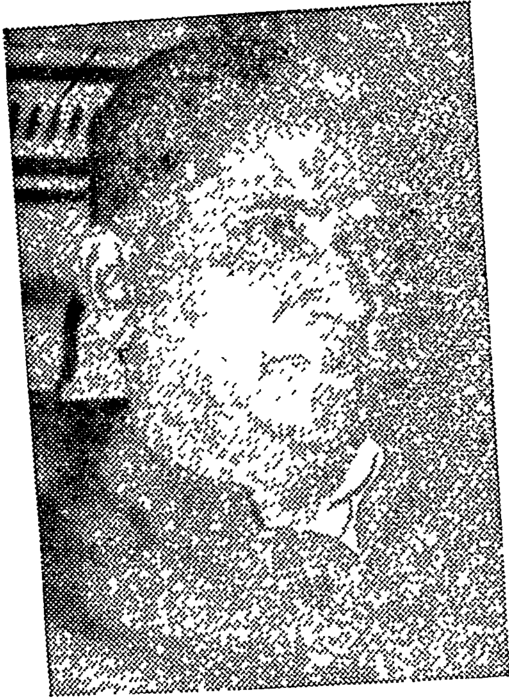
య य ర र ల ल వ व శ श

ష ष స स హ ह క్ష क्ष ఱ ऱ,ऱ

ళ ळ

उपोद्घात

आध्यात्मिकता भारतीय राष्ट्र की प्राण-शक्ति है। सुदूर वैदिक काल से लेकर महात्मा गांधी के आधुनिक युग तक अनेक रूप-रूपान्तरों और प्रकारान्तरों में यही शक्ति हमारे राष्ट्र को स्पन्दित और नियंत्रित करती रही है। हमारे जीवन का प्रत्येक अंग, व्यक्तिगत अथवा सामूहिक, राजनैतिक अथवा आर्थिक, और जीवन का छोटे से छोटा पहलू, यहाँ तक कि भोजन और स्थान तक, ऐसी नैतिक संहिता से मर्यादित है, जिसका स्रोत आध्यात्मिकता है। इतिहास के निविड़ अन्धकार और भीषण उत्पीणन के क्षणों में भी इसी संजीवनी शक्ति ने हमें जीवन ही नहीं प्रदान किया, बल्कि विकास और सौष्ठव से अभिषिक्त भी किया। हमारा यह दायित्व है कि हम इस प्राण-शक्ति को पहचानें तथा उसे वर्तमान और भविष्य के सन्दर्भ में नवीन आकार-प्रकार प्रदान करें। जो व्यक्ति अथवा समुदाय इस शाश्वत सन्देश तथा तथ्य को द्वार-द्वार तक पहुँचाता है, वह राष्ट्र की अनन्यतम सेवा करता है।



भगवान राम का जीवन और कृतित्व हमारी आध्यात्मिक संस्कृति का मूलाधार है। उनका शैशव, उनका विद्यार्थी जीवन, उनका यौवन व उनका दाम्पत्य जीवन और उनका राजस, वैयक्तिक विलास के लिए नहीं, बल्कि कठोर धार्मिक मर्यादाओं तथा उच्च नैतिक मूल्यों की वेदी पर आहुति मात्र हैं। उनके व्यक्तित्व और कृतित्व का समय-समय पर अनेक ऋषियों, मुनियों और समर्पित व्यक्तियों ने अपनी-अपनी दृष्टि से आंकलन किया है। मुझे यह कहने में गौरव है कि आन्ध्र प्रदेश और तेलुगु भाषा में राम-काव्य की जितनी प्रचुरता व बहुलता है, वह दूसरे क्षेत्र अथवा भाषा में उपलब्ध नहीं।

मुझे यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हो रही है कि भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ ने 'रंगनाथ रामायण' का नागरी लिप्यन्तरण सहित हिन्दी अनुवाद प्रकाशित किया है। तेलुगु के राम-काव्यों में 'रंगनाथ रामायण' कालक्रम से और काव्यसौंदर्य की दृष्टि से भी प्रथम स्थान का अधिकारी है। इस सुप्रसिद्ध काव्य का प्रकाशन कर, भुवन वाणी ट्रस्ट ने देश का महोपकार किया है। अनुवादक विद्वान् डॉ० भीमसेन निर्मल का योगदान भी प्रशंसनीय है।

भुवन वाणी ट्रस्ट ने अभी गत वर्ष ही तेलुगु के मोल्ल रामायण का हिन्दी अनुवाद सहित नागरी लिप्यन्तरण प्रकाशित किया था। आज दूसरा विशाल ग्रन्थरत्न श्री रंगनाथ रामायण नागरी कलेवर मे विद्यमान है। भुवन वाणी ट्रस्ट का यह कार्य राष्ट्रीय संस्कृति के परिपोषण में निस्सन्देह स्तुत्य एवं श्लाघनीय है। इस सत्प्रयत्न के लिए मै ट्रस्ट के प्रतिष्ठाता श्री नन्दकुमार अवस्थी तथा ट्रस्ट के अन्य कार्यकर्ताओ को हार्दिक बधाई देता हूँ।

(डॉ०) एम० चेन्ना रेड्डी
(मुख्यमन्त्री, आन्ध्र प्रदेश)

प्रकाशकीय परिशिष्ट

विश्ववाङ्मय से प्रवहित अगणित भाषाई धारा,
पहन नागरी पट सबने अब भूतल-भ्रमण विचारा।
अमर भारती सलिला की शुचि 'तेलुगु' सुमञ्जुल धारा-
की नागरी-सुमण्डित छवि से अब जगमग जग सारा॥

विषयवस्तु—भुवन वाणी ट्रस्ट के माध्यम से नागरी लिपि का मञ्च, विना किसी भेदभाव के प्रत्येक भाषा और मान्यता के लिए खुला है। भुवन की भाषाओं का सत्साहित्य नागरी लिपि में उद्‌भूत होकर अखिल भूतल की सामग्री बने; ज्ञानमात्र अविभाज्य रूप से सबको सुलभ होकर सबकी समान सम्पत्ति हो;—यह ट्रस्ट का सर्वोपरि उद्‌देश्य है।

प्रस्तुत ग्रन्थ में, पृष्ठ १८-१९ पर क्रमशः प्रकाशकीय और अनुवादकीय वक्तव्य अवलोकनीय हैं। इनके रहते, आज ग्रन्थ-समाप्ति के समय परिशिष्ट रूप में दुबारा प्रकाशकीय, और अनुवादक महोदय डॉ० भीमसेन निर्मल द्वारा दुबारा एक अनुवादकीय वक्तव्य देने की आवश्यकता पड़ी; क्यों? इस विवर्णता के पीछे ग्रन्थोदय का क्रमिक इतिहास है। संकल्प, श्रम; और उसका सुफल 'श्री रंगनाथ रामायण' का सानुवाद लिप्यन्तरण का मुर्तिमान होना, विवर्ण को सुवर्ण बना देता है।

ज्ञातव्य है कि सन् १९६९ ई० के उत्तरार्द्ध में भुवन वाणी ट्रस्ट की स्थापना हुई। भाषाई सेतुवन्ध के अनेक सानुवाद लिप्यन्तरण-ग्रन्थों में तेलुगु के प्रसिद्ध महाकाव्य श्री रङ्गनाथ रामायण का लेखन आरम्भ होकर, सर्वप्रथम वाणीसरोवर के अक्तूबर, ७१ अंक में, उसके कुछ पृष्ठ प्रकाशित होकर पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत हुए। प्रायः सभी ग्रन्थों की पृष्ठ संख्या सहस्रों में थी। मनोरथ गगनस्तर पर होते हुए भी यह आशा अनपेक्षित-सी ही थी कि इतने अल्प समय में ये वृहत्कलेवर ग्रन्थ मूर्तिमान हो सकेंगे। सुतरां, उस समय वाणीसरोवर त्रैमासिक में ग्रन्थ-परिचय, प्रकाशकीय और अनुवादकीय पाठकों की जानकारी के लिए सामान्य रूप में आरम्भ में देना उचित समझा गया।

किन्तु भगवान् की कृपा से वह अनपेक्षित आशा आज इतना शीघ्र फलवती हो गई। श्री रंगनाथ रामायण (१३२६ पृष्ठ) का सानुवाद लिप्यन्तरण संपूर्णतः प्रकाशित हो गया। पुरी में, भगवान् जगन्नाथ के दर्शन से पूर्व, साक्षीगोपाल का दर्शन-लाभ होता है। ब्रजयात्रा, विना मथुराधाम के भगवान् भूतनाथ के दर्शन किये सफल नहीं होती। 'रङ्गनाथ' के प्रकाशन से पूर्व ही तेलुगु की लोकप्रिय 'मोल्ल रामायण' प्रकाशित हो गई। वीणापाणि सरस्वती के अवतरित होने से पूर्व मानो वीणा प्रकट

हुई। जनपद की एक सामान्य महिला भगवदर्पिता कुम्हारिन 'मोल्ल' से लेकर, गोनवंशाधिराज विठ्ठलनाथ के सुपुत्र रेड्डिराज बुद्धनाथ द्वारा विरचित रामायण— राममय आन्ध्रप्रदेश के सामान्य से सम्भ्रान्त तक की तेलुगु-रामरचना हिन्दी जगत् के सम्मुख प्रस्तुत हो सकी।

ऐसी परिस्थिति में परिशिष्ट-स्वरूप दुवारा अनुवादकीय और प्रकाशकीय देने की आवश्यकता का एहसास हुआ। प्रकाशन के इस इतिहास से जनित इस विवर्णता को उदार पाठकवृन्द क्षमा करते हुए अलौकिक तेलुगु-काव्य से रामरसामृत पान करें।

उपोद्घात्— डॉ० एम० चेन्ना रेड्डी, माननीय मुख्यमंत्री, आन्ध्र-प्रदेश ने ग्रन्थ पर उपोद्घात लिखकर ट्रस्ट को गौरवान्वित किया है। उत्तरप्रदेश के राज्यपाल पद पर जब वे सुशोभित थे, तब से ट्रस्ट के भाषाई सेतुकरण के संकल्प और श्रम पर वे कृपालु हैं। हम उनके संरक्षण से सदैव सहायता प्राप्त करते रहे हैं।

पृष्ठ १—५ पर डॉ० आई० पाण्डुरङ्गराव (विशेषाधिकारी लोक सेवा आयोग) ने ग्रन्थ पर एक संक्षिप्त किन्तु सर्वाङ्गीण भूमिका लिखने की कृपा की है। अकिञ्चन एवं ट्रस्ट उनका अतिशय आभारी है। अनुवादक एवं लिप्यन्तरणकार डॉ० भीमसेन निर्मल का परिचय पृष्ठ १८ पर सुलभ है। डॉ० निर्मल भुवन वाणी ट्रस्ट की विद्वत् परिषद के वरिष्ठ सदस्य हैं और वे अपर न्यासी पद को भी सुशोभित करते हैं। उनकी व्यवस्था में तेलुगु का ए अन्य अद्भुत महाकाव्य 'पोतन्न कृत महाभागवतमु' का हिन्दी अनुवाद सहित नागरी लिप्यन्तरण तैयारी में है, जिसको ट्रस्ट-कार्यक्रम में तेलुगु भाषा का तृतीय ग्रन्थरत्न समझा जाय।

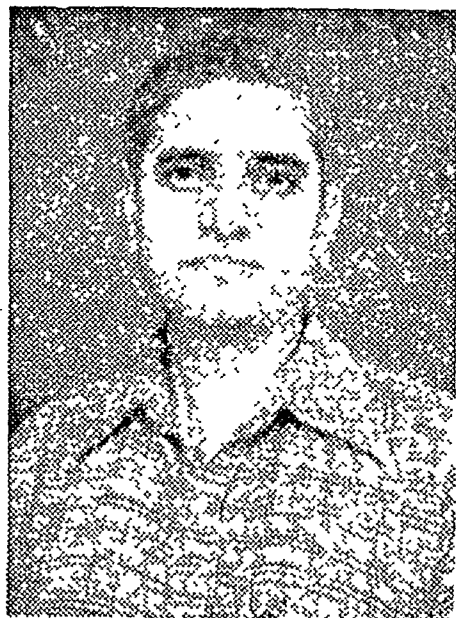
आभार प्रदर्शन— ट्रस्ट को, उदार सदाशयों, विद्वानों, एवं उत्तर-प्रदेश शासन से प्राप्त सहायता से बड़ा सहारा मिलता रहा है। अन्य भाषाई ग्रन्थों के साथ, तेलुगु 'श्री रंगनाथ रामायण' भी अपनी सहज गति से प्रकाशित होती रहती। सौभाग्य से केन्द्रीय राज्यशिक्षामन्त्री माननीया श्रीमती रेणुका देवी बरकटकी, भारत सरकार के राजभाषा सलाहकार बहुभाषामर्मज्ञ श्री रमाप्रसन्न नायक और शिक्षा एवं समाज कल्याण मंत्रालय के भाषानिदेशक श्री के० के० सेठी जी की अनुकम्पा हुई। इसके परिणाम-स्वरूप, ग्रन्थ १९७८-७९ ई० में परिपूर्णता को प्राप्त हुआ। हम उनके अतिशय अनुग्रहीत हैं। हम विश्वास के साथ निवेदन करते हैं कि भुवन वाणी ट्रस्ट की भाषाई सेतुकरण की विशाल और अद्वितीय योजना उत्तरोत्तर फलवती होकर शासन और जनता को संतुष्ट करती रहेगी।

नन्दकुमार अवस्थी

मुख्यन्यासी सभापति, भुवन वाणी ट्रस्ट, लखनऊ—३

राम नाम रमणीय है, राम परम अभिराम।
राम कथा कमनीय है, राम सुधा रसधाम॥

राम का नाम, राम का रूप और राम की लीला—ये तीनों किसी लोकोत्तर राग-रंजित रमणीयता को पल भर में धरातल पर प्रत्यक्ष कर देते हैं। राम का नाम सुनते ही अंतरंग का प्रेमधाम बोल उठता है। श्याम मनोहर राम की रूप-कल्पना उत्कृष्ट कला को जन्म देती है। रामचरित का एक-एक अक्षर लक्ष-लक्ष कृतियों का अक्षरकोष बन जाता है। राम-काव्य की इसी निसर्ग रमणीयता ने उसे देश-काल की नर-कल्पित सीमाओं से मुक्त कर उसे सार्वदेशिक, सार्वकालिक और सार्वजनिक रूप दिया है। आज संसार में, और विशेष कर भारत में, कोई ऐसी समृद्ध भाषा नहीं है जिसमें रामकथा किसी न किसी रूप में विद्यमान न हो। आंध्र-भारती ने भी इस अमरकथा को आत्मीयता के साथ अपना लिया है। आज से लगभग सात सौ वर्ष पहले रंगनाथ रामायण की रचना के साथ तेलुगु में रामकथा-साहित्य का आरम्भ हुआ था। तब से अब तक भास्कर रामायण, अध्यात्म रामायण, मोल्ल रामायण, अच्च तेलुगु रामायण, धर्मसार रामायण, उत्तर रामायण, रमणीय रामायण, रामायण कल्पवृक्ष आदि अनेक राम-काव्य लिखे जा चुके हैं और आज भी लिखे जा रहे हैं।



डॉ० आई० पाडुरंगराव

अभी-अभी छह, सात वर्ष पहले कविसम्राट् विश्वनाथ सत्यनारायण के "रामायण कल्पवृक्षम्" ने भारतीय ज्ञानपीठ का सर्वोच्च साहित्यिक सम्मान पाया है। आंध्र की कवयित्रियों ने भी रामकथा को रसात्मक काव्य में उतारने का स्पृहणीय प्रयास किया है। "मोल्ल रामायण" इसी रमणीय काव्यधारा का अनमोल रत्न है जिसे हाल ही में भुवन वाणी ट्रस्ट ने रामायण जगत् के सामने प्रस्तुत किया है। इस कांता-सम्मत कमनीय काव्य की प्रस्तुति के बाद तेलुगु साहित्य के क्षेत्र में भुवन वाणी का यह दूसरा उपक्रम है।

'रंगनाथ रामायण' तेलुगु का शायद सबसे पहला राम-काव्य है। आंध्र महाभारत के तीन प्रणेताओं में परिगणित तिक्कन सोमयाजी की "निर्वचनोत्तर रामायण" निश्चय ही इससे पहले की रचना है। पर वह

सम्पूर्ण रामकाव्य नहीं है, केवल उत्तरकांड की कथा पर आधारित है। इसलिए रंगनाथ रामायण ही तेलुगु का सर्वप्रथम रामकाव्य है। सर्वप्रथम होते हुए भी कलात्मक सौष्ठव, रचना कौशल, लोकप्रियता और आपात रमणीयता में यह बड़ी उच्चकोटि की रचना है। तेरहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध या चौदहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध की यह रचना गोनवंश के राजा विठ्ठलनाथ के पुत्र बुद्धनाथ या बुद्धा रेड्डी ने अपने पिता की इच्छा पर संपन्न की। उनके पिता की इच्छा थी कि यह रामायण उनके नाम से प्रसिद्ध हो। "निपुणमति" और "निखिलशब्दार्थ-मर्मज्ञ" कविकुमार ने अपनी रचना का नाम रंगनाथ रामायण रखकर पिता की इच्छा भी पूरी की और साथ ही अयोध्या के आराध्य देव रंगनाथ को भी काव्य मे शीर्षस्थ स्थान दिया। अतः काव्य के नामकरण में भी कवि की उदात्त कल्पना और सहज ध्वन्यात्मकता का परिचय मिल जाता है।

आदि कवि की आर्ष रचना पर आधारित इस अनर्घ रचना में अनेक प्रसंग ऐसे हैं जिनमें कवि की मौलिकता का प्रमाण मिलता है। "मानस" से तीन सौ वर्ष पहले की रचना होते हुए भी इसमें सेतुबंधन के बाद राम के द्वारा शिवजी की प्रतिष्ठा का वर्णन मिलता है। धार्मिक सामरस्य और सांस्कृतिक एकता की दृष्टि से यह रचना बहुत ही महत्वपूर्ण है। मानसकार की भाँति बुद्धनाथ ने भी अपने आराध्य राम में हरि-हर का सम्मिलित रूप देखा है।

रावण की माता कैकसी और इंद्रजित की पत्नी सुलोचना की सृष्टि भी रंगनाथ रामायण की रमणीय कल्पना है। कैकसी की ममता और सुलोचना की अलौकिक पवित्रता राक्षस-परिवार में भी सहृदयता का समावेश करती है। शूर्पणखा के पुत्र जंबुमाली का चित्रण भी आनन्द रामायण पर आधारित कल्पना है। सेतुबंधन के समय का एक प्रसंग विशेषरूप से उल्लेखनीय है। समुद्र पर सेतु बांधने में जब सारी वानर-सेना बड़े-बड़े पहाड़-पत्थर लाने में जुटी हुई होती है, तब एक छोटी सी गिलहरी यथाशक्ति अपना भी सहयोग अर्पित करने के प्रयत्न में अपनी पूंछ पर सिकता के कण उठा-उठाकर समुंदर पर डाली जानेवाली चट्टानों पर डालने की कोशिश करती है। गिलहरी के इस प्रयास के पीछे जो भोली-भाली भक्ति-भावना है, उस पर राम प्रसन्न होते है और अपनी करांगुलियों से उसकी पीठ को अंकित कर देते हैं। राम की यह प्रेमभरी मुद्रा इतनी अमिट होती है कि आज भी गिलहरियों की पीठ पर हाथ की उँगलियों की छाप दिखाई देती है। रंगनाथ रामायण का यह प्रसंग तेलुगु-भाषी जनता में इतना लोकप्रिय हो चुका है कि "गिलहरी की यत्किंचित् भक्ति" कहावत सी हो गई है। रामकथा की मार्मिक मंजुलता को उभारनेवाले ऐसे अनेक

प्रसंग रंगनाथ रामायण में मिलते हैं जिनका रसास्वादन भुवन वाणी की इस विराट योजना ने सबको सुलभ कर दिया है।

"प्रत्येक क्षेत्र, प्रत्येक संत की बानी।
संपूर्ण विश्व में घर-घर है पहुँचानी॥"

भुवन वाणी ट्रस्ट का यह ध्येय अखिल मानव-महामानस को महिमान्वित करनेवाला महनीय मंत्रराज है। अब तक भुवन वाणी के माध्यम से जो काम संपन्न हुआ है, उसे देखकर हम आशान्वित हो जाते हैं कि इस ध्येय की सिद्धि उनके लिए कोई कठिन कार्य नहीं है। असल में भारत-भारती विभिन्न भाषाओं की विशिष्ट पद-विधि में एक ही पद-निधि को प्रतिपादित करती है। पर जब तक भाषा और लिपि का आवरण हटाकर भाव जगत् की इस एकात्मकता को प्रत्यक्ष न कर लिया जाए तब तक हमारे यहाँ की सांस्कृतिक समरसता का सही-सही बोध नहीं हो पाता। यह तभी संभव है जब सारा सुरुचिपूर्ण साहित्य एक ही भाषा और लिपि के माध्यम से सबके सामने प्रस्तुत किया जा सके। इस दिशा में भुवन वाणी ट्रस्ट के मुख्यन्यासी सभापति कविमनीषी नंदकुमार अवस्थी का यह प्रयास सराहनीय क़दम है।

आजकल भारत का लगभग हर शिक्षित नागरिक नागरी लिपि और हिन्दी भाषा से परिचित है। इसलिए संतवाणी को सार्वजनिक रूप देने के लिए भुवन वाणी ने इस माध्यम को ठीक ही अपना लिया है। इन ग्रंथों के सहारे जिज्ञासु पाठक मूल पाठ को भी पढ़ सकते हैं और हिन्दी के माध्यम से उसका मंतव्य भी ग्रहण कर सकते है। पर कठिनाई केवल यही है कि ग्रंथ का आकार लगभग दुगुना हो जाता है और आजकल मोटी किताबें देखकर ही लोग घबरा जाते हैं। पर जिनमें सच्ची जिज्ञासा हो और उच्च संस्कार हों, उनके लिए कोई समस्या नहीं है। अगर शासन की ओर से भी अनुदान के रूप में कुछ सहयोग मिल जाय तो इनका मूल्य भी सर्वसुलभ रखा जा सकता है। वास्तव में यह निष्ठा और दीक्षा का काम है, जिसमें सबका सहयोग अपेक्षित है। तटस्थभाव से देखने पर किसी भी भाषा के सत्साहित्य का लिप्यंतरण और अनुवाद प्रस्तुत करना साधारण कार्य-सा प्रतीत होता है। पर गहराई में पैठकर गोते लगानेवालों को ही इसकी गरिमा और मधुरिमा का वास्तव में पता चलता है।

उदाहरण के लिए प्रस्तुत रचना "रंगनाथ रामायण" को ही लें। एक तो इतने प्राचीन ग्रंथ का सही पाठ तैयार करने में ही काफ़ी श्रम और सावधानी अपेक्षित होती है। फिर जब प्रामाणिक पाठ तैयार हो जाए तो उसे नागरी लिपि में रूपांतरित करना भी कम कठिन नहीं है। तेलुगु भाषा समास-बहुला है। प्रायः सभी शब्द एक दूसरे से जुड़े हुए होते है।

उनको अलग-अलग लिखा जाए या मिलाकर लिखा जाए, यह लिप्यंतरण के पग-पग पर उठनेवाली समस्या है। सन्धि-विच्छेद से शब्दों को समझने में सुगमता होती है, पर यह हमेशा संभव नहीं है। इसलिए लिप्यंतरकार को विवेक और प्रसंगोचित विवक्षा से काम लेना पड़ता है। इसके अलावा, तेलुगु में ह्रस्व एकार, ह्रस्व ओकार, अर्द्धानुस्वार, अलघु लकार, अलघु रकार जैसे कई ध्वनि-सकेत है जिनके पर्याय नागरी मे नहीं मिलते। इसके लिए एक लिप्यंतरण सहिता वनानी पड़ती है। लिप्यंतरण का प्रयोजन तभी सिद्ध होता है जब नागरी में लिखा हुआ मूलपाठ पढ़ते समय हिन्दी-भाषी या तेलुगु से अनभिज्ञ कोई अन्य-भाषी मूलपाठ को उसी प्रकार उच्चारण कर सके जैसे तेलुगु-भाषी करता है। इस ध्येय को प्राप्त करने में प्रस्तुत रचना का लिप्यंतरण बहुत कुछ सफल हुआ है, इसमें कोई संदेह नही है।

लिप्यंतरण से भी कठिन और जटिल समस्या भाषांतरण या अनुवाद की है। वैसे ही अनुवाद का कार्य अपने में एक साधना है। अनुवाद का मतलब केवल शब्दों के रूपांतर से नही, वल्कि शब्दों के माध्यम से होनेवाले भावबोध को दूसरी भाषा के माध्यम से प्रस्तुत करने से होता है। पहले मूल भाषा के विचारतत्त्व को आत्मसात् करना और उसे बारीकी के साथ दूसरी भापा के परिधान में सहज, सुबोध और सुस्वाद्य शैली में प्रस्तुत करना कोई मामूली काम नही है। यह तो सामान्य अनुवाद की बात है जिसमें मूल पाठ अनुवाद के साथ नही दिया जाता। प्रस्तुत रचना "रंगनाथ रामायण" में अनुवाद का कार्य और भी जटिल और श्रमसाध्य इसलिए हो चुका है क्योंकि उसमें मूलपाठ के साथ ही अनुवाद भी दिया गया है। इस अनुवाद को पढ़नेवाले न केवल मूल ग्रंथ का रसास्वादन करते है; वल्कि क़दम-क़दम पर अनुवाद को मूल से मिलाकर चलते हैं। ऐसी स्थिति में अनुवादक को काफ़ी सतर्क और समर्थ होकर चलना पड़ता है। यही "असिधाराव्रत" (तलवार की नोक पर चलने) जैसा काम कहा जाता है। जहाँ मूल पाठ के बिना अनुवाद छप जाता है, वहाँ अनुवादक काफ़ी स्वतंत्र होता है। मूल का पूरा-पूरा आनंद लाने के लिए कहीं कुछ जोड़कर कहीं कुछ तोड़कर अनुवाद को अंतत: आपातरमणीय वनाना ही उसका ध्येय होता है। पर इस स्वतंत्रता या सुविधा से प्रस्तुत ग्रंथ का अनुवाद एकदम वंचित है। इसलिए यह साधना वहुत ही जटिल और प्रज्ञापेक्षी होती है।

मुझे यह देखकर प्रसन्नता हुई कि इस ग्रंथ का लिप्यंतरण और अनुवाद प्रस्तुत करनेवाले सुयोग्य विद्वान् डॉ० भीमसेन निर्मल ने इस महान् कार्य को वड़ी दक्षता के साथ संपन्न किया है। जहाँ तक हो सके, उन्होंने मूल के संस्कृत शब्दों का ज्यों का त्यों प्रयोग किया है और जहाँ ये शब्द कुछ

दुरूह या कठिन प्रतीत हों, वहाँ कुंडली में उनके सरल पर्याय भी दिए हैं। अनुवाद में प्रत्येक अक्षर पर, प्रत्येक शब्द पर और प्रत्येक भाव-भंगिमा पर पूरा-पूरा ध्यान दिया गया है। तेलुगु में एक पंक्ति पढ़कर फिर हिन्दी में उसके अनुवाद से मिलाते जाएँ तो न केवल मूल का आशय समझ में आता है, बल्कि मूल की भाषा 'तेलुगु' सीखने में भी सुविधा होती है। सफल अनुवादक प्रायः अपने अनुवाद के संबंध में दावा करते हैं कि उन्होंने ऐसी कोई बात नहीं कही जो मूल में न हो और न ही कुछ ऐसी बात जोड़ दी जो अपेक्षित नहीं है—"नामूलम् लिख्यते किंचित् नानपेक्षितमुच्यते"। यह बात अन्यान्य अनुवादकों के बारे में सही निकले या नहीं, पर डॉ० निर्मल ने इस नियम का पूरा-पूरा पालन किया है। इससे उनका यह अनुवाद न केवल रामायण-बोधिनी का काम देता है, बल्कि तेलुगुभाषा-बोधिनी के रूप में भी उपयोगी सिद्ध होता है। सारी पुस्तक पढ़ने के बाद पाठक को तेलुगु भाषा का कार्यसाधक ज्ञान अवश्य मिलता है और कम से कम तेलुगु भाषा के माधुर्य से वह परिचित हो जाता है।

यह महान् सांस्कृतिक अनुष्ठान भुवन वाणी ट्रस्ट के प्रतिष्ठाता श्री नंदकुमार अवस्थी और हिन्दी-तेलुगु के जाने-माने विद्वान् डॉ० भीमसेन निर्मल के मणि-कांचन संयोग से सुसंपन्न हो सका है। डॉ निर्मल को मैं वर्षों से जानता हूँ। हिन्दी और तेलुगु के मर्मज्ञ विद्वान् होने के कारण उन्होंने साहित्यिक आदान-प्रदान के कार्य में महत्वपूर्ण योग दिया है। शरीर से दुबले-पतले, पर मन से निर्मल और आत्मा के आलोक से चिर-प्रफुल्ल उनका व्यक्तित्व पल भर में पराये को अपना बना लेता है। "रंगनाथ रामायण" की शैली और डॉ० निर्मल के व्यक्तित्व में भी बहुत कुछ साम्य है—सहज सात्विक सरलता कृतित्व और कर्तृत्व को जोड़ देती है। मुझे पूरी आशा है कि नागरी जगत् इस सांस्कृतिक अनुष्ठान का सहर्ष स्वागत करेगा। कविमनीषी श्री नंदकुमार अवस्थी के लगाए गए इस 'नंदन वन' में रंगनाथ रामायण के यशस्वी लेखक गोन बुद्धा रेड्डी की यह मंगलकामना निरंतर गूंजती रहेगी:—

अघनायकभवबंधविमोचक, दिव्य भव्य रचना श्रीकारक।
रामायण रमणीय कथा यह, भावुकजन-तारक पुण्यावह॥
जब तक भूधर, जब तक सागर, जब तक शशि, नक्षत्र, दिवाकर।
जब तक चार वेद, यह वसुधा, जब तक जग आलोकित बहुधा।
तब तक रामकथा यह मंजुल, बरसे नित आनंद रसोज्ज्वल॥

॥ इति शम् ॥

विशेष कार्याधिकारी,
संघ लोक सेवा आयोग, नई दिल्ली

(डॉ०) आई० पाण्डुरंगराव

अनुवादकीय

श्रीरामचन्द्र आन्ध्रजाति के प्रियतम भगवान हैं, परम आराध्य हैं। दैनिक जीवन में हो अथवा साहित्य में हो, जहाँ सुनिए, वहीं पवित्रनाम प्रतिध्वनित होता सुनाई पड़ेगा। श्रीराम के वनवास के चौदह वर्षों में अधिक भाग दंडकारण्य में आन्ध्रप्रान्त में— गोदावरी के तीरस्थ प्रदेशों में ही व्यतीत हुआ था। उस पावन स्मृति को जाग्रत करनेवाले अनेक स्थान और चिह्न आन्ध्रप्रान्त में विद्यमान हैं। अतः यह स्वाभाविक है कि मर्यादापुरुषोत्तम की पवित्र कथा के श्रवण से मैं बचपन से ही आसक्त रहा। बचपन में हरिकथाओं के श्रवण तथा चर्म-पुत्तलिका-नृत्यों के दर्शन से राम के कर्त्तव्यपरायण-शीलता की हृदय पर अमिट छाप पड़ गई। लेखन कार्य में रत होने के बाद रामकथा संबंधी तथा रामभक्तों संबंधी कई लेख भी लिखे थे।



डॉ० भीमसेन निर्मल
(उस्मानिया वि०वि० हैदराबाद)

सन् १९६९-७० में हैदराबाद में संपन्न हिन्दीतर हिन्दी लेखक सम्मेलन के सुअवसर पर आदरणीय बन्धुवर डॉ० गजानन नरसिंह साठे जी से भेंट हुई थी। प्रथम दर्शन में ही मेरे प्रति उनके हृदय में अपनत्व उत्पन्न हुआ। उन्होंने भुवन वाणी ट्रस्ट के लिए तेलुगु भाषा के किसी रामायण का अनुवाद कर देने के लिए मुझे प्रेरित किया। तदनन्तर श्रद्धेय पद्मश्री नन्दकुमारजी अवस्थी के साथ पत्राचार प्रारंभ हुआ। स्व० ए० सी० कामाक्षीरावजी-कृत रंगनाथ रामायण का स्वच्छन्द गद्यानुवाद बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना द्वारा प्रकाशित हुआ था। वह अनुवाद ट्रस्ट के सिद्धान्तों के अनुरूप और मूलपाठ सहित न होने के कारण, अवस्थी जी ने रंगनाथ रामायण का नागरी लिप्यन्तरण सहित हिन्दी अनुवाद प्रस्तुत करने का आदेश दिया। उनके आदेशानुसार इस पुनीत कार्य का श्रीगणेश किया। प्रारंभ में मन में यह विचार घर कर गया था कि त्रैमासिक 'वाणीसरोवर' में प्रकाशित होने के पश्चात् ही मेरा

अनुवाद ग्रन्थरूप प्राप्त करेगा। बद्धमूल बनी इस धारणा के कारण, कार्य की गति प्रारंभ में पर्याप्त मंद रही। किन्तु श्री अवस्थीजी के बार-बार स्मरण दिलाते रहने पर तथा मेरे शिष्य डॉ० सीएच्० रामुलु कृत 'मोल्लरामायण' के प्रकाशित होने पर अनुवाद कार्य शीघ्रगति से हुआ और भगवान की असीम कृपा से इस पवित्र कार्य को इस वर्ष के श्रीरामनवमी के दिन पूर्ण कर सका।

तेलुगु भाषा में उपलब्ध रामायणों में रंगनाथ रामायण प्रथम तथा अत्यन्त लोकप्रिय रचना है। पाठ्य तथा गेय दोनों रूपों में सुमधुर यह रचना पण्डित और पामर को प्रसन्न करनेवाली है। यह द्विपद शैली में लिखा गया प्रथम विशालकाय महाकाव्य है। इस काव्य में अनेक अवाल्मीकीय प्रसंग हैं जो काव्यरसिक को भाव-विभोर कर देते हैं। ये प्रसंग मूलकथा की घटनाओं को अधिक तर्कसंगत-मनोवैज्ञानिक सिद्ध करते हैं और काव्यसौंदर्य में चार-चाँद लगा देते हैं। 'असमान ललित शब्दार्थ संगतियों' तथा 'अलंकार-भावनाओं' से युक्त इस काव्य में मनोहर वर्णनों की शोभा, प्रकृति वर्णन की छटा पाठक को मुग्ध कर देती है। उक्ति-वैचित्र्य एवं अर्थ-गौरव से युक्त इस काव्य में संस्कृतबहुल समासयुक्त मधुर गंभीर भाषा के साथ ठेठ तेलुगु भाषा के मुहावरे का हृदयंगम सम्मेलन है। यह कवि के उभयभाषा पांडित्य का ज्वलन्त प्रमाण प्रस्तुत करता है। तेलुगु भाषा के रामकाव्यों में भाव-प्रौढ़ता तथा काव्य-माधुरी के कारण इस काव्य का अद्वितीय स्थान है। इस अप्रतिम काव्य को हिन्दी के सुधी पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए मैं अतीव आत्मतोष का अनुभव कर रहा हूँ।

तेलुगु लिपि तथा ध्वनि चिह्नों की विशिष्टता के बारे में अन्यत्र विस्तार से लिख चुका हूँ। लिप्यन्तरण में जिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, उन्हें पूज्य अवस्थीजी के परामर्श द्वारा सुलझा सका। तेलुगु के '' (अर्द्धानुस्वार का प्रतीक) जिसका उच्चारण तो होता ही नहीं है। यह लुप्त अनुस्वार (अरसुन्न) लुप्त 'न्' का चिह्न है और इसके कारण परवर्ती सरल अक्षर (क, च, ट, त, प) परुष अक्षर (ग, ज, ड, द, ब) बन जाते हैं। इसे लिप्यन्तरण में छोड देना पड़ा। आशंका इस बात की थी कि उस चिह्न को नागरी-लिपि में देने के कारण नागरी के पाठक पसोपेश में पड़ जाएँगे।

रंगनाथ रामायण १३-१४वीं शती की रचना है, जिसमें क्लिष्ट संस्कृत समास-शैली के साथ, ऐसे ठेठ तेलुगु शब्दों का प्रयोग किया गया है जो आज प्रचार में नहीं हैं। ऐसे शब्दों तथा शब्द-प्रयोगों का अर्थ लगाने में बन्धुवर डा० जी० वी० सुब्रह्मण्यम् (रीडर, तेलुगु विभाग,

उस्मानिया विश्वविद्यालय) तथा डा० पी० श्रीरामचंद्रुडु (रीडर, संस्कृत विभाग, उ० वि० वि०) ने मेरी सहायता की है। मैं इन दोनों विद्वानों का हृदय से आभारी हूँ।

अनुवाद में मूल काव्य की कथन शैली एवं भावाभिव्यक्ति की पद्धति का यथासंभव अनुसरण किया है। इस कारण से हो सकता है कि अनुवाद की भाषा, वाक्य-रचना अथवा शब्द-प्रयोग आदि किंचित् अटपटे लगें। मूल तेलुगु काव्य में मात्रापूर्ति के प्रयुक्त संज्ञाओं, क्रियाओं तथा सर्वनामों का भी यथावत् रूप से अनुवाद कर दिया है। जो हो, मेरे इस अनुवाद से हिन्दी के रसज्ञ पाठक तेलुगु की लोकप्रिय रामायण के काव्य-गौरव से यत्किंचित् भी परिचित हो जाएं तो मैं अपने प्रयास को सार्थक मानूंगा।

भाषाई सेतुकरण, एक भाषा के साहित्य का दूसरी भाषा में प्रति-बिंबीकरण द्वारा राष्ट्रीय भावात्मक समन्वय के पुनीत कार्य में विगत २० वर्षों से लगे हुए भुवन वाणी ट्रस्ट के कर्मठ साधक पद्मश्री नन्दकुमारजी अवस्थी तथा श्री विनयकुमारजी अवस्थी के अथक परिश्रम के कारण भारतीय भाषाओं के साहित्य परस्पर नैकट्य का अनुभव कर रहे है और नागरी लिपि प्रचार के द्वारा भारतीय साहित्यों को तथा भारतीय जन-मानस को एकसूत्र में निबद्ध करते जा रहे हैं। पिछले वर्ष हैदराबाद में उन दोनों मौन तपस्वियों के साक्षात्कार का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उनके कर्मठ व्यक्तित्व एवं मौन तपस्या की भावना ने मुझे अत्यधिक प्रभा-वित किया था। उनके द्वारा संपन्न हो रहे इस महान् यज्ञ में अपना अल्पतर योगदान प्रस्तुत करने का मुझे जो सुअवसर प्राप्त हुआ है, तदर्थ मैं उनका हृदय से आभार मानता हूँ। इस कार्यक्रम को सफल बनाना मैं अपना कर्त्तव्य मानता हूँ।

डा० ए० पांडुरंगराव (विशेष अधिकारी, लोक सेवा आयोग, नई दिल्ली) का मैं अत्यन्त आभारी हूँ जिन्होंने इस ग्रन्थ को अपनी भूमिका से समलंकृत किया है। अन्त में अन्य सभी सुहृदजनों का आभार मानता हूँ जिन्होंने मेरे प्रयास को सफल बनाया है।

॥ इति शम् ॥

रीडर, उस्मानिया विश्वविद्यालय,
हैदराबाद

बुधजनविधेय,
(डॉ०) भीमसेन 'निर्मल'

विषयानुक्रमणिका

किष्किधाकाण्ड ४८०-५८२



श्री रंगनाथ रामायणमु

(तॅलुगु द्विपद काव्य)

मूल:

गोन बुद्धारेड्डी

देवनागरी लिप्यन्तरण तथा अनुवाद:

डॉ० भीमसेन 'निर्मल' एम० ए०, पीएच्० डी०

प्र० उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद

प्रकाशकीय

श्री भण्डारम भीमसेन जोस्युलु साहित्य-जगत् में भीमसेन 'निर्मल' के नाम से प्रख्यात है। एम. ए., पीएच्. डी. (हिन्दी), एम. ए. (तॅलुगु), राष्ट्रभापा-प्रवीण, हिन्दी-प्रचारक, साहित्य-रत्न, साहित्यसुधाकर आदि विभिन्न उपाधियों से समलंकृत इन विद्वान् का जन्म ३० नवंबर, १९३० ई० में मेदक (आन्ध्र) में हुआ। तॅलुगु तथा हिन्दी के अनेक ग्रंथों के सफल अनुवादक, नाटककार, कवि, निवन्धकार—इस प्रकार राष्ट्र-भाषा हिन्दी तथा आन्ध्र-भाषा तॅलुगु के समानरूपेण अनन्य सेवी और राष्ट्र की भावनात्मक एकता के लिए सतत प्रयत्नशील इन विभूति के द्वारा आज कल रामचरितमानस के सन् १८५० ई० के पूर्व रचित तॅलुगु-अनुवाद का सम्पादन हो रहा है।

'भुवन वाणी ट्रस्ट', लखनऊ के माध्यम से राष्ट्र के सम्मुख प्रस्तुत गत बाईस वर्षीय विविध भाषाओं के हिन्दी अनुवाद सहित देवनागरी लिप्यन्तरण के विशाल कार्यक्रम में तॅलुगु के प्रसिद्ध ग्रन्थ 'रंगनाथ-रामायण' का हिन्दी अनुवाद सहित देवनागरी लिप्यन्तरण का भार इन्हीं विद्वान् ने अपने ऊपर लिया है।

श्री रंगनाथ रामायण तथा तॅलुगु भाषा के सम्वन्ध में श्री निर्मल की लेखनी से निःसृत विवरण आगे दिया जा रहा है। आशा है इस वित्ररण तथा आरंभ में दिये हुए 'तॅलुगु-देवनागरी' वर्णमाला चार्ट की सहायता से अखिल राष्ट्र के रसज्ञ पाठक तॅलुगु भाषा और उसके अनुपम काव्य द्वारा रामचारितामृत का सरलता से रसास्वादन कर सकेंगे।

—नन्दकुमार अवस्थी

—सम्पादक

अनुवादक एवं लिप्यन्तरणकार का वक्तव्य

१—रंगनाथ रामायण

श्रीराम की कथा परम पवित्र है। उस पवित्र गाथा को लेकर तॅलुगु भाषा में अनेक काव्य, नाटक, गेयपद, यक्षगान आदि रचे गए हैं। उन सब में रंगनाथ रामायण का अपना विशिष्ट स्थान है। यह तॅलुगु के अपने देशी छन्द 'द्विपद' में लिखा गया है जो गाये जाने के अत्यन्त अनुकूल है।

रंगनाथ रामायण के कर्ता (लेखक) तथा समय के बारे में विभिन्न मत है। फिर भी अन्त:साक्ष्य के आधार पर गोन बुद्ध भूपति इस काव्य के कवि माने जाते हैं। इन्हें रेड्डीवंशज और इनका जन्म सन् १२७० ई० माना जाता है। विद्वानो के मत से इस काव्य का रचनाकाल सन् १३१० अथवा १३२० ई० है। जो हो, रंगनाथ रामायण को अधिकतर विद्वान् चौदहवी शताब्दी के अन्तिम दशकों की रचना मानते है। रंगनाथ रामायण का उत्तरकांड बुद्ध भूपति के पुत्रों द्वारा रचा गया है।

इस काव्य का 'रंगनाथ रामायण' के नाम से प्रचलित होने का कोई कारण उपलब्ध नही है। इस काव्य की अनेक पांडुलिपियों का सकलन कर, शुद्ध पाठ के निर्णय करने का कार्य, सर सी० पी० ब्राउन महोदय ने सन् १८४० ई० में किया था। उनका कथन है कि This translation of the Ramayana is always attributed to a poet named Ranganatha, but his name is nowhere mentioned in the book; while it is asserted in each volume that the author was Budha Raj, who wrote it at the desire of his father Vithal Raj....... ....This Ramayana is vulgarly attributed to Ranganatha; but I can not discover the reason. अस्तु,

रंगनाथ रामायण यद्यपि वाल्मीकि रामायण के आधार पर रचा गया है किन्तु इस काव्य में कई अवाल्मीकीय प्रसंग है। पता नही इस काव्य के लेखक ने वाल्मीकि रामायण की किस प्रति को अपना आधार बनाया था।

यह काव्य तॅलुगु के द्विपद काव्यों में श्रेष्ठ माना जाता है। शैली, अर्थ-गाम्भीर्य, शब्द और अर्थालंकार के प्रयोग, रस और भाव के अनुकूल रचनाशिल्प में यह काव्य अनुपम है। संस्कृत के साथ तॅलुगु पर कवि का समान अधिकार है। यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नही कि इस काव्य में प्रसंगानुकूल रसभरे वर्णन प्रचुरमात्रा में है।

श्रीराम-पञ्चायतन



श्री रंगनाथ रामायणमु

बाल - काण्डमु

श्लोक ॥ चरितं रघुनाथस्य शतकोटि प्रविस्तरम्,
एकैकमक्षरं प्रोक्तं महापातकनाशनम्,
रामाय रामभद्राय रामचन्द्राय वेधसे,
रघुनाथाय नाथाय सीतायाः पतये नमः ॥

देवतास्तुत्यादिकमु

श्री कामिनीनाथु, जितदैत्यनाथु । लोकरक्षणकृत्यु, लोकैकनित्यु
नित्यचिदानन्द निर्वाणकृत्यु । गृत्यंविदूरु, नकृतिमाधारु
नाधारकमल - मध्यामोदभेद । साधनक्रमसमाचरण षट्चरणु
सिन्धुर वरदु, नाश्रितलोकबन्धु । बन्धमोचनु, वलिबन्धनोदग्रु
नारूढ - पंचाशदक्षर प्रसव । पारिजाताकारु, ब्रणवानुकारु
नग्राम्य - गोपिकाभ्यन्तरव्यग्रु । नग्रेसराकारु, नाकार रहितु
योगिमानस - लसदोंकारदीप्तु । योगसंदर्शिताभ्युदय - प्रचारु

श्री लक्ष्मीनाथ, राक्षस राजाओं को जीतने वाले, लोक-रक्षा को ही अपना कर्त्तव्य मानने वाले, लोकैकनित्य, सदा चिदानन्द से युक्त, मोक्षदायक, कर्मरहित, स्वयंभूत आधार, आधार-कमल के मध्यस्थित सुगंध के भेद (रहस्य)को जानने या प्राप्त करने की साधना के अनुष्ठान में भ्रमर समान, गजेन्द्र को मोक्ष देने वाले, आश्रित जनों के वन्धु, (संसार के) वन्धनों से मुक्ति प्रदान करने वाले, वलि को बाँधने में दृढ़, वह पारिजात वृक्ष जिसपर पंचाशत अक्षर (वर्ण माला) रूपी प्रसून विकसित हुए हों, प्रणवस्वरूप, अग्राम्य गोपिकाओं के हृदय में विहार करने में व्यग्रचित्त वाले, अवोध-गम्य आकार वाले, निराकार, योगियों के मानस में स्थित ओंकार-रूप में दीप्त, योगियों से संदर्शित अभ्युदय के प्रचारक, श्रुतियों के सिरमौर,

श्रुतिशिरोभागविशुद्ध चैतन्यु । नतिलोकु, सर्वलोकाश्रयश्लोकु
नखिलांड मौक्तिकायत नित्यसूत्रु । नखिलतत्त्वातीतु, नाद्यन्तरहितु
नमलात्मु, नक्षरु, नाम्नायकमल । कमलाप्तु, नक्षीणकल्याणसदनु १०
शंकाविनिर्मुक्त - सद्भक्तवर्य । कैकर्यवत्सलु, गारुण्यसिन्धु
बोधकुंडै वच्चि, बोध्यमै तोचि । बोधमै वीक्षिंचु पूर्णस्वरूपु
नादितत्त्वमु,'तत्त्वम' स्यादि वाक्य। भेदाति - रूपु, नभेद्यप्रतापु
गडुकॉनि नियतुलै कर्मबन्धमुलु ।गडचि, येकतमुन गदलक निलिचि
यरुदुगा निन्द्रिय व्याप्तुल मरचि । विरचितासनबद्ध विन्यासिलील
वरिचितासनमुन बदिलमै निलिचि। सरवितो मदिलोन सरसत निलिप
वॅलय डॅब्बदि रॅण्डु वेल नाडुलनु ।गलय विवेकिंचि, कसटु वो दुडिचि
यॉक रॅडुं त्रोवल नॉकटिगा मॅलगि । यकलंकमतितोड नतिसूक्ष्ममुगनु
नवयवंबुलयंदु नानन्दमैन । पवनु निरोधिंचि, पश्चिमवीथि
जॉनिपि, कोणत्रय शुद्धि गविंचि ।मनसुतोडनॅकूड मरपिंचितॅच्चि २०
कुंडलिनिजशक्ति गूर्चि, संप्रीति ।नॉण्डॉण्ड गमलबु लॉगि नाड़ गडचि

विशुद्ध-चैतन्य स्वरूप वाले, अलौकिक, समस्त लोकों के आश्रयस्वरूप, (पुण्य) श्लोक, अखिलांड रूपी मुक्ता के आयतन, नित्यसूत्र, अखिल तत्त्वों से अतीत, आदि एव अन्त-रहित, निर्मल-आत्मा, अनश्वर, वेदरूपी कमल के लिए सूर्य सम, अक्षीण कल्याणों के आकर, ।। १० ।।

—शकाओं से विमुक्त सद्भक्त श्रेष्ठों की सेवाओं के कारण वात्सल्य-भाव से पूर्ण, करुणा-सिन्धु, वोधक, बोध्य तथा बोध—इन तीनों रूपो में अभिव्यक्त पूर्ण-स्वरूप वाले, आदि तत्त्व, 'तत्त्वमसि' आदि वाक्यो के अनुसार भेदातीत रूप वाले, अभेद्य, प्रताप से युक्त परमात्मा का (भक्ति-भाव से ध्यान करने के लिए) निष्ठा से नियमों का पालन कर, कर्म के वन्धनों को पारकर, एकान्त में स्थिर भाव से रहकर, इन्द्रिय-व्यापारों को भुलाकर, योगासन मे सुस्थिर होकर परिचित आसन में स्थित (अचंचल) रहकर, मन को सरस (भक्तिरसपूर्ण) बनाकर, (शरीर के भीतर की) वहत्तर नाड़ियों का विवेकपूर्ण विचार कर, उनका परिमार्जन कर, दोनों मार्गो (इड़ा और पिगला) को एक वनाकर, अकलक मति से, अवयवों मे अतिसूक्ष्म हो आनन्द-रूप से व्याप्त पवन का निरोध कर, (उसे) पश्चिम वीथि (ऊपर) की ओर लगाकर, कोण-त्रय (त्रिकुटी अथवा मूलाधार) की शुद्धि कर, मन के साथ ही उसे लाकर, ।। २० ।।

—कुंडलिनी को अपनी शक्ति से सयुक्त बनाकर, सम्यक् आह्लाद से क्रम शः षट्कमलों को पार कर, उस (प्राण-पवन) को चन्द्र-मण्डल मे पहुँचाया ।

यतनि तनूभवु ना शुकब्रह्म । नतिभक्तियुक्तिमै नभिनुति चेसि,
ये कथ सॅप्पिन नॅल्ल सज्जनुलु । सेकॉनि कीर्तनल् सेयुचु नुंदु;
रे कथ सॅप्पिन निहपरोन्नतुलु । प्राकटंवुग वेंचिफलयिंचु व्रीति;
ने कथ सॅप्पिन नीप्सितार्थमुल ।गैकॉनि पुण्यमुल् गडगि कान्पिञ्चु
ननु विचारमुलु ना यंतरंगमुन ।गॉनकॉनि कृतिसेय गोरुचुन्नंत; ४०

ग्रन्थरचनकु गारणमु

श्रीरमणीयुलै कृष्टिसत्तमुलु । गोरि वर्णनसेयु गोनवंशमुन
फलित सदाचार भानुडै तोचि । कलिकालदोषान्धकारंबु द्रोलि,
गुरुधर्मपथमुल कॉलदुलु दॅलिसि । परनृपनक्षत्रपंक्तुल नणचि,
नित्यपुण्योदयनियति बॅम्पॉन्दु । नत्युन्नत - प्रतापाभिरामुनकु
गरदीप्तिनिजखड्ग गंगाप्रवाह । परधरणीपाल फालाक्षरमुल
गलपूर्वगर्वपंकमु लॉप्पगडुगु । नलवुमै नसमानुडगु सत्यनिधिकि
शरणार्थि राजन्यषट्पदाधार । करपद्मुनकु गोनकाटभूपतिकि,

पारिजात एवं सारमानस (तत्त्ववेत्ता) पराशर-पुत्र (वेदव्यास जी) का ध्यान कर, उनके पुत्र शुकदेव की बड़ी भक्ति से स्तुति कर (ने के वाद), किस कथा के कहने से सभी सज्जन मेरा कीर्तिगान करेंगे, किस कथा के कहने से इहलोक और परलोक दोनों ही प्रकट रूप से, प्रीतियुक्त रूप से, सफल होंगे, किस कथा के कहने से इच्छित अर्थ (कामनाएँ) सिद्ध होंगे और साथ ही साथ पुण्य भी प्राप्त होगा—ऐसे विचार मेरे अन्तरंग में उठ रहे थे और मैं किसी कृति (ग्रन्थ) की रचना करना चाह रहा था, उस समय—॥ ४० ॥

ग्रन्थ रचना का कारण

—श्री (शोभा) से (सयुक्त होने से) रमणीय, तथा पंडितगण जिस गोनवंश का, सानन्द वर्णन करते है, उस गोनवंश में सदाचार के पुण्य के फलस्वरूप सूर्य के समान प्रतिभासित होकर, कलिकाल के दोषरूपी अन्धकार को दूर कर, श्रेष्ठ धर्मपथ के महत्त्व को जानकर, शत्रुराजा-रूपी नक्षत्र-पंक्तियों को तेजोहीन कर, नित्य पुण्योदय की नियति को विस्तृत करने वाले, अत्युन्नत प्रताप से अभिराम तथा कर में दीप्तिमान निज खड्ग के गंगाप्रवाह से अन्य राजाओं के फालभाग में लिखित पूर्व-गर्व-पक को धो डालने वाले, दृढ़ एवं अद्वितीय वलशाली, सत्यनिष्ठा वाले, शरण में आने वाले राजा-रूपी भ्रमरों के लिए आधारभूत करपद्म वाले तथा नित्य नय, विनय तथा दया का आगार

नय नयोदय दयायत नित्यमतिकि । ब्रियतनूजन्मुडै पृथिवि बॅम्पॉन्दु
रुद्र प्रतापुंड्ु रुद्रनिर्मलुडु । रुद्रात्मुडगु गोन रुद्र नरेंद्रु
पौत्रु, डभंगु, डप्रतिम विक्रमुडु । गोत्रधीरुडु, कुलगोत्रवर्धनुडु ५०
दिविजेन्द्रविभवुंडु, धीरवर्तनुडु । भुवनविख्यातुंडु, बुद्धभूपालु
ननुजन्मु, डक्षीणदाक्षिण्यधनुडु । धनधान्यधनदुंडु, धर्मधर्मजुडु
अतिपुण्य सौजन्यु, डरिभीमजन्यु । डतिशौर्यशरजन्मु, डाजन्मशुभुडु
कामिनीकामु, डखंडविक्रमुडु । रामत्रयोदार रणविशारदुडु
चन्दनमन्दार चन्द्रिकाहार । कन्दळत्कुन्देंदु घनकीर्तिधनुडु
परगु गोनान्वयपारिजातमुन । बरिपक्वफलरीति बरगिनवाडु
पॉलुचु गोनान्वयपूर्वाद्रियंदु । वॅलयु भानुडु वोले विलसिल्लुवाडु
दॉरयु गोनान्वयदुग्धांबुराशि । बरिपूर्णचन्द्रुडै भासिल्लुवाडु
निक्कि यंतंतकु निर्मलंबगुचु । दिक्कुल दन पेर्मि दीपिंचुवाडु
दानधर्म - क्रियातात्पर्यकेळि । दानयै विनतुल दनरारुवाडु ६०
मगटिमि नसमानमहिम दीपिंप । बगतुर नवलील भजिंचुवाडु
बलितोग्रराजन्य बलवज्रपाणि । ललिनॉप्पु वासवु ललिबोलुवाडु

सदृश मति वाले, गोन (वंशज) काटभूपति के प्रिय और पृथ्वीवल्लभ-सुवन (महाराज) गोन रुद्रनरेन्द्र रुद्रप्रताप, रुद्रनिर्मल, रुद्रात्म, अभंग, अप्रतिभ विक्रमवाले, गोत्रधीर (पर्वतसमान धैर्यशाली) [आदि उपाधियों से विभूषित थे।] उनके पौत्र तथा बुद्धभूपाल के पुत्र [महाराज विट्ठलनरेश थे।] ॥५०॥
—कुल और गोत्र के संवर्द्धक, देवेन्द्र के समान वैभव वाले, धीर, भुवनविख्यात, अक्षीण-दाक्षिण्य-धनी (अक्षीण कृपा के धनी), धन-धान्य में कुबेर, धर्म (-निर्वाह) में धर्मराज (युधिष्ठिर), अतिपुण्य-सौजन्य-शीलवान, शत्रुओं के लिए अति भयंकर, शौर्य के अतिशय में कुमार कार्त्तिकेय, जन्म से शुभ (कल्याण) करने वाले, कामिनियों के लिए कामदेव, अखंड विक्रमी, परशुराम, राम और बलराम के समान रण-विशारद, चन्दन, मन्दार, चन्द्रिका, हार, कुन्द, इन्दु सम उज्ज्वल धनकीर्ति के धनी, गोन-वंश-रूपी पारिजात के परिपक्व फल स्वरूप शोभित, शोभायुक्त गोनवंश-रूपी पूर्वाद्रि पर भानु-समान प्रकाशित, गोनवंश-रूपी क्षीरसागर के लिए परिपूर्ण चन्द्र के समान प्रतिभासित, अत्युच्च एवं क्रमशः निर्मल बननेवाली अपनी कीर्ति को दसों दिशाओं में व्याप्त करने वाले, अपने दान-धर्म आदि क्रियाओं की प्रचुरता के कारण सबकी प्रशंसाएँ प्राप्त करने वाले, ॥ ६० ॥
—पौरुष में असमान दीप्ति से और सरलता से शत्रुओं का नाश करने वाले, बली एवं उग्र राजाओं के लिए वज्रपाणि (इन्द्र) के समान दीखने वाले,

प्रत्यक्ष नृपवनपावकोज्ज्वलुडु । सत्यंवुचेतनु सरिदगुवाडु
वलवदुग्रारति वलसमुदमुल । गलचुचो मंथाद्रिगति वेर्चुवाडु
विमलोग्रराजन्य विपुलान्धकार । कमलाप्तविंव खड्ग प्रभाविभव
विलसितामरवधू विमलास्यकमल। मुल वीरमधुकरंवुल गूर्चुवाडु
अरिनृपप्राणानिलाहारभुजग । वरभुजस्थापितावनि गलवाडु
कुरुकेरळावन्ति कुन्तल द्रविळ । मरुमत्स्यककरूश मगध पुळिंद
सरस सुपांड्य कोसल बर्बरमुल । नरनाथसभल वर्णनकॆक्कुवाडु
आतत सामभेदादुल नॊप्पु । नीतिक्रमंवुल नॆगडॆडुवडु ७०
रमणमै नादिमराजन्यरीति । नमितवैभवमुल नमरिनवाडु
विनयनयोपाय विजयसुस्थिरुडु । घनकीर्ति विट्ठल क्षमापालवरुडु
राजसर्वज्ञुंडु राजसिंहुंडु । राजशिरोमणि, राजपूजितुडु
सकल जगद्धित चातुर्यधुर्यु । डॊकनडु कॊलुवुन नुन्नतुंडगुचु
वहुपुराणज्ञुलु बहुशास्त्रविदुलु । वहुकाव्यनाटक प्रौढमानसुलु
हितुलु मन्त्रुलु पुरोहितुलु नाश्रितुलु। सुतुलु राजुलु बहुश्रुतुलनु गॊल्व

उत्साह से युक्त, सौन्दर्य में देवेन्द्र के समान विराजमान, प्रत्यक्ष नृपवन के लिए पावक के समान उज्ज्वल, सत्यनिष्ठ, वलशाली एवं उग्र शत्रुसेना-रूपी समुद्रों को मथने में मंदर पर्वत का रूप धारण करने वाले, विमल उग्र राजाओं के विपुल (गर्वरूपी) अन्धकार के लिए कमलाप्त (सूर्य) विम्व के समान, अपने खड्ग की प्रभा से प्राप्त शोभायमान देवाङ्गनाओं के विमल मुखकमलों को (अपने हाथ रूपी) वीर मधुकरों से अलंकृत करने वाले, शत्रुओं के प्राण-रूपी अनिल का सेवन करने वाले श्रेष्ठ भुजरूपी भुजगों (सर्परूपी भुजाओं) पर राज्य-भार वहन करने वाले, कुरु, केरल, अवन्ती, कुन्तल, द्रविड़, मरु, मत्स्यक, करूश, मगध, पुलिन्द, सरस, सुपांड्य, कोसल, वर्वर (देशों) की राजसभाओं में प्रशंसाएँ प्राप्त करने वाले, साम (दाम) भेद आदि से युक्त अत्यधिक नीतिक्रम से सुशोभित, ॥ ७० ॥

—प्राचीन वैभववान राजाओं के समान अमित वैभवों से युक्त, नय, विनय आदि उपायों से अपनी विजय को सुस्थिर करने वाले, धनकीर्तियुक्त (यही महाराज) विट्ठल नरेश, (जो) राजाओं में सर्वज्ञ, राजसिंह, राजशिरोमणि, राजपूजित एवं सकल-जगद्धित चातुर्यधुरीण (हैं), एक समय (अपनी) राजसभा में विराजमान थे। (उस समय) वहुपुराणों को जानने वाले, वहुशास्त्रविद्, वहुकाव्य-नाटकों (के अध्ययन) से प्रौढ मन वाले, हितू, मन्त्री, पुरोहित, आश्रित, पुत्र, (सामंत) राजा और वहुश्रुत (व्यक्ति)

दीपिंचि भूलोक देवेंद्रु पगिदि । नेपारियुन्नचो निपु सॉम्पॉन्द
रसिकुलु भारतरामायणादि । रसगोष्ठि जॅल्लिप रसिकशेखरुडु
रामकथासुधारस रक्तुडगुचु । नामहासभलोन नंदर जूचि
रमणमै दॅनुगुन रामायणंबु ।क्रममॉप्पजॅप्पॅडिघनकाव्यशक्ति८०
गलकवुलॅव्वारु गलरुर्विननुचु । तलपोय विट्ठल धरणिपालुनुकु
नुन्नतमूर्तिकि नुर्वियशोनिधिकि ।विन्नविंचिरि वेड्क विबुधुलुगडिगि
नी तनूजन्मुंडु निपुणमानसुडु । धूतकल्मषुडु बंधुरनीतियुतुडु
सर्वज्ञुडनघुंडु चतुरवर्तनुडु । सर्वपुराण विचार तत्परुडु
कमनीय बहुकळाविचक्षणुडु । सुमनीषि पोषणोत्सुकोन्नतुडु
कविसार्वभौमुंडु कविकल्पतरुवु । कविलोकभोजुंडु कविपुरंदरुडु
प्रत्यर्थिराजन्य वलवज्रपाणि । प्रत्यर्थिनृपदावपावकोज्ज्वलुडु
भीकरनिजखड्ग बिंबित स्वर्ग । लोकानुरक्त त्रिलोक दुर्दमुडु
वरसाधुजलजात वनजातहितुडु । पुरुषचिन्तामणि बुद्धयाह्वयुडु
नीकतिभक्तुंडु निखिलशब्दार्थ । पाकज्ञुडत्यन्त पांडित्य धनुडु ९०

उनकी सेवा में उपस्थित थे। (राजा) भूलोक के देवेन्द्र के समान वड़े उत्साह से दीप्त थे। सभा मनोरम बनी हुई थी। रसिक जनों द्वारा भारत, रामायण आदि की रसगोष्ठी में रस को जान सकने वाले वह रसिकशेखर (राजा) रामकथा-सुधा के प्रति अनुरक्त होकर, उस महासभा में उपस्थित सभी को देखकर यों बोले, 'सुन्दर ढंग से तॅनुगु (तॅलुगु) में रामायण (की कथा) को क्रम से कहने की उत्तम कविता-शक्ति— ॥ ८० ॥

—रखने वाला कवि इस संसार में कौन है?' तब ऐसा सोचने वाले उस उन्नतमूर्ति वाले तथा महायशोनिधि विट्ठल नरेश से विबुधों ने (इस प्रकार) सोत्साह विनति की—'(हे महाराज!) आपके पुत्र, निपुण मन वाले, पापरहित, अति नीतियुक्त, सर्वज्ञ, अनघ, चतुरवर्तन (व्यवहार) से युक्त (शिष्टाचार-सम्पन्न), सर्वपुराणों के ज्ञाता, अनेक सुन्दर कलाओं तथा आगमों के मर्मज्ञ, सुमनीषियों का पोषण करने में उत्सुक तथा उसी में उन्नत सुख का अनुभव करने वाले, कवि-सार्वभौम, कवि-कल्पतरु, कवि-कुलभोज, कवीन्द्र, शत्रु राजाओं के लिए वज्रपाणि, शत्रुराजारूपी वन के लिए प्रचड पावक, (अपने) भयंकर खड्ग में प्रतिबिम्बत स्वंग वाले (जिनका खड्ग शत्रुओं को स्वर्ग का मार्ग बताता है), लोकप्रिय, त्रिलोकदुर्दम, श्रेष्ठ साधुजन-रूपी कमल (समूह) के लिए सूर्यसम, पुरुषश्रेष्ठ, आपके परमभक्त, निखिल शब्द, अर्थ, गुण आदि के ज्ञाता, अत्यन्त पंडित, ॥ ९० ॥

मर्रियु रामायणमर्म मातंड । येर्रुगु नातनि विल्वु मीकथ सॅप्प
ननिन मज्जनकुडुदात्त वर्तनुड्डु ।ननु र्नथि विलिपिंचि ननु गार्रविंचि
भूमिगवींद्रुलु बुधुलुनु मॅच्च । रामायणंवु पुराणमार्गंवु
तप्पक नापेर दगनन्ध्रभाष । जॅप्पि प्रख्यातंवु सेयिपु मुर्वि
ननियानतिच्चिन नामृदूक्तुलकु । ननियंवु हर्षिंचि यट्ल काविप
बनिपूनि यरिगंड भैरवुपेर । घनुपेर मीसरगंडाकुं पेर
ललितसद्गुण गणालंकारुपेर । नलघु निश्चल दयायबुद्धि पेर
नाततकृति पेर ललिपुण्यु पेर । मातंड्रि विट्ठल क्ष्मानाथुपेर
राजुलु बुधुलुनु रसिकुलु सुकवि । राजुलु गोष्टिनि रागिल्लि पॉगड़
वदमुलर्थंवुलु भावमुलगतुलु ।पदशय्यलर्थ-सौभाग्यमुल् यतुलु१००
रसमुलु गुंभनल् प्रास संगतुलु । नसमानरीतुल नन्नियु गलुग
नादिकवीश्वरुडैन वाल्मीकि । यादरंवुन वुण्युलंदरु मॅच्च
चॅप्पिन तेर्रगुन श्रीरामचरित । मॉप्प जॅप्पॅद गथाभ्युदयमेट्लनिन१०३

—वुद्ध नरेश ही रामायण के मर्म को जानते हैं। आप (तदर्थ) उन्हीं को बुलावें'। ऐसा कहने पर उदात्त चरित्र वाले मेरे पिता ने मुझे बड़े प्रेम से बुलाकर, सम्मान कर, यह आदेश दिया—'रामायण की कथा को पुराणों के ढंग पर तॅलुगु भाषा में, मेरे नाम पर लिखकर (मुझे समर्पित कर) प्रख्यात करो जिससे संसार के कवि तथा पंडित उसकी प्रशंसा करें'। उनके मृदु वचनों से अत्यन्त हर्षित होकर, उसी प्रकार करने का (उनके आदेश का पालन करने का) निश्चय कर, शत्रुओं के लिए भयंकर मूर्ति वाले, महान्, रोबीले गलमुच्छों से सुशोभित, ललित-सद्-गुणालंकार वाले, महान् और निश्चल दया से युक्त वुद्धि वाले, अविरल पुण्य कर्म करने वाले, पुण्यात्मा मेरे पिता विट्ठल नरेश के नाम पर, श्रीरामचन्द्र के चरित्र को मैं इस ढंग से लिखूँगा कि राजा, पंडित, रसिक, सुकवि श्रेष्ठ, गोष्ठियों में (उस कथा को सुनकर) हर्षित होकर उसकी (उस रचना की) प्रशंसा करेंगे और जिसमें शव्द, अर्थ, भाव, गति, पदशय्या (रीति), अर्थ-गाम्भीर्य, यति, ॥ १०० ॥

—रस, निर्माण, प्रास (प्रत्येक चरण के द्वितीयाक्षर का समान रहना) आदि सभी को अद्वितीय रीति से संयुक्त करूँगा, आदिकवि वाल्मीकि की कृपा से सभी पुण्यात्मा मेरी प्रशंसा करेंगे। कथा का प्रारम्भ इस प्रकार है— ॥ १०३ ॥

कथाप्रारंभु

घनतपस्वाध्यायकमनीय शीलु । मुनिनाथु नारदु मुनिलोक वन्द्यु
ननघतपोनिधियैन वाल्मीकि । गनुगॉनि यॉकनाडु करमर्थिनडिगे
यॅव्वडु श्रीमन्तुडॅव्वडु शान्तु । डॅव्वडु घनपुण्यु डॅव्वडुन्नतुडु ?
यॅव्वडु नीतिज्ञुडॅव्वडु प्राज्ञु । डॅव्वडु दुर्दमुडॅव्वडुत्तमुडु ?
यॅव्वडु जितकामुडॅव्वडजेयु । डॅव्वडु निरसूयुडॅव्वडाढ्युंडु ?
यॅव्वडु सुव्रतुं डॅव्वडुदारु । डॅव्वडु सुचरित्रु डॅव्वडु समुडु
यॅव्वनिकिन्ककुनिंद्रादि सुरलु ।दव्वुदव्वुलनुंडितलकुचुंडुदुरु? ११०
अट्टिवाडिलबुट्टि यरिगॉनो इप्डु । पुट्टॅनो यिकमीद बुट्टनुन्नाडो ?
यनिन त्रिलोकज्ञुडैन नारदुडु । तनबुद्धिनॅन्तयु तलपोसि चूचि
ईमहि श्रीविष्णुडिपुडॅ जन्मिचे । रामुडै दशरथराजुनकतडु
नियतात्मुडतिशौर्यनिधि कृपाजलधि।जयशालिस्वजनरक्षण विचक्षणुडु
कंबुकंधरुडु चक्कनि मेनिवाडु । बिम्बारुणोष्टुंडु पीनवक्षुंडु
वॅडद कन्नुलवाडु विपुलांसतलुडु । निडुदचेतुलवाडु नियतवर्तनुडु

कथा-प्रारम्भ

—एक दिन महान् तपस्वाध्याय से कमनीय, महान् शील से सम्पन्न, मुनि-श्रेष्ठ तथा मुनिलोक-वन्द्य नारद को देखकर, अनघ तपोनिधि वाल्मीकि ने अत्यन्त प्रार्थनापूर्वक पूछा—"(हे मुने ! इस संसार में) कौन श्रीमन्त (श्री से युक्त) है ? कौन शान्त (क्षमाशील) है ? कौन अधिक पुण्यात्मा है ? कौन उन्नत है ? कौन नीतिज्ञ है ? कौन प्राज्ञ है ? कौन दुर्दम है ? कौन उत्तम है ? कौन जितकाम (काम को जीतने वाला) है ? कौन अजेय है ? कौन ईर्ष्या-रहित है ? कौन आढ्य (सम्पन्न) है ? कौन सुव्रती है ? कौन उदार है ? कौन सुचरित्र है ? कौन सम-बुद्धि है ? किसके क्रोध से इन्द्रादि देवता भय से दूर-दूर रहते हैं ? ॥ ११० ॥

ऐसा व्यक्ति (क्या) भूमि पर पैदा होकर गुजर गया है ? क्या अब पैदा हुआ है ? आगे पैदा होने वाला है ?" ऐसा कहने पर त्रिलोकज्ञ नारद ने अपनी बुद्धि से देर तक सोचकर (कहा)—"इस पृथ्वी पर श्रीविष्णु ने अब जन्म लिया है, दशरथराज के (यहाँ) राम बनकर। वे नियतात्मा, अतिशौर्यनिधि, कृपा-जलधि, जयशाली, स्वजनरक्षण में विचक्षण हैं। वे कंबुकंधर, सुन्दर शरीर, बिम्बारुण सम ओठ, पीन (विशाल) वक्ष, विशाल नेत्र, विशाल कंधों से युक्त और आजानु-बाहु वाले हैं। वे नियत-वर्तन, वेद-वेदांगों में कोविद, कोदंडवेद

वेदवेदांग कोविदुडु कोदंड । वेदविदुंडु विवेकभूषणुडु
कमलाप्तुतेजंबु कडलि गांभीर्य । ममराद्रि धैर्यबु नवनिसैरणयु
धनुदुनि त्यागंवु दनयंदु मिगुल । ननुवॉन्दु नित्य कल्याण विग्रहुडु
कौसल्यकानन्दकरुडु श्रीकरुडु । भासुर त्रैलोक्य पावन मूर्ति१२०
रामुडै पुट्टि या राजर्षि वच्चि । रामुनिम्मनि वेड राजु पंपगनु
मौनि वॅन्टनु वोयि मखमुनु गाचि । दानविनट्टु कूल्चि दैत्युनि द्रुंचि
राति नातिनि जेसि रामुडु वेग । सीतचेगॉनुटकु शिवुविल्लु विरुचि
ख्यातिगा सीतनु कडु वॅन्ड्लियाडि। सीततोडनु गूडि चॅलगि ययोध्य
केतॅञ्चु चोटनु गॅरलुचु । डेतॅञ्चि निलचिन नेपुन गदिपि
वापोव नातनि बलुविल्लु दिगिचि । कोपंवु तो मुनु गॉमरॉप्प दीसि
येपुन नंदरु यॅद वेड्क मीरु । नापट्टुननॅ वच्चि यप्पुरि जेरि
यासक्ति यौवराज्याभिषिक्तुनिगा। जेसॅदननि तंड्रि चॅलगि ययोध्य
बट्टंबु गट्ट भूपति समकट्ट । मट्टुमीड्रिन यट्टि मंथर यपुडु
नॅट्टिन गैकतो नॅर्रिनाट जेप्प । गट्टिडि गैक संगरमुन दॉल्लि१३०

(धनुर्विद्या) के विद्वान्, विवेक-भूषण है। सूर्य का तेज, समुद्र का गाम्भीर्य, अमराद्रि (सुमेरु) का धैर्य, अवनि (भूमि) की क्षमा, धनद (कुबेर) का त्याग—इन गुणों को अपने में समाए हुए नित्य-कल्याण (प्रद) विग्रह (मूर्ति) वाले हैं। वह कौसल्या को आनन्द देने वाले, श्रीकर, त्रिलोक को पावन करने वाली दीप्तिमान मूर्ति वाले है ॥ १२० ॥

—"(ऐसे भगवान्) राम के रूप में पैदा हुए, उस राजर्षि (विश्वामित्र) के आकर राम को माँगने पर, राजा के उनको भेजने पर (वे ही राम) मुनि के साथ जाकर, यज्ञ की रक्षा कर, दानवी (ताड़का) को वहां (मार) गिराकर, दैत्य (सुबाहू) का संहार कर, पत्थर को नारी बनाकर, सोत्साह सीता जी को ग्रहण करने के लिए शिवधनु तोड़कर, सीता जी से विवाह कर ख्यातिवान्, सीता जी के साथ सोत्साह अयोध्या लौटते समय, गर्वीले विप्र (परशुराम) के आ खड़े होने पर (रास्ता रोकने पर) उत्साह से सामना कर, उनके विशाल धनुष को उतरवा कर, क्रोध से उनके अहकार को क्षीण कर, सबके हृदयों में आनन्द भरते हुए, उसी समय आकर, नगर (अयोध्या) पहुँचे। 'आसक्ति (इच्छा) से युवराज बनाऊँगा' ऐसा कहकर पिता जब सोत्साह (राम को) अयोध्या का राज देने को उद्यत हुए तब मर्यादा का उल्लंघन करने वाली मन्थरा ने हृदय को प्रभावित करने वाले ढंग से कैकेयी के कान भरे। तब क्रूर कैकेयी ने युद्ध में पहले से ही—॥ १३० ॥

रॅण्डु वरंबुलर्थिंचिनदौट । जंडिंचि काननस्थलिकि राघवुनि
बनिच्चिन जनकुनि प्रतिनकै बूनि । जनकजालक्ष्मण सहितुडै वॅडलि
तेवनंबुननु नेंतेवनंबुननु । बावनमुनिचर्यं बरगु संयमुल
गरुणमै गापाडि खरदूषणादि । शिरमुलु शरमुल जॅण्डु चॅण्डाडि
ऋश्यमूकंबुन निनुजु जेपट्टि । वश्यतनॉक कोल वालि दूलिंचि
सीतकै चॅलपट्टि सेतुवुगट्टि । पातकि दशकंठु पदतलल्गॉट्टि
सीततो गूडि याश्रितलोकपालि । जातंबु वनचरजातंबु गॉलुव
निन्द्रादि विनुतुडै येतॅञ्चि राम । चन्द्रुंडु निजपूज्य साम्राज्यलक्ष्मि
बालिंचु चुन्नाडु प्रजलकु वेड्क । गीलिंचुचुनु गृतकृत्युडै यनुचु
नारामु चरित माद्यान्तंबु जॅप्पि । नारदमुनिपोयॅ नलिनजुपुरिकि १४०
मुनिपति वाल्मीकि मुदमॉप्पनंत । दनशिष्युडगु भारद्वाजुंड दानु
ब्रकटिंप सज्जनभावंबु पोलॅ । नकलुष जीवनंबै करंबलरु
तमसानदिकि पोयि तन्नदीवारि । दमयनुष्ठानमुल्दग जेयुचुंडि
यायेटि दरि ग्रौंचयमळंबु प्रेम । गायजुकेळिमै गवयुचो नॉकटि

—(दशरथ से) दो वर प्राप्त कर चुकने के कारण, क्रुद्ध होकर. राघव को कानन भेज दिया; पिता की प्रतिज्ञा (पूर्ति) के लिए (वे) जनक-जा (सीता) और लक्ष्मण के साथ (वन की ओर) निकल पड़े। (उन्होंने) पवित्र मुनिचर्या (तपस्या) में लगे हुए संयमी मुनियों की सकरुण हो रक्षा की, खर-दूषण आदि के सिरों को शरों से काट डाला। ऋश्यमूक (पर्वत) पर सूर्यपुत्र (सुग्रीव) का हाथ पकड़ कर (मित्रता कर), आसानी से एक बाण से वालि का संहार कर, सीता (को पुनः प्राप्त करने) के लिए दृढ़-होकर सेतु बांधा, पापी दशकण्ठ (रावण) के दसों सिर काट डाले। उसके बाद सीता के साथ, आश्रित (जनों) के कल्पवृक्ष हो, वनचर-समूह की सेवाएँ लेते हुए, इन्द्रादि से स्तुतियाँ प्राप्त करते हुए (अयोध्या) आकर श्री रामचन्द्र, प्रजा को सोत्साह आनन्द पहुँचाते हुए तथा कृतकृत्य होते हुए निज-पूज्य-साम्राज्य-लक्ष्मी का पालन कर रहे हैं।" (ऐसा) कहकर उन राम के चरित्र (कहानी) को आदि से अन्त तक कहकर, नारदमुनि नलिनजपुरी (ब्रह्मलोक) को गए ॥ १४० ॥

मुनिश्रेष्ठ वाल्मीकि हर्षित हो कर, अपने शिष्य भरद्वाज सहित, स्वयं सज्जन भाव की प्रकटमूर्ति, अकलुष जीवनयुक्त अति मनोरम तमसा नदी (के पास) जाकर, उस नदी के जल से अपने अनुष्ठान (स्नान, सन्ध्या-वन्दन आदि) का पालन करते रहे। उस नदी के पास क्रौंच (पक्षियों का) जोड़ा सप्रेम मन्मथकेलि में रत था।

नॉकबोय संपिन नुन्नया क्रौंचि । प्रकटशोकंबुन वनवुट जूचि
दगवुनु धर्मबु तलपोसि मौनि । पगदायनव्वोय पै नल्कवॉडमि
योरि निषादुंड ! योरि पापात्म । योरि नीकॅग्गेमि योनरिंचेरोरि!
कामिंचि क्रौंचमुल् गवयुचो नॉकटि।नेमिटिकै चंपितिभ्भंगि गडगि
ईपातकमुन ननेकदुःखमुलु । प्रापिंचि तिरुगुमु वहुवत्सरंबु
लनिबोय शपयिंचि यंत वाल्मीकि ।तनशिष्युडग भारद्वाजुनि जूचि १५०
पलिकॅनु श्लोकंबुपद्धतिगानु । पलिकिन वल्कुनु पलुमारु चूड़
छन्दोनिवद्धमै समवर्णपंक्ति । बोंदि नालुगु पदंबुल हृद्यमगुनु
र्निदि चाल विस्मय मीशाप वाक्य । पदमुलु दमयंत पद्यमै निलिचे
ननिन भारद्वाजुडादिगा शिष्यु । लनुरक्ति वठियिंचिरापद्यमंत
ननघुडा वालमीकि याश्रमंवुनकु । जनियुन्नचो ब्रह्म चनुदॅञ्चुटयुनु
नॅदुरेगि पदमुलकेरगि तॉड्तॅच्चि । कुदुरुगा गुशपीठि कूर्चुंड जेसि
करमर्थि बूजिंचि करमुलु मॉगिचि। परग शापाक्षरपद्यंबु जदुव
विनि ब्रह्म नगि पद्यविषयमै वाणि। यनघ नीमुखमुन नवतरिंचिनदि

(तो उनमें से) एक को (किसी) एक निषाद के मार डालने पर, (जीवित) वची उस क्रौंची को प्रकट शोक से विलाप करते देख, न्याय और धर्म का विचार कर मुनि ने उस निषाद पर क्रुद्ध हो कर कहा—'अरे! निषाद! रे पापात्मा! अरे! (उन्होंने) तुम्हारा क्या विगाड़ा है! कामासक्ति से क्रौंचों के रति-क्रीड़ा करते समय, इस प्रकार उद्यत होकर एक को क्यों मार डाला? इस पाप के कारण अनेक दुःख प्राप्त करते हुए अनेक वर्षों तक भटकते रहो।' इस प्रकार निषाद को शाप देकर, वाल्मीकि अपने शिष्य भरद्वाज को देख, ।। १५० ।।

—श्लोक के ढंग से (छन्दोवद्ध रूप मे) यों वोले—'(मेरे द्वारा) कहे गए वचनों को वार-वार देखने पर (विचार करने पर) विदित होता है कि छन्दोनिवद्धता और समवर्ण पक्तित्व को प्राप्त कर चारों पंक्तियाँ हृद्य (वन पड़े) है। यह अत्यन्त आश्चर्यप्रद है। शापवाक्य के ये चरण अपने आप (एक) पद्य वन (कर रह) गए'। (ऐसा) कहने पर भरद्वाज आदि शिष्यों ने अनुरक्ति से उस पद्य को पढ़ा, तव अनघ वाल्मीकि आश्रम में चले गए। (एक दिन वहाँ) ब्रह्माजी का आगमन हुआ। (वाल्मीकि ने) आगे वढ़कर, चरणवन्दना की, साथ लिवा लाकर अच्छे सत्कार से कुशासन पर विठाया, बड़ी भक्ति से पूजा की, (फिर-) हाथ जोड़, शापाक्षरयुक्त पद्य को पढ़-सुनाया; इस पर ब्रह्माजी हॅस पड़े (मुस्कुराए) (और) कहा, 'हे अनघ! पद्य के रूप में वाणी आपके मुख से

श्रीरामचरित मशेषंबु नीकु । गोरि नारदुडु संकोचिंचि चॆप्पॆ
नदि विस्तरिंचि नीवखिलंबु चॆप्पु।मदिसर्वमुनुदोचुननिचॆप्पि पोये १६०
नी रीति गृप वरंबिच्चि मन्निंचि । सारसगर्भु डुस निन पिम्मटनु
मरि निर्मल ध्यानमति बूनि मौनि । तरिगोनि सकलंबु दलपोसि चूचि
रघुचरित्रमु दशरथु चरित्रंबु । रघुरामु जन्मंबु रामु वर्तनमु
दाटकवधयु नुद्दंड राक्षसुल । याटोपहरणंबु यज्ञरक्षणमु
दनरु गंगामहत्त्वंबु गौतममुनि । वनितनु शापंबु वलन बापुटयु
धनुवु द्रुंचुटयु सीताविवाहंबु । जनुचोट जमदग्निजातु नाग्रहमु
रामाभिषेक संरंभंबु दुष्ट । कामिनि कैकेयि कष्टभाषणमु
नभिषेक विघ्नंबु नडविकि राम । विभुडु वोवुटयु भूविभुनि शोकंबु
दशरथमरणंबु दशरथरामु । गुशलसंभाषियै गुहुडु गांचुटयु
नुरुपुण्युलट गंगनुत्तरिंचुटयु।वरतपोनिधि भरद्वाजु गांचुटयु १७०
नरिगि या चित्रकूटाद्रि नॆक्कुटयु । भरतुंडु रघुरामु पज्ज जेरुटयु
नन्नचे बादुक लर्थिमै बडसि । मन्ननलिपार मगुडि पोवुटयु
दंडकागमनंबु तगिलि विराधु । जंडविक्रमु नंदु संहरिंचुटयु

अवतरित हुई है। श्रीराम का चरित्र अशेष (अपार) है। उसे नारद ने आपको प्रिय मानकर संक्षेप मे बता दिया है। उसका विस्तार कर, आप सब कुछ (पूर्ण रूप से) कह सुनाइए। (आपको) मन में सब कुछ—(अपने आप) सूझ जाएगा।' ऐसा कहकर (ब्रह्मा) चले गए ॥ १६० ॥
—इस प्रकार वर देकर, समादृत कर, सारसगर्भ (ब्रह्मा) के जाने के बाद, फिर निर्मल ध्यान से युक्त मति वाले मुनि ने सब कुछ सोच-विचार कर देखा। रघु-चरित्र, दशरथ का चरित्र, रघुराम का जन्म, राम का आचरण, ताड़का का वध, उद्दण्ड राक्षसों की कुचेष्टाओं का अपहरण (ध्वंस), यज्ञ-रक्षा, विलसित गंगा का महत्त्व, गौतम की स्त्री को शाप से मुक्त करना, धनुष को तोड़ना, सीता से विवाह, लौटते समय जमदग्नि के पुत्र का क्रोध, राम के राजतिलक की तैयारी, दुष्ट स्त्री कैकेयी के कटु वचन, राजतिलक में विघ्न, प्रभु राम का वनगमन, राजा (दशरथ) का शोक, दशरथ का मरण, दाशरथी राम की निषादराज से भेंट एवं मधुरालाप, महान् पुण्यात्माओं का (वहाँ) गंगा पार करना, श्रेष्ठ तपोनिधि भरद्वाज का दर्शन, ॥ १७० ॥
—जाकर उस चित्रकूट पर्वत पर चढ़ना, भरत का रघुराम के पास पहुँचना, अग्रज से प्रार्थना कर पादुकाएँ प्राप्त कर, समादृत हो (भरत का) वापस जाना, दण्डक वन में जाना, चण्डविक्रम विराध का वहाँ संहार करना,

वरम पुण्युनि शरभंगु गांचुटयु । बरुवडि मुनुलकु ब्रतिनलिच्चुटयु
जनि यय्यगस्त्युनाश्रममु चोच्चुटयु । मुनिचेत दिव्यास्त्रमुलु वडयुटयु,
मुनि चॅप्पगा वारु मुदमुन वेग । चनि पर्णशाललो सरग नुंडुटयु
मोहिंचि राक्षसि मॉनसि वच्चुटयु । नूहिंचि दानितो नॉगि वल्कुटयुनु
स्तुक्कर रामानुजुंडु शूर्पणख । मुक्कुनु जॅवुलनु म्रोडु सेयुटयु
नदिवोयि खरदूषणादि रक्कसुल । कदि सॅप्प वारंत नलिगि वच्चुटयु
नुरवडि रघुरामुडॉक्कडे कडगि । खरदूषणादुल खंडिचुटयुनु १८०
नट रावणुनि बुद्धि नलुकवुट्टुटयु । गुटिल मारीचुंडु क्रॉव्वि चच्चुटयु
नसुराधिपति सीतनपहरिंचुटयु । विसुवक रामुडुविलपिंचुटयुनु
ननि जटायुवु चावु, नवल गबंधु । गनुटयु, मरि पंपकडकु बोवुटयु
गरर्मथि ऋष्यमूकमुन सुग्रीवु । डरुदॅञ्चि कनुटयु, नतनि सख्यंबु
वालिसुग्रीवुल वैरंवु तेरगु । जालंग रामुंडु सप्तताळमुल
नेलगूलगनॅचि नॅम्म मॅप्पिचि । वालि नॉक्कम्मुन वधियिंचुटयुनु
दाराविलापंवु दशरथसूनु । डा रविसूनु राज्यमुनु निल्पुटयु,
मानवपति यंत माल्यवंतमुन । वानाकालंबॅल्ल वसियिंचुटयुनु,
गाकुत्स्थु कोपंवु, गपिसमागममु । नेकतंवुन मुद्रिकिच्चिपुच्चुटयु,

परम-पुण्य से युक्त शरभंग के दर्शन, मुनियों को वचन देना, अगस्त्याश्रम में प्रवेश करना, मुनि से दिव्यास्त्र प्राप्त करना, मुनि के कहने पर उनका आनन्द से शीघ्र जाकर पर्णशाला में सुख से रहना, (राम पर) मोहित राक्षसी (शूर्पणखा) का आगे आना, उसके राक्षसी-रूप की कल्पना करके उसके साथ वातें करना, चिन्तित हो रामानुज का शूर्पणखा की नाक और कानों को काट डालना, उसका जाकर खरदूषणादि राक्षसों को वह हाल वताना और उनका तव क्रुद्ध होना, आगे वढ़ रघुराम का अकेले ही उद्यत होकर खरदूषणादिकों का नाश कर देना, ॥ १८० ॥

—वहाँ (लंका में) रावण की वुद्धि का कुपित हो जाना, कुटिल वुद्धि वाले मारीच का मत्त होकर मरना, असुराधिपति (रावण) द्वारा सीता का अप-हरण, अविराम राम का विलाप, युद्ध में जटायु की मृत्यु, उसके वाद कवन्ध से साक्षात्, फिर पम्पा (नदी) के पास जाना, वड़ी अभिलाषा से ऋश्यमूक से सुग्रीव का आकर (उनके) दर्शन करना, उससे मैत्री, वालि और सुग्रीव के वैर के कारण को जानकर राम का सप्तताल (वृक्षों) को जमीन पर गिरा देकर उस (सुग्रीव) को आश्वस्त करना, वालि का एक वाण से वध करना, तारा का विलाप, दशरथ के पुत्र का उस रविपुत्र (सुग्रीव) को राजगद्दी पर विठाना, नृपति (राजा राम) का तव माल्यवन्त

नलयक कपुलु सीतान्वेषणंबु । सलुपुटयुनु, बिलसंदर्शनंबु, १९०
ना क्षणंबुन महेन्द्राद्रि नॅक्कुटयु । बक्षींद्रुडैन संपातिदर्शनमु,
वनधिलंघनमुनु, वनधिमध्यमुन । जनुचोट मैनकसंदर्शनंबु,
मदमेत्ति सिंहिक मारुतसूनु । गदिसि चच्चुटयु, लंकाप्रवेशंबु,
लंकनु नॉप्पिंचि ललनचे नचट । लंकत्रोवयुगनि लंक जॉच्चुटयु
नंतःपुरंबुन करिगि चूचुटयु । नंत नशोकवनावलोकनमु
देरगॉप्प नंदु वैदेहि गांचुटयु । नॅरुककु नानवालिच्चि तेर्चुटयु
भूनाथुकुशलमिपुग देल्पुटयुनु ।मानिनीमणिशिरोमणि निच्चुटयुनु
बॅनचि या वनमॅल्ल बॅरिकि वैचुटयु। हनुमंतुडत्तरि नक्षु जंपुटयु
बवनुजुडट बट्टुवडि पोवुटयुनु । गविसि लंकापुरि गलय गाल्चुटयु
मानितात्मुंडब्धि मरल दाटुटयु । मानुग गपुलतो मरल गूडुटयु२००
मधुवन हरणंबु मणि प्रीति नॉसग । नधिपति मारुति नग्गळिंचुटयु
निनुकुलाधिपुडु दंडॅत्तिपोवुटयु । वनधितीरंबुन वच्चि निल्चुटयु
वनराशि त्रोव इव्वक क्रॉव्वुटयुनु । गॉनकॉनि रामुंडु गोपिंचुटयुनु

(पर्वत) में समस्त वर्षाकाल बिताना, काकुत्स्थ (राम) का कोप, कपि (हनुमान जी) से समागम (भेंट), एकान्त में मुद्रिका देकर भेजना, अथक हो कपियों का सीतान्वेषण करना, गुफ़ा के दर्शन, ॥ १९० ॥

—उसी क्षण महेन्द्रगिरि पर चढ़ना, पक्षीन्द्र सम्पाती के दर्शन, वनधि (समुद्र)को पार करना, वनधि के मध्य जाते समय मैनाक के दर्शन, उन्मत्त सिंहिका की मारुतपुत्र (हनुमान) से मुठभेड़ और प्राण-विसर्जन, लंका-प्रवेश, लंका (नामक) राक्षसी को सताकर, उस स्त्री (राक्षसी) के द्वारा लंका का मार्ग जानकर, लंका में प्रवेश करना, अन्तःपुर में जाकर देखना, तब अशोक वन को देखना, वहाँ सीता जी के दर्शन, विश्वास (दिलाने) के लिए निशानी में अंगूठी देकर सान्त्वना देना, भूनाथ (राम)के कुशल (समाचार) को सुन्दर ढंग से बताना, मानिनीमणि (सीता) का (अपनी) शिरोमणि देना, घेरकर उस वन को उखाड़ डालना, हनुमान जी का उस समय अक्ष (रावण के पुत्र) को मार डालना, हनुमान का वहाँ पकड़ा जाना, व्याप्त हो (हनुमान का) लंकापुरी को सम्पूर्ण रूप से जला देना, मान्यवर (हनुमान) का समुद्र को फिर से पार करना, कपियों के साथ भेंटना, ॥ २०० ॥

—मधुवन का हरण, प्रेम से मणि देने पर अधिपति (राम) का मारुति को गले लगाना, सूर्यकुलाधिप (राम) का (शत्रु पर) आक्रमण के लिए निकल पड़ना, समुद्र के किनारे आकर खड़े हो जाना, समुद्र का मार्ग न देकर गर्व दिखाना, (यह) सोच राम का क्रुद्ध होना, तब विभीषण का

नंत विभीषणुडधिपु गांचुटयु । जिंतिंचुटयु मरि सेतबंधनमु
जडधि दाट्टुटयुनु, जनि लंक मीद । विडिसि पेर्चुटयु, दुर्वारंबु मॅररसि
करमुग्रुलगु कुंभकर्णादि वीर । वरुल द्रुंचुटयु रावणुनि जंपुटयु
ना विभीषणुनि लंकाधिनायकुनि । गाविंचि पट्टंबु करुण गट्टुटयु
ननुपमशुद्धि ब्रह्ममादुलु मॅच्च । जनकज रघुरामचंद्रु वॅन्दुटयु
नॅलमि बुष्पकमॅक्कि यॅल्लरु जनुचु। जॅलगि यंबोनिधि सेतुवु मीद
दॅलिसि श्रीकंठु ब्रतिष्ठ सेयुटयु । वॅलय नयोध्यकु वेग वच्चुटयु२१०
भरतुगांचुटयु, बट्टाभिषेक । मरुदार रघुरामु डवधरिंचुटयु
गपिसैन्यपतुल नर्कज विभीपणुल । विपुल संपदलिच्चि वीड्कॉल्पुटयु
बरिकिंचि ब्रजलकापदलॉदंकुंड । गरुण ब्रोचुटयनु कथलॅल्ल दॅलिपि
वॅलय निर्वदिनाल्गुवेल श्लोकमुलु । गलिगि येनूरु सर्गल विस्तरिल्लि
कांडमुलारिंट गरमोप्प मिगिलि । युंड रामायणमोलि गाविंचि
यॉनर दक्किन कथलुत्तरकांड । मुन जॅप्पि वाल्मीकि मुनिनाथुडंत
नी कथ पठियिंप नॅव्वरु नेर्तु । री कथ जगमुल नॅव्भंगि वॅलयु

अधिप (राम) के दर्शन करना, (राम का उसके दुःख से) दुखी होना, फिर सेतु बांधना, जलधि को पार करना, जाकर लंका पर डेरा डालना, पराक्रम से प्रकाशित अति उग्र हो कर कुम्भकर्ण आदि वीर-श्रेष्ठों का संहार करना, रावण का वध, उस विभीषण को लंका का अधिनायक बनाकर, करुणा के साथ उसका राजतिलक करना, अनुपम शुद्धि (अग्नि-प्रवेश) से ब्रह्मादियों द्वारा प्रशंसित हो सीता जी का रघुरामचन्द्र को प्राप्त करना, शोभित पुष्पक विमान पर चढ़कर सबके जाते समय, समुद्र पर बने सेतु के पास, श्रृद्धापूर्वक (ब्रह्महत्यादोष के निवारण के लिए) श्रीकंठ (शिवजी) की प्रतिष्ठा कर, सानन्द अयोध्या को शीघ्र गति से लौटना, ॥ २१० ॥

—भरत-मिलन, अद्वितीय ढंग से रघुराम का पट्टाभिषिक्त होना, कपिसेनापतियों, अर्कज (सुग्रीव), विभीषण (आदि) को विपुल सम्पदाएँ देकर बिदा करना, परिशीलन करते हुए प्रजा को (किसी प्रकार का) कष्ट न हो—इस प्रकार करुणा से उनका पालन करना आदि सभी कथाओं को जानकर, शोभायुक्त (रूप से) चौबीस हजार श्लोक-युक्त, पाँच सौ सर्गों में व्याप्त, छः कांडों में अति सौन्दर्य-विधान-युक्त रामायण (इतिहास) को रचकर, शेष कथाओं को उत्तरकांड में कहकर तब वाल्मीकि मुनिनाथ सोचने लगे कि इस कथा को कौन पढ़ (सुना) सकते हैं, यह कथा जगत् में किस प्रकार सुशोभित होगी। तब कुश-लवने, जो अनघ (निष्पाप) मन वाले, मनसिज (कामदेव के समान)

ननुचुंड गुशलवुलनघमानसुलु । मनसिजाकारुलु, मंजुभाषणुलु,
जननुतुल्, संगीतसाहित्यनिधुलु ।मुनिवेषधारुलिम्मुलवच्चिम्रोक्कि,
"यनघ ! रामायणंबर्थितो जद्वुव । जनुदॅञ्चितिमि मम्मुजदिविप-
-वलयु" २२०

ननिन संतोषिंचि यम्मुनीश्वरुडु । "तन मनोरथमॅल्ल दलकूडे" ननुचु
गेयमै पाठ्यमै केवल पुण्य । दायकंबगु रघूत्तमु चरित्रंबु
ननुपम - तन्त्रीलयान्वित - फणिति ।मुनुकॉनिचदिविंपमुदमॉप्प जदिवि,
रमण श्रृंगारादिरसमुलेपॅडग । समवृत्तभेदमुल् संधि समास
समधिक शब्दार्थ संगतुलॅरिगि । क्रममोप्प बाडुचु गवगूडि वारु
मुनिजनसभल निम्मुल बूजनमुलु । गॉनिविनोदिंप,गाकुत्स्थवल्लभुडु
वेलय दम्मुलु दानु वेड्कलिंपॉन्द । गोलुवुंडि वारल गोरि राविंचि
वारि रूपंबुलु, वारि निल्कडलु । वारि निर्मलतर वाग्विशेषमुलु
तनकु निंपॉनरिंप दत्कथाक्रममु । विनुचुंडॅ रामुडव्विधमॅट्टिदनिन २२१

आकार वाले, मञ्जुभाषी, जन (-जन) से स्तुति प्राप्त करने वाले, संगीत और साहित्य के वेत्ता और मुनिवेषधारी थे, आकर चरणस्पर्श किया (और बोले)—'हे अनघ ! रामायण को बड़े उत्साह के साथ पढ़ने के लिए आए हैं। (आपको) हमें पढ़ाना चाहिए' ॥ २२० ॥

—(ऐसा) कहने पर हर्षित होकर उस मुनीश्वर ने (यह) सोचते हुए, कि मेरा मनोरथ पूरा हो गया; गेय, पाठ्य और पुण्यदायक रघूत्तम के चरित्र को, अनुपम तंत्रीलयान्वित-रीति से सप्रयत्न उन्हें पढ़ाया; तो हर्षित हो उन्होंने पढ़ लिया। रमणीय श्रृंगारादि रसान्वित, समवृत्त भेद, सन्धि-समास, समधिक शब्द और अर्थ की संगतियों को जानते हुए, क्रम से, एक साथ होकर गाते हुए वे (कुश-लव) मुनिजन की सभाओं में नित्य प्रशंसाएँ प्राप्त कर हर्षित होते रहे। काकुत्स्थ-वल्लभ (राम) स्वयं अनुजों के साथ सभा मे सुशोभित थे, उन्हें कुतूहल से बुलाया (और) उनके रूप, उनके आचरण, उनके निर्मलतर वाक्‌विशेष (वाक्‌चातुर्य) आदि उनके मन को सुख दे रहे थे। उस समय, श्रीराम उस कथा-क्रम को सुनने लगे। वह विधान ऐसा था— ॥ २२१ ॥

अयोध्या वर्णनमु

द्वादशयोजन व्यायतंबगुचु । नैदुयोजनमुलनदि वॅडल्पगुचु
निपुणत मयुनिचे निर्मितंबगुचु । नॅपुडु शात्रवकोटिकॅदुरुचुक्कगुचु
कॉलदि मीरिन भानुकुलजुलकॅल्ल । गुलराजधानियै कॉनियाड वरगि
सरयुवु पॉतं गोसलदेशमुननु । धरणिकि दॉड वयोध्यापुरंबॉप्पु
मणिगोपुरंबुल मणितोरणमुल । मरिचट्टिमंबुल मणिगवाक्षमुल
गेळिकागृहमुल गृतकशैलमुल । वालानिलंबुल वटहानादमुल
महितवारणमुल मानिताश्वमुल । वहुरथप्रततुल भटकदंबमुल
विमलसौधंबुल विपणिमार्गमुल । गमनीय वनमुल गमलाकरमुल
जेरुवुल बावुल जेरुकुदोटलनु । दरुचैन शालिकेदारवारमुल
वरिखल गोटल वसिडि माडवुल ।गरमॉप्पि लोकविख्यातमै परगु२३९

दशरथ वैभवमु

नापुरि दशरथुंडनु महाराजु । चापविद्यापरशैलकार्मुकुडु
चतुरुपायज्ञुंडु षाड्गुण्यशालि । सतत शक्तित्रयसंधानकर्त

अयोध्या का वर्णन

—वारह योजन लंवा, पाँच योजन चौड़ा, मय (शिल्प-निपुण) द्वारा निपुणता से निर्मित, सदा शत्रुसमूह के लिए प्रतिकूल (अजेय), अद्वितीय भानु-वंशियों के लिए (परम्परागत) कुल-राजधानी, प्रशंसित विलसित— (इस प्रकार) सरयू (नदी) के किनारे, कोसलदेश में, पृथ्वी के लिए आभूषण स्वरूप अयोध्या नगर सुशोभित था। मणिगोपुर, मणितोरण, मणिमय कुट्टिम (फ़र्श), मणिमय गवाक्ष (झरोखे), क्रीडागृह, कृतकशैल (वनावटी पर्वत), वालानिल, पटह-नाद (नगाड़े की आवाज़), वड़े-वड़े हाथी, मान्य (श्रेष्ठ) घोड़े, अनेक (प्रकार के) रथ-समूह, भट-(सैनिक) समूह, विमल सौध (भवन), विपणि-मार्ग (वाज़ार), कमनीय उपवन, कमलाकर (सरोवर), तालाव, वावड़ी, ईख के खेत, (जगह-जगह) पर्याप्त (मात्रा में) धान के खेत, परिखाएँ (खाइयाँ), कोठे (ड्योढ़ी), सुवर्णप्रासाद (महल आदि से अति) अधिक शोभायमान और लोक विख्यात, वह (महानगर) विलसित था ।। २३९ ।।

दशरथ का वैभव

—उस पुर में दशरथ नामक महाराज, (जो) धनुर्विद्या में अपर शैलकार्मुक (शिवजी) के समान, चार उपायों (साम, दाम, दण्ड, भेद) के ज्ञाता, षड्गुणों से युक्त, सतत (सदा) शक्ति-त्रय (इच्छा, ज्ञान एवं क्रिया) के सन्धानकर्ता थे।

धर्मोत्तरुड्, गृताध्वरुड्, श्रीकरुडु । धर्मशास्त्रपुराण तात्पर्यपरुडु
अजुनि नंदनुडु बाल्यादिगा नियति । ब्रजल बालिंचिन परमपावनुडु
जंभारिकै पोयि शंबरासुरुनि । दंभंबणगिंचि सुत्रमुनिचेत
मंदारपुष्पदामंबु गैकॉन्न । यिंदुमतीपुत्रु डिनुकुलाधिपुडु
तेजंबु गांतियु दॅगुवयु नेर्पु । राजसंबुनु नुदारतयु धैर्यंबु
मॉदलैन सद्गुणंबुल प्रोदियगुचु । नुदयार्कुगति दन युग्रतेजंबु
दीपितंबै येडुदीवुल बर्व । भूपालतिलकमै पॉलुपॉन्द नेलु
नन्नरनाथु कुलांगनामणुलु । मुन्नूटयेबंड्रु; मुख्यलैयंदु
नचलित सौशील्ययैन कौसल्य । कुचकुंभ निर्जितकोक यौकैक २५०
यनघचरित्रयौ ना सुमित्रयुनु । विनुतिकॅक्किरि त्रयीविद्यलोयनग
निलमीद नतनिकि हितपुरोहितुलु । पॉलचु वसिष्टादि पुण्यसंयमुलु
अनघात्मुडु धृष्टि यनुवाडु विजयु । डनुवाडु सिद्धार्थुडनुवाडु मरियु
नर्थसाधकुडु जयंतुडु नीति । थीर्तु डशोकुंडु धीमंतुडैन
मंत्रपालकुडु सुमंत्रुडु ननग । मंत्रुलुगलरॅनमंड्रु नातनिकि
नामंत्रुलंदरु ननोन्यहितुलु । स्वामिकार्य विचार चतुर मानसुलु

(वे) धर्मविरत या श्रेष्ठ, कृताध्वर (जिसने यज्ञ किए हों), श्रीकर, धर्म-शास्त्र-पुराणों के तात्पर्य के ज्ञाता, अज के पुत्र, बाल्यावस्था से ही नियमानुसार प्रजा पर शासन करनेवाले परम पावन (स्वभाव वाले), इन्द्र के काम पर जाकर, शंबरासुर के दम्भ का भंग कर, सुत्राम (इन्द्र) से मन्दार-पुष्पों की माला को प्राप्त करने वाले थे। वे इन्दुमती के पुत्र और इस (प्रख्यात) सूर्य-कुल के अधिप थे। वे तेज, कान्ति, साहस, चातुर्य, राजस (रजोगुण), उदारता, धैर्य आदि सद्गुणों के भण्डार, उदयार्क (उदयकालीन सूर्य) की भाँति अपने उग्र तेज से प्रदीप्त, सप्तद्वीपों में यशस्वी, भूपाल-तिलक (राजाओं के शिरोमणि)—इस प्रकार शोभायमान होकर शासन करते थे। उस नरनाथ (राजा) के कुल-स्त्रियाँ (धर्मपत्नियाँ) साढ़े तीन सौ थीं। उनमें मुख्य थीं, अचलित सौशील्य वाली कौसल्या, कुचकुम्भ-निर्जित परिधान वाली कैकेयी, ॥ २५० ॥ —अनघ चरित्र वाली वह सुमित्रा। —वे (तीनों) मानों विख्यात त्रयीविद्याएँ हों। इस पृथ्वी पर उनके हितैषी पुरोहित वसिष्ठ आदि पुण्यसंयमी थे। पुण्यात्मा धृष्टि, विजय, सिद्धार्थ और अर्थसाधक, जयन्त, नीतिवेत्ता अशोक, धीमन्त और मन्त्रपालक सुमन्त्र नामक उनके आठ मन्त्री थे। वे सभी मन्त्री परस्पर हितू, स्वामी-कार्य के विचार में चतुर मन वाले, दूसरों (शत्रुओं) के मर्म के भेदन करने के उपायों

परमर्म भेदनोपायधौरेयु । लरसि प्रजारक्ष याचरिपुदुरु
नट्टिवारॅनमंड्रु नखिलकार्यमुल । वट्टुन दिद्द दीर्पनु जालिकॉलुव
न्ष्टाक्षरमुल बाहाष्टकंबुननु । स्रष्टयै वॅलयु नारायणुकरणि
दशरथुंडलरॅ नातनिदेशमुननु । गृगुड्डु गॉण्डीड्डु रोगियु दरिद्रुंडु२६०
जारुंडु मरियु ननाचारुंडु बुण्य । दूरुंडु ग्रूरुंडु दुच्छुंडु शठुड्डु
मंदुंडु मरिलेरु मंदुनकैन । नंदरु मणिकुंडलाद्यलंकृतुलु
नंदरु धर्मपरायणचित्तु । लंदरु विहितकुलाचाररतुलु
नंदरु सकलशास्त्रादि पारगुलु । नंदरु श्रीविष्णु नतिभक्तिपरुलु
श्रीचंदनमुन राज्यमेपु दीर्पिप । भूचक्रमॅल्ल नेर्पुन नेलियेलि
प्रकट राज्यांगसंपद देलि तेलि । योकनाडु दशरथुंडुल्लंबुलोन२६६

दशरथुडु पुत्रकामेष्टि चेय नालोचिंचुट

दनकु संततिलेमि दलपोसि वगचि। तनकु नायुवु वेग तगवोवु ननुचु
मनमुन गुंदुचु मरियु नावॅण्ट । दन मंत्रिवरुल नंदरनु रप्पिंचि
घनमुग गॉलुविच्चि घनत गूर्चुण्डि। तन मंत्रिवरुल नंदरजूचि पलिकॅ:

में निपुण थे। वे विचारपूर्वक प्रजा की रक्षा करते थे। समस्त कार्यो को उचित रूप में संभाल सकनेवाले ऐसे आठ (मंत्रि-) जनों द्वारा सेवा-प्राप्त, अष्टाक्षर और अष्ट भुजाओं से युक्त स्रष्टा के समान नारायण की तरह विलसित महाराज दशरथ (सर्व-प्रकार) सुशोभित थे। उनके देश में दुर्बल, चुगलखोर, रोगी, दरिद्र—॥ २६० ॥

—व्यभिचारी, और अनाचारी, पुण्य-रहित (पापी), क्रूर, हीन (नीच), शठ, (अथवा) मंद एक भी व्यक्ति नहीं था। सभी मणिकुण्डल आदि से अलंकृत, सभी धर्मपरायण चित्त वाले, सभी विहित (निर्दिष्ट) कुलाचार-निरत, सभी सकल शास्त्र-रूपी समुद्र के पारंगत, सभी श्रीविष्णु के अनन्य भक्त थे। इस प्रकार प्रकट-उत्साह के साथ, समस्त राज्य और भूचक्र (भूमण्डल) का कुशलता के साथ शासन कर, अधिक राज्य-सुख भोग कर, एक दिन दशरथ मन में—॥ २६६ ॥

दशरथ का पुत्र कामेष्टि करने के लिए विचार करना

—अपनी सन्तान-हीनता के बारे में विचार कर, दुखी होकर, अपनी आयु शीघ्र ही ढल जाएगी—यह सोचकर, मन में क्षुब्ध हुए और उसके बाद अपने सभी मन्त्रि-श्रेष्ठों को बुलवाया। सम्भ्रान्त रूप से उन्हें सभा में आसन देकर, शोभायुत आसनासीन होकर, अपने सभी मंत्रिवरों की ओर

'बॅक्कु दानंबुलु बॅक्कु धर्ममुलु । बॅक्कु यागंबुलु बॅक्कुव जेसि२७०
पॅक्कॅड्लु मंटि; शोभितकीर्ति गंटि; । मक्कुव मी वंटि मंत्रुलु गलुग
गॉदुवलेदेमिट, गॉड्कुलु लेनि ।कॉदवयॉक्कटि गानि; कुलमुद्धरिंचु
कॉडुकुलु लेकुन्न गोटि पुण्यमुल । बडयरुत्तमलोक पदवुलॅव्वरुनु;
गान पुत्रुल गानगा नाकु वलयु । गान येनिक लोकमुलॅल्ल मॅच्च
दलकॉनि यश्वमेधमु सेसि, पिदप । नॅलमि तो बुत्रकामेष्टि वेल्चॅदनु
ई यागमुलचेत हितमु रंजिल्ल । बायक पुत्रुल वडसॅद नेनु'
अनि चॅप्प वारलु नतिसंभ्रममुन । मनमुन संतोषमग्नुलैयुन्न
ना मंत्रिवर्युल नंदऱ जूचि । ता मदि नूहिंचि तगवॉप्प बलिके;
'ननुपमंबुग नेनु नश्वमेधंबु । विनयंबुन जेसि विवुधुलु मॅच्च
बुत्रुलकॉऱकुनै पुत्रकामेष्टि । नेत्रोत्सवंबुग ने जेयुवाड२८०
ननि तगु पनुलकु नंदऱ बनुप । ननघुलु मरि वसिष्टादुलु वच्चि
निलचिन म्रॉक्कुचु नॅलमि दोड्तॅच्चि ।पलिकॅनु वारितो बार्थिवोत्तमुडु

देखकर (वे) बोले, 'अनेक दान, अनेक धर्म (-कार्य), अनेक यज्ञ प्राचुर्य से करते हुए ॥ २७० ॥

—(मैं) अनेक वर्ष जीवित रहा। बड़ी कीर्ति पाई, आप जैसे स्नेही मन्त्रियों के होने पर (मुझे) केवल पुत्र होने के अभाव के सिवा और किसी बात का अभाव नहीं है। कुल का उद्धार करनेवाले पुत्रों के बिना कोई भी (व्यक्ति) पुण्यवानों की कोटि और उत्तम लोक में स्थान प्राप्त नहीं कर सकता। अस्तु, मेरे भी पुत्र उत्पन्न होने चाहिए। इसलिए मैं, संसार में प्रशंसित होने की इच्छा से अश्वमेध (यज्ञ) करूँगा। बाद मे सोत्साह पुत्र-कामेष्टि हवन करूँगा (यज्ञ करूँगा)। इन यज्ञों के कारण (मेरा) हित-रंजन होगा, मैं अवश्य पुत्रों को प्राप्त करूँगा'। ऐसा कहने पर उनके (अर्थात् मंत्रियों के) अति सम्भ्रम के साथ मन में संतोषमग्न रहते समय, उन सभी मंत्रिवर्यो की ओर देखकर, (राजा ने) स्वयं मन में विचार किया और न्याय (बुद्धि)-युक्त हो बोले—'अनुपम रूप से मैं अश्वमेध (यज्ञ) को—विनीत भाव से करूँगा, जिसकी विबुध लोग प्रशंसा करेंगे। पुत्रों के लिए पुत्रकामेष्टि को नेत्रोत्सव (दर्शनीय) रूप में मैं करूँगा'। ॥ २८० ॥

ऐसा कहकर उचित (आवश्यक) कार्यो के लिए सबको भेजने के बाद पुण्यात्मा वसिष्ठ आदि आकर खड़े हो गए। (तो राजा) साष्टांग प्रणाम कर, आनन्द के साथ (उन्हें) लिवा लाये, उनसे पार्थिवोत्तम (राजाओं में श्रेष्ठ दशरथ) यों बोले—'हे अनघ (पुण्यात्मा) वसिष्ठ !

'अनघ! वसिष्ट! संयमुलार! यिपुडु। घनमैन हयमेधकंवु ना चेत
जेयिंचि पुत्रैकसिद्धि नोंदुटकु । जेयिंपुडी यिष्टि जॅच्चॅर' नन्न
नलवड नी चेयु हयमेधमखमु । नॅलकॉनि येमिक निर्वहिंचॅदमु
मदि नॅन्न शक्यमॅ मखराज महिम । यिदिगाक पुत्रकामेष्टियु जेय
दनयुल गांचॅदु धन्यमानसुल, । ननवुडु हर्षिंचि यवनिनायकुडु
नंदर वनचि शुद्धांतंबु सॉच्चि । सुंदरीमणुल का शुभवार्त जॅप्पि
यनुरक्ति नेकांतमैयुन्न वेळ ।ननघुंडु सूतुडिट्लनियॅ भूपतिकि२८९

ऋश्यश्रृंग वृतांतमु

'धरणीश ! नीकु संतानसंप्राप्ति ।वॅरवैन कथ मुन्नु विन्नाड नेनु२९०
भूमिश ! विनुमंगभूमीशु कॉडुकु । रोमपादुडु गुणारूढुंडु दॉल्लि
यॅमि पापमुननो यॅरुग जॉप्पडक । यामहिलो वर्षमु कुर्वदय्यॅ
दानेलि पालिंचु धरणिपैनॅन्दु । वानलुलेकुन्न वगलनु जॅन्दि
वरमुनींद्रुल चेत वर्षहोममुलु । परुवडि सेयिंचि पडियराकुन्न

हे संयमियो (मुनियो)! अब महान् हयमेध (यज्ञ) को मुझसे सम्पन्न करवाकर, एक पुत्र की प्राप्ति के लिए इस यिष्टि (यज्ञ) को शीघ्र करवाइए'। ऐसा (राजा के) कहने पर (उन्होंने) कहा—'युक्तविधि से तुम्हारे द्वारा सम्पन्न हयमेध यज्ञ का उचित रीति से हम अब निर्वाह करेंगे। यज्ञों में श्रेष्ठ उस (हयमेध) की महिमा का वर्णन क्या सम्भव है ? (नहीं है)। यही नहीं, पुत्रकामेष्टि भी करने पर धन्य-मन वाले पुत्रों को प्राप्त करोगे'। ऐसा (मुनियों के) कहने पर हर्षित होकर अवनीश्वर (राजा) ने सबको विदाकर, अन्तःपुर में प्रवेश किया और सुन्दरी मणियों (रानियों) को वह शुभ-समाचार कह सुनाया। सप्रेम एकान्त में (अकेले) रहते समय, अनघ सूत ने भूपति से इस प्रकार कहा —॥ २८९ ॥

ऋष्यश्रृंग वृत्तान्त

—'हे महाराज ! आपको सन्तान-प्राप्ति का साधन किस प्रकार होगा, इस सम्बन्ध में एक कथा पहले ही मैंने सुनी है ॥ २९० ॥

—हे भूमीश ! उसे सुनिए। अंगराज के पुत्र गुणवान् रोमपाद के राज्य मे, न जाने किस पाप से, वर्षा नही हुई। अपनी परिपालित-शासित धरणी (पृथ्वी) पर कही वर्षा के न होने से दुखी होकर, (उन्होंने) श्रेष्ठ मुनीन्द्रों से वर्षाहोम (वर्षा के निमित्त अनेक हवन) करवाये। किन्तु फिर भी वर्षा के न होने से राजा को अतिशोक से व्यथित देखकर वे

भूरिशोकंबुन बॉगुलुचुनुन्न । याराजु गनुगॉनि यम्मुनुलनिरि
'यो महीपालक ! यो राजचंद्र । यी महिपै वानलिट बवु टकुनु
नॉक युपायंबु मेमॉगि जॅप्पुवार । मकलंकमति तोड ननुवॉन्द जेयु
परहितोन्नतुडु विभांडक सुतुडु । चिरपुण्यनिधि ऋश्यशृंगुडनुवाडु
नगधैर्य! पुट्टिननाटिनुंडियु । नगरराष्ट्रंबुलॅन्नडु नॅरुंगमिनि
नतडॅन्दु नाडुवारनु पेरु नॅरुग । डतडु दापसवृत्ति नडवुलनुंडु ३००
वसुधेश! यतडिदु वच्चिन जालु; । वॅसबायु नी यनावृष्टि दोषंबु'
नावुडु 'मुनिनाथु नगरि केरीति ।रावितु' ननि विचारमु सेसि तॅलिसि
यतडु वच्चुटकुनु नात्म जिंतिंचि । मतिमंतुलगुनट्टि मंत्रुल बिलिचि
मुनुलनु रप्पिंचि मुदमॉप्प नडुग । मुनुलुनु मंत्रुलु मुदमुतो जॅप्प
मनमुन संतोष महिमशोभिल्ल । मनुलमाटलु विनि मोदंबु मीर
नुंडॅनु भूकांतुडॉगि मौनुलनिरि । 'दंडिग नो राज! तलपोसि यिपुडु
वारकांतलनॅल्ल वसुधेश! पंपु । वारक वॅन्टने वनमुनकिपुडु
दंडिग भक्ष्यमुल् दगमदिमॅच्च । मॅण्डुग धनमुल मेटि वस्तुवुलु
बॅट्टि पंपुमु नीवु पॅम्पुतो नंत । गट्टिग गांतलु गडु ब्रौढ सतुलु

मुनि बोले, 'महीपालक ! हे राजचन्द्र ! इस पृथ्वी पर, यहाँ वर्षा होने के लिए एक उपाय हम क्रमशः बताएँगे। अकलंकमति से (उस उपाय को) संगत रूप से करो। हे नगधैर्य, (पर्वत के समान धैर्य वाले !) पर-हितकरने में उन्नत विभाण्डक का पुत्र, चिरपुण्य-निधि ऋष्यश्रृग, जन्म से (आज तक) नगर और राष्ट्र के बारे में कभी कुछ जानकारी न रखने के कारण, स्त्रियों के नाम तक से अनभिज्ञ है। वह तापसी वृत्ति में जंगलों में (ही) रहता है ॥ ३०० ॥

हे वसुधेश ! उसका यहाँ आना पर्याप्त है, (उसके आते ही) यह अनावृष्टि का दोष तुरन्त दूर हो जायगा'। इसे (कहने) पर (राजा) सोचने लगा, 'मुनिनाथ को नगरी में कैसे बुलाऊँ ?' उसके (ऋश्यशृंग के) आने की बात मन में सोचकर, (राजा ने) मतिमंत (बुद्धिमान) मंत्रियों और मुनियों को बुलाकर, प्रसन्न चित्त से (उपाय) पूछा। मुनियों (और) मंत्रियों ने अति प्रसन्नता से (उपाय) बताया। मुनियों की बातें सुनकर भूकान्त (महाराज) मन में अत्यधिक हर्षित हुए। मुनियों ने कहा, 'हे राजन् ! यत्नपूर्वक अभी वार-वनिताओं को तुरन्त वन में भेज दो। हे वसुधेश ! मन को प्रसन्न करनेवाले विविध खाद्य (मिष्टान्न), पर्याप्त धन (और) श्रेष्ठ वस्तुएँ देकर तुम उन (वेश्याओं) को सहर्ष भेजो।

दिन्नगनटुपोयि तॅरुगॉप्प गांचि ।मन्ननचे मौनि महिम वीक्षिंचि ३१०
तिय्यनिभक्ष्यमुल् तॅरुगॉप्पनिच्चि । नॅय्यवुचे मदि नॅरि गरगिंचि
याटल वाटल देट माटलनु । वाटलगंधुलु बदिलुलै निलचि
मनसॅल्ल गरगिंचि मरिवॅण्ट नटि । मनसिजाकारुलु मरि मायवन्नि
यॅच्चुग निटुराग नतडु वॅन्दगिलि । वच्चुनु निदुकु वसुधेश! विनुमु'
अनि चॅप्पि मुनिवर्युलटु चनिरंत । घनमुगा ना राजु गरुण ना रात्रि
मनमलरग नुंडि मरुनाडु लेचि । मुनुलनु दलचुचु मुदमॉप्प नंत
ननुरक्ति गडुप्रोडलगु वारसतुल । विनुत यौवनरूप विभ्रमवतुल
मनसिजमोहन - मंत्र - देवतल । बनिचॅ नॉप्पॅडु वारि वाटिंचियतडु
अतिवलम्मुनियुन्नयडविकि बोयि । यतनि याश्रमभूमि कल्लन जेरि
चतुर नर्तन कळा संगीत गतुल ।नतनिकि दम यॉप्पुलर्थि जूपुटयु २०
नापुण्यनिधि वारुलाडुवारगुट । रूपिंप नेरक रुचुल जॉप्पडक
यलसयानमुल नी यडविलो नॉप्प । मॅलिगॅडु निवि विंतमृगमुलो काग

तब वे अति प्रौढ़ सुन्दरियाँ सीधे वहाँ जाकर, उपाय से (उस मुनि को) देखकर, मुनि की गरिमामयी महिमा को देखकर—।। ३१० ।।

—यत्न से मधुर मिष्टान्न देकर, प्रेम से (उनके) मन को सकौशल विचलित करेंगी। क्रीडाओं (विविध विलास-चेष्टाओं), गीतों और स्वच्छ (मोहक) वचनों से (वे) पाटलगंधियाँ (रमणियाँ) सावधानी से (उनके) मन को पूरी तरह से रसमय बना देंगी। फिर उनका पीछाकर, मनसिजाकार(मनसिज मन्मथ के सदृश रूप वाली)वे कामिनियाँ (अपना) मायाजाल फैलाकर, यहाँ वापिस आएँगी, (तो) वे (ऋष्यश्रृंग) भी उनके पीछे-पीछे यहाँ आएँगे। हे वसुधेश ! सुनो (हमारी बात)'। ऐसा कहकर मुनिश्रेष्ठ चले गए। तब वह राजा उस रात को स्निग्ध और अति प्रसन्नचित्त रहा। दूसरे दिन (प्रातः) उठते ही उसने मुनियों का स्मरण करते हुए बड़ी प्रसन्नता और अनुरक्ति के साथ अत्यन्त प्रौढ वार-वनिताओं (वेश्याओं) को, जो अनुपम यौवन, रूप और छल-छन्द से युक्त, कामदेव के मोहनमन्त्र के सदृश मोहक, और अत्यंत चतुरा थीं, उनको (वन में) भेजा। वे युवतियाँ वन में गई जहाँ वह मुनि था। उसके आश्रमस्थल के निकट पहुँचकर, चतुर नर्तन-कला, संगीत की गतियों और अपने विलास (हाव-भाव) द्वारा उसको आकर्षित किया ।। ३२० ।।

—वे पुण्यनिधि (ऋष्यश्रृंग) यह न जान सके कि वे स्त्रियाँ हैं, (और संगीतादि से भी) परिचित न होने के कारण सोचने लगे कि (सम्भवतः) वे इस वन में मनोहर गति से मंद विचरण करनेवाले अनोखे मृग हैं।

यनुचुंड नॉक्कनाडतिवलु ब्रीति । दनुजेर वच्चिन दप्पक चूचि
चन्नुल पेरड्गि चन्नुल मीद । नुन्न हारमुल नुद्देश मडिगि
'माकु गॉम्मॉकटि मस्तकमुननु । मीकु गॉम्मुल रॅण्डु मॅरऽ सॅ रॉम्मुननु
नॅवृक्षमुल गल्गॅ निवि यपूर्वमुलु । नीवल्कलमुलतिमृदुलंबुलरय
मा जटाबंधंबु माट्किवि गावु । मी जटाबंधमु ल्मॅरुगुल बॉदलॅ
मेनि बूड़िदपूत मेल्तावि बोट्टु । वीनुलविंदु मी वेदनादमुलु
कनिविनि यॅरुग मिक्काननभूमि । मुनुलकु मी वेषमुलु गलवॉक्कॉ
यॅक्कडि मुनु' लन्न नितुलाघनुडु ।चिक्कुट भाविंचि चॅलगि नव्वुचुनु ३०
'नानुपूर्विग श्रुतिहारियै साम । गानंबु वाडि चक्कग बदक्रममु
शुद्ध मार्गबुन जूपंग नेतुं । मिद्धरमा चर्य लॅरुग मी तरमॅ ?'
यनि नेपुं माटल ना मुनिस्वामि । गनुन्नामि मरियु नक्कन्यकामणुलु
'यॅव्वरितनयुड ? वॅव्वड ? वेल । यिव्वनंबुन नुंडु? टॅरिंगिपु' मनुडु
अमलकीर्तुं ल बुण्युडगु विभांडकुनि। कॉमरुंड ऋश्यश्रृंगुडु ना पेरु
विपुल मनोनिष्ट वॅलय नीयडवि । दपमुसेयुटकुनै दगिल वर्तितु

एक दिन (उन) युवतियों के प्रेमयुक्त हो अपने पास आने पर उन्हें ध्यानपूर्वक देखा; स्तनों के नाम पूछकर, स्तनों पर स्थित हारों के उद्देश्य (प्रयोजन) के बारे में पूछा (और बोले—) 'हमारे तो सिर पर एक ही श्रृंग (सींग) है। (परन्तु) आपके तो उर पर दो श्रृंग शोभायमान हैं। आपके वल्कल (वस्त्र) अति मृदुल प्रतीत होते है। ये अपूर्व (वल्कल) किस वृक्ष से प्राप्त हुए हैं ? आपके जटाजूट हमारी जटाओं के समान नहीं हैं, (वे तो) चमक रहे हैं। (आपके) शरीर पर मली हुई राख श्रेष्ठ सुगन्ध दे रही है। आपके वेदनाद (वेदपाठ) कानों को मधुर लगते है। इस कानन-भूमि में (ऐसा दृश्य) न देखा है, न सुना है। कहीं मुनियों के भी ऐसी वेषभूषा होती है ? आप कहाँ के मुनि हैं ? (ऐसा) कहने पर (उन) स्त्रियों ने उस महान् व्यक्ति को (अपने जाल में) फँसते देखकर, सोत्साह मुस्कुराते हुए कहा—॥ ३३० ॥

—'परम्परा से (प्राप्त) श्रुतिमधुर (कर्णप्रिय) सामगान गाते हुए, शुद्ध रीति से पदन्यास करके (हम) दिखा सकती हैं। इस पृथ्वी पर हमारी चेष्टाएँ (कौशल) जानना क्या आपके वश की बात है ? (नहीं है)।' (ऐसा) कहकर अपने चतुर वचनों से उस मुनिनाथ को भ्रम में डालकर फिर उन कन्या-मणियों (सुन्दरियों) ने पूछा, (आप) 'किसके पुत्र हैं ? कौन हैं ? क्यों इस वन में रहते हैं ? बताइए'। तब (मुनि ने कहा—) 'अमल कीर्तियुक्त पुण्यात्मा विभांडक का मैं पुत्र हूँ। मेरा

भागीरथी स्नानपरत मा तंड्रि । योगिपुंगवुलतो नॉगि नेगिनाडु
ऑण्डु देशमुल नॅरुगक यिचट । दंडिमै दपमुलुदगनॉप्प जेसि
कदलकयुन्नाडु घनत मा तंड्रि । सदमलचित्तुडै सद्भक्तिनिपुडु
विनुडु मीरिचटिकि विच्चेयुकतन । ननघुंडनैति गृतार्थुडनैति
मा तंड्रि गृपचेत मरियु निच्चटनु । नाततंबुग तपमनुवॉन्द नॅपुडु
सेसि यिच्चट नुंदु जतुरततोड । वासिगा वनमुलवरुस मिम्मुलनु
गनिनयच्चुडु नाकु गडु जोद्यमय्यॅ । ननुवॉन्द वोदमा याश्रममुनकु ?'
ननि मुनुलनि वारि नाश्रमंबुनकु । गॉनिपोयि ऋश्यश्रृंगुडु वूजिचॅं
नॅलनाग लम्मुनि यिच्चिन पूज । ललरुचु गैकॉनि, यतनि वीक्षिचि
'मुनिवर! मा वनंबुन दॅच्चिनार । मनुपमफलराजि' यनुचु लड्वमुलु
नतिरसंबुल मनोहरमुलैनट्टि । यतिरसंबुलु, वड, ललरुमंडॅगलु
सारमौ रसमुल चवुलग्गलिप । वेरु सॅप्पगरानि पॅक्कु भक्ष्यमुलु
निच्चिन नमलुचु नॅडनॅड जवुल । मॅच्चुचु दनिसि या मॅळतल जूचि
ग्रुक्किळ्ळु म्रिगुचु गॉसरि यड्गुचुनु।जॉक्कुचु नंदंद सॉरिदि जेचाचि

नाम ऋष्यश्रृंग है। अत्यधिक मनोनिष्ठा-युक्त हो इस वन में तप करने में निरत होकर रहता हूँ। मेरे पिताजी भागीरथी में स्नान करने की इच्छा से योगिपुंगवों के साथ गए हुए हैं। अन्य देशों को न जानकर (न जाकर वे) बड़ी तपस्याएँ करते हुए, सदमलचित्त तथा सद्भक्तियुक्त हो, यहीं अचल निवास करते है। सुनिए, आपके यहाँ पधारने के कारण मैं पापरहित हुआ, कृतार्थ हुआ ।। ३४० ।।

—अपने पिता जी की कृपा से सुविधापूर्वक निरन्तर तप करते हुए मैं (भी) यहीं रहता हूँ। इन वनों में आप जैसे मनोरमों को देखने पर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। सुविधा हो तो आश्रम में चलें !' (ऐसा) कहकर (उन्हें) मुनि समझकर, अपने आश्रम में ले जाकर, ऋष्यश्रृंग ने उनकी पूजा की (आदर-सत्कार किया)। उन युवतियों ने उस मुनि की पूजाएँ (आतिथ्य) प्रसन्नता से स्वीकार की और उसे निहार कहा, 'हे मुनिवर ! अपने वन से (हम यह) अनुपम फल-राशि लाए हैं'। यह कहकर लड्डू, मनोहर अतिरस, वड़े, स्वादिष्ट मंडेग (गेहूँ से बनी एक प्रकार की मिठाई), स्वादिष्ट लगनेवाले अनेकानेक भक्ष्य (मिठाइयाँ) उनको दीं। (उन्हें) खाते और बीच-बीच में स्वाद की प्रशंसा करते हुए, मुग्ध होकर, उन सुन्दरियों की ओर देखते, लार की घूँट पीते हुए (लार टपकाते हुए), बार-बार माँगते, परवश होकर हाथ फैलाते हुए (कहते—) ।। ३५० ।।

'मुन्निट्टि फलमुल मुनिवरुलार। यॆन्नडे नॆरुगनु नेवनंबुलनु
मी तपंबे तपंबु मी तपोवनम। यी तपोवनमुल कॆक्कुडु तलप'
ननि पल्क नय्यितुलल्लन नगुचु। ननुवार दनुलत लरसोक गदिसि
तावि नूर्पुलचेत दालिमिदूलि। पोव नॊय्यन मुखांबुरुहंबुलॊत्ति
पलुकुल दळुकुल बाटलाटलनु। बिलुपुल सॊलुपुल बल्लिचि यतनि
हृदयंबु गरगंग निरि चन्नुगवलु। गदियिंचि बिगियार गौगिळ्ळ मरपि
'यनघ पोयॆदमिक नाश्रमंबुनकु'। ननि विभांडकुदॆस नडरिन भीति
नरिगि चेरुवनुंडि रावनंबुनकु। नरविंद-लोचनलरिगिन पिदप
वारिक नॆन्नडु वत्तुरो यनुचु। ना ऋश्यश्रृंगुंडु नटनिद्रलेक
या रात्रि वेगिंचि या मरुनाडु। ना रमणुलगन्न यचटिकेतेर ३६०

रोमपादुनि यिंटिकि ऋश्यश्रृंगुनि राक

नंदिय लमॊरयंग नसदु गौदीगॆ। लंदंद वडक रायंचल नडल
मगुवलु वच्चि या महितात्मु गांचि। नगुमॊगंबुल तोड नलुदट्टल जेरि

—'हे मुनिवर! इससे पूर्व ऐसे फलों को मैंने किसी वन में, कभी नहीं जाना (देखा)। आपका तप ही (श्रेष्ठ) तप है। आपका तपोवन ही, विचार करने पर (प्रतीत होता है कि) इन तपोवनों से श्रेष्ठ है'। ऐसा कहने पर वे स्त्रियाँ मन्द-मन्द मुस्काती हुई, अवसर पा, अपनी तनुलताओं को उन (ऋष्यश्रृंग) के शरीर से थोड़ा-थोड़ा स्पर्श करातीं, सुगंधित उच्छ्वासों से उनके धैर्य को डिगातीं, धीरे-धीरे अपने मुखकमलों को (उनके मुख से) सटातीं, मधुर वचनों, मृदुल संगीत, क्रीडाओं (हाव-भाव) तथा मदभरे कटाक्षों से मोहित करतीं हुई उनके हृदय को रसार्द्र करने लगीं; अपने पीन (उन्नत) कुचों से आलिंगन-पाश में कसकर उन्हें विमूढ़ करती हुई बोलीं, 'हे अनघ! अब हम (अपने) आश्रम में जाएँगी।' विभांडक के आगमन के भय से वे चली गई और उस वन के निकट ही रहीं। उन कमलनयनी कामिनियों के जाने के बाद, ऋष्यश्रृंग ने, यह सोचते हुए कि अब न जाने वे (मुनि) पुनः कब आएँगे, सारी रात आँखों में ही (जागकर) बिता दी। उसके दूसरे दिन (वह) उस स्थान पर गये जहाँ उन सुन्दरियों को (पहले दिन) देखा था ॥ ३६० ॥

रोमपाद के घर ऋष्यश्रृंग का आगमन

पायलों की झंकार करती हुई, क्षीण (दुबली-पतली) लता के समान हिलतीं-डुलतीं, राजहंसों की गति से (वे) सुन्दरियाँ उस महितात्म

'मुनिवर! मा वनंवुनकु रावलयु' । ननिपल्क राककु ननुमतिंचुटयु
गनि चाल वेलदुलु घनमुनि जूचि । मनसुलु गरगंग मर्रि मर्रि पलिकि
दम युपायंबुल दम विलासमुल । दमकंवु पुट्टिंचि, तरलाक्षुलंत
विस्तारपथमनि वेरचि पोवमिकि। हस्तपल्लवमुल नांदोळिक गनु
नोनर दीमंवुल नोक विंतमृगमु ।गोनितेच्चु तेरगुनु गोनि वच्चिरतनि
नतडु सोच्चुटयुनु नय्यंगदेश । मतुलवर्पमुल, सस्यंवुल नोप्पे
सकलसौभाग्यमुल्सललितंवुगनु । नकलंकमति तोड ना नृपुडुंडि
या मौनि गनुगोनि यतिभक्तियुक्ति । नेमंबुतो वूज नेम्मि गाविंचि ३७०
यनघुंडु दनकूतु ना राजु शांत । यनुदानि निच्चिन ना राजुनिंट
नतडुंडु दशरथुंडम्मुनि देच्चि । हितमति वुत्रकामेष्टि ना वरगु
क्रतुवम्मुनींद्रुचे गाविंचेनेनि । सुतुल नल्वुर वहुश्रुतुल नुन्नतुल
नाततोन्नति गांचु, 'ननि चेप्पे देलिय। नातोड दोल्लि सनत्कुमारुंडु
अटुगान नीविंक ना ऋश्यश्रृंगु । वटुभक्तियुक्तिमै ब्रार्थिचि तेम्मु'
अनि चेप्पि या सूतुडरिगिन पिदप । मनमुन संतोष ममतलु सेलग

(महात्मा) को देखकर आईं और हँसती-विहँसती चारों ओर से (उन्हें) घेरकर वोलीं, 'हे मुनिवर ! हमारे वन में पधारिए'। ऐसा कहकर, (मुनि के) आने के लिए तत्पर होने पर, (वे) स्त्रियाँ उस श्रेष्ठ मुनि के मन को द्रवित करने वाली वातें वार-वार करके, अपने उपायों तथा हाव-भावों से, मुग्ध करने लगी। इसके वाद, विस्तृत पथ को पार करने के भय से, (अपने) करपल्लवों की पालकी वनाकर, अनेक उपायों से एक अजनवी मृग को जिस प्रकार (एक शिकारी) लाता है, उसी प्रकार वे चंचल नयन वाली उन्हें (अंगदेश में) ले आईं। उनके प्रवेश करते ही उस अंगदेश में अतुल वर्षा होने लगी और शस्यं की वृद्धि हो गई। सकल सौभाग्यों से संयुक्त होने पर सुललित ढंग से, अकलंकमति (वाला) राजा (रोमपाद) ने, उस मौनि का साक्षात् होने पर, वड़ी भक्ति और प्रीति से समुचित और सुचारु ढंग से उसकी पूजा की ॥ ३७० ॥

—निष्पाप (अंग-) नरेश ने शान्ता नामक अपनी पुत्री उन्हें दान की (और) उस राजा के घर (पर ही) वह (मुनि अव) रहते हैं। यदि दशरथ उस मुनि को (अपने यहाँ) लाकर, कल्याण के लिए पुत्र-कामेष्टि नामक क्रतु (यज्ञ) को उस मुनीन्द्र के द्वारा करायें तो (वे) चार वहुश्रुत और महान् पुत्र एवं समृद्धि को प्राप्त करेंगे। ऐसा ही मुझसे पूर्वकाल में सनत्कुमार ने कहा था। ऐसा है न, इसलिए तुम अव उस ऋष्यश्रृंग को विनय-भक्ति से प्रार्थना कर यहाँ ले आओ'।

ननुवरि दशरथुंडारोमपाद । जननाथु वीटिकि जनि ऋश्यश्रृंग
मुनिपतिगनि म्रॊक्किमुदमुतोननियॆ 'विनवय्य! मुनिचंद्र! विमलमानसुड!
यनुवंद बुत्रुल नडुगुट केनु । मनमुन दलपोसि ममत नीकडकु
गॊनकॊनि वच्चिचति; गॊनुमु नी'वनुचु। घनमुन गृपवुट्ट मरि नुतिसेसि ३८०
क्रतुवुन काचार्युगा वरियिंचि । यतुलित चतुरंतयानाढ्यु जेसि
यतनि विरोध्यसाध्यकु नयोध्यकुनु। जतुरुडै तोड्तॆच्चे शांततोगूड
वच्चुचो दूतलवलनु वीक्षिचि । पुच्चि मुंदर वारि 'बुरमुनु नगरु
वासवुपुरितोड वैभवंबॊप्प । गैसेयवलयुनु गडुवेग मीर'
लनिपल्क वारुनु नरिगि पौरुलकु । विनिपिंप, जेसिरि विविधशिल्पमुलु
दुंदुभिशंखादितुमुल नादंबु । लंदंद म्रोयग नंत भूपतियु
मुंदुगा रथमॆक्कि मुदमु सित्तमुन । जॆन्दि शांतयु ऋश्यश्रृंगुंडु नडव
बुरमुनकेतॆञ्चॆ बुरजनुल्सेयु । परममंगळततुलपरगगॆकॊनुचु
नीरीति ना ऋश्यश्रृंगुनि दॆच्चि । भूरमणुंडंतिपुरमुन नुनिचि

ऐसा कहकर उस सूत के जाने के बाद, मन में प्रसन्नता और ममता के उमड़ आने पर, उपायज्ञ दशरथ उस रोमपाद जननाथ (राजा) के घर गये और मुनिपति ऋष्यश्रृंग का दर्शन कर उन्हें दण्डवत् प्रणाम करके प्रसन्नता से बोले, 'हे मुनिचन्द्र ! विमलमानस ! मेरी विनय सुनिए। मैं मन में पुत्रों की कामना लेकर करुण भाव से आपके पास (बड़ी आशा लेकर) आया हूँ। (मेरी प्रार्थना को) आप अंगीकार कीजिए। ऐसा कहकर (मुनि के मन में) कृपा पैदा हो, (तदर्थ) और अधिक स्तुति करके——॥ ३८० ॥

—यज्ञ के लिए (उन्हें) आचार्य (के रूप में) वरण किया। फिर अतुलित चतुरन्तयान (पालकी) में बैठा कर, शान्ता के साथ उन्हें, विरोधियों के लिए असाध्य अयोध्या को कौशल से (राजा दशरथ) ले आए। इसीबीच, उन्होंने दूतों के द्वारा (अयोध्या में) यह आदेश भेज दिया कि पुर (और) नगर को वासव (इन्द्र) की नगरी के समान वैभव-युक्त सजाया जाय। उन (दूतों) से नगरवासियों को (यह आदेश) मिलने पर, उन लोगों ने (नगर-वासियों ने) विविध शिल्पों से (नगर को) सजाया। दुन्दुभि, शंख आदि के तुमुलनाद जगह-जगह ध्वनित होने लगे। तब भूपति भी, आगे-आगे रथ पर आरूढ़, मन में मोद भरे, शान्ता और ऋष्यश्रृंग को साथ लिए पुर में पधारे और नागरिकों के द्वारा किए गये (स्वागतार्थ) परम-मंगल कार्यों को उन्होंने प्रसन्नता के साथ स्वीकार किया। इस प्रकार उस ऋष्यश्रृंग को लाकर, भूरमण (राजा) ने अन्तःपुर में ठहराया और

वितताघ्यं पाद्यादि विधुलवूज़िंचि। यतिकृतार्थुडनैतिननिसंतसिंचे
नासमयंवुन ना राजसतुलु । कौसल्य मोदलुगा गलवारु वेड्क
नलुवोन्द रेनियानति वूनि चाल । नलरि संतसमुन नाशांतकपुड्ड
महितभूपण वस्त्रमाल्यादुलिच्चि । वहुविधंवुल वारि न्नार्थिचिरंत
गोन्तकालमुनकु गुवलयजनुलु । संतोपमेसग वसंतमेतेर
नडरेंडु वेडुक ना ऋष्यश्रृंगु । कडकु भूपति वच्चि कडुभक्ति म्रोक्कि
'सन्नुतस्थिति नन्नु संयमिप्रवर! । चेन्नोन्द जन्नंवु सेयिपवलयु'
ननि विन्नविंचिन 'नौगाक' यनुचु ।निनकुलोत्तमु जूचि यिट्लनि पलिके
'वेगंवे तेप्पिंपु विहितंवुलैन । यागसंभारंवुलन्नियु नधिप !'
यनवुडु दगुवारि 'नय्यै तेरंगु । लोनरिंपु' डनुचु नियोगिंप वनिचि
यखिलसंभारंवुलन्नियु देप्पिंचि । मखमुसूचुटकु सुमंत्रुनि वंपि
केकय क्ष्मानाथु गीर्तिसनाथु । ना काशिराजु नव्याहततेजु
जनकांगराजादि जननाथवरुल । ननवचरित्रुल नर्थि रप्पिंचि
मनुजनायकुडु सुमंत्रुतो ननियें । 'ननघुल वेदवेदांगपारगुल
गृहमेधुलगुवारि गृततंत्रभाष्य । महितार्थं निश्चयमतुल भूसुरुल

अर्घ्य-पाद्य आदि के द्वारा सविधि उनका पूजन कर अपने को अति कृतार्थ (सफल) माना और प्रसन्न हुए ॥ ३९० ॥

—उस समय कौसल्या आदि महारानियों ने वड़े उत्साह से, राजा की आज्ञा लेकर, वड़े हर्प के साथ उस शान्ता को श्रेष्ठ भूपण, वस्त्र, माला आदि देकर, नानाविधि से उसकी अभ्यर्थना की। कुछ दिनों के वाद संसार के प्राणियों को प्रफुल्लित करनेवाले वसन्त ऋतु का आगमन हुआ। तव वड़े उत्साह से, उस ऋष्यश्रृंग के पास भूपति ने आकर, अनन्य भक्ति से प्रणाम किया और विनय की, 'हे संयमिप्रवर (मुनि श्रेष्ठ)! आप श्रेष्ठ यज्ञ को मुझसे करवाएँ'। निवेदन करने पर 'ठीक है (ऐसा ही हो)' कहकर रविकुलश्रेष्ठ (दशरथ) से (मुनिवर) इस प्रकार वोले, 'हे अधिप ! यज्ञ के लिए निर्दिष्ट (आवश्यक) सारी सामग्री शीघ्र मंगवाइए'। ऐसा कहने पर (राजा ने) (आवश्यक) सभी प्रकार के कार्य पूरे करने के लिए सुयोग्य व्यक्तियों को नियोजित किया और सभी वस्तुएँ मंगवाईं। (पश्चात्) सुमंत्र को भेजकर—॥ ४०० ॥

—कीर्तिमान केकयराज, अतुल तेजस्वी काशिराज, जनक, अंगराज आदि पुण्यचरित्र वाले जननाथवरों (श्रेष्ठ राजाओं) को यज्ञ देखने के लिए आमन्त्रित किया। मनुजनायक ने सुमन्त्र से कहा—'पुण्यात्मा वेदवेदांग-पारंगत, गृहस्थ, कृततन्त्रभाप्य के महितार्थों में निश्चय वुद्धि (रखने)

बरगु सुयज्ञु जाबालि गश्यपुनि । सुरुचिरात्मुनि वसिष्टुनि वामदेवु
रयमुन दोड्कोंनिरम्मु नी' वनिन । ब्रियमुन नातंडु बेंम्पार नरिगि
युरुभक्ति नंदरु नोंगि दोडितेर । बरुवडि दा नर्घ्य पाद्यादुलिच्चि
निर्मलव्रतनिधि नियतार्थमतमु । धर्मार्थयुतमु गादगुमाट बलिकें
'मुनुलार! कोंडुकुलु मुनु नाकु लेमि। मनमुन दलपोसि ममत रेंट्टिंचि
मित्रसूक्तुल नश्वमेधयागंबु । वुत्रुलकोंरकुनै पुत्रकामेष्टि४१०
जेयंग नी ऋश्यशृंगु दोड्तेंच्चि । मी यनुग्रहमु गामिंचियुन्नाड'
ननवुड्डु ना वसिष्टादि संयमुलु । जननाथुमाटकु संतोषमंदि
'यिनकुलोत्तम! लोकहितमाचरिंप । दनयुलगोरु नीतलपोंप्पु निंक
नश्वंबु विडुवु मी यश्वमेधमुन । विश्वरक्षकुलैन विक्रमोज्ज्वलुलु
नलुवुरु कोंडुकुलु नरनाथ! नीकु ।गलिगेंद' रनि पल्क गड्डु संतसिल्लि
सवनयोग्यंबैन जवनाश्वमरसि । भुवनपावनमूर्ति पूजिंचि नोंसट
ब्रकटित बिरुदांक पट्टिकगट्टि । योंकयेड्डु दनयिच्च नुर्वि जरिंप
समकट्टि विडिचें नश्वंबु रक्षिंप । विमतोग्रुलगु सैन्यविभुलतो गूड

वाले भूसरों (ब्राह्मणों) को, सुयज्ञ जाबालि, कश्यप, सुरुचिरात्म वसिष्ठ और वामदेव आदि को तुम शीघ्र ही लिवा लाओ'। (आदेश मिलते ही) तब वह (सुमंत्र) प्रसन्न मन से गये और बड़ी भक्ति के साथ उन सभी को शीघ्रता से लिवा लाये। (राजा नें) शीघ्र ही स्वयं अर्घ्य-पाद्य आदि देकर (उनका स्वागत किया।) निर्मल व्रत-विधि के अनुसार तथा धर्मार्थ युक्त हो (वह) बोले, 'हे मुनियो! (इससे) पूर्व पुत्रहीन होने की चिन्ता से प्रेरित (और) पुत्र-प्राप्ति की प्रबल कामना से उत्कण्ठित होने पर शुभचेता मित्रों की सलाह से अश्वमेधयाग तथा पुत्रों की प्राप्ति के लिए पुत्र-कामेष्टि यज्ञ करने के लिए—॥ ४१० ॥

—इन ऋष्यश्रृंग को मैं लिवा लाया हूँ और आपके अनुग्रह की कामना कर रहा हूँ'। ऐसा कहने पर वे वसिष्ठ आदि मुनि जननाथ (दशरथ) की बातों से प्रसन्न होकर बोले, 'हे भानुकुलोत्तम! लोकहित करने के लिए पुत्रों की इच्छा का तुम्हारा विचार सर्वथा संगत है। अब अश्व को छोड़ दो। हे नरनाथ! इस अश्वमेध से विश्वरक्षक, विक्रम में उज्ज्वल तुम्हारे चार पुत्र होंगे'। ऐसा कहने पर अत्यंत संतुष्ट होकर (राजा ने) यज्ञ के लिए योग्य जवनाश्व (तेज जानेवाले घोड़े) को चुनकर, उस भुवन-पावन-मूर्ति की पूजा करके, उस (घोड़े) के ललाट पर अपनी विरुदांकित पट्टिका बाँधकर, एक वर्ष तक अपनी इच्छा से पृथ्वी पर विचरण करने के लिए, छोड़ दिया। (उस) अश्व की रक्षा

नंत वसिष्टादुलनुमतिसेय । वितगा शिल्पकोविदुल रार्विचि
सरयुवुनुत्तरस्थलि यागशाल ।विर्रचिपगा वंचें वेदोक्तसरिण४२०
मरि्यु नानादेश मनुजवल्लभुल । वर्लु विप्र नृपाल वैश्य शूद्रुलनु
र्ष्पिचें नंत वर्षमु पूर्णमैन । नेप्पटिमधुमासमेतेर नृपुडु
चिरतपोनिधि ऋश्यश्रृंगुसम्मतियु। गुरुनियानतियु गैकोंनि मंचिवेळ
स्पृहानु शांता ऋश्यश्रृंगुलतोड । निहित संभार वर्णित होमकुंड
सहितमै येकविंशति रम्ययूप । महितमै श्रौतधर्मक्रियाचार
विहितमै मायाप्रवीण दैतेय । रहितमै सकलाव रहितमै योंप्पु४२६—

दशरथुडु यागवीक्ष वहिंचुट

यागवाटमु सोंच्चि, हयमु वच्चुटयु। यागदीक्ष वहिंचि यतिशुद्धि वोंन्दि
मुनु वसिष्ठादुल मुनिजनोत्तमुल । घनुल ऋत्विक्कुलुगा वरियिंचि
सवनत्रयं वभीष्टवमु नोंर्नचि । प्रविमल यूपाग्रवंधंवुलैन
जलचरंबुलरण्यचरमुलु विहग । मुलु नुरगंवुलु मोंदलुगा नोंप्पु४३०

के लिए अति पराक्रमी सेनापतियों को (नियुक्त किया)। (उसके बाद) वसिष्ठ आदि मुनियों की अनुमति से सरयू (नदी) की उत्तर दिशा में वेद-विधि के अनुसार यज्ञशाला का निर्माण करने के लिए (राजा ने) अनुपम शिल्पकारों को नियुक्त कर दिया। ॥ ४२० ॥

—फिर नाना देशों के मनुज-वल्लभों (राजाओं), (वहाँ के) विप्र, नृपाल (क्षत्रिय), वैश्य और शूद्रों को (भी) निमन्त्रित किया। इतने में वर्ष पूरा हुआ और फिर से मधुमास (वसन्त) आ गया। तव राजा ने चिरतपोनिधि ऋष्यश्रृंग की सम्मति (अनुमति) तथा गुरु की आज्ञा लेकर, अच्छी-वेला (अच्छे मुहूर्त) में, वड़े उत्साह से शान्ता और ऋष्यश्रृंग के साथ, निर्दिष्ट यज्ञोपकरणों तथा हवन-कुण्ड से युक्त, इक्कीस सुन्दर यूपों (स्तम्भों) से शोभायमान, श्रौत-धर्म-क्रियाचार विहित, माया-प्रवीण राक्षसों से रहित तथा समस्त पापों से रहित होकर शोभायमान—॥ ४२६ ॥

दशरथ का याग-दीक्षा लेना

—(उपरोक्त गुणों से युक्त) यज्ञभूमि में (दशरथ ने) प्रवेश किया। (यज्ञ के) अश्व के आते ही, यज्ञदीक्षा धारण कर, अति पवित्र होकर प्रथमतः वसिष्ठ आदि मुनिजन-श्रेष्ठों को, महात्माओं को, ऋत्विकों के रूप में वरण कर, प्रशस्त (सराहनीय) सवनत्रय (तीन यज्ञों) को पूरा किया (और) प्रविमल यूपस्तम्भों से वंधे हुए जलचर, वनचर, विहग, उरग (रेंगने वाले प्राणी) आदि— ॥ ४३० ॥

पशुवुल मुन्नूटि ब्रथिताश्वमोंकटि । विशसिंचि क्रतुकर्मवेदुलु व्रीति
नेमंत्रमुलतोड ने पललमुलु । गार्मिंचि व्रेलुवगा जेप्पुश्रुतुलु
नामंत्रमु तोड ना पललमुलु । गार्मिंचि वेलिचिरि कडगि ऋत्विजुलु
अनलुंडु सप्तजिह्वल ब्रज्वरिल्लॆ । ननिमुषुल् दनिसिराहविरादिकमुल
ना यागदिनमुल नार्कोन्नवाडु । नायासपडिन वाडरसिन लेडु
सारमृष्टान्न वस्त्रपटीरकनक । हीरभूषादि संतृप्तुले गानि
ये क्रियलंदुनु नेंडपडकुंड । नीक्रिय हयमेध मीडेरुटयुनु
वेनुक ज्योतिष्टोमविश्वजिदादि । घनयागततुलु सांगमुगा नोनर्चि
यप्पुडु दशरथुंडाऋत्विजुलकु । नोप्पुगा दक्षिणलोसगंग दलचि
यध्वर दक्षिणकै पूर्वदेश । मध्वर्युनकुनु ब्रह्मकु दक्षिणंबु ४४०
बोनरंग बश्चिमभूमि होतकुनु । दनर नुत्तरमु नुद्गातकु निच्चॆ
निल नयोध्ययु दक्क नेल्ल देशमुल । नलरि यिच्चिन मुदमंदि ऋत्विजुलु
'नेप्पुडेलुदुमु नीविच्चन देश । मेप्पुडनुष्ठानमेमु सल्पुदुमु
येमेड देशंबुलेलुट लेड । भूमिकि वेलयिम्मु भूमीश! माकु'

—तीन सौ पशुओं तथा प्रख्यात यज्ञाश्व का वध किया। श्रुतियों में जिन-जिन मंत्रों के साथ जिन-जिन पललों (मांस) को प्रीतिपूर्वक आहुति देने की विधि बताई गई है, क्रतुकर्म को जानने वाले ऋत्विकों ने उन-उन मंत्रों के साथ उन-उन मांसों का, प्रेम के साथ हवन किया। अनल (अग्निदेव) सप्त-जिह्वाओं से प्रज्वलित हुए। देवता (उन) आहुतियों से तृप्त हुए। उस यज्ञ के दिनों में ढूँढने पर भी न कोई भूखा दीखा, न कोई संत्रस्त। सभी सारयुक्त मिष्ठान्न, वस्त्र, चन्दन, स्वर्ण, हीरे, भूषण आदि से (पाकर) संतृप्त थे। किसी भी कार्य में विघ्न के विना, इस रूप में अश्वमेध (यज्ञ) के पूर्ण होने पर, दशरथ ने ज्योतिष्टोम, विश्वजित् आदि महान् यज्ञ-क्रियाओं को सांग रूप से पूर्ण किया और उन ऋत्विजों को श्रेष्ठ रूप से यज्ञ-दक्षिणाएँ देने का विचार किया। अध्वर्यु को अध्वर-दक्षिणा के रूप में (अपने राज्य का) पूर्वभाग, ब्रह्मा को दक्षिण देश, ॥ ४४० ॥

—होता को पश्चिम का भाग, उद्गाता को उत्तर भाग दे दिया। अयोध्या को छोड़ बाक़ी सभी देशों को प्रसन्नतापूर्वक देने पर ऋत्विज प्रसन्न हुए और बोले—'आपके दिए देश पर शासन कब करें और कब (हम) अपने अनुष्ठान (आचरणीय कर्त्तव्य) का पालन करें? हम कहाँ और देश पर शासन करना कहाँ? हे राजन्, हमें इस भूमि का मूल्य दे दें'। ऐसा कहने पर (राजा ने) दस करोड़ स्वर्ण (मुद्राएँ), स्वर्ण की चौगुनी

ननवुडु बदिकोटुलगु सुवर्णमुलु । गनकंबु नलुमडि गलधौतचयमु
गोरंगदगु लक्षगोवुलनिच्चे । ना ऋश्यशृंगादुलैन ऋत्विजुलु
नवि वंचुकोनि मुदमंदिरि मरियु । अविमलाध्वरकर्म परिचारकुलकु
नरनायकुंडु सुवर्णमुलु गोटियुनु । वरभूषणंबुलु वलयु वारलकु
गामितार्थंबुलु गामिंचु वारि । केमि वाकुच्चिन निपारनिच्चि
परग भूसुरुलकु भक्तितोम्रोक्कि । वरुस वारिच्चु दीवनलु गैकोनुच४५०
अकट दिव्यांबराभरणादुलोसगि । यकलंकचित्तुडै यवभृथंबाडि
श्रीमहितुडु ऋश्यशृंगुचे बुत्र । गामेष्टि जेयिंपगा नंत वच्चि
क्रममोप्प यागभागमुलु गैकोन्न । यमरुलारावणु नात्मलो दलचि४५३

ब्रह्मकु देवतल मोर

ब्रह्म गनुंगोनि प्रणमिल्लि निलिचि । 'ब्रह्म नी वरशक्ति बंक्तिकंधरुडु
अविमलाचारुल ब्रह्मर्षिवरुल । दिविजुल मुनुल बाधिंचु चुन्नवाडु
दारुण वरशक्ति दगिलि मा चेत । वारिजासन ! वाडु वारिंपबडडु
सुरगणंबुलतोड सुत्रामु बट्टि । परिभविंचुचु नेचु बाहुदर्पमुन
गन्धर्व यक्षादिगणमुल मुनुल । बंधिंचु साधुल बट्टि बाधिंचु

चाँदी और स्पृहणीय एक लाख गाएँ (उन्हें) दीं। ऋष्यशृंग आदि वे ऋत्विज उन्हें (अर्थात् उस धन को आपस में) बाँटकर सन्तुष्ट हुए। उस विमल यज्ञकर्म में प्रवृत्त परिचारकों (सेवकों) को नरनायक (राजा) ने करोड़ स्वर्णमुद्राएँ दीं। माँगने वालों को श्रेष्ठ आभूषण दिए। जिसने जो कुछ माँगा (जिस वस्तु की कामना की) राजा ने प्रेम से उन्हें वे वस्तुएँ दीं। सभी ब्राह्मणों को भक्तियुक्त हो प्रणाम किया और उनके आशीर्वाद प्राप्त करते हुए ॥ ४५० ॥

—उन्हें श्रेष्ठ दिव्य वस्त्र (और) आभरण देकर, अकलंक चित्त हो अवभृथ (यज्ञांत का) स्नान किया। (उधर) श्रीमहित (शोभा-सम्पन्न) हो (राजा के) ऋष्यशृंग के द्वारा पुत्रकामेष्टि करने पर, वहाँ आकर क्रमशः अपने-अपने यज्ञभाग प्राप्त करनेवाले देवताओं ने रावण के बारे में अपने मन में विचारा। ॥ ४५३ ॥

ब्रह्माजी से देवताओं की गुहार

—ब्रह्मा को देख, प्रणाम कर, खड़े हो, (देवताओं ने कहा)—'हे ब्रह्माजी ! आप के वर की शक्ति से पंक्तिकंधर (रावण) प्रविमल आचार-सम्पन्न (निष्ठावान्) व्यक्तियों, ब्रह्मर्षियों, देवताओं तथा मुनियों को सता रहा है।

वाडन्न गुलगिरुल्वडवड वडकु । वेडिमि सूपग वेरचु भास्करुडु
वीकतो ननलुंडु वेंलग शंकिंचु ।देकुव सेंडिगालि दिरुगंग वेरचु४६०
नन्निशाचरु गन्न नाटोपमेसग । मुन्नीरु कडलेत्ति म्रोयंग वेरचु
नेपुन गन्नप्पुडेल्ल मम्मेचु । बापात्मुडगुनट्टि पंक्तिकंधरुनि
नंतंबु नोंन्दिचु ना युपायंबु । जिंतिपवलयु नी चित्तंबुलोन'
ननवुडु ना तेरंगंतरंगमुन । गनि ब्रह्म मुनिदेवगणमुनीक्षिंचि
'यमरुलचे जावडसुरुलचेत । समयडु गंधर्व समितिचे जेंडडु
रजनीचरुलचेत ग्रागडेन्नडुनु । भुजगसंघमुलचे बोलियडेन्नडुनु
यक्षुलचे नीलगडालंबुलोन । बक्षियूथंबुचे वडडु वानिकिनि
वरमिच्चुनपुडु वाक्रुव्वडय्ये । नरुल गावुन वाडु नरुलचे जच्चु
विशदंबुगा निंक विनुडु हिरण्य । कशिपुडु लोकमुल् गारिंचु नाडु
नरसिंह रूपंबु नारायणुंडु । धरियिंचि वानि निदारिंचिनाडु४७०

(आपके द्वारा प्रदत्त) दारुण वर-शक्ति के कारण, हे कमलासन ! वह दुर्निवार बना हुआ है । (वह) देवताओं के साथ इन्द्र को पकड़कर, उन्हें अपमानित करते हुए, बाहुदर्प (बाहुबल के गर्व) के कारण सताता है । गन्धर्व, यक्ष आदि (देव) गणों (और) मुनियों को बन्धनों में डाल देता है, साधुओं को पकड़कर कष्ट देता है । उसके नाम से समस्त पर्वत थर-थर काँपते हैं । ताप दिखाने में सूर्य डरता है । दर्प (औद्धत्य) के साथ जलने में अनल आगे-पीछे देखता है (शंकाकुल रहता है) । पूरी शक्ति के साथ चलने में पवन डरता है ।। ४६० ।।

—उस निशाचर को देख सम्भ्रमयुक्त हो, समुद्र पूरी तरह से गर्जन करने के लिए भी डरता है । जब कभी (हमें) देखता है, उद्धत हो हमें सताता है । ऐसे पापात्मा पंक्तिकंधर (रावण) का अन्त करने के (उपयुक्त) उपाय (को) आपको मन में सोचना चाहिए ।' ऐसा कहने पर उस विधान को (रावण के अत्याचारों को) अन्तरंग में देखकर (हृदयंगम कर) ब्रह्मा ने मुनि और देवगण को देखकर (कहा) '(रावण) अमरों के हाथ नहीं मरेगा, राक्षसों के हाथ नहीं मरेगा । गन्धर्वों की समिति (समूह) से नहीं मिटेगा । कभी (किसी दिन) रजनीचरों के हाथ समाप्त नहीं होगा । किसी भी-दिन भुजंगों (सर्पों) के समूह से नहीं मरेगा । युद्ध में यक्षों के हाथ नहीं मरेगा । पक्षिसमूह से नहीं गिरेगा (पराजित नहीं होगा) । (मेरे) वर देते समय उसने नर का नाम नहीं लिया इसलिए वह नरों से ही मरेगा । अब विशद रूप से सुनो । हिरण्यकशिपु के लोकों को सताते समय नारायण ने नरसिंह का रूप धारण कर, उसे चीर डाला था ।।४७०।।

वाडे वीडै विश्रवसुनकु वुट्टि । नाडु गावुन नेडु नारायणुंडु
वीनि निर्जिचु नव्विष्णुनि नभय । दानंबिक दगवेडवलयु'
ननि देवतलतोड ना ब्रह्म वलुक । ननुवोन्द नंदरु नप्पुडे कदलि
यमृताब्धिकडकेगि यच्युतुनि गांचि । विमलचित्तुलुनयि विनयमेपार
गरमुलु मुकुळिंचि कडु भक्ति म्रोक्कि। यरुदुग सुरलप्पुडाविष्णु गूर्चि४७५

देवतलु विष्णुवुनु नुतिंचुट

विनयसंभ्रममुलु वेलयनिट्लनिरि । 'कनकाक्षशिक्ष! लोकत्रयाध्यक्ष!
वनजालयवक्ष! वसुमतीरक्ष! वनजाक्ष! माकु नेव्वरु लेरु दिक्कु
नीवोक्कडवुदक्क निक्कमीमाट । गोविंद! परिपूर्णगुण! चिदानंद!
देव! जगन्मय! देवादिदेव! । देवनिस्तारक ! दिव्यावतार !
शुभमूर्ति! शरणंबु सोच्चिन माकु । नभयमिच्चितिगादे यमृताब्धि
दोलि ४८०

तलपोय दानवदळन ! नी वाहु । बलविक्रमंबुल वरुगु लोकमुलु
भक्तवत्सल! निन्नु बरिकिंप दरमे । भक्तियोगमुदक्क वयलु माटलनु

—वही (हिरण्यकशिपु) यह (रावण) वनकर विश्रवसु के यहाँ पैदा हुआ है। इसलिए आज नारायण ही इसको निर्जित (पराजित) करेंगे। उस विष्णु के अभयदान को अव हमें अच्छी तरह से माँगना चाहिए।' ऐसा उस ब्रह्मा के देवताओं से कहने पर, उचितरूप से सभी (देवता) तभी निकलपड़े (और) अमृताब्धि (क्षीरसागर) के पास जाकर, अच्युत को देख, विमल चित्त से, अति विनयपूर्वक हाथ जोड़कर, अतिभक्ति से प्रणाम कर वे देवता विष्णु के प्रति—॥ ४७५ ॥

देवताओं का विष्णु की स्तुति करना

—विनय और संभ्रम को प्रकट करते हुए वोले:—'हे हिरण्याक्ष को दंडित करनेवाले ! त्रिलोकीनाथ ! वक्षस्थल में लक्ष्मी को धारण करने वाले ! वसुमती (पृथ्वी) के रक्षक ! वनजाक्ष (कमलनयन) ! आपके अतिरिक्त हमारा कोई शरण (सहायक) नहीं है। यह वात सत्य है। हे गोविन्द ! हे परिपूर्णगुण ! चिदानन्द ! देव ! जगन्मय ! देवाधिदेव ! देवों के रक्षक ! दिव्यावतार ! शुभमूर्ती ! पूर्वकाल में क्षीरसागर में आपकी शरण में आए हुए हमको (आपने) अभयदान दिया था ॥ ४८० ॥

—हे दानवदलन (राक्षसों का नाश करने वाले) ! आपके वाहुवल (और) विक्रम से (ही) (ये) लोक अवस्थित हैं। हे भक्तवत्सल !

मधुसूदनुड! निन्नु मदिलोन नम्मु । नधिक पुण्युलकेन्दु नापदलगलवे
जगदुद्भवस्थितिसंहारकृतुलु । दगविनोदंबुलै तनरु नी माय
नाधारभूतमै यखिललोकमुल । माधव ! ताल्चु नी महनीय तनुवु
अहिराजतल्प! नीयलरु वैभवमु । महिमसूडग नवाङ्मानसगोचरमु
शरणागतत्राण ! सर्वलोकेश ! । शरणार्थुलगु मम्मु जनुगाव नीकु
गावुन त्रैलोक्य कंटकुंडैन । रावणु बौलियिंचि रक्षिपु मम्मु
माकोक कार्यंबु मसलक चेसि । लोककीर्तुल बौन्दु लोकैकविनुत!
निर्मलचित्तुंडु निश्चलव्रतुडु । धर्यशीलुंडु नुत्तमगुणान्वितुडु४९०
नगुचुन्न दशरथुडश्वमेधंबु । दगजेसि मरि शुचित्वमुन नुन्नाडु
काकुत्स्थवंशुनि कांतल दलप । नेकांतलनु वारिकेनसेयराडु
नरमूर्तुलोप्पंग नालुगंशमुल । सरिसजोदर! नीवु जनियिंपवलयु
वरशक्तिसुरल कवध्युडै लोक । परितापकरुडैन पंक्तिकंधरुनि
मुनुल, गंधर्व किंपुरुषुल, सुरल । बनिवडि नोञ्चिन पापात्मु जंपि

भक्तियोग के अतिरिक्त अन्य बातों (उपायों) से आपको देख (पहचान) सकना क्या सम्भव है ? (नहीं है।) हे मधुसूदन ! आप पर मन में विश्वास करने वाले महान् पुण्यात्माओं को कहीं विपत्तियाँ होती हैं ? (नहीं)। आपकी माया के कारण जगत् की सृष्टि, स्थिति, संहार के कार्य (आपके लिए) लीला मात्र ही तो हैं। हे माधव ! आपका महनीय तन अखिललोकों को आधारभूत हो कर धारण करता है। हे शेषशायी ! आपके विलसित वैभव (और) महिमा, ध्यान देने पर, आवाङ्मानसगोचर (वाक् और मन से अतीत) हैं। हे शरणागतत्राण ! (शरणागतों की रक्षा करने वाले) ! सर्वलोकेश ! हम शरणार्थियों की रक्षा आपको करनी चाहिए। अतः त्रिलोक-कंटक बने रावण का वध करके हमारी रक्षा कीजिए। हे लोकैकविनुत (स्तुत्य) ! हमारा एक कार्य अविलम्ब करके लोक (में) कीर्ति पाइए। निर्मलचित्त, निश्चलव्रती, धर्मात्मा, उत्तमगुणसमन्वित—॥ ४९० ॥

—दशरथ अश्वमेध यज्ञ पूरा करके परमशुचि (पवित्रता को प्राप्त) हुआ है। (उस) काकुत्स्थ-वंशी (दशरथ) की स्त्रियों का विचार करें तो कोई भी स्त्री उनकी बराबरी नहीं कर सकती। हे सरसिजोदर ! (कमलगर्भ) आपको चार अंशों में नरमूर्तियों (श्रेष्ठ नर) के रूप में जन्म लेना चाहिए। वर (की) शक्ति से जो देवताओं के लिए अवध्य है, जो लोक-परिताप-कर (लोक को दुख देनेवाला) है, जिस पापात्मा ने मुनियों, गन्धर्व, किंपुरुष, देवताओं को रुचिपूर्वक सताया है, उस पंक्तिकंधर (रावण) का वध करके,

सवनमुल् सेयिंपु संयमिवरुल । भुवनमुल् रक्षिपु पुंडरीकाक्ष !'
यनि विन्नपमुसेयु नमरुल जूचि । वनदगर्जितगति वनजाक्षुडनियें
'सुरलार! मीरिंक सुखमुन नुंडु । डरिगि मर्त्यमुन ने नवतारमंदि
यादट बंधुमित्रामात्यपौत्र । सोदरयुतु दशास्युनि गीटडंचि
निंडार नेलेंद नियतितो वदुनों । कंडु वेलेंडुलु गुंभिनीतलमु५००
नजुनि वरंबुन नवनीतलमुन । रजनीचरेंद्रुंडु राजिल्ल गलिगें'
ननुचु वरंबिच्चि यजुनि वीड्कोलिप । यनिमिपुलनु वंपि यसुरारि
सनियें ५०२

दशरथुनकु यज्ञपुरुषुडु दिव्यपायसमोसगुट

नप्पुडु विमल होमाग्नि लो नुंडि । यॊप्पेंडु पुण्यात्मु डॊक दिव्यमूर्ति
हरिनील नीलांगुडरुणांवरुंडु । तरुणार्कतेजु डुदग्रविक्रमुडु
परग वायसमुतो वसिडिपात्रंबु । गरमुन धरियिंचि ग्रक्कुन वेंडलि
तनु जूचि यद्भुतादरमुन लेचि । विनयाढ्युडै युन्न विभुनि वीक्षिंचि

सयमिवरों (मुनियो) से सवन (यज्ञ) करवाइए; और हे पुंडरीकाक्ष (कमलनयन)! भुवनों (लोकों) की रक्षा कीजिए।' ऐसा कहकर विनती करने वाले अमरों को देखकर, घन-गरज के समान (गम्भीर स्वर में) वनजाक्ष (कमलनयन) ने कहा—'हे देवताओ ! तुम लोग जाकर अब से सुखी रहो। मर्त्य (लोक) में मैं अवतार लूँगा और तब वन्धु, मित्र, अमात्य (मंत्री), पौत्र, सोदर (सहोदर-) युत हो दशास्यु (दशानन) का नाश करके, कुभिनी (पृथ्वी-) तल पर ग्यारह हजार वर्ष तक, नियमपूर्वक परिपूर्ण रूप से, शासन करूँगा। ॥ ५०० ॥

—अज (ब्रह्मा) के वर से (ही) अवनीतल (पृथ्वी) पर रजनीचरेन्द्र (यह राक्षसराज) विराजमान हो सका है।' यों कहते हुए वर प्रदानकर अज को विदाकर, अनिमिषों (देवताओं) को भेजकर असुरारि (दैत्यों के शत्रु, विष्णु) चले गए। ॥ ५०२ ॥

दशरथ को यज्ञपुरुष का दिव्य पायस देना

तव विमल होम की अग्नि से शोभायमान, पुण्यात्मा-स्वरूप एक दिव्य मूर्ति जो हरिनील नीले (श्यामल) अंगवाला, अरुण अंबर (लाल रंग के वस्त्र) वाला, तरुणसूर्य के समान तेज वाला, उदग्र विक्रमी था, शोभा से पायस (खीर) से (भरे) स्वर्ण-पात्र को हाथ में धारण कर, अकस्मात् वाहर आया। उस (दिव्यमूर्ति) को देख, राजा (दशरथ) अद्भुत

'भूनाथ! विनु यज्ञपुरुषुंड सुतुल । ने नीकु नीगोरि येतेञ्चिनाड
नादट नी पायसान्नंबु पंचि । नी देवुलकु बेट्टुनिष्ठतो' ननिन
ननुरागमुनु बोन्दि यवनीशुडतनि । ननयंबु बूजिंचि या पायसंबु
दा नंदुकोनियें सुधाकलशंबु । जेनंदुकोन्न शचीपति माड्कि५१०
नंत ब्राजापत्युडट्टु मायमैन । नंत:पुरंबुनकरिगि भूविभुडु
रमणुलेंदुर्कोनि प्रमदाब्धि देल । नमर निर्मितमैन या पायसंबु
सगमु गौसल्यकु सगमुलो बुच्चि । सगमु सुमित्रकासगमुलो सगमु
गैककु निच्चि युत्कंठ नासगमु । ब्राकटबुंग सुमित्रकु निच्चे मरियु
नप्पायसान्नंबु लर्थि भुजियिंचि । यप्पुडु गर्भिणुलैरि वारेलमि
दगिलि वारल जूचि दशरथेश्वरुडु । मिगुल नानंदिंचि मेरसे जूपरकु
मोगि ऋश्यश्रृंगादि मुनुल भूपतुल।दगुनर्चनमु लिच्चि तग वीडुकोलिपि
परमानुरागुडै पडतुलु दानु । धरणीशुडपुडयोध्यकु नेगुदेञ्चे
दम यागभागमुल् दगिलि कैकोन्न । यमरुलु दमलोकमरिगेडु चोट५१९

(आश्चर्य और) आदर भाव से उठ खड़े हुए, विनय से सम्पन्न राजा को देख वे बोले—'हे भूनाथ ! सुनो, मैं यज्ञपुरुष हूँ। तुम्हें पुत्रप्रदान करने की इच्छा से आया हूँ। प्रीति के साथ यह पायसान्न (क्षीरान्न) अपनी देवियों में बाँट दो।' ऐसा कहने पर राजा ने अनुराग पाकर (सन्तुष्ट होकर) उन (दिव्य पुरुष) की अतिशय पूजा की (और) उस पायस को यों ग्रहण किया जैसे शचीपति (इन्द्र) ने सुधाकलश को ग्रहण किया था। ॥ ५१० ॥

—तब प्राजापत्य (अग्निदेव) के अन्तर्द्धान हो जाने पर राजा अन्त:पुर में गए; रमणियों (रानियों) ने (उनका) स्वागत किया और (सभी) आनन्द में मग्न हो गए। (तब राजा ने) अमर-निर्मित उस पायस का आधा भाग कौसल्या को, (और) शेष आधे में आधा भाग सुमित्रा को दिया, बचे हुए भाग का आधा कैकयी को और आधा सुमित्रा को, फिर उत्कंठा के साथ, दिया। फिर उस पायसान्न को इच्छा से खाने (ग्रहण करने) के बाद, वे (रानियाँ) संतृप्त हो, गर्भवती हुईं। अनुरक्ति के साथ उन्हें देखकर दशरथेश्वर (राजा दशरथ) बहुत प्रसन्न हुए और देखने वालों को शोभायमान दिखाई पड़े। निदान (राजा ने) ऋष्यश्रृंगादि मुनियों (और) भूपतियों को उचित रूप से अर्चन (सम्मान) कर, समुचित रूप से विदा कर दिया। तब परमानुरक्त हो राजा स्वयं और (अपनी) स्त्रियों के साथ अयोध्या में आए। अपने अपने यज्ञ-भाग को प्रेम से लेकर अमरों के अपने लोक में जाते समय—॥ ५१९ ॥

ब्रह्म देवतलनु वानरलुगा बुट्टुडनुट

नाकंजगर्भु डिंद्रादुल जूचि। 'लोकरक्षणकळालोलुडै शौरि ५२०
धारुणि पै नवतारंबु सेय। मीरुनु दोड्पाटु मेकोंनवलयु
नट्टगान लोकहितार्थवर्तनुल। वट्टुपराक्रम रूप वल पयोनिधुल
वलगर्वमुल मिम्मु ब्रतिवोल्प जालु। वलियुर वानरपतुल वेक्कंड्र
गिन्नर गंधर्व खेचर यक्ष। पन्नगामर सिद्ध भामिनुलंदु
बुट्टिपुडे मुन्नु पुट्टिंचिनाड। नेट्टन वलपयोनिधि जांववंतु
नदियेट्टिदनिन ने नावुलिचुटयु। नुदयिंचे जिरतरायुष्मंतुंडतडु'
ननि ब्रह्म दमतोड नार्नतिच्चुटयु। विनि संतसिल्लि या वेल्पुलंदरनु
अनिमिपपति वालि, ननलुंडु नीलु। निनुडु सुग्रीवु, सुरेज्युंडु दारु,
सिंधुवल्लभुडु सुपेणु गुह्यकुडु। गंधमादनु विश्वकर्मयु नलुनि
दिविजवैद्ययुगंबु द्विविदमैदुंलनु। दिविरि पर्जन्याधिदेवत शरभु ५३०
गरुवलि हनुमंतु गडगि पुट्टिप। धरणि बुट्टिंचिरि दक्किन सुरलु
दमतम यंशमुल् दगवुच्चि पेंचि। यमितशौर्युल वानराधीशवरुल

देवताओं को वानरों के रूप में जन्म लेने के लिए ब्रह्मा का कहना

—वह कंजगर्भ (ब्रह्मा) इंद्र आदि (देवताओं) को देखकर यों बोले:— 'लोकरक्षण-कला में आसक्त होकर शौरी (विष्णु) के ॥ ५२० ॥

—धारुणी (धरती) पर अवतार लेते समय, आपको भी (उनकी) सहायता के लिए तैयार हो जाना चाहिए। ऐसा हो, (इसलिए) तुम लोकहितार्थ वर्तन वाले, अत्यधिक पराक्रम, रूप, वल के पयोनिधि (समुद्र) के सम, वलगर्व (अत्यधिक वल) में अपने समान वलवान् कई वानरों को किन्नर, गन्धर्व, खेचर, यक्ष, पन्नग, अमर (तथा) सिद्ध स्त्रियों (के गर्भ) से उत्पन्न करो। मैं पहले ही वल-सिन्धु जाम्ववान् को जन्म दे चुका हूँ। वह कैसे? मेरे जम्भाई लेने से उस चिरतर आयुष्मान ने जन्म लिया है।' इस तरह ब्रह्मा के अपने को आदेश देने पर, (उस आदेश को) सुनकर, वे सव देवता प्रसन्न हुए। (तव) इन्द्र ने वालि को, अग्नि ने नील को, सूर्य ने सुग्रीव को, वृहस्पति ने तारु को, वरुण ने सुपेण को, कुवेर ने गंधमादन को, विश्वकर्मा ने नल को, अश्वनीकुमारों ने द्विविद और मयंद को, पर्जन्य ने शरभ को, ॥ ५३० ॥

—(और) वायु ने हनुमान् को उपक्रम कर जन्म दिया। (तव) अन्य देवताओं ने अपने अपने अंश (तेज) देकर, अमित शौर्य से युक्त श्रेष्ठ वानराधीशों को उत्पन्न किया। वे (सभी) वानर जगत् के आप्त-वर्तन

नावानरुल् जगदाप्त वर्तनुलु । दावाग्नि - तुल्युलुदग्र - विक्रमुलु
पर्वताकारुलै भासिल्लुवारु । सर्वलोकमुलंदु सरिलेनिवारु
भीमसाहसिकुलै पॅम्पारुवारु । गामरूपंबुल गरमॊप्पुवारु
दरिमि यब्धुलैन दाटॆडुवारु । मॆरमि कॊण्डलनैन मीटॆडुवारु
नखदंष्ट्रहेतुलै नलिग्रालुवारु । नखिल लोकोत्तरुलै यॊप्पुवारु
धारुणिनैन निदारिंचुवारु । नै रूढिकॆक्कि युदात्तुलै मिंचि
कॊन्दरु सुग्रीवु गॊन्दरु वालि । गॊन्दरु हनुमंतु गॊन्दरु नीलु
गॊन्दरु नलमैंदकुमुदुल गॊलिचि । यॆन्दु नभेद्युलै येपु दीपिंप५४०
मलयदर्दुर गंधमादन विंध्य । मुलु मॊदलगु शैलमुल, गाननमुल
बहुजल नदनदीप्रांत देशमुल । विहरिंचुचुंडिरि वेड्कतोनंत५४२
महनीय पायस महिमचे जेसि । यहिमांशुकुलु पत्नुलंदु गर्भंबु
ललवड नाधानमैनदि मॊदलु । कलिमि गैकॊनॆ बेदकौनुलॆन्तयुनु
नमृतान्नरुचि लोन नडगक वॆलिकि । गर्मकिंचॆनन देहकळ वॆल्लवारे,
रावणसाम्राज्य रम मुक्कु नल्पु । गाविंचुटकु सूचकमुलिवियनग

(शुभकारी), दावाग्नि तुल्य, उदग्र विक्रमी, आकार में पर्वत के समान, सर्वलोकों में असमान, भयंकर साहस से युक्त, शोभायमान, कामरूपी, आज्ञा पाकर समुद्रों को भी पार कर जाने वाले, (अपनी) शक्ति से पहाड़ों को भी उखाड़ फेंकने वाले, नख और दांत रूपी हथियारों से अतिशय शक्ति वाले, अखिल लोकोत्तर (अलौकिक) शक्तिशाली, पृथ्वी तक को चीर-फाड़ डालने वाले, उदात्त (वे वानर) प्रसिद्ध हुए। (उनमें) कुछ लोग सुग्रीव की, कुछ वालि की, कुछ हनुमान् की, कुछ नील की, कुछ नल, मयंद, कुमुद की सेवा करते रहे। वे (वानर) सर्वत्र अभेद्य हो, (अपनी) श्रेष्ठता से प्रकाशित होते हुए, ॥ ५४० ॥

—मलय, दर्दुर, गन्धमादन, विन्ध्य आदि पर्वतों (और) काननों तथा बहुजल से युक्त नद-नदी प्रान्तों में, बड़े आनन्द के साथ विहार करते रहे थे। ॥ ५४२ ॥

—तब उस महनीय पायस की महिमा से उस हिमांशुकुल (चन्द्रवंशी?) राजा की पत्नियों ने गर्भ धारण किया। तब से (गर्भधारण के बाद) लेकर उनकी (रानियों की) क्षीण कटियाँ पुष्ट होने लगीं। देह की कान्ति श्वेत पड़ने लगी मानों अमृतान्न (दिव्य पायस) की कान्ति भीतर ही भीतर न समा सकी, बाहर भी व्याप्त हुई। रावण की साम्राज्य-लक्ष्मी की नाक को कालिख लगाने की सूचनाएँ ये हैं, ऐसा कहने के लिए और समस्त

ननपत्यतादोषमंतयु वेडल । मौनसेनादगे जनु मुक्कुल नल्पु
चेक्कुलु पलुकेक्के जिट्टुमुलु वलिसे। निक्के नाभुलु वळुल् नेरुलकुवासे
दलचूपे गोर्कुलंतट ग्रमंबुननु । नेललु दोम्मिमिदियु निंडिनपिदप५४९

श्री रामावतारमु

वर्णित मधुमासवरशुक्लपक्ष । पूर्णयौ नवमिनि बुधवासरमुन५५०
महि बुनर्वसुतार मध्याह्नवेळ । ग्रहपंचकमु नुदग्रस्थिति दनर
दोलगक गुरुडु जंद्रुडु गूडियुंड । ललितकर्काटकलग्नंबुनंदु
सर्वलोकाधारु जगदेकवीरु । शर्वादि देवता संस्तूयमानु
दिव्यलक्षणकळा देदीप्यमानु । नव्ययु नसमानु नार्तार्तिहरणु
भव्यु जिदानंदु वरमकल्याणु । दिव्युल रक्षिचु दीनार्तिहरणु
गुणगणालंकारु गुरुकीर्तिहारु । फणिराजशयनु श्रीपति हृषीकेशु
ना कमलोदरु नर्द्धांशमुन । काकुत्सकुलु रामु गनियें गौसल्य
यदिति यिंद्रुनिगन्न यनुवुन दूर्पु । सुदति चंद्रुनि गन्न चोप्पुन नंत
भूलोकविनुतमौ पुष्यनक्षत्र । लालितंबगु मीन लग्नंबुनंदु
गमलाप्तसमतेजु गमलाप्तवंशु ।गमलाक्षि भरतुनि गनियें गैकेयि५६०

अनपत्यता-(सन्तान-हीनता का) दोप मानों शरीर से निकल रहा हो, उनके कुचाग्र काले होने लगे। कपोल पतले पड़ गए। थूक ज्यादा आने लगी। नाभियाँ उभरने लगी। त्रिवलियों की रेखाओं की कुटिलता दूर हो गईं। (अनेक वस्तुओं को पाने की) इच्छाएँ उत्पन्न हुई। इस प्रकार धीरे-धीरे नौ महीनों के समाप्त होने पर, ॥ ५४९ ॥

श्रीराम का अवतार (जन्म)

—प्रशंसनीय मधुमास (चैत्रमास) के श्रेष्ठ शुक्लपक्ष में, पूर्ण नवमी तिथि, बुधवार को, ॥ ५५० ॥

—पुनर्वसु नक्षत्र में, मध्याह्न के समय, ग्रह-पंचकों के उच्चस्थिति में शोभायमान रहते समय, गुरु और चन्द्र के अचंचल योग के रहते हुए, ललित कर्क लग्न में, सर्वलोकाधार, जगदेकवीर, शर्व (इन्द्र) आदि देवताओं से स्तुत्य, दिव्य लक्षणों से देदीप्यमान, अव्यय, असमान, आर्तजनों की आर्ति को हरने वाले, भव्य, चिदानन्द, परमकल्याण (प्रद), देवताओं के रक्षक, दीनार्तिहरण, गुणसमूह से अलंकृत, महान् कीर्ति से युक्त, शेषशायी, श्री (लक्ष्मी के) पति, हृषीकेश, उस कमलगर्भ (विष्णु) के अर्द्धांश के रूप में, काकुत्स्थवंशी श्रीराम को कौसल्या ने जन्म दिया।

प्रणुतिंपदगुनट्टि फणितार यंदु । गणितकर्कटकलग्नंबुन गवल
धवळलोचन सुमित्रादेवि मित्र । चरितुल लक्ष्मण शत्रुघ्नुल गनें
दिविम्रोसें नपुडु देवदुंदुभुलु । दिविनाडिरपुडु देवकामिनुलु
सौरिदि बुव्वुलवान सोनलै कुरिसें । बरितोषमंदिरि ब्रह्मादि सुरलु
गलय नयोध्यलो गलवारलेल्ल । वेलसिरुत्सवमुल वीरु वारनक
अप्पुडु दशरथुडनघु वसिष्ठु । रप्पिंचि जातकर्ममुल सेयिंचि
पुत्रोत्सवंबुनु बौरयिंचें नेलमि । नेत्रोत्सवंबुगा निखिल पौरुलकु
बुरुडु दीरिन यंत बुण्याहवेळ । 'वरुस ना सुतलकु वंशोन्नतुलकु
नामकरणमुलु नलुवुरकिप्पु । डेमरकीवु सेयिपु वसिष्ठ'
यनवुडु 'नौगाक' यनि तन मदिनि । गनुगोंनियतडुनु गौसल्यसुतुकु ५७०
रमुक्रीडयनि धातु राजिल्लुचुंड । रमयति यनर्नोप्पु रामनामंबु
कैकेयि तनयुंडु घन वलान्वितुडु । सुकुमार तनुडु सुश्लोकुंडु गान
भरतनामंबुन बरुगु, सुमित्र । किरवैन सुतुलकु निंपुसोम्पसग

जिस प्रकार अदिति ने इन्द्र को और प्राच्य (दिशा)-सती ने चन्द्र को जन्म दिया था, उसी प्रकार भूलोक-विनुत (प्रख्यात) पुण्य नक्षत्र युक्त मीन लग्न में कमलाप्त (सूर्य) सम तेज वाले सूर्यवंशी भरत को, कमलनेत्रों वाली कैकयी ने जन्म दिया। ॥ ५६० ॥

—स्तुत्य फणितारा (आश्लेषा नक्षत्र) युक्त कर्क लग्न में तरल लोचनों वाली सुमित्रा ने समान चरित्र वाले जुड़वे लक्ष्मण और शत्रुघ्न को जन्म दिया। तब आकाश में देवदुंदुभियाँ बज उठीं, स्वर्ग में देवस्त्रियों ने नृत्य किया, पुष्पों की अत्यधिक वृष्टि धाराओं के रूप में होने लगी, ब्रह्मादि देवता परितुष्ट हुए, अयोध्या में रहने वाले सभी लोगों ने उत्सव मनाया। तब दशरथ ने पुण्यात्मा वसिष्ट को बुलाकर, जातकर्म करवाए। समस्त पौर-जनों को नेत्रोत्सव प्राप्त हो, इस प्रकार आनन्द से पुत्रोत्सव मनाया। जात शौच के समाप्त होते ही एक पुनीत दिन को (राजा ने वसिष्ट से कहा) 'हे वसिष्ट ! क्रम से मेरे पुत्रों को, वंशोद्धारकों को, इन चारों को अविलम्ब आप नामकरण करवाइए।' (राजा के) ऐसा कहने पर, हामी भरकर, अपने मन में सोचकर उन्होंने (वसिष्ट ने) कहा कि कौसल्या के पुत्र को, ॥ ५७० ॥

—'रम्' अर्थात् 'क्रीडा' नामक धातु के विराजमान होते देख, 'रमयति' अर्थ देने वाला रामनाम उचित रहेगा। कैकयी का पुत्र अधिक बलान्वित सुकुमार शरीर वाला, कीर्तिवान् होने से भरत के नाम से प्रवर्तित होगा। सुमित्रा के योग्य पुत्रों के सुन्दर तथा श्रेष्ठ गुणों का विचार करने से उनके

लक्ष्यंवु गुणमुलु लक्षिंचि चूड । लक्ष्मण शत्रुघ्नुलनु नाममौदवु
गान वीरुलु महाघनपुण्यमहिमु । लीनलुवुरकुनु निवि नाममुलन
लक्ष्मी समन्वितुलकु रामभरत । लक्ष्मणशत्रुघ्न ललिताख्यलसग
नोंगि नामकरणंवुलोप्प गाविंचि । तग नर्द्धकोटुलु दानंवुलिच्चे५७७

दाशरथुल वाल्यमु

वारुनु दल्लुलु वरुस दादुलुनु । वोरामि दमु नर्थि वोपिंप वेरिगि
कल्लरि नगवुल गन्नुलु देरचि । यल्लनल्लन दप्पुटडुगुलु वेट्टि
मल्लडिगोनु लोवकुमाटलु नेर्चि । येल्लवारिकि जाल निंपु लोनर्चि५८०
कोद्दिगा मुत्तेम्पु गोनवुवज्राल । मद्दिकायल डालु मलय जेक्किकळ्ळ
ब्राकटंवुग फालबालेंदु कळल । श्रीकराकृति राविरेकलल्लाड
वोगडोन्दु मगराल पुलिगोळ्ळ गोलुसु । जिगि डेन्दमुलयंदु जिदुलु द्रोक्क
नेडनेड वलुपच्चले यड्डिगलुग । गडुनोप्पु मोलनूगंटलु मोरय
मुव्वलंदेलु पदंवुल रोदल् सेय । नव्वुलाटल वाल्यनटनलेपंडग
विद्देलु नेरपुचु विभुनि मुंदरनु । मुद्दलुगुलुकुचु मोहनाकृतुल

लिए लक्ष्मण तथा शत्रुघ्न नाम (उपयुक्त) होंगे । इसलिए वीर, महाघनपुण्यमहिमा से युक्त इन चारों के ये नाम होंगे ।' 'उन लक्ष्मी-समन्वित (राजकुमारों) को राम, भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न आदि ललित नाम देकर (राजा ने) नामकरण-संकस्कार सम्पन्न किया और अर्द्ध कोटि (धन) दान में दिया । ॥ ५७७ ॥

दाशरथियों का वाल्य (वचपन)

वे (वालक) माताओं तथा धाइयों के स्नेह और इच्छा से पालन-पोपण के कारण वढ़ने लगे । वे कृतक (भोली-भाली) हँसी के साथ आँखें खोलने लगे, धीरे-धीरे अटकटाते हुए चरण धरने लगे, वालोचित तुतली वोली सीखकर सभी लोगों को अत्यन्त आनन्द प्रदान करने लगे । ॥ ५८० ॥

—कतिपय मोती (और) मनोहर वज्रों से वने कर्णालंकार की छवि (उनके) कपोलों पर प्रतिविम्वित हो रही थी । स्पप्ट रूप से भालरूपी चन्द्रकला पर श्रीकर, पत्ते के आकार वाला आभूपण शोभा दे रहा था । श्रेष्ठ मणियों से खचित वघनखाओं के हार की शोभा वक्षस्थल पर विराज रही थी । स्थान-स्थान पर (वीच-बीच में) हरे रंग की मणियों से युक्त कंठहार था । अति सुन्दर करधनी के घुंघुरू वज रहे थे । घुंघुरूदार नूपुर चरणों में मुखरित हो रहे थे । हँसते-खेलते वे वालक्रीड़ाएँ करते

नंतना नलुवुरु नभिवृद्धि बौन्दि । संततपुण्युलु समसत्त्वुलगुचु
दमलोन गवगूडि दशरथात्मजुलु । रमणीयमूर्तुलु रामलक्ष्मणुलु
भरतशत्रुघ्नुलु पायक चेलिमि । निरतुलैयुंडिरि नेगडि यौकनाडु
मायाविनोदमुल्मरिगि याडगनु । नायेंड रघुरामुडाप्तुलु दानु५९०
निंडारु प्रेमतो नेट्टलु गट्टि । चेन्डुनु दंडंबु चेलुवोप्प बट्टि
तरमिडि याडेडुतरिनि गैकेयि । वरवुडामंथर वडि नेगुदेञ्चि
चिट्टंटु चेतल जेन्डु दट्टुटयु । गट्टल्क रामुडाकाष्टंबुचेत
नडचिन नौक्क कालप्पुडे विरिगे । दडयक यंदंद दमकिंचि रामु
नडरेडु वेड्कतो नाडंग जूचि । दडयक रामुपै दगग्रूरमुंचि
विरिगिन कालितो वेस गैकनगरि । करिगि तद्वृत्तांतमंतयु देलुप
दरमिडि कैकेयि दशरथाधिपुन । केरिगिंप नंतयु नेरिगि भूविभुडु
अलवसिष्ठुनि नयोध्यकु राविंचि ।वलगोनि म्रोक्कि 'यो वरमुनिचंद्र!
वीरिकि वेदादि विद्यलन्नियुनु । नेरुपु' डनुचु ना नृपुडप्पगिंप
ननघुंडम्मुनिनाथु डट्ल काविंचे ।जननाथु तनयु लासंयमि करुण६००

हुए राजा के सामने अतिप्रिय रूप में, मनोहर आकृतियों के साथ अपनी विद्याएँ प्रदर्शित करते थे। इस प्रकार विकास को प्राप्तकर, सतत पुण्यवान (और) सम सत्त्व (शक्ति) वाले होते हुए दशरथ के वे चारों पुत्र आपस में जोड़ियां बना लेते। रमणीय आकार वाले राम और लक्ष्मण तथा भरत (और) शत्रुघ्न (जोड़ी बनाकर) निरन्तर प्रेम भाव में मग्न रहते। वे एक दिन माया-बिनोद में मग्न होकर खेल रहे थे। उस समय रघुराम आप्त मित्रों और स्वयं, ।। ५९० ।।

—बड़े प्रेम से जोड़ियाँ बनाकर, गेंद तथा डंडे को सुन्दर रूप से हाथ में लेकर अतीव प्रीति से खेल रहे थे। उस समय कैकयी की दासी मंथरा वेग से वहाँ आई और कुतूहलवश गेंद को रोक लिया। (इस पर) राम ने अत्यन्त क्रोध से उस डंडे से (उस पर) प्रहार किया, (जिससे) उसी समय उसकी टाँग टूट गई। (इसके पश्चात् भी) वह (मंथरा) वहीं रुक कर राम को अधिक उत्साह से खेलते देखकर उन पर क्रुद्ध हुई, (और तब) देरी न करके राम पर मन में क्रोध रखकर, टूटी टाँग से कैकयी की नगरी (महल) में जाकर, (उसने) वह सारा वृत्तान्त कह सुनाया। कुतूहल से कैकयी ने दशरथ राजा को सुनाया। (यह) सब कुछ जानकर राजा ने उन वसिष्ट को अयोध्या में बुलाकर, भक्तिभाव से प्रणाम कर बोले, 'हे श्रेष्ठ मुनिचन्द्र ! (आप) इनको वेद आदि सारी विद्याएँ सिखाएँ।' यह

गरिहयारोहण क्रममुलॆंरिंगि । वररथारोहण वैखरुल्दॆलिसि
यखिलवेदंबुलु नखिलशास्त्रमुलु । नखिल शस्त्रास्त्रविद्यलु नॆर्चिरॊप्प
वारिलो रामुडवार्यशौर्यमुन । सारविवेकादि सद्गुणावळुल
देजरिल्लुचु विष्णुदेवुंडुगान । राजिल्लॆ ना दशरथुडुनु नंत६०४

विश्वामित्रुडु दशरथुनिकडकु वच्चुट

गॊडुकुल पॆण्ड्लिड्लु कॊमरॊप्प जेय । नडरि चिंतिप विश्वामित्र मौनि
वच्चि निल्चुटयु दौवारिकुल्दॆलिसि । वच्चि या दशरथवरु नर्थि जूचि
'यवधारु देव ! विश्वामित्रमौनि । दिविरि वाकिट नॆगुदॆञ्चियुन्नाडु'
अनवुडु दशरथुंडाप्तुल तोड । मुनि वसिष्टुडु दानु मुदमुतो नपुडु
परमेष्टि कॆदुरेगु पाकशासनुनि । करणि नॆदुर्कॊनि कडुभक्ति नॆरगि
यम्मुनि गॊनिपोयि यर्घ्यपाद्यमुल ।नॆम्मि बूजिचिन नृपु जूचि यतडु६१०
'कुशलमे प्रजलकु? गुशलमे नीकु? । गुशलमे नी मुद्दु कॊडुकु गुर्रलकु?

कहकर राजा ने बालकों को सौंप दिया, उस पुण्यात्मा मुनिवर ने वैसा ही किया। राजकुमारों ने उस संयमी की करुणा से, ॥ ६०० ॥

—हाथी-घोड़े की सवारी के क्रम को जानकर, श्रेष्ठ रथ के आरोहण की प्रक्रिया को जानकर, अखिल वेद, अखिल शास्त्र, अखिल शस्त्र-अस्त्र विद्याओं को उचित रीति से सीख लिया। उनमें राम अवार्य शौर्य, सार-विवेक आदि सद्गुणावलि से तेजस्वी बन, स्वयं विष्णुदेव होने से विराजमान हुए। उस (समय) दशरथ, ॥ ६०४ ॥

विश्वामित्र का दशरथ के पास आना

—(अपने) पुत्रों के विवाह मनोहर (उत्तम) रूप से करने के चिन्तन में प्रवृत्त हुए, (तो एक दिन) विश्वामित्र मुनि आकर (द्वार पर) खड़े हुए। द्वारपालों ने (उस बात को) जानकर उस दशरथ-वर की ओर इच्छा (प्रेम) से देखकर विनय की, 'हे देव (प्रभू)! विश्वामित्र मुनि कुतूहलपूर्वक (कोई इच्छा लेकर) द्वार पर आए हुए हैं।' तब दशरथ ने आप्त जन तथा मुनि वसिष्ट के साथ प्रसन्न भाव से, परमेष्ठी ब्रह्मा का स्वागत करने के लिए जाने वाले पाकशासन (इन्द्र) के समान, (विश्वामित्र की) अगवानी की। अति भक्ति से प्रणामकर, उस मुनि को ले जाकर, अर्घ्य-पाद्य (आदि) से सप्रेम पूजा की। राजा (दशरथ) को देखकर वे (विश्वामित्र) बोले, ॥ ६१० ॥

—'(हे राजन्) तुम्हारी प्रजा सकुशल है न? तुम कुशलता से हो

विशदव्रताचार विनुत! वसिष्ट!। कुशलमे ? मुनुलार ! कुशलमे ?'
यनिन
'नेमिट गौरत लेदेमु धन्युलमु। ना मंदिरमु पावनम्मु चेन्नोंद
भावितमूर्ति! यो परम मुनींद्र! । नीवु विच्चेसिति नेडु माकडकु
गान लोकमुल प्रख्यातुडनैति । मानवाधिपुललो मान्युंडनैति
वच्चिन कार्यंबु वलनोप्प जेप्पु । डिच्चमै जेसेद ने कार्यमैन'
ननिन विश्वामित्रु डाराजु जूचि।'जननाथ! दशरात्रसवनंबु दोंडरि६१७

यज्ञरक्षणार्थमै रामुनि बंपुमनुट

कोरि ये जेयुचो ग्रूर राक्षसुलु । दारुणाकारुलिद्दरु वच्चि वच्चि
मा यागशाललो मांसरक्तमुलु । पायक कुरियुचु प्रबल विघ्नमुलु
सेयुचुनुन्नारु क्षितिपाल ! माकु । ना यागमध्यंबुनं दल्गरादु ६२०
अट्टु गान नी पुत्रु नभिरामु रामु । बटुसत्त्वु ग्रतुवोप्प बालिचु कोरकु
गोनिपोव वच्चिति ग्रूरुलद्दनुजु । लनि जाव रौरुलचे ननिचे गानि

न ? तुम्हारे लाड़ले पुत्र कुशल हैं न ? हे विशद व्रताचारविनुत ! (विशद व्रताचार के कारण विनुत (सराहनीय) हे वसिष्ट ! आप कुशल से तो हैं न ? हे मुनि ! आप (सब लोग) कुशल से हैं न ?' (तब राजा ने कहा)- 'हमें किसी बात का अभाव नहीं है। हम धन्य हैं। हे भावित मूर्ति ! हे परम मुनीन्द्र ! हमारे यहाँ आकर, (आपने) हमारे मन्दिर (घर) को पवित्र किया, इससे मैं (समस्त) लोकों में प्रख्यात (प्रसिद्ध) हुआ हूँ, (और) सभी राजाओं में आदरणीय बन गया हूँ। अपने आगमन का कारण सप्रेम बताइए। जो भी कार्य हो, इच्छा से उसकी पूर्ति करूँगा।' राजा के ऐसा कहने पर विश्वामित्र ने उस राजा को देखकर कहा—'हे जननाथ ! सप्रयत्न मैं दशरात्र-सवन (दसदिन वाला यज्ञ), ॥ ६१७ ॥

यज्ञ रक्षा के लिए राम को भेजने के लिए कहना

—करने का विचार कर (जब भी) मैं (आरंभ) करता हूँ तो भयंकर आकार वाले दो क्रूर राक्षस आ-आकर, हमारी यज्ञशाला में निरन्तर मांस (और) रक्त बरसा कर प्रबल विघ्न डालते हैं। हे क्षितिपाल (राजा) ! हम (ऋषियों) को यज्ञ-मध्य में (यज्ञ की सफलता के लिए) क्रोधित नहीं होना चाहिए। ॥ ६२० ॥

इसलिए तुम्हारे पुत्र अभिराम (मनोहर), महाबली राम को यज्ञ-रक्षा के लिए ले जाने आया हूँ। वे क्रूर राक्षस सिवाय राम के, युद्ध में और

नितनि महत्त्व मे नेरुगुदु ब्रह्म । सुतुडैन यी वसिष्ठुडुनु नेरुगु
ननघ ! रामुडु वालुडनु वुद्धिमानु । मनघ ! नी पुत्रकुंडनु लोभमुडुगु
क्रतुकर्त क्रतुमूर्ति क्रतुभागभोक्त । यतडु लोकाराध्यु डतनि वुत्तेम्पु
मतुल शस्त्राशस्त्रंवु लतनि केनित्तु । नतनिचे ग्रतुरक्ष यगुमाकु' ननुडु ६२६
वेलुकुरि मूर्च्छिल्लि पेद्द ग्रोद्दुनकु । देलसि वेल्वेल वारि दीनुडै मिगुल
गलगि कंपिंचि गद्गद कंठुडगुचु । वलिके विश्वामित्रु ब्रार्थिंचि नृपुडु
'रामुडु मुग्धुंडु रामुडु निसुवु । रामुडेरुंगडु रणकळाकेळि
वदियुनु नैदेंड्ल प्रायंबुवाडु ।कदलेडि चिप्प कूकटि गलवाडु ६३०
परिकिंचि तनयंदु वगवारियंदु । नुरु वलावलगतु लूहिंपलेडु
इटुवंटि पसिबिड्ड नेट्लु वेडितिवि । कटकट घनदयाकलितुंडवय्यु
वहुचित्र शस्त्रास्त्रपरुलु राक्षसुलु । महित मायोपायमतुलु राक्षसुलु
निपुण संगरकळानिधुलु राक्षसुलु । विपुल वाहाटोपविभुलु राक्षसुलु
वारितो वोराड वशमे रामुनकु । वारेड यितडेड वरमुनिचंद्र

किसी से नहीं मारे जाएँगे । इनके (राम के) महत्त्व को मैं जानता हूँ (और) ब्रह्मा के पुत्र ये वसिष्ट भी जानते है । हे अनघ (पाप-रहित) ! 'राम वालक है' यह विचार छोड़ दो । हे अनघ ! 'मेरा पुत्र है' इस लोभ को छोड़ दो । वे (स्वयं) क्रतु (यज्ञ)-कर्ता, क्रतुमूर्ति, क्रतुभागभोक्ता हैं, लोकारध्य हैं । उन्हें भेज दो । मैं उन्हें अतुल शस्त्र-अस्त्र दूँगा । उनसे हमारे यज्ञ की रक्षा होगी ।' ॥ ६२६ ॥

(मुनि के ऐसा) कहने पर (राजा) विह्वल हो मूर्च्छित हो गए (और) वड़ी देर के वाद होश में आए । वे विवर्ण हो गए, दीन हो गए, अत्यधिक व्याकुल हुए, (शरीर-) कंपित हो गए, गद्गद-कंठ से, विश्वामित्र की प्रार्थना करते हुए राजा वोले, 'राम मुग्ध (नादान) है । राम (अभी) शिशु है । राम रण-कला-केलि (युद्ध-विद्या) को नहीं जानता । वह पन्द्रह साल का ही है । हिलते हुए (अभी सुदृढ़ नहीं वने) छोटे-छोटे वालों वाला है । ॥ ६३० ॥

—अपने तथा शत्रुओं के वल-अवल की परीक्षा कर सकने की शक्ति नही है । हाय ! वड़े दयालु होते हुए भी (आप) ऐसे छोटे वच्चे को क्यों माँग रहे हैं? राक्षस तो वहुचित्र (अनेक प्रकार के) शस्त्र-अस्त्रों से युक्त हैं । राक्षस तो महित (अधिक) माया-उपाय-मति वाले हैं । राक्षस तो निपुण-संगर (समर) कला के निधि है । राक्षस तो विपुल वाहुशक्ति के विभु (श्रेष्ठ) हैं । उनसे लड़ने की शक्ति राम में कहाँ है ? हे श्रेष्ठ मुनिचन्द्र ! वे कहाँ और राम कहाँ ? साठ हजार साल पृथ्वी पर शासन करने के वाद

इरुवदिवेलेड्ड लवनि बालिच्चि । तरिदप्पि मुदसि यीतनि गंटि नेनु
इतनि बुत्तेञ्चुट के जालनय्य । ऋतुरक्षकै विचारमुलेल मीकु ?
नेनु सेनलगूडि यीप्रोद्दे कदलि । पूनि वच्चेद निदे पॉदडु मी वेनुक
मुनिनाथ ! मी यागमुन विघ्नकर्त । लगु राक्षसुल शक्तुलवि यन्तगलवु?
वारेव्वरेव्वरु ? वारिपेरेमि । यी राघवुडु वारि नेभ्भंगि गेलुचु?' ६४०
ननिन विश्वामित्रुडनिये भूपतिकि । 'मनु पुलस्त्यब्रह्म मनुमंडु खलुडु
आविश्रवसु कोडुकखिलकंटकुडु । रावणु डुग्रसंरंभुडै पनुप
बलिसि मारीच सुबाहुलव्वारु । नलिरेगि यागविघ्नमुलु सेयुदुरु
रामुडोक्कडु दक्क रणभूमि वारि । नेमिचंदंबुन नेदुरलेरोरुलु' ६४४
अनिन नम्मक्कनि यधिपित मरियु। मुनिनाथु तो बल्के मोमोट लेक
'ब्रह्म नालववाडु परम साहसुडु । ब्रह्म चे वरमुलु वडसिनवाडु
अट्टि रावणुचेत नट्टु पंपु वडसि । नट्टि वारल गेल्व नतडेमि चालु?
वारिलावेरुगक वच्चेदननुचु ।मीरि पलिकिति; निंक मेल्लन जनुडु'

असमय, वृद्धावस्था में मैंने इसे जन्म दिया (प्राप्त किया) है। मैं इसे भेज नहीं सकता। आपको यज्ञ रक्षा की चिन्ता क्यों ? मैं सेनाओं के साथ आज ही निकलकर सप्रयत्न आपके पीछे-पीछे चलूँगा। आप चलिए ! हे मुनिनाथ ! आपके यज्ञ में विघ्न डालने वाले राक्षसों की शक्तियाँ ही कितनी हैं ? (मेरे सामने तुच्छ हैं।) वे कौन-कौन है ? यह राघव उन्हें किस प्रकार जीत सकेगा ? ॥ ६४० ॥
—(राजा ने) ऐसा कहा। विश्वामित्र ने भूपति से कहा, 'मानव रूप में पुलस्त्य ब्रह्मा का पोता, विश्रवसु का पुत्र, खल (दुष्टात्मा), अखिल (लोक का) कंटक (रूपी) उस रावण की भयंकर प्रेरणा पर, प्रोत्साहन प्राप्त करके, मारीच (और) सुबाहु नामक (राक्षस) अति ही उद्धत हो यज्ञ में विघ्न डाल रहे हैं। एक राम के सिवा रणभूमि में, किसी भी तरह से अन्य कोई उनका सामना नहीं कर सकता।' ॥ ६४४ ॥

ऐसा कहने पर आश्चर्य चकित हो राजा बिना हिचकिचाए मुनिनाथ से बोले, 'वह (रावण) चौथा ब्रह्मा है। परम साहसी है। उसने ब्रह्मा से वर प्राप्त किए हैं। ऐसे रावण से भेजे गए उन लोगों को जीतने में यह (राम) कैसे समर्थ होगा ? उन (राक्षसों) की शक्ति न जानकर, (मैंने अपनी) शक्ति से बाहर (काम के लिए स्वयं अपने भी) आने की बात कही थी। अब (आप) धीरे से चले जाइए।' ऐसा कहने पर, रोषपूर्ण लाल आँखों से (विश्वामित्र ने राजा की ओर) देखा। रुष्ट बने उनके गाल उत्कट रूप

नपुडु रोषताम्राक्षुडै चूचि । कनलुचु गटमुलुत्कटमुलै यदर
नोडलेल्ल गंपिप नुदरुचु वलिकॆ ।नडरि विश्वामित्रु डा राजु जूचि६५०
'काकुत्स्थ कुलजुल गति विचारिंप। कीकष्टदुर्भाषलेल भाषिंप ?
नेनु वच्चिन पनि येर्रिंगिंपुमंटि । पूनि चेसेंदनंटि वोन्केदविपुडु
क्रतुरक्षकै रामुगडगि वेडुटयु । श्रुतिमालि यीननि तॆग पल्कॆदीवु
सूनृतेतर निन्नु जूडगारादु । कान पोयेंद'नंचु गडगि पल्कुटयु
जलनिधुलिंकॆ भूचक्रंबु ग्रुंगॆ । गलगॆ लोकमुलु दिग्गजमुलु ग्रॊग्गॆ
दिविजुलु वेरचिरि दिशलु गीड्वडियॆ । नवशमुल् गाजॊच्चॆ नखिलभूतमुलु
अपुडु मौनि कोपाटोपवृत्ति । दप्पक भाविंचि दशरथु जूचि६५७

वसिष्टमुनि धैर्यमु चॆप्पुट

या वसिष्टुडु वल्कॆ 'नर्कवंशजुलु । भूवलयंबुन वॊन्करॆन्नडुनु
मिन्नंदु नी कीर्ति मीवारि कीर्तु । लन्नियु जॆडु गल्ललाडितिवेनि;

से हिलने लगे। सारा शरीर काँपने लगा। डाँटते हुए, रुष्ट विश्वामित्र ने राजा को देख कर यों कहा, । ॥ ६५० ॥

—'काकुत्स्थ-वंशजों की रीति पर विचार किए विना ऐसे कटुवचन क्यों कह रहे हो ? (तुमने) आगमन का कारण वताने के लिए कहा था। (यह भी) कहा था, कमर वाँधकर आपका काम करूँगा। अव (उसी वात को) झुठला रहे हो। यज्ञ-रक्षा के लिए मैंने राम को चाहा (और भेजने के लिए) प्रार्थना की थी। (तुम) हिम्मत हारकर, निर्लज्ज हो, कहते हो कि नही भेजूँगा। हे असत्यभाषी ! तुम्हारा (तो) मुँह (तक) नहीं देखना चाहिए। इसलिए मैं (यह) जा रहा हूँ।' (मुनि के) इस प्रकार इच्छा प्रकट करके कहने पर जलनिधि (समुद्र) सूख गये। भूचक्र (पृथ्वी) धँस गया। (समस्त) लोक व्याकुल हो उठे। दिग्गजों ने घुटने टेक दिए। देवता भयभीत हो गए। दिशाएँ हतप्रभ हो गई। सभी भूत (पंचभूत) अवश हो गए। तव मुनि के क्रोधावेश की कल्पना करके (परिणाम के वारे में सोच), दशरथ को देखकर, ॥ ६५७ ॥

वसिष्ट मुनि का धीरज बँधाना

—(मुनि) वसिष्ट यों वोले, "सूर्यवंशी (इस) संसार में कभी असत्य नहीं वोलते। यदि असत्य कहोगे तो आकाश को चूमने वाली (अति उन्नत) तुम्हारी कीर्ति और तुम्हारे लोगों (पूर्वजों) की कीर्ति नष्ट हो जाएगी।

'निच्चेद'ननि पल्कि यीकुन्न बोंलियु। नच्चुगा जेसिन यखिल धर्ममुलु ६६०
'दशरथाधीशुंडु धर्मात्मु 'डनग । विशद कीर्तुल नीवु विन ब्रसिद्धुडवु
पुडमिलो नवनीश! भुवनरक्षणमु । गडवंग धर्ममुल् गलवे राजुलकु
गान रामुनिनिच्चि गाधिनंदनुनि । माननीयुनि बंपु मानवाधीश !
'घन बलोन्नतुलु राक्षसुली कुमारु । डनिकि दक्षुंडुगा' डनुचु नीकोंडुकु
शैशवंबुन किंत शंकिपनेल । कौशिकुडुंडंग गलुगुने भयमु
अधिप! विश्वामित्रु नत्युग्रतपमु । लधिकसामर्थ्यबु लतिविचित्रमुलु
भूनाथ ! ई महापुण्युंडु देव । दानव गंधर्व दैत्युलकंटे
नेरुगु दिव्यास्त्रंबुलिम्महाभागु । डेरुगनि विषयंबुलेन्दुनुलेवु
जनलोकनायक जययु सुप्रभयु । ननगदक्षुनिकूतु ला जयवलन
सुप्रभवलन रक्षोवधार्थमुग । सुप्रभुंडगु भृशाश्वुंडु वेर्वेर ६७०
नस्त्राकृतुल बुत्रु लरय नेबंड्र । शस्त्राकृतुल दनूजन्मुलेबंड्र
गामरुपंबुलु गलवारि गांचि । भूमीश ! यिच्चे नी पुण्यात्मुनकुनु

'दूँगा' ऐसा कहकर (वचन देकर), नहीं देने से, शुद्ध रूप से किए गए सभी धर्म (पुण्य) नष्ट हो जाएँगे । ॥ ६६० ॥

—'दशरथ महाराज धर्मात्मा हैं'—ऐसी विशद कीर्ति से तुम प्रख्यात हो । हे अवनीश (राजन्) ! पृथ्वी में लोकरक्षा के सिवा राजाओं का अन्य (कौन-सा) धर्म (कर्त्तव्य) है ? इसलिए हे मानवाधीश ! राम को देकर माननीय गाधिपुत्र के साथ भेज दो । 'राक्षस महाबल में उन्नत हैं, यह कुमार (राम) युद्ध के लिए समर्थ नहीं है' ऐसा (कह कर) अपने पुत्र के शैशव के बारे में इतनी शंका क्यों ? कौशिक (विश्वामित्र) के रहते क्या कोई भय हो सकता है ? हे अधिप (राजन्) ! विश्वामित्र का अति उग्र तप और प्रबल सामर्थ्य अति विचित्र हैं । हे भूनाथ ! ये महा-पुण्यात्मा देव, दानव, गन्धर्व तथा दैत्यों की अपेक्षा अधिक दिव्यास्त्रों को (उनके प्रयोग को) जानते हैं । कोई भी ऐसा विषय कहीं भी नहीं है जिसे ये महाबाहु (महाबली) न जानते हों । हे जनलोक नायक ! दक्ष (प्रजापति) के जया (तथा) सुप्रभा नामक दो पुत्रियाँ थीं । उन जया से और सुप्रभा से (के द्वारा), राक्षसों के वध के लिए सुप्रभ हो भृशाश्व ने अलग-अलग ॥ ६७० ॥

—अस्त्र की आकृतियों में पचास, (और) शस्त्र की आकृतियों में पचास पुत्रों को, जो कामरूपधारी थे, प्राप्तकर, हे राजन्! इस पुण्यात्मा (विश्वामित्र) को दिया। उस कारण से ये मुनि अखिल शस्त्रास्त्रों के ज्ञाता है । तुम्हें डरना नहीं चाहिए। इस मुनि की महिमा के आधिक्य को, हाय! तुम समझ

नदिगारणंबुगा नखिलशस्त्रास्त्र । विदुडिम्मुनियु नीवु वेरवंगवलव
दीमुनि महिम पेम्पेरुगलेवकट । यीमुनितो नाडि येल तप्पेदवु ?
यीमुनिचंद्रुतो नेग रामुनकु । सेमंबु जयमुनु सिद्धम्मु सुम्मु
इतडु रक्कसुल जयिंपगालेडे । हितमति नीपुत्रु निद्धचारित्रु
नलघु शस्त्रास्त्रविद्यल बेद्द सेय । वलसि यिच्चटिकि भूवर! वच्चे गाक
कान रामुनि बंपु क्रतुवु रक्षिप ।नी निर्मलात्मुनि किच्चुट मेलु'६७८

दशरथुडु कौशिकुनि वेन्ट रामलक्ष्मणुल वंपुट

अनि वसिष्टुडु पल्क'नात्मलो नम्मि । जननाथुडारामचंद्रुनि विलचि,
वालभावमु जूचि वाष्पमुल् निंचि ।यालिंगनमुसेसि यर्थि दीविंचि,६८०
चिप्पकूकटि दुव्वि, चेक्किलि पुडिकि । तप्पक यॊक्किंत दडवु सिंतिंचि,
पुण्याहवाचनपूर्वंबुगाग । बुण्यव्रतंबुलु बुण्यहोममुलु
ग्रहपूजनलु सेसि, कमनीयवस्त्र । महितभूषणमुलु मनमारनिच्चि,
यॊगि दानु गौसल्ययुनु वसिष्टुंडु । दगिनदीवनलिच्चि, दशरथेश्वरुडु

नहीं सकते हो। इस मुनि को वचन देकर क्यों टालते हो ? इस मुनिचन्द्र के साथ जाने पर राम की भलाई (कुशल) और विजय अवश्य ही होगी। क्या ये विश्वामित्र राक्षसों को जीत नहीं सकते थे ? हित-चिन्तन के कारण, तुम्हारे पुत्र उज्ज्वल चरित्रवान् (राम) को महती शस्त्रास्त्र विद्याओं में वड़ा (श्रेष्ठ) बनाने (के उद्देश्य से ही) हे भूवर (राजन्) ! (वे) इतनी दूर आए हैं। इसलिए यज्ञ-रक्षा के लिए राम को भेजो। इस निर्मल आत्मा वाले (विश्वामित्र) को (राम को) देना ही कल्याण-प्रद है ॥ ६७८ ॥

दशरथ का कौशिक के साथ रामलक्ष्मण को भेजना

इस प्रकार वसिष्ठ के कहने पर, मन में विश्वास कर, जननाथ (राजा) ने रामचन्द्र को बुलाया, उन्हें वालभाव से (बालक मानकर) देख, आँसू भरकर, गले लगा, हार्दिक रूप से आशीर्वाद दिया ॥ ६८० ॥

—उनकी लटों पर हाथ फेरकर, कपोलों को प्यार से स्पर्श कर, थोड़ी देर सोचते रहे। (फिर) पुण्याहवाचन पूर्वक, पुण्यव्रत, पुण्यहोम (हवन), (और) ग्रह पूजाएँ करके, मन को संतोष होने तक सुन्दर वस्त्र, महति भूषण दिए। क्रमशः स्वयं (राजा), कौसल्या और वसिष्ठ ने उचित आशीर्वाद दिए। दशरथेश्वर ने पुण्य मुहूर्त के समय पुत्ररत्न को, पुण्यात्मा गाधिसुत को दे (सौंप) दिया। प्रेम और साहस—इन दोनों भावों के

पुण्यलग्नंबुन बुत्ररत्नंबु । बुण्यात्मुडगु गाधिपुत्रुनकिच्चि,
नेम्मियु देगुवयु नेरि बिरिगोनग । 'नम्मुनि गोलिचि पोम्म'नि
वीडुकोलिपे ६८६

विश्वामित्रुडु रामलक्ष्मणुल दोड्कोनि पोवुट

नप्पुडु लक्ष्मणुं डा रामु गोलिचि । तप्पनि भक्तितो दानुनु जनियें ।
बोंदिवि पुव्वुलवान बोरन गुरिसे; । वदलक यनुकूल वायुवुल्वीचें;
वरघोषमंगळ वाद्यमुल्म्रोसें; ।सुरलाकसमु निंडि चूचिरि प्रीति; ६८९
नक्षीणतूण गोधांगुळित्राण । कक्षलंबिकृपाण कलितुलै दिव्य
शरचापहस्तुलै संयमिपिरुद । गरमुसंप्रीतिमै गदलि राघवुलु
ना वनजाप्तुनि नर्थितो गोलिचि । पोवु नाश्विनुलन बोवुचो वेड्क ।
नुरुपुण्यमतु लर्धयोजनंबरिगि । सरयुवडग्गरि श्रममु बोन्दुटयु
रामसौमित्रुल रम्मनि यपुडु । दा मुन्नु दारुणतपमुचे गन्न
कनकगर्भुनि पुत्रिकल सर्वमंत्र । जननुल सर्वदा सौख्यदायिनुल
वल यतिबल यन बरगु मंत्रमुल । नेलमिमै वारलकिच्चे गौशिकुडु

मन को अधिक घेर लेने पर (भी) 'उस मुनि की सेवा करते जाओ' ऐसा कह कर विदा किया । ॥ ६८६ ॥

विश्वामित्र का राम-लक्ष्मण को साथ ले जाना

तब लक्ष्मण उस राम की सेवा कर (प्रार्थना कर) अमित भक्ति (भाव) से स्वयं भी उनके साथ गए । (उस समय) घेरकर (चारों ओर से) पुष्पवृष्टि झड़ी लगाकर हुई, निरन्तर अनुकूल वायु चलने लगा, श्रेष्ठ ध्वनि से मंगलवाद्य बज उठे, आकाश में (झुंड) भरकर, प्रीति से देवताओं ने (उस दृश्य को) देखा । ॥ ६८९ ॥

—अक्षय तूणीर, गोधा, अंगुली-त्राण, कमर में लटकते हुए कृपाण से कलित (सुन्दर) बने, दिव्य शर (और) चाप (धनुष) हाथ में ले, संयमी (विश्वामित्र) के पीछे, अधिक संप्रीति से (बड़े उत्साह से) राघव (रघुवंशी) इस प्रकार जा रहे थे मानों अश्विनी (कुमार) वनजाप्त (सूर्य) की प्रीति से सेवा कर (उनके) पीछे जा रहे हों । अधिक पुण्यचरित्र वाले वे आधा योजन जाकर, सरयू (नदी) के निकट पहुँच (पहुँचते-पहुँचते) थक गए । तब राम (और) सौमित्र को बुलाकर, प्रसन्न हो, उन्हें कौशिक ने बला, अतिबला नाम से अभिहित मंत्रों का उपदेश दिया तथा सर्वमंत्रों की जननियाँ

आ रामलक्ष्मणुलामंत्रशक्ति । नारूढ रवितेजुलै सौम्पुमिगिलि
नाकलि नीरुवट्टादिगा रुजलु । सोकक वलवृद्धि शोभिल्लिरंत
सरयूनदीतटस्थलि नाटि रात्रि । दरुणकोमल दर्भतल्पंबुलंदु
गौशिकुचे वुण्यकथलोप्प विनुचु । दाशरथुलु प्रमोदमुन निद्रिंप,७००
ना गाधितनयुंडु ना प्रभातमुन । वेगंवे मेल्कनि वेड्क चित्तमुन
दनरंग नट दृणतल्पंवुलयंदु । गनुमोड्चियुन्न राघवुल वीक्षिंचि
'यरुणोदयंवय्ये ननघात्मुलार ! । निरुपम पूर्वाह्ण नित्यकृत्यमुलु
वलयु नेमंबुलु वरुस गाविंप । वलयुट मेल्कनवलयु मी' रनिन
देलिसि सन्ध्याविधुल् दीर्चि कौशिकुन । कलरु चित्तमुलतो नतिभक्ति म्रोक्कि
तरणिवंशोत्तमुल् दारर्थि जनुचु । सरयू - सुरापगा - संगमंबुनु
वहुसहस्राव्दमुल् पायनि नियति । वहुतपंवुलु सेयु परमसंयमुल७०८
गनुगोनि संतोषकलितुलै गाधि । तनयुतो वलिकिरा दशरथात्मजुलु;

(आधारभूत) तथा सर्वदा सौख्यदायी कनकगर्भ (व्रह्मा) की पुत्रियों (शस्त्रास्त्रों) को दिया, जिन्हें उन्होंने पहले दारुण (घोर) तपस्या करके प्राप्त किया था। वे रामलक्ष्मण उस मंत्रशक्ति से सूर्य (के समान) तेजस्वी हो, सुन्दरता से अधिक सम्पन्न हो, भूख, प्यास आदि रुजाओं (संकट) से मुक्त हो, वलवृद्धि से शोभायमान हुए। तव सरयू नदी के किनारे, तरुण कोमल कुश-शय्याओं पर, कौशिक से पुण्यकथाएँ अच्छी तरह सुनते हुए, प्रमोद से दाशरथी (दशरथ के पुत्र) सो गए। ॥ ७०० ॥

—वह गाधितनय उस (दिन) प्रभात-समय तड़के ही जागकर, मन में प्रसन्नता अधिक होने पर, तृणशय्याओं पर, आँखें वंद किए हुए (सोए हुए) राघवों को देखकर वोले, 'हे अनघात्माओ (पुण्यात्माओ)! अरुणोदय हो गया है। निरुपम पूर्वाह्ण (प्रातःकाल) के नित्यकर्म, आवश्यक नियम क्रमानुसार करने चाहिए। इसलिए आप लोगों को जागना चाहिए।' ऐसा कहने पर वे जगे और सन्ध्याविधियों से निवृत्त होकर, प्रसन्नचित्त से, अतिभक्ति से कौशिक को प्रणाम किया। (उसके वाद) तरणीवंशोत्तम (सूर्यवंश के उत्तम जन, राम-लक्ष्मण) वड़ी इच्छा से जाते हुए, सरयू और सुरापगा (गंगानदी) के संगम-स्थल पर पहुँचे। (वहाँ) कई सहस्राब्दियों से अनवरत नियम से वहुतप करने वाले परम संयमी (मुनि) जनों को देखकर, अत्यन्त प्रसन्न हो, दशरथ के उन पुत्रों ने गाधितनय से कहा, ॥ ७०८ ॥

अंगदेश वृत्तांतमु

'ऎव्वरि याश्रमंबिदि संयमींद्र ! । यॆव्वरुंडुदुरय्य ! यी तपोभूमि ?'
ननवुडु 'राम! यनंगाश्रममन । विनबडु निदि लोकविख्यातमगुचु७१०
नी याश्रमंबुन नॆलमितो दपमु । सेयुचु लीलमै शिवुडुन्न जूचि
कंदर्पु डतिदर्प गर्वितुंडगुचु । निंदुशेखरु मीद नेयंग जूचि
यडरि महादेवु डधिकरोषमुन । तडयक फालनेत्रमु विच्चिचूड
वडिचॆडि भस्ममै वसुमति बडियॆ;। बडुट ननंगाख्य बरगॆ लोकमुल ।
नंगसंगति ददीयाश्रम भूमि । यंगदेशंबय्यॆ नंतनुंडियुनु
अरुदार दपमुलीयाश्रमभूमि । जरियिंचु पुण्युलु चरितार्थुलॆन्दु ।'
ननुचु विश्वामित्रु डत्तॆरंगॆल्ल । विनुपिंचि या रघुवीरुलु दानु
निलिचि नाडावाहिनी संगममुन । विलसित स्नानादि विधुलनुष्टिंप
नानंदमंदि रय्याश्रमवासु । लैन मुनीश्वरु; लात्मल नॆरिगि
रमणीयमूर्तुल रामलक्ष्मणुल । नमिततपोधनुडैन कौशिकुनि७२०
गॊनिपोयि वेड्कलु गॊनलॊत्तनपुडु । विनुतार्घ्य पाद्यादिविधुल बूजिंचि

अंगदेश का वृत्तान्त

—'हे संयमीन्द्र ! यह किनका आश्रम है ? इस तपोभूमि में कौन रहते हैं ?' ऐसा कहने पर (विश्वामित्र ने कहा)-'हे राम ! यह अनंगाश्रम के नाम से लोकविख्यात है । ॥ ७१० ॥

—इस आश्रम में संतृप्ति के साथ तप करते हुए, विलास (प्रसन्नता) से रहने वाले शिवजी को देखकर, कंदर्प (मन्मथ) ने अतिदर्प (अहंकार) से गर्वित हो, इंदुशेखर (चंद्रशेखर) पर (पुष्पवाण) चलाया था । (उसे) देख, रुष्ट हो महादेव ने अधिक रोष से; अविलम्ब भाल-नेत्र को खोलकर देखा । (उस अग्नि से कामदेव) शौर्य को खोकर भस्म हो पृथ्वी पर गिर पड़ा । (ऐसा) गिरकर वह लोकों में अनंग के नाम से प्रचलित हुआ । (उसके) अंग की संगति से वह आश्रमभूमि तब से अंगदेश हो गया (कहलाया) । अपूर्व इस आश्रम भूमि में तपस्या करते रहने वाले पुण्यात्मा चरितार्थ (कृतार्थ) हो जाते हैं ।' इस तरह विश्वामित्र ने वह सारा वृत्तान्त कह सुनाया । उन रघुवीरों के साथ स्वयं भी वहाँ रुककर उस नदी-संगम में विलसित स्नानादि विधियों के अनुष्ठान पूरा कर आनन्दित हुए । उस आश्रम के वासी मुनीश्वरों ने (इस समाचार को) अपनी दिव्य दृष्टि से जानकर, रमणीय रूप वाले राम-लक्ष्मण (तथा) अमित तपोधनी कौशिक को, ॥ ७२० ॥

पुण्यकथागोष्टि वॊंदलि या रात्रि । पुण्यरात्रमु जेसि पुण्य संयमुलु
मरुनाडु नित्यकर्मवुलायेट । देरगॊप्प नंदरु दीर्चिनमीद
'नी नाविकुडु नेर्चु नी येरु गडप; भानुवंशजुलकु वदिलमी नाव'
यनुचु विश्वामित्रुडलरंग वलुक । मुनिवर्युलॆल्लरु मुदितात्मुलगुचु
सरसोक्ति संसार जलधि दाटिंचु । परतारक ब्रह्मभाव नाविकुन
करुदैन सरयुवु नधि दाटिंप । गरकौशलमु चाल गल्गु नाविकुल
वारक नियमिंप वसुधेशसुतुलु । वारिकि ब्रणमिल्लि वारि दीवनलु
वारक कैकॊनि वारु दम्मनुप । ना ऋषितो गूड ना नाव यॆक्कि
सरयुवु दाटुचो सरयुवु नडुम । गरमु विस्मयमंदि कौशिकु जूचि७३०
'यिवे महाध्वनुलु वॆल्लेसगुचुन्नवियु । दिवि नुव्वि, यिदियेमि तॆलुपवे'
यनुडु
'गर मॊप्पुमीरुचु गैलासशिखरि । सरयुवु मानससरसि जन्मिंचि
पॊन्गारि साकेतपुरिच्चुट्टु गविसि । गंगतो गूडेडु करडुल श्रोत'
यनि मुनि सॆप्पिन नधितो श्रॊक्कि । यनघुलन्नदि दाटि यरुगुचो द्रोव

—(अपने आश्रम) ले गये, (और) अत्यन्त आनन्द (उत्साह) के साथ विनुत (श्रेष्ठ) अर्घ्य-पाद्य आदि विधियों से (उनका) पूजन किया। पुण्यकथा की गोष्ठियों में मन लगाकर उस रात्रि को उन पुण्य संयमियों ने पुण्यरात्रि बना दी। दूसरे दिन उस नदी के किनारे सभी लोगों के निश्चित विधान से नित्यकर्मों से निवृत्त होने के बाद विश्वामित्र ने प्रमुदित होते हुए कहा कि 'यह नाविक (रामचन्द्र) (हमें) इस नदी (जीवन या संसार) को पार कराने में समर्थ है। यह नाव सूर्यवंशियों के लिए उपयुक्त है।' विश्वामित्र के इन सरस वचनों से सभी मुनिवर प्रमुदित हुए। भवसागर को पार करने वाले पर-तारक-ब्रह्मभाव-युक्त नाविक (राम) को सरयू पार कराने के लिए (मुनियों ने) अति कुशल नाविकों को नियमित किया। (तब) राजकुमारों ने उन (मुनियों) को प्रणाम किया और निरन्तर उनके आशीर्वादों को ग्रहण कर उनके विदा करने पर उस ऋषि (विश्वामित्र) के साथ उस नाव पर चढ़कर सरयू पार करने लगे। (तब) सरयू के मध्य (मंझधार) (में पहुँचने पर) अत्यधिक आश्चर्य से (राम ने) कौशिक को देखकर (पूछा)—॥ ७३० ॥

—'ये (कुछ) महाध्वनियाँ आकाश तक व्याप्त हो रही हैं। बताइए यह क्या है?' ऐसा कहने पर विश्वामित्र ने कहा, 'बड़ी शोभा से कैलास शिखर पर, मानससरोवर में जन्म लेकर समृद्ध हो, साकेत नगर को चारों तरफ़ से घेरकर, गंगा नदी में मिलने वाली सरयू नदी की लहरों की यह

गरुलु सूकरमुलु गासरंबुलुनु । हरिणमुल् शरभंबुलजगरंबुलुनु
बुलुलु भल्लुकमुलु बॊदलु सिंगमुलु ।गल महाटवि जॊच्चि घनुडु राघवुडु
'खदिर तिंदुक पूग खर्जूर निंब । बदरी वट प्लक्ष पाटली तरुलु
बहुळ कंटक लता परिवृत वृक्ष । सहितंबु निर्मानुष्यंबुनु नैन
यिव्वनभूमि मुनीश्वरचन्द्र ! । यॆव्वरियाश्रमं ? बॆरिंगिपु' मनुचु
नडुग विश्वामित्रु डंतयु जॆप्प । दॊडगि या रामुनितो निट्टुलनियॆ७४०
'नलुक निंद्रुंडु वृत्रासुरु जंपि । मलकलुष प्राप्ति मलिनांगुडैन
सुरलुनु मुनुलुनु सुत्रामु निटकु । दुरितमुक्तुनि जेय दोड्कॊनि वच्चि
पुण्योदकंबुल बुण्यमंत्रमुल । बुण्याभिषेकमुल् पॊलुपार जेय
नामलकलुषंबु लनघ ! यी रॆन्डु । भूमुल निडि शुद्धि बॊन्दे वासवुडु;
मलयुक्तमैनदि मलदंबु, गलुष । कलितमैनदि यॊप्पुगा गरूशंबु
ननियु, बापघ्नंबुलनियु बेरॊसगि । जनपदंबुन दॊल्लि जंभारि दनकु
नल वृत्रवधपापमंदु दीरुटयु । विलसित धनधान्य विभवमुल् वॊदल

गर्जना है।' इस पर उन्होंने प्रेम से प्रणाम किया और (वे) अनघ उस नदी को पार करते जा रहे थे (तो) मार्ग में करि (हाथी), सूकर (सुअर), कासर (भैंसा), हिरन, शरभ, अजगर, वाघ, रीछ, श्रेष्ठ सिंहों से युक्त महाटवी (घोर जंगल) में प्रवेश किया। तब महापुरुष राघव (राम) ने पूछा, 'हे मुनीश्वरचन्द्र ! खदिर (कत्था), तिंदुक, पूग, निंब, बदरी, वट, प्लक्ष (पीपल), पाटल (आदि) तरुओं (तथा) बहुकंटक लता परिवेष्टित वृक्षों से युक्त यह निर्जन वन-भूमि किसका आश्रम है ? वताइए।' ऐसा पूछने पर विश्वामित्र राम से सारा वृत्तान्त (यों) कहने लगे—॥ ७४० ॥

—(किसी समय) 'क्रोध से इन्द्र, वृत्रासुर का संहार कर, मल (पाप), कलुष-प्राप्ति से मलिनांग हुए। देवता (और) मुनि सुत्राम (इन्द्र) को पाप-मुक्त करने के लिए (यहाँ) ले आए (और) पुण्योदक (पवित्र जल), पवित्र मन्त्र (तथा) पुण्याभिसेचन, सुघड़ता से करने पर हे अनघ ! उन मल (और) कलुष को, इन दोनों भूमियों (प्रदेश) पर छोड़कर वासव (इन्द्र) शुद्ध हुए। जो मल-युक्त है वह मलद, जो कलुष-कलित है वह करूश कहलाया। उन जनपदों को पापघ्न (पापों को [illegible] करने वाले) नाम [illegible] ल में जंभारि (इन्द्र) वृत्रासुर वध [illegible] से वहाँ मुक्त [illegible], उन [illegible] विलसित [illegible] भवों से युक्त

वॊलुपार वरमुला पुरमुलकिच्चि । वॆलयिंचॆं; निकनॊण्डु विनु
रघुराम; ७४८

विश्वामित्रुड्डु रामुनकु दाटक वृत्तान्तमु देलुपट

धरणि दाटक यनु दानवुरालु । करुलु वेयिंटिकि गल लावु गलिगि
पॊलुपॊन्दु नी रॆण्डु पुरमुलु सॊच्चि।यलवुमै वाधिचु' ननुडु राघवुडु७५०
'अॆव्वरु लाविच्चिरी·यिंति किंत ?। यॆव्वरि निजपुत्रि यी दुष्टवुद्धि ?
यी पुरंबुलु रॆण्डु नेल कारिचु । नी पापकर्मुरा ? लेरिगिंपु' मनुडु
'नवनि सुकेतुडन् यक्षुंडु दॊलिल । तविलि पद्मजु गूर्चि तपमाचरिंचि
यडरॆड्डु निष्ठमै नतनि मॆप्पिंचि । कॊडुकु वेडुटयुनु 'गॊडुकु नीकीनु;
वॆलसिन गजमुल वेयिंटि लावु । गल कूतु निच्चिति गनुमु पॊम्मनिन
ना वरंबुन दानि नातंडु गांचि । भाविंचि सुंदुनि भार्यगा जेसॆं;
नतडव्वधूटि यंदतिघोर - सत्त्व । पतुल मारीच सुवाहुलन् सुतुल
वडसि लोकांतरप्राप्तुडौटयुनु । गॊडुकुलु दानुनु गूडि गर्वमुन

रहने का वर दे कर शोभायुक्त किया था। हे रघुराम! एक और (वात) सुनो।' ।। ७४८ ।।

विश्वामित्र का राम को ताड़का का वृत्तान्त सुनाना

—'(इसी) पृथ्वी पर ताडका नामक (एक) दानवी, हज़ार हाथियों का वल रखती हुई, शोभायमान इन दो नगरों में प्रवेश कर, अपनी सारी शक्ति से (सव को) सताती रहती है।' ऐसा कहने पर राघव ने पूछा, ।। ७५० ।।

—'इस स्त्री को इतनी शक्ति किसने दी है? दुष्ट वुद्धि वाली यह (स्त्री) किसकी पुत्री है? यह पापिन इन नगरों·को क्यों तंग कर रही है?' ऐसा पूछने पर (विश्वामित्र ने कहा), 'प्राचीनकाल में (इस) पृथ्वी पर सुकेत नामक यक्ष ने आसक्त हो, पद्मज (ब्रह्मा) के प्रति तपस्या की थी। अतिशय निष्ठा से उसे प्रसन्न कर, पुत्र माँगा। (तव ब्रह्मा ने कहा) तुम्हें पुत्र (तो) नहीं दूँगा। विलसित हजार हाथियों का वल रखनेवाली पुत्री का वर देता हूँ। जाओ, उसे जन्म दो। (ब्रह्मा के) ऐसा कहने पर, उस वर से उसने उस पुत्री को प्राप्त किया। विचार करके, उसे सुन्द (नामक व्यक्ति) की पत्नी किया (विवाह किया)। उस (सुन्द) ने उस स्त्री से अति घोर शक्ति के स्वामी (भयंकर शक्तिशाली) मारीच (और) सुवाहु नामक दो पुत्रों को प्राप्त किया।

'निच्चेद'ननि पल्कि यीकुन्न बोंलियु। नच्चुगा जेसिन यखिल धर्ममुलु ६६०
'दशरथाधीशुंडु धर्मात्मु 'डनग। विशद कीर्तुल नीवु विन ब्रसिद्धुडवु
पुडमिलो नवनीश! भुवनरक्षणमु। गडवंग धर्ममुल् गलवे राजुलकु
गान रामुनिनिच्चि गाधिनंदनुनि। माननीयुनि बंपु मानवाधीश!
'घन बलोन्नतुलु राक्षसुली कुमारु। डनिकि दक्षुंडुगा' डनुचु नीकोंडुकु
शैशवंबुन किंत शंकिपनेल। कौशिकुडुंडंग गलुगुने भयमु
अधिप! विश्वामित्रु नत्युग्रतपमु। लधिकसामर्थ्यबु लतिविचित्रमुलु
भूनाथ! ई महापुण्युंडु देव। दानव गंधर्व दैत्युलकंटे
नेरुगु दिव्यास्त्रंबुलिम्महाभागु। डेरुगनि विषयंबुलेन्दुनुलेवु
जनलोकनायक जययु सुप्रभयु। ननगदक्षुनिकूतु ला जयवलन
सुप्रभवलन रक्षोवधार्थमुग। सुप्रभुंडगु भृशाश्वुंडु वेर्वेर ६७०
नस्त्राकृतुल बुत्रु लरय नेबंड्र। शस्त्राकृतुल दनूजन्मुलेबंड्र
गामरूपंबुलु गलवारि गांचि। भूमीश! यिच्चे नी पुण्यात्मुनकुनु

'दूँगा' ऐसा कहकर (वचन देकर), नहीं देने से, शुद्ध रूप से किए गए सभी धर्म (पुण्य) नष्ट हो जाएँगे। ॥ ६६० ॥

—'दशरथ महाराज धर्मात्मा हैं'—ऐसी विशद कीर्ति से तुम प्रख्यात हो। हे अवनीश (राजन्)! पृथ्वी में लोकरक्षा के सिवा राजाओं का अन्य (कौन-सा) धर्म (कर्त्तव्य) है? इसलिए हे मानवाधीश! राम को देकर माननीय गाधिपुत्र के साथ भेज दो। 'राक्षस महाबल में उन्नत हैं, यह कुमार (राम) युद्ध के लिए समर्थ नहीं है' ऐसा (कह कर) अपने पुत्र के शैशव के बारे में इतनी शंका क्यों? कौशिक (विश्वामित्र) के रहते क्या कोई भय हो सकता है? हे अधिप (राजन्)! विश्वामित्र का अति उग्र तप और प्रबल सामर्थ्य अति विचित्र हैं। हे भूनाथ! ये महा-पुण्यात्मा देव, दानव, गन्धर्व तथा दैत्यों की अपेक्षा अधिक दिव्यास्त्रों को (उनके प्रयोग को) जानते हैं। कोई भी ऐसा विषय कहीं भी नहीं है जिसे ये महाबाहु (महाबली) न जानते हों। हे जनलोक नायक! दक्ष (प्रजापति) के जया (तथा) सुप्रभा नामक दो पुत्रियाँ थीं। उन जया से और सुप्रभा से (के द्वारा), राक्षसों के वध के लिए सुप्रभ हो भृशाश्व ने अलग-अलग ॥ ६७० ॥

—अस्त्र की आकृतियों में पचास, (और) शस्त्र की आकृतियों में पचास पुत्रों को, जो कामरूपधारी थे, प्राप्तकर, हे राजन्! इस पुण्यात्मा (विश्वामित्र) को दिया। उस कारण से ये मुनि अखिल शस्त्रास्त्रों के ज्ञाता हैं। तुम्हें डरना नहीं चाहिए। इस मुनि की महिमा के आधिक्य को, हाय! तुम समझ

नदिगारणंबुगा नखिलशस्त्रास्त्र । विदुडिम्मुनियु नीवु वेर्वंगवलव
दीमुनि महिम पेम्पेरुगलेवकट । यीमुनितो नाडि येल तप्पेंदवु ?
यीमुनिचंद्रुतो नेग रामुनकु । सेमवु जयमुनु सिद्धम्मु सुम्मु
इतडु रक्कसुल जयिंपगालेडे । हितमति नीपुत्रु निद्धचारित्रु
नलघु शस्त्रास्त्रविद्यल वेंद्द सेय । वलसि यिच्चटिकि भूवर! वच्चें गाक
कान रामुनि बंपु क्रतुवु रक्षिप ।नी निर्मलात्मुनि किच्चुट मेलु'६७८

दशरथुडु कौशिकुनि वेंन्ट रामलक्ष्मणुल बंपुट

अनि वसिष्टुडु पल्क·नात्मलो नम्मि । जननाथुडारामचंद्रुनि विलचि,
वालभावमु जूचि बाष्पमुल् निंचि ।यालिंगनमुसेसि यर्थि दीविंचि,६८०
चिप्पकूकटि दुव्वि, चेंक्किलि पुडिकि । तप्पक योंक्किंत दडवु सिंतिंचि,
पुण्याहवाचनपूर्वंवुगाग । वुण्यव्रतंबुलु बुण्यहोममुलु
ग्रहपूजनलु सेसि, कमनीयवस्त्र । महितभूषणमुलु मनमारनिच्चि,
योंगि दानु गौसल्ययुनु वसिष्टुंडु । दगिनदीवनलिच्चि, दशरथेश्वरुडु

नहीं सकते हो। इस मुनि को वचन देकर क्यों टालते हो ? इस मुनिचन्द्र के साथ जाने पर राम की भलाई (कुशल) और विजय अवश्य ही होगी। क्या ये विश्वामित्र राक्षसों को जीत नहीं सकते थे ? हित-चिन्तन के कारण, तुम्हारे पुत्र उज्ज्वल चरित्रवान् (राम) को महती शस्त्रास्त्र विद्याओं में वड़ा (श्रेष्ठ) वनाने (के उद्देश्य से ही) हे भूवर (राजन्) ! (वे) इतनी दूर आए हैं। इसलिए यज्ञ-रक्षा के लिए राम को भेजो। इस निर्मल आत्मा वाले (विश्वामित्र) को (राम को) देना ही कल्याण-प्रद है ॥ ६७८ ॥

दशरथ का कौशिक के साथ रामलक्ष्मण को भेजना

इस प्रकार वसिष्ठ के कहने पर, मन में विश्वास कर, जननाथ (राजा) ने रामचन्द्र को वुलाया, उन्हें वालभाव से (वालक मानकर) देख, आँसू भरकर, गले लगा, हार्दिक रूप से आशीर्वाद दिया ॥ ६८० ॥

—उनकी लटों पर हाथ फेरकर, कपोलों को प्यार से स्पर्श कर, थोड़ी देर सोचते रहे। (फिर) पुण्याहवाचन पूर्वक, पुण्यव्रत, पुण्यहोम (हवन), (और) ग्रह पूजाएँ करके, मन को संतोष होने तक सुन्दर वस्त्र, महति भूषण दिए। क्रमशः स्वयं (राजा), कौसल्या और वसिष्ठ ने उचित आशीर्वाद दिए। दशरथेश्वर ने पुण्य मुहूर्त के समय पुत्ररत्न को, पुण्यात्मा गाधिसुत को दे (सौंप) दिया। प्रेम और साहस—इन दोनों भावों के

पुण्यलग्नंबुन बुवरत्नंबु । बुण्यात्मुडगु गाधिपुत्रुनकिच्चि,
नेम्मियु देंगुवयु नेरि बिरिगोंनग । 'नम्मुनि गोलिचि पोम्म'नि
वीडुकोलिपे ६८६

विश्वामित्रुडु रामलक्ष्मणुल दोड्कोनि पोवुट

नप्पुडु लक्ष्मणुं डा रामु गोलिचि । तप्पनि भक्तितो दानुनु जनियें ।
बोंदिवि पुव्वुलवान बोरन गुरिसें;। वदलक यनुकूल वायुवुल्वीचें;
वरघोषमंगळ वाद्यमुल्म्रोसें; ।सुरलाकसमु निंडि चूचिरि प्रीति; ६८९
नक्षीणतूण गोधांगुळित्राण । कक्षलंबिकृपाण कलितुलै दिव्य
शरचापहस्तुलै संयमिपिरुद । गरमुसंप्रीतिमै गदलि राघवुलु
ना वनजाप्तुनि नर्थितो गोलिचि । पोवु नाश्विनुलन बोवुचो वेड्क ।
नुरुपुण्यमतु लर्धयोजनंबरिगि । सरयुवडग्गरि श्रममु बोन्दुटयु
रामसौमित्रुल रम्मनि यपुडु । दा मुन्नु दारुणतपमुचे गन्न
कनकगर्भुनि पुत्रिकल सर्वमंत्र । जननुल सर्वदा सौख्यदायिनुल
बल यतिबल यन बरगु मंत्रमुल । नेलमिमै वारलकिच्चें गौशिकुडु

मन को अधिक घेर लेने पर (भी) 'उस मुनि की सेवा करते जाओ' ऐसा कह कर विदा किया । ॥ ६८६ ॥

विश्वामित्र का राम-लक्ष्मण को साथ ले जाना

तब लक्ष्मण उस राम की सेवा कर (प्रार्थना कर) अमित भक्ति (भाव) से स्वयं भी उनके साथ गए । (उस समय) घेरकर (चारों ओर से) पुष्पवृष्टि झड़ी लगाकर हुई, निरन्तर अनुकूल वायु चलने लगा, श्रेष्ठ ध्वनि से मंगलवाद्य बज उठे, आकाश में (झुंड) भरकर, प्रीति से देवताओं ने (उस दृश्य को) देखा । ॥ ६८९ ॥

—अक्षय तूणीर, गोधा, अंगुली-त्राण, कमर में लटकते हुए कृपाण से कलित (सुन्दर) बने, दिव्य शर (और) चाप (धनुष) हाथ में ले, संयमी (विश्वामित्र) के पीछे, अधिक संप्रीति से (बड़े उत्साह से) राघव (रघुवंशी) इस प्रकार जा रहे थे मानों अश्विनी (कुमार) वनजाप्त (सूर्य) की प्रीति से सेवा कर (उनके) पीछे जा रहे हों । अधिक पुण्यचरित्र वाले त्रे आधा योजन जाकर, सरयू (नदी) के निकट पहुँच (पहुँचते-पहुँचते) थक गए । तब राम (और) सौमित्र को बुलाकर, प्रसन्न हो, उन्हें कौशिक ने वला, अतिबला नाम से अभिहित मंत्रों का उपदेश दिया तथा सर्वमंत्रों की जननियाँ

आ रामलक्ष्मणुलामंत्रशक्ति । नारूढ रवितेजुलै सॊम्पुमिगिलि
नाकलि नीरुवट्टादिगा रुजलु । सोकक बलवृद्धि शोभिल्लिरंत
सरयूनदीतटस्थलि नाटि रात्रि । दरुणकोमल दर्भतल्पंबुलंदु
गौशिकुचे बुण्यकथलॊप्प विनुचु । दाशरथुलु प्रमोदमुन निद्रिंप,७००
ना गाधितनयुंडु ना प्रभातमुन । वेगंबॆ मेल्कनि वेड्क चित्तमुन
दनरंग नट दृणतल्पंबुलयंदु । गनुमोड्चियुन्न राघवुल वीक्षिंचि
'यरुणोदयंबय्यॆ ननघात्मुलार ! । निरुपम पूर्वाह्ण नित्यकृत्यमुलु
वलयु नेमंबुलु वरुस गाविंप । वलयुट मेल्कनवलयु मी' रनिन
दॆलिसि सन्ध्याविधुल् दीर्चि कौशिकुन । कलरु चित्तमुलतो नतिभक्ति म्रॊक्कि
तरणिवंशोत्तमुल् दारर्थि जनुचु । सरयू - सूरापगा - संगमंबुनु
बहुसहस्राब्दमुल् पायनि नियति । बहुतपंबुलु सेयु परमसंयमुल७०८
गनुगॊनि संतोषकलितुलै गाधि । तनयुतो वलिकिरा दशरथात्मजुलु;

(आधारभूत) तथा सर्वदा सौख्यदायी कनकगर्भ (ब्रह्मा) की पुत्रियों (शस्त्रास्त्रों) को दिया, जिन्हें उन्होंने पहले दारुण (घोर) तपस्या करके प्राप्त किया था। वे रामलक्ष्मण उस मंत्रशक्ति से सूर्य (के समान) तेजस्वी हो, सुन्दरता से अधिक सम्पन्न हो, भूख, प्यास आदि रुजाओं (संकट) से मुक्त हो, वलवृद्धि से शोभायमान हुए। तब सरयू नदी के किनारे, तरुण कोमल कुश-शय्याओं पर, कौशिक से पुण्यकथाएँ अच्छी तरह सुनते हुए, प्रमोद से दाशरथी (दशरथ के पुत्र) सो गए। ॥ ७०० ॥

—वह गाधितनय उस (दिन) प्रभात-समय तड़के ही जागकर, मन में प्रसन्नता अधिक होने पर, तृणशय्याओं पर, आँखें वंद किए हुए (सोए हुए) राघवों को देखकर वोले, 'हे अनघात्माओ (पुण्यात्माओ)! अरुणोदय हो गया है। निरुपम पूर्वाह्ण (प्रातःकाल) के नित्यकर्म, आवश्यक नियम क्रमानुसार करने चाहिए। इसलिए आप लोगों को जागना चाहिए।' ऐसा कहने पर वे जगे और सन्ध्याविधियों से निवृत्त होकर, प्रसन्नचित्त से, अतिभक्ति से कौशिक को प्रणाम किया। (उसके वाद) तरणीवंशोत्तम (सूर्यवंश के उत्तम जन, राम-लक्ष्मण) वड़ी इच्छा से जाते हुए, सरयू और सुरापगा (गंगानदी) के संगम-स्थल पर पहुँचे। (वहाँ) कई सहस्राब्दियों से अनवरत नियम से वहुतप करने वाले परम संयमी (मुनि) जनों को देखकर, अत्यन्त प्रसन्न हो, दशरथ के उन पुत्रों ने गाधितनय से कहा, ॥ ७०८ ॥

अंगदेश वृत्तांतमु

'ऎव्वरि याश्रमंबिदि संयमींद्र ! । यॆव्वरुंडुदुरय्य ! यी तपोभूमि ?'
ननवुडु 'राम! यनंगाश्रममन । विनबडु निदि लोकविख्यातमगुचु७१०
नी याश्रमंबुन नॆलमितो दपमु । सेयुचु लीलमै शिवुडुन्न जूचि
कंदर्पु डतिदर्प गर्वितुंडगुचु । निंदुशेखरु मीद नेयंग जूचि
यडरि महादेवु डधिकरोषमुन । तडयक फालनेत्रमु विच्चिचूड
वडिचॆडि भस्ममै वसुमति बडियॆ; । बडुट ननंगाख्य बरगॆ लोकमुल ।
नंगसंगति ददीयाश्रम भूमि । यंगदेशंबय्यॆ नंतनुंडियुनु
अरुदार दपमुलीयाश्रमभूमि । जरियिंचु पुण्युलु चरितार्थुलॆन्दु ।'
ननुचु विश्वामित्रु डत्तॆरंगॆल्ल । विनुपिंचि या रघुवीरुलु दानु
निलिचि नाडावाहिनी संगममुन । विलसित स्नानादि विधुलनुष्टिप
नानंदमंदि रय्याश्रमवासु । लैन मुनीश्वरु; लात्मल नॆरिगि
रमणीयमूर्तुल रामलक्ष्मणुल । नमिततपोधनुडैन कौशिकुनि७२०
गॊनिपोयि वेड्कलु गॊनलॊत्तनपुडु । विनुतार्घ्य पाद्यादिविधुल बूजिंचि

अंगदेश का वृत्तान्त

—'हे संयमीन्द्र ! यह किनका आश्रम है ? इस तपोभूमि में कौन रहते हैं ?' ऐसा कहने पर (विश्वामित्र ने कहा)-'हे राम ! यह अनंगाश्रम के नाम से लोकविख्यात है । ॥ ७१० ॥

—इस आश्रम में संतृप्ति के साथ तप करते हुए, विलास (प्रसन्नता) से रहने वाले शिवजी को देखकर, कंदर्प (मन्मथ) ने अतिदर्प (अहंकार) से गर्वित हो, इंदुशेखर (चंद्रशेखर) पर (पुष्पवाण) चलाया था । (उसे) देख, रुष्ट हो महादेव ने अधिक रोष से, अविलम्ब भाल-नेत्र को खोलकर देखा । (उस अग्नि से कामदेव) शौर्य को खोकर भस्म हो पृथ्वी पर गिर पड़ा । (ऐसा) गिरकर वह लोकों में अनंग के नाम से प्रचलित हुआ । (उसके) अंग की संगति से वह आश्रमभूमि तब से अंगदेश हो गया (कहलाया) । अपूर्व इस आश्रम भूमि में तपस्या करते रहने वाले पुण्यात्मा चरितार्थ (कृतार्थ) हो जाते हैं ।' इस तरह विश्वामित्र ने वह सारा वृत्तान्त कह सुनाया । उन रघुवीरों के साथ स्वयं भी वहाँ रुककर उस नदी-संगम में विलसित स्नानादि विधियों के अनुष्ठान पूरा कर आनन्दित हुए । उस आश्रम के वासी मुनीश्वरों ने (इस समाचार को) अपनी दिव्य दृष्टि से जानकर, रमणीय रूप वाले राम-लक्ष्मण (तथा) अमित तपोधनी कौशिक को, ॥ ७२० ॥

पुण्यकथागोष्टि वॊंदलि या रात्रि । पुण्यरात्रमु जेसि पुण्य संयमुलु
मरुनाडु नित्यकर्मवुलायेट । देरगॊप्प नंदरु दीर्चिनमीद
'नी नाविकुडु नेर्चु नी येरु गडप; भानुवंशजुलकु वदिलमी नाव'
यनुचु विश्वामित्रु डलरंग बलुक । मुनिवर्युलॆल्लरु मुदितात्मुलगुचु
सरसोक्ति संसार जलधि दाटिचु । परतारक ब्रह्मभाव नाविकुन
करुदैन सरयुवु नर्थि दाटिंप । गरकौशलमु चाल गल्गु नाविकुल
वारक नियमिंप वसुधेशसुतुलु । वारिकि ब्रणमिल्लि वारि दीवनलु
वारक कैकॊनि वारु दम्मनुप । ना ऋषितो गूड ना नाव यॆक्कि
सरयुवु दाटुचो सरयुवु नडुम । गरमु विस्मयमंदि कौशिकु जूचि ७३०
'यिवे महाध्वनुलु वॆल्लॆसगुचुन्नवियु । दिवि नुव्वि, यिदियेमि तॆलुपवे'
यनुडु
'गर मॊप्पुमीरुचु गैलासशिखरि । सरयुवु मानससरसि जन्मिंचि
पॊंन्गारि साकेतपुरिचुट्टु गविसि । गंगतो गूडेडु करडुल म्रोत'
यनि मुनि सॆप्पिन नर्थितो म्रॊक्कि । यनघुलन्नदि दाटि यरुगुचो द्रोव

—(अपने आश्रम) ले गये, (और) अत्यन्त आनन्द (उत्साह) के साथ विनुत (श्रेष्ठ) अर्घ्य-पाद्य आदि विधियों से (उनका) पूजन किया। पुण्यकथा की गोष्ठियों में मन लगाकर उस रात्रि को उन पुण्य संयमियों ने पुण्यरात्रि बना दी। दूसरे दिन उस नदी के किनारे सभी लोगों के निश्चित विधान से नित्यकर्मों से निवृत्त होने के बाद विश्वामित्र ने प्रमुदित होते हुए कहा कि 'यह नाविक (रामचन्द्र) (हमें) इस नदी (जीवन या संसार) को पार कराने में समर्थ है। यह नाव सूर्यवंशियों के लिए उपयुक्त है।' विश्वामित्र के इन सरस वचनों से सभी मुनिवर प्रमुदित हुए। भवसागर को पार करने वाले पर-तारक-ब्रह्मभाव-युक्त नाविक (राम) को सरयू पार कराने के लिए (मुनियों ने) अति कुशल नाविकों को नियमित किया। (तब) राजकुमारों ने उन (मुनियों) को प्रणाम किया और निरन्तर उनके आशीर्वादों को ग्रहण कर उनके विदा करने पर उस ऋषि (विश्वामित्र) के साथ उस नाव पर चढकर सरयू पार करने लगे। (तब) सरयू के मध्य (मंझधार) (में पहुँचने पर) अत्यधिक आश्चर्य से (राम ने) कौशिक को देखकर (पूछा)—॥ ७३० ॥

—'ये (कुछ) महाध्वनियाँ आकाश तक व्याप्त हो रही हैं। बताइए यह क्या है?' ऐसा कहने पर विश्वामित्र ने कहा, 'बड़ी शोभा से कैलास शिखर पर, मानससरोवर में जन्म लेकर समृद्ध हो, साकेत नगर को चारों तरफ़ से घेरकर, गंगा नदी में मिलने वाली सरयू नदी की लहरों की यह

गरुलु सूकरमुलु गासरंबुलुनु । हरिणमुल् शरभंबुलजगरंबुलुनु
बुलुलु भल्लुकमुलु बॊदलु सिंगमुलु ।गल महाटवि जॊच्चि घनुडु राघवुडु
'खदिर तिंदुक पूग खर्जूर निंब । बदरी वट प्लक्ष पाटली तरुलु
बहुळ कंटक लता परिवृत वृक्ष । सहितंबु निर्मानुष्यंबुनु नैन
यिव्वनभूमि मुनीश्वरचन्द्र ! । यॆव्वरियाश्रमं ? बॆरिंगिपु' मनुचु
नडुग विश्वामित्रु डंतयु जॆप्प । दॊडगि या रामुनितो निट्टुलनियॆ७४०
'नलुक निंद्रुंडु वृत्रासुरु जंपि । मलकलुष प्राप्ति मलिनांगुडैन
सुरलुनु मुनुलुनु सुत्रामु निटकु । दुरितमुक्तुनि जेय दोड्कॊनि वच्चि
पुण्योदकंबुल बुण्यमंत्रमुल । बुण्याभिषेकमुल् पॊलुपार जेय
नामलकलुषंबु लनघ ! यी रॆन्डु । भूमुल निडि शुद्धि बॊन्दे वासवुडु;
मलयुक्तमैनदि मलदंबु, गलुष । कलितमैनदि यॊप्पुगा गरूशंबु
ननियु, बापघ्नंबुलनियु बेरॊसगि । जनपदंबुन दॊल्लि जंभारि दनकु
नल वृत्रवधपापमंदु दीरुटयु । विलसित धनधान्य विभवमुल् बॊदल

गर्जना है।' इस पर उन्होंने प्रेम से प्रणाम किया और (वे) अनघ उस नदी को पार करते जा रहे थे (तो) मार्ग में करि (हाथी), सूकर (सुअर), कासर (भैंसा), हिरन, शरभ, अजगर, बाघ, रीछ, श्रेष्ठ सिंहों से युक्त महाटवी (घोर जंगल) में प्रवेश किया। तब महापुरुष राघव (राम) ने पूछा, 'हे मुनीश्वरचन्द्र ! खदिर (कत्था), तिंदुक, पूग, निंब, बदरी, वट, प्लक्ष (पीपल), पाटल (आदि) तरुओं (तथा) बहुकंटक लता परिवेष्टित वृक्षों से युक्त यह निर्जन वन-भूमि किसका आश्रम है ? बताइए।' ऐसा पूछने पर विश्वामित्र राम से सारा वृत्तान्त (यों) कहने लगे—॥ ७४० ॥

—(किसी समय) 'क्रोध से इन्द्र, वृत्रासुर का संहार कर, मल (पाप), कलुष-प्राप्ति से मलिनांग हुए। देवता (और) मुनि सुत्राम (इन्द्र) को पाप-मुक्त करने के लिए (यहाँ) ले आए (और) पुण्योदक (पवित्र जल), पवित्र मन्त्र (तथा) पुण्याभिसेचन, सुघड़ता से करने पर हे अनघ ! उन मल (और) कलुष को, इन दोनों भूमियों (प्रदेश) पर छोड़कर वासव (इन्द्र) शुद्ध हुए। जो मल-युक्त है वह मलद, जो कलुष-कलित है वह करूश कहलाया। उन जनपदों को पापघ्न (पापों को दूर करने वाले) नाम देकर, पूर्वकाल में जंभारि (इन्द्र) वृत्रासुर वध के पाप से वहाँ मुक्त हुए, इस कारण, उन नगरियों को विलसित धन-धान्य-वैभवों से युक्त

बॊलुपार वरमुला पुरमुलकिच्चि । वॆलयिंचॆ; निकनॊण्डु विनु रघुराम; ७४८

विश्वामित्रुडु रामुनकु दाटक वृत्तान्तमु देलुपट

धरणि दाटक यनु दानवुरालु । करुलु वेयिंटिकि गल लावु गलिगि
पॊलुपॊन्दु नी रॆण्डु पुरमुलु सॊच्चि।यलवुमैं बाधिंचु' ननुडु राघवुडु७५०
'ऎव्वरु लाविच्चिरी यिति किंत ?। यॆव्वरि निजपुत्रि यी दुष्टवुद्धि ?
यी पुरंबुलु रॆण्डु नेल कारिंचु । नी पापकर्मुरा ? लेरिंगिपु' मनुडु
'नवनि सुकेतुडन् यक्षुंडु दॊल्लि । तविलि पद्मजु गूर्चि तपमाचरिंचि
यडरॆडु निष्ठमैं नतनि मॆप्पिंचि । कॊडुकु वेडुटयुनु 'गॊडुकु नीकीनु;
वॆलसिन गजमुल वेयिटि लावु । गल कूतु निच्चिति गनुमु पो'म्मनिन
ना वरंबुन दानि नातंडु गांचि । भाविंचि सुंदुनि भार्यगा जेसॆ;
नतडव्वधूटि यंदतिघोर - सत्त्व । पतुल मारीच सुबाहुलन् सुतुल
बडसि लोकांतरप्राप्तुडौटयुनु । गॊडुकुलु दानुनु गूडि गर्वमुन

रहने का वर दे कर शोभायुक्त किया था। हे रघुराम ! एक और (बात) सुनो ।' ॥ ७४८ ॥

विश्वामित्र का राम को ताड़का का वृत्तान्त सुनाना

—'(इसी) पृथ्वी पर ताडका नामक (एक) दानवी, हज़ार हाथियों का वल रखती हुई, शोभायमान इन दो नगरों में प्रवेश कर, अपनी सारी शक्ति से (सव को) सताती रहती है।' ऐसा कहने पर राघव ने पूछा, ॥ ७५० ॥

—'इस स्त्री को इतनी शक्ति किसने दी है ? दुष्ट वुद्धि वाली यह (स्त्री) किसकी पुत्री है ? यह पापिन इन नगरों को क्यों तंग कर रही है ?' ऐसा पूछने पर (विश्वामित्र ने कहा), 'प्राचीनकाल में (इस) पृथ्वी पर सुकेत नामक यक्ष ने आसक्त हो, पद्मज (व्रह्मा) के प्रति तपस्या की थी। अतिशय निष्ठा से उसे प्रसन्न कर, पुत्र माँगा। (तव व्रह्मा ने कहा) तुम्हें पुत्र (तो) नहीं दूँगा। विलसित हजार हाथियों का वल रखनेवाली पुत्री का वर देता हूँ। जाओ, उसे जन्म दो। (व्रह्मा के) ऐसा कहने पर, उस वर से उसने उस पुत्री को प्राप्त किया। विचार करके, उसे सुन्द (नामक व्यक्ति) की पत्नी किया (विवाह किया)। उस (सुन्द) ने उस स्त्री से अति घोर शक्ति के स्वामी (भयंकर शक्तिशाली) मारीच (और) सुवाहु नामक दो पुत्रों को प्राप्त किया।

नायिति मरि यगस्त्याश्रमंबुनकु । बोयि मौनुल सारे वाँदिवि कारिप
गलशुडापापकर्मुल जूचि । यलिगि 'राक्षसुलुगं' डनि शापमिच्चें७६०
नदियादिगा राक्षसाकृतुल् वूनि । यदयत मानवाहारमुन् गौनुचु
दा निंदु वसियिंचि धरणि गारिंचु । दीनि जंपगलेरु तेंगुव नेव्वरुनु,
नीवोक्कडवु दक्क; नीचेतगानि । चाव; दाडुदि यनि चंपगादनकु;
मेनय गोब्राह्मण हितमैन जालु । जनु जंप गामिनीजनुल राजुलकु;
दौल्लि धारुणियेल्ल द्रुंप जिंतिंचु । प्रल्लदुरालैन पडति मंथरनु
संपन्नमति विरोचनु कूतु वज्रि । चंपडे? यिदि प्रशस्तमु गादे येन्दु?
नेरय लोकंबु लनिद्रमुल् गाग । जेरूप जित्तंबुन जिंतिंचुटयुनु
नलिगि दृढव्रतयगु भृगुपत्नि । जलमोप्प विष्णुंडु संपडे तोल्लि?
यदिगान लोकहितार्थमै सतुल । बोंदिवि चंपुटयुनु बुण्यंबे यनघ! "७६९

ताटक वध

यनिन विश्वामित्रु नतुल वाक्यमुलु । दन तंड्रि पनुपुनु दलचि राघवुडु७७०

(तदनन्तर) वह लोकान्तर को प्राप्त हुआ (मर गया।) (तब) वह (सुकेत की पुत्री) (अपने) पुत्रों के साथ, गर्व से, अगस्त्य के आश्रम में जाकर, मुनियों को वार-बार तंग करने लगी। कलशज (अगस्त्य) ने उन पापकर्म वालों को देखकर, क्रुद्ध हो, शाप दिया कि राक्षस बन जाओ। ॥ ७६० ॥

—तब से शुरू करके राक्षस रूप धारण कर, निर्दयता से मानवाहार (मानवों को आहार रूप में) ग्रहण करती हुई, वह यहीं रहकर पृथ्वी को (लोगों को) कष्ट देती है। तुम्हारे सिवा इसे साहसकर कोई मार नहीं सकता। यह सिवाय तुम्हारे हाथ के, नहीं मरेगी। यह मत कहो कि (यह) स्त्री है, अतः नही मारना चाहिए। यदि गो-ब्राह्मणों का हित हो तो राजा लोग स्त्रियों को मार डाल सकते हैं। पूर्वकाल में सारे संसार को मार डालने का विचार करने वाली, मंथरा नामक प्रगल्भा स्त्री को, जो संपन्नमति (मतिमान) विरोचन की पुत्री थी, क्या इन्द्र ने नहीं मार डाला था ? क्या यह कर्म जहाँ-कही प्रशस्त (स्तुत्य) नहीं माना गया है ? (पूर्व में) दृढ व्रत वाली भृगुपत्नी ने लोकों को अनिद्र (अशान्त) बनाकर, नष्ट करने के लिए मन में विचार किया, (तो) क्या विष्णु ने स्वयं ईर्ष्यालु हो (उसको) नहीं मारा था ? यही नहीं, हे अनघ ! लोक-हित के लिए स्त्रियों को घेर कर (पकड़कर) मार डालना भी पुण्य ही है।' ॥ ७६९ ॥

'हाटकगर्भाभुडगु मौनिमाट । दाटक ताटक दंडितु' ननुचु
घनधनुर्घोषंबु गगनंबुनिंड । निनुचुटयु विनि निंड गोपिंचि
कर्णकठोरमौ कार्मुकध्वनिकि । घूर्णितारुणनेत्रकुटिलास्य यगुचु
रेन्डु हस्तमुलेत्ति रेक्कलतोडि । कोन्ड रिव्वुन वच्चु कोमरु दीपिप
विदिताट्टहासंबु वेलिदंष्ट्ररुचुलु । वेदसलल दिवियेल्ल देस वेल्लगिल्ल
जरणघट्टनमुल जटुलसत्त्वंबु । धरणिकि देलुपुचु दरिमि येतेन्चु
ताटक गनुगोनि दशरथरामु । डाटोपमुप्पोंग्गननियें दम्मुनिकि;
"जूचिते लक्ष्मण! चूचिते दीनि?। नी चंद मीयंद मी युग्रदृष्टि !
दीनि जूचिन गुंडे दिगुलेरिकैन । मानुने ? यटुगाक मर्दितु दीनि ।"
ननुचुंड गर्जन नाकसं वगल ।जनुदेन्चु पदधूळि सकलंबु गप्प ७८०
नलि मीरि घोर दानवुरालु डालु । गलगोनि कुरियु राघवुडु गोपिंचि
यनुपमास्त्रंबुल नम्महाशिललु । दुनुमाडि दानि चेतुलु रेन्डु द्रुंचें;

ताड़का का वध

ऐसा (विश्वामित्र के कहने पर) विश्वामित्र के अतुलनीय वाक्यों का (और) अपने पिता की आज्ञा का स्मरण कर राघव ने, ।। ७७० ।।

—'हाटकगर्भ (ब्रह्मा) की आभा वाले मुनि के वचन को न टालते हुए, 'ताडका को दण्डित करूँगा' ऐसा कहते हुए (अपने) महान् धनुष की टंकार से सारे आकाश को गुंजरित कर दिया। (उसे) सुन (ताड़का) अत्यधिक रुष्ट हो, कर्णकठोर हो कार्मुक (धनुष) की ध्वनि के कारण चंचल और अरुण नेत्र तथा विकृत मुख वाली हुई। (वह) अपने दोनों हाथों को (ऊपर) उठाकर, (मानों) पंखोंवाले पर्वत के वड़े वेग से आने वाली शोभा के समान (झपटती हुई) प्रकट अट्टहास से, श्वेत दंष्ट्राओं की कान्ति को विखेरती हुई, समस्त आकाश को, शीघ्रता से, उन्मूलित करती हुई, पदाघातों से अपनी प्रवल शक्ति का परिचय धरणी को देती हुई, दौड़ती हुई, आनेवाली (उस) ताड़का को देख, दाशरथी-राम संभ्रम से मन के उमड़ आने पर, भाई से (यों) वोले, 'देखा लक्ष्मण! देखा इसे ? यह ढग, यह रूप (और) यह उग्रदृष्टि (देखी) ? इसको देखने पर किसके हृदय का भय कम होगा (किसे भय न होगा) ? इसलिए मैं इसका वध करूँगा।' ऐसा कहते समय, (अपने) गर्जन से आकाश को फोड़ती हुई, आते समय चरण-धूलि से समस्त (संसार) को ढाँकती हुई, ।। ७८० ।।

—वह घोर दानवी, अधिक (भयंकरता को) पार कर, संक्षब्ध होकर,

नप्पुडु लक्ष्मणुंडसुरेशु चेलिय । कप्पाटु गावितुं ननि यन्न करणि
मुक्कुनु जेवुलुनु मोदलंट गोसे । नक्कामरूपिणि कक्कजं बोदव;
मायलु धरियिंचि मरियु बेक्कम्मु । लायिंति गुरिय विश्वामित्रुडनिये;
'ननघ, संध्याकालमगुचुनुन्नदियु । दनुजुल नेन्दु संध्यल गेल्वरादु;
नीविंक गृपमालि नेलकोनि दीनि । नी विश्वहितमुगा निट संपु' मनुडु
गाधेय मुनि माट गडपक शब्द । वेधि बाणमुल नव्वेड मायलडचि
पेडपेड नार्चुचु बिडुगुचंदमुन । नडतेन्चुचुन्न दानविनि वीक्षिंचि
महितास्त्रमोकटि सन्मरुगाडनेय । बहुरक्तधारलु पर्व ना वनित ७९०
यसुरशिक्षारंभमंददि रामु । डोसगेनो शरमुलकुपहारमनग,
प्रळयमारुतमुन बगिलि संध्याभ्र । मिलगूलु तेरुगुन निलगूले दूलि;
यप्पुडानंदिंचे नखिलभूतमुलु; । नप्पुडानंदिचिरमरुलु मुनुलु;
ना रामु दीविंचि यालिंगनंबु । गारवबुंन जेसे गौशिकुडंत,

पत्थरों की वर्षा करने लगी। (तब) राघव ने क्रुद्ध हो, अनुपम अस्त्रों से उन महाशिलाओं को काट डाला, उसके (ताड़का के) दोनों हाथ काट डाले। तब लक्ष्मण ने उसकी नाक और कान जड़ से काट डाले, मानों वे यह बतलाना चाहते हों कि (आगे) मैं असुरेश (रावण) की बहन की भी यही दुर्दशा करूँगा। तब वह कामरूपिणी स्त्री, आश्चर्य को उत्पन्न करती हुई, माया-रूप धारण कर अनेक अस्त्रों की वर्षा करने लगी। (तब) विश्वामित्र ने कहा, 'हे अनघ! संध्याकाल (निकट) आ रहा है (सन्ध्या होने वाली है)। सन्ध्या समय राक्षसों को जीता नहीं जा सकता। अब तुम दया (भाव) छोड़कर, दृढ़ हो कर इसे, इस विश्व के हित के लिए, यहीं मार डालो।' ऐसा कहने पर गाधेय की बात को न टालते हुए, शब्दवेधी बाणों से उन तुच्छ मायाओं का दमन कर, भयंकर गर्जन करती हुई, बिजली (गाज) के समान आनेवाली राक्षसी को देखकर, एक महान् अस्त्र को (उसके) कुचाग्र पर चलाया। तब वह वनिता (अपने शरीर से) बहती हुई बहु रक्तधाराओं में, ॥ ७९० ॥

—[ऐसी लगी] मानों असुरों को दण्ड देने का उपक्रम करते समय वह (ताड़का) राम के शरों को (रक्त का) उपहार दे रही हो। वह (ताड़का) ऐसे पृथ्वी पर गिर पड़ी मानों प्रलय-मारुत से टूटकर सन्ध्या का आकाश धरती पर गिरा हो। तब अखिल भूत (समस्त प्राणी) आनन्दित हुए। तब देवता (और) मुनि आनन्दित हुए। उस राम को गले लगाकर कौशिक ने सम्मानित किया। तब देव, गन्धर्व आदि दिविजों के साथ देवेन्द्र (स्वयं) वहाँ आए; भगवान् श्रीराम के दर्शन कर, प्रार्थना की,

देवगंधर्वादि दिविजुलतोड । देवेंद्रुडचटिकेतेंन्चि, श्रीराम
देवुनि गांचि प्रार्थिचि पूजिचि । देवविधेयु गाधेयु वीक्षिचि,
'मम्मु रक्षिप निम्महि वुट्टिनट्टि । यिम्महात्मुनकु नीविम्म भृशवाश्वु
संतानमैन यस्त्रमुलु शस्त्रमुलु । नंतयु' ननि चेप्पि यरिगेनु दिविकि;
निनुडंत ग्रुंके; नय्येडनु नाडुंडि । मुनि मरुनाडु रामुनि व्रेम जीरि७९९

श्रीरामुनकु विश्वामित्रुडस्त्रशस्त्रमुलिच्चुट

'राम ! नी विक्रमरणकेळि सूचि । येमु मेच्चितिमि; नीकिच्चेदमिक ८००
नमरोरगासुर यक्षयुद्धमुल । समधिकमगु नस्त्रशस्त्रंवु' लनुचु
दनुशुद्धितोड सुस्थलिनि गूर्चुण्डि । मुनिपति रामु व्राङ्मुखुनि गाविंचि
यमलमनस्कुडै यखिलंवु दलचि । क्रममुन दंडचक्रंवुनु धर्म
चक्रंवु मरि कालचक्रंवु विष्णु । चक्रंवु शुक्रु वज्रंवनु नसियु
वाशिपाशमु धर्मपाशंवु गाल । पाशंवु नीशानु भयदशूलंवु
नोंगि शक्तियुग्मंवु नुग्रमै मिगुल । नेंगडु नुण्णानुण्णनिर्मिताशनुलु

पूजा की (और) देवविधेय (देवताओं की वात मानने वाले) गाधेय को देख, यह कह कर स्वर्ग को (लौट) गये कि 'हमारी रक्षा करने के लिए इस मही (धरती) पर जन्म लेने वाले इस महात्मा को आप भृशाश्व की सन्तान रूपी सभी अस्त्र-शस्त्रों को दीजिए।' तव (इतने में) सूर्यास्त हो गया। वहाँ उस दिन रहकर, दूसरे दिन मुनि ने राम को प्रेम से (अपने पास) बुलाया और कहा—॥ ७९९ ॥

श्रीराम को विश्वामित्र का अस्त्र-शस्त्र देना

—'(हे) राम ! तुम्हारी विक्रम (युक्त) रणकेलि देखकर, हम ने सराहा है (प्रसन्न हुए हैं।)। अव तुमको—॥ ८०० ॥

—अमर, उरग (नाग), असुर, यक्ष (के साथ) युद्धों में समधिक (श्रेष्ठ सिद्ध होने वाले) अस्त्र-शस्त्र देंगे।' (ऐसा) कहते हुए तन-शुद्धि के साथ (शरीर को पवित्र वनाकर), सुस्थलि पर वैठकर मुनिपति (विश्वामित्र) ने राम को प्राङ्मुख (पूर्वाभिमुख) वैठाया। अमलमनस्क हो, अखिल (सवकुछ, सर्वेश्वर) का ध्यान करके, क्रमशः दंडचक्र, धर्म-चक्र फिर कालचक्र, विष्णुचक्र, शक्र (इन्द्र) का वज्र और असि (तलवार), पाशिपाश (वरुणपाश), धर्मपाश, कालपाश, ईशान

नखिल दारुणमैन यमरमोदकियु । शिखरियु नन नुल्लसिल्ल गदल् रॆन्डु
गंकाळमुनु घोरकपाल मुसल । कंकणाख्यंबुलु ग्रौंचबाणादि
शस्त्रंबु लॊगिनिच्चि सम्मदंबडर । नस्त्रंबु लाग्नेय मन नॊप्पुनदियु
ब्राह्मंबु तेजःप्रभंबु नैंद्रंबु । ब्रह्मशिरंबुनु व्रस्वापनंबु ८१०
नारायणंबु बैनाकंबु शिखर । दारुण सौर सुदामनंबुलुनु
व्रशमनमुनु विलापनमु सत्यंबु । विशदप्रभल वॊल्चु विद्याधरंबु
वायव्य सौम्य संवर्तास्त्रमुलुनु । मायाधरास्त्रंबु मानवमथन
शामन पैशाच संतापनमुलु । दामस मौसल धर्षणास्त्रमुलु
हयशिरंबुनु मायलर्डरिंचि चाल । जयमिच्चु गांधर्व सम्मोहनमुलु
सौरिदि नैषिकमुनु शोषणास्त्रंबु । नरुदुग नाग्नेयमनु सायकंबु
गरुड बाणंबुनु गौबेरशरमु । नारसिंहास्त्रंबु नागवाणंबु
वारिंपरानट्टि वैष्णवास्त्रंबु । वारक नुतिकॆक्कु वैद्याधरंबु
रौद्रबाणंबुनु राक्षसास्त्रंबु । भद्रप्रदंबैन पाशुपतास्त्र
मॊगि गर्तरी चक्रमुलुनु मेघास्त्र । मगणितंबैनट्टि यस्त्रजालमुल८२०
नॆलमि निच्चिन वानिनॆल्ल गैकॊनुचु। नलरि· रामुंडम्महात्मुनि जूचि

(परमशिव) का भयद शूल, (और) क्रम से शक्तियुग्म (विष्णु-शक्ति और शिव-शक्ति), उग्र (और) अति प्रबल उष्ण-अनुष्ण निर्मित अशनियाँ (शुष्काशनि और आर्द्राशनि), सबसे दारुण अमर मोदकी, (और) शिखरी नाम से विराजमान दो गदाएँ, कंकाल, घोर कापाल, मुसल और कंकण नाम वाले, क्रौंच बाण आदि शस्त्रों को क्रम से दिया। सम्मोद के अधिक होने पर (शस्त्रों को देने के बाद) आग्नेय नाम से विराजित अस्त्र, ब्राह्म, तेजःप्रभ, ऐन्द्र, ब्रह्मशिर, प्रस्वापन, ।। ८१० ।।

—नारायण, पैनाक, शिखर, दारुण, सौर, सुदामन, प्रशमन, विलापन, सत्य, विशद प्रभाओं से युक्त विद्याधर, वायव्य, सौम्य, संवर्त (आदि) अस्त्र, (और) मायाधरास्त्र, मानवमथन, शामन, पैशाच-संतापन, तामस, मौसल, धर्षणास्त्र, हयशिर, मायाओं का प्रयोग कर, अधिक विजय दिलाने वाले गान्धर्व-सम्मोहन (नामक अस्त्र), क्रम से ऐषिक, शोषण, अद्वितीय आग्नेय नामक बाण, ।। ८१६ ।।

—गरुड़बाण, कौबेरशर, नारसिंहास्त्र, नागबाण, अवार्य (दुर्निवार) वैष्णवास्त्र, स्तुत्य वैद्याधर, रौद्रबाण, भद्र (कल्याण)-प्रद पाशुपतास्त्र (और) क्रम से कर्तरीचक्र, मेघास्त्र, अगणित अस्त्रजाल, ।। ८२० ।।

—(उपरोक्त सभी अस्त्रशस्त्रों को) प्रेम से देने पर, उन सबको ग्रहण

'मुनिनाथ! सकलास्त्रमुलु भवत्करुण ।गनि कृतार्थुडनैति ; गावुन निक
सललितंबुग नुपसंहरणास्त्र । मुल नोसंगु' मटन्न मुदमंदि यतडु
सत्यवंतमु रभसमु बराङ्मुखमु । सत्यकीर्तियु दशाक्षमु नवाङ्मुखमु
प्रतिहारतरमु मारणमुनु शुचियु । शतवक्त्रदैत्य धृष्टमुलु लक्ष्यमुलु
ग्रशनंबु गर वीरकनिकामरुचियु । दशशीर्षमुनु शतोदरमु ज्योतिषमु
विमलंबु मकरंबु विरुचि निष्कुलियु। प्रमथनंबुनु सुनाभंबुनु सर्व
नाभंबु मरि दुंदुनाभंबु वद्म । नाभंबु दृढनाभ नैराश्यमुलुनु
गायरूपंबु यौगंधरावरण । सौमनस , विनिद्र संधानमुलुनु
मोहन विषमाक्षमुलु महानाभ । वाहुविधूत जृम्भकमुलु धान्य ८३०
धनमुलु वृत्तिमंतमु रुचिरंबु । नैनय नर्चिमालि धृतिमालियनग
गामरूपंबुलुगल महास्त्रमुलु । भूमीशुनकु जेप्पि पोलुपार मरियु
निवियुनुगाक यनेकशस्त्रास्त्र । निवहमुल् रघुवंशनेतकु नोसगि
तत्प्रभावंबुलु दन्मंत्रमुलुनु । दत्प्रयोगंबुलु ददुपसंहृतुलु
विलसिल्लु शस्त्रास्त्र विद्या रहस्य । मुलु सर्वमुनु देल्प मोगि रामुनेदुट
नंगारसदृशंबुलै कोन्नि घोर । भंगुल धूमनिभंबुलै कोन्नि
यनुपमदीप्तिरम्यंबुलै कोन्नि । तनरारु वहुदिव्यतनुवुलै कोन्नि

करते हुए, सन्तुष्ट होकर राम उस महात्मा को देखकर (बोले), 'हे मुनिनाथ ! सकल अस्त्रों को भवत् (आपकी) करुणा (कृपा) से प्राप्त कर, कृतार्थ हुआ हूँ। अतः अब इच्छा (प्रेम) से उपसंहरणास्त्रों को दीजिए। (ऐसा) कहने पर प्रसन्न हो उन्होंने (विश्वामित्र ने) सत्यवन्त, रभस, पराङ्मुख, सत्यकीर्ति, दशाक्ष, नवाङ्मुख, प्रतिहारतर, मारण, शुचि, शतवक्त्र, दैत्य, धृष्ट, लक्ष्य, क्रशन, करवीरक, निकामरुचि, दशशीर्ष, शतोदर, ज्योतिष, विमल, मकर, विरुचि, निष्कुलि, प्रमथन, सुनाभ, सर्वनाभ और दुन्दुनाभ, पद्मनाभ, दृढनाभ, नैराश्य, कामरूप, यौगन्धर, आवरण, सौमनस, विनिद्र, सन्धान, मोहन, विषमाक्ष, महानाभ, वाहुविधूत, जृंभक, ॥ ८३० ॥

—धान्य धन, वृत्तिमन्त, रुचिर, श्रेष्ठ अर्चि, मालि, धृति-मालि नामक कामरूप वाले महास्त्रों को शोभायुक्त विधान से भूमीश (राजा राम) को कहकर (देकर) और इनके अतिरिक्त अनेक शस्त्र-अस्त्र निवहों (समूहों) को रघुवंश-नेता को देकर, उनके प्रभाव, उनके मन्त्र, उनके प्रयोग, उनकी उपसंहृतियाँ (उपसंहरण के विधान), शस्त्रास्त्र-विद्या के शोभायमान रहस्यों को, सबकुछ (राम को) बताने पर, क्रम से राम के

परुवडि जन्द्रप्रभंबुलै कॊन्नि । परिकिंप भानुदीप्तंबुलै कॊन्नि
बहुळांधकार विभ्रममुलै कॊन्नि । महितट्टाहासभीमंबुलै कॊन्नि
यकलंकमूर्तलिट्मर नेतॆन्चि । मुकुळित करयुग्ममुलतोड निलिचि
८४०

'ये कार्यमॊनरिंतु? मेमिट वनुपु? । माकेमियानति ? मनुजलोकेश !'
यनुडु 'ने दलचिनयप्पुडु मीरू । चनुदॆन्डु, पॊन्ड'न्न सकलास्त्रमुलुनु
वलगॊनि भक्ति नव्वसुमतीपतिकि। नॆलमितो म्रॊक्कुचु नेगॆ; नंतटनु,
मुनिनाथु जूचि केल्मॊगिचि राघवुडु। विनयंबु भक्तियु विश्वासमॆसग
'ननघ! कृतार्थुडनैति नी करुण!'। ननि विनुतिंचि विश्वामित्रु वॆन्ट
नरुगुचो नट वामनाश्रमभूमि । गरमॊप्पुटयु जूचि काकुत्स्थकुलुडु
'ई पर्वतमुचॆन्त निदियॊक्क वनमु । चूपुल किंपारि सॊम्पुल नलरि
पॊलुचु नानामृगंबुलु गलध्वनुलु । गल पक्षिकुलमुलु गलगि चॆन्नगुचु
नुन्नदि याश्रमंबो संयमींद्र ! । यॆन्ननॆव्वरिदि ? यिंदॆल्ल जंतुवुलु
सुखलील नुन्नवि चूड; निक्कडिकि । निलज्ञ! यॆक्कडनी यज्ञभूमि? ८५०

समक्ष कुछ तो अंगार सदृश, कुछ घोर-भंगिमाओं में धूम सदृश, अनुपम-दीप्तिरम्य हो कुछ, कुछ बहुदिव्य शरीरों से विराजमान, उनके बाद चन्द्रप्रभा के समान कुछ, कुछ देखने पर भानुदीप्त, कुछ बहुलान्धकार-विभ्रम, कुछ महित-अट्टहास से भीम (भयंकर) अकलंक मूर्ति वाले (अस्त्र, शस्त्र), क्रम से आकर, मुकुलित कर-युग्मों से खड़े होकर बोले, ॥ ८४० ॥

—'हे मनुजलोकेश ! कौन-सा कार्य करें ? क्या आदेश है ?' (ऐसा) कहने पर 'मैं जब तुम्हारा स्मरण करूँ, तभी तुम लोग आ जाओ । (अब) चले जाओ ।'—ऐसा (राम के) कहने पर सभी अस्त्र भक्ति से उस वसुमती-पति की प्रदक्षिणा कर, प्रेम से चरण-स्पर्श कर चले गए । तब, मुनिनाथ को देख, हाथ जोड़, विनय, भक्ति, विश्वास से प्रकाशमान राघव बोले 'हे अनघ ! तुम्हारी करुणा (कृपा) के कारण मैं कृतार्थ हो गया हूँ ।' ऐसा (विश्वामित्र की) विनुति कर, विश्वामित्र के साथ चल पड़े । वहाँ (मार्ग में) वामनाश्रम भूमि को, अधिक सुन्दरता से विलसित होते देख, काकुत्स्थ कुलज (राम) ने पूछा—'इस पर्वत के पास यह एक वन है । यह देखने में सुन्दर, सौन्दर्य से पूर्ण, शोभायमान, नाना प्रकार के मृगों (पशु), कलध्वनियों से युक्त, पक्षि-कुल से समायुक्त, यह आश्रम शोभा दे रहा है । हे संयमीन्द्र ! यह किसका है ? यहाँ सभी जन्तु सुखलीला से है, यहाँ से हे सर्वज्ञ ! आपकी यज्ञभूमि कहाँ है ? ॥ ८५० ॥

येटनुंडि चनुदेन्तु रेचि राक्षसुलु । चटुलोद्धतुलु नीड्डु जन्नंबु सेरूप ?
यागरक्षणमुगा नखिलराक्षसुल । वेगवे निर्जितु विशिखाळि' ननिन
नक्कौशिकुडु जगदभिरामु रामु । जेक्किलि वुणिकि संस्नेहुडै पलिकें;
'ननघ ! नी वेरुगनि यर्थवुगलदे? । विनुमु नाचे विन वेड्डुकयेनि ;

श्रीरामुनकु विश्वामित्रुडु सिद्धाश्रम विषयमेरिगिंचुट

मुनु विष्णुदेवुडु मुदमुतो दपमु । गॊनकॊनि काविंचुकॊरकुनै यिचट
युगमुलनेकंबु लुंडगा ननघ । मगु वामनाश्रममंदुरु दीनि ;
मरियुनु सिद्धाश्रमंबुनु ननग । वरलु नी याश्रमवनमु लोकमुल ;
जननाथ ! बलि विरोचनतनूजुंडु । घनराज्यमदमुन गर्वबुमिगिलि
येचि मरुत्तुल निंद्रादिसुरुल । वेचि कारिंपंग विबुधुलु मुनुलु
नी याश्रमंबुन केतेन्चि म्रोक्कि । तोयजनाभुनितो निट्टुलनिरि;
८६०

'शरणागतप्रिय ! सर्वलोकेश ! । सरसिजोदर! माकु शरणंबु नीव;
पन्नुगा मम्मेचु बलि यनुवाडु: । चॆन्नॊन्द जन्नंबु सेयुचुन्नाडु ;

—आपके यज्ञ को विगाड़ देने के लिए चटुल-उद्धत राक्षस कहाँ से दुर्निवार रूप (अतिशयता) से आते हैं ? याग-रक्षण के लिए सभी राक्षसों को, शीघ्र ही, विशिखाली (बाण-समूह) से मार डालूँगा ।' (राम के) ऐसा कहने पर, उस कौशिक ने जगदभिराम राम के गालों का स्पर्श करके, संस्नेह (भाव) युक्त हो कहा—'हे अनघ ! ऐसा कौन-सा अर्थ (विषय) है, जिसे तुम नही जानते हो? मुझसे (ही) सुनने का शौक है तो सुनो ।' ॥ ८५४ ॥

श्रीराम को विश्वामित्र का सिद्धाश्रम का विषय बताना

—'पूर्वकाल में विष्णुदेव मोद से, श्रद्धायुक्त हो, तपस्या करने के लिए यहाँ अनेक युगों तक रहे । अनघ हो (निष्पाप) इसे वामनाश्रम कहते हैं । और यह आश्रम-वन संसार में सिद्धाश्रम के नाम से भी प्रचलित है । हे जननाथ ! विरोचन का पुत्र बलि अपने घन (महान्) राज्य-मद के गर्व से प्रबल हो मरुत्, इन्द्र आदि देवताओं को अतिशयता से सताने लगा । (तब) विबुध और मुनि लोग इस आश्रम में आकर, प्रणाम कर तोयजनाभ से इस प्रकार बोले ॥ ८६० ॥

—'हे शरणागतप्रिय ! सवलोकेश ! सरसिजोदर । तुम्हीं हमारी शरण हो । हमें सताने वाला बलि नामक (व्यक्ति) शोभा से यज्ञ कर रहा है ।

अव्वारि दानमय्यज्ञवाटमुन ; । नेव्वरेमडिगिन निच्चुचुन्नाडु ;
ऋतुवु दीऱकमुन्ने काविंपु माकु । हित'मंचु ब्रार्थिंचि रेल्ल देवतलु ;
ना समयंबुन नदितो गूड । भासुर व्रतनिष्ठ बरगु कश्यपुडु
इम्मुल दपमु वेय्येडुलु सेय । सम्मदंबुन विष्णु साक्षात्करिंचे ।
ना वेळ गश्यपुडानंदमंदि । वेवेग नुतुलु गाविंचि 'सर्वेश !
नी महातनुवुन निखिललोकमुलु । सोमार्कलोचन ! चूचुचुन्नाड ;
नाद्यंतरहितुंडवगु निन्नु वेद । वेद्युनि शरणंबु वेडेद' ननिन
गरुण ना विष्णुंडु गश्यपु जूचि । 'वरमु नीकिच्चेद; वांछितंबेद्दि ?
८७०

यडुगुदुगा'कन्न नलरि कश्यपुडु । गडुभक्तितो गरकमलमुल् मोगिचि
'यतिबलोद्धति नाकु नदितिकि नीवु। सुतुडवै जन्मिंचि सुरल रक्षिपुः
मिदि कोर्कि नाकुनु नी देवतलकु; । मदिलो मन्निपु मम्मुनंदऱनु'
अनवुडु ना विष्णु वदितिगर्भमुन- । ननुपमंबगु तेजमडर जन्मिंचि
वामनत्वमु दाल्चि वच्चि यद्दनुजु । भूमि मूडडुगुलु पोसगंग नडिगि
रेन्डडुगुलने धरित्रियु दिवियु । दंडिमै गोलिचि या दैत्यु बंधिंचि

उस प्रसंग में यज्ञभूमि में जो कोई भी जो कुछ मांगता है, उसे वह दे रहा है। यज्ञ के समाप्त होने से पहले ही हमारा हित करो।' ऐसा कहते हुए सभी देवताओं ने प्रार्थना की। उस समय अदिति के साथ शोभायमान व्रतनिष्ठा में निमग्न कश्यप के सुन्दर ढंग से हजार-वर्ष तपस्या करने पर प्रसन्न होकर विष्णु ने (उन्हें) दर्शन दिए। उस समय कश्यप प्रसन्न होकर शीघ्रता से सन्नुति करके बोले—'हे सर्वेश ! हे सोमार्कलोचन वाले ! तुम्हारे महाशरीर में मैं समस्त लोक देख रहा हूँ। तुम आद्यन्तरहित और वेद-वेद्य हो। तुम्हारी शरण मांग रहा हूँ।' (ऐसा) कहने पर उस विष्णु ने करुणा से कश्यप को देख कहा—'तुम्हें वर दूंगा। इच्छा क्या है ? ॥ ८७० ॥

—माँग लो।' (ऐसा) कहने पर प्रसन्न हो, कश्यप अतिभक्ति से कर-कमल जोड़कर बोले—'मेरे और अदिति के तुम अति-बलोद्धति से पुत्र रूप में जन्म लो और देवताओं की रक्षा करो। यह मेरी और देतवाओं की इच्छा है। हम सब का मन से सम्मान (इच्छापूर्ति) करो।' ऐसा कहने पर उस विष्णु ने अदिति के गर्भ से अनुपम तेजोयुक्त होकर जन्म लिया। वामनत्व को धारण कर, आकर, उस दनुज से अनुकूलता से तीन चरणों की धरती माँगी। दो पगों से ही पृथ्वी तथा आकाश को

'लोलत नी मूडु लोकमुल् वेलय । नेलुमु नी' वंचु निंद्रुनकिच्चे ;
नदिमोदलिदि वामनाश्रमंबय्ये; । निदि मदीयाश्रमं; बी पुण्यभूमि
सिद्धिंचु निटुतपस्सिद्धुलु गान । सिद्धाश्रमंबु ना जल्लु नेल्लेडल ;
नीवे वामनुडवै नेगडि त्रिविक्र । मावतारमु दाल्चिनट्टि विष्णुडवु:
८८०

नाडुनु निदि नीवनंबु श्रीराम ! । नेडुनु ना रीति नीवनंबय्ये' ।
ननुचु गौशिकुडु निजाश्रमंबुनकु । जनि यंदु रामलक्ष्मणुल बूजिंचे ;
नच्चटि मुनिजनंबंतयु मदिनि । मुच्चट मीऱ रामुनि बूजसेसे ;

विश्वामित्र यज्ञ रक्षणमु

नंतराघवुडु विश्वामित्रु जूचि । संतसंबुन 'मुनीश्वर ! नेडु मीरु
यागदीक्षकु जोरुंडनुमानमुडिगि; । यागशत्रुलनेल्ल नडचेद नेनु ;
अनिन विश्वामित्रुडंत हर्षिंचि । मुनुल रप्पिंचि यिम्मुल दीक्षवडसि
यागवेदुल मुनुलर्थिगाविंप । यागांगमुलु पूर्णमयि वेदियोप्पे;

गुरुता से नाप लिया, उस दैत्य को बाँध कर, 'सुन्दरता से इन तीनों लोकों पर शोभा से शासन करो' ऐसा कहते हुए इन्द्र को (लोकाधिपत्य) दिया। तब से लेकर यह वामनाश्रम प्रसिद्ध हुआ। यह मेरा आश्रम है। इस पुण्यभूमि में तप की सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। अतः सर्वत्र यह सिद्धाश्रम कहलाता है। वामन रूप में अतिशयता से त्रिविक्रमावतार धारण करने वाले विष्णु तुम्ही हो ॥ ८८० ॥

—उस दिन भी यह वन तुम्हारा ही था। हे श्रीराम ! आज इस प्रकार यह वन तुम्हारा हुआ।' ऐसा कहते हुए कौशिक ने अपने आश्रम में जाकर (पहुँचकर) राम-लक्ष्मण की पूजा की। वहाँ के सभी मुनि-जनों ने मन में बड़े प्रेम के साथ राम की पूजा की।

विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा

—तब राघव विश्वामित्र को देख, प्रसन्न हो बोले—'हे मुनीश्वर ! आज आप सन्देह छोड़कर (निश्चन्त हो कर) यज्ञ-दीक्षा ले लीजिए। मैं यज्ञ के शत्रुओं का दमन करूँगा।' (ऐसा) कहने पर, तब विश्वामित्र हर्षित हुए और मुनियो को बुलाकर, प्रसन्नता से (यज्ञ) दीक्षा ले ली। मुनियों ने चाहकर (मन लगाकर) यज्ञ की वेदियों का निर्माण किया। यज्ञ के (आवश्यक) अंगों से परिपूर्ण वेदी शोभायमान हुई। अंचित (शोभित) आज्य (घी) की आहुतियों के यहाँ-वहाँ (जगह-जगह पर होम कुण्ड में)

नंचिताज्याहुतुलंदंद दौरग । मिंचि यग्नुलु मंडि मिंटिकि ब्राक
होमाग्नि ब्रभविंचु नुन्नतध्वनुलु । सामादि वेद प्रसंग घोषमुलु
नातत देवताह्वानरावमुलु । होतल पुण्यमंत्रोरु नादमुलु ८९०
दिक्कुलेल्लनु निंडि तिविरि घोषिंप। नक्कजमयि यागमटु चेल्लुचुंड
रामभद्रुडु धनुर्धरुडुनै मैत्रि । सौमित्रियुनु दानु जागरूकतनु
रक्कसुल् वच्चु मार्गमु मुन्ने येरिंगि । यक्कौशिकुनि मौनियैयुन्न वानि
विश्वमंतयु दमोवृतमु गाकुंड । शश्वत्प्रभल गाचु चंद्रार्कुलनग
गाचिरि कंटिकि गनुरेप्पकरणि । नेचिन भक्ति नय्येड नैदुनाळ्ळु;
नलवुमै गव गूडि यारवनाडु । बलिमि मारीच सुबाहुलेतेंन्चि
मेलिखड्गद्युतुल् मेरुगुलु गाग । ग्रालु कालांबुदोत्करमुलो यनग
बलमुलु दारु नुद्भट वृत्तिमिंट । निलिचि गर्जनमुलु निगुडिंचि मिंचि
वदलक यय्यज्ञवाटंबुलोन । मदमुन नुप्पोंग्गि मांसरक्तमुलु
गुरियुचो होतल कोलहलंबु । गरिम सदस्युल कलकलध्वनियु
९००

पड़ने पर अग्नि (की ज्वालाएँ) अतिशयता से प्रज्वलित होकर आकाश तक फैल उठीं। होमाग्नि से उद्भूत उन्नत ध्वनियाँ, साम आदि वेदपाठ के घोष, निरन्तर देवताओं के आह्वान (निमन्त्रण) के रव, होताओं के पुण्यमन्त्रों के उरु (विशाल) नाद, ।। ८९० ।।

—(उपरोक्त ध्वनियों के) सभी दिशाओं में (व्याप्त) होने पर, अधिक घोषित (मुखरित) होने पर, आश्चर्य के साथ यज्ञ के कार्य होते रहे तो धनुर्धारी राम स्वयं तथा भाई सौमित्री (लक्ष्मण) सावधानी से, राक्षसों के आने के मार्ग को पहले से ही जानकर, उस कौशिक के, जो मौन धारण किए हुए थे (यज्ञ की रक्षा करते रहे। मानों वे) समस्त विश्व को तमोवृत होने से, (अपनी) शश्वत्प्रभाओं से रक्षा करने वाले चन्द्र-सूर्य के समान थे। अत्यधिक भक्ति से वहाँ (उस यज्ञ भूमि में) पाँच दिन तक (उन्होंने वैसे ही) रक्षा की जैसे (नेत्र की) पलकें पुतली की रक्षा करती हैं। सबल हो, जोड़ी बांधकर, छठवें दिन जबरदस्ती मारीच (और) सुबाहु आए। श्रेष्ठ खड्ग-द्युतियों की चपला के समान (दिखाई देने वाले), वे बड़े-बड़े कालांबुद के समान लग रहे थे। बलयुक्त हो वे उद्भट वृत्ति (उद्धतगति) से आकाश में खड़े रहकर, अधिक गर्जन करते हुए, उद्धत होकर, (अपने प्रयत्न को) न छोड़कर, मद से फूलकर, यज्ञवाट (भूमि) में माँस और रक्त को बरसाने लगे। (तब) होताओं का कोलाहल, सदस्यों की बढ़ी हुई कलकल ध्वनि, ।। ९०० ।।

वरिचारकुल दीनगापणध्वनियु । वरिकिंचि विनि, रामभद्रुंडु वोंग्गि 'लक्ष्मण ! चूडु ना ला' वंचु विजय। लक्ष्मी धनुर्घोपलक्षणं बेसग नेलकोंनि विनुवीथि निजदृष्टि निलिपि । वलुविडि वायव्यवाणमेयुटयु नुरुवडि मारीचु नुव्वेत्तुगाग । सरभसवृत्तिमै शतयोजनमुलु गोंनिपोयि यख्रिमुख्रि क्रूर राक्षसुनि । वनधि लोपल वारवैचे ना शरमु; अडरि वज्रमुनकु नळिकि यंवोधि । वडिन मैनाकमै पडिन यय्यसुर योंकरीति दरि जेरि युग्रांशुकुलुनि । यकलंक विक्रमं वंदंद पोंगडि दनुजुल वासि याततनिष्ठतोड । ननयंबु ना सुचंद्राश्रम भूमि शूरत विडिचि यासुर वृत्ति नडिचि। घोरतपंबु गैकोंनि सेयुचुंडे ; नख्रिमुख्रि रघुरामु डग्निवाणमुन । नुरक सुवाहुनि नुरमेसि चंपे; ९१०
दविकन राक्षसदळमुल नोंकट । जक्काडे मानवशरमहत्त्वमुन ; सुरलुमोदिंचि यच्चो वुष्पवृष्टि । गुरिसिरि; मुनिकोटि गोंनियाडे नतनि; मुन्नु वृत्रासुरु मुनुमिडि चंपि । सन्नुतिपग देवसंघंबु गूडि वेलुगोंन्दु देवताविभुनि चंदमुन । वलुविडि रामुडु वाहुशौर्यमुन

—परिचारकों की दीन पुकारों की ध्वनि को देख सुनकर, रामभद्र ने झुक कर कहा—'हे लक्ष्मण ! देख लो मेरी शक्ति ।' (ऐसा) कहते हुए विजयलक्ष्मी की धनुष टकार कर, दृढता से आकाशवीथि पर अपनी दृष्टि रख (एकाग्र कर) उसी क्षण उनके वाव्ययवाण के छोड़ते ही, उस (उस बाण) ने सफलता के साथ द्रुतगति से, सरभस-वृत्ति (शीघ्रगति) से शतयोजन ले जाकर (उस) क्रूर राक्षस मारीच को वनधि (समुद्र) में डाल दिया। वज्र (के आघात) से अंवोधि (समुद्र) में गिरे मैनाक (पर्वत) के समान, (समुद्र में) गिरा वह असुर किसी रीति से तट पर पहुँचकर, जगह-जगह उग्रांशु (सूर्य)-कुल (वाले, राम) के अकलंक विक्रम की सराहना करता हुआ, दनुजों को छोड़, आतत-निष्ठा से, निरन्तर उस सुचन्द्राश्रम भूमि में, शूरत्व की प्रवृत्ति को छोड़, आसुर-प्रवृत्ति का दमन कर, घोर तप करने लगा। शीघ्र ही रघुराम ने अग्निवाण से सुवाहु का संहार किया ॥ ९१० ॥
—शेष राक्षस-दल का, एकसाथ, एक मानव-शर से संहार कर दिया। सुर (देवता) मुदित हुए (और) वहाँ पुष्पवृष्टि की। (राम की) मुनिकोटि ने सराहना की। पूर्वकाल में वृत्रासुर का संहार करने के बाद, देवता-समूह के एकत्र होकर स्तुति करने पर, विराजमान देवताविभु (इन्द्र) के समान, उस क्षण राम वाहुशौर्य से यज्ञ के शत्रुओं को दंडित कर महान्-वैभव से विलसित हुए। अतिनिष्ठा के शोभित होने पर, विश्वामित्र तव समस्त क्रतुकर्म को सम्पूर्ण कर आए (और)

गडगि यज्ञारुल गडगि शिक्षिंचि । विलसिल्लॆ घनमैन विभवंबुतोड;
नतिनिष्ठ वॆलय विश्वामित्रुडंत । ग्रतुकर्ममंतयु गडतेर्चि वच्चि,
'नॆलकॊनि रघुराम! नी प्रसादमुन। गलगक चॆल्लिपगंटि नी क्रतुवु'
ननि'कृतार्थुडनैति' ननि कौगलिंचि। विनुतिंचि रामुदीविंचि हर्षिंचॆ;
ननघमानसुडु विश्वामित्रमौनि । यनुरागमुनु बॊन्दि यच्चोट दामु
भूवरुलारात्रि बुच्चि यिम्मुलनु । वेविन पूर्वाह्णविधुलाचरिंचि९२०
मुनुलकु ब्रणमिल्लि मुनुपडि गाधि । तनयुनि गनुगॊनि 'तापसप्रवर !
यिक नॆय्यदि कार्य? मॆरिंगिपु; नीकु । गिंकरुलमु; नीदु कृपकु बात्रुलमु'
अनिन नच्चटि मौनुलंदरु गाधि । तनयु मुन्निडिकॊनि तामिट्टुलनिरि

मिथिलानगर प्रयाणमु

"जलजाप्तकुलवर्य! जनक भूविभुडु। चॆलुवॊप्प जन्नंबु चेयुचुन्नाडु
मनमंदुवोद मम्मनुजेशुनिंट । त्रिनयनु पाटिंचु दिव्यकार्मुकमु
गंधादिपूजल गरमॊप्पु देव । गंधर्वयक्ष राक्षस वीर वरुलु
मॊदलैन वारिकि मुन्ननेकुलकु । नदियॆत्त नॆक्किड नलविकाकुंडु

बोले—'हे रघुराम ! तुम्हारे प्रसाद (कृपा) से, बिना क्षुब्ध हुए, इस क्रतु को सम्पन्न कर सका । मैं कृतार्थ हुआ हूँ ।' ऐसा कह (राम को) गले लगा, स्तुति कर, राम को आशीर्वाद देकर, (वे) हर्षित हुए । अनघमानस उन विश्वामित्र मुनि के अनुराग को प्राप्त कर, वहाँ उस रात को राम ने अच्छे ढंग से बिता दिया । प्रातः पूर्वाह्न् विधियों से निवृत्त हो, मुनियों को प्रणाम कर, पहले गाधितनय को देख बोले—'हे तापस-प्रवर । अब कौन-सा कार्य है (करना होगा) ? बता दो । (हम) तुम्हारे किंकर (दास) है । तुम्हारी कृपा के पात्र है ।' (ऐसा) कहने पर, वहाँ के सभी मुनियों ने गाधितनय विश्वामित्र को आगे कर स्वयं यों कहा, ॥ ९२३ ॥

मिथिला नगर को प्रयाण

—"हे जलजाप्त (सूर्य)-कुल (वंश)-वर ! महाराजा जनक बड़ी शोभा के साथ यज्ञ कर रहे हैं । हम वहाँ चलेगे । उस मुनुजेश (राजा) के यहाँ त्रिनयन (शिवजी) की आज्ञा मानने वाला दिव्य कार्मुक (धनुष) है । गंध आदि पूजाओं से वह अति शोभायुक्त है । देव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस आदि अनेक श्रेष्ठ वीरों द्वारा इससे पहले उठाकर चढ़ाते समय यह उनकी शक्ति के बाहर रहा है (वे वीर असमर्थ रहे हैं ।) 'ऐसे धनुष को

नट्टि विल्लुनु वट्टि येट्टुलेक्कुपेट्टि । गट्टिगा नेत्तिन वनुनकु नतड्डु
तन कूतु निच्चेद दप्पक यनुचु । ननुचुन्नवाडनि यंदरु नपुड्डु
जननाथ ! याशरासन ललामंवु । जनकुनि जन्नंवु जनु जूड नीकु" १३०
ननुचु विश्वामित्रुडादिगा सकल । मुनुलु ना वीरोत्तमुल दाशरथुल
ललितपुण्युल मिथिलापुरंवुनकु । जेलुवार वयनंवु सेसि सम्मदमु
नोन्दि भागीरथि युत्तरतटमु । जेन्दि हिमाद्रियु सिद्धाश्रमंवु
वलपट निडि यक्षवल्लभु दिशकु । वोलुपार जागिन भूरिमार्गमुन
मूडु योजनमुलु मूडु जामुलकु । नाडेगि यट शोणनदमु तीरमुन
विडिसि तीर्थस्नान विहितकर्ममुलु। नडपि रम्यस्थलि नरनाथसुतुलु
संतोषमुन मुनीश्वरुलतो नुंडि ; ।रंत गौशिकु जूचि या रामुडनियें १३७

कौशांवि वृत्तांतमु

'गरमु प्रजावृद्धि गलुगु नी देश । मरय नेव्वरिदेश? मानति'म्मनिन
"भूनाथ ! विनु ब्रह्मपुत्रुंडु कुशुड्डु ।ना नोक्क मुनि महोन्नतकीर्ति गलड्डु;
अतड्डुनु वैदर्भियनु निंति वलन । सुतुल नल्वुरगांचे सुरुचिराकृतुल१४०

पकड़कर, (प्रत्यंचा) चढ़ाकर, सुचारु रूप से उठाने वाले महानुभाव को मैं अवश्य अपनी पुत्री दूँगा, ऐसा वह (जनक) कह रहा है।' ऐसा कहकर सब ने तब (कहा), 'हे जननाथ ! उस शरासन (धनुष) ललाम (श्रेष्ठ) को (और) जनक के यज्ञ को तुम्हें देखना चाहिए।' ॥ १३० ॥

(ऐसा)—कहते हुए विश्वामित्र आदि सभी मुनियों ने उन वीरोत्तम, ललित-पुण्य वाले दशरथ के पुत्रों को मिथिलानगर की शोभा-यात्रा के लिए प्रस्थान करवाया। बड़े हर्ष से (वे सब) भागीरथी के उत्तर तट पर पहुँचे। (वहाँ से) हिमाद्रि (और) सिद्धाश्रम को दक्षिण पार्श्व में छोड़कर, यक्षवल्लभ (कुबेर) की दिशा (उत्तरदिशा) की ओर सुन्दर सुरम्य मार्ग पर तीसरे पहर तक तीन योजन चलकर उस दिन शोण नदी के किनारे ठहरे। तीर्थ-स्नान (आदि) विहित कर्मों से निवृत्त हुए। (उस) रम्यस्थल पर (वे) राजकुमार मुनीश्वरों के साथ आनन्द के साथ रहे। तब कौशिक (विश्वामित्र) की ओर देखकर वे राम बोले, ॥ १३७ ॥

कौशांबी की कथा

—'अत्यधिक प्रजा-समृद्ध यह देश, किसका है ? निर्देश कीजिए।' राम के ऐसा कहने पर (विश्वामित्र ने कहा,) 'हे भूनाथ ! सुनो, (प्राचीनकाल में)

व्रशमितात्मुल धूर्तरजसु गुशांबु ।गुशनाभु वसुवु; नक्कोमरुलु मिगिलि
यनिवार्य शौर्युलै यनुपमलील । दनरु महाक्षत्रधर्मंबु नडप
गौंडुकुल चरितंबु गुणमुलु जूचि । यडरु संतसमुतो ना कुशुंडनियें,
'निल व्रजापालनं बेलमि गाविंपु । डलघुकीर्तुलु गल्गु' नन मुदमंदि
कौशलंबुन नोप्पु ना कुशांबुंडु । कौशांबि यनु पेर गाविंचे बुरमु ;
दशरथात्मज ! महोदयमनुपुरमु । गुशनाभुडोनरिंचे गुशलुडै धरणि;
शूरुंडु धूर्तरजुंडु निर्मिंचे । नारंगबुरमु धर्मारण्यमनग;
वसुवु निम्मुल गिरिव्रजमनुपेर । बसनुग निर्मिंचे बट्टणंबोकटि ;
यिदि प्रीति नव्वसुवेलुदेशंबु । मुदमंद गिरुलैदु मुंदरू नोप्पु,
ना नगमध्यंबुनंदुनू माग । धानाममुन नोकतटिनि सेन्नोन्दु ; ९५०
जालि यम्मगधदेशंबेल्ल वसुबु । पालिचुचुंडुनु बरमधर्ममुन ;
नच्चेरु वडरंग ना कुशनाभु । डच्चरलेम घृताचि यंदेलमि
गन्नुलु मरुनंपगमुलु ना नोप्पु । कन्नेल नूर्वुर गडु रूपवतुल

ब्रह्मा का पुत्र कुश नामक महान् कीर्तिवाला एक मुनि था । उसने वैदर्भी नामक स्त्री से सुरुचिर आकृति वाले, ।। ९४० ।।

—शान्त-आत्मा धूर्तरज, कुशांबु, कुशनाभ और वसु नामक चार पुत्रों को प्राप्त किया । अतिशय शौर्य और पराक्रम से युक्त इन पुत्रों के अनुपम लीला-युक्त महाक्षत्रधर्म का आचरण करने पर, पुत्रों के चरित्र और गुणों को देखकर, कुश ने अति प्रसन्न होकर कहा—'(इस) पृथ्वी पर प्रजा का पालन सहर्ष करो, (उससे तुम लोग) अत्यन्त यशस्वी होगे ।' ऐसा कहने पर प्रसन्न होकर, कुशल कुशांबु ने कौशांबी के नाम से एक नगर (का निर्माण) किया । हे दशरथात्मज । (इस) धरती (पर) कुशल कुशनाभ ने महोदय नामक पुर (का निर्माण) किया । शूर धूर्तरज ने धर्मारण्य नामक सुन्दर नगर का निर्माण किया (और) वसु ने गिरिव्रज नामक (अत्यंत) रमणीक पट्टण (नगर) बसाया । यह वही देश है, (जिस पर) वह वसु प्रेम के साथ शासन करता है । यह पाँच सुरम्य पर्वतों से सुशोभित है । उन पर्वतों के मध्य मागधा नाम की एक (नदी) वहती है ।। ९५० ।।

—समर्थ हो उस समस्त मगध देश (पर) वसु परम धर्म के साथ (प्रजा का) पालन करता है । आश्चर्य अधिक हो, (इस रूप में) उस कुशनाभ ने अप्सरा स्त्री घृताची में (के द्वारा) प्रसन्नता से, अत्यन्त रूपवती सौ कन्याओं को जन्म दिया, जिनकी (उन कन्याओं की) आँखें कामदेव के बाणों के समान शोभायमान थीं । वे तरुणियाँ कमनीय कान्ति

गनियें ; नत्तरुणुलु गमनीयकांति । विनुत यौवनकळा विस्फूर्तुलमर
मंजीर मेखलामधुर वाचाल । मंजुल कंकण मणिशिंजितमुलु
गरमोप्पगा दाळगतुलनगूडि । मीरय लीलालास्यमुलु सल्पुवारु
मुरिपेम्बुलिपार मोगि मृदंगादि । वर वाद्यमुलु वेड्क वायिंचुवारु
वाणिपल्लवलघुस्फारितलील । वीणामृदुक्वणविततंबुगाग
माकंद मंजुल मधुपानमत्त । कोकिलध्वनि गूडिकोनि पाडुवारु
नेरिकप्पु गोप्पुलु निटलंबुलोप्पु । मरिवालु जूपुलु माटतीपुलनु१६०
निक्किनमुक्कुलु निग्गु जेक्कुलनु । जक्केर मोवुलु जारु नीवुलनु
जक्कव कवनव्वु चन्नुल क्रोव्वु । जुक्कराायल गोमुसोवगु नेम्मोमु
दव्वरू कौनुलु दळुकु मेनुलनु । अब्बुरंबगु तोडलंचलनडलु
नगुचु नुद्यानंबुनंदु ग्रीडिप । दगिलि या चेलुवल दप्पक चूचि
कामंधुडै सर्वगतुडैन पवनु । डा मानिनुल जूचि यर्थितो वलिकें;
'मानिनीमणुलार! मरि विनुडिक। वूनि चेप्पेद मीकु वोसगंग निपुडु

(और) विनुत (प्रख्यात) यौवन-कला की विस्फूर्ति से युक्त हो, उद्यान मे गईं। (वहाँ कुछ अपने) मंजीर, मेखला की मधुर ध्वनियों (और) मंजुल कंकणों की मणियों की ध्वनियों के साथ, परम सुन्दरता से ताल-गति के साथ, नाट्यानुगुण-शब्द-गुम्फन से युक्त लीला-लास्य करने लगीं। (कुछ) अपने गमन-विलास की शोभा के साथ, क्रम से मृदंग आदि वर (श्रेष्ठ) वाद्यों को शौक से वजा रही थीं। कुछ पाणि-पल्लवों (कर-पल्लव) को शीघ्र गति से चलाती हुई, वीणाओं को मृदु रूप से ध्वनित कर (वजा) रही थीं। कुछ (युवतियाँ) आम्रमंजरी के मंजुल मधुपान से मत्त कोकिल के स्वर के समान गा रही थीं। सुन्दर जूडाओं के सिर पर सुशोभित होने पर, वाँकी चितवन (और) वचनों की मधुरता, ॥ १६० ॥ —ऊँची नासिका, चिकने गाल, मधुर ओष्ठ, ढीली पड़ती नीवी, चक्रवाक की जोड़ी का उपहास करने वाले स्तनों का दर्प, चन्द्रमा के सौकुमार्य से युक्त सुन्दर मुख, अस्ति-नास्ति का भाव पैदा करने वाली कमर, चमकीले शरीर, आश्चर्य चकित करने वाली जाँघ, हँसगमन (आदि) से युक्त हो वे (युवतियाँ) उद्यान में क्रीड़ाएँ करने लगीं, तो उन सखियों पर आसक्त हो (उन्हें) अनिवार्यत: देखकर, काम से अन्धा बन, सर्वगत (सर्वत्र गतियुक्त) पवनदेव उन मानिनियों को देख, प्रीति से (यों) वोले—'हे मानिनीमणियो, अव सुनो ! आपके अनुकूल हो (ऐसी) वात का उपक्रम कर कहता हूँ। हे नलिनाक्षियो ! (कमलनेत्रियो !) मेरा वरण करो (और) शोभा से अमरत्वसिद्धि को प्राप्त करो।

नन्नु वरिंपुडु नलिनाक्षुलार ! । चेन्नार नमरत्वसिद्धि गैकोनुडु;
अन्नडु जरलेनि येलजव्वनंबु । नुन्नतयशमु मी कोप्पारगलुगु"
ननिन नल्लन नव्वि 'यनिलुंड! सकल । जनहृदयंबुल जरियिंतु वीवु;
नी वेरुंगवे मम्मु? नी महत्त्वंबु । भाविंपकिदियेमि पलिकेद वकट९७०
नियतुडै वर्तिंचु निर्मलधर्म । नयशीलुडगु कुशनाभु कूतुलमु;
ओडक मा तंड्रि युंड मायंत । गूडुने यिट्टु सेय ? गुलहानिगादे ?
यिरवार मा तंड्रि येव्वरिकिच्चु । बरिकिंप नातडे पति माकु' ननिन
बवनुडु गोपंबु पट्टलेकप्पु । डवयवंबुल जोच्चि या तलोदरुल
गुदियंग दिविच्चिन गुब्जलै तंड्रि । कदियेल्ल नेरिंगिंप नंदरु वच्चि
विन्ननि वदनारविंदमुल् वांचि । सन्निधिनिलिचि बाष्पमुलु निंचुटयु
गुशनाभुडप्पुडाकूतुलकैन । दश जूचि वेरगंदिता वारिकनियें;
'निट्टिरूपमुलु मीकेलनागलार ! । येट्टु वाटिले? नेव्वडिट्टु सेसेमिम्मु?
मीरेल पलुकरु? मींकित केमि । कारणं ?' बनवुडु गरमुलु मोगिंचि
तमतंड्रि तोड ना धवळाक्षुलनिरि । 'ममु जूचि पवनुंडु मानंबु विडिचि ९८०

आप को शोभायुक्त रूप से जरा-हीन नवयौवन (और) उन्नत यश प्राप्त होगा।' ऐसा कहने पर, (वे) मुस्कुरा कर बोलीं—'हे अनिल! तुम सब के हृदयों में संचार करते हो। (फिर भी) तुम हमें नहीं जानते हो ? अपने महत्त्व के बारे में सोचे बिना हाय, यह क्या कह रहे हो ? ॥ ९७० ॥
—(हम) नियम के अनुसार आचरण करने वाले निर्मल-धर्म तथा नीतिशील कुशनाभ की पुत्रियाँ हैं। पराभूत हुए बिना हमारे पिता के रहते, हम स्वयं ऐसा (तुम्हें वरण) कैसे कर सकेंगी ? (इससे क्या) कुल-हानि (वंश का अपमान) नहीं होगी ? स्थिरभाव से हमारे पिताजी हमें जिसे देंगे (जिसके साथ विवाह करेंगे), विचार कीजिए वही हमारा पति होगा।' ऐसा कहने पर पवनदेव (अपने) क्रोध को दबा न सके। तब उन तलोदरियों (तरुणियों) के अवयवों में प्रवेश कर, (उन्हें) ह्रस्वीकृत करने पर, वे कुब्जाएँ हो गईं। पिता को वह सब बताने के लिये जाकर, खिन्न बने वदन-अरविन्दों (मुख-कमलों) को झुकाकर, (पिता के) समक्ष खड़े हो, उन्होंने आँखें भर लीं (आँसू बहाने लगीं)। कुशनाभ ने तब उन पुत्रियों को प्राप्त दशा देख स्तम्भित हो, स्वयं उनसे कहा—'हे युवतियो ! ऐसे रूप तुम्हें कैसे प्राप्त हुए ? किसने तुम्हारे साथ ऐसा किया ? तुम लोग बोलती क्यों नहीं हो ? ऐसा होने का क्या कारण है ?' ऐसा कहने पर हाथ जोड़कर, अपने पिता से वे धवलाक्षियाँ (सफ़ेद नेत्रों वाली इस प्रकार)

'नन्नु वरिंपुडु नलिनाक्षुलार !' । यन्नना माटकु 'नौगाक' यनक
'मा तंड्रि नडुगु मी माट नी'वनिन । नातंडु कामांधुडै यलिग मम्मु
गुब्जलगा जेसे ग्रूरात्मु'डनिन । नब्जलोचनलतो नातडिट्लनिये ;
'दगवुनु धर्मंबु दलपोसि मीरु । तगदनि शीलंबु दाट नोडितिरि ;
कन्नियलार ! मी गौरवंबुननु । नुन्नत सत्कीर्ति नोन्दे ना कुलमु ;
देवताविषयमै तेगि यलगरैति । रीविधि मीरु सहिंचुटे लेस्स ;
क्षमये सत्यंबुनु, क्षमये शीलंबु । क्षमये तपंबुनु, क्षमये कीर्तियुनु
क्षमये धर्मंबुनु, क्षमये लोकंबु । नमरंग रक्षिंचु' ननि वारि वंचि
तन मंत्रिवरुलतो दग विचारिंचि । यनघात्मुडगु चूळि यनु मुनींद्रुनकु
९८९

विश्वामित्रुनि वंशक्रममु

दनुजन्मुडगु गुणोत्तरु ब्रह्मदत्तु । ननुवार रंप्पिंचि या महात्मुनकु
९९०

बोलीं—'हमें देखकर पवन ने लज्जा त्याग कर,(निर्लज्ज बन)—।। ९८० ।।
—कहा 'हे नलिनाक्षियो ! मेरा वरण करो' (तो) हमने उसकी बात को स्वीकार नहीं किया और कहा 'यह बात तुम हमारे पिता से पूछो' । तब कामान्ध हो, क्रुद्ध उस क्रूर-आत्मा वाले (निर्दयी) ने हमें कुब्जाएँ बना दिया ।' ऐसा कहने पर उसने (कुशनाभ ने), उन अब्जलोचनाओं (कमलनेत्रियों) से कहा—'न्याय और धर्म का ध्यान रखकर, अनुचित समझकर, तुम लोगों ने अपने शील को खोना नहीं चाहा । हे कन्याओ! तुम्हारे गौरव (पूर्ण कार्य) से मेरा वंश उन्नत एवं सत्कीर्ति को प्राप्त हुआ । देवता के विषय में, साहस करके तुम लोग क्रुद्ध नहीं हुईं । इस प्रकार तुम लोगों का सहन कर जाना ही उत्तम है । क्षमा ही सत्य है, क्षमा ही शील है, क्षमा ही तप है, क्षमा ही कीर्ति है, क्षमा ही धर्म है । क्षमा ही प्रीति से (समुचित रूप से समस्त) लोगों की रक्षा करता है ।' ऐसा कहकर (सान्त्वना देकर) (राजा ने) उन्हें भेज दिया (विदा किया) । (तब) अपने श्रेष्ठ मंत्रियों से उचित रीति से विचार कर, अनघात्मा (पुण्यात्मा) हो चूली नामक मुनिवर के ।। ९८९ ।।

विश्वामित्र का वंशक्रम

—पुत्र, गुणोत्तम (गुणों में श्रेष्ठ) ब्रह्मदत्त को समुचित रीति से निमन्त्रित किया । उस महात्मा को ।। ९९० ।।

धर्मपत्नुलु गाग दनदु कन्नियल । निर्मल बुद्धिमै नेम्मि निच्चुटयु
जूळि पुत्रुडु वारि जूचि कैकोनग । व्रीलें ना नूर्वुर विकृतरूपमुलु:
अवनीश ! यदि मोदलापुरोत्तममु। ननिन गन्याकुब्जमनु पेर बरगें ।
ना कुशनाभुंडु नप्पुडोप्पारु । नाकृतुल् गल तनयुल गनुंगोनुचु
नलरि या कूतुल नल्लुनि ननिचि । येलमिमै बुत्रकामेष्टि गाविप
गोंडुकैन कुशनाभु गुशुडु वीक्षिचि । पडसेदु पुत्रुनि बरमधार्मिकुनि
विनुत निर्मल कीर्तिविख्यातु गाधि। यनुपेरु गल पुण्यु ननि येरिंगिचि
परम प्रियंबुन ब्रह्मलोकमुन । करिगें ना कुशु मन्मडै गाधि वुट्टे
दशरथात्मज ! गाधितनयुंड नेनु । गुश वंशमनि कौशिकुंडंड्रु नन्नु;
मति धर्मनिष्णात मा यक्क सत्य । वति भक्तिमै सुरेश्वर लोकमुनकु
१०००
वेडुक दन प्राणविभुडैन रुचिकु । तोड शरीरंबुतोड दा नरिगि
यी लोकमुन लोकहितमाचरिंप । ब्रालेय पर्वत प्रान्त देशमुन
नलि गौशिकी नामनदि यय्ये दानु । वेलय नन्नदि चेन्त विहरिंतु नेनु
सिद्धाश्रममु ब्रवेशिचिन कतन । सिद्धंबुगा दपस्सिद्धुंडनैति

निर्मल बुद्धि और प्रेम के साथ अपनी कन्याओं को धर्मपत्नियों के रूप में प्रदान किया। चूली-पुत्र के उन्हें देखकर स्वीकार करने पर, उन सौ (कन्याओं) के विकृत रूप दूर हो गये। हे अवनीश (राजा) ! तब से लेकर वह श्रेष्ठ नगर, (इस) अवनि पर कन्याकुब्ज के नाम से प्रसिद्ध हुआ। वह कुशनाभ तब सुन्दर आकृतियों से युक्त पुत्रियों को देखकर प्रसन्न हुए (और) उन पुत्रियों को (तथा) जामाता को विदा कर, हर्ष के साथ पुत्र-कामेष्टि किया। (तब अपने) पुत्र कुशनाभ को देखकर कुश बोले—'परमधार्मिक, विनुत (प्रख्यात) निर्मलकीर्तिविख्यात गाधि नामक पुण्यात्मा को पुत्र रूप में तुम प्राप्त करोगे।' ऐसा बताकर परमप्रिय भाव से वे (कुश) ब्रह्मलोक को गए। उस कुश के पौत्र होकर गाधि पैदा हुए। हे दशरथात्मज ! मैं गाधितनय हूँ। कुशवंश में होने से मुझे कौशिक (भी) कहते हैं। अति-धर्मनिष्णाता हो मेरी बड़ी बहन सत्यवती भक्ति के कारण, सुरेश्वरलोक (स्वर्ग) को, ।। १००० ।।

—हर्षयुक्त हो, अपने प्राणविभु (पति) रुचिक के साथ सशरीर गई। इस लोक में लोकहित करने (की भावना से) के लिए, प्रालेय (हिम) पर्वत-प्रान्त-देश में, समुचित रूप से, स्वयं कौशिकी नामक नदी बन गई। शोभायमान उस नदी के पास मैं विहार करता हूँ। सिद्धाश्रम में प्रवेश करने के कारण वास्तव में मैं तप:सिद्ध हुआ हूँ। आदि से मेरे वंश की

नादिनुंडियु मदीयान्वयस्थितियु । नीदेशविधमुनु नेर्पडविटि
नडुरात्रि यरुदेन्चे नरलोकनाथ ! । कडु डस्सिनाडवु कनुमोड्तु गाक
चलियिंपकुन्नवि सकल वृक्षमुलु । मेलगवु वनभूमि मृगसमूहमुलु
नेरि विहगमुलु नीडमुल् सेरि । मरचियुन्नवि तम मंजुल ध्वनुलु
यामिनी चरुलैन यक्षराक्षमुलु ।भूमि विच्चलविडि बोरि चरिंचेदरु
दीटुगा जीकटि देसलु नाकसमु । गाटुक बूसिन करणि नुन्नदियु ; १०१०

नीलांबरंबुन निंडु मुत्तेमुलु । गीलिंचि ब्रह्मांड गेह गोळमुन
गडु नोप्पुगा मेलुकट्लेत्तिनट्टु । लुडुगणंबुलतोड नुन्नदि निंगि ;
यडरंग जनुलकु नानंदमोदव । नुडुराजु वोडतेन्चुचुन्ना'डटन्न
ना माटलकु मेच्चि यखिलसंयमुलु। ना मुनींद्रुनितोड ननिरप्पुडलरि;
"नेरय नी वंशंबु निर्मलंबनघ! । गुरिलेनि महिम नी कुलमु वारेल्ल
ब्रह्मसमानुलु परिकिंप; नीदु । ब्रह्मवर्चसमुनु ब्रणुतिंप नोप्पु ;
ना कौशिकियु नी निजान्वयंबुनकु। दीकोनि ता वन्ने देच्चे नी जगति"

स्थिति (और) इस (प्र) देश के वनने के सम्बन्ध में यह (वृत्तान्त) सुना है। हे नरलोकनाथ! आधीरात हो गई है। वहुत थक गए हो (तुम), (अतः) आँखें मूँद लो (सो जाओ)। सभी वृक्ष अचल हो गए हैं (हिल नहीं रहे है), वनभूमि में मृगसमूह विचरण नहीं कर रहा है, सुन्दर विहंग (अपने-अपने) नीड़ों में पहुँचकर, अपनी मंजुल-ध्वनियों को भूले हुए है, यामिनी (निशा–) चर यक्ष (और) राक्षस स्वेच्छा से (स्वच्छन्द होकर) विचरण करेगे, अंधकार पूर्णरूप से दिशाओं तथा आकाश में फैल गया है मानों काजल पोत दिया गया हो। ॥ १०१० ॥

—ब्रह्माण्ड रूपी गृह मे वड़े सुन्दर ढंग से वड़े-वड़े मोतियों से युक्त चंदोवा सजाया गया हो, इस विधि से नीले आकाश में नक्षत्र-समूह शोभायमान है। लोगों के आनन्द में वृद्धि करते हुए उडुराज (नक्षत्रपति) (चन्द्र) उदित हो रहा है।" ऐसा कहने पर, उन वातों की स्तुति कर, सभी (मुनियों) ने प्रसन्न होकर तव उस मुनीन्द्र से कहा—'हे अनघ! विचार कर देखने पर तुम्हारा वंश निर्मल है। तुम्हारे वंश वाले अचूक (अतुलनीय) महिमा वाले है। परिशीलन करने पर (वे) ब्रह्म समान हैं। तुम्हारा ब्रह्मवर्चस् (ब्रह्मतेज) स्तुत्य है। उस कौशिकी ने भी, इस जगत् में तुम्हारे वंश को सप्रयत्न उज्ज्वल कर दिया है।' ऐसा कहते हुए उन मुनीश्वरो ने विश्वामित्र की विनुति (स्तुति) की। तव भूविभु

ननुचु विश्वामित्रु नम्मुनीश्वरुलु । विनुतिंचि; रंत भूविभुलु, संयमुलु
ना रात्रि निद्रिंप ना प्रभातमुन । ना ऋषिपुंगवु ला गाधिसुतुड्ड
'जननाथ ! निद्रलु सालिंपु'डनिन । विनि तेरि पूर्वाह्णविधुला-
चरिंचि१०२०

कौशिकु जूचि 'यगाधमै चूड । नी शोणनदरत्नमित यॉप्पगुनॆ ?
याकीर्णमीनंबु नतिरमणीय । सैकतंबुनु सुप्रसन्नतोयंबु
बरिचित हंसादि पक्षिसंघंबु । दरुणानिलोच्चलत्तरळतरंग
मैयुन्न दीयेरु ; ननघात्मक ! मन । मेयॆड दाटुद ? मॆत्तॆरं ?' गनिन
'दरुचुगा मुनुलॆल्ल दाटॆडु मार्ग । मॆरिगिपोद' मटंचु नॆडदव्वुबोव
गलहंस सारस कारंडवादि । जलपक्षिरवमुलु सरिदम्मु विलुचु
विधमुन जॆलगंग वीनुलिंपार । नधिपुडालिंचि,मध्याह्न कालमुन
सिद्ध मुनींद्र संसेव्यतीरमुनु । शुद्ध पुण्योदक सुप्रवाहमुनु
गलिगि नदीतिलकंबै धरित्रि । वॊलुपारु जाह्नवि बॊडगांचि,म्रॊक्कि
'गाधेय ! चूड नगाधमै तोचु । नाधुनीरत्नंबु नट दाटिपोव१०३०

उस रात को सो गए । राम-लक्ष्मण और मुनिजन प्रभात समय (हो जाने पर) उन ऋषिपुंगवों (और) उस गाधिसुत के 'जननाथ, (अब) निद्रा छोड़ो' कहने पर, (उन बातों को) सुन, स्वस्थ हो (जागकर) प्रातःकाल की क्रियाओं का आचरण कर, ॥ १०२० ॥

—(राम-लक्ष्मण) कौशिक को देखकर बोले—'अगाध दीखने वाली यह श्रेष्ठ शोण नदी कितनी सुन्दर लग रही है ! मीनों (मछलियों) से आकीर्ण (पूर्ण), अतिरमणीय सैकत (स्थल), सुप्रसन्न (निर्मल या मधुर) तोय (जल), परिचित हंस आदि पक्षिसंघ (समूह), तरुण अनिल से उछलने वाली तरल तरंगों से युक्त है यह नदी । हे अनाघत्मक! हम कहाँ (पर इस नदी को) पार करें ? (और) किस विधि से ?' ऐसा कहने पर, (विश्वामित्र) ने कहा कि प्रायः मुनिलोग जिस स्थान से (इस नदी को) पार करते हैं, उसे जानकर, (वहीं से) पार करेंगे । वे बहुत दूर तक (नदी के किनारे-किनारे) गए । (वहाँ) कलहंस, सारस, कारंडव आदि जलपक्षियों के (कल-रव) ऐसे कर्णमधुर सुनाई पड़ रहे थे, मानों वे उनका स्वागत कर रहे हों । अधिप (राजा) ने उन्हें सुनकर, मध्याह्न के समय, सिद्ध-मुनीन्द्रों द्वारा संसेवित तीर-स्थली पर, शुद्ध, पुण्य-उदक सुप्रवाह से युक्त हो, धरित्री पर नदीतिलक स्वरूपा विराजमान जाह्नवी (गंगा) को देखकर, (उसे) प्रणाम कर, कहा—'हे गाधेय ! देखने में अगाध लगने वाली इस श्रेष्ठ नदी को पार कर जाने का मार्ग

देरुविक नेय्यदि ? तेलुपवे' यनिन । 'नरनाथ ! यी शोणनदमुत्तरिंचि
मोगि मूडु योजनम्मुलु दाटिपोव । नगु नम्महानदि ; यंदाक मनकु
दोयफलादुलु द्रोव बे' क्कनुचु । ना येरु दाटि वारटु पोवुचोट
जेलगु सारसगणसेव्यमै पुण्य । सलिलमै युत्फुल्ल जलजमै विमल
फेनमै नित्यगंभीरमै चारु । मीनमै यतिपुण्य मिळितमै योप्पु
गंगातटंबुन घनलताकुंज । संगतंवगु समस्थलमुन विडिसि
मनुजेंद्रतनयुलु माध्याह्निकंबु । लोनरिंचि मुदमंदि युचित भोज्यमुल
नोजमै मुनिगोष्ठि नोप्पुचुन्नंत, । राजन्यतिलक मा रामचंद्रुंडु
राजहंसोद्धूत राजीवरेणु । राजीविराजितरंगत्तरंग
गंग नालोकिंचि, कौशिकु जूचि । 'गंग यी वसुध के क्रममुन वच्चे ?
१०४०
ने तेरंगुन बोये निट नाकमुनकु? । वाताळमुनकु नेंभंगि दा नरिगे?
नेचि पारवार मेगति जोच्चे ? । ने चंदमुन वुट्टे निम्महातटिनि ?
चेप्पवे' यनवुडु श्रीरामु जूचि । यप्पुण्यधनुडु विश्वामित्रुडनियें:

कहाँ है ? बताइए।' (ऐसा) कहने पर (विश्वामित्र ने कहा)—'हे नरनाथ ! इस शोण नदी को पार कर, ।। १०३० ।।

—सप्रयत्न तीन योजन जाने पर, वह महानदी (गंगा) मिलेगी (वहाँ तक पहुँचेंगे)। तब तक हमारे लिए मार्ग में जल और फल बहुत मिलेंगे।' ऐसा कहकर वे शोण नदी को पार कर जाने लगे। सारस-गण (समूह) से सेवित, पुण्यसलिल, उत्फुल्ल (विकसित) जलज, विमल फेन से संयुक्त, नित्यगम्भीर, सुन्दर मीनों से युक्त, अतिपुण्यमयी हो विराजमान गंगा के तट पर, घन-लता-कुंज-संगत (युक्त) एक सम (तल) स्थल पर (वे) ठहर गए। (वहाँ) राजकुमारों ने मध्याह्न समय के (उचित) कार्यों से निवृत्त हो, प्रसन्न-मन से उचित आहार ग्रहण किया (और) मुनियों की गोष्ठि (संगति) में विराजमान हुए। राजन्यतिलक (राजाओं में श्रेष्ठ) उन रामचन्द्र ने राजहंसों से उड़ाए गए (हिलाए गए) राजीव-रज के समूह (आधिक्य) से विराजित सुन्दर तरंगों वाली गंगा को देखा। (वे) कौशिक को देखकर बोले—'गंगा इस वसुधा पर किस क्रम (विधान) से आई ? ।। १०४० ।।

—यहाँ से किस विधि से नाकलोक (स्वर्ग) को गई ? पाताल को किस तरह वह गई ? अतिशयता से उसने पारावार (समुद्र) में कैसे प्रवेश किया ? यह महातटिनी (नदी) किस तरह से पैदा हुई ? कह दो न।' ऐसा

'गमनीयकांतुलु गल रूपवतुलु । हिमवंतुनकु गूतुलिरुवुरु गलरु;
अमरुलंदरुगूडि यागंबु कौरकु । हिमवंतु वेडि या यिरुवुरिलोन
गुरुपुण्ययगु पेद्दकूतुरु गंग ।नरुदार गौनिपोयि रमरलोकमुन;
कटमीद बार्वतियनु पिन्नकूतु । बट्टुतपोनिष्ठिकु वरितृप्तुडगुचु
फाललोचनुनकु बत्निगा निच्चे । ना लोललोचन ना नगाधिपुडु ।
सुरुचिरगति गंग सुरलोकमुनकु । नरिगि ता सुरनदि यनुपेर बरगें'
ननि चेप्पि मुनिनाथुडवनीशु जूचि । 'विनुमु वृत्तांतंबु वेन्डियु नोकटि
१०५०

कुमारस्वामि जन्म वृत्तांतमु

पार्वति वरियिंचि परमानुरक्ति । सार्वकालंबुनु जंद्रशेखरुडु
नतिलोक गति लोलुडै दिव्य वर्ष । शतमु दा रतिकेळि सलुपुचुन्नेडनु
गमलासनुंडादिगा सर्वसुरलु । दमलोन नेन्तयु दारु सिंतिंचि
'वेलय नी यिरुवुर विषमतेजंबु ।दलप नेव्वरिकैन धरियिंप वशमे ?

पूछने पर श्रीराम को देखकर, वे पुण्यधनी विश्वामित्र बोले—'हिमवान् के कमनीय कान्ति से युक्त, रूपवती दो पुत्रियाँ हैं। सभी अमरों ने मिलकर, याग (यज्ञ) के लिए, हिमवान् से प्रार्थना की (और) उन दोनों में से गुरु (महान्) पुण्य वाली बड़ी पुत्री गंगा को, प्रेम से (ठाठ-बाट से) अमर-लोक ले गए। उसके बाद पार्वती नामक छोटी पुत्री की पट्टु-तपोनिष्ठा से परितृप्त होकर, उस नगाधिप (पर्वतराज) ने उस लोल-लोचनों वाली को, फाल-लोचन (शिवजी) को पत्नी के रूप में दिया। सुरुचिरगति से गंगा सुरलोक में जाकर, सुरनदी के नाम से विख्यात हुई।' ऐसा कहकर मुनिनाथ अवनीश (राजा) को देखकर बोले—'सुनो, एक और वृत्तान्त है। ॥ १०५० ॥

कुमारस्वामी का जन्म-वृत्तान्त

—'पार्वती का वरण कर, परम अनुरक्ति से चन्द्रशेखर (शिवजी) अतिलोकगति में लीन हो एक सौ दिव्य वर्षों तक सदा रतिक्रीड़ा करते रहे। तब कमलासन (ब्रह्मा) आदि सभी सुर (देवता) अपने-आप में अधिक सोच-विचार करने लगे कि 'इन दोनों के विषम तेज को धारण करना किसी के वश की बात नहीं है।' ऐसा कहते हुए (सोचते हुए) सभी उन महादेव के पास आए, विनीत हो सद्भक्ति से प्रणाम किया

यनुचु नंदरु नम्महादेवु कडकु ।जनुदेन्चि विनतुलै सद्भक्ति म्रोक्कि
देवदेव ! महेश ! देव! सर्वेश ! । देवनिस्तारक ! देव ! नी महिम
सर्व गीर्वाणुलु सन्नतिचेंदरु; । सर्वज्ञ ! माकु प्रसन्नुंडवगुम ;
येपारु नी तेज मेव्वरु दाल्प । नोपुदु ? रट्टुगान युड्गु मीविधमु;
करुण दपोवृत्ति गैकोनि मीरु । सरि ब्रह्मचर्यंबु जरियिंप वलयु;
ननवुडु 'नौगाक' यनुचु ना सुरल । गनुगोनि मुदमुतो गौरीशुडनिये; १०६०

'जलियिंचिनदि निजस्थानंबु वलन; । नेलकोनि मीलोन निर्जरुलार !
येव्वरु दाल्चेंदरीतेज' मनिन । 'निव्वसुंधर दाल्चु निंपार' ननिरि
हरुडु ना सुरलतो 'नौगाक' यनुचु। धरणिपै गाविंचे दद्विमोक्षणमु ।
दिविजुलय्यड नग्निदेवु नीक्षिंचि । 'पवनुनितोगूडि पावक ! नीवु
इलमीद वडियुन्न इम्महातेज । मेलमि ब्राशिंपुमि यिंपार' ननिन
स्ववशंबु गानट्टि शर्वुतेजंबु । पवनपावकुलुनु भरियिंपलेक
यंगजहरु वीर्यमप्पुडु वेग । गंग लोगोननिच्चे गरमर्थितोड़;

(और) कहा—'हे देवदेव! हे महेश! हे देव ! सर्वेश! देवनिस्तारक! देव ! तुम्हारी महिमा की सभी गीर्वाण (देवता) सन्नुति (संस्तुति) करते हैं। हे सर्वज्ञ ! हमपर प्रसन्न हो जाओ। तुम्हारे अतिशय तेज को कौन धारण कर सकेगे ? (कोई धारण) नहीं कर सकता अतः यह क्रम (रतिक्रीड़ा) छोड़ दो। (हम पर) करुणा (भाव) से तपोवृत्ति ग्रहण कर, (तुम) दोनों को ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए।' ऐसा कहने पर, 'ऐसा ही हो' (तथास्तु) कहकर उन देवताओं को देख, प्रसन्न हो गौरीश बोले, ।। १०६० ।।

—'अपने स्थान से (वीर्य) विचलित हो चुका है। तुम में से हे निर्जरो ! इस तेज को कौन स्थिरता से धारण कर सकेगे ?' (ऐसा) कहने पर (उन्होंने) कहा—'यह वसुन्धरा शोभायुक्त होकर धारण करेगी।' हर (शिव) ने 'ऐसा ही हो' कहते हुए तत्क्षण (उस वीर्य का) विमोक्षण (विमोचन) धरती पर कर दिया। दिविजों ने उस समय अग्निदेव को देखकर कहा—'पवन से मिलकर हे पावक ! तुम धरती पर पड़े हुए इस महातेज को हर्ष के साथ पान करो।' (ऐसा) कहने पर, अपने वश में न आने वाले शर्व (शिव) के तेज को, पवन और पावक वहन न कर सके। (अतः) अंगजहर (शिव) के वीर्य को तब गंगा ने बड़ी इच्छा से (उस वीर्य को) अपने में आने दिया। तब उस स्त्री (गगा) ने स्थिरता से, प्रेम के द्विगुणित होने पर उसे धारण किया।

निच्चिन नायिंति यिरवौन्दगानु। मच्चिक धरियिंचेममत रेट्टिप
दन विभु तेजमत्तरि दालपलेक। तन मदि भयमंदि तत्तरपडुचु
गंगातरंगमुल् गरमु भीतिलिल। पौन्गेल्ल नडगुचु बौदलुचु
नपुडु १०७०
चित्तसंक्षुभितयै शीघ्रंबुगानु। दत्तीरदेशंबु दा जेर्चुटयुनु
शरवणंबुनयंदु जय्यन जौच्चि। चिरतरंबुग नंदु जेल्वौन्दुचुंडे;
नप्पुडु ऋषिपत्नुलंदरु गूडि। यौप्पुगा दमतम युचितकृत्यमुलु
तप्पक तीर्पंग दा मेगुदेन्चि; । रप्पुडु नार्यलु नागंग जौच्चि
तोयंबुलाडुचु दौडरि वेवेग। 'पायक शरवणभव्यस्थलमुन
द्रेताग्नुलनु बोलि तेजरिल्लुचुनु। ब्रातिगा ब्रचुरमै परगुचु लेस्स
नुन्नवि यीयग्नु लौन्डौरुल् मनमु। चेन्नार जलिचेत जिक्कि
स्रुक्किलिमि।
मन्ननलिर्पौन्द मनमु निच्चटनु। ग्रन्नन चेकौन गडगुद' मनिन
नीश्वरतेजंबु निरवोंद बुच्चि। शाश्वतंबुग धर सत्कीर्ति वेलय
जातवेदुनि जेर जनिन यितुलकु।नाततंबुग जूचिनट्टि यितुलकु १०८०
निर्भर वृत्तिमै निलिचे गर्भमुलु। गर्भिणुलै वारु करमौप्पुचुन्न

(किन्तु) अपने विभु (स्वामी) के तेज को उस समय धारण न कर सकने पर, (वह) अपने मन में भीत होकर, घबरा गई। गंगा की तरंगें अत्यन्त भयभीत हो गई, (उनका) उफान कम हो रहा। ॥ १०७० ॥

—चित में संक्षुभित होकर उसने शीघ्रता से उसे तीर-प्रदेश पर पहुँचा दिया (छोड़ दिया)। वह (तेज) झट से शरवण (सरकंडों के वन) में प्रवेश कर चिरकाल तक शोभायमान रहा। तव (एक दिन) ऋषिपत्नियाँ सव मिलकर, सुन्दरता से अपने-अपने उचित कार्यो को अवश्य निर्वाह करने के लिए स्वय वहाँ (उस तीर-स्थल पर) आई। तब वे नारियाँ उस गंगा में प्रवेश कर, स्नान करती हुई, आसक्त हो शीघ्रता से बोली—'शरवण के भव्य-स्थल में त्रेताग्नियों के समान प्रज्वलित होती हुई, अविरल (एवं) प्रचुरता से विराजमान होती हुई ये अग्नियाँ बहुत श्रेष्ठ (लग रही) हैं। हम लोग अधिक ठंड से ठिठुर रही हैं। वहाँ जाकर, शीघ्र ही सुख प्राप्त करेगी।' (ऐसा) कहकर, धरती पर शाश्वत रूप से सत्कीर्ति से विराजमान होकर, इस रूप में ईश्वर-तेज को स्थिरता से प्राप्त करने, जातवेद (अग्नि) के पास गई। उन स्त्रियों को, आतत रूप से (उस तेज को) देखने वाली उन स्त्रियों को, ॥ १०८० ॥

वहुभीतुलगुचु ना भामिनुलपुडु । तहतहपडि मरि तन्मयत्वमुन
दमतम यिड्लकु दारथि नरुग । शमितात्मुलगु मुनिसंघंवु लप्पु
डंत ना वृत्तान्त मायोगदृष्टि । जिर्तिञ्चि मुनुलल चेलुवलकनिरि:
'मी सत्यशीलत मीदु गर्वंबु । मी सौख्यमिप्पुडु मिम्मित चेसे',
ननुचु नाग्रहमुन नवनि गंपिप । वनितल मीद नवार्य कोपमुन
'मति हीनुलरु मिम्मु मन्निपनेल? । पतिदूरलगु' डंचु वलिकिन विनुचु
मगुड जाह्नवि जेरि मगुवलंदरुनु ।दगुनम्म! नीकिदि तगुनंचु वलिकि
तमतम वाहुल ताडनंबुलुनु । दम गर्भमुल मीद दग जेसि रोगिनि ।
गरताडनंबुल गलगि कंपिंचि । करमोप्प गर्भमुल् गरगि विच्छिन्न १०९०
गर्भबुलै यप्डु कांतलवलन । निर्भयंबुन जारि नेरुयंग नप्पु
डारुखंडंवुलै यवनिपै वडियें । जारिन या खंड चयमु ग्रहिंचि
शरवणंवुनयंदु जप्पन वेट्टि । यरुदलरग लेचि या तलोदरुलु

—निर्भर वृत्ति से (अतिशयता से) गर्भ ठहर गए (वे गर्भवतियाँ हुईं)। गर्भिणी होकर वे अति ही शोभायमान हुईं। वे भामिनियाँ (स्त्रियाँ) तव वहुत ही भीत होती हुईं, घवराती हुईं, फिर तन्मयता से, इच्छा से अपने-अपने घर पहुँचीं। शमित आत्मा वाले (शान्त चित्त वाले) मुनियों ने तव उस समस्त वृत्तान्त को योगदृष्टि से जानकर, उन स्त्रियों से कहा—'तुम्हारी सत्यशीलता, तुम्हारे गर्व, तुम्हारे सुख (की इच्छा) ने तुम्हें ऐसा (दोपी) कर दिया है।' (ऐसा) कहते हुए, क्रोध के कारण अवनि (धरती) काँप उठे, ऐसा (उन) वनिताओं (स्त्रियों) पर अवार्य (दुर्निवार वचन) क्रोध से कह दिया—तुम 'मतिहीनाओं को क्षमा क्यों करें? (तुम लोग) पतियों से दूर हो जाओ।' ऐसा कहने पर, सुनकर फिर से जाह्नवी के पास पहुँचकर, (उन) सभी स्त्रियों ने कहा—'हे (गंगा) माई! क्या यही तुम्हें करना चाहिए था? यह उचित है?' (ऐसा) कहकर, अपने गर्भों पर अपने-अपने वाहुओं से, क्रम से, ताड़न करने लगीं। कर-ताड़न से विचलित-कम्पित हो, अधिक शोभायमान वे गर्भ पिघलकर, विच्छिन्न होकर, ॥ १०९० ॥

—निर्भयता से लुढ़ककर, छः खण्ड होकर, अवनि पर गिर गए। लुढ़के हुए उन खण्डों को उठा कर, तुरन्त उन्हें शरवण में रखकर, आश्चर्य से वे तलोदरियाँ (स्त्रियाँ) वड़ी प्रीति से तपस्या करने चली गईं। वह अति उग्र तेज एक जगह एकत्र होकर अत्यधिक वढ़ा और वही इस अवनि

तपमुन करिगिरि तद्द्यु ब्रीति । नुपमिंप नट जाल नुग्रवीर्यंबु
कवगूडि वृद्धियुं गड्ुगलग जाल । नवनिपै श्वेताद्रि यन गड्ु नॉप्पें;
नरय ना शैलंबुनंदु गुमारु । डरुदार जन्मिचें हरुनि तेजमुन ;
जननप्रदेशंबु शरवणंवगुट । जननाथ! यतडॉप्पें शरजन्मुडनग;
निल गृत्तिकलु सन्नुलिच्चुट जेसि । यलरुचु गार्तिकेयाख्य जॅन्नॉन्दे ;
नारय नम्मातलार्वुरुगान । वारु संतोषिंप वदनंबुलारु
धरियिंचि समुचित स्तन्यपानंबु । सरिनॉप्प जेयुट षण्मुखुंडय्यें;
११००
दरुणेंदुमौळिरेतस्स्कंदमुननु । नरुदारगा स्कंदुडन नॉप्पें; नंत
वरुवडि दमु सुरल् प्रणुतिंप नेरिगि । गिरिपुत्रि कन्नुलु गॅम्पार जूचि,
'सुरलार ! संतानशून्यत मीकु । निरवन्द धरणिकि नॅल्लकालंबु
बहुनायकत्वंबु बाटिल्लनिम्मु । बहुविधंबुल' ननि पलिकॅ गोपिंचि;
कलगिरि सुर; लंत गौरितो दपमु । सलुप हिमाद्रिकि जनियें नीश्वरुड्ु ।
नमरेंद्रुडादिगा नखिलदेवतलु । गमलसंभवुडुन्नकडकु दामेगि,
'जलजसंभव ! भुजासत्त्वसंपन्नु । नॅलमि सेनापति निम्मु मा' कनिन,

---

पर श्वेताद्रि कहलाया । उस शैल पर शिव के तेज से, आश्चर्य रूप से कुमार (स्वामी) का जन्म हुआ । हे जननाथ ! जन्मस्थान शरवण था, अतः वह शरजन्मा (शरवण-भव) कहलाए । पृथ्वी पर कृत्तिकाओं के स्तन्य-पान कराने से वह कार्तिकेय के नाम से विख्यात हुए । विचार करने पर (जानिए कि) वे (कृत्तिकाएँ) माताएँ छः थीं । उन्हें सन्तुष्ट करने के लिए छः वदन धारण कर समुचित रूप से, शोभायुक्त रूप से, स्तन्यपान करने से वे षण्मुख (छः मुखवाले) हुए । ।। ११०० ।।

—तरुण-इन्दु-मौलि (शिव) के रेत-स्कन्दन (पतन) के कारण, वे स्कन्द कहलाए । तब क्रम से देवताओं को अपनी-स्तुति करते जानकर, गिरिपुत्री (पार्वती) ने आँखें लाल करके (क्रुद्ध होकर) कहा—'हे देवताओ ! तुम लोगों को सन्तानहीनता और इस धरणी को सदा अनेक प्रकार से बहुनायकत्व प्राप्त होगा ।' ऐसा क्रुद्ध होकर वे बोलीं । (तब) देवता क्षुब्ध हुए । उसके पश्चात् गौरी के साथ तपस्या करने ईश्वर (शिव) हिमाद्रि को चले गए । अमरेन्द्र आदि अखिल देवता, कमल संभव (ब्रह्मा) के यहाँ गए (और) (कहा)—'हे जलजसंभव ! शोभा से भुजासत्त्वसम्पन्न (इस) सेनापति को हमें दे दो ।' (ऐसा) कहने पर वारिजगर्भ ने उन्हें देखकर (कहा)—'गौरी और ईश (शिव) का पुत्र कार्तिकेय, तुम्हारे लिए

वारिजगर्भुंडु वारि वीक्षिंचि । 'गौरीशु सुतुडैन कार्तिकेयुंडु
सेनाधिपत्यंबु सेयु मी' कनिन । ना निर्लिपुलु वेड्क 'नौगाक' यनुचु
जेकोंन नातडु सेनानियय्यें । नाकनायकुनकुन्नत सौख्य मेसग'
१११०

ननिपल्क रघुरामु डधिक संतोष ।मुनु बोंदि मरियु नम्मुनिनाथु जूचि
'यी महानदि संयमीश्वर ! त्रिपथ । गामिनि यगुटेमिकारणं' बनिन
ननघुंडु कौशिकु डारामु जूचि । विनुमनि या कथ विवरिंपदोडगे;
१११३

गंगानदि वृत्तांतमु

'ननघुडयोध्यकु नधिपुडु सगरु । डनु चक्रवर्ति युद्धतकीर्ति गलडु ।
अतडु संततिलेमि कनिशंबु वगचि । मतिलोन दलपोसि मंत्रुल नुनिचि
हिमवंतमुन केगि यितुलु दानु । दमकिंचि भृगुगूर्चि तपमाचरिंप
नंत ना भृगुडुनु ना तपंबुनकु । संतुष्ट हृदयुडै सगरुनीक्षिंचि,
'पृथिवीश ! कोडुकुलु पेक्कंड्रु नीकु । प्रथितोरुकीर्तुलु परग बुट्टेदरु;

सेनापतित्व करेगा ।' (ऐसा) कहने पर वे निर्लिप (देवता) हर्षामोद से 'ऐसा ही हो' बोले । उनके ग्रहण करने पर नाक-नायक (स्वर्गपति इन्द्र) को उन्नतसुख सम्पन्न कराते हुए वह (कार्तिकेय) सेनानी हुए ।' ॥ १११० ॥

—ऐसा (विश्वामित्र के) कहने पर रघुराम अधिक प्रसन्न हुए और उस मुनिनाथ को देखकर बोले—'हे संयमीश्वर ! इस महानदी के त्रिपथ-गामिनी होने का क्या कारण है ?' (ऐसा) कहने पर निष्पाप कौशिक राम को देखकर बोले, 'सुनो' और उस कथा का विवरण देने लगे:— ॥ १११३ ॥

गंगानदी का वृत्तान्त

—'अनघ (पुण्यवान्) सगर नामक चक्रवर्ती अयोध्या के अधिप (राजा) उद्धत कीर्ति वाले थे । वे सन्तान के अभाव से व्याकुल हो, (अपने) चित्त में विचारकर, मन्त्रियों को राज्य का भार सौंप कर, स्त्रियों के साथ हिमायल पर्वत पर गए । (वहाँ) बड़ी तन्मयता से भृगु के आश्रम में तपस्या की । तब उस तपस्या से सन्तुष्ट होकर भृगु ने सगर से कहा 'हे पृथ्वीश ! तुम्हें प्रख्यात कीर्ति वाले कई पुत्र प्राप्त होंगे । सम्मान्य

अंचित कीर्ति नी यतिवलंदोकतें । गांचु नोक्कनि वंशकरुडैन पुत्रु;
मरि योक्क सतिगांचु मानुगा सुतुल। नरुवदिवेवुर नमित विक्रमुल' ११२०
ननि वरंबिच्चिन ना राजसतुलु । विनि करंबुलु मोड्चि विनयंबुतोड
मुनिनाथुनकु म्रोक्कि मुदमंद'नोक्क। तनयुडेसति? कुन्न तनयुलेसतिकि?'
ननवुडु 'मी कोरिनट्लये पुत्र । जननंबु' लनि पल्क संतोषमंदि,
यंदग्रमहिषि निजान्वयकरुनि । नंदनु नोक्कनि नरनाथ ! कोरें ।
मरि कोरें ना युन्न मगुवयु सुतुल । नरुवदि वेवुर नधिकमोदमुन ।
सगरुंडु भृगुनकु सतुलतोड गूड । नोगि ब्रदक्षिणमंत नोनरिंचि म्रोक्कि
पुरमुन केतेन्चि पोलुपार नंत । गरमु वेडुक गोन्तकालंबु सनग
मानुगा दन यग्रमहिषि केशिनियु । सूनुनि नसमंजसुंडनुवानि
गनियें ; ना सुमतियन् कांतकु बुट्टे। घनतरंबैनट्टि गर्भतुंवंबु ।
करकैन या सोरकायलो बुट्टि । ररुवदि वेवुरत्यद्भुत लील ११३०
नंत दादुलु वारि नाज्य भांडमुल ।गोन्तकालमु वेम्प गोमरारि वारु

कीर्ति वाली इन स्त्रियों में से एक (स्त्री) वंशकर (वंशोद्धारक) पुत्र को जन्म देगी। दूसरी स्त्री अमित विक्रम वाले साठ हज़ार पुत्रों को जन्म देगी ॥ ११२० ॥

—ऐसा वर देने पर, उन रानियों ने हाथ जोड़, विनय के साथ, मुनिनाथ को प्रणाम कर, प्रसन्न हो पूछा—'हम दोनों में किसके एक पुत्र होगा और किसके साठ हजार पुत्र उत्पन्न होंगे ?' ऐसा पूछने पर मुनि ने कहा—'तुम लोगों की इच्छा के अनुसार पुत्र जन्म (पुत्रोत्पत्ति) होगा।' ऐसा कहने पर प्रसन्न होकर, उनमें से अग्रमहिषी (पटरानी) ने निजान्वयकर (अपने वश के उद्धारक) एक नन्दन (पुत्र) की इच्छा प्रकट की तथा दूसरी स्त्री ने अधिक मोद के साथ, साठ हज़ार पुत्रों की इच्छा प्रकट की। सगर, रानियों के साथ, क्रम से भृगु को प्रदक्षिणा कर, पुर में शोभा के साथ आए। इस प्रकार कुछ समय अत्यन्त आनन्द के साथ बीता। कुछ समय बाद राजा सगर की अग्रमहिषी (पटरानी) केशिनी ने असमंजस नामक पुत्र को जन्म दिया। और उस सुमती नामक रानी से एक गर्भतुम्ब (लौकी) पैदा हुआ। उस कठिन लौकी में से, अतिअद्भुतलीला से साठ हज़ार (पुत्र) पैदा हुए। ॥ ११३० ॥

—तब धाइयों ने उन्हें कुछ समय तक आज्यभांडों (घी के पात्रों) में रख

रूपयौवनमुल रूढ़िमै वॅरिगि ; । रा पॅद्दवाडंदुदग्रदर्पमुन
वापोव दम्मुल वडि वट्टि पट्टि । चापलंबुन गट्टि सरयुवुलोन
वैचुचु नव्वुचु वच्चिन मगुड । द्रोचुचु नुंडु; ना दुष्टात्मुडैन
यसमंजसुन कंत नंशुमंतुंडु । दॅसल देजंबुलु दीपिप वुट्टॅ ।
नायसमंजसु डतिदुष्टचित्तु । डैयुन्न नतनि वोनडचि या राजु
शाश्वतधर्मनिष्ठापरुं डगुचु । नश्वमेधमु सेय ननुरक्ति दॉडगॅ''
ननिन गौशिकु जूचि या रामुडनियॅ । 'मुनिनाथ! मा वंशमुन वारि कथलु
विन वेड्क पुट्टॅडु ; विवरिंपु माकु' । ननिन विश्वामित्रुडनियॅ रामुनकु

सगरुल वृत्तान्तमु

'विडुवक हिमशैल विन्ध्यशैलमुल । नडुम ना सगरु जन्नंबु वर्तिप ११४०
यागंबु चेरुव नंशुमंतुंडु । रागिल्लि यश्वंबु रक्षिचुनॅडनु,
ननिमिषपति दैत्युडै म्रुच्चिलिंचि । कॉनिपोयि पाताळकुहरंबु सॉच्चि

कर पाला-पोसा । वे सभी पुत्र मनोज्ञ रूप से, रूप और यौवन को अत्यधिक रूप से प्राप्त कर बड़े हुए । उनमें से असमंजस नामक वह ज्येष्ठ पुत्र उदग्र दर्प से अपने छोटे भाइयों को झट से पकड़-पकड़ उन्हें रुलाते हुए, चपलता से उन्हें रस्सियों से बाँध, सरयू में डाल देता और हँसता । वे (नदी में से) लौट आते तो फिर ढकेलता रहता । उस दुष्टात्मा असमंजस के अंशुमान् (नामक पुत्र) दिशाओं को दीप्त करता हुआ पैदा हुआ । उस असमंजस के अतिदुष्ट होने के कारण राजा सगर ने उसे निर्वासित कर दिया और शाश्वत धर्म-निष्ठा मे तत्पर हो प्रेम-पूर्वक अश्वमेध (यज्ञ) करने का प्रयत्न करने लगा ।' यह सुनकर कौशिक की ओर देखकर राम ने कहा—'हे मुनिनाथ ! मुझे अपने वंश के लोगों (पूर्वजों) की कथाएँ सुनने की इच्छा हो रही है । अतः आप (उन्हें) विवरण (विस्तार) से कहिए ।' ऐसा कहने पर विश्वामित्र राम से यों बोले:—

सगरों का वृत्तान्त

—(राजा सगर) हिमशैल और विन्ध्यशैल के मध्य (मध्यभूमि में, आर्यावर्त में) निरन्तरता से यज्ञ करने लगा । ॥ ११४० ॥

—यज्ञ स्थल के निकट ही अशुमान् प्रेमपूर्वक (यज्ञ के) अश्व की रखवाली कर रहा था । उस समय देवराज इन्द्र ने दैत्य (राक्षस) का रूप बना कर (अश्व को) चुरा लिया और पातालकुहर में प्रवेश कर, कपिल मुनि

कपिलसंयमि वेन्क गडकतो गट्टि । यपरिमितानंदुडै येगें दिविकि ।
भूपालु डश्वंबु बोंडगान किच्च । गोपिंचि मंडुचु गोंडुकुल बिलिचि
'यिट गान मश्वंबु; नेव्वडो वच्चि । कुटिलुडै म्रुच्चिलि कोनिपोयिनाडु
मूडु लोकंबुलु मुनुमिड वेदकि । वाडेव्वडैननु वानि निर्जिंचि
तेन्डु गुर्रमु वेग तगुवमै मीरु: । पोन्ड'न्न सगरुलु भुजशक्ति मेरसि
नेरसि ब्रह्मांडंबु निंड गर्जिंचि । यरुवदि वेवुरु ना प्रोद्दे कदलि
या नाकलोकंबु नवनियु वेदकि । कानक धरणि व्रक्कलु सेयगडगि,
'योक्कोक्क डोक्कोक्क योजनं बुर्वि। नक्कजंबुग द्रव्वु' डनि येर्परिंचि
'परुवडि पूर्वदिग्भागंबु दोडरि । धर व्रदक्षिणमुगा द्रव्वुद' मनुचु
बोरि बोरि गुद्दाल भूरिशूलमुल । धर रसातलमुनंदाक द्रव्वुचुनु
बाताळवासुल व्रकटसत्त्वमुल । भूतसंततुल जंपुचु जेलंगुचुनु
वेस नप्पुडरुवदि वेल योजनमु । लसमुन द्रव्वि रा यसमानबलुलु ।
भूरिसत्त्वमुन जंबूद्वीपमिट्लु । वारिक तिरिगि रा वडि द्रव्वुटेरिंगि,
यमरगंधर्वसिद्धादुलु बेदरि । कमलगर्भु'डुन्नकड केगि म्रोक्कि,

के पीछे, सप्रयत्न (उस अश्व को) बाँधकर, अपरिमित आनन्द से दिवि (स्वर्ग) को लौट गए। भूपाल ने अश्व का पता न लगने पर, अतिक्रुद्ध होकर, जलते (क्रुद्ध होते) हुए, पुत्रों को बुलाकर कहा—'यहाँ अश्व का पता नहीं है। कोई कुटिलात्मा आकर उसे चुरा ले गया है। तीनों लोकों में क्रमशः ढूँढकर, जिस किसी ने घोड़े को चुराया हो, उसका वध करके, शीघ्र अश्व ले आओ। साहस के साथ तुम लोग जाओ।' ऐसा कहने पर अतिशय भुज-बल का प्रदर्शन करते हुए, ब्रह्माण्ड काँप उठे, ऐसा गरज कर, उसी समय सगर के साठ हज़ार पुत्र निकल पड़े। नाकलोक (स्वर्ग) (और) अवनि (धरती) पर ढूँढने पर भी जब अश्व न दिखाई पड़ा तो वे धरणी के टुकड़े-टुकड़े करने लगे। 'हममें से प्रत्येक एक-एक योजन भर उर्वी (धरती) को, चकित करने वाले ढंग से, खोद डालें', ऐसी योजना (सगर के पुत्रों ने) बनाई।।। ११५० ।।

—'क्रम से पूर्व दिग्भाग से प्रारम्भ करके, धरा को प्रदक्षिणा रूप से खोदेंगे' ऐसा कहते हुए, गुद्धाल (कुदाल) तथा बड़े बड़े शूलों से धरा को, बार-बार रसातल तक खोदते हुए, प्रकट पराक्रम वाले पाताल-वासियों (और) भूत-संततियों (प्राणी-समूह) को मारते हुए, उत्साहपूर्वक, उन असमान बलशालियों ने शीघ्रता से साठ हजार योजन भूमि को दर्प के साथ खोद डाला। भूरि सत्त्व (अधिक शक्ति) के साथ जम्बूद्वीप को (सगरपुत्रों द्वारा) पुनः पुनः दुर्निवार रूप से तथा शीघ्रता से खोदते

'वनपर्वत द्वीपवतियैन भूमि। चनि तव्वुचुन्नारु सगरनंदनुलु;
वलुवडि सत्त्वसंपन्नंबुलैन। जलचरंबुल वट्टि चंपुचु, मरियु
'वीडु यज्ञमुनकु विघ्नंबु जेसें'। 'वीडश्वहरु' डंचु वीडु वाडनक
वलियुलै तम दृष्टि वड्डवारि नेल्ल। जलजसंभव ! पट्टि चंपुचुन्नारु
११६०

तलचि नीविदि समाधानंबु सेय। वलयु'नन्ननु ब्रह्म वारितो ननियें;
'गपिलमुनींद्रुडै कैकोन्नवाडु। तपमु नव्ययुडैन दामोदरुंडु।
अम्मुनि कोपाग्नि यंदंद वारि। ग्रम्मिन भस्मंबुगा गलवार
लनि पल्क सुरलेल्ल 'नौगाक' यनुचु। जनि; रंत नक्कड सगर नंदनुलु
पिडुगुल वोलेंडि भीकरध्वनुलु। कॅडम्रोय निल ब्रदक्षिणमुगा गलय
जुट्टनु द्रव्वि यॅच्चोट घोटकमु। पट्टु गानक तंड्रिपालि केतेन्चि,
'यश्वंबु वॊंडगान मखिलंबु वेदकि;। यश्वचोरुनि गानमैति मॆक्कडनु;
नेमेमि सेयुदु मिट मीद' ननिन। भूमीशुडलगि या पुत्रुल कनियें;
'विश्वंबु गलयंग वेदकि ना येदुटि। कश्वंबुदेक मीररुदेर वलव'

देख कर, अमर, गन्धर्व, सिद्ध आदि घबरा उठे और जहाँ कमलगर्भ (ब्रह्मा) थे, वहाँ जाकर, प्रणाम कर बोले—'वन, पर्वत तथा द्वीपों से युक्त भूमि को सगरनन्दन सप्रयत्न खोद रहे हैं। इच्छानुसार पराक्रम-सम्पन्न जलचरों को पकड़-पकड़ कर मारे डाल रहे है। 'इसने यज्ञ में विघ्न पहुँचाया है', 'यह अश्वहर (अश्व का चोर) है' ऐसा कहते हुए, अपनी दृष्टि में आने वाले सभी को सगर के बली पुत्र पकड़-पकड़ कर मारे डाल रहे हैं। ॥ ११६० ॥

—इस पर विचार करके तुम्हें इसका समाधान करना चाहिए।' ऐसा कहने पर ब्रह्मा ने उनसे कहा—'अव्यय दामोदर (विष्णु) कपिल मुनीन्द्र के रूप में पाताल में तपस्या कर रहे हैं। उनकी कोपाग्नि के उन पर छा जाने से वे भस्म हो जाने वाले हैं।' ऐसा कहने पर सभी देवता 'तथास्तु' कह-कर चले गए। तब वहाँ सगर-नन्दनों ने वज्र के समान भयंकर ध्वनियों के साथ धरती को प्रदक्षणा-पूर्वक, पूरी तरह से, चौतरफ़ खोद डाला, किन्तु कहीं भी घोड़े के न मिलने पर, पिता के पास आकर, बोले—'अखिल (लोक) को खोजने पर भी हम लोग अश्व का पता न लगा सके; कहीं भी अश्वचोर को देख नहीं सके। इसके बाद हम अब क्या करें।' ऐसा कहने पर राजा सगर क्रुद्ध हो उन पुत्रों से बोले—'(समस्त) विश्व में पूरी तरह से खोजो, बिना अश्व के तुम लोगों को मेरे समक्ष नहीं आना चाहिए।'

दनि पल्क 'नौगाक' यनुचु ना सगर। तनयुलुद्धति रसातलमुन करिगि ११७०

येलमि शिरःकंप मलुक गाविंचि । तलकोनि यंदंद धरणि कंपिंप
'बरुवडि पूर्व दिग्भागंबु दोडगि । धर ब्रदक्षिणमुगा द्रव्वुद'मनुचु
दोरकोनि यंदरु दूर्पुदिक्केल्ल । नरसि गुर्रमु गान कच्चोट सकल
धारुणीमंडलोद्धरणमुकुंद । चारु भुजादंड समदंतकांड
चतुरग्रमुल धराचक्रंबु मोव । जतुरत गल शुभ्रसामजेंद्रंबु
बोडगांचि वलगोनि पूजिंचि यचट। द़डयक मरि बृहद् भानुदिक्कुनकु
बोयि नाना विधंबुल नंदु वेदकि । या यश्वरत्नंबु नरय जोप्पडक
सततदानच्छटा सम्मदामोद । भृतशिलीमुख पुंडरीकाख्य गजमु
गनुगोनि पूजिंचि कडुवेड्कतोड । विनुतिंचि यव्वल वेदकुचु याम्य
भागंबुनकु नेगि परिकिंचि हयमु । लागोकितैननु लक्षिपलेक ११८०
घनतरत्वमु द्रिविक्रमु नाक्रमिंचु । नन मिंचु वामनंबनु दंति गांचि
यर्चिंचि यव्वलि करिगि नैरृतिनि । जर्चिंचि यंदु नश्वंबु गान लेक

ऐसा कहने पर, 'ऐसा ही करेंगे', यह कहकर, वे सगर-तनय उद्धत-गति से रसातल में गए। ॥ ११७० ॥

—वहाँ क्रोध से शिरःकंपन कर, सप्रयत्न धरणी के कंपित होने पर बोले—'क्रम से पूर्वदिग्भाग से प्रारम्भ करके, धरा को प्रदक्षिणा-पूर्वक खोदेंगे।' उस प्रयत्न में लगकर, सभी ने समस्त पूर्वदिशा को छान मारा, पर घोड़े को देख न पाए। वहाँ धरणीमंडल का उद्धार करने वाले मुकुन्द के चारु भुजादंड के समान (शोभायमान) दन्तकाण्डों के चतुरग्रों पर धराचक्र को सम्हालने की चतुरता (नैपुण्य) से युक्त शुभ्र (पवित्र) दिग्गज को देखा। इच्छानुसार उसकी पूजा करके, वहाँ विलम्ब न करके आग्नेय दिशा की ओर गए। नाना विधियों से वहाँ ढूँढकर उस अश्व-रत्न का पता लगा नहीं पाए। वहाँ निरन्तर स्रवित होने वाले मदजल की मदभरी सुगंध से आकृष्ट भ्रमरों से युक्त 'पुंडरीक' नामक दिग्गज को देखकर उसकी पूजा की। बड़ी प्रसन्नता के साथ उसकी विनति कर, आगे ढूँढते हुए, दक्षिण दिशा में जाकर, ढूँढ़ने पर भी वे अश्व का पता न लगा सके। ॥ ११८० ॥

वहाँ घनतरत्व में त्रिविक्रम को भी मात करने वाले, शोभायुक्त 'वामन' नामक दिग्गज को देखकर उसकी अर्चना की। आगे जाकर नैर्ऋत्य दिशा खोज डाली पर वहाँ भी अश्व को देख न सके। वहाँ कुमुद के समान

युदकंबु गानक युन्न नय्येडकु । सदयुडै गरुडुंडु सनुदेन्चि पलिकॆ;

गंगावतरणमु

'गपिलुनि नलुकमै गलचि यम्मौनि । कुपिताग्नि सगरुलु गूलि नीरॆरि ; १२१०

यिदियेल शोकिंप? निटु शोकमंद । निदि वेळगा; दॊक्कटेर्पड विनुमु;
सरसिजासनवंद्य चरणारविंदु । डरविंददळनेत्रु डादिपूरुषुडु
बलिदानवेश्वरु बंधिचुनप्पु । डलुक द्रिविक्रमुडै निंड वॆरिगि,
यगणित शक्ति रॆन्डडुगुलयंदु । जगतीतलंबॆल्ल सरि नाक्रमिंचि,
जॆलजात जलचर शंखचक्रम्मु । ललवडुनट्टि मूडव पदांबुजमु
गडुकॊनि ब्रह्मलोकमुदाक जाप । गडुवेगमुन वच्चि कमलसंभवुडु
तलकॊन्न भक्तितो दन कमंडलुवु । जलमुल दत्पादजलजंबु गडुग
बॊगडॊन्दु दज्जलंबुलु नभोवीथि । दगिलि वर्तिचु मंदाकिनि यनग;
गावुन नीविंक गमलसंभवुनि । भाविंचि तपमति भक्ति गाविंचि
कडकमै नाकाशगंग दोड्तॆच्चि । तडयक भस्मुल् दडपिनगानि १२२०

कहीं उदक (जल) दिखाई नहीं पड़ा । उसी समय उस स्थान पर गरुड़जी सदय (दयालु) होकर आए और बोले--

गंगा का अवतरण

--'कपिल को क्रोधपूर्वक सताने के कारण उनकी क्रोधाग्नि से सगर के सभी पुत्र पानी-पानी (नष्ट) हो गए । ॥ १२१० ॥
--यह क्यों शोक करते हो ? यह समय इस प्रकार दुखी होने का नहीं है । एक बात ध्यान से सुनो । ब्रह्मा से वन्दित चरणारविन्द वाले, कमल के दल के समान नेत्र वाले, आदिपुरुष विष्णु ने दानवेश्वर बलि को बाँधते समय, क्रोध के कारण त्रिविक्रम रूप लेकर, तीनों लोकों के परिमाण के अनुसार बढ़कर, अगणित शक्ति से दो चरणों से समस्त जगत् को पूर्णरूप से आक्रान्त करने के बाद, कमल, मीन, शंख-चक्र आदि चिह्नों से युक्त तीसरे चरण को अतिशयता के साथ, ब्रह्मलोक तक फैलाया । तब बड़ी शीघ्रता से आकर ब्रह्मा ने बड़ी भक्ति से अपने कमंडल के जल से उस चरण-कमल को धोकर अपने कमंडल में ही वह जल रख लिया । वही प्रसिद्ध जल आकाश मार्ग में मंदाकिनी के नाम से वर्तमान है । अत: तुम अब ब्रह्माजी का ध्यान करके अति भक्तिपूर्वक तपस्या करो । (इस प्रकार) सप्रयत्न आकाशगंगा को लाकर, बिना विलम्ब भस्मों को सींचे बिना ॥ १२२० ॥

परलोकसुखमुलु वडयरु वीरु ; । गुरुबुद्धि दुरगंबु गॉनि येगु'मनिन
दुरगंबु गॉनिपोयि तॉडरि यंतयुनु । दरमिडि यातडु दम ताततोड
जॅप्पिन शोकिंचि चेय गैकॉन्न । यप्पुण्यमखमु समाप्तंबु सेसि
कामिंचि याकाशगंग नी युर्वि । केमॅयि दॅत्तुनो येनंचु नतडु
विडुवक मुप्पदिवेलेंड्लु दपमु ।पुडमि नॅन्तयु जेसि पोयॅनु दिविकि ।
ना राजु मनुमडय्यंशुमंतुंडु । धारुणि गंगकु दपमॉप्प बूनि,
वरुस मुप्पदिवेल वर्षमुल् सलिपि । परलोकगतुडय्यॅ बदपडि यतडु;
नतनि पुत्रुडु दिलीपावनीनाथु । डतिनिष्ठ तोड जाह्नवि दॅत्तुननुचु
विडुवक मुप्पदिवेलेंड्ल तपमु । गडिपियु नतडु रोगमुलचे जच्चॅ ।
ननघुडातनि पुत्रुडगु भगीरथुडु । तन राज्यमरय ब्रधानुल निलिप
१२३०
सारधर्मज्ञुलु सद्गुणोज्ज्वलुलु । शूरुलुनगुनट्टि सुतुलनु गोरि,
यॅल्लपापंबुल निलमीद बाप । दॅल्लंबुगा गंग दॅच्चॅद ननुचु
गरमर्थि दपमु गोकर्णाश्रममुन । नरुदुगा बदिवेलयब्दमुल् सेय
ननुपमंबगुचुन्न या तपंबुनकु । वनजसंभवुडंत वरदुडै वच्चि

—ये सगर-पुत्र परलोक के सुखों को प्राप्त नही कर सकेंगे। सुबुद्धि से तुरग को लेकर जाओ।' ऐसा कहने पर जब तुरग को ले जाकर, सप्रत्यन सव कुछ, क्रम से उसने अपने दादा को वताया, तो सगर बहुत दुखी हुए और प्रारम्भ किए उस पुण्य मख (यज्ञ) को समाप्त किया। कामना कर आकाश गंगा को इस पृथ्वी पर किस विधि से लाऊँ, ऐसा सोचते हुए अविच्छिन्न रूप से तीस हज़ार वर्ष, पृथ्वीपर घोर तपस्या कर स्वर्ग गए। इसके वाद उस राजा का पोता वह अंशुमान् भी धरणी पर गंगा को लाने के लिये क्रम से तीस हज़ार वर्ष तक तपस्या में रत होकर परलोक-गत हुआ। उसका पुत्र राजा दिलीप भी अतिनिष्ठा के साथ 'जाह्नवी लाऊँगा' यह कहते हुए लगातार तीस हज़ार वर्ष तप में विताकर, रोगों के कारण मर गया। उसके पुत्र पुण्यात्मा भगीरथ ने विचार कर अपने राज्य को मन्त्रियों के हाथों में सौप कर, ॥ १२३० ॥

—धर्म के सार को जानने वाले, सद्गुणों से उज्ज्वल, शूर-भाव-युक्त पुत्रों की इच्छा कर, 'धरती पर के सभी पापों को दूर करने के लिए स्वच्छ रूप से (स्पष्टता से, निश्चयही) गंगा को लाऊँगा' ऐसा कहते एहु, वड़ी इच्छा से गोकर्ण-आश्रम में, आश्चर्यचकित कर देने वाले ढंग से दस हज़ार वर्ष तक तप किया। उस उग्र तप से प्रसन्न होकर ब्रह्माजी आए

'यडुगुमु वर' मन्न ना भगीरथुडु । कडुभक्ति ब्रह्मकु गरमुलु मोगिचि'
'भारतीनेत ! प्रपंचनिर्मात ! । सौरलोकत्रात ! सत्यसंधात !
धात ! मा तातलुग्रुलै वच्चि । यातत कपिल कोपाग्निचे गालि,
नूरु वेलेंड्लु सन्नुतगति लेक । यारडि पडि भस्मै युन्नवारः
कडगि या भस्मंबु गंगोदकमुल । दडुपक गतिलेदु ; दयसेयु' मनिन
'हरुडोक्करुडु दक्क नन्यु ला गंग । धरियिंपनेररु दविलि येव्वरुनु ;
१२४०

नीविंक हरुनकु निष्ठमै दपमु । गाविंचि प्राथिपु गंग धरिंप'
ननि पल्कि मदिलोन नातडर्थिंचु । तनयुल निच्चि यद्धरणीशु कोरकु
दनरंग ना गंग 'धर केगु' मनुचु । जनियें बम्मजु; डंत जनि भगीरथुडु
अंगुष्ठ मोक्कटि यवनिपै मोपि । यंगजहरुनकु नतिघोरतपमु
दलकोनि चेय ब्रत्यक्षमै शिवुडु । 'तलदाल्तु देम्मु मंदाकिनि' ननियें;
नंत भगीरथुंडर्थि प्रार्थिप । नंतरिक्षंबुनयंदुंडि गंग
गगनमंडलमु नक्षत्रमंडलमु । बगुल लोकमुलेल्ल वगुल म्रोयुचुनु

और कहा--'वर माँग लो' ऐसा कहने पर उस भगीरथ ने अतिभक्ति-पूर्वक ब्रह्मा को हाथ जोड़ कर कहा--'हे भारती नेता ! प्रपंचनिर्माता ! हे सौरलोक-त्राता ! हे सत्यसंधाता ! धाता ! हमारे दादा, कपिल की भयंकर कोपाग्नि से जलकर, सौ हजार वर्षों से सन्नुत-गति के विना, निन्दित हो भस्म वने पड़े हुए है। सप्रयास उस भस्म को गगाजल से सींचे विना, उन्हें मुक्ति प्राप्त नही हो सकती। अत: आप उस गंगाजल को प्रदान कीजिए।' तव 'शकर के अतिरिक्त कोई उस गंगा को प्रयत्न करने पर भी धारण नहीं कर सकता, ।॥ १२४० ॥

--अत: अव तुम निष्ठापूर्वक शंकर के प्रति तप करके उनसे गंगा को धारण करने की प्रार्थना करो।' ऐसा कहकर (भगीरथ के मन की इच्छा के अनुसार) पुत्र प्रदान कर, शोभापूर्वक उस गंगा से 'धरा पर जाओ' यह कहकर, ब्रह्माजी चले गए। तव जाकर भगीरथ एक अंगूठे को पृथ्वी पर टेक कर (एक अंगूठे पर खड़े होकर), शिव के प्रति अति घोर तपस्या करने लगे। तव शिवजी प्रत्यक्ष (प्रकट) होकर वोले--'लाओ, मैं मंदाकिनी को सिर पर धारण करूँगा।' तव भगीरथ के द्वारा प्रार्थना करने पर, गगनमंडल तथा नक्षत्रमंडल को फोड़ती हुई, समस्त लोकों को फाड़ देने वाली ध्वनि से, कुलपर्वतों तथा पृथ्वी-युक्त बली वने महादेव तक को पाताल तक ले जाने के भाव में, घोरता से

गुल पर्वतमुलतो गुंभिनितोड । वलिसि महादेवु वाताळमुनकु
गीनिपोवु तेरगुन घोरमै पवि । चनुदेन्चु भंगिकि जगमुलु वेदर
वच्चु ना गंगगर्वमडंप शिवुडु । निच्च जूटमु बेन्चे-नितलो गंग १२५०
वच्चि महादेवु वर जूट वीथि । जोच्चि वेल्वडु त्रोव सोप्पडकुन्न

भगीरथुडु गंगनु देच्चुट

हरु जटा जूटमहाटवि जिक्कि । तिरुगुडु वडुचु वर्तिचुचुनुंडे;
नंत भगीरथु 'डतुल प्रवाह । मंतयु निप्पुडेन्दरिगेनो ?' यनुचु
वेरगंदि वेण्डियु विषकंधरुनकु । दरिगोनि यत्युग्रतपमाचरिप
नपरिमित प्रीति ना भगीरथुनि । तपमिच्च मेच्चि कंदर्पसंहरुडु
लोलत दन मौळिलो नुन्न गंग । 'भूलोकमुनकिक बो'म्मनि यनुप
वलनोप्पु जूटंबु वाकिलि वेडलि । पोलुपोन्द चाताळमुन जूपु निलिपि
तन दिव्यदृष्टि मंदाकिनि कपिलु । गनि मुनिमहिमकु गडु भीति गलगि
'तगिलि निन्नलचिन दारुणात्मकुल। सुगतिकि वुच्च वच्चु चुनुन्नदानः

दौड़ती हुई, पृथ्वी पर आती हुई, अपने आगमन की पद्धति से जगत् को भयभीत करती हुई, गंगा अंतरिक्ष से (पृथ्वी की ओर) आने लगी। उस गंगा के गर्व का दमन करने के लिए शिव ने इच्छानुसार अपने जटाजूट को बढ़ा लिया। इतने में ही गंगा आकर महादेव के श्रेष्ठ जटासमूह में पैठकर बाहर निकलने के मार्ग के न दीखने पर—॥ १२५१ ॥

भगीरथ का गंगा को लाना

हर के जटाजूट रूपी महारण्य में फँसकर, (गंगा) परिभ्रमण करती रही। तब भगीरथ यह सोचकर भयभीत हुए कि 'वह समस्त अतुल प्रवाह अब कहाँ चला गया है ?'। फिर से भगीरथ ने शिवजी के प्रति अति उग्र तप किया। उस भगीरथ के तप से सन्तुष्ट होकर, अपरिमित प्रीति से कंदर्पसंहर (शिवजी) ने आसक्ति से अपने जूड़े में स्थित गंगा को आज्ञा दी कि 'अब भूलोक में जाओ'। (तब) दक्षिण भाग से, जूट रूपी द्वार से निकलकर, स्थिरता से पाताल पर दृष्टि डालकर, अपनी दिव्य दृष्टि से मंदाकिनी ने कपिल को देखा, मुनि की महिमा से अतिभय से क्षुब्ध हुई। उस गंगा के प्रवाह में स्थित पद्म-मुकुल दर्शकों को ऐसे प्रतीत हुए मानों वह (कपिल मुनि के) हाथ जोड़ रही है (और कह रही है कि) 'मैं जान

गिनियकुमा' यनि केलर्थि मोंगिचें । नन वद्म मुकुळंवुलमर जूपऱकु १२६०

नडरु नम्मुनिकिन्क कटुवोव वेंऱचि। सुडिवडु तेंऱगुन सुडुलोंप्प मिगुल 'मा मीद जनुदेंन्चें मलयुचु गंग । येमेंक्कडिकि वोदु मिटमीद' ननुचु वऱतेंन्चि सगरुलु पालि पापमुलु । मोंऱपेंट्टुचुन्नवि मुक्कंटि कनग नोलि पंकजमुल नुंडराकुन्न । दूलि याकसमुन 'दुम्मेंदल् म्रोय भूताधिपति जूटमुन नुंडि धरणि । केतेंन्चु गंगकु नेंण्डराकुंड गोंडुगुलुवट्टिन कोंमरुन नंच । लुडुवीथि सुडिवडि योंप्पारुचुंड दोंडरि या सगरुल दोषोत्करमुलु । गडकमै वोद्रोचु करमुलो यनग गमनीयतरमुलै घन तरंगमुल । गमुलंतकंतकु गरमोंप्पुमिगुल दनवारिलोपल दग भगीरथुन । कनुपमसितकीर्तुलंदंद पुट्टि नेंऱसि भूतलमेंल्लनिंड नेतेंन्चु । परुसुन नुरुवुलु परगंग, गंग यप्पटिकप्पट कतुलघोषंवु । लुप्पोंन्गि युप्पोंन्गि युडुवीथि निंडें १२७१

बूझकर तुम्हें सताने वाले, दुष्टात्मा व्यक्तियों को सुगति प्रदान करने के लिए आ रही हूँ, (आप मुझ पर) क्रोध न करें' । ॥ १२६० ॥

—उस प्रवाह में अधिकता से पड़ने वाले भँवर ऐसे लग रहे थे मानों उस मुनि के अतिशय क्रोध के कारण, उधर जाने में डरकर, वह क्षुब्ध हो रही हो । धारा में स्थित पंकजों पर बैठ न सकने के कारण क्रम से आकाश में व्याप्त हो गुंजार करने वाले भ्रमर ऐसे लग रहे थे मानों सगर (-पुत्रों) के पाप यह कहते हुए कि 'गंगा बड़े वेग से परिभ्रमण करती हुई हमारे पास आ रही है । अब हम कहाँ जाएँ ?' और दौड़े-दौड़े आकर त्रिनयन (शिवजी) से विनति कर रहे हों । आकाश में हंस ऐसे मँडरा रहे थे मानों भूताधिपति (शिवजी) के जूट से (निकलकर) धरणी पर आने वाली गंगा को धूप से बचाने के लिए धारण किए गए छत्र हों । उस नदी के पल-पल सुन्दर बनते हुए घनी तरंगों के समूह ऐसे लग रहे थे मानों उन सगर-पुत्रों के उत्कट दोषों को सोत्साह और सप्रयत्न दूर करने वाले (नदी के) हाथ हों । फेन इस प्रकार फैला था मानों अपने वंश वालों में उचित रीति से भगीरथ की अनुपम धवल कीर्तियाँ समस्त भूतल में व्याप्त हो रही हों । उस गंगा का अतुल घोष बढ़-बढ़कर आकाश में भर गया ॥ १२७१ ॥

ब्रह्मांड भांडमुल् व्रगुल बॅल्लुब्बि । ब्रह्मादि देवतल् भक्तितो बॊगड;
शिवुडु धरिंचिन श्रीगंग यपुडु । भुवि बामरुलकॆल्ल बुण्यंबुनीय
वच्चितिननि तानु वरुसगा जॆप्प । वच्चिनविधमुन वरुस घोषिंचि,
सुरलु खेचरुलुनु सुमुखुलै चूड । गरुडगंधर्वुलु गरमु भूषिप
जनुदॆन्चि बिंदुवन् सरसिलो जॊच्चि। यॆनय ब्रवाहंबुलेडयि पारॆ ।
ननघात्म! पावनि ह्लादिनि नलिनि। यनु प्रवाहमुलु मूडरिगॆ दूर्पुनकु;
सीत सुचक्षुवु सिंधुवु नाग । भातिगा मूडेगॆ बडुमटिदॆसकु;
नडरुचु नुप्पॊंन्गि यंदुलो नॊकटि । कडगि भगीरथ क्ष्मापालु पिरुद
घनतर विशदोदक प्रवाहंबु । विनुवीथि शरदभ्र विभ्रमंबॊलय १२८०
दिविकेग मदिलोन दिवुरुभूजनुल । कविरळनिश्श्रेणुलमरु चंदमुन
निलयु निंगियु म्रोगुनॆड ब्रवाहंबु । गलय नानामालिका वीचु लमर
'नी भंगि द्रिप्पुदु नॆल्ल पापमुल । ना भंगि जूड्डु' ना सुडुलमर
जॆलिमि दारलतोड जेयजन् करणि। बॆलुच निंगिकि नंबुबिंदुवुलॆगय

—ब्रह्मादि देवताओं द्वारा भक्ति-पूर्वक स्तुति करते समय वह गंगा ऐसे बढ़ गई मानों ब्रह्माण्डों को फोड़ देगी। तब वह श्रीगंगा, जिसे शिव ने धारण किया था, मानों यह घोषित कर रही थी कि इस पृथ्वी के सभी पापी जनों को क्रमशः पुण्य प्रदान करने के लिए मैं स्वयं आई हूँ। सभी सुर और आकाशचारी जीव प्रसन्न मुख से देख रहे थे, गरुड और गन्धर्व अधिक प्रशंसा कर रहे थे। ऐसे समय में गंगा ने, बिन्दु नामक सरोवर में प्रवेश किया, तथा शोभायुक्त हो वहाँ से गंगा का प्रवाह सात धाराओं में बहा। हे पुण्यात्मा! पावनी, ह्लादिनी, नलिनी नामक तीन धाराएँ पूर्व दिशा की ओर गई। सीता, सुचक्षु, सिन्धु नामक तीन धारायें पश्चिम दिशा की ओर गई। उनमें से सातवीं धारा उत्साह से उमड़ती हुई राजा भगीरथ के पीछे-पीछे, घनतर-विशद-उदक-प्रवाह के विनुवीथि (आकाश) में शरत्कालीन मेघ का भ्रम फैलाती हुई बहने लगी॥ १२८०॥

—वह धारा ऐसी थी मानों स्वर्ग को जाने की इच्छा रखने वाले भूलोक-वासियों के लिए अविरल (घनी) निसेनी (सीढ़ी) सॅवारी गई हो। सुन्दर और तरह-तरह की तरंग-मालिकाओं के बनने से, धारा की ध्वनि धरती और आकाश में गूँज रही थी। (उस धारा में) भॅवर ऐसे पड़ रहे थे, मानों वह यह बताना चाह रही थी कि 'मैं इस प्रकार (पृथ्वी के) समस्त पापों को लौटा दूँगी (ध्वस्त कर दूँगी), मेरे ढंग को देखो'। जल की बूंदें अतिशयता से आकाश की ओर उछल रही थीं, मानों वे नक्षत्रों

'धर्मात्मुलगुवारि धर्मकीर्तुलकु । निर्मलसारमै नॆरि वॊल्तु' ननुचु
गेलि नन्यापगाकीर्तुल नव्वु । लील डिंडीरमालिक लुल्लसिल्ल
'वॆक्कु गन्नुल गांतु वृथिवि पॆम्पॆल्ल । मक्कुव' ननुभंगि मत्स्यमुल् वॊलय
जरियिंचु मकरादि जलचरावळुलु । पॊरिनॊप्प नेतॆन्चे भूलोकमुनकु ।
नंत शतार्कमै यमरुचंदमुन । गांतिमद्‌वहुरत्नखचितंवुलैन
निजभूषणंवुल नॆरि निंगि वॆलुग । गजविमानादुलु गरमर्थि नॆक्कि
१२९०

यमरगंधर्व सिद्धादुलु सूड । नमरंग नेतॆन्चि; रजुड्डु नेतॆन्चे ।
नट महानागंबु ला प्रवाहंबु । चटुलवेगमु जूचि सरिम्रॊग्गुटयुनु
नंतयु ना निर्जरावळि सूचि । चिंतिंचि जपमुलु सेसि यालोन
ना नदि लोपल नवगाहमंदि । यानंदमुनु वॊन्दि; राडिरच्चरलु;
नमरमुनींद्रादुलात्म संतोष । ममरगा बुव्वुल नर्चिंचि रॆलमि;
ना पुण्यनदि लोन नति पापरतुलु । शापदग्धुलु गृतस्नानुलै दिविकि
जनुचुंड सुरलु नच्चरलु गंधर्व । दनुजपन्नग यक्ष दैत्यराक्षसुलु
गिन्नरादुलु ना भगीरथु रथमु । वॆन्नाडि कनुगॊन्चु वेड्‌क नेतेर

से मित्रता करने जा रही है । (उस धारा में) फेन-समूह ऐसा सुशोभित हो रहा था मानों वह गंगा अन्य नदियों की कीर्ति की अवहेलना करती हुई कह रही है कि 'मैं धर्मात्माओं की धर्मकीर्तियों का निर्मलसार वन कर सदा शोभित रहूँगी' । (उस धारा में) मछलियाँ इस प्रकार शोभित हो रही थीं मानों वह कह रही हो कि 'मैं अपने अनेक नेत्रों से पृथ्वी की श्रेष्ठता को अति प्रेम से देखूँगी' । मकर आदि जलचर-समूहों के विचरण से युक्त हो (वह गंगा) क्रमशः भूलोक में आई । तब सौ सूर्य के समान प्रकाशित होने वाले वहु-रत्न-खचित अपने कान्तिमान् आभूषणों की कान्ति से आकाश को दीप्तिमान बना कर, गज, विमान आदि में आरूढ़ होकर ॥ १२९० ॥

—अमर, गन्धर्व, सिद्ध आदि वड़े कौतुक से (उस दृश्य को) देखने आए । व्रह्मा भी आए । उस धारा के चंचल वेग को देख, महादिग्गजों ने भी घुटने टेक दिए । सभी देवों ने यह सव देखकर, चिन्तन किया, जप किया और उस नदी में स्नान कर, आनन्दित हुए । अप्सराओं ने नृत्य किया । अमर, मुनीन्द्र आदि ने आत्म-सन्तुष्ट होने पर, वड़ी प्रसन्नता पूर्वक, पुष्पों द्वारा उस नदी की पूजा की । अति पाप-रत, और शाप-दग्ध जन उस नदी में स्नान कर स्वर्ग जाने लगे । तव सुर, अप्सराएँ, गन्धर्व, दनुज, पन्नग (सर्प), यक्ष, दैत्य, राक्षस, किन्नर आदि उत्साह से उस भगीरथ के

बॅरिगि पर्वतमुलु भेदिंचुकॉनुचु । नरुग जह्नुडु जन्न मा त्रोव जेय
वरदगा नट्टुवच्चि वलगॉनि गंग । सरिचुट्टुमुट्टिन सरगुन नपुडु
यागोपकरणंबु लवि वॅल्लिवोयि । यागविघ्नंबैन नम्मुनीश्वरुडु
निंगिकि नुप्पॉन्गि नॅरि नेगुदॅन्चु । गंग नार्कर्षिचि कलुषिंचि क्रोलॅ;
अनिमिषुल् मुनिवरु ला भगीरथुनि। गनुगॉनि पल्किरि करमर्थि मीरि
'नी महागंग निट्ली मुनीश्वरुडु । ई माड्कि ग्रोलॅने ! यिप्पुडॅ नीवु
कोपंबुलेकुंड गोरि यी मौनि । नी पट्ल वेडिन निच्चुनु गंग'
यनि यिट्लु देवतलंदरु जॅप्प । विनयंबुतो बोयि वेड्क नम्मौनि
गनुगॉनि म्रॉक्कुचु गरमुलु मॉगिचि।विनयसंभरितुडै वेड्क निट्लनियॅ;
'विनवय्य मुनिचंद्र! विमलचारित्र! । घनमैन गंगनु घनमैन तपमु
चेसि युर्विकि ठीवि जॅलगुचु निपुडु । वासिमै दॅच्चिति वरुस; निच्चटनु
मोसमै नीचेत मॉनसि कोलपडिति; । नो संयमीश्वर ! यो परब्रह्म !
दयचेसि विडिपिंपु धन्यचारित्र! । दयचेयु संयमी ! दयचेयु' मनुचु

रथ के पीछे-पीछे चलने लगे। वह नदी बढ़-बढ़कर, पर्वतों को बेधती हुई उस मार्ग से जाने लगी जहाँ जह्नु (मुनि) यज्ञ कर रहे थे। गंगा ने बाढ़ के रूप में उधर आकर उस मुनि के आश्रम को घेर लिया। तब बड़ी शीघ्रता से, ।। १३०० ।।

—याग-उपकरणों के बह जाने पर यज्ञ-भंग हो गया। तब वह मुनीश्वर आकाश तक उमड़कर शीघ्रता से आने वाली गंगा पर क्रुद्ध हो, (उसको) आकर्षित कर पी गए। तब देवता और मुनिवरों ने उस भगीरथ को देख बड़े उत्साह से कहा—'यह मुनीश्वर इस महागंगा को इस प्रकार पी गए! इसलिए तुम अभी उनसे क्रोध को त्यागने की प्रार्थना करो। तुम्हारे निवेदन करने से इस समय वह मुनि गंगा को दे देंगे'। सब देवताओं के ऐसा कहने पर, विनय के साथ जाकर, प्रसन्नता से उस मुनि को देखकर, प्रणाम कर, हाथ जोड़, विनय-युक्त हो, प्रसन्नता-पूर्वक (भगीरथ) इस प्रकार बोले—'हे मुनिचन्द्र ! सुनिए, आप विमल चरित्र वाले तथा महान् है। मैं, घोर तपस्या कर, वैभव के साथ, वरिष्ठ रूप में, क्रमशः गंगा को पृथ्वी पर लाया हूँ। यहाँ धोखा खाकर, आपके द्वारा उसे खो दिया है। अतः हे संयमीश्वर ! हे परब्रह्मा ! ।। १३१० ।।

—हे धन्यचारित्र ! आप दया करके उसे मुक्त कर दीजिए। हे संयमी !

विनयंबुतो बल्क विनि मौनिवरुडु। मनमुन गृपवुट्ट मरियु निट्लनियें;
'नो भगीरथचंद्र! यो महाराज! । यी भंगि गंगनु निलकु देच्चुटकु
नी महत्त्वंबुनु नी तपोमहिम । नेमनि चेप्पुदु निक नीदु कीर्ति ?
विडिचेंद गंगनु, विडिचेंद निपुडु ।पुडमिलो ना कीर्ति पोलुपोंन्दु' ननुचु
नुमिसि येंन्गिलि सेय नोल्लक यतडु । रमणमै दन कर्ण रंध्रंबुनंदु
वेडलिप नेप्पटि विधमुन गंग । यडरुचु जाह्नवि यनुपेर बरगें;
बुरुष पुराकृत पुण्यंबु वलन । दोरकोन्न विघ्नंबु द्रोचि येतेंन्चु
वेरवुन ना राजु वेनुक नेतेंन्चि । शरनिधि जोच्चि या जाह्नवीदेवि
दिगि रसातलमुन दिरिगि यंदुन्न । सगरुल भस्मुल् सरिनिंड बारे १३२०
नंत नंबुजगर्भु डा भगीरथुनि । संतसंबुन जूचि 'जननाथ! विनुमु
जलनिधि नेन्दाक सलिलंबुलंडु । दलप मी सगरुनि तनयुलंदाक
दिव्यभूषणमुलु दिव्यांबरमुलु । दिव्यमाल्यंबुलु दिव्यगंधमुलु
दिव्यमूर्तुलु नोप्पि दिविजलोकमुन। दिव्यभोगमुल वर्तिचुचु नंदु;
रडरंग निदि मोदलनघ! नी पेर । नडचु भागीरथी नाम मी नदिकि;

(उसे) प्रदान कर दीजिए, प्रदान कर दीजिए'। विनय के साथ राजा को ऐसा कहते सुनकर मुनिवर के मन में दया उत्पन्न हो गई और उन्होंने कहा— 'हे भगीरथचन्द्र! हे महाराज! इस प्रकार गंगा को पृथ्वी पर लाना तुम्हारे महत्त्व और तुम्हारी महिमा का द्योतक है। अब तुम्हारी कीर्ति का वर्णन कहाँ तक करूँ? मैं गंगा को छोड़ दूँगा, अभी छोड़ दूँगा। पृथ्वी पर मेरी कीर्ति शोभायमान हो जाएगी'। ऐसा कहते हुए मुँह से उगल कर उसे जूठा करना न चाहकर, उन्होंने उसे अपने कर्णरन्ध्र (कान के छेद) से सुन्दर ढग से निकाल दिया। तब सदा की तरह, उमड़ती हुई वह नदी जाह्नवी के नाम से प्रसिद्ध हुई। उस राजा के पीछे चल कर वह जाह्नवी देवी समुद्र में इस प्रकार पैठ गई मानों पुराकृत पुण्य (के बल) से, आए हुए विघ्नों को दूर कर मनुष्य आगे बढ़ता है। इस प्रकार समुद्र में उतर कर, रसातल में घूमकर, वहाँ स्थित सगर-पुत्रों के भस्मों को वहाकर वह नदी बहने लगी। ॥ १३२० ॥

—तव उस भगीरथ को हर्ष-पूर्वक देखकर (कमलसंभव) ब्रह्माजी बोले— 'हे राजन्! सुनो। जव तक सागर में जल रहेगा, तब तक तुम्हारे पूर्वज सगर के पुत्र, दिव्यभूषण, दिव्य वस्त्र, दिव्य मालाएँ, दिव्य-गन्ध तथा दिव्य-मूर्तियों से सुशोभित हो, स्वर्गलोक में दिव्यभोगों का अनुभव करते रहेंगे। हे पुण्यात्मा! अब से यह नदी तुम्हारे नाम पर भागीरथी के नाम से अतिशय शोभा पाएगी। हे नृप! त्रिपथगा, सरिद्वरा (सरिताओं मे

द्रिपथग यनम, सरिद्वरयनग, । नृप! जाह्नवि यनंग नेगडु नी गंग;
तग बिताळ्ळकु दिलोदकमुलु नडपि । जगमुलन्निट सत्यसंधुंडवगुमु:
अनघ! मी सगरुंडु नंशुमंतुंडु । घनुडु दिलीपुडु गैकोन्न प्रतिन
नेरप जालरु; नीवु नेरपंग दिविरि। तेरगोप्प नी गंग देच्चिति कान
गंगांबु निर्मलकमनीय परम । मंगळसितकीर्तिमहितुंडवगुमु; १३३०
काकुत्स्थकुलजुल गौरवश्रील । काकरंवगु तनयावळि गनुमु;
ललितधर्ममुल मूलस्तंभमैति; । पोलुपार नीविंक बुण्योदकमुल
वेलय दीर्थस्नानविधि सल्पि पुण्य । फलमु गैकोनु' मंचु बब्जसंभवुडु
तनलोकमुन केगे; ददनंतरंब । तनर ना गंग गृतस्नानुडगुचु
नरुवदि वेवुर का भगीरथुडु ।नेरि दिलोदकमुलु निष्ठ तो निच्चे;
ना तिलोदकमुल नमरुलै सगरु । लातनि दीविंचि यरिगिरि दिविकि;
ननघुडै मरि ययोध्यापुरंबुनकु । जनिभगीरथुडु राज्यमु सेयुचुन्डे।
गलुषघ्न मी युपाख्यानंबु भक्ति । चेलुवार जदिविन जेप्पगा विनिन
नोनर बुण्यमुल नायुष्मंतुलगुचु । धनधान्यचयमुल दनरुचु नुंदु
रेप्पुडु वारल कोल्लदेवतलु । नोप्प ब्रसन्नुलै युंडुदुरेलमि; १३४०

श्रेष्ठ), जाह्नवी के नामों से भी यह गंगा प्रख्यात होगी। समुचित रूप से पितरों को तिलोदक प्रदान कर, सभी लोकों में सत्यसन्ध बनो। हे निष्पाप! तुम्हारे पूर्वज सगर, अंशुमान् और महान् दिलीप आदि ने जो प्रतिज्ञा की थी, उसे वे पूरा नहीं कर पाए। पर तुम उस प्रतिज्ञा को पूरा करने का प्रयत्न कर, अच्छे विधान से इस गंगा को लाए। अतः गंगा-जल के समान निर्मल, कमनीय और परममंगल श्वेत कीर्ति से युक्त हो कर, तुम संसार में अत्यन्त महान् बन जाओगे ॥ १३३० ॥

—तुम काकुत्स्थ वंशवालों की गौरव-श्री की निधि के समान पुत्र-समूह को जन्म दोगे। तुम सुन्दर धर्मों के आधार बन गए हो। अब तुम शोभायुक्त हो गंगा के पवित्र जल में विधिवत् स्नान करके पुण्य-फल को प्राप्त करो'। ऐसा कहकर ब्रह्माजी अपने लोक को गए। उसके बाद, समुचित रूप से उस गंगा में स्नान करके भगीरथ ने साठ हज़ार सगर-पुत्रों को, निष्ठा के साथ तिलोदक प्रदान किये। उन तिलोदकों के कारण अमर बनकर सगर-पुत्रों ने भगीरथ को आशीर्वाद दिया और स्वर्ग को चले गए। फिर निष्पाप होकर भगीरथ अयोध्यापुरी गए और वहाँ (बहुत समय तक) राज्य करते रहे। पापों का नाश करनेवाले इस उपाख्यान को भक्ति-पूर्वक पढ़ने पर, कहने पर या सुनने पर (सभी मनुष्य) पुण्यों को प्राप्त कर, आयुष्मान (लंबी आयु वाले) बन, धन-धान्य के समूह से

नमरंग सिद्धिंचु नखिल कार्यमुलु; समकोनु संचित स्वर्गभोगमुलु;
पनुपार नट वारि पितृगणंबुलकु । ननुपमसद्गतुलनिशंबु गलुगु'
ननिन राघवुडु गंगावतारंबु । विनि कौशिकुनि जूचि विनुतुलु सेसि
'नेडु विश्वामित्र! नी चेत विंटि । बोडिमि नी गग भूलोकमुनकु
वच्चिन तेरगुनु, वारि तेरंगु । नच्चेरुवडरंग' ननि मुदंबंदि
या रात्रि यंदुंडि यखिल लोकमुल । नारूढि कैक्किन या नदि ग्रुंकि
याह्निनक कृत्यंबु लन्नियु दीर्चि । जाह्नवि दाटिविश्वामित्रु तोड
नुत्तरतटमुनंदुन्न संयमुल । जित्तंबुललर बूजिचि, वीड्कोनुचु
जनि चनि येदुट विशालयन् पुरमु । गनि गाधिनंदनु गनुगोनि पलिके: १३४९

अमृतमथन-कथा

'यी पुरि पेरेमि ? ये राजवंश्यु । डेपुमै बालिंचु ? नेरिंगिपु' मनिन १३५०
घनुडु कौशिकुडु राघवु जूचि पलिके । 'विनु मिंद्रुकड मुन्नु विन्नाड नेनु;

युक्त हो, सुख से रहेंगे । उनके लिए सभी देवता सदा सन्तोष के साथ प्रसन्न हो जायेंगे । ॥ १३४० ॥

—उनके लिए सभी काम सिद्ध होंगे, संचित स्वर्ग-भोग प्राप्त होंगे । उनके पितृगणों को अतिशयता से सदा अनुपम सद्गतियाँ प्राप्त होंगी' । (विश्वामित्र के) मुख से, राम ने इस प्रकार गंगावतरण की कथा को सुनकर, उनकी स्तुति की और कहा 'हे विश्वामित्र ! आज तुम्हारे मुख से गंगा के भूलोक में आने के बारे में, उन (सगर-पुत्रों) के बारे में, सुन्दरता से, साश्चर्य सुना है' । ऐसा कह वे प्रसन्न हुए । वह रात वहाँ बिताई और अखिल लोकों में विख्यात उस नदी में गोते लगाकर, सभी दैनिक कार्यों से निपट कर, विश्वामित्र के साथ जाह्नवी को पार कर चित्त के प्रसन्न होने पर, उस नदी के उत्तर तट पर विराजमान संयमियों की पूजा की । (उनसे) बिदा लेकर, आगे जाकर, सामने 'विशाला' नामक पुरी को देखकर, गाधिनन्दन (विश्वामित्र) से पूछने लगे ॥ १३४९ ॥

अमृतमंथन की कथा

—'इस पुरी का क्या नाम है ? किस राजवंश का राजा पराक्रम के साथ यहाँ शासन करता है ? बता दो' । ऐसा कहने पर ॥ १३५० ॥

—महर्षि विश्वामित्र राम को देखकर बोले—'सुनो (यह कथा) मैंने इन्द्र के द्वारा

दितिसुतुलैन दैतेयुलु नदिति । सुतुलैन सुरलु भासुरलील दौल्लि
नोलि रसंबुलु नोषधुल् निंचि । पालसमुद्रंबु बलुविडि द्रच्चि
क्रममोप्प नमृतंबु गैकोन्दमनुचु । सममैत्रि ना सुधाजलराशि डासि
कव्वंबु दरित्राडुगा मंदरंबु । नव्वासुकिनि जेसि यमृताब्धि दरुव
वेलयंग नट बुट्टि विषमुग्रमगुचु । गलय लोकंबुल गारिंचि मिंच
बरग रोषानल परुषंबुनैन । हरुडदिगोनि म्रिंगे; नंत नुमियुट
नुरगमुल् धरियिंचे नोलि दद्विषमुः । मरि मरि तरुवंग मरियुनु बुट्टे
वंचन मन्मथवार्धि लोकमुल । मुंचियेत्तगजालु मुरिपेम्बुलमर
गांचीझणत्कारघननितंबुमुलु । निंचुकनडुमुलु निरियु जन्गवलु १३६०
जंचलतनुलतल् सरि दंतचयमु । मिंचु कन्गवयु मेरयु मोवियुनु
गोमल भ्रूलताकोदंडुडैन । कामुनि विलुविद्यगति जूड नोप्पु
कडगंटि चूपुलु गक्षदीधितुल । वेडलिचु भुजलताविक्षेपणमुलु
नमर नूतनयौवनाभिराममुल । नमरु नरुवदिकोट्ल यप्सरोगणमु;
१३६४
लीलमै नच्चरलेमलनेल्ल । नोलि देवतलु दैत्युलुनु गैकोनिरि;

बहुत पहले सुनी थी। दिति के सुत दैतेय और अदिति के सुत सुर दोनों ने सोचा कि पहले प्रकट रूप से क्रमशः रस और ओषधियाँ भरकर क्षीर-सागर को सप्रयत्न मथकर, सुचारु रूप से अमृत को ग्रहण करें। सममैत्री से वे उस क्षीरसागर के पास गए और मंदर-पर्वत और वासुकि को क्रम से मथानी और रस्सी बनाकर, क्षीरसागर को मथने लगे। तब वहाँ विष (हलाहल) उत्पन्न हुआ, (जो) उग्र होता हुआ सर्वत्र लोकों को अधिक रूप से सताने लगा। तब रोषानल से परुष बन हर (शिव) उसे लेकर निगल गए। तब उसे थूक देने से क्रम से उरगों (सर्पो) ने उस विष को धारण किया। पुनः (सागर का) मंथन करने से साठ करोड़ अप्सराएँ पैदा हुईं जो कृत्रिम काम-रूपी समुद्र में लोकों को डुबा सकने योग्य श्रृंगार-चेष्टाओं से युक्त थीं, ॥ १३६० ॥

—और क्वणित (मुखरित) होनेवाली करधनी से युक्त गुरु नितंबों, क्षीण कटियों, घने कुचों, चंचल तनुलताओं, सुन्दर दन्त-पंक्तियों, श्रेष्ठ नयनों, कान्तिमान अधरों, कोमल भ्रूलता-रूपी कोदण्डवाले कामदेव की शरविद्या के समान दिखाई पड़ने वाले कटाक्षों, भुजमूलों के प्रकाश को प्रकट करने वाले भुजलता-विक्षेपों से तथा अमर नूतन यौवन के सौन्दर्य से युक्त थी। ॥ १३६४ ॥

वारक दरुव ना वरुणात्मजात । वारुणि प्रभविंचे वैभवंबलर;
नासुर दितिसुतुलपुडॊल्लकुन्न । नसुरुलै वर्तिल्लिरवनि नॆल्लॆडल;
सुर नादितेयुलु सॊरिदि गैकॊनग । सुरलन व्रख्याति शोभिल्लिरपुडु;
संतसंवुन रमासति दुरंगंवु । गांति मिन्नगु दंति कौस्तुभमणियु
नमृतांशुडुनु वुट्टॆ; नमृतंबु सुरभि । यमरु सुधापूर्णमगु कमंडलुवु
गलिगि धन्वंतरि करमॊप्प वुट्टॆ; । वॆलयंग मरि पुट्टॆ विषमुग्रमगुचु;
१३७१

नंत सुरासुरुलमृतंबु कॊऱकु । नॆन्तयु दमलोन नेचि दर्पमुन
ननुपमस्थिति बोर, नसुरुल सुरल । गनुगॊनि सुरलपै गरुणिंचि यपुडु
मानिनि रूपमै मधुमर्दनुंडु । ता नमृतमु बंचि तगनिच्चु वेळ
राहुकेतुवुलनु राक्षसुलप्पु । डूहिंचि पंक्तिलो नॊगि गूरुचुंडि
चॆयि जाचि पट्टिन जॆलगुचु सुधनु । मॆयिचाय जूडक मॆलत यिच्चुटयु
रविचंद्रुलप्पुडा रमणिनि जूचि । कवगूडि यिद्दरु गळवळंबंदि
कनुसैग नट्टु चूप गनलुचु विष्णु । वनुवॊन्द जक्रंबु नट्टु प्रयोगिंचि
शिरमुलु खंडिंचि सृष्टिलोपलनु । कऱकु राक्षसुतलल् कडुग्रहंबुलुग

—उन समस्त अप्सराओं को प्रसन्नता से क्रम से देवताओं और दैत्यों ने ले लिया। (फिर) रुके विना पुनः मंथन करने पर, वैभव-युक्त रूप से वरुण की पुत्री वारुणी (मदिरा) का जन्म हुआ। उस सुरा को दिति पुत्रों ने अस्वीकार कर दिया अतः अवनि पर सव जगह वे असुर कहलाए। उस सुरा को क्रम से देवताओं ने ग्रहण किया अतः वे सुर की प्रख्याति से शोभित हुए। तव प्रसन्नता के साथ सवको प्रसन्न करते हुए लक्ष्मी, उच्चैःश्रवा नामक अश्व, कान्ति में श्रेष्ठ ऐरावत नामक गज, कौस्तुभ-मणि और चन्द्र का जन्म हुआ। इसके वाद अमृत, कामधेनु और शोभाय-मान सुधापूर्ण कमण्डल से युक्त धन्वन्तरि अति शोभा से पैदा हुए। फिर से उग्र होता हुआ विष उत्पन्न हुआ। ॥ १३७१ ॥

—तव अमृत के लिए सुर और असुर आपस में विजृंभित हो, अहंकार के साथ अनुपम रूप से लड़ पड़े। असुरों और सुरों को देखकर, सुरों पर करुणा करके मानिनी-रूप से मधुमर्दन (विष्णु) स्वयं अमृत बाँटने आए। उस समय राहु और केतु नामक दो राक्षस भी कल्पना के द्वारा विष्णु के माया-विधान के वारे में सोचकर पंक्ति में क्रम से वैठ गए और हाथ फैलाया। उनके शरीर की कान्ति देखे विना उत्साह से उस नारी ने उन्हें भी सुधा दे दी। तव रवि और चन्द्र दोनों उस रमणी को देख अधिक घवराए और आँख के इशारे से उधर उन दोनों राक्षसों को दिखाया।

ना मिट निलिपॆनु; नमृतंबु द्राव। नेमियु जॆडकुंड नॆप्पुडु वारु१३८०
नादिगा नप्पुडय्यादित्यु जंद्रु । बाधिंचुचुंदुरु पर्वबुलंदु;
नसुरुल गनुङ्गामि यमृतंबु सुरल । कॊसगि वारिकि जयंबॆसग माधवुडु
दैतेयकोटि यंदड्र द्रुंचि यिंद्रु । डातडि द्रिजगंबु लॆथि बालिप१३८३

मरुत्तुल कथ

दितियंत दनसुतुल् देगुटकु नॊगिलि । पतियैन कश्यपु ब्रार्थिंचि, 'यिंद्रु
जंपजालिन महासत्त्वप्रताप । संपन्नु नॊकनि ब्रसादिंपु' मनिन
नंगीकरिंचि 'सहस्रवर्षंबु । लंगन! घनशुचिव युंडगलुग
मूडु लोकंबुलु मॊगि गल्चुवानि । वाडिमिमै निंद्रु वधियिंचुवानि
गनियॆद वॊक पुत्रु गांत! ना वलन' । ननि पल्कि दितिमेनु हस्तांबुजमुन
नयमार परिमार्जनमु सेसि मऱियु । दयजूचि यतडॆगॆ दपमाचरिंप;
जनियॆ ना दितियुनु सम्मदंबॆसग; । जनि युग्रतपमाप्प सल्पुचुनुंड
१३९०

तब क्रुद्ध होते हुए विष्णु ने अवसर पाकर, उनके ऊपर चक्र का प्रयोग कर, उनके सिर काट डाले। इस सृष्टि में उन भयंकर राक्षसों के सिर आकाश में ग्रहों के रूप में प्रतिष्ठित हुए। अमृत का पान करने से वे सदा के लिए अमर बन गए। ॥ १३८० ॥

—उस समय से लेकर वे पर्व (अमावस तथा पूर्णिमा) के समय सूर्य और चन्द्र को सदा सताते रहते हैं। असुरों की आँख बचाकर विष्णु ने देवताओं को अमृत देकर, उन्हें जय प्रदान किया। तब समस्त दैतेय कोटि (समूह) का वध करके बड़ी प्रसन्नता से इन्द्र तीनों लोकों पर शासन करने लगा।

मरुतों की कथा

अपने पुत्रों की मृत्यु से दुखी होकर दिति ने अपने पति कश्यप से प्रार्थना की और कहा—'इन्द्र का संहार कर सकने वाले महाबल से सम्पन्न एक पुत्र प्रदान कीजिए'। उसकी प्रार्थना को स्वीकार करते हुए, 'हे नारी! अगर सहस्र वर्ष तक अत्यन्त पवित्रता से रह सकोगी तो क्रम से तीनों लोकों को जीतनेवाले तथा पराक्रम से इन्द्र का वध कर सकनेवाले एक पुत्र को मुझसे प्राप्त कर सकोगी', ऐसा कहकर दिति के शरीर को अपने करकमल से सप्रेम सहला कर, और उस पर कृपा करके कश्यप तप करने

नंतट मघवंतुडत्तॆरंगॆरिगि । चिंतिंचि दिति जेरि शिष्युंडु वोलॆ
पायक कुशसमित्फलमूल भव्य । तोयादुलतिभक्तितोड दॆच्चुचुनु
जरणंबुलॊत्तुचु सत्कृतुल् मरियु । वरिपाटिसेयुचु वरिचर्य सेय
नेवेळ नॆच्चट नेमि गावलयु । गावलसिनवॆल्ल गनुसन्न दॆच्चि
युपचरिंपुचु वेड्क नुंडॆवेक्कॆंड्लु । नपुडॊक्कनाडिंद्रु नादिति चूचि
कडचन्नयेड्लु गणनंबु सेय । वडितॊम्मनूट तॊम्वदियु निंडुटनु
नलरुचु मदि रहस्यमु दापलेक । 'वलभेदि! विनुमु ना पल्कु नीवॊकटि
तनयुनि गोरि मी तंड्रि नेनडुग । 'विनुमु वेय्येड्लु वॆंडलिन पिदप
निच्चिति सुतु' नंचु निपारनाकु । नच्चुगा वरमिच्चॆ; नटुगान नीकु
१३९९
निटमीद वदियेडु लेगिनपिदप । वटुशक्ति दम्मुडु प्रभविंपगलडु;
अलरंग नीवुनु नातंडु गूडि । पॊलुपार नेलुडु भुवनत्रयंबु
विनुतकीर्तुल मीरु विलसिल्लुचुंडु'। डनिपल्कि यंत माध्याह्नकालमुन

चले गए तथा वह दिति भी प्रसन्नता-पूर्वक चली गई और जाकर उग्र तपस्या करने लगी । ॥ १३९० ॥

—तब इन्द्र उस वृत्तान्त को जानकर, चिन्तित हुए। वे दिति के पास पहुँच, शिष्य के समान सदा कुश, समिधाएँ, फल, मूल, जल आदि अति-भक्ति से लाकर देते हुए, चरण दबाते हुए, और अनेक सत्कार्य करते हुए, सुचारु रूप से परिचर्याएँ करते हुए, जिस समय जिस स्थान पर जो चाहिए, उन सभी आवश्यक वस्तुओं को आँख के इशारे भर से लाकर, सेवा करते हुए अनेक वर्षों तक दिति के पास उत्साह से रहे। तब एक दिन इन्द्र को देखकर, दिति ने गत वर्षों की गणना की तो नौ सौ निन्यानवे वर्ष पूरे हो गए थे। प्रसन्न होती हुई दिति अपने मन के रहस्य को छिपा न सकी, और इन्द्र से बोली—'हे बलभेदी ! मेरी एक बात तुम सुनो। पुत्र को चाहकर तुम्हारे पिता से मैंने प्रार्थना की तो उन्होंने शोभायमान रूप से स्पष्ट शब्दों में मुझे यह वर दिया कि 'एक हजार वर्षों के बाद तुम्हारे एक पुत्र होगा'। इसलिए अब से दस वर्षों के बीतने पर अपार शक्ति वाला तुम्हारा अनुज पैदा होगा । ॥ १३९९ ॥

—तुम और वह मिलकर शोभायमान रूप से तीनों भुवनों पर शासन करो, प्रसिद्ध कीर्ति के साथ विराजित होते रहो'। ऐसा कहकर वह मध्याह्न के समय, केश बिखेर कर, खाट पर पायताने को सिरहाना बनाकर, थका-वट के कारण सो गई। (इस प्रकार) सोती हुई दिति को देखकर इन्द्र

दलवीडि कालगड दलयंपिगाग। नलतमै निद्रिंचु ना दिति जूचि
शतमन्युडेन्तयु संतोषमंदि। विततवैखरि 'निदिवेळ' नाकनुचु
दितिगर्भ मतियोग धीशक्ति जोच्चि। शतकोटिचे दन शत्रुवौ शिशुवु
नेडु दुनकलु सेय नेलुगेत्ति बालु। डेडुव, दितियु नय्येड मेलुकांचे
मघवुडु 'मारुद! मारुद!' यनुचु। लघुरीति बलुक 'बालकु जंपवलदु
वल' दनियेडु दितिवाक्य मालिंचि। वेलुवडि गर्भमव्वेळवासवुडु
करमुलु मुकुळिंचि करमु जित्तमुन। दिरमैन भक्तिचे दितितोड बलिके १४०९

'दनरंग गालगड दलयंपि गाग। गोनि मुक्तकेशिवै कूर्कुट जेसि
यार्य! नीवशुचिवै; तट्टुगान तेंगुव। गार्यबुकोडकेनु कडुपुलो जोच्चि
गोनकोनि ननु जंपगोरु गर्भबु। दुनिमिति ने नेडु तुनियलु गाग;
सन्नकु सन्न शत्रुंडु गान। जिन्नि पापनि बरिच्छिन्नु जेसितिनिः
जननि! धर्मज्ञवै सैरिंपवलयु'। ननिन दुःखिंचुचु ना यिन्द्रु जूचि
'ना नेरमितयु नाकलोकेश!। नी नेरमदिलेदु निक्कुवंबरय'
ननि पल्कि 'मरुदाख्यलमर देजंबु। लोनयंग खंडंबु लेड्वुरु नगुचु

अत्यधिक प्रसन्न हुए और सोचा 'यही मेरे लिए सुअवसर है'। ऐसा सोचकर योगशक्ति से दिति के गर्भ में प्रवेश कर, शतकोटि (वज्रायुध) से जब इन्द्र ने अपने शत्रु (गर्भस्थ) शिशु के सात टुकड़े किए तो वह बालक जोर-जोर से रोने लगा और दिति भी जाग गई। गर्भ के भीतर से इन्द्र ने धीमे स्वर में कहा—'मा रुद; मा रुद (मत रो, मत रो)'। 'बालक को मत मार डालो, मत मार डालो' कहने वाली दिति के वाक्यों को सुनकर, उसी समय गर्भ से निकलकर इन्द्र ने हाथ जोड़कर, चित्त में अधिक स्थिर भक्तिभाव-युक्त हो दिति से यों कहा— ॥ १४०९ ॥

—'शोभा से पायताने को सिरहाना बनाकर, बाल बिखेर कर सो जाने के कारण हे आर्ये! तुम अपवित्र हो गई हो। ऐसा होने पर, साहस करके, अपने कार्य के लिए गर्भ में प्रवेश कर, मुझे मार डालना चाहनेवाले गर्भ के मैंने सप्रयत्न सात टुकड़े कर दिए हैं। नन्हे से नन्हा होने पर भी शत्रु होने के कारण ही मैंने छोटे शिशु का वध किया है। हे जननी! तुम धर्मज्ञ हो, धर्म का विचार करके मुझे क्षमा कर देनी चाहिए'। इन्द्र के ऐसा कहने पर दुखी होती हुई दिति इन्द्र को देख यों बोली—'सब कुछ मेरा दोष है। हे स्वर्गलोक के स्वामी इन्द्र! यदि सच्चाई से देखा जाय तो इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं है'। ऐसा कहकर दिति ने निवेदन किया—'ये सात खण्ड अमर तेज से शोभित हैं। प्रसन्न हो (इन) मेरे पुत्रों को मरुत्

निम्मुल ना पुत्रुलैलमि नेल्लेडल । सम्मदंमिपार जरियिंपनिम्मुः सप्तखंडंबुलै सरिनोप्पु वीरि । सप्तमारुतगणस्कंधनायकुल गाविंपु' मनि वेडगा नट्लु चेसि । देवेन्द्रुडमरावतिकि वोयें; नंत वारुनु देवतावल्लभु चेलिमि । मारुतगणसंज्ञ मडि दिव्युलैरि। १४२०

वैशालिकुल वृत्तांतमु

देवेंद्रुडतिभक्ति दितिकि शुश्रूष । गाविंचे नी पुण्यगण्य देशमुन; नी पुण्यधरणि मुन्निक्ष्वाकुडनेडु । भूपवर्यु डलंबुस यंदु गन्न कोडुकु विशालुडन् कुवलयाधिपुडु । पुडमिनेलि विशालपुरियिंदोनर्चें । ना विशालुनि पुत्रुडै हेमचंद्रु । डाविर्भविंचेनु; नतडु सुचंद्रु, नतडु धूम्राश्वुनि, नतडु सृंजयुनि । नतडंत सहदेवु, नतडु कुशाश्वु, नातंडु सोमदत्ताख्यु, गकुत्स्थु । नातडु, सुमतिनि नतडुनु गनिरि;

सुमति विश्वामित्र समागममु

भाविंप नेप्पुडु परम धर्ममुल । नी विशालापुरंवेलेंडि राजु

नाम से सर्वत्र प्रसन्नता-पूर्वक विचरण करने दो। सप्तखण्ड हो विराजमान इन्हें सप्तमारुतगणों (मरुद्गणों) के स्कंधनायक वना दो'। ऐसा निवेदन करने पर देवेन्द्र ने वैसा ही किया और अमरावती चले गए। तव वे भी इन्द्र की मित्रता से मारुतगण (मरुद्गण) संज्ञा (नाम) पाकर दिव्य वन गए। ॥ १४२० ॥

वैशालिकों का वृत्तान्त

—इस पुण्यदेश में देवेन्द्र ने अतिभक्ति से दिति की शुश्रूषा की थी। इस पवित्र धरणी पर पूर्वकाल में इक्ष्वाकु नामक राजा ने अलंवुषा नामक पत्नी से विशाल नामक पुत्र को प्राप्त किया था। उस राजा ने पृथ्वी पर शासन करके यहाँ विशालापुरी को वनाया। उस विशाल के पुत्र के रूप में हेमचन्द्र आविर्भूत हुए; हेमचन्द्र ने सुचन्द्र को, सुचन्द्र ने धूम्राश्व को, धूम्राश्व ने सृंजय को, सृंजय ने सहदेव को, सहदेव ने कुशाश्व को, कुशाश्व ने सोमदत्त को, सोमदत्त ने ककुत्स्थ को और ककुत्स्थ ने सुमति (नामक पुत्र) को जन्म दिया। वह सुमति अभी इस नगर में अति धर्मयुक्त होकर शासन कर रहा है।

सुमति और विश्वामित्र का समागम

—विचार करने (देखने) पर सदा परमधर्म (वुद्धि) से इस विशालपुर

लनघ! वैशालिकुलन वीरु जगति ।विनुतिकेक्किरि धर्मविभवसंपदल;
निच्चट रघुराम! यी रात्रि मनमु। बुच्चि वेगिन जूडबोदमु जनकु'
ननुनंत गाधेयुडट वच्चुटेरिगि । मनमुन संतोषमग्नुडै सुमति १४३०
तन पुरोहितुलुनु दन बंधुजनुलु । दनतोड जनुदेर दन पट्टणंबु
वेलुवडि चनुदेन्चि विहितमार्गमुन। नेलमितो ना संयमींद्रु बूजिंचि
करमुलु मुकुळिंचि कडुभक्ति बलिके । 'धरणिलो नेडु ने धन्युडनैति
जरितार्थमय्ये ना जन्मं' बटंचु । बरमप्रियंबुलु बलिकि यॊन्डॊरुलु
नमरंग गुशलंबुलडिगिन पिदप । सुमति विश्वामित्रु जूचि ताननियें:

सुमतिकि विश्वामित्रुडु श्रीरामलक्ष्मणुलनु गूर्चि तॆलुपुट

'मुनिनाथ! यसमानमूर्तुलीघनुलु । घनभुजुलनिमिष क्रम पराक्रमुलु
करिराजगमनमुल् कंठीरवमुल । बुरुडिप जालिन भूरिसत्त्वमुलु
ललितयौवनमुलुल्लसितारविंद । दळमुल देगडु नेत्रमुलु जॆन्नॊन्द
गरवालमुलु गार्मुकंबुलु दोनलु । धरियिंचि दमदु पदन्यासमुलनु

पर शासन करनेवाले ये राजा, हे अनघ! धर्म तथा वैभवसम्पन्न हो, जगत् में वैशालिक के नाम से विख्यात हुए। हे रघुवंशी राम! यहाँ हम आज की रात बिताएँगे (और) प्रातःकाल जनक को देखने जाएँगे'। (विश्वामित्र ने) ऐसा कहा। तब वहाँ गाधेय के आगमन (का समाचार) जानकर, मन में प्रसन्न होकर, सुमति ॥ १४३० ॥

—अपने पुरोहित (और) अपने बन्धुजनों को अपने साथ लेकर, अपने पट्टण से निकलकर, आकर, विहितमार्ग से (विधिवत्), हर्ष के साथ उस संयमीन्द्र की पूजा कर, हाथ जोड़, अति भक्ति से बोले—'धरणी में मैं धन्य हो गया हूँ। मेरा जन्म चरितार्थ (सार्थक) हो गया है'। ऐसा कहते हुए परमप्रिय (वचन) बोले। सुचारु रूप से परस्पर कुशल-प्रश्न करने के वाद, सुमति ने विश्वामित्र को देखकर, (यों) कहा—

विश्वामित्र का सुमति को राम-लक्ष्मण के बारे में बताना

—'हे मुनिनाथ! असमान मूर्ति (रूप) वाले ये महान् (पुरुष जो) विशाल बाहु वाले, देवताओं के समान पराक्रमशाली, गज के समान गति वाले, सिंह के समान अमित शक्ति वाले, ललित यौवन वाले, प्रफुल्ल अरविन्द के दलों का तिरस्कार करनेवाले नेत्रों से युक्त शोभायमान (और) तलवार, धनुष, तरकस धारण कर, सूर्य-चन्द्र की गति से सुशोभित आकाश

जगति ना रविचंद्र संचार कलित । मगु नाकसंबुना नलरिंचुवारु; १४४०
निरुवुरु दमलोन नेल्लचंदमुल । सरियगुचुन्नारु जनुल चूड्कुलकु:
नीकुमारकु लेव्व? रेव्वरि सुतुलु?। नाकु नेर्पड गाधिनंदन ! चेपुम'
यनिन विश्वामित्रुडातनि जूचि । विनिर्पिप दोडगेनु वीनुलुब्बंग
'नो राजकुलचंद्र! यो सुगुणाब्धि!। वीरि वृत्तांतंबु विनुमु देल्पेदनु:
सरयुवुपोंत गोसल देशमुननु । नरुदोप्पग नयोध्य यनु पुरि योप्पु;
ना पुरि नेलुचु ना दशरथुडु । नेपुमै मनुजुल नेल्ल वालिंचु;
नातनि वरपुत्रुडैन रामुडु । नितनिकि ननुजातुडी लक्ष्मणुडु
मखमु सेयुटकुनै मरि नेनु वेड । सुखमुन निच्चेनु सुतुल निद्दरिनि;
मा वेन्ट वेंचेसि मखमुनु गाचि । वेवेग दाटक, वेस सुबाहुवुनु
आटोपमोप्पंग ननिलोन गूल्चि । माटमात्रंबुन मारीचु दोलि १४५०
या गंग नट दाटि यटु मिथिलकुनु । नेगंग दलचुचु निटकु वच्चितिमि;
ई राजशीतांशु लिनवंशकुलुलु; । वीरि सामर्थ्यबु विनग जोद्यंबु'
ननिन विश्वामित्रुनतुल वाक्यमुलु । विनि विस्मयंबंदि वेड्क ना सुमति

के समान, अपने चरणों के स्पर्श से धरती को प्रसन्न (अलंकृत) कर रहे हैं, ॥ १४४० ॥

—(एवं) जनता की दृष्टि में दोनों सब प्रकार समान दीख रहे हैं, ये कुमार कौन हैं ? किनके पुत्र हैं ? हे गाधिनन्दन ! मुझे समझाकर बताइए'। ऐसा कहने पर विश्वामित्र उसे (सुमति को) देखकर, जिससे कान आनंदित हो सके, इस प्रकार का वृत्तान्त सुनाने लगे। 'हे राजकुल-चन्द्र ! हे सद्गुण-सागर ! इनका वृत्तान्त सुनो, मैं बता रहा हूँ। सरयू (नदी) के निकट (किनारे), कोसलदेश में आश्चर्यप्रद अयोध्या नामक पुर विराजमान है। उस नगर पर राज्य करते हुए वह दशरथ पराक्रम के साथ समस्त मानवों पर शासन करते है। उनका वर पुत्र है राम, उसका अनुज है यह लक्ष्मण। यज्ञ करने के लिए मेरे द्वारा प्रार्थना करने पर, (राजा ने) दोनों पुत्रों को प्रसन्नता से दे दिया है। हमारे साथ पधारकर, यज्ञ-रक्षा कर, अतिशीघ्रता से ताड़का और सुबाहु को युद्ध में पराक्रम के साथ, मार गिराया। बात की बात में मारीच को भगाया। ॥ १४५० ॥

—गंगा को पार कर, मिथिला को जाने के उद्देश्य से यहाँ आए हैं। ये चन्द्रवंश के हैं। इनकी सामर्थ्य सुनने में आश्चर्यप्रद है'। इस प्रकार

या राघवुल नप्पुडर्थि बूजिप । वारु ना पूजलु वरुस गैकोनुचु
ना रात्रियंदुंडि या प्रभातमुन । नाराजु दमु बंप नर्थितो जनिरि ।

गौतमाश्रम वृत्तांतमु

चनि चनि गौतमाश्रममु राघवुडु । गनुगोनि पलिके ना गाधिनंदनुनि:
'सललित पल्लव संपदल् गलिगि । वेलयु मामिळ्ळुनु वेरु पनसलु
नारंग जंबीर नारिकेळमुलु । बारिभद्रंबुलु बदरिकाततुलु
मातुलुंग लवंग मंजीरतरुलु । श्रीतरु चंपक सिंधुवारमुलु
बोन्नलु बोगडलु बोकम्राकुलुनु । नेन्नंग नरटुल नेरयु पुप्पोळ्ळु १४६०
जित्तजांबकमुलै चेलगु नशोक । लत्तुक दाडिम ललित मल्लिकलु
तिंदुकंबुलु शिवतिलक शालमलुलु । चंदन कर्पूर सहकारमुलुनु
भल्लात गुग्गुलु ब्रह्मकौशिकमु । लेल्लचो नल्लिन येलकीलतलु
अल्लिन मोल्ललु नलरु चेमंति । चल्लनि पुष्प वासनल जेन्नोन्दु
कासारमुल चेत गडुरम्य मगुचु । भासिल्लु पक्षुल पटुरवंबुलुनु
समधिकमिट्टि याश्रमभूमि सकल । रमणीयमय्यु निर्जनमेटिकय्य ?

विश्वामित्र के अनुपम वाक्यों को सुनकर, आश्चर्यचकित होकर, उस सुमति ने प्रीति से उन राघवों की हृदय से पूजा की। उन्होंने उन पूजाओं को क्रम से ग्रहण किया। उस रात को वहाँ रहकर, प्रभात समय उस राजा के विदा करने पर प्रसन्नता से चल पड़े।

गौतम आश्रम का वृत्तान्त

—चलते-चलते राघव ने गौतम-आश्रम को देखकर, उस गाधिनन्दन से कहा—'सुललित-पल्लव-सम्पदा से युक्त होकर, शोभायमान आम्र, कटहल, नारंगी, नींबू, नारियल, देवदारु, बेर, मातुलुंग, लवंग, मंजीर के वृक्ष, श्रीतरु, चंपक, सिन्धुवार, नागकेसर, मौलसिरी, सुपारी और केले के पेड़, (उपरोक्त वृक्षों पर) शोभायमान पुष्परज से युक्त, ॥ १४६० ॥

—चित्त को प्रसन्न करते हुए शोभायमान अशोक, लाख, अनार, ललित मल्लिका, तिन्दुक, शिवतिलक, शालमल, चन्दन, कर्पूर, आम, भल्लात, गुग्गुल, ब्रह्मकौशिक, सर्वत्र फैली हुई एला (इलायची) की लताएँ, मोल्ल (कुन्द), सुन्दर चमेली (आदि) के शीतल पुष्पसौरभ से शोभायमान होते हुए, कासारों (सरोवरों) से अतिरम्य बनते हुए, पक्षियों के कूजन से युक्त यह आश्रमभूमि सभी तरह से रमणीय होते हुए भी निर्जन क्यों हुई ? पहले यहाँ तपस्या करनेवाले मुनिवर कौन थे ? सब कुछ बताइए'।

मुन्निदु दपमुन्न मुनिवरुडेव्व ? ।डन्नियु नेरिगिंपु' मनिन निट्लनियॆ;
'गौतमुडिक्कड गडकतो दॊलिलि । यातत निष्ठ नहल्यतो गूडि
यतिघोरतपमुसेयग निंद्रुडेरिगि । यतनितपंबु दा नंतयु जॆरुप
गुक्कुटंबै पोयि कुटजंबु सेरि । कॊक्कॊरोको यनि कॊमरॊप्प गूय
१४७०
मनमुन जिंतिंचि मरि वेगॆननुचु । मुनि निजानुष्ठानमुनकु बोवुटयु
गौतमाकारंबु गैकॊनिवच्चि । यातनि सति नहल्यादेवि गदिसि
'ऋतुकालमनरु कोरिक गलवारु: । मतिदलंपग ब्रोद्दु मरि चालगलदु:
पॊलतुक! नी तोडि भोगेच्छ नाकु । वलयुट दलपोसि वच्चिति' ननिन
नॆरिगि यहल्य 'नीविंद्रुंडवगुट । यॆरुगुदु; नौगाक! यिंदु र' म्मनुचु
जलजाक्षि तम पर्णशाल लोपलिकि। वलभेदि गॊनिपोयि परग ग्रीडिंचॆ।
सुरनाथुडप्पुडु स्रुक्कुचु भीति । नरुगुचो गौतमु डंतलो वच्चि
'योरि पापात्मक ! युचितमे नीकु?। ना रूपु गैकॊनि ना पत्नि गवय?

(ऐसा) कहने पर (विश्वामित्र ने) यों कहा—'पूर्वकाल में निरन्तर निष्ठा के साथ, अहिल्या-युक्त हो गौतम यहाँ सप्रयत्न अतिघोर तप करने लगे। (यह) जानकर इन्द्र ने, उनके समस्त तप को विगाड़ देने के लिए कुक्कुट (मुर्गा) बनकर पर्णशाला (के पास) पहुँचकर मनोहरता के साथ बाँग दी। ॥ १४७० ॥

—मन में यह सोचकर कि प्रातःकाल हो गया, मुनि (गौतम) अपने अनुष्ठान (साधना) करने के लिए (नदी किनारे) गए। (तव इन्द्र ने) गौतम का आकार धारण कर, उस (गौतम) की सती अहिल्या के पास जाकर कहा—'जिनके मन में इच्छा (काम-वासना) है, वे ऋतुकाल की प्रतीक्षा नहीं करते। सोचने पर अभी रात बहुत है। हे वनिता! तुम्हारे साथ भोग (रति) की इच्छा से आया हूँ'। (ऐसा) कहने पर, (उसे) जानकर अहिल्या ने कहा—'तुम इन्द्र हो। यह मैं जानती हूँ। ठीक है, इधर आ जाओ'। (ऐसा) कहती हुई वह कमलनेत्री (उसे) अपनी पर्णशाला में ले गई और शोभा से (उसके साथ) रतिक्रीडा की। (रतिक्रीडा के बाद जव) देवराज संकोच और भय के साथ जा रहे थे कि इतने में गौतम आए और शाप दिया—'रे पापात्मा! मेरा रूप धारण कर, आकर मेरी पत्नी के साथ सम्भोग करना तुम्हारे लिए कहाँ तक उचित है? अपने पापफल से तुम अमुष्क (अंडकोश-रहित) हो जाओ। जाओ'। गौतम के शाप से, उसके अण्ड उसी क्षण गिर पड़े। ॥ १४८० ॥

नी पापफलमुन नी वमुष्कुंड । वै पॊम्मु पॊ' म्मनि यट शपिंचुटयु
गौतमु शापमखंडमै ताकि । यातनि यंडंबु लंतलो दॆगियॆ १४८०

अहल्या शापमोचनमु

नडरि गौतमुडहल्यादेवि जूचि । 'पडति! पाषाणमै पडियुंडु मीवु
करमुग्रमगु नॆण्ड गालि, पॆन्धूळि । बॊरलुचुंडुमु नीवु पॊडगान बडक'
यनिन 'शापमुन कॆय्यदि तुदि नाकु'। ननिन नहल्यकिट्लनियॆ गौतमुडु:
'वैकुंठधामु डवाप्तकामुंडु । लोकरक्षणकळालोलमानसुडु
रामुडै वच्चि पुराणपूरुषुडु । भूमिपै जन्मिचि पॊगडु दीपिप
जनुदॆन्चि कौशिकु जन्नंबु गाचि । यिनकुलाधीश्वरुडीत्रोव वच्चि
तॊलगिपोवक निन्नु द्रॊक्किन जालु । जलजलोचन! नीदुशापंबु दीरु'
ननि चॆप्पि शीताद्रि करिगॆ गौतमुडु;। मुनिपत्नि द्रारूपमुननुंडॆ; नंत
सुरराजु दनपाटु सुरलतो दॆल्प । दरमिडि पितृदेवतल वारु वेडि
वॆरवरुलै मेषवृषणमुल् दॆच्चि । सुरलु संधिंचिरि सुरलोकपतिकि:
१४९०

अहिल्या-शाप-विमोचन

(उसके पश्चात्) रोषावेश से गौतम ने अहिल्या को देखकर कहा—'हे नारी! तुम पाषाण हो पड़ी रहो। अति उग्र हो धूप में तपते हुए अधिक धूल में लोटती रहो जिससे तुम्हारा स्वरूप (किसी को) दिखाई न पड़े'। (ऐसा) कहने पर (अहिल्या ने) कहा—'मेरे लिए इस शाप का अन्त कब होगा'? (तब) गौतम ने अहिल्या से कहा—'वैकुण्ठधाम, अवाप्तकाम, लोकरक्षण कला-लोलमानस (लोक-रक्षा की कला में लीन मन वाले) (और) पुराण-पुरुष (विष्णु) राम के रूप में भूमि पर जन्म लेंगे। अत्यन्त प्रशंसनीय रूप में आकर, कौशिक के यज्ञ की रक्षा कर, (वे) इनकुल के अधीश्वर (राम) इस मार्ग से आकर, मार्ग से न हटकर तुम्हें चरणों से स्पर्श-भर करेंगे तो बस हे कमललोचने! तुम शाप-मुक्त हो जाओगी'। ऐसा कहकर गौतम शीताद्रि को चले गए और मुनि-पत्नी (अहिल्या) पाषाण के रूप में पड़ी रही। तब देवराज ने अपनी दुर्गति के बारे में देवताओं को बताया। क्रम से उन्होंने पितृदेवताओं से प्रार्थना की। देवताओं ने समर्थ हो भेड़ के अण्डकोश लाकर सुरलोकपति के शरीर में जोड़ दिये। ॥ १४९० ॥

नतुलपुण्यात्मकु लदियादिगाग । ग्रतुवुल जंपुदुर्कडगि मेपमुल:
नाडादिगा मुनिनाथु शापमुन । वोडिमि सॆडि यी तपोवनि नुन्न
या यहल्य नतुल्य हतमनश्शल्य । जेयवे श्रीराम! श्रितपुण्यनाम!'
यनि चॆप्पि गौतमुनाश्रमंबुनकु । जनुदेर श्रीरामचरणमुल् सोक
मॊगुलॆल्ल विरिय सोमुनि कळ वोलॆ । वॊग यडंगिन हव्यभुक्कीलवोलॆ
गलक दॊलंगिन कमलिनि वोलॆ । वलुमसटुडिगिन बंगारु वोलॆ
श्रीरामपादराजीवपराग । दूरीकृताघसंदोहयै यपुडु
वॆलदि यंतट शिलावेषंबु मानि । तिलकिंचि तन तॊण्टिदेहंबु बूनि
मुनिपति चेत रामुनि महत्त्वंबु । विनिनदि गान ना वेदंडायान
या महामहुनकु नातिथ्यमॊसगि । 'श्रीमीऱ निटकु विच्चेसिति गान
१५००
जरितार्थनैति नी चरणपद्ममुलु । दरसिंचि श्रीराम! त्रैलोक्यनाथ!
मी पादतीर्थमौ मिन्नेरु भुवन । पापंबुलॆडबाप बाल्पडॆननग,
निलयॆल्ल नॊकट मिन्नॊक्कट गॊलिचि । वलिमॆट्टि ब्रह्मांडभांडंबु मुट्टि

—(इसी कारण से) तब से लेकर अतुल पुण्यात्मक (अति पुण्यवान्) लोग क्रतु (यज्ञ) के समय सप्रयत्न भेड़ों का वध करते हैं। उस दिन से लेकर मुनिनाथ (गौतम) के शाप के क़ारण, मनोज्ञता को खोकर इस तपोवन में स्थित उस अहिल्या को जो अतुल्य (असमान) है, (उसे) हतमनशल्य (मन के दुख से मुक्त) करो न, हे श्रीराम! हे श्रितपुण्यनाम (वाले)!' ऐसा कहकर गौतम के आश्रम पहुँचने पर, श्रीराम के चरण के स्पर्श से, सभी मेघों के छँट जाने पर चन्द्र की कला के समान, धुएँ के कम होने पर हवनकुण्ड की अग्नि-ज्वाला के समान, कलंक से मुक्त कमलिनी के समान, मलिनता के कम होने पर सुवर्ण के समान, श्रीराम के पादराजीव के पराग से दूरीकृत अघ-संदोह (पाप-समूह) वाली होकर, (वह) नारी तब शिलारूप को छोड़, अपने पूर्वदेह को धारण कर, मुनिपति (गौतम) द्वारा राम के महत्त्व को सुन चुकने के कारण, उस वेदंडयाना (गजगामिनी) ने उस महामह (महापुरुष) को आतिथ्य दिया और यह कहकर राम की विनुति (स्तुति) की कि 'श्री (शोभा) की अतिशयता से (आप) यहाँ आए हैं इसलिए ॥ १५०० ॥

—आपके चरण कमलों के दर्शन कर, हे श्रीराम! त्रैलोक्यनाथ! मैं चरितार्थ हुई हूँ। मानों आपका चरणोदक होकर आकाशगंगा (समस्त) भुवनों के पापों को दूर करने के लिए निकल पड़ी है। एक (चरण) से समस्त पृथ्वी को और अन्य (चरण) से आकाश को नापकर, पराक्रम

वेदशिरोवीथि विहरिंचुनीदु । पादमुल् नादुशापमु बापुटरुदे?'
यनि रामु विनुतिंचे; नंतगौतमुडु । सनुदेन्चि रघुरामचंद्रु बूजिंचि
प्राकट जन्मसाफल्य नहल्य; । गैकोनि तोंलिलटिगति विलसिल्ले;
ग्रोव्विरि जडिवान कुंभिनि गुरिसे। नव्वेळ; देवतूर्यंबुलु मोरसे;

श्रीरामलक्ष्मणुलु विश्वामित्रुतो मिथिल जेरुट

घनपुण्युलंदुंडि कदलि मिन्नंटि । तनरु प्राकारसौधमुल यूथमुल
नमरित रत्नगेहमुल वाहमुल । रमणीय राजमार्गमुल दुर्गमुल
वलनोप्पु शृंगार वनुल जव्वनुल । बोलुचु संततशुभंबुल निभंबुलनु १५१०
ननुवोन्दु वैरिवर्गाशिथिलकुनु । जनकुनि मिथिलकु जनुदेन्चि; रंत
गाळिग नेपाळ कर्नाट लाट । माळव सौवीर मगध पांचाल
कुरु पांड्य बर्बर कुंतलावंति । मरु तुरुष्काभीर मनुज वल्लभुल
घनतर यागोपकरणभागमुल । ननुरूप पशुगणायतन यूपमुल

से ब्रह्माण्डभाण्ड में व्याप्त होकर, वेद-शिरोवीथि (उपनिषद् रूपी मार्ग) में विहार करनेवाले आपके चरणों के लिए, मेरे शाप को दूर करने में आश्चर्य ही क्या है?' इतने में गौतम आए (और) रघुवंशी रामचन्द्र की पूजा की। जन्म की सफलता के प्रकट-रूप अहिल्या को ग्रहणकर पूर्ववत् (पहले जैसे) विराजमान हुए। उस समय ताजे फूलों की कुम्भवृष्टि हुई, देवतूर्य बज उठे।

श्रीराम-लक्ष्मण का विश्वामित्र के साथ मिथिला पहुँचना

—वे घन (महान्) पुण्यवान् वहाँ से चलकर जनक की (राजधानी) मिथिला पहुँचे जो गगन को स्पर्शकर सुशोभित प्राकार सौध-समूहों, सुनिर्मित रत्न (खचित) गृहों, वाहनों, रमणीय राजमार्गों, दुर्गों, शोभायमान शृंगारोद्यानों, युवतियों, निरन्तर मांगलिक पदार्थों तथा हाथियों से शोभित, विलसित थी। ॥ १५१० ॥

—वह (नगर) वैरिवर्ग के लिए अशिथिल था। तब कलिंग, नेपाल, कर्नाट, लाट, मालव, सौवीर, मगध, पांचाल, कुरु, पांड्य, बर्बर, कुन्तल, अवन्ति, मरु, तुरुष्क, आभीर (आदि देशों के) राजाओं, (और) घनतर (श्रेष्ठतर) याग-उपकरण भागों के अनुरूप पशुगण से युक्त यूपों, भूरि (अधिक) दधि-क्षीर-पूर्ण कुम्भों, सार (श्रेष्ठ) समिधाओं से भरे सुन्दर स्थलों, उचित रूप से पंक्तियों में (सजे हुए) दर्भासनों (कुश के आसनों),

भूरि दधिक्षीरपूर्णकुंभमुल । सारसमिद्भार चारुदेशमुल
दगुपंक्तुलैयुन्न दर्भासनमुल । दगु पीठमुल नुन्न तापसोत्तमुल
ललिग्रालु रत्नपल्लवतोरणमुल । मलगि पैं चेसाचु मदवारणमुल
नडरि घोषिंचु सामादि वेदमुल । नुडुगक चनुदेन्चु चुन्न तापसुल
नुडुवीथि नुप्पोंगु होमधूममुल । नडरेडु देवताह्वानरावमुल
बूजलु गैकोंनु पुण्यसंयमुल । बूजिप सोंलयनि भूसुरोत्तमुल १५२०
नरुदारु जनकुनि यज्ञवाटंबु । गरमर्थि जोच्चे नग्गाधिनंदनुडु ।
अंत ना जनक महाराजवर्यु । डेन्तयु ब्रियमुतो नेंदुरुगा वच्चि
मुनिनाथुनकु म्रोक्कि मुदमोप्प दोडु। कोंनिपोयि पूजिचि कुशलंबुलडिगि
'नीवु विच्चेसिति, नेडु ने मिगुल । वावनात्मुडनैति; व्रवले ना क्रतुवु'
ननि चाल गोंनियाडि यम्मुनिचंद्रु । वेंनुकने विनतुलै विलसिल्लुचुन्न
गुरुतरस्फीतवक्षुल गाकपक्ष । धरुल महाधनुर्धरुल श्रीकरुल
गोमलांगुल नभंगुरयशोनिधुल । भूमि जरिंचु वेल्पुल वोलु घनुल
सदयांतरंगुल सततप्रसन्न । वदनुल भुवनपावनचरित्रुलनु

(और अन्य) उचित आसनों पर स्थित उत्तम तपस्वियों, उत्साह से शोभित रत्नपल्लव-तोरणों (वन्दनवारों), भ्रमण करते हुए (तथा) सूँड ऊपर उठाए मत्तगजों, सामादि वेद-पाठ की समधिक ध्वनियों, निरन्तर आते हुए तपस्वियों, आकाशवीथि में परिव्याप्त होम-धूमों, अधिकता से विलसित देवताओं के निमन्त्रण की ध्वनियों, पूजाएँ ग्रहण करनेवाले पवित्र सयमियों, पूजा करने पर न थकने (सन्तुष्ट न होने) वाले भूसुरोत्तमों (ब्राह्मणों)— ॥ १५२० ॥

—से युक्त जनक की यज्ञभूमि आश्चर्यजनक थी। उस गाधिनन्दन ने बड़ी प्रसन्नता से उस यज्ञवाट (भूमि) में प्रवेश किया। तब उस महाराज-श्रेष्ठ जनक ने अत्यधिक प्रेम से (उनकी) अगवानी की, मुनिनाथ को प्रणाम किया, प्रसन्नता के साथ (उन्हें) लिवा ले गए, पूजा की, कुशल-प्रश्न किए (और कहा)—'आप आए, आज मैं अधिक पवित्र बन गया हूँ। मेरा यज्ञ समृद्ध हो गया'। इस प्रकार बहुत प्रशंसा करके, उस मुनिचन्द्र के पीछे ही विनयशील हो विलसित राम-लक्ष्मण को देखा जो गुरुतर (विशाल) स्फीत वक्षवाले, काकपक्ष (अलक) धारी, महाधनुर्धर, श्रीकर (शोभाकर) कोमल शरीरवाले; अभंगुर (शाश्वत) यशोनिधि, पृथ्वी पर संचार करनेवाले देवताओं के समान दीखनेवाले महापुरुष, सदयान्तरंग (दया से युक्त अन्तरंग वाले), सतत प्रसन्न वदन वाले, भुवन-पावन-चरित्र वाले, चारु प्रभा से युक्त भानु

जोरुप्रभाभानु चंद्र सन्निभुल । धीरुल नाश्विनदेवताकृतुल
नाजानुबाहुल नतुलविक्रमुल । राजीवनेत्रुल रामलक्ष्मणुल १५३०
जूचि 'यी शरचापशोभितहस्तु । ली चतुरात्मकुलेव्वरिवार ?
लीपल्लवारुण मृदपादपद्मु । ले पगिदिनि वच्चिरिचटिकि नडचि?'
यनिनः विश्वामित्रु 'डनघुलु वीरु । जननाथ! दशरथ जनपालसुतुलु;
नायतशक्ति ना यागंबु गाचि । या यहल्यनु ब्रोचि यनुकंप नेचि,
निरुपमतरशक्ति नी यिंटनुन्न । हरुनि चापमु जूडनरुदेंन्चि' रनुडु
मुनिनाथु माटकु मुदमंदि जनकु । डनुनयंबुन वारि नर्थि बूजिंचे ।
गौशिकु गनुगोनि गौतमसूनु । डाशतानंदु डिट्लनियें रागिल्लि:
'नीवु रामुनि देच्चि नेम्मि मम्मेलि: । ती विश्वविभु देर नेव्वरितरमु?
अडरि मा तल्लि यहल्यपापमुलु । गडिगे रामुनि पादकमलरेणुवुलु;
गौतमशापदुर्गति निस्तरिंचि । गौतमु ग्रम्मर गलसे मा तल्लि; १५४०
रामचंद्रुनि पाद राजीव महिम । लेमंदु' ननि रामु नीक्षिंचि पलिके:

(सूर्य) (और) चन्द्र के समान दीखनेवाले, धीर, अश्विनीकुमार नामक देवताओं की आकृतियों वाले, आजानु (घुटनों तक लंबे) बाहु वाले, अतुल विक्रम वाले और राजीव नेत्र (कमलनेत्र) थे । ॥ १५३० ॥
—(देखकर) पूछा—'धनुष-बाण से शोभित हाथों वाले, ये चतुरात्मक कौन है ? ये पल्लव के समान लाल तथा कोमल चरण-कमलों वाले किस प्रकार यहाँ (तक) पैदल आए हैं' ? (तब) विश्वामित्र ने कहा—'हे अनघ जननाथ! ये (बालक) जनपाल दशरथ के पुत्र हैं। आयत (व्याप्त) शक्ति से मेरे यज्ञ की रक्षा कर, उस अहिल्या का उद्धार कर, अनुकम्पा से (अब) तुम्हारे घर में रखे हुए हर (शिव) के निरुपमतरशक्ति वाले धनुष को देखने आए हैं'। मुनिनाथ के वचन से आनन्दित होकर, जनक ने अनुनय-पूर्वक (और) हृदय से उनकी पूजा की। कौशिक को देखकर गौतम के पुत्र शतानन्द प्रेम से यों बोले—'राम को (यहाँ) लाकर, प्रसन्नता-पूर्वक हमें धन्य किया है। (वरन्) इस विश्व-व्यापक को ला सकने की सामर्थ्य किसमें है ? मेरी माता अहिल्या के पापों को राम के चरणकमल के रेणुओं ने, प्रबल होकर, धो डाला। गौतम के शाप की दुर्गति से पार होकर (शाप से मुक्त होकर) मेरी माता फिर से गौतम से मिल गई है । ॥ १५४० ॥

—रामचन्द्र के चरणकमलों की महिमा का वर्णन कैसे करूँ ?'। (ऐसा) कहकर राम को देखकर बोले—'सुनते हैं, ये कौशिक जो पुण्यात्मा हैं, इस

'नी कौशिकुडु पुण्युडीक्षोणिमीद । नीकु रक्षकुडट! नीकेमि कोदव?

विश्वामित्र प्रभावमु

यरय विश्वामित्रु नतुल प्रभाव । मरिदि प्रस्तुतिसेय; नैननु विनुमु;
दशरथात्मज! ब्रह्मतनयुंडु गुशुडु । गुशुडर्थि तोडुत गुशनाभु गनियें;
गुशनाभुनकु गाधिकोंडुकय्ये; नट्टि । कुशपवित्रुडु गाधिकोंडुकय्ये नीतः
डतिधर्मनिरतुडै यतुलसत्त्वमुन । नितडु महीचक्रमेलुचुनुंडि
योलसिन वेडुक नोकनाडु दन्नु । वलसि यक्षौहिणि बलमुलु गोल्व
वेंडलि काननमुल वेटलु सलिप । पुडमियंतयु जरिपुचु जाल वडलि
बहुगंधबंधुर प्रसवमंजरुल । बहुफलंबुल नोप्पु पादपावळुल
बहुपक्षिरवमुल ब्रह्मघोषमुल । बहुसरोवरमुल बहुवेदिकलनु १५५०
नलरुचु जाति वैरादुलुलेक । मेलगु नानाविध मृगमुलु गलिगि
यनिलांबु जीर्णपर्णाशुलै तपमु । नोनरिंचु मुनुलचे नुल्लसिल्लुचुनु

क्षोणि (पृथ्वी) पर तुम्हारे रक्षक हैं। (तब) तुम्हें किस (बात) की कमी हो सकती है?

विश्वामित्र का प्रभाव

—विचार करने पर कोई विरला ही विश्वामित्र के अतुल प्रभाव की प्रशंसा करने में समर्थ हो सकता है। तब भी (आप) सुनिए। हे दशरथात्मज! ब्रह्मा के पुत्र हैं कुश। कुश ने प्रेम से कुशनाभ को जन्म दिया। कुशनाभ के गाधि (नामक) पुत्र हुए। ऐसे कुश-पवित्र गाधि के पुत्र हुए ये (विश्वामित्र)। अति-धर्म-निरत हो (और) अतुल सत्त्व (शक्ति-पराक्रम) से ये महीचक्र पर शासन कर रहे थे। एक दिन अतिशय रुचि से, अक्षौहिणी सेना से अपने को परिवेष्ठित कर, सेवा करते समय, काननों की ओर आखेट के लिए निकल पड़े। (देर तक) शिकार खेलते हुए समस्त प्रदेश में घूम-घूमकर बहुत थक गए (और) वसिष्ठ के आश्रम में पहुँचे। (वह वसिष्ठ-आश्रम) बहु (प्रकार की) (सु) गन्ध से बन्धुर पुष्पमंजरियों (और) बहु (प्रकार के) फलों से सुशोभित पादप (वृक्ष) समूहों से भरा था, बहु-पक्षि-रव (ध्वनियों), ब्रह्म-घोष (वेदध्वनियों), बहु सरोवर, बहु वेदिकाओं (यज्ञ की वेदियों) से सम्पन्न था॥ १५५० ॥
—जाति (गत) वैर आदि के बिना विचरण करनेवाले नानाविध मृगों से युक्त था, अनिल (पवन), अंबु (जल) पर्ण (पत्ते) खाते हुए तप करनेवाले मुनियों से विलसित था। पन्नग, सिद्ध, सुपर्व, गन्धर्व, किन्नर

ब्नग सिद्ध सुपर्व गंधर्व । किन्नरादुल वालखिल्यादि मुनुल
गड्नोप्पि ब्रह्मलोकमु बोलि घनत। नडरु वसिष्ठुनि याश्रमंबुनकु
नतिमुदंबुन वच्चि या वसिष्ठुनकु । नतिभक्ति म्रोक्किन नतडु दीविंचि
युचितासनंबुन नुनिचि पूजिंचि । प्रचुररसस्वादु फलमूलततुल
वरुसतो निच्चिन वानि गैकोनुचु । गरमुलु मुकुळिंचि कडुभक्ति बलिकें:
'ननघात्म! तपसुलु नग्निहोत्रमुलु । जनलोकनुतमुलै जरुगुचुन्नविये ?
मीरु मी शिष्युलु मी याश्रममुन । नारय वीरु वारनकेल्लवारु
मुदमुन नुन्नारे? मुनिनाथ! 'यनिन। 'नोदवुसम्मदमुन नुन्नार मेमु;
१५६०
नीतितो जेयुदे नीवु राज्यंबु ? । ब्रीतिमै भरियिंते भृत्यवर्गमुल ?
मुदमोप्प राज्यांगमुलु परीक्षिंते?। वदलक निर्जिते वालु शात्रवुल?
गुशलमें सर्वबु ? गुशलमे नीकु । गुशलमें नी पुत्रकुलकु, बत्नुलकु?'
ननि पल्क 'मी कृप नखिलंबु गुशल'। मनियें गौशिकु; डंत नव्वसिष्ठुंडु
'करमर्थि ना यिंटिकड विंदु गुडिचि। यरुगुम यी' वनि यतनि ब्रार्थिप
नंदुकु गौशिकुंडनुमतिंचुटयु । विंदु सेयुटकुनै वेगंब यतडु

आदि से (और) वालखिल्यादि मुनियों से अति मनोहर (वह) वन ब्रह्म-लोक के समान महानता से शोभायमान था। वसिष्ठ के उस आश्रम में अति प्रसन्नता से (जाकर विश्वामित्र ने) उस वसिष्ठ को अति भक्ति से प्रणाम किया। उसने (वसिष्ठ ने) आसीस देकर, उचित आसन पर बिठाकर, (विश्वामित्र की) पूजा (सत्कार) की (और) क्रम से प्रचुर रस (और) स्वाद से युक्त फल (और) मूल-समूह दिए। उन्हें ग्रहण करते हुए, हाथ जोड़कर अतिभक्ति से (विश्वामित्र) बोले—'हे अनघात्म! तपस्याएँ (और) अग्निहोत्र (आदि) जनलोकनुत (लोकसम्मत) रूप से हो रहे हैं न? हे मुनिनाथ! आप (और) आपके शिष्य (और), आपके आश्रम के सभी लोग प्रसन्नता (सुख) से हैं न?' (ऐसा) कहने पर वसिष्ठ ने कहा—'हम सब बड़े सुख से हैं ॥ १५६० ॥

—तुम नीति के साथ राज्य करते हो न? भृत्यवर्ग का प्रीति से पालन कर रहे हो न? राज्यांगों का (राज्य के सात अंग माने गए हैं) मोद से पर्यवेक्षण कर रहे हो न? क्रूर शत्रुओं को, न छोड़कर, हरा देते हो न? सभी कुशल तो है न? तुम कुशलता से हो न? तुम्हारे पुत्र (और) पत्नियाँ कुशलपूर्वक हैं न? (ऐसा) कहने पर कौशिक ने कहा—'आपकी कृपा से सभी कुशल से है'। तब वसिष्ठ ने उनसे प्रार्थना की—'बड़े प्रेम से मेरे घर पर भोजन कीजिए'। उसके लिए कौशिक ने अनुमति दी (स्वीकार किया)। (तब) भोजन

तन होमधेनुवु दलच्चि रप्पिंचि । 'जननाथवरुनकु सकलसेनलकु
विविधभक्ष्यंवुलु विविधभोज्यमुलु । विविधभंगुल विंदु वेड्क गाविंप
वलयु गावुन नीवुवलयु वस्तुवुलु । गलिगिंपु' मनवुडु गामधेनुवुनु
गलमान्नततुलु शाकमुलु भक्ष्यमुलु । गलवंटकमु लूरुगायलंवळ्ळु १५७०
फलविशेषंवुल पायसान्नमुलु । जिलुगु पालुनु वेन्न चीनि चक्करलु
सद्योघृतंवु रसायनंवुलुनु । मद्यविशेषमुल् मांसभेदमुलु
वाविरि मर्रियु नेव्वारि केमेमि । कावले नवि येल्ल गल्पिप नपुडु
ना धेनु महिम कत्याश्चर्यमोन्दि । गाधेयुडप्पुडु कडिमाडसेय
गुडिच्चि सेनलु दानु गोर्कि दीपिंप । गडु दृप्ति नोन्दि, या गाधितनूजु
'डी कामधेनुवु नेव्भंगिनैन । जेकोन्दु' ननुचु वसिष्ठुनि जेरि
'लक्षगुर्रंवुलु लक्षधेनुवुलु । लक्षयेनुगुलु वेलक्षलु मणुलु
निच्चेद नी धेनुविम्मु ना' कनिन । निच्चलो मुनिनाथुडेन्तयु वगचि
'यिदि नाकु जीवनंबिदि नाकु प्राण । मिदि ना तपंवुलकेल्ल साधनमु;
हव्यकव्यंबुलु नतिथिसत्कार । मव्याहतमुग नी यावुचे नडचु १५८०

(दावत) (की तैयारी) करने के लिए वशिष्ठ ने स्मरण करके शीघ्रता से अपनी कामधेनु को बुलाया (और) कहा—'जननाथ-वर (राजश्रेष्ठ विश्वामित्र) (और) समस्त सेना को विविध भक्ष्य (और) विविध भोज्यों से विविध प्रकार से प्रेम से भोजन कराना है। अतः तुम आवश्यक वस्तुओं को उत्पन्न करो'। (ऐसा) कहने पर कामधेनु ने महीन और सुगंधित अन्न के समूह, शाक (साग), भक्ष्यों से युक्त रसोई, अचार, काँजी, ।। १५७० ।।

—विविध फल, खीर, गाढ़ा दूध, मक्खन, चीनी, सद्यो (ताजा) घृत, रसायन, कई प्रकार के मद्य और मांस (आदि) जिसको जो चाहिए क्रम से उन सभी का प्रबन्ध किया। तब उस धेनु की महिमा पर अति आश्चर्यचकित होते हुए गाधेय (विश्वामित्र) ने स्वयं, सेनाओं के साथ भरपेट भोजन किया। इच्छाओं के प्रदीप्त होने पर, अत्यन्त सन्तुष्ट होकर, उस गाधितनूज (विश्वामित्र) ने सोचा—'किसी भी प्रकार से इस कामधेनु को प्राप्त करूँगा'। (यह सोचते हुए) वसिष्ठ के पास जाकर कहा—'लाख घोड़े, लाख धेनु, लाख हाथी (और) हज़ार लाख (कई) मणियाँ दूँगा। यह धेनु मुझे दे दो'। (ऐसा) कहने पर मुनिनाथ मन में अत्यन्त दुखी हुए और बोले—'यह मेरे लिए जीवन है, यह मेरा प्राण है। यह मेरी सभी तपस्याओं का साधन है। हव्य-कव्य, अतिथिसत्कार (आदि) इस धेनु के कारण अव्याहत (निर्विघ्न) रूप से चलते हैं। ।। १५८० ।।

नी पुण्यधेनुवु नी जाल' ननिन । ना पूर्णवलुड्डु विश्वामित्रुडलिगि

विश्वामित्रुडु वसिष्ठुनि कामधेनुवु गॉम्पोजूचुट

'यिम्मनि बतिमालि ये वेडनेल? । र'म्मनि भटसहस्रंबुलु दानु
गोवु नुद्धति बट्टिकॉनिपोव बोव । बोवक यदि मुनिपुंगवु जूचि
'यनघ! वसिष्ठ संयमिचंद्र! नन्नु ।गॉनिपोवुचुन्नाडु ग्रॉव्वि कौशिकुडु;
वारिंपवकट! दुर्वारुंडवय्यु; । नूरक तगुनय्य! यॉप्पिंप नन्नु?'
ननघात्म! नीयॅड नपराधिगानु;। ननु नुपेक्षिचुट नायमे नीकु ?'
ननुडु धेनुवुमाट का वसिष्ठुंडु । मनमुन गृपवुट्टि मरुमाट वलिकें:
'ने नेल विडुतु निन्नॅन्तयु वलिमि । भूनायकुडु गॉनिपोयॅडु गानि;
क्षत्रियुलुद् - दंडचारित्रुलैन । धात्रीसुरोत्तमुल् दारॅंतवार ?
ली क्षोणिकधिपति यी गाधितनयु। डक्षौहिणीबलंबमरु नीतनिकि:
१५९०
ने विधंबुन गॅल्तु नितनि ने' ननिन । ना वसिष्ठुनितोड ना धेनुवनियॆं;

इस पुण्यधेनु को नहीं दे सकूँगा'। (ऐसा) कहने पर वे पूर्ण वलवान् विश्वामित्र रुष्ट हो गये ।

विश्वामित्र का वसिष्ठ की कामधेनु को ले जाने का प्रयत्न करना

—बोले—'गाय दीजिए, इस प्रकार मैं अनुनय कर प्रार्थना क्यों करूँ' ? (यह कहकर) अपने हजारों सैनिकों के साथ उद्धतभाव से गाय को पकड़ कर ले जाने का प्रयत्न किया। वह (गाय) उनके साथ न जाकर, मुनि-पुंगव को देखकर बोली—'हे अनघ ! संयमिचन्द्र ! वसिष्ठ ! मत्तभाव से कौशिक मुझे ले जा रहा है। दुर्वार होते हुए भी हाय ! (आप उसे) रोकते नहीं। आपका चुप रहना (और) मुझे सौंप देना क्या उचित है ? हे अनघात्मा ! मैं आपके प्रति अपराधी नहीं हूँ। मेरी उपेक्षा करना क्या (आपके लिए) न्यायसंगत है' ? (ऐसा) कहने पर धेनु के वचनों से मन में कृपा के उत्पन्न होने से उन वसिष्ठ ने उत्तर दिया—'मैं तुम्हें क्यों छोड़ दूँगा ? तुम्हें तो बलपूर्वक भूनायक (राजा) ले जा रहा है। यदि क्षत्रिय उद्दंड चरित्रवाले बन जाएँ तो धात्रीसुरोत्तम (ब्राह्मणश्रेष्ठ) (उनके समक्ष) किस गिनती के हैं ? यह गाधितनय इस क्षोणि (पृथ्वी) का अधिपति है। इसके पास अक्षौहिणी सेना है। ॥ १५९० ॥

—मैं इसे कैसे हरा सकूँगा'। ऐसा कहने पर उस वसिष्ठ से वह धेनु यों बोली—'हे मुनिनाथ ! नृपतेज की अपेक्षा सराहनीय विप्रतेज ही अधिक

'मुनिनाथ! नृपतेजमुनकंटे नेन्दु । चिनुतिप नेवकुडु विप्रतेजंबु:
गावुन नीकंटे गौशिकुंडेक्कु । डेवेन्ट गाकुंडुटे नेरुंगुदुनु:
वनुपुमु ननु; वीनि वलमुलनेल्ल । मुनुमिडि द्रुंचेद मुनिनाथ! यनिन
ना वसिष्ठुडु धेनु नपुडु 'सैन्यमुल । गाविंपु; वलमुल खंडिपुमुरक'
यन विनि हुंकार मर्डरिंचुटयुनु । गनुकनि धेनुहुंकारमात्रमुन
घनवाललतयंदु गर्णवुलयंदु । दनुरुहंवुलयंदु दंतंवुलयंदु
खुरमध्यमुलयंदु गोम्मुलयंदु । नुरुलोचनमुलयंदु नूर्पुलयंदु
मोनय जंघलयंदु मोकाळ्ळयंदु । ननुवोन्द दोंडलंदु नधरंवुनंदु
गाढतरंवैन गंगडोलयंदु । रूढिगा गूडिन रोमकूपमुल १६००
गेरलु रंकेलनु सक्थिप्रदेशमुन । वोरि नुद्भविंचिरि भुवनभीकरुलु
कैरात पल्लव कांभोज यवन । वीरुलु पेक्कंड्रु विषमविक्रमुलु:
चित्ररूपाढ्युलु चित्रायुधुलुनु । जित्रविलोचनुल् चित्रहुंकृतुलु
नै वीरुलै धीरुलै महोदारु । लै वारु सेनासहायुलै मरियु
हरुलतो गरुलतो नंदंद गडिमि । बरगि विश्वामित्रु वलमुल द्रुंप
जूचि या कौशिकु सुतुलु नूर्वुरुनु । नेचि नानाहेतिहतुलु निगुड

(महत्त्वपूर्ण) है। अतः आपसे किसी भी रूप में गाधेय अधिक (श्रेष्ठ) नहीं है, इस बात को मैं जानती हूँ। मुझे भेज दीजिए। हे मुनिनाथ! सामना करके इसकी समस्त सेना का वध कर दूँगी'। (ऐसा) कहने पर उस वसिष्ठ ने तब धेनु से कहा—'सेना उत्पन्न करो, (शत्रु-) सेना का संहार कर दो, भगा दो'। यह सुनकर (कामधेनु ने) हुँकार भर दिया। इच्छा से किये गये धेनु के हुँकार मात्र से (उसकी) घन (बड़ी) वाल- (पूँछ रूपी) लता से, कानों से, रोंगटों से, दाँतों से, खुर के मध्य भाग से, सींगों से, उरु (बड़े) नेत्रों से, श्वासों से, अतिशयता के साथ जाँघों से, घुटनों से, उचित रूप से जांघों से, अधरों से, घने गलकंबल से, प्रशस्त रोमकूपों से ॥ १६०० ॥

—विजृंभित हुँकारों से, ऊरुप्रदेश से क्रमशः भुवनभीकर और विषम-विक्रम हो अनेक कैरात, पल्लव, काम्भोज, यवनवीर उत्पन्न हुए। चित्ररूपाढ्य, चित्रायुध वाले, चित्रविलोचन वाले, चित्रहुँकार वाले वीर हो, धीर हो, महोदार हो, वे सेना की सहायता से युक्त हो, घोड़े, हाथियों के साथ रणोत्साह से परिव्याप्त होकर विश्वामित्र के वल (सेना) का संहार करने लगे। यह देख उस कौशिक के सौ पुत्र अतिशयता से नाना प्रकार के आयुधों से लैस हो आकर वसिष्ठ का वध करने का प्रयत्न कर, उसकी हुँकार मात्र से भस्म हो गए। तब (विश्वामित्र अपनी) अखिल

वच्चि वसिष्ठुनि वधियिंप गडगि । यच्चट भस्मैरतनि हुंकृतिकि;
नंत विश्वामित्रु डखिल सैन्यमुलु । नंतकु वीटिकि नरिगिन वगचि
यतुलपराक्रमुलगुचुन्न तनदु । सुतुल चावुनु जूचि शोकिंचि यंत
दनराज्यमुन नॊक्कतनयुनि नुनिचि।चनि हिमाचलमुन ज्रलमुन निलिचि
१६१०
त्रिपुरारि गूर्चि यतिप्रयत्नमुन । दपमॊनरिंप ब्रत्यक्षमौटयुनु

विश्वामित्रुडीश्वरुनिचे नस्त्रादुलु वडसि वसिष्ठुनितो बोरुट

हरुचेत विविध शस्त्रास्त्रमुल् वडसि। युरुवडि जनुदेंन्चि युग्रुडै कडगि
मॊगि वसिष्ठाश्रमंबुन वह्निशिखलु। नॆगय वॆल्लेसॆ नाग्नेय बाणमुन;
नप्पुडा बाणाग्नुलाश्रमंबॆल्ल । गप्पि मंडुटयुनु गनि वसिष्ठुंडु
गालदंडमु गॊन्न कालुडो यनग । गेलदंडमु दाल्चि किनुकतो वॆडलि
'योरि विश्वामित्र! योरि पापात्म! । भूरिपुण्याश्रमंबुलु गाल्पदगुनॆ ?
येनय नीवॆक्कड ने नॆक्क' डनिन । घनरोषचित्तुडै कौशिकुंडडरि
यतनि पै रौद्रंबु नैंद्रंबु बाशु । पतमु नैषिकमु जृंभणमु शोषणमु
जटुल मोहनमुनु संतापनंबु । बटुतर वज्रंबु ब्रह्मपाशंबु

(समस्त) सेना के अन्तक (यम) के घर जाने पर दुखी हुए, अतुल पराक्रम सम्पन्न अपने पुत्रों की मृत्यु पर शोक किया। तब अपने राज्य में एक पुत्र को रख (राज्य का भार सौपकर) हिमाचल जाकर, जलमध्य में खड़े होकर ॥ १६१० ॥

—त्रिपुरारि (शिवजी) के प्रति अति प्रयास से युक्त तपस्या करने पर वे प्रत्यक्ष हुए,

विश्वामित्र का ईश्वर से अस्त्र आदि प्राप्त कर वसिष्ठ के साथ युद्ध करना

—हर (शिव) से विविध शस्त्र-अस्त्र प्राप्त कर, शीघ्रता से आकर, उग्र होकर सप्रयत्न संरम्भ के साथ वसिष्ठाश्रम पर अधिक वेग से आग्नेय बाण चलाया जिससे अग्नि की शिखाएँ उठीं। तब उन बाणाग्नियों से समस्त आश्रम को जलते देख वसिष्ठ हाथ में दण्ड लेकर क्रोध से यों निकल पड़े मानों कालदण्ड हाथ में लिए कालपुरुष हों। (वसिष्ठ ने) कहा—'अरे विश्वामित्र! रे पापात्मा! भूरि पुण्याश्रमों को जला देना उचित है? तुलना करने पर तुम कहाँ और मैं कहाँ?' (ऐसा) कहने पर घन (अधिक) रोष से भरे चित्त वाले कौशिक ने विजृम्भित होकर उस पर (वसिष्ठ पर) रौद्र, ऐन्द्र, पाशुपत, नैषिक, जृम्भण, शोषण, चटुल मोहन,

गनलु पैशाचंबु गालपाशंबु । घनविष्णुचक्रंबु गालचक्रंबु १६२०
वारुण गांधर्व वायव्य सौर । घोरास्त्रमुलु कोटिकोट्लुलेयुटयु
गलयंग विस्फुलिंगंबुलु सेदर । वलुवडि नुग्गाडे ब्रह्मदंडमुन ।
नलुक विश्वामित्रुडंत ब्रह्मास्त्र । मलवड संधिंचि यार्चि येयुटयु
सकल गीर्वाणुलु सकलसंयमुलु । सकल गंधर्वुलु सकल पन्नगुलु
सकल भूतंबुलु सकल दिक्पतुलु । सकल तारकमुलु जंद्रसूर्युलुनु
सकल लोकंबुलु जलनंबु नोंन्द । सकल दिक्कुलु मंड जट्टुल वेगमुन
ब्रह्मांड मद्रुवंग वलुवडि नेगडि । ब्रह्मदंडमु दाटि परतेर जूचि
बह्मादुलकु नड्डुपडरानियट्टि । ब्रह्मास्त्र मवलील वट्टुक मिंगे ।
सुरुचिर ब्रह्मतेजोमूर्ति वेलुग । नरुदार नम्मुनियंग रोममुल
नेरमंटलेगय ननेक वाणंबु । लरिमुरि वेंडलि विश्वामित्रु दाकि १६३०
चुरुपुच्च दोंडगिन स्रुक्कि कौशिकुडु । नेरिसेडि येन्तयु निजसत्त्वमेडलि
'तरमिडि या ब्रह्मदंड मोक्कटने । वरशस्त्रकोट्लु वम्मुलै पोलिसे;
नत्रस्त, मचल मीयन ब्रह्मवलमु । क्षत्रवलंबिदि काल्पने' यनुचु

सन्तापन, पटुतर वज्र, ब्रह्मपाश, उग्र पैशाच, कालपाश, घन विष्णु चक्र, कालचक्र ।। १६२० ।।

—वारुण, गान्धर्व, वायव्य, सौर (आदि) घोर अस्त्र करोड़ों की संख्या में प्रयोग किया। वसिष्ठ ने (उन सभी को) ब्रह्मदण्ड से तत्क्षण विध्वस्त किया जिससे सर्वत्र विस्फुलिंग (चिनगारियाँ) विखर पड़े। तव विश्वामित्र ने क्रोध के मारे उद्यत होकर, सिंहनाद करके ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया। (तव) सकल गीर्वाण (देवता), सकल संयमी, सकल गन्धर्व, सकल पन्नग, सकल भूत, सकल दिक्पति, सकल तारक, चन्द्र-सूर्य, सकल लोक कम्पित हो उठे, सकल दिशाएँ प्रज्वलित हो उठीं, ब्रह्माण्ड काँप उठा, समधिक प्रकाश से उस ब्रह्मास्त्र को ब्रह्मदण्ड को पारकर आते देख, उस ब्रह्मास्त्र को जिसे ब्रह्मादि (देवता) भी रोक नहीं सकते, (वसिष्ठ) आसानी से पकड़ निगल गए। सुरुचिर ब्रह्म तेजोमूर्ति (वसिष्ठ) प्रदीप्त हो उठी। विस्मयकारी रूप से उस मुनि के अंगरोमों से प्रदीप्त ज्वालाओं के साथ अनेक वाण शीघ्रता से निकलकर, विश्वामित्र को लगे ।। १६३० ।।
—(और) उसे जलाने लगे (तो) कौशिक डर गए, कमजोर हो गए, अपने सत्त्व से हीन हो गए। (यह) कहते हुए कि 'क्रम से उस एक ब्रह्मदण्ड से ही वर शस्त्र समूह व्यर्थ हो, नष्ट हो गया। उनका ब्रह्मवल अत्रस्त (और) अचल है। यह क्षत्रवल जलाने योग्य है। (अर्थात् वेकार है।)'

ब्रह्मर्षिपदमुनकै विश्वामित्रुनितपमु

जॆनटियै मगुडि कौशिकुडालु दानु । जनि घोरतपमर्थि जलुपुचुनुंडॆ ।
नटमीद सुतुल विश्वामित्रमौनि । पटुसत्त्ववंतुल बडसॆ नल्वुरनु
विनु मधुष्यंद हविष्यंद नामु । लन दृढनेत्र महारथुलनग;
व्रलमुडिपक वेक्कु संवत्सरम्मु । ललघुनिष्ठनु दपंबटुसेय मॆच्चि,
वनजसंभवुडंत वच्चि कौशिकुनि । गनुगॊनि यॆन्तयु गरुणिंचि पलिकॆ;
'नीतपंबुन मॆच्चि यिच्चिति नीकु । श्रीतिमै निट राजऋषिपदंबनघ!"
यनि पोव गाधेयुडतिदीनुडगुचु । 'नॆनयंग ने दपंबॆन्तसेसिननु १६४०
गडपट ब्रह्मर्षि गानेरनैति; । नॆडपडि चॆडिपोयॆ नी युग्रतपमु;
नी राजऋषिपदंबेनॊल्ल' ननुचु । घोरतपंबु गैकॊनि सेयुचुंडॆ ।
नंत निक्ष्वाकु कुलाग्रणियैन । संततकीर्ति त्रिशंकुडन् राजु
तनुवुतोडनु गूडि ता नाकमुनकु । नॊनरंग जन जन्नमॊनरिंप दलचि
भक्ति वसिष्ठुनि पालि केतॆन्चि । युक्तमार्गबुन नुपचरिंचुचुनु
'दिविज लोकमुन की देहंबुतोड । जवरगा जन नॊक्क सवनंबु मीर

ब्रह्मर्षि पद के लिए विश्वामित्र का तप

—कुत्सित भाव से फिर से कौशिक अपनी पत्नी के साथ जाकर, उत्साहपूर्वक घोर तप करने लगे। उसके बाद मौनी विश्वामित्र ने पटु सत्त्वशाली चार पुत्रों को प्राप्त किया। सुनो, उनके नाम हैं, मधुष्यन्द, हविष्यन्द, दृढनेत्र (और) महारथ। हठ न छोड़कर अनेक वर्ष अलघु निष्ठा से तपस्या की। उससे प्रसन्न हो वनजसम्भव (ब्रह्मा) आकर, कौशिक को देख अधिक करुणा (कृपा) से बोले—'तुम्हारे तप से प्रसन्न होकर हे अनघ! तुम्हें प्रेम से राजर्षि का पद दिया है'। (यह) कह (ब्रह्मा) चले गए (तो) गाधेय ने अतिदीन होते हुए सोचा—'साधना कर, मैं कितना भी तप करूँ॥ १६४०॥

—तब भी अन्त में ब्रह्मर्षि न बन सका। यह उग्रतप बिगड़ (विफल हो) गया है। मैं राजर्षि के इस पद को नहीं चाहता'। (ऐसा) सोचकर वे घोर तपस्या में लीन हो गए। तब (उस समय) इक्ष्वाकु कुलाग्रणी (कुल में श्रेष्ठ) (और) सन्तत कीर्तिशाली त्रिशंकु नामक राजा ने शरीर के साथ नाक (स्वर्ग) को अतिशयता से जाने में समर्थ कराने वाला यज्ञ करना चाहा। भक्ति (भाव) से वसिष्ठ के पास पहुँचकर (जाकर), समुचित रूप से उपचार (सेवा) करते हुए कहा—'हे अनघ! स्वर्गलोक को इस देह के साथ मनोज्ञ रूप से जाऊँ, ऐसा एक यज्ञ आप मुझसे प्रेम के

लनुरक्ति गाविंपुडनघ! ना चेत;। मुनुल रप्पिपुडु मुदमोप्प' ननिन
'नरनाथ! योंडलितो नाकलोकमुन। करुग नसाध्य मी यवनीशुलकु'।
अनवुडु राजन्युडट दक्षिणमुन। घननिष्ठ दपमोप्प गविंचुचुन्न
चिरपुण्युलैन वसिष्ठपुत्रुलकु। गरमर्थि ब्रणमिलि करमुलु मोगिचि
१६५०
'देवलोकमुन कीदेहंबुतोड। वोवच्चु यागंबु वूनि ना चेत
जेयिंपु'डनिन 'वसिष्ठु' 'डी तेरगु। सेयुडि' यननेनि जेयितु 'मनुडु
ना राजचंद्रुडिट्लनियें:' वसिष्ठु। 'डे राजुलुनु जेयरी क्रतु' वनुडु
मीकड किटु राक; मीरैन नन्नु। जेकोनि जन्नंबु सेयिंपवलयु;
नरय बुरोहितुलगुवारु गारे। धरणीशुलकु सर्वधर्मसाधकुलु'।
अनिन वासिष्ठुलायवनीशु जूचि। 'घनुडु वसिष्ठुंडु गादन्न तेरगु
निर्मलमति नोरुल् नेर्तुरे सेय ?। दुर्मतिवगु नीकु दोपदु गाक'।
यनि पल्क निर्विण्णुडै संयमींद्रु। तनयुलनोक्षिंचि धरणीशुडनियें;

साथ कराइए। (तदर्थ) आनन्द से मुनियों को बुलाइए'। ऐसा कहने पर (वसिष्ठ) ने जवाब दिया--'हे नरनाथ! इन राजाओं के लिए शरीर के साथ स्वर्गलोक जाना असाध्य है'। (ऐसा वसिष्ठ के) कहने पर वह राजन्य वहाँ से दक्षिण में घन (बड़ी) निष्ठा के साथ श्रेष्ठ तप करनेवाले चिरपुण्यशाली वसिष्ठपुत्रों के पास जाकर अधिक इच्छा से प्रणाम कर, हाथ जोड़कर ॥ १६५० ॥

—बोले--'इस देह से देवलोक को (पहुँचाने वाला) यज्ञ मुझसे प्रयत्नशील हो कराइए'। (ऐसा) कहने पर (उन्होंने) कहा--'यदि वसिष्ठ इस प्रकार से करने के लिए कहें (आदेश दे) तो कराएँगे'। तब उस राजचन्द्र ने इस प्रकार कहा--'वसिष्ठ के यह कहने पर कि 'कोई भी राजा इस क्रतु (यज्ञ) को नहीं करता (कर सकता)' मैं आपके पास आया हूँ। (कम से कम) आपको तो मुझे ग्रहण कर (मेरी प्रार्थना को स्वीकार कर) यज्ञ कराना चाहिए। विचार कर देखें तो राजाओं के लिए पुरोहित ही तो सर्वधर्मसाधक हैं'। (ऐसा) कहने पर वासिष्ठों (वसिष्ठ के पुत्रों) ने उस अवनीश को देखकर कहा--'महान् वसिष्ठ के नकार देने पर, इस ढंग से अन्य कौन निर्मलमति वाला (इस यज्ञ को) करा सकता है ? दुर्मति होने के कारण यह बात तुम्हें सूझती नहीं'। ऐसा कहने पर निर्विण्ण होकर संयमीन्द्र के तनयों को देखकर राजा (त्रिशंकु) ने कहा--'आपके पिता ने निराश (अस्वीकार) कर दिया। आप भी किसी भी प्रकार से यह यज्ञ नहीं करा रहे हैं। मेरे हित की बुद्धि

'मी तंड्रि निरसिंचें; मीरुनु जेय। रैति रे तॆऱ्‍गुननैन नी क्रतुवु;
हितबुद्धि लेनि मीरेल नाकिंक ?। नितरुलचेत जेयिंचेदगाक'।१६६०
यनिन 'जंडालुंड वगु' मंचु नलुक। गनुगॊनि पलिक राघनपुण्यु; लंत
भासुरंबगु भूमिपालु तेजंबु। वासिष्ठ कोपाग्नि वडि गालॆ ननग
नारय नीलदेहंबुनु नीलि। चीरयु जुंजुरुशिखयुनु दनर
नंटिन शुद्धंबुनैन मालिन्य। मंटिचु नी रूपमनुभंगि दोप
ब्रणुतवर्णस्फूर्ति बरगिन कनक। मणिभूषणमु लयोमयमुलै तनर
नोजमै गष्टनामोक्तिभेदमुल। ना जाति कनुरूपमैन रूपमुन
जननाथुडतिघोरचंडालभाव। मॊंनरंग जेड्पडियुन्न वीक्षिंचि
पौर भृत्यामात्यबंधुवर्गंबु। ला राजु वर्जिंचि; रंत ना राजु
नॊंदविन भयमुन नॊय्यमॆट्टुचुनु। नॊंदुगुचु जनुलकु नोसरिंचुचुनु
जनि महामहुनि विश्वामित्रु गनिन। गनिकरंबॊंदव ना गाधि तनूजु
१६७०

'डिल नयोध्यापुरंबेलॆडि नीकु। नॆलमि जंडालत्वमेल वाटिल्लॆ ?

न रखने वाले आप से मेरा क्या सम्बन्ध ? अव मैं दूसरों से (यज्ञ) कराऊँगा। ॥ १६६० ॥

—(ऐसा) कहने पर क्रोध से उसे देख उन घनपुण्य वाले (वसिष्ठ के पुत्रों) ने कहा—'तुम चण्डाल बन जाओ'। तव मानों वह प्रकाशमान राजतेज वासिष्ठों की कोपाग्नि से जल गया, वह राजा नीलीदेह, नीले वस्त्र, और विखरे केशों वाला हो गया। ऐसा लगा मानों मनोहरता से स्पर्श करने पर शुद्ध (वस्तु) को भी यह रूप मलिन कर देगा। प्रसिद्ध वर्णस्फूर्ति से प्रवर्तित कनक-मणि के भूषण अयोमय (लोहे के) हो गए। क्रम से कष्ट नाम, उक्ति भेद से, उस जाति (चण्डाल जाति) के अनुरूप रूप (धारण कर) (वह) जननाथ अतिघोर चण्डाल भाव को प्राप्त हुआ। ऐसे उस राजा को देखकर पौर (नागरिक) भृत्य, अमात्य वन्धु वर्गों ने वर्जित कर (त्याग) दिया। तव उस राजा ने प्राप्त भय से धीरे से कदम रखते हुए, संकोच करते हुए, प्रजा से दूर हटते हुए, जाकर महा-तेजस्वी विश्वामित्र को देखा। (उस पर) करुणा के उत्पन्न होने पर उस गाधितनूज ने (कहा) ॥ १६७० ॥

—'(इस) पृथ्वी पर अयोध्यापुर पर शासन करनेवाले तुम्हें चण्डालत्व

नेतेऱंगुन वच्चे ? नेरिंगिपु' मनिन । नातंडु मुकुळितहस्तुडै पलिकें;
'निरवोन्द बोंदितो निंद्रलोकमुन । करुग जोप्पडुनट्टि यागंबु नन्नु
जेयिंपुडनिन वसिष्ठुडत्तेऱगु । सेयिंपरादनि चेप्पे नुत्तरमु ।
ना वसिष्ठुनिपुत्त्रुलगुवारु-'नतडु । गाविंपरादन्न गा' दनि पलिकि;
रितरुलचेत जेयितु नन् माट । कतिरोषमुन 'माल वगु' मन्न नैति;
ननघ ! ने जेसेद नन्न मध्वरमु । नोंनरितु; वोन्कने नुर्वि नेन्नडुनु
नेट्टियापदलंदु; निटमीदनैन । नेट्टन सत्यंबु नगड वालितु;
बेक्कुधर्मबुलु बेक्कु जन्नमुलु । बेक्कुवतो जेसि पम्पु गैकोन्टि;
गुरुल बूजिचिति; गुरुलु ना वलन । गरुणसालमि धर्मकार्यंबु निलिचें;
१६८०

बौरुषंबदि दैव बलमु लेकुन्न । नेरमि वाटिंचु; निक्कुवंबरय;
ने विधंबुननैन नीवु ना पालि । दैवमै रक्षिप दगुदु ना कनघ'!'
यनिन विश्वामित्त्रुडतनि वीक्षिचि । 'जननाथ! नीविंक संतापमुडुगु;'

कैसे प्राप्त हुआ ? वता दो'। कहने पर उसने हाथ जोड़ कर कहा--'मैंने वसिष्ठ से कहा था कि सफलता के साथ, इसी देह के साथ इन्द्रलोक जाने में समर्थ करनेवाला यज्ञ मुझसे कराइए। वसिष्ठ ने उत्तर दिया कि उस प्रकार (यज्ञ) नही कराना चाहिए। उस वसिष्ठ के पुत्रों ने कहा--'यदि वे (वसिष्ठ) इनकार कर दें तो (हमसे) नहीं होगा'। (तव मैने कहा) दूसरों से कराऊँगा। उस वात पर अति रुष्ट होकर (उन्होंने) कहा 'चण्डाल हो जाओ'। वैसे ही मै (चण्डाल) हो गया। हे अनघ ! मैंने जिस यज्ञ को करने की बात कही थी, वह यज्ञ करूँगा। (क्योंकि) कितनी ही आफ़तें क्यों न हों, इस पृथ्वी पर मैं कभी झूठ नही वोलता। आगे भी अनिवार्यता से (और) अतिशय इच्छा से सत्य का पालन करूँगा। अनेक धर्म (कार्य), अनेक यज्ञ अतिशयता से करके उन्नति (सुख-समृद्धि) प्राप्त की है। गुरुओं की पूजा की है। गुरुओं के मुझपर करुणा के न होने से धर्मकार्य रुक गया है। ॥ १६८० ॥

--दैवबल के न होने पर पौरुष (पुरुषार्थ) में दोष आ जाता है। विचार कर देखने पर यही तथ्य है। हे अनघ ! किसी भी प्रकार से, आप मेरे लिए ईश्वर वनकर मेरी रक्षा कीजिए'। (ऐसा) कहने पर विश्वामित्र ने उसे देख (कहा)--'हे जननाथ ! अव सन्ताप (दुख) को छोड़ दो।

त्रिशंकुनिकै विश्वामित्रुनि यज्ञमु

दीनुनि जेपट्टितिनि: द्रिशुद्धिगनु । मौनुल रप्पिंचि मखमु सेयिंचि
देहंबुतोडने तिविरि नीपलुक । पोहंबु गाकुंड बुच्चेद दिविकि;
विनु, निन्नु बरमपवित्रु गाविंतु' । ननि पल्कि शिष्युल नंदरजूचि
मुनुकौनि मीरेल्ल मुनुल ऋत्विजुल । गौनिरंडु, वे त्रिशंकुनि यागमुनकु'
नानि नियोगिंचिन नट्ल वारेगि । मुनिवरेण्युल नेल्ल मौगि दोडिकोनुचु
गदिय विश्वामित्रुकड केगुदेन्चि ।'मुदमंद ननघात्म! मुनुल देच्चितिमि;
वारु वसिष्ठुनाश्रममु वारेल्ल; । वारलु दक्कंग वच्चिरंदरुनु; १६९०
आ वसिष्ठुनि पुत्रुलाडिरि गौन्नि; । या वाक्यमुलु विनु'मंचु वारनिरि :
'विनि विचारिंपक मखमु सेयिंचु । नतडु राजट! मालडट सेयुवाडु!
चंडालु मखमुन सकल मुनींद्रु । लुंडि भोजनमुलेयुक्ति जेसेदरु ?
आड केमोगमुल नरुगुदेन्चेदरु । वेडुक सुरलु हविर्भागमुलकु ?
बरग विश्वामित्र पालितुंडैन । नरुडेट्टुलोन्देडु नाकलोकंबु ?

त्रिशंकु के लिए विश्वामित्र का यज्ञ

—दीन का हाथ पकड़ लिया है (शरण दी है)। त्रिकरण-शुद्धि (मन, वचन, कर्म) से मुनियों को बुलवाकर, यज्ञ करवाकर, देह के साथ ही तुम्हें दिवि (स्वर्ग) को भेजूँगा, (जिससे) तुम्हारा वचन असत्य न हो। सुनो, मैं तुम्हें परम पवित्र बना दूँगा'। ऐसा कहकर सभी शिष्यों को देखकर (वे यों) बोले—'तैयार होकर तुम लोग सभी मुनियों तथा ऋत्विजों को त्रिशंकु के यज्ञ में भाग लेने के लिए शीघ्र ही ले आओ'। ऐसी आज्ञा पाकर वे (शिष्य) उसी प्रकार गए (और) सभी मुनि-वरेण्यों को संरम्भ के साथ ले आए (और) सब मिलकर विश्वामित्र के पास आए—'हे अनघात्म! प्रसन्नता के साथ मुनियों को ले आए हैं। (किन्तु) वसिष्ठ के आश्रम के सभी लोग नहीं आये। उन्हें छोड़ शेष सभी लोग आ गये हैं। ।। १६९० ।।

उस वसिष्ठ के पुत्रों ने कुछ वचन कहे हैं। उन वाक्यों को सुन लीजिए'। ऐसा उन्होंने (शिष्यों ने) कहा—सुनते हैं, बुद्धि से न सोचकर मख (यज्ञ) करानेवाला राजा है! (और) करनेवाला चण्डाल है! चण्डाल के द्वारा किये जाने वाले यज्ञ में सभी मुनीन्द्र किस विधि भोजन करेंगे? वहाँ किस मुख से देवता हविर्भाग लेने के लिए प्रसन्न-मन आयेंगे? विश्वामित्र से पालित एक नर (मनुष्य) स्वर्गलोक को कैसे प्राप्त करेगा? यह (सब) सुनने में आश्चर्यप्रद है'। ऐसा कहकर उन लोगों

विन विस्मयं' वनि वेलय दूपिंचि' । रनिन विश्वामित्रु डग्नियै मंडि 'कडुनिष्ठ दपमिट्लु गाविंचु नन्नु । नडरि दूंबिचु पापात्मुलंदरुनु नूतनगति नेडुनूरु जन्ममुल । भातिगा ग्रव्यादभावंबु दाल्चि मानुगा शुनकादि मांसमुल् दिनुचु । हीनुलै चरियिंप निम्मु लोकमुल; नसमुन नन्नाडु ना महोदयुडु । वसुध निषाधुडै वर्तिपनिम्मु' १७०० अनि शपियिंचि संयमुल वीक्षिंचि । 'मुनुलार ! यी राजमुख्युद्रिशंकु नुन्नत कुलशीलु नुरुकीर्तिलोलु । सन्नुत धर्मज्ञु सत्यप्रतिज्ञु ग्रतुवु सेयिपुडु गात्रंबुतोड । नितडिंद्रपुरि केग निरवोप्प'ननिन 'गाधिसूनुनिमाट गादंटिमेनि । ग्रोधिंचि शपियिंचु घोर वाक्यमुल; गान् जेयितमु क्रतुवु गौशिकुडु । मानुगा जेप्पिन महितमार्गमुन' ननि पल्कि मुनुलेल्ल नध्वरकर्म । मोनरिंप मंत्रप्रयोगादुलमर ना गाधितनयुंडु याजकुंडगुचु । यागभागमुलकु नमरुल विलिचे; विलिचिन 'रा' मंचु वेरेलुंगेत्ति । पलिकरि सुर; लट्टु पलुक गौशिकुडु

ने प्रकट (स्पष्ट) रूप से निन्दा की है।' (शिष्यों की बातें सुन) विश्वामित्र अग्नि के समान (क्रोध से) जल उठे। (और) कहा—'अधिक निष्ठा के साथ इस प्रकार तप करनेवाले मुझे अतिशय रूप से निन्दा करनेवाले सभी पापात्मा नूतनगति से सात सौ जन्म राक्षस-रूप धारणकर, शुनक आदि के माँस खूब खाते हुए, हीन बनकर लोकों में विचरण करते रहें। दर्प (अहंकार) के साथ मेरी निन्दा करनेवाला वह महोदय (वसिष्ठ) वसुधा पर निषाद बनकर विचरण करे। ॥ १७०० ॥

ऐसा शाप देकर, संयमियों को देखकर कहा—'हे मुनियो! यह राजमुख्य (श्रेष्ठ) त्रिशंकु उन्नत कुलशील वाला, उरुकीर्तिलोल, सन्नुत धर्मज्ञ, सत्यप्रतिज्ञ है। इसी शरीर के साथ यह स्थिरता से इन्द्रपुरी जा सके, तदर्थ उचित यज्ञ कराइए'। ऐसा कहने पर उस ऋषि की बातों पर उन महामुनियों ने विचार कर आपस में कहा—'यदि हम विश्वामित्र की बातों को इनकार कर दें तो यह क्रुद्ध होकर घोर वचनों में शाप दे देंगे। इसलिए विश्वामित्र के बताए श्रेष्ठ मार्ग से मनोहर रूप से क्रतु (यज्ञ) करायेंगे'। ऐसा कह सभी मुनियों ने मन्त्र-प्रयोग आदि के समुचित ढंग से जुड़ने पर यज्ञकर्म किया। (तब) उस गाधितनय ने याजक होते हुए, याग-भागों को (ग्रहण करने के लिए) अमरों (देवताओं) को बुलाया। बुलाने पर देवताओं ने उच्चस्वर से कहा 'नहीं आयेंगे'। (उनके) ऐसा कहने पर कौशिक ने दिशाओं में अत्यन्त प्रचण्डता से अपने क्रोध की

दिशल रोषानलदीप्तुलु निगुड । गुशपवित्रमु चेत गौनि स्त्रुवंबेत्ति
'नाकेंद्र लोकंबुनकु द्रिशंकुंड; । नीकोरिनट्ल ने निन्नु बुच्चेदनु
नडरंग ने बाल्यमादिगा नियति । विडुवक तपमु गाविंचितिनेनि
बौन्दितोडनें कूड बोयि स्वर्गंबु । नंदुमु पो' म्मन्न ना त्रिशंकुंडु
तत्तपोबलमुन दडयक येल्ल । सत्त्वमुलेगेंडि सरणि बोवुटयु,
'जंडालुडवु नीवु; स्वर्गलोकमुन । नुंड नी'ननि यिंद्रुडुदरि त्रोचुटयु,
गडक 'विश्वामित्र ! काववे'यनुचु । वडि दलक्रिंदुगा वच्चु बलुक
शरणार्थियगु ना त्रिशंकुनि जूचि । करुणाविधेयुडै गाधेयुडपुडु
'जननाथ! नी वाकसमुनंदे निलुवु' । मनि पल्कि निलुपुचु नट दत्क्षणमुन
नलुक द्रिशंकुन कमरेंद्रुतोडि । च्चलमुन वेरोक्क स्वर्गबु सेसि
ललि नंदु सप्तर्षुलनु दारकमुल । नलवड गल्पिचि या नाकमुनकु
वेरु देवतल गाविंप, निंद्रुनकु । मारिंद्रु गल्पिप सदि दलंचुटयु,

ज्वाला को फैलाकर, कुश का पवित्र (पैंती) हाथ में लेकर, स्रुव को उठाकर कहा, ।। १७१० ।।

—'हे त्रिशंकु ! तुम्हारी इच्छा के अनुसार मैं तुम्हें स्वर्गलोक को भेज दूँगा । यदि मैंने बाल्यकाल से लेकर अतिशयता से, नियम को न छोड़ कर, तप किया हो तो शरीर के साथ ही जाकर स्वर्ग को प्राप्त करो, जाओ' । (ऐसा) कहने पर वह त्रिशंकु उस तपोबल के आधार पर, बिना विलंब के, सभी प्राणियों के जाने के विधान से ही (स्वर्ग को) गया । 'तुम चण्डाल हो । (तुम्हें) स्वर्गलोक में रहने नहीं दूँगा' (ऐसा) कहकर इन्द्र ने कम्पित होकर उसे ढकेल दिया ।

—'हे विश्वामित्र ! बचाओ', तेजी से उल्टे ढंग से (नीचे की ओर) आते हुए त्रिशंकु ने कहा । उस शरणार्थी त्रिशंकु को देख, करुणा-विधेय (करुणभाव से भरकर) गाधेय ने तब कहा—'हे जननाथ ! तुम आकाश में ही ठहर जाओ' । ऐसा कह (उसे वहीं) ठहराते हुए वहाँ उसी क्षण क्रोध से, हठपूर्वक त्रिशंकु के लिए देवराज इन्द्र की होड़ पर एक दूसरा स्वर्ग बनाया, प्रसन्नता से उस (स्वर्ग) में सप्तर्षियों को, तारकों को उचित ढंग से बनाकर, उस स्वर्ग के लिए, ।। १७२० ।।

—अलग से देवताओं का, इन्द्र के बदले दूसरे इन्द्र का सृजन करने के

जाल भीतिलि सर्वसंयमुल् सुरलु । नोलि विश्वामित्नु नोद्द केतेंन्चि
'यिललोन मुनिनाथ! यी त्रिशंकुंडु । दलपोय गुरुशापदग्धुंडु गान
दग नाकमुन नुंड दग'दन्नमाट । दगवुगा गोनि गाधितनयुंडु वलिके;
'सुरलार! यीतनि सुरलोकमुनकु ।नरिगितु मेनितो'ननि पल्किनाड :
ना माट निजमुगा नौट की नाक । मी महीनाथुन किट सेल्लनिड्डु;
प्रभनोप्प लोकमुल् परगुनंदाक । नभमुन वोल्चु नी नक्षत्रपंक्ति
गलसि यच्चरवीथि कंटेनु मीद । दोलगनि तेजंवुतो जेलुवोन्दि
बृंदारक स्फूर्ति वेम्पोन्दि शिरमु । क्रिंदै त्रिशंकुंडु कृतपुण्युडगुचु
गरमोप्प नी तारकंबुल नडुम । नुरुतरकीर्तिमै नुंडनि' डनिन १७३०
ननुमतिंचुचु नप्पुडायनुग्रहमु । गोनियाडि, मुनि वीडुकोनि सुरल् मुनुलु
ललि निजस्थानंबुलकु नेगि; रंत । नेलमि गौशिकुडु मुनींद्रुल जूचि
'यिम्मुगादिटमीद निदि दपंबुनकु । सम्मर्थमिक्कड जालंग गलिगे;
मुनुलार! मर्नमिक मुदमु सित्तमुन । दनर नोक्कोंडकु वोदमुर'डटंचु
गडक नक्कड वासि कदलि विशाल । कडकेगि यंदु वुष्करतीर्थमुननु

लिए मन में सोचा। (उस पर) अति भीत होकर सभी संयमी, देवता पंक्ति बाँधकर विश्वामित्र के पास आये और कहा—'हे मुनिनाय! इस पृथ्वी पर यह त्रिशंकु, विचार यदि किया जाय तो, गुरु के शाप से दग्ध (व्यक्ति) है। इसलिए स्वर्ग में रहने योग्य नहीं है'। इस वात को न्यायसंगत मानकर गाधितनय ने कहा—'हे देवताओ! मैंने कहा था कि इसे शरीर के साथ सुरलोक में भेज दूँगा'। मेरी बात सत्य हो, तदर्थ इस स्वर्ग को इस महीनाथ (राजा) के लिए रहने दीजिए। प्रकाश के साथ लोकों के रहने तक, नभ में स्थित इस नक्षत्र पंक्ति (और) आकाशवीथि से भी ऊपर, शाश्वत तेज से शोभायमान हो, वृन्दारक-स्फूर्ति (देवताओं के समान शोभा) से उन्नत होकर, शिर को उल्टा (नीचे) किये हुए, त्रिशंकु को कृतपुण्य होते हुए, उरुतर (अधिक) कीर्ति-युक्त हो, अधिक शोभा के साथ इन तारकों के मध्य रहने दीजिए'। (ऐसा) कहने पर ॥ १७३० ॥ —(उसके लिए) अनुमति देते हुए, और उस अनुग्रह की प्रशंसा करते हुए, मुनि (विश्वामित्र) से विदा लेकर, सुर (और) मुनि प्रेम के साथ अपने-अपने स्थान को गए। तब सस्नेह हो कौशिक ने मुनीन्द्रों को देखकर कहा—'आगे से यह स्थान तप के लिए योग्य नही है। यहाँ भीड़ अधिक हो गई है। हे मुनियो! अब हम प्रसन्न मन से और कहीं जाएँगे। आइये'। प्रयत्न से उस स्थान को छोड़; विशाला के पास जाकर, वहाँ पुष्कर तीर्थ में—

अंबरीषुडु शुनश्शेपुनि यज्ञपशुवुगा गॉनिपोवुट

अंबुफलाहारि यगुचु बॅक्केंड्लु । पंबिन निष्ठ दपंबु गाविंप,
नंबरीषुं डयोध्यापुरविभुडु । शंबररिपु - मूर्तिसमुडट्टियेडनु
वेलयंग ग्रतुवु गाविंपगा बूनि । बलभेदिचे यागपशुवु गोल्पोयि
यरसि लेकुन्न ब्रायश्चित्तविधिकि । नरपशुवडुगुचु नानाश्रममुल
नरयुचु नंदंद नट नॉक्क मौनि । वरु निंटिकडकु भूवरु डेगुदॅन्चि १७४०
भृगुतुंगवासियै पेदयै नियति । दगनुन्न रुचिकु नॉद्दकु बोयि म्रोक्कि,
'करुणाढ्य ! येनु यागमु सेय बूनि । परिकिंपनेरक पशुवु गोलपडितिः
गॉनकॉनि यॉक लक्ष गोवुल निच्चु । गॉनि यागपशुवुगा गॉडुकु नाकिम्मु'
नावुडु नत 'डेनु ना पॅद्दकॉडुकु । पै वेड्क सेयुदुः बशुवुगा नीनु'
नावुडु मुनिपत्नि 'ना पिन्नकॉडुकु । पै वेड्क सेयुदुः बशुवुगा नीनु'
अनि पूनि यिरुवुरु नाडु वाक्यमुलु । विनि शुनश्शेपुडुर्वीपालु जूचि
'तन पॅद्द कॉडुकु मा तंड्रि वाटिंचु । दन पिन्नकॉडुकु मातल्लि वाटिंचु

अंबरीष का शुनश्शेप को यज्ञपशु के रूप में ले जाना

—जल और फल का आहार करते हुए अधिक निष्ठा के साथ अनेक वर्ष तप किया। उसी समय अयोध्यापुर के स्वामी तथा कामदेव के समान सुन्दर शरीरवाले राजा अंबरीष ने शोभायुक्त रूप से यज्ञ करने की तैयारी की, तब इन्द्र के द्वारा उनके यज्ञ का पशु हर लिया गया। ढूँढने पर भी (यज्ञपशु के) न मिलने पर, प्रायश्चित्त-विधि के लिए नरपशु की माँग करते हुए नाना आश्रमों में खोज की। इधर-उधर घूमते हुए भूनाथ कहीं एक मौनिवर के घर पहुँचे ॥ १७४० ॥

—पहाड़ी मोथे से बनी चटाई पर निवास करते हुए, ग़रीब होते हुए नियम से उचित रूप से रहनेवाले रुचिक नामक मुनि के पास जाकर, दण्डप्रणाम कर बोले—'हे करुणाढ्य ! मैं यज्ञ करने का यत्न करके, सावधानी बरत न सकने के कारण (यज्ञ) पशु को खो बैठा। मैं एक लाख गायों को प्रसन्नता से दूँगा। उन्हें लेकर यज्ञपशु के रूप में अपने पुत्र को दो'। यह कहने पर उसने कहा—'मैं अपने बड़े पुत्र पर प्रेम रखता हूँ। अतः उसे पशु के रूप में नहीं दूँगा'। (ऐसा मुनि के) कहने पर मुनिपत्नी ने कहा—'मै अपने छोटे पुत्र पर प्रेम रखती हूँ। अतः उसे पशु के रूप में नहीं दूँगी'। उन दोनों के ऐसे हठ भरे वाक्य सुन (उनके मँझले पुत्र) शुनश्शेप ने राजा को देखकर कहा—'अपने बड़े पुत्र को मेरे पिता मानते (चाहते) हैं। अपने छोटे पुत्र को मेरी

वारेल नी? केनु वच्चेंद: निन्नु । गोरि वारलकिम्मु गोसहस्रमुल'
ननिन-नट्ल योंनर्चि यम्मुनिपुत्रु ।गोनि रथंबेक्किचुकोनि शीघ्रवृत्ति
जननाथु डेन्तयु संतोपमोप्प । जनिचनि पुष्कराश्रमभूमि जेरे १७५०
नचट शुनश्शेपुडति तपोनिष्ठ । नचलुडैयुन्न विश्वामित्रु गांचि
तन मेनमाम यातडु गान व्रेम । ननलोत्त रचित प्रणामुडै पलिके:
'ननु दलिदंड्रु ली नरवराग्रणिकि ।ननघात्म! पशुवुगा नम्मि पोम्मनिरि;
चेलुवोप्प नी राजुसेयु जन्नंबु । फलियिंप जेसि ना प्राणमुल् गावु;
तल्लियु दंड्रियु दैवंबु गुरुवु । नेल्लचुट्टमुलु नाकीवेळ नीव!'
यनि दैन्यमोन्द विश्वामित्र मौनि । दन तनूभवुल नंदर जूचि पलिके:
'व्राकटंबुग दम परलोकमुनकु । नै कदा सुतुल वुण्यात्मुलु गनुट:
परलोकमिदिय ना पालिकि; नन्नु । शरणंबु सोच्चे नी संयमिपुत्रु:
डितडु ना मेनल्लुडितनि रक्षिपु ।डितनिकै प्राणंबु लिड्डु मीरोकरु;
नडिगेद मि'म्मन्न नट्टु सेय गोंडुकु । लोडवडकुन्न नत्युग्रुडै मंडि १७६०

माता मानती हैं। उनसे तुम क्यों वादविवाद करते हो? मैं तुम्हारे साथ चलूँगा। मुझे लेकर उन्हें हजार गायें दे दो'। ऐसा सुनकर राजा ने वैसा ही किया और उस मुनिपुत्र को रथ पर बिठाकर, शीघ्रता से, अत्यन्त प्रसन्न हो, जाते-जाते पुष्कर-आश्रम में पहुँचे। ॥ १७५० ॥

वहाँ अति तपोनिष्ठा से अचल बने हुए विश्वामित्र को देख, उनके (विश्वामित्र के) अपने मामा (माता के भाई) होने के कारण (हृदय में) प्रेम के पल्लवित होने पर प्रणाम कर शुनश्शेप बोला—'हे अनघात्मा! मुझे मेरे माता-पिता ने इस नरवर-अग्रणी (राजाओं में श्रेष्ठ) के हाथ पशु के रूप में बेचकर, भेज दिया है। (किसी प्रकार) इस राजा के यज्ञ को शोभा से सफल बनाकर मेरे प्राण बचाइए। इस समय मेरे (लिए) माता, पिता, दैव, गुरु, समस्त बन्धु आप ही हैं'। दीन भाव को प्राप्त होकर ऐसा कहने पर मुनि विश्वामित्र ने अपने सभी पुत्रों को देखकर कहा—'प्रकट रूप से अपने परलोक (स्वर्ग-प्राप्ति) के लिए ही तो पुण्यात्मा लोग पुत्रों को जन्म देते हैं। यही (शुनश्शेप की रक्षा करना) मेरे लिए परलोक (स्वर्ग) है। इस संयमिपुत्र ने मेरी शरण ली है। यह मेरा भानजा है। इसे बचाइए। इसके लिए (इसके बदले) आप लोगों में से कोई एक अपने प्राण दे दे। (यह) तुम लोगों से माँगता (चाहता) हूँ'। ऐसा कहने पर, पुत्रों के वैसा करने के लिए राजी न होने पर, उस (विश्वामित्र) ने अत्युग्र हो, क्रुद्ध होकर, ॥ १७६० ॥

'शुनकमांसमु दिंचु सौरिदि वेयेड् । लनुभविंपुडु दुःख'मनि शापमिच्चि
कौशिकुडत्यंत कारुण्य बुद्धि । ना शुनश्शेपु नोय्यन जेर विलिचि
'येनु मंत्रमुलु रेन्डिच्चेद नीकु; । वानि ननुष्ठिंपु वदलक नीवु,
अवि निनु रक्षिंचु; नंबरीषुनकु । सवनतंत्रंबुनु सफलंबु सेयु'
ननि चेप्पि मंत्रंबु ला रेन्डु निच्चे; । ननुपमभक्तितो नतडु गैकोनिये ।
मरुनाडु वच्चि यम्मनुज वल्लभुडु । वरलेडु निजयज्ञवाटंबु जोच्चि
विशसिप बूनि या विमलात्मु देच्चि । पशुपूज सेसि यूपमुन बंधिंचे ।
नंत शुनश्शेपुडम्मन्त्रयुगमु । शांतुडै जपियिंचि चलियिंपकुन्न,
नचटि किंद्रोपेंद्रुलर्थितो वच्चि । सुचरित्रु नंबरीषु जेर बिलिचि
क्रतुपूर्णफलमिच्चि कडनुन्न रुचिकु । सुतु जिरायुवु चेसि सुरलतो जनिरि
१७७०
यरुदैन तपमुन नंत वेयेंड्लु । जरिपिन ब्रह्म विश्वामित्रु गदिसि
'नीकु ऋषित्वंबु नी तपश्शक्ति । जेकूडे' ननि योप्प जेप्पि विच्चेसे
नंतट दनियक यत्युग्रतपमु । संततनियतितो जलुपुचु नुंड

—'शुनक (कुत्ते) का मांस खाते हुए क्रम से हज़ार वर्ष दुख भोगो' ऐसा शाप दिया। अत्यन्त करुणाभाव से उस शुनश्शेप को धीरे से (अपने) पास बुलाकर कौशिक ने कहा—'मैं तुम्हें दो मन्त्र दूँगा। उनका निरन्तर जप करते रहो। वे तुम्हारी रक्षा करेंगे (और) अम्बरीष के यज्ञ को (भी) सफल बनायेंगे'। ऐसा कहकर उनको दो मन्त्र दिए। उसने अनुपम भक्ति से ग्रहण किया। दूसरे दिन उस राजा ने अपने शोभायमान यज्ञवाट (यज्ञभूमि) में प्रवेश किया और बलि देने की (बात) सोचकर, उस विमलआत्मावाले (शुनश्शेप) को लाकर, पशु (के समान) पूजा कर यूप (स्तम्भ) से बाँध दिया। तब शुनश्शेप शान्त हो उस मन्त्रयुग्म का जप करते हुए निश्चल रहा। (तब) वहाँ इन्द्र (और) उपेन्द्र प्रेमपूर्वक आये और सुचरित्र अम्बरीष को निकट बुलाकर (उन्हें) क्रतु का पूर्णफल देकर, निकट स्थित रुचिक के पुत्र को चिरायु बनाकर, (अन्य) देवताओं के साथ चले गए। ॥ १७७० ॥

जब अपूर्व (घोर) तपस्या करते हुए एक हजार वर्ष बीत गये तब ब्रह्मा विश्वामित्र के पास आकर मनोहरता पूर्वक बोले—'तुम्हारी तपःशक्ति से तुम्हें ऋषित्व प्राप्त हो गया'। (ऐसा कहकर) वे चले गए। तब (उस वरदान से) तृप्त न होकर (विश्वामित पुनः) निरन्तर अत्युग्र तप

गामरूपमु लील गैकॊननेर्चु । कामुनि वाणंबु कमनीयकंबु

विश्वामित्रुडु मेनकनु गूडुट

चॆलुवॊन्द नप्सरस्स्त्रीमूर्ति दाल्चि । मॆलगॆडु गति दोप मेनक यपुडु
ललित यौवन कळालावण्यगण्य । जलकेळि देल ना सति जारुकॊप्पु
जिकिलि चूपुलु नुनु जॆक्कुलु मुद्दु । मॊकमु गॆम्पुलमोवि मॊलकनव्वुलुनु
वॊन्गारु कुचकुंभमुलु वदावन्ने । वंगारुपॊडि रालु वाहुमूलमुलु
जिन्नारि नूगारु सिंगपु गौनु । वॊन्न पूर्पॊक्किलि वॊदलॆडु पिरुदु
लूरुलतीरु नोरूरगा जूचि । पेरु वाडि मरुंडु पॆळपॆळ नार्व १७८०
ध्यानंबु मौनंबु दपमु वोकार्चि । मेन गळल् ग्रम्म मेनक जूचि
'नन्नु गायजु केळि नलिनाक्षि! पॊन्दु'। मन्न ना माटकु नंगीकरिंचि
पदियॆड्लु मदिसोलि भावजुकेळि । सदमदंबुग सौख्यसरसि देलिंचॆ;
मरि विवेकमु पूनि मौनि यॆन्तेनि । दरुगनि तन तपोधनमु वोवुटकु
वरितपिंचुचु, मदि वदिलंबु सेसि । सुरलोकमुनकु ना सुदति वीड्कॊलिपि,

करते रहे। तव कामदेव के कमनीय वाण ने मानों कामरूप ग्रहण किया हो,

विश्वामित्र का मेनका से मिलना

—मेनका का रूप ऐसा था। वह मानों मनोहरता से अप्सरा स्त्री की मूर्ति धारण कर विचर रही हो। तव (मेनका) जो ललित-यौवनकला-लावण्य में गण्य (गणनीय) थी, जलक्रीडा में मग्न हुई। उस स्त्री के शिथिल पड़े जूड़े को, मनोहर चितवन, स्निग्ध कपोल, प्यारा मुख, माणिक्य के-से ओंठ, मंद-मुस्कान, उभरते कुचकुम्भ (कलश के समान स्तन), सोलह कलाएँ (कलाओं से पूर्ण शरीर कान्ति), स्वर्ण-चूर्ण विखेरने वाले (श्वेतकमल) वाहुमूल, सुन्दर रोमराजि, सिंह की-सी कमर, पुन्नाग की-सी नाभि, उत्कर्ष को प्राप्त नितंव, (और) ऊरुभाग की शोभा को (विश्वामित्र ने ऐसा) देखा जिससे लार टपकने लगी। देखकर अपनी प्रतिष्ठा को खोकर, (मन में) कामदेव के प्रवल हो जाने पर, ॥ १७८० ॥

—ध्यान, मौन (और) तप को छोड़कर, शरीर पर कलाओं के छा जाने पर, मेनका को देख (यों) वोले—'हे कमलनयनी! मुझे कायज-केलि (रतिक्रीड़ा) में प्राप्त करो'। इस वात को स्वीकार कर, दस वर्ष, सव कुछ भुलाकर, भावजकेलि (रतिक्रीड़ा) में, अधिक प्रेम से (उसे) सौख्यसरसि (सुखसागर) में ऊभ-चूभ किया (सन्तुष्ट किया)।

यिंद्रुनि यत्नंबुलिवि यंचु देलिसि । 'यिंद्रिय जयसिद्धि' ये गांतु ननुचु
शीताद्रि करिगि कौशिकि चेन्त जेरि। या तपंबुननु महातपंबपुडु
वर्षमुल् पेक्कैन वच्चि विरिंचि । हर्षिचि 'नीवु महर्षिवै' तनिन
'नीरजासन! नन्नु नीवु नी चित्त । मारंग ब्रह्मर्षि वन्नंतदाक
जरियितु दप मन्न 'जरियिपु' मनुचु । नरविंदभवुडेगें; नंत गौशिकुडु
१७९०
ब्रह्मदेवुडुं वोव 'बरम पावनत । ब्रह्मर्षितन मेनु बडसेद' ननुचु
नूरुपु पुच्चक यूर्ध्वबाहुंडु । मारुताहारुंडु मौनियु नगुचु
वनिवडि वेसवि बंचाग्निमध्य । मुन वानकालमिम्मुल बट्टबयट
मंचुकालंबुन मडुगुलयंदु । नंचितगति जेसें नत्युग्रतपमु :
नंत नातपमुन कमरवल्लभुडु । चिंतिपिच्चुनु रंभ जेरंग बिलिचि
'येलमिमै देवता हितकार्यमोकटि । चेलुवार ने नीकु जेप्पेद विनुमु :
कामगोचरु जेसि कौशिकु तपमु । वामलोचन ! नीवु वारिंपु'मनिन

तब विवेक को प्राप्तकर मौनि ने अपने अनन्त तपोधन के कम हो जाने पर परिताप किया, मन को स्वस्थ (दृढ) करके, उस सुदरी (नारी) को सुरलोक भेज दिया। ये सब (मेरे तप मे विघ्न डालने के लिए) इन्द्र के प्रयत्न हैं, यह जानकर, 'मैं इन्द्रियजयसिद्धि (इन्द्रियों पर जय) प्राप्त करूँगा' (यह निश्चयकर), शीताद्रि (पर) जाकर, कौशिकी (नदी) के पास पहुँच, (कौशिक ने) बड़ी निष्ठा से महातप किया। (इस प्रकार) अनेक वर्षो के बीत जाने पर, विरिंचि (ब्रह्मा) हर्षित हो बोले—'तुम महर्षि हो गए हो'। (ऐसा) कहने पर (विश्वामित्र ने कहा)—'हे कमलासन ! तुम जब तक मुझे हृदय से ब्रह्मर्षि नही कहोगे, तब तक मैं तप करूँगा'। तब 'तप करते ही रहो' ऐसा कहकर अरविन्दभव (ब्रह्मा) चले गए। तब कौशिक ने, ॥ १७९० ॥

—ब्रह्माजी के चले जाने पर कहा—'परमपावनता से मैं ब्रह्मर्षित्व को प्राप्त करूँगा'। (ऐसा निश्चय कर) श्वास रोककर, ऊर्ध्वबाहु होकर, मारुत-(हवा) आहार करते हुए, मौन होकर, ग्रीष्म में पंचाग्नियों के मध्य, वर्षाकाल में खुली जगह में, शीतकाल में सरोवरों में रहकर, श्रेष्ठगति से अतिउग्रतप किया। तब उस तप पर चिन्ताकर (व्याकुल होकर) अमर-वल्लभ (इन्द्र) ने रम्भा को पास बुलाकर कहा—'स्नेह के साथ एक देवताहित-कार्य मनोज्ञरूप से मैं तुम्हें बताऊँगा। सुनो, हे वामलोचने (बाँके नेत्रवाली) ! कौशिक को काममोहित करके (उसके) तप को रोक दो (विघ्न डालो)'। (ऐसा) कहने पर (रम्भा ने)

'ग्रूरतपंबु गैकॊनियुन्न यतनि । जेर ना तरमॆ शचीनाथ ! नीकु
म्रॊक्कॆद; नम्महामूर्खुनि दिक्कु । निक्कि चूडगनोप; नी पादमान!
नाकेश ! कोपिंचु; नन्नु शपिंचु । ना कौशिकुडु; सैप; डट्टुगान वॆरतु
१८००
नॆरिगियॆरिगि ता रॆट्टि वॆन्गलुलु । गॊऱवितो दलगोकुकॊनुवारु गलरॆ?'
यन विनि 'यित भयंबेनि नीकु । मनसिज माधवुल् मरि सहायमुग
वत्तुरु चनु'मन्न वनितयु नतनि । चित्तमॆरिगि चॆच्चॆर भूमि करिग;
गाधिसूनुंडुन्न घनतपोवनमु । माधवमन्मथुल् मरि सहायमुग
गीर कोकिल समाकीर्ण मयूर । शारिका निजसखी सहितयै चॊच्चि;
या रंभयुनु मनोहरलास्यगरिम । नारंभमॊनरिप नलिगि कौशिकुडु
'पदिवेल वर्षमुल् पाषाणभाव । मॊदवंग गैकॊनियुंडि या मीद
नुरुतपोविधियैन यॊक विप्रुवलन । सरसिजानन ! पॊन्दु शापमोक्षंबु'
ननि पल्क वाषाणमय्यॆ ना रंभ; । मनसिजुंडुनु नॆगॆ मदि भीति नॊन्दि;
तन तपंबॊक्किंत दरिगिन नॆरिगि । तनलोन नग्गाधितनयु डूहिंचि
१८१०

कहा—'हे शचीनाथ ! क्रूर (उग्र) तप को ग्रहण किये हुए उसके पास पहुँचना क्या मेरी सामर्थ्य में है ? (मैं) तुम्हें दण्डप्रणाम करूँगी । उस महामूर्ख की ओर आँख उठाकर देख भी नही सकती । तुम्हारे चरणों की सौगन्ध । हे नाकेश ! (वह) क्रुद्ध होगा, वह कौशिक मुझे शाप देगा, सहन नहीं करेगा, अतः (मैं उससे) डरती हूँ । ॥ १८०० ॥

जान-बूझकर क्या कोई ऐसा मूर्ख होगा जो जलती हुई लकड़ी से सिर खुजला ले ?' (ऐसा उसका) कहना सुन, (इन्द्र ने) कहा—'यदि इतना भय है तो तुम्हारी सहायता के लिए मनसिज (मन्मथ) (और) माधव (वसंत) आयेंगे, चलो' । वह नारी भी उसके (इन्द्र के) मन की बात को समझकर, तुरन्त पृथ्वी (की ओर) चल पड़ी । उसने (रम्भा ने) माधव (वसंत) (और) मन्मथ की सहायता ले (और) कीर-कोकिल-समाकीर्ण-मयूर-सारिका (और) निजसखी-सहिता (युक्त) होकर, उस घन-तपोवन में प्रवेश किया, जहाँ गाधिसून थे । उस रम्भा ने मनोहर (और) गरिमा (युक्त) लास्य (नृत्य) का आरम्भ किया तो कौशिक क्रुद्ध हुए और कहा—'दस हज़ार वर्ष पाषाणभाव को प्राप्त कर पड़ी रहो (और) उसके बाद उरु-तपोनिधि हो एक ब्राह्मण के द्वारा हे सरसिजानने ! शापमोक्ष को प्राप्त करो' । ऐसा कहने पर वह रम्भा पाषाण बन गई, मनसिज भी मन में डरकर चला गया । अपने तप के थोड़ा कम हो

'यपुडु कामंबुन नडगें ना तपमु; । निपुडु क्रोधंबुन किच्चिति' ननुचु मदिलोन वगचि 'कामंबु ग्रोधंबु । वदलि निराहारवंतुडै नियति विजितेंद्रियुंडुनै वेयुवत्सरमु । लजुडु मेच्चग दपंबतिनिष्ठ जेसि यनयंबु ब्रह्मर्षि ननिपिंचुकोन्दु' । ननि युत्तरमु वासि यट दूर्पु देसकु नेनसि वेन्डियुनु देवेंद्रुडु सेयुं । घनविघ्नकोट्लकु गलगक निलिचि यरुदेन्चि यंत सिद्धाश्रमभूमि । नुरुघोरतपमु सेयुचु नुंडदोडगें; वरतपोनियतिमै वर्ष सहस्र । मरुग वारणसेतुननि युन्नचोट निव्वरि विय्यंबु नेरि नेरि देच्चि । यव्वियन्नियु बाकयत्नंबु सेसि यारय देवतार्हणमुगा जेसि । वारक भुजियिंप वडि दलंचुटयु बलभेदि योक मुदि बापडै वच्चि । निलिचि ग्रासमु वेड नेम्मितो निच्चे १८२०

ना यमराधीशु डडरि भोजनमु । सेयुचो नन्नंबु शेषिंपकुन्न

जाने की बात को जानकर, अपने (मन) में उस गाधितनय ने सोचा, ॥ १८१० ॥

—'तब काम (भाव) से मेरा तप नष्ट हुआ, अव उसे (तपको) क्रोध को दिया (क्रोध के कारण तप नष्ट हुआ)'। ऐसा मन में दुखी होते हुए (उन्होंने) कहा—'काम और क्रोध को छोड़कर, निराहार को ग्रहण कर (बिना आहार के रहते हुए), नियम से, विजितेन्द्रिय होकर, हजार वर्ष अतिनिष्ठा से (ऐसा) तप करूँगा जिसकी अज (ब्रह्मा) प्रशंसा करें। (मैं) सदा (के लिए) ब्रह्मर्षि कहलाऊँगा'। उत्तर (दिशा) को छोड़, पूर्वदिशा को प्राप्त कर, पुन: देवेन्द्र के द्वारा किये गए घन (अधिक) विघ्न-कोटि (समूहों) से विकल न बनकर, (वे) सिद्धाश्रमभूमि में पहुँचकर उरु (महा) घोरतप करते रहे। वर तपोनियति से सहस्रवर्षों के बीत जाने पर, पारण करने की बात सोची (और) जहाँ थे वहीं अच्छे ढग से नीवार-धान्य (विना जोते-बोये उपजने वाले तिन्नी पसाई के चावल) लाये (और) उन सबको मिलाकर (एकत्र कर) पाक-यत्न (पकाने का कार्य) किया, उन्हें देवतार्हण (देवताओं के योग्य) किया या देवताओं को नैवेद्य चढ़ाया (और) रुके बिना झट से खाने की वात सोची, (तव) बलभेदी (इन्द्र) एक वृद्ध ब्राह्मण का रूप धरकर आये, (सामने) खड़े हो गए और ग्रास (आहार) माँगा (तो) प्रेम से (विश्वामित्र ने उन्हें) दे दिया। ॥ १८२० ॥

उस अमराधीश के अतिशयता से भोजन करने पर अन्न वचा नहीं। तब फिर हज़ार वर्प मौन रहकर, अत्यन्त निष्ठा से तप किया। तव

मऱियुनु वेयेंड्लु मौनियै निलिचि । तरुगनि निष्ठतो दपमाचरिंप,
नप्पुडम्मुनिनाथु नौदल वुट्टि । कप्पे लोकमुल नुत्कटमैन पोगलु;
गलगं बयोधुलु; गंपिंचे धरणि । कुलगिरुलदरे; दिक्कुलु व्रक्कलय्ये;
नमरुलु गंधर्वुलखिलसंयमुलु ।गमलगर्भुनि भक्ति गनि म्रोक्कि यनिरि;
'यायतचित्तुडै यत्युग्रतपमु । सेयुचुनुन्नाडु सेलगि कौशिकुडु;
अतनि मनोरथंबर्थि सिद्धिंप । मतिनिच्चि तपमिक मान्पकयुन्न
ननघ! विश्वामित्रु नत्युग्रमैन । घनतपोवह्निचे गालु लोकम्मु'
लनवुडु वारितो नप्पुड कदलि । वनजासनुडु वच्चि वरदुडै निलिचि
'विनुमु कौशिक! यिंक विपरीततपमु । पनिलेदु; चालिपु; ब्रह्मर्पिवैति' १८३०

वनिन गौशिकुडु ब्रह्मादि देवतल । गनुगोनि पल्के नक्कजमैन भक्ति;
'ब्रह्मर्षितन मेनु पडसितिनेनि । ब्रह्मपुत्रुडु लोकपावनमूर्ति
चिरपुण्यशालि वसिष्ठुंडु वच्चि । यरसि नन् 'ब्रह्मर्षि' व्रनकुन्न नम्म'
ननिन वसिष्ठुनि नब्जसंभवुडु । ननिमिपुलुनु बिल्व नतडेगुदेन्चि

उस मुनिनाथ के सिर के मध्यभाग से पैदा होकर उत्कट धुआँ (समस्त) लोकों पर छा गया। पयोधियाँ (समुद्र) क्षुब्ध हो गईं, धरणी कम्पित हो गई, कुलपर्वत थर्रा उठे, दिशाएँ टूक-टूक हो गईं। तब अमर, गन्धर्व (और) सभी संयमी, कमलगर्भ (ब्रह्मा) को भक्तिपूर्वक देख (दर्शनकर) दण्डवत् प्रणाम कर बोले—'आयत (वशीकृत) चित्त हो, कौशिक विजृम्भित होकर, अत्युग्रतप कर रहा है। उसके मनोरथ की, प्रीति के साथ पूर्तिकर, उसके तप को रोक नहीं देंगे (तो) हे अनघ! विश्वामित्र के अत्युग्र (और) घन-तपोवह्नि (तप की आग) से लोक जल (भस्म हो) जायेंगे'। ऐसा कहने पर उनके साथ उसी समय चलकर, वनजासन (ब्रह्मा) वरद (प्रसन्न) होकर, आकर (सामने) खड़े हो गए (और) बोले—'हे कौशिक! सुनो, अब विपरीत (उग्र) तप (करने) की आवश्यकता नहीं है। (अब) बस कर दो। (तुम) ब्रह्मर्षि हो गए हो'। ॥ १८३० ॥

(ऐसा) कहने पर कौशिक ने ब्रह्मादि देवताओं को देखकर आश्चर्यजनक भक्ति से कहा—'यदि मैंने ब्रह्मर्षित्व को प्राप्त किया हो तो ब्रह्मा के पुत्र, लोकपावन मूर्तिवाले (और) चिरपुण्यशाली वसिष्ठ आकर, (सब कुछ) विचार कर, मुझे जब तक 'ब्रह्मर्षि' न कहेंगे, तब तक इस बात पर विश्वास नहीं करूँगा'। (ऐसा) कहने पर अब्जसम्भव (ब्रह्मा) (और) अनिमिष के (देवताओं द्वारा) बुलाये जाने पर वसिष्ठ आये।

'बलितंपु दपमुन ब्रह्मर्षिवैति; । तॅलिसिति; मिदु संदेहंबु वलदु
मुदमॉप्प जनु'मन्न मुनि वसिष्ठुनकु।बदिलुडै म्रॉक्कि सद्भक्ति बूजिंचे;
नंत विश्वामित्रु नखिल देवतलु । नॅन्तयु दीविंचि येगिरि दिविकि,
नारूढपदुडु विश्वामित्रु महिम । लारय निट्टि महाद्भुतक्रममु'
लनि पल्क रघुरामु डा लक्ष्मणुंडु । जनकादुलुनु सभासदुलु मोदिलिरि,
'यिल्लड जनकुनि यिंट नुग्राक्षु । डॅल्लरॅरुंग मुन्निडिन चापंबु १८४०
कडकमै विरिचि राघवुडेपु मिगिलि । कडुमोदमुन सीत गैकॉनु नॅल्लि'
यनि रसातलमुन कंतयु जॅप्प । जनिन चंदमुन भास्करुडस्तमिंचे:
जनकु वीड्कॉनि गाधिसंभवुडॉक्क । युनिकिपट्टुन रामयुक्तुडै युंडे;
ननुपमप्रीतिमै ना रात्रि गडपि । यिनुपॉडुपुन नित्यकृत्यमुल् दीर्चि
जनकु चॅन्नकु रामसहितुडै पोयि । यनियॅ विश्वामित्रुडंदरु विनग;
'निनकोटि समतेजुली दिव्यमूर्तु । लनघकीर्तुलु वीरनन्यगोचरुलु;
ई पुण्यधनुलु नी यिंटिलोनुन्न । चापंबु सूडंग जनुदॅन्चिवारु;

'बली तप से ब्रह्मर्षि बन गए। (यह) मैं जान गया हूँ। इसमें कोई सन्देह नहीं है। प्रसन्न होकर (अब) जाओ'। ऐसा कहनेवाले मुनि वसिष्ठ को (विश्वामित्र ने) सावधानी से दण्डप्रणाम कर, सद्भक्ति से पूजा की। तब अखिल देवताओं ने विश्वामित्र को बहुत-बहुत आशीर्वाद दिया, (और) दिवि (स्वर्ग) को चले गए। लब्धप्रतिष्ठ बने विश्वामित्र की महिमाएँ, विचार कर देखने पर, इस प्रकार महाअद्भुत क्रम वाली है'। (ऐसा शतानन्द के) कहने पर रघुराम, लक्ष्मण, जनक आदि राजा (और) सभासद मुदित हुए।

—'जनक के घर मे, पूर्वकाल में उग्राक्ष (शिव) के सुरक्षापूर्वक, प्रकट रूप से रखे चाप (धनुष) को, ॥ १८४० ॥

—पराक्रम के साथ तोड़कर राघव अतिशय और अत्यंत प्रसन्नता के साथ परसों सीता को ग्रहण करेंगे' इस प्रकार समस्त रसातल में कहने के लिए मानों भास्कर अस्तंगत हुए।

—जनक से विदा लेकर गाधिसम्भव एक स्थान पर राम के साथ ठहर गए। अनुपम प्रीति से उस रात को बिताकर सूर्योदय के समय नित्यकृत्यों से निपटकर, रामसहित विश्वामित्र जनक के पास गए, (और) प्रकट रूप से बोले—'ये दिव्यमूर्ति और करोड़ों सूर्यों के समान तेज वाले अनघकीर्ति-युक्त, अनन्यगोचर, पुण्यधनी, तुम्हारे घर में रखे धनुष को देखने आए हैं।

शिवधनुर्वृत्तान्तमु

आ विल्लु देप्पिपुं' मनवुडु जनक । भूवरुंडप्पुडद्भुतमंदि पलिकें:
'भवुडंधकासुर भस्मासुरादि । दिविजारिवरुल मर्दिचें ना विंट;
नुल्लोकुडै रुद्रुडुग्रदानवुल । दोलिलि यनेकुल द्रुंचें ना विंट; १८५०
विपुल कोपाटोपविभवुडै भवुडु । त्रिपुर दुर्गमुलु साधिंचें ना विंट;
ना विंट मरि दक्षु यागंवु नाडु । देवेंद्रमुख्युल द्रिदशुल दोलि,
नियतात्म! मा तात निमि चक्रवर्ति । कयनयान्वितुनकु नारवतरमु
नगु देवरातुचे हरुडिच्चें दोलिलि । यगणितवलमैन या विल्लु विदप
नदि यादिगा नुंडु ननघ! मायिंट । विदितमै या विल्लु विनुतुल नोप्पि;
जन्नंबु गाविंप समकट्टि येनु । सन्नुत नियति भूस्थलि शुद्धि कोरकु
ग्रतुशाल दुन्न नागटि चालि लोन । नतुलितंवुग जालुनंदोप्पु मिगिलि
मंदसंबोन्डु रा मदि नुब्बि चूचि । मंदसंबुनु नेनु ममत दीयंग
नति वैभवंबुगा नंदुलो नपुडु । नतिव मोक्कते पुट्टे नाश्चर्य लील;
ब्रीतितो सीत यन् पेरोप्प बेट्टि । या तन्वि न कूतुरनि पेन्चुचुंड १८६०

शिवधनु का वृत्तान्त

—उस धनुष को मँगाओ'। ऐसा कहने पर जनकभूवर तव आश्चर्यचकित हो बोले—'भव (शिव) ने अन्धकासुर, भस्मासुर आदि दिविज-(देवताओं के) अरियों (शत्रुओं) को उसी धनुष से संहार किया था, अतिशय बनकर रुद्र ने कई उग्र दानवों का संहार उसी धनुप से किया था। ॥ १८५० ॥

विपुल-कोप-आटोप के वैभव से भव (शिव) ने त्रिपुरदुर्गो को उसी धनुष से जीता था। उसी धनुप से दक्ष के यज्ञ के दिन देवेन्द्र आदि त्रिदशों को भगा दिया था। हे नियतात्म! हमारे पितामह विनयसम्पन्न निमि चक्रवर्ति के छठी पीढ़ी वाले देवरात को पूर्वकाल में, हर (शिव) ने अगणित वल-सम्पन्न वह धनुप दिया था। उसके बाद, तव से लेकर हे अनघ! प्रशंसाओं का पात्र बनकर (और) (लोक) विदित वह धनुप हमारे घर में है। यज्ञ करने का संकल्प करके, मैंने सन्नुत (सराहनीय) नियति से भूस्थल की शुद्धि के लिए क्रतुशाला (यज्ञभूमि) में हल चलाया। (तब) उस हल की रेखा में, अतुलित रूप से युक्त एक मंजूषा (पेटी) मिली। मन में फूलकर (प्रसन्न होकर) मैंने ममता (प्रेम) के साथ उसे खोला, उसमें अति वैभव के साथ, आश्चर्यप्रद रूप से एक कन्या निकली।

निल बसंतंबुन नेलदीगे बोलि । नळि नारिकळ बोलि नानाट बोदलि
यितयै यंतयै मलजव्वनमुन । वितगा ना यिति वेलयुट जूचि,
तलकोनि तरुणिकै धरणिवल्लभुलु । बलियुलै येतेन्चि पडुचुनु दमकु
नडिगिन वारल कंटि नेनप्पु । 'डुडुराजबिंबास्यकुंकुव नाग
हरुनि विल्लुन्नदि; यतिसत्त्वयुक्ति । बेरिगि येतेन्चि मोपेट्टिन जालु;
नतनिकि ना कूतु नब्जाक्षिनित्तु । नतिमोदमुन' नन्न नन्नरेश्वरुलु
नेत्तिन कडकतो नेतेन्चि चाप । मेत्तनोपक पोदुरेन्दरेनियुनु;
धनुवेत्तजालनि धरणीशुलेल्ल । दनरारु सिग्गुन दललेत्तलेक
'कूतु निच्चेदननि कोदंडमोकटि । ब्रातिगा नेपमिडि भंगिचे मनल
जनकु; डातनि निंक सकलयत्नमुल । ननि सेसि साधित'मनि विचारिंचि
१८७०
चनुदेन्चि कोटपै संवत्सरंबु । घनसैन्यमुलतोड गडिमिमै विडिय
दगमुन्नु गूर्चिन धान्यादुलेल्ल । नोगि दीऱ मदिलोन नोकटि सिंतिंचि

प्रेम से उसका नाम सीता रखा (और) उस नारी को अपनी पुत्री मानकर पाल रहा था । ॥ १८६० ॥

पृथ्वी पर, वसन्तऋतु में लता के समान, चन्द्र की कला के समान वह दिन प्रतिदिन प्रवर्द्धित होने लगी । प्रवर्द्धमान होकर, नूतन यौवन में आश्चर्यप्रद रूप में उस कन्या को शोभायमान होते देख, उस तरुणी के लिए अनेक धरणीवल्लभ बल (सेना)-युक्त हो आये और अपने लिए (उस) युवती की माँग की । तब मैंने उनसे कहा—'उडुराज-बिम्बास्य (चन्द्रमुखी) के लिए कन्याशुल्क के रूप में शिवधनुष है । अतिसत्त्वयुक्ति से (यहाँ) आकर (उस धनुष की) प्रत्यंचा चढ़ाना भर पर्याप्त है । उसे (ऐसे वीर को) मैं अपनी पुत्री (जो) अब्जाक्षी (कमलनेत्री) (है) को अति प्रसन्नता के साथ दूँगा । (ऐसा) कहने पर वे नरेश्वर अति साहस के साथ आकर (भी) धनुष को उठा न सके । धनुष को उठाने में असमर्थ सभी धरणीश अति लज्जित हो, सिर (तक) न उठा सके । 'पुत्री को देने के लिए कोदंड (धनुष) रूपी दुर्लभ बहाने के कारण जनक ने हमारा अपमान किया । सभी प्रयत्नों से युद्ध करके हम उससे बदला लेंगे' ऐसा विचार करके, ॥ १८७० ॥

—आकर, बड़ी-बड़ी सेनाओं के साथ, पराक्रम से दुर्ग को वर्ष भर घेर रखा । पूर्व से जो धान्य आदि संचित कर रखे थे, वे क्रम से कम होते देख, मन में एक बात सोची । शीघ्रता से देवताओं की प्रार्थना कर,

वडि देवतल गौलिचि वारिचे नेनु । वडसिन चतुरंग वलमु गैकोनुचु
विडिसिन बलमुपै वीकतो नडुव । दौडर जालक भीतितो गोन्दरुग,
गोन्दरु मा तोड घोराजि वेनगि । चिंदरवंदरै चेंडिपोयिरोडि;
यक्कजमगु शक्ति ना विल्लु रामु । डेक्कुवेट्टिन गूतुनिच्चेद'ननुचु
'विल्लुन्न मंदस वेग तेम्म' नुचु । वल्लिदुलगुवारि वदिवेल वनिचें;
नदि लोहमयमुनु नत्यायतंवु । विदिताष्टचक्रंवु विपुलंवु नगुचु
नमरेडु मंदस या विंटितोड । दमतम सत्त्वमुल् दलकोन वारु
गनकाद्रितो गूड गमलजांडंवु । गोनिवच्चुगति नीड्चुकोनिवच्चि; रंत १८८०
जनकुनंत:पुर चारुलौ वारु । पनिवडि दादुल परतेन्चि वेग
जानकि नूर्मिळ जनकुनि देवि । गानंग जजुदेन्चि कनि चेप्पि रेलमि :
'विनरम्म! चेलुलार! विन्नपंवोकटि :। मन रानुसभलोन मरि मुनुलुंड
गाधिनंदनुडैन कौशिकु वेनुक । नरवरोत्तमुल नाजानुवाहुवुल
नमरंग देवगंधर्वुल कन्न । कोमरैन तेजंवु कोमरोप्पु वारि
चेलुवैन तेजंवु चेलगि वीक्षिचि । यल वीरलेव्वारलनि जनकुंडु

उनसे प्राप्त चतुरंग वल को लेकर, ठहरी हुई (शत्रु) सेना पर निर्द्वंद्वता से (आक्रमण करने) निकल पड़ा। (कोई मेरा) सामना न कर सका, कुछ लोग भय के मारे चले गए, कुछ लोग हमारे साथ भयंकर युद्ध कर, हारकर तितर-बितर हो भाग गए। आश्चर्यप्रद शक्ति के साथ राम उस धनुष को चढ़ा सकें तो अपनी पुत्री दूँगा'। ऐसा कहते हुए उन्होंने दस हजार वलिष्ठ (सेवकों) को धनुष रखी पेटी लाने के लिए भेजा। लोहे की वनी वहुत विस्तृत, विदित-अष्टचक्र वाली, विपुल और शोभित उस पेटी को, धनुष के साथ, अपनी-अपनी शक्ति के साथ प्रयत्न कर, (सेवक) खींचकर लाये, मानों कनकाद्रि के साथ कमलजाण्ड (ब्रह्माण्ड) को ले आ रहें हों। ॥ १८८० ॥

तब जनक के अन्त:पुर चर (परिचारक) (और) धाइयाँ शीघ्र आकर जानकी, ऊर्मिला (और) जनक की देवी को देखकर, आनन्द के साथ बोलीं—'हे सखियो! एक निवेदन को सुनिए। हमारे राजा की सभा में अनेक मुनि थे। (उनमें) गाधिनन्दन कौशिक के पीछे आजानुबाहु, देवगन्धर्वों की अपेक्षा तरुण तेज से मनोज्ञ वने नरवरोत्तमों (राजश्रेष्ठों) के सुन्दर तेज को शोभा के साथ देखकर, जनक ने पूछा कि ये कौन हैं। पूछने पर आत्मा में अति हर्ष के उमड़ आने पर कौशिक ने वताया—'ये दशरथात्मज है। हे धरणीश! शिवधनुप को चढ़ाने यहाँ आए हैं।

अडिगिन गौशिकुडतिहर्षमात्म । नडरंग 'दशरथुनात्मजुल् वीरु;
हरुचाप मेक्किड नरुदेन्चिरिटकु । धरणीश! तेंप्पिपु तगुवारि बनिचि'
यन नट्लु कौशिकुननुमति मीर । दन मंत्रुलनु बिल्चि धनुवु देवनिचें;
सोरणगंड्ललो जूडगवच्चु । नारय वेग र' डनि नेंम्मि बिलुव १८९०
गुलमु शौर्यमु रूपु गुणमुनु बोंगड । जेंलगि चेंवुल सुध चिलिकिनट्लुंड
ब्रेम वेंग्गलमैन बृथिवीजकपुडु । रोमांचमय्यें नारूढमै मेन;
ब्रियमुनु भयमुनु बिरिगोंनि पोंदल । नयमेंन्चि तलवांचि ननवोणियुंडें;
अलिवेणि सिग्गुन नट बल्ककुन्न । जेंलुवकु बरिचर्य चेसिरि सखुलु;
पन्नीट गुंकुम पदनिच्चि योंकतें । चन्नार मकरिकल् चेंक्किकळ्ळ व्रासें;
दट्ट पुनुंगुनु दगु चंदनंबु । दट्टंबुगा बूसें दरळाक्षि कोंकतें;
नुदुट गस्तुरिलेख नुतमुगा दीर्चें । नेंदुट नद्दमु बेंट्टें नेंलनाग योंकतें;
कुरुलु नुन्नग दुव्वि कोंप्पमर्चुचुनु । विरुलंदु नोंक तन्वि वितगा दुरिमें;
वासिचु बागालु वडि नाकुमडुपु । ला सतीजनमणि कंदिच्चें नोंकतें;

योग्य लोगों को भेजकर (धनुष को) मँगाओ'। ऐसा कहने पर कौशिक की अनुमति (आदेश) के अनुरूप, अपने मन्त्रियों को बुलाकर, धनुष ले आने के लिए (आदमी) भेजे। गवाक्षों (झरोखों) से (उस दृश्य को) देख सकते हैं। उसे निहारने के लिए शीघ्र आइए'। (ऐसा) कह प्रेम से बुलाने पर, ॥ १८९० ॥

—(राम के) कुल, शौर्य, रूप, गुण की प्रशंसा (ऐसी थी मानों) कानों में सुधा छिड़क दी गई हो। तब प्रेम-भाव की अतिशयता के कारण पृथ्वीजा (सीता) के शरीर पर रोमांच हो उठा। प्रेम (और) भय के मन को घेर लेने के कारण (वह) युवती नीति (मर्यादा) का विचार करके सिर झुकाए रही। अलिवेणी (भ्रमरों के समान केशवाली) (सीता) लज्जा के मारे चुपचाप खड़ी रही (तो) सखियों ने उसकी परिचर्या (शुश्रूषा) की। गुलाब-जल में कुंकुम घोलकर एक (सखी) ने सुन्दरता से कपोलों पर मकरिका-पत्रों की रचना की। दूसरी ने तरलाक्षी को गाढ़ी जवादि और श्रेष्ठ चन्दन का खूब लेप किया। एक और ने ललाट पर सराहनीय रूप से कस्तूरी की रेखा (तिलक) बनाई। एक नवेली ने सामने दर्पण रख दिया। एक तन्वी (नारी) ने केशों को मृदुता से कंघा करके, जूड़ा बाँध दिया (और) उसमें निराले ढंग से फूल सजाए। सुगंधित सुपारी और बीड़ा किसी (सखी) ने उस सतीजनमणि (नारीरत्न) को दिया। अलि-नीलवेणी (भ्रमरों के

अलिनीलवेणिकि नंदंबुगान । मॉलनूलिघंटलिम्मुल म्रोय निडियें;
१९००
गुलुकु वालिड्लपै गॉप्पमुत्यमुल । विलसिल्लु हारमुल् वेसें नॉक्करितें;
कान्त गट्टिन चंद्रकावि वल्वलनु । वितगा नेंरिनॉप्प वेंस दीचें नॉकतें;
यी माड्कि जेंलिकत्तें लेंलमि गैसेय। हेमपीठंबुन नेंलमितो नुंड
नप्पुडु कल्याणि नवनिनंदननु । दप्पक वीक्षिंचि तल्लि दानपुडु
कनक सौधगवाक्ष कलितगा नपुडु। वनजाक्षि दोड्कॉनि वच्चें ना येंडकु;
'नेंप्पुडु वीक्षितु मिनवंशजातु? । नेंप्पुडु गनुगॉन्दु मेमु राघुवुनि?'
ननि वारलंदरु हर्षंबुतोड । घनगवाक्षमुलंदु गनुगॉनिरंत;
रामुनि लोकाभिरामुनि दिव्य । धामुनि गन्गॉनि तरलाक्षुलपुडु
घनशौर्यरूपमुल् गलिगिन वानि ।गनकचेलुनि माड्कि गळलॉप्पुवानि
जोक पुव्वुलविल्लु जॉनिपिनवानि । ज्याकिणांकितहस्त जलजुडौ वानि
१९१०
रूपंबुलॉक्कट रुचिर वर्णमुल । नेपार वेरुगा नेंन्नग वच्चु
श्रीपतियंशजुल् क्षितिपालसुतुलु । भूपालरत्नमुल् पॉलुपारुटौर !

समान काले केशोंवाली) को (किसी सखी ने) सुन्दरता के साथ किंकिणि-युक्त करधनी को उचित रूप से पहना दिया । ।। १९०० ।।

और किसी ने (सीता के) इठलाते स्तनों पर वड़े-वड़े मोतियों से विलसित हार डाले । कान्ता (सीता) ने जो चन्द्रकावि (चन्द्रकान्ति-सम) वस्त्र पहने थी, उन्हें किसी ने निराले ढंग से, शीघ्रता से सुन्दरता से सँवारा । इस प्रकार सखियों ने प्रेम के साथ उसे (सीता को) सजाया (और) उसे हेमपीठ पर आनन्द के साथ विठाया । तव कल्याणी हो अवनिनन्दना (सीता) को अच्छी तरह देखकर (उनकी) माता, कनकसौध के गवाक्ष को सुन्दर वनाते हुए, स्वयं उसे वहाँ ले आई । 'कव इनवंशजात को देखेंगी ? हम कव राघव को देखेंगी' ? (ऐसा) कहते हुए वे सव हर्ष के साथ वड़े-वड़े गवाक्षों में से देखने लगीं । तव राम को, लोकाभिराम को, दिव्यधाम को उन तरलाक्षियों ने देखा । महान शौर्य (और) रूप से युक्त, चन्द्रसम कलाओं से युक्त, उत्साह से पुष्पधनुष को धारण किये हुए, ज्याकिणांकित (प्रत्यंचा के चिह्नों से युक्त) हस्त-जलज (करकमल) वाले (राम को) देखकर, ।। १९१० ।।

—समस्त रूपों को एकत्रकर, रुचिर वर्णों को अलग-अलग गिन सकते है, परन्तु श्रीपति (विष्णु) के अंशज हो इन क्षितिपालसुतों का, भूपालरत्नों

जनकजदगु रामचंद्रुन किरवु । ऑनरु सौमित्रिकि नूर्मिळयनुचु
दनरुगा कनि वारु दग नॆन्निकॊनुचु । ननुपमप्रेमतो नट जूचुचुंड,
नमरेंद्रसभ बोलु ना सभनडुम । नमरंग मंदस नट जेर्चि यपुडु
सभलोन नुनुपंग जनकभूविभुडु । शुभमूर्ति ना गाधिसुतुनि वीक्षिचि
'किन्नर गंधर्व गीर्वाण यक्ष । पन्नग राक्षस प्रवरुलॆव्वरुनु
नॆक्कुवॆट्टगजालरी चापमनिन । दक्किन नरुलकु दलपंग दरमॆ?
कौशिक! रामलक्ष्मणुलकु जूपु । मीशरासन'मन्न नॆलमि नम्मुनियु
रामचंद्रुनि जूचि 'रघुवंशवर्य! । यी महाधनुवॆत्ति यॆक्किडितिवियु;
१९२०
मादिवराहमै यवलील गोट । मेदिनीतलमॆत्ति मॆरसिन नीकु
दनर नी विल्लॆन्त तलपोय ननघ!' । यनि यिट्लु मुनिवरुडानतिच्चिननु
मनुवंशतिलकुड मरि वेग बुत्तु । मुनुकॊनि येनट्लु मुदमुतोनंचु
सौमित्रियुनु दानु जय्यन लेचि । प्रेमयु दमकंबु पॆनुगॊनुचुंड
जॆलगुचु दनमीदि चॆरगु रा दिगिचि । मॊलनूलु बिगजुट्टि मोहनाकृतुल

की इस शोभा का कहाँ तक वर्णन कर सकें? 'जनकजा (सीता) रामचन्द्र के योग्य है, सौमित्री के योग्य है ऊर्मिला'। (ऐसा) कहते हुए शोभा के साथ वे जोड़ियाँ बनाती हुई, अनुपम प्रेम के साथ उधर देख रही थीं। अमरेन्द्र-सभा के समान उस सभा के मध्य, सुन्दर रूप से उस पेटी को लाकर रखा गया। तब जनकभूविभ ने शुभमूर्ति वाले उस गाधिसुत को देखकर कहा—'किन्नर, गन्धर्व, गीर्वाण, यक्ष, पन्नग, राक्षस-प्रवरों में कोई भी इस धनुष को चढ़ा न सका, तो अन्य नरों का इसके बारे में सोचना सम्भव कहाँ है? हे कौशिक! यह शरासन राम-लक्ष्मण को दिखाओ'। (ऐसा) कहने पर स्नेह से उस मुनि ने रामचन्द्र को देखकर कहा—'हे रघुवंशवर! इस महाधनु को उठाकर, चढ़ाओ, ॥ १९२० ॥

—हे अनघ! (तुम) आदिवराह बन नाखून पर मेदिनीतल को सहजता से उठाने वाले (हो।) तुम्हारे लिए यह धनुष कौन बड़ी वस्तु है'? ऐसा कहकर मुनिवर के आदेश देने पर, मनुवंशतिलक (मानवश्रेष्ठ), शीघ्र ही मुनिवर के आदेश को सफल बनाने के उद्देश्य से, मुदित हो, सौमित्री (लक्ष्मण) के साथ झट उठ खड़े हुए। प्रेम (और) मोह के परिव्याप्त होने पर, शोभित होते हुए, अपने ऊपरी वस्त्र (उत्तरीय) को निकाल कर, कमरबन्द (के रूप में) कस लिया। मोहन (आकर्षक) आकृतियों के साथ, कान्ति के स्थिरता से दिशाओं में शोभित होने पर, अरविन्दलोचन,

दिरमुगा निग्गुलु दिशल शोभिल्ल । नरविंदलोचनुंड, समसाहसुडु मौलनूलि घंटलु मुरुवु मिचगनु । मलगुचु नवरत्नमालिकल् पौरल बाहुपुलुंगराल् पटु कंकणमुलु । वाहुवु लंगुळावळिकांतुलीन नमरंग गर्णभूपादुल कांति । गौमरारु चेक्किळळु गुदिगोनि मेरय नलकलु पेडतल नट नृत्यमाडि।तळुकोन्दु वंगारु तनुकांतुलीन१९३०
गोटि मन्मथलील गौमरु दीपिप । नीटुगा नटुवच्चि नेरि येल्लरेरुग जनकुनि सभलोन जननुतंबैन । मनुवंशतिलकंवु मंदस देरचि धरणिभरंबेल्ल दनमीद नुनिचि । चिरनिद्र सुखियिंचु शेपाहियनग गालमेघमुलोन गदलनि रुचुल । दूलक पोलुचु विद्युद्दंडमनग निरुपमाकारत निंडारि यंदु । गरमोप्पु विल्लेत्ति गवुसेन दिगिचि

शिवधनुर्भंगमु

गर्विंचि तन दिव्व गडगि येतेन्चु । नुर्वीशवलमु लाहुतुलुगा म्रिगि यरुणरत्नप्रभलनु मंटलोलुक । बेरुगुचु निलुचुन्न पेनुजिच्चुवोले

(और) असमसाहस वाले (राम) ने कमरबन्द की घंटियों के उल्लसित होने पर, नवरत्न-मालिकाओं के उलझकर (छाती पर) लुढ़कते रहने पर, केयूर, अंगुलीयक (अंगूठी), पटु-कंकण, वाहु (और) अंगुलावलियों (उँगलियों) के कान्ति बिखेरते समय, शोभायुक्त कर्णभूपणों की कान्ति से मनोहर बने कपोलों के सान्द्र (कान्ति के घनीभूत) हो चमकते समय, अलकों के सिर के पिछले भाग में नृत्य करते हुए, चमकते हुए सुवर्ण-(सम) शरीर की कान्तियों के बिखरते समय, ॥ १९३० ॥

—करोड़ों मन्मथों के सौन्दर्य के शोभित होने पर, वहाँ आकर, सुन्दरता से, सब लोग जानें इस रूप मे, जनक की सभा में, जननुत (जनता से प्रशंसित) मंजूपा को मनुवंशतिलक (मनुष्यश्रेष्ठ) ने खोला। उसमें स्थित धनुप ऐसा था मानों धरणी के समस्त भार को अपने ऊपर रख, चिरनिद्रा में सुखी रहनेवाला शेपाहि (शेपनाग) हो, (अथवा) कालमेघ में शाश्वत रुचियों (कान्ति) के साथ, अचचल हो विलसित विद्युतदण्ड हो। निरुपम आकार से सम्पन्न, अधिक श्रेष्ठ बने उस धनुष को उठाकर, उत्तरीय को उतार कर,

शिवधनुभंग

—गर्व के साथ धनुष को हराने (उठाने) के लिए प्रयत्नशील राजाओं के बल को अपनी अरुण रत्नप्रभा रूपी प्रस्फुटित अग्नि की कराल

नक्कजमगु चापमवलील रामु । डॆक्कुवॆट्टुचुनुंड नॆरिंगि कौशिकुडु
'हरुनि चापमु रामुडतिसत्त्वयुक्ति । बॆरिगि नॆडिदॆ यॆक्कुवॆट्टुचुन्नाडु
अदरकु भूदेवि! यात्मलो नीवु; चॆदिरि चलिंपकु शेषाहि ! नीवु १९४०
कडक धरिंपुमु कमठेंद्र ! नीवु; । कडुनेमरकुडु दिक्करुलार ! मीर'
लनि मुनि पल्कग ना मेटिविल्लु । गॊनयमॆक्किंचि कैकॊनक राघवुडु
तन बाहुसत्त्वंबु दर्पंबु मॆरसि । जनकुतो ननियॆ ना चापंबु सूपि
'यिद जाल जुलकन; यिदि चाल ब्रात; ।
यिदि चाल निस्सार-मिदि चाल नलति;
तॆगगॊन निलुवदु; दीनि नायॆदुट । बॊगडिति पलुमारु भूपाल!' मनुचु
सुरलु खेचरुलु भूसुरुलु गिन्नरुलु । नरुलुनु नृपवरुल् नलि बर्विचूड,
नॆडपक तन जयंबॆल्लॆड जाटु । वडुवुन विलुगुणध्वनि सॆलंगिंचि
सीतगुणंबुलु सॆविसोकॆननग । जेति विंटि गुणंबु सॆविसोक दिगिचि
वडि रक्कसुलपट्टु वदलॆ नन्नट्टु । पिडिपट्टु वदलिन बॆटिलि पॆडॆत्ति

ज्वालाओं से निगल जाने के लिए उद्यत उस आश्चर्यप्रद धनुष को बड़ी सहजता (आसानी) से राम को डोरी चढ़ाते जानकर कौशिक ने कहा, 'शिव के चाप (धनुष) को आज यह राम अतिसत्त्वयुक्ति से डोरी चढ़ा रहा है। हे भूदेवी ! तुम आत्मा (मन) में काँपो मत। हे शेषनाग ! तुम डरकर विचलित मत होओ ।॥ १९४० ॥

हे कमठेन्द्र ! तुम सप्रयत्न (धरा का) वहन करो। हे दिग्गजो ! तुम सावधान रहो'। ऐसा मुनि के कहने पर, उस महान् धनुष पर डोरी चढ़ाकर, (उसे) ऊपर न उठाकर, अपने वाहु-सत्त्व (भुजवल) से सगर्व शोभायमान होते हुए, उस धनुष को दिखाते हुए, राघव ने जनक से (यों) कहा, 'यह (धनुष) बहुत हलका है, यह बहुत पुराना है, यह बहुत निस्सार है, यह बहुत क्षुद्र है। उठाकर, खैंचने पर नहीं ठहरेगा (टूट जाएगा)। इसकी (ऐसे इस धनुष की ही) मेरे सामने कई वार प्रशंसा आपने की है न भूपाल !' ऐसा कहते हुए सुर, खेचर, भूसुर, किन्नर, नर, नृपवरों को (भयातुर) भागते हुए देखने पर, धनुष के गुण (डोरी) पर टंकार दी, मानों वह (ध्वनि) निरन्तर राम की जय को सर्वत्र घोषित कर रही हो। हाथ से धनुष की डोरी को कान तक खींचा मानों (यह वता रहे हों कि) सीता के गुण कान तक पहुँच चुके है। (उसके वाद) उन्होने अपनी (मुट्ठी की) पकड़ इस तरह ढीली कर दी मानों राक्षसो की पकड़ (शक्ति) ढीली (कमज़ोर) पड़ गई हो।

पॆळपॆळध्वनुलुनु बॆटपॆट ध्वनुलु । गलय दिक्कुल बर्वग। विल्लु विरिगॆ;
१९५०
विरिगॆ राजन्युल विपुलमानमुलु;। पगिलु वारॆ भूभागमंतयुनु;
जिदिसॆ दिग्गजमुलु; शेषाहिम्रॊग्गॆ;। वॆदरॆ भूतमुलु; गंपिंचॆ लोकमुलु;
जनकुडु रामलक्ष्मणुलुनु गाधि । तनयुंडु नॊगि दक्क दक्किनवारु
बिट्टुल्कि मूर्छिलिल पृथिविपै वडिरि। नॆट्टन वॊडमु ना निष्ठुरध्वनिकि
जनकभूविभुडंत संतोषमंदि । घनविस्मयमुतोड गौशिकु जूचि
'ना माट दप्पक ना मुद्दुगूतु । नी महितात्मुनकिच्चॆद; निक
दडयक पॆन्डिलकि दशरथाधीशु ।गडु सम्मदमुन निक्कडिकि रप्पितु'

दशरथाह्वानमु

ननि दशरथुनकु नत्तॆरंगॆल्ल । विनुपिंचि तॊड्तेर वेड्कतो नपुडु
तन याप्तमंत्रुल दडयक पनुप । बनिपूनि वारु दत्पर बुद्धि नॆगि
जवनाश्वमुलमीद साकेतपुरिकि। दिवसत्रयमुन केतॆन्चि वेगमुन १९६०

मुट्ठी की पकड़ के छूटते ही वह (धनुष) ध्वनिपूर्वक टूटकर, फटकर, टूटने की ध्वनियों से समस्त दिशाओं को व्याप्त करता हुआ टूट गया। ॥१९५०॥

राजन्यों का विपुल मान (अहंकार) भंग हो गया। समस्त भूभाग पर दरारें पड़ गईं। दिग्गज विचलित हो गए। शेषनाग ने घुटने टेक दिए (धँस गया)। (पंच) भूत डर गए। लोक कम्पित हो उठे। एकदम उत्पन्न उस निष्ठुर (क्रूर) ध्वनि के कारण क्रम से जनक, राम-लक्ष्मण (और) गाधितनय को छोड़ शेष (सभी) लोग घबड़ाकर मूर्च्छित हो, पृथ्वी पर गिर पड़े। तब जनक महाराज आनन्दित हुए, अतिशय विस्मय से कौशिक को देखकर बोले, 'मैं अपने वचन से न हटकर (वचन के अनुसार) अपनी प्रियपुत्री को इस महितात्म (महान् व्यक्ति) को दूँगा। अब देरी न करके विवाह के लिए दशरथाधीश को (सादर) सम्मोद यहाँ बुलाऊँगा'।

दशरथ को निमन्त्रण

—ऐसा कह, दशरथ को सारा समाचार सुनाकर, सानन्द (उन्हें) लिवा लाने के लिए तब (जनक ने) अपने आप्त मन्त्रियों को, बिना विलम्ब किए भेजा। प्रेरित हो, वे भी तत्पर बुद्धि से, जवनाश्वों (तेज़ घोड़ों) पर (आरूढ़) होकर तीन दिन में शीघ्रता से साकेतपुरी पहुँच गए। ॥ १९६० ॥

दनयुल सेमंबु दलपोसि पोसि । वनरुचुनुन्न या बसुधेशु गांचि
विनतुलै जनकभूविभुडंपिनट्टि । जननुतवस्तुवुल् सन्निधि नुनिचि
'नी कुमारुडु शौर्यनिधि रामचंद्रु । डा कौशिकुनि याग मर्थितो गाचि
जनकु जन्नमु जूड जनुदेन्चि यंदु । मुनुलु राजन्युलु मुदमुतोड जूड
धर सुरासुरुलकु धरियिंपरानि । हरुविल्लु मोपेट्टि यवलील विरिचें;
विरिचिन जनकभूविभुडिच्चें सीत । नरलेक तन कूतु ना राघवुनकु;
ब्रियमार बेन्डिलकै पिलुव बुत्तेन्चें:। रयमुन विच्चैयु राजन्यचंद्र !'
यनवुडु दन मदि नानंदमंदि ।जनपति पेन्डिलकि जाटिंप बनिचि
जनकु मंत्रुलकु नुत्सवमोप्पनिच्चें । घनरत्न भूषण कनकांबरमुलु;
अरलेनि कुलगुरुडैन वसिष्ठु । धीरात्मुडगु वामदेवु जाबालि १९७०
घनुनि गश्यपुनि मार्कंडेयु महिम । दनरु कात्यायनु दन यमात्युलनु
निम्मुल बिलिपिंचि यिट्लनि पलिकें : 'सम्मदंबडर विश्वामित्रु नोद्द
देजंबुतोड विदेहु गेहमुन । राजिल्लुचुन्नारु रामलक्ष्मणुलु :
अंदु रामुडु राजुलंदरु बोंगड । नेन्दु नसाध्यमौ निंदुशेखरुनि

पुत्रों के कुशल के बारे में चिंतित, दुखी और खिन्न उस वसुधेश (दशरथ) को देखकर, जनकभूविभु के द्वारा भेजी गई जननुत (प्रशंसनीय) वस्तुएँ सविनय समक्ष रखकर (उन मन्त्रियों ने) कहा, 'तुम्हारे पुत्र शौर्यनिधि रामचन्द्र ने उस कौशिक के यज्ञ की प्रेम से रक्षा की, (उसके बाद) जनक के यज्ञ को देखने (मिथिला) आये। वहाँ मुनि (और) राजन्यों के देखते-देखते, (उन्होंने इस) पृथ्वी पर सुर-असुरों के लिए दुर्निवार शिवधनुष को (प्रत्यंचा) चढ़ाकर आसानी से तोड़ दिया। (धनुष) तोड़ने पर जनकभूविभु ने बिना संकोच के अपनी पुत्री सीता को समर्पित किया। बड़े प्रेम से विवाह के लिए (आपको) निमन्त्रित करने के लिए (हमें) भेजा है। हे राजन्यचन्द्र ! अब (आप) शीघ्र पधारें'। —ऐसा कहने पर, अपने मम में आनन्दित होकर, जनपति (राजा दशरथ) ने (अपने सेवकों को) विवाह की घोषणा करने के लिए भेजा। जनक के मन्त्रियों को उत्सव के साथ (धूमधाम से) घन (विशेष) रत्न-भूषण-कनकाम्बर (कनक-वस्त्र आदि) दिए। बिना संकोच रहनेवाले (निर्मल हृदय वाले) वसिष्ठ, धीरात्मा वामदेव, जाबालि, ॥ १९७० ॥

—घन (महान्) कश्यप, मार्कण्डेय, महिमा से शोभायमान कात्यायन (आदि मुनियों और) अपने अमात्यों (मन्त्रियों) को प्रेम से बुलाया (और) यों कहा—'विश्वामित्र के पास, तेजोयुक्त होकर राम-लक्ष्मण विदेह (जनक) के गेह (गृह) में सानन्द सकुशल विराजमान हैं। वहाँ राम ने

चापंबु विरिचिन जनकुंडु सीत । नेपार रामुन की निश्चयिंचि
येलमि बेन्डिलकि मम्मु नेगुदेन्डनुचु । वोलुपार वीरल बुत्तेन्चिनाडु;
जननुतंबगु गदा जनकु संबंध' । मनिन नंदरु मेच्चि; रम्मरुनाडु

दशरथुनि मिथिलाप्रयाणमु

मोगि वसिष्ठादि सन्मुनुलतो गूड । दगु बंधुराजन्यततुलतो गूड
रमणीय दिव्यांवरमुलतो गूड । विमल मौक्तिक वज्रविततिं गूड
गरिरथभट तुरंगमुलतो गूड । वरमाप्त वरमंत्रिपतुलतो गूड १९८०
विनुत पुण्यांगनाविततितो गूड । ननुपमवैभवंवलर गैसेसि
करमोप्प रथमेक्कि कल्याणमुनकु । नरनाथतिलकुडानन्द मुप्पोंग
गड गेलंकुल गजस्कंधंबुलेक्कि । कोडुकुल मुत्यालगोडुगुल नीड
बरम सम्मदमुन भरत शत्रुघ्नु । लिरुवुरु गोलिचरा नेपुदीपिंप
ग्रंदुगा निंडि मंगळतूर्यकोटु । लंदंद श्रोय महाभूति मेरसि

समस्त राजाओं की प्रशंसाएँ प्राप्त कर, सर्वथा असाध्य इन्दुशेखर (शिव) के धनुष को तोड़ डाला। जनक ने शोभा के साथ सीता को, राम को देने का निश्चय किया है। आनन्द से विवाह में (भाग लेने) आने के लिए (निमन्त्रित करने) सुचारु ढंग से इन (मन्त्रियों) को भेजा है। मेरे लिए जनक के साथ सम्बन्ध जननुत (लोकप्रशंसनीय) होगा न ?'। ऐसा कहने पर सब ने (उसका) अनुमोदन किया। उसके दूसरे दिन,

दशरथ का मिथिला प्रयाण

—वसिष्ठ आदि सन्मुनियों के साथ, योग्य वन्धु (रिश्तेदारों) (और) राजाओं (के समूहों) के साथ, रमणीय दिव्य-अम्बरों, विमल मौक्तिक (और) हीरकआदिरत्न, रथ, सुभटों, एवं तुरंगों के साथ, परम आप्त मन्त्रि-श्रेष्ठों के सहित, । ॥ १९८० ॥

विनुत (श्रेष्ठ) पुण्यांगनाओं (स्त्रियों) को लिए हुए, अनुपम वैभव के साथ सज-धजकर, वड़ी शोभा के साथ रथ पर आरूढ़ नरनाथ-तिलक (राजश्रेष्ठ) (दशरथ) ने (पुत्र के) कल्याण (विवाह) के लिए बड़े आनन्द के साथ मिथिला को प्रस्थान किया। (उनके) समीप (दोनों) पार्श्वों में गजस्कन्धों पर, मोतियों की छत्र-छाया में परम सम्मोद के साथ दोनों पुत्र भरत और शत्रुघ्न, शोभा के साथ चल रहे थे। जहाँ-तहाँ मंगल-तूर्य का विपुलनाद सर्वत्र मुखरित हो रहा था। (वह राजा) महान् विभूति-(ऐश्वर्य) युक्त हो शोभायमान थे। (इस प्रकार) जहाँ-तहाँ ठहरते हुए,

यॆडनॆड विड्डुलनेकवस्तुवुल । नडपिंप मंत्रुलु नाल्गु पैनमुल
जनियॆनु मिथिलकु; जनकुंडु नंत । निनकुलाधिपुनकु नॆदुरुगा वच्चि
कॊनिपोयि वेड्कलु कॊनलॊत्तनपुडु । जनपति कुचितोपचारमुल् सेसि
मुनिवरनिवहंबु मुदमंद नप्पु । डनियॆ महानंदमलर नातनिकि;
'ना कूतु दशरथ नरनाथ! येनु । नी कुमारुनि किच्चि नॆम्मि बॆन्ड्लकिनि
१९९०
निट विल्व बंचिन नीवु विच्चॆसि;। तटुगान नेनु गृतार्थु डनैति;
नी वसिष्ठ महामुनींद्रुडीवाम । देवादिमुनुलु नेतॆन्चुट जेसि
ना कोर्कि सिद्धिंचॆ: ना जन्म मलरॆ;। ना कुलंबतिपावनंबय्यॆ नेडु;
रविकुलोत्तमुलैन राजुलतोडि । यविरळसंबंधमदि नाकु गलिगॆ;
नॆल्लि पॆन्डिलि लग्न; मिष्टुल बिलिचि। तॆल्लंबुगा व्रवर्तिपगवलयु'
ननवुडु दशरथुंडट्लगाकनुचु । ननुरागमॊन्दि यत्यन्तमौ ब्रीति
जनकडमर्चिन सदनराजमुन ।ननुरक्ति वसियिंचॆ; नंत नच्चटिक
गडु ब्रीति रामलक्ष्मणुलतो गूड । नडरि विश्वामित्रुडरुगुदॆन्चुटयु
ननघुंडु दशरथुंडम्महामुनिकि । विनतुडै तग बल्कॆ विनयंबुतोड

मन्त्रियों के अनेक वस्तुओं की व्यवस्था करते रहने पर, चार दिन की यात्रा के बाद (दशरथ) मिथिला पहुँचे। तब जनक इनकुलाधिप (सूर्यवंशी राजा दशरथ) के समक्ष (अगवानी हेतु) आए; अपने साथ ले जाकर बड़े मोद के साथ जनपति का उचित उपचार (आदर-सत्कार) किया। मुनिवर-समुदाय (और) उस (दशरथ) को मुदित करते हुए (तब जनक यों) बोले, 'हे दशरथ-नरनाथ! मैंने अपनी पुत्री को आपके पुत्र को देकर, आनन्द से विवाह करने की बात (तय) कर, ।। १९९० ।।
—आपको यहाँ आमंत्रित किया है, अस्तु आपके पधारने से मैं कृतार्थ हुआ हूँ। इन महामुनीन्द्र वसिष्ठ (तथा) वामदेव आदि मुनियों के (शुभ) आगमन से मेरी इच्छाएँ पूर्ण हो गई हैं। मेरा जन्म सफल हुआ है। आज मेरा कुल (वंश) अतिपावन हुआ। रविकुलोत्तम नरेश के साथ मुझे अविरल सम्बन्ध प्राप्त हुआ है। कल (ही) विवाह का लग्न (मुहूर्त) है। अपने इष्टजनों को बुलाकर, आवश्यक कार्य सम्पन्न कीजिए'। उनके ऐसा कहने पर, दशरथ ने 'तथास्तु' कहकर, अत्यन्त अनुराग और प्रीति के साथ, जनक द्वारा सम्पन्न किए गए सदन-राज (श्रेष्ठ-भवन) में हर्षपूर्वक निवास किया। तब वहाँ अति प्रीति के साथ, राम-लक्ष्मण को साथ लिये हुए अति शोभा से विश्वामित्र पधारे। अनघ दशरथ ने उस महामुनि को प्रणाम कर विनय के साथ (यों) कहा,

'दनरार नी दय धन्युंडनैति । ननघात्म!' यन विनि यक्कौशिकुंडु
। २०००

'अकलंक चरितुंडवैतिवीवधिप ! । सुकृतंबु गाविंचि शुद्धुंडवैति;
रविकुलोत्तमुडैन रामुंडु पुत्रु । डवुट विशेषिंचि यधिकपुण्युडवु;
क्रतुरक्षणार्थमै कडगि राघवुल ।हितबुद्धि नाडु माकिच्चिचति वीवु;
नेम्मदि नुन्नारु नी सुतुल्; वीरि । नेम्मि गन्गोनु'मन्न नृपतिकि वारु
नालोन म्रोक्किन नलरि दीविंचि । यालिंगनमुसेसे ननुरागमेसग:
जनकुंडु ना दिवसंबुन नंत । दन यागकर्ममंतयु नेरवेर्चि
यलरुवेड्डुक निनुडस्त्राद्रि करुग । वोलुपोन्द ना रात्रि पोयिनपिदप
मरुनाडु कल्याणमंटपवेदि । नेरसि मंत्रुलतोड निंड गोल्वुंडि
यिम्मुल दन पुरोहितु शतानंदु । सम्मदंबुन जूचि जनकुंडु वलिके:

ऊर्मिळादुल विवाह यत्नमु

'ननघात्म! ना तम्मुडगु कुशध्वजुडु । गनुगोनवलयु नी कल्याण; मतडु
२०१०

'हे अनघात्म ! तुम्हारी कृपा से मैं धन्य हो गया हूँ'। यह सुनकर कौशिक (यों बोले), ॥ २००० ॥

—'हे अधिप ! तुम अकलंक-चरित्रवान् हुए हो। सुकृत (पुण्य) करके शुद्ध (पवित्र) हो गए हो। रविकुलोत्तम राम के (तुम्हारे) पुत्र होने के कारण, विशेष रूप से तुम अति पुण्यवान् बन गए हो। उस दिन यज्ञ-रक्षा के लिए तुमने सुन्दर मन से राघवों (राम-लक्ष्मण) को हमें दिया था। (देखो ! आज) तुम्हारे पुत्र सकुशल है। इन्हें आनन्द से देखो'। ऐसा कह रहे थे कि इतने में (राम-लक्ष्मण) दोनों ने नृपति को प्रणाम किया। (तब राजा ने आशीर्वाद देकर) अनुराग के उमड़ने पर, बड़े स्नेह से उन्हें गले से लगा लिया। उस दिन जनक ने अपना समस्त यज्ञ-कर्म सम्पन्न किया। सूर्य के अस्ताद्रि जाने के वाद बड़े आनन्द के साथ वह रात विताई। दूसरे दिन कल्याण-मंडप की वेदी तैयार कराई, मन्त्रियों के संग विराजमान हुए, आनन्द के साथ अपने पुरोहित शतानन्द को देखकर बोले—

ऊर्मिला आदियों का विवाह-प्रयत्न

—'हे अनघात्म ! मेरे अनुज कुशध्वज को यह विवाह देखना चाहिए (उसे यहाँ उपस्थित रहना चाहिए)। वह, ॥ २०१० ॥

दिरमुगा निक्षुमतीतीरभूमि ।बौरि नौप्पु सांकाश्यपुरिनुन्नवाड्डु;
अतनि 'दोड्तेर नी वरुगु' मनंग । नतिजवाश्वमुलतो नमरु तेरेक्कि ।
यतिवेगमुग नेगि या कुशध्वजुनि । नतुलितंबुग गनि यर्थिमै जेप्पि
'जनकपुत्रिकि नेडु जननाथवर्य !। मनुवंशचन्द्रुडौ मन रामुनकुनु
घनमुग बेन्डिलयौ गड्डवेड्क तोड;। जनकुंडु यत्नंबु जरुपंग गोरि
पति निन्नु दोड्तेर बनिचें नन्निपुडु । सतुलतो हितुलतो सकलसैन्ययुति
गदलुद मिप्पुडे घनत मिथिलकु । पद' मनि चेप्पिन बरग नंदरुनु
दनरारु वेडुक दग रथंबेक्कि । तनयाद्वयमुतोड दा नेगुदेन्चि
यनघमानसुडु शतानंदुनकु । जनकभूविभुनकु सद्भक्ति म्रौविक
येलमि नम्मानवाधीशु सम्मतिनि । नलुवौप्प सिंहासनमुन मूचुंडे; २०२०
नंत सुदामनुंडनुमंत्रि जनकु । डेन्तयु मुदमुन नीक्षिंचि 'नीवु
सनि वसिष्ठुनितोड सचिवुलतोड । दनयुलतो गूड दशरथेश्वरुनि
वेरवार दोड्कौनि वेग र'म्मनिन । नरिगि यातड्डु प्रीति नम्महीपतिकि
विनयंबुतो म्रौक्कि 'वेड्कतो नन्नु । जनकुडु पुत्तेन्चें जनलोकनाथ !

—(वह) इक्षुमती के तीर पर स्थिरता के साथ अत्यन्त शोभावान् सांकाश्यपुरी में है। उसे लिवा लाने के लिए आप जाइए'। (ऐसा) कहने पर, अति जवाश्व (तेज भागनेवाले घोड़े) से जुड़े रथ पर बैठकर, अति वेग से जाकर उस कुशध्वज को अनुपम रूप से देखकर, बड़ी इच्छा से (यों) कहा, 'हे जननाथवर ! जनक पुत्री का भानुवंशचन्द्र राम के साथ बड़े आनन्द और वैभव के साथ विवाह होगा। (तदर्थ) यत्न करने के लिए ज़रूरी समझकर राजा जनक ने तुम्हें लिवा लाने के लिए मुझे इस समय भेजा है। सतियों (पत्नियों), हितू-जनों, समस्त सेनाओं के साथ अभी प्रयाण करो, वैभव के साथ मिथिला चलो'। ऐसा कहने पर, अति आनन्द के साथ, सभी लोगों को साथ लिए, योग्य रथों पर चढ़कर, दो कन्याओं को लिये हुए, शोभायुक्त उस अनघमानस शतानन्द ने स्वयं पधारकर महाराज को सद्भक्ति के साथ प्रणाम किया, उस मानवाधीश की सप्रेम सम्मति पाकर, उपयुक्त सुन्दर सिंहासन पर विराजमान हुआ। ॥ २०२० ॥

तब सुदामन नामक मन्त्री को अत्यन्त मोद से देखकर जनक बोले, 'आप जाकर, वसिष्ठ आदि मुनियों, सचिवों (मन्त्री) और पुत्रों के सहित दशरथेश्वर को, सादर शीघ्र लिवा लाइए'। (ऐसा) कहने पर वे गए और उस महीपति (दशरथ) को प्रीति और विनय के साथ प्रणाम किया और बोले, 'हे जनलोकनाथ ! मुझे जनक ने प्रेम से (आपकी सेवा में)

मी युपाध्यायुलु मी तनूभवुलु ।मी यमात्युलु मीरु मेंड्रसिरावलयु'
ननिन ना दशरथुंडंदरतोड । जनि सुखासीनुडै जनकुतो ननियें:
'वरग वसिष्ठुंडु परमदेवतयु । गुरुवु नी यिक्ष्वाकु कुलमुन कॆल्ल:
सर्वज्ञुडगुट नी संयमीश्वरुडु । सर्वकार्यमुलकु जालु मा' कनिन
नप्पुडु दशरथु नन्वयक्रममु ।जॆप्प भाविंचि वसिष्ठुडिट्लनियें;

दशरथुनि वंशक्रममु

'नरनाथ! विनु, निर्गुण ब्रह्ममैन । हरि सगुणैकलीलाकृति दाल्चि २०३०
निजलीलकै नाभिनीरजंबंदु । नजुनि गल्पिपग हरिकजुडोंदवें:
भूमीश ! ब्रह्मकु बुट्टे मरीचि; ।या मरीचिकि बुट्टे नवनि गश्यपुडु;
नतनि कर्कुडु सुतु; डा जगदाप्त । मतिकि वैवस्वतमनुवु जन्मिचें;
नतनिकि निक्ष्वाकुडनु राजरत्न । मतनिकि गुक्षियौ नात्मसंभवुडु
कुक्षियन् भूनाथु कॊडुकु विकुक्षि;। यक्षतात्मुडु वाणुडतनि नंदनुडु
नतनिकि ननरण्यु; डतनिकि वृथुडु;। चतुरमानसुडु द्रिशंकुडातनिकि;

भेजा है । आपके उपाध्याय (गुरु), आपके तनूभव, आपके अमात्य (मन्त्री), इनसे सुशोभित होकर आप (विवाह-मण्डप में) पधारे'। (ऐसा) कहने पर, वह दशरथ, सबके साथ चलकर, सुख से आसन पर बैठकर, जनक से (यों) बोले, 'इस समस्त इक्ष्वाकुकुल के लिए वसिष्ठ परमदेवता और गुरु हैं। सर्वज्ञ होने के कारण ये संयमीश्वर (हमारे) सर्वकार्यों को कराने में दक्ष हैं'। ऐसा कहने पर, दशरथ के अन्वय-(वंश) क्रम को कहने का विचार कर वसिष्ठ (यों) बोले—

दशरथ का वंशक्रम

—'हे नरनाथ! सुनो, निर्गुण ब्रह्म ने सगुण लीला (मय) आकृति 'हरि रूप' को धारणकर, ।। २०३० ।।

—अपनी लीला के लिए नाभि-नीरज (नाभि-कमल) में अज (ब्रह्मा) की सृष्टि की। इस प्रकार हरि के अज (ब्रह्मा) पैदा हुए। हे भूमीश! ब्रह्मा के मरीचि पैदा हुए। उस मरीचि के (इस) अवनी पर कश्यप पैदा हुए। उसके पुत्र अर्क (सूर्य) हुए। उस जगदाप्तमति वाले (सूर्य) के वैवस्वतमनु उत्पन्न हुए। उनके इक्ष्वाकु नामक राजरत्न (और) उनके कुक्षि नामक आत्मसम्भव (पुत्र) जन्मे। कुक्षि नामक भूनाथ के पुत्र विकुक्षि हुए। निर्मल आत्मावाले विकुक्षि के पुत्र वाण

नतनिकि दनयुंडु ना हरिश्चंद्रु; । डतनिकि लोहितुंडनु राजवर्यु;
डतनिकि धुंधुमारावनीनाथु; ।डतनिकि युवनाश्वुडनु नरेश्वरुडु;

युवनाश्वुनि वृत्तान्तमु

नतनिकि ब्रियभार्य लतिरूपवतुलु; । सतुलिद्दरकु बुत्रसंततिलेमि
नंतट ना राजु नखिल सन्मुनुल । संतति कोरकुनै सरग रप्पिंचि
२०४०
यामहात्मुलकुनु नर्घ्यपाद्यमुलु ।प्रेमतो दग निच्चि प्रियवाक्यमुलनु
'घनुलार! नन्नुनु गरुणिंचि मीरु । दनयुल नाकुनु दयसेयवलयु'
ननि विन्नविंचिन ना राजुनकुनु ।ननुवोन्द नम्मुनुलपुडिट्टुलनिरि:
'ऐंद्रयागमु सेयु मवनीश! भक्ति । सांद्रंबुगा; बुत्रसंतति गलुगु'
नन जन्नमुन कप्पुडखिलवस्तुवुल । ननुवोन्द देप्पिंचे ना क्षणंबुननु:
नैंद्रयागंबनु ना मखंबपुडु । सांद्रानुमोदुलै संयमीश्वरुलु
पुत्रलाभंबुकै पोलुपोन्द नंत । चित्रयज्ञमु दारु सेयंग नंदु
जलमुलु मंत्रिंचि जलकुंभमुलनु । नलरार नियतिचे नट्टु दाचियुंड

हुए। उसके अनरण्य (और) उसके पृथु (और) उसके चतुरमानस त्रिशंकु हुए। उसके पुत्र हरिश्चन्द्र (और) उसके लोहित नामक राजवर हुए। उसके धुन्धुमार नामक अवनीनाथ (और) उसके युवनाश्व नामक नरेश्वर हुए।

युवनाश्व का वृत्तान्त

—उस (युवनाश्व) की दोनों प्रिय पत्नियाँ अतिरूपवान् थीं। दोनों की पुत्रसन्तति नही हुई। उस राजा ने सन्तान (प्राप्ति) के लिए अखिल सन्मुनियों को शीघ्र बुलवाया; ।। २०४० ।।
—(और) उन महात्माओं को प्रेम से, उचित रूप से अर्घ्य-पाद्य देकर (यों) वोले, 'हे महात्माओ! मुझपर कृपाकर आपको मुझे पुत्र प्रदान करने चाहिए'। ऐसा निवेदन करने पर, उस राजा (के मन) की अनुकूलता के अनुरूप उन मुनियों ने तव (यों) कहा, 'हे अवनीश! भक्तिपूर्वक तुम ऐन्द्रयाग करो। तुम्हारे पुत्र-सन्तति होगी'। (ऐसा) कहने पर (राजा ने) यज्ञ के लिए (आवश्यक) सभी वस्तुओं को मनोरम रूप से उसी क्षण मँगवाया। तव संयमीश्वरों ने सहर्ष ऐन्द्रयाग नामक उस मख (यज्ञ) को पुत्रलाभ के लिए आरम्भ किया। तव सुघड़ाई से स्वयं चित्रयज्ञ किया। उसमें जल को अभिमन्त्रित कर जलकुम्भों को (मुनियों

धरणीशुडाराति दप्पितो नंत। मरपोन्दि या यज्ञमंदिरमंदु
गलशंबुलो नीळ्ळु ग्रक्कुन द्राव। जलहीनमगु कलशंबुनु जूचि २०५०
'येवरु द्राविरि जलं? बेंटु पोये?' ननुचु। ग्रविमलात्मुलु वारु भावनिरीक्ष
नरसि या नृपतिये या नीरु द्रावु। टेरिगि चोद्यंबंदि यिदि देवमाय
यनि चूचुचुंडग ना नृपालकुडु। घनमगु गर्भंबु गडुवेग दाल्चें
गर्भमंतट वडिकडुजोद्यमलर। नर्भकुंडुदयिचें; ना राजु चच्चें;
गडगुचु ऋषुलेल्ल गडुदु:खमंदि। सडलनि यम्मंत्रसामर्थ्यमुलनु
वनिवडि युवनाश्वु ब्रतिकिंचि; रंत। ननुपमशुभमूर्तिये युंडेनतडु;
वरुस तोडुत जक्रवर्ति चिह्नंबु। लरुदार नुंडेडि या पुत्रु जूचि
यितडेडुदीवुलु नेलुनटंचु। जतुरत ऋपुलेल्ल संतोपपडिरि:
अल युवनाश्वुंडु ना मौनिजनुल। केलमितो धनरासुलिच्चिन जनिरि;
तल्लिये लेनिकतंवुन वालु। डल्लन नाकोनि यट नेड्चुचुंड २०६०
वरुस नायिद्रुंडु वच्चि ता नप्पु। डरयंग ना शिशुवाक्रलिदीर
वेनुपोन्दगा नोर वेनुव्रेलु वेग। नुनिचिन नमृतंवु नोय्यन द्राव

ने) मनोहरता से नियमपूर्वक वहाँ (यज्ञशाला में एक ओर) छिपाकर रख दिया। उस रात को प्यास के मारे राजा (युवनाश्व) भूल से उस यज्ञमन्दिर में रखे कलश के अभिमंत्रित जल को झट से पी गए। (दूसरे दिन) जल-रहित कलशों को देखकर, ॥ २०५० ॥

—'किसने जल पिया? (जल) किधर गया?' ऐसा कहते हुए, उन प्रविमल-आत्मा वाले मुनियों ने ध्यानपूर्वक विचार किया तो उन्हें विदित हो गया कि स्वयं नृपति ही इस जल को पी गए हैं, इसे दैव-माया मानकर देखते रहे कि नरनाथ ने वड़ी शीघ्रता से गर्भ-धारण किया। अति आश्चर्यप्रद रूप से उस गर्भ से तव एक अर्भक (शिशु) पैदा हुआ (और) राजा मर गया। (तव) सभी ऋषि अत्यन्त दुखी हुए (और) सुदृढ मन्त्र-सामर्थ्य से यत्न करके युवनाश्व को फिर जीवित कर दिया। तव वह (राजा पुनः) अनुपम शुभमूर्ति (युक्त) हो गया। क्रम से, आश्चर्य-जनक रूप से चक्रवर्ति के चिह्नों से युक्त उस पुत्र को देखकर, सभी ऋषि-प्रवीण यह जानकर प्रसन्न हुए कि यह सप्तद्वीपों पर शासन करेगा। तव युवनाश्व के आनन्द से अतुल धन-राशि देने पर वे मुनिगण विदा हो गये। माता के न होने पर वालक भूख के मारे रोने लगा। ॥२०६०॥

तव इन्द्र स्वयं आये और मनोज्ञता से (शिशु के) मुख में शीघ्रता से (अपना) अंगूठा दे दिया, अमृत का पान करने से तुरन्त शिशु की

सुध ग्रोलुटयुजेसि शुभयुतु पेरु । बुधुलतो मांधात भूमीशुडनुचु
नतनिकि नामधेयंबट्टु चेसि । यतिवेगमुन बोये ना बिडौजुंडु;
अंत ना मांधात यल पूर्णचंद्रु । नंतटि प्रभतोड नतिशयिल्लुचुनु
रूढिगा यौवनारूढुडै यंत । गाढ शौर्यस्फूर्ति गड्ु देजरिल्लि
रावणादुल बहुरणमुल गॅलिचि । भूवलयंबेल्ल बॊन्दुगा नेलि
विष्णुनिभक्तुडै वेलसि यागमुलु । जिष्णुबलंबुन जेयुचुनुंडे;
ना राजुनकु विमलांगि यन् सतिकि । भूरितेजोयुतुलु पुत्ररत्नमुलु
नरयंग मुचुकुंदु डा सुसंधियुनु ।दरुणुलेबंड्रु नु दग जनयिप २०७०
सुदतुल ब्रायंबु सौरिदि वच्चिननु । मुदमुन सौभरि मुनिपति किच्चे;
नतिवल कग्रजुडगु मुचुकुंदु । डतिवेड्क हरिभक्तुडै येगें दिविकि
नातनि सोदरुंडा सुसंधियुनु । नाततपुण्यात्मुडै भुविनेले,
नतनिकि ध्रुवसंधि यनुराजु पुट्टे । । नतडु प्रसेनजित्तनु राजु गनिये;
दॊरय ब्रसेनजित्तुकु भरतुंडु । नरय ना भरतुनकसितुंडु वुट्टे;

भूख मिट गई। सुधा का पान करने से (उस) शुभलक्षण (वाले बालक) का, बुधजनों (की सलाह) से मान्धाता भूमीश नाम रखकर, वह बिडौज (इन्द्र) (इन्द्रलोक को) शीघ्र चले गए। तब वह मान्धाता भी पूर्णचन्द्र के समान प्रभा से युक्त हो (नित्य) बढ़ने लगा। यौवन पर आरूढ़ होते ही, प्रगाढ़ शौर्य-स्फूर्ति-सम्पन्न (मान्धाता), रावण आदियों को अनेक युद्धों में जीतकर, समस्त भूमण्डल पर सुन्दरता से शासन करने लगा। विष्णु की भक्ति और जिष्णु (इन्द्र) के बल से उन्होंने (अनेक) यज्ञ किये। उस राजा के विमलांगी नामक पत्नी से अति तेजस्वी पुत्ररत्न मुचुकुन्द (और) सुसन्धि (तथा) पचास पुत्रियाँ उचित रूप से उत्पन्न हुई। ॥ २०७० ॥

पुत्रियों के क्रम से वयस्क (सयानी) होने पर, प्रसन्नता के साथ उन्हें सौभरि नामक मुनिपति को (ब्याह) दिया। उन पुत्रियों के अग्रज मुचुकुन्द अति आनन्द से हरिभक्त हो (स्वर्ग को) सिधार गए। उनके सहोदर सुसन्धि ने अति पुण्यात्मा होकर पृथ्वी पर शासन किया। उसके ध्रुवसन्धि नामक राजा पैदा हुआ, उसने प्रसेनजित नामक राजा को जन्म दिया। प्रसेनजित के भरत हुआ, उस भरत के असित उत्पन्न हुए। उसके राज्य करते समय, हैहयवंश के नारंग, शशिबिन्दु नामक अतुल पराक्रमशाली, दारुण आकारवाले (और) तालजंघाओं वाले शत्रुओं ने मिलकर अनुपम रूप से अतिघोर युद्ध किया (और) उसका (असित का)

नतडु राज्यमु सेय नातनि शत्रु । लतुलपराक्रमुलैन हैहयुलु
दारुणाकारुलु दाळजंघुलुनु । नारंग शशिबिंदु लनुवारु गूडि
यतिघोरयुद्धंबु नतुलत जेसि ।यतनि ना यनिलोन हतु जेसि चनिरि;
अंत नातनि सतुलतिदुःखमंदि । मंत्रुल राज्यंबु मरि दीर्प नुनिचि
मेलिमि नुंडिरि; मेलतलिद्दरनु । गाळिंदि यनु सति गर्भमैयुंडे; २०८०
मेलौर्वलेक या मेलतलंदन्य । सालंग सवति मच्चरमुन जेसि
गर्भिणियै युन्न काळिंदि कपुडु । गर्भंबु जेरुप नोक्कट विचारिंचि
योर्वक विषमु प्रयोगिंचे; नंत । ना विषमुन गर्भमट वीडिपडक
ता वेगि वेदनदल्लडंबंदि । या वनितयु दुपाराद्रिकि नरिगि
च्यवनुनि गांचि या संयमींद्रुनकु । नविरळभक्तितो नल्लन म्रोक्कि
तनडु वृत्तांतंबु दग विन्नविप । विनियु ना पुत्रिवि वेरवकुमनुचु
वोन्दार गरुणतो बुवोडि नेत्ति । कंदुवदृष्टिनि कडगि लो जूचि
'प्रतिपक्ष दमनुंडु परमधार्मिकुडु । नतुलतेजुंडु महात्मुंडु नगुचु
वरकीर्तिवंतुंडु वंशवर्धनुडु । परमरूपंबुन भासिल्लुवाडु
बोगडोन्द गरमुतो बुत्रुंडु नीकु । नगुगाक गाळिंदि !' यनुचु दीविप
२०९०

उस युद्ध में वधकर चले गए। तब उसकी दोनों पत्नियाँ अति दुखी हुईं। (उसके बाद) मन्त्रियों पर राज्य (भार) रख शान्ति से जीवन विताती रहीं। उन दोनों नारियों में कालिन्दी नामक रानी गर्भवती थी। ॥ २०८० ॥

सौतियाडाह के कारण दूसरी (रानी) से यह सहा नहीं गया। जब कालिन्दी गर्भवती थी, तब उस गर्भ को हानि पहुँचाने का एक उपाय सोचकर, विष का प्रयोग किया। तब उस विष के कारण गर्भपात न होकर, अति वेदना से व्याकुल होकर, वह वनिता तुपाराद्रि (हिमालय) को गई। (वहाँ) च्यवन ऋषि का दर्शनकर, उस संयमीन्द्र को अविरल-भक्ति से प्रणाम किया (और) उचित रूप से अपना वृत्तान्त कह सुनाया। सुनकर 'मेरी पुत्री हो, डरो मत' कहते हुए, (मुनि ने) स्नेह और करुणा से उस लतांगी को उठाया। वात्सल्य दृष्टि से अन्तरंग (सारी कथा) को जानकर, यह कहकर आसीसा कि 'हे कालिन्दी! शत्रुदमन, परम धार्मिक, अतुल तेजोयुक्त, महात्मा, वरकीर्तिवान्, वंशवर्द्धन, परमरूपवान्, अति प्रशंसनीय पुत्र तुम्हें होगा'। ॥ २०९० ॥

वलगोनि यम्मुनीश्वरुनकु म्रोक्कि । यॆलमितो दनयिंटि केगि या युवति
यतिमुदंबुन नुन्न ना शुभांगिकिनि । सुतुडुदयिंचॆनु शुभमुहूर्तमुन;
गरमॊप्प बुत्रुनि गाँचि कालिंदि । गरमुतो मुदमंदॆ गड्डु संभ्रममुन;
नातंडु शत्रुल नणचि राज्यंबु । चेतोमुदंबुन जेयुचुनुंडु
सततंबु विलसिल्लॆ सगरुडन् पेर, । नतनिकि दनुजन्मुडसमंजसुंडु;
नतनिकि सुतुडय्यॆ नंशुमदाख्यु; । डतनि पुत्रुडु दिलीपावनिनाथु;
डतनिकुन्नतपुण्युडगु भगीरथुडु; । सुतुडातनिकि गकुत्स्थुंडनु राजु;
नतनिसूनुडु रघुवनु महीपालु; । डतनि पुत्रुडु पुरुषादुडन् राजु;
गमनीयसितकीर्ति कल्माषपादु; ।डमर शंखणुडय्यॆ नतनिकि; कातनिकि
सुतुडु सुदर्शन क्षोणीतलेशु; । डतनि तनूजन्मुडग्निवर्णुडु; २१००
नतनिकि शीघ्रगुं; डतनिकिमरुवु।सुतु; डातनिकि ब्रशुश्रुकुडु; नातनिकि
सुतुडय्यॆ नंबरीषुंडनु राजु; । सुतुडातनिकि जनस्तुत्युंडु नहुषु;
डतनिकि सुतुडु ययाति यन् मेटि; । यतनिकि नाभागु: डातनिकजुडु;
नतनिकि नतिरथुंडगु दशरथुडु । सुतुडय्यॆ; सफलनिस्तुलमनोरथुडु
रामुडीदशरथराजु तनूजु; । डेमनि वर्णितु ने निंक नतनि?
नितनिकि नी कूतु नी गंटि; वीवु। कृतकृत्युडवु; शुभांकितमय्यॆ गुलमु'

प्रदक्षिणाकर, उस मुनीश्वर को प्रणामकर, प्रसन्नता से वह युवती अपने घर गई। अति मोद के साथ रहनेवाली उस शुभांगी के एक शुभ-मुहूर्त में पुत्रोदय हुआ। अति शोभायुक्त पुत्र को देखकर कालिन्दी बड़े सम्भ्रम के साथ अत्यन्त प्रसन्न हुई। वह (पुत्र सयाना होने पर) शत्रुओं का दमन कर आनन्द के साथ राज्य करने लगा। सगर के नाम से वह शोभायमान हुआ। उसके पुत्र असमंजस (और) उसके अंशुमदाख्य (अंशुमान) पुत्र हुआ जिसका पुत्र भूनाथ दिलीप हुआ। उसके उन्नतपुण्यवान् भगीरथ हुआ। उसके ककुत्स्थ नामक पुत्र हुआ। उसका पुत्र रघु नामक महीपाल था। उसका पुत्र पुरुषाद (नामक) राजा था। उसका कमनीय सितकीर्तिवाला कल्माषपाद हुआ। उसके शंखण हुआ, जिसके पुत्र सुदर्शन का क्षोणीतलेश (और) उसका पुत्र अग्निवर्ण था। ॥ २१०० ॥

उसका शीघ्रग हुआ, उसका पुत्र मरु था। उसका प्रशुश्रुक हुआ। अम्बरीष नामक राजा उसका पुत्र हुआ। उसका (पुत्र) लोकवन्दित नहुष हुआ। उसका पुत्र ययाति नामक वीरश्रेष्ठ था। उसका आभाग (और) उसका अज हुआ। उसका पुत्र अतिरथ हो दशरथ अति सफल-मनोरथ हुए। ये राम इसी राजा दशरथ के तनूज हैं। अब मैं

ननि यिट्लु रघुवंशमभिनुति सेय । विनि शतानंदुंडु विमलमानसुंड्
संतोषमुन बॊन्दि समयज्ञुडगुचु । वंतंबु मॆरसि शुंभद्वाक्य सरणि
जनकानुमति सभासदुलॆल्ल विनग । मुनि वसिष्ठुनि जूचि मुदमॊप्प बलिकॆ:
'मुनिनाथ ! मी चेत मुदमार विंटि । मनघात्मु दशरथुनन्वयक्रममु
२११०
सन्नुतिकॆक्कु नी जनकुनन्वयमु । सॆन्नॊन्द मी कॆनु जॆप्पॆद विनुडु

जनकुनि वंशक्रममु

सद्विजपरमहंस प्रतिपाद्यु । डद्वितीय ब्रह्मैन यच्युतुनि
नाभिसरोजंबुननु ब्रह्मवुट्टॆ; । ना भूतनिर्मात यगु धात वलन
बुट्टॆ मरीचि; या पुण्य वर्तनुनि । पट्टियै कश्यपब्रह्म जनिंचॆ:
नतनिकि दिननाथुडात्मजुंडय्यॆ; । मतिमंतुडतनिकि मनुवु जन्मिंचॆ;
नम्मनु वच्युतध्यानकालमुन । दुम्मग वैवस्वतुनि तुम्मु वलन
निर्मलाचारुड्डु नीतिकोविदुड्डु । धर्मशीलुंडु नुत्तमगुणान्वितुड्डु

इसका अधिक क्या वर्णन करूँ ? इसे अपनी पुत्री देने के योग्य बने हो। तुम कृतकृत्य हुए हो। तुम्हारा कुल (इससे) शुभांकित हो गया है'। इस प्रकार (वसिष्ठ) के रघुवंश की अभिनुति करते सुनकर, विमलमानस शतानन्द प्रसन्न हुए। समयज्ञ होने से, स्पर्धा से चमककर, अतिशय वाक्यों की पद्धति में, जनक की अनुमति से, मुनि वसिष्ठ को देखकर, बड़े आनन्द से वे (शतानन्द) यों बोले, जिसे सभी सभासद सुन रहे थे— 'हे मुनिनाथ ! तुम्हारे मुख से अनघात्म दशरथ के अन्वयक्रम को हमने बड़े आनन्द से सुना। ॥ २११० ॥

—प्रशंसनीय इस जनक के चारु अन्वय (वंशावली) के बारे में अब मैं सुनाऊँगा।

जनक का वंशक्रम

—'सद्विजों (और) परमहंसों (मुक्त-आत्माओं) के द्वारा प्रतिपादित अद्वितीय ब्रह्म अच्युत के नाभिसरोज में ब्रह्मा पैदा हुए। (पंच) भूतों के निर्माता उस धाता (ब्रह्मा) के मरीचि पैदा हुए। उस पुण्यवर्तन (मरीचि) के पुत्र कश्यपब्रह्म पैदा हुए। उनके आत्मज दिननाथ, और मतिमान दिननाथ के मनु (वैवस्वत) पैदा हुए। अच्युत का ध्यान करते समय मनु ने छींका तो उस वैवस्वत की छींक से निर्मल आचारवान्, नीतिकोविद, धर्मशील, उत्तम गुणान्वित, विमल मूर्तिवान्, त्रिलोकों में

विमलमूर्ति त्रिलोकविश्रुतकीर्ति । निम यनु राजु मानिततेजुडोप्पे;
ततनि पुत्रुडु मिथिः यतनिकि जनकु । डतनिकुदावसुं; डम्महीजानि
तनयुंडु नंदिवर्धनुडु; सुकेतु । डनु विभुडतनिकि; नम्महात्मुनकु २१२०
राजर्षि यगु देवरातुडेल्लेंडल । राजिल्ले; मरि बृहद्रथुडु दत्सुतुडु;
ततनिकि नंदनुडु महावीरु; डतनि । सुतुडय्ये सुधृतिः या सुधृतिकि दृष्ट
केतु डातनिकुरुकीर्ति हर्यश्वु । डातनिकिनि मरुं; डामरुनकु
सुतुडु प्रतींधकक्षोणीशु; डतनि । सुतुडु कीर्तिरथुंडु; सुतुडाविभुनकु
देवमीढुंडु; तदीयुडौविबुधु; । डा विबधुनि पुत्रुडगु महीध्रुनकु
गीर्तिरातुडुः वानिकिनि महारोमु । डार्तिदूरुडुः वानि का स्वर्णरोमुः
डा स्वर्णरोमुंडु ह्रस्वरोमाख्यु । भास्वरगुणशालि बडसेः नातनिकि
जनकभूपाल कुशध्वजुल् वीरु । जनियिंचिरिरुवुरु सौजन्यधनुलुः
जनकुडंतट महीजनुल बालिप । गनि योक्कनाडु सांकाश्यभूविभुडु
धन्य विक्रमुडु सुधन्वुडन्वाडु । सैन्यसमेतुडै चनुदेन्चि मिथिल २१३०
सीतासमेतंबु शिवुनि विल्लडुग । दूत वुत्तेन्चिन द्रोपिंचे वेंडल
बैवच्चि हरुनि चापंबु सीतयुनु । गावलेननि घोरकलहंबु जेय

विश्रुत कीर्तिमान, मानित तेज (मान्य तेजोयुक्त) निमि नामक राजा उत्पन्न हुआ। उसका पुत्र मिथि था। उसके जनक (और) उसके उदावस हुए। उस राजा का पुत्र नन्दिवर्द्धन हुआ। उसके सुकेतु नामक विभु (राजा) हुआ। उस महात्मा के ॥ २१२० ॥

—राजर्षि देवरात हुए। उनके पुत्र बृहद्रथ थे। उसके पुत्र महावीर, उसके पुत्र सुधृति, जिसके पुत्र धृष्टकेतु हुए। उसके महान् कीर्तिसम्पन्न हर्यश्व हुआ। उसके मरु (और) उस मरु के पुत्र राजा प्रतीन्धक हुआ। उसका पुत्र कीर्तिरथ (और) उस राजा के देवमीढ (और) उसके विबुध, उस विबुध के पुत्र महीध्र के कीर्तिरात, उसके दुःख को दूर करनेवाला महारोम, (और) उसके स्वर्णरोम हुआ। उस स्वर्णरोम ने ह्रस्वरोम नामक तेजोवान्-गुणशाली पुत्र को प्राप्त किया। उस (ह्रस्वरोम) के राजा जनक (और) कुशध्वज नामक दो (पुत्र) पैदा हुए। ये दोनों सौजन्य की मूर्ति हैं। जब जनक (प्रजा पर) राज्य कर रहे थे, उसे देख, एक दिन सांकाश्य-नरेश सुधन्व जो धन्यविक्रम वाला था, सेना सहित मिथिला आया, ॥ २१३० ॥

—(और) सीता सहित शिवधनुष को प्राप्त करने के लिए (जनक के पास) दूत भेजा। उसे (जनक ने) विमुख कर दिया। (इस उपेक्षा पर)

जनकुंडु संगरस्थलि वानिगूल्चि । तन तम्मु बून्चे नद्धरणिकि; नंत निमिवंशमुन बुट्टु नृपतुलंदरुनु । समधिकयोग विज्ञानसंप्रदल चिरजीवुलटुगान जेच्चेर वीरि । तरमुनु गॊन्चेमै तगुनु लॆक्क' कनि जनकुनि वंशंबु सद्वर्तनंबु । गॊनियाडि, या सीतगुणमुलु वॊगडि विशद प्रतापुनि विमलभाषणुनि । दशरथु गनुगॊनि 'दशरथाधीश नी तनूजुनि रामु नित्याभिरामु ।सीत तोडुत बॆन्ड्लि सेलुवॊप्प जेसि यलघुकीर्तुल वॊन्दु' मनु शतानंदु । पलुकुल दशरथपति युत्सहिंचि २१४०

घनुनि वसिष्ठुनि गाधिनंदनुनि ।गनुगॊनि वारितो गडुवेड्क वलिकॆ: 'जारु विचारु नी जनक भूविभुनि । मीरडुगुंडु सौमित्रकूर्मिळनु ब्रकट गुणोत्तरुल् भरतशत्रुघ्नु । लकु गुशध्वजनृपालकुनि कूतुलनु' नन वारु जनकुन कत्तॆरंगॆल्ल ।विनुपिंचि यनुमति वेड्कतो वडसि जनकुनि वाक्यमुल् सकलंबु वेड्क । दनरार जॆप्पि रा दशरथुतोड;

उसने (सुधन्व ने) चढ़ाई की (और) शिवधनुष तथा सीता के लिए घोर युद्ध किया। जनक ने (युद्धभूमि) में उसको (मार) गिराया, (और) उस धरणी (सांकाश्य भूमि) पर अपने भाई को राजा वनाया। तव से जनक से लेकर, उस वंशजात सभी राजाओं के लिए धरती पर 'जनक' नाम ही प्रशस्त (श्रेष्ठ) माना गया। इस प्रकार निमि वंश में उत्पन्न सभी नृपति समधिक विज्ञान-योग-सम्पत्ति से युक्त और चिरजीवी होते रहे हैं। अतः इनकी पीढ़ियों की गणना कहाँ तक सम्भव है—'। इस प्रकार जनक के वंश, उनके सदाचरण (आदि) की प्रशंसा कर, सीता के गुणों की सराहना की (और) विशद प्रताप (तथा) विमलभाषी दशरथ को सम्बोधित कर (शतानन्द ने) इस प्रकार कहा—'हे दशरथाधीश! अपने आत्मज नित्याभिराम राम का सीता के साथ मनोहरता से विवाह करके विशद कीर्ति को प्राप्त करो'। शतानन्द की इन वातों से राजा दशरथ उत्साह से, ॥ २१४० ॥

—महान् वसिष्ठ (तथा) गाधिनन्दन को देख, वड़े आनन्द से उनसे (यों) वोले—'आप चारु विचारशील महाराज जनक से निवेदन करें कि सौमित्र (लक्ष्मण) से ऊर्मिला (और) गुणों में श्रेष्ठ भरत-शत्रुघ्न से कुशध्वज नृपाल की पुत्रियों को व्याह दें। (ऐसा) कहने पर उन्होंने वह समस्त विषय जनक को कह सुनाया (और) सानन्द उसकी अनुमति प्राप्त करके, जनक के समस्त वाक्यों को (अर्थात् स्वीकृति को), आनन्द से उल्लसित दशरथ को कह सुनाया। अनुराग से आलोड़ित राजा जनक ने, दूसरे

ननुराग मुप्पोंग्ग ना मरुनाडु । घनशुभग्रहदृष्टि गलुगुट जेसि
पनिवडि युत्तर फल्गुनियंदु । जनकुंडु लग्ननिश्चयमु सेयिंचि

पुरालंकारमु

पुरमुनु दन यंतिपुरमु गैसेय । बरिचारकुल वेग वंचिन वारु
गंधकस्तूरिकाकलितांबुपूर । गंधिलसकलमार्गधरांगणंबु
चीनिचीनांबर श्रेणीवितान । नानामणितोरण ध्वजांचितमु २१५०
फलभारनम्ररंभास्तंभपूग । कलित प्रतिद्वारकक्ष्यातरंबु
सांकवलिप्तविस्तारवितर्थि । कांकितरंगवल्लयादि शोभितमु
मणिशातकुंभ कुंभवितर्कितार्क । गणसौधगोपुरोत्करशिरोग्रंबु
दीपित माणिक्य दीप सांब्राणि । धूप पुष्पकलाप धूर्वहापणमु
नै पुरमेल्लँड नलर गैसेसि । नैपुणि मेंऽसि यंतःपुरंवंत
गरमोप्प गैसेसि 'कल्याणवेदि । विरचिंपु' डन शिल्पवेदुलंतयुनु

दिन अत्यंत शुभ-ग्रह-दृष्टि को देखकर, उत्तर-फाल्गुनी (नक्षत्र) में लग्न का निश्चय किया।

नगर को सजाना

—(उन्होंने) नगर (और) अपने अन्तःपुर को सजाने के लिए तत्काल परिचारकों को भेजा। उन्होंने (नगर के) सभी मार्गों पर गन्ध (चन्दन)-कस्तूरी से सुवासित जल से (छिड़काव कर) पूरी तरह से धरती को सुगन्धमय बनाया। चीनि-चीनाम्बरों (रेशमी वस्त्रों) की पंक्ति वितानों (तम्बुओं) से, नाना मणिमय तोरणों (और) ध्वजाओं से (सारे नगर को) सजाया। ॥ २१५० ॥

प्रत्येक द्वार (तथा) कक्ष (घर) को फलभार से झुके हुए रम्भा-(कदली के) स्तम्भों और पूग (सुपारी के) पल्लवों से विभूषित किया। सांकवलिप्त (मृगमद से विलेपित) विस्तृत वितर्थिकाओं (चबूतरों) को रंगवल्लियों से सुशोभित किया। मणिमय-शातकुम्भ (सुवर्ण-कलशों) से युक्त सौध-गोपुरों के शिरोग्र भागों का समूह अर्क (सूर्य) गण की भ्रान्ति उत्पन्न कर रहा था। दीप्त माणिक्य-दीपों, सांब्राणि (वारम्भी) धूप के (धुएँ) (और) पुष्पकलाप के भार को मानों बाजारें वहन कर रही थीं। इस प्रकार नगर को सर्वत्र सानन्द सजाकर, तब अन्तःपुर को अधिक नैपुण्य के साथ सजाया। फिर 'कल्याण-वेदी का निर्माण कीजिए' कहने

बच्चराजगतिपै बसिडि कंबमुलु । मेच्चु रा निलिप यामीद नीलंपु
बोदेलु गुरुविंदमुल दूलमुलुनु । बादुगा निडि तीरुपड जेक्कडंपु
गोमेधिकंबुल कोणिगलु ववििर । गा मल्चि पै वज्रगार योसंगि
हाटकमणिमयायत कवाटमुल । वाटंबुगा नाल्गु वाकिड्लमर्चि २१६०
यंदुल बंगरुहरुवु चित्तरुवु । लंदंबुगा दीर्चि हरिनीलकरुल
गमि गमिचिन पटिकंपु सिंगमुल । गमकमौ सोपानगतुलेर्पडिचि
कलितलामज्जकायमानमुल । गलुवडंबुलु डंबुगा जुट्टुगट्टि
यालोन नेकांडमौ बलुपच्च । मेलिपेन्ड्लियरुंगु मृगनाभि नलिकि
मुत्तेम्पुनिग्गुल म्रुग्गुलेर्पडिचि । चित्तजजनक लक्ष्मी विवाहंबु
गुजरातिकेंपुल गोड लिखिप । व्रजलकु गन्नुलपंडुवै योप्पे;
नंत वसिष्ठविश्वामित्रमुनुल । संतत पुण्युल जनकुंडु सूचि
'मीर लयोध्यकु मिथिलकु गर्त । ले रूप मुचितमै यिटमीद जेल्लु

पर शिल्पविदों ने (विवाह-हेतु) कल्याणवेदिका का निर्माण इस प्रकार किया। (शिल्पवेदियों ने) मरकत की जगत (फ़र्श) पर सुवर्ण-स्तम्भ सराहनीय रूप से खड़े किए। उसके बाद नीले रंग की धन्नियों और गुंजाफल (लाल रंग) के स्लीपरों को ठीक ढंग से सजाया। सुन्दर ढंग से नक्काशी करके बनाए गए गोमेदिकों की राशि को स्वच्छ रूप से खचित कर उनपर वज्र (हीरा) का गारा किया। (उस मंडप के चारों ओर) स्वर्ण और मणिमय चार विशाल किवाड़ों (फाटकों) को समुचित ढंग से लगाया। ॥ २१६० ॥

उसमें सोने के मनोज्ञ चित्र सुन्दर ढंग से चित्रित किये गए। नीलमणि के हाथियों (और) स्फटिक-सिंहों से युक्त आकर्षक सोपानों (सीढ़ियों) का निर्माण किया गया। सुन्दर खस का मनोहर शामियाना और उसमें कमल की लड़ियों को अधिकता से, चारों तरफ़ लटकाया। उसके मध्य मरकत पत्थर से बनी एक श्रेष्ठ-विवाह-वेदी रची गई जिस पर कस्तूरी का लेपन किया, चमकते मोतियों से चौक पूरे, गुजरात के माणिक्यों की दीवार सजाई। इस प्रकार मनोज और लक्ष्मी के विवाहार्थ बना विवाहमण्डप जनता को नेत्रोत्सव प्रदान करता हुआ शोभायमान हुआ। तब सन्तत पुण्यवान वसिष्ठ (और) विश्वामित्र आदि मुनियों को देखकर जनक (यों) बोले—'आप ही लोग अयोध्या और मिथिला (दोनों ओर) के कर्ता (नियामक) हैं। अब आगे जो विधान समुचित हो, उसे कराइए'।

दाशरथुल यलंकरण

नदि सेयुदुरु गाक' यनवुडु वारु । सदुरॊप्प दशरथ जनपालचंद्रु
नायतशुभमैन यभ्युदयंबु । सेयिंप नर्थितो जेसॆ नव्विभुडु; २१७०
अॆक्कुडु संतोषमॆसग जित्तमुन । नॊक्कॊक्कसुतुनकभ्युदयंबुकॊरकु
वॆलयंग नन्नियु वेदोक्तयुक्ति । गलय बदारु लक्षलधेनुवुलनु
गलधौतखुरमुलु गनक श्रृंगमुलु । दलकॊत्ति चॆलुवॊन्दु ताम्रपुच्छमुलु
दॊरसि मिंचिन कांस्यदोहनंबुलुनु । वरुस वेष्ठिंचिन वरवस्त्रमुलनु
गलिगि सवत्सलै करमॊप्पु वानि । ललि भूसुरोत्तमुलकु भक्ति निच्च
मरियु नसंख्यातमहित हेममुलु । तऱचुगा नंतट दक्षिणलॊसगि
भूदान बसुदानमुलु मॊदलैन । वेदोक्त दानमुल् वेर्वेऱ नॊसगॆ;
गॊमरुल नल्वुर गॊमरोप्प नप्पु । डमितमंगळमुलॊ नखिलवाद्यमुल
बाटलु पाडुचु बरग नंगनलु । तेटगा नंदरु दॆच्चि पीटलनु
गूर्चुंड दललंटि कुदुरुग वार । लेर्चि नल्वुलु वॆट्टि यॆन्तयु ब्रीति २१८०
स्नानमुल् सेयिंचि चक्कगानुदुट । मानिततिलकंबु मऱि भूषणमुलु
जीनाबरंबुलु जॆलुवॊप्पनिच्चि । नानाविधंबुल नलुवुग दीर्प

दशरथ-पुत्रों का अलंकरण

—ऐसा कहने पर, उन्होंने दशरथ-जनपाल-चन्द्र के लिए आयत शुभप्रद अभ्युदय (प्रद कार्य) कुशलता से करवाया। उस राजा ने (भी उन कार्यों को हार्दिक रूप से) किया। ॥ २१७० ॥

मन में अधिक हर्ष के उमड़ आने पर, एक-एक (प्रत्येक) सुत के अभ्युदय (श्रेय) के लिए वेदोक्तयुक्ति के अनुरूप सुन्दर-सफ़ेद खुर, कनक-शृंग, शोभायमान ताम्रपुच्छों से युक्त, वर-वस्त्रों से सज्जित, श्रेष्ठ कांस्य-दोहन (दूध दुहने के लिए काँसे के पात्र), और बछड़ों से युक्त सोलह लाख गाएँ, प्रेम और भक्ति से भूसुरोत्तमों (श्रेष्ठ ब्राह्मणों) को दीं। फिर असंख्य मूल्यवान् स्वर्ण (मुद्राएँ) दान में दीं। अलग से भूदान, स्वर्णदान आदि वेदोक्तदान दिए। तब अमित मंगलप्रद नाना वाद्यों के मंगलनाद और वनिताओं के मंगलगीतों के बीच, शोभा के साथ चारों पुत्रों को लाकर आसनों पर बिठाया, सिर पर तेल लगाकर, सुचारु रूप से, बड़ी प्रीति से उवटन लगाया, ॥ २१८० ॥

—स्नान करवाया, (उपरान्त) माथे पर सुचारु तिलक देकर भूषण (और) चीनाम्बर (रेशमी वस्त्रों) से विभूषित कर, नाना विधियों से अलंकृत

दशरथु भार्यलु दशरथेश्वरुडु । विशदप्रतापुंडु वेड्क नुप्पोंग्गि
सकलभूषणमुलु सरसत वेट्टि । यकलंकमतितोड नलरिरन्तयुनु:
ददवसरमुन युधाजित्तु प्रेम । तुदमीऱगा भरतुनि मेनमाम
तनतंड्रि केकयधरणीश्वरुंडु । मनुमनिभरतुनि मैत्रि दोड्तेर
दनु नंपगा नयोध्यकु वच्चि यचट । दनयुल पेन्ड्लिकै दशरथेश्वरुडु
जनकुनि वीटिकि जनुट येऱिंगि । यनुरक्ति वेवेग नचटि केतेर
दशरथुंडतनि नादरण बूजिंचि । कुशलंबेल्ल बेकोर्नुचुंडे; नंत
मरुनाडु स्नातक महितकृत्यमुलु । तऱितोड गाविंचि तम्मुलु दानु २१९०

रामुडत्तऱि दशरथुनोद्द निलुव । श्रीमीऱ नतनि गैसेयिंचे नृपुडु;
नारामु नौदल तमरे गिरीट । मारोहणाद्रि शृंगाग्रमो यनग;
वद्धकंकणुडय्ये भक्तुल व्रोव । सिद्धमन्नट्लु दाल्चेनु गंकणम्मु;
लेद मुन्नुवुट्टिन यिंदु दीधितुलु । पोंदलें नेडन हारमुलु सेन्नुमीऱ;
दन कनकांबरत्वमु भूमि देल्पे । नन गनकांबरंबलरारे गटिनि;

किया। (उन्हें देखकर) दशरथ की पत्नियाँ और विशद प्रतापवाला दशरथेश्वर आनन्द से फूले नहीं समाते थे। पवित्र मन होकर सरलता से (उन्होंने पुत्रों के कल्याणार्थ) सकल भूषण (आदि दान) में देकर प्रसन्नता का अनुभव किया। उसी अवसर पर भरत का मामा (युधाजित्) असीम प्रेम के साथ वहाँ आया। वह अपने पिता कैकय-धरणीश की आज्ञा से उनके दौहित्र (भरत) को लिवा ले जाने के लिए अयोध्या आया था। (किन्तु) वहाँ, दशरथेश्वर पुत्रों के विवाह के लिए जनक के यहाँ गए है, (यह) जानकर, प्रसन्न मन से अति शीघ्र यहाँ (मिथिला) आया। दशरथ ने उसका आदर से सत्कार कर, समस्त कुशल-समाचार पूछा-बताया। तदनन्तर, दूसरे दिन, स्नातक-विहित-कृत्य (विवाह-पूर्व वर के द्वारा कराए जानेवाली विधियाँ) ठीक समय से सम्पन्न करके राम (अपने) भाइयों के सहित, ॥ २१९० ॥

—दशरथ के समक्ष आ उपस्थित हुए। (तब) नृप ने अति शोभा के साथ उनको अलंकृत कराया। उस राम के सिर पर किरीट ऐसा शोभित हुआ मानों उदयाचल के शृंग का उत्तुंग शिखर हो। उन्होने कंकण धारण किए, मानों भक्तों की रक्षा के लिए बद्धकंकण (कृत-संकल्प) हो गये हों। आज उनके वक्षस्थल पर हार ऐसे शोभा दे रहे थे मानों उनके वक्ष से पैदा हुई चन्द्र-किरणें छिटक रही हों। कटि-प्रदेश पर कनक-वस्त्र ऐसे शोभित हुए मानों पृथ्वी अपने कनकांवरत्व को प्रकट कर रही हो।

गष्ट रावणुनिचे गासिल्लिनट्टि । यष्टदिक्पालुर यशमुलिर्वक
मौक्तिकच्छलमुन मनवुलु देल्पु । युक्तिमै जौकट्टु लॉप्पें वीनुलनु;
वदनश्रृंगार मी वैखरि नॉप्पु । बॉदलन गस्तूरि बॉट्टु सूपट्टे;
बदपडि लक्ष्मण भरत शत्रुघ्नु । लुदयार्कतेजु लॉन्डॉरुलु वेर्वेर
गुंडलकेयूर कोटीर हार । मंडनावळि सुकुमार देहमुलु २२००
गैसेय नंदु दिक्पतुल मध्यमुन । वासवुंडन रामवल्लभुंडॉप्पे
नंत नक्कड जनकावनिनेत । कांतिमै नलुवुरु कन्यकामणुल
गैसेय सैरंध्रिकल बंप वारु । भासुरमणिपीठिपै वारिनुनिचि
पेरटांड्रॉगि बाडु पॅन्ड्लिपाटलकु । शारिका कीरमुल् संदडि सेय
गुंकुम कस्तूरि गोरोचनंबु । संकुमदंबु वासन गदंबिप
नलुगुरि कॉक्कट नलुगुलु वेट्टि । कलमृदुध्वनुल गंकणमुलु मोरय
गुरुल संपॅन्ग नूनॅ गूर्चि यिपॉन्द । हरिचंदनंबुन नटकलि वेट्टि
घनसार सुरभि नखंपचांबुवुल । जनकपुत्रिकलकु जलकमुल् दीर्चि

चार-चार मोतियों से बने कुण्डल उनके कानों पर ऐसा शोभा दे रहे थे कि क्रूर रावण से पीडित अष्टदिक्पालों का यश (व्यथा) मुक्ताओं के बहाने (राम के कानों में) विनम्र होकर सुना रहा हो। मुख का श्रृंगार कैसा सुशोभित है, यह व्यक्त करने के लिए कस्तूरी-तिलक शोभा दे रहा था। उस समय पृथक्-पृथक् उदयार्क (बाल सूर्य) के समान तेजोयुक्त, कुण्डल, केयूर, कोटीर, हार से मण्डित सुकुमार देह वाले सुशोभित लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न, ॥ २२०० ॥

—के बीच राजा राम ऐसे शोभा दे रहे थे मानों दिक्पतियों के मध्य वासव (इन्द्र) विराजमान हों। तब वहाँ राजा जनक ने अति मञ्जुल चारों कन्यकामणियों को अलंकृत करने के लिए सैरन्ध्रियों (दासियों) को (अन्तःपुर में) भेजा। उन्होंने उन्हें (कन्याओं को) दीप्तिमान मणि-जटित आसन पर बिठाया। सुमंगलियों द्वारा क्रम से गाए जानेवाले विवाह-गीतों को (सुन) शुक-सारिकाओं के कलरव के बीच, चारों (कन्यायों) को एक साथ, कुंकुम, कस्तूरी, गोरोचन (और) संकुमद (जवादि) की सुगंध से सुवासित उबटन लगाया। कंकण की मृदुध्वनियों से मुखरित करपल्लवों से (उनके) केशों में चम्पा का तेल लगाया, प्रीति के साथ हरिचन्दन का लेप किया, घनसार (कर्पूर) की सुरभि से युक्त गुनगुने जल से जनक की (उन) पुत्रियों को स्नान करवाया, महीन वस्त्रों से (उनके शरीर को) पोंछा और गुलाबी रंग के स्वच्छ लहँगों पर सुनहली

जिलगुल दडियौत्ति चेन्गावि वन्ने । चलुवपावडलपै जाळुवा सरिग
कोन्गुल नोप्पु दुकूलमुल् गट्टि । शृंगारमुल् गुप्पसेसिरो यनग २२१०
गोप्पगा नोप्पुगा गोप्पुलमर्चि ।विप्पुगा जाजि क्रोव्विरुलंदु दुरिमि
पच्चकप्पुरमुतो वन्नीटितोड । बच्चिकस्तुरि कलपमु गूर्चि यलदि
बंगारुसरिग गन्पडु कुट्टुपनुल । कंगुल ऱयिकलु गनुपट्ट दोडिगि
निग्गयिन सकिनल निरसिंचि तम्मि । मोग्गलकुनु सिग्गु
मोलर्पिंचि पसिडि
तालंबुलनु गेरि तरमैन विरुल । मेलिबंतुलतोड मेलंबुलाडु
चनुकट्ल मीद बच्चल बन्नसरमु । लुनु दारहारंबुलुनु बोन्दुपरिचि
मुद्दुमोमुल कोक्क मुरुवुरागोर । दिद्दुचु गस्तूरि तिलकमुल् दीर्चि
चेक्कुल मकरिकल् सिंगिंचि गोप्प । मुक्करल् नासाग्रमुल गीलुकोल्पि
मगराल तळुकुगम्मलुनु गट्टाणि । वोंगडलु जुरुकु गेम्पुल बविरलुनु
बच्चल कडियमुल् पद्मरागमुलु । ग्रुच्चिन मोलनूळ्ळु गोमेधिकमुल
२२२०
यंदियल मोदलैन हारिभूषणमु । लंदंबुगा जेर्पनपुडु कन्नियलु
शारदपूर्णिमा चंद्रबिंबमुलो ? । चारु वसंत वासर पुष्पलतलो?

ज़रीदार किनारों से शोभित दुकूल (महीन वस्त्र) पहनाए। उन्होंने मानों शृंगार को समेट कर प्रस्तुत कर दिया हो, इस प्रकार— ॥ २२१० ॥

—बड़े सुन्दर ढंग से जूड़े को सवाँरा, फिर उसमें खिले हुए बहुत से जूही के फूल सजाए। भीमसेनी कपूर एवं कच्ची कस्तूरी को गुलाबजल में मिश्रित कर (सारे शरीर पर) लेपन किया, सुनहली ज़रीदार कञ्चुकी (चोलियाँ) पहनाई। उत्कृष्ट विहगों का तिरस्कार करनेवाले, कमल की कलियों को लज्जित करनेवाले, सुवर्णदीप्ति की अवहेलना कर, श्रेष्ठ पुष्पकन्दुकों का मज़ाक उड़ानेवाले स्तनों पर मरकतों के हार और तारहारों को सुन्दर ढंग से पहनाया। सुन्दर मुखों के सौन्दर्य-श्री की वृद्धि करते हुए ललाट पर कस्तूरी-तिलक लगाया, कपोलों पर मकरिका-पत्र रचे, नासाग्र पर श्रेष्ठ वेसर पहनाया, हीरों के कर्णफूल, मोतियों की वालियाँ, अधिक लाल रंग के पद्मराग के कर्णाभरण (कुण्डल), मरकतमणियों के कड़े, पद्मराग-गुँथी हुई मेखलाएँ, गोमोदिकों के वने नूपुर, ॥ २२२० ॥

—आदि सुरम्य आभरणों को सुन्दरता के साथ सजाने पर वे कन्याएँ ऐसी लगीं कि मानों शरत् पूर्णिमा के चन्द्रविम्व है ! (अथवा) चारुवसन्त काल की पुष्पलताएँ है ! (अथवा) खराद पर चढ़े हुए श्रेष्ठ रत्न है !

सानल दीरि̤न जातिरत्नमुलो ? । श्रीनिंड बटिकनार्चिन कुंदनंपु
गम्मुलो ? मरि̤ पुलुगडिगिन मुत्ति । यम्मुलो ? नेर̤ताविं नलरुगंदंपु
गोम्मलो यन बेन्डि̤लकूतुलोप्पारि । 'र̤म्मक्क' यनि सतुलक्कजंवंद;
वारिलो सीत लावण्यविख्यात । सारगुणोपेत जगदेकमात
यादिमलक्ष्मि दानै पुट्टे गान । ना देवि चेलुव मितंतनि तेलिसि
भूषिंप शक्यमे ? भूषणंबुलकु । भूषणंबै योप्पे भूदेविकरणि
मेर̤सि रत्नाकरमेखल यगुचु । मरि̤ गंधवति वसुमतियु नगुचु :
नंत वसिष्ठसंयमि लग्नसमय । मंतयु जनकुनि नरसि येतेञ्चि २२३०
दशरथुतोड̤ नंतयु देल्प नतडु । कुशिकपुत्र वसिष्ठगुरुलतो गदलि
यमरेंद्र वि̤भवुडै यर्हयानमुल । गोमरोप्प गैसेसि कोडुकुलु नडव
संगडि̤ गोलिचि राजन्युलु नडव । शृंगारमलवड जेलुवलु नडव
ग्रंतलु गोनि पुण्यकांतलु नडव । नंतंत बोगडुचु नर्थुलु नडव
गैसेसि गणिकानिकायमुल् नडव । गैसेसि मंत्रिवर्गबुतो नडव
गैसेसि मदमत्तगजमुलु नडव । गैसेसि भटतुरंगमकोटि नडव
वेदनादमुलतो विप्रुलु नडव । मोदंबुतो मुनिमुख्युलु नडव
नडचि यज्जनकुनि नगरोप्प जोच्चि । पुडमिरे̤डप्पुडु पुत्रुलु दानु

(अथवा) श्री-समन्वित कुन्दन की शलाकाएँ है जिन्हे स्फटिक में स्वच्छ किया गया हो ! (अथवा) धवलित मोती हैं ! अधिक सुगन्ध से परिपूर्ण चन्दन की पुत्तलियाँ हैं !—इस प्रकार शोभायमान वे दुलहिनें सभी स्त्रियों को आश्चर्य-चकित करने लगी। उनमें सीता, लावण्य की खान, सार-गुणोपेता, जगदम्बिका, आदिलक्ष्मी ही का अवतार थी। अतः उस देवी के सौन्दर्य का वर्णन करना किस प्रकार सम्भव है ? वे भूषणों के लिए भूषण, और रत्नाकर रूपी मेखला से युक्त भूदेवी के समान प्रकाशमान हुई। गन्धवती, वसुमती जैसी भासमान हुई। तब शुभ-लग्न, समय (आदि) सब (बातों) के बारे में जनक से परामर्श कर, वसिष्ठ ने आकर, ।। २२३० ।। —दशरथ से निवेदन किया, तो वे कुशिकपुत्र (कौशिक), वसिष्ठ (आदि) गुरुओं के साथ, अमरेन्द्र वैभव से युक्त होकर चले। उनके साथ उचित वाहनों पर विराजमान उनके पुत्र, साथ में अन्य सामन्त राजा, सुसज्जित रमणियाँ, वरपक्ष की ओर से वधू को दिए जानेवाले मंगलद्रव्यों को लिए हुए पुण्यवनिताएँ, विरुद बखाननेवाले याचक, खूब साजसिंगार किये वेश्या-समूह, ठाठ-बाट के साथ मन्त्रिगण, सजे-वजे मदमत्त गज, सुभट, अश्वसमूह, वेदपाठ करते हुए विप्र, और प्रसन्नचित्त मुनिश्रेष्ठ चल पड़े। (ऐसे) चलकर उस जनक के नगर में, पृथ्वीपति (दशरथ) ने पुत्रों के साथ

वनजलोचनलु निवाळुलोंसंग । जनकुडेदुर्कोनि संभ्रमंवेसग

श्री सीता-कल्याणमु

खचितोरु नवरत्न कल्याण वेदि । नुचितपीठंबुल नुन्नचो ब्रीति २२४०
दन पुरोहितुलतो दडयक जनकु । डनलु ब्रतिष्ठिचि हैमवेदिकल
वेदोक्तविधि होमविधुलाचरिंचि । या देवकन्यकलन नोप्पु तनदु
कन्यकामणुल नगण्य लावण्य । मान्यल नलुवुर मैत्रि राविंचि
जनकुंडु मधुपर्कसमयंबु दीर्चि । तन कूमिपुत्रि सौदामिनीगात्रि
गामिनीजनमणि गल्याणि सीत । गोमलि देरमरुंगुन वेड्क निलिपि
रामाभिरामुडौ रामचंद्रुनकु । गामितसिद्धि संकल्पपूर्वमुग
'श्रीराम ! ना पुत्रि सीत सद्धर्म ।चारिणि गोनुमग्निसाक्षिगा' ननुचु
दार वोसेनु देवतापुष्पवृष्टि । धारतो दिव्यवाद्य ध्वनुल् मीऱ;
ब्रमदंवुतोड दीपाल पळ्ळेमुलु । समदयानलु महासंभ्रमंबुननु

प्रवेश किया । जनक के ससम्भ्रम अगवानी करने के वाद कमलनेत्रियों ने आरती उतारी ।

श्रीसीता-कल्याण

—तव जनक ने विवाहमण्डप में श्रेष्ठ नवरत्नों से खचित कल्याण-वेदी पर योग्य आसनों पर प्रीति से उनको आसीन कराया । ॥ २२४० ॥

उसके पश्चात् अविलम्ब जनक ने अपने पुरोहितों से सुवर्ण वेदिकाओं में अनल (अग्नि) को प्रतिष्ठित कराकर, वेदोक्तविधि से होम-विधियों को सम्पन्न कराया । (उसके बाद) देवकन्याओं के समान शोभायमान, अतुलित लावण्यवती अपनी चारों कन्यकामणियों को सप्रेम बुलवाया । मधुपर्क (विवाह के समय वर वधू को दिये जानेवाले नूतन वस्त्र) की विधि पूरी करके, विद्युत् के समान शरीर वाली, कामिनीजनमणि, कल्याणी, (और) कोमलांगी, अपनी लाड़ली पुत्री सीता को परदे के पीछे वड़े आनन्द से खड़ा किया । पश्चात्, रामाभिराम, रामचन्द्र को, वांछित फल की सिद्धि के लिए संकल्पपूर्वक यह कहते हुए कि 'हे श्रीराम ! मेरी पुत्री सीता, सद्धर्मचारिणी सीता को, अग्नि को साक्षी बनाकर ग्रहण करो', (जनक ने सीता को) पानी के साथ कन्यादान कर दिया । दिव्य पुष्प-वृष्टि के साथ देवदुंदुभियाँ वज उठीं । मस्त चाल से चलनेवाली सुन्दर स्त्रियाँ महासम्भ्रम के साथ दीपों की थालियाँ लिए प्रस्तुत थी । स्वर्ण

दलब्रालु बंगरु तबुकुल नुनिचि । कॅलकुल रमणुलु कॅरलुचु वट्ट २२५०
गुडमुतो जिल्कर गूर्चि यिद्दरकु । वडि शिरस्सुल मीद वलनॉप्प नुंचि;
रंतट सुमुहूर्तमनि तॅरदीय । गांत नॅम्मोमु मुन् गनुगॉनि यलरॅ
रामुनि कनुगव राकासुधांशु । गोमुन नलरॅडु कुमुदंबुलनग;
भामचूपुलु निल्चॅ बतिपादयुगळि । दामरपै देटितंडंबुलनग;
निंतिलावण्याब्धि कॅदुरॅक्कु मीन । संतानमै रामचंद्रु चूपडरॅ;
वरु देहकांति प्रवाह मध्यमुन । दरुणिचूपुलु पद्मदळमुलै कालॅ;
सतिचूपु बतिचूपु सरसतजूपु । रतिरूपु रतिमनोरमणुनि रूपु
नॅलसि नॉन्डॉरु मेनुलॅरुगराकुंड । गळलंट दाकिनगति गॉन्तसेपु
वॅलसॅ; नंतट रघुवीरकुंजरमु । चॅलिकेलु गॅन्दम्मि चॅलुवु बट्टॅ;
नॉन्डॉरुल् पुलकिंचि यॉक्क पीठमुन । नुंडि होममु सेयुचुंडि; रापिदप २२६०
नुरुवयोधन्य ना यूर्मिळाकन्य । गरमु संप्रीति लक्ष्मणकुमारुनकु

के थालों में मंगलाक्षत रख, दोनों पार्श्वभागों में, प्रसन्नचित्त हो रमणियाँ खड़ी थीं। ॥ २२५० ॥

गुड़ के साथ जीरा मिलाकर, (मंगलस्वरूप) दोनों (वर-कन्या) के शिरोमध्य भाग पर सुन्दरता से रखा गया। तब सुमुहूर्त जानकर, परदा हटाया। (तब) कान्ता (सीता) के सुन्दर मुख को देखकर राम की आँखें राकासुधांशु (पूर्णचन्द्र) को देखकर सुकुमारता से प्रसन्न होने वाले कुमुदों के समान प्रफुल्लित हो उठीं। भामा (सीता) ने पति के चरण-युगल पर अपनी चितवन स्थिर की, मानों कमलों पर भ्रमर-समूह हों। रमणी के लावण्यसिन्धु-प्रवाह में तैरनेवाली मीनसन्तान के समान रामचन्द्र की चितवनें प्रतीत हुईं। (और) श्रीवर (राम) की देह-कान्ति के प्रवाहमध्य में वधू की चितवनें पद्मदल सदृश शोभित हुईं। सरसता को व्यक्त करनेवाला रतिरूप तथा रतिमनोरमण (मन्मथ) का रूप, सोल्लास एक दूसरे के शरीर को अनजान में स्पर्श कर रहा हो, इस प्रकार पत्नी और पति की चितवनें (एक दूसरे को अनजाने में देखती) कुछ क्षण तक विलसित हुईं। इसके पश्चात् रघुवीरकुंजर ने सखी (सीता) के लाल-कमल सम हाथ को प्रेम से हाथ में ले लिया। (एक दूसरे के स्पर्श से) प्रफुल्लित हो वे एक ही आसन पर दोनों बैठकर हवन करने लगे। तदनन्तर, ॥ २२६० ॥

—युवतियों में श्रेष्ठ ऊर्मिला को लक्ष्मणकुमार को, विराजमान उस कुश-ध्वज की पुत्रियों में कमलाक्षी मांडवी को भरत को, चन्द्रविम्व के समान

नलनोप्पु ना कुशध्वजु कूतुलंदु । नलिनायताक्षि मांडवि भरतुनकु,
नत्रिजविबास्ययगु श्रुतकीर्ति । शत्रुघ्नुनकु निच्चे जनकुंडु प्रीति;
निगमोक्तविधिनि बाणिग्रहणमुलु । दगिलि काविंचिरि दशरथात्मजुलु;
तलब्रालु वोसिरंदरु; लाजहोम । मुलु दीर्चि कांचिरि मुनुल दीवनलु;
दिविनुंडि घोपिंचे देवदुंदुभुलु; । भुविनिंड गुरिसेनु वुष्पवर्षमुलु;
अप्पुडानंदिंचिरखिलदेवतलु; । नप्पुडानंदिंचिरखिल सन्मुनुलु;
पाडिरि गंधर्वपतुलुत्सहिंचि; । याडिरि संप्रीति नप्सरोजनुलु;
अपुडु वसिष्ठुडा यवनीशसुतुल । नुपमिप वैवाहिकोक्तोमैनट्टि
होमांतमुन वारि युचितकृत्यमुलु । नेमंवुतो नग्नि नेरि व्रदक्षिणमु २२७०

सेयिंचि सप्तर्षिसेवलोनर्चि । यायतंवुग दीक्षनलरुचु नपुडु
कूर्चुंडिरंदरु कुदुरुगा नंदु । नेर्चुचु मौनुलु नेसगु भूसुरुलु
सरगुन नंदरु संतोषमेसग । बरग दीवनलिच्चि परमपावनुल
शुभलक्षणवुगा सुंदरीजनुल । विभवसमृद्धिगा विलसिल्लनप्पु
डायतंबुग दीक्ष नलरि मोदमुन । जेयिंचि मरुनाडु चेलगि सदस्सु

मुखवाली श्रुतकीर्ति को शत्रुघ्न को जनक ने अति प्रीति से अर्पित किया। दशरथात्मजों ने वेदोक्तविधि से, प्रेमपूर्वक पाणिग्रहण किया। सव (वधू-वरों) ने एक दूसरे के सिर पर मंगलाक्षत डाले, लाजहोम (धान की खीलें अग्नि में डालने की क्रिया) सम्पन्न करके मुनियों के आशीर्वाद प्राप्त किये। स्वर्ग से देव-दुन्दुभियाँ वज उठीं, समस्त पृथ्वी पर पुष्पवृष्टि हुई। तव सभी देवता आनन्दित हुए, सभी सन्मुनि प्रसन्न हुए। गन्धर्वपतियों ने सोत्साह गीत गाये। अप्सराएँ सम्प्रीति से नृत्य करने लगी। तव वसिष्ठ ने वैवाहिक हवन के उपरान्त नियम के अनुसार उन राजकुमारों से उचित कृत्य करवाए, सुन्दरता से अग्नि की प्रदक्षिणा कराई, ॥ २२७० ॥

—(और) सप्तर्षियों का पूजन करवाया। आयत (दीर्घ) दीक्षा में विराजते हुए सव स्थिरता से वैठे रहे। मुनियों और ब्राह्मणों—सभी ने प्रसन्न चित्त हो, परमपावन (राम-लक्ष्मण आदि) को 'शुभ लक्षणों से युक्त होकर सुन्दरीजनों तथा विभवसमृद्धि से विलसित रहो' इस प्रकार आशीर्वाद दिए। अजस्र दीक्षा के सम्पन्न होने पर प्रमुदित हो दूसरे दिन उत्साह से सदस (ब्राह्मणों की सभा, जिसमें वेदमन्त्रों का पाठ करते हुए वर-वधू को आसीसते हैं) किया। तव सभी ने सन्तुष्ट होकर दिव्यमन

गार्विचि संतोषकलितुलै यपुडु। दीविंचिरंदरु दिव्यचित्तमुल:
देरगोप्प बेन्डिलिदिनमुलु नैदु। नेरसि यित्तेरगुन निंडे; निंडुटयु
नन्निशोभनमुलु नन्नि वेडुकलु। गन्नुलपंडुवुगा जूचि प्रीति
दरणिवंशाधीशु दशरथाधीशु। शरधिसन्निभशीलु जनकभूपालु
वेरवोप्प दीविंचि, वेड्क वारनुप। नरिगे गौशिकुडु हिमाचलंबुनकु; २२८०
धरणीशुलुनु दमतमदेशमुलकु। गरमर्थि जनिरि सत्कारमुल् वडसि;
यप्पुडु मिथिलेशु डानन्दकेळि। नुप्पोंगि निजवैभवोन्नति मेरसि
करमोप्प बुद्धुलु गरपि कूतुलकु। वररत्नभूषणावळुलु विचित्र
चित्रांबरमुलु दासीजनंबुलुनु। नेत्रोत्सवंबुगा नेम्मितो नोसगि
करिरथहयभटगणभूषणादु। लरणंबुगा दन यळ्ळुंड्र किच्चि
या व्रसिष्ठादि संयमुलकु दशर। थावनीशुनकु ननर्घ माणिक्य
भूषणंबुलोसंगि पूजिंचि विनय। भाषणंबुल युक्तपद्धति ननुप
गोडुकुल गोडंड्र गोमरोप्प गोनुचु। गडकतो दशरथक्ष्मापति गदलि
यडरि ययोध्यकु नरुगुचो द्रोव। वडि बेचि प्रतिकूलवायुवुल् वीचे;

से आशीर्वाद दिए। इस प्रकार कुल मिलाकर विवाह के पाँच दिन व्यतीत हो गए। व्यतीत हो जाने पर, सभी शुभसंस्कारों, सभी उत्सवों को नेत्रोत्सव रूप में देखकर प्रीति से, भानुवंशाधीश को तथा समुद्र सदृश शीलवान् जनक भूपाल को औचित्यपूर्वक आशीर्वाद देकर, सप्रेम उनके बिदा करने पर, कौशिक (विश्वामित्र) ने हिमाचल को प्रस्थान किया। ॥ २२८० ॥

धरणीश (राजागण) भी सत्कार प्राप्तकर, बड़े प्रेम से अपने-अपने देश चले गए। तब वैभवोन्नतियुक्त मिथिलेश (जनक) ने आनन्द की अधिकता से उमड़कर, सुन्दर विधि से पुत्रियों को (उचित) सीख दी। (उन्हें) वर-रत्न भूषणावलियाँ, विचित्र चित्राम्बर, दासीजन, (आदि) नेत्रोत्सव रूप में प्रेम से दिए। अपने जामाताओं को (दहेज के रूप में) हाथी, रथ, अश्व, भटगण, भूषण आदि भेट किए। वसिष्ठ आदि संयमियों को, राजा दशरथ को अनर्घ माणिक्य भूषण देकर, आदर-सत्कार कर, विनय-भाषणों से युक्त पद्धति से बिदा किया। पुत्र तथा पुत्रवधुओं को शोभा से साथ लिए, बड़े आनन्द से, महाराज दशरथ अयोध्या के लिए रवाना हुए। (अकस्मात्) मार्ग में बड़े जोरों से प्रतिकूल वायु चलने लगा।

तेलुगु (देवनागरी लिपि)

राम परशुराम समागममु

दडयक दुर्निमित्तमुलनेकमुलु । पॊडसूपॆ; नप्पुड्डु भूपति गलगि
'येलॊको मुनिनाथ! यिꣲभंगि दॊडरि।पोलनि शकुनमुल् पॊडसूपदॊडगॆ?'
ननवुडु दशरथुननुकंप जूचि । यनियॆ वसिष्ठसंयमि निश्चयिंचि; २२९०
'युर्वीश ! मुंदर नॊक महाभयमु । पर्वि यंतटिलोन पायु नोडकुमु'
अनुचुंड वायुवुलंदंद विसरॆ । गनुकनि; वॆन्धूळि गप्पॆ; गप्पुटयु
गरुलु जोदुलु दुरंगमुलु राहुतुलु । विरथुलै रथुलनिव्वेरपाटु वडिरि;
सेनलु नलुगड जीकाकु वडियॆ; । भानुमंडलमुन ब्रभमासॆ; नंत
निरुवंदियॊक्कमारेचि राजुलनु । दरमिडि चंपिन धन्यविक्रमुड्डु
क्रम्मिन जडललो गापुन्न गंग । चॆम्मना नुदुट वॆन्जॆमरुव्वुचुंड
घोरमै मंडॆड्डु कुत्तुकविषमु । ग्रूरदैत्युलमीद गोपिंचि युमिसि
परमेश्वरुड्डु दन फाल नेत्रमुन । वॆरिगि मंडुचुनुन्न पॆनुमंट वुच्च २३००

राम और परशुराम का समागम

—शीघ्र ही अनेक अपशकुन दिखाई पड़े। तब राजा व्याकुल होकर, ॥ २२९० ॥

—(यों) बोले, 'हे मुनिनाथ! बहुलता से ये अनुपम (दुः) शकुन क्योंकर दिखाई पड़ रहे हैं?' ऐसा कहने पर दशरथ की ओर अनुकम्पा से देखकर, संयमी वसिष्ठ निश्चय करके बोले—'हे अवनीश! एक महाभय उत्पन्न होनेवाला है, किन्तु वह शीघ्र ही दूर हो जाएगा। (अतः) डरो मत'। (ऐसा) कह ही रहे थे कि सम्भ्रम से इधर-उधर हवा वह चली। (आकाश में) अत्यंत धूल छा गई। छा जाने पर, हाथी, योद्धा, तुरंग, घुड़सवार (और) रथी (आदि) विरथ होकर चकित से रह गए। चारों ओर सेना तितर-बितर हो गई। भानुमण्डल प्रभाहीन हो गया। उसी समय, क्रम से इक्कीस बार अतिक्रम से राजाओं (क्षत्रियों) का संहार करनेवाले धन्यविक्रम परशुराम परशु को कंधे पर धारण किये आते दिखाई पड़े। उनके ललाट पर अधिकता से प्रकट होता हुआ पसीना ऐसा लग रहा था मानों फैले हुए जटाजूट में छिपी हुई गंगा हो। उनकी आँखें ऐसी थीं मानों अत्यन्त भयंकर रूप से जलने वाले कंठस्थ विष को, क्रूरदैत्यों पर क्रुद्ध हो, थूक कर, परमेश्वर ने अपने फालनेत्र में प्रज्वलित विराट अग्नि को, ॥ २३०० ॥

तन रेन्डु कन्नुल दग बंचिपेट्टु । कौनि वच्चु पगिदि गन्गोनल गेम्पेसग
देगि लोन मंडेडु तीव्र कोपाग्नि । येगसि पै सुडिगोन्न येऱमंटलनग
वेलसि कॆन्जायल वेदसल्लु जडलु । बलिसिन जूटंबु भासिल्लुचुंड
दर्मकिचि भुजलक्ष्मि दग बट्टियुंडु । विमलनाळमुतोडि विरिदम्मियनग
वरशुवु मूपुन भरियिंचि वच्चु । परशुरामुनि जूचि भयमुन गलगि
रयमुन दशरथराजुनु मुनुलु । भयनिवारणमंत्र परतंत्रुलगुचु

परशुराम गर्वभंगमु

तनघुलै येदुरुगा नर्घ्यपाद्यमुलु । गोनिपोव मुनुल चेगोनि जामदग्नि
दशरथभूपालु दर्जिंचि त्रोचि । दशरथरामु मुंदऱ वच्चि निलिचे:
निलिचिन भार्गवुनिजमूर्ति जूचि । तलयूचि मेच्चि सद्भक्ति म्रोक्कि
चक्क गट्टेदुर हस्तमुलोप्प मोगिचि । योक्किंत भयमुन नुन्न वीक्षिंचि
२३१०
'नीवेन्त म्रोक्किन निन्नु मन्निंचि । पोव: नातो वोरु भूपाल!' यनुडु
'भूसुरोत्तम! कश्यपुडु मोदलयिन । भूसुरोत्तमुलकु भुवि नेल्लनिच्चि

—अपने दोनों नेत्रों में बाँट दिया हो। लाल रंग को बिखेरनेवाली घनी जटाएँ भीतर प्रज्वलित तीव्र कोपाग्नि से प्रज्वलित हो उठी अग्नि-शिखाओं के समान भासित हो रही थीं। कंधे पर का परशु ऐसा लग रहा था मानों उनकी भुजा रूपी लक्ष्मी ने विमुग्ध होकर विमलनाल के साथ खिले कमल को धारण किया हो। (इस प्रकार) आने वाले परशुराम को देखकर भय से व्याकुल हो, राजा दशरथ और मुनि शीघ्रता से भयनिवारण के मन्त्र (जपने) में लग गए।

परशुराम-गर्वभंग

—अर्घ्यपाद्य लेकर निष्पाप मुनियों को सामने प्रस्तुत देख, जामदग्नि ने मुनियों को निकट ले (सत्कार किया)। (फिर) दशरथ भूपाल को डाँट-फटकार कर, हटाकर, राम के सामने आ खड़े हुए। (सामने) खड़े भार्गव (परशुराम) की साक्षात्मूर्ति को देख, सिर हिलाकर, (मन में ही) सराह-कर, सद्भक्ति से (राम ने उनको) प्रणाम किया, सद्विधि से ठीक सामने हाथ जोड़कर, तनिक भय से खड़े हो गए। उन्हें देख, ॥ २३१० ॥

—(परशुराम ने) कहा, 'तुम कितना भी प्रणाम करो (विनय दिखाओ), तुम्हें क्षमा नहीं करूँगा। हे भूपाल! मुझसे युद्ध करो'। (तब) राम ने कहा, 'हे भूसुरोत्तम! कश्यप आदि ब्राह्मणों को समस्त पृथ्वी देकर,

यतिजितेंद्रियवृत्ति नडवुलनुंडु। नतुलतपोराशि वगुटनु जेसि योनर नीकेरगुट युचितंबुगान। मुनिनाथ! ये नीकु ऑक्किकितिगानि वेरचि ऑक्कुट गादु; वेरवेदि नन्नु। नुरक पोनाडुट युचितमे नीकु?' ननवुडु 'दापसुंडनि नन्नु वलिकि;। तनिलो सहस्रबाहार्जुनु दोट्टि यिरुवदियोक्कमारेंचि राजुलनु। दरमिडि चंपि यी धरणिपै दोल्लि नेरि दिलोदकमुलु नेत्तुटु नोरुग। देरगोप्प मा पितृ देवतलेल्ल भूपालशवमुलु पोलुपोन्द दिविकि।सोपानमुलु सेसि सोरिदिमै जनिरि; अट्टि भार्गवरामु ननघु नन्नेरुग। किट्टेल रामुडै यिल वुट्टितीवु? २३२०
राजन्न वोरिगोन्दु: रामनामकुल। राजुल सैतुने रणभूमि नेनु? राजकुलुंडवौ रामुनि निन्नु। नाजि मन्नितुने? यदियुनुगाक राजनि मी तंड्रि रणमुन द्रुंप। नाजिकि वच्चिन नाकुनु नोडि स्त्रील मरुंगुन जेलुवोप्प नुन्न। गालवशंवुन गाचितिनतनि; दान गर्वाधुडै तद्दयु निपुडु। मानक युन्नाडु मरि युव्वि यिचट मरुगु जोच्चिनननैन मननीय, ननुचु। वेरवक पल्किन वेरपुतो नपुडु

अतिजितेन्द्रिय (प्र)-वृत्ति से काननों में रहनेवाले तुम अतुल तपोराशि हो। सहृदयता से तुम्हे प्रणाम करना उचित है। इसीलिए हे मुनिनाथ! मैंने तुम्हें प्रणाम किया, डरकर नही। व्यर्थ ही मेरी निन्दा करना कहाँ तक उचित है?' ऐसा कहने पर (परशुराम ने कहा)—'मुझे तुमने तपस्वी कहा है। युद्ध में मैंने सहस्रबाहु (कार्तवीर्यार्जुन) को मार डाला है। इक्कीस वार प्रकाशित होकर, धरणी पर राजाओं को क्रम से मार-कर (पितरों को) उनके रक्त से सुचारु रूप से तिलोदक प्रदान किया है। (उससे) मेरे सभी पितृदेवता अच्छे विधान से, शोभायमान रूप से भूपालों के शवों की सीढ़ी (निसेनी) वनाकर क्रम से दिवि को गये हैं। हे अनघ! ऐसे मुझ भार्गवराम को न पहचान कर, इस प्रकार राम होकर कैसे जन्मे हो? ॥ २३२० ॥

—जो राजा (क्षत्रिय) कहाता है, (उसे) मैं मार डालूँगा। तव राम-नाम मात्र धारण कर लेने से ही राजाओं को रणभूमि में कैसे सहन करूँगा (छोड़ दूँगा)? राम नाम कुल वाले राजाओं को, मैं रण में कैसे क्षमा करूँगा? यही नहीं, राजा होने के नाते तुम्हारे पिता को युद्ध में मार डालने के लिए, युद्ध हेतु आया था। मुझसे हारकर, स्त्रियों की आड़ में छिपा रहा, तो मैंने काल के प्रभाव से उसको छोड़ दिया था। उससे गर्वान्ध होकर यहाँ अव (वह) फूला हुआ (मस्त) विराजमान है। अपने गर्व को न छोड़कर, अव तो छिप जाने पर भी, उसे जीने नहीं

अनघुडु दशरथुड़तिभीतुडगुचु। विनयोक्ति भार्गवु वीक्षिंचि पलिकें;
'नीवु ब्राह्मणुडवु, नीकु रोषंबु। गाविंपनेटिकि घनमुगा? नादु
तन्नयुलु बालुरु; दगदु गोपंबु। विनुतशास्त्रपुराणविख्याति गनुट
नेंरुगने? भार्गव! येंरुगवे नीवु? । एरुगनि मर्मंबुलेंन्दैन गलवें २३३०
नी तोड बोराड निन्नेंदिरिप। नाततंबुग नुंडु नट भवुंडैन
नोपुने? भागर्व! यौंरुलेंदिरिंप। बापवे यीतरि बरमपावनुड!
देवेंद्रुडैन नी तीव्रप्रतिज्ञ। भाविंचि युडुपंग भव्युंडु गाडु;
मन्निंचि रक्षिंचि मम्मुनंदरनु। जेंन्नुगा जनु' मनिशिरसुनु वंचि
मन्निपुमनि वेडि मरियु म्रोंक्किननु। गन्नुल गोपंबु गडुनोंप्पियुंडें;
ननि दन्नु गोंनियाडु नतनिवाक्यमुलु। विनि यादरिपक विपुलरोषमुन
गनलुचु नत्यंत कठिनुडै यपुडु। दमियिंतु ननि मदि दलचि यिट्लनियें;
'करमोंप्प विलुविद्य गडिमिमै नेनु। हरुनितो दोंल्लि यभ्यासंबु सेय
नाडु कुमारुंडु नातोड दौंडरि। पोडिमि सेंडि योडिपोयिन जूचि

दूँगा'। इस प्रकार निर्भय (परशुराम के) कहने पर, अनघ दशरथ अति भयभीत हुए। भार्गव को देखकर, विनय-वचन बोले, '(भगवन्!) तुम ब्राह्मण हो, तुम्हें इतना अधिक क्रुद्ध क्यों होना चाहिए। मेरे पुत्र बालक हैं। (उनपर) क्रोध न करना चाहिए। तुम्हारा विनुत शास्त्र-पुराण-विख्यात होना क्या मैं नहीं जानता? हे भार्गव! क्या तुम (मुझे) नहीं जानते हो? ऐसे कौन-से मर्म (रहस्य) है जो तुम्हें अज्ञात हैं! ॥ २३३० ॥

—तुमसे लड़ने (या) तुम्हारा सामना करने के लिए शाश्वत शिवजी की भी सामर्थ्य नहीं है। हे भार्गव! इस समय दूसरे (कोई) सामना करें तो (उन्हें यमलोक) भेज देने में आप कब समर्थ नहीं है! हे परम-पावन! देवेन्द्र भी आपकी तीव्र प्रतिज्ञा को व्यर्थ करने में समर्थ नहीं है। हम सबको क्षमाकर, रक्षाकर प्रसन्न मन से गमन कीजिए'। (दशरथ के ऐसा) कहकर सिर झुकाकर क्षमा याचना करने, फिर दण्डप्रणाम करने पर भी, (परशुराम की) आँखों में अपरिमित क्रोध भरा ही रहा। अपनी प्रशंसा करने वाले उस (दशरथ) के वचनों को सुनकर, उनकी उपेक्षा कर, विपुलरोप से क्रुद्ध होते हुए, अत्यन्त कठोर हो मन में (यह) सोचकर कि (इन सबका) दमन करूँगा, वे इस प्रकार वोले, 'वड़े यत्न से (और) पराक्रम से मैं शिव के पास पुरातन काल में जब धनुर्विद्या का अभ्यास करता रहा, उस समय कुमार कार्तिकेय ने मुझसे लड़ने का फैसला किया, और सव कौशल खोकर मुझसे हार गए। (उसे) देख (शिवजी

ना पेम्पु मेच्चिन नागकंकणुनि । चापंबु विरिचिन सैतुने मरियु' २३४०

ननिन ना रघुरामु डारामु जूचि । यनियॆ निश्चलवृत्ति नतिसम्मदमुन
'नेनु विनोदमै यॆक्किडि तिविय । बूनिन चाप मुप्पुड तॆगॆगाक!
ना तॆगकेल पिनाकिविल् निलुचु? । नाततभुजसत्त्वमट्टिदि नाकु;
नॆसगि युद्धतुलयि यिक्ष्वाकुकुलुलु । पसुल ब्राह्मणुल जंपदलंपरॆन्दु;
नीवॆन्निपलिकिन नीकवि सॆल्लु;। नीवु ब्राह्मणुडवु; निनु नॊम्पनॊल्ल:
निदॆ नादु कंधर मिदॆ नीदु परशु । वदरक युचितकृत्यमु सेयुमिक ।'
ननवुडु रघुरामु नलुक दीपिंप । गनुगॊनि पलिकॆ भार्गवरामुडडरि
'भाविप नाकु नी पलुकुल जूड । नीवु क्षत्रियुडवु, नेनु ब्राह्मणुड
ननु गर्वमुन्नदि; यट्टु चूडवलदु; । विनुतविक्रमशक्ति वॆन्डि चूपॆदनु;
वरलु नज्जनकभूवरुविंट नीवु । विरिचिनविल्लु नीविल्लुनु दॊल्लि २३५०

यमिलिनिडार नमरुलु विश्व । कर्मचे नॊक्कट गाविंचि रॆलमि;

ने भी मेरी) शक्ति की सराहना की थी। (उस) नागकंकण (शिवजी) का धनुष तोड़ दे, तो मैं कैसे सहन कर सकूँगा' ? ॥ २३४० ॥

—(ऐसा) कहने पर उस रघुराम ने उस (परशु-) राम को देखकर निश्चलवृत्ति से सम्मोद (यों) कहा, 'मैंने विनोद मात्र के लिए सन्धान करके खींचना चाहा तो धनुष (अकस्मात्) टूट गया। मेरे साहस (सामर्थ्य) के सामने पिनाकि (शिव) का धनुष कहाँ टिक सकेगा? ऐसी ही है मेरी विशाल भुजाओं की शक्ति! इक्ष्वाकुवंशज उद्धत होकर पशु और ब्राह्मणों का वध करना पसन्द नहीं करते। आपने जितना कुछ कहा, वह आपके लिए उचित ही माना जाएगा। आप ब्राह्मण हैं। मैं आपका वध करना नहीं चाहता। यह मेरी गर्दन है, वह आपका परशु है। व्यर्थ वातचीत को त्याग कर अव जो उचित समझिए, कीजिए'। ऐसा कहने पर, रघुराम को क्रोध से उद्दीप्त हो देखकर, भार्गव-राम ने आवेश से कहा—'तुम्हारी वातों से मुझे लगता है कि तुममें गर्व है कि तुम क्षत्रिय हो और मैं ब्राह्मण हूँ। ऐसा मत सोचो। (मैं अपने) विनुत-विक्रम एवं शक्ति को वाद में दिखाऊँगा। उस जनक भूवर के घर में विलसित जिस धनुप को तुमने तोड़ दिया था, उस धनुप को (और) इस मेरे धनुप को, ॥ २३५० ॥

—देवताओं ने, बड़े स्नेह से, बड़े प्रेम से विश्वकर्मा से एक साथ वनवाया

वुरमुलु निर्जिप बोयेंडुनाडु । हरुनकु दग विच्चिरंदुलो नॊकटि
ना विंट द्रिपुरंबुल नणचि रुद्रुंडु । दा वीरगर्वमुद्रारतुडगुचु
'नसहायमुग नेनु नसुरत्रयंबु । वसुधपैगूल्चि; तॆव्वरु नाकु नीडु?'
ननि वल्क 'जक्रि बाणाकृति बूनि । तुनियिंचॆ गाक रुद्रुनिकि शक्यंबॆ'
यनि यॆडकॆडकुनु नमरुलु मुनुलु । सनकादि हरि पार्श्वचरुलुनु वलुक
विनि रुद्रगणमुलु विनुपिंप शिवुडु । विनि रोषमुन बोर विष्णुनि बिलुव
सुरगरुडोरगवरुलॆल्ल गूडि । सरसिजासनु जेर जनि विचारिंचि
हरिहरसत्त्वंबु लरयुदमनुचु । मुरवैरि कपुडु कार्मुकराजमिच्चि
यिरवुन कॆन्तयु नॆरुकसेयुटयु । हरियु रुद्रुडु बोरिररुदुगा; नपुडु २३६०

नारायणुनि तीव्र नाराचघोर । धारचे शिवुनि कोदंडंबु सगमु
विरिगि पेटॆत्तिन वीक्षिंचि यंत । हरिशक्ति घनमनि यमरुलंदरुनु
इरुवुर मान्पि: रा यीशुडव्वेळ । सुरल चित्तस्थिति जूचि या विल्लु
रयमुन ना देवरातुन किच्चॆ; । जयधन्युडातंडु जनकुन किच्चॆ :

था। (त्रि) पुरों को पराजित करने के लिए जाते समय उनमें से एक शिवजी को दिया था। उस धनुष (की सहायता) से त्रिपुरों का दमन कर, रुद्र (शिवजी) ने वीरमुद्रारत होते हुए कहा—'बिना किसी की सहायता के मैंने असुरत्रय को वसुधा पर गिरा दिया। मेरी समता करनेवाला और कौन है'? (उस समय) जहाँ-तहाँ अमर, मुनि, सनक आदि हरि के पार्श्वचर (सहचर) कहते रहे कि 'चक्रि (विष्णु) ने बाण की आकृति धारण कर (राक्षसों का) संहार किया है, अन्यथा रुद्र की सामर्थ्य ही क्या है'? (इसे) सुनकर रुद्रगणों ने शिवजी को सुनाया। शिवजी (उसे) सुनकर रुष्ट हुए (और) युद्ध के लिए विष्णु को ललकारा। तब सुर, गरुड, उरगादि देवता, सब मिलकर, कमलासन (ब्रह्मा) के पास गये। विचार किया कि हरि (और) हर के सत्त्वों को (युद्ध के द्वारा) जानना चाहिए। तब विष्णु को कार्मुकराज (श्रेष्ठ धनुप) दिया, और (युद्ध के लिए योग्य) स्थान के बारे में भी बताया। (तब) अनुपम रूप से हरि और रुद्र ने युद्ध किया। ॥ २३६० ॥

तब नारायण के तीव्र-नाराच (बाण) के भयंकर प्रवाह से शिव का कोदंड आधा टूटकर विदीर्ण हुआ। (उसे) देखकर सभी देवताओं ने यह कहकर कि हरि की शक्ति ही अधिक श्रेष्ठ है, दोनों को शान्त किया। उस ईश (शिव) ने उस समय देवताओं की चित्तस्थित को देखकर वह धनुप शीघ्रता से उस देवरात को दिया। जयधन्य होकर, उसने (उसे)

वनजोदरुंडुनु वलनोप्प निच्चें । दन चेति चापमत्तरि ऋचिकुनकु;
जमदग्नि किच्चें निश्चलमति नतडु: । जमदग्नि ना किच्चें
सदयुडै दीनि;
बेंनकुव नदि तोंलिल पेटेंत्तियुंट । गनि नीवु विरचिति गाक! भूतनाथ!
आविटि तोडिदे यरय ना चेति । यी विल्लु, निदें चूडुमिनवंशतिलक!
नेंलकोंनि यी विल्लु नी वेंक्कुवेंट्ट । वलकोंनि बाणसंधानमु सेसि
कडिमि सूपक निन्नु गदलनी' ननिन । दडयक रोषिंचि दशरथात्मजुडु
२३७०
कन्नुल घनवह्नि कणमुलु दोंरुग । दन्नेंरुंगनि जामदग्नितो ननियें:
'निरुपमभुजशक्ति नीकु गलुगुटयु । दरमिडि राजुल दरिमि चंपुटयु
नेंरुगुदु; नन्नु नीवितरुनि माडि्क । वेंरवक पलिकेंदु वीरंबु मेंरसि:
नी वेंरुंगवु नादु निजबाहुबलमु: । नीवेंन्तवाडवु ? नी चापमेंन्त ?
तेंम्म'नि विलुदीसि तिगिचि मोपेंट्टि । क्रम्मन नत्युग्रकांडंबु दोंडिगि
'नी काळ्ळु देंगनेसि नी गर्वमडचि । नी कोप मुडिपेंद ने' डन्न दलकि
युरुसत्त्वगर्वंबु नुब्बुनु दूलि । परशुरामुडु रामु ब्रार्थिंचि पलिकें:

जनक को दिया। कमलगर्भ विष्णु ने बड़ी सुन्दरता से उस समय अपना धनुष ऋचिक को दिया। उसने निश्चलमति से (वही धनुष) जमदग्नि को दिया। जमदग्नि ने सदय होकर उसे मुझे दिया। (पूर्व के) युद्ध में पहले ही थोड़ा विदीर्ण रहने के कारण उसे तुमने तोड़ डाला है। हे भूनाथ! मेरे हाथ का यह धनुष उसी के साथ का है। यह देखो, हे इनवंशतिलक! स्थिरभाव से इस धनुष का सन्धानकर, घूमकर, (इस पर) बाण चढ़ाकर अपने प्रताप को बताए बिना तुम्हें हिलने नहीं दूँगा'। (ऐसा) कहने पर विलम्ब न करके रुष्ट हो दशरथात्मज की ॥ २३७० ॥

—आँखों से बड़े-बड़े अग्निकण झरने लगे। अपने को (राम को) न जाननेवाले जामदग्नि से उन्होंने कहा, 'मैं यह जानता हूँ कि आपमें निरुपम भुज-शक्ति है, आपने क्रम से राजाओं का पीछाकर (हराकर) वध कर दिया है। मुझे आप अन्य लोगों के समान मानकर ही, निर्भीकता से डींग मार रहे हैं। आप मेरे बाहुबल को नहीं जानते हैं। आपकी शक्ति ही कितनी है? यह धनुप ही क्या वस्तु है? लाइए'। (यह) कहकर धनुप लेकर, उसे उठाकर, प्रत्यंचा चढ़ाकर, तुरन्त अत्युग्र-कांड (बाण) उसपर चढ़ा दिया। कहा, 'आपके पैर काटकर, गर्व का दमन कर, आपके क्रोध का निवारण कर दूँगा'। (ऐसा) कहने पर कम्पित

'ननु गश्यपुनकु निलनिच्चिनाड : । गान रातुलु निल्वगा नेर निचट :
ननुदिनंबुनु महेंद्राचलंबुनकु । जनवलयुट जेसि चरणमुल् वलयु :
ना काळ्ळनेयक ना पालि पुण्य । लोकमार्गबुलालोकिंचि येयु २३८०
नन्नु रक्षिपुमु नरनाथचंद्र ! । मन्निपवे राम ! मनुजलोकेश !'
यनवुडु रघुरामु डा जामदग्नि । घनपुण्यलोकमार्गमु नेसें: नंत
जडुरीति निलुचुन्न जमदग्निरामु । गडुनुग्रुडैयुन्न काकुत्स्थरामु
जूचुचु नुंडिरि सुरसिद्धसाध्य । खेचरुलद्भुतक्रीडल दगिलि:
वलनोप्पगा बुष्पवर्षमुल् गुरिसें : । नलिनगर्भादुलु नानंदमंदि
पोगडिरि रामुनि: बोन्दुगा सुरल । मिगुलुतेजंबुन मिन्नुननुंडि;
रंत भार्गवरामुडारामु जूचि । यंतरंगंबुन नतनि भाविंचि
'यनघ ! नी सत्त्वमेनात्मलो जूचि । निनु विवेकिंचिति ; नीवु विष्णुडवु:
काकुत्स्थ ! यटुगान गदनंबुनंदु । नीकु नोडुट नाकु निंद गादेन्दु
ना बलंबुनु नीवे: नायात्म नीवे: । ना बंधुवुलु नीवे ना रामचंद्र !
२३९०

होकर, शक्ति की प्रबलता के गर्व को, मद को छोड़कर, परशुराम ने राम से प्रार्थना की, 'मैंने कश्यप को पृथ्वी दे दी है, अतः मैं रात को यहाँ ठहर नहीं सकता। प्रति दिन महेन्द्राचल को जाना चाहिए, इसलिए पैर (मेरे लिए) आवश्यक हैं। मेरे पैरों को न काटकर, (यदि चाहो तो) मेरे पुण्यलोक के मार्ग को देखकर (उस पर यह बाण) छोड़ दो। ॥ २३८० ॥

हे नरनाथचन्द्र ! मुझे बचाओ। हे राम ! हे मनुजलोकेश ! मुझे क्षमा कर दो'। ऐसा कहने पर रघुराम ने उस जामदग्नि के महान् पुण्य-लोक मार्ग पर (वह बाण) छोड़ दिया। तब जड के समान खड़े जामदग्निराम को और अतिउग्र काकुत्स्थराम को आश्चर्य-चकित हो सुर, सिद्ध, साध्य, खेचर, सब देखते रहे। सुन्दर ढंग से पुष्पवृष्टि हुई। नलिनगर्भ (ब्रह्मा) आदि ने आनन्दित हो राम की प्रशंसा की। देवता तेजोयुक्त होकर स्वर्ग में विलसित हुए। तव भार्गव राम ने उस (दाशरथी) राम को देखकर, अन्तरंग में उनके महितस्वरूप का ध्यान कर, कहा, 'हे अनघ ! तुम्हारी शक्ति के बारे में मैंने आत्म-विचार कर, विवेचन कर लिया है कि तुम विष्णु हो। हे काकुत्स्थ ! ऐसा होने पर युद्ध में तुम्हारे हाथ हार जाना मेरे लिए किसी भी रूप में निन्दनीय नहीं है। मेरा बल भी तुम ही हो, मेरी आत्मा भी तुम ही हो। मेरे बन्धु-बान्धव सब कुछ तुम ही हो। हे मेरे रामचन्द्र ! ॥ २३९० ॥

ना माटलन्नियु नातम नुंपकय । राम! रक्षिपवे रघुकुलाधीश!'
यनुचु ब्रस्तुति सेसि यानंदमंदि । मनमुन रघुरामु महिम लेन्नुचुनु
वरुस श्रीरामुनि वलगोनि भक्ति । गरमुलु मुकुळिंचि करमु संप्रीति
विनयविधेयुडै विभुनट्टु चूचि । मनमुन गृपवुट्ट मरि यिट्टुलनियें:
'सेलविम्मु राघव! श्री जानकीश ! । सेलविम्मु, पोयेद, सेलविम्मु नाकु:
ना तप्पुलेन्नक नन्नु मन्निंचि । यी तरि रक्षिंचि यिपुगा बनुपु:
मनसु नेकमु चेसि मदि वेलुगु गनुचु । गनुमूसि निनु गूर्चि कदलक तपमु
लोनरंग जेसिन नोय्यन मुनुलु । मनमुल नानंदमग्नुलै युंदु'
रनुचु ब्रस्तुतिसेसि यभिनुतुल् सेसि । यनुपमप्रीतितो नप्पुडे कदलि
'निरुपमतरशक्ति नी शक्ति' यनुचु । नरिगे रामुडु महेंद्राचलंबुनकु २४००
वरशुरामुनि विल्लु प्रार्थिप नोसगे । वरुणुचेतिकि रघुवर्युडाक्षणमे:
यप्पुडु वायुवुलनुकूलगतुल । नोप्पे: नुत्साहंबुलोदवे सेनलकु:
नरुदरुदनि सुरलभिनुतिसेय । वरजयश्रीगूडि वच्चि राघवुडु
तन तंड्रि दशरथधरणिपालुनकु । ननघवसिष्ठुनकतिभक्ति म्रोक्के

—मेरी सब बातों को मन में मत रखो। हे राम! हे रघुकुलाधीश! मुझे बचाओ'। (ऐसी) स्तुति करते हुए, आनन्दित होकर, मन में रघुराम की महिमा को गुनते हुए, क्रम से श्रीराम की प्रदक्षिणा कर, हाथ जोड़कर, अधिक सम्प्रीति से, विनय से विधेय (आज्ञाकारी) हो, प्रभु की ओर देखकर, कृपा उत्पन्न करनेवाले वचन बोले, 'आज्ञा दो, हे राघव! श्री जानकीश! आज्ञा दो। जाने की आज्ञा दो। मेरी त्रुटियों का ध्यान न कर, मुझे क्षमाकर, अबकी बेर रक्षा कर, आनन्द से विदा कर दो। मन को एकाग्रकर, मन में प्रकाश को देखते हुए, आँखें बंदकर, तुम्हारे प्रति अचल एकनिष्ठ ऐसी तपस्या करूँगा कि मुनिजन आनन्दमग्न हो जायँ। ऐसा कहते हुए प्रस्तुति, अभिनुति करके, अनुपम प्रीतिभाव से उसी समय, 'तुम्हारी शक्ति निरुपमतरशक्ति है' ऐसा कहते हुए (भार्गव) राम महेन्द्राचल को प्रस्थान कर गए। ॥ २४०० ॥

प्रार्थना करने पर उसी क्षण रघुराम ने परशुराम के धनुष को वरुण के हाथ दे दिया। तब वायु अनुकूलगति से चलने लगा, सेना में उत्साह उत्पन्न हुआ। 'यह तो विरल है' ऐसा कहते हुए देवताओं के अभिनुति करते समय, वर (श्रेष्ठ) जयश्रीयुक्त राघव ने आकर अपने पिता धरणिपाल (राजा) दशरथ को (और) अनघ वसिष्ठ को अतिभक्ति से प्रणाम किया।

म्रोक्किन दीविंचि मौगि गौगिलिंचि। यक्कुन नंदनु नौदल जेर्चि परमसम्मदमुन बार्थिवेश्वरुडु। 'सरसोक्ति ने बुनर्जातुंडनैति: गौमरौप्प नी वंटि कौडुकुनु गनुट। नमरेंद्रु बोलिति नवनिलो निपुडु परमपावनुडैन परशुरामुंडु। परमेशुपगिदिनि बरग निच्चटिकि वच्चुट ने गांचि वडलेल्ल वडक। यिच्चलो भयमंदि 'यिकनेदि त्रोव?' यनुचु भयंबुन नातनितोड। मनविगा जेप्पिन मरि विनकुन्न २४१०
बरवशतं बौन्दि पलुकनेरकय। परममैत्रिकि नेनु बालपडियुंटि: नतनि गेल्चुटये नाकाश्चर्यमय्यें:। नतुलितवैभवंबंदिति नेनु: वासेनु भयमेल्ल: ब्रौढि नीचेत। वासिकेक्किति: निल वैभवंबब्बे' ननुचु रामुनि जाल नभिनुति सेसि। मुनिवसिष्ठादुल मुदमुन गूडि परमसम्मदमुन बलमुलु दानु। नरिगेनयोध्यकुनवनिवल्लभुडु

अयोध्या प्रवेशमु

पुण्यचिह्नमुलतो बुण्युलतोड। बुण्य मंगळवाद्यमुलतोड वच्चि

प्रणाम करने पर आसीस देकर, सम्भ्रम से गले लगाकर, वक्ष-स्थल पर पुत्र के सिर को रखकर, परम सम्मोद से पार्थिवेश्वर (राजा) ने कहा, 'सचमुच मैं पुनर्जीवित हुआ हूँ। तुम्हारे जैसे पुत्र को प्राप्त करने से आज मैं पृथ्वी पर अमरेन्द्र के समान शोभायमान हूँ। परम-पावन परशुराम के परमेश्वर के समान (कराल रूप में) यहाँ उपस्थित देख (मेरा) सारा शरीर काँप उठा था, मन में भीत होकर 'अब क्या उपाय हो सकता है ?' अस्तु बड़े भय से उससे विनय की, (जब) उसने नहीं सुना, ।। २४१० ।।

—तब विवश हो, अवाक् होकर, उससे परममैत्री करने के लिए तैयार हो गया। (तुम्हारा) उसे जीत लेना ही मेरे लिए आश्चर्यप्रद हुआ। मैंने अतुलित वैभव को प्राप्त किया है। सारा भय दूर हो गया। तुम्हारे प्रताप के कारण मैं (आज) यशस्वी हुआ। इस पृथ्वी में मुझे वैभव प्राप्त हुआ है'। ऐसा कहते हुए राम की अधिक अभिनुति करके, मुनि वसिष्ठ आदि से मोद सहित मिलकर, अधिक सम्मोद के साथ अवनिवल्लभ (दशरथ) ने सेना सहित अयोध्या की ओर कूच किया।

अयोध्या में प्रवेश

—पुण्य (मंगलप्रद) चिह्नों (तथा) पुण्यात्माओं के साथ, पुण्य-मंगलवाद्यों की ध्वनि के बीच, दशरथाधीश ने अपने पुत्रों के साथ सानन्द अयोध्यापुरी

तानुनु गॉडुकुलु दशरथाधीशु । डानंदमुन नयोध्यापुरि जॊच्चि
राजितालंकाररचन जूपट्टु । राजमार्गंबुन राराजमुखुलु
सखुलु दारुनु वेड्क सौधंबुलेक्कि । सुखतराकृतुल रासुतुल गन्गॊनुचु
सेसलसल्ल नाशीर्वादमॆल्ल । भूसुरुलॊसग विस्फुरण पॆम्पॆसग २४२०
नगणित शृंगारमै यॊप्पु तनट्टु । नगरु ब्रवेशिंचॆ नरनाथु; डंत
गौसल्य केकयक्ष्मापालपुत्रि । या सुमित्रादेवि यादिगा गलुगु
नंतःपुरांगनलंदरु नप्पुडॆन्तयु । प्रीतितो नॆदुरुगा वच्चि
चेरि वारलमीद सेसलु सल्लि । नीराजनंबुलु नॆरि निच्चि; रंत
गॊडुकलंदरु म्रॊक्क गोडण्ड्रु म्रॊक्क । गड्प्रीति दीविंचि कौगिळ्ळ जेर्चि
सीतादिकांतल चॆलुवंबु वुद्धि । चातुरि गन्नुलु सल्लगा जूचि
तनरारुचुंडिरि; दशरथुंडपुडु । तनयुलु नलुगुरु दनु भजियिप
नाल्गु चेतुल नॊप्पु नलिनाक्षुडनग । नाल्गु कॊम्मुल नॊप्पु नाकेभमनग
सकल जनानंदचरितुडै राज्य । मकलंक रक्षकुडै येलुचुंडॆ;
नॊकनाडु दशरथुंडुचितमॆरिंगि । प्रकटितशुभरतु भरतुनीक्षिंचि
२४३०

में प्रवेश किया। समलंकृत राजमार्ग मे राराज-(चन्द्र) मुखियों एव सखियों ने आनन्द से सौधो (प्रासादों की अटारियों) पर चढ़कर, सुखतर आकृतिवाले हो, (रघुरामादि) राजसुतों को देखते हुए (आशीर्वाद-पूर्वक) अक्षत वरसाये। सभी भूसुरों ने आशीर्वाद दिए। (ऐसे समय), ॥ २४२० ॥

—अत्यन्त शृंगारमय अपने नगर में नरनाथ ने इस प्रकार शोभन रूप में प्रवेश किया। तव कौसल्या, कैकेयी, सुमित्रादेवी आदि सभी अन्तःपुरांगनाएँ अति हर्ष के साथ उनके स्वागतार्थ आईं, (उनसे) मिलकर, उनपर पुष्पों की वर्षा की और भली प्रकार आरती उतारी। तव सभी पुत्रों के प्रणाम करने पर, पुत्रवधुओं के प्रणाम करने पर, उन्होंने अति प्रीति से आसीस दे उन्हें आलिंगन में लिया। सीता आदि वधूटियों के सौन्दर्य, मृदु स्वभाव एवं कुशलता को देख, उनकी आँखें ठंडी हुईं और वे सन्तुष्ट हुईं। तव दशरथ चारों पुत्रों की सेवाएँ प्राप्त करते हुए, चार भुजाओं से शोभायमान नलिनाक्ष (विष्णु), (अथवा) चार शृंगों वाले स्वर्ग के हाथी (ऐरावत) के समान विलसित होते हुए, सकल जनों को आनन्द देने वाले और अकलंक-रक्षक होते हुए, राज्य पर शासन करने लगे। एकदिन दशरथ उचित (समय) को जानकर, शुभ लक्षणों से सम्पन्न पुत्र भरत को देखकर वोले, ॥ २४३० ॥

'घनुडु मी माम केकयराजसुतुडु । गोनिपोदु निन्ननि कोरियुन्नाडु
गान शत्रुघ्नुतो गदलि मी माम । तो नेगि यतनि संतोषंबु नेरपु:
तातकु नव्वकु दग मेनमाम । काततभक्तितो ननिशंबु म्रोक्कु
सुरलका दलचि भूसुरुलकु वत्स ! । परमप्रियंबुन बरिचर्य सेसि
वारलचे नश्व वारण स्यंद । नारोहणमुलु शस्त्रास्त्रविद्यलुनु
नेरि वेदशास्त्रमुल् नीतिशास्त्रमुलु । नुरुकळाविद्यलु नोगि नभ्यसिपु
मेकक्षणंबुनु नेडपक नियति । जेकोनि, नी मेलु सेप्पि पुत्तेम्मु'
अनवुडु दल्लुल कवनिपालुनकु । विनतुडै रघुरामविभुनकु म्रोक्कि
तानु शत्रुघ्नुंडु दन मेनमाम । तोन थिम्मुल भरतुडु पुण्यरतुडु
राजगृहंबुन रमणीयमैन । राजधानिकि नेगि रघुकुमारकुलु २४४०
तातकु दम राक दग नेरिगिंप । ब्रीतिमै बुच्च ना पृथ्वीवरुंडु
पट्टणंबुन दीरुवड तोरणमुलु । गट्टिंचि वहुपताकलु कल्वडमुलु
गलयंग नेत्तिचि गंधोदकमुलु । पोलुपोन्द जल्लिचि पुष्पधूपमुल
गरमोप्प राजमार्गमुल वासिप । बरिचारकुल बंचि बलयुतुंडगुचु

—'सम्भ्रान्त व्यक्तित्व वाले तुम्हारे मामा, कैकयराज-सुत तुम्हें (अपने यहाँ) ले जाना चाहते है। इसलिए शत्रुघ्न के साथ अपने मामा के साथ जाकर उन्हें प्रसन्न करो (उनकी इच्छा को पूरी करो)। नाना, नानी, मामा (आदि) को आतत भक्ति से अनिश (सदा) प्रणाम करते रहना। हे वत्स ! देवता मानकर भूसुरों की परमप्रेम से परिचर्या (सेवा) करके, उनसे अश्व, हाथी, स्यन्दन (रथ) के आरोहण (सवारी), शस्त्र-अस्त्र विद्याएँ, श्रेष्ठ वेदशास्त्र, उत्तम कलाएँ, लगन के साथ, एक क्षण भी आलस्य न करके, नियमपूर्वक अभ्यास करना और सीखना। अपना कुशल-समाचार भेजते रहना'। ऐसा कहने पर, माताओं तथा अवनिपाल (राजा) को, विनीत होकर, रघुराम-प्रभु को प्रणाम कर, स्वयं और शत्रुघ्न सहित अपने मामा के साथ बड़े सुख से पुण्यरत-भरत राजगृह मे स्थित रमणीय राजधानी को गए। रघुकुमारों ने, ॥ २४४० ॥

—अपने आगमन (का समाचार) नाना को कहला भेजा। उस पृथ्वीवर ने वड़ी प्रीति के साथ नगर को अच्छे ढंग से तोरण बँधवाकर, विविध प्रकार की झडियों और कमल की मालाओं से सजाकर, सुगंधित जल को सुन्दर ढंग से छिड़काकर, राजमार्गो को पुष्पधूपों से सुवासित कराने के लिए परिचारक भेजे। (कैकयराज ने) परिवार (मित्र तथा नौकर-चाकरों के समूह) से युक्त हो, वनिताएँ, निजमंत्रि-वर्ग को साथ लेकर,

वनितलु निजमंत्रिवर्गबु तोड । जनुदेर नेन्तयु संतोपमेसग
वरुस नानागीत वाद्यनृत्यमुलु । परमशुभाचार भंगुल नडुव
ब्रीति नेदुर्कोनि प्रियमोप्प वंदि । सूतमागधजनस्तुतुलोलि जेलग
मनुमल दोड्कोनि महिमतो वच्चे । वनुगोन्नभक्तितो भरतुंडु नंत
दम तात मोदलुगा दगिन पेद्दलकु । ग्रममु दप्पक नमस्कारमुल् सेसि
पोलुपोन्द वारिचे बूजितुंडगुचु । दळुकोत्त वेडुक दाततो ननियें:
२४५०
'नार्य ! नाकिचट विद्याभ्यासमिंक । गार्य; माचार्युलै घनुलैन वारि
कप्पगिंपुडु नन्नु' ननिन ना राजु । चेप्पिनवारिचे शिक्षितुंडगुचु
नमर विद्याभ्यासमंतयु जेसि । विमलैकमति नोक विप्रुनि जीरि
तमतंड्रिययिनट्टि दशरथेशुनकु । 'समुचितस्थिति मेमु सकलविद्यलुनु
जेलुवोन्दगा नभ्यसिंचिति; मिक । दलपुपुट्टेडु माकु दगमिम्मु जूड'
ननि चेप्पुमन नयोध्यापुरंबुनकु । जनुदेन्चि यतडु ना जननायकुनकु
राजपत्नुलकुनु रामलक्ष्मणुल । कोज नेन्तयु जेप्पे नुल्लंबुललर:
नंत श्रीरामुंडु यौवराज्यमुन । नेन्तयु जतुरुडै येल्लवारलकु

सानन्द नाना गीत-वाद्य-नृत्यों के परम शुभ आचार-भंगियों में सम्पन्न, सप्रीति उन (राजकुमारों) की अगवानी की। प्रीति से वंदि-सूत-मागध-जन (चारण-भाट आदि) की स्तुतियों के क्रम से मुखरित होने पर, दौहित्रों को साथ लेकर बड़ी महिमा (वैभव) के साथ वे (अपने यहाँ) आए। अधिक भक्ति से भरत ने तब अपने नाना आदि सभी योग्य गुरुजनों को क्रम से नमस्कार कर, शोभा से उनसे आदर-सत्कार प्राप्तकर, उत्साह में उमड़ कर नाना से बोले, ।। २४५० ।।

—'हे आर्य ! अब यहाँ विद्याभ्यास हमारा कार्य है। हमको श्रेष्ठ आचार्यों के हाथ सौंप दीजिए'। (ऐसा) कहने पर, उस राजा के बताए लोगों से शिक्षित होते हुए, उन्होने शोभा से समस्त विद्याभ्यास किया। (एक दिन) विमलमति वाले विप्र को बुलाकर; अपने पिता दशरथेश के पास यह संदेश भिजवाया कि 'समुचित स्थिति से हमने भली प्रकार सकल विद्याएँ सीख ली है। अब हमारे मन में इच्छा हुई है कि आपके दर्शन करें'। ऐसा आदेश पाकर वह (सदेशवाहक) अयोध्यापुर आया और (उसने) जननायक (राजा दशरथ), राजपत्नियों, राम-लक्ष्मण, सबको भलीभाँति सब बातें कह सुनाई, जिनको सुनकर उनके हृदय उल्लसित हुए। तब श्रीराम ने युवराज के कर्तव्य में अधिक कुशल होकर, सभी को किसी

व्राकटंबुग नोन्डु बाध लेकुंड । नेकप्रबुद्धिगा निट दंड्रि गोलिचि
धारुणीप्रजलकु दययोप्प जेसे । वीरु वारनकनु बिश्रुतकीर्ति २४६०
समचित्तुडै धर्मचरितंबु बूनि । यमरेंद्रविभवुडै या रामविभुडु
सीतयु दानुनु जेलुवोप्प गूडि । नूतनरति सुखार्णोराशि देलि
चंद्रशालल गेळिसौधवीथिकल । जंद्रकांतमणि विशालवेदिकल
गाजुटोवरुल बंगरुपडकिंड्ल । जाजिपूबान्पुल जंपक क्रमुक
नारिकेळरसाल नारंगरंग । दाराममुल गृतकाद्रिसानुवुल
गोलकुल कोलकुल गुंजपुंजमुल । जलुवचप्परमुल सैकतस्थलुल
जातुरि मेलगुचु सकलभोगमुलु । नाततसौख्यंबुलंदुचुनुंडे
ननि यांध्रभाष भाषाधीशनिभुडु । विनुतकाव्यागम विमलमानसुडु
पालिताचारुडपार धीशरधि । भूलोकनिधि गोनबुद्धभूविभुडु
दम तंड्रि विठ्ठलधरणीशुपेर । गमनीयतरधैर्यकनकाद्रि पेर- २४७०
बनुगोन नरिगंडभैरवु पैर । घनु पेर, मीसरगंडनि पेर

प्रकार का कष्ट हुए बिना, एकाग्रचित्त से इधर पिता की सेवा करते हुए और उधर धारुणीप्रजा पर दयादृष्टि से, बिना भेदभाव के विश्रुतकीर्ति से, ॥ २४६० ॥

—समचित्त हो, धर्मवान् और चरित्रवान् होकर शासन किया। वे प्रभु राम, अमरेन्द्र वैभव-सम्पन्न हो, सीता के साथ शोभा से नूतनरति (नव-वैवाहिक सुख) के सुखसमुद्र में ऊभचूभ होते रहे। चन्द्रशालाओं में, क्रीडा-वीथिकाओं में, चन्द्रकान्तमणियों की विशाल वेदिकाओं पर, चन्द्र-शालाओं की भीतरी कोठरियों में, सुवर्णखचित शयनागारों में, जूही की पुष्पशय्याओं में, चंपक, पूग, नारिकेल, रसाल (आम), नारंगी (आदि वृक्षों) से विलसित उपवनों में, क्रीडा-पर्वत की घाटियों में, सरोवरों के पार्श्व में, कुंजपुंजों में, धवल (अथवा शीतल) वितानों के नीचे, वालुकामय स्थलों पर, चातुर्य के साथ रहते हुए, सकलभोग (और) महान् सुखों का आनन्द लेते रहे।

इस प्रकार आन्ध्रभाषा के भाषाधीश (ब्रह्मा) के समान, विनुत-काव्यागम-विमल-मानस (श्रेष्ठ काव्य और शास्त्रों के ज्ञाता), आचारवान्, अपार-बुद्धि-सिन्धु, भूलोक-निधि गोन बुद्ध-भूपति ने, अपने पिता विठ्ठल धरणीश के नाम पर, जो कमनीयतर धैर्य के कनकाद्रि हैं, ॥ २४७० ॥

—दृढता से अरिगंडभैरव (शत्रुभयंकर), महात्मा, मीसरगंड (प्रताप-शाली), अलघु-निश्चल-दया के आयतबुद्धि वाले है, ललित सद्गुणगणा-लंकार हैं, आचन्द्र-तारार्क-विलसित होनेवाली, भूलोक में अतिपूज्य हो

नलघु निश्चलदयायत वुद्धि पेर। ललितसद्गुणगणालंकारु पेर
नाचंद्रतारार्कमै योप्पुमिगिलि। भूचक्रमुन नतिपूज्यमै वेलय
नसमानललितशब्दार्थसंगतुल। रसिकमै चेलुवोन्द रामायणमुन
वरग नलंकारभावनल् निंड। गरमोप्पु नी वालकाडंवु जेप्पे:
नारूढि नार्षेयमै यादिकाव्य। मै रसिकानंदमै येल्लनाड्
निव्वसुमति नोप्पु नी पुण्यचरित।। मेव्वरु सदिविन नेव्वरु विनिन
सामादि बहुवेदचयधामराम। नामचिंतामणि नव्यभोगमुलु
परहिताचारमुल् प्रभुविचारमुलु। परिपूर्णशक्तुलु प्रकटराज्यमुलु
निर्मलकीर्तुलु नित्यसौख्यमुलु। धर्मैकनिष्ठलु दानाभिरतुलु २४८०
नायुरारोग्यंवु लधिकसंपदलु। वायक पाटिल्लु; वापक्षयंवु
वरपुत्रलाभंवु वैरिनाशनमु। सरिनोप्पु; धनधान्यचय समृद्धियुनु
ने विघ्नमुलु लेक यिड्ललो नधिक। लावण्यवतुलैन ललनल पोन्दु
गोडुकुलतो नेप्डु गूडियुंडुटयु। नेडगाग नापदलेल्ल वायुटयु
सम्मदंबुन वंधुजनुल गूडुटयु। निम्मुल गाम्यंवु लेडकुंडुटयु
नन्नलुदम्मुलु नभिवृद्धि वोन्दि। मन्ननतो गूडि मलसियुंडुटयु
सततंवु देवतासंतर्पणंवु। पितृगणतृप्तियु वेम्पोन्दुचुंडु;

शोभित होने के लिए अनुपम ललित-शब्दार्थ-संगति से युक्त रसमय रामायण में अलंकार (और) भावों से परिपूर्ण, अतिरम्यता से प्रस्तुत इस बालकाण्ड की रचना की। सुप्रसिद्ध आर्षग्रन्थ, आदिकाव्य, रसिकों को आनन्द देने वाले (तथा) सदा इस वसुमति (भूमि) पर शोभायमान होनेवाले इस पुण्यचरित्र को जो भी पढे, जो भी सुनेंगे, उन्हें सामादि बहुवेद-समूहों का धाम, राम-नाम-चिन्तामणि, नव्यभोग, परहित (करनेवाले) आचार, श्रेष्ठ विचार, परिपूर्ण शक्तियाँ, प्रकटराज्य (सुख), निर्मल कीर्तियाँ, नित्यसुख, धर्मनिष्ठा, दान में आसक्ति, ॥ २४८० ॥

—आयु, आरोग्य, अधिक सम्पत्ति, अवश्य ही प्राप्त होंगे। पापक्षय, वरपुत्रलाभ, वैरि-नाश समुचित रूप से होगा। विना किसी प्रकार की विघ्न-वाधाओं के धनधान्य की समृद्धि, घरों में लावण्यवती ललनाओं का सहवास, सदा पुत्रों के साथ मिलकर रहना, सारी विपत्तियों का दूर हो जाना, सम्मोद के साथ वन्धुजनों से मिले रहना, प्रेम से कामनाओं की पूर्ति होना, सहोदरों की अभिवृद्धि (उन्नति) पाकर वड़े स्नेह के साथ मिलजुल कर रहना, सतत देवताओं का संतृप्त रहना, पितृगण की तृप्ति में वृद्धि, (आदि) से वे सम्पन्न होंगे। यह (ग्रन्थ) मोक्ष-साधक है, यह

निदि मोक्षसाधनं, बिदि पापहरमु । निदि दिव्य, मिदिभव्य, मिदियु श्रीकरमु;
रमणीयलील नी रामायणंबु । ग्रमर्मोप्प बूजिप गल्गु बुण्यमुलु;
व्रासिन वारिकि वरशुभोन्नतुलु । वासवलोकनिवासंबु गलुगु; २४९०
नॆन्दाक गुलगिरु लॆन्दाक जलधु । लॆन्दाक रविचंद्रुलॆन्दाक दार
लॆन्दाक वेदंबु लॆन्दाक दिशलु । नॆन्दाक भुवनंबु लेपुदीपिंचु
नंदाक नीकथ यक्षरानंद । संदोह-दोहळाचारमै परगु२४९३

बालकाण्डमु समाप्तमु

पापहर है, यह दिव्य है, यह भव्य है, यह श्रीकर है। रमणीयलीला (विधान) से इस रामायण को नियम से पूजा करने पर पुण्य प्राप्त होगा। लिखने वालों को वर-शुभ-उन्नति और इन्द्रलोक-वास प्राप्त होगा। ॥२४९०॥

जब तक कुलपर्वत, जब तक जलधि (समुद्र), जब तक रविचन्द्र, जब तक तारे, जब तक वेद, जब तक दिशाएँ, जब तक भुवन (लोक) विशिष्टता से प्रकाशमान रहेंगे, तब तक यह कथा, अक्षर (शाश्वत) आनन्द-सन्दोह (समूह) का निवास-स्थान होकर विराजमान रहेगी। ॥ २४९३ ॥

बालकांड समाप्त



अतुलितबलधामं स्वर्णशैलाभदेहं
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम् ।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं
रघुपतिवरदूतं वातजातं नमामि ॥

अयोध्या - काण्डमु

श्रीराम पट्टाभिषेक संकल्पमु

श्री लील दशरथोर्वीपालुडवनि । बालिचुचुंडि चौप्पड नौक्कनाडु
सुतुलु नल्वुरलोन शुभतरमूर्ति । नतुल यशोनिधि यगुचुन्न वानि
नुरुसत्यमुनु युक्तियुक्तंबु मितमु । बरहितंबुनु गाग बलिकेडु वानि
बन्नुगा दन बहि:प्राणंबुलनग । सन्नुति गैकोन्चु जरियिंचुवानि
ननुदिनंबुनु बेद्दलगुवारिनेल्ल । मनमुल मुदमंद मन्निचुवानि
हितबुद्धि यगुवानि नेल्लभूतमुल । हितमुन गरुण नन्वेषिंचु वानि
बोल जतुर्विधपुरुषार्थगतुल । नोलि जित्तंबुन नूहिंचुवानि
ननिशंबु संतुष्टुंडै युंडुवानि । विनुतविचारुडै विलसिल्लुवानि
वेरवरि यगु वानि, विहितकार्यबु । लरय ननालस्युडै चेयुवानि
गाढ विचारंबु गलवानि, बरम । गूढमंत्रंबुन गौमरोन्दु वानि १०
दप्पनि कोपंबु दगु प्रसादंबु । नौप्पगु प्रभुशक्ति योनरेडु वानि
ननि सुरासुरुलकु नविजेयुडगुचु । घनभुजबलमुन गडु वालुवानि
गज हयारोहण क्षमुडगुवानि । विजयलक्ष्मी समन्वितुडगु वानि

श्रीराम के राजतिलक का संकल्प

—बड़ी शोभा के साथ दशरथ-उर्वीपाल (राजा) अवनि का पालन उत्कर्ष से कर रहे थे। एक दिन (उन्होंने) चारों सुतों में शुभतर मूर्तिवाले, अतुल यशोनिधि, महत् सत्य को युक्तियुक्त, परिमित, परहित रूप में बोलनेवाले, शोभा से अपने (दशरथ के) बहि:प्राण माने जाकर, सन्नुति (प्रशंसा) प्राप्तकर विराजमान होनेवाले, प्रतिदिन गुरुजनों के मन को मुदित करते हुए, (उनके आदेशों को) माननेवाले, हितबुद्धिवाले, समस्त प्राणियों को हित (-बुद्धि) से, करुणा से देखनेवाले, समुचित रूप से चतुर्विध पुरुषार्थ के विधान की क्रम से चित्त में कल्पना करनेवाले, अनिश (सदा) सन्तुष्ट बनकर रहनेवाले, विनुत (सराहनीय) विचार-युक्त हो विराजनेवाले, उपायशाली, देख-समझकर विहित कार्यों को बिना आलस्य के करनेवाले, प्रगाढ़ विचारवाले, परम गूढ़ मन्त्रों (उपायों) से शोभित होनेवाले, ॥ १० ॥

—अनिवार्य (आवश्यक) क्रोध (तथा) उचित प्रसाद (वरदान) से शोभित प्रभुता की शक्ति से समंचित रहनेवाले, अनि (युद्ध) में सुर (और) असुरों के लिए अविजेय होते हुए, महान् भुजबल से अतिशयता को

माननि रोषंबु मदि लेनि वानि । मानुगा भृत्युल मन्निचुवानि
नतिरथुडगुवानि ननसूयावृत्ति । प्रतिदिनंबुनु बुद्धि वाटिंचु वानि
गुमुदबांधवु भंगि गॉमरॉन्दु वानि । नमितप्रजानंद मलरिंचुवानि[1]
गरुणासमुद्रुडै कडुमिंचुवानि । वरुल गुणंबुलु पाटिंचुवानि
बुद्धि बृहस्पति वुरुडिंचुवानि । निद्धतेजंबुन निनु बोलुवानि
नमित प्रजानंद मलरिंचुवानि । गुमुदबांधवु भंगि गॉमरॉन्दु वानि[1]
वॅलयु धनुर्वेद वेदशास्त्रमुल । वलयु विद्यलयंदु वलनॉप्पु वानि २०
न्यायमार्गंबुन नर्थार्जनंबु । पायक चेय नेर्परि यगुवानि
सैरण धर तोड सरिवच्चुवानि । भूरिगुणंबुल बॉलुपारुवानि
श्रीरामु वट्टाभिषेकंबु सेसि । धारुणि येलिप दलपोसि चूचि
तलकॉन्न कडकतो दशरथेश्वरुडु । गॉलुवुकूटमुनकु गॉमरॉप्पवच्चि २४

वसिष्ठादुलतो दशरथुनि समालोचन

यंदु वसिष्ठादुलगु पुरोहितुल । नंदु सुमंत्रादुलगु मंत्रिवरुल

प्राप्त करनेवाले, गज-हय (घोड़े) आरोहण (सवारी) में क्षमता (-युक्त) वाले, विजयलक्ष्मी से समन्वित, दीर्घ रोष को मन में न रखनेवाले, समुचित रूप से भृत्य-जनों का आदर करनेवाले, अतिरथ, अनसूया (ईर्ष्यारहित) वृत्ति को प्रतिदिन (सदा) बुद्धि (मन) से माननेवाले, कुमुद-बान्धव (चन्द्र) के समान शोभित होनेवाले, अमित प्रजानन्द (प्रजा को अति आनन्द देने) से विलसित, करुणा के समुद्र हो अनुपम बननेवाले, दूसरों के गुणों का आदर करनेवाले, बुद्धि में बृहस्पति को परास्त करने वाले, शुद्ध तेज में सूर्य के सम दीखनेवाले, अमित प्रजानन्द से विलसित, कुमुद-बान्धव के समान शोभायमान, विलसित, धनुर्वेद, वेद, शास्त्रों में, (और) आवश्यक विद्याओं में पारंगत, ।। २० ।।

—न्यायमार्ग से निरन्तर अर्थार्जन (धन कमाने) में उपायशाली, क्षमा में पृथ्वी के समान, भूरि (सद्) गुणों से विलसित होनेवाले श्रीराम का पट्टाभिषेक (राजतिलक) कर (तत्पश्चात्) धारुणी (धरती) का पालन करवाने का विचार कर, (तदर्थ) सप्रयत्न हो, दशरथेश्वर सभास्थल में शोभा के साथ आये ।। २४ ।। (और),

वसिष्ठ आदि से दशरथ की मन्त्रणा

—उसमें (सभा में) वसिष्ठ आदि पुरोहित, सुमन्त्र आदि मन्त्रिवर, निकट

१ यह पंक्ति दो बार पद आगे-पीछे करके आई है।

जेरुव नृपतुल जॆलुल जुट्टमुल । बौरवर्युल जानपदुल नाश्रितुल
धारुणीदिविजुल दंडनायकुल । धीरुल राजनीतिज्ञुल नॆल्ल
वारल रार्विंचि वारिदनिनद । चारु गंभीर सुस्वरमुन बलिकॆ:
'मापॆद्दलिक्ष्वाकु मनुजेश मुख्यु । ली पृथिवीतलमेलि रिंपॆसग;
वारल रीति नवारितनीति । नी राज्यमंतयु ने नोपिनट्लु ३०
निजकुलागतधर्मनिरतुंड नगुचु । ब्रजल नेलितिनि मी प्रापुन जेसि:
यदि यंतयुनु मीरलॆरिगिनयदिय । विदितंबुगा निक विनुडॊक्कमाट
यरुवदि वेलेडु लवनि बालिंचि । नॆरि सितच्छत्रंबु नीडन युंडि
मुदिसिति भूभारमुनकंटॆ घनत । बॊंदलु जराभारमुन दाल्चु कतन:
ना मेनु विकसित नलिनषंडंबु । गौमुदि चे बोले गर्वबु दक्कॆ:
रमणीयगुणमुल रामचंद्रुनकु । समुलु लेरधिकुलु संचिपगलरॆ ?
तलप नीतडु दल्लिदंड्रुलर्भकुल । नलरिंचुगति मिम्मु नलरिंपगलडु:
प्रजलॆल्ल रामुनि पट्टंबुनकुनु । निजमुगा सुरलकु निष्ठम्रॊक्कुदुरु;
जनमनोरथमुलु सफलंबुलगुचु । ननुपम सुखलील नलरु गावुतम:

(पास-पड़ोस) के नृपति, मित्र, सम्बन्धी, श्रेष्ठ नागरिक, जनपद के निवासी (ग्रामीण), आश्रित जन, धारुणी-दिविज (ब्राह्मण), दंडनायक (सेनापति), धीरजन, राजनीतिज्ञ (आदि) सभी को बुलाकर, वारिद (मेघ-) निनद-चारु-गम्भीर स्वर में (यों) बोले—'हमारे पूर्वज इक्ष्वाकु (वंश के) श्रेष्ठ राजाओं ने बड़ी शोभा के साथ इस पृथ्वीतल पर शासन किया। उनके समान मैंने भी अवाध गति से, इस समस्त राज्य को, अपनी शक्ति (सामर्थ्य) के अनुसार, ॥ ३० ॥

—निज कुलागत-धर्म-निरत होते हुए, आप (लोगों) के सहयोग से, प्रजा का पालन किया है। यह सब आप लोगों को ज्ञात ही है। सुस्पष्ट रूप से एक और बात सुनिए। साठ हज़ार वर्ष तक अवनि (भूमि) का पालन करके, विधि-विधान से श्वेत छत्र की छाया में रहते हुए, भू-भार की अपेक्षा बढ़ती हुई वृद्धावस्था के अतिशय भार को वहन करने के कारण बूढ़ा हो गया हूँ। विकसित कमल-समूह कौमुदी (चाँदनी) के कारण जिस तरह कान्तिहीन हो जाता है, वैसे ही मेरा शरीर गर्वहीन हो गया है। रमणीय गुणों में रामचन्द्र के समान कोई नहीं है। लोग उनकी अधिक क्या प्रशंसा कर सकेंगे? सोच-विचार कर देखने पर यह आपको इस प्रकार खुश रख सकता है, जैसे माता-पिता शिशुओं को। सचमुच समस्त प्रजा राम के राजतिलक के लिए देवताओं की निष्ठा से पूजा करती है। इससे (राम के राजतिलक से) जनता के मनोरथ सफल

कावुन निक रामु गल्याणनामु । देवताहितकामु धीगुणस्तोमु ४०
निंदीवरश्यामु निनकोटि धामु । सौंदर्यजितकामु जगदभिरामु
ब्रजल बालिपग वट्टंबुगट्टि । सुजनुलु गॊनियाड सुखकरंबैन
यूरट गोरुचुनुन्नाड; मीकु । नी रीति सम्मतंबे' यंचु वलुक
घनगर्जितंबु लाकर्णिंचि यलरु । वनमयूरंबुल वड्डुवु वर्हिंचि
मॊगि गलकलशब्दमुखरिताशांन्तु । लगुचु भूसुरमुख्युलगु भूमिप्रजलु
दमलोन दामु मंतनमाडि कूडि । कमलाप्तकुलुनकुत्कंठ निट्लनिरि:
'मीरानतिच्चिन मेलिमिमाट । वारु वीरनकॆल्लवारिकि हितमु
हृदयरंजकमु, नभीष्टदंवय्यॆ । नदिगाक सकल प्रजानंदकरुनि
राजनीतिज्ञु निर्मलधर्मनिपुणु । देजोजगद्वंधु दीनैकवंधु
सत्यसंधु प्रसन्नु शांतिसंपन्नु । नित्यविप्रार्चनानिरतु सच्चरितु ५०
नीतियु प्रीतियु नेर्पुनु नोर्पु । ख्यातियु भूतियु गांतियु दांति
शांतियु मॊदलगु सद्गुणावळुल । नॆन्तयु नीकन्ननॆक्कुडैयुन्न
रामुनि लोकाभिरामुनि नीवु । भूमिकि राजुगा वून्चुट तगदे?

होंगे (और) अनुपम सुख लीला से विलसित होंगे। अतः अव कल्याण-नाम, देवता-हित की कामना करनेवाले, धीगुणस्तोम, ॥ ४० ॥

—इन्दीवर श्याम, इन कोटि-धाम (करोड़ सूर्यों के समान प्रकाशवाले), सौंदर्यजित-काम (जिसने सौन्दर्य में कामदेव को जीत लिया हो), जगदभिराम राम का, प्रजा का पालन करने के लिए राजतिलक कर, सुजनों की प्रशंसा प्राप्तकर, सुखप्रद रूप से आश्वस्त होना चाहता हूँ। (क्या) आपको यह रीति (प्रकार) सम्मत (स्वीकार) है?' ऐसा बोलने पर, घनगर्जन को सुनकर प्रसन्न बननेवाले वन-मयूरों की भाँति, कल-कल शब्द से मुखरित अशान्ति (हलचल) से युक्त हो, भूमिसुर आदि भू-प्रजा परस्पर परामर्श करके, मिलकर (एक साथ) उत्कंठा से कमलाप्त (सूर्य) कुल (वाले दशरथ) से (यों) बोले—'आपने जिन श्रेष्ठ वचनों का आदेश दिया, वे सबके लिए हितकर, हृदयरंजक (तथा) अभीष्टदायक हैं। यही नहीं, सकल प्रजा के लिए आनन्दकर, राजनीतिज्ञ, निर्मल धर्म में निपुण, तेज में जगत्वन्धु (सूर्य), दीनैक वन्धु (दीनों के लिए एकमात्र वन्धु), सत्यसन्ध, प्रसन्न, शान्ति-सम्पन्न, नित्य विप्रों के अर्चन में रत, सच्चरित्र, ॥ ५० ॥

—(तथा) नीति, प्रीति, निपुणता, क्षमा, ख्याति, भूति (ऐश्वर्य), कान्ति, दान्ति, शान्ति, आदि सद्गुणावलियों से आप से भी अधिक श्रेष्ठ बने राम को, लोकाभिराम को पृथ्वी के लिए राजा बनाना (क्या) न्याय नहीं

त्रैलोक्यमैन नातंडेलजालु । नी लोक मेलुटदेन्त मात्रंबु ?
नी सुताग्रणि राज्यनिरतुडौनेनि । भूसति सेसिन पुण्यंबु गादे ?
कावुन बट्टंबु गट्टु मीवतनि । केवेळ मेमुनु निदियॆ कोरुदुमु ।"
अनुचु बद्धांजलुलै विन्नविप । विनि तन मदिलोन वेड्क रेट्टिप
भूमीशुडप्पुडुप्पोंग्गि वसिष्ठ । वामदेवुल जूचि वलनोप्प बलिकें:
'नी मधुमास मभीष्टदंबगुट ।रामुनि सकल साम्राज्य लक्ष्मिकिनि
राजु जेयुदमु; ददद्रव्य वस्तुवुलु। योजिंचि तॆप्पिपुडुचितवैरवरिनि ६०
ननिपल्क वारु नय्यभिषेकयोग्य । घनवस्तुवुलु गूर्पगा बूनि; रंत
नादित्यकुलगुरुंडगु वसिष्ठुंडु । मेदिनीपति याज्ञ मॆयिकोंनि यपुडु
परिचारकुल जूचि पलिकें ।'मीरिक बोरि सुवर्णंबुलु बोलुचु रत्नमुलु
नॆल्ल योषधुलुनु नॆसगु गंधंबु । तॆल्लबुष्पंबुलु देनिय घृतमु
लाजलु नूतन ललितवस्त्रमुलु । राजयोग्यंबगु रथवरेण्यमुनु
मणिकांचनांचित महितायुधमुलु । ब्रणुतलक्षणमैन भद्र सामजमु

है ? (अर्थात् न्यायसंगत ही है।) वे (राम) तो तीनों लोकों पर शासन करने में समर्थ हैं। इस लोक पर शासन करना (उनके लिए) कौन-सी बड़ी बात है ? यदि आपका सुताग्रणि (पुत्रों में श्रेष्ठ) राज्य (शासन-) निरत हो तो वह भूसति (पृथ्वी) के पुण्य का फल ही तो है न। अतः आप उनका राजतिलक कर दें। सदा हम यही चाहते हैं।' (ऐसा) कहते हुए, बद्धांजलि (अंजलि बाँधकर) उनके (सभासदों के) निवेदन करने पर, (उसे) सुनकर अपने मन में हर्ष के अधिक हो जाने पर, भूमीश (राजा) फूल गये (और) वसिष्ठ (और) वामदेव की ओर देखकर, समुचित रूप से (यों) बोले—'इस मधुमास के अभीष्टप्रद होने के कारण, राम को सकल साम्राज्य-लक्ष्मी का राजा बना देंगे। तत् तत् द्रव्य और वस्तुओं को सोचकर उचित रूप से मँगाइए।' ॥ ६० ॥

—(राजा दशरथ के) ऐसा कहने पर वे (वसिष्ठ और वामदेव) उस (राम के) अभिषेक के योग्य अधिक वस्तुओं को सँजोने के प्रयत्न में लग गये। उस समय आदित्यकुल (सूर्यवंश) के गुरु वसिष्ठ मेदिनीपति (राजा) के आदेश को स्वीकार कर, परिचारकों को देख (यों) बोले— 'अब आप (लोग) क्रम से सुवर्ण, शोभायमान रत्न, समस्त ओषधियाँ, अतिशय गंध (सुगंध द्रव्य), श्वेत पुष्प, मधु, घृत, लाजा (खील) नूतन-ललित वस्त्र, राजा-योग्य श्रेष्ठ रथ, मणिकांचन से समंचित महित (बड़े) आयुध, सराहनीय लक्षणों से युक्त भद्र सामज (गज), श्रेष्ठ हय (घोड़ा), गोलाकार बने वस्त्र के पंखे, श्वेत छत्र, उपयुक्त चँवर, बड़ा केतन, सौ

नवदातहयमुनु नालवट्टमुलु । धवळातपत्नंबु दगु चामरमुलु
घनकेतनमु हेमकलशमुल् नूरु । गनक श्रृंगंबुलु गल वृपोत्तममु
वरलु समंचित व्याघ्रचर्मंबु । मरियुनु वलसिन महितवस्तुवुलु
नोगि देन्डु मीरग्निहोत्नशालकुनु ।नगरि वाकिड्लुनु नगर वीथुलुनु७०
वुरगोपुरंबुलु वोरिनोप्पुसेयु । डरुदार शिल्पंबुलंदंद मेरय
गलुवडंबुलु वताकलु दोरणमुलु । गलयंग बुरलक्ष्मि गैसेयु डेलमि;
नोलि भूसुरुलकु नोकलक्षकैन । वोल नन्नंबु लोप्पुग जेयुडेलमि:
दक्षिणार्थं बैन द्रव्यंबुलेल्ल । नक्षीणमुग गूर्पु डखिलयत्नमुल
नंदरु बूजोपहारादि विधुल । वोन्दुगा गोलुवुडु पुरदेवतलनु;
वारांगनलु वीरुवारनकेल्ल । वारुनु गैसेसि वारक नगरि
रेन्डव वाकिट रीतितो वच्चि । युंडुडु; नगरि भटोत्तमुल् गोलुव
नेरिगिंपु' डनिनि वारेल्लकार्यमुलु । मरवक काविंचि मदिमुदंबोदव
ना वसिष्ठुनितोड नंतयु जेप्प । गा विने दशरथक्ष्मापालुः डंत
क्षमावल्लभुंडु सुमंत्रादिमंत्न । कोविदुलनु वंधुकोटि वेर्वेर ८०
राविंचि चेप्पि वारलु सम्मतिप । वेवेग रघुरामविभुनि रप्पिंचि८१

हेमकलश (सोने के घड़े), कनक-श्रृंगों से युक्त श्रेष्ठ वृपभ, शोभायमान (और) समंचित व्याघ्र चर्म और भी आवश्यक श्रेष्ठ वस्तुओं को विधि-क्रम से अग्निहोत्नशाला (हवनशाला) में लाइए। नगर के द्वारों, नगर की वीथियों (तथा) नगर के गोपुरों को, जहाँ-तहाँ आश्चर्यप्रद शिल्प के (द्वारा) शोभायमान पद्धति पर अलंकृत कीजिए। कमलों की मालाएँ, झंडियाँ, तोरण से युक्त पुरलक्ष्मी को सानन्द सजाइए। ।। ७० ।।
क्रम से एक लाख भूसुरों के लिए भी (जो) पर्याप्त हो, इतना अन्न (संचित करने)का प्रयत्न सप्रेम कीजिए। अखिल (समस्त प्रकार के) प्रयत्न करके दक्षिणा के लिए (आवश्यक) द्रव्यों को, अक्षीण रूप से सँजोइए। सभी पूजा (और) उपहार-विधियों से, सुन्दर रूप से पुर-देवताओं की पूजा कीजिए। वारांगनाएँ (वेश्याएँ) और सभी लोग समलंकृत हो, अवाध गति से नगर के दूसरे द्वार पर क्रम से आकर, ठहर जाइए। नगर के उत्तम भटों की सेवाएँ लेते हुए (यह समाचार) सबको वताइए।' (ऐसा) कहने पर वे (परिचारक-गण) सभी कार्यों को, विना भूले सम्पन्न कर, मन में हर्प के उत्पन्न होने पर वापस आ गये (और) उस वसिष्ठ से सब कुछ वताया। उसे राजा दशरथ ने (भी) सुन लिया। तव राजा ने सुमन्त्र आदि मंत्न-कोविदों के द्वारा सम्वन्धियों को, प्रत्येक का नाम ले-लेकर वुलवाया (और) (उनको) वताया। (जव) वे सहमत हुए (तव) अति शीघ्र रघुराम विभु को बुलाया ।। ८१ ।।

राज्यपालनमु बूनुमनि दशरथुडु श्रीरामुनि गोरुट

तन चूपुलनु सुधाधारलु दोरग । जननाथु डा रामचंद्रुतो ननियें:
'बेनुपोन्द गडिमिमै बेद्दगालंबु । जनुलेल्ल बोगड राज्यमु सेसि येनु
दानमुल् धर्ममुल् दनरु यागमुलु । नूनिन निष्ठतो नोगि बेक्कु सेसि
कडपट नी यट्टि कल्याणशीलु । गोडुकुगा बडसिति गोर्कि दीपिप:
नेनिक भूभारमिट मोवजाल । गान निन् बट्टंबु गट्टेद ब्रीति;
जेलुवार बट्टाभिषेकंबु सेय । ललितमै योप्पेडु लग्नमेल्लुंडि
योनर सीतयु नीवु नुपवासमंडु । डेनसिन भक्तितो नेल्लि संप्रीति'
ननिपल्कुटयु रामुडवनीशु जूचि । विनय धैर्यबुलु वेलयनिट्लनियें:
'जननाथ ! नाकुसी चरणपद्ममुलु । गोनकोन्न भक्ति गोलुचुटकंटे ९०
गडचिन कार्यबु गलदे लोकमुन? । नुडुगुडीपलुकुलयोग्यंबु' लनुडु
'ननघचारित्रुड; वतिपुण्यघनुड; । विनकुलरत्नंब; वीवुदक्कंग
दगुवारलेव्वरु धरणि पालिप ? । दगिलि कैकोनुमिक त्रैलोक्यवीर!'
यनिपल्कुटयु रामु 'डट्ल का' कनुचु। दन नगरिकि बोयें: ददनंतरंब

राज्य-पालन करने के लिए दशरथ का श्रीराम से प्रार्थना करना

—अपनी चितवनों से सुधा-धाराओं के स्रवित होते रहने पर, जननाथ (राजा) ने रामचन्द्र से कहा—'औन्नत्य (और) आधिक्य से युक्त हो, दीर्घकाल तक प्रजा की प्रशंसाएँ प्राप्त करते हुए (मैंने) राज्य किया। कई दान, धर्म, श्रेष्ठ यज्ञ, निष्ठा धारणकर, बड़ी लगन के साथ कर, कामनाओं के प्रदीप्त होने पर, अन्त में तुम-जैसे कल्याणशील को पुत्र के रूप में प्राप्त किया। अब मैं भूभार को वहन नहीं कर सकता। अतः प्रीति से तुम्हारा राजतिलक करूँगा। शोभा से पट्टाभिषेक करने के लिए ललित रूप से उपयुक्त (शुभ) लग्न परसों है। अतः तुम और सीता अधिक भक्ति (और) प्रीति के साथ कल उपवास करो।' ऐसा कहने पर राम ने अवनीश को देखकर, विनय (तथा) साहस के उमड़ने पर (यों) कहा—'हे जननाथ ! आपके चरण-पद्मों की लगन के साथ सेवा करने से बढ़कर' ॥ ९० ॥

—मेरे लिए लोक में श्रेष्ठ कार्य कोई दूसरा है ? (नहीं है।) छोड़िए इन अयोग्य (अनुचित) शब्दों को, ऐसा कहने पर (राजा ने कहा)—'(तुम) अनघ (निष्पाप) चरित्रवाले हो, अतिपुण्य धनवाले, (और) इस (सूर्य) कुल के रत्न हो। तुम्हारे सिवा इस धरणी का पालन करने में समर्थ और कौन है ? हे त्रैलोक्य (त्रिलोकों में भी अद्वितीय) वीर !

पौरुल राजुल बंधुलनेल्ल । वारल वीड्कोलिप वनजाप्तकुलुडु
अंत:पुरंवुन करिगि श्रीरामु । जेन्तनुन्न सुमंत्रुचे व्रिलिपिंचि
तनसमीपमुन नातनयु गूर्चुंड । वनिचि यानंदबाष्पमुलुप्पतिलग
मनमलरग जूड महिपुनकपुडु । मनमुन दिगुलोत्त मरि यशुभमुलु
कनुपट्टे; नंतट गडुभयमंदि । तन पुत्रकुनि जूचितद्दयु वलिके;
'नापालि भाग्यंव! ना निधानंव! ।-ना पुण्यसारंव! ना तप: फलम! १००
न पुत्र रत्नंव! ना कललंदु ।दीपिंचे नशुभवर्धितनिमित्तमुलु;
घन दुर्ग्रहमुलु नुल्कापातमुलुनु । गनु गोंटि; मनसु वैकल्यंवुनोंन्दे;
गावुन वुण्ययोगंवुन निपुडु । नीवु पट्टमु वून निंडु ना कोर्कि;
यालस्यमेल ? नी यभ्युदयमुन । की लोकमंतयु नेपुडु गांक्षिचु;
नन विनि दशरथु नानति नीय ।कोनि म्रोक्कि तंड्रि वीड्कोनि राघवुंडु
तन तल्लिकिनि सुमित्रकु नट्टिवार्त । जनकनंदनकु लक्ष्मणुनकु जेप्पि
वारल संतोष वार्धि देलिचि । या राघवुंडु शीतांशु सन्निभुडु
तन नगरिकि वच्चे दानु सीतयुनु । घनमैन हृदयविकासंवु तोड;

अव अवश्य (इस भार को) ग्रहण करो।' ऐसा कहने पर, राम ने कहा—'ऐसा ही होने दीजिए' (और) अपनी नगरी (महल) में चले गये। उसके अनन्तर नागरिक, राजा और सम्बन्धी सभी को विदाकर, वनजाप्त (सूर्य) कुल (के राजा दशरथ) ने अन्त:पुर में जाकर, निकटस्थ सुमन्त्र के द्वारा श्रीराम को बुलवाया। अपने समीप उस तनय (पुत्र, श्रीराम) को वैठने की आज्ञा दी, आनन्द-वाष्प (अश्रु) के उमड़ आने पर, मन में आनन्द के उमड़ने पर, देखने पर (विचार करने पर) महिप (राजा) को कुछ अशुभ (बुरे शकुन) दिखलायी पड़े, जिससे उनके मन में चिन्ता उत्पन्न हुई। तब अति भीत होकर, अपने पुत्र को देखकर फिर से वोले—'हे मेरे भाग्य (-निधि)! हे मेरे निधान! हे मेरे पुण्यसार! हे मेरे तप:फल! ॥ १०० ॥

—हे मेरे पुत्ररत्न! मैंने स्वप्नों में अशुभ को वर्द्धित करनेवाले कारण दीप्त हुए वड़े दुष्ट ग्रहों को (तथा) उल्कापातों को देखा है। मन विकल हो गया है। अत: अव पुण्य योग में तुम अभिपिक्त हो जाओ, यही मेरी प्रगाढ़ इच्छा है। (अव) देरी क्यों ? यह समस्त लोक तुम्हारे अभ्युदय (उन्नति) की आकांक्षा करता है।' (ऐसा) कहने पर (उसे) सुनकर, दशरथ की आज्ञा को स्वीकार कर, प्रणाम कर, पिता से विदा लेकर, वह समाचार अपनी माता को, सुमित्रा को, जनकनन्दिनी (सीता) को, (तथा) लक्ष्मण को वताकर, उन्हें आनन्द-समुद्र में ऊभ-चूभकर, वह राघव,

नंत वसिष्ठुतो ननियें भूविभुडु, "संतोष मेंसगंग जनि रामविभुनि
मुनिनाथ! युपवासमुनकु संकल्प। मोंनरिप जेयुमु युक्त मार्गमुन" ११०
ननवुडु ब्रह्मरथारूढुडगुचु। जनि वसिष्ठुडु रामचंद्रुनि कडकु
दन शिष्यु नोंक्कनि दडयक पनिपि। तन राक मुन्नुगा दग नेंरिंगिंचि
यम्मूडु वाकिंड्लयंदाक बोव। निम्मुल राघवुंडेदुरेगु देंन्चि
यवरोहणंबु दा नमर जेयिंचि। यवतीर्ण रथुनिकि नतिभक्ति म्रोक्कि
लोनिकि देंच्चि या लोकवंद्युनकु। मानुगा सत्कृतुल् मनसार जेय
बुण्याहवाचनंबुनु नुपवास। पुण्य संकल्पंबु बोंसग जेयिंचि
वेंलय रामुडु पदिवेल धेनुवुल। नेंलमि दक्षिणगाग निच्चिन गोंनुचु
वच्चि वसिष्ठुडु वसुमतीपतिकि। नच्चुगा जेंप्पि गृहंबुन करुग
नंतः पुरंबुन करिगें भूविभुडु। नंत नक्कड रामु डानंद मोंदव
जानकितो गृत स्नानुडै विष्णु। मानुगा गूर्चि होमंबु गाविंचि १२०
या हविश्शेषंबु नमर ब्राशिंचि। यूह विष्णु ध्यान मोंनर जेयुचुनु

जो शीतांशु-सन्निभ (चन्द्र-समान) थे, सीता के साथ अधिक हृदय-विकास (उत्साह) से अपनी नगरी (महल) में आये। तब राजा ने वसिष्ठ से कहा—'हे मुनिनाथ! (आप) जाकर विभु राम को, आनन्द के उमड़ आने पर, समुचित विधि से उपवास के लिए संकल्प कराइए।' ॥ ११० ॥

ऐसा कहने पर वसिष्ठ, ब्रह्मरथ पर आरूढ़ होकर, रामचन्द्र के यहाँ गये (और) अविलम्ब अपने एक शिष्य को भेजकर, पहले ही अपने आगमन (का समाचार) उचित रूप से जतला दिया। (राम के महल के) तीन द्वारों को (जब वसिष्ठ ने) पार कर लिया, तब राघव प्रेम से (उनके) स्वागत के लिए आये, उचित रूप से (उन्हें) अवरोहण कराया (रथ से उतारा); रथ से उतरे हुए उन्हें (उस मुनि को) अति भक्ति से प्रणाम किया, भीतर ले गये (और) उस लोकवन्द्य (वसिष्ठ) का विधि-विधान से, हार्दिक रूप से आदर-सत्कार किया (तब वसिष्ठ के) पुण्याह-विधान (तथा) उपवास (का) पुण्य संकल्प कराने पर, राम ने हर्ष से दस हजार धेनु (उन्हें) दक्षिणा में दिये तो उनको (धेनुओं को) स्वीकार कर, वसिष्ठ वसुमतीपति के पास आकर (सब कुछ) स्पष्टता से बताकर (स्व) गृह गये तो राजा (भी) अन्तःपुर में चले गये। तब वहाँ राम, आनन्द के उत्पन्न होने पर, जानकी के साथ स्नानकर, विष्णु के प्रति होम (हवन) कर, ॥ १२० ॥

—उस हविश्शेष (हवन-शेष) को उचित रूप से ग्रहणकर, मन से विष्णु का ध्यान करते हुए, विशद निश्चय बुद्धि से, विष्णु-गृह (मंदिर)

विशद निश्चय बुद्धि विष्णु गेहमुन । गुश शय्य पै बौल्चि कुलगुरुंडैन
या वसिष्ठुडु सेप्पिनट्टि चंदमुन । धीवरिष्ठुडु रामदेवुंडु निष्ठ
नुपवासमुंडे; नयोध्यलो नंत । विपुल सम्मदमुन विलसिल्लुवारु
गलयंग गस्तूरि कलयंपि जल्लि । कौलदि मुत्तेमुल म्रुग्गुलु वेट्टुवारु,
नरुदार नुत्तुंग हर्म्यवुलंदु । सरिनौप्पु देवता सदनंवुलंदु
विपणिमार्गमुलंदु विविध चित्रमुल । विपुल पताकलु वेसनेत्तुवारु
जेलुवार गृहमुलु सिंगिंचुवारु । नलिमीऱ मणितोरणमुलेत्तुवारु
विरुलचप्परमुलु विरचिंचुवारु । वुर वीथि गेतनंवुलु निल्पुवारु
गलुवडंवुलु डंवुगा गट्टुवारु ।गलिमि नौंडौरुलर्थि गैसेयु वारु १३०
बेरयंग निस्साण भेरी मृदंग । मुरज शंखादुलु मोरयिंचुवारु
वौलुचु दिव्यसुगंध पुष्पाक्षतमुलु । वेलयंग गैकौनि विलसिल्लुवारु
नभिषेक सुमुहूर्त मरयिंचुवारु । विभुडैन दशरथु विनुतिंचु वारु
निलुवेल्पुलकु वूजलिच्चेंडुवारु । गल कौद्दि दानमुल् गाविंचु वारु
वुरराजवीथि गुंपुलु गूडु वारु । सरसकथागोष्ठि सलिपेंडु वारु

में कुशासन पर, विराजमान हो, कुलगुरु वसिष्ठ के (द्वारा) वतायी (विधि के) अनुसार, धी-वरिष्ठ राम, देव-निष्ठा से उपवास (व्रत मे) रहे। तव अयोध्या में विपुल सम्मोद से विराजमान होनेवाले, सुन्दरता से कस्तूरी का छिड़कावकर, श्रेष्ठ मोतियों से चौक पूरनेवाले (रँगोलियाँ सजानेवाले), आश्चर्यप्रद उत्तुंग हर्म्यों (सौधों) (तथा) शोभायमान देव-सदनों में, विपणि (व्यापार के) मार्गों में विविध प्रकार के विपुल पताकाओं को शीघ्रता से फहरानेवाले, सुन्दरता से गृहों को सजानेवाले, शोभा से मणि-तोरण सजानेवाले, फूलों के छप्परों की रचना करनेवाले, नगर-वीथियों पर झंडे लगानेवाले, कमलों के हारों को आडम्वर से वनानेवाले, अधिक सम्पन्नता से परस्पर अलंकार करनेवाले; ॥ १३० ॥

—निसान, भेरी, मृदंग, मुरज, शंख आदि को मुखरित करनेवाले, सुन्दर दिव्य सुगन्ध-पुष्प-अक्षतों को लेकर विलसित होनेवाले, अभिषेक-सुमुहूर्त की (ठीक) खोज करनेवाले, प्रभु दशरथ की प्रशंसा करनेवाले, कुल-देवताओं की पूजा करनेवाले, यथाशक्ति दान करनेवाले, नगर की राजवीथियों में एकत्रित होनेवाले, सरस कथा-गोष्ठियाँ करनेवाले, राम ही राजा हों—ऐसी प्रार्थना करनेवाले, राम की सेवा करने के लिए उतावले होनेवाले, राम-संकीर्तन में अनुरक्त होनेवाले वनकर (अयोध्या-वासी) कोटि-कोटि महोत्सवों में प्रसन्न हो रहे थे ॥ १३७ ॥

रामुडे राजुगा ब्रार्थिचुवारु । रामुनि गोलुव संभ्रम पडुवारु
राम कीर्तनमुल रागिल्लुवारु ।नै महोत्सव कोटु ललरिंचु चुंड १३७

मंथर दुरालोचनमु

नप्पुड मंथर यनु कैक दासि । तप्पक तन मेड नेक्कि चूचि
"यिदि येमि चंदमो! यी पुरलक्ष्मि । पोंदलुचुन्नदि महाद्भुत वैभमुल
बौरु लंदरुनु नपार श्रृंगार । चारु शरीरुलै संचरिंचेदरु; १४०
कौसल्य नगरिलो गल कांतलेल्ल । गैसेसि युन्नारु गडुवेड्कतोड;
नेलोको! कौसल्य येंद नुब्बि युब्बि । वेल संख्य धनंबु वेंच्च पेट्टेडिनि"
ननुचु ब्रमोदादि यगु रामु दादि । गनुगोंनि यडिगि यक्कामिनि वलन
रामु बट्टमु गट्टि राजु गाविंप । ना महोत्सव कोटु लनि निश्चयिंचि
पनिवडि "रामुडु बाल्यंबुनंदु । दन कालु विरिचिन तप्पु साधिंप
निदि नाकु दरि" यनि यिच्च जिंतिचि। यदि हेंच्चि कैकतो नंतयु जेप्प
वच्चि तत्केळीनिवासंबु जोंच्चि । मच्चिक नुय्येल मंचंबु मीद
ब्रविमल मृदुल तल्पंबु पै वेड्क । बवळिंचियुन्न यप्पद्माक्षि जूचि

मंथरा का दुष्ट विचार

—तब मंथरा नामक कैकेयी की दासी ने अपने महल (की छत पर) चढ़कर, (यह महोत्सव) देखकर सोचा—'यह क्या कारण है कि यह नगरलक्ष्मी महा अद्भुत वैभव से विलसित हो रही है। सभी नागरिक अपार श्रृंगार (से युक्त) चारु शरीरवाले होकर विचर रहे हैं। ॥ १४० ॥

—कौसल्या की नगरी (महल) की सभी कान्ताएँ (स्त्रियाँ) बड़े शौक़ से अलंकृत हैं। ऐसा क्यों ? (क्या कारण है) कौसल्या मन में फूल-फूलकर हजारों की संख्या में (अगणित) धन व्यय कर रही है।' (ऐसा) सोचते हुए (मंथरा ने) प्रमोदादि (प्रमोद ही जिसके आदि में हो, अत्यन्त हर्षित) राम की धाय को देखकर (कारण) पूछा। उस कामिनी से (यह जानकर कि) राम के राजतिलक के लिए राजा के निर्णय के कारण ये महोत्सव कोटियाँ हैं, (उसने) निश्चय किया कि 'राम ने बाल्यावस्था में मेरी टाँग तोड़ दी थी, उस अपराध का बदला लेने के लिए यही मेरे लिए अवसर है।' ऐसा मन में चिन्तन करके, उसके (इच्छा के) बढ़ जाने पर, कैकेयी से सब कुछ कहने आकर, लाड़-प्यार से झूलनेवाले पलंग (पालने) पर, प्रविमल मृदु तल्प पर, आनन्द से लेटी हुई उस पद्माक्षी को देखकर, 'उठो उठो, हे भामा ! लीलाभिरामा ! अपनी भलाई

"लेम्मु लेम्मो भाम! लीलाभिराम! । यिम्मेरुंगवु कार्य मेमियु" ननुचु
गौन रेट्ट वट्टि ग्रक्कुन लेवनेत्ति ।तन नेर्पु माटल दरुणि किट्लनियें १५०
"वामलोचन! नीकु वच्चिन भयमु । नी मदि दलपोयनेर वेन्तयुनु;
वसुधाधिपति नाकु वलचु; ना भाग्य।मसमान मनि चेप्पु; ददि वोंकुलय्यें
नदि येट्टि दन वेंद्यालिकि वेंऽचि।मदिराक्षि! निनु नेडु मऽि मोसपुच्चि
भरतुनि नोंकवंक वरभूमि कनिचि। परिकिंचि रघुरामु वट्टंबु गट्ट
दलचुचुनुन्नाडु दशरथेश्वरुडु; । नेंलत! यिट्टिदयैन नीकेटि ब्रतुकु?
राजुल मदि नम्मरादु; नीवेल । वेजाडलनु विर्रवीगेंदो वाल !
यिट्टि मोह विदूरु निट्टिवंचकुनि । निट्टि वूमेंलकानि नेंन्दु ने गान;
मगडे यातडु मैत्रि मानिन यट्टि । पगवाडु गाक यी पट्टुन नीकु!
सवतिकुमारुनि जगति यंतटिकि । धवुनिगा जेसिन धवळायताक्षि
नीकुमारुनकुनु नीकुनु नाकु ।शोक मव्वुटें काक सुखमेल कलुगु? १६०
नीकरणंवुगा नीतंड्रि वनुप । जेकोंन्न प्रेम वच्चिनदान गान

के किसी कार्य को नहीं जानती हो'—यह कह, उसके (कैकेयी के) हाथ के छोर को पकड़कर, उसे झट से उठाकर बैठाया (और) अपने चतुर वचनों से तरुणी (कैकेयी) से (यों) बोली— ।। १५० ।।

—'हे वामलोचना (सुन्दर नेत्रोंवाली) ! अपने (सिर) आये भय (आफ़त) के बारे में अपने मन में तनिक भी विचार नहीं करती तुम जो कहती थी कि वसुधाधिपति (राजा) मुझसे प्रेम करता है, मेरा भाग्य असमान है, वह झूठा (सिद्ध) हो गया है। बात ऐसी है, अपनी बड़ी पत्नी से भय खाकर, हे मदिराक्षी (मतवाली आँखोंवाली) ! तुम्हें आज धोखा देकर, एक ओर भरत को पर-भूमि (विदेश) में भेजकर, (अवसर) देखकर, दशरथेश्वर रघुराम का राजतिलक करने की सोच रहे हैं। हे भामिनी ! यदि यह हो गया तो तुम्हारा जीना किसलिए ? (जीवन व्यर्थ है।) राजाओं का मन से (कभी) विश्वास नहीं करना चाहिए। हे बाला ! तुम क्यों हज़ार प्रकार से इठलाती हो ? ऐसे मोह-विदूर, वचक, कपटी को कहीं भी मैंने देखा नहीं है। वह तुम्हारा पति है ? (नहीं है)। इस अवसर पर तुम्हारे लिए वह तो मैत्री को भूला हुआ शत्रु है। हे धवलायताक्षी (स्वच्छ आँखोंवाली)! सौत के पुत्र को समस्त जगती का पति बना दे तो तुम्हारे पुत्र को, तुम्हें (और) मुझे दुख के सिवा सुख कैसे (प्राप्त) होगा ? ।। १६० ।।

—तुम्हारे पिता द्वारा दिये गये वर-शुल्क के रूप में, तुम्हारे पिता के भेजने पर, अतिशय प्रेम से (यहाँ) आयी हूँ अतः तुम्हारी भलाई (ही)

नी लेस्स ना लेस्स, नी कैन लेमि । ना लेमि; गान नाना विधंबुलनु
हितवु जेप्पिति नीकु निंदुनिभास्य! । मति नीदु पुत्तुंडु मनुट दलंपु"
मनिन व्रेडुक बूनि या कैक दानि । विनुतिंचि कौगिट वेगंब चेर्चि
"श्रीरामु पट्टाभिषेकोत्सवंबु । सेरि ना कोर्रिगिंचि चेवुलकु विंदु
सेसिति; वेमंदु जेलुव ! नीपोंदु ।वासिगा फलियिंचे; वक्रोक्तुलुड्डुगु;
भरतुनकंटे ना भरताग्रजुंडु । दिरमैन भक्ति विधेयुंडु नाकु;
नी मेलु वार्तल केनु मेच्चितिनि । भामरो!" यनुचु नेर्पड गोंतसोम्मु
घनतर नवरत्न खचितमै योप्पु । तन चेति कडियंबु दानिकि वेग
'कोम्मु को'म्मनि योसगुटयु ना सोम्मु।लम्मायलाडि यळ्ळटु पार वैचि १७०
पापंबु हृदयतापंबु गोपंबु ।दीपिंप बलिके नत्तेऽवतो मरियु:
'निदि येमि मेलुगा निच्च नुब्बितिवि। यिदि येमि मेच्चुगा निच्चिति नाकु?
निदि येमि कैक! यी हितवु गैकोक । पदरि पल्किति नीति भाविंप लेक;
वलनोप्प नेमनवच्चु नी गुणमु ? कलकाल मी तीरुगा जन दोडगे;

मेरी भलाई है। तुम्हारा अभाव मेरा अभाव है। इसलिए नाना विधियों से हित (की बात) तुम्हें बता दी है। हे इन्दुनिभास्य (चन्द्र-समान मुखवाली) ! मन से अपने पुत्र के जीवन (जीवित रहने) के बारे में सोचो।' (ऐसा) कहने पर, हर्षित होकर, उस कैकेयी ने उसकी नुति (तारीफ़) कर, शीघ्र (उसे) गले से लगा लिया। (बोली) 'श्रीराम के पट्टाभिषेकोत्सव के बारे में मुझे बताकर (तुमने) कानों की दावत की है (कर्ण-मधुर शब्द कहे हैं)। क्या कहूँ सुन्दरी ! तुम्हारा सांगत्य, श्रेष्ठता से सफल हुआ है। वक्रोक्तियों को छोड़ दो। भरत की अपेक्षा वह भरताग्रज (राम) स्थिर भक्ति से मेरा विधेय (आज्ञाकारी) है। हे भामा ! तुम्हारे श्रेष्ठ समाचारों के लिए मैं (तुम्हारी) सराहना करती हूँ।' (ऐसा) कहती हुई, कुछ धन (तथा) श्रेष्ठ नवरत्नों से खचित, हाथ में शोभायमान कड़ा उसे झट से 'ले लो, ले, लो'—कहते हुए (दिया) देने पर, उन गहनों को उस जादूगरनी (ठगिनी) ने दूर फेंक दिया। ॥ १७० ॥

(और) पाप, हृदयताप, कोप के दीप्त होने पर, उस स्त्री (कैकेयी) से फिर यों बोली—'इसे कौन-सा हित समझकर मन में फूली हुई हो ? यह कौन-सी प्रशंसा (मानकर) मुझे उपहार दिया है ? यह क्या कैकेयी ! इस (मेरी) भलाई (की बात) को स्वीकार न कर, नीति के बारे में सोचने में असमर्थ रह, ऐसा क्या बक रही हो ? अति प्रिय तुम्हारे गुण के बारे में क्या कहूँ ? सदा ऐसा ही होता आ रहा है। कहीं अपने स्वार्थ को

दन्नु मालिन यट्टि धर्मंबु गलदे ? कन्नु वोयेंडु नट्टि काटुक गलदे ?
जगति लो नेंदैन सवति नंदनुल । कगपडु शुभमुल कात्म गोरुदुरे ?
सवति कुमारुंडु साम्राज्यमुनकु । धवुडैन सकल भूधवुलु वांधवुलु
व्रजलु मंत्रुलु रामु पंपु सेयुदुरु । गजहयादि वलंबु कैवसंबगुनु;
दशरथुनकु स्वतंत्रमु लेदु विदप; । शशिमुखियैन कौसल्य संपदल
विर्रवीगग सरिवेलदिवै युंडि ।वेर्रिदाना! येंट्लु वेगिचेदीवु? १८०
नदि यिदि येल? नी वावधूमणिकि । नोंदुगुचु दासिवै युंडगवलयु;
भरतुंडु ना रघुपतिकि भीतिलुचु । वेरवेदि भृत्युडै विहरिपवलयु;
राचदेवि यटंचु रमणि सीतकुनु । नीचिन्नि कोडलेन्निक गोल्वलयु;
नेलत! यिट्टिद येनि नीकेटि ब्रतुकु? कलदुपायंबिट्टि कार्यंबुनकुनु,
वनदुर्गमुल रामु वसियिंप वनुपु; । पनिवडि भरतुनि वट्टंबु गट्टु"
मनवुडु कैकेयि "यक्कट ! नाकु जननाथु डिंतटि चनवेल यिच्चु?
ना राजु नेमनि यडुगुदु नेनु । नी रेन्डु दशरथुडेल ना किच्चु?
नेक्कडि माट! नी वेन्नि सेप्पिननु । निक्कार्य घटन नाकेरीति वोसगु?

छोड़कर भी धर्म है ? आँखों को अन्धा वनानेवाला भी काजल हो सकता है ? जगत में कहीं (ऐसा भी होता है) सौत के पुत्रों के हित के बारे में मन में चाहे ? सौत का पुत्र साम्राज्य का पति हो तो सभी भूधव (राजा), वन्धुजन (नातेदार), प्रजा, मन्त्री, राम की आज्ञा का पालन करेंगे। गज-हय-आदि वल (उनके) वश में हो जायगा। उसके वाद दशरथ को स्वतन्त्रता नहीं रहेगी। शशिमुखवाली कौसल्या संपत्ति से इठलाती रहेगी तो समान अधिकारवाली होती हुई हे पगली ! तुम दिन कैसे विताओगी ? ॥ १८० ॥

—यह-वह (अनेक वातें) क्यों ? तुम्हें उस वधूमणि (नारी-रत्न) के समक्ष झुककर, दासी वनकर, रहना होगा। भरत को, उस रघुपति से डरते हुए, मार्गान्तर के न होने से, भृत्य वनकर रहना पड़ेगा। राजदेवी (राजमहिषी) मानकर तुम्हारी छोटी पुत्रवधू को रमणी सीता की ढंग से सेवा करनी होगी। हे स्त्री ! (अगर) ऐसा हो, तो तुम्हारा जीवन किसलिए ? ऐसे कार्य का उपाय यह है कि राम को वनदुर्गों में रहने के लिए भेजो। प्रयत्न कर, भरत का राजतिलक कराओ।' तव कैकेयी वोली—'हाय, जननाथ (राजा) इतनी स्वतन्त्रता देंगे ? (नहीं)। उस राजा से ये दोनों (वर) कैसे पूछूँ ? दशरथ ये दो (वर) क्यों मुझे देंगे ? कहाँ की वात है ? (असंभव है)। तुम जो भी कहो, यह कार्य मेरे लिए कैसे घटित होगा ? हे नवेली ! श्रीराम से यह मैं कैसे कहूँ कि जंगलों में जाओ।' ऐसा कहने

श्रीरामु नडवुल जेर बौम्मनुचु । नेरीति जॆप्पुदु नॆलनाग! नेनु?"
ननुचुन्न कैकतो ना युपायंबु ।तन कीडु मॆऱय मंथर सॆप्पदॊडगॆ१९०
"वडतुक! तॊल्लि शंबरुडु निंद्रुडु । दॊडरि पोराड निंद्रुनकु नै पूनि
निनु दोडुकॊनि सैन्य निवहंबु दानु । जनि रात्रि मार्कॊन्न शंबरु तोड
बोराडु दशरथ भूपालु मीद । ना राक्षसुडु माय ललुक बन्नुटयु
धवळांगुडनु मुनि दय नीवु गन्न । यविरळंबगु माय ना माय लणचि
नी विभु ना दैत्यु निशितास्त्र निहति। जाव कुंडग गाचि संप्रीतु जेसि
वसुधेशु चे नाडु वरमुलु रॆन्डु ।मसलक पडसिति; मऱचिते वानि?
नीवे ना कीकथ यॆऱिगिंचि मऱचि । ती वात्म मऱचिननेनेल मऱतु?
बट्टंबु बॆड़बासि पदुनालुगेंड्लु । गट्टिगा मुनि वृत्ति गौसल्य कॊडुकु
दारुण कांतार तलमु नेलुटकु । धारुणी तलमु नीतनयु डेलुटकु
ना रॆन्डु वरमुलु नवनीशु नडिगि ।यी रॆन्डु तॆऱगुल निट्टु सेय बनुपु२००
पडतुक! यतडॆंत प्राथिचॆ नेनि । दॊडवु लॊन्नेनि दोड्तो निच्चॆनेनि
जडमति लो गाक सत्यंबु नॆऱपि । विडुवक यी कार्यविधमु साधिपु;

वाली कैकेयी से वह उपाय, अपनी आफ़त के दीप्त होने पर, मंथरा कहने लगी ।। १९० ।।

—हे स्त्री ! पूर्व में शंबर (और) इन्द्र के जोश के साथ युद्ध करते समय, इन्द्र का पक्ष लेकर, तुम्हें साथ लेकर, सेना-समूह के साथ, स्वयं जाकर, रात के समय (दशरथ ने उसका) सामना किया । शंबर के साथ लड़नेवाले दशरथ भूपाल पर, उस राक्षस ने क्रोध से मायाओं का प्रयोग किया । धवलांग नामक मुनि की कृपा से प्राप्त अविरल माया (-शक्ति) से तुमने उन मायाओं को परास्त कर दिया । (और) अपने विभु को उस दैत्य के निशित (तीखे) अस्त्रों की निहति (चोट) से मरने से बचाकर, सन्तुष्ट किया । उस दिन वसुधेश (राजा) से (तुमने) अविलम्ब दो वर प्राप्त किये । (क्या) उन्हें भूल गयी हो ? तुम स्वयं यह कथा मुझे बताकर, भूल गयी हो । तुम भूल गयी तो भी मैं क्यों भूलूँगी ? राज्य को छोड़कर चौदह वर्ष, दृढ़ता से मुनि-वृत्ति से कौसल्या के पुत्र को दारुण-कान्तार-तल पर शासन करने (रहने) के लिए, (और) धारुणी-तल (पृथ्वी) का शासन अपने पुत्र के लिए, ये दो वर अवनीश से माँगकर, इन दो प्रकारों से करने की आज्ञा दो । ।। २०० ।।

हे स्त्री ! वह कितना ही प्रार्थना क्यों न करे, तुरन्त अनेक आभूषण दे दे, (तब भी) जड़मति (मूर्ख) न बनकर, सत्य की दुहाई देकर, दृढ़ता से

पति बोंक वेरचु; नी पै नेय्य मेक्कु; । डतकरिंपडु, सेयु" ननिन रागिल्लि
"नीवंटि प्रियुरालि नीवंटि सखिनि। नीवंटि नयगुणनिधि नेंदुगान;
नीवु नाचे विन्न यी वर द्वयमु । गावरंवुन गानगा वरारोह !
यी वेंचिनटुवले नी भूमि कॅल्ल । ना वरतनयुंडु नायकुंडैन
वागुगा नपरंजि वंगारु चेत । नी गूनु वॉदिगिंचि नी मुखेंदुवुन
दिलकंवु गस्तूरि दिद्दि नी मेनु । वलनॉप्प भूषणावळुल गैसेसि
नटियिंचु मरुनि यंदपु गॉम्म यनग । गुटिल कुंतल ! नीवु ग्रुम्मरुचुंड
सखुलेल्ल नी माट जवदाटकुंड।सखिय! निन्नलरिंतु सतत मे" ननुचु २१०
गैक मंथरकु सत्कारमुल् सेसि । येकांतमुन दनयिंटिकि वोयि
पेट्टिन सॉम्मुलु पेट्टेलो वेट्टि । दट्टमौ कस्तूरि दलपट्टु वेट्टि
मलिन वस्त्रमु गट्टि मदि नल्क दॉट्टि। व्रलमु सेपट्टि भूस्थलि वंडे, नंत
दनलोन नूहिंचि तनु गॉल्चि वच्चि । मन मारनुन्न या मंथर जूचि

इस कार्य-विधान को सिद्ध कर लो । पति (राजा) असत्य वोलने से डरता है, तुम पर अधिक प्रेम रखता है । (तुम्हारा) अपमान नहीं करता । (तुम्हारी वात के अनुसार) करेगा ।' (ऐसा) कहने पर अनुराग-युक्त हो (कैकेयी ने कहा)—'तुम-जैसी प्रिया को, तुम-जैसी सखी को, तुम-जैसी नयगुणनिधि को कहीं देखा नहीं है । हे वरारोहे (उत्तम स्त्री) ! मुझसे तुमने जिन दो वरों के वारे में सुना था, उन्हें मैं गर्व के कारण देख नहीं पा रही हूँ । तुमने जैसा सोचा, वैसे ही इस समस्त भूमि का मेरा वर-तनय नायक होगा तो ढंग से स्वच्छ सुवर्ण से तुम्हारे कूवड़ को जड़ दूँगी । तुम्हारे मुखेन्दु (चन्द्र-मुख) पर कस्तूरी का तिलक लगाकर, प्रेम से तुम्हारे शरीर को भूपणावलियों से सजा दूँगी । हे कुटिलकुन्तले (घुँघराले वालों वाली)! तुम मन्मथ की सुन्दर नारी के समान विचरती रहोगी तो ऐसी (व्यवस्था) करूँगी कि सभी सखियाँ तुम्हारी वात का पालन करती रहें । हे सखी ! (इस प्रकार) सदा तुम्हें खुश रखूँगी ।' ॥ २१० ॥

(ऐसा) कहते हुए कैकेयी ने मन्थरा को सत्कृत कर, एकान्त में अपने घर (कक्ष) में जाकर, धारण किये आभरणों को (उतारकर) पेटी में रखकर, माथे पर गाढ़ी कस्तूरी का लेप लगाकर, मलिन वस्त्र पहनकर, मन में क्रोध धारणकर, ज़िद पकड़कर, भूस्थल पर लेट गयी । तव अपने मन में कल्पनाकर (कुमंत्रणाकर), अपनी सेवा करने के लिए आकर, सन्तुष्ट वनी हुई उस मन्थरा को देखकर (कैकेयी वोली)—'(जव तक) जननायक (राजा दशरथ) रामचन्द्र को बुलाकर, वन में मुनि-वृति से विचरण करने भेजकर, वड़े प्रेम से भरत को अपने

"जन नायकुडु रामचंन्द्रुनि बिलिचि। वनमुन मुनिवृत्ति वर्तिप वनिचि
भरतुनि दन राज्य पदमुन कॆल्ल। गरमर्थि बट्टंबु कट्टिन गानि
यन्न पानमु लॊल्ल; नाभरणमु।लॆन्नि यिच्चिन नॊल्ल; नेमियु नॊल्ल;
निट लेचि रानिक ने" नंचु नलुक।नट्टुवूनि मदिलोन नलयु चुन्नंत२१८

दशरथुडु कैकेयिंटि करुगुट

गैकेयि तोड राघवुनि पट्टाभि।षेकोत्सवंबॆल्ल जॆप्पॆद ननुचु
ना रात्रि दशरथु डचटि केतॆंचि।चारु माणिक्य कांचन धगद्धगित२२०
कनक रत्न कवाट कक्ष्यांतरमुल। घनसार चन्दन कर्पूर गंध
कलित नानारत्न कांति शोभितमु। दुलकिचु सौधवेदुल वेग कडचि
केळी गृहंबुन गेकय पुत्रि। बोलंग बरिकिंचि पॊडगानकपुडु
दौवारिकुनि जूचि दशरथुं डडुग। गा वाडु वणकुचु गरमुलु मोगिचि
"देव! या कोप मंदिरमु लोपलिकि। देवि विच्चेसॆ; नेतॆरगॊको यॆरुग,"
ननि वाडु वलिकिन या माटलॆल्ल। धनुरुग्र टंकार दारुणंबगुचु

समस्त राज्यपद का राजतिलक नहीं करेंगे, (तब तक) मैं अन्न (जल-पान) नहीं चाहूँगी (ग्रहण नहीं करूँगी)। जितने भी आभरण देंगे, नहीं चाहूँगी। कुछ भी नहीं चाहूँगी। यहाँ (कोपगृह) से अब उठकर नहीं आऊँगी।' ऐसा कहते हुए, क्रोध को धारणकर, मन में रुष्ट होती रही। (उस समय) ॥ २१८ ॥

दशरथ का कैकेयी के घर जाना

—'कैकेयी से राघव के पट्टाभिषेकोत्सव के बारे में सब कुछ कह दूँगा' (ऐसा सोचते हुए) उस रात को दशरथ वहाँ (कैकेयी के महल में) आये, चारु (सुन्दर) माणिक्य-कांचन (से) धगद्धगित (प्रकाशमान) ॥ २२० ॥

—कनक-रत्न कपाट (किवाड़) कक्ष्यान्तरों, घनसार, चन्दन, कर्पूर (के) गन्ध (से), कलित नाना रत्न-कान्ति (से) सुशोभित, प्रकाशित सौध (महल-) समूहों को शीघ्रता से पारकर, केलिगृह (रंगमहल) में केकयपुत्री को समुचित रूप से ढूँढ़ा, उनका पता न लगा, तब (वहाँ) दौवारिक (द्वारपाल) को देखकर (पूछा)। दशरथ के पूछने पर वह काँपते हुए, हाथ जोड़कर (बोला)—'हे देव! उस कोपगृह में देवी पधारी हैं। कारण मुझे मालूम नहीं है।' उसकी सभी बातें उग्र धनुष्टंकार के समान दारुण होते हुए, कानों में पड़ने पर, मुख के विवर्ण होने पर, मानवाधीश

वीनुल वड मोमु वेल-वेल वाऱ। मानवाधीशुंडु मानसंवुननु
मानैन धृति दूलि स्रान्पडि कलगि। मानंवु डोलायमानंवु गाग
ब्रेमानुबंधंवु व्रीति रेट्टिंप। ना मंदिरंवुन कल्लन वच्चि
यनिमिपपुरि नुंडि यच्चर लेम। सनु देंचि पडियुन्न चंदंवु दोप२३०
नूरक धरणि पै नुन्न या विकच। नीरजानन जूचि निव्वेऱ गंदि
वेऱवेऱ पाटोंदि वेदन जेंदि। तॆऱव दग्गऱ जेरि दीनुडै मीऱि
या यिंति योंडलेल्ल नंटि दुव्वुचुनु। गायज विवशुडै कडु वेडदोंडगॆ
"निंदीवराक्षि! पूर्णेंदुविंवास्य। इंदिंदिरालक! यी नेल नलुक
ववळिंप नीकेल वालेंदु फाल!। यविरळ मृदुल पर्यंकंवुलुंड
गोमल धवळ दुकूलंवुलुंड। नी मैल चेल नी वेल कट्टितिवि?
पसिडिशलाककु व्रतियैन मेन। वॊसग भूपणमुल व्रूनवेमिटिकि?
ज्ञलपट्टि कोंऱनेल चंदमौ नुदुट। दलपट्टु वॆट्ट नीतलपॆट्टुवुट्टॆ?
नीलालकंवुल निग्गुलु देर। नेलपापट दीर्प विन्नाळ्ळ रीति?

मानस में दृढ धैर्य के विचलित हो जाने पर, स्तंभित होकर, व्याकुल होकर, मान (अभिमान) के डोलायमान होने पर, प्रेमानुवन्ध और प्रीति के द्विगुणित होने पर, उस मन्दिर (कोपगृह) में धीरे से आये (जहाँ कैकेयी ऐसे पड़ी थी) मानों अनिमिषपुरी (अमरावती) से (कोई) अप्सरा आकर लेटी हुई हो। ॥ २३० ॥

अकारण धरणी पर पडी हुई उस विकच-नीरज-आनन (विकसित कमल-सम मुख) वाली को देखकर अचम्भे में आकर, निश्चेष्ट हो, वेदना पाकर (वेदना का अनुभव कर), स्त्री (कैकेयी) के पास पहुँचकर, अधिक दीन वनकर, उस स्त्री के समस्त शरीर का स्पर्शकर, हाथ फिराते हुए, कायज (मन्मथ-) विवश (काम-भाव से विवश) होकर अधिक प्रार्थना करने लगे—'हे इंदीवराक्षी (कमलनेत्री)! पूर्णेन्दु विम्वास्य (पूर्णचन्द्रमुखी)! इन्दिन्दिरालके (भ्रमरों-जैसे केशवाली)! हे वालेन्दुफाले (वालचन्द्र के समान फाल भागवाली)! अविरल मृदुल पर्यकों के होते हुए, तुम्हारा इस भूमि पर क्रोध से लेट जाना क्यों? कोमल धवल दुकूलों के रहते हुए, तुमने मैला वस्त्र क्यों पहना है? कनक-शलाका-सी देह पर सुन्दरता से भूपण क्यों धारण नहीं करती? हठ करके वालचन्द्र-सम ललाट पर लेप (किसी पीड़ा को सूचित करनेवाला) लगाने का विचार कैसे पैदा हुआ? रोज की तरह अलकों में चमक पैदा करते हुए, माँग क्यों नहीं भरती हो? हे अवला! अरुण अधरों में दुगुनी अरुणिमा उत्पन्न करते हुए स्वादिष्ट ताम्वूल की कामना क्यों नहीं करती हो? ॥ २४० ॥

गॆम्मोवि किनुमडि कॆंपु संधिल्ल।गम्म दम्मुलमेल कांक्षिप वबल! २४०
जिलुगु वॆन्नॆल तेट जिगिनव्वु मॊलक। मॊलपिंपवेटिकि मुखचंद्रुनंदु !
निदि येमि कैक! नी विट्टु सिन्न वोव।मदि दूलि नी कित मरुग नेमिटिकि?
नॆव्वरु नी देस नॆग्गुलु वलिकि ? रॆव्वरु माराडि रॆदिरि नी तोड?
वारि नॆरिंगिपु वारिजनयन ! । वारि वारितु नॆव्वारलनैन;
नॆव्वरु नी माटलिट मीरि चनिरि?। यिव्वगनीकेल ? यिट्लुंडनेल ?
यनि पल्कि कन्नुल नंदंद क्रम्मु । घन बाष्प पूरमुल् गरमुल दुडिचि
"लेम! नी वॊक दिक्कु लेनि चंदमुन।भूमि पै निट्टु धूळि बॊरल नेमिटिकि?
गामु सोकॆनॊ, लेक घनमैन रोग । मेमि वाटिल्लॆनो, यॆरिंगिपु नाकु;
वॆज्जुल बिलिपिंचि वेग मान्पॆदनु; लज्जिजपनेटिकि ललितांगि! नीकु?
नट्टु गाक नी तलंपरय नॊंडयिन—'निट्टुसेयु'मनि पल्कु; मेनॆचेसॆदनु; २५०
वनित! नी कॊरकुनै वध्युलु गानि । यनघ चरित्रुल नैन जंपॆदनु;
जंपंग दगिन दुर्जनकोटि नैन । गंपिंचि नी माट गाचि पुच्चॆदनु;
नीकु ब्रियंबैन निरुपेद नैन । जेकॊनि राजुगा जेसॆद नॆलिमि;

—स्वर्ण-सम स्वच्छ चाँदनी के समान मंदहास के अंकुरों को अपने मुखचन्द्र पर क्यों नहीं उत्पन्न करती ? यह क्या कैकेयी ? इस प्रकार मन को छोटा क्यों करती हो ? मन में विकल होकर (इस तरह) संतप्त क्यों होती हो ? किसने तुम्हारे प्रति कटुवचन कहे हैं ? किसने तुम्हारी बातों का विरोध किया ? हे वारिजनयने (कमलनेत्री) ! बताओ उनके बारे में। कोई भी हो, उनका निवारण (दमन) कर दूँगा। किसने तुम्हारी बातों का अतिक्रमण किया है ? यह दुख तुम्हें किसलिए ? ऐसा क्यों (उदास) रहती हो ?' ऐसा कहकर, आँखों में उमड़कर आनेवाले अधिक आँसुओं के समूह को हाथों से पोंछकर (दशरथ ने फिर कहा)—'हे भामा ! अनाथ की तरह तुम्हें इस प्रकार, ज़मीन पर, धूल में लोटने की क्या ज़रूरत है ? यह किसी दुष्ट ग्रह की पीड़ा है अथवा कोई भयंकर रोग है ? बताओ मुझे। वैद्यों को बुलाकर शीघ्रता से स्वस्थ करा दूँगा। हे ललितांगी ! तुम लज्जित क्यों हो रही हो ? (यदि) यह नहीं, तुम्हारा कोई दूसरा विचार है तो कह दो कि ऐसा करो। मैं ही (वह काम) कर दूँगा। ॥ २५० ॥

हे वनिता ! तुम्हारे लिए अवध्य पुण्यात्माओं का भी सही, वध करूँगा' वध करने-योग्य दुर्जन-कोटि (-समूह) की भी तुम्हारी बात पर रक्षा कर दूँगा। (यदि) तुम्हें प्रिय है तो कंगाल को ग्रहणकर, सप्रेम राजा बना दूँगा। हे भामिनी ! तुम्हारी दया को खोए हुए श्रीसन्त (धनी) को भी दरिद्र बना दूँगा। मैं और मेरे लोग (परिवार के अन्य लोग)

भामिनि! नी दय वासिन यट्टि । श्रीमंतुनैन दरिद्रु जेसेदनु;
नेनु ना वारु नी हित वुद्धि गडव । गा नेर; मिट्लुंड गारणमेमि ?
लेम! ना माट लालिंचि नीविपुडु । मोमेत्तु ना मदि मुच्चट दीऱ;
नडिगिन प्राणंवुलैन नी कित्तु । नडुगुमु नी" वन्न नानंदमंदि
यन्नाति विभुनि नेय्युमु दिय्यमेऱिगि। सन्नपुटेलुगुन जननाथु कनियें;
"देव! ने जेप्पिन तेऱगुन नीवु । गावितुननि वास गावितुवेनि
मऱि येऱिंगितु नम्माट नी" कनिन ।देऱवतो दशरथाधिपुडप्पुडनियें२६०
"वीरुडेव्वडु मेटि विलुकांड्लोन ? सारमेव्वडु धर्मसमितिलो नेल्ल
नेव्वनि जूडक येनुंडजाल ? नेव्वडु ननु भक्ति नेप्रोद्दु गोलुचु ?
नट्टि राघवुनि तोडतिव! नी कोर्कि । नेट्टन गावितु ने" नन्न नलरि
मरुदग्निशशि नभोमणिमुख्युलैन । सुरल वेर्वेऱ साक्षुलुगा नोनर्चि
धरणीशु मदिलोनि तमकंवु देलिसि।करुणकु वेंडवासि कैकेयि वलिके२६५

कैक दशरथुनि वरमुलडुगुट

"नोलसि देवासुर युद्धंवुनंदु । वलनोप्प निच्चिति वरमुलु रेंडु;

तुम्हारी वुद्धि (विचारों) का अतिक्रमण नहीं कर सकते। तुम्हारा ऐसा रहने का क्या कारण है ? हे रमणी ! मेरे मन को प्रसन्न करते हुए, वातों को मानकर, मुख उठाओ (मेरी ओर देखो)। माँगने पर प्राण भी दूँगा। (जो चाहो) तुम माँग लो।' (ऐसा) कहने पर आनन्दित होकर, उस स्त्री ने विभु (पति) के स्नेह-माधुर्य को जानकर, मंद स्वर में जननाथ से कहा—'हे देव ! मेरे कथनानुसार (कार्य) करने का वचन दोगे, तव मैं वह वात तुम्हें वताऊँगी।' तव (ऐसा) कहने पर, उस स्त्री से दशरथ-अधिप (राजा दशरथ) वोले ॥ २६० ॥

—'श्रेष्ठ धनुर्धारियों में ऐसा वीर कौन है ? धर्मसमिति का सार कौन है ? ऐसा कौन है जिसे देखे विना मैं रह नहीं सकता ? ऐसा कौन है जो सदा भक्ति से मेरी सेवा करता है ? ऐसे राघव की सौगंध है। हे रमणी ! तुम्हारी इच्छा की किसी भी तरह पूर्ति करूँगा।' (ऐसा) कहने पर, प्रसन्न होकर, मरुत्, अग्नि, शशि, नभोमणि आदि देवताओं को अलग-अलग से साक्षी वनाकर, धरणीश के मन की आतुरता को जानकर, करुणा से अलग होकर (निष्ठुरता से), कैकेयी वोली— ॥ २६५ ॥

कैकेयी का दशरथ से वर माँगना

—'देवासुर युद्ध में प्रेम से (आपने) दो वर दिये थे। हे भूवर ! (क्या)

भूवर! मऱचिते बुद्धि जिंतिपु । मा वरद्वयमु निन्नडिगेंद निपुडु;
नादित्यकुलजुंडवगु महाराज । वादि राजुल कंटें नधिक पुण्युडवु;
तप्पाड; वाडिन दप्पवु; नाकु । दप्पक वरमुलु दय निच्चितेनि
धरणि कंतटिकिनि दग राजुगाग।भरतु बट्टमुगट्ट बनुपु मोक्कटिकि २७०
बरग दापसवृत्तिबदुनालुगेड्।लुरु दुर्गमुल रामु नुनुपु मोक्कटिकि";
ननु पल्कु निर्घातमै वच्चि चेवुल ।गोनि काडि नोप्पिप गुंभिनि द्रेळ्ळि
पेलुकुऱि मूर्छिल्लि पेद्द प्रोद्दुनकु ।देलिवोन्दि कैकेयि देस जूचि पलिकें;
"गोमलि! केकय कुलमुन बुट्टि । यी माटलाड नी कॆट्लाडें नोरु ?
नडवुल पालु गम्मनि रामु द्रोव । नेंडपक तोल्लि नी केंग्गेमि सेसें ?
गौसल्यकंटें निन् घनतगा जूचु । नी सेव लोनरिंचु; नी पंपु सेयु;
नट्टवंटि सुगुणाढ्युडैन श्रीरामु । नेंट्टवलें बोम्मंटिवे दयमालि ?
यडवुल कतनि नी वंपु मटन्न । नेंड सूचि चूचि नेनेट्लु पोम्मंदु ?
ना महात्मुनि रामु नडवुल कनिचि । यी मेन ब्राणंबु लेंट्लु निल्पुदुनु?
नृपपुत्रि वनि निन्नु नेंम्मि गैकोन्टि।जपललोचन! कालसर्पबवैति; २८०

भूल गये हो? बुद्धि (मन) से चिन्तन (विचार) करो। अब तुमसे वह वरद्वय माँगूँगी। (तुम) आदित्यकुल के महाराजा हो, आदि (पूर्व) राजाओं की अपेक्षा अधिक पुण्यशाली हो। गलत (असत्य) नहीं बोलते हो (और) बोलकर वचन-भंग नहीं करते हो। (यदि) मुझे कृपा से अवश्य दो वर दोगे तो पहले (वर से) समस्त धरणी के लिए ढंग से (सुचारु रूप से) राजा बनने के लिए भरत के राजलितक की आज्ञा दो। ॥ २७० ॥

दूसरे (वर से) तापस-वृत्ति से चौदह वर्ष के लिए घने जंगलों में रहने के लिए राम को भेजो।' ऐसा (यह) वाक्य बिजली के समान बनकर कानों में पड़कर चुभने पर, पीड़ित करने पर, कुम्भिनी (धरती) पर (दशरथ मानों) टूट गिरे, बेहाल हो मूर्च्छित हो गये। बहुत देर के बाद होश में आकर, कैकेयी की ओर देखकर बोले—'हे कोमलांगी! केकय-कुल में पैदा होकर यह बातें (तुम) कैसे बोल सकी? राम ने पूर्व में तुम्हें क्या हानि पहुँचायी है जो उसे वनवास का भागी बना रही हो! (राम) कौसल्या की अपेक्षा तुम्हें अधिक मानता है। तुम्हारी सेवाएँ करता है। तुम्हारा आदेश मानता है। ऐसे सुगुणाढ्य (सुगुण-सम्पन्न) श्रीराम को, निष्ठुर होकर (वन में) जाने का आदेश कैसे दे रही हो? (यदि) तुम कहो भी कि उसे जंगल भेज दो (तब भी) मैं हृदय में देखकर (विचार कर) उसे (जंगल) जाने को कैसे कहूँ? हे चपललोचने! यह

ना राज्यमैन व्राणमुलैन विडुतु। ना रामु विडिचि पॊम्मनि पल्क जाल;
ननु वृद्धु दीनु ननाथु दुर्वलुनि। मनिकित पडकुंड मगुव! रक्षिपु;
चक्कगा नी पाद-जलजंवुलकुनु। म्रॊक्कॆद नेनु रामुनि यॆडाटमुन;
जॆलुव! यी पापंवु सेय जिंतिप। वल" दन गोपिंचि वामाक्षि वलिकॆ;
"राजेंद्र! सत्य पराक्रम स्फूर्ति। वूजित कीर्तिवै वॊन्कंग दगुनॆ?
इट्टु देवतलंदरॆरुगंग नॊट्टु। वॆट्टि तप्पॆद, वॆट्टि पृथिवीपालुडवु?
ऒक गुव्वकै तन यॊडलि मांसंवु। नॊक डेगकुनु शिवि यॊसगडॆ मुन्नु?
क्षोणिदेवुन कलर्कुडनु राजु। व्राण तो नॊसगडॆ तन लोचनमुलु?
चॆलरेगि जलधियु जॆलियलिकट्ट। वलिमि दाटक लोनुवडि युंडलेदे?
यदि यट्टुलुंडॆ; नी यन्वयोद्भवुलु। मदिलोन नव्वुल माटलकैन २९०
गलनैन वॊंक, रिक्ष्वाकुंडवय्यु। वॆलय गौसल्यकु वॆरचि वॊंकॆदवु!
वॊंकॆडुवाडॊक्क पुरुपुडे! यकट! वॊंकिति, निनु वॊद वुद्धिगा, दिक

समझकर कि (तुम) नृपपुत्री हो, मैंने तुम्हें प्रेम से ग्रहण किया था। (किन्तु आज) तुम कालसर्प वन गयी हो। ॥ २८० ॥

अपने राज्य को (और) प्राणों को भी छोड़ दूँगा, पर अपने राम को (मुझे) छोड़ जाने के लिए नहीं कह सकूँगा। हे वनिता! मुझ वृद्ध, दीन, अनाथ, दुर्वल को व्यथित होने से वचाओ। ढंग से तुम्हारे पाद-जलजों (चरण-कमलों) को प्रणाम करूँगा। हे सुन्दरी! राम के विछोह का यह पाप करने का विचार मत करो।' (ऐसा) कहने पर वामाक्षी (सुन्दर आँखोंवाली कैकेयी) रुष्ट होकर वोली—'हे राजेन्द्र! सत्य-पराक्रम-स्फूर्ति के कारण पूजित कीर्तिवाले होकर, (तुम्हारा) असत्य वोलना उचित है? (नहीं है।) इस प्रकार सभी देवताओं को साक्षी वनाकर भी वचन को तोड़नेवाले तुम कैसे पृथ्वीपाल (राजा) हो? पूर्व काल में एक कवूतर के लिए शिवि ने अपने शरीर का मांस वाज को नहीं दिया था? अलर्क नामक राजा ने (एक) क्षोणिदेव (व्राह्मण) को साहसपूर्वक अपने लोचन नहीं दिये थे? विजृंभित होकर भी जलधि (समुद्र) वलपूर्वक वेला का अतिक्रमण किये विना नहीं रहता? उसे (उन वातों को) वैसा रहने दो। तुम्हारे अन्वय-उद्भव (वंशज) मन में, हँसी-मजाक के लिए भी, ॥ २९० ॥

—सपने में भी, झूठ नहीं वोलते। इक्ष्वाकु (वंश के) होते हुए भी, कौसल्या से भय खाकर झूठ वोलते हो? झूठ वोलनेवाला भी कहीं पुरुष है? हाय! (तुमने) झूठ वोल दिया। अव आपके सांगत्य का मन नहीं हो रहा है। अव स्वच्छन्दता से मैं विप भी तो निगल (खा)

विच्चलविडि नेनु विषमैन ग्रिगि । चच्चेद, नटमीद जंपिपु भरतु
बावनुंडगु रामु बट्टंबु गट्टि । नीवु कौसल्ययु नेम्मदि नुंडु"
डनि पल्कुटयु शोक मात्म रेट्टिंप । जननाथु डेन्तयु संतापमंदि
वेल-वेल बोयि विवेक हीनतनु । गलिगि या कैक तो ग्रम्मर बलिके;
"नेल कैकेयि! नी किट्टि पापंबु । बालिशत्वंबुनु ब्रापिंचे मदिनि ?
नन्न युंडग दम्मु डविनीति तोड । निन्नेल नेलुने ? यिन्नियु नेल ?
नी कुमारुडु धर्मनिरतुंडु भरतु । डी कलुष क्रिय केट्लॉडिकट्टु ?
मा कुलागतमैन मर्याद दलपु । शोकार्तु ननु देगजूडक मनुपु ३००
मेप्पुडु निल्लालु हितवु भक्तियुनु । दप्पक सखि रीति, दल्लि चंदमुन,
दासि वैखरि, सहोदरि तेरंगुननु । ना सेवलोनरिंचु नाना विधमुल;
नट्टि कौसल्य मोहपुबट्टि बासि । पट्टिन धृति नेट्टि प्राणमुल् वट्टु?
सौदामिनी - लता - संकाश - देह । वैदेहि ये रीति वगल वेगिंचु ?
ना सुमित्रापुत्त्रुडतनि तल्लियुनु । नी सुद्दि विनि शोक मेट्लणंचेदरु?
श्रीरामु पट्टाभिषेकंबु गोरि । पौरुलंदरु वेड्क बडि युंडु चोट,

कर मर जाऊँगी। उसके बाद भरत का वध करा दो। पावन राम का राजतिलक करके तुम और कौसल्या सुख-शान्ति से रहो।' ऐसा कहने पर हृदय में शोक (दुख) के द्विगुणित होने पर, जननाथ अधिक संतप्त होकर, कान्तिहीन बनकर, विवेक-हीनता को प्राप्त कर, उस कैकेयी से फिर से बोले—'हे कैकेयी ! तुम्हारे मन में ऐसा पाप और मूर्खता कैसे संप्राप्त हुए ? बड़े भाई के रहते हुए छोटा भाई अविनीति से इस भूमि पर शासन करेगा ? यह सब क्यों ? तुम्हारा पुत्र भरत जो धर्म-निरत है, इस कलुष क्रिया (पाप कर्म) के लिए कैसे उद्यत होगा ? हमारी कुलागत मर्यादा का विचार करो। शोकार्त (दुखी) बने मुझको मार मत डालो, बचाओ। ॥ ३०० ॥

सदा गृहिणी के धर्म—हित और भक्ति—को न छोड़, सखी के समान, माता के समान, दासी की भाँति, सहोदरी की तरह, कौसल्या नाना विधियों से मेरी सेवाएँ करती रहती है। ऐसी कौसल्या (अपने) लाड़ले पुत्र से विछुड़कर, धैर्य के साथ, प्राणों को कैसे रोक पायेगी ? (जीवित कैसे रह सकेगी ?) सौदामिनी-लता के समान देहवाली वैदेही (सीता) किस प्रकार इस दुख से दिन वितायेगी ? वह सुमित्रापुत्र (लक्ष्मण) (और) उसकी माता इस समाचार को सुनकर, दुख का दमन कैसे करेंगी ? श्रीराम के पट्टाभिषेक की कामना कर, समस्त नागरिक हर्ष से एकत्र हुए हैं। वहाँ (इस अवसर पर) अपने राम को जंगल भेज दूँ तो (वे) धीरात्मा मुझे

धीरात्मकुलु नन्नु दिट्टकुंड्डुरे ?
ना रामु नडवुल कनिचिति नेनि । सकल भू - भुवन - रक्षण - दक्षुडैन
"अकट! कामांधुडै यालि माटलकु । नुग्रांशुकुलकीर्तुलुडिगेवो" म्मनुचु
यग्रनंदनु रामु नडवुल कनिचे । दर्चु मूकलु गट्टि तलपोसि चूचि
वेर्गंदि रच्चलु वीथुलु गलय । दल्लरु नेंत गर्हितुरो नन्नु ?
कल्लु द्राविन विप्रु गर्हिंचिनट्टु । गाविंचि ये सौख्यगतुलंदेदीवु ?
गावुन नेल्ल लोकमुलकु गीडु । सेप्पेद निक्कमुगनीवु विनुमु;
इदि यदि येल? नेनिक नोक्क माट।मुदित! मोलक नव्वुल मोमु मुरिपेंबु वानि
कलुव रेकुल वोलु कन्नुल वानि । वलराजु गेरु चेल्वमु गलवानि
बलुवैन याजानुवाहुल वानि । जल्ल जूपुलु वेदसल्लेडु वानि
नलरु गल्वलकांति नगु मेनिवानि । निंपु गुल्केडु नड नेसगेडुवानि
गेंपु पेम्पडगिंचु केम्मोविवानि । मगटिमि दिविजुल मर्पिंचुवानि
जिगि यद्दमुल वोलु चेक्कुल वानि । बुधुलकु हित मात्म बूनेडु वानि
सुध लोल्कु तिय्यनि सुद्दुल वानि । निलुवेल्ल धर्ममै नेगडेडु वानि
वलचि ना केंपुडु सेवलु सेयुवानि ।

गालियाँ नहीं देंगे ? हाय ! कामान्ध बन, पत्नी की बात मानकर, सकल-भू-भुवन-रक्षण में दक्ष (और) अग्रनन्दन (ज्येष्ठ) राम को जंगल भेजा, उग्रांशुकुल (सूर्यवंश) की कीर्ति समाप्त (नष्ट) हो गयी—ऐसा कहते हुए, आश्चर्य-चकित होकर चौराहों (और) वीथियों में, अविरल रूप से, झुण्ड बाँधकर, सोच-विचार कर, ॥ ३१० ॥ —सुरापान करनेवाले विप्र की जिस तरह निन्दा करते हैं, उसी प्रकार सभी मेरी कितनी निन्दा करेंगे ? अतः सभी लोकों का अहित कर तुम कौन-से सुख को प्राप्त करोगी ? यह (और) वह क्यों ? (इतनी बातें क्यों ?) मैं अब एक बात कहता हूँ। हे रमणी ! ध्यान से तुम सुनो। कमल के-से नेत्रवाले, मन्दहास से सुन्दर बने मुखवाले, बलिष्ठ आजानु बाहुओंवाले, कामदेव की अवहेलना करनेवाले सौन्दर्य से युक्त, सुन्दर नीलोत्पलों की कान्ति की हँसी उड़ानेवाली शरीर-कान्ति से युक्त, शीतल चितवनों को बिखेरनेवाले, पद्मराग के आधिक्य की अवहेलना करनेवाले, लाल अधरों से युक्त, सौन्दर्य को बिखेरनेवाली चाल से विलसित, कान्तिमान दर्पणों के-से गालों से युक्त, पौरुष में दिविजों को भुला देनेवाले, सुधा-सने मधुर वचन (बोलने) वाले, बुध जनों के हित को आत्मा में धारण करनेवाले, प्रेम से सदा मेरी सेवाएँ करनेवाले, समस्त शरीर से धर्म-रूपी राम को, ॥ ३२० ॥

—भृगु (परशु) राम को जीतनेवाले, चन्द्रसमान कान्तिवाले, सद्गुण-

रामुनिजित भृगुरामुनि गांति । सोमुनि सद्गुणस्तोमुनि गीर्ति
कामुनि सौंदर्यकामुनि शांति । धामुनि रविसमधामुनि बासि
निमिष मात्रंबैन ने निल्व जाल । गमलाक्षि! नी वेरुंगवे यिट्टिदौट?
ना युत्तमोत्तमु डडवुल कॅपुड्डु । वोवु, ना प्राणमुल् वोवु ना क्षणमें;
येंत पापिष्ठवे ! येंत कट्टडिवें । येंत मुढ़ात्मवे! येन्त राक्षसिवें ?
कठिनात्मुराल! यी कल्मषंबेल । शठमति गोरेंदु साध्विवै युंडि ?
यालवै प्राणापहारंबु सेयु । काळ रात्रिवि गाक कांतवा नीवु?
नडचि रामुडु काननमुन कॅट्लरुगु । नडवुल नेंट्लुंडु नंदर दोरगि ?
मेत्तनि पान्पुन मेनेत्तु भोगि । येत्तेरंगुन नुंडु निल दृण शय्य ?
बंति निष्टान्नमुल् बंधुलु दानु ।नेन्तयु नियतितो निट नारगिंचु ३ ३ ०
कडु पुण्यदेहिकि गंदमूलमुलु ।नेंडपक भुजियिंचुटेट्टुलनि तलप;
वतिव! नी कतिभक्तुडैन रामुनकु । मति गीडु दलपकु; मन्निपु" मनुचु
नडरु शोकंबुन नडुगुल मीद ।वडिन म्रोक्कोल्लक पादमुल् दिगुव
भूकांतु डिलबडि पोंगुल गैकोंनक । कैकेयि दशरथु गनि यिट्टुलनियें;
"चालु चाली वट्टि जगजोलि माट! ।चालिंपुमी! वट्टि जाड लेमिटिकि?

स्तोम, कीर्ति-काम, सौन्दर्य में कामदेव, शान्तिधाम, रवि-सम कान्तिवाले- (राम) से बिछुड़कर मैं निमिष (पल-) भर भी नहीं रह सकता। हे कमलाक्षी! ऐसी बात को तुम नही जानती हो क्या ? जब वह उत्तमोत्तम (राम) जंगलों में जायेगा, उसी क्षण मेरे प्राण (निकल) जायेंगे। कितनी पापात्मा हो ? कितनी निष्ठुर हो ? कितनी मूढ़ हो ? कितनी राक्षसी (राक्षस-स्वभाववाली) हो ? हे कठिन आत्मावाली ! साध्वी होकर भी कुत्सित बुद्धि से यह कल्मष (पाप) क्यों चाहती हो ? पत्नी होकर प्राणों को लेनेवाली तुम (मेरे लिए) कान्ता नहीं, काल की रात हो। पैदल चलकर राम जंगल में कैसे जायेगा ? सबको छोड़कर जंगल में कैसे रहेगा ? मृदुल शय्या पर शयन करनेवाला भोगी, ज़मीन पर, तृणशय्या पर, किस प्रकार रह (लेट) सकेगा ? (जो) पंक्ति में बन्धुओं (नातेदारों) के साथ इष्टान्न को नियति से यहाँ खाता है, ।। ३३० ।।

—ऐसा पुण्यदेही निरन्तर कंदमूल कैसे खायेगा ? ऐसा न सोचकर हे स्त्री ! अपने अतिभक्त राम का अहित मत सोचो। (उसे) क्षमा करो।' (ऐसा) कहते हुए अधिक शोक (दुख) से (कैकेयी के) चरणों पर (दशरथ) गिर पड़े। (उस) चरण-वन्दना को न चाहकर उसने पैर हटा लिये। भूकान्त (राजा) ज़मीन पर गिरकर व्याकुल होने लगे। उसकी परवाह न करते हुए कैकेयी ने दशरथ को देखकर इस

धर्मंबु मानि, सत्यमु वीटि बुच्चि ।निर्मल यश मॆल्ल नीटिलो गलिपि,
यी वरद्वयमु नाकी लेदटंचु । भूवर! बॊंकि नी पुत्त्रुंडु नीदु
देवुलु नीवु वर्धिल्लुमु; नेनु । ना वरसुतुडु प्राणमुल बासॆदमु"
अनुनंत माऱाड कनुवेदि विभुडु।दन मदि जिंतिंचि तलवांचि युंडॆ; ३३९

रामाभिषेक सन्नाहमु

नंत वेगुंटयु दूर्यंबुलु म्रोय । नंतंत वंदिजनावळि वॊगड ३४०
गलगॊनि कर्पूर गंधमुल् सलिल । जलमुल जलकंबु सदुरॊप्प नाडि
परग दिव्यांबराभरणमुल् वूनि । चिरकीर्ति रामुडु सीततो गूडि
तॆऱगॊप्प शचि तोड देवेंद्रु डॊप्पु । तॆऱगुन संपूर्ण तेजुडै यॊप्पॆ
मऱि यंत नभिषेक मंटपंबुनकु । नॆऱि वसिष्ठादुलु निंड नेतॆंचि
या यरुंधति मॊदलगु पुण्य सतुल । नायतमतुलगु ना मंत्रिवरुल
दग नॊप्पु मकुट वर्धन चक्रवर्तु । लगु महाराजुल नपुडु रप्पिंचि
पंच वल्लवमुलु बंचवल्कमुलु । वंचामृतंबुलु बट्ट पेनुंगु
नॆनमंड्रु कन्यलु हेम वृषंबु । नॊनर नौदुंबर योग्य पीठंबु

प्रकार कहा—'बस करो, इन व्यर्थ के कपट-वचनों को ! बस करो !! ये व्यर्थ विधान किसलिए ? धर्म को त्यागकर, सत्य को व्यर्थ (सिद्ध) कर, समस्त निर्मल यश को पानी में मिलाकर (व्यर्थकर), हे भूवर ! यह कह दो कि यह वरद्वय तुमको दिया (ही) नही है । (ऐसा) झूठ बोलकर तुम्हारा पुत्र, तुम्हारी देवियाँ (और) तुम वर्द्धित होकर रहो । मैं और मेरा वर (श्रेष्ठ) पुत्र प्राण तज देंगे ।' (ऐसा) कहने पर, (उसका) प्रत्युत्तर दिये बिना, (दशरथ) उपाय के बारे में मन में सोचते हुए सिर झुकाये (बैठे) रहे ।। ३३९ ।।

राम के राजतिलक की तैयारी

—तब प्रातःकाल होते ही तूर्य (मंगलवाद्य) बजे । यहाँ-वहाँ (सब ओर) वन्दीजन-समूह स्तुति (-पाठ) करने लगा ।। ३४० ।।

—सुन्दर ढंग से कर्पूर-चन्दन से मिश्रित जल से अच्छी तरह स्नानकर, शोभा से दिव्य-अंबर (वस्त्र)-आभरण धारणकर, चिरकीर्ति वाले राम, सीता के साथ, शचीदेवी से युक्त देवेन्द्र के समान, सम्पूर्ण तेज से विराजमान हुए । तब अभिषेक के मंडप में वसिष्ठ आदि पधारे (और) अरुन्धति आदि पुण्य-सतियों को, उच्चतमति वाले मंत्रिवरों को (तथा) सिर पर शोभायमान मुकुटों से विवर्द्धित चक्रवर्ती महाराजाओं को तब (वहाँ) बुलाया । पंचपल्लव, पंचवल्कल, पंचामृत, भद्रगज (राजा का हाथी), आठ कन्याएँ, सुनहरे सींगों

गंगादि तीर्थोदकमु लादिगाग । मंगळ वस्तु सामग्रि दॆप्पिंचि
वर रत्न भूषणावळुल दॆप्पिंचि । तरमिडि वेदोक्त दानमुल् सेय ३५०

सुमंत्रुडु कैक नगरि केगुट

नॊक लक्ष कन्यल नॊक लक्ष गोवु । लॊक लक्ष युष्ट्रंबु लॊप्प दॆप्पिंचि
जपमुलु सेयिंचि शांति सेयिंचि । विपुल होमंबुलु वेड्क सेयिंचि
यनुपमंबगु लग्न मासन्न मैन । मनुजेशु बिल्व सुमंत्रुनि बनुप
गैकेयि नगरिकि गडकतो बोयि । वाकिट निलुचुंडि वलनॊप्प बलिकॆ:
"देव! सूर्युडु वॊडतॆंचु चुन्नाडु । वेवेग मी रट वेंचेय वलयु;
श्रीरामु पट्टभिषेकंबु सेय । नारूढमगु लग्न मासन्न मय्यॆ;
मनुजेश! यभिषेक मंटपंबुनकु । मुनुलु राजुलु महात्मुलु वच्चिनारु;
पौरुलु बुधुलुनु बंधुल गूडि । मीराक गोरि यम्मॆयि नुन्नवार"
लन विनि दशरथुडा वार्त लॆल्ल । दनकु गेवल मनस्तापंबु सेय
वनट नीवुनु नॊंप वच्चिते यनुचु ।विनियु निद्रिंचिन विधमुन नुंडॆ ३६०

वाले वृषभ, औदुम्बर (ताँबा या गूलर) योग्य (निर्मित) पीठिका, गंगा आदि का तीर्थोदक आदि मंगल-वस्तु-सामग्री मँगवाकर, वर (श्रेष्ठ) रत्न भूषणावलियाँ मँगवाकर, शीघ्रता से वेदोक्त दान करने के लिए, ।। ३५० ।।

सुमन्त्र का कैकेयी के महल जाना

—एक लाख कन्याओं, एक लाख गायों, एक लाख ऊँटों को शोभा से मँगवाकर, जप कराकर, शान्ति (पाठ) कराकर, आनन्द से विपुल होम कराकर, अनुपम लग्न के आसन्न होने पर, मनुजेश को बुलाने, सुमन्त्र को भेजा। (सुमन्त्र) कैकेयी के महल को धैर्य के साथ जाकर, द्वार पर खड़े होकर, समुचित रूप से बोले—(हे) देव! सूर्य आ (निकल) रहे हैं। आपको शीघ्र वहाँ पधारना चाहिए। श्रीराम का पट्टाभिषेक करने के लिए आरूढ़ लग्न आसन्न हुआ है। (हे) मनुजेश! अभिषेक-मण्डप में मुनि, राजा, महात्मा (लोग) आये हुए हैं। पौर (पुर-जन) (और) बुध-जन नातेदारों के साथ, आपके आगमन की इच्छा से, उसी प्रकार (प्रतीक्षा कर रहे) है।' (ऐसा) कहने पर, (उन्हें) सुनकर, उन सभी समाचारों के द्वारा केवल अपने को मनस्ताप (क्लेश) पहुँचने पर, दशरथ यह सोचकर कि तुम भी मुझे दुख से (देकर) सताने के लिए आये हो, वैसे लेटे रहे, मानों सो रहे हों ।। ३६० ।।

ना समयंबुन ननियें गैकेयि । "यो सुमंत्रुड! वेग युर्वीशु कडकु
रामुनि दोड्तेम्मु; राजु पं" पनुडु ।ना माट विनि यत डप्पडे पोयि३६२

सुमंत्रुडु रामु सन्निधि केगुट

शीतपटीरांबु - सिक्तांगणंबु । गेतनान्वितमु निकेतनांचितमु
जंदनागुरुधूप सौरभान्वितमु । मदानिला लोल मालिका युतमु
ब्रतिगृह द्वार रंभास्तंभ वर्ग । मतुलितमणि तोरणाभिरामंबु
बौर जनादि संभ्रम दुर्गमंबु । नौ राजमार्ग मोय्यन गनुं गोनुचु
निंद्रु गेहमु हसियिंचि या किन्न । रेंद्रु मंदिरमुतो नीडु जोडगुचु
सांद्र-वैभव-रमा-सहितमौ राम । चंद्रुनि नगरिकि जनुदेंचि लोन
जनवरुलै युन्न जनुलचे वेग । तन राक येरिंगिंचि तदनुज्ञ वडसि
चित्राख्य तार तो सिरुलुल्लसिल्ल । मैत्रि नोप्पेडु चंदमाम चंदमुन३७०
सीता समेतुडै चेलुवोंदु राम । भूतलनाथुनि बोडगांचि म्रोक्कि
"रा देव मिमु दशरथ चक्रवर्ति । या देवि कैक गृहंबुन नुंडि
यादट बिलिचि तेम्मनि पंचें" ननुडु । मोदिंचि चिरुनव्वु मोलकलु निगुड
३७३

—उस समय कैकेयी (यों) बोली—'हे सुमन्त्र ! शीघ्र उर्वीश (राजा) के पास राम को लिवा लाओ । (यह) राजा की आज्ञा है ।' यह बात सुनकर, वह तभी जाकर, ।। ३६२ ।।

सुमन्त्र का राम के निकट जाना

—शीतल चन्दन-जल से सिक्त आँगनवाले, केतनों (ध्वजाओं) से समंचित निकेतनों (सौधों) से समलंकृत, चन्दन-अगरु के धूम (धुएँ) के सौरभ से युक्त, मन्द-अनिल से डोलायमान मालिकाओं से युक्त, प्रत्येक गृह के द्वार पर रंभा (कदली) के स्तम्भो से समंचित, अतुलित-मणि-तोरणों से अभिराम (सुन्दर), पुर-जन आदि के सम्भ्रम (उत्साह) से दुर्गम बने हुए राजमार्ग को, अकुटिल भाव से देखते हुए, इन्द्र के गेह की अवहेला कर, उस किन्नरेन्द्र (कुबेर) मन्दिर से तुलनीय बनकर, सान्द्र-वैभव-रमा (लक्ष्मी) से सहित रामचन्द्र की नगरी (महल) में आकर (पहुँचकर), भीतर मिलनसार (प्रिय) जनों के द्वारा शीघ्र अपने आगमन की सूचना दिलायी । उनकी (राम की) अनुज्ञा पाकर, चित्रा नामक तारा के साथ श्री-वैभव से सुशोभित होनेवाले चन्द्र के समान, ।। ३७० ।।

—सीता के साथ शोभायमान बने राजा राम को देखकर, प्रणाम कर, (कहा)—'आइए देव ! दशरथ चक्रवर्ती ने देवी कैकेयी के गृह में रहकर,

श्रीरामुडु कैक नगरि केगुट

धरणिज नट नुंचि तानु लक्ष्मणुडु ।गरमर्थि रथ मॆक्कि कडक तो गदलि
चतुरंग बलमु लसंख्यमुल् गॊलुव । नतुल वाद्यमुलु मिन्नंदि म्रोयंग
वंदि बृंदमुलु गैवारमुल् सेय । जेंदि पुण्यांगनल् सेसलु सल्ल
बुरजनु लानंदमुन जयवॆट्ट । नरनाथु नगरि कुन्नत गति वच्चि
यरदंबु डिगि रामुडपुडु कैकेयि । वरमंदिरमु जॊच्चि वलनॊप्प नचट
वदनंबु वांचि वैवर्ण्यबु मिंचि । पॆदवुल दडुपुचु बॆपॆल्ल नुडिगि
युडुगक कन्नीळु लॊलुक शोकाग्नि ।बडि कालु दशरथपति जेर बोयि ३८०
करमु भीतिलि म्रॊक्कि कैककु म्रॊक्कि।करमुलु मुकुळिंचि कडु विस्मयंबु
वॆऱवॆऱ पाटुनु विह्वलत्वंबु । वॆऱपुनु मऱपुनु वीडु जोडाड
परिपरिविधमुल बलुमारु नॆमकि । परमपुण्युडु रामभद्रुंडु पलिकॆ,
"नो देवि! यिदि येमि, युर्वीश्वरुंडु । ना दॆस जूडडु? ना तप्पु लेमि?

आपको लिवा लाने के लिए मुझे भेजा है।' (ऐसा) कहने पर, प्रसन्न होकर, मुस्कान के अंकुरों के व्याप्त होने पर, ॥ ३७३ ॥

श्रीराम का कैकेयी के नगर जाना

—धरणिजा (सीता) को वहाँ रख (छोड़) कर, आप लक्ष्मण के साथ, अधिक इच्छा से, रथ पर सवार होकर, साहस के साथ निकलकर, असंख्य चतुरंग बल के सेवा करने पर (पीछे-पीछे चल पड़ने पर), अतुल-वाद्यों की ध्वनियों के आकाश को स्पर्श करने पर, वन्दि-वृन्द (चारण-समूह) के कैवार (स्तुतिपाठ) करते रहने पर, पुण्य-स्त्रियों के लाजा (खील) बिखेरने पर, पुर-जनों के आनन्द के साथ जय-जयकार करने पर, नरनाथ (राजा दशरथ) के महल में उन्नतगति से (वैभव के साथ) आये। (आकर) रथ से उतरकर राम तब कैकेयी के वर मन्दिर में प्रवेश कर, समुचित रूप से रहे। वहाँ वदन (मुख) झुकाकर, (मुख के) अधिक विवर्ण होने पर, (सूखने वाले) होंठों को आर्द्र करते हुए, समस्त वैभव (तेज) को खोकर, निरन्तर अश्रुओं को वहाते हुए, शोकाग्नि में दग्ध होनेवाले दशरथपति के पास जाकर, ॥ ३८० ॥

—(राम ने) अधिक भय खाकर, प्रणाम किया, कैकेयी को प्रणाम किया, हाथ जोड़े, अधिक विस्मय, संभ्रम, विह्वलता, भय, विस्मृति के एक के समान दूसरे के होने पर (सब भावों के समान रूप से होने पर), अनेक विधियों से, कई वार (कारण की) खोजकर, परमपुण्यवाले भद्र राम वोले —'हे देवी ! यह क्या ? उर्वीश मेरी ओर देखते (क्यों) नहीं है ? मेरे

यी विन्नदनमुनु निट्टि दुःखंबु । नी विचारमु राजु केवेंट गलिगें?"
ननवुडु ना कैक "यधिपु चंदंबु । विनुपिंतु नीवु गाविंचेद वेनि"
ननि पल्क रघुरामु "इदि येमि तेरगु? विनुपिंपु मो यम्म! विशदंबुगाग;
दंड्रि वाक्यमुलकै दारुणशिखल । वेंड्रमौ नग्निलो विपधि नैन
बडियेद; विषमैन भक्षिचुवाड । जडियक विनुपिंपु; सत्य मी माट"
यनवुडु गैकेयि या रामु जूचि । मनमुन गृपमालि मरि सेप्प दोडगें३९०

कैक तन कोरिक रामुनकु देलुपुट

गरुण देवासुर कदनंबु नंदु । वरमुलु रेंडु भूवरुडु ना कोसगें;
नवनीशु ना रेंडु नडिगि मा भरतु । नवनिकि वतिसेयु मंटि नोक्कटिकि
नेंडपक पदुनालुगेंड्लुनु । निन्नु नडवुल गापुंचुमंटि नोक्कटिकि
ननुटयु 'नौ गाक' यनि यिच्चि नीकु । विनुपिंप मी तंड्रि वेरचुचुन्नाडु
कावुन जडलु वल्कलमुलु गट्टि । नी विक दपसि वै नृपवेप मुडिगि
जनुलचे दशरथ जनपति बोंक । डनिपिंप वलतेनि नडवुल करुगु

अपराध क्या हैं ? यह विवर्णता (खिन्नता), ऐसा दुःख, यह खेद राजा को क्यों कर हुआ ?' (ऐसा) कहने पर वह कैकेयी बोली—'यदि तुम करो तो मैं राजा की इच्छा बताऊँ।' ऐसा कहने पर रघुराम बोले—'वह क्या मार्ग है ? हे माता ! विशद रूप से सुनाओ। पिता के वचन के लिए दारुण शिखाओं से उत्तप्त बनी अग्नि में, (या) समुद्र में भी कूद पड़ूँगा। विष को भी खा जाऊँगा। यह बात सत्य है। बिना भय (संकोच) के सुनाओ।' (ऐसा) कहने पर कैकेयी उस राम को देखकर, मन से कृपा (ममता) का त्यागकर यों कहने लगी— ॥ ३९० ॥

कैकेयी का अपनी इच्छा राम को बतलाना

—'देवासुर-कदन (युद्ध) में करुणा (कृपा) से भूवर ने मुझे दो वर दिये। (मैंने इस समय) अवनीश से वे दो (वर) माँग लिये। एक के लिए (बदले में) कहा, मेरे भरत को अवनि का पति (राजा) बनाओ। एक के लिए कहा, तुम (राम) को निरन्तर चौदह वर्ष के लिए अरण्यों का पहरा देने भेजो। (ऐसा) कहने पर 'तथास्तु' कहकर, (वर) देकर, तुम्हें सुनाने (बताने) के लिए तुम्हारे पिता डर रहे हैं। अतः जटाएँ, वल्कल धारणकर, तुम अब तपसी बनकर, नृपवेष छोड़कर, यदि जनता से यह कहलाना चाहते हो कि दशरथ-जनपति (राजा) झूठ नहीं बोलते तो अरण्यों में जाओ। जाओ।' (ऐसा) कहने पर मुस्कान के व्याप्त होने

पों" म्मन्न विनि मोगंबुन जिरुनव्वु। ग्रम्म माटल नोंडु गसट लेकुंड
गरुणयु देंगुवयु गरिमंबु दोप । बरमपुण्युडु रामभद्रुडु वलिकें;
"निटु सेयु मन्नवाडिनकुलाधीशु । डट; ना सहोदरुंडट राज्यकर्त;
यट मीद नी कोर्कि यट वेडनेल? कटकटा! कैकेयि! कडु मुग्धवैति४००
वित मात्रमुनकै यिन वंश विभुडु । सिंतिप नेटिकि जित्तंबु लोन ?
दन जनकुनि माट दाटिन वाडु । दनयुडे तलपोय धर दायगाक ?
ये नेमि ना तम्मुडेमि यी भूमि । बूनुटकुनु ? बुण्यपुरुषडै युन्न
भरतुनि देंस नाकु ब्राणंबुलैन । सरकु गावनिन राज्यमु नाकु सरकें?
यनवुडु मुदमंदि या कैक वलिकें । "मनुजेंद्र-तनय! यी माट के निपुडु
भरतुनि दोड्तेर बनिचेंद; निंक । नरुगुमु वनमुल; करुगुनंदाक
गुडुवडु वलुकडु गूर्चुंड डिट्ल । पडियुंडु नृपु" डंचु बल्कें बल्कुटयु
"गट कटा! तगुनें यी कठिनोक्तु" लनुचु।बटुमूर्छतो नेल बडियें ना राजु
नय्येंड ना रामु डवनीशचंद्रु । नोंय्यन बट्टि शैत्योपचारमुल
दलिपि यंतयुनु बोधिंचुचु मरियु। बलिकें गैकनु जूचि परम हर्षमुन४१०

पर, बातों में किसी प्रकार के मालिन्य के न होने पर, करुणा, साहस (और) गरिमा के अभिव्यक्त होने पर, परम पुण्यवाले भद्र राम बोले—'इस प्रकार करने के लिए कहनेवाले इन-कुलाधीश (सूर्य वंश के राजा) हैं। राज्य के कर्ता मेरे सहोदर हैं। तिस पर तुम्हारी इच्छा है। इसमें माँगना क्या ? हाय! हे कैकेयी ! बड़ी अबोध (भोली) बनी हो ॥ ४०० ॥

—इस (छोटी-सी) बात के लिए इन-वंश-विभु को मन में चिन्ता करने की क्या आवश्यकता है ? अपने पिता की बात (आज्ञा) का पालन न करने-वाला, सोचने पर कहीं पुत्र होता है ? वह तो संसार में ज्ञाती है। इस भूमि (राज्य) को वहन करने में मुझमें और मेरे भाई में कोई भेद नहीं है। पुण्य-पुरुष बने भरत के लिए मुझे प्राणों की भी परवाह नहीं है तो इस राज्य की क्या गिनती ?' ऐसा कहने पर मुदित होकर वह कैकेयी बोली—'हे मनुजेन्द्र-तनय (राजकुमार) ! इस बात पर अब मैं भरत को बुला लाने हेतु (आदमी) भेजूँगी। अब (तुम) वन में जाओ। (तुम) जब तक नहीं जाओगे तक तक नृप (राजा) न खायेंगे, न बोलेंगे, न (उठेंगे) बैठेंगे, ऐसे ही पड़े रहेंगे।' (ऐसा) कहते ही राजा यह कहते हुए कि 'हाय ! क्या ये कठिनोक्तियाँ उचित हैं ? (नहीं हैं।)' अधिक मूर्च्छा से जमीन पर गिर पड़े। उस समय वह राम अवनीश-चन्द्र (दशरथ) को ढंग से पकड़कर शीतलोपचार कर, (जब वे होश में आये तव) (उन्हें) सबकुछ समझाते हुए, कैकेयी को देखकर परमहर्ष से (यों) बोले— ॥ ४१० ॥

"नित येटिकि जित? यिदि येंत नाकु? नंतरंगंवुन ननुमान पडकु;
परिकिंचि धर्मवु पाटिंतु गानि। कर मर्थि व्यर्थंवु गाविप नेनु;
वेयेल? विभुनाज्ञ विनबड कुन्न। नी याज्ञ गडवनु; निक्कुवं वरय;
जारुल शीघ्र संचारुल घोट। कारूढुलुग जेसि यनिचि वे वेग
करमर्थि नी लग्न घटिकल यंदे। भरतुनि विलिपिंचि पट्टंवु गट्टु;
मिदे यरण्यमुलकु नेगेद" ननुचु। वदनाब्ज मलरंग वलगोनि वच्चि
"तन तल्लिकिनि सुमित्रा वधूमणिकि। जनकनंदनकु नी चंद मंत युनु
विनुपिंचि वारल वेस नूरडिंचि। चनुदेंतु नो यम्म! संदिय पडकु"
मनि राजुनकु म्रोक्कि या कैक। केंडगि तनु गोल्चि सौमित्रि दगिलि
रा गदलि
चेलुवार वट्टाभिषेकंवु कोरकु। ललि नर्मचिन मंगळ द्रव्यमुलकु ४२०
नुचित प्रदक्षिण मोनरिंचि चित्त। मचलमै यविकारमै विकसिप
नी वार्त दम तल्लि केरिंगिप दलचि। पोवंग नट यंतिपुरमु लोपलनु
'राज्यपट्टमु मानि रामुंडु लोक। पूज्युंडु कानन भूमि केगेडिनि'

—'इतनी चिन्ता किसलिए ? यह मेरे लिए कौन बड़ी बात है ? अन्तरंग में (मुझपर) सन्देह मत करो। विवेक के साथ मैं धर्म का पालन करूँगा (पर) उसे (धर्म को) व्यर्थ नहीं करूँगा। हजार (बातें) क्यों ? प्रभु (दशरथ) की आज्ञा सुनायी न पड़े (मुझे न मिले) तो भी सच मानो, (मैं) तुम्हारी आज्ञा का उल्लंघन नहीं करूँगा। दूतों को शीघ्रगामी अश्वों पर सवार कर, भेजकर, तुरन्त भरत को बुलाकर, इन्ही लग्न-घटिकाओं (शुभ-मुहूर्त) में अधिक इच्छा (उत्साह) से राजतिलक कर दो। यही (अभी) (मैं) अरण्यों को जा रहा हूँ।' (ऐसा) कहते हुए प्रसन्न वदनाब्ज (मुख-कमल) हो, (माता-पिता की) परिक्रमा कर (बोले)—'अपनी माता (कौसल्या), वधूमणि सुमित्रा को (और) जनकनन्दिनी (सीता) को यह सब विधान (समाचार) सुनाकर, उन्हें शीघ्र सान्त्वना देकर, आ जाऊँगा। हे माता ! सन्देह मत करो।' (ऐसा) कहकर, राजा को प्रणाम कर, उस कैकेयी को प्रणाम कर, अपनी सेवा करते हुए सौमित्र (लक्ष्मण) के अनुगमन करने पर (राम) वहाँ से निकल पड़े। शोभा से पट्टाभिषेक के लिए सुन्दरता से सजाये गये मंगल द्रव्यों की, ॥ ४२० ॥

—उचित रूप से परिक्रमा कर, चित्त के अचल (अचंचल) (और) अविकार रूप से विकसित (प्रसन्न) रहने पर, यह समाचार अपनी माता को बतलाने की सोचकर, वहाँ (कौसल्या के महल में) गये। वहाँ अन्तःपुर के भीतर सब ओर इस महाकलकल के सुनायी पड़ने पर 'राज्याधिकार छोड़ लोकपूज्य

अनु महाकलकलं बंतट निंडि । विनबड दशरथु वेलदुलु गलगि
"ये भक्ति कौसल्य यॆडनु गाविंचु। ना भक्ति मन यंदु नट्ल काविंचु
ना गुणालंकारु ना महोदारु । ना गिरिवरधैर्यु न शौर्यधुर्यु
ना पुत्र रत्नंबु नकट! कानलकु । भूपालु डेमनि पॊम्मन नेर्चे ?
वीऱिडि यै रामु विपिनवासमुन । काऱडि वुच्चंग नौ नम्म" यनुचु
मीऱिन वगल तो मेदिनी-नाथु । दूरुचु शोकिप दॊडगि रंदऱुनु४२९

श्रीरामुडु कौसल्य नगरि केगुट

आ समयंबुन ना रामविभुडु । कौसल्य यिंटिकि गडक तो वच्चे४३०
नटमुन्न तॊडरि या यभिषेकमुनकु । बटुविघ्न मॊरुलु संपादिपकुंड
जपमुलु शांतुलु चतुर होममुलु । विपुलैकनिष्ठ गाविंचुचु ब्रेम
गरमर्थि नेममुल् गैकॊनि भक्ति । परत जनार्दनु ब्रार्थिचुचुन्न
कौसल्य रामु राककु संतसिल्लि । भासिल्लु वर पुण्य भामलु दानु
नॆलमि सेसलु गॊंचु नॆदुरुगा वच्चि। वॆलय शुभाचार विधुलाचरिंचे;
नंत ना कौसल्य यडुगुल कॆऱग । संतोषमुन रामचंद्रुनि नॆत्ति

राम कानन भूमि में जा रहे है' दशरथ की स्त्रियाँ व्याकुल होकर कहने लगीं—'राम कौसल्या के प्रति जो भक्ति रखता है, वही भक्ति हमारे प्रति रखकर, व्यवहार करता है। उस गुणालंकार, उस महा-उदार (मनवाले), गिरिवर (हिमाचल)-धीर, शौर्य-धुर्य, पुत्र-रत्न को, हाय! भूपाल (दशरथ) वनवास की आज्ञा कैसे दे सके ? मूर्ख बनकर, दुःखप्रद विपिनवास के लिए राम को भेजना कहाँ उचित है ?' (ऐसा) कहते हुए अधिक व्यथा से मेदिनीनाथ (राजा दशरथ) की निन्दा करते हुए सभी दुखी होने लगीं ॥ ४२९ ॥

श्रीराम का कौसल्या की नगरी जाना

—उस समय वे प्रभुराम कौसल्या के घर सोत्साह आये ॥ ४३० ॥

—वहाँ (कौसल्या के महल में) अभिषेक में अन्य लोग (अधिक) विघ्न न डालें, इसलिए उत्साह से विपुल-एकनिष्ठा के साथ, जप, शान्ति, चतुरता से होम करते हुए, प्रेम से अधिक नियमों को ग्रहण कर, भक्ति परायणता से जनार्दन की प्रार्थना करनेवाली कौसल्या राम के आगमन पर प्रसन्न हुईं। शोभायमान श्रेष्ठ-पुण्य-स्त्रियों के साथ स्वयं प्रेम से लाजा (खील) लेकर समक्ष आयीं और समुचित विधि से शुभाचार-पद्धतियों का निर्वाह किया। तब कौसल्या के चरणों में नत होने पर, हर्ष से रामचन्द्र को उठाकर (कौसल्या ने) गले से लगा लिया (और कहा)—'हे पुत्र ! तुम आयु, यश

यालिंगनमु सेसि "यायुवु यशमु। भू लाभमुनु वोंदु पुत्र! नी" वनुचु दीविंचु तम तल्लि तेरगोप्प राम। देवुडु वीक्षिंचि दीनुडै पलिके; "नी कार्यमुनु दल्लि! येरुगरु मीरु; मीकु सुमित्रकु मिथिलेंद्र सुतकु गडुभीति वुट्टिंचु कार्यवु वुट्टे। विडुवक धृति वूनि विनुडु सेप्पेदनु४४०
वसुधेशुचे रेंडु वरमुलु दोंलिल। यसमान गति गैक याजिलो वडसें; गोंडुकु वट्टमुगट्ट गोरे नोंक्कटिकि।नडविकि ननु बंप नडिगें नोंक्कटिकि; ४४२

श्रीराम वनवासमुनकु कौसल्य शोकमु

नडिगिन दशरथुडधिक शोकमुन। वडुटयु मातंड्रि पलुकु रक्षिप नडवुल वदुनालुगब्दंवुलुंड। गडगि वच्चिचति" नन गौसल्य मदिनि गलगि निव्वेरगंदि कडु जिन्न वोयि। पलुक नेरक ग्रानुपडि युस्सुरनुचु मुडिगोंन्न वगलतो मादलंट द्रव्वि। पडियुन्न लत वोलें बडि मूर्छ वोयें; नडलुंचु रघुरामुडप्पु डातल्लि। नेंडपनि भक्ति तो नेंत्ति नेंम्मेन

(और) भू-लाभ को प्राप्त करो।' (यह) कहते हुए आशीर्वाद देनेवाली अपनी माता की (मानसिक) दशा को देख, प्रभु राम दीन हो बोले—'इस कार्य (घटना) को हे माता! आप नहीं जानतीं। आपको, सुमित्रा को, (और) मिथिलेन्द्र-सुता (सीता) को अतिभय उत्पन्न करनेवाला कार्य उत्पन्न हुआ (घटना घटी)। सतत धैर्य को धारणकर सुनिए, कहता हूँ॥ ४४०॥
—"पूर्व में आजि (युद्ध) में असमान गति से कैकेयी ने वसुधेश (राजा) से दो वर पाये। एक से (उसने) चाहा, (अपने) पुत्र का राजतिलक हो (और) दूसरे से चाहा, मुझे जंगल भेजा जाये॥ ४४२॥

श्रीराम के वनवास पर कौसल्या का दुख

—"(ऐसा वर) माँगने पर दशरथ अधिक शोक (-संतप्त) हो गये। अपने पिता के वचन की रक्षा करने के लिए, जंगलों में चौदह अब्द (वर्ष) रहने के लिए सोत्साह आया हूँ।" (ऐसा) कहने पर कौसल्या मन में व्याकुल हुईं, निश्चेष्ट हो गयीं; अधिक कान्तिहीन हो गयीं; बोल नहीं सकीं, स्तम्भित हो गयीं। आहें भरने लगीं। घनीभूत बने दुख से (कौसल्या), जड़ से उखड़ी लता के समान (जमीन पर) गिरकर मूर्च्छित हो गयी। तब घबड़ाकर रघुराम ने माता को बड़ी भक्ति से उठाकर, शरीर पर अधिकता से लगी हुई धूल को हाथों से पोंछकर, सुन्दर आसन पर बिठाया (और) श्रम को दूर करनेवाले ढंग से लक्ष्मण और स्वयं (राम ने) समुचित

गमिय नंटिन धूळि गरमुल दुडिचि। कोमरारु गद्दिय गूर्चुंड बेट्टि
श्रममु दीरंग लक्ष्मणुडुनु दानु। समुचितगति नुपचारमुल् सेय
नोंदविन वगलतो नोय्यन देलिसि। पेदवुलु दड्डुपुचु बिंबोष्ठि वलिके ४५०
"ननघ! राघव! निन्नु नडवुल नुंडु। मनु पल्कु विन नेंदु नरिदि वीनुलकु
बेलुच नोक्कट निन्नु बिलिपिचि यिट्लु। पलुक नेम्मेयि जाले बार्थिवेश्वरुडु?
धरणि कंतटिकिनि दन मारुगाग। भरतु बट्टमु गट्टि पति सेयु गाक!
कडु गृपाशून्युडै काकुत्स्थतिलकु। डडविकि निन्नु बोम्मनकुन्न नेमि?
यविवेकिगादोंडे यधमुडु गाडु। सवति माटलु विन जनुनय्य! तनकु?
'निदि धर्म मिदि कार्य मिदि लेस्स' यनुचु। मदि कॆक्क हितुलैन मन्त्रि मंत्र लैन
गुलगुरुडैन लोकुलु मेच्च ननि। देलुप लेरैरे नी देस मैत्रि गलिगि?
यित पापमु सेसेने नेडु कैक? यित नेरमि सेसेने नेडु नाथु?
डडवुल नुंडुपो'म्मनि निन्नु जूचि। नोडुवग गैककु नोरेट्टुलाडे
ननुवुन जेरि प्राणमुलैन नडुग। जननाथुनकु दानु चनवुरालैन ४६०
गैककु बुट्टि लोकमु लेल कीवु। ना केल पुट्टिति ना रामचंद्र!

गति से उपचार किया। (मन में) उत्पन्न दुखों के कारण झट से चेतना के (लौट) आने पर बिम्बोष्ठी (बिम्बाफल-जैसे होंठोंवाली कौसल्या) (अपने) होंठों को आर्द्र करती हुई बोलीं— ॥ ४५० ॥

—"हे अनघ! राघव! तुम्हें वन में रहने के लिए (दिये गये) वचन (आदेश) को कहीं सुना नहीं अश्रुतपूर्व है। कानों को विचित्र-सा लग रहा है। तुम्हें बुलाकर पार्थिवेश्वर (राजा) इस प्रकार कैसे बोल सके? समस्त धरती के लिए, अपनी जगह, भरत का राजतिलक कर, भले ही राजा बना दें। परन्तु अधिक कृपा-शून्य (निष्ठुर) होकर, काकुत्स्थतिलक (दशरथ) तुम्हें वन जाने को न कहते (तो) क्या होता? (वे दशरथ) अविवेकी नहीं हैं, यही नहीं, अधम (भी) नहीं हैं। फिर उनके लिये (मेरी) सौत की बातें सुनना क्या शोभनीय है? 'यह धर्म (संगत) है, यह श्रेष्ठ कार्य है'—ऐसा मन को समझाते हुए, तुम्हारे प्रति मैत्री रखकर, हितू अथवा मन्त्री (अथवा) कुल-गुरु उन्हें, जन प्रशंसनीय रूप में, नहीं बता सके? (हाय) आज कैकेयी ने इतना पाप कर दिया! आज नाथ ने इतना अपराध कर दिया! तुम्हें देखकर यह कहने के लिए कि 'जाओ, वन में रहो,' कैकेयी का मुख कैसे खुला? यदि वह (कैकेयी) जननाथ (राजा दशरथ) के लिए प्रिय है तो अनुकूलता से (उनके) निकट पहुँचकर प्राण ही माँग लेती ॥ ४६० ॥

यीवु ना कडुपुन निट्टु पुट्टकुन्न । नी विषादमु नाकु नेल वाटिल्लु?
गोड्डुकुलु लेनि या गोड्रालिकंटे । गडलेनि शोकंबु गलिगे ना कक्कट !
नरनाथनंदन! ननु डिंचिनीवु । करमु तेंपुन घोर कांतारमुलकु
नरिगिनप्पुडे नाकु नारसिचूड । मरणंबु दप्पिपचि मरियोंडु लेदु
नन्नेंट्लु डिंचि कानल केगें दिक?। नन्न ! ने नेमिट नडलार्चुकोंदु?
बेक्कु दानंबुलु बेक्कु धर्ममुलु । बेक्कु व्रतंबुलु बेक्कुव जेसि
पेंद्द गालमुनकु बिड्डुलु लेक । तद्दयु वेड्क न्निन् दनयुगा गांचि
यूरडि युन्नचो नुंड रादय्ये! नारडि जेंडिपोये नकट! ना तपमु
नेलमि मै निरुवदि येनु वत्सरमु । ललरि पेंचिति निन्नु नखिलंबु नेंरुग, ४७०

नट्टि नन्निट डिंचि येंट्टु पोयेंदवु?। पट्टि! नी कोंरकुनै पाटिंचि नट्टि
विविध व्रतंबुलु विविध दानमुलु । चवुट वित्तनमुलु सल्लि नट्लय्ये
भरतुडु राजैन बरिचार जनुलु । करुणमालिन यट्टि कैककु वेंरचि
ननु गोंलव वत्तुरे नरनाथु नंदु । जनवु लेकुंडेंडु चंदंबु जूचि ?

—"(ऐसी) कैकेयी के गर्भ से जन्म लेकर लोक पालन न करके, तुम मेरे गर्भ से क्यों पैदा हुए ? (अगर) तुम मेरे गर्भ से इस प्रकार पैदा न होते तो मुझे यह विषाद क्योंकर सप्राप्त होता ? हाय ! पुत्रहीन वन्ध्या की अपेक्षा मुझे अधिक दुख प्राप्त हुआ है । हे नरनाथ-नन्दन ! मुझे छोड़कर, अधिक साहस से घोर-कान्तारों में जिस समय तुम जाओगे, तो, सोच-समझकर देखने पर, मेरे लिए मरण के सिवा अन्य (उपाय) नहीं है । मुझे छोड़कर काननों में अब कैसे जाओगे ? हे तात ! मैं किस रूप से विषाद को शान्त कर सकूँगी ? अनेक दान, अनेक धर्म, अनेक व्रत, बड़ी लगन से करके (भी), चिरकाल तक सन्तान-हीन रही । तब बड़े आनन्द के साथ तुम्हें पुत्र-रूप में प्राप्तकर, शान्ति पायी । (अब वैसी) शान्ति नहीं रहेगी । हाय ! मेरा तप नष्ट हो गया । प्रेम से पच्चीस वर्ष, आनन्द से तुम्हें पाला-पोसा जिससे तुम अखिल (जगत्) को जान गये ।। ४७० ।।

—"ऐसी मुझे यहाँ छोड़कर कैसे जा पाओगे ? हे पुत्र ! तुम्हारे लिए जो विविध व्रत रखे, विविध दान किये, (वे सब) मानों ऊसर क्षेत्र में बिखेरे बीज-सम हो गये । (यदि) भरत राजा हो जाय तो निष्ठुर बनी कैकेयी से भय खाकर, (और) नरनाथ के हमारे प्रति प्रेम न रहने के कारण, परिचारक लोग, सेवा करने मेरे पास आयेंगे ? आधिक्य, विलास, वैभव (सबसे) रहित होकर, इन सौतों के मध्य (मैं) कैसे रह पाऊँगी ? कैकेयी

वासियु वन्नेयु वैभवं बेंडलि। यी सवतुललोन नेट्लु वर्तितु ?
गैक राजसमुले करणि सैरितु?। नी कार्य मिट्लौट नेरुग लेनैति;
वीनुल नी वार्त विनुटकु मुन्ने। ये नेल चानैति निनवंशतिलक!
कडगि यी राज्यंबु गैकोंनि कैक। कोंडुकु बट्टमु गट्टुकोंनि येलु गाक,
भूरि दुर्गमुलकु बोव नेमिटिकि?। नूरक ना योद्द नुंडु मो तंड्रि!
या वसिष्ठादि संयमुलु बाल्यमुन। भाविंचि नी पाणि पाद पद्ममुलु ४८०
जलजात हल कुलिश ध्वज कलश। मुलु मोंदलगु चिह्नमुलु विलोकिंचि
"यी विश्वमंतयु नित डेलु' ननिरि। या वार्त गैक ने डनृतंबु सेसे"
ननि पेंक्कु तेंरगुल नडलु कौसल्य। गनि लक्ष्मणुडु शोकमु गोपमेंसग,
मुडिवडु बोमलतो मोंगमु गेंपेंसग। नुडुगक रोषाग्नु लोंगि मंडुचुंड
रामु मातनु जूचि रामुनि जूचि। सौमित्रि यडिदंबु जळिपिंचि
पलिकें ४८५

लक्ष्मणुनि कोपमु

"मगटिमि दिगनाडि मानंबु विडिचि। तगु नुत्तम क्षत्र धर्मबु वदलि
वालिन तेजंबु वम्मुगा जेसि। येल यी दीनोक्तु लिट्लाड नीकु?

के अधिकार (रोब) को किस प्रकार सहूँगी ? नहीं जानती थी कि यह काम ऐसा होगा। हे इनवंश-तिलक। इस समाचार को कानों से सुनने से पहले ही मैं मर क्यों नहीं गयी ? प्रयत्नकर, इस राज्य को ग्रहणकर, कैकेयी का पुत्र पट्टाभिषिक्त होकर, भले ही शासन कर ले। (तुम्हें) भूरि काननों (घने जंगलों) में जाना क्यों ? हे तात ! चुपचाप मेरे पास पड़े रहो न! उन (वसिष्ठ आदि) संयमी लोगों ने बाल्य (काल) में तुम्हारे कर (और) चरण कमलों का परिशीलन कर, ।। ४८० ।।

—'जलजात (कमल), हल, कुलिश (वज्र), ध्वज, कलश आदि चिह्नों को विलोक कर कहा 'यह (बालक) इस समस्त विश्व पर शासन करेगा।' उस बात को कैकेयी ने आज झूठा कर दिया है।" (ऐसा) कहकर, अनेक प्रकार से दुखी होनेवाली कौसल्या को देख, लक्ष्मण शोक (और) क्रोध के उमड़ने पर, तनी हुई भौंहों से, मुख के लाल बनने पर, रोषाग्नियों के बलते रहने पर, राम की माता को (और) राम को देखकर, सौमित्र (लक्ष्मण) खड्ग चमकाकर बोले— ।। ४८५ ।।

लक्ष्मण का क्रोध

—"पौरुष को छोड़कर, मान को तजकर, समुचित उत्तम क्षत्रिय-धर्म को छोड़कर, अतिशय तेज को व्यर्थ बनाकर, ऐसे दीन वचन तुम क्यों कह रहे

श्रीरामुडु लक्ष्मणुनि युद्रेकमुडिगिंचुट

"वलुविडि दमतंड्रि पनुपुन दोल्लि । ञलमुन दमतल्लि जंपे भार्गवुडु;
तरुगनि किनुक मै दमतंड्रि वनुप । दरिगोनि योक गोवु दरिगे गुंडिनुडु
तन मनोहर मैन तारुण्य मोसगि । तन तंड्रि मुदिमिनि दाल्चे बूरुंडु;
तम तंड्रि पनुपुन द्रव्वरे तोल्लि । तमकिंचि सगरनंदनु लंबुनिधिनि?
गडगि तंड्रिदि पंपु गैकोनि नाकु । नडवुल नुंडुट यदि यंत पेद्द!
नी वल्लभुनि माट नीकुनु नाकु । भाविंचि चेयुट परमधर्मंबु; ५२०
ई लक्ष्मणुडु वालु डेमियु नेरुग । जालडु वीर विचारंबे कानि"
यनि नव्वुचुनु रामु डनुजन्मु जूचि । तन लोनि शांतमंतयु दोप वलिके:
"नी विक्रमंबुनु नी भुजा वलमु । नी विलु विद्ययु नी सुबुद्धियुनु
नी मगतनमुनु ने नेरुंगुदुनु । सौमित्रि ना येंड सद्भक्ति गलिग
येंत साहसमु नी विपुडु गोरितिवि?। एंतटि बुद्धि ना कीवु सेप्पितिवि?
गोनकोनि यिटु वेडुकोन्नदि तल्लि । यनुकंप निच्चि पोम्मन्नाडु तंड्रि

श्रीराम का लक्ष्मण के आवेश को दूर करना

"पूर्व (काल) में अपने पिता की आज्ञा से, हठ कर (दृढ़ता से) अपनी माता का भार्गव (परशुराम) ने वध किया था। अपने पिता के आदेश से कुंडिन ने, कम न होनेवाले क्रोध से, अवसर पाकर एक गाय को काट डाला था। पुरु ने अपने मनोहर तारुण्य को देकर, पिता की वृद्धता को धारण किया था। अपने पिता की आज्ञा पर पूर्व में ससंभ्रम सगरनन्दनों ने अंबु-निधि (समुद्र) को खोदा नहीं था? साहस के साथ पिता के आदेश को ग्रहणकर, जंगलों में रहना मेरे लिए कौन वड़ी बात है? तुम्हारे वल्लभ (पति) की बात का पालन करना सोचने पर तुम्हारे लिए और मेरे लिए परम धर्म है॥ ५२०॥

—यह लक्ष्मण (तो) वच्चा है। वीर (के समान) विचार (करने) के अतिरिक्त और कुछ नहीं जानता।" (ऐसा) कहकर, हँसते हुए राम ने अनुजन्म (अनुज) को देखकर, अपने अन्तर के समस्त शान्तभाव को प्रकट करते हुए कहा—"तुम्हारे विक्रम को, तुम्हारे भुजवल को, तुम्हारी धनुर्विद्या को, तुम्हारी सुबुद्धि को, तुम्हारे पौरुष को मैं जानता हूँ। हे सौमित्री! मेरे प्रति सद्भक्ति से युक्त होकर तुम अव कितना (दुः) साहस करना चाहते हो? तुमने मुझे कैसा उपदेश दिया? जानबूझकर ऐसा चाहने (वन जाने का आदेश देने) वाली माता हैं। अनुकम्पा से (ऐसा आदेश) देकर, जाने के लिए कहनेवाले पिता हैं। समस्त पृथ्वी को ग्रहणकर, इस राज्य

यिल यॆल्ल जेकॊनि यी राज्य पदमु । नलि नेलुवा डिक ना सहोदरुडु
बलुविडि नॆव्वरि पै नलगॆदीवु? । बल गर्वमुलु सूप बाडिये नीकु?
नॆमिलि दंड्रि वाक्यमु सेयुकंटॆ । धर्मबु गलदॆ? यी तंड्रि वाक्यंबु
त्रोयुट कंटॆनु दुरितंबु गलदॆ ।वेयु विधंबुल वॆदकि चूचिननु? ५३०
जनकुनि पनुपवश्यमु नीकु नाकु । जननुलकुनु जेय सहज धर्मबु;
गान नातनि पंपु गैकॊनि नेनु । कानल केगुट गा दनवलदु
परमपावनुलैन भानु वंशजुल । चरितंबु नीकु विचारिंप दगदॆ?
कावलसिन पनुल् गाकेल मानु?। दैव यत्नमु लवि दाटंग दरमॆ?"
यनि पॆक्कु भंगुल ननुनयंबॆसग । ननुजन्मु बोधिंचि "यनघात्म! नीवु
नाकु भक्तुडवय्यु ना पंपु नॆम्मि । गैकॊनि काविंपु गारवं बॆसग;
नी निष्ठुर क्रम मॆल्ल बोविड्डुवु । मे नरण्यमुलकु नेगॆद; वॆनुक
नॆल्ल भंगुल भक्ति नॆडपक कॊलिचि। तल्लिदंड्रुल मनस्तापंबु मान्पु"
मनिन लक्ष्मणुडप्पु डाटोप मुडिगि। तन मदि रघुरामु तलपॆल्ल नॆरिगि
जडिसि यूरक युंडॆ; साध्वि कौसल्य। गॊडुकु तॆंपुनकु मिक्कुट मैन वगल
५४०

पद पर अब ढंग से शासन करनेवाला मेरा सहोदर है। तुम अब किस पर अधिक रुष्ट होगे ? बल का गर्व दिखाना तुम्हारे लिए (कहाँ) उचित है ? स्नेह से पिता के वचन का पालन करने की अपेक्षा (अन्य कोई) धर्म है ? हज़ार प्रकार ढूँढ़कर देखने पर भी पिता के वचन को ठुकराने से बढ़-कर (कोई) दुरित (पाप) है ? ॥ ५३० ॥

—"जनक (पिता) की आज्ञा का अवश्य पालन करना तुम्हारे लिए, मेरे लिए, माताओं के लिए सहज धर्म है। इसलिए उनकी आज्ञा को ग्रहणकर (आज्ञानुसार) मुझे काननों में जाने से मत रोको। परम पावन भानु वंशजों के चरित्र (के बारे में) तुम्हें विचार नहीं करना चाहिए ? होनेवाले काम, हुए बिना कैसे रहेंगे ? दैव-यत्न (नियति-विधान) का उल्लंघन करना किसके बस की बात है ?" ऐसा अनेक भाँतियों से, अनुनय के साथ, अनुजन्म को समझाकर (राम यों बोले)—"हे अनघात्म ! तुम मेरे भक्त हो। अतः मेरे आदेश को प्रेम से ग्रहणकर, गौरवभाव को प्रकट करते हुए, (उस आदेश का) आचरण करो। (तुम) अपने समस्त निष्ठुर क्रम (निष्ठुरता) को छोड़ दो। मैं अरण्यों को (में) जाऊँगा। (मेरे) बाद सब प्रकार से भक्तियुक्त हो, निरन्तर सेवा कर, माता-पिता के मनस्ताप (दुख) को दूर करो।" ऐसा कहने पर लक्ष्मण आवेश को छोड़कर, अपने

बॊगुलुचु गळलचे बुन्नम चंद्रु । दॆगडु रामुनि मोमु दृष्टिचि पलिकॆः
"ना कुलभूषण! ना मुद्दुलय्य! ना कूमि कॊमरुंड! ननु गन्न तंड्रि!
क्रेपु बासिन यावु क्रिय निन्नु बासि। यी पदुनालुगें ड्लिलदुंड जाल;
निनु गूडि चनुदॆंतु निष्ठुराटवुल"। कनि प्रलापिंचु नय्यंब नूरार्चि ५४४

श्रीरामुडु कौसल्य नोदार्चुट

यनुनयालापदीनास्युडै रामु। डनियॆः "नो यम्म! यिट्लाडंग दगुनॆ?
पतियॆ प्राणपदुंबु; पतियॆ चुट्टंबुः। पतियॆ दैवत मात्म वरिकिंप, नट्टि
पति वासि ना वॆंट बरतॆंतु ननुट। मति दलंपग धर्ममा तल्लि! नीकु?
वसुधेशु नानति वसुमतीभार। मॆसग ना भरतुन किच्चुट दप्पॆ?
यवनीशु डिच्चद नन्न या वरमु। लवि रॆंडु गैकेयि यडुगुट दप्पॆ?
यनृतंबुनकु नोडि यकट! राजेंद्रु। डीनरंग वरमु लिट्लोसगुट दप्पॆ ५५०
मातंड्रि यानति महि निर्वहिंप। नी तॆरंगुन बूनु टिदि नाकु दप्पॆ?
चेकॊनि पतिपंपु सॆल्लिपकुन्न। नी कैन दप्पदु निक्कुवं वरय

मन से रघुराम के समस्त विचारों को जानकर, (उनसे) डरकर चुप रहा। साध्वी कौसल्या पुत्र के साहस पर अत्यन्त दुख से, ॥ ५४० ॥

—व्यथित होते हुए, कलाओं से (युक्त होने में) पूर्णिमा के चन्द्र को परास्त करनेवाले राम के मुख को निहारकर बोली—"हे मेरे कुलभूषण! मेरे लाड़ले! मेरे प्रिय पुत्र! हे मेरे तात! बछड़े से बिछुड़े गाय की भाँति, तुमसे बिछुड़कर, ये चौदह वर्ष यहाँ नहीं रह सकती। तुम्हारे साथ निष्ठुर (भयंकर) अटवी (अरण्य) में आऊँगी।' ऐसा कहते हुए, रोदन करनेवाली अंबा (माता) को सान्त्वना देकर, ॥ ५४४ ॥

श्रीराम का कौसल्या को सान्त्वना देना

—अनुनय के आलापों (वचनों) से दीनास्य (दीनमुख) बनकर राम बोले—'हे माता! क्या ऐसा कहना उचित है? आत्मा (मन) में विचार कर देखने पर पति ही प्राणसम है, पति ही (सच्चा) नातेदार है, पति ही देवता है। ऐसे पति को छोड़कर, मेरे साथ आने के लिए कह रही हो, सोचो कि क्या यही तुम्हारा धर्म है? माता! वसुधेश की आनति से समस्त वसुमती (पृथ्वी) के भार को भरत को देने में क्या दोष है? अवनीश ने जो वर देने का वचन दिया था, उन वरों को कैकेयी के माँगने में दोष ही क्या है? अनृत (असत्य) से हार (डर) कर हाय! राजेन्द्र का इस प्रकार वर देना क्या दोषयुक्त है? ॥ ५५० ॥

बूनि कानल केनु बोयिन पिदप । दीनुडै पोगुलु पार्थिवुनि नीवेपुडु
ननुनयिंचुचु सपर्यल नोनर्पुचुनु । मनसु नुम्मलिकंबु मान्पग वलयु;
दुरित दूरुंडु बंधुर पुण्यरतुडु । भरतुंडु ना कन्न भक्ति निन्नरयु;
नीवु शोकिंपकु, मिक गलनैन । भाविंप दशरथपति योप्पडनकु
कैकेयि विडुवक कलिसि वर्तिपु । नाकु सेममु गोरु ननु वीडुकोलुपु;
मेनु नेम्मदि तोड नेतेंचु कोरकु । बूनि भूसुरुल वेल्पुल नर्थि गोलुवु"
मनि पल्कि म्रोक्किन ना रामचंद्रु। गनुगोनि कौसल्य गौगिट जेर्चि
क्रम्मेडु शोकाश्रुकणमु लंदंद । वेम्मुचु रघुरामु वीपुन राल ५६०
"नडविकि बोयेदे यकट! नी"वनुचु।गोडुकु मै निमिरि डग्गुत्तिक वेट्टि
योक्किंत धृति बूनि युल्लंबु लोन । जेक्किट गन्नीरु सेत बो दुडिचि
पावन जलमुल ब्रक्षाळितास्य । यै वच्चि पुण्याह मपुडु सेयिंचि
सुरलुनु खेचरुल् श्रुतुलुनु यतुलु । दरुलुनु गिरुलुनु दांतियु शांति

—"हमारे पिता के आदेश को मानकर, इस प्रकार आचरण करने के लिए प्रस्तुत होने में क्या दोष है ? सच देखा जाए तो पति की आज्ञा का पालन करना तुम्हारे लिए भी अनिवार्य है । (इसलिए) मेरे जंगलों के जाने के बाद, दीन बन, व्याकुल होनेवाले पार्थिव (राजा) को सदा सान्त्वना देते हुए, सपर्याएँ (सेवाएँ) करते हुए, मन के ताप को तुम्हें दूर करना चाहिए । दुरित-दूर (पाप-रहित), बन्धुर-पुण्य-सहित भरत, मेरी अपेक्षा अधिक भक्ति से (तुम्हारी) सेवा करेगा । तुम शोक मत करो । अब स्वप्न में भी राजा दशरथ के संबंध में कटु विचार (मन में) मत लाओ । कैकेयी को न छोड़कर, मिलकर (स्नेहयुक्त होकर) व्यवहार करो । मेरे कुशल-क्षेम की इच्छा करो । मुझे बिदा करो । मेरे प्रशान्त (मन) से लौट आने के लिए, इच्छा से भूसुरों की (तथा) देवताओं की सेवा करो ।" ऐसा कहकर प्रणाम करनेवाले उस रामचन्द्र को देखकर, कौसल्या ने (उन्हें) गले से लगा लिया । उमड़कर आनेवाले शोकाश्रुकण, दुख के कारण अधिक होते हुए, रघुराम की पीठ पर गिरने लगे ।। ५६० ।।

—"हाय, तुम वन में जाओगे ?" कहते हुए, पुत्र के शरीर पर हाथ फेरते हुए, गद्‌गदस्वर-युक्त हुईं । (इसके पश्चात्) मन में थोड़ा धैर्य धारणकर, कपोलों पर (झरनेवाले) आँसुओं को हाथ से पोंछकर, पावन जल से मुख का प्रक्षालन करके आकर, तब पुण्याहवाचन कराया । (और कहा)—'सुर, खेचर, श्रुति, यति, दरि (गुहा), गिरि, दान्ति, शान्ति, नदी, निधि, समुद्र, आकाश, उदक, मारुत, उर्वी, अग्नि, दिक्पालक, दशदिशा, चन्द्र, अर्क (सूर्य), वाक्पति (ब्रह्मा) आदि सभी प्रेम से तुम्हारा स्वस्ति (कल्याण)

नदुलुनु निधुलु नर्णवमु लाकसमु । नुदकंबु मारुतं वुर्वियु नग्नि
दिक्पालकुलु दशदिशलु जंद्रार्क । वाक्पति प्रमुखुलु वलनोंप्प नीकु
स्वस्ति येल्लप्पु डोंसंगुदु" रनुचु । ब्रस्तुति सेसि या भामाललाम
पोंलुपोंद वेल्पुल वूजिंचि रामु । वलचेत नोंक रक्ष वलनोंप्प गट्टि
"यलिगि वृत्रासुरु ननि जंप वोवु । वलभेदि यगु वज्रपाणिकि दोंल्लि
ये मंगळमु लिच्चि रेल्ल देवतलु । ना मंगळमुलु नी कगु रामचंद्र! ५७०

यरुदुगा दिवि नुन्न यमृतंबु देर । गरमोंप्प नरिगेंडु गरुडुन कोंलमि
ने मंगळमु लिच्चें हितमति विनत । या मंगळमुलु नी कगु रामचंद्र!
आ तारकासुरुननि जंप वोवु । नातत बलशालि यैन षण्मुखुनि
के मंगळमु लिच्चें निपार गौरि । या मंगळमुलु नी कगु रामचंद्र!"
यनि रामु दीविंचि यक्कुन जेर्चु।कोंनि मस्तकंबु मूकोंनि निंडु मदिनी
अनिपिन दम तल्लि यड्गुल कोंरगि। यनुजन्म सहितुडै यच्चोटु वेंडलि
यभिषेक विघ्न वृत्तांतंबु देलिसि । सभिकुलु राजुलु सचिवुलु सकल
पौरुलु शोकिंप वादचारमुन । जारुचामर सितच्छत्रमुल् मानि
यनुराग मंदुचु नंत राघवुडु ।दन नगरिकि वच्चि तग वोंप्प मेंरसि
यंतः पुरंवुन करुगुचो सीत । यितुलु दानुनु नेंदु रेगुदेंचि५८०

करेंगे।" ऐसा कहकर, प्रस्तुति कर, उस भामाललाम (नारीरत्न) ने ठीक ढंग से देवताओं की पूजा कर, राम के दाहिने हाथ में प्रेम से रक्षा (कंकण) बाँधा (और कहा—) "पूर्व में रुष्ट होकर, युद्ध में वृत्रासुर का वध करने के लिए जानेवाले वलभेदी वज्रपाणि (इन्द्र) को समस्त देवताओं ने जो मंगल दिये थे, हे रामचन्द्र ! वे सव तुम्हें (प्राप्त) होंगे ॥ ५७० ॥

—"विरल ही दिवि (स्वर्ग) में स्थित अमृत लाने के लिए, शोभा से जानेवाले गरुड़ को हितमति वाली विनता ने जो मंगल दिए थे, हे रामचन्द्र ! वे सब तुम्हें (प्राप्त) होंगे।" (ऐसा) कहकर राम को आशीर्वाद देकर, छाती से लगाकर, मस्तक को सूँघकर, पूर्ण हृदय से भेजा (जाने की अनुमति दी) तब अपनी माता के चरणों में झुककर, अनुजन्म (अनुज) सहित हो, उस स्थान से निकलकर, अभिपेक-विघ्न के वृत्तान्त (समाचार) को जानकर, सभासद, राजा (सामन्त), सचिव (मन्त्री) (और) सकल पौरजनों के दुखी होने पर, चारु-चामर (तथा) सित-छत्र छोड़कर, पैदल चलकर अनुरागयुक्त हो तब राघव अपनी नगरी (महल) में आए (और) शोभायुक्त हुए। (राम के) अन्त.पुर में प्रवेश करते समय, सीता (अन्य) स्त्रियों के साथ स्वयं अगवानी के लिए आईं ॥ ५८० ॥

तनु जूचि मदि विन्नदनमु गैकोन्न । घनुनि राघवु जूचि कडु जिन्नवोयि
"यिदि येमि? ना प्राण हृदयेश! नीदु। वदनांबुजमु गड्डु वाड्डु वाडिनदि?
गट्टिगा बुष्ययोगमु दप्पकुंड । बट्टंबु गट्टेने पार्थिवेश्वरुडु?
सोम मंडलमुतो जोडगु गोंडुगु । नी मोमुदम्मिकि नीडगा देल?
चामर द्वयमु पार्श्वबुल नेंव्वि? । येमोंको ! मुनु पट्टपेनुंगु रादु?
श्रीराम! नी मौळि सेसन्नालेंव्वि? पौरुलु निनु गोलिच बलिसि रारेल?
दुंदुभिपटहादि तूर्य घोषमुलु । वंदि मागधुल कैवारंबु लेंव्वि?
यभिषेक दिनमु ने डधिप! नी यंदु। शुभ राजचिह्नमुल् चूडंग लेवु
सौमित्रि मोमुन जाल दुल्लास; । मेमि चंदमों? नाकु नेरिगिपु डिप्पु"
डनि पल्कु सीत मुग्धालपमुलकु । मनमुन गुंदि यम्मानिनि जूचि ५९०

श्रीरामुडु सीतकु तन यभिषेक भंग मेरिंगिचुट

"मुनुलकु नृपचिह्नमुल गोंडवेल?। विनु मदि येंट्लन्न विवरिंतु नीकु;
गैक मा तंड्रि चे गरमोप्प दोलिल । गै कोन्न वरमुलु गांक्षिचि नेडु
धरणि पालिप ना तम्मुनि भरतु । गर मोप्प बट्टंबु गट्टेद ननियें
कोंडुकु बट्टमु गट्टु कोनि राज्य मेल। नडवुल नन्नुंड नडिगे गावुनन्नु

--अपने को देखकर मन में उदास बने महान् राघव को देखकर (सीता) अत्यन्त उदास हुई (और) बोली—'यह क्या ? मेरे प्राणहृदयेश ! आपका वदनाम्बुज अति ही मुरझा गया है ? क्या पुष्ययोग (के लग्न) को न बीतने देकर, पार्थिवेश्वर ने अच्छी तरह पट्टाभिषेक किया ? सोममंडल से समता करनेवाला छत्र आपके मुखकमल को छाया क्यों नहीं दे रहा है ? (उभय) पार्श्वों में चामरद्वय कहाँ हैं ? ऐसा क्यों? भद्रगज (आप से) पहले क्यों नहीं आ रहा है ? हे श्रीराम ! आपके सिर पर मंत्राक्षत कहाँ ? आपकी सेवा में प्रवृत्त पुरजन अधिक संख्या में क्यों नहीं आ रहे हैं ? दुन्दुभि, पटह आदि के तूर्यनाद, वन्दी-मागधों (चारण-भाटों) के कैवार (स्तुतिपाठ) कहाँ ? आज (तो) अभिषेक का दिन है। हे अधिप ! आप में शुभ राजचिह्न दिखाई नहीं पड़ रहे हैं। सौमित्री के मुख पर, पता नहीं क्यों उल्लास नहीं है। अब मुझे बताइए (इन सबका कारण क्या है ?)' ऐसा कहनेवाली सीता के मुग्ध वचनों से मन में दुखी होकर, उस मानिनी को देखकर (कहा—) ॥ ५९० ॥

श्रीराम का सीता को अभिषेक-भंग सुनाना

—"(भला) मुनियों को नृप (राज)-चिह्नों का झंझट क्यों ? सुनो, (अगर) पूछोगी कि वह कैसे ? (तो) तुम्हें बताता हूँ। कैकेयी ने हमारे

बनिवडि यडवुल बदुनालु गेंड्लु । जनकुशासन मेनु जरियिंप वलसें;
दलिल दंड्रुल माट तप्पक सेयु । बल्लिदुलकुनु संपदलु गीर्तियुनु
नाकलोकादि नाना विधपुण्य । लोकंबु लरचेतिलों नंडु नंडु;
गावुन बति याज्ञ गानल सलिपि । ये वच्चु नंदाक निंदीवराक्षि!
गुरुवुल वगलचे गुंदक युंड ।बरिचर्यं लोनरिंचि भक्तितो गोलुवु;
चित्तंबु लोन ना सेमंबु गोरु । मुत्तम शील वै युचित धर्ममुल६००
वनित! यम्मल म्रोल वर्तिपु" मनिन। जनकज या रामचंद्रुनि जूचि
कदलिन मति भीति गालिकि गदलु । कदळि चंदंबुन गडगड वणकि
बेंदरि डग्गुत्तिक वेंट्रि पेन्वगल । जेंदरि यंतंतकु जेलुवेदि पलिकें; ६०३

रामानुगमनमुनकु सीतालक्ष्मणुल निश्चयमु

"निदियें निश्चयमैन नेनु मी वेंट। वदलक पैनमै वत्तु नी क्षणमें
निनु बासि ये निल्वनेर, ब्राणमुलु । ननु बट्ट नेरवु ना प्राणनाथ!

पिताजी से पहले शोभा से जो वर प्राप्त किये थे, आज उन्हें माँग लिया है। कहा (माँगा) कि धरणि का पालन करने के लिए मेरे छोटे भाई का शोभा से राजतिलक करें। पुत्र के राजा बन, राज्य का शासन करते समय, कहा (माँगा) कि मैं जंगलों में रहूँ। इसलिए जनक (पिता) के शासन (आदेश) के अनुसार, जानबूझ कर मुझे चौदह वर्ष जंगलों में रहना है। कहते हैं कि माता-पिता के वचनों का पालन करनेवाले बलशालियों को संपत्तियाँ, कीर्ति, नाकलोक (स्वर्गलोक) आदि नानाविध पुण्यलोक हथेली में रहेंगे (सुलभ होंगे)। इसलिए हे इंदीवराक्षी ! कानन में पति (राजा) की आज्ञा का पालन कर आने तक, गुरुजनों के दु.खों से व्याकुल न होकर, (उनकी) परिचर्याएँ (सेवाएँ) कर, भक्ति से पूजा करती रहो। मन में मेरे कुशल की कामना करो। हे वनिता! माताओं के समक्ष उत्तम शीलवाली होते हुए उचित धर्मो का, ॥ ६०० ॥

—आचरण (पालन) करो।" (ऐसा) कहने पर जनकजा (सीता) उस रामचन्द्र को देखकर, विकल वनी मति से, हवा से हिलनेवाली कदली के समान थर-थर काँपकर, भयभीत होकर, गद्गद स्वर में अत्यधिक दुःख से चंचल बनकर, क्षण-क्षण विवर्ण बनकर, (यों) बोली— ॥ ६०३ ॥

रामानुगमन के लिए सीता और लक्ष्मण का निश्चय

—"(अगर) यही निश्चय (सत्य) है तो, (तो) मैं आपका साथ न छोड़कर इसी क्षण प्रयाण कर आऊँगी। आपको छोड़कर मैं रह नहीं सकती। हे

यडवुल केनुन नर्थितो वत्तु । दोड्डुक पों" म्मन दूलि राघवुडु
"कमलाक्षि! यडवुल गंदमूलमुलु । नमलुचु, ऱानेल नड्चुचु, नीवु
नारचीरल गट्टि नवयुचु वगल । गूरुचु, बेरेंडकुनु गालि कोंचि
नेलल बवळिंचि, निच्चलु बर्ण । शालल लो नुंड जालुदे यकट!
कोमल देहवु, गोलवु, बेल; । वेमियु ने पाटु नेरुगवु नीवु ६१०
तलप नी वेक्कड? दंतुलु बुलुलु । नेलुगुलु दोडेळ्ळु निर्रुलु गरुलु
बामुलु गामुलु बै ब्राकु नेर्र । चीमलु गिरिगुहासीमल दरुल
झरुल निम्नोन्नताश्चर्यमार्गमुल । विरस कंटक लतावृक्ष मार्गमुल
दलप नक्कजमैन दारुणाटवुल । मेलगुट येक्कड़! मेदिनीतनय!
कावुन गौसल्यकडनुंडु मीवु । सेविंपु मा साध्वि चित्तंबु वडसि
गृह देवतल गोल्वु; कीर्तिपु नन्नु । नहरहंबुनु माम यडुगुल केरगु
भरतुंडु निनु मातृभावन गोलुचु । बरुसंबु लातनि बलुककु मबल!
यिदे पोयि पदु नालुगेंड्लु निंडिच । मुदमोप्प जनुदेंतु मुगुद! चिंतिलकु"

मेरे प्राणनाथ! प्राण मुझे पकड़कर नहीं रह सकेंगे। मैं भी सोत्साह जंगलों में आऊँगी। (मुझे) साथ ले चलिए।" (ऐसा) कहने पर विचलित हो राघव (बोले—) "हे कमलाक्षी! जंगलों में कंदमूल चबाते हुए, पथरीली भूमि पर चलते हुए, वल्कल वस्त्र धारणकर, कृशीभूत होते हुए, दुःखों से व्याकुल होते हुए, कड़ी धूप (और) वायु को सहकर, (कड़ी) भूमि पर शयन करते हुए, नित्य (सदा) पर्णशालाओं में हाय! (कहाँ) रह सकोगी? कोमल शरीरवाली हो, मुग्धा हो, अबोध हो, किसी प्रकार के कष्ट को तुम नहीं जानती हो, ॥ ६१० ॥

—सोचने पर तुम कहाँ (और उपरोक्त कष्ट कहाँ) ? वानर, व्याघ्र, रीछ, भेड़िये, हिरन, हाथी, सर्प, पिशाच, ऊपर चढ़नेवाली लाल चीटियाँ (आदि से युक्त) गिरि-गुहा प्रान्तों में, दरियों में, झरियों में, निम्न-उन्नत (हो)-आश्चर्य-(प्रद) मार्गों में, विरस (विकट) कंटक-लता (युक्त) मार्गों में, सोचने (कल्पना करने) पर आश्चर्यप्रद भयंकर अटवियों में रहना कहाँ ? (अर्थात् तुम नहीं रह सकतीं)। इसलिए हे मेदिनीतनये (भूपुत्री)! तुम कौसल्या के पास रह जाओ। उस साध्वी के चित्त के अनुकूल सेवा करती रहो। गृहदेवताओं की पूजा करो। मेरी कीर्ति करती (गाती) रहो। दिनरात ससुर के चरणस्पर्श करती रहो। मातृभावना से भरत तुम्हारी सेवा करेगा। हे अबला ! उसे कभी परुष-वचन मत सुनाओ। हे मुग्धे! यह जाकर चौदह वर्ष पूरा करके, मोद के साथ लौट आऊँगा। चिन्ता मत करो।" ऐसा कहने पर प्रणय-शोक से आर्त होकर, सीता ने रामचन्द्र को

मनवुडु ब्रणय शोकार्त यै रामु । गनुगोनि सीत निक्कमु विन्नविंचे;
"पतुलु गाविंचिन भाग्यंबुलैन । सतुलनु रक्षिचु सम्मदं बेसग; ६२०

नापालि विभुडन्न ना दैवमन्न । ना पुण्यगति यन्न नरनाथ! नीवे;
घन तप स्वर्ग भोगमु लनेकंबु । लनुभविंचुट कंटे नति भक्ति तोड
निश्चलमनमार नी पदांवुजमु ।लच्चुगा गोलुचुट यदि नाकु सुखमु;
नृपवर्य! नीवुन्न निष्ठुराटवुलु । नुपवनंबुलु नाकु नूहिंचि चूड,
जगतीश! विनु विष्णुसमुडैन नीवु। जगदेक विक्रमशालिवै परग,
गरमोप्प नी रक्ष गलिगिन नन्नु । सुरराजु दलयेत्ति चूडंग वेरचु
नारचीरलु गट्टि नडचि नी तोड । नारंग जनु देंच नट नीवु सूप
नमरंग जूचेद नद्रुलु नदुलु । गमलाकरंबुलु गडुवेड्क तोड
बायक यी येंडलु परगनूरैन । वेयैन गानिम्मु विपिनंबुलंदु;
नन्नु दोड्कोनि पोम्मु नरनाथ! "यनिन।नन्नाति गनुगोनि यतडिट्टुलनिये
६३०

"ननिशंवु नति दुरंतायासमैन । वनवास मेटिकि वनजाक्षि! नीकु?
नीयंदु जित्तंबु निलिपि निन्नुनिचि। पोयि काविंचेद भूपालु पनुपु;

देखकर, अन्तरतर से (इस प्रकार) निवेदन किया— "पतियों का भाग्य ही सम्मोद के साथ सतियों की रक्षा करेगा ।। ६२० ।।

—हे नरनाथ ! मेरे लिए (आप ही) प्रभु हैं, मेरे देव हैं, मेरी पुण्यगति (सबकुछ) आप ही है । घन-तप से अनेक स्वर्गभोग के उपभोग की अपेक्षा अतिभक्ति से, निश्चल मन से, हार्दिक रूप से आपके चरणाम्बुजों की सेवा करने में ही मुझे सुख है । हे नृपवर ! आप (साथ) रहेंगे (तो) निष्ठुर (भयंकर) अरण्य, सोचने पर मेरे लिए उपवन हो जाएँगे । हे जगदीश ! सुनिये, विष्णु समान आप जगदेक-विक्रमशाली होकर शोभित होते रहेंगे तो अधिक शोभा युक्त आपकी रक्षा से युक्त मेरी ओर सिर उठाकर देखने के लिए भी सुरराज (इन्द्र) (भी) डर जाएंगे । वल्कल पहनकर, (आपके साथ) पैदल चलकर, शोभा से (अरण्य में) आऊँगी । (आकर) वहाँ आपके दिखाने पर, शोभा से अद्रि (पर्वत), नदियाँ, कमलाकरों (सरोवरों) को बड़ी शौक से देखूँगी । ये (चौदह) वर्ष विपिनों में, सौ होने दीजिए या हज़ार (कोई परवाह नहीं), हे नरनाथ ! मुझे साथ ले चलिए ।" (ऐसा) कहने पर, उस स्त्री को देखकर उन्होंने (राम ने) इस प्रकार कहा-- ।। ६३० ।।

वनमेड? नी वेड? वनित निन्नेड । गोनिपोदु दुर्गमुल् गुटिल मार्गमुल?
नाराम वन केळि कर्हंबु गानि । घोराटवुलयंदु ग्रुम्मरदगुन?
पेल्लु क्रूर वृकाळि पृथु पुंडरीक । भल्लूक सिंहादि बहुमृगावळुलु
घूककाकानेक घोर हुंकार । काकोल झिल्लिका कर्कश ध्वनुलु
मानक वर्तिचु मरि भयं बोंदव । नी नीड गनि यल्कु; नीवंदु वलदु"
नावुडु विनि सीत नरनाथु जूचि । "नी वुंडगा नाकु निर्भयं बधिप!
वनभूमि दिरुगुदु वरुनितो गूड । ननि नाकु जेप्पिनारा वेदविदुलु
कान नीविधमुन गांतारमुनकु । भानु कुलेश! नी पादमुल् गोलिचि ६४०
वच्चेद; नन्नु रा वलदनवलदु; । नच्चिन मदिलोनि ना भक्ति जूडु"
मनि पादमुल बट्टि यडलंग वगचि। यनुमतिपमि जूचि यति दीन यगुचु
"नेरिगि ने जेसितिने मुन्नु तप्पु? मरचि चेसिति नेनि मन्निपु नन्नु;
बटु शिला कंटक प्रचुर देशमुल । नट निन्नु गोलिचिरा नलतयु लेदु

"हे वनजाक्षी ! अनिश (सदा) अति दुरन्त आयास युक्त वनवास तुम्हें क्यों ? तुम पर चित्त रखकर, (तुमको यहीं) छोड़कर, जाकर, भूपाल की आज्ञा का पालन करूँगा। वन कहाँ और तुम कहाँ ? हे वनिता ! तुम्हें कहाँ ले जाऊँ (उन) दुर्गम (और) कुटिल मार्गों में ? आराम-वन-केली के अनर्ह घोर-अरण्यों में तुम कहाँ घूम सकोगी ? अनेक क्रूर वृक-समूह, विराट पुंडरीक, भल्लूक, सिंह आदि बहु मृग-समूह, घूक (उल्लू), काक (के) अनेक घोर हुँकार (ध्वनियाँ), काकोल, झिल्लिकाओं की कर्कश ध्वनियाँ, (वहाँ) निरन्तर होती रहती हैं और तुम भीत हो जाओगी। तुम (वहाँ) अपनी छाया से ही डर जाओगी। तुम को वहाँ नहीं आना चाहिए।" ऐसा कहने पर सीता नरनाथ को देखकर (यों) बोली—"तुम (साथ) रहोगे तो हे अधिप ! मेरे लिए निर्भय है। उन वेदविदों ने कहा था कि मैं वर (पति) के साथ वनभूमियों में विचरण करूँगी। इसलिए इस प्रकार हे भानुकुलेश ! कान्तार को, तुम्हारे चरणों की सेवा करते हुए, ॥ ६४० ॥

—आऊँगी। मुझसे मत आने के लिए मत कहिए (मुझे मत रोकिये।) मन पसन्द मेरी भक्ति पर ध्यान दीजिए।" (ऐसा) कहकर, चरण पकड़कर अतिव्याकुल होने पर भी, अनुमति न देने पर, अति दीन होकर (सीता) बोली—'जानबूझकर पहले मैंने कभी अपराध किया था ? (नहीं) भूलकर (कहीं) अपराध किया हो तो मुझे क्षमा कर दीजिए। पटु-शिला-कंटक-प्रचुर-प्रदेशों में, आपकी सेवा करते हुए आने से थकावट नहीं होगी। करुणा (प्रेम) से आपके द्वारा दिए जानेवाले कन्द मूल निश्चय ही सदा मेरे

करुण मै नी विच्चु कंदमूलमुलु । नरुदार नमृतमै यलरु नाकॅपुडु
भाविंचि चूड ना प्राणवंधुडवु । नीवे कावुन वत्तु नी तोड ब्रीति;
जनकुनि जिंतिप; जननि जिंतिप । जनुनिष्टुलगु वंधुजनुल जिंतिप;
जननाथ! सहधर्मचारिणि गाग । जनकुनिचे नग्नि साक्षि गैकोंटि
जनलोकनुतुडवु; सत्यसंधुडवु । ननु डिंचि नीकु गानल केग दगुनॅ?
यॅन्नि दुःखमुलु नी वॅन्निति वडवि ।नन्नियु सौख्यंवु लगुनु नी दयनु; ६५०

ई वाड ली मेड ली वंधुवृंद । मी वस्तु संपद ली जीवनंवु
नीवु लेकुन्नचो निस्सार मरय । गावुन निचट नेकरणि वेगितु?
सावित्रि यनु पुण्य सति दनपतिनि। सेविंचि पोयिन चॅलुवुन नेनु
नी वॅंट जनुदॅंतु नी नीड वोलॅ । ने वॅंट साध्विकि निदिय धर्मंवु;
निनु वासि यिच्चट निमिष मे नोर्व। वनमुल निनु गूडि वर्तिप नेर्तु;
वदुनालुगेंड्लेल प्राणेश! निन्नु । गदिसि वेयेंड्लैन गापुंदु नंदु;
सतुलकु वतुलकु जनु लेंच दगिन । मतमु व्रतिष्ठिपु मरि वेयुनेल?
यी वरण्यमुलकु निट नन्नु विडिचि। पोवुट निजमैन बोवु व्राणमुलु

लिए अमृत (सम) होंगे। सोच-विचारकर देखने पर तुम ही मेरे प्राण वन्धु हो। अतः प्रेम से तुम्हारे साथ आऊँगी। जनक (पिता) की चिन्ता (स्मरण) नही करूँगी, जननी की चिन्ता नहीं करूँगी। इष्ट वन्धु जनों की चिन्ता नही करूँगी। हे जननाथ! (महाराजा) जनक (के हाथों) से, अग्नि को साक्षी वनाकर, (आपने) मुझे सहधर्म-चारिणी के रूप में ग्रहण किया था। (आप) जन लोक-नुत हैं, सत्यसन्ध (सत्यनिष्ठ) हैं। मुझे छोड़कर काननों में जाना (क्या) आपको उचित है? आपने जितने दुःख (कष्ट) गिनाये है, वे सव आपकी दया से सुख ही वनेंगे ॥ ६५० ॥

—ये वीथियाँ, ये महल, यह वन्धु समूह, ये वस्तु सम्पत्तियाँ, ये जीवन (ये सव) आपके न होने से निस्सार ही होंगे। अतः मै यहाँ किस प्रकार (जीवन) विताऊँगी? जिस प्रकार सावित्री नामक पुण्यसती ने अपने पति की सेवा की थी, उसी प्रकार मैं आपके साथ, छाया के समान आऊँगी। साध्वी (स्त्री) के लिए यही धर्म है। आपसे विछुड़कर एक निमिष भी मैं सहन नहीं कर सकती। जंगलों में आपके साथ मैं रह सकूँगी। हे प्राणेश! चौदह वर्ष ही क्या, आपको निकट प्राप्तकर, हजार वर्ष भी रह सकूँगी। सतियों और पतियों के लिए ऐसा आदर्श स्थापित कीजिए जिसे (समस्त) जन मान लें। अव हजार (वाते) क्यों? अगर यह सच है कि आप मुझे यहीं छोड़ अरण्यों में जायेगे तो प्राण भी (शरीर छोड़) रुष्ट हो

नलुकमैगादेनि नग्निचे नैन। जलमुचे नैन विषंबुचे नैन;
नेचिन वगलतो निट जत्तु नेतु। ना चावु सूचि पो ननु डिंचिपोकु" ६६०
मनि विलापिंचुचु नडुगुल मीद। जनकज वडियुन्न चंदंबु सूचि
करुण तो नल्लन गरपल्लवमुल। धरणीशतनयु डा तनुमध्य नेत्ति ६६२

सीतालक्ष्मणुल राककु श्रीरामुडु सम्मतिंचुट

"यलिवेणि! निनु बासि यावनंबुलनु। नलुवंद विहरिंप नाकिच्च लेदु
निनु दोडुकोनि पोदु; नीवु ना वेंट। जनुदेर गुशलंबु सकलंबु नाकु;
निम्मुल नी चित्त मेरुगंग दलचि। यिम्माट लाडिति; नेतेंतु गाक"
यनुचु ना रघुरामु डतिकृपामूर्ति। जनकज राककु सम्मतुंडगुचु
वलयु दानंबुलु वरुस गाविंपु। नेलत! नी" वनवुडु नेम्मनंबलर
गांचन रत्नादिकंबु लैनट्टि। यंचित दानंबु लम्महो सुतयु
वरुस ब्रियंबगुवारल केल्ल। गरमर्थि नंदंद काविंचे; नंत
ना वेळ लक्ष्मणुं डन्न निश्चयमु। भाविंचि तन पाणिपद्मुल् मोगिंचि ६७०

निकल जायेंगे नहीं तो अग्नि से या जल से या विष से (ही सही) (प्राण) निकल जाएँगे। बढ़े हुए दुःख के कारण मैं यहाँ मर जाऊँगी। मेरी-मौत को देखकर जाइये। (पर) मुझे छोड़ मत जाइये।" ॥ ६६० ॥
(ऐसा) कहकर विलाप करती हुई, चरणों पर जनकजा (सीता) के पड़े रहने के विधान को देखकर, करुणा (प्रेम) से धीरे से, कर पल्लवों से, धरणीशतनय (राजकुमार) ने उस तनुमध्या (स्त्री) को उठाकर कहा— ॥ ६६२ ॥

सीता (और) लक्ष्मण के अनुगमन के लिए श्रीराम का राज़ी होना

—"हे सुन्दर वेणीवाली! तुमसे विछुड़कर उन वनों में, सुन्दरता के साथ विहार-करने की मुझे इच्छा नहीं है। तुम्हें साथ ले जाऊँगा। तुम्हारा मेरे साथ आना मेरे लिए समस्त (रूप से) कुशलप्रद है। प्रेम से तुम्हारे चित्त को जानना चाहकर (मैंने) ये बातें कही हैं। (अवश्य ही) मेरे साथ आ जाओ।' (ऐसा) कहते हुए अति कृपामूर्ति वे रघुराम जनकजा (सीता) के आगमन के लिए स्वीकृति देकर (यों बोले)—'हे सुन्दरी! आवश्यक दानों को तुम क्रम से कर लो।" ऐसा कहने पर मन में प्रसन्न होकर, उस महीसुता (सीता) ने अपने प्रिय जनों को क्रम से अति प्रेम से काँचन (स्वर्ण), रत्न आदि का समंचित दान जहाँ-तहाँ (वहीं) कर दिया। तब (उसके बाद) उस समय लक्ष्मण ने अग्रज के निश्चय का विचारकर, अपने पाणि-पद्मों को जोड़कर (कहा—) ॥ ६७० ॥

"यिनकुलाधिप! यिक निट्टिट दयेनि। दन किट वनियेमि? धनुवु मोपेट्टि मुनुपुगा नडवि किम्मुल मिम्मु गोलिचि। चनुदेंतु" ननि वेड सौमित्रि जूचि धरणीशुडुनु श्रेम दळुकोत्तनंत। जेर रम्मनि रामचंद्रुडिट्लनिये; "ना तोड नीवु गानकु वच्चेदेनि। ना तोड निनु वासि नाना विधमुल मिडुकु कौसल्यासुमित्रल नेव्व। रुडुकार्चि पोषितु रुडुगनि भक्ति? मन मिद्दरमु जन्न मन तंड्रि भक्ति। ननुदिनंबुनु नेव्व ररयुवारिचट? मोदलन सवति पै म्रोग्गु गैकेयि। मदिलोन नी राज्यमद मिक नोदवु बेर्मि सूपुचु दुःख पेट्टु ना कैक। धर्मबु दल पोसि तगवेल नडुपु? नट्टु गान ने वच्चु नंदाक नीवु। निट नुंड दगु" नन्न नेंतयु गनलि "यिप्पुडु नन्नु रा नानति यिच्चि। यिप्पुडु वलदनुटेमि कारणमु? ६८०
कौसल्य कृप रक्ष गाक ना रक्ष। या सुमित्रकु नेटिका तेज मरय बदि वेवुरकु नुन्कि पट्टु नी वेलुगु। निदि येल चिंतिप निट रामचंद्र!

"हे इनकुल-अधिप (सूर्यवंश के राजा)! अव अगर यह ऐसा ही है (आपका जंगलों में जाना अवश्यभावी है) तो मेरे लिए यहाँ क्या काम है? धनुष चढ़ाकर, (आपके) आगे-आगे (चलते हुए), प्रेम से आपकी सेवा करते हुए, जंगलों में आऊँगा।" इस प्रकार विनय करने पर सौमित्र को देखकर धरणीश (राजा राम) ने प्रेम के अधिक होने पर, तव (उन्हें) (अपने पास) बुलाया। रामचन्द्र ने इस प्रकार कहा, "यदि तुम मेरे साथ काननों में आओगे तो, मेरे साथ तुमसे भी विछुड़कर, नानाविधियों से टिमटिमाने वाले (किसी भी प्रकार दिन वितानेवाले) कौसल्या (और) सुमित्रा के दुख को कम कर, अविरत भक्ति से (उनका) पोषण कौन करेगा? यदि हम दोनों ही चले जाएँ तो हमारे पिता की, अनुदिन (प्रतिदिन) भक्ति के साथ कौन देखभाल करेगा? पहले से ही कैकेयी (अपने) सौतों पर अधिकार जमाती थी। (अव) मन में यह राज्यमद उत्पन्न होगा। (अव) प्रेम दिखाते हुए वह कैकेयी (उन्हें) दुखी बनाएगी। धर्म का ख्यालकर, वह न्याय का निर्वाह क्यों करेगी? अतः मेरे (लौट) आने तक तुम्हारा यहाँ रहना उचित है।" (ऐसा) कहने पर अधिक तप्त (दुखी) होकर, (लक्ष्मण बोले—) "तव मुझे आने के लिए अनुमति देकर, अव इनकार करने का क्या कारण है? ॥ ६८० ॥

—उस सुमित्रा के लिए कौसल्या की कृपा ही रक्षा (रक्षक) है। मेरी रक्षा क्या है? (अनावश्यक, व्यर्थ है।) खूब देखने पर वह तेज, तुम्हारा प्रकाश दस हज़ार (व्यक्तियों) के लिए भी निवास-स्थान है। हे रामचन्द्र! अव इसकी चिन्ता क्यों? भरत तुम्हारी ओर से भय खाकर, स्थिरता से

भरतुंडु नी देस भयमुन जेसि । तिरमुगा गौसल्य देस भक्ति जेयु;
गरमु सुमित्रकु गाविंचु नटुल । निरवोंद; नटुगान नेनिंदु निलुव;
बाणबाणासनपाणिनै वेंनुक । दूणीरमुलु बूनि दुर्गमाटवुल
बोंदुगा मिम्मु निम्मुल गोल्व वलयु। गंद मूलादुलु गडक देवलयु;
नट दृणपर्णादुलरसि मीरुंड । नुटजमु सेज्जयु नोनरिप वलयु
बदुनालुगेंड्लुनु बगलुनु रेयि । निदुर वोवक सेवनोरि सेय वलयु
वच्चेंद ने" नन्न वसुधेशु डतनि । निच्चमै गैकोनि यिंपुदळ्कोत्त
"वलयु बंधुल नेल्ल वरुस वीड्कोनुमु ।वलनोप्पगा मुन्नु वरुण देवुंडु६९०
मन तंड्रि किच्चिन महितचापमुनु । घनशर श्रेणुलुगल कवदोनलु
गर मभेद्यंबगु कवचंबु बसिडि । परुजुल जेन्नोंदु पटु कृपाणमुलु
गोनिरम्मु" ना नेगि कोमरार बंधु।जनुल वीड्कोनि शस्त्रशालकु नरिगि
यायुधंबुलु गोंचु नरुगुदेंचुटयु । नायतात्मुडु रामु डनुजन्मु जूचि
"तम्मुड! विनुमेल्ल धनमुल नेनु । नेम्मि निच्चेंद; धरणीसुरवरुल
महित पुरस्थुल मन किपुलैन । सहजभृत्युल नर्थिजनुल राविंपु

कौसल्या की भक्ति करेगा। उसी प्रकार सफलतापूर्वक सुमित्रा की भक्ति करेगा। अतः मैं यहाँ नहीं ठहरूँगा (रुकूँगा नहीं)। बाण (और) बाणासन (धनुष) को पाणि में (धरकर), (आपके) पीछे दुर्गम अटवियों में, ढंग से, प्रेम से (मुझे) आपकी सेवा करनी चाहिए। सप्रयत्न कंदमूल फल आदि (मुझे) लाने चाहिए। वहाँ तृण-पर्ण आदि की (अच्छी तरह) परखकर, आपके रहने के लिए कुटी और शय्या तैयार करनी चाहिए। चौदह वर्ष रात और दिन बिना सोए उचित रूप से (आपकी) सेवा करनी चाहिए। मैं (भी) आऊँगा।" ऐसा कहने पर वसुधेश (राजा राम) ने उसकी इच्छा को स्वीकार किया (और) प्रेम भाव के प्रकाशित होने पर बोले—"आवश्यक बन्धुओं (संबंधी जनों) को बिदाकर दो। अच्छे ढंग से पूर्व में वरुणदेव ने, ॥ ६९० ॥

—हमारे पिता को दिए महितचाप, घन (महान्) शर श्रेणियों से युक्त तूणीर, अति अभेद्य कवच, सोने के मूठों के शोभित पटु कृपाण लेकर आओ।" (ऐसा) कहने पर (लक्ष्मण), जाकर समुचित रूप से बन्धुजनों (रिश्तेदारों) को बिदा देकर, शस्त्रशाला को जाकर, आयुध लेकर (लौट) आए। (आने पर) सिद्ध आत्मावाले राम ने अनुजन्म (अनुज) को देखकर (कहा—) "हे अनुज! सुनो, मैं समस्त धन सप्रेम दूँगा। धरणीसुरवरों (ब्राह्मणों) को, महित पुरस्थों (नागरिकों) को, हमारे प्रिय सहज भृत्यों को, अर्थिजनों (याचकों) को बुलाओ। इस समय अर्ह (योग्य),

मावेळ नर्हुडु नखिलज्ञु डैन । या वसिष्ठुनि पुत्त्रुडयिन सुयज्ञु
मॉदलैन पुत्त्रुल मुदमु चित्तमुन । वॉदलंग नतिभक्ति वूजिप वलयु
मरियु दक्किन वारि मन्नित मॅल्ल। तॅऱ्गुल नक्कऱ दीर नर्थुलकु"
ननवुडु लक्ष्मणुं 'डौगाक! यनुचु । मुनिपुत्त्रु निंटिकि मुदमुतो नरिगि७००

रामु वाक्यमु जॅप्पि रम्मन्न नतडु। नेमंबु लन्नियु निष्ठतो दीर्चि
सौमित्त्रि सहितुडै चनुदेर गांचि । रामुडु विनयाभिरामुडै तानु
नॅलमि सीततो नॅदुरुगा वच्चि । यलघु तेजोमूर्ति यैन मुनींद्रु
गॉनिवच्चि गद्दिय गॉमरार नुनिचि। विनुतार्घ्यपादमुल् वेड्कतो निच्चि
हारकुंडल वलयांगद कटक । चारु कोटीरादि सकल भूपलनु
मातुलुं डॉसगिन मदगजेंद्रंबु । ख्यात शत्त्रुंजयाख्यमु मॉदलैन
करिसहस्रंबुनु गमनीयवस्त्र । सुरुचिर दिव्य वस्तुवुलॅल्ल मरियु
वहु भूषणमु लिच्चि पयि पयि तोन। महनीय रत्नमुल् मानुगा निच्चॆ;
बसिडि येर्पंड वुच्चि पदिकोटु लॉसगि। यसमान वस्तुवुलन्नियु नॉसगॆ
निच्चिन गैकॉनि हृदयंवु लोन । नच्चॆरु वडरंग नधिक मोदमुन७१०

अखिलज्ञ उस वसिष्ठ के पुत्र सुयज्ञ आदि (उनके) पुत्रों को समुद चित्त से, अधिक भक्ति से पूजा करनी चाहिए। फिर शेप लोगों का आदर करेंगे जिससे याचकों की आवश्यकताएँ सभी तरह से पूरी हो जाएँ।" ऐसा कहने पर लक्ष्मण यह कहकर कि 'ऐसा ही हो' मुनि पुत्र के घर समुद गए ॥ ७०० ॥

राम का वाक्य वताकर उन्हें बुलाया। तव वे सभी नियमों को निष्ठा से करके, सौमित्र सहित आये। आये हुए उन्हें देखकर राम विनयाभिराम होकर स्वयं प्रेम से सीता के साथ अगवानी करने आये। अलघु-तेजोमूर्ति मुनीन्द्र को लिवा लाकर गद्दी पर शोभा से रखा (विठाया)। विनुत (नुति करने योग्य, श्रेष्ठ) अर्घ्य पाद्य सानन्द देकर, (उन्हें) हार, कुण्डल, वलय (कंठमाला), अंगद (कंगन), कटक (कड़ा), चारु कोटीर (किरीट) आदि सकल आभूषण तथा मातुल के दिये गये मद-गजेन्द्र जो ख्यात है (और) शत्रुंजयाख्य (शत्रुंजय नामवाला) है, आदि करि सहस्र, कमनीय वस्त्र (तथा) समस्त सुरुचिर वस्तुएँ तथा वहुभूषण दिये। (देकर) उसके वाद महनीय रत्नों को सादर दिया। ढंग से दस करोड़ स्वर्ण (मुद्राएँ) दीं। (देकर) समस्त असमान वस्तुएँ दी। देने पर (उन्हें) ग्रहणकर, हृदय में अधिक आश्चर्य के उमड़ने पर, अधिक मोद से, ॥ ७१० ॥

ना राजमिथुनंबु नतडु दीविंचें। नारंग रघुरामु डप्पुडु मरियु
नेंडपक्र भंडार मेंल्ल देंप्पिंचि। तोंडरि दीनुलकु नर्थुलकु बेदलकु
जेंलिमि नगस्त्य कौशिकु लनुवारि। किल रत्न रासु लनेकंबु लोंसगि
मोंगि वसिष्ठादि सन्मुनि जनंबुलकु। दगु तपस्वुलकु नर्थमु लोंप्प निच्चि
वंदिमागधुलकु वरदान शक्तु। लेंदुनु बोंगडंग निलुसूर लिच्चि
पेदसादलकुनु बृथ्वि देवतल। कादट बंधुमित्राश्रितावळिकि
बन्नुगा निब्भंगि बहुदान ततुलु। सन्नुत मति निच्चि सौमित्रि जूचि
"नीवुनु दानंबु नेंम्मि गाविंपु"। नावुडु ना राजनंदनुं डलरि
घटजन्मु गौशिकु गार्ग्यु शांडिल्यु। नटकु रप्पिंचि पेंक्कर्थबु लिच्चि
वीरुवारन केंल्ल विधमुलवारु। नारंग नेंव्वरे मडिगिन निच्चें ७२०

धरणीशु नानति दनबुद्धि यलर। गरमोंप्प नति महा कल्याणि यैन
या यरुंधतिकि सुयज्ञुनि सतिकि। नायतंबगु भक्ति नप्पुडु सीत
तन भूषणमु लिच्चि तन यर्थ मिच्चि।तनयिंट गल वस्तुततुलेंल्ल निच्चें;
(नप्पु डरुंधति "यकट! यिक्ष्वाकु। लिप्पाटु पडुचुंड निट्टु जूड दगुनें?

—उन्होंने उस राजमिथुन (राजदंपतियों) को आसीसा। शोभायुक्त हो रघुराम ने तब अविलंब समस्त भंडार को मंगवाया (और) क्रम से दीन, याचक, निर्धनों को (तथा) सप्रेम अगस्त्य तथा कौशिक नामक व्यक्तियों को अनेक रत्नराशियाँ दीं। उसके बाद वसिष्ठ आदि सन्मुनि जनों को, योग्य तपस्वियों को शोभा से अर्थ देकर, वंदिमागध (जनों) को अत्यधिक दान दिए ताकि वे सदा-सर्वदा वर दान शक्तियों की स्तुति करते रहें। ग़रीव जनों को, पृथ्वी देवताओं (ब्राह्मणों) को (और) अनन्तर बन्धु, मित्र, आश्रित (जन) समूह को समुचित प्रकार से इस प्रकार बहुदानततियों को सन्नुतमति से देकर, सौमित्र को देखकर कहा—'तुम भी सप्रेम दान करो।' (ऐसा) कहने पर वह राजनन्दन (लक्ष्मण) प्रसन्न हुए। घटजन्म (अगस्त्य) कौशिक, गार्ग्य, शांडिल्य को वहाँ बुलाकर, अनेक अर्थ दिये। ये और वे न कहकर सब प्रकार के लोगों को, शोभा से, जिसने जो माँगा, वह उन्हें दिया ।। ७२० ।।

धरणीश (राम) के आदेश से, अपनी बुद्धि के प्रसन्न होने पर, बड़ी शोभा से, अति-महा-कल्याणी उस अरुंधती को, (और) सुयज्ञ की सती को सिद्ध भक्ति के साथ तब सीता ने अपने आभूषण दिये। अपना अर्थ (संपत्ति) देकर, अपने घर का समस्त वस्तु-समुदाय दे दिया। (तब अरुन्धती ने वसिष्ठ से पूछा—'हाय ! इक्ष्वाकु वंशजों को इस तरह कष्ट उठाते देखते रहना उचित है ?' तव उस महामौनी ने अपनी बुद्धि से देर तक सोचकर

यनि वसिष्ठु नड्डुग नम्महामौनि। तन बुद्धि नेंतयु दलपोसि चूचि
"ये रूपमुन वोव; दिदि दैव योग। मूर कुंडुमु चूचु चुंडुद" मनियें;)७२६

श्रीरामुड् त्रिजटुनकु गोदानमु चेयुट

ना वेळ द्रिजटाख्यु डनु विप्रु डडरि। जीवन स्थितिकिनै चेनु दुन्नुचुनु
घोरंपु लेमि चे गुंदुट जेसि। पेरास दत्सति विड्डुल गोंचु
नति संभ्रमंबुन नच्चोटि करिगि। तति गोंन वनि सेयु तद्भर्त जूचि
"येल यी नागेलु हृदयंबु चिवुर। नेल यी गुद्दलि यिट वाऱ वैचि ७३०
रम्मु चेप्पेंद नेडु रामचंद्रुंडु। सम्मदंबुन नर्थिजनुलकु नेल्ल
द्रव्यतंडंबुलु दयतोड धनमु। नेंव्व रेमडिगिन निच्चु चुन्नाडु
नी कुटुंवमु चेप्पि नी पेरु चेप्पि। काकुत्स्थपति चेत गामितार्थंवु
वे वेग चनि नीवु वेडुकों" म्मनिन। ना विप्रु डूहल नंदंद निगुड
जनु देंचि या रामचंद्रु नीक्षिचि। तनरंग दीविंचि ता निट्टुलनियें
"बेदवाडनु; सुतुल् पेक्कंड्रु गलरु। लेदु द्रव्यंबुनु लेशमात्रमुनु;

देखा और कहा, 'यह दैवयोग है। किसी भी रूप से नहीं टलेगा। चुप रहो। (चुपचाप) देखते रहेंगे।') ॥ ७२६ ॥

श्रीराम का त्रिजट को दान देना

उस समय त्रिजट नामक विप्र, जीवन-स्थिति (जीविका) के लिए खेत जोतते हुए, घोर-अभाव (दारिद्र्य) से दुखी होते हुए था। अधिक आशा लिए उसकी पत्नी संतान को (साथ) लिए, अतिसंभ्रम से वहाँ गई। अधिक श्रम से काम करनेवाले पति को देखकर (यों बोली—) "क्यों इस हल को हृदय के फटने तक चलाते हैं? यह कुदाल क्यों? (इन्हें) यहाँ फेंककर, ॥ ४३० ॥

—आइए, (एक वात) कहती हूँ। आज रामचन्द्र सम्मोद के साथ समस्त अर्थिजनों (याचकों) को द्रव्यतण्ड (द्रव्यसमूह) (और) दया के साथ (सदय हो) जो व्यक्ति जो माँगे वह धन दे रहा है। अपने कुटुम्व के वारे में कहकर (तथा) अपना नाम कहकर काकुत्स्थपति (राम) से कामित अर्थ (अभीप्सित इच्छा) की आप वेवेग (शीघ्रता से) जाकर याचना कर लीजिए।" (ऐसा) कहने पर वह विप्र (अपनी) कल्पनाओं के इधर-उधर वढ़ने पर (अत्यधिक सुख की कल्पना कर) आया (और) उस रामचन्द्र को देखकर, श्रेष्ठ विधि से आसीसकर, स्वयं यों वोला—'मैं निर्धन हूँ, कई सुत हैं, लेशमात्र भी द्रव्य नहीं है। हे नरनाथ! तुम्हें मेरी रक्षा

ननु नीवु रक्षिप नरनाथ! वलयु"। ननिन नारघुरामु डा विप्रु जूचि
"यावुल मंद लय्या! युन्न विपुड्डु । नीवु नीचे मुष्टि निज शक्ति मेरसि
येंदाक नेसिति वीलोनि पसुल । मंद नीकें" यटन्न मदि संतसिल्लि
यरचि दोवति मोलनंट बिगिंचि । कुरुचैन सिग मुडिगोनि यौडु गरचि
७४०

नरमुलु ब्राणमुल् नरि नंट बट्टि । करमुन बाषाण कलितुडै यपुड्डु
श्रीरमाधवु नेंचि श्रीरामु नेंचि । बिर बिर दन मुष्टि बेट्टुगा द्रिप्पि
युरमुन जंदेंबु लुरूलतलूग । सरयुवु दाक विच्चलविडि नेसि
'ब्रदुकु जीवम' ब्राह्मणुं डट्टि । मोदवुलु गोन्न रामुडु चोद्यमंदि
"यनघ! नी सत्वमे नरयुट किट्लु। पनिचिति" ननि चाल ब्रथिचि यलरि
मरि वेयु गोवुल महित वस्त्रमुल । नरलेक यिच्चेद नडुगुमी" यनिन
जन्नंवुनकु नीवु चालिन यर्थ । मेन्न नेक्कुडुगानु नि" म्मंचु नडुग
दनियंग निच्चिन ददयु नलरि। तन पत्नि तो गूड धनमुलु गोनुचु
संतोषमुन नट सनें द्रिजटुंडु । नंतट रघुरामु डनुराग मेसग

करनी चाहिए ।' (ऐसा) कहने पर उस रघुराम ने उस विप्र को देखकर (कहा—) 'हे आर्य ! अब गोसमूह (बचा) है । तुम अपने हाथ की मुट्ठी की निजशक्ति को प्रकाशित (दिखा) कर, जहाँ तक (पत्थर) डाल (फेंक) सकोगे, वहाँ तक का गो समूह तुम्हारा है ।' (ऐसा) कहने पर मन में प्रसन्न हो, चीखकर, धोती को कमर में कसकर, छोटे से बालों की चुटिया बाँधकर, ओंठ दबाकर, ।। ७४० ।।

—नसों (और) प्राणों को कसकर, कर में पाषाण (पत्थर) से शोभित हो, तब श्रीरमाधव (विष्णु) का स्मरणकर, श्रीराम का स्मरणकर, अपनी मुट्ठी को दृढ़ता से, शीघ्रता से घुमाकर, छाती पर जनेऊ के हिलते रहने पर, विशृंखलता से सरयू (नदी) तक (पत्थर) फेंका । 'चलो, जी गए' कहते हुए ब्राह्मण ने उस क्षेत्र की सभी गाएँ ले लीं । राम आश्चर्य चकित हो (बोले—) 'हे अनघ ! तुम्हारे सत्त्व को जानने के लिए मैंने ऐसा आदेश दिया ।' (ऐसा) कहकर (उनकी) प्रार्थना की और प्रसन्न हो (कहा—) 'और एक हजार गायें (तथा) महित वस्त्र दूंगा, बिना संकोच के माँगो । (ऐसा) कहने पर ब्राह्मण ने (यों) माँगा—'एक यज्ञ के लिए पर्याप्त अर्थ (धन), सोचकर, दे दो ।' (ऐसा) माँगने पर (उन्हें) तृप्त कर दिया । ऐसा देने पर अधिक हर्षित हो, अपनी पत्नी के साथ, (समस्त) धन लेकर, प्रसन्नता से तब त्रिजट चला गया । तब रघुराम अनुराग के अधिक होने

गृतकृत्युडै वच्चि गृह देवतलकु । जतुरुडै मुनुलकु सद्भक्ति म्रोक्क
नी रीति रघुरामु डॆल्ल वस्तुवुलु। गोरिन वारिकि गोरिन ट्लॊसगि
७५१

श्रीरामुडु सीता लक्ष्मणुल तो दशरथु दर्शिप नेगुट

मुनु जनकुनि यज्ञमुन वरुणुंडु । तन कॊसंगिन तनु त्राण कोदंड
घन तर तूणीर खड्गायुधमुलु । दन कुलगुरुनिंट दाचुट जेसि
यनुजुचे दॆप्पिचि यवि धरियिंचि । जनकजा लक्ष्मण सहितुडै वॆडलि
राजु नॊद्दकु नेग राज चिह्नंबु । लोज गानक पौरु लुल्लंबु लॆरिय
राज वीथुल नुंडि रच्चल नुंडि । राजितोन्नत सौधराजि पै नुंडि
पुट्टिन शोकाग्नि वॊगुलुचु गॊंद । ऱिट्टि दुर्दशकर्हुडे रामु"डनुचु
"नॆंदु रामुडु वोयॆ निक नंदऱमु । नंदॆ पोदमु गाक!"यनि कॊंदऱनुचु
गॊंद "ऱी राजन्य कुंजरु वॆनुक । मंदिरंबुलु डिंचि मनमॆल्ल जनग
नेपारि पॆंपॆल्ल नॆडलि पाडैन । यौ पट्टणमु गैक येलुगा" कनुचु ७६०

वरिकिंचि कॊंदरु प्रज"ली पुरंबु । पौरिवॊरि नॆलुगुलु बुलुलु सिंगमुलु
नक्कलु वऱळुलु नलि विशाचमुलु। बॆक्कु भूतंबुलु ब्रेत संघमुलु

पर, कृतकृत्य हो (सब कामों से निपटकर) आकर, गृह देवताओं क
(तथा) चतुर हो सद्भक्ति से मुनियों को प्रणाम किया। इस प्रका
रघुराम ने जैसा चाहनेवालों को वैसी समस्त वस्तुएँ दी ।॥ ७५१ ॥

श्रीराम का सीता-लक्ष्मण के साथ दशरथ के दर्शन के लिए जाना

पूर्व में जनक के यज्ञ में वरुण के अपने को दिए तनुत्राण (कवच), कोदंड
धनतर तूणीर, खड्ग, आयुधों को, (राम ने) अपने कुलगुरु के घर में रख
था। (उन्हें) अनुज के द्वारा मँगवाकर, उन्हें धारणकर, जनकजा (और
लक्ष्मण के साथ निकल पड़े। वे राजा के पास जा रहे थे। (उनके
पास) राजचिह्नों को, क्रम से, न देखकर पुरजनों के हृदय तप्त हुए
राजवीथियों में, चौपालों में, (वि) राजित-उन्नत-सौध-राजि (समूह)
स्थित (पुरजन) (मन में) उत्पन्न शोकाग्नि से व्याकुल होते हुए इस प्रका
कहने लगे—'इस प्रकार की (दु:) दशा के (क्या) राम योग्य हैं? 'जहाँ
राम जाएँगे, अब हम सब वहीं जाएँगे। इस राजन्य-कुंजर के पीछे
महलों को छोड़ हम सबके जाने पर, अपनी समस्त शोभा से निरस्त होकर
श्मशान बने इस नगर पर कैकेयी को शासनकर लेने दो।॥ ७६० ॥

बायनि यडवि यै, पति रामु डुन्न। या यरण्य में पुरंबगु" नंचु बलुक
ग्रंदय्ये बहुविधाक्रंदनरवमु । लंदंद यवि विंचु नधिक धैर्यमुन
जगतीशु नगरिकि जनुदेंचि मरियु। दग सुमंत्रुनि गांचि धरणीश सुतुडु
"विनिपिंपु माराक विभुनितो" ननिन। जनि शोकमुन जाल संतापमंदु
राजेंद्रु गनि "देव! राम लक्ष्मणुलु । बूजित चरितयौ भूतनूभव यु
वच्चिना" रनि चेप्प वडि मूर्छ वोयि। चेंच्चेर देंलिवोंदि चेंदिन वगल
नल्लन गद्दिय ना सीनुडगुचु । नुल्लंबुलो धैर्य मोंक्किंत निलिपि
"वत्तुरु गाक ना वनित लंदरुनु । नित्तरि रघुरामु नेंलमितो जूड" ७७०

ननुचु डग्गुत्तिक नल्लन बलुक । विनि या सुमंत्रुंडु विनयंबु तोड
नंतः पुरंबुन करिगि या राजु । नितुल मुन्नूट येबंड्र देंच्चि
मरि पोयि या रामु महनीय तेजु। देंरगोंप्प दोड्कोंनि तेर नीक्षिचि
यालिंगनमु सेय नर्थितो लेचि । या लोन रालेक यवशुडै पडियें

देख (सोच-विचार) कर कुछ लोग (यों बोले)—'यह पुर क्रम से रीछ, बाघ, सिंह, लोमड़ी, बड़े शृगाल, पिशाच, कई भूत, प्रेतसंघ (समाज) (आदि) के (कारण) निरन्तर अटवि बनेगा। पति राम जहाँ है, वह अरण्य ही पुर (नगर) होगा।' ऐसा (लोगों के) कहते समय बहुविध-आक्रन्दन-रव मुखरित हुआ। यहाँ-वहाँ (जगह-जगह) उन्हें (उपरोक्त वाक्यों को) सुनते हुए, अधिक धैर्य के साथ जगतीश (राजा दशरथ) की नगरी (महल) में आकर, और उचित रूप से सुमन्त्र को देखकर, धरणीश सुत (राम) बोले—'हमारे आगमन की बात विभु को सुनाओ।' ऐसा कहने पर, (सुमन्त्र) जाकर शोक के कारण अधिक संतप्त राजेन्द्र को देख (बोले)—'हे देव ! राम लक्ष्मण (और) पूजित चरित्र (पूज्यशील) वाली भूतनूभव (सीता) भी आए हैं।' ऐसा कहने पर, झट मूर्च्छित होकर, झट होश में आकर, दुख को प्राप्त हो, धीरे से गद्दी पर आसीन होते हुए, चित्त में थोड़ा धैर्य धारणकर, गद्गद् स्वर से, धीरे से (यों) बोले—'इस अवसर पर रघुराम को प्रेम से देखने के लिए मेरी सभी स्त्रियाँ आ जाएँ।' ॥ ७७० ॥

(यह) सुनकर वह सुमन्त्र, सविनय, अन्तःपुर में जाकर, उस राजा (दशरथ) की साढ़े तीन सौ स्त्रियों को (लिवा) लाकर, फिर जाकर, उस महनीय तेज राम को, समुचित ढंग से लाए। लाने पर, (उन्हें) देखकर, आलिंगन करने के लिए, अभिलाषा के साथ उठकर, उतने में न आ सके, अवश हो (राजा) गिर पड़े। तब वह श्रीराम उस राजा को पकड़कर अधिक

नंत ना श्रीरामु डा राजु वट्टि । येंतयु प्रेम चे नेंसगंग दिगिचि
तोंडल पै निडि कोंनि दु:खिप गोंत । वडिकि जैतन्यंबु वच्चि कूर्चुंडि
तनु जूचुचुन्न या तंड्रि नीक्षिचि । जननुतुंडगु रामचंद्रुंडु वलिकें:
"ननघात्म! नीदु सत्यमु निलप नेनु। वनभूमुलकु वोवुवाड नौ टेंरिगि
यी साध्वि जनक महीपाल तनय। यी सुमित्रापुत्त्रु डिद्दरु मिगुल
वलदनि ये नेंत वारिंप विनक । नलरि तामुनु वैनमै युन्न वारु
७८०

गान वीरलु नेनु गानल केग । नानति" म्मनुटयु नानरेश्वरुडु
"मदि दूलि कैकेयि माटकु निन्नु । नदयत वोंम्मंटि नकट! कानलकु;
जेकोंनि ना माट सेयंग नेल । नी किट्लु नंदन! नीवु नीयंत
जेंन्नोंद राज्यंबु सेयुदु गाक" । यन्न ना माटकु हस्तमुल् मोंगिचि
"तलपोय गुरुडवु, धारुणीपतिवि। येंलमि मै रक्षिप निष्टवंधुडवु;
अटुगान नी वाक्य मर्थि तो जेय । निट नाकु नानति यिच्चि नन्ननुपु
सत्यसंधुंडवै जनलोकनाथ ! । नित्यंवुगा नेलु निखिल लोकमुलु"
ननिन "दीर्घायुवु नत्यंत शुभमु । विनुत यशंबुनु विमल विक्रममु

प्रेम के उमड़ने पर, राजा को जाँघों पर (गोद में) रखकर, दुखी हुए। थोड़ी देर में चैतन्य युक्त हो, (राजा) (उठ) वैठे। अपने को (एकटक) देखनेवाले पिता को देखकर, जननुत रामचन्द्र (यों) वोले—'हे अनघात्म ! तुम्हारे सत्य (वचन) की रक्षा के लिए, मैं वनभूमियों में जाने के लिए तैयार हुआ। यह जानकर, यह साध्वी जनक-महीपाल-तनया (सीता), (और) यह सुमित्रा-पुत्र (लक्ष्मण) ये दोनों, मेरे अधिक मना करने पर भी, न मानकर, स्वय भी, आनन्द के साथ, यात्रा के लिए तैयार हुए हैं ॥ ७८० ॥

—अत: इनके और मेरे काननों में जाने के लिए आनति (अनुमति) दीजिए।' (ऐसा) कहने पर, उस नरेश्वर (राजा) ने कहा—'मति भ्रष्ठ हो, कैकेयी की वात पर, तुम्हें निर्दयता से हाय ! कानन जाने को कहा। हे नन्दन! सप्रयत्न तुम्हें मेरी वात का पालन क्यों करना चाहिए ? तुम स्वयं शोभा के साथ राज्य करो।' (ऐसा) कहने पर, उस वात पर हाथ जोड़, (राम) वोले—'विचारने पर तुम गुरु हो, धारुणीपति हो। प्रेम से रक्षा करनेवाले इष्ट-बन्धु हो। अत: तुम्हारे वाक्य का हृदय से (पालन) करने के लिए अव मुझे आनति देकर भेज दो। हे जनलोक-नाथ ! सत्य सन्ध (सत्यनिष्ठ) होकर, सदा निखिल लोकों पर शासन करो।' (ऐसा)

नकळंक धर्मबु नमरंग बोंदु । मोक बाधयुनु लेक युंडु मो पुत्त्र!
यारंग नन्नुनु नलयु मी तल्लि । नी रात्रि यूरार्चि येल्लि पोम्मनिन
७९०

"नेडेमि? येल्लेमि? निलुवंग दगदु । नेडे पोयेद; नन्नु नेम्मि वीड्कोलुपु,
नरनाथ! नी यीगि ना तम्मुडैन । भरतुडी वसुमति बालिप निम्मु
वगवु नी किटमीद वल" दन्न रामु। तेगुवकु दशरथाधिपुडु शोकिंचि
"नी वंटी सत्पुत्त्रु निष्ठुराटवुल । केवेंट बोम्मंदु? नेट्लु नोराडु?
गैकेयि मायल गडु मोसमाये । गा, कटकट!" यनि करुण दानेड्व
नंतःपुरांगन लंदरु नडल । नंत गौसल्ययु ना सुमित्त्रयुनु
वंतल वालुचु वगल दूलुचुनु । वितगा विभु जेरि विलपिंचु चुंड,
नपुडु सुमंत्रु डय्यतिवल येड्पु । नृपु शोकमुनु जूचि निट्टूर्पु वुच्चि
घनतरशोक संकलितुडै कैक । गनुगोनि पलिके नुत्कट कोपुडगुचु
"नी यत्नमुन गदा नृपुनकु माकु । नी यवस्थलु वच्चे; नेमन गलदु?
८००

कहने पर (राजा ने कहा)—'हे पुत्र ! दीर्घायु, अत्यन्त शुभ, विनुत यश, विमल विक्रम, अकलंक धर्म को उचित रूप से प्राप्त करो । बिना एक कष्ट के रहो । मुझे और व्यथित होनेवाली तुम्हारी माता को आज रात आश्वस्त कर, कल जाओ ।' (ऐसा) कहने पर, ॥ ७९० ॥

—'क्या आज ? क्या कल ? रुकना उचित नहीं है । आज ही जाऊँगा । मुझे प्रेम के साथ बिदा कर दो । हे नरनाथ ! तुम्हारे त्याग के कारण मेरे अनुज भरत को इस वसुमति (पृथ्वी) पर शासन करने दीजिए । अब आगे दुखी न होना ।' (ऐसा) कहने पर राम के साहस पर दशरथाधिप (राजा दशरथ) दुखी हुए (और) बोले—'तुम जैसे सत्पुत्र को निष्ठुर (भयंकर) अटवियों में जाने के लिए कैसे कहूँ ? मुँह कैसे आयेगा ? हाय, कैकेयी की माया के कारण बड़ा धोखा हुआ ।' यह कहकर करुणा से स्वयं रोने लगे । तब अन्तःपुर की समस्त स्त्रियाँ व्याकुल हुईं । तब कौसल्या और सुमित्रा सन्ताप से तप्त होती हुई, दुःख से दुखी होती हुई, विभु के निकट जा विलाप करने लगीं । तब सुमन्त्र उन स्त्रियों के विलाप और नृप के शोक को देख, लंबी साँस छोड़, घनतर (अधिक) शोक-संकलित होकर, उत्कट क्रोध से कैकेयी को देख (यों) बोला—'तुम्हारे यत्न के कारण ही तो नृप को (और) हमें ये दुरवस्थाएँ आईं । तुम्हें क्या कहूँ ? ॥ ८०० ॥

पतिहितं बेमियु वरिकिंप वेट्टि । सतिवैति? वकट! राक्षसिवि नी वरय!
नी तल्लि यट्लने नीवु प्राणेश । घातिनि; वदि येट्टिगति यन्न विनुमु
सकल भाषलु नीदु जनकु डेरुंगु । नोक नाडु मी तल्लियुनु दानु शय्य
नोप्पुगा शयनिंचि योक कीटवार्त । लेरिगि यातडु नव्व नेद संशयिंचि
''यिदि येल नव्विति? वेरिगिंपु'' मनिन।''नदि सेप्पिननु प्राणहानि यौ निप्पु''
डनवुडु ''नी प्राण हानि के वेरव;। विनुपिंपु'' मनिन विवेकिंचुनतनि
नदिये तप्पनि वेळ्ळनडचे मीतल्लि। यदिगान ना जंत कात्मजवैन
नीकेल कलुगु मानित पति हितमु। ओ कैक! यनिन ना युविद येंतयुनु
दलवांचि कोंडोक तडवु सिंतिंचि। पलिके ना दशरथपति जूचि यपुडु
''मुन्नु मी कुलमुन मुख्युडै सगरु। डुन्नत कीर्ति यै युर्वि नेलुचुनु ८१०
नसमंजसुंडनु नग्रनंदनुनि । गोसरक पुरिवेळ्ळ गोट्टगा लेदे?
रामचंद्रुनि नी वरण्य भूमुलकु । दामसिपक पंपु; तप्पेमि दीन?

'पति के हित के वारे में तनिक भी नहीं विचारती हो । तुम कैसी सती हो ? हाय, सोचे तो तुम राक्षसी हो । अपनी माता के समान ही तुम प्राणेश-घातिनी (हत्यारिन) हो । (पूछोगी कि) वह हालत कैसी है (तो) सुनो । तुम्हारे पिता सभी भाषाओं को जानते थे । एक दिन तुम्हारी माता और वे शय्या पर सुन्दरता से लेटे हुए थे । (तब) एक कीड़े की वातचीत जानकर वे हँस पड़े । मन में शंकालु हो, (तुम्हारी माता ने) पूछा—'यह क्यों हँस पड़े ? (कारण) बतलाओ ।' (ऐसा) कहने पर, (वे वोले)—'वह बताऊँ तो अब मेरी प्राणहानि होगी ।' ऐसा कहने पर (उसने) कहा—'तुम्हारी प्राणहानि से मैं नहीं डरती । सुनाओ ।' सोच-विचार करनेवाले उसे, उसी दोष के कारण, तुम्हारी माता ने निर्वासित कर दिया । यह बात ऐसी है । उस धूर्त (स्त्री) की आत्मजा हो तुम । हे कैकेयी ! तुम्हें अपने पति के हित का विचार क्यों होगा ?' (ऐसा) कहने पर वह स्त्री (कैकेयी) सिर झुकाकर, थोड़ी देर चिन्ताकर, उस दशरथपति को देख तब (यों) वोली—'पूर्व में आपके वंश के प्रधान सगर ने उन्नत कीर्ति युक्त हो, पृथ्वी पर शासन करते हुए, ॥ ८१० ॥

—असमंजस नामक (अपने) अग्रनन्दन (ज्येष्ठपुत्र) को, संकोच न कर, नगर से नहीं भगाया था (निर्वासित नहीं किया था) ? तुम विलंब किए विना रामचन्द्र को अरण्यभूमियों में भेज दो । इसमें दोष ही क्या है ?'

नन विनि दशरथुं डधिक शोकाब्धि। मुनिगि प्रत्युत्तरंबुन कोपकुन्न
नपुडु सिद्धार्थकुंडनु मंत्रिवरुडु। कपटात्मुरालैन कैक किट्लनियें
"नसमंजसुंडु दर्पातिरेकमुन। नेंसग बट्टणमुलो नेल्ल बालुरनु
सरिपट्टि कट्टि या सरयुवुलोन। दगवु सिंतिंचि या तनयु बोनडचें
सगरुनितो जेप्प जनहितंबुनकु। दगवु सिंतिंचि या तनयु बोनडचें;
नी रामुनं दोक्क येंगैन गलदें। चारुवर्तनगण्य सौजन्युडितडु"
नावुडु "सत्यंबु ना तोड बलिकें। गावुन दंड्रिवाक्यमु सेसि सुकृति
यगु गाक! रघुरामु" डनवुडु गैक। तेंगुवकु दशरथाधिपुडु शोकिंचि
८२०

चाल संतापिंचि जडि गोन्न वगल। दूलुचु ना सुमंत्रुनि जूचि पलिकें
"धनमुल मणुल गोधनमुल बंधु। जनमुल नवरोधजनमुल हितुल
विजय चिह्नंबुल विलसिल्लुचुन्न। गजमुल रथमुल घनतुरंगमुल
निजमुगा वेटकु नेर्चु धीवरुल। ब्रजल मंत्रुल रामभद्रुनि वेनुक
वेंडलिंपु; मी रित्त वीडु गैकेयि। कोंडुकु बट्टमु गट्टु कोनि येलुगाक!"
यनि यिट्लु दशरथुं डाडुवाक्यमुलु। विनि कैक गोपिंचि विभु दूर
बलिकें,

(ऐसा) कहने पर, सुनकर, दशरथ अधिक शोक समुद्र में मग्न हो, प्रत्युत्तर नहीं दे सके। तब सिद्धार्थक नामक मन्त्रिवर, कपटात्मा कैकेयी से (यों) बोले—'असमंजस दर्प के अतिरेक से विजृम्भित होकर, पट्टण के सभी बालकों को बाँधकर, उस सरयू (नदी) में क्रम से डालता रहा। (तो) समस्त नागरिक सगर से बोले (शिकायत की)। जनहित के लिए, धर्म का विचार कर (सगर ने) उस तनय को निर्वासित कर दिया। इस राम में (क्या) एक भी दोष है? यह (तो) चारु वर्तन (शीलवाले), गण्य-सौजन्य (वाले) हैं।' ऐसा कहने पर कैकेयी बोली—'(वे) मुझसे सत्य बोले। अतः पिता के वाक्य का पालन करके रघुराम सुकृति (पुण्य-शाली) बने।' ऐसा कहने पर, कैकेयी के साहस पर दशरथाधिप दुखी होकर, ॥ ८२० ॥

—बहुत संतप्त हो, झड़ी लगी हुई (अनवरत की) व्यथाओं से लड़खड़ाते हुए, उस सुमन्त्र को देखकर बोले—'धन, मणियाँ, गोधन, वन्धुजन, अवरोध (अन्तःपुर)-जन, हितू, विजयचिह्नों से विलसित गज, रथ, घन (श्रेष्ठ) तुरंग (घोड़े), सचमुच आखेट में निपुण धीवर (बुद्धिमान), प्रजा (और) मंत्रियों को उस रामभद्र के पीछे भेजो। इस शून्य देश (नगर) पर कैकेयी का पुत्र राजतिलक कर शासन कर लेगा।' ऐसा कहनेवाले दशरथ

"राजपुंगव! नीवु रामचंद्रुनकु । राजिल्लु नी सर्वराज्य संपदलु
निच्चि पाडै युन्न यी पुरंवेल । यिच्चेंदु भरतुन? की पल्कु लेल?
सौमित्रियुनु दानु जनक नंदनयु । रामुडु नारचीरलु प्रीति गट्टि
येनु जूचुचुनुंड नेंल्ल भोगमुलु । मानि दुर्गमुल ग्रुम्मर वोवकुन्न ८३०
बौंसगदु नी यीगि; बोंकु नी पलुकु। वसुधेश! नी यिच्चु वरमु ले नोंल्ल
दप्पिति वी" वन्न, दशरथाधीशु । डप्पुडु मूर्छिलिल यवनि पै ब्रेळ्ळे
धरणि पै नट्लुन्न तंड्रिनि जूचि । परिताप मंदुचु वलिकें राघवुडु
"एलम्म! कैकेयि! यिम्महाराजु । दूलि पो वलुमारु दूल नाडेदवु?
गुरुडुनु राजुनु गूरिमि तंड्रि । परम दैवंबिट्टी पति नन्नु वनुप
विषमैन मिगुदु, विपुलाग्नि नैन । विषधि नैननु जोंत्तु वेड्कतो नेनु
वनमुल मुनुलतो वर्तिपुमन्न । ननुमतिचुट नाकु नदि यैंत पेंद्द"
यन विनि दशरथु डावाक्यमुलकु। मनमुन गड्डूलि मरि कैक जूचि
"विनु मेनु राज्यंबु विडिचि यीरामु। वेंनुक बोयेदनु; नी विभवंबु तोड
भरतु नयोध्यकु वट्टंबु गट्टि । धरणि येलुदु गाक! तगवेल?" यनग
८४०

के वाक्य सुनकर, कैकेयी रुष्ट होकर, विभु को कोसने लगी—'हे राजपुंगव! तुम रामचन्द्र को अपने विराजमान समस्त राज्य-सम्पदाएँ देकर, उजड़ा हुआ यह नगर भरत को क्यों दोगे ? ये बातें क्यों ? सौमित्र, स्वयं जनक-नन्दिनी (सीता) (और) राम वल्कल वसन प्रेम से पहनकर, मेरे देखते हुए (मेरी आँखों के सामने), समस्त भोगों को छोड़कर, अगर दुर्गों (वनों) में घूमने नहीं जाएँगे, ॥ ८३० ॥

—तो तुम्हारे त्याग का अर्थ नहीं होगा। तुम्हारे वचन झूठे होंगे। हे वसुधेश! तुम्हारे दिए वर मुझे नहीं चाहिये। तुमने वचन-भंग किया है।' (ऐसा) कहने पर तव दशरथाधीश मूर्छित हो, अवनि (भूमि) पर गिर पड़े। धरणी पर ऐसे (पड़े) हुए पिता को देख, परितप्त होते हुए राघव बोले—'क्यों माता ! कैकेयी ! बार-बार इस महाराज की क्यों निन्दा करती हो (जिससे वे) लड़खड़ा जाएँ। गुरु, राजा, प्रिय पिता, परम देव हो ऐसे पति मुझे आज्ञा दें तो (मैं) विष भी निगल जाऊँगा, विपुल अग्नि में हो या विपधि (समुद्र) में प्रेम से घुस जाऊँगा। (तब) वनों में (जा), मुनियों के साथ रह आने की यह आज्ञा (मेरे लिए) कौन बड़ी बात है ?' ऐसा कहना सुनकर, दशरथ उन वाक्यों के लिए मन में अत्यधिक व्यथित हो फिर कैकेयी को देख बोले—'सुनो, मैं राज्य को छोड़ राम के पीछे

ना माटलकु रामु डधिपुतो ननियें। "भूमीश! निर्जनभूमि यै परगु
नव्वनंबुनु नाकु नर्हमै युंडु। नेव्वरु ना तोड नेटि केतेर ?
नार चीरलु देंच्चि ना किडु; वानि। नारंग धरियिंचि यडवुल लोन
पदुनालुगेंड्लुनु बरग नी याज्ञ। वदलक वर्तिचु वाडनु नेनु; ८४४

सीतारामुलु नारचीरलु धरिंचुट

दे नार चीरलु देवि! ना" कनिन। नानाति निर्लज्जयै तानें यपुडु
मुदमंदि मदिलोन मोंगमोट लेक। मदि चलिपक सभा मध्यंबु नंदु
नार चीरलु देंच्चि "नरनाथ पुत्त्र!। गारवंबुन नीवु गट्टुकों" म्मनुचु
बेरेंलुंगुन बल्क ब्रियमुतो रामु। डा राजसभयुनु ना राजु नडल
ना तल्लिचे नुन्न यवि पुच्चु कोंनुचु। भातिगा मुन्नुन्न पटमुलु विडिचि
यारंग धरियिंचें; नट लक्ष्मणुंडु। वारक या रामु वलेंनें धरिंचें८५०
सीतकु ना नार चीरलु रेंडु। चेतिकिच्चिन गोंनि चित्तंबुलोन
गलगि रामुनि जूचि "कांतारवासु। लेंलमिमै नी चीर लेंट्लु कट्टुदुरों

जाऊँगा। अपने वैभव के साथ भरत को अयोध्या का राजा बनाकर धरणी पर शासन कर लो। झगड़ा क्यों ?' (ऐसा) कहने पर ॥ ८४० ॥
—उन बातों पर राम अधिप (राजा) से बोले—'भूमीश ! निर्जन भूमि हो विलसित वह वन मेरे लिए योग्य रहेगा। कोई मेरे साथ क्यों आये ? वल्कल, वसन लाकर मुझे दीजिए। उन्हें शोभा से धारणकर, जंगलों में चौदह वर्ष समुचित रूप से, तुम्हारी आज्ञा का, निष्ठा से मैं पालन करूँगा। ॥ ८४४ ॥

सीता-राम का वल्कल पहनना

हे देवी (कैकेयी)! मेरे लिए वल्कल लाओ।' कहने पर वह स्त्री (कैकेयी) निर्लज्ज हो, मुदित हो, मन में (किसी) संकोच के बिना, मन में विचलित न होकर, सभा मध्य में तब स्वयं वल्कल लाकर उच्चस्वर से बोली—'हे नरनाथ-पुत्र (राजकुमार) ! गौरव के साथ तुम पहन लो।' उस राजसभा के (और) राजा के विकल होने पर, राम ने प्रेम से, उस माता के हाथ से उन्हें ग्रहण कर, ढंग से पूर्व के वस्त्रों को छोड़ शोभा से (वल्कल) पहन लिये। तब लक्ष्मण ने भी राम के समान ही (उन्हें) पहन लिया ॥ ८५० ॥

सीता को वल्कल की दो साड़ियाँ देने पर, चित्त में व्याकुल होकर, राम कोदेख (सीता यों बोली)—'कान्तार-वासी (वनवासी) मुनि प्रेम से इन

मुनु" लंचु नॊक्कटि मूपु पै वैचि । तनरार नॊक्कटि तनकेल दाल्चि
कट्टनेरक युन्न गनि रामु डतिव । यट्टि चंदमु गांचि या पुव्वुबोणि
घन नितंबमुन बॊंकमु मीर गट्ट । गनि राजसतुलु राघवुनि वीक्षिंचि
"नारचीरलु गट्टि नरनाथपुत्त्र! । यी राजवर पुत्त्रि नी सीत निट्लु
दारुणगति मीरि तापसि बोलॆ । घोराटविकि नीवु गॊनि पोव वलदु
मा माट मन्निंचि मा यॊद्द नुनिचि । सौमित्रियुनु नीवु जनुडु कानलकु"
८५८

वसिष्ठुडु कैक तो गठिनोक्तुलाडुट

ननग वसिष्ठुंडु नलुकतो गैक । गनुगॊनि "कुलनाशकारिणि वीवु
भूपालु गडु मोस पुच्चिति कान; । नी पाप मरयंग नॆंदुनु गलदॆ? ८६०
राजपत्नुल यॊद्द रघुरामुनाज्ञ । नी जनकज नुंडनि; म्मट्लु गाक
वल दन नेल? यी वैदेहि सनग । गलय बौरुल तोड गाननंबुलकु
नेमुनु जनुवार; मिंतिये कादु । रामचंद्रुनि गोल्चि रमणीय लील
भरत शत्रुघ्नुलु बलसि वच्चॆदरु । परिकिंप नीव यी पाडूर नुंडु

वस्त्रों को (न जाने) किस प्रकार पहनते होंगे ?' ऐसा कहती हुई उन्होंने एक (साड़ी) को कंधे पर डाल लिया और एक को शोभा से हाथ में पकड़ लिया। (वल्कल वस्त्र) पहनना न जानकर खड़ी उस स्त्री (सीता) के विधान को राम ने देखा। (देखकर) उस पुष्पमनोज्ञा नारी के घन नितम्बों पर (वल्कल) श्रेष्ठ रूप से पहना दिया। तब राजपत्नियाँ राघव को देख बोलीं—'वल्कल वसन पहनाकर हे नरनाथ-पुत्र ! राजश्रेष्ठ की पुत्री इस सीता को इस प्रकार निष्ठुरता से तपस्विनी के समान भयंकर वनों में तुम मत ले जाओ। हमारी बात मानकर हमारे पास रख छोड़ो (और) सौमित्र और तुम जंगलों में जाओ।' ॥ ८५८ ॥

वसिष्ठ का कैकेयी को खरी-खोटी सुनाना

(ऐसा राजपत्नियों के) कहने पर, वसिष्ठ ने क्रोध से कैकेयी को देखकर (कहा)—'तुम कुल के नाश के कारण हो। (तुम ने) राजा को अधिक धोखा दिया है। अतः (ऐसा) तुम्हारा (किया) पाप विचारकर देखने पर भी और कहीं है ? (नहीं है।) ॥ ८६० ॥

रघुराम की आज्ञा के अनुसार इस जनकजा को राजपत्नियों के पास रहने दो। ऐसा न कर, अस्वीकार क्यों करती हो ? अगर यह वैदेही (जंगलों में) जायेगी तो सभी पुरजनों के साथ हम भी काननों में जायेंगे। यही नहीं, रामचन्द्र की सेवा करते हुए, शोभा से, भरत (और) शत्रुघ्न (भी)

"पोलंग रामुंडु पुण्य शीलुंडु । लील नुन्नदि यूरु, लेनिदि पाडु'
पति निट्टु वंचिचि पापंबु दलचि । यति लोभमुन रामु नडवुल कनिचि
भरतु नयोध्यकु बट्टंबु गट्टि । चिरलील राज्यंबु सेय जूचेदवु
पतियाज्ञ दप्पडु भरतुंडु तंड्रि । प्रति यनि या रामभद्रुनि जूचु
नी माट विनि धर्म निष्ठ बोविडिचि। रामु नडंचि यी राज्यंबु गोनुने?
तल पोसि चूडग दशरथेंद्रुनकु । बोलुपार नतडु दा बुट्टिनट्लैन ८७०

नी तप्पु नी मीद नेरिगिनंतटने । मातगा दलचुने मदिलोन निन्नु?
गरमर्थि नडवि राघवुडु वर्तिप । भरतु डी साम्राज्यभार मेट्लेलु?
नेरुगवु भरतुनि हृदय मेमियुनु । मरि यी तेरगु विन्न मंडु नी मीद;
नेव्वरिकै नीकु नी निष्ठुरंबु । लिव्वेल्ल भरतुन किय्यकोलगुने ?
कावुन निदि मेलुगा नेन्न वलदु । नी; वदियुनु गाक निष्ठुर वृत्ति
श्रीरामुनकुनु नी सीतकु नार । चीर लिच्चुटकु नी चेतु लेट्लाडे?

आयेंगे। सोच समझकर, तुम्हीं इस उजड़े नगर में रहो। पुण्य शीलवाले राम शोभा से जहाँ रहें, वही नगर है, जहाँ नहीं हैं, वह उजाड़ है। इस प्रकार पति को धोखा देकर, पाप की बात सोचकर, अति लोभवश राम को जंगलों में भेजकर, भरत का अयोध्या का राजतिलक कर, चिरसुख से राज करने की (बात) सोच रही हो। पति (राजा) की आज्ञा को भरत नहीं टालेगा। वह रामभद्र को पितृतुल्य मानता है। तुम्हारी बात सुन (मान) कर, धर्मनिष्ठा को तजकर, राम का दमन कर क्या वह (भरत) इस राज्य को ग्रहण करेगा? सोच विचारकर देखें, यदि सुन्दरता से वह दशरथ का आत्मजात है तो, ॥ ८७० ॥

—तुम्हारे (किए) दोष को तुम्हारे मुख से जान लेते ही, क्या वह हृदय से तुम्हें माता मानेगा? (नहीं मानेगा)। राम वन में बड़े प्रेम से विहार करते रहें तो भरत इस साम्राज्यभार को कैसे वहन करेगा? (तुम) भरत के हृदय को बिलकुल नहीं समझतीं। अगर वह इस विधान को सुनेगा तो तुम पर भड़क उठेगा। जिसके लिए तुम ये सब निष्ठुर (कार्य) कर रही हो, उसभरत को ये सब स्वीकार्य होंगे? (नहीं) अतः तुम इसे शुभ(प्रद) मत मानो। यही नहीं, निष्ठुरता से श्रीराम और इस सीता को वल्कल वस्त्र देने के लिए तुम्हारे हाथ (आगे) कैसे आए? वल्कल वस्त्रों को तज, नव-रत्नखचित-चारु (सुन्दर)-भूषण, सरस (समुचित) चीनांवर(रेशमी कपड़े) सुन्दरता से धारणकर, जानकी अपनी परिचारिकाओं की सेवाएँ ग्रहण करती हुई जावे।' (ऐसा) कहते हुए, उस संयमीश्वर के विनुत (प्रशंस-

नार चीरलु मानि नवरत्न खचित। चारुभूपणमुलु सरसंबुलैन
चीनांवरंबुलु सॅलुवार बूनि । जानकि दन परिचारिकल् गॉलुव
जनुगाक!" यनुचु ना संयमीश्वरुडु। विनुत भूपांवर विततु लिच्चुटयु
सीत यप्पुडु नार चीरलु मानि । याततमति नुंडॆ; ना समयमुन ८८०

दशरथुडु कैकनु दॆगडुट

गैक नंदरु दिट्टगा राजु विनुचु ।ना कांत दॆस जूचि यलुक तो वलिकॆ
"दक्कक पापंवु दलचि रामुनकु । नक्कटा! वनवास मडिगिति काक
मेदिनी सुतयु सौमित्रियु नार । लादरंबुन गट्ट नडिगिते नन्नु?
नी मानवति सीत यितकु दगुनॆ?। येमि चेसिति नीकु नी तॆंपु सेय?
रामुनि विनयाभिरामु गांतार । भूमिकि दपसियै पॉम्मनु कंटॆ
मरि यॊंडु पापंवु महिमीद गलदॆ?। तरम जेसियु नेल तंडार वैति?
पाप जातिकि नीकु वतियैन नाकु। वापंवु गडमये परिकिप" ननग
ना माट विनि रामु डधिपुतो ननियॆ । "भूमीश! ननु वासि पॊदलु
शोकमुन

नीय) भूपा (आभूपण)-अंवर (वस्त्र) विततियों (समूहों) के देने पर, तव
सीता वल्कल वस्त्रों को छोड़, सन्तुष्ट हो रही । उस अवसर पर, ॥ ८८० ॥

दशरथ का कैकेयी की निन्दा करना

—जव सव लोग कैकेयी की निन्दा कर रहे थे, राजा ने सुना (और) उस
स्त्री की तरफ़ देख, क्रोध से वोले—"निरन्तर पाप का संकल्प करके,(तुमने)
हाय ! राम के वनवास की माँग की थी । (किन्तु क्या) मुझसे माँगा था
कि मेदिनीसुता और सौमित्र (भी) सप्रेम वल्कल पहन लें ? (इसकी माँग
नहीं की थी ।) क्या यह मानवती सीता इतने के लिए योग्य है ? इतना
(दुः) साहस कर रही हो, (मैंने) तुम्हारा क्या (विगाड़) किया है ?
विनयाभिराम राम को कान्तारभूमियों (जंगलों) मे तपस्वी वन जाने के
लिए कहने से वढ़कर इस पृथ्वी पर अन्य कोई पाप है ? (वन में) भेजकर
भी तुम्हें शान्ति क्यों नहीं मिल रही है ? (केवल राम के वन जाने से तुम्हें
सन्तोप क्यों नहीं हो रहा है ?) तुम ऐसी पापजात (पापिनी) के पति वने
हुए मेरे लिए कोई पाप शेप नहीं है । (सभी पाप मेरे पल्ले पड़े हैं ।)"
ऐसा कहने पर, वह वात सुनकर, राम ने अधिप से कहा—"हे भूमीश !
मुझसे विछुड़कर (मेरे वियोग में) अधिक शोक से हमारी माता कौसल्या
मन में व्याकुल न हों, आप उचित ढंग से कृपा से रक्षा कीजिए ।" ऐसा

मा तल्लि कौसल्य मदि गुंदकुंड । भातिगा गृप मीरु परग रक्षिपु"
डनुडु ना दशरथुं डा वाक्यमुलकु। दनरारु शोकाग्नि दनचित्त मॆरिय
८९०

"नॆट्टि पापमु दॊल्लि येनु जेसितिनॊ? पट्टि! ना कनुभविंपक पोदु नेडु;
तल्लुल बिड्डल दग बापि मिम्मु। नुल्लंबु लोलिमै नॊप्पिप वलसॆ;
गैक माटकु निन्नु गान्तारभूमि। बैकॊनि यिडुमुल बरपगा वलसॆः
हा पुत्त्र! हा राम!" यनुचु मूर्छिल्लि। भूपालु डंतट बोधिंप दॆलिसि
वारक पदुनाल्गु वत्सरंबुलकु। नारग बरिपूर्णमगुनट्लुगाग
मॆच्चैन तॊडवुलु मेलि वस्त्रमुलु। नच्चुगा जानकि कवनीविभुंडु
वलनॊप्प दॆप्पिचि वरुस निप्पिचॆ। वलुवलु गट्टि या वरभूषणमुलु
दनरंग जानकि धरियिंचॆ; नंत। ननयंबु मदिलोन हर्षमुप्पॊंग८९८

श्रीरामुडु दशरथुनूरार्चुट

रामु डादशरथ राजु नीक्षिंचि। यामहितात्मुतो नचलुडै पलिकॆ
"बदुनालुगेडुलु ब्रकट दुर्गमुल। बदुनाल्गु दिनमुल पगिदि वर्तिंचि
९००

कहने पर वह दशरथ उन वाक्यों के कारण, अधिक शोक की अग्नि के चित्त में जल उठने पर (बोले)— ।। ८९० ।।

—"(न जाने) पूर्व में कौन-सा पाप किया था ? हे पुत्र ! (उस पाप का फल) भोगे बिना नहीं जाएगा । माताओं और पुत्रों को अलग कर, तुम लोगों के मन को दुखाना पड़ा । कैकेयी की बात पर तुम्हे कान्तार-भूमियों में कष्टों को सहने के लिए भेजना पड़ा । हाय पुत्र ! हाय राम !" ऐसा कहते हुए (दशरथ) मूर्च्छित हुए । तब भूपाल होश में लाये गये । निरन्तर चौदह वर्षों के लिए परिपूर्ण (पर्याप्त) हों, ऐसे आभूषण, श्रेष्ठवस्त्र जानकी को अवनिवल्लभ (राजा) ने शोभा से मँगवाकर क्रम से दिलाए । वस्त्र धारणकर, उन वरभूषणों को जानकी ने धारण किया । तब मन में अत्यन्त हर्ष के उमड़ने पर, ।। ८९८ ।।

श्रीराम का दशरथ को सान्त्वना देना

—(तब) राम ने उस दशरथराज को देखकर, उस महितात्म से, अचल होकर (निश्चल भाव से), कहा—"चौदह वर्ष प्रसिद्ध दुर्गों (वनों) में चौदह दिन की तरह रहकर, ।। ९०० ।।

धरणीश! वत्तु; संतापिपवलदु। भरतुंडु नाकंटे भक्तुंडु नी
नतनि वट्टमु गट्टु; मात्म गैकेयि। कृतकंबुनकु मदि गिंकिरिपडकु
मा तल्लि नीकु नेम्मदि सेव सेयु। ना तन्वि मीरुनु नरयुडु करुण
ननि प्रदक्षिणमुगा ननुजुंडु दानु। जनकजयुनु वच्चि चागिलि म्रोव
"नडविकिवोयि मी रुरुगुदें" डनुचु। गॉडुकुल गोडलि गोंकि दीविंचे
ना समयंबुन नर्थि मुव्वुरुनु। गौसल्य पादपंकजमुल केंर
वेंलदि राघवुडुन्न वेषंबु जूचि। पलुमारु विधि दूरि पलविंचि पिद
९०

कौसल्य सीतकु पतिधर्ममु देल्पुट

घनुनि राघवुनि लक्ष्मणुनि दीविंचि।जनकज जूचि कौसल्य शोकिं
"यडरंग नितडु महाचक्रवर्ति। कॉडुकनि मी तंडि कोरि निन्निच
गडवनि दैव योगंबुन जेसि। कडपट मरि यिट्टि गतियय्यॆ ने
९१

तापस वृत्तिमै दगिलि कानलकु। नी पतितो गूडि नी केग वल
दीनिकि वगुवकु; तिविरि श्रीरामु। डी निखिलोविंयु नेलेंडि मगुड

—हे धरणीश! (मैं लौट) आऊँगा। सन्ताप मत करो। मेरी अपेक्ष
भरत तुम्हारा (अधिक) भक्त है। उसका राजतिलक करो। आत्म
(मन) से कैकेयी के कार्य के लिए मन में क्रुद्ध मत होना। हमारी मात
(कौसल्या) अच्छी तरह तुम्हारी सेवा करेगी। उस स्त्री (कौसल्या
पर तुम भी कृपा करो।" (ऐसा) कहकर, अनुज, (और) जनकज
(सीता) के साथ स्वयं (राजा की) प्रदक्षिणा (परिक्रमा) की और साष्टां
प्रणाम किया। (तव) (दशरथ ने) पुत्रों (तथा) वहू को प्रेम से आसीस
कि 'वन जाकर लौट आओ'। उस समय प्रेम से तीनों ने कौसल्या
पाद-पंकजों में (सिर) नवाया। राघव के वेप को देखकर, (उस) स्त्र
(कौसल्या) ने कई वार विधि (नियति या ब्रह्मा) की निन्दा कर, रोक
तत्पश्चात्, ॥ ९०७ ॥

कौसल्या का सीता को पतिधर्म वताना

—महान् राघव (और) लक्ष्मण को आसीसा, जनकजा (सीता) को दे
कौसल्या ने शोक कर, (कहा)—"अतिशय भाव से कि यह (राम) महा
सुरिचि से चक्रवर्ती का पुत्र है, (यह सोचकर) तुम्हारे पिता ने तुम्हें दिया
अनिवार्य दैवयोग के कारण, अन्त में आज ऐसी दशा हो गई है ॥ ९१० ॥
—तापस-वृत्ति ग्रहणकर, पति के साथ तुम्हें जंगलों में जाना पड़ा। इसवे

बति पेदवाडैन बायंगरादु । सतुलकु; निदिय विचारिंप दगवु
चेकॊनि पतिपंपु सेयु पत्नुलकु । गैकॊनु नुभयलोकमु लंदु शुभमु"
लनगनु गौसल्य ना सीत सूचि । विनुतंबुगा बल्कॆ विनयंबु मॆऱसि;
"यनुकूलनै पति नतिभक्ति गॊलिचि । तनर वर्तिंचॆद धर्ममार्गमुन
मानुगा बति बायु मगुव सक्रंबु । लेनि तेरुनु, दंत्रि लेनि वीणॆयुनु
बोलॆ बुत्रुलु गल पुण्युरालैन । जालंग गॊऱगाक चनु; नट्लुगान
बतिकि ब्रियंबैन ब्राणंबु लैन । हितबुद्धि वंचिपकित्तुने" ननिन
ना देवि वैदेहि नलरार जूचि । "भूदेवि पुत्त्रिवै पुट्टिन नीकु ९२०
नी गुणंबुलु दगु; नॆलमि लक्ष्मणुनि। नी गुणोज्ज्वलु रामहितुनि मन्निंपु"
मनिन सीतादेवि 'यौगाक' यनुचु । दनकु म्रॊक्किन नॆत्ति तग
गौगिलिंचि
दीविंचि, यप्पुडु दॆऱगॊप्प राम । देवुनि तोड ना देवि यिट्लनियॆ
"बृथुलाटवुलयंदु बृथिवीशपुत्त्र! । मिथिलेंद्रसुतनु सौमित्त्रि नेमरकु

लिए दुःख मत करो । अवश्य ही श्रीराम बाद को निखिल उर्वी (पृथ्वी) पर शासन करेगा । पति (चाहे) निर्धन हो जाए, सति (पत्नी) को उसे त्यागना नहीं चाहिए । सोचने पर यही न्याय (धर्म) है । मन से पति की आज्ञा का पालन करनेवाली पत्नियों के लिए उभय लोकों में शुभ होगा ।" ऐसा कहनेवाली कौसल्या को देखकर, उस सीता ने विनयपूर्वक, प्रशंसनीय रूप से (कहा)—"अनुकूल होकर, पति की अतिभक्ति से सेवाकर, धर्ममार्ग पर चलूँगी । पति से बिछुड़नेवाली स्त्री चक्रहीन रथ के समान, तन्त्रीरहित वीणा के समान होगी (और वह) पुत्रोंवाली पुण्यवती होने पर भी, व्यर्थ होकर रहेगी । ऐसा न होकर, पति की इच्छा हो तो धोखा न देकर, हितबुद्धि से मैं प्राणों को भी दे दूँगी ।" (ऐसा) कहने पर उस देवी (कौसल्या) ने वैदेही को प्रेम से देखकर (कहा)—"भूदेवी की पुत्री होकर जन्म लेनेवाली तुम्हारे लिए, ॥ ९२० ॥

—तुम्हारे ये गुण उचित ही हैं । लक्ष्मण को जो गुण से उज्ज्वल और राम का हितू है, प्रेम से, आदरभाव से देखो ।" कहने पर, सीतादेवी ने 'ऐसा ही हो' कहकर, प्रणाम किया । उसे (सीता को) उठाकर, उचित रूप से आलिंगन कर, आसीस कर, तब ढंग से वह देवी (कौसल्या) रामदेव से यों बोली—"पृथुल अटवियों में हे पृथिवीशपुत्र ! मिथिलेन्द्रसुता (सीता) और सौमित्र के प्रति असावधान न रहना (सतत ध्यान रखना) ।" (ऐसा) कहने पर (राम ने कहा)—"हे जननी ! आपकी आज्ञा को सुना (पालन

मनिन "मी यानति नदि विंटि जननि! । पोनर ना दक्षिण भुजमु लक्ष्मणुडु
नानड जानकि नाकु नेंभंगि । मानसंबुन वीरि मरुवंग नगुने?
येनु विल्लंदिन नेंदु नेभयमु । गा नेलवच्चु मुक्कंटि पै वडिन?
नदिगान नीविक नडलकु माकु । वदलनु धर्मंवु, वगवकु" मंचु
भूनाथुनकु गरांबुजमुलु मोगिचि । तानु सीतयु सुमित्रानंदनुंडु
"अम्मलु दीविपु डंदरु" ननुचु । निम्मुल मुन्नूट येवंड्लकुनु९३०

सरि प्रदक्षिमुगा जनु देंचिमनुसु । लेरियंग ना तल्लुलेल्ल शोकिप
विनुचु सुमित्रकु विनतुलै रंत; । गनुगोनि यद्देवि कौगिट जेर्चि
श्रीरामु दीविंचि सीत दीविंचि । धारुणिपति सेत दलपोसि वगचि
मेलुपोंद नपुडु सुमित्र लक्ष्मणुनि । विलिचि यिपार गंभीरोक्ति वलिकें
"रामुनि दशरथ राजुगा जूडु: । भूमिज नन्नुगा वुद्धि जितिपु,
मडवि नयोध्यगा नात्म लो दलपु। कडु भक्ति युक्ति राघवु गोलिचियुंडु;

करूँगा)। अनुकूलता के भाव से लक्ष्मण (तो) मेरी दाहिनी भुजा है। हर तरह से जानकी तो मेरी गति है। मन से इन्हें भूला कैसे जा सकता है? (यदि) मैं धनुष धारण करूं तो चाहे त्रिनयन ही क्यों न चढ़ आवें, भय क्यों कर होगा? यह ऐसा है। (मेरी भुजशक्ति पर विश्वास करके) अब तुम डरो मत। मैं धर्म को त्यागूंगा नहीं। (अब) शोक मत करो।" (ऐसा) कहते हुए भूनाथ (दशरथ) को करांबुज (करकमल) जोड़कर, सीता और सुमित्रानन्दन के साथ 'हे माताओ! सभी हमें आशीर्वाद दीजिए।' कहते हुए (वे) प्रेम से साढ़े तीन सौ (माताओं) की, ॥ ९३० ॥

—परिक्रमा कर आए। हृदय के फटने पर, वे सभी माताएँ शोक (विलाप) करने लगीं। तब (उस विलाप को) सुनते हुए, सुमित्रा को (उन तीनों ने) प्रणाम किया। (उसे) देख, उस देवी ने (उन्हें) हृदय से लगा लिया। श्रीराम को आसीसा, सीता को आसीसा, धारुणीपति (राजा) के कार्य पर विचारकर दुखी हुई। भले ढंग से तब सुमित्रा लक्ष्मण को बुलाकर, शोभा से, गम्भीर स्वर से बोली—'राम को दशरथ राजा के समान देखो (मानो)। मन में भूमिजा (सीता) को मेरे समान मानो। आत्मा (मन) में वन को ही अयोध्या समझो। अधिक भक्तियुक्त होकर, राघव की सेवा करते रहो। अत्यधिक विजय, सिद्धि की उन्नति प्राप्त

मायत जयसिद्धुलभिवृद्धि बोंदु । बोयिर" म्मनि प्रीति बुत्त्रु दीविंचि
रामचंद्रुनि जूचि "रघुवीर! नीकु। सेमंबु दलचिन चित्तंबु लोन
नर लेनि सखुडन्न ननुजन्मु डन्न । नेंरय नीतडे काक निक्कुवंबरय
नटुगान लक्ष्मणु नरसि रक्षिपुमटवुललो"। नन्न 'नौ गाक' यनुचु९४०
गृतकृत्युडै यंत गृह देवतलकु । जतुरुडै मुनलकु जननुल केंरगि
धरणिज दोड्कोंनि तानु लक्ष्मणुडु। शरचाप तूणीर सहितुडै वेंडलें;
९४२

रामादुल यरण्य प्रयाणमु

नप्पुडरुंधति "यकट! यिक्ष्वाकु । लिप्पाटु वड्चुंड निटु सूडवलसें!"
ननि वसिष्ठुनि बल्क नम्महामौनि। तन बुद्धि नेंतयु दलपोसि चूचि
"ये रूपमुन बोव, दिदि दैव योग। मूरकुंडुमु, सूचुचुंडुद" मनियें;
नप्पुडु रघुरामु डडविकि बूनि । तप्पक वेंडलें; ना दशरथाधिपुडु
मदिलोन वगचि सुमंत्रुनि जूचि । "यिदें रामुडडवुल केगुचुन्नाडु,
गोंनिपोंम्मु रथ" मन्न गुवलयाधिपुनि । पनुपुन गोंनि पोयि भक्ति
तो म्रोंक्कि

करो। जाकर (वापस) आओ।' कहकर प्रेम से पुत्र को आसीसकर, रामचन्द्र को देखकर (कहा)--'हे रघुवीर! चित्त में तुम्हारे क्षेम (कल्याण) का विचार करनेवाला, कलमषरहित सखा, अनुजन्म (अनुज) तो सच पूछें तो यह लक्ष्मण ही है। इसलिए अटवियों में लक्ष्मण का ध्यान रख, (उसकी) रक्षा करना।' कहने पर 'ऐसा ही हो' कहते हुए, ।। ९४० ।। --कृतकृत्य होकर (सभी कामों से निपटकर), गृह देवताओं, मुनियों, जननियों को यथाविधि प्रणामकर, धरणिजा को साथ लेकर, लक्ष्मण के साथ (राम) शर-चाप-तूणीर-सहित हो चल पड़े ।। ९४२ ।।

रामादि का वनगमन

--तब अरुन्धती (ने कहा--)'हाय! इक्ष्वाकुओं को इस प्रकार दुर्गति प्राप्त करते देखना पड़ रहा है।' ऐसा वसिष्ठ से कहने पर उस महामौनी ने अपनी बुद्धि से अधिक सोचकर देखा (और) कहा--'यह किसी रूप से टल नहीं सकता। यह दैवयोग है। चुप रहो। देखते रहे।' तब रघुराम सप्रयत्न वन को निकल पड़े। वे दशरथाधिप मन में दुखी हो, सुमन्त्र को देख बोले--'यह (देखो), राम जंगलों में जा रहा है। रथ ले जाओ।' (ऐसा) कहने पर कुवलयाधिप (राजा) की आज्ञा मानकर, (रथ) ले

"रथ मिदे पुत्तेंचे राजु मी कौऽकु। रथ मेंविक विच्चेयु रघुरामचंद्र!"
यनवुडु दशरथु नाज्ञकु वेंऽचि । मुनु सीत नेंक्किंचि मोंगि नायुधमुलु
दनरु जोडुनु वेंट्टि तानु लक्ष्मणुडु। घनमैन रथ मेंविक कदलें राघवुडु
अंत वौरुलु वृद्धुलाप्तुलु मत्तु । लितुलु वालुरु हितुलु नाश्रितुलु
वंत ब्राह्मण राज वैश्य शूद्रादु । लतंत नलुगड नडलुचु वेंडलि
मुंदट निरुपार्श्वमुल विरुंदटनु । संदडिपुचु मदि जडि गौन्न वगल
"नरनाथपुत्त्रु डेंन्नडु गान राडु । सुरुचिर स्थिति नेडु चूत" मंचनुचु
जंद्रुतेजमु नव्वजालु ना राम । चंद्रु मोमुनु जूड जनुदेंचुवारु
"गडगि यिक्ष्वाकुल गौरवंवेंल्ल । नडचेंने मंथर" यनि तिट्टुवारु,
"दगवेदि रघुरामु दपसिगा जेय । नगु नम्म! कैकेयि" कनि दूरुवारु,
"दालिमि दिगनाडि दशरथाधीशु। डालिकि वेंऽचने!" यनि रोयुवारु,
"जन वेंल्ल जेंडि राम सौमित्त्रुलित। यनदलै पोदुरे!" यनि वेगुवारु,

---

जाकर, भक्ति से प्रणामकर (सुमन्त्र) बोले--'आपके लिए राजा ने रथ भेजा है। हे रघुरामचन्द्र! रथ पर आरूढ़ होकर चलिए।' ऐसा कहने पर दशरथ की आज्ञा को मानकर, सीता को पहले रथ पर बिठाया, फिर आयुध, ॥ ९५० ॥

--(और) शोभायमान पादुकाएँ रखीं। (तब) लक्ष्मण के साथ स्वयं उस महान् रथ पर चढ़कर रवाना हुए। तब पुरजन, वृद्ध, आप्त जन, मन्त्री, स्त्रियाँ, बालक, हितू, आश्रित, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आदि चौतरफ़ दुखी होते हुए, निकल पड़े। आगे, दोनों ओर, पीछे (भीड़ लगाकर) कोलाहल करते हुए, मन में निरन्तर दुखी होते हुए (यों) कहने लगे--'नरनाथ पुत्र कभी दिखाई नहीं पड़ता। सुरुचिर स्थिति (सुन्दर रूप) से आज (उन्हें) देखेंगे।' (ऐसा) कहते हुए, चन्द्र के तेज की अवहेला कर सकनेवाले उस रामचन्द्र के मुख को देखने के लिए कुछ लोग आए हुए थे। (कुछ लोग) यह कहते हुए कि 'हाय, इक्ष्वाकुवंश के समस्त गौरव को मंथरा ने नष्ट कर दिया है' (मथरा को) कोस रहे थे। (कुछ लोग) यह कहते हुए कि 'हाय, रघुराम को तपस्वी बनाना कैकेयी के लिए कहाँ तक उचित था' (कैकेयी की) निन्दा कर रहे थे। (कुछ लोग) यह कहते हुए कि 'हाय, धैर्य को तज दशरथाधीश पत्नी से डर गए' (दशरथ के प्रति) घृणा प्रदर्शित कर रहे थे। (कुछ लोग) यह कहते हुए कि

"बनुगोन्न तम तंड्रि पनुपुन। पोनुपड निट्लेल पोदु" रन्वारु,
"नी पदुनालुगेड्लेट्लु वीरडवि। नापद वेगिंतु?" रनि पोक्कुवारु
"ने नोमु नोचेनो यिम्महीपुत्रि। ता" नंचु मदिलोन दलपोयुवारु
"नति मृदुगात्रि यी यबल भूपुत्रि। पति बायले" दनि प्रणुतिंचुवारु,
"नी सुतुडडवुल केगग बून। गौसल्य येट्लोर्चेगा" यनुवारु
नै रामुनरदंबु नंदंद कदिसि। भूरि शोकाग्नुल बोंगुलुचु वोव
नंत गौसल्ययु ना सुमित्रयुनु। जितापरंपर जिक्कि शोकिंप
वारिकरंबुलु वलनोप्प नूदि। वारि पै व्रालुचु वगल दूलुचुनु
गलय नंतःपुरकांतलु दन्नु। गोलिचि रा दशरथ क्षोणिपालकुडु
भूरिलोचन-बाष्प-पूरंबु दोरुग। "हा राम! हा राम" यनि पलुमारु
९७०

नेलुगेत्ति येड्चुचु नेचिन वगल। नलि दूलि पोंगुलुचु नगरंबु वेडले
नप्पुडु रविदीप्तु लणगे; नल्देसल। नुप्पोंगे दममु; वह्नुलु मंडवय्ये;

'हाय, समस्त सौमनस्य को बिगाड़कर, राम-लक्ष्मण इतने निस्सहाय क्यों हो गए?' मन में दुखी हो रहे थे ।। ९६० ।।

—कुछ लोग कह रहे थे कि 'दृढ़भाव से अपने पिता के आदेश को छोड़ (न मान) ये व्यर्थ ही ऐसा क्यों जा रहे है?' कुछ लोग व्याकुल हो रहे थे कि 'इन चौदह वर्ष तक ये लोग जंगल में विपत्तियों को कैसे झेलेगे?' कुछ लोग मन में सोच रहे थे कि 'इस महीपुत्री (सीता) ने कौन-सा व्रत किया है (जो इस प्रकार जंगलों में जा रही है)।' कुछ लोग (सीता की) सराहना कर रहे थे कि 'अति मृदुगात्र (शरीर) वाली यह अबला, भूपुत्री (सीता) पति को छोड़ नहीं (रह) सकती।' (कुछ लोग) कह रहे थे 'अपने पुत्र के जंगलों में जाने पर, कौसल्या उसे कैसे सहन कर सकी।' ऐसा कहते हुए वे लोग राम के रथ को यहाँ-वहाँ घेरकर, भूरि (अधिक)-शोक की अग्नि में तप्त होते हुए (रथ के पीछे-पीछे) जा रहे थे। तब कौसल्या और सुमित्रा चिन्ता-परम्परा (दुख के प्रवाह) में फँसकर शोक करने लगीं। उनके हाथों का सहारा लिए हुए, उन पर झुककर, दुख से लड़खड़ाते हुए, अन्तःपुर की कान्ताओं से सेवित (अनुगमन करने पर), दशरथ-क्षोणिपालक (राजा) भूरि (अधिक)-लोचन-बाष्प (अश्रु)-पूर (समूह) के झरने पर 'हे राम! हे राम!' कहकर कई बार, ।। ९७० ।।

—उच्चस्वर से रोदन करते हुए, अत्यधिक दुःख के मारे लड़खड़ाते हुए, व्याकुल होते हुए, नगर से निकल पड़े। तब रवि की दीप्तियाँ मद पड़ गईं। चारों दिशाओं में तम उमड़ पड़ा। वह्नियाँ (अग्नियाँ) नहीं जल रही

धरणि वीटलु वारें; दारलु रालें, विरसिंचि ग्रहमुलु विनुवीथि वोरें
नेंलसिन मदधार लिंकें दंतुलकु। गलय नश्वमुलकु गन्नीरु दोरगें
नावुलु चन्निय्यवय्यें ग्रेपुलकु। नावीडु कड्डुशून्यमै तोचें व्रजकु;
वारु वीरन कॅल्लवारु बॅल्लडल। वौरल येड्पुलंबरमॅल्ल निंडें;
सुरवर-कामिनी शोकारवमुलु। वोरि वोरि विन वच्चें बुरजनंबुलकु
नप्पुडु दशरथुं डारामु रथमु। चॉप्पु वाष्पमुल चे जूड जॉप्पडक
१७८

रथमु निल्पुमनि दशरथुडु सुमंत्रुनि विलुचुट

"चंद्रबिंबमु तोड सरियैन राम। चंद्रुनि मॉगमॉकसारि चूचेंदनु,
ओ सुमंत्रुड! रथ मुनुपवे" यनुचु। ना सुमंत्रुडु विनुनट्लु चीरुचुनु१८०
वेंनुकॉनि पुरि दाटि वेस नेगुदेर। मनुजेशसुतुडु सुमंत्रुतो ननियें,
"निदें वच्चुचुन्नवाडिनकुलेश्वरुडु। पोंद-पोंद, पोनिम्मु-पोनिम्मु रथमु"
ननि यनि रघुरामुडंदंद दरुम। मोंनसि यातडु रयंबुन देरु बरपें
नंत वसिष्ठु डय्यवनीशु जूचि। यंतरंगंबुन नडलुचु बलिकें;

थीं। धरणि में दरारें पड़ गईं। नक्षत्र टूट पड़े। विरस हो ग्रह आकाश-वीथि मे, अस्त-व्यस्त हो गए। दन्तियों (हाथियो) की मद-धाराएँ सूख गई। अश्वो के अश्रु झरने लगे। गाएँ बछड़ों को स्तन्य नहीं दे रही थीं। प्रजा को वह प्रदेश अधिक शून्य भासित हुआ। ये (और) वे नहीं, सभी के अधिक भीत होने पर, पुरजनों के रोदन की ध्वनियों से समस्त आकाश भर गया। पुरजनों को सुर-वर (देवता-श्रेष्ठों की)-कामिनियों के शोक-रव वार-वार सुनाई पड़ने लगे। तव दशरथ उस राम के रथ की शोभा को अश्रुओं के कारण देख न सके। (कहा--) ॥ १७८ ॥

रथ को रोकने के लिए दशरथ का सुमंत्र को बुलाना—

'चन्द्रविम्व के समान रामचन्द्र के मुखड़े को एक वार देखूँगा। हे सुमन्त्र ! रथ को रोक दो।' ऐसा कहते हुए चिल्लाने लगे जिसे सुमन्त्र सुन सके। ॥ १८० ॥

(रथ का) पीछा करते हुए, नगर को पार कर, शीघ्र गति से आ रहे थे। (दशरथ को देखकर) मनुजेश-सुत (राजकुमार राम) ने सुमन्त्र से कहा—'यह (देखो) कुलेश्वर (राजा दशरथ) आ रहे हैं। चलो चलो, रथ को (शीघ्र) चलने दो।' ऐसा कहकर रघुराम के वहाँ आदेश देने पर, प्रयत्नशील हो उसने रथ को शीघ्रगति से चलाया। तव वसिष्ठ

"ननघ! शोकिंचुचु ननुपगारादु; । मनुजेश! नी विंक मऱलु मिच्चोट"
ननवुडु दशरथु डटपोक निलिचि । तन सूनु रथमट्टु तप्पक चूचि
यदियु गानक धूळि नट्टु चूचि चूचि । यदियु गानक बयलट्टु चूचि चूचि
'हा!' यनि येलुगेत्ति 'हा राम! राम। हा!' यनि मूर्छिल्लि यवनि पै
द्रेळ्ळि,
पौरलुचु गेंधूळि ब्रुंगि कन्विच्चि । कर मुग्रमगु दृष्टि गैकेयि जूचि
"नी पाप मेरुगक निन्नु मन्निंचि । ना पुत्त्ररत्नंबु नट्टु कोलुपोति ९९०
निन्नु बेंड्लाडि ने नीचुंड नैति । नन्निट मेटिनै यल्पुंड नैति
नडरु निंदल केल्ल नाधार मैति । गडपट जेरिचिति गाकुत्स्थकुलमु
निनु जूडगा रादु, निनु मुट्टरादु । चेनटि! नीतोड भाषिपगा रादु"
अनि दशरथुडाड, ना पौरजनुलु । गनुगोनि तनु दिट्ट गैकेयि विनुचु
दल वंचुकोनि युंडे, दशरथुं डंत । नलयुचु जनि ययोध्यापुरि जोच्चि
पाडुवाऱिनयट्टि पट्टणवीथि । नाडाड निलुचुचु नपुडु कौसल्य

ने उस अवनीश (दशरथ) को देखकर, अन्तरंग में दुखी होते हुए, कहा—'हे अनघ ! शोक करते हुए (राम को) नहीं भेजना चाहिए। हे मनुजेश ! अब तुम यहाँ लौट चलो।' ऐसा कहने पर दशरथ उधर न जाकर, (रुक गये और) अपने सुअन के रथ को देखते रहे, वह भी न दीखा तो उड़ती धूल को देखते रहे। वह भी न दीखा तो शून्य को देख-देख, हाहाकार कर, ऊँचे स्वर में 'हे राम ! हे राम !' कह मूर्च्छित हो, पृथ्वी पर गिर पड़े, लोटने लगे, अधिक धूल से लोट-पोट हो गये। (तब) आँखे खोलकर, अत्यन्त उग्र-दृष्टि से कैकेयी को देखकर (कहा)—'तुम्हारे पाप (भाव) को न जानकर तुम्हारा आदर किया (और) अपने पुत्र-रत्न को इस प्रकार खो बैठा। ॥ ९९० ॥

—तुम्हारे साथ विवाह करके मैं नीच बन गया हूँ। सब (बातों) में श्रेष्ठ होते हुए भी अल्प (छोटा) बन गया हूँ। अधिक निन्दा (-वाक्यों) का आधार (पात्र) बना। अन्त में काकुत्स्थकुल को ही भ्रष्ट कर दिया। तुम्हें नहीं देखना चाहिए, तुम्हारा स्पर्श भी नहीं करना चाहिए। हे कुत्सित भाववाली (दुष्टे) ! तुम्हारे साथ बात भी नहीं करना चाहिए।' ऐसा दशरथ के कहने पर, उन पुरजनों के उसे देख, कोसने पर, कैकेयी सुनती हुई, सिर झुकाए खड़ी रही। तब दशरथ ने (दुख से) थककर, चलकर, अयोध्यापुरी में प्रवेश किया। उजाड़ बनी नगर-वीथियों में यहाँ-वहाँ ठहरते हुए तब कौसल्या की नगरी में प्रवेशकर, आनन पर लगी धूल से विकल होते हुए, शय्या पर लोटते हुए,

नगरंत जोंच्चि याननधूळि तोड ।वोंगुलुचु, सॆज्जपै, वोंरलुच्चु, मिगुल
नलयुचु, सोंलयुचु, नसुरुसुरनुचु । नलु दॆसल् मूचुचु नालुक यॆंड
"हा राम! हा राम!" यनुचु दैवंबु । दूरुचु दनु दाने दूपिंचुकोंनुचु
"ने पाटु ने दुःख मॆरुगनियट्टि ।ना पुत्त्र रत्नंबु नादु कोडलुनु
एंत दव्वरिगिरो ? यॆंदुन्नवारो ? । यॆंत लो गुंदिरो ? एट्टु लेगॆदरो?
कंदमूलमुलु शाकमुलु ने रीति । दिंदुरो? यॆट्लु वर्तिंतुरो यडवि?"
ननि रामसीतल यायासमुलकु । दनमदि नडलुचु दलपोयुचुंडॆ,
गौसल्ययुनु नंत कंटॆ शोकिप । ना सुमित्रादेवि यडलार्पुचुंडॆ,
नंत रामुडु पौरुलंदरु गोलुव । गोंत दव्वेगि पेर्कोंनि वारि बलिकॆ
"ननघात्मुलार! मीरंदरु मगुडि ।चनु डयोध्यकु, नाकु जयमु गोरुडु;
भरतुनि याज्ञ लोपलनु वर्तिंचि । पोंरयुडु सौख्यमुल्, पोंदु मी" रनिन
वार लंदरु नेक वाक्युलै पलिकि ।"रो रान! यिट्लाडनुचितमे नीकु?
भरतु डेटिकि माकु ? वट्टणं बेल ? वरमंदिरमुलेल? वाहनमुलेल?
युप्परिगलु नेल? युविदलु नेल? चप्परमुलु नेल? सौधंबु लेल?

अधिक थकित होते हुए, बेहोश होते हुए, लंबी-साँसें छोड़ते हुए, चारों दिशाओं में (शून्य भाव से) देखते हुए, जीभ के सूखने पर, 'हा राम ! हा राम !' कहते हुए दैव की निन्दा करते हुए, अपने-आपको कोसते रहे। (कहा)—'किसी भी कष्ट, किसी भी दुख को न जाननेवाले (अनभिज्ञ) मेरे पुत्ररत्न और मेरी बहू— ।। १००० ।।

—(पता नहीं,) कितनी दूर गये होंगे ? कहाँ होंगे ? मन में कितने व्याकुल बने होंगे ? (आगे) किस प्रकार जायेंगे ? कन्द-मूल और शाक किस प्रकार (कैसे) खायेंगे ? वन में किसविध रहेंगे ?' ऐसा कहकर राम (और) सीता के प्रयास (कष्ट) के बारे में अपने मन में व्याकुल हो सोचते रहे। कौसल्या भी उससे अधिक शोक कर रही थी (तो) वह सुमित्रा देवी (उनके) दुख को कम कर रही थी (सान्त्वना दे रही थी)। तब राम समस्त पुरजनों के सेवा करते रहने पर (घेरे रहने पर), थोड़ी दूर जाकर, उनका (पुरजनों का) सम्बोधन करते हुए बोले—'हे अनघात्माओ (पुण्यात्माओ) ! आप सब अयोध्या लौट जाइए। मेरी विजय की कामना कीजिए। भरत की आज्ञा का अनुसरण कर, सुख प्राप्त कीजिए। (अब) आप लोग जाइए।' (ऐसा) कहने पर वे सब एक वाक्य (स्वर) से बोले—'हे राम ! ऐसा कहना तुम्हारे लिए क्या उचित है ? जब तुम वन में जाओगे तो हमें भरत क्यों ? पट्टण

मेडलु माकेल? मेलमैनट्टि । वाडलु माकेल वनुल की वरुग?
वत्तुमु नी वेंट ; वलदंटिवेनि । जत्तुमु; दीनि कै संदेहमेल ?"
यनि यिट्टु पलुकुचु नखिलभूप्रजलु । दनु गोल्चिरा रघूत्तमुडु तानेगि
तमसा नदीतटस्थलमुन विडिसि । तमसलो सांध्यकृत्यमुलेल्ल दीर्चि
तगु सौधमुन मृदु तल्पंबुनंदु । मोंगि वव्वळिंचु ना मोहनमूर्ति
तरुमूलमुन वर्णतल्पंबुनंदु । धरणीसुतयु दानु दग विश्रमिंचि
तनु जुट्टि पौरुलु दम यिड्लु मरचि । तनयुल भार्यल तगुलु वोविडिचि
वनमुल दमवेंट वच्चुवारगुचु । निनुपारु भक्ति तो निद्रिंप जूचि
वारल मगुडिंप वल नोंडु लेक । या रात्रिमध्यंबुनंदु सुमंत्रु
"दे राथितमु सेसि तें" म्मनि पलिकि । पौरुल वंचिंचुभाव मातनिकि
१०२०

देलिपि ययोध्यकै तेरु वोनिच्चि । तलकोंनि मगुडिंचि तमस दाटिंचि
तृणशिलावृतभूमि देरु दोलिंचि । गणुतिपरानि वेगमुन बोवुचुनु
दमराकयुनु महीधवुनि चेतयुनु । दमकिंचि विनि मनस्तापंबु नोंदि
तेरुवु पल्लेल वारु धृति दूलि येड्चु । परुसंपु टेलुगुलु पलुमारु विनुचु

किसलिए ? श्रेष्ठ मन्दिर किसलिए ? वाहन किसलिए ? अट्टालिकाएँ क्यों ? स्त्रियाँ क्यों ? छप्पर क्यों ? सौध क्यों ? ।। १०१० ।।

श्रेष्ठ मुहल्ले किसलिए ? (अर्थात् इन सबकी हमें कोई आवश्यकता नहीं है ।) तुम्हारे साथ (वन में) आयेंगे । मना करोगे तो मर जायेंगे । इसमें सन्देह किसलिए ? (सन्देह नहीं है ।)' ऐसा कहते हुए अखिल-भू-प्रजाओं के, सेवा करते हुए आने पर, रघूत्तम (रघुवंशियों में उत्तम) स्वयं चलकर तमसा नदी के तटस्थल पर ठहर गये । तमसा (नदी) में समस्त सान्ध्य-कृत्यों को पूरा किया । उचित सौध में मृदुतल्प (शय्या) पर सुन्दरता से शयन करनेवाले मोहनाकार (रामचन्द्र ने) (उस दिन) तरु-मूल में (पेड़ के नीचे), पर्णशय्या पर, धरणीसुता (सीता) के साथ विश्राम किया। अपने को घेरकर, अपने घर भूलकर, पुत्रों (और) पत्नियों के मोह को तजकर, वनों में अपने साथ आनेवाले पुरजनों को द्विगुणित भक्ति के साथ सोते देखकर, उन्हें लौटाने के अन्य उपाय के न होने पर, उस रात्रि के मध्य में सुमन्त्र से कहा—'रथ तैयार करके ले आओ ।' पुरजनों को वंचित करने (भुलावा देने) के भाव को उसे— ।। १०२० ।।

—समझाकर, अयोध्या की ओर रथ को (थोड़ी दूर) जाने देकर, फिर उसे लौटाकर, तमसा नदी को पार कराया । तृण-शिला से आवृत भूमि पर रथ को हँकवाकर, अगणित वेग से जाते हुए, अपने आगमन

वनतरुल् सीतकु वरुस जूपुचुनु । इनकुलमणियैन यिक्ष्वाकुनकुनु
मनुवु मुन्नोसगिन महि गनुंगोनुचु । जनि वेगवति दाटि सरयुवु दाटि
नरनाथु डम्मरुनाडु मापटिकि । गरमु वेगमुन गंगानदि जेरि
तडयक यिंगुदीतरुसमीपमुन । विडिसि यच्चट प्रीति विश्रांति नोंदे,
नारय दमसलो नट निद्रवोवु । पौरुलंदरुनु व्रभातंबु नंदु
गर मर्थितो मेलुकनि नाल्गु देसलु । परिकिंचि निव्वेर पडि शोकमेसग
१०३०
रामुनि गानक रथमु चोंप्परसि । 'रामु डयोध्यापुरमुन की रात्रि
यवनिनाथुडु विल्वनंपिन मरल । भुवन भारमु वून बोनोपु" ननुचु
ननि ययोध्यकु वच्चि यच्चोट रामु । गनुगोन जालक घनशोक वह्नि
ननयंबु वोंगुलुचु "नकट! राघवुडु । मनल वंचिंचि क्रम्मर बोये" ननुचु
ना रामु कृपयु सत्यंबु धर्मंबु । जारुवर्तनमु निच्चलु नुतिंचुचुनु
नितर वस्तुवुल पै निच्चलु मानि । यतनि दलंचुचु नतनि वायुटकु
नंतरंगंबुन नलयुचुनुंडि; । रंत नक्कड गुहुंडनु चेंचु राजु १०३७

(और) महीधव (राजा) के कृत्य के बारे में सस्नेह सुन, मनस्ताप प्राप्त कर, मार्ग के ग्रामवासियों के धैर्य तजकर, परुप स्वरों में रोदन को कई बार सुनते रहे। क्रम से सीता को वनतरु दिखाते रहे। इनकुल-मणि इक्ष्वाकु को, पूर्वकाल में, मनु के द्वारा प्रदत्त भूमि का अवलोकन करते हुए जाकर, वेगवती (नदी) को पार कर, सरयू (नदी) को पार कर, दूसरे दिन सन्ध्या तक नरनाथ (राम) अधिक वेग से गंगानदी (के तट पर) पहुँच गये। झट से (वहाँ) इंगुदी-वृक्ष के समीप ठहरकर, वहाँ प्रेम से विश्राम किया। तमसा में वहाँ सोनेवाले समस्त पुरजन, प्रभात में अधिक प्रेम से जागकर, चारों दिशाओं मे देखकर, चकित रह गये। शोक के उमड़ने पर, ॥ १०३० ॥

—राम को न देख, रथ के (गमन के) ढंग को देख सोचा—'अवनीनाथ (राजा दशरथ) के बुला भेजने पर पुनः भुवनभार को सम्हालने के लिए रात को राम अयोध्यापुरी आ गये होंगे।' (ऐसा सोचकर) अयोध्या आकर, वहाँ राम को न देखकर वे महान् शोक की अग्नि में सदा तप्त होते हुए, कहने लगे—'हाय! राम हमें धोखा देकर फिर से (वन में) चले गये। उस राम की कृपा, सत्य, धर्म, चारु-वर्तन (सद्व्यवहार) की नित्य नुति (सराहना) करते हुए, अन्य वस्तुओं पर इच्छाएँ छोड़कर उसका (रामका) स्मरण करते हुए, उससे विछुड़ने के कारण मन में व्याकुल होते रहे। तब वहाँ गुह[1] नामक निपाद-राज, ॥ १०३७ ॥

[1] निपादराज (केवट) का नाम।

गुह दर्शनमु

श्रृंगिबेरंबेलु चिर पुण्यशालि । गंगातटमुन राघवुंडुंडुटेरिगि
चनुदेंचि राम लक्ष्मणुलकु म्रोक्कि । वनमूल फलमुलु वलयु वस्तुवुलु
गनकांबरादुलु कानुक लिच्चि । विनयविधेयुडै विनुतु लोनर्चि
१०४०
यच्चेरुवगु रामुनाकृति जूचि । यिच्चलो वेरगंदि "यिदि येमि देव !
नी वरण्यमुलकु निखिलंबु विडिच । यी विधि विच्चेयुटेमि कारणमु?
नलिनाप्तकुलनाथ! ना यट्टि बंटु । गलुग नी वेषंबु गलिगेने नीकु?
जेनसि नी किंत सेसिन नीच मतुल । ननि बट्टि चंपेद" ननिन राघवुडु
नतनि सद्भक्तिकि ननि शक्तिकिनि। नतनि धीरोक्तुलकात्मलो मेच्चि
यतनि गौगिट जेर्चि यादरं बेसग । नतनि तो दनदुवृत्तांतंबु देलुप
नंतयु विनि गुहुंडात्मलो बेंद्द । चिंतिचि कैकेयि चेतकु वगचि
दशरथु नेरमि दलपोसि रोसि । दशरथात्मजुल दुर्दशकु शोकिंचे
रामुडप्पुडु गृपारसमग्नुडगुचु । सौमित्रियुनु दनु समुचित फणिति
गुहु शोक मुडुप नर्कुडु ग्रुंकुटयुनु । विहित संध्यकालविधु लोप्प दीर्चि
१०५०

गुह के दर्शन

—जो श्रृंगिबेर पर शासन करनेवाला चिरपुण्यशाली था, गंगातट पर राघव के निवास को जानकर, (वहाँ) आया, राम-लक्ष्मण को प्रणाम कर, वनमूल, फल, आवश्यक वस्तुएँ, कनक-अम्बर (वस्त्र) आदि उपहार देकर, विनयविधेय होकर, विनुति (स्तुति) की (और)— ।। १०४० ।।

—आश्चर्यजनक राम की आकृति को देख मन में भीत होकर (बोला)—'यह क्या देव ! समस्त (वैभव) को छोड़कर, इस प्रकार तुम्हारे अरण्य में आने का क्या कारण है ? हे नलिनाप्त (सूर्य)-कुलनाथ ! मेरे जैसे सेवक के होते हुए आपका ऐसा वेष क्यों हुआ ? विरोधकर तुम्हें इतना (ऐसी दशा) करनेवाले नीचमतियों को युद्ध में पकड़कर वध कर दूँगा ।' (ऐसा) कहने पर राघव ने उसकी सद्भक्ति, उसकी शक्ति, उसकी धीर-उक्तियों पर आत्मा में (मन में) सराहना कर, उसे गले से लगाकर, आदर के अधिक होने पर, उससे अपना वृत्तान्त कह सुनाया । सब सुनकर गुह ने आत्मा (मन) में अधिक चिन्तित होकर, कैकेयी की करनी पर दुखी होकर, दशरथ की असमर्थता के बारे में सोच, घृणाकर, दशरथात्मजों की दुर्दशा पर शोक किया । तब राम कृपारसमग्न हुए

गंगोदकमुल नाकलि दीर्चि सूत । शृंगिबेराधिपुल् सेरि सेविंप
धरणीतनूजयु दानु राघवुडु । धरणि पै दृणशय्य दग विश्रमिंचे
शरचापहस्तुडै सौमित्रि यंत । गरमोप्प दमयन्न गातु नन् बुद्धि
बदुनालुगेंड्लुनु वगलुनु रेयि । निदुर वोवक युंड नियमंबु सेसि
तम यन्न सेज्जकु दव्वुल निलिचि । यमल मानसुडु नै यटु गोलिचियुंड
ना रात्रि निद्र मायारूपु दालिच । धीरु डालक्ष्मण देवुनि जेरि
"येनु निद्रादेवि; येर्पड देल्पु । मा नाकु निकट्लु मानाढ्य! यंत
विधि विधिंचेनु वेंट वेंट वर्तिप । विधमेदि निन्नु ने विडुचुट किक
ननिन "नूर्मिळयंदु नहरहंबुलुनु । जनि युंडु; मंत नीसमयंबु दीर्चि
वच्चिन गैकोंदु वरुस नि" न्ननिन । निच्च "नौ गा" कंचु नेगें निद्रयुनु १०६०
नलरुचु "नी देवतानुग्रहंबु । गलिगें ना" कनुचु लक्ष्मण देवुडुंडि
हंस तूलिक शय्य यंदुंडु भोगि । पांसु पल्लवमुल बवळिंचि यिपुडु

(और) स्वयं और सौमित्र ने समुचित पद्धति से गुह के शोक का शमन किया। (इतने में) अर्क (सूर्य) अस्त हुए तब विहित (नियमित) सन्ध्या समय की विधियों को शोभा से सम्पन्न किया। ॥ १०५० ॥

गंगा के उदक से (अपनी) क्षुधा को शान्तकर, सूत (सुमन्त्र) (तथा) शृगिवेरपुर के अधिपति के सेवा करते रहने पर, धरणीतनूजा (सीता) के साथ राघव ने धरणि पर, तृणशय्या पर विश्राम किया। शर-चाप-हस्त हो सौमित्र तव अधिक शोभा से 'मैं अपने अग्रज की रक्षा करूँगा' इस विचार से चौदह वर्ष तक दिन-रात (कभी) अनिद्र रहने का नियम करके अपने अग्रज की शय्या से दूर खड़े रहकर, अमलमानस वाले हो सेवा में रत थे। उस रात को निद्रा ने मायारूप धारणकर धीर लक्ष्मणदेव के निकट पहुँचकर कहा—'मैं निद्रा देवी हूँ। हे मानाढ्य (मानधनी)! मुझे समझाकर बताओ। विधि ने निर्देश दिया है (जागरण के बाद निद्रा का)। तुम्हें छोड़कर जाने का विधान क्या है?' (ऐसा) कहने पर (लक्ष्मण ने कहा)—'जाकर अहरह (रातदिन) ऊर्मिला में जा रहो। तब इस समय (प्रतिज्ञा) की पूर्ति करके, लौटकर, मैं तुम्हें लगातार ग्रहण करूँगा।' (कहने पर) 'ऐसा ही हो' कहकर निद्रा चली गई ॥१०६०॥

'इस देवता का अनुग्रह मुझे प्राप्त हुआ है' कहते हुए लक्ष्मण प्रसन्न भाव से रहे। हंसतूलिकातल्प (हंस के कोमल पंखों से बनाई गई कोमल शय्या) पर सोनेवाला भोगी धूल भरे पल्लवों पर लेटकर अब कठिन

करकुराळ्ळोत्तंग गळवळ पडुचु । गुरुवेट्टि निद्रचे गूर्कि युंडगनु
सुकुमार तारुण्य शोभनाकृतुलु । प्रकटित धैर्य संपन्नुलै युन्न-
या रामसीतलत्यंत दुःखमुल । गूरॆडु तॆरगॆल्ल गुहुनकु जॆप्पि
यडरि कौसल्ययु ना सुमित्रयुनु । बडियॆडि शोकंबु पलुमारु जॆप्पि
सौरिदि निद्दरु गूडि शोकिंचुचुंड ।नरुणोदयंबय्यॆ; नंत राघवुडु १०६७

जटाधारियै रामुडु सुमंत्रुनि वीड्कॊनुट

नेमंबु लन्नियु निष्ठतो दीर्चि । सेममेर्पड गुहुचे मर्रिपालु
दॆप्पिंचि कोमल दीर्घकेशमुलु । विप्पि या वैदेहि विवशयै तूल
ना मर्रिपाल चे नंदंद तडिपि ।सौमित्रियुनु दानु जड लॊप्प दाल्चि
१०७०

घनुडु राघवुडु वैखानसवृत्ति । ननुजुंडु दानु बायनि निष्ठ बूनि
"यनघ! सुमंत्र! र"म्मनि चेर बिलिचि । "तनरार रथ मॆक्क दगदु मा;
किक
नरदंबु गॊनि ययोध्यापुरंबुनकु । मरलि पॊ; म्मधिपु नॆम्मदि गॊल्चियुंडु
पार्थिवेश्वरुनकु बरग दल्लुलकु । नर्थितो म्रॊक्किति मनि चप्पु" मनुडु
"नेमिटि की माट लिटमीद" ननुचु।सौमित्रि यधिक रोषमुन निट्लनियॆ
"भूमीशु डालिपुन नीति मालि । येमियु बरिकिंप किट्टु सेसॆ मम्मु;

पत्थरों के चुभने पर परेशान होते हुए भी, खुर्राटे भरते हुए निद्रा में मग्न है। (उस समय) सुकुमार-तारुण्य-शोभन की आकृति वाले, प्रकट-धैर्य-सम्पन्न वाले उन राम (और) सीता को अत्यन्त दुख प्राप्त होनेवाला समस्त विधान (लक्ष्मण ने) गुह को बताया। व्याकुल कौसल्या और सुमित्रा के शोक के बारे में भी कई बार बताया। (तब) दोनों मिलकर शोक कर रहे थे कि अरुणोदय हो गया। तब राघव, ।। १०६७ ।।

जटाधारी होकर राम का सुमन्त्र को बिदा देना

समस्त नियमों को निष्ठा से सम्पन्न करके, क्षेम (कल्याण युक्त) हो, इस विधान से गुह से वट का दूध मँगवाकर, कोमल दीर्घ केशों को खोलकर, वड़ के उस दूध से जहाँ-तहाँ भिगोकर, सौमित्र के साथ स्वयं शोभा से जटाएँ धारण कीं। इसे देख वैदेही अवश हो लड़खड़ाती रही। ।। १०७० ।।

महान् राघव ने अनुज के साथ अटल निष्ठा से वैखानस वृत्ति (वानप्रस्थाश्रम का एक भेद) ग्रहण की। 'हे अनघ ! सुमन्त्र ! आओ'

दन यालु दानुनु दन कूर्मि कॊडुकु । घन राज्य भोगमल् गैकॊनु गाक!
यनि येनु जॆप्पिति ननि पल्कु मीवु ।चनु" मन विनि रामचंद्रुडु गिनिसि
"मानु सौमित्रि!" "सुमंत्र! नी विंक। भूनाथुतो निवि पुट्टिपवलव;
दा नृपुडिवि विन्न नधिक दीनाय । मानमानसुडु नै मरि पॊक्ककुन्ने?
१०८०

यनिन सुमंत्रु डत्यंत शोकमुन । मुनिगि भीतिल्लि रामुनि जूचि पलिकॆ
"गानल मिमु द्रोचि कडु दीन वृत्ति। ने नयोध्यापुर मेमनि चॊत्तु ?
नेमनि चॆप्पुदु नीवार्त पतिकि । नेमनि कॊनि पॊदु नी शून्य रथमु?
नेमनि कौसल्य नेनूरडिंतु । नेमनि कैक मो मेनु वीक्षितु ?
वनमुल केनुनु वच्चॆद गाक" । यनिन रामुडु नव्वि यातनि जूचि
"कडक तो नेमु गंगानदि दाटि । यडवुल सॊच्चिति मनु वार्त गैक
नीवु सॆप्पिन गानि निजमुगा गॊनदु । नीवु शोकिंपक नॆम्मदि बॊम्मु

कह निकट बुलाकर कहा—'अब हमें रथ पर आरूढ नहीं होना चाहिए। रथ को लेकर (अब तुम) अयोध्यापुर को लौट जाओ। शान्तभाव से अधिप (राजा) की सेवा करते रहो। कहो कि मैंने पार्थिवेश्वर (राजा) (तथा) माताओं को प्रेम से प्रणाम किया है।' (ऐसा) कहने पर 'अब भी ऐसी बातें क्यों ?' कहते हुए सौमित्र अधिक रोष से यों बोले—'भूमीश ने पत्नी के आदेश पर, नीति छोड़, (आगे-पीछे) कुछ न सोचकर, हमारी यह दशा कर दी है। अपनी पत्नी, अपने लाडले पुत्र के साथ वे महान् राज्य भोग ग्रहण कर लें। उनसे कह दो कि मैंने ऐसा कहा है। जाओ।' (ऐसा) कहने पर रामचन्द्र रुष्ट हो बोले—'हे सौमित्र ! छोड़ो (इन बातों को)।' (सुमन्त्र से बोले) 'हे सुमन्त्र ! तुम अब भूनाथ से ये बातें न कहना। यदि नृप इन्हें सुनें तो (क्या और) अधिक दीनायमान मानस हो और अधिक दुखी नहीं होंगे ?' ॥ १०८० ॥

सुमन्त्र अत्यन्त शोक में मग्न हो, भीत हो, राम को देख यों बोला—'काननों में आपको ढकेलकर, अधिक दीन-भाव से मैं अयोध्यापुर में कैसे प्रवेश करूँगा ? पति (राजा) को यह समाचार कैसे दूँ ? इस शून्य रथ को कैसे ले जाऊँ ? कौसल्या को सान्त्वना कैसे दूँ ? कैकेयी के मुख को किस विधि देखूँ ? मै भी वन में आ जाऊँगा।' (ऐसा) कहनेपर राम हँसे (और) उसे देखकर कहा—हमने गंगानदी पार करके, जंगलों में प्रवेश किया, यह समाचार जब तक तुम (स्वय)जाकर कैकेयी को नहीं बताओगे, तब तक वे इसे सत्य नहीं मानेगी। तुम शोक न करके शान्तभाव से जाओ। मेरे बदले तुम नीतिवाक्य

ना मारुगा नीवु नयवाक्यसरणि। वेमारु दॆलिपभूविभु गॊल्चियुंडु"
मनवुडु रथमॆक्कि यति दीनुडगुचु। जनियॆ सुमंत्रुंडु साकेत पुरिकि
१०८९

रामादुलु गंग दाटि यडवुल केगुट

नंत राघवु डयोध्यापुरि कपुडु। नंतरंगंबुन नतिभक्ति म्रॊक्के१०९०
नडुम जानकि गंग नट्टु चूचि म्रॊक्कि। कडुवेड्क यॆसगगा गरमुलु मॊगिचि
"दशरथेश्वरुनाज्ञ धरणि वर्जिंचि। दशचॆंडि रामुडु दंडक केगु
बदुनालुगेडुलु भव्य वृत्तुलनु। विदितंबुगा नेनु वीरितो गूड
संचरिंचॆद; नंत सौमित्रि येमु। नंचितशुभमु चे नलरु वेडुकल
वच्चिन नीकुनु वलनॊप्प गानु। निच्चॆद गोवु लनेकमुल् वस्त्र
दानमृष्टान्नादि दानंबुलमर। गानु भूसुरुलकु गानुक नित्तु;
सुरघटल् वेयिंटि शुद्धान्न मांस। मरय बॆट्टॆद नम्म!" यनि भक्ति गॊलिचि
भवभंग धवळांग भवमौळिसंग। नवनिज या गंग नर्थि ब्रार्थिंचॆ,

सरणि (पद्धति) से वार-बार वताते हुए भूविभु की सेवा करते रहो।' ऐसा कहने पर रथ पर चढ़कर, अतिदीन होते हुए सुमन्त्र साकेतपुरी गया। ॥ १०८९ ॥

रामादि का गंगा को पारकर जंगलों में जाना

तव राघव ने अयोध्यापुरी को अन्तरंग में अतिभक्ति से प्रणाम किया। तव जानकी ने गंगा की ओर देखकर प्रणाम किया और वड़े हर्ष से हाथ जोड़कर (कहा) 'दशरथेश्वर की आज्ञा से धरणि को छोड़, दशा के फिरने पर, राम दंडक (वन) जा रहे है। चौदहवर्ष भव्य वृत्तियों से, विदित रूप से, मै इनके साथ संचरण करूँगी। तव (अवधि के समाप्त होने पर) सौमित्र (और) हम अचित शुभ, हर्षोल्लास से आयेंगे तो तुम्हें प्रेम से अनेक गाएँ दूँगी। भूसुरों को वस्त्र, दान, , मृष्टान्न आदि दान ठीक ढंग से उपहार के रूप में दूँगी। हे माता! एक हजार सुरघटाओं में शुद्धान्न और मांस दूँगी।' ऐसा कहकर भक्ति से सेवाकर, भवभंग (संसार के पापों को नष्ट करनेवाली), धवलांग (धवल शरीरवाली) भवमौलिसंग (शिवजी के जटाजूट में निवास करनेवाली) उस गंगा की प्रेम से अवनिजा (सीता) ने प्रार्थना की। गुह की लाई हुई नौका पर

गुहुडु वेंट्टिन योड गोमरोप्प नेक्कि । यहिमांशुकुलुलंत नागंग दाटि
गुहुनि संभाविंचि गुहु वीडुकोलिपि । गुहुडु सेप्पिन त्रोव गोमरोप्प प्रीति
११००

मुंदर गूर्मि तम्मुडु वेन्क दानु । सुंदरि नडुचक्कि जूपट्ट गदलि
वनचरमृगमुल वरुस जानकिकि । गनुपट्ट जूपुचु घनुडु राघवुडु
सनि योक्क मौनि याश्रममुनु जेरि । मुनिपति कतिभक्ति म्रोक्कि
यिम्मुलनु,
ननघुडा राघवु डनियें ग्रम्मरुचु । "मुनिनाथ! सेलविम्मु मुदमुतो" ननिन
वारल गन्गोनि, वल्कलादिकमु । गारवंबुनु वेंचगा वल्के मौनि
"येनेंरिंगिति मीर लिटवच्चु पनिनि । ई दिन मिंदुंडि येल्लि पोवलयु
रघुकुलोत्तंस ! यी रमणीयमैन । यघनाश मैनट्टि याश्रमभूमि
निलुवुडु नेटि" कनिन रघूत्तमुडु । पलिके ग्रम्मर मुनिपति किट्टुलनुचु
"निक्कड माकुंड नेल ? पोयेदमु; । अक्कट! मुनिनाथ! यदियुनु गाक
मा तल्लि दंड्रुलु मा पुरवासु । लेतेंचि ममु जूड निट वत्तु" रन्न ११९०
ना माट कलरि यिट्लनियें नम्मौनि । "यी माट निश्चयंबे राम! यिपुडु
पद" मनि सेलविच्चि परमपावनुडु । वदलनि मुदमुन वारल कनियें

शोभा से आरूढ होकर, सूर्यवंशी (राजकुमार) तव उस गंगा को पारकर, गुह की सभावना (आदर) कर, गुह को विदा कर, गुह के वताये मार्ग पर शोभित प्रीति से— ॥ ११०० ॥

—आगे लाडले अनुज, पीछे आप स्वयं, मध्य में सुन्दरी के दीखने पर चल पड़े। वनचर मृगों की पक्ति को जानकी को दिखाते हुए महान् राघव ने जाकर, एक मुनि के आश्रम पहुँच, मुनिपति को अतिभक्ति से प्रणाम किया। प्रेम से उस अनघ (पुण्यात्मा) से राम फिर यों वोले— 'हे मुनिनाथ! मोद से (हमें) आज्ञा दीजिए।' ऐसा कहने पर, उन्हें देखकर, वल्कलादि के गौरव को वढ़ाने पर मुनि वोले—'आपके यहाँ आने के कार्य के वारे में मैं जान गया हूँ। (आपको) आज यहाँ रहकर कल जाना चाहिए। हे रघुकुलोत्तंस (रघुकुलशिरोमणी)! इस रमणीय (तथा) अघनाशक आश्रमभूमि में आज ठहर जाइए।' ऐसा कहने पर रघु-उत्तम ने मुनिपति से फिर इस प्रकार कहा—'यहाँ हमें क्यों रहना चाहिए? (रहना उचित नही है।) जायेगे। यही नही, हाय मुनिनाथ! हमारे माता-पिता (तथा) हमारे पुरजन हमें देखने के लिए यहाँ आ जायेंगे।' ॥ १११० ॥

"जननाथ! यारु योजनमुलु नडुव । ननु वोंद जित्रकूटाद्रि जेन्नोंदु,"
ननवुडु राघवु 'डौ गाक!' यनुचु । जनकजा सौमित्रि सहितुडै यप्डु
चनिचनि मूडु योजनमुलु गडचि । चनि सुधर्मंदमनु सरसि नाडुंडि
या रात्रि भूपुत्रि यति मृदुगात्रि । कारडविनि नोंटिगा शयनिंचि
युन्न चंदंबु दानुन्न चंदंबु । गन्न तल्लुलकैन कडिदि शोकंबु
कैकेयि कोर्कुलु गडमुट्टुटयुनु । भूकांतु सत्यंबु भूप्रजवगयु
गन्नीरु दोरुग राघवुडु लक्ष्मणुन । कन्नियु जेप्पगानट वेगे ब्रोद्दु
मनुवंशतिलकंबु मरुनाडु गदलि । मुनुमिडि योजनंबुलु मूडु गडचि
११२०

यनघ गंगानदि यमुनयु गूडि । कन नोप्पु ना प्रयागकु बोयि, यंदु
मुनिलोकनुतुडैन मुनिभरद्वाजु । गनि नमस्कारमुल् गाविंचि तनदु
वृत्तांतमंतयु विन्नविंचुटयु । नत्तपोधनमुख्यु डा राघवुलनु
दीविंचि रघुरामदेवु वर्तनमु । भाविंचि यच्चेरुपडि तत्त्वमेरिगि
कंदमूल फलादिकंबुल वारि । बोंदुगा संतुष्टि बोंदिंचि प्रेम
नम्मुनि पूजिप ना रात्रि यंदु । नेम्मि दीपिंपग निलिचि मर्नाडु

उन बातों पर प्रसन्न हो उस मुनि ने यों कहा—'हे राम ! यह बात तो निश्चित ही है । अब चलो ।' यों आदेश देकर, परमपावन (मुनि) ने न छूटनेवाले मोद के साथ उनसे (यों) कहा—'हे जननाथ ! छः योजन चलने पर समुचित ढंग से चित्रकूटाद्रि विराजमान है ।' ऐसा कहने पर राघव 'ऐसा ही हो' कहते हुए, जनकजा (और) सौमित्र के सहित हो तब चल-चलकर, तीन योजन पार कर, उस दिन 'सुधर्मंद' नामक सर के निकट पहुँच उस दिन वहीं ठहर गए । उस रात को अतिमृदु गात्र वाली भूपुत्री के अकेली ही सोते रहने के ढंग को (तथा) अपनी दशा को, अपनी माताओं को प्राप्त अधिक शोक, कैकेयी की इच्छाओं की पूर्ति, भूकान्त (राजा दशरथ) के सत्य (निष्ठा), भू प्रजा के दुख आदि के बारे में राघव ने आँसू बहाते लक्ष्मण को कह सुनाया । ऐसे ही रात बीती । मनुवंशतिलक (मानवश्रेष्ठ) दूसरे दिन निकलकर, आगे बढ़कर तीन योजन पार कर, ।। ११२० ।।

—अनघ (पवित्र) गंगानदी और यमुना के मिलकर देखने में सुन्दर लगनेवाले प्रयाग गये । वहाँ मुनिलोकनुत (मुनियों के समूह से प्रशंसित) भरद्वाजमुनि को देखकर, नमस्कार कर, अपने समस्त वृत्तान्त का निवेदन किया । उस तपोधन-श्रेष्ठ ने उन राघवों को आसीसा, रघुरामदेव के व्यवहार पर विचार कर आश्चर्यचकित हुए (और) तत्त्व (असली बात)

घननिष्ठ संध्यादि कर्ममुल् दीर्चि । मुनुल याशीर्वादमुलु साल वडसि
यरुदैन चित्रकूटाद्रिकि दॆरुवु । वरपुण्युडगु भरद्वाजुचे नॆरिगि
यरुगुचो रामुडय्यडवुल नडुम । नुरुचापरवमुन कुलुकुचु वारु
मृगमुल जूपुचु मेदिनीसुतकु । नगवु वुट्टिंचुचु नडतेंचु नॆडल ११३०
नलसि डस्सिन चोट नवनीतनूज । निलिचिन चोटनु निलिचि तोड्कॊनुचु
गरमर्थि वॆक्कु दुर्गवुलु गडचि । वरपुण्युलट सिद्धवटमु नीक्षिचि
सीत यप्पुडु कार्यसिद्धुलु गोरि । या तरुवरमुन कंजलिसेसि
प्रार्थिप नप्पुडा पार्थिव तनयु । लर्थितो यमुनामहानदि दाटि
या रात्रि यंदुंडि यम्मरु नाडु । घोराटवुल सॊच्चि कुशल मार्गमुन
वलनॊप्प जनि माल्यवनि सुट्टुवारि। यलघु संयमुलकु नाटपट्टुगुचु
सललित-तरुलता-सानु-कूटमुलु । सॆलुवु दीपिंचिन चित्रकूटाद्रि ११३७

चित्रकूटमुन वर्णशालवासमु

गनि यॆक्कि यंदुन्न घन तपोधनुल । गनि म्रॊक्कि मिगुल सत्कारमुल् वडसि

जान गये । कन्द-मूल-फल आदि से उन्हें समुचित ढंग से सन्तुष्ट करके प्रेम से उनकी पूजा (सत्कार) की । उस रात को वहाँ बड़े प्रेम से (राघव) रहे । दूसरे दिन बड़ी-निष्ठा से सन्ध्या आदि कर्मों से निवृत्त होकर, मुनियों के आशीर्वादों को अधिक (मात्रा में) प्राप्त किया । अनुपम चित्रकूटाद्रि के मार्ग को वरपुण्य वाले भरद्वाज से जानकर, चल पड़े । उन काननों में धनुष के अधिक (टंकार) रव से इठलाते भागने वाले मृगों को दिखाते हुए मेदिनीसुता (जानकी) का मनोरंजन करते हुए जाते समय— ।। ११३० ।।

—जहाँ स्वयं थक जाते या अवनीतनूजा थककर रुक जाती वहाँ (थोड़ी देर के लिए) ठहर जाते (फिर) उन्हें साथ लेकर, अधिक प्रीति से अनेक दुर्गों (वनों) को पारकर, उन श्रेष्ठ पुण्यवानों ने वहाँ सिद्ध-वट (वृक्ष) को देखा । तब सीता ने कार्यसिद्धि की कामना कर, उस तरुवर को हाथ जोड़कर प्रार्थना की । तब उन पार्थिव (राज) तनयों ने प्रेम से महानदी यमुना को पार कर, उस रात को वहीं ठहरकर, दूसरे दिन घोर काननों में घुसकर, कुशल (सुरक्षित)-मार्ग से, शोभा से चले । (वहाँ उन्होंने) माल्यवती (नदी) से घिरकर, अलघु (महान्) संयमियों के लिए निवास स्थान हो, सुललित तरु-लता (युक्त) सानु (घाटी)-कूट (समूह) से शोभित चित्रकूट पर्वत को— ।। ११३७ ।।

यम्मुनींद्रुल चेत ननुमति वडसि । तम्मुडु दानु नत्तरि महीजमुल
कोम्मलु रेम्मलु गोट्टि वितगनु । सम्मदंबुन बर्णशाल गाविंचि ११४०
कृष्णसारमु जंपि गृहशांतिहोम । मुष्णांशुकुलुडु शास्त्रोक्ति मै जेसि
यंदु ब्रवेशिंचि या पर्णशाल । चदंबु मेच्चुचु साध्वियु दानु
मुनुल सेविंचुचु मुनुलेल्ल बोगड । मुनिचरित्रंबुल मोदिंचुचुंडे; ११४३

काकासुर कथ

दन तोंड योकनाडु तलयंपिगाग । नुनिचि रामुडु गूर्क नुर्वीतनूज
योगि गंदमूलादुलुपहारमुनकु । दग नायितमु सेयुतरिभीतिलेक
कडक तो नोक दुष्ट काकंबु सेरि । योडियुचु गासि सेयुचुनुन्न जूचि
सीत या काकंबु जेच्चेर जोप । नेतेरंगुन बोव कीडाड जूचि
चनुगवनडुचक्कि जंचुन बोडुव । घन शोणितबोल्कगा निद्रदेरि
कडुनलिग रामुडा काकंबु मीद । वडि निषीकमु बुच्चि वैचें; वैचुटयु

चित्रकूट में पर्णशाला निवास

—देख, (उस पर्वत पर) चढ़कर, उसमें स्थित महान् तपोधनियों को देख, प्रणामकर, अधिक सत्कार प्राप्त कर, उन मुनीन्द्रों से अनुमति प्राप्त की। तब अनुज और स्वयं महीजों (वृक्षों) के डाल (और) पत्ते काटकर, विलक्षण रूप से, सम्मोद रूप से पर्णशाला का निर्माण किया। काले हिरन को मारकर, उष्णांशुकुल (सूर्यवंशी) ने शास्त्रोक्त रूप से गृहशान्ति-होम किया। उस (पर्णशाला) में प्रवेशकर, उस पर्णशाला के विधान की प्रशंसा करते हुए, साध्वी (सीता) और स्वयं मुनियों की सेवा करते हुए, सभी मुनियों के प्रशंसा करने पर, मुनि चरित्रों को सुन मुदित होते रहे। ॥ ११४३ ॥

काकासुर की कथा

एक दिन अपनी जाँघ को तकिये के रूप में रखकर राम के सोने पर उर्वीतनूजा (सीता) लगन के साथ कंदमूल आदि को उपाहार (नाश्ते) के लिए, ढंग से तैयार कर रही थी। (उस समय) निर्भय हो, साहस के साथ एक दुष्ट कौआ निकट आकर, (वार-वार) ऊपर से उड़ते हुए, पीड़ा पहुँचा रहा था। (उसे) देख सीता ने उस कौए को शीघ्र भगाया। वह किसी भी तरह गया नहीं (और) इधर-उधर देखकर, (सीता के) स्तनों के मध्यभाग में चोंच से मारा। (तव) अधिक शोणित (रक्त) वह चला। निद्रा से जागकर, अधिक क्रुद्ध हो राम ने उस काक पर, शीघ्र बाण चलाया। (बाण) चलने पर, (वह बाण) उसे न छोड़कर

विडुवक यदि दानि वेनुवेंट दगुल । दडयक यदि जगत्त्रय मेल्ल दिरिगि ११५०
कावु कावनुचु दिक्पालुर ब्रह्म । देवुनि नम्महादेवु ब्रार्थिप
वारलु "तमचेत वारिंप वडुने । श्रीराम शर ?" मन्न शीघ्रंवे मगुड
जनुदेंचि मरि तन्नु शरणु सोच्चुटयु । घनमैन कृपतोड गाकंवु जूचि
"ना यस्त्र मेंदु नेन्नडु रित्तवोदु । नी यंग मोकटि दानिकिनिच्चि पोम्म"
यनवुडु दन नेत्र मा यस्त्रमुनकु । घन भक्ति तो निच्चि काकंवु सनियें
जेलगि राघवुडंत सीतचेनुन्न । फलमुलु देवतार्पणमुलु सेसि
या युन्न फलमुल नंदरु दृप्तु । लैयुंडिरिम्मुल; नंत नवकडनु ११५७

अयोध्यकु सुमंत्रुनि तिरिगि राक

रामु वर्तनमु लारय मूडु नाळ्लु । नेमिंचि गुहु चेंत निलिचि मर्नाडु
मलगनि वगल सुमंत्रुंडु साल । नलयुचु जनि ययोध्यापुरि जोच्चि
सहज वैभवमुलु सर्ववु नेडलि । रहि सेडियुन्न या राज-मार्गमुन ११६०

उसके पीछे पड़ा। कहीं देरी न कर उस (कौए) के समस्त जगत्त्रय में घूमकर, ।। ११५० ।।

—काँव-काँव[1] करते हुए दिक्पालों, ब्रह्मदेव (तथा) महादेव से प्रार्थना करने पर, उन्होंने कहा—'(क्या) हमसे श्रीराम का शर निवारित होगा? (नहीं)।' (उनके ऐसा) कहने पर शीघ्रता से लौट आकर, अपनी शरण में आने पर, महान् कृपा से युक्त होकर, (उस) काक को देखकर (राम बोले)—'मेरा अस्त्र कहीं (और) कभी खाली नहीं जाता। अपना एक अंग उसे देकर जाओ।' ऐसा कहने पर अपना (एक) नेत्र उस अस्त्र को अधिक भक्ति से देकर काक चला गया। (तब) प्रसन्न हो राघव ने सीता के हाथ के फलों को देवतार्पण कर, उन शेष फलों से सभी आनन्द से तृप्त हो रहे। तब वहाँ— ।। ११५७ ।।

अयोध्या को सुमन्त्र का पुनरागमन

—राम की गतिविधि जानने के लिए तीन दिन नियामन कर, गुह के पास रहकर, दूसरे दिन घोर दुख से अधिक व्याकुल होते हुए सुमन्त्र ने जाकर, अयोध्यापुरी में प्रवेश किया। समस्त सहज वैभवों से रहित हो, श्रीहीन उस राजमार्ग में, ।। ११६० ।।

---

१ तेलुगु में 'कावु' का अर्थ 'रक्षा करो' भी होता है।

नरुगुचो बुरजनुला रथध्वनुलु । परिकिंचि "यिदे रामभद्रुंडु व्रच्चे"
ननि सुमंत्रुनि जेर नरुदेंचि रथमु । गनुगोनि रघुरामु गानक वगचि
"क्रूरकर्मुडु रामु गोनिराक डिंचि । यीरित्तरथमेल निट देच्चे," ननुचु
गुंपुलु गुंपुलु गोनि तन्नु दूर । सोंपेदि रामुनि सुद्दिसेप्पुचुनु
राजगेहमु सेरि रथ मंत डिगि । राजुन्न यंतः पुरंबुन केगि
धूळि गप्पिन मेनि तो बाष्पपूर । लोल नेत्रमुलतो लोलोन बोंदलु
कडलेनि वगलतो गौसल्य यिंट । बडि प्रलापिंचु भूपति गांचि, म्रोक्कि
"भूमीश ! मी पुण्य पुत्त्ररत्नंबु । रामुडु सत्य पराक्रम शालि
सौमित्रियुनु दानु जडलोप्प दाल्चि । तामसिपक गंग दाटि काल्नडल
ननघुडै चित्रकूटाद्रिकि बोये" । ननवुडु दशरथुडात्म शोकिंचि ११७०
"यनघ! सुमंत्र! र" म्मनि चेर बिल्चि । तनयुनि चरित मंतयु जाल नडिगि
"गौरवमति नीवु गल्गिति गान । मा रामचंद्रु सेममु लेल्ल विंटि
गन्नुल करवु शोकंबुनुं दीर । जेन्नार नतनि जूचिन गानि यकट!

—जाते समय, पुरजनों ने उन रथ की ध्वनियों को ध्यान से देख (सुन) कर, (यह कहते हुए कि) 'यह देखो, रामभद्र आये है', सुमन्त्र के पास आये। (आकर) रथ को देखकर, रघुराम को न देखकर, दुखी होकर, कहने लगे—'यह क्रूरकर्मी राम को साथ न लाकर, (वहीं) छोड़कर, इस खाली रथ को यहाँ क्यों लाया ?' ऐसा भीड़ बाँधकर प्रजा की अपनी निन्दा करने पर, सुन्दरता से राम के वृत्तान्त को बताते हुए, राजगृह पहुँचकर, रथ से उतर पड़ा। राजा के अन्तःपुर में जाकर, धूल से ढँके शरीर, बाष्पपूरित लालनेत्रों से मन ही मन व्याकुल होते हुए, अन्तहीन दुख से, कौसल्या के घर पड़े, (और) विलाप करनेवाले भूपति को देखा, (देखकर) प्रणाम कर कहा—'हे भूमीश ! आपका पुण्यशाली पुत्ररत्न, सत्य पराक्रमशाली राम सौमित्र के साथ शोभा से जटाएँ धारणकर, विलम्ब किये बिना, गंगा को पारकर, पवित्र होकर, पैदल चित्रकूटाद्रि को गये है।' ऐसा कहने पर दशरथ मन में शोककर, ॥ ११७० ॥

—'हे अनघ ! हे सुमन्त्र ! आओ', कह निकट बुलाकर, पुत्र के चरित्र के बारे में अधिक पूछकर कहा—'गौरव मतिवाले तुम्हारें होने से हमारे रामचन्द्र के समस्त कुशल (समाचार) सुन लिये। नेत्रों का अकाल (दर्शन का अभाव) (तथा) शोक कम हो जाये, ऐसा (तदर्थ) शोभा से उसे देखे बिना हाय ! इस शरीर में प्राणों को धारण नहीं कर सकता। (मुझे) ले जाकर रघुराम से मिला दो न'। (ऐसा) कहने

तनुवुन ब्राणमुल् धरियिंपि जाल । गॉनि पोयि रघुरामु गूर्पवे" यनिन
"विनु नीवु श्रीरामु वेंनुकोंनि पोव । गनि प्रज शोकिंचु गैक दूपिंचु
निदि विचारंबुगा; दिदि बुद्धिगादु । मदि नित वगवकु मनुजेंद्र! नीवु;
धैर्यबु वदलकु; धर्मंबु निलुपु । मार्युलु गॉनियाड ननवुंडवगुमु
अरलेक यडवुल नखिल भोगमुलु । मरचि नीसुतुलु नेंम्मदि नुन्नवार"
लनि पल्कि लक्ष्मणुंडन्न वाक्यमुलु । विनिर्पिचुटयुनु भूविभुडु शोकिंचि
"सौमित्रि माट निजंबु; नेनट्टि । कामांधुडनु, ग्रूरकर्मुंड, खलुड ११८०
ननि सुमंत्रुनि बल्कि यटु वीडुकोलिपि । तनमदि शोकिंचु धरणीशु जूचि
"हा राम! हा राम! हा राम! यनुचु । श्रीरामु बलुमारु जिंतिप नेल?
येल नटिंचेंद ? वी लेनि शोक । मेल ताल्चेंद? वित येंरुगने येनु?
नीवु लोकमुललो निंदकु वेंरचि । यावल गैकेयि कन्नियु गरपि
रामु वट्टमु गट्टि राजु गाविंचि । भूमि येलिचेंद बोंगडोंद ननुचु
नडवुल द्रोयिंचितालिचे बनिचि । कडु दुष्टुडवु, नीकु गलवे धर्ममुलु?

पर (सुमन्त्र ने कहा)—'सुनो, तुम्हारे श्रीराम के पीछे जाने पर, (उसे) देख प्रजा दुखी होगी, कैकेयी निन्दा करेगी। यह (अच्छा) विचार नहीं है, यह (अच्छी) बुद्धि नहीं है। (उचित नहीं है।) हे मनुजेन्द्र! तुम मन मे इतना दुख मत करो। धैर्य को मत छोड़ो। धर्म का निर्वाह करो। आर्यजनों के प्रशंसा करने पर पवित्र वनो। विना (किसी) संकोच के काननों में, अखिल भोगो को भूल तुम्हारे पुत्र शान्ति से हैं।' ऐसा कहकर लक्ष्मण के कहे वाक्य भी सुनाये। भूविभु (राजा) शोककर (वोले)—'सौमित्र की वात सच है। मैं ऐसा ही कामान्ध, क्रूरकर्म (तथा) खल हूँ।' ॥ ११८० ॥

ऐसा सुमन्त्र से कहकर, उधर (उसे) विदाकर, अपने मन में शोक करनेवाले धरणीश को देखकर, कौसल्या उनकी निन्दा करते हुए कहने लगी—"हे राम! हे राम! हे राम! कहते हुए श्रीराम के वारे में कई वार चिन्ता क्यों कर रहे हो? क्यों अभिनय करते हो? जो शोक है नहीं, उसे क्यों धारण करते हो? इतना भी मैं नहीं जान सकती हूँ? लोक की निन्दा से डरकर, उधर तुमने कैकेयी को सब कुछ सिखा दिया है। 'राम का राजतिलक कर, राजा बनाकर, सराहनीय रूप से भूमि का शासन कराऊँगा' ऐसा कहते हुए, उसे (राम को) पत्नी के द्वारा जंगलों में ढकेल दिया। (तुम) अति दुष्ट हो। तुम्हारे भी कोई धर्म है? (नहीं है।) निन्दा से भीत होकर, प्रयत्न कर, मेरे पुत्र के राज-तिलक को रोकने के लिए (कैकेयी ने) कहा है। हे अधिप। कमजोर

तिट्टुपाटुनकोडि तिविरि ना कोंडुकु। पट्टंबु मान्पिप बनिचेंगा कधिप?
सोंपेदि रामुनि स्रुक्कक कैक। चंपु मन्ननु बट्टि चंपवे नीवु?
पेद्दगालमु नाकु बिड्डलु लेक। पेंद्दयु शोकिंचि पेक्कुलु नोचि
कडपट नोक्कनि गनि येनु गोंत।युडुकारि युन्नचो नुंडनीवैति'११९०
वनि दूरु कौसल्य नधिपति सूचि। तन पूर्वकथ येल्ल दा जेप्प दलचि
"नीवु सेप्पिन देल्ल निजमु गौसल्य। भाविंप नेनट्टि पापकर्मुंड;
नोंडल ब्राणमु लिंक नुंडवु नाकु। गडु बेट्टिदमु लाडि कारिंपवलदु;
कौसल्य! ना तोंटि कर्मफलमु। लोसरिंचिन नेल यूरक पोवु?
दैवंबुनकु नैन दन कर्मफलमु। भाविंचि कुडुवक पायरादेंदु
'नदि येट्टि' दनिननु नदि चेप्प जोद्य। मदि देल्लमिगविनु" मनि चेप्प
दोडगें; ११९६

दशरथुडु कौसल्यकु दन शापवृत्तांतमु देल्पुट

"नाडेल्ल नेलेंडु ना पिन्नदनमु। नाडोक्कनाडेनु नडु रेयि बोयि
यरुदैन वेटल नासक्ति दगिलि। शरचापमुलु वूनि सरयुवु पोंत
रेसि चूडग रानि रेवुचक्कटिकि। डासिन पोंदललो डागि येनुंड

न होकर, यदि कैकेयी उसे मार डालने के लिए कहे तो क्या तुम राम को पकड़ वध न कर डालोगे? बहुत समय तक मेरे पुत्र न थे, अधिक दुखी हुई थी। अनेक व्रत कर अन्त में एक (पुत्र) को जन्म देकर, मैं कुछ शान्त बनी रही तो (तुमने मुझे) ऐसा रहने नहीं दिया।" ॥ ११९० ॥

इस प्रकार निन्दा करनेवाली कौसल्या को राजा ने देखा और अपनी समस्त पूर्वकथा स्वयं कहना चाहकर (यों बोले)—'हे कौसल्या! तुमने जो कुछ कहा, वह सत्य ही है। सोचने पर मैं ऐसा ही पापकर्मा हूँ। अब शरीर में मेरे प्राण नहीं रहेंगे। अधिक परुषवचन कह मुझे सताओ मत। हे कौसल्या! मेरे पूर्वकर्मफल भोगे बिना कैसे व्यर्थ जायेंगे? (नहीं टलेंगे।) सोचने पर, दैव (भगवान्) से भी अपना कर्मफल भोगे बिना नहीं रहा जा सकता। (कोई पूछे कि) वह कैसा है (तो) कहने में आश्चर्यजनक है। उसे स्पष्टता से सुन लो।' इस प्रकार (दशरथ) कहने लगे। ॥ ११९५ ॥

दशरथ का कौसल्या को अपना शापवृत्तान्त बताना

'समस्त भूमि पर शासन करते हुए, अपने बचपन में, एक दिन मैं आधी रात को जाकर, अनोखे आखेट में आसक्त होकर, शर-चाप धारण कर, सरयू (नदी) के पास, अनुपम घाट की ओर (निकट) स्थित

नरि्मुरि् मृगकोटु लय्येटि नीरु। पर्तेंचि क्रोलु शव्दमुल चक्कटिकि १२००

वीनुल दृष्टिंचि वेंस शव्दवेधु। लैन वाणमु लेसि यदंद चंपि तनियक कापुन्न तरि् यज्ञदत्तु। डनु नोक्क मुनिपुत्त्रु डम्महानदिकि दीममै विधि दन्नु देच्चिन वच्चि। करमर्थि नय्येट गलशंबु मुंप गुदियक वेंस ग्रोयु गुट गुटध्वनिकि। नदि मत्तगज मनि यडरि येयुटयु ना तीव्रशरमप्पुडदरंट गोन्न। "हा तात! हा मात!" यनु नार्तरवमु पोरिवोरि ना मर्ममुलु गाडि पार। वरमुनि सुतुडिल व्रालि यिट्लनियें "ग्रममोप्प नडवुल गंदमूलमुलु। नमलुचु दपसिनै ननु गन्न गुरुल गोलिचि येरिकि गीडु गोरनि नाकु। गलिगेने नेडिट्टि कष्टंपु जावु ? ऎट्टिपापात्मुलु नीरात्तुलंदु। नेट्टन चंपरु नेर्रसि जंतुवुल वगळुल रतिकेळि वायक मेलगु। मृगमुल जंप; रिम्मेयि नोट लेक १२१०

येव्वडोको! नन्नु नी नडु रेयि। ग्रोव्वाडि शरमुन गूलिचन वाडु ? वाडेमिगति वोवुवाडोको यिक ? वाडेमि सेयुनु? वगव ना मृतिकि;

झाड़ियों में मैं छिपा रहा। क्रूर मृग-समूहों के उस नदी के नीर के पास आकर, (पानी) पीने के शव्द को ठीक ढंग से— ॥ १२०० ॥

—कानों से देखकर (सुनकर), झट शव्दवेधी वाण डालकर (चलाकर), जहाँ-तहाँ (मृगों को) मार डाला। (उससे) तृप्त न होकर ताक में था। उस अवसर पर, यज्ञदत्त नामक एक मुनिपुत्र उस महानदी के पास, विधि (नियति) के लाने पर, धैर्य से आया (और) अधिक इच्छा से कलश डुवोया। उस कलश के न डूबने से झट 'गुट गुट' की ध्वनि से (के कारण), उसे मत्तगज समझकर, अतिशयता से (वाण) चलाया। उस तीव्रशर के तव हठात् लगने से 'हे पिता! हे माता!' का आर्तनाद मेरे मर्मस्थानों में वार-वार चुभ गया। (तव वह) श्रेष्ठ मुनिपुत्र पृथ्वी पर गिरकर यों कहने लगा—"क्रम (नियम) से जंगलों में कन्दमूल चवाते (खाते) हुए, तपस्वी होकर, मुझे जन्म देनेवाले गुरुओं की सेवा करते हुए, किसी का अहित न चाहते हुए रहनेवाले मेरी आज ऐसी कष्टप्रद मृत्यु क्यों हुई ? कोई भी पापात्मा (क्यों न हो), इन रातों में जन्तुओं का वध नहीं करते हैं (और) दिन (के समय) में रतिकेलि को न छोड़ रहने वाले (रतिकेलि में निरत रहने वाले) मृगों का वध नहीं करते है। इस प्रकार— ॥ १२१० ॥

नक्कटा! वृद्धुलै यंधुलै तमकु। दिक्केव्वरुनु लेक दीनुलै युन्न
तल्लिदंड्रुलु नेडु दमकैन वगल। वेंल्लि ने तेपल वेंडल नीदेंदरों?
'कडु ब्रोद्दुवोये; नोक्कडु बोयि तडसें।गोंडु' कनि मदि नेंत गुंदुनो तल्लि?
ननु गन्न तल्लिकि नारामि जेंप्पि। यनुमानपडि येंत यडलुनो तंड्रि?
'याटलु मरगि रा' डनि चूतुरोक्को?। नीटि कंदुव लेमि निलि'चें
नंड्रोक्को
ये मनि वगतुरो यी चावु विन्न? नेमि गागलवारो यिटमीद वार?
लेंव्व रीयुदकंबु लिच्चेंद रिंक? नेव्वरु प्रोचेंद रिट मीद वारि?
गडगि यी बाण मोक्कटने मुव्वुरमु। बडिति; मिंकेमनि पलविंतु
विधिकि? १२२०
ननि विलापिंचुचो ना विलापमुलु। विनि "येंप्पुडेंप्पुडु विरियुनो
तममु?
अेंप्पुडु सूतुनो यिम्महापुरुषु ?। निप्पाटु वाटिल्लेने नेडु नाकु!"
ननुचुंड नुदयिंचें नंत जंदुरुडु। वनधितो ना शोक वनधि युप्पोंग

—कौन है वह (जिसने) इस आधीरात (के समय) अधिक तीक्ष्ण शर से मुझे गिरानेवाला? अब वह किस गति (दुर्गति) को प्राप्त होगा? वह भी क्या करेगा (जब मेरा भाग्य ही ऐसा है)? अपनी मृत्यु पर मैं दुखी नहीं होता। हाय! वृद्ध होकर, अन्धे होकर, किसी सहारे के बिना दीन बने माता-पिता, आज अपने को प्राप्त दुख के प्रवाह को किस नौका के सहारे पार करेंगे? 'अधिक समय हो गया। अकेला जाकर पुत्र ने देर कर दी है' ऐसा कहकर माता मन में कितनी व्याकुल हो रही होगी? मुझे जन्म देनेवाली माता को मेरे न आने (की बात) कहकर, सन्देह करते हुए पिता कितना डर रहे होंगे? क्या यह सोच रहे होंगे कि खेलों में लगकर नहीं आया? (अथवा) यह कहते होंगे कि जल के स्थान (घाट) के अभाव से रुक गया? इस मृत्यु का समाचार पाकर, वे किस प्रकार से (कितने) दुखी होंगे? आगे उनकी कैसी दशा हो जायेगी? अब यह उदक उन्हें कौन देगा? अब आगे उनकी रक्षा (पालन-पोषण) कौन करेगा? इस एक बाण से (हम) तीनों की मृत्यु हो गई है। अब विधि की करतूत पर क्या रोऊँ?" ॥ १२२० ॥

ऐसा विलाप करते समय, उन विलापों को सुनकर, मैं सोचने लगा कि 'कब अंधकार छँट जायेगा? इस महापुरुष को कब देखूँगा? मुझे आज यह कैसा कष्ट प्राप्त हो गया?' (ऐसा सोच रहा था कि) तब

जंदुरु डुदयिंप सरयुवु दाटि । यंदु दत्तीरंबुनंदेनु वेंदकि
तन चेति कलशंबु धरणि पै वैचि । तन चेंक्कु गलश मस्तकमुन जेर्चि
युरमुन वीपुन नुड्डगक वेंडलु । नुरुरक्तधारल नोंडलेल्ल दोगि
वीडिन जडलतो विशिख वेदनल । वाडिन मोमु तो वसुधपै व्रालि
शर मुपदेशमै चन जोंच्चि लोन । वरिकिंचि देहसंबंधंबु लणचि
ये कर्ममुल यंदु नीडाडनीक । कैकोंनि यिंद्रिय गतु लुज्जगिंचि
कडपटि योगंबु गनि तन्नु मरचि । पडियुन्न योगियै पडियुन्न वानि
१२३०
मुनि कुमारुनि जगन्मोहनाकारु । गनु गोंनि बाणंबु गनुगोंनि वेंदरि
यन्नदीजलमु लेनप्पुडु तेंच्चि । कन्नुलु दुडिचि यंगमुलेल्ल दडिपि
"यक्कट! मुनिनाथ! यडरि नाशरमु। तेंक्कलि दाकि वधिचेंने निन्नु?
नी नदीजलमुल केल विच्चेंसि? ते निक नी पाप मेमिट गडतु?"
ननुचुंड दन कन्नुलल्लन विच्चि । ननु जूचि तनु जूचि ना भीति जूचि
"नी वेमि सेयुदु? नीकेल वगव? नी वेंव्वडवु नाकु निकृति गाविंप?
दैव योगंबुन धरणीश ! नाकु । नी विधि यय्ये; निकेल शोकिंप?

चन्द्र का उदय हो गया। (उस उदय से) वनधि (समुद्र) के साथ मेरा शोक-वनधि भी उमड़ पड़ा। चन्द्र के उदय होने पर, सरयू को पारकर, उस (नदी) में, उस तट पर मैंने खोजा। (वह) अपने हाथ के कलश को धरणि पर डालकर, अपने गाल को उस कलश के मस्तक से लगाकर, छाती (और) पीठ से न रुककर (अवाध गति से) निकलने वाली उरु (अधिक) रक्त-धाराओं से समस्त शरीर के लथपथ होने पर, खुली जटाओं (तथा) विशिख (वाण) की वेदनाओं के कारण मुरझाये मुख से वसुधा पर पड़ा हुआ था। शर के उपदेश वनकर प्रवेश करने से अन्तरंग का परिशीलनकर देह के सम्बन्धों का दमनकर, किसी कर्म में आसक्त न होकर, प्रयत्नपूर्वक इन्द्रिय की गतियों को रोककर, अन्तिमयोग को प्राप्तकर, अपने आपको भूलकर पड़े हुए योगी के समान पड़े हुए उस— ॥ १२३० ॥

—मुनिकुमार को, जगन्मोहनाकार को देखकर, वाण को देखकर, घवरा गया। उस नदी के जल को ही मैं ले आया, आँखें पोंछकर, सभी अंगों को भिगोकर कहने लगा—'हाय ! हे मुनिनाथ। अतिशयता से मेरे शर ने धोखे से लगकर तुम्हारा वध कर डाला है न ? इस नदी जल के लिए आप क्यों पधारे ? मैं अव इस पाप से कैसे मुक्त होऊँ ? ' ऐसे मेरे कहने पर, अपनी आँखों को धीरे से खोलकर, मुझे देखकर, अपने

ने नेनुगनु बुद्धि नेसिति गानि । पूनि नायॅड गोपमुन नेय वीवु;
एनु ब्राह्मणुड गा; नॅलमि वैश्युनकु । भूनाथ! शूद्रकु बुट्टिन वाड;
नटुगान निदि ब्रह्महत्ययु गाटु । पादु पाप फलमु निन् ब्रापिंप लेदु;
१२४०

नरनाथ! तलककु ना चावु जूचि । यरिगि ना गुरुवुल कंतयु जॅप्पु
नीवु सॅप्पक मुन्न निज योगदृष्टि । भाविंचि चूचि येर्पड गांचिरेनि
गोपिंचि ननु गन्न गुरुवुलु विन्नु । शापिंप रघुकुलक्षयमु गागलदु
कावुन वारिकि गलशोदकमुलु । वेवेग गॉनिपोयि विनुपिंपु दीनि
भूपाल ! यी कॉंडपॉंत बश्चिमपु । गोपुन नॉक मर्रि कॉमरॉंदु चुंडु;
नावटवृक्ष कोटरमंदु रेयि । कावडि घटियिंचि कडु संतसमुन
गुरुतुगा नेनु ना गुरुल नंदुंचि । यरसि पोषण सेय नंदुन्नवारु;
करमॉप्प गुरुवुल ग्रक्कुन डिंचि । परिताप मार्पुमु भयपडकीवु
मनुजेश ! यी यस्त्रमरणंबु नाकु । ननुचित; मी बाण मल्लन बॅरुकु
मी शरवेदन केनोर्वजाल । ना शरीरमुन ब्राणमु लुंड विक १२५०

को देखकर, मेरी भीति को देखकर (कहा)—'तुम क्या कर सकोगे ? तुम्हें दुख क्यों करना चाहिए ? तुम कौन होते हो, मेरा प्रवंचन करने वाले ? हे धरणीश ! दैवयोग के कारण मेरी ऐसी गति हुई है। अब शोक क्यों करें ? मुझे हाथी समझकर (बाण) चलाया पर चाहकर, क्रोध से तो नहीं चलाया न ! मैं ब्राह्मण नहीं हूँ। हे भूनाथ ! मैं वैश्य और शूद्रा को उत्पन्न हुआ हूँ। ऐसा होने से यह ब्रह्महत्या नहीं है। अधिक पापफल तुम्हें प्राप्त नहीं हुआ है'। ॥ १२४० ॥

—हे नरनाथ ! मेरी मृत्यु को देखकर व्याकुल मत होओ। जाकर मेरे गुरुओं को सब कुछ बताओ। तुम्हारे कहने से पहले यदि वे अपनी योगदृष्टि से सब कुछ सोच-समझकर देख (जान) लें, तो क्रुद्ध होकर, मुझे जन्म देनेवाले गुरु तुम्हें शाप देंगे तो रघुकुल का क्षय (नाश) हो जायेगा। अतः शीघ्र ही कलश का उदक उन्हें ले जाकर दो और यह (समाचार) वता दो। हे भूपाल ! उस पर्वत के निकट पश्चिम की ओर एक बड़ (का पेड़) शोभित है। उस वटवृक्ष के कोटर में, रात के समय कावड़ रखकर, प्रसन्नता से, उसे चिह्न मानकर, अपने गुरुओं को उसमें रखकर, देखभालकर, पोषण कर रहा हूँ। वे वहीं हैं। अधिक शोभा से गुरुओं को झट से उतार कर परिताप को कम करो। भय मत खाओ। हे मनुजेश ! यह अस्त्रमरण (अस्त्र के शरीर में रहते मृत्यु) मेरे लिए अनुचित है। (अतः) वाण को धीरे से निकाल दो।

ननवुडु नेनप्पुडल्लन जेरि । घनमैन शोकाग्नि गालुचु गदिसि
यम्मु वेरुक बूनि यट्टु मुट्ट वेरचि । क्रम्मर दैगुवमै गडगि कंपिंचि
पनुगोनु वगलतो बाणंबु वेरुक । मुनिकुमारुडु प्राणमुल् वासे; नंत
गलगुचु नेनु ना कलशंबुतोड ।जलमुलु गोनि तदाश्रमभूमि करिगि
यति वृद्धुलै यंधुलै तारनन्य । गतिकुलै निज सुतागमन मुल्लमुल
नेंडपक कोरुचु नेरकलु विरिगि । पडियुन्न पक्षुल पगिदि नट्लुन्न
घन पुण्युलगु वारि गनुगोनि चेर । जनुदेंचु नाकालि चप्पुडालिंचि
"यो पुत्र! यिट्टु तडवुंडुदुवय्य ! । 'मा पट्टि राडेल मसलेनो' यनुचु
दलकुचुंडितिमि मी तल्लियु नेनु । निलुतुवेयोक चोट नी वितदडवु
तनय! नी वेवकड दडसितिवय्य! । कनु गोनगा माकु गन्नुलुनीव
१२६०

यति वृद्धुलगु माकु नाधारमीव । गति लेनि माकु सद्गतियुनु नीवु,
यदि येल पलुक? वेमटिमि निन्नु? ।नुदकमुल् देम्मंटि मो कुमारकुड!"
यनि पल्कु मुनिपल्कु लंतरंगमुन । वेनगोनु शोकंबु भीतियु बेनुप
जेट्टेक्कि कावडि शीघ्रंब डिंचि । यट्टिट्टु वडकुचु नति दीन वृत्ति

इस शर की वेदना को मै सह नहीं सकता । अब मेरे शरीर में प्राण नहीं रहेंगे । ॥ १२५० ॥

ऐसा कहने पर मैने तब धीरे से निकट जाकर, अधिक शोकाग्नि से तप्त होते हुए, पास जाकर, शर को निकालना चाहा, उधर उसे छूने से डरकर, फिर साहस के साथ प्रयत्न कर, काँपकर, बढ़ते हुए दुख से, बाण को खीच निकालते ही मुनिकुमार के प्राण निकल गये । तब व्याकुल होते हुए मैं उस कलश के साथ जल लेकर, उस आश्रमभूमि (प्रदेश) में जाकर, अतिवृद्ध हो, अंधे हो, किसी अन्य की गति (आधार) के बिना, मन में अपने पुत्र के आगमन को चाहते हुए, पर कटे हुए पक्षियों के समान पड़े हुए महान्‌पुण्यात्मा-स्वरूप उन्हें देखा । निकट आनेवाले मेरे पैरों की आहट को सुनकर (उन्होंने कहा)—'हे पुत्र ! इस प्रकार (कहीं) देरी कर देते हो ? तुम्हारी माता और मैं यह सोचकर व्याकुल हो रहे थे कि हमारा पुत्र अभी तक नहीं आया, कहाँ देरी कर रहा है । इतनी देर तक एक स्थान पर रुका जाता है ? हे पुत्र ! तुमने कहाँ देरी कर दी ? (विचार कर) देखने पर तुम्हीं हमारी आँखे हो । ॥ १२६० ॥

—अतिवृद्ध (बने) हमारे लिए तुम्हीं तो आधार हो । गतिहीन हमारे लिए तुम्हीं तो सद्गति हो । यह (क्या) बोलते क्यों नहीं ? तुम्हें कहा ही क्या है ? हे कुमार ! (केवल) जल लाने के लिए कहा

जॆप्पॆद ननि वच्चि चॆप्पराकुंडि । चॆप्पकपोदनि चॆप्प नूहिंचि
चलियिंचि गद्गदस्वरमुन वॆडलु । पलुकुलु दडबाटु पडग निट्लंटि;
"दापसोत्तम ! येनु दशरथमेदि । नीपालकुड गानि नी पट्टि गानु
नीचकर्मुलु विन्न निंदिंचुनट्टि । नीच कर्ममु नाकु नेडु सिद्धिंचॆ;
ने युगंबुल यंदु नॆव्वडेनियुनु । जेयनि पापंबु सेसि मी कडकु
वच्चिति; नेमनि वाक्रुव्वनेर्तु? ।दॆच्चॆ नन् दैवमी तॆंपु सेयुटकु; १२७०
सरयुवु पॊंत निशावेळ वेट । दिरुगुचु मृगमुलेतॆंचु चक्कटिकि
वीनुल दृष्टिंचि वॆस शब्दवेधु । लैन बाणमु लेसि यंदंद चंप
नीरुकंदुवनुंडि नी कुमारुंडु । नीरु मुंपग गुंभनिनदमालिंचि
येनुगन् तलपुन नेसिति; नॆरुग । नानति नाकेमि यनघ! मी तनयु
प्राणमुल् गॊनियॆ ना पटु बाण"मनिन । ब्राणमुल् जल्लन बडि मूर्छ वोयॆ
ना मुनि; पत्नियु 'हा पुत्त्र'! यनुचु । भूमि पै बडि रित्त बॊंदि यट्लुन्न
नप्पुडे नडलुचु नल्लन दॆलुप । दॆप्पिरि वारु ना दॆस मोमु लॊत्ति

है'। ऐसा बोलनेवाले मुनि की बातें (मेरे) अन्तरंग में उलझे शोक और भीति को बढ़ा रहे थे। (तब) पेड़ पर चढ़कर शीघ्र काँवड़ को उतारकर, थर-थर काँपते हुए, अति दीन वृत्ति से कह देने का विचार कर (भी) न कह सका, कहे बिना नहीं होगा यह सोच, कह देने का विचार कर, विचलित हो, गद्गद स्वर से निकलनेवाली बातों के लड़खड़ाने पर इस प्रकार बोला—'हे तापसोत्तम ! मैं राजा दशरथ हूँ, किन्तु आपका पुत्र नहीं। नीचकर्मा (भी) सुनें तो निन्दा करें, (ऐसा) नीचकर्म मुझे प्राप्त हुआ है। किसी भी युग में किसी ने (ऐसा) पाप नहीं किया होगा, ऐसा पाप करके, आपके पास आया हूँ। कैसे बोल सकूँ? दैव यह (दुः) साहस करने के लिए मुझे (यहाँ) लाया है। ॥ १२७० ॥

सरयू के पास रात्रि के समय मृगया में घूमते हुए, मृगों के आनेवाले घाट (के पास), कानों से देख (सुन) कर, शीघ्र शब्दबेधी बाण चलाकर जहाँ-तहाँ मार डालता रहा। जल के स्थान पर तुम्हारे पुत्र के (कलश को) पानी में डुबोने पर, कुम्भ (घड़े) के निनद (ध्वनि) को सुनकर, हाथी समझकर (बाण) चलाया। जानता नहीं था। हे अनघ ! (अब) मुझे क्या आदेश है ? उस पटुबाण ने तुम्हारे पुत्र के प्राण लिये हैं'। (ऐसा) कहने पर, प्राणों के ठंडे हो जाने पर, वह मुनि मूच्छित हो गया। (उनकी) पत्नी 'हा पुत्र !' कहते हुए भूमि पर गिर कर मानों शून्य को प्राप्त (निश्चेष्ट) हो गई। तब मैंने डरते (-डरते) बताया। (तब) उन्होंने मेरी

"येलय्य! दशरथ! येल शोकाग्नि। गाल मा तनयु देक्कलि दाचितीवु?
अडवुल दपसुलै यंधुलै युन्न। वड्डुगुल जंपि पापमु गट्टुकोंटि
वडरि नी दगु वाण मदरंट गोन्न। वडुनप्पुडेगनि पलिकेनो कोडुकु
१२८०
पायनि वेदन ब्राणमुल् विडिचि। पोयेनो? विडुवक पोरलुचुन्नाडो?
मृतिकैन नोंडु निमित्तंबु लेदे? यतिसुतुंडट वाणमट चंप विधियें!
पुडमि वानप्रस्थु वोलियिंचेनेनि। जेंडु निंद्रुडैननु; जेडडे भूविभुडु?
अवनीश! मा पुत्रु नज्ञान बुद्धि। दविलि येसिति गान दगदु मा
कलुग;
मा कुर्र जूडक ममु गोनि कालु। शोकाग्नु लारवु; चूपवे वानि;"
ननि यनि शोकिंचु नत्तपोधनुल। गोनि पोयि 'वीडे मी कोंडु' कनुटयुनु
"वेडि दयोदार विमल मानसुडु?। वेडि तपोधन विपुल पुण्युंडु?
वेडि सुधीजन विनुत वर्तनुडु?। वेडि निरंतर वेदतत्परुडु?"
ननुचु जेतुलु साचि यंदंद तडवि। तनयुनिपै वडि तल्लि शोकिंचि
तोंडल पै नुनिचि नेत्तुट दोगियुन्न। जडललो दख जेर्चि संताप मंदि
१२९०

ओर मुँह करके मेरी निन्दा की। 'क्यों जी! दशरथ! तुमने हमको शोकाग्नि में जलाने के लिए हमारे पुत्र को धोखे से (क्यों) छिपाया है? जंगलों मे तपसी हो, अंधे बने ब्रह्मचारियों अथवा निस्सहायों का वध करके पाप कमा लिया है। अतिशयता से तुम्हारे वाण के जोर से लगकर गिरते समय मेरे पुत्र ने क्या कहा? ॥ १२८० ॥

अधिक वेदना से प्राण निकल गये। (अथवा) (प्राणों के) न निकलने से लोट रहा है? मरण के लिए भी दूसरा कोई कारण नहीं होना चाहिए? है यति का सुत, रहा वाण, ऐसा मरना भी कोई विधि है! इस पृथ्वी (लोक) में वानप्रस्थी (आश्रम में जीवन यापन करनेवाले) का वध करे, तो इन्द्र भी नष्ट हो जायेगा। (तब) भूविभु का नाश नहीं होगा? हे अवनीश! हमारे पुत्र पर अज्ञान बुद्धि के कारण (वाण) चलाया इसलिए हमें रुष्ट नहीं होना चाहिए। अपने पुत्र को देखे विना हमें जला देनेवाली शोकाग्नियाँ नहीं बुझेंगी। दिखाओ न उसे'। ऐसा कहकर शोक करनेवाले उन तपोधनियों को पास ले जाकर कहा कि यही आपका पुत्र है। 'कहाँ है वह दया-उदर-विमल-मनवाला? कहाँ है वह तपोधन-विपुल पुण्यवाला? कहाँ है वह सुधीजनों से विनुत (प्रशंसित) वर्तन (आचरण)वाला? कहाँ है वह निरन्तर वेद (पाठ में) तत्पर?'

"यो विमलात्मक! यो यज्ञदत्त! । यो विश्रुताचार! यो धर्मनिरत!
येंदु मा तोड नी विट्टु सेंप्पि कानि । येंदुनु बोवु; नी विदि येमि नेडु?
नाकलोकमुन कुन्नति बोवुचुंडि । नाकेल चेंप्पवु ना वंशतिलक!
कडव जेसिति; बापकर्मुरालैति । नडुरेयि निन्नेल नदिकि बोम्मंटि?
नेच्चिन गुरु भक्ति नेंल्ल लोकमुल । डाच्चिन कोडुकु नाऽडि जंपुकोंटि;
नाकेटि तप मिंक? नाकु नी तोडि । लोकंबे गतियगु लोकैकविनुत!
येक्कडि प्राणंबु? लेक्कडि बाण? । मेक्कडि दशरथुं? डेक्कडि नीवु?
इन्नियु नोंड गूर्प निट्टु नेर्पु गलिगि । निन्नु द्रेक्कोनियेने नी कर्मफलमु?"
अनि तल्लि शोकिंप, नम्मुनीश्वरुडु । तनयुनि पै बडि तद्दयु वगच्चि
"नीवु नाकड कति निष्ठतो वच्चि । कार्वितु प्रीति सत्कारमुल् दोल्लि;
१३००
येनु नीकड किप्पु डेतेंचियुंड । ने नेंय्यमुलु सेय; विट्टु नीकु दगुने?
कोंडुक! नी निर्मलगुण कलापमुलु । वेंडलेने यी बाण विवरंबुनंदु?
नेंव्वनि जदिवितु निंक वेदमुलु! । नेंव्वनि जदिवितु निंक शास्त्रमुलु?

(ऐसा) कहते हुए हाथ फैलाकर, जहाँ-तहाँ टटोलकर, पुत्र पर गिरकर माता शोक करने लगी। जांघों पर (उसे) रखकर, रक्त से सनी जटाओं में सिर रखकर सन्तप्त हो (कहा) ॥१२९०॥

'हे विमलात्मक! हे यज्ञदत्त! हे विश्रुत (प्रसिद्ध) आचरणवाले! हे धर्मनिरत! हमसे कहे बिना कभी, कहीं भी नहीं जाते थे। तुमने आज यह क्या किया? नाकलोक (स्वर्ग) को उन्नति पर जाते हुए मुझसे क्यों नहीं बताया। हे मेरे वंशतिलक! (तुम्हें नदी) भेजकर पापकर्मा बन गई हूँ। आधीरात को तुमसे नदी (के पास) जाने को क्यों कहा? अधिक गुरुभक्ति के कारण समस्त लोकों को व्यर्थ (प्रमाणित) करनेवाले पुत्र को योंहीं मैंने मार डाला। अब मुझे तप क्यों? हे लोकैक विनुत! मुझे तुम्हारे साथ लोक (मरण) ही गति है। कहाँ के प्राण? कहाँ का बाण? कहाँ का दशरथ? कहाँ के तुम? हाय, इन सबका संयोग करने की निपुणता से युक्त तुम्हारे कर्मफल ने तुम्हें मार डाला है न?' (ऐसा) कहकर माता के शोक करने पर, उस मुनीश्वर ने पुत्र पर गिरकर अधिक दुखी होकर, कहा—'पहले तुम ही मेरे पास अतिनिष्ठा से आकर प्रीति से सत्कार (सेवाएँ) करते थे। ॥१३००॥

मैं (स्वयं) तुम्हारे पास आया हुआ हूँ, (तब भी) किसी प्रकार के स्नेह (-पूर्ण कार्य) नहीं करते हो। (क्या) यह तुम्हारे लिए उचित है? हे पुत्र! इस बाण के विवर (बिल) से तुम्हारा निर्मल-गुण-कलाप

नेव्वनि विनिर्पितु निक धर्ममुलु । नेव्वनि केरिगितु निक गाव्यमुलु?
फल मूल जलमुलु परगंग देच्चि । यलयकुंडग नेव्वररसि पेट्टेदरु?
दीर्घायुवनि निन्नु दीविंतु गानि । निर्घातपटु वाण निहृति वल्किततिने?
जमुनैन बुत्त्र भिक्षमु वेडुकोनेद । गोमर! नन्नचटिकि गोनि पो गदय्य!
पनिवडि येंदुनु वरलोकविधुलु । दनयु लोनर्तुरु तल्लिदंड्रुलकु
बरिपाटि दप्पिंचि परलोक विधुलु । मर्रलिचि विधि नीकु ममु जेय
वनिचे

नी कल दिनमुल निष्ठ वेंपार । जेकोनि मम्मु रक्षिचिति वीवु १३१०
नी यट्टि कोडुकुनु निजमुगा वूनि । ये युगंबुल गंदु मेर्मिक ननघ!
दुरितदूरुडवु; बंधुरतपोनिधिवि । गुरुभक्तुडवु नीवु, गुरुभक्तियुतुलु
बरलोकपरु लार्यवरुलु धर्मैक । परुलुनु निजदारपरु लात्मपरुलु
नन्नदानादि महादान परुलु । गन्न लोकंबुलु गनुमु नी" वनुचु
गरमोप्प नग्नि संस्करादिविधुलु । दरमिडि चेसिरि तम तनूजुनकु

(समूह) निकल गया (क्या) ? अव किसे वेद पढ़ाऊँगा ? अव किसे शास्त्र पढ़ाऊंगा ? अव किसे धर्म (की वातें) सुनाऊँगा ? अव किसे काव्य समझाऊँगा ? शोभा से फल-मूल-जल (आदि) लाकर, (हमें) थकावट हुए विना, (आवश्यकता) पहचानकर कौन खिलायेगा ? मैंने तुम्हें दीर्घायु का आशीर्वाद दिया था । निर्घात (वज्रसम)-पटु (शक्तिशाली) वाण-निहृति की वात कव कही थी ? यमराज से भी पुत्रभिक्षा माँग लूंगा । हे पुत्र ! मुझे वहाँ ले जाओ न ! जहाँ कहीं भी हो, माता-पिता के परलोक-कर्म (उत्तरक्रियाएँ) तो पुत्र ही करते हैं । इस क्रम का भंगकर विधि ने तुम्हारा परलोककर्म करने के लिए हमें भेजा । जव तक तुम (जीवित) रहे, तव तक अधिक निष्ठायुक्त हो तुमने हमारी रक्षा की थी । ।।१३१०।।

—हे अनघ ! तुम जैसे पुत्र को चाहकर भी हम (आगे) किस युग में जन्म दे सकेंगे ? तुम दुरित (पाप)-दूर हो, वन्धुर (अधिक)-तपोनिधि हो, तुम गुरुभक्त हो । (अतः) गुरुभक्तियुक्त, परलोकपर, (परमार्थी), आर्यवर, धर्मैकपर (केवल धर्म परायण), निजदारापर, (अव्यभिचारी), आत्मापर (आत्मतत्व के चिन्तन में परायण), अन्नदान आदि महादानों में निरत रहनेवाले (आदि सव) जिन लोकों को प्राप्त करते हैं, तुम उन लोकों को प्राप्त करो ।' (ऐसा) कहते हुए अधिक समुचित रूपसे अपने पुत्र का अग्नि संस्कार आदि विधियाँ क्रम से सम्पन्न कीं । तव वह अमर होकर, आकाशवीथि में अमर विमान में से यों वोला—

नमरुडै यतडंत नाकाश वीथि । नमर विमानंबुनंदुंडि पलिकै
"नो गुरुलार! ये नुत्तमलोक । भोगभाग्युडनैति; बुण्युड नैति
गरमर्थि मिमु गोल्चु कतमुन; नादु। मरणंबुनकु मीरु मरुगकुंडिक;
नेकाल मे त्रोव नेदि गावलयु । ना काल मात्रोव नदि गाक पोव;
दय्येंडु कार्यबु लगुगाक मान । वय्य! मीरितनि पै नलुगकु" डनुचु
१३२०

ननिमिषपुरि केगें नत; डंत वारु । दनयुनि पै गूर्मि दरियिंप लेक
"पोयेद मे मिदे पुत्त्र शोकमुन । मा यट्ल नीवुनु मरणंबु नोंदु"
मनि घोरमगु शाप मलिगि नाकिच्चि।तनुवुलु विडिचिरत्तपसु; लच्चोट
नग्निसमानुलका पुण्यधनुल । कग्नि संस्कारादुलट नेनु जेसि
चेकोंन्न वगल वच्चिति बुरंबुनकु । ना कर्मफल मिदे यासन्नमय्ये १३२५

दशरथ निर्याणमु

धीरत सेडि बुद्धि दिरुगुडु वडियें: । नोरेंड जोच्चें; गन्नुलु गानवय्यें;
बलुकुलु विनरावु; प्राणंबु लिक । निलुववी योंडलिलो, निलुवंगलेनु;

'हे गुरुजनो ! मैं उत्तम लोकों के भोगों का भागी बन गया हूँ। अधिक प्रेम से आपकी सेवा करने के कारण, पुण्य (वान्) बन गया हूँ। मेरे मरण के कारण अब आप दुखी मत होइए। जिस काल में जिस मार्ग से जो होना है, वह उस काल में, उस मार्ग से होकर रहेगा। होनेवाले कार्य होकर रहेंगे, टलेंगे नहीं। आप इस पर क्रोध मत कीजिए'। (ऐसा) कहते हुए— ॥ १३२० ॥

—वह अनिमिष (देवता)-पुरी को गया। तब वे पुत्र पर के प्रेम को पार न कर सक, बोले—'यह हम अभी पुत्रशोक के कारण (मर) जायेंगे। हमारे समान तुम भी (पुत्रशोक के कारण) मरण को प्राप्त करो'। क्रुद्ध होकर, ऐसा घोर शाप मुझे देकर, उन तपस्वियों ने शरीर छोड़ दिये। वहीं अग्नि-सम उन पुण्यधनियों का, तब अग्नि संस्कार आदि करके, मैं अधिक दुख से पुर को लौट (आया)। यह देखो, मेरा कर्मफल आसन्न (निकट आया) हुआ है। ॥ १३२५ ॥

दशरथ का निर्वाण (स्वर्गवास)

—धैर्यभ्रष्ट होने से, बुद्धि भ्रमित हो रही है। कंठ सूखा जा रहा है, आँखें (कुछ) देख नहीं पा रही हैं। (दूसरों की) बातें सुनाई नहीं पड़ रही हैं। अब इस शरीर में प्राण नहीं रुके रहेंगे। (अब) खड़ा नहीं रह सकता।

नापालि कल्पद्रु ना धीसमुद्रु । ना पराक्रमरुद्रु ना गुणोन्निद्रु
ना भाग्यपदभद्रु ना रामभद्रु । शोभनगुणमुद्रु जूड लेनैति
नी रात्रि तो गूड नेडु नाळ्ळय्ये । श्रीरामु वासि ना जीव मेट्लुंडु?"
१३३०

ननि प्रलापिंचुचु 'हा राम! राम!' यनुचु नंतने मृतुंडय्ये ना राजु,
"वनटल डस्सि भूवरुडु निद्रिंचें" । ननि तानु निद्रिंचें नंत गौसल्य,
परिकिंप नंत प्रभातमौटयुनु । गरमर्थि वंदि मागधुलु गीतिंप
दौरकौनि मंगळतूर्यमुल् म्रोय । बुरि नेल्लरु नियोगमुलवारु वच्चि
धरणीश दर्शनोत्कंठुलैयुंड । "निरवौप्प नेडेल यिन्नाळ्ळ रीति
दौर मेलुकौन" डंचु दौरकौन्न चिंत । वरिचारिकुलु वच्चि पति सेज्ज
डासि

"धरणीशुडुन्न चंदमु वोल" दनुचु । नुरुभयंबुनु वौंदि यूरुपुलरसि
यडुगुलु जेतुलु नंटंटि चूचि । यौंडल प्राणमुलु लेकुनिकि भाविंचि
यंदरु वेलुच महारोदनंबु । लंदंद सेय दिग्गन मेलुकांचि
यदरि कौसल्ययु ना सुमित्रयुनु । बेदरि यंदर जूचि पृथिवीशु जूचि
१३४०

मेरे लिए कल्पद्रम, उस धीसमुद्र (बुद्धिमान), उस पराक्रम-रुद्र, उस गुणोन्निद्र (गुणवान्), उस भाग्यपद-भद्र, उस रामभद्र, शोभन-गुणसमुद्र को मैं देख नहीं पाया। आज रात के साथ सात दिन हो गये हैं। श्रीराम को छोड़कर मेरे प्राण कैसे रहेंगे? ॥१३३०॥

ऐसा प्रलाप करते हुये 'हा राम! राम!' कहते हुये उतने में ही वह राजा मृत हो गये। 'शोक से थककर भूवर सो गये हैं' यह सोचकर तव कौसल्या सो गई। इतने में प्रभात हो गया। (होते ही) बंदी (तथा) मागध वड़े प्रेम से स्तुति (पाठ) करने लगे। मंगल तूर्य (वाद्य) वजने लगे। नगर के समस्त नियोगवाले (जिनको कोई काम सौंपा गया हो) आकर, धरणीश के दर्शन की उत्कंठा से थे। 'शोभा से आज प्रतिदिन की तरह राजा जागे क्यों नहीं हैं?' ऐसा सोचते हुए, चिन्ता के भार से, परिचारिकाएँ आकर, पति (राजा) की शय्या के निकट जाकर, 'धरणीश के (सोये) रहने का ढंग उचित नहीं है' कहकर, अधिक भीत हुए (और) साँसों की परीक्षाकर, पैर (और) हाथ छू—छूकर देखा (और) सोच लिया कि शरीर में प्राण नहीं हैं। (तव) सभी जहाँ-तहाँ अधिक महारोदन करने लगे। (तव) झट जागकर, भीत होकर कौसल्या (और) सुमित्रा ने घवड़ाकर सवको देख, राजा को देख ॥ १३४० ॥

'हा! ' यनि यॆलुगॆत्ति "हा प्राणनाथ! । पोयितॆ दशरथभूनाथ!" यनुचु
विलपिंप गैकेयि विनि राग जूचि । पलुमारु नापैपै बडि मोदुकॊनुचु
"गैक! नीकोर्कुलु गडमुट्टॆ नेडु; । कैकेयि! कलचितॆ काकुत्स्थकुलमु?
'नडवुल पालुग' म्मनि रामु द्रोचि । सडि कोर्चि दशरथेश्वरु जंपुकॊटि
नॆलकॊनि यिटमीद नीवु नीसुतुडु । निलयॆल्ल गैकॊनि यॆलमि भोगिंपु"
डनुचु ना कौसल्य यादिगा सतुलु । तनु बेरुकॊनि येड्व दलवांचिकॊनुचु
नलि दूलि चनुदॆंचि नाथु पै व्रालि । पलु दॆरंगुल गैक पलविंचुचुंडॆ
ना समयंबुन नडलु दीपिंप । गौसल्य दशरथु गनुविच्चि चूचि
"धरणीश! नी यट्टि धर्मानुरूप । चरितुन की चावु समकूर दगुनॆ?
मोसपोयिति निन्नु मुदलिंप लेक; । नीसत्य संपद निन्निंत सेसॆ १३५०

गड्डुगष्टमति यैन कैकेयि गडगि । यडविकि रामु बोनडचिन वगपु
परिकिंचि नीकेनु बरिचर्य सेसि । तरियिंप जूचिति, दैवमीदय्यॆ;
नीयिच्च नोकुंड नी पंपु सेसि । पोयि सत्कीर्तुलु वॊंदॆ राघवुडु

'हाय' कह, ऊँचे स्वर से 'हा प्राणनाथ! हे दशरथ भूनाथ! (हमें छोड़) चले गये क्या?' कहते हुए विलाप करने लगीं। (यह) सुनकर, कैकेयी के आने पर, बार-बार उसपर गिरकर, (सिर) पीटते हुए कहा—'हे कैकेयी! आज तुम्हारी इच्छाएँ पूरी हुई। कैकेयी! काकुत्स्थकुल में ऊधम मचा दिया न (नाश कर दिया न)! 'जंगलों में चला जा' कहकर राम को ढकेलकर, अवहेला को सह, दशरथेश्वर को मार डाला। शोभा से अब आगे तुम और तुम्हारा पुत्र समस्त पृथ्वी को ग्रहणकर प्रेम से भोग करो'। (ऐसा) कहते हुए कौसल्या आदि, उन सतियों के अपना सम्बोधन कर रोने पर, सिर झुका लेते हुए, लड़खड़ाते हुए आकर नाथ पर गिरकर कैकेयी अनेक प्रकार से विलाप करती रही। उस समय नीति के दीप्त होने पर, कौसल्या ने आँख खोलकर दशरथ को देख कहा—'हे धरणीश! तुम जैसे धर्मानुरूप चरित्रवाले को ऐसी मौत होनी चाहिए? तुम्हें ललकार न सक (रोक न सक), धोखा खा गई। तुम्हारी सत्य-सम्पदा (निष्ठा) ने तुम्हारा यह हाल कर दिया। ॥ १३५० ॥

अत्यन्त क्रूर (दुष्ट) बुद्धिवाली कैकेयी ने सप्रयत्न रामको जंगल भेजा। (उस) दुखको देखकर-मैंने सोचा, तुम्हारी परिचर्या (सेवा) करके तर जाऊँ। भगवान् ने न चाहा। तुम्हारी इच्छा का उल्लंघन करके, तुम्हारे आदेश (की पूर्ति)कर, (जंगल) जाकर, राघन ने सत्कीर्ति पाई। स्थिर सत्य का तुम पालन करके, दृढ़ता से तुमने निर्लिप (देवता)-सम्पदा

नेलकोन्न सत्यंबु नीवु वाटिंचि । बलिसि निर्लिप संपदलु गैकोंटि;
धरणीश ! नाकु नुत्तमुडैन निन्नु । बरुसंबु लाडिन पापंबु दक्कें"
ननि चाल पलविप ना सुमित्रादि । वनितलु नेलुगेत्ति वापोवुचुंडि
रंतंत नी वार्त लंतट म्रोसें । गांतल येड्पु लाकासमेल्ल निंडें
नंत सूर्योदयंबय्यें; नौटयुनु । नेंतयु भयमुतो हितुलु बांधवुलु
जेरुवनृपुलु वसिष्ठादि मुनुलु । धारुणीसुरुलु ब्रधानुलु वच्चि
भूरिशोकंबुन बोंगुल वसिष्ठु । डारुढमति मंत्रुलनुमति सेय १३६०

दडयक दशरथ धरणीशु मेनु । गडकतो दैलपक्वंबु सेयिंचि
चेलुवैन मणिमय सिंहासनमुन । गोलुवुन्न तेरगुन गूर्चुंड वेट्टि
मंत्रुल सकल सामंतुल राज । तंत्रज्ञुलनु गूर्चि तगवोप्प वलिकें;
"नी राजु साम्राज्य मेल्ल वालिंचि ।स्वाराजु नगरिकि जनियें नेडकट!
यितनि पूनिकि दीर्प निंतियु दानु । हितमति मरि रामु डेगें गानलकु
भरतुंडु दम माम पट्टणंबुनकु । नरिगें शत्रुघ्न सहायुडै मुन्ने
मनमु रामुनि विल्व मगुडि राडतडु। तन पून्कि दीर्पक धर्मवर्तनुडु;
१३६७

(स्वर्गसुख) को ग्रहण किया । हे धरणीश ! तुम जैसे उत्तम (व्यक्ति) को परुष (वचन) सुनाने का पाप मुझे मिला' । (ऐसा) कहकर, अधिक विलापकर, सुमित्रा आदि, वे वनिताएँ ऊँचे स्वर में रोती रहीं । धीरे-धीरे यह समाचार सब जगह फैल गया । कान्ताओं का रोदन समस्त आकाश में भर गया । तब सूर्योदय हो गया । (सूर्योदय) होने पर, अधिक भय से हितू, बान्धव, निकट के नृप, वसिष्ठ आदि मुनि, धारुणीसुर (ब्राह्मण), प्रधान (मन्त्री) आकर, भूरिशोक से व्याकुल हुए । आरूढ़मतिवाले वसिष्ठ ने मन्त्रियों के अनुमति देनेपर— ।। १३६० ।।

—देर न करके, दशरथ धरणीश के शरीर को अविलम्ब तैलपक्व कराकर, ऐसा विठाया मानों शोभायमान मणिमयसिंहासन पर दरबार में विराजमान् हों । (विठाकर) मन्त्री, सकल सामन्त (राजा), राजतन्त्रज्ञों को जुटाकर, समुचित रूपसे बोले—'हाय, यह राजा समस्त साम्राज्य का पालनकर आज स्वाराजा (इन्द्र) की नगरी को गये । इनके वचन का पालन करने के लिए स्त्री के साथ हितमति वाले राम काननों में गये । इससे पूर्व ही शत्रुघ्न के साथ भरत अपने मामा के नगर गये । हम राम को बुलायें तो वह धर्म-वर्तन (आचरण) वाला अपनी प्रतिज्ञा पूरी किये विना नही आयेगा । ।। १३६७ ।।

भरतुनि बिलिपिंचुट

कावुन भरतु वेगमे पिलुपिंप । गावलयुनु राच-कार्यमुल् दीर्प,
राजु लेकुन्न बुरंबु राष्ट्रंबु । राजिल्ल; देल्ल वर्णंबुलु गलयु;
दंडनीति-क्रियल् दान-धर्ममुलु । मेंडोडि चेंडिपोवु; मितुरु रिपुलु १३७०
जारुलु जोरुलु संदडिंपुदुरु । कोरि नोंतुरु साधुकोटि दुर्जनुलु
दोरलु सामंतुलु दुर्गाधिपतुलु । नरि यप्पनमु लीय' रनि निश्चयिंचि
यलघुमानसुडु जयंतुडुमोदलु । नलुवुरु मंत्रुल नयमोप्प बिलिचि
"पलुवन्ने चीरलाभरणमुल् गोनुचु । बोलुचु गिरिव्रजपुरिकि मीरेगि
यी वार्त लातनि केमियु देलुप । 'कावसिष्ठुंडु रम्मने मि'म्मटंचु
गडुवेग भरतु नक्कड नुंडनीक । तोडि तेंडु, पों" डन दोरंपु गडक
वारलु हरुल दुवाळिगा नेक्कि । सारे नानापुरजनपदंबुलुनु
नदमुलु नदुलु गाननमुलु गिरुलु ।बोंदलु बेक्कुलु दाटि पोंदलिन धाटि
गरमु जेन्नोंदु केकय राजपुरिकि । नरिगि वारंत नेडव नाटि रात्रि
बलमेदि गोमय पंकमध्यमुन । दल विरिय बोसि तंड्रि गूलुटयु १३८०

भरत को बुलाना

—अत: राजकाज सम्हालने के लिए शीघ्र ही भरत को बुलाना चाहिए। राजा न हो तो पुर (और) राष्ट्र विराजित (शोभित) नहीं होंगे। समस्त वर्णवाले (आपस में) मिल जायेंगे (वर्ण संकर होगा)। दण्डनीति के कार्य, दान-धर्म बहुत अधिक बिगड़ जायेंगे। रिपु (शत्रु) प्रवल हो जायेंगे। ॥१३७०॥

—जार-चोर (आदि) की वृद्धि होगी। दुर्जन स्वेच्छा से साधुकोटि को दुख देंगे। छोटे अधिकारी, सामन्त, दुर्गों के अधिपति, कर (और) उपहार नहीं देंगे'। ऐसा निश्चय कर अलघुमानस, जयन्त आदि चार मन्त्रियों को नयपूर्वक बुलाकर, (कहा)—'अनेक रंगों के चीर (वस्त्र), आभरण साथ लेते हुए, शोभित गिरिव्रजपुरी को आप (लोग) जाकर, ये समाचार उसे बिलकुल न बताकर, केवल यह कहकर कि 'उस वसिष्ठ ने आपको बुलाया है', अधिक शीघ्रता से, भरत को वहाँ रहने न देकर, साथ ले आइए, जाइए'। (ऐसा) कहने पर, अधिक उत्साह से वे (लोग) झट से घोड़ों पर सवार होकर, नानापुर, जनपद (ग्राम), नद, नदी, कानन, गिरि, झाड़ी (आदि) अनेक पार कर, अत्यन्त वेग से, अधिक शोभायमान केकयराज की पुरी को, सातवें दिन रात को गये। गोमय (गोबर) के पंक (कीचड़) के मध्य में, सिर के बाल खोलकर, पिता का गिरना, ॥१३८०॥

जलनिधि शून्यमै संपूर्ण चंद्रु । डिल गूलुटचु, वट्टपेनुंग गॊम्मु
विरुगुट मॊदलैन विषमंपु गललु । दरुचुगा गनि लेचि तद्‍यु भीति
दन यिष्ट सखुलतो दत्प्रकारंबु । विनुपिंचि वगलचे वेंतवडुचुन्न
भरतु सन्निधिकेगि प्रणतुलै निलिचि। करमर्थि दमचेति कानुक लिच्चि
"या वसिष्ठुडु गार्यमक्कड गलिगि । देव! निन्नट तोडि तॆम्मन्नवाडु
विच्चेयु" मनवुडु विनि दूत चेष्ट । लच्चुगा गनुगॊनि यतिभीति नॊंदि
तम माम कड केगि तत्प्रकारंबु । क्रममॊप्प दॆलिपि सत्कारमुल् वडसि
१३८७

भरतु डयोध्य ब्रवेशिंचुट

यत डंप गदलि रथारूढुडगुचु । जतुरंग बलमुलु सचिवु लेतेर
नतुलित चिंत नेडव नाडु वच्चि । यति रयंबुन नयोध्यापुरि सॊच्चि
पति लेनि सति,निशापति लेनि रात्रि। गति नॆंतयुनु भोग कळलकु बासि
१३९०

कन्नुल कापुरि कडु बाडु वारि । युन्न चंदमु गांचि युल्लंबु गलगि

—जलनिधि (समुद्र) का शून्य हो (सूख) कर, सम्पूर्णचन्द्र का धरती पर गिरना, भद्रगज के सींग(दांत)का टूट जाना आदि विषम स्वप्नों को, अक्सर देखकर, जागकर, (भरत-शत्रुघ्न) अधिक भीति से, अपने इष्टसखाओं को वह प्रकार (स्वप्नों का विधान) सुनाकर, दुख के कारण व्याकुल हो रहे थे। (इतने में अयोध्या से आए हुए मंत्री) भरत के समक्ष जाकर, प्रणत हो खड़े होकर, अधिक प्रेम से अपने हाथ के (साथ लाये) उपहार देकर, (कहा)—'हे देव, वहाँ (अयोध्या में) किसी कार्य के होने से उस वसिष्ठ ने तुमको वहाँ साथ ले आने को कहा है। पधारो'। ऐसा कहने पर, सुनकर, दूत के हावभाव को स्पष्ट देखकर, अतिभीत होकर, अपने मामा के पास जाकर, उस विधान को, क्रम से बताकर, सत्कार प्राप्तकर, ॥१३८७॥

भरत का अयोध्या में प्रवेश करना

—उनके भेजने (विदा करने) पर, निकलकर, रथारूढ़ होकर, चतुरंग बल (सेना तथा) सचिवों (मन्त्रियों) के आने पर, अतुलित चिन्ता से, सातवें दिन आकर, अतिशीघ्रता से अयोध्यापुरी में प्रवेश कर, (अयोध्या नगर) पतिहीना सती, निशापति (चन्द्र)-हीन रात्री के समान अत्यन्त भोगकलाओं से रहित हो, ॥ १३९० ॥

—वह नगरी आँखों को अधिक उजड़ीदीखी। उस विधान को देखकर मन

"यिदि येमि विधमोको? यी पट्टणंबु। दुदमुट्ट शून्यमै तोचुचुन्नदियु
बौरुलु ननु जूचि बाष्पमुल् दोरुग। दूरुचु दव्वुल दोलगि पोयेदरु
अंगळ्ळ सकल सामग्रि वस्तुवुलु। पोंगारवेटिकि बुरमुलो" ननुचु
नगरि वाकिट समुन्नति रथंबु डिगि। मोगि चेंडि तानु दम्मुडु शून्यमैन
यंतः पुरंबुन करुग गैकेयि। येंतयु ब्रियमु तो नेदुरुगा वच्चि
कवुगिलिंचुटयुनु गरमर्थि गैक। कविरळ भक्तितो नप्पुडु म्रोक्कि
यिच्चमै दम माम यिच्चिन तोडवु। लिच्चि वारल सेम मेर्पड जेप्पि
"येंतयु शून्यमैं यिदि येमि नगरु। वितयै युन्नदि विभवंबु लेडलि
रामलक्ष्मणुलकु राजवर्युनकु। सेममे?" यनवुडु जिंतिंचि कैक १४००
भरतुनि जूचि संभ्रममु रेट्टिप। दरहास वदनयै तगवेदि पलिकें
"दलकोनि तोल्लि मी तंड्रि ना कर्थि। वलनु मीऽग रेंडु वरमु लिच्चुटयु
'नोकटिकि भरतुनि नुर्वि येलिपु। मोकटिकि रघुरामु नुनुपु दुर्गमुल'
ननि वेड्डुटयु दंड्रि यानति बूनि। जनकजा लक्ष्मण सहितुडै-मुनुल
यनुवुन रघुरामु डडविकि बोव। दनयुनि नेड बासि धरणीशु डीलगें
नीसुन नीकुगा नी युपायंबु। सेसिति; राज्यंबु जेकोनु मिक;
ब्रजल बालिपु; संपदल गीलिपु। भुज शक्ति नेलुमु; बुद्धि नोंडनकु"
मनवुडु मूर्छिल्लि यल्लन देलिसि। घन कोप दृष्टि तो गैकेयि जूचि

में व्याकुल हो 'यह कैसा विधान है ? यह समस्त पट्टण शून्य लग रहा है। पुरजन मुझे देखकर, आँसुओं के बहते रहने पर, निन्दा करते हुए, दूर-दूर हटकर (कतराते हुए) जा रहे हैं। पुर के हाट वाजारों में समस्त सामग्रियाँ और वस्तुएँ शोभा क्यों नहीं देरही हैं !' ऐसा सोचते हुए, नगरी (महल) के सामने समुन्नति से रथ से उतरकर संरम्भ से हीन हो, भाई (शत्रुघ्न) के साथ,शून्य बने अन्त:पुर में गये। कैकेयी ने अत्यन्त प्रेम से अगवानी करने आकर, गले से लगा लिया। अब अधिक प्रेम से, अविरल भक्ति से कैकेयी को प्रणामकर, इच्छा से अपने मामा के दिये आभरण देकर, उनका कुशल समाचार अच्छी तरह कह सुनाकर, पूछा—'यह क्या नगर अत्यधिक शून्य होकर, वैभवहीन हो, आश्चर्य पैदाकर रहा है ? रामलक्ष्मण और राजश्रेष्ठ (दशरथ) कुशल ही हैं न ?' ऐसा कहनेपर चिन्तित होकर कैकेयी– ॥१४००॥

—भरत को देख, संभ्रम के दुगुना होने पर, दरहास (मंदहास) से युक्त वदन से (वह) झगडालू (स्त्री) बोली—'चाहकर, पूर्व में, तुम्हारे पिता ने मुझे बड़े प्रेम से, शोभा से दो वर दिये थे। 'एक के बदले भरत से उर्वी (पृथ्वी) पर शासन कराओ (और) दूसरे (वर) के लिए रघुराम को

"कैक! नातल्लिवै करुणकु वासि। यी कष्टवर्तनमेल कैकोंटि?
मुनि वेषमुन वनम्मुन रामुनुंडु। मनि पलक नेट्लु नोराडेने तल्लि?
१४१०

यरय निर्मल धर्मुलैन राघवुल। चरितंवु नीकु विचारिंप वलदे?
येनिक मार्तंड्रि केमनि वगतु? नेनु रामुनि मोंग वेमनि चूतु?
नेंत लोगुंदेनो यिच्चलो रामु? डेंत कोपिंचेनो येचि लक्ष्मणुडु?
येंत दूरेनो कान केगुचो सीत? यित केमय्येनो यिंति कौसल्य?
यंतः पुरांगनला सुमित्रयुनु। वंतचे नेमनि वगचुचुन्नारों?
वीरल कड केगि विलपिंप नाकु। नोरेदि? येट्लु मनोव्यथ दीर्तु?
निंक नीपुर मेल? यी भोगमेल? शंकिप कडवियै शरणंवु नाकु;
घन पापरति जेसि कडगि मी तल्लि। निनु नोक्क रक्कसुनिकि गन नोपु
गानि केकयराजु गन्न कूतुरवु। गानेर; वेमंदु गैक! नी तोड"
ननु माटलन्नियु नल्लन वोंचि। विनुचुन्न मंथर वेस जूचि सतुलु १४२०

दुर्गों (वनों) में भेजो', ऐसा मैंने विनति की। (तो) पिता के आदेश को मानकर, जनकजा (और) लक्ष्मण के साथ, मुनियों के ढंग से (की तरह) रघुराम वन को गया। पुत्र से विछुड़कर धरणीश मर गया। ईर्ष्यावश हो, तुम्हारे लिए (मैंने) यह उपाय किया है। अव राज्य को ग्रहण करो। प्रजा का पालन करो। सम्पत्ति प्राप्त करो। भुजशक्ति से शासन करो। (अपनी) वुद्धि से और (विपरीत वात) मत कहो'। ऐसा कहने पर (भरत ने) मूर्च्छित होकर, धीरे से होश में आकर, अत्यन्त क्रोध (भरी) दृष्टि से, कैकेयी को देखकर, कहा—'हे कैकेयी! मेरी माता होकर, करुणा से रहित होकर, यह कष्ट वर्तन (क्रूर आचरण) (तुमने) क्यों किया? मुनिवेप से राम को जंगल में रहने के लिए, कहने के लिए तुम्हारा मुँह कैसे खुल सका? ॥१४१०॥

—परिशीलन करने पर निर्मल धर्म (आचरण) वाले राघवों (रघुवंशियों) के चरित्र के वारे में तुम्हें विचारना नहीं चाहिए? अव मैं अपने पिता के वारे में कैसे दुखी होऊँ? राम के मुख को कैसे देखूँ? मन ही मन राम कितना व्याकुल हो गये होंगे? लक्ष्मण रुष्ट हो, कितना क्रुद्ध हो गये होंगे? कानन में जाते हुये सीता ने (मेरी) कितनी निन्दा की होगी? (बेचारी) कौसल्या की क्या दशा हुई होगी? अन्तःपुर की स्त्रियाँ (तथा) वह सुमित्रा शोक के मारे कितना विकल हो रही होंगी? इनके पास जाकर विलाप करने की मुझमें योग्यता कहाँ है? कैसे उनकी मनोव्यथा को दूर करूँ? अव मुझे यह नगर क्यों? यह भोग क्यों? (आवश्यकता नहीं है)।

"इन्नि पापंबुलु निदिय चेयिंचे" । नन्न शत्रुघ्नुडु ना वृद्ध वनित
गूनु डोंकुलु दीर ग्रोम्मुडि जार । मेनि सोम्मुलु वीड मैलतलु सूड
गडकालु वट्टि याकसमुन द्रिप्पि । पुडमि पै वैव नप्पुडु साल गलगि
कैकेयि सतु लेल्ल गनुकनि बरव । गैकेयि वधियिंप गडगि वच्चुटयु
भरतुडु सूचि "यी पापात्मुरालि । बोरिगोनि पापंबु बोंद नेमिटिकि?
'बैनुपेदि तल्लि जंपिन नीचु' लनुचु ।मनल जूडग रोयु मदि रामविभुडु;
अटुगान वल" दनि यतनि वारिंचि । यट वोयि कौसल्य यडुगुल कॅरगि
१४२७

भरतुडु कौसल्य योद्दकु बोवुट

तानु दम्मुडु शोक दंदह्यमान । मानसुलै पलुमारॆलुगॆत्ति
पलविंप नप्पु डाभरतुनि जूचि । यलिगि कौसल्य यिट्लनि दूर बलिकॆ

बिना सन्देह किये अरण्य ही मेरे लिये शरण्य है। महान् पाप से रति (प्रेम) करके, सप्रयत्न, तुम्हारी माता ने तुम्हें किसी राक्षस से जन्म दिया होगा। वरन् केकयराज की आत्मजा तुम नहीं हो। (अब) तुमसे (और) क्या कहूँ ?' इस प्रकार (कहनेवाले भरत की) समस्त बातें, धीरे से छिपकर सुननेवाली मंथरा की ओर देखकर (अन्य) स्त्रियों ने—॥ १४२० ॥

—कहा –'इसीने सारे पाप कराये हैं'। शत्रुघ्न ने, जिससे उस वृद्ध वनिता के कूबड़ की वक्रता जाती रहे, जूड़े के बाल खुल जायें, शरीर के आभरण छूट जाये, अन्यस्त्रियों के देखते-देखते उसकी टाँग पकड़ कर, आकाश में घुमाकर, ज़मीन पर डाल (पटक) दिया। (तव इसे देखकर) अत्यन्त व्याकुल हो, कैकेयी की स्त्रियाँ (दासियाँ) सकपकाकर भाग चलीं। (तब शत्रुघ्न) कैकेयी का वध करने के लिए निश्चयकर आने लगा तो उसे देख भरत ने कहा—'इस पापात्मा का वध करके पाप क्यों कमावें ? '—माता का वध करनेवाले महान् नीच' कहते हुए, रामविभु हमें देख घृणा करेंगे। अतः ऐसा मत करो'। (ऐसा) कह उसे रोक, उधर जाकर कौसल्या के चरणों में सिर रखकर, ॥ १४२७ ॥

भरत का कौसल्या के पास जाना

आप (और) अनुज ने शोक-संतप्त-मानस होकर कई बार, ऊँचे स्वर से विलाप किया। तव उस भरत को देखकर, रुष्ट हो, कौसल्या इस प्रकार कोसने लगी—'पति से बिछुड़ कर, सुत से बिछुड़कर, बहुल-दुखों के कारण शोक करना हमारे लिए उचित है। ॥ १४३० ॥

"बति बासि सुतु बासि बहुळ दुःखमुल । मति माकु शोकिंप मरि
तगुगाक! १४३०
नीकेल शोकिंप नेलकोनि यित? नी कोरिनट्लेल्ल नी तल्लि सेसे;
नन्न! नीविंक राज्यमु सेयुचुंडु" । मन्न जेतुलु मोड्चि यतडु भीतिल्लि
वेनुवेन्क केगि यव्वेलदि कौसल्य । गनुगोनि "वाक्कायकर्मचित्तमुल
श्रीरामुनकु गीडु सेसिति नेनि । धारुणि येनेल दलचितिनेनि,
नेनु गैक तलंपु नेरिगितिनेनि । ने नोक्क कीडैन नेरिगितिनेनि,
विनुमु मद्यंबु द्राविन वानि गतिकि । बेनुपेदि विप्रु जंपिनवानि गतिकि
देगि गुरुपत्नि बोंदिन वानि गतिकि । जगति पै ननि नोडि चनुवानि
गतिकि
जेनटि यै पसिडि म्रुच्चिलु वानि गतिकि । जेनसि गोहत्य सेसिनवानि
गतिकि
न्यायंबु दप्पिन नरनाथु गतिकि । नेयेड गोंडेकाडेगेडु गतिकि
शरणार्थि ब्रोवनि दुरितात्मु गतिकि । वरधर्मविक्रय वांछितु गतिकि
१४४०
गुरुवुल दिट्टिन कुटिलात्मु गतिकि । नरय स्वामिद्रोहि यगुवानि गतिकि
दल्लि दंड्रुल दिट्टु तनयुनि गतिकि । गल्ललाडेडु पापकर्मुनि गतिकि

—तुम्हें इतना शोक करने की क्या आवश्यकता है ? तुमने जैसे चाहा, वैसा ही सब तुम्हारी माता ने किया । हे तात ! अब तुम राज्य करते रहो' । (ऐसा) कहने पर, हाथ जोड़कर, वह (भरत) भीत होकर, पीछे-पीछे जाकर उस स्त्री (कौसल्या) को देखकर (बोला)—'(यदि मैंने) वाक्, काय, कर्म, चित्त से श्रीराम की हानि की हो, (यदि) धारुणी पर मैंने शासन करना चाहा हो, (यदि) मैंने कैकेयी के भाव (इच्छा) को जाना हो, (यदि) मैंने एक भी बुराई (बुरी भावना) जानी हो, तो सुनो, मदिरा पीनेवाले की गति को, श्रेष्ठ विप्र का वध करनेवाले की गति को, धृष्टता से गुरुपत्नी से सम्भोग करनेवाले की गति को, जगति में हारकर भागनेवाले की गतिको, नीच बन सुवर्ण चुरानेवाले की गति को, दुष्टता से गोहत्या करनेवाले की गति को, न्याय रहित होनेवाले नरनाथ की गति को, सर्वत्र चुगलखोर के जाने की गति को, शरणार्थी की रक्षा न करनेवाले दुरितात्मा (दुष्ट) की गति को, वरधर्म को बेच डालने की इच्छा रखनेवाले की गति को, ।। १४४० ।।

—गुरुओं को अपशब्द कहनेवाले कुटिलात्मा (कपटी) की गति को, स्वामी-द्रोह करनेवाले की गति को, माता-पिता को गाली देनेवाले पुत्र की गति को,

बरधनंबुल कासपडुवानि गतिकि । बरसति गलिसिन पापात्मु गतिकि
दनर नधर्मवर्तनुडेगु गतिकि । जनुवाड; देवतल् साक्षुलितटिकि
ना पापमुन जेसि नाकु नी पाप । मी पापकर्मुरालिट्टु गट्टेगाक!
येनु रामुनि केल येंग्गु गाविंतु? । नी नीच कर्मबु लेड? नेनेड?"
ननि येड्चु भरतु शोकाग्नुल पेंपु । गनुगोंनि कौसल्य गरमु शोकिंचि
"यिट्टुवंटि पुण्यात्मु नेल दूशितिनि।गटगटा! "यनि पोंक्कि कौगिट जेर्चि
भरतशत्रुघ्नुल पै व्रालि तूलि । परिताप मोंदुचु बलविंचुचुंडे
नंत वसिष्ठ संयमि वारि गोंनुचु । नंतः पुरंबुन कडलुचु बोव १४५०
"गनु गोंनगा रादु कैकेयि गन्न । तनयुंडु वी" डनि तन मीद नलिगि
पेंनुपोंद माणिक्य पीठि पै नोरगि । तनु जूड नोल्लनि तलपुन रोसि
कनुगव मूसिन गति नुन्न तंड्रि । गनुगोंनि भरतुंडु गड्डु मूर्छ बोंदि
तेलिसि क्रम्मर जूचि तीव्रंपु वगल । वेलुवरिंपगराक विलपिंप दोंडगि
"वसुधेश! केकयावनिपालुचेत । नसमानमणिभूषणावळि नीकु
गोंनिवच्चिनाड, गैकोंन नोल्लवेमि?। ननु जूड विदि येमि ? ना तप्पुलेमि?

झूठ बोलनेवाले पाप-कर्मा की गति को, परधन की इच्छा करनेवाले की गतिको, परपत्नी से सम्भोग करनेवाले पापात्मा की गति को, अधर्म-आचरण (करने) वाले की गति को प्राप्त करूँगा। इसके लिए देवता साक्षी हैं। मेरे पाप के कारण, इस पापकर्मवाली ने यह पाप मेरे सिर मढ़ दिया है। मैं राम का अहित क्यों करूँगा? ये नीचकर्म कहाँ (और) मै कहाँ ?' ऐसा कहकर रोनेवाले भरत की शोक-अग्नियों की अधिकता को देखकर, कौसल्या अधिक शोककर (यों बोली)—'हाय, ऐसे पुण्यात्मा को क्यों कोसा ?' ऐसा व्याकुल होकर, (उन्हें) गले से लगा, भरत-शत्रुघ्नों पर झुककर, लड़खड़ाते हुए, परिताप करते हुए विलाप करने लगी। तब संयमी वसिष्ठ उन्हें (साथ) लेकर, अन्तःपुर में दुखी होते हुए गये। ॥ १४५० ॥

'यह कैकेयी का गर्भजात पुत्र है। (अतः) इसे नहीं देखना चाहिए'। (मानों) यह समझ, अपने पर (भरत पर) रुष्ट होकर, माणिक्य-पीठ पर लेटकर, (भरत को) न देखने की भावना से, घृणा से (मानों) नेत्रयुग्म मूँद लिये हों, ऐसे पिता को देख, भरत अत्यधिक मूर्च्छित हो, (पुनः) होश में आकर, पुनः (उन्हें) देखकर, तीव्र दुख को प्रकट न कर सक विलाप करने लगा। (कहा)—'हे वसुधेश! केकय-अवनिपाल (राजा) द्वारा (भेजे गये) असमान-मणि-भूषणावलि तुम्हारे लिये लाया हूँ। स्वीकार करना क्यों नहीं चाहते हो ? यह क्या मुझे क्यों नहीं देखते हो ? मेरे

कडु वापमति यैन कैकेयि गन्न । कॉडु' कनि ननु जूड गूडदु गाक;
धरणीश! या सुमित्रा पुत्त्रु जूडु । पुर-पुर वॉक्कुचु वॉरलु चुन्नाडु
कडगि नी हस्तपंकजमुल वट्टि । तुडुव वेमिटिकि शत्रुघ्नु पै धूळि?
यितनि गटाक्षिपु; मितनितो वल्कु । मितनि गौगिट जेर्पु मित डेमि
सेसे १४६०

नी मंचितनमुनु नी दयारतियु । नी मॉगमोटयु ने डॅंदु वोयें?
गैकेयि नी बुद्धि गलचेंने तंड्रि? । नी किट्टि मरणंबु नेर्चुने कलुग?
जावरे नृपु लिट्लु चावरु गाक! । लेवें नेंय्यमु, लिट्लु लेवुगा कॅंदु!
वडतुलु मॅप्पिचि प्राणवल्लभुल । नडुगरे, यी यीवु लडुगरु काक!
यी कष्ट वर्तनं बेमिट गडव । जेकुरु? ने नेमि सेयुदु" ननुचु
वलुमारु वलविंचु भरतुनि जूचि । तॅलिसि वसिष्ठुंडु देरगॉप्प वलिकॅ
"ननघात्म! मी तंड्रि यवनि यंतयुनु । विनुतिप नरुवदि वेलेडु लेलॅ;
मनु मार्गनियति धर्ममु लॅल्ल जेसें । गॉन कॉनि मी यट्टि कॉडुकुल
गनियॅं;
गावुन नीवु शोकमु मानु मिक । गाविंपु नग्नि संस्कारादि विधुल"

दोप क्या है ? यह सोच कि 'अधिक पापमतिवाली कैकेयी का गर्भजात पुत्र है' मुझे (मेरी ओर) नहीं देखना चाहिये । (ठीक है ।) हे धरणीश ! उस सुमित्रापुत्र (शत्रुघ्न) को देखो । अत्यधिक दुखी हो, लोट रहा है । सप्रयत्न तुम्हारे (अपने) हस्त-पंकजों से पकड़कर, शत्रुघ्न (के शरीर) पर (लगी) धूल को क्यों नहीं पोंछते ? इसपर कृपा करो । इसके साथ बातें करो । इसे गले लगा लो । इसने क्या (पाप) किया है ? ॥ १४६० ॥

—तुम्हारी भलमानसी, तुम्हारी दयारति, तुम्हारा संकोच (मुखभीति) आज कहाँ (छिप) गये है? क्या कैकेयी ने तुम्हारी बुद्धि को क्षुब्ध कर दिया है ? क्या तुम्हारा ऐसा मरण उचित है ? (नहीं है ।) राजा मरते नहीं ? (मरते तो हैं) पर ऐसा नहीं मरते । स्नेह-सम्बन्ध नहीं होते ? (होते हैं) पर ऐसा कहीं नहीं है । स्त्रियाँ प्राण-वल्लभों (पतियों) को प्रसन्न कर, (वर) माँगती हैं, पर ऐसे दान तो नहीं माँगते । इस कष्टप्रद आचरण को कैसे पार जाऊँ ? मैं क्या करूँ ?' ऐसा कहकर, बार-बार विलाप करनेवाले भरत को देख, समझकर, वसिष्ठ ने उचित विधान से कहा—'हे अनघात्म ! आपके पिता ने समस्त अवनि पर विनुत (प्रशंसनीय) रूपसे साठ सहस्र वर्ष राज्य किया । मनु के (धर्म) मार्ग-नियति से समस्त धर्म किये । अन्त में आप जैसे पुत्रों को जन्म दिया । अतः तुम अब शोक मत करो । अग्नि संस्कार आदि विधियों को (सम्पन्न)

ननवुड्डु 'नौ गाक' यनि मरुनाडु ।मुनुल राजुल महात्मुल बिलिपिंचि १४७०

वलनॊप्प दशरथेश्वरु कळेबरमु । कलगॊनि तीर्थोदकमु लार्चि पेर्चि
वरवस्त्रभूषणावळुलु गैसेसि । तरमिडि वेदोक्त दानमुल् सेसि
परग विमाननंबु पै दॆच्चि पॆट्टि । यरुदैन मंत्रपूताग्नि सेपट्टि
तन तम्मुड्डुनु दानु दग वसिष्ठादि । मुनुलतो भरतुंडु मुंदर नडुव
ना विमानमुनकु नंतंत गदिसि । वाविरि नेड्चुचु वगल दूलुचुनु
मुनुकॊनि कौसल्य मॊदलुगा । वनित लंदरु गूडि वरुसनेतेर
सरयुवु चेरुव शव भूमियंदु । दिरमुगा सॊद बेर्चि त्रेताग्नु लिच्चि
यॊलसिन भक्ति वेदोक्त मार्गमुन । नॆलकॊनि दशरथ नृपति दहिंचि
तगुरीति मरि तिलोदकमुलु वोसि। तगवुतो बिंड प्रदानंबु सेसि
नगरिकि वच्चि युन्नति भूसुरुलकु। दग बितृ प्रीतिगा दानमुल् सेसि १४८०

तॆरगॊप्प बंड्रेंडु दिनमुलु वलयु । तॆरगुल नडपि वर्तिंचुचो नंत
गॊन क्रॊनि यिक्ष्वाकु कुलगुरुंडैन ।मुनि वसिष्ठुडु गार्यमुनु विचारिंचि
तानु राजन्युलु दग मंत्रिवरुलु । भानुसन्निभतेजु भरतुनि जूचि

करो'। ऐसा कहने पर 'वैसा ही हो' कहकर, दूसरे दिन मुनियों, राजाओं (और) महात्माओं को बुलाकर ॥१४७०॥

—शोभा से दशरथेश्वर के कलेवर (शव) को क्षुब्ध (हृदय से) तीर्थ-जल से स्नान कराया, पोंछा, ढंग से रखा, वर वस्त्र भूषणावलियों से सजाया, क्रम से वेदोक्त दान किया, श्रेष्ठ रूपसे विमान (अरथी) पर ला रखा, विलक्षण मन्त्रपूत अग्नि को हाथ में लिया, अनुज (और) वसिष्ठ आदि मुनियों के साथ भरत आगे-आगे चल पड़ा। उस विमान को अगल-बग़ल में घेरकर, रोती हुई, दुख से लड़खड़ाती हुई, कौसल्या आदि सभी वनिताएँ इकट्ठी होकर क्रम से आईं। सरयू (नदी) के पास, शवभूमि (श्मशान) में स्थिरता से चिता सजाकर, त्रेताग्नियों को दे कर, वरिष्ठ भक्ति से, वेदोक्तमार्ग से, स्थिरता से दशरथ नृपति (के शरीर) का दहन कर, समुचित रीति से तिलोदक दे कर, धर्म के अनुसार पिण्ड-प्रदान कर, नगरी (अन्तःपुर) में आकर, उन्नति (श्रेष्ठता) से, उचित रूपसे, पितृ-प्रीति हो, (ऐसा) भूसुरों को दान देकर, ॥ १४८० ॥

—समुचित रूपसे बारह दिन आवश्यक विधान (क्रियायें) (भरत) करता रहा। तब (इन सब कार्यों के होने के बाद) इक्ष्वाकु कुल के गुरु मुनि वसिष्ठ ने (भावी) कार्य के बारे में विचार कर, राजन्य, मन्त्रिवरों के

"वरतेज! मी तंड्रि परलोकमुनकु । नरिगॆ, श्रीरामुडु नरिगॆ गानलकु,
नुर्विकि राजु लेकुन्न गार्यमुलु । निर्वहिंपगरादु; निलुवरु प्रजलु
धारुणि चर्लियिंचु; धर्मवु लणगु । वैरुलु मिंतुरु; वर्णमुल् गलयु;
नवनि यराजकमै युंड दगदु । प्रविमलमति नीवु पट्टंबु वूनु"
मनि वुद्धि सॆप्पिन नम्मुनि नाथु । गनुगॊनि भरतुंडु गरमु गोपिंचि
"यिदि येमि मुनिनाथ! यित मूढुडवे? ।मदि नित यॆरुगवे मा कुलक्रममु?
नन्न गानल द्रोचॆ नक्कटा! नन्नु । गन्न तंड्रिनि जंपॆ गडगि मातल्लि;
१४९०

यित सालदे नाकु? निंक राज्यंवु । र्जितितुने येनु ? जॆप्पकु मिंक
गैकेयि कॊडुकनि कडगि पल्कॆदवु । गाक, यी तलपुलु गलवे नायंदु?
निट्टुन्न रूपुन नेनु मा यन्न । वट्टंवु गट्टॆद व्रार्थिंचि तॆच्चि;
काकुन्न मा यन्न गैकॊन्न नियति । गैकॊंदुगा, कॊंडु गलुगुने माकु?"
१४९४

साथ स्वयं भानु-सन्निभ (सम)-तेजवाले भरत को देखकर (कहा)—'हे वरतेजवाले ! आपके पिता परलोक सिधारे । श्रीराम काननों में गये । उर्वी (पृथ्वी) पर किसी राजा के विना कार्यों का निर्वाह नहीं करना चाहिये । प्रजा नहीं ठहरती (उच्छृङ्खल हो जायेगी) । धारुणी विचलित होगी । धर्मों का नाश होगा । वैरी प्रवल होंगे । वर्ण मिश्रित होंगे (वर्णसंकर होगा) । अवनि का अराजक (विना राजा के) नहीं रहना चाहिये । प्रविमल मति से तुम शासन (का भार) सम्हालो' । ऐसा समझानेवाले उस मुनिनाथ को देखकर, भरत अधिक क्रुद्ध हो (वोला)—'यह क्या मुनिनाथ ! इतने मूढ़ हो तुम ? हमारे कुल के क्रम के वारे में मन में इतना भी नहीं जानते हो ? हाय ! सप्रयत्न हमारी माता ने अग्रज को कानन में ढकेल दिया, मुझे (और) मुझे जन्म देनेवाले पिता को मार डाला । ॥ १४९० ॥

—क्या मेरे लिये इतना पर्याप्त नहीं है ? (इतना होने पर भी) अव मैं राज्य की चिन्ता करूँ ? अव आगे मत वोलो । शायद यह समझकर वोल रहे हो कि यह कैकेयी का पुत्र है । क्या मुझ में (सचमुच) ऐसी भावनाएँ हैं ? (नहीं हैं ।) अत्र जैसा हूँ, उसी रूप से मैं प्रार्थना करके अपने अग्रज को लाकर राजतिलक करूँगा । नहीं तो मेरे अग्रज ने जिस नियति (गति) को ग्रहण किया, मैं भी उसी (वृत्ति) को ग्रहण करूँगा । अन्य (कोई गति) हमारी नहीं हो सकती' ॥ १४९४ ॥

भरतुडु रामुनि योद्दकु बोवुट

ननि निश्चयमु चेसि यपुडु मंत्रुलनु । गनुगोनि "मा यन्न गान बोवलयु
देरुवुलु सक्कगा दिद्दिपु डखिल । पुर जनुलकु नेग बोसगिन रीति
नेड नेड विड्डदु लनेक वस्तुवुलु । गडु समग्रमुलुगा गाविंपु" डनिन
ननुकूलमति वारु नट्ल चेयिप । ननुपमोत्साहुलै यम्मरुनाडु
वंदि मागधुलुनु वरमंत्रि वरुलु । सुंदरी नट नर्त सुकुमार वरुलु
नवसहस्रमुलु दंतावळ घटलु । जवनाश्व कोटि लक्षयु शतांगमुलु
१५००
नरुवदि वेलुनु नमितपदाति । तरुचुगा नडुव नत्तरि बौर जनुल
जनपदस्थुल नेल्ल जातुल वारि । धनरत्न रासुल दग वसिष्ठादि
मुनुल राजुल मंत्रि मुख्युल गोनुचु । दन तम्मुडुनु, दानु, दल्लुलंदरुनु
ननुवुगा जतुरंतयानंबु लेक्कि । वेनुक रा भरतुंडु वेगमे कदलि
पोयि गंगा नदि पोंतन विडिय । नायत शुभशीलुडगु गुहुं डेरिगि
"कडगि रामुनि मीद गैकेयि कोडुकु । नडचु चुन्नाडु सेनल तोड" ननुचु

भरत का राम के पास जाना

ऐसा निश्चय करके तब मंत्रियों को देखकर (कहा)–'हमारे अग्रज के दर्शन के लिये जाना चाहिये। अखिल पुरजनों के जाने के लिये उचित रूपसे मार्गो को ठीक सजवाइये। जगह-जगह पर पड़ाव डालने के लिये अनेक वस्तुओं को बहुसमग्रता से (व्यवस्था) कराइये'। (ऐसा) कहने पर अनुकूलमति से उन्होंने वैसे ही (प्रबन्ध) कराया। (तब) अनुपम उत्साह से, दूसरे दिन, वंदी-मागध, श्रेष्ठ मन्त्रीवर, सुन्दर सुकुमार नट (और) नर्तकी, श्रेष्ठ नौ सहस्र मेघ सम दंतावली (हाथियों का समूह), एक करोड़ जवनाश्व, एक लाख रथ, ॥१५००॥

—अमित (असंख्य) पदाति (पैदल) के निरन्तर चलने पर, उस अवसर पर समस्त जातियों के पुरजन, (तथा) ग्रामीण, धनरत्नराशियों के साथ वसिष्ठ आदि मुनियों, राजाओं, मन्त्रिमुख्यों को साथ लेते हुए, अपने अनुज, स्वयं (और) समस्त माताओं के उचित रूप से चतुरन्तयान (रथ) चढ़कर पीछे आनेपर, भरत ने शीघ्र ही निकलकर, जाकर, गंगानदी के निकट पड़ाव डाला। आयत शुभशीलवाले गुह ने (इस विषय को) जानकर (सोचा)—'प्रयत्नकर रामपर आक्रमण करने के लिए कैकेयी का पुत्र सेनाओं के साथ जा रहा है'। (ऐसा सोचते हुए) अत्यधिक क्रुद्ध हो नावों को (घाट से) हटाकर, (अपने दल-) बल के साथ आकर भरत से

नलवुमै गोपिंचि नाव लागिंचि । वलमुतो वच्चि भरतुन कनियॆ
"भरत! रामुडु राज्य पदवि नी किच्चि । यरुदैन मुनि वृत्ति नडवुल नुंड
नीवु सेनल तोड निजशक्ति मॆरसि । पोवु चुन्नाडवु; पोलुने नीकु?
नेनु रामुनि बंट; नॆनिंक निन्नु । वोनीनु; नी वलंवुल संहरिंतु; १५१०
नडरि नी तोड वोराडि प्राणमुलु।विडिचिन मरि राम विभुनि पै वॊम्मु'
अनि रोपमुन गुहु डाडुवाक्यमुलु। विनि भरतुडु नव्वि विमलुडै पलिकॆ
'बरमात्मुडगु रामु ब्रार्थिंचि तॆच्चि । परग नयोध्यकु वट्टंबु गट्ट,
वोवु चुन्नाडनु; बुद्धिलो गीडु । भाविंप; नी विट्लु पलुकंगवलव"
दनि यन नातनि नक्कुन जेर्चि । तन मदि वॊगुलु नातनि चित्त मॆरिगि
यनुरक्ति भरतेशु नडुगुल कॆरगि । यनुपम वन्यंबु लैन वस्तुवुलु
गनु दनियग बॆक्कु कानुक लिच्च । कॊनि पोयि गुहुडु काकुस्थुंडु दॊल्लि
विडिसिन चोटने विडियिंचि, प्रीति। जडलुगट्टिन चोटु सनि यट्टुसूप
जननुलु मुनुलुनु सचिवुलु दानु । गनुगॊनि भरतुंडु गडुशोक मंदि
सीत रामुंडुनु जेरि परुंड । नातत तृणशय्यलंदु गन्पडॆडु १५२०
तरुचैन कनक वस्त्रमुल चिह्नमुलु । पॊरिगनुगॊनि मदि बुरपुर बोक्कि

बोला—'हे भरत ! राज्यपद तुम्हें देकर राम अनुपम मुनिवृत्ति से जंगलों में रहे (तो) तुम सेनाओं के साथ, अपनी शक्तिको प्रकाशित करते जा रहे हो। यह क्या तुम्हारे लिए उचित है ? मैं रामका सेवक हूँ। अब मैं तुम्हें (आगे) नहीं जाने दूँगा। तुम्हारे वल (सेनाओं) का संहार कर दूँगा। ॥१५१०॥ —अतिशयता से तुम्हारे साथ युद्ध कर मेरे प्राण छोड़ने (मरने) के वाद ही तुम प्रभुराम पर (आक्रमण करने) जाओ'। ऐसा रोप के साथ गुह के कहे वाक्यों को सुनकर, 'भरत हँसकर विमल हो यों वोला—'परमात्मा राम से प्रार्थनाकर, (उन्हें वापिस) लाकर, शोभासे अयोध्या पर (उनका) राजतिलक करने जा रहा हूँ। मन से उनका अहित नहीं सोचता। तुम्हें ऐसा नहीं कहना चाहिये'। ऐसा कहने पर उसे गले से लगाकर, अपनेमन की व्याकुलता को उसे जताकर, उसके मन (की वातको) जानलिया, तव अनुरक्ति से (गुह) राजा भरत के चरणों को नमस्कार कर, अनुपम वन्य वस्तुओं की, संतृप्त करते हुये, अनेक भेंट देकर, (अपने साथ) ले गया। (ले जाकर) गुह ने पूर्व में काकुत्स्थ (राम) जहाँ ठहरे, वहीं ठहराया, प्रीति से (राम ने जहाँ) जटाएँ वाँधी थीं, ले जाकर वह स्थान दिखाया। दिखाने पर माताओं, मुनियों, सचिवों के साथ स्वयं (उसे) देखकर, अत्यन्त दुखी हुआ। सीता और राम के मिलकर सोने पर, आतत तृण-शय्याओं पर दिखाई पड़ने वाले— ॥१५२०॥

घनशोकमुनु ब्रोंदि कडु दीनुडगुचु । मुनु राघवुडु जटल् मौनसि धरिंचे
नेक्कड ननि भरतेश्वरुं डप्पु । डक्कडके मुनु ननुवुगा नेगि
पनवुचु मरि मर्रिपालु देप्पिंचि । तन तम्मुडुनु दानु धरियिंचे जडलु
भरतुंडु मरुनाडु ब्राह्मिककर्म । परुडुनै गुहु डोप्प बन्निंचिनट्टि
येनूरु बलुनाव लेक्कि वेर्वेर । तानु दल्लुलु मुनुल् दग मंत्रिवरुलु
सकल सेनल तोड जाह्नवि दाटि । यकलंकुडगु गुहु नपुडु दोड्कोनुचु
१५२७

भरतुडु भरद्वाजाश्रममु जेरुट

नतडु सूपिन त्रोव नट वोयि पोयि । ऋतु होमतत धूम कबळित व्योम
कृतकांबुद स्तोम केवल मुदित । कृतलास्य विपिन बर्हिण वर्हजाल
रचितांतरांतर रत्न विचित्र । खचित तोरण पथिक्रममयि योप्पु
१५३०

ना भरद्वाज संयमि याश्रममुन । काभरतुडु वोयि यनति दूरमुन
जतुरंग बलमुल जतुरत निलिपि । यतुल पुण्यात्मकुंडगु भरद्वाजु

—अनुपम कनकवस्त्रों के चिह्नों को बार-बार देखकर, मन में अधिक व्याकुल होकर, अधिक शोक को प्राप्तकर, अतिदीन होते हुए राजा भरत ने पूछा 'पूर्व में राघव (राम) ने जटाएँ कहाँ धारण कीं'। तब वहीं प्रथमतः जाकर, व्याकुल होते हुए, फिर वड़ का दूध मंगवाकर, अपने अनुज के साथ स्वयं जटाएँ धारण कीं। दूसरे दिन भरत ब्राह्मीक-कर्मपर (ब्रह्ममुहूर्त में किये जानेवाले कर्मों में रत) होकर, गुह के द्वारा शोभा से भिजवाए पाँच सौ नावों पर, स्वयं, माताओं, मुनियों और मंत्रिवरों के साथ अलग-अलग नावों पर बैठकर, सकल सेनाओं के साथ जाह्नवी को पारकर, अकलंक गुह को तब साथ लेकर, ॥ १५२७ ॥

भरत का भरद्वाजाश्रम पहुँचना

—उसके दिखाए मार्ग पर, उधर जाकर, यज्ञ-होम के समूह से परिव्याप्त आकाश में कृतक मेघों के भ्रम के कारण केवल-मुदित हो लास्य करनेवाले जंगली मोरों के वर्हिजाल (मोर-पंख) से अन्तरान्तर (जगह-जगह) पर रचित विचित्र रत्नों से खचित तोरणों से युक्त मार्गों से शोभायमान—॥ १५३० ॥

—उस भरद्वाज संयमी के आश्रम में भरत गए। (जाकर) थोड़ी दूर पर चतुरंग बल को चतुरता से खड़ाकरके, अतुलपुण्यात्मा भरद्वाज को देख

गनि भक्ति तो नमस्कारमुल् सेय । गनि यम्महामुनि गड्डु नलिगि पलिकें
"भरत! यी चतुरंग वलमुल गोनुचु । भरित सन्नाह संभ्रमुडवै नीवु
गडुशांत वृत्ति राघवु डरण्यमुल । वडि युंड नातनि पै वोव दगुने?"
यनुचुन्न मुनिकोपमंतयु नेंरिगि । विनतुडै भरतुंडु वेंरचुचु वलिकें
"जानकीवल्लभु 'सकल राज्यंवु । वूनुमु नी' वन वोयेद गानि
योंडु भावमुन बो नोमुनिनाथ! । योंडुगा दलपकु मुल्लंवु लोन"
ननिन संतोषिंचि यम्मुनि वलिकें ।"ननघात्म ! नीवु नी यखिल सैन्यमुलु
मनमार मा याश्रममुन नेडुंडि । विनुति मे मोनरिंचु विदारगिंपु" १५४०
मनि विश्वकर्मनु नटकु रप्पिंचि । "घन चित्रपुरि योंडु गल्पिंचि यंदु
वारु वीरन केंल्ल वारिकि दगिन । मेरल निड्लु निर्मिपुमी" वनिन
नैदु योजनमुल नत डोक्क पुरमु । भूदेवि चरण नूपुरमु निर्मिचें
नंदु गांचनमयंवै योक्क राज । मंदिरं वमरें, दन्मध्य भागमुन
श्वेतातपत्रोरुसिंहासनमुन । जातुरि नोक सभासदन मिपोंदें;
नप्पुडु मुनियाज्ञ नट भरतुंडु । विप्पैन गृहमु ब्रवेशिंचि यंदु

भक्ति से नमस्कार किया । उसे (भरत को) देखकर, वह महामुनि अत्यन्त रुष्ट हो बोले—'हे भरत ! इन चतुरंग वल (युक्त सेनाओं) को साथ लेकर, भरित-सन्नाह (तैयारी)-संभ्रम से युक्त तुम्हारा, अतिशान्त वृत्ति से जंगलों में निवास करनेवाले राघव पर आक्रमण करने जाना उचित है ? (नहीं है।) (ऐसा) कहनेवाले मुनि के समस्तकोप को जानकर, विनत हो भरत डरते हुए (यों) वोला—'जानकी-वल्लभ से यह कहने जा रहा हूँ कि 'तुम समस्त राज्य को ग्रहण (स्वीकार) करो' । हे मुनिनाथ ! मेरे मन अन्य कोई भाव नहीं है । मन में अन्यथा मत समझिये' । (ऐसा) कहने पर सन्तुष्ट होकर वह मुनि वोले—'हे अनघात्म ! तुम (और) तुम्हारी सेनाएँ प्रसन्नता से आज हमारे आश्रम में रहकर, विनुति से हमारे भोज को स्वीकार करो' । ॥ १५४० ॥

(ऐसा) कह, विश्वकर्मा को वहाँ वुलाकर (आदेश दिया)—'एक महान् विचित्र नगर का निर्माण कर (और) उसमें समस्तजनों के लिए समुचित घर वनाइये' । कहने पर उसने पाँच योजनों का एक नगर वनाया जो भूदेवी के चरण नूपुर (के समान) था । उसमें कांचनमय एक राजमन्दिर शोभित हुआ । उसके मध्यभाग में श्वेत आतपत्र (छत्र) से युक्त उस (महान्)-सिंहासन के चातुर्य से युक्त एक सभासदन शोभायमान हुआ ।

सिंहासनमु गांचि "श्रीराम नृपति ।सिंहार्हं" मिदि यनि चेतुलु मोंगिचि
या समीपंबुन ऩत डोक्क पीठि । नासीनुडै मंत्रु लंदरु गोलुव
नुन्नचो मुनियाज्ञ नोक्कट वच्चि । किन्नर गंधर्व खेचरांगनलु
नच्चर नेच्चेलु लाट पाटलुनु । नच्चेरुवुग जूपि रतनि सन्निधिनि १५५०
ना रीति सकल जनावळि यिड्ल । नारुढि वेलसे नाट्य प्रसंगमुलु;
निलमीद दिविमीद नेये विशेष । मुलु गल वन्नि या मुनियाज्ञ वच्चे;
जानपदुल् पौर जनमु लंदरुनु । स्नानमुल् गाविंचि चलुवलु गट्टि
मंदार पुष्प दाममु लूनि दिव्य । चंदनं बलदि भूषणमुलु दाल्चि
वेवेल तेऱगुल वितगा वेल्पु । टावु चतुर्विधाहारंबु लोसग
बरि तृप्तुलै दिव्यभामलु दमकु । सुरत विशेषमुल् सोक्कुचु देलुप
जन्म साफल्यंबु समकूडे ननुचु । दन्मयावस्थल दविलि क्रीडिप
नम्मुनियाश्रमं बट्टु सूड नोप्पे । निम्मुल ना स्वर्ग मेवगिंचुचुनु;
ईरीति भरतेशु डेल्ल सैन्यमुलु । ना ऋषि बोगडुचु ना रात्रि दीर्प
मरुनाडु पुरमु दन्मंदिरावळुलु । देऱगंटि चेलुलु नदृश्य मौटयुनु १५६०
भरतु डत्याश्चर्यभरितुडै यंत । वर तपोनिधि भरद्वाजुनि जेरि

तब मुनि की आज्ञा से भरत ने विशाल गृह में प्रवेश किया, उसमें सिंहासन को देख 'यह श्रीराम-नृपति-सिंह (राजसिंह) के योग्य है' कह हाथ जोड़कर, उस (सिंहासन) के निकट एक पीठ (आसन) पर आसीन हुआ। समस्त मन्त्री सेवा में हाज़िर थे। तब मुनि की आज्ञा से वहाँ आकर, किन्नर-गन्धर्व-खेचर स्त्रियों, (तथा) अप्सरा-सखियों ने उसके समक्ष विचित्र रूप से संगीत और नृत्य का प्रदर्शन किया। ॥१५५०॥

उस प्रकार समस्त जनसमूह के घरों में नृत्यप्रसंग सम्पन्न हुआ। भूमि पर (और) स्वर्ग में जो-जो विशेषताएँ थीं, वे सब मुनि की आज्ञा से (वहाँ) आईं। ग्रामीण (और) नागरिक सभी ने स्नान किया, स्वच्छ वस्त्र पहने, मन्दार पुष्प-दाम (हार) धारण किए, दिव्य चन्दन का लेप किया, भूषण धारण किये, हज़ार-हज़ार पद्धतियों में विलक्षणता से काम धेनु के चतुर्विध आहार देनेपर, परितृप्त हो, दिव्य स्त्रियों के आनन्द मग्न हो सुरत-विशेष (रतिविधान) बताने पर, तन्मय होते हुए (अयोध्या के नागरिक) (रति) क्रीड़ाएँ करते रहे कि जन्म (लेने की) सफलता प्राप्त हो गई है। (इस प्रकार) वह मुनि-आश्रम, स्वर्ग का तिरस्कार करता हुआ, शोभायमान दीखा। इस रीति से राजा भरत (और) समस्त सेनाओं ने उस ऋषि की प्रशंसा करते हुए, वह रात बिताई। दूसरे दिन वह नगर, वह मन्दिर-समूह, अप्सरा सखियाँ (सब) अदृश्य हो गईं। ॥ १५६० ॥

प्रणमिल्लि "मी तपोबल महत्त्वमुलु। प्रणुतिंप दरमे या परमेष्ठिकैन !
ने निंक रघुरामु निनकोटि धामु । गान बोयेद" नंत गन्न तल्लुलनु
नव्वेळ म्रोक्किंप नतडु "वीरेव्व । रेव्वरु, वेर्वेर नेरिगिंपु" मनुडु
"धीरात्म! नृपु पेद्द देवुलै येल्ल । वारिलो वन्नेयु वासियु गांचि
कडुपु सल्लग रामु गांचियु वगल ।नुडुकु चुन्नदि तद्वियोगाग्नि शिखल
बरिचित-जन्म-साफल्य-कौसल्य ।परिकिंपु मिदे मुनिपति-सार्वभौम!
कौसल्यसति वामकर मंट बट्टि । कै सेतलुडि वोयि गत पुष्प कर्णि
कारशाखयु बोलि कै व्रालि युन्न । यी राम श्रीराम नेंड बाय लेनि
या लक्ष्मणुनि गन्न यट्टि पुण्यात्मु । रालु सुमित्र; पराकु मुनींद्र! १५७०
ये तल्लिकै कान केगे मा यन्न?। ये तल्लि कतमुन नील्गे मा तंड्रि
ये तल्लि कोर्के नन्नितकु देच्चे? । ना तल्लि मा तल्लि हत पुण्यपाक
कैक गन्गोनु" मंचु गद्गद कंठु । डै कडपट शोक मग्गलंबैन
नूरक युन्नचो नूरार्चि यतनि । ना ऋषि भाविकार्यमु जूचि पलिकें:

—(तो) भरत अति आश्चर्य-भरित हो, तब श्रेष्ठ तपोनिधि भरद्वाज के पास जाकर, प्रणामकर (बोला)—'आपके तपोबल-महत्त्व की प्रणुति (प्रशंसा) करना उस परमेष्ठी के लिए भी सम्भव है ? (नहीं है।) अब मैं इन-कोटिधाम (कोटिसूर्य के धामवाले) रघुराम को देखने जाऊँगा'। कहकर, उस अवसर पर माताओं से प्रणाम कराने पर, उसने (मुनि ने कहा)—'ये कौन कौन है ? अलग-अलग से बताओ (परिचय दो)'। तब (भरत ने कहा)—'हे धीरात्मा ! राजा की ज्येष्ठ देवी होकर, सब में विलास और कीर्ति प्राप्त कर, कोख की सफलता के रूप में राम को (पुत्र के रूप में) प्राप्त करके भी, तद्वियोग्नि-शिखाओं में तप्त हो रही है, यह परिचित-जन्म-साफल्यवाली कौसल्या है। हे मुनिपति-सार्वभौम ! यह देखिये। सति-कौसल्या के वाम-कर को पकड़कर, अलंकारों से रहित होकर, पुष्प-रहित कर्णिकार (कनेर) के समान, (दुखभार से) झुकी हुई वह रामा, श्रीराम से बिछुड़ न सकनेवाले उस लक्ष्मण को जन्म देनेवाली पुण्यशीलवाली सुमित्रा है। हे मुनीन्द्र! सावधान (होकर सुनिये),॥१५७०॥
—जिस माता के कारण हमारे अग्रज काननों में गये, जिस माता के कारण हमारे पिता मर गये, जिस माता की इच्छा ने मेरी यह दशा कर दी, उस मेरी माता, हमारी माता, हतपुण्यवाली कैकेयी को देखिये'। (ऐसा) कहते हुए गद्गदकण्ठवाला हो, अन्त में शोक की अधिकता के कारण, भरत मौन हो रहा। उसे सान्त्वना देकर, भावी कार्य के बारे में विचार कर ऋषि (यों) बोले—'इस कैकेयी ने लोकैकहित किया है। आप

"नी कैंक लोकैक हितमु गाविंचें;। मी कॅल्ल दॅल्लमौ मीद दा" ननुचु
मरि रामुडुन्नट्टि मार्गंबु दॅलिपि। तॅऱगॉप्प नम्मौनि दीविप वॅडलि
सिंधुरबृंहित सेनानुलाप। सैंधव हेषित स्यंदन नेमि
रवमुल कलिकि यरण्य मृगाळि। दिविऱिन भीति नल्दॅसलकु बाऱ
बल च्चरणोद्धूत पांसु संघात। मलिनीकृतादित्य मंडलुंडगुचु
ना चित्रकूटाद्रि कर्थितो भरतु। डेचि सेनलु दानु नेगु चुन्नंत १५८०
नट जित्रकूटाद्रि यंदु राघवुडु। कुटिल कुंतल सीत गूडि मोदमुन
"गनुगॉंटिवे यिन्नगंबु बिबोष्ठि। कनु दम्मुलकु विंदु गाविंचॆ मनकु
निन्नग महिम दा नॅन्नग वशमॆ। पन्नग पति कैन भामाललाम!
गुरुतैन सॅलयेटि घुमघुमध्वनुल। नुरुमु लटंचु बॅल्लुब्बि नीकुरुल
बुरुडिंचु तन गॉप्प पुरि विच्चि नॅमलि। पॉरिबॉरि नाडॆडु; बूबोडि! सूडु;
कांतरो! यी चेंचु कांतल गंटॆ? दंति कुंभंबुलु दम चन्नु गवकु
नॅन वच्चुटॅट्लनि यिभकुंभ दळन। मॉनरिंचि तन्मणु लॉप्प दाल्चॆदरु,

---

सबको वह बाद में स्वयं स्पष्ट होगा'। (यह कहकर) फिर राम जहाँ थे, उस मार्ग के बारे में बताया (और) ढंग से आसीसा। (तब) हाथियों की चिंघाड़, सैनिकों की बातचीत, घोड़ों की हिनहिनाहट, रथों के नेमी रव, (आदि) की संयुक्त (ध्वनि) से अरण्य की मृगावली अधिक भीति से चारों दिशाओं में भागने लगी। बल (सेना) के चरणों से उठी धूल के समूह से आदित्यमण्डल को मलिन करते हुए (समय) भरत के चित्रकूट पर्वत को उत्कट अभिलाषा से सेनाओं के साथ जाते समय—॥ १५८० ॥

—वहाँ चित्रकूटाद्रि पर राघव कुटिल कुन्तलों वाली सीता के साथ मोद से (वार्तालाप कर रहे थे)। (राम ने कहा)—'हे बिम्बोष्ठी! इस नग (पर्वत) को देखा है तुमने! हमारे कमलनेत्रों को भोज (आनन्द) दे रहा है। हे भामाललामा! पन्नगपति (आदिशेष) के लिए भी इस पर्वत की महिमा का वर्णन सम्भव है? (नहीं है।) विस्पष्ट निर्झरों की गम्भीर ध्वनियों को मेघगर्जन समझकर, अत्यन्त आनन्द से, तुम्हारी केशराशि की समता करनेवाली अपनी बड़ी पंखराशि को खोल (फैला)कर, मोर बार-बार नाच रहा है। हे पुष्प के समान शरीरवाली! देखो। हे कान्ता! इन चेंचु (जंगली जाती की) स्त्रियों को देखा है? गज-कुम्भ (-स्थल) अपने कुचकुम्भों की समता क्यों करें, (यह सोच) गजों के कुम्भस्थलों का विदारण करके, उनकी मणियों को शोभा से धारण करती हैं। यह दिव्य (अमर)-जनों का संकेत प्रदेश (अभिसार का प्रदेश) है अतः इस पर्वत (प्रदेश) में दिव्यसुगंधियाँ फैल रही हैं। उस झाड़ी को देखो, वह पदतल

दिव्युल संकेत देशंबु गान । दिव्य वासनलु संधिंच नी कोन
पदतलालक्तक भासुरंबैन । पोंद सूडु गंधर्व भोग गेहंबु;
किन्नरकंठि ! यी गिरिकंदरंबु ।किन्नर किन्नरी गीत सद्गोष्ठि१५९०
कलकंठ रवसहकार पल्लवमु । कलकंठि ! यी सहकारंबु जूडु;
परि परि विधमुल परुवंपु विरुल । परिमळंबुलु गदंबमुग गूर्चुचुनु
मलयानिलुंडु गोमल यान लील । मलयु चुन्नाडिदे! मन मीद नवल!
यल्लदे! चूचिते ? हल्लकनिकर । फुल्लकैरव कुंज पुंजरंजितमु
सालतमाल रसाल तक्कोल । ताल हिंताल कुद्दाल कूलमुन
नमलिन पुलिन मध्यासनासीन । समुचित मुनिवृंद संदीप्तमैन
मंदाकिनी नदीमणि गन्नु ललर । मंद यान विलास मथित मराळ"
यनि यनि पलुकुचु नवनीरुहमुल । गनुपट्टु पोंदरिड्ल घनकंदरमुल
शैल शृंगंबुल सानुदेशमुल ।नोलि विनोदिंचुचुन्नचो गडगि१५९९

भरतुनि जूचि लक्ष्मणुडु संदेहिंचुट

वलुविडि चनुदेंचु भरत सैन्यमुल । कलकलध्वनुल नाकर्णिंचि विट्टु
१६००

के अलक्तक (महावर) से भासुर (शोभायमान) गन्धर्व-भोग-स्थली है। हे किन्नरकण्ठ वाली ! यह गिरि कन्दरा किन्नर (और) किन्नरियों के गीतों की सद्गोष्ठी (का स्थान) है। ॥ १५९० ॥

—हे कलकण्ठी ! इस सहकार (आम के पेड़) को देखो। कलकण्ठ (कोयल) की ध्वनि के सहकार (करनेवाले) पल्लवों से युक्त है। विविध प्रकार के यौवन से युक्त (विकसित) फूलों के परिमल को एकत्रित करते हुए मलयानिल कोमल-यान-लीला (मन्द-मन्द गति) से, हे अबला ! हम पर अपना प्रभाव डाल रहा है। उधर देखो ! फुल्ल-कैरव-कुंज-पुंज (से) रंजित, साल, तमाल, रसाल, तक्कोल, ताल, हिन्ताल, कुद्दाल (आदि वृक्षों से) युक्त कूलवाली, अमलिन पुलिनों (तट) पर मध्यासन में आसीन समुचित मुनि-वृन्दों से संदीप्त मन्दाकिनी-नदीमणि को, हे मन्दगमन के विलास से मराल (हंस) का भी तिरस्कार करनेवाली (सीता) ! नेत्रोत्सव करते हुए देखो'। ऐसा कहते हुए (राम और सीता) वृक्षों के (नीचे) दिखाई पड़नेवाले लताकुँजों में, महान् कन्दराओं में, शैल शृंगों में, तराइयों में प्रेम से आनन्द उठा रहे थे। (तब) सप्रयत्न—॥१५९९॥

भरत को देख लक्ष्मण का सन्देह करना

—चढ़ आनेवाले भरत की सेना की कलकलध्वनियों को सुनकर, अधिक ॥१६००॥

कलगि नलगड बारु करि वराहमुल । बलु मृगंबुल जूचि बलधूळि जूचि
"यिट धूळि दिवि बर्व नेमि कारणमों? यट वोयि यरसि र'म्मनिन
लक्ष्मणुडु
वेवेग नोंक महावृक्षाग्र मेक्कि । भाविंचि युत्तरभागंबु नंदु
बलमुल बोंडगांचि भानु वंशजुल । बलु बिरुदुल तोडि पडगलु गांचि
यिच्चलो "भरतेशु डिट रामुमीद । वच्चुचुन्ना' डनि वडि निश्चयिंचि
पटु वज्र मद्रि पै बडुभंगि दोप । जटुल सत्त्वमुन वृक्षमु डिग्ग नुरिकि
वारक रोष दुर्वारुडै वच्चि । या राम विभु जूचि यनियें लक्ष्मणुडु;
अडविकि निन्नु बोनडचि नी राज्य । मडरि यंतयु गोंनि यंतट बोक
घन शक्ति नी मीद गैकेयि कोंडकु। सनुदेंचुचुन्नाडु सबलुडै नेडु;
अवेंचूडु! कोविदारादि ध्वजंबु । लवें चूडु! भटुल वीरालापमुलुनु १६१०
शरचापकवचमुल् सरिबूनि नीवु । भरतुनि कॆदुरुगा बलुविडि नडवु
निलुवकु, कादेनि नीवु सीतयुनु । दोंलगुमु; नीशांति दुदि नित सेसें!
ने निक सैरिप; निट वच्चें नेनि । वीनि जंपेंद" नन्न विनि रामविभुडु
"नाकु दम्मुडवय्यु ना तोड बुट्टि । नी किट्टि यविनीति नेडेल पुट्टॆ?

—क्षुब्ध होकर, चारों दिशाओं में भागनेवाले करि (हाथी), वराह (आदि) अनेक मृगों को देखकर सेना (के आगमन की)-धूल को देखकर, (राम ने कहा)—'यहाँ धूल के आकाश में उठने का क्या कारण है? उधर जाकर पता लगाकर आओ'। (ऐसा) कहने पर लक्ष्मण अतिवेग से एक महावृक्ष के अग्र (शिखर) पर चढ़कर, सोचकर, उत्तर भाग (दिशा) में सेनाओं को देखकर, भानुवंशजों की अनेक विरुदों से युक्त पताकाओं को देख, मन में झटसे निश्चय किया कि 'राजा भरत अब राम पर(चढ़)आ रहा है'। चटुल सत्त्व से (लक्ष्मण) वृक्ष पर ऐसा कूद पड़े मानों पटु वज्र अद्रि (पर्वत) पर गिर रहा हो। निरन्तर के रोष से दुर्वार होते हुए, आकर, उस प्रभुराम को देखकर लक्ष्मण बोले—'जंगलों में तुम्हें भेजकर, तुम्हारे समस्त राज्य को अतिशयता से लेकर, उतने से न रुककर, अधिक शक्ति से कैकेयी का पुत्र तुम पर आज ससैन्य चढ़ आ रहा है। वे ही देखो, कोविदार आदि ध्वजाएँ, वे ही देखो, सैनिकों के वीरालाप। ॥१६१०॥

—ठीक तरह से शर, चाप, कवच धारणकर, तुम भरत का सामना करो, (उस पर) आक्रमण करने चलो। रुको मत, नहीं तो तुम और सीता हट चलो। तुम्हारी शान्ति (शान्त स्वभाव) ने अन्त में इतना (बुरा हाल) कर दिया है। मैं अब (आगे) सहन नहीं करूँगा। यहाँ आया तो (मैं)

भ्रातृ वत्सल मूर्ति परमपावनुडु । नीति कोविदुडु मानित धर्मपरुडु
भरतुंडु नी कंटे भक्तुंडु नाकु । भरतुनि देस नोक्क पापंबु लेदु;
मनल नयोध्यकु मरल न्नार्थिप । जनुदेंचु चुन्नाडु; संदेह मुडुगु;
कडवकु" मनुडु राघवु नाज्ञ पेंपु । गडव भीतिल्लि लक्ष्मणु डूरकुंडे
भरतेशु डंतट बौरुल हितुल । दोरल समरस्त योधुल नोक्क चोट
विडियिंचि तल्लुल वेंनुक दोड्तेर । गडक वसिष्ठुनि गट्टड सेसि १६२०
गुरुभक्ति सूतुडु गुहुडु दोडुगनु । नरिगि तम्मुडु दानु नग्गिरि येक्कि
वरुस नय्यडवि त्रोवलु देलियुटकु । गरर्मथि सौमित्रि गट्टिन यट्टि
गुरुतुलु गोन्नि गन्गोनुचु नलगडल । नेरि बरिकिंचुचु निखिलास्त्रशस्त्र
जाल पालित सुविशालांगणमुल । जाल जेन्नगु पर्णशाल केतेंचि १६२४

भरतुडु मुनिवेषधारुलैन रामलक्ष्मणुल जूचुट

मुनिवेषमुन जाल मुदमंदु रामु । गनुगोनि यात्मलो गलिगि शोकिंचि

उसका (भरत का) वध कर दूँगा'। (ऐसा) कहने पर, सुनकर प्रभुराम ने (कहा)—'मेरे अनुज होकर, मेरे सहोदर होकर भी, तुम में आज यह अविनीति कैसे पैदा हुई ? भातृवात्सल्य की मूर्ति, परम पावन, नीतिकोविद, मानित (सम्मान्य)-धर्म-पर (तत्पर) भरत तुम्हारी अपेक्षा मेरा अधिक भक्त है। भरत की ओर (के मन में) एक भी पाप नहीं है। हमसे अयोध्या लौट चलने की प्रार्थना करने आ रहा है। सन्देह को छोड़ दो। छोड़ो'। ऐसा कहने पर राघव के आदेश का उल्लंघन करने में भीत होकर लक्ष्मण चुप रहा। तब राजा भरत पुरजन, हितू, उमराव, समस्त योद्धाओं को एक स्थान पर ठहराकर, माताओं को पीछे ले आने के लिए सप्रयत्न (सविनय) वसिष्ठ से प्रार्थनाकर, ॥ १६२० ॥

—अधिक भक्ति से सूत (सुमन्त्र), गुह के साथ, अनुज के साथ, आप उस गिरि पर चढ़कर, क्रम से उस जंगल में मार्ग को पहचानने के लिए, सौमित्र ने बड़ी इच्छा से जो कुछ संकेत बाँधे (वनाए) थे, उन्हें देखते (पहचानते) हुए, चारों ओर ध्यान से देखते हुए, (भरत ने) निखिल (समस्त) अस्त्र-शस्त्र जाल (समूह) से युक्त विशाल आँगनों से अधिक शोभायमान पर्णशाला में आकर, ॥ १६२४ ॥

भरत का मुनिवेषधारी राम लक्ष्मण को देखना

—मुनिवेप में अत्यन्त मुदित होनेवाले राम को देखा, मन में विकल हो

"पौलुचु कांचन गृहंबुल नुंडुवाडु । ललि दूलि पर्णशालल नुन्नवाडु
पौगडौंदु पूल पान्पुन नुंडुवाडु । जगति पै बूरि सैज्जनु नुन्नवाडु
नेऽसि किरीटंबु नेरि दाल्चुवाडु । तरुचैन जड लौप्प दालिच युन्नाडु
नोलि राजुलु गौल्व नुंडेडि वाडु । लोलत मृगमुल लो नुन्नवाडु
मेलिचंदनमुनु मेयि बूयुवाडु ।धूळि धूसरितुडै तूलि युन्नाडु; १६३०
मौनसि दिव्यांबरंबुलु गट्टुवाडु । मुनिवृत्ति वल्कलंबुलु गट्टिनाडु
पौसग रसान्नमुल् भुजियिंचुवाडु । कसरुगायल ग्रौद्दुगडपु चुन्नाडु
चूचिते शत्रुघ्न ! शुभमुर्ति रामु । डीचंदमुन दुःख मीदु चुन्नाडु;
कैकेयि पापंबु गडुपुन बुट्टि । यी कष्ट दुर्दश लिट्टु सूड वलसें"
ननुचु दम्मुडु दानु ना राम विभुनि ।गनि म्रौक्कुटयु वारि गौगिट जेर्चि
कन्नुल हर्षाश्रुकणमुलु दौरुग । वेन्नुलु निविरि भाविंचि दीविंचे;
नहिमांशुकुलुनकु ना सुमंत्रुंडु। गुहुडु म्रौक्किरि भक्ति कौन साग नपुडु;
धरणिजकु सुमित्रातनूजुनकु । भरत शत्रुघ्नुलु प्रणमिल्लि निलुव

शोककर (भरत ने शत्रुघ्न से कहा)—'शोभायमान कांचन गृहों में रहनेवाला (आज) लालित्य से शून्य हो, पर्णशालाओं में निवास कर रहा है। सराहनीय पुष्प-शय्या पर रहनेवाला (आज) जगति में पर्णकुटी में रह रहा है। शोभा से किरीट को सुन्दरता से धारण करनेवाला (आज) विलक्षण जटाओं को सुन्दरता से धारण किया हुआ है। क्रम से राजाओं की सेवाएँ ग्रहण करते रहनेवाला, (आज) बड़ी इच्छा से मृगों के मध्य में है। श्रेष्ठ चन्दन को शरीर पर लगानेवाला (आज) धूलिधूसरित बना हुआ है ॥ १६३० ॥

—उपक्रम करके दिव्याम्बर धारण करनेवाला, मुनिवृत्ति से (आज) बलकल पहने हुए है। समुचित रीति से (षड्) रसों से युक्त अन्न खानेवाला (आज) कच्चे फलों से दिन बिता रहा है। देखा शत्रुघ्न ! शुभमूर्तिवाला राम इस प्रकार दुख में ऊभ-चूभ हो रहा है। कैकेयी के पापी गर्भ में जन्म लेकर, ये कष्ट (-प्रद) दुर्दशाओं को इस प्रकार देखना पड़ा।' (ऐसा) कहते हुए अनुज के साथ स्वयं (भरत ने) उस विभुराम को देखकर प्रणाम किया। उन्हें गले से लगाकर, आँखों से हर्ष के अश्रुकणों के झरने पर, (उनकी) पीठों पर हाथ फेरकर (राम ने) आशीर्वाद दिया। उस अहिमाँशुकुल (सूर्यकुल) वाले (राम) को सुमन्त्र (तथा) गुह ने बड़ी भक्ति से प्रणाम किया। धरणिजा (सीता) को तथा सुमित्रा-तनूज (लक्ष्मण) को भरत (और) शत्रुघ्न प्रणाम कर खड़े रहे। (तब) राघव

गुशपीठमुल नुंड गोरि राघवुडु । दशरथु सेमंबु दल्लुल शुभमु
बलुमारु नडुगुचु "भरत! नीवेल ।यिलरुयेल किंत दव्वेगु देंचितिवि?
१६४०
भूतलाधीशु पंपुन राज वगुचु । नीति तो जेयुदे नीवु राज्यंबु ?
दशरथुनकु सत्य प्रतापुनकु । विशद पुण्युनकु गाविंतु वे पूज ?
तल्लुल नेल्ल नादर मुल्लसिल्ल । नुल्लंबु सल्लगा नूरडिपुदुवे ?
कोविदु मत्कुलगुरु दपो निष्ठु । ना वसिष्ठु गरिष्ठु नर्चिंचि,,नीवु
अग्निहोत्रमुल संध्याकाल नियति । भग्नंबु गाकुंड बालिते नीवु ?
सुजनुलौ मंत्रुल चोप्पेल्ल देलिसि । विजय मूलमु मंत्रविधि मेरुंगुदुवे?
यपर रात्रुल लेचि यर्थचिंतनमु । निपुणत जेयुदे नीवु नित्यंबु ?
नरसि युत्तममध्यमाधमजनुल । वेरवुतो वनि गोंदुवे तगिनट्लु ?
तनवारियेंड नैन दगवुन दंड । मनुरक्ति जेयुदे यपराध मेरिगि ?
मतिमंतु सकल सम्मतु स्वामि हितुनि।विततविक्रम सैन्य विभु जेसिनावे
१६५०
कोलिचिन वारिकि गोरि जीतमुलु। निलुव गाकुंड सन्निधि नोसंगुदुवे?

ने उन्हें कुशासन पर बैठने का आदेश दिया (और) बार-बार दशरथ का कुशल तथा माताओं का शुभ (कुशल) पूछा (और कहा)—'हे भरत ! तुम पृथ्वी पर शासन न कर, इतनी दूर क्यों आये हो ?॥ १६४० ॥
भूतलाधीश (राजा) की आज्ञा से राजा बनकर, नीति के साथ राज्य कर रहे हो न ? सत्यप्रताप (और) विशद पुण्यवाले राजा दशरथ की तुम पूजा कर रहे हो न ? सभी माताओं का बड़े आदर के साथ, हृदय को शीतल बनाते हुए सान्त्वना दे रहे हो न ? कोविद, हमारे कुलगुरु, तपोनिष्ठ, गरिष्ठ उस वसिष्ठ की अर्चना करके, सन्ध्या-काल के नियम का भँग न करते हुए अग्निहोत्र का पालन करते हो न ? सुजन मन्त्रियों की चित्तवृत्ति को जानकर, विजयमूल मंत्रविधि (राजनीत) को जानते हो न ? अपर-रात्रियों में (रात के पिछले पहरों में) जागकर, निपुणता से, नित्य ही अर्थ-चिन्तन करते हो न ? उत्तम, मध्यम, अधमजनों के साथ, (उनकी चित्तवृत्ति) जानकर समुचित रूप से, उपाय से काम लेते हो न ? अपराध को जानकर, अपने लोगों (स्वजनों) के सम्बन्ध में भी न्याय को जानकर, अनुरक्ति से दण्ड-विधान करते हो न ? मतिमान्, सकल-सम्मत (लोकप्रिय), स्वामि-हितू, विततविक्रमवाले को सेनापति बनाया है न ? ॥ १६५० ॥
—सेवा करनेवालों को, प्रेम से, वेतन बिना पिछड़े हुए, अपने समक्ष

चारुल वलन राष्ट्रमुल वार्तलुनु । वैरुल तॆरगु सर्वमु नॆरुंगुदुवॆ ?
जालि दूलॆडि पेदसादल मॊरल । वालायमुग विंदुवे गर्व मुडिगि ?
यर्मिलि वर्णाश्रमाचार विहित । धर्मबु लरयुदॆ तडबडकुंड ?
जोरुल जारुल सुडियंगनीक । वारल दंडिंतॆ वदलक पट्टि ?
चतुरंगबलमुल सन्नाह पटिम । नतियुक्ति जेयुदॆ यप्पटप्पटिकि ?
धन धान्य वस्तु सद्भट समेतमुग । मुनुपुगा गडि दुर्गमुल बलियिंतॆ ?
यन्यायमुलु सेसि यर्थमुल् गॊनक । मान्यत ब्रोतुवॆ मरि कापु जनुल?
नर्थलोभमुन विप्राग्रहारमुल । नर्थ मॆत्तवु गदा यरवीसमैन ?
नॆपुडु गोब्राह्मण हितमु गोरुचुनु । निपुणुंडवै धर्मनिष्ठ नुंडुदुवॆ ?
१६६०

शक्तित्रयंबुनु षड्गुणंबुलुनु । सक्ति बंचांगमुल् चतुरुपायमुलु
बदुनाल्गु राजपापंबुलु दॆलिसि । सदयुडै मनुधर्मशास्त्र पद्धतिनि
देवतापितृ महीदेवता पूज । गाविंचि स्वर्गंबु गांचु भूविभुडु
नीवुनु ना रीति राज्यंबु । गावितु वे'' यंचुगाकुत्स्थुडडुग
गरमुलु मॊगिचि गद्गद कंठुडगुचु । भरतुंडु राम भूपति किट्टु लनियॆ

देते हो न ? गुप्तचरों के द्वारा (स्व) राष्ट्र (राज्य) का समाचार (तथा) वैरियों की समस्त गतिविधियों को जानते हो न ? गर्व को त्यागकर, दीन बने निर्धन (तथा) साधारण जनों की दुहाई को निरन्तर सुनते हो न ? बिना किसी संकोच के, अनुराग से वर्णाश्रम-आचार-विहित धर्मों के बारे में विचार करते हो न ? चोरों और जारों (पुरुषों) को बढ़ने न देकर, अवश्य पकड़कर दण्ड देते हो न ? समय-समय पर चतुरंग-बल (सेना) की सन्नाह(तैयारी)की दक्षता का अतियुक्ति से(प्रयोग)करते हो न ? धन-धान्य-वस्तु, सद्भट युक्त रखते हुए, (शत्रुओं के आक्रमण के) पूर्व ही सुदृढ़ दुर्गों का बल बढ़ाते हो न ? अन्याय करके, अर्थ (कर) न लेकर, मान्यता से किसानों की रक्षा करते हो न ? धन-लोभ से विप्रों के अग्रहारों से किंचित् अर्थ भी नहीं लेते हो न ? सदा गोब्राह्मण-हित की कामना करते हुए, निपुण हो, धर्मनिष्ठा के साथ रहते हो न ? ॥ १६६० ॥

शक्तित्रय (इच्छा, क्रिया, ज्ञान), षड्गुण, पाँच अंग, चार उपाय, चौदह राजपापों के बारे में जानकर, सदय होते हुए, मनु के धर्मशास्त्र की पद्धति के अनुसार देवता, पितृ, महीदेवताओं की पूजा करके राजा स्वर्ग को प्राप्त होता है। तुम भी उसी रीति से नीति से राज्य करते हो न ?' ऐसा काकुत्स्थ(राम) के पूछने पर, हाथ जोड़कर, गद्गद कण्ठवाला होते हुए भरत ने रामभूपति से यों कहा—'हे धर्मनिपुण! धर्मसरणि(पद्धति या मार्ग) में

"नी धर्मसरणि नाकेदियु देलिय । दो धर्मनिपुण! यिकोक वार्त विनुमु
नृपकुलाधीश्वर! निन्नु गानलकु ।गृपमालि कैकेयि किनिसि पोम्मनिन
दडयक नीविट्लु तापसवृत्ति । नडविकि विच्चेसि; तदि यादिगाग
१६६८

दशरथुनि मृतिनि भरतुडु श्रीरामुनकु देलुपुट

नलतल दूलि येडगु नाडु निन्नु । दलचुचु मृतुडय्ये दशरथेश्वरुडु;
एनुनु वितृमेध मेल्लनु जेसि । कानल मीरुंड गान वच्चितिनि"
१६७०

अनु पल्कु निर्घात मै ताक राम । जनपति मूर्छिलिल जगति पै द्रेळ्ळे,
मेदिनीसुतयु सौमित्रियु दूलि । मेदिनि व्रालिरि मृतुलैन पगिदि;
नोलसिन धृति रामु डोक कोंत देलिसि । पलुमारु विलपिप भरतु
डिट्लनियॆ

"गृतमति वय्यु व्राकृतुनि चंदमुन । नतिशोकमुनु वोंद नगुनय्य नीकु?
देव ! लक्ष्मणुडु वैदेहियु नीवु । वे वेग दशरथोर्वीनाथ-मणिकि
वरलोक विधु लेल्ल भक्ति तो जेयु । डरयंगनदि कृत्य"मनिन राघवुडु

कुछ भी नहीं जानता । एक और समाचार सुनो । हे नृपकुल-अधीश्वर ! निर्दयता से कैकेयी ने रुष्ट होकर (तुम से) कहा कि तुम काननों में जाओ । विना विलम्ब के तुम इस प्रकार तापस वृत्ति से जंगलों में पधारे । तब से लेकर—॥ १६६८ ॥

दशरथ की मृत्यु के बारे में भरत का श्रीराम को बताना

—व्याकुलता से तड़पते हुए, सातवें दिन तुम्हारा स्मरण करते हुए, दशरथेश्वर मृत हुए । मैं भी समस्त पितृयज्ञ करके, काननों में तुम्हारे दर्शनार्थ आया हूँ, ॥ १६७० ॥

यह वाक्य वज्र सदृश लगने पर राजा राम मूर्च्छित हो धरती पर गिर पड़े । मेदिनीसुता (सीता) और सौमित्र भी लड़खड़ाकर मेदिनी पर, मृतकों के समान, गिर पड़े । विशिष्ट धैर्य से राम कुछ होश में आकर, वार-वार विलाप करने लगे तो भरत ने इस प्रकार कहा—'कृतमति (बुद्धिमान) होते हुए भी प्राकृत (साधारण व्यक्ति) के समान तुम्हें क्या अतिशोक करना चाहिए ? हे देव ! लक्ष्मण, वैदेही और तुम अति शीघ्रता से दशरथ-उर्वीनाथ-मणि (राजशिरोमणि) की परलोक-क्रियाएँ भक्तियुक्त हो करो । सोचने पर यही कर्त्तव्य है ।' (ऐसा) कहने पर

मंदाकिनिकि वच्चि मदि निष्ठ वेलय । नंदु गृतस्नानुडै तंड्रि कपुडु
मौनसि तिलोदकमुलु वोसि वगलु । पेनगोन मट्टि गारपिंडि चे बुण्य
धनु डर्थि बिड प्रदानंबु सेसि । घनतर शोक संकलितुडै मगुडि
सन्नुत गति वर्णशाल कैतेंचि । युन्नचो रघुराम डुन्न चक्कटिकि
१६८०
बौर वर्गमु तोड बंधुल तोड । जारु वर्तनुलैन सचिवुल तोड
घनुडु वसिष्ठुंडु गौसल्य मौदलु । जननुल दोड्कोनि चनुदेंचुटयुनु
नूनिन शोकाग्नु लौदव राघवुडु । दानु सीतयु सुमित्रा-तनूजुंडु
वारि यंघ्रुल मीद व्रालि शोकिंप । वारुनु शोकिंप वारिंचे नंत
ना वसिष्ठमुनींद्रु डमलवाक्यमुल । नावेळ गौसल्य यवनिनंदननु
वनवास कलित विवर्णांगि जूचि । तनमदि विधि दूरितद्यु बौगुल
गिरिमीद वर्तिंचु किन्नर यक्ष । गरुडोरगामर कांतलु वच्चि
"रामुनि सति दशरथराजु कोड । ली मुग्ध जनक महीपालु पुत्त्रि
विविध संकटमुल वेगुचुनुंडे । भुवि नसाध्यमु लेदु पो यंदु विधिकि"
ननि सीत बेकौन ना रामचन्द्रु । डनघुडैन वसिष्ठु नडुगुल कौरगि
१६९०

राघव मन्दाकिनी के पास आकर, मन में निष्ठा के शोभित होने पर, उसमें (नदी में) कृत-स्नान हो, तब पिता को उपक्रम से तिलोदक देकर, दुख के अधिक होने पर, मिट्टी के ढेलों से पुण्यधन (राम) ने इच्छा (लगन) से पिण्ड-प्रदान किया। घनतर (अधिक) शोक-संकलित हो, फिर सन्नुतगति (सराहनीय विधि) से पर्णशाला में आ रहे। रघुराम जहाँ थे, उस स्थान पर—॥ १६८० ॥

—पुरजन वर्ग के साथ, बन्धुजनों के साथ, चारु-वर्तन (आचरण) वाले सचिवों के साथ, महान् वसिष्ठ, कौसल्या आदि जननियों को साथ लेकर (भरत के) आने पर, सम्प्राप्त शोकाग्नियों के उत्पन्न होने पर, राघव सीता और सुमित्रातनूज के साथ उनकी (माताओं की) अंघ्रियों (चरणों) पर गिर-कर शोक करने लगे। जब वे शोक करने लगे तब वसिष्ठ मुनीन्द्र ने अमल वाक्यों से उन्हें रोका (शान्त किया)। उस समय कौसल्या वनवास-कलित-विवर्ण-शरीरवाली अवनिनन्दना (सीता) को देखकर, अपने मन में विधि (नियति) को कोसकर, अत्यन्त दुःखी हुई। (उसी समय) उस गिरि पर विचरण करनेवाली किन्नर, यक्ष, गरुड, उरग, अमर कान्ताएँ (वहाँ) आकर सीता के बारे में यों बोलीं—'राम की पत्नी, राजा दशरथ की बहू, जनक-महीपाल की पुत्री यह मुग्धा विविध संकटों से तप्त हो रही है।

जननुल जुट्टाल सचिवुल हितुल । मुनुलनु गुशपीठमुल नुंड बनिचि
तन तम्मुलुनु दानु दर्भासनमुल । जन-लोचनोत्पल-चंद्रुडै युंडि
या वेळ भरतुनि याकृति जूचि । "यो वत्स! जडलुनु नुरुवल्कलमुलु
नीवेल तालिचति! नृपुनाज्ञ वूनि । वेवेग चनि महीविभुडवै युंडु'
मनि पल्कुटयु रामुनाननांवुजमु । गनुगोनि भरतुंडु गरमुलु मोगिचि
"देव! राघव! कैक धृति दूलि निन्नु। भाविंप नेरक पापंवु सेसि
"यडवुल नुंडु, वो"म्मन्न माटलकु । दडयक चनुदेर दगुनय्य! नीकु?
मिमु वासि दशरथ मेदिनीपतियु । नमरलोकंवुन करिगे; नी घोर
पापंवु मा तल्लि पचरिंचे; नरक । कूप कोटुल निंक गूलक युन्ने ?
येनु नीदगु राज्य मे मेयि वून । गानेर; नाचेत गादु भूनाथ !
१७००

नी वयोध्यकु निंक नेम्मि विच्चेसि। पावन मति तोड वट्टंवु वूनु;
वल्लभु नेडवासि वगल वेल्लडलु । तल्लुल नूरार्पु; तक्किन हितुल
सचिवुल जुट्टाल सकल पौरुलनु । सुचरित्र! कृपतोड जूचि पालिपु;

विधि (नियति) के लिए इस भुवि में कोई बात असम्भव नहीं है।' तब उस रामचन्द्र ने अनघ वसिष्ठ के चरणों में प्रणाम किया ॥ १६९० ॥

(उसके बाद) जननियों, रिश्तेदारों, सचिवों, हितूजनों, मुनियों को कुशासनों पर विठाया और स्वय भाइयों के साथ दर्भासनों पर, जन-लोचनों के उत्पलों के लिए चन्द्र समान (राम), वैठ गए। उस समय भरत की आकृति को देख (राम बोले)—'हे वत्स ! जटाएँ और वड़े-बड़े वल्कल तुमने क्यों धारण किये हैं ? नृप की आज्ञा ग्रहण (मान) कर, शीघ्रता से जाकर, राजा होकर रहो।' ऐसा (राम के) वोलने पर राम के आनन-अम्वुज (मुखकमल) को देखकर, भरत हाथ जोड़कर (बोला)— 'हे देव ! हे राघव ! कैकेयी के धैर्य को छोड़ (असहनशील हो), तुम्हें न जानकर, (यह कहकर कि) 'जाओ, जंगलों में रहो' पाप का विस्तार किया। उन वातों पर अविलम्ब यहाँ (जंगलों में) आ जाना क्या तुम्हें उचित है ? तुम से विछुड़कर, राजा दशरथ भी अमर लोकों में गए। हमारी माता ने यह घोर पाप किया है। वह कोटिनरक-कूपों में नहीं गिरेगी ? मैं तुम्हारे राज्य को किसी भी प्रकार ग्रहण नहीं कर सकता। मुझसे होगा नहीं हे भूनाथ ! ॥ १७०० ॥

—अब तुम प्रेम से अयोध्या को पधारकर, पावनमति से राज्य ग्रहण करो। वल्लभ (पति) से विछुड़कर, अत्यधिक शोक से व्याकुल होनेवाली माताओं को सान्त्वना दो। शेष हितू-जनों, सचिवों, रिश्तेदारों, समस्त

नन्नु नी बंटु मन्नन जेसि नादु । विन्नपं बालिपवे दयामूर्ति !"
यनि पादमुल व्रालि यट्टु लेवकुन्न । दनदु तम्मुनि नेत्ति तग गौगिलिचि
"भरत! नी विदि येमि बालुंडवैन।करणि बल्कॆदु धर्मगति दप्प नाडि?
या कैक नेल पो नाडेदु ? तंड्रि । पोककु नीवेल पौगिलेदी वेळ ?
डाकतो नदिनि गाष्ठंबु गाष्ठंबु । जोक यै पासिन चौप्पु दीपिप
बुत्त्रमित्त्रकळत्रमुलु डायु, बायु । मैत्रि ऋणानु संबंधरूपमुन;
नवनि पै बुट्टिन यप्पुडे चावु । ध्रुवमु जीवुन कनि रूपिंचि नरुडु
१७१०

तन कुलोचितमैन धर्ममार्गमुन । मनिन वाडिह पर मान्युडै युंडु,
गावुन मन तंड्रि कमनीय सत्य । भावुडै नीति तो ब्रजल बालिंचि
घन यागदान सत्कारमुल् वेक्कु । लौनरिंचि राज्यसौख्योन्नति मिंचि
मनवंटि तनयुल मनमार गांचि । जनुलेल्ल गौनियाड स्वर्गस्थुडय्यॆ;
नतनिकै वगचुट यनुचितं बिक । नतनि वाक्यमु मन कट्टु सेय दगवु;
पितृ वाक्यकरणंबे प्रियधर्म मेंदु । सुतुनकु; नट्टु सेयु सुतुडे विश्रुतुडु

पुरजनों को हे सुचरित्र (वाले) ! कृपा से अवलोकन कर पालन करो। हे दयामूर्ति ! मुझ अपने सेवक का मान रखकर, मेरी विनती का पालन करो।' (ऐसा) कहकर चरणों पर गिरकर न उठनेवाले अपने भाई को उठाकर, समुचित रीति से हृदय से लगाकर, (राम ने कहा)—'यह क्या भरत ? धर्म की गति (मार्ग) को छोड़कर बालक के समान क्यों बोलते हो ? उस कैकेयी को क्यों कोसते हो ? पिता के चल बसने पर इस समय क्यों व्याकुल हो रहे हो ? प्रवाह वेग के कारण नदी में (एक) काठ (दूसरे) काठ से (कभी) मिलकर, (कभी) बिछुड़ जाता है। (इसी विधान को) दीप्त करते हुए पुत्र, मित्र, कलत्र नियराते हैं (और) बिछुड़ते हैं। ऋणानुबन्ध रूपक है मैत्री । (यह) जानकर कि अवनी पर जन्म लेते ही जीव के लिए मृत्यु निश्चित है, ।। १७१० ।।

—अपने कुल के लिए उचित धर्ममार्ग पर जीवित रहनेवाला इह (और) पर (लोकों) में मान्य होकर रहेगा । अतः हमारे पिता ने कमनीय सत्य-भाव (युक्त) हो, नीति से प्रजा-पालन कर, अनेक महान् याग, दान, सत्कार करके, राज्य-सौख्य की उन्नति में (सबसे) बढ़कर, हम जैसे पुत्रों को जी-भर देखा, समस्त जनता की प्रशंसाएँ प्राप्तकर स्वर्गस्थ हुए । अब आगे उनके लिए दुखी होना अनुचित है। उनके वचन के अनुसार करना हमारे लिए न्याय (-संगत) है। पुत्र के लिए कहीं भी (सर्वथा) पितृ-वाक्य को करना ही प्रियधर्म है। ऐसा करनेवाला पुत्र ही विश्रुत

वनमुल बदुनाल्गु वर्षमुल् नन्नु । घन राज्यभोगमुल् गैकोनि निन्नु
नुंड गट्टड सेसें नुर्वीशु; डट्ल । युंडुद; मिदुकु नोंडाडवलव"
दनि तेलपुचो नंत नर्कुंडु ग्रुंके । ननुपम प्रीति मै नाराति दीचि
मरुनाडु संध्या समाधु लोनर्चि । मरि वसिष्ठादुलु मंत्रिवर्गमुलु
१७२०

विशदंबुगा बरिवेष्टिंचि कोलुव । गुशपीठमुन रघुकुंजरु डुंडे;
ना सभ मध्यंबु नंदुंडि भरतु । डा समयंबुन हस्तमुल् मोगिचि
"देव! मी यानति तेंरगुन नीति । भाविंचि पितृ वाक्य पद्धति बुडमि
गैकोंटि, नाभूमि गडपट नेनु । मी कित्तु; निंदु केमियु ननवलदु;
सर्व सर्वसहाचक्र भारंबु । वर्वि तालपग फणिपति योपुगानि
यसल डिंभक जलव्याळ मेंट्लोपु? । वसुधेश ! येनट्टिवाड; बालुंड;
नी धारुणीभार मेड ? नेनेड ? । साधुरक्षण मेड? चर्चिंचि चूड !
बालार्कुचे नोप्पु प्रथमाद्रि यंदु । बोलिप मिणुगुरु बुरुगुन्न यट्लु
श्रीनिधि नी वुंडु सिंहासनमुन । ने नुंड गनुपट्टुने भूमि प्रजकु ?
गावुन मौनि लक्षणमुलु मानि । नी वयोध्यकु वच्चि निपुणत हेच्चि
१७३०

(विख्यात होता) है। मुझे चौदह वर्ष (के लिए) जंगलों में, (तथा) तुम्हें महान् राज्यभोग ग्रहण कर, रहने के लिए उर्वीश (राजा) ने आदेश दिया है। वैसा ही रहेंगे। इसके लिए अन्यथा कुछ मत कहो।' ऐसा वताते (-बताते) अर्क (सूर्य) अस्त हुए। अनुपम प्रीति से (उन लोगों ने) वह रात बिताई। दूसरे दिन सन्ध्या-समाधि (जप-तप) करके (निवृत्त होकर) फिर वसिष्ठ आदि मन्त्री-समूहों के— ॥ १७२० ॥

—विशद रूप से परिवेष्ठित होकर दरवार लगाये बैठे थे। रघुकुंजर कुशपीठ पर बैठे हुए थे। उस सभामध्य में रहकर, उस समय भरत ने हाथ जोड़कर (कहा)—'हे देव ! तुम्हारी आज्ञा के अनुसार, नीति के वारे में सोचकर, पितृवाक्य-पद्धति से (मैंने) पृथ्वी को ग्रहण किया है। अपनी भूमि को अन्त में (अब) मैं तुम्हें दूँगा। इसके लिए अन्यथा कुछ मत कहो। सर्वसर्वसहाचक्रभार (समस्त पृथ्वी के भार) को धारण करने के लिए फणिपति (आदिशेष) समर्थ हो सकता है। किन्तु जल-सर्प का बच्चा कैसे समर्थ हो सकता है ? हे वसुधेश ! मैं वैसा ही हूँ। बालक हूँ। यह धारुणीभार कहाँ ? मैं कहाँ ? सोच-विचारकर देखने पर साधु-रक्षण कहाँ ? हे श्रीनिधि ! वालार्क से शोभायमान प्रथमाद्रि (उदय-पर्वत) पर जुगुनु के समान, तुम्हारे सिंहासन पर मेरा

यॆल्ल वारल कोर्कु लीडेर राज्य । मॆल्ल बालिंपु, मिंकेमियु ननकु;
मौनर नी वट्टु सेय नॊल्लवै तेनि । विनु मेनु नी यॊद्द विड्तु ब्राणमुलु;
काकुन्न सौमित्रि गति निन्नु गॊलिचि । काकुत्स्थतिलक ! यिक्कड
नुंडुवाड"
ननि दर्भशयनुडै यट्टु लेवकुन्न । यनुजन्मु नॆत्ति यिट्लनियॆ राघवुड्डु:
"इदि येमि भरत! नीविट्लाड दगुनॆ? ।मदि दलपोयवो मन तंड्रि याज्ञ?
दशरथेशुनकु मी तल्लिनि मुन्नु । विशदंबुगा निच्चु वेळ मी तात
"ना कूतुनकुगल्गु नंदनु नखिल । भूकांतुगा नीवु पून्पु मी" यनुचु
नम्मिक वडसि वॆन्कनु बॆंड्लि सेसॆ । नम्माट पट्टुन; नमर दैतेय
युद्धंबुलो विभुं डॊसगिन वरमु । बुद्धि दप्पक कैक भूमीशु नडिगॆ
धारुणि नीकु, गांतारंबु नाकु । गोरिन दशरथ क्षोणि पालकुड्डु
१७४०
सत्यंबु दप्पकी जाड गार्विचि । नित्य कीर्तुलु गांचि नॆगडॆ निंदंदु
मनमुनु मनुजेंद्रु माट वार्टिचि । घन कीर्ति सुकृतमुल् गैकॊंद मॆलमि

अस्तित्व प्रजा को कहाँ दिखाई पड़ेगा ? अतः मौनि-लक्षणों को छोड़कर, तुम अयोध्या को आओ (और) निपुणता की अधिकता से— ॥ १७३० ॥

—समस्त जनों की इच्छाओं की पूर्ति करते हुए, समस्त राज्य पर शासन करो। और कुछ मत कहो। अगर तुम शोभा से ऐसा करना नहीं चाहोगे तो सुनो मैं तुम्हारे पास (समक्ष) प्राण छोड़ दूँगा। नहीं तो सौमित्र के समान तुम्हारी सेवा करते हुए, हे काकुत्स्थ-कुल-तिलक ! यहीं रह जानेवाला हूँ।' (ऐसा) कहकर दर्भशयन हो (प्राण त्याग करने), न उठने पर, अनुजन्म (अनुज) को उठाकर राघव बोले—'यह क्या भरत ! तुम्हें ऐसा बोलना चाहिए ? हमारे पिताजी की आज्ञा (के बारे मे) मन में नहीं सोचते हो ? राजा दशरथ को (के हाथ) तुम्हारी माता को विशद रूप से देते समय (विवाह करते समय) तुम्हारे नाना ने यह विश्वास (वचन) प्राप्त करने के बाद ही कि मेरी पुत्री से उत्पन्न नन्दन (पुत्र) को अखिल भूकान्त (समस्त पृथ्वी का राजा) तुम बनाओ' इस वचन के आधार पर विवाह किया। अमर (और) दैत्यों के युद्ध में विभु (पति) के दिए वर को, न भूलकर, कैकेयी ने भूमीश से माँगा। तुम्हें धारुणी, मुझे कान्तार चाहने पर (कैकेयी के माँगने पर) राजा दशरथ—॥ १७४० ॥

—सत्य को न छोड़, इस प्रकार (व्यवस्था) करके समस्त लोक में नित्य-कीर्तियाँ प्राप्तकर, विराजमान हुए। हम भी प्रेम से मनुजेन्द्र की बात का पालन करके घन (महान्) कीर्ति (और) सुकृत (पुण्य) को प्राप्त करें।

'नरुगडे गय कॉक्कडैन ? गन्यकनु । वरग दानमु सेसि वरलडे यॉकडु?
विडुवडे यॉकडैन वृपभ' मटंचु । गॉडुकुल गांचुट गोरि पिताळ्ळु
धात्रि बुन्नरक संत्रातयौ कतन । बुत्तुडै यॉप्पु, नीपुण्यंवु लॅरिंगि
येनॅ ना तंड्रि पल्किटु सेय नैति । नेनि दंड्रल पलु कॅव्वडु सेयु
धर? "यथा राजा तथा प्रजा" यनुचु। नरुलॅल्ल मनयट्ल नडतुरु; गान
वरवुद्धि गै कॉन्न व्रतमु निंडिंचि । यरुदेंचेदेनु; नी वाग्रहं वुडुगु,
ना माट वालिपु; ना पंपु मीद । भूमिकि वतिगम्मु; पुरि किक
वॉम्मु"
अनिन "रावणु डिक नाजि लो गूलॅ"। ननि निश्चयमु सेसि यंदुन्न मुनुलु
१७५०
सुरलु दिग्वरुलु "भासुर धर्मनिरत! । भरत ! रामुनि माट वाटिंपु"
मनिरि १७५१

श्रीरामुनकु जावालि हितोपदेशमु

यप्पुडु जाबालि यनु मौनि रामु । दप्पक कनुगॉनि तगवेदि पलिकॅ

सभी पिता पुत्रों को इसीलिए प्राप्त करते हैं कि 'क्या एक (पुत्र) भी गया[1] को नहीं जाएगा ? कन्यादान करके क्या एक (पुत्र) भी शोभायमान नहीं होगा ? क्या एक (पुत्र) भी वृपभ[2] (साँड) को नहीं छोड़ेगा ? धरती पर पुन्नाम (पुनामक) नरक से संत्राता (रक्षा करनेवाला) होने के कारण ही पुत्र शोभा देता है । इन पुण्यों के बारे में जानकर मैं ही अपने पिता की वात न मानूँ तो धरा पर कौन पिता की वात का पालन करेगा ? 'यथा राजा तथा प्रजा' कहते हुए समस्त नर (मानव) हमारे जैसा आचरण करेंगे । अतः वर-वुद्धि से गृहीत व्रत को पूरा करके मैं (नगर में) आऊँगा । तुम आग्रह छोड़ दो । मेरी वात सुनो । मेरे आदेश पर पृथ्वी का पति वनो । अव नगर को जाओ ।' (ऐसा) कहने पर वहाँ के मुनियों, सुरों, दिग्वरों ने यह निश्चय कर कि 'अव तो रावण आजि (युद्ध) में गिरा (मरा)', ॥ १७५० ॥ (भरत से) कहा—'हे भासुर धर्मनिरत ! राम की वात का पालन करो ।' ॥ १७५१ ॥

श्रीराम को जावालि का उपदेश

तव जावालि नामक मौनि ने राम को ध्यान से देखकर, कहा—

१ पितरों को पिण्डप्रदान करने के लिए 'गया' क्षेत्र जाने की प्रथा है ।

२ वछड़ों मे सभी को वैल न वनाकर, एक को साँड वनाकर छोड़ देने की प्रथा है ।

"राम! यिदेमि निरर्थक बुद्धि । नेमिंचि मुनि वोलें नृप वेष मुडिगि
राजोपभोग्यमौ राज्यंबु विडिचि । यी जाड नुंड्ुट केमि कारणमु ?
अक्कडि तलिदंड्रु? लेक्कडि सत्य ।मेक्कडि सुतधर्म? मिदियेल्ल गल्ल;
तलिदंड्रु लोंडोरुल् दम सौख्यमुनकु। गलयुचो शुक्ल रक्तमु लैक्यमोंदि
योज विडाकृति नुदयिंचु नरुडु । बीज मात्रमु दंड्रि, पेक्केल यिक?
निमुड़क यारिपोयिन दीपमुनकु । जमुरु वोसिन यट्लु सच्चिन यट्टि
वारिकि बरलोक वैदिक कर्म । मूरक जनुलु सेयुटयु व्यर्थंबु
गावुन ना माट गैकोंनि राम ! । नी वयोध्यकु बोयि नृपुडवै युंडु"
१७६०

मनि यिट्लु जाबालि याडु वाक्यमुलु । विनि कोपमुन रघुवीरु
डिट्लनियें

"निट्टि नास्तिक बुद्धि येव्वरिकैन । बट्टि बोधिंपु जाबालि मुनींद्र !
माकु मा पेद्द ले मर्याद नडचि । रा कैवडि मेलंगुटदिय सम्मतमु,
सत्यमूलंबुलु सकल धर्ममुलु । सत्यंबु कंटे नेंचग धर्म मेंद्दि ?
यट्टि सत्यमु दप्प कनघ! मा तंड्रि । पट्टिन धृति नन्नु बनिचे गानलकु,

---

'हे राम ! यह कैसी निरर्थक बुद्धि है ? नियम से मुनि के समान (रहकर) नृपवेष छोड़कर, राजा के उपभोग्य राज्य को छोड़कर, इस मार्ग से रहने का क्या कारण है ? कहाँ के माता-पिता ? कहाँ का सत्य ? कहाँ का पुत्रधर्म ? यह सब झूठ है। माता-पिता परस्पर अपने सुख के लिए मिलते (सम्भोग करते) हैं तो शुक्ल (और) रक्त के ऐक्य होकर, स्वभावत: पिण्ड की आकृति में नर उदित होता है। पिता केवल बीज मात्र है। और अधिक क्यों ? शमित हो, बुझे हुए दीप में तेल डालने के समान है, मरे हुए लोगों के लिए (जीवित) लोगों का परलोक-वैदिक क्रियाएँ करना। यह व्यर्थ है। अत: मेरी बात ग्रहणकर हे राम ! तुम अयोध्या में जाकर राजा बनकर रहो'॥ १७६०॥

इस प्रकार कहनेवाले जाबालि के वाक्यों को सुनकर क्रोध से रघुवीर यों बोले—'हे जाबालि मुनीन्द्र ! ऐसी नास्तिक-बुद्धि और किसी को पकड़कर समझाओ। अपने पूर्वजों ने जिस मर्यादा के अनुसार आचरण किया है, उसी पद्धति से आचरण करना हमारे लिए सम्मत है। सकल धर्म सत्य-मूल हैं। सोचने पर सत्य से बढ़कर धर्म कौन-सा है ? हे अनघ ! वैसे सत्य को न छोड़, हमारे पिता ने धैर्य के साथ मुझे जंगलों में भेजा है। अत: उसकी आज्ञा का उल्लंघन करूँ तो मेरे समान पुण्यहीन कोई दूसरा हो सकेगा ? बुध लोग (ज्ञानी) कहते हैं कि सत्य, धर्म, शम, दम,

गान नातनि याज्ञ गडचिन बुण्य। हीनुंडु नाकंटे नितरुडु गलडे ? सत्यंबु धर्मंबु शममुनु दममु। नित्यभूति दययु नीति विक्रममु ब्रियवाक्यमुनु देवपितृ विप्रपूज। रयमोप्प स्वर्गमार्गमुलंड्रु बुधुलु, इवि येल्ल गल्लगा नीवु वोधिंचि। तवु नवु, नी वेट्टि यग्रजन्मुडवु? निन्नन बनि येमि? निन्नु नास्तिकुनि। मन्नन सेसिन मा तंड्रि ननक?" १७७०

यनि राम विभुडाडु नट्टि वाक्यमुलु। विनि प्रीति जावालि वेंडियु ननियें,

"नन्नु नास्तिकुनिगा नरनाथचंद्र!। येंन्नि; तयोध्य केंट्लेनि विच्चेसि भूमि येलुदु वनु बुद्धि निट्लंटि। राम! योर्वु" मटंचु ब्रार्थन सेसें, नंत वसिष्ठ संयमि सूर्यवंश। मंतयु निक्ष्वाकु डादिगा नेन्नि, "यनघ! मी कुलमुन नग्रजुडुंड। ननुजुंडु राजौट यरसिन लेदु; कावुन बेंद्दल क्रममुन नीवु। भूवलयं बेंल्ल बूनुट लेंस्स, 'येंतैन बितृ वाक्य मे दाट' ननुचु। नेंतयु निश्चयं विट्टिद येनि १७७७

पादुका प्रदानमु

यादट निनु गोल्चुनट्ल नी दैन। पादुका युगळंवु भरतुंडु गोंलिचि

नित्यभूति, नीति, विक्रम, प्रियवाक्य, देव-पितृ-विप्र--ये स्वर्ग के मार्ग (साधन) है। इन सबको तुम झूठ कहकर समझा रहे हो। तुम (भी) कैसे अग्रजन्मा हो ? तुम्हें कहने में क्या काम (लाभ) है ? तुम जैसे नास्तिक का आदर करनेवाले हमारे पिता को कहना (दोप देना) चाहिए।' ॥१७७०॥

ऐसा कहनेवाले विभुराम के वाक्यों को सुनकर, फिर जावालि प्रीति से (यों) बोले—' हे नरनाथचन्द्र ! मुझे नास्तिक मानकर (सही), किसी भी प्रकार तुम अयोध्या को पधार कर राज्य करोगे, इस बुद्धि (विचार) से ऐसा कहा है। हे राम ! (मेरी बातों को) सहन कर लो।' ऐसा कहते हुए प्रार्थना की। तब वसिष्ठ संयमी ने इक्ष्वाकु से लेकर समस्त सूर्यवंश को गिनाकर (चर्चा कर), कहा—' हे अनघ ! आपके कुल में अग्रज के रहते अनुज का राजा होना, सोच-विचारने पर भी (कभी) नहीं दिखता। अत: पूर्वजों के क्रम से तुम्हारा भूवलय के शासन को ग्रहण करना उचित है। यदि (तुम्हारा) निश्चय यही हो कि ' जो हो, मैं पितृवाक्य का उल्लंघन नहीं करूँगा।' तो—॥ १७७७ ॥

पादुका-प्रदान

—तुम्हारी सेवा करने के समान ही तुम्हारे पादुका-युगल की सेवाकर

नेम्मदि नुंडेंडु, नी पादुकम्मु । लि"म्मन्न दल्लुलु हितुलु नाश्रितुलु
ब्रौरुलु मंत्रुलु बांधवु लप्पु । "डो राम ! यिट्टु सेयु, मुचित"
मटंचु १७८०
बलुकंग वेवेग भरतुंडु हेम । विलसित पादुका द्वितयंबु रामु
मुंदट निडिन संफुल्लारुणार । विंद पल्लव गर्व विभव भेदमुलु
यतिवधूतिलक शापापनोदमुलु । श्रुतिशिरोभवन विश्रुत विनोदमुलु
तनदु पादमुलु संतत सनकादि ।मुनि विवादमुलु रामुडु मोपि योसग
जेकोनि यवि रेंडु शिरमुन दाल्चि । कैकेयि कोडुकु राघवुन किट्लनियें
"नी वेषमुन नेनु नृपवेष मुडिगि । तावक पादुका द्वंद्वंबु नंदु
बदिलंबुगा राज्यभारंबु निलिपि । पदुनाल्गुवर्षमुल् पालिचुवाड;
ना मीद मी रयोध्यकु राक युन्न ।स्वामि पादमु लान! वह्नि ये जोत्तु"
ननि पल्कि यन्नकु नति भक्ति म्रोक्क। ननुजुनि दीविंचि यक्कुन जेर्चि
तल्लुल नूरार्चि धन्युलौ मौनि । वल्लभुलनु मंत्रि वरुल बांधवुल
१७९०
नेल्लवारल ब्रियं बेसग वीड्कोलुप । नुल्लंबुलो शोक मुप्पोंगु चुंड

भरत शान्ति से रहेगा। अपनी पादुकाएँ दे दो। (ऐसा) कहने पर माताएँ, हितू, आश्रित, पुरजन, मन्त्री, बान्धव (सब ने) तब कहा— 'हे राम ! ऐसा करो। (यही) उचित है।' ॥ १७८० ॥

ऐसा कहने पर तुरन्त भरत ने हेम (स्वर्ण) विलसित पादुका-द्वितय (द्वय) को राम के समक्ष रखा। राम ने अपने सम्फुल्ल-अरुण-अरविन्द-पल्लव-गर्व-वैभव का भेद (परास्त) करनेवाले, यति-वधू-तिलक (अहल्या) के शाप का अपनोद (दूर) करनेवाले, श्रुति-शिरोभवन-विश्रुत विनोदवाले, सन्तत सनक आदि मुनि-विवाद (के कारण भूत) चरणों को (उन पादुकाओं पर) रखकर, दिया। (देने पर) (उन्हें) लेकर उन दोनों को सिर पर रखकर, कैकेयी का पुत्र राघव से यों बोला—' इस (मुनि) वेष में, मैं नृपवेष को छोड़कर, तुम्हारे पादुका-द्वन्द्व (द्वय) में सुरक्षित रूप से राज्य-भार को रख, (ये) चौदहवर्ष (राज्य) पालन करूँगा। उसके बाद तुम अयोध्या में न आओ तो स्वामी के चरणों की कसम, मैं वह्नि (आग) में प्रवेश करूँगा।' ऐसा कहकर अग्रज को अतिभक्ति से प्रणाम करने पर, (राम ने) अनुज को आसीसा, गले लगा लिया, माताओं को सान्त्वना दी, धन्य (धन्यात्मा) मुनि-वल्लभों, मन्त्रिवरों, बांधवों—॥ १७९० ॥

(तथा) सभी लोगों को अतिप्रेम से बिदा किया। तब मन में शोक के उमड़ने पर भरत ने राम की पादुकाओं की परिक्रमा और नमस्कार

भरतु डप्पुडु रामु पादुकंबुलकु । सरि प्रदक्षिण नमस्कारमुल् सेसि
पट्टंपुटेनुंगु पै नॊप्प दॆच्चि । पॆट्टि लोकंबुलु श्रीति गीर्तिंप,
छत्नचामरमुलु सरिदाल्चि पॊल्चि । शत्नुघ्नुडुनु दानु संगडि गॊलिचि
चॆलगि नल्दिक्कुल सेनलु गॊलुव । गुलपवित्नुडु चित्नकूटंबु डिग्गि
यब्भंगि भरतेशु डडलुचु नरिगि । यब्भरद्वाजुनि यडुगुल कॆरगि
यतनितो दनदु वृत्तांतबु दॆलिपि । यत डंत वनुप सैन्यंबुलु दानु
नट पोयि गगामहानदि दाटि । यट श्रृंगिबेरंबु नंदु ना गुहुनि
बट्टुयशोधनुनि संभाविंचि निलिपि। यट पोयि मरि ययोध्यापुरि जॊच्चि
तडयक नगरि लो दल्लुल नुनिचि । कडु मूल बलमुल गावलि वॆट्टि
१८००

मणि लेनि पॆट्टिय माड्कि नाकाश । मणि लेनि पगलिटि माड्कि
जूड्किकिनि
जतुरपुण्युडु रामचंद्रुडु लेनि । यतिशून्यमगु नयोध्यापुरि जूचि
यायत शुभशीलु डंदुंड रोसि । पोयि नंदिग्राममुन वसियिंचि
पनिवडि रघुरामु पादुका युगळ । मुन राज्यभार मिम्मुल नावहिंचि
श्रीरामुनकु बोलॆ सेव सेयुचुनु । नार चीरलु जडल् नवयुचु दाल्चि

कर—, भद्रगज पर शोभा से (उन्हें) ला रख, समस्त लोकों के प्रीति से प्रशंसा करते समय, छत्न-चामर को ठीक ढंग से धारणकर, आप और शत्नुघ्न के साथ में सेवा करते समय, शोभा से चारों दिशाओं में सेनाओं के परिवेष्ठित हो, (वह) कुलपवित्न (कुल को पवित्न करनेवाला भरत) चित्नकूट से उतर पड़ा। इस प्रकार भरतेश ने विकल होते हुए जाकर, उन भरद्वाज के चरणों में विनत होकर, उनसे अपना वृत्तान्त सुनाया। तब उनके बिदा करने पर, सेना के साथ आप वहाँ जाकर, महानदी गंगा को पार कर, वहाँ श्रृंगिबेर (पुर) में पट्टुयशोधन उस गुह का सम्मानकर, (उन्हें) वहीं ठहराया। वहाँ (आगे) जाकर, फिर अयोध्यापुर में प्रवेश कर, अविलम्ब नगरी (अन्तःपुर) में माताओं को रख, अधिक (संख्या में) मूलबल को रक्षार्थ रख (नियतकर), ॥ १८०० ॥

—मणिहीन पेटिका के समान, आकाश-मणि (सूर्य)-हीन दिन के समान, देखने के लिए चतुरपुण्यवाले रामचन्द्र से रहित, अतिशून्य (बने) अयोध्यापुरी को देख, आयत शुभशीलवाले भरत को वहाँ रहने में घृणा हुई। (अतः वे) जाकर नन्दिग्राम रहकर, रघुराम के पादुका-युगल में राज्यभार को प्रेम से आवाहन कर, (उनकी) श्रीराम के समान ही सेवा करते हुए, वल्कल वस्त्र, जटाएँ धारणकर, विकल होते हुए, उस

या राघवुनि पुनरागमनंबु । गोरुचु नतनि सद्गुणमु लॅन्नुचुनु
सरस सज्जन मंत्रि सम्मति तोड । भरतुंडु महि यॅल्ल बालिचु चुंडॆ
निदि ययोध्याकांड मॆल्ललोकमुल ।विदितमै बुधलोक विनुतमौ गाक!
यनि यंध्रभाष भाषाधीश निभुडु । विनुत काव्यागम विमल मानसुडु
पालिताचारु डपार धीशरधि। भूलोक निधि गोन बुद्ध विभुडु१८१०
दमतंड्रि विठ्ठल धरणीशु पेर । गमनीयतर धैर्यकनकाद्रि पेर
बनुर्गोन नरिगंड भैरवु पेर । घनु पेर मीसर गंडनि पेर
नलघु निश्चल दयायत बुद्धि पेर । ललित सद्गुणगणालंकारु पेर
ना चंद्रतारार्कमै यॊप्पु मिगिलि । भूचक्रमुन नति पूज्यमै वॆलय
नसमान ललित शब्दार्थ संगतुल । रसिकमै चॆलुवॊंदु रामायणमुन
बरग नलंकारभावनल् निंड । गरमॊप्पग नयोध्यकांडंबु जॆप्पॆ;
नारूढि नार्षेयमै यादिकाव्य । मै रसिकानंदमै यॆल्लनाडु
निव्वसुमति नॊप्पु नी पुण्य चरित । मॆव्वरु सदिविन नॆव्वरु विनिन
सामादि-बहुवेदचय-धाम राम- । नाम-चिंतामणि नव्य भोगमुलु
परहिताचारमुल् प्रभुविचारमुल् । परिपूर्णशक्तुलु प्रकट राज्यमुलु१८२०

राघव के पुनरागमन की इच्छा करते हुए, उसके सद्गुणों की प्रशंसा करते हुए, सरस, सज्जन मन्त्रियों की सम्मति (सलाह) से भरत समस्त महि (पृथ्वी) पर शासन करता रहा। यह अयोध्याकाण्ड समस्त लोकों में विदित (विख्यात) हो, बुध-लोक (विद्वज्जनों में)--विनुत (प्रशंसित) हो जाए, ऐसा चाहकर, आन्ध्रभाषा के लिए भाषाधीश (ब्रह्मा) के समान, विनुत-काव्य-आगम-विमल मनवाले, पालित आचारवाले, अपार धीशरधि (बुद्धिसमुद्र) वाले, भूलोकनिधि गोन बुद्ध राजा ने—।। १८१० ।। --अपने पिता विट्ठल धरणीश के नाम पर, कमनीयतर-धैर्य कनकाद्रि के नाम पर, जो दृढ़ता से अरिंगडभैरव (शत्रु भयंकर), महात्मा, मीसरगंड (प्रतापशाली), अलघु-निश्चल-दया के आयतबुद्धिवाले हैं, ललित सद्गुण-गणालंकार हैं, आचन्द्र-तारार्क-विलसित होनेवाली, भूलोक में अतिपूज्य हो शोभित होने के लिए अनुपम ललित-शब्दार्थ-संगति से युक्त रसमय रामायण में अलंकार (और) भावों से परिपूर्ण, अतिरम्यता से प्रस्तुत इस अयोध्याकाण्ड की रचना की। सुप्रसिद्ध आर्षग्रन्थ, आदिकाव्य, रसिकों को आनन्द देनेवाले (तथा)सदा इस वसुमति (भूमि) पर शोभायमान होनेवाले इस पुण्यचरित्र को जो भी पढ़ेंगे, जो भी सुनेंगे, उन्हें सामादि-बहुवेद-समूहों का धाम, राम-नाम-चिन्तामणि, नव्यभोग, परहित (करनेवाले) आचार, श्रेष्ठ विचार, परिपूर्ण शक्तियाँ, प्रकट राज्य (के वैभव), ।। १८२० ।।

निर्मल कीर्तुलु नित्य सौख्यमुलु । धर्मैक निष्ठलु दानाभिरतुलु
नायुरारोग्यंबु - लधिक - संपदलु । बायक वाटिल्लु बापक्षयंबु
वरपुत्त्र लाभंवु वैरिनाशनमु । सरिनोंप्पु,धन धान्यचय समृद्धियुनु
ने विघ्नमुलु लेक यिंड्ल लो नधिक। लावण्यवतुलैन ललनल पोंदु
गोंडुकुलतो नेप्डु गूडुटयु । नेंडगाग नापद लेल्ल बायुटयु
सम्मदंवुन बंधुजनुल गूडुटयु । निम्मुल गाम्यंबु लेंडपकुंडुटयु
नन्नलु दम्मुलु नभिवृद्धि वोंदि । मन्नन तो गूडि मेलसि युंडुटयु
सततंवु देवता संतर्पणंबु । वितृगण तृप्तियु बेंपारु चुंडु
निदि मोक्ष साधनं,विदि पापहरमु । निदि दिव्य, मिदि भव्य, मिदि श्रीकरंबु
रमणीयलील नी रामायणंवु । ग्रममोंप्प वूजिप गल्गु वुण्यमुलु,१८३०
व्रासिन वारिकि वरशुभोन्नतुलु । वासवलोक निवासंबु गलुगु
नेंदाक गुलगिरु लेंदाक जलधु । लेंदाक रविचंद्रु लेंदाक दार
लेंदाक वेदंबु लेंदाक धरणि । येंदाक भुवनंबु लेपु दीपिंचु
नंदाक नीकथ यक्षरानंद । संदोहदोहळाचार मै परगु।१८३४

अयोध्याकांडमु समाप्तमु

—निर्मल कीर्तियाँ, नित्यसुख, धर्मनिष्ठा, दान में आसक्ति, आयु, आरोग्य, अधिक सम्पत्ति, अवश्य ही प्राप्त होंगे। पापक्षय, वरपुत्रलाभ, वैरि-नाश, समुचित रूप से होगा। विना किसी प्रकार की विघ्न-वाधाओं के धन-धान्य की समृद्धि, घरों में लावण्यवती ललनाओं का सहवास, सदा पुत्रों के साथ मिलकर रहना, सारी विपत्तियों का दूर हो जाना, सम्मोद के साथ वन्धुजनों से मिलकर रहना, प्रेम से कामनाओं की पूर्ति होना, सहोदरों का अभिवृद्धि (उन्नति) पाकर, बड़े स्नेह के साथ मिलजुल कर रहना, सतत देवताओं का संतृप्त रहना, पितृगण की तृप्ति में वृद्धि,(आदि) सम्प्राप्त होंगे। यह (ग्रन्थ) मोक्ष-साधक है, यह पापहर है, यह दिव्य है, यह भव्य है, यह श्रीकर है। रमणीय लीला (विधान) से इस रामायण की नियम से पूजा करने पर पुण्य प्राप्त होगा ॥ १८३० ॥

लिखनेवालों को वर-शुभ-उन्नति और इन्द्रलोक-वास प्राप्त होगा। जब तक कुलपर्वत, जब तक जलधि (समुद्र), जब तक रवि-चन्द्र, जब तक तारे, जब तक वेद, जब तक दिशाएँ, जब तक भुवन (लोक), विशिष्टता से प्रकाशमान रहेंगे, तब तक यह कथा, अक्षर(शाश्वत) आनन्द-सन्दोह (समूह) का निवास-स्थान होकर, विराजमान रहेगी ॥ १८३४ ॥

अयोध्याकाण्ड समाप्त

अरण्य-काण्डमु

अत्याश्रमागमनमु

श्री चित्रकूटमौ चित्रकूटमुन । वाचंयम श्रेणि वर्णिप नुंडि
यंत रामुडु भरतागमनंबु । सिंतिंचि 'यिचट वसिपरा' दनियु
'निच्चट नेनुन्न नेंल्लपौरुलुनु । मुच्चटपडि दिनंबुनु वत्तु' रनियु
'दंति रथाश्व पदातिवर्गमुल । नेंन्तयु गासिल्लु नीवनं' बनियु
'खरदूषणादि राक्षस कोटि बाध । परिहरिंपुमटंचु वरमसंयमुलु
चेंन्तल जेरि सूचिंचिना' रनियु । जिंतिंचि, मरुनाडु चित्रकूटाद्रि
मुनुल वीड्कोंनि यत्रिमुनियाश्रममुन। कनुरागमुन नेग, नम्महामौनि
तन शिष्युलुनु दानु तग नेंदुर्वच्चि । कोंनिपोयि पलुदेरंगुल बूजसेसे ।
नम्मुनिपत्नियु ननसूय प्रीति । नम्महीतनयकु नातिथ्यमोसगि,
तेंरगोप्प गोंन्नि पतिव्रतागुणमु । लेंरिगिंचि, रघुरामु नेंडबायलेक
१०

अत्रि के आश्रम को आना[1]

श्री चित्रकूट बने चित्रकूट को, वाक् की रमणीय श्रेणी से वर्णन करना चाहा । तब राम भरत के आगमन का विचार कर, (यह) सोच कर, 'यहाँ रहना नहीं चाहिए', (और यह) सोचकर कि 'यदि मैं यहाँ रहूँ तो समस्त पुरजन शौक से प्रतिदिन (यहाँ) आएँगे', (और यह) सोचकर कि 'दंति (हाथी), रथ, अश्व, पदाति वर्ग से (आने जाने से) इस वन को अधिक कष्ट होगा', (और यह) सोचकर कि 'परम संयमी (जन ने) निकट आकर यह सूचित किया कि खर, दूषण आदि राक्षस-कोटि (समूह) की बाधा (पीड़ा) का परिहार कर दो', (यह सब) सोचकर, दूसरे दिन चित्रकूटाद्रि के मुनियों को बिदा कर, अत्रि मुनि के आश्रम को अनुराग से गए । उस महामौनी ने अपने शिष्यों के साथ ढंग से अगवानी करके, (आश्रम में) ले जाकर, अनेक प्रकार से (राम की) पूजाएँ कीं । उस मुनि की पत्नी अनसूया ने प्रीति से उस महीतनया (सीता) को आतिथ्य देकर, विधान से पतिव्रता के कुछ गुण बताये, रघुराम को छोड़ न सक (वियोग को न सह सक)— ॥ १० ॥

---

[1] मूल (वाल्मीकि रामायण) तथा भास्कर रामायण में यह कथा अयोध्याकाण्ड के अन्त में है । यहाँ यह कथा भाग अरण्यकाण्ड के आदि में आया है ।

तन बंधुजनुल नंदर नेंडबासि। वनमुल कासीत वच्चुट पोंगडे;
बिम्मट ननसूय प्रीतितो दानु। नम्महीतनयकु नंगरागमुलु
वाडनि विरुल चेंल्वपुदंड तोड। गूड मायनि मडुंगुलुनु दा नोंसगि
'रमणि! निन्नु स्वयंवरमुन राघवुडु। ग्रममोंप्प गैकोंन्न कथ देंल्पु' मनिन
जिलिबिलि सिग्गुनु जिरुनव्वु दोंलक।वलिकें जानकि दनपतिनि वीक्षिंचि:
'विनवम्म! मिथिलकु विभुडैनयट्टि। जनकुडोंक्कॅड यागशाल दुन्निप
गलिगिति ने; नदि कारणंबुननु। कलित सीतानामकमुन नोंप्पितिनि।
अनपत्युडौट नय्यवनिपालकुडु। दनयगा नन्नु मोदंबुन वेंनिचें:
नंत यौवनवति यगु नन्नु जूचि। चिंतिंचि तनयिंटि शिवुनि चापंबु
नेंक्कुवेंट्टिनवानि कॅलमि पॅम्पोंन्द। निक्कन्यकामणि नित्तु ने ननुचु २०
वरबुद्धिमैं स्वयंवरमु साटिंप। धरणिनायकुलु मोत्तंबुलै वच्चि
शैलजारमणुनि चापमेंत्तंग। जालक मोपेंट्ट जालक चनिरि;
अंत राघवुडु विश्वामित्रु गोलिचि। कोंन्तगालंबुनकुनु नट वच्चि

—अपने समस्त वन्धुजनों से बिछुड़कर, सीता के जंगलों में आ जाने की सराहना की। (उसके) वाद अनसूया ने प्रीति से स्वयं उस महीतनया को अंगराग, न मुरझाने वाले फूलों की सुन्दर माला के साथ-साथ, (कभी) गंदे न बनने वाले वस्त्र देकर, कहा 'हे रमणी! स्वयंवर में राम ने तुम्हें जिस क्रम से ग्रहण किया, वह कथा वताओ।' जानकी ने अपने पति को देखकर, स्वल्प (मधुर) लज्जा तथा मुस्कुराहट के उमड़ने पर, कहा:— 'हे माता, सुनो। मिथिला के राजा जनक के एक वार यागशाला को जुतवाने पर, मैं उत्पन्न हुई। उस कारण से कलित (सुन्दर) सीता के नाम से (मैं) शोभित हुई। अनपत्य (निस्सन्तान) होने से उस अवनि-पालक (राजा) ने मुझे मोद से पुत्री के रूप में पाला-पोसा। तव यौवन-वती वनी मुझे देख, चिन्ता कर, यह कहा (घोषणा की) कि मेरे घर के शिवधनुप को चढ़ा सकने वाले को, प्रेम की वृद्धि होने पर, यह कन्यकामणि दूंगा॥ २०॥

(इस) वर-बुद्धि से स्वयंवर की घोपणा करने पर, धरणी-नायक (राजा) झुंड वाँधकर आकर, शैलजा-रमण (शिव) के चाप को उठा न सक, चढ़ा न सक, चले गए। तव राघव विश्वामित्र की सेवा करते हुए, कुछ समय के बाद वहाँ आए (और) जैसे करि (हाथी) इक्षुकांड (ईख के डंठल) को तोड़ डालता है, (उसी प्रकार) झट से हर (शिव) के धनुष को तोड़कर मुझे वरण किया।' ऐसा कहकर अपने विवाह के समस्त वृत्तान्त को सुनाने पर, सुनकर अनसूया मुदित हुई। तव रवि के

करि यिक्षुकांडंबु खंडिचुनट्लु ।हरुविल्लु विरिचि चय्यन नन् वरिंचे'
ननि तनपॆण्डिल वृत्तांतमंतयुनु । विनिपिंप ननसूय विनि मुदमंदे;
नप्पुडु रवि पश्चिमांबुधि मुनुग । दप्पक सांध्यकृत्यमुलॆल्ल दीर्चि
श्रीरामुडत्रिपूजिप सद्गोष्टि । ना रात्रि गडपि काल्यक्रियल् दीर्चि
मुदमॊप्प नय्यत्रिमुनि वीडुकॊलुप । गदलॆ नम्मरुनाडु; कमलाप्तकुलुडु

दंडकारण्य प्रवेशमु

सरळतालतमालसाल हिताल । कुरवकागुरु वट कुटज गण्यंबु
चंडांशुनिभ मुनिजन शरण्यंबु । गंडकहर्यक्ष गवय वेदंड ३०
गंडभेरुंडादि खगमृगोद्दंड । दंडकारण्यंबु दरियंग जॊच्चि
वेदनादमुलचे विस्तारहोम । वेदुलचेत बवित्रंबुलैन
पर्णशाललयंदु बवनांबुजीर्ण । पर्णाशुलगुचु दपंबु गाविंचु
मुनुलचे मिगुल समुन्नति नॊप्पु । जननुत तापसाश्रममुलु वॆक्कु
गनुगॊन्चु वारलु गाविंचु पूज । लनुरक्ति गैकॊन्चु ननुजुंडु दानु

विराधवध

नरुगुचो ना दंडकारण्यवीथि । नुरुपर्वताकारुडुग्रलोचनुडु

पश्चिम समुद्र में डूबने पर, आवश्यक समस्त सान्ध्य-कृत्यों की पूर्ति कर (निवृत्त होकर), श्रीराम ने अत्रि के पूजा करने पर, सद्गोष्ठियों में वह रात विताई, दूसरे दिन कालकृत्य (दैनिक कार्य) पूरा कर (निपट कर), मोद से, उस अत्रिमुनि के बिदा करने पर, रवाना हुए। कमलाप्त (सूर्य) कुल (वाले) (राम)—

दण्डक अरण्य में प्रवेश

—सरल ताल, तमाल, साल, हिंताल, कुरवक, अगुरु, वट, कुटजों (के-कारण) गण्य (प्रसिद्ध), चंडांशु (सूर्य) निभ (के समान) मुनिजन-शरण्य, गंडक, हर्यक्ष, गवय, वेदंड, ॥३०॥
—गंडभेरुंड आदि खग, (और) मृगों से उद्दंड बने दंडकारण्य में प्रवेश कर, वेदनादों से, विस्तार होम वेदियों से, पवित्र बने पर्णशालाओं में, पवन, अंबु (जल) जीर्ण-पर्ण ग्रहण करते हुए, तप करने वाले मुनियों के कारण अधिक समुन्नति से विराजमान, जननुत (लोगों से प्रशंसित) कई तापस-आश्रमों को देखते हुए, उनकी पूजाओं को अनुरक्ति से ग्रहण करते हुए अनुज के साथ स्वयं (राम)—

विराध का वध

—जाते समय, उस दंडकारण्य-वीथियों में उरु (बड़े) पर्वत-आकार वाला,

घनवक्त्रनासुंडु कठिनविग्रहुडु । घनुडु विराधुडन् कडिदिरक्कसुडु
अट्टहासमु सेसि याकसंबद्रुव । बेट्टगा वनमेल्ल भेदिल्लं वच्चि
गरुडुंडु बालनागमु बलिमि नोंडिसि । यिरवोन्दगा दिवि कोंगयुचंदमुन
बटुशूलमुखचंचुभागुडै सीत ।गुटिलकुंतल नेत्तुकोनि मिटि कोंगसि

जनकजदेस जूचि चाल जिंतिंचु । घनुल श्रीरामलक्ष्मणुल वीक्षिंचि
'योरि ! वीरुलवले नोडक वच्चि । यीरसंबुन मीरलेनुन्न यडवि
शरचापहस्तुलै चरियिंप नेन्त । बिरुदुलु ! भुजशक्ति पेर्कोन नेन्त?
तल्लि शतह्लद; तंड्रि जयुंडु; । तोल्लि यायुधमुल द्रुंगक युंड
ब्रह्मचे वरमुलु वडसिनवाड; । ब्राह्मणाशनुड; विराधुडन्वाड;
ने नल्गि चूचिन निंद्रादिसुरल । नैननु म्रिगुदुनट, मर्त्युलेन्त ?
यी यिंति नोप्पिंचि यी कान विडिचि।पोयि मी मी प्राणमुलु गाचिकोनुडु
कादेनि नाचेति घनशूलहतिकि । नादट नरिमि रं' डनि पेर्चिपलुक
सौमित्रि यप्पुडु जनकजभयमु । नामहाराक्षसु नदटुनु जूचि
'योरि! रामुनि देवि नुरुपुण्यसाध्वि। धारुणिनंदन दगदोरि ! नीकु

उग्र लोचन वाला, घन वक्त्र-नास (नासिका) वाला, कठिन विग्रह (शरीर) वाला और महान् विराध नामक दुर्निवार राक्षस, आकाश को कंपित करते हुए अट्टहास कर, समस्त वन को उद्धत रूप से बेधते हुए आया। जैसे गरुड बालनाग को जबरदस्ती पकड़ कर, सुन्दरता से आकाश की ओर उड़ जाता है, उसी प्रकार पटुशूल मुखरूपी चचुभाग वाला (वह राक्षस), कुटिल-कुन्तल (घुंघुराले केश) वाली सीता को पकड़, आकाश की ओर उड़ा, ॥४०॥ —जनकजा की ओर देख अधिक चिन्तित होने वाले, महान् (पुरुष) श्रीराम (और) लक्ष्मण को देखकर (उस राक्षस ने कहा), 'रे ! वीरों के समान अपराजित हो आकर, इस प्रकार, तुम लोग इस जंगल में, जहाँ मैं रहता हूँ, शरचाप धारण कर घूमने के लिए कितने साहसी हो ? (तुम्हारी) भुज शक्ति ही कितनी है ? माता (मेरी) शतह्लदा है, पिता जय है। पूर्वकाल में ब्रह्मा से वर प्राप्त किया कि किसी आयुध से मरूँगा नहीं। (मैं) ब्राह्मणाशन (ब्राह्मणों को खाने वाला) हूँ। विराध मेरा नाम है। मैं क्रुद्ध होकर देखूँ तो इन्द्र आदि देवताओं को भी निगल जाऊँगा। फिर मर्त्य की बात ही क्या ? इस स्त्री को समझाकर, (मेरे पास रहने के लिए मनवाकर), इस जंगल को छोड़ जा कर, अपने-अपने प्राणों की रक्षा कर लो। नहीं तो, मेरे हाथ के घन-शूल के प्रहार के लिए, सन्तोप के साथ तैयार हो जाओ।' ऐसा गरजकर कहने पर, सौमित्र ने तब जनकजा के भय (तथा) उस महाराक्षस

गौंनिपोव; नेक्कड गौंनिपोयेंदिक ?। निनु बट्टि वधियिंतु नेडुनाकडिमि'
'ननि बाणसंधानमलुकमै जेसि। घनबाणततुलु वक्षमु गाडनेय
नरुदुगा वाडट्टहासंबु सेसि। कॅरलुचु शूलमंकिंचि वैचुटयु
घनघनाघनमु संगति बासि पिडुगु। चनुदेन्चु करणिरा जानकीविभुडु
नदि रेन्डु शरमुल नलुवुमै द्रुंप। बदरि वाडट सीत बडवैचे बुडमिः
ना राक्षसुनि बासि याकाश वीथि। धारुणीसुत सीत दल्लडिल्लुचुनु
जलदंबु नेंडबासि चनुदेन्चु मेरपु। चेंलुवुन जनुदेर जेच्चेर जूचि
गरुडास्त्रमुन डिंचि कडगि राघवुडु। वरबाणमुलु पेंक्कु वानिपै नेय
नविलेक्क सेयक यट्टहासंबु। भुवनभयंकरंबुग बिट्टौनर्चि
करमुल रामलक्ष्मणुल निद्दरनु। गरमर्थि बट्टि रक्कसुडुक्कुमीरि ६०
मूपुलनिडि रयंबुन द्रोवबट्टि। वेपोव सीतयु वेंनुवेंण्ट दगिलि
वापोव नट गौंन्तवडि पोयि पोयि। प्रापितकोपुलै रामलक्ष्मणुलु
मेंरुगुदीगेलरीति मेरयु खड्गंबु। लौरलूडि्च वानि बाहुलु रेन्डु दुनुम

के मद को देखकर (कहा)—'ओरी ! राम की देवी, उस-पुण्य-साध्वी धारुणी-नन्दना को ले जाना तुम्हारे लिए ॥५०॥

—उचित नहीं है। अब (उन्हें) ले भी कहाँ जा सकोगे ? मैं अपने पराक्रम से तुम्हें पकड़ वध कर दूँगा।' (ऐसा) कहकर क्रोध से बाण सन्धान कर, घन बाण-समूह चलाए, जो (उस राक्षस के) वक्षस्थल पर गड़ गए। अपूर्व रूप से उस (राक्षस) ने अट्टहास कर, विजृम्भित हो, शूल को घुमा-घुमा कर फेंक दिया। घने जलद के सांगत्य को बिछुड़ कर आने वाली गाज के समान (उस शूल के) आने पर जानकीविभु ने उसे दो बाणों से, सरलता से काट दिया। क्रुद्ध हो उस (राक्षस) ने सीता को पृथ्वी पर डाल दिया। उस राक्षस से बिछुड़कर आकाशवीथि में धारुणीसुता सीता के, व्याकुल होते हुए, जलद से बिछुड़कर आने वाली बिजली के सौंदर्य के समान (नीचे) आते रहने पर, झट से देख, राघव ने गरुडास्त्र से (सीता को) नीचे उतारा। (और) अनेक श्रेष्ठ बाण उस पर चलाए। उनकी परवाह न करते हुए, शीघ्र भुवन भयंकर रूप से अट्टहास कर, हाथों से राम लक्ष्मण दोनों को, इच्छा से पकड़कर, राक्षस पराक्रम के आधिक्य से ॥६०॥

—उन्हें कंधों पर बिठा कर, शीघ्रता से मार्ग-ग्रहण कर, झट से जाने लगा। सीता भी उनके पीछे लग रोती रही। उधर थोड़ी देर तक जा-जाकर, राम लक्ष्मण ने प्राप्त क्रोधवाले (क्रुद्ध) होकर, चंपालताओं के समान चमकनेवाले खड्गों को म्यानों से निकाल कर, उसके दोनों बाहु काट डाले। वज्र (के आघात) से गिरने वाले गिरि के समान, दिशाओं को कंपायमान करते

गिरिवज्रमुन गूलुक्रिय दिक्कुलद्रुव। नुरवडिनोऱलुचु नुर्विपै गूलि यसुवुलु वीड कथ्यसुरयुंडुटयु। नसमानपदमुष्टिहतुल नंदंद मुद्दगा जेसि समुद्धति जंपि। 'रद्दिरा' यनि मुनुलाश्चर्यमंद नतडंत गंधर्वुडै रामु जूचि। यतुलविमानंबुनंदुंडि पलिकें: 'नेनु गंधर्वुड; नेनु तुंबुरुड; । भूनाथ! मनु रंभ वोंन्दि कोंल्वुनकु रानि गर्व मरिंगि राक्षसाकृतिग। नेनु गुवेरुचे निटुशापमंदि नेडु मी भुजशक्ति निजशापमुक्ति। पोडिमि गांचिति; वोयेदनिक; ७०

निरवोप्प ना देहमिल वूड्चि चनुडु। शरभंगमौनियाश्रममुन' कनुचु वोयें म्रोंक्कुचु; नंत वोंलुपोंन्दुवानि। कायंबु धर वूड्चि कडुभयंवंदु धरणीतनूभव दग गौगिलिंचि। परमसम्मदमुन भयमेल्ल मान्पि तलकोंन्न पेर्मितो दम्मुनि जूचि। 'यिलमीद गलगुनें यिट्टि दुर्गमुलु? कावुन वेग मी गहनंबु दाटि। पोवलें मनमु भूपुत्नि दोड्कोंनुच' ननि यंतशरभंगुडनु मुनिचंद्रु। गनुगोंनुतलपुन गाकुत्स्थकुलुडु

हुए, अति वेग से, विलाप करते हुए वह (राक्षस) धराशायी हुआ, पर उस राक्षस ने प्राण नहीं छोड़े। तव असमान चरण (और) मुष्टि के आघातों से उसे वहीं पिण्ड-सा वनाकर, समुद्धति से मार डाला जिसे देख मुनि आश्चर्यचकित हो, साधुवाद देने लगे। तव वह गन्धर्व होकर, अतुल विमान में रहकर, राम को देखकर बोला 'मैं गन्धर्व हूँ, मैं तुम्वुर हूँ। हे भूनाथ! पूर्व में रम्भा को प्राप्त कर (रतिक्रीडा में तल्लीन रहते हुए), सभा में नहीं गया। (मेरे) गर्व को जानकर, कुवेर ने राक्षसाकृति को प्राप्त होने का शाप दिया। आज आपकी भुजशक्ति से, मनोज्ञरूप से, निज शापमुक्ति प्राप्त की। अव जाऊँगा। ॥७०॥

—सुन्दरता से मेरे शरीर को पृथ्वी में गाड़ कर, शरभंगमुनि के आश्रम को जाइए।' (ऐसा) कहते हुए, प्रणाम करते (वह) चला गया। तव शोभायमान उसके शरीर को धरा में दफनाकर, अधिक भीत होने वाली धरणीतनूभवा (सीता) को प्रेम से गले लगा कर, परम सम्मोद से समस्त भय को दूर किया, वड़े प्रेम से अनुज को देख (कहा), 'पृथ्वी पर ऐसे दुर्ग (कानन) (और कहीं) हो सकते हैं? अतः भू-पुत्री को साथ लेकर हमें शीघ्रता से इस गहन (अरण्य) को पार कर जाना चाहिए।' (ऐसा) कह शरभंग नामक मुनिचन्द्र को देखने के विचार से काकुत्स्थकुलज (राम) (निकल पड़े)।

शरभंगाश्रमगमनमु

चनुचोट नुदयार्क संकाशमगुचु । नोनर नम्मुनियाश्रमोपरिवीथि
हरितहयाकीर्णमै सितच्छत्र । परिवृतंबै देवभरितंबु नगुचु
नकलंकमणिरोचुलंदंद पर्व । नोक विमानमु गांचे नुडुवीथि; नंत
गनि विमानमुलोनि कमनीयशीलु । गनुगोनु तलपुन गदियवच्चुटयु ८०

नदि यदृश्यंबय्ये; नंत राघवुडु ।मुदमोप्प शरभंगमुनि गांचि म्रोक्कि
मुनिचेत सत्कारमुलु साल बडसि ।यनुरागमुन बोन्दि यतनिकिट्लनियें:
'नेमु निन्निट जूड नेतेन्चुचोट । नो मुनीश्वरचंद्र ! योक विमानंबु
चदलेल्ल वेलुग निच्चटनुंडि पोयें; ।नदि येन्दुलकु वच्चें? नदि येन्दुबोयें?
ना विमानमुलोनि यतडेव्वड ? 'निन। भूववरुनकु मुनिपुंगवुडनियें:
'देवेंद्रुडातडु देवेंद्रवंद्य ! । देव ! नाकडकुनु दिविनुंडि प्रीति
ननिमिषुलुनु दानु नर्थि दीपिंप । ननु ब्रह्मलोकंबुनकु बिल्व वच्चें:
वच्चिन नो महीवरचंद्र ! नीवु । विच्चेयुटिच्च भाविंचिनेनिपुडु
नेरसिन भक्तितो निन्नु बूजिंचि । मरि पोवुवाडनै मदि निश्चयिंचि
'यंतकु रा' ननि यतनि बोम्मंटि । जिंतिंचि वच्चियु श्रीराम ! निन्नु

शरभंग के आश्रम मे जाना

—जा रहे थे तो उस मुनि के आश्रम के ऊपरी भाग पर, उदयार्क (बाल सूर्य) के समान शोभायमान, हरित हय आकीर्ण, सित-छत्र-परिवृत (श्वेत छत्र से आवेष्टित), देव भरित, अकलंक मणियों की रोचियों (किरणों) से व्याप्त (युक्त) होने वाले एक विमान को उडुवीथि (आकाश मार्ग) में देखा। तब (उसे) देखकर, विमान में बैठे कमनीयशील (वाले पुरुष को) देखने के विचार से निकट आने पर ॥८०॥

—वह (विमान) अदृश्य हो गया। तब राघव ने प्रसन्नता से शरभंग मुनि को देख, प्रणाम कर, मुनि के द्वारा अनेक सत्कार प्राप्त कर, अनुराग प्राप्त कर, उससे यों कहा, 'हे मुनीश्वरचन्द्र ! हम जब तुमको देखने आ रहे थे तब एक विमान समस्त आकाश के प्रकाशित होने पर यहाँ से गया। वह क्यों आया ? वह कहाँ गया ? उस विमान में कौन था ?' (ऐसा) कहने पर भूवर (राजा) से मुनिपुंगव (यों) बोले, 'हे देवन्द्र वन्द्य ! हे देव ! वह देवेन्द्र था। मेरे पास दिवि (स्वर्ग) से प्रेम से, अनिमिष (देवता) और स्वयं, अभिलाषा के दीप्त (उत्कट) होने पर मुझे ब्रह्मलोक में बुलाने आया। आया था तो हे महीवरचन्द्र ! तुम्हारे यहाँ पधारने की (बात) मन में विचार कर, (मैंने) मन में निश्चय किया कि मैं अब उत्कट भक्ति से तुम्हारी पूजा करके ही जाऊँगा, (और उससे यह कहा)

गांतारखिन्नु निक्कड सूड करिगें; । नितलो विच्चेसि तिनकुलाधीश!
धरणीश ! नी प्रसादमुन नातपमु । नरुदार नोंक विघ्नमैननु लेक
सलिपिति निष्ठतोः सफलंबुनय्यें ;। नेंलकोंनि श्रीराम ! निनु जूडगंटिः
ननघ ! सुतीक्ष्णसंयमि निंक नीवु । गनुगोंनि यतनि चेंन्गट नुंडु; मेनु
बनिविनियेंद निंक ब्रह्मलोकमुन' । कनि चेंप्पि रामु समक्षंबुनंदु
ननलमुखंबुन नम्मुनीश्वरुडु । दनमेनु मंत्रपूतमु सेसि वेल्चि
येंडपक यिंद्रादुलेंल्लनु गोंलुव । गडुनोंप्पु ब्रह्मलोकमुनकु बोयें;
ना याश्रमवासुलैन संयमुलु । वायुभक्षकुलुनु वैखानसुलुनु
वालखिल्युलु मौनवंतुलु वर्ण । शालाविहीनुलु स्थंडिलशयुलु
मननशीलुरु दांतिमंतुलेकांतु । लनशनव्रतुलु बंचाग्निमध्यगुलु १००
मोंदलैन तापसुल् मूकलु गट्टि । सदयात्मुडगु रामचंद्रुनि जेरि
'पितृवाक्यपालनप्रियुडवु, सत्य । रतुडवु, नीवु निर्मलयशोनिधिवि;
राम ! नी यंतटि राजु गल्गियुनु । नेमु राक्षसबाध निट गुंद दगुनें ?
व्रतिनि रक्षिंचिन राजुकु गल्गु । नतनि पुण्यमुन नालवपालु; गान

'अभी नही आऊँगा, तुम जाओ।' वज्री (इन्द्र) चिन्तित हुआ। हे श्रीराम ! ॥९०॥

—कान्तार-खिन्न (वनवास से खिन्न बने) तुम्हें यहाँ देखे विना चला गया। इतने में हे इनकुलाधीश ! (तुम) पधारे। हे धरणीश ! तुम्हारे प्रसाद (कृपा) से मेरा तप, जो मैंने बिना किसी विघ्न के, निष्ठा से किया था, सफल हुआ। स्थिर भाव से हे श्रीराम! तुम्हें देख सका। हे अनघ[1]! अब तुम सुतीक्ष्ण संयमी को देखकर, उसके पास रहो। मैं अब ब्रह्मलोक को जाऊँगा।" ऐसा कहकर राम के समक्ष उस मुनीश्वर ने, अग्निमुख में, अपने शरीर को मन्त्रपूत कर, होम किया। निरन्तर इन्द्र आदि सभी के सेवा करते रहने पर, अतिशोभित ब्रह्मलोक को गया। उस आश्रम के वासी संयमी, वायुभक्षक, वैखानस[2], वालखिल्य, मौनवन्त, पर्णशालाविहीन, स्थण्डिल-शायन (भूशायी) मननशील, दान्तिमन्त, एकान्त (वासी), अनशनव्रती, पंचाग्नि मध्यग (-मध्य रहने वाले) ॥१००॥

—आदि तपस्वी झुण्ड बाँधकर, सदयात्म (दयालु) रामचन्द्र (के निकट) पहुँचकर (बोले) 'हे राम ! तुम पितृवाक्य-पालन-प्रिय हो, सत्यरत हो, निर्मल यशोनिधि हो। तुम जैसे राजा के होते हुए, हमें यहाँ राक्षसों से पीडित होना चाहिए ? व्रती की रक्षा करने वाले राजा को उस (व्रती

१ निष्पाप २ वानप्रस्थ आश्रम का संन्यासी, वैष्णव।

नी तरि दैत्युल नेल्ल खंडिंचि । मा तपोव्रतमुलु मैत्नि निंडिपु;
सोरिदि नी शरणंबु सोच्चिचति' मनिन । शरणागत त्राण चरितुंडु गान
ना याश्रमंबुलयंदुंडु मुनुल । कायतमति रामुडभयंबुलिच्चि
'मी यनुग्रहमुन मेटि रक्कसुल । दायल खंडितु; दलककु' डनुचु

सुतीक्ष्णमुनि दर्शनमु

वारि वीड्कोनि घोर वनसीम दूरि । यारूढमति सुतीक्ष्णाश्रमंबुनकु
वच्चि या मुनिचंद्रु वलगोनि पेरु । ग्रुच्चि सद्भक्ति नेक्कोन म्रोक्कटयुनु ११०

वारल दोड्कोनि वच्चि सुतीक्ष्णु । डा रामु दीविंचि यक्कुन जेर्चि
'यनघात्म ! चित्रकूटाद्रिकि नीवु । मुनिवृत्ति वल्कलंबुलु गट्टिवच्चि
युनिकि यार्कणिंचि युल्लंबुलंदु । गोनकोनि नी राक गोरुचुंडुदुमु;
नीव विच्चेसिति; निनु जूडगंटिः । मेविधंबुननिक नेमु धन्युलमु;
आयत भुजसत्त्वुलैन राक्षसुलु । मा याश्रममुलकु मत्तुलै वच्चि

व्यक्ति) के पुण्य का चौथा भाग प्राप्त होता है। अतः इस अवसर पर समस्त दैत्यों का वध कर, मैत्री से हमारे तप (और) व्रत को पूर्ण (सम्पन्न) करो। क्रम से (हम) तुम्हारी शरण में आए हैं।' (ऐसा) कहने पर शरणागत त्राण-चरित्र वाले होने से, उन आश्रमों में रहने वाले मुनियों को आयतमति वाले राम ने अभय प्रदान किया। 'आपके अनुग्रह से श्रेष्ठ (बली) शत्रु राक्षसों का वध करूँगा। भीत मत होइए।' कहते हुए

सुतीक्ष्ण मुनि के दर्शन

—उन्हें बिदा कर, घोर वन सीमाओं में प्रवेश कर, आरूढमति वाले सुतीक्ष्ण के आश्रम में आए। उस मुनिचन्द्र की परिक्रमा कर, (अपना) नाम बताकर, सद्भक्ति के उत्कट होने पर, (साष्टांग) प्रणाम किया ॥११०॥

—उन्हें लिवा ले आकर, सुतीक्ष्ण ने उस राम को आसीस, गले से लगाया (और कहा):— 'हे अनघात्म ! चित्रकूटाद्रि में मुनिवृत्ति से वल्कल धारण कर, आकर रहने (की बात) सुनकर, मन में उत्कट इच्छा लिए, तुम्हारे आगमन की कामना करते रहे हैं। तुम पधारे। तुम्हें देख पाए। अब हम सब विधियों से धन्य हैं। आयत-भुज-सत्व वाले राक्षस हमारे आश्रमों में मस्ती से आकर, होमवेदियों को उखाड़, यूप (स्तम्भों) को गिरा देते हैं। स्वयं सोमपान कर देवताओं को भगाकर, तप का भंग कर, पादपों (वृक्षों)

होमवेदुलगलिच यूपमुल् गूल्चि । सोमयानमु ग्रोलि सुरल वोद्रोलि
तपमुलु सेरचि पादपमुलु विरिचि।जपमालिकलु द्रेन्चि शाटिकल् सिंचि
फलमुलु डुल्चि पुष्पमुलेल्ल राल्चि।कीलकुलु गलचि दिक्कुलुगासि सेसि
पेक्कंड्र मुनुल जंपिरि दुरात्मकुलु;। दिक्कुले; दीपाटु दीर्पवे देव !
येचिन दनुजुल नेमु गोपिंचि । चूचिन नीरुगा जूड जालुदुमु; १२०

नेलकोनि महिमीद नीयट्टि राजु । गलुगुट जेसि येक्कडनलग मेमु;
कावुन दुष्टराक्षसुल मर्दिंचि । नीवु मा तपमुलु निष्ठ वालिपु'
मनिन रामुडु 'राक्षसाधीशवरुल । ननिलोन जंपेद' ननि यूरडिंचि
शरभंगुनाश्रमस्थलमुन मुनुल । किरवोप्प नभयंबुलिच्चुट देलिपि
रक्कसुलनु जंप रामुंडु प्रतिन । लक्कजंबुग वट्टि या रात्रि गडपे;
मरुनाडु वेक्कंड्रु मौनुलु वच्चि । मरि तम तम याश्रममुलकु विलुव
दिननाथकुलुडु सुतीक्ष्णु वीड्कोनुचु । मुनुल पुण्याश्रमंबुलु सूडगोरि

सीतादेवि धर्मसंशयमु

चनुचोट रघुरामु जानकि सूचि ।'यनघ! राज्यमु मानि यडविकिवच्चि

को तोड़ (गिरा) कर, जयमालाओं को तोड़कर, शाटियों (लंगोटियों) को फाड़कर, फल गिराकर, समस्त पुष्पों को गिराकर, सरोवरों को कलुपित कर, दिशाओं को (सब ओर) व्याकुल कर देते हैं (और) उन दुरात्मकों ने कई मुनियों को मार डाला है। (हमारे लिए कोई) चारा नहीं है। हे देव ! इस कष्ट को दूर कर दो न ! विजृम्भित राक्षसों को हम क्रुद्ध होकर देखें तो दृष्टि (मात्र) से भस्म कर सकते हैं ॥१२०॥

—मही पर शोभा से तुम जैसे राजा के होने के कारण हम कहीं (किसी भी दशा में) क्रुद्ध नहीं होते है। अतः दुष्ट राक्षसों का दमन कर, तुम हमारे तपों की निष्ठा से पालन करो।' (ऐसा) कहने पर, राम ने उन्हें आश्वस्त किया कि 'अनि (युद्ध) में राक्षसाधीश-वरों का वध करूँगा।' शरभंग के आश्रम् स्थल में मुनियों को शोभा से अभय प्रदान (का समाचार) बताकर, आश्चर्यप्रद रूप से राक्षस-वध की प्रतिज्ञा धारण कर, वह रात विताई। दूसरे दिन अनेक मुनि आए और अपने-अपने आश्रमों में बुलाया। दिननाथ-कुल (वाले राम) के सुतीक्ष्ण से बिदा लेकर, मुनियों के पुण्य आश्रमों को देखने की इच्छा कर,

सीता देवी का धर्मसंशय

—जाते समय, रघुराम को देख जानकी (बोली):— 'हे अनघ ! राज्य को

समुचित वृत्तिमै जडलुनु वल्क। लमुलु धरिंचि मैलंगुचु नुऱ्क
यसुरुलदेस नीकु नलुग नेमिटिकि?। पौसग नी माटलु बुद्धि जिंतिप; १३०

मुनुलतो 'राक्षसमुख्युल द्रुंतु'। ननि यूऱडिंचिनयंतनुंडियुनु
गलगुचुन्नदि मदि गाकुत्स्थतिलक!। वलदी तेऱंगुलु; वर्जिपवलयु;
ब्राणुल जंप बापमु रादे? तोल्लि। प्राणेश! योक मुनि बहुतपोनिष्ठ
नुंडुचो भटरूपयुक्तुडै वज्रि। योन्डु खड्गमु मौनियोद्द दाचुचुनु
इदे पोयिवच्चेद ने' ननि चनियें;। ददनंतरमुन नातडु खड्गमंदि
यूरकुंडक तीवलोकट वृक्षमुल। सारे द्रुंचुचुनु हिंसारतुडगुचु
जडमतियै तपश्चर्यंकु बासि। कडपट नतडु दुर्गति गूले: गान
दपमेड? मरि राजधर्मंबुलेड?। विपुलायुधमुलेड? विडुववे देव!"
यनवुडु विनि नव्वि यधिपति सीत। गनुगोनि "विप्रमार्गंबु नी पलुकु;
क्षत्रमार्गमु गादु साध्वि! ना वलनि। मैत्रि बल्केदवु नामतमेऱिगियुनु; १४०

छोड़, जंगल में आकर, समुचित वृत्ति से, जटाएँ तथा वल्कल धारण कर रहते हुए (समय) धृष्ट असुरों पर तुम्हें क्रुद्ध क्यों होना चाहिए? बुद्धि से सोचने पर ये बातें ठीक नहीं जँचतीं ॥१३०॥

हे काकुत्स्थतिलक! (जबसे) तुमने मुनियों को 'राक्षसमुख्यों का वध करूँगा' कहकर आश्वस्त किया था, (तब से) (मेरा) मन क्षुब्ध हो रहा है। ये पद्धतियाँ नहीं चाहिए (उचित नहीं), (इस विचार को) वर्जित करना चाहिए। प्राणियों का वध करने से पाप नहीं होगा? हे प्राणेश! पूर्व (काल) में एक मुनि बहुत निष्ठा से युक्त था तो वज्री (इन्द्र) ने भट (सैनिक) रूप युक्त हो, एक खड्ग मौनी के पास रख छोड़ते हुए कहा:— 'यहीं मैं जाकर आ जाऊँगा' (और) चले गए। उसके बाद वह (मुनि) खड्ग को पाकर चुप न रह सका, कभी लताओं को, कभी वृक्षों को काट डालते हुए हिंसारत होते हुए जड़मति (मूर्ख) हो, तपश्चर्या को छोड़ अन्त में वह दुर्गति को प्राप्त हुआ। अतः तप कहाँ? फिर राजधर्म कहाँ? (तथा) विपुल आयुध कहाँ? हे देव! (इस विचार को) छोड़ दो न!' ऐसा कहने पर, सुनकर, हँसकर, अधिपति (राम) सीता को देख बोले:— 'तुम्हारी बात विप्र मार्ग (के अनुकूल) है। हे साध्वी! क्षत्र-मार्ग नहीं है। मेरे अभिमत को जानकर भी, मेरे प्रति मैत्री (प्रेम) के कारण (यों) बोल रही हो ॥१४०॥

दरुणि ! युत्तमराजधर्मैकपरुलु । शरचापमुलु दाल्चि चरिंचुटेल्ल
शरणागतुल गाव जंचिचि कादे ? । परिकिंपवेल यी परमधर्मंबु ?
निम्महामुनुलतो नाडिन प्रतिन । नेम्मेयि गावितु; निदिय निश्चयमु;
विडुतु ब्राणमुनैन; विडुतुनिन्नैन; ।विडुतु दम्मुनि नैन; विडुव ने ब्रतिन"
ननिन नूरक युंडे नवनिज यपुडु; । विनि लक्ष्मणुडु साल विस्मयंबंदे;
नटमीद नोक्कोक्क याश्रमंबुननु । बटुधर्मविधि रामभद्रुंडु प्रीति
बदियु वासरमुलु बदुनेनुदिनमु । लदिगाक नेलनेल यटु रेन्डु नेललु
मूडेसिनेललु निम्मुलनालगुनेललु । बोडिमि निलुचुचु बुण्याश्रममुल

मंदकर्णि वृत्तांतमु

धीयुक्ति जूचुचु देरुवुन योज । नायतंबैन महातटाकंबु
गनि गीतवाद्य मंगळनिनादमुलु । दनर नय्युदकमध्यमुन ञ्रोयुटयु १५०
गडु जोद्यपडि तटाकमु सेरि दानि। कड धर्मभृतुडुंड गनि चेरि म्रोक्कि
'यिदि येमि मुनिनाथ ! यी तटाकमुन । नुदकंबुलो घोष मुब्बुचुन्नदियु
गडु जित्र'मनुडु राघवु जूचिपलिके। नडरेंडु वेडुक ना धर्मभृतुडु;

हे तरुणी ! उत्तम राज धर्म का ही पालन करने वाले जन का शर-चाप धारण कर घूमना तो शरणागतों की रक्षा करने के लिए ही है न ! इस परमधर्म पर क्यों ध्यान नहीं देती हो ? उन महामुनियों के साथ जो प्रतिज्ञा की थी, किसी भी प्रकार से, उसका पालन करूँगा । यही (मेरा) निश्चय है । (इसके लिए) प्राण भी छोड़ दूँगा, तुम्हें भी छोड़ दूँगा, लक्ष्मण को भी छोड़ दूँगा । (किन्तु) प्रतिज्ञा को नहीं छोड़ूँगा ।' (ऐसा) कहने पर तब अवनिजा चुप हो रही । (यह बात) सुनकर लक्ष्मण को अधिक विस्मय हुआ । उसके बाद पटु-धर्मनिधि रामभद्र प्रीति से एक-एक (किसी-किसी) आश्रम में दस दिन, पन्द्रह दिन, मास-मास, दो मास, तीन मास, चार मास, सुख से, अनुकूलता से ठहरते हुए, पुण्याश्रममों को

मन्दकर्णी का वृत्तान्त

—धीयुक्त हो दर्शन करते हुए, मार्ग में योजनभर (एक) महातटाक को देखकर, उस (तटाक) के जल-मध्य में शोभा से गीत वाद्य मंगल निनादों के मुखरित होते (देख) ।।१५०।।

—अत्यन्त चकित हो, तटाक के पास पहुँच, उसके निकट स्थित धर्मभृत्य को देख, नियराकर, प्रणाम कर, (पूछा):— ' यह क्या मुनिनाथ ! इस तडाग

'कदलक मुनु मंदकर्णि यन् मौनि । युदकमध्यंबुन नुरुनिष्ठ निलिचि
येनसिन महिम ननेकवर्षमुलु । तनियक यत्युग्रतपमाचरिंप
ना तपंबुनकु निंद्रादिदेवतलु । भीतिल्लि मुनिपति पेम्पेल्ल गलप
नम्मुनिकडकेवुरप्सरस्त्रील । निम्मुल बुत्तेर नेतेंचि वार
लतनिकि भार्यलै यंबुमध्यमुन । नतडु निर्मिंचिन हैमसौधमुल
मुनिनाथुमुंदट मुदमोप्प निलिचि । यनुरक्ति वारिप्पुडाडुचुन्नार;
लदिगान गौलनु पंचाप्सरंबय्ये । निदि वारि बहुवाद्य हृद्यशब्दम्मु"
१६०

लनवुडु विनि रामुडतिभक्ति तोड । घनपुण्युडगु मंदकर्णिकि म्रोक्कि
मरियु महाटवी मार्गबुनंदु । नेंरसिन कडिमिमै नेंरि नेगुनपुडु
मुनुलकु म्रोक्कुचु, मुनुलुन्न पुण्य । वनुलकु जोक्कुचु, वनजकह्लार
सरसुल देलुचु सत्कथालाप । सरणुल नानुचु जल्लनि गालि
राकल बोगडुचु रणितझिल्लिकल । जोकल देंगडुचु शुकमयूरादि
खगमुल बट्टुचु गरि वराहादि । मृगमुल गोट्टुचु मेघास्त्रमेसि
तापंबुलडचुचु दमु जूचुवारि । पापंबुलुडुपुचु बरुवंपुलतल
बुव्वलु सिदुमुचु बोंदलु तुम्मेदल । नव्वल गदुमुचु नभमंट दाकु

के उदक में शब्द उभर रहा है। बड़ी विचित्रता है।' (ऐसा) कहने पर उत्कट उत्साह से उस धर्मभृत्य ने राघव को देख कहाः— 'पूर्व में मन्दकर्णी नामक मौनी ने स्थिरता से उदक-मध्य मे उरुनिष्ठा से खड़े रहकर, अधिक महिमा से अनेक वर्ष, तृप्त न होते हुए, अत्युग्र तप किया। उस तप से इन्द्र आदि देवता भीत होकर (और) मुनिपति के महत्त्व को क्षुब्ध करने के लिए उस मुनि के पास पाँच अप्सरा स्त्रियों को प्रेम से भेजा। वे आकर उसकी पत्नियाँ बनकर, अम्बुमध्य में उसके निर्मित स्वर्ण-सौधों में मुनिनाथ के समक्ष मोदयुक्त हो रहकर, अनुरक्ति से वे अब नाच रही हैं। अतः वह तडाग पंचाप्सर हुआ (कहलाया)। ये उनके बहुवाद्य (युक्त) हृद्य शब्द हैं' ॥१६०॥

ऐसा कहने पर सुनकर राम ने अतिभक्ति से घनपुण्य वाले मन्दकर्णी को प्रणाम किया और महा-अटवी-मार्ग में प्रसरित साहस के साथ मनोहरता से जाने लगे। (जाते समय मार्ग में) मुनियों को प्रणाम करते हुए, उन पुण्य वनों को देख, जहाँ मुनिजन थे, अघाते हुए, वनज (जंगली) कह्लार (कमल) से (युक्त) सरसियों में डुबकियाँ लगाते हुए, सत्कथा-आलाप-सरणियों से प्रसन्न होते हुए, शीतल वायु के आगमन की प्रशंसा करते हुए,

शैलंबुलॆक्कुचु जानकि यलय। मेलंवु दक्कुचु मृदुरीति गुहल
मॆल्लन दार्चुचु मॆलतकु नॆक्कु। डल्लन नेर्पुचु नचटि चॆन्चॆतल
१७०

वीरमुल् मॆच्चुचु भेदिपरानि। यीरमुल् सॊच्चुचु निनरश्मिलेनि
कोनल गानल ग्रुम्मरुचिट्लु। जानकि दानु लक्ष्मणुडु गॊन्नॆड्लु
पुण्यतीर्थंवुलु वुण्यवाहिनुलु। वुण्यतपोवनभूमुलु गलय
दिरुगुचु बदियेड्लु दीरिनपिदप। मरलि सुतीक्ष्णाश्रममुनकु मरियु
वच्चि यम्मुनिचंद्रुवद्द गॊन्नाळ्ळु। मच्चिक नुंडि रामक्षितीश्वरुडु
ऒकनाडु घनु नगस्त्युनि जूडगोरि। यकलंकभक्ति संयमिकिनिट्लनियॆ:

अगस्त्य वृत्तांतमु

"निंदु नगस्त्यमुनीश्वरुडुंडु। नंदु; रॆन्दॊक्कॊ तदाश्रमभूमि ?
तॆलुपवे" यनिन सुतीक्ष्णुंडु गुरुतु। ललवड दन्मार्गमंतयु दॆलिपि
दीविंचि यनुप गादिलि तम्मुतोड। देवितो दक्षिणदिक्कुकै नडचि
चनिचनि नाल्गु योजनमुलु दाटि। वनमुलु शैलमुल् वाहिनुल् पॆक्कु
१८०

मुखरित झिल्लिकाओं के समूह की निन्दा अथवा उपेक्षा करते हुए, शुक-मयूर आदि खगों को पकड़ते हुए, करि-वराह आदि मृगों को मारते हुए, मेघास्त्र डाल (चलाकर), ताप को कम करते हुए, अपने को देखने वालों के पापों को दूर करते हुए, यौवन से भरी लताओं के फूलों को तोड़ते हुए, भ्रमरों को दूर भगाते हुए, नभचुम्वी शैलों पर चढ़ते हुए, जानकी के थक जाने पर परिहास करते हुए, मृदुरीति से गुहाओं के पास पहुँचाते हुए, वनिता (स्त्री अर्थात् सीता) को धीरे से चढ़ना सिखाते हुए, वहाँ की चेंचु (जंगली जाति) स्त्रियों की ॥१७०॥

—वहादुरी की प्रशंसा करते हुए, अभेद्य निकुंजों में घुसते हुए, सूर्यरश्मि से विहीन पर्वतों (तथा) काननों में घूमते हुए, इस प्रकार, जानकी, लक्ष्मण के साथ (राम) कुछ वर्ष तक पुण्यतीर्थो, पुण्यवाहिनियों, पुण्यतपोवन भूमियों की खाक छानते हुए, दस वर्ष के व्यतीत होने पर, फिर से सुतीक्ष्णाश्रम में लौट आए। आकर उस मुनिचन्द्र के पास कुछ दिन प्रेम से रहकर, रामक्षितीश्वर (राजाराम) एक दिन महान् अगस्त्य के दर्शन करने की इच्छा से अकलंक भक्ति से संयमी से यों वोले :—

अगस्त्य का वृत्तान्त

—'कहते हैं, यहाँ अगस्त्य मुनीश्वर रहते हैं। उनकी आश्रम-भूमि कहाँ है ? वताइए।' (ऐसा) कहने पर सुतीक्ष्ण ने चिह्न सुचार रूप से ज्ञात हों,

गनुगॊन्चु नेगि यगस्त्यानुजन्मु । ननघाश्रमंबुनकरिगि संप्रीति
ना यतीश्वरचंद्रु नडुगुल कॆरगि । या याश्रमंबुन ना रात्रि निलिचि
मुनितोड सुखगोष्ठि मॊगि जेयुचुंडि । यिनकुलाधीश्वरुंडिट्लनिपलिकॆः
"नय्य ! यगस्त्यमहामुनि दॊलिल । यिय्यॆड वातापि नॆभंगि जंपॆ"
ननिन नम्मुनिचंद्रुडा रामचंद्रु । गनुगॊनि या पुण्यकथ सॆप्पदॊडगॆ ।
'नुरुतापि वातापियुनु निल्वलुंडु । धरणिपै निरुवुरुद्दंड राक्षसुलु
गल; रंदु वातापि घनमेषमूर्ति।यिल निल्वलुडु नॊक्क ऋषियुनैनिलिचि
यिच्चट बॆनुत्रोव कॆदुरेगि मिगुल । दच्चन दमयिंट दद्दिनंबनुचु
मुनुल निमंत्रिंचि मुदमॊप्प दॆच्चि । यॆनय नम्मेषंबु नेर्पड जंपि
प्रीति गूरलु सेसि पॆट्टि भुजिप । "वातापि ! र" म्मनि वडिबेर
जीरु १९०

दडयक यपुडु वातापि यम्मुनुल । कडुपुलु व्रच्चि यग्गलिकतो वॆडलुः
नी रीति मुनुल ननेकुल जंपि । या राक्षसाधमु लडरियुंडुदुरुः
कॊनकॊनि यॊकनाडु कुंभसंभवुडु । चनुदेर गपटभोजनमॊप्पबॆट्टि

ऐसा उस मार्ग को समग्र रूप से बताकर, आसीस कर भेजा। लाड़ले अनुज (तथा) देवी (पत्नी) के साथ दक्षिण दिशा की ओर चलकर, चल चल कर, चार योजन पार कर, अनेक वन, शैल, वाहिनी ॥१८०॥

—देखते हुए जाकर अगस्त्य के अनुजन्म (अनुज) के अनघ-आश्रम में जाकर, सम्प्रीति से उस यतीश्वरचन्द्र के चरणों में नत होकर, उस आश्रम में वह रात ठहर कर, मुनि के साथ सप्रयत्न सुखगोष्ठी करते हुए, इनकुलाधीश्वर यों बोले:— 'हे आर्य ! पूर्व में अगस्त्य महामुनि ने यहाँ वातापि का संहार किस प्रकार किया ?' (ऐसा) कहने पर वह मुनिचन्द्र रामचन्द्र को देख, उस पुण्य कथा को कहने लगा। 'उरुतापि (अधिक तप्त करने वाला) वातापि तथा इल्वल नामक दो उद्दण्ड राक्षस पृथ्वी पर थे। उनमें वातापि घन-मेष (बकरी)-मूर्ति (धारण कर लेता) (तथा) इल्वल एक ऋषि बन कर, यहाँ के बड़े मार्ग में जाकर रहता। आगत मुनियों को कपट से कि हमारे यहाँ श्राद्ध है, निमन्त्रित कर, बड़ी प्रसन्नता से लाकर, उस मेष (बकरी) को ढंग से मारकर, प्रेम से साग बनाकर परोसने पर (वे लोग) खा लेते। तब शीघ्र नाम लेकर पुकारता कि 'हे वातापि ! आओ।' ॥१९०॥

—तब अविलम्ब वातापि उन मुनियों के उदर चीरकर, सोत्साह बाहर निकलता। इस प्रकार अनेक मुनियों को मारकर वे अधम राक्षस आधिक्य से विराजते थे। एक दिन कुम्भसम्भव के आने पर शोभा से कपट

वातापि विल्व निल्वलु जूचि नगुचु।"वातापि यॆन्दुंडि वच्चु ? जीर्णिचॆं" ननि यगस्त्युडु वल्क नायिल्वलुडु । कनलि रक्कसुडयि कदियवच्चुटयु गलशसंभवुडु हुंकारमात्रमुन । वलियु निल्वलु विट्टु भस्मीकरिंचि मुनुलकु नॆल्ल ब्रमोदंबु सेसॆं; । विनु मदियुनु गाक विंध्यं बडंचॆं; सरिगाग दक्षिणाशास्थलि निलिचॆं; । नरुदुगा नंबुधि नापोशनिंचॆं; बॆनुबामुगाग शपिंचॆं ना नहुषु; । मुनिमात्रुडे पुण्यमूर्ति कुंभजुडु ? मुनिवेषमुन नुन्न मुक्कंटिगाक" । यनविनि रघुरामु डानंद मंदि२००

मरुनाडु मुनिपति मार्गंबुसूपि । तॆरगॊप्प बूजिंचि दीविप वॆडलि चनिचनि यॊक्क योजन मुत्तरिंचि । पनस दाडिम शमी बदरिकाश्वत्थ साल प्रियाळु रसाल तमाल । मालूर खर्जूर मंदार तरुल तरुल ग्रिक्किरिसिन तावि क्रॊव्विरुल । विरुल तेनियलानि वॆलयु तुम्मॆदल मॆदल निपगुनट्टि मेटिपूवॊदल । बॊदललो बगलेक पॊदलु मृगमुल कलकंठकलकुहूकार नादमुल । विलसिल्लु बहुशास्त्रवेद नादमुल जॆलगुचु गिन्नर सिद्धगानमुल । कलिमि दीपिंचु नगस्त्युनाश्रममु

भोजन कराकर, वातापि को बुलाने वाले इल्वल को देख हँसते हुए (अगस्त्य) बोलेः— 'वातापि कहाँ से आएगा? वह जीर्ण (पाचन) हो गया है।' ऐसा अगस्त्य के बोलने पर, वह इल्वल क्रुद्ध होकर राक्षसबन, आक्रमण करने आया (तो) कलशसम्भव ने हुंकार मात्र से बली इल्वल को शीघ्र भस्म कर, समस्त मुनियों को प्रमुदित किया। सुनो, इसके अतिरिक्त विन्ध्य को दबा दिया, सुचारु रूप से दक्षिण दिशा की भूमि पर जा ठहरे, अद्वितीय रूप से अम्बुधि का आपोशन (पान) किया, उस नहुष को बड़ा सर्प बन जाने का शाप दिया। वे पुण्यमूर्ति कुम्भज क्या मुनिमात्र हैं? वे तो मुनिवेषधारी त्रिनयन (शिव) ही हैं।' (ऐसा) कहने पर सुनकर रघुराम प्रसन्न हुए। ॥२००॥

—दूसरे दिन मुनिपति के मार्ग बताकर, सुविधि से पूजन कर, आसीसने पर (वहाँ से) निकल पड़े। चल चलकर एक योजन पारकर, कटहल, दाड़िम, शमी, बदरी, अश्वत्थ, साल, प्रियालु, रसाल, तमाल, मालूर, खर्जूर मन्दार (आदि) वृक्षों, (तथा उन) वृक्षों पर सघन सुगंधित पुष्पों, पुष्पों के मधु का पान कर शोभित भ्रमरों के समूह से विलसित श्रेष्ठ पुष्प-कुंजों, कुंजों में निर्वैरभाव से संचार करने वाले मृगों, कलकण्ठ-कलकुहू-के निनाद के समान विलसित बहुशास्त्र-वेद नाद से शोभित हो, किन्नर-सिद्ध गान की सम्पन्नता से दीप्त अगस्त्याश्रम को ॥२०७॥

अगस्त्य दर्शनमु

गनुगव विदुगा गांचि यंदोक्क । मुनि चेत दम राक मुनि कॆरिगिंचि
चनि चॊच्चि यम्मुनिचरण पद्ममुल । कनुरागमुन म्रॊक्क नक्कुन जेर्चि
दीविंचि वेवेल तॆरगुल भक्ति । भाविंचि संतुष्टिपरुल गाविंचि
२१०

"यो राम ! शुभनाम ! युत्पलश्याम ! । क्रूरदानवभीम ! गुणधाम! नीवु
मुनुल भाग्यमुन मुनिवृत्ति दाल्चि । वनमुन दपसिवै वर्तिंप वच्चि
यरुदार जित्रकूटाद्रि केतेंचि । वरमति नॊक्क संवत्सरंबुंडि
शरभंगमौनि याश्रममु केतेंचि ।शरणु सॊच्चिन मुनीश्वरुलनु गाचि
'दनुजुल जंपॆद: दलककुडिक' । ननि प्रीति मुनुलक नभयंबुलिच्चि
करुणिंचि तनविनि काकुत्स्थतिलक! । परमसंतोषसंपन्नुडनैति'
ननि यर्थि बूजिंचि यतुल दिव्यास्त्र । घनशस्त्र कोदंड कवचादुलिच्चॆं:
निच्चन मैकॊनि यिनकुलाधीशु ।डच्चट सुखगोष्ठि ना रात्रि निलिचॆं:
मरुनाडु संध्यासमाधुल दीर्चि । परमात्मु डम्मुनिपतिकि म्रॊक्कंग

अगस्त्य के दर्शन

नेत्रयुग्म को प्रसन्नता हो, (ऐसे उस आश्रम को) देखकर, वहाँ के एक मुनि से अपने आगमन से मुनि को जनाया, (तब)जाकर, (आश्रम में) प्रवेश कर, उस मुनि के चरण-पद्मों में अनुराग से वंदना की। (अगस्त्य ने) गले लगा कर, आसीस कर, हज़ार-हजार ढग से भक्ति की,(और उन्हें) संतुष्ट कर (कहा) ॥२१०॥

—'हे राम ! हे शुभनाम (वाले) ! हे उत्पलश्याम ! हे क्रूर दानव-भीम (भयंकर) ! हे गुणधाम ! तुम मुनियों के सौभाग्य के कारण, मुनि-वृत्ति धारण कर, वन में तपस्वी हो रहने आकर, अपूर्वरूप से चित्रकूटाद्रि में आकर, वरमति से एक संवत्सर (वहां) रह, (पश्चात्), शरभंग मुनि के आश्रम (में) आकर, शरण में आए मुनीश्वरों की रक्षा कर, (यह कह कि) ' राक्षसों का वध करूँगा, अब घबराइए नहीं ' प्रीति से मुनियों को अभय प्रदान कर, करुणा दिखाई, यह सुनकर हे काकुत्स्थतिलक ! (मैं) परम संतोष-संपन्न हुआ हूँ। ऐसा कह प्रेम से पूजा कर (अगस्त्य ने) अतुल-दिव्यास्त्र, घनशस्त्र, कोदंड, कवच आदि दिए। देने पर, (उन्हें) ग्रहण कर, इनकुलाधीश (राम) सुखगोष्ठि में वह रात वहाँ ठहरे (बिताई)। दूसरे दिन सन्ध्या-समाधि से निवृत्त होकर, परमात्मा ने उस मुनिपति को प्रणाम किया, (तब उन्होंने) आसीस कर, पूजा कर,(ठीक) ढंग से रामदेव को देखकर, धीमान् ॥२२०॥

दीविंचि पूजिंचि तेरगौप्प राम । देवुनि वीक्षिंचि धीमंतुडैन
घटसंभवुडु भाविकार्य मूहिंचि । पटुतरवाक्युडै पलिकें निट्लनुचुः
"श्रीराम ! गोदावरी सरित्पुण्य । वारिशीतल गंधवाह कुमार
घटित नर्तन वनांगण लतानटिकि । जटिकृतपूज धूर्जटिकि ना पंच
वटिकि बों" म्मन रघुवर्युडच्चटिकि ।घटसूति वीड्कोंनि कदलि पोवुचुनु,

जटायुवुतो मैत्रि

नडुन्रोव नोंक पक्षिनाथुनि रेक्क । लुडिवोनि कुलगिरियो यनुदानि
गनि दैत्युडनु बुद्धि गदिसि 'नी वेव्व' । डनुटयु मुदमंदिया पक्षिवलिकें:
"गरुडाग्रजातुंडु कश्यपतनयु । डरुणसारथियैन यरुणुंडु घनुडु
मा तंड्रि; मरियु संपाति मा यन्न;। मी तंड्रि सखुड सुमी ! येनु राम!
यितरुड गानु; मी हितकार्यपरुड । नतुलसाहसुड; जटायुवन्वाडः
नी वनंबुनु नसुरेंद्र सेवितमुः । गावुन वैदेहि गावुः मेमरकु" २३०
मनुवुडु श्रीरामुडट्लुगा नतनि । मनमुन योजिंचि मैत्रि बूजिंचि,

पंचवटी प्रवेशमु

यट बंचवटि केगि यंदुन्न मुनुल । बटुतपोधनुल संभाविंचि म्रोक्कि

—घटसंभव (अगस्त्य) ने भावी कार्य की कल्पना कर, पटुतर-वाक्यों से यों कहा:— 'हे राम ! गोदावरी नदी के पुण्य-जल से शीतल वने पवन-कुमार (मन्द-पवन) के कारण, नृत्य में संलग्न वनांगन की लता रूपी नटी से युक्त; यतिकृत पूजाओं से धूर्जटि (शिव) सम, उस पंचवटी को जाओ।' कहने पर श्रेष्ठ रघु घटसूति (अगस्त्य) को विदा कर वहाँ से निकल पड़े ।

जटायु से मैत्री

मार्ग-मध्य में एक पक्षिनाथ को, जो (उस) कुलपर्वत के सम था, जिसके पंख झड़ नहीं गए हों, देख, दैत्य समझकर, नियराकर पूछा 'तुम कौन हो ?' (यह सुन) मुदित हो वह पक्षि बोला:- 'गरुड के अग्रजन्म, कश्यपतनय, अरुण (सूर्य) के सारथी, महान् अरुण मेरे पिता है, और संपाती मेरा भाई है । हे राम ! मैं तुम्हारे पिता का सखा ही हूँ । पराया नहीं हूँ । तुम्हारे हितकार्य-पर (तत्पर) हूँ । अतुल-साहस वाला हूँ । मैं जटायु नाम-धारी हूँ । यह वन असुरेंद्र-सेवित है । अतः वैदेही की रक्षा करो । असावधान मत बनो ।' ॥२३०॥
—ऐसा कहने पर श्रीराम ने उसी प्रकार मन में उसे मानकर, मैत्री से पूजा की ।

पंचवटी-प्रवेश

—तब पंचवटी जाकर, वहाँ के पटुतपोधनी मुनियों की संभावना कर, प्रणाम

करमर्थि वारु सत्कारमुल् सेय। धरणीतनय जूचि तम्मुनि जूचि
"पॊलुपॊंद नॆंदुनु बुण्याश्रममुलु। गलय वॆक्कुलु वॊडगंदुमु गानि
यी गौतमी गंग यी सरोवरमु। ली गिरु ली तरुली याश्रममुलु
नॆंदुनु वॊडगंटिमे ? यिट मीद। निदुंडुदमु मन मिपॊंद" ननुचु
नानंदमुन बॊंदि यंदुन्न मुनुल। यानति गैकॊनि या प्रॊद्दे कडगि
तानु लक्ष्मणुडुनु दग बर्णशाल। नूनिन क्रममुतो नॊप्पार गट्टि
तम्मुडु दानुनु दानि बूजिंचि। यम्महीसुत गूडि यनुरागमॆसग
ना पर्णशालयंदारु मासमुलु। दीपिंचु पेर्मि वर्तिंपुचुनुंड; २४०

हेमंतवर्णनमु

नंत नीहारधराक्रांतदश दि। शांतमै हेमंत मवनि बर्वुटयु
वेकुव नॊकनाडु वॆलदियुनु दानु। देकुव गौतमि दीर्थमाडंग
जनुचोट रामुडु सौमित्रि जूचि। "कनुगॊंटिवे शीतकालंबु महिम
दॆसलॆल्ल जलिकि भीतिलि वॆलिपट्टु। मुसुगु वॆट्टिनयट्लुमुंचॆ हिमंबु;
हेमंतमनु मेघमॆल्लॆड बर्वि। वामिगा वडगंड्लु वर्षिंचॆ ननग
गुरिसिन पॆनुमंचु गुंभिनिनॆल्ल। नॆरसि यॊप्पारॆ घनीभविंचुचुनु;

करने पर, अतिप्रीति से उन (मुनियों) के (अपने को) सत्कार करने पर, धरणीतनया और अनुज को देखकर (राम बोले):— 'शोभायमान कई पुण्याश्रमों को कई स्थानों पर देखा है। किन्तु यह गौतमी नदी, यह सरोवर, ये गिरि, ये तरु, ये आश्रम कहीं देखे हैं ? अब आगे शोभा से यहीं रह जाएँगे।' यह कहते आनंदित हो, वहाँ के मुनियों की आनति (अनुमति) प्राप्त कर, उसी दिन शुरूकर, लक्ष्मण के साथ स्वयं प्रयत्नशील हो, क्रम से शोभा से, पर्णशाला का निर्माण किया। अनुज के साथ उसकी (पर्णशाला की) पूजा कर, महीसुता के साथ, अधिक अनुराग से, उस पर्णशाला में छः मास अत्यंत प्रेम से रहे; ॥२४०॥

हेमंत वर्णन

—उस समय धरा और दश-दिशांतों को नीहार से आक्रांत करते हुए, अवनि (पृथ्वी) पर हेमंत के व्याप्त होने पर, एक दिन तड़के, स्त्री (सीता) के साथ, स्थैर्य के साथ, गौतमी में स्नान करने जाते हुए, राम ने सौमित्र को देख, (कहा):— 'देखा, शीतकाल की महिमा को ? हिम ने (समस्त धरती को) आच्छादित कर दिया है। यह ऐसा लग रहा है, मानों समस्त दिशाओं ने ठंड से भीत होकर, श्वेत कौशेय से (अपने आपको) ओढ़ लिया हो। मानों हेमंत रूपी मेघों ने सब जगह व्याप्त होकर, अधिकता से ओले बरसाए हों, उस प्रकार बरसा हुआ अधिक बरफ समस्त पृथ्वी पर व्याप्त हो,

उर्विपै ना मंचु नोक्कोकचोट। दूर्वाकुरंबुल तुदल जूचितिवे ?
पच्चभिन्नसलाक पौजुपै वेड्क। ग्रुच्चिन मुत्याल क्रोवलै योप्पें
गामु सम्मोहनकांडबुलनग; । हैमंतवायुवु ललवुमै सोक
वेऽपुन वणकेंडु विरहिणुलनग। देऽगोप्प गदलु पूदीग लीक्षिपु; २५०

मंचुन दारु तामरलु कन्नीरु। मुंचिन विरहुल मोमुल गेरु;
बोंदिगोन्न यकरुवुल् पोट्टुगा मीद। गदलु तेट्लु पोंगलगा जलिगोन्न
कोलनु देवतलकु गुंपट्लु वोलें। विलसिल्लु केंदम्मि विरुलजूचितिवे?
यडवियेनुगुलु नीरान नीनदिकि। दुडि दुडि वच्चि तत्तोयंबु दोंडिकि
नडिकि गिरऽनुचु दुंडमुलु वेवेग। मुडिचि पारेडिनि तम्मुड! विलोकिंपु;
इट्टि कालंबुन नेनुन्नुयट्लु। पट्टंबु नामीदि भक्तिमै मानि
नारचीरलु जटल् नवतमै दाल्चि। ना राक गोरुचु नम्महाघनुडु
परमपावनुडु सौभ्रात्रभावनुडु। वरपितृवाक्य मद्वाक्यतत्परुडु
चिरकीर्तिनिरतु डाश्रितलाभरतुडु। भरतुडुषःकाल परिचित नेट्लु
स्नानंबु सेयुनो सरयुवुलोन ? मौनियै येट्लोको महि वव्वळिंचु ? २६०

शोभायमान रूप से घनीभूत हो गया है। पृथ्वी पर, कहीं-कहीं उस ओस को दूर्वाकुरों के सिरों पर देखा है ? वे मानों मरकत मणियों की शलाकाओं की पंक्तियों पर सुंदरता से गुंथे हुए मोतियों की लड़ियाँ हैं। कामदेव के सम्मोहन-कांड (बाण) के सम हैमंत-वायु के मृदुता से स्पर्श करने पर, भीति से काँपने वाली विरहिणियों के समान सुंदरता से डोलने वाली पुष्पलताओं को देखो। ॥२५०॥

—ओस में रहने वाले कमल, आँसुओं से डूबी विरहिणियों के मुख की अवहेलना कर रहे हैं। उधर देखो, समूह बन, किंजल्कों के पराग पर विहार करने वाले भ्रमर रूपी धुएँ से युक्त शोभायमान लालकमल के फूल मानों ठंड से व्याकुल सरोवर के देवताओं के लिए अंगीठियाँ हैं। जंगली हाथी पानी पीने के लिए इस नदी के पास शीघ्रगति से आकर, इस (नदी) के तोय (जल) को ग्रहण (स्पर्श) कर, बीच में ही, झट से सूंड समेटे हुए, लौटकर भाग रहे हैं। हे अनुज! (उन्हें) देखो। ऐसे समय में, मुझ पर भक्ति के कारण, राजसिंहासन को तजकर, मेरे समान (यति रूप में) रहते हुए, वल्कल वस्त्र, जटाएँ नूतन ढंग से (अपूर्वता से) धारण कर, मेरे आगमन को चाहते हुए वह महान्, परम पावन, सौभ्रातृभाव वाला, श्रेष्ठ पितृवाक्य (तथा) मेरे वाक्य (वचन) में तत्पर, चिरकीर्ति निरत, आश्रितजनों के लाभ (हित) में तत्पर, भरत (इस प्रकार के शीतल) उषः–

ना तंड्रिसत्यंबु ना पून्कि यतनि । चेत नेंतयु ब्रकाशिंचे लोकमुल;
ने तल्लि पनुपुन नेल्ल संयमुल । चेत दीवेंनलु गांचिति वेड्क नेनु
नट्टि कैकनु नोव्वनाडुनो तेलिय ! । दट्टेल काविंचु ननघात्मुडतडु;
पट्टबु दोलगि तापसिनैति नेनु । बट्टबु गलिगि तापसियय्यें नतडु;
अन्नदम्मुल पाडि या पुण्यु जूचि । येन्ननेव्वरिकैन निक नेर्ववलयु;
नट्टिया भरतुनि ननुगुदल्लुलनु । जुट्टाल नेन्नडु सूतुमो मनमु ?
अनि वारि दलचुचु ननिवारितमुग । दनिवारु निष्ठ गौतमिवारि ग्रुंकि
यिनुनकु नर्घ्यंबु लेत्ति गायत्रि । पनुगोनि यजियिंचि ब्रह्मयज्ञबु
तम्मुडु दानु सीतयु बर्णशाल । किम्मैयि जनुदेंचि हितगोष्ठि नुंडे

जंबुमालि वृत्तांतमु

नोकनाडु लक्ष्मणुंडुदयकालमुन । नकलंकचित्तुडै यन्नकु म्रोक्कि २७०
कंदमूलफलादिकमुलु देच्चुटकु । नंदद वनमुल नरयुचु नरिगि
युन्नतंबगुचुन्न योकगिरि गांचि । मिन्नक यच्चोट मेलगुचुन्नंत

काल में सरयू में कैसे स्नान करता होगा ? मुनि बन, महि (जमीन) पर कैसे लेटता होगा ? ॥२६०॥

—मेरे पिता का सत्य (वचन) और मेरा दृढ़ संकल्प, उसके (भरत के) कार्य से ही लोकों में प्रदीप्त (प्रख्यात) हुए। जिस माता के आदेश से मैं समस्त संयमियों से सप्रेम आशीर्वाद प्राप्त कर सका, उस कैकई को पता नहीं, वह किस प्रकार की कटूक्तियाँ कहता होगा ? वह पुण्यात्मा ऐसा क्यों करेगा ? (नहीं करेगा।) राज्य (के अधिकार) से अलग होकर मैं तपस्वी बना। राज्य से युक्त होकर वह (भरत) तपस्वी बना। अब किसी को भी उस पुण्यात्मा को देखकर यह सीखना चाहिए कि भाइयों में (परस्पर) न्याय (सगत व्यवहार) कैसा होना चाहिए। ऐसे उस भरत को, प्रिय (स्नेहपूर्ण) माताओं को (और) नातेदारों को हम कब देख पाएंगे ?' इस प्रकार उनके बारे में सोचते हुए, अनिवारित (और) पूर्ण निष्ठा से गौतमी के जल में डुबकी लगा (स्नान) कर, सूर्य को अर्घ्य देकर, गायत्री का जपकर, ब्रह्मयज्ञ किया, (फिर) अनुज और सीता के साथ पर्णशाला को लौटकर, हितगोष्ठियों में रहे।

जंबुमालि का वृत्तान्त

एक दिन लक्ष्मण प्रातः समय, अकलंक चित्त हो, अग्रज को प्रणाम कर, ॥२७०॥

—कंद-मूल-फल आदि लाने के लिए, यहाँ-वहाँ वनों में खोजने गए। उन्नत

महियेल्ल देदीप्यमानमै वेलुग । नहिमांशुकलिपतंबगु खड्गमोकटि
भीषणजलदगंभीरघोषंबु । घोषिंचि यिदि येमोको यन वलिके;
"नंदुकोम्मिक दैत्याधीशतनय ! । पोंदुगानी तपंबुनकु दा मेच्चि
भानुंडु वनिचे नी पग नीग नन्नु । मानुग गोनु"मन्न मरि वाडु वलिकः
'मेल्लने ता वच्चि मेच्चिनाकीक । योल्लवोकलु सेसे; नोल्लवोनिन्नु;
नलघुतपंबेल्ल नवनिपै गलिसे; वलसिनकडकेगु वनजाप्तु हेति !"
यनि पलिकि तोल्लिटि यचलसमाधि । दनरंग नुंडे; नंतट लक्ष्मणुंडु
विपुलाद्भुतंबंदि वेस दानि जूचि । युपमतो डग्गरि योडिसि चेपट्टि
२८०

निपुणुडै परिकिंचि नृपकुमारुंडु । 'तपसुल केल्ल नाधारमैनट्टि
फलवृक्षमुलु द्रुंप वाडिगा"दनुचु । गलय ग्रुम्मरुचु नग्गलिक नोक्कोडनु
भाविंचि भाविंचि वागोप्प जूचि । भावंबुनंदुनु क्रमदंबु गोनुचु
"नी खड्ग मिदुंड नेमि कारणमो? । यी खड्गमिच्चटिकेल वच्चिनदो?
यनि यनि खड्गंबु नादृति जूचि । पनिगोनि दानि जेपट्टुचु मरियु

वने एक गिरि (पर्वत) को देखकर, चुप न रहकर, उस पर (चढ़कर) विहार करने लगे। तब समस्त महि (पृथ्वी) को देदीप्यमान कर चमकते हुए, अहिमांशु (सूर्य) कल्पित (निर्मित) एक खड्ग ने भीषण जलद के गंभीर घोष से गरजकर यों कहा:— 'हे दैत्याधीश-तनय ! इसे (मुझे) अब ग्रहण करो। शोभा से तुम्हारे तप की स्वयं सराहना कर सूर्य ने (मुझे) भेजा है। अपने शत्रुत्व को नष्ट करने के लिए, साहस से ग्रहण करो।' ऐसा (उस खड्ग के) कहने पर, वह बोला—'सुन्दर ढंग से स्वयं आकर, मेरी सराहना कर, (तुम्हें) मुझे न देकर, (मेरा) अनादर किया। मैं तुम्हें नहीं चाहता (ग्रहण नहीं करता)। मेरा समस्त अलघु (अधिक) तप मिट्टी में मिल गया। हे वनजाप्त (सूर्य) के खड्ग ! जहाँ चाहो, वहाँ जाओ।' यह कहकर, वह पूर्ववत् अचल-समाधि में लीन हो गया। तब लक्ष्मण अधिक आश्चर्यचकित होकर, झट से उसे देख, चतुराई से निकट जा, कुशलता से उसे हाथ में लिया ॥२८०॥

—निपुण हो, उसे ध्यान से देख, उस राजकुमार (लक्ष्मण) ने सोचा:— 'सभी तपस्वियों के लिए आधार बने इन फल (से युक्त) वृक्षों को काटना न्याय-संगत नहीं है।' चारों ओर घूमते हुए, सोत्साह, एक जगह सोच-सोचकर, ठीक ढंग से देखकर, मन में मुदित होते हुए, सोचा:— 'इस खड्ग का यहाँ रहने का क्या कारण है ? यह खड्ग यहाँ क्यों आया ?' (ऐसा) सोच-सोच कर खड्ग को आदर से देखकर, सप्रयत्न उसे हाथ में लेते हुए, सुशोभित एक

विलसिल्लु नौक गौप्प वेंदुरु जौंपंबु । मलसि खंडिप दन्मध्यभागमुन
देंगि यौक्कमौनि मेदिनि गुलुटयुनु । निगिडेंडुमूर्छ मुनिंगि सौमित्रि
यट गौंतसेपुन कल्लन देंलिसि । 'कटकटा ! सकल लोकमुलु निंदिप
ब्राह्मणु जंपिति परिकिंप लेक । ब्रह्महत्यादोषभरितुंडनैति;
नेनेल वच्चिति निंत दव्वुलकु ? नेनेल यी खड्गमिट्लु गैकौंटि ?
२९०
ननुपमधर्मात्मुडगु रामचंद्रु । ननुजुंड नगु नाकु नधिकपापंबु
समकूडे; नी मुनीश्वरुडेव्वडौक्कौ? ।समय जेसिति; निंक जानकीविभुडु
विनि नन्नु नेमनि विडनाडु नौक्कौ । पेंनुपेदि मुनुलु शपिंतुरो पट्टि !
चेप्पकुंडग रादु: चेप्पकपोदु; । तप्पे गार्य"मटंचु "दैवमा!" यनुचु
नडलुचु नल्लन नडुगुलु वडक । सुडिवडि भ्रमयुचु जौप्पु दप्पुचुनु
नडतेंचि "दशरथुनकु गुरुपुत्रु । बडनेसि चंपिन पापंबु वच्चे;
दंड्रिकि वलेंने नंदनुनकु वच्चे । नंड्रु भूजनुलेल्ल" ननि तल्लडिल्लुचु
दम यन्न जेरि गद्गदकंठुडगुचु । ग्रममेदि वडकुचु गडगि म्रौक्कुटयु
ननुजुनि नेंत्ति यौय्यन गौगिलिंचि । कनुगव नीरु ग्रक्कुन जेत दुडिचि

घने बाँस के समूह को सविलास काट डाला । उसके मध्य भाग में (स्थित) एक मुनि के कटकर मेदिनी (भूमि) पर गिर पड़ते ही, सौमित्र अधिक मूर्च्छा में डूब गए (मूर्च्छित हुए ।) फिर थोड़ी देर के बाद धीरे से होश में आकर (कहा) :– 'हाय हाय! (ठीक तरह से) देख न सक, सकल लोकों की निंदा के पात्र होते हुए ब्राह्मण का वध किया (और) ब्रह्महत्या के दोष से भरित हो गया । इतनी दूर आया ही क्यों ? इस खड्ग को मैंने इस प्रकार लिया ही क्यों ? ।।२९०।।

अनुपम धर्मात्मा रामचंद्र के अनुज हो कर (भी) मुझे अधिक पाप प्राप्त हुआ । पता नहीं, ये मुनीश्वर कौन हैं ? (इन्हें) मार डाला । अब (यह सब) सुनकर, मुझे क्या कह (कर) जानकीविभु (श्रीराम) तज देंगे । गुरु मुनिजन कैसा शाप देंगे ? कहा नहीं जा सकता, कहे बिना नहीं रह सकता । (सारा) कार्य बिगड़ गया है । हे भगवान !' ऐसा कहते हुए, भीत होते हुए, धीरे से कदमों के आगे न बढ़ने पर, चक्कर खाते हुए (भ्रमित होते हुए), स्वाभाविक गति से अलग होते हुए 'दशरथ को गुरुपुत्र (श्रवण कुमार) को मार गिराने का पाप लगा । समस्त भूजन यही कहेंगे कि पिता के समान ही पुत्र को भी (पाप) लगा ।' ऐसा सोचते हुए, व्याकुल होते हुए, अपने अग्रज के पास जाकर गद्गदकंठ (वाला) होते हुए, कांपते हुए, सप्रयत्न प्रणाम किया । अनुज को उठाकर, झट से गले लगाकर, नेत्र

यनुकंप मदि वर्वननियॅ राघवुडु; । "अनघ ! यॅ गलुग नीकडल नेमिटिकि ?
धर्मवर्तनुड; वुदारशीलुडवु; । निर्मलात्मकुडवु; नीतिमंतुडवु;
दशरथ क्ष्मापालतनय मान्युडवु; । पशुपति विक्रम प्रकट शौर्युडवु;
नन्न ! नी मॉगमेल यटु सिन्नवोयॅ? । नुन्नदि येर्पड नॉगि जॅप्पु' मनिन
जयशालियैन लक्ष्मणुडिट्टुलनियॅ; । "भयनिवारण ! नीदु पंपुन वोयि
वनमूल फलमुलु वलयुनन्नियुनु । गॉनि येनु मॅलगुचो ग्रूरखड्गंबु
ऑक्कटि मिंट रा नॉडिसि चेपट्टि । वॆक्कसंबगु नॉक्क वॆदुरु जॉपंबु
नरिकिति; दान नुन्नतुडॉक्क मौनि। यॉरलुचु वर गूलॅ नुग्रडो यनग;
ना नेरमिकि गुंदि नरनाथचंद्र ! । रानेरकुंडियु रा नेरवलसॅ;"
ननवुडु रघुरामुडाश्चर्यमंदि । यॉनर गार्यमु मदि नूहिंचुचुंडॆ;
नंत नक्कडि मुनुलंदरु गूडि । "यॅंतयु नी तॆरंगॆरिगित" मनुचु ३१०
जनुदॆंचि रघुरामचुद्रु दीविंचि । घनतर मृदुवाक्यगरिम निट्लनिरि:
"अखिलेश ! विनुमु, नी यनुजन्मुडिप्पु । डखिललोकद्रोहियैन रावणुनि

युग्म के जल को झट से पोंछकर, मन में अनुकंपा के व्याप्त होने पर राघव (ने कहा):— 'हे अनघ ! मेरे रहते हुए तुम्हें भीत क्यों होना चाहिए ? ॥३००॥

—(तुम) धर्मवर्तन, उदारशील, निर्मलात्मा, नीतिमान (और) दशरथ-क्षमापाल (राजा) के पुत्र (और) मान्य हो, पशुपति (शिव) (के समान) विक्रम से प्रकटित शौर्य वाले हो। हे तात ! तुम्हारा मुख इस प्रकार उतरा हुआ क्यों है ? जो हुआ, (उसे) स्पष्ट रूप से कहो।' ऐसा कहने पर जयशील लक्ष्मण ने ऐसा कहा:– 'हे भय-निवारण (दूर करने वाले)! तुम्हारे आदेश से जाकर, आवश्यक समस्त वनमूल फलों को लेकर, मैं घूम रहा था। (तब) एक क्रूर खड्ग के आकाश से आने पर हाथ में लिया। बांस की अति घनी झाड़ी को काट डाला। उसमें (स्थित) एक उन्नत (श्रेष्ठ) मौनि जो उग्र (शिव) सम थे, चीखते हुए धरा पर लोट गए। अपने अपराध के कारण दुखी होकर, आ न सकने पर भी (मुझे यहाँ) आना ही पड़ा।' ऐसा कहने पर रघुराम आश्चर्यचकित हुए (और) कर्त्तव्य के बारे में मन में सोचते रहे। तब वहाँ के सभी मुनि एकत्र होकर, यह कहते हुए कि 'यह समस्त वृत्तान्त बताएँगे' ॥३१०॥

—आकर, रघुरामचंद्र को आसीस कर, घनतर मृदु वाक्य गरिमा से यों बोले 'हे अखिलेश ! सुनो, तुम्हारे अनुजन्म ने अब अखिल लोकद्रोही रावण की बहन के पुत्र, विजृंभित जंबुनामक दुष्ट का सहार किया है। (इसमें)

चेलियलि कोडुकु नेचिन जंबुडनेडु । तुलुव निर्जिंचे; ने दोषंबु लेदु
मुनुलेल्ल संतसंबुन बोंदि रधिप !" । यनुवुडु रघुरामुडनियें मौनुलकु;
"ने वेल्पु गोल्चि वाडिट्टि तपंबु । गाविंचे? खड्गमेक्कडनुंडि वच्चे?
चीटिकि माटिकि जेडुदुरे बुधुलु ? नाटिकि हतुडुगा नजुडेल व्रासे ?
नेंतकालमु सेसे नी युग्रतपमु ? । संतुष्टुडय्येने सरसिजाप्तुडु ?
अंतयु नेरिगिंपु" डनिन ना भूमि । कांतुनितो मुनिग्रामणुलनिरि:
"तोल्लि दशास्युंडु दोर्बलशक्ति । नेल्लदिक्कुलु गेल्व नेगुचो मदिनि
ओरुल नम्मगलेक सोदरिमगनि । नुरुपराक्रमुनि विद्युज्जिह्वु
बिलिचि ३२०

मन्निंचि 'लंक येमरकुमी !' यनुचु । सन्नुति गापुंचि चनियें; नंतटनु
'येनु मायलु नेर्चि यी दशकंठु । रानीनु; लंकापुरंबु गैकोंदु'
ननुचु विद्युज्जिह्वुडपुडु पाताळ । मुन केगि राक्षसमुख्युल दंड
महित मायोपायमंत्रवादमुलु । ग्रहवाद खिलवाद गारुडक्रियलु
विषवाद रसवाद विकृतकृत्यमुलु । दृष दीरगा नेर्चि धीरुडै मरियु
बायक वारिचे बहुळंबुलैन । मायलु नेर्चुचु मदवृत्ति नुंड

कोई दोष नहीं है। हे अधिप ! सभी मुनि (इस कार्य से) संतुष्ट हुए हैं।' ऐसा कहने पर रघुराम मुनियों से बोले:— 'किस देवता के प्रति उसने ऐसा तप किया है? खड्ग कहाँ से आया है? जब-तब (उससे) बुधजनों की हानि हो सकती है ? ब्रह्मा ने आज मर जाने की (उसके ललाट पर) क्यों लिख दी ? (उसने) यह उग्रतप कितने काल तक किया ? सरसिजाप्त (सूर्य) क्या संतुष्ट हुए ? सब बताइए।' (ऐसा) कहने पर उस भूमिकांत (राजा) से मुनि-ग्रामीणी (श्रेष्ठ) बोले:– 'पूर्व में दशास्य (रावण) भुजबल शक्ति से समस्त दिशाओं को जीतने जाते समय, मन से किसी दूसरे पर विश्वास न कर सक, अपनी बहन के पति उस विक्रमशाली विद्युज्जिह्व को बुलाकर, ॥३२०॥

—आदर, (सत्कार) कर, 'लंका के प्रति असावधान मत बनो' कहकर, सन्नुति (प्रशंसनीय रूप) से, उसे रक्षक बनाकर गया। तब यह सोचकर कि मैं 'मायाओं को सीखकर इस दशकंठ को नहीं आने दूँगा। लंकापुर को हस्तगत कर लूँगा।' विद्युज्जिह्व पाताल जाकर, राक्षस-प्रमुखों के पास महित मायोपाय मंत्रवाद, ग्रहवाद, खिलवाद, गारुड-क्रियाएँ, विषवाद, रसवाद (आदि) विकृत कृत्य, तृष्णा बुझने तक सीखकर, धीर बन और (उन्हें) न छोड़कर, उनसे बहुल मायाओं को सीखते हुए मदवृत्ति से रहा।

नच्चट रावणुंडखिल दिक्पतुल । विच्चलविडि गॆलिचि वेस लंक जॊच्चि
घनत विद्युज्जिह्वु कथलॆल्ल देलिसि । कनुगवलनु निप्पुकलु निव्वटिल्ल
"नायाज्ञ नुंडक नलि रेगि वीडु । पोयि मायलु नेर्व वोवु गाकेमि ?
मायलन्नियु नेडु मायमै पोव । जेयुदु" ननुचु नजेयुडै यरिगि३३०
अस्मय नगर वासासुरुल् वॆंगड । विस्मयकोपुडै वेस हेति वॆरिकि
'मऱदि; ना चॆलियलि मगडीत' उनक । तऱिमि विद्युज्जिह्वु तल द्रॆव्व नेसि
क्रम्मऱ वेग लंककु नेगुदॆंचि । 'र' म्मनि चॆलिय शूर्पणख नूरार्चि
"यनयंबु स्वेच्छाविहारिणिवगुचु । मनमुन नीकु सम्मतमैन पुरुषु
बॊंदुमुः वॆऱवक पूनि लोकमुल । यंदु जरिंपु, पॊ' म्मनिन नारॆललु
गर्भिणियै युन्नकतन बै नॆललु । निर्भरगति निंड नॆलतुक गांचॆ
जटुलोग्रबलुडैन जंबुकुमारु; । नटवाडु पॆद्दयै या तल्लिचेत
दन जनकुनि चावु दप्पक तॆलिय । विनि तंड्रिपग दीर्प वॆरवु सिंतिंचि
"ब्रह्ममुनु गूर्चि तपंबु सेसिननु । ब्रह्म वरंबीडु; भवुनि गॊल्चिननु
अतनि भक्तुडु गान नलुगडातनिकि; । नतुलितगति विष्णुनर्थिंतु नेनि ३४०

वहाँ रावण स्वच्छन्दवृत्ति से सभी दिक्पतियों को जीतकर, झट से लंका में प्रवेश कर, विद्युज्जिह्व की समस्त कथाएँ जानकर, नेत्रयुग्मों से चिनगारियों के निकलने पर (कहा)– 'मेरे आदेश के अनुरूप न रह कर, रजकण जैसे उड़कर, यह जाकर मायाएँ सीखे तो क्या होने वाला है ? समस्त मायाओं को मैं आज अदृश्य (मटियामेट) कर दूंगा।' (ऐसा) कहते हुए वह (रावण) अजेय होते हुए जाकर ॥३३०॥

—अस्मय नगरवासी राक्षसों के भीत होने पर, आश्चर्यजनक क्रोध वाला होते हुए,झट तलवार खींचकर, 'बहनोई है,यह मेरी बहन का पति है' ऐसा न सोच कर, पीछा करते हुए विद्युज्जिह्व का सिर काट डाला। फिर शीघ्र लंका में लौटकर, बहन शूर्पणखा को बुलाकर, सान्त्वना दी, (कहा):— 'सदा स्वेच्छा-विहारिणी बन कर, अपने मन से सम्मत (अनुकूल) पुरुष को प्राप्त करो। बिना भय के लोकों में विहार करो। जाओ।' (ऐसा) कहने पर छः महीने की गर्भवती होने के कारण, शेष महीने निर्भर गति (अतिशयता) से पूर्ण होने पर, (उस) स्त्री के चटुल-उग्र-बल वाला जंबु-कुमार हुआ। तब वह बड़ा होकर, अपनी माता से अपने पिता की मृत्यु के बारे में जानकर, पिता (की मृत्यु) का प्रतिशोध लेने के प्रकार के बारे

जाल नातडु मेच्चि चनुदेंचि वरमु । पालिंचुटेंपुडु ? ना पगदीरुटेप्पु ?
डरय द्रिमूर्तुलौ हरिहर ब्रह्म । लरविंद हितरूपमैयुंदु रंड्र;
कावुन रवि गूर्चि कडुनिष्ठ दपमु । गाविंचि मेंप्पिंचि कदनरंगमुन
दनुज-नायकुडैन दशकंठु द्रुंतु" । ननि येंचि तपमु सेय दौडंगे; नंत
वनरुहाप्तुडु मेच्चि वरखड्गमोकटि । पनिचे दानवुनकु बग नीगुटकुनु;
दानि गैकोनडय्ये दर्पांधुडगुचु; । नानिमित्तमुन नी यनुजुन कब्बे
ना हेति; यटुगाक यसुर चेबडिन । साहसंबुन नेचु जगमुलन्नियुनु;
दैवकृतंबुन दैत्युंडु मडिसॆं; । नी विचारंबेल यिनवंशतिलक !
कलन रावणु गेल्चे गार्तवीयुंडु; । चलमोप्प नातनि जंपे भार्गवुडु;
नट्टि भार्गवरामु ननिलोन बट्टि । कौट्टिति बीरंबु ग्रोव्वुनु नणग ३५०

नट्टि नी चे रावणादि राक्षसुलु । गट्टिगा दुरमुन गडतेरगलरु"
अनवुडु रघुरामु डाश्चर्यमंदि । विनतुडै मौनुल वेड्कतो ननिचे ।

में सोचकर, 'ब्रह्मा के प्रति तप करूँगा तो भी ब्रह्मा वर नहीं देगा। भव (शिव) की सेवा करूँगा तो भी अपना भक्त होने के कारण (शिव) उस पर नाराज नहीं होगा। अतुलित गति से विष्णु की याचना करूँ ।।३४०।।

—(तो) वह अधिक प्रसन्न होकर, कब आकर वर देगा ? मेरा प्रतिशोध कब पूरा होगा ? कहते हैं, सोचने पर त्रिमूर्ति हरि-हर-ब्रह्मा (तीनों) अरविंद-हित (सूर्य) के रूप में रहते हैं। अतः रवि के प्रति अतिनिष्ठा से तपस्या कर, प्रसन्नकर, कदन (युद्ध)-क्षेत्र में दनुज-नायक दशकंठ का वध करूंगा।' ऐसा सोचकर तप करने लगा। तब वनरुहाप्त (सूर्य) ने प्रसन्न होकर, दानव के पास प्रतिशोध लेने के लिए एक वरखड्ग भेजा। गर्वांध होते हुए (उसने) उसे (खड्ग को) हाथ में नहीं लिया। उस कारण से वह हेती (तलवार) तुम्हारे भाई को प्राप्त हुआ। वैसा न होकर राक्षस के हाथ पड़ता तो वह साहस से समस्त लोकों को सताता। दैवकृत्य (दैवयोग) से राक्षस मर गया। हे इनवंशतिलक! यह सोच (शोक) क्यों? युद्ध में कार्त्तवीर्य ने रावण को जीता, हठ से भार्गव ने उसे मार डाला। ऐसे भार्गवराम को (तुमने) युद्ध में हरा दिया जिससे उसकी वीरता और मद नष्ट हो गए। ।।३५०।।

—ऐसे तुम्हारे (हाथ) से रावण आदि राक्षस अवश्य ही युद्ध में मर जाएँगे।' ऐसा कहने पर रघुराम आश्चर्यचकित हुए और विनत होकर मुनियों को सानन्द विदा किया।

कुमारुनि मृतिकि शूर्पणख शोकमु

नंतशूर्पणख नित्यमु देच्चुनट्लु । वितगा नन्नंबु विविध भक्ष्यमुलु
पोसग निंचिन बोनपुट्टिक गोनुचु । वेस वच्चि तुनिसिन वेदुरु जोंपंबु
नडुम खंडंबुलै नलि बडियुन्न । कोडुकु गनुंगोनि कुंभिनि व्रालि
तेलिसि या तुनुकल दृढमुगा गूर्चि । पलविंचि पलविंचि पडति
यिट्लनियेः
"नो कुमारकचंद्र ! युचितमे ? नन्नु । गैकोनि चूडवु गन्नुलु देरचि;
तगु माम यनक प्रताप लंकेशु । डगु रावणुनि जंप नात्म गोरिननु
नी कोनगूडुने ? नेरवैतकट ! । या कार्तवीर्युचे नणगेने यतडु ?
अनरण्यु शापाब्धि नणगेने यतडु ? । वनजसंभवु शापवह्निनचे देगेने ?
३६०
नलकूबरुनि चेत नलगेने यतडु ? । अल नंदि कोपानलार्चुल बडेने ?
शांडिल्य मौनि रोषंबुन जेडेने ? । योंडेल धननाथुडुंडेने लंक ?
बलवद्विरोधंबु पाडिगादनेडु । पलुकु नेम्मदि लोन भाविंपवैति;
प्रापिंप दतनिकि बंचत्वमिपुडु; । 'पापी चिरायु'-वन् पलुकु वम्मौने!

पुत्र की मृत्यु पर शूर्पणखा का शोक

—तब शूर्पणखा नित्य के समान, विचित्र अन्न, विविध भक्ष्य (पकवान) से शोभा से भरे हुए भोजनपात्र को लेती हुई, शीघ्रता से आकर, कटी बांस की झाड़ी के मध्य खंड-खंड होकर गिरे पुत्र को देखकर, कुंभिनी (जमीन) पर (मूर्च्छित होकर) गिर पड़ी। होश में आकर उन टुकड़ों को एकत्र कर, रो-रोकर (वह) स्त्री यों बोली: 'हे कुमारकचंद्र ! मुझे पाकर भी आँखें खोलकर नहीं देखते हो, क्या यह उचित है ? यह भी न सोचकर कि प्रतापवान लंकेश मेरा मामा है, उसे वध करने की मन में इच्छा की थी। क्या वह तुमसे हो सका ? हाय, ऐसा कर नहीं पाए। क्या वह (रावण) कार्त्तवीर्य से विजित हुआ था ? अनरण्य (पृथु के पिता) की शापरूपी अब्धि (समुद्र) से नष्ट हुआ था ? वनजसंभव (ब्रह्मा) की शाप-वह्नि से नष्ट हुआ ? (नहीं) ॥३६०॥

—नलकूबर से पराजित हुआ क्या ? पूर्व में नंदि (शिव-वाहन) के कोप-अनल-अर्चियों (ज्वालाओं) में मरा क्या ? शाँडिल्य मुनि के रोष से नष्ट हुआ ? इतना क्यों ? धननाथ (कुबेर) लंका में रह सका ? (नहीं) तुमने मन में इस बात पर विचार नहीं किया कि बलवान से विरोध उचित नहीं है। उसे (रावण को) अभी पंचत्व (मृत्यु) प्राप्त नहीं होगा। (वह अभी

पगवलदन्न ना पल्कु गैकोनक । तेंगितिः रावणुडेल दैंगुनु नी चेत?
धर्मदेवत माट तल्लि माटंड्डु; । निर्मलात्मक ! विननेरवै तकट;
गंधर्व सुरसिद्ध गणमुलु सेंरल । नंधुलैयुन्नार; लसुर मीरुदुरे ?
कोरि विद्युज्जिह्व कुलदीपकुंड ! । भूरि तपोनिधि ! पुण्यमानसुड!
तपमु वंडे ननंग दग नीकु बुद्धि । गपटिंचें; दैवंबुकतलेल यिंक ?
बतिहीननैनट्टि पापात्मुराल ! । सुतुनैन गन्नुल जूडंगनैन ३७०

गोंत शोकमु मानु; गुलमुद्धरिंचु । संतति मुख्यंबु सतुलकु नंदु"
रनि यनि शोकिंचि यक्कुमारकुनि । गनुगोनि यग्नि संस्कारंबु सेसि
यनतिदूरंबुन नचलसमाधि । दनरुचुनुन्न पेंद्दल जेर बोयि
"योरि ! कन्नुलु मूसि युडुगनि निष्ठ । घोरतपंबु गैकोनि सेयुरीति
दलल मोपेंडु जडल् धरियिंचि बूदि । यलदि जन्नबुल नंदरु गूडि
तोलगक मेकपोतुल मेंडल् विरिचि । पोलुपार नुडिकिंचि पोट्टल निंड
नेट्टन भुजियिंचि नेंरि गळासमुलु । गट्टि येमियु नेरुंगनियट्टुलुंडि

मरेगा नहीं) । क्या यह वचन व्यर्थ होगा कि 'पापी चिरायु'होता है ? (नहीं) 'प्रतिकार का भाव मन में मत लाओ', मेरी इस बात को न मानकर, नष्ट हो गए । रावण तुम्हारे हाथ क्योंकर मरेगा ? कहते हैं, माता के वचन धर्म देवता के वचन होते हैं । हे निर्मलात्मा वाले ! हाय, (मेरी बात को) मान नहीं सके । गंधर्व, सुर-सिद्ध गण (समूह) (रावण के) कारागार में अंधे (निस्सहाय) बन पड़े हुए है । क्या उस राक्षस (रावण) को जीता जा सकता है ? (नहीं) । हे विद्युज्जिह्व के कुलदीपक ! हे भूरि तपोनिधि ! हे पुण्य मानस ! चाहकर तप के पक्व (सिद्ध) होते समय तुम्हारी बुद्धि भ्रष्ट हो गई । अब दैव को क्या कहें ? मैं पतिहीना बनी पापात्मा हूँ । पुत्र को ही आँख भर देख सकती तो ॥३७०॥

—थोड़ा शोक कम हो जाता । कहते हैं, सतियों (स्त्रियों) के लिए कुल का उद्धार करने वाली संतति मुख्य है ।' ऐसा कह-कह शोक करने के बाद, उस कुमारक को देख, अग्नि-सस्कार कर, थोड़ी दूर पर अचल समाधि में शोभित वृद्ध जनों के पास जाकर, (कहा):— 'रे ! आँखें बन्दकर, अधिक निष्ठा से घोर तप करने (वालों) के समान, सिर पर गठरी के सम जटाएँ धारण कर, (शरीर पर) विभूति लगाकर, यज्ञों में सब मिलकर, हठ से बकरों का सिर काटकर, (अच्छे) ढंग से (उस मांस को) पकाकर, पेट भर मजे से खाकर; (उनके) चमड़े पहनकर, ऐसे बैठे हो, मानों कुछ नहीं जानते । मदांध हो, कुमति वाले होकर, मेरे शिशु को पकड़ किस प्रकार मार डाला ?

कोंवि ना शिशुवुनु गुमतुलै पट्टि । येव्विधि जंपिति ? रेरिगिपकुन्न
दापसाधमुलार ! तापंबु दीऱ । वे पट्टि म्रिगुदु विडुवक मिम्मु"
ननि कह्कहरावमडर डग्गऱिन । मुनुलेल्ल भीतिल्लि
मुदितकिट्लनिरि; ३८०

"विनु शूर्पणख ! मुनिवेषुडोक्करुडु । सनुदेंचि नी पुत्त्रु समयंग जेसि
फलमुलु गोनि यल्ल पर्णशालकुनु । जलियिंप केगि यच्चट नुन्नवाडु;
मुक्कु मोमेर्पडु मोगि गार्यमुनकु; । दिक्कु गल्गिति गान तेऱव! यंदरुगु"
मनि चूपि चेप्पिन ना दुष्टवुद्धि । गनलुचु नपुडु लक्ष्मणुडु सन्नट्टि
यडुगुल चोप्पुन नरुग नम्मुनुलु। पोंडमिन भीतिचे 'वुलि नाकिविडिचे;
दप्पक दीनिकि दगनिट्टि बुद्धि । सेप्पि पंपुदुरिक जेलगि राघवुलु;
नादट सकल दैत्यक्षयंबुनकु । नादि कारणमिदि' यनि मुदमंद,
विधि बलवंतमै वेस द्रिप्पिकोनुचु । नधिक वेगंबुन नटगोनिपोव
नत्तऱि नेसरेगि यसुरेंद्रु चेलिय । लुत्तुंग नासिकंबुग्रभालंबु
गुरुविलोचनमुलु गोरदौडलुनु । पऱपैन कडुपुनु वल्लवेंड्रुकलु ३९०
देऱनोरु गऱिमेनु दीर्घजिह्वयुनु । वेऱपैन रूपुनु विषमदृष्टियुनु

रे तापसाधमो ! नहीं बताओगे तो अपना क्रोध-शांत हो, (इस प्रकार) शीघ्र तुम्हें पकड़कर निगल जाऊँगी । तुम्हें नहीं छोड़ूँगी ।' ऐसा कह-कह-रव (गर्जना) के विजृंभित होने पर, (उसके) निकट आने पर, सभी मुनि डरकर, (उस) स्त्री से यों बोले:— ॥३८०॥

—'हे शूर्पणखा ! सुनो । एक मुनिवेषधारी आया, तुम्हारे पुत्र का वध करके, फल ग्रहणकर, उधर पर्णशाला की ओर, अविचलित रूप से जाकर, वहाँ है । हे स्त्री ! वहाँ जाओ तो सभी बातों का पता लग जायेगा ।' (ऐसा) कहकर, (मार्ग) दिखाने पर, वह दुष्ट बुद्धि वाली क्रुद्ध होती हुई, तब लक्ष्मण के चरण-चिह्नों का अनुसरण करती चल पड़ी । वे मुनि (मन में) उत्पन्न भीति से (सोचने लगे):— 'बाघ ने चाटकर ही छोड़ दिया (अर्थात् बड़ी आफत टल गई ।) । अब राघव विजृंभित हो अवश्य ही इसे उचित बुद्धि सिखाकर (दंड देकर) भेज देंगे । तदनन्तर यह सकल-दैत्य-क्षय (नाश) का मूलकारण बनेगी ।' ऐसा सोचकर वे हर्षित हुए । विधि (नियति) बली होकर, शीघ्रता से उसे (शूर्पणखा) अधिक वेग से उधर ले गई । उस अवसर पर, विजृंभित हो असुरेंद्र की बहन ऊँची नाक, उग्र ललाट, बड़ी-बड़ी आँखें, दाढ़ों वाले जबड़े, विशाल उदर, अस्त व्यस्त केश, ॥३९०॥

नरुदार धरियिंचि याडुरूपमुन । गरमुग्रमुग वच्चु गरळमो यनग
नोंडिसि लोकमुलेल्ल नोगिंग्रिंग गडगि।पोडमिन योक महाभूतमो यनग
दरिवेचि दैत्यसंतति नाशकाल । मेद्रिगि भूस्थलि दोचु मृत्युवो यनग
नडुकक वेस शूर्पणख यनु नाति । कडकतो रामु डग्गर जेर बोयि

शूर्पणख रामुनि मोहिंचुट

यिंदीवरश्यामु निनकोटिधामु । सौंदर्यजितकामु जगदभिरामु
रामु दैतेयविरामु वीक्षिंचि । कामभूतमु सोक गनुगोन राक
तामसगुणमेचि तन्नु लोकाभि । रामगा दलचि या रक्कसि निक्कि
'तनमोंद्दुमोगमु नातनि मुद्दुमोगमु। तन महोदरमु नातनि तनूदरमु
तन कप्पकन्नुलातनि गोप्पकन्नु । लेन' यंचु 'दनकितडे तगु' नंचु ४००
मोगमु चेटंतगा मुसिमुसि नगवु ।लिगुरिप रघुरामु नीक्षिंचि पलिकें;
"शरचापमुलु पूनि चरियिंपनेल । यरुदैन यडवुल नतिवयु नीवु ?

—खुला मुँह, काला शरीर, लंबी जीभ भयावह रूप, विषम दृष्टि आदि अपूर्व रूप से धारणकर, मानों स्त्री रूप धारणकर, अधिक उग्रता के साथ आनेवाला गरल (विष) हो, (अथवा) समस्त लोकों को पकड़कर निगलने के लिए उत्पन्न एक महाभूत हो, (या) घात में रहकर दैत्यसंतति के विनाश के काल को जानकर भूस्थल पर दिखाई पड़नेवाली मृत्यु हो, इस प्रकार भीत न होते हुए, शूर्पणखा नामक नाति (स्त्री) वेग से, सप्रयत्न राम के निकट गयी ।। ३९५ ।।

शूर्पणखा का राम पर मोहित होना

इंदीवर श्याम, कोटि-सूर्य-धाम, सौंदर्य में काम को जीतनेवाले, जगदाभिराम, दैत्यों का नाश करनेवाले राम को देखकर, कामरूपी भूत के आविष्ट होने पर, (उसे) कुछ नहीं दीखा, तामस-गुण के अधिक होने पर, अपने आपको लोकाभिराम (समस्त लोक में सुन्दरी) मानकर, वह राक्षसी (वासना से) गर्वीली होकर, (यों) सोचकर 'अपने भद्दे मुख के लिए उसका (राम का) सुन्दर मुख, अपने महोदर (बड़ी तोंद) के लिए उसका क्षीणोदर, अपनी मेंढक जैसी आँखों के लिए उसकी श्रेष्ठ आँखें, तुलनीय' हैं (और) यही मेरे लिये योग्य है' ।। ४०० ।।

मंदमंद मुस्कान के उत्पन्न होनेपर, मुख के सूप समान चौड़ा होनेपर, रघुराम को देखकर (वह यों) बोली:— '(इन) अपूर्व (अगम्य) वनों में स्त्री के साथ, शरचाप धारण कर तुम (यों) क्यों विचरण कर रहे हो ?

नी वेषमुन नुंडनेमि करणमु ? । नीवेव्वडवु ? मरि नीकु बेरेमि ?"
यनुवुडु विनि रामुडल्लन नव्वि ।दनुजकामिनि तोड़ दग निट्टुलनियें;
"रामाभिराम! यो राम! ना पेरु । रामुडु; दशरथराजु मा तंड्रि;
या पर्णशाल नुन्नतडु ना तम्मु । डी पद्मलोचन यिल्लालु नाकु;
नेनु दंडिरि पंप नीयरण्यमुल । बूनि चरिंतु दपोवृत्ति निपुडु;
नी वेव्वरेलनाग ?नीकु बेरेमि? । नीवेल वच्चिचति नेडु माकडकु ?
नी विलासंबुनु नी वयोरूप । लावण्यमुनु नितुलकु नेंदु गलदु ?"
ना विनि या शूर्पणख रामु जूचि।वाविरि वल्कें दुर्वारयै निलिचि; ४१०
"या विश्रवसु कोंडुकखिलकंटकुडु। रावणुडुग्र विक्रम यशोधनुडु;
ना पट्टुसत्त्वुनि यनुगु जेल्लेलनु; । ना पेरु विनु शूर्पणख यंडुदेलिय;
नी रूपुरेख लन्नियु सरि चूचि । कूरिमि नीकु नाकु दगुनंचु
गामिंचि वच्चिचति; गडु नोप्पु रूपु। गामिंचिनप्पुडे कैकोन नेर्तु;
नेंदैन जन नेर्तु; ने वस्तुवैन । बोंदुगा दे नेर्तु; भोगिंप नेर्तु;

इस वेष में रहने का क्या कारण है ? तुम कौन हो ? और तुम्हारा नाम क्या है ?' (ऐसा) कहने पर, सुनकर, राम ने धीरे से हँसकर (मुस्कुराकर) दनुजकामिनी से उचित रूप से यों कहा:— 'रामाओं में अभिरामा (सुंदरियों में सुंदरी) ! हे रामा ! मेरा नाम राम है। राजा दशरथ हमारे पिता हैं। इस पर्णशाला में जो है, वह मेरा अनुज है। यह पद्मलोचना मेरी पत्नी है। मैं पिता के भेजने पर इन अरण्यों में तपोवृत्ति ग्रहण कर अब विचरण करता हूँ। हे युवती ! तुम कौन हो ? तुम्हारा क्या नाम है ? आज हमारे पास तुम क्यों आई हो ? तुम्हारा विलास (हाव-भाव), तुम्हारा वयो-रूप-लावण्य स्त्रियों में और कहाँ हैं ? (अर्थात् तुम अनुपम सुन्दरी हो।) (ऐसा) कहने पर, सुनकर, उस शूर्पणखा ने राम को देखकर, दुर्निवार रूप से खड़ी होकर, उत्कृष्टता से यों कहा:— ॥ ४१० ॥

'उस विश्रवसु के पुत्र, अखिल (लोक)-कंटक, उग्र-विक्रम (के) यशोधनी, पटु सत्व वाले रावण की लाड़ली छोटी बहन हूँ। सुनो, मेरा नाम शूर्पणखा है। तुम्हारी समस्त रूपरेखाओं को (अपनी रूपरेखाओं से) तुलनाकर देख, प्रेम से यह सोचकर कि तुम्हारी और मेरी (जोड़ी) उचित होगी, काम भाव से आई हूँ। जब कामना करूँ तभी अति सुंदर रूप को ग्रहण कर सकती हूँ। जहाँ चाहूँ, वहाँ जा सकती हूँ। किसी भी वस्तु को समुचित रूप से ला सकती हूँ। (किसी भी सुख का) भोग कर सकती हूँ। तुम्हारे साथ जो है, वह क्यों ? (वह किसी काम की

नुन्नदि येल ? ना योप्पु भाविंपु; । नन्नु बाणिग्रहणंबु गाविंपु;
मिदि कुलगुणहीन; यिदिविकृतांगि। यिदि नीकु मरि तगुने ? यटुगान
नी मेलतुक बट्टि यिप्पुडे म्रिंगि । राम! नी कोरिन रति सल्प नेर्तु;"
ननि यदि दनुजेर ना सीत दिगिचि। कोनि राघवुडु दानि कोर्किकिनव्वि
कोंत हास्यमु सेय गोरि या दनुज।कांत विकारंबु गनुगोनि पलिके; ४२०

"ने निंतिगलवाड; निंदि नन्नु नम्मि। पूनि नातो वनंबुनकु नेतेंचे;
दगिलि नी कोप्पिप दगदीलतांगि; । बगगोनु सवतितो बडजाल वीवु;
नी नाति लेकुन्न नितकु मुन्ने। ये निन्नु गैकोंदु; निप्पुडेमाये ?
वाडे नातम्मुडु वरसत्त्वधनुडु। वाडु नाकंटेनु वर रूपधरुडु;
तन कोक्क चक्कनि तरलायताक्षि । ननुकूलवतिनि नित्यमु गोरु; गान
निनु बोंद नातडु नेर्चु; नीवरुगु" ।मनवुडु 'नौगाक!' यनि डायबोयि
नेलकोनि "लक्ष्मण! निन्नु गामिंचि। कलय वच्चिति; नन्नु गैकोनु" मनुडु

नहीं है।) मेरे सौन्दर्य का विचार करो। मेरा पाणिग्रहण (विवाह) करो। (तुम्हारे साथ जो है) यह (स्त्री) कुल (तथा) गुण से हीन है। यह विकृत शरीरवाली है। यह क्या तुम्हारे लिए योग्य है? (नहीं है।) यही नहीं, इस स्त्री को पकड़कर अभी निगल जाऊँगी (और) हे राम! तुम जिस प्रकार की रति (-क्रीड़ा) चाहोगे, वह कर सकूँगी।' (यह) कहकर उसके अपने पास आने पर, सीता को निकट लेकर, राघव उसकी इच्छा पर हँसकर, तनिक हास्य (परिहास) करना चाहकर, उस दनुज-कान्ता के विकार को देखकर (यों) बोले:— ॥ ४२० ॥

'मैं स्त्री (पत्नी) से युक्त हूँ। यह मुझ पर विश्वास रखकर, चाहकर, मेरे साथ वन मे आई। इस लतांगी को तुम्हें चाहकर सताना नहीं चाहिए। वैर भाव रखनेवाली सौत के साथ तुम निर्वाह नहीं कर सकोगी। (यदि) यह स्त्री नहीं होती, इससे पहले ही मैं तुम्हें ग्रहण कर लेता। अब भी क्या हुआ (बिगड़ा) है? वह देखो, मेरा अनुज है। वर (श्रेष्ठ) सत्त्व का धनी है। वह मुझसे भी श्रेष्ठ रूप (सौन्दर्य) धारण करने वाला है। वह नित्य अपने लिए एक सुन्दर तरलयाताक्षी (चंचल तथा विशाल नेत्रवाली) अनुकूलवती की इच्छा करता रहता है। अतः तुम्हें ग्रहण करने में वही समर्थ है। तुम (उसके पास) जाओ।' ऐसा कहने पर यह सोच कि यही ठीक है वह (शूर्पणखा) (लक्ष्मण) के पास जाकर, खड़ी होकर, बोली:— 'हे लक्ष्मण! तुम पर आसक्त होकर, मिलने आई हूँ। मुझे ग्रहण करो।' (ऐसा) कहने पर, राम के प्रयत्न को वह समझ गया, धैर्य से वह उससे क्रम से बोला:—

ना रामुनुद्योगमतडुनु देलिसि । धीरुडै दानितो देरगोप्प वलिकें;
"मेलत! मा यन्न गार्मिचिति तोलुत। दलपुनः नटुगान दगदुनिन् बोंद;
सीत निन् बोलदु चेलुवंबुनंदु; ।नी तरितीपुनु नी मुरिपेंबु ।।४३०।।
भाति निकोंकसारि परिकिंचेनेनि । सीतनोल्लक निन्नु जेंदु राप्पुवुडु;
रामुनि सन्निधिकि नो रमणि! पो" म्मनिन।सौमित्रिमाटलु सत्यंबुलनुचु
दामसि तन रोल दलपक मरियु । रामुनिकडकेगि रतिकि ब्रार्थिंचे;
"वलव; दातनि बोंदु वनित! नी" वनिन । जलजाक्षि मरियु लक्ष्मणुनि ब्रार्थिंचे;
दम्मुडन्ननु, नन्न, दम्मुनि जूप । द्रिम्मरि तन कोर्कि तिरितीपुलाड
मरि मन्मथुनिसूत्र महिमचे दिरुगु। तेरबोम्मयो यन दिरिगे बेरास;
विरसवर्तनमुल वेलदि यिब्भंगि । निरुवुरि सन्निधि केडदाकि ताकि
वेसरि यन्योन्यविरस वाक्यमुल । गासिल्लि येंतयु गडु नल्गि पलिकें;
"नोरि मानवुलार! योंक पेदरालि। गारिंचु गति नन्नु गारिंप दगुने ?
येनु गोपिंचिन निंद्रादि सुरुल । नैननु म्रिगुदुनट, मर्त्युलेंत? ४४०
पोंदिवि यी यितितो भुवनंबुलेल्ल । जदिपि म्रिगेंद" ननि संरंभमेसग

'हे रमणी ! तुमने प्रथमतः मन में मेरे भाई को चाहा (प्रेम किया।) अतः तुम्हें ग्रहण करना उचित नहीं है। सौन्दर्य में सीता तुम्हारी बराबरी नहीं कर सकती। तुम्हारे हाव-भाव ।। ४३० ।।
—के विधान को एक बार और देख लें तो सीता को न चाहकर, राघव तुम्हें प्राप्त करेंगे। हे रमणी ! राम की सन्निधि (सम्मुख) में जाओ।' (ऐसा) कहने पर सौमित्र की बातों को सत्य मानकर, तामसी (राक्षसी) ने अपने भद्देपन का विचार न कर,, राम के पास जाकर रति (-क्रीड़ा) के लिए प्रार्थना की। 'संभव नहीं है, हे वनिते ! तुम उसको (लक्ष्मण को) प्राप्त करो।' (ऐसा राम के) कहने पर उस जलजाक्षी ने पुनः लक्ष्मण से प्रार्थना की। अनुज के अग्रज को, अग्रज के अनुज को दिखाने पर, मन में इच्छा के विकल बना देने पर, वह दुराशा के कारण, मन्मथ के सूत्र की महिमा से घूमनेवाली छाया-पुतली के समान घूमती रही। इस प्रकार वह स्त्री विरस-व्यवहार के कारण, दोनों के समक्ष जा जाकर, ऊबकर, अन्योन्य विरस वचनों के कारण सताई जाकर, अत्यधिक क्रुद्ध होकर बोली:—' अरे मानवो ! किसी अकिंचन स्त्री को सताने के समान मुझे सताना उचित है ? मैं क्रुद्ध हो जाऊँगी तो इन्द्र आदि देवताओं को भी निगल जाऊँगी। मानव (मात्र) की बात ही क्या ? ।। ४४० ।।
—इस स्त्री के साथ समस्त लोकों को घेरकर, मारकर निगल जाऊँगी।'

नदि मृत्युवुनु बोलॅ नट्टहासंबु। पॉदल दग्गरु वच्चु पूनिक सूचि
"जानकि दलकॅडु सौमित्रि! यिक। दीनि मेलमु चालु; दीनि शिक्षिपु"
मनि राघवुडु वल्क ना लक्ष्मणुंडु। विनि पर्णशालकु वॅलुपल निलिचि
"पडति। नीकिंत कोपंबेल रम्मु। कडमुट्ट नी कोर्कि गाविंतुनिपुडॅ"
यनि दानिगनि पल्क ना शूर्पणखयु। दन मदि नुप्पॉगि दग्गरु जेर
घनविषज्वालोरगमु पुट्टवॅडलु। ननुवुन नॉरबापि यदरुलु सॅदर
दन खड्गमंकिंचि दानवुरालि। घन नासिकमु चॅवुल् गरमुन बट्टि
"ये सीम सरसमोयिदि" यन नतडु। "मा सीम सरसमो मगुवरो!" यनुचु
"जेयॉड्डि वलचिवच्चिन जॅवुल् मुक्कु। पोयॅ" नन् सामॅतबुडमि बुट्टिंचि
४५०

मुक्कुनु जॅवुलुनु मॉदलंट गोय। वॅक्कुचु वेसारि विवशात्म यगुचु
शृंगमुल् वोयिन जेवुरुगॉड। भंगि रक्तमुलॉल्क भयमंदि पारि
चनि चतुर्दश सहस्र निशाचरेंद्र। जनविराजित जनस्थानंबु नैन

कहकर, संरंभ के साथ, मृत्यु के समान उसके अट्टहास के बढ़ते जाने पर, उसके (शूर्पणखा के) निकट आने का प्रयत्न देखकर, राघव बोले:— 'हे सौमित्र! जानकी भयभीत हो रही है। अब इसका परिहास बस है। इसे दंडित करो।' राघव के कहने पर, उस लक्ष्मण ने (बातें) सुनकर, पर्णशाला के बाहर खड़े होकर, कहा:— 'हे युवती! तुम्हें इतना क्रोध क्यों? आओ, तुम्हारी इच्छा को अभी सान्त रूप से पूरी करूँगा।' ऐसा उसे देख बोलने पर, वह शूर्पणखा भी मन में फूल उठी, (लक्ष्मण के) निकट आई। बांबी से निकलने वाले, घन-विष ज्वालाओं से युक्त सर्प के सम खड्ग को म्यान से निकालकर, चंचलताओं के नष्ट होने पर, खड्ग को हिलाकर, दानवी की बड़ी नाक और कान को हाथ से पकड़ लिया। शूर्पणखा के पूछने पर कि 'यह किस प्रान्त की सरस-क्रीड़ा है?' लक्ष्मण ने कहा कि 'हे प्रमदे! यह हमारे प्रान्त की सरस-क्रीड़ा है।' 'चाहकर आने पर कान और नाक गए' वाली कहावत को जन्म देकर, ॥ ४५० ॥

—(लक्ष्मण के) नाक और कान को जड़ से काट डालने पर, (वह) रोती-बिलखती, ऊबकर, विवशता से युक्त मनवाली होकर, शृंग कटे लाल-पर्वत के समान, रक्त के बह उठने पर, भीत होकर, भागकर, चतुर्दश-सहस्र-निशाचरेन्द्र-जन से विराजित जनस्थान,

खरदूषणादुल संहारमु

खरुनि यावासंबु कडकु वच्चुटयु। खरुडुनु दानि याकारंबु जूचि वेऱगंदि "यदि येमि वेलदि! नीरूपु। वेऱवक येव्वडु विकृतंबु सेसे? नेव्वडु कालाहि नेऱिगियु द्रोक्के? । नेव्वडु मृत्युवु नित्तरि जेकके? वानि ना केरिगिंपु; वानि रक्तमुलु। वानि मांसमुलु वडिनीकु नित्तु" ननि पेर्चि खरुडु दन्नडिगिन जूचि। विनुटकु व्रेगैन विकृत स्वरमुन मुनुकोन्न सिग्गुन मोमर वांचि। विनुपिप दोडगे नव्वेलदि येड्चुचुनुः "विनुमरण्यमुन ने वेस नादुत्रोव। जनुचोट ना जनस्थानंबुनंदु ४६०
ना सुतुडैनट्टि नाकेश सदृशु। डा सूर्युनि गूर्चि यट निष्ठनुंड विनु मरगोरलेक विपुल साहसुलु। मुनिवेष-धारुलु मोहनाकृतुलु वानि वधिंचिरि वानि मीऱगनु। वानिकि गर्ममुल् वडि जेसि येग राम लक्ष्मणुलनु राजनंदनुलु। कामिंचि येनु डग्गरुटयु जूचि पटुशक्ति नन्नंटबट्टि नावेष। मिटु सेसि विडिचिन नेनु दुःखिंचि निनु गानवच्चिति: नीविक बोयि। येनसिन कडिमि ना यिद्दर जंपि

खरदूषण आदि का संहार

खर के निवास-स्थान के पास आई। खर उसके आकार को देख, डरकर बोला:— 'यह क्या नारी! भीत न होकर किसने तुम्हारे रूप को विकृत कर दिया? किसने जान-बूझकर कालसर्प को कुचला? इस समय किसने मृत्यु को छेड़ा? उसके बारे में मुझे बताओ। झट से उसका रक्त (और) उसका मांस तुम्हें दूँगा।' इस प्रकार विजृंभित खर के अपने से पूछने पर, (उसे) देखकर, सुनने में भद्दे विकृत स्वर में, अत्यधिक लज्जा से सिर को आधा झुकाकर, वह नारी रोती हुई, (समाचार) सुनाने लगी। 'सुनो, अरण्य में मैं अपने मार्ग पर झट से जा रही थी। उस जनस्थान में ।। ४६० ।।

—मेरा पुत्र, जो नाकेश (इन्द्र) सदृश है, सूर्य के प्रति वहाँ अतिनिष्ठा से (तप करता) रहा। सुनो, बिना किसी संकोच के, विपुल साहस वाले, मुनिवेषधारी, मोहनाकृति वाले राम लक्ष्मण नामक राजनन्दनों ने उसे (मेरे पुत्र को) बिना किसी कारण के, मार डाला। शीघ्रता से उसकी अन्त्येष्टिक्रियाएँ कर, उनपर आसक्त होकर, मैं उनके निकट गई। इसे देख पटुशक्ति से मुझे पकड़, मेरे रूप को इस प्रकार करके छोड़ दिया। तब मै दुखी होकर, तुम्हें देखने आई हूँ। तुम अब जाकर अधिक साहस से उन दोनों का वधकर, झट से उनके मांस मुझे ला दो (और)

वारि मांसमुलु वडि नाकु निच्चि। वारक नालोनि वगलार्पु" मनुडु
"नितमात्रमुनकं ये नेल ? वारि। पंतमदेंत ? ना पंपु गैकोंम्मु"
अनि पदुनलुवुर नंतकोपमुल। ननलोग्रतेजुलु नप्पुडु पिलिचि
"यी शूर्पणख वेंट नेगि या नरुल।नाशंबु नोंदिंचि ना सहोदरिकि ४७०
वारि शोणितमु द्रावग जेयु" डनिन। वारुनु दुर्वार वारिवाहमुलु
गालितो वच्चिन करणि ना जंत। तो लोल शूलकांतुलु मेरुपुलुग
जनदेंचि रामलक्ष्मण सूर्यचंद्रु। लनु गप्पि गर्जितालापमुल् सूप
दिनकर-कुलुडंत देदीप्यमान। धनुरादिसाधनोद्धामुडै येंदिरि
वारलु दनमीद वैचिन यशनि। दारुण शूलमुल् धारुणि गूल्चि
वारि नंदर भूरि वज्रानुकारि। नाराचमुल गंठनाळमुल् चिदुम
बरिपक्व फलशिरोभागमुल् वासि। निरुपमाशुगहति निट्टराळ्ळनग
बुडमिपै गेंडसि; रप्पुडु चुप्पनाति। मडमेत्तु परुवुन मरियुनु वारि
खरुनकु लोक भीकरुनकु वारि। मरणंबु रघुरामु महितरणंबु

मेरे अन्तर के अनिवार्य दुख को शान्त करो।' ऐसा कहने पर, खर ने कहा:— 'इतनी सी बात के लिए मेरी क्या आवश्यकता है ? उनका पौरुष ही कितना है ? मेरी आज्ञा ले लो।' (ऐसा) कहकर अन्तक (यम)-समान, अनल-सम-उग्र तेजवाले चौदह (वीरों) को तभी बुलाकर कहा:— 'इस शूर्पणखा के साथ जाकर, उन मानवों का नाशकर, मेरी सहोदरी को ॥ ४७० ॥

—उनका शोणित पिला दो।' (ऐसा) कहने पर, वे भी पवन के साथ आनेवाले दुर्वार-वारिवाहों (मेघों) के समान, उस धूर्त स्त्री के साथ, चंचल शूल कांतियों के बिजलियों के समान चमकते रहने पर, जाकर, राम-लक्ष्मण रूपी सूर्य-चन्द्रों को ढककर, आलाप-रूपी गर्जन करने लगे। तब दिनकरकुल वाले (राम) ने देदीप्यमान धनुष आदि साधनों से उद्दाम बनकर, (उनका) सामना किया। उनके अपने पर फेंके अशनि (गाज)– समान दारुण शूलों को धारुणि पर गिरा दिया। भूरि-वज्र-समान नाराचों (बाणों) से उन सबके कंठनालों को काट दिया, परिपक्वफल रूपी शिरोभागों (सिरों) से बिछुड़कर (के कट जाने पर), वे (राक्षस वीर) निरुपम आशुग (बाण) के आघात से, सीधी शिलाओं के समान पृथ्वी पर गिर पड़े। तब शूर्पणखा ने एडियों के वल भाग-भागकर, लोकभयंकर खर का उन (वीरों) के मरण तथा रघुराम क महितरण के बारे में बताया। आहुति की अधिकता के कारण, अधिक वल उठनेवाले पावक के समान ॥ ४८० ॥

नुग्गडिच्चुटयु नाहुति वेंग्गलमुन । भग्गुभग्गन मंडु पावकुडनग ४८०
गोपिंचि खरुडु मिक्कुटमैन कडिमि। दीपिंप दूपणत्रिशिरुलु मोदलु
वीरुलु पदुनाल्गुवेल राक्षसुलु । घोर सत्त्वुलु गोल्व गोमरु दीपिंचि
तेरलिन सुरलतो दिवि तल्लडिल्ल। बोरलिन गिरुलतो भुविपेल्लगिल्ल
रणभेरि व्रेयिंचि रत्नशैलाभ । गणनीय शबलाश्व कलित वैडूर्य
मणिकूबर सुवर्णमय चक्रदशक । रण जयप्रद धनुर्बाणासि पूर्ण
रणितकिंकिणियैन रथमेक्कि वेडलें । रणबलोदग्रुडै रघुरामु मीद;
द्रिशिरुंडु कंकपत्रशरुंडु विलस । दशनिकल्पुडु दिक्कुलगल नार्चुचुनु
वासव वारणोज्ज्वल भासमान । भासुररासभ प्रकरसंभरित
हाटकस्थगित शतांगंबु नेक्कि । मेटि कय्यमुनकु मेनुब्बि वेडलें;
बर्हिणिवर्णनिबर्हण पवन । गर्हणचणकांति घनवेग तुरग ४९०
संदोह संभृत स्यंद नोत्तममु । मुंदुगा दोलिंचि मुदमग्गलिप
सेना मुखंबुन जेलगि दूषणुडु । नाना विधंबुल नलुवोप्प नडचें:

—क्रुद्ध होकर, अधिक साहस के दीप्त होने पर, दूपण, त्रिशिर आदि वीरों, चौदह हजार घोर सत्व वाले राक्षसों के सेवा करते रहने पर, मनोज्ञता के दीप्त होने पर, क्षुब्ध बने देवताओं के कारण दिवि (स्वर्ग) के घबरा उठने पर, लोटते (धाराशायी होते) पर्वतों से भुवि (पृथ्वी) के उखड़ने पर, रणभेरी बजवाकर, रत्न शैल के समान, गणनीय-शवल (रंगविरंगे) अश्व-कलित वैडूर्य-मणि-कूबर-सुवर्णमय दस चक्रोंवाला, रण में जयप्रद धनुर्बाण-असिपूर्ण (तथा) रणित (मुखरित) किंकिणियों से युक्त रथ पर आरूढ़ हो, रण-बल से उदग्र बन, रघुराम की ओर चल पड़ा। (उसके पीछे-पीछे) कंकपत्रों से युक्त बाणवाला, विलसित अशनि (बिजली) की समता रखनेवाला त्रिशिर (नामक राक्षस) दिशाओ को वेध देने वाले रूप में चिल्लाते हुए, वासव (इन्द्र) के वारणों (घोड़ों) के सम उज्ज्वल (और) भासमान भासुर रासभ- (गधों)- प्रकर (समूह)- संभरित, हाटक (स्वर्ण) से स्थगित (जड़े हुए) शतांग (रथ) पर आरूढ़ होकर, महायुद्ध के लिए, शरीर के फूलने पर निकल पड़ा। सेनामुख में (सेना के आगे-आगे) मयूर के वर्ण (कान्ति) को मात करने वाले, पवन की गति का तिरस्कार करने वाले, कान्तियुक्त, शीघ्रगामी तुरग (अश्व) ॥ ४९० ॥

—समूह से घिरे हुए उत्तम स्यन्दन (रथ) को सबसे आगे हाँककर, मोद के अधिक होने पर, दूषण अनेक प्रकार से शोभित होता हुआ चल पड़ा। पृथुग्रीव, श्येनगामी, विहंगम, मेघमाली, महामाली, प्रलयकाल

ब्रेमतो मरि पृथुग्रीवुंडु श्येन । गामियु नव्विहंगमुडुनु मेघ
मालियु दगु महामालियु ब्रळय । काल कालानलकल्पुडौ सर्प
मुखुडुनु गालकार्मुकुडु दुर्जयुडु । मखशात्रवुंडुनु मरि परुषुंडु
कारुण्यदूरुडौ करवीरनेत्रु । डा रुधिराशनुंडन नोप्पुवाडु
द्वादशदैत्युलत्तरि खरु गोलिचि । द्वादशादित्य प्रतापुलै चनिरि :
त्रिशिरुंडु मरि प्रमाथियु रणोदग्र । यशमुन बेर्चु महाकपालुंडु
स्थूलाक्षुडुनु रणोद्योगुलै सेन । नालुगुमुखमुल नडचिरेमरक;
भीषणकरिघटाबृंहित तुरग । हेषारथस्वनानेक पदाति ५००
पटुतर हुंकार पटह भांकार । पटुकेतु पटपटस्फारनादमुल
ग्रुंगे भूतलमु; दिक्कुल व्रक्कलय्यें । बोंगे बयोधुलु; भूतमुल् वडके;
बलमुल पेंधूळि भानुमंडलमु । गलदु लेदन गप्पे गगनंबु निंड;
खरुनि केतनमुपै ग्रद्दलु व्रालें; । दुरगमुल् स्रोंग्गे; नेत्तुरवान गुरिसें;
नक्कलु सेनलो नडचि वापोयें । जुक्कलु डुल्लें; बक्षुलुचुट्टु नरचें;
मरियु नुत्पातमुल् महि नाकसमुन । दरचुगा दोप नेंतयु भीतिलेक
खरुडीतेरंगुन गडकतो नडचि । यरुदुगा नादंडकाटवि जोच्चें;

के कालाग्नि-सम सर्पमुख, कालकार्मुक, दुर्जय, मखशात्रव (यज्ञ-शत्रु), और परुष, करुणारहित करवीरनेत्र और रुधिराशन नाम से शोभित बारह दैत्य उस समय खर की सेवा करते हुए, द्वादश-आदित्यों के सम प्रतापी हो चल पड़े। त्रिशिर (और) प्रमाथी, रण के उदग्र यश में महान् वने महाकपाल, (और) स्थूलाक्ष रण के प्रयत्न में लगकर, सावधानी से सेना के चारों तरफ चलते रहे। (इस प्रकार राक्षस सेना जब चल पड़ी तब) भयंकर गज-समूह के चिंघाड़ने, घोड़ों के हिनहिनाने, रथों के चलने (और) असंख्य पदातियों (पैदल सैनिकों) ॥ ५०० ॥

—के पटुतर रूप से हुँकारने, पटहों (ढिंढोरों) के निनाद करने, (तथा) बड़े-बड़े झंडों के फड़फड़ाने आदि की ध्वनियों से पृथ्वी धँस गई, दिशाएँ टूक-टूक हो गई, समुद्र उमड़ उठे, पचभूत कंपायमान हो गये। सेना के चलने से उड़ी धूल ने आकाश को इस प्रकार आच्छादित कर दिया कि संदेह होने लगा कि भानुमंडल है या नहीं। खर के केतन (झंडे) पर चील बैठने लगे, घोड़े टेकने लगे, रक्त की वर्षा हुई, सियार सेना के मध्य से रोते हुए चले गए, नक्षत्र टूट गिरे, चारों ओर पक्षी चिल्लाए, (इनके अतिरिक्त) और भी उत्पात पृथ्वी (और) आकाश में अक्सर (वहुतायत से) दीख पड़े। (फिर भी) खर ने भीत हुए बिना, इस प्रकार (उपरोक्त सेनाओं के साथ) साहस के साथ चलकर, अपूर्वरूप से

ननुपमाकृति रामुडक्कलकलमु। विनि पर्णशालकु वेलुपल निलिचि
यवनिपै दिवमुपै नपशकुनमुलु। विविधमुल् गनुगोंचु वेस दम्मु विलिचि
"सौमित्रि! समर सूचकनिमित्तमुलु। भूमिपै वेक्कुलु पुट्टुचुन्नवियु; ५१०
रट्टुडि मुक्किडि रक्कसि मरियु। दिट्टयै वलमुल देच्चे गावलयु;
नदे सैन्यघोपंवुलट्ल कानोपु;। नदे महावलधूळि यखिलंवु गप्पे;
नवमैन रणमव्वुना; कट्लुगान। नवहितमति वूनि यालस्यमुडिगि
जनकज निक्कड जनदुंपनिक। गोनिपोयि यग्गिरिगुहनुंडु" मनिन
"निनवंश वल्लभ! ये नेट्लुपोदु। निनुडिंचि? यट्टुगान नीवु सीतयुनु
पर्वतगुह जेरि परिकिंपु; डेनु। दुर्वारदनुजुल द्रुंतु नी कृपनु"
अनविनि "वीरितो नालंवु सेय। नेनसे वेडुक नाकु; नीवुंडवलदु;
जनकज दलकेंडु! जनु" मन्न सीत। गोनिपोयि पर्वतगुह जोच्चियुंडे;
नंत रामुडु प्रळयांतकु पगिदि। नेंतयु गोपिंचि येपु दीपिंप
नमितमुनित्राणमगु कृपाणंवु। ग्रममोप्पगा वज्रकवचंवु वूनि ५२०

उस दंडक-वन में प्रवेश किया। अनुपम आकृति वाले राम उस कोलाहल को सुन, पर्णशाला के वाहर खड़े रहकर, पृथ्वी पर (और) आकाश में विविध अपशकुनों को देखते हुए, शीघ्रता से अनुज को वुलाकर (यों) वोले:-- 'हे सौमित्र! पृथ्वी पर समर सूचक कई निमित्त (शकुन, कारण) उत्पन्न हो रहे हैं।। ५१०।।

निंदनीय (और) नकटी राक्षसी संभवतः और भी वली सेनाएँ ला रही है। संभवतः वह सैन्य-घोप हो सकता है। वह (देखो) महावल (सेना) की धूल ने समस्त (पृथ्वी-आकाश) को आच्छादित कर दिया है। मुझे नवीन रण प्राप्त होगा। ऐसा है (इसलिए) जनकजा को अव यहाँ नहीं रखना चाहिए। (तुम) अवहित मति (सावधानी) को धारणकर, आलस्य को छोड़, (जनकजा को) ले जाकर, उस गिरि-गुफा में रहो। (ऐसा) कहने पर (लक्ष्मण ने कहा):-- 'हे इनवंश-वल्लभ! तुम्हें छोड़ मैं कैसे जा सकता हूँ? अतः तुम और सीता पर्वत की गुफा में पहुँचकर, देखते रहो। मैं तुम्हारी कृपा से दुर्वार-दनुजों का संहार करूँगा।' (ऐसा) कहने पर, सुनकर (राम वोले):-- 'इनसे युद्ध करने का मुझे कौतुक हो रहा है। तुम (यहाँ) मत रहो। जनकजा भयभीत हो रही है। जाओ।' (ऐसा) कहने पर, सीता को (साथ) ले जाकर (लक्ष्मण) पर्वत गुफा में प्रवेश कर रहा। तव राम प्रलयांतक (प्रलय-काल के यम) के समान, अत्यधिक क्रुद्ध होकर, विकास के दीप्त होने पर, अमित मुनि-त्राण (अनेक मुनियों की रक्षा करनेवाले) कृपाण को

शरशरासनमुलु चतुरुडै तालिच। युरुतर तूणीर युगळंबु बिगिचि
कोंडविल्लुग वंचु कुंडलिकुंड। लुंडन विल्लु वेल्लुग नेक्कुवेट्टि
यगणितध्वनुल मिन्नंतयु बगुल। दगिलि चापमु गुणध्वनि सेयुचुंडे;
निद्रुडु मोदलुगा नेल्लदेवतलु। सांद्ररत्न विमानसहितुलै यपुडु
ब्रदलेल्लनिंडि "येंचग रामुडोकडु। पदुनाल्गुवेल नप्रतिमविक्रमुल
खरदूषणादि राक्षसुल ने रीति। बोरिगोनुनो चोद्यमुग जूत मनुचु
गनुगोनुचुंडिरि; "कपटदानवुल। घनुडु रामुडु द्रुंचुगा" कंचु सारे
देवर्षिगणमुलु दिविनुंडि रामु। दीविंचुचुंडिरि तिविरि पल्मारु
बदिवेलकोट्टुल भानुतेजमुलु। पोंदिगोनि लोकमुल् पोंदिविनयट्लु
रामुनि तेजमरण्यभूजमुलु। भूमियु नभमु नब्धुलु गप्पुटयुनु ५३०
जडमतुलै सर्वसंभ्रमंबुडिगि। मिडुकुचु गन्नुलु मिरुमिट्लु गोलुप
गडुदीनुलैन राक्षसुलनु जूचि। कडकतो बल्के ना खरुडु दूषणुनि;
"निदियेमि दूषण! यी सेन नडव;। देदिरेनो परसेन ? येरुडुपडेनो?"

(और) क्रम के शोभित होने पर, वज्रकवच को धारणकर, ।। ५२० ।।
—चतुरता से शर (और) शरासन (धनुष) धारणकर, उरुतर (महान्) तूणीर-युगल को बांधकर, पर्वत को धनुष के रूप में झुकाने वाले कुंडलि कुंडल (शिव) के समान धनुष को सीधे चढ़ाया। अगणित ध्वनियों से मानों समस्त आकाश फटा जा रहा हो, (इस प्रकार) चाप (धनुष) की गुण-ध्वनि (टंकार) करता रहा। तब इन्द्र आदि समस्त देवता सान्द्र रत्न (खचित) विमान-सहित हो, समस्त आकाश में भरकर यह सोचते देख रहे थे कि 'इस आश्चर्य को देखेंगे कि अकेले एक राम चौदह हजार अप्रतिमविक्रम वाले खर-दूषण आदि राक्षसों का किस प्रकार संहार करेगा।' यह कहते हुए कि कपट दानवों को महान् राम मार डालें, बार-बार देवर्षिगण आकाश से बार-बार राम को आसीस दे रहे थे। दस हजार करोड़ भानुतेज एकत्र होकर मानों लोकों को परिवेष्टित कर रहा हो, उस प्रकार राम के तेज ने अरण्य के वृक्षों, भूमि, नभ (आकाश), अब्धियों (समुद्रों) को आच्छादित किया। ।। ५३० ।।

—जड़मति हो, समस्त संभ्रम (आडम्बर) को खोकर, व्याकुल हो, आँखों के चकाचौंधिया जाने पर, अतिदीन बने राक्षसों को देख, वह खर साहस से दूषण से बोला:— 'यह क्या दूषण! यह सेना आगे नहीं बढ़ती? शत्रु की सेना का सामना हुआ या कोई नदी बीच में पड़ गई?' (ऐसा) कहने पर दूषण जाकर, वहाँ देख आया (और) बोला:— 'हे दनुजेश! राम के उद्दंड तेज के सर्वत्र व्याप्त होने पर,

यनिन दूषणुडेगि यटजूचि वच्चि । "दनुजेश ! रामुनुद्दंडतेजंबु
गलय बर्वुटयुनु गतिदर्प्पे" ननुडु । नलुकमै खरुडु सैन्यमुल दिट्टुचुनु

खरुनि सेनलु रामु नेदकोंनुट

नरदमत्युग्रत नट्टु दोलुकोंनुचु । नरुगुचो राक्षसुलंदरु गूडि
भुजबलाटोपविस्फुरित प्रताप । गजरथ भटवाजिकलितुलै योंकट
मंडु कार्चिच्चुपै मलयुचु मिडुत । तंडंबु लोंक्कट दार्कोन्न करगि
गडुनुग्रवेगुलै काकुत्स्थरामु । वडि जुट्टुमुट्टि दुर्वारुलै कदिसि
शरचाप पट्टिस शक्ति त्रिशूल ।करवाल कुंत मुद्गर भिंडिवाल ५४०
परशु तोमर गदा पाश चक्रमुलु । गुरिसि यार्चिरि देवकोटि भीतिल्ल ।
नप्पुडु रघुरामुडंबुदपंक्ति । गप्पिन चंडांशुगति गानवड्क
कोंतसेपुनकु रक्षोगणमुक्त । कुंतादि बहुशस्त्रकुटिलास्त्रततुल
नन्नियु मायिचे नैंद्रजालिकुनि । चेन्नुन दनु सुरश्रेणि गीर्तिप;
मरियु दोड्तो दैत्यमंडलि गुरियु । तरुचु नस्त्रमुल शस्त्रमुल द्रुंचुचुनु

(सेना की) गति रुक गई ।' (ऐसा) कहने पर, क्रोध के मारे, खर (अपने) सैन्य को गालियाँ सुनाते हुए,

खर की सेनाओं का राम का सामना करना

—रथ को अति-उग्रता से उधर (राम की ओर) हाँकते हुए जाने लगा। (तब) सभी राक्षसों ने एकल होकर, भुजबल के आटोप (आडम्बर) से विस्फुरित प्रतापवाले (तथा) गज-रथ-भट-वाजि से एक साथ युक्त हो, बलते हुए प्रचड दावानल का, मानों शलभों का समूह एक साथ सामना कर रहा हो (टूट गिर रहा हो), (इस प्रकार) अति-उग्र-वेग वाले होते हुए काकुत्स्थ राम को शीघ्रता से घेर लिया। (घेरकर) दुर्वार होते हुए, निकट पहुँचकर, शर, चाप, पट्टिस (एक प्रकार का खड्ग), शक्ति, त्रिशूल, करवाल (खड्ग), कुंत, मुद्गर, भिंडिवाल ॥ ५४० ॥
—परशु, तोमर, गदा, पाश, चक्र आदि की, चिल्लाते हुए, वर्षा की जिससे देवकोटि भीत हो गई। तब रघुराम अंबुद पक्ति से आच्छादित चंडांशु (सूर्य) के समान दिखाई नही पड़े। थोड़ी देर के बाद रक्षोगण (राक्षस-समूह) के छोड़े (चलाए गए) कुंत-आदि बहुशस्त्र (तथा) कुटिल अस्त्रों के समस्त समूह को, ऐन्द्रजालिक (जादूगर) के समान नष्ट कर दिया, जिससे सुरश्रेणि ने उनकी प्रशंसा की। फिर से, साथ ही साथ दैत्यमंडलि के द्वारा बरसाए जानेवाले अस्त्र (तथा) शस्त्रों को काट देते हुए, समक्ष,

मुंदट निरुपार्श्वमुल बिरुंदटनु । संदंडिचिन दैत्यसैन्यंबुमीद
गरलाघवमु मीर गवदोनलोनि । शरमुलन्नियु नोक्कसारि संधिंचि
पदियु नूरुनु वेयु बदिवेलु लक्ष । पदिलक्ष पदिकोट्लु बदिनूरुकोट्लु
मंडित परिवेष मध्यंदिनार्क । मंडलपरिवेष महितानुकारि
कुंडलीकृत चन्डकोदंडदंड । भंडनात्युत्साहबाहुडै व्रेय ५५०
दुनियु गंभीर वेदुलुनु जोदुलुनु । दुनुकलै पडेंडु वीतुलुनु रौतुलुनु
द्रुंगेडु बहुपदातुलुनु हेतुलुनु । मुंगल बडु शरंबुलु शिरंबुलुनु
म्रोग्गेडु योधांगमुलु रथांगमुलु । म्रग्गेडु सगुणधर्ममुलु वर्ममुलु
तूलेडु रथिकजातुलुनु सूतुलुनु । गूलेडि वेलिगोडुगुलु बडगलुनु
नलियैन मांसखंडमुलु मोंडेमुलु । गलिगि लोकैकभीकरमय्ये रणमु;
अंत भानुनि दीप्ति नंधकारंबु । पंतमंतयु बटापंचलैनट्टु
लतुल विक्रम धामुडगु रामुनकु । हतशेषमगु सैन्यमंतयु विरिगि
खरुनकु 'शरण' न्न खरुडुनु वारि । बुरिकोलिप दूषणु बोरिकै पनुप
वाडुनु हतशेषवाहिनुल् दानु । वेडिमि सूपुचु वेवेग पोंदिवि

दोनों पार्श्वों में, (तथा) पीछे (की ओर से) व्याप्त दैत्य सैन्य पर करलाघव (हाथ की चतुराई) की अधिकता को प्रदर्शित करते हुए, तूणीर के सभी बाणों को जो दस, सौ, हजार, दस हजार, लाख, दस लाख, दस क़रोड़, हजार करोड़ थे, संधान करके, परिवेश से मंडित मध्यंदिन—अर्क (सूर्य) के समान तेजोरूपी परिवेश (घेरा) से युक्त हो, कुंडलाकार में झुकाए गए चंडकोदंड-दंड के साथ, युद्ध के उत्साह से युक्त बाहुओं से युक्त हो, डाल दिया (बाणों का प्रयोग किया)। ॥ ५५० ॥

(इस शर-प्रयोग से) कट गिरनेवाले गंभीर वेदी (मस्त हाथी), योद्धा, टुकड़े होने वाले घोड़े (तथा) घुड़सवार, नष्ट होने वाले अनेक पदाती (पैदल सैनिक) (और) तलवारें, सामने गिरनेवाले शर (और) शिर, चित्त होने वाले योद्धाओं के अंग (और) रथों के भाग, चूर-चूर होने वाले गुण (डोरी) सहित धनुष (तथा) वर्म (कवच), लोटने वाले रथी और सूत (सारथी), गिरनेवाले श्वेत छत्र (तथा) पताकाएँ, कुचले हुए मांस खण्डों और रुंडों से युक्त हो, रण लोकभीकर हुआ। तब मानों भानु की दीप्ति से अन्धकार की समस्त स्पर्धा छिन्न-भिन्न हो गई हो, (उसी प्रकार) अतुल-विक्रमधाम राम के समक्ष हतशेष (मरने से बची) समस्त सेना टूटकर (दर्प खोकर) खर की शरण में पहुँची। खर ने उनको प्रेरित (प्रोत्साहित) कर, दूषण को युद्ध के लिए भेजा। उसने भी हतशेष वाहिनियों (सेनाओं) के साथ पौरुष दिखाते हुए,

तालसालशिलावितान नानास्त्र । जाल वर्षमु रामचंद्रुपै गुरिसे; ५६०
गुरिसिन दनमेन ग्रोत्नेत्तुरोलुक । नरुणारविंदाक्षुडै रामुडलुक
गांधर्वशरमु राक्षसुलपैनेय । सैंधर्वासिंधुरस्यंदन सुभट
वीरुल कम्महाविशिखराजंबु । तेरिच्चूडग राक देदीप्यमान
धाराकराळमै दनुजवर्गमुल । गारिंचि नोंचि चीकाकु गाविंचि
दंडिंचि खंडिंचि तललुत्तरिंचि । चेंडाडुचो रणक्षितियेल्लनिंडि
येंदु जूचिन दुरंगेभखंडंवु । लेंदु जूचिन निगिकेगयु मोंडेमुलु
नेंदु जूचिन व्रेवुलेड्रचियु मेदडु । नेंदु जूचिन नेत्तुटेरुलै युंडे;
शाकिनीभूत पिशाच भेताळ । डाकिनुल् दंडतंडंवुलै यप्पु
"डेनुगुतलकाय लेसगु कुंडलुग । वूनि यंदलि मुत्यमुलु दंडुलमुग
दंडि रामुनि रणधर्मसत्रमुन । वंडिनारिदे रंडुवरुस भुजिप" ५७०
ननि वेड्क बैकोन्न यधिकारमुद्र । गोनि रोदगाकुंड गूचुंडवेट्टि
रक्तचंदनमुनु रक्ताक्षतमुलु । रक्तसंकल्पपूर्ववुगा दाल्चि

अतिशीघ्रता से घेरकर ताल, साल, शिला, वितान, नाना अस्त्र-जाल को रामचन्द्र पर बरसाया ।। ५६० ।।

—(अस्त्रों के) वरसने पर अपने शरीर पर नए रक्त के छलकने (स्रवित होने) पर अरुण-अरविन्द जैसे नेत्रोंवाला होकर, राम ने क्रोध से राक्षसों पर गान्धर्वशर को चलाया। उस महा-विशिख (वाण)- राज (श्रेष्ठ) ने सैंधव (घोड़े), सिन्धुर (हाथी), स्यन्दन (रथ), सुभट वीरों के लिए आँखों को चौंधिया देनेवाले रूप में देदीप्यमान धारा-कराल (भयंकर धार से युक्त) हो, दनुज समूहों को पीड़ितकर, सताकर, उद्विग्न वनाकर, दंडितकर, खंडितकर, सिर काटकर (शत्रुओं के) छक्के छुड़ाए। तव समस्त रणभूमि जहाँ देखो वहाँ तुरंग, इभ (हाथी) के टुकड़े, जहाँ देखो वहाँ आकाश को उठने वाले रुंड, जहाँ देखो वहाँ आंतड़ियाँ, मांसखंड (और) दिमाग, जहाँ देखो वहाँ रक्त की नदियों से भरी हुई थी। तव शाकिनी, भूत, पिशाच, भेताल (वेताल), ढाकिनी (आदि) झुंड के झुंड (वहाँ पहुँचकर) कहने लगे:— 'हाथियों के सिर को शोभा से घड़े वनाकर, उनमें प्राप्त मोतियों को चावल बनाकर, राम के रणरूपी धर्मशाला में खूव (बहुलता से) पकाया गया है। पंक्ति में वैठ खाने के लिए, यहाँ आओ'।। ५७० ।।

—(ऐसा) कहकर आनन्द से प्राप्त अधिकार-चिह्न को ग्रहण कर, खामोशी से वैठकर, रक्त चन्दन (और) रक्ताक्षतों को रक्त संकल्पपूर्वक धारण कर, वकझक किए विना, चमड़े के (वने) केले के पत्तों के चौतरफ आर्द्र

पदरक चर्मरंभापलाशमुलु । पदनैन पुनकदोप्पलु चुट्टमर्चि
शरवह्नि पक्व मांसपुटन्नमुनु । पौरलेडु मेदडु पप्पुनु ग्रोव्वुलंदु
वरदलौ नाज्यप्रवाहमुल् कंड । लैड्रचि कारिजमु लनेकशाकमुलु
पालप्रेवुलु सेवै पासेमुल् मेलि । वालुगुंडेलु पिंडिवंटलु क्रोत्त
नैत्तुरु तीयनि नीरुगादलचि । यत्तरि विप्रयोग्याहारमनुचु
नाकंठतृप्तुलै यधिकसम्मतमु । सेकौनि सभ गूडि "श्रीरामचंद्र !
ते विजयोऽस्त" नि दीविंचि कौन्नि । यावल गौन्नि "तथाऽस्त" नि पल्क
नितलोमरि कौन्नि येनुगु जीव । दंतमुल् चेतलातमुलुगा बूनि ५८०
पौलुसुटेम्मुल संकुपूसल पेर्लु । कळुकु कामाक्षुलुगा धरियिंचि

श्रीरामुनितो खरदूषणुलयुद्धमु

करिघंटिकाताळगतुल कुब्बुचुनु । दरिबेसिकोपुलत्तरि जूपदौडगे;
नंत दूषणुडु मत्तारिभीषणुडु । वंत नौंदुचु दनवंटि योधुलनु
विजयशीलुर नैदुवेल बंपुटयु । द्रिजगमुल् वडक नेदिर्चि वारपुडु
चापविद्या प्रौढि सकलंबु जूप । जूपुल गोपंबु सूपुचु नृपुडु

कपाल के दोने सजाकर, शर-वह्नि (बाणाग्नि) से पके मांस को अन्न, लुढ़कते भेजे को दाल, बाढ़ के रूप में स्थित चर्बी को प्रवहित आज्य (घी), शिराएँ, मांस, कालेय को अनेक शाक (साग), दूधिया आंतड़ियों को सेवै खीर, श्रेष्ठ हृदय पिंड को मिष्ठान्न, नये रक्त को जल मानकर, उस समय उसे विप्र-योग्य-आहार मानकर, (भोजन करने से) आकंठ-तृप्त हो, अधिक सम्मति से, सभा (रूप) में जमा होकर, कुछ ने आसीसा:— 'श्रीरामचन्द्र ! ते विजयोऽस्तु ।' तत्पश्चात् कुछ ने कहा:— 'तथास्तु'। इतने में कुछ और ने हाथियों के दाँतों को हाथ की छड़ी के समान धारण कर, ॥ ५८० ॥

—मांसयुक्त हड्डियों को शंख की गुरियों की लड़ियों के समान, सुशोभित कामाक्षियों के समान धारण कर,

श्रीराम के साथ खर-दूषणों का युद्ध

करि (हाथी) घंटिकाओं की तालगतियों से (को सुन) फूलते हुए, वे (भूत-पिशाच) उस समय (अपनी) निन्दनीय शोभा दिखाने लगे। तब मत्त अरि-भीषण (मस्त वैरियों के लिए भयंकर) दूषण ने संतप्त होते हुए, अपने समान विजयशील पांच हजार योद्धाओं को भेजा। उन्होंने तब तीनों लोकों को कंपाते हुए (अपनी) चापविद्या-प्रौढ़ता

नोक्कोक्कशरमुन नोक्कोक्क दनुजु । दक्कक नोंचि विदारिंचि वैचें;
गोंदर नंदंद गुदुलुगा गूर्चि । यंदर देगटार्चि यार्चिन जूचि
दूषणुडप्पुडत्युग्रुडै परुष । भाषणुंडै रामुपै देरु वरूपि
दशदिगंतबुलु दट्टंबुगाग । नशनि कालाहितुल्यंबुलै योप्पु
तम्मुल निगुडिप नवि द्रुंचि नालु । गम्मुल नरदंबु हयमु गूल्चि ५९०
वेरवोप्प नोक कोल विलुद्रुंचुटयुनु । दुरमुन विरथुडै दूषणुंडलिगि
दारुण प्राणविदारण विजय । कारणातंकगदाकल्पमै योप्पु
परिघंबु द्रिप्पुचु बरतेर रामु । डुरुशरद्वयमुन नुरुबाहुयुगमु
नरुदुगा देगनेसि याम्यबाणमुन । नुरमेयुटयु दैत्युडोरलुचु गूलें
दंतमुल् विरिगिन दारुण भद्र । दंतावळेंद्रबु धर गूलिनट्लु;
गूलिन जूचि मुग्गुरु दंडनाथु । लालो ब्रमाथि महाकपालुंडु
स्थूलाक्षुडुनु वरशुवु द्रिशूलंबु । गेल वट्टिसमु लंकिंचि वैचुटयु
वारि शस्त्रबुल वारि मस्तमुल । श्रीरामु डोक्कट बेंडाडें;

दिखाई। चितवनों से क्रोध दिखाते हुए नृप (राजा-राम) ने एक-एक शर से एक-एक दनुज को, बिना किसी को छोड़े, सताकर, फाड़ डाल दिया (वध कर दिया)। कुछ दनुजों को, यहाँ-वहाँ, समूह रूप में एकत्र कर, सबका वधकर, ललकारा। इसे देख तब दूषण अत्युग्र हो, परुष-भाषण वाला बन (परुष वचन कहते हुए), राम के सम्मुख रथ चलाकर, दशदिगन्तों को निबिड़ रूप से आच्छादित करते हुए, अशनि (बिजली), कालाहि (काल-नाग) सम-शोभित बाणों का प्रयोग किया। उन्हें (बीच में ही) काटकर, चार बाणों से रथ और घोड़ों को गिरा दिया ॥ ५९० ॥

—ढंग से एक बाण से (दूषण के) धनुष को काट दिया, (तब) रण में विरथ बन दूषण क्रुद्ध होकर, दारुण, प्राणविदारण, विजयकारण, अन्तक (यम)-गदा-सम शोभित परिघा को घुमाते हुए दौड़ पड़ा। राम ने उरु (श्रेष्ठ) शर-द्वय से, उरु बाहुयुग को अपूर्वरूप से काट डाल, याम्य बाण का छाती में प्रयोग करने पर, दैत्य चिल्लाते हुए ऐसे गिर पड़ा मानों दारुण-भद्र-दन्तावलेन्द्र (भयंकर मद गज), दाँतों के टूटने पर, पृथ्वी पर ढह पड़ा हो। (उसे) ढेर होते देख, उसी बीच तीन सेनापतियों ने-प्रमाथी, महाकपाल, स्थूलाक्ष-हाथ में परशु, त्रिशूल (और) पट्टिस (एक तरह का खड्ग) घुमाकर (राम पर) डाल दिया। श्रीराम ने उनके शस्त्र (और) मस्तकों को एक-साथ काट डाल दिया। तब खर ने त्रिगुणित रोष से सेनाधिनायकों को प्रेरित किया। वे बारहों

नप्पुडु खरुडु सेनाधिनायकुल । मुप्पिरिगॉनु रोषमुन बुस्किॉल्प,
वारु पन्निद्दरवार्य शौर्यमुन । वीरु राघवु दाकि वेवेर पोर ६००

गुलिश धाराकार घोर बाणमुल ।कलिमि जूपुचु श्येनगामि नुक्कणिचि
कालकार्मुकु द्रुंचि करवीरनेत्रु । दूलिचि सर्पास्यु त्रुळ्ळडगिंचि
या विहंगमु द्रुंचि यज्ञशात्रवुनि । चेव यडंचि शिक्षिंचि दुर्जयुनि
गेलि महामालि गेंडसि या मेघ । मालिनि वधियिंचि मर्दिंचि परुषु
पृथुकंठु कंठंबु बृथ्विपै गूल्चि । रुधिराशनुनि जंपि रोषंबु मिगुल
दिक्केदि खरुडुनु द्रिशिरुंडु दक्क । दक्किन वारि नंदर नेल गूल्चें ।
नी लील रामुचे नेल्ल सैन्यमुलु । गालिचे दूलिन काराकुलट्ल
कूलिन गोपंबु गॉनि काल द्रिशिरु। डालोन रामुपै नरदंबु वरपि
सिंहनादमु सेसि सिंधुरोत्तममु । सिंहंबु नेंदिरिन चेलुवुन नंदिरि
गुणनाद मेसग रक्षोवीरुडॉकट । गणनापरंपरल् गडव नंदंद ६१०

नतुल बाणमुलेय नलिगि राघवुडु । प्रतिबाणततुलेसि बलुविडिद्रुंचें;
वाडुनु दन पेरुवाडि वाडिमिनि । मूडुबाणमुल रामुनि फालमेसें;

(सेनापति) अवार्य शौर्य के साथ वीर राघव से जूझकर अलग-अलग लड़ने लगे ॥ ६०० ॥

कुलिश (गाज) की धारा के आकार वाले घोर बाणों की सम्पत्ति (शक्ति-सामर्थ्य) दरसाते हुए, श्येनगामी के शौर्य का दमन किया, कालकार्मुक का वधकर, करवीर नेत्र को मारकर, सर्पास्य के गर्व को कुचलकर, उस विहंगम को मारकर, यज्ञशत्रु की सामर्थ्य को दबाकर, दुर्जय को दंडितकर, लीला से महामाली का संहारकर, उस मेघमाली का वध कर, परुष का मर्दनकर, पृथुकंठ के कंठ को पृथ्वी पर गिराकर, उत्कट रोष से रुधिराशन को मारकर, खर और त्रिशिर को छोड़, शेष सभी को पृथ्वी पर गिरा दिया । इस प्रकार, पवन (के झोंके) से गिरनेवाले पके पत्तों के समान समस्त सेना के नष्ट हो जाने पर, क्रुद्ध होकर, जलते हुए, उसी समय त्रिशिर, राम के समक्ष रथ चलाकर, सिंहनाद कर, (राम का) सामना किया उत्तम गज मानों सिंह का सामना कर रहा हो । रक्षोवीर ने धनुष की टंकार करते हुए, गणनीयतर से यहाँ-वहाँ अतुल बाणों का प्रयोग किया ॥ ६१० ॥

—रुष्ट होकर राघव ने प्रति-बाण समूह का प्रयोग कर, (उन्हें) झट से काट डाला । उसने भी अपने नाम को सार्थक करते हुए, पौरुष से, राम के फाल भाग (ललाट) पर तीन बाण डाले । उन पैने बाणों के

न्वाडि बाणंबु ललिकंबु दाक। नव्वुचु नलुकमै नलिनाप्तकुलुडु
त्रिशिरुनि नेसिन द्रिशरमुलु कुसुम। दश दाल्चे; 'निक जतुर्दशभुवनमुलु
दूरिन निनु बट्टि तुनुमाडुनट्टि। दारुणतर चतुर्दश सायकमुल
ने नेयुवाड सहिंपुमी' यनुचु। दा नेसे बदुनालुगु दारुणास्त्रमुल;
नवि ग्रोम्मु गोनि काडि यव्वल वेडलि। यवनीस्थलमु गाडे; नंत राघवुडु
नरदम्मु मरि नालुगम्मुल विरिचि। युखडि बदियिट नुरमेयुटयुनु
सुरवैरि कोपिंचि शूलंबुवैव। नरनाथुडदिद्रुंचे नालुगस्त्रमुल;
द्रुंचि मूडम्मुलतो मूडु दलल। द्रुंचिन द्रिशिरुंडु दुरमुन गूले ६२०
मूडुगोम्मुलतोड मोदलंट द्रेव्वि। पोडिमि सेडि कूलु भूजंबु करणि;
द्रिशिरुंडु गूलुट दृष्टिंचि खरुडु। दशरथरामु चेतकु जोद्यमंदि
मरिचाल गोपिंचि महनीयरथमु। दरिमि युग्रास्त्र संततुलेय जूचि
शरलाघवमु पेर्चि जानकीविभुडु। खरुनिपै ब्रतिसायकमुलेयुटयुनु
खरुनि बाणमुलु राघवुनिबाणमुलु। धरणीतलमु वियत्तलमुनुनिंडे;
नप्पुडर्कुनि दीप्तुलन्नियु मासे। गप्पेनु निविडांधकारंबु दिशल

(अपने) ललाट पर लगने पर, हँसते हुए, रूठकर नलिनाप्तकुल (सूर्यवंशी राम) ने त्रिशिर पर (बाण) चलाए तो (उसके) तीनों सिर कुसुम सम बन गए। 'अब चतुर्दश भुवनों में जा पैठने पर भी, तुम्हें पकड़ मार डालने वाले दारुणतर-चतुर्दश-सायक (बाण) मैं चला रहा हूँ। (उन्हें) सहन कर लो।' (ऐसा) कहते हुए उन्होंने (राम ने) चौदह दारुण-अस्त्र चलाए। वे (त्रिशिर की) छाती को छेदकर, उस पार निकलकर, भूमि में जा गड़ गये। तब राघव ने और चार बाणों से रथ को नष्ट कर दिया (और) द्रुतगति से दस अस्त्र छाती पर चलाए। उस पर क्रुद्ध होकर, सुर-वैरी (राक्षस) ने शूल चलाया, नरनाथ (राम) ने उसे चार अस्त्रों से काट दिया। काटकर तीन अस्त्रों से तीन सिरों को काट देने पर, त्रिशिर रण में ऐसे गिरा ॥ ६२० ॥

—मानों तीन शाखाओं के साथ, समूल उखड़कर, शोभारहित हो, ढह गिरने वाला भूज (वृक्ष) हो। त्रिशिर को गिरते देखकर, खर दशरथ राम के कार्य पर विस्मित हुआ। फिर अतिक्रुद्ध हो महनीय रथ को दौड़ाकर, उग्र-अस्त्र-समूह चलाया। यह देख शरलाघव (बाण चलाने का कौशल) प्रदर्शित करते हुए, जानकी के विभु ने खर पर प्रति-सायक (बाण) चलाए। खर के बाणों (तथा) राघव के बाणों से धरणीतल और वियत्तल (आकाश) भर गया। तब अर्क (सूर्य) की समस्त दीप्तियाँ मंद हो गयीं। दिशाओं में निबिड़ (घना) अन्धकार फैल गया।

खरुनिराघवुडु, राघवुनि ना खरुडु। सरकुगा गोन काजि जयकामुलगुचु गासरयुगळंबु गलभद्वयंबु। गेसरियुगळंबु गेरलि योडोड पोरेडु गति दोप भुजबलाटोप। भूरि प्रतापुलै पोराडु चोट खरुडप्पुडलिगि राघवु चेतिविल्लु। सरि द्रुंचे वेस नर्धचंद्र बाणमुन; ६३०

द्रुंचि जोडुनुद्रुंचि तोड्तोन मरियु। मुंचे रामुनि देहमुन नंपवेल्लि: नायंपतंडंबु ना तरि सरकु। सेयक तनु सुरश्रेणि गीर्तिप नुष्णांशुकुलुडगस्त्युनि चेत गोन्न। वैष्णवचापंबु वडि नेक्कुवेट्टि शिंजिनि म्रोयिंचि शितसायकमुल। भंजिचे राक्षसप्रवरु केतनमु: मरि वाडु रामु मर्ममुलुच्चिपाउ। गरुकुटम्मुलु नाल्गु गर्द्दिचि येय रक्तसिक्तांगुडै राघवुंडंत। नक्तंचरुनि नोंचि नाराचनिहति बटुवाण मोकट जापमु द्रुंचि वैचि। यट नालुगिट वानि हयमुल गूल्चि सारथि बडनेसि सायकवह्नि। ना रथंबपुडु पूर्णाहुति सेसे; विलु गोलुपडि यट्लु विरथुडै खरुडु। प्रलयकालांतक प्रतिमुडै केल

खर की राघव और राघव की खर, परवाह न कर, आजि (युद्ध) में जय की कामना से, ऐसे लड़ रहे थे मानों दो कासर (महिष), दो कलभ (हाथी के बच्चे), दो केसरी (सिंह) सोत्साह आपस में लड़ रहे हों। भुजबल के आटोप (आडम्बर) तथा भूरि प्रतापवाले होते हुए लड़ते समय, तब खर ने रुष्ट होकर, राघव के हाथ के धनुष को झट अर्द्धचन्द्र-बाण से ठीक (बीच में) काट दिया ॥ ६३० ॥

—काटकर, (धनुष) युग्म को काटकर, साथ ही साथ राम की देह को बाण समूह में डुबो दिया। उस समय उस बाण समूह की परवाह न कर, सुरश्रेणी की (अपने को) प्रशंसा करते समय, उष्णांशुकुल (सूर्य-वंशी राम) ने अगस्त्य से प्राप्त वैष्णव चाप को शीघ्रता से संधान कर, शिंजिनी (धनुष की डोरी) बजाकर, राक्षस-प्रवर के केतन (झंडे) को शित (सफेद) सायकों से नष्ट कर दिया। तब उसने भी राम के मर्मस्थानों का विदारण करने वाले चार क्रूर (कठोर) बाणों का, गर्जन करके, प्रयोग किया। रक्तसिक्तांग वाले होते हुए राघव ने तब नक्तंचर (राक्षस) को नाराचनिहति (बाण समूह) से सताकर, एक पटुबाण से चाप काट डाल दिया, चार (बाणों) से उसके घोड़ों को मार गिराया, सारथी को मारकर, सायक (बाण)- वह्नि (अग्नि) से उसके रथ की तब पूर्णाहुति कर दी। धनुष से वंचित हो, उस प्रकार विरथ बन, खर प्रलयकाल के अन्तक (यम) के सम होकर, हाथ में, मात्सर्य से,

जलमुन गद गोंचु जनुदेंचुटयुनु। जलियिंचे गिरुलतो जगति
यंतयुनु; ६४०
नप्पुडु रघुरामु डा दुष्टदैत्यु। दप्पक कनुगोनि दर्पिंचि पलिकें;
'नोरि! राक्षस! विनरोरि! नीचात्म! शूरत नीकेल चोंप्पडु निक?
नी वलंबुलु सच्चें; नी वारु देंगिरि; । नी वाणसंपद निर्मूलमय्यें;
नरुदुगा नीदंडकाटवि दोंल्लि। पेंरिगि सन्मुनुल जंपिन पापफलमु
गुडुव गालमु वच्चें; गुडुतुगाकिंक; । नडरि वधितु घोराजिलोनिन्नु'
ननवुडु खरुडप्पु डा रामु जूचि। कनलुचु वलिकें दोर्गर्वंबु मेंरसि
'येलरा राघव! यित गर्वंबु?। आलंबुलो गोंदरल्पुल जंपि
कोंलयुचु निनु नीव कीर्तिचुकोंनेदु? कुलजुंडु तनु दानें कोनियाडुकोनुनें?
यिदें गदाधरुडनै येतेंचिनाड; । गदिसि पोराडु: ना कडिमियु जूडु;
देवासुरुलकैन दृष्टिपरादु; । नीवु नामुंदर निलुव शूरुडवे? ६५०
योंडोंड कडगि नी योंडलि मांसंबु। चेंडाडि नेडुना चेंलियलि कित्तु।'
ननि महागद द्रिप्पि यडरि वैचुटयु। ननिलुनि वेगंबु नर्कुतेजंबु

गदा धारणकर (राम की ओर) आने लगा तो, गिरियों के साथ समस्त जगती काँप उठी ॥ ६४० ॥

तब रघुराम उस दुष्ट दैत्य को देखकर, दर्प के साथ बोले:— 'अरे! राक्षस! सुन रे! नीचात्मक! अब तुम्हें शूरता क्यों कर प्राप्त होगी? तुम्हारी सेनाएँ नष्ट हो गयीं, तुम्हारे स्वजन मर गये, तुम्हारी बाण-सम्पत्ति निर्मूल हो गयी। अपूर्व रूप से इस दंडकाटवि (दंडक वन) में बढ़कर, सन्मुनियों को मारने का पापफल भोगने का समय आ गया है। अब (उसे) भोग लोगे। घोर रण में, अतिशयता से, तुम्हारा वध करता हूं।' ऐसा कहने पर खर तब उस राम को देखकर (क्रोध से) जलते हुए, बड़े गर्व के साथ बोला:— 'क्यों रे राघव! इतना गर्व? युद्ध में कुछ अल्प (जनों) का संहार करके, प्रसन्न होकर, अपनी ही प्रशंसा करते हो? कुलीन (व्यक्ति) क्या अपनी प्रशंसा स्वयं करता है? ये देख, गदा धारण कर आया हूँ। (मुझसे) निकट आकर भिड़ो, (और) मेरे पौरुष को देखो। देवासुर भी (मेरी ओर) देख नहीं सकते। तुम मेरे समक्ष खड़े रहने योग्य शूर हो? ॥ ६५० ॥

—एक-एक करके तुम्हारे शरीर के मांस को काटकर आज अपनी बहन को दूंगा।' (ऐसा) कहकर महागदा को घुमाकर, अतिशयता से फेंक दिया। मानों अनिल का वेग, अर्क का तेज, अनल का ताप, अशनि (बिजली) का काठिन्य, घनगदा के रूप में एकत्र हुए हों, इस प्रकार से वह गदा आ

ननलुनि वेडिमि यशनि बेट्टिदमु । घनगदारूपमै कदिसिनयट्लु
चनुदेर नुद्दंडचंडकांडमुल । गनेलुगा रामु डागद द्रुंगनेसि

खरुडु श्रीरामु नेंदुर्चुट

'योरि! नी गर्वोक्तुलुब्बुनु मदमु । दीरेने ? बिकमुल् दीरेने ?' यनुडु
गद्दिंचुचुनु वच्चि कडु वडि तोड । नद्दनुजुंडु महारोषमुननु
ग्रक्कुन वृक्षमोक्कटि पेल्लगिंचि । चिक्कनि भुजशक्ति जिरजिर द्रिप्पि
'चावु' मटंचुनु जय्यन वैव । ना वृक्षमुनु द्रुंचि यपुडु राघवुडु
खरुनिपै खरकर कर सहस्राभ । शरसहस्रमुलेसि चाल नोंप्पिंचे:
नोच्चियु वाडु तनुवुरक्तधार । पिच्चिल देच्चिकोल् बीरंबु मीर ६६०
नेंदुरुगा जनुदेर नीक्षिंचि रामु । डदयुडै भुवनंबु लन्नियु गलग
नुरुवडि नैंद्रास्त्रमोनर संधिंचि । युरमेयुटयु दैत्युडुब्बेल्ल बोलिसि
पिडुगडच्चिन कोंड पृथिवि पै गूलु । वडुवुन खरुडंत वसुधपै गूलें ।
ननि मुहूर्तमु मुहूर्तार्धंबु लोन । दनु नेंदिर्चिन चतुर्दश सहस्रमुल
खरदूषणादि राक्षसुल नीरीति । बोरिगोनुटयु रामु बोगडिरि सुरलु:

रही थी । राम ने उस गदा को उद्दंडचंड कांडों (बाणों) से टुकड़े-टुकड़े कर दिए ।

खर का श्रीराम का सामना करना

'रे ! तुम्हारी गर्वोक्तियाँ, हर्षातिरेक, गर्व चुक गये ? ऐंठ (गर्व) चुक गया ?' (ऐसा राम के) कहने पर, धमकी देते हुए, अतिशीघ्रता से आकर, वह राक्षस महारोष से, झट से एक वृक्ष को उखाड़कर, अधिक भुजशक्ति से, वेग से घुमाकर 'लो, मरो' कहते हुए, झट से डाल दिया । उस वृक्ष को काटकर राघव ने खर पर खरकर (सूर्य)-कर-सहस्र (हजारों किरणों की)-आभा से युक्त शरसहस्र चलाकर खूब सताया । पीड़ित होकर, शरीर से रक्तधाराओं के फूट निकलने पर भी वह दिखावे के गर्व की अधिकता से ।। ६६० ।।

—(राम के) समक्ष आया, (उसे) देख राम ने अदय (दयाविहीन) हो, समस्त भुवनों के व्याकुल होने पर, शीघ्रता से ऐन्द्रास्त्र का संधान करके, उसकी छाती पर चलाया । दैत्य समस्त अकड़ को खोकर, वज्रपात से (चूर-चूर होकर) पृथ्वी पर गिर पड़ने वाले पर्वत के समान वह खर गिर पड़ा । युद्ध में मुहूर्त (और) मुहूर्तार्द्ध में, अपना सामना करनेवाले चौदह हजार खर-दूषण आदि राक्षसों को इस प्रकार संहार करते देख

मुनुलु दीविंचिरि: मोगि वुष्पवृष्टि। यनिमिपुल्गुरिंयिचि रा रामुमीद;
घनशैलगुहनुंडि कडकतो नंत । जनकज गोनिवच्चि सौमित्रि म्रोक्कि
यभिनुतुलोनर्रिचि या राम भूमि। विभुनिचे शोभिल्लु विल्लंदुकोनियें;
सुनिशितास्त्र क्षतशोभितवक्षु । गनि सीत रामु वेड्कनु गौगिलिंचें;
नूनिन संतोपमुल्लंवुनिड । जानकीपति पर्णशाल केतेंचि ६७०
कलनि लो देंगिन राक्षसुल भूमिजकु। देलिय जेप्पुचु विनोदिंचुचुनुंडें ।

लंकलो अकंपन, रावण संभापणमु

नपुडकंपनुडु रयप्रकंपनुडु । विपुलार्ति लंककु वेगंवे पोयि
या रावणुनिगांचि 'यसुराधिनाथ !। वीरुलु पदुनाल्गुवेल राक्षसुलु
खरदूपणादुलु काकुत्स्थरामु । शरवह्नि नीरैरि: सत्यं' वटन्न
नक्कजंवुन वोंदि यय्यकंपनुनि । दिक्कुचिक्कनि रोपदृष्टि जूचुचुनु
'नेमेमि ? यिदिंवित ! येंट्टुरा योरि ! रामुडेव्वडु ? राजराजो ?
स्वराजो ?

देवताओं ने राम की प्रशंसा की, मुनियों ने आसीसा, अनिमिपों (देवताओं) ने उस राम पर, संरंभ के साथ पुष्पवृष्टि की। तव घन-शैल-गुफा से, साहस के साथ तव जनकजा को ले आकर सौमित्र ने प्रणामकर, अभिनुति (स्तुति) कर, उस रामविभु के हाथ में सुशोभित धनुप को ग्रहण किया। सुनिशित (तेज, पैने) अस्त्रों के क्षतों (घावों) से शोभित वक्ष वाले को देख सीता ने आनन्द से राम का आलिंगन किया। उत्कट आनन्द से हृदय के पूर्ण होने पर, जानकीपति पर्णशाला में आकर, ।। ६७० ।।
—युद्ध में मरे राक्षसों के बारे में जनकजा को समझाकर कहते हुए, विनोद करते रहे (आनन्द मग्न रहे)।

लंका में अकम्पन और रावण का संवाद

तव रयप्रकंपन (वेग के कारण कंपन उत्पन्न करने वाला) अकपन (नामक राक्षस) विपुल आर्ति से, वेग से लंका जाकर, उस रावण को देखकर (बोला):— 'हे असुराधिनाथ ! चौदह हजार वीर राक्षस, खर दूपण आदि काकुत्स्थ राम की शर-वह्नि से भस्म हो गये। (यह) सत्य है।' ऐसा कहने पर, चकित हो, उस अकम्पन की ओर प्रगाढ़ रोप (पूर्ण) दृप्टि से देखते हुए (रावण बोला):— 'क्या-क्या ? यह कैसा आश्चर्य है रे! रे! राम कौन है? (वह क्या) राजराज (कुवेर) है? स्वाराज (इन्द्र) है? यमधर्मराज है? ये (सव) ठीक तरह से

यमधर्मराजो ? वारैननु गूडि । यमर मा खरदूषणादुल गैल्व
जाल; रट्टि प्रतापशालुल नोक्क । डेलील गेल्चे ? मा केरिंगिपु तेलिय;
निर्दे यभयंबु नीकिच्चिति' ननिन । बदरक मरि यकंपनुडु राघवुनि
चरितंबु धैर्यंबु शौर्यंबु नतडु । खरदूषणादुल खंडिचुटयुनु ६८०
सौमित्रिचंदंबु जानकिचंद । मामूलमुग जेप्प नतडु रोषिंचि
युद्धंबु सेय नुद्योगिंचुटयुनु । बद्धमैत्रिनि नकंपनुडिट्टुलनिये;
'राक्षसेश्वर! विनु, रघुरामु गेलुव । बक्षिवाहन शूलपाणुल वशमे ?
माटमात्रंबुन महियु नाकसमु । मीटनु नाट नम्मेटिये नेर्चु;
गार्चिच्चुनैननु गरुवलिनैन । नार्चनु नूर्चनु नातडेनेर्चु;
भुवनंबुलन्नियु बूदि गाविंप । नवि प्रोदि गाविंप नातडे नेर्चु;
बालपडि ब्रह्मांडभांडबुनैन । निल्प बगुल्प नानिपुणुडे नेर्चु;
जलरासुलन्नियु जल्लि यिंकिंप । नलवड निंडिंप नातडे नेर्चु;
ग्रहतारकावळि गडुवडितोड । महिराल्प नवि निल्प महिपति नेर्चु;
कानुन्न कार्यंबु गाकुंड जेय । गानि कार्यंबैन घटियिंप जेय६९०

मिलकर भी, हमारे खर-दूषण आदि को जीत नहीं सकते । ऐसे प्रतापशाली (राक्षस वीरों) को एक (व्यक्ति) किस प्रकार जीता ? हमें समझाकर बताओ । यही तुम्हें अभय प्रदान किया है ।' (ऐसा) कहने पर, भीत न होकर, फिर अकम्पन ने राघव का चरित्र (समाचार), धैर्य (बहादुरी), शौर्य (और) उसका खर-दूषण आदियों का खण्डन (वध) करना ॥ ६८० ॥
—सौमित्र का विधान, जानकी का वृत्तान्त (आदि को) आमूल (आदि से अन्त तक) बताया । (तब) उसने (रावण ने) रुष्ट होकर, युद्ध करने का उद्योग किया । (तब) बद्धमैत्री से अकम्पन यों बोला:— 'हे राक्षसेश्वर! सुनो, रघुराम को जीतना पक्षिवाहन (ब्रह्मा) (और) शूलपाणि (शिव) के बस की (बात) है ? (नहीं है ।) मात्र बात से (बात की बात में) मही (पृथ्वी), आकाश को उछालने (अथवा) स्थिर बनाए रखने में वह निपुण (व्यक्ति) ही समर्थ है । दावानल को बुझाने (अथवा) पवन को निरुद्ध करने में वही समर्थ है । समस्त भुवनों को भस्म करने (अथवा) रक्षण करने में वही समर्थ है । चाहकर ब्रह्माण्ड-भाण्ड की रक्षा करने (अथवा) तोड़-फोड़ करने में वही समर्थ है । समस्त जलराशियों को विखेर-कर, सुखाने (अथवा) ढंग से भरने में वही समर्थ है । ग्रह (और) तारक समूहों को अति-शीघ्रता से धरती पर गिरा देने (अथवा) स्थिर बनाए रखने में राजा (राम) समर्थ हैं । होने वाले कार्य को (सम्पन्न) होने से रोक सकता है । न होने वाले कार्य को घटित करने में ॥ ६९० ॥

'नसुरेंद्र ! लोकंबुलन्निटियंदु । नसमानसत्त्वुंड ननुकोंदुवीवु;
कडिमिमै मूडुलोकंबुल रिपुल । गडगि चंपितिननि गर्वितुवीवु;
कडक ना राज्यमकंटकंबनुचु । नोंडिवि पेल्लुब्वि विनोदितुवीवु;
चारुलयंदुनु जनवरुलंदु । गोरि बोक्कसमंदु गोरिकलंदु
गूढचारुलयंदु गुप्तंबुलंदु । रूढिगा देलियुचु रूपिंचुवाडे
सकल लोकमुलकु स्वामि ना वडुनु; । विकटंबुलैन नीविद्यल कलिमि
नी विक्रमंबुनु नी भुजावलमु । नी विभवंबुलन्नियु मुन्नेकाक
यिक जेल्लुने ? यदि येट्लंटिवेनि ? गोंकक विनु; भानुकुलपावनुंडु
७२०

तनतंड्रि दशरथ धरणिवल्लभुडु । तनु वंप रामुडु दापसवृत्ति
दनकु गादिलि सहोदरुडु लक्ष्मणुडु । दनदेवि सीतयु दानुनेतेंचि
मुनु दंडकाटवि मुदमोप्प जोच्चि । यनुकंप मुनुलकु नभयंबुलिच्चि
वच्चि यिम्मुल बंचवटि नुन्नचोट । निच्चलो गार्मिचि येनु डग्गरिन
गरमलिग नन्निट्लु गासिसेयुटयु । खरुनितो जेप्पिन खरुडु विट्टलिगि

विषाद को प्रकट करते हुए (शूर्पणखा यों) बोली:— 'हे असुरेन्द्र ! तुम समझते हो कि समस्त लोकों में मैं असमान सत्त्ववाला हूँ। तुम गर्व करते हो कि मैंने साहस के साथ तीनों लोकों के शत्रुओं का सप्रयत्न-वध किया है। तुम फूलकर साहस से यह कहते प्रसन्न रहते हो कि मेरा राज्य अकंटक है। समस्त लोकों का स्वामी वही कहलाता है जो (अपने) गुप्तचरों के वारे में, अन्य राजाओं के वारे में, चाहकर (उनके) राजकोशों, इच्छाओं, गुप्तचरों, रहस्यों को स्पष्ट रूप से जानकर, (कार्य को) रूपायित करता है। तुम्हारी भयंकर विद्याओं की संपत्ति (आधिक्य), तुम्हारा विक्रम, तुम्हारा भुजवल, तुम्हारे समस्त वैभव, (इससे) पूर्व ही सफल होते थे । अव सफल होंगे ? (नहीं)। कहोगे कि वह कैसा ? विना संकोच के सुनो। भानुकुल के पावन (व्यक्ति) ॥ ७२० ॥

—राम ने अपने पिता राजा दशरथ के भेजने पर, तापस वृत्ति से, अपने लाड़ले भाई लक्ष्मण (तथा) अपनी देवी सीता के साथ स्वयं आकर, प्रथमतः मोदपूर्ण हो, दंडकवन में प्रवेश कर, मुनियों को अनुकंपा से अभय प्रदान किया। (तदनन्तर) आकर, सुन्दरता से पंचवटी में रहा। मन में आसक्त होकर मैं निकट गयी तो अधिक क्रुद्ध हो मुझे इस प्रकार सताया। (मैंने) खर से कहा तो खर अधिक क्रुद्ध हो, रुष्ट हो, लयकाल-रुद्र के समान, दूषण (और) त्रिशिर के साथ, नरभोजी चौदह हजार वरवीर

रोषिंचि लयकालरुद्रुंडु बोलें। दूषण त्रिशिरुलतो दंडुवेंडलि
नरभोजनुलु पदुनालुगुवेलु। वरवीरभट्टुलतो वडि नेगुदेंचि
बलुविडि रघुरामु बाणाग्निशिखल। बलमुलु दानुनु भस्मै माडिसें;
नट्टुगान ना भंगमंतयु नीग। निट नीवें काक दिक्केव्वरु गलरु?
इदेंनादु मुखभंगमीक्षिपु; नादु। कौंदव नीकौंदवगा गोंकि भाविंपु' ७३०

मनिन नच्चेंरुवंदि यात्म जिंतिंचि। दनुजाधिनाथुडा दानवि कनियें;
'ज्ञातिवधंबु नीचन्नविधंबु। ख्याति विंटिनि; गंटि; नदि यट्टुलुंडें;
नो राम! या रामु नुरुसत्त्वमेंन्त? ये रूप? मे प्राय? मेंन्तटिवाडु?
अतनि तम्मुनि रूपमदि यैट्टि? दतनि। सतियैन सीत के चंदंबु रूपु?
चेंप्पुमा चूचिवच्चिन तेरंगेंल्ल। दप्पिदीरुतु रक्तधारल नीकु' ७३५

शूर्पणख सीतारामुल रूपातिशयमु देंल्पुट

ना विनि या शूर्पणख यिच्च बोंगि। रवाणुतोड नेपंड जेंप्पदोडगें;
'नुन्नतोरस्थलुडुत्पलश्यामु। डिन्निलोकमुलकु नेंक्कुडुवाडु

भटों के साथ चढ़ आया। शीघ्रता से आकर बरजोरी से रघुराम की बाणाग्नि-शिखाओं में, सेनाओं के साथ स्वयं भस्म हो गया। ऐसा होने पर अब मेरे समस्त अपमान को दूर करने के लिए तुम्हारे सिवा मेरा कौन शरण्य है? यही मेरे मुख का अपमान (दुर्गति) देखो। मेरे अभाव (कमी) को चाहकर अपना अभाव समझो।' ॥ ७३० ॥

—(ऐसा) कहने पर चकित होकर, मन में विचारकर, दनुजाधिनाथ ने उस दानवी से कहा:— 'ज्ञाति-वध और तुम्हारे (वहाँ) जाने के विधान के बारे में अच्छी तरह सुना है, देखा है। अस्तु, हे रामा! उस राम का उरु (अधिक) सत्त्व कितना है? (उसका) कैसा रूप है? क्या अवस्था है? कितना (आकार का) है? उसके भाई का वह रूप कैसा है? उसकी पत्नी सीता का रूप विधान कैसा है? तुम जो कुछ देख आई हो, वह सब बताओ। रक्त की धाराओं से तुम्हारी प्यास बुझाऊँगा।' ॥ ७३५ ॥

शूर्पणखा का सीताराम का रूपातिशय बताना

ऐसा कहने पर सुनकर, वह शूर्पणखा मन में फूलकर (प्रसन्नता से) रावण से ढंग से कहने लगी:— 'रामचन्द्र उन्नत उर-स्थलवाला, उत्पल (के सम) श्याम (वर्णवाला), सभी लोकों में श्रेष्ठ, बहुत सुन्दर,

मिगुल जक्कनिवाडु मिहिरमंडलमु। दॆगडुतेजमुवाडु धीरवर्तनुडु
नाजानुबाहुडुदग्रविक्रमुडु । राजीवनेत्रुंडु रामचंद्रुंडु;
नतडे पो खरदूषणादि राक्षसुल। गृतमति नॊन्टिगा गॆलिचिन जोदु७४०
हेमवर्णुडु गाक यिन्निचंदमुल। सौमित्रि रघुरामुचंदंबु वाडु;
वाडॆपो नाकीयवस्थ गाविंचि। ना; डिक सीतसौंदर्यंबु विनुमु;
तॆऱगॊप्प जूचिति देवकामिनुल; । दऱिगॊनि चूचिति दनुजकामिनुल;
गॆलिमै जूचिति गिन्नरांगनल; । वॊलिचि चूचिति भोगिकामिनुल;
गलयंग जूचिति गंधर्वसतुल; । नलवड जूचिति यक्षकांतलनु;
जूचिति बार्वति; जूचिति शचिनि। जूचिति द्रिभुवनसुंदरीजनुल;
जूचिति रंभनु; जूचिति शचिनि । जूचिति द्रिभुवनसुंदरी;
मुनुकॊनि चूचिति मुनुल कामिनुल। बनिवडि चूचिति ब्राह्मणस्त्रील;
ना चन्नु लाकन्नु लामुद्दुवल्कु । ला चॆक्कुला मुक्कु ना सोयगंबु
ला तरु ला कुरु ला वालुजुपु । ला तॊड ला यॊडला यॊयारंबु ७५०
ला मंदहासंबु ला विलासंबु । ला मंदगमनंबु ला विवेकंबु

मिहिर (सूर्य) मंडल (के तेज) को परास्त करनेवाला, धीर-वर्तन (व्यवहार) वाला, आजानु बाहुवाला, उदग्र विक्रमवाला, राजीवनेत्र वाला है। वही तो खर-दूषण आदि राक्षसों को कृतमति हो, अकेले ही जीतने वाला योद्धा है ॥ ७४० ॥

हेमवर्ण वाला हो सौमित्र, इन सब विधियों से रघुराम जैसा है। उसी ने तो मेरी यह दुर्दशा की है। अब सीता के सौंदर्य (के बारे में) सुनो। मैंने अच्छी तरह देव-कामिनियों को देखा है; अवसर पाकर दनुज कामिनियों को देखा है; खेल ही खेल में किन्नर-अंगनाओं को देखा है; ढंग से भोग (नाग) कामिनियों को देखा है; सर्वत्र गन्धर्वसतियों को देखा है; बार-बार यक्ष-कान्ताओं को देखा है, पार्वती को देखा है, रति को देखा है, भारती को देखा है, लक्ष्मी को देखा है, रंभा को देखा है, शची को देखा है,त्रिभुवन की सुन्दरियों को देखा है। सप्रयत्न मुनियों की कामिनियों को देखा है, आवश्यकता से ब्राह्मण स्त्रियों को देखा है। (किन्तु) वे स्तन, वे आँखें, वे प्यारी बोलें, वे गाल, वह नासिका, वह सुघड़ाई, वे वली (त्रिवली), वे केश, वे तिरछी नजरें, वे जांघ, वह देह, वे अदाएँ ॥ ७५० ॥

—वह मन्दहास, वह विलास, वह मन्दगमन, वह विवेक, मैंने इतः पूर्व किसी भी स्त्री में नहीं देखा है। कहो, मैं भूमिजा का किस विधि वर्णन करूँ ? मैंने जिन कन्याओं के विलासों के बारे में कहा, सोचकर

ने मुंदु बोंडगान ने यितुलंदु । भूमिज नेमनि भूषितु जेंपुम !
ने बल्किनट्टि कन्नेल टेक्कुलेल्ल । रूपिंप गालि गोरुनु बोल वरय;
नेंम्मेन वेलुगोन्दु निद्दंपुमणुल । सोंम्मुलकुनु दाने सोंम्मयि तनरु;
नेंगड लोकमु लेलुनीयट्टि पतिकि । दगुगाक या यिंति तगुने यन्युलकु?
ना यिंदुबिंबास्य या चकोराक्षि । या येलजव्वनि या कुंदरदन
या मत्तगजयान या लतकून । या मानिनीमणि या पद्मगंधि
या यिंति नी यिंतियै युंडेनेनि ।नीयान दनुजेश! नी राज्यमोप्पु'७५८

रावणुडु मरल मारीचु कडकेगुट

ननिन रावणुडु कामातुरबुद्धि । मुनु नकंपनुमाट मुद्दियमाट
विन नोक्कतेऽगंचु विस्मयंबंदि । गोनकोंन्न प्रेममै गोलुवु सालिंचि७६०
तन पालि विधि तन्नु दगिलि प्रेरेप । जनि येकतंबुन सारथि बिलिचि
'यरदंबु दे' म्मन्न नतडट्लसेय । खरकरसदृशंबु गामचारंबु
ननुपमायुधपूर्णमगु रथंबेक्कि । दिनकरकोटि संदीप्तुडै मेऽसि

तुलना करने पर वे (सीता के) पदनख की बराबरी नहीं करते। सुन्दर शरीर पर प्रकाशमान स्निग्ध मणिमय आभूषणों के लिए स्वयं भूषण होकर (सीता) विराजमान है। शोभा से लोकों पर शासन करने वाले तुम जैसे पति (मालिक) के लिए वह योग्य है। अन्य के लिए वह कहाँ योग्य है ? (योग्य नहीं है) वह इन्दुबिंबास्या (चन्द्रमुखी), वह चकोराक्षी, वह नूतन यौवनवाली, वह कुन्द रदनवाली, वह मत्तगजयाना (गजगामिनी), वह नवल लतिका, वह मानिनीमणी, वह पद्मगंधी, वह नारी यदि तुम्हारी नारी होकर रहे तो हे दनुजेश ! मेरी कसम, तुम्हारा राज्य शोभायमान होगा' ॥ ७५८ ॥

रावण का फिर से मारीच के पास जाना

(ऐसा) कहने पर रावण कामातुर-बुद्धि से यह सोच कि पूर्व की अकम्पन की बात (एवं) नारी (शूर्पणखा) की बात सुनने के लिए एक समान हैं, चकित हो गया, सप्रयत्न उत्पन्न प्रेम के कारण सभा को समाप्त कर, ॥ ७६० ॥

—अपनी विधि (नियति) के अपने को लगकर प्रेरित करने पर, जाकर, एकान्त में सारथी को बुलाकर, कहा 'रथ लाओ'। उसके वैसा ही करने पर, खरकर (सूर्य) सदृश, कामचार (इच्छानुसार जानेवाला), अनुपम-आयुध-पूर्ण रथ पर आरूढ़ होकर, करोड़ दिनकरों की संदीप्ति से

गगनमार्गमुन सागरमध्यवीथि। दगिलि वस्तुविशेषततुलु सूचुचुनु दर्मकिंचि वडि समुद्रमु दाटिपोयि। क्रमुक मरीचिकागरु नारिकेळ साल तक्कोल रसाल विशाल। वेलावनंबुलु वेड्क गन्गोनुचु गरुडडु मुनु सुधाकलशंबु देर। गरमर्थि बोवुचो गजकच्छपमुल भक्षिचुकौरकुनै पदमूदिनट्टि। वृक्षंबु पक्षींद्रकृतलक्षणंबु शतयोजनायतशाखंबु मौनि। वृतमु सुभद्राख्य वेलयु वटंबु सुमुखुडै कनुगोन्चु सुरुचिरमहिम। नमरिन या सुचंद्राश्रमभूमि ७७०

ग्रममोप्प जडलु वल्कलमुलु दाल्चि। समचित्तुडै कडुसौम्य भावमुन भूरि तपोनिष्ठ बोलुपारुचुन्न। मारीचु जेरि सन्मानंबु वडसि यतिदीनवदनुडै या पंक्तिकंठु। डतनितो दनदु कार्यमु सेप्पदोडगे; 'मारीच ! नी वाप्तमंत्रिवि गान। वारक मरियुनु वच्चितिमिटकु; दरणिवंश्युडु रामधरणिवल्लभुडु। धरणि येलगनीक तंड्रि वोम्मनिन ननुजन्मुडुनु दानु नतिवयु गूडि। वनमुल दपसुलै वर्तिप वच्चि तन सत्त्वमुन पेमि दंडकारण्य। मुनुलकु नभयमिम्मुल निच्चि निल्चि

प्रकाशमान हो, गगनमार्ग से, सागर की मध्यवीथि (मार्ग) से होते हुए, विविध वस्तुओं के समूहों को देखते हुए, संभ्रम से, शीघ्रता से समुद्र पारकर गया। क्रमुक (सुपारी, पूग) मरीचिका, अगरु, नारिकेल, साल, तक्कोल, रसाल से युक्त विशाल वेला-वनों को प्रसन्नता से देखते हुए, पूर्व में गरुड़ ने सुधाकलश को लाने के लिए इच्छा से जाते समय, गज-कच्छपों को खाने के लिए, जिस वृक्ष पर पैर रखा था, पक्षीन्द्र द्वारा कृत लक्षण (चिह्न) वाले, शतयोजन-आयत-शाखाओं वाले, मुनियों से घिरे हुए, सुभद्र नाम से विलसित उस वट को सुमुख (प्रसन्न) हो देखते हुए, सुरुचिर-महिमा से शोभित उस सुचन्द्राश्रम भूमि में ॥ ७७० ॥

—यथाविधि जटाएँ (तथा) वल्कल धारणकर, समचित्त हो, अधिक सौम्यभाव से, भूरि तपोनिष्ठा से विराजित मारीच के पास जाकर, सम्मान (आदर-सत्कार) प्राप्त किया। अतिदीन वदन हो, वह पंक्तिकंठ (वाला) उससे अपने कार्य के बारे में कहने लगा:—'हे मारीच ! तुम आप्त मंत्री हो, इसलिए बिना रुके, दुबारा (हम) यहाँ आये हैं। तरणि (सूर्य) वंशज राजाराम, धरणी पर शासन न करने देकर, पिता के (जंगलों में) जाने को कहने पर, अनुजन्म (और) स्त्री के साथ, वनों में तपसी हो रहने के लिए आया है। अपने सत्त्व के कारण प्रेम से दंडकारण्य के मुनियों को शोभा से अभय प्रदानकर रहते हुए, अकंपित (निर्भीक) भाव

नडुकक मन शूर्पणख मुक्कु जेवुलु । गडुनलिग कोसे नक्कट! यकारणम;
खरदूषणादि राक्षसुल खंडिंचे । दरमिडि मरि चतुर्दश सहस्रमुल
तेंगिन बंधुलकु ब्रतीकारमेनु । नेगडि चेयकयुन्न नेन्जिलिवोदु; ७८०

नीवु मुन् गऱपिन नीतिनट्लुन्न । नावल नभिमानहानि गाकुन्ने ?
तग नट्टुगान नातनि देवि माय । बोंगडोन्द गोनितेर बोवुचुनुंडि
यलवड नोकयुपायमु गंटि; नीवु । दलकोन्न नदिनाकु दगिलि सिद्धिचु;
नडरेंडु कडक तो ना पर्णशाल । कडकेगि मायामृगंबवै नीवु
चेलगुचु वर्तिप सीत निन् जूचि । मेलुपोन्द रामसौमित्रुल बिलिचि
निनु बट्टि तेम्मन्न नीवुनु वारि । गोनिपोयि मृगवृत्ति गुशलत मेऱसि
पोयि दुर्गातरंबुल गाडु पऱचि । मायमै नी याश्रममु वच्चि चोरुमु;
एनुनु जानकि निट लंकलोनि । कूनिन वेड्कमै नोगि देच्चुकोन्दु;
ना रामुडुनु विरहाग्निचे गुंदु; । गोरि येनुनु गोर्कि कोनसागनुंदु;
निदि यिट्लु काविंपु; मेनु ना राज्य । पदमुन सगपालु पंचि नीकित्तु'
७९०

से हमारी शूर्पणखा की नाक और कान अतिक्रुद्ध हो, हाय ! अकारण ही काट डाला । खरदूषणादि राक्षसों का वध कर दिया । बरज़ोरी (युद्ध में) मरे चतुर्दशसहस्र-बन्धुओं का प्रतिशोध मैं शोभा से न लूँ तो व्यथित रह जाऊँगा । ।। ७८० ।।

—तुमने पहले जो नीति (उपदेश) कही थी, उसके अनुरूप रहूँ तो बाद में मान-भंग होकर नहीं रहेगा ? वैसा उचित नहीं है । अतः उसकी देवी को माया से, प्रशंसनीय ढंग से लाने जाते समय, एक उचित उपाय सूझा । तुम चाहोगे तो वह मेरे लिए सिद्धि प्रदान करेगा । अधिक साहस से, उस पर्णशाला के पास जाकर तुम्हारे मायामृग बनकर, विचरण करते रहने पर, सीता तुम्हें देखकर, आकृष्ट होगी । राम (और) सौमित्र को बुलाकर, तुम्हें पकड़ लाने के लिए कहेगी । तुम भी उन्हें ले जाकर मृग-वृत्ति से कौशल प्रदर्शितकर, दुर्ग (वन) के मध्यभाग में ले जाकर, सताकर, अन्तर्धान होकर अपने आश्रम में आ प्रवेश करो । मैं भी यहाँ जानकी को, लंका में अधिक प्रसन्नता से, सप्रयत्न ला लूँगा । वह राम भी विरहाग्नि से दुखी होगा । चाहकर मैं भी (अपनी) इच्छाओं के पूर्ण होते रहूँगा । इसे (कार्य को) ऐसा ही सम्पन्न करो । मैं अपने राज्य में आधा भाग बाँटकर तुम्हें दूँगा ।' ।। ७९० ।।

मारीचुडु रावणुनिकि श्रीरामुनि प्रभावमु देलुपुट

ननवुडु मारीचुडा नीचु जूचि। घनभीति नेचि शोकसमुद्र-वीचि
मुनिगि मूर्छिलि लेचि मोमट द्रोचि। 'दनुजेश! मरियु नीतलपेट्टु-वुट्टे?
गूडुने यिट्टवंटि कोरगानि त्रोव? योडक नी कॆव्वडुपदेश मिच्चॆ?
सुक सुकंबुननुंडि सुतसोदराप्त। सकलवांधवुलतो जाव गोरॆदवु?
कटकटा! यॆव्वनिगा जूचिनावो। कुटिल राक्षसकोटिकुलभीमु रामु!
नेनु बाल्यंबुन नॆरुगुदु गॊन्त;। या नित्यकल्याणु डसमसाहसुडु;
अडरि विश्वामित्रु यागंबु गाव। गडगि यातडु वच्चि कापुन्न चोट
बलिमिमै नेनु सुबाहुंडु बोर। नलुक सुबाहु नॊक्कम्मुन द्रुंचॆ;
नॊक कोल बुच्चि पयोधि मध्यमुन। ब्रकटितगति नन्नु वडवैचॆ नुरक;
यकृतास्त्रुडै बालुडै पिन्ननाडॆ। यकलंकुडिट्टि शौर्यमु जूपिनाडु; ८००
नेडस्त्रबलशौर्यनिधियैन यतनि। वाडिमि जॆनकि यॆव्वरु निल्चुवार?
लिप्पटि शौर्यंबु नॆरुगुदु गॊन्त;। दप्पक विनु मुग्रदानवाग्रणुल

मारीच का रावण को श्रीराम का प्रभाव बताना

ऐसा कहने पर, मारीच ने उस नीच को देखकर, अधिक भीति से शोक समुद्र की वीचियों में डूबकर, मूर्च्छित होकर, (फिर) जागकर (होश में आकर), संकोच को दूरकर (कहा):—'हे दनुजेश! फिर से यह विचार कैसे पैदा हुआ? ऐसा अनुचित मार्ग क्या समुचित है? निस्संकोच भाव से किसने तुम्हें यह उपदेश दिया है? सुख-चैन से रहते हुए (अब) सुत-सहोदर-आप्त-कुल-बान्धवों के साथ क्यों मरना चाहते हो? हाय, हाय! कुटिल-राक्षस-कोटि-कुल के लिए भीम (भयंकर) राम को (तुमने) क्या समझ रखा है? मैं बाल्य में (उनके बारे में) थोड़ा जानता हूँ। वह नित्य-कल्याण (गुण-सम्पन्न) असमसाहस वाला है। शोभा के साथ विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा करने लगकर जहाँ वह रक्षार्थ खड़ा था (वहाँ) मैं और सुबाहु बल बटोरकर लड़ने गये। क्रोध से (उसने) एक बाण से सुबाहु का वध किया। एक बाण से प्रकटित गति से मुझे समुद्र के मध्य में फेंक दिया। अकृतास्त्र होते हुए, बालक होते हुए, बचपन में ही उस अकलंक (चरित्रवाले) ने ऐसा शौर्य दिखाया है। ॥ ८०० ॥

—आज अस्त्र-बल (से युक्त)-शौर्यनिधि हो उसके साहस को छेड़कर कौन टिक सकता है? अबके शौर्य को (मैं) थोड़ा जानता हूँ। अवश्य सुनो, दो उग्र-दानव-अग्रणियों को साथ लेकर, मैं पूर्वरोष से भरित होकर,

निरुवुर दोकोनि ये बूर्वरोष । भरमुन व्याघ्ररूपमु दाल्चि यतनि
दपमुन गृशुगाग दलचुचु बोव । नपुडेमि चेप्प मूडंबकंबुलनु
मुग्गुरि नेसिन म्रोग्गि यिद्दरुनु । म्रग्गि: रायुश्शेषमहिम येट्टिदियो ?
ये नोक्क विधमुन निक्कड गूलि । प्राणंबुलुंडुट बट्टि चूचुकोनि
यंतनुंडियु रामुनतुलविक्रममु । जिंतिंचि नालोनि चेव वोविडिचि
रवमन्न रथमन्न रमणीयमन्न । रवियन्न रतियन्न रत्नंबुलन्न
मरियु रेफादिनाममु लेव्वि विन्न । दरुचैन भीति नातनिग नेन्नुचुनु
ई विधि दपसिनै यिदुन्नवाड; । रावण! येरुगवु रामु पौरुषमु; ८१०
दलपदु तन रोत; तनु जूड दित; । नलिरेगि मन शूर्पणख तानु बोयि
यनुपमगुणधामु नभिरामु रामु । गनुगोनि यी रीति गामिप दगुने ?
तनकु नावेषंबु ताने काविंचु । कोनियें; निंदुकु मदि ग्रोधिंचि पोयि
परुषत रघुरामु बाणाग्निशिखल । खरदूषणादि राक्षसुलु नीरैरि;
व्रीरिकै नीवेल विपरीतबुद्धि । श्रीरामु बगगोनि चेडदलंचेदवु ?
इदि विचारंबु गादिदि बुद्धिगादु । इदि नीतिगा; दिक नी तलंपुडुगु;
नीवु लंककु बोयि नेम्मदि नुंडु; । मेविधंबुनैन निदि यकार्यंबु;

व्याघ्र (बाघ)-रूप धारणकर, उसे (राम को) तप के कारण कृश (दुर्बल) मानकर, गया। तब की क्या कहूँ ? तीन अंबक (बाण) तीनों पर डाले। वे दोनों मर गये। शेष-आयु की महिमा (पता नहीं) कैसी है ? मैं किसी प्रकार से यहाँ गिरकर, अपने को प्राणयुक्त समझकर, तब से लेकर राम के अतुलविक्रम की चिन्ता (विचार) कर, अपने पौरुष को छोड़कर, रव, रथ, रमणीय, रवि, रति, रत्न आदि रेफ (रकार) आदि में होनेवाले शब्दों को सुनकर, उसका स्मरण होनेपर भीत होते हुए, इस प्रकार तपस्वी हो, यहाँ पड़ा हुआ हूँ। हे रावण ! (तुम) राम के पौरुष को नहीं जानते। ॥ ८१० ॥

—(शूर्पणखा) अपने भद्देपन के बारे में सोचती नहीं, अपने बारे में सोचती नहीं, स्वयं प्रेरित हमारी शूर्पणखा का, स्वयं जाकर—अनुपमगुणधाम, अभिराम, राम को देखकर, इस प्रकार आसक्त होना क्या उचित था ? उसने अपनी दुर्दशा स्वयं कर ली है। उसके लिए मन में क्रुद्ध हो, जाकर, परुषता से, खरदूषणादि राक्षस रघुराम की बाणाग्निशिखाओं में भस्म हो गये। इन (सब) के लिए तुम क्यों विपरीत बुद्धि से श्रीराम से वैर मोलकर, नष्ट होना चाहते हो ? यह (सु) विचार नहीं है, यह बुद्धि (संगत) नहीं है, यह नीति (संगत) नहीं है। इस विचार को छोड़ दो। तुम लंका में जाकर सुख से रहो। किसी भी प्रकार से (विचार

कावुन निपुडेनु गडगिपोदु ननु। पोव रामुनिचेत बोवुब्राणम्मु;
लेनु नीकपकारमॆन्नडु सय; । नेनु नीकॊककीडु निच्च जिंतिप;
बूनि नीविपुडु ना बुद्धि बाटिंपु; । मेनेमि चॆप्पिन हितवुगा गॊनुमु;
८२०

'ऒच्चॆमॆंचक कार्यमॊनर्रिचितेनि । निच्चॆद सगराज्यमे' नंटि विपुडु
चॆच्चॆर रघुरामु जॆनकि येब्रतिकि। वच्चुट किदु नॆव्वडु पूट चॆपुम ?'
यनि यिट्लु मारीचुडाडु वाक्यमुलु।विनिरावणुडु क्रोधविवशुडै पलिकॆ;
लोकैकभर्त; द्रिलोकभीकरुड; ।ना कॆक्कुडनि यॊक्क नरुनि जॆप्पॆदवु;
कडुब्राणभयमुन गारुलाडॆदवु; । विडुवक नाकॊक्क वॆरपु सॆप्पॆदवु;
नन्नु राजनुचु मनंबुन गॊनवु; चिन्नपुच्चॆदवेनु जॆप्पिन पनुलु;
नीवेमिटिकि नाकु? निनु दोडुवेड। नीविधि वच्चॆने यिप्पुडु नाकु'
ननि चंपगडगिन नतनि रोषंबु । गनुगॊनि मदिलोन गडु विचारिंचि
मारीचु 'डी नीचमरणंबुकंटॆ । ना रामुनिचे जच्चुटदि यॊप्पु' ननुचु
दनुजाधिपति जूचि 'तगुनीति नीकु। गॊनकॊनि चॆप्पिन गोपमेमिटिकि ?
८३०

कर देखने पर) यह अकार्य है। अतः यह कहकर कि अब मैं प्रयत्नकर जाऊँगा, तो राम के हाथ (मेरे) प्राण जाएँगे। मैं कभी तुम्हारा अपकार नहीं कर सकता। मैं मन से कभी तुम्हारा अनभला नहीं चाहता। चाहकर तुम अब मेरे विचार को मान लो। मैं जो भी कहूँ उसे अपना हित मान लो।॥ ८२० ॥

—आगे-पीछे न सोचकर, कार्य करोगे तो आधा राज्य दूँगा, ऐसा अब कहा था। (किन्तु) झट से रघुराम को छेड़कर, मेरे जीवित लौट आने के लिए यहाँ कौन (मेरा) रक्षक है?' ऐसा कहे मारीच के वचनों को सुनकर रावण क्रोध-विवश हो बोलाः—'मैं लोकैकभर्ता, त्रिलोक भीकर हूँ। मुझसे एक नर को श्रेष्ठ बतलाते हो? अधिक प्राणभय से बकवास करते हो? न छोड़कर मुझे भी भय बताते हो? मुझे मन से (अपना) राजा नहीं मानते हो। मेरे कहे कार्य को न कर मुझे अपमानित करते हो। मुझे तुम्हारी आवश्यकता ही क्या है? मेरी ऐसी क्या दुर्दशा आ पड़ी है (जो मुझे तुम्हारी सहायता माँगनी पड़े)?' ऐसा कहकर (मारीच को) मारने गया, उसके रोष को देखकर, मन में अधिक चिन्तित हो, मारीच यह सोचकर कि इस नीचमरण की अपेक्षा राम के हाथ मरना संगत है, दनुजाधिपति को देखकर बोलाः—'उचित नीति (की बात) कहने पर इतना क्रोध क्यों? ॥ ८३० ॥

मरि बुद्धि सेप्पिन मंत्रुल बट्टि । नरकदलंचु भूनायकुल् गलरे ?
नीवेमि चेप्पिन नी चेप्पिनट्ल । काविप गलवाड गडमुट्ट' ननग
ननुरागमुन बोन्दि यतनि मन्निंचि । तन रथमेक्किंचि तद्यु ब्रीति
नसमानवेगुडै यतडुनु दानु । नसुराधिपति वच्चेनट बंचवटिकि;
नट्टिदकादे कामातुर बुद्धि । येट्टुनु जेडुत्रोव नेटिकि रोयु; ८३५

मारीच मायामृगमु

नायेड मारीचुडरदंबु डिग्गि । या यसुराधिपुडपुडु प्रार्थिप
मायावि गान नमानुषमहिम । मायामृगाकृति मदि विचारिंचि
मेलैन कनकंबु मेनुनु निंद्र । नील नीलायतनेत्रयुग्मंबु
पवडंपु बोमलुनु भासिल्लु वज्र। निवहकर्णंबुलु नीलवालंबु
बोलुचु पच्चल श्रृंगमुलु मुत्तियमुल। तोलकुलु रत्नबिंदुवुलैन पोडलु
८४०
राजिल्लु नवपद्मरागोदरंबु । राजित खुरमुलु रम्यमै मेरय
जगतिपै रोहणाचल मोप्पु मिगुल । मृगरूपमै वच्चि मेलगुचुन्नदियो ?

—अच्छा उपदेश देनेवाले मंत्रियों को पकड़कर, मार डालने की (बात) सोचने वाले भूनायक (राजा) भी कहीं होते हैं ? तुम जो भी कहो, तुम्हारे कहे जैसा, (कार्य के) अन्त तक करनेवाला हूँ।' (ऐसा) कहने पर अनुराग को प्राप्तकर, उसे क्षमाकर (अथवा सम्मानकर), अपने रथ पर आरूढ़ करवाकर, फिर प्रीति से असमान वेगवाला होता हुआ, उसके साथ स्वयं असुराधिपति उधर पंचवटी में आया। ऐसी ही है न कामातुर-बुद्धि ! वह किसी प्रकार के कुमार्ग (को अपनाने) से घृणा नहीं करती। ॥ ८३५ ॥

मारीचरूपी-मायामृग

उस समय मारीच रथ से उतरकर, उस असुराधिप के तब प्रार्थना करने पर, मायावी होने के कारण अमानुष महिमा से मायामृग की आकृति का मन में विचारकर, (मायामृग का रूप धारण किया)। स्वच्छ कनक जैसी देह, इन्द्रनील-से नीलायत (नील और विशाल) नेत्रयुग्म, प्रवाल-सी भौंहें, भासमान वज्र-निवह-से कर्ण, नील वाल (पूँछ), सुन्दर मरकत के-से सींग, मोती-से (और) रत्न बिन्दुओं के-से धब्बे, ॥ ८४० ॥
—विराजित नवपद्मराग-सा उदर, रजत-से खुर, (आदि से) रम्य बन, प्रकाशमान होते हुए (वह मृग ऐसा लग रहा था) मानों रोहणाचल

औन्डेनि राहुवु कुलिकि राकेंदु । मंगलमृगमुर्वि मलयुचुन्नदियों ?
कादेनि राक्षसक्षयमु गाविंप । नादट जिंतिंचि यब्जसंभवुडु
मेलुगु लेल्लनु गूर्चि मृगमुगाविंचि । कपटियै पुत्तेरगा वच्चिनदियों ?
जानकि नेरिवेणि शक्रनीलमुल । ना नातिदंतंबु लाणिमुत्तेमुल
भामिनि कॅम्मोवि पवडंपुलतल । गामिनि चेंक्कुलु कळुकु वज्रमुल
वैदेहि तनुकांति वैडूर्यमणुल । ना देवि नूगारु हरित रत्नमुल
भामपाणि द्युतुल् पद्मरागमुल । गोमलि नखकांति गोमेधिकमुल
बटुतेजमुन जाल बरिहसिंचुटयु । नदुल गीड्पडि वच्चि यखिलरत्नमुलु
८५०

रत्नगर्भातमजारत्नंबु नलप । यत्नंबुतो मृगंबै वच्चिनवियों ?
'सीतकै तनविल्लु सेकोंनि विरिचें; । नी तरि रघुरामु नेलयिंतु' ननुचु
हरुडु पुत्तेरगा नातनिचेति । हरिणमिच्चोटिकि नरुदेंन्चिनदियों?
सीतमोमुनकोडि सीत भ्रमिप । शीतांशुडनुप वच्चिन मायलेडों ?

बड़ी सुन्दरता से मृग-रूप धारणकर, जगती पर विचरण कर रहा हो। अथवा राहु से भीत होकर राकेन्दुमंडल (चंद्रबिंब) का मृग उर्वी (पृथ्वी) पर विचरण कर रहा हो। नहीं तो राक्षस-क्षय करने के लिए प्रेम से विचार कर, अब्जसंभव के सभी कान्तियों को एकत्रकर, कपट-मृग बनाकर भेजने पर आया हो। जानकी की कुटिल वेणी के, इन्द्र नीलमणियों का, उस नाति (स्त्री) के दाँतों का, निखरे मोतियों का, भामिनी के अरुण ओष्ठों का, प्रवाललताओं का, कामिनी के कपोलों का, श्रेष्ठ वज्रों का, वैदेही के शरीर की कान्ति का, वैढूर्य मणियों का, उस देवी की रोमराजि का, हरित रत्नों का, भामा की पाणि-द्युतियों का पद्मरागों का, कोमली की नख-कान्तियों का, गोमेधिकों का, पटुतेज से अधिक परिहास करने पर (अर्थात् जानकी के शरीर का प्रत्येक अंग किसी न किसी तुलनीय रत्न से अधिक सुन्दर था) अखिल रत्न मानों इस प्रकार (मायामृग के शरीर के अंग बनकर) ॥ ८५० ॥

—रत्न गर्भातमरत्न (सीता) को सताने के प्रयत्न से मृग बनकर आये हों। 'सीता के लिए चाहकर मेरे धनुष को तोड़ा है। इस समय मैं रघुराम को सताऊँगा' यों कह (सोच) कर, हर (शिव) के (वहाँ) आनेपर, उनके हाथ का हरिण शायद यहाँ आया हो। (या यह) सीता के मुख (सौंदर्य) से हारकर, सीता को भ्रम में डालने के लिए शीतांशु (चन्द्र) के भेजने पर आया हिरन हो। इस प्रकार चित्र वर्णों की दीधितियों (कान्तियों) से समन्वित होकर, एक (वर्ण) का दूसरे के साथ शोभित

यन जिलवर्णबुलैन दीधितुलु । बैनगोनि यॊन्डॊन्ड पेंचि शोभिल्ल
गपटसारंगमै कदिय नेतेंन्चि । युपमिंप नरुदैन यॊप्पुल नॊप्पि
नेंमकुचु बुलुमेयु; निजवालरुचुल । रमणमै वनमयूरमुल नाडिंचु;
दऱमिडि यॊकमारु तन मेनि रुचुल। बऱपैन वनमेल्ल बसिडि गाविंचु;
नॊकमारु चेंगुन नुप्परंबेगसि । प्रकटिंप नतुल शंपालतारुचुल; ८६०
दऱिगॊनि यॊकमारु तन पार्श्वरुचुल। नेंऱि जंद्रकांतमुल् नीरु गाविंचु;
मृगयूथमुल गूडि मेलगि पुल् मेयु । मृगमुल बेदरिंचु; मेल्लन डागु;
नंतंत बॊडसूपु; नट जेरवच्चु; । नंतलो बेदरि बिट्टडरि कुप्पिंचु;
दरुल नीडल केगु; दग बर्णशाल । जॊरबारु, नंतने स्रुक्कि क्रॆळ्ळुरुकु;
वसुध मूकॊनि चूचु; वालमल्लार्चु; ।देसलकु जेवि सेंर्चि तेलिय नालिंचु;
गंचु मिंचै पारु; ग्रम्मऱ जेरु; । गुंचिताकृति जेविकॊन गदलिंचु;
बच्चिक पट्लपै बवळिंचु; लेंचु; । मच्चिक नच्चोटि मौनुल जेरु;
खुरमुल जेवि गोकु; गॊम्मुलतुदल ।विरुलतीग गदलिंच्चि विरुलेल्लराल्चु;
नंदंद यंदमै या पर्णशाल । मुंदऱ मृगमिट्लु मोदिंचुचुंडे ।

होनेपर, कपट सारंग बनकर निकट आकर, उपमित करने के लिए अपूर्व सुन्दरताओं से शोभित हो, वह मृग (कभी) खोजता हुआ, घास चरता हुआ, निज वाल (पूँछ) रुचियों (कान्तियों) से रमणीय बन, वनमयूरों को नचाता हुआ, शीघ्रता से एक बार अपने शरीर की कान्तियों से विस्तृत समस्त वन को सुनहरा बनाता, कभी सिकुड़कर एक बार चौकड़ी भरकर, त्रिदशेन्द्रचाप (इन्द्र धनुष) के समान लगता, एकबार झट से आकाश की ओर उछलकर, अतुल शंपालताओं की रुचियों को प्रकट करता, ।। ८६० ।। —एकबार अपनी पार्श्वरुचियों से सुन्दर चन्द्रकान्त (मणियों) को लज्जितकर देता, मृगसमूहों से मिलकर विचरणकर घास चरता, मृगों को डराता, धीरे से छिप जाता, जहाँ-तहाँ प्रकट हो जाता, कभी नियराता, इतने में डरकर अतिभीत होकर, छलांग मारता, तरुओं की छाया में जाता, ढंग से पर्णशाला में प्रवेश करता, इतने में सिकुड़कर छलांगें भरता, वसुधा को सूंघकर देखता, पूँछ को हिलाता, दिशाओं में कान खड़े कर (मानों किसी विषय को) जानते हुए सुनता, अदृश्य हो दौड़ता, फिर से नियराता, कुंचित आकृति से कान के छोर को हिलाता, घास के मैदान पर लेट जाता, उठता, प्रेम से वहाँ के मुनियों के पास पहुँचता, खुरों से कान को खुजलाता, सींगों के आखिरी भागों से (नोक से) पुष्पलताओं को हिलाकर, सभी फूलों को गिरा देता । इस प्रकार वह हिरन, जहाँ-तहाँ सुन्दर बन, उस पर्णशाला के आगे बड़ा मुदित होता रहा । उस समय

ना वेळ सीतयु नलरुलु सिद्रुम । लावण्यसीम यल्लन वर्णशाल८७०
मंजुलशिंजानमंजीर रवमु । रंजिल्ल वेंडलि सौरभमुल वोंदलु
पोंदलु डायुचु विरुल् पोंसग गोयुचुनु । मदिकि विस्मयमैन मायंपुलेडि
गनुगोनि वैदेहि कडुजोद्यमंदि । यिनकुलाधिपु जूचि यिट्लनि पलिकें
'नी पोन्त वितयै यिदि योक्क मृगमु। भूपाल ! चूचिते पोंदलुचुन्नदियु;
जूपुल किपार सोम्पु गलिपप । नेपारियुन्नदि येमि चोद्यंबु !
एन्नडु बोडगान मिन्निचंदमुल। वन्नेलमृगमुल वनभूमुलंदु;
जगतीश ! यीमृगचर्मवुनंदु । दगिलि सुखिप नेन्तयु वेड्क वुट्टें;
दिननाथकुलनाथ! दीनि वेन्‌दगिलि। चनि येसि वेस जंपि चर्मंबु देम्मु;
अदियेल ? ये युपायंबुन दीनि । जेंदरक पट्टि तेच्चेंदवेनि मिगुल
मंचिदि; प्राणेश ! मन वनवास । मेन्चग नीडेरें; नी पैडिमृगमु ८८०
बुरिकि वेडुक गोनिपोयि यत्तलकु। भरतादुलकु वेड्क परुपंग वच्चु'
ननि सीत प्रीतिमै नाडु वाक्यमुलु । विनि लक्ष्मणुडु रामविभु जूचि
पलिकें;

लावण्यसीमा सीता भी फूल चुनने के लिए धीरे से पर्णशाला से ॥ ८७० ॥
—मंजुल-शिंजान (नूपुर)-मंजीर-रव के रंजित होनेपर, निकलकर, सौरभों से महकनेवाली झाड़ियों को नियराते हुए, ढंग से फूल चुनने लगी। मन को आश्चर्यचकित कर देनेवाले माया-मृग को देखकर वैदेही अतिचकित होकर, इनकुलाधिप (सूर्यवंशी राजा = राम) को देखकर इस प्रकार बोली:—'हे भूपाल ! देखा, इस ओर अद्भुत यह एक मृग विचरणकर रहा है। क्या आश्चर्य है, यह चितवनों को सुन्दर लगते हुए, मनोहरता से शोभित है। वनभूमियों में कभी इतने प्रकार से सुन्दर मृग को देखा नहीं है। हे जगदीश ! इस मृग के चर्म पर सुखी होने के लिए अत्यधिक कुतूहल उत्पन्न हुआ है। हे दिनकुलाधिनाथ ! इसके पीछे लग जाकर, (बाण) डालकर, झट से मारकर चर्म लाओ। वह क्यों ? किसी भी उपाय से इसे परेशान किये बिना पकड़ लाओगे तो बहुत अच्छा होगा। हे प्राणेश ! सोचकर देखनेपर हमारा वनवास सार्थक हुआ है। इस स्वर्णमृग को ॥ ८८० ॥

—नगर में प्रसन्नता से ले जाकर, सासों, भरतादियों को प्रसन्न किया जा सकता है।' इस प्रकार सीता के प्रीति से युक्त वाक्यों को सुनकर लक्ष्मण राम-विभु को देख बोला:—'पृथ्वी पर मृगराज के भी ऐसा शरीर नहीं है। तब साधारण मृग का ऐसा शरीर कहाँ हो सकता है ? यह मायामृग है।

'मृगराजुनकु निट्टि मेनुलेदुर्वि; । मृगमात्रमुनकिट्टि मेनेन्दु गलदु ?
मायामृगमु; दीनि मदि नम्मदगदु; । मायावुलसुरुल माय गानोपु !
नदियुगाकिचटि संयमुलु 'मारीचु । डदयुडै मायावियै यिंदु मेलगु'
ननि पल्क विनमे? या यसुरगाबोलु! मनल भ्रमिप नी माड्कि नेतेन्चें !'
जित्तंबु दीनिपै जेरिचि मीर । लुत्तलपडि पट्ट नूहिंपवलव
दारय वैदेहि यतिमुग्धयैन । मीरुनु मुग्धुले मेदिनीनाथ !
यनिन रामुडु सीत याननांबुजमु ।गनुगोनि नव्वि लक्ष्मणु जूचि पलिकें;
'जलियिंप नेटिकि सौमित्रि! यित ? । यिल राक्षसुल मायलेंदुरुने नन्नु ?
८९०

मृगमेनि गोनिवत्तु; मेटिरक्कसुल । देगनेसि पोलिवुत्तु; देलियुमु नीवु;
मगुड नेक्कड बोवु मायामृगंबु; । देगुवमै लक्ष्मण! दीनि वेन् दगिलि
यिपार लक्ष्मण ! यिप्पुडे दीनि । जंपि चर्ममु देच्चि जानकि कित्तु;
निन्नि नाळ्ळकु सेलवी कोर्कि वेड । जिन्नवुत्तुने सीत चेप्पिन चेत ?
हितमतिवै पूनि यी पर्णशाल । नतिव नेमरकुंडु' मनि यप्पगिंचि ८९५

मन से इसपर विश्वास नहीं करना चाहिए। यह शायद मायावी असुरों की माया हो सकती है। यही नहीं, यहाँ के संयमियों का यह कहना नहीं सुना कि यहाँ मारीच अदय (निर्दय) हो घूमता रहता है। (शायद यह) वही राक्षस होगा जो हमें भ्रम में डालने के लिए इस विध आया है। इस पर मन लगाकर आप जलदबाजी न कर, (इसे) पकड़ने का विचार मत कीजिए। सोचने पर वैदेही अतिमुग्ध है तो हे मेदिनीनाथ ! आप भी मुग्ध (भोलेभाले) हैं ?' (ऐसा) कहने पर राम सीता के आननांबुज को देख, हँसकर लक्ष्मण को देख (संबोधनकर) बोले:—'हे सौमित्र ! इतने से विचलित क्यों हो ? पृथ्वी पर राक्षसों की मायाएँ मेरा सामना कर सकती हैं ? ॥ ८९० ॥

—तुम यह जान लो कि मृग ही लाऊँगा या श्रेष्ठ राक्षसों को काट मार डालूँगा। (यह) मायामृग फिर और कहाँ जा सकता है ? हे लक्ष्मण ! इसका पीछाकर, सुन्दरता से, अभी इसे मारकर, चर्म लाकर, जानकी को दूँगा। इतनी अवधि के बाद (जानकी ने) यह इच्छा प्रकट की, उसे (पूरा) न कर सीता को उदास बनाऊँगा ? (नहीं) हितमति (वाले) होकर, सयत्न इस पर्णशाला तथा नारी के प्रति असावधान मत रहो।' (ऐसा) कहकर, सौंपकर, ॥ ८९५ ॥

रामुडु: मायामृगमुनु वॆन्टाडुट

यल्लन रघुरामुडनुजु चे नुन्न । विल्लंदि मोपॆट्टि वॆऱवोप्प गदलि
यागमृगंबु मुन्नर्थि वॆन्कोनिन । यागजासुर-वैरि यन जॆन्नुमीऱि
कॊन्कुचु बॊदमरुंगुन वॊन्चि पॊन्चि । क्रुंकुचु नंतंत गूडदाटुचुनु
मगिडि चूचुटयुनु मरुगुन निलिचि । तगुलुचु वट्टंग दमकमंदुचुनु
विल्लुनम्मुलु वॆन्क व्रेलिचि पट्टि । यल्लन जरणंबुलवनिपै निडुचु१००
जप्पुडु गाकुंड जनुचु बट्टुटकु । जॊप्पुनु नॊप्पुनु जूचि डायुचुनु
'नदॆ चेरॆ वट्टॆद; नदॆ चेरॆ' ननुचु । 'नदियॆ लोवडियॆ ना' कनि चॆलंगुचुनु
निव्विधंबुन बोव नेचि या मृगमु । दव्वुल बॊडसूपु; दनु जेरवच्चु;
वट्टबोयिन मिट्टिपडि पाऱिपोवु;। गट्टल्क रामुनि गनि यट्टॆ निलुचु;
ललि देसलकु वारु; लालतो गूड । सॆलवुल्ल वुलुराल्चु; जेष्टलु मानु;
नॆसगि क्रेवलवच्चु; नॆगसि क्रॆळ्ळुरुकु; । बसमिंचि मिन्नुलयै वारुचुंडु;
गुप्पिचि दाटु जॆन्गुन; दीगमॆरुगु । द्रिप्पिनगति जिह्व द्रिप्पुनंदंद;
कॊऱवि द्रिप्पिन रीति गुम्मरि सारॆ। तॆऱगुन भ्रमरिगा दिरिदिर दिरुगु;

राम का मायामृग का पीछा करना

धीरे से रघुराम अनुज के हाथ का धनुप लेकर, (डोरी) चढ़ाकर, ढंग से (ऐसे) निकल पड़े मानों पूर्व में इच्छा से मायामृग का पीछा करने वाले गजासुर-वैरी हों। अधिक सुन्दरता से, झिझकते झाड़ी की आड़ में छिपते-छिपते हुए, झुकते हुए, यहाँ-वहाँ छलांग भर पार करते हुए, पीछे मुड़ देखते हुए, आड़ में खड़े होकर, पकड़ने के लिए उतावले होते हुए, धनुष-वाण पीछे की तरफ लटकाकर रख, धीरे से चरणों को अवनि पर रखते (दवे-पाँव चलते) हुए, ॥ १०० ॥

—(उस हिरन को) पकड़ने के लिए खामोशी से जाते हुए, अवसर को देख नियराते हुए, 'यह पहुँचा, पकड़ा, यह मिला', 'वस, मेरे हाथ में आ गया' कहते हुए विचरण करते गये। इस प्रकार (राम के) जानेपर, (उन्हें) सताते हुए वह मृग (कभी) दूर पर दिखाई पड़ता, (कभी) निकट पहुँचता, पकड़ने जाने पर, उछलकर भाग जाता, अधिक क्रोध से राम को देख, वैसे ही खड़ा रहता, चंचलता से दिशाओं में (इधर-उधर) भागता, लार के साथ घास (के तिनकों) को होंठों से टपकाता, गति को छोड़ देता (निश्चल खड़ा रहता), उकसाने के लिए पार्श्व में आता, उछलकर छलाँगें भरता, अधिक सामर्थ्य से आकाश (मार्ग) पर दौड़ता रहता, झट से उछलकर छलांग भरता, कभी-कभी बिजली की चमक के

बडलिन गति ग्रोग्गु; बज्ज केतेर। वडि साळुवंबु कैवडि मिंटि केगयु;
नलसि रामुडु वेरगंदि निल्चुटयु। गेलकुल बोडसूपु; गिकुरिंचि तोलगु;
देंगि येय दलप नदृश्यमै पोवु; । मगिडि रादलचिन मरिम्रोल निलुचु;
गलगोन निब्भंगि गाकुत्स्थरामु। नलयिंचि यलयिंचि यवलकु गदल
गोनिपोयि कोनिपोयि घोरदुर्गमुल। गनुब्रामि यटबोव गडगिन जूचि
मायामृगंबनि मदि रामु डेरिगि । 'दाय ! नीवेक्कड दप्पिपोयेदवु ?
११४

मायामृगमु रामुनिचे गूलुट

अगपडि' तंचु ब्रह्मास्त्रंबु दोडगि । नगमुलु वडक, नर्णवमुलु गलग
जगमुलु बेदर, दिक्चक्रंबुलदर । देगगोनि दृष्टि संधिंचि येयुटयु
नालोन नोडलुचु ना रूपमुडिगि । 'हा लक्ष्मण !' यनु नार्तरावमुन
देसलद्रुवग महादीर्घदेहमुन । नसुवुलु वेडवासि यसुरयै पुडमि
गूले, राक्षसलक्ष्मि गूले, रावणुडु । गूले, लंकापुरि गूले नन्नट्टु ।

समान जीभ को घुमाता, लुकाठी के समान, कुम्हार के चाक के समान, भ्रमर के समान चक्कर काटता रहता, थके हुए के समान झुक जाता (झुककर बैठ जाता), (राम के) निकट आनेपर बाज़ के समान आकाश की ओर उड़ता, थककर राम के चकित होकर खड़े रह जाने पर, पार्श्वों में दिखाई पड़ता, धोखा देकर निकल जाता, (बाण) चलाने की सोचने पर अदृश्य हो जाता, फिर आने की सोचने पर सामने खड़ा रहता, इस प्रकार काकुत्स्थ राम को विकल बनाते, सता-सताकर उस पार चलकर घोर वनों में ले जाकर, वहाँ राम की आँखों से ओझल हो जाना चाहा । उसे देख राम ने मन में यह जानकर कि यह मायामृग है, (यह कह कि) 'हे शत्रु ! तुम कहाँ निकल जाओगे ।। ११४ ।।

मायामृग का राम के हाथ मरना

(एक बार) दिखाई देकर ?' ब्रह्मास्त्र का संधानकर, पर्वतों के काँपनेपर, समुद्रों के आन्दोलित होनेपर, जगत् के भीत होनेपर, दिक्-चक्रों के थर्रानेपर, मार डालने के लिए दृष्टि एकाग्रकर, (अस्त्र) डाल दिया । इतने में बिलखते हुए उस रूप को छोड़, 'हा लक्ष्मण !' के आर्त्तरव से दिशाओं के फट जानेपर, महादीर्घदेह से, प्राणों के निकल जाने पर, राक्षस हो (रूप से) पृथ्वी पर गिर पड़ा । (उसके गिरने पर) राक्षस-लक्ष्मी नष्ट हो गयी, रावण नष्ट हो गया, मानो लंकापुरी ही नष्ट

लंत मायामृगमवनि द्रेळटयु । संतोषमुन बॊन्दि जानकीविभुडु९२०
गनुगॊनि मारीचुगा निश्चयिंचि। तनतम्मु माटलु दलचि मॆच्चुचुनु
'सौमित्रि! यदि येमि चंदमो? नेडु। रामुडु निन्नार्तरवमुन जीरॆ;
ननघ! नी वापलुकालिंचि विनवॊ?। विननॊल्लवॊ ? काक विनरादो नीकु ?
नुलुकवु; भीतिल्ल; वॊकयित गलग;। वलयवु; शोकिंप; वदियेमि नीवु ?
नानाविधंबुल ना यंतरंग। मूनिन वगल बॆल्लुडुकुचुन्नदियु;
नडवुल कॊन्टिमै नट्टु पोयिनाडु;। तडवाये, राडु; युद्धंबुन नेडु
कडिदि रक्कसुल कॆक्कड जिक्किनाडॊ ? । तडयक पोवय्य ! धरणीशु वॆदुक' ९३०
ननि यश्रुपूरंबुलंदंद दॊरुगु। जनकनंदनकु लक्ष्मणुडिट्टुलनियॆ;
'दल्लि! नीवेटिकि दलकॆदु? राम। वल्लभुनकु गीडु वच्चुने यॆन्दु ?

हो गयी। तब मायामृग के अवनि पर गिरनेपर, सन्तुष्ट होकर, जानकी विभु ने ॥ ९२० ॥

—(उसे) देख, यह निश्चयकर कि मारीच है, अपने अनुज की बातों का स्मरणकर, (उसकी) प्रशंसा करते, यह सोच डरते रहे कि 'इस चपल-राक्षस के इस महारव को सुन, सौमित्र और सीता कितना भयभीत हो गये होंगे ?' उस आर्त्तनाद को सुन सीता डरकर झट से पृथ्वीपर (मूर्च्छित हो) गिर पड़ी। (फिर) होश में आकर, दिशाओं को देख, धैर्य को खोकर, लालित्य को खोकर, लक्ष्मण को देख उच्चस्वर से बोली:— 'हे सौमित्र ! यह कैसा विधान है ? आज राम ने तुम्हें आर्त्तस्वर से पुकारा। हे अनघ ! तुम उन वचनों को ध्यान से क्यों नहीं सुनते हो ? सुनना नहीं चाहते हो ? अथवा तुम्हें सुनाई नहीं पड़ता ? यह क्या तुम विचलित नहीं होते, भीत नहीं होते, तनिक भी व्याकुल नहीं होते, थकित नहीं होते, शोक नहीं करते। अनेक व्यथाओं से मेरा अन्तरंग अनेक प्रकार से अधिक व्याकुल हो रहा है। (राम) जंगलों में अकेला ही गया है। देर हो गयी है, नहीं आया है। आज कहीं युद्ध में दुष्ट राक्षसों के हाथ नहीं फँसा है ? धरणीश को खोजने अविलंब जाओ न।' ॥ ९३० ॥
—(ऐसा) कह अविरत अश्रुधाराओं को ढारने वाली जनक-नन्दना से लक्ष्मण ने यों कहा:—'हे माता ! तुम क्यों भीत होती हो ? कहीं राम-वल्लभ का अहित हो सकता है ? तुम अपने प्रिय हृदयेश की महिमा नहीं जानती हो ? जानकर भी इस प्रकार की बेतुकी बातें करना क्या उचित

नेरुगवे नीकूर्मि हृदयेशु महिम ? । लेरिगियु वेंडमाटलिट्लांड दगुने ?
निव्वटिल्लेंडि वग निन्निंत गलप? : नेव्वडो राक्षसुंडिट्टु चीरे गाक !
चलियिंचुने रामजगतीशु? डित । तलकि पल्केद; वित दैन्यमेमिटिकि?
निनकुलाधिपुडेड? नीदैन्यमेड ? । जनकज ! नीवेल चंचलिंचेंदवु ?
दलमीरि रघुराम धरणीशु दोंडरि। पोलियक निलुतुरे पोरि राक्षसुलु ?
मिडुतल कार्चिच्चु मीद गर्विंचि । पडि निल्व नेर्चुने भस्मंबु गाक ?
कावुन रामाज्ञ गडचि निन् डिंचि । पोवजूचुट नाकु बुद्धि गादिक;
नी कानलोन निन्निट्टु डिंचि पोव । ने कीडु वच्चुनो ? ये बोव वेरतु;
९४०

नलयक नामाट लात्मलो नम्मु;। तलककु' मनवुडु धरणीतनूज
योलसिन रोषाग्नुलोगि बर्वुचुंड । नलयुचु सौमित्रि नट्टु चूचि पलिके;
'नीवु रामुनि देस नेरय भक्तुडवु । नीवेल नेडित नीचुंडवैति ?
श्रीरामुडट निन्नु जीरुट विनियु । दारुणमति बगदायचंदमुन
नेम्मदि नुन्नावु; नीकिदि दगुने? । 'तम्मुडु प्राज्ञुडुत्तमुडीत' डनुचु
भूपति निनु नम्मि पोयिनचोट । नी पापवर्तनमेल कैकोंन्टि ?

है ? अत्यधिक व्यथा से तुम्हें व्याकुल बनाने के लिए किसी राक्षस ने ऐसा पुकारा होगा । क्या राजाराम विचलित होंगे ? (नहीं) । इतना डरकर बोलती हो ? इतना दैन्य क्यों ? कहाँ इनकुलाधिप ? कहाँ यह दैन्य ? हे जनकजा ! तुम क्यों विचलित हो रही हो ? अपनी सामर्थ्य का अतिक्रमणकर, रघुराम-धरणीश का सामनाकर, लड़कर, क्या राक्षस मरे बिना रह सकते हैं ? गर्व के मारे यदि शलभ दावानल पर गिरें तो भस्म हुए बिना रह सकते है ? अत: राम की आज्ञा का उल्लंघनकर, तुम्हें (अकेली) छोड़ जाने का, अब मेरा मन नहीं मान रहा है। तुमको इस कानन में इस प्रकार छोड़ जाऊँ, तो पता नहीं कौन-सी विपत्ति आ पड़ेगी ? जाने से मैं डरता हूँ । ॥ ९४० ॥

—मेरी बातों पर आत्मा में विश्वास करो । डरो मत ।' ऐसा कहने पर धरणीतनूजा फैलती रोषाग्नियों के प्रकट होने पर, श्रान्त होते हुए, सौमित्र की ओर देख बोली:—'तुम राम के प्रति पूर्ण भक्त हो । आज तुम इतने नीच क्यों बन गये हो ? वहाँ (से) श्रीराम का तुम्हें पुकारना सुनकर भी, दारुण मति से शत्रु-ज्ञाति के समान प्रशान्त (मन से) हो । यह क्या तुम्हें उचित है ? भूपति (राम) यह सोच कि (मेरा) यह अनुज प्राज्ञ (और) उत्तम है, तुम पर विश्वास रख गये । ऐसी जगह तुमने यह पाप-आचरण क्यों अपनाया ? हाँ, जानती हूँ । राम असुरों

वगु; नेरुंगुदु; रामडसुरुलचेत। देंगुट निक्कमुगाग देंलिसि नीवर्थि
ननुचितमति बूनि यनुमानमुडिगि। ननु बोन्द दलचेदो नान वोविडिचि?
कादेनि 'गोनिपोयि कैकेयिसुतुनि। कादट नोप्पितु' ननि तलंचेद्रवो ?
येनु नादगु जीवमी शरीरमुन। बून दलंचुट बुद्धि गादिक; ९५०

दडयक पोयि गोदावरिलोन। बडि प्राणमुलु वातु; वलुकुलिकेल ?'
यनि वेंट्टिदपुमाट लवनिज वलुक। विनि लक्ष्मणुडु साल वेदन बोन्दि,
रामु बेकोनि कर्णरंध्रमुल् मूसि। दीमसंबुन नालुगुदिक्कुलु सूचि
'पलु पापमुलु सीत पलुकुचुन्नदियु। देलिय विंटिरे वनदेवतलार !
मीरंदरुनु साक्षि; मेदिनीतनय। घोरभापल नन्नु ग्रूरत बलिके'
ननि बाष्पचोचनुंडै लक्ष्मणुंडु। दनमदि 'निक निलव दगवुगा'दनुचु
'दल्लि! ये निदे पोयि तडयक नीदु। वल्लभु गोनिवत्तु; वगवकु' मनुचु,
'निनु दल्लिमारुगा नेनु भावितु;। ननु जित्तमेरियमिन्नक याडितिट्टु;
लेनु बोयेदनम्म! यिदि नीकु गीडु। गानोपु' ननुचु निक्कमुगाग वलिकि
पर्णशालकु जुट्टु बरुलेडु ब्रासि। वर्णिचि 'यी बरुल् वडि दाटकम्म!
९६०

के हाथ अवश्य मरेगा, यह जानकर, तुम स्व-इच्छा से अनुचित मति से, संकोच छोड़, प्रतिज्ञा (अग्रज के दिए वचन) को छोड़, संभवतः मुझे प्राप्त करना चाहते हो। अथवा यह सोच रहे हो कि (सीता को) ले जाकर कैकेयी-सुत को स्नेह से मना लूँगा'। (अब) मुझे अपने जीव (प्राण) को अपने इस शरीर में धारण किये रहने की सोचना उचित नहीं है।॥ ९५० ॥

—विलम्ब न करके जाकर गोदावरी में डूब प्राण छोड़ दूँगी। अब अधिक बातें क्यों ?' इस प्रकार सीता के कठोर वचन कहने पर, सुनकर लक्ष्मण अत्यधिक व्यथित हुआ। राम का नाम लेकर (राम-राम कह-कर), कर्णरन्ध्र बन्दकर, चारों दिशाओं (ओर) में देखकर बोला:—'हे वनदेवताओ ! खूब सुन रहे हो न। सीता अनेक पाप (-युक्त वचन) बोल रही है। आप सभी साक्षी हैं। मेदिनीतनया ने क्रूरता से घोर भाषाएं (कठोर वाणी) मेरे प्रति कही हैं।' (ऐसा) कह सजललोचन हो लक्ष्मण ने मन में सोचा कि अब रुकना उचित नहीं है। (फिर) कहा:—'हे माता ! यह मैं अभी विलम्ब न कर तुम्हारे वल्लभ को ले आऊँगा। दुःख मत करो। मैं तुम्हें माता-सम मानता हूँ। मेरा चित्त व्याकुल हो जाए, इस प्रकार कटु वचन कहे हैं। अब मैं जाऊँगा। सम्भवतः यह तुम्हारे अहित के लिए होगा।' ऐसा सत्यता से कह पर्ण-

एव्वडे नी बरुल् वॅस दाटि वच्चु । नव्वीरवरु तललवियु नाक्षणमॅ'
यनि पलिक यनलुऩि नपुड्डु प्रार्थिंचि । 'वनित नेमरकु नी' वनि
यॊप्पगिंचि
जगती तनूजकु सद्भक्ति म्रॊक्कि । पॊंगुलुचु रामु चॊप्पुन बोयॅ; नंत
९६३

सीतापहरणमु

नत्तरि रावणुंडरुदार वेचि । युत्तलंबुन जित्तमुलुकुचुनुंड
गरमुन दंडंबु घनकमंडलुवु । नुरुललाटंबुन नूर्ध्वपुंड्रंबु
गॊलदुलॅ व्रेळ्ळनु गुशपवित्रमुलु । बॊलुपॊन्दु पेरुरंबुन जन्निदमुलु
नरुदार वलकेल नक्षमालिकयु । सरि बूनियुन्न काषायवस्त्रमुलु
दुलसिपूसलपेर्लतोड मुंदरिकि । वलनॊप्प नॊक कॊन्त व्रालिन मॅडयु
बड्डुगुदेहंबुनु बावलु जिपि । गॊड्डुगुनु वॅड मुडिगॊन्नट्टि शिखयु
नलवड गपट सन्यासिवेषंबु । विलसिल्ल वॅडवॅड व्रेळ्ळॅन्निकॊनुचु
९७०

शाला के चौतरफ़ सात रेखाएँ खींच, वर्णनकर कहा:—'हे माता! झट से इन रेखाओं को पार मत करो। ॥ ९६० ॥

—जो कोई झट से इन रेखाओं को पारकर आएगा, उस वीरवर के सिर उसी क्षण नष्ट हो जाएँगे।' ऐसा कहकर अनल से तब प्रार्थनाकर, यह कह कि 'वनिता (सीता) के प्रति तुम असावधान मत बनो' (उसे) सौंपकर, जगतीतनूजा को सद्भक्ति से प्रणामकर, क्षुब्ध होते हुए राम के यहाँ गये। तब, ॥ ९६३ ॥

सीतापहरण

उस अवसर के लिए रावण अपूर्व रूप से प्रतीक्षाकर, उतावलेपन से चित्त के उद्विग्न होते रहनेपर, कर में दंड (और) घन (बड़ा) कमंडल, उरु (-बड़े) ललाट पर ऊर्ध्वपुंड्र (तिलक), बड़ी-बड़ी उंगलियों में कुश (की बनी) पवित्री, शोभित विशाल उर पर जनेऊ, अपूर्व रूप से दाएँ हाथ में रुद्राक्ष की माला, अच्छे ढंग से धारण किये हुए काषायवस्त्र, तुलसी के मनकों की लड़ियों (मालाओं) के कारण सुन्दरता से आगे की ओर थोड़ी-सी झुकी गरदन, कृशगात्र, फटा-पुराना छत्र, सुन्दरता से बँधी हुई शिखा (आदि से) कपट संन्यासी के वेष को अच्छी तरह धारणकर, शोभायमान रूप से झट-झट उँगलियाँ गिनते हुए, ॥ ९७० ॥

गॊण्णिमंत्रंबुलु गॊणुगुचु मुनुलु। दन्नॆरुंगुदुरनि तत्तरिंचुचुनु
दलकॊन्न मुदिमिचे दल वडकंग। नलयुचु सॊलयुचु नसुरुसुरनुचु
नंतंत निलुचुचु 'हरि हरी!' यनुचु। श्रांति बॊन्दुचु बर्णशाल कॆतॆन्चि
तनु जूचि वनदेवतलु 'जगद्द्रोहि। च्चनुदॆन्चॆ वी' डनि सभयुलै यॊदुग
निक्कंपु मुनिवोलॆ निलिच्चिन जूचि। ग्रक्कुन वैदेहि गडुभक्ति मॆरसि
यक्कपटात्मु संयमि गाग दलच्चि। म्रॊक्कि हस्तांबुजंबुलु मुकुळिंचि
सौमित्रि व्रासिन चक्कनि वरुलु। नमरंग गडच्चियु नतिभक्तितोड
बॊलति यभ्यागतपूज गाविप। गलगुचु गैकॊनि कल्याणि जूचि
'यो भाम! नीविट्टि युग्रदुर्गमुल। ने भंगि जरियिंचॆदिट्लॊन्टि निलिचि!
रतिवॊ? श्रीसतिवॊ? भारतिवॊ? काकुन्न। क्षिति मर्त्यसतुल की चॆलुवंबु
गलदॆ? १८०

नीमोमु पंडुवॆन्नॆलपिंडु दॆगडु;। नी मोवि कॆम्पुरानिग्गुल दॆगडु;
नी मेनु सौदामिनीलत गेरु;। नी माट सुध तेट नीटुल मीरु;
नी वेणि जलधरनिकरंबु दरुमु;। नी विलासंबु वर्णिप ना तरमॆ ?

—कुछ मंत्र गुनगुनाते हुए, कहीं मुनि (जन) पहचान न लें, (इस भय से) घबराते हुए, सिर पर बैठी जरा (बुढ़ापे) के कारण सिर के काँपते रहने पर, थके हुए (के समान) (सन्तापसूचक) लंबी आहें छोड़ते हुए, जहाँ-तहाँ ठहरकर 'हरि-हरि' कहते हुए मानों शान्ति प्राप्त करते हुए, पर्णशाला पहुँचा। उसे (रावण को) देख वनदेवताएँ 'यह जगद्द्रोही आया है' कहकर सभय होकर (एक तरफ़) सटकर रह गयीं। ऐसा वह रावण सच्चा-मुनि-सा खड़ा रहा। उसे देख झट से वैदेही अति भक्ति से प्रकाशित हो, उस कपटात्म को संयमी समझकर, प्रणामकर, हस्तांबुज जोड़कर, सौमित्र की लिखी सुन्दर रेखाओं को ढंग से पारकर, अतिभक्ति से नारी (सीता) ने अभ्यागत की पूजा की। (उस पूजा को) घबराते हुए स्वीकारकर, कल्याणी (सीता) को देख बोला:—'हे भामा! ऐसे अकेली रहकर, किस प्रकार तुम ऐसे उग्र (भयंकर) दुर्गों (वनों) में विचरण कर रही हो? (तुम क्या) रति हो? श्रीसती (लक्ष्मी) हो? भारती हो? नहीं तो पृथ्वीपर की मर्त्यसतियों (मानव-नारियों) के ऐसा सौंदर्य है क्या? ॥१८०॥

—तुम्हारा मुख पूर्ण ज्योत्स्ना के समूह का उपहास करता है, तुम्हारा अधर पद्मराग मणि के सौंदर्य का निरास करता है, तुम्हारा शरीर सौदामिनी-लता का तिरस्कार करता है, तुम्हारी वाणी स्वच्छ सुधा की विलासिता से बढ़कर है, तुम्हारी वेणी जलधर-निकर (समूह) को भगाती (परास्त करती) है, तुम्हारे सौंदर्य का वर्णन करना मेरे बस की बात

तरुणि! नी कौगिट दविलि सुखिंचु। पुरुषुडे तलपोय बुरुषोत्तमुंडु;
कामिनि! नी पोन्दु गलवाडे पूर्ण। कामु; डातडे नित्यकल्याणुडरय;
निच्चट नी युन्कि कन्तयु वगपु; । नच्चेरुवय्येडि नब्जाक्षि! माकु;
नेलत! नीवेव्वरु ? नीवेल यित।नलगोद विक्काननमुलोन निलिचि?
यंतयु नेरिंगिंपु' मनिन ना सीत । येन्तयु भक्तितो निट्लनि पलिके;
'ननघात्म! रघुरामु नतिव; मा तंड्रि।जनकुंडु; दशरथेश्वरुडु मा माम;
ना पेरु सीत; युन्नतकीर्ति राम। भूपति, तम तंड्रि पोम्मन्न वेडलि ९९०
काननंबुल नुंड गडगि वच्चुटयु। नेनुनु लक्ष्मणुंडेगुदेन्चितिमि;
ई याश्रमंबुन नेमु मुव्वुरमु। बायनि नियति दापसुलमै युंड
नोलसि मा मुंदर नोक पैडिमृगमु। पोलयुटयुनु नेनु भूनाथु जूचि
दानि नेगतिनैन दगिलि तेम्मनिन। बूनि रामुडु वोये; बोयिन वेनुक
'हा लक्ष्मणा !' यनु नार्तरावंबु। शूलमै ना चेवि सोकि काडुटयु
बोगिलि लक्ष्मणु नेनु बोम्मन्न बोये;। मगुडि राडिदियेमि माययो ?
येरुग'
ननि पलिक मुनि जूचि 'यनघ! नीपेरु।विनुपिंपुमिटकेल विच्चेसि' तनिन

है ? (नहीं)। हे तरुणी ! तुम्हारे आलिंगन में बद्ध हो, सुख भोगनेवाला पुरुष ही, सोच-विचार करने पर, पुरुषोत्तम है। हे कामिनी ! जिसे तुम्हारा साहचर्य प्राप्त है, वही पूर्णकाम है, विचार करने पर वही नित्य कल्याण (सम्पन्न) है। हे अब्जाक्षी ! यहाँ अब तुम्हारे निवास से हमें अत्यधिक व्यथा और आश्चर्य हो रहा है। हे नारी ! तुम कौन हो ? इस कानन में ठहरकर तुम इतना अधिक दुःख क्यों भोग रही हो ? सब कुछ बताओ।' (ऐसा) कहने पर, सीता ने अधिक भक्ति से यों कहा:—'हे अनघात्म ! (मैं) रघुराम की स्त्री हूँ। हमारे पिता जनक हैं। दशरथेश्वर हमारे ससुर हैं। मेरा नाम सीता है। उन्नत कीर्ति वाले राम-भूपति के अपने पिता के 'जाओ' कहने पर, ॥ ९९० ॥

—निकलकर, सप्रयत्न काननों में रहने के लिए आनेपर, मैं और लक्ष्मण आये है। इस आश्रम में हम तीनों अविरत नियम से तपस्वी बन रहते हैं। हमारे आगे एक स्वर्णमृग के उपस्थित होनेपर मैंने भूनाथ को देख कहा, उसका पीछाकर, उसे किसी भी तरह लाओ। (ऐसा कहने पर) राम सप्रयत्न गये। जाने के बाद 'हा लक्ष्मण' का आर्त्तरव शूल बन मेरे कानों में लग चुभ गया। (मैं) संतप्त हो, लक्ष्मण से 'जाओ' कहने पर, वह गया। लौटकर नहीं आया। नहीं जानती कि यह कैसी माया है।' ऐसा कहकर, मुनि को देख कहा:—'हे अनघ ! तुम (अपना) नाम

गौन्कक तनदैन कुहकत्वमुडिगि । लंकाधिनाथुडाललनकिट्लनियॆ;
'वनजाक्षि! विनु मेनु वनधिमध्यमुन । नेनय लंकापुरमेलेंडिवाड;
राक्षसाधिपुड, विश्रवसु नंदनुड । यक्षेशु ननुजुंड; नखिल दिग्जयुड;
१०००

रावणुंडनुवाड; रणमुन नेंदिरि । देवासुरुलनैन देंगटार्चुवाड;
वनित! नी रूपलावण्य संपदलु । विनि, चूड वच्चिचति वेड्कलुप्पोंग;
नवयुचु बेद मानवुनितो गूडि। युविद! नी कडवुल नुंड नेमिटिकि?
ना राज्यमंतयु नलिनायताक्षि! । कोरि येलुचु नीवु गौमरु दीपिंप
बौगडोन्दु पॆम्पुन बुष्पकंबादि । यगु विमानमुलंदु हर्म्यंबुलंदु
सुरगरुडोरगासुरसिद्ध साध्य । वरकन्यकलु गौल्व वर्तितुगाक !
नी यंघ्रिरुचुलु ना निलयभूमुलकु । मायनि मणिकुट्टिममुलगुगाक !
चॆलुव ! नी चूपुल सिरुलु नामेड । कलुवतोरणमुतो गलहिंचुगाक !
नी मंदहासंबु नित्यंबु नादु । प्रेमांबुनिधिकि जद्रिक यगुगाक !
रम्मु ना लंकापुरम्मुन' कनुडु । नम्माट विनि सीत यतिभीत
यगुचु १०१०

बताओ। यहाँ क्यों पधारे हो ?' (ऐसा) कहने पर, संकोच न कर अपना कपट (रूप) तजकर, लंकाधिनाथ ने उस ललना (नारी) से यों कहा:—'हे वनजाक्षी ! सुनो, मैं वनधि (समुद्र)-मध्य में स्थित लंकापुर पर शासन करनेवाला हूँ। राक्षसाधिप हूँ। विश्रवसु का पुत्र हूँ। यक्षेश का अनुज हूँ। अखिल दिशाओं का विजेता हूँ। ।। १००० ।।

—रावण कहलानेवाला हूँ। रण में, सामना करनेपर, देवासुरों को भी मार डालनेवाला हूँ। हे वनिते ! तुम्हारी रूप लावण्य-संपदा (के बारे में) सुनकर, अत्यधिक कौतूहल से फूलकर, देखने आया हूँ। कृशीभूत होते हुए, गरीब (अकिंचन) मानव के साथ हे नारी ! तुम्हें इन जंगलों में रहना क्यों ? हे नलिनायताक्षी ! मेरे समस्त राज्यपर चाहकर, मनोज्ञता के दीप्त होने पर शासन कर लो। अधिक सराहनीय विधान से पुष्पक आदि विमानों (तथा) सौधों में सुर-गरुड़-उरग-असुर-सिद्ध-साध्य (आदियों) की श्रेष्ठ कन्यकाओं की सेवाएँ लेते हुए रहो। तुम्हारी अंघ्रियों (चरणों) की कान्तियाँ, मेरी निवास-भूमियों के लिए सदा स्वच्छ रहनेवाले मणिमय कुट्टिम (फर्श) बन जाएँ। हे सुन्दरी ! तुम्हारी चितवनों की श्रियाँ मेरे सौध के लिए कुमुदिनियों के बन्दनवारों से झगड़ती रहें (समान बनने का प्रयत्न करती रहें), तुम्हारा मन्दहास नित्य ही

धीर गावुन वानि दृणमुगा जूचु । तीरुन दनचेति तृणमु जूचुचुनु
'सार प्रतिव्रताचारगा यनक । योरि! नन्निट्टुलाड नुचितमे नीकु ?
ननिमिषयोग्यपूर्णाहुति शुनक । मुनकु दुर्लभमैन पोल्कि भाविंप
श्रीरामचंद्रुनि जेन्दिन नन्नु । गोरि कामिंप नीकुनु नेन्नि तललु ?
पोम्मु गुट्टुन नीदु पुरवरंबुनकु;। नेम्मदि बोक दुर्नीति येमेनि
दलचितिवेनि ना धवुडु राघवुडु । विलसित शस्त्रास्त्रविदितलाघवुडु
हरचंडकोदंडहरण विनोदि । खरदूषणादि राक्षस शिरच्छेदि
निन्नु नीवंशंबु नीरु गाविंचु । नेन्नंग नीकु नायिनकुलाग्रणिकि
नक्ककु सिंहंबुनकु, दोमकुनु । दिक्करिकिनि, बयोधिकिनि गाल्वकुनु
वायसंबुनकुनु वैनतेयुनकु । नेयंतरुवु बेद्दलेपंङ्पुदुरु; १०२०
आ यंतरुवु गल; दट्टुगान नीवु । धीयुक्ति लंककु दिरिगि पोम्मिक'!
नन विनि रावणुंडाग्रहोदग्र । जनितोग्रदृष्टिमै जानकि जूचि
यनुपमाटोपुडै यारूपमुडिगि । तन मनोवीथि गंदर्पाग्नि मंड

मेरी प्रेमांबुनिधि के लिए चन्द्रिका बने। आओ मेरे लंकापुर में।' (ऐसा) कहने पर, वह बात सुन सीता अति भीत होती हुई ॥ १०१० ॥

—धीरा होने के कारण, उसे तृण सम मानकर, अपने हाथ के तृण को देखते हुए बोली:—'रे! सार-पतिव्रताचार वाली न समझ, मेरे साथ ऐसा कहना तुम्हें क्या उचित है? अनिमिषयोग्य पूर्णाहुति जैसे शुनक के लिए दुर्लभ है, उसी प्रकार श्रीरामचन्द्र की बनी, मुझे चाहकर काम-भाव प्रकट करने को तुम्हारे कितने सिर हैं? चुपचाप अपने पुरवर को जाओ। चुपचाप (लौट) न जाकर कुछ दुर्नीति सोचोगे तो राघव, विलसित शस्त्र-अस्त्र विदित लाघव (नैपुण्य) वाला, हर के चंडकोदंड के भंजन में विनोदी, खरदूषणादि राक्षस शिरच्छेद करनेवाला मेरा पति तुम्हें और तुम्हारे वंश को नष्ट कर देगा। गणना करने पर तुममें और इनकुलाग्रणी में सियार और सिंह, मच्छड़ और दिग्गज, नाला और पयोधि, कौए और वैनतेय (गरुड़) में जिस अन्तर को बड़े लोगों ने बताया है, ॥ १०२० ॥

—वह अन्तर है। यह ऐसा है। (अत:) तुम धीयुक्ति से लंका को लौटकर जाओ।' (ऐसा) कहने पर, सुनकर रावण आग्रह (क्रोध) की उदग्रता (भयंकरता) से उत्पन्न उग्रदृष्टि से जानकी को देखकर, अनुपम आटोप से उस रूप (कपट यति के रूप) को छोड़कर अपनी मनो-वीथि में कंदर्पाग्नि के बलकर दस अवस्थाओं के दिखाई पड़ने के समान,

बदियवस्थलु दोचि भासिल्लु पगिदि । वदितलल् मणिजूटपंक्तुलनोंप्प नायवस्थल गोर्कुलवि यिन्मडिप । बायनिगति नोंप्प वाहुलिर्वदियु गोंनलिन्मडिप गोर्कुलु पल्लविंचे । नन रक्तरुचुलैन हस्तंवुलोंप्प ललि दोचु कोर्कि पल्लवमुल बुष्प । मुलु वोलें नायुधंवुलु पोंल्पुमिगुल बरग दिव्यांवराभरणौघकांतु । लरुदार मदनाग्नुलै मंडुचुंड नतिभीकराकारुडै निल्चुटयुनु । धृति दूलि सीत भीतिल्लि मूर्च्छिल्लें; वडि गालि बडियुन्नवनलत वोलें । वडियुन्न गनुगोंनि पंक्तिकंधरुडु १०३०

ग्रम्मि यश्रुवुलोंल्क गौदीग युल्क । ग्रोंम्मुडि विगियूड गुचमुलल्लाड नंदंद तेंगि राल हाररत्नमुलु । पोंन्दिन भयशोकमुल मेनु वडक नच्चारुलोचन नदयुडै येति । तेंच्चि रथंवुपै देंर्रगोंप्प वेंट्टि दैवंबु प्रेरेप दन पालि मृत्यु । देवत गोंनिपोवु तेंर्रगु दीपिंप नमरारि गोंनिपोव नाकाशवीथि । गमललोचन देर्रि कनुविच्चि चूचि पेंदवुलु दडपुचु बिगिचन्नुदोयि । व्रिदिलिन पय्येंद बिगिय जेर्चुचुनु

मणि-जूट-पंक्तियों के साथ दस सिरों के साथ दिखाई पड़ा। उन दस (मन्मथ) अवस्थाओं की इच्छाओं को द्विगुणीकृत कर रहे थे, इस प्रकार निरन्तर वीसै वाहु शोभा दे रहे थे। (प्रेम के) अंकुर द्विगुणित होकर, इच्छाएँ पल्लवित हो रही हों, इस प्रकार रक्त की कान्तिवाले हाथ शोभा दे रहे थे। सुन्दरता से दिखाई पड़नेवाले इच्छारूपी पल्लवों के पुष्प हों, इस प्रकार आयुध अधिक शोभित हो रहे थे। शोभित दिव्य-अंवर (के) अरुण-औघ कान्तियाँ अपूर्व रूप से मदनाग्नियों के समान प्रज्वलित हो रही थीं। (इस प्रकार रावण के) अति भीकर आकार से खड़े होनेपर, धैर्य के छूटने पर सीता भीत होकर मूर्च्छित हो गयी। आँधी के मारे (नीचे) पड़ी हुई वनलता के समान, (पृथ्वी पर) पड़ी हुई सीता पंक्तिकंधर ने देखा ॥ १०३० ॥

—(आँखों में) घिरकर, आँसुओं के उमड़ने पर, तनुलता के काँपने पर, वेणीबंध के खुलने पर, कुचों के हिलने पर, हार के टूटने पर, जहाँ-तहाँ रत्नों के गिरने पर, प्राप्त भय-शोक से (सीता का) शरीर काँप रहा था। (ऐसी) उस चारुलोचना को अदय हो, उठा ले आकर रथ पर अच्छे ढंग से रखकर, दैव के प्रेरित करनेपर अपनी मृत्यु देवता को ले जानेवाले विधान के दीप्त होनेपर, अमरारि (राक्षस) सीता को ले जाने लगा। आकाश-वीथि (मार्ग) में कमललोचना होश में आकर, आँखें खोलकर, देखकर, होंठों को आर्द्र करते हुए, ढीले वने आँचल से कठिन कुचद्वय को कसते

वेड्क जकोरमुल् वेन्नेलग्रक्कु । माड्कि दम्मुल जारु मकरंदमनग
नाननशशि दोचु नमृतबिंदुवुल । पूनिक गन्नीरु पॉटपॉट दोरग
नेलुगेत्ति कोदमकोयिल गूसिनट्लु । पलुमारु विधि दूरि प्राणेशुजीरि
१०३९

जानकी विलापमु

यलतयु गोपंबु नतिविषादंबु । वेलवेल पाटुनै विलपिंप दोडगे;
'नो राघवेश्वर! यो रामचंद्र ! । नीरजहितवंश ! नी देवि नन्नु
ननदचंदंबुन नक्कटा ! यिपुडु । कोनिपोवुचुन्नाडु कुटिल राक्षसुडु;
वेवेग चनुदेन्चि वीनि मर्दिंचि । काववे ना लज्ज ! गाववे नन्नु
'नेलरा राक्षस! यी निंदनीकु ? । नी लंक नेलरा नीवे काल्चेदवु ?
तगदुरा नीकु नी दारुणक्रममु । देगटार्चुरा निन्नु दिविरि राघवुडु'
'कनकमृगंबेल कनुगोन्टि नोन्टि?। निनवंशवल्लभुनेल पोम्मंटि ?
गादन्नपलुकेल कैकोननैति ? । मेदिनीविभुडेल मृगमु देबोये ?

हुए, कुतूहल से चकोरों के चाँदनी के वमन करने के समान,' कमलों से चू पड़नेवाले मकरंद के समान, आनन-शशि (मुखचंद्र) पर दिखाई पड़ने वाली अमृत बिन्दुओं की तरह आँसुओं के टप्-टप् गिरने पर, ऊँचे स्वर से मस्त कोयल के कूकने के समान, अनेक बार विधि को कोसकर, प्राणेश को पुकारकर,॥ १०३९ ॥

जानकी का विलाप

—व्यथा अथवा थकान, क्रोध (तथा) अतिविषाद से विवर्ण हो (जानकी) (यों) विलाप करने लगी:—'राघवेश्वर ! ओ रामचन्द्र ! हे नीरजहित (सूर्य) वंशवाले ! तुम्हारी देवी—मुझे—अनाथ की तरह हाय ! अब कुटिल राक्षस ले जा रहा है। अतिवेग से आकर, इसका मर्दन (संहार) कर, मेरी लाज की रक्षा करो न ! मेरी रक्षा करो न।' 'क्यों रे राक्षस ! तुम्हें यह निंदा (बदनामी) क्यों ? रे, अपनी लंका को स्वयं क्यों जला रहे हो ? तुम्हें यह दारुण क्रम उचित नहीं है। राघव तुम्हें शीघ्र ही मार डालेगे।' '(मैंने) कनकमृग को अकेले देखा ही क्यों ? इनवंशवल्लभ को जाने के लिए कहा ही क्यों ? मना करने पर उस वचन को क्यों नहीं ग्रहण किया ? मेदिनी-विभु (राजा) मृग लाने गये ही क्यों ? जगतीश की सामर्थ्य के बारे में क्यों नहीं सोचा ? व्याकुल होकर, कोसकर लक्ष्मण को जाने को क्यों कहा ? ये सब बातें

जगतीशुलावेल चर्चिंपनैति?। वोंगिलि लक्ष्मणुनेल पोम्मंटि दिट्टि ?
यी पल्कुलेटिकि? निट्टुसेयकुन्न। नापालि विधि येल ननु वोव निच्चु?'
'नन्नु! लक्ष्मण! निन्नु नभिमानधन्यु। गन्नतल्लिग नन्नु गरमर्थि नेन्नु
१०५०

नन्नुतगुणमान्यु नुदित सौजन्यु। नन्नितेरंगुल नाडिनफलमु
गुडिचिचिति जेसेत; गोपंबु दक्कि। कडुवेगमुन वच्चि काववे नन्नु!"
'नक्कटा! कैक! नीवडिगिन वरमु। लिक्कड जेकूडेने ? यिटमीद
नीकुमारुंडुनु नीवुनु गूडि। एकातपत्रत नेलुडी वसुध।'
ननि रामविभु जीरि यसुरेशुदूरि। तन चेत देंगडि या दैवंबु वोगडि
काकुत्स्थतिलकु लक्ष्मणुगोनियाडि। कैक वोनाडि शोकंबुन मरियु
'मिथिलेशु कूतुर, मेदिनि बंक्ति। रथुनकु गोडल, रामुनि देवि
वलतुलै काव नेव्वरु लेनि चोट। वोलिदिडि सेरगोनि पोवुचुन्नाडु;
तरुलार! ना सहोदरुलार! मीरु। धरणीशुनकु निदितग जेप्परय्य!
'सुरलार! मीरैन सुरवैरि दाकि। वेरवोप्प ना चेर विडिपिपरय्य!
१०६०

क्यों ? ऐसा न करती तो मेरी विधि (भाग्य) मुझे चुप रहने देती ?'
'भाई ! लक्ष्मण ! तुम्हें, अभिमान धनी को, अत्यधिक भाव से मुझे
माता माननेवाले को, ॥ १०५० ॥

—उन्नत गुणों से मान्य को, उदित सौजन्यवाले को, उतने प्रकार से
अपशब्द कहने के फल को, स्वयंकृत (के फल) को भुगत रही हूँ। क्रोध
तजकर अतिवेग से आकर मेरी रक्षा करो न।' 'हाय! हे कैकेयी!
तुमने जो वर माँगे थे, वे यहाँ सफल हुए हैं न ? आगे से अपने कुमार के
साथ तुम इस वसुधा पर एकच्छत्राधिपत्य शासन करो।' (ऐसा) कह
प्रभुराम को पुकारकर, असुरेश को फटकारकर, अपनी करतूत की निन्दा-
कर, उस दैव (भगवान) की स्तुतिकर, काकुत्स्थ (वंश)-तिलक लक्ष्मण
की प्रशंसाकर, कैकेयी को कोसकर, आगे (इस प्रकार कहा):—'(मैं)
मिथिलेश की पुत्री हूँ, धरती में (पृथ्वीपर) पंक्तिरथ (दशरथ) की बहू
हूँ, राम की देवी हूँ। रक्षा करने के लिए कोई न हों, ऐसे स्थान पर,
(यह) मांसभक्षी (मुझे) बन्दी बनाकर ले जा रहा है। हे तरुओ!
हे मेरी सहोदरियो (भूमिज)! आप लोग धरणीश को उचित रूप से यह
(बात) बता दीजिए।' 'हे देवताओ! कम से कम आप तो सुरवैरी
का सामनाकर, ठीक समय से मुझे क़ैद से छुड़ाइए न!' ॥ १०६० ॥

'निंडिन भक्तितो निन्नाश्रयिंचि । युंड्डु; ननु गाव नुचितमीवेळ;
दगिलि नीवैन गोदावरीदेवि! । जगतीश्वरुनितोड जनि तेल्पवम्म!"
'प्रल्लदु चेतिलोबडि चिक्कुवडिति; ।दल्लि ! नीवैननु दग गाववलदे?
भूदेवि ! रघुराममभूपालमणिकि । नी दुरवस्थ पेम्पेरिंगिपवम्म !'
वीरु वारनक यी विधमुन जीरि । 'नोरेन्डे; धृतिदूले; नौच्चे ब्राणमुलु;
ननु गावरय्य! किन्नरुलार! पुण्य । धनुलार! घनुलार! तापसुलार!
कृतुलार! हितुलार! खेचरुलार! । व्रतुलार! यतुलार! वनपक्षुलार!
करुलार! हरुलार! गंधर्वुलार! ।नरुलार! सुरलार! नागेंद्रुलार!'
यनि पेक्कुभंगुल नम्महीतनय । पोनुपडि शोकिंप भूदेवि वडके;
गौतमि पाऱक ग्रक्कुन निलिचे । नातरि सकलभूताक्रोशमेसगे; १०७०

'नन्यायमन्याय' मनिमुनुल् कपट । सन्यासि रावणु चंदंबु देलिसि
पोगिलिरि शोकाश्रुपूरमुल् दोरुग । मृगमुलु निलुचुंडे मेतलु मऱचि;
पक्षुलु वापोये; बवनंबुलडगे; । वृक्षमुल् वाडे; नाविलमय्ये नभमु;
दिक्कुलु वगिलेनु; दिनमणि नोगिले; । 'दिक्केदि' यनि धर्मदेवत
पोगिले;

—'पूर्णभक्ति से तुम्हारे आश्रय में रहती हूँ । इस समय मेरी रक्षा करना समुचित है । हे गोदावरी देवी ! ध्यान देकर तुम तो जगतीश्वर के पास जाकर बता दो न !' 'दुष्ट के हाथ में पड़कर फँस गयी हूँ । हे माता ! तुम्हें तो मेरी रक्षा करनी चाहिए न ? हे भूदेवी ! रघुराम-भूपालमणि को इस दुर्दशा की अतिशयता के बारे में बता दो न ।' इस प्रकार सबको पुकारकर (कहा):—'कंठ सूख गया, धैर्य छूट गया, प्राण व्यथित हुए । हे किन्नरो ! हे पुण्यधनियो ! हे महात्माओ ! हे तापसियो ! हे कृती-जनो ! हे हितू-जनो ! हे खेचरो ! हे व्रतियो ! हे यतियो ! हे वनपक्षियो ! हे करियो ! हे हरियो ! हे गंधर्वो ! हे नर ! हे सुर ! हे नागेंद्रो मेरी रक्षा करो न!' (इस प्रकार) अनेक प्रकार से वह महीतनया के (सीता) व्यर्थता से विलाप करने पर भूदेवी काँप उठी, गौतमी न बहकर झट से ठिठक गयी, उस अवसरपर सकलभूतों (प्राणियों) का आक्रोश बढ़ चला ।॥ १०७० ॥

—'अन्याय, अन्याय' कहकर कपट-संन्यासी (बने) रावण के स्वभाव को जानकर, शोकाश्रु-समूह के प्रवाहित होनेपर, मुनि दुखी हुए । चरना भूलकर मृग खड़े रह गये, पक्षी रोये, पवन बन्द हो गया, वृक्ष मुरझा गये, नभ धुंधला (व्याकुल) हो गया, दिशाएँ फट गयीं, दिनमणि (सूर्य) विकल

वनदेवतलु साल वगचिरि; साधु। जनुलेल्ल नेड्चिरि जानकि जूचि। १०७५

जटायुवु रावणु नेदिरिंचुट

यत्तरि विहगेंद्रुडरुणतनूजु। डुत्तमसाहसुंडोक कोन्डनुंडि युक्कलुंडगु जटायुवु बिट्टु विनियै।'नक्कट! रघुराम!' यनु नार्तरवमु; विनि संभ्रमिंचि निव्वेरगंदि दिशलु। गनुगोनि मोगमेत्ति गगनंबु सूचि 'यदयुडै रावणुंडारामु देवि। वोंदिवि यिम्मुल गोनिपोवुचुन्नाडु नाडीवनंबुन ननु गन्नमोदलु। पोडिमि घनमैत्रि ब्रोचु राघवुडु; १०८०

तगदिक वर्जिप; दैत्यु निर्जिंचि। तेगुवमै वैदेहि देत्तु; नोन्डेनि निनकुलाधिपुनकै यिक ब्राणमुल। ननि मोन नोप्पितु' ननि निश्चयिंचि कुलिशंबुधार ताकुनकु नेंभंगि। नलविगा केंगयु महाद्रिचंदमुन नुरुशक्ति मेयिवेन्चि यूकिंचि येगसि। पोरिवोरि गिरिश्रृंगमुलु नुग्गुगाग मरलिंचि पुक्किटि मांसखंडमुलु। धरणिपै नुमिसि युदग्रभावमुन

हो गया, धर्म-देवता दुखी हुआ कि (अब मेरे लिए) शरण्य कहाँ है, समस्त वन-देवता बहुत रोये, जानकी को देखकर समस्त साधुजन रोये। ॥ १०७५ ॥

जटायु का रावण का सामना करना

उस अवसर पर विहगेन्द्र, अरुण का तनूज, उत्तम साहसवाला, धुरंधर जटायु ने एक पर्वतपर से 'हाय, रघुराम' के आर्त्तरव को शीघ्र सुना। सुनकर संभ्रमित होकर, चकित होकर, दिशाएँ (चौतरफ़) देखकर, सिर उठा आकाश (की ओर) देखकर, यह निश्चय किया कि 'अदय होकर रावण उस राम की देवी को घेरकर (पकड़), आनन्द से ले जा रहा है। उस दिन इस वन में जब से मुझे देखा, तब से लेकर मनोज्ञता से, महान् मैत्री से राघव (मेरी) रक्षा कर रहा है। ॥ १०८० ॥

—(इस अन्याय का) अब वर्जन किये बिना नहीं रहना चाहिए। दैत्य का संहारकर, साहस से वैदेही को लाऊँगा। नहीं तो इनकुलाधिप के लिए अब युद्धभूमि में प्राणों को पीड़ित करूँगा।' ऐसा निश्चयकर कुलिश (गाज़) (तथा) अंबुधारा के आघात से न दबकर उठनेवाले महाद्रि (महापर्वत) के समान, उरु (महान्) शक्ति से शरीर को बढ़ाकर, दृढ़ निश्चयकर, उड़कर बार-बार गिरिश्रृंगों के चूर-चूर होनेपर, मुँह में रखे

खरनखंबुलनुन्न करिसिंहशरभ । शिरमुलंतंतन चिद्रुपलै तोरुग
बटुतुंडरोचुलु पक्षदीधितुलु । चटुलकोपोग्रलोचनरुचुलु वर्व
बक्षानिलंबुल पर्वतशिखर । वृक्षमुल् विरिगि दिग्वीथुलु निंड
बरगु रावणतमःपटलंबु नडप । नरुदेन्चु मध्यन्दिनार्कुचंदमुन
नासन्नबलु रावणादित्यु म्रिग । रासि युग्रत वच्चुराहु चंदमुन १०९०
वडि बेर्चि कदियु रावणराहु म्रिग । दडयक चनुदेन्चु तार्क्ष्युनि भंगि
'निलुनिलु पोकुमु; निलु पोकु पोकु । निलुनिलु; रघुरामनृपचंद्रु देवि
गुटिल राक्षस ! येन्दु गोनिपोयेदिक ? । नेटुपोये ? देटुपोये ? देन्दु
बोयेदवु ?
पोयिन बोनीनु; पोरिगोन्दु निन्नु । व्रेयुदु; खंडितु; विदळितु; द्रुंतु;
दंडितु; दुडितु; दललुत्तरितु । जेन्डु बेन्डुग' नंचु सीत नीक्षिंचि
'योडकोडकु देवि ! युग्रराक्षसुनि । नीडाडि नी चेरु ने विडिपिंतु'
ननिन या पल्कु महानिदाघमुन । वनमयूरिकि घनध्वनियुनुबोले
वाडिन चेनिकि वानयु बोले । वेडुक गोन्त गाविंचिन नलरि

मांस-खंडों को धरणि पर थूककर, उदग्रभाव से खर (तीक्ष्ण) नखों में स्थित करि (हाथी), सिंह, शरभ के सिरों के जहाँ-तहाँ टुकड़े-टुकड़े हो गिरने पर, पटु-तुंड-(चोंच) रोचियों (दीप्तियों), पक्ष (पंख) की दीधितियों (आभा), (तथा) चटुल-कोप-उग्र-लोचन-रुचियों के व्याप्त होनेपर, पक्ष (पंखों) के अनिल से पर्वत-शिखर (पर स्थित) वृक्षों के टूटकर, दिग्वीथियों (आकाश मार्ग) में भर जानेपर, सुशोभित रावण (रूपी) तमःपटल को दूर करने के लिए आनेवाले मध्यंदिन-अर्क (सूर्य) के समान, आसन्न बलवाले रावण (रूपी) आदित्य को निगलने के लिए उग्रता से आनेवाले राहु के समान, ॥ १०९० ॥

—शीघ्रता से क्रम से नियरानेवाले रावण (रूपी) राहु को निगलने आनेवाले तार्क्ष्यु की तरह 'ठहरो, ठहरो, मत जाओ, ठहरो मत जाओ, मत जाओ, ठहरो, ठहरो। हे कुटिल राक्षस ! रघुराम-नृपचंद्र की देवी को अब कहाँ ले जाओगे ? कहाँ जाओगे ? कहाँ जाओगे ? किस स्थान पर जाओगे ? जाना चाहो तो भी जाने नहीं दूँगा। तुम्हारा संहार करूँगा। मार डालूँगा, खंडन करूँगा, विदलन करूँगा, टुकड़े कर दूँगा, दंडित करूँगा, तोड़ दूँगा, छक्के छुड़ाकर सिर काट दूँगा'—(ऐसा) कहते हुए सीता को देखकर (कहा):—'हे देवी ! डरो मत, डरो मत। उग्र राक्षस को मारकर, तुम्हें क़ैद से मैं मुक्त करूँगा।' (ऐसा) कहने पर, वह वचन महा-निदाघ (ग्रीष्म) में वनमयूरी के लिए मेघध्वनि की

या सीत वल्कें; 'जटायुवा ! नन्नु। नी सुरकंटकुंडेत्ति युद्वृत्ति
मायचे रामलक्ष्मणुल वंचिंचि। यो योन्न ! कोंनिपोवुचुन्नवाडेचि
१११०
यनि पलक विनि यंत नरुणनंदनुडु। घनमैन कोपंबु कडिमियु दोप
नलुकमै रथमुन कड्डंबु वच्चि। प्रळयाभ्रनिर्घोष पटुभाषणमुल
बलुमारु दशकंठु भर्जिचि मिंचि। निलिचि यिट्लनियें नूनिन धैर्य-
मैसगः
'बरमपावनुडैन ब्रह्ममन्मडवु; । वरपुण्यनिधि विश्रवसुतनूजुडवु;
धनदानुजुंडवु; दानवाग्रणिवि; । विनुमिट्टि कृत्यंबु विहितमे नीकु?
जगदेकपति रामचंद्रुनि देवि। दगदोरि ! कोंनिपोव दगिलि
यिब्भंगि;
मुदलिचि तेक रामुनि डागुरिंचि। सुदति नी भंगि देच्चुट बंटुतनमे ?
नीलंकयुनु निन्नु नी बधुजनुल। गालुचु नोरि ! राघवु कोपवह्नि;
येरिगियु विषमिटुलेल क्रोलेंदवु ?। अरगोन्न पेनुबामु नेल त्रोक्केंदवु?
अरवदिवेलेंड्ल यतिवृद्धु नन्नु। नेरुगुदो, येरुगवो ! ये जटायुवनु;

तरह, मुरझाए खेत के लिए वर्षा के समान, थोड़ा-बहुत (सीता को) प्रसन्न करनेपर, खुश होकर वह सीता बोली:—'हे जटायु ! मुझे यह सुरकंटक (राक्षस) उद्वृत्ति (घमंड) से, माया (के प्रभाव) से राम लक्ष्मण को वंचितकर, हे भाई ! (मुझे) सताते हुए ले जा रहा है।' ॥ १११० ॥

—ऐसा कहनेपर सुनकर, तब अरुण-नंदन महान् क्रोध और साहस के प्रकट होनेपर, क्रोध से रथ को टोककर, प्रलय अभ्र (मेघ)-निर्घोष (के सम) पटु-वचनों से कई बार दशकंठ को फटकारकर, (मार्ग का) अतिक्रमणकर, खड़े होकर, स्थिर धैर्य के शोभित होनेपर यों बोला:—'तुम परमपावन ब्रह्मा के पौत्र हो, वर पुण्यनिधि विश्रवसु के तनूज हो, धनद (कुबेर) के अनुज हो, दानवाग्रणी हो। सुनो, क्या ऐसा कृत्य तुम्हारे लिए विहित है ? रे, जगदेकपति रामचन्द्र की देवी को इस प्रकार ले जाना समुचित नहीं है। ललकारकर (लड़कर) (सीता को) न लाकर, राम को धोखा देकर, सुदती (नारी) को इस प्रकार लाना (कहीं) वीरता है ? अरे, राघव की क्रोधाग्नि तुम्हारी लंका को, तुम्हें, तुम्हारे बंधुजनों को जला देगी। जानते हुए भी इस प्रकार विष को क्यों पीते हो ? क्रुद्ध महासर्प पर क्यों पैर रखते हो ? साठ हज़ार वर्ष के अतिवृद्ध मुझे (पता नहीं) जानते हो या नहीं जानते। मैं जटायु हूँ।

नी पुण्यसाध्वि नी विप्पुडोंप्पिंचि। पोपोम्मु; पोकुन्न बोरिपुत्तु निन्नु;
११२१

रावणुनितो जटायुवु पोरु

दुंडाग्रमुन विल्लु दुनुकलु सेसि। मंडितवर्ममर्ममुलु भेदिंचि
यडरि नीदैन प्राणाभिमानमुलु। विडिपिंचि जानकि विडिपिंतु' ननिन
नरदंबु निलिपि युदग्रुडै दैत्य। वरु डलिग विलुगुणध्वनि सेसि यार्चि
घोर बाणमु लेय गोपिंचि विहग। वीरुडु तद्बाणविततुलु विरिचि
युरुपक्षयुगमुन नुरमु धट्टिंचि। पोरि फालमुलु सीरि भुजमुलु वोडिचि
तरमिडि खरनखततुल नोप्पिप। गरमु गोपिंचि राक्षसकुलेश्वरुडु
खगराजु नेरकलु गाड नुग्रंबु। लगु बाणमुलु वदि यडरि येयुटयु
दुंडाग्रमुन विल्लु दुनियलुगाग। खंडिचि वडि बताकलु नेल गलिपि
दनुजेशु मकुटमुल् धर डोल्लनेसि। पेनचि सारथि बट्टि प्रेवुलु सीरि
११३१

तलमीरि दनुजु रथ्यमुलु जेंडाडि। चलमोप्प नरदंबु जदिय मोदुटयु

इस पुण्यसाध्वी को तुम अब (मुझे) सौंपकर चले जाओ। नहीं जाओगे तो तुम्हारा वध कर दूँगा। ॥ ११२१ ॥

रावण से जटायु का युद्ध

तुंडाग्र (चोंच के अग्रभाग) से धनुष के टुकड़ेकर, (तुम्हारे शरीर पर) शोभित वर्म और मर्म को बेधकर, प्राणों के प्रति तुम्हारे अधिक अनुराग को अलगकर, (शरीर और प्राणों को अलगकर) जानकी को मुक्त करूँगा।' (ऐसा) कहनेपर, रथ को रोककर, उदग्र हो, दैत्यवर ने क्रुद्ध हो, धनुष के गुण (डोरी) को ध्वनितकर, चिल्लाकर, (जटायु पर) घोर-बाणों का प्रयोग किया। (उसपर) क्रुद्ध हो विहगवीर ने उन बाणविततियों (समूहों) को तोड़कर, उरु पक्षयुग से (रावण के) उर पर आघातकर, बार-बार फाल (भाग) को नोचकर, भुजाओं को छेदकर, शीघ्र खर (तेज) नखसमूहों से (उसे) पीड़ित किया। (तब) अधिक क्रुद्ध होकर राक्षसकुलेश्वर ने ऐसे दस उग्र बाण अतिशयता से डाले जो खगराज के पंखों में धंसे। (तब जटायु ने) तुंडाग्र से धनुष के टुकड़ेकर, झट से पताकाएं ज़मीन (मिट्टी) में मिलाकर, दनुजेश के मकुट को ज़मीन पर लुढ़का देकर, खींचातानीकर सारथी को पकड़, आँतड़े फाड़कर, ॥ ११३१ ॥

विरथुडै राक्षस विभुडु गंपिंचि। धरणिपै बडि लेचि धरणिज गोनुचु
मायाबलंबुन मरि मिटि कॆगसि। पोयॆ; बोयिन जूचि पोनीक पेंचि
यडुगिंचि जटायु वाकाशवीथि। नॊड्डिनगति दाकि 'योरि पापात्म!
जुणिगि ये लोकंबु जॊच्चिन नैन। दृणमुगा बट्टि वधितु नि' न्ननिन
दिरिगि रोषमुन दैतेयवल्लभुडु। तरमुगाकुन्कि नद्धरणिज डिंचि
परुषरोषानल प्रभलुप्पतिल्ल। गरमुग्रमैन मुद्गरमु वैचुटयु
नदि तुंडमुन द्रुंचि यतनिमस्तमुलु। नदियंग नडिच्चि केशमुलु द्रॆन्चुटयु
सुर वैरि गोपिंचि स्रुक्कक कदिसि। युरवडि नक्षींद्रु नॊडिसिरा दिगिंचि,
मोगि बट्टि यंदंद मुष्टिघट्टनल। दगिलि नॊप्पिप नुद्धत शक्ति मॆरय
११४१

दनुजेंद्र विहगेंद्र दारुणयुद्ध। मनिमिषादुलु सूचि यच्चॆरुपडिरि;
यरुदैन कडिमिमै नंत रावणुडु। गरमुग्रगति मिंचि खड्गमंकिंचि
यॆरकलु पदमुलु नॆगिंचि तुंचुटयु। नॆरि दूलि खगपति नेलकु व्रालॆ;
व्रालिन वैदेहि वग नॊक्क वृक्ष। मूलंबु जेरि रामुनि वेरुकोनुचु

—अतिक्रमणकर (बाजी मारकर), दनुज के रथ्यों (अश्वों) को नष्टकर, हठ से रथ को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। (तब) विरथ हो राक्षसराज कंपित हो, धरणि पर गिरकर, उठकर, धरणिजा को लेकर, माया के बल से फिर आकाश में उड़कर गया। जानेपर, देखकर, जाने न देकर, क्रम से रोककर, जटायु आकाशवीथि मे रोकने के समान, सामनाकर (बोला):—'रे पापात्मा! भयादि से सकुचित हो (छिपकर) किसी भी लोक में प्रवेश करने पर भी, तिनके के समान पकड़कर (तुम्हारा) वध कर दूंगा।' (ऐसा) कहने पर, मुड़कर रोप से, दैतेय-वल्लभ ने, सहन न होने से, उस धरणिजा को उतारकर, परुप-रोपानल-प्रभाओं के उमड़ने पर, अधिक उग्र मुद्गर को डाल दिया। उसे तुंड (चोंच) से काटकर, उसके मस्तकों को दबाकर, कुचलकर, केशों को काटने लगा। (तब) सुरवैरी (राक्षस) क्रुद्ध होकर, न थककर, सामनाकर, शीघ्रता से पक्षीन्द्र को तरकीब से पकड़ नीचे लाकर, संरंभ से पकड़कर, जहाँ-तहाँ मुष्टि के आघातों से, उद्धत शक्ति के शोभित होनेपर, पीड़ित करने लगा। ॥ ११४१ ॥

—(इस प्रकार से) दनुजेन्द्र और विहगेन्द्र के दारुणयुद्ध को देख, अनिमिप (देवता)-आदि आश्चर्यचकित हुए। अपूर्व साहस से तब रावण अधिक उग्रगति से शोभित हो, खड़्ग को हिलाकर, (जटायु के) पंख और चरण काट डाले। झट से कंपित हो, खगपति जमीन पर गिरा। गिरने पर

वापोवुचुंड रावणुडंकसीम । ना परम पतिव्रतांगन नुनिचि ११३६

सीत ऋश्यमूकपर्वतमुन नाभरणमुल बडवेयुट

यंत संतोषिंचि याकाशवीथि । नेंन्तयु रयमुन नेगें रावणुडु;
अप्पुडु ब्रह्मादुलगु सुरल् मुनुलु । 'दप्पदु; रामुचे दशकंठुडीलगु;
मन मनोरथमुलु मनकु सिद्धिंचु' ।ननि चेंप्पिकोंनि युब्बिरंदरु प्रीति;
ननिमिषपथमुन नंत रावणुडु । चनुरयंबुन सीत चरण नूपुरमु
सुरवैरि कुत्पातसूचकंबगुचु । नुरवडि बरतेंन्चु नुल्कयै पडियें;
११४१

जगतिपै जाह्नवि जलधारलोंलुकु । पगिदियै याकाशपथमुन नुंडि
चेंलवकुचंबुल जेंलवोंन्दु हार । मुलु द्रेंव्वि यंदंद पुडमिपै बडियें;
नालोन सीत 'हा हा' रवं बेसग । लोलोन गडु नडलुचु बोयि पोयि
यट ऋश्यमूकंबुनंदु वानरुल । बटुसत्त्वुलेवुर बरिकिंचि कांचि
तन वस्त्रमुन गोंन्त तर्गाजित्रि पुच्चि । तन भूषणंबुलु दान बंधिंचि,
'वीरैन रामभूविभुन की वार्त । लारय देंलुपरे' यनु बुद्धिनपुडु
तडयक रामुचे दशकंठुडिक । जेडुनंचु मुडियु वैचिन बागुदोप

वैदेही दुःख से एक वृक्षमूल में पहुँच, राम का नाम लेते हुए रोती रही। (तब) रावण उस परम-पतिव्रता-अंगना को अंक (गोद) में ले, ॥ ११३६ ॥

सीता का ऋश्यमूक पर्वत पर आभरण डाल देना

—तब प्रसन्न हो, आकाशवीथि में अधिक शीघ्रता से रावण गया। तब ब्रह्मादि सुर और मुनि सभी यह कह लेते हुए प्रीति से फूल उठे कि 'अवश्यंभावी है कि राम के हाथ दशकंठ मरेगा, हमारे मनोरथ हमें प्राप्त होंगे।' तब अनिमिष पथ (आकाश मार्ग) में रावण के गमनवेग से सीता का चरण नूपुर गिर पड़ा मानों सुरवैरी का उत्पात सूचक होते हुए शीघ्रता से आन गिरनेवाली उल्का हो। ॥ ११४१ ॥

—जगत् पर जाह्नवी की जलधाराओं के छलक पड़ने के समान आकाश पथ से, सुन्दरी (सीता) के कुचोंपर शोभित हार टूटकर पृथ्वी पर जहाँ-तहाँ गिर पड़े। इतने में सीता हाहाकार के उमड़ने पर, अन्तर में अधिक व्यथित होती हुई जा-जाकर, वहाँ ऋश्यमूक पर पटुसत्त्व वाले पाँच वानरों को ध्यान से देखा, अपने वस्त्र को थोड़ा फाड़कर, अपने भूषणों को उससे बाँधकर, 'सोचने पर ये तो रामभूविभु को यह समाचार बताएँगे' इस विचार से, विलंब न कर, 'अब राम के हाथ से दशकंठ नष्ट हो

वारि मध्यंबुन वैचुचु वोव । वारुनु दाचिरि वडि दानि बुच्चि
दनुजाधिपति यंत दशरथात्मजुलु । दनवेंन्ट वत्तुरन् तल्लडंबुननु
वेलवेल वाऱ्च वेनुक जूचुचुनु । दलकुचु वडि समुद्रमुदाटिपोयि
११५१

जडिगोंनु मरणसूचकनिमित्तमुलु । पोंडसूप गनि रयंबुन लंक जोंच्चि
यनुपम विविध भोगास्पदंबेन । तन नगरिकि वच्चि तगु राजसमुन
जनकपुत्रिकि दन सकलसंपदलु । मुनुकोंनि येन्तयु मुदमोंप्प जूपि
११५४

सीतनु रावणुडु अशोकवनमुनंदुंचुट

'यिवे ना निवासंबु लिवे ना धनंबु । लिवे ना तुरंगंबु लिवे ना गजंबु;
लिवे येनु दिविजुल नेल्ल भंजिचि । तिवुटमे देच्चिन दिव्यभूपणमु;
लिदे कुवेरुनि गेल्चि येनु गेकोंन्न । मदिकिंपु गाविंचु मणिपुष्पकंबु;
वीरे ना कुडिगमुल् वेवेर सेयु । चारणामर सिद्ध साध्य कामिनुलु
वारे ना माट गर्वमुन गैकोंनक । कारागृहंबुल गासिल्ल सतुलु;

जाएगा' (इस विपय के) ठीक प्रकट होनेपर जैसा गाँठ वाँधकर, उन (वानरों) के मध्य (आभूपणों की पोटली) डालती चली गयीं। उन्होंने भी उसे लेकर झट से छिपा दिया। तव दनुजाधिपति (यह सोचकर कि) दशरथात्मज अपना पीछा करते आएँगे, इस अकुलाहट से, विवर्ण होते हुए, पीछे (मुड़कर) देखते हुए, घवराते हुए, झट से समुद्र पार जाकर, ।। ११५१ ।।

—क्रम से मरणसूचक निमित्तों (कारणों) के दिखाई पड़ने पर, देखकर, शीघ्रता से लंका में घुसकर, अनुपम-विविध-भोगों के आस्पद (स्थान) वनी अपनी नगरी में आया। उचित राजस से जनकपुत्री को पहले अपनी समस्त संपदाएँ अधिक मोद से दिखाकर, (वोला):— ।। ११५४ ।।

सीता को रावण का अशोक वन में रखना

'यही मेरा निवास है, ये ही मेरे धन हैं, ये ही मेरे तुरंग हैं, ये ही मेरे गज हैं, समस्त दिविजों (देवताओं) का संहारकर, मुझसे लाये गये दिव्य भूपण ये ही हैं, कुवेर को जीतकर, मेरा लिया हुआ मणिपुष्पक यही है, जो मन को प्रसन्न वनाता है। येही अलग-अलग मेरी सेवाएं करनेवाली चारण-अमर-सिद्ध-साध्य (जातियों की) कामिनियाँ हैं, वे ही हैं जो मेरे वचन को गर्व के कारण ग्रहण न कर, कारागृहों में तड़पने वाली सतियाँ हैं।

अवे नाट्यशाल; लल्लवे केळिवनमु। लिवे चंद्रशाललो यिंदीवराक्षि!
करमर्थि नितकु गर्तवै नीव। यरुदुगा भोगिंपु मखिल संपदलु!'
११६१

ननवुडु त्रुणखंडमतिव चेबट्टि। कौनि पल्के वानिगैकौनक यॆन्तयुनु
'नॊरि! नीकीपापमूरकपोदु। घोराग्नियै निन्नु काल्चु गानि;
निडिविगा ब्रदुकरु नीवु नी वारु। चॆडिपोवगलरु; सिद्धमीपलुकु;
रामु बाणानलराशिलो गूलि। नी मेनु वडि गालि नीरु गाकुन्न
घनमैन यी पातकमुलॊन्टदीर'। वनि पलिक वैदेहि यंदंद पॊगिलि
'यिट्टि दुर्वाक्यंबुलेनु ना चॆवुल। बॆट्टिति; नेडु ना पॆम्पेल्ल बॊलिसॆ;
नामानमिट्टु सेसि नन्नित सेसॆ;। नेमनि पलवितु नेनु ना विधिकि'
ननि महारोदनमंदंद सेय। दनमदि गोपिंचि दनुजवल्लभुडु
तॆरगॊप्प नप्पडु त्रिजटादुलॆन। तॆरवल बिलिचि धात्रीपुत्रि जूपि
'यॆन्दु नेमरक मीरिंदरु गूडि। पॊन्दुगा ननु बॊन्द बोधिचुकॊनुचु
११७१

नॆनसिन कडक नीयिंति नशोक। वनमुन निडिकॊनि वर्तिपु' डनुचु

वे ही नाट्यशालाएँ हैं, वे ही केलीवन हैं। हे इन्दीवराक्षी! ये ही चन्द्रशालाएँ हैं। अधिक इच्छा से इन सबका कर्ता (कर्त्री) बनकर तुम अपूर्व रूप से अखिल संपदाओं का भोग करो।' ॥ ११६१ ॥

—ऐसा कहने पर उसकी बिलकुल परवाह न करते हुए नारी (सीता) ने तृणखंड को हाथ में लेकर कहा:—'अरे, यह पाप तुम्हारे लिए यों ही नहीं जाएगा, घोराग्नि बनकर तुम्हें जलाकर रहेगा। तुम और तुम्हारे लोग दीर्घकाल तक जीवित नहीं रहेंगे। नष्ट हो जाएँगे। यह वचन सिद्ध (सत्य) है। राम की बाणानल-राशि में गिरकर, शीघ्रता से तुम्हारी देह जब जलकर नष्ट होगी तभी यह महान पातक जाएगा, अन्यथा नहीं।' ऐसा कहकर वैदेही जहाँ-तहाँ व्याकुल हो 'ऐसे दुर्वाक्यों को मैंने अपने कानों रखा (सुना)। आज मेरा सारा महत्त्व मिट्टी हो गया। मेरे अभिमान (गर्व) ने मेरी यह दशा की। अपनी विधि (भाग्य) के लिए मैं क्या कह रोऊँ?' कहकर जव-तब महारोदन किया। (तब) अपने मन में क्रुद्ध हो दनुजवल्लभ ने ढंग से तब त्रिजटा आदि स्त्रियों को बुलाकर, धात्रीपुत्री (सीता) को बतलाकर, यह कह कि 'कहीं भी असावधान न होकर तुम सब मिलकर, अच्छी तरह मुझे प्राप्त करने का बोध कराते हुए, ॥ ११७१ ॥

—साहस से इस स्त्री को अशोक वन में रखकर, (उपरोक्त) वर्ताव

बनिचि कापुलु वेट्टि पंक्तिकंधरुडु । दनमदि मदनाग्नि दरिकोन नुंडे;
११७३

श्रीरामुडाश्रममुनकु मरिल वच्चुट

मायामृगमु जंपि मरि रामचंद्रु । डायेड मरि योक यन्यमृगंबु
जंपि तन्मांसंबु जर्मंबु गोनुचु । निर्पोदि मरलि तानेतेन्चुचोट
म्रोयु जंबुक रवंबुलकु गुंदुचुनु । नायासमंदुचु नट वच्चि वच्चि
रामभूपालुडरण्यमध्यमुन ।सौमित्रि वोडगनि चाल भीतिल्लि
'यकट लक्ष्मणुड ! ना याज्ञ गैकोनक । विकलधैर्यमुन विवेकिवै युंडि
यत्तन्वि सीत नप्पडविलो डिंचि । वत्तुरे ? यिट्ले वच्चिति वीवु ?
जगतिपै गलुगु राक्षसुलेल्ल मनकु । वगयौट येरुगवे पलुमारु नीवु ?
कुलहानि गुणहानि गुरुधर्महानि । तलपोयवलवदे तम्मुडा ! नीवु
११८१
अनवुडु लक्ष्मणुंडतिभीति वोन्दि । यनयंबु गंपिंचि हस्तमुल् मोगिचि
'जगदीश! नाकिटु चनुदेर दगदु । तगकुंट नेरुगुदु त्रैलोक्यनाथ !
मायामृगाकृति मरि मिम्मु द्रिप्पि । पायक मी दिव्य बाणाग्निशिखल

करो' आदेश दे, पहरा रखवाकर, पंक्तिकंधर अपने मन में मदनाग्नि (काम-पीड़ा) से दग्ध होता रहा । ॥ ११७३ ॥

श्रीराम का आश्रम में लौट आना

मायामृग को मारकर, फिर रामचन्द्र, उस अवसर पर और एक अन्य मृग को मारकर, उसके माँस (तथा) चर्म को लेकर, प्रसन्न होकर फिर लौट आते समय मुखरित होनेवाले जंबुक-रव से (को सुनकर) दुखी हुए । निश्वास भरते हुए वहाँ आ-आकर, रामभूपाल ने अरण्य-मध्य मे सौमित्री को देखकर, अधिक भीत होकर (कहा):—'हाय ! लक्ष्मण ! मेरी आज्ञा को ग्रहण (मान) न कर, विवेकी होकर भी, विकल बने धैर्य से उस स्त्री सीता को उस अटवि में छोड़ आते हो ? ऐसा तुम क्यों आये हो ? जगति पर जितने राक्षस हैं, उन सबका हमारा शत्रु होना बार-बार तुम नही जानते हो ? हे अनुज ! तुम्हें तो कुलहानि, गुण-हानि, गुरु-धर्महानि के बारे में सोचना नहीं चाहिए था ? ॥ ११८१ ॥

—ऐसा कहने पर लक्ष्मण ने अतिभीत हो, अनारत कंपित हो, हाथ जोड़ (कहा):—'हे जगदीश ! मुझे इस ओर आना नहीं चाहिए था। हे त्रैलोक्यनाथ ! यह अनुचित है, यह भी जानता हूँ। मायामृग की

गूलुचुनुंडि या कुटिलराक्षसुडु । 'हा लक्ष्मणा' यन्न यार्तरावंबु
सीतामहादेवि चेविसोक मिगुल । भीतिल्लि मीदैन पेम्पेल्ल मरचि
'यन्न ! मीयन्न चोप्परय बोम्मन्न ! येन्नडु नेलुगिपडिटु दीनवृत्ति
सौमित्रि !' मनवुडु जानकि जूचि । 'भूमिज ! नीकित पोगुलंग वलदु;
पनिवडि मनयंदु भयमु पुट्टिंप । ननि राक्षसुडु क्रूरुडै चीरै गाक !
यिनकुलाधिपुडेड ? नी दैन्यमेड ?। जनकज ! नीवेल चंचलिंचेदवु !
अनवुडु गोपिंचि या देवि नन्नु । विनरानि पलुकुल वेस दूरि पलुक
११९१
नेनु नामदिलोन नेन्तयु वगचि । दानिकि वनदेवतल साक्षिवेट्टि
यिट केनु वच्चिचति निक्ष्वाकुतिलक! यटुगान दप्पुगा नवधरिंपकुडु'
अनि बाष्पलोचनुंडै म्रोक्कियुन्न । यनुजुनि गरमुल नल्लन नेत्ति
कनुगव दोरगेडु कन्नीरु दुडिचि ।यनयंबु वगचि यिट्लनियै राघवुडु;
'आजन्मशुद्धुडै यखिलज्ञुडैन । या जनकुनि पुत्रियै वार्तकेक्कु
ना पुण्यवति येग्गुलाडुट येल्ल । नापदलकु मूलमनि विचारिंचि
निलुवक वत्तुरे ? नी यट्टिवानि । कलुगंगदगुनय्य ! यतिवमाटलकु'

आकृति से आपको खूब घुमाकर, न बच सके आपकी दिव्य-बाणाग्नि-शिखाओं में गिरते हुए, उस कुटिल राक्षस के 'हा लक्ष्मणा !' आर्त्तरव के महादेवी सीता के कानों में पड़ने पर, (वे) आपके महत्त्व को भूल, अधिक भीत हुईं। 'हे भाई ! अपने भाई की स्थिति को जानने के लिए जाओ भाई! हे सौमित्र ! राम ने कभी इस प्रकार दीनवृत्ति से पुकारा नहीं है।' ऐसा कहने पर जानकी को देखकर (मैंने कहा):—'हे भूमिजा ! तुम्हें इतना व्याकुल नहीं होना चाहिए। जानबूझकर हममें भय उत्पन्न करने के लिए राक्षस ने क्रूर हो पुकारा होगा। (वरन्) कहाँ इनकुलाधिप ? कहाँ यह दैन्य ? हे जनकजा ! तुम क्यों चंचल बन रही हो ?' ऐसा कहने पर क्रुद्ध हो उस देवी ने मुझे कर्ण-कठोर शब्दों में झट से गालियाँ सुनाईं। ॥ ११९१ ॥

—मैं अपने मन में अधिक दुखी हो, उसके लिए वनदेवताओं को साक्षी बनाकर, इस ओर आया हूँ। हे इक्ष्वाकुतिलक ! यह ऐसा होने से (इसे मेरी) त्रुटि मत मानिए।' (ऐसा) कह बाष्प (पूरित) -लोचनवाले होते हुए, प्रणाम करनेवाले अनुज को हाथों से धीरे से उठाकर, नेत्रयुग्म से गिरनेवाले आँसू पोंछकर, निरन्तर दुखी हो, राघव यों बोले:—'आजन्मशुद्ध (पवित्र), अखिलज्ञ उस जनक की पुत्री होकर, प्रख्यात बनी उस पुण्यवती का अपशब्द कहना ही समस्त आपदाओं का मूल है—ऐसा

ननुचु सौमित्रि नूरार्चि येतेंन्चि । जननाथुडट निजाश्रमभूमि जोच्चि
'यिंदियेमि लक्ष्मणा! यीयाश्रमंबु। तुदिमुट्ट शून्यमै तोचुचुन्नदियु;
वनदेवतानंदवचन घोषमुलु । विन्नराव्रु; चेलगवु विहगनादमुलु;
१२०१
'एलोको मुनिवरुलिट संचरिंप । रेलोको सीत ना कॅदुरुगा रादु !
कडुदीनमै बुद्धिगलगेंडु नाकु; । नेंडमकन्नदरेंडु नेलोको नेडु ?
इक्कानलोपल नेनुनु नीवु । नक्कट! ये दुःखमनुभविंचेदमो ?
यनि पर्णशालकु नट्टु सेर वच्चि ।दिनकरु रुचि लेनि दिनलक्ष्मि वोलि
रेराजुकक लेनि रेयुनु वोलि । शारिक लेनि पंजरमुनु वोलि,
येनय गोयिल लेनि येलमावि वोलि । कनुगोन विन्ननै कडु वाडुवारि
युन्न चंदमु जूचि युल्लंबु गलगि । विन्ननै धृति दूलि वेलवेलवारि,
पन्नि शोकरसंवु प्रवहिंचे ननग । गन्नुल बाष्पांबुकणमुलु दोरुग
बेंदवुलु दडपुचु भीति ब्राणमुलु । सेंदर दम्मुनि जूचि श्रीरामुडनियें;
'वोल जूचिति नेनु; भूमिज पर्ण। शाललोपल नुन्न चंदंवु लेदु
१२११

विचारकर (वहीं) न ठहरकर (यहाँ) आना चाहिए ? (नहीं आना चाहिए था)। तुम जैसे व्यक्ति को एक स्त्री की वातों पर रूठ जाना चाहिए ?' कहते हुए सौमित्री को सान्त्वना देकर, आकर, जननाथ (राजा) ने अपनी आश्रमभूमि में प्रवेशकर, (कहा):—'यह क्या लक्ष्मण ! यह आश्रम तो विलकुल शून्य-सा लग रहा है। वनदेवता के आनन्द (पूर्ण)-वचन-घोष (ध्वनियाँ) सुनाई नहीं पड़ रहे हैं। विहगनाद व्याप्त नहीं हो रहे हैं। ।। १२०१ ।।

—यहाँ मुनिवर विचरण क्यों नहीं कर रहे है ? सीता (मेरे) समक्ष क्यों नहीं आ रही है ? अतिदीन वनकर मेरी बुद्धि विकल वन रही है। आज न जाने क्यों मेरा वाम नेत्र फड़क रहा है ? हाय ! इस कानन में तुम और मैं शायद किस दुःख का अनुभव करेंगे ?' कह उधर पर्ण-शाला पहुँचकर, दिनकर के प्रकाश से रहित दिनलक्ष्मी के सम, निशा-पति की कला से रहित रात्रि के समान, सारिका हीन पिंजड़े के समान, शोभित कोयल से हीन रसाल के समान, देखने के लिए उदास वने, अधिक विवर्ण वने उसे देख, मन के व्याकुल होकर, मुख के विवर्ण वन, धैर्य के छूटकर, कांतिहीन वनने पर, राम की आँखों से वाष्पांवुकण झरने लगे मानों शोकरस ही प्रवाहित हो रहा हो। होंठों को आर्द्र करते हुए, भीति से प्राणों के विकल वनने पर अनुज को देखकर श्रीराम वोले:—'अच्छी

पोंदल बूवुलु गोयबोयेनो ! काक । वेंदुक नोन्डोक जाड वेडलेनो! काक
सरसुल ग्रीडिप जनियेनो ! काक । करमुग्रमगु भीति ग्रागेनो ! काक
डासि नव्वुलकुनै डागेनो ! काक । यीसुन गोनि येक्कडेगेनो ! काक
ये चंदमो नाकु नितयु देलिय । दे चंदमुन सीत यिदुलो लेदु'
अनि वितर्किंचुचु ना पर्णशाल । जन जोच्चि लोपल सकलंबु वेदकि
जानकि ना पर्णशाललोपलनु । गानक प्राणमुल् गलगि कंपिप
मतमेल्ल सेडि मेनु ग्रान्पडि बोध । मनु रवि शोकाब्धि नस्तमिंचुटयु
भ्रांति यन् चीकटि प्रबलमै पर्वि । यंतरंगमु गप्पि यक्षुलु गप्पि
मरलेडि धृति गप्पि मानंबु गप्पि । नेरसिन विकलुडै नेलकु व्रालि
'वदलक सीतकै वगचेंडि नन्नु । ब्रिदिलि पोनीक नोंप्पिंचे नेव्वगलु;
१२२१
ई पग ना किप्पुडेल्लोव वच्चे ? । ने वेंन्ट दरियिंतु निक नी वगलु ?
नेमेयि वच्चितिमि कानमुल ? । के माट लाडुदु नितनितो निक !
ये नन्न नितनिकि; नितडु ना तम्मु; । डेनु नीतडु गूडि येट्लु वेगेदमो ?'

तरह देख लिया है। ऐसा नहीं लगता कि भूमिजा पर्णशाला में है। ॥ १२११ ॥

—कहीं झाड़ियों में फूल चुनने गयी हो अथवा (हमें) ढूँढ़ने के लिए किसी दूसरे मार्ग से गयी हो अथवा सरसियों में (जल-)क्रीड़ा करने गयी हो अथवा अधिक उग्र भीति से संतप्त हो रही हो अथवा (कहीं) निकट हँसी-मजाक के लिए छिप गयी हो अथवा क्रोध से कहीं गयी हो अथवा और क्या प्रकार है, मुझे बिलकुल मालूम नहीं। किसी भी तरह से सीता तो इसमें नहीं है।' ऐसा (तर्क-) वितर्क करते हुए, उस पर्णशाला में प्रवेशकर, भीतर समस्त को ढूँढ़, उस पर्णशाला में जानकी को न देख पा, प्राणों के व्याकुल हो, काँपने पर, समस्त मन के बिगड़कर, शरीर के स्तब्ध होकर, बोध (ज्ञान) रूपी रवि के शोकाब्धि में अस्तंगत होनेपर, भ्रान्तिरूपी अन्धकार के प्रवल हो व्याप्त होकर, अंतरंग को घेर, आँखों को ढक, लौटनेवाले धैर्य को आवृतकर, मान को घेर, विकल बनाने पर, ज़मीन पर गिरकर (बोले):—'निरन्तर सीता के लिए (वन-वास की यातनाओं के बारे में सोचकर) दुखी होनेवाले मुझे ॥ १२२१ ॥

—यह दुःख अब किस प्रकार से प्राप्त हुआ ? इस दुःख को किस प्रकार पार करूँगा ? किस प्रकार से इन काननों में आये थे ? इससे (लक्ष्मण से) अब कैसे बात करूँगा ? मैं इसका अग्रज हूँ, यह मेरा अनुज है। मैं और यह (दोनों) मिलकर (एक साथ) कैसे संतप्त होते

यनु विचारमु वुद्धि नणुमात्रमैन । नुनुपनेरक रामुडुल्लंवु .. गलगि
१२२५

सीतनु गानक श्रीरामुनि शोकमु

मदनवेदनल नुन्मत्तुचंदमुन । बेंदरि चूचुचु दन पेम्पेल्ल मरचि
'तनुमध्य ! नीवित दडवेन्दु वोयि?' । तनि चूचु; 'निंदु रम्म' नि चेर
विलुचु;
व्रियमोप्प वैवडु; वेंनचि रा दिगुचु; । वयलु गौगिट जेंचि पलुमारु वगचु
नोय्यन नूरार्च; नोक कोन्तवडिकि । नोय्यन दनलोन नोककोन्त
देलियु;
'नक्कटा ! सौमित्रि! यवनीतनूज । येक्कडवोयेनो येमैनयदियो !
वेलि नडुगुल चोप्पु वेंदकियु गान । जलजाक्षि यी पर्णशाललो लेदु
१२३१
ए देस वोयेनो यिदीवराक्षि ? । यी देस गादोको! यिदि पर्णशाल
गादोको ! यिदि दंडकावनभूमि । गादोको ! रामुड गानोको नेनु ?
नैन ना प्राणंवुलकट ! यी बोंन्दि । लो नेंट्टुलुन्नवि लोलाक्षि वासि ?

रहेंगे ?' इस विचार को अणुमात्र (लेशमात्र) भी मन में धारण न कर सक, राम मन में विकल हो, ॥ १२२५ ॥

सीता को न देख श्रीराम का दुःख

मदन-वेदनाओं के कारण उन्मत्त के समान, घवराते हुए (इधर-उधर) देखते हुए, अपने समस्त महत्त्व को भूलकर, (यह कल्पना कर कि सीता जी आयी हैं) यह कह कि 'हे तनुमध्ये ! इतनी देर तक कहाँ गयी थी ?' देखते, 'यहाँ आओ' कहकर नियराने के लिए बुलाते, प्यार से आलिंगन करते, जकड़कर नीचे लोटते, शून्य को आलिंगन में ले, कई वार दुखी होते, झट से सान्त्वना देते, थोड़ी देर के वाद झट से होश में आते। (कहते) 'हाय ! सौमित्री ! (पता नहीं) अवनीतनूजा कहाँ गयी है ? उसका क्या हो गया ? स्वच्छता से चरणह्निों के छाप खोजनेपर भी न दीखे, जलजाक्षी इस पर्णशाला में नहीं है। ॥ १२३१ ॥

—इन्दीवराक्षी किस दिशा में गयी है ? इस ओर नहीं क्या ? क्या यह (वही) पर्णशाला नहीं है ? क्या यह (वही) दंडक वनभूमि नहीं है ? मैं क्या राम नहीं हूँ ? तव (यदि मैं राम ही हूँ) तो लोलाक्षी से विछुड़कर हाय, इस शरीर में प्राण कैसे (अटके हुए) हैं ? प्रयत्नकर इस समय

पूनि यी येंड ब्राणमुं तगुल् रोसि । तानुनु दिविकेग दलचितिनेनि
'व्रतमु सेंल्लिपक वच्चें; वीडेट्टि । सुतु' डंचु ननु गणिचुनें दशरथुडु ?
कादेनि व्रतमु सांगंबुगा दीर्चि । मेदिनि बालिप मिन्नक पुरिकि
जनिनचो मिथिलुडच्चटिकि रा नतनि।गनुगोंनगा सिग्गु गादोको नाकु?
नट्टुगान नन्नु नी यडविलो विडिचि। पटुबुद्धि बुरि केगि भरतुनि गांचि
'तन यनुमति सर्वधरणि बालिपु' । मनि चेप्पि, कैककु ना सुमित्रकुनु
गौसल्यकुनु जनकज सन्न तेरगु । ना सुद्दियुनु देल्पु; ननु मदिनिल्पु'
१२४१

मनि राघवुडु रेप्पलल्लन व्रालचें । जनकज मुनु पर्णशाललोनुंडि
पोयिनगति मनंबुन नुंडि वेंडलि । पोयेंडु ननि यड्डुमुग जेचें ननग;
नप्पुडु लक्ष्मणुडन्न चंदंबु । दप्पक चूचि येन्तयु शोकमंदि
'ये तल्लि पनिसेसि, ये तल्लि गोलिचि। ये तल्लि तल्लिगा निटमीद
नडतु ?

निनकुलाधिपु शोक मे त्रोव मान्तु ? । दनकु दल्लुलकुनु दन सोदरुलकु
नेनय नीतनि तोडिदे लोकमगुट । मनुवंशमंतयु मडिसें बो' म्मनुचु,
नंदंद विलपिंप, नंतलो रामु । डोन्दिन मूर्च्छ दा नोककोन्त देलिसि

प्राणों के प्रति आसक्ति से घृणाकर, मैं भी स्वर्ग जाना चाहूँ तो 'प्रण पूरा करके नहीं आया, यह कैसा सुत है ?' कह दशरथ मेरी गणना नहीं करेंगे। नहीं तो प्रण को पूर्णतः पूरा करके मेदिनी (पृथ्वी) पर शासन करने के लिए चुपचाप नगरी में जाऊँ तो वहाँ मिथिलापति आएँगे तो उन्हें देखने में मुझे लज्जा नहीं होगी ? इसलिए मुझे इस अटवि में छोड़कर, पटु-बुद्धि से पुरी (नगर) जाकर, भरत को देखकर, 'अपनी अनुमति से सर्व-धरणि पर शासन करो' कहकर, कैकेयी को, उस सुमित्रा को, कौसल्या को जनकजा के (खो) जाने का विधान (तथा) मेरा समाचार बताओ। मुझे अपने मन में बनाए रखो।' ॥ १२४१ ॥

—(ऐसा) कह राघव ने पलकें धीरे से मूँद लीं, कहीं पहले पर्णशाला से चले जाने की रीति से जनकजा कहीं मन से भी न चली जाएँ। तब लक्ष्मण बड़े भाई की गति को अवश्य देखकर, अधिक दुखी हो, जब-तब रोदन करने लगे कि '(अब आगे) किस माता का कामकर, किस माता की सेवाकर, किस माता को अपनी माता मानकर रहूँगा ? इनकुलाधिप के शोक को किस विध कम करूँ ? मेरे लिए, माताओं के लिए, मेरे भाइयों के लिए प्रीति से इसके (राम के) साथ ही लोक (जीवन) होने के कारण, (अब) (विरहताप से राम की मृत्यु के बाद) समस्त मनुवंश नष्ट हो जाएगा।'

तलकोन्न वगलतो दंडकावनमु । गलय नालोकिंचि कन्नीरु निंचि
वनजाक्षि जिंतिंचि वगलु रेट्टिप । दनमदि शोकिंचि धैर्यंबु डिंचि;
'पोयिते सीत! ना बोन्दितो बासि? । पोयिते ननु ब्राणमुलतोड डिंचि ?
१२५१

पोरि सुरासुरलोकपूजार्ह मनक । हरुविल्लु विरिचिति नतिव ! नी कोऱकु;
बरुनिगा दलपोसि ब्राह्मणुंडनक । परशुरामुनि भंगपरचिति गडगि;
नीरजलोचन ! नीकुनै पूनि । यी रेन्डु निदल नैनु गैकोन्टि;
गडपट निनु बापे गष्टदैवंबु; । पडति ! निंदलबड वालेति नेनु;
नीवेडुकलु सूचि 'नीकेनु ब्रियमु । गाविंतु' ननि पोयि कपट मृगंबु
जंपि तेच्चिचति दानि चर्मबु गडगि;। यिपार नेव्वरिकित्तु नेनिक ?
मदिनेल्लसुखमुलु मऱचि काननकु । वदलक ननु नम्मि वच्चिन चोट
निनु गावलेनैति; नी चन्न त्रोव । गनि रयंबुन वच्चि कदियलेनैति;
बरुवडि जगमेल्ल बालिपजालु । वरशक्ति गलिगिन वानि चंदमुन
मुनुकोनि शरचापमुलु दाल्चि घोर । वनदुर्गभूमुल वर्तिपवच्चि १२६१

इतने में राम मूर्च्छा से थोड़ी सी होश में आकर, सिरपर आ टपके दुःखों से दंडक वन को चौतरफ़ देखकर, आँसू भरकर, वनजाक्षी के बारे में सोचकर (सोचने से) दुःख के दुगुना होनेपर, अपने मन में दुखी होकर, धैर्य को छोड़ (बोले):—'हे सीते ! क्या मेरे शरीर को छोड़कर चली गयी हो ? क्या मुझे प्राणों से छोड़कर चली गयी हो ? ॥ १२५१ ॥

—हे नारी ! तुम्हारे लिए यह न मान कि सुर-असुर-लोक के पूजार्ह है, हर के धनुष को तोड़ डाला था । अन्य मानकर, ब्राह्मण है इसका विचार न कर, सप्रयत्न परशुराम को अपमानित किया था । हे नीरजलोचने ! तुम्हारे लिए चाहकर इन दोनों निन्दाओं को मैंने ग्रहण किया है । अन्त में क्रूरदैव ने तुम्हें (मुझसे) अलग कर दिया है । हे नारी ! मैं निन्दाओं का ही भागी बना हूँ । तुम्हारे कौतूहल को देख 'मैं तुम्हारे लिए प्रिय (कार्य) करूँगा' ऐसा सोच कपटमृग को मारकर, लगकर उसके चर्म को लाया हूँ । अब शोभा से उसे किसे दूँगा ? मन से सभी सुखों को भूल, जंगलों में (मुझे) न छोड़, मुझपर विश्वास रखकर आयी हो, (इस परिस्थिति में) तुम्हें बचा न सका । जिस मार्ग से तुम गयी हो, शीघ्रता से उधर आ (तुमसे) मिल न सका । क्रम से समस्त-जगत पर शासन कर सकने की वरशक्ति से युक्त व्यक्ति के समान, आगे बढ़, शरचाप धारण कर, घोर-वन-दुर्गों में विचरण करने के लिए आकर, ॥ १२६१ ॥

पेंडमरि मावारि पेम्पेल्ल दक्कि । पडतुक! निनु गोलुपडिति ने नेडु;
एणाक्षि! निनुबासि यी शरीरमुन । ब्राणंबु लेंब्भंगि बट्टुदुनिंक ?
मेदिनीतनय ! नी मेनितो बासि । ये देंस भरियिंतु नी देहमिंक ?
नेंलत! नी विरहाग्नि नीदु लावण्य। जलराशि मुनुगक चल्लार्पराडु;
तगिलि यी शोकाब्धि दरुणि! नी मेनु।तगु तेंप्पगाकेट्लु तरियिंपवच्चु?
मगुव! नी पालिड्ल मरुगु लेकुन्न। नोंगि गामु शरवृष्टि कोर्वगरादु;
पडति ! नी मुखचंद्रु प्रापुलेकुन्न । गडतेर वशमें दुःखतमंबुचेत ?
मटुमायदैवंबु मत्सरंबूनि । कटकटा ! कपट मृगव्याजमुननु
नन्नटुकोंनि चनि नळिनाक्षि ! पिदप। निन्निटु कोंनिपोयें; नेडिट्लु मनल
निरुवुर बापिन यी दैवमुनकु । नरुदेन्दु गल? दसाध्यमुलेन्दु गलवु?
१२७१

कोमलि ! निन्नेत्तुकोंनिपोवुनप्पु । डेमनि पलविंचि ? तेमंटि नन्नु ?
ने देशमुन केगि ? तेन्दुन्नदान ? । वेदुःखमुल वेगें ? देमि सेसेंदवु ?
एंव्वरु गोंनिपोयि ? रेत्रोव बोयि ?। तिव्विधि वाटिल्लेंने नेडु मनकु ?
नी यट्टि चदुरालु नी यट्टि मुग्ध । नीयट्टि लावण्यनिधि येंन्दु गलदु?

—पीछे हट (कार्य न कर सके) अपने स्वजनों के महत्त्व को खोकर, हे सुन्दरी ! आज मैं तुमको खो चुका हूँ। हे हरिणाक्षी ! तुमसे बिछुड़कर अब इस शरीर में प्राणों को कैसे धारण करूँगा ? हे मेदिनीतनये ! तुम्हारी देह को खोकर, अब इस देह को कैसे वहन करूँगा ? हे युवती ! यह विरहाग्नि तुम्हारे लावण्य (रूपी)-जलराशि में डूबे बिना बुझाई नहीं जा सकती। इस शोकाब्धि को हे तरुणी ! तुम्हारी देह को समुचित नौका बनाए बिना कैसे पार किया जा सकता है ? हे वनिते ! तुम्हारे स्तनों की आड़ के बिना, लगन के साथ, काम की शरवृष्टि को सहन नहीं कर सकता। तुम्हारे मुखचन्द्र के आश्रय के बिना, दुःखतम को पार करना कैसे सम्भव है ? हाय, हाय ! कपटदैव ने मात्सर्यभाव धारणकर कपटमृग के बहाने मुझे उधर ले जाकर, हे नलिनाक्षी ! उसके बाद तुम्हें इधर ले गया। आज इस प्रकार हम दोनों को अलगकर देनेवाले दैव के लिए असम्भव क्या है ? असाध्य (बातें) कहाँ हैं ? ॥ १२७१ ॥

—हे कोमली ! उठा ले जाते समय तुम क्या कहकर रोई थी ? मुझे क्या कहा था ? किस देश में गयी हो ? कहाँ हो? किन दुःखों से संतप्त हो रही हो ? क्या कर रही हो? कौन (तुम्हें) ले गया है? किस मार्ग से गयी हो? आज दुर्विधि ने हमारे प्रति ऐसा किया है ? तुम जैसी कुशल, तुम जैसी मुग्धा, तुम जैसी लावण्यनिधि कहाँ है? हे कमलाक्षी ! अधिक इच्छा से तुमसे

कलदीको यीकनाडु गरमथि निन्नु । गलसि विनोदिप गमलाक्षि! नाकु?
दीरकुने यीकनाडु तीगरु लेजिगुरु। दरुमु नी मोवि सुधारसमान ?
हरिणाक्षि ! यीकनाटिकव्वुने नाकु । दरुचैन नी चक्कदनमु वीक्षिप ?
जलजाक्षि ! निनु गूडि साकेतपुरमु।गलवाडननि कानिकाननोंन्डोंकटि;
कलकंठि! निनुगूडि कनकहर्म्यमुलु।गलवाडननि कानिकाननोंन्डोंकटि;
यलिवेणि ! निनुगूडि यखिलभोगमुलु । गलवाडननि कानिकान-
नोंन्डोंकटि; १२८१
नेलतुक ! निनुगूडि निखिलसौख्यमुलु । गलवाडननि कानिकान-
नोंन्डोंकटि;
यदि महारण्यमै यिप्पुडुतोंचें; । निदि पर्णशालयै यिप्पुडु तोचें;
निदि नाकु दपमनि यिप्पुडु तोचें; । निदिनाकु दुःखमै यिप्पुडु तोचें;
नेलें महीपुत्रि ! येलें मृगाक्षि ! । येलें सरोजाक्षि ! येलें लतांगि !
येलें वधूमणि ! यिन्नि चंदमुल । गालुचुन्नाड; 'गटकटा' यनवु !
अलसयानमुल बागंचलकिच्चि । ललितांघ्रिरुचि प्रवाळंबुलकिच्चि
वर कुचोन्नति चक्रवाकुलकिच्चि । करमुल कैंम्पु पंकजमुलकिच्चि

मिलकर विनोद करने (सुख भोगने) का दिन (फिर से) मुझे प्राप्त होगा ? अरुण किसलय का उपहास करनेवाले तुम्हारे अधर सुधारस का पान करने का दिन (फिर से) मुझे प्राप्त होगा ? हे हरिणाक्षी ! तुम्हारे सौंदर्य को देखने का (सौभाग्य) किस दिन प्राप्त होगा ? हे जलजाक्षी ! तुम्हारे साथ रहकर यही समझता था कि मैं साकेतपुर में ही हूँ, अन्य जगह नहीं। हे कलकंठी ! तुम्हारे साथ रहकर यह समझता था कि मैं कनक हर्म्य (महल) वाला हूँ, अन्य नहीं। हे अलिवेणी ! तुम्हारे साथ रह कर यही समझता था कि मैं समस्त सम्पदाओं से युक्त हूँ, अन्य नहीं।॥ १२८१ ॥

—हे सुन्दरी ! तुम्हारे साथ रहकर यह समझता था कि मैं समस्त सुखों से युक्त हूँ, अन्य नहीं। अव (तुम्हारे विना) यह महारण्य लग रहा है, अव यह (सचमुच) पर्णशाला जैसी लग रही है। अव यह (सचमुच) तप (साधना) जैसा लग रहा है, अव यह सचमुच दुःख सा लग रहा है। क्यों महीपुत्री ! क्यों मृगाक्षी ! क्यों सरोजाक्षी ! क्यों लतांगी ! क्यों वधूमणि ! इतने प्रकार से मेरे संतप्त होनेपर भी तुम 'हाय' तक नहीं कहती हो (सहानुभूति नहीं प्रकट करती हो)। (तुम्हारा) मंदगमन श्रेष्ठ राजहंसों को देकर, ललित अंघ्रिरुचियाँ प्रवालों को देकर, वर-कुच-औन्नत्य (शोभा) चक्रवाकों को देकर, हाथों की

मेयिचाय क्रौंक्कारुमेरुगुलकिच्चि । नयनवैभवमु मीनमुलकुनिच्चि
चल्लनि मुखदीप्ति चंद्रुनकिच्चि । तेल्लनि नगवु चंद्रिकलकुनिच्चि
चेलुवंपु बलुकुलु चिलुकलकिच्चि । यलकल नुनुगांति यळुलकुनिच्चि
१२९१

रदमुल योप्पु वज्रंबुलकिच्चि । पोदलु मैतावुलु पूवुलकिच्चि
सन्नपुनडुमाकसंबुनकिच्चि । निन्नु दैवमु म्रिगने नेडु सीत !
हा वामलोचन ! हा पद्मगंधि! । हा वारिजानन! हा सीत !' यनुचु
विवशुडै रामभूविभुडु पल्वगल । दविलि दीनत बौन्दि तम्मुनि जूचि
'येदेस बोयेनो यिंदीवराक्षि ? । पोदमा लक्ष्मण ! भूमिज वेदुक ?
नोलसि येपोदललो नुन्नदो ? पोयि। पिलुतमा लक्ष्मण ! पृथ्वीतनूज ?
नेतरुचाटुलकेगेनो यिन्ति ? । चूतमा लक्ष्मण! शुकमजुवाणि ?
नेत्तम्मिकोलकुलकेगेनो ? यरसि । वत्तमा लक्ष्मण! वनजाक्षिनिप्पु ?
डनि यिट्लु पलुमरु नतिदीनवृत्ति। मनमुन गोनि जालिमरिमरि तूलि
धरियिपरानि वेदनलतो राम । धरणिवल्लभुडु गौतमि जेरबोयि
१३०१

'यो लोकपावनि ! यो लोकमात ! । यी लोकपावनि नेरुगवे सीत ?

लालिमा पंकजों को देकर, शरीर की छाया नूतन चंचलाओं को देकर, नयन वैभव मीनों को देकर, शीतल मुखदीप्ति चन्द्र को देकर, श्वेत हास्य चंद्रिकाओं को देकर, सुन्दर वचन सारिकाओं को देकर, केशों की स्निग्ध कांति भ्रमरों को देकर, ॥ १२९१ ॥

—दाँतों की सुघड़ाई वज्रों को देकर, वर्द्धित शरीर की सुगंधियाँ फूलों को देकर, पतली कमर आकाश को देकर, हाय सीते ! भगवान आज तुम्हें निगल गया है। हाय वामलोचने ! हाय पद्मगंधी ! हाय वारिजानने ! हाय सीते !' कहते हुए विवश हो, राम भूविभु अनेक प्रकार दुःखों से युक्त हो, दीन हो, अनुज को देख (बोले) :—'वह इन्दीवराक्षी (पता नहीं) किस दिशा में गयी है ? लक्ष्मण ! क्या भूमिजा को खोजने जाएँ ? थककर (पता नहीं) वह किन झाड़ियों में है ? हे लक्ष्मण ! जाकर पृथ्वीतनूजा को बुलाएँ ? वह इन्ती (स्त्री) (पता नहीं) किन पेड़ों की आड़ में गयी है ? हे लक्ष्मण ! (उस) शुकमंजुवाणी को देखें ? (पता नहीं, कहीं) कमलों से युक्त सरसियों में गयी हो। हे लक्ष्मण ! (उस) वनजाक्षी को अब देख आवें।' ऐसा कहकर बार-बार, मन में अतिदीनवृत्ति लिए, दुःख के कारण बार-बार लड़खड़ाकर, असह्य वेदनाओं से राम-धरणी-वल्लभ गौतमी (नदी) के पास जाकर, बोले:—॥ १३०१ ॥

नो लोकबांधव! यो कर्मसाक्षि!। ये लीलनैन नीवॆरुगवे रीत ?
व़ो सर्वसंचार! यो जगत्प्राण!। या सीत नॆरुगवे यनघ! नीवैन ?
ऩॆलदीग! कानवे यॆलदीगबोडि?। जलजंब! कानवे जलजातगंधि ?
हरिराज! कानवे हरिमध्य नीवु ?। करिराज! कानवे करिराजगमन?
हरिणंब! कानवे हरिणायाताक्षि?। बरभृत! कानवे परभृतवाणि ?
नळिनाथ! कानवे यलिनीलवेणि?।दिलकंब! कानवे तिलकांचितास्य?
जंदन! कानवे चंदनगंधि ?। गुंदंब! कानवे कुंदाभरदन ?'
ऩनुचु विभ्रांतुडै यिट्टुल नंदंदु। जनिचनि वॆदकुचु जालि दूलुचुनु
नॆडयक यिब्भंगि नॆन्दु वैदेहि। दडवि कानक जनस्थानंवु वॆडलि
विन्ननै विरहार्ति विवशुडैयुन्न। यन्न नीक्षिचि यिट्टलनियॆ लक्ष्मणुडु;
१३१२

लक्ष्मणुडु रामु नूरडिचुट

'अन्न! नी वखिललोकाराध्यवरुड;। वुन्नतचित्तुंड; वुरुबलाढ्युडवु;

—'हे लोकपावनी! हे लोकमाता! इस लोकपावनी सीता को नही जानती हो? (सीता का पता नहीं है?) हे लोकवान्धव! हे कर्मसाक्षी (सूर्य)! किसी भी प्रकार से तुम सीता को नहीं जानते? हे सर्वसंचार (करनेवाले = पवन)! हे जगत्प्राण! हे अनघ! तुम भी सीता को नहीं जानते? हे लताकुमारी! लतांगी को नही देखा है? हे जलज! जलजातगंधी को नही देखा है? हे हरिराज! (सिंह श्रेष्ठ) हरिमध्या को तुमने देखा नही है? हे करिराज! करिराजगमना (गजगामिनी) को नहीं देखा है? हे हरिण! (उस) हरिणायताक्षी (हिरन जैसी विशाल आँखों वाली) को देखा है? हे परभृत (कोयल)! परभृतवाणी (पिकवयनी) को देखा है? हे अलिनाथ (भ्रमर)! भ्रमर जैसी नीलवेणी (वाली) को देखा है? हे तिलक! तिलक से समंचित मुखवाली को देखा है? हे चंदन! चंदनगंधी को देखा है? हे कुंद! कुंद जैसी आभावाले रदन (दांत) वाली को देखा है?' (ऐसा) कहते हुए विभ्रान्त हो, इस प्रकार (उन्मत्त दशा में) जहाँ-तहाँ जा-जाकर खोजते हुए, तरस खाते लड़खड़ाते हुए, अनारत इस प्रकार खोजनेपर भी वैदेही को न पाकर, जनस्थान से निकलकर, विवर्ण हो, विरहार्ति से विवश बने रहे। (ऐसे) अग्रज को देखकर लक्ष्मण ने यों कहा:— ॥ १३१२ ॥

लक्ष्मण का राम को सान्त्वना देना

'हे अग्रज! तुम समस्त-लोकाराध्य-वर (श्रेष्ठ) हो, उन्नतचित्तवाले

इंतिकै विभ्रांति निन्निचंदमुल । निंत शोकिंतुरे ? यिनकुलाधीश !
यी मोहशोकंबु लिट्टु नीकु गलवे ? । तामसमोहनार्थमु गादेजगति ?
नरुदुगा नीवु विल्लंदितिवेनि । सुरलैन नीदिक्कु चूडनोपुदुरे ?
यसमानसत्त्वुंडवखिलेश ! नीवु; । वसुधेश ! नायट्टिवाडु नीबंटु;
अक्कटा ! नीकसाध्यंबुलेन्दु गलवु? । तक्कक नी पेम्मिदलपवुगाक ?'
यनिन रामुडु शोकमंतयुनुडिगि । तन यदि देलिवोंन्दि तम्मुनि जूचि
'येनिक निटमीद निन्निचंदमुल । जानकि नेडबासि सैरिपजाल;
वारक नादु दुर्वार बाणमुल । धारुणीतलमु विदारिंचि चोच्चि १३२१
पाताळवासुल बट्टि बंधिंचि । शीतांशुमुखियैन सीत साधिंतु;
गादेनि सप्तसागरमुलु गलचि । मेदिनीधरमुलु मेरमि नुग्गाडि
यीरसंबुन दिग्गजेंद्रकुंभमुलु । दारिंचि मेदिनीतनय साधिंतु;
गादेनि नष्टदिक्पालमर्ममुलु । भेदिंचि यादित्यबिंबंबु द्रुंचि
पोरिबोरि नक्षत्रमुलु डुल्लनेसि ।धरणि जीकटिसेसि तरुणि साधिंतु;

हो, उरु (महान्) बलाढ्य हो। हे इनकुलाधीश ! स्त्री के लिए विभ्रान्त होकर, इतने प्रकार से, इतना दुखी होना (क्या) तुम्हारे लिए उचित है ? ये मोह और शोक यहाँ तुम्हारे लिए (वास्तव में) है ? (नहीं हैं।) यह जगत तो तामसमोहनार्थ ही है न? (तामस गुणवालों को आकर्षित करने के लिए ही है।) अपूर्व रूप में तुम (हाथ में) धनुष लोगे तो देवता भी तुम्हारी ओर देख सकेंगे ? हे अखिलेश ! तुम असमान सत्त्व वाले हो। हे वसुधेश ! मुझ जैसा व्यक्ति तुम्हारा सेवक है। हाय, तुम्हारे लिए असाध्य (विषय) कहाँ है ? (कुछ भी असाध्य नहीं है।) वैसे (तुम) अपने महत्त्व के बारे में सोचते ही नहीं।' (ऐसा) कहनेपर राम ने समस्त दुःख को छोड़कर, अपने मन से होश में आकर, अनुज को देखकर कहा:—'अब आगे मैं किसी भी प्रकार से जानकी से बिछोह को सहन नहीं कर सकूँगा। निरन्तर मेरे दुर्वार (दुर्निवार) बाणों से धारुणी-तल का विदारणकर, (उसमें) पैठकर, ॥ १३२१ ॥

—पातालवासियों को पकड़ बांधकर, शीतांशुमुखी (चन्द्रमुखी) सीता को प्राप्त करूँगा। नहीं तो सप्तसागरों को विकल बनाकर, मेदिनी-धरों (पर्वतों) को अतिशयता से चूर करके, अमर्ष (भाव) से दिग्गजेन्द्र के कुंभ (स्थलों) को बेधकर, मेदिनीतनया को प्राप्त करूँगा। नहीं तो अष्ट दिक्पालों के मर्मों को चीरकर, आदित्यबिंब के टुकड़ेकर, बार-बार नक्षत्रों को तोड़ गिराकर, धरणी को अन्धकार युक्तकर, तरुणी को प्राप्त

गादेनि सकलराक्षसुलु भस्मंबु। गा दीप्तबाणमुल् कडकतो नेसि
यवनि यराक्षसमैयुंड जेसि। तिवुटमै नेडु वैदेहि साधितु;
गादेनि ब्रह्मलोकंबेल्ल गलचि। यादिम ब्रह्म संहारंबु सेसि
बलसि जीवुलकेल्ल भयमु वुट्टिंचि। नेलकोन्न कडिमिमै नेलत साधितु;
नी रीति भुजशक्ति ने जूपकुन्न। जेरि मिन्नक सुरल् सीत जूपुदुरे?
१३३१

यदे! चूडुनादु बाणानलशिखलु। पोंदुवुचुनुन्नवि भुवनंबुलेल्ल;
निदे! चूडु वैदेहि ने विजृंभिंचि। त्रिदशुलु मेच्च साधिचेद ननुचु
नोदवि लोकमुलकु नत्पातकेतु। वुदयिंचेनन बोमलुरक निक्किंचि
बलसि जीवुलतोडि ब्रह्मांडमेल्ल। नलिसेयु संकर्षणस्वरूपंबु
रूपिंचि लयकाल रुद्रुंडु वोले। गोपिंचि विल्लंदुकोन्नमात्रमुन
दलके भूतमुलु; भूतलमेल्ल वडके;। गलगे वयोधुलु; गगनमल्लाडे;
ब्रह्मांडभांडमुल् पगिलिनट्लय्ये;। ब्रह्ममंत्रमु दप्पे; रवि दप्पि नडचे;
नक्षत्रमुलु डुल्ले; नभवुंडु वेरचे। यक्षदेवासुरुलात्म जेड्पडिरि;
अत्तरि सौमित्रि या रामु जूचि। चित्तंबु भयमंद जेतुलु मोगिचि

करूँगा। नहीं तो साहस से दीप्त बाण डाल सकल राक्षसों को भस्मकर, अवनि को अराक्षस (राक्षसरहित) बनाकर, शीघ्रता से आज वैदेही को प्राप्त करूँगा। नहीं तो समस्त ब्रह्मलोक को आलोड़ितकर, आदिम-ब्रह्मा का संहारकर, भरे-पुरे समस्त जीवों को भयभीतकर, स्थिर बने साहस से सुन्दरी को प्राप्त करूँगा। इस रीति से मैं भुजशक्ति का प्रदर्शन न करूँ तो क्या देवता चुपचाप ही सीता को दिखाएँगे? (पता देंगे?) ॥ १३३१ ॥

—वही देखो, मेरी बाणानल-शिखाएँ समस्त भुवनों को समेट ले रही है। यह देखो, मैं विजृंभित होकर त्रिदशों (देवताओं) की प्रशंसा प्राप्त करते हुए, सीता को प्राप्त करूँगा।' (ऐसा) कहते हुए मानों लोकों के लिए उत्पात (सूचक) केतु का उदय हुआ हो, इस प्रकार भौंहों को एक साथ तानकर, भूरि-भूरि जीवों के साथ समस्त ब्रह्माण्ड को चूरकर देनेवाले संकर्षण-स्वरूप को धारणकर, लयकाल के रुद्र के समान क्रुद्ध हो, धनुष को ग्रहण करने मात्र से ही भूत (प्राणी) भयभीत हुए, समस्त भूतल काँप उठा, पयोधियाँ (समुद्र) क्षुब्ध हुईं, गगन हिल उठा, ब्रह्मांड भांड मानों टूट गया, ब्रह्मा का मन्त्र (सृष्टि का नियम-चक्र) टूट गया, रवि भटककर चला, नक्षत्र टूट गिरे, अभव (शिव) भीत हुआ, यक्ष, देव, असुर मन में व्याकुल हुए। उस अवसर पर, सौमित्र ने, उस राम को देख, चित्त में

'काकुत्स्थ ! नीवतिकारुण्यनिधिवि ; । लोकरक्षणं कळालोलचित्तुडवु ;
१३४१

जनकज कौऱकुनै सकललोकमुलु । मुनुमिडि निर्मूलमुलु सेयदगुनें ?
योंन्डोंन्ड वनमुल नोंगि समुद्रमुलु । निडन पुरमुलु निखिलदेशमुलु
नलयक वैदेहि नरसि लेकुन्न । ज़लमु पेंम्पुन मऱि साधितुगानि ।'
यनिन तम्मुनि माटलन्नियु ब्रीति । विनि कोपमुडिगि ता विल्लेक्कुडिंचि
यखिलेशुडगु रामुडट दक्षिणाभि । मुखुडयि तानु दम्मुडु वोवुचुंडें ;
ना तऱि देरुवुन नंदंद नलगि । सीत कोंप्पुन नुंडि चिंदिन विरुलु,
ना तन्वि वक्षोजहाररत्नमुलु, । नाततमणिमयंबैन या नाति
पदनूपुरमुलुर्वि बडियुन्न जूचि । मुदमु शोकंबुनु मूर्छयु गदुर
नप्पुडु रघुरामुडात्म जिंतिंचि । 'तप्प देंव्वडों क्रूर दानवुंडोंकडु
कुटिलकुंतल नेत्तुकोंनि पोयिनाडु ; । कटकटा !' यनि त्रोवगनुगोंन्चु
बोव १३५१

जटायु मरणमु

नंत ना तेरुवुनकनतिदूरमुन । नंतंत राक्षसुनडुगुल चोंप्पु

भीत होकर, हाथ जोड़कर, (कहा):—'हे काकुत्स्थ ! तुम अतिकारुण्य-निधि हो, लोकरक्षणकला में लग्न चित्तवाले हो । ॥ १३४१ ॥

—(क्या तुम्हें) जनकजा के लिए सकल लोकों को प्रथमतः निर्मूल करना चाहिए ? (क्या यह उचित है ?) एक-एक वन में, लगन के साथ समुद्रों में, भरपूर पुरों में, समस्त देशों में, बिना थके, वैदेही को खोजकर; (उनके) प्राप्त न होनेपर, अधिक हठ से फिर ऐसा ही (सीता को) प्राप्त करेंगे ।' अनुज की सभी बातों को प्रीति से सुनकर, क्रोध को छोड़कर, उठाए हुए धनुष को नीचेकर, अखिलेश राम तब दक्षिणाभिमुख हो, अनुज के साथ जाने लगा । उस अवसर पर मार्ग में जहाँ-तहाँ चूर होकर, सीता के जूड़े से बिखरकर गिरे फूलों, उस तत्वंगी के वक्षोज-हार के रत्नों, उस स्त्री के आतत-मणिमय पद-नूपुर को उर्वी पर पड़े हुए देखकर, मोद, शोक (और) मूर्च्छा से अभिभूत हुए । तब रघुराम ने आत्मा (मन) में विचारा:—'निश्चय है, हाय, कोई एक क्रूरदानव कुटिलकुन्तला (सीता) को उठाकर ले गया है ।' (ऐसा) कह मार्ग को देखते हुए जानेपर, ॥ १३५१ ॥

जटायु का मरण

तब उस मार्ग से थोड़ी दूरपर, जहाँ-तहाँ राक्षस के चरणों के चिह्नों

नरयुचु नरयुचु नंदंद पोयि। करमर्थि जूचिरा कमलाप्तकुलुलु
रालिन येंऱकलु रक्तपंकमुन। गूलिन सूतुपै गूलिन तेरु
देरुंक्रिदट बडि तेंगिन यश्वमुलु। धारुणि बडिन पताकखंडमुलु
विरिगि मुंदटनुन्न विटितुन्कलुनु। नरिमुरि बडियुन्न यस्त्रशस्त्रमुलु;
गनि लक्ष्मणुडु सूप गडु जोद्यमंदि। 'घनुलव्वरो यिदु गदनसौख्यंबु
लनुभविंचिनवार' लनि यव्विधंबु। गनुगोनु तलपुन गाकुत्स्थकुलुडु
देरुवंतकंत शोधिचुचु मुंद। ऱगुचो रघुरामुडासमीपमुन
नेलमि यंतयु दूलि येंऱकलु दुनिसि।कलय नेत्तुट दोगि काळ्ळुनु विरिगि
पविचेत गूलिन भर्माद्रि पगिदि। विवशुडै पडियुन्न विहगेंद्रु गांचि
१३६१

'सौमित्रि! चूचिते चपलराक्षसुडु। भूमिज म्रिंगि ता बोंडसूप वेंऱचि
चलियिंचि पक्षिवेषमुन नुन्नाडु;। पेलुकुऱ वीनि जंपेद' नंचु गडगि
घनचापहस्तुडै कदिसिन रामु। गनि पक्षिविभुडु गद्गदकंठुडगुचु
नेत्तुरु ग्रक्कुचु निट्टूर्पुलेसग। गुत्तुक प्राणमुल् गुदिवड बलिके;
'धरणीश! येनु मीतंड्रिकि सखुड;। बरगंग गश्यपब्रह्मपौत्रुडनु;
नरुणनंदनुड; जटायुवन्वाड;। जरियितु नडवुल शैल शृंगमुल

को देखते-देखते जाकर, अधिक इच्छा से उन कमलाप्तकुल वालों ने देखा। झड़े पंख, रक्तपंक में गिरे सारथीपर गिरा हुआ रथ, रथ के नीचे गिरकर कटे अश्व, जमीनपर गिर पड़े झंडे के टुकड़े, टूटकर सामने गिरे हुए बाणों के टुकड़े, इधर-उधर (अस्त-व्यस्त) गिरे हुए अस्त्र-शस्त्रों को लक्ष्मण ने देखा, देखकर बताने पर अति आश्चर्यचकित हो (सोचा) किन्हीं महान् व्यक्तियों ने यहाँ कदन (युद्ध)-सुख का उपभोग किया है', उस विधान को देखने की इच्छा से काकुत्स्थकुलवाले समस्त मार्ग को खोजते हुए, आगे जाते रहे तो रघुराम ने निकट ही समस्त शोभा को खोकर, पंख कटकर, रक्त में डूबकर, पैर के कटनेपर, वज्र से टूटे भर्माद्रि (स्वर्ण पर्वत) के समान, विवश हो पड़े विहगेन्द्र को देख (कहा):— ॥ १३६१ ॥

—'हे सौमित्र देखा, चपलराक्षस भूमिजा को निगल, अपने रूप में दिखाई देने से डरकर, छल से, पक्षी के वेष में है। विह्वल हो (ऐसा) इसे मार डालूंगा।' कहते हुए, सप्रयत्न महान्-चाप को हाथ में ले झपटने वाले राम को देखकर पक्षी-विभु ने गद्गद कंठ होते हुए, खून उगलते हुए, लंबी आहें छोड़ते हुए, कंठ में प्राणों के अटकनेपर (कहा):—'हे धरणीश! मैं तुम्हारे पिता का सखा हूँ। विलसित कश्यप ब्रह्मा का पौत्र हूँ। अरुण नन्दन हूँ। जटायु कहलानेवाला हूँ। जंगलों और

ननि नादु वृत्तांतमंतयु नीकु । विनुपिंपने मुन्नु विशदंबुगाग;
'नट्टिवानिकि निट्टि यापद येट्लु । पुट्टें' नटन्न नो पुण्यात्म ! विनुमु;
वलनोप्प नेडु रावणुडु नी देवि । नॅलमि म्रुच्चिलिकोनि येगुचो नेनु
बोनीक यड्डमै भूरिसत्त्वमुन । वानितो बोराडि वसुध गूलितिनि;
१३७०

अदे वानि केतु सूताश्व समेत । विदितरथंबाजि विरिगॅ नाचेत;
ज्ञलमुन नुडुवीथि जपलराक्षसुडु । नॅलतुक गोनिपोयें; नीवु रावैति;
वेनु नीकीवार्त येंडिगिप गंटि; । बूनि नी शुभमूर्ति बोडगान गंटि;
नतिपुण्यकृतिनैति' ननि विन्नविप। मतिलोन शोकमिन्मडिग राघवुडु
विल्लटु पडवैचि विवशुडै धरणि । द्रेळ्ळि सौमित्रि बोधिंपगा दलसि
'यय्यो ! महात्म ! जटायुवा ! नीकु। निय्यवस्थलु वच्चेने मदर्थमुग ?'
ननि जटायुवुदेहमंदंद तडिवि । तनुरक्तमंतयु दानें पोदुडिचि
तम्मुनि जूचि 'यीतडु मनकोरकु । निम्माड्कि रावणु नॅदिरि पोराडें;
निट्टुवंटि पुण्यात्मुडन्दैन गलडें? । यट्टुगान दिविकीतडरुगकमुन्न

शैलशिखरों पर विचरण करता हूँ। यह अपना सारा वृत्तान्त विशदरूप से (इससे) पहले तुमको सुनाया नही था ? यदि पूछोगे कि ऐसे व्यक्ति को ऐसी विपदा कैसे संप्राप्त हुई तो हे पुण्यात्मा ! सुनो। तरकीब से आज रावण के तुम्हारी देवी को ढंग से चुराकर ले जाते समय मैंने (उसे) जाने न देकर, भूरि सत्त्व से उससे युद्धकर, वसुधा (पर) गिर गया हूँ। ॥ १३७० ॥

—वही उसका केतु (झंडा), सूत, अश्व समेत विदित (प्रसिद्ध) रथ है जो आजि (युद्ध) में मेरे हाथ नष्ट हुआ है। हठ से, उडुवीथि (आकाश मार्ग) से चपलराक्षस नारी को ले गया। तुम (समय पर) नही आए। (यही बड़ी बात है कि) मैं तुम्हे यह समाचार दे सका, सप्रयत्न तुम्हारी शुभमूर्ति को देख सका। अतिपुण्यकृति बन सका।' ऐसा निवेदन करने पर, मन में दुःख के द्विगुणित होनेपर राघव धनुष को उधर डालकर, विवश हो, धरणी पर गिर पड़े। सौमित्र के प्रबोधित करने पर, होश में आकर (बोले):—'हाय, महात्मा ! जटायु ! मदर्थ (मेरे हेतु) तुम इन (दुः) अवस्थाओं को प्राप्त हुए ?' (ऐसा) कहकर जटायु की देह पर जहाँ-तहाँ फेरा, शरीर पर के समस्त रक्त को स्वयं पोंछकर, अनुज को देखकर कहा:—'इसने हमारे लिए इस प्रकार रावण का सामनाकर युद्ध किया। ऐसा पुण्यात्मा और कहीं है ? (नहीं है।) यह ऐसा है

रावणुडेलेंडि राजधानिकि । द्रोवयु, वानि बंधुर पराक्रममु १३८०
नन्नियु नड्गुमी' वन्न लक्ष्मणुडु । ग्रन्नन रघुरामकार्य सहायु
ना जटायुवु निर्जरादिविधेयु । नोज दद्विधमेल्ल नुचितोक्ति नड्ग
गोन्निमाटलु पेरुकोनुचु गुत्तुकनु । ग्रोन्नेत्तुरोलुक बल्कुल कॅडलेक
यतुलपुण्योदयुंडगु रामु जूचि । मतिलोन नतनि नामंबु नेमरक
मोक्षपदानंदमुन बुलकिंचि । पक्षिवल्लभुडंत ब्राणमुल् विडिचें ।
धरणीशसुतुलंत दशरथाधीशु । मरणंबुकंटेंनु मदि जाल वगचि
विहगवल्लभुनकु वेदोक्तयुक्ति । दहनादिकृत्यमुल् दग नाचरिंचि १३८७

कबंध संहारमु

यंत वेवेग क्रौंचारण्यमुनकु । नेंत्तयु गडकतो नेगि यच्चोट
नाना लतावृक्ष नगमृगोदग्र । मैनट्टि योक कोन नरुगुचो नचट
नेंरसिनकुरुलुनु निडुदकोरलुनु । बरुपैन कडुपुनु बडबाकिनोरु १३९०
मिडिग्रुड्ल कन्नुलु मीगाळ्ळदाक । विडिवड्ड चन्नुलु वेंरिचिन्नेलुनु

(अतः) इसके स्वर्ग जाने से पहले रावण की राजधानी के मार्ग, उसके बन्धुर पराक्रम, ।। १३८० ।।

—(ये) सभी तुम पूछ लो ।' कहनेपर लक्ष्मण ने झट से रघुराम के कार्य में सहायक, निर्जरादि के विधेय (आज्ञाकारी) उस जटायु से उत्साह से, उस समस्त प्रकार को, उचित उक्तियों से पूछा । कुछ बातों का उल्लेख करते हुए, गले मे नये रक्त के उमड़नेपर, बात करने का अवकाश न होने पर, अतुलपुण्योदय वाले राम को देखकर, मन मे उसके नाम को न भूलकर, मोक्षपदानन्द से पुलकित होकर, पक्षिवल्लभ ने तब प्राण तज दिये । तब धरणीसुत (राजकुमार) दशरथाधीश के मरण की अपेक्षा मन मे अधिक दुखी हुए । विहगवल्लभ को वेदोक्तयुक्ति से उचित प्रकार से दहनादि कृत्य (सम्पन्न) कर, ।। १३८७ ।।

कबन्ध संहार

—तब अतिशीघ्र क्रौंचारण्य में अधिक साहस से जाकर, वहाँ नानालता-वृक्ष-नग-मृग से उदग्र (भयंकर) वने एक जंगल में जानेपर, वहाँ पके हुए केश, लंबी दाढें, विशाल उदर, बड़ा मुंह, ।। १३९० ।।

—उभरी हुई आँखें, घुटनों तक लटकते कुच, पागलों की-सी करतूतें,

कुदियगट्टिन मॆड गॊप्प पिक्कलुनु । मॊदलंट बलसिन मॊद्दु पॆन्दॊडलु
नलर नयोमुखियनु दैत्यवनित । कलितसौंदर्यलक्षणुनि लक्ष्मणुनि
गनुगॊनि कामिंचि करमंटबट्टि । तनुबॊन्द रम्मनि तरितीपु सेय
जुप्पनातिकि नॆट्टिसुखमिच्चॆ दानि । कप्पाटु नसिधार ननुवार नॊसगि
दुंदुभिपटहादि तूर्यनादमुल । क्रंदुनकंटॆ नग्गलमुगा नपुडु
मुंदर नॊकम्रोत म्रोयंग दानि । चंदंबु गनुगॊनि चनुचु राघवुलु
योजनायत बाहुलॊगि बारसाचि । ये जंतुवुलनैन नेपुमै नॊडिसि
यरिमुरि म्रिगुचु नाकलिचिच्चु । जुरवुचि मस्तकशून्युडै निलिचि
युदरंबु नोरुगानुन्न कबंधु । विदळित बहुजीववितितकबंधु १४००
द्रिदशनिबंधु संदीप्त मदांधु । गदिसि रामुडु सूचि कडु जोद्यमंदॆ;
वाडुनु दन करद्वयमुन वारि । वेडिमि वडि बट्टि वेवेग दिगुव
नन्ननु जूचि यिट्लनियॆ लक्ष्मणुडु; । 'नन्नु वीनिकि भक्षणमु सेसि मीरु
सीतनन्वेषिंचि चेकॊनि सकल । भूतल मेलंग बॊन्ड'न्न नतडु
चिंतिचुचुनु वानि चेतुल वॆन्ट । गॊन्तदूरमु वोयि कूमितम्मुडुनु

संकुचित हो मोटी बनी गरदन, बड़ी-बड़ी पिंडलियाँ, जड़ से मोटी बनी भद्दी बड़ी जाँघों (आदि से) युक्त 'अयोमुखी' नामक दैत्य वनिता के, कलित-सौंदर्य लक्षण से युक्त लक्ष्मण को देखकर, कामी बन (आसक्त होकर) हाथ पकड़कर, अपने को प्राप्त (संभोग) करने के लिए कामना (प्रकट) करनेपर, (लक्ष्मण ने) शूर्पणखा को जो सुख दिया था, उसे भी, उस समय तलवार की धार से, चतुरता से, वही सुख दिया। तब आगे दुंदुभि पटहादि तूर्यनादों के हल्ले से बढ़कर, एक ध्वनि के मुखरित होनेपर, उसके प्रकार को देखते हुए राघव जा रहे थे। योजन-आयत (विशाल) बाहुओं को लगन के साथ फैलाकर, किसी भी जानवर को, अतिशयता से पकड़कर, अस्त-व्यस्त रूप से निगलते हुए, क्षुधाग्नि को बुझाते हुए, मस्तक शून्य हो, उदर ही मुँह हो ऐसा खड़े कबन्ध को, जो विदलित बहुजीव-वितत (समूह)-कबन्ध है, ॥ १४०० ॥

—त्रिदश-निर्बन्ध (देवताओं को बंधनों में डालनेवाला) है, संदीप्त-मदान्ध है, नियराकर, देखकर, राम आश्चर्य-चकित हुआ। उसने भी अपने दो हाथों से, तीक्ष्णता से, झट से पकड़, शीघ्रता से अपनी ओर खींचा। (उसे देख) अग्रज को देख लक्ष्मण ने यों कहा:—'मुझे इसका आहार बनाकर, आप सीता को खोजकर, प्राप्तकर, समस्त भूतल पर शासन करने जाइए।' कहनेपर वह (राम) चिन्ता करते हुए उस (राक्षस) के हाथों के साथ थोड़ी दूर जाकर, लाड़ले अनुज और स्वयं (दोनों ने भी) मन में बहुत

दानुनु बुद्धि नेन्तयु विचारिंचि । पूनिकमीऱ गोब्बुन नोऱलु वेऱिकि
कडुवाडि खड्गमुल् गैकोनि वानि। कडिदि चेतुलु रेन्डु खंडिचुटयुनु
नुब्बेल्ल जेडि दैत्युडोऱलुचु गूलि । गोब्बुन देलिवि गैकोनि वारि जूचि
'मीरेव्वर' नुडु सौमित्रि सर्वबु । श्रीरमचरितंबु सेप्पिन वाडु
विनुकलिचे नंत विज्ञानमोदव ।दनदु वृत्तांतमंतयु जेप्पदोडगे १४१०
'दनुवनु दिव्युंड धरणीश ! येनु;। घनमैन मुनिशापगति निट्टुलैति;
गनकगर्भुनि चेत गामरूपत्व । मुनु जिरजीवित्मुनु गांचि, क्रोव्वि
यिट्टिरूपमु दाल्चि येल्लसंयमुल । बट्टि बांधिपग बरमकोपनुंडु
स्थूलशिरुंडु ना शोभिल्लु मुनिकि । नी लोकमुन दोल्लि येग्गु गाविंप
नतनि शापंबुन ना क्षणंबुननु । नतिघोररूपुंडनै येनु मरल
नतनि ब्रार्थिंचिन नतडु मी वलन। नतुल शापविमुक्ति यगुनंचु बलुक
नदि यादिगा निट्टि याकृति बूनि । त्रिदशेंद्रु नाजि केतेम्मन्न नतडु
कंठंबु तलतोड गडुपुलो बोव । गुंठितंबुग सेसे गुलिशंपातमुन'
ननिन राघवुडु 'दशाननुचंद । मनघ! नी वेरुगुदे?' यनिन वाडनियें;
'नेरुगुदु; गानि मौनींद्रु शापमुन। नेरुक चालदुनाकु; नी शरीरमुन
१४२०

विचारकर, कृतसंकल्प हो, झट से म्यान से खींच, अतितीक्ष्ण खड्ग हाथों मे लेकर, उसके दोनों बलिष्ठ हाथ काट दिये। समस्त गर्व के भग होने पर, दैत्य चिल्लाते हुए गिर गया। झट से होश में आकर, उन्हें देख पूछा, 'आप कौन है ?' तब सौमित्र ने श्रीराम सारा चरित सुनाया तो वह श्रवण-सौभाग्य से विज्ञान (पूर्वज्ञान) के उत्पन्न होनेपर, अपना समस्त वृत्तान्त कहने लगा। ॥ १४१० ॥

—'हे धरणीश ! मैं दनु नामक दिव्य (देवता) हूँ। महान् मुनि के शाप की गति से ऐसा हुआ हूँ। कनकगर्भ (ब्रह्मा) से कामरूपत्व और चिरंजीवत्व (चिरायु) प्राप्तकर, गर्वीला बन, इस प्रकार का रूप धारण कर, सभी सयमियों को पकड़ सताने लगा। (तब) परमक्रोधी, स्थूल-शिर नाम से शोभायमान मुनि को, पूर्व में, इस लोक में, हानि पहुँचाई तो उसके शाप से मैं उसी क्षण घोररूप को प्राप्त हुआ। मेरे फिर प्रार्थना करने पर उन्होने कहा कि आपके कारण अतुल शाप से विमुक्ति होगी। तब से लेकर इस प्रकार की आकृति को धारणकर, त्रिदशेन्द्र (इंद्र) को युद्ध के लिए आह्वान करनेपर उसने सिर के साथ कंठ उदर में चला जाए, इस तरह अकुंठित रूप से कुलिशपात (वज्र का आघात) किया।' (ऐसा) कहनेपर राघव ने (पूछा):—'हे अनघ ! दशानन

ननलंबु दरिकोल्पु; डामीद मीकु। विनुपिंतु देलिय निव्विध' मन्न वारु
दनुवु शरीरंबु दग संस्करिंचि। यनलुन का देहमाहुति सेय
नतडंत दिव्युडै याकाशवीथि। नतुलविमानंबुनंदुंडि पलिकें;
'नो रघुराम ! यायोधनोद्दाम !। कारुण्य तारुण्य गांभीर्यधुर्य !
काकुत्स्थवर्य ! नी कारुण्यदृष्टि। गैकोंन्टि नातोंन्टि कमनीयतनुवु;
विनु; मिक रावणुविधमेल्ल नेनु। विनुपिंतु देटगा विवरिंचि; यतडु
धनदानुजुडु; पुलस्त्यब्रह्म कूर्मि। मनुमडु; तन तपोमहिम मेप्पिंचि
नलुवचे वरमुलुन्नति गांचिनाडु;। चेलगि दिग्विजयंबु चेसिनवाडु;
तोलिवेलुपुलकेल्ल दोरयैनवाडु;। कलवेलुपुलकेल्ल गंटैनवाडु;
बलुतलल् पदियुनु बाहुलिर्वदियु। गलवाडु; लवणसागरखेयमैन
१४३०
लंकापुरंबु पालनसेयुवाडु;। बिंकान रजताद्रि बेरिकिनवाडु'
अनि चेप्पि, रावणुंडट सीत गोनुचु। जनिन मार्गमु सेप्पि सरग ना दनुवु
मरि त्रोव गुरुतुलु मार्गबुनंदु। दरुचैन वस्तुवुल् दप्पक चेप्पि
'मेरगा बंपासमीपबुनंदु। नारूढमति मतंगाश्रमंबोप्पु;

के प्रकार को तुम जानते हो क्या ?' उसने कहा:— 'जानता हूँ। किन्तु मौनीन्द्र के शाप से मुझे पर्याप्त ज्ञान नहीं है। इस शरीर में ॥ १४२० ॥
—अनल को प्रज्वलित कीजिए। उसके बाद, आप जान ले, इस तरह समस्त विधान को बताऊँगा।' (ऐसा) कहनेपर उन्होंने शरीर को ठीक तरह संस्कृतकर, उस देह को अनल की आहुति कर दी। तब वह दिव्य होकर आकाशवीथि में अतुल विमान में से (यों) बोला:—'हे रघुराम ! हे युद्ध में उद्दाम ! हे कारुण्य-तारुण्य-गाम्भीर्य-धुर्य ! हे काकुत्स्थवर ! तुम्हारी करुणादृष्टि के कारण मैंने पूर्व के कमनीय शरीर को प्राप्त किया। सुनो, अब रावण के विधान का मैं स्पष्ट रूप से विवरण दूंगा। वह धनद (कुबेर) का अनुज है। पुलस्त्य ब्रह्मा का लाड़ला पौत्र है। अपनी तपोमहिमा से प्रसन्नकर, ब्रह्मा से वर और औन्नत्य प्राप्त किया है। उल्लसित हो दिग्विजय किया है। वह पूर्व-देवताओं (दानवों) का राजा है, देवताओं का मनोकंटक है, बड़े-बड़े दस सिर, बीस बाहुओं से युक्त है। लवणसागर के खेय (खाई) से युक्त, ॥ १४३० ॥
—लंकापुरी पर शासन करनेवाला है। (वह) गर्व से रजताद्रि को उखाड़नेवाला है।' ऐसा कहकर, रावण जिस ओर मे सीता को ले गया, उस मार्ग को वताकर शीघ्रता से उस दनु ने फिर मार्ग के चिह्न, मार्ग में अक्सर पड़नेवाली वस्तुओं के बारे में अवश्य बताकर (कहा):— 'पम्पा

नम्मुनि शिष्युरालयिनट्टि शबरि । मिम्मु बूजिंचु; नम्मेलत युन्नेडकु
मीरुवोॅन्डट मीकु मिहिरसूनुनकु । गूरिमि चेॅलिमिगलुगुनु; दानिवलन
जानकि बोॅन्देदु; साम्राज्यपदवि । बूनि कांतु' वटंचु बोयेॅनद्दिविकि ।
दनुवट्टु दिव्यपदंबुन करुग । मनुवंशतिलकुलु मरुनाडु कदलि
पंपासरोवर पश्चिमस्थलिनि । संपूर्ण तरुलतासंपद बोॅदलि
प्रवल पुण्यमुलकु वट्टैनयट्टि । शवरियाश्रमवनस्थलिकि बोवुट्यु
१४४०

शवरी सत्कारमु

नेॅदुरुगावच्चि यय्यिति सद्भक्ति । वदमुलकट्टु सागवडि म्रोॅक्कि लेचि
'दशरथवरपुत्र ! ताटकाजैत्र ! । कुशिकसंभव-याग-कुशलप्रयोग !
चिरमुनिध्येय! शिक्षित ताटकेय! । परमगंगातीर पादसंचार !
पदरजोनैर्मल्य पालिताहल्य ! । विदळितहरचंड विपुल कोदंड !
भीमभार्गवरामविरुदविराम ! । कामितपितृ वाक्यकरण सुश्लोक!

(सरोवर) की सीमा के पास, आरूढ़ मतिवाले मतंग (मुनि) का आश्रम है। उस मुनि की शिष्या शबरी आपकी पूजा करती है। वह नारी जहाँ है, वहाँ जाइए। वहाँ आप और मिहिरसून (सूर्यपुत्र, सुग्रीव) में मैत्री होगी। उसके कारण जानकी को प्राप्त करेंगे। साम्राज्यपद को प्राप्तकर शोभित होंगे।' (यह) कह वह दिवि को गया। दनु के उधर दिव्यपद (स्वर्ग) को जाने के बाद, मनुवंशतिलक (राम-लक्ष्मण) दूसरे दिन निकलकर, पम्पासरोवर की पश्चिमस्थली में, सम्पूर्ण-तरुलता-सम्पन्नता से शोभित, प्रबलपुण्यों का आकर बने शबरी-आश्रम-वनस्थल गये। ॥ १४४० ॥

शबरी का सत्कार

(स्वागतार्थ) सामने आकर, उस नारी ने सद्भक्ति से चरणों में लोटकर, प्रणामकर, उठकर, (कहा):—'हे दशरथ-वर पुत्र ! हे ताटकाजैत्र (ताड़का विजयी) ! हे कुशिक सम्भव (कौशिक)-याग कुशलप्रयोगा ! हे मुनियों के चिरध्येय ! हे शिक्षित ताटकेय (ताड़का के पुत्रों को दंडित करनेवाले) ! हे परम गंगातीर-पाद संचार (करनेवाले) ! हे पदरजोनैर्मल्य (से) पालिताहल्या ! हे विदलित हर-चंड-विपुल-कोदंड ! हे भीम-भार्गवराम-विरुद विराम ! कामित पितृवाक्य-करण-सुश्लोक ! प्रकटापराध-विराध निरोध। सकल मुनित्राण ! सत्यप्रवीण ! खरदूषणादि राक्षस-शिरच्छेद (करनेवाले) ! मरणार्थि मारीचमर्दिनाराच ! सीतावियोग

प्रकटापराध विराधनिरोध ! । सकलमुनित्राण ! सत्यप्रवीण !
खरदूषणादि राक्षस शिरश्छेद ! । मराणार्थिमारीचमर्दिनाराञ्च !
सीतावियोग सूचितमोहराग ! । ख्यातखगाध्यक्ष कल्पितमोक्ष !
यलघुविक्रमधाम! यतिपुण्यनाम! । नॆलकॊन्न वेडुक निनु जूडगंटि;
बरिकिंप नातपःफलमंदगंटि; । नरुदैन पुण्यंबुलन्नियुगंटि; १४५०
गाकुत्स्थ! तॆरुवुन गडु डस्सितॆन्दु । बोकु; मायाश्रमंबुन नेडु निलुवु;
मनघात्म ! ना गुरुडैन मतंग । मुनिचेत नी कथल् मुनु विनियुदु;
नी वाद्युडवु, सर्वनिगमवेद्युडवु । गावुन निनु नुतुल् गाविंपदरमॆ ?
यिदि या मातंगमुनींद्रु नाश्रममु । विदित तपश्चर विश्रांतिकरमु'
ननि या महत्त्वंबुलन्नियु दॆलिपि । वनमूलफलमुलु वलनॊप्पदॆच्चि
यिच्चिन भुजियिंचि यॆलमिमै रामु । डच्चट ब्रीतितो ना रात्रि निलिचि
घनजटाबंधैककबरि ना शबरि । गनुगॊनि मरुनाडु काकुत्स्थुडनियॆ;
'दरमिडि नन्नु सीतावियोगाग्नि । दरिकॊन नॆन्तयु दलकुचुन्नाड;
नॊकचोट निलुवलेकुडुकुचुन्नाड; । विकचाब्जमुखि सीत वॆदुकबोवलयु;
बनिविनियॆद' नन्नबरमसंतोष । मुन बॊन्दि शबरि रामुनि जूचि
पलिकॆ १४६०

सूचित मोहराग (से युक्त) ! ख्यात-खगाध्यक्ष-कल्पित मोक्ष ! अलघु विक्रमधाम ! अतिपुण्यनाम ! स्थिर बने कुतूहल से तुमको देख पाई हूँ। सोचनेपर अपने तपः फल को प्राप्तकर सकी। अपूर्व समस्त पुण्यों को प्राप्तकर सकी। ॥ १४५० ॥

—हे काकुत्स्थ (से युक्त)! मार्ग में (मार्गश्रम से) बहुत थक गये हो। कहीं मत जाओ। आज हमारे आश्रम में ठहर जाओ। हे अनघात्म ! मेरे गुरु मतंगमुनि द्वारा पूर्व में तुम्हारी कथाएँ सुनी थीं। तुम आद्य हो, सर्व-निगमवेद्य हो। अतः तुम्हारी नुतियाँ करना सम्भव है ? (असम्भव है।) यह उस मतंग मुनीन्द्र का आश्रम है, विदित (प्रसिद्ध) तपश्चर्या (से पूर्ण तथा) विश्रान्तिकर है।' (ऐसा) कहकर उन सभी महत्वों (पूर्ण बातों) को बताकर, प्रेम से वनमूलफल लाकर, देनेपर, (उन्हें) खाकर, आनन्द से राम वहाँ उस रात को प्रीति से ठहर गये। दूसरे दिन घन जटा-बन्धैक-कबरी (वाली) उस शबरी को देखकर, काकुत्स्थ ने कहा:— 'शीघ्रतत से सीता की वियोगाग्नि के प्रज्वलित होनेपर व्याकुल हो रहा हूँ। एक स्थानपर रहना असह्य होने के कारण संतप्त हो रहा हूँ। विकच-अब्जमुखी सीता को खोजने जाना है। (अब मुझे) जाना है।' (ऐसा) कहनेपर परम प्रसन्न हो, शवरी राम को देख बोली:— ॥ १४६० ॥

'दनुवनु घनुड्डु मुंदर जेयदगिन । पनुलेल्ल देलिपे नेर्पडमुन्ने मीकु;
नेननु मरियु नेनदिये तेल्पेदनु । मानवनाथ ! नीमदि केक्कुनट्लु;
रावणु जंपेदु राम ! नी कूर्चु । देवि गूडेदवु; संदेहंबु वलव;
दैन नेकाकुलैयट पोवदगदु । भानुकुलाधीश ! पगरपैनेपुडु;
निनकुलाधिप! विनुमिट ऋश्यमूक । मनु पर्वतमुनकु नरुगुमु प्रीति;
सुनिशितमति सूर्यसुतुडु सुग्रीवु । डनु वानराधिपुडाकोन्डनुंडु;
दन वधूरत्नंबु दन राज्यपदमु । दन यन्न वालिचे दा गोलुपोयि
यतडु शोकातुरुडै युन्नवाडु; । अतनिकि गपिसेनलप्रमाणम्मु;
लतनिकि विश्वासमात्म बुट्टिंचि । यतनिकि नुपकारमलवड जेसि
यतडु नीवुनु गूडि यट्टु लंक करिगि । यतिसत्त्वु रावणु ननिलोन जंपि
१४७०
बलविक्रमंबुल प्रस्तुति केक्क । जेलुवोन्द नी देवि सीत गैकोनुमु'
अनि प्रीति शबरि कार्यमुलेल्ल देलिपि । तन गुरुवाक्यमुल् दलचि या
क्षणम
यनलंबु दरिकोल्पिया यग्निलोन । दन शरीरमु वेल्व दा समकट्टि
या समयंबुन नंतरिक्ष मुन । वासवप्रमुखगीर्वाणुलंदरुनु
मणिघृणिदेदीप्यमानविमान । गणसमारूढुलै कनुगोनुचुंड

—'दनु नामक महान् (व्यक्ति) ने आगे करणीय (करने योग्य) ढंग से पहले ही तुमको बताया है। फिर भी हे मानवनाथ ! मैं फिर से वही बताऊंगी जिससे तुम्हारे मन में (बात) जमे। हे राम ! रावण का वध करोगे। तुम्हारी लाडली देवी को प्राप्त करोगे। सन्देह की आवश्यकता नहीं है। फिर भी हे भानुकुलाधीश ! एकाकी हो वहाँ शत्रुओं पर नहीं जाना चाहिए। हे इनकुलाधिप ! सुनो, यहाँ ऋश्यमूक नामक पर्वतपर प्रीति से जाओ। उस पर्वतपर सुनिशितमतिवाला सूर्य-सुत सुग्रीव नामक वानराधिप रहता है। अपनी वधू-मणि (तथा) अपने राज्यपद को अपने अग्रज वालि के हाथों खोकर वह शोकातुर बना रहता है। उसकी कपिसेनाएँ अप्रमाण (अनन्त) है। उसके मन में विश्वास को उत्पन्नकर, उसका सुन्दरता से उपकार कर, वह और तुम मिलकर उधर लंका जाओ, अतिसत्त्ववाले रावण को युद्ध में मार डालकर ॥ १४७० ॥

—बलविक्रमों के प्रशंसित होनेपर, शोभा से सीता को ग्रहण करो।' (ऐसा) कहकर प्रीति से शबरी (करणीय) समस्त कार्य बताकर, अपने गुरु के वाक्यों को स्मरणकर, उसी क्षण अनल को प्रज्वलितकर, उस अग्नि में अपने शरीर को होमकर देने के लिए तैयार हुई। उस समय अंतरिक्ष

नारद सनक सनंदन प्रमुख । सार मुनींद्रुलु संतोषमंद
बरमु बरंधामु बरमकल्याणु । बरिपूर्णु बरमात्मु बरमेष्ठिविनुतु
नव्ययु नविकारु नखिलांतरात्मु । नव्यक्तु नखिलेशु नाद्यंतरहितु
भवमुखामरवेद्यु भवरोगवैद्यु । रविकुलांबुधिचंद्रु रघुरामचंद्रु
दनमदिनिलिपि यत्तरि वलगोनुचु । विनुतिंचि शबरि या विभुनि
सन्निधिनि १४८०
ननिलुनियंदु रामार्पणंबुगनु । दन शरीरमु वेल्चि दैवतानीत
मानितदिव्य विमानंबु नेक्कि । नानाविधमुल वर्णनसेय सुरलु
देवलोकमुन कॆन्ते वेड्क जनियें । देवदुंदुभुलु धिंधिम्मनि म्रोय;
ननलमुखंबुन ना रीति शबरि । यनिमिषसौख्यंबुलंदिनयंत १४८४

ऋश्यमूकगमनमु

रमणीयमूर्तुलु रामसौमित्रु । लमितबलोदग्रुलच्चोटु वेंडलि
यनवरतानेकयतगुणानीक । मुनिलोकमगु ऋश्यमूकंबु गनिरि ।
त्रैलोक्यविभुलैन तम राक जूचि । यालोन मदि बॊंगि यानंदमंदि

में, वासव-प्रमुख (आदि) समस्त गीर्वाणों के, मणिघृणि देदीप्यमान-विमान-गण-समारूढ़ होकर देखते समय, नारद-सनक-सनन्दन-प्रमुख (आदि)-सारमुनीन्द्रों के प्रसन्न होनेपर, परम, परंधाम, परमकल्याण (प्रद), परिपूर्ण, परमात्मा, परमेष्ठि (ब्रह्मा)-विनुत, अव्यय, अविकार, अखिलान्तरात्मा, अव्यक्त, अखिलेश, आद्यन्तरहित, भव-मुख (आदि)-अमर-वेद्य, भवरोग-वैद्य, रविकुलांबुधिचन्द्र, रघुरामचन्द्र को अपने मन में रख (स्थिरकर), उस अवसर पर, अनुकूलता से ग्रहणकर, विनुतिकर, शबरी उस विभु की सन्निधि में ॥ १४८० ॥

—अनल में, रामार्पण के रूप में, अपने शरीर को होमकर, दैवतानीत (देवताओं से लाये गये)-मानित-दिव्य विमानपर चढ़कर, देवताओं के नानाविधियों से वर्णन करते रहनेपर, देवदुन्दुभियों के धिम्-धिम् (नाद से) मुखरित होनेपर, अधिक कुतूहल से देवलोक में गयी । अनलमुख से, उस प्रकार शबरी के अनिमिषसुख प्राप्त करने के बाद, ॥ १४८४ ॥

ऋश्यमूक गमन

रमणीय मूर्तिवाले, अमित बल से उदग्र बने राम और सौमित्र ने उस स्थान से निकलकर, अनवरत-अनेक-यत-गुणानीक-मुनिलोक (युक्त) हो, ऋश्यमूक को देखा । त्रैलोक्य विभु (राम-लक्ष्मण) के आगमन को देख,

यनयंबु नॊप्पॆडु नश्रुपूरंबु । लन सॆलयेरुल नलरॆडुदानि
निल मेरुमंदर हिमशैलपतुल । नलिमीड्रि नगियॆडि नगवुलो यनग
सांद्रंवुलैयुंडि ब्रदल दीपिंचु । चंद्रकांतोपलच्छायलदानि
१४९०

सरसिजासनुडु भूचक्रंबुमीद । वरग वर्वतराज्यपट्टंबुगट्टि
शिरसुन बॆट्टिन सेसब्रालनग । नुरुशृंगमुल जुक्कलॊप्पॆडि दानि
नुरुभीति दनु जॊच्चियुन्न सुग्रीवु । बरिभर्वाचिन वालिपै मंडुचुंडु
गति सूर्यकांतमुल् गनकन मंड । नतुल प्रतापोग्रमै यॊप्पुदानि
मॆरुगुलु गॊम्मुलै मॆरय नेतॆन्चि । नॆड्रसि सानुवुलपै नीलमेघमुलु
पॊलुपॊन्द ब्रतिगजंबुलु गागदलचि । मलयु सामजमुल मानैन दानि
नंगजहरु मौळि नलरु नाकाश । गंगना नप्पुलु गरमॊप्पुमिगुल
नायॆड ग्रीडिंचु हंसमालिकलु । मायनि विधुशिरोमालिकल् गाग
बहुशृंगभूरुहपल्लवचयमु । विहित जटाजूट विभवमै यॊप्पु
नासन्नुलै सिद्धुलर्थि सेविंप । ना सदाशिवमूर्ति यन नॊप्पुदानि
१५००

उससे मन में फूलकर, आनन्दित हो, निरन्तर शोभित अश्रुपूर के समान (लगनेवाले) झरनों से विराजमान, पृथ्वीपर (स्थित) मेरु, मन्दर, हिमशैलपतियों को कुचलकर (तिरस्कारकर) उपहास करनेवाली हँसी हो, इस प्रकार आकाश में (उन्नत प्रदेशों में) सान्द्र हो दीप्त होनेवाले चन्द्रकान्त-उपलों की छायाओं से युक्त, ।। १४९० ।।

—सरसिजानन (ब्रह्मा) के भूचक्र पर समुचित रूप से पर्वतराज्य का पद देकर, शिरस् पर रखे मंत्राक्षत हों, इस प्रकार उरु-शृंगोंपर नक्षत्रों से शोभित, उरुभीति से अपनी शरण में आये सुग्रीव को परिभवित (अपमानित) करनेवाले वालिपर वलनेवाले (क्रुद्ध होनेवाले) की तरह सूर्यकान्त (मणियों) के वलते-जलते रहनेपर, अतुल-प्रताप से उग्र हो विराजित, चपलाओं के ही सींग बनकर प्रकाशित होनेपर, निकट आकर, नीलमेघों के (पर्वत-) सानुओंपर शोभित होनेपर (उन्हें) प्रतिगज मानकर, विचरण करनेवाले सामजों (गजों) से शोभित, अंगजहर (शिव) की-मौलि (सिर) पर शोभित आकाश-गंगा के समान, नदियों की अधिक शोभा से युक्त, उस स्थानपर (पर्वतपर) क्रीड़ाएँ करनेवाली हंसमालिकाएँ, स्वच्छ विधु-शिरोमालिकाएँ हों, बहुशृंग-भूरुह (वृक्ष)-पल्लव-चय (समूह) ही विहित जटाजूट का वैभव हो, निकट आये हुए सिद्ध (जनों) के, इच्छा से सेवाएँ करते रहनेपर, सदाशिवमूर्ति के समान सुशोभित, ।। १५०० ।।

बलभेदिमोंदलुगा बरगु देवतलु । कलय नंबुधि द्रच्चि कन्न वस्तुवुलु
पनिवडि तमलोन बालुवोकुन्न । तुनिचिरो, यमृतपानोन्मत्तुलगुचु
मऱचिरो, यदि गड्ड मंचितावगुट । देऱगोप्प दाचिरो दीनिपैननग
गलपवृक्षंबुलु गामधेनुवुलु । वेल्पुगन्नियलुनु विविधौषधमुलु
जिंतामणुलु नेन्दु जेडनि पेन्निधुलु । सतानतरुवुलु सरिनोप्पुदानि
गनिदानि महिमकु गड्ड जोद्यमदि । यिनवंशवल्लभुंडेन्तयु बोगडि
यऱलेनिभक्तितो ननुजुंडु गोलुव । मेऱय नाशैलसमीपंबुनंदु
दरुचैन तोंगल नेत्तम्मुल तेगल । वऱलु पंपासरोवरमुन करिगि
यंदिन नियतितो ना सरोवरमु । नंदु गृतस्नानुडै रामविभुडु
कलय गनुंगोनि कड्ड जोद्यमंदि । विलसिल्लु नोक मावि वृक्षंबुनीड
१५१०
नलसट दीरंग नपुडु लक्ष्मणुडु । सललित शैत्योपचारमुल् सलुप
नीक्षिंचि रघुरामुडेपु दीपिंचि । वृक्षंबु बरिकिंचि वेड्क निट्लनियें;
वनवासमिटु तुदवच्चिनमोंदलु । घनमैन यद्रुलु घनपुण्यनदुलु
दरमिडिकंटिमि; धारुणिनिट्टि । तरुवेन्दुगान मीतरुवुकु सवतु;
सुरपति मोंदलगु सुरलेल्लगूडि । करमर्थि नी तरु गाविंचिरोक्को ?

—बलभेदी (इन्द्र) आदि विलसित देवताओं ने अंबुधि का मंथनकर प्राप्त की गयी वस्तुओं को, वितरण न कर पाने के कारण यहाँ रख दिया हो, (अथवा) अमृतपान से उन्मत्त हो भूल गये हों, इस स्थान के अत्यन्त श्रेष्ठ होने के कारण समुचित रूप से इस (पर्वत) पर छिपाया हो, इस प्रकार के कल्पवृक्ष, कामधेनु, देवकन्याएँ, विविध-औषध, चिन्तामणियाँ, कभी नष्ट न होनेवाली बड़ी निधियाँ, सन्तान-वृक्ष (आदि से) शोभित (उस पर्वत को) देखकर, उसकी महिमा से अधिक चकित हो, इनवंशवल्लभ ने (उसकी) अधिक सराहनाकर, अकलंक भक्ति से अनुज के सेवा करते रहनेपर, प्रकाशित उस शैल के समीप (स्थित) घने उत्पल, लालकमलों के समूहों से शोभित पंपा-सरोवर को जाकर, उचित नियम से उस सरोवर में कृतस्नान होकर, रामविभु ने चारों तरफ देखकर, अधिक चकित होकर, विलसित एक रसाल वृक्ष की छाया में ॥ १५१० ॥

—लक्ष्मण के सललित-शैत्योपचार करनेपर, थकावट के मिटनेपर, रघुराम ने अधिक महिमा से वृक्ष को देखकर, कुतूहल से यों कहा:—'वनवास के लिए यहाँ आने के बाद, महान् पर्वतों को, महान् पुण्यनदियों को शीघ्रता से देखा है। (परन्तु) धारुणि पर इस तरु के समकक्ष अन्य वृक्षों को नहीं देखा। कहीं अधिक इच्छा से सुरपति आदि समस्त देवताओं ने मिलकर

यजुडे यी तरुवुन कायुवु वोसि । निजमुगा निच्चट निलिपिनाडोक्को?
रविसुतु तपमुन रागिलिल ब्रह्म । भुविनि नी तरुवुनु बुट्टिंचिनाडो ?
सेविंचि यमृतंबु चेकोनि सुरलु । भाविंचि रविसुतु पक्षंबु गलिगि
यरयंग मेलैन यमृतंबु वोसि । पुरणिप दरुवुगा बुट्टिंचिनारो ?
यिनुनितो निष्टंबु लिपोन्द जेय । जनुधर्ममुन नुंडि शाखलुन्नतमु
१५२०
लष्टदिक्कुलकुनु ननुवंद बारि । यिष्टफलंबुल नीगोरिनट्लु
पऱचु शाखल रुचि प्रभ नोप्पुमीरि । तेऱचि पर्णबुलु तेजंबुलोप्प
रविदृष्टि चोरनीदु; रात्रुल वेर्मि । दविलि या शशिदीप्ति दनु गाननीदु;
फलमुलायमृतपुफलमुल कंटे । गलशतगुणमुल गडुनोप्पुदानि
दरुराजपट्ट मी धात्रिपै वेड्क । गरमर्थि दिविजुलु गट्टिरो प्रीति ?'
ननि तम्मुनिकि देलप 'नगुगाक' यनुचु । विनियोक्ति नारामविभु
चित्तमेऱिगि
यालोन सौमित्रि यन्नकुभक्ति । शालियै मृदुपर्णशय्य गाविंप,
समुचितस्थिति मृदुशय्य राघवुडु । विमलचित्तंबुन वेड्क शयिंप

इस तरु को बनाया हो ? स्वयं अज (ब्रह्मा) ने ही इस तरु को जीवन प्रदानकर, सचमुच यहाँ प्रतिष्ठित किया हो ? रविसुत (सुग्रीव) के तप से अनुरक्त होकर ब्रह्मा ने भुवि पर इस तरु को उत्पन्न किया हो ? अमृत का सेवनकर, देवताओं ने सोचकर, रविसुत के पक्ष में होकर, परिशीलन-कर, श्रेष्ठ अमृत डालकर, पोषणकर, तरु के रूप में उत्पन्न किया हो ? इन (सूर्य) के साथ प्रेम बढ़ाने के लिए, जननधर्म में रहकर, उन्नत शाखाओं को ॥ १५२० ॥

—आठ दिशाओं में शोभा से फैलाकर, इष्टफल देना चाहकर, फैली शाखाओं की रुचि (कान्ति) की प्रभाओं से अधिक शोभित होकर, खुले पर्णों के तेज के अधिक होनेपर (यह वृक्ष) रवि की दृष्टि (कान्ति) को पैठने नहीं देता। रात्रि के समय प्रेम से लगकर उस शशि-दीप्ति (चाँदनी) को (यह वृक्ष) ज़मीनपर लगने नही देता। उन अमृतफलों की अपेक्षा शतगुणों से युक्त फलों से सुशोभित इसे, इस धात्रीपर अधिक प्रेम से दिविजों ने तरुराजपद प्रदान किया हो।' (ऐसा) कह अनुजको बताने पर विनयोक्ति से (लक्ष्मण ने) कहा—'ऐसा ही होगा।' इस बीच उस रामविभु के मन को जानकर सौमित्र ने अग्रज के प्रति भक्तिशाली होते हुए मृदुपर्ण-शय्या तैयार की। समुचित स्थिति (रूप) से मृदुशय्या पर राघव के विमलचित्त से प्रसन्न हो लेटनेपर, सौमित्र के रघुराम के चरण

सौमित्रि रघुरामु चरणंबुलोत्त । श्रीमीर निद्दरु जेलगुचुनुंड
ननघुनि रघुरामु नट लक्ष्मणुंडु । गनि वेन्डि येलुगेत्ति ग्रक्कुन बलिके ; १५३०
गैकोन्दु चेलिननि कलयंग रोप्पि । चेकोनि चिरुत रा चेरुवबट्टि
येल्लेड शुभमुले येसगु नीकनुचु । बल्लि दीप्तंबुगा बलिके बो चेविकि,
भानुनिपै बक्षि परुसुन नेलुगु । मानुगा गूर्चेद महिपुत्रि नीकु
ननियु निंचुक चेरि यंतयु रोप्प । दनयात्म गडुमेच्चि तम्मुनिजूचि
यिनवंशवल्लभुंडिट्लनि पलिके; । 'वनचराधीशुंडु वडि नेगुदेन्चि
घनभक्ति मनलनु गलयु निच्चटनु; । चनुदुमु लंककु सरगुन मनमु;
नन राम सौमित्रुलधिक संतोष । मुनु बोन्दि सुखगोष्ठि मुदमोप्पनुंडि;
गूलु रावणुडाजि; गूडुनु सीत; । येलुदु लोकंबु लेलमि बेंपोदं'
रारण्यकंड मिपारंग नुतुल । ना रवितारार्कमगु नुर्वि मीद
ननि यंध्रभाष भाषाधीशनिभुडु । विनुत काव्यागम विमल मानसुडु १५४०
पालिताचारुं डपार धीशरधि । भूलोकनिधि गोनबुद्धभूविभुडु
तमतंड्रि विट्ठलधरणीशु पेर । गमनीयगुण धैर्यकनकाद्रि पेर

दाबते रहनेपर, दोनों अधिक शोभा से विराजमान हुए । अनघ रघुराम को उस समय देख लक्ष्मण ने झट से उच्चस्वर में कहा:-- ।। १५३० ।।

--'चीता के निकट आने से यह निश्चय है कि शोभा से सखि (सीता) को प्राप्त करेंगे । कानों में छिपकली ने दीप्तरूप से कहा कि तुम्हें सर्वत्र शुभ होगा । भानु (एक बृक्ष) पर पक्षी की परुष ध्वनि ढंग से तुम्हें महिपुत्री प्राप्त कराएगी ।' थोड़ा निकट आकर, (शुभशकुनों के बारे में) यह सब कहनेपर, अपने में अधिक प्रसन्न होकर, अनुज को देख इनवंश-वल्लभ यों बोला:—'यहाँ शीघ्रता से आकर, वनचर-अधीश (वानर-राजा) अधिक भक्ति से हमसे मिलेगा । हम झट से लंका जाएँगे । युद्ध में रावण गिरेगा । सीता मिलेगी । सुख के बढ़नेपर लोकोंपर शासन करेंगे ।' (ऐसा) कहनेपर राम-सौमित्र अधिक प्रसन्न हो मोद से सुख-गोष्ठि मे रहे । शोभा से अरण्यकाण्ड नुतियों से युक्त हो, रवि-तारार्क (आचन्द्रतारार्क) उर्विपर बने रहे, इस प्रकार आन्ध्रभाषा के भाषाधीश विभु, विनुत काव्यागमविमल मनवाले पालित आचारवाले, अपार धीशरधि (बुद्धिसमुद्र) वाले, भूलोकनिधि गोन बुद्ध राजा ने, अपने पिता विट्ठल धरणीश के नाम पर, ।। १५४० ।।

नाचंद्र तारार्कमगु नोंप्पुमिगिलि । भूचक्रमुन नतिपूज्यमै वेलय
नसमान ललित शब्दार्थ संगतुल । रसिकमै चेलुवोंन्दु रामायणंबु
परगु नलंकार भावनल् निंड । गरमर्थि नारण्यकांडंबु चेप्पें ।
नारूढि नार्षेयमै यादिकाव्य । मै रसिकानंदमै येल्लनाडु
इव्वसुमति नोंप्पु नी पुण्यचरित; । मेंव्वरु सदिविन नेंव्वरु विनिन
सामादि बहुवेदचयधाम राम । नामचिंतामणि नव्यभोगमुलु
परहिताचारमुल् प्रभुविचारमुलु । परिपूर्ण शक्तुलु प्रकटराज्यमुलु
निर्मलकीर्तुलु नित्यसौख्यमुलु । धर्मैकनिष्ठलु दानाभिरतुलु
१५५०

नायुरारोग्यंबु लैश्वर्यमुलुनु । बायक पाटिल्लु बापक्षयंबु
वरपुत्रलब्धियु वैरिनाशनमु । सरिनोंप्पु; धनधान्यचयसमृद्धियुनु
नेविघ्नमुलु लेक यिड्ललो नधिक । लावण्यवतुलैन ललनल पोंन्दु
गोंडुकुलतो नेंप्ड गूडियुंडुटयु । नेंडगाग नापदलेल्ल बायुटयु
सम्मदंबुन बंधुजनुल गूडुटयु । निम्मुल गाम्यंबु लेंडपकुंडुटयु
सततंबु देवतासंतर्पणंबु । बितृगणतृप्तियु बेंम्पारुचुंडु;

—आचन्द्र-तारार्क-विलसित होनेवाली, भूलोक में अतिपूज्य हो शोभित होने के लिए अनुपम ललित-शब्दार्थ-संगतियों से युक्त, रसमय रामायण में अलंकार (और) भावों से परिपूर्ण, अतिरम्यता से प्रस्तुत इस अरण्यकाण्ड की रचना की। सुप्रसिद्ध आर्षग्रन्थ, आदिकाव्य, रसिकों को आनन्द देनेवाले (तथा) सदा इस वसुमति (भूमि) पर शोभायमान होनेवाले इस पुण्यचरित्र को जो भी पढ़ेंगे, जो भी सुनेंगे, उन्हें सामादि-बहुवेद-समूहों का धाम, राम-नाम-चिन्तामणि, नव्यभोग, परहित (करनेवाले) आचार, श्रेष्ठ विचार, परिपूर्ण शक्तियाँ, प्रकट राज्य (के वैभव), निर्मल कीर्तियाँ, नित्यसुख, धर्मनिष्ठा, दान में आसक्ति, ।। १५५० ।।

—आयु, आरोग्य, अधिक सम्पत्ति, अवश्य ही प्राप्त होंगे। पापक्षय, वर-पुत्रलाभ, वैरि-नाश, समुचित रूप से होगा। बिना किसी प्रकार की विघ्न-वाधाओं के धन-धान्य की समृद्धि, घरों में लावण्यवती ललनाओं का सहवास, सदा पुत्रों के साथ मिलकर रहना, सारी विपत्तियों का दूर हो जाना, सम्मोद के साथ वन्धुजनों से मिलकर रहना, प्रेम से कामनाओं की पूर्ति होना, सतत् देवताओं का सतृप्त रहना, पितृगण की तृप्ति में वृद्धि, (आदि) सम्प्राप्त होंगे। (इसे) लिखनेवालों को वर-शुभ-उन्नति और इन्द्रलोक-वास प्राप्त होगा। जब तक कुलपर्वत, जब तक जलधि (समुद्र),

व्रासिन वारिकि वरशुभोन्नतुलु । वासवलोकाधिवासमु गलुगु;
नेन्दाक गुलगिरुलेन्दाक दार । लेन्दाक रविचन्द्रुलेन्दाक दिशलु
नेन्दाक वेदंबु लेन्दाक धरणि । येन्दाक भुवनंबुलेपुदीपिंचु
नंदाक नीकथ यक्षरानंद । संदोहदोहळाचारमै परगु । १५६०

अरण्यकाण्डमु समाप्तमु

जब तक रवि-चन्द्र, जब तक तारे, जब तक वेद, जब तक दिशाएँ, जब तक भुवन (लोक), विशिष्टता से प्रकाशमान रहेंगे, तब तक यह कथा, अक्षर (शाश्वत)- आनन्द-सन्दोह (समूह) का निवास-स्थान होकर, विराजमान रहेगी ॥ १५६० ॥

अरण्यकाण्ड समाप्त

किष्किंधा-काण्डमु

पंपा सरोवर वर्णनमु

श्रीरामुडय्येड शीतलवारि । वारिजोत्पल कैरवंबुल नोप्पु
पंपयु मधुमास फलित तत्तीर । चंपक सहकार चारु कांतार
संपदयुनु जुचि जानकीविरह । कंपितुंडगुचु लक्ष्मणुनकिट्लनियें;
'सौमित्रि ! यी पंप सकलनिर्लिप । कामिनुल् जलकेळि गरमु गांक्षिप
नोप्पु; नी सरसितो नुपमानमरसि । चेप्पंग शक्यमे शेषाहिकैन ?
ननकूलमलयानिलाहति दीन । जनिर्यिचु वो बिंदु सरमुलेन्नैन !
दीनिमहत्त्वंबु देलिसिन चोट । मानसंबुनु नणुमात्रंबे कादे ?
पावन जीवनास्पदमैन दीनि । का वेल्पुडिग्गययैन समंबे ?
युन्नाळविस्फुरितोरुकर्णिकल । दिन्नगा विरिसिन तेल्ल नेत्तम्मि
मरकतस्तंभ निर्मल हेमकुंभ । भरितातपत्रमै पार्श्वंदयमुन १०

पंपा सरोवर का वर्णन

उस समय श्रीराम शीतल वारि (जल) (तथा) वारिज-उत्पल-कैरवों से शोभायमान पंपा (सरोवर) को तथा उसके तीर पर स्थित, मधुमास (वसंत) (के कारण) फलित (विकसित) चंपक, सहकार (से युक्त) चारु-कान्तार-संपदा (सुन्दर वन-वैभव) को देखकर, जानकी-विरह के कारण कंपित होते हुए, लक्ष्मण से यों बोले:- 'हे सौमित्र ! यह पंपा (सरोवर) इस प्रकार सुशोभित है कि समस्त निर्लिप-कामिनियाँ (देवता-स्त्रियाँ) (यहाँ) जलकेली करने के लिए अधिक इच्छा करें। क्या शेषाहि भी इस सरसी के युक्त उपमान को, सोच विचारकर भी, बताने में समर्थ हो सकता है ? (नहीं।) इसमें अनुकूल मलयानिल से आहत (होकर), अनगिनत बिंदु-सर (बूंदों के हार) उत्पन्न हो रहे हैं। जहाँ इसका महत्व समझ में आ जाए, वहाँ मानस (सरोवर) भी अणुमात्र (नगण्य) ही है न ! पावन-जीवन (जल) के आस्पद (आकर) इसकी समता वह देवता-सरोवर भी (कहाँ) कर सकता है ? उन्नाल (ऊंचे मृणाल)-विस्फुरित-उरु-कर्णिकाओं से युक्त, स्वच्छता से विकसित श्वेत कमल, (इस सरोवर के लिए मानों) मरकत स्तंभ (पर स्थित) निर्मल हेमकुंभ से भरित आतपत्र (छत्र) बने हैं। पार्श्वद्वय (दोनों तरफ) में, ।। १० ।।

देटिरेक्कल ग्रम्मु तेम्मेरवलन । नूटाडु तरगल नुय्याल लूगु
विप्पारु रेक्कल वेलयु रायंच । लोप्पारगा वेचु नुभयचामरमु
लेपोन्द नी पंप यीक्षिप नोप्पे । श्रीपूर्ण पट्टाभिषिक्तुनि करणि;
नामनि जव्वनंबलरिन रुचुल । चे मिचु चिन्नारि चिगुरु मानिकपु
सोम्मुलु दाल्चि नल् चुट्टुनु ग्रम्मि । कोम्मलीनिद्दंपु गोलकुटद्दमुन
निक्कि नीडलु सूचि निजविलासमुल । कोंक्कित यौदललूचुचंदमुन
गोन्डोक गालिसोकुल दुदल् गदल । नोन्डोरु बोगडुचुनुन्नचंदमुन
गीरशारिकलर्थि गेरलु निच्चोटि । तीर वनीवाटि दृष्टिप निपुडु
तापंबु मरुनि प्रतापंबु करणि । दीपिंचे ना मेन धृतिनटु गान
सौमित्रि, यिदि वनस्थलिगादु, चूड । गामुनि यायुधागारंबु गानि; २०
चिंतिप निवि माविचिगुरुलु गावु, । कंतुनि क्रोव्वाडि कत्तुलु गानि;
भाविप निवि पूवुबंतुलु गावु, । भावजातुनि बाणपंक्तुलु गानि;
यी येड भृंगझंकृतुलिवि गावु, । डायु मारुनि चाप टंकृतुल् गानि;
वर्णिप निवि पिकध्वनुलुगा, वतनु। कर्णकठोर हुंकारमुल् गानि;

—भ्रमरों के पंखों से उत्पन्न मंद-पवन के कारण डोलनेवाली तरंगों में झूलनेवाले शोभित राजहंसों के (अपने) फैले पंख रूपी चामरों को डुलाने पर सुशोभित यह पंपा, देखने पर, श्री-पूर्ण पट्टाभिषिक्त (राजा) के समान लग रहा है। वसंत में यौवन से संप्राप्त कांतियों से संपन्न हो, नवपल्लव-रूपी माणिक्य-आभरणों को धारणकर, चारों तरफ से घेरकर, (वृक्ष की) शाखाएँ[1], इस स्वच्छ सरसी रूपी दर्पण में, उझककर (अपने) प्रतिबिंबों को देख, कभी-कभी पवन के स्पर्श से अग्र-भागों के हिलने पर ऐसे लग रही हैं मानों अपने विलास (-वैभव) के कारण (प्रसन्न हो), धीरे-धीरे सिर हिला रही हों। अति उत्साह से चहकनेवाले कीर और शारिकाएँ ऐसी लग रही हैं मानों एक दूसरे की प्रशंसा कर रही हों। यहाँ के तीरस्थ वनस्थल को देखने पर अब मेरा (सं-) ताप मन्मथ के प्रताप के समान मेरे शरीर पर दीप्त हुआ है। अब धैर्य नहीं (रह गया) है। अतः हे सौमित्र ! देखने पर (ऐसा लग रहा है) मानों यह वनस्थली नहीं है, काम (देव) का आयुधागार ही है ।। २० ।।

—सोचने पर ये आम्रपल्लव नहीं हैं, बल्कि कामदेव के नये पैने खड्ग हैं। सोचने पर ये पुष्पगुच्छ नहीं हैं, बल्कि भावजात (मन्मथ) की बाणपंक्तियाँ हैं। इस अवसर पर ये भृंग-झंकृतियाँ (भ्रमर-गुंजार) नहीं (लग रही) हैं, बल्कि नियरानेवाले मन्मथ के धनुष के टंकार हैं। वर्णन

१. कोम्म शब्द के दो अर्थ हैं १. शाखा २. नारी

यटु गान नावंटि यंगनारहितु । लेंटुवलें वेगितु री काननमुन ?
गलकंठकलकुहूकारनिस्वनमु । जेलगिचु वनमु गर्जिलु घनाघनमु
गुलुकु पुप्पोंडि मिचु ग्रोक्कारु मिचु । दलिरु गोम्मलु शक्रधनुवुल यनुवु
वसुध रालेंडि विरुल् वर्पोपलमुलु । मुसुरुतेनियसोन मुंचिनवान
गा नोप्पुचु वसंतकालंवु चूड । वानकालमु वोलि वसुध नोप्पियुनु
जिगुराकुशिखलतो जिट्टाडु तेंटि । पोगलतो वोगडपुप्पोडि वूदि तोड
३०
वूरुगुपूवु निप्पुकलतो नेंगडि । यारय विरहुल कग्नियै निगुडि
कंतु प्रतापाग्नि करणि गडंगि । येन्तेनि नाचित्तमेरियिंप दोडगें;
रामाशिरोमणि राजविवास्य । ने मार्गमुन गोनि येगेनो यसुर ?
वनजाक्षि येच्चट वसियिंचिनदियो? । कनिविनि येरुगमिक्कार्यंबुलेल्ल;
नेमि चेयुदुनिक ? नेट्लु वेगितु ? । गामिनीमणि सीत गांतु नेन्नटिकि ?
वंपासरोवरप्रांतकांतार । संपदतोड वसंतुंवुगूड
गलिगिनि गति जनकजतोड गूड । गलुगुने नाकु नोकानोकनाडु ?

करने के लिए ये पिकध्वनियाँ नहीं हैं, ये तो अतनु (अनंग) के कर्णकठोर हुंकार हैं। यह (सब) ऐसा होने पर मुझ जैसा अंगना-रहित (व्यक्ति) इस कानन में किस प्रकार समय व्यतीत करेगा ? कलकंठ-कल-कुहूकार (कुहू की)- निस्वन (ध्वनि) से मुखरित (यह) वन गरजनेवाला घनाघन (काला बादल) है। सुंदर-पराग से उत्कर्ष को प्राप्त (तथा) नूतन मेघ की शोभा की अपेक्षा अधिक सुंदर बनी पुष्पशाखाएँ शक्रधनु (इन्द्रधनुष) के समान हैं, वसुधा पर गिरनेवाले पुष्प ओले हैं। घिरकर झरनेवाली मधुवर्षा, डुबो देनेवाली वर्षा ही है। इस प्रकार शोभायमान वसंतकाल देखने के लिए वर्षाकाल के समान वसुधा पर सुशोभित है। (यह वसंत) नवपल्लव रूपी शिखाओं (ज्वालाओं) से, घूमनेवाले भ्रमररूपी धुँए से, सराहनीय पुष्पपराग रूपी राख के साथ, ॥ ३० ॥

—सेमर के पुष्परूपी अंगारों से बलकर, सोचने पर विरहियों के लिए अग्नि बन व्याप्त होकर, कंत (कामदेव) की प्रताप-अग्नि के समान मेरे चित्त को अधिक परितप्त करने लगा है। रामा (सुन्दरी)-शिरोमणि, राजविवास्य (चंद्रमुखी) को (वह) असुर (पता नहीं) किस मार्ग से ले गया ? (वह) वनजाक्षी (सीता) कहाँ रह रही है ? ऐसे कार्यों को कभी न देखा न सुना है। अब मैं क्या करूँ ? उत्तप्त होकर कैसे रहूँगा ? कामिनीमणि सीता को कब देखूँगा ? पंपा-सरोवर प्रान्त की कान्तार-संपदा के वसंत से युक्त होने के समान क्या मुझे वह दिन प्राप्त

ई पंपलो दम्मुले जूचिनट्लु । भूपुत्रिवदन मॅप्पुडु चूतुनॉक्को ?
इंदु मीनविहार मीक्षिचिनट्टु । लिंदुवदन चूपुलॅप्पुडु चूतु ?
जलपक्षुलिच्चट जतगूडिनट्लु । जलजाक्षि नॅन्नडु जतगूडुवाड ? ४०
देटि यिच्चट दम्मि तेनॅ ग्रोल्करणि । बोटि कॅम्मोवि यॅप्पुडु ग्रोलुवाड ?
नॅक्कडि तलपोत ? लॅक्कडि सीत ? । यॅक्कडि वॅडसेत ? लिवियॅट्लु पॉसगु ?

दम्मुडा ! नीवयोध्यकु जनुमिक; । निम्मॅयि ब्राणंबुलिक निल्पजाल' ननि यनाथुनिक्रिय नंदंद वगव । विनि लक्ष्मणुडु रामविभुनि बोधिंचि 'यिदि येमि रघुराम ! यॅल्ललोकमुलु । मुदलिप बुरुषोत्तमुडवैन नीवु ई मोहशोकंबुलेल तालॅचेदवु ? । कामिनि वंचनगैकॉनि चनिन रावणु जंप नारंभंबु सेयु । मी' वनि तॅलुपुचो नॅन्तयु ब्रीति गनु बंटि यॅलुगिच्चॅ गब्बुलगु पलिकॅ । गनुगॉनितच्चॅलि कलयंग रॉप्पॅ जेकॉनि चिरुत दा जेरुव बॅट्टॅ । गैकॉन्दु चॅलिनवि कलयंग रॉप्पॅ

होगा जब मैं सीता के साथ (मिलकर) रहूँ ? इस पंपा में मैं जिस प्रकार कमलों को देख रहा हूँ, वैसे ही भूपुत्री के वदन (मुख) को कब देखूँगा ? इस (सरोवर) में मीन, विहार को देखने के समान, इन्दुवदना (चंद्रमुखी-सीता) की चितवनों को कब देखूँगा ? जैसे यहाँ जलपक्षी एक संग रहते हैं, उसी तरह मैं कब जलजाक्षी के संग रह पाऊँगा ? ।। ४० ।।

—यहाँ भ्रमर के, कमल के मकरंद को पान करने के समान, नारी के अधर का पान कब कर सकूँगा ? ये कहाँ के विचार ? कहाँ की सीता ? कहाँ के व्यर्थ-कार्य ? ये (विचार) कैसे अनुकूल बनेंगे ? हे अनुज ! तुम अब अयोध्या जाओ । अब (मैं) किसी भी प्रकार प्राणों को रोक रख नहीं सकूँगा ।' (ऐसा) कह अनाथ के समान, बारंबार दुखी होने पर, (उन बातों को) सुनकर, लक्ष्मण विभु राम को प्रबुद्धकर, बोला:- 'यह क्या रघुराम ! समस्त लोकों को आज्ञापित करने (अथवा ललकारने) के लिए पुरुषोत्तम बने तुम इस मोह-शोक को क्यों धारण करते हो ? कामिनी (सीता) को छल से लेकर गये हुए रावण का वध करने के लिए तुम उपक्रम करो ।' (ऐसा) बताने पर, अधिक प्रीति से कनुबंटि[1] ने आवाज़ दी, कुक्कुभ बोला, (उसे) देखकर उसकी सखी सुन्दरता से चहक उठी, सप्रयत्न चीता निकट आया, उसने (चीता ने) आवाज़ दी मानों कह रहा हो कि तुम सखी (स्त्री) को प्राप्त करोगे । कान के पास

१. तित्तिरि सदृश एक पक्षी ।

नेल्लेड शुभमुलुनित्तु मीकनुचु । वल्लि दीप्तंबुगा वलिकेंबो चेविक
भानुपै वामाक्षि परुसनि येलुगु । यानि यिचुक चेवि यंतयु रोप्पे
दनयात्म गडुमेंच्चि तम्मुनि जूचि । यिनवंशवल्लभुडिट्लनि पलिकें;
'वनचराधीशुंडु वडिनेगुदेंन्चि । घनभक्ति मनलनु गलयंग गलडु
कूलु रावणुडाजि; गूडुनुसीत; । नेलुदु लोकंबु लेलमि धरिप'
ननि रामसौमित्तुलधिक संतोप । मुनु वोंन्दि सुखगोष्ठि मुदमंदुचुंड

सुग्रीवसख्यमु

नालोन सुग्रीवुडा ऋश्यमूक । शैलसानुवुलंदु जरियिचु चुंडि
या पंप चेरुवयंदुन्न राम । भूपालु लक्ष्मणु वोडगांचि वेरचि
यचलंबुपैकि गुंडनक चेट्टनक । किचकिचध्वनुलतो गिच्चकोट्टुकोनुचु
नेगन्नाकि योक्कचो नेकांतमुंडि । यगचरुलकु वारिनट चूपिचूपि
'विलुपूनि यिद्दरु विविधशस्त्रास्त्र। कलितुलै यदें पंपकडनुन्नवारु
विनुंडिदु ब्रच्छन्नवपुलै वालि । पनुपुन मनल जंपंग वच्चिनारु
कादेनि मुनुलकु खड्गतूणीर । कोदंड शरमुल गोडव येमिटिकि ?

छिपकली दीप्त रूप से बोली मानों (कह रही हो कि) सर्वथा तुम्हें समस्त सुख दूँगी ॥ ५० ॥

—भानु पर वामाक्षि के परुष स्वर को सुन कान प्रसन्न हो गये। (यह सब देख) अपने मन में अत्यंत प्रसन्न हो, अनुज को देख, इनवंशवल्लभ (राम) ने यों कहा:— 'वनचर-अधीश (वानरों का राजा) शीघ्र आकर, बड़ी भक्ति से हमसे मिलेगा। आजि (युद्ध) में रावण गिरेगा (मरेगा), सीता से भेंट होगी, लोक को प्रसन्न करते हुए शासन करेंगे।' (ऐसा) कह राम (और) सौमित्र अधिक हर्ष प्राप्तकर, सुखगोष्ठी से मुदित हो रहे।

सुग्रीव से मित्रता

इतने में सुग्रीव उस ऋश्यमूक-शैल की तराइयों में विचरण करते हुए, उस पंपा के पास स्थित राजाराम (तथा) लक्ष्मण को देख, भीत होकर, 'किच्किच्' की ध्वनियों से चीत्कार करते हुए, झाड़-झंखाड़ की परवाह न कर, अचल (पर्वत) पर चढ़कर, एक स्थान पर एकांत में रहकर, (अन्य) अगचरों (वानरों) को उन्हें दिखा-दिखा कर कहा:— 'वह (देखो), दो (व्यक्ति) धनुष धारणकर, विविध-शस्त्र-अस्त्र-कलित होकर, पंपा के पास हैं ॥ ६० ॥

विनुत साहसुलैन वीरि वेषमुलु । गनुगॊन्न नाबुद्धि गलगुचुन्नदियु
नॆक्कडिकैननु नेगुट कार्य । मिक्कडनुंडुट यिदि बुद्धिगादु,
यनि मंत्रिवरुलतो नाडुवाक्यमुलु । विनि हनुमंतुडुविमलुडै पलिकॆ:
'बूनि वीरल जूड बुण्यमानसुलु । गानि कानेरु कपटमानसुलु
आ रविचंद्रुलो यन नॊप्पु वीरु । कारणपुरुषुलु कडु विचारिंप
नेरूपमुनवच्चि यिदुन्नवारो । वीरि चॊप्पॆरुगक वॆरुवनेमिटिकि ?'
ननिन सुग्रीवुंडु हनुमंतुजूचि । 'विनु वालि पनुपुन वीरलिच्चटिकि
जनुदेन्चिरनु शंक जनियिंचॆ नाकु । गिनिसि येवेळ ने कीडॆन्चुनॊक्को ? ७०
तन पगतुनि नम्म दगदट्टुगान । जनिनीवु वीरल जतुरत गदिसि
वीरेलवच्चिचरो वीरिलोतॆरिगि । वीरितो भाषिंचि वेवेग वच्चि
पवनज ! नालोनि भयमॆल्लमान्पु । मविरतगति नेगु' मनि वीडुकॊलिपि
यलमॆडु भीतिमैनंदुंड वॆरचि । मलयाद्रि कट्टुवोयॆ मंत्रुलुदानु । ७४

—सुनो, (ये लोग कहीं) वालि की आज्ञा से हमें मारने के लिए यहाँ आए हों। नहीं तो मुनियों को खड्ग-तूणीर-कोदंड-शरों की झंझट क्यों ? विनुत-साहसवाले इन लोगों की वेश-भूषा देखकर मेरी बुद्धि क्षुब्ध हो रही है। (इस स्थान को छोड़) और कहीं चला जाना (समुचित) कार्य है, यहाँ रहना यह बुद्धि (की बात) नहीं है।' इस प्रकार (उसके अपने) मंत्रिवरों से कहनेवाले वाक्यों को सुनकर, विमल (मानस) हो, हनुमान बोला:— 'ध्यान से इन्हें देखने पर, ये पुण्य पुरुष (लगते) हैं, कपट पुरुष (कदापि) नहीं हो सकते। अधिक विचार करने पर, रवि और चन्द्र के समान शोभायमान ये कारण-जन्म हो सकते हैं। किस विधान से आकर यहाँ ठहरे हैं ? इनके विधान को न जानकर, क्यों डरना चाहिए ?' (ऐसा) कहने पर सुग्रीव हनुमान को देख, बोला:— 'सुनो, मेरे मन में शंका उत्पन्न हुई कि वालि के आदेश पर ही ये यहाँ आए हैं। (हम पर) क्रुद्ध होकर, (पता नहीं वालि) किस समय कैसी हानि पहुँचाएगा ? अपने शत्रु का कभी विश्वास नहीं करना चाहिए। यह (बात) ऐसी है, अतः तुम चतुरता से इनके पास जाकर, इनसे बातें कर, ये यहाँ क्यों आए हैं ? उनकी गहराई (मन की बात) क्या है ? (यह जानकर) शीघ्रता से लौटकर, हे पवनज ! मेरे भीतर के भय का निवारण करो। अविरतगति से जाओ।' ऐसा कह बिदाकर, व्याप्त भीति के कारण, वहाँ ठहरने में डरकर, अपने मंत्रियों के साथ (सुग्रीव) मलयाद्रि की ओर गया ॥ ७४ ॥

हनुमंतुडु रामलक्ष्मणुल जेरवच्चुट

अत्तरि हनुमंतुडतिशौर्यवंतु । डुत्तमगुणशीलु डुरुबाहुवलुडु
खरकर तेजुंडु गमनीय मूर्ति । तरुचरुलकु रक्ष धर्मार्थमोक्ष
यतुलकु गुरुभक्ति यभिनवयुक्ति । श्रुतकीर्ति यंजनासुतुडु तावेड्क
नमरलोकमुनकु नावालि बनुप । रमणमै सुग्रीवु राज्यंबु निलुप
वाविरि सुरुलनु वरभक्ति ब्रोव । रावणु जयलक्ष्मि रामुनकोसग
नवनिज घनशोकमंतयु मान्प । रविसूनु मनसेल्ल रागिप जेय ८०
वच्चेनो? यनग नव्वनचरेश्वरुडु । अच्चुगा ना गिरि नल्लन डिगि
वटुवेषधारियै वायुनंदनुडु । नट पंप कडकु दा नर्थितो बोयि
यनुपमंबगु शून्यहस्तंबुतोड । जनि महात्मुलगान जन दटुगान
नलरामुनकु निय्यनर्हमैनट्टि । फलमोक्कटपुडु चेपट्टि वेडुकनु
नरुदेन्चु ननिलजु नपुडु ताजूचि । धरणीशुडिट्लनियें तम्मुनि तोड
'कनकपुवन्नेयु गरमोप्पु मुंजि । घनरत्नकुंडलकलित कर्णमुलु
नरुतरहारंबु लोन्टि जन्निदमु । गरमोप्प गोचियु गरकंकणमुलु

हनुमान का रामलक्ष्मण के निकट आना

उस अवसर पर, अतिशौर्यवाला, उत्तमगुणशीलवाला, उरुबाहुबल वाला, खरकर तेजवाला, कमनीय मूर्तिवाला, तरुचरों का रक्षक, धर्म-अर्थ मोक्ष का इच्छुक, गुरु (अधिक) भक्तिवाला, अभिनव युक्तिवाला (कुशल), श्रुतकीर्तिवाला अंजनासुत वनचरेश्वर हनुमान बड़े आनन्द से, सीधे, पर्वत से उतरकर वहाँ इस प्रकार पहुँचा मानों उस वालि को अमरलोक भेजने के लिए, रमणीय रूप से सुग्रीव को राज्यपद पर सुस्थिर करने के लिए, उत्कृष्टता से देवताओं की वरभक्ति से रक्षा करने के लिए, रावण की जयलक्ष्मी राम को देने के लिए, अवनिजा के महान् शोक के निवारण के लिए, रविसुअन (सुग्रीव) के मन को प्रसन्न बनाने के लिए ।। ८० ।।

—आया हो । (इस प्रकार) वायुनंदन वटु (ब्रह्मचारी) वेशधारी बनकर, वहाँ पंपा के पास बड़ी इच्छा से जाकर, महात्माओं को देखने के लिए जाते समय, अनुपम शून्य हस्त (खाली हाथ) से नहीं जाना चाहिए, अतः राम को देने योग्य एक फल को तब हाथ में लेकर, प्रसन्नता से आया । तब अनिलज को स्वयं देखकर धरणीश (राम) ने अनुज से यों कहाः— 'सुनहरा रंग, अधिक शोभायमान मुंजि (मौंजी), घन-रत्न-कुंडलों से कलित कान, श्रेष्ठ हार, (ब्रह्मचारी के योग्य) यज्ञोपवीत, अधिक शोभित कौपीन, कर-कंकण (से युक्त हो), उपमित करने के लिए अपूर्व शोभा से शोभित

नुपमिप नरुदैन योप्पुलनोप्पु । गपिरूपु मनुजुडु गैकोनेनोक्को ?
ई रूपु रेखयु निलगोरि रुद्रु । डारूढिगा नितडै पुट्टिनाडो ?
काक यी वसुध्रपै गपिमात्रमुनकु । ब्राकटंबुग शुभप्रभ येल गलुगु ?' ९०

ननि रामसौमित्नु लन्योन्यमतुल । ननुनयिंपुचुनुन्न नंत वायुजुडु
कोन्डंत भक्तितो गोरि रामुनकु । दंड प्रणामंबु दगनाचरिंचि
रमण सीताशिरोरत्नंबु देच्चि । यमर रामुनिचेतिकंदिच्चिनट्लु
मरुवक तनचेति माकंदफलमु । करमु रामुनकर्थि गैकानुकिच्चि
मुकुळितहस्तुडै मुंदरनुन्न । नकलंकुडै रामुडतनिकिट्लनिये;
'वनचर ! येन्दुंडि वच्चितिवीवु ?। निनुजूडगा माकु निखिल कार्यमुलु
चेकूरि वच्चेडु चिह्नमुल् दोचु;। नेकांग वीरुंड वेमि कावलसि
वच्चिति? पनियेमि? वाकुव्वुमीवु;। निच्चेद नी कोर्कि यिहपरोन्नतुलु;
देवेंद्रमणि कांति दिव्यदेहंबु । भाविंप सरिगारु प्लवंग पुंगवुलु;
भूषिचु नी मेनि भूषणावळुलु । शेषाहिकैन जर्चिपंगरावु; १००

कपि के रूप को संभवत: किसी मनुष्य ने धारण किया हो। इस रूप-रेखा को चाहकर, रुद्र ने, सुस्थिरता से इस पृथ्वी पर, शायद इस रूप में जन्म लिया होगा। नहीं तो इस वसुधा पर कपिमात्र को, प्रकट रूप से, ऐसी शुभ-प्रभा कैसे प्राप्त होगी ?' ।। ९० ।।

—ऐसा कहकर राम (और) सौमित्र परस्पर समझा रहे थे। तब वायुज पर्वत-सम भक्ति से चाहकर, उचित ढंग से राम को दंड-प्रणामकर, मानों सीता का सुन्दर शिरोरत्न लाकर, ढंग से राम के हाथ में दे रहे हों, इस प्रकार भूले बिना अपने हाथ के रसाल फल को अधिक प्रीति से राम को भेंट स्वरूप दिया। (देकर) मुकुलित-हस्त बन, सामने खड़ा हुआ तो अकलंक (मनवाले) हो राम ने उससे यों कहा:— 'हे वनचर ! तुम कहाँ से आए हो ? तुम्हें देखने पर हमें ऐसे चिह्न दीख रहे हैं कि हमारे समस्त कार्य सफल हो जाएँगे। तुम एकांग (अकेले ही शत्रुनाश करनेवाले) वीर हो। क्या चाहकर आए हो ? काम क्या है ? बोलो तुम। तुम्हारी इच्छा पर इह-पर-उन्नतियाँ (इहलोक और परलोक के वैभव) प्रदान करूँगा। देवेन्द्रमणि की कान्ति से शोभित तुम्हारी दिव्यदेह से कोई प्लवग (वानर)- पुंगव (श्रेष्ठ) सानी नही रखता। तुम्हारे शरीर को भूषित करनेवाले भूषण-समूह की शेषाहि भी चर्चा (वर्णन) नहीं कर सकता ।। १०० ।।

—तुम्हारी माता कौन है ? तुम्हारा पिता कौन है ? तुम्हारे दादा कौन

नी तल्लि यॆव्वरु ? नी तंड्रि यॆवरु ? । नी तात यॆव्वडु ? नी दात यॆवडु ?
नी नाममॆय्यदि ? नी जन्ममॆट्टि ? । भूनुतंवगु नीदु पुट्टुवेलागु ?
चॆप्पुमा' यन विनि चेतुलु मोगिचि । चॆप्पदॊडंगॆनु श्रीराघवुनिकि;

हनुमंतुनि जन्मप्रकारमु

'बुंजिकस्थलमुन बोयि मातल्लि । यंजनीदेवि करांजलि वट्टि
वायुदेवुनि गूर्चि वरपुत्रुगोरि । पायक वेयेंड्लु पदिलमैयुंड
शिवुडुनु बार्वति सितगिरिनुंडि । भुविमीद दमइच्च बोवगा दलचि
नंदिकेश्वरुनि नानंदिंचि यॆक्कि । विदार नाकाशवीथि बोवुचुनु
विद्योपदेशंबु विलसिल्लुचुन्न । युद्यानमटुगांचि युविद यिट्लनियॆ;
'जूचिते देव ! यी चोद्यंबु तॆरगु । पूचिन सहकारभूजंबुक्रिंद
माकंदफलमुलु माकंदुननुचु । माकंद शाखल माटुन नुंडि ११०
मगलु नय्यांड्रुनु मानंबु विडिचि । पगलुनु रतिसेय बाडियॆ' यनुचु
'मर्कटुलकु जॆल्लु महितकृत्यमुलु । तर्किपने' लन दलवांचि गौरि
क्रीगंट वीक्षिचुक्रिय शिवुंडॆरिगि । या गौरि कोर्कि दानंतयु दीर्प

हैं ? तुम्हारा (आश्रय) दाता कौन है ? तुम्हारा नाम क्या है ? तुम्हारा जन्म कैसा है ? तुम्हारा भूनुत (लोकप्रसिद्ध) जन्म किस प्रकार हुआ ? बताओ।' (ऐसा) कहने पर, सुनकर, हाथ जोड़कर, श्रीराघव से यों कहने लगा।

हनुमान का जन्म वृत्तान्त

'हमारी माता अंजनी देवी (एक समय) पुंजिकस्थल जाकर, अंजलि बाँधकर, वरपुत्र की इच्छाकर, वायुदेव के प्रति, निरंतर ही, हजार वर्ष स्थिरता से (तपस्या करती) रही। (उस समय) सितगिरि (श्वेत पर्वत कैलास) से शिव (और) पार्वती भुवि पर अपनी इच्छा से विचरण (करने) का विचार कर, नंदिकेश्वर को प्रसन्नकर, आरूढ हो, आनन्द से आकाशवीथि से जा रहे थे। विद्योपदेश से विलसित उद्यान (वन) को वहाँ देखकर स्त्री (पार्वती) ने यों कहा:— 'हे देव ! देखा न इस विचित्र विधान को। फूले सहकार वृक्ष के नीचे रसालफल हमें प्राप्त होंगे, यह कहते हुए, रसाल शाखाओं की आड़ में, ।। ११० ।।

—पुरुष और स्त्रियाँ लाज को छोड़कर, दिनके समय रतिक्रिया कर रहे हैं। यह उचित कैसे है ?' (ऐसा) कहने पर, (शिवजी ने कहा):— 'इस प्रकार के कृत्य मर्कटों के लिए उचित ही हैं। (इस पर) तर्क करना

दर्किपगा नंत दर्पकुंडेच्चें; । मर्कटरूपुलै महिषियु दानु
नपरिमितानंदुडै सदाशिवुडु । नुपरति दलचि या युविद नीक्षिंचि
पार्वति जेन्त केर्पडजेरबिलिचि । योर्वनि सिग्गुतो नुविद गलिय
रेतंबु दिगजारि रिव्वुरिव्वनुचु । भूतलंबुनकेग भूरिमार्गमुन
झणझण हुंकारशब्दंबुतोड । गणनापथमु दप्पु कालचक्रंबु
करणि नेतेरगा गनि संभ्रमिंचि । करुवलि तन रेन्डुकरमुल दानि
धरियिंचुकोनिवच्चि तरुणीललाम । गरुणिंचि डग्गर गदिसि यंदुन्न १२०
यंजनीदेवि करांजलियंदु । संजीवि यिडु क्रिय जय्यन निडिन
नदिपुच्चि दिगम्रिंगे नंजनीदेवि : । पदिवेलियेडुला पद्मायताक्षि
गर्भंबु मोय नक्कांताललाम । यर्भकु ननु गांचे : नंतने यिनुडु
नुदयिंचु तेजंबु नुग्रत जूचि । पदिलमै फलबुद्धि बक्षियु बोलें
लक्षयोजनमुलु लघुलील नेंगसि । भक्षिप बट्टिन बर्जन्युडलिगि
तनचेति वज्रायुधंबुन वैव । ननघात्म ! येनु बूर्वाद्रिपै बडिति;

क्यों ?' (ऐसा) कहने पर सिर झुकाकर गौरी के तिरछी नज़र से देखने की क्रिया को शिवजी जान गये (और) उस गौरी की इच्छा की पूर्णरूप से पूर्ति करने के लिए सोचा, तब मन्मथ ने (उन्हें) पीड़ित किया। मर्कट रूप धारणकर (अपनी) महिषी (रानी) के साथ सदाशिव अपरिमित आनन्द युक्त हुए। (तब शिवजी) उपरति की सोचकर, उस नारी (पार्वती) को देख, पार्वती को ढंग से निकट बुलाया। अमित लज्जा से (युक्त) पार्वती से संभोग करने पर, रेतस् नीचे फिसलकर, अतिवेग से, भूतल की ओर, भूरि मार्ग में झन-झन के हुंकार शब्द से गणना पथ (गणना के क्रम) से भटकनेवाले कालचक्र के समान आने पर, उसे देख, संभ्रमित हो, वायुदेव ने उसे दोनों हाथों से धारण कर लिया (और) तरुणी-ललाम (अंजना) पर कृपालु बनकर, निकट आकर, वहाँ स्थित ॥ १२० ॥

—अंजनी देवी की करांजलि में, संजीवनी रखने के समान, झट से रख दिया। उसे ले अंजनीदेवी निगल गयी। उस पद्मायताक्षी ने दस हज़ार वर्ष तक गर्भ धारण किया। (तब) उस कान्ता ललाम ने मुझ अर्भक (शिशु) को प्राप्त किया। तभी (पैदा होते ही) सूर्य के उदयकालीन तेज को उग्रता से देख, (उसे) स्थिरता से फल मानकर, पक्षी के समान, आसानी से, एक लाख योजन उड़कर, (सूर्य को) खाने गया। तब पर्जन्य (इन्द्र) ने रुष्ट होकर, अपने हाथ का वज्रायुध मुझ पर डाल दिया। हे अनघात्म !

हनुवु भग्नंबैन यानिमित्तमुन । हनुमंतुडनुपेर नमरिनवाड;
नांजनेयुड; भिक्षुकाकृति निप्पु । डंजक मी चंदमरय वच्चितिनि ।
ऍलमिमातल्लिकि नॅलमि जन्मिंचि । वलनॊप्प नॊक कॊन्नि वर्षमुल् सनग
नॊक कारणमुनकै यॊक ब्रह्म गूर्चि । प्रकटितमति ने दपंबु सेयगनु १३०
बरिकिंचि सरसिजभवुडेगुदेन्चि । 'वरमु वेडु' मटन्न वलगॊनिम्रॊक्कि
वेवेलु विधमुल विनुतुलु सेसि । 'यो विमलात्म ! यी युर्विपैनाकु
गति मोक्षकाम्यार्थकारणंबुलकु । वति यॆव्व ? डतनि ने ब्राथिंचि कॊलुतु'
ननि विन्नविंचिन नब्जसंभवुडु । तन मनोवीथिनि दलपोसि चूचि
'यॊनरंग नी मेनि युरुभूषणमुलु । कनुगॊन्नयातडॆ गतियुनु बतियु
धातयु नीकिष्टदैवंबु सकल । भूतजालमुलकु भुविकॆल्ल कर्त;
नतडॆव्वडनिन नल्लतडॆ विष्णुंडु; । अतडॆ नी गति यनि यरयु मी वात्म'
ननि ब्रह्म चनियॆ; ने नदियादिगाग । घनबुद्धि जरियिंतु गलय लोकमुल
भूपालतिलक ! भूषणावळुलु । दीपिंच गानरु दिविजुलादिगनु

(तव) मैं पूर्वाद्रिपर गिर पड़ा । हनु के भग्न होने के उस कारण से मैं हनुमान के नाम से विराजमान हुआ । (मैं) आंजनेय हूँ, भिक्षुक की आकृति से अब आपके विधान को जानने के लिए आया हूँ । बड़े प्रेम से प्रिय माता के गर्भ से जन्म लेकर, सुन्दरता से कुछ वर्षों के बीतने पर, (किसी) एक कारण से ब्रह्मा के प्रति प्रकटितमति से मैंने तप किया, ॥ १३० ॥

—(मेरा) परिशीलनकर, सरसिजभव आकर बोले:— 'वर मांगो' । ऐसा कहने पर, प्रदक्षिणाकर, प्रणामकर, हजार-हजार प्रकार से विनुतियाँ (स्तुतियाँ) कर, (मैंने कहा):— 'हे विमलात्मा ! इस पृथ्वी पर मेरे लिए गति (आश्रय) (तथा) मोक्ष-काम्यार्थ-कारणों के लिए पति कौन है ? मैं उसकी प्रार्थनाकर, सेवा करूँगा ।' ऐसा निवेदन करने पर अब्जसंभव ने अपनी मनोवीथि में सोच देखा, (कहा):— 'ठीक ढंग से तुम्हारे शरीर पर के उरु-भूषणों को देख पानेवाला ही तुम्हारे लिए गति, पति, धाता तथा तुम्हारा इष्ट देवता है । सकल-भूत-समूह (तथा) समस्त भुवि के लिए वह कर्ता है । पूछोगे कि वह कौन है तो वह विष्णु ही है । अपने मन में विचार कर लो कि वही तुम्हारी गति (आश्रयदाता) है ।' (ऐसा) कह ब्रह्मा चले गये । मैं तब से लेकर, समस्त लोकों में बड़ी-बुद्धि से खोजते हुए, विचरण करता हूँ । 'हे भूपालतिलक ! दिविज आदि मेरी

दीनशरण्य ! मी दृष्टि नन्सोक । नैनवि ना भूषणावळु; लिक १४०
नेनु गृतार्थुंड; नेनु धन्युंड: । नेनुमीभृत्युंड; नेलमितो' ननुचु
गोनकोनि कोनियाडि कोंकि दीपिंप । नैनयु सतोषाब्धि नेन्तयु देलि
तरमिडि साष्टांगदंडंबु वेट्टि । करमुलु मुकुळिंचि कडुप्रीति बलिके;
'नवनि निंद्रोपेंद्रुलर्थि नश्विनुलु । रविचंद्रुलन रूपरम्यत तोड
नेगुबुजंबुलतोड निंदुबिंबंबु । नगु मोगंबुलतोड नळिनपत्रमुल
द्रेगडु कन्नुलतोड दिविजुलु मेच्चि । पोगडु विक्रमकळाभुजशक्तितोड
नरुदैन राजचिह्नमुलतो मीरु । शरचापहस्तुलै चनुदेन्चिनारु;
भूरि तपोवेषमुलुमीकु नेल ? । मीरेव्व ? रिचटिकि मीरु रानेल ?'
यनि सुधामधुरवाक्यंबुल नधिक । विनयविधेयुडै विन्नविंचुटयु
ननि वाक्शुद्धिकि ननि बुद्धिकिनि । ननि चमत्कृति कननि
याकृतिकि १५०
ननि मनः प्रीति कतनि नीतिकिनि । यति संतसिल्लि रामक्षितीश्वरुडु
दम्मुनि जूचि 'यीतनियट्लु वलुक । दम्मिचूलिकिनि नातनि वधूमणिकि
दगुगाक योरुलकु दरमे ? व्याकरण । निगमशास्त्रंबुलन्नियु नेर्व बोलु

भूषणावलियों को दीप्ति से नहीं देख पाते हैं। हे दीनशरण्य ! आपकी दृष्टि के मुझे स्पर्श करने से ये (सचमुच) भूषणावलियाँ बन गयी हैं ।। १४० ।।

—अब मैं कृतार्थ हूँ, मैं धन्य हूँ। (अब) मैं प्रेम से आपका भृत्य हूँ।' (ऐसा) कहते हुए सप्रयत्न प्रशंसाकर, इच्छा के दीप्त होने पर, दीप्त आनंद-अब्धि में अधिक ऊभचूभ होकर, क्रम से साष्टाँग प्रणामकर, हाथ जोड़कर, अत्यंत प्रीति से बोला:— '(इस) पृथ्वी पर प्रेम से, रूप की रमणीयता से इन्द्र-उपेन्द्र, अश्वनी-देवता, रवि-चन्द्र बन, उन्नत भुजाओं से, इन्दु बिंब का तिरस्कार करनेवाले मुखों, नलिन-पत्रों की अवहेलना करनेवाले नेत्रों, दिविजों के सराहकर, प्रशंसा करनेवाली विक्रम कला भुजशक्ति के साथ, अपूर्व राजचिह्नों से युक्त हो, आप शर-चापहस्त हो पधारे हैं। आपको ये भूरि-तपोवेश क्यों ? आप कौन हैं ? यहाँ आपको क्यों आना पड़ा ?' (ऐसा) कह सुधा-मधुर वाक्यों में, अधिक-विनय-विधेय (आज्ञाकारी) हो निवेदन करने पर, उसकी वाक्शुद्धि, उसकी बुद्धि, उसकी चमत्कृति, उसकी आकृति ।। १५० ।।

—उसकी मनःप्रीति, उसकी नीति (आदि) से मन में संतुष्ट हो, राजा राम ने अनुज को देख (कहा):— 'इसके समान बात करना ब्रह्मा (और) उसकी वधूमणि को ही उचित होगा, अन्यों के लिए यह संभव है क्या ? लगता है, इसने व्याकरण, निगम, शास्त्र सभी सीख लिए है। इसका संवाद,

नितनि सल्लापंबु नितनि रूपंबु । नतुल लक्षण लक्षितानुरूपंबु;
निट्टवंटि दूत नाकिपुडब्बेनेनि । घटियिंपकुन्ने मत्कार्यंबुलेल्ल ?
गावुन मत्कार्यगतुलीतनिकिनि । गोविदात्मक ! पूस ग्रुच्चिनयट्लु
चेप्पुमेर्पड' नन्न श्रीरामुतम्मु । डप्पुडु प्रियमंदि हनुमंतु जूचि
'मे मन्नदम्मुल; मिक्ष्वाकुकुलुल;। मी महात्मुडु रामु; डेनु लक्ष्मणुड;
दशरथराजनंदनुल मिद्दरमु; । दशरथु पनुपुन दपसुलै वच्चि
दंडकावनमुन दविलि वर्तिचु । चुंड रामुनिदेवि नुर्वीतनूज १६०
ममु डागुरिचि दुर्मदुडु रावणुडु । क्रममेदि कोनिपोयै गपटमार्गमुन;
वानिपोयिन जाडवदलक वेदक । गानल नडुम नोक्कट वच्चि वच्चि
शबरि सुग्रीवुनि चरितंबु सेप्प । सबलुडातडु माकु सुखुडुगा गोरि
वच्चितिमिचटि; किव्वडुवुन निन्नु । नच्चुगा गनुगोंन्टि' मन नने नतडु;
'विनुडु, सुग्रीवुडु विश्रुतकीर्ति । वनचरुलकु राजु वरबलाधिकुडु
भानुसूनुडु बृहद्भानुतेजुंडु । मानभूषणुडसमानविक्रमुडु
अन्नयौ वालिचे नपहृतराज्य । खिन्नुडै यिप्पुडिग्गिरि नुन्नवाडु;

इसका रूप (दोनों) अतुल लक्षणों से लक्षित-अनुरूप है । अब अगर ऐसा दूत मुझे संप्राप्त हो जाता तो क्या मेरे सभी कार्य संपन्न न होते ? अतः हे कोविदात्मा ! इसे मेरे कार्य की गतियों को क्रम से, ढंग से कह दो ।' (ऐसा) कहने पर श्रीराम का अनुज तब प्रसन्न होकर, हनुमान को देखकर (बोला):— 'हम भाई हैं । इक्ष्वाकु कुलवाले हैं । यह महात्मा राम है । मैं लक्ष्मण हूँ । हम दोनों राजा दशरथ के नंदन (पुत्र) हैं । दशरथ की आज्ञा के कारण, तपसी वन आए हैं, दंडकवन में आसक्त हो विचरण करते रहने पर, राम की देवी (तथा) उर्वीतनूजा (सीता) को ॥ १६० ॥

—हमें धोखे में डाल, दुर्मदवाला रावण, कपट मार्ग से ले गया है । उसके गमन के चिह्नों को न छोड़कर, ढूँढते हुए, काननों के मध्य आ आकर, शबरी के द्वारा सुग्रीव चरित्र को सुना है । वह सबल (बलवान) है, अतः उसे सखा बना लेने के उद्देश्य से यहाँ आए हैं । इस प्रकार तुम्हारे यहाँ आने पर स्वच्छता से तुम्हें देखा है ।' ऐसा कहने पर उसने कहा:— 'सुनिए, सुग्रीव विश्रुत कीर्तिवाला है, वनचरों का राजा है, श्रेष्ठ बल से श्रेष्ठ बना है । भानुसून (सुग्रीव) बृहत्-भानु-तेज से युक्त है, मान-भूषण है, असमान विक्रमवाला है । बड़े भाई वालि से अपहृत-राज्य (के कारण) खिन्न (दुखी) वन अब इस गिरि पर रहता है । (वह) आर्त (बना हुआ) है । (उसे) आपका सखा बना सकता हूँ ।' (ऐसा)

आर्तुडु मी सखुडै युंडजेय । नेर्तु' नावुडु 'रामनृपु चित्तमेरिगि
मरियुनु सौमित्रि मारुति जूचि । तेरगोप्प नतनितो धीरुडै पलिकें;
'विनु राघवुडु लोकविख्यातसत्त्वु । डनुपम दिव्यास्त्रु डतुलसाहसुडु १७०
करुणापयोधि यगाधमानसुडु । शरणागतत्राण सद्धर्मपरुडु
जगदेकनाथु डशरणशरण्यु । डगणितगुणगण्युडधिकतेजुंडु
अतिलोकविक्रमुंडतिसत्यवादि; । हितुडनै बंटनै येनु वर्तितु;
गावुन राघवक्ष्मापालमणिकि । ले वसाध्यंबुलु लेक्किप नेन्दु;
गुटिलराक्षसुडुन्न गुरुतु मुन्नेरिगि । यिट सीतसाधिंप नेम चालुदुमु;
अलवुमै नेकाकुलै पोवदगदु; । दलपोय निदि राजधर्मंबुगादु;
गान नी सुग्रीवु गैकोनुतलपु । मानवाधीश्वरु मदिलोन गलदु;
इट मीद नी कार्यमेवेन्टनैन । घटियिंपु' मनवुडु गरुवलिसुतुडु
नेरय संतसमंदि निजमूर्ति जूपि । मरि तन्नु रामलक्ष्मणुलु मन्निप
दनु गृतकृत्युगा दपननंदनुनि । वनचरराजुगा वरुसनेन्नुचुनु १८०
गनुगव हर्षाश्रुकणमुलु दोरुग ।गोनियाडि कोनियाडि कोर्कै दीपिंप

कहने पर राजा राम के चित्त (-प्रवृत्ति) को जानकर, सौमित्र ने मारुति को देखकर, ढंग से उससे, धीर बनकर, कहा:— 'सुनो, (ये) राघव लोक विख्यात-सत्त्व वाला है। अनुपम दिव्यास्त्र से युक्त है, अतुल साहस वाला है, ।। १७० ।।

—करुणा-पयोधि है, अगाध-मानसवाला है, शरणागत-त्राण (रक्षा) (रूपी) सद्धर्म में निरत है। जगदेकनाथ, अशरणशरण्य, अगणितगुणगण्य, अधिक तेजवाला, अतिलोकविक्रमवाला, अतिसत्यवादी है। (इनके) हितू और सेवक होकर मैं रहता हूँ। अतः राघव-क्ष्मापाल (राजा)-मणि के लिए गणना करने पर कहीं असाध्य नहीं हैं। कुटिल राक्षस जहाँ है, उसका पता पहले से लगाकर, सीता को ला सकने में हम समर्थ ही हैं। समर्थ के पास अकेले होकर जाना नहीं चाहिए। विचार करने पर यह राजधर्म नहीं है। अतः तुम्हारे सुग्रीव को (अपना) लेने का विचार मानवाधीश्वर (राजा-राम) के मन में है। अब आगे इस कार्य को किसी भी प्रकार संपन्न करो।' ऐसा कहने पर पवनपुत्र अधिक संतुष्ट होकर, निजमूर्ति (स्वस्वरूप) का प्रदर्शनकर, फिर अपने को राम-लक्ष्मण के सम्मानित करने पर क्रम से अपने को कृतकृत्य मानते हुए, तपननन्दन (सुग्रीव) को वनचर-राजा मानते हुए ।। १८० ।।

—नेत्रयुग्म से हर्षाश्रुकणों के ढुलकने पर, प्रशंसाकर, इच्छा के प्रदीप्त होने

मनमुन संतोषमग्नुलै वारु । ननुवुन वीड्कॊल्प नतिसंभ्रममुन
नरिगि राघवुल वृत्तांतमंतयुनु । दॊरकॊनि सुग्रीवुतो नॊप्पजॆप्पि
रमणीयमूर्तुल रामलक्ष्मणुल । कमनीयगुणमुलु गडगि वर्णिचि
'जगतिपै नतिशोकसागरमग्नु । डगु नीकु रघुरामुडनु तॆप्प दॊरकॆ;
ब्रदिकिति सुग्रीव ! पगयॆल्ल दीरॆ । दुदमुट्टगलिगॆ संतोषंबु नीकु;
ना दशरथपुत्रु डा सुचारित्रु । डा दयापरमूर्ति या सत्यवादि
या महाभुजशालि या महाबलुडु । श्रीमहाविष्णुंडु श्रीनिवासुंडु
आ पुण्यनिधि रामुडट नीकु गर्त ! । नी पुण्यमेमन नेर्तु सुग्रीव !
निरुपेदवानिकि निधियब्बिनट्लु । करमर्थि नीकिट गल्गॆ राघवुडु;
१९०

ना महात्मुडु तंड्रियानति दंड । कामध्यमुन नुंडगा दशाननुडु
दनदेवि म्रुच्चिलितनमुन नॆत्ति । कॊनिपोव वानि मार्कॊनि त्रुंचि वैव
जिंतिचि नी तोड जॆलिमि वार्टिप । नॆन्तयु दलपोसि यॆतॆन्चॆ निटकु'
ननिन सुग्रीवुंडु हर्षबुनॊन्दि । यनिलनंदनु जूचि यर्थितो बलिकॆ;
'बवनज ! नालोनि भयमॆल्ल नडगॆ । दविलि ये जेसिनतपमॆल्ल बंडॆ ।
नलवडनाकु नीयट्टि यंजनमु । गलुगुट गंटि राघवनिधानंबु;

पर, मन में आनंद हो उनके आनुकूल्यता से बिदा करने पर, अतिसंभ्रम से जाकर, राघवों के समस्त वृत्तान्त को, क्रम से, सुग्रीव को कह सुनाया। रमणीयमूर्तिवाले राम-लक्ष्मणों के कमनीय-गुणों को सप्रयत्न वर्णनकर, (यों कहा):— 'जगती में अतिशोक-सागर मग्न बने तुम्हे रघुराम रूपी नौका मिल गयी है। हे सुग्रीव ! (अब तुम) जीवित (सुरक्षित) हो गये, समस्त प्रतिशोध पूर्ण हो गया, तुम्हें अब पूर्ण संतोष प्राप्त हो गया। वह दशरथपुत्र, वह सुचरित्र, वह दयापरमूर्ति, वह सत्यवादी, वह महाभुजशाली, वह महाबली, श्रीमहाविष्णु, श्रीनिवास, वह पुण्यनिधि अब तुम्हारा कर्ता है न। हे सुग्रीव ! तुम्हारे पुण्य की कैसे प्रशंसा करूँ? जैसे कंगाल को निधि प्राप्त हुई है, उसी प्रकार बड़ी इच्छा से तुम्हें यहाँ राघव प्राप्त हुए ॥ १९० ॥

—वह महात्मा, पिता की आज्ञा से दंडक-मध्य में रहते समय दशानन के अपनी देवी के धोखे से उठा ले जाने पर, उसका सामनाकर, वध करने की सोचकर, तुम्हारे साथ मैत्री करने की बहुत सोचकर यहाँ आया है।' (ऐसा) कहने पर सुग्रीव हर्षित होकर अनिलनंदन को देख, इच्छा से बोला:— 'हे पवनज ! मेरे अंतर का सारा भय दूर हो गया। लगकर मैंने जो तपस्या की, वह फलीभूत हो गया। ढंग से मुझे तुम जैसे अंजन के प्राप्त

गलगक नी वंटि कर्णधारुंडु । गलुगुट शोकाब्धि गडतेर गंटि;
गडकतो ऋश्यमूकमुनकु वारि । दोडितेच्चि नादैन दु:खंबु मान्पु;
पों' म्मनवुडु वायुपुत्रुंडु वोयि । नेंम्मितो रघुरामनृपतिकि म्रोक्कि
'देव ! सुग्रीवुंडु देवरसखुडु । देव ! निन् दर्शिप दिवुरुचुन्नाडु;
२००

विच्चेयु'डनि विन्नविंचिन रामु । डिच्चलो हर्षिचि येपु दीपिंचि
हनुमंतु गोंनियाडि, यतिशुभलग्न । मुन हनुमंतुंडु मुंदट नडुव
दन तम्मुडुनु दानु दग ऋश्यमूक । मुन केगि यानंदमुन बोंन्देविभुडु;
हनुमंतुडंत नेकांतबुनंदु । मनुजेश्वरुल डिंचि मलयाद्रिकरिगि
श्रीरामदर्शनोद्ग्रीवु सुग्रीवु । जेरि 'नी कोरिकल् चेकूरेंनिक;
रा देव ! वच्चिरि रामलक्ष्मणुलु । आदट ऋश्यमूकाद्रिकि' ननुडु
निनतनूजुडु प्रीति निच्चलो नुब्बि। मनुजवेषमु बूनि मकुटकेयूर
घनतर श्रृंगार कलितुडै यपुडु । तन मंत्रुलुनु दानु दडयकेतेंन्चि
डक्किन भक्तितो डासि रामुनकु । जक्क सागिलि म्रोक्कि संप्रीति
वेंलय

रहने पर, (मैंने) राघवरूपी निधान को प्राप्त किया। क्षुब्ध न होने वाले तुम जैसे कर्णधार के प्राप्त होने पर शोकाब्धि को पूरा-पूरा पार कर सका। सप्रयत्न ऋश्यमूक को उन्हें लिवा लाकर मेरे दु:ख का निवारण करो। जाओ।' ऐसा कहने पर वायुपुत्र जाकर, प्रेम से रघुराम-नृपति को प्रणामकर, (कहा):— 'हे देव ! सुग्रीव, श्रीमान् (आप) का मित्र है, हे देव ! आपके दर्शन के लिए तड़प रहा है ॥ २०० ॥

—पधारिए।' (ऐसा) कह निवेदन करने पर, राम मन में हर्षित होकर, विकास से दीप्त होकर, हनुमान की प्रशंसाकर, अतिशुभलग्न में हनुमान के आगे-आगे चलने पर, अपने अनुज के साथ, ढंग से ऋश्यमूक जाकर विभु (राम) आनंदित हुए। तब हनुमान मनुजेश्वरों को एकांत में उतारकर, मलयाद्रि जाकर, श्रीराम-दर्शन-उद्ग्रीव (उत्कंठित) सुग्रीव के पास पहुँचकर (कहा):— 'अब तुम्हारी इच्छाएँ संपन्न हुई हैं। आओ देव ! ऋश्यमूकाद्रि को राम-लक्ष्मण आए हैं।' (ऐसा) कहने पर इन-तनूज (सूर्यपुत्र-सुग्रीव) प्रीति से मन में फूलकर, मनुजवेष धारणकर, मकुट-केयूर (के) घनतर अधिक-श्रृंगार (सजावट) से कलित होकर, तब अपने मंत्रियों के साथ विलंब न कर, अधिक भक्ति से निकट आकर, ठीक तरह राम को साष्टांग प्रणामकर, सम्यक् प्रीति के अभिव्यक्त होने पर,

मुकुळितहस्तुडै मुंदर नुन्न । यकलंकु सुग्रीवु नधिपति सूचि २१०
यालिंगनमु सेसि यतनिकट्लनियें । नालोन दरहासममृतमै तॊरुग
'नी वायुसुतुनिचे निनसुत ! येनु । नी विक्रमंबुनु नी गुणावळुलु
विनि प्रीति नॊन्दिति ; वॆरवकुमिक । नॆनसि नी पगवानि नेनॆ चंपॆदनु ;
नाकाप्तबंधुंडु नम्मिन सखुडु । नी कंटॆ नॊकडु गणिंचिन गलडे'
यनि यूरडिंचिन नर्कनंदनुडु । 'ननिचिन वंटुगा नन्न गैकॊन्टि ;
देव ! नी कारुण्यदृष्टि नन् सोकॆ ; । ने वॆन्ट धन्युड नेनिक नॆन्दु ;
नलिनाप्तकुलनाथ ! ना यट्टि वंटु । गलिगॆ नी ; कटुगान गडिमिदीपिप
'दिविरि रावणुनि वधिंचिति गडगि । यवनिज गैकॊन्टि' ननि निश्चयिंपु'
मनि राम सुग्रीवु लन्योन्यभाष । लनलु सन्निधि चेसिरकलंकुलैरि
अटनंगदुंडु नुदंचितांगदुडु । आटप्रायमुगाग नप्पुडावनुल २२०
गिरुलनु वॆसवच्चि क्रियनाडुचुंडि । या राम सुग्रीवु लन्योन्यमु गनि
नॆन्नगा ननलु सन्निधि बल्कु पल्कु । लन्नियु विनि वच्चि या तार तोड

मुकुलित-हस्त हुए। समक्ष स्थित अकलंक सुग्रीव को अधिपति ने देखा ॥ २१० ॥

—आलिंगन कर दरहास के अमृत के छलकने पर, उससे यों कहा:— 'हे इनसुत ! इस वायुसुत से मैं तुम्हारे विक्रम, तुम्हारी गुणावलि सुनकर संप्रीत हुआ। अब डरो मत। तुम्हारे शत्रु का मैं ही वध करूँगा। गणना करने पर तुम्हारे सिवा मेरे लिए आप्तबंधु, विश्वासपात्र सखा दूसरा कौन है ?' (ऐसा) कह सान्त्वना देने पर अर्कनंदन ने कहा:— आज्ञाकारी सेवक के रूप में मुझे स्वीकार किया है। हे देव ! तुम्हारी करुण-दृष्टि ने मेरा स्पर्श किया है। किसी भी प्रकार से मैं सर्वथा धन्य हूँ। हे नलिनाप्त (सूर्य)-कुल-नाथ ! मुझ जैसा सेवक (तुम्हें) मिला है न ! अतः साहस के दीप्त होने पर यह निश्चय करो कि शीघ्र ही रावण का सप्रयत्न वध कर दिया है। (और) अवनिजा को प्राप्त किया है।' (ऐसा) कह राम (और) सुग्रीव अनल के समक्ष परस्पर वचन-बद्ध हो, अकलंक बने। वहाँ उदंचित-अंगद (उभरे हुए शरीर वाला) अंगद ने, क्रीडा करने योग्य आयु के होने पर, तब उन वनों में' ॥ २२० ॥

—गिरियों में, शीघ्र आकर खेलते रहते हुए, उन राम सुग्रीवों के अन्योन्य (परस्पर) सुघड़ाई से, अनल के समक्ष कहे हुए वचनों को सुना (सुनकर) (नगर में) लौट आकर, उस तारा से (सबकुछ) निवेदन किया। मन

विन्नविंचिन मदि वेगुचु दार। कोन्नि दुश्शंकल गुंदुचु नुंडे
नपुडर्कसुतुनकु ना राघवुनकु। विपुल भूरुहशाख विरिचि वायुजुडु
आसनंबुग वैवनंदु गूचुंडि। यासक्ति बरिणाममरयुचुन्नंत

सुग्रीवुडु रामुनकु जनकजतोडवुलिच्चुट

नहिमांशुनंदनुंडंत राघवुल। गुहलोपलिकि दोडुकोनिपोयि प्रीति
भूमिज मुनु वैचिपोयिन तोडवु। लामेयि गोनिवच्चि यपुडिट्टु-
लनियेः
'दनुजुंडु नी देवि धरणितनूज। वनसीमलोपल वंचन मिम्मु
गनुब्रामि गगनमार्गंबुन नेत्ति। कोनिपोव बोव नी कोन्डपै मम्मु
गनुगोनि मिमु बेक्कु गतुल जीरुचुनु। जिनुगुपय्येद कोन्गु सिंचि बंधिचि
२३०
तन तोडवुलु वैचि तरलाक्षि वोये'। ननि चेप्पि यिच्चिन नधिपति सूचि
मुन्नुगा वगलनु मुन्नीट मुनिगि। कन्नीट ना सोम्मु कसटेल्ल गडिगि
यदंद युरमुन नाभूषणमुलु। पोन्दिचि पोन्दिचि भूमिज दलचि
पेलुकुरि लक्ष्मणु बेकोनि पिलिचि। पलिके बल्कुल दोट्टुपाटु रेट्टिप

में व्याकुल होते हुए, कुछ दुष्ट शंकाओं के कारण (तारा) व्यथित होती रही। तब वायुज ने अर्कसुत तथा राघव के लिए विपुल-भूरुह (वृक्ष)-शाखा तोड़कर आसन के रूप में डाल दिया, उस पर बैठकर, आसक्ति से परिणाम (के बारे में) सोच रहे थे, तब—

सुग्रीव का राम को सीता के आभूषण देना

—अहिमांश (सूर्य)-नंदन तब राघव को गुफ़ा में लिवा ले गया, प्रीति से, भूमिजा जो आभूषण डाल गयी थी, उस अवसरपर उन्हें लाकर, तब यों कहा:— 'दनुज तुम्हारी देवी धरणीतनूजा को वनप्रांत में छल से, आपको धोखा देकर, गगनमार्ग से ले जाता रहा, जाता रहा। (तब) इस पर्वत पर हमें देखकर, आपको कई प्रकार से पुकारते हुए, महीन आंचल के कोर को फाड़कर, (आभूषण) बाँधकर, ॥ २३० ॥
—अपने आभरण डालकर, तरलाक्षी (सीता) चली गयी।' ऐसा कहकर (आभरण) देनेपर, राजा (राम) ने (उन्हें) देखा, (देखते ही) पहले शोकरूपी सागर में डूबकर, अश्रुधाराओं से उन आभरणों के मैल को धोकर, बार-बार उन आभरणों को उर (वक्ष) से लगा लगाकर, भूमिजा का स्मरणकर, विह्वल हो, लक्ष्मण को नाम ले पुकारकर, वचनों में

'गंटे लक्ष्मण ! सीत कैसेतलेल्ल । मंटिपालय्यें नी माड्कि नेमदु ?
नी तोंडवुलु वैव नेमि कारणमो ? । यी तोंडवुलतोड नेमैनयदियो ?
यदिगाक प्राणनायकियैन सीत । कुदुरु निंडिन गब्बिगुब्बलमीद
बायनि यी जिलुगु पय्येंदचीर । की यवस्थलु वच्चे नेमनवच्चु ?
बन्नीट ना पादपाद्ममुल् गडिगि । युन्नति दडियोत्तुलोत्तुनु दीन
सुरटिगाविंचि भासुरलील दीन । भरितश्रमांबुवुल् पलुचगा जेयु
२४०
मेरुगारु मेंदीग मेंरयुचुंडंग । मरि यडुगुलकुनु मडुगुलु पर्चु'
ननि यनि शोकिंचि यश्रुवुल् निंचि । यनयंबु मूर्छिल्लि यंतलो देलिसि
प्रियभक्ति विनमितग्रीवु सुग्रीवु । नयसनाथुडु रघुनाथुडीक्षिंचि
'ना देवि गोनिचन्न नाकेशवैरि । ये देशमुन नुंडु? नेद्दिपुरंबु ?
चेप्पुमा सुग्रीव ! सीत साधितु । निप्पुड ना दैत्यु नेपडगितु'
ना विनि या रविनंदनुंडनियें । 'देव ! या द्रोहि मंदिरमेनेरुग
नेरुगकुंडिननेमि ? यिटमीद वानि । नेरुगु नेरंगोल्ल नेनु गावितु;
नीवु शोकमु मानि निश्चलधैर्य । भावपौरुषगुणास्पदुडवु गम्मु;

लड़खड़ाहट के बढ़नेपर बोला:— 'देखा लक्ष्मण ! सीता के सभी शृंगार (आभरण) इस प्रकार मिट्टी में मिल गये हैं। क्या कहूँ ? इन आभूषणों को डाल देने का क्या कारण हो सकता है ? इन आभूषणों को साथ रखने में क्या (कष्ट) हुआ होगा ? यही नहीं, (मेरी) प्राण-नायकी सीता के स्थिर (सुडौल) बने पीन-स्तनोंपर निरंतर रहनेवाले इस महीन अंचल को कैसी दुर्गति प्राप्त हुई। (अब) क्या कहें ? मेरे पदपद्मों को गुलाबजल से धोकर, श्रेष्ठता से इसी (अंचल) से पोंछती थी, (इसे) पंखा बनाकर, सुंदर-ढंग से इससे (मेरे शरीरपर) भरे हुए श्रमबिंदुओं को सुखा देती थी; ॥ २४० ॥

—प्रभायुक्त तनुलता के दीप्त होनेपर, (इसी से) (मेरे) चरणों के लिए पांवडे बिछाती थी।' (ऐसा) कह-कहकर शोककर, आँसू भरकर, बार-बार मूर्च्छित होकर, इतने में होश में आकर, प्रियभक्ति से विनमित-ग्रीववाले (झुके सिरवाले) सुग्रीव को नय-सनाथ, रघुनाथ देखकर बोले:— 'मेरी देवी को ले जानेवाला नाकेश (इन्द्र)-वैरी किस देश में रहता है ? (उसका) नगर कौन-सा है ? बोलो सुग्रीव ? सीता को लाऊँगा, उस दैत्य के विकास का उन्मूलन करूँगा।' (ऐसा) कहनेपर, सुनकर, रविनंदन ने कहा:— 'हे देव (प्रभू) ! उस द्रोही के निवास को मैं नहीं जानता। न जाननेपर क्या हुआ ? आगे उसे जानने का समस्त

अतिपराक्रमशालियगु वालि चेत। हृतकळत्रुडनय्यु नेनित वगव;
नापद यनु वार्धि कात्मधैर्यंबु। देप सेयुनतंडु तेलिविमै नुंडु: २५०
मावंटि प्राकृतमतुलचदमुन। नीवुनु शोकिंप नीतिये देव !'
यनग ना सुग्रीवुनाप्तवाक्यमुलु। विनि धीरुडै रघुवीरुडेन्तयुनु
इंतिवोयिन जाड येरिगिनपिदप। नंतरंगंबुन नडलुचु नुनिकि
मगपाडि गादनि मदिनिश्चयिंचि। जगतीशुडंतट संतापमुडिगि
'सरसिजानन बूनि साधिंचुपनिकि। बरिकिंचि मुनु वीनि पग दीर्तु' ननुचु
मीनाक्षि तोडवु सौमित्रिकंदिच्चि। भूनाथुडपुडर्कपुत्रु नीक्षिंचि
'यापदकुनु सखुडैनट्लु चुट्ट। मापाटि गानेरडारसि चूड:
गुणवंतुडैननु गुणहीनुडैन। गणियिंप सखुडे सद्गति यंड्रु बुधुलु:
गावुन नी चेलिम गलिगिन नाकु। ने वेन्ट गोदवले: दिदि निश्चयंबु:
नी पत्नि गैकोनि निनु जंपगोरु। पापात्मुडगु वालि बरिमार्तुनिपुडे; २६०

विधान मैं करूँगा। तुम शोक त्यागकर, निश्चल-धैर्य-भाव (तथा) पौरुष-गुणास्पद बनो। अतिपराक्रम-शाली वालि द्वारा (अप-) हृतकलत्र वाला होता हुआ भी मैं इतना दुखी नहीं होता। विपत्तिरूपी वारिधि (सागर) के लिए आत्मधैर्य को नौका बनानेवाला सजग (सावधान) रहता है। ॥ २५० ॥

—हे देव ! हम जैसे प्राकृतमति (साधारण बुद्धि) वालों के समान तुम्हें भी दुखी होना नीति (-संगत) है क्या ? (समुचित नही है।) (ऐसा) कहनेपर उस सुग्रीव के आप्त वाक्यों को सुनकर, अधिक धैर्य धारणकर नारी के (खो) जाने का पता जानने के बाद अंतरंग में व्याकुल होते रहना पुरुषलक्षण नहीं है, ऐसा मन में निश्चयकर, तब जगदीश ने संताप त्यागकर (यों) सोचा:— 'सरसिजानना (पद्ममुखी) को प्राप्त करने के कार्य (के बारे में) सोचकर, उससे पहले इसके (सुग्रीव के) शत्रु का संहार करूँगा।' (ऐसा) सोचते हुए, मीनाक्षी (सीता) के आभूषण सौमित्र को सौंपकर, भूनाथ (राम) ने तब अर्कपुत्र (सुग्रीव) को देखकर (कहा):— 'सोचकर देखनेपर विपत्ति में सखा (मित्र) के समान रिश्तेदार कभी (उतना सहायक) नहीं हो सकता। बुध (जन) कहते हैं कि गणना करनेपर गुणवान हो या गुणहीन, मित्र ही सद्गति (सहायक) है। अतः तुम्हारी मित्रता को प्राप्त मुझे किसी भी प्रकार का अभाव नहीं है। यह निश्चित है। तुम्हारी पत्नी को लेकर (अपहरणकर),

यन्नदम्मुल मैत्रि नलरुटकंटे । नुन्नदा सौख्य ? मा यौरिमिक मानि
यगचराधिपुड ! मी यन्नकु नीकु । बगयैन विधमु दप्पक चेप्पु' मनिन

वालिसुग्रीवुल कलहकथा

'नो राम ! वालिकि नौगि नाकुनैन । वैरानुकथनंबु वर्णितु विनुमु :
कडगि मंथरगिरि कव्वंबु सेसि । तडयक वासुकि दरित्राडु सेसि
मम्मु देवतलेल्ल मन्ननसेय । ग्रम्मिन देलिविमै घनभुजावलमु
वालियु नेनुनु वडि नौक्क वक । व्रालिति मौकवंक वालिन वारु
सुरगरुडोरगासुरसिद्धसाध्य । वरुलंदरुनु क्षीर वारिधि दरुव
गरळंबु वुट्टि लोकमुलेल्ल गाल्प । हरुडदियुनु म्रिगे नद्भुतंबनग :
नलरंग ज्येष्ठयु नंदुदयिंप । गलिराजु दानिनि कैकोने प्रीति :
ब्रस्तुति कैक्कुचु वहुळवुलैन । वस्तुचयंबुलव्वारिधि बुट्टे : २७०
तममत कोर्केकु दगिनवस्तुवुलु । नमरंग गैकोनिरंदरु प्रीति :

तुम्हारा संहार करना चाहनेवाले पापात्मा वालि का अभी संहार कर दूंगा । ॥ २६० ॥

—भाइयों का मैत्री के साथ शोभित होने से बढ़कर कोई सुख है क्या ? उस प्रकार की आनुकूल्यता (अथवा एकता) को छोड़, हे अगचर-अधिप ! तुम और तुम्हारे अग्रज के बीच शत्रुता होने का विधान अवश्य बताओ ।' (ऐसा) कहने पर,

वालि और सुग्रीव के कलह की कथा

—(सुग्रीव ने कहा)—'हे राम ! क्रम से मेरे और वालि के मध्य हुए वैरानुकथन का वर्णन करता हूँ, सुनो । सप्रयत्न मंथरगिरि को मथानी बनाकर, अविलंव वासुकि को नेती वनाकर, समस्त देवताओं ने हमारा सम्मान किया (तो) व्याप्त बुद्धि (तथा) घनभुजबल से वालि और मैं झट से एक ओर आ कूदे । एक ओर उतर जाने पर वे सुर, गरुड, उरग, असुर, सिद्ध, साध्य श्रेष्ठ सभी (जन) क्षीर-वारिधि का मंथन करने लगे । (तब) गरल उत्पन्न हो, समस्त लोकों को जलाने लगा तो अद्भुत रूप से उसे हर निगल गये । उसमें शोभा से ज्येष्ठा (दरिद्र देवता) के उदित होनेपर, उसे राजा कलि ने प्रेम से ग्रहण किया । (तदनंतर) प्रख्यात होते हुए वहुत वस्तुचय (समूह) उस वारिधि में उत्पन्न हुए । ॥ २७० ॥

—शोभा से सभी लोगों ने प्रीति से अपनी-अपनी इच्छा के अनुरूप वस्तुएँ

नलि बुट्टॆ नैरावतमु मेषमहिष। मुलु मकरकरेणुवुलु हयवृषमु
लवि जनियिंप निंद्रादिदिक्पतुलु। विविधयानमुलुगा वेड्क गैकोनिरि:
महनीय सौभाग्य महिमलु दनुक। सहजंबुलै लक्ष्मि जनियिंप जूचि
यामहालक्ष्मि नारायणुंडपुडु। कामिंचि तनदेवि गाग गैकोनियॆ:
जंद्रुडु देवतासतुलुदयिंप। नंदरिलो दार यनुनाति माकु
देवतलिच्चिन दिविरि कैकोंन्टि। मा विधंबुन मरि यंदरु दरुव
जनियिंचॆ नमृतंबु, सकल देवतलु। ननुरागमुन बोंन्दि या सुधारसमु
कामधेनुवु कल्पकमुलादिगाग। सोमुनि गोनि तम चोटिकि जनुचु
नमरुलु मम्मंप नर्थितो वच्चि। कमनीयपदमुन गांततो गूडि २८०
कलसियुंटिमि कोंन्तकालंबुदनुक। नलरुसुषेणुनि यनुगु गूतुरुनु
जॆलुवोंप्प बॆन्ड्लियै चॆलगु वेडुकल। वलनोंप्पु रुम गूडि वर्तिंचुचुंड
मातंड्रि तर्वात मंत्रुलु वेड्। यीतडंचुनु वानरेंद्रपट्टंबु
वालिकि गट्टि: रा वालियु नन्नु। जाल मन्ननसेसि संप्रीतिनडपु:
नतनिकि बंटनै यहरहंबेनु। बितृसमानुनि गाग बेमि सेविंतु:
नीरीति नन्योन्यहितुलमै मेलग। श्रीराम! योंकनाडु चिरवैरमूनि

ले लीं। क्रम से ऐरावत, मेष, महिष, मकर, करेणु (हथिनी) हय, वृष, आदि के उत्पन्न होनेपर, इन्द्र आदि दिक्पतियों ने अनेक वाहनों के रूप में, सहर्ष (उन्हें) ले लिया। महनीय-सौभाग्य-महिमाओं के अपने में सहज ही लिए लक्ष्मी को उदित होते देखकर, उस महालक्ष्मी को, तब नारायण ने कामनाकर, अपनी देवी के रूप में ग्रहण किया। चन्द्र (और) देवता-स्त्रियों के उत्पन्न होने पर, उन सब में तारा नामक स्त्री को हमें देनेपर, सकाम (उसे) ग्रहणकर लिया। हमारे समान ही सबके मंथन करनेपर अमृत उत्पन्न हुआ। सकल देवता अनुराग प्राप्तकर, उस सुधारस, कामधेनु, कल्पक, सोम (चंद्र) आदि को लेकर अपने स्थानपर जाने लगे। जाते हुए अमरों के हमें विदा करनेपर, प्रेम से आकर, कमनीय स्थानपर कान्ता के साथ मिलकर, ॥ २८० ॥

—कुछ समय तक मिलजुलकर रहे। शोभायमान सुषेण की लाड़ली पुत्री को सुंदरता से ब्याहकर, अधिक विनोद (विहार) के साथ, प्रिया रुमा के साथ रहा। हमारे पिता के बाद मंत्रियों ने बड़ा (ज्येष्ठ) मानकर, वालि को वानरेंद्र का पद दिया। वह वालि भी मुझे अधिक सम्मानितकर, सम्यक् प्रीति से व्यवहार करता रहा। मैं उसका सेवक बनकर, अहरह उसे पितृसमान मानकर, प्रेम से सेवाएँ करता रहता। इस प्रकार अन्योन्यहितू बनकर हे श्रीराम! हम लोग रहे। एक दिन

तोंडरिन कडकतो दुंदुभि गन्न । कोंड्कु मायावि यन् घोरराक्षसुड्डु नड्रेयि किष्किधनगरंबु बेंदर । वडि नार्चि गर्व दुर्वारुडै पेर्चि यनिसेय बिलिचिन नलुक दीपिंप । ननुपमबलशालियगु वालि वेंडलि ननुगूडि युद्धसन्नद्धुडै वेग । तनमीद नडुव निद्दर जूचि वाडु २९०

वालि, मायावि युद्धमु

ननि सेयकतिभीतुडै पारिपोयि । तन गुह जोच्चिन दर्पिंचि वालि 'यधिकगर्वोद्धतुंडगु वानि बट्टि । वधियिंचि वत्तु : ने वच्चुनंदाक निच्चट नेमर कीवु वेरोंकडु । चोच्चि राकुंड निच्चोनुंड्' मनुचु गुहवात नन्नुंचि गुह दानु जोच्चि । गुहलोन नोंकयेडु घोरयुद्धंबु कडकनो जेय रक्तमु वेल्लि विरिसि। युड्गक गुहवात नुब्बिन जूचि कनुकनि नार्चु राक्षसुनि यार्पुलुनु। विनि 'वालि राक्षसविभुनि चे जच्चें :
निच्चट ने नुंडुटेरिगिन वेंडलि । वच्चि दैत्युडु पट्टि वधियिंचु नन्नु'

चिर वैरभाव से विजृंभित साहस से दुंदुभि का पुत्र मायावी नामक घोर राक्षस आधीरात को किष्किधा नगर को भयभीत करते हुए, शीघ्र चिल्लाकर, आया । गर्वदुर्वार होकर अनि (युद्ध) करने के लिए (वालि को) बुलाया । (तब) क्रोध के दीप्त होनेपर, अनुपम बलशाली वालि (बाहर) निकलकर, मुझे साथ ले, युद्ध के लिए सन्नद्ध (तैयार) होकर, झट चल पड़ा । दोनों को देखकर वह, ॥ २९० ॥

वालि और मायावी का युद्ध

—युद्ध न कर, अतिभीत हो, भागकर अपनी गुफा में घुसा । दर्पित होकर वालि (ने मुझसे कहा):— 'अधिक गर्वोद्धत बने उसे पकड़, वधकर (लौट) आऊँगा । मेरे (लौट) आने तक यहाँ असावधान न होते हुए, किसी दूसरे को भीतर घुसने न देकर यहाँ रहो ।' कहते हुए गुफा-मुख पर मुझे रख, स्वयं गुफा में प्रवेश किया, गुफा में एक वर्ष (तक) घोर युद्ध सप्रयत्न किया, (तब) रक्त के अधिक बह उठकर, (भीतर) न रुककर गुफा के मुख तक उमड़कर आनेपर, (उस रक्त को) देख, संभ्रम से चिल्लानेवाले राक्षस के हुंकारों को सुनकर, मैंने यह निश्चयकर कि 'राक्षसविभु के हाथ वालि मरा । मेरा यहाँ रहना वह जान जाए तो निकल आकर, दैत्य मुझे पकड़ मार डालेगा ।' ऐसा निश्चयकर, तभी

ननि निश्चयमु सेसि यप्पुडे पोयि । कौनिवच्चि यौक कौन्ड गुहवात नुनिचि
यच्चट वालिकि नट तिलोदकमु । लिच्चि किष्किधकु नेनु वच्चुटयु
'वालि वोयिन तरुवात नी राज्य । पालनंबुन कोवे प्राप्तुंड' वनुचु

वदलक मंत्रुलु वानर राज्य । पदमुन ननु देंच्चि पट्टंबु गट्ट
वानरकुल चक्रवर्तिनै येनु । नूनि राज्यमु सेयुचुंडिति : नंत
मनुजेश ! मरि वालि मायावि जंपि । ननु जीरि चीरि यंतट गुहवात
पेंनच्चि वैच्चिन कौन्ड बिडिगा दन्नि । चनुदेंन्चि नेलेमि जाल गोपिंचि
क़िनुकतो मरि वच्चि किष्किध जौच्चि । तनकु ने जेयुवंदनमु गैकौनक
'योरि ! तम्मुडवनि यूरडि नम्मि । पोराड बगतुपै बोयिन चोट
ननुडिचि चनुदेंन्चि ना राज्यपदमु । गौनि प्रीतिनिट्लुंडगूडुने नीकु ?
गडु बापबुद्धिवि गावुन निन्नु । दौडरि चंपिन नाकु दोसंबु लेदु ।'
अनवुडु ने वालियडुगुल कैरगि । विनयंबु भयमुनु वेलयनिट्लंटि :
'नौकयेडु मायावियुनु मीरु बोर । ब्रकटिंप रक्तपूरमु गुहवात

जाकर एक पहाड़ी (बड़ी चट्टान) लाकर, गुफा-मुखपर रख दिया, वहाँ वालि को तिलोदक देकर (तर्पण-क्रियाकर) मैं किष्किधा चला आया। 'वालि के (मर) जाने के बाद इस राज्य-पालन के तुम ही अधिकारी हो।' (ऐसा) कहते हुए, ॥ ३०० ॥

—(मुझे) न छोड़कर, मंत्रियों ने मुझे वानर-राज्यपद के लिए अभिषिक्त किया। मैं वानर-कुल-चक्रवर्ती बनकर, राज्य करता रहा। तब हे मनुजेश ! वहाँ मायावी का वधकर, वालि मुझे पुकार-पुकारकर, तब गुफा-मुख पर स्थापित चट्टान को पदाघातों से चूर-चूरकर, (बाहर) निकलकर, मेरी अनुपस्थितिपर अधिक क्रुद्ध हुआ। क्रोध से आकर, फिर किष्किधा में घुसकर, मेरे द्वारा किए गये वंदन (नमस्कार) को ग्रहण न कर (कहा):— 'रे ! अनुज समझकर, (तुमपर) विश्वासकर, शत्रु से युद्ध करने गया। ऐसी स्थिति में तुम (मुझे) छोड़कर, (यहाँ) आए, मेरे राज्यपद को ग्रहणकर, प्रेम से इस प्रकार रहना तुम्हारे लिए उचित है ? अधिक पापबुद्धिवाले हो, अतः सोत्साह तुम्हें मार डालनेपर मुझे (कोई) दोष नहीं लगेगा।' ऐसा कहनेपर मैं वालि के चरणोंपर गिरकर, विनय (और) भय के प्रकट होनेपर यों बोला:— 'एक वर्ष (भर) मायावी और आपके युद्ध करनेपर, गुफा-मुख में रक्त-प्रवाह के प्रकट होनेपर, ॥ ३१० ॥

वेंडलिन भयमंदि विपरीतवुद्धि । वडि वारि यिचटि के वच्चिन जचि
रट्टडिमंतुली राज्यंवु नाकु । गट्टि : रितियकानि कपटमेनेरुग :
नाकु नी यागमनंवे शोभानमु : । नी कपिराज्यंवु नीवे कैकोनुमु :
वावि दम्मुड गानि वालि ! नीकेनु । सेवकुंड : सुतुंड : जेप्पनेमिटिकि ?
गरुणाढ्य ! नायेड गल्ल गलिगननु । गरुणिपु' मनि पेक्कुगतुल ब्रार्थिप
नंनकंतकु मंडि, 'यनुजुनिपट्ल । नितेल ?' यनि मंत्रुलेन्त सेप्पिननु
अनयुडै ना पत्नि यगु रुम वुच्चु । कोनि राज्यमुनु वुच्चुकोनि
चंपगडग

वेरचि येकाकिनै वेनुकोनि वालि । तरुम भूलोकमंतयु नेनु दिरिगि
येपर परतेन्चि यिदुन्नवाड । नी पर्वतमु वालिकेक्कराकुनिकि'
ननिन रामुडु वेरगंदि 'यी कोन्ड । यिनतनूभव ! वालिकेट्लेक्क-
राडु ? ३२०

त्रिनुपिपु' मनवुडु विनतुडैनिलिचि । यिनतनूजुडु प्रीतिनिट्लनि पलिके :
'दोल्लि दुंदुभि यनुदुष्टराक्षसुडु । वल्लिदुडै वरवलमु रंजिल्ल

—भीत होकर, विपरीत वुद्धि से, झट से, भागकर यहाँ मैं आया । (इस प्रकार) आए हुए (मुझे) देखकर निंदनीय चरित्रवाले मंत्रियों ने यह राज्य मेरे सिर मढ़ दिया । यह इतना ही है, मैं किसी कपट को नहीं जानता । मेरे लिए तुम्हारा आगमन ही शोभन है । अपने कपिराज्य को तुम्हीं ले लो । हे वालि ! रिश्ते में मैं तुम्हारा अनुज हूँ, किन्तु (वास्तव में) मैं तुम्हारा सेवक हूँ, पुत्र हूँ । (और अधिक) कहना क्यों ? हे करुणाढय । (यदि) मुझसे कुछ दोष हो भी गया हो, (मेरे प्रति) करुणा वरतो ।' (ऐसा) कह, अनेक प्रकार से प्रार्थना करनेपर, और अधिक क्रुद्ध हुआ । 'अनुज के प्रति इतना (क्रोध) क्यों ?' ऐसा मंत्रियों के कितना ही कहने (समझाने) पर भी, अनय (नीति रहित) होकर, मेरी पत्नी रुमा को लेकर, राज्य को भी लेकर (वालि ने) मुझे मारने का प्रयत्न किया । (उससे) डरकर, अकेला होकर, वालि के पीछा करने पर, मैं समस्त भूलोक में (शरण ढूँढते) घूमा । विकास (शोभा) के नष्ट होनेपर, भाग आकर, इस पर्वत के वालि के लिए अगम्य होनेपर, यहाँ रह गया हूँ ।' (ऐसा) कहने पर राम चकित होकर (वोला):— 'हे इनतनूभव (सुग्रीव) ! यह पर्वत वालि के लिए अगम्य क्यों है ? (अथवा वालि इस पर्वत पर क्यों नहीं चढ़ सकता ?) ॥ ३२० ॥

—(सारी कथा) सुनाओ ।' ऐसा कहनेपर, विनत हो खड़े रहकर, इनतनूज (सुग्रीव) ने प्रीति से यों कहा:— 'पूर्व में दुंदुभि नामक दुष्ट

मुल्लोकमुलु दनमौनकु भीतिल्ल । मल्लडिगौनि पेनुमहिषमै पोयि
तड्रिमि समुद्रुनि दनतोडननिकि । नड्रिमि पिल्चुटयु नय्यंबोधि गलगि
घनरत्नकोटुलु कानुकलिच्चि । 'तुनियनि बलिमि नीतोड बोराड
घनमैन तुहिनाद्रि गानि ये बूनि । यनि सेयजाल बौ' म्मनिन नेतेन्चि
जंभारिदोस्तंभसंभावितोग्र । दंभोळिनैशित्य दर्पभंगमुल
नतुलश्रृंगमुल हिमाद्रि गोराड । नतिभीतुडै पर्वताधीशुडनियै :
'नी सरिवाडना निलिचि पोराड ?। नोसरिपकनिल्व नेर्तुने येनु ?
ई लोकमुन निन्नु नेंदिरि पोराड । वालिन भुजशक्ति वालिक
गलदु : ३३०

बलियुडै किष्किध बालिंचु नतडु:। कलहंबुपै वांछ गलदेनि नीवु
नलघुविक्रम ! यिंक नटकेगु'मनिन। जैलगि राक्षसुडु किष्किध केतेन्चि

वालि, दुंदुभुल युद्धमु

विलयकालाभीलवेळ गर्जिल्लु । जलदंबुगति नार्चि 'सरि दनतोड

राक्षस बलिष्ठ होकर, श्रेष्ठ वर (-दानों के कारण) से प्रसन्न होकर, त्रिलोकों के अपने पौरुष के कारण भयभीत होनेपर, विजृंभित होकर, बड़ा भैंसा बनकर, जाकर, पीछाकर, समुद्र को अपने साथ युद्ध करने के लिए ललकारकर, बुलाया। (तब) वह अंबोधि विकल होकर, बड़े रत्न समूहों को भेंट देकर, (बोला):— 'अटूट बल से तुमसे लड़ने के लिए महान् तुहिनाद्रि (हिमालय) ही (समर्थ) है, मैं सप्रयत्न भी युद्ध नहीं कर सकता, जाओ।' कहने पर, आकर, जंभारि (इंद्र) के दो स्तंभ (भुज)-संभावित-उग्र-दंभोलि (वज्रायुध) के नैशित्य (तेज) के दर्प का भंग करनेवाले अतुल श्रृंगोंवाले हिमाद्रि को सींग मारनेपर, अतिभीत हो, पर्वताधीश ने कहा:— 'अड़कर लड़ने के लिए क्या मैं तुम्हारी बराबरी का हूँ ? हटे बिना (तुम्हारे सामने) खड़े रहने में मैं क्या समर्थ हूँ ? इस संसार में तुम्हारा सामना करने के लिए योग्य भुजशक्ति वालि में है। ॥ ३३० ॥

—बलवान होकर वह किष्किधापर शासन करता है। हे अलघुविक्रम वाले ! यदि तुम्हें युद्ध पर इच्छा है तो अब वहां जाओ।' (तब) उल्लसित हो राक्षस किष्किधा में आकर,

वालि और दुंदुभि का युद्ध

—विलय (प्रलय) काल के भयंकर समय में गर्जना करनेवाले जलद के

नालंबु सेयर'म्मनि वालि बिल्व ।वालि कोपिंचि वेंल्वडि वच्चि यार्चि दुंदुभि गति म्रोयु दुंदुभि दाकि । 'येन्दु बोवग वच्चु निक नी'कनुचु शिललु पादपमुलु चेच्चेर रुव्वि । नल मुष्टिहतुल गोन्दलमंद जेय वाडुनु वानरेश्वरुनि वक्षबु । वाडिकोम्मुल ग्रुम्म वालि कोपिंचि यतिघोरुडै पेंचि यचलंबु वैव । गतिदप्प नुरिकि रक्कसुडेदिरिप गंडशैलमु वुच्चि कपिराजु वैव । नोन्डोन्ड कोम्मुल नोसरिल्लुचुनु अरुग्रम्मिकोनि वालि नदरंट न्रेय । दरिमि वृक्षंबुन दरुचरुंडडुव ३४०
माटुन नसुर ग्रम्मर वच्चि ताक । मोट ताडेत्तुक मोदेना वालि : कदिसि:कोम्मुल जिम्म गपिराजु निलिचि। कदलनि मुष्टि ववत्तंबुन बोडुव
रक्कसुडोडुव मर्कटराजु बोडुव । दक्कक यिरुवुरु दर्पिंचि पेंचि कोनकोनि नूरेंड्लु घोरयुद्धंबु । मनुवशवल्लभ ! मरि चेसि वालि ऋेळ्ळुरिकियु बिडिकिट दोक बट्टि । येल्लेड गुदियिंचि येडपक त्रिप्पि

समान सिंहनादकर, (कहा):— 'बराबरी से मेरे साथ युद्ध करने के लिए आओ ।' कहकर वालि को बुलानेपर, वालि क्रुद्ध होकर, बाहर निकलकर, आकर, सिंहनादकर, दुंदुभि (युद्धवाद्य) के समान ध्वनि करने वाले दुंदुभि का सामनाकर (बोला):— 'अब तुम कहाँ जा सकोगे (मेरे हाथों से बचकर) ?' (ऐसा) कहकर, झट-झट शिलाएँ और पादप (वृक्ष) फेंककर, (राक्षस के) सिरपर मुष्टि-प्रहारकर (उसे) व्याकुल कर दिया। उसने भी वानरेश्वर के वक्षपर पैने सींग मारे। वालि ने क्रुद्ध होकर, अतिभयंकर वन, क्रम से पर्वत डाल दिया। गति का अतिक्रमण न कर, दौड़कर, राक्षस के सामना करनेपर, गंडशैल लेकर कपिराज के डालनेपर, इधर-उधर सींगों से (उन्हें) हटाते हुए, (वालि के) गर्दन को घेरकर, वालि को ऐसा धक्का दिया कि वालि विचलित हो गया। (तब) पीछाकर वृक्ष लेकर, तरुचर (वानर) के मारने पर, ॥ ३४० ॥

—राक्षस छिपकर, लौटकर, सामना करनेपर, उस वालि ने मोटा ताड़ (का वृक्ष) लेकर, प्रहार किया। उसे सप्रयत्न अपने सींगों से फेंक दिया। तब कपिराज ने स्थिरता से अटूट मुष्टि से उसके गर्दनपर प्रहार किया। राक्षस के प्रहार करनेपर, मर्कटराजा ने प्रहार किया। (इस प्रकार एक दूसरे से कम न होकर) दोनों ने दर्प-युक्त हो, क्रम से, लगकर, सौ वर्ष तक युद्ध किया। हे मनुजवंशवल्लभ ! वालि (युद्ध करके) (एक बार) उछलकर, मुट्ठी से (राक्षस की) पूँछ को पकड़कर, सब जगह सिंकोड़कर, निरंतर घुमानेपर, झट से विचलित हो, असुर के

वडिदूलि यसुरयु वापोव वैव । गडगि मर्ममु गांचि कडुवडि बौडिचि
बलिमि गौम्मुलु वट्टि पडवैचि चंपि। तलकौन्न लावुमै दन्नें : दन्नटयु
मुक्कुन जेवुल मोमुन नेत्तुरौलुक । नक्कुलिशाहति नद्रियु बोलें
ना युग्रदैत्यु महाकळेबरमु । पोयि योजनमात्रमुन दूलि पड़ियें :
गैरिकनिर्झराकारंबुलगुचु । ना रक्तकणमुलीयद्रिपै बडिन ३५०
नारसि यिचट नित्यमु तपंबुन्न । दारुणशक्ति मतंगुडु गिनिसि
यी पर्वतमु वालि कैक्कराकुंड । शापंबु गाविंचे जगदेकनाथ !
कान नी ऋश्यमूकमुनंदु वेउव । केनु गापुरमुंदु नेल्लकालंबु
कडगि या दुंदुभिकायंबु वुच्चि । पुडमि योजनदूरमुन बाउ वैव
वलनैन भुजशक्ति वालिकि गाक । तलपोय नोरुलकु दरमुगादधिप!
कैकौनि नीवंतकंटे दूरमुग । नी कळेबरमिप्पुडिट मीटकुन्न
निनवंश ! मी सत्त्वमे नात्मनम्म' । ननवुडु रघुरामुडल्लन नव्वि
'या दुंदुभिशरीरमल्लन मीटि । नीदु संदेहंबु नेडु वापेदनु
इनतनूभव ! दानि नेर्पड जूपु' । मनवुडु सुग्रीवुडर्थितो जूप

रोदन करनेपर, मर्म-स्थान को देखकर, अतिशीघ्रता से प्रहारकर, बलपूर्वक सींग पकड़कर, (जमीनपर) डालकर, मारकर, अत्यधिक बल से (उसे) लात मारी। लात मारनेपर, नाक, कान (और) मुँह से खून के उमड़नेपर, कुलिश (वज्र) के आहत से अद्रि (पर्वत) के समान, उस उग्र दैत्य का महा-कलेवर (शरीर), योजन भर दूरपर जा गिरा। गैरिक (काषाय रंग) के निर्झर के आकारवाले होते हुए वे रक्त कण इस अद्रिपर गिरे। ॥ ३५० ॥

—यहाँ नित्य तप करनेवाले, दारुणशक्तिवाले मतंग (नामक ऋषि) ने उसे देख क्रुद्ध हो, हे जगदेकनाथ ! ऐसा शाप दे दिया जिससे वालि इस पर्वत पर चढ़ न पावे। इससे मैं सदा निर्भीक हो इस ऋश्यमूक (पर्वत) पर निवास करता हूँ। हे अधिप ! सप्रयत्न उस दुंदुभि के शरीर को पकड़कर, पृथ्वीपर योजन भर दूर फेंकने के योग्य भुजशक्ति, वालि के अतिरिक्त और किसकी हो सकती है ? अब उस कलेवर को लेकर, तुम उससे भी दूर नहीं फेंकोगे तो हे इनवंश (वाले) ! मैं तुम्हारे सत्त्व का, मन से विश्वास नहीं कर सकता।' ऐसा कहनेपर राघव ने मंद-मंद हँसकर (कहा):— 'उस दुंदुभि के शरीर को धीरे से उछालकर, तुम्हारे संदेह को दूर कर दूंगा। हे इनतनूभव ! ढंग से उसे बताओ।' ऐसा कहनेपर, सुग्रीव के चाहकर बतानेपर, घन-मेरु (और) मंदर (पर्वतों के)- आकार वाले (उस कलेवर) को देख, कलेवर के पास आकर, ॥ ३६० ॥

घनमेरुमंदराकारमैयुन्न । गनि कळेबरमु दग्गऱकु नेतेंन्चि
३६०
गौनकौनि दानि गैकौनक यंगुष्ठ । मुन बदियोजनंबुलु मीटिवैचें :
वैचिन रघुरामु वरशक्ति पेमि । जूचियु नम्मक सुग्रीवुडनियें :
'मैलपुमै निदि वालि मीटेंडुनाडु । दलमैन रक्तमांसमुलतो नुंडु ;
मनुजेश ! नेडस्थिमात्रमैयुंड । गनि नीवु मीटिति गाक यौक्कित
वडि वेचि; नी लावु वालि लावुनकु । गडुनेक्कुडनि नम्मगारादु देव !
यतडदियुनुगाक यलवोक मीटु । क्षितिधरंबुलु पुट्टचेंन्ड्ल कैवडिनि :
जतुरंबुधुलयंदु संध्यलु वार्चु : । शितिकंठु पदमुलु शिरमर्थि जेर्चु :
वायुवुकन्न जवंबु हेच्चुगनु । दोयधुलन्नि तोड्तो दाटिवच्चु :
वालिकि निर्जरेश्वरदत्त हेम । मालिकेव्वरु साटि ? मरि यौन्डु
विनुमु :
धरणीश! यी येडु ताळ्ळुनु दौलिल । वरशक्तियुक्तिमै वालि बिट्टेंचि
३७०
करमुल नौक्कटिगा गूड बट्टि । तरमिडि वानि पत्रमुलेल्ल द्रुंचु :
नडरि यी ताळंबुलंदौक्कटैन । वडि गदलपग लेरु वासवादुलुनु :

—सप्रयत्न उसे ग्रहण न कर, अंगूठे से दस योजन (दूर) उछालकर डाल दिया। डालनेपर रघुराम की श्रेष्ठ-शक्ति के औन्नत्य को देखकर भी, विश्वास न कर, सुग्रीव ने कहा:— 'यह (कलेवर) स्थिरता से वालि के उछालने के दिन (समय) रक्तमांसों से युक्त समर्थ (बना) था। हे मनुजेश ! आज उसे अस्थिमात्र (केवल हड्डियाँ भर) होते देख, तुमने थोड़ी शक्ति से, शीघ्र उछाल दिया। हे प्रभो ! तुम्हारी सामर्थ्य को वालि की सामर्थ्य से अधिक नहीं मान सकते। यही नहीं, वह बड़ी आसानी से क्षितिधरों (पर्वतों) को वस्त्रादि-निर्मित कंदुकों के समान उछाल देता है। चारों अंबुधियों में सन्ध्या (वंदन) करता है। शितिकंठ (शिवजी) के चरणों को सप्रेम सिरपर रखता है। वायु की अपेक्षा अधिक वेग से समस्त तोयधियों (समुद्रों) को एक साथ पारकर आता है। निर्जरेश्वर (इंद्र)-दत्त-हेममाला वाले वालि के समान कौन है ? और एक सुनो। हे धरणीश ! पूर्व में इन सात ताड़ों (के वृक्षों) को वरशक्तियुक्त हो, विजृंभित हो वालि हाथों से एक साथ पकड़कर, ॥३७०॥
—शीघ्रता से उनके समस्त पत्रों को तोड़ देता है। आधिक्यता से इन ताड़ों (के वृक्षों) में एक को भी झट से वासव आदि भी हिला नहीं सकते। प्रयत्न करके एक वाण से सात ताड़ के वृक्षों को गिरा दोगे

दलकौनि यौक कोल दाळंबु लेडु । निलुवक काडि पो नेरिंदेगनेय
वसुधेश ! नी लावु वालि लावुनकु । नसमानगति नेक्कुडनि नम्मवच्चु:
धरणीश ! यी सप्तताळंबुलोक्क । शरमुन देगव्रेयु शौर्यंबु गलुगु
पुरुषुनिचे वालि वौलयुनटंचु । नरसि नाकु मतंगुडनु मुनि सेप्पे ।'
ननवुड विनि रामुडल्लन नव्वि । 'वनचराधिप! ताळ्लु वदलक चूपु'
मनवुडु सुग्रीवु डा रामु वेग । कौनिपोयि या ताळ्ळ गुरुतेरिंगिप
नशनिसंकाशमै यसदृशंबैन । निशितास्त्रमरिवोसि निपुणुडै नृपुडु
मुंचि यौक्कट बंक्तिमुखुनाळ्ळ ताळ्लु । द्रेन्चिनगति दाळ्लु देगनेयु-
टयुनु ३८०
नवनिपै वक्रंबुलैयुन्न ताळ्ळ । नविरळंबुग वडि नटु गाडि पारि
चेरुव गिरिदाटि चेच्चेर बोयि । धारुणि दूरि पाताळंबु जेरि
यलयक तीव्रत नम्महाशरमु । तौलगक रघुरामु दौन वच्चि चौच्चे ।
नतुलितंबगु रव माकाशवीथि । नतुलविमानंबुनंदुंडि पलिके :
'परमात्म ! ये सुरपतिकड नुंदु । गरुणावतनियेडु कन्निक : दौलिलि
निरतंबु दुर्वासु निंदिचुटयुनु । गरमलिग शापंबु गाविंचे निट्टि

तो हे वसुधेश ! तुम्हारी सामर्थ्य को, असमान रूप से, अधिक मान सकते हैं। हे धरणीश ! इन सप्त तालों को एक शर से गिरा सकने के शौर्य से युक्त पुरुष के हाथ वालि मरेगा, ऐसा सोचकर मतंग नामक ऋषि ने मुझे बताया।' ऐसा कहने पर सुनकर, राम मुस्कुराकर (बोले):— 'हे वनचर-अधिप ! (उन) ताड़ (के वृक्षों को) अवश्य दिखाओ।' ऐसा कहनेपर, सुग्रीव उस राम को शीघ्र ले जाकर, उन ताड़ (के वृक्षों को) पहचानें, ऐसा बताया। तब नृप (राम) अशनि (वज्र)-संकाश (सम), असदृश हो, निशित अस्त्र का संधानकर, निपुण हो, पंक्तिमुख (रावण) के नाड़ियों को काट देने के समान, एक बाण से ताड़ों को काट गिराने के लिए (बाण चलाया), ।। ३८० ।।

—पृथ्वीपर वक्र हो खड़े ताड़ (के वृक्षों) को अविरल रूप से, झट से, पार जाकर, निकट के पर्वत को पारकर, अतिशीघ्र जाकर, पृथ्वी में घुसकर, पाताल पहुँचकर, अथक तीव्रता से वह महाशर, अविचल रूप से रघुराम के तूणीर में आ घुसा। (तब) आकाशवीथि से अतुलित विमान में से, एक अतुलित रव (ध्वनि) यों मुखरित हुआ:— 'हे परमात्मा ! मैं सुरपति के पास रहनेवाली करुणावती नामक कन्या हूँ। पूर्व में निरत ही दुर्वासा की निंदा करनेपर, अधिक क्रुद्ध होकर, इस प्रकार के रूप (को प्राप्त करने) का शाप दिया। हे धरणीश ! तुम्हारे कारण सचमुच मेरा

रूपमै धरणीश ! रूढि नीकतन । शापमोचनमय्यं; जनियेदनिक;'
ननि चेप्पि करुणावतमरेंद्रपुरिकि । जनियेनु रघुरामु शरमु ता दूणि
जोच्चिन गनुगोनि सुग्रीवुडप्पु । डच्चेरुवुन बोन्दि यानंदमोंद
'सप्तपताळससक्तमूलमुलु । सप्ताश्वमंडलाच्छादिपत्नमुलु ३९०
नगु सप्ततालंबुलस्त्रमोक्कटने । तेगनेसे : नादु संदेहंबु वासे:
वालि राघवुनिचे वडि जच्चुनिक । नेलिति लोकवु; लेलिति दार:
नेलिति गपिराज्यमे' ननि पोंन्गि । यालोन कपिवीरु लानंदमंद
गमलाप्तकुलनाथु गाकुत्स्थु जूचि । कमलाप्तसुतुडंत गरमुलु मोगिच्चि
'देव ! देवरमूर्ति दृष्टिंचि लावु । भाविपनेरक पशुबुद्धिनैति
निनजुंड नेनु: नीविनवंशसभवुड । वनि समबुद्धिमै नपराधिनैति
नी लोकमुलकेल्ल नेलिकवीवु । बालिशु नन्न नी बंटुगा नेलि
ना शत्रु देंगटार्चि ना राज्यमिच्चि । ना शोकमुडुपवे नरनाथचंद्र !'
यनवुड सुग्रीवु नतिकृपादृष्टि । गनुगोनि मन्निचि काकुत्स्थुडनियें:
'जेंच्चेड नीवु किष्किंधकु बोयि । यच्चट वालितो ननि सेयुचुंडु ४००

शाप-विमोचन हो गया । अब जाऊंगी ।' ऐसा कहकर करुणावती अमरेंद्रपुरी को गयी । रघुराम के शर के स्वयं द्रोणि (तरकस) में प्रवेश करते देख, तब सुग्रीव चकित हो, आनंद प्राप्तकर (यों बोला):— 'सप्त पाताल-ससक्त मूलवाले, सप्तांश्व (सूर्य)-मंडल को आच्छादित करनेवाले पत्नवाले ॥ ३९० ॥

—सप्ततालों को एक ही अस्त्र से काट डाला । मेरा संदेह दूर हो गया । अब शीघ्र ही वालि राघव के हाथ मरेगा । (समझ लो अब) लोकोंपर शासन किया, तारा पर शासन किया, कपिराज्य पर शासन किया ।' ऐसा (कह) फूलकर, इस बीच कपिवीरों को आनंदित करते हुए कमलाप्त-कुल-नाथ काकुत्स्थ को देख कमलाप्तसुत (सुग्रीव) ने तब हाथ जोड़कर (कहा):— 'हे देव ! देव (प्रभु) की मूर्ति को देखकर, (आपकी) सामर्थ्य की कल्पना न कर सक, पशु-बुद्धिवाला (मूर्ख) बन गया । मैं इनज (सूर्यभव) हूँ, तुम इनवंशभव (सूर्यवंश में उत्पन्न) हो, ऐसी समता की बुद्धि से अपराधी बन गया हूँ । इन समस्त लोकों के तुम शासक हो । मुझ मूर्ख को अपने सेवक के रूप में पालकर, मेरे शत्रु का संहारकर, मेरा राज्य देकर, हे नरनाथचंद्र ! मेरे दुःख को दूर कर दो न ।' ऐसा कहनेपर, सुग्रीव को अतिकृपादृष्टि से देखकर, सम्मान अथवा क्षमाकर काकुत्स्थ (यों) बोले:— 'झट से तुम किष्किंधा जाकर, वहाँ वालि से युद्ध करते रहो । ॥ ४०० ॥

मवलील नोंककोल ना वालि जंपि । प्रविमलकपिराज्यपदमु नीकित्तु
वेरवक सुग्रीव ! वेग पों'म्मनिन । नरलेनि कडकतो नप्पुडुप्पोंगि
नलुडु नीलुडु नंजनातनूभवुडु । बलियुडु तारुंडु बलसि तो नडुव
नाजिकि सन्नद्धुडै बलिम मेरसि । राजिल्लि वेनुक रा रामलक्ष्मणुलु
वच्चि किष्किंधकिव्वलनुन्न वनमु । सोच्चि गूढमुग नच्चो दन्नु बनुप
वडि बोयि किष्किंधवाकिट निलिचि । यडरि सुग्रीवुडुदग्रुडै यार्चि

वालिसुग्रीवुल द्वन्द्वयुद्धमु

तडयक तनतोड दगिलि पोराड । वडि नेगुदेम्मनि वालि बिल्चुटयु
गरिबृंहितंबुलाकर्णिंचि पेलुच । गरिवैरि कोंपिचु करणि गोंपिंचि
शितिकंठ चरणराजीवालि वाल । कृतबंधरावणग्रीवालियैन
वालि सुग्रीवुनि वडि वच्चि ताक । वालिसुग्रीवुलवक्रविक्रमुलु ४१०
समरूप समकोप समजवाटोप । समसुप्रतापुलै जानु जंघोरु
जत्रु वक्षोनाभि जघनदेशमुलु । च्चिलवेखरि नोंन्चि चिंचि चेन्डाडि

बड़ी सुगमता से एक बाण से वालि को मारकर, प्रविमल-कपिराज्य पद तुम्हें दूंगा । हे सुग्रीव ! बिना डरे शीघ्र जाओ ।' (ऐसा) कहनेपर बिना संभ्रम के, साहस के साथ तब सुग्रीव फूलकर, नल, नील, अंजना-तनूभव (हनुमान), बली तार (आदि) के सबल हो साथ चलनेपर, युद्ध के लिए सन्नद्ध होकर, बल से प्रकाशित हो, शोभित हो, राम लक्ष्मणों के पीछे (-पीछे) आने पर, किष्किंधा के इस पार वाले वन में घुसकर, वहाँ से अपने को भेजनेपर, शीघ्र जाकर, किष्किंधा के द्वारपर खड़े होकर, विजृंभित हो सुग्रीव ने उदग्र हो, सिंहनाद किया ।

वालि सुग्रीव का द्वन्द्व युद्ध

अविलंब अपने साथ युद्ध करने के लिए शीघ्र आने के लिए वालि को बुलानेपर, (वह वालि) करि-बृंहित (हाथी की चिंघाड़) का आकर्णनकर, करि-वैरि (सिंह) के अधिक क्रुद्ध होने के समान, शितिकंठ (शिवजी)-चरण-राजीवाली (कमल समूह), वालकृत-बंध-रावण-ग्रीवाली (कंठ-समूह) वालि ने झट से आकर सुग्रीव का सामना किया । (तब) अवक्रविक्रम वाले वालि और सुग्रीव ॥ ४१० ॥

—समरूप, समकोप, समजव-आटोप, सम प्रतापवाले होकर, जानु, जंघा, उरु, जत्रु, वक्ष, नाभि, जघन प्रदेशों को विचित्र ढंग से झुकाकर, फाड़कर, (एक दूसरे के) दांत खट्टे करते हुए, विजृंभित हो, इस प्रकार जूझने लगे

चेलरेगि पूर्व पश्चिमसमुद्रमुलु । बलुविडि बोराडु भंगि बोराड
नायेंड धृति रामुडम्मु संधिंचि । येय नुद्योगिंचि मिरुवुर जूचि
वदनमुल् रदनमुल् वालमुल् बाहु । लुदरंबु लधरंबु लूरुलु बरुलु
कक्षमुल् वक्षमुल् काळ्ळुनु व्रेळ्ळु । वीक्षलु शिक्षलु वेषभाषलुनु
जेक्कुलु मुक्कुलु शिरमुलंसमुलु । प्रक्कलु पिक्कलु पादयुग्ममुलु
कर्णमुल् वर्णमुल् गळमु लंगमुलु । निर्णयिपग नोक्क नेड्रियैन जूचि
येतेरंगुन जूड निरुवुरियंदु । नीतडु सुग्रीव डीतडु वालि
यनि येर्परिचुट कलविगाकुन्न । दनलोन वेरगंदि दशरथात्मजुडु ४२०

'एंडपक येसिन नी यम्मु चेत । दोंडिवड नेव्वडु द्रुंगुनो' यनुचु
नम्मु वेयक युंडे; नंत सुग्रीवु । डिम्मेयि गडु डस्सि येपेल्ल बोलिसि
वलतियै पोराडि वालिकि नोडि । वलमेदि यातनि बलुमुष्टिहतुल
गुल्ललतित्तियै कुट्टूर्पुलेसग । 'जेल्लवो ! नेनेल श्रीरामु नम्मि
वच्चिति ? वदिवेलु वच्चे; जल्चालु; । वच्चिन त्रोव बोवगवले' ननुचु
मेलकुव चेंडि तोक मेडमीद वैचि । सोलसि नल्गडल जूचुचु वारिपोयि
तन ऋश्यमूकंबु तडयक येक्कि । तनमदि शोकिंचुतरि रामुडरुग

मानों पूर्व और पश्चिम के समुद्र बरजोरी जूझ रहे हों। उस अवसरपर धैर्य से रामने बाण का संधानकर डालने का प्रयत्न किया। दोनों को देख, वदन, रदन, वाल (पूंछ), वाहु, उदर, अधर, ऊरु, कक्ष (बगल), वक्ष, चरण, उंगलियाँ, वीक्षण, शिक्षण, वेषभाषाएँ, गाल, नाक, शिर, अंसभाग, पार्श्व, पिंडलियाँ, चरणयुग्म, कर्ण, वर्ण, गला, अंग (आदि) का निर्णय करनेपर एक समान होते देख, किसी भी प्रकार से विचारकर देखनेपर, यह सुग्रीव है, यह वालि है, ऐसा निर्णय न कर सकने के कारण, अपने में चकित हो दशरथात्मज ॥ ४२० ॥

—'न रुककर बाण चला दूं तो इस बाण से पता नहीं कौन मरेगा ?' ऐसा सोचते बाण चलाए बिना रहे। तब सुग्रीव इस प्रकार अधिक थककर, समस्त विकास को खोकर, समर्थ हो जूझकर, वालि के हाथ हारकर, उसके प्रबल मुष्टिप्रहारों के कारण, (सुग्रीव) घोंघों की थैली के समान हो, लंबी आहें छोड़कर (कहा):— 'हाय रे ! मैं श्रीरामपर भरोसा रखकर आया ही क्यों ? बहुत हो गया। बस, बस, जिस रास्ते आया, उस रास्ते जाना चाहिए।' (ऐसा) सोचते हुए, उपाय अथवा सुधबुध के बिगड़ने पर, पूंछ को गरदनपर डालकर, थककर, चारों दिशाओं में देखते हुए, भाग निकलकर, अपने ऋश्यमूकपर अविलंब चढ़कर, मन ही मन दुखी

नलघुविक्रमधामुडगु रामुतोड । दल वंचुकोनि यर्कतनयुडिट्लनियें: वसुधेश ! निनु नम्मि वालितो गदिसि । यसमान बलरूढि नडरिपोराड नन्नुपेक्षिचिति; ननु गाववैति; । मिन्नक चूचिति : मेकोनवैति : ४३०
जगतिपै सूर्यवंशबुन बुट्टि । तगुनय्य ! नीकिट्लधर्मबुसेय ? देव ! नी सत्यंबु तेजंबु नम्मि । ये वालि दोडरिति; निंतिये कानि, यतडेड ? नेनेड ? याहवंबेड ? । ब्रतिकि वच्चुट येड भाविंचि चूड ? नेमिभाग्यमुननो येप्पटियट्ल । राम ! यी पर्वताग्रमु चेरगलिगें ! बगतुनिचे भंगपाटु, नी रीति । नगुबाटु नोंदवे निन्नम्मिन कतन; दगवुनु गृपयुनु धैर्यंबु शक्ति । मिगुल नी येड जुचि मेच्चि नम्मितिनि ।'
अनवुडु 'सुग्रीव ! यात्मलोनित । यनुमानपडनेल ? यकट ! नावलन दप्पु लेशमु लेदु; दायकु निन्नु ।नोप्पगितुने? विनुमोकमाट देलिय; विश्वमोहनरूपविख्यातुलेन । यश्वनीतनयुलयट्ल येपट्ल वर रूपरेखलु वालिकि नीकु । वेरसि समंबैन भेदिप राक ४४०

होता रहा । (तब) राम के नियरानेपर अलघु-विक्रमधाम राम से अर्कतनय सिर झुकाकर यों बोला:— 'हे वसुधेश ! तुमपर भरोसा रखकर वालि का सामनाकर, असमान-बल से युक्त हो, विजृंभित हो जूझनेपर (तुमने) मेरी उपेक्षा कर दी । मुझे नहीं बचा पाए, चुपचाप देखते रह गये, (उसे मारने के लिए) सहमत नहीं हुए । ॥ ४३० ॥

—हे आर्य ! जगती पर सूर्यवंश में पैदा होकर, ऐसा अधर्म करना तुम्हारे लिए कहाँ संगत है ? हे देव ! तुम्हारे सत्य (और) तेज का विश्वास कर, मैंने वालि का सामना किया । इतना नहीं तो वह कहाँ (और) मैं कहाँ ? युद्ध कहाँ ? सोचकर देखनेपर जीवित बच आना कहाँ ? (जीवित बच आना असंभव था ।) हे राम ! पता नहीं किस भाग्यवश यथावत् इस पर्वताग्रपर पहुँच सका । तुम पर विश्वास रखने के कारण शत्रु के हाथ, अपमान, इस प्रकार की (जग-) हँसाई प्राप्त हुई । तुम्हारे पास न्याय, धैर्य, शक्ति की अधिकता को देख, सराहकर, विश्वास किया था ।' ऐसा कहनेपर (राम ने कहा):— 'हे सुग्रीव ! मन में इतना संदेह क्यों करते हो ? हाय ! मुझसे तनिक भी दोष नहीं हुआ । क्या तुम्हें दायाद (ज्ञाती) को सौंप दूँगा ? एक बात को समझकर सुन लो । विश्व-मोहनरूप से विख्यात अश्वनीतनयों के समान किसी भी (हर) प्रकार से तुम्हारी और वालि की रूपरेखाओं के समान होने से, (तुम दोनों में) अंतर न कर सक, ॥ ४४० ॥

ये नेय वेंड्रन्चिति; निदि यमोघंवु;। गान नीविदि कीडुगा जूडवलदु;
करमोप्प निक नी गजपुष्पमाल । धरियिंचि पोयि युद्धमु सेयुचुंडु;
वेंदरकु; वालि जंपेद; निश्चयिंपु;। कदलुमु किष्किंधकडकु नी' वनुचु
गादिलितम्मु चे गजपुष्पमाल । यादट देप्पिंचि यतनि कंठमुन
जोक्कंवुगा जेर्प सुग्रीवुडोप्पे । जुक्कलु पेनगोन्न शुभ्रांशुडनग
सरिवलाकलतोडि संध्याभ्रमनग । शरदंवुदमुतोडि स्वर्णाद्रि यनग;
नंत गाकुत्स्थुडु ननुजुंडु दानु । संततंवुन युद्धसन्नद्धुलगुचु
नलनीलतारांजनातनूभवुलु । गेलकुल गोल्व सुग्रीवु दोड्कोनुचु
नदुलु पूवोंदलु पुन्नाग नारंग । कदळिका सहकार कांतारमुलुनु
भासुर कैरव पद्म कह्लार ।वासित वहु सरोवर विशेषमुलु४५०
गासर केसरि करि वराहमुलु । नासक्ति गनुगोन्चु नट्टु पोयिपोयि
दीप्नवैश्वानर तेजुलै योप्पु । सप्तजनाह्वयसंयमीश्वरुल
याश्रममीक्षिंचि या महत्त्वंवु । सुश्राव्यमुग विंचु सुग्रीवुचेत
वलशालियगु वालि पालिपसिरुल । विलसिल्लु किष्किंध वीक्षिंचि नृपुडु

—मैं (वाण) चलाने में डरा। यह (मेरा वाण) अमोघ (दुर्निवार) है। अतः इसे बुरा मत मानो। अव अधिक शोभा से इस गजपुष्पमाला का धारणकर, जाकर, युद्ध करते रहो। डरो मत, वालि का वध करूँगा, निश्चय करो, किष्किंधा की ओर चलो तुम।' (ऐसा) कहते हुए लाड़ले अनुज से गजपुष्पमाला को प्रेम से मँगाकर, उसके कंठ में सुन्दरता से डालनेपर, तारिकाओं से शोभायमान शुभ्रांशु (चन्द्र) के समान, वलाकाओं (वगुलों) से युक्त संध्याभ्र के समान, शरत्-अंवुद से युक्त स्वर्णाद्रि के समान सुग्रीव शोभित हुआ। तव काकुत्स्थ (राम), अनुज और स्वयं आनन्द के साथ युद्ध के लिए सन्नद्ध (तैयार) होते हुए, नल, नील, तार, अंजनातनूभवों के पार्श्वों में सेवाएँ करते रहनेपर, सुग्रीव को साथ लिए हुए, नदियों, पुष्पित झाड़ियों, पुन्नाग, नारंग, कदली, सहकार (से युक्त) कांतारों को, भासुर (उज्ज्वल) कैरव, पद्म, कह्लारों से वासित विशिष्ट अनेक सरोवरों को, ॥ ४५० ॥

—कासर, केसरी, करि, वराहों को आसक्ति से देखते हुए, जा-जाकर, दीप्त-वैश्वानर (अग्निदेव) -तेजवाले हो, सुशोभित सप्त-जनाह्वय संयमीश्वरों के आश्रम को देखकर, उसके महत्त्व को सुश्राव्य रूप से सुनते हुए, वलशाली वालि द्वारा सुशासित (और) संपत्तियों से विराजमान किष्किंधा को, सुग्रीव के वतानेपर, देखकर, नृप (राम) ने (कहा):— 'पूर्व के समान युद्ध करते रहनेपर, वलशाली वालि

'तॉल्लिटि चंदान दुरमॉनरिप । बल्लिदुडगु वालि बरिमार्तु' ननुचु
गृतमति नंत सुग्रीवु मन्निंचि । यतनि 'बॉ' म्मनि पंचि यासमीपमुन
ननुजुडु सौमित्रि यटुचेरियुंड । मनुजेशुडॉक म्रानि माटुन नडॅ;
नहिमाशुनंदनुंडंत गिष्किंध । गुहलॅल्ल भेदिल्ल घोषिंचि यार्चि
तनतोड युद्धंबु दगजेयनिंद्र ।तनयुबिल्चुटयु नॅन्तयु बिट्टु गिनिसि
'मानक वीडॉक्क मगवाडुवोलॆ । बूनिन भुजशक्ति बॉन्गुचुन्नाड४६०
'वीनि सैरिंचुट वॅरवुगा; दिक । वीनि जंपॅद' ननि वॅस निश्चयिंचि
यतिसत्वजयशालियगु वालि वॅडल।बति जूचि वॅस नड्डुपडि तार बलिकॅ;

तार वालिनि वारिंचुट

'देवेंद्रनंदन ! दिनपजुमीद । ने विचारमुलेक येल पोयॅदवु ?
अतड् नीतो निप्पुडनि सेसि नॉच्चि। मति चॅडि पारि क्रम्मर वच्चुटॅल्ल
नॅगडिन कडिमिमै नीकंटॆ नॅक्कु । डगु सहायमुलेक यतडिदु राडु;
अनिमिषेश्वरपुत्र ! यदियुनुगाक । यॉनर नंगदु चेत नॉक माट विंटि;
बनिवडि तमतड्रि पनुपुन जेसि । वनवासमुग नुंडवच्चिन चोट

का सहार करूँगा ।' (ऐसा) कहते हुए कृतमति (निश्चित बुद्धिवाले) सुग्रीव का सम्मानकर, उसे बिदाकर, उस (स्थान) के निकट, अनुज सौमित्र के निकट रहनेपर मनुजेश (राम) एक (पेड के) तने की आड़ में रहे । तब अहिमांशु (सूर्य)-नंदन किष्किधा की सभी गुफाओं को विदीर्ण करते हुए गर्जनाकर, सिंहनादकर, अपने साथ ठीक तरह से युद्ध करने के लिए इंद्रतनय (वालि) को बुलाया, (वह) अधिक क्रुद्ध हो 'न छोड़कर, यह भी एक मर्द के समान, प्राप्त भुजशक्ति से फूल रहा है । ॥ ४६० ॥

इसको सहना समुचित नहीं है, अब इसे मार डालूँगा ।' ऐसा झट निश्चयकर, अतिसत्त्वशाली वालि (बाहर) निकल पड़ा । पति को देख शीघ्र (उसे) रोककर तारा बोली:—

तारा का वालि को मना करना

—'हे देवेंद्रनंदन ! कुछ भी सोच-विचार किए बिना दिनज (सुग्रीव) पर (आक्रमण करने) क्यों जा रहे हो ? वह अभी तुमसे युद्धकर, पीड़ित हो, बुद्धि के भ्रष्ट होनेपर, भागकर, दुबारा आया है । (यह) सब (ऐसा है कि) तुम्हारी अपेक्षा अधिक पराक्रमवाले की सहायता के बिना वह यहाँ नहीं आएगा । हे अनिमिषेश्वर (इन्द्र)-पुत्र ! यही नहीं, क्रम से अंगद के द्वारा एक बात सुनी है । आवश्यक होने से अपने पिता के

दशरथरामुडु दन धर्मपत्नि । दशकंधरुनिचेत दा गोलुपोयि
तनतम्मुडुनु दानु दडयक वेंदक । मुनिवेषुला ऋश्यमूकाद्रि जेरि
पनिगोनि सुग्रीवु बंटुगा नेलि । यनि निन्नु जंपेंदननि वच्चिनाडु;
४७०

आराघवुडु विष्णुडंबुजोदरुडु । वैरिभीकरुडु गेवलदयापरुडु
धीरुंडु कोदंडदीक्षागुरुंडु । वैरंबु गोनि गेल्व वशमुगादतनि
निनसुतुनकु प्रीति नी राज्यमिच्चि । चनि नीवु गनि रामु संधि गाविपु
विनु; मदि गादेनि वीरंबु विडिचि । मुनिवृत्ति जनि प्राणमुलु
गाचिकोनुमु'
अनि तार वलिकिन नावालि गिनिसि । 'विनु नाकु पत्निवै वेंडवने-
मिटिकि ?
वलशालिनै येट्टि वलियुनि नेन । गलन गेल्चि जयंबु गैकोन्दु गानि
परुलकुनेनोड; बगवाडु वच्चि । पेरिगि युद्धमुसेय विलिचिन चोट
धीरत दोरगि संधिक्कि नियकोनुट । वीरधर्ममु गादु वेलदि! नाकिक;
नलिनविलोचन ! नायंतवानि । बलियु जेपट्टक पट्टे सुग्रीवु;

आदेश से (राम) वनवास के लिए आए तो उस स्थानपर दशरथराम अपनी पत्नी को दशकंधर के हाथ स्वयं खोकर, अपने अनुज के साथ अविलंब (सीता को) खोजने के लिए मुनिवेष धारणकर ऋश्यमूक-अद्रि (पर्वत) पर पहुँचे । (वह राम) चाहकर सुग्रीव को अपना सेवक मानकर, युद्ध में तुम्हें मारने आया है । ॥ ४७० ॥
वह राघव (साक्षात्) विष्णु है, अंबुजोदर है, वैरिभीकर है, केवल दयापर (दयालु) है, धीर है, कोदंड-दीक्षा (धनुर्विद्या का)-गुरु है । वैर ग्रहणकर, उसे जीतना संभव नहीं है । प्रेम से इनसुत को यह राज्य देकर, जाकर तुम राम को देख, संधि कर लो । सुनो, यह नहीं हो सकता तो वीरता छोड़कर, मुनिवृत्ति ग्रहणकर प्राणों की रक्षा कर लो ।' ऐसा तारा के कहनेपर वह वालि क्रुद्ध होकर (बोला):— 'सुनो, मेरी पत्नी होकर तुम्हें डरना क्यों ? मैं बलशाली होकर, कितना ही बलवान क्यों न हो, युद्ध में जीतकर, विजय प्राप्त करूंगा किन्तु अन्य से मैं नहीं हारता । शत्रु के आकर, बढ़-बढ़कर युद्ध करने के लिए बुलाते समय, धैर्य खोकर, संधि के लिए तैयार होना अब मेरे लिए वीर धर्म नहीं है । हे स्त्री ! नलिन विलोचने ! मुझ जैसे बलशाली को ग्रहण न कर, राम ने सुग्रीव को ग्रहण किया (अपनाया) अतः राम नीतिवान् नहीं है । अतः राम की मित्रता स्वीकार-योग्य नहीं है । ॥ ४८० ॥

गान रामुडु नीतिगलवाडु गाडु । गान रामुनि पौन्दु गैकोनदगदु ४८०
तैरलि सुग्रीवुंडु दिक्कु लेकुंडि । यरिगि रामुनकु बंटयि चेरैगाक !
नाकेल रामुडु ? नाकेल संधि ?। नाकेमिटिकि वेड नलिदूलि यौकनि ?
ना महितात्मकुंडतिधर्मपरुडु । रामुडु नन्नु नूरक येल चंपु ?
बोल वी माटलु; पोयिसुग्रीवु । वालायमुग ग्रूरवज्रप्रहार
मूलमै यौप्पु नामुष्टिघट्टनल । नेल गूलिचि वत्तु नेम्मदि नुडु ।'
मनि तार मरलि पौम्मनि वीडुकौलिपि । यनिमिषेश्वरपुत्रुडगु वालि कडगि
कलगौन जुट्टिन कर्मपाशमुलु । नैलकौनि तिगिच्चिन निलुव राकुन्न
वैडलुचंदबुन वैरवुनु लावु । गडिमियु बैम्पु नुत्कटमुगा वैडलि
शरधुलु गलग भूचक्रंबु वडक । गिरुलौड्डुगिल्ल गिष्किंध घूर्णिल्ल
गर्जिंचि चनुदेन्चि कदिसि सुग्रीवु । दर्जिंचि चूचि युदग्रुडै पलिकै ४९०
'न तोड बोराडि ना कोडि पारि । येतैन्चिते यौरि ! यिदु लज्जमालि?
येतैन्तुगाकेमि यिप्पुडे जमुनि । वातिकि निनु नुट्रवडियंबौनर्तु;
वैदरकचैदरक बैट्टु बीरमुलु । वदरक यौक्कित वडिनिल्वु चालु ।

—चाहे सुग्रीव अनाथ होकर, जाकर राम का सेवक बन जाए तो बन जाए। मुझे राम की क्या आवश्यकता है ? मुझे संधि क्यों ? शोभा को खोकर, मुझे दूसरे की प्रार्थना करना क्यों ? वह महितात्मक (महान् पुरुष) अतिधर्मवान् है। वह यूंही मुझे क्यों मारेगा ? ये बातें असगत हैं। (मैं) जाकर, सुग्रीव का, निश्चय ही, क्रूर-वज्र प्रहार का मूल बनकर शोभित अपने मुष्टिप्रहारों से, वध कर आऊंगा। तुम निश्चिंत रहो।' (ऐसा) कह तारा को लौट जाने के लिए कहा, (उसे) बिदाकर अनिमिषेश्वर (इंद्र)-पुत्र वालि साहसकर निकल पड़ा मानों विकराल रूप से घिरे कर्मपाश के स्थिर बनकर आकर्षित करनेपर (जीव) नहीं रुक सकता हो। पराक्रम, शक्ति (तथा) साहस के अधिक उत्कर्ष से निकलकर, गर्जना की जिससे शरधियाँ (समुद्र) व्याकुल हो गयीं, भूचक्र कांप उठा, पर्वत झुक गये, किष्किधा उद्भ्रांत हो गयी। (इस प्रकार) आकर, सामनाकर, सुग्रीव को डांटकर, उदग्र हो कहा:— ॥ ४९० ॥
—'रे ! मेरे साथ युद्धकर, मेरे हाथ हारकर, इस प्रकार बेशरम बनकर, (फिर) आए हो ? आए तो क्या हुआ ? अभी तुम्हें यमराज के मुँह की बरी बना दूंगा। बस, भीत हुए बिना, चंचल हुए बिना, डींग न हांककर, थोड़ी देर के लिए रुक जाओ। युद्ध में मुष्टिप्रहार से तुम्हें

नालंबुलो मुष्टिहति निन्नुनेल । गूलिचि प्राणमुल् गोन्दु ने' ननुचु
नुरुमनि पिडुगुतो नुल्लसंबाडु । कडकैन तनमुष्टि गट्टिगा बट्टि
पडतेन्चि पोडिचिन भानुतनूजु । डोरगि नेत्तुरु ग्रक्कि योय्यन देलिसि
धीरुडैनिलिचि गद्दिचि यिंद्रजुनि । गेरडंबाडि सुग्रीवु डिट्लनियें;
'नन्नवु नाकु बूजाहुँडवनुचु । निन्नाळ्ळु सैचिति निंतिय कानि
विग्रहंबुन केनु वेडतुने ? तोन्टि । सुग्रीवुडगानु जूचि पोराडु ।
वालि ! निन्निप्पुडवश्यंबु चपि । पालितु गपिराज्यपदमु ने' ननुचु ५००

गडुनल्गि सालवृक्षमगलिच तेंच्चि । वडि नार्चि वैचिन वालि गंपिंचि
पुडमिपै बडि मूर्छ बोन्दि योक्किंत। वडि देरि गर्वदुर्वारुडै निलिचि
धीरुडै शूरुडै दिविजुलु वोन्ग । ना रविजुनि वैचें नडरि शैलमुन;
नदरक सुग्रीवुडडचें वालमुन; । बदमुल नोप्पिचें बलियुडै वालि;
करनखंबुल व्रच्चें गडगि सुग्रीवु । डुरुमुष्टि नोप्पिचें नुग्रुडै वालि;
यंतट दनियक नार्पुलु निगुड । नंतकंतकु लावुलडरि यिद्दरुनु

ज़मीनपर गिराकर, मैं प्राण हरण कर दूँगा।' (ऐसा) कहते हुए न गरजनेवाले वज्र (अशनि) का परिहास करनेवाली अपनी कठोर मुष्टि को सबल बांधकर, आकर, प्रहार करनेपर, भानुतनूज गिरकर, रक्त उगलकर, ज़रा होश में आकर, धीर हो, खड़े होकर, धमकी देकर, इंद्रज का परिहासकर, सुग्रीव ने यों कहा:— '(तुम) मेरे अग्रज हो, पूजार्ह हो, (ऐसा) मानकर, इतने दिन सहन किया। यह नहीं तो विग्रह (युद्ध) के लिए मैं डरने वाला हूँ क्या ? (मैं) पूर्व का सुग्रीव नहीं हूँ। देख (संभल) कर युद्ध करो। हे वालि ! तुम्हें अब अवश्य मार डालकर, मैं कपिराज्य-पद को ग्रहण करूँगा।' (ऐसा) कहते हुए ॥ ५०० ॥

—अधिक क्रुद्ध हो, सालवृक्ष उखाड़ ला, झट सिंहनाद कर डालनेपर वालि कांपकर, पृथ्वीपर गिरकर मूर्च्छित हुआ। थोड़ी देर में होश में आकर, गर्व से दुर्वार बनकर, धीर, शूर बनकर, देवताओं के प्रसन्न होने पर, विजृंभित होकर, उस रविज (सुग्रीव) पर शैल (पर्वत) फेंक दिया। भीत न होकर सुग्रीव ने उसे वाल (पूँछ) से दबा दिया। बली बनकर वालि ने चरणों से (उसे) पीड़ित किया। सुग्रीव ने सप्रयत्न कर-नखों से (वालि को) नोच डाला। वालि उग्र बन उरुमुष्टि से पीड़ित किया। उसके बाद तृप्त न होकर, हुंकार भरते हुए, क्रमशः शक्ति से विजृंभित हो, महान् रूप से पदाघातों से, कचाकची (एक दूसरे की शिखाओं को पकड़कर), नखानखी (एक दूसरे को नाखूनों से नोचते हुए), मुष्टामुष्टि

घनपदापदि कचाकचि नखानखिनि। जेंनसि मुष्टामुष्टि जेंलगि पोरुचुनु
'हु' म्मनि म्रोयुचु नूर्पु लोन्डोन्ड । ग्रम्म नंगमुल रक्तमुलुब्बुचुंड
वालमुल् बाहुवुल् वरुस नोन्डोन्ड । कीलिंचि पेनगुचु गिनिसि ताकुचुनु
बायुचु डायुचु बलिमि नोन्डोरुल । व्रेयुचु द्रोयुचु विपुलसत्त्वमुल ५१०
दूटुचु दाटुचु दोड्तोन पगलु । चाटुचु मीटुचु सांद्रमर्ममुल
निरुवुरु गडिमिमै निब्भंगि बोर । सुरलोकनायकसुतुनकु गाक
तरणितनूजुडत्तरि जालनोच्चि । गरुवंबुदक्कि संगरभूमिजिक्कि
पेंदवुलु दडपुचु बेम्पेल्ल बोलिसि । कुदिसि भीतिल्लि दिक्कुलु सूचुचुंडे
निग्रहानुग्रहनिधि रामुडंत । सुग्रीवुडलवेदि स्रुक्कुट जुचि

रामास्त्रमुचे वालि गूलुट

'यी लोन वालि ने नेयकयुन्न । वालि सुग्रीवुनि वधियिंचु' ननुचु
जलनिधुलेडुनु जगमुलीरेडु । गलग भूतमुलेल्ल गडगि कंपिप
गुणनादमोनरिंचि कोरि मै वेंन्चि । त्रुणमुगा नव्वालि दृष्टिचि पोन्चि

(मुष्टि प्रहार करते हुए), विजृंभित हो लड़ते हुए, 'हुम्' की ध्वनि के बढ़ने पर, एक के श्वास के दूसरेपर प्रसरित होनेपर, अंगों से रक्त के फूट निकलने पर, पूँछ (और) बाहुओं को क्रम से एक दूसरे से फँसाकर, खींचातानी करते हुए, क्रुद्ध हो सटते (धक्का देते) हुए, दूर हटते हुए, नियराते हुए, बल से एक दूसरे पर प्रहार करते हुए, ढकेलते हुए, विपुल सत्त्व से ।। ५१० ।।

—नोचते हुए, लांघते हुए, साथ ही साथ वैर को प्रदर्शित करते हुए, मर्म-स्थानों पर प्रहार करते हुए, दोनों साहस से इस प्रकार (उपरोक्त विधान से) लड़ते रहे । उस समय सुरलोक-नायक के सुत के हाथ तरणितनूज अत्यधिक पीड़ित हो, गर्व (दर्प) को खोकर, संगरभूमि में (शत्रु के हाथ) फँसकर, होंठ चाटते हुए, उत्कर्ष के नष्ट होने पर, सिकुड़कर, भीत होकर, (चारों) दिशाओं में देखता रहा । तब निग्रह (और) अनुग्रह के निधि राम सुग्रीव के श्रांत हो, कमजोर होते देख,

राम के अस्त्र से वालि का गिरना

(यह सोचकर कि) 'इस बीच मैं वालि पर (बाण) न चलाऊँ तो वालि सुग्रीव का वध कर देगा ।' सात समुद्र और सात लोकों के विकल होने पर (तथा) समस्त भूतों के कंपित होने पर, गुण (धनुष की डोरी)-नाद

वेँस नमोघास्त्रंबु विंट संधिंचि । यसमानबलशालियगु वालि नेसेँ;
नेयुडु नव्बाणमिनवह्निरुचुल । मायिंचि वडि नभोमडलिनिंड
नुरुतरानलकील लौलुक नोन्डोन्ड । गरुडोरगामरगंधर्वुलदर
दन पुत्त्रु रक्षिंप दाय शिक्षिंप । निनुडिट्टि यस्त्रमै येतेन्चें ननग
दपनपुत्त्रुडु गान दंडधरुंडु । कृप दम्मुडैन सुग्रीवुनि ब्रोव
दनकालदंडमुद्धति वालिमीद । वनिचेनो यन महापवनवेगमुन
नुरवडि जनुदेन्चि युरमुगाडुट्यु । दरुचरपति गूलेँ दर्पंबु दूलि;
कैरलि दिक्करुलतो गिरुलतो वेलुच । दरुलतो नंदंद धरणि गंपिंप
नुरमु गाडिन बाणमुरवडि वेडलि । धरगाडेँ; नत्तरि दरुचरेश्वरुडु
नविरळरक्तसिक्तांगुडै गालि । नवनि द्रैळ्ळिन पुष्पिताशोकमनग
व्रळयकालंबुन व्रभलेल्ल मासि । यिलमीद व्रालिन यिनुनिचंदमुन
नवशुडै यवनिपै नट्टुपडियुन्न । नवनीशुडगु रामुडट्टु चेर वच्चें;
वच्चिन रघुरामु वालि वीक्षिंचि । यिच्चलोपल कोपमेँरुग निट्लनियेँ

करके, चाहकर, शरीर को बढ़ाकर, उस वालि को तृण के समान देखकर, ताक में रहकर, झट से अमोघ-अस्त्र को धनुष पर चढ़ाकर, असमान बलशाली वालि पर चला दिया। चलानेपर वह बाण इन-वह्नि-रुचियों (कांतियों) को म्लान बनाते हुए, (अपने प्रकाश को) नभोमंडली में भरते हुए, ।। ५२० ।।

—उरुतर-अनल-कीलाओं (ज्वालाओं) के उमड़नेपर, आपस में गरुड़, उरग, अमर, गंधर्वों के भीत होनेपर, मानों अपने पुत्र की रक्षा करने (तथा) शत्रु को दंडित करने के लिए सूर्य ही अस्त्र बनकर आया हो, मानों सुग्रीव के तपन (सूर्य)-पुत्र होने से यमराज कृपा से अपने अनुज की रक्षा करने के लिए अपने कालदंड को उद्धत रूप से वालि पर भेजा हो, (इस प्रकार) महापवन वेग से, अतिशीघ्रता से आकर, उर में धंसते ही तरुचर (वानर)-पति दर्प खोकर गिर पड़ा। विकल बने दिग्गजों, गिरियों (तथा) घने तरुओं के साथ जहाँ-तहाँ धरणि के कंपित होनेपर, (वालि के) उर में धँसा बाण, शीघ्रता से निकलकर धरती में गड़ गया। उस अवसर पर तरुचरेश्वर, अविरल-रक्तसिक्त अंगवाला होता हुआ, पवन के कारण ज़मीनपर गिरे पुष्पित अशोक के समान, प्रलयकाल में समस्त प्रभा के मलिन होनेपर, ज़मीनपर गिरे सूर्य के समान, अवश हो, अवनिपर गिर पड़ा। (ऐसे पड़े हुए) उसके पास अवनीश राम उधर आया। ।। ५३० ।।

वालि रामुनि दूरुट

'नो राघवेश्वर ! यो रामचंद्र ! । धारुणिलो निन्नु धर्मात्मुडंड्रु;
दममुनु शममुनु दययु सत्यंबु । समबुद्धियुनु नीति सौमनस्यंबु
मोदलैन सद्‌गुणंबुल राशि वगुचु । बोंदलिन नी पेम्पु पोल्लुगा जेसि
येनसि सुग्रीवुतो नेनु बोराड । ननु नेयनगुनय्य ! नडुसोच्चि नीवु?
एनु नीकपकारमेन्नडु जेय; । नेनु नीकोक दोषमेपुडु जिंतिप
नीकु शत्रुड गानु; नी शत्रु गूड; । नीकु शत्रुलुसेयु निकृतुलेनेरुग;
नेरिगि युपेक्षिप; निट्टु सेयदगुने ? । येरिगियु नेरुगवैतिनवंशतिलक !
शरभ कंठीरव शार्दूल कोल । करिहरिणादुल खंडिप गोरि
वसुध राजुलु वेट वत्तुरुगाक । येसगि कोतुलबट्टि येन्दु जंपुदुरे ?
५४०
यर्कसूनुंडु ने नन्नदम्मुलमु; । कर्कशमति बूनि गारवंबेडलि
यडरि मेमेट्लैन नैतिमिगाक । कडगि नीविट्टु चंप गारणंबेमि ?
कुंदेलु नुड्मुनु गूमंबु नेदु । बंदि याळुवयुनु भक्ष्यमुल् गानि,

---

बाली और राम का सम्वाद

—आये हुए रघुराम को देखकर, वालि मन के क्रोध के बढ़नेपर (यों बोला):— 'हे राघवेश्वर ! हे रामचंद्र ! धरणि में तुम्हें धर्मात्मा कहते हैं। दम, शम, दया, सत्य, समबुद्धि, नीति, सौमनस्य आदि सद्‌गुणों के राशि होकर वर्द्धित अपने उत्कर्ष को व्यर्थ बनाकर, मेरे सुग्रीव के साथ लगकर लड़ते समय, बीच में आकर (मुझपर बाण) चलाना संगत है क्या ? मैंने कभी तुम्हारा अपकार नहीं किया, मैं कभी तुम्हारे प्रति दोष (पूर्वक) चिंतन नहीं करता। तुम्हारा शत्रु नहीं हूँ। तुम्हारे शत्रु का साथ नहीं देता। तुम्हारे प्रति शत्रु क्या अहित कर रहे हैं, मैं नहीं जानता। जानकर, (उनकी) उपेक्षा नहीं करता। क्या (तुम्हें) ऐसा करना चाहिए-था ? (क्या यह उचित है ?) हे इनवंशतिलक ! जानकर भी अज्ञ बन गये। वसुधा पर राजा (लोग) शरभ, कंठीरव, शार्दूल, कोल, करि, हरिण आदि का वध करना चाहकर, आखेट खेलने आते हैं। जानबूझकर वानरों को पकड़ कहीं मार डालते हैं ? ॥ ५४० ॥

—अर्कसून और मैं सहोदर हैं। कर्कशमति (क्रूर बुद्धि) धारणकर, (परस्पर) गौरव (भाव) को छोड़कर, विजृंभित हो, हम जैसा चाहें कर लें, तुम्हें इस प्रकार (मुझे) मारने का क्या कारण है ? (राजाओं के लिए) खरगोश, गोधा, कूर्म (कछुआ), शल्यमृग, वराह ।द)

पंचनखबनि प्लवगंबु दिनरु; ।पौन्चि नन्निट्लेसि पौलियिंचितेल?
मनुजेश ! यिंक ना भांसरक्तमुल । ननुभविंपुमु नीवु ननुजुडु गूडि;
विशदकीर्तुल जगद्विख्यातुडैन । दशरथु पनुपुन धर्मंबु नूदि
वनमुल दपसिवै वर्तिंचुटकुनु । जनुदेन्चि जीवहिंसकुरोयवैति;
धरणिपै मेमोंक तप्पुसेसिननु । भरतुंडुदगु गाक पट्टि शिक्षिंप;
नीकु गारणमेमि ? नीवु भूपतिवे ?। चेकोंन किट्लु चेसितिगाक नन्नु?
नी देवि जैरगोंन्न नीचु रावणुनि । नादट साधितुननि येगुदेन्चि ५५०
ननुडिंचि नीवर्कनंदनुनि वट्टि । यनयंबुनीतिलेवैति लोकमुल;
नी वार्त नीवु ना कैरिगिंचितेनि । देव ! नी देवि साधिंपने येनु ?
नाततबलशालियै येगुदेन्चि । सीतामहादेवि जैरगोंनि चनिन
वानिनि मुन्नु ना वालरोममुल । बूनि बंधिंचि यंबुधुलेल्ल मुंचि
करुणिंचि विडिचिति घन बाहुशक्ति। सौरिदि लोकमेरुंगु; सुग्रीवु-
डेरुगु;
बेलुकुर नन्नु जंपेंडिवाडवकट ! । वलिमिमै ना दृष्टिपथमुन निल्चि

भक्ष्य (खाने योग्य) हैं किन्तु पंचनख मानकर प्लवग (वानर) को नहीं खाते। ताक में रहकर (आड़ में छिपकर) मुझपर (बाण) चलाकर ऐसा वध क्यों किया ? हे मनुजेश ! अब तुम और अनुज मिलकर अब मेरे रक्तमांस का भोग करो। विशद-कीर्तियों से जगद्विख्यात बने दशरथ के आदेशपर धर्म का आधार बनकर, वनों में तपस्वी बन रहने के लिए आकर, (तुमने) जीवहिंसा को घृणास्पद नहीं माना। (इस) धरतीपर हम कोई अपराध करें तो भरत को उचित था कि वह हमें पकड़कर दंडित करता। किन्तु तुम्हें (ऐसा करने का) क्या कारण है ? क्या तुम राजा हो (जो इस तरह दंड देते ?)। मुझे न अपनाकर ऐसा किया। अपनी देवी का हरण करनेवाले नीच रावण को बाद में पराजितकर दूँगा, (ऐसा) सोचकर, (यहाँ) आकर, ॥ ५५० ॥

—मुझे छोड़ अर्कनंदन को अपनाकर, सदा के लिए लोक में नीतिहीन बन गये। हे देव ! अगर तुम अपना समाचार मुझे बताते तो क्या मैं तुम्हारी देवी को नहीं ला देता ? आतत-बलशाली बन आकर, सीता महादेवी को पकड़ ले जानेवाले उस (रावण) को पूर्वकाल में अपनी पूँछ के बालों से बाँधकर, समस्त समुद्रों में डुबोकर, (अपनी) महान् बाहुशक्ति का प्रदर्शनकर, (अंत में) करुणा दिखाकर छोड़ दिया था। इस क्रम को लोक जानता है। सुग्रीव जानता है। हाय ! विह्वल बन मुझे मार डालनेवाले (तुम) सबल हो, मेरी दृष्टिपथ में आकर, मुझे

ननु बेरुकोंनि पिलिचि नन्नु मुदलिंचि। जननाथ! कडिमिमै जंपलेवैति!
छलमु गैकोंनि डागि चंपितिनन्नु; । दलपोयनिदि राजधर्मंबे' ? यनिन
वालिमाटलु विनि वसुधेशुडनियें; । 'वालि! यी माटलु वलवदु नीकु;
गपिवंशमुन बुट्टि कपुललो बेरिगि । चपलुडवै धर्मशास्त्रंबु तेरगु ५६०
तेलियक नीवु नादेस दप्पुलेन्नि । पलिकेद; विदि धर्मपद्धति गादु;
नीवन्न पलुकुलन्निटिकि नुत्तरमु । ना वाक्यमुलु गोन्नि नयबुद्धि विनुमु;
यनुजुनि दनुजुनियट्लग्रजुंडु । पनुपगवले नंड्रु महि धर्मविदुलु;
आमेर दप्पिती वपराधहीनु । दामरसाप्तनंदनु बुरि वेडल
नडिचि वाविनि गोंडलैनयट्टि यतनि । पडतिनि रति बलिमि बट्टि भोगिंचि;
कामांधुडेन्दैन गलडे नीवंटि । पामरुडोकडु दप्प जगत्त्रयमुन
नदियट्लुंडनि; म्मतडुनु नेनु । गदिसि सख्यमु सेयुकतमुन नीवु
जगतिपै ना मित्रुशत्रुंडवगुट । देंगि नाकु निन्नु वधिंचुट दगवु;
अकलंकुलयि वेटलाडेडि राजु । लोंकट दीममु नोड्डि योंकट जंपुदुरु;

नाम लेकर बुलाकर, मुझे ललकारकर, हे जननाथ! पराक्रम के साथ मार नहीं सके न! धोखे से, छिपकर मुझे मार डाला। सोचने पर क्या यही राजधर्म है?' (ऐसा) कहने पर वालि की बातें सुनकर वसुधेश ने कहा:— 'हे वालि! ये बातें तुम्हारे लिए उचित नहीं हैं। कपिवंश में पैदा होकर, कपियों में पलकर, चपल बनकर धर्मशास्त्र के विधान को ॥ ५६० ॥

—न जानकर, तुम मेरे प्रति अपराध गिनाकर कहते हो। यह धर्मपद्धति नहीं है। तुम्हारे कहे सभी वचनों के उत्तर (रूप में) मेरे कुछ वाक्यों को नयबुद्धि से सुनो। महि (जगत) पर धर्मविद (धर्मज्ञों) का कहना है कि अग्रज को (अपने) अनुज को तनुज (पुत्र) के समान पालना चाहिए। उस नियम का तुमने उल्लंघन किया। अपराधहीन तामरस-आप्त (सूर्य)-नंदन को नगर से निर्वासित कर, रिश्ते में बहू होनेवाली, उसकी (अनुज की) स्त्री से बलात्कार से रतिकर, भोगा। तुम्हारे जैसा कामांध, किसी पामर को छोड़, जगत्त्रय में दूसरा कोई है? उसे वैसा रहने दो। उसके (सुग्रीव के) और मेरे मिलकर मैत्री करने के कारण तुम धरतीपर मेरे मित्र के शत्रु हो। अतः तुम्हारा वध करना मेरे लिए संगत ही है। अकलंक हो आखेट करनेवाले राजा एक स्थान पर बताकर, दूसरी जगह से मार डालते हैं। एक दूसरे से लड़ते समय मार डालते

औंकटितो वोराडुचुंड जंपुदुरु; । औंकभंगि वोंदरिंट नुंड जंपुदुरु
उरुलोड्डि चंपुदु; रुऽक चंपुदुरु; । उरुशक्ति माटुन नुंडि चंपुदुरु;
तेरलु ब्रोनुलु नोड्डि तेगुव जंपुदुरु । परिकिंप दीन वापमुलेदु नाकु;
गावुन शाखामृगंबगु निन्नु । नीविधि जंपिन नेंगेल कलुगु ?
जतुर बाहाशक्ति जगतिकंतटिकि । बतियैन भरतुनि पनुपुन वच्चि
दुष्टमृगंबुल दुष्टराक्षसुल । सृष्टिपै नेंपुड्ड शिक्षिंचु चुंडुदुमु;
नी तम्मुडगु वानि नेलत गैकोन्न । पातकुडवु; गान बट्टि चंपितिनि;
राजदंडितुडु नारकबाधवोंरय । डोजमै गान ना युग्रास्त्रनिहति
मनिकितपडक निर्मलुडवै यिक । ननिमिषराज्यसौख्यमु वोंन्दुमीवु'
अनियौप्प रघुरामुडाडु वाक्यमुलु । विनि वालि कनुमूसि विवशुडैयंडि
कौन्तसेपुनकु नेंक्कोंन रामचंद्रु । गांतिराकाचंद्रु गनुगोंनि पलिकें
'यो राम ! शुभनाम ! युग्रांशुधाम । ताराधिपानन तार ना देवि
देवरशौर्यंबु देलिपि 'नीवनिकि । वोवल' दन्न दुर्बुद्धि वाटिंचि

हैं। एक समय झाड़ियों में रहते समय मार डालते हैं। ॥ ५७० ॥

—फंदे फैलाकर मार डालते हैं। अकारण ही मारते हैं। उरुशक्तियुत होकर आड़ में रहकर मार डालते हैं। परदे, कटघरे रखकर साहस के साथ मार डालते हैं। (अतः) सोच-विचारने पर इससे (तुम्हें मारने से) मुझे कोई पाप नहीं लगता। शाखामृग (वानर) हो तुम्हें इस प्रकार मार डालने में दोष ही क्या है ? चतुर बाहुशक्ति युक्त होकर (हम) समस्त जगत के पति भरत के आदेश से आकर, सृष्टि में (फैले हुए) दुष्ट मृगों (तथा) दुष्ट राक्षसों को दंडित करते रहते हैं। (तुम) अपने अनुज की स्त्री को ग्रहण करनेवाले पापी हो। अतः तुम्हें मारा है। राजा के हाथ दंडित होनेवाले व्यक्ति को दीप्ति से नरक की यातनाएँ प्राप्त नहीं होतीं। अतः मेरे उग्र-अस्त्र के प्रहार के लिए व्याकुल न होकर, निर्मल बन अब तुम अनिमिषराज्य (स्वर्ग)- सौख्य को प्राप्त करो।' ऐसा शोभा से राम के कहे वाक्य सुनकर, वालि आँखें मूँदकर, विवश हो थोड़ी देर के बाद रामचन्द्र को, कांति में राकाचंद्र सम वाले को, देखकर (वालि) बोला:— ॥ ५८० ॥

—'हे राम ! हे शुभ नाम ! हे उग्रांशु (सूर्य) धाम ! मेरी देवी ताराधिप-आनन (चंद्रमुख) वाली तारा के प्रभु (आप) का शौर्य बताकर, 'तुम युद्ध के लिए मत जाओ' कहने पर भी, दुर्बुद्धि को मानकर, विधिवश (उसकी बातें) न मानकर, मैं निकल पड़ा और इस प्रकार जमीनपर

विधिविहितंबुन विनक ने वेंडलि । यधिकवैरमुन निट्लवनिपै बडिति
बडिन कोपमुन दुर्भाषलु गौन्नि । जडमति बल्किति; सैरिंपवय्य !
तनपाटु चिंतिप; दारकु वगव; । दनयुडंगदुनकै तलकेंद नधिप !
यितकेमगुदुरो यितियु सुतुडु ! । नितटि दुरवस्थ ये वच्चुटेरुग'
ननि शोकमोहंबुलनु पयोराशि । मुनिगि मूर्छिलियुंडे मूगचदमुन;
नंत : पुरबुन का वार्तवोव । नंतलो दारादुलैन कामिनुलु
वालि गूलिन माट वज्रमै तमदु । वालुगुंडेलु नाट वसुधपै गूलि
यंतलो देलियुचु नट सोलयुचुनु । वंतलो दारुचु वालि जीरुचुनु ५९०
'ओ यंगदा ! नेडयो ! वालि दिविकि । बोयेंन्गदा' यंचु बोगुलुचु, नडलु
नंगदु दोड्कोनि यतुलशोकमुन । ब्रुंगियु बोन्गि येड्पुलु निगि मुट्ट
बदमुलु दोट्रिल बय्येदल् जार । वदलि कोप्पुलु वीड वा तेरल् वडक
गन्नुल बाष्पांबुकणमुलु दोरग । नन्नुव गौदीगलटुनिटु बेणक
वेवेग किष्किंधवेडलि रा नपुडु । द्रोव वारल नेदुकोनि कपुलनिरि;
'वालि राघवुचेत वसुधपै गूले । नेल पोयेदरु ? पोयिन ब्रमादंबु

गिर पड़ा। गिर पड़ा, इस क्रोध से कुछ बुरे वचन मूर्खतावश कहे हैं। क्षमा कर दो न! (मैं) अपने पतन के लिए दुखी नहीं होता। तारा के लिए दुखी नहीं होता। हे अधिप ! पुत्र अंगद के लिए व्याकुल होता हूँ। अब मेरी स्त्री (तथा) पुत्र का क्या होगा ! नहीं सोचा था कि मेरी ऐसी दुर्दशा होगी।' (ऐसा) कह शोक-मोहरूपी पयोराशि (समुद्र) में डूबकर, गूंगे के समान, मूर्च्छित हो (पड़ा) रहा। इतने में इस समाचार के अंत:पुर में जाने पर, तारा आदि कामनियाँ, वालि के निहत होने की खबर के अपने विशाल वक्ष में गड़ जानेपर वसुधापर गिर पड़ीं। कभी होश में आते हुए, कभी बेहोश होते हुए, संताप में ऊभचूभ होते हुए, वालि (का नाम लेकर) पुकारते हुए,।। ५९० ।।

—'हे अंगद ! हाय ! आज वालि स्वर्गस्थ हुआ है न !' (ऐसा) कहते हुए, भीत बने अंगद को साथ लेकर, अतुलशोक में ऊभचूभ होकर, रोदन (के स्वरों) के आकाश को स्पर्श करनेपर, चरणों के लड़खड़ानेपर, आँचलों के खिसकने पर, जूड़ों के ढीले होकर खुल जानेपर, होठों के कंपित होनेपर, आँखों से बाष्पांबुकणों के ढुलकनेपर, लघु (पतली) लतारूपी कटियों के कंपायमान होनेपर, अतिशीघ्रता से किष्किन्धा से निकलकर आनेपर, मार्ग में कपिजन उनके सामने आकर बोले:— 'वालि राघव के हाथ वसुधा पर गिर गया है (मारा गया है।) (वहाँ) क्यों जाती हो ? जानेपर अवश्य ही (कोई न कोई) विपत्ति आएगी। पहले से

राक मानदु सुमी ! रामसुग्रीवु । लेकमैयुंट मीरेरुगरे मोदल ?
नी यंगदुनि बट्टि येमि सेयुदुरो ? । दायल मदि नम्म दग दट्टुकान
नितनिचे गपिराज्यमेलिंतमिक; । मतिमंतुलगु कपुल् मनकु नुन्नारु;
पोवल' दन्न नप्पुडु तार दगवु । भाविंचि वेस वारि बलुमारु दूरि ६००

तारा विलापमु

'येटिकंगदुडु ? मीरेटिकि ? राज्य । मेटिकि ? नाकु प्राणेश्वरुडैन
वालि जूडक' यंचु वारि वारिंचि । या लोन दार ताराधिपवदन
तनमदिलो वालि दलपोसि पोसि । घनशोकमुन जनुगव चूचि चूचि
'यमरेंद्रसुतुराक यल्लंत जूचि । समकट्टि डायुचु सत्क्रीड गोरि
रासि गदा सुरराजेंद्र सुतुनि । वासिति ! रिक ना फलमुचेसेत
गुड्डुवुडितटनुंडि कुचमुला' रनुचु । गड्डुनल्क वेस नुग्रगति मोदुकोनुचु
बुडमि गंपिप नद्भुतशोकमडर । नेंडपक यिंभंगि नेतेर दार
हारमुल् देगि राल नलिवेणि दूल । भारंपु जनुगव वय्येद जाउ

ही तुम नहीं जानते हो कि राम और सुग्रीव मिले हुए हैं। पता नहीं, इस अंगद को पकड़कर क्या करेंगे ? दायादों (नातियों) का मन में विश्वास नहीं करना चाहिए। अत: इससे (अंगद से) अब कपिराज्य पर शासन कराएँगे। हमारे (पास) मतिमान कपि हैं। मत जाओ।' कहनेपर तब तारा ने न्याय (औचित्य) का विचारकर, झट उनकी कई बार निन्दाकर, ॥ ६०० ॥

—(कहा):— '(अपने) प्राणेश्वर वालि को न देख सकूँ तो मुझे अंगद किसलिए ? आप किसलिए ? राज्य किसलिए ?' (ऐसा) कहते हुए उन्हें रोककर, इस बीच ताराधिप-वदनवाली तारा अपने मन में वालि के बारे में विचार कर-कर, घनशोक से (अपने) स्तन-द्वय को देखकर, (कहने लगी):— 'थोड़ी दूर से ही अमरेंद्रसुत (वालि) के आगमन को देख, सन्नद्ध हो नियराकर, सत्क्रीड़ा की इच्छाकर, (उनसे) टकराते रहने के कारण सुरराजेंद्रसुत को खो बैठे न ! हे कुचो ! अब उसके फल, अपने किए के फल को भोगो।' (यों) कहते हुए अधिक क्रोध से झट उग्रगति से -(अपनी छाती) पीटने लगी। अद्भुत शोक के बढ़नेपर, पृथ्वी के कंपित होनेपर, इस प्रकार तारा के आनेपर, तारा के हार टूटकर गिरने लगे, सुन्दरवेणी खुल गयी, भारी स्तनद्वय पर आँचल खिसक गया। नीरज से मकरंद के झरने के समान, अधिक अश्रु झरने लगे। (वह)

नीरजंबुननु देनिय गाङ्रिनट्लु । तोरमै कन्नीरु दोरुग नंदंद
बलुविडि नेतेंन्चि पवनवेगमुन । ललि दूलि पडु पुष्पलतिकयु बोलें
६१०
ना वालिपै बडि यंदंद पोंगुल । लावेदि तार प्रलापिंपदोडगें;
'गपिकुलाधीश्वर! कपिराजचंद्र! । कपिराजशेखर! कपिसार्वभौम!
सकलसुरासुरसंघंबुलंदु । नकलंकसत्त्वुडवधिनाथ ! नीवु;
अङ्रिमुङ्रि विंध्यादुलगु महागिरुलु । वेंङ्रिकि पेटाडिन बिरुदवु नीवु;
बलियुडै त्रिभुवनपालुडै वेंलयु । कुलशैलभेदिकि गोंडुकवु नीवु;
कोलंबुडनु पेरि क्रूरगंधर्वु । नेल गूल्चिन रणनिपुणंडवीवु
नीवु मानवुनिचे नीचत बोंन्दि । यी विधिबडितिंक नेमनगलदु ?
इनतनूजुडु निन्नु नेंदिरि लावेदि । यनिलोन निनु गूल्तुननि रामुदेंच्चें
'रामुनि ननि गेल्वरादुंडु' मंटि; । नामाटविनवैति; ना मन्कि गोंन्टि
'वा महात्मुडु विष्णु वट्टु पोकु' मंटि । 'भीमशौर्युडतंडु; बिरुदुडुगु' मटि;
६२०
निनु जंप वच्चिन नीपालि मृत्यु । वनक रामुनिचेत नाङडिवडिति;

अतिशीघ्रता से, पवनवेग से आकर, लालित्य को खोकर गिरनेवाली पुष्पलतिका के समान, ॥ ६१० ॥

—उस वालिपर गिरकर, शोभा को खोकर, बार-बार विलाप करने लगी:— 'हे कपिकुलाधीश्वर ! हे कपिराजचन्द्र ! हे कपिराजशेखर ! हे कपिसार्वभौम ! हे अधिनाथ ! तुम समस्त सुरासुर समाज में अकलंक सत्त्ववाले हो। तुम अतिवेग से विंध्यादि महागिरियों को उखाड़कर, छिन्नभिन्न करने वाले, विरुदवाले हो। बली हो, त्रिभुवनपालक हो, विराजमान कुलशैल-भेदी (इन्द्र) के तुम पुत्र हो। कोलंब नामक क्रूर गंधर्व को जमीनपर गिरा देनेवाले रणनिपुण हो तुम। (ऐसे) तुम मानव के हाथ नीच (हीन) बन, इस प्रकार गिर गये हो ! अब और क्या कह सकूँगी ? इनतनूज तुम्हारा सामनाकर, बल खोकर, युद्ध में तुम्हें मार डालने के लिए राम को लाया। मैंने कहा कि ठहरो, राम को युद्ध में जीता नहीं जा सकता। मेरी बात नहीं मानी। मेरे अस्तित्व का हरणकर लिया। (मैंने) कहा कि वह महात्मा विष्णु है, उधर मत जाओ। कहा कि वह भीम-शौर्यवाला है, पौरुष को छोड़ दो। ॥ ६२० ॥

(मेरी बात नहीं मानी)। तुम्हें (मेरे) मार डालने के लिये आये, तुम्हारे (मेरे) लिए मृत्यु है, ऐसा न मानकर राम के हाथ व्यर्थ हो

वॊलसि देवासुरु लॊगि द्रच्चितच्चि । वलमाँड्र मड्रि पायवडियुन्न जूचि
यडरि वासुकि मंदराद्रिकि जुट्टि । वडि समुद्रमु द्रच्चि वरशक्ति पॆमि
द्रिजगंबुलंदु नुद्दीपिचु नीदु । भुजमुलु पॆन्धूळि ब्रुगॆने नेडु ?
अतिसत्त्वुडगु राक्षसाधीशु बट्टि । धृतिदूलि वगव नी दृढमुष्टि गट्टि
मुनुकॊनि वार्धुल मुंचि मुंचॆत्तु । घनवालमिट धूळि गलिसॆने नेडु ?
करकंठु श्रीपादकमलंबुमीद । दॆड्रगॊप्प नी मौळि तेटियै व्रालु
नट्टि नीमस्तकंबकट ! यिच्चोट । वट्टिनेलनु गूलवलसॆने नेडु ?
हृदयेश ! निनुबासि ये निल्व जाल; । गदिसि नीवुन्न लोकमुनके वत्तु;
वेदन निटमीद वेगबालैति; । ना दिक्कुलेमिकि नाकुनु वगव
६३०
गोत्रारिनंदन ! कोरि नीकन्न । पुत्रु नंगदु जूचि पॊवकॆद गानि:
दूलितो दॊगि नी तॊडलपॆ बॊरलु । बालु नंगदु नेल पालिपवय्य !
युरमुपै दॊडलपै नुंचि मन्निंचि । शिरमु मूकॊनि मुद्दु जॆक्कुलु पुणिकि
करमु मुद्दाडि नी गारापु पट्टि । वरुस नंगदु नेल वारिप वधिप !'

गये । क्रमसे देवासुर मंथन करके-करके थककर, बल खोकर, शिथिल बनकर रहे (तो उन्हें) देख, उत्कर्ष के साथ वासुकि से मंदर पर्वत को परिवेष्टितकर, वरशक्ति के उत्कर्ष से शीघ्रता से समुद्र का मंथनकर, त्रिजग में उद्दीप्त होनेवाली तुम्हारी भुजाएँ आज अधिक धूलि में लोट गये न? अतिसत्त्ववाले राक्षसाधीश को पकड़कर, (उसके) धैर्य को खोकर, रोते रहने पर अपनी दृढ़मुष्टि से बांधकर, वारिधियों में ऊभचूभ करने वाला तुम्हारा बाल (पूँछ) आज धूल में मिल गया क्या ? नीलकंठ के श्री चरणकमलों पर अच्छे विधान से भ्रमर हो झुकनेवाला तुम्हारा मस्तक को हाय ! यहाँ आज खुली जमीनपर गिरना पड़ा ना ! हे हृदयेश ! तुमसे बिछुड़कर मैं रह नहीं सकती, नियराकर तुम जिस लोक में हो, वहीं आऊँगी । अब से वेदना की भागी बन गयी हूँ । मैं अपने अनाथपन के लिए दुखी नहीं होती । ॥ ६३० ॥
हे गोत्रारि (इन्द्र)-नंदन ! तुम्हारे लाड़ले पुत्र अंगद को देख अधिक दुखी हो रही हूँ । धूल से लिपटकर तुम्हारे जाँघों पर लोटनेवाले बालक अंगद का लालन क्यों नहीं करते ? हे अधिप ! वक्षस्थल पर, जाँघों पर रख (बिठाकर), मानकर, सिर को सूँघकर, प्यारे गालों पर पुचकार कर, अधिक चूमकर, अपने लाड़ले पुत्र को (रोने से) क्यों नहीं मना करते ?' ऐसा प्रलाप करती हुई स्त्री (तारा) ने, सुग्रीव को देखकर, शोक के

यनि प्रलापिंचुचु नतिव सुग्रीवु । गनुगोनि पल्कॅ शोकमु वॅल्लिविरियः
'दलकोनि वालिमुंदऱ निल्वलेक । बलमऱि पलुमारु पंदवै पारि
गतिमालि पोयि राघवुतोडितॆच्चि । कृतकंपु जयमुन गिष्किध गोन्टिः
नी कोरिनट्लय्येः नी पग दीरॆः । गैकोनि भोगिंपु कपिराज्यपदविः
नॆंडमाटलाडि यी यिनवंश्यु देर । गडु हनुमंतुडु गलिगॆने नीकु ?
बलुमारु बुद्धुलु परिकिंचि चॆप्प । नल नीलतारुलुन्नारुले नीकु' ६४०
ननि पल्कि रघुरामु नब्जाक्षि सूचि। 'जननाथ ! यी वालि जंप ने- मिटिक ?
मॆऱसि निन्निट्टुसेय मी तंड्रितोड ।गऱपॆने रघुराम ! गणुतिंप वालि ?
वॆरवोप्प नी राज्य विभवंबु गोन्न ।भरतुडे रघुराम! परिकिंप वालि ?
चॆनटियै नी देवि जॆऱगोनि चन्न । दनुजुडे रघुराम ! तलपोय वालि ?
वालि नकारणवैरंबु वूनि । येलय्य! तॆगटार्चितिभंगि बेर्चि ?
नी यट्टि सुकृतिकि नी यट्टि पतिकि । नी यट्टि कारुण्यनिधिकिट्लु तगुनॆ ?
जनकजतो गूड जनियॆनो यॆरुक ? । घनमैन विरहाग्नि ग्रागॆने यॆरुक ?

उमड़ने पर (कहा):—'सामनाकर वालि के सामने खड़े न रह सक, बल को खोकर, कई बार कायर बन, भागकर, अनाथ-से जाकर, राघव को साथ ले आकर, कृतक (कपट) जय से किष्किधा को प्राप्त किया। तुमने जैसा चाहा, वैसा ही हुआ। तुम्हारा प्रतिशोध पूरा हुआ। कपि राज्यपद लेकर उपभोग करो। समुचित बातें करके इस इनवंशवाले को लाने के लिए तुम्हें हनुमान मिल गया न ? अनेक बार सोच-विचार कर मंत्रणा देने के लिए तुम्हें नल, नील, तार हैं न !' ।।६४०।।
—ऐसा कहकर रघुराम को देख अब्जाक्षी (कमलनेत्री) ने (कहा):—'हे जन-नाथ ! इस वालि को किसलिए मार डाला ? प्रकट रूप से तुम्हारी ऐसी दशा कर देने के लिए, गणना करने पर क्या वालि ने तुम्हारे पिता को सलाह दी थी ? हे रघुराम ! उपाय से तुम्हारे राज्य-वैभव को छीननेवाला, सोचने पर वालि तो नहीं है न ? हे रघुराम ! दुष्टता से तुम्हारी देवी को चुरा ले जानेवाला राक्षस, विचार करने पर वालि तो नहीं है न ? हे आर्य ! अकारण वैर ग्रहणकर इस प्रकार वालि का संहार क्यों किया ? तुम जैसे सुकृति (पुण्यात्मा) को, तुम जैसे प्रभु को, तुम जैसे कारुण्यनिधि के लिए यह उचित है क्या ? क्या जनकजा के साथ (तुम्हारी) समझ (विवेक) चली गयी ? महान् विरहाग्नि के कारण विवेक (-ज्ञान) जल गया क्या ? हे भूमीश ! आज मेरा पुण्य (भाग्य) ही ऐसा हो गया। अब क्या करूँ ?

भूमीश! नेडुना पुण्यमिट्लय्यें:। नेमि सेयुदुर्निक? नेमंदु विधिकि?
नी वालि नेडबासि ये नुंडजाल:। देव! नन्नुनु वट्टि तेगटार्पवय्य!'
यनि युरंबुनु मोमु नंदंद मोदि। कोनुचु वालिनि वेरुकोनि येड्चुचुंडे: ६५०
नावेळ हनुमंतुडट्टु तार गदिसि। 'नी वेरुंगनि धर्मनीतुलु गलवे?
याजि वीरस्वर्गमंदिन वालि। की जाड शोकिंपनेल? यी पनुलु
दैवयत्नमु' लंचु दा बलुमारु। धीविचक्षणुडिट्लु तेलुपुचुनुंडे

वालि सुग्रीवुनकु बुद्धुलु गरपुट

नंतलो गनुविच्चि यमरेंद्रतनयु। डिंतित यनरानि यिति शोकंबु
नंतकंटेनु मिचु नंगदु वगपु। नंतयु नट्टुसूचि यर्कजु जूचि
'पूनि रामुनिचेत भुवनंबु लेरुग। भानुज! नेडु नी पग साध्यमय्येः
क्षितिमीद राजुल कृप नम्मदगदुः। मति नम्मि चेडक येमरक वर्तिपुः
मडरि रामुनितोड नाडिन प्रतिन। येडपक कार्विपु मिटमीद नीवुः
पायक नातोड वलिमि वोराडि। मायावि गडिमिमे मडिसिन मेच्चि

विधि को क्या कहूँ? इस वालि से विछुड़कर मैं नहीं रह सकती। हे प्रभू! मुझे भी पकड़कर मार डालो न!' (ऐसा) कह छाती और मुख पर जहाँ-तहाँ पीटते हुए, वालि का नाम लेकर रोती रही। ॥ ६५० ॥

उस समय उधर हनुमान तारा के नियराकर (कहा):— 'क्या ऐसे धर्म (और) नीतियाँ हैं, जिन्हें तुम नहीं जानती हो? युद्ध में वीर स्वर्ग को प्राप्त करनेवाले वालि के लिए इस प्रकार शोक क्यों करती हो? ये कार्य दैवयत्न (से हुए) हैं।' (ऐसा) कहते हुए वह धीविचक्षण कई बार इस प्रकार समझाता रहा।

वालि का सुग्रीव को सीख देना

इतने में अमरेन्द्र-तनय (वालि) ने आँख खोलकर अवर्णनीय (बने) स्त्री के शोक, उससे अधिक बने अंगद के शोक (आदि) सब कुछ देख, अर्कज को देख (कहा)—'हे भानुज! सप्रयत्न राम के हाथ आज तुम्हारा प्रतिशोध भर आया, जिसे सारे भुवन जान गये। क्षिति (पृथ्वी) पर राजाओं की कृपा का विश्वास नहीं करना चाहिए। मन से (उस पर) विश्वासकर, न बिगड़कर, असावधान न बनकर, व्यवहार करो। अब आगे राम से की गयी प्रतिज्ञा का पालन अविलम्ब करो। न छोड़कर

पूनिन वेड्कतो बुरुहूतुडिच्चें । मानैन यी हेममालिक दौलिल; ६६०
यिदिनीवु धरियिंपु मी कपिराज्य । पदमुन किदि नीवु बरगु चिह्नंबु:
ई यंगदुनि शोकमिक वारिंपु । ना यट्ल कौनियाडि ननु मरपिंपु
मा सुषेणुनि पुत्रियैन यी तार । धीसार दीनि बुद्धिनि ब्रवर्तिल्लु:
मेनु जेसिन तप्पुलेल्लनु मरवु : । पूनि ना मेयि ब्राणमुलु निल्वविक:
गैकोनु मी मालिकारत्न' मनुचु । शोकानतग्रीवु सुग्रीवु बिलुव
नतडुनु रघुरामु नानति वडसि । यतिभक्ति दाल्चें ना हैमदामंबु ।
ननुवोप्प मरि वालि यंगदु जूचि । तन मदिलो नतिदय दोप बलिकें;
'नो कुमारक! शोकमुडुगुमु नीवु । शोकिंप नेटिकि सुग्रीवुडुंड ?
नलिनाप्तसूनुंडु नाकंटे निन्नु । ललि बेम्पुमै नुपलालिंपगलडु;
सुग्रीवुडेक्कड शूरत जूपें । नग्रणिवै युंडु मक्कड नीवु: ६७०
चिरतरकीर्तुलु सिद्धिचु नीकु: । नुरुतर सौख्यबु लोगि बोन्दु निन्नु;
बरग गिष्किधकु बट्टंबु गट्टि । यरुदुगा जूचु पुण्यमु सेयनैति;
ननिमिषपुरमुन करिगेद निक' । ननि पलिक रघुरामुनर्थितो जूचि

(लगातार) मुझसे प्रबलता से लड़कर मायावी (नामक राक्षस) के ससाहस मरने पर, (मेरी) सराहनाकर, बड़े आनन्द के साथ पुरुहूत (इंद्र) ने पूर्वकाल में यह मान्य हेमामालिका दी थी । ।। ६६० ।।

—इसे तुम धारण करो । इस कपिराज्यपद के लिए यह चिह्न के रूप में रहेगा । इस अंगद के शोक का निवारण करो । (उसका) मुझ जैसा पालनकर, मुझे भुला दो । यह तारा हमारे सुषेण की पुत्री है, यह धीसारा (बुद्धिमती) है । इसकी बुद्धि (मंत्रणा) के अनुसार आचरण करो । मैंने जो अपराध किए थे, उन्हें भुला दो । अब मेरे प्राण शरीर में नहीं रहेंगे । इस मालिकारत्न को ग्रहण करो ।' (ऐसा) कहते हुए शोक से अवनत-ग्रीवावाले सुग्रीव को बुलाने पर, उसने भी रघुराम का आदेश प्राप्तकर, उस हैमदाम को अतिभक्ति से धारण किया । आनुकूल्यता के शोभित होने पर वालि ने अंगद को देखकर, अपने मन में अति करुणा के उत्पन्न होने पर कहा—'हे कुमार ! तुम शोक त्यागो । सुग्रीव के रहते शोक करने की क्या आवश्यकता है ? नलिनाप्तसून (सूर्यपुत्र सुग्रीव) मेरी अपेक्षा तुम्हें लालित्य की आधिक्यता से उपलालन करेगा । सुग्रीव जहाँ शूरता दिखावे, वहाँ तुम अग्रणी बनकर रहो । ।। ६७० ।।

—तुम्हें चिरतर कीर्तियाँ प्राप्त होंगी । क्रम से उरुतर सुख तुम्हें प्राप्त होंगे । तुम्हें किष्किधा का राजा बनाकर, अपूर्व रूप से उसे देखने का पुण्य मैंने नहीं किया है । अब मैं अनिमिषपुर को जाऊँगा ।' ऐसा

'यो राम ! येनु वॆम्पॊन्द सुग्रीवु । तो रासि पोरुट तुदि वथ्यमय्यॆ:
नारय नंगदुंडवलु डेमैन । नेरमुल् सेसिन नेर्पुगा गॊनुम;
यिनसुतु तर्वात नितनि राजुगनु । मनुवंशतिलकुंड ! मन्निपवय्य !
वेदशास्त्रंबुल वॆदकि निन् गान । रादिमध्यांतंवुलवि नीकु लेवु:
चनुदॆन्चि प्राणावसानकालमुन । नॊनर नाकिदे तोचुचुन्नाडवीवु:
अटु पोयि कनियॆडु ना मूर्ति गंटि:। नटुगान नेनु गृतार्थुंडनैति:
बंकजहितवंश ! परमकल्याण ! । यिक व्राणमुलुंड वी यम्मु वॆरुकु' ६८०
मनिन रामुनि याज्ञ ना दिव्यशरमु । पॆनुपॊन्द नीलुंडु पॆरिकि वैचुटयु
गरमॊप्प दन वाह्यगतुलु वंधिचि । मरलिन पवनुतो मनसु संधिचि
यी मॆयि वरममै यिपारु रामु । श्रीमूर्ति मनमुलो जॆलुवॊप्प जेर्चि
ब्रह्मपदानंदपरुडैन वालि । ब्रह्मरंध्रंबुन व्राणमुल् विडिचॆ:
ना वेळ दारादुलैन कामिनुलु । ना वालिपै वालि यंदंद वगव
नंगद सुग्रीवुलच्चटि प्लवग । पुंगवुल् 'हा ! वालि ! पोयिते' यनुचु
विलपिंचुचुंड ना वेळ सौमित्रि । नलिनाप्तसुतुनि नंदरुनु वारिंचि

कहकर प्रेम से रघुराम को देखकर (कहा)—'हे राम ! अधिक शोभा से मेरा सुग्रीव के साथ लड़ना अन्त में (मेरे लिए) पथ्य ही (सिद्ध) हुआ है। सोच-देखने पर अंगद अवल है। (वह) कुछ भी अपराध करे तो उन्हें चतुरता से स्वीकारो (क्षमा कर दो)। हे मनुवंशतिलक ! इनसुत के वाद इसे राजा के रूप में मान्य करो। वेद शास्त्रों में खोजकर भी तुम्हें देख नहीं सकता। तुम्हारे लिए आदि-मध्य-अन्त नहीं है। (मेरे पास स्वयं) आकर, प्राणावसान काल में, यह तुम मुझे दिखाई पड़ रहे हो। उधर (स्वर्ग) जाकर देखनेवाली मूर्ति को (यहीं) देख पाया है। अतः मैं कृतार्थ वन गया हूँ। हे पंकजहितवंश (वाले) ! हे परमकल्याण (करनेवाले) ! अव प्राण नहीं रहेंगे, इस वाण को निकाल दो।' ।। ६८० ।।

(ऐसा) कहने पर, राम की आज्ञा से उस दिव्य शर को शोभा से नील ने निकाल दिया। अधिक शोभा से अपनी वाह्यगतियों का वन्धन करके, रुद्ध पवन को मन में वाँधकर, इस शरीर में परम (सबसे श्रेष्ठ) वन विराजमान राम की श्रीमूर्ति को मन में सुन्दरता से धारणकर, व्रह्मपदानन्द (तत्पर) पर-वालि ने व्रह्मरंध्र के द्वारा प्राण छोड़ दिये। उस समय तारा आदि कामिनियों के उस वालि पर झुककर वार-वार रोते रहने पर, अंगद, सुग्रीव (और) वहाँ के प्लवग (वानर)—पुंगव (श्रेष्ठ) 'हा वालि! चले गये!' कहकर रोते रहे। उस समय सौमित्री ने

'हनुमंत ! नीविंक नंबरमाल्य। घनगंधसारादिकमुलु दॆप्पिपु'
'शिबिक दॆप्पिपुमु शीघ्रंबे तार। निबिड हाटकरत्ननिर्मितंबुगनु'
अनि पंप वारुनु नट्ल काविप। वनचरुलंदरु वच्चिरच्चटिकि: ६९०

मरि तार मॊदलैन मगुवल यडलु। तॆरगॊप्प वारिंचे दिननाथसुतुडु:
नालोन रघुरामु नानति वडसि। वालिकि बरलोक वैदिक क्रियलु
सेसि या दशरात्रशेषकृत्यमुलु। भासुरगति दीर्चि परिशुद्धि बॊन्दि
यंगदुंडुनु दानु हनुमदादुलुनु। संगति ना रामचंद्रु गांचुटयु
विपुलसंतोषंबु विलसिल्ल नंत। गपिनायकुलकु राघवुडिट्टुलनियॆ:

श्रीरामुडु सुग्रीवुनि गिष्किधकु बट्टमु गट्टुट

'मीरिंक ना पंपु मेकॊनि पोयि। श्रीरम्यमुगनु गिष्किधकु गैसेसि
स्थिरमैन कपिराज्यसिंहासनमुन। बरग सुग्रीवुनि बट्टंबु गट्टि
यॊन्द नी यंगदु युवराज्यपदमु। नंदु बट्टमु गट्टु' डनि यॊप्प बलुक

नलिनाप्तसुत (और) दूसरों को रोककर (कहा)—'हे हनुमान ! अब तुम अम्बर (वस्त्र)-माल्य-घन-गंधसार-आदि मँगाओ।' हे तारा ! निबिड हाटक (स्वर्ण) रत्न निर्मित शिविका को शीघ्र ही मँगाओ।' (ऐसा) कह भेजने पर उन्होंने भी वैसा ही किया। तब समस्त वनचर वहाँ आए।।। ६९०।।

तारा आदि स्त्रियों के अधिक शोक का दिननाथसुत ने क्रम से निवारण किया। इस बीच रघुराम की आज्ञा प्राप्तकर, वालि के लिए परलोक-वैदिक क्रियाएँ (उत्तर क्रियाएँ) करके, उस दशरात्र के शेष कृत्यों को भासुरगति से पूर्णकर, परिशुद्ध होकर, अंगद हनुमान आदियों के साथ (सुग्रीव ने) ठीक ढंग से रामचंद्र के दर्शन किए। विपुल हर्ष के विराजित होने पर तब कपिनायकों से राघव ने यों कहा—

श्रीराम का सुग्रीव को किष्किधा का राजा बनाना

'आप (लोग) अब मेरी आज्ञा को मानकर, जाकर, श्रीरम्यता से किष्किधा को अलंकृतकर, सुस्थिर-कपिराज्य के सिंहासन पर, शोभा से, सुग्रीव को पट्टाभिषिक्त कर, उसी समय शोभा से इस अंगद को युवराजा के पद पर, पट्टाभिषिक्त कीजिए।' ऐसा सुन्दर ढंग से बोलने पर, बिलंब न कर वानर सेनापति, एक साथ मिलकर, तब किष्किधा आए। नूतन

दडयक वानर दंडनायकुलु । गैंडगूडि यंत गिष्किंध केतेंन्चि
नूत्नश्रृंगार मनोहरागार । रत्नवितर्थिकारमणीय ह्रीर ७००
रंगवल्लीवार रंजितद्वार । रंगद्ध्वजोदार रम्यपटीर
नीरपूरितमार्ग निरुपमाकार । पौरसंचारसंभरितंबु गाग
जेलगि या पुरमु गैसेयिंचि नगरु । कौलुवुकूटंबु मिक्कुटमैन सिरिकि
गारणंबुग नलंकारं बौनर्चि । वारिधि नदनदी वारियु मरियु
दगु मंगळद्रव्यततुलु दैप्पिंचि । मौगि नौप्प शुभतूर्यमुलु म्रोयुचुंड
बण्यांगनामणुल् पात्रंबुलाड । बुण्याहवाचनपूर्वकंबुगनु
सिंहचर्मंबुन जिह्नितंबैन । सिंहपीठिनि गपिसिंहंबु नुनिचि
सुरलिंद्रु बोलें भासुरलील ब्लवग । वरु लभिषेकपूर्वकमुगा गदिसि
ललितपुण्योदयलग्नंबुनंदु । व्रलियु सुग्रीवुनि बट्टंबु गट्टि
युरुसत्त्वु नंगदु युवराज्यमुनकु । गरमौप्प वट्टंबु गट्टिरि प्रीति ७१०
नंगदु यौवराज्यमुनंदु निलुप । वौन्गे वेडुक नंतिपुरमु बुरंबु;
नल नील तारांजनाभवुलु । गलबंधुवुलु बौडगनिरि सुग्रीवु;
नितर वानरनाथुलेल्ल गेल्मोगिचि । यतिमोदमुन गौनियाडिरि प्रीति ।

श्रृंगार (सजावट) से युक्त मनोहर-आगार (गृह), रत्न-वितर्थिकाओं से (तथा) रमणीयह्रीर ॥ ७०० ॥
—रंगवल्लीवार से रंजित द्वार, रंगत् (प्रकाशमान) ध्वज (से) उदार (विस्तृत), रम्यपटीर-नीर पूरित मार्गो के (आदि से युक्त हो) निरुपम-आकार (वाले किष्किंधा के) पुरजन-संचार-संभरित होने पर, उल्लसित (अथवा शोभित) उस नगर को सजाया, अंतःपुर (तथा) राजदरबार को अत्यधिक श्री के कारणभूत रूप में अलंकृतकर, वारिधि-नद-नदी का वारि (जल) तथा उचित मंगल-द्रव्य-समूह को मंगवाकर, संरंभ (आडंबर) की शोभा से शुभ तूर्यो के ध्वनित होते रहने पर, पण्यांगना (वेश्या)-मणियों के कलशों के साथ नाचते रहने पर, पुण्याहवाचनपूर्वक, सिंहचर्म से चिह्नित सिंहपीठ पर कपिसिंह को रखा (बिठाया)। भासुरलीला से प्लवग-(वानर) वीरों ने अभिषेकपूर्वक (सुग्रीव के) नियराकर, मानो देवता इन्द्र के निकट पहुँच रहे हों, ललित-पुण्योदय लग्न में वली सुग्रीव का राजतिलक कर, उरु-सत्त्व वाले अंगद को युवराज्यपद के लिए बड़ी शोभा से (तथा) प्रीति से पट्टाभिषिक्त किया। ॥ ७१० ॥

अंगद को युवराज्य (पद) पर रखने पर अंतःपुर और पुर भी हर्ष से उमड़ पड़े। नल, नील, तार, अंजनातनूभव (हनुमान) आदि संबंधियों ने सुग्रीव के दर्शन किए। अन्य समस्त वानर-नाथों ने हाथ जोड़कर

नंत सुग्रीवुडुदात्त संपदल । नॆन्तयु बॆम्पॊन्दि यिंपु सॊम्पॊन्दि
वनचर बलमु तो वडि नेगुदॆन्चि । घनरत्नकोट्लु कानुकलिच्चि
यादट बॆम्पॊन्द ना रामचंद्रु । पादपद्ममुलकु भक्तितो म्रॊक्कि
करमुलु मुकुळिंचि कडु ब्रेम निलिचि । परमसम्मदमुन भानुनंदनुडु
'इच्चोट नेटिकि ? निंक ना पुरिकि । विच्चेयुदुरुगाक ! विश्वलोकेश !'
यंनवुडु सुग्रीवुनाननांबुजमु । गनुगॊनि प्रीति राघवुडिट्टुलनियॆ;
'दपसुलु पुरमुन दगदु वर्तिप । दपनज ! किष्किंध दगदु माकुंड; ७२०
महिमीद नाषाढमासंबु वच्चॆ; । नहितुलपै बोव ननुवुगादिक;
वानकालमु माल्यवंतंबुनंदु । ने नुंडगलवाड नॆब्भंगिनैन;
निनतनूभव ! नीवु नी वानकाल । मॊनर गिष्किंधलो नुंडुमुपोयि;
तलकॊनि मरि शरत्कालंबुनंदु । बॊलुपॊन्द बगरपै बोदमु कडगि'
यनि चॆप्पि मन्निंचि यतनि वीड्कॊलिपि। यनुजन्मुडुनु दानुनच्चोटु वासि

श्रीरामुडु माल्यवंतमु जेरुट, वर्षाकाल वर्णनमु

वसुधेशु डम्माल्यवंतंबु जेरि । कुसुमकोमलि सीत गुणमु व्रायंबु

अतिमोद से, प्रीति से प्रशंसाएँ कीं । तब सुग्रीव उदात्त-संपत्तियों से अत्यधिक उत्कर्ष को प्राप्तकर, आनंद-सौंदर्य को प्राप्तकर, वनचर-बल (समूह) के साथ झट से आकर, घन-रत्न-कोटियाँ उपहार में देकर, अनंतर शोभा से उस रामचंद्र के चरणकमलों में भक्ति से प्रणामकर, हाथ जोड़कर, अति प्रेम से खड़ा हो गया । भानुनंदन ने परमसम्मोद से (कहा):—'यहाँ (रहना) क्यों ? हे विश्वलोकेश ! अब मेरी नगरी में पधारिएगा ।' ऐसा कहने पर सुग्रीव के मुख-कमल को देखकर, प्रीति से राघव यों बोले:— 'तपस्वियों को नगरों में रहना नहीं चाहिए । हे तपनज ! हमें किष्किंधा में नहीं रहना चाहिए । ॥ ७२० ॥

—पृथ्वी पर आषाढ़ मास आ गया है । अहितुओं (शत्रुओं) पर जाने के लिए (आक्रमण करने के लिए) अब आनुकूल्यता नहीं है । मैं किसी भी प्रकार वर्षाकाल (का समय) माल्यवंत में रह जानेवाला हूँ । हे इनतनूभव ! तुम इस वर्षाकाल में जाकर किष्किंधा में रहो । फिर शरत्काल में सप्रयत्न, शोभा से शत्रु पर जाएँगे ।' ऐसा कहकर, सम्मान कर, उसे विदाकर, अनुजन्म के साथ उस स्थान को छोड़कर,

श्रीराम का माल्यवंत पहुँचना (वर्षाऋतु वर्णन)

—वसुधेश (राम) उस माल्यवंत (पर्वत पर) पहुँचकर, कुसुमकोमली

नसमानरूपविलास मॆन्नुचुनु। नसमान शोकार्तुडै युंडॆ; नंत
धरणिज नॆडवासि तलकॆड्डु रामु। वॊरिवॊरि दुःखमुल् पॊंदवुचंदमुन
नरिमुरि दिविनुंडि यंवुजमित्नु। मॆरयनीकंदंद मेघमुल् वॊडमॆ:
रावणु राज्यंवु रघुरामु चेत। नीविधि जलियिंचु निक नन् पगिदि
७३०
नॊलसि यॊंडॊंड विद्युन्निकायमुलु। जलदंवुलंदुंडि चलियिप दॊडगॆ;
'गैकॊनि यिक निक्ष्वाकुवल्लभुडु। नाकारि पै दंडु नडुचुचुन्नाडु'
अनि सुरलकु जॆप्प नरिगॆनो धात्नि। यन वायुवुलतोड नट धूळि यॆगसॆ;
'नालंवुलो दैत्यु नणगिपु' मनुचु। गालुडु तन चेति कालपाशंवु
वॊनर रामुनि कयि पुत्तॆंचॆ ननग। दनरार दिवि निंद्रधनुवॊप्पॆ जूड;
नमरुलु रामुनकयि दंडु वॆडल। गॊमरार भेरुलु घोपिचुपगिदि
नुन्नतध्वनुलतो नॊडॊंट वर्वि। मिन्नॆल्ल भेदिल्ल मेघंवुलुरिमॆ;
नलरु प्रावृट्कालमनु पुरुपुंडु। ललिमीर नाकाशलक्ष्मितो गदिय

सीता के गुण, वय, असमान रूप-विलास को गिनते (सोचते) हुए, असमान-शोकार्त हो रहे। तव धरणिजा से विछुड़कर व्याकुल होने वाले राम (के मन में) वार-वार दुःखों के उद्‌भव होने के समान, दिवि (आकाश) में अंवुज-मित्र को प्रकाशित न होने देकर, जहाँ-तहाँ मेघ शीघ्रता से उत्पन्न हो (घिर) आए। रावण का राज्य रघुराम के द्वारा अव इस प्रकार विचलित होगा, इस प्रकार ॥ ७३० ॥
—जहाँ-तहाँ जलदों में विद्युत्-निकाय (समूह) उत्पन्न हो, चंचल होने (चमकने) लगा। वायु के साथ धूल इस प्रकार उड़ी मानों धरती देवताओं को यह वताने गयी हो कि 'निश्चयकर अव इक्ष्वाकु-वल्लभ (राम) नाक-अरि (देवलोक का शत्नु) पर आक्रमण करने जा रहा है।' आकाश में इन्द्र-धनु इस प्रकार शोभित हुआ मानों 'युद्ध में राक्षसों का दमन करो' यह कहते हुए काल (यमराज) ने अपने हाथ का कालपाश अनुकूलता से राम के हाथ भेज दिया हो। जहाँ-तहाँ व्याप्त हो, उन्नत-ध्वनियों से समस्त आकाश को फोड़ देते हुए मेघ इस प्रकार गर्जन करने लगे मानों देवताओं के राम के लिए सेना के रूप में निकल पड़ने पर, शोभा से (रण-) भेरियाँ वज रही हों। प्रथम वर्षा की वूँदें जहाँ-तहाँ इस प्रकार पड़ीं मानों वर्षा-काल रूपी पुरुष के हाव-भावों के उत्कर्ष के साथ आकाश-लक्ष्मी से भेंट (संभोग) करने पर, हारों के मोती टूटकर गिर रहे हों। जहाँ-तहाँ धरणीपर, हर जगह उदग्र होते हुए भाप (इस प्रकार) निकलने लगी मानों (राक्षस को) दिखाई पड़कर,

नोंगि सरुल् देंगि रालुचुन्न मुत्यमुल । पगिदि दोंल्चिनुकुलु पडियें नंदंद
यगपडि चेंर वोयें ननि कूतु दलचि । वगचि नट्टूर्पुलु वडि बुच्चुचुन्न ७४०
वेंरवुन नावुलु वेंडलें नंदंद । धरणि नेंल्लेंडल नुदग्रंबुलगुचु
जनुदेंचि रामलक्ष्मणपयोदमुल । गनुगोंनि सुरचातकमु लुब्बुपगिदि
गनुकनि बवेंड्डु घनपयोदमुल । गनुगोंनि दिवि जातकमु लुब्ब दोंडगें;
धिमिधिमियनुचु मद्देल म्रोय बाट । लमर नटीमणुलाडु चंदमुन
घुमघुम यनुचु मेघुंडु गर्जिल्ल । नमलकेकास्फूर्ति नाडें नेंमळ्ळु
राक्षसांगमुलपैं रामबाणमुलु । लक्षिपबडु निट्टिलागुनन्नट्लु
पर्वताग्रमुलपैं भयदघोषमुलु । पर्व निर्घातमुल् वडियें नंदंद
प्रकटबुंगा दैत्यसति मेनिमांस । शकलंबुलिट्टु रणस्थलि निंडुननिन
परुसुन निंद्रगोपमु लंतकंत । नरुणारुणंबुलै यवनिपैं बडियें
रावणु जंपुचो रघुरामुमीद । देवतल् तललूचि दिव्यपुष्पम्मु ७५०
लेंडनेंड वर्षितुरीक्रिय ननिन । वडुवुन महिरालें वर्षोपलमुलु
रावणु कीर्ति परंपरलणगि । पोवुनिंकिट रामभूपालुचेत
ननिन चंदमुन रायंच्रल पिंडु । चनें क्रौंचगिरिमीद जय्यन नडचें;

(उसके हाथ) क़ैद हुई' (अपनी) पुत्री के बारे में सोच, दुखी हो, धरणी झट से निश्वास (लंबी आहें) छोड़ रही हो। ॥ ७४० ॥
—(वनों में) आए हुए राम-लक्ष्मण रूपी पयोदों को देखकर सुररूपी चातक फूल उठे हों, मानों इस प्रकार संभ्रम से व्याप्त होनेवाले घने बादलों को देखकर, आकाश में चातक (पक्षी) फूलने लगे। 'धिम्-धिम्' की ध्वनि से मर्दल के मुखरित होने पर, गीतों के साथ नटीमणियों के नृत्य करने के समान, 'घुम्-घुम्' कहते मेघ के गर्जन करने पर, अमल-केका-स्फूर्ति के साथ मयूर नाच उठे। राक्षसों के शरीरों पर राम के बाण इस प्रकार लक्षित होंगे, इस प्रकार भयद-घोष के व्याप्त होने पर जहाँ-तहाँ पर्वत के अग्रों (शिखरों) पर, गाज गिरे। परुषता से इंद्रगोप (बीर बहूटी) अधिकाधिक अरुण से अरुण बनकर, अवनि पर (बिखर) पड़े मानो यह प्रकट कर रहे हों कि दैत्यपति के शरीर के माँस-खंड इसी प्रकार प्रकट रूप से रणस्थल को भर देंगे। मानों रावण का सांहर करते समय देवता सिर हिलाकर (प्रशंसा में) दिव्यपुष्पों को ॥ ७५० ॥
—लगातार इस प्रकार रघुराम पर बरसाएँगे, इस प्रकार वर्षोपल (ओले) महि पर गिरे। अब आगे रामभूपाल के द्वारा रावण की कीर्ति-परंपराएँ लुप्त हो जाएंगी, मानों इस प्रकार राजहंसों का समूह

ननि मोन दन पुत्रुडैन सुग्रीवु । डनिमिषाधिप सूनु नकट: चंपिचे
नलुगु नापै निंद्रुडनि सूर्युडुन्न । बलितंबु गोटन वरिवेपमोनरें;
गुदियनि कडकतो गोरि याकाश । नदि नाडवोयिन नागकन्यकलु
त्रनि चनि मगुड रसातलंबुनकु । जनुदेंचुगति वर्षजलधार लमरें;
वासिगा दमकु जीवनमु लव्वारि । गा समर्पिंचिन घनुनि वेनोळ्ळ
बोगडु चंदमुन नद्भुत वृत्ति भेद । मगपड भेकंबुलरचें नंदंद;
वेलय मेघमुलु प्रावृड् वधूमणिकि । गलय मै बूसिन कस्तूरियनग७६०
धरणि नेल्लेडलनु दनर सोंपेक्कि । परग नीलच्छाय वंकमोप्पारें;
वाराशि नोंडगूडि वलनेदि रामु । घोर वाणाग्नि ग्रागुट विचारिंचि
चरचि पो वेरचिन चाड्पुन वरद । लरिमुरि जेरवुल नंदंद निलिचें;
लोककंटकु दैत्यु लोवेंट्टुकोंटि । काकुत्स्थुडिदें निन्न गट्टिचुननुचु
सुडिवडि मोर वेंट्टुचुनु बारु करणि । वडि म्रोयुचुनु जोच्चें वार्धि
वेन्नदुलु

क्रौंचगिरि पर चला गया। 'युद्ध-भूमि में मेरे पुत्र सुग्रीव ने अनिमिष-अधिपसून (इन्द्रपुत्र-वालि) को हाय! मरवा डाला, मुझपर इन्द्र रुष्ट हो जाएगा', (इस भय से) मानों सूर्य वलिष्ट दुर्ग में रह गया। (सूर्य के चारों तरफ का) परिवेश प्राचीर के समान लगा। वर्षा की जलधाराएँ इस प्रकार शोभित हुईं मानों दुर्निर्वार साहस से, चाहकर आकाश-नदी में स्नान करने गयी नाग-कन्याएँ फिर से रसातल को लौट रही हों। भेक (मेंढक) अद्भुत वृत्ति (ढंग)-भेद (स्वर-भेद) दिखाते हुए, जहाँ-तहाँ बोलने लगे, मानों अपने को अपार जीवन प्रदान करनेवाले उस महान् (व्यक्ति) की, हजार मुखों से, प्रशंसा कर रहे हों। शोभित मेघों ने मानों प्रावृट् (वर्षा) रूपी वधूमणि के शरीर पर खूब कस्तूरी लगाई हो, ॥ ७६० ॥

इस प्रकार धरणी पर हर जगह विराजित नील-छाया (वर्ण) से पंक सुशोभित हुआ। वाराशि (समुद्र) में मिल जाने पर राम की घोर बाणाग्नि से तप्त हो, शोभा से रहित होने की बात सोचकर, (समुद्र में जाने से) डरकर, मानों बाढ़ का पानी जहाँ-तहाँ शीघ्रता से तालाबों में ठहर गया हो। लोककंटक दैत्य को भीतर रख लिया, अब काकुत्स्थ तुम पर बाँध (पुल) बँधवाएगा, मानों यह कहते हुए, भँवरों के साथ, निवेदन करते हुए, शीघ्रता से शब्द करते हुए, बहते हुए, बड़ी-बड़ी नदियाँ समुद्र में जा मिलीं।

शरदागममु

नंत वानलु वेल्चे नवनि नेल्लेडल । नंतंत दिवि नुन्न यभ्रमुल् विरिसे;
देलिवोंदि किरणमुल् दिशलेल्ल निंड । जलुवोंद रवि प्रकाशिंचे लोकमुल;
धरणि निष्पंकमै तनरे नेंतयुनु : । गरमोप्प गोलकुल गमलंबु ललरे;
गूलमुल् मदकरुल् ग्रुच्चि गोराडे : । रेलु नक्षत्रचंद्रिकल बेंपारे;
वच्च नंचलु सरोवनिकि गापुरमु : । मेच्चे दामरतूंड्लु मेसगि युल्लमुन; ७७०
जेऱकु राजनमुल चेनुल पंट । तरुचय्ये; वृषभयूथमु ऱंके वैचे;
गलक यंतयु बासि कनुपट्टे जलमु; । लिल देरुवरुलकु निच्चे सौख्यंबु;
ग्रदल निर्मलमुलै जलदंबुलोप्पे; । नदुलेल्ल डोंकि काल्नडलय्ये; नंत
नटमुन्न हनुमंतुडर्कजु गदिसि । 'यिट शारदागमंबेतेंचे; निंक
श्रीरामु कार्यबु सेयंगवलयु; । वारु वीरनकेल्ल वानराधिपुल
रप्पिपु' मनवुडु रविसूनुडलरि । यप्पुड पडवालुडगु नीलु बिलिच्चि

शरत् का आगमन

तब अवनि पर सर्वत्र वर्षा समाप्त हुई। जहाँ-तहाँ आकाश पर के अभ्र (मेघ) छँट गये। होश में आकर, समस्त दिशाओं के किरणों से भर जाने पर, शोभायुक्त हो रवि, लोकों पर प्रकाशित हुआ। धरणि निष्पंक हो अधिक शोभायमान हुई। अधिक सुंदरता से सरोवरों में कमल शोभित हुए। मद करि (मस्त हाथी) कूलों को दाँतों से खोदकर, मज़ाक करने लगे। नक्षत्र (तथा) चंद्रिका से रात्रि सुशोभित हुई। राजहंस सरोवरों में रहने आ गये। मृणालों का भक्षण कर, मन में सराहा। ॥ ७७० ॥

ईख तथा राजन (एक प्रकार का धान्य) के खेतों में फसल अधिक हुई। वृषभ-यूथ (समूह) ने गर्जन किया। समस्त कालुष्य से रहित हो जल दिखाई पड़ा (और) भूमि पर यात्रियों को सुख दिया। आकाश पर निर्मल जलद शोभित हुए। समस्त नदियाँ (जल के कम हो जाने से) पैदल पार करने योग्य बन गयीं। तब उससे पूर्व ही (शरत् के आगमन से पहले ही) हनुमान अर्कज से मिलकर (बोले):—'अब शरत्काल आ गया है। अब श्रीराम का कार्य करना चाहिए। यह और वह न कहकर (बहानेबाज़ी न कर), समस्त वानर-राजाओं को बुला भेजो।' ऐसा कहने पर रविसून (सुग्रीव) प्रसन्न हो, तभी सेनापति नील को

'विविध पर्वत सरिद्वीपाधिपतुल । प्लवग गोलांगूल भल्लूकपतुल
राविपु; मोकडैन राकुन्न नाज्ञ । गाविपु' मनि पंचे गडकमै; निचट
दम्मुडु चेयूत दन तालिमि कोसग । ग्रम्मिन वग वानकालंबु गडपि
रामभूवरुडु शरत्कालमैन । गोमलि जिंतिंचि कोर्कुल वोंदलि ७८०
मदनातुरुंडयि मदि जाल भ्रमसि । युदयाद्रिपै नुन्न युडुराजु जूचि
'यिदियेमि युत्पात ? मिदि येमि चंद ? । मिदियेमि यी रात्रि यिनुडेल
पोडिचे ?
ना मेनि तापमिन्मडि गाग जोच्चें; । सौमित्रि ! ननु तरुच्छायल जेर्पु'
मनिन 'जंद्रुडु गानि यर्कुडु गाडु । जननाथ ! हरिणलांछनमदे चूडु ।'
मनि लक्ष्मणुडु वल्क 'हरिणाक्षि पोये'। ननि सीत वेकोंनि यट मूर्छ वोव
दशरथात्मजुनकु दम्मुडालोन । शिशिरोपचारमुल् सेसि तेर्चुटयु
मरि विवेकमु बूनि मनुजवल्लभुडु । 'तरि लंकमै निक दंडैत्तवलयु;
सौमित्रि ! चूचितें ? जलजाप्तसूनु । डेमनि भाषिंचे ? नेमनि पोये ?
वानकालमु बुच्चि वच्चेदननिये; । वानकालमु वोये; वच्चुटलेदु;

बुलाकर, सप्रयत्न आज्ञा देकर भेजा कि 'विविध पर्वत, सरित्, द्वीपों के अधिपतियों (तथा) प्लवग, गोलांगूल, भल्लूकपतियों को बुलाओ। (उनमें से) एक भी न आवे, तो (मेरे) आदेश का पालन करो (दंडित करो)।' यहाँ अनुज की सहायता तथा सांत्वना देते रहने पर, व्याप्त व्यथा से वर्षाकाल बिताकर, शरत्काल होने पर, रामभूवर ने कोमली (सीता) के बारे में सोचकर, (मन में) इच्छाओं के उत्पन्न होने पर, ॥ ७८० ॥

—मदनातुर हो, मन में अधिक भ्रमित हो, उदयाद्रि पर स्थित उडुराज (चंद्र) को देख (कहा):—'यह कैसा उत्पात है ? यह कैसा विधान है ? यह क्या इस रात को सूर्य का उदय कैसे हुआ ? मेरे शरीर का ताप दुगुना होने लगा। हे सौमित्र ! मुझे पेड़ की छायाओं में पहुँचा दो।' (ऐसा) कहने पर (लक्ष्मण ने कहा):—"हे जननाथ ! यह तो चंद्र है, अर्क (सूर्य) नहीं है। वह देखो, हरिण लांछन (चिह्न)।" ऐसा लक्ष्मण के कहने पर "हरिणाक्षी तो गयी।" कहते सीता का नाम ले (राम), वहाँ मूर्छित हो गये। इतने में अनुज के दशरथात्मज (राम) को शिशिरोपचारकर, होश में लाने पर, फिर विवेक धारणकर, मनुजवल्लभ ने (कहा):—"इस अवसर पर, अब लंका पर आक्रमण करना चाहिए। देखा सौमित्र ! जलजाप्तसून (सुग्रीव) ने क्या कहा ? क्या कहकर गया ? वर्षाकाल बिताकर आने की बात कही। वर्षाकाल बीत

औदवि ना चेसिन युपकारमेल्ल। मदिलोन मऱचि युन्मत्तुडै वाडु ७९०
तारतो रतिकेळि दगिलियुन्नाडॊ ?। या राज्यमुन मत्तुडै युन्नवाडॊ ?
काकुन्न मत्कार्यगतुलु भाविंप; । डी कृतघ्नत कोर्चि येटिकि दडय ?
मति नुपकारंबु मऱचिनवाडु । प्रतिन दप्पिनवाडु पाडिमै दनदु
चॆलिकानि कार्यबु सेयनिवाडु । तलपोय मानवाधमुडंड्रु बुधुलु;
अलवुमै नट बोयि यर्कजु बिलुवु; ।;पिलिचिन राननि बिरुदाडॆनेनि
'ननि वालि जंपिन यम्मॆंदु वोयॆ' । ननि रम्मु; पॊ' म्मन्न नन्नकु म्रॊक्कि

लक्ष्मणुडु कुपितुडै किष्किंधकु बोवुट

कनुगव ब्रळयाग्निकणमुलु दॊरुग । घन शरचापमुल् गैकॊनि वॆडलि
नेल यल्ललनाड निडुजंगलिडुचु । गालि वेगमुन वृक्षमुलॆल्ल गूल
गृतमति नटुपोयि किष्किंध जेर । नतिभीतुलै कपुलंदंद बर्व
ना पुरद्वारस्थुलगु कपुलप्पु । डेपऱॆंचि 'वीडॆव्वडो' यनुचु ८००

गया। उसका आना नहीं हुआ। मेरे हाथ किए गये समस्त उपकार को मन से भुलाकर, उन्मत्त हो वह ॥ ७९० ॥

—शायद तारा से रतिकेलि में लगा हुआ है। शायद उस राज्य में मत्त हो रह गया है। वरन् मेरे कार्य की गतिविधियों के बारे में क्यों नहीं सोचता। इस कृतघ्नता को सहनकर, क्यों विलंब करना चाहिए ? बुधजन कहते हैं, मन से उपकार को भुलानेवाला, प्रतिज्ञा का भंग करनेवाला, न्यायानुकूल अपने मित्र का कार्य न करनेवाला सोचने पर मानवाधम है। समर्थता से वहाँ जाकर अर्कज को बुलाओ। बुलाने पर आने से इनकार कर, घमंड से बातें करे तो यह कह आओ "युद्ध में वालि का संहार करनेवाला बाण कहीं नहीं गया। जाओ।" (ऐसा) कहने पर, अग्रज को प्रणाम कर,

लक्ष्मण का क्रुद्ध हो किष्किंधा जाना

—नेत्रयुग्म से प्रलयाग्नि-कणों के निकलने पर, महान् शर-चाप हाथ में लेकर, निकलकर, धरती को कंपायमान करते हुए, लंबे-लंबे डग भरते हुए, (अपने) पवनसम वेग से समस्त वृक्षों के गिरने पर, कृतमति (निश्चित बुद्धिवाला) हो, वहाँ जाकर, (लक्ष्मण के) किष्किंधा पहुँचने पर, अतिभीत हो कपि इधर-उधर भागने लगे। उस पुर के द्वार पर स्थित कपि तभी विकास को खोकर, यह कहते कि 'यह कौन है ?' ॥ ८०० ॥

गोट वाकिळ्ळु ग्रक्कुन वेसि प्लवग । कोटि गावलि वेट्टि कोरियत्तेऱगु
वडि राजु केऱिगिंपवलेननि येंचि । कडु भीतुलै पाऱि करमुलु मोगिचि
वडि दार परिचार वनितलतोड । दडयका चंदमंतयु देल्प वारु
'निदि वेळ गा' दन्न नेलमि नंगदुनि । गदिसि चागिलि म्रोक्कि करमुलु मोगिचि
'विनवय्य ! युवराज ! विख्याततेज ! । मन वीटि वाकिट मौनिवेषंबु
गनुपड जडलु वल्कलमुलु दाल्चि । तन केल बाणकोदंडमुल् वूनि
योंक डंतकुडु वोले नुन्नाडु वच्चि । यकलंकसत्त्वुडै' यनिनि नंगदुडु
ना रामु ननुजन्मुडनि निश्चयिंचि । तारातनूजुडु दडयक वच्चि
सौमित्रि वोडगन जंडकोपमुन । 'दामरसाप्तनंदनुन कंगदुड !
ना राक चेंपु' मन्न नतडुनु वोयि । मार विकाराब्धिमग्नुडै मिगुल ८१०
गारवंबुन जेरि करपल्लवमुल । ना रुमासति यंघ्रुलल्लन बिसुक
दारामृदूरुलु दलगड गाग । नूरक सुखियिंचुचुन्न सुग्रीवु
गनुगोनि 'वाडे लक्ष्मणुडुन्नवाडु । मन वीटि वाकिट मंडुचु' ननिन
मदि संशयिंचुचु मंतुल बिलिचि । 'यिदियेमि ? सौमित्रि हितमैत्रि दप्पि

—दुर्ग के द्वार झट से बंदकर, प्लवग-कोटि को पहरे पर रख, चाहकर, वह विधान झट से राजा को जताने का सोचकर, अतिभीत हो भागकर, हाथ जोड़कर, झट तारा की परिचारिकाओं से अविलंब वह समस्त विधि बताई। उन्होंने कहा "(राजा को बताने के लिए) यह समय नहीं है"। तब स्नेह से अंगद के निकट जाकर, साष्टांग प्रणामकर, हाथ जोड़कर (कहा):—"हे युवराज ! विख्यात तेजवाले ! सुनो न। हमारे निवास-स्थान के द्वार पर मुनिवेष में, जटाएँ-वल्कल धारणकर, अपने हाथ में बाण-कोदंड धारणकर, कोई अकलंक सत्त्ववाला (व्यक्ति) अंतक (यम) के समान आया हुआ है।" (ऐसा) कहने पर अंगद ने यह निश्चयकर कि उस राम का अनुजन्म है, तारातनूज (अंगद) ने अविलंब आकर सौमित्री को देखा। चंडकोप से (लक्ष्मण ने कहा):—"हे अंगद ! तामरसाप्तनंदन को मेरा आगमन (का समाचार) बता दो।" (ऐसा) कहने पर, वह भी जाकर, (सुग्रीव को देखा जो) मार (मन्मथ) के विकार-सागर में अधिक मग्न बनकर, ॥ ८१० ॥
—सती रुमा के अधिक प्रेम से निकट पहुँचकर, चरणों को धीरे से दाबते रहने पर, तारा के मृदुल जाँघों को तकिया बनाकर, सुखी होनेवाले सुग्रीव को देखकर (कहा):—"वही लक्ष्मण हमारे निवास-स्थान की देहली पर, (क्रोध से) जलते हुए हैं।" (ऐसा) कहने पर मन में संशय करते

यी रीति वच्चुट केमि कारणमु ? । नेरमि नावल्ल नेंमकिन लेदु'
अनि वितर्किंपगा नांजनेयुंडु । दिननाथसुतुनितो देलियनिट्लनिये;
'ना महेंद्रकुमारु ननिगूल्चि नीकु । नी माड्कि गपिराज्यमिच्चिनयट्टि
रामुनि कार्यं मारडि वुच्चि यिट्लु । कामोपभोगसौख्यंबुल बोंदलि
युंदुरे ? यिदुकै युग्रभावमुन । संदेहमेटिकि, सौमित्रि यिटकु
वच्चिनाडम्मेटि वाकिट नुंड । वच्चुने ? लोकैकवंद्युडा घनुनि ८२०
राविपु; सेविपु; रामुकार्यंबु । भाविपु; गाविपु परग नी प्रतिन'
ना विनि या रविनंदनुंडट्ल । भाविप बंचिन रामानुजुंडु
भर्मगोपुर हर्म्यपटलंबु विश्व । कर्म निर्मित चित्र कर कौशलंबु
कैलासशैल संकाशसौधंबु । केळी सरोवरांकित वनांतरमु
देव गंधर्वावतीर्णप्लवंग । मावासतत्परंबगु तत्पुरंबु
चोच्चि यच्चोटि निस्तुलवस्तुमहिम । कच्चेरुवंदुचु नटु पोयि पोयि
यिंद्रुगेहमुतोड नेनयैन वान । रेंद्रु गेहमु सोच्चि हेच्चिन किनुक
नच्चरलेमल यंदचंदमुलु । मेच्चनि मेलतल मिसिमिपाटलुनु

हुए, मंत्रियों को बुलाकर वितर्क (सोच-विचार) किया कि "यह क्या ? सौमित्र के हितमैत्री को छोड़कर, इस प्रकार आने का क्या कारण है ? खोजने पर भी मुझसे दोष नहीं हुआ है।" आंजनेय ने दिननाथसुत को समझाकर यों कहा:—"उस महेंद्रकुमार (वालि) को युद्ध में संहारकर, तुम्हें इस प्रकार कपिराज्य (पद) प्रदान करनेवाले राम के कार्य को व्यर्थकर, इस प्रकार कामोपभोग-सुखों में फूलकर रहना क्या उचित है ? इसमें संदेह क्या ? इसी कारण उग्रभाव से सौमित्री यहाँ आया है। उस वीर को द्वार पर रहने देना उचित है ? लोकैक-वंद्य उस महान् (व्यक्ति) को ॥ ८२० ॥
—(भीतर) बुलाओ; सेवा करो, राम के कार्य पर विचार करो, अपनी प्रतिज्ञा को पूरा करो"। ऐसा कहने पर सुनकर, रविनंदन ने उसी प्रकार बुला भेजा। (तब) रामानुज भर्म (सुवर्ण)-गोपुर (से युक्त) हर्म्य (सौध)-समूहवाले, विश्वकर्मा के निर्माण के चित्र-कर-कौशल से संपन्न, कैलास-शैल-संकाश (समान) सौधवाले, केलीसरोवर से युक्त उपवनवाले, देव गंधर्वों के अवतार प्लवंगों (वानरों) के आवास बने उस पुर में प्रवेश कर, वहाँ की अनुपम वस्तुओं की महिमा पर आश्चर्य करते हुए, उधर जा-जाकर, इंद्र के गृह की समता करनेवाले वानरेंद्र के गृह में प्रवेशकर, अधिक क्रुद्ध बनते हुए, अप्सरा स्त्रियों के सौंदर्य-विलास की सराहना न करनेवाली (अर्थात् उनसे अधिक सुंदर) सुंदरियों की उज्ज्वल

वारि वीणावेणु वाद्यमृदंग। भूरिभूपणरवस्फूर्तियु विनुचु
नंतकाकारुडै यतिकोपुडगुचु। नंत:पुरद्वारमटु चेरि निलुव ८३०
ना राक विनि यॊंटि नपुडु दा राक। तारासमेतुडै तडयक वच्चि
यतनि कोपंबुनु नतनि रूपंबु। नतिभीति गनुगोंचु नर्कनंदनुडु
अलमेंडु भक्तिमै नडुगुल कॆरगि। वलयु नर्चनमु ली वच्चिन जूचि
'योरि! रामद्रोहि! योरि! कृतघ्न!। योरि! नीयर्चनलुचितमे
नाकु?
जानकीपतितोड सत्यातमुतोड। वानकालमु वुच्चि वच्चेद नंटि;
रावैति; तप्पिति; रघुरामुनाज्ञ। भाविपलेवैति; पशुबुद्धिवैति;
वालि जंपिन रामवसुधेशु शरमु। कालाग्निकणमुलु ग्रक्कुचुन्नदियु;
निनु नीरु सेयक निलुचुने यिक?। वनचराधम! वॆर्रिवाडवै चॆडिति'
वनिन दारादेवि यतिभीति बॊंदि। 'यनघ! मी दासुडी यर्कनंदनुडु;
ई राज्यसंपदली भोगकोट्टु। लारय मीरिच्चिनविय यीतनिकि; ८४०
मीरु वॆट्टिन चॆट्टु मिहिरनंदनुडु;। वैरंबुनकु नॆंतवाडु मीकितडु?
रणविशारदुडैन रामुनि याज्ञ। गणुतिपकुन्नाडु गाडर्कसुतुडु;

शोभाएँ, उनकी वीणा, वेणु, मृदंग (आदि) वाद्यों (तथा) भूरि-भूपण-रव-स्फूर्ति को सुना। (सुनकर) अंतक (यम) आकारवाले होते हुए, अति-क्रुद्ध होते हुए, अंत:पुर-द्वार पर पहुँचकर खड़े हुए। ॥ ८३० ॥

उस आगमन (के समाचार) को सुनकर, तब स्वयं (अकेले) न आकर, अविलंब तारा-सहित आकर, उसके (लक्ष्मण के) कोप, उसके रूप को अतिभय से देखते हुए, अर्कनंदन ने उमड़ती हुई भक्ति से, चरणों पर प्रणत होकर, समुचित अर्चन करना चाहा। तो (उसे) देख (लक्ष्मण ने कहा):— "अरे! रामद्रोही! अरे! कृतघ्न! अरे! ये तेरी अर्चनाएं मेरे लिए उचित हैं? सत्यात्मा जानकीपति से कहा था कि 'वर्षाकाल बिताकर आऊँगा।' नहीं आए, (वचन का) भंग किया, रघुराम की आज्ञा का विचार नहीं किया। पशुबुद्धि वाले बन गए। राजाराम का वह शर जिसने वालि का संहार किया था, कालाग्नि के कणों को उगल रहा है। वह अब तुम्हारा नाश किए बिना रुकेगा? वनचर-अधम! मूर्ख बनकर, नष्ट हो रहे हो।" (ऐसा) कहने पर देवी तारा अतिभीत होकर (बोली):— "हे अनघ! यह अर्कनंदन आपका दास है। ये राज्य-संपत्तियाँ, ये भोग-कोटियाँ (भूरि-भोग-सामग्री), सोच देखने पर आप ही की दी हुई हैं। ॥ ८४० ॥

मिहिरनंदन (सुग्रीव) आपका लगाया हुआ वृक्ष (के समान) है।

पोलुचु नी कार्तिक पूर्णिम नाटि किलमीद गपिसेनलेल्लनु गूर्प
बडवालु नीलुनि बंचि ता बोदु । नडरेड कडकतोनति युन्नवाडु;
काडु रामद्रोहि; गाडसत्युडु; । गाडु कृतघ्नुडु; गान मीरितनि

लक्ष्मणुडु सुग्रीवुनि मन्निंचुट

गरुणिपु डनवुडु गलुषंबु दक्कि । नरनाथसुतुडर्चनमुलु गैकोनिये ।
गैकोन्नपिम्मट गनकपीठमुन । राकोमारुनि नुंचि रवितनूभवुडु
तदनुज्ञ गैकोनि तानु गूर्चुंडि । मृदुमधुरोक्तुलु मेकोन बलिकें;
'सौमित्रि ! राघवस्वामिकार्यंबु । ने मरतुने? यिप्पुडेल्ल वानरुल
देच्चेद; वैदेहि दिक्कुल वेदुक बुच्चेद; । बच्चेद बोदडु मी वेनुक; ५५०
ने शरंबुन वालि यिलमीद ग्राले । ने शरंबुन गूले नेडु ताळमुलु
ना शरंबे चालु नखिल दानवुल । नाशंबु नोंदिप नाति साधिप;
नैनतु रघुरामु नतिभक्ति गोलिचि । येनु गीर्तुलकेल्ल नेल्लयै पोलुतु ।'

यह आपके वीर के योग्य नहीं है। यह बात नहीं है कि अर्कसुत रण-विशारद राम की आज्ञा को नहीं मान रहा है। इस कार्तिक-पूर्णिमा तक पृथ्वी पर की समस्त कपिसेना को एकत्र करने के लिए सेनापति नील को भेजा है। स्वयं युद्ध के लिए उमड़ते साहस से बैठा हुआ है। वह रामद्रोही नहीं है, असत्यभाषी नहीं है, कृतघ्न नहीं है, अतः आप इस पर

लक्ष्मण का सुग्रीव को मानना

कृपा कीजिए। ऐसा कहने पर, कलुष (भाव) को छोड़कर, नरनाथ-सुत (राजकुमार-लक्ष्मण) ने अर्चना स्वीकार की। ग्रहण करने के बाद, कनकपीठ पर राजकुमार को आसीन कर, रवितनूभव उनकी आज्ञा लेकर स्वयं बैठ गया, मृदुमधुरोक्तियों से (उन्हें) सहमत कराते हुए कहा :—"हे सौमित्र ! स्वामी राघव के कार्य को मैं भूल सकता हूँ ? अभी समस्त वानरों को लाऊँगा। (समस्त) दिशाओं में वैदेही को ढूँढने के लिए भेजूँगा। चलिए, मैं आपके पीछे-पीछे आऊँगा। ॥ ५५० ॥ जिस शर से वालि पृथ्वी पर गिरा, जिस शर से सात ताड़ (के वृक्ष) गिरे, वह शर ही समस्त दानवों का नाश करने के लिए, स्त्री (सीता) को प्राप्त करने के लिए पर्याप्त है। फिर भी अतिभक्ति से रघुराम (की) सेवा कर, समस्त कीर्तियों (के लिए) सीमा बनकर, मैं विराजूँगा।'

सुग्रीवुडु कपियूथमुलतो माल्यवंतमु जेरुट

ननिपल्कि हनुमंतु नतिनीतिमंतु । गनुगोनि 'मन वीट गल कपिकोटि
जाटिंचि वेंडलिप समकट्टु प्रतिन । बाटिंचि; येंडसेय बाडिगादिक;
मनमिप्पु डा राम मनुजेशु गान । जनवले' ननि पल्कि संभ्रमंबेसग
दरणिनंदनुडंत दारादिसतुल । वेरवोप्प नप्पुडु वीड्कोनि वच्चि
कलय दिक्कुल नुन्न कपियूथपतुल । बलमुल विलिपिंचि पयनंबु सेसि
मेदिनीभागंबु मिन्नुनु दिशलु । भेदिल्ल व्रस्थान भेरि वेयिंचि
प्रबलकांचन रत्न रम्यमौ नोक्क । शिबिकपै लक्ष्मणु जेलिमि नेक्किंचि
८६०
चामरद्वय सितच्छत्रचिह्नंबु । ला महात्मुनि म्रोल नरुग नेमिंचि
सबलुडै तानुनु सौमित्रि वेंनुक । शिबिक योक्कटि येक्कि चित्रवैखरिनि
मुंदुगा शुभतूर्यमुलु बोरुकोनग । ग्रंदुगा वंदिमागधनुतुल् सेलग
नेंडनेंड गपिनाथुलेतेंचि तन्नु । वोडगोन नुडुगणस्फुरितेंदु पगिदि
सकल वानर वीर सैन्य सन्नाह । मकलंकमै योप्प नप्पुड कदलि
यरुदैन पेंमितो नवनि गंपिंप । गरमु तेंपेक्कि लक्ष्मणु गोल्चि नडचें ।

सुग्रीव का कपिसमूहों के साथ माल्यवंत पहुँचना

ऐसा कहकर अतिनीतिवान हनुमान को देखकर (कहा):— "प्रतिज्ञा के अनुकूल हमारे आवास में स्थित कपिकोटि को घोषितकर, प्रस्थान के लिए सन्नद्ध करो। अव विलंब करना उचित नहीं है। अब हमें राजाराम के दर्शन करने जाना है।" ऐसा कहकर, संभ्रम के उमड़ने पर, तब तरणिनंदन ढंग से तारा आदि सतियों को विदा कर आया। (और) शोभा से समस्त दिशाओं में स्थित कपियूथ-पतियों की सेनाओं को बुलाकर, प्रयाण (प्रस्थान) कर, पृथ्वी, आकाश (और) दिशाओं को विदीर्ण करनेवाली प्रस्थान भेरी को ध्वनित कराया। प्रेम से लक्ष्मण को प्रबल (अधिक)-कांचन-रत्न से रम्य बनी एक शिविका पर बिठाकर, ॥ ८६० ॥ —उस महात्मा के आगे-आगे चामर-द्वय और श्वेत-छत्र-चिह्नों को जाने का आदेश देकर, ससैन्य स्वयं भी सौमित्र के पीछे एक शिविका पर बैठ गया। आगे-आगे चित्रवैखरी (विलक्षणता) से शुभतूर्य (मंगलवाद्य) के बजते समय, अधिकता से वंदि-मागधों (चारण-भाटों) की नुतियों (स्तुतियों) के व्याप्त होने पर, जहाँ-तहाँ कपिनाथों के आकर, दर्शन करते रहने पर उडुगण (नक्षत्र) से स्फुरित (शोभित) इंदु के समान (शोभित होते हुए), सकल-वानर-वीर-सैन्य का (युद्ध) सन्नाह (सन्नद्धता) से अकलंक (दोषरहित)

नट माल्यवंतंबुनंदुन्न रामु। डट म्रोयु कलकलंबप्पु डालिंचि
'यवें वच्चें गपिसेन' लनि कोपमुडिगि। रवितनूजुनि मीद रागिल्लुचुंडे।
नंदमै मणिकांचनांचितंबैन। यांदोळिकाद्वयं बल्लंत डिग्गि
तामरसाप्तनंदनुडु संप्रीति। सौमित्रियुनु दानु जनुदेंचि म्रोक्कि ८७०
यविरळंबगु भक्ति हस्तमुल् मोगिचि। यवनिवल्लभुनकिट्लनि
विन्नविंचें;

'देव ! सेनल बिल्व देसलकु बंचि। वाविरि नवि गूडिवच्चुनंदाक
दंडेत्ति यिट राक तडसिति गानि। योंडोक्क वेंटमैनुन्नाड गानु'
अनिन नर्कजु रामु डति कृपादृष्टि। गनुगोनि मन्निंचें; गडकतो नंत
गैलासगिरियंदु गनकाद्रियंदु। नीलाचलमुनंदु निषधाद्रियंदु
द्रोणाचलमुनंदु दुहिनाद्रियंदु। शोणाचलमुनंदु सोमाद्रियंदु
वृषभाचलमुनंदु विंध्याद्रियंदु। ऋषभाचलमुनंदु ऋक्षाद्रियंदु
बारियात्रमुनंदु ब्राग्गिरियंदु। ना रत्नगिरियंदु नस्ताद्रियंदु
मलयाचलमुनंदु मंथाद्रियंदु। गलगोन वर्तिंचु घनबाहुबलुलु
पवमानसूनुंडु पनसु डंगदुडु। गवयुंडु नीलुंडु गंधमादनुडु ८८०

हो शोभा देने पर, वह (सुग्रीव) तभी चलकर, अपूर्व गरिमा के साथ, पृथ्वी के काँपने पर, अधिक साहस से शोभित हो, लक्ष्मण की सेवा करते हुए चल पड़ा। वहाँ माल्यवंत में स्थित राम, वहाँ मुखरित कोलाहल को तब सुनकर, यह सोच कि 'वे ही कपिसेनाएँ आ रही हैं,' क्रोध के शांत होनेपर, रविपुत्र पर प्रसन्न हो रहे। सुंदर मणिकांचनमय शिविकाद्वय से थोड़ी दूर पर ही उतरकर, तामरस-आप्त (सूर्य)-नंदन ने संप्रीति से लक्ष्मण के साथ आकर, प्रणाम किया, ॥ ८७० ॥

—अविरल भक्ति से हाथ जोड़कर, अवनि-वल्लभ (राजा-राम) से यों निवेदन किया:— "हे देव! सेनाओं के लिए दिशाओं में (अपने लोगों को) भेजकर, क्रम से उनके एकत्र हो आने तक, (शत्रु पर) आक्रमण के लिए, यहाँ न आकर विलंब किया। और किसी कारण से लगा नहीं रहा।" (ऐसा) कहने पर राम ने अर्कज को अतिकृपादृष्टि से देखकर, सम्मानित (अथवा क्षमा) किया। तब साहस से कैलासगिरि, कनकाद्रि, नीलाचल, निषधाद्रि, द्रोणाचल, तुहिनाद्रि, शोणाचल, सोमाद्रि, वृषभाचल, विंध्याद्रि, ऋषभाचल, ऋक्षाद्रि, पारियात्र, प्राक्-गिरि, रत्नगिरि, अस्ताद्रि, मलयाचल, मंथाद्रि (आदि) में विचरण करनेवाले महान् बाहुबली (वानर), पवमान-सून (हनुमान), पनस, अंगद, गवय, नील, गंधमादन, ॥ ८८० ॥

पावकाक्षुडु कालपाशुंडु ग्रथनु । डा वेगदर्शियु नगवाक्षुंडु नलुडु मैंदुडु महानाथुंडु धूम्रु । डलघुंडु जंघुंडु तगिरिभेदि सुमुखुंडु केसरि ज्योतिर्मुखुंडु । विमुखुंडु तारुंडु विनतुंडु गजुडु जांववंतुंडुनु संपाति रंभु । डंवुराशितनूजुडगु सुषेणुंडु शतबलि शरभुंडु सन्नाथुलनग । नतिवीरवरुलु वीरादिगा गपुलु तम सुतुल् दम हितुल् दम सहोदरुलु । दम चुट्टमुलु दामु दट्टमै कूडि यिवि पदुलिवि नूरुलिवि वेलु लक्ष । लिवि कोटुलव्वल निवि शतकोट्टु लनराक पद्म महापद्म शंख । मनग वर्विन संख्यलन्निटि गडचि येलमि सोंपुन नेल यीनिनभंगि । जेलगि ये दिक्कु सूचिन वेल्लिविरिसि येमेयि गोलदिगाकेपु दीपिंचि । भूमियु नाकसंवुनु निंड गप्पि ८९० कर मुग्रगति ग्रालु कालदंडमुल । परुसुन दीपिंचु वाहुदंडमुलु गेडगूडि वडबाग्नि कीललु वोलि । वडि वेंचि दिवि रायु वालपाशमुलु बोरि बोरि गालाभ्रमुल कांतुलनग । नुरवडि मै ग्रालु नुग्रदंष्ट्रमुलु नलरेडु प्रळयकालादित्य विंव । मुल वोलि मंडेडु मुखगह्वरमुलु लोलाब्धि विपुल कल्लोल घोषमुल ।वोलि घोषिंचु नार्पुलु वेल्लिविरियि

—पावकाक्ष, कालपाश, ग्रथन, वेगदर्शी, गवाक्ष, नल, मैंद, महानाथ, धूम्र, अलघु, जंघु, गिरिभेदी, सुमुख, केसरी, ज्योतिर्मुख, विमुख, तार, विनत, गज, जांववान, संपाति, रंभ, अंबुराशि (समुद्र)-तनूज सुषेण, शतवलि, शरभ, सन्नाथ आदि अतिवीरवर—इनसे प्रारंभकर (समस्त) कपि अपने सुत, अपने हितू, अपने सहोदर, अपने संवंधी (जनों के साथ) सांद्रता से एकत्र होकर, ये दस हैं, ये सौ हैं, ये हजार हैं, ये लाख हैं, ये करोड़ हैं, उसके बाद ये सौ करोड़ हैं, (उसके बाद) गिने न जा सकनेवाले पद्म, महापद्म, शंख आदि समस्त संख्याओं को पारकर, (इतनी अधिक संख्या में) आनंद की शोभा से ऐसे विजृंभित हुए, मानो धरती से (तत्काल) उत्पन्न हो आए हों । जिस दिशा में देखें, उधर ही उमड़ पड़ते हुए किसी प्रकार से कम न होकर, उन्नति से दीप्त होकर, भूमि और आकाश को आच्छादित कर दिया (इस प्रकार से व्याप्त हो गए) । ।। ८९० ।।

अधिक उग्रगति से जाज्ज्वल्यमान कालदंड के समान परुषता से दीप्त बाहुदंडों के साथ एकत्र होकर, वाडव-अग्नि की ज्वालाओं के समान, शीघ्रता से आकाश को रगड़नेवाले वालपाश (पूँछ) मानो बार-बार कालाभ्र (प्रलयकालीन मेघ) की कांतियाँ हों, इस प्रकार शरीर से दीप्त होनेवाली उग्र दंष्ट्राएँ, शोभायमान प्रलय काल के आदित्यविंव के समान प्रज्वलित मुख-गह्वर, चंचल समुद्र के विपुल-कल्लोल-घोष के समान

बलमुलतो गूड ब्लवगवल्लभुलु । गलगोनि वच्चु नग्गलिकलु सूचि
यिच्चलोपल नप्पुडिक्ष्वाकुतिलकु । डच्चेरुवडि चूचि, हर्षिंचुचुंडे ।
ना वेळ सुग्रीवु डधिपति जूचि । 'देव ! ना सेन लेतेंचु चंदंबु
लवधरिंचिते ? वीरलंदोक्कडोकडु । तिविरि नी पनुलु साधिपनोपुदुरु'
अनि चेप्पि वारल यलवुलु बेळ्ळु । जननमुलु जातुलु सत्त्वसंपदलु १००
दनुवुलु वर्णमुलु दगु भोजनंबु । लुनुकुलु देशंबु लोलि वर्णिंचि
'बडबाग्निमुखमुन बडियुन्ननैन । गडुवेग जनि युग्रगति योप्पुमिगिलि
वडि बेर्चि यार्चि दुर्वारुलै कदिसि । पुडमियु नभमु नब्धुलु सोच्चियैन
नट मृत्यु वक्त्रंबुनंदुन्ननैन । नेंट नेंदु बोरानि येंदुन्ननैन
नी वानराधीशुलिंदोक्करोकरु । देव ! नी देवि वैदेहि देच्चेदरु ।
आनति यि'म्मन्न नर्कजु दिगिच्चि । भूनाथुडादरंबुन गौगिलिंचि
'बलसंपदलयंदु भानुज ! नीकु । दलपोय मरि यसाध्यमुलेंदु गलवु ?
पूनि, नी पौरुषंबुनु जूचि काक । येनेल कैकोंदु निट क्रिंद निन्नु'
ननि पलिक 'वैदेहि नरसि रा बनुपु' । मनवुडु हर्षिंचि यर्कनंदनुडु

गरजनेवाले उमड़ते सिंहनाद—(इस प्रकार की) सेनाओं को साथ लिए हुए आनेवाले प्लवग-वल्लभों (वानर राजा) के महत्त्व को देखकर, तब इक्ष्वाकु-तिलक (राम) मन में आश्चर्यचकित हो, हर्षित होते रहे। उस समय सुग्रीव ने अधिपति (राजा = राम) को देखकर (कहा):— "हे देव! मेरी सेनाओं के आगमन के विधान पर ध्यान दिया है न ? इनमें से एक-एक (अकेला) ही तुम्हारे कार्य को सिद्ध कर सकते हैं।" ऐसा कहकर, उनका बल, नाम, जन्म, जाति, सत्त्व-संपत्तियाँ, ॥ १०० ॥
—तनु, वर्ण, योग्य भोजन, स्थान, देश (आदि का) क्रम से वर्णनकर, (कहा):— "हे देव ! इन वानराधीशों में प्रत्येक आपकी पत्नी वैदेही को, वह वाड़व-अग्नि के मुख में पड़ी क्यों न हो, अतिवेग से जाकर, उग्रगति से शोभित हो, शीघ्र ही गरजकर, दुर्वार हो, लगकर, पृथ्वी, नभ, अब्धि (समुद्र) में पैठकर, वह कहीं मृत्युमुख में ही क्यों न हो, बिलकुल अगम्य स्थान में ही क्यों न हो, (सीता को) लाएँगे। आज्ञा दीजिए।" (तब) अर्कज को निकट ले, भूनाथ ने आदर से गले लगाकर (कहा):— 'हे भानुज! सोचने पर, बल की संपदा (के कारण) तुम्हारे लिए कहीं (कोई) असाध्य (कार्य) है ? (नहीं है)। तुम्हारे पौरुष को देखकर ही, तुम्हें ग्रहण किया (अपनाया) है। नहीं तो क्यों अपनाता।' ऐसा कहकर "वैदेही का पता लगा आने को (अपने लोगों को) भेजो।" ऐसा कहने पर अर्कनंदन हर्षित हो,

सीतान्वेषणकै सुग्रीवुडु वानरुल पंपुट

औनर नुत्तममैन यॊक लग्नमंदु । विनतुडन् वानरवीरुनि बिलिचि ९१०
'ये वॆंट नॆच्चोट नॆंदु नेमऱक । नीवु नी सेनलु नॆरि दूर्पु नडचि
या महीतनय ना यमुनलो वॆदकि । यामुनगिरि जूचि यटमीद बोयि
सुरनदिलो जूचि शोणनदंबु । गरमर्थि नरसि या कौशिकि वॆदकि
यल सरस्वति जूचि यल सिंधुवरसि । पॊलुचु पौंड्र विदेह भूमुलु वॆदकि
मालव कोसल मागध ब्रह्म । मालाख्य सीमल मैथिलि नरसि
जलधितीरमु सूचि चनि मंदराद्रि । निलय किरातुल नॆलवुलु वॆदकि
तिवुटमै नट यवद्वीपंबु गडचि । यवल जंबूद्वीपमट दाटि मीद
जॆच्चॆर नटु पोयि शिशिराद्रि वॆदकि । यच्चोट गालोदमनु मडुगरसि
तनरु लोहितसमुद्रमु दाटि पोयि । चनि कूट शाल्मलिच्छायल नरसि
मरि पोयि गरुडाश्रमंबुन वॆदकि । वरलु गोशृंगपर्वतमु शोधिंचि ९२०
यंदलि शृंगंबुलंदु वर्तिंचु । मंदेहराक्षसमंडलि नरसि

सीता को खोजने सुग्रीव का वानरों को भेजना

—अनुकूलता से एक उत्तम लग्न में, विनत नामक वानर को बुलाकर (बोला) ।। ९१० ।।
—"किसी तरह, कहीं भी असावधानी न वरतकर, तुम अपनी सेनाओं के साथ, क्रम से पूर्व की ओर चलकर, उस महीतनया (सीता) को, उस यमुना में ढूँढ़कर, यामुनगिरि को देखकर, वहाँ से (आगे) जाकर, सुरनदी में देखकर, अधिक इच्छा से शोणनद को खोजकर, उस कौशिकी में ढूँढ़कर, फिर सरस्वती (नदी) को देखकर, फिर सिंधु में खोजकर, विस्तृत पौंड्र, विदेहभूमियों को खोजकर, मालव, कोसल, मागध, ब्रह्ममाला नामक देशों में मैथिली को खोजकर, जलधितीर (छोर) को देख, आगे (जाकर) मंदराद्रि में निवास करनेवाले किरातों के (निवास) स्थान ढूँढ़कर, इच्छा से वहाँ यवद्वीप पारकर, आगे उसके बाद जंबूद्वीप को पारकर, शीघ्र उधर जाकर, शिशिराद्रि में (हिमालय) खोजकर, वहाँ 'कालोद' नामक सरोवर की खोजकर, शोभित लोहित समुद्र को पारकर जाकर, कूट शाल्मली (वृक्ष की) छायाओं में खोजकर, और (आगे) जाकर, गरुडाश्रम में (सीता की) खोजकर, विराजमान गोशृंगपर्वत पर खोजकर, ।। ९२० ।।
—उसके शिखरों पर निवास करनेवाले मंदेह राक्षसों के समूह को देखकर, वहाँ से दुग्ध-सागर को सरलता से पारकर, वहाँ सुदर्शन नामक सरोवर

यट दुग्धसागर मवलील गडचि । यट सुदर्शनमनु नळिनिलो वेंदकि
वलनोप्प शुद्धार्णवमु दाटि पोयि । बलुवैन जातरूपशिलाद्रि यरसि
यंदु वेदललतो नासीनुडैन । यिंदुवर्णु ननंतु नीक्षिचि म्रोक्कि
यौगि बदुनालुगु योजनंबुलकु । मिगिलि यव्वलनुन्न मेरुव वेंदकि
या मेरुगिरिचुट्टु नर्कुनि केरगि । या मेयि वालखिल्यादुल केरगि
यावल नुदयाद्रियंदु शोधिंचि । रावणु निलय मारसि वार्त देम्मु ।
रविलेक यंधकारमु ग्रम्मु कतन । भुवि मीद नव्वलि भूमुलेनेरुग;
निविडि नी विट्टु पोयि नेललोन रम्म; । यवमति राकुन्न नाज्ञ गाविंतु' ।
नावुडु लक्ष वानरुलतो गूडि । या वालितम्मुन कर्कवंश्युनकु ९३०
वेवेल तेरगुल विनतुडै कडगि । वे वेग विनतुंडु वेडले दूर्पुनकु ।
निनतनूभवुडंत हितशीलु नीलु । हनुमंतु नंगदु नट जांबवंतु
गजु गंधमादनु गवयु गवाक्षु । विजयुनि मैंदुनि द्विविदुनि दारु
दग बिल्चि 'मीरिक दक्षिणंबुनकु । दगु वानरुल गोंचु डडयक पोयि
यर्मिलि विंध्याद्रि यादिगा दोंडरि । नर्मदयु दशार्णनगरंबु नरसि
दंडकारण्यंबु दप्पक वेंदकि । दंडिगा नवल गोदावरि नरसि

में खोजकर, बड़ी शोभा से शुद्ध-अर्णव (समुद्र) को पारकर, जाकर, महान् जातरूप शिलापर्वत को खोजकर, वहाँ सहस्र सिरों के साथ आसीन इन्दुवर्ण-वाले अनन्त (आदिशेष) को देख, प्रणामकर, लगन के साथ चौदह योजनों से भी आगे स्थित मेरु (पर्वत पर) खोजकर, उस मेरुगिरि के चौतरफ़ घूमनेवाले अर्क (सूर्य) को प्रणामकर, उसी प्रकार वालखिल्य आदि (मुनियों) को प्रणामकर, उसके बाद उदयाद्रि में खोजकर, रावण के निलय का पता लगाकर, समाचार लाओ। रवि के न होने से अंधकार के आवृत होने के कारण, पृथ्वी पर, उसके आगे की भूमियों को मैं नहीं जानता। झट से तुम इस प्रकार जाकर महीने के भीतर आओ। अवज्ञा कर नहीं आओगे तो दंडित करूँगा।" ऐसा कहने पर, एक लाख वानरों को साथ लिए, वालि के अनुज तथा सूर्यवंशवाले को, ॥ ९३० ॥
—हज़ार-हज़ार तरह से विनत हो, ससाहस, अतिशीघ्र विनत पूर्व दिशा की ओर निकल पड़ा। तब इन-तनूभव (सुग्रीव) ने हितशीलवाले नील, हनुमान, अंगद, जांबवान, गज, गंधमादन, गवय, गवाक्ष, विजय, मैंद, द्विविद, तार (आदि) को उचित रूप से बुलाकर (कहा):—"अब आप योग्य वानरों को साथ लेकर अविलंब जाकर, प्रेम से विन्ध्याद्रि से लेकर, सोत्साह नर्मदा, दशार्ण नगर में ढूँढकर, दंडकारण्य में अवश्य खोजकर, बहुलता से आगे गोदावरी में अन्वेषणकर, अतिशोभा से वहाँ वेत्रवती में

वलनोप्प नट वेत्रवतिलोन जूचि । नेलकोनि कालिंग निषधदेशमुल
नारसि कर्णाटकांध्रचोळेंद्र । चेर केरळ पांड्य सीमल नेल्ल
नरसि यम्मलयाद्रि नरसि कावेरि । नरसि यगस्त्युनि याश्रमंबरसि
यम्महात्मुनि गांचि यतनि यनुज्ञ । नेम्मितो दाम्रपर्णिनदि दाटि ९४०
जलधिवेलावनस्थलमुल वेदकि । पोलुपोंदु ना हेमपुरमुलो व्रेदकि
येंदिरिन कडक महेंद्राद्रियंदु । वेदकि यव्वलनुन्न विषमाद्रि जूचि
यावल बुष्पाद्रियंदु शोधिंचि । क्रेव गुंजरमनु गिरि वरीक्षिंचि
यचट नगस्त्यु गेहमु विश्वकर्म । रचितमै तगु नंदु रमणि शोधिंचि
यंजनानदि दाटि यव्वल मणुल । रंजिल्लु फणुलचे रक्षिपबडिन
वदलक या भोगवतिलोन जोच्चि । वेदकि यव्वलनुन्न वृषभाद्रि करिगि
यंदुपै गंधर्वुलप्सरल् सुरलु । नुंदु राचोटुल नोडक वेदकि
तलकक यरिगि वैतरणि लंघिंचि । पोलुचु वैवस्वतुपुरमुन करिगि
यंदु ना समवर्ति यनुमति वडसि । पोंदुगा वितृलोकमुलु गलयंग
वेदकि सीतादेवि वृत्तांतमरसि । पदिलुलै नेललोन व्रतिवार्त देंडु । ९५०

देखकर, स्थिरता से कालिंग, निषध देशों में पता लगाकर, कर्णाटक, आन्ध्र, चोल, इन्द्र, चेर, केरल, पांड्य (आदि) समस्त देशों में पता लगाकर, उस मलयाद्रि में ढूँढकर, कावेरी में पता लगाकर, अगस्त्य के आश्रम में पता लगाकर, उस महात्मा के दर्शनकर, उसकी आज्ञा से, प्रेम से ताम्रपर्णी नदी को पारकर, ॥ ९४० ॥

—जलधि-वेला (किनारे पर स्थित)-वनस्थलियों में ढूँढकर, शोभायमान उस हेमपुर में खोजकर, अत्यधिक साहस के साथ महेंद्राद्रि में ढूँढकर, उसके आगे स्थित विषमाद्रि को देखकर, उसके बाद पुष्पाद्रि में ढूँढकर, पार्श्व में स्थित कुंजर नामक गिरि की परीक्षा (निरीक्षण) कर, वहाँ विश्वकर्मा के बनाए अगस्त्य के गृह में रमणी (सीता) को खोजकर, अंजना नदी को पारकर, उसके आगे मणियों से रंजित (विलसित), फणियों (सर्पों) से रक्षित उस भोगवती (नामक नगरी) को न छोड़, (उसमें) प्रवेशकर, ढूँढकर, उसके आगे स्थित वृषभाद्रि जाकर, जिसपर गंधर्व, अप्सराएँ, सुर रहते हैं, उसके स्थानों को, पीछे न हटकर, ढूँढकर, विचलित न होकर, जाकर, वैतरणी (नदी) को लाँघकर, सुशोभित वैवस्वत के नगर को जाकर, वहाँ उस समवर्ती (यमराज) की अनुमति प्राप्तकर, सुघड़ता से पितृलोकों को खूब अच्छी तरह ढूँढकर, सीतादेवी के समाचार को जानकर, सकुशल, महीने के भीतर प्रतिसमाचार लाओ । ॥ ९५० ॥

आवल नंधकारावृतंबगुट । देवतलकु नैन दीऽदंदरुग ।
ननिन ना कपिनाथुलंदरु गूडि । यनुमोदरसवार्धियंदोललाडि
दिननाथतेजुडै दीपिंचु राम । जननाथुतो दम सत्त्वमुलु मेरसि
'जानकि नेऽभंगि साधिंचि कानि । मानवेश्वर ! रित्त मगुडिरा मेमु'
अनि पल्क रामुडु हनुमंतु जूचि । यनुवुगा भाविकार्यमु निश्चयिंचि

रामुडु हनुमकु आनवालुगा अंगुळीयकमिच्चुट

तन दयादृष्टि यातनिमीद नुंचि । 'यनिलज ! यिंदु र'म्मनि चेर बिलिचि,
'जनकज गनुगोन जालुदुवीव; । यनघ ! नीचेत गार्यमुलु सिद्धिंचु;
नीवंतवाडवु; नी बाहुबलमु । भाविप नट्टिद पवमानतनय !
यिदे ! नादु मुद्रिक; यिदि सीत किच्चि । सुदतिचित्तमुलोनि शोकंबु मान्पि
सीतकु मा यन्न सेमंबु सेप्पि । सीतसेममु जेप्प शीघ्रंबे रम्मु' ९६०
अनि मुद्रिक योसंग ननिलनंदनुडु । दन मस्तकंबुन धरियिंचि मिंचे

उसके आगे अंधकारावृत होने से, वहाँ जाना देवताओं के लिए भी संभव नहीं है।" (ऐसा) कहने पर वे सभी कपिनाथ मिलकर, अनुमोद-रसवारिधि में ऊभ चूभ होकर, दिननाथ (सूर्य के समान) तेज से दीप्त होनेवाले राजाराम के समक्ष अपने सत्त्वों के साथ चमककर, (कहा):— "हे मानवेश्वर ! किसी भी प्रकार से जानकी का पता लगाए बिना, रिक्त (खाली हाथ) नहीं आएँगे।" ऐसा कहने पर, राम हनुमान को देखकर, समुचित ढंग से भावी कार्य का निश्चयकर,

राम का हनुमान को अभिज्ञान के रूप में अंगूठी देना

—अपनी दयादृष्टि उसपर रखकर, 'हे अनिलज ! यहाँ आओ' कह निकट बुलाकर, (बोले):—"हे अनघ ! तुम्हीं जनकजा का पता लगा सकोगे। तुम्हारे हाथ कार्य सफल होंगे। तुम समर्थ हो। हे पवमानतनय ! सोच-विचार करने पर तुम्हारा बाहुबल वैसा है। यही है मेरी मुद्रिका। इसे सीता को देकर, सुदती (नारी) के चित्त के शोक (खेद) को दूरकर, सीता को हमारी कुशलता के बारे में बताकर, सीता का क्षेम (कुशल) बताने शीघ्र ही आओ।" ॥ ९६० ॥

(ऐसा) कह मुद्रिका देनेपर अनिलनंदन (हनुमान) (उसे) अपने

दनरार नुदयाद्रि दनदु श्रृंगमुन। दिनमणि दाल्चि यॆंते नॊप्पु करणि;
नंत ना हनुमंतु डानंदमंदि। गंतुलु वेयुचु गरमुलु मोंगिचि
'यिनकुलाधीश्वर ! यॆंत दव्वैन। जनि सीतयुन्नॆड साधिंचि वत्तु;
सोमसूर्युलवट्टि शोधिंचियैन। भूमियु नभमु नब्धुलु सॊच्चियैन
ना महीसुत निक नारसि वत्तु। नी महिलोपल नॆच्चटनुन्न
नसमानमगु सत्त्वमभिनुति कॆक्क। वसुधेश ! रावणावासंबु जॊत्तु;
नरिगॆद' ननि म्रॊक्कि यट दक्षिणमुन। करिगॆ वायुजुडंगदादुलतोड।
मरि सुषेणुनि बिलिचि मर्कटेश्वरुडु। 'वरल नीवॊक लक्षवानरुल् गॊलुव
सौराष्ट्रदेशंबु सन जॊच्चि वॆदकि। धीरत बाह्लिकदेशंबु नरसि ९७०
श्रीकरमै यॊप्पु सिंधु सौवीर। केकयदेशमुल् गृतमति वॆदकि
वलनॊप्प बुन्नागवनमुलो नरसि। तॆलिवि बश्चिमवार्धि दृष्टिंचि चूचि
ललितमौ नारिकेळवनंबु वॆदकि। यलयकपोयि वज्राद्रि शोधिंचि
पारियात्रनगंबु वरिकिंचि यचट। गूरिमि गंधर्वकोट्टल दॆलिसि
बलियु हयग्रीवु बंचजनाख्यु। गलन खंडिंचि शंखंबु जक्रंबु

मस्तक पर धारणकर, शोभा से उदयाद्रि के अपने श्रृंग (शिखर) पर दिनमणि (सूर्य) को धारणकर अधिक शोभित होने के समान, शोभित हुए। तब हनुमान आनंदित हो, उछलते-कूदते, हाथ जोड़कर, (बोला):—"हे इनकुलाधीश्वर ! कितनी भी दूर क्यों न हो, जाकर, सीता के स्थान का पता लगाकर आऊँगा। सोम (चन्द्र) और सूर्य को पकड़ ढूँढकर भी, (अथवा) भूमि, नभ, अब्धि (समुद्र) में प्रवेशकर ही सही, इस महि पर कहीं भी क्यों न हो, अब उस महीसुता का पता लगाकर ही आऊँगा। असमान सत्त्व के प्रशंसित होनेपर, हे वसुधेश ! रावण के आवास में प्रवेश करूँगा। (अब मैं) जाऊँगा।" कह, प्रणामकर, वायुज अंगद आदियों के साथ उधर दक्षिण को गया। तब सुषेण को बुलाकर मर्कटेश्वर (वानरों का राजा = सुग्रीव) ने (कहा):—"शोभा से तुम एक लाख वानरों के सेवा करनेपर, सौराष्ट्र देश जा, प्रवेशकर, ढूँढकर, धैर्य से बाह्लिक देश में पता लगाकर, ।। ९७० ।।

—श्रीकर हो शोभित सिंधु, सौवीर, कैकयदेशों को कृतमति (निश्चित-बुद्धि) से ढूँढकर, सुशोभित पुन्नाग वन में ढूँढकर, अच्छी तरह पश्चिम समुद्र पर दृष्टि रखकर देख, ललित हो नारिकेल वन में ढूँढकर, बिना थके जाकर वज्राद्रि को ढूँढकर, पारियात्रनग (पर्वत) को निहारकर, वहाँ प्रेम से गंधर्व समूह को जानकर (परिचय प्राप्तकर), जहाँ बली हयग्रीव तथा पंचजन नामक (व्यक्तियों का) युद्ध में संहारकर, सर्वप्रथम चक्री (विष्णु)

जक्कि यॆच्चो दॊलिलि जत गांचॆनट्टि । चक्रवंतंबनु शैलंबु वॆदकि
मॆलकुव नट्टुपोयि मेघाद्रियरसि । विलसिल्लु नरुवदिवेल संख्यमुलु
गल कांचनाद्रुल गलय नीक्षिंचि । जलजाप्तुडॆचट नस्तमुगांचु नट्टि
चरमाद्रि नीक्षिंचि सौवर्णमरसि । पुरणिंचु वरुणुनि पुरमॆल्ल वॆदकि
चरितार्थुडगु मेरुसावर्णिमौनि । बरिकिंचि नॆललोन ब्रतिवार्त दॆंडु; ९८०

अर्कहीनमु नमर्यादंबु गान । बेकॊनि नव्वलि पृथिवि ने नॆरुग ।"
ननिन सुषेणादुलगु महाकपुलु । पनि बूनि पोयिरि पडमटि दॆसकु ।
जलजाप्तसुतुडंत शतबलि बिलिचि । 'नलि नीवु लक्षवानरुलतो गूडि
मॊदल बुळिंदभूमुलु सॊच्चि पोयि । चॆदरक या सौरसेनंबु वॆदकि
भरतभूमुल नॆल्ल बरकिंचि यवन । धरणीशुदेशंबु तडयक वॆदकि
कडगि कांभोज कॊंकणभूमुलरसि । यॆडपक यट्टु पोयि हिमवंतमरसि
सोमाश्रमंबुन जॊच्चि शोधिंचि । श्रीमिंचु कालाख्यशिखरि नीक्षिंचि
या पै सुदर्शनमनु नद्रिवॆदकि । कामिंचि यट्टु पोयि कनकाद्रि वॆदकि
कैलासगिरि जेरि कौबेर वनमु । ना लोलनयन मीरलयक वॆदकि

ने शंख और चक्र दोनों को प्राप्त किया था, उस चक्रवंत नामक पर्वत पर ढूँढकर, सावधानी से उधर जाकर मेघाद्रि में अन्वेषणकर, शोभित साठ हजार संख्यावाले कांचन पर्वतों को अच्छी तरह देखकर, जलजाप्त (सूर्य) जहाँ अस्त होता है, उस चरमाद्रि को देखकर, सौवर्ण पर ढूँढकर, वर्धित वरुण के नगर भर में ढूँढकर, चरितार्थ बने मेरु सावर्णि मौनी को देखकर, महीने भर में प्रतिसमाचार लाओ । ॥ ९८० ॥

अर्कहीन होने से, अमर्यादित होने से उसके बाद वाली पृथ्वी का मैं उल्लेख नहीं करूँगा और जानता भी नहीं हूँ ।" कहनेपर सुषेण आदि महाकपि, निश्चित मति से पश्चिम की ओर गये । जलजाप्तसुत (सुग्रीव) ने तब शतबली को बुलाकर (कहा):—"शोभा से तुम एक लाख वानरों के साथ, प्रथमत: पुलिंद भूमियों में प्रवेशकर जाकर, एकाग्र हो, उस सौरसेन (प्रदेश) को ढूँढकर, समस्त भरतभूमियों को देखकर, अविलंब यवन-धरणीश के देश को खोजकर, सप्रयत्न कांभोज, कोंकण भूमियों में देखकर, न रुककर वहाँ जाकर हिमवंत में पता लगाकर, सोमाश्रम में प्रवेश-कर, ढूँढकर, अधिक श्रीसंपन्न कालाख्य-शिखरी को देखकर, उसके बाद सुदर्शन नामक पर्वत में ढूँढकर, चाहकर उधर जाकर कनकाद्रि में ढूँढकर, कैलास-गिरि पहुँचकर, कौबेर (कुबेर के) वन में उस लोल-नयनवाली

धनदुनि पुरमु नातनि सरोवरमु । ननुमोदभरमु बायक विलोकिंचि
९९०
यंदु गुबेरुनि नडिगि क्रौंचाद्रि । यंदु मीरंदरु नवनिज नरसि
चनि यट मैनाकशैलंबु गडचि । यनघ ! वैखानसंबनु कौलनरसि
तनरु शैलोदाख्यतटिनि लंघिंचि । गोनकोनि युत्तरकुरुभूमुलरसि
यच्चट गंधर्वुलप्सरलु सुरलु । निच्चलु नुंदु रा नेलवुलु वेदकि
निलुवकुत्तरपयोनिधि दाटिपोयि । सोलयक यटमीद सोमाद्रिवेदकि
यचट ब्रह्मयु शिवुडर्थि वर्तिंतु । रचलगति मीरु नंदुंडि मरलि
योक नेललोपल नुर्वीशुकडकु । ब्रकटंबुगा मीरु प्रतिवार्त देंडु"
अनवुडु शतवलि यवनीशु वीडु । कोनि युत्तरंपु दिक्कुन केगे; नंत
नप्पुडु रघुरामुडर्कजु जूचि । 'येप्पुडु चूचिनावी भूमुलेल्ल'
ना विनि 'वालिकि नाडेनु वेरचि । वेवेग यतडु ना वेनुवेंट दगुल १०००
गलगोन गुरुतुलुगा महियेल्ल । नलुदिक्कुलुनु जूचिनाड ने' ननिये ।
ननिन नच्चेरुवंदि यट गोंतकाल । मिनजानुजुलु गोल्व निनकुलुडुंडे;

को, न थककर, ढूँढकर, धनद (कुबेर) के नगर, उसके सरोवर को अनुमोद (प्रसन्नता) के भार से न छोड़कर, देखकर, ।। ९९० ।।
—वहाँ कुबेर से पूछकर क्रौंचाद्रि में तुम सब लोग अवनिजा का पता लगाकर, (आगे) जाकर वहां मैनाक शैल को पारकर, हे अनघ ! वैखानस नामक सरोवर में ढूँढकर, शोभित शैलोदाख्य-तटी (नदी) को लांघकर, सप्रयत्न उत्तर-कुरु भूमियों में पता लगाकर, वहाँ जहाँ गंधर्व, अप्सराएँ, सुर नित्य निवास करते हैं, उन स्थानों को ढूँढकर, (वहाँ) न रुककर उत्तर पयोनिधि को पारकर जाकर, न थककर, उसके वाद सोमाद्रि पर ढूँढो। वहाँ ब्रह्मा और शिव प्रेम से रहते हैं। अचलित (अविचल) गति से वहाँ से लौटकर, एक महीने के भीतर, उर्वीश (राजा राम) के पास, प्रकट रूप से तुम लोग प्रतिसमाचार लाओ।" ऐसा कहने पर शतवली अवनीश से बिदा लेकर उत्तर दिशा की ओर गया। तव रघुराम ने अर्कज को देख (कहा):—"तुमने इन सभी भूमियों को कव देखा है ?" यह सुनकर (सुग्रीव ने कहा):—'उस दिन मैं वालि से डरकर, उसके मेरे पीछे पड़नेपर, अतिशीघ्र, ।। १००० ।।
—विकल हो, समस्त मही को, चारों दिशाओं को मैंने देखा है।' (ऐसा) कहने पर आश्चर्यचकित हो, इनकुलवाला (राम) इनज (सुग्रीव) (तथा) अनुज (लक्ष्मण) के सेवाएँ करते रहनेपर, वहीं कुछ समय तक रहा। उचित विधान से पूर्व, पश्चिम (और) उत्तर में अन्वेषण के लिए जगदीश

दग बूर्व पश्चिमोत्तरमुल वेंदक । जगतीशु पनुपुन जनिन वानरुलु
निनरश्मुलेंदाक निलमीद बर्वु । ननुपमसत्त्वुलै यंदाक दिरिगि
नलिनाक्षि नेंदु गानक वच्चि पतिकि। जेलुवेदि प्रतिवार्तसेप्पिरंदरुनु;
नट रामसुग्रीवु 'लंगदमुख्यु । लिट मीद ब्रतिवार्त लेमि सेप्पेदरो ?
यदि येमि चंदमो ?' यनि वारि राक । केंदुरु चूचुचुनुंडिरेंतयु वगचि;
यंत नंगदमुख्युलगु महाकपुलु । पंतंबु लाडुचु बरमहर्षमुन
संतत जवसत्त्वसंपदल् मेरसि । मंतु केक्किन हनुमंतुंडु दामु
जेंदरक रविजुंडु सेप्पिनयट्ल । मोदल विंध्याचलंबुन केगुदेंचि १०१०
यंदलि गुहल महागहनमुल । नंदंद वैदेहि नरयुचु गदलि
यदियादिगा दक्षिणंबुन करिगि । पोंदलु पूबोंदलंद भूजंबुलंदु
नदुलंदु गिरुलंदु नगरंबुलंदु । वेंदकि जानकि गान वेरवु लेकुनिकि
चिंतासमाक्रांतचित्तुलै वार । लंतंत गुमुरुलै यट पोयि पोयि

अंगदादुल विचित्रगुहाप्रवेशमु

पदियेंड्ल तन कूर्मि पट्टि यच्चोट । गदलक मेंदलक कालुनिपुरिकि

(राम) की आज्ञा से गये वानर, जहाँ तक इनरश्मियाँ (सूर्य की किरणें) पृथ्वी पर व्याप्त होती हैं, वहाँ तक अनुपमसत्त्व युक्त हो जाकर, कहीं भी नलिनाक्षी को न पाकर, लौट आकर, शोभा से रहित सभी ने पति (राजा) को प्रति-समाचार सुनाया। तब राम (और) सुग्रीव अधिक व्यथित होते हुए, यह सोचते कि "अब आगे अंगद आदि प्रतिसमाचार क्या सुनाएँगे ? यह कैसा विधान है ?" उनके आगमन की प्रतीक्षा करते रहे। तब अंगद आदि महाकपि स्पर्धा की बातें करते हुए, परमहर्ष से, संतत-जव-सत्त्व-संपदाओं से प्रकाशित होते हुए, मंत्रणा में अधिक उन्नत बने हनुमान के साथ, विकल न बनते हुए, रविज के कथनानुसार, प्रथमतः विंध्याचल आकर, ॥ १०१० ॥

—वहाँ की गुफ़ाओं, महा-गहनों (काननों) में जहाँ-तहाँ वैदेही को ढूंढते हुए, चलकर, वहाँ से शुरूकर, दक्षिण को जाकर, शोभित फूलों से युक्त झाड़ियों (तथा) वृक्षों में, नदियों में, गिरियों में, नगरों में ढूँढकर, जानकी को देख सकने के उपाय के न होनेपर, चिंता से समाक्रांतचित्तवाले हो, वे धीरे-धीरे झुंड बाँधकर, उस तरफ़ जा-जाकर,

अंगद आदियों का विचित्रगुफ़ा में प्रवेश

—उस वन में प्रवेश किया कि जो अपनी दस वर्षीया लाड़ली पुत्री के वहाँ

बोयिन बोंगुलुचु बुत्रशोकाग्नि। बायक पडि क्रालि पलविंचुचुन्न
कंडु महामुनि घन शाप वह्नि। मंडि निमृगमु निर्मानुष्यमगुचु
नुंड नीडयु द्राव नुदकंबु लेक। पंडक जनशून्यपथमैन यडवि
चोंच्चि येंतेनियु सोंलसि लो दारु। नच्चोट नुदकंबु लरयुचन्नंत
नंदोक्क रक्कसुंडगचराधिपुल। मुंदरु नीलाभ्रमो यन निलिचि १०२०
'योरि वानरुलार! युर्विपै नेनु। मारीचतनयुंड, महितविक्रमुड
देवगंधर्वुलु दिविरि ये नुन्न। यी वनि दृष्टिप नेव्वरु वेरतु;
रिंदेल वच्चितिरिंदरु गूडि?। येंदु बोवग वच्चु निक नाचेत
जावक मी' कंचु संरंभमेसग। 'गो' यनि यार्चिन गुपितुडै यप्पु
डंगदुंडादैत्युनदरंट व्रेय। बोंगि रक्तमु वात बोंटबोंट वेडल
वसुधपै बडे; नंत वानरुलेल्ल। बोंसगंग नोक महाभूजंबु नीड
नलसि कूर्चुंडि 'तोयंबुलेच्चोट। गलवोको?' यनि दप्पि गदुरनुन्नंत
दरमिडि योक बिलद्वारंबु वेडलि। युरवडि जलपक्षुलोंडोंड येगय
गनुगोनि 'युदकमिक्कड नुंड बोलु'। ननि वच्चि बिलमुलो नंदरु
सोंच्चि

चेतनाशून्य हो, यम की पुरी को जानेपर (मर जानेपर), व्यथित होते हुए पुत्री की शोकाग्नि में रत होकर, दग्ध होते रोते रहनेवाले कंडु (नामक)-महामुनि के घोर-शाप-वह्नि के कारण जलकर, निर्मृग (मृगरहित) (तथा) निर्मानुष्य होते हुए, रहने के लिए छाया, पीने के लिए पानी के न होकर, सस्य-रहित, जनशून्यपथ बन गया था। (उस वन में प्रवेशकर) अधिक थककर, भटकते हुए, वहाँ उदक (जल) के लिए ढूँढ रहे थे तो वहां एक राक्षस अगचर (वानर)-अधिपों के सामने यों खड़ा हो गया मानों नीला मेघ हो। ॥ १०२० ॥

(उसने यों कहा):—"रे वानरो! उर्वी (पृथ्वी) पर मैं मारीचतनय हूं, महितविक्रमवाला हूँ। देव-गंधर्व कामना करके भी इस वन को, जहाँ मैं रहता हूँ, देखने के लिए भी डरते हैं। सभी मिलकर यहाँ क्यों आए हो? अब मेरे हाथ मरे बिना तुम लोग कहाँ जा सकते हो?" (ऐसा) कहते हुए अधिक संरंभ (महत् प्रयत्न) के साथ 'को' कह (वह राक्षस) चिल्लाया। तब कुपित हो अंगद ने उस दैत्य के मर्म पर प्रहार किया, तब मुँह से रक्त उगलते वह वसुधा पर गिर पड़ा। तब समस्त वानर अनुकूल ढंग से एक महावृक्ष के नीचे, थककर, बैठकर, (यह सोचते कि) 'पता नहीं, जल कहाँ है'? प्यास से व्याकुल होते रहे। एक विलद्वार से पंक्तिबद्ध हो, बड़े वेग से जल पक्षियों के जहाँ-तहाँ उड़ आते

कलगोनि विपुलांधकारमै तेरुवु। तेलिय कोंडोरुवुल धृति
जीरिकोनुचु १०३०
ननुपमसत्त्वुलै यट्टु पोव बोव। गनुकनि यय्यंधकारंबु विरिसि
यरुदुगा जगदद्भुताकारमैन। पुरमोकडच्चोट वोडगांचि निलिचि
पसिडिगोपुरमुलु बसिडि माड्वुलु। बसिडि यट्टळ्ळुनु बसिडिकोटलुनु
बसिडिवृक्षंबुलु बसिडि पूबोदलु। बसिडि पर्वतमुलुबसिडि तामरलु
नै चूड ना पुरंबतिरम्यमैन। जूचि येंतेनियु जोद्यंबु नोंदि
'प्रकट संपदलच्चे बरगुचुंडियुनु। नकट! निर्मानुष्यमैनदी पुरमु!
एलोंको! यिट्लय्यैनी पुरं' बनुचु। ने लील वेडलु चोप्पकुगंग लेक
चाल जिंतिलुचु नच्चट गोन्निनाळ्ळु। पोल जरिंचुचु बुरमध्यवीथि
मिन्नुलतो रासि मेटियै युंदु। नुन्नतंबैयुन्न योक मेड गनिरि।

हनुमदादुलकु स्वयंप्रभ सत्कारमु

कनि दानिमीदिकि गपुलेल्ल ब्राकि। कनिरि तपोवृत्ति गरमोप्पुदानि
१०४०

देख, (यह सोच कि) "संभवतः यहाँ जल हो सकता है," आकर, सब बिल (-द्वार) में घुस गए। (घुसकर) चारों तरफ़ देखकर, विपुल अंधकार के होनेपर, मार्ग के न सूझनेपर, धैर्य से एक दूसरे को पुकारते हुए, ॥ १०३० ॥
—अनुपम सत्त्ववाले होते हुए, उधर जाते रहनेपर, शीघ्र ही उस अंधकार के दूर हो जानेपर, अपूर्व (रूप) से जगद्-अद्भुत-आकारवाले एक नगर को, वहाँ देखकर, ठिठक गए, सुवर्णमय गोपुर, सुवर्णमय सौध, सुवर्णमय अट्टालिकाएँ, सुवर्ण के दुर्ग, सुवर्ण के वृक्ष, सुवर्णमय पुष्पकुंज, सुवर्ण-पर्वत, सुवर्ण-कमल से युक्त हो देखने में उस पुर के अतिरम्य होनेपर, (उसे) देख, अत्यधिक चकित हो (कहने लगे):—"प्रकट संपदाओं से युक्त होकर शोभित होते हुए भी हाय! यह नगर निर्जन है।" "पता नहीं, क्यों यह नगर ऐसा हो गया है।" किसी भी प्रकार से बाहर निकलने के उपाय को न जानकर, अधिक चिंतित होते हुए, वहाँ कुछ दिन शोभा से विचरण करते हुए, पुर की मध्य-वीथि में, आकाश को स्पर्श करते हुए श्रेष्ठ (और) वहाँ (सबमें) उन्नत बने हुए एक महल को देखा।

हनुमान आदि को स्वयंप्रभा का सत्कार

—(महल को) देखकर, उसपर सब कपि चढ़ गए और तपोवृत्ति में अधिक शोभायमान, ॥ १०४० ॥

हरिणाजिनांबरयै योप्पुदानि । दरुणेंदुकळ बोलि तनरारुदानि
नोक पुण्यकांत। नय्युविदकु म्रोक्कि । यकलंकचित्तुडै हनुमंतुडनिये;
'नो तन्वि ! नीवेव्व ? रोंटिमै निचट । नी तपंबुन नुंड नेमि कारणमु ?
ए महात्मुनि पुर मी पुण्यनगर ? । मेमेन्नडुनु गान मी विचित्रम्मु !'
लनिन नक्कोमलि हनुमंतु जूचि । तन पूर्वकथयेल्ल दा जेप्पदोडगे;
'दग दोलिल मयुडनु दानवेश्वरुडु । तगिलि पद्मजु गूर्चि तपमाचरिंचि
पस नोप्पु निर्माणपटुशक्ति वडसि । पसिडि नी पुरमिट्लु परग निर्मिंचि
यविरळगति हेम यनु दिव्यवनित । गविसि यातडु पेद्दकालमिंदुंड
नातनि वज्रधाराहतु जेसि । या तन्वि गोनिपोये नमर वल्लभुडु;
आ तरलाक्षि नेय्यपुजेलि नेनु; । मा तंड्रि सौवर्णि महितमानसुडु; १०५०
आ यिंतिपनुपुन नति तपोनिष्ठ । बायकुंडुदु; स्वयंप्रभ यनुदान';
ननि जेप्पि कंदमूलादुलंदरकु । दनिविदीर नोसंगि दाहंबु दीर्चि
'यनघ ! मीरेव्व ? रिंदरुगुदेनेल ? । यनिमिषुलेन निंदरुदेरादु;
विनु डिंदु मीरलेव्विधिनि वच्चितिरि ?' । यन विनि हनुमंतुडतिव-
किट्लनिये;

—हरिणाजिन (मृगचर्म के)-अंबर (वस्त्र) धारणकर सुशोभित, तरुणेंदु-कला के समान शोभित एक पुण्य-कांता को देखा। उस स्त्री को नमस्कार कर, अकलंक चित्तवाला होता हुआ हनुमान (यों) बोला:—"हे तन्वी ! तुम कौन हो ? अकेली यहाँ तप करते रहने का क्या कारण है ? यह पुण्यनगर किस महात्मा का पुर है ? हमने इस विचित्र (दृश्य) को कभी नहीं देखा है।" (ऐसा) कहनेपर वह कोमली हनुमान को देखकर, अपनी समस्त पूर्वकथा स्वयं कहने लगी:— "उचित रूप से पूर्व (काल) में मय नामक दानवेश्वर ने लगन के साथ पद्मज (ब्रह्मा) के बारे में तप किया, सामर्थ्य से शोभित निर्माण करने की पटु शक्ति प्राप्तकर, सुवर्ण से इस पुर का शोभा से निर्माणकर, अविरल गति से हेमा नामक दिव्य वनिता से मिलकर लंबी अवधि तक यहाँ रहा, उसे वज्रधारा से आहतकर, अमर-वल्लभ उस तन्वी को ले गया। उस तरलाक्षी की मैं प्रियसखी हूँ। हमारे पिता सौवर्णी महितमनवाला है। ॥ १०५० ॥

उस नारी (हेमा) के आदेश से अति तपोनिष्ठा को न छोड़कर (यहाँ) रहती हूँ। मैं स्वयंप्रभा नामवाली हूँ।" ऐसा कहकर सबको कंद-मूल आदि देकर संतुष्टकर, प्यास बुझाकर (पूछा):—"हे अनघ ! आप कौन हैं ? यहाँ क्यों आए हैं ? अनिमिष (देवता) भी यहाँ नहीं

'दन तंड्रि पनुपुन दंडकाटविकि । मुनिवृत्ति रामुडिम्मुल वच्चियुंड
वनजाक्षि ना रामु वरपत्नि गोनुचु । जनिन रावणुवेंट जनि चनि येमु
जनकज वेदकुचु जलशून्यमगुट । घनमैन दप्पिचे गड्डु डस्सि योक्क
बिलमुलोपल जोच्चि पेंद्दचीकटिकि । दलकक योक्कट दैवयत्नमुन
नीयाश्रमंबुन केतेंचि वेडलि । पोयेडि मार्गंबु पोडगानलेक
तिरुगुचुन्नारमु; धृति बेक्कुदिनमु । लुरि बडियुन्नारमोक दिक्कु लेक'
१०६०
यनिन 'रामुनिकार्यमै वच्चिनार । लनघुलु पुण्यात्मुल'नि भक्ति जेसि
'मीकेंद्दि यिष्टमिम्मेयि वेड्डु' डनिन । 'माकी बिलद्वारमार्गंबु वेडल
जेयुमु; वेवेग सीतनु वेदक । बोयेद' मनुड्डु नुप्पोंगि या मगुव
'मोगि मीरु कन्नुलु मूसिकों' डनुचु । दग बल्कि वारल दन तपश्शक्ति
नेलतुक यवलील निमिषमात्रमुन । बिलमुखमुन देच्चि पेट्टि ता बोये;
बोयिन गपिवीरपुंगवुलेल्ल । ना यिंति बोगड्डुचु नट्टु पोयि पोयि
यायतोन्नतबलुलंदोक्क सरसि । बायक जलमुलु बलुविडि द्रावि

आ सकते । बताइए, आप (लोग) यहाँ किस विध आए हैं ?" (ऐसा) कहनेपर, सुनकर, हनुमान ने (उस) नारी से यों कहा:—"अपने पिता के आदेश से राम मुनिवृत्ति अपनाकर, दंडक वन में प्रेम से आकर रहे। उस राम की पत्नी वनजाक्षी को (चुरा) ले जानेवाले रावण का पीछा करते आ आकर, हम जनकजा का अन्वेषण करते, (जंगल के) जलशून्य (जल से रहित) होने के कारण, अधिक प्यास से अधिक थक गए। (और) एक बिल में घुसकर, घन-अंधकार के कारण क्षुब्ध हुए बिना, दैव यत्न (संयोग) से इस आश्रम में आए (और) बाहर निकल जाने के मार्ग को न जानकर घूम रहे हैं। धैर्य से, कई दिनों से, बिना किसी उपाय के विचलित हो रहे हैं।" ॥ १०६० ॥

(ऐसा) कहनेपर, "राम के कार्य से आए हुए अनघ (तथा) पुण्यात्मा हैं" (ऐसा) सोच, भक्ति से (कहा):—"अब इस समय आपको क्या चाहिए, माँगिए।" (ऐसा) कहनेपर (वानरों ने कहा):—"हमें इस बिलद्वार से निकाल दो। अतिशीघ्र सीता को ढूँढने जाएँगे।" (ऐसा) कहनेपर उस नारी ने (प्रसन्नता से) फूलकर (कहा):—"झट से आप लोग आँखें बंद कर लीजिए।" (ऐसा) उचित रूप से कहकर, उस स्त्री ने अपनी तपःशक्ति से, अति सरलता से, पलभर में उन्हें बिलमुख पर ला छोड़ दिया (और) स्वयं चली गयी। (उसके) चले जानेपर समस्त कपिवीर-पुंगव उस स्त्री की प्रशंसा करते हुए, उधर से चलते ही गए।

यंत नंदरु महेंद्राद्रिकि बोयि; । रंत नंगदुडिट्टुलनुचु शोकिंचे;

सीत गानमिकि वानरुलु पलविंचुट

"निनजुनि मिति दप्पे; निनवंश्यु देवि।वनजाक्षि वोडगन्नवारमु गामु; आज्ञाधुरंधरुडैन सुग्रीवु । 'डाज्ञदप्पिरिवीर' लंचुनु मनल १०७० वोडगन्नयप्पुड भूपति मेच्च । नडिमिकि रेंडुगा नर्रकिचु नुरक; कावुन मनमिक गपिराजु गान । वोवुट तगवुनु वुद्धियु गादु; वेलुवडि मनमिप्डु वेस वच्चिनट्टि । विलमुलोपल जोच्चि पेर्मिनुंडुदमु; अदि यष्टदिक्पालकाभेद्यमार्ग; । मदि पक्वफलभरिताराम मरय; वोंदुगा नचट गापुरमुन्न मनल । नेंदु नेव्वरिकैन नेरुग जोप्पडदु" अन गोंदरगचरुलापनिकिय्य । कोनि; रंत मारुति कोपिंचि पलिके; 'वेद्दवुद्धिवि नीवु ! पिनतंड्रि पनुप । गद्दरिवै रामुकार्यमै वच्चि कपुलतो गूडि या गंभीर विलमु । जपलत जोच्चि यच्चट नुंडिनपुडे भानुजुतो मळ्ळवडु चोप्पुगादे ! । तानुनु नीलुंडु दारुंडु नलुडु

वे आयत-उन्नत वल वाले वहाँ की एक सरसी में वरज़ोरी जल पीकर, तव सभी महेंद्राद्रि गए । वहाँ यों कहता हुआ अंगद दुखी हुआ ।

सीता के न दिखाई पड़ने पर वानरों का विलाप करना

'इनज की (दी हुई) नियत अवधि समाप्त हो गयी है । इनवंशवाले (राम) की देवी वनजाक्षी (सीता) को देख नहीं पाए । आज्ञा-धुरंधर सुग्रीव हमें देख (यह समझकर कि) 'ये आज्ञा का पालन नहीं कर सके' उसी समय, झट से (हमारे शरीर को) वीच में से दो टुकड़े करा देगा जिसकी भूपति (राजा राम) सराहना करेंगे । अतः अव हमारा कपिराजा (सुग्रीव) के दर्शन करने जाना न उचित है न वुद्धिमत्ता ही । अव झट से जिस विल से निकल आए, उसी में प्रवेशकर सुख से रहेंगे । वह (स्थान) अष्ट दिक्पालकों के लिए (भी) अभेद्य-मार्गवाला है, वह (स्थान्) विचार करनेपर पक्वफल-भरित आराम (उपवन) वाला है । समुचित ढंग से वहाँ निवास करते रहने पर हमें जानना किसी के वस की वात नही होगी ।" (ऐसा) कहनेपर कुछ अगचर (वानर) उस काम के लिए राजी हो गए । तव मारुति क्रुद्ध हो वोले:—"वड़ी वुद्धिवाले हो ! चाचा के भेजनेपर, साहसी हो, राम-कार्य के लिए आकर, कपियों के साथ उस गंभीर विल में, चपल वुद्धि से, प्रवेशकर, वहाँ रह जाने का अर्थ भानुज (सुग्रीव) के साथ विद्रोह करना ही है न ! मैं, नील, तार, नल

दीनि कॊन्विधि सम्मतिपमु; दक्कु। वानरुल् दम बंधुवर्गंबु वासि १०८०
निनु गॊल्चियुंडंग नेररु सुम्मु; । विनु; मदियुनुगाक, वृत्रारि तॊलिल
र्यमिलि दन वज्रहृति ना बिलंबु । निर्मिंचॆ; नट्टुवंटि निशितवज्रास्त्र
कोटि लक्ष्मणुनकु गॊलदि कग्गलमु; । माटमात्रमुन नी मर्कटाधमुल
निन्नु नी बलमुनु नीरुगा जेय । कुन्ने ? यी दुर्बुद्धुलॊक्कट विडिचि
'यवनिज बॊडगानमैति' मटंचु । रविजुनिकड कंदरमु पोयि म्रॊक्कि
विन्नवितमु; जगद्विख्याति नतडु । निन्नुनु मम्मु मन्निंचु मोमोट;
ना मीद मीतल्लिकनुरक्तुडगुट । नी मीद नलुगडु; नीवॆ पुत्रुडवु
कावुन गडु निन्नु गट्टु बट्टंबु" । ना विनि या वालिनंदनुंडनियॆ;
"बितृसमानुनि वालि बृथ्विपै गूल्चि । यतनि भार्य वरिंचि या मीद

दनकु

नुपकारियगु रामु नुद्योगमॆल्ल । जपलुडॆ मरचि लक्ष्मणुडाग्रहिंप १०९०
मरि कादॆ चनुदॆंचॆ मा पिनतंड्रि ? । यॆरुगवे यातनि हीनवर्तनमु !
नट्टि कामांधुनि नट्टि कृतघ्नु । नॆट्टु नम्मगवच्चु ? निदि यदि येल ?

इसके लिए किसी भी प्रकार सहमत नही होंगे। वानर अपने बंधु (संबंधी)-वर्ग से बिछुड़कर, ।। १०८० ।।

—तुम्हारी सेवा करते नहीं रहेंगे। सुनो, यही नहीं, वृत्रारि (इंद्र) ने पूर्व में, चाहकर, अपनी वज्रहति (वज्र के आघात) से उस बिल का निर्माण किया। उस प्रकार के निशित वज्र (रूपी) अस्त्र-समूह लक्ष्मण की अधिक शक्ति के अधीन हैं। बात ही बात में क्या वे इन मर्कट-अधमों को, तुम्हें (और) तुम्हारी सेना का नाश नहीं कर देंगे ?' इन दुर्बुद्धियों को एकदम छोड़कर, यह कहते कि "अवनिजा को देख नहीं पाए हैं," रविज के पास हम सब जाकर, प्रणामकर, निवेदन करेंगे। जगद्-विख्यात हो वह, तुम्हें और हमें क्षमा कर देगा। संकोचवश मुझपर (और) तुम्हारी मातापर अनुरक्त होने के कारण, तुमपर रुष्ट नहीं होगा। (सुग्रीव के) तुम्हीं पुत्र हो, अतः तुम्हारा राजतिलक कर देगा।" ऐसा कहनेपर सुनकर उस वालिनंदन ने कहा:— "पितृसमान वालि को पृथ्वीपर गिराकर (वधकर), उसकी पत्नी का वरणकर, उसके बाद अपना उपकार करनेवाले राम के समस्त कार्य को भूलकर लक्ष्मण के क्रुद्ध होनेपर, ।। १०९० ।।
—ही तो हमारा चाचा निकल पड़ा था न ? उसके हीन-व्यवहार को नहीं जानते हो ? वैसे कामांध, वैसे कृतघ्न का किस प्रकार विश्वास करें ? ये सारी बातें क्यों ?

कपुल प्रायोपवेशमु

श्रीरामु कार्यंव सेयक पोयि । या रविसूनुचे नट्टु चच्चुकंटे
नीयेंड जच्चुट यिदि लेस्स मनकु; । ब्रायोपवेशपरुलु गं" डनुचु
वारुनु दानुनु वरदर्भशयनु । लै राक वृथयौट कात्मजिंतिचि
तेवुलुनु मुदिमियु दीव्रवेदनयु । नवतयु लेनि प्राणंबुलु गान
लेचियु मरि पव्वळिंचियु दिशलु । सूचियु दमतम चुट्टाल सतुल
दलचियु "बापुरे ! दैवमा ! यिट्लु । व्रलपट्टि ममु वृथा चंपनिच्चोट
समकट्टिते !" यंचु सकल वानरुलु । गुमुरुलु गुमरुलै कूडि यौंडोरुलु
"नलिनाप्तकुलुडु कानलकुरानेल ? । कुलभाम नसुरचे गोल्पडनेल ?
११००
यौरसि दैत्युडु जटायुवु जंपनेल ? । धरणीशुडरुणनंदनु गननेल ?
धरणिज वार्त यतडु सेप्पनेल ? । तरणिवंश्युडु पंप दरिकि रानेल ?
सुग्रीवु कडकु रासुतुलु रानेल ? । सुग्रीवु डातनि सोम्मु गानेल ?
वलनोप्प वालि भूवरुडेयनेल ? । बलिमितोडुत गपिबलमु रानेल ?
यिनतनूजुडु मम्मु निटु पंपनेल ? । पनिवडि मनकु निप्पाटु रानेल ?

कपियों का प्रायोपवेश

—श्रीराम के कार्य को (संपन्न) किए बिना, उस रविसून (सुग्रीव) के हाथ वहाँ मरने की अपेक्षा, यहीं मर जाना हमारे लिए उचित है। चलो, प्रायोपवेश के लिए तत्पर हो जाओ।" (ऐसा) कहते हुए, वे और स्वयं वर-दर्भशायी हो, (अपने) आगमन के वृथा हो जानेपर मनमें चिंतित हो, रोग, जरा, तीव्र वेदना, दुर्बलता से रहित प्राण (वाले) होने के कारण, (दर्भशय्या से) उठकर, फिर लेटकर, दिशाओं में (चौतरफ़) देखकर, अपने-अपने संबंधियों, सतियों का स्मरणकर, सोचते कि "बाप रे ! हाय देव ! इस प्रकार हठकर, क्या हमें व्यर्थ ही यहाँ मार डालनेपर उतारू हो गए ?" (ऐसा) कहते समस्त वानर छोटे-छोटे झुंड बाँध, एकत्र हो एक दूसरे से कहते:— "नलिनाप्तकुल (राम) को जंगलों में क्यों आना चाहिए था ? कुलसती को राक्षस के हाथ खोया ही क्यों ? ॥ ११०० ॥
—संघर्षकर दैत्य ने जटायु को मारा ही क्यों ? धरणीश (राम) ने अरुणनंदन (सुग्रीव) को देखा ही क्यों ? उसने (सुग्रीव ने) धरणिजा (सीता) का समाचार दिया ही क्यों ? तरणिवंशवाला (राम) पंपा के पास आया ही क्यों ? राजकुमार सुग्रीव के पास आए ही क्यों ? सुग्रीव उसकी संपत्ति (दास) बना ही क्यों ? शोभा से भूवर (राम) ने वालि

यॊक्कॊट ब्राणंबुलुड़क पोनेल ? । यक्कटा ! भुवि गैक यडिगिन वरमु
मनुवंशयुतमुगा मनवंश मणचॆ" । ननि यनि शोकिंचि यलयुचुन्नंत

संपाति दर्शनमु

ना यॆड संपाति यनु पक्षिनाथु । डायतदेहुडत्यंतवृद्धुंडु
प्रायंबु रॆक्कलु बलिमियु लेमि । ना यद्रिगुहनुंडि यल्लन वॆडलि
मॆल्लन जनुदॆंचि मृतिगोरि धरणि । द्रेळ्ळिन वनचराधिपुल वीक्षिंचि
११११०

"दैवंबु कृपसेसॆ दनकु नाहार । मीवेळ" ननि चेर नेतेर गपुलु
चपलुलै मरण निश्चयबुद्धि वगव । नपुडांजनेयुनितो नंगदुंडनियॆ;
"निदि पक्षिगादु; मम्मिदर जंप । नदयुडै यमुडिट्टुलरुदॆंचिनाडु;
नाडा जटायुवु नरनाथु देवि । बोडिमि जॆरगॊनि पोवु रावणुनि
दाकि यातनि खड्गधारचे जच्चि । तेकुव बडयडे दिव्यपदंबु ?
रामु कार्यार्थमै प्राणमुल् मनमु । नी महापक्षिकि निच्चुट लॆस्स"

को मारा ही क्यों ? अधिक सामर्थ्य के साथ कपि सेना का (वहाँ) क्यों आना चाहिए ? इनतनूज ने हमें इधर भेजा ही क्यों ? जानबूझकर इस आफ़त का हमारे सिरपर आना क्यों ? अचानक हमारे प्राणों का यूँ ही जाना क्यों ? हाय ! (इस) भुविपर कैकेयी के माँगे वर ने मनुवंश (मानव) के साथ हमारे वंश का नाशकर दिया ।" (ऐसा) कह-कह विलाप करते-करते वे थक गए ।

संपाति दर्शन

उस समय संपाति नामक पक्षिनाथ जो विशाल देहवाला, अत्यंत वृद्ध था, वय, पंख, बल के न होनेपर, उस पर्वत की गुफ़ा से धीरे निकलकर, धीरे से आकर, मृत्यु चाहकर, पृथ्वी पर लेटे हुए वनचराधिपों को देखकर, ॥ ११११० ॥

—सोचा कि "इस समय मुझे भगवान ने आहार की कृपा की ।" (ऐसा) सोच नियराने पर कपियों के चपलता के साथ मरण की निश्चयबुद्धि से दुखी होनेपर, आंजनेय से अंगद ने कहा:—"यह पक्षी नहीं है । हम सब को मार डालने के लिए अदय (निर्दय) बन यमराज यों आया है । उस दिन जटायु ने नरनाथ (राम) की देवी को सुविधा से चुरा ले जानेवाले रावण का सामनाकर, उसकी खड्ग धारा से मरकर, स्थैर्य से दिव्य पद

यनुचोट ना माट लालिंचि यरुण । तनयुंडु शोकगद्गदकंठुडगुचु
ना कपिवीरुल नट्टु चेर वोयि । "यो कपुलार ! येंदुंडि वच्चितिरि?
या जटायुवु नाकु नर्मिलितम्मु; । डा जटायुवु नेनु नरुणपुत्रुलमु;
निशितोग्रनखुडु मानितगुहामुखुडु। दशरथसखुडु संततसुखुडात; ११२०
डतडेमिटिकि जच्चें ?" ननवुडु वालि । सुतुडंतयुनु जेप्प जोप्पड देलिसि
येंतयु शोकिंचि यिच्चलो जाल । वंत नोंदुचुनुन्न वनचरुलेत्ति
चेंतनुन्न पयोधि जेर्चिन नंदु । संतापमुन गृतस्नानुडै वच्चि
विपुलशोकमुतोड विहगवल्लभुडु । कपुलतो दन पूर्वकथ जेप्पदोडगें;
"नालोलगतुल जटायुवु नेनु । गैलासगिरि दोल्लि कवगूडियुंड
घनजवसत्त्वमुल् कडिमिमै मेरसि । मोनसि मेमिद्दरमुनु मच्चरिंचि
युडुवीथि किद्दरमुदयकालमुन । गडकतो नेगसि संगडि बोयि पोयि
परुवडि नट पट्टपगलिटि कोलदि । निरुवुरु गदिसिति मिनमंडलंवु;
नुग्रांशु किरणंवु लोंडोंट दाकि । युग्रमै वडि जटायुवु मंडुटयुनु
बदिलमै वानि ना पक्षंबुलंडु । बोदिविन नापक्षमुलु गालिपोये; ११३०

को प्राप्त नहीं किया था ? राम के कार्य के लिए हमें (अपने) प्राण इस पक्षी को देना समुचित ही है ।" ऐसा कहनेपर उस बात को सुनकर, अरुण-तनय (संपाति) ने शोक से गद्गद कंठवाला होते हुए, उन कपिवीरों के निकट जाकर, (कहा):—"हे कपियो ! आप किधर से आए हैं ? वह जटायु मेरे लिए लाड़ला भाई है । वह जटायु और मैं अरुण के पुत्र हैं । निशित-उग्र-नखवाला, मान्य गुफा जैसे मुखवाला, दशरथ का सखा, संततसुखी है वह । ॥ ११२० ॥

वह क्यों मरा ?" ऐसा कहनेपर वालिसुत ने सब कह सुनाया । (सब कुछ) अच्छी तरह जानकर, अधिक शोककर, मनमें अधिक व्याकुल होता रहा । (तब) वनचरों (वानरों) ने उसे उठाकर, निकट में स्थित पयोधि (समुद्र) के पास पहुँचाया । उसमें संताप के साथ, स्नानकर आकर, विपुल शोक से विहगवल्लभ कपियों से अपनी पूर्वकथा बताने लगा:—"चंचलगतियों से जटायु और मैं पूर्वकाल में कैलासगिरि पर साथ मिलकर रहते थे । अधिक जव (वेग) सत्त्व (और) पराक्रम से प्रकाशित होकर, सप्रयत्न हम दोनों ने स्पर्धाकर, उडुवीथि (आकाश) में दोनों (एक दिन) प्रातःकाल सधैर्य उड़कर, साथ-साथ जाकर, क्रम से वहाँ दिनदहाड़े दोनों इनमंडल तक चले गए । उग्रांशु (सूर्य) की किरणों के जहाँ-तहाँ लगकर, उग्र बननेपर, झट से जटायु के जलनेपर, सुरक्षा के लिए उसे अपने पंखों से घेर लेने के कारण मेरे पंख जल गए । ॥ ११३० ॥

नेरकलु गालिन नेपॅल्ल बॉलिसि । मरि वच्चि यीयाश्रमंबुन बडिति;
ना पक्षिनाथुडेंदरिगेनो येरुग; । नी पल्कु मीचेत निटविंटि नेडु;
वीनुल नी वार्त विनियुन्नवाड । हीनबलुंडनै येरकलु लेमि;
बक्षमुल् दॉल्लिलटि पगिदि नाकुन्न । दक्षित नितकु दन सहोदरुनि
पगदीर्चि श्रीरामभद्रु देवि । मगटिमि देनेर्तु; माटल केमि ?"
ना विनि भल्लूकनाथुडिट्लनियॆ । ना वायुजुडु नंगदादुलुप्पोंग;
"ना जटायुवु तम्मुडगु नीकु मिगुल । नी जगंबुललोन नेदुरेंदु गलदु ?
नीवु चूडनियट्टि नेलवुलु लेवु; । रावणुडिप्पुडु रघुरामुदेवि
नेंदु दाचिनवाडॊ येरिगिंपु" मनुडु । संदेह मॆडवाय संपाति वलिकॆ;

सीत जाडनु संपाति वानरुल कॆरिगिंचुट

"तन तनूभवुडु दुर्दमपराक्रमुडु । घनुडु सुपार्श्वुंडु कडुभक्तियुक्ति
रॆक्कलु गालि यी क्रियनुन्न नाकु । नक्करतो देच्चि याहारमोसगु;
नतडॊक्कनाडु नाकशनंबु देक । ततिवच्चुटयु 'नेल तडसिति' वनिन
'नो तंड्रि! नीकु ने नुपहारमरय । नाततगति महेंद्राद्रि समुद्र

पंखों के जलने पर, समस्त विकास को खोकर, आकर, इस आश्रम में गिर गया। नहीं जानता कि वह पक्षिनाथ (जटायु) कहाँ चला गया। यह बात आज तुमसे सुनी है। कानों से यह समाचार सुन, हीनबल (तथा) पक्षरहित होने के कारण (ऐसे ही) पड़ा हुआ हूँ। पूर्व के समान मेरे पंख होते तो दक्षता के साथ मेरे सहोदर के (वध का) बदला चुकाकर, श्री रामभद्र की देवी को सपौरुष ला सकता। (केवल) बातों से क्या (लाभ)?" (ऐसा) कहने पर सुनकर, भल्लूकनाथ ने उस वायुज (तथा) अंगद आदियों के फूलने पर (प्रसन्नता से) यों कहा:—"उस जटायु के तुम्हारे अनुज होने पर, इन लोकों में कौन तुम्हारा सामना कर सकता है ? ऐसे स्थान नहीं हैं, जिन्हें तुमने न देखा हो। यह बताओ कि रावण ने अब रघुराम की देवी को कहाँ छिपाकर रखा है ?" (ऐसा) कहने पर संदेह को दूर करते हुए संपाति बोला—

संपाति का वानरों को सीता का पता बताना

—"दुर्दम पराक्रमवाला (तथा) महान् सुपार्श्व नामक मेरा तनूभव (पुत्र) अति भक्तियुक्त होकर, पंख जलकर इस विधि पड़े हुए मुझे आवश्यकतानुसार आहार ला देता है। उसके एक दिन मुझे अशन (आहार) न लाकर, देर से आने पर (मैंने) पूछा "देर क्यों की ?" (उसने कहा)—"हे

तीरमार्गमुन नेंते वोंचियुंड । ना रविप्रभवंटि यंगन गोनुचु
गाटुकनडकोंड कैवडि नोकडु । धाटिमै जनुदेंचि तनकु प्रियंबु
जेप्पि ये देरुवीय जेच्चेर जनियें; । नप्पुडच्चटि मौनुलंदरु नन्नु
संतसिंचुचु 'नेडु सावुकु दप्पि; । तंतकुंडगु रावणासुरुंडतडु
चेरगोनि लंककु श्रीरामु देवि । नुरक कैकोनिपोवुचुन्नना' डनिरि
अंदुकै तडसिति ननि वाडुवलिके; । संदेहमेटिकि ? जनकतनूज
बलसि राक्षसवधूपरिवृत यगुचु।जलदमालिकलोनि चंद्रिक वोलें ११५०
नुन्नदि लंकलो; नोगि शतयोज । नोन्नति ना दृष्टि युर्वि जरिंचु;
देल्लंबु गगनंबु दृष्टियु नाकु । नेल्लपक्षुलकंटे नेक्कुडै परगु"
ननिपल्कि मरियु निट्लनियें संपाति; । "तनपक्षयुगळंबु दग्धमैनप्पु
डे वच्चि मूर्च्छिल्लि यिच्चोट द्रेक्कि । चावुकु दप्पि येंचग रानि डप्पि
गुट्टूर्पुलेंसगंग गोन्नेंड्लु गडपि । गट्टिगा नाभाग्यगति नोक्कनाडु
घननिष्ठ दर्पमिदु गाविंचु सकल । जनतापहरुनि साक्षान्निशाकरुनि
ना निशाकरु नोय्यन गांचि म्रोक्कि । भानुदीप्तुलचेत पक्षमुल् गालि
तनयुन्न चंदमंतयु विन्नविंप । मुनिशिखामणियुनु मुन्नुनन्नेरुगु

पिता ! मैं तुम्हारे लिए उपहार (नाश्ता) ढूंढने, आततगति से महेंद्राद्रि के समुद्र तीरमार्ग पर देर तक टोह में बैठा रहा। तब उस रविप्रभा समान अंगना (स्त्री) को लेकर, काजल के महापर्वत के समान (दीखनेवाला) एक व्यक्ति औद्धत्य से आकर, (मेरे) उससे प्रिय बातें कहकर, मार्ग देने पर शीघ्र चला गया।" तब वहाँ के सभी मौनी मुझे (देख) प्रसन्न होते हुए (बोले)—"आज (तुम) मृत्यु (मुख) से बच गये। वह अंतक (यम) (समान) रावण-असुर है। बंदी बनाकर (वह) लंका को श्रीराम की देवी को अप्रत्याशित रूप से ले जा रहा है। इसी से देरी हुई है।" ऐसा उसने कहा था, संदेह क्यों? जनकतनूजा बली राक्षस-वधुओं से परिवृत होकर, जलद मालिका में चंद्रिका के समान, ॥ ११५० ॥ —लंका में स्थित है। मेरी दृष्टि उर्वी (पृथ्वी) पर लगन से शतयोजन तक जाती है। स्पष्ट है कि समस्त पक्षियों की अपेक्षा मेरी गमन (शक्ति) (तथा) दृष्टि अधिक हो प्रवर्तित होती है।" ऐसा कह, संपाति ने आगे यों कहा—"अपने पक्ष युगल के दग्ध होने पर मैं आकर, मूर्च्छित हो यहाँ गिरकर, मृत्यु से बचकर, अत्यंत तृष्णा से, कराहते हुए, कुछ वर्ष बिताकर, एक दिन मेरे (सौ) भाग्यगति से यहाँ घननिष्ठा से तप करने वाले, सकल जन के ताप को हरने वाले, साक्षात् निशाकर (चंद्र) के समान (गुणवाले) निशाकर नामक मुनि को ऋजुता से देखकर, प्रणामकर,

गावुन नेंतयु गरुणिंचि मीदु । भाविंचि "या श्रियःपति परात्परुडु
विष्णुंडु दशरथविभुनकु बुट्टि । युष्णांशुकुलुडंत उग्राटवुलकु ११६०
जनुदेर नातनि सतिनि रावणुडु । गोंनिपोयि चेर नुंचुकोंनि युन्नयप्पु
डमृतान्न मायिंति कमृतांशुडिडिन । देमलक याहारतृष्णलु वासि
युंडु; नंतट रामुडोय्यन वच्चि । चंडांशजुनि गाचि शक्रजु द्रुंचि
यालोलगति सीत नरय वानरुल । नालुगुदेसल कुन्नति बंपगलडु;
आ रामु निजदूतलगु वारितोड । जेरि नी वीकथ सेप्पिननाडु
घनपक्षयुगळंबु गलुगु नी" कनुचु । मुनु निशाकरुडनु मुनि सेप्पे नाकु;
नतडानतिच्चिनयट्ल मीतोड । हितमति नी कथ येरिंगिप गंटि;
निवे पक्षमुलुवच्चे, निदे चूडु" डनुचु । दिविरि कुप्पिंचि यद्दिविकि लंघिंचि
"वडि लंकचेरुव वनमुलो सीत । बोडगंटि नदे सीत बोडगंटि नेनु;
अदे ! शतयोजनंबैन दूरमुन नदे ! लंकलोपलनदे ! पुण्यसाध्वि ११७०
चालु ब्रायोपवेशन मिक लेंडु; । पौलस्त्यपति लंक बरिकिंप बोंडु"

भानु दीप्तियों से पंखों के जलकर पड़े हुए अपनी विधि का निवेदन किया। (वह) मुनि शिखामणि (श्रेष्ठ) भी पूर्व में मुझे जानते थे। अतः अधिक करुणा से भावी का चिंतन कर (कहा)—'वह श्रियः (लक्ष्मी) पति, परात्पर और विष्णु दशरथविभु के यहाँ पैदा होगा, उष्णांशु (सूर्य) कुल वाला तब उग्र-अटवियों को ॥ ११६० ॥

—निकल पड़ेगा, उसकी सती को रावण ले जाकर बंदी बनाकर रखेगा, तब उस नारी को अमृतांश (चंद्र) अमृतान्न देंगे, (उस कारण) वह अचंचल हो, आहार-तृष्णाओं से रहित रहेगी। तब राम ऋजुता से आकर, चंडांशज (सुग्रीव) की रक्षाकर, शक्रज (बालि) का संहार करके, अलोल-गति सीता के अन्वेषण के लिए चारों दिशाओं में, औन्नत्य के साथ, वानरों को भेजेगा। उस राम के निजदूत हो उन (वानरों) के पास पहुँचकर, जिस दिन यह कथा सुनाओगे, उस दिन तुम्हें घन (महान्)-पक्षयुगल प्राप्त होगा।' ऐसा पूर्व में मुझे निशाकर नामक मुनि ने बताया। उसके आदेशानुसार आपसे हितमति से इस कथा को बता चुका। लो, ये पंख आ गए, यही देखिए।" कहते हुए, झट से सांस रोककर, आकाश की ओर छलांग भरकर (कहा) :—"झट से लंका के वन में सीता को देखा है। लो, मैंने सीता को देखा है। वही है शतयोजन की दूरी पर, वही है लंका ! वही लंका के भीतर पुण्यसाध्वी है ! ॥ ११७० ॥

अनिलंककै पोव नटु त्रोव सूपि । चनियें हेमाद्रिकि संपाति प्रीति;
नंत वानरवीरुलंदरु गूडि । संतोषचित्तुलै जवमोप्प बोयि
चंडवाताघात जात डिंडीर । गंडूपिताशवकाशवाचाल
वीची समीचीनविहरमाणाति । वैचित्र्यकरवाल वरवालमुलनु
घोरनक्रग्राहकोट्टुलुप्पोंगि । पोराडुचुन्न यंभोराशि डासि
यंदरु निश्चेष्टुलै कोंतदडवु । गुंदु डेंदमुलतो गूचुंडि यप्पु
"डी समुद्रमु दाट नेव्वडु चालु ! । नी सत्त्वमेव्वरिकिदुलो गलदु ?"
अनि यिट्लु चिंतिपनंत नंगदुडु । वनचरुल् तानु नव्वनधितीरमुन
ना रात्रि वेगिंचि यम्मरुनाडु । वीर वानरुल वेवेर नीक्षिंचि ११८०
"यी रीति मी यंतलेसि वानरुलु । पौरुषंबुनु नेलपालुगा जेसि
जलराशिलोपल शतयोजनमुल । कोलदि दाटुट किट्लु गुंदेदरेनि
नपकीर्ति यनुपेरि यगणितांबोधि । गपिवर्युलार ! ये करणि दाटेदरु ?
मी मी जवंबुलु मी दाटु कोलदु । लीमात्रमनि नाकु निदरु गूडि ११८४

—(अब) प्रायोपवेश बस है (उसे छोड़ दीजिए) । अब उठिए। पौलस्त्यपति की लंका को देखने जाइए ।" (ऐसा) कह लंका जाने के लिए उधर मार्ग बताकर, संपाति प्रीति से हेमाद्रि पर चला गया । तब सभी वानर वीर एकत्र हो, प्रसन्नचित्त हो, अतिवेग से जाकर, अंभोराशि (समुद्र) के पास पहुँचे । (वह समुद्र) चंड-वात (वायु)-आघात से जात (उत्पन्न) डिंडीर (फेन) रूपी गंडूष (कुल्ली) से समस्त दिशाओं के, अंतरिक्ष के भर जाने से मुखरित बना था। (उस समुद्र में) वीची (तरंग)-समीचीन विहार करनेवाले, अति विचित्रता से वर-वाल रूपी करवालों से घोर नक्र-ग्राह समूह औद्धत्य से जूझ रहे थे । (उसे देख) सभी वानर कुछ देर तक निश्चेष्ट हो रहे । तब व्याकुल बने हृदय से बैठकर इस प्रकार चिंतित होने लगे कि "इस समुद्र को पार करने की सामर्थ्य किसमें है ? यह सत्त्व इनमें किसमें है ?" तब अंगद वनचरों (वानरों) के साथ उस वनधि (समुद्र) के किनारे ॥ ११८० ॥

—वह रात बिताकर, दूसरे दिन वीर वानरों को अलग-अलग से देखकर (कहा) :—"हे कपिवरो ! इस प्रकार आप जैसे वानर पौरुष को मिट्टी में मिलाकर जलराशि में शतयोजनों को समर्थ हो पार करने के लिए व्याकुल होते रहेंगे तो अपकीर्ति नामक अगणित (अपार)-अंभोधि (समुद्र) को किस प्रकार पार करेंगे ? अपने अपने जव (वेग) (तथा) पार करने की अपनी-अपनी सामर्थ्य इतनी है, ऐसा सब मिलकर, ॥ ११८४ ॥

वानर वीरुलुतम तम सत्त्वमुल देल्पुट

घनुलार ! योक्कडोक्कडु चेप्पु" डनुचु । गिनिसिन नंदरु गृतमतुलगुचु
दमतम सत्त्वमुल् दलपोसि चूचि । यमितसत्त्वोन्नतुलंदरु गूडि
"नलिमीर बदियोजनंबुलु दाट । गलवाड ने" ननि गजुडर्थि बलिके ।
नेलसिन लावुमै निरुवदि दाट । सोलय ने" ननि गवाक्षुडु वेचि पलिके ।
"मोनसिन कडिमिमै मुप्पदि दाट । घनशक्तिगल" दनि गवयुंडु वलिके ।
"ना लावु पेम्पुन नलुवदि दाट । जालुदु ने" ननि शरभुंडु वलिके ११९०
"बनिगोनि जलधि नेबदि दाटुवाड" । ननि गंधमादनुंडलवुमै बलिके ।
"नसमितडिपक यरुवदि दाट । मसल कोपुदु" ननि मैंदुडु वलिके ।
"नेनुबदि दाटुदु नेपु दीपिप । दनियक ने" ननि तारुंडु वलिके ।
नोपिन तम लावु नोकडुनु दाप । केपुमै नंदरु निटु पल्कुचुंड
भल्लूकनाथुंडु बहुकालवृद्धु । डुल्लोक विक्रमुडोकमाट वलिके;
"जिन्ननाटि बलंबु सेप्पवच्चिननु । ग्रन्नन हास्यकारणमगु नेडु;
नैननु विनुडु; मुन्नमृतंबु कोरकु । दानवुल् सुरलु युद्धंबु गाविप
नमरुलकै सहायंबुगा वच्चि । यमृतंबु द्राविति नर्थि वारोसग;

वानर वीरों का अपना-अपना सत्त्व बताना

—हे महान् (जनो) ! एक-एक अलग-अलग से कहिए ।" ऐसा कहते क्रुद्ध होने पर, कृतमति (निश्चित बुद्धिवाले) होते हुए, अपने-अपने सत्त्व (के बारे में) विचारकर (उन) अमित सत्त्व मे उन्नत (वानरों ने) मिलकर यों कहा। "सरलता से मैं दस योजन पारकर सकता हूँ" । (ऐसा) गज ने इच्छा से कहा। "सुस्थिर बल से मैं बीस (योजन) पार कर नहीं सकूँगा" गवाक्ष ने चीखकर कहा। "सुनिशित साहस से तीस (योजन) पार करने की महाशक्ति (मुझमें) है" । (ऐसा) गवय बोला । "अपने बलके आधिक्यसे मैं चालीस (योजन) पार कर सकता हूँ" शरभ ने कहा ॥ ११९० ॥
—"सप्रयत्न (मैं) जलधि में पचास (योजन) पारकर सकता हूँ" ऐसा गंधमादन ने समर्थता से कहा । "उद्रेक के कम न होने पर, साठ (योजन) पारकर, सुस्ताए बिना रह सकूँगा" ऐसा मैंद ने कहा । "कम न होनेवाले साहस से सत्तर (योजन) पार करने में समर्थ हूँ" ऐसा द्विविद ने कहा । "औन्नत्य के दीप्त होने पर मैं अस्सी (योजन) बिना थके पारकर सकूँगा" ऐसा तार ने कहा । अपनी सामर्थ्य को छिपाए बिना प्रत्येक (वानर) ने औन्नत्य से सभी के इस प्रकार कहते रहने पर, भल्लूकनाथ ने जो बहुकाल-वृद्ध, उल्लोकविक्रम वाला था, एक बात कही—"बचपन के बल की बात

नुदधुतलेड्नु दाट नोपु; दस्ताद्रि। कुदयाद्रिपै नुंडि यौक जंग मिड्डु;
नैल्ललोकमुल नाकेंदुरेंदुलेदु। वल्लिदुडगु बलि बंधिचुनाडु १२००
इरवदियौक्क मारिल ब्रदक्षिणमु। दिरिगि त्रिविक्रमदेवुनि गौलुचु
तरि गालु विरिगें; ना दर्पंबु जवमु।परिबोयें; मरि जराभारंबु वौदिवें;
नरयंग गड्वृद्धनैतिनिप्पटिकि; । वरिकिप नेनु दौंवदि गानि चाल;
वौलुपोंद नी त्रोव बोयेंडुपनिकि। वलति गा" ननि जांबवंतुंडु वलिकें।
"दौंवदियेडु दोड्तो दाटुवाड। नंबुधि" ननि नीलुडत्तरि बलिकें।
ना मारुतात्मजुडात्मपौरुषमु। लेमियु बलुकक्कय्येंड नूरकुंडें।
"वालिन कडिमिमें बडि नूरु। दाट जालुदु; मगुडि राजालनु गानि"
यनि यंगदुड्डु वल्क ना जांबवंतु। "डनघ! माकंदरकधिपति वीवु;
वालितनूज! यी वाराशि दाट।जालुदु, मगुडि राजालुदु वीव; १२१०
युवराज वी कपियूथंबुलकुनु; । रवितनूजुनियट्ल राजवु गान
दगमम्मु बनिगोंन दगुगाक! यिट्लु।तगुनय्य! नीकित दैन्यमेमिटिकि?

कहूँ तो एकदम हास्य का कारण बनेगा। फिर भी सुनिए। पूर्व में अमृत के लिए दानव और सुरों के युद्ध करते समय, अमरों की सहायता के लिए आकर, उनके प्रेम से देने पर अमृत का पान किया था। सात समुद्रों को पार कर सकता हूँ। अस्ताचल से उदयाचल तक एक छलांग भर सकता हूँ। समस्त लोकों में मेरा कोई सानी नहीं है। वलिष्ठ बलि को बाँधने के समय, ॥ १२०० ॥

—पृथ्वी पर इक्कीस बार प्रदक्षिणा कर, त्रिविक्रमदेव की सेवा करते समय टाँग टूट गयी थी। मेरा दर्प (तथा) जव नष्ट हो गए। इसके अतिरिक्त जराभार भी प्राप्त हुआ। सोचने पर अब तक अधिक वृद्ध हो गया। देखने पर मैं नब्बे (योजन) के लिए तो योग्य हूँ। शोभित इस मार्ग से जाने के काम के लिए समर्थ व्यक्ति नहीं हूँ।" (ऐसा) कह जांबवान ने कहा। उस समय नील ने कहा—"साथ-साथ सतानवे (योजन) अंबुधि को तो पार कर सकता हूँ।" मारुतात्मज आत्मपौरुष के अभाव में उस अवसर पर चुप्पी साधे रहा। "साहस से झट सौ (योजन) पार तो कर सकूँगा, वापिस नहीं आ सकूँगा" ऐसा अंगद ने कहा। जांबवान ने कहा—"हे अनघ! तुम हम सबके अधिपति हो। हे वालितनूज! इस वाराशि (समुद्र) को पारकर सकोगे, लौटकर भी आ सकोगे। ॥ १२१० ॥

—हे युवराज! इन कपियूथों (समूहों) के लिए रवितनूज के समान तुम राजा हो। उचित रूप से (तुम्हें) हमसे काम लेना चाहिये। ऐसा

रामकार्यपरुंडु रविजुनिमंत्रि । यी मर्कटावलि कॆल्ल ब्राणंबु
तक्कक पवमानतनयुंडु गलुग । नक्कटा ! नी कसाध्यमुलॆंदु गलवु ?
वल" दनि वारिंचि वायुनंदनुनि।बिलिचि यातनितोड ब्रियमुन बलिकॆ;

समुद्रलंघनकु जांबवंतुडु हनुमंतुनि ब्रोत्साहिंचुट

"मारुति नी ! पनि मा मीद बॆट्टि । यूरकयुन्नाड वुचितमे नीकु ?
ललितलावण्य विलास संपदल । वलनॊप्पु नप्सरोवनितलयंदु
बुंजिकस्थलयन बॊलुचु मी तल्लि । यंजन यट्टु दॊल्लि यग्निशापमुन
वानर वनितयै वसुध गेसरिकि । मानिनियैयुंडि मरि यॊक्कनाडु
वनगिरिस्थलुलंदु वर्तिंचुचुंड । ननिलुडायंगन यलसयानंबु १२२०
दॊडलबॆडंगुनु दोरंपुबिरुदु । नुडुराजबिंबंबु नॊरयु नॆम्मोमु
गलदु लेदनु कौनु गब्बिगुब्बलुनु । दल चुट्टिवच्चु बित्तरिकन्नुगवयु
गनुगॊनि मोहंबु गडलुकॊनंग । मनसिजशरभिन्नमानसुंडगुचु
जेल बायगजेसि चॆलिमिमै डासि । यालिंगनमु सेय नंजन यलिगि,
"नादु पातिव्रत्यनैपुणि जॆरुप । ने दुष्टमति यॊको यिट्टु समकट्टॆ ?"

(करना तुम्हारे लिए) उचित है ? तुम्हें इतना दैन्य क्यों ? रामकार्यरत, रविज का मन्त्री, इस मर्कट-समूह के लिए प्राण समान इस पवमानतनय के होते हुए हाय ! तुम्हारे लिए असाध्य (कार्य) ही क्या है ? व्याकुल मत बनो" ऐसा मना कर वायुनन्दन को बुलाकर, उससे प्रिय वचन बोला ।

समुद्र लांघने के लिए जांबवान का हनुमान को प्रोत्साहित करना

"हे मारुती ! अपना काम हम पर रख चुप बैठे हो । यह क्या तुम्हें उचित है ? ललितलावण्यविलास की सम्पदाओं से शोभित अप्सरा-स्त्रियों से 'पुंजिकस्थल' के समान शोभित तुम्हारी माता अंजना पूर्व में अग्नि के शाप से वसुधा पर वानरवनिता हो, केसरी की पत्नी होकर रही । (ऐसा होकर) एक दिन (उसके) वन-गिरि-स्थानों में विचरण करते समय, अनिल उस अंगना के अलस (मंद)-गमन, ।। १२२० ।।

—जंघाओं की सुन्दरता, विलासपूर्ण नितंब, उडुराजबिंब (चंद्र) की समता करनेवाला सुन्दर मुख, अस्ति-नास्ति का संदेह पैदा करनेवाली कटि (क्षीण कटि), पीन स्तन, विशाल तथा चंचल नेत्रों को देख मोह के व्याप्त होने पर, मनसिज-शर से छिन्न मनवाला होता हुआ, (अंजना के) वस्त्रों को दूरकर, प्रेम से नियराकर, आलिंगन किया । (तब) अंजना ने रुष्ट होकर, (कहा)—"कौन दुष्टमति इस प्रकार मेरे पातिव्रत्य-नैपुणी को

ना विनि "यलुगको नाति ! ने वायु । देवुंड; नीदु पातिव्रत्यमुनकु
भंगंबु गाकुंड बरिकिंचि हृदय । संगंबु सलिपिति; जलजाक्षि ! दीन
बल वेग विक्रम पौरुष धैर्य । मुलु गल तनयुडिम्मुल नीकु वुट्टु"
ननि पलिक चनुटयु ना वधूमणियु । मनमुन नलरुचु मरि वायुदेवु
प्रविमलकृप निन्नु बडसे गावुननु । भुविनि वायुवुतोडि भूरिसत्त्वुडनु;
१२३०

वेगविक्रमकळा विस्फूर्तुलंदु । ना गरुडुनिकंटे नधिकुड वीवु;
वरलु पंकजगर्भु वरमुन जेसि । मरि नीकु नायुधमरणंबु लेदु;
नी समानुलु लेरु निखिललोकमुल; । नी सत्वमेरुगुदु निजमुगा नेनु;
जडनिधि लंघिंचि जनकज गांचि । कडकमै निट्टु रामकार्यंबु सेसि
कपुल प्राणमुलु राघवुल प्राणमुलु । कपिनाथु प्राणमुल् गरुणतो गाचि
तडयक यो जगत्प्राणनंदनुड ! । पडयु मुत्तमलोकपदमुलु नीवु"
अनवुडु हनुमंतु "डवुगाक ! मीरु । पनिचिन जेयुदु बतिकार्यमोनर;
नगचरुल् सूडुडु ना शक्तिनेडु । जगदेकहितबुद्धि जलधि लंघिंचि
परतेंचि सुरलड्डुपडिन साधितु; । नेरसि लोकमुलेल्ल नीरु गावितु;

बिगाड़ने पर उतारू हुआ ?" यह सुन, (वायुदेव ने कहा)—"हे नारी ! क्रुद्ध मत होना । मैं वायुदेव हूँ । यह देखकर कि तुम्हारा पातिव्रत्य खंडित न हो मैंने हृदयसंगम किया है । हे जलजाक्षी ! इससे बल, वेग, विक्रम, पौरुष, धैर्य से सम्पन्न पुत्र प्रेम से उत्पन्न होगा ।" ऐसा कह (वायुदेव के) जाने पर वह वधूमणि भी मन में प्रसन्न होते हुए, फिर वायुदेव की प्रविमल कृपा से तुम्हें प्राप्त किया है । अतः भुवि (लोक) में तुम वायु के समान भूरिसत्त्ववाले हो ।। १२३० ।।

—वेग-विक्रम-कला की विस्फूर्तियों में तुम गरुड़ से भी अधिक हो। शोभायमान पंकजगर्भ (ब्रह्मा) के वर से फिर तुम्हें आयुध-मरण नहीं है । निखिल लोकों में तुम्हारे समान कोई नहीं है । मैं वास्तव में तुम्हारे सत्त्व को जानता हूँ । जड़निधि (समुद्र) को लांघकर, जनकजा को देखकर, साहस से यहाँ रामकार्य सम्पन्न कर कपियों के प्राण, राघवों के प्राण (तथा) कपिनाथ के प्राणों की, करुणा से, रक्षाकर, (इस कार्य में) विलंब न कर हे जगत्प्राणनंदन ! तुम उत्तम लोकपदों को प्राप्त करो ।" ऐसा कहने पर हनुमान ने कहा—"वैसा ही हो । आपके आदेशानुसार पति (राम के) कार्य को सम्पन्न करूँगा । हे अगचरो ! आज मेरी शक्ति को देखो । जगदेकहितबुद्धि से जलधि को लांघकर, यदि दौड़ आकर देवता भी बाधाएँ उपस्थित करें तो (कार्य को) सिद्ध

नक्कजंबगु शक्ति नट्ट लंक सौच्चु । स्रुक्कक वेदकि भूसुत जूचिवत्तु;
१२४०
जूड जौप्पडकुन्न सुरवैरितोड । गूड लंकापुरि गौनिवत्तु वेग;
गाकुन्न जलधुलु गलतु नौंडेनि । वीकतो नमराद्रि विरुतु नौंडेनि
बुडमि तुत्तुमुरुगा बौडुतुनौंडेनि । जेवमीरग लंक जेरियच्चोट
दुष्टासुरुल नेल्ल द्रुंतु नौंडेनि । सृष्टि जीकटि सेसि चेरुतु नौंडेनि
गानि यूरक रानु गडगि मीयौद्द । के" ननि पूनि महेंद्राद्रि येक्कि,

हनुमंतुडु समुद्रमुनु दाटुट

युदधुलतो गूड नौंगि सृष्टि म्रिंग । गदिसिन लयकालकालुडो यनग
वेस द्रिविक्रमुडैन विष्णुनि रीति । नसमानदेहुडै यंदंद पेरिगि,
यंगदादुलचेत ननुमति वडसि । यंगमेंतयु बौंग बौंग नंतरंगमुन
द्रन तंड्रि बवमानु दलचि श्रीराम । जननाथु पदपंकजमुलात्मनिलिपि
१२५०

करूँगा, रुष्ट होकर समस्त जगत को नष्ट कर दूँगा। आश्चर्यप्रद शक्ति से उधर लंका में प्रवेश करूँगा, दुर्बल न बन अन्वेषण कर भूसुता को देखकर आऊँगा। ॥ १२४० ॥

—देखने में दुर्निवार बने सुर-वैरी (रावण) के साथ लंकापुरी को ही झट से लाऊँगा। ऐसा न हो तो जलधियों को व्याकुल बनाऊँगा, नहीं तो बेपरवाह हो अमराद्रि के टुकड़े कर दूँगा, नहीं तो पृथ्वी को चकनाचूर कर दूँगा, नहीं तो सप्रयत्न मृत्यु का ही संहार कर दूँगा, नहीं तो समस्त द्वीपों को शोध डालूँगा, नहीं तो अधिक शक्ति से लंका पहुँचकर वहाँ के समस्त दुष्ट असुरों का वध कर दूँगा; नहीं तो सृष्टि को अंधकारमय बनाकर नष्ट कर दूँगा। ऐसा कुछ नहीं करूँगा तो खाली हाथ मैं आपके पास लौटकर नहीं आऊँगा।" (ऐसा) कह निश्चयकर महेंद्रादि पर चढ़कर,

हनुमान का समुद्र पार करना

—मानो उदधियों के साथ, लगकर सृष्टि को निगलने पास आया हुआ प्रलयकाल का कालपुरुष हो, (हनुमान) झट त्रिविक्रम बने विष्णु की तरह, असमान देहवाला हो। जहाँ-तहाँ बढ़कर, अंगद आदियों से अनुमति प्राप्तकर, शरीर के अधिक फूलने पर, अंतरंग में अपने पिता पवमान का स्मरणकर, राजा श्रीराम के पदपंकजों को आत्मा में स्थिर कर, ॥ १२५०॥

—चरणों को स्थिरता से अद्रि पर आरूढ़कर, गरदन उठाकर, थोड़ा-सा मही

यड्गुलु दिरमुगा नद्रिपै मोपि । मॅडयेत्ति योंकयित मॅयि ग्रुंक निक्कि
बोमलेत्ति कलय नंभोराशि जूचि । यमरारिपुरि मीदनट दृष्टि निलिपि
वड्लग नटमीद वाल मल्लार्चि । नेरि कर्णमुलु रेंडु निक्किचि मिंचि
यट नद्रिशिलमीद हस्तंबुलूदि । पटुजवंबुन दाटॆ ववमानसुतुडु
अल्ल सुधाहरणार्थमै वैनतेयु । डिलनुंडि मुनु दिविकॆगयुचंदमुन;
ना रभसंबुन नद्रिश्रृंगमुलु । भूरेणुवुलकंटॆ बोंडिवोंडियय्यॆ
ना रावणुंडु मुन्नार्जिंचिनट्टि । भूरिकीर्तुल पॆम्पु पोंडियैन यट्टु;
ला युरवडि म्राकुलतनितो नॆगसि । तोयधिलो जोच्चि तुनियलै पडियॆ
भाविसेतुवुनकै पवननंदनुडु । दा वच्चि शंकुवुल् स्थापिचॆननग;
वॆस बॆचि यप्पटि विषमवायुवुल । दॆसलकु जॆड पारॆ दिविरि मेघमुलु
१२६०

वक्रिचॆ लंकपै वायुजुंडनुचु । शक्रादुलकु जॆप्प जनिनचंदमुन;
नावडि नब्धि नीरंतयु बासि । यावलि पाताळमट्टु गानवच्चॆ
'जनकज दॆच्चि ना जलमुलो दाप' । डनि मारुतिकि जूपॆ नंबोधियनग;
दन पति हितकार्य धैर्यशौर्यमुलु । दन वेगलाघवोदात्त सत्त्वमुलु

दब जाए, ऐसा ऊपर उठ कर, भौंहें उठाकर अंभोराशि को खूब निहारकर, अमरारि (राक्षस) की पुरी पर दृष्टि स्थिर बनाकर, उसके बाद शोभा से पूँछ को हिलाकर, बड़े कानों को ऐंठकर, शोभित हो, तब अद्रिशिला पर हाथ दबाए रख, पूर्व में सुधा-हरण के लिए वैनतेय (गरुड़) पृथ्वी पर से आकाश को उड़ा था, उस तरह पवमानपुत्र पटु जव के साथ लांघ उठा। उस रभस (शीघ्रता) के कारण पर्वत के श्रृंग भूरेणुओं की अपेक्षा (अधिक) चूर-चूर हुए मानों उस रावण के पूर्व में अर्जित भूरिकीर्तियों की सम्पत्ति चूर हो गयी हो। उस वेग के कारण बड़े पेड़ उसके साथ उड़कर तोयधि (समुद्र) में गिरकर टुकड़े-टुकड़े हो गये मानों भावी सेतु के लिए पवननंदन ने स्वयं आकर शंखुओं की स्थापना[1] (शिलान्यास) की हो। झट एकत्र होकर (उठे) उस समय के विषम वायुओं के कारण मेघ हारकर दिशाओं में फैल गये ॥ १२६० ॥

—मानों शक्र (इंद्र) आदियों को यह कहने गए हों कि वायुज लंका के प्रति वक्र हो गया है। उस वेग के कारण अब्धि (समुद्र) समस्त जल से रहित हो, उस ओर का पाताल दिखाई पड़ा मानों अंबोधि (समुद्र) मारुति को यह बता रहा हो कि जनकजा को लाकर मेरे जल के भीतर

---

१. तेलुगु में 'शिलान्यास' को 'शंखुस्थापना' कहते है।

जूचि. यिद्रादुलु सौरिदिगीर्तिंप । नी चंदमुन दाटि येगुचन्नंत
'नी तित्यकृति जगद्धितमुगा गोरि । पूनि यैंतयु दव्वु पोवुचुन्नाडु;
इतनिकि विश्रांति यिचट गाविंप । नितनि बुच्चेद' ननि यिच्चलो दलचि
यप्पुडु मैनाकु नंबुधि पिलिचि । 'यिप्पुडु हनुमंतुडेतेंचे निटकु;
नीप्पार नातिथ्य मौसगु नी' वनुचु । जेप्पि 'पो' म्मनुटयु शीघ्रंबे येगसि
१२६९

हनुमंतुनकु मैनाकुनि आतिथ्यमु

युरुतर निजपक्षयुगळ संजात । मरुदुच्चलद्वार्थिमध्यंबु वेडलि
श्रीकरकांचन शृंगसंकलित । नाकमै यौप्पु मैनाकपर्वतमु
अेदुट दोचिन जूचि 'यिदि दैत्यमाय; । कदिसि ना पनिकि विघ्नमु
सेयगोरे;
दानिकि नेमि ? ना दर्पंबु पेर्मि । दीनि द्रुंचेद गाक तेगि'' यंचु नडरि
वरवज्रकठिनमौ वक्षंबु चेत । नुरुवडि हनुमंतुडुदरि ताकुटयु
गरुवलि सुडिगोन्न काराकु वोलें । दिरमेदि धृति दूलि दिर्दिर दिरिगि
मनुजुडै पौडसूपि मैनाक शिखरि । यनिलनंदनु जूचि यर्थितो बलिकें;
'ननिलज ! नेनु नीकपकारिगानु । वनराशि पनुपुन वच्चिति गानु;

नहीं छिपा रखा है।' अपने पति (राजा) के हितकार्य के लिए धैर्य-शौर्य, अपने वेग-लाघव (और) उदात्त सत्त्व (आदि) को देख इंद्र आदियों के क्रम से प्रशंसा करते रहने पर, इस प्रकार समुद्र को पार करते जाते (देख) मन में यह सोच कि "यह नित्य कृती (पुण्यात्मा) जगत्‌हित की इच्छाकर, निश्चयकर बहुत दूर जा रहा है। इसे विश्राम देने के लिए इसे भेजूँगा" तब अंबुधि ने मैनाक को बुलाकर, यह कह कि "अब हनुमान यहाँ आया है, शोभायुक्त रूप से उसे तुम आतिथ्य प्रदान करो, जाओ" भेजा। (वह भी) शीघ्र उड़कर ॥ १२६९ ॥

हनुमान को मैनाक का आतिथ्य प्रदान करना

—उरुतर (महत्तर) निजपक्ष युगल से संजात (उत्पन्न) मरुत् (पवन) से उच्छलत् (उछलते हुए) वारिधि के मध्य से निकलकर श्रीकर कांचन-शृंग-संकलित नाक (स्वर्ग) हो शोभित मैनाक पर्वत के सामने दीखने पर, (उसे) देख, यह सोच कि "यह दैत्यमाया है। इसने जान-बूझकर मेरे कार्य में विघ्न उपस्थित करना चाहा। हुआ तो क्या ? अपने दर्प की अधिकता इसका दमनकर दूँगा।" उद्धत होकर, वर-वज्र (समान) कठिन वक्ष से झट से भीत करते हुए हनुमान के लगने पर,

यम्महात्मुडु नीकु नातिथ्यमोसगु । पोम्मन्न वच्चिति; बूर्वकालमुन
बर्वतंबुलकेल्ल वक्षमुल् गलिगि । गर्विंचि मेलग नाखंडलुंडलिगि
पविधार नोक्कट बक्षमुल् दुनुम । ववनुडु मी तंड्रि परिकिंचि नन्नु १२८०
नवलील नी लवणाबुंधिलोन । गवयिंचि पक्षमुल् गाचि रक्षिंचे;
गान मी वाडनु गानि यन्युंड । गानु; शीताचलाग्रणिकुमारुंड;
नेनु मैनाकुंड; नीवु ना यंदु । बूनिन फलमूलमुल दृप्ति बोंदि
बडलिकलुनु बासि पवनकुमार ! । कडुलावु मीर लंकापुरंबुनकु
नरुगुमु नी'वन्न नम्महावलुडु । "वेरवुगादिप्पुडु विश्रमिंचुटकु
जलधिनडुम नेच्चट निल्व ननुचु । जेलगि मुन्नु प्रतिज्ञ सेसिनवाड
निट्टु रामुकार्यमै येगुचुन्नाड; । नटुगान निल्वरादद्रीश ! नाकु"
ननि पाणितलमुन नय्यद्रिदडवि । 'यनघात्म ! नी पूजलन्नियु वच्चे'
ननि पल्कि पोवुचो ननिलनंदनुनि । घनशक्ति कमरुलु गडु जोद्यमंदि
नानाविधमुल नानंदिंचि; रंत। मैनाकगिरि निपुमै नाकविभुडु १२९०

पवन के भँवर में फंसे पके पत्ते के समान स्थिरता (और) धैर्य को खोकर, गोल घूमकर, मनुष्य हो दिखाई पड़कर, मैनाक पर्वत ने अनिलनंदन को देख प्रेम से कहा:—"हे अनिलज ! मैं तुम्हारा अपकार करनेवाला नहीं हूं। बस, वनराशि (समुद्र) के भेजने पर आया हूँ। उस महात्मा के कहने पर कि तुम्हें आतिथ्य दूं, आया हूँ। पूर्वकाल में समस्त पर्वतों के पंख होकर, उनके गर्वित हो विचरण करने पर, आखंडल (इंद्र) रुष्ट होकर, पवि (वज्र)-धारा से एक वार पंख काट डाले। (तब) आपके पिता पवन ने मुझे निहारकर ॥ १२८० ॥

—सरलता से इस लवणांवुधि में डुबोकर (मेरे) पंख बचाकर, रक्षा की। अतः मैं आप ही का हूँ, अन्य नहीं हूं। मैं सीताचलाग्रणी (हिमालय) का पुत्र हूँ। मैं मैनाक हूँ। तुम मुझ पर उत्पन्न फल-फूलों से तृप्त होकर, थकावट को दूरकर हे पवनकुमार ! अधिक सामर्थ्य की अधिकता से तुम लंकापुर को जाओ।" (ऐसा) कहने पर वह महावली (बोला):—"विश्राम करने का अव अवसर नहीं है। प्रथमतः मैंने प्रतिज्ञा की कि जलधि के मध्य कहीं रुकूँगा नहीं। इधर राम के कार्य के लिए जा रहा हूँ। अतः हे अद्रीश ! मुझे यहाँ नहीं रुकना चाहिए।" (ऐसा) कह हथेली से उस अद्रि (पर्वत) को स्पर्शकर कहा:—"हे अनघात्म ! तुम्हारी समस्त पूजाएँ मुझे प्राप्त हैं।" (ऐसा) कह जाते समय अनिलनंदन की घनशक्ति से अमर अत्याश्चर्यचकित हो अनेक प्रकार से आनन्दित हुए। तब मैनाकगिरि को शोभा से, नाकविभु (इंद्र) ॥ १२९० ॥

गनुगोनि 'श्रीरामुकार्यमै येगु । हनुमंतुनकु ब्रियंबाचरिंचितिवि;
यट्गान नीकु ने नभयमिच्चितिनि, । इट सुखस्थिति नुंडु मी वंचु बलिकें',
नप्पुडु गंधर्वुलमरुलु मुनुलु । दप्पक यंजनातनयु जूचुचुनु
'इतनि लावेट्टिदो येरुगुद' मनुचु । जतुरुलै सुरस ना जनु देवदूत
बनिचिन राक्षसभावंबु दालिच । यनिलसूनुनकु दा नड्डमै निलिच्चि
'यी वार्धिलोनुंडि येगु निन् गंटि; । दैवयत्नंबुन दानिक मंटि;
ननिलज ! याकोंटि; नटनिट जनक । मुनुकोनि ना वक्त्रमुन वच्चिचोरुमु
नी'वनवुडु 'रामनृपु कार्यमुनकु । बोवुचुन्नाडनु बोलति ! रारादु;
धरणीशु कार्यमंतयु नेरवेर्चि । तिरिगि येतेंचुचो दीर्तु नीकोर्कि;
पोयि वच्चेद निंति ! बोंकुगा' दनिन । ना यिंति कोपिंचि यरुक्रम्मि-
निलिच्चि १३००
चननीनु; निनुबट्टि चंपुदु गडिमि" । ननि नोरु देरचिन ननिलनंदनुडु
तन मेनु वेस बेंचें दशयोजनंबु; । लिनुमडिगा बेंचें निंति याननमु;
मुप्पदि योजनंबुलु वेंचें नात; । डप्पुडु नलुवदि यद्वियुनु बेंचे;
नोंडोरुलिट्टु शतयोजनाधिकत । दंडिमै बेंचिरि तनुवु वक्त्रमुलु :

—देखकर बोले:—"श्रीराम के कार्य के लिए जानेवाले हनुमान को प्रिय किया है। अतः मैंने तुमको अभय दिया है। यहाँ तुम सुख से रहो।" तब गंधर्व, अमर, मुनि अवश्य अंजनातनय को देखते हुए यह सोच कि "इसकी सामर्थ्य कैसी है? यह जानेंगे" चतुर हो, सुरसा नामक देवदूती को भेजा। (वह) राक्षसभाव को धारणकर, अनिलसून के (मार्ग में) बाधा बन खड़ी हुई। (कहा):—"इस वारिधि में से जानेवाले तुम्हें देखा है। दैवयत्न से अब मैं जीवित रह पाऊँगी। हे अनिलज! भूखी हूँ। इधर-उधर न जाकर तुम प्रथमतः मेरे गले में आकर प्रवेश करो।" ऐसा कहने पर "हे नारी! राजाराम के कार्य के लिए जा रहा हूँ। नहीं आना चाहिए। धरणीश के समस्त कार्य को सम्पन्न कर लौट आते समय तुम्हारी इच्छा की पूर्ति करूँगा। हे नारी! जाकर आऊँगा। इसे झूठ मत समझो।" (ऐसा) कहने पर वह नारी क्रुद्ध होकर, खूब व्याप्त होकर खड़ी हो गई ॥ १३०० ॥

—(और कहा):—"(तुम्हें) जाने नहीं दूँगी। साहस से तुम्हें पकड़ मार डालूँगी।" (ऐसा) कह मुँह खोलने पर अनिलनन्दन ने झट से अपने शरीर को दस योजन तक बढ़ा दिया। (उस) नारी ने अपने मुख को दुगुना (बड़ा) बना दिया। दोनों ने इस प्रकार परस्पर तनु और वक्त्र को खूब शतयोजनों से अधिक बढ़ा लिया। तब वह हनुमान

नंत ना हनुमंतुडसमान बुद्धि । मंतुडै यंगुष्ठमात्रगात्रमुन
नतिसूक्ष्मुडै वच्चि या यिंतिवदन । मतिरयंबुन जोच्चि यवलील वेडले
मुडिगोन्न संसारमोहबंधमुलु । विडदन्नि सुज्ञानि वेडलिनमाड्कि;
वेडलि 'नी कोर्कि गाविंचिति निंक । गडलि दाटेद' नन्न गपिकुलोत्तमुनि
बुद्धि कोंतयु मेच्चि पोगडुचु 'गार्य । सिद्धि नीकय्येडु शीघ्रंबे' यनुचु
नट दिव्यवनितयै या यिंति प्रीति।वटुसत्त्वुनिलजु वरग दीविंचे१३१०
नतडंत प्रणमिल्लि यटु वोवुचुंड । नतिरयंबुन वच्चि यातनि गदिसि
योलसि देहच्छाय लोडिसि रा दिगिचि।चेलगि जीवुल म्रिगु सिंहिक गडगि
पदियोजनंबुल पउपुनु मूडु । पदुल योजनमुलै परगेडु निडुपु
नगुचुन्न तन नीड नलमि चेपट्टि । तिगिचि म्रिग गडंग धीरुडै यतडु
प्रतिकूलवातूलपवनसंघात । हतुल नोडयु वोले नटु पोक निलिचि
येडद 'छायाग्राहि यिद' यनि तेलिसि। मडपक यटमीद मकरि ववत्रंबु
चोच्चि वत्तु नटंचु सूचिंचुनट्टु । लच्चेरुवंदि यिंद्रादुलु सूड
गडुसूक्ष्मरूपुड कलगक दानि । कडुपुलोपल जोच्चि कडिमिमै व्रच्चि

असमान बुद्धिमान होते हुए अंगुष्ठमात्र गात्र (शरीर) से अतिसूक्ष्म हो आकर, उस नारी के मुख में अतिशीघ्रता से घुसकर सरलता से (वाहर) निकल आये मानों उलझे हुए संसार-मोह-वन्धनों से छूटकर सुज्ञानी निकल पड़ता हो। निकलकर (वोले)—"तुम्हारी इच्छा की पूर्ति की। अव समुद्र को पार करूँगा।" (ऐसा) कहनेवाले कपिकुलोत्तम की बुद्धि की अधिक प्रशंसाकर, सराहते हुए, यह कहते "तुम्हें शीघ्र ही कार्यसिद्धि होगी" दिव्यवनिता हो (राक्षस रूप छोड़), उस नारी ने प्रीति से पटु-सत्त्ववाले अनिलज को शोभा से आसीसा। ॥ १३१० ॥
—वह तव प्रणामकर उधर जा रहा था तो अतिशीघ्रता से आकर, उसके निकट आकर, देह की छायाओं का स्पर्शकर, आकर्षितकर, नीचे खींच, उल्लसित हो, जीवों को निगलनेवाली सिंहिका के सप्रयत्न दस योजन चौड़ाई, तीस योजन की लम्बाई वाली अपनी छाया को आवृत हो, पकड़कर, निगलने लगने पर, धैर्यशाली होकर वह प्रतिकूल-वातूल-पवन संघात-हतियों के कारण नौका के समान आगे न जाकर, मन से यह जानकर कि "यह छायाग्राही है", न दवकर, प्रथमतः मकरी के वक्त्र में प्रवेश कर आऊँगा, यह सूचित करते हुए, इंद्र आदियों के चकित हो देखते रहने पर, अतिसूक्ष्म रूप से, व्याकुल हुए विना उसके पेट में प्रवेशकर, (उसे) चीरकर, उस दुष्ट राक्षस को समुद्र में डाल दिया। अनन्तर सभी देवताओं ने आनन्दित हो, विनुति कर वर-पुष्पवृष्टि की। वननिधि (समुद्र) को सरलता से झट पारकर, जाकर, ॥ १३२० ॥

या दुष्टराक्षसि नब्धिलो वैचि । यादट सुरलैल्ल नानंदमंदि
विनुतिंचि वरपुष्प वृष्टुलु गुरिय । वननिधि नवलील वडि दाटिपोयि
१३२०

या समीरजुडनायासंबुतोड । ना सुवेलाचलंबचलुडै येक्के ।
ननि यंध्रभाष भाषाधीशनिभुडु । विनुत काव्यागम विमल मानसुडु
पालिताचारुडपार धीशरधि । भूलोकनिधि गोनबुद्धभूविभुडु
दम तंड्रि विट्ठलधरणीशुपेर । गमनीयतरधैर्यकनकाद्रि पेर
बनुगोन नरिगंडभैरवु पेर । घनु पेर, मीसरगंडनि पेर
नलघु निश्चलदयायत बुद्धि पेर । ललितसद्गुणगणालंकारु पेर
नाचंद्रताराकर्मै योप्पुमिगिलि । भूचक्रमुन नतिपूज्यमै वेलय
नसमानललितशब्दार्थसंगतुल । रसिकमै चेलुवोन्द रामायणमुन
बरग नलंकारभावनल् निंड । गरमोप्पु नी किष्किधाकाडंबु जेप्पे:
नारूढि नार्षेयमै यादिकाव्य । मै रसिकानंदमै येल्लनाडु १३३०
निव्वसुमति नोप्पु नी पुण्यचरित । मेव्वरु सदिविन नेव्वरु विनिन
सामादि बहुवेदचयधाम राम । नामचिंतामणि नव्यभोगमुलु
परहिताचारमुल् प्रभुविचारमुलु । परिपूर्णशक्तुलु प्रकटराज्यमुलु
निर्मलकीर्तुलु नित्यसौख्यमुलु । धर्मैकनिष्ठलु दानाभिरतुलु

—वह समीरज अनायास उस सुवेलाचल पर अचंचल हो चढ़ गया। इस प्रकार आन्ध्रभाषा के भाषाधीश (ब्रह्मा) के समान, विनुत-काव्य-गम-विमल-मानस (श्रेष्ठ काव्य और शास्त्रों के ज्ञाता), आचारवान्, अपार-बुद्धि-सिंधु, भूलोक-निधि गोन बुद्धि-भूपति ने, अपने पिता विट्ठल धरणीश के नाम पर, जो कमनीयतर धैर्य के कनकाद्रि हैं, दृढ़ता से अरिगंडभैरव (शत्रुभयंकर), महात्मा, मीसरगंड (प्रतापशाली), अलघु-निश्चल-दया के आयतबुद्धि वाले हैं, ललित सद्गुणगणालंकार हैं, आचन्द्र-तारार्क-विलसित होनेवाली, भूलोक में अतिपूज्य हो शोभित होने के लिए अनुपम ललित-शब्दार्थ-सगित से युक्त रसमय रामायण में अलंकार (और) भावों से परिपूर्ण, अतिरम्यता से प्रस्तुत इस किष्किधाकाण्ड की रचना की। सुप्रसिद्ध आर्षग्रन्थ, आदिकाव्य, रसिकों को आनन्द देनेवाले ॥ १३३० ॥ —(तथा) सदा इस वसुमति (भूमि) पर शोभायमान होनेवाले इस पुण्यचरित को जो भी पढ़ें, जो भी सुनेंगे, उन्हें सामादि वहुवेद-समूहों का धाम, राम-नाम-चिन्तामणि, नव्यभोग, परहित (करनेवाले) आचार, श्रेष्ठ विचार, परिपूर्ण शक्तियाँ, प्रकटराज्य (सुख), निर्मल कीर्तियाँ,

नायुरारोग्यंबु लधिकसंपदलु । वायक पाटिल्लु; वापक्षयंबु
वरपुत्रलाभंबु वैरिनाशनमु । सरिनोंप्पु; धनधान्यचय समृद्धियुनु
नेविघ्नमुलु लेक यिड्ललो नधिक। लावण्यवतुलैन ललनल पोंन्दु
गोंडुकुलतो नेंप्डु गूडियुंडुटयु । नेंडगाग नापदलेल्ल वायुटयु
सम्मदंबुन बंधुजनुल गूडुटयु । निम्मुल गाम्यंबु लेंडकुंडुटयु
नन्नलुदम्मुलु नभिवृद्धि बोंन्दि । मन्ननतो गूडि मलसियुंडुटयु १३४०
सततंबु देवतासंतर्पणंबु । वितृगणतृप्तियु वेंम्पोंन्दुचुंडु;
निदि मोक्षसाधनं, विदि पापहरमु । निदि दिव्य, मिदिभव्य, मिदियु
श्रीकरमु;
रमणीयलील नी रामायणंबु । ग्रममोंप्प बूजिप गलगु बुण्यमुलु;
व्रासिन वारिकि वरशुभोन्नतुलु । वासवलोकनिवासंबु गलुगु;
नेंन्दाक गुलगिरु लेंन्दाक जलधु । लेंन्दाक रविचंद्रुलेंन्दाक दार
लेंन्दाक वेदंबु लेंन्दाक दिशलु । नेंन्दाक भुवनंबु लेपुदीपिंचु
नंदाक नीकथ यक्षरानंद । संदोह-दोहळाचारमै परगु १३४७

॥ किष्किधाकांडमु समाप्तमु ॥

नित्यसुख, धर्मनिष्ठा, दान में आसक्ति, आयु, आरोग्य, अधिक सम्पत्ति, अवश्य ही (प्राप्त) होंगे । पापक्षय, वरपुत्रलाभ, वैरि-नाश समुचित रूप से होगा । विना किसी प्रकार की विघ्न-वाधाओं के धनधान्य की समृद्धि, घरों में लावण्यवती ललनाओं का सहवास, सदा पुत्रों के साथ मिलकर रहना, सारी विपत्तियों का दूर हो जाना, सम्मोद के साथ वन्धुजनों से मिले रहना, प्रेम से कामनाओं की पूर्ति होना, सहोदरों की अभिवृद्धि (उन्नति) पाकर वड़े स्नेह के साथ मिलजुलकर रहना ॥ १३४० ॥

—सतत् देवताओं का संतृप्त रहना, पितृगण की तृप्ति में वृद्धि, (आदि) से वे सम्पन्न होंगे । यह (ग्रन्थ) मोक्ष-साधक है, यह पापहर है, यह दिव्य है, यह भव्य है, यह श्रीकर है । रमणीयलीला (विधान) से इस रामायण को नियम से पूजा करने पर पुण्य प्राप्त होगा । लिखनेवालों को वर-शुभ-उन्नति और इन्द्रलोक-वास प्राप्त होगा । जब तक कुलपर्वत, जब तक जलधि (समुद्र), जब तक रविचन्द्र, जब तक तारे, जब तक वेद, जब तक दिशाएँ, जब तक भुवन (लोक) विशिष्टता से प्रकाशमान रहेंगे; तब तक यह कथा, अक्षर (शाश्वत) आनन्द-सन्दोह (समूह) का निवास-स्थान होकर विराजमान रहेगी । ॥ १३४७ ॥

॥ किष्किधाकांड समाप्त ॥

सुंदर कांडमु

लंका प्रवेशमु

श्रीरामुकार्यंबु सेयंग बूनि । वारिधि बिल्लकाल्वयु बोलें दाटि
चारुशृंगंबुल सानुदेशमुल । भूरि भूरुह लतापुंज कुंजमुल
कैरव बंधूक कह्लार कुमुद । सारस जलचरचय तुंगभंग
चलितडोलाकेळि जरियिंचु हंस । कलकलस्वरमुल क्रौंचनादमुल
राजीवरसमत्त रणित सद्भृंग । राजिचे नोप्पेडु रम्यदीर्घिकल
कलिमिचे नोप्पु लंकापुरियोद्द । वेलयु सुवेलाद्रि वेड्कमै नेक्कि
यंत ना हनुमंतुडायद्रिमीद । नेंतयु बदिलुडै येपुमै निलिचि
यट्टु दक्षिणमु सूचि यपुडिट्टुल् गनियें । नट त्रिकूटाद्रिपै नमरेडु दानि
गदलक धर्मार्थकाममुल् मूडु । पोंदिगोन्न सिरिवोलें बोलुपोंदु दानि
दनरारु मेरुगुल दाराद्रि बोलि।विनुवीथितो रासि विलसिल्लु दानि
घनतर वज्र सत्कांतुल दनरि । यनिमिषचयमुचे नलरारुनट्टि
यमरावतीपुरं बब्धिमध्यमुन । गमनीयमुग नोप्पुगति दोचुदानि

लंका प्रवेश

श्रीराम का कार्य करने का निश्चयकर, वारिधि को छोटी-सी नहर के समान पार कर, चारु शृंगों, सानु देशों (पहाड़ की तराइयाँ), भूरि (प्रचुर) भूरुह (वृक्ष) (एवं) लताकुञ्जों के पुंजों, कैरव, बंधूक, कह्लार, कुमुदों, सारस (आदि) जलचर-चयों (समूहों), ऊँचे होकर गिरनेवाली लहरों पर चंचल डोलाकेलि में विचरण करनेवाले हंसों के कलस्वरों, क्रौंच (पक्षियों) के नादों, राजीव (कमल)-रस के पान से मत्त बनी सद्भृंग राजि से सुशोभित रमणीय बावलियों (आदि) की सम्पन्नता से विराजमान लंकापुरी के पास विलसित सुवेलाद्रि पर हनुमान शौक से चढ़ गए। तब उस अद्रि पर अधिक सावधानी से, शोभा से खड़े होकर, उधर दक्षिण की ओर (लंका को) देखा तो वह नगर त्रिकूटाद्रि पर विराजमान था, धर्म-अर्थ-काम को स्थिर तथा एकत्र बनाए रख शोभित होनेवाली लक्ष्मी के समान था, सुशोभित कान्तियों से ताराद्रि की समता करते हुए, आकाश-मार्ग को स्पर्श कर विलसित था, ॥ १० ॥

—घनतर (महत्तर)-वज्रों की सत्कान्तियों से शोभित हो, अनिमिष

सललितमकरकच्छप पद्मनिधुल । जॆलुवॊंदि यंचितस्थिति दनरारु
नलककुबेरुतो नलुकमै नचट । नॆलकॊन्न कैवडि नॆगडॆडुदानि
गलकालमुनु नथोगति नुंडलेक । तॆलिविमै भोगवतीनगरंबु
जलराशि वॆलुवडि सरि द्रिकूटमुन । वॆलसिन कैवडि विलसिल्लुदानि
नंबुधि यावरणांबुवुल् गाग । बंबिनप्रभ नॊप्पु बंगारुकोट
ब्रह्मांडविधमुगा बरिकिंप दनरि । ब्रह्माद्यभेद्यमै परगॆडु दानि
दुरग सामज रथस्तोमारि भीम । वरभटानेक दुर्वारंबु नगुचु
बॊलुपॊंदु बहुदिव्यभोगसंपदल । ललितमै यॊप्पॆडु लंकापुरंबु २०
गनि चाल वॆरगंदि कनुरॆप्प बॆट्ट । कनिलतनूभवुंडंदंद .. जूचि
"यॆल्ललोकंबुलु नॆक्कटि गॆलिचि । बलिदुंडै पेर्चु पंक्तिकंधरुडु
इट्टि संपदलचे नॆसगु नी लंक । बट्टाभिषिक्तुडै ब्रदुक बालेदि ?
सकलेशुडगु रामचंद्रुनि देवि । विकलुडै कॊनिवच्चि वीडेल पॊलिसॆ ?"
ननि वानि दूषिंचि यट लंक जॊरग । ननुवु विचारिंचि या सत्वधनुडु
तग लंकयुत्तरद्वारंबु जेरि । तगवुनु नीतियु दलपोसि मरियु

(देवता)-चय (समूह) से विलसित अमरावतीपुर ही मानों अब्धि (समुद्र) के मध्य कमनीय रूप से विलसित हो रहा हो, (अथवा) सललित मकर-कच्छप-पद्मनिधियों से संपन्न बन, समंचित स्थिति से शोभित (कुबेर की) अलकानगर ही कुबेर से रूठकर, वहाँ आकर बस गया हो, (अथवा) सदा के लिए अधोगति (समुद्र के नीचे, पाताल में) न रह सक, विवेक से मानों भोगवतीनगर (पाताल की राजधानी) जलराशि से निकलकर, त्रिकूट (पर्वत) पर आ जम गया हो, ऐसा था वह नगर। अंबुधि के परिखा बनने पर, व्याप्त-प्रभा से शोभित (वह) स्वर्ण-दुर्ग ब्रह्माण्ड के समान शोभित हो, ब्रह्मा आदि के लिए अभेद्य हो विलसित हो रहा था। तुरग (अश्व) सामज (गज) रथ-स्तोम (समूह), अरि भीम (शत्रुओं के लिए भयंकर) अनेक श्रेष्ठ वीरों से युक्त हो (वह नगर) दुर्वार था। इस प्रकार सुशोभित हो, बहु-दिव्य-भोग-सम्पत्तियों से ललित (सुन्दर) बन विलसित लंकापुर को ॥ २० ॥

—देख अधिक चकित हो, अपलक हो, अनिलतनूभव ने जहाँ-तहाँ देखकर (यों सोचा)—"समस्त लोकों को अकेले ही जीतकर, बलवान हो शोभित पंक्ति-कंधर (रावण) को, इस प्रकार की सम्पदाओं से युक्त हो, सिंहासनस्थ हो जीवित रहने का (आगे) अवसर कहाँ है ? सर्वेश्वर रामचन्द्र की देवी को, विकलता से लाकर यह मरा क्यों ? (सीताजी को लाना मृत्यु को आमंत्रित करने के समान है।)" इस प्रकार रावण की

"नी समुद्रमु गपुलेट्लु दाटेदरु ? । वासि दाटिननैन वासवादुलकु
साधिप मिगुलनसाध्यमीलंक । साधिप नलविये सकलयत्नमुल ?
भीमसाहसमुन बेर्चु रावणुनि । रामुडेट्लु जयिंचु रणमुलो नेदिरि ?"
यनि मुहूर्तमु दन यात्म जितिंचि । मनमुन श्रीरामु महिमंबु देलिसि ३०
"यी समुद्रंबेन्त, यी लंक येंत, । यी सुरारियु नेंत यिनकुलेश्वरुन ?"
कनि तिरस्कारंबुगा दलपोसि । "येनलेनि पोंडवैन यी मेनितोड
बगटुन नी पुरि बगलु सोच्चिननु । बग यगु राक्षसभटुलकु ताकु:
जानकि बोडगान जाल ने नट्लु; । कान सूक्ष्माकृति गैकोनि पोयि
यी लंक दैत्युल नेल्ल वंचिंचि । वालायमुन गांतु वैदेहि" ननुचु
मदिलोन सूर्यास्तमयमोप्प दलचि । पदिलुडै येंतयु बरिकिंचुचुंड
"तविरळसत्त्वुडै यवनीशुदेवि । नवनीततनूभव नरसिपो वच्चे;
नेनुन्न ननुवुगा दी लंक जोरग । वीनिकि" नन्नट्लु वेस ग्रुंगे निनुडु;
अनिलनंदनुनकु ननुविंचि दैत्यु । घनपापमुलु पूनि कलगोन बर्वे

निन्दा करते हुए, लंका में प्रवेश करने के उपाय के बारे में सोचकर उस सत्त्वधनवाले ने लंका के उत्तर-द्वार पर पहुँचकर, न्याय और नीति के बारे में विचारकर सोचा—"इस समुद्र को कपि कैसे पार कर सकेंगे? किसी भी तरह पार करेंगे तो भी वासव (इन्द्र) आदि के लिए असाध्य इस लंका को सकल प्रयत्न करके भी जीतना कहाँ सम्भव हो सकेगा? भयंकर साहस से विलसित रावण का सामना कर राम उसे युद्ध में कैसे जीत पाएंगे ?" ऐसा मुहूर्त (पल) भर अपनी आत्मा में चिन्तनकर, मन से श्रीराम की महिमाओं को जानकर, ॥ ३० ॥

—तिरस्कार भाव से सोचा—"इस समुद्र की हस्ती ही क्या है ? यह लंका ही क्या चीज़ है ? इनकुलेश्वर (राम) के समक्ष यह रावण ही क्या है ? (नाचीज़ है ।)" फिर सोचा—"अनुपम विशाल इस शरीर से दिन के समय इस पुरी में प्रवेश करूँ तो राक्षसभटों से मेरा वैर (प्रतिरोध) होगा । ऐसा होने पर मैं जानकी का पता नहीं लगा सकूँगा । अतः सूक्ष्म आकृति धारणकर, जाकर, इस लंका के सभी दैत्यों को धोखा देकर, अवश्य ही सीता के दर्शन करूँगा ।" मन में सूर्यास्त-समय के बारे में सोचकर, सावधानी से देखते रहे (प्रतीक्षा करते रहे) । सूर्य झट से अस्त हो गए मानों यह सोचा कि "अविरल सत्त्व से युक्त हो, (हनुमान) अवनीश की देवी (और) अवनीतनूभवा (सीता) का पता लगाने आया है । मेरे रहने पर, उसके लिए लंका प्रवेश में सुविधा नहीं होगी ।" दिशाओं में घोर-अन्धकार ऐसे व्याप्त हुआ मानों अनिलनन्दन (हनुमान)

ननबर्वें दिशल घोरांधकारंबु; । घनमैन दैत्युल कलकलंबडगॆ; ४०
नंत नाकलकलंबडगुट नात्म । नंतयु बरिकिंचि यनिलनंदनुडु
मनमुन रघुरामु मरुवक निलिपि । तन तंड्रि वायुवु दप्पक वेडि
मार्जालमात्रुडै मरि लंक जॊरग । गर्जमूहिंचुचु घनुल राघवुल

लंकिणि हनुमनड्डगिंचुट

दलचुचु मॆलग नत्तरि विस्मयमुग । गलितभयंकराकारंबुतोड
बॆन्निधि साधिप ब्रीतिमै नरुगु । चुन्न साधकुनकु नॊगि नड्डुपडग
वडि महाभूतंबु वच्चु चंदमुन । नडरि लंकिणि वच्चि यड्डुमै निलिचि
यट्टहासमु सेसि यनिलनंदनुनि । धट्टिंचि पलिकॆ ग्रोधंबु रेट्टिप :
"नीवॆव्वडवु ? मरि नीकु बेरेमि ? । नी वीपुरंबुलोनिकि वच्चुटॆट्टु ?
लॆव्वरु वंचिना ? रॆरिंगिपु मनिन । नव्वायुनंदनुंडचलुडै पलिकॆ :
"नीवॆव्वतेवु ? मरि नीकु बेरेमि ? । नीवेल यड्डुमै निलिचितिवि नाकु ? ५०

को अनुकूल्यता प्रदान कर, दैत्य के महापाप क्षुब्ध हो भाग उठे हों। दैत्यों का अधिक कोलाहल शान्त हो गया॥ ॥ ४० ॥

—उस कोलाहल का शान्त होना (आदि) सब कुछ के बारे में मन में विचारकर, अनिलनन्दन ने मन से रघुराम को न भूलकर, (मन में) उन्हें स्थिर बनाकर, अपने पिता वायुदेव की अवश्य प्रार्थना की (और) मार्जालमात्र (बिल्ली के समान) बन, लंका में प्रवेश करने के उपाय के बारे में सोचता, मन में महान् राघवों का स्मरण करता, विचरण करता रहा।

लंकिणी का हनुमान को रोकना

उस समय विस्मयप्रद रूप से कलित-भयंकर आकार से, परमनिधि को प्राप्त करने के लिए प्रीति से जानेवाले साधक को अवरुद्ध करने के लिए आनेवाले महाभूत के समान, अतिशयता से लंकिणी आकर, रास्ता रोककर, खड़ी हो गयी, अट्टहास कर अनिलनन्दन को डाँट बताकर, क्रोध के द्विगुणित होने पर बोली—"तुम कौन हो ? फिर तुम्हारा नाम क्या है ? तुम्हारा इस नगर में आना कैसे हुआ ? किसने (तुम्हें) भेजा है ? बताओ।" वह वायुनन्दन अविचल हो बोला—"तुम कौन हो ? फिर तुम्हारा नाम क्या है ? तुम क्यों मुझे रोककर खड़ी हो गयी हो ? ॥ ५० ॥

मुन्नु नी वेंरिंगिपु मुदित ! या वेनुक । नुन्नट्लु ना तेरंगोनर जेप्पेदनु"
अनि पल्क "नेनु दशाननु नाज्ञ । बनिपूनि यी पुरि बलिमि रक्षितु;
बेरु लंकिणि यंडु; पेरवारि गन्न । बोरन बोरिगोंदु वोनीक" यनिन
हनुमंतु डय्यति कनियें वेंडियुनु । "वनित ! यी पुरि जूचुवाडनै येनु
जनुदेंचितिनि; वेग चनग नि" म्मनिन । गनुल गोपमुन नक्करकु
रक्कसियु
"नेक्कड वोयेद्द विक ? ना चेत । जिक्किति गा !" कंचु जेलगि मै वेंचि
"करकरि निनु बट्टि कदिसि नीमेनु । दरिगि नी रक्तमुलु द्रोवद" ननुचु
गड्डगोप मेसग नक्कपिनाथु रोम्मु । बोडिचिन 'बोलति जंपुट पाप'
मनुचु
दडयक मारुति दानि वक्षंबु । बिडिकिट बोडिचिन बेंपेल्ल दक्कि
यिल गूलि मिक्किलि हीनस्वरमुन । बलुमारु हनुमंतु ब्रार्थिचि पलिके: ६०
"गपिकुलोत्तम ! नन्नु गरुणिपुमय्य ! । निपुणुडे यी पुरि निर्मिंचुनाडु
वनजासनुडु नाकु वरमिच्चिनाडु; । वनचरुडोक्कडु वच्चि निन्नेदिरि
येन्नडु नोप्पिचु निल नदि मोदलु । ग्रन्नन राक्षसक्षयमगु" ननुचु;

—हे मुदिते (नारी) ! प्रथमतः तुम बताओ । उसके बाद मैं अपने विधान के बारे में यथारूप बताऊँगा ।" ऐसा कहने पर (वह बोली)— "मैं दशानन (रावण) की आज्ञा से, सप्रयत्न इस पुरी की, सबल हो रक्षा करती हूँ । मुझे लंकिणी कहते हैं । पराये लोगों (शत्रुओं) को देखती हूँ तो उन्हें जाने (बचने) न देकर, तुरन्त मार डालती हूँ ।" ऐसा कहने पर फिर हनुमान ने उस नारी से यों कहा—"हे वनिते ! इस नगर को देखना चाहकर मैं आया हूँ । शीघ्र जाने दो ।" (ऐसा) कहने पर आँखों से क्रोध प्रकट करते हुए वह कठोर राक्षसी ने यह कहते हुए कि "मेरे हाथों में फँसकर अब कहाँ जा सकोगे ?" उद्धत हो शरीर को बढ़ाकर, "बलात् तुम्हें पकड़कर, नियराकर; तुम्हारे शरीर के टुकड़ेकर; तुम्हारा रक्त पी जाऊँगी ।" अधिक क्रोध के बढ़ने पर, उस कपिनाथ के वक्षस्थल पर घूँसा मारा । 'स्त्री का वध करना पाप है' यह सोचकर; अविलंब मारुति (हनुमान) ने उसके वक्ष पर घूँसा जमाया । तब अपने समस्त आधिक्य (बल) को खोकर, अत्यन्त हीन स्वर से, कई बार हनुमान की प्रार्थना कर वह (यों) बोली— ।। ६० ।।

"हे कपिकुलोत्तम ! मुझ पर करुणा दिखाओ । निपुणता से इस पुरी का निर्माण करते समय वनजासन (ब्रह्मा) ने मुझे एक वर दिया कि जिस समय कोई वनचर (वानर) आकर, तुम्हारा सामना कर, तुम्हें

गान नी तलचिन कार्यसंसिद्धु । लौ "नंचु दीविंचि या यिंति सनियें । दनमंदि मारुति दानि माटलकु । ननुवौद नुब्बि मिन्नंदि पेल्लार्चि 'चेंडुदुरु राक्षसुल् सिद्ध' मटंचु । नेंडमकाल् मुन्नुगा निलनडुगिड्चु

हनुम लंकनंतयु वेंदकुट

गडु सूक्ष्मरूपंबु गैकोनि पोयि । यडरि कोटलु दाटि यट लंक सौच्चि वडि गोट कावलिवारु दलार्लु । वोंडगानकुंड नप्पुडु गूढवृत्ति वीथुलु परिकिंचि विपणिमार्गमुलु । शोधिंचि रच्चलु सौरिदि नीक्षिंचि घनगोपुरमुलेक्कि गजशाललरसि। मुनुमिडि वरहर्म्यमुल संचरिंचि ७०
देवालयंबुलु दिरिगि यिल्लिल्लु । भाविंचि गोंदुलु परिकिंचि चूचि युप्परिगलु गांचि योवरुल् नेमकि । चप्परंबुलु डासि सौधमुल् वेंदकि चाल जेन्नगु रथशाललु वाजि । शाललु शस्त्रास्त्रशाललु दडवि माडुवुल् परिकिंचि मणिमयमैन । मेडलु वाडलु मिगुल जेन्नैन मंत्रुल यिड्लु सामंतुल यिड्लु । तंत्रिपालुर यिड्लु दैवज्ञुलिड्लु

दुःख पहुँचाएगा, उस दिन से, झट से राक्षसक्षय होगा । अतः तुम्हारे इच्छित कार्य सफल हो जाएँगे ।" ऐसा कह, आसीसकर, वह नारी चली गयी । उसकी बातों से मारुति अपने मन में अनुकूलता के कारण, फूलकर, आकाश को स्पर्शकर, अधिक गरजकर, "अवश्य राक्षस नष्ट हो जाएँगे" ऐसा सोचते हुए प्रथमतः ज़मीन पर वामचरण रखते हुए,

हनुमान का समस्त लंका में खोजना

—अत्यन्त सूक्ष्मरूप को धारणकर, जाकर, अतिशयता से प्राकार पार कर, वहाँ लंका में प्रवेश किया । झट से दुर्ग के पहरेदारों (और) सैनिकों की आँख बचाकर, तब गुप्त रूप से वीथियों का परिशीलनकर, विपणिमार्गों को खोजकर, चौराहों को क्रम से देखकर, उन्नत गोपुरों पर चढ़कर, गजशालाओं को देखकर, क्रम से श्रेष्ठ सौधों में विचरण कर, ॥ ७० ॥

—देवालयों में घूमकर, घर-घर खोजकर, गलियों में खूब खोजकर, अट्टालिकाओं को देखकर, भीतर के कमरों में खोजकर, छप्परों में जाकर, सौधों में खोजकर, अतिशोभायमान रथशालाएं, वाजिशालाएँ, शस्त्र-अस्त्रशालाओं में ढूँढकर, बड़े मकानों का परिशीलनकर, मणिमय सौध, मुहल्ले, अधिक शोभित मंत्रियों के मकान, सामन्तों के मकान, तंत्रिपालकों के मकान, दैवज्ञों के मकान, उस विभीषण का मकान, अतिकाय का गृह

ना विभीषणु गेह मतिकायु गृहमु । देवांतकुनि यिल्लु त्रिशिरु मंदिरमु
गंभीरमगु कुंभकर्णुनिनेलवु । गुंभुनालयमु निकुंभु सद्मंबु
श्रीमिंचु नय्यिंद्रजित्तुनि नगरु । ना महोदरु गेहमादिगा नयिन
दनुजनाथुल निकेतनपंक्तुलोंकट । गनुगोंचु नद्भुतक्रांतुडै वारि
यंतःपुरंबुल नंतयु वेंदकि । कांताजनंबुल गलयंग नरसि ८०
वेंडियु दनुजुल वेश्ममुल् गलय । नोंडोंड गनुगोंचु नोक्कोक्कचोट
नोक कन्नु नोक चेवि योक केलु गलुगु । विकृतवेषुल जूचि वेरगु बोंदुचुनु
बहुपाद बहुभुज बहुमस्तकोरु । सहितुल गोंदर सारे गन्गोनुचु
जपतपस्वाध्याय सत्कर्मनिष्ठ । दपसुलौ दानवोत्तमुल जूचुचुनु
मकरतोरणबद्धमाल्यजालमुल । प्रकटित धूपसौरभविशेषमुल
रत्नमुक्ताफलरंगवल्लिकल । नूत्नेंदु कांत बंधुर वितर्दिकल
मणिगण हाटकमयकवाटमुल । गणुतिपदगिन बंगरुकुट्टिममुल
गणनाधिकोग्र विष्कंभसूत्रमुल । प्रणुतिप दगुमंटपप्रदेशमुल
स्फुट वज्रकलितकपोत मालिकल । घटितेंद्र नीलप्रकाशदेहळुल
महनीयतर विद्रुम स्तंभततुल । बहुशिरोगृहमुल भवनपाळिकल ९०

देवान्तक का घर, त्रिशिर का मंदिर (घर), कुंभकर्ण का गंभीर निवास-स्थान, कुंभ का आलय, निकुंभ का सद्म, श्री (शोभा) से अधिक संपन्न उस इन्द्रजित का नगर (अन्तःपुर), उस महोदर का गेह (गृह) आदि दनुजनाथों के निकेतन (गृह)—पंक्तियों को क्रमशः देखते हुए, आश्चर्य-चकित होते हुए, उनके सभी अन्तःपुरों में खोजकर, कान्ताजनों में खूब देख लिया, ।। ८० ।।

—अन्य दनुजों के मकानों को एक के बाद एक देखते हुए, एक-एक जगह (कहीं-कहीं) एक आँख, एक कान, एक हाथ से युक्त विकृत-वेष (रूप) वालों को देख चकित हो, बहुधा बहुपाद, बहुभुज, बहु-मस्तक (तथा) उरु (वक्ष) से सहित कुछ (राक्षसों) को देखते हुए, जप-तप-स्वाध्याय-सत्कर्म में निष्ठा रखनेवाले तपस्वी दानवोत्तमों को देखते हुए, मकर-तोरण-बद्ध-माला-जाल (समूह), प्रकटित (महकते) विशिष्ट धूप-सौरभ-रत्न-मुक्ताफल (मोती) से युक्त रंग वल्लिकाएँ (रंगोली या चौक) नूतन-इन्दु (चन्द्र)-कान्त (शिलाओं से) बन्धुर (निर्मित)-वितर्दिकाएँ (चबूतरे), मणिगण तथा हारक (स्वर्ण) मय किवाड़, प्रशंसा के योग्य स्वर्ण-भित्तियाँ, गणना में अधिक उग्र (तुंग) विष्कंभ सूत्र, प्रणुति (स्तुति) के योग्य मण्डप-प्रदेश, स्फुट (परिस्फुट) वज्र कलित कपोत मालिकाएँ, जटित इन्द्र-नील (मणियों) के प्रकाश से युक्त देहलियाँ, महनीयतर-विद्रुम के खंभों की पंक्तियाँ, अनेक शिरोगृह, भवनों की पंक्तियाँ, ।। ९० ।।

नायुधोज्ज्वलहस्तुलैन राक्षसुलु । नायक ये प्रोद्दु बलसियुनट्टि
रावणुनगरु चेरगबोयि यचट । गावलिवारल गलय शोधिंचि
पेक्कु वाकिड्लु निर्भीतिमै गडचि । यक्कोल्वुकूटंबुलन्नियु वेदकि
यंतःपुरमु जेर नरुगु नालोन । गंतुनि मामं सत्कळलकु सीम
कलुवलपै ब्रेमगल चंदमाम । कलितबिंबललामगति नुदयिंचि
जलराशि देलिचि जलजषंडमुल । गलवासि दूलिचि गब्बिजक्कवल
विरहाग्नि नलयिंचि वेडविटिवानि । वरकीर्ति वेलयिंचि वाडिन कलुव
मोत्तंबु नलरिंचि मुग्धजारिणुल । चित्तंवुलडरिंचि चिम्मजीकटुल
यंतंबु दलरिंचि पदनैन चंद्र । कांतंबु गरगिंचि घनचकोरमुल
विंदुल दनियिंचि विटविटीजनुल । पोंदुल नेलयिंचि पूर्ण चंद्रिकल १००
दिक्कुलकेल्लनु देलिवि देप्पिंचि । चुक्कलगमिकाडु चूपट्टे मिट
बावनि वीडेल्ल बरिकिंपवलसि । देवतलेत्तिन दीपमो यनग

हनुम रावणांतःपुरप्रवेशमु

नट्टि चंदुरु जूचि यंतरंगमुन । दोट्टिन वेड्क वातूलनंदनुडु

—आयुधों से उज्ज्वल बने हाथोंवाले राक्षसों से निरन्तर सुरक्षित रावण के अन्तःपुर के पास जाकर, वहाँ पहरेदारों का खूब परिशीलन किया। (वहाँ से) निडर हो अनेक द्वार पारकर, वहाँ के सभी सभागारों को खोजकर, अन्तःपुर में प्रवेश करने गया कि इतने में मन्मथ का मामा, सत्कलाओं की सीमा (चरमावधि), उत्पलों से प्रेम रखनेवाला चन्द्रमा, कलित बिंब से युक्त हो ललामगति से उदित हुआ। (उदित हो) जलराशि (समुद्र) को प्रसन्नकर, जलज-षंड (-समूह) की कान्ति को मिटाकर, मस्त चक्रवाकों को विरहाग्नि में तड़पाकर, मन्मथ की श्रेष्ठ कीर्ति को सुस्थिर बनाकर, मुरझाए हुए उत्पल-समूहों को प्रसन्नकर, मुग्ध-जारिणियों के चित्तों को चंचल बनाकर, घने अंधकार के प्रताप को नष्टकर, तर बने चन्द्रकान्त (शिलाओं) को गलाकर, महान् चकोरों को दावतों से तृप्तकर, विट और विटीजनों के समागमों को सम्पन्नकर, पूर्ण चंद्रिकाओं से ॥ १०० ॥

—समस्त दिशाओं को होश में लाकर (जागृतकर), नक्षत्रों का नायक (चन्द्र) आकाश में इस प्रकार दृष्टिगोचर हुआ मानों पावनी (पवनकुमार) को समस्त प्रदेश देख लेने की सुविधा प्रदान करने के लिए देवताओं ने दीप जला दिया हो।

हनुमान का रावण के अन्तःपुर में प्रवेश

ऐसे चन्द्र को देखकर, अंतरंग में हर्षित हो, वातूल (वायु)-नन्दन

अरयोजनमु वेडल्पै योजनंबु । विरिवियौ नौकयिल्लु वेग कन्गोंतुचु
नंतःपुरंबेल्ल नरयुचु रत्न । कांतिमंतमु विश्वकर्मनिर्मितमु
गामचारमु जित्रकरकौशलंबु । सोमार्कनिभमुनै सुरलोकवैरि
या कुबेरुनि दौलिल याजिलो गैलिचि । कैकोन्न मणिपुष्कंबु वीक्षिंचि
या विमानंबुलो नंगनामणुलु । रावणु सौख्यवाराशि देलिंचि
पानाभिरतिकेळि बरवशलगुचु । मेनुदीगेलु सोल मिसिमि पैंदौडल
पस बयलपड नीविबंधमुल् सडल । वसिवाळ्ळु वाडिन वदनंबु ललर ११०
गम्मनिट्टूर्पुलु ग्रम्म गेम्मोवु । लेम्मेलु गैव्राल नेलनव्वुदेर
नरमोड्पु गनुगव लंगजकेळि । परवशत्वमु देल्प बादपद्ममुल
नंदेलु रौदलु सेयक याश्रयिंप । जंदनतिलकमुल् श्रमवारि गरग
वेणीभरमु वीड विरिदंडलूड । नाणिमुत्तेपु बेरुलत्यंतकठिन
वक्षोजपर्वतद्वयि जिक्कुवडग । लक्षितासवमदालसचित्तलगुचु
गटिसैकतंबुल गचशैवलमुल । स्फुटनाभिसरसुल भ्रूतरंगमुल
स्तनचक्रमुल विलोचनमीनततुल । गनुपट्टि सुखसुप्ति गैकोन्न नदुल

ने आधा योजन चौड़ा तथा योजन भर लम्बा एक गृह को झट से देखा। उसके समस्त अन्तःपुर का परिशीलन करते हुए उसने रत्न-कान्तिमान, विश्वकर्म द्वारा निर्मित, कामचार (अपनी इच्छाशक्ति से चल सकने की सामर्थ्य रखनेवाला), विचित्र कर-कौशल से युक्त, सोम (चन्द्र)-अर्क (सूर्य) समान मणिपुष्पक को देखा, जिसे सुरलोक-वैरी (रावण) ने पूर्वकाल में कुबेर को युद्ध में जीतकर प्राप्त किया था। उस विमान में अंगनामणियों को देखा। वे रावण को सुख-समुद्र में ऊभ-चूभकर, मद्यपान (तथा) रतिकेली में परवश बन, तनुलताओं के शिथिल होने पर, स्निग्ध जंघाओं के सौंदर्य के प्रकट होते रहते पर, नीवि बन्धनों के ढीले पड़ जाने पर, मुरझाए हुए वदनों के शोभित होने पर, ॥ ११० ॥
—सुगंधित लम्बी सांसों के घेरने पर, अरुण अधरों के सविलास हाथों पर झुकने पर, मुस्कान के प्रकट होते रहने पर, अधमुंदी आँखों के अंगज-केली (रति) की परवशता को प्रकट करते रहने पर, नूपुरों के बिना कोलाहल के पादपद्मों में आश्रय लेने पर, चन्दन (और) तिलक के श्रमवारि (पसीने) के कारण गल जाने पर, वेणियों के खुल जाने पर, पुष्पमालाओं के बिखर जाने पर, श्रेष्ठ मुक्ताओं की मालाओं के वक्षोज-पर्वतद्वय के मध्य फँसे रहने पर, चित्तों के आसव-मद के आलस्य को प्रकट करने पर, सुख-सुषुप्ति को प्राप्त नदियों के समान सो रही थीं। उनकी कटियाँ ही सैकत, केश ही शैवाल, (परि) स्फुट नाभियाँ ही सरोवर, भौंह ही तरंग, स्तन ही भँवर, (तथा) विलोचन ही मीनसमूह थे। (इस

कैवडि निद्रिंचु कामिनीमणुल । ना वायुनंदनुंडंदंद चूचि
परवधूमर्ममुल् परिकिंचुटकुनु । बुरबुर बोक्कचु वुण्यमानसुंडु
स्वामिकार्यार्थमै सतुलमर्मंबु । ली माड्कि गनुगोंटि; नितियेकानि १२०
कानिचेतल वीरि गनुगोन्नवाड । गा; निति नी यितिगमिलोन वेदक
वलेगानि मरि पेर वानिलो वेदक । वलनुगा" दनुचु भावमुन नेन्नुचुनु
जप्पुडु गाकुंड जनुचु मुंदरनु । विप्पैन योक रत्नवेदिक मीदि
बुव्वुपान्पुन निद्रपोयेडुवानि । नव्वासवु भोगमडगिंचु वानि
संजकेंपुलतोडि जलदंबु वोले । रंजित गंधांगरागंबु वानि
नीटैन सेलयेळ्ळ नीलाद्रि वोले । देट मुत्तेपुबेर्ल दीपिंचुवानि
नैदुमस्तमुल घोराहुलु वोले । श्रोदि नंगुळिरम्यभुजमुलवानि
जिलुगु वेन्नेल्ल तोडि चीकटिवोले । जलुवदुप्पटि मेन जत नोप्पुवानि
वेडद रोम्मुन नोप्पु वेल्पुटेनुंगु । कडिदि कोम्मुल पोटु केपुलवानि
गर्पूरमणिदीपकळिकलिवंक । नेर्पुमै गदलिंचु निटूर्पु वानि १३०
मकुटकुंडल दीप्तिमयमूर्ति वानि । सकलारिगर्व निस्रावणुंडैन
रावणुंडनुवानि राक्षसाधिपुनि । भाविंचि यातनि पार्श्वभागमुल

प्रकार सोनेवाली) कामिनी-मणियों को जहाँ-तहाँ देखकर वायुनन्दन पर-स्त्रियों के मर्मस्थानों को देखने के कारण अत्यन्त दुखी हुआ। उस पुण्य मानसवाले ने सोचा—"स्वामी के कार्यार्थ ही मैंने (इन) सतियों (स्त्रियों) के मर्म स्थानों को इस प्रकार देखा है ॥ १२० ॥

—यह इतना ही है। दुष्ट भावों या पाप कार्य के लिए इन्हें देखा नहीं है। स्त्री (सीता) को इस स्त्री-समूह में ढूंढ निकालना होगा। अन्यत्र उसे नहीं ढूंढ सकते।" इसी प्रकार सोचते हुए दबे पाँव बढ़ाते हुए, सामने एक विशाल रत्नवेदिका पर पुष्पशय्या पर सोनेवाले, वासव (इन्द्र) के भोग (-विलास) को मात करनेवाले, संध्या की अरुणिमा से युक्त जलद सम रंजित सुगंधित अंगरागवाले, स्वच्छ निर्झरों से नीलाद्रि सम स्वच्छ मोतियों की लड़ियों से दीप्त होनेवाले, पाँच शिरवाले भयंकर सर्पों की भाँति सुपोषित उँगलियों से युक्त भुजाओंवाले, स्वच्छ चाँदनी से युक्त अंधकार के समान स्वच्छ चादर से युक्त शरीरवाले, विशाल वृक्ष पर ऐरावत के कठिन दाँतों के आघातों के शूरतायुक्त चिह्नोंवाले, दोनों पार्श्वों में रखे कर्पूर मणिमय दीपकलिकाओं (शिखाओं) को हिला सकने में कुशल उसाँसोंवाले, ॥ १३० ॥

—मकुट (तथा) कुंडलों की दीप्ति से युक्त मूर्ति (रूप) वाले, सकल-अरि (शत्रुओं के)-गर्व को निचोड़ देनेवाले को देख रावण नामक राक्षसा-

नडपंबु गिंडियु नालवट्टमुलु । गड्डुवेड्क बट्टियु गरकंकणमुलु
रायंग विंजामरमुलु वेसियुनु । हायिगा बाडियु नाडियु वीण
मीटियु मद्दॆलल् मृदुमार्गलील । सूटि वायिंचियु स्रुक्कि यॊंडॊरुलु
तम साधनंबुलु दग गौगिलिंचि । तमि निद्रवोवु गंधर्वकामिनुल
देवकामिनुल दैतेयकामिनुल । भाविंचि यंत ना परमपावनुडु
गगनमंडलि जंद्रकळयुनु बोलॆ । मॊगुलु चेंत मॆरुंगु मॊलकयु बोलॆ
ना रावणुनि शय्य नभिनवयौव । ना रूढयै देवतांगन करणि
नुन्न मंदोदरि नॊय्यन गांचि । यन्नॆलतुक सीत यनि निश्चयिंचि १४०
"यवनिज ने गंटि" ननुचु नानंद । विवशुडै गंतुलु वेयुचु नचटि
कंबमुल् व्राकुचु गलित वालाग्र । चुंबनं बॊनरिंचुचुनु नटिंचुचुनु
गापेयजाति विकारमुल् गॊंत । सेपु सूपुचु दम चित्तंबुलोन
मरि विवेकमु बूनि "मनुकुलेश्वरुनि । तॆरव पतिव्रतातिलकंबु परम
पावनि जनकभूपालुनि पुत्रि । देवदेवुनि रामदेवुनि बासि
रावणुगोरुने ? रागिल्लि मधुवु । द्रावुने ? यट्टेल तन बुद्धि ब्रमसॆ ?

धिप का अनुमान कर लिया। उसके पार्श्वभागों में पानदान, हुक्का, छत्र (आदि को) बड़े शौक से धारणकर, करकंकणों के झंकृत होने पर चामर डुलाकर, आनन्द से गाकर, नाचकर, वीणा बजाकर, मृदुरीति से मृदंग बजाकर, थककर, अपने साधनों (उपकरणों) से ही गले लगाकर, उत्कट इच्छा से सोनेवाली (स्त्रियों को) गन्धर्व कामिनियाँ, देव कामिनियाँ, दैतेय कामिनियाँ समझकर तब उस परम पावन (हनुमान) रावण की शय्या पर गगन मंडल के चंद्रकला के समान, मेघ के पास चपला के अंकुर के समान, अभिनव-यौवन-आरूढ़ा हो, देवतांगना के समान स्थित मंदोदरी को झट से देखकर, उस स्त्री को सीता ही समझकर ॥ १४० ॥

—"अवनिजा को मैंने देख लिया है" ऐसा कहते आनन्द-विवश हो, उछलता-कूदता, स्तम्भों पर चढ़ता, सुन्दर वालाग्र (भाग) का चुम्बन करता, अभिनय करता हुआ थोड़ी देर कपि जाति के विकार (विकृत चेष्टाएँ) प्रदर्शित करता रहा। फिर अपने चित्त में विवेक धारणकर सोचा—"मनुकुलेश्वर (राम) की स्त्री पतिव्रता-तिलक (शिरोमणि), परमपावनी, जनकभूपाल की पुत्री (सीता) कहीं देवों के देव रामदेव को छोड़, रावण की चाह करेगी ? आसक्त हो मधुपान करेगी ? (नहीं) मेरी बुद्धि को ऐसा भ्रम क्यों हो गया ? नानाविधियों से विचारकर देखने पर, यह तरलाक्षी सीता नहीं है, (कोई) दानवी है।" ऐसा जानकर, वहाँ न रहकर आगे मेदुर (स्निग्ध)-परिकर-आम्रेडित (द्विगुणित)-

नानाविधंबुल नाकु जूचिननु । दानवि गानि यी तरळाक्षि सीत
गा दनि तेलिसि यक्कड नुंडकवल । मेदुर परिकराम्रेडितामोद
मानितासव रक्त मधुमांसयुक्त । पानशालापरंपरलेल्ल जूचि
गरुडोरगामर गंधर्वसिद्ध । वरसतुल् चेरलुन्न वाडलु वेदकि १५०

हनुमंतुडु उद्यानवनमु जूचुट

वारि दुःखंबुलु वारि यापदलु । नारंग वीक्षिंचि यात्मलोवगचि
"वेरवकुंडिटमीद; विभुरामु डिंक । नेरि रावणुनि नाजि निर्जिंच मिम्मु
विडिपिंचु; नंदरु वेरवकुंडिक । दडवुले" दनि वारि दग नूरडिंचि,
नीडल नंदंद निलिचि येकांत । माडेडु वारल नट्टु जेर बोयि
या माटलेल्लनु नालिंचि विनुचु । ना मारुतात्मजुंडल्लन वच्चि
"यिदि नाकु जोर बोलु; निदि नाकु बोल । दिदि नाकु जोर वच्चु;
निदि नाकु रादु"
अनक लंकापुरमंतयु वेदकि । मनुजवेषमुतोडि मगुव नेभंगि
नेंदुनु बोडगानकिच्चलो वगल । बोंदुचु नट्टु बोयि पुर समीपमुन

रावणुनि युद्यानमुन हनुमयन्वेषण

बसिडिगोडलचेत भासिल्लुचुन्न । यसमानमैन युद्यानंबु गांचि

आमोद-मानित आसव-रक्त-मधुमांसयुक्त-पानशालाओं की सभी परंपराओं (पंक्तियों) को देखकर, उन भवनों को ढूँढा जहाँ गरुड, उरग (नाग), अमर, गन्धर्व, सिद्धों की वरसतियाँ (श्रेष्ठ स्त्रियाँ) वंदी थीं। ।। १५० ।।

हनुमान का उद्यानवन देखना

उनके दुःखों (तथा) उनकी आफ़तों को समुचित रूप से देखकर, मन में दुखी होकर, (यह कह कि) "अब आगे डरो मत, प्रभुराम अब ढंग से रावण को युद्ध में हराकर तुम्हें छुड़ा देगा। (तुम) सब डरो मत। अब विलंब नहीं होगा" उन्हें उचित रूप से आश्वस्त कर, (वृक्षों की) छायाओं में जहाँ-तहाँ रुककर, एकान्त में बात करनेवालों के पास जाकर, उन सबको सुनते हुए, वह मारुतात्मज धीरे से "यह मेरे प्रवेश के योग्य है, यह योग्य नही है, यहाँ मैं प्रवेश कर सकता हूँ, यहाँ नहीं" ऐसा न सोचकर, समस्त लंकापुर को खोजकर, मनुज रूप की स्त्री को (सीता को) किसी प्रकार, कहीं भी देख न सक, मन में दुखी होते हुए, उधर जाकर, नगर के समीप

रावण के उपवन में हनुमान का (सीता को) खोजना

—स्वर्णभित्तियों से भासमान, अनुपम उद्यानवन को देखकर, धीरे से वहाँ

मॆल्लन नटबोयि मॆलग वीक्षिंचि । यल्लनल्लन ब्राकि या गोडलॆक्कि १६०

चंदनपुन्नाग सहकारतरुल । मंदार खर्जूर मातुलुंगमुल
बनसपिप्पल निंब पाटली वकुळ । घनसार सौवीर कर्णिकारमुल
मल्लिका मालती माधवीलतल । सल्लकी कुरवक जंबीरतरुल
दालतमाल हिंतालरसाल । नाळिकेराशोक नागवल्लरुल
नेडाकुटनटुल नेलालवंग । दाडिम नारंग तक्कोलकमुल
गदळिका केतकी क्रमुक भूजमुल । बदनैन गोस्तनी फलगुळुच्छमुल
बरिपक्वफलपुष्प परिमळमिळित । भरितमौ वायुसंपदल निंपॆक्कि
कलकंठ शुकनीलकंठ शारिकल । जॆलुवोंदि यळुलचे जॆलुवग्गलिंचि
कमलाकरंबुल गरमु शोभिल्लि । कुमुदषंडंबुल गोमरु दीपिंचि
शशिकांतवेदुल सन्नुति कॆक्कि । विशदचंद्रिकलचे वॆड्क सॊंपॆक्कि १७०
सिकतातलंबुलचे जॆन्नुमीरि । सकलर्तु विहरणस्थानमै मिगुल
रमणमै नदि चैत्ररथमुनु मिंचि । यमरेंद्रु नंदनमन जूडनॊप्पि
यलरु रावणु विनोदारामभूमि । गलयंग गनुगॊनि कडुजोद्यमंदि
यॊप्पु ना वनभूमि कॊय्यन डिग्गि । चप्पुडु गाकुंड जरणंबुलिड्डुचु

जाकर, ठीक ढंग से देखकर, हौले-हौले उन दीवारों पर चढ़कर ॥ १६० ॥ —चन्दन, पुन्नाग, सहकार (आम) के वृक्षों, मंदार, खर्जूर, मातुलुंग, फनस, पिप्पल, निंब, पाटली, वकुल, घनसार, सौवीर, कर्णिकार (कनेर), मल्लिका, मालती, माधवी (आदि) लताओं, सल्लकी, कुरवक, जंबीर (आदि) तरुओं, ताल, तमाल, हिंताल, रसाल, नारिकेल (नारियल), अशोक, नागवल्लरी, सप्तपर्णी, ऐला, लवंग, दाड़िम, नारंगी, तक्कोल, कदली, केतकी, क्रमुक (आदि) वृक्षों, उपयुक्त द्राक्षाफल गुच्छों, परिपक्व फल पुष्पों के परिमल से मिलित संभरित वायुसंपदाओं से शोभा को प्राप्तकर, कलकंठ, शुक, नीलकंठ, शारिकाओं विलसित हो, अलियों (भ्रमरों) से अति शोभायमान हो, कमलाकरों (सरोवरों) से अधिक शोभित हो, कुमद षंडों (समूहों) से अति शोभित हो, शशिकान्त (मणियों) की वेदिकाओं से प्रशंसित हो, विशद-चन्द्रिकाओं की प्रचुरता से शोभायमान हो ॥ १७० ॥

—सिकता-तलों (रेतीले स्थलों) से सुन्दर बन, सकल ऋतुओं के विहरण-स्थान बन, रमणीय बन, वह चैत्ररथ (कुबेर का उपवन) को मातकर, देखने में अमरेंद्र के नन्दन (-वन) समान दीखकर, शोभित (होनेवाली) रावण की विनोद-आराम (उपवन)-भूमि को खूब ढूंढकर, आश्चर्यचकित होकर,

गोलकुलयंदुनु गूलंबुलंदु । बुलिनदेशमुलंदु वोंदरिड्लयंदु
गेळीगृहमुलंदु गृतकाद्रुलंदु । शैलशृंगमुलंदु सानुवुलंदु
नुर्वीरुहमुलंदु नोलंबुलंदु । नुर्वीतनूभव नुड्डुगक वेंदकि
या वनमध्यंबुनंदु रेवगलु । गावलियुंडु राक्षसकोटि कोंपुडु
दावलंबै मिन्नु तलदन्नु पोंडवु । चे वेलुंगुचु मेरुशिखराळि गेरु
पसिडि कुंभमुलचे बसमीरि वेलयु । पसिडिकंवंबुल वरपु दीपिंचि १८०
वररत्न तोरणावळुल शोभिल्लि । युरुतरंबगुचुन्न योंक मेड गांचि
या मेडलोपल नंतयु वेंदकि । भूमिज गानक बुद्धिलो वगचि

सीतकानमिकि हनुम संतापमु

"यिनवंशवल्लभुडेकतंबुननु । मुनु नन्नु रम्मनि मुदमोप्प बिलिचि
'जनकज गनुगोनजालुदु वीव' । यनि चेप्पि ना चेति कानवालीय
बनिपूनि वच्चिचति बंटनै येनु; । गनुगोनलेनैति गमलाक्षि नेंदु;
नी दुरातमुडु तन्नु निटु देच्चु चोट । वेदन ब्राणमुल् विडिचेनो यिति ?
यंबरंबुन वेग नरुदेर भीति । नंबुधि बडियेनो यसुर चे दप्पि ?

सुशोभित उस वनभूमि में झट से उतरकर, विना आहट फिर चरण रखते हुए, सरोवरों में, कूलों में, पुलिन-प्रदेशों में, निकुंजों में, केलीगृहों में, कृतक-अद्रियों में, शैलशृंगों में, सानु (-प्रदेशों) में, उर्वीरुहों (वृक्षो) में, (उनकी) आड़ में, विना कहीं रुके, उर्वीतनूभवा (सीता) को ढूंढा। उस वनमध्य में, रात-दिन पहरा देनेवाले राक्षससमूहों का निलय वन, आकाश को मात कर देनेवाली ऊँचाई से प्रकाशित होते हुए, मेरु (पर्वत) के शिखर-समूह की अवहेलना करते हुए, स्वर्णकुंभों (कलशों) से अधिक शोभायमान स्वर्णस्तम्भों की व्याप्ति (प्रचुरता) से दीप्त होते हुए ॥ १८० ॥ —वर-रत्न-तोरण-समूहों से शोभित उरुतर (वहुत वड़े) सौध को देखा। (देखकर) उस समस्त अट्टालिका को ढूँढकर, भूमिजा को न पाकर, मन में दुखी हो,

सीता के न दीखने पर हनुमान का दुःख

—(हनुमान सोचने लगा)—"इनवंश-वल्लभ (राम) के एकान्त में, प्रथमतः मुझे बुलाकर, वड़े मोद से बुलाकर, यह कहकर कि 'तुम्हीं जनकजा का पता लगा सकोगे' मेरे हाथ में मुद्रिका रखने पर, (उनका) सेवक वनकर, मैं सप्रयत्न आया हूँ। कहीं कमलाक्षी (सीता) का पता नहीं लगा पाया हूँ। इस दुरात्म (दुष्ट) के अपने को यहाँ लाते समय, कहीं वेदना के कारण उस इन्ती (स्त्री) ने प्राण छोड़ दिए हों ?

यिच्चट दनुजुल नीक्षिंचि बेंदरि । चच्चेनो ? विरहाग्नि समसेनो ? लेक
कमलाक्षि यौरुलकु गानराकुंड । भ्रमपेट्टि मायलु वन्नेनो वीडु ?
ऑडु देशंबुल नुनिचेनो ? काक । दंडिंचि चंपेनो तरलाक्षि नसुर ? १९०
येमनि मगुड्डु ? नेमंदु बोयि ? । येमि चेयुदु निक निट मीद नेनु ?
"वामाक्षि गानक वच्चिति" ननिन । रामुडप्पुडे पायु ब्राणवायुवुल ;
नन्नकै सौमित्रि यडगु; नी वार्त । विन्नंत भरतुंडु विड्चु ब्राणमुल;
नतनिकै शत्रुघ्नुडखिलबांधवुलु । हतुलौदु; रिनवंशमंतयु समयु;
नदि चूचि सुग्रीवुडायंगदुंडु । मोंदलैन कपिवंशमुलु नाशमोंदु;
गान वानप्रस्थुगति महाटवुल । नेनु गापुंड्डु; निदियु गादेनि
सोंद बेर्चुकोंनि यग्नि जोत्तु; नोंडेनि।नुदधिलो बडि चत्तु नुसुरास दक्कि
यक्कट ! संपाति याडिनमाट । निक्कंबुगा नम्मि नीरधि दाटि
यिच्चटि कोंटिमै ने वच्चुटेल्ल । नच्चुगा वृथयय्ये; नौगाक ! येमि
त्रिदशुलतो गूड देंगुवमै बेंचि । त्रिदशेंद्रु बट्टि बाधितु नोंडेनि २००

(अथवा) आकाश में अतिवेग से आते समय, मारे भय के, राक्षस के हाथ से छूटकर कहीं अंबुधि (समुद्र) में न गिरी हों ? (अथवा) यहाँ राक्षसों को देखकर, कहीं (भय से) प्राण छोड़ दिए हों ? (अथवा) विरह की अग्नि में भस्म हो गयी हों ? अथवा इसने (रावण ने) किसी ऐसी माया की रचना की हो जिससे वह किसी को दीखे ही नहीं ? (अथवा) कहीं अन्य देशों में रख दिया हो ? नहीं तो राक्षस ने दंडितकर मार डाला हो ? ॥ १९० ॥

—मैं किस प्रकार (किस मुँह से) लौट पड़ूँ ? जाकर क्या कहूँ ? अब आगे मैं क्या करूँ ? यदि यह कहूँ कि वामाक्षी (सीता) को देखे बिना आया हूँ तो राम तभी प्राणवायु छोड़ देगा। अग्रज के लिए लक्ष्मण मर जाएगा। यह समाचार सुनते ही भरत प्राण छोड़ देगा। उसके लिए शत्रुघ्न (और) अखिल बन्धु (सगे-संबंधी) मर जायँगे। (इस प्रकार) समस्त सूर्यकुल नष्ट हो जाएगा। यह देखकर सुग्रीव, अंगद आदि कपि-वंश (समूह) विनष्ट हो जायँगे। अतः वानप्रस्थ की तरह मैं महाटवियों में रह जाऊँगा। यह भी न हो सका तो चिता बनाकर, अग्नि में प्रवेश करूँगा। नहीं तो प्राणों पर आशा छोड़कर उदधि (समुद्र) में डूब मरूँगा। हाय, संपाति की कही बात को सच मानकर, नीरधि (समुद्र) को पारकर यहाँ मेरा अकेले आना एकदम व्यर्थ हो गया। हुआ तो क्या हुआ ? साहस करके त्रिदशों (देवताओं) के साथ त्रिदशेन्द्र (इन्द्र) को पकड़ सताऊँगा। नहीं तो ॥ २०० ॥

जेलगु कीललतोड शिखि नीट । यिल ब्रामि प्रभलु मायितु नोंडेनि
ग्रंदुगा जमुनि गिंकरुलतो वट्टि । डेंदंवु वगुल दंडितु नोंडेनि
ज़लमोप्प निऋृति राक्षसुलतो गूड । वेलुकुरु वट्टि नोप्पितु नोंडेनि
वारिरासुलतोड वरुणु गारिंचि । धीरत गेल्चि साधितु नोंडेनि
गरुवलि नय्येडु गाड्पुल बेनचि । केरलि यंदंद शिक्षितु नोंडेनि
नलिरेगि धनदु गिन्नरुलतो वट्टि । चेलुवेदि कूल भंजितु नोंडेनि
नेनय सेनानितो नीशानु वट्टि । चेनसि योंडोंड निर्जितु नोंडेनि
नी लंक दैत्युल नी यब्धि मुंचि । लीलमै गलचि गालितु नोंडेनि
ने नित सेसिन नेल्ल देवतलु । नानतुलै वच्चि यतिव जूपेदरु; २१०

काकुन्न राघवुल् करुणमै दारे । यी कीडु वलदनि यिक मान्चेदरु
अनि निश्चयमु सेसि या मेड शिखर । मनिलनंदनुडेक्कि या समीपमुन
वायुवु नेंडयु वडि जोर रानि । या यशोक वनांतरावनि लोन

—प्रज्वलित होनेवाली ज्वालाओं के साथ शिखि (अग्नि) को पानी में डुबोकर, ज़मीन पर रगड़कर उसकी प्रभाओं को समाप्त कर दूँगा। नहीं तो उपद्रव मचाकर यम को, किंकरों के साथ पकड़कर ऐसा दंडित करूँगा कि हृदय फट जाए। नहीं तो हठ कर के नैऋृति को राक्षसों के साथ पकड़कर, बेहालकर दुखी बनाऊँगा। नहीं तो जलराशियों के साथ, वरुण को पीड़ितकर धैर्य से उसे जीतकर (कार्य को) संपन्न करूँगा। नहीं तो वायु को, सप्त पवनों के साथ बाँधकर, विजृंभित हो, जहाँ-तहाँ दंडित करूँगा। नहीं तो भड़ककर कुबेर को, किन्नरों के साथ पकड़कर, ऐसा करूँगा कि समस्त शोभा चूर हो जाए। नहीं तो ढंग से सेनानी (कुमार) के साथ ईशान को पकड़कर, युद्धकर, पराजित कर डालूँगा। नहीं तो कुतल (पृथ्वी) को पहाड़ों के साथ कुम्हार के चाक के समान घुमा-घुमाकर उगलवा दूँगा। नहीं तो इस लंका के दैत्यों को इस अब्धि (समुद्र) में डुबोकर, सलील हो, उपद्रव मचाकर, छान डालूँगा। मैं इतना करूँगा तो समस्त देवता आनत हो (झुककर), आकर स्त्री (सीता) को दिखा देंगे ॥ २१० ॥

—यह नहीं होगा तो राघव ही स्वयं ही दया करके इस नाश से मुझे रोकेंगे। ऐसा निश्चयकर अनिलनन्दन उस सौध के शिखर पर चढ़कर, उसके समीप में वायु और आतप के लिए भी झट से प्रवेश के लिए दुर्गम उस अशोक-वन के भीतर

हनुमंतुडु सीतनु जूचुट

नेलमि बोंपिरि वोयि हेमवर्णमुन । विलसिल्लु शिंशुपावृक्षंबुक्रिंद
व्रतमुल गड्डस्सि वनटल ग्रुस्सि । यति दुःखमुन गुंदि यलतल गंदि
विपुलाश्रुवुल दोगि विरहाग्नि ग्रागि।कपटवृत्तुल जिक्कि कडुमुट्ट स्रुक्कि
जीवंबुपै रोसि चेलुवंबु बासि । या विधि मदि दूरि यलसत मीरि
चेक्किट जेयि सेर्चि चिंतल कोर्चि । दिक्कुलेमि दलंचि धृति दूर डिंचि
यिनरश्मि वाडिन येलदीग वोले । घनधूमयुत दीपकळिकयु बोले
जलदमालिकलोनि शशिकळयु वोले । बलुमंचु वोंदिविन पद्मिनि वोले २२०
जेलगु पिल्लुललोनि चिलुकयु बोले। बुलुललो नावुनु बोले दुर्वार
घोरराक्षस वधूकोटिलो नुन्न । नारि शिरोमणि नळिनायताक्षि
नलिनांगि वेणीसमन्वित जघन । गलित भूषण जाल गद्गद कंठि
जनितोष्ण निश्वास सततोपवास । जनकतनूजात जगदेकमात
निखिल सन्नुतपूत निर्मलख्यात । यखिलगुणोपेत ययिन या सीत

हनुमान का सीता को देखना

—आनन्द से समृद्ध हो, हेमवर्ण से विलसित शिंशुपावृक्ष के नीचे, व्रतों (के अनुष्ठान) के कारण अधिक थकी, शोक से कृशीभूत, अति दुःख से विलखती हुई, श्रम से व्याकुल, विपुल अश्रुओं में ऊभचूभ, विरह की अग्नि से तप्त, कपटवृत्ति (आचरण) में फँसकर अत्यधिक दुर्बल, जीवन के प्रति विरक्त, सौंदर्य को खोकर, उस विधि (ब्रह्मा) को मन में कोसकर, थकावट के अधिक होने पर, कपोल पर हाथ रख, चिन्ताओं को सहकर, (अपनी) असहाय स्थिति के वारे में विचारकर, धैर्य को छोड़कर, सूर्य की रश्मि से सूखी नवलतिका के समान, घन-धूम-युक्त दीपकलिका (शिखा) के समान, जलद-मालिकाओं में शशिकला के समान, अधिक तुषार से आवत पद्मिनी के समान, ॥ २२० ॥

—विजृंभित मार्जारों के बीच तोते के समान, व्याघ्रों के मध्य (फँसी) गाय के समान, दुर्वार-घोर-राक्षस-वधू (नारी)-कोटि (समूह) के मध्य स्थित नारी-शिरोमणि, नलिनायताक्षी, मलिनांगवाली, वेणी-समन्वित जघनवाली, कलित-भूषण-जाल (समूह) वाली, गद्गदकंठवाली, जनित-उष्ण निश्वासवाली, सतत् उपवास करनेवाली, जनकतनूजाता, जगदेक माता, निखिल सन्नुत-पूत (सब से प्रशंसित पवित्र चरित्रवाली), निर्मल ख्यातिवाली, अखिल-गुण-समुपेता उस सीता को देखा। देखते ही संभवतः सीता हो सकती है, यह सोचकर, अतिभक्ति से राम-लक्ष्मण को

बोंडगनि सीत गावोलु बोम्मनुचु । गडुभक्ति रामलक्ष्मणुलकु म्रोक्कि
कडुवेड्क सुरलनु गडगि वेडुचुनु । नडरेडु मुदमुन ना मेड डिग्गि
मदि नुव्वि यंगुष्ठमात्नुडै कदिसि । पदिलुडै या शिंशुपा वृक्षमेक्कि
बालुडै यल वटपत्नंबुनंदु । वे लील ग्रीडिंचु विष्णुंडु वोलॆ
शाखामृगेंद्रुंडु जडिगोन्न दानि । शाखललो डागि चतुरुडै निलिचि २३०
पावनचरितुडा पद्मायताक्षि । भाविंचि भाविंचि पलुमारु जूचि
"कडकतो ऋश्यमूकमुनंदु गन्न । तोडवुलु नी युन्न तोडवुलु जूड
नेकप्रकारंबु; ली पद्मनयन । काकुत्स्थु सति सीत गावोलु" ननुचु
मरियुनु बरिकिंचि मारुतात्मजुडु । नेरसिन वुद्धिमै नेलत नीक्षिंचि
श्रीरामुडानतिच्चिन प्रकारमुन । ना रमणीमणि यवयव श्रीलु
गर्णभूषणमणि करकंकणमुलु । स्वर्णांबरंबुनु सरि वरकिंचि
वलवंत बडि वेगुवारि चिह्नमुलु । वलनोप्पगल पतिव्रतल चिह्नमुलु
जदुरांड्रगु मर्त्यसतुल चिह्नमुलु । जेंदरकन्नियु जूचि चिंतिंचि मरियु
गोनकोनि रामु वेकोनि प्रलापिप । गनुगोनि मरि सीतगा निश्चयिंचि
या विन्ननगु मोमु ना कृशांगंबु। ना विरिसिन वेणि या युन्न युनिकि २४०

प्रणामकर, बड़े उत्साह से देवताओं की प्रार्थना कर, अतिशय मोद से उस सौध से उतरकर, मन में फूलकर, अंगुष्ठ-मात्र (आकारवाले) होते हुए, निकलकर, सावधानी से उस शिंशुपा वृक्ष पर चढ़कर, बालक बनकर वट पत्न पर अनेक प्रकार से क्रीडाएँ करनेवाले उस विष्णु के समान, शाखा-मृगेंद्र (वानरेंद्र) उस (वृक्ष) की घनी शाखाओं में छिपकर, चतुरता से स्थित होकर, ।। २३० ।।

—पावन चरित्नवाले (हनुमान)ने उस पद्मायताक्षी के बारे में सोच-सोचकर बार-बार देखकर, (सोचा)—"ऋश्यमूक में देखे हुए आभूषण (और) ये आभूषण, देखने पर, एक प्रकार हैं । यह पद्मनयना काकुत्स्थ (रामचंद्र) की पत्नी हो सकती है ।" फिर (उसे) देखकर, मारुतात्मज समर्थ बुद्धि से स्त्री (सीता) को देखकर, श्रीराम के वचनानुसार, उस रमणी-मणि के अवयव-सौभाग्य (सुघड़ता), कर्णभूषण, मणि (-जडित) करकंकण, स्वर्णांबरों को ठीक तरह से परिशीलन कर, प्रेम की पीर में फँसकर व्यथित होनेवालों के लक्षणों को, सुशोभित पतिव्रता (स्त्रियों) के लक्षणों को, चतुर मर्त्यस्त्रियों के लक्षणों को स्थिरता से सब को देखकर, विचारकर, और सप्रयत्न राम का नाम लेकर प्रलाप विलाप करते देख यह निश्चय कर कि वह सीता है, उस विवर्ण मुख, कृश-अंग (शरीर), बिखरी वेणी, उस स्थिति, ।। २४० ।।

या दुरवस्थयु ना विलापंबु । ना दैन्यमुनु जूचि यात्मलो वगचि
'चंद्रुनि बासिन चंद्रिक रीति । जंद्रास्य या रामचंद्रुनि बासि
युंडुने ? यी यिंति नॊगि बासि रामु । डुंडुने ? यिदि सोद्यमूहिंचि चूड
गुलशील दाक्षिण्य गुण वयोधर्म । ललितरूपमुलॊक्कलागौट जेसि
यारामविभुनकी यंगनामणियु । नी राम का रामनृपतियु दगुनु;
ई कांतकै कादॆ यिनकुलेश्वरुडु । श्रीकंठु विलु द्रुंचॆ जॆरकु चंदमुन
नाकुलंबुन जॆंद नडरि याकपट । काकंबु शिक्षिंचॆ गडिमि वाटिंचि
तॊलुत बट्टिनयंत द्रुंचॆ विराधु; ।नलि गोसॆ ना शूर्पणख मुक्कु सॆवुलु;
खरदूषणादि राक्षसुल खंडिंचॆ; । मरणंबु नॊंदिंचॆ मारीचु नीचु;
वालि नॊक्कम्मुन वधियिंचॆ; गपुल। नालुगुदिशल कुन्नतशक्ति बनिचॆ;
२५०
वारललोपल बलवंतुंडननुचु । नारूढगति नंगदादुल गूडि
घनपुण्य निधियॆन काकुत्स्थु नॆदुर । बनिपूनि वच्चितति बंतंबु मॆरसि;
ना पुण्यवशमुन ना कोरिनट्ल । यी पुण्यसति गंटि निच्चोट वच्चि;
दारुणासुरवधूतति नट्टनडुम । गारणाकृति जिक्कि कलगु नी सतिकि

—उस दुर्दशा, उस विलाप, उस दैन्य को देखकर मन में दुखी हो (हनुमान ने सोचा)—"चन्द्र से बिछुड़कर चन्द्रिका के समान, चंद्रास्या (चन्द्रमुखी) उस रामचन्द्र से बिछुड़कर रह सकती है ? इस स्त्री से बिछुड़कर राम रह सकेंगे ? विचार कर देखने पर यह आश्चर्य (की बात) है। कुल, शील, दाक्षिण्य, गुण, वय, धर्म, ललित रूप के एकसम होने के कारण उस प्रभु राम के लिए यह अंगनामणि (रमणीश्रेष्ठ) तथा इस रामा के लिए वह राजाराम उपयुक्त ही है। इसी कान्ता के लिए तो इनकुलेश्वर (राम) ने ईख की तरह श्रीकंठ (शिव) के धनुष को तोड़ दिया था। (इसके) व्याकुल होने पर अतिशयता से कपटी कौए को, पराक्रम मानकर दंडित किया था। पूर्व में विराध के पकड़ लेते ही (उसका) वध किया था। लीला से उस शूर्पणखा के नाक-कान काट दिए थे। खर-दूषण आदि राक्षसों का संहार किया था। नीच मारीच को मौत के घाट उतारा, वाली को एक बाण से मार डाला था। उन्नत शक्ति से चार दिशाओं में कपियों को भेजा। ॥ २५० ॥

उनमें (अपने आपको) बलवान समझते हुए, आरूढ़ गति से अंगद आदियों के साथ घन-पुण्यनिधि काकुत्स्थ (राम) के समक्ष, होड़ लगाकर, कार्य संपन्न करने आया हूँ। अपने पुण्यवश, अपनी इच्छा के अनुसार, इस पुण्यसति को यहाँ आकर देख पाया हूँ। दारुण-असुर-वधूतति (स्त्री-समूह)

नॆ॰भंगि जूपुदु निक ना रूपु ? । नॆ॰भंगि भाषिंतु नीयिंतितोड ?
नॆ॰भंगि नूरार्तु नी पुण्यसाध्वि ? । नॆ॰भंगि नि॰भंगु लॆरिंगितु सतिकि?

सीतयॊद्द रावणुनि प्रलापमु

ननि यिट्लु चिंतिप नंत रावणुडु । जनकज जिंतिंचि संतापमंदि
वेकुवजामुन वेग मेल्कांचि । तेकुव मनसिजाधीन चित्तमुन
दिव्यमाल्यंबुलु दॆरगॊप्प मुडिचि । दिव्यगंधंबुलु दॆरगॊप्प बूसि
दिव्याबरंबुलु दॆरगॊप्प गट्टि । दिव्यभूषणमुलु दॆरगॊप्प वॆट्टि २६०
तन किरीट प्रभाततुलॆदं बर्व । घनचंद्रहास संकलितुडै मॆरसि
करमणि कंकण क्वणनमुल् मॊरय । सरस नच्चरलु विंजामरलिडग
घनकुचहारमुल् ग्राल गंधर्व । वनिताजनमु लालवट्टमुल् वट्ट
गॊडुगुनु धरियिंचि कुचमूलरुचुल । नडयाडुचुंड गिन्नरसतुल् गॊलुव
बाहुपार्श्वबुल् बरगंग हस्त । वाहिकलै यक्षवनितलु नडुव
बरिमळोदक पानपात्रिकल् वट्टि । गरुड कामिनुलिरुगडल नेतेर

के बीचोंबीच, कारणाकृति से फँसकर विकल होनेवाली इस सती को मैं अब किस प्रकार अपना रूप दिखाऊँ ? इस स्त्री के साथ कैसे बात चलाऊँ ? इस पुण्य-साध्वी को किस प्रकार सांत्वना दूँ ? सती को कैसे समस्त दशा जताऊँ ?"

सीता के पास रावण का प्रलाप

ऐसा कह, इस प्रकार हनुमान के सोचते रहने पर, रावण जनकजा के बारे में सोचकर, संतप्त हो, बड़े तड़के शीघ्र जागकर, स्थैर्य से, मनसिज-अधीन चित्तवाला होता हुआ, दिव्य मालाओं को ढंग से धारणकर, दिव्य गंधों (चंदन आदि) का ढंग से लेपकर, दिव्य वस्त्रों को ढंग से पहनकर दिव्य भूषणों को ढंग से धारण कर, ॥ २६० ॥

—अपने किरीट को प्रभाततियों के हर जगह व्याप्त होने पर, घन चन्द्रहास (खड्ग)-संकलित (युक्त) हो, शोभायमान होकर पार्श्व में करमणिकंकणों के क्वणित हो झंकृत होने पर, अप्सराओं के चामर डुलाते रहने पर, घन-कुचों पर हारों के फबते रहने पर, गंधर्व-वनिता-जन (समूह) के छत्र धारण करने पर, छत्र धारणकर, कुचमूल (बाहुमूल)-रुचियों (कान्तियों) के शोभित होते रहने पर, किन्नरों की स्त्रियों के सेवाएँ करते रहने पर, बाहु-पार्श्व भागों के विलसित होते रहने पर, यक्ष-वनिताओं के हस्त वाहिकाएँ बन (साथ) चलने पर, दोनों पार्श्वों में परिमल-उदक (सुगंधित जल) की

लेंडनेंड संदडि नेंडगलग जडिसि । कडगि मुंदर नागकन्यलु नडुव
विद्याधर स्त्रीलु वीणादिवाद्य । हृद्यसंगीतंबु लिपुगा बाड
दन गुणोन्नतुलकु दग सिद्धसाध्य । वनितलु सेरि कैवारमुल् सेय
बागॉप्प वरखड्गपाणुलै कदिसि । रागिल्लि वेंनुक रा राक्षस स्त्रीलु
२७०
कलगॉनि करदीपिका सहस्रमुलु । वेलुग मंडोदरि वेड्क दोड्कॉनुचु
मेंरुगुलु वेंनुकॉनु मेघंबु वोलें । मरियुनु गल सतुल् मलसि तग्गॉलुव
नुरुपादहति कोडि युर्वि गंपिप । बरिहासरवमु लंबर वीथि निंड
मंजीरमेखलादि मणिभूषणादि । शिंजितंबुलु विंदुसेय वीनुलकु
ना यशोकाराममपुडु सॉत्तेंचि । वायुसूनुडु दन्नु वांछतो जूड
निद्रावशेष घूर्णितदृष्टितोड । भद्रकेयूरांकबाहुलतोड
वसुधपै जीराडु वल्लेंवाटु तोड । वसिवाळ्ळु वाडिन वदनंबु तोड
घनतरभीषणाकारंबु तोड । जनकज मुंदर जनुदेंचि निलिचें;
निलिचिन गनुगॉनि निव्वेंरगंदि । तलपुलो रघुरामु दप्पक निलिपि
यूरुलु नुदरंबु नुरुकुचद्वयमु । जारुहस्तंबुलु जक्कगा माटि २८०

पान-पात्रिकाएँ (छोटे पात्र) लेकर, गरुड़ों की स्त्रियों के चलने पर, जहाँ-तहाँ हलचल के मचने पर मन में डरकर, (फिर भी) साहस कर आगे नाग-कन्याओं के चलने पर, विद्याधर स्त्रियों के वीणा आदि वाद्यों के साथ हृद्य-संगीत को मधुरता से गान करने पर, अपने गुणों की उन्नति के अनुकूल सिद्ध और साध्य वनिताओं के मिलकर स्तुतिपाठ करने पर, अच्छे ढंग से हाथों में वर खड्गों से युक्त हो, प्रेम के साथ राक्षस स्त्रियों के पीछे-पीछे आने पर, ॥ २७० ॥

—विकल होकर दीपिका सहस्रों के बलते रहने पर, उत्साह से मंदोदरी को साथ लेकर, चपलाओं से युक्त मेघ के समान, अन्य सतियों के घेर कर अपनी सेवाएँ करते रहने पर, उरु (बृहत्) पाद के आघात से हारकर, उर्वी (पृथ्वी) के कंपित होने पर, परिहास के स्वनों से अंबर-वीथि के भर जाने पर, मंजीर (तथा) मेखलाओं के मणिभूषण आदि के शिंजितों (ध्वनियों) के कानों में मधु घोलने पर, तब उस अशोकाराम (उपवन) में प्रवेशकर, वायुसून के इच्छा से अपने को (रावण को) देखने पर, निद्रा-वशेष-घूर्णित दृष्टि लिए, भद्रकेयूरों से अंकित (अलंकृत) बाहुओं के साथ, वसुधा पर लोटनेवाले उत्तरीयके साथ, मुरझाए बदन के साथ, घनतर-भीषण-आकार के साथ, (रावण) जनकजा के सामने आ खड़ा हो गया। (ऐसा रावण के आ) खड़े होने पर, उसे देख, आश्चर्यचकित हो, विचार

पुलिगन्न लेडिनि वोलि चित्तमुन । गलगुचु नुन्नट्टि कल्याणि जूचि
वनितललोन दुर्वारगर्वमुन । दनु दैवमाडिप दगवेदि पलिकै;
"निति! नी तनुमध्यमिट दाचनेल? कांत नी नेम्मोमु गैन्नालनेल ?
वेंडविटि वानिकि वेंरचिन नन्नु । गडकंट निकनैन गावुमो यवल !
बलमिनैननु बट्टि परकांत वोंद । दलचुट तम जाति धर्ममो यवल !
यैन नी यानति यरसियुन्नाड; । गान ना माटलु गैकोनि विनुमु ।
ई रूपमुन नुंड नेमि कारणमु ? । दारुणाटवि दाटि तम्मुडु दानु
वनित! रामुडु वच्चि वनधि बंधिचि । ननिचिन कडिमिमै नन्नु साधिच्चि
गोनकोन्न वेड्क दोकोनिपोवु निन्नु । ननि विचारिंचेंदवात्मलो नीवु;
अमरेंद्र यम वरुणादुल कैन । समरंबुलो नन्नु साधिपरादु; २९०
ई बेलतनमेल ? यिंदीवराक्षि ! । ना बाहुशक्तिकि नरुलेंतवार ?
लडवुल गोंडल ननदयै तिरिगि । यिडुमलु पडुचुन्न हीनमानवुनि
पोंदेल कोरेंदु? पोंलति! नन् बोंदि । पोंदनोल्लवे राज्यभोगंवुलकट !

(मन) में रघुराम को स्थिर बनाकर, ऊरु (जाँघ), उदर, उरु (पीन) कुचद्वय, चारुहस्त को अच्छी तरह छिपाकर, ।। २८० ।।

—व्याघ्र द्वारा देखी गई हिरनी के समान, मन में विकल होनेवाली कल्याणी (सीता) को देखकर, स्त्रियों से परिवेष्टित होकर, दुर्निवार गर्व से, नियति के कहलाने पर, न्याय (औचित्य) को त्याग (रावण) बोला—"हे सुन्दरी ! यह अपने तनुमध्य (कमर) को क्यों छिपाती हो ? हे कान्ता ! तुम्हारे सुन्दर वदन का हाथ पर झुकना क्यों ? हे अवले ! मन्मथ (की पीड़ा) से त्रस्त मुझे अब तो कृपाकोर से बचाओ । हे अबले ! बल, ही से सही परस्त्री को प्राप्त करने की सोचना हमारे जाति का धर्म है । फिर भी तुम्हारे आदेश की प्रतीक्षा कर रहा हूँ । अतः मेरी बातों को ध्यान से सुनो । (तुम्हें) इस रूप में रहने का कारण (आवश्यकता) क्या है ? हे वनिते ! तुम मन में सोचती हो कि दारुण कानन को अनुज के साथ पारकर, राम आकर वनधि (समुद्र) (पर पुल) बाँधकर, उत्कट साहस के साथ मुझे जीतकर, उत्साह के साथ तुम्हें ले जाएगा । मुझे समर में जीतना अमरेंद्र, यम, वरुण आदि के लिए भी संभव नहीं है । ।। २९० ।।

यह नासमझी (मूर्खता) क्यों ? हे इन्दीवराक्षी ! मेरी बाहुशक्ति के समक्ष मनुष्य किस गिनती के हैं ? जंगलों (तथा) पर्वतों में अनाथ हो घूमते हुए, कष्ट सहनेवाले हीन मानव का सहवास क्यों चाहती हो ? हे नारी ! हाय, मुझे प्राप्तकर, राज्य-भोग भोगना क्यों नहीं चाहती हो ? सुनो, अनिमिषाधिप (इन्द्र) हो, अन्तक (यम) हो, जलाधिप (वरुण) हो,

यनिमिषाधिपुडैन नंतकुंडैन । विनु जलाधिपुडैन वित्तेशुडैन
ननल नैऋति वायु हरुलुनु नैन । जनुदेंचि ना लंक साधिपलेरु;
लंक मानवुलकु लक्षिप दरमे ? । यिक नेक्कडि रामु? डिदेट्लुवच्चु?
वच्चि लंकापुर वरमेट्लु चोच्चु ?। जोच्चि नन्नेभंगि स्रुक्कक येदुरु ?
नेदिरि नातो वोर नेभंगि गदियु? । गदिसि ना सत्वमेगति सैपजालु ?
जालुट येंदाक समकूर बोलु ? । बोलवीमाटलु पो विड्डुमिक"
ननि यिट्लु पलुमारु नरिमि रावणुडु । विनरानि पलुकुलु वेस दूरि पलुक ३००
गडु नलिग गद्गदकंठंबुतोड । बुडक द्रुंचि 'यवश्यमुग रामुचेत
जेंडुदु वी' वनि चाटि चेप्पिन रीति । बडतुक तृणमु चेपट्टि यिट्लनियेः ३०२

जानकि रावणुनि दूरुट

"बापात्म! नीवु ना पति डार्गुरिचि । नी पुरि लंकलोनिकि नन्नु देच्चि
यिदि योक्क कडिमिगा नेल गर्विचे? । दिदि योक्क मेलुगा नेल प्रेलेदवु ?
परवधूरति गोरु पापात्मु कुलमु । सिरियुनु नायुवु जेंडु; नटु गान

वित्तेश (कुबेर) हो, अनल, निऋति, वायु (अथवा) हर हो, कोई भी आकर मेरी लंका को जीत नहीं सकता। (ऐसी) लंका की ओर देखना भी मानव के लिए कहीं संभव है? अब कहाँ का राम? यहाँ (वह) आएगा ही कैसे? आकर भी लंकापुर में प्रवेश कैसे करेगा? प्रवेशकर कमज़ोर हुए बिना कैसे मेरा सामना करेगा? सामना करके भी मेरे साथ कैसे भिड़ सकेगा? भिड़कर मेरे सत्त्व को किस प्रकार सहन कर सकेगा? सहन करना कहाँ तक संभव हो सकेगा? (अतः) ये (सब) बातें संभव नहीं है। छोड़ो इन्हें।" ऐसा कई बार संभ्रम से रावण के (राम की) तुरत निन्दा करते हुए ऐसी बातों के कहने पर जिन्हें सुना नहीं जा सकता, ॥ ३०० ॥

—अधिक रुष्ट हो, गद्‌गद कंठ से, (एक) तिनके को तोड़ मानों घोषणा कर रही हो कि तुम अवश्य ही राम के हाथों नष्ट हो जाओगे (वह) नारी तृण को हाथ में ले यों बोली—

जानकी का रावण की निन्दा करना

"हे पापात्मा! तुम मेरे पति को धोखा देकर, अपने नगर लंका में मुझे लाकर, इसे साहस (का कार्य) मानकर क्यों गर्व करते हो? इसे श्रेष्ठ कार्य मानकर क्यों प्रलाप (बकवास) करते हो? पर-स्त्री-रति को

दगवुनु धर्मंबु दलपोसि नन्नु । मगुड रामुन किम्मु मनगोरेदेनि;
गादनि दुर्बुद्धि गैकोंटिवेनि । गोदंड दीक्षागुरुनिचे राम
जननाथुचे नीवु सच्चुट निजमु;। 'वनवासकृशुडु केवल दुर्बलुंडु
ननद राज्यविहीनु डसहायुडतडु । मनुजमात्रु' डटंचु मदि नेन्नवलदु;
दंडकाटवि जतुर्दश सहस्रोग्र । चंडराक्षस कोटि जंपडे तोल्लि ?
३१०
दंडधरोद्दंड दंडंबु नोंडिसि । चंडांशु किरणोग्र संरंभमडचि
गणना परंपरल् गडचि यदंद । रणभीपणमुलैन रामु बाणमुलु
पंरुवडि नी लंकपै बारुनाडु । तरमिडि नी युरस्स्थलि गाडुनाडु
मुनुकोनि नी शिरंबुलु द्रुंचुनाडु । मुनुमिडि नी रक्तमुलु ग्रोलुनाडु
रावण ! नी लावु रघुरामु लावु । नीवु चूचेदु गाक नेडेल चेप्प !
नेंडतो ब्रालेयमंदिरिनयट्लु । कोंडतो दगरु डीकोनिन चंदमुन
मदहस्ति दोम मार्कोन्न करणि । नुदधितो गाल्व मोंडोड्डिन पगिदि
श्रीतरुवुतो वेमु श्रीशुतो जोगि । धाततो विप्रुंडु धनिकुतो बेद

चाहनेवाले पापात्मा का वंश, श्री (संपदा) और आयु नष्ट हो जाएँगे । अतः न्याय (औचित्य) धर्म के बारे में विचारकर, यदि जीवित रहना चाहते हो तो मुझे राम को लौटा दो । न मानकर दुर्बुद्धि को ग्रहण करोगे तो कोदंड-दीक्षा-गुरु प्रभु राम के हाथ तुम्हारा मरना सत्य है । मन में यह मत सोचो कि '(राम) वनवास से कृश हैं, मात्र दुर्बल है, अनाथ है, राज्य विहीन है, निस्सहाय है, मनुजमात्र हैं ।' क्या उसने पूर्व में दंडक वन में चतुर्दश सहस्र (संख्यावाले) उग्र (तथा) चंड-राक्षस-कोटि (समूह) का बध नहीं किया ? दंडधर (यम) के उद्दंड दंड को मात करनेवाले, चंडांशु (सूर्य) की किरणों के उग्र संरभ को परास्त करनेवाले (तथा) गणना के क्रम को पार करनेवाले (असंख्य) राम-बाण जहाँ-तहाँ रणभीषण होकर, शीघ्रता से तुम्हारी लंका पर व्याप्त होते समय, झट से तुम्हारे वक्षःस्थल पर गड़ते समय, लगकर तुम्हारे सिर काटते समय, लगकर तुम्हारे रक्त का पान करते समय हे रावण ! उस समय अपने तथा राम की सामर्थ्य का अनुभव कर सकोगे । आज (उस सम्बन्ध) में क्यों कहूँ ? कुहरे का आतप का सामना करने के समान, भेड़े का पर्वत से टक्कर लेने के समान, मच्छड़ का मदगज का सामना करने के समान, नाले का समुद्र की बराबरी करने के समान, नीम (के पेड़) का श्रीतरु (कल्पवृक्ष) से, जोगी (निर्धन) का श्रीश (विष्णु) से, विप्र का धाता (ब्रह्मा) से, सियार का भूत से बराबरी करने के समान, छोटे बच्चों के समान जो (खेल में)

जातिरत्नमुतोड सरि गाजुपूस । बूतंबुतो नक्क पुरिंणिचिनट्लु
तन्नंटुकोनुवारु तनयंतलनुचु । बिन्नबिड्डुलमाड्कि ब्रेलेदवीवु; ३२०
तेंगुवमे राघवधिपुनकु नीकु । मगटिमि मदहस्तिमशकांतरंबु;
मिगुल नोरुलु गलिग मीरि पल्केदवु।जगति रामुनितोड सरियें राक्षसुड!
ओक लंक येलुचु नुब्बेदवीवु । सकललोकमुलकु स्वामि राघवुड;
अखिल कंटकुडवीवन्नि लोकमुल । नखिललोकाराध्युडाराघवुंडु;
वेदचोरुडवविवेकिवि नीवु । वेदंबुलकु नेल्ल वेद्युंडतडु;
कर्मपूरितघनकायुंड वीवु । निर्मलगुणयशोनिधि राघवुंडु;
सर्वजीवाळि भक्षकुडवु नीवु । सर्वजीवुलकुनु समुडु राघवुडु;
उन्नतोन्नतुडैन युर्वीशुनकुनु । अन्नि सारेल पेंट्टु नेरुगवु नीवु;
इंद्रुंड जंद्रुंडु निनुडु गाडतडु । निंद्रादिवंद्युडुं निनवंशजुंडु;
निन्नु मर्दिचियु नी पेरु मान्चि । नन्नु गोंपेयेंडि; नम्मुमितटिकि; ३३०
नाकु नीकुनु साक्षि ननु देच्चुनपुडु । गैकोनि योक पक्षि कडगि येतेंचि
नी लावु शक्तियु नी पराक्रममु । नेलपालुग जेसि नेंरि व्रेसि निलुप
गपटभाषलु वल्कि घनपक्षिनाथु । नपुडु खंडंचिन यधमुड वीवु;

यह कहते हैं कि मुझे छूने वाले मेरे बराबर होंगे, क्यों बकवास करते हो ? ॥ ३२० ॥

राघवाधिप तथा तुम में, पराक्रम की दृष्टि से, मदहस्ति और मशक (मच्छड़) का अन्तर है। अधिक मुँह रहने से ज्यादा बोलते हो। हे राक्षस! (यह) जगत राम की सानी रख सकता है ? एक लंका पर शासन करते, (गर्व से) फूल रहे हो, राघव तो सकल लोकों का स्वामी है। तुम सभी लोकों में अखिल कंटक हो, वह राघव तो अखिल लोकों का आराध्य है। तुम अविवेकी तथा वेद-चोर हो। वह तो सभी वेदों का वेद्य है। तुम कर्म पूरित-घन-काय वाले हो, राघव तो निर्मलगुणयशोनिधि है। तुम सर्व जीव समूह के भक्षक हो, राघव सर्व जीवों पर समदृष्टि रखनेवाला है। उन्नत से उन्नत वह उर्वीश (राजा) तुमसे कितने गुने बड़ा है, तुम नहीं जानते। वह इन्द्र, चन्द्र, (अथवा) इन (सूर्य) नहीं है। इन-वंशज (राम) इन्द्रादि-वन्द्य है। अब इस पर विश्वास रखो कि तुम्हारा मर्दन (संहार) कर, तुम्हारे नाम (यश) को नष्टकर, मुझे ले जाएगा ॥ ३३० ॥

तुम्हारे मुझे लाते समय, एक पक्षी के साहस युक्त हो आकर, तुम्हारे बल, शक्ति, तुम्हारे पराक्रम को नष्टकर, पराक्रम से तुम्हें रोकने पर, कपट की बातें कहकर, महान् पक्षिनाथ को खंडित करनेवाले अधम हो तुम।

तरमॆरुंगक राम धरणीशुतोड । दॊरसिन भस्मै त्रुंगॆदु गाक !
येमिटि कॆंदुरु दन्नॆरुगनिमाट ? । लेमिटि की गर्व ? मिनकुलेश्वरुडु
ई मूडु जगमुल नॆंदु डागिननु । ई महि निन्नेल यिट्लुंड निच्चु ?"
ननिन रावणुडु महारोषमॆत्ति । जनकजजूचि यच्चलमुतो ननियॆ;
"बरमेष्ठि दपमुन बरग मॆप्पिंचि । वरशक्ति नतनिचे वरमुलु गांचि
सुरपति मॊदलुगा सुरलनोडिंचि । गरळकंधरुतोड गॆलासमॆत्ति
कडिमिमै नूर्ध्वलोकमुलु साधिंचि । वडि वॆंचि पाताळवासुल नोंचि ३४०
सकलोन्नतुंडनै सडिगन्न नन्नु । वॆकलियै तमतंड्रि वॆडलंग द्रोव
नतिहीनसत्त्वुडै यडवुललोन । गतिमालि फलमुल वर्णाशनमुल
विकृतांगुडै तपोवृत्तिमै नुन्न । यॊक पेद मानवुडोपुने चॆनक ?"
ननि रामु निंदिप नंदंद बॊगिलि । मनमुन नॊगिलि युम्मलिकंबु मिगिलि
घनशोक गद्गदकंठयै यप्पु । डिनकुलाधिपुदेवि यॆलुगॆत्ति येड्चॆ;
धृतिदूलि नलगड देवगंधर्व । सतुलॆल्ल नेड्चिरि जानकि जूचि;
रावणु गर्वंबु रमणि शोकंबु । भाविंचि कोपतापंबुलु निगुड

(अपने) स्तर को न जानकर राम-धरणीश के साथ भिड़कर, भस्म बन नष्ट हो जाओगे। प्रतिपक्षी तथा अपने को न जाननेवाली यह बात क्यों ? यह गर्व क्यों ? इन तीनों लोकों में कहीं भी छिप जाओ वह इनकुलेश्वर तुम्हें इस महि पर ऐसा क्यों रहने देगा ?" (ऐसा) कहने पर रावण महारोष से जनकजा को देख महाहठ से (यों) बोला:—"परमेष्ठी (ब्रह्मा) को अधिक प्रसन्नकर, वरशक्ति से उससे वर प्राप्तकर, सुरपति से लेकर (सभी) देवताओं को हराकर, गरलकंधर (शिव)- समेत कैलास को (भुजाओं पर) उठाकर, पराक्रम से ऊर्ध्वलोकों को जीतकर, झट से क्रम से पातालवासियों को सताकर, ॥ ३४० ॥

—सकल (लोकों में) उन्नत बन नाम कमानेवाले मुझे अपने मूर्ख पिता के (नगर से) निष्कासित कर देने पर, अति सत्त्वहीन हो, जंगलों में अनाथ हो, फल और पर्ण खाते हुए, विकृतांग से, तपोवृत्ति से रहनेवाला एक मानव मुझे छेड़ने में समर्थ हो सकता है ?" ऐसा (रावण के) राम की निन्दा करने पर जब-तब व्याकुल हो, मन में दुःख के अधिक होने पर घनशोक से गद्गदकंठी होकर, तब इनकुलाधिप की देवी ऊँचे स्वर से विलाप करने लगी। धैर्य को खोकर चारों ओर देवगन्धर्व सतियाँ जानकी को देखकर रो उठीं। रावण के गर्व (तथा) रमणी के शोक के बारे में विचार कर क्रोध और ताप के बढ़ने पर, अनिल-तनूभव (हनुमान) तब

ननिलतनूभवु डप्पु डादुष्ट । दनुजुपै लंघिप दलपोसि चूचि
"बिरुदनै वीनि जंपितिनेनि पतिकि। धरणिजसेमंबु दग जेप्पगलनु;
अमरारि चेत ना यलवेल्ल बोलिसि। समरंबुलोपल जच्चितिनेनि ३५०
लंक दिक्केरुगक ललन नेव्वगल । निकुचु निदुन्कि येरुग जोप्पडक
येनु जच्चुटयुनु नेपेंड विनक । भानुकुलाग्रणि प्राणमुल् विडुचु;
नित चेसिन चेतलेमियु गाक । यंतयु जेडिपोवु नधिपु कार्यंबु;
अेडपक निटमीद नी दैत्यु तोड । गडगि कय्यमु सेयगलवाड गानु;
दनुजुतो बोराडि दर्पिचि गेलुतु ।ननि तलंचिन गेल्पु नदि गानरादु;"
अनि निश्चयमु सेसियात्मलो मुन्नु । दनुजुतो बोरुट तगवु गादनुचु
"नेलतनु दर्शिचि निष्ठतो बिदप । गल कार्यमुलु सेयगलवाड गानि,
अनि सेय निदि समयमु गादु नाकु"। ननि धीरुडै युंडे ना श्रानिमीद;
मरियु रावणुडु गामंबु ग्रोधंबु । वेरयुनु नोरपुनु वेरगुनु गदुर
नाडिन माटल कन्निटि कात्म ।नोडक यतिनिष्ठुरोग्रवाक्यमुलु ३६०
वनितलंदरु विन वसुधातनूज । तनु दूर बल्किन दनुजेशुडंत
गुटिलभावमुन भ्रूकुटिल सन्निटल । चटुल रक्ताक्षुडै जाज्वल्यमान

उस दुष्ट दनुज पर झपटने का विचार कर देख (सोचा)—"शूर-वीर हो इसको मार डालूँ तो पति (राम) को धरणिजा के कुशल के बारे में ठीक तरह बता सकूँगा। अमरारि (राक्षस) के हाथों अपने समस्त बल को खोकर, समर में मर जाऊँगा तो ।। ३५० ।।

—लंका का पता न जानकर, अधिक व्यथा से ललना के यहाँ व्यथित होते रहने की (बात) न जानकर, मेरे मरण का समाचार भी न पाकर, भानुकुलाग्रणी (राम) प्राण छोड़ देंगे। अब तक जो कार्य किया था, वह पूर्ण न होकर, अधिप (राम) कार्य बिगड़ जाएगा। विलंब किए बिना अब इस दैत्य के साथ युद्ध नहीं करूँगा। दनुज से जूझकर, गर्वकर, जीतने की सोचूँ, वह भी दिखाई नहीं पड़ रहा है।" ऐसा निश्चय कर मन में यह सोच कि अब दनुज से लड़ना न्याय (-संगत) नहीं है। यह सोच धैर्य धारण कर शाखा पर बैठा रहा कि "नारी के दर्शन करने के बाद निष्ठा से आगे के कार्य करूँगा। अब यह मेरे लिए युद्ध करने का समय नहीं है।" और (उधर) काम, क्रोध, भय, उतावलापन, स्तब्धता के आधिक्य से रावण की, कही बातें सुनकर, मन से भीत न होकर, समस्त वनिताएँ सुनें इस तरह अति निष्ठुर उग्र वाक्यों से वसुधातनूजा के निंदा करते रहने पर, दनुजेश कुटिल भाव से कुटिल-भ्रू-सन्निटलचटुल-रक्ताक्षी वाला हो, जाज्वल्यमान लोल-आकील-आभील-लोक-संहार (करनेवाली)

लोल कीलाभीललोकसंहार । कालाग्निरीति नाग्रहमुन मंडि
घोरहुंकारुडै क्रूरुडै नीति । दूरुडै या सति दौंडरि भंजिचि
चंद्रहासंबॆत्ति जानकि नेय । निद्रारि गर्मकिचुनॆड गेलु वट्टि

रावणुनिक मंडोदरि नीतिबोध

यमल मंडोदरि यड्डुमै निलिचि।कॊमरॊप्प बलिकॆ ना कुमतियौ विभुनि;
"दंडिमै नॆदिरिन धरणिपालकुडॆ । खंडिप नीकु नी कांत दैत्येश !
यॆन्नि चॆप्पिन विनवेमि सेयुदुन ? । निन्नन बनियेमि ? नी पुराकृतमु !
म्रुच्चिलि परसति मुनु दॆच्चुटॊकटि;। चॆच्चॆर भुवि निंद जॆदुंट रॆंडु;
तॆगुवतोडुत वट्टि तॆच्चिन सतियु । वगगॊनि युंडुडेपॆरुपगा मूडु;
नॊनर दुर्बुद्धि ना युविदनु गूडि । यनुभविंचॆद ननुटारय नालगु;
कन नुत्तमस्त्रील गडगि पल्मारु । विनरानि पल्कुलु वॆस बल्कुटेनु;
गाममणपलेक कामिनि जंप । दा मदि नॆंचुट दनुजेश ! यारु;
तगवॆंचनेरकॊंतयु जेसि तुदिनि । मगटिमिबोवुट मरियुनु नेडु;

कालाग्नि के समान क्रोध से जलकर, घोर-हुँकार युक्त हो, क्रूर वन, नीति-दूर हो, उस स्त्री (सीता) को डाँटकर, चन्द्रहास (खड्ग) उठाकर, इंद्रारि (रावण) जानकी को मारने को उद्यत हो गया। तव उसका हाथ पकड़कर,

मन्दोदरी का रावण को उपदेश

—अमल-मंदोदरी (उसे) रोककर, उस कुमतिवाले विभु से शोभा से वोली:—"हे दैत्येश ! मार डालने के लिए यह कान्ता क्या अतिशयता से सामना करनेवाला (कोई) धरणिपालक है ? कितनी वार कहा, एक भी नहीं सुनते। मैं (अव) क्या करूँ ? तुम्हें कहने की भी क्या ज़रूरत है ? (यह सव) तुम्हारा पुराकृत (पूर्वजन्मकृत पाप) है। पहला दुष्कार्य चोरी करके परस्त्री को लाना है, भुवि (जगत) में (तदर्थ) झट निंदाएँ प्राप्त करना दूसरा है, पराक्रम से लाई गई स्त्री का भी द्वेषभाव से युक्त रहना तीसरा है, दुर्बुद्धि से तुम्हारा उस स्त्री का उपभोग करने की वात सोचना चौथा है, पाँचवाँ (तुम्हारा) वार-वार ऐसी वातें कहना जिन्हें उत्तम स्त्रियाँ सुन नहीं सकतीं, कामभावना का दमन न कर सक, स्त्री को मार डालने की मन में सोचना हे दनुजेश ! छठा है। न्याय (औचित्य) के वारे में न सोचकर कई महान् कार्य कर, अन्त में पौरुष खोना सातवाँ है। (इस प्रकार) इस नारी के कारण सात हानियाँ

नेडु चेट्टुलुनय्ये नीयिंतिवलन; । नेडु गडपगरादु निजमु नेन्न
बौरिबातकंबुल पुट्ट यी मेनु । दोऽगिन सद्गति दौरुकुर्ने नीकु ?
नभिमानवति मानवांगन सीत । कभिलाष पडि यित कलगंगनेल?
नी यंतिपुरमुन नेलतललोन । नी यिंति चिंतिपनेव्वरि बोलु ?
ननु गूडि क्रीडिपु नाथ ! यी चेत । निनुवंटिवानिकि नीति गादेंदु ?
बौलिसेने नी बुद्धि? पोपो" म्मटंचु । बलिमि दौलंगिप बतिकेलिवालु;
३८०
गडु सिग्गुवडि चाल गलुषिंचि सीत । कडनुन्न दुष्टराक्षसवधूजनुल
नतिदीर्घतनुल भयंकराकृतुल । सततनिष्ठुर वाक्य समरकर्कशल
विनत नयोमुखि विकटहयास्य । यनुदानि हरिजट यनुदानि द्रिजट
ब्रघस महोदरि बाटिंचि पिलिचि।लघुवृत्ति बलिकें निर्लज्जुडैनिलिचि;
"प्रियनयोक्तुलनैन बेंदरिंचियैन । भयदचेष्ठलनैन बाधिंचियैन
मासद्वयंबुन मगुव ना सौम्मु चेसि तें। डट्टु मीरु सेयलेकुन्न
नंतटिमीद नी यब्जाक्षि जंपि । यिंतलितलु कंडलिदरु दिनुडु"
अनि यशोकाराममप्पुडु वेंडलि । तन नगरिकि बोये दनुजवल्लभुडु ।

हुई हैं । सच मानें तो सात दोषों से बचना दुष्कर है । यह शरीर पापों की बाँबी (समूह) है । यह छूठ जाए तो क्या तुम्हें सद्गति प्राप्त होगी ? अभिमानवती (मानिनी) और मानव स्त्री सीता को चाहकर इतना विकल क्यों होते हो ? तुम्हारे अन्त:पुर की स्त्रियों में यह स्त्री, विचार करने पर, किसी की समता कर सकती है ? (किसी की नहीं) । हे नाथ, मेरे साथ सुख भोगो । यह करतूत तुम जैसे व्यक्ति के लिए नीति (संगत) नहीं है । क्या तुम्हारी बुद्धि भ्रष्ट हो गई है ? (हट) जाओ, जाओ ।" यह कहते पति के हाथ के खड्ग को बलपूर्वक हटा देने पर, ॥ ३८० ॥

—अधिक लज्जित होकर, अधिक क्षुब्ध होकर, निकट की दुष्ट-राक्षस-वधू जनों को, जो अति दीर्घ तनु वाली थीं, भयंकर आकृतिवाली थीं, सतत-निष्ठुर-वाक्य-समर में कर्कश थीं, विनता, अयोमुखी, विकट हयास्या, हरिजटा, त्रिजटा, प्रघसा, महोदरी नाम वाली थीं, सादर बुलाकर, निर्लज्ज हो खड़े होकर, लघुवृत्ति (नीच बुद्धि) से बोला— "प्रिय-नय-उक्तियों से अथवा धमकियों से अथवा भयद-चेष्टाओं (कार्य) से अथवा सताकर ही मासद्वय में (इस) नारी को मेरी संपत्ति बनाकर लाओ । ऐसा न कर सकोगी तो उसके बाद इस अब्जाक्षी को मार डालकर, (इसके) मांस के टुकड़े खा जाओ ।" (ऐसा) कह तभी अशोकाराम छोड़, दनुज-वल्लभ अपने अन्त:पुर में गया ।

राक्षस स्त्रीलु सीतनु बेदरिंचुट

अपुड जानकि दानवांगनलेल्ल । गृपमालि तमतम कृतक वाक्यमुल
बोधिंचि 'रावणु बोंदु मी' वनुचु । वाधिंचुतरि शूलपाणियै योक्क ३९०
रक्कसि बेदरिंचु; "रामुडीलंक । दिक्कु सूडगलेडु; तेरव ! यायास
विडु" मंचु नोक यिति वेडमति वलुकु; । "निडुमल वडियुंड नेल नीकिट्लु ?
वरियिंपु दानवेश्वरुनि; गादेनि । बोरिगोंदु" ननि योक्क पोलति भर्जिचु;
देंडु खड्गमु; तल तेगगोट्टि दीनि । कंडलु कम्मगा गल्लुतो नद्दि
चविचूत" मनि योक्क जंत मार्मलयु; । "नवु नवु नट्टु सेयु" डनि योर्तु पदुरु;

सीत शोकमु

नी रीति बेदरिप निंदीवराक्षि । धारुणितनय गोंदलमंदि कुंदि
कन्नीरु दोरुग गद्गदकंठयगुचु । दन्नु गारिंचु दैत्यस्त्रील कनियै;
"दलप मानवुलकु दानवलकुनु । गलुगुने दांपत्यगौरव श्रीलु ?

राक्षस स्त्रियों का सीता को धमकाना

तब निष्ठुर हो दानव-स्त्रियाँ अपने-अपने कृतक-वाक्यों से जानकी से 'रावण को अपना लो' कहकर समझाने लगीं। उस समय कोई राक्षसी शूलपाणी हो, ॥ ३९० ॥
—उसे धमकाती, कोई स्त्री मूर्खबुद्धि से कहती कि "राम इस लंका की ओर देख नही सकता। हे नारी ! उस आशा को छोड़ दो।" एक स्त्री डाँट बताती कि "इस प्रकार कष्ट क्यों भोगती रहती हो ? दानवेश्वर का वरण करो। नहीं तो मार डालूँगी।" एक नारी कहती कि लाओ खड्ग। सिर काटकर, इसकी मांसपेशियों को मधुरता से सुरा में डुबोकर चखकर देखें।" एक बकती कि "हाँ हाँ, इसी तरह करो।"

सीता का शोक

इस प्रकार धमकाने पर, इंदीवराक्षी धारुणि-तनया (कमलनयनी सीता) व्याकुल होकर, आँसुओं के ढुलक पड़ने पर, गद्गदकंठवाली होती हुई, अपने को सतानेवाली दैत्यस्त्रियों से (यों) बोली— "सोच विचारने पर

इंदरु दुर्भाषलिट्लाडदगुने ? । चंदुरु वायनि चंद्रिक वोले
भानुनि बायनि प्रभयुनु बोले । नेनु श्रीरामुनि नेडबायजाल; ४००
नानृपालुडु दीनुडैननु राज्य । हीनुडैननु नाकु निष्टदैवंबु;
जलधिकन्यकरीति शर्वाणिभाति । बलुकर्दोय्यलिमाड्कि बौलोमि माड्कि
रोहिणि सरणि नरुंधति करणि । स्वाहंगनागति सावित्रिमतिनि
रतिचंदमुन बतिव्रतनिष्ठ बौदलि । पतियैन रघुरामु भजियिंचुदान;
जंपिन जंपुडु; शातासि शिरमु । द्रेंपिन द्रेंपुडु; धृति रामु गानि
यितरुनि ने नोल्ल; निटुवंटि कल्ल। मतमुलु ने जेल्ल; मानुडि" क्रनिन
मंडुचु वारलामाटकु मिगुल । गंडक्रोव्वुन बेक्कुगतुल गारिंप
धूळिधूसरितयै तूलि लो दारि । नीलाहि बोलिन नेरि वेणि सेदर
नेलपै बडि वेडि निट्टूर्पु निगुड । 'हा लक्ष्मणा !' यंचु 'हा राम !' यनुचु
'हा यत्त! कौसल्य!' यनुचु नेल्गेत्ति। या युत्तमांगन यार्तिमै नेड्चे; ४१०

कहीं मानव और दानवों में दाम्पत्य-गौरव-श्रियाँ(-वैभव) (संभव) हो सकती हैं ? इतने सब का इस प्रकार दुर्भाषाएँ (अपशब्द) कहना क्या उचित है ? चन्द्र से विलग न होनेवाली चन्द्रिका के समान, भानु से विलग न होने वाली प्रभा के समान, मैं श्रीराम से अलग नहीं हो सकती हूँ। उस नृपाल के दीन, राज्यहीन होने पर भी (वही) मेरा इष्टदेव है। जलधि-कन्यका (लक्ष्मी), शर्वाणी, सरस्वती, पौलोमी (शची), रोहिणी, अरुंधती, स्वाहा (अग्निदेव की पत्नी), सावित्री, रती के समान पातिव्रत्य निष्ठा में मग्न हो, पति रघुराम की आराधना करती हूँ। चाहो तो मुझे मार डालो, चाहो तो शातासि (पैनी धारवाली तलवार) से सिर काटना चाहो तो काट डालो। मैं राम के अतिरिक्त अन्य को नहीं स्वीकार सकती। ऐसी कपटी बातों में मैं नहीं आऊँगी। छोड़ दो अब (इन बातों को)।" (ऐसा) कहने पर (राक्षस स्त्रियों के) उन बातों के कारण प्रज्वलित हो, अधिक मत्तता के कारण (सीता को) अनेक प्रकार से सताने पर, धूलिधूसरित होकर, झूमकर, मन में विकल हो, नीलाहि (कृष्णसर्प) सम काली वेणी के (बालों के) बिखरने पर, ज़मीन पर गिरकर, गरम उसाँसें भरती बोली:—"हा लक्ष्मण ! हा राम ! हे सास ! कौसल्या !" ऐसा ऊँचे स्वर में, आर्ति के कारण वह उत्तम नारी रो उठी ॥ ४१० ॥

त्रिजट स्वप्नमु

नंत ना त्रिजटयु नवनीतनूज । संतापमटु चूडजालक तोलगि
नेलकोनि योकचोट निद्रिंचि लेचि । कलगनि राक्षसकांतल जूचि
"योक कलगंटि ने नो यितुलार! । प्रकटिंचि चेप्पेद; बाटिंचि विनुडु;
रामुडेनुगु नेक्कि रा जूड गंटि; । सौमित्रि भृत्युडै चनुदेर गंटि;
ना महागजमुपै नवनिवल्लभुडु । गोमलि नेक्किचुकोनि पोव गंटि;
बट्टाभिषिक्तुडै ब्रह्मादिसुरलु । गट्टिगा गोल्व राघवुडुंड गंटि;
गमनीयमगु पुष्पकमु मीद नुंडि । ब्रमसि रावणुडुर्विपै गूलगंटि;
गूलिन रावणु ग्रूरासि नोकते । नीलांबरमुतोड नेरि जेरगंटि;
जेरि रावणु तलल् चेलवेदि कूल्चि । भूरिगार्दभमुल बूनिन रथमु
नंदुग्रमुग वेचि याम्यदिक्कुनकु । गोंदलपड नीड्चिकोनि पोवगंटि;
गुरुतरोष्ट्रमुनेक्कि कुंभकर्णुडु । तिरमेदि दक्षिणदिशकेगगंटि
दनरारु तोरणततुलतो गूड । वनधिलोपल लंक वडि गूलगंटि;
नतिकायु मकराक्षु ला यिंद्रजित्तु । प्रतनविक्रमुलुर्विपै गूलगंटि;
दैलधारल दोगि दानवुलेल्ल । नेल नूरक पडि निद्रिपगंटि;

त्रिजटा का स्वप्न

तब वह त्रिजटा अवनीतनूजा के संताप को न देख सक, हटकर एक स्थान पर स्थिरता से सो गई, स्वप्न देखकर जाग गई और राक्षसकान्ताओं को देखकर बोलीः—"हे नारियो ! मैंने एक स्वप्न देखा है। प्रकटरूप से कहूँगी। ध्यान से सुनो। राम को हाथी पर सवार आते देखा है। सौमित्र को भृत्य (सेवक) बन आते देखा है। उस महागज पर अवनि-वल्लभ (राजा) के कोमली (सीता) को बैठाकर ले जाते देखा है। पट्टाभिषिक्त हो, ब्रह्मादि देवताओं के दृढता से सेवाएँ करते रहने पर, राघव को देखा है। कमनीय पुष्पक (विमान) पर से भ्रमित हो (चकराकर) रावण को उर्वी (पृथ्वी) पर गिरते देखा है। गिरे रावण के पास एकस्त्री को क्रूरासि ले, नीलांबर धारण किए आते देखा है। (निकट) पहुँचकर रावण के सिरों को शोभारहित कर, गिराकर, भूरि (प्रचुर) गार्दभों से जुते रथ पर उग्रता से डालकर, याम्य (दक्षिण) दिशा की ओर व्याकुल बनाते, खींचकर ले जाते हुए देखा है ॥ ४२० ॥

गुरुत्तर-उष्ट्र (बड़े ऊँट) पर चढ़कर, कुंभकर्ण को, स्थिरता खोकर दक्षिण दिशा की ओर जाते देखा है। सुशोभित तोरणसमूहों के साथ, लंका को झट वनधि में डूब गिरते देखा है। अतिकाय, मकराक्ष, इन्द्रजित

गनकपीठंबुपै गारुण्यमूर्ति । यौनर विभीषणुंडुडंग गंटि;
रावणु मरणंबु रघुरामु जयमु । नेविधंबुन सिद्धमिटमीद निंक;
नट्गान मीरलीयवनीतनूज । बटुदुष्टभाषल भजिपवलदु;
तोलगि पों' डनवुडु दोलगि निद्रिंचि । रलसि राक्षसभामलंदरुनंत;
ना समयंबुन नवनीतनूज । गासिल्लि भयशोककंपितयगुचु
दन्नु रेण्नेललकु दयमालिचंपु । मन्न रावणु माट लंदंद तलचि ४३०
शोकंबु ग्रम्म नशोकंबु कोम्म । या कोम्म यूतगा नटु लेचि निलिचि
लोलत नडवुललो नोंटिबडिन । बालिकेयुनु बोले बलविप दोडगे;

राक्षसस्त्रील बाधलकु जानकि पलविंचुट

"नक्कटा ! दैवंब ! यदयत नन्नु । निक्कड जेरबेट्टि यिटुलेचदगुनें ?
'खलदैत्युचे जावगलवु नीवनुचु । नलिनसूति लिखिचिनाडो ना नोसट ?
गाकुन्न मरि दंडकावनंबुनकु । गाकुत्स्थकुलुडु रागारणंबेमि ?
पैडिमृगंबु नन् भ्रमियिपनेल ? । वीडिट्टु चेरवट्टि वेतबेट्टनेल ?

(आदि) पुरातन विक्रमवालों को पृथ्वी पर गिर पड़ते देखा है। तैल-धाराओं में लथपथ हो समस्त दानवों को अकारज पृथ्वी पर सोते देखा है। कनकपीठ पर कारुण्यमूर्तिवाले विभीषण को ढंग से आसीन देखा है। अब आगे रावण का मरण और रघुराम की विजय हर तरह से निश्चित है। अतः तुम लोग इस अवनीतनूजा को पटु दुष्ट वाक्यों से धमकाओ मत। हटकर चले जाओ।" ऐसा कहने पर (वहाँ से) हटकर, थककर सभी राक्षस स्त्रियाँ सो गईं। उस समय में अवनीतनूजा पीड़ित हो भय-शोक कंपित होती हुई, 'दो महीने के बाद निर्दय हो मार डालो' रावण के इन बातों का जब तब स्मरण कर, ॥ ४३० ॥

—शोक के घेर लेने पर, वह नारी अशोक की शाखा को सहारे के लिए पकड़कर, उठकर, जंगलों में अकेली पड़ी हुई चंचल बालिका के समान रोने लगी।

राक्षसस्त्रियों के पीड़ित करने पर जानकी का विलाप करना

"हाय ! हे दैव ! दयाहीनता से मुझे यहाँ बंदी बनाकर, इस प्रकार सताना क्या (तुम्हारे लिए) उचित है ? क्या नलिनसुअन (ब्रह्मा) ने मेरे ललाट पर यह लिख दिया कि 'तुम खल दैत्य के हाथ मरोगी ?' नहीं तो फिर काकुत्स्थकुल वाले को दंडकावन में आने की क्या आवश्यकता थी ? स्वर्णमृग

नाकेमि चिंतिप; ना कूर्मिविभुडु । लोकरक्षणलोलकळामानसुडु
राकेंदुवदनुंडु रामचंद्रुंडु । नाकुगा घोर कांतार मध्यमुन
सौमित्रियुतु दानु जालिमै दूलि । येमिगागलवाडो? यॆट्लुन्नवाडो ?
यॆन्नडाघनशौर्युडिटकेत्तिवच्चु । निन्नीच दैत्युनिनॆन्नडुवकडचु ? ४४०
दुदि नन्नु नॆन्नडु दोड्कोनिपोवु ? । नदि यॆन्नटिकि गूडु ? नदियॆट्लु पोसगु?
नी दुरात्मुनिचेत निट्टु चच्चुकंटे । जेदुम्रिगुट मेलु; चेदुनु नाकु
वालिन दय निच्चुवारिदु लेरु । हा लक्ष्मणाग्रज! हा धर्मनिरत!
नीकैन येकपत्नीत्वंबु नेडु । चीकाकुपड हत्यचे जत्तुंननुचु
गेरलिन दन दीर्घकेशपाशमुल । नुरि पॆट्टुकोन नूहिंचे; नंत
नालोन यॆडमकन्नदरॆ ना सतिकि । वालु मीनुलचेत वनजंबु वोलॆ;
वलपुदेम्मेरलचे वनलत वोलॆ ।बोलतिकि मरि वामभुजमुनु नदरॆ;
नय्यॆड मदहस्ति हस्तंबु वोलॆ । दोय्यलि दापलि तोडयुनुनदरॆ;
घोर राहु विमुक्त कुवलयहितुनि । तीरुन मुखचंद्र दीप्तुलिपॆसगॆ;

मुझे भ्रम में क्यों डालता ? यह (रावण) इस प्रकार बंदी बनाकर, दुख क्यों देता ? (किन्तु) मैं (अपने बारे में) चिन्ता क्यों करूँ ? मेरे प्रिय विभु रामचन्द्र जो लोक-रक्षण-कला में लोल मानसवाला है, राकेन्दु (चन्द्र) वदनवाला है, मेरे लिए घोर-कान्तार-मध्य में सौमित्र के साथ करुणा से विकल होकर पता नहीं, किस स्थिति में है ? कैसा है ? कब वह घनशौर्यवाला यहाँ धावा बोल देगा ? कब इस नीच दैत्य के गर्व को चूर करेगा ? ॥ ४४० ॥

अन्त में मुझे कब ले जाएगा ? वह (कार्य) कब संपन्न होगा ? वह कैसे संभव होगा ? इस दुरात्म के हाथ यहाँ मरने की अपेक्षा गरल पी जाना अच्छा है। अधिक दया कर वह गरल भी मुझे देनेवाला यहाँ कोई नहीं है। हे लक्ष्मणाग्रज ! हे धर्मनिरत (स्वभाववाले) ! तुम्हारे एकपत्नीव्रत को छल कर (आत्म) हत्या कर लूंगी।" (ऐसा) कहती हुई, अपने बिखरे दीर्घकेशपाश से फाँसी लगाकर मरने का विचार किया। इतने में उस सती का वाम-नेत्र मछलियों के स्पर्श से वनज (कमल) के समान फडक उठा। उस सुन्दरी की वामभुजा प्रिय मलयनिल के स्पर्श से (हिलनेवाली) वनलता के समान फड़क उठी। उस समय हाथी की सूँड के समान स्त्री (सीता) की बाईं जाँघ भी फड़क उठी। घोर राहु से विमुक्त कुवलयहितू (चन्द्र) के समान मुखचन्द्र की दीप्तियाँ सुशोभित हुईं। इस प्रकार शुभसूचक (लक्षणों) के सम्पन्न होने पर,

शुभसूचकंबु लीचोप्पुन नोंदव । निभराजगमन यय्येड देंपु मानि ४५०
जनकुनि श्रीरामचद्रुनि ननतनि । यनुजुल नत्तल नट दलंचुचुनु
दनुजुलचेति बाधल जाल नलसि । दन दिक्कु लेमिकि दरळाक्षि वगव
"सुदति चित्तमु लोनि शोकंबु मान्प । निदि नाकु दरि" यनि यिच्च
जिंतिचि

हनुम राघवुल वृत्तांतमु सीतकेरिगिंचुट

रविकुलक्रममुनु रामु पौरुषमु । विवध भंगुल वेड्क विनुति सेयुचुनु
भ्रानि मीदने युंडि मारुतात्मजुडु । वानर भाष गीर्वाण भाषयुनु
नी नाति येरुगुनो येरुगदो" यनुचु । मानवभाषल मगुवकिट्लनिये;
"नो महीनंदन ! यो पुण्यसाध्वि ! । यीमेयि शोकिंपनेटिकि नीकु ?
मगुव ! नी विभुडु सेममुननुन्नाडु; । जगदेकपति रामजनपालकुंडु
वनधि बंधिचि रावणु संहरिंचि । निनु दोडुकोनिपोवु; निक्कमीपलुकु;
सहजन्मुडैन लक्ष्मणुडु तन् गोलुव । महनीयमहिमतो माल्यवंतमुन४६०
नुन्नाडु कपिसेनलोगि ननेकमुलु । तन्नर्थि गोल्वगा दशरथात्मजुडु"

इभराज-गमना (गजगामिनी) (सीता) उस समय दुःसाहस को तजकर, ।। ४५० ।।

(अपने) जनक का, श्रीरामचन्द्र का, उसके अनुजों का, सासों का वहाँ स्मरण करते हुए, दनुजों के हाथ (दिए गए) कष्टों से बहुत क्लान्त होकर, अपने अनाथपन के कारण तरलाक्षी (सीता) के दुखी होने पर, (हनुमान ने) मन में यह सोचकर कि "(इस) नारी के चित्त के शोक को शान्त करने के लिए यह मेरे लिए (अच्छा) अवसर है ।"

हनुमान का राघवों का वृत्तान्त सीता को बताना

रविकुल-क्रम (परंपरा) (तथा) राम के पौरुष का विविध प्रकार से उत्साह से नुति करते हुए, वृक्ष की शाखा पर रहकर मारुतात्मज यह सोच कि 'वानर-भाषा और गीर्वाण-भाषा को यह नारी जानती है या नहीं', मानवभाषा में नारी से यों बोला:—"हे महीनन्दने ! ओ पुण्यसाध्वी ! तुम्हें इस प्रकार दुखी होने की क्या आवश्यकता है ? हे नारी ! तुम्हारा प्रभु सकुशल है । जगदेकपति, राजाराम, वनधि (समुद्र) को बाँधकर रावण का संहार कर जाएगा । यह बात सत्य है । अनुजन्म लक्ष्मण की सेवाएँ पर, महनीयमहिमा के पर, ।। ४६० ।।

अनवुडु "निदियोक्क यशरीर वाणि"। यनि शिशुपावृक्षमवनिज सूड
ब्रन्ननि नीलाभ्रपटलंबुलोनि। क्रोन्नेल गति मेरुगुनु बोले जूड
सन्नमै या म्रानि शाखल नडुम। नुन्न मर्कटरूपमोय्यन गांचि
"कललोन प्लवगंबु गंटि ने" ननुचु।गलगि "याकल कीडु काकुत्स्थजुलकु
गाकुंडुगा !" कंचु घनुल देवतल। बाकशासन बृहस्पति वीतिहोत्र
लोकेश्वरुलनु मेलकोनि भक्तितोड। नाकांत गोनियाडि यट देलिवोंदि
"कंटकासुरकोटि गारिंचुकतन। गंटिकि निदुर ने गान रेबगलु;
कान निद्दुरलेनि कल येंदु गलदु ?। पूनि यिकोकसारि पोलंग जूतु"
ननि तन वदनाब्जमल्लन नेत्ति। हनुमंतु मरियुनु नंदंद चूचि ४७०
"येंदुंडि वच्चेनो यी म्रानिमीदि ?। केंदुनु गडुजित्रमिदि योक्क कोति!
चेलुवोप्प नरुडु भाषिंचुचंदमुन। नलिनाप्तकुलुडु ना नाथु सेमंबु
नलवड देलुपुचु नमृतंबु लोलुक। वलुमारु प्रियमुन बलुकुचुन्नदियु;
वानर जाति की वार्तलु गलवे ?। नानाविधंबुल नाकु जिंतिप
गडगि राक्षसमाय गाबोलु" ननुचु। वडति यूरकयुंडे ब्रतिभाषलुडिगि;

—अनेक (अगणित) कपिसेनाओं के इच्छा से सेवाएँ करते रहने पर दशरथात्मज (राम) स्थित हैं।" ऐसा कहने पर 'यह कोई अशरीर वाणी है' ऐसा समझ अवनिजा ने शिंशुपा वृक्ष को देखा। उस वृक्ष की शाखाओं के बीच स्थित मर्कटरूप को देखा जो मनोज्ञ नीलाभ्र-पटल में नूतन चन्द्ररेखा के समान (तथा) चपला के समान (शोभायमान) था। "स्वप्न में प्लवग (वानर) को मैंने देखा है" ऐसा मान व्याकुल हो, यह सोचकर कि इस स्वप्न का बुरा फल काकुत्स्थकुलजों को प्राप्त न हो, फिर जागृत हो महान् देवता पाकशासन (इन्द्र), बृहस्पति, वीतिहोत्र (अग्नि) (आदि) लोकेश्वरों की भक्ति से प्रशंसा कर, वह कान्ता होश में आकर, यह सोच कि "कंटक (सम) असुरकोटि के सताते रहने पर, रात दिन आँखें लगती ही नहीं। अतः बिना निद्रा के स्वप्न कहाँ का ? सप्रयत्न एक बार और ध्यान से देखूँगी।" अपने वदनाब्ज (मुखकमल) को धीरे से उठाकर, फिर से वहाँ हनुमान को देखकर, ॥ ४७० ॥

—"यह एक वानर इस वृक्ष पर कहाँ से आया ? यह बड़ा विचित्र है। शोभा से मानव के बोलने के समान, नलिनाप्तकुल (सूर्यवंश) वाले मेरे नाथ के कुशल के बारे में बार-बार प्रियवचन बोल रहा है, मानों (कानों में) अमृत उँडेल रहा है। कहीं वानर जाति का ऐसा समाचार है ? अनेक प्रकार से सोचने पर मुझे लग रहा है कि यह राक्षस-माया है।" ऐसा सोचते हुए वह नारी प्रत्युत्तर दिए बिना चुप रही।

अंगुळीयक प्रदानमु

यनिलनंदनुडंत नवनीतनूज । मनमुन दन्नु नम्ममि जाल नेंरिगि
यातरु वट्टु डिग्गि यतिभक्तियुक्ति । नातिकि दंडप्रणाममुलु सेसि
करमुलु मोड्चि "यो कल्याणि! नम्मु;। परिकिंपु, येनु नी पति कूर्चु बंट;
जनपति नीवु विश्वासंबु वुट्टु । ननि यिच्चि पुत्तेंचे नंगुळीयकमु"
ननि चूपि म्रोक्किन नवनीतनूज । हनुमंतु गनुगोनि यतनिकिट्लनिये; ४८०

"नडरेडु दनुजमायल ननुगलमु । नुडुकुलवडि वेगुचुंडुदु गान
ननघात्म! रघुरामु नंगुळीयकमु । गनियु विश्वासंबु गलुगदु नाकु;
नीवेव्वडवु? मरि नीकु बेरेमि? । भूवरुनकु नीकु बोंदेटु गलिगें?
निनकुलाधिपु रूपमेट्टिदि? यतनि । यनुजुंडु सौमित्रि यतडेट्टिवाडु?
गाकुत्स्थुडिप्पुडेक्कड नुन्नवाडु? । नीकु नेमनि चेप्पि निन्नु बुत्तेंचे?
ने चंदमुन वच्चितीवार्धि दाटि? । ना चित्तमूरड नातोड जेप्पु"
मनि योप्प नडिगिन नवनिनंदनकु । हनुमंतुडंत मुन्नट जेप्पदोडगें; ४८७

अंगूठी प्रदान करना

तब अनिलनन्दन यह खूब जानकर कि अवनीतनूजा मन से मुझपर विश्वास नहीं कर रही है, उस तरु से उतरकर, अतिशक्ति से नारी को प्रणामकर, हाथ जोड़कर बोला—"हे कल्याणी! (मुझ पर) भरोसा करो। देखो, मैं तुम्हारे पति का प्रिय सेवक हूँ। राजा (राम) ने यह सोचकर कि तुम्हें विश्वास हो, यह अंगूठी देकर भेजा है।" (ऐसा) कह, (अंगूठी) दिखाकर प्रणाम करने पर अवनीतनूजा ने हनुमान को देखकर (यों) कहा:—॥ ४८० ॥

—"अतिशय दनुज-मायाओं के कारण निरन्तर ताप से संतप्त होती रहती हूँ अतः हे अनघात्मा! रघुराम की अंगूठी देखकर भी मुझे विश्वास नहीं होता। तुम कौन हो? फिर तुम्हारा नाम क्या है? भूवर (राजा-राम) तथा तुममें मैत्री कैसे हुई? इनकुलाधिप का रूप कैसा है? उसका अनुज सौमित्री कैसा (किस प्रकार का) है? काकुत्स्थ (राम) अब कहाँ है? तुमसे क्या कहकर तुम्हें पठाया है? इस वारिधि को पार कर कैसे आये हो? यह सब ऐसा बताओ कि मेरे चित्त को सान्त्वना मिले।" ऐसा शोभा से पूछने पर अवनीनन्दना को हनुमान सब कुछ वहाँ (यों) बताने लगा:—

हनुमंतुडु सीतकु दन वृत्तांतमु देलुपुट

"वनजाक्षि ! वायुदेवर वरंबडिगि । घनुडु केसरियनु कपिकुलाग्रणिकि
ननु बुत्नुगा नंजनादेवि गनियें; । हनुमंतुडनु पेर नमरिनवाड;
वसुध सुग्रीवुडन्वानरेंद्रुनकु । नसमानमति मंत्रिनै मेलंगुदुनु; ४९०
आतनि राज्यंबु नातनि पत्नि । नातनि यग्रजुंडगु वालि गोन्न
मदमेदि नलुगुरु मंत्रुलु दानु । नदि मोदल् ऋश्यमूकाद्रिपै नुंड
बटुसत्त्वमुन बेचि पंक्तिकंधरुडु । कुटिलुडै निन्नेत्तिकोनिपोवुचुड
नोदविन याक्रोशमूरक विनुचु । सुदति ! निन् दललेत्ति चुचुचुंडितिमि;
नेलत! यप्पुडु मम्मु नीवुनु जूचि । तोलगक नी मेनि तोडवुलु वुच्चि
नी वस्त्रमुन गट्टि नेल वैचुटयु । ना वेळ सुग्रीवुडवि येत्ति दाचे;
नच्चुगा रघुरामुडट निन्नु वेदुक । वच्चि पंपासरोवरतीर भूमि
दानु दम्मुडु नुन्न तरि जूचियर्क । सूनुंडु वारल जूचि रम्मनिन
ने नेगि यंतयु नेरिगि येतेंचि । भानुजु रामभूपालु गान्पिप
नन्नरनाथुकर्कनंदनुडु । कन्न सोम्मुलु सूपि कडुभक्ति म्रोक्क ५००

हनुमान का सीता को अपना वृत्तान्त बताना

"हे वनजाक्षी ! वायुदेव से वर प्राप्त कर अंजनादेवी ने केसरी नामक महान् तथा कपिकुल के अग्रणी के मुझे पुत्र के रूप में जन्म दिया । हनुमान नाम से सुशोभित हूँ । वसुधा पर सुग्रीव नामक वानरेन्द्र का असमान-रूप से मंत्री हो रहता हूँ ।। ४९० ।।

उसके (सुग्रीव के) राज्य तथा उसकी पत्नी को उसके अग्रज बाली के ग्रहण कर लेने पर, मद खोकर, तब से लेकर चार मंत्रियों के साथ वह (सुग्रीव) ऋश्यमूक-पर्वत पर रहने लगा । पटुसत्त्व से हुँकार कर पंक्ति-कंधर (रावण) के कुटिल भाव से तुम्हें ले जाते समय, उत्पन्न आक्रोश को यों ही सुनते हुए हे वनिते ! सिर उठाकर तुम्हें देख रहे थे । हे सुन्दरी ! तब तुम भी हमें देखकर, हटे बिना, अपने शरीर के आभूषण निकालकर, अपने वस्त्र में बाँधकर ज़मीन पर डाल दिया था । उस समय सुग्रीव ने उन्हें उठाकर छिपा दिया था । उधर रघुराम के तुम्हें ढूँढते आकर पंपासरोवर-तीर भूमि में अनुज के साथ रहते समय, अर्क-सुअन (सुग्रीव) ने (उन्हें) देखकर, उन्हें देख आने के लिए कहने पर, मैंने जाकर सब कुछ जानकर, (लौट) आकर भानुज (सुग्रीव) और रामभूपाल की भेंट करायी । (तव) उस नरनाथ (राम) को अर्कनन्दन ने अपने देखे आभूपण दिखाकर, अतिभक्ति से प्रणाम किया । ।। ५०० ।।

ना तोडवुल जूचि हर्षिंचि रामु । डातनि निजशत्रुडगु वालि जंपि
युपकारशीलुडै योप्पु सुग्रीवु । गपिराज्यपदमुन गरमर्थि निलिपे;
नतिभक्ति सुग्रीवुडंत राघवुनि । बतियुगा निजभृत्यभावंबु मोचि
यक्षीण बलधन्युलैन वानरुल । लक्षयु रेंडेसि लक्षलु गूर्चि
"गर्वुलौ दैत्युल कटकंबुलरसि । युर्वीतनूभव युन्नचोटेरिगि
मसलक नेललोन मगुडिरंड" निन । नसमुन गपुलेगिरन्नि दिक्कुलकु;
बटुशक्ति दक्षिणभागंबु वेदक । निटु नंगदुडु मोदलेमु गोंदरमु
चनुदेंचि पेक्कुदेशंबुलु वेदकि । निनु गान नेरक निव्वेर गंदि
शोकिप नरुणुनि सुतुडु संपाति । माकु लंकापुरिमार्गंबु सूपे;
जूपुटयुनु निन्नु जूड नर्थिंचि । येपुन बरतेंचि ये नब्धि दाटि ५१०
मरि नेडु सूर्यास्तमयमुन नितरु । लेरुगकुंडग वच्चि यी लंक सोच्चि
विलसिल्लु ना महावेषंबु दाचि । सोलवक निन्नेल्ल चोटुल वेदकि
येंदुनु बोडगान किटु लेगुदेंचि । यिदु निन् दर्शिचि येपंड जूचि
रविकुलाधिपुडैन रामुनि देवि । यवुनोको कादोको यनि विचारिंचि
सृष्टीशुचे विन्न चिह्नंबुलेल्ल । दृष्टिचि पिदप संदेहंबु वासि

उन आभूषणों को देखकर राम हर्षित हुआ और उसके (सुग्रीव के) निज शत्रु बालि का संहारकर, उपकार-शीलवाले होते शोभा देनेवाले सुग्रीव को अति इच्छा (प्रेम) से कपिराज्य पद पर अभिषिक्त किया। तब सुग्रीव अतिभक्ति से राघव को पति (स्वामी) मानकर, सच्चे भृत्य सेवक भाव को वहन कर रहा है। अक्षीण बल के धनी वानरों को लाख और दो लाख एकत्रित कर "गर्वीले दैत्यों के कटकों (सेना) का पता लगाकर, उर्वीतनूभवा का पता लगाकर, विलंब न कर, एक महीने के भीतर लौट आओ" कहने पर, दर्प से कपि सभी दिशाओं में गए। पटु शक्ति से दक्षिण भाग में अन्वेषण करने के लिए, अंगद आदि हम कुछ आकर, अनेक देशों में ढूँढकर, तुम्हें न पाकर, आश्चर्यचकित हो, दुखी होने लगे। (तब) अरुण के पुत्र संपाति ने हमें लंकापुरी का मार्ग बताया। बताने पर, तुम्हें देखना चाहकर, औन्नत्य से आकर मैंने अब्धि (समुद्र) पार किया, ॥ ५१० ॥

—फिर आज सूर्यास्तमय (के समय) इस लंका में प्रवेश किया जिसे अन्य कोई जान न सकें। विलसित अपने महावेष को छिपाकर, न थककर, तुम्हारे लिए सभी स्थानों में ढूँढकर, कहीं न देखकर, यहाँ आकर, तुम्हारे दर्शनकर, समुचित रूप से देखकर, यह विचार किया कि यह रविकुलाधिप राम की देवी है या नहीं। सृष्टीश (राम) के द्वारा सुने समस्त चिह्नों

वलनेदि यिप्पुडु वच्चि रावणुडु । तलकक निनु बल्कुतरि नुन्नवाड;
घनशक्ति वानितो गय्यंबु सेसि । यनि वानि जंपेद ननि विचारिंचि
पूनि निन् दर्शिचि पोंदुगा नीकु । नी नाथु सेमंबु निजमुगा जेप्पि
दनुजु बिम्मट जंप दलपोसि कानि । वनित ! ना प्राणमुल् वंचिचि कादु"
अनि चेप्पि रघुरामु नलवु व्रायंबु । गनुगव चेलुवंबु गळमु सोयगमु ५२०
नगुमोमु कळयुनु नखमुल तीरु । नेंगुबुजंबुल बागु निरि कौनु लागु
वेंडद रोम्मु बेंडंगु वीनुल रंगु । नडल यंदंबुनु नाभिचंदंबु
घन जघनमु पेंपु गरमुल केंपु । दनुवुलक्षणमुलु दप्पक चेप्पि
या शौर्य मा धैर्य मा ब्रह्मचर्य । मा शांति या दांति या महाक्षांति
या शक्ति या युक्ति या पितृभक्ति । या शील मा लीललन्नियु जेप्पि
रूपिंचि लक्ष्मणु रूपेल्ल जेप्पि । या पुण्यु डंगुळीयकमप्पुडिच्चे;
निच्चिन गैकोनि "यिपुडु प्राणमुलु । वच्चेगा" यनुचु नेव्वग नूरडिल्लि
रामु जूचिनकंटे राम रागिल्लि । सेम मेर्पड भद्रसिहासनमुन
ब्रेमतो गूर्चुंडबेट्टिनकरणि । ना मणिमुद्रिक नक्कुन जेचि

को देखकर, बाद में सदेहों को दूरकर, औचित्य को तज अब आकर रावण के निर्भीकता से तुम्हारे साथ बात करते समय यही था। यह सोचा था कि घनशक्ति से उससे युद्धकर, युद्ध में उसे मार डालूंगा। लगकर तुम्हारे दर्शनकर, ढंग से तुम्हें अपने नाथ का कुशल बताकर, तब दनुज को मार डालने का सोचा था किन्तु हे नारी ! अपने प्राणों पर आशा रखकर नहीं।" ऐसा कहकर रघुराम के बल, वय, नेत्रद्वय का सौंदर्य, कंठ की सुन्दरता, ॥ ५२० ॥

—मृदुहास्य से युक्त मुख की कला, नाखूनों का ढंग, उन्नत स्कन्धों की सुघड़ता, सुन्दर कमर की आकृति, विशाल वक्ष की शोभा, कानों का वर्ण, चाल की सुन्दरता, नाभि का आकार, घन जघन का औन्नत्य, करों की लालिमा (आदि) तनु लक्षणों को अवश्य बताकर, वह शौर्य, वह धैर्य, वह ब्रह्मचर्य, वह शान्ति, वह दान्ति, वह महाक्षान्ति (क्षमा), वह शक्ति, वह युक्ति, वह पितृभक्ति, वह शील, वह लीलाएं सब बताकर, लक्ष्मण के समस्त रूप को रूपायित कर बताकर, उस पुण्यशील वाले ने तब अंगूठी दी। देने पर लेकर 'अब प्राण (ठिकाने) आए' (यह) कहते अधिक दुःख से सान्त्वना प्राप्तकर, रामा साक्षात् राम को देखने की अपेक्षा अधिक प्रसन्न हुई। उस मणिमुद्रिका को वक्ष से ऐसे लगाया मानों उसे ढंग से भद्रसिंहासन पर प्रेम से बिठाया हो। नेत्रद्वय से हर्ष के अश्रुकण ढुलकने लगे मानो अनुरक्ति (प्रेम) से अर्घ्यपाद्य दे रही हो ॥ ५३० ॥

यनुरक्ति नर्घ्यपाद्यमुलिच्चिनट्लु । कनुगव हर्षाश्रुकणमुलु दौरुग ५३०
धूपदीपम्मुलु दोड्तोड नौसगि । येपार साष्टांगमेंड्रगिनपगिदि
बुलकिंचि तिलकिंचि पौलति मूर्छिल्लि ।.तेलिसि या हनुमंतु देस जूचि
पलिकें;
"गपिवंशवर्य ! राघवकार्यधुर्य !। युपकारनिरत ! लोकोन्नतचरित!
पवमानसुत ! नाकु ब्राणदानंबु ।दविलि चेसिति; नीकु दग जेयलेनु;
गाकुत्स्थतिलकुनि करुण नीविंक। नाकल्पमुगनुंडु" मनुचु दीविंप
नलघु विक्रमशीलुडगु वायुसुतुडु । चेलुव जानकि जूचि चेतुलु मोगिचि
"हरुनकुनैन निद्रादुलकैन । बरमेष्ठिकैननु बडय जौप्पडनि
नी कृप वडसिति; निनु जूडगंटि; । नाकिंत चालदे नलिनायताक्षि!"
यनिन सीतादेवि यनियें वेंडियुनु । मनुजेशु सेमंबु मरदि सेमंबु
मनमार नडुगुचु ममत रेट्टिंप; । "ननघात्म ! रघुरामुडसमानबलुडु
५४०
ननु नेडबासि युन्नाडे धैर्यमुन ? । ननुजुंडु दानुनु नप्पटप्पटिकि
दय नन्नु दलतुरे ? दंडेत्ति यिटकु । रयमुन वत्तुरे रणकांक्ष ?" ननिन

—साथ-साथ धूपदीप समर्पित कर, शोभा से साष्टांग (प्रणाम) करने के समान, देखकर, पुलकित होकर, नारी (सीता) मूर्च्छित हुई। फिर होश में आकर हनुमान की ओर देखकर बोली:—"हे कपिवंश-श्रेष्ठ ! हे राघव-कार्य-धुरंधर ! हे उपकार निरत ! हे लोकोन्नत चरित (वाले) ! हे पवमान सुत ! मुझे आसक्ति से प्राणदान किया है। तुम्हारा (किए का) न्याय नहीं कर सकती। काकुत्स्थ-कुल-तिलक (राम) की करुणा से अब तुम आकल्प (चिरकाल) रहो।" ऐसा कह आसीसने पर अलघु विक्रमशील वाले वायुसुत ने रमणी सीता को देखकर हाथ जोड़ कहा:— "हर (शिव), इंद्रादियों, (तथा) परमेष्टि (ब्रह्मा) के लिए असाध्य तुम्हारी कृपा प्राप्त की है तुम्हें देख सका हूँ। हे नलिनायताक्षी ! क्या मेरे लिए यही पर्याप्त नहीं है ?" (ऐसा) कहने पर सीतादेवी ने मनुजेश (राम) का कुशल, देवर का कुशल, जी भर कर, ममता के द्विगुणित होने पर, पूछते हुए कहा—"हे अनघात्म! असमान बल वाला रघुराम, ॥ ५४० ॥

—मुझसे बिछुड़कर क्या धीरज के साथ रह रहा है ? अनुज और स्वयं क्या कभी-कभी दया से मेरा स्मरण करते रहते हैं ? रणकाँक्षा से शीघ्र यहाँ धावा बोलने के लिए आएँगे ?" (ऐसा) कहने पर (हनुमान ने कहा):—

हनुम सीतकु श्रीरामलक्ष्मणुल क्षेममु देल्पुट

"विनवम्म! नी प्राणविभुनि सेमंबु; ।निनु बासिनदि मोदलू नित्यवेदनल नेलपै बवळिंचु; निद्र येरुंग; । डोलि मांसाहारमोल्लडेन्नडुनु; वासिमै दंडकावनमुलो निन्नु । मोसपोवुट येंचु; मोमर वांचु निट्टूर्पु निगुडिंचु; निंचु गन्नीरु; । नेट्टन मूर्छिल्लु नेलपै द्रेळ्ळु; देलिविमै लेचु; नल्दिक्कुलु सूचु;। गलगु; निव्वेरगंदु; गळवळंबंदु 'हा सीत! हा सीत! ' यनि प्रलापिंचु; । ना सुमित्रापुत्रुडदि चूचि वगचु; गावुन मीरलिक्कड नुंडु वार्त । वेवेग ना चेत विन्नंत गदलि नाकंटे घनुलैन नगचराधिपुल । भीकराकृतुल नभेद्य विक्रमुल ५५० नगशृंगतरु संघ नखमुखायुधुल । नगणितबलुल देवांशसंभवुल सुग्रीव नल वालिसुतुलादियैन । युग्रवीरुलगूडि युदधि लंघिंचि येल्लभंगुल वच्चु निति ! नी विभुडु; । तल्लि ! निन्गोनि ययोध्यापुरि केगु;
रामुचे रणमुन रावणुडीलगु; । नी मदि कोर्कुलु नीकु सिद्धिंचु;

हनुमान का सीता को श्रीराम-लक्ष्मण का कुशल बताना

—"हे माता ! अपने प्राण विभु का कुशल (-समाचार) सुनो। जब से तुम्हारा विछोह हो गया था, (तब से) नित्य (सतत) वेदानाओं के कारण धरती पर सोता है, निद्रा को तो जानता ही नहीं। कभी माँसाहार नहीं चाहता। दंडकवन में तुम्हारे वंचित होने की बात सोचता है। मुँह थोड़ा झुकाए रहता है। उसाँस छोड़ता है, आँसू भर लेता है, अचानक मूर्च्छित हो जाता है, धरती पर गिर पड़ता है, होश में आकर उठता है, चारों दिशाओं में देखता है, व्यथित होता है, चकित हो जाता है, व्याकुल होता है। 'हा सीते ! हा सीते !' कहकर प्रलाप करता है। उसे देखकर वह सुमित्रापुत्र दुखी होता है। अतः आपके यहाँ रहने का समाचार, शीघ्र मेरे द्वारा सुनते ही वे निकल पड़ेंगे। मुझसे भी श्रेष्ठ नगचर (वानर)-अधिप, जो भीकर आकृतिवाले है, अभेद्य विक्रमवाले हैं, ।। ५५० ।।

—नग, शृंग, तरुसंघ, नख, मुख (दाँत) आदि के आयुधवाले हैं, अगणित बलवाले हैं, देवांश संभव हैं, (तथा) सुग्रीव, नल, वालिसुत आदि उग्रवीरों के साथ उदधि (समुद्र) को लाँघकर, हे सुन्दरी ! हर प्रकार से तुम्हारा विभु आएगा। हे माता ! तुम्हें साथ लेकर अयोध्यापुरी जाएगा। राम के हाथ रण में रावण मरेगा। तुम्हारे मन की इच्छाएँ पूरी होंगी

नैन नीतडवेल यखिलैकमात ! । येनु ना वीपुन निडिकोनि प्रीति
योदविन कडकतो नुदधि लंघिंचि । युदयवेळकु बोदु नुर्वीशुकडकु;
नी पनि किटु संशयिंचितिवेनि । भूपक्षि मृगरूपमुल बूनि येट्टि
रूपुननैनतु रूढि निन् गोनुचु । भूपालु पालिकि बोयेद वेग;
विच्चेयु" मनवुडु वेलदि वायुजुनि । सच्चरित्रमुनकु संतोषमंदि
"यो समीरात्मज ! योपुदु वीवु; । नी सत्त्वमट्टिद, निजमु चिंतिप; ५६०
ननघात्म ! ये बेंड्लियैनदि मोदलु । जनलोकविभु रामचंद्रुनि गांचि
पोलुपेदि येन्नडु बुरुषांतरंबु । गलोननैनतु गदिसि येरुंग;
नी नीचमति नन्नु निट देच्चु चोट । वीनि यंटुटकेनु वेगुचुंडुदुनु;
वेरवक बलिमिमै वीडंटेगाक । मरि यन्यपुरुषुलमदि नंटनेनु;
ना नाथुनकु नीवु नम्मिन बंट; । वैननु निनु नेक्कि यरुदेंचुटोल्ल;
दनदेवि म्रुच्चिलि दैत्युंडु सनिन । निनकुलुंडारीतिने तेच्चेनंदु;
रिदि विचारंबुगादिनकुलेश्वरुडु । कोदलेक मुनु चित्रकूटंबुनंदु
नोकनाडु तन तोड नोरगि निद्रिप । ग्रकचोग्रनखमोक्क काकंबु सेरि

(बर आएँगी)। फिर भी हे अखिलैकमाता ! यह विलंब क्यों ? मैं अपनी पीठ पर प्रीति से बिठाकर, अधिक साहस से उदधि लाँघकर, उदयवेला (प्रातःकाल) तक उर्वीश के पास (ले) जाऊँगा। इस कार्य के लिए संकोच करोगी तो भूपक्षी-मृग रूप को धारणकर, किसी भी रूप से, निश्चय ही तुम्हें लेकर तुरन्त भूपाल के पास जाऊँगा। आओ।" ऐसा कहने पर वायुज के सच्चरित्र से नारी (सीता) प्रसन्न हो बोली— "हे समीरात्मज ! तुम (तदर्थ) सामर्थ्य रखते हो। सचमुच विचार करने पर तुम्हारा सत्त्व ऐसा ही है। ॥ ५६० ॥

हे अनघात्म ! विवाह होने से लेकर मैंने जनलोकविभु रामचन्द्र के अतिरिक्त शोभा को खोकर, अन्य पुरुष के स्वप्न में भी नियराना नहीं जानती। यह नीचमति वाले (रावण) के मुझे यहाँ लाते समय, इसके स्पर्श से मन में व्यथित होती रहती हूँ। निर्भीकता से, बलात्कार से इसने मेरा स्पर्श किया हो किन्तु मैं किसी अन्यपुरुष का स्पर्श नहीं करती। तुम मेरे नाथ के विश्वस्त सेवक हो, फिर भी तुम्हारी (पीठ पर) चढ़कर आना नहीं चाहती। (लोग) कहेंगे कि अपनी देवी को दैत्य के चुरा ले जाने पर, इनकुलज भी उसी प्रकार लाया। यह उचित नहीं है। पहले एक दिन चित्रकूट में इनकुलेश्वर मेरी जाँघ पर सिर रख सो रहे थे। क्रकच-उग्र नखवाला एक काक (कौआ) के आकर

चंचुपुटंबुन जनुगव नडुम । वोंचि चिंचिन रक्तपूरंबु दोरग
गाकुत्स्थतिलकुडोक्कट निद्र देलिसि ।काकंबुपै निपीकमु ब्रयोगिंप ५७०
नदियु ब्रह्मास्त्रमै यखिल लोकैक । विदितोग्रशक्तिमै वेंनुवेंट नंट
ना काकि येकाकियै येंडु दिरिगि । कैकोंनि तनु 'गावु कावु' मटंचु
मरलि क्रम्मर दन मरुगु सोंच्चुटयु । शरणागतत्राणचरितुंडु गान
दानि नेत्रमु निजास्त्रमुन किप्पिचें । ना निमित्तंबुगा नलिनाप्तकुलुडु;

सीता प्रतिसंदेशमु

नाटि नापै प्रेम नाटि यस्त्रंबु । नेटिकि मरचेंनो? यदि हेंच्चरिंपु;
पदिवेलभंगुल वाधलकोर्चि ।पदिनेलल् गडपिति वति बासि येनु;
नायुन्कि सूचिति; ना पाटु गंटि; । वेयुपायंबुल निंदोर्वरादु;
उडुगनि वगलतो नोक्कोक्क दिनमु । गडचुट योंक वार्धि गडचुट नाकु;
नरनाथु मदिलोन ना मीद जाल । गरुण वुट्टेंडुनट्लुगा विन्नविंपु;
मा तंड्रि जनकुंडु महिमीद दन्नु । नेतेंरंगुन बोंकडितडनि नम्मि ५८०

चंचुपुट से स्तनमध्य में चीरने पर, रक्तपूर (प्रवाह) प्रवाहित होने लगा। काकुत्स्थ-तिलक (राम) एकदम निद्रा से जगाकर, काक पर निषीक (वाण) का प्रयोग करने पर, ॥ ५७० ॥

—वह (वाण) भी ब्रह्मास्त्र वन, अखिल-लोकैक-विदित-उग्रशक्ति से पीछा करने पर, वह कौआ एकाकी होकर, 'काव्-काव्'[1] कहते संसार भर में घूमकर, फिर वापिस अपनी ही शरण में आने पर, शरणागत की रक्षा करने के स्वभाववाले होने पर, नलिनाप्तकुल वाले ने मेरे लिए, उस (कौए) का नेत्र निज-अस्त्र को दिलाया।

सीता का प्रतिसन्देश

—उस समय के मुझपर प्रेम, उस दिन के अस्त्र को क्या आज भूल गया? इसका स्मरण दिलाओ। पति से बिछुड़कर, दस हज़ार (अनेक) प्रकार से कष्ट को सहते मैंने दस महीने विताए हैं। मेरी स्थिति को (तुमने) देखा है, मेरी विपत्ति को देखा है। किसी भी उपाय से अव यह (आगे) सहा नही जा सकता। कम न होनेवाले दुखों से एक-एक दिन बिताना मेरे लिए एक-एक वारिधि पार करने के समान है। ऐसा निवेदन करो कि नरनाथ के मन में मेरे प्रति अधिक करुणा उत्पन्न हो। उनसे कहो कि मैंने यों कहा है कि हमारे पिता जनक ने, 'इस महि पर किसी भी प्रकार से मुझे नहीं छोड़ेगा', ऐसा विश्वासकर, ॥ ५८० ॥

१ 'कावु' का अर्थ तेलुगु में 'वचाओ' होता है।

तनकु निच्चिन देंच्चि तगदु नन्विडुव।नंनि येनु बलिकितिननि पल्कुमीवु;
विलसिल्लु कल्याणवेदिपै नुंडि । वलनोप्प नग्निदेवर साक्षिगाग
गरमोप्प नन्नेल्लकालंबु विडुव । करसि रक्षिंचेदनंनि तेच्चि नन्नु
नरयकुपेक्षिंचि यनदगा जेसे; । बरिकिंपुमनि विन्नपमु सेयु मनघ!
तनयिंति नोकनिचे दा गोलुपोयि । मन निच्च सेयुट मगपाडि गादु;
अटुगान दनकिदि यपकीर्ति यनुचु । निटु विन्नविंचिति; निंतिये कानि
कलगक ना मनोगतुलु ब्राणंबु । लोलसि तन्नेंडबायकुन्नवि यनुमु;
चतुरात्म ! मरि नीवु सौमित्रि जेरि ।यतनितो नोक्क माटाडुमु तेलिय;
ननु दल्लिगा जूचु; ना पाटु चूड । दन कोन्नि भंगुल दगदनि चेप्पु;
वाविरि दंडकावनमुलो बरम ।पावनुंडगु तन्नु बलिकिन फलमु ५९०
कुडिचितिननि चेप्पु कोंदुवलेकुंड;। दडयकु मनि तेल्पु; दय वुट्ट जेप्पु;
मवसरोचितमुगा नंगदुतोड । रविजुतो दक्कु मर्कटकोटितोड
विनयमुल् वलिकि येव्विधिनैन वारि । निनकुलुलनु वेग निटकु दोड्तेम्मु;
मिक्किलि तेंगुवमै मी राक वेंचि । योक्कमासमु चूतु; नुंड ले नवल;

—मुझे सौंपा था। मुझे (मायके से) लाकर, मुझे इस प्रकार छोड़ देना उचित नहीं है। हे अनघ ! (उनसे) निवेदन करो कि विलसित कल्याण वेदी पर शोभा से अग्निदेव को साक्षी बनाकर, यह कह मुझे लाकर कि अधिक शोभा से तुम्हें कभी न छोड़कर, अच्छी तरह रक्षा करूँगा, मेरी खबर न लेकर, उपेक्षा कर, मुझे अनाथ बना दिया है, इसपर ध्यान दें। अपनी स्त्री को किसी दूसरे के (हाथ) खोकर, जीते रहने की इच्छा करना पुरुष का लक्षण नहीं है। ऐसा (लोकरीति) होने से आपके लिए यह अपकीर्ति (का विषय) है, इसीलिए ऐसा निवेदन किया है। उनसे कहो कि क्षुब्ध न बनकर मेरी मनोगतियाँ (और) प्राण, उन्हें छोड़े बिना स्थित हैं। हे चतुरात्म ! फिर तुम सौमित्र के पास जाकर, उसे समझा कर एक बात कहो। वह मुझे माता के समान मानता है। उससे कहो कि मेरे दुःख को देखते रहना किसी भी प्रकार से उचित नहीं है। (उससे) कहो, दंडकवन उसमें परमपावन को अपशब्द कहने का फल ॥ ५९० ॥

—बिना किसी कसर के भुगत लिया है। उन्हें समझाओ कि अब विलंब न करें। ऐसा कहो कि (उनके मन में) दया उत्पन्न हो। अवसर के अनुकूल अंगद से, रविज (सुग्रीव) से तथा शेष मर्कट कोटि से विनय (वचन) कहकर, किसी भी प्रकार उन्हें और इनकुलवालों को झट यहाँ ले आओ। अधिक साहस (धैर्य) से एक मास तक तुम्हारे आगमन की

नी लोन रघुरामु नॆव्भंगिनैन । वालायमुग दॆम्मु; वडि निक बॊम्मु;"
अनि सीत वल्कु वाक्यमुलॆल्ल दॆलिय । विनि हनुमंतुडु विमलुडै पलिकॆ;
"नवुगाक ! चॆप्पॆद नन्नि कार्यम्मुलुविद ! । नी मदिलोन नूऱडुमिक;
नच्चुगा रघुरामुनंगुळीयकमु । दॆच्चि यॊप्पिचिति देवि ! नी कर्थि;
धरणिज ! रिक्तहस्तमुतोड मगुड । मरलुट दूतधर्ममु गादु नाकु;
नतिव ! मुद्रारत्नमानति" म्मनिन । नतनितो दॆलिय नय्यवनिज
वलिकॆ; ६००

चूडामणिप्रदानमु

"नीवु विचारिंप निसुमंत गानि । लेवु; समुद्रमेलील दाटितिवि ?
यारूढबलविक्रमास्पदंबयिन । नी रूपमॆट्टिदो निजमुगा जूपु;
मेनु नी निजरूपमेर्पडजूचि । कानि ना तलमानिकमु नीकु नीय"
ननिन ना हनुमतुडाकाशमॆल्ल । दन मेनु निंड नुद्दंडुडै पॆरिगि
मालतीमल्लिकामाल्यमै मॆंडकु । नालोलतरहारमै कटिनि
गलधौतमयघटिकादाममगुचु । ललितमौ पदयुगळमुनकु मुव्व
लनुवारु विधमुन नंदंदु चूड । दनरि चुक्कलर्पिडु तन मेन नलर

प्रतीक्षा करती रहूँगी । उसके बाद नही रह सकूँगी । इसी बीच किसी भी प्रकार अवश्य रघुराम को लाओ । 'अब झट से जाओ ।" इस प्रकार सीता के समस्त वाक्यों को सुनकर, हनुमान विमल मन से यों बोला--"ऐसा ही होगा । सभी कार्य (वातें) उनसे कह दूँगा । हे नारी ! अपने मन में आश्वस्त हो जाओ । अति इच्छा से रघुराम की अंगूठी ला देकर तुम्हें समझाया है । हे धरणिजा ! मेरा रिक्त हस्त से फिर लौट जाना, दूत का धर्म नहीं है । हे नारी ! मुद्रारत्न प्रदान कर दो ।" उससे समझाकर, अवनिजा (यों) बोली— ॥ ६०० ॥

चूड़ामणि को प्रदान करना

—"सोचने पर तुम बहुत छोटे हो । समुद्र को किस प्रकार पार किया है ? आरूढ़ बल-विक्रम के आस्पद अपने वास्तविक रूप को बताओ । तुम्हारे सच्चे रूप को देखे बिना मैं अपना शिरोरत्न नही दूँगी ।" (ऐसा) कहने पर वह हनुमान समस्त आकाश को अपने शरीर से व्याप्त करते हुए उद्दंडता से बढ़ता गया । नक्षत्र समूह प्रथमतः सिर पर मालती-मल्लिका-माला बना, (तदनन्तर) कंठ में लोलतर (चंचल) हार बना, कटि में कलधौत (चांदी)-मय घंटिका-दाम (माला) बना, (तदनन्तर) ललित पदयुगल में घुघरू के शोभित होने के समान, जहाँ-तहाँ नक्षत्र समूह के

नतिभीषणाकारुडगुचु निलिचननु । नतिव चित्तंबुन नतिभीति बौंदि
"यसमानगात्र ! यो यंजनापुत्र ! । विसुमान मी रूपु, वेंसदाचु" मनुचु
हनुमंतु गोंनियाडि यतनि दीविंप । दन विश्वरूपंबु दग जूचि सुरलु
६१०
विनुतिंप नदि दाचु वेंन्नुंडु वोलें । ननिलजुडंतलो नलतियै निलिचें;
निलिचिन हनुमंतु नेम्मिमै जेर ।बिलिचि लोकोंगुन बिगियंग मुडिचि
युन्न शिरोरत्न मोय्यन विडिचि । यन्नाति प्रीतिमै नपुडोसंगुटयु
वनितशिरोमणि वलनोप्प नंदि । कौनि म्रोक्कि सीत वीड्कोनि
वेड्क नरिगि
पंतंबुतो निक वंक्तिकंठुनकु । नितट दनराक नेरिगितु ननुचु
"दल्लि ! ने नाकोंटि; दनरग वनमु । नेंल्लेड फलमुलु नेनु गेकोंदु"
ननवुडु सीत या हनुमंतु जूचि । यनें; "राक्षसावळि यल्ल कापुंडु;
ग्रम्मि रालिन पंड्लु क्रममुतो नमलि । पोम्मु वेग" यटंचु बोंदुगा ननुप
दन मदि गोंडोक तडवु चिंतिंचि । वनभंग मोनरिंचुवाडुनै पेरिगि
तोंडलंदु बोंडमु वातूलघट्टनल । बड्गु बेकयु बोल बड महीजम्मु ६२०

अपने शरीर पर शोभित होने पर, अतिभीषणाकार होते खड़े रहने पर, नारी (सीता) चित्त में अतिभीत होकर, यह कहते कि "हे असमान गात्र (वाले)! हे अंजनापुत्र ! यह रूप असमान है, इसे झट छिपा दो।" हनुमान की प्रशंसाकर, उसे आसीस, अपने विश्वरूप को ढंग से देख देवताओं के ॥ ६१० ॥

विनुति करने पर उसे छिपानेवाले विष्णु के समान, अनिलज पलभर में लघु हो खड़ा रह गया। (ऐसा) खड़े हनुमान को प्रेम से निकट बुलाकर, साड़ी की भीतरी छोर में बंधी शिरोरत्न को झट से खोल, उस नारी ने प्रीति से दिया। वनिता (नारी) की शिरोमणि को शोभा से ग्रहणकर, प्रणामकर, सीता से बिदा लेकर जाकर, हठ से यह सोचकर कि अब पंक्तिकंठ वाले को अपने आगमन का (समाचार) बताता हूँ, सीता से कहा--"हे माता ! मुझे भूख लगी है। इस उपवन के फलों को शोभा से ले लूंगा।" ऐसा कहने पर सीता ने उस हनुमान को देखकर कहा:— "राक्षस समूह तो वहाँ पहरे पर रहता है। व्याप्त हो गिरे फलों को क्रम से चबाकर झट से चले जाओ।" ऐसा कह ढंग से भेजने पर, अपने मन में थोड़ी देर विचारकर, वन का नाश करना चाहकर, (शरीर को) बढ़ाकर, जाँघों से उत्पन्न वातूल (वायु)-घट्टनाओं (झोंकों) के कारण, (वन के) महीजों (वृक्षों) के (कपड़े के) ताने-बाने-से गिरने पर, ॥ ६२० ॥

अशोकवन विध्वंसनमु

ला नित्यकृति यशोकारामभूमि । मानैन हर्म्यमुल् महिगूल दन्नि
मीनसि केळीगृहंबुलु नुग्गुसेसि । वनमहीरुहमुलु वडि नेल गलिपि
कोम्मलु खंडिंचि कुसुममुलु राल्चि । कम्मदेनेलु सलिल कालुवल् सेरिचि
पूवुदीगेलु द्रेंचि पोंदरिंड्लु सदिपि । बावुलु गलचि दोर्बलकेळि देलि
कलकंठ बक बिसकंठिका क्रौंच । कलहंस शुक शारिका मयूरादि
वनपक्षुलार्तरावमुलतो बारु । वनपालकुलु भीति वडि मेलुकांचि
हनुमंतु चेतकु नग्नुलै मंडि । यनिकि सन्नद्धुलै यति शौर्यमुननु
विनुवीथि दिक्कुलु व्रील नार्चुचुनु । ननुपम कर वालहस्तुलै कदिय
दन पेरु तन राक तन पराक्रममु । विन जेप्पि श्रीराम विभु कूर्मिबंटु
नोक्कोक्क राक्षसु नुद्दंडवृत्ति । नोक्कोक्क तरुवुन नोगि गूलनेसि ६३०
प्रथमसंगरकळाप्रारंभुडगुचु । बृथिविपै बीनुगुबेंटलु गाग
भूरिसित्त्वंबुन बोलुपोंदु घोर । वीरुल नेनिमिदिवेल राक्षसुल
बवमानतनयु डप्रतिमुडै पेर्चि । यवलील देगटार्चि यार्चिन बेदरि

अशोक वन का विध्वंस

—उस नित्यकृति (नित्य धन्य जीव) ने अशोक-आराम-भूमि के शोभायमान हर्म्यों (सौधों) को पृथ्वी पर गिराकर, दीप्त हो, केलीगृहों को चूर(चूर) कर, झट से वन के वृक्षों को मिट्टी में मिलाकर, शाखाओं को तोड़कर, फूलों को गिराकर, मधुर मधु को बिखेरकर, नालों को नष्टकर, पुष्पलताओं को तोड़कर, पुष्पकुंजों को छिन्नभिन्न कर, वापियों (के जल) को आलोड़ित किया। (उसके इस प्रकार) बाहुबल-केली में ऊभचूभ होने पर, कलकंठ (कोयल), बक, बिसकंठिका (हंस), क्रौंच, कलहंस, शुक, शारिका, मयूर आदि वनपक्षी आर्त्तरव करते हुए भागने लगे। (उस समय) वनपालक भीत हो, जागकर, हनुमान की करतूत पर अग्नि के समान भड़ककर, युद्ध करने को तैयार होकर, अतिशौर्य के साथ, आकाश और दिशाओं को फाड़ देनेवाला गर्जन करते हुए, अनुपम-करवाल-हस्त होते हुए (हनुमान के) निकट पहुँचे। (तब) अपना नाम, अपना आगमन, अपने पराक्रम के बारे में सुनाकर, श्रीराम के लाड़ले सेवक ने एक-एक राक्षस को उद्दंडवृत्ति से, लगन के साथ, एक-एक वृक्ष (के प्रहार) से गिरा दिया, ॥ ६३० ॥

—(इस प्रकार) प्रथम-संगर (युद्ध) की कला का प्रारम्भ करते हुए, पृथ्वी को शव-समूह से भरते हुए, भूरि-सत्त्व से शोभित होनेवाले आठ हजार घोर-वीर

येपरि धृतिदूलि यिनवंश्युदेवि । गापुन्न राक्षसकांतलु पारि
रावणु लोकविद्रावणु गांचि । "देव! नेडोक कोति तेगुवमै वच्चि
तोलि दोलि वैदेहितो माटलाडि । कलगोन वनमेल्ल गासिगा बेरिकि
वेनुदन्नि येनिमिदिवेल राक्षसुल । वनपालकुल जंपि वालुचुन्नाडु;
वाडु राघवुडंप वच्चिनवाडु । गाडेनि या सीत गापुगानुन्न
तरुवोक्कटियु दक्क दक्किन वनमु । गरमलिग पेरुकंग गारणंबेमि ?
वानि तेरंगेल्ल वैदेहि नडुग । दा नेसंगनटंचु दाचुचुन्नदियु; ६४०
गावुन वाडु राघवुनि दूतौट । ये विधंबुन सिद्ध; मिटमीद वानि
नेट्टन गडिमिमै नीलावु मेरसि । पट्टि शिक्षिपुमु प्राभवंबोप्प"
नावुडु मंडि दानवलोक विभुडु । रावणु डुग्र निग्रह दृष्टि जूचि
दीपाग्रनिर्गळद्दीप्त तैलंबु । लै पावक ज्वाल लक्षुल दोरुग
दन किंकरुल बंचे दंडि राक्षसुल । नेनुबदि वेवुर निद्ध विक्रमुल;

राक्षसों का अप्रतिम हो, पवमानतनय ने सामना किया और सहज ही संहार कर, गर्जन किया। (तब) भीत होकर, विकास को खोकर, धैर्य को खोकर, इनवंश (वाले राम की) देवी की रखवाली करनेवाली राक्षस-स्त्रियाँ भागकर, लोकविद्रावण (लोक को रुलानेवाला) रावण को देख (बोलीं):--"हे देव ! आज एक बंदर साहस से आकर, पहले-पहल वैदेही से बातकर, समस्त वन को क्षुब्ध करते हुए, उखाड़कर, पीछा करके आठ हज़ार वनपालक राक्षसों को मारकर विलसित हो रहा है। वह राघव के भेजने पर आया है। नहीं तो उस सीता को सुरक्षा प्रदान करनेवाले वृक्ष के अतिरिक्त शेष समस्त वन को अधिक क्रुद्ध हो उखाड़ने का क्या कारण है ? उसके विधान के बारे में वैदेही से पूछने पर, वह यह कहकर (बात) छिपा रही है कि मैं कुछ नहीं जानती। ।। ६४० ।।

—इसलिए यह प्रत्येक विधि से सिद्ध (सत्य) है कि वह राघव का दूत है। अब आगे किसी भी प्रकार से, साहस से, अपने बल से प्रकाशित हो प्रभुता के शोभित होने पर, उसे पकड़ दंडित करो।" ऐसा कहने पर दानव-लोक-विभु रावण ने (क्रोध से) भड़ककर, उग्र-निग्रह-दृष्टि से देख कर, दीपाग्रभाग से निर्गलित दीप्त-तैल सम, आँखों से पावक-ज्वालाओं के ढुलकने पर, अपने किंकर, विक्रम से सुशोभित तथा बली अस्सी हज़ार राक्षसों को भेजा।

अड्डु वच्चिन राक्षसुल संहारमु

बनिचिन बनिपूनि बलियुलै वारु । धनुरस्त्र शूल मुद्गर-भिंडिवाल
घनगदा करवाल कलितुलै पेर्चि । यनिकि सन्नद्धुलै यार्चुचु वॆडलि;
रंत सूर्योदयंबय्यॆ; नौटयुनु । नॆंतयु गडकतो नेपग्गलिंचि
यकलंकगति बर्वताकारु डगुचु । मकरतोरणमॆक्कि मारुतात्मजुडु
तनुदाकि शस्त्रास्त्रततुल नॊप्पिंचु । दनुजवीरुल जूचि दर्पिंचि पलिकॆ; ६५०
"नोरि! राक्षसुलार! युर्विपै नेनु । शूरत विलसिल्लु सुग्रीवु बंट;
रामुनि दूत; ना रामु सेमंबु । भूमिज तो जॆप्पि पोवुचुन्नाड;
हनुमंतुडनुवाड; नतिबलाधिकुड । विनुत विक्रम कळाविभव शूरुंड;
बूनि लंकापुरंबुन नुन्न मगल । के नंतकुंडनै यिट वच्चिनाड;
जॆडगोरि नन्नेल चॆनकॆद" रनुचु । वड बेचि याभीलवालमंकिंचि
पदुल नूरुल वेल बलियुडै पट्टि । त्रिदशारिभटुल बंधिंचि बंधिंचि
यारूढ विक्रमाहव केळि देळि । तोरणस्तंभंबुतो व्रेसि व्रेसि

सामना करने आए राक्षसों का संहार

—भेजने पर, निश्चित मन वाले (तथा) बली होते हुए वे (राक्षस) धनु-अस्त्र, शूल, मुद्गर, भिंडिवाल, घन-गदा (तथा) करवालों से कलित हो, क्रम से युद्ध के लिए सन्नद्ध हो, गर्जन करते हुए निकल पड़े। इतने में सूर्योदय हुआ। होने पर, अत्यधिक साहस से उत्साह के बढ़ने पर, अकलंक-गति से पर्वताकार होता हुआ, मकर तोरण पर चढ़कर, मारुतात्मज, अपने से भिड़कर, शस्त्र-अस्त्रततियों (समूहों) से कष्ट पहुँचाने वाले, दनुज वीरों को देखकर, दर्पयुक्त हो, यों बोला:— ॥ ६५० ॥

—'रे राक्षसो ! पृथ्वी पर शूरता से विलसित होनेवाले सुग्रीव का मैं सेवक हूँ। राम का दूत हूँ। उस राम का कुशल समाचार भूमिजा को बताकर जा रहा हूँ। हनुमान कहलानेवाला हूँ। अत्यधिक बलवान हूँ। विनुत-विक्रम-कला-वैभव (से युक्त) शूर हूँ। जानबूझकर लंकापुर में स्थित पुरुषों के लिए अंतक (यम) बनकर यहाँ आया हूँ। नष्ट होना चाहकर, मुझे क्यों छेड़ते हो?" (ऐसा) कहकर, झट विजृंभित हो, आभील (भयंकर) वाल (पूँछ) को चलाकर दसों, सैकड़ों, हज़ारों को, बली होते हुए पकड़, त्रिदश-अरि (देवताओं के शत्रु) के भटों (सैनिकों) को बाँध-बाँधकर, आरूढ़-विक्रम (युत) आहव (युद्ध)-केली में मग्न हो, तोरण स्तंभ से मार-मारकर, युद्ध में एक को भी जीवित न

पूनि योक्करुनैन बोरुलो ब्रतिकि । पोनीक विशेषमुगा जंपिवैचें;
नंतलो बनिहारुलमरारि कडकु । नेंतयु भीतुलै येतेंचि म्रोंकि
"दनुजेश! विनु कोति तनदुवालमुन । नेंनुबदि वेवुर नेपुमै जंपि ६६०
मलयुचुन्नाडु मकरतोरणमु । तलदन्नि रणबलोदग्रुडै" यनुडु
नापंक्तिमुखुडु कालांतकु पगिदि । गोपिंचि पिंगळाक्षुनि दीर्घजिह्वु
वक्रनासुनि नश्मवक्षुनि वैरि । चक्रभीकरुडैन शार्दूलमुखुनि
वेवेग रप्पिंचि "वीरुलै मीर । ला वानरुनि दैगटार्चिरंड" नुचु
बनिचिन नेवुरु ब्रबल सैन्यमुल । गोनि रथारूढुलै क्रूरत वेंडलि
परुवडि नार्चुचु बवनजु दाकि । शरवृष्टि बोंदिविन जलियिंप कात
डा तोरणमुपै नार्चुचु बेर्चि । वातूलसुतुडेचि वालमर्किचि
रथमुल विरचि सारथुल नुग्गाडि । रथतुरंगमुल रणवीथि द्रुंचि
वारणमुल गूल्चि वाजुल गेंडपि । या राक्षसुल सेन नट रूपु मापि
धरणिकि लंघिंचि तनदु वालमुन । नुरुशक्ति गळमुनकुरिगा बिगिंचि ६७०
युरुवडि कन्नुग्रुड्लुरुकंग द्रिप्पि । सुरुगक वक्रनासुनि व्रेसि चंपें;

छोड़ते हुए निःशेष रूप से मार डाला। उतने में द्वारपालक अमर-अरि के पास अत्यन्त भीत हो आकर, प्रणामकर, (बोले):—"हे दनुजेश! सुनो; वानर अपने वाल से अस्सी हज़ार (राक्षसों) को शोभा से मारकर ॥ ६६० ॥ —मकरतोरण के ऊपर, रणबल के उदग्र होते हुए लसित हो रहा है।" (ऐसा) कहने पर पंक्तिमुख कालान्तक के समान क्रुद्ध हुआ (और) पिंगलाक्ष, दीर्घजिह्व, वक्रनास, अश्मवक्ष, वैरिचक्र (समूह) के लिए भीकर शार्दूलमुख को शीघ्रातिशीघ्र बुलाकर, यह कह भेजा कि "तुम लोग वीरतापूर्वक उस वानर का संहार करके आओ।" (भेजने पर) वे पाँचों प्रबल सैन्यों को साथ ले, रथारूढ़ हो, क्रूर हो निकल पड़े। क्रम से गरजते हुए, पवनज का सामना कर, शर वृष्टि से घेर लेने पर, वह (हनुमान) विचलित न होकर, उस तोरण पर (बैठकर) गरजते हुए, क्रम से (उन्हें) व्याकुल करते हुए, वातूलसुत (हनुमान) पूँछ को चलाकर, रथों को टुकड़ेकर, सारथियों को चूरकर, रथ के तुरंगों (घोड़ों) को रणवीथि में मार डालकर, वारणों (हाथियों) को गिराकर, वाजियों को मारकर, राक्षसों की सेनाओं को नष्टकर, धरणि पर कूद पड़ा (और) अपनी पूँछ को महान् शक्ति से (वक्रनास के) गले में फँदे के रूप में कसकर, ॥ ६७० ॥

—झट से घुमाया जिससे उसकी आंख की पुतलियाँ बाहर निकल आईं

जंपियंतट वोक समयनि किनुक । दॆंपुसॊंपुनु वॆंपु दींपिप गदिपि
पॆंडपॆंड नार्चुचु बिडुगुन कंटॆं । वॊंडिदमै कनुपट्टु पिडिकिटि चेत
बुडमिपै नुरुरक्तमुल ग्रक्कि कूल । वडि नश्मवक्षुनि वक्षंबु वॊंडिचॆं;
वॊंडिचि वाहागर्वमुन मारुलेनि । कडक दन गनुगॊनि कलगु राक्षसुल
मॊंगि द्रुंचि शार्दूलमुखु ललाटंबु । पगुलंग वडि द्रिप्पि पडवैचि चंपॆं;
नट्टु चंपि क्रोधाग्नुलंदंद निगुड । गुटिल राक्षसकुलक्षोभंबु गाग
ग्रूरुडै पिंगळाक्षुनि दोक गट्टि । काराकु सुडिगालि गड्डु वडि द्रिप्पु
तीरुन वानि दिर्द्दिर मिंट द्रिप्पि । तोरणस्तंभमुलतो व्रेसि चंपॆं;
वानि निर्म्मॊंयि जंपि वरशक्तियुक्ति । वूनि दानवसैन्यमुलु चॊच्चि कलचि ६८०
युरुवडि दीर्घजिह्वुनि वच्चि ताकि । युरुमुष्टिसंहति युर्वि पै गूल्चि
यालोन बवनुजु डसमान विजय । लोलुडै वानि नालुक पीकि चंपि
तोरणारूढुडै तॊलगकयुन्न । मारुति गनुगॊनि मदि भीतुलगुचु

(और) (इस प्रकार) वक्रनास को मार डाला। मारकर, उतने से न रुककर, कम न होनेवाले क्रोध से, साहस, शोभा और औन्नत्य के दीप्त होने पर, नियराकर, ज़ोर से गरजते हुए, गाज़ की अपेक्षा भयंकर दीखने वाली मुट्ठी से, अश्मवक्ष के वक्ष पर (घूँसा) मारा, जिससे अधिक रक्त उगलकर, (वह) ज़मीन पर गिर पड़ा। मारकर, वाहु (बल) के गर्व से, अनुपम साहस से, अपने को देखकर, विकल होनेवाले राक्षसों के समूह का संहार कर, शार्दूलमुख को झट घुमाघुमाकर (ऐसा) पटक दिया जिससे उसका ललाट फूट गया। ऐसा मारकर, जहाँ-तहाँ क्रोधाग्नियों के वलने पर, कुटिल-राक्षस-कुल को क्षुब्ध करते हुए, क्रूर बन, पिंगलाक्ष को पूँछ से बाँधकर, पके पत्ते को जिस प्रकार आँधी वेग से घुमाती है, उसे आकाश में गोलाकार घुमाकर, तोरणस्तंभ से दे मारा। उसे इस प्रकार मारकर, वरशक्ति-युक्ति को धारणकर, दानव-सैन्य में पैठकर, क्षुब्ध कर, ॥ ६८० ॥

—वेग से आकर दीर्घजिह्व पर आक्रमण कर, उरु-मुष्टि-संहति (संघात) से जमीन पर गिराकर, इतने में असमान-विजय-लोलता से पवनज उसकी जीभ खींचकर (उसे) मार डालकर, तोरण पर चढ़ बैठा, वहाँ से न हिला। ऐसे मारुति को देखकर, मन में भीत होते हुए,

हनुमंतुनि मीदिकि रावणुडु रक्तरोमादुल बंपुट

नंत जिक्किन दैत्युलट बारिपोयि । यंतयु जेप्पिन नद्दशाननुडु
सोमिंचि निजमंत्रिसुतुलैन रक्त । रोमुनि शतजिह्वु रुधिरलोचनुनि
स्तनितहासुनि शूलदंष्ट्रु दुर्मुखुनि । घनसत्त्वुडगु व्याघ्रकबळुनि
बिलिचि
"यिदि योक्क वानरुंडेचि राक्षसुल । बोदिवि पेक्कंड्र जंपुचुन्नवाडु;
आ मर्कटुनि जंपु' डनि पूनि पनुप । ना महाबलगर्वु लार्चुचु वेडलि
चतुरंगबलमुलसंख्यमुल् गोलुव । नतुलरथारूढुलै वच्चि पेर्चि
मकरतोरणमुपै मारुलेक्कच्च । नकलंकुडैयुन्न हनुमंतु बोदिवि ६९०
वरदिव्यशस्त्रास्त्रवर्षमुल् गुरिय । बरमसाहसुडैन पवमानसुतुडु
जलदसंवेष्टित शक्रुनि पगिदि । बोलुपोंदि यंतयु बोलिवोनि कडिमि
नप्पुडादैत्युल यस्त्रशस्त्रमुलु । दप्पिचुकोनुचुनु दनु दाककुंड
दन नखाग्रंबुल दंतकुंतमुल । घनपाद कूर्पर करघट्टनमुल
जेलरेगि वडि महाशिलल वृक्षमुल । बलमुल नलुगड बरपि नुग्गाडि
कंठीरवमु वोले गजमुल पैकि । गुंठितेतर शक्ति गुप्पिंचि ताकि
पटु मांस मौक्तिक प्रकरमुल् सेदर । गुटिलोग्रनखमुल गुंभमुल् व्रच्चि

हनुमान पर रावण का रक्तरोम आदि को भेजना

—तब बचे दैत्य वहाँ से भागे । सबके कहने पर वह दशानन ने पराक्रम से युक्त हो, अपने मंत्री-पुत्रों—रक्तरोम, शतजिह्व, रुधिरलोचन, स्तनितहास, शूलदंष्ट्र, दुर्मुख, घन (महान्) सत्त्ववाले व्याघ्रकबल—को बुलाकर (कहा):—"यह एक वानर उद्धत हो, अनेक राक्षसों को पकड़ मार डाल रहा है । उस मर्कट को मार डालो ।" (ऐसा) कह सप्रयत्न भेजने पर वे महाबल-गर्वित (राक्षस) गरजते हुए निकल पड़े, मकरतोरण पर असमान हो, मन से अकलंक बने हुए हनुमान को घेरकर, ॥ ६९० ॥

—श्रेष्ठ-दिव्य शस्त्र-अस्त्र की वर्षा करने पर, परम साहसिक पवमानसुत, जलद से संवेष्टित शक्र (इन्द्र) के समान, शोभायमान हो, अकुंठित पराक्रम से, तब उन दैत्यों के अस्त्र-शस्त्रों से (अपने को) बचाते हुए, उन्हें (अपने को) स्पर्श करने न देते हुए, अपने नखाग्रों से, दन्त-कुन्तों (भालों) से घन-पाद-(बड़े-बड़े चरणों), कूर्पर (घुटने) तथा करघट्टनों से, विजृंभित हो, वेग से महाशिलाओं (तथा) वृक्षों को चारों तरफ़ फेंककर, सेना को चूर-चूरकर, जैसे सिंह गजों पर कुंठितेतर (अकुंठित) शक्ति से छलाँग भरकर, आक्रमणकर, कुटिल-उग्र-नखों से कुंभ (-स्थल) फाड़कर, पटुमांस

लेळ्ळपै बुलि चौकळिंचिन पगिदि । द्रुळ्ळु गुर्रमुल दोड्तो रूपुमापि
जंतुपारण सेयु जमुनि कैवडिनि । बंतंबुतो ग्रालु बलमु मायिंचि
कुलशैलमुल दाकि कुलिशायुधंबु । पेळपेळध्वनुलतो भेदिंचिनट्लु
बलुविडि रथमुल पैकि लंघिंचि । पोलुपार रथरथ्यमुल नेल गलपि
रथुल जेंडाडि सारथुल नुग्गाडि । पृथुसत्त्वयुक्तुडै पेंचि लंघिंचि
मुनुमुन्न रक्तरोमुनि नेलगूल्चि । स्तनितहासुनि द्रुंचि शतजिह्वु नणचि
रुधिराक्षु जंपि दुर्मुखु विदारिंचि । ऋथनविक्रमु व्याघ्र कवळु खंडिंचि
शूलदंष्ट्रु वधिंचि शूरत मिंचि । कालपाशाभीलकरवालुडगुचु
नुरुवडि निब्भंगि नोक्कोक्क तेंगुव । दरमिडि पेलुच नुद्दंड राक्षसुल
बलमुलतोगूड भस्मबु सेसि । तलगक मारुतात्मजुडुन्न दलकि
पोरिलो निलुवक पोयिनवारु । वारि चावुलु चेप्प वडि गोपमेत्ति
यट ब्रहस्तुनि पुत्तुडगु जंबुमालि । जटुल प्रताप संचलितांशुमालि
गुटिलारि पर्वत क्रूर दंभोळि । बटु बाहुबलशालि बनिचे रावणुडु;
पनिचिन ना दैत्यपतिकि म्रोक्कुचुनु । ननुरक्ति रक्तमाल्यांबरोदग्र

मौक्तिक प्रकरों को बिखेर देता है, जैसे हिरनों पर व्याघ्र छलांग भरता है, (उसी प्रकार) उछलते अश्वों को झट से निःशेष कर, हठ से विजृंभित सेना को, जन्तु पारण करनेवाले यम(-राज) के समान, मटियामेट कर, कुलपर्वतों पर गिरकर भयंकर ध्वनि से उनको बेधनेवाले कुलिशायुध (वज्रायुध) के समान, ॥ ७०० ॥

—बरजोरी रथों पर लाँघकर, शोभा से रथ-रथ्य को मिट्टी में मिलाकर, रथियों का संहारकर, सारथियों को चूर-चूरकर, पृथु-सत्त्वयुक्त हो, क्रम से, लाँघकर, सर्वप्रथम रक्तरोम को जमीन पर गिराकर, स्तनितहास का वधकर, शतजिह्व को दबाकर, रुधिराक्ष को मारकर, दुर्मुख का विदारण कर, ऋथन (वध करने के)-विक्रम वाले व्याघ्र-कबल का खंडनकर, शूलदंष्ट्र का वधकर, शूरता में बढ़कर, कालपाश के समान अभील (भयंकर) करवाल (खड्ग) वाले होकर, बड़े वेग से, इस प्रकार, एक-एक प्रकार, क्रम से उद्दंड राक्षसों को, ससैन्य भस्मकर, पीछे हटे बिना रहा। (इस प्रकार) मारुतात्मज के रहने पर, युद्ध में टिक न सकनेवाले जाकर, उनकी (अन्य राक्षसों की) मृत्यु के बारे में कहने पर, झट से क्रुद्ध होकर, प्रहस्त के पुत्र जंबुमालि को जो चटुल-प्रताप-संचलित-अंशुमालि (सूर्य) है, जो कुटिल-अरि-पर्वत-क्रूर-दंभोलि (वज्रायुध) है, जो पटु बाहुबलशाली है, रावण ने भेजा। ॥ ७१० ॥

समरोग्रशस्त्रास्त्रसन्नद्धुडगुचु । नमितरथारूढुडै वच्चि यतडु
शिंजिनी टंकार सिंहनादमुल । गंजजांडमु हल्लकल्लोलमुगनु
हरि दाकु नुन्मत्त हस्ति चंदमुन । नरुदैन कडिमिमै हनुमंतु दाकि
केरलि मेघमु महागिरिमीद बोलें । शरवृष्टि गुरिसिन जलियिंपकतडु
पैनुशिल दैत्युपै बेरिकि वैचुटयु । गनि दानि शरदशकंबुचे दुनिमि
हनुमंतु वदनाब्ज मर्धचंद्रास्त्र । मुन नोंचि पदि बाणमुल बाहुलुरमु
नाटिंचि योक शक्ति नडुनेत्ति वगुल । मेटियै येसिन मिगुल रोषिंचि
पवमानतनयुंडु बाहुदर्पमुन । नवलील नोक सालमगलिंचि वैव
नालुगम्मुल दानि नडुमने त्रुंचि । वालिन कडिमि ना वनचरवरुनि ७२०
शिरमोक्क निष्ठुरशितसायकमुन । दरमिडि वक्षंबु दशविशिखमुल
बोरि भुजंबुल नैदु भूरिभल्लमुल । गरमु नोंप्पिंचि रक्कसुडेपु मेरय
गालुनि पगिदि गन्गव निप्पुलुरल । नालोन हनुमंतु डा दैत्युरथमु
बदमुल बडदन्नि पट्टि दंष्ट्रमुल । गदिसि विदारिंचि गर्जिंचि व्रेसि

—भेजने पर उस दैत्यपति को प्रणामकर, अनुरक्ति से रक्त (लाल)-माला, रक्तअंबर तथा उदग्र-समर (के लिए उचित) उग्र-शस्त्र-अस्त्र से सन्नद्ध होते हुए, अमित रथारूढ़ होकर, आकर, उसने शिंजनी-टंकार (तथा) सिंहनादों से ब्रह्मांड को कल्लोलित करते हुए, हरि (सिंह) से भिड़ जाने वाले उन्मत्त हस्ति (हाथी) के समान, विरल साहस से हनुमान पर आक्रमण किया (और) मेघ के महागिरि पर (बरसने) के समान शर-वृष्टि की फिर भी उसने (हनुमान ने) विचलित न होकर दैत्य पर बहुत बड़ी चट्टान उखाड़कर फेंक दिया। (उसे) देख उसे दस बाणों से टुकड़े कर, हनुमान के वदनाब्ज को अर्द्धचन्द्र बाण से पीड़ित कर, बाहु और उर पर दस (-दस) बाण गड़ाकर, एक शक्ति (बाण) को उत्कृष्टता से ऐसा डाला कि (हनुमान का) शिरोमध्य भाग फूट गया। (तब) अतिरुष्ट हो, पवमानतनय ने बाहु-दर्प से, अनायास एक साल(-वृक्ष) को उखाड़कर डाल (फेंक) दिया। उसे चार बाणों से बीच में ही काटकर, निशित पराक्रम से उस वनचर-वर के ॥ ७२० ॥

—शिर को एक निष्ठुर-शित (तेज)-सायक (बाण) से, (तथा) क्रम से वक्ष को दस बाणों से, पुनः भुजाओं को पाँच बड़े-बड़े भालों से अधिक पीड़ित कर, राक्षस सुशोभित हुआ। इतने में काल के समान नेत्रद्वय से अंगार उगलते हुए, हनुमान ने उस दैत्य के रथ को चरणाघात से जमीन पर गिरा दिया, (उसे) पकड़, दाँतों से टुकड़े-टुकड़े कर, फेंककर गर्जना

प्रोंदिवि महासालमुन रथ्यसमिति। जदिपिन विरथुडै जंबुमालियुनु
बलकयु नडिदंबु बलुविडि गोनुचु। नलवु बेंपुनु गूड नार्चुचु वच्चि
पवमानतनयुनि फालंबु व्रेय। नवशुडै मूर्च्छिलिल यंतलो देलिसि
पिडुगुतो सरिपोलु पिडिकिट बलक। बोडिचि भग्नमु सेसि प्रोनीक
कदिसि
योडिसि कैदुव गोनि युग्रुडै कडिमि। दडयक दैत्युनि तल द्रेव्व नेय
धृति दूलि यतडुर्वि द्रेळ्ळे; द्रेळ्ळुटयु। नतुल सत्वमुन दैत्यावळि दरिमि
७३०
वितत विक्रम जयवृद्धि वेंपोंदि। चतुरुडै तोरणस्थलिनुन्न जूचि
यतिभीतचित्तुलै यंदरु बरचि। हतशेषुलतनिपाटंतयु देलुप
गडु जोद्यमंदि राक्षसमंत्रिवरुल। दडयक पिलिपिंचि तग गोलुविच्चि
दनुजनाथुडु गोंत दडवु सिंतिंचि। यनिमिषेंद्रुनिनैन नाजि गैकोननि
यलघु विक्रमु विरूपाक्षु यूपाक्षु। गलहदुर्धरु भासकर्णाख्यु व्रघसु
नदयुल बंचसेनाग्रनायकुल। गदन कर्कशुल नोक्कट जूचि पलिकें;
"ने लोकमुननैन निट्टु मर्कटुलकु। नी लावु गलदे? वीडेव्वडो तेलिय

की, (और) घेरकर महासाल (वृक्ष) से रथ्य-समिति (समूह) को चूर कर दिया, (तब) विरथ हो जंबुमालि ने भी ढाल तथा खड्ग को दृढ़ता से (हाथ में) लेते हुए, बल और शोभा के साथ गरजते हुए आकर, पवमान-तनय के फाल पर प्रहार किया, (तब) अवश हो, मूर्च्छित हो, पलभर में होश में आकर, गाज की समता करनेवाली मुष्टि से ढाल पर आघात कर, (उसे) भग्नकर, (राक्षस को) जाने न देकर, नियराकर, खड्ग खींच हाथ में ले, उग्र बन, पराक्रम से अविलंब दैत्य के सिर को काट डाला। धृति को खोकर वह (राक्षस) ज़मीन पर गिर पड़ा। गिर पड़ने पर अतुल-सत्त्व से दैत्य-समूह को भगाकर, ।। ७३० ।।

—वितत-विक्रम, विजय-वृद्धि के बढने पर, चतुर हो तोरणस्थली पर (बैठा) रहा। (उसे) देख अतिभीत चित्तवाले होते हुए हतशेष (मरने से बचे हुए राक्षस) सब भागकर उसकी (जंबुमालि की) समस्त दुर्गति बताने पर, (रावण) अति चकित हो, राक्षसमंत्रिवरों को अविलंब बुलाकर समुचित रूप से सभा का आयोजन कर, दनुजनाथ थोड़ी देर चिन्तनकर, युद्ध में अनिमिषेन्द्र (इन्द्र) की भी परवाह न करनेवाले, अलघुविक्रम वाले (तथा) दयाहीन (क्रूर) विरूपाक्ष, यूपाक्ष, कलह-दुर्धर, भासकर्ण, प्रघस (नामक) पाँच अग्रसेनानायकों को जो कदन (युद्ध में)-कर्कश हैं, एक साथ देखकर बोला:—"क्या किसी भी लोक में मर्कटों (वानरों) की ऐसी

रादु ! मीरेवुरु रणबलोदग्रु । लै दर्पमेर्पड नात्म नेमरक
यगणित सैन्य सहायुलै वानि । देंगुवमै निट बट्टि तेंडु; पोंड" निन
रावणुनाज्ञ शिरंबुन बूनि । पावकादित्यप्रभाभासुलगुचु ७४०
वारलु बहुरथ वारण तुरग । वीर दैत्युलतोड वेवेग कदलि
प्राग्गिरिपै नुंडु भानुंडु वोलें । दिग्गगनांतरोदीर्णतेजमुन
दोरणंबेक्कि बंधुर दैत्यवरुल । तो रणंबोनरिप दौरकोनुवानि
ननिलसूनुनि दाकि यवनियु दिशलु । जिनुगंग जेयुचु सिंहनादमुल
नंदरु दिव्यशस्त्रास्त्रमुल् गुरिय । नंदुलो दुर्धरुंडनु पेरि वाडु
ऐदुबाणंबुल ननिलजुनुरमु । भेदिंचुटयु रोषभीषणुंडगुचु
गपिवीरु डार्चि याकसमुनकेगय । नपुड दुर्धरुडुनु ननितो नेगसि
विलुनारि सारिंचि विलयकालोग्र । जलदंबु कैवडि शरवृष्टि गुरिय
ना युग्रशरवृष्टि नणचि वायुजुडु । ना येंड बोडवुगा नटमिट केगसि
वडिवडि बरतेंचि वानिपै बडिन । बोडिपोडियै कूलें बुडमि रक्कसुडु;
७५०
अदि सूचि या विरूपाक्ष यूपाक्षु । लदयत मुद्गर हस्तुलै येगसि

सामर्थ्य है ? (नहीं है ।) पता नहीं यह कौन है ? तुम पाँचों रणबल से उदग्र हो, दर्प के साथ, मन से असावधान न होकर, अगणित सेना की सहायता लेकर, उसे साहस से पकड़कर यहाँ लाओ, जाओ ।" कहने पर, रावण की आज्ञा सिर पर धारणकर, पावक (तथा) आदित्य की प्रभा से भासमान होते हुए, ॥ ७४० ॥

—वे (लोग) अनेक रथ, वारण, तुरग (और) वीर दैत्यों के साथ अति-शीघ्रता से निकल पड़े । प्राक्-गिरि पर स्थित भानु के समान, दिक (और) गगनांतरों में उदीर्ण तेज से, तोरण पर चढ़कर, बन्धुर (सान्द्र) दैत्यवरों से रण करने के लिए उद्यत अनिलसून पर आक्रमण कर, अवनि और दिशाओं को विदीर्ण करनेवाले सिंहनाद करते हुए, सभी ने दिव्य शस्त्र-अस्त्रों को बरसाया । उनमें दुर्धर नामक व्यक्ति ने पाँच बाणों से अनिलज के उर को बेध डाला । तब रोष-भीषण होते हुए, कपिवीर गरजकर आकाश की ओर उड़ा । तब दुर्धर भी उसके साथ उड़कर, धनुष की डोर चढ़ाकर, विलयकाल-उग्र-जलद के समान शरवृष्टि की । उस उग्र शरवृष्टि को रोककर, वायुज तब आकाश में अधिक ऊँचा चढ़कर शीघ्रता से आकर, उस पर गिर पड़ा तो वह राक्षस चूर-चूर हो ज़मीन पर गिर पड़ा । ॥ ७५० ॥

उसे देख विरूपाक्ष और यूपाक्ष अदयता (क्रूरता) से मुद्गर-हस्त हो

याकसंबुन निलिच पेर्चि यार्चुटयु । ना करुवलिपट्टि यट दानु नेगसि
वारितो बोराड वारुनु नतनि । घोरमुद्गरमुलु गोनि व्रेयुटयुनु
जगतिपै बडि लेचि सालभूरुहमु । नगलिचि मरियुनु नार्चुचु नेगसि
चिक्कनि भुजशक्ति जिरुचिरु द्रिप्पि । यौक्कदेब्बन वारि नुर्विपै गूल्चे;
भासकर्णुडुनु ग्रघसुंडु नंत । ना समीरात्मजु नदरंट दाकि
पटु शूल पट्टिस प्रहतुल नोंप । नटु रक्तसिक्तांगुडै वायुसुतुडु
कोपिंचि मिक्किलि कुलशैलसदृश । मौ पर्वतंबेत्ति यसुरुलमीद
स्रुक्कक वैचिन जूर्णमै पडिरि । कौक्कुलु वडि गुंट गूलु चंदमुन;
वायुनंदनुडंत वारि सैन्यमुल ।ना यंतकुडु वोले नणगिचुनपुडु ७६०
पडु करुल् चेडु हरुल् परुचु काल्वलमु। गडतेरु तेरुलु गलगु शूरुलुनु
मडियु महारथुल् म्रग्गु सारथुलु । वोडियैन शस्त्रमुल् पोलियु नस्त्रमुलु
गडिकंडलैन चक्रप्रासमुलुनु । मडिसिन गुर्रमुल् म्रग्गु काल्बलमु
गूलेडु मावतुल् ग्रुंगु रावुतुलु । दूलेडु गोडुगुलु द्रुंगु पडगलु
बरुचु नेत्तुरुटेर्लु बहुमांसमुलकु । नरुग्रम्मु भूतंबुलै रणंबोप्प
क्षणमात्रमुन वारि जंपि वायुजुडु । रणकांक्ष मरियु दोरणमेक्कियुंडे;

उड़कर, आकाश पर खड़े होकर, गरजकर विजृंभित हुए तब वह पवनपुत्र भी स्वयं उड़कर, उनसे लड़ पड़ा। उन्होंने उस पर घोर मुद्गर फेंके। (तब हनुमान) जमीन पर गिरकर, उठकर सालवृक्ष को उखाड़कर, फिर गरजते हुए; ऊपर उठकर, महान् भुजशक्ति से (उस वृक्ष को) वेग से गोल घुमाकर, एक ही प्रहार से उन्हें जमीन पर गिरा दिया। तब भासकर्ण और प्रघस ने उस समीरात्मज को भीत करते हुए आक्रमण किया, पटु शूल (तथा) मुद्गरों के प्रहारों से पीड़ित करने पर, उधर रक्तसिक्तांग हो वायुपुत्र क्रुद्ध हो, विशाल कुलशैल सदृश पर्वत को उठाकर, असुरों पर विना कमजोर हुए (अधिक बल से), डाल देने पर, वे चूर हो गिर पड़े जैसे बड़े चूहे गर्त में गिर पड़ते हों। तब वायुनन्दन के उनके सैन्यों को अन्तक के समान नष्ट करते समय, ।। ७६० ।।

—गिरते करियों, नष्ट होते अश्वों, भागते पैदलों, ध्वस्त होते रथों, विकल होते शूरों, मरते महारथियों, दबते सारथियों, चूर्ण बने शस्त्रों, नष्ट होते अस्त्रों, मरे हुए तुरंगों, मरते पैदल भटों, गिरते महावतों, दबते घुड़सवारों, झुकते छत्रों, ध्वस्त होते ध्वजाओं, प्रवाहित रक्त की नदियों, प्रचुर मांस (खंडों) के लिए आकृष्ट भूतों से युक्त हो रण के शोभित होने पर, क्षणमात्र में ही उन (राक्षसों) का संहार कर, वायुज रणकांक्षा से

बंचसेनाग्रगुल् पंचत्वमोंदि । रंचुनु हतशेषुलय्यॆड दॆलुप

अक्षयकुमारुडु हनुमपै नेत्तिवच्चुट

राक्षसपति यंत रणबलोदारु । निक्षु चापाकारु निद्ध विचारु
नक्षीणदोस्सारु नसहायशूरु । नक्षयकुमारु महावीरु बिलिचि
"यलव्रुमै ना कोति ननिलोन जंपि । तलगोसि तोरणस्तंभंबुनंदु ७७०
गट्टि र" म्मनवुडु गडकतो नतडु । नॆट्टन शस्त्रास्त्रनिचयबुतोड
दुरगाष्टकमुतोड द्रुतगति तोड । बिरुदु टॆक्कॆमुतोड बृथुकांति बॊंदलि
युदयार्कनिभमैन यॊकरथंबॆक्कि । कदलि भूभागंबु गंपिप नडचॆ
नरदंबुस्रोतयु हयहेषितमुलु । गरिबृंहितमुलु रक्कसुल यार्पुलुनु
दन महाकार्मुक ध्वनियु नॊंडॊंड । घनमुलै याशावकाशमुल् निंड
दोरणारूढुडै तॊलगक चॆलगु । मारुति नक्षकुमारुंडु दाकि
त्रिजगमुल् भीतिल्ल दिशलु घूर्णिल्ल । भुजशक्ति पुंखानुपुंखंबुगाग
घनबाणततुल नक्कजमुगा बॊंदुव ।"ननि वीनि मदि बालुडनि यॆंचरादु;
घनपराक्रम कळाखनि वी' डटंचु । हनुमंतुडचलुडै या बाणततुल

फिर से तोरण पर चढ़ बैठा । तब हतशेषों के यह बताने पर कि पंचसेनापति पंचत्व को प्राप्त हुए,

अक्षकुमार का हनुमान पर आक्रमण करना

—तब राक्षसपति ने रणबल-उदार, इक्षुचापाकार (मन्मथ के सम आकार वाले), इद्ध विचारवाले, अक्षीण-दो:सार (बाहुबाल) वाले, असहाय शूर, महावीर, अक्षकुमार को बुलाकर (कहा):—"सबल हो, उस वानर को युद्ध में मारकर, सिर काटकर, तोरणस्तभ पर ।। ७७० ।।
—बाँधकर आओ ।" ऐसा कहने पर साहस से वह सप्रयत्न अनिवार्य शस्त्र-अस्त्र-निचय (समूह) ले, आठ तुरगों तथा द्रुतगति के साथ, बिरुद को बतानेवाली पताका के साथ, पृथु कान्ति से शोभित उदयार्क-निभ (उदयकाल के सूर्य के सम) एक रथ पर चढ़कर चल पड़ा तो रथ की ध्वनि, घोड़ों की हिनहिनाहट, हाथियों की चिंघाड़, राक्षसों की गर्जनाएँ, अपने महाकार्मुक (धनुष) की ध्वनि पर परस्पर एक दूसरे से बढ़कर दिशाओं और अन्तराल में भर जाने पर, भूभाग काँप उठा । तोरण पर बैठ विचलित न होकर विलसित होनेवाले मारुति पर अक्षकुमार ने आक्रमण कर, तीन लोकों के भीत होने पर, दिशाओं के घूर्णित होने पर, भुजशक्ति से लगातार घनबाण-ततियों से आश्चर्यचकित रूप से घेर लिया । हनुमान यह सोचते हुए ...ालक नहीं मानना चाहिए । यह घनपराक्रम-कला की

वालमुखंबुन वडि द्रुंचिवैव । मेलनि हनुमंतु मेच्चुचु वाडु ७८०
बाणत्रयंबुन वावनि शिरमु । शोणितंबुलु गार सूटि नेयुटयु
गीलालधारलु किरणमुल् गाग । बालभानुडु वोलै बरग जूपट्टि
या लोन प्रळय कालाग्नियै मंडि । तालवृक्षमुन रथ्यमुलु द्रुंचुटयु
नेल बदातियै निलिचि वाडतनि । फालंबु शरमुल बदियिंट नोंप
नवशुडै तेप्परि यतडु वालमुन । दविलि यय्यक्षुनि तनुवु नोंप्पिप
नक्षुंडु गदगोनि यनिलतनूजु । वक्षंबु व्रेसिन वडि दूलि तेलिसि
कुदिसि यग्गद बुच्चुकोनि बिट्टु व्रेय । बेंदरि वाडोक विंटि पेंट्टोसरिंचि
तप्पिचुकोनि वियत्तलमुन कैगसे । नप्पुडु पलकयु नडिदंबु गोनुचु;
नलवुमै नंतलो ना वायुसुतुडु । तोलगक या दैत्यु तोडनै येगसि
गद व्रेयुटयु जूचि खड्गमंकिचि । गद रेंडु तुनुकलुगा व्रेसि डासि ७९०
तोडलु व्रेयुटयु वातूलनंदनुडु । पुडमिपै बडि नभंबुनकु बिट्टेगसि
खगनाथुडु रगंबु गबळिचुनट्टु । लोगि वानि चरणंबु लोडिसि रादिगिचि
तेगुव गुम्मरिसारै तीरुन द्रिप्पि । जगतिपै व्रेसिन जवमेल्ल दूलि

निधि है।" अचल हो, उन बाणततियों को वालमुख से झट तोड़ डाला। हनुमान की प्रशंसा करते हुए ।। ७८० ।।

—उसने तीन बाण सीधे पावनी (पवनपुत्र) के सिर पर डाले जिससे शोणित (रक्त) बह उठा। रक्त की धाराओं के किरणें होने पर बाल भानु के समान शोभायमान दीखकर, उतने में ही प्रलयकाल की अग्नि हो बल उठकर, (हनुमान ने) तालवृक्ष से रथ्यों (अश्वों) को मार डाला। जमीन पर पैदल खड़े होकर उसने उसके (हनुमान के) फाल-भाग को दस शरों से पीड़ित किया। अवश (बेहोश) हो (फिर) होश में आकर उसने (हनुमान ने) बाल (पूँछ) से अक्ष के शरीर को पीड़ित किया। अक्ष ने गदा लेकर अनिल तनूज के वक्ष पर डाल दिया, डालने पर झट मूर्च्छित हो (फिर) होश में आकर, सिकुड़कर, उस गदा को लेकर, पूरी शक्ति से फेंक दिया। वह (अक्ष) भीत होकर, धनुष मात्र की दूरी तक सरककर, बचकर, तब ढाल और तलवार लेकर आकाश की ओर उड़ा। उतने में न हटकर, वायुसुत ने उसी दैत्य के साथ उड़कर, गदा फेंक दी। (उसे) देख खड्ग चलाकर, गदा के दो टुकड़े कर, नियराकर, ।। ७९० ।।

—जाँघों पर मारने पर, वातूलनन्दन ज़मीन पर गिरकर, पूरी शक्ति से आकाश की ओर उड़ा। खगनाथ (गरुड़) के उरग (सर्प) को निगलने के समान क्रम से उसके चरण पकड़, खींच लिया, साहस से कुम्हार के चाक

पोलुपरि तलनुन्न बौमिडिकमूडि । कलभूषणमुलुर्वि गनुकनि जेंदर
गुंडियल वगिलि प्रेगुलु वात दौट्टि । कंडलेल्लेड राल गनुग्रुड्लु सेंदर
नगलि यद्दानवुडंगंबुलेल्ल ।बगिलि नेत्तुरु ग्रक्कि प्राणमुल् विडिचें;
वानि चावटु चूचि वासवाद्यमरु । लानंद भरितात्मुलै तन्नु बौगड
नंत ना हनुमंतु डसमान विजय । वंतुडै यार्चि दुर्वारुडै युंडे,
जेंदरिन दनुजुलच्चेरुवुगा बरच्चि ।त्रिदशारिसभ सौच्चि दीनुलै निलिचि
"बलियु डा वानरपति बाहुबलमु । दलप नच्चेरु वौंदु दानवाधीश !
८००
पोलिसिरि वनपालपुंगवुलु, गिंक । रुलु गीटडंगिरारूढ विक्रमुलु,
शतजिह्वुडिलगूले, शार्दूलमुखुडु । गतजीवुडय्ये, बिंगळनेत्रुडील्गे,
स्तनितहासुडु सच्चे, शार्दूलकबळु । डनि द्रुंगे, मृतुडय्ये नट जंबुमालि,
सोमिचि वक्रनासुडु म्रग्गे, रक्तरोमुंडु । लयमय्ये, रुधिराक्षुडडगें,
दळमुलतो शूलदंष्ट्रुडु मडिसे । जेलुवेदि मरि दीर्घजिह्वुंडु देगिये,
रूपरि पोये दुर्मुखुडु, दुर्धरुडु । प्रापिंचे मरणंबु, प्रघसुडु वडिये,

---

के समान (उसे) घुमाकर ज़मीन पर पटक दिया। (डाल देने पर) समस्त प्रताप के खोने पर, शोभा से शिर पर स्थित किरीट के छूटकर, सुन्दर आभूषणों के संभ्रम से भूमि पर बिखर जाने पर, हृत्पिंड के फटकर, आंतों के बाहर निकल आकर, कंडराओं (स्नायुओं) के जगह-जगह टूट पड़ने पर, आँख की पुतलियों के बिखर जाने पर, उस दानव ने समस्त अंगों के फूटने पर, रक्त उगलकर, प्राण छोड़ दिए। उसकी मृत्यु को उस प्रकार देखकर वासव आदि अमरों के आनन्द-भरित-आत्मावाले होते हुए अपनी प्रशंसा करने पर, तब हनुमान असमान विजयवान हो, गरजकर दुर्वार बना रहा। भीत बने दनुज, आश्चर्य चकित रूप से भागकर, त्रिदशारि (देवताओं के शत्रु) की सभा में प्रवेशकर, दीन हो, खड़े होकर, (बोले):—"हे दानवाधीश! उस बली वानरपति का बाहुबल सोचने पर आश्चर्यप्रद है ॥ ८०० ॥

—वनपाल-पुंगव (श्रेष्ठ) मर गए, आरूढ़ विक्रम वाले किंकर नष्ट हो गए। शतजिह्व ज़मीन पर गिर गया, शार्दूलमुख गतजीव हुआ, पिंगल-नेत्र मर गया, स्तनितहास मर गया, शार्दूलकबल युद्ध में मर गया, उधर जंबुमालि मृत हो गया, पराक्रम दिखाकर वक्रनास समाप्त हो गया, रक्तरोम का लय हो गया, रुधिराक्ष का दमन हो गया, (अपनी) सेना के साथ शूलदंष्ट्र मर गया, शोभा को खोकर फिर दीर्घजिह्व कट गया, दुर्मुख का रूप ही नहीं रहा, दुर्धर मरण को प्राप्त हुआ, प्रघस गिर गया, भासकर्ण भस्म हो गया, यूपाक्ष गिर गया, विरूपाक्ष प्राण खो बैठा, अक्ष मर गया,

नुरुमय्ये भासकर्णुंडु, यूपाक्षु । डोरगे, विरूपाक्षु डुसुरुतो बासे,
नक्षुंडु देगटारे, हतुडय्ये नक्ष्म । वक्षुंडु, मडिसे दुर्वारसैन्यमुलु,
निक ना वानरु निंद्रादि सुरल । शंकिप कनिमोन साधिपलेरु,
प्रळयांतकुनिनैन बट्टि निर्जिप । जलमैक्कि यसमानसत्त्वुडैनाडु, ८१०
अमराउलनु म्रिग नगचर रूप । ममर दालिचन मृत्युवगु निजंबरय"
नावुडु वेरगंदि नाकारि वगल । भाविंचि यक्षुनि बलविप दोडगे,
"हा कुमारक ! यक्ष ! हा वीरवर्य ! । हा कपिचे नीवु नणगिते ?" यनुचु
दलकुचु वलविचु तंड्रिनि जूचि । तोलगक यिंद्रजित्तुडु चेरि पलिके,

इंद्रजित्तुचे हनुम बद्धुडगुट

"देव ! नीकेटिकि धृतिदूलि वगव ? । ना वानराधमु नवलील दाकि
वारक यट जंपि वच्चेद नोंडे । धीरत निट बट्टि तेच्चेद नोंडे"
ना विनि तन यग्रनंदनु जूचि । रावणुडनिये धैर्यस्फूर्ति निगुड,
"जिरकाल ममरेंद्रु जेरबेट्टिनावु । परम मायाबलं प्रौढुंडवीवु,

अशमवक्ष का वध हो गया, दुर्वार सैन्य नष्ट हो गया । अब उस वानर को युद्ध में इन्द्र आदि सुर भी निस्सन्देह जीत नहीं सकते । (लगता है) वह प्रलयान्तक (प्रलयकाल का यम) को भी पकड़ परास्त करने का हठ करने वाला असमान सत्त्व संपन्न है । ॥ ८१० ॥
यह बात सच लगती है कि अमरारियों (राक्षसों) को निगल जाने के लिए मृत्यु ने मानो अगचर (वानर)-रूप धारण किया है।" ऐसा कहने पर चकित हो नाकारि (स्वर्ग का शत्रु) दुखी हो, अक्ष के बारे में विलाप करने लगा "हा कुमारक ! अक्ष ! हा वीरवर ! हाय, तुम (एक) कपि के हाथ मर गए ?" ऐसा कहते, विचलित हो, विलाप करने वाले पिता को देखकर, (निकट) पहुँच, हटे बिना, इन्द्रजीत ने कहा:—

इन्द्रजीत से हनुमान का बन्धित होना

—"हे देव ! धैर्य को छोड़ दुखी होने की तुम्हें क्या आवश्यकता है ? उस वानराधम पर सरलता से आक्रमण कर, वहाँ (युद्ध में) मार डालकर आऊँगा अथवा धैर्य से पकड़ यहाँ लाऊँगा ।" ऐसा कहने पर सुनकर, अपने अग्रनन्दन को देखकर, धैर्य स्फूर्ति के शोभित होने पर, रावण बोला—"(तुमने) चिरकाल तक अमरेन्द्र को बन्दी बना रखा है, तुम परम माया-बल में प्रौढ़ हो, विक्रम के औन्नत्य में मुझसे बढ़ गए हो, निखिल लोकों में तुम्हारी समता कौन कर सकता है ? दर्प से ऐसा होने पर भी, उस

नाकंटे विक्रमोन्नति मिच्चिनावु । नीकेंदुरेव्वरु निखिल लोकमुल ?
नसमुन नट्टुलय्यु ना वानरेंद्रु । नसदुगा वदलक यात्म नेमरकद८२०
वहुदिव्य बाण प्रभावमुल् सूपि । सहजशौर्यंबुन जयमु गैकोनुमु"
अन दंड्रि वीड्कोनि या मेघनादु । डनलार्क संकाशमगु रथंबेक्कि
यगणित निज धनुर्ज्याघोषमुनकु । बोंगिलि दिग्गजकर्णपुटमुलु वगुल
जगमुलु बेदर दिक्चक्र बंधमुलु । पगुल नार्चुचु वच्चि पवनजु दाकें,
ना समयंबुन नमरुलु मुनुलु । वासव प्रमुख दिग्वरुलु गिन्नरुलु
नुप्परंबुन नुंडि योंदिगि वीक्षिप । नप्पंक्तिकंधरु नग्रनंदनुडु
नडरि यातनि देह मणुमात्रमैन । बोडवडकुंड नद्भुतशितास्त्रमुलु
गुरिय नय्यस्त्रमुल् ग्रूरवालमुन । दरमिडि चिदिपियु दप्पिचुकोनियु
शरवेगलक्ष्यगोचरुडु गाकिट्लु । दुर मोनरिंचें नद्भुत पौरुषमुन,
रावणि निर्जितैरावणि यंत । बावनि यसमान बलवेगमुनकु८३०
नरुदंदि मरियु दिव्यास्त्रंबु लेय । बरुवडि खंडिंचि पवनजुडतनि
दरुशैलमुल वैव दर्पिंचि यसुर । शरमुल वानि जर्जरितमुल् सेसें;
जेसिन गनि यिंद्रजित्तुपै गविसि । या समीरात्मजुंडवलील दन्नि

वानरेंद्र को अल्प मान (उसे) न छोड़कर, आत्मा से असावधान न बनकर, ॥ ८२० ॥

—अनेक दिव्य बाणों के प्रभाव को दिखाकर, सहजशौर्य से विजय को प्राप्त करो।" (ऐसा) कहने पर पिता से बिदा लेकर, वह मेघनाद अनल (और) अर्क-सकाश (समान) रथ पर चढ़कर, अपने अगणित धनुर्ज्या-घोष से दिग्गजों के कर्णपुटों के फट जाने पर, लोकों के भीत होने पर, दिक्-चक्रबन्धों के फट जाने पर, गरजते हुए आकर, (उसने) पवनज पर आक्रमण किया। उस समय अमर, मुनि, वासव आदि दिग्वर (देवता-श्रेष्ठ), किन्नर आकाश में एक पार्श्व में हटकर, देखने लगे। (तब) पंक्तिकंधर के उस अग्रनन्दन ने उत्कर्ष से, अपनी देह को अणुमात्र भी प्रदर्शित न कर, अद्भुत-शित (तेज) अस्त्रों की वर्षा की। उन अस्त्रों को क्रम से क्रूर-वाल से नष्ट कर और बचकर, अद्भुत पौरुष से शर-वेग-लक्ष्य के लिए गोचर न होकर (हनुमान ने) युद्ध किया। तब रावणि (रावण का पुत्र) ने जो निर्जित-ऐरावणि (ऐरावत को जीतनेवाला) था, पावनी (हनुमान) के असमान बल और वेग को (देखकर), ॥ ८३० ॥

—चकित हो, और भी दिव्यास्त्र डाले। बरजोरी उनका खंडनकर, पवनज ने उस पर तरु और शैल फेंके। दर्प से असुर ने उन्हें शरों से जर्जरित (छिन्नभिन्न) कर दिया। (ऐसा) करना देखकर, इन्द्रजीत पर

मौनयुचु रथरथ्यमुल नुग्गुसेय । ननिमोन विरथुडै या यिंद्रजित्तु
हनुमंतु कडिमिकि नच्चेरु वंदि । विनुतोग्रगति वायवीयास्त्रमेय
वायुपुत्तुडु गान वानराधीशु । डायस्त्रमुन दूल कचलुडै युन्न
नरुदंदि रौद्रास्त्रमतनिपै नेय । वेंरिगि यातडु रुद्रवीजंवु गान
गदलक निलिचिन गनि यिंद्रजित्तु । मदिलोन गोपिंचि मारुति मीद
सुरसिद्धसाध्युलु सूचि कंपिंपि । वरमदुर्जयमैन व्रह्मास्त्रमेय
ना यस्त्रराजंवु नवनियु मिन्नु । रायुचु दन मीदं रा वायुसुतुडु ८४०
व्रह्मास्त्रमुन व्राणभयमु लेकुंड । व्रह्मचे वरमुलु वडयुट जेसि
बलुविडि व्ररतेंचु व्रह्मास्त्रमुनकु । दलकक व्रह्ममंत्रमुलुच्चरिंप
नदि चंपजालक यतनि बंधिंचि । कुदिर्यिचि पडवैचे गुंभिनि मीद,
वडिन मारुति जूचि "पट्टुडु कट्टु । डडवुडु पोंडवु" डंचुखिलराक्षसुलु
सुट्टु मुट्टि कठोर सूत्रजालमुल । गट्टिगा गट्टिरि कट्टल्क निगुड,
नंतलो हनुमंतुडवशुडैयुन्न । नेंतयु रयमुन निंद्रारि जेरि
"नलुव वाणंवुचे नाशंवु काक । बलियुडै यिट्टु कट्टवडियुन्नवाडु,

झपटकर, वह समीरात्मज सरलता से रथ और रथ्यों को लात मारकर चूर कर दिया। (तव) युद्ध क्षेत्र में विरथ हो, इन्द्रजीत ने, हनुमान के पराक्रम के कारण आश्चर्यचकित हो, विनुत-उग्रगति से वायव्य-अस्त्र चलाया। वायुपुत्र होने से वानराधीश उस अस्त्र के कारण न हिलकर, अचल हो खड़ा रहा। चकित हो, उस पर रौद्रास्त्र का प्रयोग किया। वह (हनुमान) रुद्रबीज था, अतः निश्चल हो खड़ा रहा। उसे देख मन में क्रुद्ध हो, सुर-सिद्ध-साध्यों को देखकर कंपायमान होने पर, मारुति पर परम दुर्जेय व्रह्मास्त्र का प्रयोग किया। उस अस्त्रराज के अवनि और आकाश को स्पर्श करते हुए, अपने ऊपर (ओर) आने पर वायुसुत ने ॥ ८४० ॥

—व्रह्मा से यह वर प्राप्त करके रहने से कि व्रह्मास्त्र से प्राण भय (हानि) नहीं होगी, उस विधि से आने वाले व्रह्मास्त्र से विचलित न होकर, व्रह्म-मंत्रों का उच्चारण करने पर, वह (अस्त्र) मार न सक, उसे बाँधकर, सिकोड़कर, जमीन पर गिरा दिया। गिरे मारुति को देख 'पकड़ो, बाँधो, दवाओ, चुभो दो,' कहते हुए सभी राक्षस, अधिक क्रोध के उमड़ने पर, उसे घेरकर, कठोर सूत्र-जाल से मजवूती से बाँध दिया। उस समय हनुमान अवश हो पड़ा रहा। तव अति शीघ्रता से इन्द्रारि (इन्द्रजीत) (हनुमान के) पास पहुँच, यह निश्चय कर कि "व्रह्मा के वाण से नष्ट हुए विना यह बली, इस प्रकार बंधा पड़ा है। सोचने पर न जाने यह

एनय नी वानरुंडेव्वडो ? वीनि । ननि मीन जंपरा" दनि निश्चयिंचि
यमितसत्त्वोन्नतुडै पट्टि तेच्चि । तम तंड्रि मुंदर दडयक पेट्टि
दन मंत्रिवरुलुनु दानु वेर्वेर । दनयु लावुनकु दद्दयु संतसिंचि ८५०
कनुगव गोपाग्निकणमुलु दोरुग । हनुमंतु जूचि यिट्लनियै रावणुडु,
"ओरि वानरुड ! ना युन्न पट्टणमु । शूरत नोंटिमै जोच्चुट येट्लु ?
नी वेव्वडवु ? मरि नीकु बेरेमि ? । ये वेरवुन वच्चितीवार्धि दाटि ?
हरुडु वंचिनवाडो ? हरि वंचिनाडो ? । परमेष्ठि निन्निट बंचिनवाडो ?
सुरगरुडोरगासुर सिद्ध साध्य । नर वियच्चर वरुल् ना पेरु विन्न
वेरतुरु, नी विट्लु वेरवक वच्चि । तेरगंटि दोरकैन दृष्टिप राक
वरलेडु ना पुरि पंचन जोच्चि । पेरिकिति वनमेल्ल बीरंबु मेरसि,
बडुगु रक्कसुल दुर्बलुल गोंदरिनि । मडियिंचितिवि मेटि मगवाडु वोले,
दीपिंचु नीदगु तेजंबु सूड । गापेयमात्रुडु गावु चिंतिप,
निप्पुडी नेरंबु लिन्नियु गातु । दप्पक नी राक तग जेप्पितेनि" ८६०
ननिन ना हनुमंतु डद्दशकंठु । गनुगोनि येंतयु गनलि यिट्लनियै,

वानर कौन है ? इसे युद्ध क्षेत्र में नहीं मारना चाहिए।" अमित सत्त्वोन्नत वाले उसे पकड़ लाकर, अविलंब अपने पिता के समक्ष रख दिया। स्वयं और अपने श्रेष्ठमंत्रियों के साथ, अलग-अलग, अपने पुत्र की सामर्थ्य पर अधिक प्रसन्न हो, ॥ ८५० ॥

—नेत्रद्वय से कोपाग्निकणों के ढुलकने पर, हनुमान को देख रावण ने यों कहा:—"रे वानर ! मेरे नगर में अकेले ही शूरता के साथ (तुमने) कैसे प्रवेश किया ? तुम कौन हो ? फिर तुम्हारा नाम क्या है ? किस प्रकार से इस वारिधि को पार कर आए हो ? (तुम्हें) हर (शिव) ने भेजा है ? (या) हरि ने भेजा है ? या परमेष्ठी (ब्रह्मा) ने तुम्हें यहाँ भेजा है ? सुर, गरुड़, उरग (नाग), असुर, सिद्ध, साध्य, नर (और) वियच्चर (देवता)-वर मेरा नाम सुनकर डरते हैं। तुमने इस प्रकार भीत हुए बिना, आकर, इन्द्र के लिए भी, देखने में दुर्निवार होकर विराजमान मेरी नगरी में धोखे से प्रवेशकर, वीरता प्रदर्शित कर, समस्त वन को उखाड़ डाला। महान् पराक्रमी के समान कुछ अशक्त (तथा) दुर्बल राक्षसों का वध किया। दीप्तिमान तुम्हारे तेज को देखने से लगता है कि तुम मात्र कपि नहीं हो। अपने आगमन (के कारण) के बारे में समुचित रूप से बताओगे तो अब इन सभी अपराधों को क्षमा कर दूँगा।" ॥ ८६० ॥

—(ऐसा) कहने पर हनुमान ने दशकंठ को देखकर, अत्यधिक क्रुद्ध हो यों कहा:—

हनुम रावणुनिकि दन राक येरिंगिंचुट

"नोरि राक्षस! विनरोरि नीचात्म!। दूरीकृताचार ! दुष्टमानसुड ! विशदकीर्तुलु मुन्नु विश्वंबुनिंड । दशरथेश्वरुनकु दनयुडै पुट्टि यरिगि विश्वामित्रु यागंबु गाचि । हरुविल्लु विरिचि महाशक्ति मेरसि परशुरामुनि बट्टि भंगिंचि विडिचि। खरदूषणादि राक्षसुल खंडिचि नी पेंपु गुदियिंचि निनु दोक गट्टि । येपुन जलधुल नीड्चिन वालि बोलुपार नोक बाणमुन गूलनेसि । बलियुडै सुग्रीवु बट्टंबु गट्टि यक्षीणशक्तिमै नतुलकोदंड । दीक्षागुरुंडन देजंबु मेरसि तगिलि राक्षसकुलांतकुडैन राम । जगतीशु निजदूत, जतुरमानसुड, हनुमंतु डनुवाड, नर्कजु मंत्रि । निनवंशनिधि रामुडिट नन्नु वनुप ८७०
मुदमोप्प बति व्रेलि मुद्रिक गोनुचु नोदविन कडिमिमै नुदधि लंघिचि वच्चि नी पुरि जोच्चि वैदेहि वेदकि। येच्चट वोडगान केंतयु वगचि यवनिज वनमुलो नारसि कांचि । यवनीशुडिच्चिन यानवालिच्चि देवि नी पुरि नुन्न तेरंगेल्ल राम । भूवरुनकु जेप्प बोवुचुनुंडि

हनुमान का रावण को अपना आगमन बताना

"अरे राक्षस ! सुन रे नीचात्मा ! दूरीकृत (सत्) आचार वाले ! रे दुष्ट मानसवाले ! पूर्व में विशद कीर्तियों के विश्वों में भर जाने पर, दशरथेश्वर के तनय के रूप में जन्म लेकर, जाकर, विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा कर, शिव धनुष का खंडनकर, महाशक्ति से प्रकाशित होकर, परशुराम को पकड़ अपमानित कर छोड़ दिया, खरदूषण आदि राक्षसों का खंडन (संहार) किया। तुम्हारे औन्नत्य को लघु बनाकर तुम्हें (अपनी) पूंछ से बाँधकर, शोभा से जलधियों में घसीटनेवाले वालि को शोभा से एक बाण से गिराया। बली हो सुग्रीव का राजतिलक कर, अक्षीण शक्ति से, अतुल-कोदंड-दीक्षा गुरु के नाम से प्रख्यात होने वाले राक्षस-कुलान्तक (बने) जगदीश राम का निजी दूत हूँ, चतुर मानस वाला हूँ, हनुमान नाम वाला हूँ, अर्कज (सुग्रीव) का मंत्री हूँ। इनवंशनिधि राम के यहाँ मुझे भेजने पर ॥ ८७० ॥

—आनन्द से पति (राम) की उंगली की मुद्रिका लेकर, उत्पन्न साहस से उदधि को लाँघकर, आकर, तुम्हारी पुरी में पैठकर, वैदेही का अन्वेषण कर, कहीं उसे न पाकर, अधिक दुखी हो, (तत्पश्चात्) अवनिजा को (अशोक) वन में देख, अवनीश (राजा राम) का दिया चिह्न देकर, राजा राम को यह कहने जाते हुए कि तुम्हारी पुरी में देवी (सीता)

येनसि ना राक नी केंरिगिंप गोरि । पेनचि नी वनमेल्ल बेरिकि पो वैचि
वनपालुरगु दैत्यवरुल गिंकरुल । नेनुबदि वेवुर नेपुमै गडगि
मडियिंचि मुनुमिडि मंत्रिनंदनुल । मडियिंचि यक्षुनि मडियिंचि पिदप
दगिलि नी युन्न चंदमुलेल्ल जूचि । मगुडि पोयेंदनि मरि पट्टुवडिति,
ना रामु निजभृत्युडैन सुग्रीवु । भूरि सैन्यमुललो बोलुपुदीपिप
नलवुन नाकंटे नति बलाधिकुलु ।कोलदि बेट्टगरानि कोटुलुन्नार,८८०
लदिमि ब्रह्मादुलनैन साधिंचु । मदयुतुल् नीवन्न मंडुचुंडुदुरु,
गौनकोनि या वीर कोटुलतोड । वननिधि बंधिंचि वच्चि राघवुडु
लंकपै विडिसि च्रलमु पेंपेक्क । गिंकमै नसुरुल गीटणगिंचि
नी तलल् नुग्गाडि निनु संहरिंचि । सीत दोड्कोनिपोवु,सिद्धमीपलुकु,
नेलकोनि नीविक नीतिमार्गमुन । दोलगक बुद्धिमंतुडवैन विनुमु !
सीत नोप्पिंचि याश्रितलोक पारि । जातंबु रघुरामु शरणंबु सोरुमु,
वलवदु वैरंबु, वसुधेशुचेत ।बोलियक नी प्राणमुलु गाचिकोनुम"
यनि बुद्धि सेप्पिन हनुमंतु जूचि । कनलुनु बेंपु मोक्कलमुनु गदुर
घनघनाघनमेचि गर्जिचिनट्लु । तनियक भर्जिचि दशकंठु डलिगि

किस विधि से है, सोचा कि तुम्हें अपने आगमन के बारे में जता दूँ। इसी से तुम्हारे समस्त वन को उखाड़ डाला, वनपालक दैत्यवर, तथा अस्सी हजार किंकरों का शोभा से वध कर दिया, तदनन्तर मंत्रि-नन्दनों का संहार कर, अक्ष का संहारकर, बाद में तुम्हारे समस्त विधान को देखकर लौट जाने की इच्छा से बंदी बना हूँ। राम के निजभृत्य सुग्रीव की भूरि सेनाओं में, शोभा के दीप्त होने पर, बल में मुझसे भी अति बलाधिक, संख्या में करोड़ों (वानर) हैं, ।। ८८० ।।

—ब्रह्मादियों को जीतने वाले वे मदयुत (मस्त) (वीर) तुम्हारे नाम से ही जलते रहते हैं। चाहकर, उन वीर-कोटियों के साथ वननिधि (समुद्र) को बाँधकर, आकर, राघव लंका पर आक्रमण कर, हठ के उत्कर्षित होने पर, क्रोध से असुरों का संहार कर, तुम्हारे सिरों को चूर कर, तुम्हारा वध कर, सीता को ले जाएगा। यह वचन तथ्य (सत्य) है। स्थिरता से तुम अब नीति मार्ग से हटे बिना बुद्धिमान होकर तो सुनो। सीता को मनाकर, आश्रितलोक (के लिए)-पारिजात रघुराम की शरण में आओ। शत्रुता उचित नहीं है। वसुधेश (राम) के हाथ, न मरकर, अपने प्राणों को बचा लो।" ऐसा हित (वचन) कहने पर, हनुमान को देख, क्रोध, औन्नत्य, मात्सर्य के उमड़ने पर, महान् घनाघन के विजृंभित हो गरजने के समान, अधिक भर्त्सना (फटकार) कर, दशकंठ ने क्रुद्ध हो, यह सोच कि

"वेंड्रवक चनुदेंचि वीडु ना येंदुट । नग्रम्मि दुर्भाषलाडुचुन्नाडु,
कोनिपोयि चंपुडी कोतिकीटंबु" । ननि प्रहस्तुनि बंप नसुरेशु जूचि

दूत जंपरादनि विभीषणुडु रावणुनि वारिंचुट

विनयभाषणुडु विवेकभूषणुडु । ननघपोषणुडु मत्तारि भीषणुडु
ना विभीषणुडु कार्यमु दीर्घचित । भाविंचि चूचि येर्पड विन्नविंचें,
"मगुवल ब्राह्मल मरि बालकुलनु । दगदु दूतल जंप दनुजाधिनाथ !
वलनोप्प बति पंप वच्चिन दूत । ललवुमें नेमैन नाडुचुनुंदु,
रदि दूतलकु धर्म,मदि विचारिंचि । मदि गोपमोक्किंत मट्टु गाविपु,
तुदि दूत लेंदु वध्युलु गारु गान । वोंदिवि यी कोति जंपुट पाडि गादु,
च्रलमु गोपमु रामसौमित्रुलंदु । वेलुवरिंपुमु, वीनि विडिचि पोनिम्मु,
मगुडनि किन्क नी मदि नुंडेनेनि । दगिन दंडमु कोंत दंडिचि पुच्चु"
मनि नीति चेंप्पिन नतनि वाक्यमुलु । विनि रावणुडु दैत्यवीरुल जूचि
"कोतुलकेंल्लनु गुरुतु वालंबु । ब्रातिगा, नटुगान ब्रजलेंल्ल जूड

"भीत हुए बिना आकर, यह मेरे सामने खुलकर अपशब्द कह रहा है" ॥ ८९० ॥
—प्रहस्त को आज्ञा दी कि "इस कपि-कीट (कीड़े) को ले जाकर मार डालो ।" (तब) असुरेश को देखकर,

विभीषण का रावण से कहना कि दूत को नहीं मारना चाहिए

--विनय-भाषण वाला, विवेकभूषण, अनघ-पोषण करनेवाला, मत्त-अरि-भीषण, वह विभीषण ने (भविष्य के) कार्य का दीर्घचिन्तन कर, भावना कर, ढंग से निवेदन किया:--"हे दनुजादिनाथ ! स्त्रियों, ब्राह्मणों, बालकों तथा दूतों को नहीं मारना चाहिए । शोभा से (अपने) स्वामी द्वारा भेजने पर आए दूत सामर्थ्य से जो भी हो, कहते रहते हैं । (ऐसी वाचलता) दूतों का धर्म है । मन से विचारकर, मन में क्रोध को थोड़ा कम कर दो । अन्त में दूत कहीं भी वध्य नहीं हैं न ! अतः इस कपि को पकड़कर मारना न्याय (-संगत) नहीं है । (अपना) हठ तथा क्रोध राम और सौमित्र पर प्रकट करो । इसे छोड़ जाने दो । यदि अपने मन में अभी क्रोध कम न हुआ हो, तो थोड़ा योग्य दंड देकर भेज दो ।" इस प्रकार नीति (-वाक्य) कहने पर, उसके वाक्य सुन रावण ने दैत्यवीरों को देख (कहा):--॥ ९०० ॥

वीनि वालमु गालिच वीथुल द्रिप्पि । पोनिंडु" नावुडु बौदिवि राक्षसुलु
बलुम्रोकुलोगि देच्चि पवनजु बट्टि । बलिमि जेतुलु काळ्ळु बंधिंचि तेच्चि
"मनवारि बेवकंड्र मडियिंचिनट्टि । चेनटि कीटमु लेस्स चिक्केरा !" यनुचु
बुरवीथुलंदु द्रिप्पुचु नंतकंत । वरुस दूर्यंबुलु वायिंचुकोनुचु
नेल्लंदु मेलग नय्येड वायुसुतुडु । कल्लरि दनुजुल गलय ग्रेगंट
गनुगोंचु मरियु लंकापुरंबेल्ल । गनुगोनु तलपुन गासिकि नोर्चि
हीनसत्त्वुडु वोले विटनटु दिरुग । नानाविधंबुल नगुचु गेरुचुनु
नाबालगोपालमतनि वेन् दगुल । ना बूमेलकु बुण्युलात्मलो वगव

हनुम तोककु निप्पंटिंचुट

दलकोनि यंत गोंदरु दैत्यवरुलु । चलमुन जीरलसंख्यमुल् देच्चि ९१०
कालसर्पाकृतुल्गा तिरुल् दलिच । लोलत नवि नूनेलो दोचि तोचि
"यिदि यशोकाराममेल्ल खंडिचे । निदि दानवेंद्रुल निदर् जंपे,
दीनिकि दगु शास्ति देवारि वेट्टे । दीनिगाल्त" मटंचु देगुव नोंडोरुलु

—"समस्त कपियों के लिए पूंछ प्रिय चिह्न है। अतः सब लोगों के समक्ष इसकी पूँछ को जलाकर, (नगर-) वीथियों में घुमाकर, (तब) जाने दो।" ऐसा कहने पर (हनुमान को) घेरकर राक्षस झट मोटे मोटे रस्से लाकर, पवनज को पकड़, मजबूती से हाथ और पैर बाँधकर, यह कहते हुए कि "हमारे कई लोगों को मार डालनेवाला दुष्टकीट ढंग से फँस गया न", पुर-वीथियों में घुमाते हुए, क्रम से अधिकाधिक तूर्य बजाते हुए, हर जगह घूमने लगे। तो उस समय वायुसुत मृषावादी दनुजों को सर्वत्र कनखियों से देखते हुए, और समस्त लंकापुर को देखने के विचार से, तकलीफ़ को सहते हुए, हीनसत्त्व वाले के समान इधर-उधर घूमता रहा। नाना विधियों से हंसते हुए, मजाक उड़ाते हुए, आबाल-गोपाल (सभी लोग) उसके पीछे हो गए। उन दुश्चर्याओं के कारण पुण्यी जन मन में दुखी हुए।

हनुमान की पूँछ में आग लगाना

तव कुछ दैत्यवर ज़िद करके असंख्य चीर (वस्त्र) लाकर, ॥ ९१० ॥
—काल सर्प की आकृतियों में बँटाकर, सुन्दरता से उन्हें तेल में डाल-डालकर, आपस में यह कहते हुए कि "इसने समस्त अशोकवन को नष्ट किया, इसने इतने (बहुत-से) दानवेन्द्रों को मार डाला, देवारि (रावण)

नोंदविन लंकलो नुत्पातकेतु । वुदयिंचे नन वेर्चुचुन्न वालमुन
नच्चलंबुन जीर लन्नियु जुट्टि । चिच्चु दगिलिचरच्चेरुवुगा मंड,
दनुजुलु सिंहनादमुलु सेयुचुनु । वेनुवेंट दगुल ना वृत्तांतमेल्ल
दप्पक दनुजकांतलु सूचि पोयि । चेप्पिन नप्पुडु सीत शोकिंचि,
"यक्कटा ! नीतिज्ञुडैन नीकिट्टि । यिक्कुपाटुनु गल्गेने ? तंड्रि" यनुचु
जलमुल मुट्टि सुस्थलमुन निलिचि । चेलवोप्प नग्निकि जेतुलु मोगिचि
"या रामविभुडु धर्मात्मुडौनेनि ।वारिधि नाकुगा वडि दाटुनेनि९२०
ई रावणुनि रामु डिल गूल्चुनेनि । वारक ये वतिव्रतनौदुनेनि
जनकभूपति सर्वसमुडगुनेनि । दनरु वेदमुलु सत्यमुलगुनेनि
पवमानमित्र ! यो परमपवित्र !। सवकेकि शरद! दोषह्लद द्विरद!
वरद ! वैश्वानर ! वानरोत्तमुनि । बरमशीतलुडवै पालिपुमय्य !"
यनि सीत प्रार्थिप ननिलसूनुनकु । घनवालमनु पेरि कालाहि तलनु
गनुपट्टु माणिक्यकळिकना मेरसि। यनलुंडु गडु जल्लनैयुंडै, नंत
ना विधंबुनकु दा नाश्चर्यमंदि । पावनि "तन तंड्रि पावकसखुडु

ने इसे उचित दंड दिया है। इसे जला डालेंगे।" मानों लंका में उत्पात (-सूचक) केतु का उदय हुआ, (इस प्रकार) क्रम से वढ़ती पूँछ में हठ से समस्त चीर लपेटकर, आग लगा दी। वह आश्चर्यजनक रूप से जलने लगी। दनुजों के सिंहनाद करते हुए, पीछे लगने के समस्त वृत्तान्त को अवश्य देखकर, दनुज कान्ताओं के जाकर वताने पर, तब सीता दुखी हुई (और) यह सोचकर कि "हाय ! तात ! नीतिज्ञ हो तुम्हें ऐसी दुरवस्था प्राप्त हुई !" जल का स्पर्शकर, सुस्थल पर खड़े रहकर, शोभा से अग्नि को हाथ जोड़कर (कहा):—"यदि रामविभु धर्मात्मा है, मेरे लिए झट वारिध पार करनेवाला है, ।। ९२० ।।

—इस रावण को राम (मार) जमीन पर गिरानेवाला है, मैं पतिव्रता हूँ, जनकभूपति सर्व्रसम (-दृष्टि) वाले हैं, शोभायमान वेद सत्य हैं तो हे पवमान-मित्र ! हे परमपवित्र ! सवकेकि (यज्ञ रूपी मयूर के लिए) -शरद् (शरद् मेघ) ! दोपह्लद (दोषरूपी सरोवर के लिए) द्विरद ! हे वरद ! हे वैश्वानर ! परमशीतल वनकर वानरोत्तम का पालन (रक्षा) करो।" इस प्रकार सीता के प्रार्थना करने पर, अनिलसून के महान वालरूपी कालाहि (कालसर्प) के सिर दीखनेवाले माणिक्य के समान प्रकाशित हो अनल अति शीतल बना रहा। तव उस विधान से आश्चर्य-चकित हो, पावनी यह सोच होश में ही रहा कि "मेरा पिता पावक-सखा है। इसलिए शायद अग्नि ने मुझपर करुणा दिखाई हो ! (अथवा)

गावुन नन्नग्नि गर्राणिंचे नौक्कौ !। देवतलेल्ल ब्रार्थिंचिरो ! राम
देवु विक्रममौ ! येदियु गादु, सीत । दीवैन यिदि" यंचु देलिविमै नूंडे,
ब्रविमल तत्त्वैकपरुलैन जनुल । भवपाशमुलु वीडु भावंबु दोप९३०
ब्रह्म मंत्रमुलु दप्पक युच्चरिप । ब्रह्मपाशमुलूडै बवनसूनुनकु,
नंत ना हनुमंतुडसुरेशु लंक । यंतयु गाल्पग ननुवु सिंतिंचि
"यलवड दनकुनै यग्निसूक्तमुलु । जलमुललो ग्रुंकि जपिंपियपवलयु"
तनि पोयि मुनिगिनट्लपरांबुराशि। निनुडस्तमिंचिन नेंचि वायुजुडु
कनकमहीधराकारमै यौप्पु । तन मेनु डिंचि बंधमुलेल्ल द्रुंचि
कीडाचरिंचुचु - गेलि सेयुचुनु । वेडुकतो दन वेनुवेंट वच्चु

लंकादहनमु

दनुजुल निर्जिंचि दनुजेशुडुन्न । घनमैन मेड कुत्कट शक्ति नेगसि
तन वालवह्नुलंतट दरिकोल्प । दनरि यंतंतकुदग्रंबुलगुचु
बुगुलन बौगलौप्पै, बौगलकु मुन्नै । निगिडि पेन्मंटल निंडै नाकसमु,
नाकसमुन मंटलडरकमुन्नै । पैकौनि यंदंद पर्वे नुल्कमुलु, ९४०

समस्त देवताओं ने (मेरे लिए) प्रार्थना की हो ! (अथवा) रामदेव का विक्रम हो ! नहीं, यह कुछ भी नहीं, यह सीता का आशीर्वाद है।" प्रविमल तत्त्वैकपर (परमात्मा में एकनिष्ठ)-जनों के भवपाशों के छूटने के समान ॥ ९३० ॥

—ब्रह्ममन्त्रों के उच्चारण करने पर पवमानसून के ब्रह्मपाश छूट गए। तब हनुमान असुरेश की समस्त लंका को जलाने की सुविधा के बारे में चिन्तन करता रहा। अपरांबुराशि (पश्चिम समुद्र) में सूर्य का अस्त हुआ मानों उसने यह सोचा कि "मुझे जल में डूबकर अग्निसूक्त का जप करना चाहिए।" तब वायुज कनक-महीधर (पर्वत) के आकार से शोभित अपने शरीर को छोटा बनाकर समस्त बन्धनों को तोड़कर, अहित का आचरण करते हुए, उपहास करते हुए, उत्साह से अपने पीछे आने वाले,

लंका दहन

—दनुजों का वधकर, दनुजेश के उत्तुंग सौध पर उत्कट शक्ति से उछलकर, अपनी पूंछ की अग्नि चारों ओर लगा दी। शोभित हो, देखते-देखते उदग्र होते हुए, भयंकर धुआँ व्याप्त हो गया। धुएँ से पहले ही तनकर महाग्नि आकाश में व्याप्त हुई। आकाश में अग्नि के उत्कर्ष को प्राप्त करने से पहले ही जहाँ-तहाँ उल्काएँ गिरीं। ॥ ९४० ॥

नडरि या युल्कल कटमुन्नै तोलगि । वडि दिक्कुलकु बारॆ वरविमानमुलु,
नप्पुडु हनुमंतुडडरि योंडोंड । कुप्पिंचि मरि कोल्वुंगूटमुल् गाल्चि
वरशस्त्रशाललु वडि नीरु सेसि । यिरवोंद बंडारपिंड्लुनु गाल्चि
प्रुवडि सौधमुल् भस्मंबु सेसि । सोरिदि च्रप्परमुलु चूर्णंबु सेसि
मणिचंद्रशाललु मसिगा नोनर्चि । प्रणुत शय्यागेहपटलि दहिंचि
रमणीय गज वाजि रथशाललोलि । गर्मलिचि दग्धमुल् गा जेसे, नप्पु
डेंडपक येगसिन येरमंटतुनुक । लुडुगक युडुवीथि नोंडोंट वर्वे
खचरोरगामरगण विमानमुलु । प्रचुर विभागैक परत जरिप,
सोरिदिमै रावणासुरु चेटु देल्प । दोरगुनुल्कलयट्लु दोचॆ नुल्कमुलु,
राजन्यनिधि रघुरामभूपालु । डोजमै दंडेत्त नुद्युक्तुडगुचु ९५०
बलुविडि लंकलोपल ब्रतापाग्नि । नेलमिमै निर्गममिडियेनो यनग
दहनुंडु निर्भर ध्वनुल ब्रह्मांड । कुहरंबु निंड मिक्कुटमुगा वर्वे,
रावणुडट घोर रणकळाकेळि । गावलुंडगुचु दिक्पालुरनेल्ल
बरचिन तोल्लिटि भंगमुल् मारु । परपक पोवनु भंगि बेल्लेगसि

—उन उल्काओं से पहले ही, हटकर, वर विमान दिशाओं में भाग गए। तब हनुमान उत्कर्ष को प्राप्त हो, एक स्थान से दूसरे स्थान पर छलाँग भरते हुए, फिर सभागारों को जलाकर, वर-शस्त्र-शालाओं को शीघ्र भस्मकर, सफलता से भंडार-घरों को जलाकर, क्रम से सौधों को भस्मकर, पंक्तिबद्ध छप्परों को चूर्णकर, मणि(-मय) चन्द्रशालाओं को भस्म बनाकर, प्रनुत शय्यागृह-समूह का दहनकर, रमणीय गज-वाजि-रथ शालाओं को भूनकर दग्ध कर दिया। तब अविरल गति से ऊपर उठी धधकती अग्नि की शिखाएँ, निरन्तरता से उडुवीथि (आकाश) में व्याप्त हुईं। खेचर, उरग, अमर गणों के विमान अलग-अलग हो विचरने लगे। क्रमशः (लगातार) रावणासुर के अहित को बतानेवाले उल्काओं के समान उल्काएँ दीख पड़ीं। मानो राजन्य निधि रघुराम भूपाल ने ओज से आक्रमण करने उद्यत होते हुए ॥ ९५० ॥

—बरजोरी लंका में (राम की) प्रतापाग्नि का निर्गम[1] रखा हो, इस प्रकार दहन (अग्नि) निर्भर (अतिशय) ध्वनियों से ब्रह्मांड-कुहर को भरते हुए अधिकता से व्याप्त हुआ। पूर्व में रावण ने घोर-रण-कलाकेलि का कावल (पापी) होते हुए समस्त दिक्पालकों के प्रति जो अपमान किए, वे यूँ ही व्यर्थं नहीं जाएँगे, इस प्रकार अधिक व्याप्त हो, बढ़कर, विभीषण

1 यात्रा के निश्चित समय से पहले, शुभमुहूर्त में पड़ोस के यहाँ निर्गमन का सूचक कोई वस्तु रखना (प्रस्थान)।

बलसि विभीषणु भवनमोक्कटिय । वॆलिगाग बुरमॆल्ल व्रेलिमडिलोन
दरिकोनि मंडे, नत्तरि दैत्यवरुलु । करमु भयभ्रांति गंपिंचुवारु
दललुनु जीरलु दरिकोनि मंड । बलुविडि नलगड बारॆडु वारु,
दमतमवारलु दम बंधुजनुलु । गमरुट जूचि शोकमु नोंदुवारु,
हाहानिनादंबुलडरिंचुवारु । ना हनुमंतुपै नलिगॊंडि वारु,
"नादि देवुडु रामु, डतनिकि नॆग्गु । गादलचॆनु पापकर्मु" डन्वारु,९६०
"नट्टि कीडोनरिंचिनट्टि रावणुनि । किट्टियापद वितये" यनुवारु
नगुचुंड नॆंतयु नत्युग्रुडगुचु । नगचरवीरुंडु नलि जॆलरेगि
योकचोटु दप्पकयुंड ना लंक । सकलंबु गाल्चि युत्सवकेळि देलि
चन जन ना यगचरनाथु वाल । घनतरदीप्ताग्नि कडुनेपुमिगुल
नॆडपक पैरालु नॆरमंटतुनुक । लुडुगक त्रोयुचु नोगि दूलि तूलि
सोलि सुरापानसुखसुप्ति मुनिगि । कालुट यॆरुगक कालॆडु वारु
ना यॆड मृदुलशय्यलयंदु निदुर । पोयिनट्टुलॆ युंडि बॊंदुलु कमल
दॆलिविकि नॆडमीक तीव्राग्निशिखल । मिलमिल मिडुकुचु मृति बॊंदुवारु
दमतम बंधुल दम वधूजनुल । दमतम बिड्डुल दम प्राणसखुल
दमतम वारलंदरु दोडुकोनुचु । गुमुरुलु गट्टि येगुचु म्रग्गुवारु९७०

के भवन को छोड़कर, समस्त नगर पलभर में जल उठा। उस समय अधिक भयभ्रान्ति से कंपित होने वाले दैत्यवर, सिर (के बाल) और वस्त्रों के जलने पर चौतरफ़ भागनेवाले, अपने-अपने लोग (तथा) बन्धु जनों को भुने जाते देख, शोक करनेवाले, हाहाकार करनेवाले, हनुमान पर क्रुद्ध होनेवाले, "राम तो आदिदेव हैं, उसके प्रति पापकर्मा (रावण) ने अहित किया है", ।। ९६० ।।

"उस प्रकार का अहित करनेवाले रावण पर इस प्रकार विपत्ति के आने में आश्चर्य ही क्या है ?" ऐसा कहनेवाले बन गए। अत्यधिक अत्युग्र होते हुए, अगचर-वीर विजृंभित हो, एक स्थान को छोड़कर शेष समस्त लंका को जलाकर, उत्सवकेलि में ऊभचूभ हुआ। उस अगचरनाथ की पूँछ की घनतर-दीप्त-अग्नि के अधिक होकर, अनवरत ऊपर से गिरनेवाली लाल अग्नि के टुकड़ों (चिनगारियों) को निरन्तर हटाते हुए झूम-झूमकर, सुरापान की सुखसुप्ति में डूब बेहोश (कुछ राक्षस) जलना न जानकर ही जल गए। उस समय मृदुल शय्याओं पर निद्रा में रहकर, शरीर के भुनने पर, होश में न आकर, तीव्र अग्नि की शिखाओं के कारण झिल-मिलाते (और) छटपटाते मरने वाले, अपने-अपने बन्धुजनों, अपने वधूजनों,

देगिरियिड्लसरकुलु दिगिचि तेबोयि । मगुडि रानेरक म्रग्गेडु वारु
सतुल गौगिट जेर्चि सरि देच्चि तेच्चि । धृति दूलि वाकिड्ल
ड्रेळ्ळेडुवारु
नै लंक घूर्णिल्ल नंतंत गदिय । नालोकभयदंबुलै मीरिमीरि
युरुसिंहमुल बोलि युग्रत मिगिलि । करिकुंभविदळनगति मंडि मंडि
योज बेंपारु राहुत्तुल चंदमुन । वाजुलमीदिकि वडि दाटि दाटि
तगनिच्चु वरविटोत्तमुल चंदमुन । मौगि गामिनीकुचंबुलु ब्राकि प्राकि,
भाविंचि यन्युल व्रहसिंचुवारि । कैवडि नालुकल् कडु ग्रोसि क्रोसि
तगिलि संतसमुन दलकोन्नवारु । मिगिलि युब्बेडुगति मिन्नंदि यंदि
पेलुकुरि परतेंचु भीतुल पगिदि । दौलगक निगुडि गोंदुलु दूरि दूरि
वालुचु निब्भंगि वायुनंदनुनि ।वालाग्नुलोंगि लंक वडि जुट्टि काल्चे,
१८०
गालिचन नुब्बि दिक्पतुलु देवतलु ।'मेल्चुट्ट मित' डनि मेंच्चि तन् बोगड
हनुमंतुडंतट नंतरंगमुन । जनकजमरणंबु शंकिंचि बेदरि
"यी लंकतो गूड निनवंश्यु देवि । गालिचितिनि गन्नुगानक क्रोव्वि,

---

अपने-अपने बच्चों, अपने प्राणसखाओं, अपने-अपने सभी लोगों को साथ लिए, समूह बन जाते-जाते भुननेवाले, ।। १७० ।।

—घरों में वस्तुओं को लाने जाकर, पीछे लौट न आ सक जल भुननेवाले, सतियों को छाती से लगाए ही, (उन्हें बाहर) लाने (के प्रयत्न) में धैर्य को खोकर, देहलियों पर गिर पड़ने वाले, (ऐसे राक्षसों से युक्त हो) इस प्रकार लंका घूर्णित होने लगी। क्रमशः फैलते हुए, आलोक से ही भयंकर हो, बढ़-बढ़कर, करिकुंभ (हाथियों के कुंभस्थल) के विदलन करने के लिए अधिक उग्र बने उरुसिंहों के समान भड़ककर, तेज से शोभित घुड़सवारों के समान, घोड़ों पर झट छलाँगें भर भरकर, वर-विटोत्तमों (लंपटों) की भाँति, लगन के साथ कामिनियों के कुचों पर व्याप्त होकर, जानबूझकर दूसरों को प्रहसित (निंदा) करने वालों की जिह्वाओं को काट-काटकर, प्रसन्नता में ऊभचूभ लोगों के अधिक फूलकर गगन चूमने के समान, बेहाल हो भागने वाले कायरों की भाँति न हटकर, गलियों में घुसघुसकर, इस प्रकार वायुनन्दन की वालाग्नियों ने शीघ्र लंका को घेरकर जला दिया। ।।१८० ।।

—जलाने पर, दिक्पति (तथा) देवता फूलकर, सराहकर 'यह हमारा श्रेष्ठ बन्धु है' कहकर प्रशंसा करने लगे। तब हनुमान ने अंतरंग में जनकजा के मरण की शंका कर, डरकर (सोचा)—"चर्बी चढ़कर, आँखों के न दीखने पर (आँखों पर चर्बी चढ़ने के कारण) मैंने इस लंका के साथ,

येनिक रघुरामु नेमनि कांतु ? । जानकि सेममेसरणि देल्पुदुनु ?
दप्पे गार्यं" मटंचु दल्लडंबंदि । यप्पुडु तन मदि नट विवेकिंचि
"ये तल्लि दीवेन नी घोर वह्नि । ना तोक रोममैन गमर्प वेरचें,
नट्टि सीतादेवि कग्निचे भयमु । वुट्टुने? यिदि येदि बुद्धि ?" यटंचु
धरणिज मदिलोनि तापाग्नुलार्चु । वेरवुन वालाग्नि विषधिलो नार्चि
वेस् नशोकारामवीथिकि बोयि । यसुरकांतलु भयंबंदि वीक्षिप
दनुजकांतलचेत दनसेममेल्ल । विनि मुन्ने संतोषविवशयैयुन्न ९९०
जनकपुत्रिकि म्रोक्कि सन्निधि निलिचि। तन पौरुषमेल्ल दग विन्नविंचि,
"यिदे पोयि तेच्चेद निनकुलेश्वरुनि। मदि लोन नीकु नुम्मलिकंबु दीर"
ननि "यिक बनिविदु" ननुचु सीतकुनु। विनयंबुतो म्रोक्कि वीड्कोनि कदलि
तडयक पश्चिमद्वारंबुनंदु । वेडलुचु बावनि वेस नेपुमिगिलि
तलुपुलु वड दन्न दलुपुलु विरिगि । यिल गूलें राक्षसुलेल्ल भीतिल्ल,

---

इनवंशवाले (राम) की देवी को भी जला डाला। अब मैं रघुराम के दर्शन कैसे कर सकूँगा ? जानकी के कुशल के बारे में कैसे बताऊँगा ? कार्य ही बिगड़ गया।" (थोड़ी देर) परेशान होकर, तब अपने मन से विवेकी होकर, "जिस माता के आशीर्वाद से यह घोर-वह्नि मेरी पूँछ के रोम को भी जलाने से डरी, उस सीतादेवी को अग्नि से भय होगा ? यह कैसी बुद्धि (विचार) है ?" धरणिजा के मन के ताप की अग्नि को बुझाने के समान, पूँछ की आग को विषधि (समुद्र) में बुझाकर, शीघ्र अशोक वन-वीथि में जाकर, असुरकान्ताओं के भीत होकर देखते रहने पर, पहले ही दनुजकान्ताओं के मुख अपना समस्त कुशल सुन, आनन्द-विवश बनी, ॥ ९९० ॥

—जनकपुत्री को प्रणामकर, निकट खड़े हो, अपने समस्त पौरुष (कृत्य) को समुचित रूप से सुनाकर, यह कहते कि "यही जाकर इनकुलेश्वर (राम) को लाऊँगा जिससे तुम्हारे मन का ताप दूर हो" (और) "अब जाता हूँ", सीता को सविनय प्रणामकर, बिदा लेकर, निकलकर, विलंब न कर, पश्चिमद्वार से निकलते हुए, पावनी ने झट शोभा के उत्कर्ष से किवाड़ों पर लात मारी, किवाड़ टूटकर ज़मीन पर गिरे, सभी राक्षस भीत हुए।

हनुम यंगदादुल गलिसिकोनुट

नुरुवडि ना लंक योंकट गंपिप । वरवसंवन वेंचि पदिलुडै वेंडलि
वरुसतो नट्टळ्ळु वडि गूलदन्नि । यरिगि सुवेलाद्रि नवलील नेक्कि
कलय लंकापुरि गल दैत्युलेल्ल । बेलुकुरि भीतिल्ल बेल्लार्चि यार्चि
कडगि सानुवुलु भग्नंवुलै यब्धि । जेंडि कूल वडि गंडशिललेल्ल डुल्ल
नंगदमै वेंचि यद्रिश्रृंगमुलु । क्रुंग गुंभिनि क्रुंग गुप्पिंचि येगसि १०००
यटु दाटि बलुविडि नाकाशवीथि । बटु सत्त्वदेहसंपद वच्चि वच्चि
यरुदैन पेमितो नब्धि मध्यमुन । वरगेडु मैनाक पर्वताधीशु
गनि, यंदु दन मेन गल डप्पि दीर्चु । कोनि पर्वतुनि वीडुकोनि यटवच्चि
पोलुपोंद दन जवंबुनु वेंपु सोंपु । दलकोनि जलधियुत्तरतीरभूमि
नतिसत्त्वसंपन्नुडै वच्चि निलुव । नतनि संतोषचिह्नमुलेल्ल जूचि
यंगदुडादिगा नगचराधिपुलु । संगति नेदुरुगा जनि कौगलिंचि,
प्रकटिंचि यंदंद परिणाममरसि । योंकट नंदरु गूडि योलि गूर्चुंडि,
पोयिन कार्यंबु पोलुपोंद नडुग । ना युन्नतोन्नतुंडंदर जूचि
"कपुलार! येनु मी करुणमै जेसि । युपमिप नरुदैन युदधि लंघिंचि

हनुमान की अंगद आदियों से भेंट

एकदम लंका के कंपित होने पर, परवशता से (आनन्द से अपने को भूल) सुरक्षित रूप से निकलकर, क्रम से महलों को झट लातों से गिराकर, जाकर, सरलता से सुवेलाद्रि पर चढ़कर, लंकापुरी में सर्वत्र स्थित सभी दैत्य विह्वल तथा भीत हों, ऐसा अधिक ज़ोर से गरज-गरजकर, (पर्वत के) सानु (-भाग) भग्न होकर अब्धि में गिरें, बड़ी चट्टानें गिर पड़ें, इस प्रकार शरीर को बढ़ाकर अद्रि के श्रृँग (तथा) कुंभिनी (पृथ्वी) के धँसने पर, छलाँग भरकर, उछलकर, (समुद्र को) पार कर, आकाशवीथि में पटु सत्त्व-देह संपत्ति से आ आकर, विरल प्रेम से, अब्धिमध्य में विलसित मैनाक पर्वताधीश को देख, वहाँ अपने शरीर की प्यास बुझाकर, पर्वत को बिदाकर, वहाँ से निकलकर, अपने वेग, औन्नत्य, सौंदर्य के शोभित होने पर, सप्रयत्न जलधि की उत्तर-तीरभूमि पर, अतिसत्त्वसंपन्न हो, आ खड़ा हो गया। उसकी प्रसन्नता के चिह्नों को देखकर, अंगद आदि अगचराधिप उसकी अगवानी कर, गले मिलकर, (हर्ष को) प्रकटकर, जहाँ-तहाँ परिणाम (के बारे में) पूछकर, एक स्थान पर सब मिलकर बैठकर, गए कार्य (के बारे में) शोभा से पूछने पर, वह उन्नतोन्नत (हनुमान) सबको देखकर (यों बोला)—"हे कपियो! मैं आपकी करुणा से, अनुपम उदधि को

यगणित वैभवंबगु लंक जौच्चि । तगिलि शोधिंचि सीतादेवि गांचि
१०१०
यिनकुलाधिपुडानतिच्चिन तेरगु । जनकनंदनतोड सकलंबु जॅप्पि
यिंतिकि मुद्रिक यिरवंद निच्चि । यिंति शिरोमणि यिदे पुच्चुकोंनुच्चु
वच्चिति ने" नन्न वनचराधिपुलु । निच्चलो हर्षिचि यिंपु सोंपोंदि
हनुमंतु नंदरु नन्नि चंदमुल । गोंनियाडि कोंनियाडि कोर्कुल देलि
युन्नचो नंगदुडुरुपराक्रमुडु । क्रन्नन नुत्साह कलितुडै पलिके,
"जनकज मर्नमिक साधिंचि तोडु । कोंनिपोयि रघुरामु गूर्चुट लॅस्स,
यट्टु गान निप्पुडीयंबुधि दाटि । पटु पराक्रमुडैन पंक्तिकंधरुनि
सुतुलतो हितुलतो जुट्टालतोड । नतिरयंबुन जंपि यवनिज गोंनुच्चु
वत्तमु लॅ"डन्न वालिसूनुनकु । नत्तरि ऋक्षेशुडनियॅ भाविंचि,
"मनल सुग्रीवुंडु मैथिलि वेदुक । बनिचिन पनुलॅल्ल बावनि वलन
१०२०
ननघात्म! सफलंबुलय्यॅ, नी मीद । निनकुलाधिपुनितो नी वार्त देलुप
बोवुट दगु" नन्न बुद्धि नोंडोरुलु । भाविंचि दानि केर्पड सम्मतिच्चि
वनचरुल् नाडॅल्ल वनधितीरमुन । ननिलसूनुडु दारु नर्थितो नुंडि

लाँघकर, अगणितवैभवयुक्त लंका में प्रवेशकर, अन्वेषण में लग, सीतादेवी को देख, ।। १०१० ।।

—इनकुलाधिप की आज्ञा का समस्त विधान, जनकनन्दना को बताकर, नारी (सीता) को शोभा से मुद्रिका देकर, नारी की शिरोमणि को लेते हुए, यह मैं आ गया हूँ। "(ऐसा) कहने पर वनचर-अधिप मन में हर्षित हो, आनन्द (और) शोभा को प्राप्त कर, सभी ने हनुमान को सभी प्रकार से सराहा-सराहा (और) इच्छाओं (भविष्य की कल्पनाओं) में ऊभचूभ हुए। तब उरु पराक्रमवाला अंगद शीघ्र उत्साह कलित हो बोला—'अब हमारे लिए सीता को जीत ले जाकर, रघुराम के पास पहुँचना उचित है। अतः अब इस अंबुधि को पारकर, पटु पराक्रमशाली पंक्तिकंधर को सुत, हितु, बान्धवों के साथ अति शीघ्र मार डालकर, अवनिजा को लेते हुए आएँगे। उठिए।" कहने पर, उस अवसर पर ऋक्षेश (जाँबवान) ने सोचकर, वालिसून से कहा—"हमें सुग्रीव ने मैथिली को ढूंढने के लिए भेजा था। वे समस्त कार्य पावनी द्वारा ।। १०२० ।।

—हे अनघात्म ! सफल (सम्पन्न) हुए हैं। अब आगे यह उचित है कि इनकुलाधिप को यह समाचार देने जावें।" (ऐसा) कहने पर परस्पर विचार कर, उसे स्वीकार कर, वनचर, सारा दिन वनधि के तीर पर

वहुमूलफलमुल वरितृप्ति वोंदि । महितसत्त्वाधिकुल् मरुनाडु गदलि
धरणिपै मेरुमंदरमुलकंटे । वरपैन दर्दुर पर्वतंवुनकु
जनुदेंचि यग्गिरिसानुदेशमुल । वनमूलफलमुलु वडि नास्वदिंचि
या यद्रिपति मीद ना रात्रि निलिचि । यायतभुजवलुलंत वेगुटयु

मधुवनमुलो अंगदादुल विहारमु

"मनमिक सुग्रीवु मधुवनंवुनकु । नेनसिन कडकतो नेगि यंदरमु
दनिवोव देनियल् द्रावक युन्न । मन दप्पि पो' दनि मदि विचारिंचि
"यिनकुलाधिपु पनुलेल्ल साधिंचि । चनियेंद, मट्टुगान जलजाप्तसुतुडु
१०३०
मनमीद गोपिंचि मर्दिप वेरचु" । ननि निश्चयमु सेसि यंदरु गूडि
हनुमंतु नंगदु नपुडु प्रार्थिंचि । यनुकूलमुग वारि यनुमति वडसि
याततबलुलु मध्याह्नंवु कोलदि । केतेंचि मधुवनंवेपुमै जोच्चि
दिक्कुल वेंदचल्लु तेनेतावुलकु । ग्रुक्किळ्ळु म्रिगुचु गुनिसियाडुचुनु
गोनसेवुल् रिक्किंचि कोक्किरिंपुचुनु। गिनिसि योंडोरुलु दकिंचुचु वेड्क
लेनयंग दमतमकिष्टंबुलैन । वनभूमुलकु वारि वनचराधिपुलु

अनिलसून के साथ प्रेम से रहे । वहु-मूल-फलों से परितृप्त होकर, (वे) महित सत्त्वाधिक दूसरे दिन निकलकर, धरणि पर मेरु (और) मन्दर पर्वतों की अपेक्षा उन्नत दर्दुर पर्वत पर आकर, उस गिरि के सानुप्रदेशों पर वन मूल-फलों को शीघ्र खाकर, उस अद्रिपति (पर्वत राजा) पर, उस रात को रहकर, पौ फटने पर आयतभुजवल वालों ने (यों सोचा)—

मधुवन में अंगदआदियों का विहार

"अब हम सुग्रीव के मधुवन को दीप्त पराक्रम से जाकर, सभी जी भरकर मधु का पान नही करेंगे तो हमारी प्यास नहीं बुझेगी ।" ऐसा मन में विचारकर, "इनकुलाधिप के समस्त कार्य संपन्न करके जा रहे हैं, अतः जलजाप्तसुत (सुग्रीव) ॥ १०३० ॥

—हम पर रुष्ट होकर, मार-पीट (दंडित) करने में भीत होगा ।" ऐसा निश्चय कर सभी मिलकर, तव हनुमान (और) अंगद की प्रार्थना कर, उनकी अनुकूल अनुमति प्राप्त कर, (वे) आतत वलवाले मध्याह्न के समय आकर, मधुवन में उत्साह से प्रवेशकर, दिशाओं में परिव्याप्त मधुसौरभ के कारण, घूँट भरते हुए (टपकते हुए लार को पीते हुए, लालायित होते हुए) हाव-भाव प्रदर्शित करते नाचते हुए, कान के अन्तिम भाग खड़े

धीनिधुल् मरि पूवुदेनियल् जुंटि । तेनियलुनु बुट्टतेनें मुन्नैन
पलुदेनियलु ग्रोलि फलमुलु नमलि । कलय बूवुलु रालिच कायलु डुल्चि
तलिरुगोम्मलु द्रुंचि तरुकोटि वंचि । मलयुचु गोम्मकोम्मकु दाटि दाटि
योलसि पूदीगेल नुय्येललूगि ।कोलकुल ग्रोडिंचि कूडि वर्तिप १०४०
नालोन दधिमुखुंडनग नावनमु । पालिचुचुंडेडु प्लवगुडोक्करुडु
असमानकोपुडै यंदर गिनिसि । वेस दम्मु भंजिचि वेडलिपोंडनुचु
वनपालकुलचेत वरुस द्रोयिंप । वनचुरुल् वेस बार वारि वारिंचि
वडि नंगदुंडुनु वायुनंदनुडु । दडयक दधिमुखु धरणिपै लील
गेडपि बेंट्टग मोमुक्रिदुगा नीड्चि । पोंडिचि त्रोयुटयुनु बोलुपेदि वाडु
कोपिंचि मोरवेट्टुकोनुचुनु बोयि । भूपालु पदपद्ममुलकु लक्ष्मणुनि
श्रीपादमुलकु सुस्थिरभक्ति म्रोक्कि । या पद्महितसूनु नडुगुल केरगि
"देवदानवुलकु दृष्टिपरादु । देव ! नी वनमेल्ल, देजंबु मेरसि
पेनगोनि वनचरुल् पेक्कंड्र तोड । जनुदेंचि यसमानसत्त्वुलै कूडि

करके, (एक दूसरे की) खिल्ली उड़ाते हुए, क्रुद्ध होकर, परस्पर तर्क करते हुए, उत्साह के उमड़ने पर, अपनी-अपनी प्रिय वनभूमियों में दौड़कर (वे) वनचराधिप जो धीनिधि हैं, पुष्प मकरंद, छत्तों के मधु, झाड़ियों में एकत्र मधु आदि अनेक प्रकार के मधु का पानकर, फल चबाकर, सर्वत्र फूल गिराकर, कच्चेफल गिराकर, नव-शाखाओं को तोड़, वृक्षसमूह को झुकाकर, घूमते हुए, एक शाखा से दूसरी शाखा पर छलांग भरकर, पुष्पलताओं पर झूला झूलकर, सरोवरों में क्रीड़ाएँ कर, सब मिलकर इस प्रकार बिचरने लगे ॥ १०४० ॥

इतने में उस वन की रक्षा करनेवाला दधिमुख नामक प्लवग (वानर) असमान कोपवाला होता हुआ, सब पर क्रुद्ध हो, झट निकल जाने के लिए फटकार कर, वनपालकों से क्रम से उन्हें ढकेलवा दिया। तब वनचर (वानर) झट भागने लगे तो उन्हें रोककर, झट अंगद और वायु-नन्दन ने अविलंब दधिमुख को सलील धरणि पर गिराकर, मुँह के बल घसीटकर, घूँसे देकर, ढकेल दिया तो शोभा खोकर वह क्रुद्ध हो, दुहाई देते हुए जाकर, भूपाल (राम) के पद-पद्मों को, लक्ष्मण के श्रीचरणों को सुस्थिर भक्ति से प्रणाम कर, पद्महितसून (सुग्रीव) के चरणों में नत होकर (बोला)—"हे देव ! तुम्हारे समस्त वन को देव-दानव नज़र उठाकर तक नहीं देख सकते। तेज से प्रकाशित होते हुए, अनेक वनचरों के साथ खींचातानी करते आकर, असमानसत्त्व वाले होकर, मिलकर, मरुत्तनय (हनुमान) तथा वालिपुत्र तुम्हारे मधुवन में आज आकर, ॥ १०५० ॥

या मरुत्तनयुंडु ना वालिसुतुडु । नी मधुवनमुलोनिकि नेडुवच्चि १०५०
तगिलि म्राकुल म्राकि तरुशाखललमि । तिगिचि पंडुलु दिनि तेनियल् ग्रोलि
यिदि राचवनमनि यिच्च भीतिलक । कुदियक यित गैकोंनकुन्न जूचि
येंडपक जंकिंचि येनु मी यान ।बौंडिचि त्रोचुटयुनु वौंडिचिरि नन्नु"
ननि वाडु मोंऱयिड नलिगि सुग्रीवु । डेंनसि मर्दिप नूहिंचिन जूचि
यंत ना वृत्तांतमंतयु नेंऱिगि । संतत जयशालि सौमित्रि वलिकॆ,
"दौंलगक यगदादुलु महाकपुलु । नेलकोंनि सुग्रीव ! नी याज्ञवलन
तलकितयुनु लेक तमयंत जोंच्चि । नलि देनें द्रावुचुन्नारेनि विनुम
याततवलसत्त्वुलगु वारिचेत । सीताधिपतिपनुल् सिद्धिप नोपु,
गाकुन्न नीयाज्ञ गडव नोपुदुरे ? । कैकोंनि पिलिपिपु कडकतो वारि"
ननि वुद्धि सेप्पिन नर्कनंदनुडु ।तन वुद्धि गैकोंनि दधिमुखु जूचि १०६०
"श्रीरामु कार्यंबु सेसिरि, गान । वारि चेसिन चेत वारिकि जेल्लें,
नूरक यी शोकमुडिगि नीविक । वारि बुत्तें" म्मनन्न वाडंत नरिगि
हनुमंतु नंगदु ना जांववंतु ।गनि म्रोक्कि" तन तप्पु गाचि मन्निचि
वनचरोत्तमुलार ! वडि नेगुडिक । वनमुलोपल नुंडवलवदु मीरु,

—वृक्षों पर चढ़कर, तरुशाखाओं को जबरन् झुकाकर, फल खाकर, मधु का पानकर, मन में भीत न होकर, संकोच न कर कि यह राजवन है, इतना (कोलाहल) करने पर, पीछे न हटकर, मैंने आपके आदेश से उन्हें ढकेल दिया तो मुझे घूंसे लगाए हैं।" ऐसा उसके दुहाई देने पर, क्रुद्ध हो सुग्रीव का उन्हें मारने-पीटने का विचार करते देख, तब समस्त वृत्तान्त को जानकर, संतत जयशाली लक्ष्मण ने कहा—"हे सुग्रीव ! सुनो, अंगद आदि महाकपि लगकर, तुम्हारी आज्ञा के विना अपने आप (वन में) प्रवेशकर, यदि मधुपान कर रहे हैं तो आतत वल सत्त्ववाले उनसे सीताधिपति के कार्य संपन्न हुए होंगे। नहीं तो तुम्हारी आज्ञा का उल्लंघन कर सकते हैं ? चाहकर उन्हें सप्रयत्न बुलाओ।" ऐसा समझाने पर, अर्कनन्दन ने समझकर, दधिमुख को देखकर ॥ १०६० ॥

—(कहा)—"श्रीराम का कार्य (सम्पन्न) किया अतः उन्होंने जो किया वह उनके योग्य था। तुम इस शोक (व्यथा) को छोड़कर, उन्हें भेजो।" (ऐसा) कहने पर वह तब जाकर, हनुमान, अंगद, जांववान को देख, प्रणाम कर, कहा—"हे वनचरोत्तम। मेरे अपराध को क्षमाकर, अब शीघ्र जाइए। आपको इस वन में नहीं रहना चाहिए। प्रेम से मिहिर-तनूज (सुग्रीव) ने तुम्हें बुला भेजने का मुझे आदेश देकर भेजा है।"

मिम्मु बुर्तेम्मनि मिहिरतनूजु। डिम्मुल नाकानतिच्चिपुत्तेंचे"
ननु वार्त सैंप्पिन नंदरु नुब्बि। यिनसूनु नाज्ञकै येंड गोंकु वालि
तनयुनि नूरार्चि तडयक पेर्चि। वनचराधीशुलु वनभूमि वेंडलि
युप्पोंगु कडकल नुप्परंबेंगसि। यप्पुडु मेघंबुलट्ल म्रोयुचुनु
वारक चनुदेंचु वारि चिह्नमुलु। दूरंबुनंदे संतोषिंचि चूचि
यिनजुंडु गपिसेन नेंदुरुगा बंचि। यनुरक्ति रप्पिंप नर्थितो वच्चि १०७०

हनुमंतुडु सीतकुशलमुनु रामुन केरिंगिंचुट

जगतीशुडगु रामचंद्रुनंघ्रुलकु। नगचरुल् दंडप्रणाममुल् सेसि
तदनंतरंबुन दग लक्ष्मणुनकु। बिदप नर्कजुनकु ब्रीतितो म्रोक्कि,
यंदरु गोंनिवच्चि हनुमंतुनपुडु। मुंदर निडिकोंनि मुदमु दीपिंप
श्रीरामचंद्रुनि सिंहासनंबु। चेरुव नोलि नासीनुलै युंड,
वलनोंप्प दम पोयि वच्चिन तेंरगु। दलकोंनि विनगोरु धरणीशु तलपु
हनुमंतुडेंतयु नात्मलो नेंरिगि। घनमैन भक्तितो गरमुलु मोंगिचि
"कमलाप्तकुलनाथ! कंटि वैदेहि। ब्रमदाशिरोमणि बरम कल्याणि
धरणीश! मी याज्ञ दल मोचिकोंनुचु। नरुदैन देशंबुलन्नियु वेंदकि

ऐसा समाचार देने पर वे सब फूलकर, इनसून (सुग्रीव) के आदेश के (अभाव के कारण) भीत होनेवाले वालितनय को सान्त्वना देकर, अविलंब क्रम से बनचराधीश वनभूमि से निकल पड़े। तब उमड़ते साहस से आकाश तक उछलते हुए, मेघों के समान ध्वनि करते हुए, न रुककर आनेवाले उनके लक्षणों को दूर से ही सन्तुष्ट हो, देखकर, इनज ने कपि-सेना को अगवानी करने के लिए भेजकर, अनुरक्ति से बुलवाया। प्रेम से आकर, ॥ १०७० ॥

हनुमान का सीता का कुशल राम को बताना

—अगचरों ने जगदीश रामचन्द्र की अंघ्रियों में दंड प्रणाम कर, तदनन्तर समुचित रूप से लक्ष्मण, उसके बाद अर्कज को प्रीति से प्रणाम किया। तब सब हनुमान को आगे करके, मोद के दीप्त होने पर, श्रीरामचन्द्र के सिंहासन के पास क्रम से आसीन हो रहे। शोभा से अपने जाने और आने के विधान को चाहकर सुनने की इच्छा रखनेवाले धरणीश (राम) के विचार को हनुमान ने अपने मन से जानकर, अधिक भक्ति से हाथ जोड़, (कहा)—"हे कमलाप्तकुलनाथ! प्रमदाशिरोमणि, परमकल्याणी वैदेही को देखा है। हे धरणीश! आपकी आज्ञा को सिर पर धारण कर, समस्त

च्चिरशक्ति संपातिचे द्रोव यॆंरिंगि । यरिगि समुद्रमे नवलील दाटि
यॆनर दक्षिण वार्धि नुन्नतमहिम । दनरु त्रिकूटाद्रि दद्द्यु नॊप्पि १०८०
दानवकुलपालितंबैन लंक । ये नॊक्करुड जॊच्चि यॆल्लचो वॆदकि
धरणिज गानक तद्द्यु वगचि । यरिगि रावणुनि युद्यानंबु जॊच्चि
परिकिंचि राक्षसभामलु दन्नु । दिरिगि चुट्टुचुनुंड देव ! मी देवि
युपवासमुल ग्रुस्सि यॊक म्रानिक्रिंद। विपुलदु:खंबुल वॆल्लिलो मुनिगि
चॆक्किट जेयूदि चित्तंबुलोन । नॆक्कॊन्न वगलतो निनु दलंचुचुनु
दनुजुंडु सनुदॆंचि दंडिचु तॆरगु । दन दिक्कुलेमिनि दलपोसि पोसि
युडुगक कन्नीळ्ळुलोरंत प्रॊद्दु । वडिय निट्टूर्पुलु वडि वुच्चि पुच्चि
मासिन चीरतो मलिनयै धूळि । धूसरितांगियै तूलि कै व्रालि
तलयूचि तलयूचि तलकॊन्न वगल । वलुमारु व्रेगुचु वलविप जूचि
मीनाक्षि चिह्नमुल् मीरु ना तोड । नानतिच्चिन जाडलन्नियु जूचि १०९०
क्रममुन मरि सीतगा निश्चयिंचि । कमलाक्षि विदप डग्गरि पोयि म्रॊक्कि

अनुपम प्रदेशों में (उनका) अन्वेषण कर, चिरशक्ति वाले संपाति से मार्ग जानकर, जाकर, मैंने बड़ी आसानी से समुद्र पार किया। शोभा से दक्षिण समुद्र में, उन्नत महिमा से विराजमान त्रिकूटाद्रि पर आधिक्य से शोभित, ।। १०८० ।।

—दानवकुलपालित लंका में मैंने अकेले ही प्रवेश कर, हर जगह खोजकर धरणिजा को न पाकर, अधिक दुखी हो, जा-जाकर रावण के उपवन में प्रवेशकर, परिशीलन किया, हे देव ! राक्षस भामाओं के अपने को घेरकर घूमते समय, आपकी देवी उपवासों से क्लान्त हो, एक वृक्ष के तले विपुल दु:ख की बाढ़ में डूबकर, कपोल पर हाथ धरे, चित्त में उमड़ती व्यथाओं से आपका स्मरण करते हुए, दनुज के आकर दंडित करने के विधान तथा अपनी अनाथ-अवस्था का विचार करके दिनभर अविरत अश्रु बहाकर, लंबी आहें छोड़-छोड़कर, मलिन वस्त्र से मलिन बन, धूलि-धूसरित शरीर वाली हो, डगमगाते हुए, हाथ पर झुककर, सिर हिला-हिलाकर, अधिक व्यथाओं से बार-बार व्यथित होती हुई, विलाप करने लगीं। मीनाक्षी (सीता) के चिह्न तथा आप द्वारा आदिष्ट (आदेश दिए गए) सभी चिह्नों को (मिलाकर) देखकर, ।। १०९० ।।

—क्रम से यह निश्चयकर कि यह सीता हैं, फिर कमलाक्षी (सीता) के निकट जाकर, प्रणामकर, तामरसाक्षी (सीता) से उचित बातें कर, (उस)

तामरसाक्षितो दगुमाटलाडि । लेमकु मी यंगुळीयकमिच्चि
मगुवशिरोमणि मरि पुच्चुकोनुचु । मगुडक यारामममंतयु बॆरिकि
कमलाकरंबुल बट्टि कलचु सिंहंबु । तरि वनपालकतति रूपुमापि
तरमिडि तमतंड्रि तलपु दीपिंप । नरुदेंचिनट्टि या यक्षयु द्रुंचि
चॆलगि राक्षसवीरसेनल जंपि । यल यिंद्रजित्तुतो नचट बोराडि
रावणिचे जिक्कि राक्षसेश्वरुनि । कावर मणचंग गडगि ने वानि
वरमंदिरमु जेरि वलयु वाक्यमुल । बरुवडि ने दॆल्प वाडुनन् गनलि
वालमग्नि दगिलिच्चि वडि नेगुमनिन । गालिचि लंकनु गडु वडि गदलि
११००
यगणितंबैनट्टि यंबुधि दाटि । मगुड निन् गांचंग मदि दलपोसि
वच्चिति ने" ननि वसुधाधिपतिकि । नच्चुगा सति वियोगाग्नि कीललकु
मच्चिदि यन नॊप्पु माणिक्यमिच्चॆ । निच्चिन ना रत्नमेपॆंड जूचि
यनुरागमुन दानि नल्लन बुच्चु । कौनि डॆंदमुन जेर्चुकोनि मूर्छबोयि
यॊक कोंत प्रॊद्दुन कॊय्यन दॆलिसि । प्रकट धैर्यंबुन ब्राणमुल् निलिपि
नृपति बाष्पाकुलनेत्रुडै चूचि । कपिनाथु सुग्रीवु गरमर्थि बलिकॆ,

---

नारी को आपकी अंगूठी देकर, फिर नारी की शिरोमणि को ग्रहणकर, (वहाँ से) न लौटकर समस्त वन को उखाड़कर, कमलाकरों (सरोवरों) का मंथनकर, तुम्हारा स्मरणकर, कमलाप्तसुत (सुग्रीव) की आज्ञा का मन में विचार कर, करि-समूहों को पकड़ व्याकुल करनेवाले सिंह के समान, वनपालक-समूह को मिट्टी में मिलाकर, क्रम से अपने पिता के विचार को दीप्त करने आए हुए अक्ष(-कुमार) का वधकर, विजृंभित हो, राक्षस-वीरों की सेनाओं का संहार कर, तब वहाँ इन्द्रजीत से लड़कर, रावणि (इन्द्रजीत) के हाथ फँसकर, (वंदी बनकर), राक्षसेश्वर के गर्व का दमन करने लगकर मैंने उसके श्रेष्ठ मंदिर जाकर, आवश्यक बातें कर, औचित्य बताने पर, उसने मुझपर क्रुद्ध होकर, पूँछ में आग लगाकर, शीघ्र चले जाने के लिए कहा। (तब), लंका को जलाकर, अतिशीघ्र रवाना होकर, ॥ ११०० ॥

—अगणित अंबुधि को पार कर, फिर तुम्हारे दर्शन करने का विचार कर मैं (यहाँ) आया हूँ।" (ऐसा) कह वसुधाधिपति को वास्तव में सती की वियोगाग्नि कीलाओं (ज्वालाओं) के नमूने के समान शोभित माणिक्य दिया। देने पर उस रत्न को ढंग से देखकर, अनुराग से उसे हाथ में ले, छाती से लगा, मूर्च्छित हो, थोड़ी देर के बाद झट से होश में आकर, प्रकटित धैर्य से प्राणों को रोक, नृपति बाष्पाकुलनेत्रों वाला होता हुआ (राम),

"भानुज ! ना प्राणप्रदमैनयट्टि । मानिनीमणि शिरोमणि जूचिनपुडे
ना मदि गरगुचुन्नदि लक्कवोलें । नी मणि मा मामकिच्चें निंद्रुंडु
यागसंतृप्तुडै यात्मलो मेंच्चि । या गुणनिधि जनकावनीविभुडु
नट्टि यी मणि सीतयौदल वेड्क । गट्टि पेंड्लि योंनर्चें गरमर्थि नाकु,
१११०
नन्नुल तलमिन्नयैन या सीत । नेंन्नडु नेंडवायदी मणि, नेडु
नातिनि नन्नु मन्नन गूर्पवच्चु । दूतिक यन सिरुल् दुलकिंप वच्चें।"
ननि यनि यंदंद यक्कुन जेर्चि । मनुकुलेश्वरुडु रामक्षितीश्वरुडु
इनतनूजुनितोड निट्लनें मरियु । "वनजातहितपुत्त्र ! वारक विनुमु,
ए देंस जूचिन नेंद्दि गन्गोंनिन । ना देंस नेंल्लनु नथि दानगुचु
ना दृष्टिमार्गंबुननु मदि नेंपुडु । वैदेहि पायदु वरुस नोंडेंडनु,
वैदेहि बोंडगनिवच्चितिमनुट । वादमो, निजमो ? धीवर! यदिगाक
मुनु निमिषांतरंबुननु बायनट्टि । यनघात्म मत्प्रिय यवनीतनूज
जनकज योंक्कतें जलनिधिशैल । वन वहुळांतरावासिनि यंदु
ननु नेंडवासि युन्नदि येंव्विधमुन । घनविरहाग्निचे ग्रागुचु नचट ?
११२०

कपिनाथ सुग्रीव से वड़े प्रेम से बोला— "हे भानुज ! मेरे प्राणप्रद मानिनीमणि की शिरोमणि को देखने पर ही मेरा हृदय लाख के समान पिघल रहा है। यागसंतृप्त हो, मन से सराह कर, इन्द्र ने मेरे ससुर को यह मणि दी थी। गुणनिधि जनकावनी-विभु (राजा जनक) ने इस मणि को सीता के सिर पर उत्साह से पहनाकर, वड़े प्रेम से मेरा विवाह किया था। ॥ १११० ॥

—नारियों में श्रेष्ठ उस सीता से यह मणि कभी अलग नहीं होती। आज नारी को सगौरव मुझसे मिला देने वाली दूतिका के समान, शोभाओं को बिखेरते आयी है।" ऐसा कह जव-तव उसे छाती से लगाकर, मनुकुलेश्वर राजा राम ने फिर इनतनूज से यों कहा— "हे वनजातहित (सूर्य) के पुत्र ! सावधानी से सुनो ! जिस किसी दिशा में देखें, जिस किसी को देखें, उसी दिशा में स्वयं (स्थित) होते हुए, वैदेही कभी मेरे दृष्टि-मार्ग से अलग नहीं होती। हे धीवर (धीमान्)! (इनका कथन) कि हम वैदेही को देख आए हैं बकवास है अथवा सच ? यही नहीं, पूर्व में पलभर के लिए भी मुझसे न विछुड़ने वाली अनघात्मा वाली मेरी प्रिया, अवनीतनूजा, जनकजा अकेले ही जलनिधि-शैल-वन बहुलांतरावासिनी बन, वहाँ महान् विरह की अग्नि से तप्त होती हुई, मुझसे बिछुड़कर किस विध जी रही हैं ? ॥ ११२० ॥

जनकज बासि यिच्चट निल्वलेवु । तनुवुन ब्राणमुल्, तडयक यिंक
जनकजयुन्न यच्चटिकि गोंपोयि । मनमुलो वग नुड्डपु मर्कटाधीश!"
यनुचु ब्रलापिंचु ना रामचंद्रु । ननुवंद नूरार्चि हनुमंतुडनियें,
वननिधि दाटि रावणु जंपि जगमु । ननुमोदमुन गोंनियाड भूपुत्रि
जनकज गोंनि तेर जनवलें, निंक । मनमुन नेंव्वग मानवें देव !"
यनि तेंल्प देरि रामावनीश्वरुडु । हनुमंतु मरियुनु नट जूचि पलिकें,
"बरमपुण्यात्मक ! पवनज ! नीवु । मरलि येतेंचुचो मगुव येमनियें ?
जेंप्पु मेपंड" नन्न श्रीरामु जूचि । चेंप्पंग दोंणगें नंचितसत्त्वधनुडु,
"एडपनि वगलतो ने नोंक्कभंगि ।गडपिति बदिनेंलल् काकुत्स्थु बासि
व्रलमूदि रेंडुमासमुलकु बिदप । बेंलुकुरु नन्नु जंपेद नन्नवाडु ११३०
रावणु, डटुगान रामभूपतिकि । ने विधंबुन ब्राणमिटमीद निल्व
दनि विन्नपमु सेयुमनियें, मा तंड्रि । तनु सत्यधनुडनि तगनिच्चिनपुडु
विलसिल्लु कल्याणवेदिपैनुंडि । वलनोंप्प नग्निदेवर साक्षिगाग
गरमर्थि नन्नेंल्लकालंबु विडुव । करसि रक्षिंचेंदननि तेंच्चें, नन्नु

जनकजा से बिछुड़कर यहाँ मेरे प्राण शरीर में नहीं रह पा रहे हैं। अब विलंब न कर, वहाँ ले जाओ जहाँ जनकजा है और हे मर्कटाधीश! (मेरे) मन की व्यथा को दूर करो।" (ऐसा) कहते विलाप करनेवाले रामचन्द्र को उचित विधान से सान्त्वना देकर, हनुमान ने कहा—"वननिधि को पारकार, रावण का वध कर, जगत् के अनुमोदन-स्वरूप सराहते समय भूपुत्री जनकजा को लाने के लिए चल पड़ना चाहिए। हे देव! अब मन से अधिक व्यथा को दूर कर दो।" ऐसा बताने पर राजा राम ने होश में आकर, फिर वहाँ हनुमान को देख (यों) कहा—"हे परमपुण्यात्मा! हे पवनज! तुम जब लौटकर आरहे थे, तब सीता ने क्या कहा? सब ढंग से सुनाओ।" (ऐसा) कहने पर अंचित-सत्त्व-धनी (हनुमान) श्रीराम को देखकर कहने लगा—"(उन्होंने) कहा कि (राम से) निवेदन करो कि काकुत्स्थ (राम) से बिछुड़कर मैंने अनारत व्यथाओं से दस महीने एक-से बिताए हैं। रावण कहता है कि हठ करके दो महीने के बाद बेचैनी से तुम्हें मार डालूँगा। ॥ ११३० ॥

—अतः रामभूपति से कह दो कि अब आगे किसी प्रकार प्राण नहीं बचेंगे। मेरे पिता के उन्हें (राम को) सत्यधनी मानकर, उचित रूप से देने पर, बिलसित कल्याणवेदी पर रहकर, शोभा से अग्निदेव को साक्षी बनाकर, बड़े प्रेम से मुझे सदा के लिए न छोड़कर, 'अच्छी तरह रक्षा करूंगा' यह (प्रणकर) (वे मुझसे) लाये थे। मेरा विचार न कर उपेक्षा की, अनाथ

नरयकुपेक्षिचे, ननदगा जेसे । वरिकिपडनि विन्नपमुसेयुमनिये,
दक्कक चनुदेंचि तन धर्मपत्नि । नौक्कडेत्तुकपोव नूरक युनिकि
महिलोन वीरधर्ममु गादु गान । विहितमंतयु विन्नविंचिति गानि
वलनोप्प ना मनोवाक्कायकर्म । मुलु पूनि तनयंदे पोंदि वर्तिंचु
नेनयंग ना योंडलेंदुंडेनेनि । ननि विन्नपमु सेयुमनियें मी देवि,
तनुचित्रकूटाद्रि दग नोक्क काकि । चेनकुटयुनु मनश्शिलचेत मीरु
११४०

लीलतो मकरिकल् लिखियिंचुटयुनु । शीलिंचि गुरुतुगा जेप्पि नन्ननिचे,
चतुरात्मुडगुचुन्न सौमित्रि जेरि । यतनितो नोक्क वाक्यमु वल्कुमनियें
ननु दल्लिगा जूचु ना पाटु चूड । दनकेन्नि भंगुल दगदनि चेप्पि
वाविरि दंडकावनमुलो वरम । पावनुंडगु तन्नु वलिकिन फलमु
गुडिचितिननि चेप्पु, कोरतलेंव्वियुनु । दडवकुमनि चेप्पु, दयवुट्ट वल्कु
मनि विन्नपमु सेयुमनियें लक्ष्मणुन । किनजुंडु मोदलैन गिरिचरुलकुनु
विनयमुल् वलिक येंव्विधिनैन वारि । निनकुलुलनु वेग निटकु देम्मनियें,
नीति दप्पिन लोकनियतुलु दप्पु । नीतियें तोडवगु निखिलनृपुलकु

कर दिया। निवेदन करो कि मेरा विचार (क्यों) नहीं कर रहे हैं। किसी के आकर अपनी धर्मपत्नी को ले जाने पर चुप रहना जगती में वीरधर्म नहीं है, अतः समस्त विहित (कर्त्तव्य) का निवेदन किया है। नहीं तो शोभा से मेरे मनोवाक्-काय-कर्म, शरीर कहीं भी रहे, तुम्हीं में लगकर प्रवर्तित होते हैं, ऐसा निवेदन करने के लिए आपकी देवी ने कहा है। अपने को चित्रकूटाद्रि पर एक कौए का छेड़ना, मनःशिला (गैरिक) से आपका— ॥ ११४० ॥

—लीला से मकरिकाएँ लिखना, यह परिशीलन कर, पहचान के रूप में बताकर मुझे भेजा है। चतुरात्मा सौमित्र के निकट जा, उससे एक वाक्य कहने के लिए कहा है। मुझे माता समान माननेवाले उसका मेरे कष्टों पर ध्यान न देना किसी भी प्रकार से उचित नहीं है। (उससे) कहो कि क्रम से दंडक वन में परमपावन उसके प्रति जो कटुवचन कहे हैं, उनका फल भोगा है। कहो कि अपराधों की गिनती न करे। लक्ष्मण से इन बातों का ऐसा निवेदन करो कि उसके मन में दया उपजे। कहा कि इनज आदि गिरिचरों से विनयवचन कह, किसी भी प्रकार इनकुलजों को यहाँ सवेग लाने के लिए उनसे कहो। नीति (मार्ग) का उल्लंघन करने पर लोक-नियति (नियम) उल्लंघन होगा। उस देवी ने यह निवेदन करने के लिए कहा है कि समस्त राजाओं के लिए नीति (-मार्ग) ही अलंकार

ननि विन्नपमु सेयुमनियॆ ना देवि । यिनवंश्युतो जॆप्पि यिप्पुडे दंडु
ननुवॊंद वॆंडलिपुमनि विन्नविंचॆ" । ननि, लक्ष्मणुनितोड नर्कजुतोड
११५०
जनकज पलुकुलु सकलंबु जॆप्प । घनशोकमुनु मानॆ घनुडु रामुंडु,
चॆप्पिन गपिवीरसिंहंबु लॆल्ल । नप्पुडु दमलोन हर्षिंचिरंत ।
ननि यंध्रभाष भाषाधीशनिभुडु । विनुत काव्यागम विमलमानसुडु
पालिताचारुंडपार धीशरधि । भूलोक निधि गोन बुद्ध भूविभुडु
दमतंड्रि विट्ठलधरणीशु पेर । गमनीय गुण धैर्य कनकाद्रि पेर
बनि बूनि यरिगंड भैरवु पेर । घनु पेर, मीसर गंडनि पेर
ना चंद्रतारार्कमै यॊप्पु मिगिलि । भूचक्रमुन नतिपूज्यमै वॆलय
नसमान ललित शब्दार्थसंगतुल । रसिकमै चॆलवॊन्दु रामायणंबु
परग नलंकार भावनल् निंड । गरमॊप्प सुंदरकांडंबु सॆप्पॆ ।
नारूढि नार्षेयमै यादिकाव्य । मै रसिकानंदमै यॆल्लनाडु ११६०
निव्वसुमति नॊप्प नी पुण्यचरित । मॆव्वरु सदिविन नॆव्वरु विनिन
सामादि बहुवेद चयधाम राम । नाम चिंतामणि नव्यभोगमुलु
परहिताचारमुल् प्रभुविचारमुलु । परिपूर्णशक्तुलु प्रकटराज्यमुलु

है। निवेदन किया कि इनवंश वाले से कहकर अभी (तुरन्त) सेना को शोभा से रवाना करा दो।" ऐसा, लक्ष्मण से (तथा) अर्कज से, ॥११५०॥

—जनकजा के समस्त वचन कह सुनाने पर, महान् राम ने महान् शोक को छोड़ दिया। (यह सब) कहने पर तब सभी कपिवीरसिंह अपने मन में हर्षित हुए। इस प्रकार आन्ध्रभाषा के लिए भाषाधीश (ब्रह्मा) के समान, विनुत-काव्य-आगम-विमल-मन वाले, पालित आचारवाले, अपार धीशरधि (बुद्धि समुद्र) वाले, भूलोकनिधि गोनबुद्ध राजा ने अपने पिता विट्ठल धरणीश के नाम पर, कमनीय-गुण-धैर्य-कनकाद्रि के नाम पर, जो दृढ़ता से अरिगंड-भैरव (शत्रु-भयंकर), महात्मा, मीसरगंड (प्रतापशाली) के नाम पर, आचन्द्र तारार्क-विलसित होनेवाली, भूलोक में अतिपूज्य हो शोभित होने के लिए अनुपम ललित-शब्दार्थ संगतियों से युक्त, रसमय हो विराजित होनेवाली रामायण के सुन्दरकांड को अधिक सुन्दरता से, अलंकार-भावनाओं से पूर्ण रूप में कहा। सुप्रसिद्ध आर्ष-ग्रन्थ, आदिकाव्य, सदा रसिकों को आनन्दप्रद होकर, ॥ ११६० ॥

—इस वसुमति (पृथ्वी) पर यह पुण्य चरित्र शोभायमान होगा। (इसे) जो भी पढ़ेंगे, जो भी सुनेंगे, उन्हें सामादि-बहुवेद-समूहों का धाम, रामनाम-चिन्तामणि (के कारण) नव्यभोग, परहित (करनेवाले)-आचार,

निर्मल कीर्तुलु नित्यसौख्यमुलु । धर्मैकनिष्ठलु दानाभिरतुलु
नायुरारोग्यंबु लधिकसंपदलु । वायक वाटिल्लु, बापक्षयंबु
वरपुत्रलाभंबु वैरिनाशनमु । सरिनोप्पु, धनधान्यचय समृद्धियुतु
ने विघ्नमुलु लेक यिड्ललो नधिक । लावण्यवतुलैन ललनल पोन्दु
गौड्कुलतो नेप्पुडु गूडियुंडुटयु । नेडगाग नापदलेल्ल वायुटयु
सम्मदंबुन बंधुजनुल गूडुटयु । निम्मुल गाम्यंबु लेडपकुंडुटयु
नन्नलु दम्मुलु नभिवृद्धि वोन्दि । मन्ननतो गूडि मलसियुंडुटयु ११७०
संततंबु देवतासंतर्पणंबु । पितृगणतृप्तियु बेंपारुचुंडु,
निदि मोक्षसाधनंबिदि पापहरमु । निदि दिव्य मिदि भव्य मिदि श्रीकरंबु,
रमणीय लील नी रामायणंबु । क्रममोप्प बूजिप गलुगु बुण्यमुलु,
व्रासिनिवारिकि वरशुभोन्नतुलु । वासवलोक निवासंबु गलुगु,
नेंदाक गुलगिरुलेन्दाक जलधु । लेंदाक रविचंद्रुलेंदाक दार
लेंदाक वेदंबुलेंदाक धरणि । येंदाक भुवनंबु लेपु दीपिंचु
नंदाक नी कथ यक्षरानंद । संदोह दोहळाचारमै परगु ।११७७

॥ सुंदरकांडमु समाप्तमु ॥

श्रेष्ठ विचार, परिपूर्ण शक्तियाँ, प्रकट राज्य (के वैभव), निर्मल कीर्तियाँ, नित्य सुख, धर्मनिष्ठा, दान में आसक्ति, आयु, आरोग्य, अधिक संपदाएँ अवश्य ही प्राप्त होंगी। पाप-क्षय, वरपुत्रलाभ, वैरियों का नाश समुचित रूप से होगा। विना किसी विघ्न-बाधाओं के घरों में धन-धान्य की समृद्धि, लावण्यवती ललनाओं का सहवास, सदा पुत्रों के साथ मिलकर रहना, सारी विपत्तियों का दूर हो जाना, सम्मोद से बन्धुजनों के साथ मिलकर रहना, प्रेम से कामनाओं की पूर्ति होना, सहोदरों का अभिवृद्धि पाकर, बड़े स्नेह के साथ मिलजुलकर रहना, ॥ ११७० ॥

—सतत देवताओं का संतृप्त रहना, पितृगण की तृप्ति में वृद्धि अधिक विलसित होगा। यह (ग्रन्थ) मोक्ष-साधक है, यह पापहर है, यह दिव्य है, यह भव्य है, यह श्रीकर है। रमणीय लीला (विधान) से इस रामायण की क्रम से (नियम से) पूजा करने पर पुण्य प्राप्त होगा। लिखनेवालों को वर-शुभ-उन्नति और इन्द्र-लोक-वास प्राप्त होगा। जब तक कुलपर्वत, जब तक जलधियाँ, जब तक रवि-चन्द्र, जब तक नक्षत्र, जब तक वेद, जब तक धरणि, जब तक भुवन (लोक) विशिष्टता से प्रकाशित होते रहेंगे, तब तक यह कथा अक्षर (शाश्वत) आनन्द-सन्दोह (समूह) का आकर होकर, विराजमान रहेगी। ॥ ११७७ ॥

॥ सुन्दरकाण्ड समाप्त ॥



अतुलितबलधामं स्वर्णशैलाभदेहं
दनुजवनकृशानुं ज्ञानिनामग्रगण्यम् ।
सकलगुणनिधानं वानराणामधीशं
रघुपतिवरदूतं वातजातं नमामि ॥

युद्ध कांडमु

श्रीरामुडु हनुमंतुनि गोनियाडुट

श्रीरामचंद्रु डाश्रितहितोदयुडु । वारिजबांधव-वंशवर्द्धनुडु
प्रियमुलयंदेल्ल ब्रियमैनयट्टि । प्रियवाक्य मंजनाप्रियसुतुचेत
ब्रियमुन विनि तन प्रियसति युनिकि। ब्रियमुन भाविंचि प्रीतितो ननियेः
"हनुमंतु चेसिनयंत कार्यंबु । चनुनै चेयंग निर्जरुलकुनैन ?
नरय सत्त्वमुन नीहनुमंतु डौंडे । गरुवलि यौंडे नग्गरुडुंडु नौंडे
देवगंधर्व दैतेयकिन्नरुलु । भाविंचि चौरकाक पगलुनु रेयु
राक्षसानीक विराजित बाहु । रक्षितमौ लंक रमणमै जोच्चि
प्राणंबुतोडन ब्रदिकि कम्मरग । नेणांकधरुडैन नेट्लु रानेर्चु ?
गडुमोदमुन बेंद्दगार्यंबु पतिकि । वडि जेयु नेव्वडु वाडुत्तमुडु १०
एलिनपतिकार्य मेंडरैन येडनु । वालूर नटु चेयुवाडु मध्यमुडु;

श्रीराम का हनुमान की प्रशंसा करना

आश्रित-हितोदय (करनेवाले) (तथा) वारिज-बान्धव (सूर्य)-वंश का वर्द्धन करनेवाले श्रीरामचन्द्र ने समस्त प्रिय (विषयों) में प्रिय बने प्रियावाक्य को अंजनाप्रियसुत से, प्रेम से सुनकर, अपनी प्रिय सती की स्थिति के बारे में प्रेम से सोचकर, प्रेम से यों कहा—"हनुमान ने जितना कार्य किया, वह कार्य निर्जरों के लिए भी साध्य है? सोच-विचारकर देखने पर सत्त्व के साथ वनधि (समुद्र) को पार करने में सामर्थ्यवान या तो हनुमान है या पवन या गरुड़ ही। मन से सोचने पर और कौन समर्थ है? चाहकर भी देव, गन्धर्व, दैतेय (राक्षस), किन्नरों के लिए दुर्गम बनकर, दिनरात राक्षस-सेना के विराजित बाहु(-बल) से रक्षित लंका में, रमणीयता से, प्रवेशकर, प्राणों के साथ (सजीव) जीवित रहकर लौट आने में एणांकधर (चन्द्र) भी कैसे समर्थ हो सकता है? अतिमोद से पति (स्वामी) के महत्कार्य को शीघ्र करनेवाला (सेवक) उत्तम है ॥ १० ॥

शासक स्वामी (प्रभु) के कार्य में विपत्ति (विघ्न) पड़ने पर,

पलुमारु मूलगुचु बति वंचु पनिकि । दोलग बारेडुवाडु दुस्सेवकुंडु;
ईमुव्वुरंदुनु नेक्कुव यैन । यामेलिवाडय्यै नरु यितलेक
यनुरागमुन बेद्द यैन नाकार्य । मनुपमंबुग जेसे ननिलनंदनुडु;
कावुन ब्रत्युपकार मीतनिकि । नेविधंबुन जेय नेर्चुवाड ?
नालिगनंबे ना यर्थ" मं चतनि । नालिगनमु सेसेनप्पु डव्विभुडु;
ईरीति मेच्चि या यिनसूति विनग । ना रामु डनियै ना यांजनेयुनकु:
"ननिलतनूज ! नी वंबुधि दाटि । जनकज गनि राग संतोष मोदवे;
निटनाकु बोडमिन यी मुदं बेल्ल । निटमीद मरि तुदिनेट्लौनोकानि;
यदि येट्टि दंटेनि नग्गलंबैन । युदधि लंघिपंग नोपेडिवैरवु २०
कपिसेन केब्भंगि गलुगुनो यनुचु । गपिनाथ! नामदि गलगंगजोच्चे।"
ननि पल्कि यटमीद नास्यंबु वंचि । मनुजेशु डेमियु मरिपल्ककुन्न
श्रीरामदेवुनि चित्तंबुकलक । नारविजुडु मान्तु ननि विचारिचि
"यिदि येमि देव! नी विकलभंगि । मदिलोन शोकंबु मानवय्यैदवु;
दाटरादननेल ? दाटुद; मब्धि । दाटि, सुवेलाद्रि दाटि, यालंक

विलम्ब के साथ (सुविधा से) उसे (पूरा) करनेवाला मध्यम है। कई बार (बार-बार) कराहते हुए (अनिच्छा से), प्रभु द्वारा आदिष्ट कार्य से हट भागनेवाला दुस्सेवक है। इन तीनों में (हनुमान) निस्सन्देह उत्तम (तथा) श्रेष्ठ सेवक हुआ। अनुराग से मेरे महत्कार्य को अनिलनन्दन ने अनुपम रूप से (सम्पन्न) किया। अतः इसका प्रत्युपकार मैं किस विधि से कर सकूँगा ? (अब) आलिगन (करना) ही मेरा उद्दिष्ट कार्य है।" (ऐसा) कहते तब उस विभु (राम) ने उसे गले से लगा लिया। इस प्रकार (हनुमान की) सराहना कर, इनसुत (सुग्रीव) के सुनते रहने पर, राम ने आंजनेय से कहा—"हे अनिलतनूज ! तुम्हारे अंबुधि पार कर, जनकजा को देख आने पर मुझे प्रसन्नता हुई। यहाँ मुझे जो समस्त मोद (प्राप्त) हुआ, पता नहीं, आगे और अन्त में (वह) कैसा परिणत होनेवाला है। पूछोगे कि वह (आशंका) क्यों ? वह (आशंका) यह है कि हे कपिनाथ ! अपार उदधि को लाँघने का उपाय (मार्ग), ॥ २० ॥

—कपिसेना को किस प्रकार (प्राप्त) होगा, यह सोच मेरा मन व्याकुल हो रहा है।" ऐसा कहने के पश्चात् सिर झुकाकर, मनुजेश (राम) कुछ नहीं बोले। (तब) रविज ने यह सोचकर कि श्रीरामदेव के मन की विकलता को दूर करूँगा, कहा—"यह क्या देव ! तुम, दूसरों के समान मन में दुःख को, क्यों नहीं छोड़ रहे हो ? क्यों कहते हो कि नहीं पार कर सकते ? देखो, भूपालक ! (हम समुद्र) पार करेंगे। अब्धि को

सार्धिंचि रावणु जंपि, लोकमुल । बाध मान्पेदमु भूपालका ! चूडु;
मुर्वीश ! कपुलेल्ल नुद्योगपरुलु । दोर्विभवाढ्युलु दुर्जयक्रमुलु;
वीरुंड राघवोर्वीनाथ ! नीकु । वारक यिब्भंगि वगव नेमिटिकि?
नुद्योगि वगुमु; समुद्योगि केंदु । सद्यःफलंबुलु सकलकार्यमुलु;
नुत्साहि यगुवानि कुलुकुदुरहितु ।लुत्साहरहितुन कुलुकरु गानि;" ३०
यनि यतंडिब्भंगि नाडु वाक्यमुलु । विनि हनुमंतुतो विभु डर्थि बलिके:
वेडेंद; गादेनि वेंडलु नयंप । वाडिमिनैननु वार्धि निंकितु;
"वेडेंद; गादेनि; बवनतनूज ! । कंधि दाटुट येंत गगनंबु नाकु ?
नदि येंत पनि? विनु मनिलनंदनुड! । पदिशिरबुलवानि पट्टणंबुनकु
नेन्निकोटलु ? बल मेंत ? वीक्षिप । नन्निटि गवनुलु नवि येव्विधमुलु?
कावलियुंडु राक्षसु लेंदरुंदु ? । भाविंप ददृगृहपंक्तुलेतेरुगु ?
चूचि वच्चितिवि कान चूचिन तेरुगु । नीचेत विनियेद, निक्कंबु सेपुम"
यनिन नंजलि मोड्चि यांजनेयुंडु । विनयोक्तु लेसग नव्विभुन—
किट्लनियें:

पारकर, सुवेलाद्रि को पारकर, उस लंका को जीतकर, रावण का वध कर, लोकों के कष्ट को दूर करेंगे। हे उर्वीश ! समस्त कपि उद्योग तत्पर (प्रयत्नशील) हैं, दोर्विभव (बाहुबल) से सम्पन्न है, दुर्जेय हैं। हे राजा राघव ! (तुम) वीर हो, तुम्हें इस प्रकार दुखी क्यों होना चाहिए ? (तुम) उद्योगी बनो। समुद्योगी (सम्यक् रूप से उद्योग करनेवाले) के लिए सभी कार्य सद्यः फलप्रद होते हैं। अहितू (शत्रु) उत्साही व्यक्ति से डरते हैं, उत्साहरहित से नहीं डरते।" ॥ ३० ॥

इस प्रकार के उसके वाक्यों को सुनकर हनुमान से प्रेम से विभु (प्रभु राम) ने कहा—"(समुद्र से मार्ग देने के लिए पहले) निवेदन करूँगा। नहीं तो अपने बाणों की गरमी से वार्धि (समुद्र) को सुखा दूंगा। नहीं तो (पुल) बाँध डालूँगा। हे पवनतनूज ! समुद्र पार करना मेरे लिए कौन बड़ा कार्य है ? वह है कितना काम ? सुनो अनिलनन्दन ! दसशिर वाले (रावण) के पट्टण के लिए कितने दुर्ग हैं ? (उसका) बल (सेना) कितना ? देखने पर उसके दुर्ग-द्वार किसने (और) किस प्रकार के हैं ? पहरा देनेवाले राक्षस कितने रहेंगे ? सोचने पर तत्-गृह-पंक्तियाँ किस प्रकार की हैं ? (तुम) देख आए हो अतः तुमने जो विधान देखा, (उसे) तुमसे सुनना चाहता हूँ। वास्तविकता बताओ।" (ऐसा) कहने पर अंजलि भरकर, आंजनेय ने विनयोक्तियों के शोभा देने पर, उस विभु से यों कहा—

हनुम श्रीरामुनकु लंकवैभवमु देलुपुट

"नुडुगनि मदधार लौलुकुचु नुंड । गड्डु नोप्पु पर्वताकारंबुलगुचु
रौद्रंबु मोमुल रंजिल्लुचुंडु । भद्रदंतावळप्रततु लग्गलमु; ४०
पेक्कायुधंबुल वेरिगि चूड्कुलकु । नक्कजंबै घोरमै कनुपट्टु
गोंडुगुलु वडगलु गोमरारु पेक्कु । नडियालमुलु डेक्कियंबुलु ग्राल
भानुबिंब प्रभापटलंबुपगिदि । मानैन मणिदीप्त महिम वेलुंगु
रथिक सारथि मनोरथमुलै युंडु । रथमु लेक्कुडु दशरथराजतनय !
घनवीररसवार्धिकरडुलो यनग । दनरारि यैंतयु दरुचु वन्नियल
मेरसि चूड्कुलकुनु मिरुमिट्लु गोलुप । वरलिन हेषारवंबुलु सेलग
हरिघोटकंबुलनैन वेगमुन । हरियिंप नोपिन हरिशक्ति गलिगि
हरुलेंतयुनु मनोहरमुलै युंडु । हरिवाजुलनु मेच्चनट्टि वग्गलयु;
पिडुगुल तोड ब्रब्बिन नल्लमोगुळु । लडरि दानवरूपुलय्येनो यनग
नेर्चि रौद्रंबुतो नेनसि यंगंबु । गूर्चिन नल्लनि कोंडलो यनग ५०
गादेनि हरुडु म्रिगिननाटि गरळ । मीदैत्यकोटियै येसगेनो यनग

हनुमान का श्रीराम को लंका का वैभव बताना

"निरन्तर मद की धाराओं के स्रवित होते रहने पर, अधिक शोभायमान, पर्वताकार वाले, रौद्र (भाव) के मुखों पर रंजित होनेवाले भद्र दन्तावलियों के समूह अधिक हैं। ।। ४० ।।

हे दशरथराजतनय ! अनेक आयुधों से सम्पन्न, देखने में आश्चर्यप्रद तथा भयंकर दीखनेवाले छत्र, पताकाएँ, सुशोभित कई चिह्न (तथा) ध्वजों से विराजमान, भानुबिम्ब के प्रभा-पटल के समान शोभायमान, मणिदीप्ति की महिमा से प्रकाशित, रथिक, सारथियों से मनोरथ (मनोवेग वाले) बने रथ असंख्य हैं। महान् वीररस की वारिधि के घनीभूत पिंड हों, इस प्रकार शोभायमान होकर, बहुलवर्णों से चमककर, दृष्टियों को चकाचौंध करते हुए, प्रशस्त हेषारव (हिनहिनाहट) के व्याप्त होने पर, हरि-घोटकों को भी वेग से जीत सकने की हरि-शक्ति से युक्त हो, हरि (अश्व) अधिक मनोहर बने हुए हैं। हरि-वाजियों को भी पसन्द न (मात) करनेवाले (ऐसे अश्व) बहुत अधिक हैं। हे देव ! राघव-धराधीश (राजाराम) ! वहाँ के राक्षसों की गिनती नहीं हो सकती। वे ऐसे हैं मानों गाज (बिजलियों) से व्याप्त काले मेघों ने उत्कर्ष के साथ दानव रूप धारण किया हो, (अथवा) रौद्र से उत्कर्ष को प्राप्त काले पहाड़ों ने ही शरीर धारण किया हो, ।। ५० ।।

ब्रळयकालमुनाटि पावक धूम। मलवड राक्षसु लैरोंको यनग
गलिगिनयट्टि राक्षसुलकु संख्य। गलुगदु; देव! राघवधराधीश!
दट्टमै यट्टुळ्ळ दनरि चूपट्टु। निट्टिककोटयु निरवैन ग्राति
कोटयु बोंडवुन गोंमरोंदु निनुप। कोटयु नट युक्कुगोटयु गंचु
गोटयु यरि वेंडिकोटयु बसिडि। कोटयु नन नेडु कोट लोप्पारु;
गालुनि वक्षंबुकरणि बल् पेक्कु। मेलैन तलुपुल मेंऱसि येंतयुनु
नक्कोट लन्निटियंदुनु जूड। मिक्किलि दीप्तुल मिक्कुटंबगुचु
नखिलरत्नमुल मेलैन वाकिळ्ळु। नखिलावनीनाथ! यरय नाल्गेसि;
वरमंत्रविधुल दिव्यंबु लैनट्टि। शरचापचयमु लसंख्यलैयुंडु; ६०
नाकोटचुट्टनु नखिललोकेश!। भीकरमकरसंभृतमुलै परगु
नालुगगड्तलु नाल्गुदिक्कुलनु। जालंग बाताळसमिति नोप्पारु;
देव! यानालुगु तेरुवुलयंदु। गावलि पेक्कु राक्षसकोटु लुंडु;
नमितशिलाबाणयंत्र जालमुलु। दमतमयंतन दायल जंपु;
धात्रीश! यिंटिंट दप्पक यग्नि। होत्रमुलुन्नवि योंकार मेंसग"
ननवुडु विनि यत डतिचोद्यमंदि। मनमुन जिंतिप मारुति यनियें:

—नहीं तो हर ने जिस गरल का पान किया था, वही यह दैत्यकोटि बनकर विलस रहा हो (अथवा) प्रलयकाल का पावक-धूम ही शोभा से राक्षस बना हो। शोभा से दिखाई पड़नेवाले अग्रगृहों (जो युद्ध के समय बनाए जाते हैं) से युक्त ईंटों का दुर्ग है, (उसके बाद) सुस्थिर बना पत्थरों का दुर्ग है, लंबान में विराजमान लोहे का दुर्ग है, (उसके बाद) वहाँ फ़ौलाद का दुर्ग, काँसे का दुर्ग, फिर रजत का दुर्ग (और) सुवर्ण का दुर्ग है। इस प्रकार सात दुर्ग (प्राकार) शोभा देते हैं। हे अखिल-अवनीनाथ! उन सभी प्राकारों में काल (पुरुष) के वक्षस्थल के समान अनेक श्रेष्ठ किवाड़ों से प्रकाशित (तथा) देखने में अधिक दीप्तियों के उत्कर्ष से युक्त, अखिल रत्नों से युक्त श्रेष्ठ चार द्वार हैं। वर-मन्त्रविधियों से दिव्य बने शर (और) चाप के असंख्य समूह हैं॥ ६०॥

हे अखिलेश! उस दुर्ग के चौतरफ़, चारों दिशाओं में, भीकर-मकर संभृत (पूर्ण) हो विलसित चार परिखाएँ हैं, जो पाताल-समिति (समूह) (सम) शोभित हैं। हे देव! उन चारों मार्गों पर अनेक राक्षस-समूह पहरा देते रहते हैं। (वहाँ) अमित शिला-वाण (चलानेवाले)-यन्त्र-जाल (समूह) हैं जो अपने आप शत्रुओं का संहार करते हैं। हे धात्रीश! (वहाँ) घर-घर अवश्य अग्निहोत्र है, जो ओंकार से युक्त हैं।" ऐसा कहने पर, सुनकर, वह (राम) मन में चिन्ता करने लगे तो मारुति ने

"सत्यंबु धर्मंबु शौचंबु दययु । नत्यंतशून्यंव यसुरुलयंदु"
ननि पल्कुटयु 'साध्यमौ' ननि लंक । जनपति मुदमंद, जतुरुडै पलिकें:
"नवि यन्नि यिट्टिट्टिवनि यॆन्ननेल । यवनीतलेश ! महावैभवमुन
वारक सेनतो वाह्याळि वेडलि । या रावणुंडु नित्यमु दोड्डुसूचु ७०
वालिन मदमुन वडि गय्ययुनकु । गालुदुव्वुचुनुंडु गमलाप्तवंश !
यग्गलिकयु लावु नडरु वैरुलकु । लग्ग वट्टगरादु लंक भूनाथ !
जलवनकृतिम स्थलशैलदुर्ग । मुलु नालुगुंडु समुद्रंबुलोन
नदि येल्लकालंवुनंदुनु; गानि । कदियवोवग रेवु गानंगरादु;
मृत्युजिह्वनु वोलि मॆरुगुलतोडि । यत्युग्रशूलंबु लनिशंबु वट्टि
कडुनुग्र दैत्युलु गाचियुंड्डुरु । पडुमटिवाकिट वदिवेलसंख्य;
लक्षदैतेयु लालंकापुरंबु । दक्षिणद्वार मुद्धति गातु रॆप्पु;
डट दूर्पुवाकिट नमरारि युंडु । वटुतर चतुरंग वलसमेतमुग;
नगणित शस्त्र सहायमैयुंडु । दग नॊक्कलक्ष युत्तरपुवाकिटनु;
ग्रालु राक्षसुलु लक्षयु निर्वदेनु । वेलु दत्पुरमध्यवीथि नुंड्डुरु; ८०
आलंक मीकृप नर्ककुलेश ! । ये लील जॊच्चितिनित गैकॊनक;

कहा—"(किन्तु) असुरों में सत्य, धर्म, शौच (एवं) दया का अत्यन्त अभाव है।" ऐसा कहने पर, यह कहा कि "(तब तो) लंका को जीत सकते हैं।" जनपति (राजा) के मुदित होने पर चतुरता से (हनुमान ने) कहा—"हे अवनीतलेश ! उन सब का कहाँ तक वर्णन करूँ ? महावैभव के साथ, नित्य सेना के साथ, वह रावण सैर करने निकलता है (और) नित्य निरीक्षण करता है ॥ ७० ॥

हे कमलाप्तवंशज ! अधिक मद से वह झट दूसरों को कलह के लिए ललकारता रहता है। हे भूनाथ ! महत्त्व, सामर्थ्य से अतिशयता को प्राप्त लंका शत्रुओं के लिए असाध्य है। (वहाँ के) समुद्र में जल, वन, कृत्रिम स्थल, शैल के चार दुर्ग सदा रहते हैं किन्तु नियराने पर घाट दिखाई नहीं देते। मृत्युजिह्वा के समान चमक से युक्त अत्युग्र शूलों को, सदा धारण कर, अधिक उग्रदैत्य, संख्या में दस हज़ार पश्चिमद्वार की रक्षा करते रहते हैं। उस लंकापुर के दक्षिणद्वार की एक लाख दैत्य सदा औद्धत्य से रक्षा करते रहते हैं। वहाँ पूर्वद्वार पर पटुतर-चतुरंग बल समेत रावण रहता है। अगणितशस्त्र-सहाय से युक्त एक लाख (राक्षस) उत्तर के द्वार पर स्थित रहते हैं। उस पुर की मध्य-वीथि में सवा लाख समर्थ राक्षस रहते हैं ॥ ८० ॥

हे अर्ककुलेश ! आपकी कृपा से इन सबकी परवाह किए बिना सलील

वडि जौच्चि यट्टळ्ळु वडि गूलदन्नि।यडरि कोटलु द्रोचि यगडितल् पूड्चि
यच्चेरुवुग लंक यंतयु गाल्चि । वच्चि मीश्रीपादवनजमुल् गंटि;
नडिगि यक्कडिकार्य मंतयु विंटि; । तडय नेटिकि? नब्धि दाटुदमिक;
दटिनयप्पुडे दशकंठु लंक । मीटि वैचेदरु व्रेलिमिडिलोन गपुलु"
अनवुडु रघुरामुडर्कजु जूचि । "यिनसुत! यालस्य मेटिकिनिक?
निदि शुभलग्नंबु; ई मुहूर्तमुन । गदलुट कार्यंबु कपिराज! मनकु;
नायस्त्रमुनु दक्क नरभोजनुनकु । नेयुपायमु गलदेंदु दागिननु ?"
अनि नीलु देस जूचि यर्कवंशजुडु । विनु मनि बुद्धिगा वेस जेप्पे नपुडु
"कडु निपुदनमुनु गडु निर्मलंबु । गडुतीपुगल नीरु गलुगंग जूचि ९०
परिपक्वफलमुल भरितंबुलैन । तरुवुल नीडलु तरचैन त्रोव
नडवुमु मुंगलि नलि जौरनीक; । वडि बरिकिंपु मौव्वनि लातिवारि"
ननिन नारामुनि यानतिनेल्ल । विनि नीलु डट्ल काविचे शीघ्रमुन;

सुग्रीवुडु कपिसेनल वेडलिंचुट

नप्पुडु सग्रीवु डखिलवानरुल । दप्पक राविंचि दंडेत्त बनिचे;

मैंने (लंका में) प्रवेश किया। झट प्रवेशकर अग्रगृहों को झट लात मार गिराकर, औन्नत्य से प्राकार गिराकर, परिखाओं को पूर दिया (और) आश्चर्यप्रद रूप से समस्त लंका को जलाकर, (वापस) आकर आपके श्रीचरणकमलों के दर्शन किए हैं। पूछकर वहाँ के समस्त कार्य को सुना है। अब देरी करना क्यों? अब समुद्र पार करेंगे। इस गहन (समुद्र) को पार करते ही दशकण्ठ की लंका को कपि पलभर में मिटा देंगे।" ऐसा कहने पर रघुराम ने अर्कज को देख (कहा)—"हे इनसुत! अब विलम्ब क्यों? यह शुभ लग्न है। हे कपिराज! मुहूर्त पर चल पड़ना हमारे लिए (उचित) कार्य है। कहीं भी छिप जाए, उस नरभोजन वाले (राक्षस) के लिए मेरे अस्त्र को छोड़ दूसरा कौन-सा उपाय है?" तब नील की तरफ़ देखकर अर्कवंशज (राम) ने शीघ्र समुचित रूप से कहा—"अधिक मनोहरता, अधिक निर्मलता (तथा) अधिक माधुर्य से युक्त जल, ॥ ९० ॥ —(तथा) परिपक्व-फल-भरित तरुओं की छायाओं के प्राचुर्य वाले मार्ग पर (अन्य) रेणु को भी स्थान न देते हुए, (तुम) आगे-आगे चलो। झट से अहितू शत्रुओं का परिशीलन करते रहो।" ऐसा कहने पर राम के समस्त आदेश को सुन, नील ने शीघ्र वैसा ही किया।

सुग्रीव का कपिसेनाओं का प्रस्थान कराना

तब सुग्रीव ने समस्त वानरों को अनिवार्यत: बुलाकर आक्रमण की

बनिचिन नंदंद पटुरभसमुन । घनगुहलंदुंडि कपिसेन वेंडले;
भूरिपदाहति भुवनंबु गलग । घोर रावंबुल गुहलु घूर्णिलल
वीरगर्जनमुलु वीरहासमुलु । वीरनादंबुलु वैस निंगि मुट्ट
बेल्लुगा गोंदरु पेंडबोब्बलिड्चु । द्रुळ्ळुचु बटुशक्तितो दाटुवारु;
गोंदरु पंडिन कुजमुलु मूपु । लंदिडि नमलुचु नरिगेडुवारु;
'रावणुतो गूड राक्षसप्रतति । नेविंधबुननैन नेमे चंपेदमु १००
रामभूपालक ! रणमुन' ननुचु । रामुनि मुंदर. रागिल्लुवारु;
गेरलि पै नेगुरुचु गेक वैचुचुनु । वेरवार दोकलु विसरि याडुचुनु
जेच्चेर बर्वतशिखरबुं लेक्कि । यिच्च गोंदरु बोब्बलिडुवारुनगुचु
नप्पुडु कपिवीरु लंदरु जेलगि । रप्परमेश्वरु डानंदमोंद;
नारवंबुन म्रोसे नाकाशविवर; । मारवंबुन भूमि यट्टिट्टु वडियें;
नारवंबुन बेल्च नद्रुलु वणके । नारवंबुन म्रोंगे नष्ट दिग्गजमु;
लारवंबुन भारमय्यें शेषुनकु; । नारवंबुन गूर्म मणचें शिरंबु;
निटु सेन नडवंग नेगसिन धूळि । पटलंबु मिन्नंदे बहुवर्णमुलनु
आरवंबुन भारमै यिल नेंसगु । तोरंपु निश्वासधूमंबु लनग;

आज्ञा दी। आज्ञा देने पर जहाँ-तहाँ की बड़ी गुफाओं से कपिसेना पटु रभस (संरंभ) से निकल पड़ी। (उस कपिसेना के) भूरि पदाघात से भुवन विकल बना, घोर आरव (गर्जन) से गुफाएँ घूर्णित होने लगीं। वीर गर्जन, वीर हास (तथा) वीर नाद झट से आकाश को छूने लगे। (उनमें) कुछ अधिक महानाद करते हुए, इठलाते हुए पटु शक्ति से छलाँगें भर रहे थे, कुछ पके वृक्षों को कन्धों पर लादकर, (फल) चबाते हुए जा रहे थे, कुछ राम के समक्ष प्रेम से यह कहते जा रहे थे कि "हे रामभूपालक ! रण में रावण के साथ राक्षस-समूह को हमीं किसी भी प्रकार से मार डालेंगे।" ॥ १०० ॥

विजृंभित हो ऊपर उछलते हुए, चिल्लाते हुए, उपाय से पूँछ हिलाते-खेलते हुए, झट से पर्वत-शिखरों पर चढ़कर, चाहकर कुछ (वानर) गर्जन कर रहे थे। तब वह परमेश्वर (राम) आनन्दित हों, इस प्रकार समस्त कपिवीर विजृंभित होते रहे। उस गर्जन से आकाश-विवर गूँज उठा, उस रव से भूमि डोल उठी, उस रव से अतिशयता से पर्वत काँप उठे, उस रव से अष्टदिग्गज धँस गए, वह रव (आदि) शेष को भारी लगा, उस रव ने कूर्म के शिर को दबाया। इस प्रकार से सेना के चलने पर उड़ा धूल-समूह वहुवर्णों से युक्त हो, आकाश में व्याप्त हो गया, जो ऐसा लगा मानों उस रव के भारी होने पर पृथ्वी से निकलनेवाला बहुल-निश्वासरूपी धूम

नप्पुडु मुंगलि यै नीलुतोड । नोप्पेंडु सैन्य मत्युग्रतुंडमुग ११०
निरुदिक्कुलंदुनु नेपारि नडच्चु । तरुचरबलमु लुद्धतपक्षमुलुग
स्फुरणमोप्पग मध्यमुन वच्चु राम । धरणीतलेशुडु तन यात्मगाग
गडिमि सोंपारि चक्कग वेन्क गाचि । वडि वच्चु सैन्यंबु वालंबुगाग
नुरगपाशंबुल नोंदंग नुन्न । तरणिवंशजु नवस्थलु तोलंगिप
गरुडुंडु भूस्थलि गैगोनि नडचु । करणि नोप्पारे मर्कटमहासेन;
सरि प्रजंघुंडु गेसरि दधिमुखुडु । बरुवडि संदडि बाय द्रोवगनु
विरळमै श्रीरामु वेल्लुव नडव । बरम संतोष संभरितात्मुलगुच्चु
गवयुंडु दारुंडु गंधमादनुडु । बवमानसूनुंडु बनसु डंगदुडु
शरभुंडु नलुड्डुनु जांबवंतुंडु । हरुडुनु मैंदुंडु नादिगागल्गु
वनचरपतुलुनु वडि नेगुदेर । जनुदेंचि रघुपति सह्यपर्वतमु १२०
गनि यंदु विडिसे लक्षणसमेतमुग; । घनततो नप्पुडग्गलमुगानंदु
बेंपारु वनमुल बेनुतटाकमुल । निंपारु नीडल नेंडलेनि तरुल
विडिदलल् गैकोनि वेलय नब्बलमु । विडिसे सुग्रीवुंडु विडियंग बनुप;
मारुनाडु नेप्पिटिमाड्कि लक्ष्मणुडु । तड्रिमि सेनयु दानु दद्दयु नडव

हो । तब आगे-आगे चलनेवा लेनील के साथ वह सेना (इस प्रकार) लगी कि (अग्रभाग में स्थित नील) अत्युग्र तुंड है, ।। ११० ।।

दोनों पार्श्वों में शोभा से चलनेवाला तरुचर (वानर)-बल ही उद्धत पक्ष (पंख) है, अधिक स्फूर्ति से मध्यभाग में चलनेवाला राजाराम ही आत्मा है, साहस की शोभा से युक्त हो अच्छी तरह पृष्ठभाग की रक्षा करते झट आनेवाली सेना ही पूँछ है, उरग (सर्प)-पाशों में फँस जानेवाले तरणिवंशजों (सूर्यवंशी) की दुरवस्थाओं को दूर करने के लिए मानों गरुड़ भूस्थली पर चल रहा है । इस प्रकार मर्कट-महासेना शोभायमान हुई । प्रजंघ, केसरी, दधिमुख (आदि) क्रम से भीड़-बळभड़ को हटाकर मार्ग बना रहे थे । (इस प्रकार) अनुपम श्रीराम की (सेना-रूपी) बाढ़ के चल पड़ने पर, परम-सन्तोष से भरित आत्मा वाले होते हुए गवय, तार, गन्धमादन, पवमानसून, पनस, अंगद, शरभ, नल, जाम्ववान, हर, मैंद आदि वनचरपतियों के शीघ्र चलने पर, रघुपति ने आकर सह्यपर्वत को, ।। १२० ।।

—देख वहाँ लक्ष्मण समेत हो, पड़ाव डाला । सुग्रीव के पड़ाव डालने की आज्ञा देने पर वह सेना तब वहाँ वहुलता से शोभायमान वनों, वड़े-वड़े तडागों, तरुओं की मनोहर तथा घनी छायाओं में स्कन्धावार डाल विराजमान हुई । दूसरे दिन सदा की तरह लक्ष्मण के पीछे-पीछे सेना

दोरलु महीपति द्रोचि येगगनु । धरणि ग्रक्कदलंग दरुचरुल् नडव
नुरुवीररसमुन नुप्पोंगि पोंगि । भरितसत्त्वंबुन बरपोंदि पोंदि
तनुकांतिकरडुल दनरारि यारि । घनमैन म्रोत नाकस मंदि यंदि
मुनुकोनि वरशैलयुल नोप्पि योप्पि। मनुवंशचंद्रुचे मदि नुब्बि युब्बि
यासमुद्रमुपेंपु नडगिंप नडचे । भासुरंवगु कपिबलसमुद्रंबु;
धैर्याढ्युलामहीधवु लभ्रमध्य । सूर्यचंद्रुलमाड्कि शोभिल्लिरंत १३०
नदुललो जोच्चि वानरसेन नडव । नेंदुरु दोट्टुचु नुब्बे नेसगि यानीरु;
सह्याद्रिमलयाद्रिसंदुल नडव । सह्यमै कपिबलसमितितो बोडमु
चिरुगालिचे दरुशेखर प्रततु । लोरुपैन कोम्मलोडोटितो रासि
यगचरावळिमीद नलरुलु राल्चे; । दग नट्टिदय कादे तलपोसिचूड
वनलक्ष्मि या रामवल्लभु जूचि । येनय बुष्पांजलु लीकेल मानु ?
नप्पुडु कपिवीरु लय्यद्रियेडल । नोप्पेडि कोलकुल नुरुवडि जोच्चि
यानिर्मलोदक मारंग ग्रोलि । यानंदमुन बोंदि यंदंद कदिसि
कमनीयमृदुकरकमल युग्ममुल । गमलमुल् द्रुंतुरु गमुलुगा बट्टि

और स्वयं (राम) निकल पड़े। सरदार और महीपतियों के आगे-आगे चलने पर, उन्हें ढकेलते हुए, धरणि विचलित हो, इस प्रकार तरुचर (वानर) चलने लगे। भासुर बने कपि-बल (सेना) रूपी समुद्र ने वीररस से उमड़-उमड़कर, भरित सत्त्व से विस्तृत हो-होकर, शरीर की कान्ति के संपुटों से शोभित हो-होकर, महान् घोष से आकाश को छू-छूकर, आगे वर-शैलों से शोभित हो-होकर, मनुवंश-चन्द्र (राम) के कारण मन में फूल-फूलकर, उस (सच्चे) समुद्र की शोभा को मात किया। वे धैर्यसम्पन्न महीधव (राजा) अभ्र (मेघ)-मध्य (स्थित) सूर्य-चन्द्र के समान शोभित हुए। तब, ॥ १३० ॥

—नदियों में प्रवेशकर वानरसेना के चलने पर, मार्ग के रुकने से (नदी का) जल उमड़ उठा। सह्याद्रि (तथा) मलयाद्रि के मध्यभाग में चलने पर, कपिबल-समिति (समूह) के साथ उत्पन्न मन्द पवन के कारण तरुशेखर (श्रेष्ठवृक्ष)-प्रततियों (समूहों) की विशाल शाखाओं ने आपस में रगड़ खाकर, अगचर-समूह पर फूल वरसाए। सोचकर देखने पर न्याय (औचित्य) तो यही है न! रामवल्लभ को देखकर, आनुकूल्यता के कारण वनलक्ष्मी पुष्पांजलियाँ दिए बिना कैसे रहेगी? तब कपिवीर उस अद्रि (पर्वत) पर शोभायमान सरोवरों में बड़े वेग से प्रवेशकर, उस निर्मल-उदक (जल) को जी भर पीकर, आनन्दित हो, जहाँ-तहाँ नियराकर, कमनीय मृदु कर-कमल-युग्मों से, गुच्छों के गुच्छे पकड़कर कमल (के फूलों) को

"कमलाकरंब! माकमलाप्तकुलुडु। कमलारि युद्धति गमलमुल् द्रुंचु
क्रममोप्पगा दशकंधरु वदन। कमलमुल् द्रुंचु" नन् करणि
जेलंगि; १४०
"तोगलु दट्टितुयु दुष्टारिसतुल। तोगलु जानकि यिक दोलगंग वैचु
दोगलार! यिटमीद दोग यिट्टि" दनुचु। दोगलेलुल जिदिमि वैतुरु
पेच्चुपेरिगि;
बिरुदुलै यसुरुल प्रेवुलु वेरुकु। करणि बेकुंदुरोलि घनमृणाळमुल;
निट्टु विनोदिंचुचु नेल्लवानरुलु। दटमुलमीदि कुद्धतशक्ति दाटि
गिरुलेक्कि पणकुल ग्रिक्किरियंग। वेरल तेनिय लानि पेन्नीरुग्रोलि
कडुनुत्सहिंचि युत्कटबलाधिपुलु। नडचिरि वानरनायकोत्तमुलु।

श्रीरामुडु महेंद्राद्रि जेरुट

इनवंश्युडपुडु महेंद्राद्रि येक्कि। यनतिदूरंबुन नंबुधि गनियेः;
गरिमकरंबुलु करिसमूहमुलु। दरगलु गुर्रंपुदळमुल पेल्लु
गमठकर्कटमुलु घनरथावळुलु। समदजलार्भकसमिति भटाळि

तोड़ते हैं मानों यह कह विजृंभित हो रहे हों कि "हे कमलाकर! हमारा कमलाप्त (सूर्य)-कुल वाला, औद्धत्य से कमलारि (चन्द्र) के कमलों को नष्ट करने के समान, क्रम से दशकंधर के वदनकमलों को तोड़ डालेगा।" ॥ १४० ॥

वे उद्धत हो समस्त कुमुदों को नष्ट कर देते हुए मानों कह रहे हों कि "दुष्ट-अरि-सतियों को दुःख देकर, जानकी के दुखों को दूर कर देंगे। हे कुमदो! आगे उन्हें मालूम हो कि दुःख क्या होता है।" बिरुद वाले होकर, असुरों के आँतों को खींच निकालने के समान क्रम से बड़े मृणालों को उखाड़ते हैं। इस प्रकार विनोद करते हुए, समस्त वानर, तटों पर उद्धत शक्ति से लाँघकर, श्रेष्ठ जल पीकर, अधिक उत्साही हो, उत्कट बल के अधिप वानर-नायकोत्तम (आगे बढ़) चले।

श्रीराम का महेन्द्राद्रि पहुँचना

तब इनवंश (वाले) ने महेन्द्राद्रि चढ़कर, अनति (थोड़ी) दूर से अंबुधि को देखा। करि (हाथी बराबर) मगर ही करि-समूह हों, लहरें ही अश्वदल की बाढ़ हो, कमठ (कछुए) और कर्कट (केकड़े) ही घन-रथ समूह हों, समद (मस्त) जलार्भक (मत्स्य)-समिति (समूह) ही भट-समूह

पोलुपारु फणिफणंबुलु केतनमुलु । ललि जोऽमीलवालमुलडिदमुलु
१५०
जलदुरुमीनाळि चामरप्रतति । तलकोन्न नुरुवु सितच्छत्रसमिति
पेनुपोंदु घोषंबु भेरीरवंबु । विनुतिप वीरंबु वीररसंबु
गा 'नन्नुजोच्चिन कडिदिरावणुनि। नेनेल चंपंग नित्तु' नन्माड्कि
दत्तरिन क्रूरसत्त्वस्थिति वेंचि । तन केदुरै महोद्धति नोप्पुदानि
गनि वेंऽगंदि यागांभीर्यधनुडु । वनधितीरमु जेर वच्चे राघवुडु;
प्रकटंबुगा सर्वबलमु गूडुटकु । नोक मंचि चंद्रकांतोपलस्थलिनि
जलनिधि प्रापुन जरियिंचुचुन्न । वलितंपु रावणपाठीन वरुनि
ननुपमंबगु तन यंप गालमुन । गोनि तिवुचुटकुनै कूर्चुन्नकरणि
नासीनुडै यप्पुडर्ककुलेशु । डासन्नुडै युन्न यर्कजु वलिकै;
"वच्चिचति मिम्महावारिधि जेर; । नेच्चोट घटियिंचु निदि दाट
मनकु ? १६०
नायुपायंबु नी वात्म जिंतिपु; । मीयगचरकोटि नेंदु वोनीक
यिपेनयेड विडियिपंग वनुपु । सोंपारगा जोटु चूपंगवलयु"

हो, शोभायमान फणि-फण (सर्प-फन) ही केतन हों, मोटे-मोटे मीन के वाल (पूंछ) ही करवाल हों, ॥ १५० ॥

चंचल-उरु (श्रेष्ठ)-मीनावलि ही चामर प्रतति हो, ऊपर उठा फेन ही सित-छत-समिति हो, वढ़ता हुआ घोप (गर्जन) ही भेरी-रव हो, विनुत नीर ही वीर-रस हो, इस प्रकार मानों यह कहते कि "मेरी शरण आए हुए वली रावण को मैं क्यों मारने दूंगा ?" शोभित क्रूर-सत्त्व-स्थिति से युक्त हो, अपने समक्ष महा-उद्धति से विराजमान (समुद्र को) देख आश्चर्य-चकित हो, वह गाम्भीर्य-धनी राघव वनधि (समुद्र) तीर पर पहुंचा । प्रकट रूप से सर्वसेना को एकत्रित करने योग्य एक अच्छी चन्द्रकान्त-उपल (शिला)-स्थली पर (राम) इस प्रकार बैठ गए मानों जलनिधि की शरण में विचरण करनेवाले बली रावण-रूपी श्रेष्ठ मत्स्य को अपने अनुपम वाण-रूपी वंसी से पकड़ने के लिए बैठे हों । (इस प्रकार) बैठकर तव अर्ककुलेश (सूर्यवंश के राजा) ने निकटस्थ अर्कज (सुग्रीव) से कहा—"इस महावारिधि के पास पहुँच गए । इसे किस स्थान पर पार किया जा सकता है ? ॥ १६० ॥

तुम मन से उस उपाय के वारे में चिन्तन करो । इस अगचर-कोटि को कहीं जाने न देकर मनोहर स्थान पर पड़ाव डालने के लिए भेजो । शोभा से (योग्य) स्थान (उन्हें) वताने चाहिए ।" (ऐसा) कहकर

ननि राघवेश्वरु डर्कजु बनुप । निनसुतुंडुनु नीलु निटुसेय बनिचें;
नीलुंडु नप्पुडु निरतंबुगाग । वालिनसेनल वडि विडियिंचें;
"वनचररवमु नावलननु गलिगें; । वनचररवमु नीवलननु गलिगि
युनिकि सहिंतुने योसमुद्रंब !" । यनि यप्पु डावार्धि नदलिचुमाड्कि
विडियु वानरसेन वेंडलेडु म्रोत । यडचें बेंल्लैन या यंबुधि म्रोत;
नट रेंडुवेलंबुलैं यापयोधि । तटवनभूमुल दरुचरुल् विडिय
नप्पुडु रामु डेकांतंबुनंदु । नोंप्प लक्ष्मणुनितो नोंय्यन बलिकें:
"सौमित्रि! कंटें यीजलनिधि नेंलवु । नेमेंयि दुद निश्चयिंपंग वच्चु !
१७०
निदि यित यितनि येंन्नंगरादु; । तुदि लेदु गद मनोदुःखवारिधिकि!"

सायं संध्यादि वर्णन

ननि रामविभुडु शोकांबुधिलोन । मुनुगुचुंडग मूडुमूर्तुलु गलिगि
यतनितोडिदें लोक मनिन चंदमुन । नतिवेगमुन निनु डपराब्धि ग्रुंकें;
निनुडु ग्रुंकिनयप्पुडेंल्ललोकमुलु । पेंनुपेदि मणिलेनि पेंट्टियबोलें

राघवेश्वर के अर्कज को आज्ञा देने पर इनसुत ने वैसा करने के लिए नील को आज्ञा दी। तब नील ने आसक्ति से अतिशय सेनाओं को (उचित स्थान पर) ठहराया। "वनचर-रव मुझसे उत्पन्न हुआ। हे समुद्र! तुमसे भी वन (जल)-चर-रव का उत्पन्न होते रहना मैं क्या सह सकूँगा?" मानों ऐसा उस वारिधि को डाँटने के समान, पड़ाव डालनेवाली वानरसेना के कारण उत्पन्न घोष ने अंबुधि के अत्यधिक घोष को दबा दिया। तब दोनों (समुद्रों) के विशाल बनने पर, उस पयोधि के तीरस्थ वनभूमियों में तरुचरों ने पड़ाव डाला। तब राम ने एकान्त में शोभा से झट लक्ष्मण से कहा—"हे सौमित्र! देखा है न, इस जलनिधि के अस्तित्व को! इसके अन्त का कैसे निश्चय कर सकें? ।। १७० ।।

इसके वैशाल्य की कल्पना नहीं कर सकते। मनोदुःख-रूपी वारिधि का भी कोई अन्त नहीं है न!"

सायं-सन्ध्या आदि का वर्णन

(ऐसा) कह विभु राम शोकांबुधि में डूबने लगे (तब) तीन मूर्तियों[1] (रूपों) से युक्त सूर्य भी यह समझकर कि उसके (राम के) साथ लोक (जीवन) है, अतिवेग से अपराब्धि (पश्चिम समुद्र) में डूब गया। सूर्य के डूब जाने पर समस्त लोक बुद्धि खोकर, मणिरहित मंजूषा के समान,

---

१. ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर।

मनसिजानल तप्तमानसु रामु । गनुगोनि तनुपुगा गप्पेंडुकोर्कु
जेलुवोंद नपराब्धि चेंगाविचीर । नेलमि देच्चिन क्रिय नेरसंज योप्पे।
'निनवंशचंद्रुचे निंद्रारिमोयु । लनयंबु निट्टुवाडु' ननिन चंदमुन
दलमुल बिगुवेल्ल दरिगि यंदंद । ललि दक्कुचुनु गमलंबुलु मोगिडे;
जेलुवुगा रामुनि शीतलक्रियकु । नलिरेगि याशांगनलु गूड वैचु
ललित तमालपल्लवरासुलनग । गलयंग देसल जीकटि पर्वजोच्चे;
१८०
'दिननाथकुलु देवि देच्चि मोदिंचु । दनुजनाथुनि मोमुदम्मुलु विरियु'
ननि नगियेंडिमाड्कि नप्पुडंदंद । तनरारगा गुमुदंबुलु विरिसे;
'श्रीरामदेवुनि शितमार्गणमुल । नारत्नमुलु दक्क नंबुधि यिकि
यीरुपमुन नुंडु निक' ननुमाड्कि । दारकावळिचेत दनरारे मिन्नु;
आनिशीथिनि रामुनंगतापंबु । कै निबिडंबुगा नर्मरिचियुन्न
सारंपु मल्लिकाशय्यना नोप्पि । तारलु प्रतिबिंबितमुलय्येनब्धि;
'विरहंबुचे रामविभुडुनु जिक्के; । नरिदिये विरहुल मौटमे' मनुचु
देसलकु जेप्पेंडि तेरगुन बासि । वस मरि वेस जक्रवाकमुल् सनिये;

हो गए। लालिमा से पूर्ण सन्ध्या ऐसे व्याप्त हुई मानों मनसिज-अनल (विरहाग्नि) से तप्त मानसवाले राम को देखकर, अपराब्धि प्रीति से, उसे शीतल बनाने के लिए, मनोहरता से काषाय वस्त्र लाई हो। निचले भाग के ऐंठ के कम होने पर, जहाँ-तहाँ लालित्य को खोकर, कमल मुकुलित हो गए मानों यह बता रहे हों कि "इनवंशचन्द्र (राम) के हाथ इन्द्रारि (रावण) के मुख सदा इस प्रकार मुरझा जाएंगे।" सुन्दरता से राम की शीतलक्रिया (शीतलोपचार) के लिए विजृंभित होकर, आशा (दिशा)-अंगनाओं ने ललित-तमाल-पल्लव-राशियाँ बिखेर दी हों, इस प्रकार दिशाओं में अन्धकार फैलने लगा ॥ १८० ॥

"दिननाथकुल (वाले राम) की देवी को ले आकर, मुदित होनेवाले दनुजनाथ के मुखकमल कुम्हला जाएँगे" (ऐसा) सोच हँसने के समान तब जहाँ-तहाँ शोभा से कुमुद विकसित हुए। तारकसमूह से आकाश इस प्रकार शोभित हुआ मानों "श्रीरामदेव के सित-मार्गणों (बाणों) से, सूखे हुए समस्त अंबुधि का रूप इसी प्रकार रहेगा जिसमें रत्न ही बचे रहेंगे।" उस निशीथ को राम के अंगताप (को दूर करने) के लिए सान्द्र रूप से सजाए गए मल्लिका पुष्पों की शय्या हो, इस प्रकार तारकाएँ अब्धि में प्रतिबिंबित हुईं। "विभु राम विरह में फँस गए तो हमारा विरही होने में क्या आश्चर्य है?" मानों इसे दिशाओं में कहने के समान चक्रवाक बिछुड़कर

'राजनै येनु वाराशि युब्बितु; । राजवै नीवु वाराशि यिंकिप
दलचुट पाडिये धरणीतलेश ! । विलसित सत्कळान्वितुडवु नीवु;
१९०
नट्टुचेसितेनि दोषाकरत्वंबु । पटुवृत्ति नीयंदु ब्रभविंचु' नंचु
दूरू वच्चिनमाड्कि दोर्चै जंदुरुडु । मीरिन करमुलु मिन्नुलुमुट्ट;
'जनकजकै रामजननाथतिलक ? । ननु दल दाल्चि मन्नन चेसिनट्टि
हरु विल्लु विर्रिचिन या दोषमुनुन । विरहि वैतिवि सीतवेंट्रवुन' ननुचु
जंदुरु डट्टहासमु चेसे ननग । नंदंद चंद्रिक लतिशयंबंदे;
शरनिधि नुरुवनु चंदनं बर्थि । गरमोप्प वीचिकागणमुल पेरि
करमुल दिगिचि दिक्कांतल मेन । बौरिबौरि नाराजु पूसेनो यनग
दलकोनि मर्रियुनु दट्टमै पर्वि । वेलयंग नच्चपु वेन्नेल योप्पे;
नप्पुडु वेडुक नाचकोरंबु । लोप्पुचित्तमुल बेंपोलयंग गदिसि
पोरि बोरि दम चंचुपुटमुलु साचि। निरतंबुगाग वेन्नेल पुक्किलिंचि २००
ललितोड दम प्रियलकु निच्चि यिच्चि । येलमितो नवि यंदि यी ग्रोलि
क्रोलि

शीघ्रगति से चले गए। "राजा होकर मैं वाराशि (समुद्र) को प्रफुल्ल कर देता हूँ। हे धरणीतलेश ! राजा होकर तुम्हें वाराशि को सुखाने की बात सोचना न्यायसंगत है क्या ? तुम विलसत्-कलाओं से अन्वित (युक्त) हो ॥ १९० ॥

वैसा करोगे (समुद्र को सुखा दोगे) तो दोषाकरत्व[1] तुममें पटुवृत्ति से समुत्पन्न होगा।" मानों इस प्रकार निन्दा करता हुआ, अत्यधिक करों (किरणों) के आकाश को स्पर्श करते हुए चन्द्र दिखाई पड़ा। जहाँ-तहाँ चन्द्रिकाएँ (चाँदनी) अतिशयता से व्याप्त हुईं मानों चन्द्र यह कहकर अट्टहास कर रहा हो कि "हे राम जननाथ-तिलक (राजश्रेष्ठ) ! पूर्व में जनकजा के लिए मुझे सिर पर धारण कर आदर करनेवाले हर (शिव) का धनुष तोड़ा, उस दोष के कारण, सीता के कारण से विरही बन गए हो।" अधिक सान्द्र बन, व्याप्त हो स्वच्छ चाँदनी इस प्रकार शोभित हुई मानों उस राजा (चन्द्र) ने शरनिधि (समुद्र) के फेनरूपी चन्दन को प्रेम से अधिक शोभा से वीचिका-गणों से आकृष्ट कर, हाथों में लेकर, दिग्वधुओं के शरीर पर बार-बार लेप कर दिया हो। तब (उस समय) उत्साह से चकोर प्रसन्न चित्तों से, शोभा से नियराकर, बार-बार अपने चंचुपुटों को फैलाकर, निरन्तर चाँदनी से कुल्ला कर, ॥ २०० ॥

1. चन्द्र दोष (कलंक) का अकर (स्थान) है।

मलसि याडुचु वलुमरु सोलि सोलि। पौलुचु वेन्नेलरसंबुल देलि तेलि
गमिबासि येंडगलुगग दारितारि। कौमरारि यितुल गूडियुंडुटयु
गनुगोनि मदनमार्गणपात भिन्न। तनुडैन रामुडा धरणिज दलचि
यंतकंतकु मदनाग्निचे गंदि। यंतरंगंबुन नडलुचु नुंडे;
नप्पुडु लक्ष्मणुं डन्नसंताप। मुप्पोंगुटयु जूचि युडुपंगदलचि
"यिदे यब्धि दाटुद; मिदे दाटिपोयि। पदिशिरंबुलवानि बटुशक्ति नाजि
भंजिचि मिथिलाधिपतिकूर्मिपुत्रि। गंजास्ययगु सीत गैकोनेदधिप!
यसमानवीरुंड वारूढ मतिवि;। वसुधेश! नी किंत वगव नेमि-
टिकि?"
ननवुडु तम्मुनि यनुनयंबुनकु। जननाथु डैंतयु संतोषमंदे; २१०
नादट वेन्नेलयंदु वानरुलु। मोदंबुतोड निम्मुल नेल्लकडल
नारामदेवु गुणांकंबु लिपु। लारंग वाडुचु नाडेडुवारु,
हरि यवतारंबु लन्नियु गथल। वैरवुन निपुगा विनिपिंचुवारु,
गरगिन याचंद्रकांतोपलमुल। वरिणमिपुचु मेच्चिच पवळिंचुवारु,

—लालित्य के साथ अपनी प्रियाओं को दे-देकर, उनके प्रेम से देने पर पान करते हुए, घूमते-खेलते, कई वार मस्त हो झूम-झूमकर, अत्यधिक चन्द्रिका-रस में ऊभ-चूभ हो, झुण्ड से विछुड़कर, अवकाश मिलते ही (परस्पर) स्पर्श कर, शोभा से अपनी स्त्रियों के संग थे। (उसे) देख मदन-मार्गण (मन्मथ के वाण)-पात (लगने से)-भिन्न-तन वाला राम धरणिजा का स्मरण कर, अधिकाधिक मदनाग्नि (विरहवेदना) से तप्त हो, अन्तरंग में व्याकुल होता रहा। तब लक्ष्मण अग्रज के सन्ताप के उमड़ते देख, (उसे) कम करने का विचार कर (कहा)—"यही (अभी) अब्धि को पार करेंगे। हे अधिप! यही पारकर जाकर दस सिर वाले को पटुशक्ति के साथ युद्ध में हराकर, मिथिलापति की लाड़ली पुत्री, कंजास्या (कमलमुखी) सीता को (तुम) ग्रहण करोगे। (तुम) असमान वीर हो, आरूढ़मति वाले हो। हे वसुधेश! तुम्हें इतना दुखी क्यों वनना चाहिए?" ऐसा कहने पर अनुज के अनुनय (-वाक्य) सुनकर जननाथ अत्यन्त प्रसन्न हुए ॥ २१० ॥

चन्द्रिका में वानर सर्वत्र मोद के साथ, प्रेम के साथ थे। उन्होंने रामदेव के गुणगण शोभा के साथ गाते हुए, खेलते हुए, झुण्ड बाँधकर जलनिधि के कूल पर उत्साह से फूलकर विहार करते हुए, हरि के समस्त अवतारों को, कथाओं के रूप में, उचित विधान से मनोहरता से सुनाते हुए, पिघले उन चन्द्रकान्त पत्थरों पर, हर्षित होते, सराहते लेटे हुए, समय

नयि प्रौढ्ढु गडपि प्रियंबुन बोदल । रयमुन नंत बूर्वमुन गेंपेसगे
'जलनिधि राघवेश्वरु डेयुनपुडु । बलुशिलीमुखमुल बड्डुनो' यनुचु
गडुवेग तोलगि याकंपंबु नोंदि । बडबाग्नि युदयाद्रि न्राकेनो यनग;
'रामु बाणाग्नि वाराशि दहिंचु । चो मिन्नुमुट्ट नर्चुलु पर्वु' ननुचु
वेरचि तोलंगिन विधमुन ग्रुंके । नेडसिन चुक्क लन्नियु दोड्डुतोड; २२०
'निदि येल तडसेद? बीयब्धि गट्टि । वदलक चंपु रावणु राघवेंद्र ।'
यनि मनुमनिकि दोडै रेपकडनु । जनुदेंचे ननग भास्करुडुदयिंचे;
गमालाप्तकुलुनि राघवुनि सद्विजय । कमलयु दद्राज्यकमलयु गीर्ति
कमलयु नेरि मेलुकनिनचंदमुन । गमलंबु लेल्ल नोक्कट मेलुकनियें;
नप्पुडु तगिन संध्यादिकृत्यंबु । लोप्पंग सलिपि रायुर्वीशु; लंत

रावणुडु मंत्रुलतो नालोचिंचुट

नक्कड रावणुं डखिलमंत्रुलनु । दक्कक राविंचि तग वारि कनियें;
"मंत्रकोविदुलार! मर्कटुंडोकडु । जंत्रंबु चूपिन चंदान वच्चि

बिताया । तब प्रीति के पनपने पर शीघ्र पूर्व (दिशा) में लालिमा व्याप्त हुई । (वह ऐसा लगा) मानों बड़वाग्नि यह सोच कर कि "जलनिधि पर राघवेश्वर के (बाण) चलाते समय, अधिक शिलीमुखों (बाणों) का शिकार बन जाऊँगा" अतिशीघ्र (समुद्र से) निकलकर, काँपकर, उदयाद्रि पर चढ़ गयी हो । सभी नक्षत्र साथ-साथ इस भय से व्याकुल हो छिपने लगे कि राम की बाणाग्नि के वाराशि को जलाते समय, अग्नि ज्वालाएं कहीं आकाश को छू न लें ॥ २२० ॥

मानों अपने पौत्र की सहायता करने के लिए भास्कर तड़के ही यह कहते उदित हुए कि "अब विलम्ब क्यों करते हो? हे राघवेन्द्र! इस अब्धि को बाँधकर, शीघ्र ही रावण का वध कर दो ।" कमलाप्तकुल वाले राघव की सद्विजय-कमला, राज्यकमला, कीर्तिकमला के सुन्दरता से जाग्रत होने के समान, सभी कमल एक साथ जाग्रत हुए । तब उचित विधान से उर्वीशों (राजाओं) ने सन्ध्यादि-कृत्य सम्पन्न किए । तब,

रावण का मन्त्रियों से विचार-विमर्श करना

—वहाँ रावण ने सभी मन्त्रियों को अवश्य बुलाकर, उनसे समुचित रूप से कहा—"हे मन्त्रिकोविदो! एक मर्कट जन्त्र (मायायन्त्र) दिखाने के समान आकर, लंकिणी को हराकर, मेरी लंका को शोध डालकर, पंकजानन वाली

लंकिणि नोंचि नालंक शोधिंचि । पंकजानन सीत बरिकिंचि कांचि
नावनं बगलिंचि नासुतु जंपि । नाविक्रममु मीड़ि नापुरि गाल्चि
पेक्कुव नसुरुल बेक्कंड्र जंपि । चिक्कियु मनचेत जिक्ककपोये; २३०
नदे तेच्चे रामुनि नावानरुंडु । पदिलुडै यंबुधिप्रातंबुनकुनु;
भल्लूकबलमुलु ब्लवगसैन्यमुलु । वेल्लुवलै वच्चि विडिसिरि वार्धि;
स्थिरमुगा नीवार्त तेऱगेल्ल देलिय । जरजनुल् चेप्पिरि सकलंबु नाकु;
निनकुलु डीयब्धि यिंकिंचियैन । दन सेन बंचि युद्धति गट्टियैन
दाटि वच्चिन मड़ि तप्पु गार्यंबु; । दाटकमुन्ने मीर् तज्ज्ञत मेर्सि
'यिदि कार्य' मनि चेप्पुडिदरु गूडि; । यदियै चेयुदमु मेलगु तेऱंगैन"
ननि यडिगिन राक्षसाधीशुतोड । ननिरि मंत्रुलु गड्डु नल्पज्ञुलगुचु:
"दिव्युलकैननु दृष्टिंपरानि । दिव्यास्त्रमुलु पेक्कु देवरयंदु;
ग्रक्कन विषमुलु ग्रक्कंग बट्टि । युक्कडगिंचिति वुरगाधिपतिनि;
रुद्रुनि सखु गुबेरुनि मदंबणचि । भद्रकंबैन पुष्पकमु गैकोंटि; २४०
मयुनि प्रख्यातुनि मर्दिंचि यतनि । प्रियतनूभव बेंड्लि प्रीतितोनैति;

सीता का परिशीलन कर (उसे) देख, मेरे वन को उखाड़कर, मेरे सुत का वध कर, मेरे विक्रम से परे वन (परास्त) कर, मेरी नगरी को जलाकर, —बहुत से राक्षसों को मारकर, फँसकर भी हमारे हाथों फँसे बिना चला गया ।। २३० ।।

यह वही वानर सुरक्षित रूप से राम को अंबुधि प्रान्त में लाया है। भल्लूक-सेनाओं (और) प्लवग-सेनाओं ने बाढ़ के रूप में आकर, वारिधि के पास पड़ाव डाल लिया है। पुरजनों ने समस्त समाचार, उचित विधि से मुझसे बताया है। इनकुलवाला (राम) इस अब्धि को सुखाकर ही अथवा अपनी सेना को भेजकर औद्धन्य से पुल बाँधकर ही (समुद्र को) पार कर आएगा तो कार्य बिगड़ जाएगा। पार करने से पहले ही तुम लोग वुद्धि कौशल से, इतने सब लोग मिलकर बताओ कि 'यह कार्य (कर्त्तव्य) है' उसीको श्रेष्ठ विधान से करेंगे।" इस प्रकार पूछनेवाले राक्षसाधीश से मन्त्री अति अल्पज्ञ होते हुए बोले—"आपके पास कई ऐसे दिव्य-अस्त्र हैं जिनकी ओर दिव्य (देवता) भी दृष्टि प्रसरित नहीं कर सकते। उरगाधिपति (सर्पराज) को पकड़कर, उसका गर्व भंग किया, जिससे उसने झट विष उगल दिया। रुद्र के सखा कुबेर के मद का दमन कर, भद्रक (शुभप्रद) पुष्पक को ग्रहण किया (ले लिया); ।। २४० ।।
—प्रख्यात मय का मर्दन करके, उसकी प्रिय तनूभवा (पुत्री) को प्रेम से ब्याह

वंतकु नेंक्कुडौं नंतकु बट्टि । यंतकुनकु नीवें यंतकुडैति;
वारनि बलुडैन वरुणुनि यात्म । नीरु गाविंचिति निर्जराराति !
चक्रवर्तुल राज्यचक्रमुल् द्रिप्पि । चक्रमुल् गोंटि राक्षसचक्रवर्ति !
शूलायुधुनि गिट्टि शूरत मेरसि । मूलकु द्रोयवा मुक्कंटि यनक !
वासवु नन्नाकवासुलतोड । वासि दप्पिंपवा वासिकि नेक्कि ?
वेडिकि बलुमारु वेडिमि जूपि । वेडिमि बापवा वेडिको ननलु ?
ब्रलिमिनि गोणाधिपति दैत्यनाथु । नलिगि मर्दिपवा यधिकशौर्यमुन?
निलिचिनचोटनु निलुवंगनीक । पलुमारु बवनु दुप्पल दूलवेंतु;
मनुजु डातडु; नीवु मनुजाशनुडवु;। मनुजुंडु नीचेत मनुटेल कलुगु !
२५०

नीश्वरु गूर्चि महेश्वरक्रतुवु । शाश्वतकीर्तिमै सलिपे नीसुतुडु;
सांद्रानुमोदियै सफलतनोंदि । यिंद्रुनि भंजिचि यिंद्रजित्तय्यें;
नायिंद्रु जेरबेट्ट नजुडु वेडुटयु । नायजुनकु निच्चें नायिंद्रजित्तु;
आतडु चालडे यालंबु गेलुव ? । दैतेयकुलनाथ ! तगदु चिंतिप"

लिया। अधिक संतप्त करनेवाले अंतक (यम) को पकड़, अंतक के लिए तुम्हीं अन्तक बने। हे निर्जर-अराति (देवारि)! दुर्निवार बल वाले वरुण की आत्मा को भस्म कर दिया। हे राक्षस चक्रवर्ती! चक्रवर्तियों के राज्य-चक्र घुमाकर चक्र (अधिकार चिह्न) अपने हाथ में ले लिए। शूलायुध वाले (शिव) के पास पहुँच, शूरता से प्रकाशित हो, त्रिनेत्र की परवाह न करके, उसे कोने में नहीं ढकेल दिया था? (नीचा दिखाया था)। स्वयं प्रसिद्ध बनकर नाक (स्वर्ग)-वासियों के साथ वासव (इन्द्र) की प्रसिद्धि को दूर नहीं किया था? अग्नि (-देवता) को कई बार अपनी अग्नि (प्रतापाग्नि) बताकर, उसका ताप नष्ट नहीं किया था? क्या दैत्यनाथ कोणाधिपति (नैऋत) पर क्रुद्ध हो अधिक शौर्य और बल से (उसका) मर्दन नहीं किया था? पवन को एक स्थान पर स्थिरता से ठहरने न देकर, कई बार उसे अत्यन्त विचलित नहीं किया था? वह मनुज है, तुम तो मनुजाशन (नरभक्षी) हो। तुम्हारे हाथ पड़कर मनुज जीवित कैसे रह पाएगा? ॥ २५० ॥

तुम्हारे पुत्र ने ईश्वर के प्रति, शाश्वत कीर्तियुक्त हो, महेश्वर-क्रतु (यज्ञ) किया था। सान्द्रानुमोदी (अधिक प्रसन्नता से युक्त) हो, सफलता प्राप्त कर, इन्द्र को जीतकर (वह) इन्द्रजित बन गया था। उस इन्द्र को बन्दी बनाने पर, अज (ब्रह्मा) के विनय करने पर, इन्द्रजित ने उसे (इन्द्र को) अज (ब्रह्मा) को दे दिया। क्या युद्ध जीतने के लिए वह पर्याप्त नहीं है? (अतः) हे दैतेयकुलनाथ! चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है।"

दनुजसैनिकुल वीरमुलु

ननि मंत्रुलाडुचो नधिकदर्पमुलु । घनमैन लावुलु गल दैत्यवरुलु
ब्रळयकालांतक प्रभुलैनवारु । सुलभशौर्युंडु ब्रहस्तुडु निंद्रजित्तु
शतमायुडुनु बाहुशालि दुर्मुखुडु । नतिकायुडुनु मकराक्षुंडु खड्ग
रोमुंडु वृश्चिकरोमुंडु सर्प । रोयुंडु नग्निवर्णुडु विरूपाक्षु
डक्षीणबलुडु धूम्राक्षु डन्वाडु । नक्षतोन्नतुडु यूपाक्षु डन्वाडु
रमणीयबलशालि रश्मिकेतुंडु । नमितविक्रमशालि यग्निकेतुंड
२६०
वज्रदंष्ट्रुंडनुवाडु द्रिशिरुडु । वज्रदेहुडु बलवंतु डैनट्टि
सुप्तघ्नुडुनु मरि शोणिताक्षुंडु । ब्राप्तशौर्युंडु महापार्श्वु डन्वाडु
नौनर गुंभुडु निकुंभुडु सूर्यशत्रु । डुनु नग्निकोपनुंडुनु महोदरुडु
दिव्युल गैलिचिन देवांतकुंडु । नव्ययविक्रमुं डानरांतकुडु
गडुनुग्रुडगु महाकायु डन्वाडु । नडर विद्युज्जिह्वुडनुवाडु मरियु
गंपनुडुनु महाघनु डकंपनुडु । वेंपारुचुन्न यभेद्यविक्रमुडु
नादिगा गलगु महादैत्यवरुलु । नादैत्यवल्लभु नग्रभागमुन
गन्नुल गोपंबु गडलुकोनंग । मिन्नुलु मुट्टंग मीरि पलकुचुनु

राक्षस-सैनिकों की वीरोक्तियाँ

इस प्रकार मन्त्रियों के अधिक दर्पपूर्ण वचन कहने पर अत्यधिक सामर्थ्य वाले दैत्यश्रेष्ठ (तथा) प्रलयकाल के अन्तक के प्रभु सम, (तथा) सुलभ शौर्यवाले प्रहस्त, इन्द्रजित, शतमायु, वाहुशाली दुर्मुख, अतिकाय, मकराक्ष, खड्गरोम, वृश्चिकरोम, सर्परोम, अग्निवर्ण, विरूपाक्ष, अक्षीणवल, धूम्राक्ष, रमणीय वलशाली रश्मिकेतन, अमित विक्रमशाली अग्निकेतन, ।। २६० ।।

—वज्रदंष्ट्र, त्रिशिर, वज्रदेह, वली सुप्तघ्न, शोणिताक्ष, प्राप्तशौर्य, महापार्श्व, कुंभ, निकुंभ, सूर्यशत्रु, अग्निकोपन, महोदर, देवताओं को जीतनेवाला देवान्तक, अव्ययविक्रम वाला नरान्तक, अति उग्र महाकाय, शोभित विद्युज्जिह्व और कंपन, महान् अकंपन, शोभायमान अभेद्यविक्रम आदि महादैत्य-श्रेष्ठ उस दैत्यवल्लभ (राक्षसराजा) के सम्मुख, आँखों से क्रोध के उमड़ने पर, वढ़-बढ़कर आकाश स्पर्श करनेवाली वातें करते हुए, प्रलय-अवसर (काल के)-महापवन-निर्धूत (मुक्त) कुलपर्वतों के समान परस्पर ऐसा देखते हुए कि कुंभिनी (पृथ्वी) दब जाए, उद्दंडता से परस्पर न सराहते हुए (दूसरे को अपने सामने तुच्छ मानते हुए), उग्रता से प्रकाशित होते हुए, ।। २७० ।।

ब्रळयावसरमहा पवननिर्धूत । कुल पर्वतमुलन गुंभिनि यद्रुव
नोंडोरु जूचुचु नद्दंडवृत्ति । नोंडोरु मेंच्चक युग्रत मेंरसि२७०
यूर्पुलु निगुड नत्युद्धति म्रोयु । सर्पंबुलुनु बोलें सरभसवृत्ति
शूलंबु लंकिंचि सुरियलु बिगिचि । वालमुल् जळिपिंचि वडिलोंडुलेंत्ति
सबळंबु लमरिंचि चक्रमुल् द्रिप्पि । प्रबलंबुलगु भिंडिवालमुल्दिगिचि
पट्टसंबेंसगिंचि प्रासमुल् द्रिप्पि । गट्टिविड्लनु गुणकलितमुल् सेसि
युड्डुगक यलुगु लोंडोंटितो रासि । मिड्डुगुर्लु मंटलु मिक्कुटंबगुचु
नोंडोरु बिपुलकेयूरंबु लोंरय । नोंडोरु मकुटंबु लग्रत राय
भासुरमौक्तिकप्रकरमुल् सेंदर । रासिन भूषणरजमुलु दोंरुग
संदडिंपुचु महासंरंभ मेंसग । बृंदारकारितो बेंचि यिट्लनिरि:
"देवगंधर्व दैतेयकिन्नरुलु । देव ! नित् जूड भीतिल्लुदुरेंपुडु;
नरुलेंतवारु, वानरु लेंतवारु । सुरवैरि ! निनु जूचि स्रुक्कक निलुव ? २८०
नेमु नाडोंककोंत येमरियुंड । नामर्कटाधमुडट्लेगेंगाक !
यिंक मामुंदर नीलंक जोंच्चि । शंकिप केंव्वरु चन जालुवारु ?
वानरु लनियेंडि वार्त लेकुंड । बूनि निर्जिंचि पेंपुन महीधवुल

—निश्वासों के वेग से चलने पर, अति-उद्धति से मुखरित सर्पों के समान, स-रभस (संरंभ)-वृत्ति से शूल उठाकर, छुरियाँ कसकर, तलवार हिलाकर, लट्ठ ऊपर उठाकर, सबलों (एक प्रकार का आयुध) को ढंग से पकड़कर, चक्र घुमाकर, प्रबल भिंडिवालों को संभालकर, पट्टिस को पकड़कर, प्रास घुमाकर, दृढ़ धनुषों को गुणकलित (ज्या से युक्त) कर, (किसी से) न दबकर, परस्पर बाण रगड़ते हुए जिससे जुगुनुओं के समान ज्वालाएँ फूट रही थीं, परस्पर विपुल केयूरों के रगड़ खाने पर, आपस में उग्रता से, मकुटों के रगड़ खाने पर, भासुर मौक्तिक प्रकरों के रगड़ खाने पर, भूषणरज के ढुलकने पर, कोलाहल करते हुए, महासंरंभ के प्रकट होने पर, क्रम से बृन्दारकारी (देवताओं के शत्रु रावण) से यों बोले—"हे देव ! तुम्हें देख सदा देव-गन्धर्व-दैतेय-किन्नर भीत होते रहते हैं। हे सुर-बैरी ! तुम्हें देख कमजोर हुए बिना खड़े रहने के लिए नर और वानर कितने समर्थ हैं ? (उनमें कोई सामर्थ्य नहीं है।) ॥ २८० ॥

उस दिन हमारे थोड़ा असावधान रहने पर, वह मर्कटाधम उस प्रकार चला गया। अब हमारे समक्ष इस लंका में प्रवेश कर, बिना शंका (भय) किए कौन जा सकता है ? हे दानवनाथ ! अब बातें क्यों ? झट से हमें भेज दो तो वानरों का नामोनिशान मिटाकर, हराकर, शोभा से महीधवों

जंपि येतेंतुमु चय्यन मम्मु। बंपु दानवनाथ! पलुकुलिकेल?"
यनि गर्वदुर्वारुलै पल्कुचुन्न। दनुजुल नंदरु दप्पक जूचि

विभिषणुडु राक्षसवीरुलकु हितमुपदेशिंचुट

"युवरुवडिपकुडोहोहो! मानु मानु। डरसि कार्यमु चूत" मनि विभीषणुडु
चित्तंबुलोन बेचिन यिंद्रियमुल। नोत्ति यडंचिन योगियु बोले
बरग गर्जिचु नुत्पातमेघमुल। निरवुन बेट्टिन यिंद्रनिभंगि
ननुवोंद नेप्पटियट्ल कुर्चुंड। बनिचि कार्यमु मुट्टबलिके वारलकु:
"बेनुपोंदगा सामभेददानमुल। गोनरानि कार्यंबु गोनकोननेनि २९०
मरि कदा दंडंबु मायलु दलचि। नेरपुट; मुन्ने दुर्नीति येमिटिकि?
नेसगंग शात्रवु डेमरियुंडु। देस शत्रु गेलुवंगदीरु: गादेनि
नातरि नोकशत्रुडतनिपै विडिय। नेतेरंगुननैन नेतेंचेनेनि
दानिपै नतनिकि दैवशक्तियुनु। हीनमैयुन्न नेपेंडलिपवच्चु;
येन्नडु नेमरु; डेंदुरेंदु लेदु; । मुन्ने दैवंबु रामुडु; काक मरियु

(राजाओं) का संहार कर लौट आएंगे।" ऐसा गर्व-दुर्वार हो बतियाने वाले दनुजों को अवश्य देखकर,

विभीषण का राक्षसवीरों को हितोपदेश

—विभीषण ने, चित्त में विजृंभित होनेवाली इन्द्रियों का दमन कर देनेवाले योगी के समान, शोभा से गरजनेवाले उत्पात (करनेवाले)-मेघों को शान्त करनेवाले इन्द्र के समान, सुविधा से (सभी राक्षसों को) यथापूर्व रूप में बिठाकर, कार्य-साफल्य के लिए उनसे कहा—"ओहो, जल्दबाज़ी मत करो। छोड़ दो (इन बातों को) सोच-विचार कर कार्य (की बात) देखेंगे। शोभा से साम, भेद, दान (आदि उपायों) से असाध्य कार्य सामने आ जाए ।। २९० ।

—तो तब दण्ड (और) माया को अपनाकर (कार्य) साधना चाहिए। पहले यह दुर्नीति क्यों? शोभा से शत्रु के असावधान रहते समय शत्रु को जीता जा सकता है। नहीं तो, उस समय शत्रु पर (कोई दूसरा) शत्रु किसी भी रूप में आ जाए (धावा बोल दे), जिसपर वह दैवशक्ति से हीन बना हुआ हो तो, उसके विकास का नाश कर सकते हैं। (राम) कभी असावधान नहीं रहता, वह दुर्जेय है, स्वयं दैव (भगवान) है। यही नहीं, हर के धनुष को तोड़नेवाला साहसी है। परमविवेकी

हरुविल्लु विरिंचिनयट्टि साहसुडु; । परमविवेकि; दोर्बलजयाधिकुडु;
मीचेत साध्युडे मिहिरिकुलेशु । डेंचि मीरी गति नेंन्नि याडिननु !
गडिलेनि यीवार्धि गालुव करणि । वडि दाटि राडे या वायुनंदनुडु !
वच्चि यीलंकलो वलसिनमाड्कि । नच्चेरुवंदि मीरंदरु जूड
नेमेयि चेसेंनो येंरुगरा मीरु ? । रामुनि वीटि शूरत्वंबु चूप ३००
नत डोंक्क वानरु; डट्टिवानरुलु । नतनिकि नेंक्कुडैनट्टि बानरुलु
नावानरुल कॅक्कुडैन वानरुलु । भाविपगा लॅक्क परुपंगरादु;
मीरु राघवुनि नेंम्मेंयि नोर्चुवारु? । वारनि कोपंबु वलन नेपारि
येंदिरिनि दन्नुनु नेंरुगक पलुकु । टिदि विवेकमें दानवेश्वरुलार !
रामललो नभिराम यासीत । रामुनि देवि नरण्यमध्यमुन
भयमुन रामुनि बलुमारु जीर । रयमुन देंच्चें नीराक्षसेश्वरुडु;
मदिलोन दलपोय मन कीडेंकाक । यितनिकि जेसिन येंग्गेमि यतडु?
खरदूषणादुल गडिकंडलुगनु । धरणिपै गूल्यें गदा यनि मीरु
तलचेंद; रतनिपै दैत्युल पोक । दलपरु; वारिपै दाडि पोदगुनें ?

है, दोर्बल (बाहुबल) के जय में अधिक है। अतिशयता से आप इस प्रकार कितनी ही बातें क्यों न करें, क्या मिहिर (सूर्य)-कुलेश (राम) आपके हाथों हारेगा ? क्या वह वायुनन्दन अपार वारिधि को नहर के समान झट पार करके नहीं आया था ? आकर इस लंका में आप सबके आश्चर्यचकित देखते रहने पर ही, अपनी इच्छा से क्या-क्या किया था, आप नहीं जानते ? राम के यहाँ की शूरता बताने के लिए, ॥ ३०० ॥

—वह मात्र एक वानर है। उस प्रकार के तथा उससे अधिक (बली) वानर और उन वानरों से अधिक (बलशाली) वानर, सोचने पर (उसके पास) असंख्य हैं। आप लोग राघव का कैसे सामना कर सकेंगे ? (नहीं कर सकते।) हे दानवेश्वरो ! अत्यधिक क्रोध से, उद्धत बन, प्रतिपक्षी तथा अपने (बल) को न जानकर, (इस प्रकार) बोलना कहीं विवेक है ? रामाओं (सुन्दरियों) में अभिराम उस सीता के, राम की देवी के, अरण्य-मध्य में, भय से राम को कई बार पुकारते समय, यह राक्षसेश्वर शीघ्रता से लाया। मन में सोचने पर हमारी ही बुराई है, वरन् उसने (राम ने) इसकी (रावण की) क्या हानि की है ? आप सोचते है कि खर-दूषण आदियों को टुकड़े-टुकड़े कर धरती पर गिरा दिया। (किन्तु) उस पर (राम पर) दैत्यों के जाने (आक्रमण) के बारे में नहीं सोचते। (ऐसे) उनपर आक्रमण करने जाना क्या संगत है ? अपने दोष के कारण ही वे

तम नेरमिनि वारु धरणिपै गूलि । यमरलोकमु जेरि; रदि चॅप्पनेल?
३१०
मेटिवानरुलिट मीरक मुन्ने । कोटलु वारिचे गूलकमुन्ने
सौमित्रिबाणवर्षमु राकमुन्ने । रामुनि कोपाग्नि राजकमुन्ने
यायग्निचे लंक यडगकमुन्ने । मीयसुरावळि यीलगकमुन्ने
सीत बुच्चुट लॅस्स श्रीरामुकडकु; । सीत देच्चिनकीडु चेसेत गुडुप;
धर्मात्मुडा राम धरणीश्वरुंडु; । धर्मंबुवलननॅ तगनुंडु जयमु ।"
अनि पॅक्कुभंगुल नव्विभीषणुडु । दनुजवीरुल बल्कि दशकंठु जूचि
"तलपोय सुखमुनु धर्मबु जॅरुप । वलतियै पॅरुगु दुर्व्यसनंबु विडुवु;
सुखमु गीर्तिमु जेयु सुरुचिरधर्म । मखिलनीतिज्ञुडवगुचु गैकॊनुमु;
च्चलमु मानुमु; सुप्रसन्नुंडवगुमु; । कुलमॆल्ल रक्षिचुकोन जूचॆदेनि
जनकज विडुवु; मा जननाथुतोड । मनकेल वैरंबु मदि मदि बुंडि"
३२०
यनि विन्नविंचिन नतनि वाक्यमुलु । विन बुद्धिपुट्टक वॅसगॊल्वुविडिचि
रावणु डंतःपुरंबुन करिगॆ; । नाविभीषणु डंत नामरुनाडु

(राक्षस) धरती पर गिर, अमरलोक पहुँचे । उनके बारे में अब क्यों कहें ? ।। ३१० ।।

श्रेष्ठवानरों के यहाँ (आकर) उद्धत बनने से पहले, उनके हाथ दुर्गों के गिरने से पहले, सौमित्र के बाणों की वर्षा से पहले, राम की क्रोधाग्नि के सुलगने से पहले, उस अग्नि से लंका के नष्ट होने से पहले, इस असुर-समूह के मरने से पहले, श्रीराम के पास सीता को भेज देना उत्तम (कार्य) है । सीता को लाने के दोष का फल अवश्य भुगतना पड़ेगा। वह धरणीश्वर राम धर्मात्मा है, धर्म के पास ही जय स्थिर बनकर रहती है ।" ऐसा अनेक विधियों से वह विभीषण दनुजवीरों से कहकर, दशकंठ को देख बोला— "सोचने पर सुख और धर्म को बिगाडने के लिए समर्थ बन पनपने वाले दुर्व्यसन को छोड़ दो । सुख और कीर्ति को सम्पन्न करानेवाले सुरुचिर धर्म को नीतिज्ञ होकर ग्रहण करो । हठ छोड़ दो, सुप्रसन्न बनो । यदि समस्त वंश को बचाना चाहोगे तो जनकजा को छोड़ दो । उस जननाथ (राजा) से हमें वैर क्यों ? (उस वैर को) मन से निकाल दो ।" ।। ३२० ।।

ऐसा निवेदन करने पर, उसके वाक्य सुनना न चाहकर झट सभा छोड़ रावण अन्तःपुर में चला गया । तब विभीषण दूसरे दिन,

विभीषणुडु रावणुनियोद्दकु बोवुट

प्रथमसंध्याविधुल् परिपाटि दीर्चि । रथमेक्कि नलुगड राक्षसुल् गॊलुव
रमणीय चित्रतोरण राजवीथि । गमनीय शिल्पमुल् गनुगॊंचु वच्चि
पटुहेषितंबुलु बटुबृंहितमुलु । बटहशंखादुल पटुनिनादमुलु
सेवागतांगना शिंजितंबुलुनु । सावासुलडरिंचु चंडहुंकृतुलु
सूतमागधवंदिशुभकीर्तनमुलु । नाततभट संकुलालपमुलुनु
मातंग निश्वास समारुतोद्धूत । केतनांशुकपटात्कृतु लोलि बॆरय
बधिरदिग्भागमै बहुळोर्मिजलधि । विधमुन म्रोयंग विश्वासुलैन
राक्षसवीरुल रक्षचे नमरि । नक्षत्रपरिवृत नवसौधमगुचु ३३०
दॆरपिलेकिभमुलु देरुलु हरुलु । गिरिकॊन्न नगरिवाकिट देरु डिग्गि
पाद्यादिविधुल संभावितुंडगुचु । वेद्यंबुगा नुर्वीसुपर्वाळि
पुण्याहवाचन पूर्वंबुलैन । पुण्यशांतुलु सेय वॊरि गनुंगॊनुचु
मनसॊप्प नास्थान मंटपंबुनकु । जनुदेंचि यन्नकु सद्भक्ति म्रॊक्कि
यलरि यातडु सूप नर्हपीठमुन । नॆलमिमै गूर्चुंडि येकांत मॆरिगि

विभीषण का रावण के पास जाना

—प्रथम (प्रातःकालीन) सन्ध्या-विधियों को क्रमानुसार सम्पन्न कर, रथ पर आरूढ़ हो, चारों तरफ़ राक्षसों के सेवा करते रहने पर, रमणीय-चित्र-तोरणों से युक्त राजवीथि में कमनीय शिल्पों को देखते हुए आकर, पटु-हेषित (हिनहिनाहट), पटु-बृंहित (चिंघाड़), पटह, शंख आदियों के पटु-निनाद, सेवारत-अंगनाओं के शिंजित (आभूषणों के झनझनाहट), सहवासियों के अधिक हुंकार, सूत-मागध-वन्दीजनों के शुभकीर्तन, आतत भटों के संकुल आलाप, मातंगों के निश्वास-मारुत से उद्धूत केतनांशुक की पटात्कृतियों के क्रम से स्पर्श करते रहने पर, दिग्भाग (आकाश) को बधिर बनाते हुए, बहुल-ऊर्मि से युक्त जलधि के समान मुखरित होते रहने पर, विश्वस्त राक्षसवीरों की रक्षा से शोभित हो, नक्षत्र-परिवृत (घिरे हुए अर्थात् गगनचुंबी) नवसौध के, ।। ३३० ।।

—अधिक संख्या में रथ, अश्वों से घिरे (रावण के) नगर-द्वार पर (विभीषण) रथ से उतर पड़ा । पाद्य आदि विधियों से सम्भावित होते हुए, विदित रूप से उर्वी-सुपर्व-अवली (ब्राह्मणों के समूह) के पुण्याह-वाचन-पूर्वक पुण्य (पवित्र) शान्तिपाठ को क्रम से देखकर, प्रीति से आस्थान (सभा)-मण्डप पहुँचकर, अग्रज को सद्भक्ति से प्रणामकर, प्रसन्न हो, उसके (रावण के) बताने (इशारा करने) पर, योग्यपीठ पर आनन्द से

मंत्रुल सन्निधि महनीयमंत्र। तंत्रज्ञुडनिये ना दशकंठुतोड

रावणुनिकि विभीषणुनि हितोपदेशमु

"नवधरिपुमु देव! यसुराधिनाथ!। यवनिज देंच्चिनयंतनुंडियुनु
दुर्निमित्तंबुलु दोचुचुन्नवियु; । निर्णयिपग रादु निक्कुवंबरय;
होमकुंडंबुल नुन्न त्रेताग्नु। लेमियु वेलुगव यीदिवसमुल;
नागुंडमुलु सोच्चि यलमि चुट्टियुनु। सागिलि पडियुंडु सर्पमुल् पेक्कु;
३४०
लुडुगनि मदमुल नोलसि तुम्मेदल। गडुनोप्पु नम्मदकरुलेल्ल निपुडु
कडु मेनु डिल्ल मै कंबालतोड । येंड लेत्तुकोनि स्रुक्कि मेदलकुन्नवियु;
नुन्नतस्थितिगल युत्तमाश्वमुलु। गन्नुल नोगि नीळ्ळु गारुचुनुंड
गवणंबु नीरुनु गड्डियु नुडिगि। जवसत्त्वमुलु दूलि सडलि युन्नवियु;
वानि तोकलयंदु वडि नग्निशिखलु। मानुगा नलुगुल मंटलु वेंडलु;
नरदालपै नग्नु लट रालुचुंडु; ।बोरिबोरि युल्कमुल् भुवि बडदोडगे;
जडिगोनि वीरमस्तमुल वायसमु। लडरुचु बुरमुलो नाडंगदोणगे;

बैठकर, एकान्त जानकर, मन्त्रियों की सन्निधि में (समक्ष) महनीय-मन्त्र-तंत्रज्ञ (विभीषण) ने उस दशकण्ठ से कहा—

रावण को विभीषण का हितोपदेश

"हे देव ! हे असुराधिनाथ ! ध्यान से सुनो। जब से भूमिजा (सीता) को लाए थे तब से दुःशकुन दिखाई पड़ रहे हैं। सोचने पर यथार्थ का निर्णय नहीं कर पा रहे हैं। इन दिनों होमकुण्डों में स्थित त्रेताग्नियाँ प्रज्वलित नहीं हो रही हैं। उन कुण्डों में प्रविष्ट होकर, आनन्द से घेरकर, कई सर्प लेटे पड़े हुए हैं ॥ ३४० ॥

अनारत मद (धाराओं) से भरे हुए (तथा) भ्रमरों से अधिक शोभायमान वे सभी मद-गज अब शरीर के ढीले पड़ने पर, शरीर-रूपी स्तम्भों से (और) सिर ऊपर उठाए, कमज़ोर बन, चुप खड़े हैं। उन्नत स्थिति से युक्त उत्तम अश्व, आँखों के क्रम से आँसुओं के बहते रहने पर, चारा, जल और घास को छोड़, जवसत्त्वों से हीन हो क्लान्त बने हुए है। उनकी पूँछों में झट अग्निशिखाएँ (तथा) मनोज्ञता से बाण-ज्वालाएँ निकल रही हैं। रथों पर अग्नियाँ गिरती रहती हैं। पुनः पुनः उल्काएँ भुवि (पृथ्वी) पर गिरने लगीं। झड़ी लगाकर (ताँता बाँधकर) पुर में वीरों के मस्तकों पर कौए बहुलता से मँडराने लगे। प्रख्यात रूप से शिखाओं

ख्यातिगा शिखलतो गडगि कूपमुल । भातिगा मंडूकपतुलुद्भविंचे;
देवगेहमुल भूदेवगेहमुल । भाविंप शिथिलाधिपङ्क्तुलु वुट्टे;
इंद्रधनुस्सुलु निट रात्रुलंदु । जंद्रधारिक नैन जयमु लेदंड्रु; ३५०
पूनि चूडग शुभंबुलु गावु मनकु; । वीनि विचारिंचि विग्रहं बुड्डुगु;
मट्टुगान निन्निटि कसुराधिनाथ । सटलेल ? विनु मौक्क शांति चेप्पेदनु:
श्रीरामुनकु निम्मु सीत गोंपोयि; । नेरमि वट्टडानृपकुंजरुंडु;
नेंदु नीतिज्ञुन किदि लॅस्सकार्यं; । मिंदरु नेंऱगरा यिदि बुद्धियगुट!
दनुजेश ! नीचित्तधर्मंबु नूदि । 'विनु' मनि चेप्पंग वेंऱतुरुगाक!
नाकु बोरादु दानवनाथ ! कान । नीकु जेप्पिति निट्लु नीतिमार्गंबु"
ननि बुद्धि सेप्पिन नव्विभीषणुनि । विनुतवाक्यंबुलु वीनुलु सोरक
"येव्वरिदिक्कुन नेभयं बेंऱुग; । नेव्विधंबुन सीत नीनु रामुनकु;
दुर्जयुंडगु नाकु दुरमुलो नतडु । निर्जरुल् तोडैन निलुचुने?" यनुचु
गोपंबु दीपिंप गोल्वंत विडिचि । वेपोये दानवविभुडु लोपलिकि; ३६०

से युक्त हो, कुओं में प्रचुरता से मंडूक उत्पन्न हुए। देवगेहों में, भूदेव (ब्राह्मणों)-गृहों में, सोच देखने पर शिथिलाधिपंक्तियाँ (खंडहर) उत्पन्न हुईं। यहाँ रात के समय इन्द्रधनुष हैं। कहते हैं, रात को इन्द्र-धनुष के होने पर, चन्द्रधारी (शिव) को भी विजय प्राप्त नहीं होती ॥ ३५० ॥

ध्यान से देखने पर (ये शकुन) हमारे लिए शुभप्रद नहीं हैं। इनके बारे में विचार कर विग्रह (कलह) को छोड़ दो। हे असुराधिनाथ! यह ऐसा है, अत: इतने कष्ट क्यों? सुनो, शान्ति की एक बात कहता हूँ। सीता को ले जाकर श्रीराम को दे दो। वह नृपकुंजर (तुमको) अपराधी नहीं मानेगा। नीतिज्ञ के लिए यह उत्तम कार्य है। क्या सब लोग नहीं जानते कि यह बुद्धिमानी है? हे दनुजेश! इतना ही है कि तुम्हारी चित्तवृत्ति को जानकर, कहने में डरते हैं। मैं कहे बिना नहीं रह सकता। अत: तुम्हें इस प्रकार नीतिमार्ग बताया है।" ऐसा समझाने पर उस विभीषण के विनुत-वाक्यों को कानों में प्रविष्ट न कर, यह सोचते कि "किसी की ओर से मैं किसी प्रकार का भय नहीं जानता, किसी भी प्रकार से राम को सीता नहीं दूँगा। मुझ दुर्जय के समक्ष यदि निर्जर भी तो उसका साथ दें, क्या वह युद्ध में खड़ा रह सकता है?", कोप के दीप्त होने पर, सभा को छोड़कर, शीघ्र दानव-प्रभु भीतर चला गया ॥ ३६० ॥

मरुनाडु लेचि क्रम्मर रावणुंडु । मरुवक संध्यासमाधुलु दीर्चि
यनुजुनि वचनंबु लात्म जिंतिंचि । तन मंत्रुलुनु दानु दलपोय दलचि
भानुमंडलनिभप्रभ गलयट्टि । मानैन दिव्यविमानंबु नैक्कि
कमनीय बहुरत्नखचितंबुलगुचु । गोमराउ नप्पैडिकुंभमुल् मेरय
वेन्नेलनुरुवुन विरचिंचिनट्टुल । नुन्नतच्छत्रंबु लोप्पारुचुंड
गंकणझणझणत्कारमुल् मेरय । नंकिंचि चामर लतिवलु वीव
बेक्कुर्यंतुलु पेल्लुगा म्रोय । वेक्कंड्रु सुभटुलु पेंपारगोलुव
वंदिमागधुलु गैवारंबु सेय । संदडि जडिय नैश्वर्यंबु मेरय
जनुदेंचि बहुमंत्रसहितंबुगाग । मनुजाशनुडु सभामंटपंबुनकु
'नर्कवंशजुनि शराहति देगि मीद । नर्कबिंबमु जोत्तु' ननि तेलुपुकरणि
३७०
जोच्चि सिंहासनस्थुंडयि पिलुव । बुच्चें नायकुल नप्पुडु पडवाळ्ळ।
वारलु दम रथावळुलपै नेक्कि । वारणंबुल नेक्कि वाजुल नेक्कि
विमलचामरमुलु वेलदुलु वट्ट । दमतम विभवमुल् तगनोप्प मेरसि
चारुचामीकरच्छत्रंबु लोप्प । वारक भीषणाकारंबु लोप्प

दूसरे दिन जागकर, फिर रावण ने भूले विना सन्ध्या-समाधि से निवृत्त होकर, अनुज के वचनों के वारे में मन में चिन्तन कर, अपने मन्त्रियों के साथ विचार-विमर्श करने के लिए, भानुमण्डल के सम प्रभा से युक्त, दिव्य विमान पर आरूढ़ हो, कमनीय वहुरत्नखचित सुन्दर स्वर्णस्तम्भों के प्रकाशित होने पर, मानों चाँदनी के झाग से वनाए गए हों, ऐसे सित-छत्रों के शोभा देते रहने पर, कंकणों के झणझणत्कारों के मुखरित होने पर, सुन्दरियों के चामर डुलाते रहने पर, अनेक तूर्यों के अधिकता से वजते रहने पर, अनेक सुभटों के शोभा से सेवा करते रहने पर, वंदि-मागधों के स्तुतिपाठ करते रहने पर, कोलाहल के मचने पर, ऐश्वर्य के दीप्त होने पर, आकर, अनेक मन्त्रियों के साथ, मनुजाशन (राक्षस) ने सभामण्डप में इस प्रकार प्रवेश किया मानों यह बता रहा हो कि अर्क (सूर्य-) वंशज के शराघात से मरकर, अर्कविंव में प्रवेश करूँगा ॥ ३७० ॥

(इस प्रकार सभा में) प्रवेशकर, सिंहासनासीन होकर, तब नायक और सरदारों को वुला भेजा। वे अपनी-अपनी रथावलियों पर आरूढ़ होकर, वारणों (हाथियों) पर सवार होकर, वाजियों (घोड़ों) पर सवार होकर, सुन्दरियों के विमल चामर धारण करने पर, अपने-अपने वैभवों से उचित विधि से दीप्त होकर, चारु-चामीकर-छत्रों के शोभा देने पर, क्रम से भीपणाकारों के शोभा देने पर, अपने-अपने तूर्यनादों के साथ आकर, क्रम से

तमतम तूर्यनादमुलतो वच्चि । क्रममुन मंटपांगणमुलयंदु
दम वाहमुलु डिग्गि तनरु सिंहमुलु । कोमरारगा गिरिगुह जोच्चुकरणि
नामंटपमु जोच्चि यादानवेंद्रु । चे मन्ननलु गांचि चित्तंबुललर
नुचितासनंबुल नुंडि पडालु । रुचितंबु लेरिगिंप नुत्तमंबनुचु
"देव ! नेडेंतयु देलिसियुन्नाडु । देवरतम्मु डुद्दीपितबलुडु
घनुडेन याकुंभकर्णु" डनंग । विनि "पिल्वु" डनवुडु वेग वारेगि
३८०

"देवारि सभकु नेतेंचि कोल्वुंडि । देव ! निन्बिलुव बुत्तेंचे" नावुडुनु
गोडुकुलु कुंभनिकुंभुलु गोलुव । गडुवेगमुन गुंभकर्णु डेतेंचि
मणिमयंबै दिव्यमहिमंबु गलिगि । गणिकासमूहंबु गाननादमुल
नेंतयु नोप्पारि येसगिन मंट । पांतरंबुननु सिंहासनस्थलिनि
नुन्न यन्नकु म्रोक्कि योगि गोल्वु सोच्चि । युन्नतासनमुन नुन्नयावेळ
नन्नतोडने वच्चि याविभीषणुडु । क्रन्नन गूर्चुंडे गनकपीठमुन;
नप्पुडु रावणुंडमरवल्लभुनि । योप्पेल्ल गेकोनि युंडि प्रहस्तु
गनुगोनि पलिके: "लंकापुरंबुनकु । बनुपडगा बेट्टु बलुवैन कापु
मरियु नीकड नेल्ल मार्गंबुलंदु । गिरिकोन्न कोट वाकिळ्ळ नेल्लेडल

मण्डप के प्रांगण में, अपने वाहनों से उतरकर, सुशोभित सिंहों के गिरिगुफा में प्रवेश करने के समान, उस मण्डप में प्रवेशकर, उस दानवेन्द्र से सम्मान प्राप्त कर, चित्त के प्रसन्न होने पर, उचित-आसनों पर रहकर, सरदारों के औचित्य बताने पर, दूतों ने (उसे) उत्तम मानते हुए, (कहा)—"हे देव ! आपका अनुज, उद्दीप्त बल वाला, महान् कुंभकर्ण आज अति जाग्रत दशा में है।" (ऐसा) कहने पर, सुनकर, कहा 'बुलाओ'। ऐसा कहने पर वे शीघ्र जाकर, ॥ ३८० ॥

—बोले कि "हे देव ! देवारि (रावण) ने सभा में पधारकर, दरबार लगाकर, तुम्हें बुला लाने (हमें) भेजा है।" ऐसा कहने पर कुंभ-निकुंभ नामक पुत्रों के सेवाएँ करते रहने पर, कुंभकर्ण अतिशीघ्रता से आया। मणिमय तथा दिव्य-महिमा-युक्त हो, गणिका-समूह तथा गान-नादों से अत्यधिक शोभायमान मण्डप के भीतर सिंहासनस्थली पर स्थित अग्रज को प्रणामकर, लगन के साथ सभा में प्रवेशकर उन्नत-आसन पर रहा। उसी समय अग्रज के साथ ही आकर विभीषण भी कनकपीठ पर शीघ्र बैठ गया। तब रावण अमरवल्लभ की समस्त शोभा के लिए विराजमान होकर, प्रहस्त को देखकर बोला—"लंकापुर के लिए आनुकूल्यता से बलवत्तर रक्षा का आयोजन करो। फिर यहाँ के समस्त मार्गों में, परिवेष्टित दुर्ग-द्वारों

जतनमै युंड राक्षसवीरवरुल । व्रतिदिवसंबु लोपलनु वेलपलनु"
३९०
ननि दानवाधीशु डाकुंभकर्णु । गनुगोनि पल्के नुत्कंठ दीपिंप:

रावणुडु कुंभकर्णुनकु रामुनिराक येरिंगिंचुट

"विनु कुंभकर्ण! नीविननिदि यौकटि । जनपदंबुन केगि चय्यन नेनु
रामुनि देवि धरासुत सीत । गामिंचि तेंच्चिति गंजदळाक्षि:
मटि मौन्न नौक हनुमंतुडन् कोति । पडतेंचि सीतकु वरिणाम मौसगि
'देवि ! नीपति रामदेवुंडु वच्चु' । ना विनि 'मदिलोन नम्मि यासीत
युन्नदि; यंतयु नुद्दंडवृत्ति । नन्नरुंडुनु नब्धि कव्वल विडिसे;
वनमुललो गल वनचरुलेल्ल । वेंनुमूकगा गूड वेंट्टु केतेंचे;
जेंच्चेर ननिसेसि सीत गोंपोव । वच्चिनाडतडु; तावच्चुगाकेमि?
सुरनाथसुरलनु स्रुक्किंचिनाड; । हरुडुन्नकैलास मगलिंचिनाड;
शंभुचे जंद्रहासंबु गोन्नाड; । नंभोजभवु वरंबडिगिकोन्नड;
४००
दानिपै नीलावु तविलि युन्नाड; । मानवुडे नन्नु मर्दिंचुवाडु !

पर, सर्वत्र, जतन के साथ, प्रतिदिन, दिन-रात, राक्षसवीरों को नियुक्त करो ।" ॥ ३९० ॥

(ऐसा) कह दानवाधीश कुंभकर्ण को देख, उत्कण्ठा के दीप्त होने पर बोला—

रावण का कुम्भकर्ण को राम का आगमन बताना

"हे कुंभकर्ण ! एक बात सुनो जिसे तुमने सुना नहीं था । झट जनपद जाकर मैं राम की देवी, धरासुता, कंजदलाक्षी सीता को कामा बनकर लाया हूँ । फिर परसों हनुमान नामक एक वानर ने (यहाँ) आकर सीता को प्रसन्न बनाकर (कहा)—"हे देवी ! तुम्हारा पति रामदेव आएगा ।" यह सुन, वह सीता मन में विश्वास किए हुए है । अधिक उद्दंडवृत्ति से उस नर (राम) ने भी अब्धि के उस पार पड़ाव डाला है । वनों के समस्त वनचरों की बड़ी भीड़ साथ लेकर आया है । अतिशीघ्र युद्ध कर, सीता को ले जाने के लिए वह आया है । आया तो आया, क्या होनेवाला है ? सुरनाथ (तथा) सुरों को मैंने दुर्बल बना दिया है । कैलास को, जहाँ हर थे, उखाड़ दिया है । शम्भु से चन्द्रहास प्राप्त किया है । अंभोजभव से वर माँग लिया है ॥ ४०० ॥

रामु डॆन्नडु गॆल्चु रणभूमि नन्नु ! । गोमलि नॆन्नडु गॊनिपोवु नतडु!"
ननवुडु गोपिंचि या कुंभकर्णु । डनियॆ रावणुतोड नंदरु विनग;
"रामु वंचिंचि या रामुनि देवि । नेमरियुंडंग नेचि युद्वृत्ति
दॆत्तुवे ? यिट्टु लेल तॆच्चितिव कडगि ? । चित्तंबुलो नीति जिंतिपवैति;
धर्ममार्गमु नीवु दलपोयवैति; । वर्मिलि गुलमॆल्ल नडग जेसितिवि;
सीत दॆच्चिनयप्डॆ चॆडियॆ नीलंक; । येतॆरंगुननैन निदिय निश्चयमु;
अॆट्टयिननेमि ? या यिनकुलेश्वरुनि । नॆट्टन शरमुलु नॆरि गाडकुंड
ब्रदिकि वच्चिचति नीदुभाग्यंबुकतन; । निदि मेलु कीडनि यॆन्नंगनेल ?
पोवच्चुनेयिक बूनॆदु गाक ! । रावण! यितकार्यमु चक्कबॆट्ट ४१०
नामीद बडियॆ; वानरुल राघवुल । नेमियु दलपक यिक सुखिपु"
मनि पल्कुटयुनु महापार्श्वुडनियॆ: । "घनभुज यॆल्ललोकमुलकु नीव
पतिवट ! यासीत बलिमिनि बट्टि । रति सल्पनेरवा? राक्षसाधीश!"
यनवुडु जित्तंबुनंदु मोदिंचि । दनुजाधिनाथु डातनि जूचि पलिकॆ:
"विनु महापार्श्व! ये वेधकॊल्वुनकु । जनुचोट बुंजिकस्थल यनु नाति

तिस पर तुम्हारी सामर्थ्य को प्राप्त किया है । क्या मानव मुझे परास्त करनेवाला है ? क्या राम कभी मुझे रणभूमि में जीत सकेगा ? क्या कभी वह कोमली (सीता) को ले जा सकेगा ?" ऐसा कहने पर, क्रुद्ध हो कुंभकर्ण ने सबके सुनने पर रावण से कहा—"राम को धोखा देकर, उस राम की देवी के असावधान रहते समय, विजृंभित हो, उद्वृत्ति से क्यों लाए हो ? सप्रयत्न (उसे) इस प्रकार क्यों लाए ? मन से नीति के बारे में सोच नहीं पाए । तुम धर्ममार्ग के बारे में सोच नहीं पाए । प्रेम से समस्त कुल को नष्ट कर दिया । जब सीता को लाए तभी लंका नष्ट हो गई । किसी भी विधान से यही निश्चित बात है । जो भी हो । उस इनकुलेश्वर के अप्रतिहत शरों के, क्रम से गड़ने से पहले, अपने भाग्य के कारण जीविति (बच) आए । इसे भला (और) बुरा क्या मानें ? अब (अपने कर्तव्य से) कैसे मुक्त हो सकता हूँ ? अब (भार) धारण करूँगा ही, हे रावण ! इतना महाकार्य सुधारने का, ॥ ४१० ॥

—(भार) मुझपर आ पड़ा । वानरों और राघवों के बारे में बिलकुल न सोचकर अब सुख से रहो ।" ऐसा कहने पर महापार्श्व ने कहा—"हे घनभुजाओं वाले (हे रावण) ! समस्त लोकों के लिए तुम्हीं स्वामी हो न ! हे राक्षसाधीश ! उस सीता के साथ बलपूर्वक रति नहीं कर सकते ?" ऐसा कहने पर मन में हर्षित हो, दनुजाधिनाथ ने उसे देखकर कहा—"हे महापार्श्व ! सुनो । (एक बार) पूर्व में मैं वेधा (ब्रह्मा) की सभा में

वलुवूडिपड बट्टि वडि गुदियिंचि ।बलिमि भोगिंचिति बैबडि तोल्लि;
यामेरलेल्लनु नब्जजुंडेरिगि । नामीद गोपिंचि नयमितलेक
"योरि! राक्षस! कडु नुचितंबु दक्कि । नारीजनुल येड नय मितलेक
वलिमि नेव्वतेनैन बट्टि भोगिंप । दलतु वेप्पुडु नीदु तललप्पुडविसि
वारक यिल नूरु व्रय्यलै रालु । बोरोरि"यनुचु शप्तुनि जेसि
विडिचे । ४२०

नदि कारणंबुगा नंगनाजनुल । हृदयंबु गरगक ये नेंदु गलय;
नालावु गोनक वानरुलतो गूडि । यीलंकपै रामु डेतेंचुटेल्ल
निद्रिंचु सिंहंबु नेरि मेलुकोल्पु । भद्रदंतावळ प्रततिविधंब"
यनि पल्कुटयु नव्वि यव्विभीषणुडु। द्दनुजनाथुनितोड दग विन्नविंचे:
"मोनयु निट्टूर्पुले ग्रोगुट गाग । घनमैन चितये गरळंबु गाग
गोपंबु ग्रलमुनु गोरलुगाग । नेपरियुंडुटे येरगोंट गाग
नमरंग जेक्कुन हस्तिन चेयि । कमनीयतर फणाकारंबु गाग
निजनखंबुलु मणिनिकरंबु गाग । भुजयुगमध्यंबु भोगंबु गाग
दारुणंबैन सीतकालसर्प । मे रूपमुन निन्नु नेल पोनिच्चु ?
नपकीर्ति यट, पापमट, सुखंबुनकु । विपरीतमट ! यिट्टि वितमेल ?
युडुगु ?" ४३०

जाते समय पुंजिकस्थला नामक सुन्दरी के वस्त्रों के हट जाने पर, (उसे) पकड़, दबाकर, बलपूर्वक (उसे) भोगा । वे सभी बातें अब्जज (ब्रह्मा) ने जानकर, मुझपर क्रुद्ध हो और बिना अनुनय के यह शाप देकर छोड़ दिया कि "रे राक्षस ! अधिक औचित्य को छोड़, नारी जनों के प्रति, नीति न मान, कभी किसी को बलपूर्वक पकड़ भोगना चाहोगे तभी तुम्हारे सिर टूटकर अवश्य पृथ्वी पर, सौ टुकड़े होकर गिर पड़ेंगे । जा रे !" ।। ४२० ।।

इस कारण से अंगनाजनों के मन को पिघलाए बिना (प्रसन्न किए बिना) मैं कभी उनसे संभोग नहीं करता । मेरी सामर्थ्य को न मानकर, वानरों के साथ राम का इस लंका पर (चढ़) आना सोनेवाले सिंह को भद्र-दन्तावल-प्रतति का जगाने के समान है ।" ऐसा कहने पर, हँसकर, उस विभीषण ने दनुजनाथ से उचित रूप से निवेदन किया । "अतिशय-लम्बी आहें ही फुफकार, अधिक चिन्ता ही गरल, क्रोध और हठ ही दाढ़ें, शोभा से विहीन रहना ही सुस्ताना, शोभा से गाल पर दबाया हाथ ही कमनीयतर फण, मणिनिकर ही नाखून, भुजयुगमध्य ही भोग बना दारुणाकार वाला सीता-रूपी कालसर्प तुम्हें किस विधान से छोड़ देगा ? (डसे बिना नहीं रहेगा) । यह कार्य अपकीर्ति (-प्रद) है, पाप है, सुख का

मनि यन्नतो बल्कि यंतट बोक। सुनिशितंबुग ब्रहस्तुनि जूचि पलिके;
"नेरि पिडुगुल बोलु नृपुनि बाणमुलु। गरुलंट नीदुवक्षमु गाडुनाडे
येरिगेंदु गा! केल यिट्टट्टु पडेंदु ? । करकुलाडिन माडिक गादु; मीदटनु
नी कुंभकर्णुंडु नी निकुंभुडुनु। नी कुंभुडुनु मरि यीमहोदरुडु
नीमहापार्श्वुंडु नीयिंद्रजित्तु। रामुनि गेल्चुवारा रणंबुननु ?
नेपु चूपक यप्पु डेंदु बोयेदरु ? । प्रापुलै मी रडुपडेदरु गाक ?
कडगि यिंद्रुडु वच्चि काचिन नैन। गडुनडुपडि सुरल् गाचिननैन
गालाग्नि रुद्रुंडु गाचिननैन। गालमृत्युवु वच्चि काचिननैन
रावणु जंपक रामभूपालु। डेविधंबुननैन नेल पोनिच्चु ?
दनुजेशुपै विल्लु धरियिंचुनपुडु। मनचेत साध्युडे मनुकुलेश्वरुडु ? ४४०
पिडिकिट नडगुने पेर्चु कालाग्नि? । पुडिसिट नडगुने पोंगारु जलधि?
पट्टंग वच्चुने पाताळतलमु ? । गट्टिप नलवियें गगनभागंबु ?

विपरीत (उल्टा) है। यह विधान क्यों ? छोड़ो (इसे)।" ऐसा अग्रज से कह, उतने से जाने न देकर (चुप न रहकर) सुनिशित (पैनी दृष्टि से) रूप से प्रहस्त को देखकर कहा— ॥ ४३० ॥

—"अभी क्यों इठलाते हो ? मनोहर वज्र के समान नृप (राम) के बाण जिस दिन तुम्हारे वक्ष पर गड़ जाएँगे, तभी मालूम होगा। परुष वचन कहने के समान नहीं होगा (उन बाणों को सहना।) यही नहीं, क्या यह कुंभकर्ण, यह निकुंभ, यह कुंभ, फिर यह महोदर, यह महापार्श्व, यह इन्द्रजित (आदि) रण में राम को जीतनेवाले हैं ? (नहीं) विकास दिखाए बिना तब कहाँ जा सकेंगे ? आप सब रोकने आएँ (रक्षा करने आएँ), सप्रयत्न इन्द्र आकर रक्षा करना चाहे, अतिशयता से बीच में आकर देवता रक्षा करें, कालाग्नि रुद्र भी रक्षा करे, कालमृत्यु आकर रक्षा करे, तो भी रावण का वध किए बिना किसी भी विधि से, (राम) क्यों (रावण को) जाने देगा ? दनुजेश पर जब धनुष चढ़ाएँगे, तब क्या मनुकुलेश्वर को हराना हमारे लिए सम्भव होगा ? ॥ ४४० ॥

—विजृंभित कालाग्नि क्या मुट्ठी में समाएगी? उमड़ता समुद्र मुँह में समा सकेगा ? पाताल-तल को पकड़ (छू) सकते हैं ? गगनभाग को (आकाश-रूपी वितान को) खड़ा कर देना संभव है ? दिग्वितान (आकाश-रूपी वितान) को तोड़ सकते हैं ? धूर्जटि (शिव) की तलवार को तोड़ सकते

त्रेंपंग वच्चुने दिग्वितानंबु ? । त्रुंपंग वच्चुने धूर्जटिवालु ?
नरुचेत नणचिन नणगुने सूर्युं ? । डेरगनि मीतोड निट्लाडनेल ?
कडुमूर्खु नाकारि कामातुरुंडु ? । मडियडे मीयट्टि मंत्रुलु गलुग ?
नाबुद्धि विनुने यी नाकेशवैरि । मी बुद्धि जेडुगाक मिक्किलि-
क्रोव्वि !"
यनि मोगमोडक याड ब्रहस्तु । डनुवाडु गैकोन का बिभीषणुनि
"नुरगुलतो बोरि योड मेन्नडुनुः । सुरलतो बोराडि स्रुक्कमेन्नडुनु;
यक्षुलतो गिट्टि मलय मेन्नडुनु; । राक्षसावळिचेत ग्रागमेन्नडुनु;
नरुडैन या रामनरनायकुनकु । दुरमुलो ने मोड्डुमे विभीषणुड ?
४५०
येचंदमुन वारि नेरुगुदो कानि । नीचेत विंटिमि नेडिट्टि विंत;

इंद्रजित्तु विभीषणुनिकि तन पराक्रम मेरिगिंचुट

दनुजुल लाविंत तक्कुवे ?" यनिन । ननियें नाग्रह मेत्ति यार्यिंद्रजित्तु
तोरमै पेर्चिन दुर्मद ग्रंथि । यारामु तम्मु शराग्निचे गाल
गारणं बटमीद गलुगुटजेसि । येरूपमुन नीति निच्चलो निडकः

हैं ? दबाने पर भी हथेली से सूर्य दब सकेगा ? आप अज्ञानियों से इस प्रकार की बातें करना क्यों ? अतिमूर्ख और नाकारि (रावण) जो कामातुर है, आप जैसे मन्त्रियों के होते मरकर क्यों नहीं रहेगा? मेरे विवेकयुक्त वचनों को यह नाकेश-वैरी सुनेगा ? (नहीं) आपकी बुद्धि (मन्त्रणा) के अनुसार, मदान्ध होकर नष्ट हो जाएगा।". ऐसा संकोच किए बिना कहने पर, प्रहस्त नामक (राक्षस ने) विभीषण की परवाह किए बिना कहा—"उरगों से लड़कर हम कभी नहीं हारे। देवताओं से लड़कर कभी दुर्बल नही बने। यक्षों के समीप जाकर कभी क्लान्त नहीं हुए। राक्षस-समूह से कभी संतप्त नहीं हुए। हे विभीषण ! तब उस मानव राजा राम के हाथ युद्ध में हम हारेंगे ? ॥ ४५० ॥

—पता नहीं किस प्रकार तुम उन्हें जानते हो, कि आज तुमसे ये विचित्र बातें सुनीं।

इन्द्रजित का विभीषण को अपना पराक्रम बताना

क्या दनुजों का सामर्थ्य इतना कम (हीन) है ?" क्रुद्ध हो इन्द्रजित जो स्थिर बना दुर्मदग्रन्थी है, (आगे चलकर) राम के अनुज की शराग्नि से जलने के कारण के होने से, किसी भी रूप से मन से नीति (की बात को)

"विनु विभीषण! नीवु वेरचेंदुगाक! । मनयंदु राक्षस महिमलूहिंप
हीनुडैनन्नु जालु नितटिपनिकि । मानक रामलक्ष्मणुल निर्जिप;
मूडु लोकंबु लिम्मुल नेलुवनि । बाडिवज्रमु गल वासवु वट्टि
चेरवेट्टना ? वानि सितकरि बट्टि । विरुवना कोम्मुलु ? वितये नाकु ?
ननलुनि गारिंचि यंतकु नोंचि । दनुजु वारिंचि यातलिवानि नोंडिचि
गालि दूलिचि यक्षपुनि मर्दिचि । शूलि नोंडिचि निष्ठुरत वाटिंचि ४६०
येचिन नाचेत नीनरुलु चाव । रा ? चेप्पे दुब्बि वारल बेंद्रसेसि !
कलतुना सप्तसागरमुलु सोच्चि । मलपुदुना मेरुमंदरंबुलनु ?
दाटुदुना धरातल मेल्ल गडव ? । मीटुदुना नेल मिटितो नंट ?
वंतुना जगमुलु ? वनचरकोटि । मुंतुना बेगडोंद मुन्नीटिलोन ?
बुडमि मोचिन नागपुंगवु बट्टि । पिडुतुना विषमेल्ल बिच्चिलिवोव?
नोक्कट दुंडंबु लोडिसि रा दिगिचि । दिक्करींद्रुल नीड्चि तेत्तुनापूनि?
भूमितो निप्पुडु भुजशक्ति मेरसि । प्रामुदुना चंद्र भानुबिंबमुल ?
वनचरकोटुल वेतुना पट्टि । दिनकर बिंबंबु दिक्कुलु गडव ?

न मानकर, (बोला)—"सुनो विभीषण ! हो सकता है, तुम डरते हो तो डरो । हमारे राक्षसों की महिमाओं का विचार करने पर, राम-लक्ष्मण का वध करने के लिए, कोई हीन (राक्षस) भी पर्याप्त है। तीनों लोकों का आनन्द से पालन करनेवाले (तथा) निशित वज्र वाले वासव (इन्द्र) को पकड़ (मैंने) बन्दी नहीं बनाया था ? उसके सितकरि (सफ़ेद हाथी, ऐरावत) को पकड़, उसके सींगों (दाँतों) को नहीं तोड़ा था ? यह क्या मेरे लिए आश्चर्य (-प्रद कार्य) है ? अनल को पीड़ित कर, अन्तक (यम) को दबाकर, दनुज (नैऋत) को रोककर, वरुण को खींच पकड़कर, पवन को मारकर, यक्षप (कुबेर) का मर्दन कर, शूली (शिव) को हराकर, निष्ठुरता को मान, ।। ४६० ।।

—(इन सभी को) सतानेवाले मेरे हाथ ये नर नहीं मरेंगे ? फूलकर, उन्हें बड़ा बनाकर (बेकार की) बातें करते हो ? सप्तसागरों में पैठकर (उन्हें) आलोडित कर दूँ ? मेरु (और) मन्दर (पर्वतों) को मटियामेट कर दूँ ? समस्त धरातल को लाँघ जाऊँ ? पृथ्वी को उछाल दूँ ताकि वह आकाश को जा लगे ? लोकों को झुका दूँ ? वनचर कोटि को समुद्र में डुबो दूँ जिससे वे भीत हो जावें ? पृथ्वी का वहन करनेवाले नागपुंगव (नाग-श्रेष्ठ) को पकड़ निचोड़ दूँ जिससे वह समस्त विष उगल दे ? एक साथ सभी के सूँड पकड़, चाहकर दिग्गजों को खींच लाऊँ ? भुजशक्ति से दीप्त हो चन्द्र

नालंबुलो वानरालि रक्तमुलु। ग्रोलितुना भूतकोट्लचेत ?
गप्पुदुना यंपगमुलचे मिन्नु। निप्पुडमियु दिक्कु लिन्नियु गूड?
४७०
गडु नोंगल् वट्टि याकसमुन द्रिप्पि। यडतुना नेलतो नर्कुनि रथमु ?
बेंडचेत लोचेत बृथिवियु मिन्नु। नडतुना पोंडिपोंडियै रालिपोव ?
दनुजाधिनाथुनि तम्मुड वगुट। निनु नोंडनाक मन्निचिति गानि
योरुडैन सैतुने ? यूरकयुंडु; । वेरविडि माटलु वे याडनेल ?"

इंद्रजित्तु वीरमुलनु विभीषणुडु गर्हिंचुट

ननवुडु गोपिंचि याविभीषणुडु। गनुगोनि पलिके नुद्गाढवाक्यमुल:
"नेव्वनिगा जूचितिनकुलेश्वरुनि ? । ग्रोव्वुलु वलिकेदु कूडदु नाक;
गणुतिप निंद्रुंडु गाडु नीकोड। रणभीषणुंडगु रामुंडुगानि;
गणुतिप ननलुंडु गाडु नीकोड। रणगरिष्ठुंडगु रामुंडुगानि;
गणुतिप गालुंडु गाडु नीकोड। रणमहोग्रुंडगु रामुंडु गानि;
गणुतिप निरृति गाडु नीकोड। रणभीकरुंडगु रामुंडु गानि; ४८०

और भानु-बिंबों को ज़मीन पर डाल रगड़ दूं ? वनचर-कोटियों (समूहों) को पकड़कर दिनकर-बिंब तथा दिशाओं के उस पार फेंक दूं ? युद्ध में वानरालि (वानर-समूह) का रक्त भूतकोटियो को पिला दूं ? अस्त्र-समूह से आकाश, यह पृथ्वी, समस्त दिशाओं को एक साथ ढंक दूं ? ।। ४७० ।। —अतिशय जुआ पकड़ आकाश में घुमाकर, अर्क (सूर्य) के रथ को ज़मीन पर पटक दूं ? वाएँ और दाएँ हाथ से (क्रमशः) पृथ्वी और आकाश को दबा दूं जिससे वे चूर-चूर हो गिर जाएँ ? दनुजाधिनाथ के अनुज होने के कारण तुम्हें कुछ कहे विना क्षमा कर दिया, दूसरा होता तो क्या सहन करता ? (नहीं) चुप रहो। उपायहीन हज़ार बातें क्यों करते हो ?"

इन्द्रजित के दम्भी वाक्यों द्वारा विभीषण की निन्दा

ऐसा कहने पर वह विभीषण उसे देख, उद्गाढ वाक्यों से बोला— "इनकुलेश्वर को कौन समझ रहे हो ? दर्पयुक्त वचन (क्यों) कहते हो ? ऐसा अनुचित नहीं कहना चाहिए। गणना करने पर वह इन्द्र नहीं है जो तुम्हारे हाथ हार जाए। वह तो रणभीषण राम है। गणना करने पर वह अनल नहीं है जो तुम्हारे हाथ हार जाए। वह तो रणगरिष्ठ राम है। गणना करने पर वह काल नहीं है जो तुम्हारे हाथ हार जाए। वह तो रणमहोग्र-राम है। गणना करने पर वह निरृति नहीं है जो तुम्हारे हाथ हार जाए। वह तो रणभीकर राम है ।। ४८० ।।

गणुतिप वरुणुंडु गाडु नीकोड । रणविनिद्रुंडगु रामुंडु गानि;
गणुतिप ननिलुंडु गाडु नीकोड । रणनिपुणुंडगु रामुंडु गानि;
गणुतिप धनदुंडु गाडु नीकोड । रणमहाशनियगु रामुंडु गानि;
गणुतिप बशुपति गाडु नीकोड । रणविजयुंडगु रामुंडु गानि;
वारि नोर्चिनरीति वच्चुने योर्व । नारामदेवुनि नालंबुलोन ?
दलयु दप्पिनयट्टि तलपुलु दलचि । तलक्रिंदु वडियेदु तद्दयु ग्रोव्वि;
कुलनाशकुंडवु कोडुकवा नीवु ? । वलयु रावणु पगवाडवुगाक !
पावकनिभरामबाणघट्टनकु । रावणुंडा योर्चु रणमुलो निलिचि?
यी रावणुडु तन हितुलतो गूड । ना रामचंद्रुनि यडुगुल कॆरगि
मणुलतो वारणमणुलतो दुरग ।मणुलतो मानिनीमणिनिच्चुटॊप्पु;
४९०
नीकुन्न राघवु डीयब्धि गट्टि । यीकुलं बडपक येल पोनिच्चु?"
ननवुडु रावणुं डाविभीषणुनि । दन रोषदृष्टुल दप्पक चूचि

रावण-विभीषण संवादमु

"पगवानितो नैन बायक कूडि । मिगिलिन येपुतो मॆलगंग वच्चु;

गणना करने पर वह वरुण नहीं है जो तुम्हारे हाथ हार जाए। वह तो रण-विनिद्र राम है। गणना करने पर वह अनिल नहीं है जो तुम्हारे हाथ हार जाए। वह तो रणनिपुण राम है। गणना करने पर वह धनद नहीं है जो तुम्हारे हाथ हार जाए। वह तो रण-महा-अशनि राम है। गणना करने पर वह पशुपति नहीं है जो तुम्हारे हाथ हार जाए। वह रणविजयी राम है। उपरोक्त लोगों का सामना करने के समान, युद्ध में रामदेव का सामना कर सकते हैं क्या? अधिक गर्वांध हो, सीमा से परे विचार कर, उल्टे सिर गिरोगे। कुल नाश करनेवाले तुम भी पुत्र हो? रावण के लिए तो तुम अवश्य शत्रु हो। पावक-निभ (सम) राम-बाण के आघात का, रण में खड़े होकर, रावण सामना कर सकेगा ? इस रावण का अपने हितू-जनों के साथ, उस रामचन्द्र के चरणों में नत हो, मणियों, वारणमणियों, तुरगमणियों के साथ मानिनीमणि (सीता) का देना उचित है ॥ ४९० ॥

नहीं देगा तो राघव इस अब्धि पर (पुल) बाँधकर, इस कुल का नाश किए बिना कैसे छोड़ देगा ?" ऐसा कहने पर रावण उस विभीषण को अपनी रोष (पूर्ण)-दृष्टियों से अवश्य देख, (बोला)—

रावण-विभीषण-सम्वाद

"शत्रु से भी सदा मिल-जुलकर शोभा के साथ विचर सकते हैं, पटु-

बटुविषं बौलिकेडु पामुतोनैन । जटुलनिर्भयवृत्ति जरियिंपवच्चु;
दनवानिवले नुंडि दायल गूडि । मनुवानितो गूडि मनरादु काक!
वारक नी वट्टिवाडवु गान । वैरुल नायोद्द वर्णिंचेदुव्वि;
तम्मुडवनि चंपदगदुका; कीवु । तम्मुडवा नाकु दायवु गाक"
यनवुडु ब्रह्मशापातिशयंबु । गौनकौनुटयु जूचि कुंभकर्णुंडु
दम्मुनिमाटलु दगवनराक । यिम्मुलाडेडु नन्न नेट्टनलेक
यग्गौरवमु तोड नन्नकु म्रौक्कि । दिग्गुन गुहकु निद्रिंपग जनियें;
५००
जनिनपिम्मट विभीषणुडु रावणुनि । कनिये जित्तंबुन नलुक दीपिंप:
"नन्नवु गान नी यापद कुलिकि । यिन्नियु जेप्पिति हितवनि नीकु;
बौसगदु बहुमुखंबुल गान नीकु । नसुरेश ! चेप्पिन याप्तुलबुद्धि;
हितवुसेप्पेडि मंत्रुलेंदु बुट्टुदुरु ? । हितवनि विनु राजुलेंदु गल्गुदुरु ?
तगुनाकु जेप्पुट; तगुनीकु विनुट; । तग सीत निच्चुट तगुनीति नीकु;
बलमेंत गलिगिन बरिकिंचि चूड । नलवेंत गलिगिन नदियेमि सेयु
बुरुषुनि वेरवुन बोनीवु पेचि । परिकिंप दैवंबु प्रतिकूल मैन ?

विष को उगलनेवाले सर्प के साथ ही सही, चटुल (अधिक)-निर्भय-वृत्ति से विचरण कर सकते हैं। अपने (पक्ष के) व्यक्ति के समान रहकर, शत्रुओं का साथ देकर रहनेवाले के साथ नहीं रह सकते। तुम ऐसे ही व्यक्ति हो, इसीलिए अबाध रूप से, फूलकर वैरियों का मेरे पास वर्णन (प्रशंसा) करते हो। अनुज मानकर तुम्हें मारना नहीं चाहिए। किन्तु तुम मेरे भाई हो क्या ? शत्रु ही हो।" ऐसा कहने पर ब्रह्मा के शाप की अतिशयता (प्रबलता) के प्रारम्भ होते देख, कुंभकर्ण अनुज की बातों को न्याय-संगत न कह सक, (मिथ्या) सुख की बातें करनेवाले अग्रज की बातों का खण्डन न कर सक, गौरव के कारण अग्रज को प्रणाम कर, शीघ्रता से सोने के लिए गुफ़ा की तरफ़ चला गया ॥ ५०० ॥

(उसके) जाने के बाद विभीषण ने चित्त में क्रोध के दीप्त होने पर रावण से कहा—"(तुम मेरे) अग्रज हो, अतः तुम्हारी आगत-विपद् के बारे में डरकर, यह सब तुम्हारे हित के लिए कहा है। हे असुरेश ! आप्तों के हितवचन, बहुमुख वाले होने के कारण, (तुम्हारे कानों में) नहीं बैठते। हित का दिग्दर्शन करनेवाले मन्त्री कहाँ होते हैं ? (उसे) हित मानकर, सुननेवाले राजा कहाँ होते हैं ? मेरे लिए कहना उचित है। सुनना तुम्हारे लिए उचित है। ढंग से सीता को दे देना तुम्हारे लिए उचित नीति है। कितना भी बल क्यों न हो, सोचकर देखने पर, सामर्थ्य कितना भी हो,

दैवंबुना नोंडु दैवंबु गलडे ? । दैवंबु दशरथतनयुंडु गाक !"
यनि विभीषणुडाड ना रावणुंडु । विनि बोमल् मुडिवड विकृता-
स्युडगुचु
मिन्नंद गोंपिचि मीसंबुलदर । गन्नुल मंटलु ग्रम्म निट्लनियें:५१०
"नेन्नेदु रामुनि निट्टु दैवमनुचु । नन्नरुडे दैव मय्येंडुनेनि
वेंडगयि तंड्रिचे वेंडलंग गोट्टि । बडि यडवुल नेल बडि म्रग्गि स्रुक्क?
बिनु माकु नलमुनु वेरु वेल्लंकि । दिनियेंडिवानिने देवरयंड्रु !
ननु दाकवलवदे नन्नेदिरिंचि । तन देवि गोंनिराग दैवंबयेनि ?
नलसि तम्मुडु दानु नडवुललोन । बलविंचि पलविंचि पलुमारु दिरिगि
वच्चि सुग्रीवुडन् वानरु मरुगु । सोंच्चुट दैवंबु चोंप्पुले तलप ?
बलुमरु नेटिका पंद मानवुनि । जैलगि नातो सरिचेसि चेंप्पेदवु ?"
अनिन रावणुतोड ननिये ग्रम्मरनु । दनलोन नव्वुचु दग विभीषणुडु:
"अंसंगि दिव्युल वेंप ऋषुल रक्षिप। नसुरुल शिक्षिप नवनि बालिप
नादिनारायणुं डर्कवंशमुन । नीदाशरथिगाग निट्लु जन्मिचें; ५२०
वनजासनादुलु वर्णिपलेरु: । सनकादुलुनु गूड जर्चिपलेरु;

यदि दैव प्रतिकूल होकर, पुरुष को सन्मार्ग पर चलने न दे तो वह क्या कर सकता है। दैव कहलाने के लिए अन्य दैव कहाँ है ? दैव तो दशरथतनय ही है।" ऐसा विभीषण के कहने पर, रावण ने भौंहों के तनने पर, विकृत मुख वाला होता हुआ, अत्यधिक क्रुद्ध हो, मूँछों के काँपने पर, आँखों से ज्वालाओं के फैलने पर यों कहा— ।। ५१० ।।

—"उस राम को दैव मानकर कहते हो ! यदि वह नर भगवान है तो मूर्ख बन, पिता से निष्कासित होकर, जंगलों में जा मरने की क्या आवश्यकता है ? सुनो, पत्ते-वत्ते, जड़-वड़ खानेवाले को ही भगवान कहते हैं क्या ? यदि वह दैव ही है तो मुझपर आक्रमण कर, मेरा सामना कर, अपनी देवी को ले जाना चाहिए। क्लान्त होकर स्वयं अनुज के साथ जंगलों में प्रलाप कर-कर, बार-बार घूमकर, अन्त में सुग्रीव नामक वानर की आड़ (शरण) में जाना क्या भगवान के काम हैं ? बार-बार उस भीरु मानव को मेरे बराबर क्यों बताते हो ?" (ऐसा) कहनेवाले रावण से, अपने में हँसते हुए, फिर विभीषण ने कहा—"दिव्यों का पालन (रक्षा) करने, ऋषियों की रक्षा करने तथा असुरों को दण्डित करने, अवनि पर शासन कर विलसित होने के लिए आदिनारायण अर्कवंश में, दाशरथि होकर इस प्रकार जन्मा है ।। ५२० ।।

वनजासन (ब्रह्मा) आदि वर्णन नहीं कर सकते, सनक आदि भी

आ महामहिम नीकलवियेतेलिय?। रामुडु मर्त्युडे राक्षसाधीश !
कान रामुनि गनि कंजास्य निम्मु । दानवेश्वर ! मन दलचेदवेनि;
मलगक यर्थ कामंबुलवलन । दलपग्गलंवैन धर्म मेक्कडिदि ?
नी वोल्लवेन्नडु नीतिमार्गंबु; । नीवार लोल्लरु नीकंटे मुन्ने;
कान गार्याकार्यंगति यिट्टि दनवु; । दानवेश्वर ! नीकु धर्मंबु गलदे ?
वातूलसुतुचेत वनमु चेंद्रुट्लु । सीतचे लंकयु जेंडगलदिक;
वच्चेद रगचरुल् वारिधि दाटि; । वच्चि यी राक्षस वनितल नेल्ल
मोड्चिन करमुल मुंदलल् वट्टि । यीड्चेद; रट्टुवले नीड्वकमुन्न
योप्पिपुमा सीत नुर्वीश्वरुनकु; । दप्पक चेप्पिति दानवाधीश! ५३०
मंडेडि नग्नुलमाड्कि राघवुनि । दंडिवाणंबु लुद्दंडत वच्चि
नीरोम्यु गोनि काड नेर्तुने चूड? । नीराज्यगति सूड नेर्तु गाकेनु !
प्रळयानिलयु गुलपर्वतशिखर । मुल गूल्चुपगिदि रामुडु भंडनमुन
नीतललंदंद नेलपै गूल्प । नेतेरंगुन निकने जूडनेर्तु ?"
ननिन विभीषणु नदरंट जूचि । मुनुकोनि पदिमोगंबुलु जेवुरिंप

(उसके गुणों की) चर्चा नहीं कर सकते। उस महामहिम को जानना तुम्हारे लिए सम्भव है ? हे राक्षसाधीश ! वह राम क्या मर्त्य है ? अतः हे दानवेश्वर ! यदि जीना चाहते हो तो राम के दर्शन कर, कंजास्या (कमलमुखी सीता) को दे दो। यदि अर्थ-कामों से मुँह न मोड़, उन्हीं का अधिक विचार करोगे तो फिर धर्म कहाँ रहेगा ? तुम कभी नीति-मार्ग को नहीं चाहते। तुम्हारे लोग तुमसे पहले ही नहीं चाहते। अतः तुम कार्य (तथा) अकार्य की गति को समझ नहीं पाते। हे दानवेश्वर ! तुम्हारा भी कोई धर्म है ? वातूलसुत (हनुमान) से उपवन के नष्ट हो जाने के समान, अब आगे सीता से लंका भी नष्ट हो जाएगी। अगचर के कारण वारिधि पार कर आएँगे, आकर इन समस्त राक्षस-स्त्रियों को प्रथमतः झुके हाथों से पकड़ खींचेंगे। उस प्रकार खींचने से पहले सीता को उर्वीश्वर (राजा राम) को देकर मनवा लो। हे दानवाधीश ! आवश्यक (सब बातें) कही हैं ॥ ५३० ॥

प्रज्वलित अग्नियों के समान राघव के पटुबाणों के उद्दण्डता से आकर—तुम्हारे वक्ष पर गड़ते मैं देख सकूँगा क्या ? तुम्हारी राज्यगति (शासन) को देख सकता हूँ। जैसे प्रलय-अनिल कुलपर्वत शिखरों को ढहा देता है, उसी प्रकार राम युद्ध में तुम्हारे सिरों को जहाँ-तहाँ गिरा देगा। उस विधान को मैं कैसे देख सकूँगा ?" (ऐसा) कहने पर प्रथमतः दसमुखों के लाल होने पर, विभीषण भीत हो जाए, ऐसा उसे देख,

रावणुडु विभीषणुनि दन्नि पुरि वेंडल गोंट्टुट

गटमु लुप्पोंग नोक्कट नूर्पु लेसग । बट्टुधूममुलतोडि पावकुंडनग
बदहति मेदिनीभागंबु वगुल । नदलुपुबेट्टुन नाकसंबदर
'नह्हिरा! यितनि कोपावेश' मनग । गद्दियनुंडि डिग्गिन डिग्गनुरिकि
यडिदंबु जळिपिंचि यट्टु व्रेय बूनि । युडिगि विभीषणु नुग्रत दन्ने;
दन्निन वज्रंबुताकुन गूलु । नुन्नतगिरि वोलें नुर्विपैं बडियें; ५४०
बडिन वेंडियु व्रेय बार ब्रहस्तु । डेंड सोंच्चि वलदनि येंडलिंचे वालु;
गोलुवेंल्ल नातनि गोपंबु जूचि । 'तलकोनि येंत वितलु वुट्टे' ननग
ननलार्चु लक्षुल नडर दैत्येशु । डनियें निर्दयत ब्रहस्तुनि जूचि:
"वीनि दुरुक्तुलु विंटे प्रहस्त ! । वीनि नम्मुदुरे येंव्विधि दम्मुडनुचु?
वेंडलंग द्रोयुमु वेगंबे वीनि; । नेंडसेसि मोंगमोडितेनि नायान !"
यनिन ब्रहस्तुंडु नव्विभीषणुनि । गनुगोंनि पलिकें नाग्रहवृत्ति दोप:
"वलदिट नुंड; नीं वलसिनयेंडकु । वेलुवडि यरुगुमु वीटिक बासि"

रावण का विभीषण को लात मारकर नगर से निकाल देना

—गंडस्थलों के फूलने पर, एकदम उसाँसों के उमड़ने पर, मानों पट्टु धूम से युक्त पावक हो, पदाघात से मेदिनी (धरती) फूटे, भर्त्सना से आकाश कम्पित हो जाए, 'वाह रे ! (यह है) इसका कोपोवेश' (ऐसा अन्य जन कहें), (इस प्रकार) (रावण ने) सिंहासन से झट कूदकर, तलवार हिलाकर, मार डालना चाहकर, रुककर, विभीषण को उग्रता से लात मारी। लात मारने पर (विभीषण) वज्र के प्रहार से गिरनेवाले उन्नत गिरि के समान उर्वी पर गिर पड़ा ।। ५४० ।।

गिर पड़ने पर फिर (लात) मारने पर, (उसके) भागने पर, प्रहस्त ने बीच में आकर, मनाकर, तलवार को हटा दिया। समस्त सभासद उसके कोप को देखकर कहने लगे कि 'जान-बूझकर कितने आश्चर्य (-प्रद कार्य) उत्पन्न हुए।' अनल की अर्चियों के आँखों से उमड़ने पर, दैत्येश ने निर्दयता से प्रहस्त को देखकर कहा—"हे प्रहस्त ! इसकी दुरुक्तियों को सुना है न ? किस प्रकार से इसे अनुज मानकर विश्वास करें ? इसे शीघ्र निकाल ढकेल दो। अन्तर कर, संकोच करोगे तो मेरी सौगन्ध है।" (ऐसा) कहने पर प्रहस्त ने उस विभीषण को देखकर, क्रोध प्रवृत्ति के दीखने पर कहा—"(अब) यहाँ मत रहो। (इस) घर को छोड़, अपने इच्छित स्थान को (यहाँ से) निकलकर जाओ।" (ऐसा) कहने पर,

यनिन विभीषणुंडति कोपुडगुचु । ननलुंडु नलुडुनु हरुडु संपाति
यनुवारितो गूडि यसुरेंद्रु तोड । ननियें नुद्धति गदाहस्तुडै निलिचि:
"मदनातुरुंडवु; मरि पापमुलकु । गुदुरैनवाडवु; क्रूरकर्मुडवु; ५५०
मुन्ने कदा निन्नु मूर्खुनि बाय । नुन्नाड; निदि ग्रोत्तयुनु गादु नाकु;
नार्तरक्षकुनि गृपांबुधि दिव्य । मूर्ति जगद्धितंबुग वुट्टिनट्टि
सत्यसंधुनि रामजनपालचंद्रु । नित्ययशोनिधि निर्मलात्मकुनि
शरणनि पोयेद; शरणन्न यतडु । करुणतो ब्रोचु नेकालंबुनंदु;
नेनु बोयिन नैन निटमीद नेरिगि । मानैन नीतितो मनु दानवेंद्र !
यट्टुनु गादेनि नगचरुल् लंक । जुट्टिनयपुडैन जौनुपु नाबुद्धि;
यट्टुनु गादेनि नर्कनंदनुडु । दट्टिचुनपुडैन दलपु नाबुद्धि;
नोंडेनि रघुरामुनुग्रबाणमुलु । खंडिचुनपुडैन गनुमु नाबुद्धि"

विभीषणुडु तल्लि वद्द केगुट

ननि पल्कि यन्नकु नवनतुंडगुचु । दन तल्लिनगरि कुद्धतगति बोयें
जैलगिन सिंहंबुचेपडि तप्पि । मलगिन वगतोडि मदकरिवोलें;
५६०

विभीषण अति क्रुद्ध हो, अनल, नल, हर, सम्पाति नामक लोगों के साथ हो, औद्धत्य से, गदाहस्त हो खड़े होकर, असुरेन्द्र से बोला—"(तुम) मदनातुर हो, और पापों के आलवाल हो, क्रूरकर्म (करने) वाले हो ॥ ५५० ॥

(इससे) पहले ही तुम (जैसे) मूर्ख से बिछुड़ने वाला था। यह (इस प्रकार का आचरण) मेरे लिए नया भी नहीं है। आर्तरक्षक, कृपांबुधि, दिव्यमूर्ति (वाले), जगद्विख्यात रूप से उत्पन्न सत्यनिष्ठ, राम-जनपालचन्द्र, नित्य-यशोनिधि (और) निर्मलात्मा की शरण में जाऊँगा। शरण माँगने पर वे हर समम करुणा से रक्षा करते हैं। हे दानवेन्द्र ! मेरे जाने के बाद (ही सही) अब आगे समझकर, उत्तम नीति से जीवन-यापन करो। ऐसा भी नहीं तो जब अगचर लंका को घेर लेंगे तब मेरी बुद्धि (हितवचन) को (मन में) प्रवेश कराना। ऐसा भी नहीं तो अर्कनन्दन के भर्त्सना करते समय तो मेरी बुद्धि (हितवचन) का स्मरण करना। नहीं तो रघुराम के उग्र बाणों के खण्डन करते समय तो मेरी बुद्धि का स्मरण करोगे।"

विभीषण का माता के पास जाना

ऐसा बोलकर, अग्रज को अवनत हो (सिर झुकाकर), उद्धतगति से

भीकरारवसंस्फीतमै परगि । चेकॊनि पिडुगडच्चिन यद्रिभंगि;
ज़नि यट गैलास सदृशमैनट्टि । घनतरंबुग विश्वकर्मचेनॆन्न
गृहमुन नुपवासकृशमैन मेन । महितशुक्लांबरमानित यगुचु
वॆन्नॆलरसमुन विदलिंचि तिविचि । मिन्नेटिनुरवुन मॆरुगिडुकरणि
नरसिनबॊमलुनु नरपच्चॊळ्ळियमु । गरमॊप्पि यॆंतयु गौरवं बॊलय
बन्नुगा मुदुककुप्पसमुलु दॊडिगि । चॆन्नार ब्रद्दलु सेतुल बट्टि
मुदिसिन विप्रुलिम्मुल नॆंदरेनि । वदलक चेरि सावासुलै कॊलुव
गरुण प्रवाहंबुगा वचोभंगि । सरळत्व मूर्मुल चंदंबुगाग
बॊलुपार शमदमंबुलु तटंबुलुग । गल नरलेल्ल जॊक्कपुनुर्वुगाग
वॆलसिन तनयॊद्दि वेदघोषमुलु । सललितं बगुचुन्न जलघोषमुलुग ५७०
विनुत बहुद्विजविततुलतोड । दनरारु नाजह्नुतनय ना नॊप्पि
बहुपुराणंबुलु बहुवेदमुलुनु । बहुशास्त्रमुलु पॆक्कु ब्रह्मराक्षसुलु
बहुभंगि जदुवंग बहुमति विनुचु । बहुळनिर्मलशुभप्रभ देजरिल्लु
चुंडियु रावणु नॊप्पमि दलचि । कॊंडंत वगपु जेकॊनियुन्न तल्लि

अपनी माता की नगरी में गया। विजृंभित सिंह के हाथ पड़, बचकर, दुख से मुड़े मदगज़ के समान, ॥ ५६० ॥

—भीकर-आरव (ध्वनि)-संस्फीत हो विचरण करनेवाले वज्र के (आघात से) दबे पर्वत के समान, जाकर, वहाँ कैलास-सदृश, महत्तर रूप से विश्वकर्मा से निर्मित गृह में, उपवासों से कृश बने शरीर से, महित-शुक्ल-अम्बर से मान्य माता को देखा। ज्योत्सना के रस में घोलकर, काढ़कर, आकाश-गंगा के फेन में चमकाई हों, ऐसी सफ़ेद भौंहें, तथा सफ़ेद (पलित) जूड़े के अधिक शोभित होने से अत्यधिक गौरवयुक्त हो, ढंग से मोटे वस्त्र धारणकर, शोभा से बाँस (छड़ी) को हाथ में लेकर, अनेक वृद्ध ब्राह्मणों के निरन्तर समीप में सेवा करते रहने पर, वचोभंगिमा के करुणा के प्रवाह के समान, सरलता के ऊर्मियों के समान होने पर, सुशोभित शम (और) दम के तट होने पर, सफेद केशों के फ़ेन होने पर, अपने निकट विराजमान वेदघोषों के सललित रूप से जलघोष होने पर, ॥ ५७० ॥

—विनुत-बहु-द्विज (पक्षी, ब्राह्मण)-ततियों (समूहों) के साथ विलसित उस जह्नुतनया (गंगा) के समान शोभित हो, अनेक ब्रह्म-राक्षसों के बहु पुराण, बहु वेद, बहु शास्त्रों को बहुभंगि (अनेक प्रकार से) पढ़ने पर बहुमति (स-सम्मान) सुनते हुए, बहुल-निर्मल-शुभ-प्रभा से दीप्त होते हुए भी, रावण के अमंगल (अनौचित्य) का स्मरण कर, अत्यधिक व्यथा को लिए

गांचि दंडमु वेट्टि कन्नुल नीरु । निंचि दु:खितुडैन निव्वेंरगंदि
कैकेसि नंदनु गरमुल नेत्ति । कैकोनि यक्कुन गदियंग जेर्चि
"लोपलियिड्ल नालोकिपरानि । यापद पुट्टेनो? यटुकाक मरियु
ब्राह्मण वधमु जोप्पडियेनो? काक । ब्रह्म कोपिंचेनो ? परिकिंचिचूड
हरि यलगेनो ? हरु डलगेनो? रामु । डुरुवडिमै वच्चेनो संभ्रमिंचि ?
यिदि येमि नापुत्र! यित शोकिंचे? । दिदि येमि वित ? नीवितयु देल्पु;
५८०
मडिगेद; नदि विन्नयंतकु नाकु । नोंडलिलो ब्राणंबु लुंडवय्येडिनि!"
अनि पल्कु तल्लिकि नाविभीषणुडु । मुनुकोनि करमुल मोगिचि यिट्-
लनियें:
"नवधारु! देवि! नीयग्रनंदनुडु । रविकुलाधीश्वरु राककु नेडु
मंत्रुलु दानुनु मंत्रकूटमुन । मंत्र मिट्टिदि यनि मदि जर्चसेय,
'निन्नि विचारंबु लेल ? रामुनकु । नेन्निभंगुल सीतनिच्चुट लेस्स;
यीकुन्न राघवुं डीयब्धि गट्टि । यीकुलं बडपक येल पोनिच्चु ?'
ननि योत्ति चेप्पिन नापंक्तिकंठु । डनलुंडु मंडिन याकृति मंडि
तन्नें गद्दियतोड धरबड नन्नु; । दन्नि यंतट बोक तालिमि दक्कि

माता को देख, प्रणामकर, आँखों में आँसू भर, दुखी हो रहा। (उसे देख) आश्चर्यचकित हो, कैकेसी ने नन्दन (पुत्र) को हाथों से उठाकर, छाती से लगाकर (पूछा)—"अन्त:पुर पर देखने न योग्य विपत्ति आई है क्या? ऐसा नहीं तो फिर ब्राह्मण-वध हो चुका है क्या? या ब्रह्मा क्रुद्ध हो गया? ध्यान से देखने पर हरि रूठ गया? हर रूठ गया? राम संभ्रम से अत्यन्त वेग से (चढ़) आया? यह क्या मेरे पुत्र! इतने दुखी क्यों हो? यह कैसा आश्चर्य है? ॥ ५८० ॥

—पूछ रही हूँ, तुम सब कुछ बताओ। उसे सुनने तक मेरे प्राण शरीर में नहीं रह पाएँगे।" ऐसा कहनेवाली माता से उस विभीषण ने आगे बढ़, हाथ जोड़ यों कहा—"ध्यान दो हे देवी! तुम्हारे अग्रनन्दन (रावण) ने रविकुल-अधीश्वर (राम) के आगमन के कारण आज मन्त्रियों के साथ स्वयं मन्त्रकूट (मन्त्रणागृह) में मन से चर्चा की कि उपाय कैसा हो। मैंने जोर देकर कहा कि 'इतने विचार क्यों? सभी प्रकार से राम को सीता दे-देना उत्तम है। नहीं दोगे तो राघव इस अब्धि को पार कर, इस (राक्षस) कुल का दमन किए बिना क्यों जाने देंगे?' (ऐसा) कहने पर, वह पंक्तिकण्ठ (वाला) अनल के समान बल उठकर, मुझे सिंहासन के साथ लात मारी जिससे मैं धरा पर गिर पड़ा। लात मारकर, उतने से न

यदिदंबु गोनि व्रेय नट्टु पूनुटयुनु । जेंडक ने व्रतिकि वच्चिति नोक्क-
भंगि;
बोयॆद नारामभूवरु गान; बोयि । यायनकृप बोंदियुंडेदनु; ५९०
ईवीट नाकिक नेव्वरु गलरु । भाविंपगा नात्मबंधुवु लोरुलु ?"
ननवुडु नतिभीत यै मूर्छनोंदि । घनमैन धैर्यंबुकतमुन देलिसि
कैकेसि नंदनु गनुगोनि पलिके, । "नीकथ मुन्नु ने नेर्रिगिनदान;
नदि येर्रिगिंचेद नमरुलु मुनुलु । द्रिदशेंद्रुडुनु ब्रह्मदेवुडु गूडि
यमृताब्धिकड केगि यच्युतु गांचि । तमपडु निडुमलु दारेर्रिगिंपग
"नीरसंबुन मिम्मु नेचुचुन्नुन्न । क्रूरुल रावणकुंभकर्णुलनु
जंपेंडु कोर्रकुनै जनियिंचुवाड । सोंपार वर्तिचु सूर्यवंशमुन"
ननि देवु डाडिनयट्टि वाक्यमुलु । विनुपिंचे मीतंड्रि विशदंबुगाग;
विनि येनु वेर्रचि मद्विभुन किट्लंटि। "नैनपंग नीकुलं बेव्वडु निलुपु
नीपुत्रकुललोन? निक्कंवु सेप्पु । मापुण्यु डेव्वडो ? यनघ ! ना" कनिन
६००
"सत्यंबु धर्मंबु शौचंबु गलिगि । नित्ययशोनिधि नी कडगोट्टु
कोंडुकु रामुनि कृप गोरि यीलंक । गडुनोप्प बालिपगलवाडु मीद"

रुककर, धैर्य खोकर, तलवार ले मारना चाहा तो (किसी) एक प्रकार से बचकर, जीवित आया हूँ। (मैं) उस राम-भूवर को देखने जाऊँगा। (और) उनकी कृपा प्राप्त कर रहूँगा ।। ५९० ।।

अब मेरे लिए इस प्रदेश में सोचने पर भी अन्य आत्मबन्धु कौन हैं ?" ऐसा कहने पर अतिभीत हो, मूर्च्छित हो, अति धैर्य के कारण, होश में आकर, कैकेसी ने नन्दन को देखकर कहा—"मैं इस कथा को पहले ही जानती हूँ। वह बताऊँगी। अमर, मुनि, त्रिदशेन्द्र (इन्द्र), ब्रह्मदेव ने मिलकर, अमृताब्धि के पास जाकर, अच्युत को देखकर, अपनी विपत्तियों के बारे में स्वयं बताया। (भगवान विष्णु ने कहा)—"इस प्रकार तुम्हें सतानेवाले क्रूर रावण (और) कुंभकर्ण को मार डालने के लिए मैं रमणीयता से प्रवर्तित होनेवाले सूर्यवंश में जन्म लूँगा।" ऐसा भगवान के कहे वाक्यों को विशद रूप से तुम्हारे पिता ने (मुझे) सुनाया। सुनकर मैं डरकर अपने विभु से यों बोली—"तुम्हारे कुल को तुम्हारे पुत्रों में कौन सुस्थिर रूप से बनाए रखेगा ? हे अनघ ! मुझे सच बताओ कि वह पुण्यवान कौन है ?" (ऐसा) कहने (पूछने) पर, ।। ६०० ।।

—(उन्होंने कहा) "सत्य, धर्म, शौच से सम्पन्न (तथा) नित्य-यशोनिधि तुम्हारा कनिष्ठ पुत्र राम की कृपा चाहकर (प्राप्त कर) आगे बड़े औचित्य

ननि चॅप्पि तपमुन करिगॅ मीतंड्रि । यॉनर नम्मेरुनगोपांतमुनकु; गान रामुडे हरि कंजाप्तकुलुडु; । मानिनि यासीत महनीयलक्ष्मि; विश्रवसुनि माट वेरॉक्कटगुनॆ ? । विश्रुतकीर्ति ! येविधमुननैन जनुमु; रामुनि गनि शरणनि म्रॉक्कि । मनुमु, राक्षसकोटि मनुप जिंतिपु;
आयुवु श्रीयुनु नगुगाक ! नीकु, । नायन्न ! पॉम्मु श्रीनरनाथुकडकु" यक्षतलु वॅट्टि यमिलि बॅमि । तनयुनि दीविंचि तग वीडुकॉलुप नतडुनु दल्लिकि नवनतुंडगुचु । मतिलोन बॉंगुचु मंत्रुलु दानु रावणु तनुवुन ब्राणंबु लॅदु । नीविधंबुन बोवुनिक ननुमाड्कि ६१०

वेगंबॆ याकाशवीथिकि नॅगय । नागुणाढ्युनि जूचि या लंकवारु तमतम वीथुल दमदु लोगिळ्ळ । गुमुरुलुगा गूडुकोनि पल्किरपुडु: "धर्मंबु दिगनाडि तम्मुडनालु । पेमिवो बल्कि विभीषणु विडिचॆ; नीतियु नॅय्यंबु नेर्पु गोल्पडियॆ । नीतॆरंगुन निप्पु डी रावणुंडु; चॆडियॆगा कीलंक सॅप्पने ?" लनुचु । नुडुगनि वगलतो नुंडॆडुवारु,

---

से लंका पर पालन कर सकेगा।" ऐसा कहकर, शोभा से तुम्हारे पिता उस मेरु-नग-उपान्त (निकट स्थान) पर, तपस्या करने चले गए। कंजाप्त (सूर्य) कुल वाले राम ही हरि हैं, वह मानिनी सीता महनीय लक्ष्मी हैं। विश्रवसु का कथन अन्यथा हो सकता है ? (नहीं)। हे विश्रुतकीर्ति (वाले) ! किसी भी प्रकार (वहाँ) जाओ, राम को देखकर, शरण कहकर, प्रणामकर जीते रहो, राक्षसकोटि को जीवित रखने का विचार करो। तुम्हें आयु (तथा) श्री भी प्राप्त हो। हे तात ! श्री नरनाथ (राम) के पास जाओ।" (ऐसा) कह, (सिर पर) अक्षत रख, अधिक प्रेम से पुत्र को आसीस देकर, ढंग से विदा किया। वह भी माता के समक्ष अवनत होते हुए, मन में फूलते हुए, मन्त्रियों के साथ स्वयं, मानों अब रावण के तन से पाँच प्राण, इस प्रकार जाएँगे, ॥ ६१० ॥

(इस प्रकार) वेग से आकाश मार्ग पर उड़ा। उस गुणाढ्य को देख, लंकावासी, अपनी-अपनी वीथियों में, अपने आँगनों में, झुण्ड बाँधकर तब (आपस में) बोले। "धर्म को तजकर, भाई न मानकर, प्रेम छोड़, (दुष्ट वचन) कहकर, विभीषण को छोड़ दिया (निर्वासित कर दिया)। नीति, स्नेह, कुशलता को रावण ने इस प्रकार अब गँवा दिया। अब (अधिक)कहना क्या ? यह लंका तो नष्ट हो गई।" (ऐसा)कहते अधिक व्यथाओं से रहनेवालों से, 'इस लंका पर यही (आगे) शासन करेगा'

"नीलंक यीतडे येलु बो" म्मनुचु । बोलिंचि तम मनंबुल नेंचुवारु,
गोरि यीतडु रामु गूडु गाकेमि । यीरावणुडु म्रंदुने" यनुवारु,
"नरनाथु डीतनि नम्मुने यचटि । करिगिन" ननुवारलगुचु नुंडंग

विभीषण शरणागति

नंत विभीषणु डाकाशवीथि । संतसंबुन मंत्रिजनुलतो गूडि
वच्चुट गनुगोनि वनचरु लेल्ल । नच्चेरुवडि चूचि रट्टु तललेत्ति
६२०
येत्तिन रामुचे निंद्रारि यिंक । नेत्तडु दललु, पेडेत्तु दत्कुलमु;
नेत्तेंडु भयमु वोनिडि सुरलार ! । येत्तु, डात्मल दल लेत्तु डन्माड्रिक;
नप्पुडु सुग्रीवु डगचराधिपुल । दप्पक कनुगोनि तग वारि कनिये
"वनचरुलार! यी वच्चु राक्षसुनि । गनुगोनुंडदे ! वाडखंडविक्रमुडु
घनमैन पर्वताकारंबुवाडु । तनरार शस्त्रमुल् दाल्चिनवाडु
मिक्किलि पोंडवुन मेरसिनवाडु । स्रुक्कक यिट वच्चुचुन्नाडु वाडु"
ननवुडु गडगि यय्यगचराधिपुलु । घनमैन गिरुलु वृक्षमुलु सेपट्टि

कहकर अपने मन में तुलना कर सोचने वालों से, 'चाहकर यह राम के साथ मिल जाए तो क्या यह रावण मरेगा ?' (इस प्रकार) कहने वालों से, 'इसके वहाँ जाने पर भी नरनाथ (राम) इसका विश्वास करेगा ?' कहने वालों से (लंका की गलियाँ) भर गईं ।

विभीषण की शरणागति

तब विभीषण के आकाश-वीथि पर प्रसन्नता से (तथा) मन्त्रियों के साथ आते देख, सभी वनचरों ने आश्चर्य-चकित हो, सिर उठाकर (इस प्रकार उधर देखा ।। ६२० ।।

मानों यह कह रहे हों कि "हे देवताओ ! आक्रमण करनेवाले राम के कारण अब इन्द्रारि (रावण) सिर नहीं उठाएगा । उसका कुल नष्ट हो जाएगा । उठ आनेवाले भय को छोड़, अपने सिर उठाओ ।" तब सुग्रीव ने अगचराधिपों को अवश्य देखकर, उनसे ढंग से यों कहा—"हे वनचरो ! वही, आनेवाले उस राक्षस को देखिए । वह अखण्ड विक्रम वाला है, महान् पर्वत के समान आकार वाला है, शोभा से शस्त्र धारण किए है, बड़े गर्व के साथ प्रकाशमान है । वह निर्भयता से यहाँ आ रहा है ।" ऐसा कहने पर, सप्रयत्न वे अगचराधिप बड़े पर्वतों (तथा) वृक्षों को हाथ में ले बोले—"हे सुग्रीव ! हमें भेजो । हे देव ! हमें भेजो ।

"ममु बंपु सुग्रीव ! ममु बंपु देव! । समरंबुलो दैत्यु जंपेद" मनुडु
ना विभीषणुडनें: "नगचरुलार! । मीवाड, निट्टु संभ्रमिंपगवलदु,
रावणु तम्मुड, राक्षसोत्तमुड; । भाविंप नेनु निष्पापमानसुड; ६३०
शरणनि याराम जनपालु गान । नरुगुदेंचिनवाड नट लंकनुंडि;
रावणुतो नेनु "रामभूपाल । देवि नि" म्मनि पेक्कु तेरगुल नंटि;
ननवुडु नामाट कतडु गोपिंचि । तन सभलोपल दन्ने नन् बट्टि;
तन्नि यंतट बोक तन वीटिलोन । नुन्न जंपेदननि योट लेकाडे;
नेनुनु वेलुवडि यीरामचंद्रु । गानंग वच्चिचति; गानि चिंतिंप
गपटुंड गानु; निष्कपटमानसुड; । गपुलार! नायेड गपटंबु लेदु;
सभयुंडनगु नाकु संप्रीति वेलय । नभयमिप्पिंपुडी यवनीशुचेत"
ननवुडु सुग्रीवु डारामुकडकु । जनि विन्नपमुसेसे सविनयुंडगुचु;
"रावणुतो नलिग रायिडि वुट्टि । देव ! वीडोक्क डेतेंचियुन्नाडु;
मीत्तंबुतो नभंबुन नुन्नवाडु; । चित्तंबु मीमीद जेर्चियुन्नाडु,६४०
'अमरारितम्मुड' ननुचुन्नवाडु; । विमलवाक्यंबुल वेलसिनवाडु;

समर में दैत्य को मार डालेंगे।" (ऐसा) कहने पर, उस विभीषण ने कहा—"हे अगचरो ! (मैं) आपका हूँ। इस प्रकार जल्दबाज़ी मत करो। रावण का अनुज हूं, राक्षसोत्तम हूँ, सोचने पर मैं निष्पाप-मन वाला हूँ ॥ ६३० ॥

उधर लंका से (यहाँ) शरण माँगने, रामभूपाल के दर्शन करने आया हुआ हूँ। रावण से मैंने कई विधियों से कहा कि 'रामभूपाल की देवी को (वापस) दे दो।' ऐसा कहने पर, मेरे वचन पर, क्रुद्ध हो, उसने अपनी सभा में मुझे पकड़, लात मारी। लात मारकर, उतने से न जाने देकर, दुर्निवार रूप से कहा कि मेरे यहाँ रहोगे तो मार डालूँगा। मैं भी (वहाँ से) निकलकर, रामचन्द्र के दर्शन करने आया हूँ। किन्तु सोचने पर (मैं) कपटी नहीं हूँ। निष्कपट मन वाला हूँ। हे कपियो ! मुझमें कपट नहीं है। मुझ सभय (भीत मन वाले) को सम्प्रीति के विलसित होने पर, अवनीश राम द्वारा अभय प्रदान कराइए।" ऐसा कहने पर, सुग्रीव ने सविनय होते हुए, राम के पास जाकर निवेदन किया—"हे देव ! रावण से रूठकर, संघर्ष के उत्पन्न होने पर, यह एक (राक्षस) आया हुआ है। अपनों के साथ आकाश (मार्ग पर) स्थित है। चित्त आप पर लगाए हुए है ॥ ६४० ॥

कहता है कि 'मैं अमरारि (रावण) का अनुज हूँ'। वह विमल

'आदित्यकुलनाथ ! यभय मि'म्मनुचु । मोदवाक्यंबुल मोनसिनवाडु;
मीकृपकलिमि येम्मेयि नुन्नयदियो ? । नाकु जूडग बीनि नम्मंगरादु;
नरनाथ ! कपटंबुनकु बुट्टिनिल्लु । लरय राक्षसुलुगाकन्युलु गलरे ?
दनुजाधिनाथुनि तम्मुडेमिटिकि । जनुदेंचु ? निन्नीचु जंपगावलयु"
ननुडु नंतटिलोन नांजनेयुंडु । विनयसंभरितुडै विभुन किट्लनियें:

विभीषणुनि योग्यत नांजनेयुडु रामुन केरिगिंचुट

"दनुजाधिनाथु डुद्दंडकोपमुन । दनु सभलोपल दन्नें नन्माड्कि
नखिलंबु नेरुगंग नाडे नीयसुर; ।निखिलेश! यामाट निजमु गानोपु;
नुडुगक मनलकै युचित माडुटयु । वेंडल द्रोच्चिनवानि विडिचि वच्चुटयु
गलुगनोपुनु गानि कपटंबु गादु; । वलवदु शंकिप वसुधेश ! यितनि; ६५०
गपटमानसु लेट्टि क्रममुन नुन्न । गपट मितटिलोन गानंगवच्चु;
नितनि माटललोन नेमाट येन । गृतकमै तोपदु; कीडनरादु;
मनुजेश! दनुजुल मर्मज्ञु डितडु; । मनदेंस नुंडुट मानैन नीति;

वाक्यों से सम्पन्न है। 'हे आदित्यकुलनाथ ! अभय प्रदान करो', कहते मोदप्रद वाक्यों से शोभित है। पता नहीं, आपकी कृपा की सम्पदा किस प्रकार है ? मुझे तो लगता है, इसका विश्वास नहीं करना चाहिए। हे नरनाथ ! कपट के लिए मातृगृह (उत्पत्ति स्थान) राक्षसों के सिवा अन्य (कौन) हो सकते हैं ? दनुजाधिनाथ का अनुज क्योंकर (यहाँ) आएगा ? इस नीच को मार डालना चाहिए।" कहने पर इतने में आंजनेय ने विनय-संभरित हो विभु से यों कहा—

विभीषण की योग्यता के बारे में आंजनेय का राम को बताना

"दनुजाधिनाथ ने उद्दण्ड क्रोध से मुझे भरी सभा में लात मारी है, इस प्रकार इस असुर ने सब कुछ बताकर कहा है। हे निखिलेश ! वह बात सच हो सकती है। अनारत हमारे लिए उचित बातें करना और घर निकालनेवाले को छोड़ आना भी (सम्भव) हो सकता है, किन्तु कपट नहीं है। हे वसुधेश ! इस पर शंका नहीं करनी चाहिए ॥ ६५० ॥

कपटी मानुस किसी भी क्रम में रहें, थोड़े में (उनका) कपट दिखाई पड़ जाएगा। इसकी बातों में कोई बात कृतक (बनावटी) नहीं दीखती। बुरी भी नहीं दीख रही है। हे मनुजेश ! यह दनुजों के मर्म को जानने

ननु रावणुडु वट्टि नाडु बंधिंचि । येनलेनि बाधल नेचुट सूचि
यितडु नाकै पेक्कुहितवुलु वल्कै; । नितनि चित्तस्थिति येरुगुदु गोंत"
यनिनमाटलु दनयात्मकु नैक्क । वनजाप्तसुतु जूचि वसुधेशु डनियैः
"नर्कज ! दीन मेलौट गीडौट । दर्किंच नेटिकि ? धर्मंबु त्रोव
शरणनि वच्चिन शत्रुवु नैन । बरिकिंपगा राचपाडि रक्षिप;
नीक कपोतमु डेग यद्धति दरुम । विकलभावंबुन वेगंबवच्चि
शिबिमाटु सोच्चै; जोच्चिन डेग यडुग । शिबि तनु विच्चि चेच्चेर
गुव्व गाचै, ६६०

नपकीर्ति बोंदक यार्तु जेकोन्न । कृप यश्वमेधसत्कृतिफलं बिच्चु;
नीविभीषणु डेल, यिक सुग्रीव ! । रावणुंडैन गर्वमु दक्कि वच्चि
शरणन्न गातु नेचंदंबुनंदु, । मरियाद यिट्टिदि माकुलंबुनकु,
नभय मिच्चिति, वेग मर्कज! पोयि। सभयुनि नव्विभीषणु दोडितेम्म"
यनवुडु सुग्रीवु डारामु कृपकु । गनु व्रालिच यटु शिरः कंपंबु सेसि
"परिकिंप नीवलै बगवानि तम्मु । शरणन्न गैकोनु सत्कृपारसमु

वाला है। (इसका) हमारे पक्ष में रहना मान्य नीति है। जिस दिन रावण मुझे पकड़ बाँधकर, अगणित कष्ट देकर सता रहा था, उसे देख, इसने मेरे लिए कई हित (-वचन) कहे हैं। मैं इसकी चित्त-स्थिति (-प्रवृत्ति) को थोड़ा जानता हूँ।" (ऐसा) कही बातों के अपने मन में अच्छी लगने पर, वनजाप्तसुत को देख वसुधेश ने कहा—"हे अर्कज ! ऐसा तर्क क्यों करें कि इससे भला होगा (और) हानि होगी। परिशीलन करने पर शरण में आए शत्रु की रक्षा करना क्षत्रिय-नीति है, धर्म का मार्ग है। बाज के उद्धत रूप से पीछा करने पर, एक कबूतर, विकल भाव से, वेग से आकर, शिबि की आड़ मे घुस गया। (इस प्रकार कबूतर के) प्रवेश करने पर, बाज के माँगने पर शिबि ने झट शरीर देकर, कबूतर की रक्षा की ।। ६६० ।।

अपकीर्ति के भागी न होकर, आर्त को कृपा से अपना लेने पर, (वह कार्य) अश्वमेध-सत्कृति का फल देगा। हे सुग्रीव ! यह विभीषण ही क्यों ? अब रावण ही गर्व छोड़, आकर, शरण चाहे तो हर तरह से उसकी रक्षा करूँगा। यह हमारे कुल की मर्यादा (रीति) है। (विभीषण को) अभय प्रदान किया है। हे अर्कज ! शीघ्र जाकर, सभय (भीत) उस विभीषण को ले आओ।" ऐसा कहने पर सुग्रीव ने राम की कृपा पर, आँखें झुकाकर, शिरःकम्प (सिर हिला) कर, कहा—"परिशीलन करने पर तुम्हारे समान शत्रु के अनुज के माँगने पर, (उसे) ग्रहण करने का

नीकै का कैंदु ने नृपुलकु जेल्लु । गाकुत्स्थतिलक ! निक्कमु
धात्रिलोन !"
ननि पल्कि सुग्रीवु डाकाशमुनकु । दन सेनतो समुद्धतगति नेगसि
"चेकोनि यभयंबु श्रीरामु डिच्चे । नीकु विभीषण ! निक्कंबु नम्मु,
र" म्मनि कपिराजु राक्षसराजु । निम्मुल गौगिट नेनयंग जेचि ६७०
तोड्कोनि वच्चि संतोषंबु गृपयु । वेड्कयु नेसग नव्विभु गानुपिंप
निंड नानंदिचि नृपु जूचि यतडु । दंडप्रणामंबु दग जेसि निलिचि

विभीषणुडु श्रीरामुनि नुतिंचुट

नित्यसत्यत्राण ! नित्यकल्याण ! । नित्यजगत्राण ! नित्यगीर्वाण !
जगदन्वयाकार ! जगदेकवीर ! । जगदुदयाकार ! जगदब्धिपूर !
सर्वसंगातीत ! सर्वानुभूत ! । सर्वजगत्पूत ! सर्वनिर्णेत !
गुरुलघुक्रमरूप ! गुरुबोधदीप ! । गुरुमधुरालाप ! गुरुचारुचाप !
पद्मसन्निभनेत्र ! बहुजीवसूत्र ! । पद्माकलितगात्र ! परमपवित्र !
कविमनस्संवेद्य ! करुणानवद्य ! । विविधशास्त्रापाद्य ! वेदांतवेद्य!

सत्कृपारस तुम्हारे सिवा अन्य किन राजाओं को भाती है ? हे काकुत्स्थ तिलक ! यह (बात) धरती पर सत्य है।" ऐसा कहकर सुग्रीव ने अपनी सेना के साथ समुद्धत गति से उड़कर (कहा)—"हे विभीषण ! चाहकर श्रीराम ने तुम्हें अभय प्रदान किया है। यह सच है, यह सच है, विश्वास करो। आओ।" (ऐसा) कह, कपिराज ने राक्षसराज को प्रेम से, शोभा से आलिंगन कर, ।। ६७० ।।

—साथ ले आकर, प्रसन्नता, कृपा, उत्साह के विलसित होने पर उस विभु के दर्शन किए। पूर्णतः आनन्दित हो, नृप (राम) को देखकर, उसने उचित रूप से दण्ड-प्रणाम कर, खड़े होकर,

विभीषण का श्रीराम की नुति करना

—(इस प्रकार स्तुति की)—"नित्यसत्य-त्राण (रक्षक) ! नित्यकल्याण (रूप वाले) ! नित्यजगत्त्राणा ! नित्यगीर्वाणा (देव) ! जगदन्वयाकारा (वाले) ! जगदेकवीरा ! जगदुदयाकारा ! जगदब्धिपूरा ! सर्वसंगातीता ! सर्वानुभूता ! सर्वजगत्पूता ! सर्वनिर्णेता ! गुरु-लघुक्रमरूपा (वाले) ! गुरुबोधदीपा ! गुरुमधुरालापा ! गुरु चारु चाप (वाले) ! पद्मसन्निभनेत्र ! बहुजीवसूत्र ! पद्माकलित-गात्र (वाले) ! परमपवित्र ! कविमनस्संवेद्य ! करुणानवद्य ! विविध शास्त्रापद्य ! वेदान्तवेद्या ! तुम्हीं परमात्मा हो,

परमात्मुडवु नीव; परमंबु नीव; । परमविद्ययु नीव परिकिंप नेंदु;
भुवनकर्तयु नीव; भुवनंबु नीव; । भुवनहर्तयु नीव भुवनैकवीर! ६८०
यागभोक्तयु नीव; यागंबु नीव; । यागफल प्रदुंडरयंग नीव;
चंद्रार्कुलुनु नीव; जलधुलु नीव; । यिंद्रादुलुनु नीव; यिलयुनु नीव;
शब्दार्थमुलु नीव; शब्दमुल् नीव; । शब्दमुल् भेदिंचु श्रवणमुल् नीव;
मूडुमूर्तुलु नीव; मूडुमूर्तुलकु । बोडिमि नव्वलि पोडवुनु नीव;
क्षरमुनु नीव, यक्षरमुनु नीव, । क्षरसाक्षि वीव, यक्षरसाक्षि वीव;
त्रिभुवनवंदित ! देवाधिदेव ! ।यभय मी देव! ना कखिलाधिनाथ!
जयजय शतकोटि जलजाप्ततेज! । जयजय संसारसर्पसुपर्ण !
ललितागमस्तोत्र ! लक्ष्मीकळत्र! । विलसद्दयापात्र ! विबुधारिजैत्र!
यलघुमुनिस्तुत ! याद्यंतरहित ! । दळितशात्रवभीम ! दशरथराम!
दिनकरशशिनेत्र ! दिव्यचारित्र! ।यनुपमशुभगात्र ! यखिलैकसूत्र! ६९०
वेनोळ्ळुगल भोगिविभुडैन नीमहिम । नोंप्पार नुतियिंप नोपुने तविलि ?
ये निन्नु नुतियिंप नेंतटिवाड ! । ये निन्नु नेरुगंग नेंतटिवाड ?

तुम्हीं परम (मोक्ष) हो। किसी भी प्रकार से देखें तुम्हीं परमविद्या हो। तुम्हीं भुवनकर्त्ता हो, तुम्हीं भुवन हो। हे भुवनैकवीर ! तुम्ही भुवनहर्ता हो ॥ ६८० ॥

तुम्हीं यागभोक्ता हो याग भी तुम्हीं हो। सोचने पर याग-फलप्रद तुम्हीं हो। चन्द्र-अर्क तुम्हीं हो, जलधियाँ तुम्हीं हो, इन्द्रादि भी तुम्हीं हो, धरती भी तुम्हीं हो। शब्दार्थ तुम्हीं हो, शब्द तुम्हीं हो, शब्दों का भेद करनेवाले श्रवण तुम्हीं हो। तीन मूर्ति तुम्हीं हो, तीन-मूर्तियों के सुन्दर अवस्थान के परे औन्नत्य तुम्हीं हो। क्षर तुम्हीं हो, अक्षर भी तुम्हीं हो। क्षरसाक्षी तुम्हीं हो, अक्षरसाक्षी (भी) तुम्हीं हो। हे त्रिभुवन-वन्दिता ! हे देवादिदेव ! मुझे अभय प्रदान करो हे देव! हे अखिलादिनाथ ! जय जय शतकोटि जलजाप्ततेज (वाले) ! जय जय संसार-सर्प-सुपर्णा ! ललितागमस्तोत्र ! लक्ष्मीकलत्र ! विलसद्दयापात्र ! विबुधारिजैत्र। अलघुमुनिस्तुत ! आद्यान्तरहिता। दलितशात्रवभीम[1] ! दशरथ राम ! दिनकर-शशि-नेत्रा ! दिव्यचारित्र ! अनुपमशुभगात्र ! अखिलैकसूत्र ! ॥ ६९० ॥

हे भूपाल ! हजार मुखवाले भोगी (सर्प)-विभु भी सयत्न तुम्हारी नुति कर सकता है क्या ? (नहीं)। वह पद्मसम्भव भी लगकर, तुम्हारी महिमा को शोभासम्पन्न रूप में स्तुति कर सकता है क्या ? (नहीं)।

---

१ दलित-शत्रुओं के लिए भयंकर।

दानवुंडनु, वृथा तरळचित्तुडनु, । भूनाथ ! नी वादिपुरुषोत्तमुडवु;
कान निन्नितरुलु गानग लेरु; । ने नेंतवाडनु निजमुगा देलिय ?
नरनाथ ! यार्तुनि नन्नु रक्षिपु, । परमदुर्जनु दैत्यपति द्रुंचिवैवु;
मखिलशरण्युंड वैन नीमरुगु । सुख मनि ये वच्चि चोच्चिति बीति ।"

श्रीरामुडु विभीषणु ननुग्रहिंचुट

ननवुडु ननि गृपांबुधिलोन । मनुजेश्वरुंडु ग्रम्मर नोललार्चि
"नम्मु विभीषण ! नाकेशवैरि । तम्मुडवा ? नाकु दम्मुडवीवु;
मरुगंकुमिक! लक्ष्मणुकंटे निन्नु । नरलेनिवानिगा नात्म गैकोंटि" ७००
ननि भयं बुडिपि दयार्द्रवाक्यमुल । जननायकुडु विभीषणुनादरिंचे,
नेय्यंबुतोड नानृपु डप्पु डतनि । चेय्यूदुकोनि वार्धि सेरंग बोयि
"माकु निक्कमु सेप्पुमा विभीषणुड! । नाकारि शक्तियु नम्मिन बलमु,
नुदधिलो बुरमु मुन्नुदयिंचुटेट्लु ? । वदलक तोलुत नेव्वडु नेलेनंदु?"
ननिन विभीषणुं डारामचंद्रु । गनुगोनि म्रोक्कि निक्कमु विन्नविंचे:

तुम्हारी स्तुति करने के लिए मैं कितना हूँ ? तुम्हें जानने को मैं कितना हूँ ? (मेरी सामर्थ्य ही कितनी ?) । (मैं) दानव हूँ, वृथा-तरल-चित्त वाला हूँ । हे भूनाथ ! तुम आदि पुरुषोत्तम हो । अतः तुम्हें अन्य नहीं जान सकते । सचमुच ही तुम्हें जानने के लिए मैं कितना हूँ ? हे नरनाथ! मुझ आर्त की रक्षा करो, परमदुर्जन दैत्यपति का संहार कर दो। समस्त जनों के शरण्य तुम्हारे आश्रय को सुख (प्रद) मानकर, मैं प्रेम से यहाँ आया हूँ।"

श्रीराम का विभीषण को अनुगृहीत करना

ऐसा कहने पर उसे मनुजेश्वर (राम) ने कृपासागर में ऊभचूभ कर, (कहा)—"हे विभीषण ! (मेरी बातों पर) विश्वास रखो । तुम नाकेश-वैरी (रावण) के अनुज हो ? (नहीं), तुम मेरे अनुज हो । अब व्याकुल मत होना । लक्ष्मण की अपेक्षा तुम्हें निस्संकोच रूप से मन से स्वीकारा है।" ॥ ७०० ॥

(ऐसा) कह, भय दूर कर, दयार्द्र वाक्यों से जननायक (राम) ने विभीषण का आदर किया । स्नेह से उस नृप (राम) ने तब उसके हाथ का अवलम्ब लेकर वारिधि के निकट पहुँच, (कहा)—"हे विभीषण ! हमें नाकारि की शक्ति और उसकी विश्वस्त सेना के बारे में सच (सच) बताओ । (यह भी बताओ कि) पूर्व में समुद्र में यह नगर कैसे उत्पन्न हुआ ? पूर्व में किसने अनारत वहाँ शासन किया ?" (ऐसा) कहने पर विभीषण ने रामचन्द्र को देख, प्रणाम कर, सत्य का निवेदन किया ।

विभीषणुडु रामुनकु लंकोत्पत्तिनि देलुपुट

"दोयजदळनेत्र ! तोलिलि नारदुडु । वायुवु मुंदर फणिराजुलावु
फणिराजुमुंदर बवमानु लावु । ब्रणुतिंचि वारिकि बग सेयुटयुनु
रासि लावुनकु वारलु मत्सरिंचि । "भासुरहेमाद्रि फणिराजु चुट्टि
पट्टंग दानि गंपमु नोंद वीतु । नेट्टन ने" ननि नियमिंचे गालि,
तन सत्वमंतयु दग बूनि शेषु । डनिमिषगिरि जुट्टे नसदृशलील, ७१०
वेयुफणंबुल वेशिखरमुल । नायतभुजशक्ति नंटंग बोंदिव
च्चलमुन बट्टिन सप्तवायुवुलु । वेलयंग बवनुंडु वीवग दोडगे,
शेषुनि भेदिंप जेकुरकुन्न । भीषणगति वीचे बेंचि वायुवुलु,
नागालि नचलंबुलन्नियु बिडिगे, । नागालि भुवनंबुलन्नियु वाले,
नागालि नंबुधुलन्नियु गलगे, । नागालि भूतंबुलन्नियु नरचे,
नागालि जलियिंचे नर्कुनि रथमु, । नागालि नूटाडे नखिलदिक्कुलुनु,
गदिसिन लोकसंकटमेल्ल जूचि । 'यिदि महापद वच्चे नित्तरि' ननुचु
नर्थिमै ब्रह्मादु लचटिकि वच्चि । प्रार्थिंचि पवनु मान्पगलेक पोयि

विभीषण का राम को लंका की उत्पत्ति के बारे में बताना

'हे तोयज (कमल)-दल-नेत्रा ! पूर्व में नारद ने वायु के समक्ष फणिराज (नागराज) की सामर्थ्य (तथा) फणिराज के समक्ष पवमान की शक्ति की प्रशंसा कर, उनमें शत्रुता (उत्पन्न) की। अन्य (प्रतिपक्षी) की सामर्थ्य से वे मात्सर्य-युक्त हुए। पवन ने नियम से कहा कि "भासुर हेमाद्रि को फणिराज घेरकर पकड़े रहें तो भी मैं प्रवहित होकर, उसे किसी भी प्रकार कम्पित कर दूँगा।" तब असदृश रीति से फणिराज अपने समस्त सत्त्व को धारणकर अनिमिष गिरि को घेरकर रहे ॥ ७१० ॥

हज़ार फणों से हज़ार शिखरों को आयत (विशाल) भुजशक्ति से परिवेष्ठित कर, हठ से पकड़े रहने पर, सप्तपवनों से विलसित हो वायु (देव) बहने लगा। (आदि) शेष को बेधने के लिए भीषण गति को प्राप्त हो वायु चलने लगा। उस पवन (की गति) के कारण सभी अचल (पर्वत) टूट पड़े, उस पवन के कारण समस्त भुवन काँप उठे, उस पवन के कारण समस्त अंबुधियाँ आलोडित हो गईं, उस पवन के कारण समस्त भूत चीख उठे। उस पवन के कारण अर्क (सूर्य) का रथ कम्पित हो उठा, उस पवन के कारण समस्त दिशाएँ हिल उठीं। (इस प्रकार) नियराये समस्त लोक-संकट को देख, यह सोच कि 'इस अवसर पर यह महा विपत्ति आई है', चाहकर ब्रह्मादि (देवता) वहाँ आकर, प्रार्थना कर भी पवन को

परमसात्विकुडैन फणिराजु गदिसि । "युरगेंद्र ! नीवैन नोर्वंगवलयु,
मीमच्चरंबुल मिहिरुंडु गूलें, । मीमच्चरंबुल मेदिनि ग्रुंगें,७२०
मीमच्चरंबुल मितिमीरें नब्धि, । मामाट लालिंचि मम्मु मन्निंचि
गालिनि गेलिपिंचि करुण वाटिंचि । केळिमै मम्मु रक्षिपवे" यनिन
सुरल प्रार्थनकु शेषुडु शांति बोंदि । करुवलिकिनि वीवगा ननुविच्चि
यिचुक योंकफणंबेत्त वे जोच्चि । मिंचिनबलिमि समीरुंडु वीव
जेलुवेदि यंदोक्क शिखरंबु विरिगि । तलकोन्न गालिचे दव्वुगा दूलि
गुरुतरगतिनि द्रिकूटंबु नाग । धरणीश ! यब्धिमध्यंबुन बडियें,
देव ! याश्रृंखलद्वीपंबु नंदु । देवेंद्रु पनुपुन देवताशिल्पि

विभीषणुडु रावणु वैभवमुनु रामुन केरिगिंचुट

करकौशलमुन लंकापुरं बनेंडु । पुरमु निर्मिंचें, दत्पुरवरंबुनकु
गोट लेडोप्पु, नक्कोटकोटकुनु । वाटमै नाल्गेसि वाकिड्लु गलवु,
तरुचैन यट्टि कोत्तळमुलतोड । निरविुगा मुंदर निटिककोटकुनु
७३०
बडुमटि द्वार मेर्पड गाचियुंदु । रेंडपक राक्षसु लेनुबदिकोट्लु,

---

मना नहीं सके। तब परम सात्त्विक (बुद्धि वाले) फणिराज के निकट जाकर कहा—"हे उरगेन्द्र ! तुम्हें तो सहन कर लेना चाहिए। तुम लोगों के मात्सर्य (स्पर्धा) के कारण मिहिर (सूर्य) गिर गया, तुम्हारे मात्सर्य से मेदिनी (पृथ्वी) धंस गई ॥ ७२० ॥

तुम्हारे मात्सर्य से अब्धि सीमा को पार कर गई। (अतः) हमारी बातें सुनकर, हमारा मानकर, पवन को जिताकर, करुणा मानकर, लीला से हमें बचाओ न।" (ऐसा) कहने पर देवताओं की प्रार्थना पर, (आदि) शेष ने शान्त हो, पवन को बहने के लिए सुविधा देकर, एक फन को थोड़ा सा उठाया। झट आकर, अधिक बल से समीर बहने लगा तो उसमें से एक शिखर शोभा को खोकर, पवन के वेग से दूर जाकर, हे धरणीश ! गुरुतर गति से त्रिकूट नामक होकर, अब्धिमध्य में गिर पड़ा। हे देव ! उस श्रृंखला-द्वीप में, देवेन्द्र की आज्ञा पर देवताशिल्पी ने,

विभीषण का रावण के वैभव को राम को बताना

—करकौशल से लंकापुर नामक नगर का निर्माण किया। उस पुरवर के लिए सात दुर्ग शोभा देते हैं, प्रत्येक दुर्ग के दृढ़ता से चार द्वार हैं। पर्याप्त गुम्बजों के साथ शोभा से प्रथमतः ईंटों का दुर्ग है ॥ ७३० ॥

दानवु लुत्तर द्वारंबु गाचि । येनूट डेब्बदि येडुकोट्लुंड्रु,
तूर्पुवाकिलियंदु दोलगके प्रोद्दु । दर्पिंचि युंदुरु तग नूरुकोट्लु,
दक्षिणद्वार मुद्धति गाचियुंदु । रक्षीणदानवु लरुवदिकोट्टु,
लरय नालोपलि यारुकोटलनु । नरनाथ! यिरुवदिनालगु वाकिड्ल
वरुस नीचेप्पिन वड्डुवुन नेपुडु । दरि गाचियुंदुरु धरणीतलेश !
तिरमगुचुन्नट्टि दिड्डिवाकिड्ल । नुरुसत्वु लुंडुदु रोक्कोक्ककोटि,
पुरमध्यवीथि नेप्पुडु गाचियुंदु । रिरुवदिलक्षलु नेन्नूरुकोट्लु,
कुंभकर्णुनि निद्रगुहचुट्टु गाचि । जृंभणमै वसिंचेद रेडुकोट्लु,
मोनसि यारावणु मोगसाल गाचि । कोनियुंदु रोकलक्षकोटिराक्षसुलु,
७४०
नोनर नावाकिट नुंडु राक्षसुलु । विनवय्य! मिरुवदिबेलकोट्लेलमि
जेलुवंबुगा निंद्रजित्तुवाटिकटनु । बलवंतु लुंदुरु पदिवेलकोट्लु,
घनुलैन यायतिकायादिवीर । दनुजुल वाकिड्ल दशलक्षकोटि
तोंडरिन कडिमिमै दुष्टराक्षसुलु । कडुनेचि विडिवड्डु गजमुलो यनग,
नेन्निकतो मरि यिनकुलाधीश ! । येन्नराक्षसेन, येंतयु घनमु,

(उसके) पश्चिमद्वार को निरन्तर ढंग से अस्सी करोड़ राक्षस पहरा देते रहते हैं। उत्तरद्वार की रक्षा करते दो सौ सतहत्तर करोड़ दानव रहते हैं। पूर्व के द्वार पर सदा, (वहाँ से) न हटनेवाले सौ करोड़ (राक्षस) दर्प के साथ रहते हैं। दक्षिणद्वार का पहरा देते साठ करोड़ अक्षीण (क्षीण न होनेवाले) दानव उद्धति से रहते हैं। विचार करने पर भीतर के छहों दुर्गों के, हे नरनाथ ! चौबीस द्वार है। हे धरणीतलेश! अब कहे अनुसार, क्रम से सदा (उन द्वारों की) रक्षा करते (राक्षस) रहते हैं। स्थिर (दृढ़) बने हुए छोटे द्वार (दुर्ग के बड़े द्वार में बना छोटा द्वार) पर एक-एक करोड़ उरु (महा) सत्त्व वाले (राक्षस) रहते हैं। पुर की मध्यवीथि की बीस लाख सात सौ करोड़ (राक्षस) सदा रक्षा में रहते हैं। कुंभकर्ण की निद्रा-गुफा के चारों तरफ़ रक्षा करते, विजृंभित हो, सात करोड़ (राक्षस) रहते हैं। रावण के आँगन की लाख करोड़ राक्षस सप्रयत्न रक्षा करते रहते हैं ।। ७४० ।।

सुन लीजिए। उस (रावण के आँगन के) द्वार पर शोभा से रहनेवाले राक्षस बीस हज़ार करोड़ हैं। सुन्दरता से इन्द्रजित् के द्वार पर दस हज़ार करोड़ बलशाली राक्षस रहते हैं। उन महान् अतिकाय आदि वीर राक्षसों के द्वारों पर दस लाख करोड़ दुष्ट राक्षस रहते हैं जो उदित साहस से युक्त हो अधिक सताए जाकर मुक्त हुए गजों के समान हैं।

वासवांतकु लावु वर्णिपदरमे ? । यीसुन गैलास मैत्तिनवाडु,
वनजजुंडतनिकि वर मिच्चिनाडु । दनुजुलचेत गंधर्वुलचेत
नमरुलचेत नायक्षुलचेत । समरंबुलोपल जावु लेकुंड,
समरंबे येल ? येचंदंबुनंदु । समयिंपराडु राक्षसलोकनाथु,
नतडु मीचेतने यनि जच्चु गानि । क्षितिनाथ! यितरुलचे नसाध्युंडु,
७५०
कुंभकर्णुंडु गैकोनडु चीरिकिनि । जंभारिनैनन समरंबुलोन,
नैत्तिनमदमुन नेरुगडेभयमु । जित्तंबुलो निंद्रजित्तनुवाडु,
हरुनकु प्रियमुगा यागंबु सेसि । वरमुन बडसेनु वज्रकवचमु,
नरुदुगा मायाविये विल्लु वट्टि । यरुल नाकाशंबुनंदुंडि गेलुचु,
नतिसत्वधनुडु प्रहस्तु डन्वाडु । चतुरुडा रावणु सैन्यपालकुडु,
खंडेंदुधरु चेलिकानि सामंतु । भंडनंबुन माणियद्रुनि नोर्चे,
दनुजवीरुलु महोदरमहापार्श्वु । लनुवारु नतिकायुं डनुवाडु देव!
बलिमि गैकोनरु दिक्पालुर नैन, । गेलुतुरु रणमुन गिट्टिनयपुडु,
यनिनिषकंटकुलैन बल्लिदुलु । दनुजेशुनकु लक्षतनयुलु देव !

हे इनकुलाधीश ! गिनती करें तो उस सेना की गिनती नहीं हो सकती। बहुत महान् है। वासवान्तक (रावण) की शक्ति का वर्णन (क्या) सम्भव है ? (नहीं।) उसने ईर्ष्या से कैलास पर्वत को उठाया है, वनज-ज (ब्रह्मा) ने उसे वर दिया है कि दनुजों, गन्धर्वों, अमरों, यक्षों के हाथ समर में मृत्यु नहीं होगी। युद्ध ही क्यों ? उस राक्षसलोकनाथ को किसी भी प्रकार से मार डाला नहीं जा सकता। हे क्षितिनाथ ! वह आपके ही हाथ युद्ध में मरेगा। अन्यों के लिए (वह) असाध्य है ।। ७५० ।।

कुंभकर्ण युद्ध में जम्भारि (इन्द्र) की भी परवाह नहीं करता। इन्द्रजित नामक (राक्षस) तो उभरे मद के कारण मन में किसी भी प्रकार के भय को नहीं जानता। हर को प्रसन्न करने हेतु याग कर, वज्रकवच को वर के रूप में प्राप्त किया है। सतत मायावी हो, धनुष धारण कर, आकाश में स्थित होकर, अरियों को जीतता है। उस रावण का सैन्य-पालक प्रहस्त नाम का है जो अतिसत्त्वधनी तथा चतुर है। उसने खंडेंदुधर (शिव) के सखा के सामन्त मणिभद्र को भंडन (युद्ध) में हराया था। हे देव ! महोदर, महापार्श्व, अतिकाय आदि दनुजवीर, (अपने) बल के कारण दिक्पालकों की भी परवाह नहीं करते। नियराने पर (सामना होने पर) उन्हें भी जीत लेते हैं। हे देव ! अनिमषों (देवताओं) के लिए कंटक बने हुए बली एक लाख पुत्र हैं दनुजेश के।

ज्ञातुलतो बंधुसमिति लेक्किंप । धातकु नैननुदरमुगादधिप! ७६०
यरय गुबेरादु लरिगापुलन्न । विरंचिपवच्चुने विभवंबुकोलदि ?
नेत्तुट नंजुट नेट्टन दनिसि । मत्तुन संगरोन्मत्तुले चाल
नदटेक्किकनट्टि महादैत्यवरुलु । पदिवेलकोट्लु वलियुरु गलरु,
वारि लावुनजेसि वसुमतीनाथ ! । यारावणुडु गेल्चे नखिलदिक्कुलनु"
अनवुडु राघवुंडतनितो ननियें, । "विनु विभीषण! मुन्नु विन्नाड नेनु,
मीयन्न येंतयु मिक्किलिबंटुः । पायक यातनि बलिमि यट्टिदय,
वाडेंतवाडैन वच्चि नायेदुट । वाडिमि वर्चरिप वाडेंतवाडु ?
हरिहरब्रह्मादुलादिगागलगु । सुरलड्डुगिंचिन जूर्णंबुसेसि
वानि जंपुद्दु, निन्नवश्यंबु लंक । बूनि येलितु निम्मुल दानवेश!"
यंनिन विभीषणुंडु रामुनि जूचि । विनयंबुतो म्रोक्कि वेड्क निट्-
लनियें : ७७०
"नारावणुंडेंत, यालंक येंत । श्रीराम! नीबाणशिखि पर्वुनपुडु?
लंककोटलु व्राकि लग्गलु वट्टि । किकतो नसुरुल गिट्टिनयपुडु
नालावु जूडुमु नरनाथचंद्र ! । कालाग्निरुद्रुनिगति वेर्चुवाड ।"

हे अधिप ! ज्ञातियों के साथ (रावण की) वन्धु (रिश्तेदार)-समिति की गिनती करना धाता (ब्रह्मा) के लिए भी सम्भव नहीं है ।। ७६० ।।

यह जानने पर कि कुबेर आदि उसके सामन्त हैं तो उसके वैभव का वर्णन कैसे करें ? (इसके अतिरिक्त) दस हज़ार करोड़ बली महादैत्यवर हैं जो (शत्रु-) रक्त का पान कर, तृप्त हो, मद से संगरोन्मत्त बन, गर्वीले बने रहते हैं । उनकी शक्ति के कारण हे वसुमतीनाथ ! उस रावण ने समस्त दिशाओं को जीत लिया है ।" ऐसा कहने पर राघव ने उससे यों कहा— "सुनो विभीषण ! (यह सब) मैंने पहले ही सुन रखा है । तुम्हारा अग्रज बहुत बड़ा वीर है, उसकी शक्ति भी वैसी ही है । (किन्तु) वह कितना ही महान् (बड़ा शूर, शक्तिशाली) क्यों न हो, मेरे समक्ष आकर, (अपना) प्रताप दिखाने के लिए किस बूते का है ? हरि, हर, ब्रह्मा आदि देवता (भी मुझे) रोकें, (तब भी) चूर-चूरकर उसे मार डालूँगा । हे दानवेश ! तुम्हें प्रेम से अवश्य ही लंका का राजा बनाऊँगा ।" (ऐसा) कहने पर विभीषण ने उस राम को देखकर विनय से प्रणाम कर, उत्साह से यों कहा— ।। ७७० ।।

"हे श्रीराम ! तुम्हारे बाणों की शिखि (अग्नि) के निकल पड़ने पर, वह रावण और वह लंका कहाँ (टिक कर) रह सकेंगे ? लंका के प्राचीरों पर रेंग-चढ़कर, दुर्ग पर चढ़कर, क्रोध से असुरों का सामना करते समय

ननवुडु बति वानि नालिंगनंबु । घनमुगा जेसि लक्ष्मणुनकु ननियें;

श्रीरामुडु विभीषणुनकु लंकाभिषेकमु सेयुट

"नीसमुद्रमुनीट निनजुंडु नीवु । जेसेत वडि नभिषेकंबुसेसि
क़ट्टुडु वेग लंकाराज्यमुनकु । बट्टंबु वानिकि ब्रति विभीषणुनि"
नति यानतिच्चिन नतडुनु नतनि । वननिधिजलमुलु वनचरुल् देर
नभिषेक मौनरिंचि "यसुरुल कॆल्ल । प्रभुडवु ग" म्मनि पट्टंबुगट्टि
"तलपोय नाचंद्रतारार्कमुगनु । सललितंबुग रामचंद्रुनि कीर्ति
येंतकालमु गल्मु निल विभीषणुड! । यंतकालमुनु राज्यमुसेयु" मनग
७८०
नार्चि वानरकोटि हर्षिचें; नपुडु । पेर्चि राघवुडु विभीषणु जूचि
"यी यब्धि दाटंग नेयुपायंबु । सेयुद" मनवुडु जेतुलु मौगिचि
"यीवार्धि गट्टक यिंद्रादलकुनु । देव! येम्मेयि दाट दीरदु, कान
निदि गट्टुवडुटकु निनकुलाधीश! । पदिलंबुगा वार्धि ब्रार्थिपवलयु।"

हे नरनाथचन्द्र ! मेरी सामर्थ्य को देखोगे। (तब) कालाग्नि रुद्र के समान प्रज्वलित हो जाऊँगा।" ऐसा कहने पर पति (राम) ने उसका आलिगन कर, सम्मानित कर, लक्ष्मण से कहा—

श्रीराम का विभीषण को लंका का राजा बनाना

"इस समुद्र के जल से इनज (सुग्रीव) और (लक्ष्मण) तुम लोग (विभीषण) को शीघ्र अभिषिक्त कर, उसके (रावण के) बदले विभीषण को लंका राज्य का राजा बनाओ।" ऐसा आदेश देने पर उसने (लक्ष्मण ने) वनचरों के वननिधि (समुद्र) का जल लाने पर, उसे (विभीषण को) अभिषिक्त कर, यह कह राजतिलक किया कि समस्त असुरों के लिए प्रभु बन जाओ। उसके (लक्ष्मण के) यह कहने पर कि "सोचने पर चन्द्र, तारा, अर्क के रहने तक, सललित रूप से रामचन्द्र की कीर्ति के पृथ्वी पर रहने तक, हे विभीषण ! उतने काल तक राज्य करो," ॥ ७८० ॥

—वानर-कोटि सिंहनाद कर हर्षित हुई। तब क्रम से राघव ने विभीषण को देखकर कहा—"इस अब्धि को पार करने के लिए कौन सा उपाय करेंगे ?" ऐसा कहने पर हाथ जोड़कर (विभीषण बोलने लगा—) "हे देव ! इस वारिधि पर (सेतु) बाँधे बिना, इसे इन्द्रादि भी किसी भी प्रकार से पार नहीं कर सकते। अतः हे इनकुलाधीश ! बाँध के बाँधे जाने के लिए, सावधानी से वारिधि की प्रार्थना करनी चाहिए।" ऐसा

ननि पल्कुचुंडंग नट दशग्रीवु । ननुमति शार्दूलुडनु दूत वच्चि,
कपिसेनकौलदियु गपुल माटलुनु । गपुलतो नाडु राघवुनि वाक्यमुलु
नरसि क्रम्मर जनि मसुरेशु गांचि ।करमुलु मोगिचि निक्कमु विन्नविंचे:
"नुत्तुंग गात्रुलु नुत्तुंगभुजुलु । नुत्तुंगसत्त्वुलु नुत्तुंगमतुलु-
नगु रामलक्ष्मणु ललवुमै विडिसि । रगचरसेनतो नब्धितीरमुन;
गणुतिपनगु नुडुगणमुल नैन, । गणुतिपनगु वृष्टिकणमुल नैन, ७९०
गणुतिपनगु नब्धिकरडुलनैन, । गणुतिपगा रादु कपिसेनसंख्य,
नुचित मीवेळ सामोपायमुनकु । बचरिप बंपु नेर्परुलैनवारि" ।
ननवुडु शार्दूलुडनु वानि माट । विनि शुकुनकु दैत्यविभु डर्थि बलिकै:

शुक संदेशमु

"जनि नीवु वानरसैन्यंबु सोच्चि । यिनसूनुतो प्रियं ब्रेर्पड बलिकि
पग लेमि दैलिपि या भानुनंदनुनि । मगुडिंचि रम्मु सम्मति वोम्मु लेम्मु ।"

कहते समय वहाँ दशग्रीव की अनुमति से शार्दूल नामक दूत ने आकर, कपिसेनाओं की सामर्थ्य, कपियों की बातें (तथा) कपियों के साथ राघव के वचनों को जानकर, लौटकर जाकर, असुरेश के दर्शन कर हाथ जोड़, तथ्य का निवेदन किया। (उसने कहा)—"उत्तुंग गात्र (शरीर) वाले, उत्तुंग भुजाओं वाले, उत्तुंग सत्त्व वाले, उत्तुंग मति वाले राम-लक्ष्मण ने सरलता से, अगचर सेना के साथ समुद्रतीर पर पड़ाव डाला है। उडुगणों (नक्षत्रों) को गिना जा सकता है, वृष्टि (वर्षा) के कणों को भी गिना जा सकता है, ॥ ७९० ॥

—अब्धि की तरंगों को भी गिना जा सकता है, (किन्तु) कपिसेना की संख्या को गिना नहीं जा सकता। इस समय उचित है कि सामोपाय का प्रयोग कर सकने वाले चतुर (जन) को वहाँ भेजो।" ऐसा कहने पर शार्दूल नामक (उस दूत) की बात सुन, दैत्यविभु ने प्रेम से शुक से कहा—

शुक-सन्देश

"तुम जाकर वानरसैन्य में पैठकर, इन-सुअन (सुग्रीव) से प्रिय वचन बोलकर, वैर के अभाव को बताकर, उस भानुनन्दन (सुग्रीव) को विरत कर आओ, सम्मति (ले) जाओ, उठो।" ऐसा कहने पर वह जाकर, अर्कज को देख रावण के समस्त वचनों को जताकर कहा—"हे अर्कज! मुझे

अनवुडु नतवेगि मर्कजु गांचि । यनिये रावणुचेप्पिनंतयु देलिय:
"वैरंबु सेय रावणुतोड नीकु । गारणं बेमि ? यर्कज! नाकु जेपुम,
वालि मीयन्नना वलवदु, विनुमु, । वालिकि नीकुनु वैरंबु गलदु,
वालि यादानवेश्वरु पगवाडु, । चाल रावणुतोड संधि नी कमरु,
रावणुं डीरामु राम देच्चुटकु । नी विट्लु रादगुने ? कपिराज !
८००
यनि गुबेरुनि गेल्चि यतनि पुष्पकमु। गोनिन रावणु नेरुंगुट लेस्सगादे।
यट्टेल, हरुतोड नय्यद्रि नेत्ति । नट्टि रावणु डल्पुडा कपिराज !
देवेंद्रु डादिगा दिविजुल नेल्ल । नाविधंबुन गेल्वडा वानरेंद्र ।
कौलदि मीरिन होमकुंडंबुलंदु । दललु खंडिंचि युद्धति व्रेल्चिव्रेल्चि
जलरुहसंभवु जाल मेप्पिंचि । वेलयंग द्रैलोक्यविजयंबु गोनडे ?
हीनमानवुनितो नेटिसख्यंबु ? । दानवेश्वरुतोड दग जेयु संधि"
ननवुडु गोपिंचि यगचरुलेल्ल । विनुवीथि कैगयुचु वेस वानि बट्टि
बेंडिदंबुगा बेक्कुपिडिकिळ्ळ बोडिचि । कडु मारुमसगि ऱेक्कलु द्रुंचिवैचि
मुक्कुनु जेवुलुनु मोगि गोसिवैव । नोक्कट गडगिन नुदरि राघवुडु

बताओ, रावण से वैर करने के लिए तुम्हें क्या कारण है ? अपने अग्रज वालि से (तुम्हारी) नहीं बनती थी । सुनो, वालि और तुम में वैर था । वालि उस दानवेश्वर का शत्रु है । रावण से सन्धि (समझौता) तुम्हें खूब जमेगी । रावण के इस राम की रामा (स्त्री) को लाने पर क्या तुम्हें ऐसा आना चाहिए ? (तुम्हारा आना उचित नहीं है) । हे कपिराज ! ॥ ८०० ॥

युद्ध में कुबेर को जीतकर, उसके पुष्पक (-विमान) को लेनेवाले रावण (की शक्ति-सामर्थ्य) को जानना उचित है न ! यही क्यों, हे कपिराज ! हर (शिव) के साथ उस अद्रि (पर्वत) को उठानेवाला रावण क्या अल्प है ? हे वानरेन्द्र ! उसने देवेन्द्र आदि दिविजों को उस प्रकार से (प्रख्यात रूप से) जीत नहीं लिया था ? अति औन्नत्य से होमकुण्डों में सिर काट डालकर, हवन करके, जलरुह-सम्भव (ब्रह्मा) को अधिक प्रसन्न कर, शोभा से त्रैलोक्य-विजय को प्राप्त नहीं किया था ? हीनमानव से कैसी मित्रता ? दानवेश्वर से उचित विधि से समझौता कर लो ।" ऐसा कहने पर समस्त अगचर (वानर) आकाश-वीथि में उड़कर झट उसे पकड़, कठोरता से अनेक मुष्ठिघात कर, अनेक प्रकार से मरोड़, पंख तोड़कर, नाक (और) कान काट डालने पर, एक साथ (उसे मार डालने का)

"दूत नेटिकि नित दोंसगुल बेट्ट । ब्रातिगा वीनि नेपक पोवनिङु ।"
८१०
अनवुडु राघुरामुनानति कुलिकि । वनचरु लंदरु वानि बोविडुव
विनुवीथि केगसि याविनुवीथिनुंडि। यिनसूनुनकु शुकुंडेपेंड बलिकें:
"रावणुतो गपिराज ! येमंदु" । नावुडु दाराधिनाथुंडु गिनिसि
"ता नेंच द्रोहि यीधरणीश्वरुनकु । गान नाद्रोहिनि गनि सैपननुमु,
सुरिगि येलोकंबु जोच्चिचन नैन । बौरिगोंदु गानि ये बोवनीननुमु,
पटुकार्मुकंबु यूपंबुगा निलिपि । चटुलास्त्रमुलु परिस्तरणमुल् सेसि
परग गेंधूळुलु प्रभलु गाविंचि । तरुचरस्सुक्सृवततुलु चेपट्टि
समरभूवेदिकास्थलमुन निलिचि । यमरुल केल्ल ब्रियं बेक्कुचुंड
गरमोप्प वीरांगकमुल बेल्लुब्बि । तोरगुचुनुन्न नेत्तुरु नेय्यि गाग
महितगुणध्वनुल् मंत्रमुल् गाग । बहुराक्षसश्रेणि पशुकोटि गाग
८२०
दनरेडु सिंहनादध्वनुल् पेंचि । यनिमिषावलिकि नाह्वानंबु गाग
विडुवनि काहळ विततुल म्रोत । कडुनिपुगा सामगानंबु गाग ।

प्रयत्न करने पर, राघव उद्विग्न हो वोले—"दूत को इतना त्रास क्यों देना चाहिए ? आफ़तों में डालने और इसे सताए विना जाने दो ।" ॥ ८१० ॥

ऐसा कहने पर, रघुराम की आज्ञा के कारण चौंककर सभी वनचरों ने उसे जाने दिया । (तव वह) विनुवीथि पर उड़कर, उस आकाशमार्ग से इन-सून (सुग्रीव) से शुक ढंग से वोला—"हे कपिराज ! रावण से क्या कहूँ ?" ऐसा कहने पर तारा-अधिनाथ (सुग्रीव) क्रुद्ध हो बोला—"(उससे) कहो कि (वह) स्वयं गणना करने पर इस धरणीश्वर (राम) का द्रोही है, अतः उस द्रोही को देख, सहन नहीं करूँगा । कहो कि वह क्रम से किसी भी लोक में घुस जाए, फिर भी मैं पकड़कर मार डालूँगा, किन्तु जाने नहीं दूँगा । पटु-कार्मुक को यूप (रूप) खड़ाकर, चटुल-अस्त्रों को परिस्तरण (आच्छादन) बनाकर, विलसित लाल-धूलि को ही प्रभा बनाकर, तरुचरों (वानरों) को स्रुक्-सृव (यज्ञ के उपकरण)-समूह वनाकर, समर-भू-वेदिका स्थल पर खड़े होकर, देवताओं के अत्यधिक प्रसन्न होने पर, अतिशयता से वीरों के अंगों से घुमड़कर प्रवाहित होनेवाले रक्त के ही मानों घृत होने पर, महित-गुण (ज्या) की ध्वनियों के ही मन्त्र (घोप) होने पर, बहु-राक्षस श्रेणी के ही पशुकोटि होने पर, ॥ ८२० ॥

—शोभायमान सिंहनाद-ध्वनियाँ ही अनिमिषावली (देवता-समूह) के लिए न्योता होने पर, अनारत काहल (नगाड़े आदि युद्ध-वाद्य)-समूह के निनाद

घनमैन रामलक्ष्मणुल कोपमुलु । मुनुकोनि नाकोपमुनु गूड बर्वि
यनुपम त्रेताग्नुलै युंड नंदु । दनदु प्राणंबु लत्तरि नाहुतुलुग
रणमुन दन वीररस मडंचुटये । प्रणुतिपगा सोमपानंबु गाग
ब्रकटराक्षसवीर पशुपललमुल । सकलभूतव्रात संतृप्ति गाग
विडुवक संग्राम विपुलयज्ञंबु । गडुनोप्प जेयु राघवसोमयाजि,
यटुगाक मुन्ने सीतांगन देच्चि । यिट यिच्चि ब्रदुकुट यिदि बुद्धि यनुमु"
अनि पेर्चि सुग्रीवुडाडु वाक्यमुलु । विनि शुकचारुंडु वेगंबे पोयि
यंत वृत्तांतंबु नारावणुनकु । मंतनंबुन जेप्पे, मरि रामु डिचट ८३०

श्रीरामुनि दर्भशयनमु

वनधितीरंबुन वनदर्भशयनं । मोनरिंचि तात्पर्य मोप्पारुचुंड
नमृतपयोधिलो नहिशय्यमीद । नमलचित्तंबुन नानंदमंदि
मुन्नुन्न तन यादिमूर्तिचंदमुन । नन्नरनायकुं डतिकौतुकमुन
नवरत्नकटकमंडनमंडितंबु । विविधोर्मिकामणि विपुलरावंबु
नुर्वीतनूजा मृदूपधानंबु । गर्विताहितभिदा कालदंडंबु
घोरप्रताप कुंकुमचर्चितंबु । सारंगमदलेप संवासितंबु

के ही अतिरमणीय सामगान होने पर, राम-लक्ष्मणों का महान् क्रोध (तथा) मेरे कोप के भी प्रकट अनुपम त्रेताग्नियों के समान रहने पर, उसके (रावण के) प्राणों को उस अवसर पर आहुतियाँ बनाकर, रण में उसके वीररस का दमन करना ही मानों प्रस्तुति करने पर सोमपान होने पर, प्रकट-रक्षोवीर रूपी पशुओं के पललों से सकलभूत-व्रात (समूह) के संतृप्त होने पर, राघव-सोमयाजी अवश्य ही, बड़े औचित्य से संग्राम-रूपी विपुलयज्ञ करेगा। ऐसा न होने से पहले ही सीतांगना को यहाँ ला देकर जीवित रहना ही बुद्धिमत्ता है, (ऐसा) (जाकर) कह दो।" ऐसा क्रम से सुग्रीव के कहे वाक्यों को सुन शुकाचार्य ने शीघ्र जाकर, समस्त वृत्तान्त उस रावण को रहस्य प्रसंग में बताया। फिर राम यहाँ, ॥ ८३० ॥

श्रीराम का दर्भशयन

वनधि (समुद्र) तीर पर, वनदर्भ शयन कर, तात्पर्य के शोभित होने पर, रमणीय दक्षिण भुज शाखा को सुन्दर तकिया बनाकर, धरणीश्वर (राम) अति कौतुक से अमृतपयोधि में, अहि-शय्या पर, अमल चित्त से, आनन्दित हो स्थित अपनी पूर्व की आदिमूर्ति की तरह लेट गया। (वह दक्षिण भुजा) नवरत्न-कटक-मंडन-मंडित, विविध-ऊर्मिका-मणि (के) विपुल रव से युक्त, उर्वीतनूजा के लिए मृदु-उपधान (तकिया), गर्वित शत्रुओं के लिए कालदंडसम, घोर-प्रताप-कुंकुम चर्चित, सारंग-मद-लेप से संवासित, निरत-

निरत महादान निपुणतानकमु । धरणीभरणधुर्यतासमंबगुचु
बोलुपोंदु दक्षिणभुजशाख दनर । दलगडगा जेसि धरणीश्वरुंडु
"नेविधंबुन नैन ने दाटि पोव । द्रोव मिम्मनियेद दोयधि" ननुचु
रामभूवरुडु वारक युपवासि । यै मूडुदिवसंबु लटु शयनिंचि ८४०
तेलिडेंदमुन जलदेवत निलिपि । पलुमरु निष्ठतो ब्रार्थिपदोडगें:
"गड गानरानि नी कडिदिचित्तंबु । वडयुटकै येनु बडियुन्नवाड,
नी केनु मान्युंड, नीरधि ! वेग । नाकिम्मु त्रोव या नाकारि जंप"
ननि वेडुकोनुटयु नारामुनेंदुर । दनरारि यंतकंतकु बोंगि पोंगि
तोरंपुदेरलचेतुलु वीचि वीचि । बोरन नुर्वुतेल्पुन नव्वि नव्वि
घनमीनरुचिनालुकलु ग्रोसि क्रोसि । चनु म्रोत नट्टहासमु सेसि चेसि
तुदि नीट दिक्कुलतो जेप्पिचेप्पि । कदिसिन सुळ्ळ वक्रत जूपिचूपि
युदधि यारामुनि नोक्किकत गोनड, । यदि यट्टिदय कादेयरसिचूडंग ?
जडुडैनवाडु दुर्जनु डैनवाडु । कडु ग्रूर जीवनगति नुन्नवाडु
मलुगक तनलोन मंडेडुवाडु । कुलगोत्रमैन जेकोनिम्रिगुवाडु ८५०

महादान-निपुण-तानक, धरणीभरण-धुरीणता से युक्त था। "किसी भी प्रकार से पार जाने के लिए रास्ता देने के लिए तोयधि से कहूँगा।" (ऐसा) सोचते हुए, राम-भूवर (राजा) अनवरत उपवास करते तीन दिन उस प्रकार लेटे रह कर, ॥ ८४० ॥

—स्वच्छ हृदय में जलदेवता को रख, बारबार निष्ठा से प्रार्थना करने लगा। "तल दिखाई न पड़नेवाले तुम्हारे साहसी चित्त को प्राप्त करने के लिए मैं (यहाँ) पड़ा हुआ हूँ। मैं तुम्हारे लिए मान्य हूँ। हे नीरधि ! उस नाकारी का वध करने के लिए झट से मुझे रास्ता दे दो।" ऐसा निवेदन करने पर, (समुद्र) उस राम के समक्ष शोभित हो, अधिकाधिक फूलकर, विशाल वीचि रूपी हाथ हिला-हिलाकर, फेन की सफ़ेदी मिस खिलखिल हँसकर, घन (वड़े) मीन की रुचियों रूपी जिह्वाओं को फैला-फैलाकर, प्रवाह की ध्वनि मिस अट्टहास कर, जल के अन्तिमभागों से दिशाओं से वातकर, नियराये भँवरों से वक्रता का प्रदर्शन कर, मानों उदधि उस राम की बिलकुल परवाह नहीं करता था। सोचकर देखने पर यह तो वैसी ही (स्वाभाविक) बात है न ! जड़, दुर्जन, अधिक क्रूर जीवन-गति से युक्त, अनवरत भीतर ही भीतर जलनेवाला, कुल गोत्र को भी निगल जानेवाला,[1] ॥ ८५० ॥

१. ये विशेपण श्लेषयुक्त हो दुर्जन तथा समुद्र के लिए अन्वित होते हैं।

नेदुरेंत वेडिन नेरुगुने ? पेद्द । योंदरुचु नंतंत नुब्बुनुगाक !
कदियंग वच्चुचो गडिदिचित्तंबु । चेंदरंग विषमु पै जिलिकिंचु गाक!
नड्डकक तन प्रार्थनंबु गैकोनक । जडधि वोंगुट सूचि जानकीविभुडु
निड्डदकन्नुलक्रेव निप्पुलु राल । मुडिवडु बोमलु ग्रम्मुचु गोपमेसग
जलनिधि दिक्कुनु सौमित्रिदिक्कु । बलुमारु जूचुचु बलिके राघवुडु
"वीनि गर्वमु गंटिवे? लक्ष्मणुंड ! । येनेंत वेडिन नित गैकोनक
पोडसूपकुन्नाडु, पोंडसूपकुन्न । बोडवडगिपक पोनेल यित्तु ?
नेंडपक क्रोलियु निंकिपलेनि । बडबानलंबे नाबाणानलंबु ?
अटु चूचु गाक नायस्त्रंबु कोलदि । बटुतर मकर सर्पमुलु मीनमुलु
गंडकंबुलु गूर्म कर्कटंबुलुनु । मंडूकमुलु नीरुमानिसुल् कदुपु ८६०
नुरुवडि नोंडोंटि नोरयंग बारि । केरलेंडि तिमितिमिंगल तद्गिलमुलु
दंडिराक्षसुलुनु दरुचु नेगळ्ळु । गोंडलु मुनु मारुकोनि रूपुमापि
परगुचुनुन्न नाबाणाग्निशिखल । नेरसिन तनलोनि येम्मुलो यनग
जलमुल गप्पि तज्जलचरकोटि । मेलगुट मान्पिचि मीद देलिंचि

—दूसरा (व्यक्ति) कितना ही प्रार्थना करे तो भी (कब) समझ सकता है ? (ऐसे समय) जोर से चिल्लाते हुए और भी फूलकर रहेगा। नियराने पर ऊपर से विष (गरल, जल) छिड़केगा, जिससे साहसी चित्त भी प्रकम्पित हो जाए। न हिलते हुए (प्रभावित न होते हुए), अपनी प्रार्थना को स्वीकार न करते हुए जडधि (समुद्र) को फूलते-उमड़ते देख, जानकी-विभु विशाल नेत्रों के पार्श्व भागों से अंगारों के बरसने पर, कुंचित होते भौंहों में क्रोध के छाकर उमड़ने पर, जलनिधि की ओर तथा सौमित्र की ओर बारबार देखते हुए राघव बोला—"हे लक्ष्मण ! इसके गर्व को देखा है ? मेरे कितना ही प्रार्थना करने पर भी, बिलकुल परवाह न करके दिखाई नहीं पड़ रहा है। दिखाई नहीं पड़ेगा तो गर्व का भंजन कर दूंगा। (ऐसे ही) जाने दूंगा क्या ? सदा पान करते रहने पर भी सुखा न सकनेवाला बड़वानल है क्या मेरा बाणानल ? इधर (समुद्र भी) देख ले मेरे अस्त्र की सामर्थ्य। पटुतर मकर, सर्प, मीन, गंडक, कूर्म, कर्कट, मंडूक, जलमानुषों के समूह, ॥ ८६० ॥

—अत्यन्त वेग से एक-दूसरे को रगड़ते हुए दौड़कर, उत्साहित होनेवाले तिमि-तिमिंगल, तद्गिल, बली (जल) राक्षस, अधिक अग्नि-पर्वत आदि का सामना कर, (समूल) रूप को मिटाकर, व्याप्त होनेवाली मेरी बाणाग्नि-शिखाओं के अपने भीतर की अस्थियों के समान (प्रकाशित होकर), जलों को आच्छादित कर, उस जलचर-कोटि (समूह) के संचलन को बन्दकर,

चिप्पलु गुल्ललु जिक्कंग दन्नु। निप्पुड धूळिगा निंकिचुवाड, सिरितंड्रि यनि पेंद्दसेसिति गानि। हरिमाम यनुचु वालार्चिति गानि यिदुकु दनु वेडनेटिकि नाकु ? । वोंदेरुंगक पेंचि पोंगेडु जलधि नन्नशक्तुनिगा मनंबुन दलचि। यिन्नि चंदंबुल नेचें सौमित्रि ! ते विल्लु नम्मुलु, दोंगि पोंगियुन्न। यी वार्धि नाचेत निंकुट जूडु, वनधिलो जलमुलु वडि जूरवुत्तु"। ननुचु राघवुडु विल्लंदुमात्रमुन ८७०
बलभेदि वणकें, दिग्भागंवु वगिलें,। जलधुलु गलगें, नाशाकरुलुलिकें, धारुणि ग्रुंगें, भूधरमुलु गूलें। नीरजासनुडुनु निव्वेंरगंदें, जुक्कलु डुल्लें, शेषुंडु भीतिल्लें,। दिक्कुलु घूर्णिल्लें,दिवि योंड्डुगिल्लें, निनकुलेश्वरुडंत नेपु दीपिप। विनुतुलु शोभिलल विल्लेक्कुवेंट्टि समवर्ति संवर्तसमयदंडंबु। सममैनवानि नुज्ज्वलमैनवानि ब्रळयकालानलप्रभ नोंप्पुवानि। विलयोग्रचंडांशु विधमैनवानि सायकंबुलु पेंक्कु संधिप पेंचि। तोयधिलोपल दोंडरि येयुटयु "गडव बोंगिति नन्नु गरुणिपु" मनुचु। जेंडक वारिधि योंरपिल्लेंडु माड्कि

(मर जाने के कारण) ऊपर तैराकर, सीप और घोंघे ही बचे रहें, (इस प्रकार) अभी धूल के रूप में (समुद्र को) सुखा दूंगा। लक्ष्मी के पिता मानकर, बड़ा सम्मान किया है, हरि के मामा (ससुर) मानकर विलम्ब किया है। नहीं तो इस (कार्य) के लिए उससे निवेदन करने की ही क्या आवश्यकता है ? स्नेह को न समझकर उमड़कर फूलनेवाले समुद्र ने मन में मुझे अशक्त मानकर, इतने प्रकार से सताया है। हे सौमित्र ! लाओ धनुष-बाण, सीमारहित हो फूला हुआ इस वारिधि का मेरे हाथ सूख जाना देखो। वनधि (समुद्र) के जल को झट से सुखा दूंगा।" (यह) कहते राघव के धनुष उठाने मात्र से, ॥ ८७० ॥

—बलभेदी (इन्द्र) काँप उठा, दिग्भाग (दिशाएँ) फूट गईं, जलधियाँ आलोड़ित हो गईं, आशाकरि (दिग्गज) चौंक पड़े, धरणी धँस गई, भूधर गिर पड़े, नीरजासन (ब्रह्मा) भी चकित रह गया, तारे टूट गिरे, शेष भयभीत हो गया, दिशाएँ घूर्णित हो गईं, दिवि अपने स्थान से हट गया। तब इनकुलेश्वर ने विकास के दीप्त होने पर, विनुतियों (स्तुतियों) के शोभित होने पर, धनुष चढ़ाकर, समवर्ती (यम) के संवर्त-समय (प्रलय) के दण्ड के सम, उज्ज्वल, प्रलयकालानल-प्रभा से शोभित, विलय-उग्र-चंडांशु के समान अनेक सायकों (बाणों) का संधान कर क्रम से (उन्हें) तोयधि (समुद्र) में लगकर डालने पर, मानों यह कहते कि "अतिक्रमण कर फूल

गडु म्रोसि पर्वताकारंबुलगुचु । गडुवेग दरग लाकस मप्पळिचें;
बलितंपु रामभूपालुनि वाण । मुलु पेंक्कु नाट समुद्रुनि नोट८८०
ग्रम्मेंडु लाललकैवडि नुरुवु । लम्महावीचुलयंदु बेंल्लेगसें
सोंरिदि नेलोकंबु जोंत्तु नन्माड्कि । धरियिंपका समुद्रमु दल्लडिल्लें,
जलनिधियुदकमास्वादिंप वच्चि । मलुगनि रामास्त्रमहिमकु नुलिकि
मोंगुळ्ळु मगुडि वेंम्मुचु बोवु भंगि । बोंग लेंडलेंव्वक पोंरिबोंरि नेंगसें,
नोंर्लुचु राक्षसु लोंर्लुट सूपु । तेंर्गुन नोंर्ले नेंतें जलचरुलु,
मनुकुलवल्लभु मार्गणवह्नि । दोंनकजोंच्चिन समुद्रुनि चित्तवृत्ति
घनतरंबगु नहंकारादुलेल्ल । बेंनुपरि निलुवक पेंडबायु करणि
दैतेयुलेंल्ल बाताळंबु विडिचि । भीतिलि पार्रि पेंक्कुदिक्कुलकु,
दनचेत निकक तनरिन वार्धि । ननयंबु निंकितु ननि वच्चुचुन्न
यिनकुलु बाणाग्नि केंदुरुगावच्चि । ननुपोंद नालिंगनमु सेयुकरणि ८९०
नुडुगनि वाणाग्नि नोंडगूडि लोनि । बडबाग्नि वाराशिपै मंडजोंच्चें;

उठा, मुझपर करुणा दिखाओ", वारिधि के क्रन्दन करने के समान, अधिक ध्वनि कर, पर्वताकार होते हुए, अति वेग से तरंगें आकाश को स्पर्श करने लगीं। रामभूपाल के कई शक्तिशाली बाणों के लग जाने से समुद्र के मुख से, ॥ ८८० ॥

—उमड़ पड़नेवाले झाग के समान, उन महावीचियों पर फेन अधिकता से फैल गया। '(अब) क्रम से मैं किन लोकों में घुस पड़ूँ, (अपने आपको बचाने के लिए)' (यह सोचते) वह समुद्र (बाण-प्रभाव को) धारण (सहन) न कर सक, विचलित हो गया। जलनिधि के उदक का आस्वादन करने के लिए आकर, राम के दुर्निवार-अस्त्र-महिमा के कारण भीत होकर, मेघ मानों दुखी हो वापिस जा रहे हों, (इस प्रकार) निरन्तर धुआँ फैलने लगा। जलचर आत्यन्तिक रूप से चीख-पुकार मचाने लगे मानों (भविष्य में) इसी प्रकार राक्षस चीख-पुकार मचाएँगे। मनुकुल-वल्लभ (राम) की मार्गण-(बाण)-अग्नि के विकल बना देने पर, समुद्र की चित्तवृत्ति से घनतर (अधिक) अहंकार आदि के उन्नति के साथ वहाँ न रह सक, निकल जाने के समान, समस्त दैतेय पाताल को छोड़, भीत हो अनेक दिशाओं में भाग निकले। बड़वानल से न सूखकर विलसित वारिधि को अवश्य ही सुखा दूँगी, यह कहते आनेवाली इनकुल वाले की बाणाग्नि के समक्ष आकर, शोभा से आलिंगन करने के समान, ॥ ८९० ॥

—बड़वाग्नि का साथ देकर, भीतर की बड़वाग्नि वाराशि (समुद्र) के

नप्पुडु लक्ष्मणुंडंतकुभंगि । नुप्पोंगि रौद्र - संयुक्तुडै युन्न
यन्न चंदमु जूचि यलुकुचु वच्चि । मुन्नीटि वेंडसोंच्चि मोड्पुगेलमर
"मानवेश्वर ! यिदि मथनंबु सेय । रानि रुद्रुनि रोषरसवार्धि गादु,
मानवेश्वर ! यिदि मथनंबु सेय । रानि कालुनि कोपरसवार्धि गादु,
ईनीरु नेर्प्रियिप निञ्भंगि दोंडगों, । मानक यिक नी मार्गणवह्नि
वेलिकि नेतेंचि दिग्विततितो गूड । गलय लोकंबुलु गाल्चुनो तुदनु ?
सर्वजगद्धितचरितंबु बूनि । युर्वीश ! नीकोपमुपसंहरिंपु,
नी कोपमुनकु नी नीरधि येंत । ते कार्मुकमु दीनि देंगगोन कधिप!"
यनि विल्लुवट्टिन नतडीक कोप । मिनुमडिपंग सौमित्रि दानुडिपि ९००
"यंबकंबेल ? नायंबकंबुलने । यंबुधि निंकितु" ननिन चंदमुन
ग्रूरदृष्टुल गनुंगोनि योडुगरचि । "योरि समुद्रुंड ! योडवु नाकु;
नीनीरु निंकिचि नीयंदु गलुगु । वानि नन्निटिनि वडि नीरुसेसि
भर्जितु; नीविक बंटवै निलुवु । दुर्जनत्वमुननु दोंडरि नायेंदुट;
९०४

उपरितल पर दहकने लगी। तब लक्ष्मण अन्तक (यम) के समान भड़ककर, रौद्र संयुक्त बने अग्रज का विधान देखकर, भीत हो, समुद्र के किनारे आकर, हाथ जोड़कर (यों बोला)—"हे मानवेश्वर ! यह रुद्र की रोष-रस-वारिधि नहीं है, जिसका मन्थन न किया जा सके। यह काल (यम) की कोप-रस-वारिधि नहीं है, जिसका मन्थन न किया जा सके। इस जल को तुम्हारी वाणाग्नि इस प्रकार सुखाने लगी, अब वह वही न रुककर, बाहर निकलकर, अन्त में दिग्विततति (दिशा-समूह) के साथ सम्भवतः (समस्त) लोकों को जला देगी ! हे उर्वीश (राजा) ! सर्व-जगत्-हित-चरित को धारणकर, अपने क्रोध का उपसंहार करो। तुम्हारे क्रोध के लिए यह नीरधि क्या (चीज) है ? हे अधिप ! इसका संहार करने के लिए कार्मुक (धनुष) इधर दो।" (ऐसा) कह धनुष सम्भालने पर, (उसे) न देकर, क्रोध के द्विगुणित होने पर, सौमित्र को मनाकर, ॥ ९०० ॥

—कहा, "बाण ही क्यों ? अपनी दृष्टियों से ही अंबुधि को सुखा दूंगा।" इस प्रकार क्रूरदृष्टियों से देख, होंठ चबाकर (कहा)—"रे समुद्र ! (तुम) मुझसे परास्त नहीं होते हो ? तुम्हारे जल को सुखाकर, तुम्हारे भीतर सभी (प्राणियों) को झट नष्ट कर, भर्जित करूँगा। तुम अब दुर्जनत्व को छोड़, मेरे समक्ष सेवक हो खड़े रहो ॥ ९०४ ॥

श्रीरामुडु समुद्रुनिपै ब्रह्मास्त्रमेयुट

यिदे तोंडिगेद बाणमे नारि" ननुचु । नदलिंचि यपुडु ब्रह्मास्त्रंबु दोडुग
ब्रह्मयु निंद्रुंडु भ्रम गानरैरि; । ब्रह्मांडमेल्लनु बगिलिनट्लय्ये;
भुवनंबुलेल्लनु बोगिलिनट्लय्ये; । भुवनत्रयमुलोनि भूतंबुलऱचे;
गलयंग दिशल जीकट्लग्गलिंचे; । वेलुगवु रविचंद्रविमलबिंबमुलु;
नशनुलु वडियें; महानिलमडरें; । नशरीरि योऱलें; मिथ्याग्नुलु मंडें;
तुडुगक योक म्रोत यूरक म्रोसें; । जडधि यप्पुडु ग्राहसमितियु दानु ९१०

बोगेल्ल नेक्कड बोयेनो यनग । दुंगफेनमुलेंदु दूलेनो यनग
बटुघोषमेम्मेयि बासेनो यनग । जटुलोग्रविषमेंदु समसेनो यनग
बेंपेल्ल नेक्कड प्रिदिलेनो यनग । सोंपेल्ल नेक्कड जोच्चेनो यनग
भंगंबु लेकयु बरिकिंचि चूड । भंगंबुनकु दाने पट्टन बरगि
सत्त्वंबु सेडियु नाश्चर्यंबु गाग । सत्त्वसमग्रुडै चलनंबु नोंदि
भ्रमणंबु लेकयु भ्रमणंबु गलिगि । यमितवेगंबुन नधिकत दक्कि
यारामु चेति ब्रह्मास्त्रंबु तुदकु । बीरंबु सेडि वच्चि बिंदुवै निलिचे

श्रीराम का समुद्र पर ब्रह्मास्त्र चलाना

यही धनुष की डोरी पर बाण चढ़ाता हूँ।" (ऐसा) कहते हुए तब ब्रह्मास्त्र का संधान करने पर, ब्रह्मा और इन्द्र भ्रान्त हुए। ऐसा लगा मानों समस्त ब्रह्माण्ड फट गया, मानों समस्त भुवन संतप्त हो गए। भुवनत्रय के भूत चीख उठे, दिशाओं में पूरी तरह से अन्धकार व्याप्त हो गया, रवि-चन्द्र के विमल बिम्ब प्रकाशित न हुए, अशनियाँ (वज्र) गिरीं, महा-अनिल भीत हुआ। अशरीरी चीख उठी, मिथ्याग्नियाँ बल उठीं, अविरल गति से एक भयंकार नाद लगातार मुखरित हो उठा। तब पता नहीं जड़धि (समुद्र) का समस्त उफ़ान कहाँ चला गया, ॥ ९१० ॥

—तुंग फ़ेन कहाँ लुप्त हो गया, पटुघोष किस प्रकार छूट गया, चटुल-उग्र-विष कहाँ मिट गया, समस्त गर्व कहाँ शिथिल हो गया, समस्त शोभा कहाँ चली गयी, अपनी ग्राह समित के साथ स्वयं (वहाँ उपस्थित हुआ)। (अब तक) भंग (पराजय) के न होने पर भी, विचारकर देखने पर (आज) पराजय (तरंग) के निवास-स्थान के समान, सत्त्व के नष्ट होने पर, आश्चर्यप्रद रूप से सत्त्वसमग्र होकर विचलित हो, भ्रमण के न होते भी भ्रमण-सम्पन्न हो, अमित वेग से आधिक्य को खोकर, वीरता को खोकर, उस राम के हाथ के ब्रह्मास्त्र के अन्तिम भाग पर, एक बिन्दु होकर खड़ा

वरमुन बॆरुगु रावणु मस्तकमुलु । गरमरुदार नॊक्कट द्रुंचुकॊरकु
गडगि राघवु डंबकमु वाडिसेय । वडवाग्नि निडि नीट बदनिड्डु-
करणि
"र्जितिप देव ! ना जीवनंवेंत । यितियेका" कनियॆडु भंगिदोप; ९२०

समुद्रुडु रामुनि न्नार्थिचुट

नासमुद्रुंडप्पुडखिलंवु जूड । भासुररत्न प्रभाभासुडगुचु
न्नज्वरिल्लॆडु पॆनुवडगलतॊड । नुज्ज्वलदहिकोटि यॊक्कट गॊलुव
गंगादिनदुलॆल्ल गदिसि तो नडव । मंगळवहुपुष्पमालिकल् मॆरय
दलबूनि जलचरततुलोलि नडव । जलनिधि सनुदॆंचि साष्टांगमॆरगि
करपद्ममुलु मॊड्चि कडुसंभ्रममुन । नरवराग्रणिकि सन्मति विन्नविंचॆ,
"नेनु मीयलुककु नॆंतटिवाड ? । भूनाथ ! नी वादिपुरुषोत्तमुडवु;
वायु भू जल नभो वह्नु लादिगनु । नीयाज्ञलोनिवि निक्कुवंबरय;
नीयंदुनुन्नवानिकि लॆक्कलेदु; । नीयधीनंबुलु निखिललोकमुलु;

रह गया। वह ऐसा लग रहा था मानों वर (के प्रभाव) से बढ़नेवाले रावण के मस्तकों को आधिक्य से एक साथ काट डालने के लिए, सयत्न राघव ने अंवक (वाण) को पैना करने के लिए, वड़वाग्नि में रख (तपाकर), फिर पानी में डुवोया तो उसकी छोर पर स्थित जलविन्दु के समान हो वह (समुद्र) यह कह रहा हो कि "हे देव ! सोचने पर मेरा जीवन (अस्तित्व) इतना ही तो है न।" ॥ ९२० ॥

समुद्र का राम से प्रार्थना करना

तव वह समुद्र अखिल (समस्त जीव कोटि) के देखने पर (समक्ष), भासुर-रत्नप्रभा-भासमान होते हुए, प्रज्वलित होनेवाले वड़े-वड़े फणों से उज्ज्वल वने अहिकोटि के सेवाएँ करते रहने पर, गंगा आदि नदियों के निकटता से साथ-साथ चलने पर, मंगल(-प्रद)-वहु-पुष्पमालिकाओं के विलसित होने पर, आगे-आगे जलचरततियों के क्रम से चलते रहने पर, जलनिधि (समुद्र) ने आकर, साष्टांग प्रणाम कर, करपद्म जोड़कर, अधिक संभ्रम से सन्मति से नरवराग्रणि (राज श्रेष्ठ) से निवेदन किया—"मैं आपके क्रोध के लिए कितना हूँ ? हे भूनाथ ! तुम आदि पुरुषोत्तम हो। वायु, भू, जल, नभ, वह्नि आदि सच पूछें तो तुम्हारी आज्ञा के अन्तर्गत हैं। तुम्हारे भीतर जो हैं, उनकी कोई गिनती ही नहीं है। अखिल लोक

तप्पुसेसिति ननि दंडिपवलदु; । चेप्पुमे पनियैन जेसेद गानि"
यनि विन्नपमु सेय नंत नारामु । गनुगोनि यप्पुडा गंगादिनदुलु
९३०
धर शिरम्मुलु म्रोव दंडमुल् वेट्टि । करमुलु फालभागमुननु जेर्चि
"शरणार्थुलमु राम! जगदभिराम! । करुणिपवे मम्मु गरुणासमुद्र !
यभयंबु वेडेदमय्य ! यिदरमु; । नभिनवंबुगनु नी यब्धीशु गाचि
शुभगति मंगळसूत्रमुल् निलुपु । त्रिभुवनाधीश्वर ! दीनमंदार !
यपराधुलनु गाचुटदियै नीगुणमु; । कृप जूचि रक्षिचु गीर्वाणवंद्य !
नीमहिमल नेंच नेरवु श्रुतुलु । नेमेंतवारल मिट मिम्मु बोगड?
देवतामयुडवु, देवदेवुडवु, । कावनु ब्रोवनु गर्तवु नीव;
भूमीश ! लोकेश ! भूरिप्रकाश ! । भूमिसुताधिप ! पुण्यस्वरूप !"
यनि यिट्लु नदुलेल्ल नभिनुतुल् सेय । विनि यप्पुडारामविभुडु वारलनु
मन्निचि "भययेल्ल मानु" डटन्न । नन्नरनाथुन कब्धि यिट्लनियै,
९४०
"सरसिजोदर! मौनिजननुतचरण! । शरणागतार्तरक्षक ! दिव्यमूर्ति !

तुम्हारे अधीन हैं। अपराध किया, इसलिए दण्डित मत करो, कहो तो कोई भी काम कर दूंगा।" ऐसा निवेदन करने पर उस राम को देखकर, तब गंगा आदि नदियों ने— ॥ ९३० ॥

—धरा पर सिर नवाकर, प्रणाम कर, हाथ फालभाग पर जोड़कर, कहा— "हे राम ! जगदभिराम ! शरणार्थी हैं (हम)। हे करुणासमुद्र ! हम पर करुणा दिखाओ न। हे तात ! इतने सब अभय की प्रार्थना करती हैं। अभिनव रूप से इस अब्धीश (समुद्रराज) की रक्षा कर, शुभगति से (हमारे) मंगलसूत्र (सौभाग्य का चिह्न) की रक्षा करो। हे त्रिभुवनाधीश्वर ! हे दीनमन्दार ! अपराधियों की रक्षा करना ही तुम्हारा गुण है। हे गीर्वाणवन्द्य ! कृपा से देखकर रक्षा करो। श्रुतियाँ भी तुम्हारी महिमाओं की गिनती नहीं कर सकतीं। तुम्हारी स्तुति करने के लिए हमारी क्या सामर्थ्य है ? (तुम) देवतामय हो, देवदेव हो, रक्षा करने तथा पालन करने के लिए कर्ता तुम्हीं हो। हे भूमीश ! हे लोकेश ! हे भूरि प्रकाश (वाले) ! हे भूमिसुता-अधिप ! हे पुण्यस्वरूप !" कहकर इस प्रकार समस्त नदियों के अभिनुतियाँ करने पर, सुनकर तब विभु राम ने उन्हें मानकर, कहा—"समस्त भय से विरत होइए"। (तब) उस नरनाथ से अब्धि (समुद्र) ने यों कहा— ॥ ९४० ॥

"हे सरसिजोदर ! हे मौनिजन-नुतचरण (वाले) ! हे शरणागतआर्तरक्षक !

तरुचरसेन युद्धति नेगुनपुडु । गरिमकरादुल गदलंग नीय;
नुप्पोंगि क्रय्यल कोंत्ति वेलिवरिय; । दप्पि झंझामारुतमु जूचि म्रोय;
गडलेक मिगुल नगाधमैयुंडु । सुडि वोंडमिप; नासोंपु वाटिंप;
नलरि सेतुवु गट्टियैननु नडवु; । मलघुविक्रम ! यूरकैनन‌ु नडवु"
मनिन राघवुडमोघास्त्र मब्धीशु । पनुपुन मरुभूमिपै ब्रयोगिंचि
विलसिल्लु नायंपवेडिमिचेत । सोंलव कंदुलनीरु शोषिंप जेसि
यामरुभूमि कुदात्तुडै सर्व । कामसमग्रंबुगा वरंबिच्चें;
नदि मरुदेशमै यंतनुंडियुनु । वदलक यम्माड्कि वर्तिचुचुंडे;
मगुडे दूणिकि नंत मनुजेशु शरमु; । तग नब्धि पूर्वविधंबुन नुंडे। ९५०
नप्पुडंभोनिधि यनियें राघवुन । कुप्पोंगु नयमुन नोंप्पु वाक्यमुल,
"जगति मीपूर्ववंशजुलैनयट्टि । सगरुलु सेयंग सागरंबनग
बरगिनवाड भूपालक ! येनु । मरियुनु मीकुनु मान्युंड विनुमु;
मीतंड्रि दशरथमेदिनीश्वरुडु । दैतेयदेवयुद्धमुन बेंपोंदि
नन्नयोध्यकु गोंनि नरनाथ ! पोयि । मन्निंचि यप्पुडु मगुड वीड्कों-
लिपि
पुत्तेर वच्चिचति भूतलाधीश ! । यित्तेरंगुन मीकु ने दक्किनाड;

हे दिव्यमूर्ति (वाले) ! जब तरुचर सेना उद्धत (गति) से जाती रहेगी (तब) करि मकर आदियों को हिलने नहीं दूँगा। उमड़कर कुल्याओं में बढ़कर बाहर नहीं निकलूँगा। भटककर झंझामारुत को देख गरजूंगा नहीं। अतल हो, अत्यन्त अगाध भँवरों की सृष्टि नहीं करूँगा। अपनी शोभा का प्रदर्शन नहीं करूँगा। हे अलघुविक्रम (वाले) ! प्रेम से सेतु बाँधकर ही चलो या यूँही चले जाओ।" (ऐसा) कहने पर राघव ने अब्धीश की आज्ञा से अमोघ-अस्त्र का मरुभूमि पर प्रयोग किया। विलसित उस बाणाग्नि से, वहाँ के समस्त जल को सुखाकर, उदात्तता से उस मरुभूमि को सर्व-कामद (इच्छा तत्त्व की) समग्रता का वर दिया। तब से लेकर वह मरुदेश हो, उस प्रकार प्रवर्तित होता रहा। तब मनुजेश का शर फिर तूणीर में लौट आया, अब्धि भी पूर्व विधि से रहा। ॥ ९५० ॥

तब अंभोनिधि ने राघव के प्रति फूलते हुए नीति से शोभित वाक्य कहे—"हे भूपालक ! जगत् में आपके पूर्वज सगरों द्वारा बनाया जाकर सागर के नाम से विख्यात हूँ। मैं आपके लिए और भी मान्य हूँ। हे नरनाथ ! आपके पिता दशरथ-मेदिनीश्वर (राजा) दैतेय-देव युद्ध में अधिक प्रेम से मुझे अयोध्या को ले जाकर, सम्मान कर, तब फिर बिदा कर भेजने पर हे भूतलाधीश ! इस प्रकार मैं आपके हाथों आ गया हूँ।

दौरकनि कट्टु सेतुवु राघवेंद्र ! । तरुचरसेन नुद्धति नड़पिंपु ।"
९५७

सेतुवु गट्ट श्रीरामुडु सुग्रीवु नाज्ञापिंचुट

मनवुडु राघुरामुडर्कजु जूचि । "पनुपु सेतुवु गट्ट ब्लवगपुंगवुल
रयमुन" नन विनि रविनंदनुंडु । प्रियमुन बनिचे वार्धिनि गट्ट गपुल;
जनिरंगदुंडुनु जांबवंतुंडु । घनुलैन यानील गजगवाक्षुलुनु ९६०
बनसुंडु नलुडुनु बावकनेत्रु । डुनु दपनुडु दारुडुनु गवयुंडु
गरमोप्प ऋषभुडु गंधमादनुडु । शरभुंडु द्विविदुंडु शतबलि मेटि
हरि रोमवक्षुंडु नट सुषेणुंडु । सोरिदि गेसरियुनु ज्योतिर्मुखुंडु
दधिमुखुंडुनु वेगदर्शियु मरियु । नधिकुलु ब्लवगसेनाधिपु लेल्ल
म्राकुलु गोंडलु मल्लडिगोनग । वीकतो गोनिवच्चि बिषधिलोवैव
नोकटियु नीटिपै नुंडक मुनुग । विकलुलै कपुलेल्ल वेरगंदि वच्चि,
पतिकि जेप्पुटयु भूपति यात्मलोन । नतिविस्मयंबंदि यब्धि किट्लनिये
"निदियेमि कपिवीरुलीभंगि देच्चि । वदलक तरुलु बर्वतमुलु वैव

हे राघवेन्द्र ! लगकर सेतु का निर्माण कीजिए और उद्धतगति से तरुचरसेना को चलाइए ।" ।। ९५७ ।।

सेतु बाँधने के लिए श्रीराम का सुग्रीव को आज्ञा देना

ऐसा कहने पर रघुराम ने अर्कज को देख (कहा)—"सेतु बाँधने के लिए प्लवग-पुंगवों (वानर श्रेष्ठों) को शीघ्र बुला भेजो ।" (ऐसा) कहने पर रविनन्दन ने प्रेम से सेतु बाँधने के लिए कपियों को भेजा । (तब) अंगद, जाम्बवान्, महान् बने वे नील, गज, गवाक्ष, ।। ९६० ।।

—पनस, नल, पावकनेत्र, तपन, तार, गवय, अधिक शोभायुक्त ऋषभ, गन्धमादन, शरभ, द्विविद, शतबलि, श्रेष्ठ हरि, रोमवक्ष, सुषेण, क्रम से केसरी, ज्योतिर्मुख, दधिमुख, वेगदर्शी और भी सभी प्लवग सेनाधिपति, वृक्षों पर्वतों को (आपस में) खींचा-तानी करते हुए, बेपरवाही से ले आकर, विषधि (समुद्र) में डाल देने पर, (उनमें) एक भी पानी पर न रहकर, डूब जाने पर व्याकुल हो, समस्त कपि आश्चर्य-चकित हो, आकर पति (राजाराम) से बोले । (बोलने पर) आत्मा में अतिविस्मित होकर (उन्होंने) अब्धि से यों कहा—"यह क्या ? कपिवीरों के इस प्रकार लाकर लगातार तरु और पर्वतों को डालने पर, एक भी जल पर टिक नहीं रहा है ।" (ऐसा) कहने पर सकलाधिपति (राम) से उस जलधि ने यों

नोंकटियु नीटिपै नुनिकिले" दनिन । सकलाधिपतिकि नाजलधि
यिट्लनियें:
"बरमेश! विनुमु लोपलि कवि वोव। बोरिबोरि जलचरंबुलु म्रिगु
वानि; १७०
नमरंग शतयोजनायतंबगुचु । दिमि यनु मत्स्यंबु दिरुगुचुनुंडु
मिगु ना मीनु दिमिगलंबोकटि । म्रिगु ना मत्स्यंबु मिगुल दद्गिलमु;
निटुवले नोंडोंटि नेऱगोंनुचुंडु । चटुलसत्त्वंबु लसंख्यमुल् देव!"
यन विनि "यिट्टि महांबुधिगट्ट । ननुवेदि, चेप्पवे यब्धीश!" यनुडु
"निनकुलाधीश्वर ! यीनलु वंपु; । घनुडैन याविश्वकर्मनंदनुडु
भानुकुलेश ! युपायज्ञुडितडु; । दानु नेंतयु दम तंड्रिचे नेर्चे;
वडि वानिचे दप्प वननिधि गट्टु । वड; ददि येट्लन्न ? वसुधेश !
विनुमु:
शिशुवेळ विंध्याद्रिचेरुव यडवि । बशुकण्वुडनुमुनि पज्ज नाडुचुनु
मुनि यनुष्ठानमिम्मुल जेय बोव । मुनिवेल्पुलनु बट्टि मोरतोपुननु
वनधिलोपल बाऱवैचे नीनलुडु; । चनुदेंचि यम्मुनि चय्यन नेरिगि
१८०
चालंग गोपिंचि शास्ति गाविपं । बालुंडु दगडनि परग जिंतिंचि

कहा—"हे परमेश ! सुनो, उनके (जल के) भीतर जाने पर जलचर क्रम से उन्हें निगल जाते हैं ॥ १७० ॥

बड़ी शोभा से शत-योजन-आयत (विशाल) होते हुए तिमि नामक मत्स्य घूमता रहता है। उस मछली को एक तिमिंगल निगल जाता है। उस मत्स्य को तद्गिल निगल जाता है। हे देव ! इस प्रकार चटुल सत्त्व वाले असंख्य (जलचर) एक-दूसरे को खाते रहते हैं।" (ऐसा) कहने पर सुनकर (राम ने) पूछा—"हे अब्धीश ! इस महांबुधि पर (सेतु) बाँधने का उपाय बताओ न।" ऐसा कहने पर (समुद्र ने कहा)—"हे इनकुलाधीश्वर ! महान् विश्वकर्मा के नन्दन (पुत्र) उस नल को भेजिए। हे भानुकुलेश ! वह उपायज्ञ है। उसने स्वयं भी अपने पिता से सीख लिया है। उसके सिवा और किसी से वननिधि बाँधा नहीं जा सकता। वह कैसा है ? हे वसुधेश ! सुनो। शिशुता के समय विन्ध्याद्रि के पास कानन में पशुकण्व नामक मुनि के समीप खेलते हुए, मुनि के प्रेम से अनुष्ठान के लिए जाने पर, मुनि के देवता-विग्रहों को हाथ में ले इस नल ने वनधि में डाल दिया। आकर, उस मुनि ने इस विषय को झट जानकर, ॥ १८० ॥

—अधिक क्रुद्ध हो, दण्डित करने की सोचकर, (दण्ड देने के लिए) यह

तन सौम्मु पोकुंड दानँ तॆच्चुटकु । ननुवु जिंतिंचि यायर्भकु जूचि
तन तपोमहिम नत्तापसोत्तमुडु । घनतरंबगु नोक्क कट्टड सेसँ;
"दोयधिलोपल दृणमादिगाग । बायक वीडेमि पट्टि वैचिननु,
नवि तेलुगा" कनि यावरंबीय । नवि यंतलो देल नतडु गैकॊनियँ;
नदिगान देलँडु नतनिचे गिरुलु; । वदलक ने गट्टुवडियेंदनपुडु;
धरणीश! यीवार्धि दग गट्टुनंत । कुरुभक्तियै गोल्चि युंडेद; नलुनि
रप्पिपु" मनवुडु रघुकुलोत्तमुडु । रप्पिंचि यत्यादरंबुन जूचि९८८

सेतुबंधनमु

"यो वनचरवीर! यो महाधीर! । नीविक्रमंबॆल्ल नीरधि सॆप्पॆ;
मानुग निप्पुडु महिम सूपुचुनु । बूनिक गपुलचे बोंकंबु मीर९९०
दरुगिरुलंदरु दार तेरगनु । वॆरवॊप्प नसदृशविद्य येर्पडग
गट्टु मंभोराशि गडकतो नीवु । नॆट्टन नीलावु नेर्पुन मॆरसि"
यनवुडु गरमुगंबथितो मोगिचि । विनयंबुतो रामविभुनकु ननियँ:
"नुर्विपै नेनिट युदयिंचुटकुनु । नुर्वीश! कलिगॆ ब्रयोजनंबिपुडु

बालक उपयुक्त नहीं है, ऐसा खूब सोचकर, अपनी खोई सम्पत्ति (वस्तुओं) को स्वयं लाने का उपाय सोचकर, उस अर्भक को देखकर, अपनी तपोमहिमा से उस तापसोत्तम ने एक महान् नियम बनाया। तोयधि में तृण आदि कुछ भी पकड़कर यह डाल दे तो वे (जल के ऊपर ही) तैरते रहेंगे।" ऐसा वर देने पर, उतने में ही उनके (देवमूर्तियों के) ऊपर आने पर, उन्हें ले लिया। हे धरणीश! इस वारिधि को ठीक ढंग से बाँधने तक मैं उरु (अधिक) भक्ति के साथ रहूँगा। नल को बुला भेजिए।" ऐसा कहने पर रघुकुलोत्तम ने (उसे) बुलाकर, अत्यादर से देखकर, ॥ ९८८ ॥

सेतु बन्धन

"हे वनचरवीर! हे महाधीर! नीरधि ने तुम्हारा समस्त विक्रम कहा है। स्थिरता से अब महिमा का प्रदर्शन करते हुए, सप्रयत्न कपियों से, सुघड़ाई की अधिकता से, ॥ ९९० ॥

—उन सबके तरु-गिरियों के लाने पर, उपाय से, असदृश विद्या को बताते हुए साहस से अपनी सामर्थ्य (तथा) कौशल प्रकाशित करते हुए (अंभोराशि (पर बाँध) बाँध दो।" ऐसा कहने पर, इच्छा से करयुग जोड़कर, सविनय रामविभु से कहा—"हे उर्वीश! उर्वी (पृथ्वी) पर यहाँ मेरे जन्म

देव! यीजलधि बंधिचेद वनुपु । मावेंरवेंल्ल नेनट तंड्रिचेत
धारुणीतलनाथ! तग नेर्चिनाड; । नारय देवर यानति जेसि
नानेर्पु मीयौद्द नरनाथ ! चेंप्प । गानेल ? यिपुडु सागरमु बंधिचि
चेंच्चेंर देवरचित्तंवु वडसि । मेंप्पिंचुवाड; नम्मिक वंपु'' मनुडु
नलिनाप्तकुलमणि नलुनि बंचुटयु । नलुनितोगूड वानरसेनलेंल्ल
नेलयु निगियु निखिलदिक्कुलुनु ।वालिनयार्पुल व्रय्य जेयुचुनु १०००
नायेंड शैलवृक्षावळि देंच्चि । तोयधि गट्ट नुद्योगिंचिरपुडु;
रामचंद्रुंडनु राजु गणेशु । दा मदिलोपल दलचि म्रोक्कुचुनु
नरयोजनंबैन यद्रि सुग्रीवु । डुरुवडि गोंनिवच्चि युर्वि गंपिंप
गलयंग देवतागणमुलु वोंगड । नलवुन दोलुदोंल्त नलुचेतिकिच्चें;
दोरकोंनि नलुडुनु दोयधियंदु । वेंरवार निलिपें नाविपुलशैलंबु
दनचेयु सेतुबंधमुनकु रामु । ननुपमकीर्तिकि नाविभीषणुनि
विनुतपट्टमुनकु विशदप्रभाति । दनरारू शासनस्तंभंबु माड्कि;
नंत वानरकोटि याशावितान । मंतयु दानयै यद्रुलु दरुलु
नवलील बेंरुकुचु नवि देंच्चि नलुन । कवसरोचितमुग नंदियिच्चुचुनु,

---

लेने का प्रयोजन अब सम्पन्न हुआ है। हे देव ! आज्ञा दो, इस जलधि को बाँध दूँगा। हे धरणीतलनाथ ! वह सारा उपाय मैंने पिता से ढंग से सीख लिया है। आपके आदेश पर विचार कर, अपनी कुशलता के बारे में हे नरनाथ ! आपके समक्ष क्यों कहूँ ? अब सागर को बाँधकर शीघ्र देव के चित्त को प्रसन्न करूँगा। (मुझपर) विश्वास रख भेजिए।" (ऐसा) कहने पर, नलिनाप्त-कुल (सूर्यवंश)-मणि ने नल को भेजा। नल के साथ समस्त वानर सेनाओं ने पृथ्वी, आकाश, समस्त दिशाओं को (अपनी) व्याप्त गर्जनाओं से फाड़ देते हुए ॥ १००० ॥

—उस अवसर पर शैल-वृक्ष-अवली लाकर, तब तोयधि को बाँधने का उद्योग किया; रामचन्द्र नामक राजा का (तथा) गणेश का मन में स्मरण कर, प्रणाम किया। सुग्रीव ने आधा योजन वाले अद्रि (पर्वत) को अतिशीघ्रता से लाकर, उर्वी (पृथ्वी) के कम्पित होने पर, परिव्याप्त देवतागणों के सराहने पर, सरलता से प्रथम नल के हाथ में दिया। लगकर नल ने भी तोयधि में उस विपुल शैल को ढंग से रख दिया। मानों वह अपने सेतुबन्धन कार्य के लिए, राम की अनुपम कीर्ति के लिए, उस विभीषण के विनुत राज्याधिकार के लिए विशद प्रभा से युक्त, विलसित शिलास्तम्भ था। तब वानर-कोटि समस्त आशावितान में व्याप्त होकर, अद्रि एवं तरुओं को आसानी से उखाड़कर, उन्हें लाकर नल को आवश्यकतानुसार देते हुए,

औकर्कोंडपैनुंडि यौकर्कोंडपैकि ।ब्रकटजवंबुलौप्पंग दाटुचुनु, १०१०
गैरलुचु नौककौन्नि गिरुलेत्ति यार्चि । गिरुल क्रिंदुग बेल्लगिलगवैचुचुनु
गौंडलु तलकैत्ति गुनिसियाडुचुनु । देंडनि कोंदरु दिट्टि नव्वुचुनु
गौंडपै गौंड याकोंडपै गौंड । यौंडौंड यवि डौल्लकुंड बेर्चुचुनु
निम्मुल शैलंबु लिरुचेतुलंदु । निम्मपंडुलमाड्कि निगुडवैचुचुनु
नौकडु कौंडलु मोचि युरुवडिराग । नौकडवि पडद्रोचि युब्बि नव्वुचुनु
दाटि याकोंड लुद्दंडत बट्टि । मीटुदुना नीवु मैच्चंग ननुचु
नीतरु लीगिरुलित वेगमुन । वैतुना यान्नलुवद्दकु ननुचु
ननि बासलिच्चुचु नग्गिचुकौनुचु ।वनचरु लिब्भंगि वडि दैच्चि तैच्चि
तरुवुलु नगमुलु दन किच्चुचुंड । दौरकौनि नलुडु सेतुवु गट्टदौडगै
मुंदटिचंदमै मुनुगक युंडै । नंदौक्कटैननु नंबुधिलोन; १०२०
नट्टिचंदंबुन नाकपिकोटि । गट्टैनु; गटकटा ! कष्टजीवनमु
गलिगैना ना कनि कलगिनमाड्कि । गलगि यंबुधि हल्लकल्लोलमय्यै;
नलुडु निम्मैयि बदुनाल्गुयोजनमु । ललवड दौलिनाडै यब्धि बंधिंचै;

एक पहाड़ से दूसरे पहाड़ पर प्रकटित जब (वेग) के शोभित होने पर, उछलते हुए, ।। १०१० ।।

—उल्लसित होते कुछ गिरियों को उठाकर, चीखकर, गिरियों को समूल उखाड़ डालते हुए पर्वतों को सिर पर ले इठलाते, कुछ (अन्य वानरों) से लाओ कहकर, हँसते हुए, एक पर्वत पर दूसरा पर्वत, उस पर्वत पर दूसरा पर्वत—परस्पर न लुढ़के ऐसा सजाते हुए, सुन्दरता से दोनों हाथों से शैलों को नींबू के फलों के समान उछालते हुए, किसी के पर्वतों को ढोते हुए अति वेग से आने पर, दूसरा (कोई) उन्हें गिराकर फूलकर हँसते हुए, यह कहते कि इन पहाड़ों को उद्दण्डता से पकड़ फेंक दूँ जिसे तुम सराहो, यह कहते कि इन तरुओं, इन गिरियों को इतने ही वेग से उस नल के पास फेंक दूँ, इस प्रकार के वचन कहते, प्रशंसा करते, वनचर इस तरह झट ला-लाकर, तरु (और) नगों को अपने को देते रहने पर, लगकर नल सेतु बाँधने लगा तो पूर्व की तरह उनमें से एक भी अंबुधि में डूबे बिना रहा। इस तरह से उस कपिकोटि ने (सेतु) बाँध दिया। ।। १०२० ।।

हाय ! विकल हो अंबुधि क्षुब्ध हुआ मानों यह सोच विकल हो गया हो कि मुझे यह कष्ट-जीवन (विपत्तियों का समय) प्राप्त हुआ है। नल ने इस प्रकार पहले ही दिन चौदह योजन तक अब्धि पर (सेतु) बाँध दिया। तब सूर्य अस्त हुआ। वलीमुख (वानर) उस सेतु के लिए

नंत सूर्युंडु ग्रुंके; नासेतुवुनकु । नेंतयु वलुकापुलिडि वलीमुखुलु
वच्चि वेलमुल निवासदेशमुल । जोच्चि येंतेनियु सोंपुतो नुंड १०२५

चंद्रोदय वर्णनमु

गृतकृत्युडगु रामु कीर्तिपुष्पमुलु । चतुरतमै वेदचल्लिनयट्लु
करमोप्प जुक्कलु गारिंचे मिट; । वरकळायति सीम वलराजु माम
पोलुपोंदु कलुवल पोरानि विंदु । कलसिन जक्कवकव बापु मंदु
पालवेल्लिनि द्रच्चि पडसिन वेन्न । शूलि योदलपुव्वु चुक्कलनव्वु
नेंरिचकोरमुलकु नेलनेलपंट । युडवेदि विरहुल नुडिकिचु मंट१०३०
गगनंवुतोडवु दोंगलगुंडेदिगुलु । नोंगि नव्धि वोंगिचु नूर्टपट्टि
हरिहरव्रह्मल यानंदसृष्टि । सरसिजरिपुडैन चंद्रुडु वोंडिचें?
निनुपारि कलशांवुनिधि वेल्लिविरिसे । ननग वेंन्नेल वर्व नट निद्रलेक
"येंन्नडोको सेतुवेमु गट्टेंदमु ? । अेंन्नडोको लंक येमु सूचेंदमु ?
अेंन्नडोको दानवेंद्रुंडु गूलु ? । नेंन्नडोकी सीता यी रामु गूडु ?
नेंप्पुडु वेगुनो यीरेयि यिक ? । नप्पुडे वच्चिति मातमलो सोलसि

अधिक पहरा नियुक्त कर, आकर (समुद्र के) तटस्थ (तीर पर के) निवास-प्रदेशों में प्रवेश कर अत्यन्त शोभा से रहे ॥ १०२५ ॥

चन्द्रोदय का वर्णन

कृतकृत्य वने राम के कीर्ति-पुष्पों को चतुरता से विखेर दिये हों, इस प्रकार वड़ी शोभा से आकाश में तारे दिखाई पड़े। श्रेष्ठ कलाओं की सीमा (पूर्णता), मन्मथ का मामा, सुशोभित कुमुदों का वन्धु, जुड़े हुए चक्रवाक की जोड़ी को अलग कर देनेवाला औषध, क्षीरसागर का मन्थन कर प्राप्त किया नवनीत, शूली (शिव) का शिरोपुष्प, नक्षत्रों का हास, सुन्दर चकोरों को आनन्द प्रदान करनेवाला, रूप खोये विरहियों को तपाने वाली ज्वाला— ॥ १०३० ॥

—गगन का आभूषण, चोरों के हृदय की चिन्ता, क्रम से अव्धि को उत्तेजित करनेवाला प्रियपुत्र, हरिहर व्रह्माओं की आनन्द-सृष्टि, (और) सरसिज-रिपु चन्द्र उदित हुआ। ज्योत्स्ना इस प्रकार छिटक गई मानों कलशांवुनिधि (क्षीर-सागर) शोभा से द्विगुणित हो व्याप्त हो गई हो। उधर वानर निद्रा के अभाव में (सोचने लगे)—"कव हम सेतु वांध देंगे ? कव लंका को हम देख लेंगे ? दानवेन्द्र कव (मर) गिरेगा ? कव सीता राम से मिलेगी ? इस रात का अव कव सवेरा होगा ? मन से थककर अभी आ गए थे। रात भर वहीं

येल वच्चितिमि रेयेल्ल नंदुंडि । योलि सेतुवु गट्टुचुंडक मनमु"
अनुचु नव्वानरुलंदरु नट्लु । मनमुन जिंतिंचि मक्कुवल् दक्कि
यारेयि गडिपि संध्याविधुल् दीर्चि । चारुतरंबुगा सकलवानरुलु
नोंडोरु जीरुचु नुत्साह मोप्प । नोंडोरु गडवंग नुरुबडितोड १०४०
बृथिवीधरंबुलु पृथिवीजमुलुनु । बृथुलसत्त्वंबुन बेरिकि वे तेंच्चि
यंबुधिलो वैव नपुडु सुग्रीवु । डंबरवीथिकि नरिगि वेगमुन
वेरवारगा बट्टि विंध्याद्रिशिखर । मरयोजनमु निडुपैनदि तेंच्चि
यासुषेणुनि चेति कंदियिच्चुटयु । नासुषेणुं डिच्चे नानलुनकुनु;
दारासुतुंडुनु दर्दुरशैल मारूढगति । देंच्चि यब्धिलो वैचे;
मलयाद्रिशृंगंबु म्राकुलतोड । नलुनकु नीलु डुन्नतगति निच्चे;
द्विविदुंडु मैंदुंडु देंच्चि यावार्धि । गवगूडि वैचिरि ग्रावंबु लेंत्ति;
गजुडु गवाक्षुंडु गंधमादनुडु । भुजवलाढ्युलु शरभुडु गवयुंडु
निल चलियिंप महेंद्राद्रिशिखर । मुलु देंच्चि वैचिरि मुन्नीटिलोन;
नवि येल्ल मुनुगनी कंटि नलुंडु । तविलि यंबुधि गट्टे; दरुचरुलिट्लु १०५०
प्रकटिंचि तेंच्चु पर्वतमुलु दरुलु । नोंककेल नंदि पयोनिधियंदु

रहकर, क्रम से सेतु बाँधते न रहकर, हम (वहाँ से) क्यों आ गए ?" ऐसा वे सभी वानर मन में उस प्रकार सोचते हुए, प्रेम-विहीन होकर, वह रात बिताकर, संध्या विधियों से निपटकर, चारुतर रूप से सभी वानर, एक दूसरे को पुकारते हुए, उत्साह के विलसित होने पर, एक-दूसरे को मात करने के लिए अत्यन्त वेग से, ॥ १०४० ॥

—पृथ्वीधरों (पर्वतों) और पृथ्वीजों (वृक्षों) को पृथुलसत्त्व से उखाड़ शीघ्र ला, अंबुधि में डाल दिया । (उस समय) सुग्रीव अंबर वीथि में जाकर, वेग से, उपाय से पकड़कर, आधे योजन की चौड़ाई वाले विन्ध्याद्रि-शिखर को लाकर, उस सुषेण के हाथ में देने पर, उस सुषेण ने (उसे) नल को दिया । तारासुत (अंगद) ने भी आरूढ़ गति से दर्दुर शैल को लाकर अब्धि में डाल दिया । नील ने उन्नतगति से वृक्षों सहित मलयाद्रि शृंग नल को दिया । द्विविद (तथा) मैन्द ने ग्रावों (चट्टानों) को उठाकर एक साथ उस वारिधि में डाल दिया । गज, गवाक्ष, गन्धमादन, भुजबल में आढ्य (धनी) शरभ (तथा) गवय ने पृथ्वी विचलित हो उठे, इस तरह महेन्द्राद्रि के शिखर लाकर गहरे पानी में डाल दिये । उन सब को डूबने न देकर, स्पर्श कर, नल ने अंबुधि (पर बाँध) बाँध दिया । इस प्रकार तरुचर, ॥ १०५० ॥

—प्रकट रूप से लानेवाले पर्वत (तथा) तरुओं को एक हाथ में ले पयोनिधि

नुनुपंग गनुगोनि युग्रकोपमुन । गनलुचु बलिमिमै गरुवलिसुतुडु
चय्यन नेडुयोजनमुल कोंड । नय्येड गोनितेर नदि रामु डेरिगि
यनयंबु निरुगेल नंद ननुज्ञ । योनरिप नट्लने योनरिचे नतडु।
वप्पुडु कपिसेन यार्पुल म्रोत । युप्पोंगि वाराशि युब्बेंडिम्रोत
तरुगिरु लोंडोंटि दाकेंडु म्रोत । तरुचरु लोंडोरु दग विल्चु म्रोत
कुदिसि भूतंबुलु घोषिंचु म्रोत । वदलि दिग्गजमुलु वापोवु म्रोत
कडुनग्गलंबुगा गगनंबु मुट्टि । युडुगक पेल्लैन युलिवु चिंतिप
बृंदारकासुरबृंदंबु लेत्ति । मंदरगिरि वैचि मथियिंचुनाटि
यमृताब्धिम्रोतयो यनग नाम्रोत । कमलभवांडदिक्तटमुलु निंडे; १०६०

नंतट मध्याह्नमैन वानरुलु । श्रांति नोंदुटकु वृक्षंबुलु सेरि
पलुदेरंगुल मंचि फलमुलु नमलि । नेलवुल जल्लनि नीळ्ळोप्प द्रावि
नीडल नोक्किंत निलिचि क्रम्मरनु । वेडुक रेट्टिप वेगंबु मिगुल
"नाकोंड लेत्तिते नरुगुडु गोंद; । रीकोंडलनु गोंदरेत्ति ते" डनुचु
बेक्केन तरुवुलु वेक्केन गिरुलु । बेक्कुमोत्तंबुलु बेक्कुव देच्चि

में रख देते देख, उग्रकोप से जलते हुए वल (सारी शक्ति) से पवनपुत्र, झट सात योजन वाले पर्वत को उस अवसर (या स्थान) पर लाया। उसे जानकर, उसे सदा दोनों हाथों से लेने (नल को) आदेश देने पर, उसने वैसा ही किया। तब कपिसेना के गर्जनों की ध्वनि, उफन कर वाराशि के फूलने की ध्वनि; तरु-गिरि के परस्पर टकराने की ध्वनि, तरुचरों के आपस में एक-दूसरे को बुलाने की ध्वनि, सिकुड़कर भूतों के घोष की ध्वनि, (अपने स्थान से) विचलित हो रुदन करनेवालों दिग्गजों की ध्वनि, (इन सबके) बहुत अधिक हो, गगन को स्पर्श कर, (वहाँ) न रुक उस ध्वनि के और अधिक हो जाने के कारण वह ध्वनि बृन्दारक-असुरों के जुटकर, मन्दरगिरि को (समुद्र में) डालकर मन्थन करते समय अमृताब्धि में उत्पन्न ध्वनि के समान हो, कमलभवांड (ब्रह्माण्ड)-दिक्तटों में भर गया। ॥ १०६० ॥

तब मध्याह्न होने से वानर विश्रान्ति लेने वृक्षों (के तले) पहुँचकर, अनेक प्रकार के अच्छे फल चबाकर, सरोवरों के ठण्डे पानी को शोभा से पीकर, छायाओं में थोड़ी देर ठहरकर, फिर से उत्साह के द्विगुणित होने पर, (कार्य में) वेग के अधिक होने पर, यह कहते कि "उन पहाड़ों को उठा लाने के लिए कुछ (लोग) जाओ, इन पहाड़ों को कुछ उठा लाओ", असंख्य तरुओं, असंख्य गिरियों को, अधिक संख्या में, प्रेम से लाकर, निरन्तर नल

यूरक नलुनकु नौप्पिचुवारु । वारिधिलोपल वैचेंडुवारु
नट येंदुरेगि पॅल्लंदकोन्वारु । निट तॅच्चि चेरुव निडियॅडिवारु
नलु डंदिकौनग वानरुलंदि यौसग । बलुतरुल् गिरुलु निब्भंगिमर्नाडु
नासेतु विरुवदियारुयोजनमु । लीसुन बंधिंचि; रिनुडंत ग्रुंकॅ;
नप्पुडु सुग्रीवु डादिगा गपुलु । चॅप्पिरप्पनियॅल्ल श्रीरामुतोड; १०७०

जॅप्पि वेलमुलकु जॅच्चेर नरिगि । यॉप्पॅडि सुखनिद्र नौंदि यारात्रि
गडचुटयुनु रेपकड वलीमुखुलु । वडि नंदरुनु गूडि वारिधि गट्ट
"ने मेमॅ तॅच्चॅद मॅल्लभूजमुल; । नेमेमॅ तॅच्चॅद मॅल्ल कौंडलनु"
ननि पारि तरुवुलु नद्रुलु दॅच्चि । वननिधिलोपल वडि वैचुवारु
गौंदरंतयु गनुंगौनुचुंडुवारु । गौंदरु नीडल गूर्चुंडुवारु
गौंदरु सेतुवु गौलवॅट्टुवारु । गौंदरु निद्रल गूर्कॅडुवारु
गौंदरु तॅलिनीरु ग्रोलॅडिवारु । नंदरु नीक्रिय नलसुलैयुंड
नप्पुडु रवि चंद्रुडै तनु पौसगॅ; । नप्पुडिंद्रुडु निंचे नमृतंपुसोन;
नप्पुडु चल्लनै यनिलुडू वीचॅ; । नप्पुडु सौरभंबानंद मौसगॅ;
दरुचरु लंत नुत्साहुलै शैल । तरुवु लंबुधि महोद्धति दॅच्चि वैव १०८०

को देनेवाले, वारिधि में डालनेवाले, सामने जाकर उन्हें (अपने हाथ) लेनेवाले, यहाँ लाकर निकट रखनेवाले, (इस प्रकार) वानरों के कई तरु (और) गिरियों के ला देने पर उन्हें नल (अपने हाथ में) लेता रहा। इस प्रकार दूसरे दिन उस सेतु को ईर्ष्या (स्पर्धा)-वश बीस योजन तक बाँध दिया। तब इन (सूर्य) अस्त हुआ। तब सुग्रीव आदि कपियों ने श्रीराम को समस्त कार्य के बारे में बताया। ॥ १०७० ॥

(श्रीराम से) कहकर निवास स्थानों में शीघ्र जाकर, शोभा से सुख की नींद ली। उस रात के बीतने पर, दूसरे दिन प्रातः सभी वलीमुखों (वानरों) ने मिलकर वारिधि को बाँधना शुरू किया "हमीं समस्त भूजों (वृक्षों) को लाएँगे, हमीं समस्त पर्वतों को लाएँगे।" (ऐसा) कहते (कुछ वानर) दौड़कर, तरु (और) पर्वत लाकर, वननिधि में झट डाल रहे थे, कुछ (वानर) सब कुछ देख रहे थे, कुछ छायाओं में बैठे हुए थे, कुछ सेतु को नाप रहे थे, कुछ निद्रा (के कारण) ऊँघ रहे थे, कुछ निर्मल जल को पी रहे थे। इस प्रकार सभी के आलसी हो रहने पर, तब रवि ने चन्द्र बन, तृप्ति प्रदान की। तब इन्द्र ने अमृत की धारा भर दी। तब शीतल होकर अनिल चला। तब सौरभ ने आनन्द प्रदान

नारभसंबुन कतिभीति नोंदि । वारिधिलोनि जीवंबुलन्नियुनु
देरलुचु नोरलुचु दिरुग बारुचुनु । नेरियुचु नट दललेत्ति चूचुचुनु
"मुंदटिपगिदि नमोघबाणंबु । ग्रंदिप वच्चेनो मम्मेल्ल" ननुचु
दलचि यंतटिलोन दगिलिनभीति । देलिसि सेतुवुगट्टु तेरगुगा नेरिगि
मरि संतसंबुलु मदिलोन गलिगि । वरलु निजेच्छल वर्तिचुचुंडे;
बंधुरंबुग गपिपतुलु नाडब्धि । वंधिचिरेलमि नेबदियोजनमुलु
रवि ग्रुंके; नंत मर्कटनाथुलेल्ल । नविरळलील संध्यादुलु दीर्चि
"पंतंबु मेरयंग बदियोजनंबु । लितिय कट्टुट येल्लि यीजलधि"
ननि माटलाडुचु नरिगि वेलमुल । ननुपमलील निद्रानंद मोंदि
युदयावसरमुन नुर्वीशु जेरि । मुदमुन गपियूथमुख्युलु ग्रोक्कि
१०९०
पनि विन्नपमु सेसि परवसंबोप्प । जनि तरुवुलु महाशैलंबुलेत्ति
मनुपमलीलमै नतिशीघ्रवृत्ति । गोनिवच्चि नलुनकु गोम्मनि योसग

किया। तब तरुचरों (वानरों) के उत्साहयुक्त हो, शैल और तरुओं को लाकर, महा-उद्धति से अंबुधि में डालने पर, ॥ १०८० ॥

—उस कोलाहल से अतिभीति होकर, वारिधि के समस्त जीव (पानी से बाहर) निकलकर, चिल्लाते हुए, फिर भागते हुए, बिखर जाते हुए, उधर सिर उठाकर देखते हुए, यह सोच कि "पूर्व के समान कोई अमोघ बाण कहीं हम सबका वध करने के लिए आया है", इतने में अनुभूत भीति के कारण यह जानकर कि यह सेतु बाँधने का विधान है, फिर मन में आनन्द के होने पर, निज इच्छाओं के प्रकाशित होने पर, विचरण करते रहे। बन्धुरता से कपिपतियों ने उस दिन पचास योजन तक सेतु का निर्माण किया। (तब) रवि का अस्त हुआ। तब सभी मर्कटनाथों ने अविरलगति से सन्ध्या (वन्दन)-आदि से निवृत्त हो, यह कहते हुए कि "अब तो स्पर्धा के प्रकाशित होने पर कल इस जलधि पर दस योजन ही पुल बाँधना रह गया है" जाकर, वेलाओं पर अनुपम लीला से निद्र के आनन्द को प्राप्त किया। (दूसरे दिन) (सूर्य-) उदय के अवसर पर, उर्वीश के पास पहुँच, मोद से कपियूथ-मुख्य (नायक) प्रणाम कर, कार्य का निवेदन कर, ॥ १०९० ॥

—बड़े लगन के साथ, वृक्ष (तथा) महाशैलों को उठाकर, अनुपम लीला से, अतिशीघ्र वृत्ति से लाकर, नल को देने लगे।

श्रीरामुनियॆड उडुतभक्ति

नप्पुडु श्रीरामुडासेतुवॆल्ल । दप्पक गनुगॊनु तात्पर्यमॊप्प
वनधीश्वरुंडुनु वनचराधिपुडु । दनुजनायकुडुनु दनु जेरि कॊल्व
सौमित्रिकरमुपै सौभाग्यलील । वामहस्तमु जेर्चि वडि गट्टु मीद
सन्नपु दरहासचंद्रिक लोलय । नन्नरनायकुंडट्टु चूचुवेळ
दरुचरेश्वरुलेल्ल दरुलुनु गिरुलु । बिरुदुलै वडिबॆचि पेकलिंचि तॆच्चि
नलुचेति कोसग नानलुडवि वुच्चि । तलकोनि कट्टे; नातरि यॊक्क युडुत
"गॊब्बुन सेतुवु गोनसागवलयु; । निब्बलिलदुलकु दोडॆनु गाविंतु"
ननुचु श्रीरामुनि यडुगुदामरलु । मनमुन जेर्चि यामनुजेशुनेदुर ११००
नच्चपुभक्तितो नल वार्धि मुनिगि ।वच्चि ता निसुकलो वडि बोरलाडि
तडयक यट चनि तनमेनि यिसुक ।वडि गट्टपै रालिच वनधिलो मरियु
देलि गट्टुन केगि तिरुगंग बोरलि । वालिन भक्तितो वच्चि विदल्चु;
निव्विधंबुन नुंड निनकुलाधिपुडु । दव्वुल बोडगांचि तम्मुनि जूचि

श्रीराम के प्रति गिलहरी की भक्ति

तब श्रीराम उस समस्त सेतु को भलीभाँति देखने के तात्पर्य (उद्देश्य) के विलसित होने पर, वनधीश्वर (सागरेश्वर), वनचर-अधिप (सुग्रीव) तथा दनुजनायक (विभीषण) के अपनी सेवाएँ करते रहने पर, सौमित्र के कर पर सौभाग्य-लीला (शोभा) से वाम कर रखकर, शीघ्रता से बाँध पर (खड़े होकर) मन्द-दरहास-चन्द्रिकाओं के व्याप्त होते रहने पर, वह नरनायक उधर देखता रहा। साहसी हो समस्त तरुचरेश्वरों के तरु और गिरि झट, क्रम से उखाड़कर, लाकर, नल के हाथ में देने पर उस नल ने उन्हें लेकर, सयत्न (बाँध) बाँध दिया। उस अवसर पर एक गिलहरी यह सोचकर कि "शीघ्रता से सेतु (-बन्धन का काम) हो जाना चाहिए। इन बलवानों की मैं सहायता करूँगी", श्रीराम के चरणकमलों को मन में रख, उस मनुजेश्वर के समक्ष, ॥ ११०० ॥

—शुद्ध भक्ति से उधर वारिधि में डूबकर, आकर, स्वयं झट रेत में लोटकर, विलम्ब न कर, वहाँ जाकर, अपने शरीर पर के रेत को झट बाँध पर गिराकर, फिर से वनधि में डूबकर, किनारे जाकर फिर लौटकर, अधिक भक्ति से आकर, (रेत) डाल देने लगी इस प्रकार करते समय दूर से ही पता लगाकर, इनकुलाधिप ने अनुज को देखकर (कहा)—"हे लक्ष्मण! ढंग से

"पोंदुगा लक्ष्मण ! पोन्नदॆ चूडु । मुंदऱ नॊक तरुमूषिकंबॆलमि नामीद भक्ति नुन्नतगति बूनि । ता मॆनु जलमुल दडिपि गट्टुनकु जनि वेग निसुकपै जल्लाडि तिरुग । जनुदॆंचि कॊंडलसंदुन रालिच कर मोप्पुचुन्नदि; कपिकुलाधीशु । लुरुशक्ति दरुगिरुलोगि दॆच्चुचोट दा नॆंतयनि मदि दलपक प्रेम । बूनि सहायमै पॊदलुचुन्नदियु; गनुगॊंटॆ "यनवुडु गमलाप्तवंश्य! ।कनुगॊंटि भवदंघ्रिकमलमुल् भक्ति नॆव्वडु मदिनिलिप यॆसग दृणंबु । नव्वेल्पुगिरिबोलु मनिन गाकुन्नॆ? १११०

कावुन भक्तिये कारणंवनघ !" । नावुडु मुदमंदि नलिनाप्तसुतुनि गनुगोनि "मदि दानि गनुगॊनु वेड्क । पॆनगॊनुचुन्नदि; प्रेम निच्चटिकि दॆ "म्मन्न वेगंवॆ तॆच्चि सुग्रीवु । डम्माहत्मुनि चेतिकंदियिच्चुटयु वलुतॆऱंगुल दानि न्नस्तुति सेसि । कलितदक्षिण कराग्रमुन दुव्वुटयु नल युडुतकु वॆन्क नमरॆ द्रिरेख । चुलुकनै चूड्कुल सुखकरंबुगनु; नॆंतयु संतोष मिनुमडिपंग । नंत लक्ष्मणुडुनु नब्धिनायकुडु

वहाँ देखो। वहाँ एक तरुमूषिक (गिलहरी) प्रेम से मेरे प्रति भक्ति के कारण उन्नतगति से (ऊँची भावना को ले), अपनी देह को जल में भिगोकर, किनारे जाकर, झट रेत पर लोटकर, वापिस आकर, (समुद्र में रखे गए) पहाड़ों के मध्य (उस रेत को) डालकर अधिक शोभित हो रही है। जहाँ कपिकुलाधीश उरु (अधिक) शक्ति से तरु और गिरियों को क्रम से ला रहे हैं, वहाँ अपनी (शक्ति) के बारे में मन में न सोचकर, प्रेम धारण कर, सहायता कर रही है। देखा है न !" ऐसा कहने पर, (लक्ष्मण ने कहा)—"हे कमलाप्त(-सूर्य)-वंश्य ! देखा है। जो (व्यक्ति) आपके अंघ्रिकमलों को भक्ति से मन में धारण कर, तृण भी दे, तो वह देवगिरि (हिमालय) के समान होकर नहीं रहेगा ? (भक्ति से प्रदत्त तृण भी मेरु-सम हो जाता है।) ॥ १११० ॥

अतः हे अनघ ! भक्ति ही कारण (मूलभाव) है।" ऐसा कहने पर प्रसन्न हो, नलिनाप्त (सूर्य)-सुत को, देख (कहा)—"मन में उसे (गिलहरी को) देखने की इच्छा तीव्र हो रही है। प्रेम से (उसे) यहाँ लाओ।" (ऐसा) कहने पर शीघ्र लाकर, सुग्रीव के (उस गिलहरी को) उस महात्मा (राम) के हाथ में देने पर, अनेक प्रकार से उसकी प्रस्तुति कर, कलित-दक्षिण-कर-अग्र (भाग) से (पीठ पर) फेरा। तब गिलहरी की पीठ पर अनायास ही, नेत्रानन्द रूप से, अधिक आनन्द के द्विगुणित होने पर, तीन रेखाएं बन गईं। तब लक्ष्मण, अब्धिनायक, दनुजेश (रावण) के अनुज

दनुजेशु तम्मुंडु दरुचराधिपुडु । ननयंबु संतोष मतिशयिंपंग
नंदंद कैकोनि यलरुचु नुंड । जंदनमंदारचंपकक्रमुक
पुन्नागसहकारभूरुहप्रततु । लुन्नचो विडिपिंचे नुर्वीशु; डंत ११२०
हनुमदंगदनीलहरिरोमकुमुद । पनसादि वानर प्रमुखुलु गूडि
कनुगोन नाश्चर्यकरमैनयट्टि । घनतरंबैन या कट्टपै निलिचि

श्रीरामुडु सेतुवुनु जूचि संतसिंचुट

"बापुरे! येंत नेर्परियौको नलुडु! । रूपिंप बेद्दयु रूढिकि नैक्कि
यरुगु दीर्चिनमाड्कि नलवड दीर्चे । दौरकौनि सेतुवु दुदिदाक" ननुचु
दन बाहुबलमुन दन विद्यकलिमि । घनमैन सेतुवु गट्टे नी नलुडु;
अदि शतयोजनंबैनट्टि निडुपु । बदियोजनंबुल परपुनु गलिगि
वेलसिन मलयसुवेलाचलंबु । लोलसि येंतयु जूड नोप्पु वहिंचे;
मेलगि याडेडु गंडुमीलु पैदरुचु । वेलिगेडुचुक्कल विधमुन नुंड
निरुदेस नल्लनै येपारु नब्धि । करमोप्पुचुन्न याकाशंबु गाग
गलयंग दीपिंचे घनसेतुवपुडु । वेलसिन नक्षत्रवीथि चंदमुन;
११३०

तथा तरुचराधिप के निरन्तर अतिशय प्रसन्न होकर, जहाँ-तहाँ (उसे) हाथ में लेकर, आनन्दमग्न होने पर उर्वीश (राजा-राम) ने (उसे) वहाँ छुड़वा दिया जहाँ चन्दन, मन्दार, चंपक, क्रमुक (पूगीफल), पुन्नाग, सहकार (आदि) भूरुह (वृक्ष) प्रततियाँ (समूह) थीं। तब, ॥ ११२० ॥
—हनुमान, नील, अंगद, हरिरोम, कुमुद, पनस आदि प्रमुख वानरों से युक्त होकर, देखने में आश्चर्य-प्रद उस महान् सेतु पर खड़े होकर, (कहा)—

श्रीराम का सेतु को देखकर प्रसन्न होना

"वाह रे! कितना निपुण है नल! रूप में बड़ा तथा सुप्रसिद्ध चबूतरे के निर्माण के समान, जुटकर सेतु का अन्त तक निर्माण किया।" अपने बाहुबल से तथा अपनी विद्या-संपत्ति से इस नल ने महान् सेतु का निर्माण किया है। वह शत योजन लम्बा तथा दस योजन चौड़ा होकर, विलसित मलय (पर्वत) तथा सुवेलाचल का स्पर्श करता हुआ अधिक सुन्दर दीख रहा है। (समुद्र में) उछल-कूद करनेवाले बड़े-बड़े मत्स्यों के ऊपर (आकाश में) अधिकता से चमकने वाले नक्षत्रों के समान रहने (दीखने) पर, दोनों ओर श्याम हो सुशोभित अब्धि के अधिक शोभायमान आकाश-सम होने पर, वह महान् सेतु तब विलसित नक्षत्र-वीथि (आकाश-गंगा) के समान सुशोभित हुआ। ॥ ११३० ॥

दनु नट्टु गांचिन तनपेमि जूचि । तनरार मन्निपदगु ननि राम
विभु डासमुद्रुनि वेडुकतोड । नभयपट्टमु गट्टे नन मिंचि मरियु
गप्पारु नायब्धि गन्नार जूचि । योप्पार गपुलेल्ल नब्बुचुनुंड
नप्पुडु देवतलामिटनुंडि । यप्पौरुषमु गन्नुलारंग जूचि
"निक्कंबु निट्टिद; नीचु मृदूक्ति । जक्क नेलगु दंडसाध्युंडु गाक !
यटु वेडुकोनुटयु नब्धि गैकोनमि । निट्टु सेय नेरडे यिनकुलेश्वरुडु ?
चेकोनि येव्वडी सेतुवु जूचु । जेकोनि येव्वडीसेतुवु दलचु
नतनिकि विजयंबु नतुलकीर्तियुनु । वितत पुण्यंबुलु वेलयंग गलुगु;
नेंतकालंबेनि नीसेतुवुंडु । नेंतकालंबेनि नीयब्धि युंडु
नंतकालमु राघवाधीशु कीर्ति ।यंतंत केक्कुचु नानंदमोसगु" ११४०
ननि मदिलोपल हर्षिचुकोनुचु । दनुवुन बुलकलु दरुचुगा नेगय
बुव्वुलवानलु पोरिबोरि गुरिसि । रव्वल देवतूर्यम्मुलु म्रोय;
नप्पुडु रघुरामु डानंदमोंदि । योप्पुसेतुवु जूचि योनर निट्लनियेः
"नेलमितो नीसेतुवेल्लकालंबु । नलुपेर बरगुचु नलुवोप्पु गाक!"
यनुटयु नाविभुनानति नलुनि । गनुगोनि पोगडिरि कपिवीरुलेल्ल

अपने को उस प्रकार देखकर, अपनी अतिशयता को देखनेवाले समुद्र को मान्यता देकर मानों विभु राम ने उत्साह से अभय प्रदान किया हो। (इस कारण) और भी अधिक शोभित होनेवाले उस अब्धि को आँख भर देखकर समस्त कपि (आनन्द से) फूल रहे थे। तब आकाश से देवता उस पौरुष को आँख भर देखकर (कहने लगे)—"सच बात तो यही है। नीच (व्यक्ति) कहीं मृदुवचनों से सुधरेगा ? वह तो दण्ड-साध्य ही है। उस प्रकार विनय करने पर अब्धि के न मानने पर, इनकुलेश्वर ऐसा नहीं कर पाया क्या? चाहकर जो इस सेतु का दर्शन करेगा, चाहकर जो इस सेतु का ध्यान करेगा, उसे विजय, अतुलकीर्ति तथा वितत पुण्यों की, प्राप्ति शोभा से होगी। जब तक यह सेतु बना रहेगा, जब तक यह अब्धि रहेगा, तब तक राघवाधीश की कीर्ति दिन-प्रतिदिन बढ़ती हुई आनन्द प्रदान करती रहेगी।" ॥ ११४० ॥

(ऐसा) कह मन में हर्षित होते हुए, शरीर पर अधिक रोमांच के होने पर, वहाँ देवतूर्यो के मुखरित होने पर, (देवताओं ने) बार-बार पुष्पवृष्टि की। तब रघुराम ने आनन्दित हो, शोभायमान सेतु को देखकर आनुकूल्यता से यों कहा—"प्रेम से यह सेतु सदा के लिए नल के नाम पर प्रसिद्ध होकर, शोभा से रहेगा।" (ऐसा) कहने पर उस विभु की आनति पर समस्त कपिवीरों ने नल को देख (उसकी) प्रशंसा की।

मुदमुतो नपुडु समुद्रुंडु रामु । सदनम्मुनकु सैन्यसहितम्मुगाग
बोलुपार दोडकोनि पोयि दिव्यास्त्र । मुलुनु दिव्यांबरमुलु भूषणमुलु
नोक वज्रकवचंबु नुरुभक्ति निच्चि । यकलंकचित्तुडै यारामु जूचि
"रामभूपालक ! राजपुत्रुलकु । नीमुनिवेषंबुलेल युद्धमुन ?
जारुवस्त्रमुलु भूषणमुलु निपुडु । मीरु धरिंपुडिम्मैयि नुचितंबु"
११५०

रामलक्ष्मणुलु सुवेलाद्रिकेगुट

ननवुडु दिव्यांबराभरणंबु । लनुपमगंधमाल्यादुलु दाल्चि
चारुतेजमुल भास्वरमूर्तुलगुचु । ना रविचंद्रुलो यन वेलुंगुचुनु
वननिधि यंत दीवनलतो ननुप । ननिलज नीलुर यंसंबु लेक्कि
सकलदेवतलुनु सन्नुतुल्सेय । सकललोकंबुलु जयवेट्टुचुंड
सकलतरंगिणीश्वरु वीडुकोलिपि । सकलेश्वरुंडनुजन्मुंडु दानु
रमणीयमैनट्टि राक्षसलक्ष्मि । सीमंतवीथिपै जेलगेडुमाड्कि
मनुकोनि लंकाभिमुखुडौचु नडचे । घनमैन सेतुमार्गंबोगिबट्टि ।
तगविभीषणुडु गदाहस्तुडगुचु । मोगि गपिसेनकु मुंदरु नडचि

मोद से तब समुद्र ने सेनासहित राम को (अपने) सदन (निवास) को शोभा से ले जाकर, दिव्य-अस्त्र, दिव्य-अंबर, भूषण और एक वज्रकवच को उरु भक्ति से देकर, अकलंकचित्त से उस राम को देखकर (कहा)—'हे राजाराम ! राजपुत्रों को युद्ध के समय ये मुनिवेष क्यों ? आप चारु वस्त्र तथा भूषण अब धारण कीजिए । इस समय यही उचित है ॥ ११५० ॥

राम-लक्ष्मण का सुवेलाद्रि जाना

ऐसा कहने पर दिव्य अंबर, आभरण और अनुपम गन्ध-मालाएँ आदि धारण कर, चारुतेज से भास्वर (प्रकाशमान) मूर्ति (आकार) वाले होते हुए, ऐसे प्रकाशित होते हुए मानों रवि (और) चन्द्र ही हों, तब वननिधि के आसीसों के साथ भेजने पर (विदा करने पर), अनिलज और नील के कन्धों पर चढ़कर, सकल देवताओं के सन्नुतियाँ (प्रशंसाएँ) करने पर, सकल लोकों के जयकार करने पर, सकल-तरंगिणीश्वर (समुद्र) को विदा कर, सकलेश्वर (राम) अनुजन्म (अनुज) के साथ स्वयं रमणीय बनी राक्षसलक्ष्मी की सीमंत-वीथि पर विचरण करने के समान, महान् सेतुमार्ग का अनुसरण कर, लंकाभिमुख हो चल पड़ा । उचित रूप से विभीषण गदाहस्त हो, कपिसेना के आगे-आगे चलने लगा । (इस प्रकार) अपने

गनुगोंनि "यय्येविकाकेलमानु ? । मन वुद्धि विनडनि माननगरादु
अम्म ! नीवुनु नद्दशास्युनक । निम्महागोप्यंबु लिन्नियु देलिय
जेप्पंगवलयु नेर्चिन नीतुलेल्ल; । निप्पुडे कदलुद मिदि वेळ गान;
वलनोप्प नाविश्रवसुनि यापलुकु । दलग व्रह्मादुलु दप्पिपलेरु;
चेप्पुमु नीवु नेर्चिन नीतु लेल्ल । नोप्पुग" ननवुड नुविद याक्षणमे
पसिडिपल्लकिमीद वसमिच नेक्कि । यसमुतो नच्चरयतिवलु मोय
धवळांबरंबुलु तगुनट्लु गट्टि । धवळचामरमुलु धवळमाल्यमुलु
धवळगंधंबुलु धवळाक्षतमुलु । धवळभूषणमुलु तलकोनि प्रेम ११९०
नविरळंबुग दाल्चि यतिवैभवमुन । दविलि दिव्यांगनातति वेंट नडव
सुतभृत्यहितबंधुसोदरुल् नडव । मतिमंतुलैनट्टि मंत्रुलु नडव
श्रुतिपाठतंत्रुलु सूनृतोन्नतुलु । व्रतधर्मगुणचारुवर्तनुल् नडव
गिन्नरगंधर्वगीर्वाणसिद्ध । पन्नगासुरयक्षभामलु नडव
वंक्रुति मनु माल्यवंतुनि वनित । संक्रुति यनुमालि सति केतुमतियु
मानितंबुग सुमालितन्वंगि । दानवांगनलु गोंदरु वेंट नडव

होकर क्यों न रहेंगे ? हमारी बुद्धि (की बात) नहीं मानेगा, ऐसा सोचकर कहने से विरत नहीं होना चाहिए। अम्मा ! तुम्हें और मुझे दशास्य (वाले) को ये सभी महागोप्य (बातें) समझाकर बताना चाहिए। (हमारी) सीखी हुई सभी नीतियाँ समझना चाहिए। यह (समुचित) अवसर है, अतः अभी निकल पड़ो। औचित्य से युक्त उस विश्रुवसु के उस वचन का व्यक्तिक्रम व्रह्मादि भी नहीं कर सकते। सीखी हुई नीति की सभी बातों को तुम उचित रूप से कहो।" ऐसा कहने पर स्त्री (कैकेशी) उसी क्षण, स्वर्णमय पालकी पर अधिक प्रभा से आरूढ़ होकर, प्रसिद्ध रूप से अप्सरा स्त्रियों के उसे ढोने पर (चल पड़ी)। उचित रूप से धवल-अंवर धारण कर, धवल चामर, धवल मालाएँ, धवल गन्ध, धवल अक्षत, धवलभूपणों को प्रेम से सयत्न, ॥ ११९० ॥

—अविरल रूप से धारण किया, चाहकर दिव्य-अंगना-तति (समूह) के साथ चलने पर, सुत, भृत्य, हित, वन्धु (रिश्तेदार) (तथा) सहोदरों के चलने पर, मतिमान मन्त्रियों के चलने पर, श्रुतिपाठ तन्त्रज्ञ, सूनृत (सत्य) में औन्नत्य वाले, व्रत-धर्म-गुण (से युक्त) चारु-वर्तन वालों के चलने पर, किन्नर-गन्धर्व-गीर्वाण-सिद्ध-पन्नग-असुर-यक्ष-भामाओं के चलने पर, माल्यवन्त की वंक्रुति नामक वनिता (स्त्री), मालि की संक्रुति तथा केतुमति नामक सतियाँ, मान्यता से सुमालि की तन्वंगी (स्त्री) के (तथा) कुछ (अन्य) दानव-अंगनाओं के साथ चलने पर, तीनों माताओं के आगे-पीछे

मुग्गुरुतल्लुलु मुंदरु वेनुक । डग्गरि नडवंग धवळचामरलु
गरुडगंधर्वादिकांतलु वीव । नरुगुचो नाट्यंबु लच्चरल् सेय
बंधुरंबुग मित्रभ्रातलैनट्टि । बंधुजनंबुलु बलिमितो नडव
यूपाक्षुडतिकायुडौंगि विरूपाक्षु । डेपुन मुंदरु नेचि तो नडव १२००
मुदुक कुप्पसमुलु मुदमोप्प दोडिगि । मुदिसिन राक्षसमुदितलु नडव
संदडि जडियंग साहो यटंचु । मुंदरु फणिहारमुख्युलु नडव
गुरुतरबहु वेदघोषंबुतोड । सरि लेनि याब्रह्मसभतोड गदलि
चंद्रदीधितुलतो शारदादेवि । यिंद्रुमंदिरमुन केतेंचुकरणि
मंदारचंद्रिका मल्लिकाश्वेत । कंदलहिमशैल कर्पूरहार
चंदनगोक्षीर शरदिंदु रुचुल । नंदमै विलसिल्लु नभिनवस्फुरण
मंदाकिनीदेवि मरि दिविनुंडि । बृंदारकुलु दानु बृथिवि केतेंचि
विलसिल्लुविधमुन वीक्षिप नोप्पि । कलित विलासमै कैकेशि केल
वररत्नमणिगणवलयमुल् मेरय । गरमोप्प मुत्यालकंठहारमुलु
वेरवार दनमेन विलसिल्लुचुंड । मेरुपुल दगु शुभ्रमेघमो यनग
१२१०
दीपिंचु नादित्यतेजमो यनग । नेपारि येंतयु निभुमुलु नडव

(और) निकट चलने पर, गरुड़-गन्धर्व आदि कान्ताओं के धवल-चँवर डुलाने पर, चलते समय अप्सराओं के नाट्य (नृत्य) करने पर, मित्र-भातृ आदि बन्धुजनों के सान्द्र रूप से शक्तियुक्त हो चलने पर, यूपाक्ष, अतिकाय और विरूपाक्ष के औन्नत्य से आगे-आगे अतिशयता से चलने पर, ॥१२००॥

—मोटे वस्त्रों को आनन्द से धारण कर वृद्ध राक्षस-स्त्रियों के चलने पर, कोलाहल के बढ़ने पर ओहो कहते हुए आगे-आगे फणिहार आदियों के चलने पर, गुरुतर-बहु-वेदघोष से युक्त अनुपम ब्रह्म-सभा (ब्राह्मणों का समूह) के साथ चलने पर, चन्द्र-दीधितियों के साथ शारदादेवी के इन्द्र-मन्दिर को आने के समान, मन्दार, चन्द्रिका, मल्लिका, श्वेत-कन्दल, हिमशैल, कर्पूरहार, चन्दन, गोक्षीर, शरदिन्दु की रुचियों से सुन्दर बन विलसित अभिनव-स्फूर्ति से मन्दाकिनी (गंगा) देवी दिवि से बृन्दारकों (देवताओं) के साथ स्वयं पृथ्वी पर आकर विलसित होने के विधान से दीप्त होने पर, कलित विलास से युक्त हो कैकेशी हाथों में वर-रत्न-मणि-गण (से जड़ित) वलयों (कंकणों) के प्रकाशित होने पर, अधिक शोभित मुक्ताओं के कण्ठहारों के समुचित विधि से अपने शरीर पर विराजमान होने पर, मानों चंचलाओं से युक्त शुभ्रमेघ हो, ॥ १२१० ॥

अबल नीलांबुदपटलमो यनग । निबिडमै राक्षसनिचयंबु नडव
रथसिंधुघोटकराजि सैन्यमुलु । पृथिवि बीटलुवारु बेल्लुगा नडव
वनजोदरुनि पुत्रि वाहिनुलु गोलुव । नेनयंग नजुसभ केतेंचे ननग
नमृतवारिधि वोंगि यमलतरंग । विमलमै यट वेलिलविरिसेनो यनग
नरिदि नक्षत्रंबुलन्नियु वच्चि । गुरिगाग नोकचोट गूडेनो यनग
नुदधिमुत्यमुलेल्ल नोक्कटै वच्चि । पोदिगोनि यट मुन्नु पोंडमेनो यनग
गुरुतैन कप्रंपु गोंडलो यनग । दिरमैन वेन्नेल तेटलो यनग
युक्तंबुगा दन्नु नुविदलुचेरि । मुक्तातपत्रमुल् मुदमुतो बट्ट
नीभंगि नप्पुड ध्यिद्रारिसभकु । प्राभवस्फुरणमै बरग नेतेर१२२०
विभवशुभाचार विनुतुलु सेलग । शुभलील गैकेशि जूचि रावणुडु
मुदमुतो गद्दिय मोगि डिग्गि वच्चि । मुदितकु नंदंद म्रोक्कि कैदंड
प्रमदबुतो निच्चि पल्लकि डिंचि । यमरार गोनिवच्चि यास्थानमुनकु
दन भद्रपीठंबु दरियग नोक्क । कनकासनंबिडि कैकेशि यंदु
गूर्चुंड दल्लुल गूर्चु सोदरुल । गूर्चिनभक्तितो गूर्चुंडु डनियें;

—मानों दीप्त आदित्य तेज हो (इस प्रकार कैकेशी चल पड़ी)। अतिशयता से इभों (गजों) के चलने पर ऐसा लग रहा था मानों प्रबल नीलांबुद पटल है। सान्द्र राक्षस-निचय (समूह) के चलने पर तथा रथ, सिन्धु-घोटक-राजि (समूह) तथा सैन्य के चलने पर पृथ्वी में दरारें पड़ गईं। वनजोदर की पुत्री (गंगा) मानों वाहिनियों (नदियों) के सेवाएँ करने पर शोभा से अज (ब्रह्मा) की सभा में आई हो; मानों अमृत-वारिधि (क्षीर-सागर) उफ़न कर, अमलतरंगों से विमल होकर वहाँ व्याप्त हो उठा हो, मानों विरल समस्त नक्षत्र एक साथ एक स्थान पर एकत्र हुए हों, मानों उदधि के सभी मोती एकत्र होकर, ढेर लगकर, वहाँ उत्पन्न हुए हों, मानों श्रेष्ठ कर्पूर के पर्वत हों, मानों स्थिर ज्योत्स्ना की निर्मलता हो, इस प्रकार युक्त रूप से स्त्रियों के अपने पास आकर, मोद से मुक्ता (जड़ित)-आतपत्रों के धारण करने पर, इस प्रकार से (ऊपर वर्णित विधान से) उस इन्द्रारि (रावण) की सभा में प्राभवस्फूर्ति से आने पर, ॥ १२२० ॥

—वैभवयुक्त शुभाचारों की विनुतियों (स्तुतियों) के मुखरित होने पर, शुभलीला से कैकेशी को देख रावण, मोद से झट गद्दी से उतर, आकर, मुदिता (प्रसन्न बनी स्त्री-माता) को बार-बार प्रणाम कर, प्रमोद से हाथ का सहारा देकर, पालकी से उतारकर, ठीक ढंग से लिवा लाकर, सभा में अपने भद्रपीठ के निकट एक कनकासन डलवाकर, उसपर कैकेशी को बिठाकर, प्रिय माताओं को, प्रिय सहोदरों को अधिक भक्ति से (उचित स्थानों पर)

नंतरांतरमुल नंदरु निट्टु । लंतंत गूर्चुं डिरर्हपीठमुल;
नंत नाकैकेशि यनुमति जेसि । चिंतामणी भद्रसिंहासनमुन
दानवेंद्रुंडुनु दत्प्राकारमुन । नूनिन संतोष मौप्प गूर्चुं डि
यचलितमतिमंतु नम्माल्यवंतु । नुचितासनंबुन नुंडंग बनिचे;
नावेळ रावणुंडमरवल्लभुनि । भावंबु गैकोनि भासिल्लु चुंडे; १२३०
नलयु म्रोतयु लेनि यंबुधिकरणि । यलबलंबुडिगे नामसुरेशु कौलुवु:
आलोन नमरारि हस्तमुल् मोगिचि । कैलासनिभकेशि कैकेशि कनियें:
"जनयित्रि! यिब्भंगि जननुलतोड । नेनयंग नासभ कॆन्नडुरावु;
चालंग नामदि संतोषमय्यें; । नेल विच्चेसिति ? वॆड्रिंगिपु" मनिन
नप्पुडु कैकेशि यम्माल्यवंतु । दप्पक कनुगोनि तगुनीति मॆड्रसि
प्राभवस्फुरणमै बंक्तिकंधरुनि ।शोभनगुणशील जूचि यिट्लनियें; १२३६

रावणुनकु कैकेशि हितबोध

दॆलियंग मीतंड्रि दिव्यरहस्य । मॆलमि जॆप्पिनवार्त लॆड्रिंगितु विनुमु:

बैठने को कहा। सभी (लोग) जहाँ-तहाँ अन्तरान्तर से अर्ह (योग्य)-पीठों पर बैठ गए। तब कैकेशी की अनुमति लेकर, चिन्तामणी-भद्रसिंहासन पर दानवेन्द्र उस प्रकार अधिक प्रसन्नता से शोभित हो बैठकर, अचलित-मतिमान उस माल्यवन्त को उचित आसन पर बैठने का आदेश दिया। उस अवसर पर रावण अमरवल्लभ की समता को ग्रहण कर भासमान हो रहा था। ॥ १२३० ॥

उस असुरेश की सभा और तरंग कोलाहल से रहित अंबुधि के समान कोलाहल से रहित हो गयी। इतने में अमरारि ने हाथ जोड़कर, कैलास-निभ (श्वेत)-केशी कैकेशी से यों कहा—"हे जनयित्री! इस प्रकार (अन्य) माताओं के साथ शोभित होते (तुम) कभी मेरी सभा में नहीं आई हो। मेरे मन में बड़ी प्रसन्नता हुई है। क्यों आई हो? बताओ।" (ऐसा) कहने पर, तब कैकेशी ने उस माल्यवंत को अवश्य देखकर, उचित नीति से प्रकाशित होकर, प्राभव-स्फूर्ति से पंक्तिकंधर को देख, (उस) शोभनगुणशीला ने यों कहा— ॥ १२३६ ॥

रावण को कैकेशी का हितबोध

"तुम्हारे पिता ने प्रेम से जो दिव्य रहस्य बताया था, वह समाचार

सुरलु ब्रह्मादुलु सौरिदिमै मुनुलु । दरुगनि भीतिचे दनुजारि जेरि
तमतम यिड्मल दमपाट्लेल्ल । दमनेलुस्वामितो दामोप्प जेप्पि
'रावणकुंभकर्णादिराक्षसुल । नेवगनैननु नेपडगिंचि १२४०
काववे दीनुल गरुणचे' ननुचु । दिविरि यब्जजुडादि देवतलेल्ल
नभयदानमु वेड नतिकृपांबोधि । यभयंबुलिच्चे नय्यमरुलकेल्ल
'निनकुलंबुन जनियिंचि राक्षसुल । ननिलोन दुनिमेद नवलील ननुचु;
वरमिच्चि सकलदेवतल वीक्षिंचि । 'तरुचरुलै मीरु धरणि जन्मिंचि
यनिलोन नाकु दोडगु' डनि पलिके । ननि चेप्पे मीतंड्रि; यारीति निप्पु
डमरुलु वानरुलै पुट्टि रेलमि । नमरकंटक! निन्नु नणप श्रीहरियु
वनजसंभवु डिच्चु वरमु बालिंचि । यिनकुलंबुन बुट्टे निदरु बोगड;
जेनटि ताटकि जंपे जिन्ननाडेचि, । मुनियागरक्षणंबुनु जेसि कावे,
पदधूळिचे शिल बडति गाविंचे, । वदलक जनक भूवरु वीटिलोन
नरुदरुदनि जनंबभिनुतिसेय । हरुविल्लु मोपेट्टि यवलील विरचि १२५०
जनकभूपतितनूजनु बेंड्लियाडे, । मौनसिन परशुरामुनि भंगपरचे;

समझाकर कहूँगी, सुनो। सुर, ब्रह्मा, क्रम से मुनि (गण) अत्यन्त भीति से दनुजारि (विष्णु) के पास जाकर, अपनी-अपनी मुसीबतों तथा अपनी समस्त विपत्तियों के बारे में अपनी रक्षा करनेवाले स्वामी से ढंग से कहकर, यह कहते कि "रावण कुंभकर्ण आदि राक्षसों के गर्व को किसी भी प्रकार, दमन कर, ॥ १२४० ॥

—हम दीनों की करुणा से रक्षा कीजिए" सप्रयत्न अब्जज (ब्रह्मा) आदि समस्त देवताओं ने अभयदान माँगा। अति कृपांबोनिधि ने उन समस्त अमरों को यह कहते अभय प्रदान किया कि 'इनकुल में जन्म लेकर, राक्षसों को अनायास ही युद्ध में मार डालूँगा,' (ऐसा) वर देकर, सकल देवताओं को देखकर कहा कि 'आप (लोग) तरुचर हो, धरणी पर जन्म लेकर, युद्ध में मेरा साथ दीजिए'। यह (सब) तुम्हारे पिता ने कहा। उसी प्रकार अब अमर शोभा से वानर होकर पैदा हुए हैं। हे अमरकंटक! तुम्हारा दमन करने के लिए श्रीहरि भी वनजसंभव के दिए वर का पालन कर, सबके प्रशंसा करने पर इनकुल में पैदा हुआ है। बचपन में ही कुत्सित ताड़का का वध किया, विजृंभित होकर मुनि के राग का रक्षण किया, पदधूलि से शिला को नारी बना दिया, फिर जनकभूवर के यहाँ हर (शिव) के धनुष का संधान कर, अनायास (उसे) तोड़कर, ॥ १२५० ॥

—जिसकी जनता ने 'विरल विरल' कह अभिनुति की, जनक-भूपति की

दमतंड्रिपनुपुन दपसियै मुनुल । कमितसत्त्वंबुन नभयंबुलिच्चें
घनु विराधु गबंधु गडुविक्रममुन । दुनुमाडि विडुवडे दोषाचरेंद्र !
वेंड्रचि तपुडु गादे वेयुभंगुलनु? । वेंड्रवकुंडितिवेनि वेरेल, नीदु
चेंलियलि मुक्कुनु जेंवुलुनु बट्टि । बलिमि गोसिननाडे पग गेलूवरादे?
घनु खरू दूषणु खंडिचुमाट । विनि यूरकुंडुट वेंड्रचुट गादे ?
मारीचु नोककोल मडियिंचुनाडु । नूरकें यौकवंक नौंदिगियुंडितिवि;
रामुनि मुदलिंचि रमणि देलेक । येमरुपाटुन नेंलनाग गोंचु
वेंनुवेंन्क जूचुचु वेंलवेंलनगुचु । नेंनलेनि भीतिचे नेंलमि बारुचुनु
वच्चितिगाक भूवरुल जयिंचि । वच्चितिवा? योडि वच्चितिगाक !
१२६०
सच्चरित्रनु रामचंद्रुनि देवि । म्रुच्चिलि तेंच्चुट मौगतनंबगुनें ?
वालंबुननु जुट्टि वारिधि मुंचु । वालि द्रुंचुट निन्नु वंचुट कादें ?
यिन्नि येंन्नगनेल? यिनकुलेश्वरुडु । मुन्नीरु नोककोल मौंनकु देलेदें ?
नेडोडिते रामनृपशेखरुनकु ? । ना डोडितिवि गादे नाकेशवैरि ?
माटिमाटिकि बेल मनुजुलटंचु । नेटिकि नाडेंदवेंतयु नेंचि ?

तनूजा से विवाह किया, आगे बढ़ आए परशुराम के (गर्व का) भंग किया, अपने पिता के आदेश पर तपस्वी बन, अमित सत्त्व से मुनियों को अभय प्रदान किया। हे दोषाचरेन्द्र! महान् विराध (तथा) कबंध को अति विक्रम से (उसने) मार नहीं डाला था ! तब हज़ार विधियों से (तुम) भीत नहीं हुए थे ? भीत नहीं हुए थे तो अन्य (बातें) क्यों, तुम्हारी बहन को पकड़, जबरदस्ती नाक-कान काट दिए, उसी दिन शत्रु को जीत लेना था न ? महान् खर-दूषण का खण्डन करने की बात सुनकर चुप रहना भीत होना नहीं है ? मारीच को एक बाण से मार डालते समय चुपचाप एक ओर छिपे रहे। राम को ललकार कर रमणी को न ला सक, धोखे से नारी (स्त्री) को ले आते, पीछे-पीछे देखते हुए, विवर्ण होते हुए, असीम भय से भागते हुए (लंका में) आए थे। क्या भूवरों को जीत आए थे ? हारकर आए थे न ! ॥ १२६० ॥

—सच्चरित्र वाली रामचन्द्र की देवी को चुरा ले आना पौरुष है ? पूँछ से लपेटकर (तुम्हें) वारिधि में डुबोने वाले वालि का संहार करना तुम्हारा दमन करना नहीं है ? ये सब गिनना क्यों ? इनकुलेश्वर एक बाण से समुद्र को एक छोर पर नहीं लाया था ? क्या आज (तुम) नृपशेखर राम से हारे हो ? हे नाकेश-वैरी ! उसी दिन हार गये थे न ! अधिक विजृंभित होकर बार-बार (वे) अबल मनुष्य हैं, ऐसा क्यों कहते हो ? घन-तपोमहिमा के

घनतपोमहिमकु गर्रुणिंचि नीकु । वनजसंभवुडु दा वर मिच्चुवेळ
नरुल नेन्नक तप्पे; नाटितप्पेल्ल । दरमिडि नेडिदे तलकूडे नीकु;
गेलुपेदियिक नीकु गीर्वाणवैरि ! । अलमुन गुलमेल्ल समयितुगाक!
येटिकिन्नियु जेप्प? निट नोक्ककोति । दाटि वारिधि महोदग्रुडैवच्चि
लंकिणि वरिमार्चि ललि शंकलेक । लंकलोपल जोच्चि लंक शोधिंचि
१२७०
जानकि बोडगांचि जननाथु सेम । मूनिनभक्तितो नोनरंग जेप्पि
मरलि पोवुचु नीदु मधुवनंबेल्ल । वेरिकि कावलिकांड्र बेक्कंड्र जंपि
यक्षकुमारुतो नसुराधिपतुल । नक्षणंबुन नेंदरैननु द्रुंचि
बलिमि शौर्यस्फूर्ति बचरिंचि मरियु । वलमरि लंकनु भस्मंबु सेसे;
नित सेसियु मरि यिट बट्टुवडेने ? । यंतयु नेंदुरले, केर्चि पेल्लार्चि
नीवुनु नीवारु नेरिचेडि चूड । बोवडे यल वायुपुत्रुडु दोल्त ?
गुरुसत्त्वमुन निन्नु गोनिपोयि राम । धरणीशु मुंदट दट्टुकुन बेट्टि
'तेच्चिचति गो' म्मन्न देवेंद्रवैरि ! । यच्चट नीसत्त्वमदि येमि सेयु ?
नट्टुगाक यीलंक नगलिंचि पट्टि । तट्टुकुन धरणिपै दट्टिचेनेनि

कारण करुणा दिखाकर, तुम्हें वनजसंभव के स्वयं वर देते समय, नर की गिनती न कर (तुमने) भूल की। उस दिन की समस्त भूल एकत्र होकर आज सम्पन्न होने जा रही है। हे गीर्वाण-वैरी ! अब तुम्हारे लिए विजय कहाँ ? हठ के कारण समस्त कुल का नाश कर दोगे। ये सब कहना क्यों ? यहाँ एक वन्दर ने वारिधि को पारकर, महा-उदग्र हो आकर, लंकिणी का संहार कर, बिना शंका (संकोच) के लंका के भीतर प्रवेश कर, लंका की खोज कर, ॥ १२७० ॥

—जानकी को देखकर, अधिक भक्ति से जननाथ (राम) का कुशल (समाचार) शोभा से बताकर, लौटकर जाते हुए, तुम्हारे समस्त मधुवन को उखाड़कर, अनेक पहरेदारों को मारकर, अक्षकुमार के साथ अनेक असुराधिपतियों को उस क्षण (समय) मारकर, बल (और) शौर्य-स्फूर्ति को प्रसारित कर, फिर निर्बल बनाकर लंका को भस्म कर दिया था। इतना कुछ करके भी (वह क्या) यहाँ पकड़ में आया था ? (नहीं)। प्रतिरोध के अभाव में अधिक सिंहनाद कर, तुम और तुम्हारे लोगों के शोभाहीन हो देखते रहने पर, उस समय वायुपुत्र (यहाँ से) चला नहीं गया था? गुरु-सत्त्व से तुम्हें ले जाकर झट राम-धरणीश के समक्ष रख, 'यह लो, (इसे) लाया हूँ' कहता तो हे देवेन्द्र-वैरी ! वहाँ तुम्हारा सत्त्व क्या कर सकता था ? (कुछ नहीं।) ऐसा न कर, इस लंका को पकड़कर, झट धरणी

जिदरवंदरै चेंदरि पल्वगल। नंदरु द्रुंगरे यमरुलुप्पोंग ? १२८०
नतनिकि नोडित वसुराधिनाथ ! । यतनि येलिक गेल्व नलवियेनीकु
वनचरुलनि कदा वालुचुन्नावु । वनचरुलनु गेल्व वशमे? मुन्विनुमुः
वनचरुचे जेटु वच्चु बोम्मनुचु । गोनकोनि नंदि दा गोपिंचि नीकु
बाय किच्चिन शापफलमेल्ल नीव । वायुपुत्रुनिचेत वालिचे गनवे ?
फालाक्षवासव ब्रह्मादिदिवुजु । लेलील दैत्यारियिष्टंबु नोंदि
नीलंकयुनु निन्नु निखिलराक्षसुल । गूल द्रोयुटकुनै घोररूपमुल
भूलोकमुन वच्चि पुट्टिरि काक । यीलागु वनचरुलेंदैन गलरे ?
यलघुबलुंडवै यखिललोकमुल । ज्रलमु पेंपुन गेल्चि चनुदेंचुनपुडु
किन्नरगंधर्व किंपुरुषादि । पन्नगगुह्यक पक्षींद्रयक्ष
सुरवरमुनिवर सुदतुल नेल्ल । बिरबिर जेरलनु बेट्टेडुवेळ १२९०
बरमपतिव्रतल् वडवड वणकि । "परकांतनेपमुन भस्ममै नीवु
कुलमुतो बलमुतो गूलिपो" म्मनुचु । नलिगि शापंबिच्चि; रदि तलकूडे;
वालिकि नेक्कु डव्वालिनंदनुडु; । वालिकि नेक्कु डठवायुपुत्रुडु;

पर फटक देता तो देवताओं के प्रसन्न होने पर, (लंकावासी) बिखरकर टुकड़े होकर, अनेक दुखों से सब नष्ट न होते ? ॥ १२८० ॥
—हे असुराधिनाथ ! उसी के हाथ हार गए थे। उसके प्रभु को जीतना तुम्हारे वश (की बात) है ? यह बक रहे हो कि वे वनचर ही हैं। वनचरों को जीतना तुम्हारे बस (की वात) है ? (नहीं) सुनो, लगाकर रुष्ट होकर नन्दी ने तुम्हें शाप दिया था कि 'वनचर से तुम्हें हानि होगी, जाओ।' वह समस्त शाप-फल तुम्हें वायुपुत्र और वालि से प्राप्त नहीं हुआ था ? फालाक्ष (शिव), वासव (इन्द्र), ब्रह्मा आदि दिविज ही इस प्रकार दैत्यारि (विष्णु) की अनुमति प्राप्त कर, तुम्हारी लंका को, तुमको (और) निखिल राक्षासों को (मार) गिराने के लिए, घोर रूपों में, भूलोक में आकर जन्मे। वरन् ऐसे वनचर और कहीं हैं ? अलघु बलशाली होते हुए, अखिल लोकों को हठ की अतिशयता से जीतकर आते समय, किन्नर, गन्धर्व, किंपुरुष आदि, पन्नग, गुह्यक, पक्षीन्द्र, यक्ष, सुरवर, मुनिवर (आदि) की स्त्रियों को अतिशीघ्र क़ैद करते समय, ॥ १२९० ॥
—उन परमपतिव्रताओं ने थर-थर काँपकर, रुष्ट होकर, शाप दिया कि "परकान्ता के मिस भस्म होकर तुम कुल और बल (परिवार) के साथ नष्ट हो जाओ।" वह (आज) सम्पन्न हुआ है। वालि की अपेक्षा अधिक

वारु निन् रणमुलो वधियिंप लेरे ? । वारिकि नेक्कुडव्वालितम्मुड्डुनु,
समरंबुननु बलसहितंबु गाग । सौमित्रि निनु वट्टि समयिंप लेडे?
मरि योक्कटियु विनु मनुजाशनेंद्र! । यरमंग नीविक नेरुगवु गानि,
रामलक्ष्मणुलेल रविसूनु डेल । कोमलि यासीत कोपानलंबे
यरुदुगा ब्रह्मरुद्रादिदेवतलु । वरदुलै यिच्चिन वरमुलतोड
हरुडोसंगिन चंद्रहासंबुतोड । नरयु मूडरकोटियायुवुतोड
गैलास मेत्तिन घनशक्तितोड । जलनंबु लेनट्टि संपदतोड १३००
दक्कनि भुजबल दर्पंबुतोड । दिक्कुलु गेलिचिन तेजंबुतोड
राक्षसकुलमुतो रावण ! निन्नु । नीक्षणंबुन वट्टि येरियिंप लेदे ?
धर्मपतिव्रत दग दन कीवु । कर्मपाशंबुन गैकोनि तेच्चि
यरिमुरि चेरपट्टि यापुण्यवतिनि । मोरगिन संकटमुन बुट्टु वह्नि
निन्नु नीकुलमुनु नीवारि नेल्ल । नेन्नि भंगुल गालपकेलपोनिच्चु ?
नसुरेश! यिदि येट्टि दनिननु विनुमु । विडुवक नीवु दिग्विजयंबु सेसि
यकलंकगति पूनि यमरुल गेलिच । सकललोकंबुल जरियिंचुनपुडु

(वलशाली) है वह वालिपुत्र । वालि की अपेक्षा अधिक है वह वायुपुत्र । वे ही तुम्हें रण में नहीं मार सकते ? उनसे भी बढ़कर है वालि का वह अनुज समर में वल (परिवार)-सहित तुम्हें पकड़कर वह सौमित्र ही तुम्हारा वध नहीं कर सकता ? हे मनुजाशनेन्द्र ! और एक बात सुनो, वैसे सोच विचारने पर तुम अभी (इस बात को) नहीं जानते हो। राम-लक्ष्मण ही क्यों, रविसून (सुग्रीव) ही क्यों (इनकी क्या आवश्यकता ?) कोमली उस सीता का कोपानल ही विरल रूप से, ब्रह्मा-रुद्र आदि देवताओं के वरंद (प्रसन्न) हो दिए वरों से युक्त, हर के दिए चन्द्रहास (खड्ग) के साथ, साढ़े तीन करोड़ वर्ष की आयु से युक्त, कैलास (पर्वत) को उठानेवाली महान् शक्ति से युक्त, चल-रहित (स्थिर) सम्पत्ति से युक्त, ॥ १३०० ॥
—भुजबल के दर्प से युक्त, दिशाओं को जीत लेनेवाले तेज से युक्त बने तुम्हें, हे रावण ! राक्षसकुल के साथ इसी क्षण व्यथित नहीं कर सकेगा ? (सीता) धर्म से पतिव्रता है, ऐसा न मानकर, तुमने कर्मपाश के कारण (उसे) लाकर, जल्दबाज़ी से क़ैद कर, उस पुण्यवती को प्रताड़ित किया, उस संकट से उत्पन्न वह्नि तुम्हें, (और) तुम्हारे कुल को, तुम्हारे समस्त आत्मीय जनों को हर प्रकार से जलाए बिना क्यों जाने देगी ? हे असुरेश ! पूछोगे कि वह कैसे होगा तो सुनो (बताती हूँ)। अनारत तुम दिग्विजय कर, अकलंकगति से अमरों को जीतकर, सकल लोकों में विचरण कर रहे थे, उस समय प्रथम युग में ब्रह्मर्षि-वर, प्रथित-उरु-सुज्ञान-परमार्थ-विद, परम

प्रथमयुगंबुन ब्रह्मर्षिवरुडु। प्रथितोरुसुज्ञानपरमार्थविदुडु
परमसात्त्विकगुणास्पदकुशध्वजुनि। वरपुत्रियगु वेदवतिनि गलंप
बरमपतिव्रत 'पापात्म ! नीदु। वरगर्वमंतयु वम्मुगा जेसि १३१०
सुतुलतो सतुलतो सोदरप्रभृति। हितुलतो भृत्यसंहतुलतो गूड
नमितविक्रमुडैन यतनिचे निन्नु। समरंबुलोपल जंपितु' ननुचु
नग्रिमुग्रि गोपिंचि याधर्मशील। मरुगुचु शपियिंचें; मरचिपोयितिवे?
यासति यीसीत यादि श्रीदेवि। भूसुतयै पुट्टे; भुवनरक्षकुडु
आदिनारायणुंडंबुजोदरुडु। वेदवेद्युडु रामविभुडैनवाडु; १३१५

कैकेशि रावणुनकु रामुनि महिम चेप्पुट

असुरुल मर्दिप नमरुल गाव। वसुमति रक्षिप वच्चे विष्णुंडु;
अरुग नीवुनु नेनु नेंतटिवार ?। मेरुगरु ब्रह्मरुद्रेंद्र प्रमुखुलु;
पुट्टिचु बोषिचु बोलियिंचु बिदप। नेंट्टनु गाक ता नेकमै युंडु;
नतडंदरिकि मेटि; यातनितोड। ब्रतिपोल्प दलचिन बापंबु गादे?
चेंदरि लोकमुलेल्ल जेडिनपिम्मटनु। वदलक युंडेडिवाडु वो यतडु;
१३२०

सात्त्विक-गुणों के आगार कुशध्वज की वरपुत्री वेदवती को व्याकुल करने पर, (उस) परमपतिव्रता ने यह कहा 'रे पापात्मा ! तुम्हारे समस्त वर गर्व को व्यर्थ कर, ॥ १३१० ॥

सुतों, सतियों, सहोदर आदि हितों, भृत्य-समूहों के साथ तुम्हारा वध अमित विक्रम वाले उससे (विष्णु से) समर में करवाऊँगी।' शीघ्र क्रुद्ध हो, उस धर्मशीला ने क्षुब्ध होते शाप दिया था। (क्या उसे) भूल गए हो ? वह सती (वेदवती) ही यह सीता है। आदि श्रीदेवी भूसुता होकर जन्मी है। भुवनों के रक्षक, आदिनारायण, अंबुजोदर, वेदवेद्य (परमात्मा) प्रभु राम हुए हैं ॥ १३१५ ॥

कैकेशी का रावण को राम की महिमा बताना

असुरों का मर्दन (संहार) करने, अमरों की रक्षा करने, वसुमती (पृथ्वी) की रक्षा करने विष्णु आए हैं। (उसे) जानने के लिए तुम्हारी और मेरी हस्ती ही क्या है ? ब्रह्मा-रुद्र-इन्द्र आदि भी नहीं जानते। (वह समस्त सृष्टि को) उत्पन्न करता, पोषण करता, लय करता, उसके बाद अविकल रूप से एक होकर रहता है। वह सब में श्रेष्ठ है, उसकी समता करने की सोचना पाप है न ? बिखरे हुए समस्त लोकों के नष्ट होने के बाद अविकल रूप से रहनेवाला वही तो है। ॥ १३२० ॥

शरणन्न वेग ना सामजवरुनि । गरुण लीलामति गाचें नाघनुडु;
मधुकैटभादुल महित राक्षसुल । नधिकतेजस्फूर्ति नणचें नाघनुडु:
चोंच्चि सोमकु जंपि श्रुतु लर्थितोड़ । दोंच्चि ब्रह्मकु निच्चि दीपिंचेंनतडु;
अमृताब्धि दा द्रच्चि यमृतंबु वडसि । यमरुलकुनु निच्चें नरय नाघनुडु;
भासुरंबुग दैत्यु बट्टि शिक्षिंचि । भूसति नेंत्तिन पुण्युडाघनुडु;
कडगि बालुनि गाव गंवंबुनंदु । बोंडमि कांचनकशिपुनि जीरेंनतडु;
धरणि मूडडुगुल दार्नथि वेडि । पेंरिगि या बलि जेंरपेंट्टें नाघनुडु;
राजसंबुन भृगुरामुडै पुट्टि । राजुल द्रुंचिन रणदक्षुडतडु;
तप्पक चेंप्पिति दनुजलोकेश ! । यिप्पुडु देवताहितमु चिंतिंचि
रामुडै जनिंयिचें रविवंशमुननु । दामसगुण मेंचि दनुजेश! नीकु १३३०
अेंमि पापमों कानि, येंरुक चोंप्पडदु; । कामांधुनकु धर्मगतुलेल कलुगु?
गोंडुकुचें नैननु गूतुचे नैन । नडरि कीर्तियकानि यपकीर्ति गानि
वच्चु गोत्रमुनकु वडि बेंद्दलकुनु । जेंच्चेंर ननि जनुल् चेंप्पेंडिदेंल्ल
नरय निंदलु रेंडु नसुरेश ! चूड । मरि येंव्वरिकि वच्चें मनकु
गाकिपुडु ?

उस महान् ने शरण में आए सामज (गज)-श्रेष्ठ की करुणा से, लीला से रक्षा की, उस महान् ने मधुकैटभ आदि महित राक्षसों को अधिक-तेज-स्फूर्ति से दमन कर दिया। (पाताल में) पैठकर, सोमक का वध कर, चाहकर श्रुतियों को लाकर, ब्रह्मा को देकर वह दीप्त हुआ था। अमृताब्धि का मन्थन कर, अमृत प्राप्त कर, उस महान् ने उसे अमरों को दिया था। भासुर (प्रकट) रूप से दैत्य को पकड़, दण्डित कर, भूसति का उद्धार करनेवाला पुण्यी है वह महान् (व्यक्ति)। सप्रयत्न बालक की रक्षा करने के लिए स्तम्भ में उत्पन्न होकर, उसने काँचन-कशिप को मार डाला था। तीन चरण की पृथ्वी को चाहकर, माँगकर, बढ़-बढ़कर उस बलि को क़ैद किया था उस महान् ने। राजस (रजोगुण युक्त) से भृगुराम हो उत्पन्न होकर, राजाओं का संहार करनेवाला रणदक्ष है वह। हे दनुजलोकेश ! अवश्य कह रही हूँ। अब देवताहित की चिन्ता कर, राम हो, रविवंश में जन्म लिया है। हे दनुजेश ! तामस गुण के विजृंभित होने के कारण, ॥ १३३० ॥

—पता नहीं कौन-सा पाप है, तुम्हें (कोई बात) समझ में नहीं आती। कामान्ध को धर्म की गतियाँ कहाँ से उपलब्ध होंगी ? कहते हैं कि पुत्र से हो या पुत्री से, गोत्र तथा वृद्धजनों को अतिशयता से कीर्ति हो या अपकीर्ति झट प्राप्त होती है। हे असुरेश ! सोच-विचारने पर निंदाएँ दो हैं।

अदि यॆट्टिदंटेनि नंतयु विनुमु । मदि गोंत दलपक मन शूर्पणखयु
आयन परमात्मुडनक कामिंचि । पोयि मुक्कुनु जॆवुल् पोकार्चुकॊनियॆ
बरसति यन कासपडि पट्टि तॆच्चि । करकरि गुलमॆल्ल गाल्चॆदवीवु;
इंतकंटॆनु निंद यिक नॆंदु गलदु ? । पंतमेलॊको ? यिट्टि पापंबुलेल?
बलसि रक्षोराज्य प्रमुखुलंदरुनु । नॆलमि विष्णुनितोड नॆदिरिंचि कादॆ
चक्रंबु घातकु सैरिपलेक । शुक्रशिष्युलु भुवि जॊच्चिचरि वॆरचि; १३४०
शंकलेटिकि; नीवु जन्मिचुकतन । ग्रुंकिन राक्षसकुलमॆल्ल नॆगडॆ
ननि मनंबुन गोंत यलरुचुंडितिनि; । दनुजेश! नाकोर्कॆ तलकूडदय्यॆ;

कैकेशि रावणुनिकि जलप्रळयमु दॆल्पुट

जॆकॊनि लोकमुल् चॆडिनपिम्मटनु । नेकमै युदकंबु लेपारुचुंड
मक्कुव नाजलमध्यंबुलोन । नॊक्कडै तनकु दोडॆव्वरु लेक
बालुडै यट वटपत्रमु मीद । लोलत देलाडु लोकरक्षकुडु

देखने पर वे (निंदाएँ) हमारे सिवा और किसको अब प्राप्त हुई हैं ? कहोगे, वह कैसा तो सब कुछ सुनो । मन में कुछ भी न सोचकर हमारी शूर्पणखा यह न सोच कि वह परमात्मा है, कामभाव वश होकर, नाक और कान खो बैठी । परसती है, ऐसा न मानकर (उसकी) इच्छा कर, उसे (सीता को) लाकर, क्रूरभाव से तुम समस्त कुल को जला दोगे । इससे बढ़कर अपकीर्ति और कहाँ है ? (इतना) हठ क्यों ? ऐसे पाप क्यों ? वली (गर्वीले) होकर सभी रक्षोराज्य-प्रमुख (राक्षस प्रमुख) शोभा से विष्णु का सामना कर ही, चक्र के आघात को सहन न कर सक, डरकर, शुक्रशिष्यों (राक्षसों) ने भुवि में प्रवेश किया । ।। १३४० ।।

शंकाएँ क्यों ? यह सोचकर कि तुम्हारे जन्म लेने के कारण पतन को प्राप्त समस्त राक्षसकुल (पुनः) शोभायमान हुआ, मन में कुछ प्रसन्न होती रही । हे दनुजेश ! मेरी इच्छा सफल नहीं हुई ।

कैकेशी का रावण को जलप्रलय (के बारे में) बताना

लगकर (समस्त) लोकों के विनष्ट होने के बाद, सब कुछ के एक (लय) होकर, (सर्वत्र) जल के शोभित रहते समय, प्रेम से उस जलमध्य में एक (अकेला) होकर, अपने को किसी सहचर के न रहने पर, बालक हो, उधर वटपत्र पर, चंचलता से, तैरते हुए, लोकरक्षक के कमनीय

कमनीयमगु सृष्टिकार्यंबुनंदु । विमलचित्तंबुन वेसनुन्न नंत
गमलोदरुनि नाभिकमलंबु पुट्टें; । गमलंबुलो बुट्टे गमलसंभवुडु;
कमलासनुडु सृष्टिकार्यंबुकौरकु । नमर नवब्रह्मलनुवारि बडसे;
वरपुण्युलैनट्टि वारिलोपलनु । बरमात्मुडय्ये नापौलस्त्यवरुडु;
गमलाप्तनिभुनकु घनयशोनिधिकि । विमलात्मुडै पुट्टे विश्रवसुंडु;
१३५०

नरुदार जन्मिचिततनिकि नीवु; । परिकिप नालव ब्रह्मवुगावे ?
ब्रह्मसंतति येड ? परदारलेड ? । इम्महापातकमिट्टु सेयुटेड ?
चेकौनि लोकमुल् सेरिचेंदवीवु? । लोकरक्षणगणलोलुरु वारु;
धर्मघातकुडवै तनरुदुवीवु; । निर्मलधर्मैकनिपुणुलु वारु;
मीरि तापसुलनु म्रिगेंदवीवु; । वारु तापसुलनु वडि ब्रोतुरेपुडु;
चेरि परस्त्रील जेरुतुवु नीवु; । परदाररक्षकुल् परिकिप वारु;
वेदबाह्युंडवै विहरितु वीवु: । वेदार्थसत्कर्म विहितुलु वारु;
धर्ममेक्कड नुंडु दगिलि दैवंबु । निर्मलस्थितितोड निलुचु नक्कडनु
अक्कड दैवंबुलिपारुचुंडु । नक्कड विजयंबुलमरुचुनुंडु:
वरमिच्चि चनिनट्टि वनजजुतोड । नुरगकंकणुतोड नुरगुलतोड १३६०

सृष्टिकार्य में विमलचित्त को झट (तत्पर) करने के कारण, कमलोदर की नाभि से कमल उत्पन्न हुआ। कमल में कमलसम्भव (ब्रह्मा) उत्पन्न हुआ। कमलासन (ब्रह्मा) ने सृष्टिकार्य के लिए समुचित रूप से नव ब्रह्माओं को प्राप्त किया। उन वर पुण्यात्माओं में व्रह पौलस्त्यवर परमात्मा हुए। कमलाप्त (सूर्य)-निभ (समान), घन यशोनिधि को विमलात्मा वाला विश्रवस उत्पन्न हुआ। ॥ १३५० ॥

विरल रूप से उसके तुम उत्पन्न हुए हो। सोच-विचार करने पर तुम चतुर्थ ब्रह्मा नहीं हो ? कहाँ ब्रह्मा-संतति और कहाँ परदाराएँ ? ऐसा महापातक करना कहाँ (उचित है) ? जान-बूझकर तुम लोकों को विनष्ट कर देते हो, वे (राघव) लोकरक्षण-गुण-तत्पर हैं। तुम धर्मघातक होकर शोभित होते हो, वे निर्मल-धर्मैक-निपुण हैं। वढ़-बढ़कर तुम तपस्वी (जनों) को निगल जाते हो, वे झट तपस्वियों की सदा रक्षा करते रहते हैं। लगकर परस्त्रियों को तुम भ्रष्ट कर देते हो, सोचने पर वे पर-दाराओं के रक्षक हैं। तुम वेद-बाह्य होकर विचरण करते हो, वे वेदार्थ-सत्कर्म विहित हैं। धर्म जहाँ रहता है, दैव भी स्थिरता से, निर्मल स्थिति से वहाँ रह जाता है। जहाँ दैव शोभा से रहता है, वहीं विजय शोभा से

सुरसिद्धखेचरुल् सुमुखुलै वच्चि । यरिमुरि नीकुगा नड्डंबु निलिचि
काचिननैननु गाकुत्स्थवंशु । डेच्चिन निनु जंपकेल पोनिच्चु?
नोप्पदोप्पदु व्रलमोप्पदु विडुबु । तप्पक चेप्पिति दनुजलोकेश !
वालिन वरगर्ववह्निनलोपलनु । नेल कालेदु पडि येंतयु नेचि ?
वद्धवैरमु मानि परिकिंच नादु । बुद्धि निर्मलमगु बुद्धिलो गोनुमु
तल्लिदंड्रुल बुद्धि दलमोचु धर्म । वल्लभुनकु गीडु वच्चुने तलप ?
दल्लि चेप्पिनमाट तग दन कीवु । प्रल्लदंबुलु मानि परिकिंचि विनुमु;
अक्षरुं डमृतुंडु नखिलरूपुंडु । पक्षींद्रवाहुडु परमपावनुडु
मोक्षमिय्यगजालु मोहनमूर्ति । रक्षकुंडुरुकीर्ति रणकर्कशुंडु
आदिनारायणुंडमरुल ब्रोव । मोदंबुतो मुनिमुख्युल गाव १३७०
भूदेविभारंबु बुच्चिपोवंव । नादशरथुनि कट्लमरि जन्मिचें;
नेराजु जलनिधि निंकिप जालु । नेराजु हरुबिल्लु नैलमि मोपेट्टि
तृणलील विरिचेनु दिविजुलुप्पोंग । गुणरत्नघनखनि कोदंडगुरुडु
मनुकुलाधीशुंड माधवुंडरय; । निनवंश्युदेवियौ निंदिरादेवि;

रहती है । वर देकर गए हुए वनज-ज (ब्रह्मा) के साथ, उरग-कंकण (शिव) के साथ, उरगों के साथ ॥ १३६० ॥

—सुर-सिद्ध-खेचर (तुम पर) सुमुख (प्रसन्न) हो आकर, अतिशीघ्र बीच में पड़ जाएँ, रक्षा करना चाहें तो भी काकुत्स्थवंश वाला (राम) विजृंभित होकर तुम्हारा वध किए बिना कैसे जाने देगा ? (यह) संगत नहीं है, संगत नहीं है, हठ करना नहीं चाहिए । हे दनुजलोकेश ! अवश्य कह दिया है। अधिक विजृंभित होकर वर-गर्व-वह्नि में पड़कर क्यों भस्म हो जाते हो? बद्ध वैर को छोड़कर, सोच-विचारकर, मेरी बुद्धि (हित-वचनों) को निर्मल बुद्धि से मन में ग्रहण करो । माता-पिता के हित-वचनों को सिर आँखों रखनेवाले धर्म-वल्लभ को सोचने पर कहीं हानि होती है ? माता की कही बात को इनकार न कर तुम बकवास छोड़कर, सोच-विचार कर सुनो । अक्षर, अमृत, अखिल-स्वरूप, पक्षीन्द्रवाह, परम-पावन, मोक्ष दे सकनेवाला, मोहनमूर्ति वाला, रक्षक, उरु-कीर्तिमान, रणकर्कश, आदिनारायण, अमरों की रक्षा करने के लिए, मोद से मुनिमुख्यों की रक्षा करने के लिए, ॥१३७०॥

—भूदेवी के भार को नष्ट करने के लिए, उस दशरथ के यहाँ उचित रूप से पैदा हुआ । जो राजा जलनिधि को सुखा सकता है, जो राजा हर के धनुष को शोभा से संधान कर, दिविजों के (प्रसन्नता से) फूल उठने पर, तृण के समान तोड़ दे सकता है, वह गुणरत्न-घन-खनि (निधि), कोदण्डगुरु, मनुकुलाधीश, सोच-विचारने पर माधव है, इनवंश वाले की देवी इन्दिरादेवी

जगतीतनूजात जगदेकमात । निगमसन्नुतपूत निगमविख्यात
यमितगुणोपेत यैन यासीत । ब्रमदंबुतो नीति वार्टिचि बुद्धि
सकलभूषणमणिसहितंबु गाग । सकलेशुडगु रामचंद्रु ब्रार्थिचि
यिप्पुडे कोनिपोयि येलमि रामुनकु । नोप्पिचि नी प्राणमोगि
गाचुकोनुमु;
ता नोरुवरमुलु दप्पिचु गानि । ता निच्चुवरमुलु दप्पिपलेडु;
गुरुधर्मपोषणगुणु विभीषणुनि । हरिभक्तितोषणु ननघपोषणुनि
१३८०
समर विभीषणु सत्यतोषणुनि । ग्रममोप्प गनुटयु गडु लेस्स नीकु;
नतिमृदु भाषणु ना विभीषणुनि । नतिवेग प्रार्थिचि यतनि रार्विचि
परग लंकाराज्य पट्टंबु गट्टि । शरणनि म्रोक्कु मा जननायकुनकु;
शरणन्न नेंटुवंटि चंदबुनंदु ।गरुणतो गाचु ना करि गाचुरीति"
ननि पेक्कुभंगुल नध्यात्मविद्य । घनमति यैनट्टि कैकेशि तनकु
निर्मलतरपुण्य नीतिमार्गंबु । धर्मतत्परबुद्धि दगिलि चेप्पिननु
दललकेल्लनु बेद्दतल यैनयट्टि । तलतोड गूड नातललेल्ल वंचि

है वह सीता जगती तनूजा, जगदेकमाता, निगम-सन्नुत-पूता (पवित्र चरित्र वाली) अमितगुणोपेता है। प्रमोद से नीति (की बात) मानकर, बुद्धि (-मत्ता) से, सकल-भूषण-मणि युक्त कर, सकलेश रामचन्द्र की प्रार्थना कर, अभी (उसे) ले जाकर, प्रेम से राम को मनाकर, झट अपने प्राणों की रक्षा कर लो। (वह) स्वयं दूसरों के दिए वरों से (किसी को) बचा सकता है किन्तु स्वयं अपने दिए वरों को व्यर्थ नहीं कर सकता। गुरु-धर्म पोषण-गुण वाले हरिभक्ति-तोषण (तुष्ट रहनेवाले), अनघ-पोषण (करने-वाले) ॥ १३८० ॥

—समर विभीषण, सत्य-तोषण विभीषण को क्रम से देख लेना तुम्हारे लिए बहुत उत्तम है। अतिमृदु भाषण वाले उस विभीषण की अतिशीघ्र प्रार्थना कर, उसे बुलवाकर, शोभा से लंकाराज्य के लिए पट्टाभिषिक्त कर, उस जननायक (राजा राम) की शरण जाकर प्रणाम करो। शरण माँगने पर, किसी भी परिस्थिति में, उस करि (गजेन्द्र) की रक्षा करने के समान, वह रक्षा करता है।" (इस प्रकार) कह, अनेक प्रकार से अध्यात्म। विद्या में घन (बड़ी)-मति वाली कैकेशी ने निर्मलतर पुण्य (प्रद)-नीति मार्ग को धर्मतत्पर बुद्धि से, चाहकर बताया। (कहने पर भी) सिरों में सबसे बड़े सिर के साथ सभी सिरों को झुकाकर, उचित रूप से दण्ड-प्रणाम कर, पूर्ण भक्ति से खड़े होकर रावण, पूर्व में उस सनत्सुत से सुने भासुर

दंड प्रणामंबु दग नाचरिंचि । निंडिन भक्तितो निलिचि रावणुडु
आ सनत्सुतुनिचे नट मुन्नु विन्न । भासुरंबैनट्टि परतत्त्वमेल्ल
दनकु सिद्धिचुट दनलोन देलिस । मनमुन नेंतयु मग्नुडै यपुडु १३९०
तलकोन्न वेड्कतो दललेल्लनेत्ति । तलपक यप्पुडु तल्लितो ननियें:
"नेरुगुदु नन्नि; ने नेरुगनियट्टि । मोरगुलु गलवे मीमूडुलोकमुल?
दरमिडि यीपरतत्त्वंबुतेरगु । लेरिगि येरुंगवु हृदयंबु चेदिरि;
तल्लि ! नीवेरिगिन धर्मशास्त्रंबु । लेल्ल निष्पलमुलैयिप्पुडु तोचें;
दल्लिदंड्रुलु पल्कु तप्पुलेन्नैन । नुल्लंबुलो नाटि युंडवु गानि
यामहात्मुडु विष्णुडैन रामुनकु । नीमेनितो बोयि ये म्रोक्कजाल;
हेयपादार्थमै येसगुचुन्नट्टि । कायंबु वेंचुट कष्टंबु गादे ?
नरुलु वानरुलु नेन्नग नेंतवारु ? । सुरलकन्ननु वारु शूरुले तलप?
गेलुतु नवश्यंबु; गेलुपु लेकुन्न; । निल रामु शरमुल नीलुगुदु गानि,
हीनमानवुनकु ने म्रोक्कजाल; । मानु मिस्माट मुम्माटिकोयम्म!
१४००
चालु नी बुद्धुलु, चालु नी ममत, । चालिचवैतेनि जननि! विच्चेयु;

समस्त परतत्त्व के अपने को सिद्ध होने की बात अपने (मन) में जानकर, मन में अत्यधिक मग्न हो रहा। ॥ १३९० ॥

तब सम्पन्न उत्साह से समस्त सिरों को उठाकर, सोचे बिना तब माता से (उसने) कहा—"सब जानता हूँ। मैं न जानता हूँ, ऐसे भी षड्यन्त्र इन तीनों लोकों में कहीं हैं ? (नहीं)। इस परतत्त्व के विधान को जानकर भी, हृदय के विकल हो जाने से, नहीं जानती हो। हे माता ! अब लगता है, तुम जिन समस्त धर्मशास्त्रों को जानती हो, वे सब निष्फल हैं माता-पिता कितने ही ग़लत (बातें) कहें, वे मन में गड़कर तो नहीं रहते। किन्तु उस महात्मा, विष्णु, राम को इस शरीर से जाकर मैं प्रणाम नहीं कर सकता। घृणित पदार्थ हो विराजमान (इस) काया का संवर्द्धन करना भी कठिन है न ? नर (और) वानर गिनती करने में कितने हैं (उनकी शक्ति ही कितनी है) ? क्या सुरों की अपेक्षा वे शूर हैं ? अवश्य (उन्हें) जीत लूँगा। विजय (प्राप्त) न हो तो राम के बाणों से मर जाऊँगा किन्तु हीन मानव को प्रणाम नहीं कर सकूँगा। हे माता ! यह बात (उपदेश) छोड़ दो, छोड़ दो, छोड़ दो। तुम्हारे हित-वचन बस हैं, तुम्हारी ममता बस है। (इन बातों को) बन्द न कर सकोगी तो हे जननी ! पधारो (यहाँ से)। ॥ १४०० ॥

चाहकर अपने छोटे पुत्र के साथ अनुपम सम्पत्ति के साथ इस लंका

गौनकौनि नी पिन्न कोडुकुतो गूडि । यॆनलेनि संपद नेलु मीलंक;
ईलोकसंपदलिन्नि नीकृपनु । नालोलमति नेनु ननुभविचितिनि;
बलिमिनि गलिमिनि भर्ममितलेक । बलिसि लंकेलिति बदलक्षलेडु
लॆलमि नाकुनु नॆदुरॆव्वरु लेक । विलसिल्लु प्राभवविभवंबु मॆरसि;
विच्चॆयु नगरिकि वेगंब" यनिन । नच्चुगा रावणुंडाडुमाटलकु
गैकेशि मदिलोन गडु जोद्यमंदि । याकोडुकुन जूचि यनियॆ ग्रम्मरनु:
"वरतपोनिधि विश्रवसुडानतिच्चु । परतत्त्व मदियेल परिवोवु"
ननुचु
वनित यप्पुडु माल्यवंतुनि जूचि । "मनमॆंत चॆप्पिन यानुने यितडु"
अन विनि यिट्लने नम्माल्यवंतु: । 'डॆनयंग नीविप्पु डेल चॆप्पॆदवु ?
१४१०
जडुनकु नार्युलु चाटु वाक्यमुलु । कडु ब्रीति जॆप्पिन गादनि विनडु;
गान गानडु वीडु कार्यंबु तॆरगु । मानुमु नीविक मानिन ! लॆम्मु"
अनवुडु गैकेशि यट्लकाकनुचु । "नॆनपंग जॆडुत्रोव येटिकि दप्पु?
नेतॆरंगुन वोवदिदि दैवकृत्य । मोतंड्रि! मननीति युचितमे" यनुचु
दातयु दानुनु दलकॊडु वगल । भ्रातलु दल्लुलु बांधवुल् गलग

पर शासन करो । इस लोक की इतनी सम्पदाओं (वैभवों) को, तुम्हारी कृपा से आलोकमति (कामुकता) से, भोगा है । बलयुक्त (और) ऐश्वर्य-युक्त हो, किसी भी प्रकार के भय से रहित हो, गर्वीला हो, दस लाख वर्ष तक लंका पर शासन किया है। प्रतिपक्षी के अभाव में, विलसित प्राभव-वैभव से शोभा से विराजमान हूँ । (अब तुम) शीघ्र नगरी में पधारो ।" (ऐसा) कहने पर, रावण की निश्चल बातों पर कैकेशी मन में अति चकित हो, उस पुत्र को देखकर फिर बोली—"वरतपोनिधि विश्रवसु का दिया आदेश (कथन) परतत्त्व (से सम्बद्ध) व्यर्थ कैसे जाएगा ?" (ऐसा) कहते हुए उस स्त्री ने तब माल्यवन्त को देखकर कहा—"हम कितना भी कहें क्या यह विरत होगा ? (नहीं) । कहने पर सुनकर उस माल्यवन्त ने यों कहा—"अब तुम उचित रीति से (और अधिक) क्या कहोगी ? ।।१४१०।।
—जड़ (व्यक्ति) को आर्य (जन) हित-वचन अधिक प्रीति से कहें तो वह उन्हें नहीं मानता है । अतः यह कार्य के विधान को समझ नहीं सकता है । हे मानिनी ! अब तुम छोड़ दो, उठो ।" ऐसा कहने पर 'वैसा ही हो' कहकर, यह कहते कि "कुमार्ग से कैसे हटेगा? हे तात! यह दैवकार्य किसी भी तरह से नहीं टलेगा । हमारे हित-वचन कहाँ उचित लगते हैं ?" तात और स्वयं, भ्राताओं, माताओं और सम्बन्धियों के विचलित-व्याकुल

जनि यप्पुडा संभासदनंबु बासि । तन नगरिकि बोयि धर्मक्रमंबु
दन नित्यकर्मंबु दप्पक यपुडु । मनमुन देलिसि सम्मदमुन नुंडे;
नट दशग्रीवुंडु नधिकदर्पमुन । बटुतरनिस्साणभांकृतुल् सेलग
जेयिंचि राक्षससेन राविंचि । यायोधनोद्युक्तुलै येपुमीरि
युन्न मंत्रुल जूचि युग्रुडै पलिकें । गन्नुल गोपंबु गडलुकोनंग: १४२०
"श्रीरामचंद्रुंडु सेतुवु गट्टि । वीरुडै वच्चि सुवेलाद्रि विडिसें;
बटुगति नामीद बगवाडु राग । निटु निद्रवोवुट ये नीति मीकु?
मिम्मेमि सेयुदु? मिमु मंत्रुलनुचु । नम्मिन वीड्रिडि ननु नंदु गाक!
कादु पो मीरुपेक्षापरुलैन । नादेस गीडोंदुना येविधमुन ?
सामभेदंबुल जक्क गाकुन्न । रामुनितो बेंचि रणमु सेसेंदनु"
अनि रावणुंडाड नखिलराक्षसुलु । दनिकिन सिग्गुन दल लेत्तलेक
यूरकुंडिरि; 'यूरकुंड ने' लनुचु । धीरुडै यावेळ दिविजारियैन
रावणुतोड दर्पंबुन दनदु । चेव दोपग निंद्रजित्तुंडु वलिकें:
"देव! रावण! सर्व देवसंघमुल । नाविधंबुन गेल्चिनंतटि नीकु
निल येल गाननि यीरामलक्ष । णुलचेत नेकीडु नूल्कोनु निंक? १४३०

होने पर, तब उस सभासदन को छोड़, अपनी नगरी में जाकर धर्मक्रम तथा अपने नित्यकर्म को न छोड़, मन में (सब कुछ) जानकर, सम्मोद से रही। वहाँ दशग्रीव (रावण) अधिक दर्प से, पटुतर-निस्साण भाँकृतियों (ध्वनियों) के व्याप्त होने पर, राक्षससेना को बुलाकर, आयोधन (युद्ध) के लिए उद्युक्त (तैयार) हो, अधिक विजृंभित बने हुए मन्त्रियों को देखकर, आँखों से क्रोध के परिव्याप्त होने पर, उग्र हो यों बोला— ॥ १४२० ॥

—"श्रीरामचन्द्र ने सेतु का निर्माणकर वीर हो आकर, सुवेलाद्रि पर पड़ाव डाल दिया है। पटुगति से मुझ पर शत्रु के आने पर, इस प्रकार सोते रहना आपके लिए नीति संगत है? तुम लोगों को क्या करूँ? तुम (लोगों) को मन्त्री मानकर भरोसा करनेवाले मुझ मूर्ख को दोष देना चाहिए। जाने दो, आप उपेक्षा कर दें तो मेरे प्रति किसी प्रकार की हानि कैसे होगी? साम तथा भेद से (कार्य) न बन सकेगा तो क्रम से राम से रण करूँगा।" (ऐसा) रावण के कहने पर, अखिल राक्षस अतिशय लज्जा से सिर उठा न सक, चुप रहे। 'चुप क्यों रहें' ऐसा सोच, धीर बन, दिवजारि रावण से दर्प के साथ तथा अपनी शक्ति को प्रकट करते हुए इन्द्रजित ने कहा—"हे देव! हे रावण! सर्व देव संघों को उस प्रकार जीतनेवाले तुम्हें पृथ्वी पर शासन न कर सकनेवाले इन राम-लक्ष्मणों से अब हानि किस प्रकार होनेवाली है? ॥ १४३० ॥

वलदु चिंतिप; ने वालिनवाड; । नलवु ज्ञलंवु धैर्यमु गलवाड;
नागपाशंवुल नाकीशु गट्टि । यागति नेपना यसुराधिनाथ !
कालकेयादि राक्षसवीरवरुल । दोलना दानवोद्धुरसंगरमुल ?
मनुजुल गृशुल दापसुल दुर्वलुल । दनुजेश ! दशरथतनयुल नाकु
जंपुट पेद्दये समरंवुलोन ? । जंपेद, नीमदि संदियपडकु"
मन विनि यतिकामुडनुवाडु वलिके । दनुजेश्वरुनि तोड दज्ञुलु मेंच्च: १४३६

रावणुनकतिकायुडु नीति सेप्पुट

"विनु दानवेश्वर! विशदनीतिज्ञु । डनु पेंपुतोड नीयखिलंवु वोंगड
वरुल सोम्मुल कासपडक वर्तिंचु । नरनाथुडिल येल्लनाडुनु नेलु;
निदि नीतिगति यनि यिच्च जिंतिप । केंदरेंडु लेदनि येल चूचेंदवु ?
इनकुलोत्तमुडु नी केंग्गेमिचेसे ? । दनुजेश! नीकु नातनि देवियेल? १४४०
नीदैन लंकयु निन्नुनु जेरुप । नीदुष्टराक्षसु लेत्तुकोन्नारु;
गावुन सीत राघवुनकु निच्चि । या विभीपणुनकु नट्टु लंकयिच्चि

—चिन्ता करनी नहीं है, मैं समर्थ हूँ । शक्ति, हठ, धैर्य से युक्त हूँ । हे असुराधिनाथ ! नागपाशों से नाकीश (वानरेश) को पकड़कर उस प्रकार सताया नहीं था ? कालकेय आदि राक्षसवीरों को दानवोद्धुर संगरों में भगाया नहीं था? हे दनुजेश ! कृश तापस तथा दुर्वल मनुजों, दशरथतनयों को, युद्ध में मार डालना मेरे लिए कौन वड़ी वात है ? मन में सन्देह मत करो, (उन्हें) मार डालूंगा।" ऐसा कहने पर सुनकर, अतिकाय नामक (राक्षस) दनुजेश्वर से वोला जिसे तज्ञ (विज्ञ) सराहें ।। १४३६ ।।

रावण को अतिकाय का हित कहना

"सुनो दानवेश्वर ! विशद नीतिज्ञ की प्रसिद्धि से इस अखिल (समस्त सृष्टि) के सराहना करने पर, दूसरों की सम्पत्ति की आशा न कर व्यवहार करनेवाला नरनाथ धरती पर सदा शासन करता है । यह नीति मार्ग है, ऐसा मन में न सोचकर, मेरा सामना करनेवाला कोई नहीं है, ऐसा क्यों सोचते हो ? इनकुलोत्तम (राम) ने तुम्हारा क्या विगाड़ा है ? हे दनुजेश ! तुम उसकी देवी क्यों हर लाये ? ।। १४४० ।।

—तुम्हारी लंका का तथा तुम्हें विनष्ट करने का इन दुष्ट राक्षसों ने वीड़ा उठाया है । अत: सीता को राघव को दे-देकर, उस विभीषण को लंका

यूनिन भक्तितो नूरकयुंडि । मानितंबुग बुद्धिमंतुंड वगुम"
यनि पेक्कुभंगुल नतिकायुडपुडु । तनतोड बलुकंग दानवेश्वरुडु
अतिकायु माट दानात्म गैकोनक । नतिसाहसस्फूर्ति नप्पुडु मरियु
शुकसारणुल जूचि शूरुडै पलिके । "नीक मानवुंडब्धि नूरक बंधिंचि
घनुडैनवाडेंदु गल ? डिदिचित्र; । मनयंबु रामु डी यंबुधि गट्टे
ननुचुन्नवारु; मीरासेन जोच्चि । घनमतुलै येल्ल क्रममु वीक्षिंचि
रं" डनि पनिचिन रयमुन वारु । दंडि वानरवेषधारुलै वच्चि
वनमुलयं दुपवनमुलयंदु । ननुपमलील महाद्रुलयंदु १४५०

शुकसारणुलु रामसेनल जूचिवच्चुट

वरसेतुवंदु नव्वार्धियव्वलनु । गुरुगुहांतरमुल गोमरैनयेडल
गलयंग विडिसिन कपिसेन जूचि । तललूचि वेरगंदि तलकि या चरुलु
मेनुलु गरुपार मेल्लन जोच्चि । वानरसेनलो वच्चुट जूचि
येरिगि बिभीषणुं डेचि पट्टिंचि । युरक वांड्रनु रामुनोद्दकु देच्चि
"मनुजेश ! रावणु मंत्रुलु वीरुः । वनचरवेषुलै वच्चिनवारु;

दे देकर, स्थिर भक्ति से चुपचाप रहकर, मान्य रूप से बुद्धिमान बनो ।" (ऐसा) कह अनेक प्रकार से तब अतिकाय के कहने पर, दानवेश्वर ने, अतिकाय की बात पर ध्यान न देकर, अतिसाहस-स्फूर्ति से तब फिर शुक-सारणों को देखकर शूर हो कहा—"अब्धि को यूँही (अनायास) बाँधकर महान् बना मानव कहीं है ? यह तो विचित्र है । (लोग) सतत कहते हैं कि राम ने इस अंबुधि को बाँध दिया है । तुम (लोग) उस सेना में प्रवेश कर, घनमति से समस्त क्रम (विधान) को देखकर आओ ।" कहकर भेजने पर, शीघ्रता से वे अतिशयता से वानर वेषधारी हो, आकर, वनों में, उपवनों में, अनुपम लीला से महाद्रियों में, ॥ १४५० ॥

शुकसारणों का राम की सेनाओं को देख आना

—वरसेतु पर, उस वारिधि के उस पार, गुरु-गुहान्तरों में सुन्दर बने स्थानों पर, शोभा से पड़ाव डाले हुए कपिसेना को देखकर, सिर हिलाकर, आश्चर्यचकित हो, विचलित हो उन (गुप्त) चरों के, शरीरों के (भय से) पुलकित होने पर, धीरे से प्रवेश कर, वानरसेना में आते देख, जानकर, विभीषण विजृंभित हो, (उन्हें) पकड़वाकर, यूँही उन्हें राम के पास लाकर, (कहा)—"हे मनुजेश ! ये रावण के मन्त्री हैं, वनचर वेषधारी हो आए हैं । ये शुकसारण है । ये (इस सेना में) घुसकर, यहाँ के समस्त (समाचार)

शुकसारणुलु; वीरु सौच्चि यिव्वीट। सकलंबु गनुगोंनि चनगलवार"
लनवुडु नाचारु लतिभीति नोंदि। मुनुकोंनि चेतुलु मोगिचि
म्रोक्कुचुनु
"देव! रावणुडु वुत्तेंचिन चरुल; । माविभीषणु चेप्पिनंतयु निजम;
येचि या रावणुं डेलमि मीसेन। जूचि रम्मनवुडु जूड वच्चितिमि"
अनुटयु नव्वुचु ननियें राघवुडुः। "विनुडु, रावणु मंत्रिविभुलौटजेसि
१४६०
मिम्मु जंपुट दगु; मिमु जंपगानि;। मिम्मु जंपग वच्चु मेलेमि माकु?
नदि सेप्पनेल? वीडंतयु जूडु। 'डदि सूड मिदि सूड' मनक मीरिप्पु
डिटु तेरकोनग वीडेंतयु जूचि। यटुपोयि वेस जेप्पु डारावणुनकु;
नेलावु नम्मि ता निट सीत देच्चें। नालावु जूपरम्मनु; डाजिलोन
नेल्लि यीलंकलो नेल्लराक्षसुल। द्रुळ्ळेडि तन्नुनु दुनुमाडु ननुडु;
चनु" डनि रावणु चारुल वनिचें। जननाथु डारामचंद्रुडु प्रीति;
वारु विभीषणुवलन नव्वीडु। वारक सकलंबु वडि जूचिपोयि
रावणु गांचि या रावणुतोड। "देव! नीपंचिन तेरगुन बोयि
कपिसेन नेंतयु गनुगोनुचुंड। नेपमात्रमुन मम्मु नीतम्मु डेरिगि

को देखकर जाएँगे।" ऐसा कहने पर, वे चर अति भीत होकर, प्रथमतः हाथ जोड़ प्रणाम करते हुए बोले—"हे देव! (हम) रावण के भेजे चर हैं। विभीषण ने जो कुछ कहा वह सब सच है। विजृंभित होकर, उस रावण के शोभा से आपकी सेना को देख आने के लिए कहने पर, देखने आए हैं।" (ऐसा) कहने पर हँसते हुए राघव ने कहा—"सुनो, रावण के श्रेष्ठ मन्त्री होने के कारण, ॥ १४६० ॥

—तुमको मार डालना उचित है। तुम्हें मार तो नहीं डालूँगा। तुम्हें मार डालने से हमें क्या लाभ होगा? वह कहना क्यों? (हमारे) समस्त स्थान देख लो। 'यह नहीं देखा, वह नहीं देखा' (ऐसा) न कह, अब तुम स्पष्टता से समस्त स्थानों को देखकर, वहाँ जाकर झट उस रावण से कह दो। किस सामर्थ्य पर भरोसा कर वह सीता को यहाँ लाया था, उस सामर्थ्य को दिखाने के लिए आने को कह दो कह दो कि परसों युद्ध में इस लंका के समस्त राक्षसों को, उसे भी मार डालूँगा, जाओ।" (ऐसा) कह रावण के चरों को जननाथ रामचन्द्र ने प्रीति से भेज दिया। वे विभीषण के द्वारा उस समस्त स्थान को निरन्तर शीघ्रता से देखकर जाकर, रावण को देखकर, उस रावण से (कहा)—"हे देव! तुम्हारे भेजे विधान के अनुसार जाकर, कपिसेना को अधिकता से देख रहे थे। इशारे भर से

पट्टिचि कट्टिचि भानुकुलेशु । कट्टेदिटिकि देच्चि कलुषंबुतोड १४७०
जंपिपदलचिन सदयुंडुगान । जंपिपडय्ये निक्ष्वाकुवल्लभुडु;
नीलंकयुनु निन्नु निखिलराक्षसुल । नालंबुलोपल नणगिंचुटकुनु
रामभूपालु शौर्यमु जेप्पनेल । सौमित्रि योक्कडे चालु लंकेंद्र !
सुरवैरि ! सेतुवु जूचिति; मंदु । नेरसि वानरसेन निंडि युन्नदियु;
नदि शतयोजनंबैनट्टि निडुपु । पदियोजनंबुल पऱपुन नोप्पे;
गपिसेन यितनि गणुतिपरादु; । कपुलाडकाडकु घनगिरुलंदु
विडिसिन सेनयु विडियु सेनयुनु । विडिदलपट्लकु वेदकु सेनयुनु
नुदधिकि नव्वल नुंडु सेनयुनु । वदलक नऱियुनु वच्चु सेनयुनु
नेयुंटकु बराकु नात्मलो वेऱगु । पायनि वेऱपुनु ब्रभविंचे देव !
योक्कोक्कचोटुन नुन्न यासेन । लेक्किंचि ब्रह्मयु लिखियिंपलेडु; १४८०
कान नारामुनि गनि सीत निच्चि । दानवनाथ ! मोदंबुननुंडु"
मनवुडु रावणुं डामाटलेल्ल । विन निपुगाक क्रोव्विन रोषमेत्ति
"देवगंधर्वुलेत्तिन नैन सीत । नेविडुतुने ? येल यीपंदतनमु ?

हमें तुम्हारा भाई जान गया और पकड़कर, बाँधकर, भानुकुलेश के समक्ष ले जाकर, कलुष (भाव) से, ॥ १४७० ॥

—(हमें) मरवा डालना चाहा तो सदय होने के कारण इक्ष्वाकुवल्लभ ने हमारा संहार नहीं कराया। हे लंकेन्द्र ! युद्ध में तुम्हारी लंका को, तुमको (तथा) अखिल राक्षसों को दबा देने के लिए राम भूपाल का शौर्य क्यों, अकेला सौमित्र ही पर्याप्त है। हे सुर-वैरी ! सेतु को देखा है, उसमें वानर सेना भरी हुई है। वह (सेतु) शतयोजन की लम्बाई (तथा) दस योजन की चौड़ाई से शोभित है। कपिसेना की गिनती नहीं कर सकते। कपि जहाँ-तहाँ (फैले हुए) हैं, घन-गिरियों में पड़ाव डाली हुई सेना, पड़ाव डालने वाली सेना, पड़ाव के लिए (स्थान) ढूँढनेवाली सेना, उदधि (समुद्र) के उस पार स्थित सेना, निरन्तर आनेवाली सेना के होने से आत्मा (मन) में आश्चर्य और अत्यन्त भय उत्पन्न हुए। हे देव ! एक-एक स्थान पर स्थित उस सेना की गिनती कर ब्रह्मा भी लिख नहीं सकता। ॥ १४८० ॥

अतः उस राम को देख (दर्शन कर), सीता को देकर, हे दानवनाथ ! मोद से रहो।" ऐसा कहने पर, वे बातें श्रवण सुभग न होने से दर्प से रोषपूर्ण होकर बोला—"देव गन्धर्व भी आक्रमण करें तो भी सीता को छोड़

मिम्मु गोतुलु वट्टि मेंदिचिन नोंच्चि । बम्मेरवोवुचु बऱतेंचिनारु;
वलव दोडकुडु; दुर्वारुलै मिम्मु । दलचि कोतुलु रारु दाडि मी वेंनुक
ननि धीरुडै बल्कि यारावणुंडु । चनि तनतो शुकसारणुल् नडव
मिक्किलि पोंडवेंन मेडपै नेंक्कि । यक्कपिबलमुल नंतयु नपुडु
चूचि यद्भुतमंदि शुकसारणुलकु । "नीचंदमुन नुन्न यीसेनलोन
नेंव्वडु मुंगल नेपारि नडचु ? । नेंव्वडेंव्वडु वेंन्क नेमऱकुंडु ?
नेंव्वरु शूरु ? डिंदेंव्वडु वलति ? । येंव्वनिमाट लायिनसूति सेयु ?
१४९०
नेंव्वनितो रामु डिष्टंबु वलुकु ? । नेंव्वनिचे सेन येपारियुंडु ?
नेंव्वरु रेवग लीसेन गातु ? । रेंव्वरु सामंतु लीसेनलोन ?
नेंव्वडु सुग्रीवु ? डेंव्वडु रामु ? । डेंव्वडु लक्ष्मणुं ? डेंव्वडंगदुडु ?
चूपुडा येर्पड; जूपिति रेनि । गोपिंप ने वारि गुणमुलु विन्न"
नन विनि सारणुं डारावणुनकु । विनुपिंप दोणगें ब्रवीणत मेंऱसि:

रावणुनकु सारणुडु कपिपुंगवुल देलुपुट

"देव ! पुळिंदानदी तीरवर्ति । पावकसुतुडैन प्रबलुडीधात्रि;

दूँगा ? यह कायरता क्यों ? तुम्हें बन्दर जानकर, पकड़कर मर्दन करने से, तुम भ्रान्त होकर भाग आए हो, डरो मत। दुर्वार बने तुम (लोगों) का स्मरण कर, तुम्हारे पीछे बन्दर धावा बोलते नहीं आएँगे।" ऐसा धीर हो बोलकर, वह रावण, अपने साथ शुकसारणों के चलने पर जाकर, अत्यन्त ऊँचे सौध पर चढ़कर, तब उस समस्त कपिबल को देखकर, चकित हो, शुकसारणों से बोला—"इस प्रकार की इस सेना में कौन शोभा से आगे-आगे चलेगा ? कौन पीछे असावधान हुए बिना रहेगा ? कौन शूर है ? कौन समर्थ है ? किसकी बातें वह इनसुत (सुग्रीव) मानता है ? ॥ १४९० ॥

किससे राम प्रिय (वचन) कहता है ? किसके कारण सेना शोभित रहती है ? कौन किस प्रकार इस सेना की रक्षा करते हैं ? इस में कौन सामन्त हैं ? सुग्रीव कौन है ? राम कौन है ? कौन लक्ष्मण है ? कौन अंगद है ? वह विधान बताओ। बताओगे तो उनके गुणों को सुनकर, मैं तुम पर क्रुद्ध नहीं होऊँगा।" (ऐसा) कहने पर सुनकर, वह सारण प्रवीणता से प्रकाशित होकर, उस रावण को सुनाने लगा।

रावण को सारण का कपि-पुंगवों के बारे में बताना

हे देव! इस धरती पर पुलिदा तीरवर्ती (तथा) पावक का सुत है प्रबल

वीडॆ यीलंकॆल्ल वॆस बॆल्लगिंचॆ । बोडिगा नार्पुलु बोब्बलु सॆलग;
गुरुतरकपिनायकुलु लक्ष गॊलुव । दरुचरसेनमुंदर नुन्नवाडु
अलघुसत्त्वुडु नीलुडनुवाडु देव ! । जलजाप्तसुतुनकु सैन्यपालकुडु;
वीकतो दिक्कुलु वॆस बॆल्लगिल्ल । दोक दार्टिचुचु दुर्दमवृत्ति १५००
वॆरगंद जेयुचु वेयुपद्ममुलु । मरिनूरु शंखमुल् मर्कटोत्तमुलु
बलवंतुलगुवारु बलसि तन् गॊलुव । गॊलुवुन्नवाडॊक्ककॊंडयु बोलॆ
वालिनंदनुडल्लवाडॆ यंगदुडु; । वालिकंटॆनु बलवंतुडु वाडु;
अडरंग नाचंदनाद्रिवल्लभुडु । कडु ब्रसिद्धुडु विश्वकर्मनंदनुडु
विनु प्लवंगंबुलु वेयुगोट्लुनु । नेनुबदिलक्षलु नेपारि कॊलुव
घनमैन सेतुवु गडकतो गट्टि । वनचरसेन निव्वलिकि दार्टिचि
वालिन नलुडु वो वाडु दैत्येंद्र ! । वालिनंदनुन कव्वल नुन्नवाडु;
तरुचरयूथमुल् तनु बॆक्कु गॊलुव । सुरलोककंटक ! सुतरुडन्वाडु;
ननसेनतो गूडि तानॊक्करुंड । मन लंक साधिप मंडुचुन्नणडु;
रजनीचराधीश ! रमणीयकांति । रजताद्रि बोलुचु रविपुत्रुनॆदुर १५१०

(नामक कपि)। उसी ने सुघड़ता से सिंहनादों के विजृंभित होने पर, झट इस लंका को उखाड़ डाला था। एक लाख गुरुतर कपिनायकों के सेवा करने पर, तरुचर-सेना के आगे-आगे नील (खड़ा) है जो अलघुसत्त्व वाला है। हे देव ! वह जलजाप्तसुत (सुग्रीव) का सैन्यपालक है। साहस से पूँछ के आघात से झट दिशाओं को उखाड़ डालते हुए, दुर्दम वृत्ति से ॥ १५०० ॥

—आश्चर्य-चकित करते हुए, हज़ार पद्मों तथा सौ शंखों की संख्या में बलवान मर्कटोत्तमों के बली हो सेवाएँ करने पर, एक पर्वत के समान उपस्थित है वालिनन्दन ! वही अंगद है। वह वालि से भी बलवान है। अतिशयता से वह चन्दनाद्रि-वल्लभ (और) विश्वकर्मनन्दन अधिक प्रसिद्ध हैं। सुनो, हज़ार करोड़ (तथा), अस्सी लाख प्लवगों के शोभा से सेवाएँ करने पर, महान् सेतु का साहस के साथ निर्माणकर, वनचर सेनाओं को इस पार उतारनेवाला वह नल है। हे दैत्येन्द्र ! वह वालिनन्दन के उस तरफ़ है। हे सुरलोक-कंटक ! अनेक तरुचरयूथों के सेवाएँ करने पर सुतरु नामक (कपि) अपनी सेना के साथ अकेले ही हमारी लंका को जीतने के लिए प्रज्वलित हो रहा है। हे रजनीचराधीश ! रमणीयकांति से रजताद्रि से उपमित होते हुए रविपुत्र के समक्ष ॥ १५१० ॥

वलमुलन्निटिनि वरिपाटि दीर्चु । वलति याश्वेतुडन्वानरु जूडु;
गुरुबलाढ्युलु वेयुगोट्लु गौलुव । वरलुनातडु वेगवंतुडन्वाडु
चूडुमा मनदिक्कु सूचुचुन्नाडु; । चूडुगा लंकेंद्र ! सुग्रीवसखुनि;
दग विंध्य सह्यसुदर्शनमुख्य । नगमुल कॅल्लनु नाथुंडु वाडु;
कौमरारु सिंगपु गौदमयु वोले । नमरिनवाडु लंकाधीश ! विनुमु
गांभीर्यवारिधि कपिलवर्णुंडु । रंभुंडु घनकेसरंबुलवाडु
बलुविडि नूटमुप्पदिलक्ष लॅलमि । गौलुवनुन्नाडदिगो देव ! चूडु;
कुमुदुडन्वाडु संकोचनाचलमु[1] । नमरंग बालिचु नमरारि ! यतडु
पदिकोट्ल यगचरपतुलोलि गौलुव । मदमुन मलयु नामर्कटु जूडु;
रम्यशैलमुनकु[2] राजैनवाडु । रम्योरु विस्तृतोरस्थलुंडतडु
१५२०
नलुवदिलक्षलु नालुगुवेलु । गौलुवंग लंकपै गोपंबु मीऱ
गुदियक यिरुगॅलंकुल जूचुवाडु । त्रिदशारि ! यदॆचूचिते शरभुंडु;
बलसि तन्नॆप्पुडेबदिकोट्ल कपुलु । गौलुवनुन्नतनि गन्गौनुमल्लवाडॆ

—(अपनी) समस्त सेनाओं को क्रम से सजाए रखनेवाला समर्थ श्वेत नामक उस वानर को देखो। देखो न, गुरु-बलाढ्य हज़ार करोड़ (कपियों) के सेवाएँ करते रहने पर शोभित होनेवाला वह वेगवान् नामक (कपि) हमारी ओर देख रहा है। देखो न लंकेन्द्र ! सुग्रीव सखा को। वह उचित रूप से विन्ध्य, सह्य, सुदर्शन आदि समस्त नगों का नाथ (अधिपति) है। हे लंकाधीश ! सुनो, शोभायमान सिंह-शावक के समान विराज रहा है। हे देव ! (उधर) देखो, गांभीर्य-वारिधि, कपिलवर्ण वाला, घन केसर वाला रम्भ (नामक कपि) वरजोरी एक सौ तीस लाख (कपियों) के प्रेम से सेवाएँ करने पर स्थित है। हे अमरारी ! कुमुद नामक वह (कपि) संकोचनाचल[1] पर समुचित रूप से शासन करता है। दस करोड़ अगचरपतियों के सुन्दरता से सेवाएँ करने पर, मोद से घूमते उस मर्कट को देखो। रम्यशैल[2] का राजा, रम्य ऊरु (तथा) रम्य उरस्थल वाला है वह। ॥ १५२० ॥

चालीस लाख और चार हज़ार (सैनिकों) के सेवाएँ करते रहने पर, लंका पर उत्कट क्रोध से, सिकुड़े बिना, दोनों तरफ़ देखनेवाले शरभ को हे त्रिदशारी ! देखा है न ! हे देवेन्द्र वैरी ! सान्द्रता से सदा पचास करोड़ कपियों की सेवाएँ पानेवाले उसे देखो। वह पारियात्राचल का

१. मूल वाल्मीकि में 'संरोचनाचल' है।
२. संस्कृत मूल में 'रम्यं साल्वेय पर्वतम्' है।

नीलशैलंबुल निलुवॆल्ल दार। यै लील नॊप्पॆडु नाक्रुतुल् गलिगि
युल्लसिल्लुचुनुन्न यॊककोटिसंख्य। भल्लूकमुलु गॊल्व बलसियुन्नाडु
१५४०
तॊल्लि देवासुरोद्धुरयुद्धकेळि। नॆल्लवरंबुल निद्रुचे बडसि
वालिन या जांबवंबडु वाडै:। तूलडु रणमुलो धूर्जटिकैन;
नुक्कलुंडदॆ वीनि युभयपार्श्वमुलु। नॊक्कॊक्क योजनं बॊडलंत पॊडवु
नलि बद्मसंख्य वानरसेन गॊलुव। सललितुंडगुवाडु सन्नादनुंडु
नाकारि! विरुदु वानर पितामहुडु। नाकीशुतो बोरि नलि गॆलिचनाडु;
दहनुनिवलन गंधर्वकन्यककु। महनीयमैन जन्मंबुनु बॊंदि
परपैन या द्रोणपर्वतं बेलु। दिरमुगा जंबुनदीतीरवर्ति
वेयुगोट्लु कपुल् वेड्क दन् गॊलुव। नीयगचरु जूडु मेचिनवाडु
नीलुनि तम्मुडु निर्जरवैरि!। चालुवाडितंडिद्रजालुडन्वाडु;
कुपितमर्कटुलु वेगोट्लु गॊलुव। कपिवीरुडदॆ चूडु क्रथनुडन्वाडु;
१५५०
करमु संप्रीति गंगातीरमुननु। जरियिंचुवाडु शाश्वतवाहुबलुडु
चिरतरलीलमै शिशिराद्रि वेड्क। निरवंद नॆप्पुडु नेलॆडुवाडु

से विराजमान है। नीलशैलों पर जहाँ-तहाँ नक्षत्रों के समान शोभित आकार से युक्त हो उल्लसित होनेवाले एक करोड़ की संख्या के भल्लूकों के सेवाएँ करने पर वली बना हुआ है। ॥ १५४० ॥

पूर्व में देवासुरों के उद्धर-युद्ध-केलि में इन्द्र से समस्त वरों को प्राप्त कर विराजित जांबवान वही है। वह रण में धूर्जटि (शिव) से नहीं हारता। वही उक्कल (नामक कपि) है। उसके उभय पार्श्वों के शरीर की लम्बाई एक-एक योजन है। शोभा से पद्म संख्या की वानर सेना के सेवा करने पर सललित बना हुआ है सन्नादन। हे नाकारी! प्रसिद्ध रूप से वानर पितामह नाकीश से संघर्ष कर, शोभा से विजयी हुआ है। दहन (अग्नि) के द्वारा गन्धर्वकन्या में महनीय जन्म प्राप्त कर, विशाल उस द्रोण पर्वत पर शासन करते हुए, जंबूनदी तीरवर्ती हो, हज़ार करोड़ कपियों के उत्साह से सेवाएँ करने पर यह क्षगचर विजृंभित हो रहा है, इसे देखो। हे निर्जर वैरी! नील का भाई यह इन्द्रजाल नामक (कपि) समर्थ है। हज़ार करोड़ कुपित मर्कटों की सेवाएँ लेनेवाले कपिवीर क्रथन नामक (कपि) को देखो। ॥ १५५० ॥

अधिक संप्रीति से गंगातीर पर विचरण करनेवाला (तथा) शाश्वत बाहुबल वाला, चिरतर-लीला से सोत्साह शिशिराद्रि पर सदा शोभा से

पदिकोट्ल नगचरुल् बलसि तन् गौलुव । नदे चूडुमा गजुंडनुवाडु देव !
कोटिकोट्ल वेलु कोमरारु जमुनि । पाटि गोलांगूल बलमुलु गौलुव
नदे गवाक्षुंडनुनतडालमुनकु । द्रिदशारि! यौडुलु दीडुचुन्नाडु;
धवळवर्णंगुलुद्दंडविक्रमुलु । रविसन्निभुलु रणरंगभीषणुलु
विविधरूपंबुल विख्यातुलैन । प्लवगमुख्युलु दनु बदिवेलु गौलुव
नुन्न केसरि जूडु मोंप्पारु कांच । नोन्नतगिरुलकु नौडयंडु वाडु;
बहुवर्णुलै पटुभाषणध्वनुल । महि यगल्चुचु दंतमंडलि वेलुग
सिंगंपुगौदमल चेन्नगगलिंचि । पिंगळाक्षंबुल बैद्यु मेरसि १५६०
वेयुगोटुल कपुल् वेड्कतो गौलुव । बायक राम कृपारसंबंदि
तन प्राणमुलु रामधरणीश्वरुनकु । ननयंबु नीगोरु नतुलविक्रमुडु
अमरारि ! वाडे यत्यायतबलुडु । समरकर्कशुडैन शतबलि चूडु;
वीडे सुषेणुंडु वेगोट्लकपुलु । वाडिमि दनयट्टिवारु दन् गौलुव
नुन्नवाडदे चूडुमो देव ! समर । सन्नद्धुडै वेक्कसंबैन कडिमि;
बदिकोट्ल यगचरपतु लोलि गौलुव। नौदवु नाकपिवीरुडुल्कामुखुंडु;
इटु चूडुमा वीडे ऋषभुडन्वाडु! । भटमुख्युलतनिकि बदिकोटु लधिप!

शासन करनेवाला, दस करोड़ नगचरों की सेवाएं लेते हुए गज स्थित है। हे देव ! उसे देखो। हे त्रिदशारी ! करोड़-करोड़ हज़ार (की संख्या में) यम के समान शोभित वानर सेना के सेवाएँ करने पर वही गवाक्ष नामक (कपि) युद्ध के लिए ओंठ चबा रहा है। धवल वर्ण वाले, उद्दंड विक्रम वाले, रवि सन्निभ, रणरंग भीषण (तथा), विविध रूपों से विख्यात दस हज़ार प्लवग मुख्यों के सेवाएँ करने पर स्थित केसरी को देखो। शोभायमान कांचन उन्नत गिरियों का वह अधिपति है। बहुवर्ण वाले हो, पटुभाषण ध्वनियों से (तथा) महि को फोड़ देनेवाली दन्त-पंक्तियों के प्रकाशित होने पर, सिंह-शावकों की शोभा को मात कर, पिंगलाक्षों (पीतवर्ण के नेत्रों) से अधिक शोभित होकर, ।। १५६० ।।

—हज़ार करोड़ कपियों के उत्साह से सेवाएं करने पर, निरन्तर रामकृपा रस को प्राप्त कर, अपने प्राणों को राजाराम के लिए सदा समर्पित करना चाहनेवाला अतुल विक्रमशाली वही अत्यायत बल वाला (तथा) समर कर्कश शतबली है। हे अमरारी ! उसे देखो, यही सुषेण है। बल-पराक्रम में अपने समान हज़ार करोड़ कपियों के सेवाएँ करने पर, अधिक साहस से समर के लिए सन्नद्ध (तैयार) है। हे देव ! वही देखो। दस करोड़ अगचरपतियों के सुन्दरता से सेवाएँ करने पर स्थित वह कपि-वीर उल्कामुख है। इधर देखो न, यही ऋषभ नामक है। हे अधिप !

वनचरशतकोटि वलनोप्प गोलुव । दनरुनातनि जूडु दानवाधीश !
कनकाद्रिधैर्युडखंडविक्रमुडु । घनभुजस्कंधुडु गंधमादनुडु;
मोनकु वेगोट्लुगा मुय्येडुमोनलु । दनर गलिगनवाडु दधिमुखुडतडु;
१५७०
विनु मिरुवदियोक्क वेयुशंखंबु । लुनु मरिरेंडु वेल्नूरु बृंदमुलु
गल यल्ल मोन दिवाकरसूनु मूल । बल; मा वलीमुखप्रमुखुलु वेड्क
लोलय गिष्किंधलो नुंडेडु वारु; । ललि देवगंधर्वुलकु बुट्टिनारु;
कामरूपमुल संगरकौतुकमुल । भीमविक्रममुल बेंपारुवार
लनिकि सन्नद्धुलै यार्चुचुन्नारु; । कनुगोनु वारि राक्षसलोकनाथ!
अमृतंबु ब्रह्मचे नमरंग वडसि । रमरुलकंटेनु नधिकुलु चूडु
विनुतिप मैंदद्विविदुलनुवारु । विनु देव ! येकांगवीरुलु वारु
पदिवेलकोट्लु प्लवगुलु गोल्व । नुदधितीरंबुन नुन्नारु देव !
वीरुलु सुमुखुंडु विमुखुंडु ननग । घोरविक्रमुलु गन्गोनुमु लंकेश !
मृत्युवुकोडुकुलु मिक्किलिचेव । मृत्युवुकंटेनु मीडिनवारु; १५८०
मिगिलिन तेगुवतो मिति मेर लेनि । यगचरुल् दनु भृत्युलै कोलुवंग

उसके दस करोड़ मुख्य भट हैं। हे दानवाधीश ! शतकोटि वनचरों के शोभा से सेवाएँ करने पर शोभित उसे देखो। कनकाद्रि सम धैर्यशाली, अखण्ड विक्रमवाला, घन भुज-स्कन्ध वाला, वह गन्धमादन है। एक-एक छोर पर हजार करोड़ (के हिसाब) से इक्कीस छोरों की शोभा से युक्त वह दधिमुख है। ॥ १५७० ॥

सुनो, इक्कीस हज़ार शंख तथा और दो हजार सौ से युक्त बृन्द (समूह) दिवाकर-सून (सुग्रीव) के मूल बल में हैं। वे वलीमुख (वानर)-प्रमुख सोत्साह किष्किन्धा में रहनेवाले हैं, शोभा से देव-गन्धर्वो से उत्पन्न हुए हैं। कामरूपों से, संगर-कौतुक से, भीम-विक्रम से वे युद्ध के लिए सन्नद्ध होकर, सिंहनाद कर रहे हैं। हे राक्षसलोकनाथ ! उन्हें देखो। हे देव ! ब्रह्मा से अमृत को समुचित रूप से प्राप्त कर, वे अमरों की अपेक्षा अधिक (पराक्रम वाले) हैं सराहनीय मैंद (और) द्विविद एकांगवीर हैं। हे देव ! वे दस हजार करोड़ प्लवगों के सेवाएँ करने पर उदधितीर पर स्थित हैं। हे लंकेश ! सुमुख (तथा) विमुख नामक वीर (तथा) घोर विक्रम वालों को देखो। मृत्यु (यम) के पुत्र (तथा) अधिक सामर्थ्य के कारण मृत्यु से भी अधिक हैं। ॥ १५८० ॥

अधिक साहस से अनन्त अगचरों के भृत्य हो सेवाएँ करने पर, उदधि

नुन्नवाडदे चूडु मुदधि लंघिंचि । निन्नु नीबलमुनु नीवारि गौनक
चतुर्देंचि मनमुलो जानकि गांचि । वनमेल्ल वेंरिकि नीवरसुतु जंपि
लंक भस्ममु सेसि लंकिणि नोंचि । जंकेंतो ग्रम्मर जन्नवाडतडु;
आ वायुसूनुंडु हनुमंतुडगुट । नीवुनु नेंरुंगुदु निर्जराराति !
विनु चित्रमोक्कटि; वीडु बाल्यमुन । निनमंडलं बुदयिपंग जूचि
पेरिगिन याकटि पेल्लुन दानि । बरिकिंचि फलमनि पट्टंग दिविरि
वेगंबुतो मूडु वेल योजनमु । लागगनंबुनकपुडु बिट्टेगसि
यंतटनुंडि पूर्वाद्रिपै बडियें । नेंतयु रयमुन; नीवानरुनकु
हनुवु भग्नंबय्यें; नंतनुंडियुनु । हनुमंतुडानुनाममय्यें नीतनिकि;
१५९०

वीरलंदरुनु बृथ्वीतलंबेल्ल । वारक यौक्किकत वडि गेल्चुवार;
लिट्टि कपींद्रु लनेकुलु देव ! । येंट्टनि संख्य दानेंन्नंग वच्चु ?"
ननि सारणुडु वल्क नसुरेंद्रुजूचि । सुनिशितमतियैन शुकु डर्थि
बलिकें: १५९३

शुकुडु श्रीरामुनि तेजोविशेषमुलदेलपुट

"वारल कैल्ल जीवनमैनयट्टि । यारामु जेप्पेद नसुरेश ! विनुमु:

को लांघकर, तुम्हें और तुम्हारी सेना की परवाह किए बिना आकर, वन में जानकी के दर्शन कर, समस्त वन को उखाड़कर, तुम्हारे श्रेष्ठ सुत का वध कर, लंका को भस्म कर, लंकिणि का दमन कर, त्रास देकर लौट जानेवाला (साहसी) है, उसे देखो। हे निर्जरारातीं ! उस वायुपुत्र का हनुमान होना तुम भी जानते हो। सुनो, एक विचित्र (बात) है। यह बाल्य में उदित होते इनमण्डल (सूर्य) को देख, क्षुधा के आधिक्य के कारण, उसे फल समझ, पकड़ने की कोशिश कर, वेग से तीन हज़ार योजन तक आकाश में अतिशयता से उड़कर, वहाँ से अतिशीघ्रता से पूर्वाद्रि पर गिर पड़ा। (तब) इस वानर का हनु (ठुड्ढी) टूट गया। तब से इसका नाम हनुमान हो गया। ॥ १५९० ॥

ये सब समस्त पृथ्वी-तल को अतिशीघ्रता से जीत लेनेवाले हैं। हे देव ! ऐसे कपीन्द्र अनेक हैं। इनकी संख्या को कैसे गिन सकें ?" ऐसा सारण के कहने पर, असुरेन्द्र को देखकर, सुनिशितमति से शुक चाहकर बोला— ॥ १५९३ ॥

शुक का श्रीराम का तेजोविशेष बताना

—"हे असुरेश ! उन सबके लिए जीवन (प्राण) बने उस श्रीराम के बारे

नयरीति हरिनील रत्नप्रभाति । मेयिचाय नेंतयु मेऽसिनवाड्डु
गमलंबुलनु बोलु कन्नुलवाड्डु । विमल नीतिस्थिति वेलसिनवाड्डु
आजानुबाहुंड्डु नखिलेश्वरुंड्डु । राजतेजोनिधि रघुकुलोत्तमुड्डु
सत्यंबुलोपलि सारमौवाड्डु । नित्यधर्मबुन नेगडिनवाड्डु
शस्त्रास्त्र विद्य विशारदुंडखिल । शास्त्रज्ञु डुरुकीर्तिसम्पदवाड्डु
दपनुनिनैननु दम तात यनक । तपियिंपजेयु प्रतापंबुवाड्डु; १६००
जक्काड्डु नभमैन शरजालमुलनु; । व्रक्कलुगा जेयु वसुमतिनैनं;
नलिगिन नातनि यलुक वेंरुलकु । दलपंग मृत्युवु दशकंठ ! विनुमु;
तेगुव नीवा सीत देच्चिचति गान । जगतीशु डिब्भंगि जनुदेंचे ननिकि
वरशरणागत वज्रपंजरुड्डु । बिरुदुल केल्लनु बिरुदैनवाड्डु
शरणन्न गानि येचंदंबुलंदु । दौरकोन्न यलुककु दुदि लेनिवाड्डु
मिक्किलियैन नीमीदिकोपमुन । नवकन्नुलंदेर्रे यमरिनवाड्डु
मूड्डुलोकमुल निम्मुल नेलुवाड्डु । वाडे पो रामुंड्डु वनजाप्तकुलुड्डु;
वारक शुद्धसुवर्णवर्णांगु । डारामुवलपट नट नुन्नवाड्डु
ब्रलमुन नीरेड्डुजगमुलनैन । नलुकतो निर्जिंचु नतिशक्तिवाड्डु

में कहूँगा। सुनो, नयरीति से हरिनील रत्न प्रभा के सम शरीरवर्ण से अति प्रकाशित है (वह)। कमल के समान नेत्रोंवाला है, विमल नीति स्थिति से विलसित है, आजानुबाहुओं वाला है, अखिलेश्वर है, रघुकुलोत्तम राजतेज का निधि है। सत्य के भीतर का सार है वह, नित्यधर्म से शोभित है। शस्त्र-अस्त्र विद्या में विशारद है, अखिल शास्त्रज्ञ है, उरुकीर्ति-सम्पत्ति से युक्त है। तपन (सूर्य) को भी अपना तात (दादा) न मानकर तप्त करनेवाले प्रताप से युक्त है। ॥ १६०० ॥

शरजाल से नभ को टुकड़े-टुकड़े कर सकता है, वसुमति के भी टुकड़े कर सकता है। हे दशकण्ठ ! सुनो, क्रुद्ध होने पर उसका क्रोध, सोचें तो, शत्रुओं के लिए मृत्यु ही है। साहस कर तुम उस सीता को लाए हो, इसीलिए जगदीश इस प्रकार युद्ध करने के लिए आया है। शरणागतों के लिए वह वर वज्रपंजर है, समस्त बिरुदों के लिए बिरुद है। शरणागति के अतिरिक्त और किसी प्रकार से कम न होनेवाला अनन्त क्रोधवाला है। तुम पर अधिक क्रोध के कारण उन आँखों में लालिमा से युक्त है तीनों लोकों पर प्रेम से शासन करनेवाला है। वही तो राम, वनजाप्तकुल वाला है। नित्य शुद्ध सुवर्ण वर्ण-अंग (शरीर) वाला है वह जो राम के दाहिनी ओर स्थित है। मारे हठ के चौदह जगों को भी क्रोध

आरामुनकु ब्राणमैनट्टिवाडु । आरामुतम्मु डुदग्रविक्रमुडु १६१०
भाविंप नस्मेंर्चि पट्टिनवाडु । देव ! यालक्ष्मणदेवर जूडु;
मलुकमै तिन्नु नुगाजिलो गेलिचि । ब्रलमोंप्प लंक निश्शंक नेलुटकु
बट्टंबु रामभूपालुनिचेत । गट्टिचुकोंनि प्रीति ग्रालुचुन्नाडु
महनीयवर धर्म मार्गंबुवाडु । महित नीतिस्थिति मरगिनवाडु
आविभीषणु जूडु मसुराधिनाथ ! । भूवरु वेंनुक नेपुननुन्नवाडु
आरामुतम्मुनि याविभीषणुनि । चेरुव नव्वल जेरियुन्नाडु
मानगुणाधीन मति नोंप्पुवाडु । पूनि किष्किंध नेंप्पुडु नेलुवाडु
चिरकपिराज्याभिषेचनहेतु । कर हेममालिकाकलितवक्षुंडे
गुरुभुजुडत्यंत घोर विक्रमुडु । सुरवैरि ! चूचिते सुग्रीवुडतडु;
वीनिकि गल सेन विवरंबु विनुमु । दानवनाथ ! चित्तंबुन दैलियः
१६२०
संख्य वेगोटुल चन नूरुवेल । संख्यलु मरि महाशंखु नाबरगु;
नवि लक्ष गूड महाबृंद संख्य; । यवि लक्षगूडिन नगु पद्म संख्य;
यवि लक्षगूडिन नगु महापद्म संख्य; । यवि लक्ष गूडिन नगु खर्वगणन;

से जीत सकने की अतिशक्ति से युक्त है। वह उस राम के लिए प्राण-सम है। राम का वह अनुज उदग्र विक्रम वाला है। ॥ १६१० ॥

सोचने पर बाण का सन्धान किए हुए हैं।' हे देव ! उस प्रभु लक्ष्मण को देखो। क्रोध के मारे तुम्हें उग्र-युद्ध में जीतकर, हठ से लंका पर निस्सन्देह शासन करने के लिए रामभूपाल से पट्टाभिषिक्त होकर, प्रेम से विलसित होनेवाले, महनीय-वर-धर्म-मार्ग वाले (तथा) महित-नीति-स्थिति से विलसित, उस विभीषण को देखो। हे असुराधिनाथ ! वह भूवर (राजाराम) के पीछे शोभा से वैठा है। उस राम के अनुज (तथा) उस विभीषण के पास, उस ओर उपस्थित है, मानगुणाधीन-मति वाला (तथा) सप्रयत्न सदा किष्किन्धा पर शासन करनेवाला, चिरकपि-राज्य के अभिषेक के कारणभूत हेम मालिका से कलित वक्ष वाला, गुरु (बड़ी) भुजाओं वाला, अत्यन्त घोर विक्रम वाला, सुग्रीव है। हे सुरवैरी ! देखा है न उसे। हे दानवनाथ ! चित्त (मन) को मालूम हो जाए (इस प्रकार) इसकी सेना के विवरण को सुनो, ॥ १६२० ॥

—संख्याओं में हज़ार करोड़ों के बाद लाख करोड़ की संख्या महाशंख कहलाती है। वे एक लाख हों तो उस संख्या का नाम महावृन्द है। वे एक लाख हों तो पद्म कहलाती है। वे एक लाख मिलकर महापद्म कहलाते हैं। वे एक लाख हों तो गणना में खर्व होता है।

यवि लक्षगूडिननगु महाखर्वं। मवि लव गूडिन नगु समुद्रंबु;
अवि लक्षगूड महसमुद्रंबु; । नवि लक्षतो महदाख्यमै परगु;
नवि कोटि वो वालियनुजुनि बलमु; । विवरिंचि चूडुमु विशदंबु गाग;
निदि तुद मोदलनि यॆन्नंगरादु; । चदुरुदनंबुन संख्य देरादु;
कावुन रामुतो गदिसि पोराड । रावण! रादु; दुर्वार माबलमु"
अनि शुकुं डॆरिंगिप नारावणुंडु । घनमैन कपिसेन गलयंग जूचि
तनलोन बडबाग्नि दरिकॊनुचुंड । दनरारु बाधिचंदंबुनु नपुडु १६३०

वॆरचियु दनलोनि वेरपडगिंचि । वॆरवनिगति गोपविवशुडैपलिके:
"मंत्रि येलिकचित्तमार्गंबु विडिचि । मंत्रंबु जॆप्पुने मनसॆल्लविरुग?
नेतॆरंगॆरुगक मैदिरि नायॆदुर । नीतॆरंगुन बल्कुटिदि मीकु दगुनॆ?"
यनवुडु दललॆत्त कच्चोटु वासि । चनिरि भीतिलि शुकसारणुलंत;
जनिन पिम्मट नाप्तसचिवुलु दानु । दनुजाधिनाथुडॆन्तयुनु र्जितिंचि
वारि वीड्कॊल्पि दुर्वारुडै वैर । मार विद्युज्जिह्वुडनुवानि बिलिचि

वे एक लाख हों तो महाखर्व होता है। वे एक लाख हो जाएँ तो समुद्र होता है। वे लाख हों तो महासमुद्र होता है। वे एक लाख हों तो महत् नाम होता है। ऐसे महत् (संख्या में) करोड़ (कपियों) का है वालि के अनुज का बल (सेना)। विवरण कर, विशद हो जाए, (ऐसा) देख लो। यह अन्त है, यह आदि है, ऐसा नहीं कह सकते (अनन्त सेना है)। निपुणता से भी (किसी भी संख्या से) गिनती नहीं कर सकते। हे रावण! अतः राम का सामना कर लड़ नहीं सकते। वह सेना दुर्वार है।" ऐसा शुक के बताने पर, उस रावण ने कपिसेना को समग्रता से देख, अपने में बलनेवाली बाडबाग्नि से युक्त हो शोभित समुद्र के समान ॥ १६३० ॥

—तब भीत होकर भी, अपने भीतर के भय का दमन कर, मानों भीत न हुआ हो, ऐसा कोपविवश हो, कहा—"स्वामी के चित्तमार्ग (मानसिक प्रवृत्ति) को छोड़ (उसके विरुद्ध), मन टूट जाए, ऐसा भी कोई मन्त्री मन्त्रणा देता है क्या? कोई भी पद्धति न जानकर, मेरे समक्ष इस प्रकार कहना क्या आपके लिए उचित है?" ऐसा कहने पर तब सिर न उठाकर, भीत हो, उस स्थान को छोड़ शुक-सारण चले गए। (उनके) जाने के बाद आप्त सचिवों के साथ दानवनाथ ने अधिक चिन्तन कर, उन्हें विदा कर, दुर्वार हो, वैर-भाव को ले, विद्युजिह्व नामक (राक्षस) को बुलाकर, (कहा)—

रामुनि मायशिरस्सुजूपि रावणुडु सीतनु वेंद्रपिंचुट

"रामुनि धनुवु शिरंबुनु बोले । नीमाय नतिवेग निर्मिंचि तेम्म"
यनवुडु वाडुनु नप्पुड पोयि । तन नेर्पुमीऱ नाधनुवुनु शिरमु
नतिवेग निर्मिंचि यर्थि देच्चुटयु । नतनिकि मेच्चु प्रियंबुन नोसगि
सुरुचिरमैन यशोकवनमुन ।करिगि यादशकंठु डवनिज गनियें;
१६४०
"वेल्लगु नीवग वेंट्टने कंटि । तल्लि! न"न्ननि वसुंधर दूरुकरणि
दल वंचुकोनि विन्नदनमुन दूलि । सोलवक धात्रि जूचुचुनुन्नदानि
नोडल जित्तमुन बेंपोंदु तापाग्नि । नुडिकि पोंगुंचु वेलिकुरुकुचुनुन्न
राक्षसुपै रोषरसधार लनग । नक्षीणबाष्पधारावळिदानि
"बुत्रि ! यीदुरवस्थ बोंदितें" यनुचु । धात्रि दानुनु बरितापंबु नोंदि
यालिंगनमु सेसिनट्टिचंदमुन । धूलि गप्पिन मेनितोनुन्नदानि
"रावण ! निन्नु नीराक्षसकोटि । नेविधंबुन द्रुंप केलपोनित्तु ?"
ननि वानि क्रूरकर्माधि दैवंबु । गोनकोन्नकैवडि गूर्चुन्नदानि

राम के माया शिर को दिखाकर रावण का सीता को डराना

"अपनी माया से अतिशीघ्र राम के धनु और शिर के समान (धनु और शिर का) निर्माण कर लाओ।" ऐसा कहने पर वह भी तभी जाकर, अपनी निपुणता के आधिक्य से उस (प्रकार के) धनुष और शिर का अतिशीघ्र निर्माण कर, प्रेम से ले आया। उसे प्रेम से पुरस्कृत कर सुरुचिर अशोकवन को जाकर, उस दशकण्ठ ने अवनिजा (सीता) को देखा। ॥ १६४० ॥

सिर झुकाकर, विवर्णता से लड़खड़ाकर, निरन्तर मानों यह कहते कि 'हे माता ! मुझे इस प्रकार व्यथित होते (कैसे) देख रही हो ?" (सीता) धरती को देख रही थी, वह अक्षीण (बहुत अधिक) बाष्प (अश्रु) धारावली से युक्त थी। वह अश्रु-प्रवाह ऐसा लग रहा था मानों शरीर और चित्त में वर्धित होनेवाली तापाग्नि के खौलकर, उबलकर, बाहर निकल पड़ने वाली राक्षस के प्रति-रोषरस की धाराएँ हैं। वह धूल से आवृत शरीर वाली थी। मानों धरती स्वयं भी परितप्त होकर यह कहते कि 'हे पुत्री ! (हाय) कैसी दुरवस्था को प्राप्त हुई हो ?' उसका आलिंगन कर रही हो। वह ऐसी बैठी थी, मानों उसका (रावण) का क्रूरकर्मों का अधिदेवता यह कहते कि "हे रावण ! तुम्हें और तुम्हारी राक्षसकोटि को किसी भी प्रकार नष्ट किए बिना कैसे जाने

नमरारुलनु नीरसावनीजमुल । दमर्किचि ता विटताटंबुसेय
ननि दरिकौनु विलयानिलुपगिदि ।दनस निट्टूर्पुलु दरुचैनदानि१६५०
गनि चेंड दलचि या कष्टदानवुडु । तनदिक्कु जूडनि धरणिज कनियें:
"वेरवु चालनि यविवेकि दानवुल । खरधूषणादुल खंडिचें ननुचु
जनकनंदन ! रामु शौर्यंबु नम्मि । ननु गणुतिपवेन्नडु जित्तमुननु:
नसमुन गपुलतो नत डब्धि दाटि । यसमुडै यासुवेलाद्रिपै नुंडि
यलसि निद्रिपंग, नगचरसेन । नलमि यीरात्रि प्रहस्तुडन्वाडु
नाकूर्चुबंटु चूर्णबुगा जेसि । काकुत्स्थुनुरुकार्मुकंबुनु शिरमु
गौनिवच्चे; रामुनि कूर्मितम्मुडुनु। वनचराधिपुडुनु वगचुचुनुंड
दप्पिचुकौनि पारॆ दा विभीषणुडु; । चुप्पनातिनि मुक्कुसुरियचेगोयु
नापापमुन वारॆ नपुडु नीमरदि; । वापोवुचुनु जांबवंतुडु परचे;
नूरक यंगदुंडूडंग वारॆ; । दारितप्पुन बोयॆ दारुंडु भीति;
१६६०
नीलुंडु शरभुंडु निलिचि पोराडि । व्रालिरि सेनुलु व्रय्यलै जगति;

दूंगा।" सयत्न बैठा हो। अमरारी राक्षस (रूपी) नीरस (शुष्क) अवनीजों (वृक्षों) को ससंभ्रम तितर-बितर करने के लिए प्रयत्नशील विलय (प्रलयकाल के)-अनिल के समान शोभित दीर्घ नि:श्वासों से (सीता) युक्त थी। ॥ १६५० ॥

(ऐसी सीता को) देख, नष्ट होना चाहकर, उस दुष्ट राक्षस ने अपनी ओर न देखनेवाली धरणिजा से कहा—"हे जनकनन्दने ! उपायहीन (तथा) अविवेकी दानवों (तथा) खरदूषणादियों का खण्डन (वध) किया, ऐसा (सोच) राम के शौर्य पर विश्वास कर, मन में मेरी गिनती तक नहीं करती हो। दर्प के साथ, कपियों के साथ वह (राम) अब्धि पार कर, असमान हो, उस सुवेलाद्रि पर रहकर, थककर सो रहा था। (तब) अगचर सेनाओं का दमन कर, इस रात को प्रहस्त नामक (राक्षस) जो मेरा प्रिय सेवक है, (कपि सेना को) चूर्णकर, काकुत्स्थ (राम) का उरु-कार्मुक (बड़े धनुष) तथा शिर ले आया। राम के लाड़ले अनुज तथा वनचराधिप के व्यथित होते समय, बचकर विभीषण भाग गया। शूर्पणखा की नाक को छुरी से काट देने के पाप के कारण तुम्हारा देवर भी भाग गया। रोदन करते हुए जांबवान भाग गया। अंगद यूँही (विरोध किए बिना) (लंगोट के) छूट जाने पर भाग गया। मारे भय के तार रास्ता भटक कर भागा। ॥ १६६० ॥

नील और शरभ डटकर लड़े और शरीर के टुकड़े होने पर धरती

बोक निलिचि समीरपुत्रुंडु वडियें । मोकाळ्ळु विडिगि रामुनि बायलेक
नेत्तुरु ग्रक्कुचु नेगे सुषेणु; । डुत्तलंबुन धूम्रुडुदधिलो बडियें;
जेयेत्ति म्रोक्क गूलिचरि दधिमुखुनि;। मायचे गेसरि मयि दाचिपोयें;
गुमुदुंडु तल देगगोट्टिन बडियें; । समसें मैंदुडु; वीगि चनियेनु नलुडु;
पनसुडेड्रिगि दब्बर वच्चे ननुचु । बनसचेट्टुनु बोलि भ्रमसि ता निलिचें;
नालंबुलोपल नखिलवीरुलुनु । गूलुट ता जूचि कूडिनभीति
जिव्वजालिंचि वच्चिनकपुलेल्ल । नव्वंग बरुगेत्ते नलिनाप्तसुतुडु;
सेतुवु जूड वच्चिन कपुलेल्ल । भीतिचे निल्लांड्र बिड्डुल दलचि
मुगिसे कार्यंबनि मोदलि टेंकुलकु । दग गोट्ट बारिरि दैत्युलु दरुम; १६७०
गान गंजास्य! राघवुनास विडिचि । ना नारुलकु नाकु नाथवै युंडु;
नायिंट दासीजनमु लैदुवेलु । पायक मणिमयाभरणमुल् दाल्चि
यच्चरलुन्नवारतिव ! नीसेव । किच्चेद; नीमनसिम्मु ना किपुडु:
विरिदोटलो गल्पवृक्षंबु लैदु । तरुणि! नीमुडिपुव्वुदंडलकित्तु;
नमरभूधररोहणाचल मणुलु । रमणि! नी कित्तु, नन् रतुल देलिपु;

पर गिर गए। राम को छोड़ न जा सके, खड़े रहकर, समीरपुत्र घुटनों के टूट जाने पर गिर गया। सुषेण रक्त उगलता हुआ चला गया। मारे व्याकुलता के धूम्र उदधि (समुद्र) में गिर गया। हाथ उठाकर प्रणाम करने पर भी दधिमुख को (राक्षसों ने) गिरा दिया। केसरी माया से शरीर छिपाकर चला गया। सिर काट गिराने से कुमुद गिर गया। मैंद मर गया, नल हिल-डुलकर चला (समाप्त हो) गया। आफ़त आई यह जानकर पनस पनसवृक्ष के समान हो (राक्षसों को) भ्रम में डालते रह गया। युद्ध में समस्त वीरों के गिरते स्वयं देख, भीतियुक्त हो, ॥१६७०॥ —युद्ध करना छोड़कर, (साथ) आए समस्त कपियों के हँसने पर नलिनाप्तसुत (सुग्रीव) भाग गया। सेतु को देखने आए समस्त कपि, मारे भय के पत्नी-बच्चों का स्मरण कर, कार्य समाप्त हो गया यह जानकर, सिर पर मार कर, दैत्यों का पीछा करने पर भाग गए। अतः हे कंजास्या (कमलमुखी)! राघव की आशा छोड़कर मेरी नारियों के लिए तथा मेरे लिए नाथ (अधीश्वरी) बनकर रहो। हे नारी! मेरे घर में निरन्तर मणिमय आभरण धारण कर पाँच हजार अप्सराएँ दासीजन बनकर हैं। उन्हें तुम्हारी सेवा में दूँगा। तुम अब मुझे अपना मन दे दो। हे तरुणी! फुलवाड़ी के पाँच कल्पवृक्षों को तुम्हारे जूड़े की पुष्पमालाओं के लिए दे

मामीद गामधेन्वादिधेनुवुल । भामिनि! नीयिंटि पाडि के नित्तु;
नाबलंबेल्ल नीयड्गुलु गोलिचि । योवाल ! यिटमीद नुप्पोंगगतुं"
ननुचु विद्युज्जिह्वु डनुवानि बिलिचि । वनजाक्षिमुंदर वेंव बंचुटयु
"दनुमध्य! यिदे रामुतलयुनु विल्लु" । ननि यट्टुवैचि वा डरिगे
नव्वुचुनु;
दलकोंनि रामभूतलपति वच्चि । तलरु नय्याहव-तलमुन नसुर
१६८०
तल द्रेंचुननि वियत्तलवाणि वीचें । 'दलककु; नी विभु तलचोप्पुगादु;
साधिचु श्रीरामचंद्रुडु नेडु । नी धर्मगुणमुतो निक' नन् माड्कि
दरलाक्षि यातल तप्पक चूचि । करमोप्पु रामुनि कन्नुलु मोमु
दलकट्टु मौळिरत्नप्रभावळियु । बलुवरुसयु गर्णभातियु मोवि
तलपोसि रामुनि तलयका दलचि । बलुमूर्छ पालपडि पडियें धरित्रि
'निदि बोंकु, नीपति केमियु गादु; । सुदति! नी कीमाय चूडगा' दनुचु
दन युरस्थलिकि नातन्वंगि दिविचि ।कोंनियेंनो काक याकुंभिनि यनग;

दूंगा । हे रमणी ! सुन्दरता से भूधर-रोहणाचल की मणियाँ तुम्हें दे दूंगा । मुझे रतियों से प्रसन्न करो । उसके बाद हे भामिनी ! कामधेनु आदि धेनुओं को तुम्हारे घर दूध आदि (दुग्ध विकार) के लिए दे दूंगा । हे बाला ! अब आगे मेरा समस्त बल (सेना, परिवार) तुम्हारे चरणों की सेवा करे, ऐसी व्यवस्था करूँगा ।" (ऐसा) कहते हुए विद्युज्जिह्व नामक (राक्षस को) बुलाकर, वनजाक्षी के समक्ष डालने का आदेश देने पर, वह यह कहते कि 'हे तनुमध्ये ! ये ही राम के सिर तथा धनुष हैं ।' उधर डालकर हँसते हुए चला गया । लगकर राम-भूतलपति (राजा) आकर, शोभायमान आहवतल (युद्धभूमि) में असुर का सिर काट देगा, ॥ १६८० ॥

—ऐसा कहते वियत्तलवाणी (आकाशवाणी) हुई मानों यह कह रही हो कि "विचलित मत बनो । यह तुम्हारे विभु के सिर का ढंग नहीं है । अब आगे तुम्हारे धर्मगुण के कारण श्रीरामचन्द्र आज तुम्हें जीत ले जाएँगे ।' (फिर भी) तरलाक्षी (चंचलाक्षी, सीता) ने उस सिर को अवश्य देखकर, अधिक सुन्दर राम की आँखें, मुख, किरीट, मौलि-रत्न की प्रभा का समूह, दन्त-पंक्ति, कर्ण-सौंदर्य, अधरों का स्मरण कर, (उसे) राम का ही सिर मानकर, अधिक मूर्छित हो धरती पर गिर पड़ी । मानों कुंभिनी (धरती) ने उस तन्वंगी (सीता) को अपने उरः स्थल पर, यह कहते कि 'हे नारी ! यह झूठ है, तुम्हारे पति को कुछ भी (हानि) नहीं होगी । इस माया को तुम देख नहीं सकती हो' खींच लिया हो । गिरकर,

बडि यंत दनलोन बडतुक देलिसि । यडरेंडु शोकाग्नि नलयुचु वलिकें;
"गटकटा! कैकेयि! कलहंबु वन्नि । यिटु द्रुंगजेसिते यिक्ष्वाकुकुलमु!
नीराघवेश्वरुंडेंगेमि सेसें । नूरक यडवुल नुंडंग बनुप?" १६९०
"वननिधि बंधिचि वच्चिचति; नन्नु । गौनिपोयेंदनि येनु गोर्कि दीपिंप
बेंद्द नम्मितिगदे पृथिवीश! निन्नु! । निट्टेंस नादैवमिट्टु सेयु टेंरुंग;
नाकुनु नीकु ब्राणमु लोकटगुट । काकुत्स्थ! यिटु बोंकुगा जेय दगुनें?
पतिकंटें मुंदर ब्राणमुल् विडुचु । नतिव गानैतिने? यर्ककुलेश!
यरुगुदु गाकेमि; यडरु नीकडकु । नरनाथ! पुत्तेंतु नादुप्राणमुलु;
वसुध नातल्लि; ना वरुडवु नीवु; । वसुध गौगिट जेर्प वाविये नीकु?
जनकुचे नन्नग्निसाक्षि जेपट्टि । कोंनिवच्चि यिटु पायगूडुने नीकु?
नेंट्टोंको राम! नी विट्लुन्न नादु । कट्टिडिप्राणमुल् ग्रागवय्येडिनि;
ग्रागनि यप्पुडे काकुत्स्थ! नीवु । ग्रागुट निक्कंबु गाकुंडु" ननुचु
नीविधंबुन सीत येड्चुचुनुंड । दौवारिकुलु वच्चि दनुजेशु गांचि
१७००

इतने में अपने में होश में आकर, बढ़ती शोकाग्नि के कारण व्यथित होते हुए, उस स्त्री (सीता) ने कहा—"हायहाय! हे कैकेयी! कलह (का जाल) फैलाकर इस प्रकार इक्ष्वाकु वंश का नाश कर दिया है न! जंगलों में रहने के लिए भेजने के लिए इस राघवेश्वर ने (तुम्हारा) क्या बिगाड़ा था?" ॥ १६९० ॥

—"वननिधि (समुद्र) को बाँधकर आये हो। कामना के दीप्त होने पर हे पृथ्वीश! मैं यह बड़ा विश्वास लेकर (बैठी) थी कि आप मुझे ले जाएँगे। हाय, यह नहीं जानती थी कि भगवान मेरी ऐसी स्थिति करेंगे। हे काकुत्स्थ! तुम्हारे और मेरे प्राण एक हैं न! उसे आज यों मिथ्या क्यों कर दिया? हे अर्ककुलेश! पति से पहले प्राण त्याग कर देनेवाली स्त्री नहीं बन सकी न! जाओगे तो क्या हुआ? हे नरनाथ! अतिशय शोभित तुम्हारे पास अपने प्राणों को भेज दूँगी। वसुधा मेरी माता है, तुम मेरे वर (पति) हो। वसुधा को गले से लगाना क्या तुम्हारे लिए न्यायसंगत है? जनक के यहाँ अग्नि को साक्षी बनाकर, पाणिग्रहण कर, ले आकर, इस प्रकार बिछुड़ना तुम्हें उचित है? हाय राम! तुम्हारे इस प्रकार रहते भी मेरे कठोर प्राण तप्त नहीं हो रहे हैं। जब (मेरे प्राण) उत्तप्त नहीं होते तब हे काकुत्स्थ! तुम्हारा तप्त होना सच न हो।' (ऐसा) कहते इस प्रकार सीता के रोते रहते समय द्वारपाल आकर दनुजेश को देखकर, ॥ १७०० ॥

"देव! कार्यंबु लेंतेनि बुट्टुटयु। नी वरमंत्रुलु निनु सभास्थलिकि
नरुगुदेंडनि प्रहस्तादुलु वच्चि। तरमिडि युन्नारु द्वारदेशमुन"
ननि विन्नविंचिन नारावणुंडु। चनियें शीघ्रंबुन सभकुनत्तरिनि;
दनुजुंडु सनग ना तलयुनु विल्लु। विन विस्मयंबुग वेंस मायमय्यें
ना रावणुनि लक्ष्मि यंतलोपलने। वोरन मायमै पोवुनन्नट्टु;
लिदे वच्चें राघवुंडेत्तिपै ननुचु। द्रिदशारि येंतयु धीरुडै कडगि
वेगुल वारिचे विन्न वार्तलकु। वेग निस्साणंबु व्रेयंग वनिचि
तन सेन गूर्प नद्दलवारि बंनिचें; । जनकनंदन नंत सरम वीक्षिंचि
"येल मायम्म! नी विट्टु प्रलापिंप?। वोलवीसाटलु, बोंकुगा दलपु;
वनित! नीमुंदर वैचिन शिरमु। दनुजुनि मायगा दलपोय वलदे?
१७१०

वनजाक्षि! यसुर दुर्वाक्यंबुलेल्ल। विनि येनु बोयिति वेंनुकने यरय;
नावार्त विनु; रामुडनि केत्तें ननुचु। देवारि येंतयु दिरुगुडुपडियें:
नदें विनु निस्साणहननघोषंबु; । नदें विनुमा राक्षसावळियुग्र
रथमुल म्रोतयु; रथिकसारथुल। पृथुलभाषणमुलु पेल्लुगा म्रोसें;

—बोले, "हे देव! अत्यावश्यक कार्यों के उत्पन्न होने से तुम्हारे वरमन्त्रियों ने तुम्हें सभास्थल में बुलाया है। (यह समाचार लेकर) प्रहस्त आदि आकर, शीघ्रता से द्वारदेश पर खड़े हैं।" ऐसा निवेदन करने पर, उस अवसर पर वह रावण शीघ्र सभा में गया। दनुज (रावण) के चले जाने पर वह सिर और धनुष झट विस्मयप्रद रूप से अदृश्य हो गए मानों उस रावण की लक्ष्मी (ऐश्वर्य) अनतिकाल में शीघ्र (इसी प्रकार) अदृश्य हो जाएगी। यह आया, राघव चढ़ आया है, यह कहते हुए गुप्तचरों द्वारा सुने समाचारों के कारण त्रिदशारी (रावण) ने अधिक धीर होकर, सप्रयत्न झट निस्साण बजाने के लिए भेजकर, वेत्रधरों को अपनी सेना एकत्र करने भेजा। तब जनकनन्दना को देख सरमा बोली—"हे मेरी मैया! तुम्हें इस प्रकार विलाप करना क्यों? ये बातें उचित नहीं हैं, (उन्हें) असत्य मान लो। हे वनिते! तुम्हारे समक्ष जो सिर डाला गया, (उसे) दनुज की माया नहीं समझनी चाहिए? हे वनजाक्षी! असुर के समस्त दुर्वाक्य सुन, मैं पता लगाने पीछे गई थी, ॥ १७१० ॥

—वह समाचार सुनो। राम चढ़ आया है, यह जानकर देवारी अत्यन्त विचलित हो उठा है। वही सुनो, निस्साण-हनन (बजाने का) घोष। वही सुनो, राक्षसावली के उग्र रथों की ध्वनियाँ। रथिक और सारथियों के पृथुल (अधिक)-भाषण (संभाषण) अत्यधिक मुखरित हो रहे हैं।

नटु गान रामुन गापद लेदु; । कुटिलकुंतुल! नीवु गुंदंग वलव"
दनि चेप्पुचो लंक यगल नार्चुचुनु । वनचरसेनलु वच्चुट सूचि
यंतरंगमुन बिट्टदरि रावणुडु । चिंतिचि मंत्रुल जेन्चेर बिलिचि
"यदे राघवुंडेत्तेननिकि; मी रिपुडु । विदित विक्रमशक्ति वेगंबे पोयि
मनुजुल निद्दरु मर्डियिंचि रंडु; । वनचरसेनल वधियिंचु डोलि;
नरुगुडु; लें" डन्न नारावणुनकु । वरनीतिमति माल्यवंतु
डिट्लनियें: १७२०

रावणुनिकि माल्यवंतुनि हितोपदेशमु

"नुचितकालंबुन नोप्पुनु संधिः । युचितकालंबुन नोप्पु वैरंबु;
गान नयोचितकार्यंबु सेयु । वानिकि राज्यंबु वर्धिल्लुचुंडु;
नधमुतो विग्रह, मधिकुतो संधि । बुधुल मतंबु नेप्पुडु सेयुटोप्पु;
वलवदु; मनकंटे वनजाप्तकुलुडु । बलवंतुडगुवाडु बलवैरि-वैरि !
दैवकार्यंबुगा धर बुट्टिनाडु; । दैवबलंबु नातनियंदे कलदु;
आरय धर्मात्मुडनि चेप्पनेल ? । वारक ऋषुल दीवनलु गोन्नाडु;

अतः राम को कोई विपत्ति नहीं है। हे कुटिलकुंतले ! तुम्हें चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं है।" ऐसा (सरमा के) कहते समय, लंका फट जाए ऐसा सिंहनाद करते हुए, वनचर सेनाओं को आते देख, रावण ने अन्तरंग में अधिक भीत होकर, चिंतित हो, मन्त्रियों को शीघ्र बुलाकर (कहा)— "वही राघव युद्ध के लिए चढ़ आया है। तुम लोग अब विदित (प्रकट)-विक्रमशक्ति से शीघ्र ही जाकर (उन) दोनों मनुजों का वध कर आओ। क्रम से वनचर-सेनाओं का वध करो। जाओ, उठो।" कहने पर उस रावण से वर नीतिमति वाला माल्यवान यों बोला— ॥ १७२० ॥

रावण को माल्यवान का हितोपदेश

—"उचित समय में सन्धि (कर लेना) शोभा देता है, उचित समय में वैर शोभा देता है। अतः नय (नीति)-उचित कार्य करनेवाले के राज्य की वृद्धि होती रहती है। अधम (व्यक्ति) से विग्रह और अधिक (बलवान) से सन्धि, बुधजनों के मत से, समुचित है। हे बलवैरि (इन्द्र-वैरी) ! हमारी अपेक्षा वनजाप्तकुल वाला बलवान् है। अतः (विग्रह) नहीं चाहिए। (वह) दैवकार्य के रूप में धरा पर उत्पन्न हुआ है, दैवबल उसी में है। सोच-विचार कर, उसे धर्मात्मा क्यों (न) कहें ? सतत ऋषियों के आशीर्वाद प्राप्त किये हैं। सुरों को पीड़ित कर, भूसुरों का मर्दन कर,

सुरुल बाधिंचि भूसुरुल मर्दिंचि। युरुपापबुद्धिवै युंड्डुवीवु;
गेलुपु धर्ममुदेस गोल्कोनु गानि। यिल नधर्ममुदेस नेल वर्तिंचु ?
नक्कमलजुचेत नट्टु नाडु वरमु। तविकनवारिचेतनु जावकुंड
बडसिति गानि यिब्भंगि नीमीद।नडतेंचु नरुल वानरुलनु गेलुव १७३०
बडमवु नी; वेन्नि भंगुल नैन। जेंडुट तथ्यमु वारिचेतनु नीवु;
दानि कंतटिकि ब्रत्यक्षंबु सूडु;। मानैन विपुलहोममुल धूममुलु
जडिसे; राक्षसुल तेजंबुलु मासे;। नुडुगक मन वीट नोप्पमुल् वुट्टे;
नट्टुगान नादिनारायणुंडात;। डिट्टुसेयुटकु बुट्टै निद्धरमीद;
रामुनितोड विग्रह मोप्प; दुडुगु;। रामुनि बाणपरंपरल् बेंट्टु;
वलवदु; रामुनि वनित नोप्पिंचि। कुलमेल्ल रक्षिचुकोनु दानवेंद्र!"
यनवुडु दशकंठुडम्मालयवंतु। गनुगोनि रोषसंकलितुडै पलिकें;
"मिगुल देजंबुन मेटिनै येंदु। नेंगडिन नायोद्दने पगवानि
जेप्पेंदु; निन्नेमि सेयुदु निंक ?। नेप्पुडु मानवय्येंदु पंदतनमु;
सीत नेमिटि कित्तु ? सीतनिय्युटकु। भीति नाकेटिकि बेर्चु नितटने?"
१७४०

तुम उरु-पाप-बुद्धि-युक्त हो रहते हो। धर्म की ओर विजय लगा रहता है किन्तु धरती पर अधर्म की तरफ़ क्यों रहता है ? उस दिन उस कमलज (ब्रह्मा) से अन्य (सभी) जनों से न मरने का वर प्राप्त किया था किन्तु इस प्रकार तुम पर चढ़ आनेवाले नरों और वानरों को जीतने का (वर), ॥ १७३० ॥

—प्राप्त नहीं किया था। उनके हाथ तुम्हारा नष्ट होना हर तरह से तथ्य (निश्चित) है। उस समस्त (विषय) के लिए प्रत्यक्ष (प्रमाण) देखो। श्रेष्ठ विपुल होम (कुण्डों) में धूम भीत (निस्तेज) हो गया है। राक्षसों के तेज धूमिल पड़ गये हैं। हमारे यहाँ निरन्तर अमंगल (अपशकुन) उत्पन्न हुए हैं। अतः वह (राम) आदिनारायण है। इस प्रकार करने के लिए इस धरती पर जन्मा है। राम के साथ विग्रह उचित नहीं है। (विरोध) छोड़ दो। राम की बाण-परम्पराएँ दुर्निवार हैं। (ऐसा करना) नहीं चाहिए। हे दानवेन्द्र ! राम की वनिता (स्त्री) को मनाकर समस्त कुल की रक्षा कर लो।" ऐसा कहने पर दशकण्ठ ने उस माल्यवन्त को देखकर रोषसंकलित हो कहा— "अत्यधिक तेज से सर्वत्र श्रेष्ठ हो शोभित मेरे समक्ष ही शत्रु का वर्णन करते हो ! अब तुम्हें क्या करूँ ? (अपनी) कायरता को कभी नहीं छोड़ते हो। सीता को क्यों दूँगा ? अभी मुझे क्या भय कि मैं सीता को दे दूँ ?" ॥ १७४० ॥

यनि मीरि पलिकिन नम्मालयवंतु । डनियें; "ना माट नी वात्मगैकोनक
यारामचंद्रुनि नालंबुलोन । शूरत गेलुवंग जूतुमु गाक !
येंदु बोयेंद" मनि हेंच्चि कंटकमु । लंदंद पलुकुचु नलुकमै बोयें;
बोयिनपिम्मट बुद्धिलो दलचि । यायसुरेश्वरुंडप्पुडे कडगि
यलघुबलाढ्यु ब्रहस्तुनि बनिचें । दोलितोलि बलुकापु दूर्पुवाकिटिकि;
दक्षिणंबुन महोदरमहापार्श्वु । लक्षीणबलयुतुलैयुंड बनिचें;
वारक पडुमटि वाकिट नुंड । शूरत नट्टु पंचे सुतु निंद्रजित्तु;
दनमारुगाग नुत्तरपुवाकिटिकि । जनियुंडुडनि पंचे सारणशुकुल;
नंदरकुनु मुख्युडै पुरमध्य । मंदुंडगा विरूपाक्षुनि बनिचें;
नीविधंबुन लंककेल्ल गापिडुचु । रावणुंडंतःपुरंबुन करिगें; १७५०
नंत नक्कड रामु डनुजु नर्कजुनि । नंतकंटेनु हितुंडगु विभीषणुनि
वालितनूजुनि वायुनंदनुनि । वालिन याजांबवंतु सुषेणु
नालोन रप्पिंचि यंदरितोड । नालोचनंबुनकै कूर्चि पलिकें:
"नवगुणंबुलकेल्ल नालयंबैन । दिविजारिलंक येतेरगोको यिक
जूतमा येर्पड; जूडुडा योकनि । चेत दत्कुलमेल्ल जेडुट सिद्धंबु"

—ऐसा (सीमा का) अतिक्रमण कर कहने पर वह माल्यवन्त बोला—"मेरी बात को अपने मन में न लेकर, उस रामचन्द्र को ही युद्ध में शूरता-पूर्वक जीतना चाहते हो न ! जाएँगे कहाँ (देखे बिना) ?" ऐसा अधिक कंटक (पुरुषवचन) कहते (वह) क्रोध से चला गया। (उसके) जाने के बाद मन में सोचकर, उस असुरेश्वर ने तभी सप्रयत्न अलघु-बलाढ्य प्रहस्त को प्रथमतः पूर्वद्वार पर रक्षार्थ भेजा। दक्षिण (द्वार) पर महोदर (तथा) महापार्श्व को अक्षीण बलयुत हो रहने भेजा। पश्चिम-द्वार पर सतत शूरता से रहने के लिए (अपने) पुत्र इन्द्रजीत को भेजा। अपने बदले में उत्तर-द्वार पर जाकर रहने के लिए सारण (तथा) शुक को भेजा। सबके लिए प्रधान होकर पुरमध्य में रहने के लिए विरूपाक्ष को भेजा। इस प्रकार समस्त लंका के लिए पहरा रखते हुए (रक्षण की व्यवस्था करते हुए), रावण अन्तःपुर में गया ॥ १७५० ॥

तब वहाँ राम ने अनुज, अर्कज, उससे बढ़कर हितू विभीषण, वालि-तनूज, वायुनन्दन, बली जांबवान, सुषेण (आदि) को उस अन्तर में बुलवाकर, सबके साथ आलोचना (मन्त्रणा) के लिए, (उन सबको) एकत्र कर, कहा—"समस्त अवगुणों के लिए आलय (आकर) दिवजारि की लंका किस विधान से है, अब ठीक ढंग से देखेंगे। देखिए, उस एक (रावण) के कारण उसके समस्त कुल का नष्ट होना सिद्ध (निश्चित) है।"

श्रीरामुडु लंकापुरवैभवमु जूचुट

ननि पलिक यारामु डनुजुंडु दानु । निनसुतु डादिगा नेल्लवानरुलु
गोलुवंग वच्चि नेक्कोनु वेड्कतोड । नलरुचु नासुवेलाचलंबेक्कि
गुणमुलु गलवाडु गोत्रंबुनंदु । ब्रणुतिकि नेक्कु निब्भंगि नन्माड्कि
गनियें राघवुडु लंकापुरंबपुडु । दनचेत गडकु साध्यंबगुदानि
ननिलजु पेट्टिन यंतनुंडियुनु । दनरार लोपल दरिकोन्न चिच्चु १७६०
नाडु नेडुनु मंडु नामणिप्रभल । पोडिमि गलुगु गोपुरमुलदानि
गडु नेरुपुन रामु घातकु नुलिकि । मिडिकेंडु रावणमृगमु बोनीक
विलयकालुंडनु वेटकाडर्थि । वैलिवारु वाग्नि विधमुन जूड
दनरारु पेद्द कोत्तळमुलतोड । गनुगोन नोप्पु प्राकारंबुदानि
रावणु बोरिगोंदु, राम! र' म्मनुचु । जेवीचुगतिनि विचित्रध्वजमुल
महनीयतोरण मंगळसूत्र । महिमतो नंवरमणिसंगममुन
दळतळ वेलुगु नद्दंबुल नोप्पि । चेलुवारगा दट्टु चेतुलु गलिगि
पगलुनु रेयुनु बायक कूड्ड । मगलचे नोप्पु कोम्मलु गलदानि

श्रीराम का लंकापुर के वैभव को देखना

ऐसा कहकर, राम अपने अनुज, इनसुत आदि समस्त वानरों के सेवाएँ करते रहने पर, आकर, विजय (भाव) से होनेवाले उत्साह से प्रसन्न होते हुए, उस सुवेलाचल पर चढ़ा, मानों गुणों से युक्त (व्यक्ति) इसी प्रकार (अपने) गोत्र (वंश) में प्रसिद्ध हो जाता है । तब राघव ने अन्त में अपने हाथों अधीन हो जाने वाले लंकापुर को देखा ।। १७६० ।।

वह (लंका) मणिप्रभाओं से युक्त गोपुरों से ऐसे लग रही थी मानों अनिलज के लगाए समय से लेकर, शोभा से उसके भीतर तब और अब आग सुलग रही थी । (मणिप्रभाएँ अग्निशिखाओं के समान थीं ।) (वह नगर) राम के आघात से चौंककर, उछलने वाले रावण-रूपी मृग को अतिनिपुणता से जाने न देकर, विलयकाल-रूपी शिकारी ने चाहकर मानों फंदा फैलाया हो, इस प्रकार देखने में शोभायमान गुंबजों से युक्त द्रष्टव्य प्रकारों वाला था । 'रावण का संहार करो, राम ! आओ' कहते हुए फहरने वाली विचित्र ध्वजाओं से तथा महनीय तोरणरूपी मंगलसूत्रों की महिमा से, अंबरमणि (सूर्य) के संगम के कारण झिलमिल चमकानेवाले शीशे के टुकड़ों से युक्त हो, सुन्दरता से हिलाते हुए, रात दिन सतत पति से मिली रहनेवाली रमणी के समान थी (वह पुरी) । (चारों तरफ़)

नैसगिन रामु कट्टेदुटिकि गालु । डसुरेशुडनु लुलायमु बट्टितेर
नीरुपुगा द्रव्विन योदंबुलनग । नेरसिन परिखल नेलकोन्नदानि १७७०
गैलास ममरारि क्रम्मर बैरिकि । मेलैन पेमि निर्मिंचिन माड्कि
दनरारि यल मिन्नु दाकि तेल्पुननु । गनुपट्टु मेडलु गलिगिनदानि
घनलक्षि येदुरुको गडगे रामुनकु । ननि चेप्पुनट्टि तूर्यध्वनिदानि
जिलुकलपलुकुल चेलुवु वहिंचि । यलुल नादंबुल नानंदमंदि
कलकंठरवमुल गडु ब्रीति जेसि । पलिकेंडि शारिकास्फारत मेरसि
पल्लवचयमनःपल्लवंबिचु । पल्लवंबुल रागभरितंबुलगुचु
गडिवोनि पूवुल गंधंबुवलन । नेडपक यंदंद यिपुलु सूप
जेप्प बेक्कगुचु नेचिनयट्टितरुल । नोप्पेडिवनमुल नोप्पारुदानि
गमल केंदुनु मनःकमलंबुलैन । कमलाकरंबुल गरमोप्पुदानि
नटु चोद्यपडि चूचु नाराघवुनकु । बटुतरोद्यत्प्रभाभाति दा नोसगि १७८०
याकाशमणि ग्रुंके नपराब्धिलोन । गाकुत्स्थमणि नमस्कारंबु सेय;
नाराघवुडु सुवेलाद्रिपैनुंडि । याराति गडतेंचि यंत वेगुटयु

विलसित परिखाएँ ऐसी थीं मानों सुशोभित राम के समक्ष असुरेश-रूपी लुलाय (भैंसे) को पकड़ लाने के लिए काल (पुरुष) के चतुरता से खोदे गए खड्डे हों ।। १७७० ।।

सुशोभित गगनचुंबी श्वेतवर्ण वाले सौधों से युक्त लंका ऐसी थी मानों अमरारी (रावण)ने दुबारा कैलासपर्वत को उखाड़कर, श्रेष्ठ पद्धति से यहाँ लाकर निर्मित कर दिया हो । तूर्यध्वनि ऐसी थी मानों घन (महान्) लक्ष्मी (राम का) स्वागत करने लगी है । शुकालापों से मनोज्ञ बने, अलियों के नाद (गुंजार) से आनन्दित बने, कलकंठियों (कोयलों) के रव से अधिक प्रीत बने, मुखर सारिकाओं की स्फूर्ति से प्रकाशित बन, पल्लव-चय (समूह) से मन को पल्लवित करनेवाले पल्लवों से राग भरित होते हुए, पुष्पों के अमित सुगन्धों के कारण जहाँ-तहाँ सुन्दर लगते हुए, अगणित (तथा) शोभायमान तरुओं से शोभित वनों से विलसित था (वह नगर) । कमला (लक्ष्मी) के मनः कमल बने कमलाकरों (सरोवरों) से युक्त था (वह नगर) । ऐसी लंका को चकित हो देखनेवाले उस राघव को स्वयं पटुवर-उद्यत-प्रभाभाति प्रदान कर, ।। १७८० ।।

—काकुत्स्थमणि (राम) के नमस्कार करने पर, आकाशमणि (सूर्य) अपराब्धि में डूब गया । राघव ने सुवेलाद्रि पर रहकर, वह रात बिताई ।

गपुलु विनोदंबुगा बॆल्लु रेगि । विपिनंबुलंदॆल्ल वॆस जॊच्चिच चॊच्चिच
यंदलि शरभसिंहादुलनॆल्ल । नंदंद तोलुचु नार्चुचु जॆलग
नट्टिटकोलाहलं बंतयु लंक । मुट्टॆ राक्षसुल यॆम्मुलु वगिलिप;
नदि विनि रावणुं "डदि येमि रवमु? ।पॊद" डनि वच्चिच गोपुर मॆक्कि चूचॆ;
नप्पुडु गोपुरं बतनितो गूड । नॊप्पॆ जूपऱकुनु नुज्ज्वलंबगुचु;
धवळातपत्रमुल् दऱुचुगा बट्ट । धवळचामरमुलु दऱुचुगा वीव
बॊरि बॊरि सुरदंति पोटुल नमरु । नुरमुन वदकंबु लॊरयुचु ग्राल
नायत रत्न सिंहासनासीसु । डॆयुंडॆ नंत बॆंपलर रावणुडु १७९०
बहुविध राक्षसपरिवृतुंडगुचु । महितायुधप्रभामंडलंबुनन‍ु
नपराचलमु मीदि यर्कुनितोडि । युपमकु बात्रुडॆ युज्ज्वलुंडगुचु;
मॆऱुपुलु गल नीलमेघंबु वोलॆ । दऱुचुगा मॆऱसि मदंबुलु गुरिय
नॆसगिन यादानवेश्वरुंडप्पु । डसमानुडैयुंडॆ नागोपुरमुन;
महनीयरावण महिमचे जेसि । महितविद्युत्प्रभामंडलंबैन
गोपुरस्थलमु दृग्गोचरंबैन । भूपालतिलकुडद्भुतमु बॊंदुचुनु
आ विभीषणु जूचि यल्लन बलिकॆ: । "रा विभीषण ! गोपुरंबुन वच्चिं

तब प्रातः होने से, कपि विनोद से अति विजृंभित होकर, समस्त विपिनों में झट प्रवेशकर-कर, वहाँ के समस्त शरभ-सिंह आदियों को जहाँ-तहाँ भगाते हुए सिंहनाद करते हुए विलसित हुए । वह समस्त कोलाहल लंका में व्याप्त हुआ जिससे राक्षसों की हड्डियाँ हिल (काँप) उठीं । उसे सुन, रावण ने 'यह क्या रव है ? चलिए (देखें) ।' (यह) कहते आकर, गोपुर पर चढ़कर देखा । तब उसके साथ गोपुर, दर्शकों को उज्ज्वल हो, शोभित हुआ । अधिकता से धवल-आतपत्रों (छत्रों) के धारण करने पर, अधिकता से धवल-चामरों के डुलाने पर, सुरदन्ति (देवतागज) के प्रहारों से शोभित उरः स्थल पर पुनः पुनः (अनेक) पदकों (तमगों) के रगड़ खाते हुए विलसित होने पर, अधिक शोभा के व्याप्त होने पर आयत (विशाल)-रत्न सिंहासन पर आसीन हो रहा ॥ १७९० ॥

तब वह दानवेश्वर असमान (अप्रतिम) होते हुए, बहुविध राक्षस परिवृत होते हुए, अपराचल (अस्ताचल) पर स्थित अर्क (सूर्य) के साथ उपमा देने पात्र (योग्य होते हुए) महित-आयुध-प्रभामण्डल में उज्ज्वल हो रहा है । चंचलाओं से युक्त हो अक्सर चमककर, मद (जल) बरसानेवाले नीलमेघ के समान शोभित हुआ । महनीय रावण की महिमा से, महित विद्युत् प्रभामण्डल बने गोपुरस्थल के दृग्गोचर होने पर, भूपालतिलक विस्मित होते हुए, उस विभीषण को देख धीरे से बोला—"आओ विभीषण !

भाविप नरुदैन प्राभवंबुननु । ई विधंबुन नुन्नयितडेव्वडोक्को ?
प्रळयकालमुनाटि भानुबिंबमुल । वेलुगुलपोदि बोलि वेलुगुचुन्नाडु"
अनिन विभीषणुंडारामुतोड । ननियें: "नातंडु मा यन्न रावणुड; १८००
सुरनाथु सुरलनु स्रुक्किंचिनाडु । सुरकामिनुल जेरु जौनिपिनवाडु
मुल्लोकमुल नुग्रमूर्तिचे हल्ल । कल्लोलमुग वडि गारिंचिनाडु"

रावण सुग्रीवुल मल्लयुद्धमु

अनवुडु सुग्रीवु डारामुतोड । ननियें: "मीयेदुट नीयसुर गर्विंचि
वैभवंबिट्टु चूपुवाडे श्रीराम ! । यीभंगि नुंड ने नेट्लोर्तु" ननुचु
गुटिलवर्तनुडुनु ग्रूरुंडु नगुचु । नट्टु तल लेत्तिन यसुराहिमीद
नकुटिल शौर्यसमग्रुडैनट्टि । प्रकट दिव्यांगसुपर्णुडै पेर्चि
सकलेशुडगु रामचंद्रुनि येदुर । नकलंक साहसव्याप्तिचे बोदलि
मस्तककोटीर महितश्रृंगमुल । विस्तरोरस्थल विपुलसानुवुल
गुरुकोनि वाडोक्क कोंडयै युन्न । बिरुबिरु बडवच्चु पिडुगुचंदमुन
वेस नग्गलमुग सुवेलाद्रिनुंडि । यसुरेश्वरुनिमीदि कर्कजुंडैगसि १८१०

गोपुर पर आकर, सोचने में भी विरल प्राभव से इस प्रकार स्थित (यह व्यक्ति) पता नहीं कौन है ? प्रलयकाल के भानुबिंब के प्रकाश-पुंज-सा प्रकाशित हो रहा है।" (ऐसा) कहने पर विभीषण ने उस राम से कहा—"वह मेरा अग्रज रावण है ॥ १८०० ॥

सुरनाथ और सुरों को पीड़ित किया है, सुरकामिनियों को बन्दी बनाया है, तीनों लोकों को, उग्रमूर्ति हो, होहुल्लड़ करते झट पीड़ित किया है।"

रावण और सुग्रीव का द्वन्द्व युद्ध

ऐसा कहने पर सुग्रीव ने उस राम से कहा—"हे श्रीराम ! आपके समक्ष यह असुर गर्वीला हो (अपने) वैभव को इस प्रकार दिखाए ! इस विधान से रहना मैं कैसे सह सकूँगा ?" (ऐसा) कहते हुए कुटिल वर्तनवाला तथा क्रूर होते हुए, उधर सिर उठाए असुराहि (असुर-रूपी सर्प) पर अकुटिल शौर्य समग्रता (से) प्रकट-दिव्यांग वाला सुपर्ण (गरुड़) हो, क्रम से, सकलेश रामचन्द्र के समक्ष अकलंक-साहस-व्याप्ति- से वर्धित हो, मस्तक-कोटीर (किरीट) के महित श्रृंगों (तथा) विस्तृत-उर:स्थल -रूपी विपुल सानुओं से उसके (रावण के) एक पर्वत-सम होने पर

देवारि रावणु दृणमुगा जूचि । "रावण! विनु मेनु रामुनि बंट;
माकु नीवैभवमा चूपे" दनुचु । वीकतो मकुटमुल् वेस डोल्ल व्रेसे;
व्रेसिन नुरुमुलै वेलुगुचु रालु । भासुरकोटीरपंक्ति योप्पारे
गालरुद्रुडु मिन्नु गदगोनि व्रेय । रालु ताराग्रहराजि चंदमुन;
जाल गोपिंचि दशग्रीवुडंत । वालितम्मुनि बट्टि वडि वडवैचे;
नंतटिलोन नय्यर्कतनूजु । डेंतयु रयमुन नेचि पेल्लेगसि
यसुर जेतुलतोड नंटंग बट्टि । देसलु गंपिपंग धृति दूल वैचे;
गटमुलु नुदुरुलु गंधरंबुलुनु । विटताटमुलु सेसि वीपेल्ल जीरि
कडकाळ्ळु मेडलतो गदियंग बट्टि । वडि गोपुरंबुतो वैचि नोप्पिंचे;
निट्टु पोरुचो वारलिद्दरु दप्पि । पटुगति नेलपै बड वच्चि वच्चि
१८२०
यानेल मोवक यतिलाघवमुन । बूनिक नेगसि गोपुरमुमीदटनु
बेनगिरि; पेनगुचो बृथुलसत्वमुल । गोनिनि विन्नाणमुल् गोनक त्रोयुचुनु
डासि मोकाळ्ळ दट्टनलु सेयुचुनु । बासि क्रम्मर वच्चि बलमु सूपुचुनु

(उस पर्वत पर) अतिवेग से गिरनेवाली गाज के समान, झट अतिशयता से सुवेलाद्रि से अर्कज ने, असुरेश्वर पर छलांग मारी ।। १८१० ।।

(सुग्रीव ने) देवारि रावण को तृण-सा देखकर (कहा)—"हे रावण! सुनो, मैं राम का सेवक हूँ। हमें अपना वैभव दिखाते हो ? (इतना साहस ?)" (यह) कहते साहस से (रावण के) मुकुटों को झट से लुढ़का दिया। गिरा देने पर चंचलाओं के समान प्रकाशित होनेवाली भासुर-कोटीर-पंक्ति ऐसे शोभित हुई मानों कालरुद्र के गदा लेकर आकाश पर आघात करने से टूट गिरनेवाली तारा-(और) ग्रह-राजि (-समूह) हो। अधिक क्रुद्ध हो दशग्रीव ने तब वालि के अनुज को पकड़कर झट पटक दिया। उतने में वह अर्कतनूज अधिक शीघ्र ऊपर उठकर, वर्धित हो, असुर को हाथों के साथ पकड़कर, दिशाओं के कम्पित होने पर, धृति छूट जाए, ऐसा फेंक दिया। कनपटियों, ललाटों (और) कन्धों पर तमाचे जड़कर, समस्त पीठ को नोचकर, पैरों और गर्दनों को एक साथ पकड़कर, झट गोपुर से दे मारा। इस प्रकार, संघर्ष करते हुए वे दोनों (पकड़ के) छूटने से पटुगति से धरती पर गिरने लगे (किन्तु), ।। १८२० ।।

—उस धरती का स्पर्श न कर, अति लाघव (फुर्ती) से सप्रयत्न, ऊपर उड़कर, गोपुर पर ही जूझ पड़े। जूझते समय पृथुलसत्त्वों से पैंतरे बदलते हुए, ढकेलते हुए, नियराकर घुटनों से आघात करते हुए, दूर होकर फिर नियराकर, बल प्रदर्शन करते हुए, चरणों से छाती पर लात मारते हुए

बदमुल गुंडेलु पगुल दन्नुचुनु । गदिसि मोचेतु लंगमुल नोत्तुचुनु
गरवलयंबुल गडगि यौदललु । पोरिबोरि नेत्तुरुलू पोंडम ब्रेयुचुनु
दडबड बेक्कु विधंबुल बेनगि । कडगि येप्पटि तानकमुलु गैकोनुचु
नुब्बुनूर्पुलतोड नोककोंतसेपु । नुब्बरिपक पट्टि यूरकुंडुचुनु
निम्मेयि बोरुचो निद्दरु मेन । ग्रम्मि पेल्लेगयु रक्तप्रपूरमुल
जेगुरुटेरुल जेलुवैन गिरुल । बागुन नेंतयु भास्वरुलगुचु
नुन्नचो रावणुंडुरुवडि माय । बन्नि तन्नप्पुडु पट्ट जूचुटयु १८३०
नेरिगि याकसमुन केगिसि वेगमुन । गरकु राक्षसुलु वेक्कसमंदि चूड
गपुलेल्ल नार्व नुत्कटसंभ्रममुन । गपिराजु वच्चि राघवुनकु म्रोक्क
भक्तिमै रणरजः पटलसम्मिळित । रक्तपंकमु निजोरस्थलं बंट
गपिराजु रामुडु गौगिट जेर्चि । कृप दळुकोत्त वीक्षिचुचु बलिकें
"वासवांतकुनि रावणुनि गैकोनक । यीसाहसमुसेय निटु नीकु जेल्लु;
'ने वानि जंपेद: नी विभीषणुनि । नावीट निलिपेद' ननु बास कोरकु
वानि जंपक नीवु वच्चुट लेस्स; । येनु मेच्चिचति निन्नु निनसूति! नीवु

जिससे छाती फट जाए, निकट आकर कुहनियों से (एक दूसरे के) अंगों को दबाते हुए, सप्रयत्न कर-वलयों से ललाट पर ऐसा मारते हुए कि क्रम से रक्त बह निकले, लड़खड़ाते हुए अनेक प्रकार से जूझने के बाद फिर पुराने पैंतरे ग्रहण कर, फूलती हुई साँसों के कारण थोड़ी देर तक साँस न फुलाते हुए (न हाँफ कर) चुप खड़े रहते, इस प्रकार संघर्ष करते समय दोनों के शरीरों पर व्याप्त हो, अधिक उमड़ने वाले रक्त-प्रवाहों से, लाल रंग की नदियों से शोभित गिरियों के समान भास्वर (प्रकाशमान) हुए। ऐसी स्थिति में रावण के द्रुतगति से माया फैलाकर, अपने को बाँध डालने की (बात) सोचने पर, ॥ १८३० ॥

—उसे जानकर, आकाश में उड़कर, वेग से, अनेक क्रूर राक्षसों के आश्चर्य-चकित हो देखते रहने पर, समस्त कपियों के उत्कट-संभ्रम के साथ सिंहनाद करने पर, कपिराज ने आकर राघव को प्रणाम किया। भक्ति के कारण रणरज-पटल (समूह) से सम्मिलित रक्तपंक के निज उर:स्थल पर लगने पर कपिराज को राम ने गले से लगाकर, कृपा (भाव) के प्रकाशित होने पर देखते हुए, कहा—"वासवान्तक (इन्द्रान्तक) रावण की परवाह किए बिना इस प्रकार साहस करना यहाँ तुम्हें शोभा देता है। मेरे इस वचन के लिए कि 'मैं उसका वध करूँगा, इस विभीषण को उस स्थान पर प्रतिष्ठित करूँगा' उसका (रावण का) वध किए बिना तुम्हारा आना उत्तम है। हे इनसूति! मैं तुम पर प्रसन्न हूँ। तुम वालि के अनुज हो,

वालितम्मुडवु, रावणुनि निर्जिप। जालवे ? तलपंग सैरिंचुटेल्ल
नदि नाकु वालिडि यवनि नाकीर्ति। वदलक चेल्लिप वच्चिचति" वनुड्डु
"देव ! याद्रोहिनि देऱगोप्प जूचि। येविधंबुन गोपमेनु सैरिंतु" १८४०
ननि यर्कजुड्डु वल्क नतनि माटलकु। मनमुन हर्षिचि मऱि यिट्टुलनियें:
"स्फुरिततारकमु भासुरकृष्णरक्त। परिवेषमुनु नगु भानुमंडलमु
वलन मंटलु देंगि व्रालुचुन्नवियु; । जलदमुल् वेक्कु राक्षसरूपमुलनु
जेलगुचु नेत्तुरुल् सिलुकुचुन्नवियु;। गलयंग नोकट भूकंपमय्येडिनि;
मेटिगाड्पुलनु भूमीधरकोटि। कूटमुल् धरणिपै गूलुचुन्नवियु;
बेगडक दिनकराभिमुखंबुलगुचु। निगिडि वापोयेडि नेऱि जंबुकमुलु;
सारेकु निट्लु राक्षसकुलप्रळय। कारणोत्पातमुल् गानंगबडियें;
दिरमुगा नांगिकास्त्रिकशुभप्रकर। वरसूचकंबु लीवलन गन्पट्टें;
मनकु जयंबनुमानंबु लेक। योनगूडु; निक दडयुट गा" दटंचु
गरुवलिसुतुनिपै गरमोप्प नेक्कि। वरपुण्यनिधि जांबवंतु डंगदुडु
१८५०
सौमित्रिमुनु विभीषणुड्डु नलुंडु। भीमविक्रमकळाभेद्युलै कोलुव

रावण को मार नहीं सकते थे ? सोचने पर सब कुछ सहन कर लेना, उसे (रावण-वध) मेरे हिस्से छोड़, धरती पर मेरी (प्राप्य) कीर्ति मुझे देने के लिए है।" (ऐसा) कहने पर अर्कज ने कहा—"हे देव ! उस द्रोही को समुचित विधि से देखकर भी, किस प्रकार मैं क्रोध को सह लूँ ?" ॥१८४०॥

—उसकी बातों से मन में हर्षित हो फिर यों कहा—"स्फुरित (विलसित)-तारक (ताराओं से युक्त) (तथा) भासुर कृष्ण रक्त परिवेष (परिवेषण) युक्त भानुमण्डल से ज्वालाएँ टूट गिर रही हैं, अनेक जलद राक्षसरूपों से विजृंभित होकर रक्त बरसा रहे हैं। लगता है, एक बार भूकम्प हो जाएगा। प्रचण्ड वायु के कारण भूमीधर (पर्वत) कोटि-कूट (समूह) धरणी पर गिर रहे है। भीत न होकर, दिनकर के अभिमुख हो, तनकर, सुन्दर जंबुक रोदन कर रहे हैं। इस प्रकार बार-बार राक्षस-कुल के प्रलय-कारण-उत्पात दिखाई पड़ रहे हैं। स्थिरता से इस ओर आंगिक-अस्त्रिक-शुभ-प्रकर-वर-सूचक (लक्षण) दिखाई पड़े। हमें निस्सन्देह विजय प्राप्त होगी। अब विलम्ब नहीं करना चाहिए।" (ऐसा) कहते हुए वायुपुत्र के (कन्धे पर) अधिक शोभा से चढ़ (आसीन हो) कर, वर पुण्यनिधि जांबवान, अंगद, ॥ १८५० ॥

—सौमित्र, विभीषण, नल (आदि के) भीम-विक्रम-कला से अभेद्य होते हुए सेवाएँ करते रहने पर, उस नगस्थल से उतर गया। वह अतुल विक्रम

ना नगस्थलि डिगें; नतुलविक्रमुडु । वानरसेनलु वडि दोडुसूप
दानु मुंदर धनुर्धारियै नडचें । दोन यालक्ष्मणादुलु चेरि कॊलुव;
दक्किन सेन लुद्दंडवेगमुन । बॆक्कुभंगुल नॊक्क पॆल्लुगा दोड
नडव नॆंतयुबेर्चि नलिनाप्तकुलुडु । गडुघोरमैन राक्षसकोटिचेत
दनरिन लंकयुत्तरपुवाकिटनु । विन विस्मयंबुगा विडिसॆं राघवुडु;

श्रीरामुडु वानरुलचे लंक मुट्टडि वेयिंचुट

द्विविदमैंदुलतोड दिविरि नीलुंडु । नविरळभुजशक्ति नमरुलु पॊगड
बरुवडि गपिसेन बलसि तन् गॊलुव । वरमति विडिसॆं बूर्वद्वारमुननु;
गजुडु गवाक्षुंडु गवयुंडु भूरि । भुजुडैन ऋषभुंडु बॊंकंबुतोड
दनतोड गूडिरा दक्षिणद्वार । मुन वालिपुत्तुंडु मुदमॊप्प विडिसॆं;
१८६०
बसतो सुषेणुनि बवननंदनुडु । वॆस गूर्चुकॊनि बाहुविक्रमंबॊप्प
वाडॆ पो यीलंक वडि गाल्चिनट्टि । वाडुना बडुमटि वाकिट विडिसॆं;
मेट्टुलु पॆद्दनम्मिन मुप्पदारु । कोट्टुलु कपिनायकुलु तन्नु गॊलुव

वाला (राम) वानरसेनाओं के झट साथ देने पर, स्वयं आगे (-आगे) धनुष धारण कर, पीछे (-पीछे) लक्ष्मण आदियों के एकत्र होकर सेवाएँ करने पर, चल पड़ा। शेष सेनाओं के उद्धंडवेग से अनेक प्रकार से एक साथ, आधिक्य के साथ चलने पर अधिक औन्नत्य से नलिनाप्तकुल वाला (राम) अतिघोर राक्षसकोटि से शोभित लंका के उत्तर द्वार पर, सुनने में आश्चर्यप्रद रूप से, राघव ने पड़ाव डाला ॥ १८५६ ॥

श्रीराम का वानरों से लंका का घेरा डलवाना

द्विविद (और) मैंद के साथ नल ने शीघ्र अविरल भुजशक्ति से, अमरों की प्रशंसा करने पर, क्रम से कपिसेना के बली हो अपनी सेवाएँ करने पर, वरमति से पूर्वद्वार पर पड़ाव (घेरा) डाला। गज, गवाक्ष, गवय (और) भूरिभुज (शक्ति)-युक्त ऋषभ के सुघड़ता से अपने साथ मिलकर आने पर, मोद की अतिशयता से वालिपुत्र ने दक्षिण द्वार पर पड़ाव डाला ॥ १८६० ॥

समर्थता से सुषेण को झट साथ लेकर पवननन्दन ने बाहुविक्रम के शोभित होने पर, 'यही तो है इस लंका को झट जला डालनेवाला' ऐसा (दीखते हुए) पश्चिम द्वार पर घेरा डाला। श्रेष्ठ और अधिक विश्वसनीय छत्तीस करोड़ कपिनायकों की अपनी सेवाएँ करने पर, अर्कज ने झट राम

नसमानबलयुतुंडै ऋक्षविभुडु । वसुधेशुनकु दूर्पुवंकनु विडिसे;
नेक्कड नेमियु नेमरकुंड । मिक्किलि कडिमिमै मेरसिराघनुलु;
मनुजेशुडपुडु लक्ष्मण विभीषणुल । गनुगोनि पलिकें नुत्कंठ दीपिंप;
"वनचरपतुल नवारित बलुल । वनुपुडु मरियुनु बैदळंबुगनु
नेक्कड नेमियु नेमरकुंड । नोक्कोक्क पद्म मोक्कोक्क वाकिटिकि ।"
ननवुडु श्रीरामुनानतिजेसि । पनिचिरि यट्टुले पटुसत्त्वधनुल;
१८७०
बंपिन रामभूपालुंडु सौरि । निपारगनुगोनि यिट्लनि पलिकें:
"ननलुंडु नलुडुनु हरुडु संपाति । मनमु मूवुरमुनु मार्तुरतोड.
मिगिलि राक्षसकोटिमीद बेल्लेंगसि। तगिलि यिक्कडने यद्धंबु सेयुदमु;
क्रंदैन संदडि कय्यंबुनंदु । निदु नंदुनु मन केरुगंगवलयु"
ननि पलिक रामु डायगचराधिपुल । गनगोनि यपुडोक्क कट्टड सेसे;
"गपिरूपमुले कानि कामरूपमुलु । गपटरुपंबुलु गाकुंडु" डनुचु;
निट्टु रामुनानति नेल्लवानरुलु । नट लंकचुट्टु नत्यंतवेगमुन
निश्चलसत्वुलै नेलकोनि पूर्व । पश्चिमोत्तरयाम्यभागमुल् निंडि

की पश्चिम (दिशा में) पड़ाव डाला । समर्थ भल्लूक सेना के सेवाएँ करने पर, असमान बलयुत हो, ऋक्षविभु (भल्लूक राजा) ने वसुधेश (राम) की पूर्वदिशा में पड़ाव डाला । कहीं भी, कुछ भी असावधान न रहते हुए, अति साहस से वे महान् (योद्धा) प्रकाशित हुए । तब मनुजेश (राम) ने उत्कंठा के दीप्त होने पर, लक्ष्मण और विभीषण को देखकर कहा—"इनके अतिरिक्त अवारित बलवाले वनचरपतियों को, कहीं भी, कुछ भी असावधान रहे बिना एक-एक द्वार पर, एक-एक पद्म (एक संख्या) (की संख्या में) अतिरिक्त दल (सेना) के रूप में भेज दो ।" ऐसा कहने पर श्रीराम के आदेश पर पटुसत्त्व-धनवालों को (उन्होंने) उसी प्रकार भेजा ।। १८७० ।।

भेजने पर रामभूपाल ने सौरि (सुग्रीव) को प्रेम से देखकर यों कहा—"अनल, नल, हरि, संपाति (और) हम तीनों शत्रुओं (तथा) शेष राक्षस समूह पर अधिक विजृंभित हो, लगकर यहीं युद्ध करेंगे । घमासान युद्ध में हमें यहाँ की और वहाँ की (अपने और परायों की) जानकारी रखनी चाहिए ।" ऐसा कहकर राम ने उन अगचर-अधिपों को देखकर तब एक नियम बनाया कि "कपि रूप ही धारण कर रहो, कामरूप (और) कपटरूप धारण मत करो ।" इस प्रकार राम के आदेश पर समस्त वानर, उधर लंका के चारों तरफ़ अत्यन्त वेग से, निश्चल सत्त्ववाले हो, जम गए

पदियोजनंबुल परपुन विडिसि । पदिलमैयुंडि यप्रतिमविक्रमुलु
विकृतवालंबुलु विकृताननमुलु । विकृतदंष्ट्रंबुलु विकृतकायमुलु
१८८०
नमरंग दरुशैलहस्तुलै पेंचि । समरंबु सेयंग सन्नद्धुलैरि;
वारि यदल्पुलु वारि यार्पुलुनु । वारि हुंकाररवंबुलु जेलग
भीममै लंकलो बेंचि यादैत्य । भामिनी-जनुल गर्भंबुलु गलगॆ;
नट्टि कोलाहलंबंतयु जूचि । नेंट्टन राक्षसनिकरंबु बेंदरॆ;
कमलाप्तकुलुडण्डु कल्याणरामु । डमितसत्त्वोन्नतुं डतिदयाशालि
"रावणुनोद्दिकि रायबारंबु । पोवनु नेंव्वनि बुत्तेंत" मनुचु
"गपिकुलोत्तमुडैन कंजाप्तसुतुनि । गपिराजु बंपुट कार्यंबु गादु;
बलिलदुंडगु जांबवंतु बंपुटकु । नेंल्लविधंबुल नेंरुगडु वाड्डु;
परमविक्रमशालि बवमानसुतुनि । मरलनु बंपुट मर्याद गादु;
भुजविक्रमंबुन भूरिवेगमुन । भुजगवैरिकि सरिपोलु नंगदुनि १८९०
नंपुट मे" लनि यतिवेड्क नेंचि । संपद वेलयंग सर्वज्ञुडैन
मनुजेशु डंतट मंत्रुलतोड । ननुमति गैकोनि यंगदु बिलिचि १८९२

(और) पूर्व, पश्चिम, उत्तर, याम्य भागों में फैलकर, दस योजन की चौड़ाई में पड़ाव डालकर, सुरक्षित रूप से रह गए। (वे) अप्रतिम विक्रम वाले, विकृत-वाल, (पूंछ) विकृत-आनन, विकृत-दंष्ट्राएँ, विकृतकाय, ।। १८८० ।।

—वाले होकर, शोभा से तरु शैलों को हाथों में धारणकर, समर करने के लिए सन्नद्ध (तैयार) हो गए। उनके गर्जन, उनके सिंहनाद (तथा) उनके हुंकार-रवों के व्याप्त हो भयंकर होने पर, क्रम से उन दैत्यों की भामिनी-जनों के गर्भ संचलित हुए। उस समस्त कोलाहल को देखकर राक्षस-निकर (समूह) एकदम सहम गया। तब कमलाप्त-कुलवाला, कल्यणराम, अमितसत्त्व-उन्नति वाला, अतिदयाशाली, यह सोचते कि "रावण के पास दूतकार्य के लिए किसे भेजें", "कपिकुलोत्तम, कंजाप्तसुत (सुग्रीव) कपिराज को भेजना समुचित कार्य नहीं है, बलवान जांबवान को भेजने के लिए, वह कुछ भी (राजनीति) नहीं जानता, परम-विक्रमशाली पवमानपुत्र को फिर से भेजना सभ्यता नहीं है, भुजविक्रम में (तथा) भूरि वेग में भुजगवैरी के बराबर अंगद को, ।। १८९० ।।

—भेजना श्रेष्ठ है।" ऐसा अति उत्साह से सोच, संपत्ति (ऐश्वर्य) से शोभित हो, तब सर्वज्ञ मनुजेश ने मन्त्रियों से अनुमति लेकर, अंगद को बुलाकर,

अंगदु रायबारमु

यॆलमि वहिंचुचु निट्लनि पलिकॆः । "दलगक नीवेगि दशकंठुतोड
"यरसि रावण! नीवु नजुनिचे गॊन्न । वरगर्वमुन मुनिवरुल देवतल
नडचि बाधिंचिनयट्टुगादु; नेडु । विडिसॆ नीपैं रामविभु"डनि पल्कु;
"मेलावु नम्मि नी वॆलनाग दॆच्चि । तालावु जूप र"म्मनुमाजिलोन;
"बंटवै श्रीरामु बाणघट्टनल । गॆंटक रणमुलो गील्कॊनु" मनुमु;
"अट्टु चेय वॆरचिते नवनिज दॆच्चि । यिट निच्चि ब्रतुकुट यिदिबुद्धि"
यनुमु;
"परग लंकाराज्यपट्टंबुनकुनु । गरुण विभीषणु गट्टिना" डनुमुः
"चंपॆडु राघवेश्वरु डिदॆ निन्नु; । जंपक मुंदर सकलबांधवुल १९००
जूडुमु; लंकयु जूडु मेर्पडग; । जूडुमु नीकूर्चुसुंदरीजनुल;
दनयुलु दम्मुलु दग बंधुजनुलु । ननि जावकुंडगा नट्टु कावु"मनुमु;
"नीवु नीबंधुवुल् निरवशेषमुग । जावंगगलवारु; चच्चिन मीद
कार्यंबु लिप्पुडु गाविंचुकॊनुमु; । कार्यमिट्टिदि दशकंठ! नी"कनुमु ।
अनि यिट्लु श्रीरामु डानतिच्चुटयु । मनमुन हर्षिंचि मर्कटोत्तमुडु

अंगद का दूतकार्य

—प्रेम (भाव) धारण करते हुए इस प्रकार कहा—"विचलित न होकर तुम जाकर दशकण्ठ से कहो कि 'हे रावण! सोचो तो तुम अज से प्राप्त वरों के गर्व से मुनिवरों (तथा) देवताओं का दमन कर पीड़ित करने के समान नहीं है (राम के साथ लड़ना)। आज तुम पर (आक्रमण करने के लिए) विभु राम ने पड़ाव डाला है।' कहो कि 'जिस सामर्थ्य पर विश्वास कर तुम सुन्दरी (सीता) को लाए थे, उस सामर्थ्य को दिखाने के लिए युद्ध (भूमि) में आ जाओ।' कहो कि 'योद्धा वन श्रीराम के बाणाघातों से विचलित न होकर रण में लग जाओ'। कहो कि 'ऐसा (युद्ध) करने से डरोगे तो अवनिजा को लाकर, यहाँ देकर जीवित रहना नीति संगत है।' कहो कि 'शोभा से लंकाराज्य पदवी को करुणा से विभीषण को (राम ने) प्रदान किया है।' कहो कि 'यही (अभी) राघवेश्वर तुम्हारा वध कर देगा। मरने से पूर्व समस्त बान्धवों (रिश्तेदारों) को, ॥१९००॥

—देख लो, लंका को खूब देख लो, अपनी प्रिय सुन्दरियों को देख लो, तनय, अनुज, योग्य बन्धुजनों को युद्ध में मर जाने से बचा लो।' कहो कि 'तुम और तुम्हारे सम्बन्धी निरवशेष (निःशेष) रूप से मर जाने वाले हैं। मरने के बाद किए जानेवाले कार्यों को अब कर लो। हे दशकण्ठ!

विनयंबुतो रामविभुनकु म्रोक्कि । यनुरागमुन नेगे; नम्महाबलुडु
घनतरपर्वताकारंबुतोड । ननिमिषुल् पोगडंग नालंक जोच्चे
गड्डुदुष्टराक्षसगहनमुल् गालप । नडरेंडु विलयकालाग्नियु बोले
नेगसि यासभलोन निंद्रारि जंप । दगिलिन मृत्युदूतयु बोले नपुडु
दशरथात्मजुनाज्ञ दल मोचिकोनुचु । दशकंठुमुंदर दडयक निलुव
१९१०
गनुगोनि यपुडु राक्षसकोटि येल्ल । "निनजुंडु क्रम्मर नेतेंचे" ननुचु
नायोधनोद्युक्तुलै संभ्रमिंप । नायसुरुल नेल्ल हस्तमुल् साचि
'वलव दोहो !' यनि वारण सेसि । पलिके नंगदुनितो बंक्तिकंधरुडु:
"क्रोव्वि वानरुड! यी कोलुवुलोपलिकि । नेव्वग नोंदक नेडुवच्चितिवि,
ऐवरु निन् बंचिना ? रेव्वंडवीवु ? । एव्वनि तनयुंड ? वेमि नीपेरु ?
निव्वटिल्लेंडु लंक नीविट्टु चोच्चि । येव्वरिपनि बूनि येगुदेंचितिवि ?
वनचर! चेप्पर वच्चिनकार्य ।" । मनि रावणुंडिट्टुलदलिंचि पलुक
विनि क्रोधविवशुडै विकृतास्युडगुचु । वनचरपति यंतवानि किट्लनियै
"नी वेव्वडनिपल्कु, देरुगवे नन्नु ! । रावण ! येनु रा रामुनिबंट ।"

यह कार्य ही ऐसा है ।" (ऐसा) कह इस प्रकार श्रीराम के आदेश देने पर, मन में हर्षित हो, मर्कटोत्तम (वानरश्रेष्ठ) विनय से विभुराम को प्रणामकर अनुराग से गया । वह महाबली घनतर-पर्वताकार से अनिमिषों (देवताओं) के प्रशंसाएँ करने पर, उस लंका में प्रविष्ट हुआ । अत्यन्त दुष्ट राक्षस-गहनों (वनों) को जलाने के लिए विजृंभित विलय कालाग्नि के समान, उड़कर, उस सभा में इन्द्रारि (रावण) को मारने के लिए उद्यत मृत्युदूत के समान तब दशरथात्मज की आज्ञा को सिर पर धारण करते हुए, दशकण्ठ के समक्ष अविलम्ब खड़ा हो गया ।। १९१० ।।

(उसे) देख, तब समस्त राक्षस-समूह के यह सोच कि "इनज (सुग्रीव) फिर से आया है" आयोधन (युद्ध) के लिए उद्युक्त हो जल्दबाजी करने पर, हाथ फैलाकर उन समस्त असुरों को "न न, रुको" कह, मना कर, पंक्तिकंधर ने अंगद से कहा—"हे वानर ! चर्बी चढ़ गई जो इस सभा में किसी प्रकार की बाधा को न पाकर आज आए हो ? तुम्हें किसने भेजा है ? कौन हो तुम ? किसके पुत्र हो ? क्या है नाम तुम्हारा ? अधिक शोभायमान लंका में इस प्रकार प्रवेशकर, किनके काम को लेकर आए हो ? हे वनचर ! बोलो रे ! क्या काम है ?" ऐसा रावण के धमकाकर कहने पर, सुनकर, क्रोधविवश हो, विकृतास्य (विकृत-आनन) वाला होता हुआ, वनचरपति ने उससे यों कहा—"यह पूछते हो कि तुम कौन हो ? मुझे नहीं

"रामुडेव्वडु?" "पराक्रममुन बरशु। रामुनि गेलिचिन रणविचक्षणुडु" १९२०

"अतडेव्व ?" "डुद्धतुंडै कार्तवीर्यु । नतिवीरु द्रुंचिन यतुल विक्रमुडु।
"अतडेव्व? डेरुगवा याजिलो निन्नु। जितु जेसिकौनि पोयि चेरनिडनतडु"
"एव्वनि तनयुड ?" वेरुगवा नन्नु ? । निव्वटिल्लग बट्टि निनु दोकगट्टि
मौरपेट्ट वार्धुल मुंचि मुंचीड्चि । करुणिंचि विडुवडे घनुडैन वालि!
यावालि मरचिते यकट! यितटने? । ये वालिसुतुडौट येरुगवा योरि !
यंगदुंडनुवाड; नाहववार्धि । नंगद निनु मुंतु नातंड्रिवोले;
मातंड्रि येरुगक मरि निन्नु बट्टि । यातंबुग नीट नट्टु मुंचेगाक !"
यनवुडु गोपिंचि यसुरेशुडनियें: । "वनचराधम! योरि! वच्चिनदूत
जैनकि निन्निट शिक्ष सेयरादनुचु । घनमुगा बेंडिदंपु गारुलाडेदवु;
मन्निपगा नीवु मम्मु गैकौनक । यिन्नीचवाक्यंबु लेल पल्केदवु ? १९३०

वलनुगा निट मुन्नु वच्चिन दूत । यलरग दनपेरु हनुमंतुडनुचु
वलनोप्प निट वच्चि वैदेहितोड । गलवि लेनिवि कौन्नि कारुलु बल्कि

जानते हो ? हे रावण ! मैं हूँ रे राम का सेवक ।" "राम कौन है ?"
"पराक्रम से परशुराम को जीतनेवाला रणविचक्षण (कुशल) है" ॥ १९२० ॥
—"वह कौन है ?" "उद्धत बन अतिवीर कार्त्तवीर्य का संहार करनेवाला
अतुलविक्रमी है ।" "वह कौन है ?" "नहीं जानते (उसे) ? युद्ध में तुम्हें
हरा ले जाकर बन्दी बनानेवाला वह ।" "किसके पुत्र हो ?" "नहीं
जानते हो मुझे ? अतिशयता से पकड़कर तुम्हें पूँछ से बाँधकर, (तुम्हारे)
मिन्नतें करते रहने पर वारिधियों में (तुम्हें) डुबो-डुबोकर, (अन्त में)
करुणा कर नहीं छोड़ दिया था उस महान् वालि ने । हाय उस वालि को
इतने में ही भूल गए ? रे, यह नहीं जानते कि मैं वालि का पुत्र हूँ । मैं
अंगद हूँ । आहव (युद्ध) रूपी वारिधि में उत्साह के साथ मेरे पिता के
समान तुम्हें डुबो दूँगा । मेरे पिता ने न जानकर तुम्हें पकड़कर, उस
समय केवल पानी में डुबोया था ।" ऐसा कहने पर क्रुद्ध हो असुरेश ने
कहा—"हे वनचराधम ! रे ! आए हुए दूत को छेड़कर दण्डित नहीं करना
चाहिए, (ऐसा हमारे) सोचने से, बढ़-बढ़कर परुष निंदा वाक्य कहते हो ।
(तुम्हारा) मान करने पर हमारी परवाह न करके तुम ये नीच वाक्य क्यों
कहते हो ? ॥ १९३० ॥

यहाँ पहले आए दूत ने औचित्य से अपना नाम हनुमान बताया ।
औचित्य से यहाँ आया (और) वैदेही (सीता) से अनेक व्यर्थवचन कह,

यीचतुरोक्तुलनेकंबु लाडि । माचेत दंडन मडि पौंदि पोये;
नोरि! यावानरुडुन्नाडो ? लेडो? । वेरवारगा नाकु विवरिंचि चेप्पु।"
मनवुंडु नंगदुंडसुर किट्लनियें: ।"घनुलु रामुनिसेन गपुलेल्ल गिनिसि
बलिमि नहंकार पटुशक्ति मेडसि । चेलगि याहनुमंतु चेंपलु गोट्टि
यनिरि 'रामुनितोड नट्टु माटलाडि। पनिपूनि लंककु बंटवै पोयि
यडरि यिंद्रारिचे नालंबुलोन । वडि बट्टुवडि चिक्कि वनचर! नीवु
तोक गाल्पिचुक तोलगिवच्चितिवि;। वीकतो रामुनि वीटिलोपलनु
सरवि नंदर कपसडि तेच्चि' तनुचु । वेरविडि तोलिन वीटिकिबासि
१९४०
यट बंपकड केगें नावानरुंडु । इट रामुसेनलो निद्दर मम्मु
निनजुंडु वानरहीनुल नेर्चि । पनुपड निट्टुवंटि पनुलु सेयिंचु"
ननि यंगदुडु वल्क नसुरेशु डंत । मनमुन विस्मयमग्नुडै युंडै;
मलयुचु जलमु क्रम्मर नूलुकोलिपि । यलघुडै यंगदुंडप्पुडु पलिकें:
"नेर रावण! रामु नेरुगवा योरि! । यीरीति गर्विप नेटिकि नीकु ?
लोकविक्रमुडु त्रिलोकभीकरुडु । लोकशरण्युंडु लोकैकनुतुडु
लोकरक्षकुडुनु लोकशिक्षकुडु । प्राकटचंद्रमोभानुवीक्षणुडु
वेदांतवेद्युंडु वेदगोचरुडु । नादिनारायणुं डतिसत्त्वधनुडु

इस प्रकार के अनेक चतुर वचन कह, हमारे हाथ दण्डित होकर चला गया था। अरे, वह वानर (अभी) जीवित है या नहीं? ठीक ढंग से मुझे सविवरण बताओ।" ऐसा कहने पर अंगद ने असुर से कहा—"राम की सेना के समस्त वीर कपियों ने क्रुद्ध हो, बल (तथा) अहंकार की पटुशक्ति से दीप्त हो, विजृंभित हो उस हनुमान को तमाचे जड़कर कहा 'हे वनचर! राम से बात करके (वचन देकर), सप्रयत्न लंका को वीर बन जाकर, शोभित हो, इन्द्रारि से युद्ध में झट बन्दी बन, अपनी पूँछ जलवाकर, वापिस आए हो? क्रम से राम के यहाँ के सबको अपकीर्ति लाए हो।' (ऐसा) कहते औचित्य को छोड़, भगाने पर, स्थान से बिछुड़कर, ॥ १९४० ॥

—वह वानर उधर पम्पा (सरोवर) के पास गया है। राम की सेना में हम दो हीन वानर हैं। इनज (सुग्रीव) हमें तैयार कर इस प्रकार के (नीच) कार्य करवाता है।" ऐसा अंगद के कहने पर तब असुरेश (थोड़ी देर) मन में विस्मयमग्न हो रहा। घूमते हुए हठ से फिर भड़काकर, अलघु होते हुए, तब अंगद ने कहा—"अरे रावण! राम को नहीं जानते? इस प्रकार का गर्व तुम्हें क्यों? लोकविक्रमी, त्रिलोकभीकर, लोक-शरण्य, लोकैक-विनुत, लोकरक्षक, लोकशिक्षक (दण्डित करनेवाला), प्रकट

यसदृशुं डारामु डभिरामु डनघु । डसहायशूरुडुं नतुलबिक्रमुडु
अडरि नीच्चेलिय लत्यासक्ति डाय । नडच्चिन नाशूर्पणखमुक्कु सेवुलु
१९५०
वडि बट्टि कोसिन वरखड्गधार । वडियु नेत्तुरु दुडुवग रोसिरोसि
खरदूषणांगरक्तंबुल गडिगि । करमोप्प जेसिन काकुत्स्थतिलकु
नेरुगवा रामुनि? नेटिकि ब्रेलें ? । देरिगेदु का केमि? येंदु बोयेदवु?
मूडु लोकंबुलु मुट्टि गर्वमुन । माडिच्चि निन्नु नम्मनुजवल्लभुडु
दुनिमेडि, नुग्रत दोलगक निलिच्चि । यनिसेयु बंटवै; यंतिय चालु;
लंक नीविक नेलगलेवु विनुमु; । लंककु बति सुम्मु ललि विभीषणुडु;
तडयक नीमीद दयगलिग विभुडु । कडुवेगमुन निट्टि क्रममुन मंचि
बुद्धि नीकुनु जेप्प बुत्तेंचे नन्नु; । वद्दुरा ! राक्षस! वैदेहि निम्मु;
तोडरिन बलवंतुतो संधियगुट । पुडमि राजुलकेल्ल बुद्धियें सुम्मु!
मदि मदि नुंडि रामाधिपुतोड । गदिसि कय्यमुनकु गालु द्रुव्वकुमु;
१९६०
राक्षसाधम! योरि ! रामुनि देवि । नीक्षिति मोरगि नी विट्लु
तेदगुने ?

चन्द्रमुखवाला, भानुवीक्षण (सूर्यसम नेत्रवाला), वेदान्तवेद्य, वेदगोचर, आदिनारायण, अतिसत्त्वधनी, असदृश अभिराम, अनघ, असहायशूर, अतुल विक्रमवाला है वह राम। अतिशयता से तुम्हारी बहन (शूर्पणखा) के निकट आने पर, उस शूर्पणखा के नाक कान, ॥ १९५० ॥

—अतिशयता से झट पकड़कर काट देने पर, वर खड्ग की धारा से स्रवित होनेवाले रक्त को पोंछने को घृणित मानकर, खरदूषण के अंगरक्त से (खड्ग) को धोकर, उचित कार्य करनेवाले काकुत्स्थतिलक राम को नहीं जानते हो ? क्यों बकते हो ? अब नहीं जानोगे (उन्हें) ? कहाँ जाओगे ? त्रिलोकों को स्पर्श कर (तुम कहीं भी छिपो, पकड़कर) गर्व से दग्ध कर, तुम्हें वह मनुजवल्लभ (राम) मार डालेगा। उग्रता से न हटकर, खड़े रहकर, वीरता से युद्ध करो। इतना ही बस है। सुनो, अब तुम लंका पर शासन नहीं कर सकते। अब तो लंका का पति विभीषण है। विलम्ब न कर तुम पर दयालु हो विभु (राम) ने अतिशीघ्र इस प्रकार से तुम्हें अच्छी बुद्धि (की बातें) बताने के लिए मुझे भेजा है। यह छोड़ दो रे राक्षस ! वैदेही को दे दो। समक्ष आए बलवान (राजा) से सन्धि कर लेना, धरती पर सभी राजाओं के लिए उचित ही है। प्रशान्त मन से रहकर, राम-अधिप (राजा राम) से युद्ध मत छेड़ो ॥ १९६० ॥

लोकपावन सीत लोकैकमात । नीकु देदगु नोरि! नीच राक्षसुड!
निनु जूड दोषंबु निनु जूडरादु; । घनतर दुष्पापकर्मुंड वीवु;
लोकंबुलकु दल्लि लोलाक्षि सीत । नीकु दल्लियकादे ? निर्भाग्य दनुज!
एदिरि दन्नेरुगवे; येमंदु गिन्नु? । मदिराक्षि नटु पोयि मायचे देच्चु
टिवि बंटुतनमुला येरुगंग नीकु ? । निवि राजसंबुला येन्नंग नीकु?
निवि कीर्तुला नीकु? नेरुगलेवैति; । ववविवेकमुनजेसि यपसडिवडिति;
विहपरदूरुड वी वेपुमीरि । विहितमार्गबित विवरिंपवैति;
वेडपक रघुरामुडेंगेमि सेसे ? । गडुगर्वमुन मीदु गानलेवैति;
वुडुगक बडवाग्नि नोंडिगट्टुकोंटि । पुडमिपै भस्ममै पोयेडिकोरकु; १९७०
नीपालि विधि पट्टि नीमेंड गट्टि । यीपाटु सेसे निन्नीरसमेत्ति
नीवेमिसेयुदु; नीव्रातफलमु । गाविप नजुडिट्लु कट्टडसेसे;
गडिदि रामुनि यंप कार्चिच्चुलोन । वडि शलभंबवै व्रालेदवेल्लि;

हे राक्षसाधम ! अरे ! राम की देवी को इस क्षिति (लोक) में वंचना से इस प्रकार तुम्हारा लाना उचित है ? अरे, नीच राक्षस ! लोकपावनी, लोकैकमाता (सीता) को तुम्हें लाना चाहिए था ? तुम्हें देखना ही दोषप्रद है, तुम्हें नहीं देखना चाहिए। घनतर दुष्पाप-कर्म वाले हो। लोलाक्षी सीता समस्त लोकों की माता है (तो) हे निर्भाग्य दनुज ! तुम्हारे लिए भी माता नहीं है ? प्रतिपक्षी और अपनी (सामर्थ्य) को नहीं जानते। क्या कहें ? उधर जाकर मदिराक्षी को धोखे से लाना कैसी वीरता है ? सोचने पर यह तुम्हारे लिए राजस (राजा सा कार्य) है क्या ? क्या यह तुम्हारे लिए कीर्ति (-प्रद) है ? नहीं समझ सके। अविवेक के कारण अपकीर्ति के भागी बने। इह (लोक) तथा पर (लोक) से दूर होकर तुम अतिशय गर्व से विहित मार्ग को समझ नहीं सके। रघुराम ने सतत ही तुम्हारा क्या बिगाड़ा है ? अधिक गर्व से ऊँच (-नीच) को नहीं जान सके। पृथ्वी (लोक) पर भस्म हो जाने के लिए, न रुककर (आगे-पीछे न सोचकर) बड़बाग्नि को गोद में भर लिया है ॥ १९७० ॥

तुम्हारी विधि (नियति) ने तुम्हें इस प्रकार उभाड़कर, (यह सब) तुम्हारे गले मढ़ दिया है तो तुम क्या कर सकोगे ? तुम्हारे विधि-विधान को कार्यान्वित करने के लिए आज (ब्रह्मा) ने ऐसा नियम बनाया है। परसों सप्रयत्न राम की बाणाग्नि में पड़ शलभ बनकर मर जाओगे। अधिक

चाल नौप्पिनयट्टि सौख्यत लंक । येलु भाग्यंबु ले; देमंदु निन्नु ?
सडिवोक रघुरामु शरणंबु सोरुमु । पुडमिलो नीप्राणमुलु गाचिकोनुमु
नी पुत्रमित्रादिनिखिलराक्षसुलु । नेपद्रि रामुचे नीलुगकमुन्ने ।
कार्यबु मनुपड गैकोनि ब्रतुकु । कार्य मोल्लक पोरु गैकोंटिवेनि
चुट्टाल नितुल सुतुल सोदरुल । निट्टै यिदरु जूडु, मिक जूडलेवु;
एलमि नीमोहंपुटिंतुल नेल्ल । गलय भोगिपुमु कांक्षलु दीर;
वेलयंग नीराज्यविभवंबु लेल्ल । वलुदेरंगुल नेडे पाटिंचि चूडु;
१९८०
हरिहरब्रह्मादुलड्डुगिंचिननु । दुरमुलोपल निन्नु द्रुंचु राघवुडु;
इन्नियु नेटिकि निनकुलेश्वरुनि । कुन्नतमति सीत नोप्पिचि ब्रतुकु;
मिटु रामुनानति येरुग जेप्पितिनि । गुटिलराक्षस ! येमि ? गोब्बुन
जेप्पु"

रावणु डंगदुनितो दन पराक्रममु सेप्पुट

मन रोषचित्तुडै यद्दशाननुडु । ननियें नंगदुतोड नप्पुडु किनिसि
"रामु जेप्पेंदु, पराक्रमशालि नन्नु । रामु डेरुंगडा रणविजयुडुग ?

शोभायमान सुख से लंका पर शासन करने का सौभाग्य नहीं है। तो तुम्हें (अधिक) क्या कहूँ ? अपने पुत्र-मित्र आदि निखिल राक्षसों के शोभा रहित हो राम के हाथ मरने से पहले ही, अपकीर्ति के भागी न बन, रघुराम की शरण में जाओ, पृथ्वी (लोक) पर अपने प्राणों की रक्षा कर लो। कार्य ठीक करके प्राण बचा लो, यह न चाहकर युद्ध को अपनाना चाहो तो बन्धुवर्ग, स्त्रियाँ, सुत, सहोदरों को सभी को अभी देख लो, आगे (उन्हें) नहीं देख सकोगे। प्रेम से अपनी समस्त लाड़ली स्त्रियों का, आकांक्षाएँ पूरी हो, ऐसा उपभोग करो। शोभा से अपने समस्त राज्य वैभव का अनेक प्रकार से निर्वाह (भोग) कर देख लो ॥ १९८० ॥

हरिहर ब्रह्मा आदि बीच में (रोकने) आवें तो भी युद्ध में राघव तुम्हारा वध करके रहेगा। ये सब क्यों ? इनकुलेश्वर (राम) को उन्नत मति वाली सीता देकर जीवित रहो। हे कुटिलराक्षस ! यह राम के आदेश से (तुम्हें) समझाकर बताया है। क्या (जवाब देते हो), झट कह दो।" ॥ १९८३ ॥

रावण का अंगद से अपने पराक्रम के बारे में बताना

(ऐसा) कहने पर रोषचित्त वाला हो, दशानन ने क्रुद्ध हो, अंगद से तब (यों कहा)—"राम के बारे में (इतना क्या) कहते हो ? मुझ

दिविजेंद्रु डादिगा देवसंघमुल । बवरंबुलो दोंडरि परपिनवाड
हरुडुन्न कैलास मगलिंचिनाड । नेरियंग गालुनि नेदिरिंचिनाड
वरुसतो जगमुलु वर्णिप नलरि । सरवि लोकमलेल्ल साधिंचिनाड
वनजासनुनिचेत वरमु गोन्नाड । मोनसि दिव्यायुधंबुलु गलवाड;
निट्टिपिम्मटनु ने नीरामुमरुगु । बट्टिन नलुगुरु पकपक नगरे ?
१९९०
यनुजुंडु नातोड नलिगटुपोयि । जननाथु मरुगु वंचन जोच्चेंगाक!
येनेनु जोच्चिन हीनत गादे । वानराधम! नाकु वसुमतिलोन ?
मगपाडि दिगनाडि मानंबु वीडि । पगवानि गोल्चुट पंतमे नाकु ?
बगवाडु दंडेत्ति पैवच्चिनपुडु । मगटिमि चेडि संधि मरि चेसिनंत
जगति राजुलु नन्नु सरकुसेयुदुरे? । तगदुरा! संधि यित्तरि वानरुंड !"
यनिन दशास्युनिकनिये नंगदुडु: । "घनपराक्रमुतोड गय्यंबु दगदु;
दानव ! रघुरामु तरमेरुंगकय । पूनि युन्नाड विप्पुडु कावरमुन;
सुरल गेल्चिनमाड्कि शूरु राघवुनि । दुरमुलो नेदिरिंचि तोडरुट-
येट्लु ?
बलमेदि रघुरामपार्थिवुनेदुर । बलुमुष्टि विल्लेट्लु पट्टंगवच्चु ?

पराक्रमशाली को रणविजयी के रूप में राम नहीं जानता ? दिविजेन्द्र के साथ देवसमूहों को युद्ध में हराकर भगा दिया है, हर के कैलास को उखाड़ डाला है, काल (यम) को दुखी कर सामना किया है, क्रम से सभी जग वर्णन करें, ऐसा आनन्द से समस्त लोकों को जीत लिया है, वनजासन से वर प्राप्त किया है, श्रेष्ठ दिव्य-आयुधों वाला हूँ। इतना सब होने पर मैं राम की शरण जाऊँ तो सभी लोग खिल-खिलकर नहीं हँसेंगे ? ॥ १९९० ॥

अनुज मुझपर रूठकर, उधर जाकर जननाथ (राम) की शरण में (मुझे) वंचित कर गया तो गया। हे वानराधम ! मेरा भी (राम की) शरण में जाना, वसुमति (लोक) में हीनता नहीं होगी ? पौरुष को छोड़, मान को छोड़, शत्रु की सेवा करना मेरे लिए पौरुष है ? शत्रु के चढ़ आने पर, पौरुष को छोड़, फिर सन्धि कर लेने पर, जगत में (आगे अन्य) राजा मेरी परवाह करेंगे ? हे वानर ! इस अवसर पर (मेरे लिए) सन्धि उचित नहीं है।" (ऐसा) कहने पर अंगद ने दशास्य से कहा—"घन पराक्रम वाले से युद्ध नहीं करना चाहिए। हे दानव ! रघुराम के स्तर को न जानकर, अब घमण्ड से युद्ध के लिए तैयार हो गए हो। सुरों को जीतने के समान, शूर राघव का, युद्ध में सामना कर कैसे टिक सकोगे ? बल खोकर रघुराम-पार्थिव (राजा) के समक्ष दृढ़ मुष्टि से धनुष कैसे

नोरुल गेलि्चन माड्कि नोर्चि राघवुनि। शरमुलमुंदर जरियिचु-
टेट्लु ? २०००
कणकतो नीवेत्तगा लेनि विल्लु । दृणलील विरुवडे त्रिजगंबुलेरुग?
वेउवेदि रघुरामु विक्रमस्फुरण । मेरुगनि यविवेकि, वेमंदुनिन्नु ?
जनकनंदन निच्चि शरणंट लेस्स" । यनि यंगदुडु वल्क नसुरेशुडनियै:
"नोरि! वानरुड! नी वोडक निल्चि। सारेकु रघुरामु शौर्यमेन्नेंदवु,
आरामु विक्रम मा रामु कडिमि । या रामु भुजशक्ति यदि येंतपेद्द?
चलमुन दाटक जंपेनंटेनि । तलपोय, नाटदि, दानि पेंपेंत?
जनकुनि विल द्रुंचि जनकतनूज । घनत जेकोन्नट्टि घनुडंटिवेनि
नाविल्लु नेटिदे, यदि येंचनेल ? । आविल्लु चिवुकुदि; अदि येमि-
दोड्डु ?
जमदग्नि रामुनि समरमध्यमुन । ग्रममुन गेलिचिन घनुडंटिवेनि
अनि ब्राह्मणुनि गेल्चुटदि वंटुतनमे?। विन बोलदीमाट; वीरत्व-
मगुने ? २०१०
नलपुन खरदूषणादिराक्षसुल । जलमुन नोक्कडे चंपेनंटेनि

धारण कर सकोगे ? अन्यों को जीतने के समान, राघव के वाणों को सहन कर कैसे विचरण कर सकोगे ? ॥ २००० ॥

प्रयत्न करके भी तुम जिस धनुष को उठा नहीं सके, उसे त्रिलोक जानें ऐसा तृण के समान तोड़ा नहीं था ? उपाय (युक्ति) को खोकर, रघुराम की विक्रम-स्फूर्ति को न जान सकनेवाले अविवेकी हो । क्या कहूँ तुम्हें ? जनकनन्दना को देकर शरण माँगना ही समुचित है।" ऐसा अंगद के कहने पर असुरेश ने कहा—"अरे ! वानर ! तुम हारे (थके) विना रहकर, वार-वार रघुराम के शौर्य की स्तुति करते हो। उस राम का विक्रम, उस राम का साहस, उस राम की भुजशक्ति —वह कितनी बड़ी है ? कहोगे कि हठ से ताड़का का वध किया है तो सोचने पर वह अवला है, उसकी शक्ति कितनी है ? कहोगे कि जनक के धनुष को तोड़कर जनकतनूजा को बड़प्पन के साथ स्वीकारनेवाला महान् (व्यक्ति) है तो क्या वह धनुष आज का है, उसकी गिनती क्यों करते हो ? वह धनुष जीर्ण हो गया है। (उस धनुष को तोड़ना) वह कौन-सी बड़ी वात है ? कहोगे कि जमदग्नि-राम (परशुराम) को युद्ध में क्रम से जीतनेवाला महान् (व्यक्ति) है तो युद्ध में ब्राह्मण को जीतना भी कोई वीरता है? यह बात तो सुनने भी योग्य नहीं है। यह वीरता है ? (नहीं) ॥ २०१० ॥

कहोगे कि अथक हो, खरदूषण आदि राक्षसों को हठ से अकेले ही

नलर वारलु वृद्धु, लदि चेप्पनेल ?। तलपोय कैंचिति तप्पक नीवु;
तेगुव मारीचु मर्दिचेनंटेनि। मृगमात्र, मदियेमि मेलपु वेग्गलमु ?
ऐसग वालिनि गूलनेसें नंटेनि। वसुधलोपल गोति, वाडेंतदोड्डु ?
जवसत्त्वमुन वार्धि शरमुखंबुनकु। गवगोनदेच्चिन घनुडंटिवेनि
नावार्धि जलमात्र, मदि येमि बलिमि ?। एविधंबुन रामुनेन्नेदवुब्बि ?
इवि बंटुतनमुला यी राघवुनकु ?। निवि यीक्क गेलुपुला यी रामुनकुनु ?
बूनि नामुंदर बोंड्वुलु सेसि। वानराधम ! रामु वर्णिचेदीवु"
अनि दशास्युडु वल्क ननियें नंगदुडु:। "पनिगोन निर्घातबाणु राघवुनि
सकललोकाराध्यु जगदभिरामु। सकलजगन्नुत जयशालि रामु २०२०
नकलंकविक्रमोन्नतशौर्यु रामु। नकट! तूलगनाड नर्हमे नीकु ?
जेलगु नारघुरामु शौर्यबुनकुनु। तोलिमुद्दयगु खरदूषणुल् साक्षि;
गोनकोनि वालिनि गोतंटिवकट !। अनघुडावालि कोतौट गाकुंट
कॅनसिन यंबुधु लेडुनु साक्षि। किनुकमै नी दशग्रीवमुल् साक्षि;
अलघुविक्रमशालियैन राघवुनि। जेलगि दूषिंचिन जननाथुपोमि

मार डाला है तो वे वृद्ध हैं। (उनकी बात) कहना ही क्यों ? यह सोचे बिना ही तुमने इन्हें गिना है। कहोगे कि साहस से मारीच का मर्दन किया है तो वह तो मृगमात्र है। वह कौन बड़ा आधिक्य है ? कहोगे कि शोभा से वालि को गिराया है तो वह तो वसुधा पर वानर है। वह कितना बड़ा है ? कहोगे कि जव-सत्त्व से वारिधि को शरमुख से एकत्र ला सकनेवाला महान् (व्यक्ति) है तो वह वारिधि जल-मात्र है। वह कौन-सी सामर्थ्य है ? फूलकर राम कि किस प्रकार स्तुति करोगे ? ये राघव के लिए (कोई) वीर (कार्य) हैं ? ये भी राम के लिए (कोई) विजय हैं ? हे वानराधम ! चाहकर मेरे समक्ष बड़ा बनाकर राम का वर्णन करते हो !" ऐसा दशास्य के कहने पर अंगद ने कहा— निर्घात बाण वाले, राघव की, सकल लोकाराध्य, जगदभिराम, सकल जगन्नत, जयशाली राम की, ॥ २०२० ॥

—अकलंक विक्रम से उन्नत शौर्य वाले राम की हाय, निन्दा करना तुम्हारे लिए योग्य है ? विजृंभित उस रघुराम के शौर्य के प्रथमकवल बने खरदूषण ही साक्षी हैं। जान-बूझकर वालि को वानर कहा है। हाय, अनघ उस वालि के वानर होने या न होने के परिव्याप्त सात समुद्र साक्षी हैं, क्रुद्ध बने तुम्हारे दशग्रीव ही साक्षी हैं। अलघु विक्रमशाली राघव का

दप्पुने ? नीकेमि धन्यत वौडमें? । निप्पुडु रघुरामु निट्लु दूषिप
नी राजसंबुनु नीदु भोगंबु । दूरमौ; नायुवु दोलगुनु सिरियु;
दनरंग रामुनि दलचिनंतटनें । घनमैन पापंबु ग्रक्कुन बायु;
रामु पादमु सोकि इा यितियय्यें; । रामरामनि बोय राशिकि नॅक्कें;
रामयन् कीरंबु रमण डा बिलिचि । यामेटि सायुज्य मायिति वडसें;
२०३०
नट्टि श्रीरामुनि यसुरेश ! नीवु । नॅट्टन दूषितु; नी केदि गतियौ ?
रामनामस्तुति रावण ! नीकु । नेमि पापमुननो यॅरुगजोंप्पडदु !"
अनि यंगदुडु वल्क नसुरेशुडनियें: । "वनचर! रघुरामवसुधेशु शक्ति
यॅरुगुदु; जॅप्पगा नेल ? यास्वामि । परमैन तारकब्रह्मंबनंग;
नाडवलसि माटलाडिति गाक ! । पोडिमि रामुतो बुरुणिप गलदे?
व्रलपट्टि रामुतो समरंबु सेय । गलुगुनो यनिचाल ग्रालुचुन्नाड;
निंदु नंदुनु मेच्च निनवंश्युतोड । जेंदि कय्यमु सेतु शिवु डेरुंदगनु;
अतनितो बोराडि यतनिचे जच्चि । प्रतिलेनि वैकुंठपदवि गैकोंदु;
नीलोकसौख्यंबु लितिय चालु; । नॅलमि जॅप्पगनेल ? यॅरुगुदंतयुनु;

विजृंभित हो (बढ़-बढ़कर) दूषण करने से जननाथ (राम) के वैभव में कमी आएगी ? तुम्हें कुछ धन्यता प्राप्त होगी ? (नहीं) अब रघुराम का इस प्रकार दूषण करने से तुम्हारा राजत्व, तुम्हारा भोग दूर होगा। आयु और श्री दूर होंगे। शोभा से राम का स्मरण करने से घन (महान्) पाप झट दूर हो जाएगा। राम के चरण का स्पर्श पाकर पत्थर स्त्री बन गया। राम राम कहकर बहेलिया प्रसिद्ध हुआ। सुन्दरता से कीर को राम कह कर बुलाकर उस स्त्री ने श्रेष्ठ सायुज्य को प्राप्त किया ॥ २०३० ॥

ऐसे श्रीराम का हे असुरेश ! तुम ऐसा घोर दूषण करते हो ? पता नहीं तुम्हारी कैसी गति होगी ! हे रावण ! पता नहीं किस पाप के कारण तुम्हें राम-नाम स्तुति (का महत्व) समझ में नहीं आती।" ऐसा अंगद के कहने पर असुरेश ने कहा—"हे वनचर ! रघुराम-वसुधेश की शक्ति को जानता हूँ। (तुम्हारे) कहने की क्या ज़रूरत है ? (जानता हूँ कि) वह स्वामी परम तारक-ब्रह्म है। मैंने कहने योग्य बातें कह दीं। (किन्तु) उचित रूप से कोई राम की समता कर सकता है ? हठ करके राम से समर करने के अवसर के लिए अधिक व्यथित हो रहा हूँ। यहाँ-वहाँ सब (लोग) प्रशंसा करें, (ऐसा) इनवंश वाले से युद्ध करूँगा जिसे देख शिव भी चकित हो जाए। उसके साथ लड़कर, उसके हाथ मरकर, अप्रतिम वैकुंठपद को प्राप्त करूँगा। इस लोक के सुख अब पर्याप्त हो

बलवंतुडगु रामु प्राभवोन्नतुलु । दैलिय चित्तंबुलो दिवुरुचुन्नाड"
२०४०
ननि चेप्पि दशकंठु डनियें ग्रम्मरनु । दन विवेकमु सेंडि तामसुंडगुचु:
"धरणीतलं बेल्ल दम्मुनिचेत । बरगंग गोल्पोयि पडतियु दानु
ननुजुंडु गूडंग नडवुल बडुचु । दनसति नौकनिचे दा गोलुपोयि
वच्चि सुग्रीवादि वानरवरुल । जौच्चियु नटमीद शूरत जूप
जनुदेंचे रामुडु संगरस्थलिनि । ननु दाक नेर्चुने नरनायकुंडु ?
अटुगान रघुरामु डालंबुलोन । बटुतरशौर्यसंपन्नुंडु गाडु
मनुजुलु कोतुलु मगटिमिचेत । तनयौद्द जेप्पकु तरुचराधमुड !
वनचराधम! योरि! वालिकि नीवु । तनयुंडवै युंडि दशरथात्मजुनि
गोलिचिति बंटवै; कौल यीगवैति; । चलमुन मीतंड्रि जंपिनाडतडु;
अट्टि रामुनि गोल्चितधमवानरुड ! । पुट्टिति वालिकड्पुन वृथा नीवु;
२०५०
चंपक मीतंड्रि जंपिन रामु । पंपुसेयुचु निट्लु बंटवै तिरुगु;
दैलमितो गोलुवंग नीराजे कानि । तलपोय राजुलु धरणिपै लेरे ?

गए हैं। शोभा से (तुम्हारा) कहना क्यों ? मैं सब कुछ जानता हूँ। बलवान राम के प्राभव (तथा) औन्नत्य को जानने के लिए प्रयास कर रहा हूँ।" ॥ २०४० ॥

ऐसा कहकर, अपने विवेक को खोकर, तामसी (तामस गुणवाला) होता हुआ दुबारा दशकंठ ने यों कहा—"समस्त धरणीतल (पृथ्वी) को अनुज के हाथ शोभा से खोकर, स्त्री (तथा) अनुज के साथ स्वयं जंगलों में घूमते हुए, अपनी सती को किसी के हाथ खोकर, आकर, सुग्रीव आदि वानर-वरों के (आश्रय में) आकर, उसके बाद (इतनी कायरता के बाद) अब शूरता दिखाने राम संगर-स्थल में आया है। वह नरनायक मेरा सामना कर सकता है ? रघुराम युद्ध में पटुतर-शौर्य-सम्पन्न नहीं है। हे तरुचर-अधम ! मनुज और वानरों के पौरुष के बारे में मेरे सामने मत कहो। रे ! वनचराधम ! वालि के पुत्र होकर दशरथात्मज के दास होकर (उसकी) सेवा कर रहे हो ? (अपने पिता के वध का) बदला नहीं ले सके। हठ से उसने तुम्हारे पिता का वध किया है। हे अधमवानर ! ऐसे राम की सेवा कर रहे हो ? वालि के गर्भ से व्यर्थ ही उत्पन्न हुए हो ॥ २०५० ॥

(उस राम को) न मारकर, पिता का वध करनेवाले राम के आदेश का पालन करते हुए, ऐसा दास हो विचरण कर रहे हो। शोभा से सेवा

गौनकौनि पगवानि गौलिचिन वानि। निनुगानि येव्वनि ने नेंदु गान;
नीमगटिमिकिन नीदुपेंपुनकु । सीमवारेल्लरु सीयनि नगरे ?
कौडुकैन पिम्मट गुलपगलेल्ल । वडितोड नीगनिवाडेट्टिकौडुकु ?
ईरीति बंदवै हीनमानवुनि । जेड्रि कौल्चुट येट्लु चेवयु लेक?
निनु वालि कौडुकन्न नेंटु नम्मवच्चु?। वनचर ! येव्वरिवाडवो काक?
विनु, बुद्धिसेप्पेद, विवरंबु गाग: । मनुजुल गौलुतुरे? मनुजुलु नाकु
बगवारु; नीकुनु बगवारुगाक ! । नौगि दैत्य मिट्टु सेयुचुंडुट दक्कि
नन्नु गौल्चिन निन्नु नंगद! यिपुडु । वनचरुलकु नेल्ल वरप्रभुगाग
२०६०
घनभूषणंबुल घनवाहनमुल । मन जेतु निप्पुडु महिमीद" ननिन
दनुजाधिपति जूचि तारासुतुंडु । घनकोपमुन जाल गरिमनिट्लनियें:
"नगणितोन्नतशक्तुडैन राघवुडु । तग नादु तलि दंड्रि दात दैवंबु;
एमि गर्वमु नीकु ? नेरुक चौप्पडदु;। भूमीशुतो रिपुल् पुरणिपगलरे ?
यरयलेक विवेकु ला रामविभुनि । नरुडंचु नेंतुरु नक्तंचरेंद्र !

करने के लिए इस राजा को छोड़, धरणी पर अन्य राजा नहीं हैं ? तुम्हें छोड़कर, चाहकर शत्रु की सेवा करनेवाले अन्य किसी को नहीं देखा है। तुम्हारे पौरुष (तथा) तुम्हारे औन्नत्य को देख तुम्हारे देश के लोग छिः कहकर अवहेलना नहीं करेंगे ? पुत्र हो जनमने के बाद वंश के प्रति (किए गए कार्यों का) बदला न लेनेवाला भी कोई पुत्र है ? यह क्या ? कायर होकर, सामर्थ्यहीन होकर, एक हीन मानव की सेवा कर रहे हो ? तुम्हें वालि का पुत्र कैसे मानूं ? हे वनचर ! तुम और किसी के (पुत्र) हो। (वालि का पुत्र ऐसा नहीं कर सकता।) सुनो, सविवरण बुद्धि की बातें कहूँगा। कहीं मनुष्यों की सेवा की जाती है। मनुज मेरे लिए शत्रु है। तुम्हारे लिए भी तो शत्रु हैं। क्रम से इस प्रकार दौत्य (दूतकार्य) करना तजकर मेरी सेवा करोगे तो तुम्हें हे अंगद ! अब समस्त वनचरों का वर (श्रेष्ठ)-प्रभु, ॥ २०६० ॥

—बनाकर घन (महान्) भूषणों (तथा) घन-वाहनों से युक्त कर, अब महि पर जीवन-निर्वाह करने दूंगा।" (ऐसा) कहने पर, दनुजाधिपति को देखकर, तारासुत ने महाकोप से (तथा) अधिक गरिमा से यों कहा— "अगणित उन्नत शक्तिवाला राघव मेरे लिए माता, पिता, दाता (तथा) दैव (भगवान) है। कैसा गर्व है तुम्हारा ? (बात) समझ में नहीं आती। भूमीश (राजाराम) के साथ रिपु (शत्रुजन) अपनी तुलना कर सकते हैं ? हे नक्तंचरेन्द्र ! जान न सक, अविवेकी-जन उस विभु राम को नर (मात्र)

यतडु मानवमात्रुडा यसुरेश ! । यतडु लोकाराध्यु डत डप्रमेयु
डतडु श्रीविष्णुंडु नत डादिमूर्ति; ।यितनिकि सरिपोल नेव्वरुगलरु?
सनकादुलुनु गूडि चर्चिपलेरु; । वनजासनादुलु वर्णिपलेरु;
दानवांतकुडुनै दशरथेंद्रुनकु । बूनि जन्मिचिन पुरुषोत्तमुंडु;
नितनि कोपाग्निनकि नेव्वडु निल्चु ?। नितनितो डीकोनि येव्वडु पोरु?
२०७०

नितनि बाणाहति कॆव्वडु नोर्चु ? । नितनि नेन्न वशंबे यिंद्रादुलकुनु?
नी वेरुंगवु रामु निपुणविक्रममु; । कावरंबुन नेल कारुलाडेदवु?
वररामु नेरिगेदु दुरुमुलो नेल्लि; । कर मर्थि दुरमुन गदलक निलुमु;
कर्मपंकंबुलु गडतेरि वालि । निर्मलात्मुडु रामनृपतिचे जच्चि
पदपडि वैकुंठपदमु गैकोंये; । निदि कीडुगा मम्मु नेन्न नेमिटिकि?
नितनि गोल्चिन नाकु निहमुनु बरमु। नतुलितंबुग गल्गुनवनीशु सेव;
नीमदंबुनु नुब्बु नीराजसंबु । रामचंद्रुनि घोररणरंगमंदु
बोयेंडु भुवि ग्रुंगि पोलुपेल्ल द्रुंगि; । वेयु जेप्पग नेल? विधि निन्नुबट्टि

समझते हैं। हे असुरेश ! क्या वह मानवमात्र है ? वह लोकाराध्य है, वह अप्रमेय है, वह श्रीविष्णु है, वह आदिमूर्ति है। उसकी बराबरी करनेवाला (और) कौन है ? सनकादि भी मिलकर (उसकी) चर्चा (वर्णन) नहीं कर सकते। वनजासन आदि वर्णन नहीं कर सकते। (वह) दानवान्तक होकर दशरथेन्द्र के यहाँ सप्रयत्न उत्पन्न पुरुषोत्तम है। उसकी कोपाग्नि के (समक्ष) कौन टिक सकता है ? उसका सामना कर कौन जूझ सकता है ? ॥ २०७० ॥

—उसके बाण के आघात को कौन सह सकता है ? इन्द्र आदि भी उसका वर्णन कर सकते हैं ? तुम राम के निपुण-विक्रम को नहीं जानते हो। मस्ती के कारण क्यों बुरे वचन कहते हो ? परसों युद्ध में श्रेष्ठ राम को जान सकोगे। युद्ध में अधिक इच्छा से अचल हो खड़े रहो। कर्मपंकों से निवृत्त होकर निर्मलात्मक वालि ने नृपति-राम के हाथ मरकर, तदनन्तर वैकुंठ पद को प्राप्त किया। इसे अशुभ के रूप में मानकर, हमारी निंदा क्यों करते हो ? इसकी (राम की) सेवा करने पर मुझे इह (लोक-सुख) तथा पर (लोक) अतुलित रूप से अवनीश की सेवा से प्राप्त होगा। तुम्हारा मद, गर्व, तुम्हारा राजस (ये सब) रामचन्द्र के साथ घोर रणरंग में, धरती के दब जाने पर, समस्त वैभव को खोकर, नष्ट हो जाएँगे। हज़ार (बातें) कहना क्यों ? हे कुटिल राक्षस ! विधि (नियति) तुम्हें पकड़कर (इस मार्ग पर) ले जा रही है। (तुम्हारे) पूर्व के वरगर्व अब

कौनिपोवुचुन्नदि कुटिलराक्षसुड ! । मुनुपटि वरगर्वमुलु चेल्लविक;
निन्नियु नेटि कायिनकुलेश्वरुन । कुन्नतमति सीत नोप्पिचि ब्रतुकु"
२०८०

अंगदुनि बट्टि कट्टुंडनि रावणुडु तन भटुल नियमिंचुट

अनवुडु गोपिंच या रावणुंडु । घनबाहुबलुनि नंगदु बट्टि कट्ट
बनिचिन गोंदरु वलितंपुटसुरु । लनयंबु नुद्धतुलयि पट्टुटयुनु
सोलवक तन शक्ति सूपेडिकोरकु । दोलग नोल्लक यंगदुडु वट्टुवडियें;
नट्टु पट्टुवडि यत डाकसंबुनकु । बट्टुशक्ति नेगसि युद्भटवृत्ति मेरसि
विद्रिचिन बदिवेल वीरुलु धात्रि । यद्रुवंग नुग्गुनूचै त्रोळ्ळि; रंत
नलिगि यंतट बोक यंगदुं डसुर । कोलुवुन्न यम्मेड गूल दन्नुटयु
नदि वज्रहति दुहिनावनीधरमु । तुदि गूलुपगिदि दुत्तुनियलै कूले
वेंडियु "नंगदु विड्वक पट्टु । बो" डनि दैत्युल बुच्चे रावणुडु;
पुच्चिन वारुनु बोदिवि यंगदुनि । नच्चेरु वडरंग नाकाशमुननु
बरशुबट्टिसभिंडिवालशूलमुल । गरवालतोमरगदल नोप्पिप२०९०

काम नहीं देंगे। ये सब क्यों? उस इनकुलेश्वर (राम) को उन्नत मति से सीता देकर, मनाकर, जीवित रह जाओ।" ॥ २०८० ॥

अंगद को पकड़ बाँधने के लिए रावण का अपने सैनिकों को आदेश देना

ऐसा कहने पर क्रुद्ध होकर उस रावण ने घन-बाहुबल वाले अंगद को पकड़, बाँधने का आदेश दिया। (तब) कुछ बली असुरों ने अनारत उद्धत हो पकड़ लिया। (तब) थके बिना अपनी शक्ति दिखाने के लिए, हट जाना न चाहकर, अंगद बन्दी हो गया। ऐसा पकड़ा जाकर, उसने आकाश में पटुशक्ति से उड़कर, उद्भट वृत्ति से प्रकाशित होकर, (राक्षस वीरों को) बिखेर दिया तो दस हज़ार वीर, धरती के सहम जाने पर, चूर-चूर हो गिर पड़े। तब क्रुद्ध हो, उतने से न जाकर, अंगद ने उस सौध को लात मार गिरा दिया, जिसमें राक्षस (रावण) सभा लगाए बैठा था। वह (सौध) वज्रहति से समूल गिरनेवाले तुहिन-अवनीधर (हिमालय) के ढहने के समान, टुकड़े-टुकड़े हो गिर गया। आगे (उसके बाद) रावण ने यह कह कि 'अंगद को न छोड़ पकड़ लो, जाओ', दैत्यों को भेजा। भेजने पर उन्होंने भी घेरकर, अंगद आश्चर्यचकित हो जाए, (इस प्रकार) आकाश में परशु, पट्टिस, भिंडिवाल, शूल, करवाल, तोमर, गदाओं से बहुत पीड़ित किया ॥ २०९० ॥

बिडिकिळ्ळतोडने प्रेवुलु वेंडल । बेंडिदंबुगा नोंचि पृथिविपैगूल्चि
यरुगुचुनुन्न यायंगदु जूचि । खरसूति सुकरुंडु कार्मुकं बेत्ति
"निलु निलु यंगद ! नी वेंदु बोव । गल" वनि पेल्लार्चि कांडंबुलैदु
नुदुरु गाडग नेसि नोंप्पिंचि मरियु । बदि तीव्रशरमुल बाहुवु लेय
नलुकतो बिडिकिट नंगदुंडसुर । तल पेक्कु व्रय्यलै धरगूल बोडिचें;
दानिकि दैत्युलु तल्लडपडग । दानवेश्वरुडु चिंतामग्नुडय्यें;
दारातनूजु डत्तरि नेगुदेंचि । यारामुनकु म्रोक्कि यंजलि मोड्चि
"योजगदाराध्य ! योरामचंद्र ! । भूजननुत ! रामभूपालतिलक !
देव ! मीयानति तेंरगुन नेनु । रावणुनोद्दिकि रयमुन बोयि
चेप्पगा गल वेल्ल जेप्पिति देव ! । चेप्पिनमाटलु चेवि बेट्टडय्यें;
२१००
गट्टिगा जावुकु गडु देंपुसेसि । युट्टिगट्टुक यूगुचुन्नाडु देव !
दिनमुलन्नियु दीरें दिविजांतकुनकु; । निनकुलनाथ ! नी वी दशग्रीवु
ननिलोन मडियिंपु मखिललोकेश ! । यनघात्म ! सकलसुरादुलुप्पोंग"
ननुचु नावृत्तांतमंतयु देलिय । विनुपिचें नेंतयु विशदंबुगाग;

—(तो उन्हें) मुष्ठियों से ही भयंकर रूप से मारकर जिससे उनकी आंतड़ियाँ बाहर निकल आवें, (उन्हें) पृथ्वी पर गिराकर, जाते हुए उस अंगद को देखकर, खर का पुत्र सुकर ने कार्मुक (धनुष) उठाकर, सिंहनाद कर कि "रुक रे रुक अंगद ! तुम कहाँ जा सकोगे ?" पाँच बाणों को ललाट में गड़ाकर, पीड़ित कर और दस तीव्र शरों को बाहुओं पर चलाया । (तब) क्रोध से अंगद ने मुष्टि से ही असुर के सिर पर दे मारा, जिससे (उसके सिर के) अनेक टुकड़े होकर, वह धरती पर गिर गया । उसपर दैत्य क्षुब्ध हो गए, (और) दानवेश्वर चिन्तामग्न हो गया । उस अवसर पर तारातनूज ने आकर, राम को प्रणाम कर, हाथ जोड़कर (कहा)—"हे जगदाराध्य ! हे रामचन्द्र ! हे भूजन-नुत ! हे रामभूपाल-तिलक ! हे देव ! आपकी आनति के विधान से मैं रावण के पास शीघ्र गया, जो कुछ कहना था, वह सब कह सुनाया । हे देव ! मेरी कही बातों को (उसने) कानों से धारण नहीं किया ॥ २१०० ॥

हे देव ! दृढ़ता से मृत्यु के लिए, अधिक साहस कर, वह मस्ती से झूम रहा है । हे इनकुलनाथ ! दिविजान्तक के सभी दिन पूरे हुए हैं । हे अखिल लोकेश ! तुम इस दशग्रीव का युद्ध में वध कर दो । हे अनघात्म ! (इससे) समस्त सुर आदि प्रसन्न हो जायँगे ।" (ऐसा) कहते अधिक विशद रूप से (अंगद ने) वह समस्त वृत्तान्त समझाकर

जननायकुंडुनु　संतसंबंदें । घनतरंबैन यंगदु सत्त्वमुनकु;
नट रावणुनितोड नसुरुलंदरुनु । बटुतरवाक्कुलै पलिकिरय्येडनु;
"इदि येमि देव! नी विट्लूरकुनिकि ? । यदें! कंपिसेनतो न राघवुंडु
विडिसिनाडीलंक; वेधिंचु निक; । गडिमि येन्नडु चूपगलवाड वीवु?
ममु बंपु रामलक्ष्मणुल वानरुल । समरंबुलो गेलिच चनुदेंतु" मनुडु

रावणुडु तन वैभवमुनु मेरयिंचुट

वीनुल करुदुगा विनि दशाननुडु । भानुजादुलकुनु भयमु वुट्टंग२११०
दन वैभवमु रामधरणीशुनकुनु । घनमुगा जूपेंदगा ! कंचु दलचि
सांद्रप्रतापनिस्तंद्रुडै तोंल्लि । यिंद्र नागेंद्र धनेंद्रुल गेलिचि
कप्पमुल् गैकोंन्न घनवस्तुवितति । देप्पिंचि मेलैन दीधितुल् निगुड
जीनांबरंबुलु चेलुवार गट्टि । नानादिशल वासनलु वेदचल्लु
मृगमदघनसारमिळितमनोज्ञ । मगु दिव्यचंदन मर्थितो नलदि
सरसमंजुळ पारिजातप्रसून । विरचितमालिकाविततुलु मुडिचि

सुनाया । अंगद के घनतर-सत्त्व को (जानकर) जननायक (राम) प्रसन्न हुए। वहाँ रावण से समस्त असुरों ने पटुतर-वाक्यों से (युक्त हो) उस अवसर पर यों कहा—"यह क्या देव! ऐसे आप चुप क्यों हैं ? वही कपिसेना के साथ उस राघव ने लंका के पास पड़ाव डाला है। अब (तुम्हें) व्यथित करेगा। तुम अपना साहस कब दिखाओगे ? हमें भेजो। रामलक्ष्मणों (तथा) वानरों को समर में जीतकर आ जायँगे।" (ऐसा) कहने पर, ॥ २१०८ ॥

रावण का अपने वैभव का प्रदर्शन करना

—कानों के लिए विरल रूप में (इन वचनों को) सुनकर दशानन ने 'भानुज आदियों को भय उत्पन्न हो, ॥ २११० ॥

—(ऐसा) अपना वैभव राम-धरणीश को घनता से दिखाऊँगा', ऐसा सोचकर, सान्द्र प्रताप से निस्तन्द्र होकर, पूर्व में इन्द्र, नागेन्द्र, धनेन्द्र को जीतकर, शुल्क या कर के रूप में प्राप्त की गई घन-वस्तु-वितति को मँगाया। श्रेष्ठ दीधितियों के दीप्त होने पर चीनांबरों (कौशेय-वस्त्रों) को सुन्दरता से धारणकर, नाना दिशाओं में सुगन्धियों को बिखेरने वाले मृगमद (कस्तूरि) (तथा) घनसार (कर्पूर) से मिलित मनोज्ञ दिव्य चन्दन को चाहकर लेपन कर, सरस-मंजुल-पारिजात-प्रसूनों से विरचित मालिका विततियों को धारणकर, पंकजराग (पद्मराग) आदि बहुरत्न कलित कंकण,

पंकजरागादि बहुरत्नकलित । कंकणमुद्रिकांगद भुजाभरण
घनतरग्रैवेय घंटिकानेक । विनुतहारंबुलु विपुलंबुलैन
पदकंबु लादिगा बहुभूषणमुलु । पदकशुद्धिग वर्न्नै पर्चरिप दल्चि
कुंडलंबुल मेंडुकोनु मणिप्रभलु । गंडमंडलमुल गडलुकोनंग २१२०
चंडांशुमंडलोज्ज्वलमुलै दिक्कु । लोंडोंड वेलिगिचु नुरुकिरीटमुलु
दशशिरंबुल मिंचु दहनुडो यनग ।दशशिरंबुल लील धरियिंचि मिंचि
सुरवरानलयमासुरनाथ वरुण । मरुदर्थनायक स्मरसंहरुलनु
गंडडंचि जयिंचि कैकोन्न बिरुदु । गंडपेंडेंबु डाकाल धरिंचि
शर शरासन पट्टिस प्रास चक्र । परशु तोमर भिंडिवाल त्रिशूल
करवाल पाश मुद्गर चंद्रहास । परिघादुलगु वरप्रहरणश्रेणु
लिरुवदिकरमुल नेपार बट्टि । परिचारकुलु वेंट बलिसि येतेर
गोब्बुन नुत्तर गोपुरंबुनकु । गब्बु नुब्बुनु मीऱ गदलि शूलादि
हस्तुलै येंडगल्गि याप्तराक्षसुलु । विस्तरंबुग बरिवेष्टिंचि कोलुव
स्फुरितभूषणवस्त्र भूषितुलगुचु । निरुवंक मंत्रुलनेकुलु गोलुव २१३०

मुद्रिका, अंगद (एक प्रकार का आभरण), भुजाभरण, घनतर ग्रैवेय (कण्ठाभरण) घंटिका आदि अनेक विनुत (स्तुत्य) हार, विपुल (बहुल)-पदक आदि बहुभूषणों को पदकशुद्धि से, वर्णो के व्याप्त होने पर धारणकर, कुंडलों से मणिप्रभाओं के अधिकता से गंडस्थलों पर व्याप्त होने पर, ॥ २१२० ॥

—चंडांशु मण्डल (सूर्यबिंब) (के समान) उज्ज्वल हो, जहाँ-तहाँ दिशाओं को प्रकाशित करनेवाले उरु-किरीटों को, मानों दस सिरों से समुन्नत बने दहन (अग्निदेव) हों, ऐसा दस सिरों पर लीला से धारणकर, समुन्नत बना। सुरवर, अनल, यम, असुरनाथ, वरुण, मरुत् (पवन), अर्थनायक (कुबेर), स्मर-संहारक (शिव) (आदि) के पौरुष का दमनकर, जीतकर, ग्रहण किए प्रसिद्ध तोड़े को वामचरण में धारण किया। शर, शरासन (धनुष), पट्टिस, प्रास, चक्र, परशु, तोमर, भिंडिवाल, त्रिशूल, करवाल, पाश, मुद्गर, चन्द्रहास, परिघा आदि वरप्रहरण (आयुध)-श्रेणियों को बीसों हाथों में शोभा से धारणकर, परिचारकों (सेवकों) के साथ विवर्धित होते आने पर, झट से उत्तर के गोपुर की ओर दर्प और उत्कर्ष के अधिक होने पर, निकलकर, शूल आदि को हाथों में धारणकर, आप्त (प्रिय) राक्षसों के विस्तार से घेरकर, सेवाएँ करते रहने पर, स्फुरित-भूषण (और) वस्त्रों से भूषित होकर, दोनों तरफ़ अनेक मन्त्रियों के सेवाएँ करते रहने पर, ॥ २१३० ॥

दुद लेनि रत्नपंक्तुलु दापिनट्टि । पैदपेद्द पसिडिकुप्पेलु मीद नोप्प
विवरिंप नेनुबदिवेल संख्यलगु । धवळातपत्रमुल् दनुजुलु वट्ट
नल शेषफणमुलो यन नन्निवेल । सललित व्यजनमुल् सकियलु वून
निंदुरश्मुल बोलु नेनुबदिवेलु । चंदनगंधु लप्सरस लिरुवंक
दळुकुवेन्नेलल चंदमुन नासंख्य । गल चामरंबुलु गडुसंभ्रममुन
गंकणझणझणत्कारमुल् मेरय । नंकिंचि वेडुक नल्लन वीव
सुरल गेल्चिन जयस्फुरणलु मेरय । बिरुदु लेत्तुचु वंदिबृंदंबु वोगड
मंद्रमध्यमतारमान भेदमुल । जंद्रास्य लेदुर नेच्चचरिकलु पाड
सन्नुतमाणिक्य जालप्रभा स । मुन्नत सिंहासनोपरिस्थलिनि
नपराचलमु मीदि यर्कुनितोडि । युपमकु बात्रुडै योगि रावणुंडु
२१४०
वलनैन तन वैभवंबेल्ल मेरसि । कोलुवुंडे नुत्तरगोपुरंबुननु;
ना गोडुगुलनीड यादित्यु गप्प । वेगंबे चीकटि विलसिल्लुटयुनु
नावेळ मायामृगाजिनंबुननु । देवेंद्रमणिकांति दीपिंचु मेनि
वामभागमु मोपि वामभुजाग्र । सीम गपोलमूर्जितमुगा जेर्चि

—अन्तहीन रत्नपंक्तियों से जड़ित बड़े-बड़े स्वर्णपात्रों के ऊपर शोभित अस्सी हज़ार संख्या में धवल-आतपत्रों (छतरियों) के (सेवकों द्वारा) धारण किए जाने पर, शेषफण के समान, उतने हज़ार (अस्सी हज़ार) सललित व्यजनों को सखियों के धारण करने पर, इन्दुरश्मियों (चन्द्रकिरणों) के सम अस्सी हज़ार चन्दनगन्धी अप्सराओं के दोनों तरफ़ उज्ज्वल चन्द्रिकाओं के सम, उस संख्या के (अस्सी हज़ार) चामरों को अधिक संभ्रम से, कंकण-झनझनाकारों के मुखरित होने पर, उल्लसित हो, उत्साह से, धीरे-धीरे डुलाने पर, देवताओं पर विजय की स्फूर्ति को दीप्त करते हुए, वंदिवृन्द के बिरुदों का उल्लेख करते हुए स्तुति करने पर, समक्ष चन्द्रास्याओं (चन्द्रमुखियों) के मन्द्र-मध्यम-तारमान भेदों से प्रबोधगीत गाने पर, सन्नुत (स्तुत्य)-माणिक्य-जाल (समूह)-प्रभा से समुन्नत सिंहासन के उपरिस्थल पर, अपराचल पर अर्क के साथ उपमा के पात्र होते हुए क्रम से रावण, ॥ २१४० ॥

—अपने श्रेष्ठ वैभव के साथ समुज्ज्वल होते हुए, उत्तर गोपुर पर सभा में विराजमान हुआ। उन छतरियों के आदित्य को ढक देने पर, शीघ्र ही अन्धकार विलसित हुआ। उस समय माया-मृग के अजिन (चर्म) पर देवेन्द्रमणि की कान्ति से दीप्त शरीर के वाम भाग को टेककर, वाम भुजाग्र प्रदेश पर कपोल को उत्कृष्टता से टेककर, उग्रांशु (सूर्य)-बिंब के

यग्रांशुबिंबसमुज्ज्वलुंडयिन । सुग्रीवु तोंडलपै सौरिदि सौंदर्य
संपदलोलुक राजसमोप्प नोरगि । पेंपारु महिमचे ब्रियभक्तुडैन
पवनजु तोंडलपै बादपद्ममुलु । सवरण जाप निश्चलभक्ति नतडु
मृदुरीति नोत्त नर्मिलि नंगदुंडु । कदिसि दक्षिणभुजाग्रंबिरुगेल
नंदि यंगुळमुलोय्यन बट्टुचुंड । वंदिबृंदम्मुल वैखरि निलिचि
नल नील भूल्लूकनायकप्रमुखु । ललरुचु सकललोकाराध्यचरण !
२१५०
जानकीहृदयांबुजातषट्चरण ! । दीनार्तिहरण! कीर्तितकृपाभरण!
हरनुतनाम! सूर्यकुलाब्धिसोम ! । यरिभीम! रघुराम! " यनि सन्नुतिंप
गंदनिपूर्ण राकाचंद्रु बोलु । मंदस्मितानन मंडलंबुननु
नविरळकरुणामृतापूर्ण मगुचु । धवळारविंद-सौंदर्यंबु देगडु
तेलिगन्नुगवकांति देसलेल्लनिंड । ललितावलोकविलासचंद्रिकलु
वेदचल्लगा गरद्वितयसन्निहित । वदनुंडु राक्षसवरमर्मविदुडु
नगु विभीषणुतोड नतिरहस्यंबु । लगु माटलाडुचु नप्पटप्पटिकि
रमणीयलील श्रीराघवेश्वरुडु । नमर दक्षिणमुखमै युन्नवाडु
गावुन गोपुराग्रमुन गोल्वुन्न ।रावणु बोडगांचि रमण निट्लनियै:

समान समुज्ज्वल सुग्रीव की जाँघों पर, क्रम से सौंदर्य की सम्पदाओं के उमड़ने पर, राजसी ठाठ से टेककर, (राम) अतिशय महिमा से प्रियभक्त पवनज की जाँघों पर, पदपद्मों को समुचित विधि से पसारे रहे । वह (हनुमान) निश्चल भक्ति से, मृदुरीति से (चरणों को) दबाता रहा । प्रेम से अंगद (उनके) नियराकर दक्षिण भुजाग्र को दोनों हाथों से पकड़कर, उँगलियों को दबा रहा था । नल, नील, भल्लूकनायक आदि शोभा से वंदिबृन्दों के समान खड़े होकर, (यह कहते) "हे सकल लोकाराध्य चरणवाले ! ॥ २१५० ॥

—जानकी हृदय-रूपी अंबुजात (कमल) के षट्चरण (भ्रमर)! दीनार्तिहरण! कीर्तितकृपाभरणवाले ! हरनुत नाम वाले ! सूर्यकुलाब्धि सोम (चन्द्र) ! अरिभीम ! हे रघुराम !" प्रशंसा कर रहे थे । अमलिन पूर्ण-राकाचन्द्र सम मन्दस्मित-आननमण्डल को अविरल करुणामृतपूर्ण बनाते हुए, धवल-अरविन्द के सौन्दर्य की अवहेलना करनेवाले स्वच्छ नेत्रद्वय की कान्ति को दिशाओं में भरते हुए, ललित-अवलोकन-विलास-चन्द्रिकाओं को बिखेरते हुए, कर-द्वितय (युग्म) को वदन के सन्निहित रखनेवाले (हाथ जोड़नेवाले) (तथा) राक्षसवरों के मर्म को जाननेवाले विभीषण से अति रहस्यपूर्ण बातें करते हुए भी रमणीय लीला से श्री राघवेश्वर ने समुचित रूप से दक्षिण की ओर मुख रखे रहने के कारण, गोपुराग्र पर सभा लगाए (बैठे) रावण

"नो विभीषण ! चूडुमुन्नतंबैन । या विशालपु गोपुराग्रंबुनंदु २१६०
भोगियै यॆंतयु बॊगडॊंदुवाडु । बागॊप्प वानिकि बट्टिनयट्टि
शरदभ्र विभ्रमच्छत्र संघमुल । बरगॆडु नीड भूभागंबु गप्प;
नारूढवैभवायतवृत्तितोड । नीरीति नुन्नवाडितडॆव्व" डनिन
नारामु जूचि यिट्लनि विन्नविंचॆ । नारावणुनि तम्मुडगु विभीषणुडु:
"देव ! राघव ! वीडु देवारियैन । रावणु डमरविद्रावणुं; डखिल
दिविजुलचे गॊन्न दिव्यभूषणमु । लविरळंबुग बूनि याप्तुलैनट्टि
दनुजमुख्युलु गॊलव दनकु निंडार । बनुपडगा नॆनुबदिवेल संख्य
गल गॊडुगुलु वट्ट घनचामरंबु । ललवुमै वीवंग नालवट्टमुलु
पूनंग दनदु पॆंपुनु राजसमुनु । दा निट्टि दनुचु मोदमुन मीयॆदुर
जूपंग दलचि भासुरवैभवमुन । गोपुरोपरिसीम गॊलुवुन्नवाडु" २१७०
ना विनि नव्वि मानवकुलेश्वरुडु । देवारिगर्वंबु दीपंग दलचि

श्रीरामुडु रावणुनि छत्रचामरमुलु दॆगनेयुट

वॆनुकॊनि "लक्ष्मण! विल्लु दॆ"म्मनुचु। दनकु बिम्मट नुन्न तम्मुनिचेति

को देखकर सुन्दरता से यों कहा—"हे विभीषण ! देखो, उन्नत बने उस विशाल गोपुराग्र पर, ॥ २१६० ॥

—भोगी बन अधिक सराहनीय स्थिति में रहकर, बड़ी खूबी से उसके लिए धारण किए गए शरदभ्र का विभ्रम (उत्पन्न करनेवाले)-छत्र-संघों (समूहों) से व्याप्त छाया के भूभाग को आच्छादित करने पर, आरूढ़-वैभव-आयत-वृत्ति से इस प्रकार स्थित वह कौन है ?" (ऐसा) कहने पर राम को देखकर, रावण के अनुज विभीषण ने इस प्रकार निवेदन किया—"हे देव ! हे राघव ! यह देवारि रावण है, अमरों का विद्रावण (रुलानेवाला) है। अखिल दिविजों से प्राप्त दिव्यभूषणों को अविरलता से धारणकर, आप्त दनुज-मुख्यों के सेवाएँ करने पर, अपने को पूर्णता से विराजमान अस्सी हज़ार की संख्या में छत्रों को धारण करने पर, घन-चामरों को सुन्दरता से झलने पर, व्यजनों के धारण करने पर, अपनी शोभा तथा राजस को आपके समक्ष दिखाना चाहकर, भासुर वैभव के साथ गोपुर की उपरि-सीमा (ऊपर के भाग) पर दरबार लगाए (बैठा) है ॥ २१७० ॥

ऐसा कहने पर सुनकर, हँसकर, मानव-कुलेश्वर ने देवारि (रावण) के गर्व का भंग करने का सोचकर,

श्रीराम का रावण के छत्र-चामरों का खण्डन कर देना

'हे लक्ष्मण ! धनुष लाओ' कहते हुए, अपने पीछे स्थित अनुज के हाथ

धनुवु डाचेत नेंतयु वेड्क नंदि । कोंनि दक्षिणांघ्रियंगुष्ठान विंटि
गोंनयंबु बूनि ग्रक्कुन नेक्कुवेट्टि । कनदर्धचंद्रमार्गण मरिबोसि
धीलक्षितोल्लासि तेंगनिड दिगिच्चि । यालील नोंड्रगिनयट्लने युंडि
यल चामरव्यजनातपत्रौघ । मुलमीद नेसें नद्भुतवृत्ति मेंड्रय;
शरमोंक्कटियु बदिशरमुलै नूरु । शरमुलै बदिवेलशरमुलै मरियु
लक्षयै कोटियै लक्षिंचि चूड । नक्षणंबुन संख्यलन्नियु गडचि
तालवृंतंबुलु दालुचु चेडियल । मेलिचामरमुलु मेड्रयिचु सतुल
संगीतमुलु सेयु सरसिजमुखुल ।बोंगुचु गैवारमुलु सेयु बोंट्ल २१८०
धवळातपत्रमुल् धरियिंचु दैत्य । निवहंबुलनु गोंल्चि निल्चन भट्रुल
गरमुलु द्रुंपक गळमुलु द्रेंप । कुरमुलु नाटक युरुकिरीटमुलु
धर डोंल्लजेयक तललु खंडिप । 'करु दरु दिदि' यनि यमरुलु वोंगड
नालवट्टंबुलु नातपत्रमुलु । देलुचु जल्लन दिविनिंड नेंगसि
कोंलुवुलो गोंन्नि दिक्कुलयंदु गोंन्नि । कोंलुवुलोपलि दैत्यकोटिपै गोंन्नि
लंकलो गोंन्नि यालवणाब्धि गोंन्नि । लंकेशुपै गोंन्नि लघुलील बडियै
नलवुमै नट्टुचेसि यादिव्यशरमु । तोंलगक रघुरामुदोंन जोंच्चें; नंत

के धनुष को, वाम कर में अधिक उत्साह से ग्रहण कर, दक्षिण-अंघ्रि (चरण) के अँगूठे से धनुष की प्रत्यंचा पकड़कर, शीघ्र (उसे) चढ़ाकर, अर्द्धचन्द्र-मार्गण (बाण) का संधान कर, धी-लक्षित-उल्लास से, पूरी तरह से खींचकर, उसी प्रकार लेटे ही रहकर, अद्भुत वृत्ति से प्रकाशित होकर, उन चामर-व्यजन-आतपत्र-ओघ (-समूह) पर, छोड़ दिया। वह एक शर दस शर हो, सौ शर हो, दस हज़ार शर हो और लाख हो, करोड़ हो, ध्यान से देखने पर उसी क्षण सभी संख्याओं को पारकर, तालवृन्तों को धारण करनेवाली सुन्दरियों, श्रेष्ठ चामरों को डुलानेवाली सतियों, संगीत गानेवाली सरसिजमुखियों, फूलकर कीर्तिगान करनेवाली लतांगियों, ॥ २१८० ॥

—धवल आतपत्रों को धारण करनेवाले दैत्य-निवहों (समूहों) की सेवाएँ करते स्थित भटों के हाथों को काटे बिना, कण्ठों को काटे बिना, उर (स्थलों) में गाड़े बिना, उरु-किरीटों को धरा पर डुलाए बिना, सिर काटे बिना ही, 'विरल है, विरल है' ऐसा अमरों के स्तुति करने पर, (छत्र-चामर आदि के) कण्ठ-सूत्रों को काटता चला गया। उस अवसर पर कट गिरे वे चामर, आलावर्त (छत्र), आतपत्र (छत्र) उड़ते हुए, बिखरकर, समस्त आकाश में व्याप्त हो, उस सभा में कुछ, दिशाओं में कुछ, सभा की दैत्य-कोटि पर कुछ, लंका में कुछ, उस लवण समुद्र में कुछ, लंकेश पर कुछ, लघुलीला (सरलता) से गिर पड़े। सरलता से ऐसा करके वह दिव्यशर फिर

महितातपत्र चामर तलावृंत । रहित दंडधरासुरश्रेणि नडुम
नुन्न रावणु डप्पुडॉप्परि चूड ।दन्नु गॉंपोव नुद्धति वच्चियुन्न२१९०
दुर्वारुलगु यमदूतल नडुम । गर्वबु चेंडियुन्न गति नुंडि चाल
वेंरिगंदि रघुरामु विलुविद्यपेंपु ।तरिगॉनि तलपोसि तललूचियूचि
बट्टु कैंवडि मैंच्चिच पटुतरध्वनुल । बेंट्टेत्ति रघुरामु बेंकॉंनि पॉंगडें:

रावणुडु रामुनि धनुर्विध्याकौशलमुनु गॉनियाडुट

"नल्लवो रघुराम ! नयनाभिराम! । विल्लुविद्यगुरुव ! वीरावतार!
करशरलाघवक्रमकळानिपुण ! । स्फुरदुरुचापसंशोषित कृपण !
भुजसार दृढ़मुष्टि! भुवनविख्यात! । विजितरिपुव्रात ! विजयसमेत!
मानव राजकुमारकंठीर । वा.! नव्यदिव्यशस्त्रास्त्रसंपन्न!
स्फारघोराक्षयबाणतूणीर ! । वीराग्रगण्य ! यो विश्वशरण्य !
बापुरे ! रामभूपाल ! लोकमुल । नीपाटि विलुकाडु नेर्चुने कलुग ?
बाटिंचि पुरमुलपै बड्डु हरुनि । येटॉप्पु,निंदु नी येटॉप्पुगाक! "२२००

रघुराम के तूणीर में प्रविष्ट हो गया। तब महित आतपत्र, चामर, तालवृन्त से रहित दंडधर (दंडों को धारण किए) असुर श्रेणी के बीच स्थित रावण तब शोभारहित हो इस गति से था, मानों उद्धत गति से अपने को ले जाने के लिए आए हुए, ॥ २१९० ॥

—दुर्वार (दुर्निवार) यमदूतों के बीच गर्व को खोए बैठा हो। अधिक आश्चर्यचकित हो रघुराम की धनुर्विद्या के महत्त्व के बारे में सोचकर, सिर हिला-हिलाकर (सराहना कर) भट्ट (वन्दीजन) के समान प्रशंसाकर, पटुतर ध्वनियों से रघुराम का नाम लेकर, (उसने) प्रशंसा की।

रावण का राम के धनुर्विद्या-कौशल की प्रशंसा करना

"वाह रे ! हे रघुराम ! हे नयनाभिराम ! हे धनुर्विद्या गुरु ! हे वीरावतार ! हे कर-शर-लाघव के क्रम में कलानिपुण ! स्फुरत्-उरु-चाप से संशोषित कृपण (समुद्र) वाले ! भुजसार-दृढ़ मुष्टि वाले ! हे भुवन विख्यात ! हे विजित-रिपु-व्रात (समूह) वाले ! हे विजयसमेत ! हे मानव-राजकुमारों में कंठीरव (सिंह) ! हे नव्य-दिव्य-शस्त्र-अस्त्रों से सम्पन्न ! हे स्फार-घोर-अक्षय-बाण-तूणीर वाले ! हे वीराग्रगण्य ! हे विश्वशरण्य ! बापरे ! हे रामभूपाल ! लोकों में तुम्हारे समान धनुर्धारी कोई हो सकता है ? सोचकर पुरों (त्रिपुरों) पर गिरा हर (शिव) का आघात मानने योग्य है और अब तुम्हारा आघात मान्य है।' ॥ २२०० ॥

यनि यनि पदिनोळ्ळ नंदंद पौगड । विनि मंत्रु लादैत्यविभुन
किट्लनिरि:
"पगवानि नीरीति बंतंबु विडिचि । पौगडुदुरे दैत्यपुंगव ! यिट्लु ?
पौगडिन भय मंदबोलुनटंचु । बगवारु दनवारु बलुचगा जूतु;
रदिगाक राचकार्यमुगा" दटन्न । मदि नव्वि यमरारि मंत्रुल कनियें:
"विलुविद्यपेंपुनु विक्रमक्रममु । गलितनंबुनु बाहुगर्वराजसमु
लादियौ गुणमुल नधिकुडैनट्टि । कोदंडदीक्षादिगुरुनितो राज
वरुनितो रामभूवरुनितो नौरुलु । परिकिंचि चूड नेपट्टुननैन
साटिये यिम्मूडु जगमुलयंदु ? । मेटिशूरुल पेंपु मेच्चंग वलदे ?"
यनि नीति सेप्पुचु नच्चोटु वासि । दनुजेश्वरुडु वोय; दनुजनायकुलु
तेगिपडु गोडुगुल तेऱगोप्प जूचि । मिगिलिन भीतिमै मेल्लन जनुचु
२२१०
नट्टु रामु शौर्यंबु नतुल विक्रममु । बट्टुगति वोगडुचु बलुतेऱंगुलनु
"ना राघवुडु करुणांबुधिगान । घोरबाणंबुन गोडुगुले त्रुंचे;
नट्टुवंचि येसिन नंदऱ तललु । पट्टुतरंबुग नुच्चि पाऱवे?" यनिरि;

(इस प्रकार) बार-बार कहकर, दसों मुँहों से निरन्तर सराहने पर, मन्त्रियों ने दैत्यविभु से यों कहा—"हे दैत्यपुंगव ! इस प्रकार अहंकार को छोड़कर, कहीं शत्रु को सराहते हैं ? सराहने पर शत्रु और अपने लोग यह सोच कि यह भीत हो गया है, (सराहनेवाले को) उपेक्षा की दृष्टि से देखते हैं। यही नहीं, यह राजा के (योग्य) कार्य नहीं है।" ऐसा कहने पर मन में हँसकर अमरारि (रावण) ने मन्त्रियों से कहा—"धनुर्विद्या का आधिक्य, विक्रम का क्रम, तेज, बाहु-गर्व, राजस आदि गुणों में (सबसे) अधिक बने कोदण्ड-दीक्षा-गुरु, राज-वर (राजश्रेष्ठ) राम-भूवर के साथ दूसरों की (तुलना कर) देखें, तो इन तीनों जगों में किसी भी प्रकार से (उनकी) समता कौन कर सकता है ? श्रेष्ठ शूरों के आधिक्य की प्रशंसा नहीं करनी चाहिए ?" ऐसा नीति (-वाक्यों) को कहते हुए, उस जगह को छोड़, दनुजेश्वर चला गया। दनुज-नायकों ने कटकर गिरे छत्रों के विधान को ढँग से देखकर, अत्यन्त भीति से हौले-हौले जाते हुए, ॥ २२१० ॥

—राम के शौर्य, अतुल-विक्रम (तथा) पटुगति को अनेक प्रकार से सराहते हुए, कहा—"वह राघव करुणासागर है अतः घोर बाण से केवल छत्र ही काट डाला। ऐसा न कर, (अस्त्र-) संधान कर डालता तो सब के सिर महत्तर रूप से फूट न गिरते ?"

वानरुलु लंकनु ध्वंसपटलमु गाविंचुट

इट नंत मरि राघवेंद्रुंडु गार्य । घटनाप्रयत्नसंगतचित्तु डगुचु
ननुजविभीषणार्यमजादुलेन । तनवारि यनुमति दगुमुहूर्तमुन
बनिचे लंककु लग्गपट्ट वानरुल; । बनिचिन वानरबलमुलु लंक
घनगति निक्कडक्कड बड नार्चि । वनजाप्तकुलु रामवल्लभु जूचि
"देव ! माशौर्यंबु तेंऽगोप्प जूडु: । येविधि व्राणंबुलित्तुमु नीकु"
ननि पर्वतंबुलु नवनीरुहमुलु । गौनि वेलु लक्षलु कोटानकोट्टु
लक्षौहिणुलु गुमुले कूडिवच्चि । याक्षणंबुन मुट्टिरा लंककोट; २२२०
मुट्टिन "गेलुपु रामुनकु नौ" ननुचु । दट्टिंचि पेर्चि युदग्रुलै कविसि
वहुकाष्ठपाषाण पादपावळुल । नहितदुर्वारुलै यंदंद पेर्चि
तरमिडि यायगड्तलु पूड्चुनप्पु । डुरुशक्ति गपिवीरु लुन्नविधंबु
पौलुपार नपुडु चंपुडु गट्टुमीद । दलमुगा नुन्नचंदमु निव्वटिल्ले;
गुमुदु डत्तरि बदिकोटुलतोड । समदुडै तूर्पुमोसालकु नरिगे;
वै दळंबै युंडि बलसि राक्षसुलु । पै द्रोचि राकुंड बलिमि जूपुचुनु

वानरों का लंका को ध्वंसपटल करना

यहाँ पर तब राघवेन्द्र कार्य-घटना के प्रयत्न में संगत-चित्तवाला होता हुआ, अनुज, विभीषण, सूर्यपुत्र आदि अपने लोगों की अनुमति से, उचित मुहूर्त में लंका पर आक्रमण करने वानरों को भेजा। भेजने पर वानर-सेनाओं ने घनगति से गर्जन किया जिससे लंका जहाँ-तहाँ धँस गई। (उन्होंने) वनजाप्तकुल (सूर्यवंश) वाले राम-वल्लभ को देखकर कहा— "हे देव ! हमारे शौर्य को उचित विधि से देखिए। देखिए हम किस प्रकार आपके लिए प्राण देंगे।" (ऐसा) कह, पर्वतों, वृक्षों को लेकर, हजारों, लाखों, करोड़ों, अक्षौहिणियों में झुंड बाँधकर, उसी क्षण लंका को घेर लिया ॥ २२२० ॥

घेर लेने पर, 'विजय राम की होगी' कहते, भर्त्सना करते, क्रम से उदग्र हो, व्याप्त हो, अनेक काष्ठ, पाषाण, पादप समूहों के साथ, अहित (शत्रु भाव) से दुर्वार वन, जहाँ-तहाँ क्रम से उन परिखाओं को पाटने लगे। तब उरु-शक्तियुत हो कपिवीर शोभा से इस प्रकार दीख रहे थे मानों वध्यभूमि पर वधिक हों। उस अवसर पर कुमुद दसकरोड़ (वानरों) के साथ, समद हो, पूर्व की ड्योढ़ी की ओर गया। वली हो महान् वाहुवलवाला शतबली अस्सी करोड़ कपियों के अपने साथ क्रम से

गौनकौनि यॆनुबदिकोट्ल कपुलु । तनतोड बेंचि युद्दंडत नडव
घनबाहुबलुडु लंककु दक्षिणमुन । जनियुंडे बलियुडै शतबलि; यंत
बडुमटिदेसकुनु बदिकोट्ल कपुलु । नडव सुषेणु डुन्नति नेगियुंडेः
रामलक्ष्मणुलुनु राक्षसेश्वरुडु । नामर्कटेश्वरुं डायुत्तरंपु २२३०
वाकिट नुंडिरि; वनचरोत्तमुल । नाकोट लॆक्किंचि यडरि यार्चुचुनु
गजुडुनु गवयुंडु गंधमादनुडु । भुजबलाढ्युडु शरभुडु नुग्रवृत्ति
दट्टिंचि कोट यंतटिकिनि लग्ग । पट्टिंचुचुंडिरि पलुमारु दिरिगिः
कोपिंचि वानरकोट्लु गविसि । योपिनंतंत नॊंडोरुल द्रोयुचुनु
इदि कौत्तडमुकोट यिदि दनि कॊम्म । यिदि यदि यनि येमि यॆरुगराकुंड
वडि गोट लॆक्कि याळ्वारुलपै कुरिकि । पॆंडबॊब्बलिडि तमपेरु वाडुचुनु
नुडुगक तमतोक लॊडिसॆलल् सेसि । वडि ड्रालु लोनिकि वैचि यार्चुचुनु
म्राकुल तुदलु समंबुगा बट्टि । वीक लोपलियिड्लु विरुगवैचुचुनु,
गुडुलु नट्टळ्ळुनु गोपुरंबुलुनु । बडदन्नि कोटपै बरुवुलॆत्तुचुनु
नट्टळ्ळतोडन यसुरवर्गंबु । नॆट्टन गूलिन निलिचि नव्वुचुनु २२४०
निम्मुल रूपिंचि यिदे चूडुडनुचु । गॊम्मुलु विरुगंग गुंड्लु वैचुचुनु

उद्दंडता से चलने पर, ऊपर से बलयुत हो आनेवाले राक्षसों को रोकते हुए, बलप्रदर्शन करते हुए, लंका के दक्षिण की ओर गया। तब दस करोड़ कपियों के (साथ) चलने पर, उन्नति (आधिक्य) से सुषेण पश्चिम दिशा में गया। रामलक्ष्मण, राक्षसेश्वर (विभीषण), मर्कटेश्वर उस उत्तर के, ॥ २२३० ॥

—द्वार पर रहे। वनचरोत्तमों को उन प्राकारों पर चढ़ाकर अतिशयता से सिंहनाद करते हुए, गज, गवय, गन्धमादन, भुजबलाढ्य शरभ कई बार घूमकर, उग्रवृत्ति से डाँटते-फटकारते हुए, समस्त दुर्ग का अधिरोहण करा रहे थे। क्रुद्ध हो वानर-कोटि (-समूह) व्याप्त होकर, भरसक एक-दूसरे को ढकेलते हुए, यह गुंबजवाला दुर्ग है, यह उसका भाग है, ऐसा कुछ समझ में न आए, इस प्रकार शीघ्र प्राकारों पर चढ़कर, मन्दिरों पर कूदकर, अपना नाम लेते हुए घोर-गर्जन करते हुए, वहीं न रुककर, अपनी पूँछों को गोफन बनाकर, झट से पत्थर (दुर्ग के) भीतर फेंककर सिंहनाद करते हुए, वृक्षों के मूल भागों को समरूप से पकड़कर, उत्साह से ऐसा फेंकते हुए जिससे (दुर्ग के) भीतर के मकान ढह जाएँ, गृह, अट्टालिकाएं (तथा) गोपुरों को मार गिराकर, प्राकारों पर दौड़ते हुए, अट्टालिकाओं के साथ असुरवर्ग के अतिशयता से गिरने पर हँसते हुए, ॥ २२४० ॥

—मनोज्ञता से निरूपित करते हुए, 'यही देखो' कहते हुए, चट्टान ऐसे फेंक

दोरणावळुलु गैदुवुलु राक्षसुलु । जारुपताकाध्वजच्छत्रमुलुनु
गोटलु गोम्मुलु गूलुट चूचि । व्रेट्टुन दिक्कुलु व्रील नार्चुचुनु
मुंचि कोंडलु करम्मुल बिट्टु वट्टि । दंचनंबुलकिवि दंचनालनुचु
ग्रच्चर नट्टु विरुगंग वैचुचुनु । मच्चरंबुन बलुमारुनु गपुलु
वडि निट्लु तमचेति नाटुलचेत । गुड्डु बेट्टिदमुग लंकापुरिलोन
गूलेडु मेडलु ग्रंगु वाडलुनु । व्रीलेडु गोडलु विरुगु माडुवुलु
नुरुमैन यिड्लुनु नुग्गुनूच्चैन । तरुचु गुळ्ळुनु ननंतंबुलै पडग
दानवक्षयकरोत्पातंबु लनग । वूनि यैंतयु भीति बुट्टिचुटयुनु
"इट्टु गनि यॆरुगमे यॆन्नडु" ननुचु ।जटुलतराट्टहासमुलु सेयुचुनु २२५०
नार्चु वानरुलपै नादैत्युलेल्ल । बेर्चि यॆंतयुनु गोपिंचि शूलमुल
बोंडिचियु गरवालमुलनु व्रेसियुनु । गड्डुवेट्टिदंबुगा गदल मोदियुनु
जोच्चि तन्नियु बरशुवुल व्रच्चियुनु । ग्रुच्चि यगड्तल गूल द्रोचियुनु
दंचैनगुंड्लचे दार्टिचि कडिमे । मुंचिन लग्ग यिम्मुल विडिपिंचि
यलरि राक्षसुलार्व नाकपुलार्व । निलयु दिक्कुलु जलियिचै नैंतयुनु;

रहे थे जिससे गुंबज टूट जाएँ। तोरण-समूह, हथियार, राक्षस (तथा) चारु (सुंदर) पताकाएँ, ध्वज, छत्र, दुर्ग, गुंबज (आदि के) गिरते देख, एक साथ दिशाओं के बेध डालनेवाली गर्जनाएँ करते हुए, वड़े पर्वतों को हाथों में दृढ़ता से धारणकर महान् गोलायुधों से बढकर ये गोलायुध हैं, ऐसा कहते वेग से उन्हें ऐसा फेंक रहे थे जिससे (लंका) टूट गिर जाए। मात्सर्य से कई बार कपि इस प्रकार झट अपने हाथ के प्रहारों से अधिक भयद रूप से प्रहार करने लगे। (तब) लंकापुरी में ढहनेवाले सौध, धँसनेवाले मोहल्ले, गिरनेवाली दीवारें, टूटनेवाले भवन, चूर-चूर बने मकान, चूर्ण-चूर्ण बने असंख्य मन्दिर, (ये सब) अनंत (असंख्य) हो गिरने पर मानों वे दानव-क्षयकर-उत्पात हों, ऐसा अधिक भीति को उत्पन्न करने पर, 'ऐसा हमने कभी देखा नहीं है' कहते हुए, चटुलतर-अट्टहास करते हुए, ॥ २२५० ॥

—सिंहनाद करनेवाले वानरों पर, वे सभी दैत्य क्रम से अत्यधिक क्रुद्ध हो, शूलों से भोंककर, करवाल चलाकर, अतिभयंकरता से गदाओं से प्रहार कर, घुसकर लात मारकर, परशुओं से चीरकर, घुसेड़कर, खंदकों में गिरा-ढकेलकर, महान् गोलायुधों से आहतकर, साहस से प्राकारों को (वानरों से) मुक्त करने पर, प्रसन्न हो राक्षसों ने सिंहनाद किया। उन कपियों के भी सिंहनाद करने पर भूमि तथा दिशाएँ अधिक विचलित हुईं। व्याकुल हो दिग्गज चिंघाड़ उठे। आकाश भी फट गया। खौलते अदहन के समान

गलगि दिक्करुलु घींकारंबुलिच्चे; । वेलुकुडि या निंगि बीटलु वारे;
ग्रागिन येसरुलगति नब्धुलुडिके; । वेगे भूभागंबु; वेंड्रचे भूतमुलु;
गुलगिरुलच्चनगुंडुल माड्कि । निलमीद नंदंद येत्तेत्ति पडिये;
नुरगाधिपति विषं बोलिके; गूर्मंबु । गिरियु नोंडोंटितो ग्रिंदुमीदय्ये;
नाकारि यप्पुडु नडुचक्कि नुन्न । भीकरसैन्यंबु बिलिचि युब्बिच्चि २२६०
"कडिमि सोंपारंग गपिसेन लंक । वेडल दाकुं" डनि वेस बुरिकोलुप
भेरीरवंबुलु भीकरकाह । ळारवंलुनु शंखारवंबुलुनु
बटहारवबुलु बहुतूर्यरवमु । बटुतरनिस्साण भांकारमुलुनु
दुरगहेषितमुलु दोरंबुलैन । करिबृंहितंबुलु घननेमिरवमु
लत्तरि जेलगु भुजास्फालनमुलु । जित्तंबु लगलिचु सिंहनादमुलु
नडरि योंडोंड ब्रह्मांडंबु लविय । सडलि दिग्देवतासमिति भीतिल्ल
बलुविडि राक्षसप्रवरसैन्यमुलु । वलनोप्प नालुगुवाकिंड्ल वेडले
नटु शांतवक्त्रंबुनंदु दक्कंग । बटुभीषणाकृति ब्रळयरुद्रुनकु
नुन्न मुखंबुल नुडुगक वेडलु । चुन्न मंटलमाड्कि नोक्कट मेरिसि;

समुद्र खौल उठे। भूभाग पीड़ित हो उठा। भूत भीत हुए। कुलपर्वत अच्चन-गुंडु[1] के समान जहाँ-तहाँ उछल-उछल गिर पड़े। उरगाधिपति (सर्पराज) ने विष उगल दिया। कूर्म और गिरि (मंदर पर्वत) आपस में नीचे-ऊपर हो गए। नाकारि (राक्षस राजा) तब बीचोंबीच स्थित भीकर सैन्य को बुलाकर, (उन्हें) सराहकर, ॥ २२६० ॥

—'साहस के शोभित होने पर कपिसेनाओं को लंका के बाहर भगा दो।' यह कह झट भड़काया। (तब) भेरियों के रव, भीकर-काहलों के रव, शंखों के रव, पटहों के रव, बहुतूर्यों के रव, पटुतर-निस्साणों के भांकार, तुरगों के हेषित (हिनहिनाहट), महत्तर करियों के बृंहित (चिंघाड़), घन नेमियों (रथ-चक्रों) के रव, (तथा) उस अवसर पर विवर्धित भुजाओं के आस्फालन, चित्त को विकल बना देनेवाले सिंहनाद (आदि) विजृंभित होकर, ब्रह्माण्डों के फट जाने पर, दिग्देवतासमिति के भीत होने पर, राक्षस-प्रवर की सेनाएँ शोभा से चारों द्वारों से निकल पड़ीं। एक साथ वे ऐसे चमक उठे मानों शांतवक्त्र को छोड़ पटुभीषणाकृति वाले प्रलयकाल रुद्र के सभी मुखों से अनारत निकलनेवाली ज्वालाएँ हों।

1. बालिकाओं के एक खेल में प्रयुक्त गोलाकर छोटे पत्थर।

वानरराक्षसुल द्वंद्वयुद्धमु

वेंडलि वानरसेन वेंस दाकुनपुडु । तडयक द्वंद्वयुद्धमुनकु जोच्चि २२७०
कडिमिमै नप्पुडंगदु निंद्रजित्तु । गडु बेट्टिदवुगा गद गोंनि व्रेसे
वज्रंबु बट्टि पर्वतमुन कोंगसि । वज्रि वेसिनक्रिय वारणलेक;
यंगदुंडुनु बेंचि यायिंद्रजित्तु । संगरंबुन गिट्टि समशक्ति मेंरसि
भूरिभूधरशृंगमुन वेंचि वैंचि । सारथिरथरथ्यचयमुल जदिपें;
वारक येसें दुर्वारुडै मूडु । क्रूरास्त्रमुल ब्रजंघुंडु संपाति;
विजयुडै यतडुनु वेंस नश्वकर्ण । कुज मेत्तुकोंनि प्रजंघुनि बडवैचें;
विनतुनि रंभुनि वेंस नोंचि पेंक्कु । घनबाणमुल नतिकायुंडु पेचें;
बूनि यय्यिद्दरु भूरिशैलमुल । वानिसेननु वानि वडि नोंचिरपुडु;
दट्टिपुचुनु महोदरुडु सुषेणु । गिट्टि यातनिमीदि किनुकच्चुपडग
नडरिंचें बाणंबु लैदुनु मूडु । वेंडदवक्षंबुन विपुलफालमुन; २२८०
वानि रथ्यंबुल वानि सारथिनि । वानि रथंबु बर्वत मोंक्कटेत्ति
नलियंग जाव जूर्णंबुलै पोव । जेलगि यार्चुचु नासुपेणुंडु वैचें;

वानर और राक्षसों का द्वन्द्वयुद्ध

(ऐसा) निकलकर झट वानरसेना से भिड़कर, अविलम्ब द्वन्द्वयुद्ध करने लगे ॥ २२७० ॥

साहस से तब अंगद पर इन्द्रजित्त ने अधिक काठिन्य से गदा ले प्रहार किया, मानों वज्र को लेकर उछलकर वज्री (इन्द्र) ने पर्वत पर दुर्निवार रूप से प्रहार किया हो। अंगद ने क्रम से उस इन्द्रजित्त के नियराकर, समशक्ति से प्रकाशित होकर, भूरिभूधर शृंग को क्रम से डालकर, सारथी, रथ और रथ्यचय को चूर-चूर कर दिया। प्रजंघ ने दुर्वार हो, न रुककर, तीन क्रूर अस्त्र सम्पाति पर डाले। वह भी विजयी हो झट अश्वकर्ण (नामक) कुज (वृक्ष) को उठाकर प्रजंघ को गिरा दिया। अतिकाय ने विनत और रंभ पर झट अनेक घन-बाण डालकर सिंहनाद किया। लगकर उन दोनों ने तब भूरि शैलों से उसकी सेनाओं का नाश कर दिया। महोदर भर्त्सना करते हुए सुषेण के निकट जाकर, उसपर का क्रोध प्रकट होने पर, विशाल वक्ष पर पाँच और विपुल फाल (ललाट) पर तीन अस्त्र चलाकर शोभित हुआ ॥ २२८० ॥

सुषेण ने विजृंभित होकर, सिंहनाद करते हुए, एक पर्वत को उठाकर (हाथ में लेकर) उसके रथ्यों तथा सारथी पर डाल दिया जिससे वे दबकर, चूर होकर मर गए। और जांबवान ने विशाल वृक्ष को ज़ोर से घुमाते

मरि जांबवंतुंडु मकराक्षुमीद । बिरबिर द्रिप्पुचु बैनुम्राकु वैचें;
नडुमने यदि द्रुंचि नाटिंचें नतडु । कडुबेंक्कुशरमु लुग्रस्फूर्ति मेंरय
नतनि भुजंबुल नतनि फालमुन । नतनि वक्षंबुन नतिलाघवमुन
नाजांबवंतुंडु नलुकमै वानि । भाजनंबुग जेय बर्वतंबोंकटि
वैचिन रथमुनु वररथाश्वमुलु । जूचेंडुनंतलो जूर्णबुलय्यें;
शरमुलु पेंक्किट शतबलि गिट्टि । युरुलाघवमुन विद्युज्जिह्वुडेय
नतनि वक्षमु गाड नत्युग्रभाति । शतबलि यॊक्कवृक्षंबुन वैचें;
बेंक्कंड्रु दैत्युल पीचंबु लणचि । पेंक्कुचंदंबुल बेंचिन गजुनि २२९०
दप्पक प्रमदुडत्तरि जूचि किनिसि । विप्पैन वनचरविभुनि वक्षंबु
शूलंबु गोनि पॊडुचुटयुनु जूचि । सालवृक्षमुन राक्षसुनि नागजुडु
व्रेयंग नतडुनु वेस मृतुंडय्ये । नायेंड नगचरु लार्चि मोदिप;
ननि गुंभकर्णुनि यग्रनंदनुडु । घनुडु कुंभुडु प्लवंगमुल बेंल्लडरि
कुत्तुकलो वैचिकोनग धूम्रुंडु । नेंत्ति वक्षमुबट्टि येपुतो वैचें;
ग्रूरुडै देवांतकुंडु गवाक्षु । चारुतरोरुवक्षस्स्थलं बैदु
शरमुल नेसिन जालंग नॊच्चि । सरभसवृत्तिमै सालवृक्षमुन
वैचिन वाडेडु वाडिबाणमुल । जूचुनंतनै दानि जूर्णबु सेसि

हुए मकराक्ष पर डाल दिया। उसने उसे (वृक्ष को) बीच में ही काट देकर, अति उग्र-स्फूर्ति से प्रकाशित होते हुए, अनेक शर उसकी (जांबवान) भुजाओं, उसके फाल, उसके वक्ष पर अति-लाघव (शीघ्रता) से फेंके। वह जांबवान भी क्रोध से उसको निशान बनाकर, एक पर्वत फेंका जिससे देखते-देखते रथ और श्रेष्ठ रथाश्व चूर-चूर हो गए। विद्युज्जिह्व ने उरु-लाघव से शतबली को घेरकर अनेक शर फेंके। शतबली ने अत्युग्रता से एक वृक्ष फेंका जो उसके वक्ष में गड़ गया। अनेक दैत्यों के छक्के छुड़ाकर, अनेक प्रकार से शोभित होनेवाले गज को, ॥ २२९० ॥

—उस अवसर पर देख प्रमद ने क्रुद्ध होकर, वनचर-विभु (गज) के विशाल वक्ष पर शूल चलाया। वह देख, उस राक्षस पर गज ने सालवृक्ष फेंका (जिससे) वह झट मृत हो गया। उस समय नगचरों (वानर) ने मुदित हो सिंहनाद किया। युद्ध में कुंभकर्ण के अग्रनन्दन महान् कुंभ अधिक विजृंभित हो प्लवंगों (वानरों) को मुँह में डालने (निगलने) लगा। धूम्र ने अति पराक्रम से उसके वक्ष पर दे मारा। क्रूर बन देवांतक ने गवाक्ष के चारुतर-उरु-वक्षस्थल पर पाँच शर डाले। अधिक पीड़ित हो अधिक शीघ्रता से (गवाक्ष ने) सालवृक्ष फेंक दिया। उसने देखते-देखते सात पैने बाणों से उसे चूर्ण कर, नौ बाणों से उसे संचलित कर दिया।

तोम्मिदियम्मुल द्रूलिप वानि । 'गों' म्मनि गिरि येत्तिकोनि वैचें नतडु;
ऋषभुनि मुसलान नेसें सारणुडु; । वृषभुंडु सारणु विपुलवक्षंबु २३००
वृक्षंबु गोनि वैव विल्लुनम्मुलुनु । नक्षणंबुन वैचि यतडु मूर्छिल्लें;
गिरिवोनि गजमु नेक्किन त्रिशिरुंडु। शरभुनि तलव्रेसें जनि तोमरमुन
शरभुंडु गोपिंचि सालवृक्षमुन । हरि गिरि व्रेसिनट्ला त्रिमस्तकुनि
व्रेसि तद्गजमुनु व्रेसें गूलंग;। रारि राक्षसुलकु राक्षसुंडगुचु
ननयंबु वेचि नरांतकुंडपुडु । पनसुनिपै दीव्रबाणंबु लेय
बनसुंडु नातनिपै वृक्षवृष्टि । घनमुगा गुरिसि युग्रत जूपें नंत;
वरिघंबु गोनि यकंपनुडु व्रेयुटयु । धरणिपै म्रोग्गि यद्धतशक्ति नेंगसि
कुमुदुंडु पिडिकिट गुपितुडै पोडुव । भ्रमसि चय्यननकंपनुडु मूर्छिल्लें;
गिट्टि धूम्राक्षुंडु केसरिमीद । नेंट्टन नंप पेन्निटंनु मुंप
वानि सेनलमीद वडि बर्वतमुलु । मानक कुरियिप मरि वाडु विरिगें:
२३१०
मंडितभुजु गंधमादनु गिट्टि । भंडनंबुन महापार्श्वुंडु दाक
दरुलनु गिरुलनु दंष्ट्रल वानि । गरमोप्प नोंप्पिचें गंधमादनुडु;

तब उसने 'यह ले' कहते पर्वत उठाकर उस पर डाल दिया। सारण ने ऋषभ पर मूसल डाल दिया। वृषभ ने सारण के विपुल वक्ष पर, ।। २३०० ।।

—वृक्ष लेकर डालने पर, धनुष-बाणों को झट फेंककर, वह मूर्छित हो गया। गिरि-सम गज पर सवार त्रिशिर ने तोमर से शरभ के सिर पर मारा। शरभ ने क्रुद्ध होकर सालवृक्ष से उस त्रिमस्तक वाले को मारा, जैसे हरि (इन्द्र) ने गिरि को गिराया था। उसके गज को भी गिरा दिया। वह राक्षसों का राक्षस बन शोभित हुआ। निरन्तर गरजते हुए नरान्तक ने तब पनस पर तीव्र बाण डाले। पनस ने उस पर अतिशयता से वृक्षों की वर्षा कर, उग्रता दरसाई। परिघा लेकर अकंपन ने उसपर फेंका। वह (कुमुद) धरणी पर झुककर, उद्धतशक्ति से ऊपर उड़कर, क्रुद्ध हो मुट्ठी से मारने पर, भ्रमित हो झट अकंपन मूर्छित हो गया। धूम्राक्ष ने केसरी के निकट आकर, उसे क्रूर बाणों की बाढ़ में डुबो दिया। वह (केसरी) भी उसकी सेनाओं पर टूट गिरकर, अनवरत पर्वतों को बरसाने पर वह भी टूट गिर गया ।। २३१० ।।

मंडित भुजाओंवाले गन्धमादन के निकट आकर, भंडन (युद्ध) के लिए महापार्श्व ने सामना किया। गन्धमादन ने तरुओं (और) गिरियों (और) दंष्ट्राओं से उसे (महापार्श्व को) बहुत पीड़ित किया। वेगदर्शी

तरचुगा ना वेगदर्शिपै शुकुडु । नॆरिनाट नम्मुलु निगुडिंचुटयुनु
वानि रथंबु दुर्वारुडै वाडु । पूनिकमै द्रौक्कि पॊडिपॊडि सेसॆ;
नडुकक तपनुंडु नलुनकु नॆदुर । नडतेरगा दॊड्डनगमुन नतडु
नुरुवडितोड ग्रुड्लुरुकुनट्लुगनु । बॆरिगि यातनि गिट्टि बॆट्टुगा वैव
वाडि बाणंबुलु वडि नलुमीद । वाडेयुटयु व्रेसै वानि सालमुन;
गुरुतरंबगु शक्ति गौनि जंबुमालि । यरुदुगा नुरमंट हनुमंतु नेय
नॆरि जवंबुन नांजनेयुंड गिनिसि । युरक रथंबुपै नुरिकि युग्रतनु
गिरिशिखरंबनु क्रिय नुन्न वानि । शिर मरचेत व्रेसॆनु व्रय्यलुगनु;
२३२०

शरपरंपर विभीषणुनि मित्रघ्नु । डुरुवडि नॆत्तुरु लुरल नेयुटयु
गलुषिंचि यातडु गदगौनि व्रेय । दलकि मूर्छिल्लॆ मित्रघ्नु डॆतयुनु;
वनचरसेनल वारक पट्टि । कौनि यवलील मिंग्रुडु नाप्रहस्तु
घूर्णितारुणकटाक्षुंडुनै सप्त । पर्णवृक्षंबुन भानुजुं डडचॆ;
मौनसि युद्धति वज्रमुष्टि यन्वानि । बॆनुपार मैंदुंडु पिडिकिट बॊडुव
नालंकगोपुरं बबनीस्थलमुन । गूलॆनो यन दन्नुकॊनि कूलॆ वाडु;

पर शुक ने लगातार बाण चलाए जो (उसके शरीर में) गड़ गए। वह भी दुर्वार हो, सप्रयत्न उसके रथ को कुचलकर चूर्ण कर दिया। कम्पित हुए बिना तपन नल के समक्ष आया तो उसने बड़े पर्वत को ले, द्रुतगति से ऐसा बढ़कर कि उसकी आँखें फूट जाएँ, उसके निकट जाकर, (उस पर्वत को) जबरदस्ती डाल दिया। उसने (तपन ने) भी झट नल पर पैने बाण चलाए। उसपर (नल ने) साल (-वृक्ष) डाल दिया। गुरुतर-शक्ति को ले जंबुमालि ने आश्चर्यप्रद रूप से ऐसा फेंका कि वह हनुमान के उर में गड़ गया। श्रेष्ठ जव (वेग)-से हनुमान क्रुद्ध हो एकदम (उसके) रथ पर छलाँग मारकर, उग्रता से, गिरिशिखर के समान शोभित उसके सिर को हथेली से मारा जिससे वह फूट गया ॥ २३२० ॥

मित्रघ्न ने विभीषण पर शरपरम्परा चलाई, जिससे झट विभीषण ने रक्त उगला। क्रुद्ध होकर उसने (विभीषण ने) गदा लेकर फेंका तो मित्रघ्न एकदम मूर्च्छित हो गया। प्रहस्त दुर्निवार रूप से वनचर-सेनाओं को सरलता से निगलने लगा। (तब) भानुज (सुग्रीव) ने घूर्णित-अरुण-कटाक्ष (उद्भ्रान्त लाल चितवनों) वाला होता हुआ सप्त-पर्ण-वृक्ष से (उसका) दमन किया। लगकर उद्धतभाव से वज्रमुष्टि नामक (राक्षस) को, वर्द्धित हो मैंद ने मुट्ठी से मारा तो वह छटपटाकर धराशायी हो गया, मानों लंका का गोपुर ही अवनीस्थल पर गिरा हो। द्विविद ने अशनि-प्रभु

विनुवीथि सुरलार्व द्विविदुंडु शैल । मुन नशनिप्रभु मोंगि गूल नेसें;
गरमल्क नीलमेघमु सूर्युं गप्पु । करणि नंदंद युग्रप्रतापमुन
बरग दिव्यास्त्र संपदलचे नीलु । गुरुभुजुंडैन निकुंभुंडु गप्पें;
गप्पिन नीलुंडु गदिसि निकुंभु । जप्परिंचुचु रथचक्रंबु बुच्चि २३३०
रयमुन वैचि सारथि तल द्रुंचें । भयमंदि वाडु विभ्रांतुडै चूड;
शरवर्ष मप्पुडु सौमित्रिमीद । गुरियु विरूपाक्षु गोंनक सौमित्रि
योक्कबाणंवेय नोंगि वाडु शक्ति । दक्कि मूर्छिल्लें नुद्दंडत धरणि;
रामुपै सुप्तघ्नु रश्मि केतुवुल । नामेयि नग्निकोपाग्नि केतुवुलु
भीमप्रतापुलै पेर्चि यंतंत । वेमरु गर्जिंचि वेंस विजृंभिंचि
कोंरलि मेघंबुल क्रिय नंपसोन । गुरिसिरि गुणरावघोरगर्जनल;
नलिनाप्तकुलुडंत नालुगुबाणमुल । नलुवुरि तललनु नलि द्रुंचिवैचें;

युद्धभूमिवर्णनमु

नेंक्कटिकय्यंबु लिट्टु चेंल्लुचुंड । दक्कक विरिगिन तरुचैन विंड्लु
जिदिसिन करमुलु जिद्रुपलै पडिन । गदलुनु दुनिसिन करवालमुलुनु

(नामक राक्षस) को शैल से मार गिराया, जिसे देख विनुवीथि (आकाश-मार्ग) पर देवताओं ने हर्षनाद किया। अधिक क्रोध से, नीलमेघ के सूर्य को ढँकने के समान, उग्रप्रताप से शोभित हो, दिव्यास्त्र-सम्पत्ति से गुरु-भुजाओंवाले निकुंभ ने नील को ढँक दिया। ढँक देने पर नील निकट पहुँच, निकुंभ को चुबलाकर, रथचक्र को हाथ में ले, ।। २३३० ।।
—झट फेंककर, सारथी के सिर को काट दिया, जिसे वह (निकुंभ) डरकर, विभ्रान्त हो देखता रह गया। तब विरूपाक्ष ने सौमित्र पर बाणों की वर्षा की। उसकी परवाह न कर सौमित्र ने एक बाण फेंका, जिससे वह शक्ति को खोकर, उद्दंडता से धरणी पर मूर्छित हो गिर गया। सुप्तघ्न, रश्मिकेतु, अग्निकेतु, कोपाग्नि केतु (नामक राक्षसों ने) भीम (भयंकर) प्रताप से युक्त होकर, बार-बार गरजकर, झट विजृंभित होकर, औद्धत्य से मेघों के समान, गुण (ज्या)-रव की घोर-गर्जनाओं के साथ, राम पर बाण बरसाए। तब नलिनाप्तकुल वाले ने चारों के सिर चार बाणों से सलील काट फेंक दिया।

युद्धभूमि का वर्णन

इस प्रकार घोर युद्ध के चलते रहने पर, (युद्ध भूमि में) टूटे हुए असंख्य धनुष, टूटे बाण, तिनके-तिनके बनी गदाएँ, खण्डित करवाल

मुरिसिन शक्तुलु मुद्गरंबुलुनु । बरिसिन परिघलु बट्टिसंबुलुनु २३४०
गडिकंडलैन चक्रप्रासमुलुनु । बौडियैन सुरियलु भूरिशूलमुलु
दुमुरुलै पडियुन्न तोमरंबुलुनु । रमण जूर्णबैन रथचक्रमुलुनु
गूलि पेल्लुग दन्नुकौनु घोटकमुलु । व्रालि मन्नगरुच्चिन रथचोदकुलुनु
रालिन कोटीररत्न पुंजमुलु । नेल बट्टिन बाहु निचयखंडमुलु
जच्चिन यसुरुल समरभूभाग । मच्चेरु वयियुंडे नप्पुडु चूड
र्मदितारार्ति रामक्षितीश्वरुडु । दुर्दातशरमुल द्रुळ्ळडंचुटयु
मलगौन्न युरुमीन मकरोरगादि । जलचरंबुलु सिक्क जलमेल्ल निगिरि
वशगतंबै रामवल्लभुनेंदुरु । गृशमैन यंबुधि क्रियनुंडे रणमु;
नट्टिविधंबुन नवनिज देच्चि । नट्टि रावणुनकु नट्टपै शिरमु
लट्टेल निलुचु नन्नट्टि चंदमुन । नट्ट लाकसमुनंदाडंग दोडगे; २३५०
नेंरिगलु मज्जंबु नेरसिन शौंपि । तरुचैन वेंड्रुकतंडंबु नाचु
बुनुकलु चिप्पलु बौरिबौरि नुन्न । घनमुलौ पलकलु कमठतंडमुलु
दुमुरुलै पडिन कैदुवुलु मीनमुलु । रमणीयतरचामरमुलु हंसमुलु

(तलवार), फटी शक्तियाँ और मुद्गर, (ज़मीन में) दबी परिघाएँ और पट्टिस, ॥ २३४० ॥

—खण्ड-खण्ड बने चक्र और प्रास, चूर-चूर बनी छुरिकाएँ और भूरि (महान्) शूल, सूक्ष्म खण्ड बन पड़े हुए तोमर, रमणीय चूर्ण बने रथचक्र, गिरकर अतिशयता से छटपटाने वाले अश्व, गिरकर मिट्टी चाटनेवाले रथ-चोदक (सारथी), ढुलक गिरे किरीटों के रत्न-समूह, ज़मीन पर पड़े बाहुओं के समूहों के खण्ड, मरे हुए असुर (आदि से भरकर) समर भूभाग तब आश्चर्यप्रद दिखाई पड़ा। मर्दित-आराति (शत्रुओं का दमन करनेवाले) राम-क्षितीश्वर के दुर्दान्त शरों का (अपना) गर्व भंग कर देने पर, समस्त जल के सूख जाने पर, असंख्य उरु (बृहद) मीन-मकर-उरग आदि जलचरों के फँस ज़ाने पर, (राम के) वशीभूत होकर, राम-वल्लभ के समक्ष कृश बने अंबुधि (समुद्र) के समान था रण (-स्थल)। शून्य में (उस युद्धभूमि में) धड़ इस प्रकार नाच रहे थे मानों कह रहे हों कि उस प्रकार (अत्याचार कर) अवनिजा को लानेवाले रावण के धड़ पर सिर कैसे टिक कर रह सकेंगे ? ॥ २३५० ॥

(कटकर गिरे वीरों की) शोभायुक्त मज्जा रूपी कीचड़, अतिशय केशसमूह-रूपी सेवार, खोपड़ी-रूपी सीप, खण्डित होकर गिरे हुए ढाल-रूपी कमठ-समूह, खण्डित हो पड़े हुए खड्ग-रूपी मीन, रमणीयतर-चामर-रूपी

गौमरारु तैल्लनि गौड्डुगुलु नुरुवु । नमरु भूषणचूर्ण मंदलि यिसुक
यौड्डुनंबुलु नैगळ्ळुरुदंतिशवमु । लौड्डि पेंपारिन यौड्डुयिन गिरुलु
दुरुचरासुर देहततुलु वृक्षमुलु । दौरिगिन प्रेवुलु दुष्टसर्पमुलु
गौऽप्राणमुलतोड गुंभिनियंदु । नौऽगिन राक्षसु लौरलुट श्रोत
गलगौन्न घनतुरंगमुलु ग्राहमुलु । नलि दूलु पडग लुन्नति नंदु तैरलु
नव्विधंबुन मीऽि येरुल नैल्ल । नव्वुचु बट्टुरक्तनदुलुब्बि पाऽे;
नारय बापात्मु डगुगाक, येमि? । यारामुनकु द्रोहि यगु गाक, येमि?
२३६०
यतिलोककंटकुंडगु गाक, येमि ? । यतडु नीचात्मकुंडगु गाक, येमि?
यतुल जंपिन पापि यगुगाक, येमि? । सतुल जंपिन दुरासदुडुगा, केमि ?
हितमतिनै यिप्पु डीडेर्प दलचि । प्रतिलेनि रघुरामु बाणजालमुल
धृति दूल गट्टि या देवकंटकुनि । हितमति नीदेह मिट्टु विडिपिंचि,
लोगौनि वानि नालोपल मुंचि । बागौप्प गलुषमुल् वापि रक्षिंचि
खलुडैन यट्टि युक्कलुनि रावणुनि । वौलुपार मुक्तिकि बुत्तु नन्माड्कि
संगति नौप्पारु जाह्नवि यनग । संगरस्थलि महाश्चर्यमै यौप्पे;

हंस, शोभायमान श्वेत-छत्र-रूपी फेन, विराजमान भूषण चूर्ण-रूपी सैकत, ढाल-रूपी जलग्रह, विशालकाय दंतियों (हाथियों) के शवरूपी विपुल पर्वत, तरुचर (तथा) असुरों के देह-समूह-रूपी वृक्ष, बाहर कढ़े आंत-रूपी दुष्ट सर्प, मरणासन्न हो धराशायी बने राक्षसों के कराह-रूपी घोष, क्षुब्ध घन तुरंग (घोड़े) रूपी ग्राह (मकर), गिर-गिर पड़नेवाली पताकाएँ रूपी ऊँची लहरें, इस प्रकार इन सबसे अतिशयता से युक्त हो, समस्त नदियों का उपहास करती हुई, पटु रक्त-नदियाँ फूलकर बह उठीं। सोचने पर पापात्मा हुआ तो क्या ? उस राम के प्रति द्रोही बना तो क्या हुआ ? ॥ २२६० ॥

—अतिलोक-कंटक हुआ तो क्या ? वह-नीच आत्मावाला है तो क्या हुआ ? यतियों को मार डालनेवाला पापी हुआ तो क्या ? सतियों (साध्वी-स्त्रियों) को मार डालनेवाला नीच है तो क्या हुआ ? मैं हितमति हो अब उसे तार देना चाहकर, अनुपम रघुराम के बाण-समूह से धृति (धैर्य) को छुड़ाकर, उस देवकंटक (रावण) को देह से हितमति से मुक्तकर, उसे अपने भीतर ले, अपने में खूब डुबोकर, अच्छी तरह उसके कलुष (पाप) धो डालकर, रक्षाकर, खल (दुष्ट) और धुरंधर नेता बने रावण को शोभा से मुक्ति प्रदान करूंगी, मानों इस प्रकार कहनेवाली शोभायमान जाह्नवी (गंगा) के समान संगरस्थली महाश्चर्यप्रद रूप शोभित हुई ।

सायंकालादिरात्रि वर्णनमु

नप्पुडु लंकलो नादैत्यकांत । लुप्पोंगु शोकपयोधिलो मुनिगि
"ग्रहन जेयु नक्कय्यंबु दक्कि । प्रोद्दु ग्रुंकिन गानि पोडु राघवुडु;
एप्पुडु ग्रुंकुनो यिनुडिक" ननुचु । नप्पटप्पटिकि बिट्टरयुचु नुंड२३७०
नंचितकठिनपुंखास्त्रांशु समिति । मुंचि रावणुनि तमोगुणं बणप
भीमप्रतापसंस्फीतुडै युन्न । रामुडे चालु दुर्वारु डन्माड्कि
घनतरंबगु तन करमुलु मोड्चि । वनजाप्तु डपरदिग्वनधिलो मुनिगे।
खलुडैन यादशकंठुनि चेटु । देलुपुटकै निशीथिनि कचभरमु
विरळमै जल्लन विरिसेनो यनग । बरपोंदि चीकटि प्रबलमै पर्वे;
नप्पुडु बोब्बलु नार्पुलु वेट्टु । चप्पुळ्ळु मल्ललु सरचु बेडिदमु
लट्टहासंबुलु नडरि योंडोरुलु । दिट्टुडुनेलुगुलु दीर्घ हुंकृतुलु
झंकाररवमुलु जप्परिचुटलु । नंकिचुपलुकुलु नाह्वानमुलुनु
रथनेमिरवमुलु रथिकसारथुल । पृथुलवाक्योद्भूतभीमनादमुलु
गुणनिस्स्वनंबुलु गुंजरांगमुल । घणिघणिल्लनि म्रोयु घंटास्वनमुलु २३८०

सायंकाल तथा रात्रि का वर्णन

तब लंका में दैत्यकान्ताएँ उमड़नेवाली शोक-पयोधि में ऊभ-चूभ होकर, यह कहते हुए कि 'सूर्यास्त होने से पहले इस भीषण संघर्ष को छोड़कर राघव नहीं जाएगा। अब कब सूर्य का अस्त होगा ?' बार-बार (आकाश की ओर) देख रही थीं ॥ २३७० ॥

अंचित (श्रेष्ठ)-कठिन-शर-किरण-समूह में डुबोकर, रावण के तमोगुण का दमन करने के लिए, भीमप्रताप से संस्फीत और दुर्निवार राम ही पर्याप्त है, मानों ऐसा सोच अपने घनतर-करों को समेटकर, वनजाप्त (सूर्य) अपर (पश्चिमी)-दिग्वनधि (दिशा-समुद्र) में डूब गया। खल बने उस दशकंठ की हानि (नाश) को सूचित करने के लिए मानों निशीथिनी (निशिकान्ता) ने अपने कच-भार (केश-समूह) को अविरल रूप से चारों दिशाओं में फैला दिया हो, इस प्रकार प्रसरित हो, अंधकार घना हो, व्याप्त हो गया। तब (सूर्यास्त होने पर भी) गर्जन और सिंहनाद, भुजास्फालन, परुषवचन, एक-दूसरे को कोसने के शब्द, दीर्घ-हुंकार, झंकार-रव, चुवलाने की ध्वनियाँ, उल्लसित वचन, आह्वान पूर्वक शब्द, रथनेमि के रव, रथिक और सारथियों के पृथुल (अत्यधिक) वाक्यों से उद्भूत भीमनाद, गुण (ज्या) के निस्वन, कुंजर (हाथियों) के शरीरों पर की घंटाओं के स्वन, ॥ २३८० ॥

गरिबृंहितंबुलु घनतूर्यरवमु । दुरगोग्रहेषलु दोरमै निगुड
बौद्दु ग्रुंकिन नैन बोवक चलमु । पेद्दयै कपुलुनु वेचि राक्षसुलु
नतिभयंकरमैन यनि सेयुनप्पु । डतिनिबिडंबैन यंधकारमुन
बौडु पौडु पौडु; पोकु पोकु डन्माट । विडु विडु विडु; व्रेयु व्रेयु डन्माट
व्रलमु डिपक चंपु चंपु डन्माट । तौलगक तल द्रुंपु त्रुंपु डन्माट
येंदुन्नवाडेडि येडि यन्माट । यिदु रानिम्मु रानिम्मनुमाट
यटमीद हुंकृतुल् हासमुल् सेलग । निटु चेल्लुमाटल निक्कुव लेरिगि
पोरुचो गेंधूळि बोरन नेगय । बेरि याचीकटि पेद्द यौटयुनु
भ्रमयुटजेसि येर्परुपंगराक । तमतमवारल दामे चंपुदुरु;
कोपिंचि वानरकोटुलु गविसि । यापापकर्मुल नसुरुलगिट्टि २३९०
रथिकुल जंपि सारथुल जेंडाडि । पृथुलरथ्यंबुल पीचंबु लणचि
कडनौग ललमि म्रोग्गग देरुलेत्ति । यडतुरु नुग्गुनूचै नेल गूल;
दुमुरुगा जोदुल त्रुळ्ळडगिंचि । समदवारणमुल चरणंबु लेत्ति
मिरुगेल नमरिंचि येचि तार्टिचि । वरुस नल्लटु पाऱवैतुरु चंपि;
चिदुरलै देसलंदु जेंदरुगुर्रमुल । गदिसि तोकलतोड गडकाळु लोडिसि

—करियों की चिघाड़े, घन तूर्य के रव, तुरगों की उग्र हिनहिनाहटें—आदि अतिशयता से व्याप्त होने पर, सूर्यास्त होने पर भी वापिस न जाकर, अधिक हठ से कपि और राक्षस अतिभयंकर युद्ध करने लगे। उस समय अति निबिड़ अन्धकार में 'मारो, मारो, मारो', 'जाओ मत, जाओ मत', 'छोड़ो, छोड़ो, छोड़ो', 'मारो, मारो', 'हठ न छोड़कर मार डालो, मार डालो', 'न हटकर सिर काट दो, काट दो', 'कहाँ है कहाँ कहाँ ?' 'यहाँ आने दो, आने दो'—ऐसी बातों के उपरान्त हुंकार, अट्टहास के विजृंभित होने पर, इस प्रकार की बातों के यथार्थ्य को जानकर युद्ध करने लगे तो अधिकता से उड़ी धूल ने, जमकर, उस अन्धकार को और घना बना दिया। उससे भ्रमित होकर, (एक-दूसरे को) पहचान न सक, अपने-अपने लोगों को आप ही मारने लगे। क्रुद्ध हो वानर-समूह पापकर्मवाले असुरों के पास पहुँच, जूझकर, ॥ २३९० ॥

—रथिकों को मारकर, सारथियों को चीर डालकर, पृथुल रथ्यों (अश्वों) के गर्व का दमनकर, शोभा से रथों को अनायास ऊपर उठाकर ऐसे पटक देते थे कि उनके टुकड़े-टुकड़े हो जाते थे। फिर योद्धाओं के अहंकार का दमनकर, मदयुक्त वारणों (गजों) को चरणों से उठाकर, दोनों हाथों में समा लेकर एक-दूसरे से टकराकर, मारकर, क्रम से फेंक देते थे। तितर-बितर होकर, दिशाओं में (इधर-उधर) भागनेवाले अश्वों के पास जा,

पट्टि बॅट्टुग द्रिप्पि पडवैतुरॅलमि । नॅट्टन नेल वॅन्नॅत्तुरु लोलुक
गोलॅम्मु लुरमुलु गुंडॅलु बरुलु । वालिन भुजमुलु वदनदंष्ट्रमुलु
बुनुकलु मॅदडुनु भुविमीद जॅदर । गनुकनि गाल्वुर गडगि चंपुदुरुः
अरदाल पॅल्लुन नडरु धूळियुनु । दुरगखुरोद्धूतधूळियु नॅगसि
दानवानीकंबु तलपुलोनुन्न । काननि मॅल्लनु ग्रम्मि वॅलिविरिसॅ
२४००
ननग जीकटि कूडि यग्गलंबगुचु ।विनुवीथि नडुमॅल्ल विपुलमै निंडॅ;
नसुरुल यसुवुलु नगचराधिपुल । यसुवुलु नॉक्कट नपहरिंचुटकु
नामॅयि नारात्रि यसुरेशुचेत । रामुनिचे गाळरात्रियै तोचॅ;
दमवेळ यगुटयु दैत्यु लंदंद । गुमिगूडि मुट्टि त्रिकूटाचलंबु
दम यार्पुलकु ब्रतिध्वनु लिच्चुचुंड । समरसन्नद्धुलै सरभसवृत्ति
मिगिलि याराघवुमीदनु गविसि । गगनंबु निंड मार्गणमु लेयुटयु
नारामविभु डप्पु डग्निबाणमुन । बेरिन चीकटि पॅपॅल्ल नणचि
तन्नु गिट्टिन महोदरु महापार्श्वु । सन्नुतबलुलैन सारणशुकुल
नट्टु वज्रदंष्ट्रु महाकायु नेसॅ । बटुवेगमुन नारुबाणमुल् दॉडिगि

पूँछ के साथ पिछले पैर पकड़कर, ज़ोर से घुमाकर, ज़मीन पर पटक देते जिससे वे खून उगलते। पैदल सैनिकों को झट ऐसा मार डालते कि उनकी रीढ़ (की हड्डियाँ), वक्ष, कलेजा, पसलियाँ, भुजाएँ, वदन, दंष्ट्राएँ, खोपड़ी, भेजा (आदि) छिन्न-भिन्न होकर चारों ओर फैल जाएँ। रथों की अतिशयता से (उड़ी) धूल और तुरगों के खुरों से उद्धूत धूल (दोनों) उड़कर, ऐसे फैलकर व्याप्त हो गईं मानों दानवानीक (राक्षस सेना) के मन का अज्ञान हो ।। २४०० ।।

यह (धूलन) अन्धकार से मिलकर घनीभूत होते हुए, विनुवीथि (आकाश) के मध्य में विपुलता से भर गयी। असुरों के प्राणों तथा नगचराधिपों के प्राणों का एक साथ अपहरण करने के लिए, उस समय वह रात असुरेश तथा राम द्वारा प्रवर्तित कालरात्रि (प्रलयकाल की रात) के समान प्रतीत हुई। अपना समय होने के कारण (रात का अपने लिए अनुकूल होने के कारण) दैत्य जहाँ-तहाँ झुंड बाँधकर, अपने गर्जनों से त्रिकूटाचल को गुंजायमान करते हुए, समर-सन्नद्ध हुए और संरंभ के साथ, अतिशयता से राघव को घेरकर, (अपने) मार्गणों (बाणों) से गगन को भर दिया। तब प्रभुराम ने अग्निबाण से, घनीभूत बने अन्धकार के औद्धत्य का नाश कर, अपने को घेरे हुए महोदर, महापार्श्व, सन्नुत (प्रशंसित) बलवाले सारण और शुक, वज्रदंष्ट्र तथा महाकाय पर पटुवेग

यार्वुरु दैत्युलु नवि नोव्वनाट । बविन भीतियै बारिरि दिशल;
२४१०
कट नुन्न राक्षसु लारामविभुनि । पटुबाणशिखि शलभंबुलै पडिरि।

इंद्रजित्तु मायायुद्धमु

अरदंबु सूतुंडु हरुलु नंगदुनि । करमुक्त गिरिश्रृंगकठिन पातमुन
नवनिपै गूलिन नाजि वर्जिंचि । सवनशालकु वेग चनि यिंद्रजित्तु
तगु होमसाधनततुलु राक्षसुलु । मोगि देर गैकोनि मुख्यमार्गमुन
वलनोप्पगा रक्तवर्णबुलैन । तलचुट्टु नुभयवस्त्रमुलु माल्यमुलु
धरियिंचि वह्निनकि दग बरिस्तरण मुरुतोमरंबुलु नुग्रशस्त्रमुलु
गरिलेनि शरमुलु गाविंचि नलुपु । गरिगोन्न घनमेषकंठरक्तंबु
नोगि दाडिसमिधलु होमंबु सेय । बोग लेक मंडुचु बोडवुगा निक्कि
येलमिमै विजयंबु लेरिगिंप जाल । वलतियै दक्षिण वलमानशिखल
नोप्पुचु ननलुडाहुतुलु गैकोनियै; । नप्पुडु निष्ठतो नायिंद्रजित्तु२४२०

से छः बाणों का संधान कर चलाया । वे छः दैत्य, उन बाणों के गड़कर पीड़ित करने पर, दिशाओं में (चारो तरफ़) भाग गए ॥ २४१० ॥

वहाँ स्थित राक्षस विभुराम की पटु-बाण-शिखाओं में शलभ हो गए । (जलकर मर गए ।)

इन्द्रजित का माया-युद्ध

अंगद के कर-मुक्त (हाथों से फेंके गए) गिरि-श्रृंग के कठिन-पात से रथ, सारथी, (तथा) अश्वों के धराशायी होने पर, युद्ध से निरस्त होकर, इन्द्रजित शीघ्रगति से सवनशाला (यज्ञ-शाला) में गया । उपयुक्त होम-साधन-ततियों (होम के लिए सामग्री-समूहों) को क्रम से राक्षसों के लाने पर, (उन्हें) लेकर मुख्यमार्ग से शोभा से चल पड़ा । रक्तवर्ण का शिरोवेष्टन (पगड़ी), उभयवस्त्र (अधोवस्त्र (धोती) और उत्तरीय) तथा मालाएँ पहनकर, वह्नि के लिए योग्य परिस्तरण (होमकुंड के चारों ओर रखे जानेवाले कुश) के रूप में उरु (बड़े-बड़े) तोमर, उग्रशस्त्र (और) असम शर रखकर, घने कालेवर्ण के घन (बड़े) मेषों (बकरों) के कण्ठरक्त (तथा) क्रम से समिधाओं से होम करने लगा, तव निर्धूम हो बलते हुए, ऊँचे बनकर, शोभा से विजय की सूचना देने में समर्थ दक्षिणाग्नि की भ्रमणशील शिखाओं से युक्त हो अनल ने आहुतियाँ ग्रहण की । तब निष्ठा के साथ उस इन्द्रजित ने, ॥ २४२० ॥

युक्तक्रमंबुन होम मोंप्पार । भक्तितो नोंनरिंचि पावकुवलन
नालुगु हयमुलु नानास्त्रशस्त्र । जालंबु गलुगु कांचनमयरथमु
बडसें; नारथमेक्कि ब्रह्मांड मगल । गडुवडि नाचि युत्कटकोपुडगुचु
निंद्रादिदेवतलेल्ल भीतिल्ल । निंद्रजित्तुडु मरि येपुदीपिंचि
चेंच्चेर दानवसेनलतोड । वच्चि यदृश्युडै वडि दिविनुंडि
मसलक रामलक्ष्मणुलपै नेसें । ससदृशकांडंबु लंदंद पेक्कु;
ला रामलक्ष्मणु लाकसंबुनकु । भूरिशरंबुलु पोवनेयुटयु
नंदोक्कटैननु नायिंद्रजित्तु । नंदु दाकमि मरि यादैत्यवरुडु
तनु गानराकुंड दर्पंबु मेरसि । विनुवीथि गडु वेवकुविधमुल दिरिगि
कविसि यंतट बोक घनुलैन कपुल । नवलील दुनुमाडि यंदंद पेंचि
२४३०
नलुदेस नेयुचो नगचरुलकुनु । नलिनाप्तकुलुनकु नलिनाप्तकिरण
निभमुलै परतेंचु निष्ठुरास्त्रमुलु । नभमुनयंदु गानगवच्चु गानि
यरदंबु म्रोतयु नाघोटकमुल । खुरमुल म्रोतयु गुणमु म्रोतयुनु
सारथिपलुकु कशाघातरवमु । ला रथिकुनि यार्पु लतनि मूर्तियुनु
नारथंबुनु दानि यधिककध्वजंबु । लीरुपु लनि कन नेंन्नंगबडव;

—युक्तक्रम से शोभित भक्ति के साथ होम कर (हवन-कार्य पूरा कर), पावक (अग्नि) द्वारा चार हय (अश्व), नाना-अस्त्र-शस्त्र-जाल (समूह) से युक्त कांचनमय रथ को प्राप्त किया। उस रथ पर सवार होकर ब्रह्मांड को विदीर्ण करनेवाला सिंहनाद कर, उत्कट कोपवाला होता हुआ, इन्द्र आदि समस्त देवताओं के भयभीत होने पर, इन्द्रजित और अधिक पराक्रम से युक्त हो, झट दानव सेनाओं के साथ आकर, अदृश्य रूप से, आकाश से जहाँ-तहाँ से लगातार असदृश बाण रामलक्ष्मण पर चलाए। रामलक्ष्मणों ने आकाश में भूरि-शर चलाए किन्तु उनमें से एक भी उस इन्द्रजित को नहीं लगा। फिर वह दैत्यवर (इन्द्रजित) ने स्वयं दिखाई न पड़ते हुए, बड़े दर्प के साथ, विनुवीथि में अनेक प्रकार से संचरण कर, व्याप्त हो, महान् कपियों का अनायास ही संहार किया। जहाँ-तहाँ रहकर क्रम से, ।। २४३० ।।

—चारों दिशाओं में (बाण) फेंकने लगा। नगचरों को, (तथा) नलिनाप्तकुल वाले को नलिनाप्त (सूर्य)-किरण सम हो आनेवाले निष्ठुर अस्त्र नभ में तो दीख रहे थे, किन्तु रथ की ध्वनि, उन घोटकों के खुरों की ध्वनि, गुण (ज्या) की ध्वनि, सारथी के वचन, कशाघात का रव, रथिक के सिंहनाद, उसकी मूर्ति (रूप), उसका रथ, उसका महत्तर ध्वज—ये सभी रूप बिलकुल दिखाई

याविधमासेन कप्पुडु दोचें; । नावालि दुनुमाडि यसमुन बेर्चु
रामुनि मीद सुरप्रभुं डलिगि । रामणीयकमहोग्रप्रकांडमुल
नातनूजुनि गूल्चिनाडंचु बेचि । यीतेरंगुन मिंचि येसैनो यनग;
नप्पुडु कपिसेनयंगंबु लेल्ल । जिप्पलु चिद्रुपलै चेंदरंग जूचि
जनलोकपतितोड सौमित्रि पलिकें: । विनुवीथि डागिन वीनिचे निट्लु
२४४०
मनुजेंद्र ! चूचिते मर्कटोत्तमुलु । मनकोडकै वच्चि मडियुचुन्नारु;
विस्मयंबुग निक वीनि वंशंबु । भस्मंबु सेयुदु ब्रह्मास्त्र मेसि"
यनवुडु रघरामु डनुजुतो ननियें; । "जनुनें योक्करुनिकै चंप बल्वुरनु?
ऎरुगवे रणधर्म ! मेंदु राजुलक । वेंरचि डागिनवारि वेंन्निच्चुवारि
मुकुळितहस्तुलै म्रोक्केंडुवारि । जकितात्मुलै वच्चि शरणन्नवारि
गदनंबुलो बूरि गरचिनवारि । बिदप नायुधमुलु ब्रिदिलिनवारि
निद्रवोयिनवारि निर्जिप दगुनें । भद्रंबु गोरु ना परमपुण्युलकु ?
नधिकमायल बेर्चु नायिंद्रजित्तु । वधियिंपनोपेंडु वानरोत्तमुल
गामचारुल बंप गालंबु गानि । सौमित्रि ! ब्रह्मास्त्रसमयंबु गादु"
अनि नलु नंगदु ननिलनंदनुनि । घनुनि गवाक्षुनि गंधमादनुनि २४५०

नहीं पड़ रहे थे । तब यह विधान उस (कपि) सेना को ऐसा दीखा मानों उस वालि का संहार कर दर्प से शोभित राम पर सुरप्रभु (इन्द्र) क्रुद्ध होकर, रमणीय महोग्र प्रकांडों से मेरे तनूज को गिराया, ऐसा सोचकर इस प्रकार अतिशयता से (इन्द्र) बाण-वर्षा कर रहा हो। तब कपिसेना के (सैनिकों के) अंग खण्ड-खण्ड होकर बिखर पड़े । इसे देख जनलोकपति (राम) से सौमित्र ने कहा—'विनुवीथि में छिपे इस (राक्षस) से इस प्रकार, ॥ २४४० ॥

—हे मनुजेन्द्र ! देखा, हमारे लिए आए हुए मर्कटोत्तम मर रहे हैं। अब ब्रह्मास्त्र का प्रयोग कर, आश्चर्यप्रद रूप से, इसके वंश का नाश कर दूंगा।' ऐसा कहने पर रघुराम ने अनुज से कहा—'एक के लिए अनेकों को मारना कहाँ उचित है ? रणधर्म को नहीं जानते हो ? भीत हो छिपे हुए लोगों को, पीठ दिखानेवालों को, मुकुलित करों से प्रणाम करनेवालों को, चकितात्मा हो शरण में आए लोगों को, कदन (युद्ध) में फूस खानेवालों को (पराजितों को), फिर शिथिल बने आयुध वालों को, सोनेवालों को निर्जित करना (मार डालना) कल्याणकामी (तथा) पुण्यात्मा राजाओं के लिए क्या उचित है ? अधिक मायाओं से विलसित उस इन्द्रजित का वध करने में समर्थ वानरोत्तमों को, कामचारियों को भेजने के लिए (उचित)

भरितविक्रमधामु बनसु गेसरिनि । शरभुनि ऋषभुनि सन्नाथु गजुनि
मरि गवयुनि नीलु मैंदुनि द्विविदु । नरिमुरि गोपिंचि यसुरुपै बनिचें;
नटु राघवुडु वंप नगचराधिपुलु । पटुगति मिन्नुलपै कप्पु डेगसि
तरुशैलमुलु वैव दर्पिंचि क्रूर । शरपरंपरल राक्षसराजसुतुडु
वारि नोप्पिंपिचिन वार लादैत्यु । नेरूपमुन गान कॅप्पटिपगिदि
वच्चिरि रयमुन वसुमतीस्थलिकि । नच्चेरुवोंदि यिंद्रादुलु सूड;
विलयमेघश्याम विपुलगात्रंबु । नलुक गेंजायल नडरु नेत्रमुलु
गल घोररूपंबु गानराकुंड । मॅलगुचु बलिकें नम्मेघनादुंडु:

रामलक्ष्मणुलु नागपाशमुलचे गट्टुवडुट

"नरनाथसुतुलार ! नम्नु गय्यमुन । नरुदु लक्षिप सहस्त्राक्षुनकुनु;
मीरेंतवा;" रनि मिन्नेल्ल नद्रुव । घोरम्मुगा धनुर्गुणमु म्रोयिंच २४६०
यशनिसंकाशंबुलगु सायकमुलु । दशरथात्मजुलपै दरचुगा बरपि

समय है। सौमित्र ! यह ब्रह्मास्त्र के लिए (अवसर) नहीं है।' (ऐसा) कहकर नल, अंगद, अनिलनन्दन, घन, गवाक्ष, गन्धमादन, ।।२४५०।।

—भरित-विक्रम-धाम पनस, केसरी, शरभ, ऋषभ, सन्नाथगज, और गवय, नील, मैंद, द्विविद (आदि) को झट क्रुद्ध हो (राम ने) असुर पर भेजा। ऐसा राघव के भेजने पर, तब नगचराधियों ने पटुगति से आकाश में उड़कर, तरुशैल फेंके। दर्प से राक्षसराजसुत ने शर-परम्पराओं से उन्हें खूब पीड़ित किया। वे उस दैत्य के रूप को न देख सक, यथापूर्व-रीति से शीघ्रगति से वसुधा पर आ गए। इसे इन्द्र-आदि (देवता) आश्चर्य से देखते रह गए। विलय (प्रलयकाल के) श्याम-मेघ के सम विपुल गात्र (शरीर) तथा क्रोध से (उत्पन्न) अरुणिमा से शोभित नेत्रों से युक्त घोर रूप को (अन्यों की) दृष्टि से बचाकर विचरण करते हुए उस मेघनाद ने कहा—

रामलक्ष्मण का नागपाशों में बद्ध हो जाना

'हे नरनाथसुतो ! युद्ध में मेरा सामना कर सकना या देख पाना सहस्राक्ष के लिए भी असम्भव है। तुम किस गिनती के हो ?' (ऐसा) कह समस्त आकाश को फ़ोड़ देनेवाले रूप में, अति घोर रूप में धनुष की ज्या का टंकार कर, ।। २४६० ।।

—अशनि (बिजली) के संकाश (समान) बाणों को लगातार दशरथात्मजों पर सायक (बाण) चलाये और जहाँ-तहाँ मर्म-स्थान छिन्न-भिन्न हो जाएँ

मऱियुनु नंदंद मर्मबुलंदु । गरुलुच्चिपो बैक्कुकांडंबु लेसि
यंतट बोवक यायिंद्रजित्तु । डंतकाकारुडै याग्रहंबुननु
बटुतरनिर्घातपात भीकरत । जटुलतरक्रूर सर्पबाणमुल
निनकुलेश्वरुलपै नेयग वारु । घनबाणमुल वानि खंडिंचि वैचि
वानिमीदिकि मऱि वरसायकमुलु । पोनेय वानिनि बोंडिसेसि यसुर
वेंडियु नंदंद वेगंबु मेंऱसि । दंडि शस्त्रावळि दरुचुगा बऱप
"निदें वच्चें बाणंबु लिदेयु" मनुचु । "नदें वच्चें बाणंबु लंदेयु" मनुचु
नेदेंस बाणंबु लेतेंचुचुंडु । नादेंस ब्रतिबाण मंदंद येय
"नुरगसमेतु लैयुंडुट मीकु । गरमोप्प दोंल्लियु गल; दटुगान २४७०
दरणिवंशजुलार ! तप्पक यिपुडु । नुरगसमेतुलै युंडु" डन् करणि
बंधुरंबुग नब्जबांधवकुलुल । बंधिचें वेंस नागपाशसंततुल;
वारुनु नाब्रह्मवरमु मन्निंचि । तारु राक्षसुनिचे दद्दयु दूलि
यादिनारायणुनंशजुलैन । मेदिनीपतुलु निम्मैयि गट्टुवडिरि;
"नेडु रामुडु गाक निक्क मूहिंप । ना डितडे वामनस्वरूपंबु
नटु दाल्चि भूदान मडिगि याबलिनि । बटुकृतघ्नत बट्टिबंधिचें; नट्टि

इस प्रकार अनेक बाण चलाये। उतने से न जाने देकर (सन्तुष्ट न होकर) इन्द्रजित ने अंतक (यम) का आकारवाला होता हुआ, आग्रह (क्रोध) से पटुतर-निर्घातपात (वज्रपात) की भयंकरता से युक्त चटुलतर क्रूर सर्प-बाण इनकुलेश्वरों पर चलाए। उन्होंने भी घन-बाणों से उनका खंडन कर, उसपर और भी श्रेष्ठ सायक चलाए। उन्हें चूर-चूर कर असुर ने फिर जहाँ-तहाँ शीघ्रता से प्रकाशित होकर, अधिक शस्त्र-समूह को अनवरत चलाया। 'ये ही बाण आए, इधर बाण चलाओ', 'वे ही बाण आए, उधर बाण चलाओ' कहते हुए जिस ओर से (मेघनाद के) बाण आते, उस ओर प्रति-बाण चलाने लगे। 'उरग (सर्प) समेत होकर रहना तुमको पूर्व में भी अधिक शोभा देता था। ऐसा होने से, ॥ २४७० ॥

—हे तरणि (सूर्य) वंशजो ! अब अवश्य ही उरगसमेत होकर रहो।' मानों इस प्रकार कहते अब्ज-बांधव-(सूर्य) कुल वालों को बन्धुरता से झट नागपाश समूह से बाँध दिया। उन्होंने भी उस ब्रह्मा के वर को मानकर, स्वयं उस राक्षस के हाथ विचलित होकर, आदि-नारायण के अंश वाले वे मेदिनीपति (राजा) इस प्रकार बंधित हुए।' आज वास्तव में उस समय में वामनस्वरूप को धारणकर भूमिदान माँगकर, उस बलि को पटुकृतघ्नता से पकड़ बाँध देने का फल राम को प्राप्त होकर क्यों नहीं रहेगा ? नहीं

फलमु रामुन किट्लु प्राप्तंबु गाक । पौलयुने मनुजुडै पुट्टि युंडगनु"
ननि लोकमुन बुट्टु नपवादमुनकु । दनु सृजिच्चिनमाय दागट्टवडियें;
बन्नुगा मायाविबंधंबुवलन । दन्नु दामरचिन धरणीशु नपुडु
कनुगोनि दिविजुलु गडु विन्ननैरि; । वनचरोत्तमुलेल्ल वडि
खिन्नुलैरि; २४८०
खिन्नुडै युन्न सुग्रीवुन कपुडु । सन्नुतमति विभीषणुडिट्टुलनियें:
"निदि येल चिंतिप! नेट्टि वारलकु । नौदववे यापद लोक्कोक्कवेळ ?
निनकुलेश्वरुलकु नेमय्ये निपुडु । घननागपाशमुल् गट्टिनंतटनें"
यनि पल्कि यतडु मायादृष्टि जूचि । कनियें रावणसुतु गगनमार्गमुन;
गनि नीरु मंत्रिंचि कन्नुलु दुडिचि । वनजाप्तसुतुनकु वलनोप्प जूपे;
नारविजुंडुनु नाविभीषणुनि । चारुमहामंत्रशक्तिचे जेसि
यायिंद्रजित्तुनि नप्पुडु कांचि । यायतोन्नतमगु नचलंबु बेंरिकि
येंगसि व्रेयग द्रुंचि यिंद्रजित्तुंडु । मौगि दिरिगिंचें नम्मुलवेल्लि
वरपि;
मिनजुंडु तिरिगिन निनजुनि डाक । गनि मुन्नु वेंरचु राक्षसुलु मोदिप
नप्पुडु विजयुडै यायिंद्रजित्तु ।मुप्पिरिगोनु मुदंबुन दन्नु गोलुचु २४९०

तो मनुष्य होकर जनमकर, (राम) ऐसा क्यों मरेगा ?' इस प्रकार लोक में उत्पन्न अपवाद को स्थान देकर स्वयं अपने द्वारा सृजन की गई माया में स्वयं बंध गया। शोभा से मायाविबंधन में स्वयं अपने आपको भूले हुए धरणीश को देख तब दिविज अति उदास हो गए। समस्त वनचरोत्तम खिन्न हो गए ॥ २४८० ॥

खिन्न बने हुए सुग्रीव से तब सन्नुतमति वाले विभीषण ने यों कहा—'यह चिंता करना क्यों ? चाहे कैसा भी व्यक्ति क्यों न हो, किसी-किसी समय में विपत्तियाँ क्यों नहीं आएँगी ? घन नागपाशों से आवद्ध कर देने पर इनकुलेश्वरों का अब क्या हुआ ?' ऐसा कहकर, उसने मायादृष्टि से रावण-सुत को गगनमार्ग में देखा। देखकर जल को मंत्रित कर, आँख पोंछकर वनजाप्तसुत को शोभा से दिखाया। रविज ने भी उस विभीषण की चारु-महा-मन्त्रशक्ति के कारण उस इन्द्रजित को तव देख, आयत (विशाल) तथा उन्नत अचल को उखाड़कर, उछलकर फेंक दिया। उसे काटकर वाणवर्षा कर उसे फिर लौटाया। उससे इनज (सुग्रीव) ने पीठ दिखाई तो इनज के विधान को देख, इतःपूर्व भीत होनेवाले राक्षस मुदित हुए। तब विजयी हो इन्द्रजित ने अत्यधिक मोद से अपनी सेवाएँ करनेवाले ॥ २४९० ॥

वारुनु दानुनु वडि लंक करिगि । यारावणुनि गांचि यप्पुडिट्लनियें:
"जंपिति गपुलनु; सर्पबाणमुल । गंपिप जेसितिक्ष्वाकुवल्लभुल"
ननि यौप्प जेंप्पिन नंतरंगमुन । दनयुनि चेतकेंतयु संतसिंचि
रावणुडप्पुडु रयमुन द्रिजट । रार्विचि यनियें: "धरापुत्रि नन्नु
नौल्लदु रामुनि नौडगूडुकौनुट । युल्लंबुलो नम्मियुंडुट जेसि;
ने डिंद्रजित्तुचे नेलकु नौरगि । पोडिमि चेंडिन या भूपालुनिकि
सीत दोड्कौनिपोयि चेंच्चेर जूपु । मीतरि बुष्पकमेंक्किंचि नीवु;
अंत रामुनिमीदि यासलु दक्कि । चिंतिपकिट नन्नु जेकौनु सीत"
यनवुडु रावणुनानति द्रिजट । दनुजांगनलु दानु धरणीतनूज
नेंनय बुष्पकमुपै नेंक्किंचि वेग । चनुदेंचि संगरस्थलि बडियुन्न
२५००

नागपाशबद्धुलैयुन्न रामलक्ष्मणुलजूचि सीत शोकिंचुट

कपुलनु रामलक्ष्मणुलनु जूप । जपलाक्षियुनु नट्टिचंदंबु सूचि
कन्नीरुधारलै क्रम्म नंदंद । विन्ननै कडु दूलि विलपिंपदौडगें:
"गटकटा! राम! नीकार्मुकविद्य । येंट्टु पोयें? नीयंदे येपारियुंडु

—लोगों के साथ स्वयं शीघ्रता से लंका में जाकर उस रावण को देख तब यों बोला—'कपियों को मार डाला है, सर्पबाणों से इक्ष्वाकु-वल्लभों (राजाओं) को कम्पित कर दिया है।' ऐसा शोभा से कहने पर, अन्तरंग में तनय (पुत्र) के कार्य पर अधिक प्रसन्न हो, रावण ने तब झट त्रिजटा को बुलवाकर, कहा—'मन से राम के मिलन पर विश्वास रखे रहने के कारण, धरापुत्री (सीता) मुझे नहीं चाहती। आज इन्द्रजित के हाथ, धरती पर गिरकर, शोभाहीन बने उस भूपालक (राजाराम) के पास सीता को पुष्पक पर आरूढ़ कराकर, ले जाकर, शीघ्र दिखा दो। तब (उस मृत बने राम को देखकर) राम पर आशाएँ छोड़, चिन्ता किए बिना अब सीता मुझे ग्रहण करेगी।' ऐसा कहने पर, रावण के आदेश पर त्रिजटा दनुज-अंगनाओं के साथ स्वयं धरणीतनूजा को शोभा से पुष्पक पर आरूढ कराकर, शीघ्र आकर, संगरस्थल पर पड़े हुए ॥ २५०० ॥

नागपाशबद्ध बने हुए रामलक्ष्मण को देख सीता का दुखी होना

—कपियों (तथा) रामलक्ष्मण को दिखाया। चपलाक्षी (चंचल आँखों वाली सीता) उस विधान को देख, अश्रुओं की धाराओं के उमड़ने पर, जहाँ-तहाँ विवर्ण होकर, अधिक विचलित हो, विलाप करने लगी—'हाय हाय! हे राम! तुम्हारी कार्मुक-विद्या (धनुर्विद्या) कहाँ चली गई?

हरिहरादुलनैन नदलिचु नीदु। शरमुल शक्तियु समसैने नेडु ?
जामदग्न्युनिनैन सरकुगा गोनवु। नीमेयि लावुन नीभुवि नीवु !
सकलमुनींद्रुलु सर्पमुल् नीकु। प्रकटितशय्यगा बलुकुचुंडुदुरु;
नट्टिसर्पंबुले यवनीश ! निन्नु। गट्टंग द्राडुलै कविसेनु नेडु !
लाक्षणिकुलु नन्नु लक्षिंचि "सकल। लक्षणंबुलु मेन ललितंबुलरय
विलसित रेखारविंदंबुलंघ्रि। तलमुन गलुगुट दरळायताक्षि !
पट्टाभिषेकंबु पतितोड़ गल्गु। बुट्टुदु रिपार बुत्रुलु नीकु; २५१०
नैदुवयै युंदु" वनु माटलेल्ल। नादित्यकुलज ! नेडवि बोंकुलय्यें;
"रोलंबकुलनीलरुचिशिरोजमुलु। व्राल जेन्नारेडु; सन्नंबु नडुमु;
गदिय वोंडोंटितो गरिवंकबोमलु;। कदिसियुन्नवि वज्रकांतिदंतमुलु;
तोंगलिचुकयु लेक तोरमुल् गाक। मिगुल वट्रूवलुनै मिंचु पेंदोडलु;
करमुलु निटलंबु गन्नुलु मोमु। जरणमुल् रुचिरलक्षणसमेतमुलु;
वरकांति नुनुपारि वट्रूव लगुचु। सरिनोप्पु नखमुलु संगतांगुळुलु;
एचि वृत्ताकृति नेनसि क्रिक्किरिसि। नीचाग्रमैनदि नीकुचद्वयमु;

तुम्हीं में शोभित रहनेवाली (तथा) हरिहर आदियों को भी भर्त्सना करनेवाली तुम्हारी शर-संचालन-शक्ति आज नष्ट हो गई क्या ? इस पृथ्वी में अपने शरीर-बल के कारण तुम जामदग्न्य (परशुराम) की भी परवाह नहीं करते हो। सकल मुनींद्र प्रकट रूप से कहते रहते हैं कि सर्प तुम्हारे लिए शय्या हैं। हे अवनीश ! वे सर्प ही तुम्हारे लिए रस्से बन आज आ जुटे न ! लाक्षणिकों (सामुद्रिकों) ने मुझे देखकर (कहा था)—'ललितरूप से शरीर पर समस्त लक्षणों के होने पर, अंघ्रितल (चरणतल) में अरविन्द-रेखाओं के विलसित होने पर हे तरलायताक्षी (चंचल और विशाल नेत्र वाली) ! पति के साथ तुम्हारा पट्टाभिषेक (राजतिलक) होगा। शोभा से पुत्रों का जन्म होगा ॥ २५१० ॥

—(सदा) सुहागिन होकर रहोगी।' हे आदित्यकुलज ! वे सभी बातें आज झूठी हो गईं न ! रोलंब-कुल (भ्रमर-समूह) की नील-रुचि (-कांति) से युक्त शिरोज (केश) अधिक शोभायुक्त हैं। कमर पतली है, काली और बंकिम भौंहें (एक दूसरे से) मिलती नहीं हैं; वज्रकांति से युक्त दाँतावलि (एक दूसरे से) जुड़ी हुई हैं, विकृतिहीन, मंजुल वर्तुलाकार वाली बड़ी-बड़ी जाँघें शोभा से युक्त हैं; कर, निटल (ललाट), नेत्र, मुख, चरण रुचिर-लक्षण-समेत हैं। वरकांति से स्निग्ध तथा वर्तुल बनकर उंगलियों के साथ नख शोभायमान हैं, घने (पीन) (तथा) वर्तुल आकार से विवर्धित बन, तुम्हारा कुचद्वय नीच (झुके हुए)-अग्र भाग से युक्त है। उदर के पार्श्व

उरुतरस्निग्धंबु लुदरपार्श्वमुलु; । गरमोप्पुचुन्नदि गंभीरनाभि;
कमनीयतरदिव्य कांति जेन्नोंदि । रमणीयमैनदि रमणि! नीमेनु;
सौभाग्यमुन नीकु सरियेव्व" रनिरि; । ना भाग्य मिट्लय्ये नरनाथ!
नेडु; २५२०

"ललन लीपदियेनु लक्षणंबुलनु । गलवारलत्यंत कल्याणवतुलु"
अनि चेप्पु नार्योक्तुलवियेल्ल दप्पे; ।मनुजेश! नापुण्यमहिम गाकिदियु;
"गेंदामरलभंगि गेंजाय मेरसि यंदंबुलैयोप्पु नरचेतुलेन्न;
बल्लवारुणकांति बरगु पादाग्र । पल्लवंबुलु समस्पर्शबुलरय;
नडुमोप्पु नेलुगोप्पु नगुमोगंबोप्पु । गडुनोप्पु निवि कन्यकालक्षणमुलु
परिकिंप" ननि पल्कु पलुकुलु दप्पे; ' नरनाथ! चूचिते नानोमुफलमु!
तलपुलु दैवंबु तलकूडनीक । वेलयग निट्टु संभविंचेने नाकु?
धरणीश! ननु जनस्थानंबुनंदु । नुरुवडि गोनिपोवु नुग्रदानवुनि
बोरिबोरि वेदकि नापोयिनजाड । करमोप्प देलिसि या कपिसेन गूडि
जलनिधि बंधिंचि चनुदेंचि पिदप । बोलुपेदि गोष्पदंबुन मुनिगितिवे?
२५३०

भाग उरुतर-स्निग्ध हैं, गम्भीर नाभि अधिक शोभा दे रही है। तुम्हारा शरीर हे रमणी! कमनीयतर दिव्य-कांति से शोभित हो रमणीय है। उन्होंने कहा कि सौभाग्य में तुम्हारे समान (और) कौन हैं। हे नरनाथ! मेरा भाग्य आज ऐसा हो गया न! ॥ २५२० ॥

—'इन पन्द्रह लक्षणों से युक्त ललनाएँ अत्यन्त कल्याणवती होती हैं' ऐसा कहनेवाली समस्त आर्योक्तियाँ भी झूठी हुईं। हे मनुजेश! यह तो मेरी पुण्य-महिमा ही होगी। (मेरा दुर्भाग्य है।) 'लाल कमल के समान, लालिमा से प्रकाशित हो, सुन्दर बनी शोभित हथेलियाँ, पल्लव-अरुण कांति से विराजमान पादाग्र-पल्लव (चरणतल) जो देखने पर समस्पर्श वाले हों (पृथ्वी को समरूप से स्पर्श करनेवाले हों), शोभित कमर, शोभा से युक्त कण्ठ-स्वर, शोभित प्रसन्न वदन—सोचने पर अधिक शोभा से युक्त ये कन्यका-लक्षण हैं।' ऐसे सभी वचन झूठे हुए न? हे नरनाथ! देखा न मेरे व्रतों का फल! (मन के) विचारों के सफल न होने देकर भगवान ने मेरे प्रति ऐसा किया है न! हे धरणीश! मुझे जनस्थान से बरजोरी ले जानेवाले उग्रदानव को निरन्तर ढूँढकर, मेरे गए मार्ग को अच्छी तरह जानकर, कपिसेना के साथ मिलकर, जलनिधि को बाँधकर, (यहाँ) आकर, शोभा को खोकर (अब) गोष्पद (छोटा गड्ढा, पगार, गोपद) में डूब गए क्या? ॥ २५३० ॥

आरय नतिघोरमगु याम्यशरमु । वारुणबाणंबु वह्नि-सायकमु
नेरय ब्रह्मास्त्रंबु नेरि प्रयोगिंप । मरचितिवे ? नेडु मनुजलोकेश ?
पगवाडु मीदृष्टिपथमुन बडिन । दैगि नेल बडुगाक! तिरिगि पोगलडे ?
यिदि दैवकृतमु गाकेल्लचंदमुल । नेदुरंग शक्तुले येवरैन निन्नु ?
मेघनादुडु मायमैरसि मिम्माजि । नीघोरशरमुल निट्टु कट्टे ननिन
गालंबु गडिमिमै गडव नेव्वरिकि । बोलुने तलपोय ? भूलोकनाथ !
हा नाथ! हा वीर! हा रामचंद्र ! । ये नाकु शोकिंप; निट नीकु वगव;
नीकु प्राणमुलिच्चि निर्मलुंडैन । काकुत्स्थमणिकि लक्ष्मणुनकु वगव;
मनसु गंदग नाकु मरुगुचुनुन्न । जननिकि दुःखिप; सततंबु नीकु
जित्तंबुलोपल जिंतिचुचुन्न । यत्त कौसल्यकै यडलेद नधिप! २५४०
"ऍप्पुडु पदुनालुगेड्लु चनुनो ! । ऍप्पुडु वच्चुनो यिटु रामु" डनुचु
नीतेरंगुन नीकु नेदुरुलु सूचु । नीतल्लियाशलु निलिचेने नेडु ?
नीदिव्यशक्तियु नीबाहुबलमु । नीदुर्दमक्रम निपुणविक्रममु
नेक्कड बोयेनो ? येमंदु निक ? । नक्कटा ! विधि ! नीकु नलगेने नेडु?
चेलुवोंद नेनु नोचिन नोयुलेल्ल । फलियिंचे, नेमनि पलवितु विधिकि"?

—विचार करने पर अतिघोर याम्यशर, वारुणबाण, वह्नि सायक, शोभित ब्रह्मास्त्र (आदि) का क्रम से प्रयोग करना क्या आज हे मनुजलोकेश ! भूल गए ? शत्रु यदि आपके दृष्टिपथ में आ जाए तो कटकर ज़मीन पर गिर न पड़ेगा ! (कहीं) बचकर जा सकता है ? (नहीं) यह तो दैवकृत है वरन् किसी प्रकार से तुम्हारा सामना करने में कोई समर्थ है ? मेघनाद ने माया से प्रकाशित होकर, आपको आजि (युद्ध) में इन घोर शरों से बाँध दिया। यह (इस बात को स्पष्ट करता है कि) साहस से भी काल (नियति) का अतिक्रमण नहीं किया जा सकता है। हे भूलोकनाथ ! हा नाथ ! हा वीर ! हा रामचन्द्र ! मैं अपने लिए शोक नहीं करती, यहाँ तुम्हारे लिए दुखी नहीं होती, तुम्हारे लिए प्राण देकर निर्मल बने काकुत्स्थमणि लक्ष्मण के लिए दुखी नहीं होती, मन के विकल होने पर मेरे लिए तप्त होनेवाली (अपनी) जननी के लिए दुखी नहीं होती। (किन्तु) सतत ही तुम्हारे लिए चित्त में चिन्तित होनेवाली सास कौसल्या के लिए हे अधिप ! व्यथित होती हूँ ॥ २५४० ॥

'कब चौदह वर्ष बीत जाएंगे, कब राम इस ओर आएगा' ऐसा सोचते हुए तुम्हारे लिए प्रतीक्षा करनेवाली तुम्हारी माता की आशाएँ बनी रह सकीं ? (नहीं।) तुम्हारी दिव्यशक्ति, तुम्हारा बाहुबल, तुम्हारा दुर्दमनीय निपुण-विक्रम-क्रम कहाँ चले गए ? मैं अब क्या कहूँ ? हाय ! नियति !

त्रिजट सीत नूरडिंचुट

ननि प्रलापिंपग ननियें नात्रिजट । जनकज नूरार्चि सदयचित्तयुनः
"रामुनकोक कीडु रादु; नीकेल । नीमेंयि शोकिंप निंदीवराक्षि !
यट्टिदयेन नीयगचरसेन । यिट्टेल पेंद्यु नेंचि वर्तिंचु ?
नदें चूडुमा देवि ! यगचरेश्वरुलु । पदिलुलै नीविभु बलसियुन्नारु;
कादु पो, यीपुष्पकंबेल निलुचु । मेदिनीतनय ! यिम्मेदिनि बडक ?
२५५०
विधवलमोवनि विधि दीनियंदु । वृथयौनें, निक्कमै विलसिल्लुगाक !
कान रामुन कीडु गादु चिंतिप; । माननि ! नामाट मनसुन नम्मु;
लंकेशु जंपि यी लंक साधिंचि । पंकजानन ! निन्नु भानुवंशजुडु
नलि दोडुकोनिपोवु; नम्मु नामाट; । कलगकुमिक नो कल्याणि! नीवु"
अनवुडु सीत "मायामस्तकंबु । ननुवुगावो" लनियात्मलो नम्में;
सुंदरि त्रिजट यशोकवनंबु । नंदु ग्रम्मर देंच्चि यवनिज नुनिचें;

आज तुमने (राम को) क्षुब्ध कर दिया न ? शोभा से मेरे किए सभी व्रत (इस प्रकार) सफल हुए न ? अब किस मुँह से नियति को देख रोऊँ ?"

त्रिजटा का सीता को सान्त्वना देना

ऐसा प्रलाप (विलाप) करने पर त्रिजटा ने सदयचित्त से जनकजा को सान्त्वना देकर कहा—"हे इन्दीवराक्षी ! तुम्हें इस प्रकार शोक करना क्यों ? राम पर कोई विपत्ति नहीं आ सकती। यदि (राम पर कोई विपत्ति आई होती तो) यह ऐसा है तो यह अगचरसेना इस प्रकार अधिक विजृंभित होकर कैसे प्रवर्तित होती ? वही देखो देवी ! अगचरेश्वर सावधानी से तुम्हारे विभु को परिवेष्टित किए हुए हैं। ऐसा नहीं तो, इस मेदिनी (पृथ्वी) पर गिरे बिना यह पुष्पक (आकाश में) कैसे रहेगा ? ॥ २५५० ॥

—विधवाओं को वहन न करनेवाली बात (पुष्पक के बारे में) क्या व्यर्थ होगी ? (नहीं होगी।) तथ्य होकर रहेगी। अतः हे मानिनी ! सोचने पर राम के प्रति अन्यथा (कुशल के अतिरिक्त अन्य प्रकार) नहीं हो सकता। मेरी बात पर मन से विश्वास करो। हे पंकजानने ! लंकेश का वध कर, इस लंका को जीतकर भानुवंशज (राम) तुम्हें शोभा से साथ ले जाएगा। मेरी बात पर विश्वास करो। हे कल्याणी ! अब आगे व्यथित मत होना।" ऐसा कहने पर सीता ने आत्मा (मन) में विश्वास किया कि "माया मस्तक (राम का) (राक्षसों की माया के) अनुकूल है।" सुन्दरी त्रिजटा ने फिर से लाकर अवनिजा को अशोकवन में रख दिया।

नंत नप्पुडु कपुलार्तुलै मिगुल। जितनोंदुचु दमु जेरि शोकिंप
मनुवंशतिलकुंडु मदि देलिवोंदि। तनकु जेरुवनुन्न तम्मुनि जूचि

रामुडु मूर्छ देरि लक्ष्मणुनिकै वापोवुट

"नातम्मु जूचिते नलिनाप्ततनय!। यीतेरंगुन वोंदि यिट्लुन्नवाडु;
सीत गोल्पडि सीतचेरु माम्पलेक। यीतनि गोल्पोवुटिट्टु संभविंचे; २५६०
सौमित्रि गोल्पडि जनकज नाकु। नेमिटि? किटमीद नेल नाब्रतुकु?
यत्नंबु सेसिन नवनिज बोलु। पत्नि नोंडोकचोट बडयंग वच्चु;
गलरु कांतलु; सुतुल् गलरु; बांधवुलु। गलरुगा; कोंदुनु गलरे सोदरुलु?
तम्मुडम्मात्रमे तलपोसि चूड; । निम्मुल ननु गोल्चु निम्महाभुजुडु;
अरय गौसल्यकु नासुमित्रकुनु। सरिय कावर्तिचु सद्भक्ति तोड;
दग लक्ष्मणुनिकंटे दयतोड नन्नु। मिगुल मन्निंचु सुमित्र; नावलन
वात्सल्यमेप्पुडु वदल; दापुत्र। वत्सलयगु तल्लि वगबेट्टवलसे!
बुरि कयोध्यकु नेनु बोयितिनेनि। भरतशत्रुघ्नुलु भातृवत्सलुलु

तब कपिओं के आर्त हो, अधिक चिंतित होते हुए, अपने पास आकर शोक करने पर मनुवंशतिलक (राम) मन से होश में आकर, अपने पास पड़े हुए अनुज को देख, (बोले)—

राम का होश में आकर लक्ष्मण के लिए विलाप करना

—"हे नलिनाप्ततनय (सुग्रीव)! देखा है न मेरे अनुज को जो इस विधि को प्राप्त हो ऐसा पड़ा हुआ है। सीता को खोकर, सीता को क़ैद से छुड़ा न सक, इसको भी खो देना सम्भव (सम्प्राप्त) हुआ न! ॥ २५६० ॥
—सौमित्र को खोकर अब मुझे जनकजा क्यों (सीता की क्या आवश्यकता है)? अब मेरा जीना ही किसलिए? यत्न करने पर, अवनिजा के समान पत्नी को किसी और जगह प्राप्त कर सकते हैं। कान्ताएं (प्राप्त की जा सकती) हैं, सुत (हो सकते) हैं, बांधव (रिश्तेदार) (हो सकते) हैं, कहीं सहोदर मिल सकते हैं? सोच देखने पर मनोज्ञता से मेरी सेवा करनेवाला यह महाभुज (वाला) मात्र अनुज ही है? (बढ़कर है।) विचार करने पर कौशल्या के प्रति, सुमित्रा के समान ही, सद्भक्तियुत हो आचरण करता है। लक्ष्मण की अपेक्षा मुझे अधिक मानती है सुमित्रा। मेरे प्रति वात्सल्य भाव को कभी नहीं छोड़ती है। (ऐसी) उस पुत्र-वत्सल माता को शोकाकुल करना पड़ा न! मैं यदि पुरी (अयोध्या) को जाऊँ तो भातृ-वत्सल भरत-शत्रुघ्न पूछें कि 'लक्ष्मण कहाँ फँस गया है?

"अँट चिक्के लक्ष्मणुं ? डेल रा ?" डनिन । नट नेमि चेप्पुदु नकट ! तम्मुलकु ?
"वनटमै नीवोंटि वच्चुट चूचि । मनमुलु गलगेंडु माकु नो तनय ! २५७०
सौमित्रितो नेल चनुदेर" वनिन । नेमनि युत्तरंबित्तु दल्लुलकु ?
नेमनि यूरार्तु नीमोमुतोड ? । नेमनि यट्टुपोदु नीमेनितोड ?
ब्रालेथशैलंबु वगिलिन, निनुडु । नेल गूलिन, नीरु निश्चलंबैन,
वनधुलिकिव, गालि वर्तिप्रकुन्न, । ननलुंडु कडु जल्लनैयुन्ननैन
नामाट गडवडु; नाकु नप्रियमु । लेमाटलुनु नाडडेन्नडु नीत;
डितनि चित्तंबु नायेंड नोक्कचंद; । मितनि बोलेंडि तम्युडेंदैन गलडे ?
यितडु नाप्राणंबु; लितडु नाबंधु; । डितनि नोक्कनि वुच्चि ये नोंटिनुंड;
नित डेंदु बोयिन ने नंदु बोदु; । नितनि तोडिदेलोक; मीलोक मोलल;
जनुदेंचे ना तोड सौमित्रि नाडु; । चनियेंद ने नेडु सौमित्रितोड;
हितबुद्धि गार्यंबु लेंडपक सेसि; । ततुलविक्रमशालि; ववि नाकु दक्के २५८०

क्यों नहीं आया है ?' तो हाय, अनुजों को क्या जवाब दूंगा ? 'दुखी होते तुम्हारा अकेले ही वापिस आना देख हे तनय ! हमारे मन व्यथित हो रहे हैं, ॥ २५७० ॥

—सौमित्र के साथ क्यों नहीं आए हो ?" ऐसा माताएँ पूछें तो उन्हें क्या जवाब दूं ? यह मुख लेकर कैसे उन्हें सान्त्वना दूं ? इस शरीर को लेकर उस ओर (अयोध्या में) कैसे जाऊँ ? प्रालेय शैल (हिमपर्वत) फूट जाए, सूर्य पृथ्वी पर गिर जाए, जल निश्चल हो जाए, वनधियाँ सूख जाएँ, पवन अचंचल बनकर रह जाए, अनल अधिक शीतल बना रह जाए, तो भी (लक्ष्मण) मेरी बात का उल्लंघन नहीं करता । यह मुझे अप्रिय लगनेवाली बातें कभी नहीं कहता है । इसका चित्त मेरे प्रति सदा एकरस रहता है । इसके समान अनुज और कहीं है ? (नहीं है ।) यह मेरा प्राण है, यह मेरा बंधु है; इसे अकेले भेजकर, मैं अकेले नहीं रह सकता । यह जहाँ जाएगा, मैं वहाँ जाऊँगा । इसके साथ ही मेरे लिए लोक है । मैं इस संसार को नहीं चाहता । उस दिन सौमित्र मेरे साथ आया था; आज मैं सौमित्र के साथ जाऊँगा । हे तरुचराधिप ! हितबुद्धि से, अविलम्ब तुमने कार्य किए थे । तुम अतुल विक्रमशाली हो । वे कार्य मुझे संप्राप्त हुए ॥ २५८० ॥

दशचराधिप ! वालितनयु दोड्कौनुचु । गिरिचरसेनतो गिष्किंधकरुगु;
मे लक्ष्मणुनितोड नेगिनपिदप । बौलस्त्यजुडु मिम्मु बाधिपगलडु;
जयशालि यगुचुन्न सौमित्रिलेनि । जयमु ना कंधुनि चंद्रोदयंबु;
मद्भक्तुडै पूनि मारुतपुत्रु । डद्भुतकार्यंबुलवि पेक्कु सेसे;
जलनिधि लंघिंचि जनकज गांचि । कलन बेंवकंड्रु राक्षसुल मर्दिंचे;
नी यंगदुंडुनु नी सुषेणुंडु । धीयुतुलैन यी द्विवद मैंदुलुनु
नी गवयुंडुनु नी गवाक्षुंडु । नी गजुंडुनु शक्ति नेनयु नीलुंडु
मेंऱयु संपातियु मेटि केसरियु । मरियु दक्किन वीरमर्कटोत्तमुलु
नाकौंरकै वच्चि नलिनाप्ततनय ! । चेकोंनि लावुलु सेसि रंदरुनु;
निक्काल मिक्कड निब्भंगि मिम्मु । द्रेक्कोंन्न विधि दाट दीरदेव्वरिकि;
२५९०
रणभूमि बलुवुर राक्षसपतुलु । दृणलील बोंलियिंचि तीव्रबाणमुल
बगतुचे निब्भंगि बडि लोचनमुलु । मोंगियुचु भूरजंबुन ब्रुंगिनाडु !
वरतल्पमुन नुंडुवाडु नेडकट ! । शरतल्पमुन रणस्थलि नुन्नवाडु!
संकीर्ण रविकुल जलधिपोंगडचि । क्रुंकेने लक्ष्मणकुवलयप्रियुडु ?"
अनुचु विलापिंप नखिलवानरुलु । मनमुल शोकाब्धिमग्नुलै; रंत

—वालितनय को साथ लेकर, गिरिचरसेना के साथ किष्किन्धा को जाओ। मेरे लक्ष्मण के साथ चल बसने के बाद पौलस्त्यज (रावण) तुम्हें पीड़ित करेगा। जयशाली सौमित्र न हो तो मेरे लिए विजय अन्धे के लिए चन्द्रोदय (के समान) है। मद्भक्त हो, लगकर, मारुतपुत्र ने अनेक अद्भुत कार्य किए हैं। जलनिधि को लाँघकर, जनकजा को देख, युद्ध में कई शत्रुओं का मर्दन कर दिया। यह अंगद, यह सुषेण, धीयुत ये द्विविद, मैंद, यह गवय, यह गवाक्ष, यह गज, शक्ति से विलसित नील, प्रकाशमान सम्पाति, श्रेष्ठ केसरी, और भी शेष वीर मर्कटोत्तम मेरे लिए आकर हे नलिनाप्ततनय ! जान-बूझकर सभी ने समर्थ कार्य किए हैं। इस समय, यहाँ इस प्रकार हम पर आए विधि का उल्लंघन कैसे किया जा सकता है ? ।। २५९० ।।

—रणभूमि में अनेक राक्षसपतियों को, तीव्र बाणों से तृण के समान मारकर, शत्रु के हाथ इस प्रकार गिरकर, आँखें मूँदकर, भूरज (धूल) में लोट रहा है। वरतल्प में रहनेवाला, हाय, आज रणस्थल में शरतल्प पर पड़ा हुआ है। संकीर्ण-रविकुल-जलधि की ज्वार को शान्त कर, लक्ष्मण-रूपी कुवलयप्रिय (चन्द्र) अस्त हो गया न ?" ऐसा कहते विलाप करने पर समस्त वानर मन से शोकाब्धि में मग्न हो गए। तब,

विभीषणांगदुलु वानरुलकु धर्यमुगोलुपुट

ननिकि ग्रम्मर वच्चें नामेघनादु । डनुवुद्धि दूरस्थुलैन वानरुलु
घनतरांजन शैलकल्पुडैयुन्न । तेनु जूचि वेरव गदापाणि यगुचु
सैन्यमध्यंबुन जरियिंचु कपुल । दैन्यंबु वापुचु दग विभीषणुडु
तेंएचि रविसूति नीक्षिचि पलिके— । "नीतेरंगुन मीकु नेल शोकिंप?
गैकोनि यिदि युद्धकालंबु गानि । शोकिंप वेळये सुग्रीव ! मनकु ! २६००
दुर्णिवारोर्मिबंधुरमैन जलधि । गर्णधारुडु लेक कलमु चंदमुन
मन सैन्यमुन्नदि; मन किक वेग । ननिकि नुद्योगिंचुटदियें कार्यंबु"
अन विनि यंगदुंडाविभीषणुनि । गनुगोनि "नीमाट कडुनुत्तमंबु;
नरनाथतनयुलु नागपाशम्मु । लुरुवडि वेनगोन नुर्विपै नोरगि
बाणक्षतंबुल वलुविडि वेंडलु । शोणितंबुल ब्रुंगि सोलियुन्नार;
लीदाशरथुल मीरेमरकुंडु; । डादित्युडु दयाद्रि करुदेरक मुन्न
येनु राक्षसकोटि नेल्ल निर्जिंचि । जानकि देच्चेद जननाथु कडकु;
हनुमंतुडादिगा नखिलवानरुल । गौनि कवाटमुलतो गोटलतोड
दोरणश्रेणुलतो गूड लंक । दोरंपुविडिकिळ्ळ दुमुरु सेसेदनु;

विभीषण (तथा) अंगद का वानरों को धैर्य देना

—दूरस्थ वानरों के 'युद्ध के लिए फिर मेघनाद आया है' ऐसा सोच, घनतर-अंजन-शैल के समान अपने को देख डरने पर, गदापाणी होते हुए, सैन्यमध्य में विचरण करते हुए, कपियों के दैन्य को दूर करते हुए आकर, विभीषण ने रविसूति (सुग्रीव) को देखकर कहा—'इस तरह से तुम्हें दुखी क्यों होना चाहिए ? यह तो लगकर युद्ध करने का समय है, हे सुग्रीव ! क्या यह हमारे लिए शोक करने का समय है ? ।। २६०० ।।

—दुर्निवार-ऊर्मि-बंधुर (दुर्निवार तरंगों से पूर्ण) जलधि में कर्णधार रहित नौका के समान हमारी सेना (की दशा) है । अब हमारा कार्य है कि शीघ्र युद्ध के लिए प्रयत्न करें ।" (ऐसा) कहने पर सुनकर, अंगद ने उस विभीषण को देख (कहा)—"तुम्हारी बात बहुत उत्तम है । नरनाथ-तनय (राजकुमार) नागपाशों के बरबस बाँध डालने पर, उर्वी (पृथ्वी) पर गिरकर, बाण-क्षतों से अविरत निकलनेवाले रक्त में डूबकर, मूच्छित पड़े हैं । इन दाशरथियों के प्रति असावधानी मत बरतो । आदित्य के उदयाद्रि पर आने से पहले मैं समस्त राक्षसकोटि को जीतकर जननाथ के पास जानकी को लाऊँगा । हनुमान आदि अखिल वानरों को साथ लेकर

विस्मयंबुग बंधुवितितितो गूड । भस्मंबु सेसेंद बंक्तिकंधरुनि; २६१०
नाविक्रमंबुनु नाभुजाबलमु । भूवरुवलन नापूनुभक्तियुनु
देल्लंबु सेयुदु देगुवतो नेल्लि; । येल्लभूतंबुलु नीक्षिपनिम्मु;
मलयजकेयूर महितानुभूति । बलुमारु गन्न नाबाहुदंडम्मु
लनवरतंबुनु नधिकदर्पमुन । दनरुचुन्न रघूत्तमु कार्यमुनकु;
रावणु निर्जिंचि रघुवीरुडलर । नीविभीषणु लंक नेलमि निल्पेदनु;
गादेनि नाजि राक्षसुनिचे जच्चि । पोदुनु सौमित्रि पोयिन त्रोव"
नन विनि सुग्रीवुडंगदु जूचि । "तनय ! नी विंक नीदशरथात्मजुल
गौनिपोम्मु किष्किंधकुनु वेग; मेनु । जनि यिंद्रजित्तुनि सकलराक्षसुल
रावणु निर्जिंचि रघुरामु देवि । नेविधंबुननैन ने देत्तु वेग"
ननिन सुग्रीवुनि नारामविभुनि । गनुगौनि खिन्नुलै कपुलु भीतिल्लि २६२०
मुनुकोनि शोकाब्धि मुनुग सुषेणु । डनुवाडु वलिकें नय्यंदर जूचि:
"यीनागपशंबुलेल्ल बायुटकु । वानरेश्वरुलार ! वलनु सेप्पेदनु;

कवाट, दुर्ग, तोरण श्रेणियों के साथ लंका को अपने दृढ़ मुष्टि प्रहारों से चूर-चूर कर दूँगा। आश्चर्यजनक रूप से, बन्धु-वितति (समूह) के साथ पंक्ति-कंधर को भस्म कर दूँगा ।। २६१० ।।

मेरे विक्रम को, मेरे भुजबल को, भूवर के प्रति मेरी अनन्य भक्ति को साहस के साथ आज स्पष्ट (अभिव्यक्त) कर दूँगा। (इसे) समस्त भूतों को देखने दो। मलयज (चन्दन) (तथा) केयूर की महितानुभूति को कई बार प्राप्त मेरे बाहुदण्ड अनारत, अधिक दर्प के साथ रघूत्तम के कार्य के लिए फड़क रहे हैं। रावण को जीतकर (या मारकर), रघुवीर के प्रसन्न होने पर, इस विभीषण को लंका (के सिंहासन) पर शोभा से प्रतिष्ठित करूँगा। नहीं तो आजि (युद्ध) में राक्षस के हाथ मरकर, लक्ष्मण जिस-मार्ग से गया, उसी मार्ग से जाऊँगा।" (ऐसा) कहने पर, सुनकर सुग्रीव ने अंगद से (कहा)—"हे तनय ! अब तुम इन दशरथात्मजों को शीघ्र किष्किन्धा ले जाओ। मैं जाकर इन्द्रजित को, सकल राक्षसों को, रावण को जीतकर (या मारकर), रघुराम की देवी को किसी प्रकार शीघ्र लाऊँगा।" (ऐसा) कहने पर, सुग्रीव को (तथा) विभुराम को देख, खिन्न हो कपि भीत होकर, ।। २६२० ।।

—शोकाब्धि (दुःख समुद्र) में डूब गए। सुषेण नामक (वानर ने) सबको देखकर कहा—"हे वानरेश्वरो ! इन समस्त नागपाशों से मुक्त होने के लिए उपाय बताऊँगा। पूर्व में देवासुरों के उद्धर-संगर में, समस्त देवताओं को

दॊल्लि देवासुरोद्धुरसंगरमुन । नॆल्लदेवतलकु निवि गट्टियुन्न
देवतलप्पुडु दिव्यौषधमुल । चे वानि बाध बासिरि कट्लु वीडि;
यायौषधमु लिप्पुडमृताब्धिकवल । बायकुन्नवि द्रोणपर्वतस्थलिनि;
हनुमंतु बुच्चुडी यातडु वोयि । कॊनिवच्चु; मीरिट्टु कुंदंग वलव।"

नारदागमनमु

दनुनंत सूर्यसहस्रसंकाशु । डननॊप्पि कृष्णमृगाजिनं बमर
मॆरुगुलुगल शुभ्रमेघंबु बोलॆ । नॆऱयु पिंगलजटानिचयंबु वॆलुग
बॊनर नुदुट नूर्ध्वपुंड्रंबु वॆट्टि । तनरंग गौपीनदंडमुल् दाल्चि
रमणमै नॊप्पु नारायणमंत्र । ममलमै तनवीणयंदॊप्प म्रोय २६३०
दनतोडि योगींद्रतति नाकसमुन । नुनिचि, चित्तंबुन नुल्लासमॊदव
बरमयोगींद्रुंडु परतत्त्ववेदि । परमपावनमूर्ति परमवैष्णवुडु
नारदुडारामनरनाथु गान । गारवंबुन वच्चि करमुलु मॊगिचि
वलगॊनि यारामवसुमतीशुनकु । दलकॊन्न भक्तितो दग विन्नविंचॆः
"देव ! निन् ब्रह्मादि देवतलॆल्ल । नावार्धिमध्यंबुनंदॊप्प गांचि

इन (नागपाशों) ने बाँध डाल दिया था । तब देवता दिव्य-औषधों से बन्धनों से मुक्त हो, पीड़ा से मुक्त हुए । वे औषध अब अमृताब्धि के उस पार द्रोण-पर्वतस्थल पर हैं । हनुमान को भेजिए, वह जाकर (उन्हें) ला लेगा । इस प्रकार आप व्यथित मत होइए ।"

नारद का आगमन

(ऐसा) कहने तक सहस्र-सूर्य-संकाश (समान) हो शोभित होकर, कृष्णमृग के अजिन (चर्म) के शोभित होने पर, चपलाओं से युक्त शुभ्रमेघ के समान शोभित पिंगल (वर्ण के) जटा-समूह के प्रकाशित होने पर, ललाट पर ऊर्ध्वपुंड्र लगाकर, शोभा से कौपीन (तथा) दण्ड धारण कर, रमणीयता से शोभित नारायणमन्त्र के अमलता से अपनी वीणा पर शोभा से झंकृत होने पर, ।। २६३० ।।

—अपने साथी योगीन्द्र समूह को आकाश में ही ठहरा देकर, चित्त में उल्लास के उत्पन्न होने पर, परमयोगीन्द्र, परतत्त्ववेदी, परम-पावनमूर्ति, परम-वैष्णव नारद ने राम-नरनाथ (राजाराम) के दर्शनार्थ गौरव से आकर हाथ जोड़कर, प्रदक्षिणा कर, उस राम-वसुमतीश (-राजा) को अनन्य भक्ति से (यों) निवेदन किया—"हे देव ! वारिधि के मध्य में तुम्हें शोभा से ब्रह्मादि समस्त देवताओं ने देखकर, रावण के द्वारा दी गई बाधा

रावणबाधापरंपरल् सेप्प । गा विनि वारिपै गरुणिंचि नीवु
वारि ब्रोचुटकु रावणुनि द्रुंचुटकु । धारुणि बुट्टिति दशरथेशुनकु;
नट्टु गान नीविट्टुललमट नोंद । निट्टु तगुनय्य! महीपालवर्य!
नीनाममात्मलो निलिपिनंतटने । भूनाथ! यज्ञानमुलु पोंदवनिन,
नीकु नज्ञानंबु नेपमैन गलदे ? । चेकोनि निनु नीवु चिंतितु गाक! २६४०

नारायणुडवु; पूर्णज्ञाननिधिवि;। चारुकौस्तुभरत्नसहितवक्षुडवु;
ननिशंबु लक्ष्मिकि नाटपट्टयिन । घनतरांगंबुलु गलुगु देवुडवु;
नादिदेवुडवु, सर्वांतरात्मुडवु; । वेदवेद्युंडवु; विश्वरूपुडवु;
दलचु योगींद्रुल ध्यानंबुनंदु । नलुवोंदु सच्चिदानंदरूपुडवु;
धरणि यंघ्रलु; वियत्तलमु मस्तकमु;। परपैन निटलंबु पद्मासनुंडु;
कन्नुलु चंद्रुंडु गमलमित्रुंडु; । नुन्नतंबगुचुन्न यूर्पु मारुतमु;
वदनंबु शिखि; सरस्वति जिह्व योप्पु; । रदनप्रतति वेदराशि चिंतिप;
जेलुवैन गायत्रि शिख; प्रणवंबु । वेलसिन हृदयंबु; वीनुलु दिशलु;
महनीयधर्मंबु मनसु; देवतलु । बहुजयस्थितिगल्गु बाहुसमृद्धि;

(पीड़ा) की परम्पराओं को कह सुनाया। (तो उन्हें) सुनकर उनपर करुणा करके तुम उनकी रक्षा करने के लिए तथा रावण का संहार करने के लिए, धरणी पर, दशरथेश के यहाँ पैदा हुए हो। हे महीपालवर! ऐसा होने पर, इस प्रकार व्याकुल होना क्या तुम्हारे लिए उचित है? हे भूनाथ! कहते हैं कि तुम्हारा नाम आत्मा में स्थिर रखते ही अज्ञान संप्राप्त नहीं होते। तो तुम्हारे अज्ञान का कोई कारण हो सकता है? (नहीं।) चाहकर तुम अपने बारे में चिन्तन करो तो सही ॥ २६४० ॥

(तुम) नारायण हो, पूर्ण ज्ञान-निधि हो, चारु-कौस्तुभ-रत्न-सहित वक्षवाले हो, सदा लक्ष्मी (शोभा) के निवास-स्थान बने घनतर (महत्तर) अंगों वाले भगवान हो, आदि देव हो, सर्वान्तरात्मा हो, वेदवेद्य हो, विश्वरूप वाले हो, चिन्तन करनेवाले योगीन्द्रों के ध्यान में विराजमान रहनेवाले सच्चिदानन्द रूपवाले हो। (तुम्हारे लिए) धरणी अंघ्रि (चरण) हैं, वियत्तल (आकाश) मस्तक है, पद्मासन (ब्रह्मा) विशाल ललाट है, चन्द्र और कमलमित्र (सूर्य) आँखें हैं, मारुत समुन्नत बना हुआ श्वास है, शिखि (अग्नि) वदन (मुँह) है, सरस्वती जिह्वा हो शोभित है, सोचने पर वेद-राशि रदन-प्रतति (दन्त-समूह) है, सुशोभित गायत्री ही शिखा है, प्रणव (ओंकार) ही विराजमान हृदय है, दिशाएँ कान हैं, महनीय धर्म ही मन है, देवताजन बहुजयस्थिति से सम्पन्न बाहुओं की सम्पन्नता (बाहुबल) हैं,

गौनकौन्न ब्रह्मांडकोट्लु गुक्षि; । तनराउ तौडलु मित्रावरुणलुनु; २६५०
नश्वुलु नौगि जानुलात्मलो जूड;। विश्वंबु नीरोमवितति चिंतिप;
निर्दे चूडुमा देव! येल्लदेवतलु । गदिसि किन्नर यक्षगंधर्ववरुलु
नादिगा वच्चि जयंबु नीदेसकु । मेदिनीश्वर! कोरि मिटनुन्नार;
लकलंकमतिवि गम्मज्ञान मुडिगि;। सकलराक्षसुलनु समयिपु वेग;
वारक नरुलैनवारु संसार । पारंबु जेरु तुपायंबु लेक
बाळि नाशापाशबद्धुलैरेनि । नीलील नटियिंचुटितियकाक !
नीवेल यीसर्पनिकरंबुचेत । भाविपगा गट्टुपडुदु श्रीराम !
नी वादिमूर्तिवि; नीमूर्ति दुलपु;। नीवाहनंबैन नीकेतु वैन
गरुडुंडु वच्चिन गरुडुनिचेत । नुरगपाशमुलेल्ल नूडु नीक्षणमे"
यनि चेप्पि दीविंचि यानारदुंडु । चनियॆ नम्मरु सुधासागरंबुनकु; २६६०

गरुडुनि राकतो राघवुलु नागपाश विमुक्तुलगुट

नानारदुडु सेप्पिनट्लु राघवुडु । ता नादिहरियौट दलपोसि चूचि

ब्रह्माण्ड-कोटियाँ (-समूह) ही कुक्षि हैं, मित्र (तथा) वरुण— ॥ २६५० ॥
—शोभायमान जाँघें हैं, आत्मा से सोचने पर अश्वनी (देवता) शोभा से जानु हैं, चिन्तन करने पर विश्व तुम्हारा रोम-वितति (-समूह) है। हे देव ! यही देखो, समस्त देवता किन्नर, यक्ष गन्धर्ववर आदि जुटकर तुम्हारी जय की कांक्षा करते हुए हे मेदिनीश्वर ! आकाश पर स्थित हैं। अज्ञान से मुक्त हो अकलंकमति वाले बन जाओ। शीघ्र समस्त राक्षसों का संहार करो। निरन्तर ही मानव संसार को पार करने के उपाय के न होने पर, कांक्षा (और) आशा-पाशों से आबद्ध हो, इसी प्रकार पड़े रहते हैं, (शायद यही दिखाने के लिए) तुम लीला से अभिनय कर रहे हो। हे श्रीराम ! नहीं तो तुम इस सर्पनिकर से क्यों आबद्ध रह जाओगे ? तुम आदिमूर्ति हो, अपने (असली) रूप को सोचो। (तुम्हारा) अपना वाहन (तथा) अपना केतन गरुड़ आ जाए तो गरुड़ के कारण इसी क्षण समस्त उरग पाश छूट जाएंगे।" ऐसा कहकर, आसीस कर, नारद फिर से सुधासागर में चला गया ॥ २६६० ॥

गरुड़ के आगमन पर राघवों का नागपाशों से विमुक्त होना

उस नारद के कथन के अनुकूल राघव ने यह सोचकर कि मैं आदिहरि हूँ, होश में आकर, धीर वैनतेय (गरुड़) का स्मरण किया।

तेलिसि धीरुनि वैनतेयुनि दलचे; । दलचिन नप्पुडु तलपुतो गूड
नारुढ़मगु नमृताब्धियुत्तरपु । दीरंबुनंदुंडि दिग्गन नेगसि
यूदि मेट्टिन पादयुगमुचे बयलु । पादैन धरणि लोपलिशेषुड़ुलुक
गड़ुबेट्टयैन रेक्कलगालि मिन्नु । सुडिवडि रिक्कलु सुरियलै तूल
नाम्रोतपेल्लुन नखिललोकमुलु । नाम्रेडितमगु भयंबुन स्रुक्क
नेरकलु विद्रिचिन नेगसिन धूळि । नेरसि चीकट्लुगा निखिलंबुगप्प
जनुदेंचु नुरुवडि शैलंबुलुरुल । वननिधुल् पिडितवारुलै कलग
बदिवेल सूर्युल प्रभलेल्ल गूर्चि । मेदिपि चेसिनक्रिय मेयिप्रकाशिप
मेरयु रेक्कलतोडि मेरुवोयनग । बरतेंचे गरुडुडंबरवीथि बेचि;
२६७०
परतेंचुटयु नागपाशंबुलेल्ल । वेरचि यानृपतुल विडिचि पेल्लुरिके;
नदि यट्टिदय कादे ? यतनि जिंतिप । वदलु बंधंबुलेव्वारलकैन;
दनुदानु चिंतिचि तनदु बंधमुलु । चन द्रोव रामुंडु सालडे तलप ?
निनसतु डादिगा नेल्लवानरुलु । विन विस्मयंबनि वेरगंदि चूड
भानुकोटिप्रभाभव्य तेजमुन । नानंदकरमूर्ति यमरुलु पोगड

स्मरण करने पर, स्मरण करते ही आरूढ़ अमृताब्धि के उत्तर तीर से झट उछल (उड़) कर, दबाकर रखे पादयुग से (उस स्थान पर) गड्ढा बनने पर, धरणी के भीतर (नीचे) रहनेवाला शेष चौंक पड़ा। उसके बृहद् पंखों से उत्पन्न पवन से आकाश आलोड़ित हो गया और टुकड़े-टुकड़े होकर नक्षत्र गिरने लगे। उस ध्वनि (पंखों की फड़फड़ाहट) की अधिकता के कारण समस्त लोक आम्रेडित (द्विगुणित) भय से कमज़ोर हो उठे। पंखों के फड़फड़ाने से उठी हुई धूल ने व्याप्त होकर समस्त (लोक) को अंधकार-सा ढक लिया। आगमन की प्रबलता के कारण शैल लुढ़कने लगे, वननिधि (समुद्र) आलोड़ित हो उठे। दस हज़ार सूर्यों की समस्त प्रभाओं को गूँथकर एक बनाया हो, इस प्रकार शरीर के प्रकाशित होने पर, मानों चमकते हुए पंखोंवाला मेरु (पर्वत) हो, गरुड़ अम्बर-वीथि से आया ॥ २६७० ॥

आने पर समस्त नागपाश भीत हो, उन नृपतियों को छोड़ शीघ्र भाग गए। यह ऐसा ही है न! उसका चिंतन करने पर किसी के भी हों, बन्धन छूट जाएँगे। स्वयं अपने आप चिंतन कर अपने बन्धनों को काट देने में क्या राम समर्थ नहीं हैं? (हैं, फिर भी उन्होंने यह श्रेय गरुड़ को दिया।) इनसुत (सुग्रीव) आदि समस्त वानरों के विस्मय से देखते रह जाने पर, भानुकोटि-प्रभा दिव्यतेज से, अमरों द्वारा प्रशंसित आनन्दकर

हीरकिरीटंबु हेमांबरंबु । गारुत्मतोज्ज्वलग्रैवेयकंबु
रत्नकुंडलमुलु राजीवराग । नूत्नमंजीरमनोहरांघ्रुलुनु
मौक्तिकमालिकल् माणिक्यकवच । सक्तमै मिंचु विशालवक्षंबु
मरकतकेयूर मंजुबाहुवुलु । नरुण पक्षमुलु चंद्राननाब्जंबु
करुणावलोकमुल् कंबुकंधरमु । नरुणपल्लवकोमलाग्रहस्तमुलु २६८०
दुंदुभिस्वनमु लत्तुकचाय मेनु । मंदरमेरुसमानगात्रंबु
ललितोर्ध्वपुंड्र ललाटपट्टिकयु । सॆलवुल देरॆंडु चिरुनव्वुलॊलुक
वैनतेयुंडुनु वलगॊनि वच्चि । यानरपतुलकु नंदंद म्रॊक्कि
मॆरुगारु रॆक्कल मेनुलु दुडिचि । नॆरि गरंबुलु मोड्चि निलिचि-
यिट्लनियॆ :
"बासॆ मीकीनागपाशबंधमुलु; । वासवांतकुनि रावणु द्रुंचि वेचि
धरणिज गॊनि ययोध्यकु नेगु वेग; । धरणीश ! यसुरुल दंडिचुनपुडु
मायलु वॆंद्; येमरक वर्तिपु; । मेयुपायंबुल निक मोसपोकु"
मनि प्रदक्षिणमुगा नरिगि यानृपुल । विनुतिंचि दीविंचि वॆस गौगिलिंचि
म्रॊक्कि यायमृतसमुद्रंबुकडकु । ग्रक्कुन गमनिंचॆ गश्यपात्मजुडु;

मूर्ति (रूप) से, हीरकिरीट, हेमांबर (स्वर्णिम वस्त्र), गारुत्मत्-उज्ज्वल-ग्रैवेयक (कण्ठमाला), रत्नकुण्डल, राजीवराग (कमल की कान्ति से युक्त) नूत्न मंजीर से युक्त मनोहर-अंघ्रि (चरण), मौक्तिक मालिकाएँ, माणिक्य-कवच से लगा हुआ विशाल वक्ष, मरकत-केयूर से युक्त मंजु बाहु, अरुण पक्ष, चन्द्र-आनन-अब्ज (चन्द्र और कमल-सा मुख), करुणावलोकन, कंबु-कंधर, अरुणपल्लव के समान कोमल अग्रहस्त (हथेलियाँ), ॥ २६८० ॥ —दुंदुभि के समान स्वर, लाख के वर्ण से युक्त शरीर, सुन्दर मेरु समान गात्र (शरीर), ललित ऊर्ध्वपुंड्र से युक्त ललाट-पट्टिका, होंठों के कोरों पर विराजमान मन्दहास के उमड़ने पर, वैनतेय ने परिक्रमा करके आकर, उन नरपतियों को बार-बार प्रणामकर, कान्तिमान पंखों से शरीर पोंछकर, हाथ जोड़कर खड़े होकर यों कहा—"आपके ये नागपाश-बन्धन छूट गए। हे धरणीश ! वासवांतक (इन्द्र का अन्त करनेवाले) रावण का संहार कर, शीघ्र धरणिजा को लेकर अयोध्या जाओ। असुरों को दण्डित करने पर अधिक मायाएँ होती हैं, सावधानी से आचरण करो, किसी भी उपाय से अब धोखे में मत आओ।" (ऐसा) कह, प्रदक्षिणा कर, उन नृपों की विनुति (प्रशंसा) कर, आसीस कर, झट गले मिलकर, प्रणामकर, झट से कश्यपात्मज (गरुड़) अमृतसमुद्र से पास चला गया। सर्प-बन्धनों से मुक्त हो जाने पर राम और लक्ष्मण प्रसन्न हुए। तब, ॥ २६९० ॥

पामुल कट्लॆल्ल बायुट जेसि । रामलक्ष्मणुलुनु रागिल्लि; रपुडु
वनचरु लारामवल्लभु नॆदुर । ननुरागरसमुन नंदंद तेलि
तनरुचु सिंहनादमुलु सेयुचुनु । विनुवीथि दोकलु विसरि याडुचुनु
गुरुवुलुवारुचु गुनिसि याडुचुनु । नुरवडि बारुचु नुब्बि नव्वुचुनु
घाटिंचि शैलवृक्षमुलॆत्ति लंक । कोट लुव्वॆत्तुगा गौनदलंचुचुनु
मिगिलिनवारि या मिक्किलि रभस । मर्गलिंचॆ लंक; बॆल्लगलिंचॆ नभमु;
नंत सूर्योदयंबगुटयु जरुल । नंतयु नरय दशास्युंडु वनिचॆ;
बनिचिन नक्कोटपैनुंडि वारु । गनिरि सुग्रीवुंडु कदिसियुंडगनु
सविनयुंडै विभीषणुडु गॊल्वगनु । प्रविमलमति गपिबलमु सेविंप
बोरिकि सेनल बुरिकॊल्पुकॊनुचु । जारुविश्रृंखल समदेभयुगमु
गतिनुन्न रामलक्ष्मणुल निक्ष्वाकु । पतुल बंधंबुलु वासिनवारि;
गनि विन्ननै वारु ग्रम्मर बोयि । दनुजेश्वरुनकव्विधं बॆरिगिंप
विनि खिन्नुडै कडु वॆरगंदि यपुडु । तन मंत्रिवरुलतो दशकंठुडनियॆः
"बन्नगपाशमुल् पायंग मगुड । गन्न यारामलक्ष्मणुलचे निक
जॆडगलदीलंक सिद्धंबुगाग;। बडयवच्चुनॆ नागपाशंबुलूड ?

—वनचर राम-वल्लभ के समक्ष, अनुराग रस में बार-बार ऊभचूभ होते हुए, शोभित हुए। सिंहनाद करते हुए, विनुवीथि (आकाश) में पूँछ फेंककर खेलते हुए, अतिशयता से शोभित होते हुए, इठलाते हुए, शीघ्रता से दौड़ते हुए, फूलकर हँसते हुए, बरजोरी शैल (और) वृक्ष उठाकर, लंका के दुर्ग को एकदम आक्रांत करने की सोचते रहे, (इस प्रकार) शेष सभी लोगों के उस संरंभ ने लंका को हिला दिया, नभ को अधिकता से हिला दिया। तब सूर्योदय होने पर, सब कुछ जानकर आने के लिए दशास्य (रावण) ने चरों (गुप्तचरों) को भेजा। भेजने पर, उस दुर्ग पर से ही उन्होंने सुग्रीव के निकट रहने पर, सविनय विभीषण के सेवाएँ करते रहने पर, प्रविमल गति से कपिबल के सेवाएँ करते रहने पर, युद्ध के लिए सेनाओं को प्रेरित करते हुए, चारु-विश्रृंखल-समद-इभ (गज)-युग के समान स्थित रामलक्ष्मण को, इक्ष्वाकुपतियों को जो बन्धन-रहित हो गए थे, देखा ॥ २७०० ॥

देखकर, उदास बन, उन्होंने लौटकर, दनुजेश्वर को वह विधान बताया। (बताने पर) सुनकर, खिन्न हो, अति भीत हो (अथवा चकित हो), तब अपने मन्त्रिवरों से दशकण्ठ ने कहा—"पन्नगपाशों से मुक्त बने उन रामलक्ष्मण से अब यह लंका नष्ट हो जाएगी। यह सिद्ध

जयमॆक्कडिदि नाकु ? समरंबुलोन। रयमुन जॆंडुगाक राक्षसलक्ष्मि !
गरुडुंडु वच्चॆनो काक, लेकुन्न। नुरगपाशमुलॆट्टुलूडु वारलकु ?
गरुडुंडु ननु गॆल्चॆ गाक, लेकुन्न। नरुलॆंतवारु ? वानरुलॆंतवारु ?"
अनुचु मत्तेभ मुरवानुकारमुग। घनमैन निट्टूर्पु ग्रम्म धूम्राक्षु

धूम्राक्षुडुयुद्धमुनकु वच्चुट

बनिचॆ "नग्गलमैन बलमुल गॊनुचु। जनु वेग रामलक्ष्मणुलपै" ननुचु;
बनिचिन नादैत्यपतिकि म्रॊक्कुचुनु। ननिकॆत्ति धूम्राक्षुडप्पुडु वॆडलॆ; २७१०

वानि बलंबु वॆल्वड जॊच्चॆ नपुडु। नानाविधंबुल नलुगडलंदु;
वृकसिंहमुखमुल वॆलसिनयट्टि। प्रकटितस्फूर्तितुरंगंबुलॊप्प
बटपटार्भटि जॆवुल् पगिलिचुनट्टि। पटुरवंबुल दिशापटलंबु लद्रुव
वडि भयंकरमु दिव्यंबैन दीप्ति। यडर धूम्राक्षुनि यरदमॊप्पारॆ;
भेरुलु शंखमुल् पृथुमृदंगमुलु। भूरि घोषणमुलद्भुतमुगा म्रोय
दुरमुन कट्टु वच्चु धूम्राक्षुनकुनु। बरुवडि दोचॆ नॊप्पनि शकुनमुलु;

(अवश्यंभावी) है। नागपाशों से मुक्त होना किसी के लिए सम्भव है ? मेरे लिए अब जय कहाँ ? समर में शीघ्र ही राक्षसलक्ष्मी नष्ट हो जाएगी। शायद गरुड़ आया था, नहीं तो उनके उरगपाश कैसे छूटेंगे ? गरुड़ ने मुझे जीता है, नहीं तो नर कितने समर्थ है ? वानर कितने समर्थ हैं ?" (ऐसा) कहते हुए मत्तेभ (गज) के रव (चिंघाड़) का अनुकरण करनेवाली लम्बी आह छोड़कर, धूम्राक्ष को—

धूम्राक्ष का युद्ध के लिए आना

—यह कहते भेजा कि "दुर्निवार बलों (सेनाओं) को साथ लेते हुए, रामलक्ष्मण पर शीघ्र जाओ।" भेजने पर, उस दैत्यपति को प्रणाम करते हुए, युद्ध के लिए सन्नद्ध हो धूम्राक्ष तब निकल पड़ा ॥ २७१० ॥

तब उसकी सेनाएँ अनेक प्रकारों से, चारों तरफ़ से निकल पड़ने लगीं। वृक (भेड़िया) (तथा) सिंह जैसे मुखों से सुशोभित प्रकटित स्फूर्ति वाले तुरंगों के शोभित होने पर, पट-पट आरभटी (घोर रव) के कानों को फोड़ देनेवाले पटुरव के दिशापटलों के फट जाने पर, शीघ्रगति से भयंकर (तथा) दिव्यदीप्ति की अतिशयता के साथ धूम्राक्ष का रथ शोभित हुआ। भेरियाँ, शंख, पृथु (अधिक, बहुत) मृदंग (आदि के) भूरि-घोष के अद्भुत रूप से मुखरित होने पर युद्ध के लिए आनेवाले धूम्राक्ष को बरबस कुछ अपशकुन दिखाई पड़े। (उन्हें देख) शोभा से

नलि नार्चि मुंदर नडचु राक्षसुलु । निलिचि यँतयु भीति निश्चेष्टुलैरि;
अय्युनु निलुवक यग्गलंबैन । कय्यंबुमीदनु गविसि यार्चुचुनु
वच्चि धूम्राक्षुंडु वारिधिवोलँ । नच्चैरुवैयुन्न यगचरसेन
दाकिन नसुरुल दरुचरेश्वरुलु । दाकिरि मिन्नुलु दाक नार्चुचुनु; २७२०

नंगदादुलकुनु नसुरुल कपुडु । संगर मतिघोरसंकुलंबय्यॆ;
दानवावलि यडिदंबुलु व्रेय, । वानरावलि व्रेयु वारि वृक्षमुल;
दानवेश्वरुलु कुंतंबुल बॊडुव, । वानरुल् पॊडुतुरु वडि बिडिकिळ्ळ;
दानवुल् हरुल बंतंबुल द्रोल, । वानरुल् वानिनि व्रत्तुरु गोळ्ळ;
दानवोत्तमुलु रथंबुलु वरप, । वानरुल् वानिनि व्रय्य द्रॊक्कुदुरु;
दाववुल् मदकरिततुल डीकॊलुप, । वानरुल् वानि नुर्वर गूल्तुरलुक;
नव्विधंबुन बॆर्चि यिरुवागु बोर । नव्वनचरवीरुलसुरुल गिट्टि,
यंतकाकृति गाळ्ळ नलमि मदोग्र । दंतुल नेलतो दाटिंचि चंपि,
वानि जेकॊनि कडुवडि व्रेसि डासि । दानवानीकंबु दर्पबु मापि
गॆडपि काळ्ळीडिसि पक्कॆरलतो बट्टि । पुडमि बॆट्टुग गुद्दमुल व्रेसि
चंपि २७३०

सिंहनाद कर आगे-आगे चलनेवाले राक्षस अत्यन्त भीति से निष्चेट होकर रुक गए। ऐसा होने पर न रुककर घमासान युद्ध के लिए लालायित होते हुए, सिंहनाद करते हुए, आकर धूम्राक्ष वारिधि के समान आश्चर्य-प्रद अगचर-सेना के साथ भिड़ गया। भिड़ जाने पर तरुचरेश्वर आकाश को छूनेवाले सिंहनाद करते हुए असुरों के साथ भिड़ गए ।। २७२० ।।

तब अंगद आदियों और असुरों में संगर (युद्ध) अतिघोर संकुल हो गया। दानवावली (राक्षस-समूह) खड्ग फेंकते तो वानरावली उनपर वृक्ष फेंकती। दानवेश्वरों के भाले भोंकने पर, वानर झट मुष्टिघात करते। दानव हठ करके घोड़ों को चलाते तो वानर उन्हें नखों से चीर डालते। दानवोत्तम रथ चलाते तो वानर उन्हें कुचलकर चूर कर देते। दानव मद-करि-ततियों (मदगज-समूहों) से टकराते तो वानर क्रोध से (उन्हें) विचलित कर गिरा देते। इस प्रकार क्रम से दोनों पक्षों के लोग युद्ध करने लगे। (उस समय) वनचरवीरों ने असुरों को घेरकर, अन्तक (यम) की आकृति से चरणों से कुचलकर, मद से उग्र दंतियों (गजों) को पृथ्वी पर पटककर मारकर, उन्हें (मृत गजों को) हाथों में ले अतिशीघ्रता से फेंक, दानवानीक के दर्प को नष्ट किया, लगकर घोड़ों के चरणों को कवचों के साथ पकड़कर, ज़मीन पर ज़ोर से पटक मार डालकर, ।।२७३०।।

व्रेसिन धूम्राक्षु वीकयु लावु । नीसुनु शौर्यबु नित गैकोनक २७६०
हनुमंतु डुग्रत नरचेत नुन्न । घनतरशैलश्रृंगंबेत्ति यांचि
येचि यद्दानवु नेपेल्ल दूल । वैचिन दल रेंडु व्रय्यलै कूलें;
नप्पुडु कोंड वज्राहति गूलु । चप्पुडु दोचेनु जगमुल नेल्ल;
नट्टु वाडु मृतुडैन हतशेषुलैन । कुटिलदैत्युलु गालिकोडुकुन कुलिकि
भूचक्रमगलंग बोरि बोरि मगिडि । चूचुचु वेस लंक सोच्चिरि पारि;

अकंपनुडु युद्धमुनकु वच्चुट

यंत रावणुडु धूम्राक्षुडु वडुट । यंतरंगमु नेरियंग जेयुटयु
गलन देवतलकु गंपिपकुनिकि । गलिगिनवानि नकंपनाह्वयुनि
दिव्यास्त्रशस्त्रप्रदीप्तुलवानि । दिव्यरथोपरिस्थिति नोप्पुवानि
बडिबडि नाजिकि बडवाळ्ळ बनिचि । वेंडलिंचे बहुबलविततितो गूड;
मोनसि कालांबुदमूर्तियै वाडु । तनरि भूषणदीप्तिधामंबु लडर २७७०
मणिदीधितुल सूर्यमंडलंबगुचु । व्रणुति गांचिन हेमरथमुपै निलिचि

उसने गदा लेकर 'मर जा' कहते हुए हनुमान के मस्तक पर फेंका। फेंकने पर धूम्राक्ष के साहस, सामर्थ्य, ईर्ष्या, शौर्य (आदि) की किंचित् परवाह न कर, ॥ २७६० ॥

—हनुमान ने उग्रता से हथेली पर स्थित घनतर-शैलश्रृंग को उठाकर, सिंहनाद कर फेंका। फेंकने पर समस्त शोभा को खोकर, सिर के दो फाँकें होने पर वह दानव गिर पड़ा। तब समस्त जगों में ऐसी ध्वनि सुनाई पड़ी मानों वज्र के आघात से पर्वत गिर पड़ा हो। तब उसके मर जाने पर, हतशेष (मरने से बचे) कुटिल दैत्य पवनसुत से भीत होकर, भूचक्र के विचलित होने पर क्रम से, पीछे मुड़कर देखते हुए, भागकर लंका में घुस गए।

अकंपन का युद्ध के लिए आना

तब रावण धूम्राक्ष के पतन से अन्तरंग के फट जाने पर, युद्ध में देवताओं के समक्ष अकंपित रहने के कारण प्राप्त अकंपन नाम वाले को, दिव्य-अस्त्र-शस्त्र-प्रदीप्तियों वाले को, दिव्यरथ के ऊपर शोभित रहनेवाले (अकंपन) को, दूतों को भेज जल्दी बुलाकर, बहुबल (अधिक सेना के)-वितति (-समूह) के साथ युद्ध के लिए भेजा। वह कालांबुद-मूर्ति बनकर, भूषणों के दीप्ति-धाम से विराजमान होकर, ॥ २७७० ॥

मणिदीप्तियों से सूर्यमण्डल सम होता हुआ, प्रसिद्ध हेमरथ पर खड़े

'यिदि वच्चॆ नाजिकि नित' डनि तॆल्पु । चदुरुन गेतुवु च्चदल बॆल्लडर
गुर्टिलराक्षसवीरघोरनिस्साण । पटहभेरिभूरिभांकृतुल् सॆलग
विततंबुगा लंक वॆडलंग दोन । चतुरंगबलमु लसंख्यमै वॆडल
नगचरसेनयु नार्चुचु दार्कॆ । गगनंबु वगुल राक्षससेनतोडः
नुभयबलंबुलिट्लुग्रत बेंचि । रभसंबुतो दाकि रणमोनर्पिप
नॆगसिन कॆंधूळि यॆल्लदिक्कुलनु । गगनभूभागमुल् गप्प नालोन
जीकटि मिगुल बॆचिनचंदमय्यॆ । नाकपिसेनकु नसुरसेनकुनु;
नप्पुडु तमतम यडियालमुलनु । दप्पक रणमु गॊंदरु सेयुवारु;
पलुकुल सन्नल बरुलनि यॆरिगि । तलकॊनि पेचि कॊंदरु पोरुवारु; २७८०
वारु वीरनक यॆव्वरिनैन दाकि । दारुणाकृतिनि गॊंदरु पोरुवारु;
तरुचरावलि वैचु तरुलुनु गिरुलु । नुरुदैत्युलर्डरिंचु नुग्रशस्त्रमुलु
बॆरसि नल्दॆसलकु बॆल्लुगा बरचि । पॊरिबॊरि जलचरंबुलभंगि नॊंद
मानैन धूळितमःपटलंबु । मानितांभोनिधि माड्कि गाविंचॆ ।
नप्पुडायुभयसैन्यंबुल नडुम । नुप्पॊंगु तनुवुल नुरुलु रक्तमुन

होकर, 'यहीं यह आया युद्ध के लिए' इस बात को प्रकट करने के समान प्रताकाओं के आकाश में फहरने पर, कुटिल राक्षसवीरों के घोर-निस्साण, पटह, भेरी के भूरि-भांकृतियों के मुखरित होने पर, वितत रूप से लंका से निकल पड़ा, तो उसके साथ असंख्य चतुरंग-बल (सेना) के निकल पड़ने पर, गगन को फाड़ देनेवाला सिंहनाद करती हुई वानर सेना भी राक्षस सेना से भिड़ गई। इस प्रकार उभय बल उग्रता से सरभसवृत्ति से भिड़कर रण करने पर, उड़ी हुई लाल धूल ने समस्त दिशाओं तथा गगन-भूभाग को आच्छादित कर दिया, मानों उस कपिसेना तथा असुरसेना के मध्य अधिक अन्धकार व्याप्त हो गया। तब कुछ अपने-अपने (पक्ष के) चिह्नों को अवश्य पहचानकर युद्ध कर रहे थे, बोली के ढंग से ये पराये हैं, ऐसा जानकर, लगकर युद्ध कर रहे थे ॥ २७८० ॥

—कुछ ये और वे (अपने और पराये) न कहकर हर किसी से भिड़कर दारुण-आकृति से लड़ रहे थे। तरुचर-समूह के द्वारा फेंके जानेवाले तरु और गिरि, उरुदैत्यों के द्वारा फेंके जानेवाले उग्र शस्त्र—ये सब चारों दिशाओं में अतिशयता से फैलकर, क्रमशः जलचरों के समान दीखने पर, धूल के तमःपटल को मान्य अंबोनिधि के समान कर दिया। तब उभय-सैन्यों के बीच दैत्य-तरुचरपतियों के उत्साह से युद्ध करने पर, उमंग से भरे शरीरों से उमड़नेवाले रक्त से धरणी-पराग (धूल) (तर होकर) कम हो

धरणीपरागंबु दक्के नादैत्य । तरुचरपतुलु युद्धमु वेड्क जेय;
नावानरुल युद्ध मग्गलंबैन । बावकाकृति नकंपनुडु गोपिंचि
नारि सारिंचि युन्नतसत्त्वुडनियै । सारथितोड नुत्साहंबु मिगुल:
"श्राकुल गोंडल मर्कटसेन । वीकतो राक्षसवितति नोंप्पिचें;
नादिक्कुनकुगा रयंबुन दोलु । मा दर्पमुन नीवु मन रथं" बनुडु; २७९०

वाडुनु बरपिन वाडु नग्गलिक । वाडिमि दाकि यव्वनचरसेन
बेडिदंपुशरमुल बेल्लेयुटयुनु । जेंडि वलीमुखुलु निश्चेष्टितुलय्यु
हनुमंतुडडरिन नतनितो गूड । दनुजसैन्यंबुल दाकिरि बेंट्टु;
अप्पुडु मेरुनगाकृति नुन्न । यप्पवनजुमीद नय्यकंपनुडु
वीररसस्फूर्ति वेल्लुवदोट्टि । घोरंपुटार्पु निर्घोषमै चेलग
गडुबेल्लुगा लयकालमेघंबु । वडुवुन नुरुशरवर्षबु गुरिय
नवि गणिपक यट्टहासंबु सेसि । पवननंदनुडंत ब्रळयकालाग्नि
रुद्रुनिकैवडि रूक्षकटाक्ष । रौद्ररसंबु घोरंबुगा निगुड
विगतभयुंडुनै वेळ्ळतो गूड । नगलिंचि पेरिकि महाशैलमेंत्ति
वैचेंनु नमुचिपै वज्रि वज्रंबु । वैचिनचंदान वारणलेक; २८००

गया। वानरों के युद्ध के अधिक (असहनीय) हो जाने पर पावक की आकृति धारण कर, अकंपन ने क्रुद्ध होकर, उस उन्नत-सत्ववाले ने नारी (धनुष की डोरी) का संधान कर, सारथी से उत्साह से (यों) कहा—"वृक्षों (और) पर्वतों से मर्कटसेना ने साहस से राक्षस-वितति को पीड़ित किया। उस ओर शीघ्रता से दर्प के साथ तुम हमारा रथ चलाओ।" (ऐसा) कहने पर, ।। २७९० ।।

—उसने भी (रथ) चलाया। वह अतिशय पराक्रम से वनचर-सेना से भिड़कर, अनेक क्रूर शरों के चलाने पर, वलीमुख (वानर) निश्चेष्ट हो गए। हनुमान के आगे बढ़ने पर उसके साथ जोर से दनुजसेना भिड़ गई। तब मेरुनग की आकृति वाले उस पवनज पर अकंपन ने वीररस स्फूर्ति की बाढ़ बनकर, घोर-निश्वास के निर्घोष के समान मुखरित होने पर, अत्यधिकता से प्रलयकाल के मेघ के समान अधिक शरवर्षा की। उनकी परवाह किए बिना, अट्टहास कर, पवननन्दन तब प्रलय कालाग्नि-रुद्र के समान रूक्षकटाक्ष-रौद्ररस के घोर रूप से उमड़ने पर, विगतभयवाला हो, महाशैल को समूल उखाड़कर, दुर्निवार रूप से नमुचि पर वज्रि (इन्द्र) के वज्र डालने के समान फेंक दिया ।। २८०० ।।

दानवुंडर्धचंद्रप्रदरमुन । दानि नुग्गाड नुद्धतशक्ति मेरसि
मानितंबगु सत्त्वमहिम दीपिंप । गा नग्निकणमुलु गन्नुलु दोरग
जनि वेग वेरोक्क शैलंबु वेरिकि । कोनिवच्चि यरिमुरि ग्रूरुडै यार्चि
कडुबेट्टिदमुग राक्षसुमीद वैव । वडिगोनि तुमुरुगा वाडदि द्रुंचे;
दानिकि मारुतितनयुंडु गिनिसि । वे नगंबुनु बोनि वृक्षंबु वेरिकि
यडुगुल बेट्टुन नवनि गंपिंप । मिडुगुरुगमुलु ग्रम्मेडु कन्नुलोप्प
मसलक तक्किन म्राकुलु विरुग । विसरि याडुचु दैत्यविततिपै गविसि
रथिकुल जंपि सारथुल गीटडचि । रथरथ्यमुलनु धरास्थलि गेडपि
गोम्मुलु नेम्मुलु गुंभस्थलमुलुनु । नम्मीदि जोदुलु नंकुशंबुलुनु
बोरिब्रोरिगंटलु भूषणंबुलुनु । जरणंबुलुनुगूड सामजप्रतति २८१०
नडपरगा व्रेसि यंदु गोन्निटि । बोडिपोडिगा व्रेसि पुडमिपै गलपि
तुमुरुगा रौतुलतोनु गुर्रमुल । समयिंचि काल्वुर जदियंग मोदि
यंतकाकृति बेर्चु हनुमंतुमीद । नंतरंगमुन गोपाविष्टुडगुचु
वाटंबुगा दैत्यवरुडुच्चिचपार । नाटिंचि योंकपदुनालुगुबाणमुल

दानव ने उसे अर्द्धचन्द्रप्रदर से चूर कर दिया। (तब) उद्धत-शक्ति से प्रकाशित होकर, मान्य सत्व-महिमा से दीप्त होकर, आँखों से अग्निकणों के गिर पड़ने पर, जाकर एक और पर्वत को उखाड़कर, लाकर जल्दबाजी से, क्रूर हो, सिंहनाद कर, बड़े ज़ोर के साथ राक्षस पर डाल दिया। झट उसने (दानव ने) उसे ग्रहण कर चूर-चूर कर दिया। उसपर मारुति-तनय क्रुद्ध हो, झट नग (पर्वत)-समान वृक्ष को उखाड़कर, पद-गति से अवनि के कम्पित होने पर, जुगनुओं के समूहों (स्फुलिंगों) से घिर आँखों के शोभित होने पर, अन्य वृक्षों के टूटने पर, घुमाते हुए, दैत्यवितति पर आक्रमण कर, रथिकों को मारकर, सारथियों के दर्प का उन्मूलन कर रथ और रथ्यों (अश्वों) को धरास्थल पर गिराकर (मिट्टी में मिलाकर), दाँतों, हड्डियों, कुंभस्थलों, (तथा) उनपर के योद्धाओं, अंकुशों को, क्रम से घंटाओं, भूषणों (तथा) चरणों के साथ सामज-प्रतति (हाथियों के समूह) को, ॥ २८१० ॥

—पिंड (मिट्टी के पिंड) के समान करके, उनमें कुछ (हाथियों) को चूर-चूरकर, मिट्टी में मिलाकर, घुड़सवारों के साथ घोड़ों को एक साथ मार डालकर, पैदल (सैनिकों) को मार-मार सपाट कर, अंतक की आकृति से शोभित होनेवाले हनुमान पर, अन्तरंग से कोपाविष्ट होते हुए, दैत्यवर ने चौदह बाणों को ढंग से चलाया जो (हनुमान के) आर-पार चले गए। (हनुमान के) हाथ के अश्वकर्णवृक्ष को चूर-चूरकर, प्रसन्न होते हुए

गरमुन गल यश्वकर्णवृक्षमुनु । मुरियलु गार्विचि मुरियुचु नार्चे,
नप्पुडु नेत्तुरुलडर नशोक । मोप्प वूचिनक्रिय नोप्पि यालोन
हनुमंतुडोकवृक्ष मवलील वेरिकि । तनर नकंपनु तल व्रेयुटयुनु
पोरिवोरि वगिलिन पुनुकलतोड । नरभोजनुंडु प्राणंबुलु विडिचे
लोकंबुलगल वेल्लुन गोंडगूलु । नाकृति वेट्टुगा नवनिपै गूलि;
वाडु गूलिनयंत वानरोत्तमुनि । वाडिमिकोर्वक वाडु दम्मेदुर २८२०
दनुजुलु गनुकनि दललोलि वीड। जनि लंक सोच्चिचरि संभ्रमिचुचुनु
नगचरेश्वरुलुनु हनुमंतु कडिमि। वोगडिरि तम मनंबुल मेच्चि मेच्चि;
पररुलचे ननि नकंपतुडु गूलुटयु । बरितापमुन वोंदि पंक्तिकंधरुडु
"मनुजुल गपुलनु मरणमोंदिचि । चनुदेम्मु नी बलशौर्यमुल् मेरसि"

महाकायुडु युद्धमुनकु वच्चुट

यनि महाकायुनि नप्पुडु पनिचे; । बनिचिन वनिपूनि यपुडु
रमणीयतर मयूरध्वजंबोप्प । नमितमणिप्रभलखिलंबु निंड
बनुगोन्न शस्त्रास्त्रपंक्तुलु मेरय । घनपिशाचानन गार्धभप्रतति
पूनिन यरदंबु बोलुपार नेक्कि । नानास्त्रशस्त्रसन्नद्ध सैन्यमुलु

सिंहनाद किया। तब रक्त के अधिकता से प्रवहित होने पर पुष्पित अशोकवृक्ष के समान शोभित हनुमान ने इतने में एक वृक्ष को अनायास उखाड़कर, अकंपन के शिर पर दे मारा। उस नरभोजन (राक्षस) ने सिर के फूटने पर लोकों के विचलित होने पर झट पर्वत के गिरने के समान धरा पर गिरकर प्राण छोड़ दिए। उसके गिरते ही वानरोत्तम के प्रताप को सहन न कर सक, उसके पिल पड़ने पर, ॥ २८२० ॥

—दनुज, सिर के बालों के बिखेरने पर, संभ्रमित होते हुए, लंका में घुस पड़े। अपने मनों में सराहते-सराहते नगचरेश्वरों (वानरों) ने हनुमान के साहस की प्रशंसा की। शत्रुओं से युद्ध में अकंपन के गिरने पर पंक्तिकंधर परितप्त हुआ। "मनुजों (तथा) कपियों को मारकर, अपने बलशौर्यो से प्रकाशित होकर वापिस आओ," ॥ २८२४ ॥

महाकाय का युद्ध के लिए आना

—(ऐसा) कह महाकाय को तब भेजा। भेजने पर वह भी चाहकर तब रमणीयतर मयूरध्वज के शोभित होने पर, अमित मणि-प्रभाओं के अखिल (समस्त लोक) में भर जाने पर, दीप्त बनी शस्त्र-अस्त्र-पंक्तियों के चमकते रहने पर, महान् पिशाचों के मुखवाले गार्धभ (गधे)-समूह से जुते हुए रथ

नडवंग निस्साणनादंबुलॅसग । नडियालमैन तूर्यंबुलु मॉरय
दनरिन दक्षिणद्वारंबुनंदु । विनुत विक्रमशालि वॅडलॅ वेगमुन; २८३०
नप्पुडु गुरिसॅ बै नस्थुल वान; । सॉप्पड बिड्गुलु सोनलै पडियॅ;
गॉडुगुल बडगलु गूलॅ; गूलटयु । नडरि महाकायुडवि यॅल्ल गॉनक
कडिमि वानरसेन गदिसि ताकुटयु । बुडमि सलिपनप्पुडु वलीमुखुलु
दरुशैलविततुलु तरुचुगा मीद । गुरियुचु दाकिरि क्रूरदानवुल;

वानर राक्षसुल भीकर समरमु

नप्पुडु दानवु लासेन मीद । नुप्पॉंगु बीरंबु लॉप्पुचुनुंड
दडबडगा नरदंबुलु वऱपि । कडुवेगमुन गरिघटल डीकॉलिप
तुरग दळंबुल दोलियु नुग्र । तरमुगा मुंचि पदाति द्रोचियुनु
गरवालमुल द्रुंचि गदल नॉप्पिंचि । सुरियल नाटिंचि शूलाल बॉडिचि
परिघल विदळिंचि प्रासाल नॉंचि । शरपरंपर लेसि चक्रमुल् वैचि

पर शोभा से सवार होकर, नाना अस्त्र-शस्त्र से सन्नद्ध (लैस) सैन्यों के साथ-साथ चलने पर, निस्साणों के नादों के मुखरित होने पर, (अपने) चिह्न बने तूर्यों के बजते रहने पर, शोभित दक्षिणद्वार से (वह) विनुत विक्रमशाली झट चल पड़ा ॥ २८३० ॥

तब ऊपर से हड्डियों की वर्षा हुई। शोभा से लगातार बिजलियाँ (टूट) गिरीं। छत्र-चामर गिर पड़े। गिर पड़ने पर भी उद्धत बन महाकाय उनकी (अपशकुनों की) परवाह न कर, साहस से वानरसेना के निकट पहुँचकर (उनपर) टूट पड़ा। (तब) पृथ्वी कम्पित हुई। वलीमुख (वानर) लगातार तरु-शैल-विततियों (-समूहों) को बरसाते हुए, भयंकरता से जूझ पड़े।

वानर और राक्षसों का भीकर समर

तब दानव उस (वानर) सेना पर, उमड़ते हुए, दंभपूर्ण वचनों से शोभित होते हुए, रथ चलाकर जिससे शत्रु लड़खड़ाए, अतिवेग से करि-घटाओं (मेघरूपी गजों) को सामना करने के लिए प्रेरित कर, तुरग-दलों को चलाकर, उग्रतर रूप से (शत्रुओं को) डुबोकर, पदातियों (पैदल सैनिकों) को ढकेलकर, करवालों से काटकर, गदाओं से पीड़ित कर, छुरियाँ भोंककर, शूलों को चलाकर, परिघाओं को विदलित कर, प्रासों (एक प्रकार का शस्त्र) से सताकर, शर-परम्पराएँ चलाकर, चक्र फेंककर, पट्टिस (बड़े खड्ग) भोंककर, परशुओं से चीरकर, नियराकर, क्रुद्ध हो मुद्गरों से मारकर, ॥ २८४० ॥

पट्टिसंबुल ग्रुच्चि परशुल व्रच्चि । किट्टि मुद्गरमुल गिनिसि दट्टिचि २८४०
मिगिलिन, गपुलुनु मेटि रक्कसुल । नग पादपमुल वानल मुंचि; रंत
नारभसंबुन नवनीपराग । मा रविमंडलंबतयु गप्पे;
नारज:पटलंबु नंदिरुवागु । वोरुचो नोंडोरु वोडगानराक
तरुवुलु गोंडलु दरुचु म्रोयुचुनु । देरलंग मीद नेतेंचु चक्कटिकि
नुरवडि नेयुदुरुग्र दानवुलु । शरपरंपर लाकसंवुन गप्प;
वरग शस्त्रंबुलु बट्टिसंबुलुनु । शरमुलु दोमरचयमु व्रासमुलु
वडि म्रोयुचुनु मीद वच्चु चक्कटिकि । विडुतुरु तरुशैल विततुलु गपुलु;
नंत बोवक चेंवुलंदुनु धूळि । येंतयु निंडिन निरुवागुवारु
म्रोयु चक्कटिकि निम्मुल विक्रमंबु । सेयु नेर्पुलु दक्क जेयुचु नपुडु
कपि वीडु नाक राक्षसुडु वीडनक । चपलत्वमुन वेल्लु चंपुदुरेचि २८५०
यटु वोर दनुवुल नडरु रक्तंबु । पटु नदुलयि रज: पटलंबु नणप
दिमिरंबु वासियु दीप्त तेजमुन । नमरुलु वेरुगंद ननि सेयुनपुडु

—आगे बढ़े । कपियों ने भी श्रेष्ठ राक्षसों को नग (और) पादपों की वर्षा में डुबोया । तब उस रभस के कारण उत्पन्न अवनी-पराग (धूल) ने रविमण्डल को ढक दिया । उस रज:पटल में दोनों पक्षवाले एक-दूसरे को देख न सकने पर भी लड़ते रहे । तरु और पर्वतों के अवसर (लगातार) मुखरित होते, (अपने) ऊपर आने के विधान को देख, उग्र दानव झटपट शरपरम्पराओं का प्रयोग करते हैं, जिससे आकाश ढक जाए । शोभा से शस्त्र, पट्टिस, शर, तोमर-चय (-समूह), प्रास (आदि) के शीघ्र मुखरित होते (अपने) ऊपर आने के विधान पर कपि तरु-शैल-विततियों को डाल देते हैं । अलावा इसके (धूल के उड़कर, सब कुछ अन्धकारमय होने के अतिरिक्त) कानों में भी धूल भर गई । दोनों पक्षवाले (अस्त्र-शस्त्रों के) मुखरित होने तथा शोभा से विक्रमपूर्ण ढंग से (शत्रुओं के किए जानेवाले) चातुर्यों के न सुनाई पड़ने पर (पहले तो दिखाई नहीं पड़ रहा था अब सुनाई भी नहीं पड़ रहा है), यह कपि है, यह राक्षस है, ऐसा न जानकर, चपलता से विजृंभित होकर (परस्पर एक-दूसरे को) मार डालते हैं ।। २८५० ।।

इस प्रकार जूझते समय शरीरों (के घावों) से अधिकता से निकलनेवाले रक्त के पटु (बड़ी) नदियाँ बनकर, रज:पटल का दमन करने पर, तिमिर दूर हो गया । (तब) दीप्त तेज से, अमरों के आश्चर्यचकित होने

वेस दैत्युलकु गाक विरिगि याकपुलु । कसिमसियै कनुकनि बारुटयुनु गनि यंगदुडु वल्कै : "गपिवीरुलार! । कनुकनि निटुपारगानेल येनु गलुगंग" ननि वारि ग्रम्मर ननिकि । दलकोन जेसि युत्साहंबुतोड नोक महापर्वत मुखवडि नेत्ति । यकलंकुडै राक्षसावळि मीद नडव नातनि तोड नलि नार्चि यार्चि । नडचिरि वानरनायकुलेचि; यंगदुंडुनु बेर्चि यसुरुल गिट्टि । यंगद दरुपर्वतादुलु वैचि पेंडचेत बडद्रोचि पिडिकिळ्ळ बोडिचि । यडरि मुंजेतुल नंगमुलू मोदि मोचेत बगुलंग मोगमुलु सदिपि । पूचि शस्त्रास्त्रमुलू पोडि पोडि सेय २८६०

गरकु राक्षसुलु नंगदुनकु गाक । विरिगि हाहाकार विवशुलै तूलि नलुगड बार नुन्नतशक्ति वारि । "वलवदोहो!" यनिवारण सेसि ख्याति मिंचिन महाकायुनि मंतृ । लाततमति रुधिराशनुंडनग वाळेंडिवाडुनु वज्रनाभुंडु । गालदंष्ट्रुडुनु गालकल्पुंडु मरि वपाशुडु शतमायुंडु धूम्रु । डरिमुरि दुर्धरुंडनुवाडु गडगि यट्टहासमु सेसि यगसरसेन । गिट्टि नोप्पिप वीक्षिचि पृथुंडु बनसुंडु मेघपुष्पकुडु गवाक्षु । डुनु ऋषभुडु गजुडुनु ग्रोधनुंडु

पर युद्ध करते समय, झट दैत्यों के हाथ हारकर, कपि नष्ट-भ्रष्ट हो, सकपकाकर भागने लगे (तो उन्हें) देख अंगद ने कहा—'हे कपिवीरो ! मेरे रहते इस प्रकार सकपकाकर भागने की क्या आवश्यकता है ?' (ऐसा) कह उन्हें पुनः युद्ध के लिए प्रवृत्त कर, उत्साह से, एक महापर्वत को झट से उठाकर, अकलंक हो, राक्षसावलि की ओर चल पड़ा तो क्रम से उत्साहित हो, सिंहनाद कर, वानरनायक विजृंभित हो चल पड़े। अंगद ने भी क्रम से असुरों के पास जाकर, उत्साह से तरु-पर्वत आदि डालकर, वाम कर से गिराकर, मुट्ठियों से मारकर, मणिबन्धों से शरीरों पर प्रहार कर, कुहनी से मुख तोड़कर, लगकर (राक्षसों के) शस्त्र-अस्त्रों को चूर-चूर कर दिया ।। २८६० ।।

(तब) क्रूर राक्षस अंगद के हाथ हारकर, हाहाकार करते हुए लड़खड़ाकर चारों दिशाओं में भागने लगे तो उन्नतशक्ति से 'ऐसा मत करो, न करो' कहते (उन्हें) निवारित कर, महाकाय के प्रख्यात मन्त्री तथा आततमति वाले रुधिराशन, वज्रनाभ, कालदंष्ट्र, कालकल्प, वपाश, शतमायु, धूम्र, जल्दबाज दुर्धर नामक (राक्षसों) ने सयत्न अट्टहास कर, अगचरसेना के निकट जाकर, (उन्हें) पीड़ित किया। (उसे) देख पृथु, पनस, मेघपुष्पक, गवाक्ष, ऋषभ, गज, क्रोधन, शतबलि, तार (आदि वानर-

शतबलि तारुंडु सबलुलै वारि । नतुलित गति दाकि यनि सेयुनपुडु
रुधिराशनुंडंत रोषंबुतोड । नधिक बाणमुलु गवाक्षुपै नेय
वेगंबे पर्वत वृक्षंबु लेत्ति । यागवाक्षुडु रुधिराशनुवैचे;
२८७०
वैचिन नडुमने वानि नन्निटि । नेच्चि चूर्णबुगा नेसि गवाक्षु
बडनेसें; मूर्छचे बडिन गवाक्षु । बोडगनि तारुडप्पुडु कलुषिंचि
पेडपेड नार्चुचु बेडिदंबु मिगुल । गडुनुग्र रणबलकौशलंबमर
घनमैन सालवृक्षंबेत्ति व्रेसें । ननुवंद रुधिराशु नरदंबु मीद;
नारुधिराशनुंडम्महीरुहमु । बोरन नडुमनें पोडि पोडि सेसि
पदि बाणमुल दारु बडनेसि मिंचि । कदिसि व्रलंबुन गपिसेन गिट्टि
कडु नुग्रुडयि लयकालंबुनाडु । मिडुक लोकमुलेल्लम्रिगु नंतकुनि
याकृति गैकोनि यासेनतोड । भीकर वृत्तितो बेर्चुचु नुंडे
नप्पुडोक्किंत गवाक्ष तारुलुनु । देप्पिरि कनुविच्चि तेलियंग जूचि
यंतलो गदगोनि यडरि गवाक्षु । डंतकाकृति रुधिराशु मस्तकमु
२८८०
व्रेसिन नसुरयु विकृतांगुडगुच्चु । बासेंब्राणमुलकु; बडियें दत्तनुवु;
ननि वज्रनाभुडुदग्रुडै पृथुनि । गनुगोनि पेल्लेसे घनसायकमुल;

नायकों) के सबल हो, अतुलित गति से, (राक्षसों से) टकराकर युद्ध करते समय, रुधिराशन ने तब रोष से गवाक्ष पर अधिक बाण फेंके। शीघ्र गवाक्ष ने पर्वत-वृक्षों को उठाकर रुधिराशन पर डाला ।। २८७० ।।

डालने पर बीच में ही उन सबको चूर्ण कर, गवाक्ष को गिरा दिया। मूर्च्छित हो गिर पड़े गवाक्ष को देखकर तार ने तब क्रुद्ध होकर, जोर से सिंहनाद करते हुए, कठोर (तथा) अधिक उग्र रण-बल-कौशल से शोभित होकर, एक महान् सालवृक्ष को उठाकर, औचित्य से रुधिराशन के रथ पर डाल दिया। वह रुधिराशन उस महीरुह (वृक्ष) को झट बीच में ही चूर-चूरकर, दस बाणों से तार को गिराकर, विजृंभित हो, हठ से कपिसेना के निकट पहुँच, अतिउग्र हो, लयकाल के समय संतप्त समस्त लोकों को निगल जानेवाले अन्तक (यमराज) की आकृति को धारण कर, उस सेना के साथ भीकरवृत्ति से जूझता रहा। तब गवाक्ष और तार थोड़ा होश में आकर, आँखें खोलकर, देखकर, समझकर, झट गदा ले विजृंभित हुए, गवाक्ष ने अन्तक-आकृति से रुधिराशन के मस्तक पर, ।। २८८० ।।

—दे मारा, असुर ने भी विकृतांग वाला होकर, प्राण छोड़ दिए। उसका शरीर भी गिर गया। युद्ध में वज्रनाभ ने उदग्र हो पृथु को देखकर

बृथिवीधरमु वैचें बृथुडप्पु; डतडु । प्रथितंबुगा नेसें बदि व्रय्यलुगनु;
बृथुडुनु रोषसंभृतुडुनै वानि । रथंमुपैंकेन्तयु रयमुन नुरिकि
विल्लु खंडमुलु गाविंचि गुर्रमुल । डोलिंचि रथमु वेट्टुग नुग्गुसेसि
यनयंबु गोपिंचि यव्वज्रनाभु । घनशक्ति वलकेल गडकाळ्ळु वट्टि
वेसद्रिप्पि नेलतो व्रेसि रोषमुन । नसुवुल बेडबापि यापृथुंडार्चें;
बरुवडि ऋषभुनिपैं गालदंष्ट्रु । डुरुशक्ति गोलिपें महोद्धतदंति;
नट्टु मीद जनुदेंचु नग्गजंबुनकु । नट्टुनिट्टु तोलगक या ऋषभुंडु
वेगंब तन पदद्वितयमोक्ककटिग । लागिंचि कुंभस्थलंबु दन्नुटयु
२८९०

मदकरि घींकृति मानक निगुड । नदि योंक विंटिपट्टुरिगें वेंन्ककुनु
मरियुनु ऋषभुंडु मानक मीद । दरिमि यय्येनुगुदंतंबु वेंरिकि
बागोप्प व्रेसि यप्पट्टुकरि जंपि । लागुनु वेगंबु लावुनु मेरसि;
कालदंष्ट्रु नि गिट्टि कालोगि बट्टि । केळिमैं धर व्रेसि गीटडगिंचें
नसुरसैन्यंबु हाहारवंबंद; । नसमुन गपिसेन यार्चें नंदंद;
कालकल्पुडु नग्निकल्प बाणमुल । पालु गाविंचें नप्पनसुनिगिट्टि;

अधिक संख्या में महान् बाण फेंके। तब पृथु ने एक पृथिवीधर (वृक्ष) को फेंका। उसने प्रथित रूप से उसके दस टुकड़े कर दिए। पृथु ने भी रोषसंभूत हो, उसके रथ पर अतिशीघ्रता से दौड़कर, धनुष को टुकड़े कर, घोड़ों को लुढ़काकर, रथ को कठिनता से चूरकर, सदा क्रुद्ध होते, उस वज्रनाभ को घनशक्ति से बाँए हाथ से टाँगें पकड़कर, शीघ्रता से घुमाकर, रोष से, ज़मीन पर पटककर (राक्षस को) प्राणरहित कर, (पृथु ने) सिंहनाद किया। झट ऋषभ पर कालदंष्ट्र ने उरुशक्ति से महा-उद्धत-दंति (-हाथी) को चलाया। अपने ऊपर आनेवाले उस गज को (देख), इधर-उधर न हटकर, उस ऋषभ ने वेग से अपने पद-द्वितय (चरण द्वय) को एक कर, खींचकर (उसके) कुंभस्थल पर लात मारी, ॥ २८९० ॥

—(तब) वह मदकरि चिंघाड़ते हुए पीछे इतनी दूर चला गया जितना (चलाने पर) एक तीर जाता है। फिर भी ऋषभ ने न छोड़कर, पीछा कर, उस हाथी के दाँत को उखाड़कर, शोभा से प्रहार कर, उस महान् गज को मारकर, लाघव, वेग, बल से दीप्त हो, कालदंष्ट्र के निकट पहुँच, (उसकी) टाँग को औचित्य से पकड़कर, केलि से (खेल में जैसा) (उसे) धरा पर पटककर, दर्प का दमन कर दिया जिससे असुरसैन्य में हाहाकार फैल गया, दर्प से कपिसेना ने लगातार सिंहनाद किया। कालकल्प ने पनस के पास पहुँच, अग्निकल्प बाणों का भागी बनाया। पनस ने उस रथ पर लांघकर,

पनसुडय्यरदंबु पैकि लंघिंचि । मुनु बेट्टुगा गुर्रमुल जदियिंचि
सारथि बडदन्नि सत्त्वमेपार । नारथंबेल्ल नुग्गयि रालगौट्टि
पिडिकिट गळसंधि बेट्टुगा गिट्टि । पौडिचें नक्कालकल्पुडु दन्नुकौनग;
बौडिचिन वाडु नप्पुडु पंड्लु डुल्लि । दौड दौड नोर नेत्तुरु ग्रक्कुकौनुचु
२९००

मिड्कुचु ग्रुड्डुलु मिडुक ब्राणमुलु । विडिचें राक्षसुलेल्ल विस्मयमंद;
वलियुडै कपुल वपाशुंडु गिट्टि । चलमुन नेचि जर्जरितुल जेय
वानिपै बाषाणवर्षंबु गुरिसें । जानुगा गजुडाकसंबेल्ल निंड;
ना वपाशुडु वानि नन्निटि नडुम । गाविचें दुनियलुगा नंपगमुल;
गाविंचि मरियुनु गजुनुरुमाड । बावकाभमुलैन बाणंबुलेडु
नेसि वेंडियु गिट्टि इरुवदेनिंट । नेसि नूरिंट मेनेसें दूरंग;
गजुडु नय्यम्मुल गडुनौच्चि वानि । निजरथंबंतयु नेळ नेळ विरुग
गरुडुनि विधमुन गडुवेग दाकि । करिगोपुराग्रमुग्रत द्रोयु करणि
नावपाशुनि तल यट्टकु बासि । पोवैचें नप्पुडु भूमिपै बडग;
रोषिंचि यपुडु धूम्रुडु दुर्धरुंडु । भीषणास्त्रमुल नौप्पिंचि वानरुल
२९१०

प्रथमतः भयंकरता से अश्वों को मार डालकर, सारथी को लात मार गिराकर, सत्त्व के विजृंभित होने पर, उस समस्त रथ को चूर-चूर कर, मुट्ठी से उस (राक्षस) के गलसंधि के पास दृढ़ता से प्रहार किया जिससे वह तड़पने लगा। ऐसा मारने पर उसने तब दाँतों के टूट गिरने पर, मुँह से रक्त उगलते हुए, ॥ २९०० ॥

—आँखों के बाहर निकल आने पर, समस्त राक्षसों के विस्मित होने पर, प्राण छोड़ दिए। (तब) वपाश ने बली हो कपियों के निकट जाकर, हठ से, सताकर, जर्जरित करने पर, गज ने उसपर शोभा से पाषाणों की वर्षा की जिससे आकाश भर गया। उस वपाश ने बाण-समूह से उन सबको बीच में टुकड़े कर दिया। (टुकड़े) कर और गज को चूर करने के लिए पावक-समान सात बाण डालकर, और फिर (उसके) निकट जाकर, पच्चीस (बाण) डालकर, फिर सौ बाण डाले जो (उसके शरीर में) घुस गए। गज उन बाणों से अति पीड़ित होकर, गरुड़ के समान अति वेग से (उस राक्षस के) अपने रथ पर कूद पड़ा जिससे वह टूट गया। करि के गोपुर-अग्र (भाग) को उग्रता से गिराने के समान, उस वपाश के सिर को तब धड़ से अलग करते हुए भूमि पर गिरा दिया। तब रुष्ट होकर धूम्र (और) दुर्धर ने भीषण-अस्त्रों से वानरों को पीड़ित कर, ॥ २९१० ॥

दरिमिन गिनुक ग्रोधनमेघपुष्पु । लुरुक रथंबुलकुरिकि वारलनु
गरतलंबुल मस्तकंबुलु सरचि । दुरमुन गेडपिरद्भुत शक्ति मेरसि;
यट्टु वारु हतुलैन नसुरु लंदंद । पट्टुरयंबुन जेंडि पारिरि भीति;
नसुरुलु वारुट यप्पुडु चूचि । मसलक वडि शतमायुंडु वेचि
कविसिनचो बरिघम्मुद्धरिंचि । कविसि यातनिमीद गजु डेदिरिंप
ग्रलमोप्प ऋषभुंडु शतबलि पनसु । डलुक गवाक्षु नलांगदुल् गूडि
कडगि वृक्षंबुलु घनशैलमुलुनु । मडवक याशतमायुपै वैव
शर तोमर प्रास चक्र गदासि । वरशस्त्र चयमुल वर्षंबु गुरिसि
वडि शतमायुंडु वनचरेश्वरुल । बेंडिदंबुगा नोंचि पेर्चि पेल्लार्चे;
वानिचे नट्टुनोंच्चि वानराधिपुलु । मानक रोषसमग्रुलै कविसि
२९२०
यडरि गवाक्षुंडु हयमुल जंपे; । गडगि खंडिचे नंगदुडु बताक;
बरियलुगा द्रोक्के बनसुंडु रथमु; । तुरुमुगा ऋषभुंडु नोंचे सारथिनि;
नलवोप्प नलुडु शस्त्रास्त्रमुल् विरिचे; । ग्रलमुन बिडिकिट शतबलि वोंडिचे

—भगाया (तो) क्रोध से क्रोधन (और) मेघपुष्प ने एकदम (उनके) रथों पर कूदकर, अद्भुत शक्ति से प्रकाशित होकर, करतलों से उनके मस्तकों पर प्रहार कर, युद्ध में उन्हें समाप्त कर दिया। ऐसा उनके निहत होने पर भीति से असुर शीघ्रता से इधर-उधर भाग गए। असुरों के भागते तब देख, विलम्ब न कर, झट शतमायु विजृंभित हो, परिघा को उठाकर भिड़ गया। भिड़नेवाले उसका सामना किया गज ने। हठ से ऋषभ, शतबलि, पनस, क्रोध से गवाक्ष, नल, अंगद (आदि) एकत्र होकर, सयत्न वृक्षों, घनशैलों को निष्फल न कर (ठीक लक्ष्य पर), उस शतमायु पर डालने पर, झट से शर, तोमर, प्रास, चक्र, गदा, असि (आदि) वर-शस्त्र-चय की वर्षा कर, शतमायु ने वनचरेश्वरों को तीव्रता से सताकर घोर सिंहनाद किया। उससे उस प्रकार सताए जाकर, वानराधिप न रुककर, रोषसमग्र हो जूझ पड़े ॥ २९२० ॥

विजृंभित हो गवाक्ष ने अश्वों को मार डाला, सप्रयत्न अंगद ने पताका का खण्डन कर दिया, पनस ने रथ के टुकड़े कर कुचल दिया, ऋषभ ने सारथी को चूर कर दिया, शोभा से नल ने शस्त्र-अस्त्रों को तोड़ दिया, हठ से शतबलि ने मुट्ठी से मारा। मुष्टिघात की परवाह न करते हुए, अतिलघुता से गरुड़ के समान पटु सत्त्व से तलवार (और) ढाल ले, चटुल-वेग से शतमायु (आकाश की ओर) उछला। बड़ी तत्परता से (युद्धभूमि

बिडिकिटि पोटुन बिम्मिटि गौनक । कडुलघुत्वंबुन गरुडुंडु बोले
बटु सत्त्वमुन वालु बलकयु गौनुचु । जटुल वेगंबुन शतमायुडेगय
बरवसंबुन वालु बडियुन्न ब्रद्द । परियुनु गौनि शतबलियु दो नेगसें;
नेंगसि भेरुंडंबुलेडरेंडु गविसि । यौंगि बोरु तेंड्रगुन नुरुवडि मिगुल
व्रेयुचु दिरुगुचु वेंस दप्पुकौनुचु । बायुचु डायुचु बाटवंबौप्प
गेंरलुचु देंरलुचु ग्रिदु मीदगुचु । बौरि बौरि नाकसंबुन बोरुतरिनि
शतमायु डडिदंबु जळिपिंचि पून्चि । शतबलि विपुल वक्षंबेयुटयुनु २९३०
सरभसुंडै यप्पुडु शतबलि ब्रद्द । परिदप्प नौड्डि कृपाणोग्रधार
व्रलमुन देग व्रेसें शतमायु तौडलु । तलक्रिदुगा वाडु धरमीद बडग;
नविसें दैत्युनि तल यंतंत जेंदरि । यवनिपै गिरि श्रृंग मवियु चंदमुन;
शतमायु डम्मेंयि जच्चिन गपुलु । शतबलितोड नच्चट नार्चुटयुनु
धरणि मिन्नुनु गुणध्वनि बीटलेंगय । नरदमत्युग्ररयंबुन बड्रपि
यंगद नपुडु महानादुडार्चि । यंगदु मेन मूडम्मुलु ग्रुच्चि

महानादु डंगदुनितो बोरि मडियुट

मड्रियुनु वेंस नेय मर्कटेश्वरुडु । वड्रलु कोपंबुन वानिपै गिट्टि

में) पड़े हुए तलवार, ढाल लेकर शतबलि भी (उसके) साथ ही उछला। उछलकर, वे दो भेरुंडों (पक्षियों) के भिड़कर लड़ने के समान, शीघ्रता से वार करते हुए, घूमते हुए, (शत्रु के वार से) बचते हुए, दूर होते हुए, नियराते हुए, पटुता के शोभित होने पर, उत्साहित होते हुए, ऊपर-नीचे होते हुए, क्रम से आकाश में लड़ने लगे। उस समय शतमायु ने खड्ग को चमकाकर, सप्रयत्न शतबलि के विपुलवक्ष पर दे मारा, ॥ २९३० ॥

—तो सरभसता से तब शतबलि ने ढाल को आगे कर (उस वार से) अपने को बचा लिया और कृपाण की उग्र धाराओं से, हठ करके शतमायु की जाँघों को काट डाला तो वह सिर के बल पृथ्वी पर गिर पड़ा। दैत्य का सिर, अवनि पर गिरिश्रृंग के (छिन्न-भिन्न हो) छितराने के समान छितरा गया। शतमायु के उस प्रकार मरने पर कपियों के शतबलि के साथ वहाँ सिंहनाद करने पर, गुणध्वनि (धनुष्टंकार) से धरणि और आकाश में दरारें पड़ जाने पर, रथ को अत्युग्रता से चलाकर, उत्साह से तब महानाद ने सिंहनाद कर, अंगद के शरीर में तीन बाण जड़ दिए,

महानाद का अंगद से लड़कर मरना

—और भी (बाण) झट डालने से मर्कटेश्वर विवर्धित क्रोध से उसके पास

योजनायतगिरि यीकटि रथंबु। पै जवंबुन वैव बडकुंड वाडु
नडुमने गद वैचि नगमेल्ल बोंडिग। वडि द्रुंप गोपिंचि वालिनंदनुडु
नतनि रथंबुन कवलील दाटि। चतुर सत्त्वोन्नति जापंबु विट्रिचि २९४०

पट्टि रथंबुपै बडवैचि ट्रोम्मु। मैट्टि ग्रुड्डुलु वडि मिडिकि रोजगनु
मेंड नुल्चि त्रेंचि क्रम्मिन नेत्तुरोलुक। बुडमिपै वैचें नप्पुडु वानि
शिरमु;

दम्मुडु साव नुद्दंड शोकमुन। नेम्मुलु वगुलंग नेचि यार्चुचुनु
मट्रियुनु गनलुचु महनीय रथमु। मेट्रयंग नलुगड मेरुगुलु वाट्र
गदलिचि यम्महाकायु डुद्वृत्ति। मदमुन सिंहंबु मलयु चंदमुन
गुदुलु ग्रुच्चिचन माड्कि ग्रूर बाणमुल। नेंदिरि धारुणि गूल नेसे
वानरुल;

वनचरवीरुलु वानिकि गाक। हनुमंतु मरुगुन कंदरुं जनिरि;
सारथि जूचि "यीचक्कटि मनल। वारक मार्कोनुवारलु लेरु;
बोरन रामुपै बोनिम्मु तेरु। नेरपु वाटिंचि नी" वन्नवाडु
गडगि युग्यमुल पग्गमुलु वदलिचि। वडि नदलपगनु दीव्रंबुन गदल २९५०

जाकर, एक योजन-आयत-(विशाल)-गिरि को जब (वेग) से डालने पर, उसे गिरने न देकर बीच में ही गदा फेंक समस्त नग को झट चूर कर देने पर, क्रुद्ध वालिनन्दन ने उसके रथ पर सरलता से कूदकर, चतुर-सत्त्व की उन्नति (अधिकता) से चाप को तोड़, ॥ २९४० ॥

(उसे) पकड़ रथ पर गिराकर, छाती दबाकर, (राक्षस की) आँखों के झट बाहर निकल (उसके) हाँफते रहने पर, गला घोंटकर, (सिर) तोड़कर, उमड़ते रक्त से भरे हुए उसके सिर को पृथ्वी पर डाल दिया। अनुज के मरने पर, उद्दंड शोक से (छाती की) हड्डियाँ टूट जाएँ, ऐसा रोते हुए, विजृंभित हो सिंहनाद करते हुए, फिर क्रुद्ध होते हुए, महनीय रथ के प्रकाशित होने पर, चौतरफ़ चिनगारियों के व्याप्त होने पर, (उसे) चलाकर, महाकाय ने उद्वृत्ति से मद के कारण सिंह के विचरण करने के समान, गदाएँ भोंकने के समान क्रूर वाणों से, (शत्रुओं का) सामना कर, वानरों को धरणि पर गिराया। वनचरवीर उसे जीत न सक, सभी हनुमान की आड़ में गए। (उसने) सारथी को देख कहा—'इस विधान से हमारा सामना करनेवाला कोई नहीं है। चातुर्य से तुम अब शीघ्र रथ को राम के पास जाने दो।' (ऐसा) कहने पर उसने सप्रयत्न अश्वों के लगाम को ढीला कर, हाँका तो (रथ) तीव्रता से चल पड़ा, ॥ २९५० ॥

ना क्रूरतकु गाक यगचरुलू परुव । "नोक्रोतुलार ! मीकुलुक नेमिटिकि ?
शिवुनि चापमु द्रुंचि सीत जेकोन्न । यवनीशुपै गानि याजि ने नलुग;
बरशुरामुनि भंग परचिन यट्टि । नरनायकुडु गानि नायीडु गाडु;
आजिलो खरुनि नुक्कडचिन यट्टि । राजु मीदने कानि रादु नायम्मु;
धृति नम्मुतुद कब्धि देच्चिन यट्टि । पतितोड गानि ये बवरंबु सेय;
द्रिजगंबुलंदुनु दीपिंचि नट्टि । रजताद्रि येत्तिन रावणु सुतुड;
दुदि निक निंद्रजित्तुनिकि दम्मुंड; । निदें महाकायुंड नेतेंचिनाड"
ननुचु जेप्पुचु राग नंबुदपटल । मुन नुन्न सूर्युंडु मोनसिन माड्कि
गपिराज तनयु डंगदकुमारुंडु । कपि सेनलो नुंडि कडगि येतेंचि
वेनुकोनि कोपंबु विलसिल्ल नपुडु । घनमैन कडिमितो गलुषिंचि पलिकें; २९६०
नोरि महाकाय युडुगक रज्जु । ली रणस्थलमुन नेल प्रेलेंदवु ?
मीतंड्रि गिरि येत्ति मेरसे; मातंड्रि । मीतंड्रि दोक निम्मेंयि गट्टियेत्ते,
नीकु नाकुनु दगु निष्ठुर रणमु; । काकुत्स्थपति येल? कपिवीरुलेल?
यनि म्राकु गोनि मीद नडरिप नतनि । तनुवु निडग गप्पे दारुणास्त्रमुल;

—उस क्रूरता को सह न सक अगचर भागने लगे (तो उसने कहा)—'हे वानरो ! तुम लोग क्यों भीत होते हो ? शिव के चाप का खण्डन कर, सीता को ग्रहण करनेवाले अवनीश के अतिरिक्त मैं किसी पर युद्ध में रुष्ट नहीं होता। परशुराम का अपमान करनेवाले नरनायक को छोड़ कोई मेरी बराबरी का नहीं है। युद्ध में खर के दर्प का दमन करनेवाले राजा को छोड़ अन्य किसी पर मेरा बाण नहीं आता। धैर्य से बाण की नोक पर अब्धि को लानेवाले पति (नायक) को छोड़ और किसी से मैं युद्ध नहीं करता। त्रिजगों में दीप्त बने हुए रजताद्रि को उठानेवाले रावण का पुत्र हूँ। अन्त में इन्द्रजित का अनुज हूँ। यही मैं महाकाय आया हूँ।' ऐसा कहते हुए (उसके) आते समय, अंबुदपटल में स्थित सूर्य के बहिर्गत होने के समान कपिराजतनय अंगदकुमार कपिसेना में से सयत्न आकर, उद्धत क्रोध से शोभित होने पर, अतिसाहस से, क्रुद्ध हो बोला— ॥२९६०॥ "अरे महाकाय ! न रुककर इस रणस्थल में दम्भपूर्ण वाक्य क्यों बकते हो ? तुम्हारा पिता गिरि को उठाकर दीप्त हुआ, हमारे पिता ने तुम्हारे पिता को पूँछ से इस प्रकार बाँधकर उठाया। तुम्हारे और मेरे मध्य निष्ठुर रण उपयुक्त है। (उसके लिए) काकुत्स्थपति क्यों ? कपिवीर क्यों ?" ऐसा कहकर वृक्ष ले विजृंभित होने पर, (राक्षस ने) उसके

गदिसि वेंडियु महाकायुडंगदुनि । गदगौनि ब्रेसे नुत्कट कोपुडगुचु;
ब्रेसिन नेंतयु विवशुडै पडियें; । नासमयंबुन नतडु मूर्छिल्ल
गुतलंबु वगुल नेक्कोन दैत्युलार्चि; । रतडु मूर्छिल्लिन नगचरपतुलु
कलिसि यंदरु महाकायुपै गविसि । शिललु भूजंबुलु जेच्चेर वैव
नवि येल्ल दनुडु बाणावलि चेत । नवलील दुनिमि गवाक्षुनि बदिट
बृथुनि नैदिट नूट बृथुसत्वु गजुनि । ब्रथितंबुगा शतबलि मुप्पदिट
२९७०

नेनुबदि यम्मुल ऋषभुनि गिनुक । बनसुनि डेब्बदि पटुसायकमुल
मेरसि क्रोधनुनि नम्मेघपुष्पकुनि । नरुवदिटनु नूट नदरंट नेसे;
निटु वानरुल नतडेपडगिंप । नट मूर्छनोंदिन यंगदुडपुडु
तेलिसि मोमुन ग्रम्मुदेंचु रक्तंबु । बलुमरु गरमुल बाय द्रोयुचुनु
नुदरुचु नप्पुडयोमयंबैन । गदयेत्तिकोनि महाकायुनि रथमु
पयिकि लंघिंचि युद्भट शक्ति तोड । जयशीलुडै वानि सारथिजंपि
वेस विल्लु बेळ्ळन विरुगंग गोट्टि । यसमुन हयमुल नन्निटि गूल्चि
तल ब्रेसे; ब्रेसिन दैत्यपुंगवुनि । तल बोमिडिक मूडि धरणिपै
बडियें;

शरीर को दारुण अस्त्रों से ढक दिया। और फिर निकट आकर, महाकाय ने उत्कट कोपवाला होता हुआ अंगद पर गदा का प्रहार किया। (गदा) डालने पर वह अधिक विवश हो गिर पड़ा। उस समय उसके (अंगद के) मूर्च्छित होने पर राक्षसों ने ऐसा सिंहनाद किया जिससे कुतल (पृथ्वी) विदीर्ण हो जाए। उसके (अंगद के) मूर्च्छित होने पर नगचरपति सब मिल कर, महाकाय पर आक्रमण कर, शिलाएं और भूज (वृक्ष) शीघ्रता से फेंकने लगे। उन सब को अपने बाण समूह से सरलता से काट देकर, गवाक्ष को दस, पृथु को पाँच, पृथुसत्त्ववाले गज को सौ, प्रथित रूप से शतबलि को तीस, ।। २९७० ।।

—ऋषभ को अस्सी, क्रोध से पनस को सत्तर पटु-सायक, प्रकाशित होकर क्रोधन और उस मेघपुष्पक को (क्रम से) साठ और सौ बाण मर्म (स्थान) बेधते हुए डाला। इस प्रकार उसके वानरों के उत्कर्ष का दमन करने पर, उस प्रकार मूर्च्छित अंगद तब होश में आकर, मुख पर (प्रवाहित हो) आनेवाले रक्त को कई बार हाथों से पोंछ लेते हुए, विजृंभित हो तब अयोमय (लौह) गदा को उठाकर, महाकाय के रथ पर लाँघकर, उद्भट शक्ति से जयशील हो उसके सारथी को मारकर, झट धनुष को तोड़ देकर, दर्प से समस्त अश्वों को गिराकर, (राक्षस के) सिर

ना महाकायुंडु नरदंबु डिग्गि । भीम-गदादंड-भीषणुंडगुचु
नंगदु नंगंबु नदरंट व्रेसें; । नंगदुंडुन व्रेय नतडु दर्पिंचि २९८०
यंगदु मस्तकं बलुकतो मड्रियु । बोंगि गदादंडमुन डासि व्रेसें;
नाघातामुन नेत्तुरडरिन नैन । राघवुबंटु शौर्यबित्त सेडक
गद पुच्चुकोनि महाकायुनि व्रेसें । नुदुरु भग्नमु गाग नुरुशक्ति मेंड्रसि;
येंदिरिन तन तंड्रि नीतनि तंड्रि । विदितंबुगा बट्टि वेमारु दौल्लि
मुन्नीटि लोपल मुंचुट दलचि । मुन्निटि पगकुने मुंचेनो यनग
नसमेदि दनुजु डायंगदु गिट्टि । वेस बेर्चि नेत्तुरु वेल्लुव मुंचें;
मुंचें रावणु बट्टि मुन्नब्धि वालि । मुंचिन गति वानि मुंचें रक्तमुन;
निटु महाकायुंडु निंद्रु मन्मडुनु । बटुगति बोरुचो बरगु रक्तमुल
जेवुरु टेरुल जेलुवैन गिरुल । भावंबु चेकोनि भास्वरुलैरि;
गदयुनु गदयु नुग्रंबुगा दाकि । चिदुरुपलगुटयु जेच्चेंड्र वारु २९९०
बलुडुनु निर्जरपतियुनु दोल्लि । कलिसि पेनंगिन कैवडि दोप

पर दे मारा । मारने पर दैत्यपुंगव के सिर का किरीट छूटकर धरणि पर पड़ा । उस महाकाय ने रथ से उतरकर, भीमगदादण्ड से भीषण होता हुआ, अंगद का शरीर हिल जाए, ऐसा प्रहार किया । अंगद ने भी मारा तो वह दर्पित होकर, ॥ २९८० ॥

—अंगद के मस्तक पर क्रोध से और विजृंभित होकर, निकट से गदादण्ड से प्रहार किया । उस आघात से रक्त के अधिक बहने पर भी, राघव का सेवक, शौर्य के तनिक भी नष्ट न होने पर, गदा ले, उरुशक्ति से दीप्त हो, महाकाय का ललाट फट जाए ऐसा मारा । सामना करनेवाले मेरे पिता को इसके पिता ने विदित रूप से पकड़कर, पूर्व में, कई बार समुद्र में डुबोने की बात का स्मरण कर, अब यहाँ शत्रुभाव से डुबोने की बात सोच, दर्प के उत्कर्ष से दनुज ने अंगद के पास पहुँच, विजृंभित हो, उसे रक्त की बाढ़ में डुबो दिया । पूर्व में रावण को पकड़ वालि के अब्धि में डुबोने के समान उसे (अंगद को) रक्त में डुबो दिया । इस प्रकार महाकाय और इन्द्र के पौत्र के पटुगति से लड़ते समय, प्रवहित होनेवाले रक्त के साथ, लाल नदियों से समायुक्त शोभित गिरियों के भाव (साम्य) को ग्रहण कर, वे भास्वर (प्रकाशमान) हुए । उग्रता से गदा के गदा से लगकर, (टूटकर) तिनके हो जाने पर वे झट से, ॥ २९९० ॥

—बल (एक राक्षस का नाम) और निर्जरपति के पूर्व में मल्लयुद्ध करने के समान, (जूझने लगे ।)

महाकायुडंगदुनितो मल्लयुद्धमु सेसि मडियुट

बलुधूळि यिद्दरि पदहति नेगय । दलपडि मल्लयुद्धमु सेयुचोट
जतुरतमै 'वनचर वीरु डीत । डितडु राक्षसु' डनि यैरुगंग राक
कीलुबोम्मलु पोरु क्रियलनु दोचि । वालि सुग्रीवुल वडुवुन बोर
नादट गपुलेल्ल नंगदु जूचि । "यी दुष्ट राक्षसु नेल पालार्प ?
वालिनंदनुडवु; वालि कैवडिनि । वालिन वाडवु वरभुजशक्ति;
वालि दुंदुभियुनु वडि बोरु चोट । वालि दुंदुभि नितवडि निल्वनीडु;
वेवेग चंपु मी विबुधकंटकुनि । नी विक्रमक्रम निपुणत मेऱसि;"
यनि जयशब्दंबु लडरिप नतडु । दनुजुनि तल मुष्टि दाटिचे बेट्टु;
पिडिकिट दाचिन बिट्टुगा दिरिगि । पडियें ना दैत्युंडु बलमरि नेल; ३०००
बडियुन्न राक्षसपति ऱोम्मु द्रोक्कि । मेंड नुल्चि तल द्रेंचि मीदिकि वैचि
यंगदुडार्चें; नय्यंगदु जूचि । यंगद नार्चि रय्यगचरपतुलु;
विच्चि दानवुलुनु वेस नेगि लंक । जोच्चियु वारिधि जोच्चियु नालगु

महाकाय का अंगद से मल्लयुद्ध कर, मर जाना

दोनों के पदाघातों से अधिक धूल के उड़ने पर, लगकर दोनों के मल्लयुद्ध करते समय, (कोई भी) चातुर्य से भी इसका पता नहीं लगा सका कि 'यह वनचरवीर है, यह राक्षस है'। वे कठपुतलियों के युद्ध की क्रियाओं का स्मरण दिलाकर, वालि-सुग्रीव के समान लड़ने लगे। झट से समस्त कपियों ने अंगद को देख (कहा)—'इस दुष्ट राक्षस की उपेक्षा करना क्यों ? (तुम) वालिनन्दन हो, वालि के समान ही वर-भुज-शक्ति से शोभित हो। वालि और दुंदुभि के झट जूझते समय, वालि दुंदुभि को इतनी देर रहने नहीं देता। अपने विक्रमक्रमनिपुणता से दीप्त होकर, इस विबुधकंटक को अतिशीघ्र मार डालो।' (ऐसा) कहकर जय-(जय) कारों के करने पर उसने भीकरता से दनुज के सिर मुष्टि प्रहार किया। मुष्ठि से मारने पर, वह दैत्य बल खोकर, चक्कर खाकर भूमि पर गिर पड़ा ॥ ३००० ॥

गिरे हुए राक्षसपति के वक्ष को रौंदकर, गला घोंटकर, सिर काटकर, ऊपर फेंक, अंगद ने सिंहनाद किया। उस अंगद को देख उत्साह से अगचरपतियों ने सिंहनाद किया। बिखरकर दानवों के झट जाकर लंका में घुसकर और वारिधि में घुसकर और चारों दिशाओं में भागकर, दीनता को प्राप्त होने पर, कपियों ने दर्प से अंगद की स्तुति की। स्तुति कर,

देसलकु बारियु दीनत नोंद । नसमुन नुतियिंचिरंगदु गपुलु
नुतियिंचि सीतामनोनाथु कडकु । नतनि दोड्कोनि चनि यत्तेरंगेल्ल
विनिर्पिप रघुपति विनि संतसमुन । घनमुगा नुप्पोंगि कौगिट जेर्चि;
करुणाकटाक्ष मंगदु मीद नुनिचि । सरसंपु मंदहासंबुन नोप्पे;
हतशेषुलगु राक्षसावळि चेप्प । गतपडु यम्महाकायुनि दलचि
विन्ननै तलवांचि वेरुगंदि कुंदि । कन्नीरु निंचि राक्षसकुलाधीशु
डंत:पुरंबुन करिगि याराति । चिंतिचुचुनु निद्र सेंदक युंडे; ३०१०
मरुनाटि रेपु सामंतुलु गोलुव । मेरुगारु नरदंबु मीदिकि वच्चि
यरिगि पेंपारिन यलवरि नेक्कि । परपेंन तन कोट बरिकिंचि चूचि
चूचि पाळेंबुलु शोधिंचि मीद । नेचिन पयिकापुलिड बंचि यप्पु
डारावणुंडु प्रहस्तुतोननियें: । "बेरेक्कि येंदु नभेद्यमीकोटः
येट्टि शात्रवुलकु नेंन्नडु डायु । नट्टिदिगा; दिप्पुडगचर प्रतति
वच्चिच भेदिंचि दुर्वारमै युनिकि । यच्चेरुवैनदि; यदियुनुगाक
श्रीरामु भुजबल-श्री येल्लचोट । नारुढतरमु प्रहस्त ! कापुनकुनु
नी वोंडे, नदिगाक ये नोंडे, रणमु । गार्विप नाकुंभकर्णुंडु नोंडे
दगुवार; मिदु निद्रारति दनकु । मिगिलि ना तम्मुडु मेल्कोनडय्ये;

सीता-मनोनाथ के पास उसे ले जाकर, वह समस्त विधान सुनाने पर, रघुपति सुनकर, हर्ष से अत्यधिक फूलकर, (उसे) गले से लगाकर, अंगद की ओर करुणा-कटाक्ष (कृपादृष्टि) डालकर, सरस मंदहास से विराजमान हुए। हतशेष राक्षसावली के कहने पर, विगत हुए उस महाकाय का स्मरण कर, लज्जित हो, सिर झुकाकर, भीत हो, विकल हो, आँसू भरकर, राक्षस-कुलाधीश अन्तःपुर जाकर, वह रात चिंतित होते हुए, बिना सोए रहा ।। ३०१० ।।

दूसरे दिन प्रातः सामन्तों के सेवाएँ करते रहने पर, प्रकाशवान रथ पर सवार हो, आकर, जाकर शोभित प्राकार चढ़कर, विशाल अपने दुर्ग को निहारकर, देखकर, स्कंधावारों को शोधकर, उसके बाद अधिक उपरि-रक्षक रखने (नियमित करने) का आदेश देकर, उस रावण ने प्रहस्त से कहा—'प्रसिद्ध यह दुर्ग किसी भी प्रकार से अभेद्य है। किसी भी प्रकार के शत्रुओं को निकट आने न देनेवाला है। अब ऐसा नहीं है। अगचर-प्रतति (इसमें) आकर, घुसकर, दुर्वार बनी हुई है। उनका अस्तित्व आश्चर्यप्रद है। यही नहीं, श्रीराम की भुजबल-शक्ति सर्वत्र आरूढतर (श्रेष्ठ) है। अतः हे प्रहस्त ! (अब) रण करने को या तुम हो, या मैं हूँ, अथवा वह कुंभकर्ण योग्य है। इनमें निद्रारति से युक्त मेरा अनुज जाग

बोयेंदवो ? येनु बोदुने ?" यनुडु । ना यसुरेंद्रुन कतडिट्टुलनियें; ३०२०

"बोयेंद निदे; नादु भुजबलंबेल्ल । नायमरुलु मेच्च नरुल द्रुंचेदनु; डासि भूत प्रेत डाकिनीगणमु । लासक्तितो नेत्तुरानि मोदिप नटु चूडु माजि ब्रहस्तुंडु कपुल । निट्टु चेयुने यन नेपु सूपेदनु; 'बोरिकि जनु' मन्न बुद्धुलु सेप्प । नारय बाडिगादेननु विनुमु दनुजेश! योकमाट; 'तग' दंटि निक । विनु, विनकुंडु; विवेकिंचि चूडु; दानिकि गादन दनुजेश ! मुन्नु । मानैन बुद्धुलु मंत्रुलु सेप्प विनवेति; विकनैन विनु; सीत राम । जननाथुनकु निम्मु; समरंबु वलव;"

प्रहस्तुनि युद्धमु

दनुचु रावणुनि ब्रहस्तुंडु वीडु । कोंनि वच्चि ता दन कोललवारि बनिचि यप्पुडु नाल्गु बलमुल वारि । दनु गूर्चुकोंनि महोद्दंडभावमुन घनमैन कपिवरांगंबुल गालि । तनमीद वीचुनंतकु म्रोयुचुन्न ३०३०

नहीं रहा है। (तुम) जाओगे ? या मैं जाऊँ ?' ऐसा कहने पर, उस असुरेन्द्र से उसने (प्रहस्त ने) यों कहा— ।। ३०२० ।।

"यही जाता हूँ। अपने समस्त भुजबल से नरों (राम-लक्ष्मण) का वध करूँगा, जिसकी देवता प्रशंसा करें। भूत-प्रेत-डाकिनी-गणों के निकट आकर, आसक्ति से रक्त पी प्रसन्न हो, कहें कि 'वह देखो, युद्ध में प्रहस्त कपियों की ऐसी गत कर सकता था !' ऐसा उत्कर्ष प्रदर्शित करूँगा। 'युद्ध में मत जाओ' ऐसी नीति (वचन) कहने के लिए, सोचने पर (अब) औचित्य नहीं है। फिर भी सुनो। हे दनुजेश ! एक बात। कहा (युद्ध) 'उचित नहीं है'। सुनो या मत सुनो (मानो) विवेक कर देखो। (उसके परिणाम को) इनकार नहीं करता। पूर्व में मन्त्रियों के बुद्धि (नीतिवचन) कहने पर (तुमने) नहीं सुना (माना) था। अब तो सुनो। सीता को राम-जननाथ (राजा) को दे दो। समर (करना) नहीं चाहिए।'

प्रहस्त का युद्ध

(ऐसा) कहते हुए रावण से प्रहस्त ने विदा ली (और) आकर स्वयं अपने वेत्रधरों को भेजकर, तब चतुरंग बल वालों को एकत्र कर, महोद्दंड भाव से महान् कपिवरों के शरीरों पर के पवन के अपने ऊपर प्रवहित होने पर मुखरित होते, ।। ३०३० ।।

कौमरुन जलदनिर्घोषंबु दानि। नमरंग विहगेन्द्रुलन गपुलेगसि
तक्कक द्रुंचुनंतकु ग्रालुचुन्न। चक्कनि युरगध्वजस्फूर्ति दानि
मणिगण किंकिणी महनीय भूरि। रणनंबु गलिगिन रथमप्पुडेक्कि
पेक्कु तूर्यमुल गंभीर रावमुल। दिक्कुलु घूर्णिल्ल दिवि योंड्डुगिल्ल
जुक्कलु डुल्ल वसुंधर येल्ल। व्रक्कलु वारू बूर्व द्वारमुननु
गालांतकुडु बोले गडगि यिब्मंगि। नालंबु सेय ब्रहस्तुंडु वेडले;
नप्पुडादैत्युल यार्पुलु, नतनि। योप्पार बेंचिन युग्र मूर्तियुनु
नक्कजंबगुटयु नाविभीषणुनि। कक्कड जूपि रामावनीश्वरुडु
"तेजंबु बलमुनु दीप्ति शौर्यमुनु। राजिल्लुचुन्न यीराक्षसवरुनि
पेरेमि ? साहसस्फीतुडै कपुल। पैराक चेप्प जूपग जोद्यमय्ये"

•३०४०

ननुडु विभीषणुं डर्कवंश्युनकु। ननियें "देवा! यितंडारावणुनकु
गलिगिन सैन्यसंघमुलकु नेल्ल। दळवायि; यीतनि दळमंदुलोन
मूडव पालगु; मूडु लोकमुल। वाडि मगंटिमि वालिनवाडु;
वरबलाढ्युंडु; रावणु मातुलुंडु; । हरविक्रमुंडु; प्रहस्तुडन्वाडु;
खंडेंदुधरु चेलिकानि सामंतु। भंडनंबुन माणिभद्रुनि नोर्चे;

—शोभा में जलद-निर्घोष से युक्त, (तथा) शोभा से विहगेन्द्रों के समान कपि के (ऊपर) उछलकर, अवश्य काट डालने तक सुन्दर उरग-ध्वज-स्फूर्ति से युक्त, मणिगण-किंकिणी के महनीय भूरि-रणन से युक्त रथ पर तब सवार होकर, अनेक तूर्यों के गम्भीर-आरव से दिशाओं के घूर्णित होने पर, आकाश के अवनत होने पर, नक्षत्रों के टूट गिरने पर, समस्त वसुन्धरा में दरारें पड़ जाने पर, पूर्व द्वार से, कालान्तक के समान, सप्रयत्न इस प्रकार युद्ध करने के लिए प्रहस्त निकल पड़ा। तब उन दैत्यों के सिंहनाद और उसकी शोभायमान, विजृंभित उग्रमूर्ति के आश्चर्यप्रद होने पर, उस विभीषण को उसे दिखाकर राम-अवनीश्वर (राजा-राम) ने (कहा)—'तेज और बल, दीप्ति और शौर्य से विराजित इस राक्षसवर का नाम क्या है ? (इसका) साहस-स्फीत होते हुए कपियों पर आना, कहने में (तथा) बताने में भी विचित्र है।' ॥ ३०४० ॥

ऐसा कहने पर विभीषण ने अर्कवंश वाले से कहा—"हे देव ! यह रावण के समस्त सैन्यसंघ का सेनापति है। इसकी सेना उसमें (रावण की सेना में) तीन भाग है। तीनों लोकों में तीक्ष्ण पौरुष से विराजमान है। वर बल से आढ्य (श्रेष्ठ) है। रावण का मातुल (मामा) है। हर-(सम) विक्रमवाला है। यह प्रहस्त नाम वाला है। खण्ड-इन्दु-धर

द्रेळ्ळेडि मेनुलु दिरिगेंडि ग्रुड्लु । बेल्लुगा नेंतयु भीकरंबय्ये;
३०६०
दलकक संगरस्थलमुन बोरि । कलगोनबडिन राक्षसुलुनु गपुलु
गलगि यंतट बोक कलुषिंचि मिंचि । चलमग्गलिंचि युत्साहंबु मेरसि
बेडिदंबुगा दैत्यबृंदंबु मीद । नडचिरप्पुडु कपिनायकोत्तमुलु;
द्विविदुंडु वैचें पृथ्वीधर-शिखर । मविरळशक्ति नरांतकु मीद;
नकलंकुडै कुंभहनुबडवैचें । नोक वटंबुन दारुडुग्रवेगमुन;
वडि बेद्दगिरि जांबवंतुडुद्धतिनि । नडरिंचि मिंचें महानादुमीद;
भूरि भूजंबुन बोरि गूल नेसें । घोरंबुगा दुर्मुखुडु समुन्नतुनि;
वानरनाथुल वाटुलचेत । दानवुल् नलुवुरु धरणि द्रेळुटयु
दन प्रधानुल चावु दप्पक चूचि । यनयंबु नलिगि प्रहस्तुंडु गपुल
नोकट बदुंड्रनु नोकट निर्वदुर । नोकट मुप्पदुरनु नोकट नल्वदुर
३०७०
रथचित्रगतु लोप्प रयमुन बेंचि । पृथिविपै गूलिचन बेंचि वानरुलु
द्रुमशैलमुल ब्रहस्तुनि सेनलेल्ल । जमरिन गति नुंड जंपिरि कडगि;
यपुण्डु वेल्लुवलयि पारु जोच्चें । जोप्पड मिन्नंटि शोणितनदुलु;

(बाहर) फूट पड़नेवाले नेत्र (इन सबके साथ) (रणस्थल) अत्यन्त भीकर हुआ ॥ ३०६० ॥

विचलित न होकर, संगरस्थल में जूझकर, भिड़ पड़े राक्षस और कपि व्याकुल होकर, उतने से न जाने देकर, क्रुद्ध हो, बढ़कर, हठ के अधिक होने पर, उत्साह के प्रदीप्त होने पर, भयंकर रूप से तब दैत्यवृन्द पर कपिनायकोत्तम चल पड़े। द्विविद ने अविरलशक्ति से पृथ्वीधर-(पर्वत) शिखर को नरांतक पर फेंका, तार ने उग्रवेग से अकलंक हो, कुंभहनु पर एक वट (वृक्ष) फेंक दिया, जांबवान ने झट एक बड़े पर्वत को उद्धतगति से महानाद पर फेंक उत्कर्ष को प्राप्त किया, दुर्मुख ने समुन्नत को भूरि-भूज (बड़े वृक्ष) से अतिघोर रूप से (मार) गिराया। वानर-नाथों के वारों से कई दानवों के धरणि पर गिर पड़ते देख, अपने प्रधानों (प्रमुख व्यक्तियों) की मृत्यु को अवश्य देखकर, सदा क्रुद्ध हो, प्रहस्त ने कपियों को —एक-एक करके, दसों को एक बार, बीसों को एक बार, तीसों को एक बार, चालीसों को एक बार— ॥ ३०७० ॥
—रथ को चित्रगतियों से शीघ्र चलाते हुए, पृथ्वी पर गिराया। तो वानरों ने उद्धत हो, द्रुमशैलों से प्रहस्त की समस्त सेनाओं को लगकर, सफाचट मार डाला। तब आकाश को छूकर शोणित की नदियाँ बाढ़ों

नंदुलोपल नुंडि यसुरुलु गपुलु । नंदंद यनिसेसि रार्चुचु बेंचि;
यायग्गलिक सूचि यखिल देवतलु । वेयुविधंबुल विनुतिंचि रप्पु;
डा प्रहस्तुंडु कालांतकाकार । डै प्रतिलेक सोंपारि यावेळ
गरमुलु बदमुलु खंडिंचि वैचि । युरमुलु निटलंबु लुच्चि पोनेसि
तललुनु बाहुलु धरमीद गूलिच । तलगक येम्मुलु दंतमुलू रालिच
मुरियलुगा जक्रमुल द्रुंचि तुंचि । पौरि बौरि नंकुशंबुल जिंचि चिंचि
कड्डनुग्रमुग बरिघल गौट्टि कौट्टि । मुडिवड घनपाशमुल गट्टि
कट्टि ३०८०

ललि मीऱ बरशुवुलनु व्रच्चि व्रच्चि । पौलुपार बलु शूलमुल ग्रुच्चि क्रुच्चि
मुनुमिडि पट्टिसंबुल जिम्मि चिम्मि । गौनकौनि कडिमि शक्तुल ग्रुम्मि
क्रुम्मि
पललंबु मेदडु गुप्पलु सेसि चेसि । सौलवक यंपरासुलु वोसि पोसि
पटुभूत कोटिक बलि यिच्चि यिच्चि । पट पट दिक्कुलु वगुल नार्चुचुनु
समर विक्रम कळा संरंभमेसग । नमितुडै मेऱसि प्रहस्तुडेपोंदे;

नीलुडु प्रहस्तुनि मडियिंचुट

नाकपिसैन्यंबु लणगुट जूचि । भूकंपमुग महाद्भुतवृत्ति नडच

के रूप में बहने लगीं। उन (बाढ़ों) में से असुर (और) कपि जहाँ-तहाँ सिंहनाद करते, युद्ध करते रहे। उस बड़प्पन (वैशिष्ट्य) को देख, समस्त देवताओं ने सहस्र विधि से तब विनुति (प्रस्तुति) की। वह प्रहस्त कालांतक-आकारवाला हो, अप्रतिम होकर शोभित हो, उस समय, कर (और) पद (चरण) खण्डित कर, वक्ष (और) ललाट विदीर्ण हों ऐसा (अस्त्र) डालकर, सिर (और) बाहुओं को धरा पर गिराकर, विचलित न होकर, हड्डियाँ (और) दाँत ढुलकाकर, चक्रों से टुकड़े-टुकड़े कर, अंकुशों से चीर-चीरकर, परिघाओं से अतिउग्रता से मार-मारकर, घनपाशों से गाँठों में बाँध-बाँधकर, ॥ ३०८० ॥

—शोभा से परशुओं से फाड़-फाड़कर, शोभा से अनेक शूलों से भोंक-भोंककर, प्रथमतः पट्टिसों को बिखेर-बिखेरकर, लगकर भयंकर शक्तियों से वेध-वेधकर, माँस और भेजा के ढेर लगा-लगाकर, न थककर शर बरसा-बरसाकर, पटु-भूत-कोटि (-समूह) को बलि दे देकर, दिशाओं को फोड़ देनेवाला सिंहनाद करते हुए, समर-विक्रम-कला-संरंभ के उत्कर्ष से, अमित (बेहद पराक्रमशाली) होते हुए, दीप्त हो, प्रहस्त विजृंभित हुआ।

बॅरिगि युद्भट रणाभीलुडन्नीलु । डुरुतराहंकारहुंकारुडगुचु;
धीरुडै यपुडु धात्रीजंबु बॅग्रिकि । याराक्षसुनि तेरि कवलील नुग्रिकि
यग्रिमि सारथि नॉंचि हयमुल गूल्चि । युग्रक याविल्लु महोग्रत विरुव
मुसलंबु गॉनि यार्चि मुदमॉप्प नप्पु । डसमुन रथमु ब्रहस्तुंडु डिग्गि
३०९०

नीलुनि मुंदर निलिचॅ नॅदिर्चि । नीलुंडु नॅदिरिंचॅ 'निर्जितु' ननुचु,
नॉंडीरु गॅलुचु नुद्योगंबुलंदु । गंडु मीरिन वृत्र कौशिकुलनग;
नलुक नीलुनि फाल मडिचॅ नीक्षिचि । ललि ब्रहस्तुडु मुसलंबुन वगुल;
नडिचिन नंदंद यडरु नॅत्तुरुलु । दुडिचिकॉंचुनु ब्रहस्तुनि बिट्टु गिट्टि
व्रेसॅ नन्नीलुंडु वृक्षंबु बट्टि; । व्रेसिन मुसलान व्रेसॅ नय्यसुर;
व्रेसिन सोलि या वृक्षंबु विडिचि । यासमयंबुन नंदंद कदिसि
यार्चुचु नतडु प्रहस्तु मस्तकमु । बॅचि व्रय्यग वैचॅ बॅनुगिरि यॅत्ति;
यातॊलु व्रॆटुन काप्रहस्तुंडु । मेनुनु शिरमुनु मॅयि भूषणमुलु

नील का प्रहस्त को मार डालना

उस कपि-सैन्य के दब (नष्ट हो) जाते देख, उद्भट-रण में आभील (भयंकर) नील बढ़कर, उरुतर-अहंकार से हुंकार करते हुए, भूमि को कँपाते हुए, महाद्भुतवृत्ति से चल पड़ा। धीर बन तब एक धात्रीज (वृक्ष) को उखाड़कर, उस राक्षस के रथ पर आसानी से कूदकर, संक्षुभित कर, सारथी को पीड़ित कर, हयों को गिराकर, साथ-साथ उस (के) धनुष को महोग्रता से तोड़ दिया तो मूसल (हाथ में) ले, मुदित होते हुए, तब दर्प से प्रहस्त रथ से उतरकर, ॥ ३०९० ॥

—नील के समक्ष सामना करते हुए डट गया। नील ने 'मार डालूँगा' कहते हुए (उसका) सामना किया। एक दूसरे को जीतने के उद्योगों (प्रयत्नों) में पौरुष के उत्कर्ष से युक्त वृत्र (तथा) कौशिक के समान वे शोभित हुए। शोभा से देखकर (लक्ष्यकर) प्रहस्त ने क्रोध से मूसल से नील के फालभाग को विदीर्ण कर दिया। विदीर्ण करने पर जहाँ-तहाँ प्रवहित होनेवाले रक्त को पोंछ लेते हुए, कठोरता से प्रहस्त के निकट पहुँचकर, नील ने एक वृक्ष को पकड़, दे मारा। मारने पर उस असुर ने मूसल से प्रहार किया। प्रहार करने पर झुककर (लड़खड़ाकर), उस वृक्ष को छोड़, उस समय इधर-उधर से नियराकर, सिंहनाद करते हुए, प्रहस्त का मस्तक फूट जाए ऐसा एक बड़े पर्वत को उठाकर फेंक दिया। उस नील के आघात से वह प्रहस्त शरीर और शिर तथा शरीर के भूषणों के बिखर जाने पर, वृत्रारि (इन्द्र) से (के हाथ) समस्त शोभा को खोकर,

जेंदरि वृत्रारिचे जेलुवेल्ल बोलिसि । कुदिसि धारुणि गूलुकोंड चंदमुन
बड्टयु नाकपिबलमेल्ल नार्चे; । जेडि पारि लंकजोच्चिरि
दैत्युलंत; ३१००
सुरुचिरामृत-वार्धि-सुतयुनु बोलें । हरियुतमैन निजांगंबु गलिगि
चारु वसंत-मासंबुनु बोलें । नारक्तफुल्ल पलाशालि गलिगि
वरदानशीलु निवासंबु बोलें । गरसोप्प नधिक मार्गण कोटि गलिगि
दीपिंचु नेरेडु दीवियु बोलें । रूपिप नवखंडरूपंबु गलिगि
वलचिन पतियोद्द वनितयु बोलें । सललितरागरसंबुनु गलिगि
कडिदियै चोररानि कानयु बोलें । गडु नोप्पु पुंडरीकंबुलु गलिगि
सडलनि मृडु-निवासंबुनु बोलें । गडगि याडेडु भूतगणमुलु गलिगि
कमलाप्तरुचि नोप्पु गगनंबु बोलें । ग्रममु दप्पिन तारकंबुलु गलिगि
सरभसंबैन वेसवियुनु बोलें । सुरुचिरांबरमणिस्फुरणंबु गलिगि
कलिसिन शिवुडुन गौरियु बोलें । दलपोयगा नर्ध तनुबुलु गलिगि
३११०
रमण जूपट्टु वाराशियु बोलें । समधिकतर-वारि-संपद गलिगि

अवनत हो धारुणि पर गिर पड़नेवाले पर्वत के समान, गिर पड़ा। (तब) समस्त कपि-बल (-सेना) ने सिंहनाद किया। तब टूटकर, भागकर, दैत्य लंका में घुस गए॥ ३१०० ॥

(तब रणभूमि) सुरुचिर-अमृत-वार्धि-सुता (लक्ष्मी) के समान हरि (विष्णु अथवा अश्व) युत निज अंगों से युक्त हो, चारु वसंत मास के समान आरक्त (लाल)-फुल्ल-पलाश-समूह के साथ, वरदानशील के निवास के समान, अधिक शोभा से युक्त अधिक मार्गण (बाण अथवा पातक)-कोटि से युक्त हो, प्रदीप्त होनेवाले जम्बूद्वीप के समान दीखने के लिए नवखण्ड (नौ खण्ड अथवा नए टुकड़े) से युक्त हो, प्रेमी पति के पास वनिता के समान सललित रागरस (प्रेम अथवा लाल रक्त) से युक्त हो, भयंकर हो दुर्गम बने कानन के समान अधिक शोभित पुण्डरीकों (कमल या व्याघ्र या गज) से युक्त हो, अचल मृड (शिव) के निवास के समान सप्रयत्न नृत्य करनेवाले भूतगणों से युक्त हो, कमलाप्त (सूर्य) की रुचि (कान्ति) से शोभित गगन के समान क्रम से च्युत (अस्त-व्यस्त) तारकों (नक्षत्र अथवा आँख की पुतलियाँ) से युक्त हो, सरभस (तीव्र) निदाघ के समान सुरुचिर-अम्बरमणि (सुन्दर सूर्य अथवा वस्त्राभरण) से युक्त हो, सम्मिलित शिव और गौरी के समान सोचने पर अर्द्ध-शरीरों (टुकड़े बने शरीरों) से युक्त हो, ॥ ३११० ॥

—रमणीयता से दीख पड़नेवाले वाराशि के समान समधिकतर वारि (जल

पेक्कु चंदंबुल बेंपु सोंपडरि । यक्कजंबय्ये रवणावनी-स्थलमु;
अंतनीलुडु राघवाधीशु कडकु । नेंतयु वेसजनि योऽगें नंघ्रुलकु;
बोगडिरि गपुलेल्ल बोरि बोरि नीलु; । देगनि राक्षसुलु भीतिलि पारि चेप्प
विनि रावणुडु शोकविवशुडै मंत्रि । जनुलतो ननियेनु ज्ञलमग्गलिचि;
"येवीरु लरिगिन निटु राक लेक । यावानरुल चेत नचट द्रुंगेदरु
वैरुल वलनि गर्वंबडंगिप । नेरूपमुन नेन नेने पोयेदनु ।"

रावणुनकु मंदोदरि हितोपदेशमु

अनि पेर्चि पलुकुचो नामाटलेल्ल । विनियु मंदोदरि वेस माल्यवंतु
करमु चेपट्टि डग्गरि दैत्यवनित । लिरुदेस गोलुवंग नेंतयु वेड्क
नतिकायुडुनु दोड नरुगुदेरंग । ब्रतिहारुलुरुवडि वलसि येतेर ३१२०
नायुधहस्तु लंतंतट गोलुव । बायक चामर प्रततुलु पोलय
सकल भूषणरुचिजालंबु वेलुग । सकल मंत्रुलु तोन चनुदेंचुचुंड
गडु नोप्पु नीलमेघमु जोच्चु मेरुपु । वडुवुन जोच्चे रावणु सभास्थलमु;

या रक्त)-सम्पदा से युक्त हो, अनेक प्रकार से उत्कर्ष (और) शोभा से विवर्द्धित हो, रण-अवनीस्थल (-भूमि) आश्चर्यप्रद हुआ। तब नील ने राघवाधीश के पास अधिक शीघ्र जाकर चरणों में प्रणाम किया। क्रम से समस्त कपियों ने नील की प्रशंसा की। हतशेष राक्षस भीत हो, भागकर, कहने पर, सुनकर, रावण ने शोकविवश हो मन्त्रीजनों से हठ के उत्कर्ष से कहा—'जो भी वीर जाते हैं, वे इधर न आ सक (लौट न सक) उन वानरों के हाथ वहीं मरते हैं। वैरियों के गर्व का दमन करने के लिए, किसी भी रूप से मैं ही जाऊँगा।"

रावण को मन्दोदरी का हितोपदेश

ऐसा विजृंभित हो कहने पर, उन सब बातों को सुनकर, मन्दोदरी ने झट माल्यवन्त का हाथ पकड़कर (सहारा लेकर), निकट से दैत्यवनिताओं के दोनों ओर सेवाएँ करते रहने पर, अधिक उत्साह से अतिकाय के भी साथ आने पर, अधिकता से प्रतिहारियों के आने पर, ।। ३१२० ।।

—जहाँ-तहाँ आयुधपाणी (सैनिकों) के सेवाएँ करने पर, सदा चामर-प्रततियों के शोभित होने पर, सकल भूषणों के रुचिजाल के प्रकाशमान होने पर, सकल मन्त्रियों के साथ आने पर, अधिक शोभित नीलमेघ में प्रवेश करनेवाली शंपालता के समान रावण के सभास्थल में प्रवेश किया। उस

नासति नप्पुडर्धासनासीन । जेसि रावणुडु विशेषप्रियोक्ति
तुचित पीठंबुल नुंडंग बनिचे । नचलितमतुलगु नम्मंत्रिवरुल;
म्रोक्किन यतिकायु मोदंबुतोड । दवकक युनिचे नोद्दन गद्देयंदु;
नंत नक्कोलुवेल्ल नलबलंबडग । निंतितो नादानवेश्वरुंडनिये;
"गोलुवुलोपलि किटु कुवलयनेत्रि । तलय नेन्नडु रानिदानवु नेडु;
वडवड वडकुचु वच्चुट येल्ल । गडु जोद्यमैनदि; कारणंबेमि?"
यनिन मंदोदरि यात्मेशु जूचि । "दनुजेश ! नाकुरादड्रियय्ये गान ३१३०
वच्चिचति नेडु; नावच्चुटकेल्ल । निच्चलोपल गडु नेग्गु सेयकुमु;
अनिलोन धूम्राक्षु डादिगा गलुगु । मनवारु दनुजेश ! मडियुट कंटे :
यल जनस्थानंबुनंदु राक्षसुल । नलि दुनिमेनु बदुनालुगुवेल;
सरि खरत्रिशिरुल जंपिननाडे । नरुडु गाडंटि नानरनाथु; रामु
डलिगि वेंडियु दंडकारण्यमंदु । बलवंतुडैन कबंधु निर्जिचे;
मारीचु वधियिंचे माय बोनीक । घोरास्त्रमुन वालि गूलंग नेसे;
देवहितार्थमै तिविरि राघवुडु । भूवलयंबुन बुट्टिनवाडु;
आदि नारायणुंडुतडु गाडेनि । मेदिनि नितटि मिक्किलि नरुडु

सति को तब अर्द्ध-आसन पर बिठाकर, रावण ने विशेष-प्रिय-उक्तियों से उन अचलित-मतिवाले मन्त्रीवरों को उचित पीठों (आसनों) पर बैठने का आदेश दिया। प्रणाम करनेवाले अतिकाय को मोद से निकट की गद्दी पर बिठाया। तब समस्त सभा में कोलाहल के शान्त होने पर, इंति (स्त्री-मन्दोदरी) से दानवेश्वर ने कहा—"हे कुवलयनेत्री ! सभा में कभी न आनेवाली हो। तुम्हारा आज इस प्रकार थर-थर काँपते हुए आना आश्चर्यप्रद है। क्या कारण है ?" (ऐसा) कहने पर मन्दोदरी आत्मेश को देख (बोली)—"हे दनुजेश ! मुझे आने की आवश्यकता पड़ी अतः ॥ ३१३० ॥

—आज आई हूँ। मेरे आने के कारण मन में अधिक बुरा मत मानो। हे दनुजेश ! युद्ध में धूम्राक्ष आदि हमारे स्वजनों की मृत्यु को देखा है न ! उस दिन जनस्थान में सरलता से चौदह हज़ार राक्षसों का वध किया था। खर (और) त्रिशिर को जिस दिन मारा था, उसी दिन उस नरनाथ को नर (मात्र) नहीं कहा (माना) था। और राम ने क्रुद्ध हो दण्डक-अरण्य में बलवान कबंध को मार डाला था। (अपनी) माया से न जाने देकर मारीच का वध किया था। घोर-अस्त्र से वालि को गिराया था। सोचकर ही देवहित के लिए राघव भूवलय पर जन्मा है। वह आदि-

गलुगुने ? मरि करकंठुनि चाप । मलचोप्प विरिचे प्रख्यातंबु गाग;
दशतंड्रि पनुपुन दपसियै सत्य । समयम्मुतो वनस्थलिनुंड नतनि ३१४०
सीत दच्चिचति वीवु; श्रीरामचंद्रु । डेतेरंगुन नीकु नेग्गेमि सेसे ?
राम लक्ष्मणुलतो रणमोनरिप । नीमूडु जगमुल नेव्वरु गलरु ?
नलि साम-भेद-दानंबुलु सूप । गलिगिन दंडंबु गादु पाटिप;
दंडंबु बाटिप दलचेदवेनि ? । दंडिप वड्डुरे दशरथात्मजुलु ?
देव ! रामुडु परदेवत गान । नीवु म्रोक्कुटयेल्ल नेरंबु गादु;
शरणन्न जेकोनु; शरणन्न नीकु । नुरु शुभंबगुगानि योक कीडु गादु;
गुणरूप दाक्षिण्य गुण गण केळि । गणुतिप नलवियै काकुत्स्थु? रामु
डलिगिन निलुबरिंद्रादि देवतलु; । दलपवय्येदु ! नीदु तरमुगादिदु;
वलदु; वृथागर्ववह्नि गूलकुमु; । चलमोप्प; दोप्पदु; संतापमुडिगि
यिकनैननु सीत निच्चुट मेलु; । लंकेश! कुलमुनु लंकयु निलुपु;
३१५०
महनीय वाहन मणिभूषणादि । सहितंबुगा नीवु जानकि निच्चि

नारायण है। नहीं तो मेदिनी पर इतना श्रेष्ठ नर (और कोई) हो सकता है ? यही नहीं, करकण्ठ (नीलकण्ठ शिव) के चाप को प्रख्यात रूप से सहज रूप से खण्डित किया था। अपने पिता के आदेश पर तपस्वी बन सत्य-प्रतिज्ञा से वनस्थली में रहते समय उसकी, ॥ ३१४० ॥

—सीता को लाए हो तुम। श्रीरामचन्द्र ने किसी रूप से तुम्हें क्या हानि पहुँचाई है ? राम-लक्ष्मण के साथ रण करने (में समर्थ) इन तीनों जगों में कौन है ? यदि साम-भेद-दोनों से काम निकल जाए तो दण्डविधान समुचित नहीं है। यदि दण्डविधान से काम लेना चाहोगे तो क्या दशरथात्मज दण्डित हो सकते हैं ? हे देव ! राम परमदेवता है अतः तुम्हारा उसे प्रणाम करना दोष नहीं है। शरण माँगने पर (वह) स्वीकारता है। शरण माँगने पर तुम्हें उरु-शुभ ही होगा, हानि नहीं होगी। गुण-रूप-दाक्षिण्य-गुणों के केलि (निधान) उस काकुत्स्थ की गणना (प्रशंसा) करना सम्भव है ? राम क्रुद्ध हो जाए तो इन्द्र आदि देवता भी टिक नहीं सकते। (तुम) उसका विचार ही नहीं करते। तुम तो किसी भी प्रकार उसके समर्थ नहीं हो; यह नहीं चाहिए। वृथागर्व-वह्नि में मत गिरो, हठ मत करो, मत करो। सन्ताप छोड़ अभी तो सीता को (वापिस कर) देना उत्तम है। हे लंकेश ! कुल (वंश) और लंका को बचाओ ॥ ३१५० ॥

महनीय वाहन मणिभूषण आदि के सहित (के साथ) तुम जानकी को देकर, यूपाक्ष, अतिकाय और माल्यवन्त को सुलह करने के लिए भूपाल

यूपाक्षु नतिकायु नोंगि माल्यवंतु । भूपालु पालिकि बुच्चु संधिकिनि;
मतिमंतुडगुचुन्न मन विभीषणुडु । हितबुद्धि गाविंचु नीसंधि मनकुः
वेयुनेटिकि? गार्तवीर्युतो संधि । सेयवे ? यतनि गेलिचन भृगुरामु
गेलिचिन रामुडु कीर्तिधामुंडु । तलपोय संधिकि दगडे चर्चिंप ?

मंदोदरि हितोपदेशमुनु रावणुडु तिरस्करिंचुट

ननि दैन्यपाटुतो नाडु वाक्यमुलु । विनि रावणुडु कडुवेडियूर्पडर
गलयंग नेत्रंनि कनुल गोप । मोलुकुचुनुंड मंदोदरि जूचि
"हितमतिवै नाकु निन्नियु जेप्पि । ततिव ! नी माटलयंदोक्कटैन
मनसुन बट्टदु; मगटिमि कलिमि । घनुडवै मूडु लोकंबुलु गेलिचि
दानवयक्षगंधर्व देवादु । लैननु वेट्टि सेयगनुन्न नन्नु ३१६०
दुदिबोयि यिंक गोतुल मरुवु सोच्चि । ब्रदिकेडु नरुनकु ब्रणमिल्लु मनुचु
निदि येट्टि माटगा नीसभ नाडि ? । तिदि नीकु बाडिये ? यिक्ष्वाकु कुलजु
डेरिंगि येरिंगि मुन्नेग्गोनरिंप । मरिकदा तेच्चिचति मनुजेशु देवि?
जडमतिनै पोयि संधिगाविंचि । कडगि खरादुल गडतेर्चिनट्टि

(राजा राम) के पास भेजो। मतिमान बना हमारा विभीषण हितबुद्धि से यह संधि करा देगा। हज़ार (बातें) क्यों ? कार्तवीर्य से संधि नहीं किया था ? उसे जीतनेवाले भृगुराम को जीतनेवाला कीर्तिधाम राम क्या सोचने पर संधि के लिए योग्य नहीं है ?"

मन्दोदरी के हितोपदेश को रावण का तिरस्कार करना

इस प्रकार दीनता से युक्त वाक्यों को सुनकर, रावण ने अति उष्ण साँस के चलने पर, सुन्दर अरुण नेत्रों में क्रोध के उमड़ने पर, मन्दोदरी को देख (बोला)—'हे अतिवे (नारी) ! हितमति से मुझे ये सब बताया। तुम्हारी बातों में एक भी मन में नहीं बैठती। पौरुषसंपत्ति से महान् बन तीन लोकों को जीतकर, देव, यक्ष, गन्धर्व देवादियों से भी बेगार करानेवाले मुझसे, ॥ ३१६० ॥

—अन्त में जाकर अब वानरों की आड़ (शरण) में जाकर जीनेवाले एक नर को प्रणाम करने की बात तुम इस सभा में कैसे कह सकी ? यह क्या तुम्हारे लिए न्याय है ? पूर्व में इक्ष्वाकु-कुलज के जानबूझकर अहित करने पर ही तो मनुजेश की देवी को लाया था ? यदि जड़मति हो जाकर, संधि कर लूं तो खर आदियों के वध का प्रतीकार तथा तुम्हारी ननद के अपमान (के प्रतीकार) को कैसे चुका सकूँ ? (ऐसा) नहीं हो सकता। ऐसा होने

पगयु नीमरद्दलि बन्नंबु नेट्टि। पगिदि नीगुदुनु; जोप्पड; दट्टुगान
भीम बाणमुल विभीषणु निनजु। राम लक्ष्मणुल मर्कटुलनु द्रुंचि
गेलुत, नवश्यंबु; गेलुपु लेदेनि। ज्रलमोप्प दुरमुन समयुदु गानि;
मानवेश्वरु तोड मरि चेय संधि,। जानकि नीनु; निश्चयमिट्टि दतिव!
यायिंद्रजित्तुडुदात्त विक्रमुडु। नीयग्र सुतुडुंड नीकेल वेरपु?
नाकेंदुरेव्वरु? नातनूभवुलु। भीकराकारु लभेद्यविक्रमुलु!" ३१७०
अन विनि चिंतिंचि यवनत यगुचु। जनियें मंदोदरि सभनेंडबासि
नीचमैनट्टि दुर्नीति चेपट्टि। येचंदमुन दन्नु नेरुगडटंचु
रमणीयतरमैन रावणु लक्ष्मि। क्रममेदि तोलगेडि कैवडिदोप;

रावणुनि प्रथम युद्धमु

नारावणुंडुनु नप्पुडु गडगि। वारक तन पडवाळ्ळकु ननियें;
"जिरकाल मेनु नाचित्तंबुलोन। दोरकोन्न यलुककु दुदिसेयुवाड;
नातनि पालिकेनल्ल रुद्रुंड;। नातडु नापालि कंधकासुरुडु;
मुनुकोनि तूणीरमुल वेलुवडुचु। दनरारु नायंपतंडमूहिप
गुपसंबु लूड्चिन क्रूर सर्पमुल। नुपमिप ननुवुलै योडियु राघवुनि;

से भीम-(भयंकर) बाणों से विभीषण, इनज, रामलक्ष्मण, मर्कटों का संहार कर अवश्य जीतूंगा। विजय न मिले तो हठ से समर में मर जाऊँगा किन्तु मानवेश्वर से संधि नहीं करूँगा। जानकी नहीं दूंगा। हे नारी! यह निश्चय ऐसा है। उदात्तविक्रमवाले तुम्हारे अग्रसुत इन्द्रजित के रहते तुम्हें भय क्यों? मेरा सामना कौन कर सकता है? मेरे तनूभव भीकर-आकारवाले तथा अभेद्यविक्रमवाले हैं।" ॥ ३१७० ॥

(ऐसा) कहने पर, सुनकर, चिंतित हो, अवनत होते हुए मन्दोदरी सभा छोड़कर चली गई; मानों नीच दुर्नीति को धारणकर, किसी भी तरह अपने को न जाननेवाले रावण की रमणीयतर-लक्ष्मी शोभाहीन हो चली जा रही हो।

रावण का प्रथम युद्ध

वह रावण तब सयत्न, अविलंब अपने सरदारों से बोला—"मैं अपने चित्त में चिरकाल से स्थित क्रोध को समाप्त कर दूंगा। उसके लिए मैं कालरुद्र हूँ। वह मेरे लिए अंधकासुर है। लगकर तूणीरों से निकलते हुए विराजमान मेरे बाण-समूह, सोचने पर केंचुली से मुक्त बने क्रूर सर्पों से उपमित होने योग्य होते हुए, राघव को घेर लेंगे। काल (मृत्यु)

गालंबु प्रेरेप गपिसेन नम्मि । वालिन मगटिमि वच्चियुन्नाडु;
उरुदिव्य शस्त्रास्त्र युक्तंबुगाग । नरदंबु देंडु कय्यंबुन" कनुडु ३१८०
वारु नर्क-प्रभावर-रथंबप्पु । डारुढ़गति बन्नि यर्थि देच्चुटयु
दोलगक तनदेन दुर्मनोरथमु । नेलमि नेक्किन क्रियनेक्कि रावणुडु
दिक्कुल मिटनु दीप्तिजालंबु । लक्कजंबयि पर्व नरदंबु मीद
मेरसिन तोडवुल मेरुगुल तोड । देड़गोप्प नप्पुडु देवारि योप्पे
नाराम बाणानलार्चुल चेत । नारथंबुनु दानु ननि गूलु करणि;
बटुतर निस्साण भांकारमुलुनु । बटह भेरिशंख भयदरावमुलु
हस्ति बृंहितमुलु नश्वहेषलुनु । ब्रस्तुति पाठक प्रकटरावमुलु
नरदाल म्रोतयु नार्पुल रवमु । धरपगिलेंडु पदताडन-ध्वनुलु
नडरि योंडोंड ब्रह्मांडंबु निंड । गडु भीकरंबुलै कलयंग बर्वे
"नल समुद्रमुनकु नलुगु चंदमुन नलिगे । निप्पुडु राघवाधीशु" डनुचु ३१९०
मुनुकोनि लंका समुद्रंबुलोन । ननुवेदि जीवंबुलरुचु चंदमुन;
"गोनि वच्चितिमि दैत्य कोटि श्रीराम ! । कोनु" मनि योप्पिप गोनि पोवु करणि

से प्रेरित होकर, कपिसेना पर विश्वास करके, (राम) उत्तुंग पौरुष से आया हुआ है। दिव्य-शस्त्र-अस्त्र से युक्त रूप में युद्ध के लिए रथ लाइए।" ऐसा कहने पर— ॥ ३१८० ॥

—वे अर्कप्रभा से युक्त वर-रथ को तब आरूढगति से, चाहकर लाए। न हटकर, अपने दुर्-मनोरथ पर शोभा से सवार होने के समान, (उस रथ) पर सवार होकर रावण, दिशाओं में आकाश में दीप्तिजाल के आश्चर्यप्रद रूप से व्याप्त होने पर, रथ पर प्रकाशवान आभूषणों की दीप्तियों के साथ ढंग से तब देवारि (रावण) शोभित हुआ मानों उस राम की बाणानल अर्चियों से उस रथ के साथ स्वयं युद्ध में गिरनेवाला हो। पटुतर-निस्साण भांकार, पटह-भेरी-शंख के भयदराव, हस्ति के बृंहित, अश्व-हेषाएँ, प्रस्तुति-पाठकों (चारणों) के प्रकटराव, रथों की ध्वनियाँ, हुंकार-रव, धरा को विदीर्ण करनेवाले पद-ताड़न की ध्वनियाँ, (आदि के) विजृंभित हो, परस्पर ब्रह्मांड को भर देने पर, (वे ध्वनियाँ) अतिभीकर रूप से फैल गईं। 'तब समुद्र से विचलित होने के समान अब राघवाधीश विचलित हुए' (ऐसा) कहते हुए, ॥ ३१९० ॥

—लंका-समुद्र के जीव (जलचर) चीख रहे थे। 'हे श्रीराम ! यह लो, दैत्यकोटि को लाए हैं। स्वीकारो' कह समझाकर ले जाने के समान

भीम रथंबुलु पेर्चि यंदंद, । रामचंद्रुनि मनोरथमुलै नडचे;
"रामशिलीमुखराजी मै नाटि । यीमदंबुडिपेंडु; नितलोपलनें
द्रागुद मिम्मद धार" लन्माड्कि । मूगि यार्डेडि शिलीमुखमुलतोड
गरमुलु गडु भयंकरमुलै रामु । करमुल किदु दुष्करमुलु गाक
करमोप्पगा समुत्करमुलै यपुडु । करिकोट्लु वसुमति गंपिप नडचें;
"वलनेल्ल दप्पे; रावणुनकु रणमु । वलनि जयंबु मावलन नेक्कडिदि;
वलनेदि कूलु रावणु" डनुमाड्कि । वलनोप्प हयमुलु व्रालुचु नडचें;
"व्रालिन राघवेश्वरुनि बाणाग्नि । ग्रालु वलंबेल्ल गालु वलंबु" ३२००
ननिन चंदंबुन नार्चुचु नडचें । घनतरंबयिनट्टि कालुवलंबु;
कालमेघंबुल करणि नोप्पगुचु । शैलंबुलोयन जतुरत मेरसि
प्रळयकालमु नाटि भानु बिंबंबु । कोंलदि मीरिन मिडिगुड्डुलतोड
गटमुलु नुदुरुलु घनदंष्ट्रमुलुनु । बटुकेश चयमु नोप्पगा जूडनपुडु
प्रळयकालुनिकेन भयमु बुट्टिंचु । व्रलमुनु विकृत वेषमुलुनु मेरय
बेक्कायुधंबुल बेक्कु मायलुनु । बेक्कु तेजंबुलु ब्रेक्कुव गलिगि
"येमेमे रामु जयिंचेद माजि । नेमेमे" यनि यसमेविकन वारु

भीमरथ, क्रम से जहाँ-तहाँ रामचंद्र के मनोरथ सम, चल पड़े। राम की शिलीमुख (बाण)-राजि (समूह) इस मद को सुखा देगी। इस बीच ही इन मद-धाराओं का पान करेंगे।' इस प्रकार, घेरकर, चक्कर लगाने वाले शिलीमुखों के साथ करि (हाथी) अति भयंकर हो, राम के करों (बाणों) को किसी भी प्रकार से दुष्कर न होकर, बड़ी शोभा से समुत्कर होकर, तब करि-कोटियाँ (-समूह) पृथ्वी को कंपाते हुए चल पड़ीं। 'समस्त उपाय व्यर्थ हो गए हैं। हमारे कारण रण में रावण को जय कहाँ से होगा! शोभा को खोकर रावण गिरेगा' मानों इस प्रकार हय (घोड़े) झुककर चल पड़े। 'शोभायमान राघवेश्वर की बाणाग्नि में सुशोभित (रावण का) समस्त बल (सेना) दग्ध हो जाएगा।' ॥ ३२०० ॥

मानों यह कहने के समान घनतर (महत्तर) पैदल सेना हुंकार भरती हुई चल पड़ी। कालमेघ के समान शोभित होते हुए, मानों शैल हों, ऐसी चतुरता से दीप्त होकर, प्रलयकाल के समय के भानुबिंब से भी अधिक (भयंकर) उभरी हुई आँखों के साथ, कट (गंडस्थल), ललाट, बड़ी दंष्ट्राएँ, पटु-केशचय (आदि) के शोभित हो दीखने पर तब प्रलयकाल (-पुरुष) को भी भीत करने वाले हठ तथा विकृत वेषों के दीप्त होने पर, अनेक आयुध, अनेक मायाएँ, अनेक तेज के अधिकता से युक्त होकर

राक्षसवीरुलु राक्षसाधिपुलु । राक्षसेश्वरुनितो रणबासलिच्चि
परगंग नार्चुचु बटहनादमुलु । नुरुवडि म्रोयंग नुरुबलोन्नतिनि
नडवंग नप्पुडुन्नत शक्ति मेरसि । नडुनड नडुकि वानरुलेल्ल गलग

निनवंशुनकु द्रोव निच्चुट कलिगि । वननिधि निंकिप वडि नेगु करणि
"निनुड ! नीतनयुंडु नीरामु गूडे" । ननि यर्कु गबळिप नरिगेडु माड्कि
दन युरुवडि समुद्रंबुलु गलग । दन प्रतापंबुन दपनुंडु माय
देगुव येल्लनु मुख दीप्तुल दोप । मगटिमि जयलक्ष्मि मरि पोंदुवाय
नारवंबुन दानु नाजिकि वेडले । नारावणुंडट्टहासंबु चेलग;
बेक्कायुधंबुल बेर्चि दीधितुलु । मिक्किलि कांतुलु मिरुमिट्लु गोलुप
बंबि वायुवुलचे पडगलु टेक्कि । यंबुलु मिन्नंदि यदंद क्राल
घनतर भीषणाकारंबु तोड । ननयंबु नंदंद यार्चुचु रामु
बाणानलंबुन बाल्पडनुन्न । प्राणंबुलनु दृणप्रायंबु सेसि
वारण लेकट्टु वच्चुचुनुन्न । दारुणासुरसेन दप्पक चूचि
रावणानुजु तोड रघुरामुडनियें: । "नीवच्चुचुन्नवाडेव्वडो ? वीडु

'हमीं राम को आजि (युद्ध) में जीतेंगे' ऐसे दर्प से युक्त राक्षसवीर (और) राक्षसाधिप राक्षसेश्वर को रण-वचन देकर, शोभा से सिंहनाद करते हुए, पटहनादों के शीघ्रगति से मुखरित होने पर, उरु-बल-उन्नति से चल पड़े। तब उन्नतशक्ति से दीप्त होकर चल पड़ने पर भीत हो समस्त वानरों के व्याकुल होने पर, ॥ ३२१० ॥

—इनवंश्य (राम) को मार्ग देने के कारण क्रुद्ध हो, वननिधि को सुखाने के लिए जाने के समान, 'हे सूर्य ! तुम्हारा पुत्र इस राम से मिल गया' (यह) कहते अर्क (सूर्य) को निगलने के लिए जाने के समान, (ऐसा) अपनी शीघ्रगति से समुद्र के व्याकुल होने पर, अपने प्रताप के समक्ष तपन (सूर्य) के उदास होने पर, (सूर्य की प्रभा को निस्तेज करते हुए), समस्त साहस के मुखदीप्तियों में प्रस्फुटित होने पर, पौरुष से जयलक्ष्मी को प्राप्त करने के लिए स्वयं रावण, अट्टहास के व्याप्त होने पर, आरव (बड़ी ध्वनि) के साथ चल पड़ा। अनेक आयुधों की दीधितियों (दीप्तियों) के क्रम से आँखों को चकाचौंध कर देने पर, विजृंभित पवन के कारण छत्र-चामरों के आकाश को छूकर जहाँ-तहाँ शोभायमान होने पर, घनतर-भीषण आकार से निरंतर जहाँ-तहाँ सिंहनाद करते हुए, राम के बाणानल के भागी बनने वाले प्राणों को तृणप्राय करके, दुर्निवार रूप से उस प्रकार आनेवाली दारुण-असुर सेना को अवश्य देखकर, ॥३२२०॥

मिक्किलि सत्त्व समेतुडै कडिमि । पेक्कुव नेंतयु बेंचिन वाडु"

विभीषणुडु दनुज नायकुलनु वर्वेर रामुन केरिगिंचुट

अनिन विभीषणुंडारामु जूचि । "दनुज नायकुल नंदरु वेरुवेर
विनुमु श्रीरघुराम ! विन्नविंचेदनु । दनरंग" ननि वारि दग जेप्प
दोडुगे
"वाडे बंधुरगंध वारणेन्द्रंबु । वाडिमि नेक्कि युज्ज्वलुडैनवाडु
उदयार्कबिंब समुज्ज्वलास्यमुन । नोदविन घनरोषमोप्पिनवाडु
पौरि बौरि नंकुशंबुन नियमिंचि । करि जाळि सेयिप गडगेडुवाडु
उरुवडि जनुदेंचुचुन्नट्टि वीरु । डुरुबलाढ्युनि गंटे, यूपाक्षुडतडु;
कडुनोप्पु भीकर घंटारवंबु । लडरेडु रथमेक्कि यावच्चुवाडु
पोरुल बेक्कंड्र बौरिगोन्नवाडु । धारुणीश्वर ! महोदरुडनुवाडु
३२३०
भरित-रत्न-प्रभा पटलंबुतोड । बरपैन यरुणंपु बक्कैर वेट्टि
गरुड वेगंबुचे घनमैन यट्टि । तुरगंबु नेक्कि युद्धुरवृत्ति तोड

—रावणानुज से रघुराम ने कहा— "यह आनेवाला कौन है ? यह अधिक सत्त्वसमेत हो, साहस के आधिक्य से शोभायमान है ।"

विभीषण का दनुजनायकों का अलग-अलग से परिचित कराना

(ऐसा) कहने पर विभीषण राम को देख (बोला)—"समस्त दनुज-नायकों को (एक-एक के) नाम-नाम से (अलग-अलग से) सुनो (जान लो) ! हे श्रीरघुराम ! शोभा से निवेदन करता हूँ ।" (ऐसा) कह उचित रूप से उनके बारे में कहने लगा—"बंधुरगंध (अधिक मद से युक्त) वारणेंद्र (गजेन्द्र) पर पौरुष से सवार हो, उज्ज्वल बने हुए, उदयार्कबिंब के समान समुज्ज्वलास्य (समुज्ज्वल मुख) में उत्पन्न घनरोष से युक्त, बार-बार अंकुश से नियमन कर, करि को प्रेरितकर सकनेवाले, शीघ्रता से आनेवाले, उस वीर को, उरु-बलाढ्य को देखा है न, वह यूपाक्ष है । अधिक शोभायमान भीकर-घंटारव के उत्कर्ष से युक्त रथ पर सवार हो आनेवाला वह, जिसने युद्धों में कई लोगों का वध किया था, हे धारुणीश्वर ! महोदर नामवाला है ।। ३२३० ।।

भरित-रत्नप्रभा-पटल से युक्त, विशाल (तथा) अरुण जीन (चारजामा) से सज्जित, गरुडवेग से महान् बने तुरग पर सवार हो, उद्धुर वृत्ति (उद्दंडता) से आनेवाला वह पिशाचनाथ है । युद्ध में उसका

जनुदेंचुवाडु पिशाचनाथुंडु; । ननिकि नीतनि केदुरगु वारु लेरु;
मिक्किलि कडिमिमै मेरसि सिंहंबु । नेक्कि शूलमु बट्टि येतेंचुवाडु
अनिमीदि वेडुक नलरिनवाडु । दिनकरकुलनाथ ! त्रिशिरुडनुवाडु;
पृथुल घंटारवस्फीतमैनट्टि । रथमेक्कि वडि गुणारवमु सेयुचुनु
घन सर्प केतुवु गलिगिन वाडु । घन नीलतनुडु राक्षसुडु कुंभुंडु;
कनक महामणि खचितमौ पडग । दनरारु चित्ररथंबुपै नेक्कि
यरुगुदेंचुचुनुन्न याराक्षसुंडु । गुरुभुजबलुडु निकुंभुंडु देव;
यनल सन्निभमैन यरदंबु नेक्कि । घन गर्वमुन मीरि कय्यंबुसेय ३२४०

गलवाडु वाडे यीकपिसेन दिक्कु । सोलवक विषदृष्टि जूचुचुन्नाडु
शरमट्टु विंटितो संधिचु कोनुचु । नरुदेंचुवाडु नरांतकुंडधिप !
भीषण रूपमै पेर्चु वाक्यमुल । रोषमोल्केडु मिडिग्रुड्डुलतोड
गरि वक्त्रमुल घोटकमुल वक्त्रमुल । हरि वक्त्रमुल गिटिव्याघ्र वक्त्रमुल
नुरग वक्त्रमुल नुष्ट्रवक्त्रमुल । गरमुग्रुलैन राक्षसुलुत्सहिंचि

सामना करनेवाला कोई नहीं है। अधिक साहस से दीप्त होकर, सिंह पर सवार हो शूल को हाथ में लिए आनेवाला, युद्ध (भूमि) में उत्साह से शोभित वह, हे दिनकरकुलनाथ ! त्रिशिर नामवाला है। पृथुल (विपुल) घंटारव से स्फीत बने रथ पर सवार हो, झट गुणारव (धनुष्टंकार) करते हुए, घनसर्प-केतु (-पताका) से युक्त (तथा) घननील तन वाला राक्षस कुंभ (नाम वाला) है। कनक-महामणि-खचित पताका से शोभित चित्ररथ पर चढ़कर आनेवाला वह राक्षस, गुरु-भुज-बल वाला हे देव ! निकुंभ है। अनल-सन्निभ (-समान) रथ पर चढ़कर, घन-गर्व से उत्कर्ष को प्राप्त कर, युद्ध कर, ॥ ३२४० ॥

—सकनेवाला वही इस कपिसेना की ओर अथक विषदृष्टि से देख रहा है। हे अधिप ! शर का धनुष से संधान करते हुए आने वाला वह नरांतक है। भीषण रूप वाले वाक्यों से, रोष से उमड़ती उभरी आँखों वाला, करि-वक्त्र (-मुख) वाले, घोटक-वक्त्र वाले, हरि (सिंह)-वक्त्र वाले, किटि (वराह) (तथा) व्याघ्र वक्त्र वाले, उरग (सर्प)-वक्त्र वाले, उष्ट्र (ऊँट)-वक्त्र वाले तथा अधिक उग्र राक्षसों के उत्साहित होकर सेवाएँ करते रहने पर, भूतों के सेवाएँ करते रहने पर, फालाक्ष (शिव) की समता करनेवाला वह हे अधिप ! देवांतक है। घन (महान्) घोष (ध्वनि) वाले स्वर्ण-

कौलुव भूतंबुलु गौलुचु पालाक्षु । नलनौप्पुवाडु देवांतकुंडधिप;
घनमैन घोषंबु गल पैडिरथमु । दनरार नैक्कि युद्दंड चापम्मु
नति तृणीकृतलोकुडै गुणाराव । मतिशयिल्लग बट्टि नंतनुंडियुनु
नेन्नडु नोटमि नैरुगनि वीरु । इन्नर भोजनु नात्मसंभवुडु
अरुणचंदनमु मैनलदिन वाडु । तिरमैन यरुणंपु दृक्कुलवाडु ३२५०
संध्यांबुदमु वंटि चंदंबुवाडु । विंध्याचलमु बोलि विलसिल्लुवाडु
कोटानगोट्टुलु गौडुगुल चेत । मेटि चामरमुल मैरसिनवाडु
अवधरिंपुमु देव ! यतिकायुडात । डवनीश याजिकि नधिकशूरुंडु;
भूरिसितच्छत्रमुलु पदिवेलु । जारु चामीकर चामरावळुलु
बरगंग सिंगंपु बडगयु ग्राल । बरपैन घोटक-प्रततुल नौप्पु
नरदंबु मीद गुणारवंबैसग । भरित शस्त्रास्त्रसंपद देजरिल्ल
नजुनि वरंबुन नखिल देवतल । भुजबलस्फीतुडै पोरिलो नौंचि
सुरपति जैरपट्टि सौंपारुनट्टि । वरगर्वमुन गडु वालिनवाडु
निच्चलो मनमीद निडिन चूपडर । वच्चुचुनुन्नाडु वांडिद्रजित्तु;
इंक जूपैद जूडु मिनकुलाधीश ! । लंकाधिनाथु नुल्लसित प्रतापु;
३२६०
गनकरत्न प्रभाकलित दंडमुल । बोनरिन चामरंबुल नुल्लसिल्ल

रथ पर शोभा से चढ़कर, उद्दंडचाप से अति-तृणीकृत-लोक वाला (लोक को अति ही तुच्छ मानने वाला) हो, गुणारव के अधिक होने पर, जबसे (धनुष हाथ में) पकड़ लिया था तबसे अपजय को न जाननेवाला वीर, उस नर-भोजन (राक्षस रावण) का आत्मसंभव (पुत्र), अरुणचंदन का शरीर पर लेपकर, स्थिर अरुण दृष्टियों वाला, ॥ ३२५० ॥

—संध्यांबुद (संध्या-मेघ) के समान, विंध्याचल के समान विराजमान, करोड़ों छत्रों के साथ (तथा) श्रेष्ठ चामरों से प्रकाशमान वह अतिकाय है। हे देव ! हे अवनीश ! ध्यान दो कि वह आजि (युद्ध) में अधिक शूर है। दस हज़ार भूरि-सित-छत्र, चारु-चामीकर-चामर-समूह, शोभित सिंह-पताका, विशाल घोटक-प्रततियों से शोभित रथ पर, गुणारव के मुखरित होने पर, भरित-शस्त्र-अस्त्र-संपत्ति के दीप्त होने पर, अज के वर से, अखिल देवताओं को, भुजबल-स्फीत हो, युद्ध में पराजित कर, सुरपति को बंदी बनाकर, मनोज्ञ-वर-गर्व से शोभित तथा मन से हम पर दृष्टि गड़ाकर वह इन्द्रजित आ रहा है। और दिखाऊँगा, देखो हे इनकुलाधीश! लंकाधिनाथ, उल्लसित प्रतापवाला, ॥ ३२६० ॥

—कनकरत्नप्रभा से कलित दंडों से शोभित चामरों से उल्लसित हो,

सौलवक पंड्रेंडु सूर्यबिंबमुल । गलयंग दशकंबुगा गरगिंचि
चेसिन पगिदि विचित्र रत्नांशु । भासुर कोटीर पंक्ति नोप्पारि
महनीयतरमैन मणिकुंडलमुल । महिम दिक्कुल नेल्ल मट्टाडुचुंड
रोष महादृष्टि रोचुल जाल । भीषणाकारत बेचिनवाडु
हरुडुन्न कैलास मर्गलिचिनाडु । सुर कामिनुल जेर जोनिपिनवाडु
लोकंबुलेल्ल बेल्लुग गेलिचनाडु । पाकशासनु ननि बरपिनवाडु
ऐरावतमु दंतमानिन युरमु । तो रमणीयमै तोचिनवाडु
मुल्लोकमुल दन मूर्तिचे हल्ल । कल्लोलमैपड गलचिनवाडु
वाडे सेनामध्यवर्तियैनाडु । वाडु वोदेव! रावणुडनुवाडु" ३२७०
अनि विभीषणु डोलि नंदर जेप्प । विनि राघवुडु कडु विस्मयंबंदि
"यारय जित्रमी यसुरेश्वरुंडु । सारमैनट्टि तेजंबु रूपैन
यट्टि चंदंबुवा, डसुरुल यंदु । निट्टि तेजोधनुंडेव्वडु गलडु ?
कडु ग्रूरकर्मुडु गाकुंडेनेनि । बुडिम कंतटिकिनि बूज्युंडु गाडे!
परिकिंप नंदरु बर्वताकृतुलु । नुरु शक्ति गलिगिन योधुलु ग्रूर
चरितुलु मरिवीनि सैनिकुलेल्ल । गरमु भीषणुलु राक्षसवीरु" लनुचु
नुग्रलोचनु पिनाकोग्र चापंबु । निग्रह क्रम कळानिपुणुडै नृपुडु

लगातार बारह सूर्यबिंबों को शोभा से दशक में पिघलाकर बनाए हों, ऐसे विचित्र-रत्न-अंशु (-किरणों से) भासुर-कोटीर-पंक्ति से शोभित होकर, महनीयतर मणिकुंडलों की महिमा के समस्त दिशाओं में प्रदीप्त होने पर, रोषमहादृष्टि-रोचियों (कांतियों) से अधिक भीषण आकार से विजृंभित, हर के स्थित कैलास को हिलाने वाला, सुरकामिनियों को बंदी बनानेवाला, ऐरावत के दाँत के गड़े उर (स्थल) से रमणीय दीखने वाला, तीनों लोकों में अपनी मूर्ति से हलचल मचानेवाला, वही सेना के मध्यवर्ती हो स्थित वह हे देव ! रावण नामक है।" ।। ३२७० ।।

ऐसा विभीषण के क्रम से सबके बारे में कहते सुन, राघव अति विस्मित हो (बोले)— 'देखने पर यह असुरेश्वर विचित्र (लगता) है। मानों तेज का सार ही रूप बन गया हो, ऐसा है यह। असुरों में ऐसा तेजोधन (और) कौन है ? अति क्रूरकर्म वाला न होता तो समस्त पृथ्वी के लिए पूज्य न होता ! परिशीलन करने पर सभी राक्षसवीर पर्वताकार वाले हैं, उरुशक्तियुत योद्धा हैं, क्रूर चरित (स्वभाव) वाले हैं। इसके सभी सैनिक अधिक भीषण हैं।' (ऐसा) कहते हुए उग्रलोचनवाले तथा पिनाक (शिव) के उग्रचाप को, निग्रह-क्रम-कला से निपुण हो नृप (राम) ने साहस से धारण किया। स्वयं और लक्ष्मण के वर-त्राण-चय के क्रम

धरियिंचे गडकतो दानु, लक्ष्मणुडु । वरबाणचयमुलु वरुस नुप्पोंग
"गोपिंचयुनु धर्म गुणमें चेपट्टि । री पार्थिवुलकु नीडेव्व" रनंग;
नारावणुंडप्पु डखिलनिशाट । वीरुल वीक्षिचि 'विनु' डनि पल्कें:
३२८०

"नगरि वाकिड्ल नुन्नति तोड बेंट्ट । मोंगसालयंदुनु मोसंबु लेक
कडु सुरक्षितमुगा गावलियुंडु । डडरि यीलंकलो नंदरु ब्रीति;
नेननु मीरुनु निटुकय्यमुनकु । मानुगा बोयिन मरि वलीमुखुलु
लंक जोंच्चिन मन लावेमि सेयु ? । शंकिप वलवदु; चनु" डन्नवारु
चनिरि; रावणुडुनु जटुल वेगमुन । धनुवुनु नस्त्रमुलु धरियिंचि मिंचि
कार्चिच्चु वनमुलुग्रंबुगा गिट्टि । येर्चु कैवडि दोप निम्मुल गदिसि
जगतीतलमु नाकसमु दाकुकरिणि । नगचर सैन्यंबु नदरंट दाकि
यिदि धरणीभाग; मिदि वियत्तलमु; । इदि दिशावळि यनि येर्पडकुंड
नतिनिशितास्त्रंबु लंदंद परपि । यतुल बलोदग्रुडै दशाननुडु
कलचि कोंदल मदगा जेसि कपुल । जुलुकन खंडिचि चूर्णबु सेसि
३२९०

से उमड़ने पर, कहा जा सकता है कि 'क्रुद्ध होकर भी धर्मगुण को ही धारण करनेवाले इन पार्थिवों का सानी कौन है ?' तब रावण अखिल-निशाट (राक्षस)-वीरों को देखकर 'सुनो' कह, (यों) बोला—।। ३२८० ।।

—"नगर के द्वारों पर औन्नत्य के साथ (तथा) प्रथम द्वार के समीप के बड़े-बड़े आंगनों में, बिना किसी प्रवंचना के, अधिक सुरक्षा से रक्षणार्थ रहिए। लंका के भीतर सभी प्रीति से रहिए। मैं और आप (लोग) इधर युद्ध के लिए शोभा से जाएँ और यदि वलीमुख (वानर) लंका में घुस आएं तो हमारी शक्ति किस काम की होगी ! शंका (संकोच) करने की आवश्यकता नहीं है। चलिए।" (ऐसा) कहने पर वे चले गए। रावण भी चटुल वेग से धनुष और अस्त्र धारणकर, उत्कर्ष को प्राप्त कर, दावाग्नि के वनों को उग्ररूप से नियराकर जलाने के समान दीखनेपर, शोभा से नियराकर, जगतीतल के आकास से भिड़ जाने के समान अगचर सैन्य पर आक्रमण किया। यह धरणीभाग है, यह वियत्तल है, यह दिशावलि है, ऐसा समझ में न आए, इस प्रकार जहाँ-तहाँ निशित अस्त्र चलाकर, अतिवल से उदग्र बन, दशानन (रावण) (वानरों को) व्याकुलकर, परेशान कर, कपियों को सरलता से खंडितकर, चूर्ण कर, ।। ३२९० ।।

येम्मुलु मज्जंबु नॆऱचियु मॆदडु । ग्रम्मि नॆत्तुरु नेल गलयंग निंचि
तनरि यार्चुचु गुणध्वनि दिक्कुळंबु । निनिचि घोराजिलो नॆऱय बेर्चुटयु
बडियॆडु वानरुल् भ्रमयु वानरुलु । मडियु वानरुलुनु अग्गु वानरुलु
नोऱलु वानरुलुनु नुलुकु वानरुलु । नऱचु वानरुलु रूपऱिन वानरुलु
गलिगिन संगरागण भूमि जूचि । तलकिरि सुरलु चित्तंबुलु सॆदर;
गालकालानल काल दुर्वार । केळीकराळु डक्षीणुडै यपुडु
पेर्चु कोपंबुन भीषणुंडगुचु । नार्चुचु नुन्न दशाननु जूचि
यतनिकि नॆदुरुगा नरिगि सुग्रीवु । डतिरयंबुन नॊक्क यग मॆत्तिवैव
नारावणुंडुनु नदि मध्यमुननु । भूरि शरंबुल बॊडि सेसि मऱियु
नॊडॊंड घनदीप्तु लॊदव नाकसमु । निंडि मंडुचु नुंडु निशितास्त्र मिनजु
३३००
नुरमाड नेसिन नुच्चि यायम्मु । धरगाडॆ; नत्तऱि दानवु लार्व
दरुचरु लॆल्ल नुद्गत बाष्पधार । लुरलिप नर्कजु डॊऱलुचु गूले;
भुजबलाढ्युलु ऋषभुडु सुदंष्ट्रुडु । गजुडु गवाक्षुंडु गवयुंडु नलुडु
ज्योतिर्मुखुंडदि चूचि कोपमुन । नाततगति बर्वतावनीजम्मु

—हड्डियों, मज्जा, मस्तिष्क, रक्त से, भूमि को भर देकर, सन्तुष्ट हो सिंहनाद करते हुए, गुणध्वनि से दिशाओं को भरते हुए, घोराति घोर युद्ध (भूमि) में शोभा से दीप्त हुआ। गिरने वाले वानर, भ्रमित होने वाले वानर, मरने वाले वानर, नष्ट होने वाले वानर, चीखने वाले वानर, भयभीत होने वाले वानर, चिल्लाने वाले वानर, विकृत रूपी बने वानर—इनसे युक्त संगर-आंगन भूमि को देख, चित्तों के चकराने पर सुर विकल हो गए। कालकालानल (प्रलयकाल की अग्नि) (और) काल (मृत्यु) की दुर्वार-केलि-सम कराल बन, अक्षीण हो तब दीप्त होने वाले क्रोध से भीषण बनकर सिंहनाद करने वाले दशानन (रावण) को देखकर, उसके समक्ष जाकर, सुग्रीव ने अतिशीघ्रता से एक पर्वत उठाकर डाल दिया। रावण ने भी उसे बीच में ही भूरिशरों से चूरकर, तिसपर जहाँ-तहाँ घनदीप्तियों को उत्पन्न कर, समस्त आकाश में भरकर जलने वाले निशित-अस्त्र को इनज के, ॥ ३३०० ॥

—उर पर चलाया तो आर-पार हो, वह बाण धरा में गड़ गया। उस अवसर पर दानवों के सिंहनाद करने पर, समस्त तरुचरों की (आँखों से) उद्गत-बाष्प-धाराओं के उमड़ने पर अर्कज आर्तनाद करता हुआ (धरापर) गिर गया। भुजबल से आढ्य ऋषभ, सुदंष्ट्र, गज, गवाक्ष, गवय, नल, ज्योतिर्मुख (आदि वानर-नायकों) ने उसे देख अति कोप से आततगति से

लर्डरिंचि रतनिपै; नविर्येल्ल नतडु। नडुमनै तुनिमि वानरुल नेड्वुरनु नॊक्कॊक्क यम्मुन नुर्वर मीद। ग्रक्कुन जच्चिचन गति नुंड नेसॆ।

हनुम रावणुनितो युद्धमॊनर्चि मूर्छिल्लुट

नालोन हनुमंतु डायूधपतुलु। गूलुट गनुगॊनि कोपंबुतोड नसुराधिनाथुनि यरदंबुमीदि। कसमुन लंघिंचि यतनितो ननियॆ; "देवेन्द्रु डादिगा दिविजुल नॆल्ल। रावण! मरि यक्षराक्षस कोटि द्रुळ्ळडंचिति ननि व्रुळ्ळॆद वीवु;। चॆल्लदुरोरि; नी चेवडगिंतु; ३३१०

नुन्नति जिरकाल मुर्विपै ब्रदिकि। युन्न नीमीद नायुन्नतंबैन वलकेलु नेडु रावण! यिदॆ चूडु। मलमि सागेडु दनयंतन पेर्चि; यिदॆ निन्नु बॊरिगॊनि येचि यंतकुनि। सदनंबु जेर्पक सैपदु; निजमु" अनि पेर्चि पलिकिन हनुमंतु माट। विनि रावणुडु क्रोधविकृतास्युडगुचु "गलितनंबुनु लावु गलदेनि नीवु। नलुवॊप्पनुप्पॊंगि ननु मुन्नु बॊडिचि पेरुकॊम्मटमीद बेंचिन नीदु। शूरतयुनु लावु जूचि ये नेचि

उस (रावण) पर पर्वत और अवनीज (वृक्ष) फेंक दिए। उन सबको बीच में ही तोड़देकर सात वानरों को एक-एक बाण से झट मृतप्राय कर दिया।

हनुमान का रावण से युद्धकर मूर्च्छित होना

इतने में हनुमान ने उन यूथपतियों (सेनापतियों) को गिरते देख, क्रोध से, असुराधिनाथ के रथ पर दर्प से लाँघकर उससे कहा—"हे रावण! देवेन्द्र आदि समस्त दिविजों को और यक्ष-राक्षस-कोटि के गर्व का दमन किया, यह सोच दर्पित होते हो। रे, यह (आगे) नहीं चलेगा। तुम्हारी सामर्थ्य का दमन करूँगा॥ ३३१०॥

औन्नत्य से चिरकाल तक उर्वी पर जीवित तुम पर मेरा वाम कर अपने आप ही विजृंभित हो उठ रहा है। हे रावण! यही देख लो। यही तुम्हें आक्रांत कर, दमनकर, अंतक के सदन को पहुँचाकर रहेगा। (यह) सच है।" ऐसा विजृंभित हो कही हनुमान की बात सुनकर, रावण क्रोध से विकृत-आस्य (आनन) वाला होता हुआ, (बोला)— "सामर्थ्य और शक्ति है तो तुम शोभा से उत्साहित हो पहले मुझ पर आघात करके, अपनी प्रशंसा कर लो। विजृंभित तुम्हारी शूरता एवं शक्ति को देखकर, मैं भी विजृंभित हो, तुम पर प्रहार करूँगा।" ऐसा

पोंडिचेंद" ननुडु नद्भुत शौर्युंडगुचु । गडगि मारुति दशकंठुनि जूचि
"देवदेवुडु रामदेवुंडु वनुप । नीवीटिलो मेदिनीपुत्रि वेंदकि
तडयक पोंडगांचि तग विन्नविंचि । वेंडलि ये बोवुचो विक्रमस्फुरण
नीतोट नुग्गाडि नीलंक गाल्चि । नीतनूभवु जंपि निन्नु दट्टिंचि ३३२०
युक्करि निल्चि दैत्युलु सूचुचुंड । जक्क नेप्पटि त्रोव जन्न नालावु
'नेडु चूचेंद' ननि नीवाडे दुब्बि: । नाडेंदु बोयिति नाकारि नीवु ?"
अनवुडु गोपिंचि हनुमंतु वक्ष । मनुवोप्प बोडिचें नय्यसुरेश्वरुंडु;
पोंडिचिन स्रुक्कियु बोवक यतडु । बिडिकिट रावणु बेट्टुगा बोडिचें;
बेनुगालि पोंदविन बेंद्द कंपिचु । घनवृक्षमुनु बोले गंपिचें नसुर;
यंतट नोच्चिन यसरेशु जूचि । येंतयु नार्चि रय्यिद्रादु लेल्ल;
दनुजाधिपतियु नंतट मूर्छ देलिसि । हनुमंतु जूचि यिट्लनु: "नी बलंबु
कडु मेंच्चुवच्चु; नी घनमुष्टि हतिनि । गडकतो प्रेतलोकमु जूचि वच्चें
देवारि।" यनुडु नद्धीरात्मुडनियें—। "रावण! विनु मीवु प्राणंबुतोड
नुन्नवाड! विदेल युरक नालावु । सन्नुतिचोंदु! लज्ज जनियिचें नाकु"
३३३०

कहने पर, अद्भुत शौर्यवाला होता हुआ, लगकर, मारुति ने दशकंठ को देख (कहा)—"देवदेव रामदेव के भेजने पर, तुम्हारे यहाँ मेदिनीपुत्री (सीता) को खोजकर, अविलंब पता लगाकर, औचित्य से निवेदन कर, जाते समय विक्रम की स्फूर्ति से तुम्हारे उपवन का नाशकर, तुम्हारी लंका को जलाकर, तुम्हारे तनूभव (पुत्र) का वधकर, तुम्हें फटकारकर ॥ ३३२० ॥
—निर्वीर्य बने दैत्यों के देखते रहने पर, ठीक तरह से अपने मार्ग से जाने वाले मेरी सामर्थ्य को, फूलकर कहते हो कि 'आज देखूँगा'। हे नाकारि! उस दिन कहाँ गए थे ?" ऐसा कहने पर क्रुद्ध हो हनुमान के वक्ष पर उस असुरेश्वर ने उपाय से (मुष्टि से) प्रहार किया। प्रहार करने पर, कमज़ोर बनकर भी, न हटकर, मुष्टि से रावण को ज़ोर से मारा। वह असुर, झंझा के उत्पन्न होने पर अधिक कंपित होने वाले घनवृक्ष के समान कंपित हो उठा। तब पीड़ित हुए उस असुरेश्वर को देख उन इन्द्र आदियों ने अधिक सिंहनाद किया। दनुजाधिपति भी फिर होश में आकर, हनुमान को देख यों कहा—"तुम्हारे बल को अधिक सराहा जा सकता है। तुम्हारे महान्-मुष्टि-प्रहार से, साहस से देवारि (राक्षस-रावण) प्रेतलोक को देखकर आया है।" (ऐसा) कहने पर उस धीरात्मा ने कहा—"हे रावण! सुनो, तुम प्राण से बच गए हो। यह क्या बेकार मेरी शक्ति की प्रशंसा करते हो ? मुझे तो लज्जा का अनुभव हो रहा है।" ॥ ३३३० ॥

ननि पल्कि "नीवु नन्नट्टु पिडिकिय्नु। गॊनुमॊक्कपो" टन्न "गॊनु" मनि यतडु

ननयंबु गॊपिंचि यनिलनंदनुनि। ननुपमाशनिकल्पमगु मुष्टि नार्चि
वक्षंबु बॊडिचिन वडि मूर्छ नॊंदि। यक्षणंबुन द्रॆळ्ळॆ नवनिपै नात;

नीलुडु रावणुनितो बोरुट

डग्गिमुग्गि हनुमंतुडट्टु कूलुटयुनु। नॆऱसि रावणुडंत नीलुपै गविसॆ;
हनुमंतुसनु मूर्छ यंतलो दॆलिडु। दनुजुंडु नीलुपै दरुमुट सूचि
"यॆट्टु पोयॆ" दनि पिल्चि यॆदुरुगा निलिचॆ;। नट्टु तन्नु गिट्टि पॆल्लार्चुचुनुन्न
मनुजाशनुनि मीद मलय शृंगंबु। गॊनिवच्चि नीलुंडु गॊपिंचि वैव
नडुमनॆ तुनुमाडॆ नाकारि दानि। नॆडपनि कडकतो नेडम्मु लेसि;
वॆंडियु नीलुंडु विपुल कोपमुन। गॊंडलु दरुवुलु गॊनि वैचुटयुनु
वानि नन्निंटि रावणुडु चूर्णंबु। गा निशितास्त्र संघंबुल दुनिमि ३३४०
नीलुनि मेन ग्रॊन्नॆत्तुरुलॊलुक। वालिन यम्मुलु वडि बॆक्कु लेसॆ;
नेसिन नॊच्चियु नित गैकॊनक। गासिलल नीलुंडु गडु लाघवमुन
धारुणि दैत्युलु दल्लडंबंद। वीरुडै दानवविभु तॆरि कुग्गिकि

फिर ऐसा कहा, 'तुम मेरी मुट्ठी का एक और प्रहार लो।' 'लो' कहते वह (रावण) ने अधिक क्रुद्ध हो अनिलनन्दन को अनुपम-अशनि-कल्प (-सम)-मुष्टि से, सिंहनाद करके, वक्ष पर मारा तो झट मूर्छित हो, उसी क्षण अवनि पर वह (हनुमान) गिर पड़ा।

नील का रावण से युद्ध करना

शीघ्रता से हनुमान के उस प्रकार गिरते देख, रावण तब नील से भिड़ गया। इतने में हनुमान मूर्छा से होश में आकर, दनुज (रावण) को नील का पीछा करते देख 'किधर जाओगे!' कहते बुलाकर, सामने डट गया। उस प्रकार अपने निकट पहुँच, अधिक सिंहनाद करनेवाले मनुजाशन (नरभोजी) पर नील ने क्रुद्ध हो मलयशृंग ला डाल दिया। नाकारि ने उसे बीच में ही, विलम्ब किए बिना, साहस से, सात बाण छोड़कर बीच में टुकड़े कर दिया। और भी नील के विपुल कोप से पर्वत और तरु ला डालने पर, उन सबको रावण ने निशित-अस्त्रसंघ से चूर्ण कर दिया॥ ३३४०॥

नील के शरीर से नवरक्त उमड़ पड़े, ऐसे कई तेज़ बाण फेंके। फेंकने पर पीडित होकर भी, ज़रा भी परवाह न करके, नील अतिलाघव

पौलुपोंद नप्पुडद्भुत शक्ति मॆरसि । निलिचि यच्चलमुन निगुडि युप्पोंगि
वड बेंचि यारथध्वजमुन कॆगसि । पौडि चेसि चापाग्रमुनकु लागोप्प
नॆगसि ग्रलंबुन नॆक्कॆडलिंचि । मगुडि रावणु घनमकुटमुल् द्रोक्कि
युरुभुज निज विक्रमोन्नति मॆरसि । सुरसिद्ध साध्युलु सोद्दॆंबु नोंद
नोक मौळिपैनुंडि योक मौळि व्रेसि ।योक मौळिपै नुंडि योक मौळि यूचि
योक मौळिपै नुंडि योक मौळि डुलिच। योक मौळिपै नुंडि योक मौळि दन्नि
मकुटंबुलन्नियु मट्टि मल्लाडि । यकलंकुडै नीलुडंतट बोक ३३५०
वारक तनुबट्ट वच्चिन सूक्ष्म । मै रावणुनि जूचि यंदंद नगुचु
गोडगुलु सिंचि ग्रक्कुन मीद द्रोचि । पौडिगाग जामरंबुलु द्रुंचि वैचि
विरुगंग नरदंबु वीक दार्टिचि । करकरि तोड नुत्कंठ दीपिंप
दनुजेशु नुरुमुष्टि दाचि हारमुलु । पैनचिरा दिगिचि यापृथुल वक्षंबु
जरचि यंदंद युत्साहंबु मॆरसि । युरक यीगति नाडुचुंडुट जूचि
तरुचर सेनलु दैत्य सेनलुनु । बोरि बोरि नद्भुतंबुग जूचुचुंड

से, धारुणि पर दैत्य विकल हो जाएं, ऐसा वीर हो, दानवविभु के रथ पर कूदकर, सुशोभित हो, तब, अद्भुतशक्ति से दीप्त हो, अधिक हठ से उमड़कर, झट सिंहनाद कर, उस रथ के ध्वज पर छलांग भरकर, (उसे) चूरकर, चापाग्र (-भाग) पर पूरी शक्ति से कूदकर, हठ से, उस (धनुष की डोरी) को ढीली कर, फिर से रावण के घनमकुटों को कुचलकर, उरु-भुज-निज-विक्रम-उन्नति से दीप्त होकर, सुर-सिद्ध-साध्य (आदि) चकित रह जाएँ, ऐसा एक मौलि (सिर) पर खड़े रहकर दूसरे पर प्रहार करके, एक सिर पर रहकर दूसरे को हिलाकर, एक सिर पर रहकर दूसरे को झकझोर कर, एक सिर पर रहकर दूसरे को लात मारकर, सभी मकुटों को धूल में मिलाकर, अकलंक हो रहा। उतने से न जाने देकर, ।। ३३५० ।।

—अपने को पकड़ने के लिए आने पर सूक्ष्म होकर (सूक्ष्म रूप को धारण कर), (रावण की पकड़ में न आकर) रावण को देख जहाँ-तहाँ हंसते हुए, छत्र फाड़कर, झट (रावण के) ऊपर लुढकाकर, चामर चूर हो जाएँ ऐसा गिरा देकर, पराक्रम से रथ को खंड-खंड करके, बलयुत हो उत्कंठा के दीप्त होने पर, दनुजेश को उरु-मुष्टि से प्रहार कर, हारों को उलझाकर, खींच फेंककर, उस (के) पृथुलवक्ष पर (हथेली से) प्रहारकर, जहाँ-तहाँ उत्साह से दीप्त होकर, इस गति से क्रीडा करते देख, तरुचर-सेनाओं तथा दैत्य-सेनाओं के बार-बार चकित हो देखते रहने पर, वे राजाराम

वेरगंदि रा रामविभुडु लक्ष्मणुडु । मरि रावणुंडुनु महिताग्नि शरमु
नय्येड नारितो नलुक संधिंचि । यय्यग्नि सुतु तोड ननिये मंडुचुनु;
"नी लाघवमु लेस्सः निन्नु मेच्चितिनि; । नी लाघवमे नाकु नेंडयक चूपु;
मिदे वच्चे नाबाणमिनवह्नि रुचुल; । ब्रदिकेडु चंदंबु वरिकिंचु
कोनुम" ३३६०
यनि येयुटयु नीलु डग्नि बाणमुन । दनुवेल्ल मंडुचु धरणिपै बडियें;
नग्निपुत्रुडु गान नातीव्र शरमु । नग्निचे जावक यवशुडै युंडे;

रावणुडु ब्रह्म शक्तिचे लक्ष्मणु गूलनेयुट

नंत धनुर्घोष मडर सौमित्रि । यंतकंतकु बेर्चि यद्दैत्यु दाक
नग्गुणारावंबु नतनि साहसमु । नग्गिच्चि यतनितो ननिये रावणुडु
"पिन्नवै युंडियु बेर्चुचु ननिकि । सन्नद्ध गति नीवु चनुदेंचुटोप्पु;
बुच्चेद नंतकु पुरिकि लक्ष्मणुड! । यिच्चंदमुन निल्वु मिचुक तडवु"
अनवुडु विनि राघवानुजुंडनियें । "दनुजाधमुड! यीवृथा गर्वमेल?
डासिनवाड; माटलु पेक्कुलुडिगि । चेसि चूपुदु गाक! चेलगि नीलावु"

और लक्ष्मण विस्मित हुए। फिर रावण ने महित-अग्नि शर को, उस अवसर पर, क्रोध से धनुष की डोरी का संधानकर, (क्रोध से) जलते हुए उस अग्निसुत से यों बोला—"तुम्हारा लाघव (कौशल) श्रेष्ठ है। तुम्हें प्रशंसित करता हूँ। अपने लाघव को ही सर्वदा दिखाते रहो, यह देखो मेरा बाण इन-वह्नि-रुचियों (सूर्य और अग्नि की कांतियों) से आ रहा है। जीवित रहने के विधान को देख लो।" ॥ ३३६० ॥

(ऐसा) कह डालने पर नील अग्निबाण से समस्त शरीर के जलते रहने पर धरणि पर गिर पड़ा। अग्निपुत्र होने के कारण उस तीव्र शर की अग्नि से न मरकर अवश हो रहा।

रावण का ब्रह्मशक्ति से लक्ष्मण को गिरा देना

तब धनुर्घोष के अधिक होने पर, सौमित्र ने् अधिकाधिक सिंहनाद कर, उस दैत्य का सामना किया। उस गुणारव (ध्वनि) (तथा) उसके साहस की प्रशंसा कर, उससे रावण ने कहा—"छोटे होते हुए भी सिंहनाद करते हुए, युद्ध के लिए सन्नद्धगति से तुम्हारा आना समुचित है। हे लक्ष्मण! तुम्हें अंतक-पुरी को भेजूंगा। इसी प्रकार थोड़ी देर खड़े रहो।" ऐसा कहने पर सुनकर राघवानुज ने कहा—"हे दनुजाधम! यह वृथा गर्व क्यों? (तुम्हारे) निकट आया हूँ। अनेक बातों को छोड़कर, उत्साहित

ननिन सौमित्रि नेडम्मुल नेसें; । दनुजुनि यम्मु लुद्धति लक्ष्मणुंडु
नडुमनें त्रुंचेनु; नाकारि यप्पु । डडरेंडु क्रोधमुदग्रमै पर्वं ३३७०
घनतरज्यानाद कलितंबुगाग । ननयम्मु निगुडिचें नम्मुलवान;
नायंपतंडबु लंदंद त्रुंचि । वेयेसि शरमुलु वेंस नेसें नात;
डायस्त्रमुलकु मारैन यस्त्रंबु । लेय नेरक दानवेश्वरुंडपुडु
तलकोंनि योंक ब्रह्मदत्त बाणमुन । ललित वक्षंबेय लावेंल्ल दूलि
विल्लूतगा निलिच वेगंबें तेंलिसि । पेंल्लुगा नार्चुचु बेंचि लक्ष्मणुडु
घनबाण माकट राक्षसनाथु विल्लु । दुनिमि यंतट बोक दोर्बलंबेंसग
मू डग्नुलन बोलु मूडु बाणमुल । वाडिमि मिगुलंग वक्षंबु नेसें;

लक्ष्मण मूर्छ

नेसिन मूर्छिल्लि यिंतलो देंलिसि । यासन्न-सत्त्व-समग्रुडै कदिसि
तनविल्लु विरिचिन दानिकि नसुर । मनमुन जाल विस्मयमुन बोंदि
कलुषिंचि निच्चलु गंध पुष्पमुल । नलवड बूजिप नमरिन दानि ३३८०

हो अपनी शक्ति को (कार्य रूप में) करके दिखाओ।" (ऐसा) कहने वाले सौमित्रि पर सात बाण डाले। दनुज के बाणों को औद्धत्य से लक्ष्मण ने बीच में ही तोड़ दिया। नाकारि तब उत्कर्ष को प्राप्त क्रोध के उदग्र हो, व्याप्त होने पर, ॥ ३३७० ॥

—घनतर-ज्या-नाद से कलित होने पर, निरन्तर बाणों की वर्षा की। उस बाणसमूह को जहाँ-तहाँ नष्टकर, उसने हजारों शर चलाए। उन अस्त्रों के लिए प्रति-अस्त्र चला न सक दानवेश्वर ने तब लगकर ब्रह्मदत्त एक बाण को (लक्ष्मण के) ललित वक्ष पर चलाया। समस्त शक्ति को खोकर, धनुष के सहारे खड़े होकर, झट होश में आकर, अधिकता से सिंहनाद करते हुए लक्ष्मण ने एक घनबाण से राक्षसनाथ के धनुष को काट देकर, उतने से न जाने देकर, दोर्बल (बाहुबल) के उमडने पर, त्रेताग्नियों के सम तीन बाण, नैशित्य से (रावण के) वक्ष पर चलाये।

लक्ष्मण की मूर्छा

चलाने पर, मूर्छित हो, उतने में होश में आकर, आसन्न-सत्त्व से समग्र हो, अपने धनुष के तोड़े जाने पर असुर ने मन में अधिक विस्मित हो, कलुषित (संतप्त) होकर, नित्य गन्धपुष्पों से औचित्य से पूजित होकर सुशोभित बनी थी, ॥ ३३८० ॥

निलयु ब्रह्माण्डंबु नेल्ल दिक्कुलुनु । वेलुगोंदु मंटल विलसिल्लु दानि
नडरेंडु पदि कोट्टु लशनुल बोलि । कडु बेट्टिदपु म्रोत गलिगिन दानि
नलिनमित्रुनि किरणंबुल कंटे । वेलुगोंदु नुग्रंपु वेडिमि दानि
ननिमिषुल् वेरगंद ना ब्रह्मशक्ति । गोनि लक्ष्मणुनि मीद ग्ररुडै वैचे;
वैचिन गालाग्नि वडुवुन बेद्द । येचि वज्रमुनकु नेक्कुडै निगुडि
यनिमिषावलि येल्ल नाहारवंबु । लोनरिप बरतेंचु नुग्रत सूचि
वारिप नम्मुलवान लक्ष्मणुडु । घोरतरंबुगा गुरियंग गोनक
यदि वच्चिच भुज-मध्यमंदु लक्ष्मणुनि। वदलक ताकिन वसुधपै वडियें;
नरिगि दशाननुंडंत लक्ष्मणुनि । निरुवदि चेतुल नेत्त बूनुटयु
नातडु विष्णुनि यंशजुडगुट । नेतेरंगुन वानि केत्त रादय्ये; ३३९०
नेत्त राकुंडिन "नेनु कैलास । मेत्तिति नगलिचि ये नट्टुलडरि;
मरि मेरुवैननु मंदरंबैन ।नेरय नेत्तग नोपु निज शक्ति नाकु;
वीडित व्रेगौट विस्मय" बनुचु । बोडिगा गरमुल बून्चि रावणुडु
अतुल सत्त्वोन्नति नंदंद येत्त । मतिलोन गोपिंचि मारुति गडगि
परतेंचि निर्घात पटुमुष्टि नार्चि । करकुराक्षसुनि वक्षस्थल मगल

—पृथ्वी, ब्रह्मांड (तथा) समस्त दिशाओं में प्रज्वलित वह्नियों से युक्त थी, दस हज़ार अशनियों के समान अति भयंकर घोष से युक्त थी, नलिनमित्र (सूर्य) की किरणों से भी अधिक प्रदीप्त उग्र-उष्णता से युक्त थी, ऐसी उस ब्रह्मशक्ति को, अनिमिषों के चकित होने पर, क्रूर बन, लक्ष्मण पर चलाया। उसके डालने (चलाने) पर कालाग्नि के समान विजृंभित हो, वज्र की अपेक्षा अधिक होकर, समस्त अनिमिषावली के हाहाकार करते रहने पर आनेवाली उस (शक्ति) की उग्रता को देख, उसका निवारण करने के लिए लक्ष्मण ने बाणवर्षा घोरतर रूप से की। उसकी परवाह न कर वह (शक्ति) आकर, लक्ष्मण के भुजमध्य (वक्ष) में अनिवार्य रूप से लगी तो (लक्ष्मण) वसुधा पर गिर पड़ा। तब जाकर दशानन, लक्ष्मण को बीसियों हाथों से उठाने का प्रयत्न करने पर, उसके (लक्ष्मण के) विष्णु-अंशज होने पर, किसी भी तरह से उठा न सका ।। ३३९० ।।

उठा न सकने पर "मैं अतिशयता से कैलाश (पर्वत) को उखाड़कर उठा सका। यही नहीं, मेरु हो या मन्दर, उठाने की मेरी अपनी शक्ति है। इसका इतना भारी होना विस्मयप्रद है।" (ऐसा) सोचते, सुघड़ता से हाथ लगाकर रावण ने अतुल-सत्त्व-उन्नति से जहाँ-तहाँ उठाने का प्रयत्न किया तो मन में क्रुद्ध हो मारुति ने सप्रयत्न आकर, निर्घात

बौड्डुचुटयुनु मूर्छ बौंदि रावणुडु । कडु दूलि यंत मोकाळ्ळु मोवंग
बडियें बिरि्रदिकि बद मिडलेक: । पडिन रावणुनि यप्पटि भंगि जूचि
यार्चिरि देवत; लप्पुडु कपुलु ।पेर्चिरि; दैत्युलु भीति गीड्वडिरि;
पावनि यट विष्णु भक्तुंडु गान । रावणुनकु नैत्तरानि लक्ष्मणुनि
गुरुसत्त्वमुन नैत्तुकौनि पोयि राम । धरणीतलेशु मुंदर बेट्टै नपुडु
३४००
रामु तेजमुन बराजित मगुचु । सौमित्रि नाटिन शक्तियु नूडि
यसरेशु रथमुन करिगें; सौमित्रि । यसमान बलशालियै मूर्छ देरें;
नट रावणुंडुनु नम्मूर्छ दैलिसि । चटुल बाणासन सन्नद्धुडय्यें;

राम रावणुल प्रथम युद्धमु

सौमित्रि यट्टु परिश्रांति नौंदुटकु । नामर्कटुलु भीति नलिकि पारुटकु
रावणुडेचि पैराककु राम । देवुंडु गोपंबु दीपिंप बेचि
भीकरगुण रवस्फीतुडै वेग । नाकारि कैदुरुगा नडचुट सूचि
यनिलतनूभवुंडनियें रामुनकु । "निनकुलाधीश्वर ! यीरावणुंडु

(वज्र)-पटुमुष्टि ले, सिंहनाद कर, क्रूरराक्षस का वक्षस्थल फट जाए, ऐसा प्रहार करने पर, रावण मूर्च्छित हो, लड़खड़ाकर, घुटनों के बल, पीछे पैर न रख सक, गिर पड़ा। गिरे हुए रावण के उस विधान को देख देवताओं ने सिंहनाद किया। तब कपियों ने सिंहनाद किया। दैत्य भीति से त्रस्त हो उठे। पावनी (हनुमान) के विष्णुभक्त होने के कारण रावण के लिए दुर्वह लक्ष्मण को गुरुसत्त्व से उठा ले जाकर तब राम-धरणीतलेश (राजा राम) के समक्ष रखा, ॥ ३४०० ।

—राम के तेज से पराजित होकर, सौमित्री के शरीर में गड़ी शक्ति छूटकर, असुरेश के रथ की ओर गयी। सौमित्र भी असमान बलशाली हो मूर्च्छा से सचेत हो गया। उधर रावण भी मूर्च्छा से होश में आकर, चटुल-बाणासन ले सन्नद्ध हो गया।

राम-रावण का प्रथम युद्ध

सौमित्री के उस प्रकार मूर्च्छित होने पर, उन मर्कटों के भी भीत हो भाग आने पर, रावण के विजृंभित होकर आक्रमण करने के लिए आने पर, रामदेव के कोप दीप्त होने पर, उत्साहित हो, भीकरगुणरवस्फीत हो, झट नाकारी के समक्ष चल पड़ते देख, राम से अनिलतनूभव ने कहा—"हे इनकुलाधीश्वर ! इस रावण के रथ पर रह युद्ध करते समय तुम्हारा

अरदंबुपै नुंडि यालंबु सेय। वेरवगुने नीकु विभुड! कालनडव?
नामीद वडि नेक्कि नाकारि कॅदुर। राम! विच्चेयुट राजधर्मबु"
अनवुडु गडकतो हनुमंतु नेक्कि। यनिमिषकरिमीदि यमरेन्द्रु करणि ३४१०
नोप्पि गुणध्वनि योप्पार जेसे। नप्पुडु कोपिंचि याटोपमोप्प;
रावणुडुग्रुडै रामु नीक्षिंचि। पावक-ज्वालोग्र-बाण-जालमुल
गुरिसिन राघवक्षोणीशु डलिगि। युरु बाणमुल नेसे; नुरुवडि वानि
निंद्रारि देंगनेसे; नेसिन राम। चंद्रुडुद्धति नर्धचंद्र बाणमुन
दनुजेशु कोदंड दंडंबु द्रुनिमि। सुनिशित भीकराशुग पंचकमुन
मर्ममुल् नोंप्पिप मरियुनु नोक्क। धर्मबु गोनि याचि दशकंधरुडु
पट्टु बाण मोक्कट बवन नंदनुनि। निटलतटंबेसे निपुणुडै मेंडसि;
यनिलजु फाल मुग्रास्त्रंबु दाक।गनुगोनि कोपिंचि काकुत्स्थकुलुडु
भल्लंबु दोडिगि यापंक्तिकंधरुनि। विल्लंत लोपल विरुगंग नेसि
योक्कट सारथि नोकट यश्वमुल।नोक्कट नरदंबु नोकट वताक३४२०
नोक्कट गोडुगुनु नोकट नस्त्रमुल। ग्रक्कुन नेसि चूर्णबु गाविंचि
मनुज नायकुडु समंत्रक शरमु। दनुजुनि वक्षंबु दाक नेयुटयु

पैदल रहना क्या समुचित होगा? हे राम! मुझपर झट सवार होकर, नाकारी के समक्ष पधारना राजधर्म है।" ऐसा कहने पर, साहस से युक्त हो, हनुमान (के कंधों) पर चढ़कर, अनिमिष-करि (ऐरावत) पर अमरेन्द्र के समान, ॥ ३४१० ॥

—शोभित हो, तब क्रुद्ध हो, आटोप की शोभा से गुण-ध्वनि की। रावण ने उग्र हो राम को देख पावक-ज्वाला-उग्र बाण बरसाए। राघव-क्षोणीश (-राजा) ने क्रुद्ध हो उरुबाण चलाए। शीघ्रता से उन्हें इंद्रारि ने काट दिए। (काट) देने पर रामचन्द्र ने उद्धति से अर्द्धचंद्र बाण से दनुजेश के कोदड-दंड को काटकर, सुनिशित-भीकर-आशुग (-बाण) -पंचक से मर्मस्थानों को पीडित किया। और एक धनुष को लेकर, सिंहनादकर दशकंधर ने एक पट्टुबाण को पवननंदन के निटलतट (ललाट) पर चलाया (और) प्रवीण हो प्रकाशित हुआ। उस उग्र-अस्त्र के अनिलज के फालभाग पर लगते देख, काकुत्स्थकुलज ने क्रुद्ध हो, भल्ल (भाले) का संधानकर, उस पंक्तिकंधर के धनुष को झट काटकर, और एक से सारथी, अन्य से अश्व, एक से रथ, एक से पताका, ॥ ३४२० ॥

—एक से छत्र, एक से अस्त्रों को झट चूर्णकर, मनुजनायक ने समंत्रशर को दनुज के वक्ष को लगे, ऐसा चलाया। उस राम के शर से रावण

नारामु शरमुन नारावणुंडु । वारक कडुनोच्चि वडवड वडकि
यनिकि निश्चेष्टितुंडगु दशकंठु । गनि यर्थ-चंद्र-मार्गण मरिवोसि
दश दिशलंदुनु दनरिन दैत्यु । दश यडगिंचु चंदमु जूपु करणि-
द्रिदशुलु मेच्च नुद्दीप्त कोपमुन । बदि मकुटंबुलु बडि डोंल्ल नेसें;
नेसिन मदिलोन नेंतयु स्रुक्कि । भासुर मकुट प्रभावळि बासि
ग्रद्दन जेयु नक्कय्यंबु दक्कि । तद्दयु निश्चेष्ट दशकंठु डुंडे;
नप्पुडु राघवुंडनियें रावणुनः । "किप्पुडु कपुलतो निब्भंगि बोरि
कडु डप्पिनाडवु; कान निन् जंप । विडिचिति; नीविक वेगंबु मरलि
३४३०

रावणुडु चिन्नवोयि लंककु मरलुट

पो लंक" कनुडु नप्पुडु चिन्नवोयि । योलिन वेडिनिट्टूर्पुलु निगुड
मंडेडि कोपंबु मलिपि चित्तमुन । दंडि गर्वमु दक्कि दशकंधरुंडु
बलमेल्ल बोंलिसि दर्पमु पेर्मि दूलि । वेंलवेंल बारुचु विरथुडै नडचि
पेंदवुलु दडपुचु बिम्मिटि गोंनुचु । गदरिन भीति गद्गद कंठुडगुचु
जेरि योंडोरुवुल चेतुलु सरचि । बोरन नव्वुचु भूतंबु लार्व

दुर्निवार रूप से अधिक पीड़ित हो, थरथर काँप उठा। युद्ध के लिए निश्चेष्टित बने दशकंठ को देख, अर्द्धचंद्रमार्गण का संधानकर, दशदिशाओं में विलसित दैत्य की (महा) दशा का दमन करने के विधान को दिखाने के समान, त्रिदशों (देवताओं) की प्रशंसा करने पर, उद्दीप्त कोप से दसों मकुट (धरा पर) लुढका दिए। (ऐसा) चलाने पर मन में अधिक कमजोर बन, भासुर-मकुट-प्रभावली से रहित हो, जल्दबाजी से किए जाने वाले उस युद्ध से विरत हो, दशकंठ अधिक निश्चेष्ट हो, खड़ा रह गया। तब राघव ने रावण से कहा—"अब कपियों से इस प्रकार जूझकर अधिक थक गए हो। अतः तुम्हें मार डाले बिना छोड़ दिया है। अब तुम शीघ्र ही लौटकर, ॥ ३४३० ॥

रावण का खिन्न हो लंका को लौटना

—लंका जाओ।" (ऐसा) कहने पर तब खिन्न होकर, उद्गत होने वाले उष्ण निश्वासों के बढ़ते रहने पर प्रज्वलित क्रोध को बुझाकर, मन में अधिक गर्व को खोकर, दशकंधर समस्त बल खोकर, दर्प के उत्कर्ष को खोकर, विवर्ण होते हुए, विरथ हो, पैदल चलते हुए, होंठ चाटते हुए, बेहोश होते हुए, अधिक बने भय से गद्गदकंठ वाला होते हुए, सभी (मर्कटों) के मिलकर तालियाँ बजाते हुए, भूत चीख उठें ऐसा अट्टहास करते हुए,

गुरुवुलु वारुचु गुनिसि याडुचुनु । गेरलि वानर कोटि गेलि सेयंग
गड़कॅल्ल नुडिगि यॉक्करुडुनु वेग । पड़चि यालंक लोपल जॊच्चॆं नप्पु;
डट्टु लंकलोपलि करिगि रावणुडु । पट्टुतरंबगु चिंतबडि तल्लडिलुचु
बंचाननंबुचे बडियु जावुनकु । निचुक तप्पिन येनुगु पगिदि,
गरुडुनिचे बडि क्रम्मर ब्रदिकि । सुरिगि पोयिन दंद शूकंबु वोलॆं ३४४०
स्फीत विद्युत् प्रभाभील कीलमुल । नातत ब्रह्म-दंडातिशयंबु
लगु रामु बाणंबु लडरि प्राणमुल । दॆगटार्चुचुनिकि जिंतिंचि चिंतिंचि
युडुगनि वेडि निट्टूर्पुल बॆल्लु । वडगालि बोलॆं नॆव्वलनैन सुडिय
दलकॊन्न सिग्गुन धैर्यंबु वदलि । कॊलुवुलो गल दैत्य कोटि नीक्षिचि
"नालावु कलिमि दानव वीरुलार! । नेलतो गलियुट नेडुवो कलिगॆं !
सहज पराक्रम शालि यॊक्करुडु । महिमीद बुट्टॆ रामक्षितीश्वरुडु;
सॊरिदि युद्धंबुल सुरसिद्धसाध्य । गरुड गंधर्व राक्षस पक्षि यक्ष
किन्नरोरगवर किंपुरुषुलुनु । नन्नु जयिंचुटॆन्नडु लेक युंड
वरमु गांचिति ब्रह्म वलन ने; । नपुडु सरकु सेयनु नरसमिति मोसमुन;
नामोसमॆल्लनु नाकु बैवच्चॆं; । नेमनि चॆप्पुदु नीदुरवस्थ! ३४५०

शीघ्र दौड़ते इठलाते, उद्धत हो वानरकोटि के अपहास करते रहने पर, समस्त क्रौर्य को खोकर, अकेले ही शीघ्रता से तब उस लंका में प्रवेश किया। तब लंका के भीतर जाकर रावण पट्टुतर-चिन्तामग्न हो, विकल होते हुए, पंचानन (सिंह) के हाथ पड़कर भी, बाल-बाल बच निकल जानेवाले हाथी की तरह, गरुड के हाथ पकड़कर भी, फिर जीवित हो, अदृश्य हो जानेवाले दंदशूक (सर्प, राक्षस) की तरह, ।। ३४४० ।।

—स्फीत-विद्युत्-प्रभा-आभील-कील (-ज्वालायुत) हो, आतत-ब्रह्मा के दंड (अस्त्र) से भी अतिशय राम के बाणों का, विजृंभित हो, अपने प्राणों को मार डालने की (बात) सोच-सोचकर, कम न होने वाली गरम साँसों के तीव्र लू के समान होने पर, कहीं जा छिप जाने की बात से उत्पन्न लज्जा के कारण, साहस खोकर, सभा में स्थित दैत्यकोटि को देखकर (बोला)— "हे दानव वीरो ! मेरी सामर्थ्य की संपत्ति (अतिशयता) का मिट्टी में मिल जाना आज संभव हुआ न ! एक सहज पराक्रमशाली राम-क्षितीश्वर महि पर जन्मा। क्रम से युद्धों में सुर, सिद्ध, साध्य, गंधर्व, राक्षस, पक्षि, यक्ष, किन्नर, उरगवर, किंपुरुषों के हाथ कभी न हारने का वर मैंने ब्रह्मा से प्राप्त किया। तब भूल से नर-समिति की उपेक्षा कर दी। वह समस्त भूल (आज) मेरे (सिर पर) आयी है। इस दुर्दशा के बारे में क्या कहूँ ? ।। ३४५० ।।

कोट मीरेमरु कुंडि वाकिळ्ळ । बाटिंचि यँतयु बलुकापुलिड्डु;
दुरमुलोपल ब्रहस्तुडु मोदलैन । युरुवीरु लंदरु नोगि बोरि पडिरि;
मरि यिक रामलक्ष्मणुल जयिंप । नेरिबिरुदेव्वडु निजमुगा निंदु;
बहुसंगरांगण परिणतुंडैन । सहज शूरुडु रामजनपालु मीद
नडव नेर्चिन यट्टि नातम्मुडैन । कडिदि वीरुडु कुंभकर्णुडु गाक
विनुतिंप मरि योंडु वीरुंडु गलडे" । यनुचु नद्दशकंठु डंदरु जूचि
"नेरयंग निरुमूडु नेललु निद्रिंचि । मरि मेलुकनि सभामंटपंबुनकु
नलरि येतेंचि मंत्रालोचनंबु । पोलुपार गाविंचि पोयि क्रम्मरनु
नेडु तोम्मिदि नाळ्ळ निद्रमै नुन्न । वाडु; शत्रुलनेल्ल वधियिंपगलडु
अतनि मेल्कोल्पि यतुल विक्रमुनि । नेतेरंगुन नैन निटकुदें" डनिन
३४६०

राक्षसुलु कुंभकर्णुनि निद्र मेल्कोल्पुट

बहु गंधपुष्पमुल् भक्ष्य भोज्यमुलु । बहु विधंबुल गोनि परचि राक्षसुलु
नाततानंत भोगास्पदंबगुचु । बाताळमुनु बोलें बरगेंडु दानि
महनीय शतकोटि महिमचे निंद्रु । महितालयमु बोलें मानैनदानि

तुम लोग असावधान न बन, दुर्गद्वारों पर अधिक रक्षा की व्यवस्था करो। युद्ध में प्रहस्त आदि उरु-वीर लगन के साथ युद्ध कर मर गये। अब सचमुच राम-लक्ष्मणों को जीत सकनेवाला उत्तम वीर यहाँ कौन है? बहु समरांगणों में परिणत (अनुभवी) (तथा) सहजशूर, साहसी वीर मेरे अनुज कुंभकर्ण को छोड़, राम-जनपाल (राजाराम) का सामना कर सकनेवाला और कौन है?" (ऐसा) कहते वह दशकंठ सबको देख (यों बोला)—"शोभा से छः मास सोकर, फिर जागकर, सभामंडप में आनन्द से आकर, मंत्रालोचन कर, फिर आज से नौ दिन पहले जाकर, सो रहा है। वह समस्त शत्रुओं का वध कर सकता है। उसे जगाकर, उस अतुल विक्रम वाले को किसी भी तरह यहाँ लाओ।" ऐसा कहने पर, ॥ ३४६० ॥

राक्षसों का कुंभकर्ण को नींद से जगाना

—बहुगंधपुष्प, बहुविध भक्ष्यभोज्य लेकर जाकर, राक्षस, आतत-अनंत-भोग (सर्प और भोग) का आस्पद हो पाताल के समान शोभायमान, महनीय शतकोटि-(शत करोड़ और वज्रायुध) महिमा से इन्द्र के महितालय (स्वर्ग) के समान मान्य, निखिल (समस्त लोक) में व्याप्त तेज के

निखिलंबुनंदुनु नेगडु तेजमुन । शिखिनिवासमु वोलें जेलुवैनदानि
समधिकंबैन भीषण वृत्ति गलिगि । यमनिवासमु वोलें नमरिन दानि
विविध मेदो मांस वितति ग्रव्यादु । भवनांगणमु वोलें भासिल्लु दानि
निरुपमतर वारुणीयुक्तमगुचु । वरुणालयमु बोलें वालिन दानि
दिरमैन यासुगंधिश्वसनमुल । मरुदालयमु वोलें मलसेंडुदानि
विलसित निधुलचे वेलसि कुवेरु । नेलवुनु वोलें वर्णितमैन दानि
नुरुविभूतिकि नेल्ल नुनिकिपट्टगुचु। हरुनिवासमु वोलें नलरिनदानि
३४७०

गलिगिन पद्मराग प्रभावळुल । नलुव युन्नेड बोलें नलुवैन दानि
नखिलाशल द्रियोजनायतंबगुचु । सुखतरंवगु गुह सोच्चि यच्चोट
नावीरु निट्टूर्पु लडरिन दूलि । लाबुन नेंट्ट केलकु जेर बोयि
कडुनोप्प नेंतयु गरगरनैन । वेंडलुपु गल हेम-वेदिक मीद
नंसंबुतो गपोलांकंबु जेर्चि । हंस-तूलिक-तलपमंदु शयिंचि
युडुगक तरचैन यूर्पुल तोड । बेंडगैन या घर्मविदुलतोड
गरमोप्प मोड्चिन कन्नुल तोड । दरमैन कपुर गंदपु बूत तोड

कारण शिखि (अग्नि) निवास के समान सुन्दर, समधिक भीषणवृत्ति से युक्त हो यम-निवास के समान विलसित, विविधमेदोमांस-वितति के कारण क्रव्याद (मांसभोजी राक्षस) के भवनांगण के समान भासित, निरुपमतर वारुणी (मदिरा और जल) से युक्त हो वरुणालय के समान विलसित, स्थिर बने सुगंधयुक्त श्वसनों से मरुदालय के समान शोभित, श्रेष्ठ-निधियों से विलसित हो, कुबेर के निलय के समान वर्णित, उरु-विभूति (ऐश्वर्य और राख) के लिए आकर (स्थान) होते हुए, हर के निवास के समान शोभित, ।। ३४७० ।।

—पद्मराग प्रभावलियों से युक्त हो ब्रह्मा के निवासस्थान के समान मनोहर, (इस प्रकार) अखिल-आशाओं (दिशाओं) में त्रियोजन-आयत (विशाल) होते हुए, सुखतर बनी गुफा में प्रवेशकर, वहाँ उस वीर (कुंभकर्ण) के निश्वासों के मारे लढ़खड़ा जाकर, शक्ति के कारण किसी भी प्रकार निकट पहुँच, अधिक शोभित स्वच्छ (अथवा श्वेत), चौड़ी हेम-वेदिका पर, अंश (कंधा) भाग को कपोलांक (कपोल) जोड़कर, हंस-तूलिकातल्प पर शयन कर, न रुककर अधिक बने निश्वासों के साथ, विलसित धर्म-(पसीने की) बिन्दुओं के साथ, अधिक मनोज्ञता से मूँदी आँखों के साथ, घने कर्पूर-चंदन के लेप के साथ, उर पर अधिक उज्ज्वलता से प्रकाशित मणिहार-निकर (-समूह) के साथ, सल्ललित-आनंद-संपत्ति

नुरमुन नेंतयु नुज्ज्वलंबगुचु । नेरसिन मणिहार निकरंबु तोड
सल्ललितानंद संपद तोड । नेल्लप्पुडुनु दन्नु नेरुगमितोड
सरस निद्रांगना संभोगकेळि । बरिणमिंचिन भंगि भासिल्लुवानि ३४८०
बलुमारु दिविजुल भंजिचु नट्टि । कल लर्थि गनु कुंभकर्णुनि गनिरि;
कनि "यिट्टिवानि की घन निद्र यिच्चे । वनरुहासनु" डनिवगचुचुनप्पु
डातनि मुंदर नन्नरासुलुनु । ब्रातिगा महिष वराह मांसमुलु
बोसि यंचित गंधपुष्पार्चनमुलु । सेसि धूपंबुलु चेलुवोप्प निच्चि
पोरि बोरि बहुदीपमुलु निवाळिंचि । करमुलु मोगिचि पोगड्तलनेरपि
पिडुगुलु म्रोसिन पेक्कुव कंटे । नेडपकार्चुचु बोब्बलिडुचु जीरुचुनु
नुरुवडि शंखंबु लूदुचु बेट्टु । मोरयंग निस्साणमुलुनु भेरुलुनु
जेंदि व्रेयुचु दोन सिंहनादमुलु । नंदंद चेलगिंप नम्महारवमु
दक्षत बाताळ तलमु दिक्कुलुनु । नक्षत्र-पथमुनु नाकंबु निंडे;
नंतक देलियक याकुंभकर्णु । डंतकंतकु गडु नग्गलंबैन ३४९०
निदुर वोवग जूचि,निखिल राक्षसुलु । गदलुनु मुसलमुल् घनमुद्गरमुलु
बेनुपारु पट्टिस भिडिवालमुलु । मुनुमिडि यंदरु मुसरि व्रेयुचुनु

के साथ, सदा अपने को न जानकर (अपने को भूलकर), सरस-निद्रा-अंगना की संभोगकेली के परिणाम-स्वरूप प्राप्त स्थिति के समान भासित होनेवाले, ॥ ३४८० ॥

—अनेक बार दिविजों को पराजित करने के स्वप्न प्रेम से देखनेवाले कुंभकर्ण को देखा। देख 'ऐसे व्यक्ति को यह महानिद्रा दी है न वनरुह-आसन (ब्रह्मा) ने,' (ऐसा) सोच दुःखी होते हुए तब उसके सामने अन्न (भात) की राशियाँ, प्रेम से महिष-वराह मांस (का ढ़ेर) लगाकर, अंचित (पूज्य) गंध-पुष्पों से अर्चनाएँ कर, मनोहरता से धूप जलाकर, बार-बार बहुदीपों की आरती उतारकर, हाथ जोड़कर, स्तुतिपाठ कर, अशनि-घोष से भी अधिक भयंकर (ध्वनि से) निरंतर सिंहनाद कर, पुकारते हुए, शीघ्रता से शंख बजाते हुए, निसानों तथा भेरियों को अधिकता से मुखरित कर, उन (ध्वनियों) के साथ-साथ सिंहनाद कर, (इस प्रकार) लगातार महारव को करने पर, (वह रव) दक्षता से पाताल-तल, दिशाओं, नक्षत्रपथ (और) नाक (स्वर्ग) में भर गया। इतने पर न जानकर (होश में न आकर) कुंभकर्ण के क्रमशः अति गाढ़, ॥ ३४९० ॥

—निद्रामग्न होने पर, (उसे) देख समस्त राक्षस गदाएँ, मूसल, घनमुद्गर, शोभित पट्टिस, भिंडिवाल, क्रम से सबके घेरकर डालते हुए, दस हज़ार

बदिवेल कुंतमुल् बरुल ग्रुम्मियुनु । वदलक कोंडलु वैचियु बोक
युरमुपै नंदंद युर्रिकि पादमुल । गरमु मेट्टियु मेलुकान्पंग लेक
तडबड सिंहनादमुलु सेयुचुनु । गड्डु बेट्टुगाग शंखंबु लूदुचुनु
बट्टु नादमुलु ग्रंदुबड गुंभ वाद्य । पटह भेरी भूरि बहु तूर्यमुलुनु
दोंडरि म्रोयिंपुचु दोडन मर्रियु । नुड्डुगक पदिवेवुरुग्र राक्षसुलु
क्रंदुगा निस्साण घनतराराव । मंदंद चेलंगिप ना रभसमुन
नीलाद्रियुनु बोलि निश्चलुंडगुचु । नालोन देलियक यतडुन्न जूचि
करुल हयंबुल घनतरोष्ट्रमुल । नुरुलुलायमुलचे नुर्रक द्रोक्किंचि ३५००
कोंकक -मेनेल्ल गुदियल मोदि । यंकिंचि सकलवाद्यमुलु वायिंप
लंक गंपिंचि कोलाहलंबय्ये; । शंकिंचे नव्वनचर सेन येल्ल;
निट्टु चेयुनप्पुडु नेमियु देलिय । कट्टु निद्र वोवंग नखिल राक्षसुलु
कोंदरु दिक्कुलु घूर्णिल्ल भेरु । लंदंद म्रेयुचु नधिक दर्पमुन,
गोंदरु पर्वत गुहलेल्ल नद्रुव । दंदडि सिंहनादमुलु सेयुचुन,
गलयंग गोंदरु करमुल बेनचि । पेलुच्च शिरोजमुल् वेर्रिकि वैचुचुनु,
गोंदरु घनकर्ण-कुहरमुल् सोच्चि । क्रंदुगा गूबलु गर्रचि पट्टियुनु,

---

कुंत (भाले) तथा अंकुशों से मारकर, न छोड़कर पर्वत (तक) डालकर, (उतने से) न जगा सक, उर (वक्ष) पर जगह-जगह कूदकर, चरणों से अधिक दबाकर, (उसे) जगा न सक, लड़खड़ाए ऐसा सिंहनाद करते हुए, बहुत भीकरता से शंख फूंकते (बजाते) हुए, पटुनादों से हल्ला मचाते हुए, कुंभवाद्य पटह, भेरी, भूरि, बहुतूर्यो को विजृंभित हो बजाते हुए, और न रुककर दस हज़ार उग्र राक्षसों के अधिकता से निस्साण-घनतर-आरव (ध्वनि) को निरंतर करने पर, उस रभरु (हो-हल्ला) में भी नीलाद्रि के समान निश्चल होते हुए, अपने आपको न जानते हुए (होश में न आकर) पड़े हुए उसे देख, करियों, हयों, घनतर-उष्ट्रों से, उरु-लूलायों (भैंसों) से लगातार रौंदवाकर, ।। ३५०० ।।

—संकोच न कर, सारे शरीर को बड़े लट्ठों से मारकर, लगकर सकल वाद्यों को (एक साथ) बजाने पर, लंका कंपित हुई और कोलाहल हुआ। समस्त वनचर-सेना शंकित हुई। (राक्षसों के) ऐसा करने पर कुछ भी न जानकर (कुंभकर्ण के) उस प्रकार सोने पर, समस्त राक्षसों में कुछ लोग, दिशाएँ घूर्णित हो जाएँ ऐसा अधिक दर्प से निरंतर भेरियाँ बजाते हुए, कुछ समस्त पर्वतगुफाएं उखड़ जाएँ ऐसा घोर रूप से सिंहनाद करते हुए, कुछ हाथ मरोड़कर, अधिकतर शिरोज उखाड़ डालते हुए, कुछ घन कर्ण-कुहरों में प्रवेशकर, जबरदस्ती कान के परदे

नट्टु घोरमगु बाधलडरिंचि मर्रियु । बट्टुगदा मुद्गर प्रास खड्गमुल
मुसलंबुलनु बैट्टु मोंगमु नुरंबु । मसलकंदरु बलुमरु व्रेय व्रेय
दननिद्र यिंचुक दर्रिगि यंतटनु । मनुजाशनुंडोक्क मर्रियावुलिप
दर्रचुगा सम्मेट लुर:स्थलमुन वैच्चि । यिर्रिय म्रोकुल संधुलेल्ल बिगिंचि
तेरल ग्रागिन नूनै दैच्चिच कर्णमुल । गरमुग्रमुग वेयु घटमुलु वोसि
मुनुकोंनि यातनि मुकुगोळ्ळयंदु । ननलतप्तशलाक लंदंद पेट्टि
येक यत्नंबुन हेम दंडमुल । भीकर गति म्रोय भेरुल व्रेय
विडुवक करिहय वितति नुरंबु । गडिगि त्रोक्किप राक्षसुडु स्रुक्कियुनु
चक्क शेषोग्रहस्तंबुलु साचि । योंक्कित मेल्कनि हुम्मनि नीलिग
बडबामुखाभमै परगिन नोरु । कड्डूड विकृतंबुग नावुलिंचि
"गुर्रुवैनयट्टि सायुज्य पदंबु । नेर्रयंग रामुंडु नेडु नाकिच्चु;
नी रित्त निद्र नाके" लनि दानि । दूरंबुगा बैड द्रोचैनो यनग
गनुविच्चि यसुरुलु गंपिप मेलु ।कनि कुंभकर्णुडुग्रत गूरुचुंडे
प्रळयकालमु नाटि भानु बिबंबु । चैलुवंबुतो मोमु जेवुरिंपगनु
बट्टु विंध्य गुहल लोपल नुंडि वच्चु । चटुलानिलंबुल सरि यूर्पु लेसग

को नोच पकड़कर, इस प्रकार घोर-बाधाओं (पीड़ाओं) को देकर, और पट्टु-गदा-मुद्गर-प्रास-खड्ग-मूसलों से जोर से मुख पर (तथा) उर पर अविराम गति से कई बार मारने पर, अपनी निद्रा के थोड़ा उचटकर, मनुजाशन (राक्षस, कुंभकर्ण) के एक बार जंभाई लेने पर, ।। ३५१० ।।

—अक्सर उरस्थल पर हथौड़ों से मारकर, रस्सों की गाँठों को निकट से कसकर, उबलते हुए तेल के एक हज़ार घड़े लाकर उग्रता से उसके कानों में डालकर, सयत्न उसके नथुनों में लगातार अनलतप्त-शलाकाएँ रखकर, एक साथ हेमदंडों से भीकरगति से भेरियाँ बजाकर, लगातार करि-हय-वितति से सप्रयत्न उर को रौंदवाने लगने पर, राक्षस (कुंभकर्ण) ने थककर, शेष (सर्प) के समान उग्र-हस्तों को फैलाकर, थोड़ा जागकर, 'हुम्' कहकर हुंकार भरी, बड़ब-मुख-आभ (-समान) बन-विलसित मुख को अति विकृत बना, जंभाई लेकर, 'श्रेष्ठ सायुज्यपद को शोभा से राम आज मुझे प्रदान करेगा। यह रिक्त ('व्यर्थ') की नींद मुझे क्यों ?', ऐसा मान उसे दूर हटा दिया हो, इस प्रकार आँख खोलकर, असुरों को कंपित करते हुए जागकर कुंभकर्ण उग्रता के साथ बैठ गया ।। ३५२० ।।

प्रलयकाल के समय के भानुबिंब की मनोज्ञता के साथ मुख के लाल बनने पर, पट्टु-विंध्य की गुफाओं से आनेवाले चटुल-अनिल के सम निश्वासों के वर्द्धित होने पर, प्रलयकाल के अर्कबिंबों के समान सुन्दर

ब्रळय कालार्क बिंबंबुलु बोलें। गलयंग नेंऱ्ंनि कन्नलु मेंऱ्य;
दानवु लिट्टु लातडु मेलुकौंनग। दानमेश्वरुनि योद्दकु बोयिनिलिचि
"देव! नीतम्मु डेंतेनियु बाध। गाविंपगा मेलुकनिये; नितटनु
नट्टु कय्यमुनकु बोंम्मंदुमो, काक। यिट्टु तोडि तेंत्तुमो येतेंऱ्" गनुडु
रागिल्लि "तोड्कोंनि रंडु" नावुडुनु। वेगंबे यादैत्यविभुनाज्ञ वच्चि
तन कट्टेदुर नुन्न दानव प्रतति। गनुगोंनि याकुंभकर्णुंडु वलिकें:

राघवुल येंत्तिराक विनि कुंभकर्णुंडु कुपितुडगुट

"मीरेल नन्निट्टु मेलुकोंल्पितिरि। यारावणुनकु गार्यबेमि पुट्टें?
नदि येमि चेंप्पुडी" यनवुडु वारु। "त्रिदशारि चेतने तेंलियुमु नीवु;
३५३०
निनु दोडि तेंम्मनि निर्जरारातिं। वनिचें, नितिय कानि पनियेमों
तेंलिय"
दनवुडु जलकंमिपारगा नाडि। चनुदेंचि येंतयु जतुरत मेंऱ्सि
चारु वस्त्रमुलु भूषणमुलु दाल्चि। भूरिकोटीर दीप्तुल नोंप्पुचुंड
नति मुंदंबुन नप्पुडादैत्युलेल्ल। नतनि कनेक भक्ष्यमुलु भोज्यमुलु

अरुण नेत्रों के प्रकाशित होने पर, (वह उठ बैठा)। उसके इस प्रकार जाग पड़ने पर दानव तब दानवेश्वर के पास जाकर, खड़े होकर, 'हे देव! बहुत अधिक पीड़ित करने पर तुम्हारा अनुज जाग पड़ा है। अब उधर युद्ध के लिए जाने के लिए कह दें या इधर लावें। जो विधान है, बता दो।' कहने पर, प्रसन्न हो "साथ ले आओ" कहने पर, शीघ्र ही उस दैत्यविभु की आज्ञा से आकर अपने समक्ष स्थित दानव-प्रतति को देख उस कुंभकर्ण ने कहा—

राघवों की युद्ध-यात्रा को सुन कुंभकर्ण का कुपित होना

—"तुमने इस प्रकार मुझे क्यों जगाया है? उस रावण को क्या कार्य (ज़रूरत) आ पड़ा है? वह (कार्य) क्या है, कहो।" ऐसा कहने पर उन्होंने कहा—"तुम त्रिदशारि (देवताओं के शत्रु, रावण) से ही जान लो, ॥ ३५३० ॥

—तुम्हें लिवा लाने के लिए निर्जराराति ने (हमें) भेजा है। इससे अधिक हम नहीं जानते।" ऐसा कहने पर, जी भरकर स्नान कर, आकर अधिक चतुरता से दीप्त होकर, चारु वस्त्र (तथा) भूषण धारण कर, भूरि-कोटीर-दीप्तियों के शोभा देने पर, तब उन समस्त दैत्यों के

मधुवुनु सूकर महिष मांसमुलु । नधिकमौ मेंदडुनु नाज्य भांडमुलु
मुदमुतो गोनिनिच्चि मुंदर निडिन । मोदल मेदोमांसमुल प्रीतिनमलि
रुधिरंबु मद्यंबु रूढ़िगा ग्रोलि । यधिक संतुष्टुडै यतडुन्न जूचि
म्रोक्कि निशाचरुल् मुंदर निलुव । नक्कुंभकर्णु डिट्लनियें वारलकुः
"मीरिन सुतुलकु मेटि बंधुलकु । वारक राक्षसेश्वरुनकु शुभमे ?
येंडरु पुट्टदुगदा येव्वरिवलन । नडरि यीलंककु? नट्लयिननिपुड
३५४०

यडचेंद नाभयं; बमरेंद्रुनैन । वडिगिट्टि नाकंबु वलन बापेंदनु;
नाचेंद गालाग्नि नैननु बोंदिवि; । तीचेंद बगवारि तीव्र दर्पमुलु"
ननिन यूपाक्षुंडु हस्तमुल् मोगिचि । कनुगोनि याकुंभकर्णुतो ननियेः
"विनु निशाचरवीर! विबुधुल वलन । दनुजुल वलन गंधर्वुल वलन
नेभयं बेन्नडु नेरुगमु; माकु । नीभीति बुट्टिचिरिप्पुडु नरुलु;
दिविजारि जानकि तेंच्चुट कलिगि । रविकुलोत्तमुडैन रामचंद्रुंडु
कडिदि विक्रमुलैन कपुलतो गूडि । विडिसिना डीलंक वेडिंचि यिप्पु;
डगचरुंडोक्कडे यक्षकुमारु । मोगि सेनतो गूड मुन्नु निर्जिचि

अति मोद से उसे अनेक भक्ष्य, भोज्य, मधु, सूकर-महिष-मांस, बहुत-सा भेजा (तथा) आज्य (घी) की हाँडियाँ (आदि) मोद से ले आकर सामने रखीं। (रखने पर) पहले मेदा, मांस को प्रीति से चबाकर, रुधिर और मद्य को खूब पीकर, अधिक संतुष्ट हुआ। वैसे (संतुष्ट बने) उसको स्थित होते देख, निशाचर प्रणाम कर समक्ष खड़े हो गए। तब कुंभकर्ण ने उनसे यों कहा—"विवर्धित सुतों, श्रेष्ठ बंधुजनों (तथा) राक्षसेश्वर को निरंतर शुभ है न ? उत्कर्ष को प्राप्त इस लंका को किसी से भय तो उत्पन्न नहीं हुआ न ? ऐसा है तो अभी, ॥ ३५४० ॥

—उस भय को दमन कर दूँगा। अमरेन्द्र भी हो तो झट निकट पहुँच, उसे स्वर्ग भगा दूँगा। कालाग्नि को भी गोद में ले बुझा दूँगा। शत्रुओं के तीव्रदर्प का भंग कर दूँगा।" (ऐसा) कहने पर यूपाक्ष ने हाथ जोड़कर, उस कुंभकर्ण को देख कहा—"सुनो निशाचरवीर! विबुधों (देवताओं) द्वारा, दनुजों द्वारा, गंधर्वों द्वारा, हम कभी किसी प्रकार के भय को नहीं जानते थे। अब हममें नरों ने भीति उत्पन्न कर दी है। दिविज-अरि (देवताओं का शत्रु, रावण) के जानकी को लाने पर, क्रुद्ध हो रविकुलोत्तम रामचन्द्र ने साहसी (तथा) विक्रमी कपियों के साथ अब इस लंका को घेरकर पड़ाव डाला है। अकेला एक अगचर, यक्षकुमार को क्रम से सेना के साथ निर्जित कर लंका को भस्म कर,

लंक भस्ममु जेसि लावुमै जनियें; । निक नेंव्वडु गेल्चु नीमहाकपुल?
ननिलोन देवासुरादुल कंटें । घन विक्रमख्याति गल रामुतोड ३५५०
नुऽक कय्यमु सेसि योडि रावणुडु । वेंऽपुन वऽतेंचि वेंस लंक जोंच्चें"
ननि विन्नविंचिन ना निशाचरुडु । कनुगव विस्फुलिंगंबुलु सेंदर
यूपाक्षु नीक्षिंचि युग्र कोपंबु । दीपिप नौडुल दीडुचु वलिकें;
"समरंबुलो नेडु सकल वानरुल । नमित विक्रमुलैन यादाशरथुल
मडियिंचि कपि वीर मांस रक्तमुल ।दोंडरि राक्षस कोटि दृप्ति वोंदिंचि
राम लक्ष्मणुल यारक्तमुल् ग्रोल । केमनि वत्तुने निंद्रारि कडकु ?
नटु चेसि वच्चेंद" नन महोदरुडु । नट म्रोंक्कि मुकिळित हस्तुडै पलिकें;
"घनुड दशग्रीवु गनि चेयवलयु । पनियेंल्ल विनि पोयि पगवारि गेलुवु
मनवु 'डौ गा' कनि, याहार कांक्ष । दनयोंद्दि राक्षसतति जूड वार
लिरवोंदगा नप्पु डिरुवदि योंक्क ।पुरुषुल मांसंबु ब्रोवुगा बोसि ३५६०
येंनुबदि महिषंबु लेनू ऽजंबु । लुनु वेयु ग्रोडंबुलुनु नालुगु वेलु

सामर्थ्य के साथ चला गया। अब इन महाकपियों को कौन जीत सकता है ? युद्ध में देवासुरादियों की अपेक्षा घन-विक्रम-विख्याति से युक्त राम के साथ, ॥ ३५५० ॥

—यों ही युद्धकर, हारकर भीति से रावण आकर लंका में घुस गया है।" ऐसा निवेदन करने पर वह निशाचर, नेत्रद्वय से विस्फुलिंगों (चिनगारियों) के निकलने पर, यूपाक्ष को देखकर, उग्रकोप के दीप्त होने पर, होंठ काटते हुए बोला—"आज समर में सकल वानरों (तथा) अमित विक्रम वाले उन दाशरथियों को मारकर, कपिवीरों के मांस-रक्तों से उत्साह से राक्षस-कोटि को संतुष्ट कर, राम-लक्ष्मणों के रक्त का पान किए बिना मैं इन्द्रारि (रावण) के पास कैसे आऊँ ? वैसा ही करके आऊंगा।" (ऐसा) कहने पर महोदर ने तब प्रणाम कर, मुकुलित हस्त होते हुए कहा—"हे महान् (वीर) ! समस्त कार्य दशग्रीव को देखने के बाद ही करना चाहिए। (उनका आदेश) सुनकर ही जाकर, शत्रुओं को जीतो।" ऐसा कहने पर 'ऐसा ही हो' कहकर, आहार-कांक्षा से अपने पास के राक्षसतति (-समूह) को देखने पर, उनके शोभा से तब इक्कीस पुरुषों के मांस का ढेर लगाकर, ॥ ३५६० ॥

—अस्सी महिष, दो सौ अज (बकरियाँ), हजार क्रोड (वराह), चार हजार शश (हिरन), छः सौ मृगों को ढंग से लाकर, उन्हें अलग-अलग

घनशशंबुलुनु मृगंबु लार्नूरु। ननुवोंदगा देंच्चि यावि वेरु वेरु
चंपि सुपक्व मांसंबुलु सेसि। यिपार नातनि येंदुट बोयुटयु
दनिवोव गुडिच्चि युद्धति रेंडुवेलु। घन घटंबुल निंड गल मद्यमानि
पट पट दिक्कुलु बगुल द्रेन्चुचुनु। जटुलंबुलेन मीसमुलु दीटुचुनु
जनुदेंचु नुरुवडि जगति गंपिप। गनुदोयि घूर्णिल्लगा गुह वेंडले
नल राहु वदन गह्वरमुन नुंडि। विलय कालाकुंडु वेंडलिन माड्कि,
बलि गिट्टि धात्रियु ब्रह्मांडतलमु। वेलय दट्टिचु त्रिविक्रमुपगिदि;
नाचंदमुन विकृताकारुडगुचु। नेच्चिन पोंडवुतो नेतेंचुनपुडु
कोट यव्वलि कपि कोटु लन्नियुनु। मेटि राक्षसु जूचि मिंगिलिन भीति
३५७०
गोंदरु वेरुगंद गोंदलु डाग,। गोंदरट्टिटुवड, गोंदरु वेरुव,
गोंदरु मूर्छिल्ल, गोंदरु जलधि। यंदुरुकग, गोंदरह्रिरा! यनग
गोंदरु रामुदिक्कुन कोंदुगंग,। नंदरु गनुगोनि यासमयमुन
"सौमित्रि! विल्लुनु शरमु" देम्मनुचु। रामुडु वलिकि यारावणानुजुनि
"नदे याकसंबुनु नवनीतलंबु। गदिसिन देहंबु गलिगिन वाडु
प्रळयांबुधर तटित्पटलंबु वोले। बोलयु भूषणरुचि बोलुपेन वाडु

मारकर, सुपक्व मांस बनाकर, प्रेम से उसके सामने ढेर लगा देने पर, छककर खाकर, उद्धति से दो हज़ार घन (बड़ी) घटाओं (घड़ों) भर मद्य पीकर, फट-फट दिशाएँ फट जाएँ ऐसा डकार लेकर, चटुल बनी मूँछों पर ताव देते हुए, आगमन के संभ्रम के कारण जगति के कंपित होने हेतु नेत्रद्वय के घूर्णित होने पर, गुफा से (ऐसे) निकल पड़ा मानों राहुवदन रूपी गह्वर से विलय-काल का अर्क निकला हो, (अथवा) बलि के निकट पहुँच धात्री और ब्रह्मांडतल में सुन्दरता से परिव्याप्त होने वाला त्रिविक्रम हो, उस प्रकार विकृताकार होता हुआ, अतिशय औन्नत्य से आते समय, दुर्ग के बाहर की समस्त कपिकोटियाँ, श्रेष्ठ राक्षस को देख, अधिक भीति से, ३५७० ॥

—कुछ के चकित होने पर, कुछ के छिप जाने पर, कुछ के इधर-उधर होने पर, कुछ के भीत होने पर, कुछ के मूर्च्छित होने पर, कुछ के जलधि में कूद पड़ने पर, कुछ के 'वाह रे!' कहने पर, कुछ के राम की आड़ में जाने पर, (उन) सब (वानरों) को देखकर उस समय राम ने कहा—"सौमित्री! धनुष और शर लाओ।" कहकर उस रावणानुज को देख (विभीषण से पूछा)—"वही आकाश तथा अवनीतल को मिलाती हुई देह वाला, प्रलयांबुधर (प्रलय मेघ) की तटित् पटल (बिजलियों के

मूडु लोकमुलु निम्मुल म्रिगु नट्टि । वाडिमि देरचिन वदनंबु वाडु;
कालुंडो ? यट्टुगाक कालानलुंडो? । काल रुद्रुडो? लयकाल मारुतुडो?
कालार्कुडो? महा कालाहिपतियो?। कालमृत्युवो ? लयकालाब्धि
विभुडो ?
काल कालुडो ? लयकाल भैरवुडो?। कालरुद्रुनकुनु गालरुद्रुंडो! ३५८०
भीमंपुरूपु विभीषण ! यिट्टि । दे मेन्नडुनु जूचि येरुगमु मुन्नु;
दानवुडो ? वीडु दैत्युडो ? काक । वीनि कुलंबेमि ? वीडेव्व ? डिदु
वाडे? यापुर वीथि वडि नेगुचुन्न । वाडेव्व ? डेरिंगिपु; वानि पेरेमि?
वीनि गनुंगोनि वेरचिरि कपुलु; । वीनि चंदमु गडु वेरगय्ये'' ननुडु

कुंभकर्णुनि शाप वृत्तांतमु

ना विभीषणुडु रामाधिपु जूचि । "देव यी दैत्युनि तेरगेल्ल विनुमु;
वरनंदनुडु विश्रवसुनकु नितडु; । करमु ग्रूरुडु; कुंभकर्णुडन्वाडु;
रावणु तम्मुडु; रणवीथि गिट्टि । देवसंघंबुल दिक्पालकुलनु
बलुमरु दोलिन बाहु बलाढ्युडु; । डलगु शूलायुदोद्धत सत्व धनुडु;

समूह) के समान विलसित भूषण-रुचि (कांति) से मनोज्ञ, तीनों लोकों को प्रीति से खा जाने वाली प्रबलता से खुला मुँह वाला, (यह राक्षस पता नहीं) काल (मृत्यु) है ? या नहीं तो कालानल है ? या कालरुद्र है ? या लयकाल मारुत है ? या कालार्क है ? या महा-कालाहिपति या कालमृत्यु है ? या लयकाल-अब्धिविभु (वरुण) है ? या कालकाल है ? या लयकाल भैरव है ? या कालरुद्र के लिए कालरुद्र है ? ॥ ३५८० ॥

—हे भीमरूप वाले विभीषण ! पूर्व में ऐसा हमने कभी नहीं देखा है। (यह) दानव है ? अथवा यह दैत्य है ? इसका कुल क्या है ? यह कौन है ? यहीं का है ? उस पुरवीथि से शीघ्र जानेवाला वह कौन है ? बताओ, उसका नाम क्या है ? इसे देख कपि भयभीत हुए हैं। इसके विधान को देख अति आश्चर्य हुआ है।" (ऐसा) कहने पर,

कुंभकर्ण का शाप-वृत्तान्त

—वह विभीषण राम-अधिप को देख (बोला)—'हे देव ! इस दैत्य के समस्त विधान को सुनो। यह विश्रवसु का वरनन्दन है। अधिक क्रूर है। कुंभकर्ण नाम वाला है। रावण का भाई है। रण-वीथि में सामना कर देवसंघों (और) दिक्पालकों को कई बार भगाने वाला बाहुबलाढ्य है। अलघु शूलायुध से युक्त उद्धत सत्त्वधन वाला है।

ब्रह्मांड मयिननु बगुलिप नोपु; । ब्रह्मादुलकु वट्रपडडु सत्त्वमुन;
वीडु पुट्टिन यप्डे विकृतंपु नोर । बोडिमि चेंड जीवमुल म्रिंग
जोच्चें ३५९०

मुनुमिडि यट्टु जीवमुल म्रिंग म्रिंग । विनि वज्रि कोपिंचि विपुल वज्रंबु
वीनिपै वेंचिन वीडु गैकोनक । या नाक गजदंत मगलिंचि पेरिकि
सुरपति नेसिन सुरसुर स्रुक्कि । सुरपति यप्पुडु सुरुलतो वच्चि
यंभोज भवु गांचि हस्तमुल् मोगिचि। "कुंभकर्णुडनु घोर राक्षसुडु
पोलुपार ब्रजल जंपुचु नुन्नवाडु; । सोलवक सुरल नेचुचुन्नवाडु;
कडगि परस्त्रील गवयुचुन्नाडु; । तोंडरि लोकमुलेल्ल द्रुंचुचुन्नाडु;
ईनीचु डीक्रिय निट मीद नुन्न । वीनि निग्रहमुन विश्वंबु वोलियु"
ननवुडु विनि यप्पु डंबुजासनुडु । तन मनंबुन नल्क दद्दयु मिगुल
राक्षसावळि नेल्ल रप्पिंचि यंदु । वीक्षिंचे दप्पक वीनि रूपंबु;
वीक्षिचि येंतयु वेरगंदि "वीडु । भक्षिचु बोवेस ब्रह्मांडमैन; ३६००
वीनि चंदमु जूड वेरपु नायंदु । नूनेडु; वीडित युग्रुडै युन्न
वीडाजिलोपल विदळिपकुन्ने । मूडु गन्नुल वेल्पु मुट्टिन नैन"

ब्रह्मांड को भी फोड़ सकता है। ब्रह्मादियों से भी (अपने) सत्त्व के कारण पराजित नही होता। यह पैदा होते ही विकृतमुख से जीवों को निगलने लगा जिससे (सृष्टि की) सुघड़ाई नष्ट हो जाए ॥ ३५९० ॥

क्रम से ऐसा जीवों को निगलने लगने पर, सुनकर वज्रि (इन्द्र) ने क्रुद्ध हो, विपुल वज्र को इस पर फेंक दिया। डालने पर इसने उसकी परवाह न करके उस नाकगज के दाँत को उखाड़कर, सुरपति पर डाल दिया तो वह तत्काल अधिक कमज़ोर हो गया। तब सुरपति सुरों के साथ आकर अंभोजभव को देख, हाथ जोड़ (बोला)—'कुंभकर्ण नामक घोर राक्षस, ढंग से प्रजा को मार डाल रहा है, थके बिना सुरों को पीड़ित कर रहा है। लगकर परस्त्रियों का बलात्कार कर रहा है। समस्त लोकों को तोड़ रहा है। यह नीच इस क्रिया (विधान) को करता रहा तो इसके निग्रह से विश्व नष्ट हो जाएगा।' ऐसा कहने पर, सुनकर तब अंबुजासन ने अपने में अधिक क्रोध के उत्पन्न होने पर, समस्त राक्षसवली को बुलाकर, उनमें इसके रूप को ध्यान से देखा। देखकर अधिक चकित होकर, (यह सोच कि) 'यह ब्रह्मांड को भी झट खा जाएगा, ॥ ३६०० ॥

—इसके विधान को देखने पर मेरे मन में ही भीति उत्पन्न हो रही है। (यह अभी) इतना उग्र होकर है तो (भविष्य में) यह तीन आँखों

ननि वीनितो नप्पुडनियें नाब्रह्म । 'चन' दनि मिगुल नाज्ञापिप दलचि
"यापुलस्त्युनि युत्तमान्वयंबुननु । नी पुट्टुटेल्लनु निखिल भूतमुल
बोलियिंचु कोऽकुना! भुवनंबुलेल्ल । नलकंग निट्टि शौर्यमु जूपे" दनुचु
जावुतो सरियैन शापंबु निच्चे । "नीवुडुगनि यट्टिनिदुर बो"म्मनुचु;
जलिपिडुगुनु बोले शापंबु दाकि । निलुवले कैंतयु निद्रितुंडय्ये;
रावणुंडप्पु डाब्रह्मकु म्रोक्कि । "देव! चूडुमु कृपा दृष्टितो वीनि;
दाख पैट्टिन चेट्टु दारे त्रुंपुदुरे? । येरूपमुन नित डेंत कीडैन
दगु बुद्धि सेप्पुट तगवगु गानि । तगदिट्टु वले शापतप्तुनि जेय; ३६१०
वीनि निद्रकु दुदि विवरिंपु" मनुडु । दानवु तोड नुत्तर मिच्चे नजुडु;
"अक्कजंबुग निद्र याऽेसि नेललु; । नोक्क नाडेरुकचेनुंडु बोम्मेपुडु;
नेललारु निडक नेरि मेलुकोल्प । गडुनद्दिदनंबुन गडतेरु" ननियें;
नंत नुंडियुनु वीडव्विधंबुननु । जित सेयक निद्र जेंदि मेल्कांचु;
देव! यिप्पुडु नीदु दिव्य बाणोग्र । पावक शिखल बालपडि सैप लेक
यनि नोडि चनि यट नारावणुंडु । तनु मेलुकोल्पंग दैत्युल बनुप

वाले देवता (शिव) भी आ जाए तो उसे भी युद्ध में हरा देगा।' उससे तब ब्रह्मा ने 'ऐसा मत करो' कह विशेष आज्ञा (आदेश) देने का सोचकर कहा—उस पुलस्त्य के उत्तम अन्वय (वंश) में तुम्हारा पैदा होना क्या समस्त भूतों को मार डालने के लिए है ? समस्त भुवन कंपित हो जाए, ऐसा शौर्य दिखाते हो ! 'तुम कभी कम न होने वाली निद्रा से सो जाओ' कहकर मृत्यु के समान शाप दिया। भयंकर अशनि के समान शाप के लगते ही, टिक न सका, वह अधिक निद्रित हो गया। तव रावण ने उस ब्रह्मा को प्रणाम कर—"हे देव ! इसे कृपादृष्टि से देखो न। स्वयं पौधा लगाकर उसे कहीं स्वयं ही काट देते हैं ? किसी रूप से यह कितना ही हानिप्रद क्यों न हो, उसे उचित बुद्धि (उपदेश) देना न्यायसंगत होगा। ऐसा शापतप्त करना उचित नहीं है, ॥ ३६१० ॥

—इसकी निद्रा का अन्त बताओ।' (ऐसा) कहने पर अज ने दानव को उत्तर दिया 'जाओ, यह आश्चर्यप्रद रूप से छः छः मास निद्रा में रहेगा और एक दिन जागृत रहेगा। छः महीने पूरे होने से पहले अगर जगाया जाए, तो उस दिन मरेगा।' तब से लेकर यह उस विधि से निश्चित हो सोता है और जागता है। हे देव ! अब तुम्हारी दिव्य बाम-उग्र-पावक-शिखाओं का भागी बन, सहन न कर सक, युद्ध में हारकर, जाकर, वहाँ रावण के जागृत करने के लिए दैत्यों को भेजने पर, स्वयं भी

दानुनु बेंचि युद्ध प्रसन्नद्धु । डै नेडु नगरिकि नरुगुचुन्नाडु ।
वेंस वीडु रावणु वीड्कोनि वच्चु । नसमुन मनमीद; नंतकु मुन्ने
वीनि याकृति जूचि वेंरवक युंड । वानर सेनलो वडि जाट बनुपु;
'दनुजुंडु गाडिटु दारु यंत्रमुन ।नोनरंग जेसिन युग्ररू' पनुचु; ३६२०
निटु चाटगा बंचि येल्ल वानरुल । बटु भीतियुनु बापि भंडनंबुनकु
सन्नद्धुलुग जेय सकलाधिनाथ ! । मुन्ने यानति यिम्मु मोहरिपंग"
ननवुडु नीलुन कानति यिच्चि । जननाथु डब्भंगि जाटंग बनिचे;
ना कुंभकर्णुंडु नट बुरांगनलु । चेकोनि पूवुल सेसलु चल्ल
जनि निंडु वेंन्नेल सदनमो यनग । दनरारुचुन्न यास्थानंबु सोच्चे
बरगिन धवळाभ्र पटलंबु सोच्चु । सुरुचिरकरुडैन सूर्युनि भंगि;
जोच्चि यन्नकु म्रोक्कि सोंपार नतडु । ग्रुच्चि कौगिट जेंचि कूर्मि दीपिंप
गनकासनंबिडगा बंचुटयुनु । दनुजाधिनाथुनि तम्मु डंदुंडि
यन्न नालोकिंचि "यसुराधिनाथ! । नन्नु दें लिपन कारणंबेमि नेडु ?
एव्वडु नीदेंस नेंग्गोनिरिंचे ? । नेव्वनि जंपुदु ? नेतेंरं" गनुडु ३६३०
नाकुंभकर्णुन कनियें रावणुडु: । "नीकु बेंल्लगुचुन्न निद्र पेंपुननु

विजृंभित हो युद्ध के लिए प्रसन्नद्ध हो आज (कुंभकर्ण) नगरी को जा रहा है। झट यह रावण से विदा लेकर, दर्प से हम पर चढ़ आएगा। इससे पहले ही झट वानर-सेना में यह घोषणा करने भेज दो कि इसकी आकृति देखकर (कोई) न डरे। यह कहला दो कि यह दनुज नहीं है, उग्ररूप से तैयार किया हुआ दारु-यंत्र है ॥ ३६२० ॥

इस प्रकार घोषणा करने भेजकर, समस्त वानरों की पटुभीति को दूरकर, भंडन (युद्ध) के लिए सन्नद्ध करने के लिए हे सकलाधिनाथ ! पहले ही मोर्चा लेने के लिए आज्ञा दे दो।" ऐसा कहने पर जननाथ (राम) ने नील को आनति (आदेश) देकर, उस प्रकार घोषणा करने भेजा। वहाँ उस कुंभकर्ण ने, पुरांगनाओं के चाहकर पुष्पों के अक्षत बिखेरनेपर, जाकर, पूर्ण-ज्योत्स्ना का सदन रूप हो शोभित दरबार में, सुशोभित धवल-अभ्रपटल में प्रवेश करनेवाले सुरुचिकर (किरण) वाले सूर्य के समान, प्रवेश किया। प्रवेश कर अग्रज को प्रणाम करने पर, उसने गाढ़ आलिंगन कर, प्रेम के दीप्त होने पर, कनकासन डालने की आज्ञा दी। तब दनुजाधिनाथ का अनुज उस पर बैठकर, अग्रज को देख (बोला)—"हे असुराधिनाथ ! मुझे स्मरण करने का आज कारण क्या है ? किसने तुम्हारे प्रति अहित किया है ? किसे मार डालूँ ? क्या विधान है ?" (ऐसा) कहने पर, ॥ ३६३० ॥

नेकार्य गतियुनु नेरुगवु गान । जेकोनि यंतयु जेप्पेद विनुमु;
रामुडु दशराथ-राज-नंदनुडु । सोमिंचि नामीद सुग्रीवु गूडि
वननिधि बंधिंचि वच्चि यीकोट ।वेनुकोनि बलुविड़ि विडिसि युन्नाडु
अनिकि जोच्चुटयु ब्रहस्तादि वीर । दनुजुल नंदरू धरमीद गूल्चे;
वानर-वीरु लेव्वरु जावरंदु; । गांन नारामलक्ष्मणुल भंजिंचि
या वालिसुत रविजादुल जंपि । लावुनु जेंडकुंड लंक रक्षिपु,"३६३७

रावणुनकु गुंभकर्णुडु नीति सेप्पुट

मनि पेद्द कृप वुट्टनाडु वाक्यमुलु । विनि कुंभकर्णुडाविबुधारि कनियें;
"मुनु नाटि येकांतमुन मंत्रलेल्ल । गनुगोन्न याकीडे काक चिंतिप
वारक यिदि नेडु वच्चिन कीडे? । येरूपमुन निदि येटिकि दप्पु ?
३६४०
मदमु पेंपुन जेसि मरि येव्वडैन । दुदि मोदलेरुगक तोडरु गार्यंबु
वाडु गदा येल वलन जेटोंदु; । वाडनि चेप्प नेव्वडु नीवे काक ।

—उस कुंभकर्ण से रावण ने कहा—"तुम अधिक निद्रावश हो, किसी भी कार्य की गति को नहीं जानते हो अतः आरम्भ से सब कुछ कहता हूँ, सुनो। दशरथराजनंदन राम पराक्रमी हो, तब सुग्रीव से मिलकर, वननिधि (समुद्र) को बाँधकर आकर, इस दुर्ग को खोजकर, सबल हो, घेरा डाले हुए है। युद्ध आरंभ कर प्रहस्त आदि समस्त वीर दनुजों को धरा पर गिरा दिया। उनमें कोई भी वानर-वीर नहीं मरा। अतः उन रामलक्ष्मणों का संहार कर, उन वालिसुत, रविज आदि को मारकर, (लंका की) सामर्थ्य (नाम) न बिगड़े, ऐसा लंका की रक्षा करो" ॥ ३६३७ ॥

रावण को कुंभकर्ण का हितोपदेश

—ऐसा अधिक करुणोत्पादक वाक्य सुनकर कुंभकर्ण ने उस विबुधारि (रावण) से कहा—"यह उसी दिन एकान्त में समस्त मंत्रियों द्वारा जानबूझ कर किया गया अहित ही है। नहीं तो (समझदारी से) चिन्तन करने पर यह अनिवार्य रूप से आज आया हुआ अहित है क्या ? किसी भी रूप में यह अब कैसे निवारित हो सकता है ? (नहीं) ॥ ३६४० ॥

—मद के आधिक्य से कोई भी हो, आदि-अन्त न जानकर (आगे-पीछे न सोचकर) किए गए कार्य के कारण, जरा से दोष से, हानि प्राप्त करता है। ऐसा व्यक्ति तुम्हारे सिवा और कौन है ? मतिमान मंत्रियों की

मति गल मंत्रुल मंत्रानुमतुल । ग्रुत कार्यमुलु पचरिंचु नेविभुडु
औंगि ब्रभुमंत्र समुत्साह शक्तु । लगणित फलदंबुलै वानिकमरु;
बति देशकाल विभागंबु लेरिंगि । चतुरजन द्रव्य संपद गलिगि
कार्यबुनकु मरि कार्यमूहिंचि । कार्य विघ्न प्रतीकारंबु सेसि
फलसिद्धि गैकोनि बहुराज्य भोग । मुल नित्युडै युर्वि मोदिप वलयु;
बगवानि बलशक्ति बाटिंचि संधि । तगुबुद्धियै जेय दलकोनवलयु;
रूपिप समबलारूढुनि तोड । नेपुमै जनि निग्रहिपंगवलयु;
नटुकाक बलशून्युडगुट चिंतिंचि । पटुसत्त्वुडै शत्रुपै नेत्तवलयु; ३६५०
विडिसिन बलिमि विवेकिंचि मीद । विडिसि मार्तुर गेल्व वेरवूनवलयु;
वैरुलसाध्युलै वालिन वारि । लो रैंडु वुट्ट नालोचिंप वलयु;
नतिसत्त्वुलै वैरुलजितुलैरेनि । हितबुद्धिमै नाश्रयिंपंगवलयु;
नीयारुगुणमुल नेरिंगि वर्तिंचु । नायवनीश्वरुडभिवृद्धि बोंदु;
बूनि ये पुरुषुडेप्पुडु साम भेद । दान दंडमु लुचितिमु दप्प जेयु
नेरय वानिकि गल नीति शास्त्रमुलु । कोरमालियुंडु निक्कुव मिव्विधंबु;

मंत्रणा से कृत (योग्य)-कार्यों को करने वाले विभु (राजा) को, क्रम से प्रभुता (और) मंत्र (मंत्रणा) की समुत्साहित शक्तियों के कारण (कार्य) अगणित-फलत होकर प्राप्त होते हैं। पति (राजा) को देशकाल-विभाग को जानकर, चतुरजन (तथा) द्रव्यसंपत्ति से युक्त हो, कार्य के लिए प्रतिकार्य के बारे में सोचकर, कार्य-विघ्न का प्रतीकार कर, फलसिद्धि (कार्य की सफलता) को प्राप्तकर, बहुराज्यभोगों से नित्य (शाश्वत) होते हुए, उर्वी (पृथ्वी) पर मुदित होना चाहिए। शत्रु की बल-शक्तियों को मानकर, उचित बुद्धि से संधि के लिए प्रयत्न करना चाहिए। समबल से आरूढ़ (संपन्न) व्यक्ति से उत्कर्ष के साथ निग्रह (युद्ध) करना चाहिए। ऐसा न होकर (शत्रु का) बल से शून्य होने की चिन्ता कर, पटुसत्त्व युक्त हो शत्रु पर आक्रमण करना चाहिए ।। ३६५० ।।

—(शत्रु के) पडाव डालने पर (उसके) बल का विवेक (सोच) कर, उसके बाद शत्रु को जीतने का उपाय सोचना चाहिए। वैरी असाध्य (अजेय) होकर विराजें तो उनमें फूट डालने का उपाय सोचना चाहिए। अतिसत्त्वयुक्त हो, वैरी अजेय (सिद्ध) हों तो हितबुद्धि से उनके आश्रय (शरण) में जाना चाहिए। इन छः गुणों को जानकर व्यवहार करने वाला अवनीश्वर (राजा) अभिवृद्धि (उन्नति) को प्राप्त करेगा। यह विधि (विधान) तथ्य है कि जो पुरुष लगकर (जानबूझकर), सदा साम, भेद, दान, दंड (इन चारों) उपायों को उचित विधि से काम में नहीं

परधन परदार परचित्तु डॆव्व । डरय नातडु कुलंबंतयु जॆरुचु"
ननि कुंभकर्णु डिट्लाडु वाक्यमुलु । विनि रावणुडु क्रोध विवशुडै पलिकॆ;
"ननु नन्न यनुचु मनंबुन गोनक । किनिसि यिब्भंगि शिक्षिचॆदु वच्चि;
यी वृथाजल्पंबु लिक नेमिटिकि ?। ने विधंबुन नैन नी कार्य मेनु
३६६०
गडवंग जेसिति; गादन कीवु । कडिमि मै निदि चक्कगा जेयु मिक"
ननवुडु विनि यप्पुडा कुंभकर्णु । "डनि सेय बोयॆद; नैन निंकोकटि
विनु दानवेश्वर! वेडुक नॊक्क । दिनमुन ने निद्र दॆलिसिन नाडु
चेकॊनि कडु बॆक्कु जीवुल म्रिंगि । येकांतमुन नॆम्मि ने नुन्नचोट
कनघुडु नारदुंडरुदेर नॆदुरु । चनि विन्नविंचिति संयमि तोड;
"नॆक्कड नुंडि ? नीविटु संभ्रममुन । नॆक्कड वोयॆद ? वॆड्रिंगिपु नाकु"
ननवुडु "गनकाद्रियंदुंडि राक; । विनु वार्तलन्नियु विनुपिंतु नीकु;
बंकजनाभुंडु फाललोचनुडु । बंकजासनुडुनु बाकशासनुडु
ननलुंडु यमुडुनु नंबुधीश्वरुडु । ननिलुंडु यक्षेशुडौ कुवेरुंडु
नोषधीपतियुनु नुष्णकरुंडु । शेष ग्रहंबुलु सिद्धुलु मुनुलु ३६७०

लाता, उसके लिए नीतिशास्त्र व्यर्थ ही होंगे। परधन (तथा) पर-दारा में चित्त लगाने वाला व्यक्ति समस्त कुल को नष्ट करता है।" ऐसे कुंभकर्ण के वाक्यों को सुनकर रावण क्रोध-विवश हो बोला—"मुझे अग्रज न मानकर (सम्मान न देकर), (यहाँ) आकर, नाराज़ हो (मुझे) शिक्षा (उपदेश) देते हो ? अब यह वृथा-जल्प (बकवास) क्यों ? किसी भी रूप में हो, मैंने यह कार्य किया है ॥ ३६६० ॥

—(मेरी बात को) नकार न कर, साहस से इस कार्य को ठीक कर दो।" ऐसा कहने पर सुनकर तब कुंभकर्ण (बोला)—'युद्ध करने के लिए जाऊँगा। फिर एक बात और सुन लो। हे दानवेश्वर! उत्साह से एक दिन जागृत होकर, चाहकर अत्यधिक प्राणियों को निगलकर, एकांत में प्रेम से बैठा था (उस समय) वहाँ पर अनघ नारद आए। उनकी अगवानी कर (मैंने) संयमी (नारद मुनि) से निवेदन किया—"कहाँ से (आए हैं) ? इस प्रकार संभ्रम (शीघ्रता) से कहाँ जा रहे हैं ? मुझे बताइए।" ऐसा कहने पर (नारद बोले)—'कनकाद्रि से (मेरा) आगमन है। सुनो, सभी समाचार तुम्हें सुनाऊँगा। पंकज-नाभ (विष्णु), फाल-लोचन (शिव), पंकजासन (ब्रह्मा), पाकशासन (इन्द्र), अनल, यम, अंबुधीश्वर, (वरुण) अनिल, यक्षेश, कुबेर, ओषधिपति (चन्द्र), उष्णकर (सूर्य), शेष ग्रह, सिद्ध, मुनि, ॥ ३६७० ॥

गिन्नर गंधर्व गीर्वाण गरुड । पन्नग गुह्यक प्रमुख संघमुलु
सभ गूडि मंत्र विचारंबु सेय । शुभमति नूहिंचि सुरगुरुंडनियें:
"ग्रोधिंचि मनल गैकोनक लोकमुलु। बाधिंचुचुन्नाडु पंक्तिकंधरुडु:
शुंभद्बलंबुन सुडिवड जेसि । जंभारि भंजिंचें समरंबु लोन;
वडि नंतकुनि दोलें; वरुणु गारिंचें; । नोंडिचें गुबेरुनि नुरुबलोज्वलुनि;
गट्टलुकतो नति गर्वबु मेंरसि । पट्टि धर्मात्मुल बलुवुर जंपें;
दिनकर चंद्रुल तेजंबु लणचि । तन याज्ञ नडवंग दट्टिंचि पनिचें;
ग्रहमुल नंदंद कारिंचें; मंत्र । महितंबुलगुचुन्न मखमुलु सेंरिचें;
वरलु महोद्यान वाटिकल् वेंरिकें;। जेंरवट्टे नुत्तम स्त्रील बेंक्कंड्र;
निवि लोनुगा बाधलिट्लु सेयुचुनु । भुवनंबुलकु भीति बुट्टिंचें गान
३६८०
नडरि राक्षसुलतो नद्दशाननुडु । चेंडुनुपायमु मीरु चिंतिंपुडिक"
ननि बृहस्पति वल्क ना माटलेल्ल ।विनि ब्रह्म वल्के नाविबुधुल तोड;
"वरमिच्चिनाड नेवानिकि मुन्नु । सुरगरुडोरगासुर यक्ष वरुल

—किन्नर, गंधर्व, गीर्वाण, गरुड़, पन्नग, गुह्यक प्रमुख (आदि का) समूह के सभा करके, मंत्र विचार (सलाह-मशविरा) करने पर, शुभमति से सोचकर सुरगुरु ने कहा—"क्रुद्ध हो, हमारी परवाह न करके, पंक्तिकंधर (रावण) लोकों को पीडित कर रहा है। शुंभत्-बल (प्रचंड शक्ति) से घेरकर, जंभारि (इन्द्र) को समर में परास्त किया। शीघ्रता से अंतक (यम) को भगाया, वरुण को पीडित किया, उरु-बलोज्ज्वल कुबेर को (अपने) अधीन किया, अधिक क्रोध से, अतिगर्व से प्रकाशित होकर, पकड़ (पकड़) कर अनेक धर्मात्माओं का बध किया। दिनकर (तथा) चन्द्र के तेज का दमन कर, अपनी आज्ञा के अनुसार चलने के लिए डाँट सुनाई। जहाँ-तहाँ ग्रहों को सताया, मंत्र-महित होनेवाले मखों (यज्ञों) को नष्ट कर दिया। शोभायमान महान् उद्यान-वाटिकाओं को उखाड़ दिया, अनेक उत्तम स्त्रियों को बंदी बनाया। इस प्रकार से पीड़ित करते हुए भुवनों को भीत कर दिया। अतः, ॥ ३६८० ॥

—अब आप लोग विजृंभित राक्षसों के साथ दशानन के नाश के उपाय का विचार कीजिए।" ऐसा बृहस्पति के कहने पर, वे सब बातें सुनकर, उन विबुधों (अमरों) से ब्रह्मा ने कहा—"मैंने उसे पूर्व में सुर, गरुड़, उरग, असुर, यक्षवरों से अवश्य अमृत्यु का वर दिया है। उसका प्रति-विधान भी सोचा है, सुनिए। दैत्य ने मनुजों की चर्चा नहीं की, अतः मैंने भी वरदान (करते) समय में चर्चा नहीं की। अतः रावण को

चे नैन जावमि सिद्धंबु गाग; । दीनिकि मारु चिंतिंचिति, विनुडु;
तडवडु मनुजुल दैत्युंडु; गान । दडव नेनुनु वरदान कालमुन;
गान रावणुनि संगर रंगमंदु । मानवु लोर्तुरु; मनुज लोकमुन
जनियिंप ब्रार्थिप जनु डादि विष्णु । वनजनाभुनि लोकवंद्यु मुकुंदु"
ननवुडु सुर मुनुलट्ल काविंचि; । रनघुंडु हरियु मर्त्यबुंन बुट्टे"
ननि जेप्पि नारदुंडरिगे दैत्येश । दिनकरकुलु डादि देवुंडु गानि
मनुजुंडु गाडु रामक्षितीश्वरुडु; । जनक नंदन निम्मु; शरणनु वेग; ३६९०
वनचरुलेल्ल देवतलुगा दलपु; । दनुजेश! नामाट तथ्यंबु; नम्मु"
मनिन माटलु विनि यद्दशाननुंडु । तनलोन नधिक संतापाग्नि गुंदि
योक कोंततड वूरकुंडि निट्टूर्पु । प्रकटंबुगा बुच्चि बहु चिंत नोंदि
वेरचियु वेरवनि विधमुन नप्पु । डरिमुरि गोपिंचि यनुजन्मु जूचि

रावणुडु कुंभकर्णुनि हितवुनु दिरस्करिंचुट

"सोलवक येंपुडु विष्णुडु विष्णुडनुचु । बलिकेदु; नी किंत भयमेल पुट्टे
विष्णुडै युन्ननु वेरवनि नेनु । विष्णुंडु मानव वेषुडै युन्न
वेरतुने? नन्नेल वेरपिंचे दिट्लु?। वेरचे देनियु नीवु वेरतुगा केमि

संगर-रंग (युद्धभूमि) में मानव पराजित करेंगे। आदि विष्णु, वनजनाभ, लोकवंद्य, मुकुंद से प्रार्थना करने जाइए कि वे मनुजलोक में जन्म लें।" ऐसा कहने पर सुर-मुनियों ने वैसा ही किया। अनघ हरि भी मर्त्य (लोक) में जन्मा। ऐसा कहकर—नारद चला गया। हे दैत्येश! दिनकरकुल वाला आदिदेव है, राम-क्षितीश्वर (राजाराम) मानव नहीं है। जनकनंदना को दे दो और शीघ्र शरण माँग लो ॥ ३६९० ॥

समस्त वनचरों को देवता जान लो। हे दनुजेश! मेरी बात सत्य है। विश्वास करो।" (ऐसा) कहने पर (वे) बातें सुनकर, वह दशानन अपने (मन) में अधिक-संताप-अग्नि से व्याकुल हो, थोड़ी देर चुप रहकर, प्रकट रूप से लम्बी-आह छोड़कर, अधिक चिंतित हो, भीत होकर भी भीत हुए जैसा न दीखकर, तब शीघ्र क्रुद्ध हो, अनुजन्म (अनुज) को देखकर (बोला)—

रावण का कुंभकर्ण के हितवचनों का तिरस्कार करना

"न थककर, बारबार 'विष्णु' 'विष्णु' क्यों कहते हो? तुम्हें इतना भय क्यों होने लगा? (साक्षात्) विष्णु से भी न डरनेवाला मैं विष्णु के

याराघवुडु विष्णुडौगाक! येमि?। यारामुनकु दम्मुडैन सौमित्रि
यारय शर्वुँडे यगु गाक; येमि? । यारविसुतु डिंद्रु डगुगाक; येमि?
सुरलयै युंडग सौरिदि ने वेँऱव; । निरवोंद वीरिकि नेनेल वेँऱतु?
३७००
नेँऱयंग नीवेल्ल नीति शास्त्रमुलु । नेँऱुगुट निष्फलंबिट्टु विचारिंप;
नति विरोधमु गौन्न यारामुतोड । नति हीन मैत्रिकि नास चेसेँदवु;
समरोर्वि मनलनु समयिंप, मुनुल । नमरुल रक्षिप ननि विचारिंचि
यंचित देवत्व मट्टु मानि वच्चि । वंचन निट्टु मानवत्वंबु नौंदि
जगदेकरक्षकै सरसिजोदरुडु । जगतिपै रामुडै जन्मिंचि नाडु;
वैरंबु गौनि मन वध कोरकैन । यारामुतो संधि यदि येल पौसगु?
वालि दूलग बोयि वानराश्रितुनि । नीसमयंबुन नेमनि कांतु?
बलिजन्नमुमकु नी पंकजोदरुडु । पौलुचु वामन मूर्ति बौंदि ता नरिगि
धरणि मूडडुगुलु दानंबु वेडि । यरुदारगा गौनि यतनि बंधिंचे;
नौप्पार नुपकार मौनरिंचु नतनि । कप्पुडे काविंचे नपकार मितडु;
३७१०

मानव-वेष में रहने से डरूँगा? मुझे ऐसा क्यों भयभीत करते हो? (भले ही) तुम डरो तो डरो। वह राघव विष्णु ही होगा तो क्या? उस राम का अनुज सौमित्र सोचने पर शर्व (इंद्र) ही होगा तो क्या? रविसुत (सुग्रीव) इंद्र ही होगा तो क्या? ये सब देवता ही थे तब भी क्रम से मैं इनसे नहीं डरता था। अब मैं इनसे क्यों डरूँगा? ।। ३७०० ।।

तुम्हारा सभी नीतिशास्त्रों को जानना, विचार करने पर, निष्फल है। अति विरोध करनेवाले उस राम से अतिहीन मैत्री के लिए इच्छा करते हो? समर-उर्वी (युद्ध-भूमि) में हमारा संहार करने, मुनियों और अमरों की रक्षा करने का विचार कर, अंचित (पूजनीय) देवत्व को उधर छोड़, वंचना से इधर मानवत्त्व को ग्रहणकर, जगदेकरक्षा के लिए सरसिजोदर (विष्णु) जगति पर राम हो जन्मा है। वैर को ग्रहणकर, हमारा वध करना चाहनेवाले उस राम से संधि कैसे संभव हो सकेगी? (अपने) गर्व को छोड़, उस वानराश्रित (वानरों से आश्रित अथवा वानरों के आश्रय में रहनेवाले) को इस समय कैसे देखूँ (जाऊँ)? बलि के यज्ञ में इस पंकजोदर ने शोभित वामन-मूर्ति (-आकार) को धारणकर स्वयं जाकर, तीन चरण धरणि का दान माँगकर, विरलरूप से बंदी बनाया। शोभा से उपकार करनेवाले का तभी अपकार किया है इसने ।। ३७१० ।।

पग गोन्न मनलनु बरिमार्प केल । मगुडु ? नेक्कडि संधि मनकु रामुनकु?
नेनुनु नीवु ना यिद्र लोकंबु । पै नेत्ति चनि भुजाबलेमु लिपार
निबिड विक्रमुलैन निर्जरेंद्रादि । विबुधुल दोल ना विष्णु डेंदरिगे ?
निनु मेलुकोल्पुट नीति नीचेत । विन गोरिये ? नीकु वेरपेल पुट्टे ?
ब्राण भयंबुन बलुमाट लेल ? । प्राणंबु तीपैन ब्रदुकु नेम्मदिनि;
घनमैन यायुवु गरमर्थि गंटि; । मुनुमिडि गेलिचिति मूडु लोकमुलु;
ननुभविंचिति बेक्कुलगु राज्य सुखमु । लनुपमंबगु तेज मंतंत केसग;
नति हीन विक्रमुडैन रामुनकु । नितरुल गति;निक ने म्रोक्क जाल;
बोरिकि जनु मन्न बोनोप किपुडु । वारक याडेदु वक्रोक्तु लिट्लु;
निद्र वोवने पोम्मु नेम्मदि नीवु; । निंद्र वोयेडि वानि निजिपररुलु;
३७२०

रामलक्ष्मणुलनु रवि तनूभवुनि । भीम विक्रमुलैव बिरुदु वानरुल
नेने चंपेद; बेल्च नेल्ल देवतल । नेने चंपेद; विष्णु नेने चंपेदनु;
नोलि यव्विष्णुनि योद्दि शूरुलनु । नालंबुलोपल नधिक दर्पमुन
नेद्देस गदिसिन नेने चंपेदनु; । बेद्दकालमु नीवु पिरिकिवै मनुमु"

विरोध धारण कर यह हमारा संहार किए बिना क्यों लौट जाएगा ? हमारे और राम के मध्य कहाँ की सधि ? मैंने और तुमने उस इंद्रलोक पर धावा बोलकर, भुजबल के उत्कर्ष से निबिड-विक्रम वाले निर्जर, इन्द्र आदि विबुधों (देवताओं) को भगाया था। उस समय वह विष्णु कहाँ गया था ? तुम्हें जगाना क्या तुम्हारे मुख से नीति (की बातें) सुनने के लिए है ? तुम्हें भय क्यों हुआ ? प्राणभय के कारण अनेक बातें क्यों (कहते हो) ? प्राण प्रिय हैं तो शांति के साथ जीते रहो। बड़ी इच्छा से महान् आयु को प्राप्त किया है। क्रम से तीनों लोकों को जीता है। अनुपम तेज के सदा व्याप्त रहने पर अनेक राज्यसुखों का उपभोग किया है। अतिहीन विक्रम वाले राम को, अन्य-जनों के समान, प्रणाम नहीं कर सकता। युद्ध के लिए जाने के लिए कहने पर, जाने में समर्थ न बन निरन्तर ये वक्रोक्तियाँ अब क्यों कहते हो ? तुम जाकर सुख से सो ही जाओ। शत्रु सोनेवाले को नहीं मारते ॥ ३७२० ॥

रामलक्ष्मणों को, रवितनूभव को, भीमविक्रम वाले प्रसिद्ध वानरों को मैं ही मार डालूँगा। अतिशयता से समस्त देवताओं को मैं ही मार डालूँगा। विष्णु को मैं ही मार डालूँगा। क्रम से उस विष्णु के पास के शूरों को युद्ध में, अधिक दर्प से जिधर भी जावें, मैं ही मार डालूँगा। तुम चिरकाल कायर बन जीवित रहो।" ऐसा कहकर फिर उस दशानन

अनि पलिक वेंडियु नद्दशाननुडु । कनुगोनि याकुंभकर्णुतो ननियै;
"जैलुवारगा निट्टु सीतयै लक्ष्मि । यिलकु जनिचुट ये नेरुंगुदुनु;
अस्यंग रघुरामु डाविष्णु डगुट । परिक्ळिचि येरुगुदु भावंबु लोन;
वलनोप्प देवतल् वानरुलगुचु । निलमीद जन्मिचुटे नेरुंगुदुनु;
रामुचे मरणंबु रणमुलो नाकु । नीमेंयि सिद्धिचुटे नेरुंगुदुनु;
नेलमि गामंबुन ने सीत देनु; । बलिमि ग्रोधंबुन बट्टि ये देनु; ३७३०
रणमु लोपल रघुरामुचे नीलिग । प्रणुतिप विष्णुनि परम पदंबु
दक्कक पोंदंग दलचिये सीत । निक्कंबु देच्चिचति नीकेल दाप ?"
ननि पेक्कु भंगुल नाडु रावणुनि । गनुगोनि याकुंभकर्णुडिट्लनियै;
"ने नीकु गलुगंग नेल तूलेदवु ? । दानवनाथ ! मोदंबुन नुंडु;
पग यडचेंद" ननि पलिकि यास्थान ।मोगि नंतयुनु जूचि युचित वाक्यमुल
"ने डिदुलो लेडु निर्मलाचारु । डेडि विभीषणुंडेट केगे" ननिन
"मनमीद रामलक्ष्मणुलेत्ति वच्चि । रनुवार्त विनि सभ नंदरु गूडि
यालोचनमु सेय नंतलो नीवु । वालिन निद्रवो वडि नेगुटयुनु
निष्ठतो रघुरामुनिकि गाग बेंद्द । निष्टुरंबुलु नन्नु नेरि नाटनाडे;

ने उस कुंभकर्ण को देख कहा—"इधर शोभा से लक्ष्मी का सीता बन धरती पर जन्म लेने की बात को मैं जानता हूँ। विचारने पर उस विष्णु का रघुराम बनना मैं आत्मा से जानता हूँ। शोभा से देवताओं का वानरों के रूप में पृथ्वी पर जन्म लेना मैं जानता हूँ। राम के हाथ रण में मुझे इस प्रकार मरण की प्राप्ति को मैं जानता हूँ। मैं कामभाव से सीता को नहीं लाया हूँ। बलात् क्रोध के कारण नहीं लाया हूँ ॥ ३७३० ॥

रण में रघुराम के हाथ मरकर, सराहनीय विष्णु के परमपद (मोक्ष) को अवश्य प्राप्त करने की इच्छा से ही सीता को सचमुच लाया हूँ। (अब) तुमसे क्या छिपाऊँ ?" ऐसा अनेक प्रकार से कहने पर रावण को देख कुंभकर्ण ने यों कहा—"मैं जब तुम्हारे पास हूँ तो क्यों विकल होते हो ? हे दानवनाथ ! मोद से रहो। शत्रुता को दमन कर दूँगा।" ऐसा कहकर समस्त सभा को क्रम से देखकर, उचित वाक्यों से (कहा)—"यहाँ निर्मल-आचारवाला विभीषण नहीं है। कहाँ गया ?" (ऐसा) कहने पर (कहा)—"हम पर रामलक्ष्मणों के आक्रमण के समाचार को सुनकर, सभा में सभी एकत्र होकर सोच-विचार कर रहे थे। इतने में तुम अधिक निद्रा के वशीभूत हो, शीघ्र चले गए थे। (तब विभीषण ने) रघुराम के प्रति निष्ठा से, मेरे मन में चुभ जाएँ ऐसे निष्ठुर वचन कहे

नाडिन दन्निति ना विभीषणुनि । गूडदु नाकनु कोपंबु पेर्मि; ३७४०
दन्नि यंतट बोक तालिमि दक्कि । "युन्न जंपुदु" ननि योटलेकंटि;
ननवुडु ननु बासि यारामु कडकु । जनि यिप्पु डाविभीषणुडुन्नवाडु"
अनि चेप्पुटयु "गार्यमदि तुद मुट्टेः।ननिकि बोवुट युक्त" मनि विचारिंचि
"यिंक बोरा" दनि यिंद्रारि येदुट । नंककाडुनु बोलें नतडिच्चें बास;

कुंभकर्णु डु प्रगल्भमुलाडुट

"किट्टि भंजिचेंद गीनाशु नैन; । बट्टि मर्दिचेंद बद्मजु नैन;
जिरु जिरु द्रिप्पेंद शेषुनि नैन; । व्रलमुन ग्रोलेंद व्रलनिधि नैन;
वे'पारु द्रोलेंद विष्णुवु नैन; । रूपरु जेसेंद रुद्रुनि नैन;
गडगि खंडिचेंद ग्रव्यादु नैन; । मेंड नुल्चि वैचेंद मृत्युवुनैन;
वडिचेंड जेसेंद वरुणुनि नैन; । गडुपु सिचेंद नलकापति नैन; ३७५०
बिडिकिलिचेंद रविबिंबंबु नैन;। बडद्रोचि पुच्चेंद ब्रह्मांडमैन;

थे । कहने पर क्रोध के उत्कर्ष में 'ऐसा कहना उचित नहीं है' कहते (हुए मैंने) लात मारी थी ।। ३७४० ।।

लात मारकर, उतने से न जाने देकर (संतुष्ट न होकर), सहनशीलता को खोकर, 'यहाँ रहोगे तो मार डालूँगा' कह दिया। ऐसा कहने पर मुझे छोड़ उस राम के पास जाकर, विभीषण अब वहीं है।" ऐसा कहने पर 'अब तो कार्य समाप्त हो गया है। युद्ध में जाना ही उपयुक्त है,' ऐसा विचारकर कि अब (घर) नहीं जाना चाहिए, (ऐसा) सोच, इंद्रारि (रावण) के समक्ष उसने जिद्दी व्यक्ति के समान वचन दिया।

कुंभकर्ण के प्रगल्भ वचन

(कहा)—"आक्रमण कर कीनाश (यमराज) को भी नष्ट कर दूँगा, पकड़कर पद्मज हो तो भी मर्दन कर दूँगा। शेष को भी घुमा दूँगा, विहगेंद्र हो तो भी भीत कर दूँगा, प्रलयाग्नि हो तो भी बरबस निगल जाऊँगा, हठकर जलनिधि को भी पी जाऊँगा, विष्णु हो तो भी शीघ्र भगा दूँगा, रुद्र हो तो भी नाश कर दूँगा, क्रव्याद (नैऋत) हो तो भी लगकर खंडित कर दूँगा, मृत्यु हो तो भी गला घोंट दूँगा, वरुण हो तो भी शीघ्र नष्ट कर दूँगा, अलकापति (कुबेर) हो तो भी पेट चीर डालूँगा, ।। ३७५० ।।

—रविबिंब हो तो भी मुट्ठी में कस लूँगा, ब्रह्मांड हो तो ढकेल दूँगा। (ऐसे मुझ शक्तिशाली को) मेरी समरकेलि के समौद्धत्य के लिए कपियों

गोतुल बट्टि म्रिगुदु ननुटेंत । लेत नासमर-केळी-समुद्धतिकि;
नामर्कटुल नेल्ल नद्रुल कनिचि । यामनुजुल द्रुंतु नसुराधिनाथ !
नी मनंबलरंग नेम्मदि नुंडु; । रामुड्डु नाचेत रणमुलो बडिन
सीत यनाथयै चिक्कु; नंतटनु । नी तलंचिन कोर्कि नीकु सिद्धिंचु"
ननिन महोदरुंडावाक्यमुलकु । घनभुजुंडगु कुंभकर्णुनो ननियें;
"सत्कुलंबुन नीवु जनियिंचिनाड; । वुत्कटंबगु गर्व मुचितमे नीकु ?
दगु नयानयमुलु दलपोय किट्लु । पगतु जंपुदु ननि पलुकुने घनुड्डु ?
कोपंबु दीपिंप घोर सिंहंबु । नेपुन नुन्न वाडेसगु तेजमुन;
गेवलमानवाकृति गाडु रामु; । डाविष्णु डीरूपमै वच्चि नाडु; ३७६०
आवालि नोक कोल नणचिन शूरु; । डावीरवरु गेल्व नलवियें नीकु ?
ब्रकट विक्रमुलैन पगवारि मीद । नोंकड पोवुट माकु नोडबाटु गादु;
बलमुतो जनि महाबलुडैन रामु । गेलु" मनि मरि दशग्रीवुतो ननियें;
"नेमु गलगग नीकु नेल चिंतिंप ? । नी मनोरथसिद्धि नेरपंग लेमे ?
जानकि कोरकु विचार मेमिटिकि? । नेनु संपातियुनु नीद्विजिह्वुंडु

को पकड़कर निगलजाना कौन बड़ी बात है ? उन सभी मर्कटों को अद्रियों में भेजकर (भगाकर) उन मनुजों का संहार कर दूँगा, हे असुराधिनाथ ! तुम्हारा मन प्रसन्न हो, (ऐसा) शान्ति से रहो। राम मेरे हाथ रण में गिर (मर) जाए तो सीता अनाथ हो फँस जाएगी। और तुम्हारी मनोकामना तुम्हें सिद्ध हो जाएँगी।" (ऐसा) कहने पर महोदर ने उन वाक्यों को (प्रति-उत्तर देते हुए) घनभुजवाले कुंभकर्ण से कहा—"तुमने सत्कुल में जन्म लिया है। क्या तुम्हारे लिए उत्कट गर्व उचित है ? समुचित नय-अनय के बारे में सोचे बिना कोई महान् व्यक्ति शत्रुवध की (बात) कहता है ? कोप के दीप्त होने पर, विजृंभित तेज से युक्त हो, औन्नत्य में (राम) घोर सिंह के समान है। राम केवल मानवाकार वाला नहीं है, वह विष्णु ही इस रूप में आया है, ॥ ३७६० ॥ —उस वालि का एक ही बाण से दमन करनेवाला शूर है, उस वीरवर का दमन तुमसे हो सकेगा ? प्रकट-विक्रम वाले शत्रुओं पर (तुम्हारा) अकेले जाना हमारे लिए स्वीकार्य नहीं है। सेना के साथ जाकर, महा-बली राम को जीतो।" (ऐसा) कह (उसने) पुनः दशग्रीव से कहा—"हमारे रहते तुम्हें चिन्ता करना क्यों ? तुम्हारे मनोरथ को (हम) सफल नहीं बना सकेंगे ? जानकी के लिए विचार (चिंता) क्यों ? मैं संपाति और इस द्विजिह्व और गंभीर विक्रम से कलित बाहुओं वाला कुंभकर्ण, मिलकर जाकर, राम को आनन्द से किसी भी उपाय से जीत लें,

गंभीर विक्रम कलित बाहुंडु। कुंभकर्णुडु गूडि कौनिपोयि रामु
नेलमि गेलिचति मेनि नेयुपायमुल। वलनोप्प सिद्धिचु वैदेहि नीकु;
नटुकाक राम नामांकित बाण। चटुलोग्र पातंबु सैरिप लेक
वडि भिन्न तनुलमै वच्चितिमेनि ?। नडरंग नेमु नीयडुगुल कैरगि
"प्रणुतोग्र वानर बलमुतो गुड। रणभूमि लोपल रामलक्ष्मणुल ३७७०
वधियिंचि भक्षिंचि वच्चिति" मनुचु।नधिप जेप्पिन मम्मु नधिकमोदमुन
नालिगनमु सेसि यर्थि मन्निंचि। पोलंग नीवार्त पुरमुन नेल्ल
नीवु सार्टिचिन निजमुगा सीत।भाविंचि यटमीद बतियास विडिचि
मतिबूनि नी माट मरिचेयु" ननिन। नतनि गोपिंचि यय्यमरारि जूचि
"यी बोंकु लगु माट लेल्ल नेमिटिकि ?। नाबाहुबलमेचि ननुजूतु गाक !
निश्चयंबुग रामु निर्जितु नेनु;। निश्चितमुग नुंडु नीविट्टु मीद"
ननि कुंभकर्णुडुदग्रुडै पलुक। विनि रावणुडु गडुवेड्क दीपिंप
दनकु बुनर्जन्मतासिद्धि गलिगे। ननि चाल मोदिंचि यनुजन्मु जूचि
"चनि याजि रामलक्ष्मणुल निर्जितु। वनि नम्मिनाड नीयतुल सत्त्वंबु;
शौर्यंबु नंदु नी सरियैन वीर। वर्युलु लेरु; ध्रुवंबिव्विधंबु; ३७८०

तो वैदेही शोभा से तुम्हें प्राप्त होगी। ऐसा न होकर राम-नामांकित बाणों के चटुल-उग्रपात को सह न सक, झट भिन्न-तन (खंडित-शरीर घायल) वाले होकर भी यदि आएंगे तो सोत्कर्ष तुम्हारे चरणों में नत होकर (कहेंगे कि)—"प्रणुत (प्रशंसित)-उग्र वानर-बल (-सेना) के साथ रणभूमि में राम-लक्ष्मण का, ।। ३७७० ।।

—वधकर, भक्षणकर आए हैं।' हे अधिप ! ऐसा कहने पर, अधिक मोद से आलिंगित कर, प्रेम से सम्मानकर, शोभा से इस समाचार की घोषणा समस्त नगर में घोषित करा दोगे तो सीता (उसे) सच मानकर, उसके बाद पति की आशा छोड़कर, मति (अच्छी बुद्धि) धरकर, तुम्हारे वचन के अनुसार करेगी।" (ऐसा) कहने पर, उस पर क्रुद्ध हो, उस अमरारि (रावण) को देख कुंभकर्ण ने उदग्र हो कहा—"ये सर्व झूठी बातें क्यों ? विजृंभित बाहुबल से युक्त मुझे देख लेना। निश्चित रूप से मैं राम को परास्त कर दूंगा। अब आगे तुम निश्चिन्त होकर रहो।" (इसे) सुन, रावण अति उत्साह के दीप्त होने पर, यह सोच कि मुझे पुनर्जन्म प्राप्त हुआ है, अधिक मुदित हो, अनुजन्म को देखकर (बोला)—"तुम्हारे अतुल सत्त्व के कारण यह विश्वास करके निश्चित हूँ कि तुम युद्ध में जाकर रामलक्ष्मणों को परास्त कर दोगे। शौर्य में तुम्हारी बराबरी करनेवाले वीरवर्य (अन्य) नहीं हैं। यह विधान ध्रुव (अटल सत्य) है ।। ३७८० ।।

मुनुकोनि शूलंबु मोदलुगा गलुगु । घनतरायुधमुल गय्यंबु सेयु''
मनि प्रीति रेट्टिंप नतनिकि निच्चे । ननुपम रत्न मयाभरणमुलु;
नारावणुनि तम्मु डाभूषणुमुलु । वारक तालिच प्रज्वलितांगुडगुचु
दनरारें बसिडि कत्तळमोप्प दोडिगि । विनुत संध्यंबुदावृत गिरिवोलें;
बहु रत्न मेखलाबद्धुडै योप्पे । नहिराज बद्ध मंथाद्रि चंदमुन;
नोप्पि रणोत्साह मुप्पोंगि पोंगि । यप्पुडु च्चनुदेंचि यसुरपुंगवुडु
त्रिजगद्भयंकर दीप्तमै पर्व । विजय सूचक भेरि व्रेयंग बनिचि,

कुंभकर्णुडु युद्धमुनकु वेडलुट

शूलि शूलमु कंटे सोंपारि मोनल । वालिन मंटलुज्ज्वलमुलै निगुड
निप्पुलु सेंदर मानितमैन पूज । नोप्पि रत्न प्रभ नुज्ज्वलंबगुचु
व्रतिवीर शोणित भ्राजितंबैन । यतुल शूलमु बट्टि यन्नकु म्रोक्कि ३७९०
यतनि दीवनलतो ना सभांतरमु । वितत समुद्योग वेगुडै वेडलें
''नी कष्ट तनुवुलो नेमेल निलुत्तु । मोकुंभकर्ण ! रणोर्बर दीनि

—शूल आदि घनतर-आयुधों से युद्ध करो।'' (ऐसा) कह प्रीति के द्विगुणित होने पर, उसे अनुपम रत्नमय आभरण दिए। उस रावण का भाई उन आभूषणों को अवश्य धारणकर, प्रज्वलित-अंग (-शरीर) वाला होता हुआ, स्वर्ण-कवच को पहनकर, विनुत-(-प्रशंसित) संध्यांबुद से आवृत-गिरि के समान शोभित हुआ। बहुरत्नों से युक्त मेखला से आबद्ध हो, अहिराज से बद्ध मंथाद्रि (मन्दराचल) के समान विराजमान हुआ। शोभित होकर, रणोत्साह से उमड़-उमड़कर, तब आकर असुर-पुंगव (-श्रेष्ठ) ने त्रिजगद् भयंकर-दीप्त होकर व्याप्त होने के लिए, विजय-सूचक भेरी ध्वनित कराने को (सेवकों को) भेजकर,

कुंभकर्ण का युद्ध के लिए निकल पड़ना

—शूली (शिव) के शूल से भी (अधिक) शोभित होकर, नोकों से निकलने वाली ज्वालाओं के उज्ज्वल हो, चिनगारियों को बिखेरते हुए, मान्य पूजा से विराजित होकर, रत्नप्रभावों से उज्ज्वल होते हुए, प्रतिवीर-शोणित से भ्राजित (प्रकाशमान) अतुल-शूल को धारणकर, अग्रज को प्रणाम कर, ॥ ३७९० ॥

—उसके आशीसों को लेकर, उस सभा के मध्य से विगत-समुद्योग के वेग से युक्त हो निकल पड़ा। मानों उसके प्राण यह कहते उसे

वैतुवु र''म्मनि वानि प्राणंबु । लातत गति नीड्व नरुगु चंदमुन;
नंत राक्षस कोटि याकुंभकर्णु । नंतंत गूडि कय्यंबुन करिगें;
दुरगंबु लेक्कि सिंधुरमुल नेक्कि । यरदंबु लेक्कि सिंहंबुल नेक्कि
काटुक कोंडलगति दनरारि । मेटि दंष्ट्रंबुल मेरुगुल सेंदर
ग्रौर्यमंतयु गूर्चि करुविडुकरणि । शौर्यबु रूपुलै चरियिंचु भंगि
गय्यंबु सेतयै कार्यंबु गाग । नय्यै तेरंगुल नाटोप मोप्प
बरिघ पट्टिस गदा प्रास कोदंड । करवाल कुंत मुद्गर भिंडिवाल
परशु चक्रादिक प्रथितायुधमुल । बरगि पदाति युद्भट वृत्ति नडचें; ३८००
नीचंदमुन गूडि येल्ल सैन्यमुलु । वे चनुदेर गर्वित चित्तुडगुचु
बुरकामिनीतति पुष्प वर्षमुलु । गुरिय रणोद्योगि कुंभकर्णुंडु
चंद्र मंडल निभच्छत्रंबु लोप्प । जंद्र बिंबास्यलु चामरल् वीव
दुरग हेषलुनु सिंधुर बृंहितमुलु । वररथ नेमि निस्वन परंपरलु
बटुतर निस्साण भांकारमुलुनु । बटहभेरीशंख पणवनादमुलु
घंटामृदंगढ़क्कारवंबुलुनु । मिंट दिक्कुलं निंड मिगुल म्रोयंग

आततगति से खींच ले जा रहे हों कि "इस क्रूर तन में हम क्यों रहेंगे ? हे कुंभकर्ण ! रण-उर्वी (रणभूमि) में इसे त्याग दो, चलो।" तब राक्षसकोटि उस कुंभकर्ण के साथ मिलकर युद्ध के लिए चल पड़ी। (वे सब) तुरगों पर चढ़कर, काजल के पर्वतों के समान शोभित होकर, श्रेष्ठ दंष्ट्राओं की चमक के चारों ओर फैलने पर, समस्त क्रूरता को एक स्थान पर एकत्रित करने के समान, मानों शौर्य ही रूप धारण कर विचर रहा हो, युद्ध करना ही अपना कर्तव्य हो, (ऐसा समझ) अनेक प्रकारों से आडम्बर के विलसित होने पर, परिघ, पट्टिस, गदा, प्रास, कोदंड, करवाल, कुंत, मुद्गर, भिंडिवाल, परशु, चक्र आदि प्रथित (प्रसिद्ध) आयुधों से सज्जित होकर, पदाति (पैदल) सेना उद्भट वृत्ति से चल पड़ी ।।३८००।।

इस प्रकार से मिलकर समस्त सेनाओं के शीघ्र चल देने पर, गर्वितचित्त वाला होते हुए, पुर-कामिनीतति (-स्त्रीसमूह) के पुष्पवर्षा करने पर, रणोद्योगी (रण करने में प्रयत्नशील) कुंभकर्ण के चंद्रमण्डल के सम छत्रों के शोभित होने पर, चंद्रबिंबास्याओं (चंद्रमुखियों) के चामर डुलाने पर, घोड़ों की हिनहिनाहटों, सिंधुरों की चिंघाड़ों, वर रथों के नेमिस्वनों की परंपराओं, पटुतर निस्साणों के भाँकारों, पटह-भेरी-शंख-पणव के निनादों, घण्टा-मृदंग-ढक्का के रवों के आकाश तथा दिशाओं में अधिक व्याप्त होकर मुखरित होने पर (वह चल पड़ा।)

कुंभकर्णुनकु दुश्शकुनमुलु पॉडसूपुट

वेडलिन यपुडु पृथ्वीभाग मगलें; । जडधुलु गलगें; दिशावलि वगिलें;
गगनंबु वडकें; दिग्गजमुलु म्रोंग्गे; । जगमुलु बेंगडोंदें; शैलंबु लुरिलें;
"दौर्जन्यमुन दुष्टदानव ! नीवु । पर्जन्यु नेचिन फलमेल्ल गुडुवु"
मनि राघवुनकु दोडै वच्चि पेर्चि । ननरार वानि नदल्चिन माड्कि ३८१०
गलयंग नप्पुडकालमेघमुलु । पलुमारु बिडुगुलु परगिचि म्रोसें;
"दोरंबुगा नार्चि व्रुळ्ळेडु वीडु; । घोराहवक्षोणि गुपितुडैनट्टि
ताराधिपतिचेत दारुपरुटकु । नीराजवरुनिचे निट गूलुटकुनु
दारु साक्षुल" मनि तग जेप्पु करणि। दारलु मंडुचु धरणिपै बडियें;
"दनु मुन्नु नोंचिन दानिकै यनिलु। डनयंबु रामुनि यान नीयसुर
बडवैतु" ननि पेर्चि परगिन माड्कि। वडिगोनि प्रतिकूल वायुवुल् वीचें;
"रामुडु संप नीराक्षसाधमुडु । नामीद बडुनपुडु नाकेंत व्रेगु
पुट्टुनो" यनि भीति पुट्टि कंपिंचि । नट्टि चंदंबुन नवनि गंपिचें;

कुंभकर्ण को दुःशकुन दिखाई पड़ना

चल पड़ने पर, पृथ्वीभाग उखड़ (विदीर्ण हो) गया, जड़धियाँ (समुद्र) आलोडित हुईं, दिशावली फट गई, गगन कंपित हो उठा, दिग्गज धँस गए, जग भयभीत हुए, शैल लुढक गये। 'हे दुष्ट दानव ! दुर्जनता से तुमने पर्जन्य को जो सताया था, उसका पूरा फल भुगतो' मानों ऐसा कहते राघव का साथ देते हुए आकर, विजृंभित हो शोभा से उसे डाँट रहे हों ॥ ३८१० ॥

—(ऐसा) चारों तरफ़ से तब अकालमेघ कई वार गाज गिराकर, गरज उठे। "अत्यधिक रूप से सिंहनाद कर दर्पित होनेवाला यह (राक्षस) घोर-आहव-क्षोणि (युद्धभूमि) में क्रुद्ध बने तारा के अधिपति (सुग्रीव) के हाथों नष्ट होने तथा इस राजवर से यहाँ मर जाने के साक्षी है" (ऐसा) ढंग से कहने के समान नक्षत्र जलते हुए धरणी पर गिर पड़े। 'पूर्व में उसका दमन किया था, उसके लिए (प्रतीकार रूप) अनल निरन्तर राम की शपथ लेकर इस असुर को गिरा देगा' ऐसा (अनल के) विजृंभित हो चलने के समान, झट से प्रतिकूल वायु चलने लगी। 'राम के मार डालने पर, इस राक्षसाधम के मेरे ऊपर गिर पड़ने पर, मुझे कितना बोझ मालूम होगा' मानों ऐसी भीति के उत्पन्न होने पर, कंपित होने के समान अवनि कंपति हो उठी। 'हे राक्षसाधम ! हमें पक्षपाती (पंखों के बल उड़नेवाले

"बक्षपातुल मनि परिकिंप वलदु । राक्षसाधम ! नीवु राघवेश्वरुनि
खगमुलचे जावगल" वनु करणि । खगमुलु सुडिवडगा बारु जौच्चे;
३८२०
नवि यॆल्ल गौनक साहसमु रॆट्टिप । सवरण युडुग कुत्साहंबु मिगुल
"जूपुल चेतने चूर्ण बौनर्तु । गोपिंचि वानर कुलमॆल्ल" ननुचु
मेटियै वच्चुचु मीरि कन्गौनियॆ । गोट यव्वलि कपि कोट्ल नॆल्ल;
गपुलुनु नाकुंभकर्णुनि जूचि । विपरीत मारुत विहृत मेघमुल
करणि बारुग गुंभकर्णुंडु लंक । युरुवडि वॆडकि मिन्नु लिय्यंग नार्चॆ;
नायार्पु विनि वानरावळि यॆल्ल । बायनि मूर्छ पाल्पडि भुवि द्रॆळ्ळॆ;
शरनिधि गलगॆ; भूस्थलि गंप मॊंदॆ; ।सुरलकु गडु भीति सॊच्चॆ जित्तमुल;

वानर कुंभकर्णुल युद्धमु

नंत वानरवीरु लंतलो दॆलिसि । यंतकाकृति गल याकुंभकर्णु
गिट्टि पादपमुलु गिरुल श्रृंगमुलु । पट्टि बॆट्टुग नॆदुर्पडि यार्चि पेर्चि

और पक्षपात करनेवाले) मत समझो । तुम राघवेश्वर के खगों (बाणों) से अवश्य मर जाओगे' मानों (यह कहते हुए) खग (पक्षी) घिरकर उड़ने (मँडराने) लगे ।। ३८२० ।।

उन सबकी परवाह न कर, साहस के द्विगुणित होने पर, सुघड़ाई के कम न होकर, उत्साह के बढ़ने पर, 'क्रुद्ध होकर दृष्टियों से ही समस्त वानरकुल को चूर्ण कर दूँगा' (ऐसा) कहते श्रेष्ठ बन कर आते हुए, उत्कर्ष से उसने दुर्ग के उस पार के समस्त कपि-कोटियों को देखा । कपियों ने भी उस कुंभकर्ण को देखा, वे विपरीत-मारुत से विहृत-मेघों के समान भाग निकले । कुंभकर्ण ने शीघ्र लंका से निकलकर सिंहनाद किया, जिससे आकाश फट जाए । उस सिंहनाद को सुनकर समस्त वानर-समूह अत्यधिक मूर्च्छित हो जमीन पर गिर पड़ा । शरनिधि (समुद्र) आलोड़ित हुआ, भूस्थली (पृथ्वी) कंपित हुई, सुरों के चित्तों में अधिक भीति ने प्रवेश किया ।

वानरों और कुंभकर्ण का युद्ध

तब वानरवीर इतने में होश में आकर, अंतक-आकृति वाले उस कुंभकर्ण के निकट पहुँच पादप, गिरि (और) श्रृंग पकड़कर (हाथ में लेकर), भीकरता से सामना कर, विजृंभित हो सिंहनाद कर बार-बार (लगातार) युद्ध करने लगे । तो उन्हें जाने न देकर, पकड़कर, तरुचर से दानव सेना, ।। ३८३० ।।

पौरि बौरि बोरुचो बोनीक पौदिवि । तरुचर सेनपै दानव सेन ३८३०
युरुवडि गदियनिट्लुभय सैन्यमुलु । बरवसंबुन दलपडियें नावेळ
ब्रळय कालमुनाटि पट्टु सागरमुलु । दलकोंनि यौंडोंटि दाकोंन्नि करणि;
नौंडळुलु नेम्मुलु नूरुलु बरुलु । बौंडि पौंडिगा जेसि पोनीक मरियु
दविलि प्रेवुलु मेडलु दललु फालमुलु । नवियंग बेट्टु रथ्यमुल द्रौक्किंचि
कडलगलिचिन कत्तुलचेत । गडि कंडलुग जेसि कट्लक तोड
नंत बोवक भूनभोंतराळंबु । नंतयु गडुवाडि यम्मुल गप्पि
वडि बेर्चि रथमुलवार लिब्भंगि । गडिमि जंपिरि महोग्रमुग वानरुल;
वानरुलुनु रथावळुलपै कुरिकि । पूनिचि वेंनुककु बोव दन्नियुनु
गडुनौग ललमि ब्रग्गन नेल तोड । नडिचियु विरिचि यल्लंत वैचियुनु
भयदंबुगा वच्चि पादयुग्ममुल रयमुन । जदिय सारथुल द्रौक्कियुनु
३८४०
बेंळ पेंळ नरमुलु पेंनचि रादिगिचि । तल लुरुवडि द्रेंचि धात्रि वैचियुनु
रथिकुलै पेर्चिन राक्षसाधिपुल । वृथुगति जंपिरि पेंक्कु चंदमुल;
नदि गनि राक्षसु लधिक रोषमुन । वदलक वानरावळि जुट्टु मुट्टि

—द्रुतगति से जूझ पड़ी। उस समय तत्परता से उभयसैन्य आपस में प्रलयकाल के समय के पट्टसागरों के लगकर एक दूसरे से भिड़ जाने के समान, भिड़ गए। शरीरों, हड्डियों, ऊरुओं (तथा) पसलियों को चूर-चूरकर उतने से न जाने देकर, और भी तत्पर हो, आंतड़ियों, कण्ठों, सिरों (तथा) फालों (ललाटों) को भीकरता से रथ्यों (अश्वों) से कुचलवाकर, लहराती तलवारों से (तथा) अधिक क्रोध से (शत्रुओं को) खण्ड-खण्ड कर, उतने से न जाकर (तृप्त न होकर), भू-नभ के अंतराल (मध्यभाग) को अधिक पैने बाणों से आच्छादित कर, झट विजृंभित हो रथिकों ने इस प्रकार साहस से (तथा) महोग्ररूप से वानरों को मार डाला। वानरों ने भी रथावलियों पर कूदकर, जोर से लातें मारीं, जिससे वे पीछे की ओर चले जाएं। उनके लगामों को सरलता से पकड़कर, ज़मीन पर पटककर, तोड़कर, दूर फेंक दिया, भयद रूप से आकर, पदयुग्मों से झट दबाकर, सारथियों को कुचल डाला, ।। ३८४० ।।

—नसों को पकड़ खींच सिरों को झट काटकर ज़मीन पर फेंक दिया, (इस प्रकार) रथिक बने, विजृंभित राक्षसाधिपों को पृथुगति से, अनेक प्रकार से मार डाला। उसे देख राक्षस अधिक रोष से, न छोड़कर, वानरावली को घेरकर, मद के उत्कर्ष से, बल के क्षीण होनेवाली करिघटाओं (मेघसम गजों) को, चरणों के संकेतों से, (वानरों पर)

मदमु पेंपुन बलमरु गरिघटल । बदमुल सन्नल बै गदियिंचि
कडकाळु लौडियिंचि करमुल वलन। नेंडपक नेलतो नैत्ति व्रेयिंचि
मेंदडुनु बुनुकल मेदिनि गलय । बदमुल द्रोक्किंचि भयदंबु गाग
नोलि जूर्णबुलै युर्वि नंदंद । राल नुग्र प्रदरमुल नेसियुनु
गरुलपै नुन्न राक्षसु लेपु मीरि । युरुवडि गेंडपि रत्युग्रत गपुल;
गपुलु नुग्रंबुगा गबिसि येंतंयुनु । गुपितुलै गजमुल कौम्मुलु वट्टि
कुदिंचि रूपणचियु गुंभस्थलमुलु । पदमुल बरियलु वार दन्नियुनु
३८५०

बललंबु रक्तंबु बहुळास्थिचयमु । गलय गाळ्ळौगि पट्टि कडक व्रेसियुनु
ना येनुगुल मीद नलवु ज्रलंबु । वेयु भंगुल जूपि वेगंबु मेंरसि
पट्टिन विड्लुनु बाहुवुल् तललु । नट्टलु मरुवुलु नवनि गूल्चियुनु
नसमुन गपुलु गजारूढुलैन । यसुरुल जंपि रत्यंत रौद्रमुन;
गूडि दट्टमु चेसिकौनियु बीरंबु । लाडुचु हरुल ग्रोव्वंडरंग दरिमि
पलुदेरंगुल बाण पंक्तु लेसियुनु । नलि सैलकट्टियल् नाट नेसियुनु
सुनिशित खड्ग विस्फुरण शोभिलल ।मौन सौच्चि कडिकंडमुलुग व्रेसियुनु

भिड़ाकर, पीछे के पैरों को दबाकर, सूंड़ों से उठवाकर, लगातार (वानरों को) ज़मीन पर पटकवा दिया। मस्तिष्क (भेजा) और हड्डियाँ मेदिनी पर व्याप्त हों, (ऐसा) कुचलवाकर (युद्धभूमि को) भयंकर बना दिया। क्रम से चूर्ण बन उर्वी पर जगह-जगह गिर पड़ें, (ऐसा) उग्रप्रदरों से प्रहार कर, करियों पर स्थित राक्षसों ने विजृंभित हो, शीघ्र अत्युग्रता से कपियों का संहार किया। (तब) कपि उग्रता से भिड़कर, अधिक कुपित हो, गजों के दांतों को पकड़कर, झकझोर कर, रूप को नष्ट कर, कुंभस्थल फट जाएँ, ऐसे लात मारकर, ॥ ३८५० ॥

—मांस, रक्त, बहुल-अस्थिचय से युक्त लोधा बन जाएँ, ऐसा (उन गजों को) टाँगों से पकड़कर सप्रयत्न (ज़मीन पर) पटककर, उन हाथियों पर बल (तथा) हठ को सहस्रविधियों से दिखाकर, वेग से दीप्त होकर, (राक्षसों के) धारण किए धनुषों, बाहुओं, सिरों, धड़ों, कवचों को अवनि पर गिराकर, दर्प से कपियों ने गजारूढ़ बने असुरों को अतिरौद्रता से मार डाला। एकत्र हो, घने बन, डींग हाँकते हुए, हरियों (अश्वों) को, चर्बी (मद) के उत्कर्षित होने पर, दौड़ाकर, अनेक प्रकार से बाणपंक्तियाँ चलाकर, शोभा से बाण चलाकर जिससे वे चुभ जाएँ, सुनिशित-खड्ग के विस्फुरण के शोभित होने पर, युद्धभूमि में प्रवेशकर, खण्ड-खण्ड कर, शूरवीर राहुतों (घुड़सवार) ने निजृंभित होकर, गिरिचरों को अनारत

नुक्कलुलैन राहुतु लेपु मीरि। तक्कक चंपि रैंतयु गिरिचरुल;
गिरिचरवरुलुनु गिट्टि यश्वमुल। गरमुल दोकलु गाळुलु बट्टि
दैसलकु वैचियु दिविकि वैचियुनु। वसुमति वैचियु व्रच्चि वैचियुनु ३८६०
बद घट्टनंबुल बगुल दाचियुनु। वदलक यामीद व्रालेडु नट्टि
राहुतुलैन याराक्षसाधिपुल। साहसंबुन नेल जमरिरि कडिमि;
नप्पुडु राक्षसु लधिक दर्पमुन। निप्पुलु कन्नुल निव्वटिल्लंग
नम्मुल नेसियु नडरि कुंतमुल। ग्रुस्मियु सुरियल ग्रुच्चि त्रोचियुनु
शित खड्ग समिति न्रेसियु मुद्गरमुल। वितत चूर्णमुलु गाविंचियु मरियु
गल यायुधमुल नुग्रतलु सूपियुनु। शिलल बादपमुल जेंदर द्रोचियुनु
गडिमि पेंपुन निट्लु कालवुरु गिट्टि। बेंडिदंबु गाग जंपिरि तरुचरुल;
दरुचरुलुनु ना पदातिपै गविसि। पोरि बोरि नायुधंबुलु विरिचियुनु
नेट्टन बदकर निकरंबु ललमि। चट्टलु वापियु जमरि वैचियुनु
निरुचेतु लंदुनु निरुवुर बट्टि। युरुवडि दाटिंचि युरुल वैचियुनु ३८७०
नट्टलु शिरमुलु नमरंग बट्टि। दिट्टतनंबुन द्रेंचि वैचियुनु
नुडुगक चंपि रत्युग्र वेगमुन। गडिमि दीपिप बेंक्कंड्र राक्षसुल;

मार डाला। गिरिचरवर भी (उनका) सामना कर अश्वों के पूंछ और पैरों को हाथों से पकड़कर, दिशाओं में फेंककर, आसमान की ओर फेंककर, वसुमति (धरती) पर पटककर, चीर-फाड़ डालकर, ॥ ३८६० ॥

—पदघट्टनों से फाड़ देकर, (उन्हें) न छोड़कर, उसके बाद विलसित (उन) घुड़सवार राक्षसाधिपों को साहस से मिट्टी में मिला दिया। तब राक्षसों के अधिक दर्प से, आँखों से चिनगारियों के निकलने पर, बाण चलाकर, विजृंभित हो भालों से भोंककर, छुरियाँ भोंक ढकेलकर, सित-खड्ग-समिति (-समूह) से काटकर, मुद्गरों से वितत-चूर्ण बनाकर, और भी अन्य आयुधों से उग्रता का प्रदर्शन कर, शिलाओं (और) पादपों को (वापस) बिखराकर और ढकेलकर, साहस के उत्कर्ष से राक्षसों ने सामना कर, भीकरता से तरुचरों को मार डाला। तरुचर भी उन (राक्षस) पदाति (पैदल) सैनिकों पर भिड़कर, बार-बार आयुधों को तोड़कर, जबरदस्ती चरण (और) कर-निकरों को दबाकर, छक्के छुड़ाकर, दबाकर, दोनों हाथों में दो-दो राक्षसों को पकड़कर, शीघ्रता से (एक-दूसरे से) टकराकर, ॥३८७०॥

—लुढ़का देते, रुंड और मुंडों को ढंग से पकड़कर, सुघडता से काट देते, (इस प्रकार) अविलंब, साहस के दीप्त होने पर, अत्युग्र वेग से अनेक राक्षसों को मार डाला। इस प्रकार विजृंभित हो दोनों पक्षों के जूझने पर, (युद्धभूमि)

निव्विधंबुन बेंचि यिरुवागु बोर । नव्वनचरुलंदु नसुरुल यंदु
निंडिन नेत्तुरु नीळ्ळ भंगियुनु । गंडलु विरियु चेंगलुवल माड्कि
मानितास्यमुलु दामरल चंदमुन । नानेत्रमुलु गुमुदावळि पगिदि
दोरंपु ब्रेवुलु तूडुल तेंरगु । बेरिन मेंदडुनु फेनंबु रीति
मेंडु वेंट्रुकलु तुम्मेंद पिंडु पोलिक । दंडि शस्त्रंबुलु तरगल वड्डुवु
जामरावळ्ळुलु हंसंबुल ठेव । भूमि परागंबु पुप्पोडि योप्पु
गौकोंनि यपुडु संगर महीस्थलमु । भीकरंबय्युनु बेंद्दयु नोप्पें
ननिमिषारुलपालि यामृत्यु देवि । गोनकोंनि वर्तिचु कोलनि चंदमुन; ३८८०

गान गदा यिदि काकुत्स्थ रामु । नूनेंडु जयलक्ष्मि कुनिकिपट्टय्यें;
सुर खेचरुलु मेंच्चि सोंपारि रपुडु; । दुरमुन निरुवागु दोंडरि पोराड
गपिकोटि नोंच्चिन गडगि यंदंद । कपि नायकुलु सूचि कपट राक्षसुल
गेरलि क्रोधंबुन गिरि महीजमुल । दरमिडि नोंप्पिप दानवुल् बेंदरि
कडुवेगमुन गुंभकर्णुनि वेंनुक । कडरि पाङिरि 'शर' णनु पल्कु लोप्प;
नाकुंभकर्णुंडु नादैत्यवरुल । जेकोंनि दिक्कुलु सेंदर नार्चुचुनु
"नोड कोडकु" डनि यूरडिंचुचुनु । गूडि पै पै वच्चु कोतुल नेल्ल

वनचरों तथा असुरों के भरे रक्त के जल के समान, मांस-खण्डों के विकसित लाल कमलों की तरह, मान्य-आस्यों (-मुखों) के कमलों के समान, नेत्रों के कुमुद के समान, मोटे आँतों के कमलनालों के समान, घनीभूत बने भेजा के फेन की तरह, विपुल केश-समूह के भ्रमर-समूह की भाँति, बहुल शस्त्रों की तरंगों की तरह, चामरावलियों के हंसों की सुन्दरता सम, भूमि-पराग (धूल) के पुष्परज के समान होने पर, तब संगर-महीस्थली भीकर होते हुए भी अनिमिष-अरियों (राक्षसों) की मृत्युदेवता के सयत्न विहार करनेवाले सरोवर के समान शोभित हुई ।। ३८८० ।।

ऐसा होने से यह काकुत्स्थ राम की स्थिर-जयलक्ष्मी का आवास हुई । सुर (और) खेचर तब प्रशंसा कर शोभित हुए । (इस प्रकार) युद्ध में दोनों पक्षों के सयत्न जूझने पर, कपिकोटि पीड़ित हुई तो उसे देख कपि-नायक ने कपट-राक्षसों को विजृंभित क्रोध से गिरि-महीजों से शीघ्र पीड़ित किया । इस पर दानव भीत होकर, अतिवेग से कुंभकर्ण की आड़ में 'शरण-शरण' कहते दौड़ पड़े । वह कुंभकर्ण भी उन दैत्यवरों को ग्रहण कर, दिशाओं को विदीर्ण कर देनेवाला सिंहनाद करते हुए, 'मत डरो, मत डरो' कहते आश्वस्त करते हुए, 'एकत्र होकर आक्रमण करने के लिए आनेवाले समस्त बन्दरों को चितवनों से ही जला दूंगा' कहते हुए, क्रुद्ध हो, शूल धारण कर,

जूपुल चेतने चुरुवुत्तु ननुचु। गोपिंचि शूलंबु गौनि यार्चि पेर्चि
बलितंपु गपिकोटि पालिटि विधियौ, । कलुषत नेतेंचु कालुडो यनग
रावणु तम्मुडु राक्षसाधीशु। डावनचर कोटि नडगिंप जौच्चे; ३८९०

गरुकैन याकुंभकर्णुनि येंदुर। नेरवैन कडिमिनि निलुवलेकपुडु
वडि मूर्छ नौंदि युर्वर बडुवारु। गडुवडि नेत्तुरुल् ग्रक्केडुवारु
सेतुवु त्रोवकै चेंडिपारुवारु। वातूल गति दिवि वडि ब्राकुवारु
नगु वानरुल जूचि यडरि यंगदुडु। तग नप्पुडति बलोदग्रुडै पलिकें;
"नेल वानरुलार! यिटु चेंडिपारु। नेलिन पतिडिंचि येपु वोकार्चि!
वरकपींद्रुलु महावंश संभवुलु। कैरलि पारुदुरे प्राकृतुल चंदमुन?
रामुनि मुंदर रणमुलो बडिन। रामणीयक सुरराज्यंबु गलुगु;
नटुगाक ब्रदिकिन नति कीर्ति गलुगु; । निटु मगुडुडु; पारुनेल मी"
कनुचु

बुद्धुल सेप्पुचु बुरिकोल्पि योक्क। ग्रद्दन मगुडिंचे गपिकोटि नेल्ल;
नाकपु लंगदु नतुल वाक्यमुलु। गैकोनि योप्प नाकर्णिंचि मिंचि ३९००

सिंहनाद कर, विजृंभित होकर, मानों बली कपिकोटि के लिए विधि (नियति) हो, (अथवा) आकुलता से आनेवाला काल ही हो, रावण का अनुज राक्षसाधीश (कुंभकर्ण) उस वनचर-कोटि का दमन करने लगा।। ३८९० ।।

क्रूर उस कुंभकर्ण के समक्ष उपाययुक्त साहस से टिक न सक (वानर) झट मूर्च्छित हो पृथ्वी पर गिरनेवाले, अतिशीघ्र रक्त उगलनेवाले, सेतु के मार्ग की ओर भीत हो भागनेवाले, बातूल (पवन) के समान झट आकाश की ओर बढ़ जानेवाले हो गए। ऐसे वानरों को देखकर, विजृंभित हो अंगद ने तब अतिबल से उदग्र हो कहा—"रे वानरो! पालन करनेवाले पति को छोड़, उत्कर्ष को तजकर इस प्रकार परास्त होकर भागना क्यों? वर कपीन्द्र होकर, महावंशसंभव होकर, संभ्रमित होते हुए, प्राकृतों (साधारण जनों) के समान भागते हो? राम के समक्ष रण में गिर पड़ोगे (मारे जाओगे) तो रमणीय सुरराज्य (स्वर्ग) प्राप्त होगा। ऐसा न होकर जीवित रहोगे तो अतिकीर्ति प्राप्त होगी। इधर लौट आओ। तुम्हें भागना क्यों?" (ऐसा) कहते बुद्धि (नीतिवचन) कहते हुए, उत्साहित कर, शीघ्रता से समस्त कपिकोटि को लौटा लाया। वे कपि अंगद के अतुलित वाक्यों को ग्रहण कर, शोभा से सुनकर, उत्साहित हो,।। ३९०० ।।

"प्राणमु लित्तुमु रामुन; कतनि । प्राणंबु कंटे मा प्राण मे" मनुचु
गोंडलु गोनिवच्चिच 'को' यनि यार्चि । कोंड बोलिन दैत्यु गुंडे पै वैव
शूलंबु गोनि वडि जूर्णंबु सेसे । नालोन राक्षसुंडापर्वतमुल;
वदलक यंत वोवक रौद्र मेसग । गद चेतगोनि त्रिप्पि कडुवडि नेसि
पदियेडु कोटु लेवदियेडु लक्ष । लदन मुप्पदि वेलु नार्नूरु कपुल
हुंकार रवमुल नुग्रत मेरय । गिकतो ना रणक्षिति गूल्चे;
जेलगि यंतट बोक चेतुल गपुल । वलुविडि गवळिंचे वटु रौद्र मेसग
गरुडुंड वेस नुरगंबुल म्रिगु । करणि नेंतयु भयंकर वृत्ति तोड;
ना क्षणंबुन नोक्क यार्नूरु कपुल । वीक्षिच्चि यिरुवदि वेवुरु कपुल
लक्षिच्चि येनुबदि लक्षल कपुल । राक्षसाधीशुंडु रयमुन म्रिगें; ३९१०
म्रिगि यंतट बोक मिक्कुटंवगुचु । संगरांगणमुन जरियिचु चुंडि
नर भोजनुंडु वानर भोजनुंडु । धरणिपै दान यै दर्पिंचे; नपुडु
घूर्णिल्लुचुनु मुकु गोळुल यंदु । कर्ण रंध्रमुलंदु गपिसेन वेडले;
वेडळिन गवळिचि वेंडियु म्रिगु । दडयक; मरियु मुंदटि तेरंगुननु
जेलगुचु वेडलिन जेंदरि पोनीक । सोलवक पट्टि नज्जुग जेसि नमलु;

—यह कहते कि "राम के लिए प्राण देंगे । उसके प्राणों की अपेक्षा हमारे प्राणों का क्या (मूल्य) है ।" पर्वत ले आकर 'को'[1] कहते सिंहनाद कर, पर्वत के समान दैत्य के वक्ष पर डाल दिया । इतने में राक्षस ने उन पर्वतों को शूल लेकर झट चूर्ण कर दिया । न छोड़कर, उतने से न जाकर, रौद्र के विजृंभित होने पर, गदा हाथ में लेकर, घुमाकर, अतिवेग से फेंककर, सत्रह करोड़ सत्तावन लाख और अतिरिक्त तीस हज़ार छः सौ कपियों को, हुंकार-रवों से, उग्रता से दीप्त हो, क्रोध से उस रणक्षिति पर गिरा दिया । विजृंभित हो उतने से न जाने देकर, पटुरौद्र के उत्कर्ष से, हाथों से अतिशीघ्र कपियों को भयंकर वृत्ति से गरुड़ के झट उरगों को निगल जाने के समान, निगल गया । उसी क्षण एक छः सौ कपियों को देखकर, बीस हज़ार कपियों को लक्ष्य कर, अस्सी लाख कपियों को वह राक्षसाधीश शीघ्र निगल गया ।। ३९१० ।।

निगलकर, उतने से न जाने देकर, उत्कटता से संगरांगण में विचरण करते हुए, धरणि पर स्वयं ही नर-भोजन (करनेवाला) और वानर-भोजन (करनेवाला) होकर दीप्त हुआ । तब नथनों और कर्णरंध्रों से घूर्णित होती हुई कपिसेना निकल पडी । निकलने पर विलंब किए बिना उन्हें फिर निगल जाता । फिर आगे जैसा पुनः निकल आने पर, न थककर,

१ मल्लयुद्ध करते समय 'को' कहकर मल्ल एक दूसरे को ललकारते हैं ।

सडलि कोरल संधि जारि भूस्थलिनि। बडिन जूर्णबुगा बदहति ब्रामु;
नंत नातनि गदाहति बड्डु कोतु। लेंतयु दम मूर्छ लेल्लनु देलसि
यार्पुलतो दरुलद्रुलु देच्चि। दर्पिंचि निलिचिरा दानवु नेदुर;
गनलुचु द्विविदुंडु गंड शैलंबु। गोनि यप्पुडसुर वक्षोवीथि वगुल
नर्डरिप नदि दाकि यल्लंत मिट्टि। पडियें रात्रिचर बलमुलु सदिय;
३९२०

हनुम, कुंभकर्णुल पोराटमु

नप्पुडु हनुमंतु डधिक रोषमुन। निप्पुलु रालेंडु नेत्रंबु लोप्प
गिरि पादपंबुलु गिरिकोनि वैव। नुरुवडि दैत्यु डत्युग्रशूलमुन
दुमुरु सेयुचुनु बै द्रोचि रा मरियु। नमरुलु मेच्चंग नांजनेयुंडु
नसुरपै वैचे महा पर्वतंबु। नसमान बलुडितंडनि तन्नु बोगड;
दानिचे ना दैत्यु तनुवु कंपिंचि। मेनेल्ल नेत्तुरु मिक्कुटुंबय्यें;
दान नेंतयु नोच्चि दानवेश्वरुडु। मानक मेरुगुलु मंटलु ग्रुम्म
भूतलंबगल नभोभाग मविय। भीतिल्लि निर्जर-बृंदंबु वडक

पकड़कर, लोंधा बनाकर चबाता। फिसलकर दंष्ट्राओं के मध्य से भूस्थल पर गिरने पर पदाघात से चूर्णकर (ज़मीन पर) लीप देता। तब उसके गदा-आघात से गिरे सभी बन्दर अपनी मूर्च्छा से होश में आकर, सिंहनादों के साथ तरु और अद्रि लाकर, दर्प से उस दानव के सामने खड़े हो गए। क्रुद्ध होते हुए द्विविद ने गंडशैल को ले ऐसा फेंका कि उस असुर का वक्षस्थल विदीर्ण हो जाए। (किन्तु) वह (शैल) (असुर के वक्षस्थल से) लगकर टूक-टूक होकर ऐसा गिर पड़ा कि रात्रिचर (राक्षस)-सेना दब गई ॥ ३९२० ॥

हनुमान और कुंभकर्ण का युद्ध

तब हनुमान अधिक रोष से, चिनगारियाँ उगलनेवाले नेत्रों के शोभित होने पर, गिरि (और) पादपों को (राक्षस पर) घेरकर डालने पर, झट से दैत्य ने अत्युग्र शूल से उन्हें चूर्ण कर, ऊपर ढकेलकर आगे बढ़ा। तब अमरों के प्रशंसा करने पर, (राक्षस के) यह असमान बली है कहकर अपने को प्रशंसित करने पर आंजनेय ने महापर्वत को असुर पर डाल दिया। उससे उस दैत्य का तन कंपित हो उठा और समस्त शरीर अधिक रक्तयुक्त (लहूलुहान) हो गया। उस (आघात) से अधिक पीड़ित हो, दानवेश्वर न रुककर, चिनगारियों और ज्वालाओं के उमड़ने पर, भूतल के उखड़ने पर, नभोभाग के विदीर्ण होने पर, भीत होकर निर्जर-वृन्द के

गर मुग्रमैनट्टि घनतर शूल । मुरुवडि बून्चि समुल्लासि यगुचु
मडवक शक्ति गुमारुंडु पेंचि । वडि ग्रौंच गिरिमीद वैचिन करणि
हनुमंतु पै नेत्ति यति रभसमुन । वनचरुल् बेंदरंग वैचे नय्यसुर; ३९३०
यटु वैव दान नय्यनिलजुनुरमु । पट पट बगुल नप्पावनि यपुडु
डरुकोपरस मेल्ल नुमियु चंदमुन । दुरमु लोपलनु नेत्तुरुलु ग्रक्कुचुनु
ब्रळयकालमु नाटि पटुमेघ रवमु । बलुवुन नेंतयु बरग रोजुचुनु
गपुलु गंपिप राक्षसुलु मोदिंप । गपि शेखरुडु गूलेंगल लावु दूलि;
यालंबुलो नप्पुड निलजु पाटु । नीलुडु गनुगोनि नेग्रयु कोपमुन
गैकोनि वैचे राक्षसुलेल्ल बेंदर । ना कुंभकर्णु महापर्वतमुन;
वडि तोड बै बड वच्चु पर्वतमु । बेंडिदंबुगा वाडु पिडिकिट बोडिचे;
बोडिचिन नदियु नद्भुतमुगा जेदरि । येंडपक चिरुमंट लेंगसि नुगर्यो;
नमरारि पै नप्पुडाग्रहव्यग्रु । लमित बलोदग्रुलगु महा कपुलु
च्रलमुन ऋषभुंडु शरभुंडु बेचि । कलुषत नीलुंडु गंधमादनुडु ३९४०
नग्गवाक्षुंडुनु नधिकरोषंबु । लग्गलिपग नप्पुडडरि पेल्लार्चि

कंपित होने पर, अधिक उग्र बने घनतर-शूल को द्रुतगति से धारणकर, समुल्लसित होते हुए, निष्फल न बननेवाली अपनी शक्ति को कुमार (स्वामी) के विजृंभित हो क्रौंचगिरि पर डालने के समान, (उसे) हनुमान पर आक्रमण कर, अति रभस के साथ, वनचरों के भीत होने पर, असुर ने फेंक दिया ।। ३९३० ।।

ऐसा डालने पर, उससे अनिलज का उर 'फट-फट' की ध्वनि से फूट गया । तब पावनी (हनुमान) उरु-कोप रस को उगलने के समान, युद्ध (भूमि) में रक्त उगलते हुए, प्रलयकाल के समय के पटुमेघरव के समान अधिक हाँफते हुए, कपियों के कंपित होने पर (तथा) राक्षसों के मुदित होने पर, अपनी सामर्थ्य को खोकर कपिशेखर गिर पड़ा । युद्ध में तब अनिलज के पतन को नील देखकर, अधिक क्रोध से, समस्त राक्षसों के भीत होने पर, महापर्वत को लेकर कुंभकर्ण पर डाल दिया । झट से अपने पर आ गिरनेवाले पर्वत को भीकरता से उसने (राक्षस ने) मुष्टि से मारा । प्रहार करने पर वह अद्भुत रूप से बिखरकर अविलंब लघु ज्वालाओं के निकलने पर चूर-चूर हो गया । तब अमरारि (राक्षस) पर आग्रह (क्रोध) से व्यग्र तथा अमित बल से उदग्र बने हठ से महाकपि ऋषभ, विजृंभित हो शरभ, क्रोध से नील, गंधमादन, ।। ३९४० ।।

—अधिक रोष के उत्कर्ष से गवाक्ष आदि ने तब अधिकता से सिंहनाद कर,

तरमिडि वानिपै दरुलु वैचियुनु । गिरुलु व्रेसियु बिडिकिळ्ळ दाचियुनु
बदमुल नन्नियु बट्टुनखप्रतति । विदळिचियुनु बहुविधमुल नौचि
येचिन नन्नियु नित गैकौनक । येचि यद्दानवुंडेसगु रौद्रमुन
बट्टुतरंबुग नेलबडि तन्नुकौनग । जटुलत बिडिकिट शरभुनि बौडिचें;
नुरुवडि ऋषभुनि नौडिसि रादिगिचि । करमुल गौनि मुद्दगा नौगिलिचें;
गुनिकल बडि तन्नुकौनि गुंडेलविय । घनुडैन नीलु मोकाल दाटिचें;
नसमुन निगुडि गवाक्षुनि गिट्टि । यसुरेशु डर्चेत नदरंट नेसें;
ग्रम्मिन तेंगुवमै गंधमादनुनि । बिम्मिट गौनि त्रेळ्ळ बैडचेत वैचें;
रयमुन रणरागरसमुलु ग्रक्कु । क्रिय नेत्तुरुलु ग्रक्कि कोंडसिरेगुरुनु; ३९५०

शूलंबु द्रिप्पि यार्चुचु नट्टहास । लोलुडै यालंबुलोन ग्रुम्मरुचु
वितत वज्राभील वृत्रारि भंगि । नतुल दंडोद्दंड यमुनि चंदमुन
गडु भयंकर वृत्ति गाग बेल्लार्चि । मुडिवडु नेम्मोगंबुन निप्पुलुरल
ब्रळयकालमुनाटि पटु शूलरुचुलु । दौलुकाड नाडु रुद्रुनि तेरंगुननु
मेरसे बोम्मनुमाट मिक्किलि गाग । नेरवार नंदर निर्जिचें गान;

क्रम से उसपर तरु फेंककर, गिरि फेंककर, मुष्टियों से प्रहार कर, चरणों से लात मारकर, पटु-नख-प्रतति से खण्डित कर, (इस प्रकार) बहुविधियों से पीड़ित कर, सताया। उन सबकी बिलकुल परवाह न कर; विजृंभित हो उस दानव ने अधिक रौद्र से शरभ को चटुलता से मुट्ठी से मारा जिससे वह पटुतर रूप से जमीन पर गिरकर छटपटाने लगा। शीघ्रता से ऋषभ को खींच पकड़, हाथों से (मसलकर) पिण्ड जैसा बनाया। महान् नील को घुटने से ऐसा मारा कि वह नीचे गिरकर, कलेजे के टूक-टूक होने पर छटपटाने लगा। दर्प से तनकर गवाक्ष के पास पहुँच, असुरेश ने हथेली से मारा जिससे वह सहम गया। अधिक साहस से गंधमादन को बाएँ हाथ से ऐसा मारा कि वह बेहोश हो नीचे गिर पड़ा। शीघ्रता से रणराग रस को उगलने के समान पाँचों (कपि) रक्त उगलकर मर गए ॥ ३९५० ॥

शूल को घुमाते हुए, अट्टहास करने में मग्न होते हुए, युद्धभूमि में घूमते हुए वितत-वज्र के कारण आभील (भयंकर) बने वृत्रारि (इन्द्र) के समान, अतुल दण्ड से उद्दण्ड बने यम के समान, अधिक भयंकर वृत्ति से अधिक सिंहनाद कर, तने हुए मुख से अग्निकणों के झरने पर, प्रलयकाल के समय पटुशूल की रुचियों (कांतियों) के विकीर्ण होते समय रुद्र के समान (कुंभकर्ण) प्रकाशित हुआ। शत्रुओं को निर्जित करने की बात अधिक वास्तविक हुई।

सुग्रीवडु कुंभकर्णु नितो बोरि मूर्छिल्लुट

नप्पुडु सुग्रीवु 'डनिसेय नाकु । निप्पुडु तरि' यनि यिच्च र्जिंतिचि
कुलशैलपतिमीद गोपिंचि वच्चु । बलभेदिपगिदि नप्रतिमविक्रमुडु
पोरि बोरि सर्वागमुलु वेंचि पेंचि । परुषरोषानल प्रभलुप्पतिल्ल
गोंडलकेल्लनु गोंडयैनट्टि । कोंडनानोक पेद्द कोंड सेपट्टि
कोतुल नेत्तुट गोमरोप्प दोगि । मूतियु दनुवुनु मुदुकयै तोचि ३९६०
वीक्षिप नरुदैन वेषंबुतोडि । राक्षसाधीशु पै रयमुन वच्चि
"नन्नेरुंगवे ? येनु नलिनाप्तसुतुड; । सन्नुतुंडगु रामचंद्रुनि बंट;
नीकु नाकुनु गाक निष्ठुरयुद्ध । मी कपिकोट्टुल नेल चंपेदवु ?"
अनि पेंचि सुग्रीवुडाडु वाक्ययुलु । विनि कुंभकर्णुंडु विपुलकोपमुनु
"सुग्रीव ! कडु निन्नु शूरुंडवंदु; । राग्रहितुरे शूरुलनि वेलिगाग ?
शूरत रणमुन जूपुदु गाक । यूरक वेडमाटलोप्पुने नीकु ?"
ननिन राक्षुसुमीद नर्कनंदनुडु । किनिसि ता देच्चिन गिरि यैत्ति वैचे;
वैचिन नदि वानि वक्षंबु दाकि । चूचुनंतटिलोन जूर्णमै राले;
ना बेट्टिदंबुन कार्चे निर्वागु । ना बलिलदुनि चेत नसुर स्रुक्कियुनु

सुग्रीव का कुंभकर्ण से लड़ते मूर्च्छित होना

तब सुग्रीव ने मन में यह चिंतन कर कि 'युद्ध करने का अब मेरे लिए अवसर (आया) है', कुलशैल-पति पर क्रुद्ध हो आनेवाले बलभेदी (इन्द्र) के समान, अप्रतिम विक्रमवाले (सुग्रीव) ने बार-बार सर्व-अंगों को बढ़ाकर, विजृंभित हो, परुष रोषानल-प्रभाओं के उमड़ने पर, पर्वतों के लिए पर्वत बने एक बड़े पर्वत को हाथ में ले, बन्दरों के रक्त में शोभा से ऊभचूभ होने से मुँह और शरीर के वृद्ध हो दीखकर, ।। ३९६० ।।

—देखने में विरल बने वेष से, शीघ्रगति से राक्षसाधीश पर आकर बोला—"मुझे नहीं जानते हो ? नलिनाप्त का सुत हूँ। सन्नुत रामचन्द्र का सेवक हूँ। तुम में और मुझ में निष्ठुर युद्ध होना चाहिए। इन कपि-कोटियों को क्यों मार डालते हो ?" ऐसा विजृंभित हो सुग्रीव के कहे वाक्यों को सुन कुंभकर्ण ने विपुल कोप से (कहा) "हे सुग्रीव ! तुम्हें लोग बड़ा शूर कहते हैं। शूर अनि (युद्ध) किए बिना ही क्रुद्ध होता है क्या ? शूरता को रण में दिखा देना। ये व्यर्थ की बातें तुम्हें शोभा देती हैं ?" (ऐसा) कहने पर अर्कनंदन ने राक्षस पर क्रुद्ध हो लाए हुए गिरि को उठाकर डाल दिया। डालने पर वह (पर्वत) उसके वक्ष से लगकर देखते-देखते चूर हो गिर गया। उस भयंकर (दृश्य) से दोनों पक्षवालों ने सिंहनाद किए।

दडयक यत्यंत धैर्यबुतोड । गड्ड भयंकर वृत्ति गाग बॆल्लार्चि ३९७०
दिगुलॊंदि यगचराधिपुल गुंडियलु । वगुलंग निलुवुन ब्राणमुल् वोव
जगतीतलमु नाकसंबु दिक्कुलुनु । नगल राक्षसुंडट्टहासंबु सेसि
हुंकाररवमुन नुग्रत मॆरय । गिंकिणी घंटिकाघींकाररवमु
वासिकॆक्किन यिरुवदि वेल तलल । जेसि गंधाक्षतार्चित मूर्ति नॊप्पु
शूलंबु निर्जरासुरुलकुनैन । दालुप ब्रेगैनदानि नक्षणमॆ
सुग्रीवुमीद वैचुटयु बॆल्लेचि । युग्रंपुमंटल नुज्ज्वलंबगुचु
नेलयु निंगियु निखिल दिक्कुलुनु । जालंग दरिकॊनि सागि मंडुचुनु
बदिवेल पिडुगुल पगिदि म्रोयुचुनु । वदलकर्कजुमीद वच्चुट सूचि
घनविषज्वालोरगप्रभु बट्टि । विनतात्मजुड्डु द्रुंचु दॆरवु दीपिंप
नॆंडसॊच्चि हनुमंतु डेपार नॊडिसि । कडुबॆक्कु तुनियलुगा द्रुंचिवैचि ३९८०
कुप्पिचि दाटि यॆक्कुडु पेमि नार्चॆ । नप्पुडु वानरुलंदरु बॊगड;
शूलंबु विरुगुट सूचि कोपिंचि । यालोन वेग नय्यसुरेश्वरुंडु
कनलुचु वच्चि लंका मलयाद्रि । घन शृंगमॆत्ति यर्कजुमीद वैचॆ;

उस बलवान (सुग्रीव) के हाथ असुर ने कमजोर होकर भी, अविलंब, अत्यन्त धैर्य से, अधिक भयंकर-वृत्ति से अधिक सिंहनाद किया, ।। ३९७० ।।

—जिससे भीत हो अगचराधिपों के हृदय विदीर्ण हुए, खड़े-खड़े उनके प्राण निकल गए। जगतीतल, आकाश और दिशाएँ विदीर्ण हो जाएँ, इस प्रकार राक्षस ने अट्टहास करके, हुंकार रव की उग्रता से दीप्त होकर, किंकिणी-घंटिका रव से प्रसिद्ध बने तथा बीस हज़ार सिरों की (आहुति) के बाद गंध-अक्षतों से अर्चित मूर्तिवाले तथा निर्जर (तथा) असुरों को भी धारण करने के लिए (अति) भारी शूल को उसी क्षण सुग्रीव पर फेंक दिया। अति विजृंभित हो उग्र ज्वालाओं से उज्ज्वल होते हुए, पृथ्वी और आकाश तथा समस्त दिशाओं में लगकर बढ़ते जलते हुए, दस हज़ार अशनियों के समान मुखरित होते हुए, दुर्निवार रूप से अर्कज पर आते देख, घनविष से उज्ज्वल बने उरग-प्रभु (सर्पराज) को पकड़, विनतात्मज (गरुड़) के तोड़ देने के विधान के प्रदीप्त होने पर, बीच में आकर, हनुमान ने उत्साह से (उस शूल को) पकड़ अनेक खण्ड-खण्ड करके, ।। ३९८० ।।

—छलांग मार अधिक प्रेम से सिंहनाद किया। तब समस्त वानरों ने प्रशंसा की। शूल के टूट जाते देख, क्रुद्ध हो, इतने में झट उस असुरेश्वर ने जलते हुए (क्रोध से) आकर, लंका की मलयाद्रि के महाशृंग को उठाकर

नुग्रंबुगा नदि युरमु दाकुटयु । सुग्रीवुडपुडु रोजुचु नेल बडियें ।

मूर्छिल्लिन सुग्रीवुनि गुंभकणु्ंडु लंककु गोंपोवुट

नातडु वडुटकु नखिल राक्षसुलु । चेतोगतुलयंदु जैंलगि यावँग
गुंभकर्णुंडतिक्रूरुडै वच्चि । कुंभिनि बडियुन्न गुरुसत्त्व धनुनि
गनुगोंनि "तलपोय गपि बलंबुनकु । निनकुलेश्वरुनकु नीतंडै लावु;
ईतडु वडुटयें येंल्ल वानरुलु । नातत गति बडु; टदि सेंप्पनेल?
सुग्रीवु मायन्न सूचु गा" कनुचु । नुग्रुडै कोंनि पोयें नोंनर लंककुनु
गालानिलमु वच्चि काल मेघमुनु । गूलिचि गुहकुनु गोंनिपोवु करणि; ३९९०
नट सुरावळि येंल्ल "नकट! सुग्रीवु । डिट्टु पट्टुवडि पोवुने" यनि वगव
नक्कुंभकर्णुनि यलवु ज्रलंबु । दक्कक यंदंद दनुजुलु वोंगड
वेंनुकोंनि रविसुतु विडिपिंप लेक । वनचरुल् हाहारवंबुलु सेय,
गरुवलि सुतुडु नंगदुडु नीलुंडु । शरभुंडु ऋषभुंडु जांबवंतुंडु
गिरिभेदि सुतरुंडु गेसरि पृथुडु । हरिरोमुडुनु बावकाक्षुंडु हरुडु
द्विविदुंडु मैंदुंडु वेगवंतुंडु । गवयुंडु शतबलि गजुडु दुर्दमुडु

अर्कज पर डाल दिया । उग्रता से उसके उर पर लगने पर, तब सुग्रीव हाँफते हुए पृथ्वी पर गिर पड़ा ।

मूच्छित सुग्रीव को कुंभकर्ण का लंका ले जाना

उसके गिरने पर समस्त राक्षसों ने चेतोगतियों (मन) में उत्साहित हो सिंहनाद किया । (तब) कुंभकर्ण ने अतिक्रूर हो आकर, कुंभिनी (पृथ्वी) पर पड़े हुए गुरु-सत्त्व-धनवाले (सुग्रीव) को देखकर (सोचा)— "सोचने पर कपि सेना को (तथा) इनकुलेश्वर की यही शक्ति (संबल) है । इसका गिरना ही समस्त वानरों का आतत-गति से गिरने के सम है । इसे (अलग से) कहना क्यों ? मेरा अग्रज सुग्रीव को देख लेगा ।" (ऐसा) सोचते, उग्र हो, कालानिल के आकर कालमेघ को गिराकर, गुफा में ले जाने के समान, शोभा से लंका में ले गया ।। ३९९० ।।

उधर समस्त सुरावलि 'हाय ! सुग्रीव इस प्रकार पकड़ा जाकर, ले जाया गया न !' कहकर दुखी हुए, तो उस कुंभकर्ण की सामर्थ्य (और) हठ की जहाँ-तहाँ दानव प्रशंसा करने लगे । पीछाकर रविसुत को छुड़ा न सक वनचर हाहाकार करने लगे । तब पवनपुत्र, अंगद, नील, शरभ, ऋषभ, जांबवान, गिरिभेदी, सुतर, केसरी, पृथु, हरिरोम, पावकाक्ष, हर,

सुमुखुंडु वालपाशुडु गवाक्षुंडु । गुमुदुडु ज्योतिर्मुखुडु सुषेणुंडु
दधिमुखुंडुनु वेगदर्शि रंभुंडु । ग्रथनुंडु धूम्रुंडु गंधमादनुंडु
दारुंडु ग्रोधनतपन प्रजघ । घोराक्षजंघाल गोमुख विमुख
पनस सन्नाथ संपातींद्रजाल । विनुत सुदंष्ट्रक श्वेत दुर्मुखुलु ४०००
वीरादिगा गल वीरवानरुलु । दारुणाकारु लुद्दंड विक्रमुलु
धारुणीधरमुलु दरुवुलु गौनुचु । नारूढ़ भुज सत्त्वुलै मिटि कॅगसि
यट्टहासंबुल नार्पुल दिक्कु । लट्टिट्टु गाग ब्रह्मांडंबु वगुल
"निनसूति विडिपितु मैट्लैन" ननुचु । दनुजुनिपै बड दर्मकिचुटयुनु
गरमेत्ति 'वल' दनि करुवलिसुतुडु । वरनीति मति गान वारि
किट्लनियै;
"भानुतनूजुडुद्भटशूरवर्यु । डूनिन मूर्छचे नुन्नवाडिप्पु;
डामूर्छ बापिन नात्मलो दॅलिसि । यामहात्मुडु वच्चु; नटुगाक मनमु
विडुवकी यसुरचे विडिपिचुकॉन्न । गडुलाघवंबुन गपिकुलेश्वरुडु
मदिलोन नॅप्पुडु मरुगुचुनुंडु; । निदि विचारमु कादु; यिचुक सैचि
यटु चूडु; डीलोन नतडु राकुन्न । गुटिलुलौ रावणकुंभकर्णुलनु ४०१०
जटुल विक्रमुलैनन सकल राक्षसुल । बटु मुष्टि निहतुल भग्नंबुसेसि

द्विविद, मैंद, वेगवान, गवय, शतबलि, गज, दुर्दम, सुमुख, वालपाश, गवाक्ष, कुमुद, ज्योतिर्मुख, सुषेण, दधिमुख, वेगदर्शी, रंभ, क्रथन, धूम्र, गंधमादन, तार, क्रोधन, तपन, प्रजंघ, घोराक्ष, जंघाल, गोमुख, विमुख, पनस, सन्नाथ, संपाति, इन्द्रजाल, विनुत, सुदंष्ट्रक, श्वेत, दुर्मुख, ।। ४००० ।।

—आदि वीर वानर जो दारुण आकारवाले (तथा) उद्दण्ड विक्रमवाले हैं, धारुणीधरों (पर्वत) (और) तरुओं को लेते हुए, आरूढ़-भुज-सत्त्व वाले होकर आकाश में उड़कर अट्टहासों और सिंहनादों से दिशाओं के कंपित होने पर, ब्रह्माण्ड के विदीर्ण होने पर, 'किसी भी तरह इनसूति को छुड़ाएंगे' कहते हुए दनुज पर टूट पड़ने के लिए उतावले हुए तो हाथ उठाकर 'रुको' कहते हुए पवनसुत ने, वरनीतिवान होने के कारण, उनसे यों कहा— "भानुतनूज उद्भट, शूरवर है, अब मूर्च्छा धारण किए ऐसा है। उस मूर्च्छा के हट जाने पर, होश में आकर, वह महात्मा (लौट) आएगा। ऐसा न होकर, हम लगकर इस असुर के हाथ से अतिलाघव से उसे छुड़ाएँगे तो कपिकुलेश्वर मन में सदा व्याकुल हो रहेगा। यह (ठीक) विचार नहीं है। थोड़ा सहन कर देखिए। इतने में वह (लौट) नहीं आएगा तो कुटिल रावण-कुंभकर्णों को, ।। ४०१० ।।

—चटुल विक्रम वाले, सकल राक्षसों को पटुमुष्टि-निहतियों (आघातों) से

हाटक दीप्तुल नलरंडु नेडु । कोटलु लंकयु गूलंग द्रोचि
प्रळयंबु नोंदिचि भानुजु गूडि । ग्रलमु गोपमु मीऱ जनुदेंत मेलमि"
ननि यिट्लु हनुमंतुडाडु वाक्यमुल । मनमुल नलरि यामर्कटेश्वरुलु
विनु वीथि नत्यंत वेगुलै दनुजु । वेंनुकोनि पोव, नव्विध मेरुंगकये
यट गुंभकर्णुंडु नर्कजु गोनुचु । बटुरयंबुन जोच्चे बलियुडै लंक;

सुग्रीवुडु मूर्छ देरि कुंभकर्णुनि विरूपनि जेयुट

राजमार्गंबुल रा मेडलंदु । राजिल्लु नागोपुरंबुल यंदु
नोप्पेंडि पुरकांत लोंगि पुष्पवृष्टि । यप्पुडु कुरियंग नर्कनंदनुडु
तेलिसि यापुर वीथि देऱगोप्प जूचि । वेलवेल नै कडु वेऱगुन गुंदि
"यिटु पट्टु वडिति ने नी दैत्युचेत । बटुतर मूर्छ चे बडियित तडवु" ४०२०
ननियटु करमुल नादैत्यु चेवुलु । पैनचि तम्मैल तोड वेरिकि रा दिगिचि
पुटमुलतो मुक्कु बोसिवो गऱचि । पटुगति मिटिकि भानुजुंडैगय
निम्मुल बोनीक येचि राक्षसुडु । क्रम्मऱ नातनि काळ्ळोगि बट्टि
नेलतो व्रेसिन नेगसि सुग्रीवु । डेलिन पतिकड केगे वेगमुन;

भग्न करके, हाटक-दीप्तियों से विराजमान सात प्राकारों वाली लंका को ढहा देकर, प्रलय मचाकर, भानुज के साथ हठ (और) क्रोध के उत्कर्ष से (वापिस) आ जाएँगे ।" (ऐसा) कहनेवाले हनुमान के वाक्यों से मन में प्रसन्न हो, वे मर्कटेश्वर, विनुवीथि में अत्यन्त वेग से दनुज का पीछा करते गए । उस विधान को न जानकर ही उधर कुंभकर्ण ने अर्कज को लेकर, अतिवेग से, बली हो, लंका में प्रवेश किया ।

सुग्रीव का होश में आकर कुंभकर्ण को विरूप करना

तब राजमार्गों में, राजभवनों में, विराजमान उन गोपुरों में शोभायमान पुरकान्ताओं के क्रम से पुष्पवृष्टि करने पर अर्कनन्दन होश में आया । उस पुरवीथि को ढंग से देखकर, विवर्ण बन, अति आश्चर्य से विकल होकर, 'पटुमूर्च्छा के अधीन हो, इतनी देर इस दैत्य के हाथ पड़ा रहा', ॥४०२०॥ —(ऐसा) सोच, हाथों से उस दैत्य के कान मरोड़कर, कर्णभूषणों के साथ खींच लिये । नासिका शून्य हो जाएँ, ऐसा कुतर डाला (और) पटुगति से भानुज आकाश में उड़ चला । शोभा से उसे जाने न देकर, विजृंभित हो, राक्षस ने पुनः उसके पैर पकड़कर, ज़मीन पर पटक दिया तो उड़कर सुग्रीव

सुरलोकसंबुन जोद्यंबु नोंद । दरुचरवरु लेल्ल दनुजेरिग्रोक्क;
वारुनु दानुनु वच्चि सुग्रीवु । डारामचंद्रुनि यडुगुल केरग
नालिंगनमु सेसें नंत राघवुडु । नालोन गपुलेल्ल नानंद मंद;

कुंभकर्णुडु वानरुल जक्काडुट

नायसुरेशुडु नटु मुक्कु सेवुलु । वोयिन नेंतयु बुद्धिलो रोसि
"मुनु चेलियलि बन्नमुनकु नै यात्म । नेनसिन सिग्गुन नेंगौनर्रिप
वनजाप्तकुलुनितो वलवनि वैर । मुन मगंटिमि तोड बोराडुचुन्न ४०३०
नाकारि कडकु मानमु गोलुपोयि । यी कष्ट तनुवुतो नेमनि पोदु ?
बोरिकि नुचितंबु पोवुट" यनुचु । ना रक्तपूरंबु लंदंद क्रम्मि
तनुवुन निंड नुद्दंड वर्तनुडु । घनतर रोषंबु गडलुकोंनंग
जेवुरु चायल सेलयेरु लडर । गा वच्चु नीलाद्रि कैवडि दोप
नटुगाक "वीडु युगांतंबु नाटि । चटुलाग्नि" यन रणस्थलि केगुदेंचि
यद्रिमुरि गोपिंचि यगचर सेन । दद्रिमि दानवु डत्युदग्रुडै मेरसि

अपने राजा के पास शीघ्रगति से पहुँचा। आकाश में सुरों के आश्चर्यचकित होने पर (तथा) समस्त तरुचरवरों के घेरकर प्रणाम करने पर, उनके साथ आकर सुग्रीव रामचन्द्र के चरणों में नत हुआ। समस्त कपि आनन्दित हों, ऐसा राघव ने तब उसका आलिंगन किया।

कुंभकर्ण का वानरों का सत्यानाश करना

वह असुरेश्वर वैसा नाक और कान के (कट) जाने पर मन में अधिक घृणा करके, "पूर्व के अनुजा के अपमान के कारण मन में उत्पन्न लज्जा के कारण, प्रतीकार करने के लिए वनजाप्तकुल वाले (राम) से दुर्निवार वैर लेकर, पौरुष से जूझते समय, ।। ४०३० ।।

—नाकारि (रावण) के पास (इस प्रकार) मान खोकर, इस क्रूरतनु को लेकर कैसे जाऊं ? युद्ध के लिए जाना ही उचित है।" (ऐसा) सोचते, रक्तपूर के जहाँ-जहाँ प्रवहित होकर, शरीर को भर देने पर, उद्दंड-वर्तन (-आचरण) वाला (कुम्भकर्ण) घनतर रोष के (मन में) व्याप्त होने पर, गेरुए रंग के झरनों की अतिशयता से पूर्ण नीलाद्रि के समान दीखते हुए, अथवा 'यह युगांत के समय की चटुल-अग्नि है' ऐसा रणस्थल में आकर, शीघ्र कुपित होकर, अगचर-सेना को भगाकर, (वह) दानव अति-उदग्र हो प्रकाशित हुआ। अति उग्रता से (वानरों के) पैरों को क्रम से पकड़कर

कड्डनुग्रमुग गडकळ्ळोंगि बट्टि । वडि द्रिप्पि त्रिप्पि युर्वर मीद व्रेयु;
बिरबिर व्रेवुलु पिडिकिटि लोन । बेंरिकि रा गोंदर बिडिकिट बोंडुचु;
निब्बरंबुग दाचि नेंरय गुंडियलु । दोंब्बलु नुरुकंग द्रोक्कु बादमुल;
बिडुगुल बोलेंडु पेंडचेतुलेत्ति । कडु नुग्रमुग मन्नु गरवंग नेयु;
४०४०

दनमीद व्राकिन तरुचरावळुल । विन विस्मयंबुगा वेंस निग्रहिंचु;
नगपडु राक्षसु नैननु बट्टि । तिगिचि वेगमुन गुत्तिक लोन वैचु;
झंकाररवमुल शवमुलु सेयु; । हुंकार रवमुल नसुरुलु वापु;
दिविज विमानमुल् दिरुगुडुवडग । दिविचि मर्कटुल मीदिकि नेंत्तिवैचु
नेंगसिन कपुलतो नेट्टु दाकंग । नगचरावळि बट्टि यंदंद वैचु;
नेंम्मुलु नुरुमुगा नेपार द्रिप्पि । यिम्मुल गोंदर नेंड गलग वैचु;
गोंदर निरुगेल गुदियंग बट्टि । यंदंद तार्टिचि यल्लंत वैचु;
"नीवानरुल जूडुडेर्पड" ननुचु । लावुन गोंदर लंकलो वैचु;
बेंपार "दनुगट्टि पेर्चिन कपुल । मुंपु मी" यनि यब्धि मुनुगंग वैचु;
निव्विधंबुन दानवेश्वरुडेचि । यव्वानरुल दिक्कुलंदेल्ल वैव ४०५०
मेदिनि यंदुनु मिन्नुल यंदु । नेदिक्कुलंदुनु नेंडमु लेकुंड

झट घुमा-घुमाकर जमीन पर पटक देता, झट आंत मुष्टि में आ जाएँ ऐसा कुछ (वानरों) पर मुष्टि प्रहार करता, धैर्य से लात मारकर, उत्कर्ष से कलेजा और स्नायु चूर हो जायें ऐसा चरणों से कुचल देता, अशनियों के सम मरोड़ा हुआ हाथ (मुट्ठी) उठाकर ऐसा मारता कि वे (वानर) मिट्टी चाटने लगते, ।। ४०४० ।।

—अपने ऊपर रेंगनेवाले तरुचर-समूह को, सुनने में आश्चर्यप्रद रूप से, दबा देता, नजर में आए राक्षस को ही सही, पकड़, खींच झट मुँह में डाल लेता, झंकार रवों से (उन वानरों को) शव बना देता, हुंकार रवों से प्राणों से विहीन कर देता, दिविज-विमान चक्कर खाएँ ऐसा खींचकर मर्कटों पर डाल देता, ऊपर उछले मर्कटों पर प्रहार कर, नगचर समूह को पकड़ जहाँ-तहाँ फेंक देता, कुछ को दोनों हाथों से सिकोड़कर, पकड़कर, जहाँ-तहां टकराकर दूर फेंक देता, 'इन वानरों को ढंग से देख लो' मानों ऐसा कहते, समर्थता से कुछ को लंका में फेंक देता, शोभा से 'तुम पर (सेतु) बांधे कपियों को डुबो दो' कहते अब्धि में फेक देता जिससे वे डूब जायें, इस प्रकार दानवेश्वर ने विजृंभित हो उन वानरों को समस्त दिशाओं में फेक दिया, ।। ४०५० ।।

बडि चच्चु कपुलुनु बडि डोल्लु कपुलु। बडि कूतलिडु कपुल् पडि पोरल्
कपुलु
बडि तन्नुकोनु कपुलु पडि रोजु कपुलु। बडियुन्न कपुलुनु बडियेडु कपुलु
नै रणस्थलि येल्ल नगचराक्रोश। मारासुनि चेत नग्गलंबय्ये;
ना कुंभकर्णुनि यत्युग्र भीष-। णाकृति कालांतकाकृति यैन
नडगें दारापति; यलिकें नंगदुडु;। नडिकें गवाक्षुडु; डुन्नति दक्कें गजुडु
जलियिंचें ऋषभुंडु; शंकिचें नलुडु;। बेलुकुरें नीलुंडु; बेग्गिलें बृथुडु;
वेरगंदें शरभुंडु; वेरचें धूम्रुंडु; । नुरुकंपमुन बोंदे नोगि बनसुंडु;
गडुभीति नोंदेनु गंधमाधनुडु; । नडलुचु वडकें नय्यनिलनंदनुडु;
जूड भयंबंदें ज्योतिर्मुखुंडु; । जाड सेकोनि पारें जांबवंतुंडु; ४०६०
नुलिकिरि वेंडियु नुन्न वानरुलु। गलय नंतट गुंभकर्णुनि जूचि;
घन-बाहु-बलुडु लक्ष्मणुडु गोपिंचि। चनुमरु नाटिचें शरमु लेडिट;
मरियु बेक्किट लक्ष्मण देवु डेय। गरकु राक्षसुडु लक्ष्मणुनि गैकोनक
बलुविडि राग नापाद-मस्तकमु। नलमि प्राकुचु गपु लादैत्यु मेन

—(फेंक देने पर) मेदिनी पर, आकाश पर, सभी दिशाओं में (वे वानर) भरकर गिर मरनेवाले कपि, लुढकनेवाले कपि, गिर चिल्लानेवाले कपि, गिरकर लोटनेवाले कपि, गिर छटपटानेवाले कपि, गिर हाँफनेवाले कपि, गिरे हुए कपि और गिरनेवाले कपियों से युक्त हो समस्त रणस्थल उस राक्षस के कारण अधिक अगचर-आक्रोश (आक्रंदन) से युक्त हो गया। उस कुम्भकर्ण की अत्युग्र-भीषण-आकृति के कालांतक-आकृति होने पर तारापति (सुग्रीव) दब गया, अंगद नत हो गया, गवाक्ष काँप उठा, गज औन्नत्य से हीन हो गया, ऋषभ विचलित हो गया, नल शंकित हो गया, नील विह्वल हो गया, पृथु चीख उठा, शरभ चकित रह गया, धूम्र भीत हुआ, पनस अधिक कंपन को प्राप्त हुआ, गन्धमादन अधिक भीत हुआ, वह अनिलनंदन उद्विग्न हो काँप उठा, (कुम्भकर्ण को) देखते ही ज्योतिर्मुख भीत हो गया, मार्ग पकड़कर जाम्बवान भाग गया, ॥ ४०६० ॥

—शेष सभी वानर अत्यन्त भीत हुए। तब सर्वत्र कुम्भकर्ण को देख घनबाहुबल वाले लक्ष्मण ने क्रुद्ध हो, स्तनाग्रभाग (वक्ष) पर सात वाण चलाए। उसके बाद लक्ष्मणदेव के और भी कई वाण चलाने पर, क्रूर राक्षस लक्ष्मण की परवाह न कर, समर्थ हो, आगे बढ़ा। उस दैत्य के शरीर पर, कपि आपाद-मस्तक रेंगते हुए, क्रुद्ध हो, मूँछें पकड़ झूलते हुए, क्रोध से अपनी पूँछों से उसके (शरीर को) घेर लेते हुए, झट से उसपर टूट गिरकर, (शरीर की) उन-उन संधियों में शोभा से मल्लबंध के विविध प्रकारों

नलिगि मीसमुल नुय्याल लूगुचुनु । गलुषत दोकलु कलय जुट्टुचुनु
नरिमुरि गविसि या या संधुलंदु । वरलंग लागुलु वैचि हत्तुचुनु
जिदर वंदर सेसिन नसुर । डेंदंबु लोन गडिदि कोपमुन
बटुसत्त्वुलै तन पैनुन्न कपुल । जटुल मत्तेभबु जाडिंचु करणि
जलकेळि दनिसिन समद सूकरमु । वेंलय बिंदुलु राल विद्रिचिन भंगि
प्रळय कालमु नाटि ब्रह्माण्डतलमु । डुलडुल जुक्कलु डुल्चु कैवडिनि
४०७०

दनमीद ब्राकिन तरुचरावळुल । दनुवु गदल्चि यद्धरिणिपै गूल्चें;
नप्पुडु विस्मितुंडै कुंभकर्णु । दप्पक कनुगोनि तन कन्नु गवल
निप्पुलु रालंग निगुडु कोपमुन । नप्पन्नगाधीशु नाकृति गलिगि
करमोप्पु कांचन कार्मुकंबेत्ति । निरुपम बाण तूणीरमुल् बिगिचि
भीम विक्रम कळाभेद्युडै पेरिगि । रामुडु नडचु संरंभंबु जूचि
समर महारंभ चतुरु लोंडोंड । दमकंबु निंड नुद्दंड वर्तनुलु
परुषाद्रि पाषाण पादपावळुलु । धरियिंचि युग्रुलै तरुचरोत्तमुलु
मोगि सप्त पाताळमुलुनु भेदिल्ल । नोगि गूर्म मगलंग नुदधुलु गलग
दिगिभंबु लडरंग दिवि तल्लडिल्ल । नगचराधीशुल कतिधैर्यमोदव

से दबाते हुए, (उसे) तितर-बितरकर करने लगे। (ऐसा करने पर) असुर ने मन में अधिक क्रोध से, पटुसत्त्वशाली हो, अपने शरीर पर स्थित कपियों को, चटुल मत्तेभ के झटकाने के समान (तथा) जलकेलि से संतृप्त बने समद-सूकर के (अपने शरीर को) झटका देकर जलबिन्दुओं को नीचे गिराने के समान, प्रलयकाल के ब्रह्मांडतल के नक्षत्रों को टप-टप गिराने के समान ॥ ४०७० ॥

—अपने ऊपर रेंग आए तरुचर-समूह को (अपना) शरीर झटकाकर, धरणी पर गिरा दिया। तब विस्मित हो, कुम्भकर्ण को अवश्य देखकर, अपने नेत्रयुग्म से चिनगारियों के छूटने पर, अत्यन्त क्रोध के कारण पन्नगाधीश (आदिशेष) की आकृति से युक्त हो, अधिक शोभायमान कांचन-कार्मुक उठाकर (हाथ में ले), निरुपम बाण-तूणीर का संधानकर, भीम-विक्रम-कला से अभेद्य होते बढ़कर, राम के चलने के संरंभ को देखा, (देखकर) समर-महारंभ में चतुर और उद्दंडवर्तनवाले (वानर) आपस में औत्सुक्य से पूर्ण हो, परुष-अद्रि-पाषाण (तथा)- पादप-समूह को धारणकर, उग्र बन, तरुचरोत्तम क्रम से सप्त पाताल भी फट जाएँ, क्रम से कूर्म उखड जाए, उदधियाँ आलोड़ित हो जायें, दिक्-इभ (दिग्गज) कांप उठें, दिवि

नदिमि कुंप्पिचि मिन्नगल बेल्लेंगसि। युदित क्रमंबुन नुरु विक्रमंबु ४०८०
सुरसिद्ध साध्युलु सोंरिदि गीर्तिंप। गरमेंचि यपुडु राक्षसु मीद नडव
नापति मुंदर नाविभीषणुडु। कोपंबुतो गदगोंनि शौर्य मेंसग
गडुवेगमुन गुंभकर्णुनि म्रोल। बुडमि चलिंप नप्पुडु वच्चि निलिचें;
नाविभीषणु जूचि यनियें नव्वुचुनु। रावणु तम्मुडु राक्षसेश्वरुडु;

विभीषण, कुंभकर्णु ल संवादमु

"विनु विभीषण! नीदु विक्रमंबुनकु। ननुवैन तरियिदि यधिपति येंदुर;
नन्न दम्मुल पाडि यनि स्रुक्क वलव; । दिन्नरनाथुनि हृदयंबे पट्टु;
पूनि येंन्नडु निन्नु बोंद वापदलु। भानुवंश्युनि कृप बडसिति गान;
नारामु दयगल; दट्टु मीद नीवु। सारदयोदयश्लाघ्य चित्तुडवु;
लंक सद्गुण गणालंकृति नेल। निंक नेंव्वरु गलरिट नीवें काक;
साहस बल महोत्साहंबु मिगिलि। याहवंबुन वेगमडरि नायेंदुर ४०९०

(आकाश) विचलित हो जाए, ऐसा नगचर-अधीशों को अति धैर्य प्राप्त हो, साँस को रोककर छलांग भरकर, आकाश फट जाए, ऐसा अधिक उछलकर उदितक्रम से तथा उरु-विक्रम से, ॥ ४०८० ॥

—सुर-सिद्ध-साध्य क्रम से प्रशंसा करें, अधिक विजृंभित हो ऐसा तब राक्षस पर चल पड़े। उस पति (राम) के समक्ष वह विभीषण क्रोध से गदा ले, शौर्य के शोभित होने पर, अतिवेग से कुम्भकर्ण के समक्ष ऐसा आ खड़ा हो गया कि पृथ्वी विचलित हो जाए। उस विभीषण को (देख) हँसते हुए, रावण का अनुज (और) राक्षसेश्वर (कुम्भकर्ण) बोला—

विभीषण-कुम्भकर्ण का संवाद

"सुनो विभीषण! अधिपति (राम) के समक्ष अपने पराक्रम के (प्रदर्शन के लिए) यह उचित अवसर है। अग्रज-अनुज के न्याय (न्याय-संगत संबंध) का विचार कर व्यथित मत होना। इस नरनाथ (राम) का हृदय ही (तुम्हारे लिए) आधार है। भानुवंशवाले की कृपा प्राप्त की है अतः कभी कोई विपत्ति तुम्हें छू न सकेगी। (तुम पर) उस राम की दया है। इस पर तुम दया के सार के उदय से श्लाघ्य (प्रशंसनीय) चित्तवाले हो। अब आगे तुम्हारे सिवा सद्गुणों के गणों (समूह) से अलंकृत बन, लंका पर शासन कर सकनेवाला और (कौन) है? साहस (और) बल के महोत्साह के उत्कर्ष से आहव (युद्ध) में वेग से विजृंभित हो, मेरे समक्ष, ॥ ४०९० ॥

मगंतनंबुनु बाडि मनसुन दलचि। तगनीवु नातोड दाकेंदवनुचु
बलिकिति गानि यीपट्टुन निलुव। नलवियें ब्रह्मरुद्रादुलकैन ?
दौलगुमु तम्मुडा! तुंग; कीवैन। वलयु नीराक्षस वंशंबु मनुप"
ननिन विभीषणुंडन्नतो ननियें; । "दनुज कुलंबेल्ल दग्धमै पोवु
ननु भयंबुन मन यन्नतो देलिय। घनमैन नीति प्रकारंबुलेल्ल
जेप्पिति नेनु नेर्चिन यंत वट्टु; । चेप्पिन नामाट जेकोनडय्यें:
नट्टुगान निन्नुनु नन्ननु बासि। यिट्टु वच्चि श्रीरामुने बौडगंटि"
ननि यनि चेप्पुचु नंतरंगमुन। दनुजेशु नविनीति दलपोसि पोसि
कन्नीरु दोरुगंग गड्डु दुःख मडर। नन्न जूडग लेक यव्वल दौलगें;
नाराघवेश्वरु डनुजन्मयुक्तु। डै रणोद्योगुडै यगचरुल् दानु ४१००
घन रौद्ररसमु राक्षसरूपु दाल्चि। यनिकि नेतेंचेनोयनदगु वानि
जारु कोटीर भूषणमुल वानि। वीररसावेश वेशंबु वानि
धीरुडै कपुलनु देगजूचुवानि। दोरंपु नैत्तुट दोगिन वानि
गनुगोनि मदि लोन गड्डु वेरगंदि। मनुकुलोत्तमुडु रामक्षितीश्वरुंडु
"नारिकै पुट्टिन नाकोप मेल्ल। नारिचे जूपेद नाकारि किपुडु;

—पौरुष-धर्म का मन में विचारकर, मेरे साथ उचित रूप से भिड़ जाओगे, यह सोच यों कहा; किन्तु क्या इस अवसर पर ब्रह्मा, रुद्र आदियों में भी (मेरे समक्ष) खड़े रहने की सामर्थ्य है ? हट जाओ अनुज! इस राक्षस-वंश को जीवित बनाए रखने के लिए तुम्हारा मरे बिना (जीवित) रहना आवश्यक है।" (ऐसा) कहने पर विभीषण ने अग्रज से कहा—"इस भय से कि समस्त दानवकुल दग्ध हो जाएगा हमारे अग्रज से समस्त नीति प्रकारों को, भरसक, समझाया था। कहने पर मेरी बात नहीं मानी। अतः तुम्हें और अग्रज को छोड़, इधर आकर, मैं श्रीराम को देख पाया हूँ (शरण ली)।" ऐसा कहते हुए, अंतरंग में दनुजेश की अविनीति के बारे में सोच-सोचकर, आँसुओं के ढुलकने पर, अधिक दुख के बढ़ने पर, अग्रज को देख सक, वहाँ से हट गया। राघवेश्वर अनुजन्म (अनुज)- युक्त हो, रण-उद्योगवाला हो, अगचर और स्वयं (चल पड़ा) ॥ ४१०० ॥

—मानों घन-रौद्ररस राक्षस का रूप धारणकर युद्ध के लिए आया हो, जो चारु-कोटीर-भूषणों से युक्त था, जो वीररस के आवेश से युक्त वेष (आकार) वाला था, धीर बन कपियों को अत्यधिकता से देखनेवाला था, अत्यधिक रक्त में भीगा हुआ था, (ऐसे कुम्भकर्ण को) देखकर, मन में अधिक आश्चर्यचकित हो मनुकुलोत्तम रामक्षितीश्वर ने (यह सोच कि) —"नारी के कारण उत्पन्न मेरे समस्त क्रोध को नारी (प्रत्यंचा) पर,

नार्चुचु वच्चु नीयसुर कोपाग्नि । नार्चेद शर वृष्टि" ननि बिट्टु
किनिसि
'करियान निज धर्मगति जेंदु' ननेडु । करणि दिक्करुलु घींकारमुल् सेय
'निक नीरुग जेयु नीरामु नलुक । लंकेशु' ननुमडि्क लंक घूर्णिल्ल
नेरयंग जगमु लन्नियु जेवुड्पडग । गुड्रिलेनि रवमुन गुणमु म्रोयिंचे;
ना गुणध्वनि विनि यलुकमै नेदुरु । गा गर्वमुन गुंभकर्णुडेतेर ४११०
मानैन गरुवंपु माट लिपार । वानितो ननियें ना वनजाप्तकुलजु;
"डोरि राक्षस ! नीकु नोंदुगंगरादु; । धीरुडवै यिक देगुववाटिंचि
यमरुलु मेच्चंग नमरि नायेदुर । समरंबु सेयंग जक्कगा निलुवु;
मटुगाक कपटुंडवै माय वन्नि । येटुपोयिननु निन्नु नेल पोनित्तु"
'गाववे' यनि पोयि कमलजु गन्न । गाव; ना ब्रह्मलोकमु नाकु नेंदुरे ?
'कावव' यनि पोयि करकंठु गन्न । गाव; ना रुद्रलोकमु नाकु नेंदुरे ?
'कावव' यनि पोयि कमलाक्षु गन्न । गाव; ना विष्णुलोकमु नाकु नेंदुरे ?"
यनि पेर्चि पलिकिन नारामु पलुकु । विनि कुंभकर्णुडु विपुलंबु गाग

अब नाकारि को दिखाऊँगा, सिंहनाद करते हुए आनेवाले इस असुर-कोपाग्नि को शरवृष्टि से बुझा दूँगा" अधिक क्रुद्ध हो, मानों यह कहते हुए कि 'निशित शरों से (अथवा गजगमनवाला) (राक्षस) निजधर्मगति (मृत्यु) को प्राप्त करेगा' दिक्करियों के घींकार करने पर, मानो लंका के यह कहते 'अब इस राम का क्रोध लंकेश को भस्म कर देगा' घूर्णित होने पर, (तब राम ने) शोभा से समस्त जगों के बहरे कर देने वाले अनुपम रव से गुण (प्रत्यंचा) को मुखरित किया। उस गुणध्वनि को सुनकर क्रोध के मारे, दर्प से कुम्भकर्ण के समक्ष आने पर, ॥ ४११० ॥

—मान्य-गर्व-वचनों को शोभा से वनजाप्तकुलज ने उससे कहा—"रे राक्षस ! तुम्हें पीछे हट जाना नहीं चाहिए। धीर बनकर, अब साहस मानकर, देवता प्रशंसा करें, ऐसी शोभा से युद्ध करने के लिए (मेरे समक्ष) ठीक ढंग से खड़े हो जाओ। ऐसा न कर कपटी हो माया रचकर कहीं जाओगे तो भी मैं तुम्हें कैसे जाने दूँगा। 'रक्षा करो' ऐसा कह जाकर कमलज को देखोगे (शरण में जाओ) तो भी रक्षा नहीं करूँगा। वह ब्रह्मलोक मेरा सामना कर सकता है ? 'रक्षा करो' ऐसा जाकर नीलकण्ठ को देखोगे तो भी रक्षा नहीं करूँगा। वह रुद्रलोक मेरा सामना कर सकता है ? 'रक्षा करो' ऐसा कह जाकर कमलाक्ष को देखोगे तो भी रक्षा नहीं करूँगा। वह विष्णुलोक मेरा सामना कर सकता है ?" ऐसा विजृंभित हो कहे गए उस राम के वचन सुनकर कुम्भकर्ण विपुलता से, अगचराधिपों के खेद के

दिगुलोंदि यगचरधिपुल गुंडियलु । वगिलि निल्वुल तोड ब्राणमुलू वोव
जगतीतलमु नाकसमु दिक्कुलेल्ल । नगल राक्षसुडट्टहासंबु सेसि४१२०
नलुवोंद नाराम नरनाथु जूचि । पलिकें नुद्भट रणप्रौढ़ि दीपिंप;
"वेंडगु मायलु वन्नि वेंउचि नीचेत । मडियंग मारीच मनुजाशि गानु;
रयमुन नीचेत रघुरामचन्द्र ! । भयमुन जाव गबंधुंड गानु;
ग्रममोप्प नीशर घट्टनचेत । रमणमै गूल विराधुंड गानु;
अनिमोन नोक कोल नवनिपै गूल । निनकुलाधीश्वर ! ये वालि गानु;
जेति विल्लिच्चि नीचे भंगमोंद । बूतात्मुडगु भृगुपुत्रुंड गानु;
रावणु तम्मुड; राक्षसेश्वरुड; । देवकंटकुडनु; दीप्त विक्रमुड;
नन्नेरुंगवे ? राम ! नगचर कोटि । क्रोन्नेत्तु रानिन कुंभकर्णुंड;
नेरुगक ब्रह्मयु निंद्रुंडु निन्नु । गउपिन वेलवै गर्विंचि पुट्टि
यी तरुचरकोटि नेमनि नम्मि । नातोडि युद्धंबुनकु वच्चितीवु ?
४१३०
घनमैन यट्टि राक्षस भाषणमुलु । सनकादि योगींद्र सन्नुतुलू गावु;
उरुवडि बउतेंचु नुग्र शस्त्रमुलु । परिवार चामर प्रततुलु गावु;

मारे कलेजे के टूक-टूक होकर खड़े-खड़े प्राण चले जायें (और) जगतीतल, आकाश (तथा) समस्त दिशाएँ विदीर्ण हो जाएं, ऐसा अट्टहास करके, ।। ४१२० ।।

—शोभा से उस रामनरनाथ को देखकर, उद्भट-रणप्रौढता के दीप्त होने पर बोला—"मूर्ख मायायें रचकर, भीत होकर, तुम्हारे हाथ मरने के लिए मारीच-मनुजासन (-राक्षस मैं) नहीं हूँ। हे रघुरामचन्द्र! झट तुम्हारे हाथ भय के कारण मरने के लिए कवंध नहीं हूँ। क्रम की शोभा से तुम्हारे शर-घट्टन से रमणीयता से मरने के लिए मैं विराध नहीं हूँ। युद्ध में एक बाण से अवनि पर गिर पड़ने के लिए हे इनकुलाधीश्वर ! मैं वालि नहीं हूँ। (अपने) हाथ का धनुष देकर, तुम्हारे हाथ अपमानित होने के लिए पूतात्मा (पवित्र) भृगुपुत्र नहीं हूँ। (मैं) रावण का अनुज हूँ, राक्षसेश्वर हूँ, देवकंटक हूँ, दीप्त विक्रमवाला हूँ। (ऐसे) मुझे नहीं जानते हो ? हे राम ! नगचर-कोटि के नूतन रक्त को पिया हुआ कुम्भकर्ण हूँ। (मुझे) न जानकर ब्रह्मा और इन्द्र के तुम्हें सिखाने पर, नादान बन, गर्वीले हो, जन्म लेकर, इस तरुचरकोटि पर कैसा विश्वास कर, मुझसे युद्ध करने तुम आए हो ? ।। ४१३० ।।

—राक्षसों के महान् भाषण (वचन), सनक आदि योगीन्द्रों की सन्नुतियाँ (स्तुति पाठ) नहीं हैं। वेग से आनेवाले उग्र शस्त्र, परिचारकों की

व्रलमुन नार्चु राक्षसभटोत्तमुलु । नलिबाडु तुंबुरु नारदुल् गारु;
व्रालुचु नीमीद वच्चु नागालि । यालवट्टंबुल यनिलंबु गादु;
युद्धरंगं बमृतोदधि गादु; । युद्धंबु नी कौलुवुंडुट गादु;
इट्टेल पुट्टिति ? वीयाजिलोन । नट्टि सौख्यंबु नीकवनीश ! कलदे ?
यदि चेप्पनेल ? निन्ननियेंडि देमि । यिदे चूडु नागद येट्टिदो राम !
दीनबो गेलिच्चिति देव संघमुल; । दीनिकि साटिये दिव्याधमुलु ?
बलमुनु शौर्यंबु बाहु विक्रममु । गलदेनि घोराजि गदियुमु नन्नु;
नेरय नीयंदलि निज शक्ति जूचि । मरि निन्नु जंपेद मानवाधीश !"
४१४०

श्रीरामुनिचे गुंभकर्णुडु गूलुट

यनुटयु रघुरामु डलिगि वेगमुन । घनशिलीमुखमुलु गडु वेक्कुवेलु
नावालि नेसिन यट्टि बाणमुलु । देवकंटकु मीद दिविरि येयुटयु
जलबिंदुवुलु ग्रोलु चातकं बनग । बलुविडि नाबाण पंक्तुलु ग्रोलि
कर मुग्रमैन मुद्गरमु द्रिप्पुचुनु । बरुवडि वानरपतुल दोलुचुनु
नेंदुरुगा जनुदेंचु निद्रारि जूचि । मदि लेक्कसेयक मानवेश्वरुडु

चामर-प्रततियाँ (-समूह) नहीं हैं। हठ से सिंहनाद करनेवाले राक्षस-भट-उत्तम (श्रेष्ठ भट), शोभा से गान करनेवाले तुंबुर-नारद आदि नहीं हैं। तुम पर आनेवाली मेरी जो वायु है, वह आलवट्टों (छाता अथवा कपड़े से बनाया हुआ वीजन) का अनिल नहीं है। युद्ध-क्षेत्र अमृत-उदधि नहीं है। युद्ध तुम्हारे दरबार लगाने के समान नहीं है। ऐसा क्यों पैदा हुए हो ? इस आजि (युद्ध) में वैसा सुख हे अवनीश ! कहाँ है ? वह (सब) कहना क्यों ? तुम्हें कहना ही क्यों ? हे राम ! यही देखो मेरी गदा कैसी है ? इसी से तो देवसंघों को जीता है। क्या दिव्य-आयुध इसकी बराबरी कर सकते हैं ? बल और शौर्य, बाहु-विक्रम (तुम में) हैं तो घोर युद्ध में मुझसे भिड़ जाओ। हे मानवाधीश ! शोभा से तुम्हारी अपनी शक्ति को देखकर फिर मैं तुम्हें मार डालूँगा ॥ ४१४० ॥

श्रीराम के हाथ कुम्भकर्ण का मरना

(उसके ऐसा) कहने पर, रघुराम ने क्रुद्ध हो, वेग से कई हजार शिलीमुखों को, उस बालि पर चलाये ऐसे बाणों को, देवकंटक पर शीघ्रता से डाला। मानों जलबिंदुओं को पीनेवाला चातक हो, ऐसा झट उन बाण-पंक्तियों को (कुम्भकर्ण) पी गया। अधिकता से उग्र मुद्गर को घुमाते हुए,

कविसि युद्भट गदा कलित हस्तंबु। नवलील देगनेसे ननिल बाणमुन
दानि पाटुनकु गोंदरु तरुचरुलु। नाना विधंबुल नलुगडलू चनिरि;
अदि मीरि पारंग नलवि गाकुन्न। जिदिसि वानरुलु सच्चिरि दानि
क्रिंद;
नुन्न दापलि चेत नौक पेद्द वृक्ष। मन्नरभोजनुंडवलील बेरिकि
यिंद्रादु लडरंग नेतेर रामु। इंद्र बाणंबुन नदियुनु द्रुंचे; ४१५०
ताभूरितर बाहु वमरु लुप्पोंग। भूभाग मगल नद्भुतमुगादुनिसि
पेक्कंड्रु कपुलु निर्भिन्नुलै क्रिंद। नोक्कट वडि कूल नुर्विपै बडियें
निटु रेंडु भुजमुलु निनकुलेश्वरुडु। पटु बाणमुल द्रुंप बलभेदिचेत
गडिदि वज्रमुन रेक्कलु द्रुंप बडिन। तडगोंडयुनु बोले नलि नार्चि यार्चि
चेतुलु मुक्कुनु जेवुलुनु लेक। याततंबुग विकृताकारुडगुचु
नरुगु देंचुचुनुन्न याकुंभकर्णु। नुरुवडि गनुगोनि युर्वीश्वरुंडु
"दुरमुन नीनीचु द्रुंतु गा!" कनुचु। सरभसंबुन नर्ध चंद्र बाणमुलु
देग निड रेंडु संधिंचि खंडिंचे। जगमुलु मेच्च दच्चरणयुगंबु;

बार-बार वानरपतियों को भगाते हुए, समक्ष आनेवाले इन्द्रारि को देख, मन में परवाह न करके, मानवेश्वर ने उद्भट-गदा-कलित-हस्त को अनिलबाण से सहज ही काट दिया। उस (हाथ) के पतन के कारण कुछ तरुचर नाना प्रकार से चौतरफ चले गए, उससे बच भाग न सके, उसके नीचे दबकर वानर मर गए। शेष (बचे) वामकर से एक बड़े वृक्ष को उस नरभोजन (राक्षस) ने सरलता से उखाड़कर, इन्द्र आदियों के भीत होने पर, (समक्ष) आने पर राम ने ऐंद्र बाण से उसे भी काट दिया, ॥ ४१५० ॥

वह भूरितर-बाहु अमरों के फूलने पर तथा भूभाग के विदीर्ण होने पर अद्भुत रूप से कटकर, अनेकों कपियों के खंड-खंड हो एक साथ गिरने पर, उर्वि (पृथ्वी) पर गिर पड़ा। इस प्रकार दोनों भुजाओं के इनकुलेश्वर के पटुबाणों से कट जाने पर, बलभेदी (इन्द्र) के हाथ कठोर वज्र से पंख काट डाले गए जंगमपर्वत के समान होकर, सिंहनाद करके, हाथ, नाक, कानों के न होने पर, आततरूप से विकृत आकारवाला होते हुए आनेवाले उस कुम्भकर्ण को उर्वीश्वर (राजा-राम) ने झट देखा, (देखकर) यह सोच कि 'युद्ध में इस नीच का वध कर दूँगा' सरभसता (आटोप) से दो अर्द्धचन्द्र बाणों को पूरी तरह संधान कर, उसके चरणयुग्म काट डाले जिसे लोकों ने सराहा। चरणों के कटकर, बाहुओं के कटकर, न सिकुड़कर,

बदमुलु देंगियुनु बाहुवुल् देंगियु । गुदियक यत्युग्र कोपुडै नडचि
बडबाग्नि चक्रंबु पगिदि नाननमु । गडुनेचिविकृतंबु गाविचु कोनुचु
४१६०

बलुविडि भास्करु बट्टेडु राहु । नलवाटु गैकोनि यारामु गदिसें;
गदिसिन नाकुंभकर्णुनि नोर । बोंदि लोनि निष्ठुर भुरि बाणमुल
निनकुलेश्रुडेसें नेर्पड नोक्क । दोन कोल लिकोंक दोन जोन्पु करणि;
घनमैन यायंपगमि नोरु निंड । दनुजुंडु सिंह नादमु सेय राक
येपार विकृतंपु टेलुगु हुंकृतुलु । जूपुल जंकेलु सूपुचु वच्चें;
वच्चिन ना दैत्यवल्लभु मेन । नच्चुगा दृष्टिचि यैंद्रास्त्र मेसें;
ब्रदर मिम्मैयि रघुप्रवरुडेयुटयु । नदि घर्म मध्यंदिनादित्युपगिदि
दलपोय ना ब्रह्म दंडंबु रीति । बलितमै निगुडेडु पवनंबु करणि
नेरय लोकमुलेल्ल निंड नोंडोंट । नेर्र मंट लोलुकुचु नेपुतो वच्चि
कुंभकर्णुनि रोम्मु गोनि युच्चि पारि । कुंभिनि नाटे दिक्कुलु म्रोयुचुंड;
४१७०

नंतलो मरियुनु नाराघवेंद्रु । डंतकबाण मत्यंत वेगमुन
संधिंचि येसिन सकल दिक्कुलुनु । बंधुरंबुग म्रोय ब्रह्मांड मविय

अत्युग्रकोप से चलकर, (लुढ़कते हुए) बडबाग्नि के चक्र के समान आनन को अतिविजृंभित तथा विकृत करता हुआ, ।। ४१६० ।।

—झट से भास्कर को पकड़नेवाले राहु के समान (वह) राम के निकट पहुँचा । नियराए उस कुम्भकर्ण के मुख में (अपने) तूणीर के निष्ठुर बाणों को इनकुलेश्वर ने इस ढंग से चलाया मानों एक तूणीर के बाणों को दूसरे में डाल रहे हों । उस महान् बाण-समूह से मुख के भर जाने से दनुज सिंहनाद नहीं कर पाया, उत्कर्ष के साथ विकृत स्वर (तथा) हुंकृतियों से, दृष्टियों से भर्त्सना अथवा धमकी अभिव्यक्त करता आया । आने पर, उस दैत्य-वल्लभ के शरीर पर, ठीक ढंग से देखकर, ऐंद्रास्त्र डाल दिया । इस प्रकार रघुप्रवर के प्रदर चलाने पर, वह (बाण) धर्म (ग्रीष्म)-मध्यंदिन-आदित्य के समान, सोचने पर उस ब्रह्मदंड की तरह, प्रबल हो विलसित होनेवाले पवन के समान, शोभा से समस्त लोकों में भरकर, सर्वत्र अरुण ज्वालाओं को उगलते हुए, उत्कर्ष से आकर, कुम्भकर्ण के वक्ष में घुसकर, पार निकलकर, कुंभिनी में गड़ गया जिससे दिशाएँ प्रतिध्वनित हो उठीं ।। ४१७० ।।

इतने में राघवेंद्र ने फिर से आतंक-बाण का अत्यन्त वेग से संधान कर, डालने पर, समस्त दिशाओं के अधिकता से मुखरित होने पर, ब्रह्मांड

ब्रकटंबुगा भूमि पट पट बगुल । सकल भूतंबुल चैतन्य मेंडल
गलयंग शत कोटि काल चक्रमुलु । बलुपेंक्कि यौक्कटै पर्तेंचु भंगि
वालिन बडबाग्नि वडि वच्चु करणि । गालकूटंबु मार्गणमैन पगिदि
विच्चलविडि बर्वि वेगंबु मेंर्सि । वच्चि याबाणंबु वडिद्रुंचि वैचें
बटु नील गिरि श्रृंग भातितो नुन्न । कुटिल राक्षसु तल घोरंबुगाग;
बुडमिपै ना दैत्यपुंगवु शिरमु । पडक यालंक लोपल गनुपट्टु
पोंडवैन गोपुरंबुलुनु मेडलुनु । बोंडि पोंडियै रालि पोव दाकुचुनु
जनि महाध्वनि तोड जंतु संततुल । मुनुकोंनि चदुपुचु मुनिगें नंबुधिनि;
४१८०

बदि कोटु लगचर पतु लोलि म्रग्ग । नुदधिलो जलचर यूथमुल् चदिय
वसुधपै सगमुनु वनधिलों सगमु । नसुर देहमु गूलें नद्भुतंबडर;
नारवंबुन नब्धुलन्नियु गलगें; । धारुणि वडकें; दिक्तटमुलु वगिलें;
लंकाधिनाथु नुल्लमु व्रय्यलय्यें; ।लंकलो नेंल्ल गोलह्लंबय्यें;
जगमुलु मोदिंचें; संतोष वार्धि । नगचराधिपु लोललाडि रंदंद;
रविकुलाधीश्वरु रघुरामचन्द्रु । विविध भंगुल सुरल् विनुतिंचि रपुडु;

के विदीर्ण होने पर, प्रकट रूप से भूमि के पट-पट फटने पर, सकलभूतों के चैतन्य के दूर होने पर, शोभा से शतकोटि कालचक्रों के समर्थता से एक बनकर आने के समान, निशित बडवाग्नि के शीघ्र आने के समान, कालकूट के मार्गण (बाण) बनने के समान, विश्रृंखलता से धाकर, वेग से दीप्त हो, आकर, झट पटुनीलगिरिश्रृंग के समान स्थित कुटिल राक्षस के सिर को घोर रूप से काट डाला। उस दैत्यपुंगव का सिर पृथ्वी पर न गिरकर, उस लंका में दीख पड़नेवाले लम्बे गोपुरों, सौधों को टकराकर, चूर-चूर करते जाकर, महाध्वनि के साथ जंतुसंततियों को दबा देते हुए, अंबुधि में डूब गया ॥ ४१८० ॥

असुर की देह अद्भुत रूप से वसुधा पर आधा और वनधि में आधा गिरी जिससे दस करोड़ अगचरपति क्रम से कुचले गए और उदधि का जलचर-यूथ (-समूह) सपाट हो गया। उस रव से सभी अब्धियाँ विलोड़ित हुईं, धारुणी कंपित हुई, दिक्तट फट गए, लंकाधिनाथ का हृदय टूक-टूक हो गया, लंका में सर्वत्र कोलाहल मच गया, जग मुदित हुए, नगचराधिप सर्वत्र संतोषवार्धि में ऊभचूभ हुए, तब सुरों ने रविकुलाधीश्वर रघुरामचन्द्र की विविध प्रकारों से स्तुति की। महान् राम कुम्भकर्ण के मृत होने पर अपने (मन) में मन्दहास के चमक उठने पर, यह सोच कि

घनुडु रामुडु कुंभकर्णु डीलगुटकु । दनलोन जिरुनव्वु दळुकोत्तुचुंड
"देव संघमुलकु दिक्पालकुलकु । भाविप नेक्कुडी पडिन राक्षसुडु;
इंक लोकमुलकु नेन्नंडु नोंडु । शंक ले" दनि मदि संतोष मंदि
यप्पुडु कर मर्थि नाहव लक्ष्मि । नुप्पोंग गैकोनि युज्ज्वलुंडय्ये ४१९०
गडुनुग्र राहुवु गबळिंचि पिदप । विडिचिन वेलुगोंदु विमलार्कु पगिदि
ददनंतरंब यादानव कोटि । मदिलोन नेव्वग मल्लडि गोनग
विन्ननै वदनमुल् वेलवेल बार । नुन्न रावणु गान नुरुवडि बोयि
"देव! नी तम्मुडु त्रिदशांतकुंडु । वाविरि नगचरावळि नेल्ल दोलि
देसलु भूभागंबु दिवियु दानगुचु । नसम साहस महाहवकेळि व्रालि
नेलकोनि दुग्धांबुनिधि मंदराद्रि । कलचि याडेडु क्रिय गपिकुलांभोधि
निक्कडक्कड नेसि यिंद्रादुलेल्ल । वेक्कसपड बोरि विवशुडै तूलि
यंत श्रीरामुनि यधिक बाणाग्नि । नेंतयु दग्धुडै यिलमीद व्रेळ्ळे"
ननि कुंभकर्णु डय्यनिलोन बडुट । दनुजुलु सेप्प नादानवेश्वरुडु
तन पाटु निक दथ्यंबन्नकरणि । गोनकोन्न बलु मूर्छ गुंभिनि वडियें;
४२००

'यह गिरा हुआ राक्षस देवसंघों के लिए तथा दिक्पालकों के लिए दुर्जेय रहा है। अब लोकों को किसी प्रकार की आशंका नहीं है।' (ऐसा) मन में मुदित हो, तब अधिक इच्छा से आहवलक्ष्मी के फूल उठने पर, (उसे) ग्रहणकर (ऐसा) उज्ज्वल हुआ, ।। ४१९० ।।

मानों अधिक उग्र राहु के निगलकर, बाद में छोड़ देने पर प्रकाशित होनेवाला विमल-अर्क हो। उसके अनन्तर, वह दानवकोटि मन में अधिक व्यथा से संतप्त होकर, विवर्ण हो, वदनों के कांतिहीन होने पर, रावण के पास शीघ्रगति से जाकर, (बताया कि)— 'हे देव ! तुम्हारा अनुज त्रिदशांतक (देवताओं का वध करनेवाला—कुम्भकर्ण) क्रम से समस्त नगचर-समूह को भगाकर, दिशाओं और भूभाग में स्वयं भरकर, असम-साहस से महाआहवकेलि से विजृंभित हो, स्थिरता से दुग्धांबुनिधि को मन्दराद्रि के आलोडित करने के समान, कपिकुलांबोधि को तितर-बितरकर, इन्द्र आदियों के आश्चर्यचकित होने पर, जूझकर, विवश हो, लड़खड़ाकर, तब श्रीराम की अधिक-बाणाग्नि से दग्ध हो पृथ्वी पर गिर पड़ा।' ऐसा कुम्भकर्ण के उस युद्ध में गिर जाने की बात के दनुजों के कहने पर, वह दानवेश्वर अधिक मूर्छा से कुंभिनी पर गिर पड़ा, मानों यह कह रहा हो कि मेरा पतन भी अब तथ्य है ।। ४२०० ।।

नतिकायु डधिक शोकायत्तुडय्यें;। धृति दूलि शोकिंचें देवांतकुंडु;
दिक्कु दप्पिन माड्कि त्रिशिरुंडु नोरलें; ।दक्कक यानरांतकुडु
स्रान्पडियें;
दनुज वीरुलु महोदर महापार्श्वु। लुनु महाशोक विलुंठितुलैरि !

कुंभकर्णुनि मरणमुनकु रावणुडु शोकिंचुट

बलुमूर्छ नंतट बासि रावणुडु । पलुमारु दम्मुनि बलविप दोडगें;
"वडि बेंचि राघव-वैरांबुराशि । नेंडपक येनिक ने तेप्प गडतु ?
रामलक्ष्मणुलनु रणमुलो जंपें । देमेयि ननि नम्मि येनुन्न चोट
जटुल राघव महाशर-वह्नि-शिखल। निटु नेल गूलिते येकांग-वीर !
निद्रारतुंडवु ने डिट्लु दीर्घ । निद्र गैकोंटे निर्णिद्र-विक्रमुड !
कुलिशधारकु नैन गूलनि मेनु । निल नरु व्रेटुन निटु गूलवलसें;
नंतकुनकु नीव यखिलंबु नेरुग । नंतकुंडन नुंटिवारूढ़शक्ति; ४२१०
नंतटि नीकु नीयनि मोन निप्पु । डंतकु डय्येने यकट ! राघवुडु ?
निद्र मेल्कोनि नीवु निष्टुर वृत्ति । रुद्रुंडवै तम्मु रूपडंतनुचु

अतिकाय अधिक शोकाकुल हुआ, धृति को खोकर देवांतक ने शोक किया, दिङ्मूढ़ बननेवाले के समान त्रिशिर विलाप कर उठा, वह नरांतक एकदम स्तंभित हो गया, महोदर महापार्श्व (आदि) दनुजवीर महाशोक से विलुंठित हो गए।

कुम्भकर्ण के मरण पर रावण का शोक करना

अधिक मूर्छा से तब होश में आकर रावण कई बार अनुज का स्मरण कर विलाप करने लगा—"वेग से विजृंभित हो राघव के वैर रूपी अंबुराशि को अब अविलंब किस नौका से पार कर सकूँगा ? मैं विश्वास किए था कि तुम किसी भी प्रकार से राम-लक्ष्मणों को रण में मार डालोगे। (ऐसी स्थिति में) हे एकांगवीर ! चटुल-राघव-महाशर-वह्नि की शिखाओं में इस प्रकार गिर गए न ! हे निर्निद्र विक्रमवाले ! निद्रारत रहनेवाले ! तुमने आज ऐसी दीर्घ निद्रा धारण की है न ! कुलिश-धारा से भी न गिरनेवाला (तुम्हारा) शरीर इस प्रकार नर के आघात से गिर पड़ा न ! समस्त (सृष्टि) जाने, इस प्रकार मैंने आरूढ़शक्ति से समझ रखा था कि तुम अंतक (यम) के लिए भी अंतक हो ॥ ४२१० ॥

—हाय, ऐसे तुम जैसे समर्थ के लिए युद्धभूमि पर अब राघव अंतक बने न ! निद्रा से जागकर तुम निष्ठुर-वृत्ति से रुद्र बनकर, 'हमें नष्ट-भ्रष्ट कर

नद्रि विद्रावणुं डादिगा सुरलु । निद्र पोरॅन्नडु नॅरपिन भीति;
नीवाजि द्रुंगिति; निर्जरु लिक । नेविधंबुन नन्नु नेल कॅकोंड्रु ?
कुलमॅल्ल रक्षिचु कोॅरकु नातोड । ग्रलमुन बलुमारु सद्बुद्धि सॅप्प
विनक विभीषणु वॅस दन्नि 'वॅडलि । चनु' मन्न पापंबु सॅचुने नन्नु ?
गड्कोनि नीवादिगा बुद्धिमंतु । लुड्गक चॅप्पिन युचितोक्तुलेनु
नॅम्मितो विननैति; निन्नु गोलपडिति; । नम्मिन जयलक्ष्मि नाकेल कलुगु ?
बलिमि मै ना वलपलि मूपु भंगि । गलहरंगंबुन गडिमि वाटितु;
बटु बाहुबल मरि पडिति वी वाजि; । निटमीद दिक्कु नाकॅव्वरु गलरु ?" ४२२०

अनि कुंभकर्णुनि नंदंद तलचि । वनरि निट्टूर्पुलु वडि बुच्चि पुच्चि
परिताप मनियॅडि बडबाग्नि गलिगि । पॅरिगॅड्डु लालयन् फेनुंबु गलिगि
वॅडलु कन्नीरनु वॅल्लुव गलिगि । कडलेनि वगपनु करडुलु गलिगि
प्रकट रोदनमनु रावंबु गलिगि । चकितत्व मनियॅडि चलनंबु गलिगि
मुनुकोनि शोकसमुद्रुडै पॅद्द । वॅनुबडि यॅंतयु विकलुडै युन्न
यारावणुनि जूचि यप्पु डोॅक्किंत । धीरत वाटिंच त्रिशिरुंडु वलिकॅ;

दोगे,' इस भय से अद्रि-विद्रावण (इन्द्र) आदि सुर कभी सोते ही न थे। तुम युद्ध में गिर गए हो, अब निर्जर किस विध (क्योंकर) मेरी परवाह करने लगेंगे? समस्त कुल की रक्षा करने के लिए मुझसे हठ करके कई बार सद्बुद्धि (नीति वचन) कहने पर, न सुनकर विभीषण को झट लात मारकर 'चले जाओ' कहा था, वह पाप मुझे छोड़ देगा? (नहीं।) सप्रयत्न तुम और अन्य बुद्धिमानों की अनारत कही उचित-उक्तियों को मैंने प्रेम से सुना नहीं था। तुम्हें खो बैठा हूँ, जिस जयलक्ष्मी पर आशा की थी, वह मुझे क्यों मिलेगी? बलयुक्त हो मेरे दाहिने स्कंध के समान तुम कलह-रंग (युद्ध-क्षेत्र) में साहस से डटे रहते थे। पटुबाहुबल को खोकर तुम युद्ध में गिर गए, अब आगे मेरे लिए अवलंब (देनेवाले) कौन है?" ॥४२२०॥

—इस प्रकार कुम्भकर्ण का बार-बार स्मरण कर, व्यथित हो, झट लम्बी आहें छोड़-छोड़, परिताप रूपी बड़वाग्नि से युक्त हो, विवर्द्धित होनेवाली लार रूपी फेन से युक्त हो, विनिर्गत होनेवाले आँसू रूपी बाढ़ से युक्त हो, अंतहीन वेदना रूपी तरंगों से युक्त हो, प्रकट रोदन रूपी रव से युक्त हो, चकितत्व रूपी संचालन से युक्त हो, लगकर शोकसमुद्र बन, अधिक शोक से अधिक विकल बने हुए उस रावण को देखकर, तब थोड़ा धैर्य धारणकर

"बदिलंबु दप्पि यिब्भंगि शोकिंचें; । दिदियेमि देव ! नीवितरुल भंगि ?
वनजासनुनि चेत वरमुनु गोंन्न । घन शक्ति नीयंदु गलिगि युंडंग
नविरळ मंत्र पूतास्त्रमुल् वज्र । कवचंबु नीयंदु गलिगि युंडंग
नुरुतरगति गल युज्ज्वल रथमु । गरमोप्प नीकुनु गलिगि युंडंग
४२३०

शोकितुरे ! नन्नु जूडु मोक्किक । नी केंदुरेव्वरु निर्जर-वैरि !
वेवेग नवलील वेडलि राघवुनि । नीविक्रमंबुन नेल पै गूल्पु;
मिट शोक मुडुगु मी; विंतिय चालु; । नट नेनु बोयि महाजिरंगमुन
नतुल विक्रम कळाहंकार वृत्ति । नति शूरुडितडन नंदंद पेंचि
गरुडुंडु पामुल खंडिचु माड्कि । दरुचरावळि नेल्ल धरणि गूल्चेंदनु
सुरपति वृत्रुनि स्रुक्किचु भंगि । हरु डंधकासुरु नणगिंचु करणि
रामुनि द्रुंचेंद रणमुलो निप्पु; । डीमेयि बोयेंद, नेलमि नन्ननुपु"
मतिन रावणु तोड नप्पुडु कडगि । घन बाहुबलु डतिकायुंडु वलिकें:
"नित शोकिपंग नेटिकि नीकु ? । बंतंबुतो दैत्य बलमुल गूडि
येनें पोयेंद; नंपु मिट; जित्रमुगनु । गाननंबुल नेर्चु कार्चिच्चु पगिदि
४२४०

त्रिशिर ने कहा—"यह क्या ! तुम दूसरों के समान धैर्य खोकर इस प्रकार शोक करते हो ? वनजासन से वर-प्राप्त महान् शक्ति के तुम में (तुम्हारे पास) रहने हुए, अविरल-मन्त्र-पूत-अस्त्रों तथा वज्र कवच के तुम्हारे पास रहते हुए, उरुतरगति से युक्त उज्ज्वल रथ के अधिक शोभा से तुम्हारे पास रहते हुए, ॥ ४२३० ॥

—शोक करना चाहिए ? (नहीं।) थोड़ा मेरी ओर देखो। हे निर्जर-वैरी ! तुम्हारा सामना (कर सकने वाला) कौन है ? अधिक शीघ्रता से सरलता से निकल पड़कर, अपने विक्रम से राघव को धरा पर गिरा दो। तुम शोक को छोड़ दो, यही पर्याप्त है। मैं वहाँ जाकर महायुद्ध क्षेत्र में, सर्वत्र विजृंभित हो, 'अतुल-विक्रम-कला-अहंकार-वृत्ति से यह अति शूर है' ऐसा कहलाते हुए, गरुड़ के सर्पों का खंडन करने के समान, समस्त तरुचरावली को धरणी पर गिरा दूंगा। सुरपति के वृत्र को हराने के समान, हर के अंधकासुर का दमन करने की भाँति, अभी रण में राम का खंडन कर दूंगा। इसी प्रकार जाऊँगा, प्रेम से मुझे भेजो।" (ऐसा) कहने पर, रावण से तब साहस कर, घनबाहुबल वाला अतिकाय बोला—"तुम्हें इतना शोक करना क्यों ? स्पर्धा के साथ दैत्य-सेनाओं के साथ मैं ही जाऊँगा।

विपुल बाणंबुल विशदंबु गाग । गपुलतो रामलक्ष्मणुल द्रुंचेदनु"
अनि पल्कुनपुडु नरांतकु गूडि । यनुपम बलुडु देवांतकु डनियें;
"ने मिद्दरमु बोयि योक्षणंबुननें । रामलक्ष्मणुल मर्कटुल द्रुंचेदमु"
अनिन माटलकु दैत्याधीश्वरुंडु । दन शोक मुडिगि मोदंबुन नुंडि
तनयुल तोडनु दद्दयु नोप्पें । ननिमिषगण युक्तुडगु निंद्रु माड्कि;
नव्विधंबुन नुंडि यारावणुंडु । नव्वुचु गोडुकुल नलुवुर बनिचें
"रामलक्ष्मणुल मर्कट सैन्यमुलनु । भीमास्त्रमुल जंपि पेर्चिरं"ड्नुचु;
दन तम्मुलनु महोदर महापार्श्वु । लनु बीडुकोलिपें नालमु सेयुटकुनु;
"माकतंबुननें यी मनुजाशनुंडु । चेकोनि सीतकै श्रीरामु दोडरें"
ननि यरिषड्वर्ग मारावणुनकु । मुनुमुन्न रामु निम्मुल दाक बोवु
४२५०
पगिदि नायार्वुरु ब्रह्मांड भांड । मगलंग नार्चुचु ननि केगुनपुडु

अतिकाय महोदरादुलु युद्धमुनकु वेडलुट

भूरि शारद घनस्फुरणंबु गलिगि । यैरावतेभंबु नंशंबु गलिगि

अब भेज दो। विचित्र रूप से काननों को जला देनेवाले दावानल के समान, ।। ४२४० ।।

—विपुल बाणों से विशद रूप से, कपियों के साथ राम-लक्ष्मणों का खंडन कर दूंगा। ऐसा कहते समय नरांतक के साथ मिलकर अनुपम बल वाले देवांतक ने कहा—"हम दोनों जाकर इसी क्षण राम-लक्ष्मणों को (और) मर्कटों का खंडन कर देंगे।" ऐसी बातों पर दैत्याधीश्वर अपने शोक को छोड़कर, मोद से रहकर, तनयों के साथ, अनिमिषगणयुक्त इन्द्र के समान अधिक शोभित हुआ। ऐसा रहकर उस रावण ने हँसते हुए (प्रसन्नता से) चार पुत्रों को यह कहते भेजा कि "राम-लक्ष्मणों को तथा मर्कट-सेनाओं को भीम-अस्त्रों से मार डालकर, विजृंभित होकर आओ।" अपने अनुजों को तथा महोदर, महापार्श्वों को युद्ध करने के लिए बिदा कर दिया। "हमारे कारण ही यह मनुजाशन (नरभोजी रावण) सप्रयत्न सीता के लिए श्रीराम का सामना कर रहा है," मानों यह कहते हुए अरिषड्वर्ग उस रावण से पहले ही राम के पास प्रेम से जा रहा हो, ।। ४२५० ।।

—इस प्रकार वे छः (राक्षस), ब्रह्मांड-भांड विदीर्ण हो जाए, ऐसा सिंहनाद करते हुए, युद्ध के लिए निकल पड़े।

अतिकाय, महोदर आदि का युद्ध के लिए निकल पड़ना

भूरि-शारद (शरत्कालीन) घन की समता से युक्त हो, ऐरावत-इभ

तनरारुचुन्न सुदर्शनेभंबु । निनुडस्त शिखरिपै नेक्किन करणि
नेक्कि महोदरु डेपारि नडचें; । दक्कक निशितायुधंबुलु वेलुग
बटुजव-सत्त्व प्रभावमुल् गलिगि । चटुलंबुलैन यश्वंबुल बून्चि
येसगु चापंबुनु निंद्र चापंबु । पसमीर, सूर्युनि भंगि वेलुंगु
नरदंबु मीद नीलाभ्रंबु बोलि । तिरमैन वेड्कतो द्रिशिरुंडु वेडलें;
वितत धनुर्वेद विद्याढ्युडैन । यतिकायुडुनु नप्पुडधिक तेजमुन
शरचाप खड्गादि शस्त्रास्त्र समिति । गरमोप्पु सूर्य प्रकाशमै वेलुग
दनरारु कनकरथं बेक्कि वेडलें । घन भूषण द्युति गनकाद्रि यगुचु ४२६०
सुखर घोटक स्फुरण जेन्नोंदि । युरुभूषणप्रभ नुज्ज्वलंबैन
यवदात हयमु नरांतकुंडेक्कि । प्रविमल तेजो विभासितुंडगुचु
शक्ति नुद्भट बाहु शक्ति मै दाल्चि । शक्ति पाणियु बोलि सन्नुति वेडलें;
दीपित गद दाल्चि देवांतकुंडु । रूपिप विष्णुनि रूपुन वेडलें;
गुरुगदापाणियै गुह्यकेश्वरुनि । परुसुन नट महापार्श्वुंडु वेडलें;
गालचक्रंबुल गति नुज्ज्वलंबु । लै लील बेक्कैन यरदमुल् वेडलें;

(हाथी) के अंश से युक्त हो शोभित होनेवाले सुदर्शन-(नामक) इभ (हाथी) पर, इन (सूर्य) के अस्तशिखरी पर आरूढ़ होने के समान, आरूढ़ होकर महोदर उत्कर्ष के साथ चल पड़ा। विलसित निशित आयुधों के प्रकाशित होने पर, पटु-जव-सत्त्व-प्रभाओं से युक्त, चटुल अश्वों से जुते हुए, शोभित चाप (धनुष) के इन्द्रचाप से अधिक शोभित होने पर, सूर्य के समान प्रकाशमान रथ पर नीलाभ्र के समान, स्थिर उत्साह से त्रिशिर निकल पड़ा। वितत-धनुर्वेद-विद्या में आढ्य बना अतिकाय तब अधिक तेज से, शर-चाप-खड्ग आदि शस्त्रास्त्र-समिति (समूह) से, अधिक शोभा से सूर्यप्रकाश की भाँति प्रकाशित और शोभित कनकरथ पर आरूढ़ हो, घनभूषणों की द्युति से कनकाद्रि (सम) होते हुए, चल पड़ा, ॥ ४२६० ॥
—सुरवरों के घोटकों के सम शोभायमान हो, उरुभूषण-प्रभा से उज्ज्वल बने अवदात (निर्मल, श्वेत)-हय पर आरूढ़ हो, नरांतक प्रविमल तेजोभासित होते हुए, शक्तिपूर्वक उद्भट बाहुशक्ति को धारणकर, शक्तिपाणि (कुमारस्वामी) के समान सराहनीय ढंग से निकल पड़ा। दीपित गदा को धारणकर देवांतक विष्णु के रूप से उपमित होते हुए निकल पड़ा। गुरु-गदा-पाणि हो गुह्यकेश्वर (कुबेर) की पुरुषता से तब महापार्श्व रवाना हुआ। कालचक्रों के समान उज्ज्वल बनकर लीला से अनेक रथ चल

गोंडल वडुवुन गोटान कोट्लु । गंडु मीरिन मदगर्वंबु मिगुल
दंडिमै वेंडले नुद्दंडत हस्त । दंडंबु लोप्प वेदंड संघमुलु;
हेषारवंबुल नेल्ल दिक्कुलनु । घोषिप जेयुचु गुर्र्रमुल् वेंडले;
गालकिंकर समाकारंबु लमर । गालुबलंबु लुग्रत नेचि वेंडले;
४२७०

जतुरंग बलमु ली चंदंबु नोंदि । यतुलितंबगुटयु नप्पुडु नडुम
ब्रळयकालार्कुल भंगि नेंतयुनु । वेलुगोंदि रादैत्य वीरु लार्वुरुनु;
नति शुभ्रमगु शरदभ्रंबु लोप्पु । गति वारि पुंडरीकंबु लोप्पारे;
"गडिमि मै गेलुतुमु; कादेनि जत्तु; । मुडुग मेंभंगि रणोत्साह" मनुचु
नडचिरि कलनिकि नाना विधमुल । नेडपक पंतंबु लिच्चुचु वार;
लप्पु डोंडोरुवुल याह्वानमुलनु । जेप्प जोद्यंबैन सिंहनादमुल
रथघोषमुलनु दुरंग हेषलनु । बृथुल दंतावळ बृंहितंबुलनु
गर मुग्रमुगु पदघटन ध्वनुल । निरुपम ध्वज किंकिणीनिस्वनमुल
बटह भेरी शंख भयदरावमुल । बटुतर निस्साण भांकारमुलनु
दिक्कुलु घूर्णिल्ले; दिवि पेल्लगिल्ले; । जुक्कलु डुल्ले; वासुकि योंडुगिल्ले
४२८०

पड़े । पर्वतों के समान करोड़-करोड़ की संख्या में मदगर्व के उत्कर्ष से, उद्दंड-हस्तदंडों (सूंडों) से सुशोभित हो. अधिक संख्या में वेदंड (हाथी) निकल पड़े । हेषारवों से समस्त दिशाओं को प्रतिध्वनित करते हुए अश्व निकल पड़े । कालकिंकर (यमदूतों) के सम आकार से शोभित हो पैदल सेना उग्रता से विजृंभित हो निकल पड़ी ॥ ४२७० ॥

—चतुरंग बल के इस प्रकार अतुलित होने पर तब बीच-बीच में प्रलय-काल के अर्क की भाँति वे छः दैत्यवीर अधिक प्रकाशित हुए । अतिशुभ्र शरदभ्रों (शरत्-मेघों) की शोभा के समान उनके पुंडरीक (छत्र) शोभित हुए । 'साहस से युक्त हो जीत लेंगे, नहीं तो मर जाएँगे । किसी भी प्रकार रणोत्साह को नहीं छोड़ेंगे' (यह) कहते हुए, वे लोग युद्धभूमि की ओर, नाना प्रकारों की प्रतिज्ञाएँ करते हुए चल पड़े । तब दोनों (पक्षवालों) के आह्वानों, विचित्र सिंहनादों, रथघोषों, तुरंग हेषाओं, पृथुल-दंतावलियों के बृंहितों, अधिक उग्र बने पदघट्टन की ध्वनियों, निरुपम ध्वजाओं के किंकणी-स्वनों, पटह-भेरी-शंख के भयद-रवों, पटुतर-निस्साणों के भांकारों के कारण दिशाएं घूर्णित हुईं, दिवि (आकाश) उखड़ गया, तारे टूट गिरे, वासुकि (एक ओर) झुक गया, ॥ ४२८० ॥

मेरुवु गंपिंचें; मेदिनि वडकें। भार मोर्वक दिगिभमुलु सलिचें;
नट्टु दानवानीक माकोट वेंडल। वट्टु भयंकर वृत्ति व्लवगवल्लभुलु
भूनभोंतरमु लास्फोटन ध्वनुलु। पूनि योक्कट निंड भूरि सत्वमुल
दलकोंनि गिरुलुनु दरुवुलु वैचि। चेलगिंचि रप्पुडु सिंहनादमुलु;
ज्रलमुन दैत्युलु चटुल बाणमुलु। वलुविडि गुरिसिरि प्लवगुल मीद;
नसुरावळिकि मुन्न याकपिवरुलु। नसुरुल जंपंग नडरि पेंल्लार्चि
कपुलकु मुन्न राक्षसुलुग्र वृत्ति। गपुल जंपुद मनि कडक वार्टिचि
यसमुन जलमु पेंपार नोंडोरुल। वसुमति पै वडवेतुरु किनुक;
नसुरुल चेति शास्त्रास्त्रंबु लोंडिसि। वेंस ब्रुच्चि पेंळ्ळनविरुतुरु कपुलु;
गपिकोटि चेति वृक्षंबुलु गिरुलु। गुपितुलै विरुतुरु क्रूर दानवुलु; ४२९०
गपुल काळ्ळनु बट्टि कडगि राक्षसुलु। कपुल तोडनें महोग्रमुग ब्रेयुदुरु;
असुरुल कडकाळ्ळ ललमि वानरुलु। नसुरुल तोडन यडुतुरु बेंट्टु;
अट्टु पोरि जर्जरितांगुलै नेल। गुटिल दैत्युलु गपि कोटुलु ब्रेंळ्ळि
दुरमुलो बडियु नेंत्तुरुलु ग्रक्कुचुनु। वोंरि वोंरि मूर्छलु पोंदि; रंतटनु
देलिसि वानरुलनु देव शात्रवुलु। गलिसि कय्यमु सेयगा नंदु गपुलु

—मेरु कंपित हो गया, मेदिनी कांप उठी, भार को सह न सक दिगिभ (दिग्गज) संचलित हुए। इस प्रकार दानवानीक के उस दुर्ग से निकलने पर, पटु-भयंकर-वृत्ति से प्लवग-वल्लभ (वानर-नायक) आस्फोटन (आस्फालन) की ध्वनियों से भू-नभ के अन्तर को एकदम भर देते हुए, भूरि सत्त्वों से, लगकर, गिरि और तरु फेंककर, सिंहनाद करते हुए विजृंभित हुए। हठ से दैत्यों ने बारबार प्लवगों पर चटुल बाण बरसाए। असुरावली से ही उन कपिवरों के, असुरों को मारने के लिए उत्कर्ष से अधिक सिंहनाद करने पर, कपियों से पहले ही राक्षसों ने उग्रवृत्ति से कपियों को मार डालने के लिए साहस धारण किया। दर्प से और हठ के विवर्द्धित होने पर क्रोध से एक दूसरे को वसुमति (जमीन) पर गिरा देते। असुरों के हाथ के शस्त्र तथा अस्त्रों को झट छीन-पकड़कर, तोड़ देते। कपिकोटि के हाथ के वृक्ष और गिरियों को कुपित हो क्रूर दानव तोड़ डालते ॥४२९०॥

कपियों को चरणों से पकड़कर, कपियों के साथ ही महोग्रता से टकराकर फेंक देते। असुरों को चरणों से दबा-पकड़कर, भीकरता से राक्षसों को दबा डालते। ऐसा जूझकर जर्जरित शरीर वाले होते हुए, कुटिल दैत्य और कपि-समूह जमीन पर गिर पड़े। युद्ध में गिरकर, रक्त उगलते हुए, बार-बार मूर्छित हुए। तब होश में आकर (पुनः) वानरों

दानवुतो नॆत्ति दानवु व्रेसि । येनुगु तो नॆत्ति येनुगु व्रेसि
तुरगंबुतो नॆत्ति तुरगंबु व्रेसि । यरदंबु तो नॆत्ति यरदंबु व्रेसि
यरदंबु गॊनि करि नदरंट व्रेसि । करि नॆत्तिकॊनि तुरंगमु बडव्रेसि
तुरगंबु नॆत्ति दैत्युनि डॊल्ल नेसि । युरुसत्त्वुलै पेर्चि युग्रत नार्चि
तरुचर वीरुलु दर्पंबु मॆरसि । पॊरि बॊरि निब्भंगि बॊरि
वुच्चुटयुनु ४३००
रयमुन गोपंबु रंजिल्ल दैत्य । चयमुनु वानर समितिपै गविसि
प्रदरंबु लेसि चक्रंबुल नेसि । गदल नॊप्पिचि खड्गंबुल द्रुंचि
भिंडिवालम्मुल बीचम्मु लणचि । खंडिचि सुरियल गंडलु बरुलु
गुंत शूलम्मुल ग्रुच्चि वानरुल । नितलितलु सेसि यॆसग नार्चुटयु
नंतट बोवक यगचरु लार्चि । यंतंत कडरि दैत्यावळि गिट्टि
तरु षंडमुलु बर्वत प्रकरमुलु । नुरुवडि नॆत्ति यत्युग्रत वैव
बडियॆडि दैत्युलु बारु दैत्युलुनु । नुडुगक यंदंद यॊरलु दैत्युलुनु
गलयंग नॆत्तुरु ग्रक्कु दैत्युलुनु । बॊलुपरि नेलपै बॊरलु दैत्युलुनु
नंदंद यट्टलै याडु दैत्युलुन । श्रंदि प्रत्यर्थुल मरचु दैत्युलुनुः
नॆक्किन रौतुलु निट्टु नट्टु पडग । लॆक्क सेयक कराळिचु गुर्रमुलु
४३१०

और देव-शत्रुओं ने टकराकर युद्ध किया। उसमें कपियों ने दानव को उठाकर दानव पर फेंककर, हाथी को उठाकर हाथी पर फेंककर, तुरग (अश्व) को उठाकर तुरग पर मारकर, रथ उठाकर रथ पर डालकर, रथ को उठाकर करि को मर्मातक रूप से मारकर, करि को उठाकर तुरंग को गिराकर, तुरंग को उठाकर दैत्य को लुढ़काकर, (इस तरह) उरुसत्त्व वाले हो विजृंभित हो, उग्रता से सिंहनाद कर, तरुचर वीर दर्प से दीप्त हो, बार-बार इस प्रकार मार डालने पर, ॥ ४३०० ॥
—वेग से, क्रोध के रंजित होने पर, दैत्यसमूह ने भी, वानर समिति पर टूट पड़कर, प्रदर डालकर, चक्र डालकर, गदाओं से पीड़ित कर, खड्गों से काटकर, भिंडिवालों से छक्के छुड़ाकर, छुरियों से खंडित कर, स्नायुओं और पसलियों में बर्छियाँ और शूल चुभोकर, वानरों को इस प्रकार सता-सताकर, विजृंभित हो, सिंहनाद किया। उतने से न जाने देकर अगचरों ने सिंहनाद कर, अधिकाधिक विवर्द्धित हो, दैत्यावली के पास पहुँच तरुषण्ड (वृक्षसमूह), पर्वतप्रकरों को झट से उठाकर अति-उग्रता से डालने पर, गिरनेवाले दैत्यों, भाग निकलनेवाले दैत्यों, अविलंब जहाँ-तहाँ चीख-पुकारनेवाले दैत्यों, सर्वत्र रक्त उगलनेवाले दैत्यों, शोभा खोकर ज़मीन पर लोटनेवाले दैत्यों, जहाँ-तहाँ

बक्कॅर लूडंग बड्रचु गुर्रमुलु । दिक्कुलु सुडिवड दिरुगु गुर्रमुलु
गीलॅडलिन क्रिय गॅडयु गुर्रमुलु । गूलि काळ्ळनु दन्निकॉनॅडु गुर्रमुलु
विकलंबुलै नोरु विच्चु गुर्रमुलु । नॉकरूपु नेर्पडकुंडु गुर्रमुलु;
गरमुलु दुनिसिन गंपिंचु करुलु । वॅरवार गॉम्मुलु विरिगिन करुलु
मर्रलि लंककु वॅस मगिडॅडु करुलु । दिरमेदि दिदिर दिरिगॅडु करुलु
गॉडल कैवडि गूलॅडि करुलु । गंडतुंडंबुलै क्रालॅडि करुलु;
मदमुलु दिगजारि म्रग्गॅडु करुलु । सदमदमै नेल जदिसिन करुलु;
रथिक सारथि रथ्य रहित रथमुलु । ब्रथितंबुगा भुवि बडु रथंबुलुनु
दोरगंड्लुग बड्ड दुनियु रथमुलु । नारग दल क्रिंदु लगु रथंबुलुनु
गीळ्ळॅल्ल दप्पि म्रग्गिन रथंबुलुनु । द्राळ्ळॅल्ल द्रॅव्व बॉदनि रथंबुलुनु ४३२०
नालील नुग्गुनूचगु रथंबुलुनु । नालंबुलो दरुचगुटयु जूचि
सुरखेचरादिकस्तोमंबु 'चोद्य । तर' मनि यात्मल दद्दयु मॅच्च
नप्पुडु किनिसि नरांतकुंडार्पु । लॉप्प निजाश्वंबु नुरवडि बड्रपि

रुंड बन हिलनेवाले दैत्यों, मरकर प्रत्यर्थियों (शत्रुओं) को भूलनेवाले दैत्यों (तथा) आरूढ़ अश्वारोहियों के इधर-उधर गिरने पर, ॥ ४३१० ॥

—(उनकी) परवाह किए बिना हिनहिनाने वाले घोड़ों, झूल के ढीले हो जाने पर भागनेवाले घोड़ों, दिशाओं के चक्कर खाने पर (स्वयं चकराकर) घूमनेवाले घोड़ों, अंगों की संधियों (जोड़ों) के उखड़ जाने पर गिरनेवाले घोड़ों, गिरकर पैरों से छटपटाने वाले घोड़ों, विकल हो मुँह खोल देनेवाले घोड़ों, रूप का पता ही न लगनेवाले घोड़ों, (तथा) सूँडों के कट जाने पर कंपित होनेवाले हाथियों, शोभायमान दाँतों के टूटे हाथियों, लौटकर झट लंका की ओर जानेवाले हाथियों, स्थिरता खोकर झट चक्कर खानेवाले हाथियों, पर्वतों के समान गिरनेवाले हाथियों, खण्ड-खण्ड हो गिरनेवाले हाथियों, मद बहाते नष्ट होनेवाले हाथियों, तहस-नहस हो मिट्टी में मिलनेवाले हाथियों, (तथा) रथिक, सारथी, रथ्य रहित रथों, प्रथित (यशोयुक्त) रूप से जमीन पर गिरनेवाले रथों, एक ओर उलटकर गिरनेवाले रथों, पूरी तरह उलट जानेवाले रथों, संधियों (जोड़ों) के टूट जाने से गिरनेवाले रथों, रस्सों के कट जाने से अस्तव्यस्त बने रथों, ॥ ४३२० ॥

—इस प्रकार चूर-चूर बने रथों (आदि के) युद्धभूमि में प्रचुर मात्रा में होने पर, देखकर, सुर-खेचर-आदि का स्तोम (समूह) 'आश्चर्यतर है', कहकर मन में अत्यन्त चकित हुआ। तब क्रुद्ध हो नरांतक ने सिंहनादों के शोभित होने पर, अपने अश्व को शीघ्र दौड़ाकर, असुरों को 'मत डरो' कहते (धैर्य

यसुरुल 'नोडकुं' डनुचु वानरुल । नसमुन गिट्टि विट्टदलिंचि ताकि
नेलकौनि यौक्कौक्क निमिषंबुलोन । निल गूल्चे नेडु नूरेसि वानरुल
सुरपति शौर्यंबु सौंपारुचुंड । गिरुल खंडिंचि येगिन त्रोव वोलें
दरुचर कोट्टुलु दरूचुगा बडुट । निरवौंद वाडु वोयिन त्रोव यौप्पे;
नेवानरुंडैन नेचि कोपमुन । भावंबुलो दन्नु बरिमार्प दलचु
नंतरंगमु जौच्चिनट्टि चंदमुन । नंतकु मुन्न ता नतनि गीटडुचु;
ने कपियैन दन्नेदुरंग दलचि । भीकरुडै गिरि बेरुकंग जूचु ४३३०
नंतलोननें चेरि यधिक रौद्रमुन । नंतकु मुन्न तानतनि गीटडुचु;
ने वलीमुखुडैन ने पग्गलिंचि । ताबेट्टु गाग बादप मेत्त दलचु
नंतंत डग्गरि यधिक शौर्यमुन । नंतकु मुन्न तानतनि गीटडुचु;
नंतट बोवक हयमु बेंबरपि । यंतंत बेनु गुंपुलैन वानरुल
प्रेवुलु दौब्बलु बेल्लुगा नुरुमु । गा विविधमुलैन गतुल द्रौक्किकचि
गुंडेलु वगुलंग गोलेम्मु लगल । नौडौट दाकिंचि युर्वर गूल्चि
नलुकतो ब्रळय कालानिलुपगिदि । दलकौनि येंदुनु दानयै निंडि
वानर-वर-सैन्य-वनमुलु विरुग । मान कुग्रत बलुमारु जरिचें;

देते हुए) वानरों पर दर्प से आक्रमण कर, भीकरता से धमकाकर, जूझकर, स्थिरता से एक-एक निमिष (क्षण) में सात सौ वानरों को ज़मीन पर गिराया। सुरपति (इन्द्र) का शौर्य से शोभित होकर, गिरियों को खंडित करते मार्ग बनाते जाने के समान, वह (नरांतक) जिस मार्ग से जाता था, तरुचरकोटियों के प्रचुर माता से गिरने पर (वह मार्ग इन्द्र के गए मार्ग के समान) शोभित होता। कोई वानर विजृंभित हो क्रोध से मन में अपने वध करने की बात सोचता, (ऐसे वानर के) अन्तरंग में प्रवेश करने के समान (मन की बात जानने के समान) उसे पहले ही मार डालता। कोई कपि सामना करने की सोच, भीकर हो गिरि उखाड़ने की सोचता, ॥ ४३३० ॥

—उतने में ही (उसके पास) पहुँच अधिक रौद्रभाव से, स्वयं उसे मार डालता। कोई वलीमुख अधिक उत्कर्ष से, पादप उठाना चाहता हो तो तभी (उसके पास) पहुँच अधिक शौर्य से उसे स्वयं मार डालता। उतने से न जाने देकर, घोड़े को (उनपर) चलाकर, झुंड के झुंड बने हुए वानरों पर, विविधि गतियों से चलाकर, आँत और स्नायु को अधिकता से नष्ट करता, एक को दूसरे से टकराकर जिससे वक्ष फट जाए और अस्थिपंजर टूक-टूक हो जाए, ज़मीन पर डाल देता, क्रोध से प्रलयकाल के अनिल के समान (उसने) सप्रयत्न सर्वत्न स्वयं व्याप्त होकर, वानर-वर-सैन्यरूपी वनों

वानि शौर्यबुनु वानि शक्तियुनु । वानरुलेल्ल नोर्वग लेक यपुडु
विकलुलै युंडिरि विस्मितु लगुचु; । सकल देवतलुनु जलियिंचि रपुडु
४३४०
पटु भीति वोंदिन प्लवग सैन्यमुल । नटु वेचु चुन्न नरांतकु जूचि
यनयंबु गोपिंचि यंबुद पटल । मुन नुंडु सूर्युंडु मोनसिन माड्कि
गपिराज तनयु डंगद कुमारुंडु । कपिसेन लोनुंडि कडगि येतेंचि

अंगद, नरांतकुल द्वंद्वयुद्धमु

"योरि नरांतक ! युग्रत कपुल । नीरसंबुन वेंचि येल चंपेदवु ?
इंत सेसिननु नीविट बंट वैते ? । यंत शूरुडवैन ननि दाकु नन्नु"
नन विनि नव्वि नरांतकुं "डोरि । वनचर ! नीवेंतवाडवु नाकु ?
नखिल दिक्पालुर नदटडंचितिनि; । निखिल देवतल मन्निप केचितिनि
नट्टि नातोड नीवा येंदिरेंदवु ? । पट्टि चट्टलु चीरि पार वैचेंदनु;
नरयंग मुकु पच्च लारवु नेडु । विरुदु पिच्चुकलतो वेनग जूचेंदवु;
ननु जूतुगा" कन्न नगुचु नंगदुडु । "दनुज दशग्रीव दर्पंबु मान्पि४३५०

को गिरा देते हुए दुर्निवार रूप से उग्रता से कई बार उसने विहार किया। उसके शौर्य तथा उसकी शक्ति को सह न सक तब सभी वानर विकल हो, विस्मित होते रहे, तब सकल देवता विचलित हो गए, ॥ ४३४० ॥
—अधिक भीत बने प्लवग सेनाओं को उस प्रकार सतानेवाले नरांतक को देख, अनारत क्रुद्ध हो, अंबुद-पटल (मेघसमूह) में रहनेवाले सूर्य के विनिर्गत होने के समान, कपिराजतनय अंगदकुमार कपिसेना के भीतर से सप्रयत्न निकल पड़ा। (और कहा)—

अंगद, नरांतक का द्वन्द्व युद्ध

"रे नरांतक ! उग्रता से कपियों को इस प्रकार विजृंभित हो क्यों मार डालते हो ? इतना करने पर भी यहाँ (महा) शूर बन सके क्या ? यदि इतने (महा) शूर हो तो युद्ध में मेरा सामना करो।" (ऐसा) कहने पर सुनकर, नरांतक ने (कहा)—"रे वनचर ! तुम मेरे लिए कितने हो (तुम्हारी हस्ती ही क्या है) ? अखिल दिक्पालकों के दर्प का दमन किया, निखिल देवताओं को क्षमा न कर, सताया है। ऐसे मेरा तुम सामना कर सकते हो ? पकड़कर छक्के छुड़ाकर फेंक दूँगा। सोचने पर दुधमुँहे हो, आज बिरुद वाले (प्रतापी) योद्धाओं से जूझना चाहते हो; मुझे देख लेना।" (ऐसा) कहने पर हँसते हुए अंगद ने (कहा)—"हे दनुज ! दशग्रीव के दर्प का दमनकर, ॥ ४३५० ॥

पूनि याखर सूति बौरि मालिच पिदप । ने नेगुनपुड्ड नी वेंरुगवे नन्नु ?"
ननुडु दानवुडु कालाहि चंदमुन । मुनुकौनि यार्पुलु म्रोयंग वच्चि
घनतर विस्फुलिंगंबुलु सेंदर । ननयंबु दन शक्ति नंगदु वैचें;
गरुडुनि वक्त्रंबु गदिसि नंतटनें । परिसिन काल सर्पबुनु बोलें
नदि वज्र निभमैन यतनि वक्षंबु । गदिसिन यंतने खंडंबु लय्यें;
वज्रायुधंबुन वरशैल मडुचु । वज्रि चंदंबुन वालिनंदनुडु
नऱचेत वानि हयंबु मस्तकमु । पऱियलु वाऱ निर्भर वृत्ति नेसें;
जेंच्चेंर व्रेयंग जेड्पडि नोरु । विच्चुचु नालुक वेंडल बेंट्टुचुनु
वेंरवऱि काळ्ळुनु वेंस दन्निकौनुचु । धरमीद बडि चच्चें दत्तुरंगंबु;
नट्टु तुरंगमु वड्डु नन्नरांतकुंडु । चटुल कोपानलज्वलिताक्षुडगुचु ४३६०
'गेंडयु' मंचुनु बिडिकिट मस्तकंबु । बौडिचि यंगदु मूर्छ बौंदिचुटयुनु
नंतनें तेंलिसि "नरांतक ! नीकु । नित शक्तियु गलदे" यनि पेंच्चि
पेंरिगियु बिडुगैन पिडिकिट वानि । वर शैल निभमैन वक्षंबु वौडिचें;
बौडिचिन नेंत्तुरु पौरि बौरि दौरुग । बौडि पौडियै धर बुनुकलु सेंदर

—सप्रयत्न उस खरसूत का वध करके मेरे (लौट) जाते समय, मुझे नहीं जाना था ?" (ऐसा) कहने पर दानव ने कालाहि के समान, आगे बढ़कर सिंहनाद करते हुए आकर, घनतर-विस्फुलिंगों को बिखेरनेवाली अपनी शक्ति को अंगद पर फेंक दिया। गरुड़ के वक्त्र (मुख) का स्पर्श होते ही, दमित होनेवाले कालसर्प के समान, वह (शक्ति) वज्रसमान उसके वक्ष का स्पर्श करते ही खण्ड-खण्ड हो गयी। वज्रायुध से वरशैल का दमन करनेवाले वज्रि (इन्द्र) की भाँति वालिनन्दन ने हथेली से निर्भर (दुर्भर)-वृत्ति से, उसके (नरांतक के) हय के मस्तक पर दे मारा जिससे वह फूट गया, (और) वह अश्व झट मार खाकर, नष्ट हो, मुँह खोले, जीभ बाहर करते, शोभा खोकर, पैरों से छटपटाते हुए, धरा पर गिरकर मर गया। ऐसा तुरंग के गिरने पर वह नरांतक ने चटुल-कोपानल से ज्वलित अक्ष (नेत्र) वाला होता हुआ, ।। ४३६० ।।

—'मर जा' कहकर मुट्ठी से मस्तक पर प्रहार कर, अंगद को मूर्च्छित कर दिया। उतने में ही (अतिशीघ्र) होश में आकर 'रे नरांतक ! तुम्हारी इतनी भी शक्ति है ?' कह, विजृंभित हो, अशनिरूपी मुट्ठी से उसके (नरांतक के) वर-शैल-निभ (-समान) वक्ष पर प्रहार किया। प्रहार करने पर बार-बार रक्त के बहने पर, हड्डियों के चूर-चूर हो धरा पर गिरने पर, अति घोर संगर-भूमि में गिरकर नरांतक ने तब प्राण छोड़

गडु घोरमैन संगरभूमि लोन । वडि नरांतकुडंत ब्राणमुल् विडिचें;
नांचिरि देवत लांमिट नुंडि; । यांचिरि वानरु लवनीतलमुन;

देवतंक त्रिशिरु लंगदुनितो दलपडुट

दनुजाधिनाथुनि तनयुनि पाटु । गनि महोदरु डुग्रकरि बुरि कौल्पे
ननुजुंडु वडुटकु नडलुचु, वालि । तनयु डेचुटकु नुद्दंड कोपंबु
मुप्पिरि गौनग निम्मुल वरिघम्मु । द्रिप्पुचु वर्तेंचे देवांतकुंडु;
रवि मंडलमु बोलु रथ मुग्र भंगि । नवनि गंपिप नुद्धति दोलुकौनुचु ४३७०
द्रिशिरस्कुडगुचु नग्नि तेंरगुन मेंरसि । त्रिशिरुंडु गविसें नुद्दीप्त कोपमुन
नप्पु डंगदुडु शाखायतंबगुचु । नौप्पेंडु नौकवृक्ष मुरुवडि वेंरिकि
यडरंग नांचि देवांतकु वेंव । नडुमनें त्रिशिरुंड् नरुमुगा नेसें;
नेसिन मिटिकि नेंगसि यंगदुडु । गासिल्लि शैल वृक्षंबुलु मिगुल
नर्डरिप नपुडु देवांतक त्रिशिरु । लेंडवडगा द्रुंचि येंतयु मिंचि
परंगिचि रतनिपें बटुतोमरंबु । लरुदारगा जेरि यत्युदग्रतनु;

दिए । आकाश पर से देवताओं ने सिंहनाद किए (और) अवनीतल पर वानरों ने सिंहनाद किए ।

देवांतक और त्रिशिर का अंगद से जूझ पड़ना

दनुजाधिनाथ के पुत्र के पतन को देखकर, महोदर ने उग्रकरि को भड़काया । अनुज के गिरने पर व्याकुल होते हुए, वालितनय के विजृंभित होने पर उद्दंडकोप के तिगुना होने पर, शोभा से परिघा घुमाते हुए देवांतक आया । रविमंडल-समरथ को उग्रगति से, उद्धत रूप से ऐसे चलाते हुए कि अवनि कंपित हो जाए, ।। ४३७० ।।

—त्रिशिर वाले अग्नि की तरह प्रकाशित हो, त्रिशिर ने उद्दीप्त कोप से आक्रमण किया । तब अंगद ने शाखायुत हो शोभित होनेवाले एक वृक्ष को अतिवेग से उखाड़कर, उत्कर्ष से सिंहनादकर, देवांतक पर फेंक दिया (तो उसे) त्रिशिर ने बीच में ही चूरकर दिया । करने पर आकाश पर उड़कर, अंगद के व्याकुल हो शैल-वृक्षों को प्रचुरता से फेंक देने पर, तब देवांतक और त्रिशिर ने क्रम से उन्हें काट देकर, उत्कृष्ट हो, उस पर अतिशयता से, अति उदग्रता से, पटु तोमर चलाए । उतने से न जाकर (संतुष्ट न होकर) सिंहनाद करते हुए और विचित्र रूप से (अंगद को)

नंतट बोवक यार्चुचु मरियु । वितगा वोंदुवुचु वेगंबु मेंडसि
यावालिसुतु मीद नधिक रोषमुन । देवांतकुडु वैचे दीव्रत बरिघ;
दरमिडि सिंहनादंबु सेयुचुनु । देरलक शर वृष्टि द्रिशिरुंडु गुरिसे;
नुरुदंति गोंलिपि महोदरुंडेचि । परगिचे नतनिपै बट्टु तोमरंबु;
४३८०

नेंनसि या मुव्वुरिट्लेपु सूपुटयु । घनरोष मेंसग नंगदुडु मैवेंचि
दंभोळि क्रिय महोदरुनि येनुंगु । कुंभस्थलमु दाक गुधरशृंगंबु
गेंरलि व्रेसिन नदि घींकार मेंसग । नोंरलि ग्रुड्डुलु वेंलिकुरिकि चच्चुटयु
जयलक्ष्मि राघवेश्वरु बोंद गोरि । प्रियमुन गैसेय बेंट्टिय देरचे
ननग नाकरितल यट्टु व्रस्सि योंप्पे । ननुपमंबैन मुत्यंबुलु सेंदर;
नंतट बोक देवांतकु व्रेसे । दंति दंतमु बुच्चि तारासुतुंडु;
अट्टु व्रेट्टु वडि वातहति जलियिंचु । पट्टु साल वृक्षंबु पगिदि दूगाडि
नेंत्तुरु ग्रक्कियु नेंडि साहसमुन । जित्त मोंक्किकतगा जेसि यय्यसुर
परिघंबु गोंनि व्रेसे बर्वत तटमु । करणि नोंप्पारु नंगदु नुरस्थलमु;
नंगदुंडुनु दान नवनिपै म्रोंग्गि । यंगमुतोड धैर्यमु सिक्कबट्टि ४३९०

घेर लेते हुए, वेग से दीप्त हो, उस बालिसुत पर अधिक रोष से, तीव्रता से देवांतक ने परिघा फेंक दी। क्रम से सिंहनाद करते हुए त्रिशिर ने निरंतर शरवृष्टि की। उरुदंति (बड़े हाथी) को भड़काकर विजृंभित हो महोदर ने उस पर पटु तोमर चलाया ॥ ४३८० ॥

—उन तीनों के मिलकर विजृंभित होने पर, घनरोष के बढ़ने पर अंगद ने शरीर को बढ़ाकर, दंभोलि (अशनि) के सम-महोदर के हाथी का कुंभस्थल फट जाए, ऐसा विजृंभित हो, कुधर (पर्वत) -शृंग को फेंक दिया। वह भी घींकार करके, चीखकर, आँखें बाहर निकल आने पर मर गया। जयलक्ष्मी ने राघवेश्वर को प्राप्त करना चाहकर, प्रेम से अलंकृत होने के लिए मंजूषा खोला हो, इस प्रकार उस हाथी के सिर के फूटने से अनुपम मोती बिखर पड़े। उतने से न जाकर दंति के दाँत को ले तारासुत ने देवांतक को दे मारा। ऐसा प्रहार खाकर, वातहति (हवा के झोंके) से विचलित होनेवाले पटुसाल-वृक्ष के समान हिलकर, खून उगलकर भी, अधिक साहस से अपने चित्त को एकत्र कर, उस असुर ने परिघा लेकर, पर्वततट के समान शोभायमान अंगद के वक्षस्थल पर मारा। अंगद भी उसके कारण अवनि पर झुककर, अंग (शरीर) में धैर्य को धारणकर, ॥ ४३९० ॥

कोपिंचि देवांतकुनि मीद नडव । दीपितास्त्रंबुल द्रिशिरुंडु मूट
ना वालितनयुनि नातम गैकोनक । लावुन फालस्थलमु नाट नेसॆ;

हनुमदादुलु त्रिशिरादि राक्षस वीरुल जंपुट

नंत नीलुंडुनु ननिलनंदनुडु । वंतंबुतो दोड्पडि रंगदुनकु;
नंदु नीलुंड महाशैल मॆत्ति । यंदंद त्रिशिरुपै नार्चुचु वॆव
नशनि चंदंबगु नस्त्रंबु दोडिगि । त्रिशिरुंडु नग्गिरि दॆगनेसॆ नपुडु;
धीरत वाटिंचि देवांतकुंडु । वारियै योप्पिन परिघ द्रिप्पुचुनु
बलियुडै चनुदेर बवमानसूनु । डलुकतो राक्षसु नौदल जूचि
बॆडिदंबुगा वैस बिडिकिट बौडिचॆ; । बौडिचिन नप्पुडु पौरि वौरि बंड्लु
डुल्लंग नोरु बॆट्टुग दॆरचुचुनु । ग्रेळ्ळॆ दैत्युडु ग्रुड्लु दिरुग वैचुचुनु;
देवत लार्चिरि दिवि नुंडि यपुडु; । देवांतकुनि पाटु तॆरगौप्प जूचि
४४००

त्रिशिरुंडु गोपिंचि तीव्रत नेसॆ । नशनि वेगास्त्रंबु लानीलु मीद;
दग वॆडियुनु महोदरु डप्पु डुग्र । मगु नौक्क करि नॆक्कि यार्चुचु वच्चि
कुल गिरिपै वान गुरियु मेघंबु । नलवुन नतनिपै नस्त्रंबु लेसॆ;

क्रुद्ध हो देवांतक पर चल पड़ा तो त्रिशिर ने तीन दीप्त अस्त्रों को, उस बालितनय की परवाह न करके, समर्थता से फालस्थल (ललाट) पर गड़ जाएँ, ऐसा चलाया ।

हनुमान आदि के त्रिशिर आदि राक्षस वीरों को मारना

तब नील और अनिलनन्दन, स्पर्धा के साथ अंगद के सहायक बने । उनमें नील ने महाशैल को उठाकर सर्वत्र सिंहनाद करते हुए त्रिशिर पर फेंका तो त्रिशिर ने अशनि समान अस्त्र का संधान कर, तब उस गिरि को काट दिया । धैर्य धारणकर देवांतक ने विशाल शोभित परिघा घुमाते हुए, बली हो आने पर, पवमानसून ने क्रोध से राक्षस के ललाट को देख (लक्ष्यकर) भीकरता से झट मुष्टि का प्रहार किया । प्रहार करने पर तब लगातार दाँतों के टूट गिरने पर, मुँह खोलते हुए, पुतलियों के घूम जाने पर दैत्य मर गया । तब दिवि से देवताओं ने सिंहनाद किया । देवांतक के पतन को ठीक तरह देखकर, ॥ ४४०० ॥

—त्रिशिर ने क्रुद्ध हो, तीव्रता से अशनि-वेगवाले अस्त्र उस नील पर फेंके । फिर शोभा से तब महोदर एक उग्र करि पर आरूढ़ हो सिंहनाद करते आकर, कुलगिरि पर मेघ के वर्षा (पानी) बरसाने के समान उस पर अस्त्र

नानीलुड्नु वारि यस्त्र संततुल । दा नैंतयुनु भिन्नतनुडै नोंच्चि
यटु मूर्छ नोंदियु नंतन तेलिसि । पटु गति तोड नभंबुन कैगसि
तरुवुलतोड नुद्धति मीदि कैत्ति । धरणीधरमु महोदरुमीद वैचें;
वैचिन दानिचे वारण युक्तु । डै चच्चें दल व्रस्सि यम्महोदरुडु;
धरमीद नम्महोदरुडु गूलुटयु । दिरमैन कडिमतो द्रिशिरुंडु वेचि
'सरि गोंदु' ननि पैक्कु शरमुलु गुरिसें । नरवायि गोनक या हनुमंतु मीद;
जेच्चैर बवंत शिखरंबु विरिचि । तेंच्चि यापावनि त्रिशिरुपै वैचें; ४४१०

नदि नडुमनें तुमुरै राल नेसें । द्रिदशुलु वैड्गंद द्रिशिरुंडु वेचि;
हनुमंतुडुनु वानि यरदंबु मीदि । कनुवारगा दाटि यत्युदग्रतनु
सिंगंबु गजमुल जेलरेगि व्रच्चु । भंगि रथ्यंबुल बटुगति व्रच्चें;
नातंडु गिनिसि याहनुमंतु मीद । नाततंबुग शक्ति यडरिचुटयुनु
बलुमंट लेंगयंग बड्तेंचु दानि । बलुवडि बट्टि यप्पावनि द्रुंचें;
शक्ति द्रुंचिन भुज शक्ति वाटिंचि । शक्ति जिह्वयु बोलु चटुलासि गोनुचु

चलाए। उस नील ने भी उनके अस्त्र-समूह के कारण स्वयं भिन्नतन (घायल शरीरवाला) हो, अधिक पीड़ित हो, मूर्छित होकर, फिर शीघ्र होश में आकर, पटुगति से नभ में उड़कर, उद्धत गति से, तरुओं के साथ धरणीधर (पर्वत) को ऊपर उठाकर महोदर पर डाल दिया। डालने पर, उससे वारण-युक्त, (हाथी के साथ) सिर फूट कर, महोदर मर गया। उस महोदर के धरा पर गिरते देखकर, स्थिर साहस से त्रिशिर ने विजृंभित हो 'मार डालूँगा' कहकर, कातर हुए बिना उस हनुमान पर अनेक शर बरसाए। अतिवेग से पर्वतशिखर तोड़ लाकर, पावनी (हनुमान) ने त्रिशिर पर डाल दिया ।। ४४१० ।।

—उसे बीच में ही, त्रिदश (देवता) भीत हो जाएँ, ऐसा त्रिशिर ने विजृंभित हो, चूर कर दिया। हनुमान भी उसके रथ पर कूदकर, अति उग्रता से, सिंह के विजृंभित हो गजों को मार डालने के समान, उसके रथ्यों (अश्वों) को पटुगति से मार डाला। उसने क्रुद्ध होकर, उस हनुमान पर आततगति से शक्ति का प्रयोग किया। अधिक ज्वालाओं के प्रज्वलित होते आनेवाली उस (शक्ति) को झट से पकड़ पावनी ने तोड़ दिया। शक्ति के तोड़ देने पर (अपनी) भुजशक्ति का आधार मानकर, शक्ति की जिह्वा के समान चटुल-असि हाथ में लेते हुए, आश्चर्यप्रद वेग के शोभित होने पर, आकर, हनुमान के वक्ष पर चलाया। चलाने पर उसने

नच्चेरुवैन रयंबु सोंपार । वच्चि याहनुमंतु वक्षंबु व्रेसे;
व्रेसिन नतडुनु वेस नर्चेत । व्रेसे नाराक्षसु विपुल वक्षंबु;
नटु व्रेटु वडि तन यडिदंबु विडिचि । कुटिल राक्षसुडु ग्रक्कुन मूर्छ नोंदे;
ननिलजुंडटु पड्ड यदिदंबु बुच्चु । कौनि बिट्टुगा नार्चे गुंभिनि
वगुल; ४४२०
नालोन देप्पिरि यात्रिशिरुंडु । वालिन पिडिकिट वायुजु पौडिचे;
हनुमंतु डंत नत्यंत रोषमुन । दन कटंबुलु वोंग दर्प मुप्पोंग
रूपिंचि याविश्वरूपु मस्तकमु । लेपुन द्रुंचु सुरेंद्रु चंदमुन
जेच्चेर दनुजुनि शिरमुलु मूडु । नच्चेरुवैन यायडिद मंकिचि
तेगनेसे नादैत्यु तीव्र कर्ममुलु । दग बुच्चुकोनि त्रुंचु दैवंबु करणि;
दिशलु भूभागंबु दिवियु गंपिप । द्रिशिरुंडु भूस्थलि द्रेळ्ळे; द्रेळ्ळुटयु
बटु रौद्रमुन महापार्श्वुडु गिनिसि । निटलंबु वोमलुनु नेरि मुडिवडग
नरुल नेत्तुट दोगि याशाकरींद्र । कर भीकरंबुनु गनक चक्रमुल
नुरुमणि प्रभल नत्युग्रमै यमुनि । परुषोग्र दंडंबु पाटिगा गलिगि
यरुण पुष्पंबुल नरुण गंधमुल । नुरु तरंबगुचु नयोमयंबगुचु ४४३०
नुदयार्क भासमानोज्ज्वलं बगुचु । नोंदवु गदादंड मुग्गुडे तालिच

भी झट हथेली से उस राक्षस के विपुल वक्ष पर प्रहार किया। ऐसा प्रहार खाकर अपनी तलवार को छोड़कर, कुटिल राक्षस झट से मूर्छित हो गया। अनिलज ने उस प्रकार गिरी हुई तलवार को लेकर भीकरता से सिंहनाद किया जिससे कुंभिनी (पृथ्वी) फट जाए ।। ४४२० ।।

—इतने में होश में आकर उस त्रिशिर ने कठोर मुष्टि से वायुज पर प्रहार किया। तब हनुमान अत्यन्त रोष से, अपने गंडस्थलों के फूलने पर, दर्प के उमड़ने पर, लक्ष्य करके, उस विश्वरूप के मस्तकों के औन्नत्य से काट डालनेवाले सुरेन्द्र के समान, आश्चर्यप्रद उस तलवार को चमकाकर, झट से दनुज के तीनों सिर काट डाले, मानों उस दैत्य के तीव्र कर्मों को काट देनेवाला दैव हो। दिशाएँ, भूभाग, आकाश के कंपित होने पर त्रिशिर भूस्थल (धरा) पर गिरकर मरा। (उसके) गिरते ही पटुरौद्र से महापार्श्व क्रुद्ध हो, ललाट तथा भौंहों में गाँठ पड़ने पर (तेवर बदलते हुए), नरों के रक्त से ऊभचूभ होकर, आशा (दिक्)-करींद के कर (सूंड) के समान भीकर, कनक-चक्रों की उरु-मणियों की प्रभाओं से अत्युग्र हो, यम के परुष-उग्र-दंड के समान, अरुण पुष्पों, अरुण गन्धों (चन्दन) से युक्त हो, महान् बन, अयोमय (लौह) बने हुए, ।। ४४३० ।।

तनकोप शिखि मंड दर्प मुप्पोंग । हनुमंतु मीद रयंबुन नड्डुव
नेंड सोच्चि योक्क महींधरंबेत्ति । येंडपक दैत्युनि ऋषभुंडु वैचें;
नडरि यंतटिलोन नम्महीधरमु । दोंडि बड गद गोनि तुमुरुगा नडिचि
चटुलत गदद्रिप्पि समदुडें ऋषभु । बटु सत्त्वमुन महापार्श्वुंडु वैचें;
दानिचे वक्षंबु दाकि या ऋषभु । डूनिन मूर्छचे नोय्यन सोलि
यालोन देलिसि महा पार्श्वु रोम्मु । व्रालिन पिडिकिट व्रय्य दाटिंचे;
दाटिंचुटयु गदादंडंबु विडिचि । मेटि सत्त्वमु सेंडि मेदिनि बडियें;
नागदा दंडंबु ना ऋषभुंडु । वेगंबे कोनि यार्चि व्रेसे नद्दैत्यु;
व्रेसिन वज्रंबु व्रेटुन गोंड । तो सरियै तल तुमुरुगा गूलें ४४४०
नटु महाध्वनितो महापार्श्वु डवनि । बटु भयंकर वृत्ति बडुटग्रु जूचि
करुवलिचे दूलु काराकु लनग । दिरिगि दैत्युलु नलु देसलकु जनिरि;

अतिकायुडु युद्धमु चेयुट

आचंदमुन व्रार लंदरु वडुट । जूचिन रोष विस्फुरण शोभिल्ल
मिडिकि लोकमुलेल्ल म्रिगेंद ननुचु । गडगिन क्रिय नतिकायुडु वेचि

—उदयार्क के समान भासमान-उज्ज्वल होते हुए शोभित गदादंड को उग्रता से धारणकर, अपनी कोप-शिखि (क्रोधाग्नि) के बलने पर, दर्प के उमड़ने पर, हनुमान की ओर वेग से चल पड़ा। बीच में आकर एक महीधर को उठाकर, अविलम्ब दैत्य पर ऋषभ ने डाल दिया। विजृंभित हो इतने में वह महीधर लड़खड़ाकर चूर हो जाए, ऐसा गदा को चटुलता से घुमाकर, समद हो, पटुसत्त्व से महापार्श्व ने ऋषभ पर चलाया। उसके वक्ष पर लगने से ऋषभ एकदम मूर्छित हो गया। शीघ्र होश में आकर, महापार्श्व की छाती पर, कठोर मुष्टि से प्रहार किया जिससे वह फट जाए। प्रहार करते ही गदादंड को छोड़, श्रेष्ठ तत्त्व को खोकर, वह मेदिनी पर गिर पड़ा। उस गदादंड को शीघ्र हाथ में लेकर ऋषभ ने सिंहनाद कर उस दैत्य को दे मारा। मारने पर वज्र के प्रहार से पर्वत के समान सिर के चूर होने पर (वह) गिर गया ॥ ४४४० ॥

—उधर महाध्वनि के साथ महापार्श्व के अवनि पर पटु-भयंकर-वृत्ति (-गति) से गिरते देख, पवन के कारण झड़नेवाले पके पत्तों के समान दैत्य चारों दिशाओं में भाग गए।

अतिकाय का युद्ध करना

—उस प्रकार उन सबके गिरते देखकर, रोष-विस्फुरण के शोभित होने पर, चमककर समस्त लोकों को निगल जाऊँगा, ऐसा प्रयत्नशील होने की तरह

वेयु सूर्युल भंगि वेलुगुचु मिगुल । नायतंबैनट्टि यरदंबु नेक्कि
तनरार सिंहनादमु सेलंगिंचि । तन पेरु सेप्पि युद्दंड कोदंड
निष्ठुराराववंबु निगुड गालाग्नि । काष्टंबु लडगिंप गवयु चंदमुन
गपि सेन पै महोग्रंबुगा गविय । गपुलु निशाटु नाकारंबु जूचि
पटु रौद्र लील नप्पटि कुंभकर्णु । डिट वच्चेनो यनि येंतयु बेदरि
कोंदरु मूर्छिल्ल गोंदरु वेरव । गोंदरु वेरगु चेकोनि चूचुचुंड ४४५०
गोंदरु वापोव गोंदरु गलग । गोंदरु 'राम! चेकोनु' मनि म्रोक्क
र्वविन भीतिमै बरतेंचु कपुल । नुर्वीश्वरुं 'डोड कोडकुं' डनुचु
गलय लोकमु लेल्ल गप्पि गर्जिचु । प्रळयावसर मेघपटलंबु वोले
बेडिदंबुगा नार्चि पृथुल वेगमुन । नडतेंचुचुन्न दानव-नाथ-तनयु
नग्गलिकयु लावु नधिक दर्पंबु । नग्गतियुनु दव्वुलंदे वीक्षिंचि
यनयंबु वेरगंदि यप्पुडाराम । जननाथु डाविभीषणु जूचि पलिके;
"बिडुगु म्रोसिन माड्कि बेडिदंपु म्रोत ।यडरि वच्चुचु नुन्न यरदंबु मीद
निंद्रचापमु तोड नेनवच्चु नट्टि । सांद्र प्रभायत चाप मोप्पार
बरिघ गदा प्रास पट्टिस शूल । परशुतोमर भिंडिवाल चक्रादि

अतिकाय ने विजृंभित हो, सहस्र सूर्यों के समान प्रकाशित होते हुए, अधिक विशाल रथ पर आरूढ़ होकर, शोभा से सिंहनाद कर, अपना नाम लेकर, उद्दंडकोदंड का निष्ठुर रव करते हुए, कालाग्नि का काष्ठों (वनों) का दमन करने के लिए व्याप्त होने के समान, कपिसेना पर महोग्रता से टूट पड़ा। कपि, उस निशाट (राक्षस) के आकार को देखकर, पटु-रौद्र गति से उस समय का कुम्भकर्ण इधर आया हो, ऐसा समझकर, अतिभीत हो, कुछ मूर्छित हुए तो कुछ भीत हुए, कुछ आश्चर्यचकित होते देखते रहे, ॥ ४४५० ॥

—कुछ रोने लगे तो कुछ व्याकुल हुए तो कुछ 'हे राम ! रक्षा करो' कहते प्रणाम करने लगे। (इस प्रकार) व्याप्त भीति से भाग आनेवाले कपियों को उर्वीश्वर (राजाराम) ने 'मत डरो' कहते हुए, मनोज्ञता से समस्त लोकों को आच्छादित कर, गर्जन करनेवाले प्रलयकाल के मेघपटल के समान, भीकरता से सिंहनाद कर, पृथुलवेग से आनेवाले दानवनाथ-तनय की प्रचंडता, सामर्थ्य, अधिक दर्प, उस विधान को दूर से देखकर, अनारत चकित हो, तब राजाराम ने विभीषण को देखकर कहा—"अशनि की गर्जना के समान भीकर ध्वनि के उत्कर्ष के साथ आनेवाले रथ पर, इन्द्रचाप की समता करनेवाले सांद्र-प्रभायत- (प्रभा से विशाल) चाप के शोभा देने पर, परिघा, गदा, प्रास, पट्टिस, शूल, परशु, तोमर, भिंडिवाल, चक्र आदि

वरदिव्य शस्त्र निर्वाहंबुतोड । नरुदैन सैंहिकेय ध्वजं बॊप्प४४६०
नलुवॊंद नार्चुचु नलुवुरु सार । थुल तोड नॊक वेयि तुरगमुल् पून्चि
मूडु कन्नुलु गल मूर्तियु बोलॆ । वेडिमि दिक्कुल वॆदचल्लु कॊनुचु
गपुल दोलुच्चुनु निक्कडनॆ चूचुचुनु । विपरीत गति वच्चु वी डॆव्व"डनिन

विभीषणुडु श्रीरामुन कतिकायुनि प्रभावमु दॆलुपुट

"देव! यीदैत्युडु देवारि सुतुडु; । रावणु कंटॆनु रण गरिष्ठुंडु;
चतुरंगमुल यंदु समरंबु सेय । नति निपुणुंडु वी डवनीशतिलक;
यरुदैन वेद शास्त्रादि विद्यलनु । बरिणतुं; डॆंतयु बरतत्त्व बेदि;
लंक यी वीरुनि लावुन जेसि । शंकले कॆपुडु निश्चल वृत्ति नुंडु
ननिमिषु ललिगिन ननि जावकुंड । वनजासनुनि चेत वरमु गॊन्नाडु;
दिव्यायुधंबुल दिव्य शस्त्रमुल । दिव्य मंत्रंबुल दीपिंचु वाडु;
मीरि यिंद्राद्यनिमिषुलनु नूरु । मारुलु गॆलिच्चिन मगटिमि वाडु;
४४७०
वासवु वज्रंबु वरुणु पाशंबु । नासमवर्त्ति युदग्र दंडंबु

वर-दिव्य शस्त्र-निर्वाह के साथ, अद्वितीय सैंहिकेय (राहु)-ध्वज के शोभित होने पर, ।। ४४६० ।।
—शोभा से सिंहनाद करते हुए, चार सारथियों के साथ, एक हजार तुरगों के जुते हुए (रथ पर आरूढ़ होकर), तीन नेत्रोंवाले के आकार के समान, तेज को दिशाओं में बिखेरते हुए, कपियों को भगाते हुए, इसी ओर देखते हुए, विपरीत गति से आनेवाला यह कौन है?" (ऐसा) कहने पर (विभीषण ने कहा)—

विभीषण का श्रीराम को अतिकाय का प्रभाव बताना

"हे देव! यह दैत्य देवारि का सुत है। रावण से भी रणगरिष्ठ है। हे अवनीशतिलक! चतुरंगों के साथ समर करने में अति निपुण है। विरल वेद-शास्त्र आदि विद्याओं में परिणत है। अधिक परतत्त्ववेदी है। इस वीर की सामर्थ्य से ही लंका सदा निश्शंक हो, निश्चलवृत्ति से रहती है। अनिमिषों के क्रुद्ध होने पर भी, युद्ध में (उनके हाथ) न मरने का वनजासन से वर प्राप्त किया है। दिव्य-आयुधों, दिव्यशस्त्रों, दिव्यमन्त्रों, से दीप्त रहनेवाला है। उत्कर्ष को प्राप्त कर इन्द्र आदि अनिमिषों को सौ बार जीतनेवाले पौरुष से युक्त है ।। ४४७० ।।
—वासव (इन्द्र) का वज्र, वरुण का पाश, उस समवर्ती (यम) का उदग्र

धनपति गदयु नीतनि शस्त्र समिति। ननिशंबु गडु ब्रतिहतमुलै युंडु
मनुजाशनुडु धान्यमालिनि यंदु। गनिन पुत्रुं; डतिकायुंडु वीडु;
ई दानवुनि चेत नीकपुलेल्ल। मेदिनीनायक ! मैदुगक मुन्ने
समरंबु लो वीनि जंपुट लेस्स। यमित विक्रम केळि" ननि चेप्पु चुंड
वाडंत बटु गुणध्वनि दिक्कुलद्रुव। वाडिमिमै नट वच्चुट सूचि
खंडनोदग्रुंडु गवयुंडु गोमु। खुंडुनु ज्योतिर्मुखुडु गुमुदुंडु
मारुतात्मजुडुनु मैदुंडु नलुडु। शरभुंडु नीलुंडु शतवलि गजुडु
नादिगा गलुगु महा कपिवरुलु। मेदिनीजंबुलु मेटि शैलमुलु
वडि नेत्तिकोनि यप्डु वानिकि नेदुरु। नडवगा नटु जूचि नव्वि दानवुडु
४४८०

"कलह विक्रम कळा कठिन सत्त्वमुलु। गलुगवु, तोलगुडु कपुलार ! मीरु;
त्रिजगंबुलुनु मेच्च दिविरि वाराशि। निज शराग्रंबुन निलिपिन शूरु
डतडेव्वडिटु चूपु; डतनिपै गानि। यतुलितंबैन ना यस्त्रंबु विडुव;
दुरमुन निंद्रजित्तुडु गट्टिनट्टि। युरगपाशंबुल नूड्चुकोन्नट्टि
यतडेव्व ? डिटुचूपु; डतनिपै गानि। यतुलितंबैन ना यस्त्रंबु विडुव;

दंड, धनपति की गदा, इसकी शस्त्र-समिति (-समूह) द्वारा सदा प्रतिहत होते रहते हैं। मनुजाशन (राक्षस-रावण) के धान्यमालिनी द्वारा प्राप्त पुत्र है। यह अतिकाय (नामक) है। हे मेदिनी-नायक (राजा) ! इस दानव के हाथ समस्त कपियों के नष्ट होने से पहले ही, अमित विक्रम केलि से इसे समर में मार डालना अच्छा है।" (ऐसा) कहते रहने पर, वह (अतिकाय) तव पटु-गुण ध्वनि से दिशाओं को विदीर्ण करते हुए, तेजोयुक्त हो उसके आते देख, खंडनोदग्र, गवय, गोमुख, ज्योतिर्मुख, कुमुद, मारुतात्मज, मैंद, नल, शरभ, नील, शतवलि, गज आदि महाकपिवीरों ने मेदिनीजों (वृक्ष), श्रेष्ठ शैलों को झट उठाकर, तव उसका सामना करने पर, उधर देख, हँसकर, दानव ने (कहा)— ।। ४४८० ।।

—"हे कपियो ! तुम में कलह (रण)-विक्रमकला का कठिन सत्त्व नहीं है। अतः तुम हट जाओ। त्रिजगों की प्रशंसा करने पर, सप्रयत्न वाराशि (समुद्र) को निज-शराग्र-भाग पर स्थित किया था, वह शूर कौन है। दिखाइए। उसे छोड़ अन्य किसी पर मेरे अतुलित अस्त्र का प्रयोग नहीं करूँगा। युद्ध में इंद्रजित के बांधे उरगपाशों से विमुक्त बनने वाला वह कौन है ? इधर दिखाइए। उसे छोड़ अन्य किसी पर मेरे अतुलित अस्त्र का प्रयोग नहीं करूँगा। तीनों लोकों को क्रम से जीतकर, प्रचंड

मूडुलोकंबुलु मुनुमिडि गैलिचि । वाडि मगंटिमि वालिन शूरु
नलघुबलोदीर्णु नाकुंभकर्णु । दल द्रेंव्व नेसि युद्धति बेचि युन्न
यतडेंव्व? डिट्टु चूपु; डतनिपै गानि । यतुलितंबैन नायस्त्रंबु विडुव;
देव दानव यक्ष दिविजुल काजि । भाविंप नेक्कुडै परगिन यट्टि
रावणु नोर्चेंद रणमुलो ननुचु । नी विधंबुन लंक केतेंचु वीरु४४९०
डत डेंव्व? डिट्टु चूपु; डतनिपै गानि । यतुलितंबैन नायस्त्रंबु विडुव"
ननि पेंक्कु गर्वंबु लाडुचु नुन्न । दनुजाधि-नाथुनि तनयुनि मीद
गडिदि कोपमुन वृक्षंबुलु गिरुलु । नुडुगक कपि नायकोत्तमुल् वैव
नवि यंत वट्टुनु नतिकायु डेंडनु । नविरळ मार्गणाहति द्रुंचि वैचि
गुरुतरास्त्रंबुल गुमुदुनि मूट । गरमुग्र शर पंचकंबुन द्विविदु
नरुदार मैंदुनि नम्मु लेर्डिट । शरभुनि दोंम्मिदि सायकंबुलनु
घनतर बाणाष्टकंबुन गजुनि । गिनिसि बेंट्टुग नालुगिट गवाक्षु
गवयुनि नेंनिमिदि घनसायकमुल । दविलि ज्योतिर्मुखु दशमार्गणमुल
बलु कांडमुल शतबलि बदेंनिट । नेंलमितो नीलुनि निरुवदेंनिट
वेंडिदंबुगा नेय बृथिविपै नोरगि । कडुमूर्छ नोंदिरा कपिवरुलेल्ल
४५००

पौरुष से विराजमान शूर, अलघुबलोदीर्ण उस कुम्भकर्ण का सिर काट देकर, औद्धत्य से विजृंभित वीर कौन है? इधर दिखाइए। उसे छोड़ अन्य किसी पर मेरे अतुलित अस्त्र का प्रयोग नहीं करूँगा। देव, दानव, यक्ष, दिविजों के लिए आजि (युद्ध) में दुर्जेय हो विलसित रावण का रण में सामना करूँगा, ऐसा सोचकर, इस प्रकार लंका को आनेवाला वीर, ॥ ४४९० ॥

—वह कौन है? इधर दिखाइए। उसे छोड़ अन्य किसी पर अपने अतुलित अस्त्र का प्रयोग नहीं करूँगा।" ऐसी अनेक गर्वोक्तियाँ कहनेवाले दनुजाधिनाथ के तनय पर अधिक क्रोध से कपिनायकोत्तमों ने लगातार वृक्ष और गिरि फेंके। उन सबको अतिकाय ने मध्य में ही अविरल-मार्गण-आघात से काट देकर, कुमुद को तीन गुरुतर अस्त्रों से, द्विविद को अधिक उग्र शरपंचक से, मैंद को अद्वितीय सात बाणों से, शरभ को नौ सायकों से, गज को घनतर बाणाष्टक से, गवाक्ष को भीकरता से क्रुद्ध हो चार (बाणों) से, गवय को आठ घन सायकों से, लगकर ज्योतिर्मुख को दस-मार्गणों से, शतबलि को पन्द्रह बली कांडों से, नील को शोभा से पच्चीस से, (इस प्रकार) भीकरता से मारने पर (बाण चलाने पर) वे कपिवर पृथ्वी पर गिरकर अधिक मूर्छित हुए॥ ४५०० ॥

दिविजुलु वेंऱगंदि दिविनुंडि चूड । दविलि वेंडियुनु नुद्दंड कोपमुन
मृगमुल दोलेंडि मृगपति माड्कि । नगचरावळि दोलें नतिकायुडपुड्;
तोलुचु दन्नु नेंदुर्पनि कपुल । नेल पै गूल्पक निगुडि रामुनकु
"बगतोडि भक्ति नप्परमेशु वलन । दग मुक्ति गंदु नेंतयु" ननि तलचि
निगमार्थमुल रामुनिकि नतिकायु । डगलनि तेंगुवमै ननियें नव्वुचुनु
"राम! यी समर धरास्थलि लोन । नी मगटिमि जूपु निक्कंबु नाकु;
नेंतटि वाडवो, येंव्वरु निन्नु । नितटि वाडनि येंरुग रॅन्नडुनु;
मातंड्रि कतमुन मानिसि वैति; । मातंड्रि कतमुन महिराजवैति;
वमरेन्द्र यमवरुणादि देवतल । गमिलोन नोंकडवु कावु नन्नेंदुर!
गड मुट्ट शूरुडै कदिसिन वानि । गडिमि मै नेंदुरंग गदियुदु गाक ४५१०
येनु नी मगतनं बेंरुगने मुंदु; । मानाभि मानमुल् मरि नीकु गलवे?
गणुतिप नन्नेंरुंगवु गाकनीवु ! । गुणहीनुलकु सत्त्वगुण मेंदु गलदु ?
ऐजाति गलवाड ? वेमि चेप्पेंडिदि ? । राजकुलाचाररतुडवे नीवु ?
अनघ तापस मानसाटवुल् दूरु; । ननुजेरि पोराड नायीडु गावु;
गौनकौनि वेदाद्रि गुहललो नुंडु; । ननुजेरि पोराड नायीडु गावु;

—दिविजों के भीत होकर दिवि से देखते रहने पर, लगकर और अधिक उद्दंड कोप से मृगों को भगा देनेवाले मृगपति (सिंह) के समान तब अतिकाय ने वनचरावली को भगा दिया। भगाते हुए, अपना सामना न करनेवाले कपियों को जमीन पर न गिराकर, तनकर राम के (समक्ष) यह सोचकर कि 'वैरभाव की भक्ति से उस परमेश्वर के द्वारा मुक्ति प्राप्त करूँगा' निगमार्थों के (सार) राम से अतिकाय ने अतिशय साहस से हँसते कहा—"हे राम ! इस समर-धरास्थल (भूमि) में सचमुच अपना पौरुष मुझे बताओ। (तुम) अनन्त हो। कोई तुम्हारे बारे में कभी यह नहीं जानता कि तुम कितने हो। मेरे पिता के कारण (तुम) मनुष्य बने। मेरे पिता के कारण महिराजा (पृथ्वीपति) बने। मेरा सामना करने के लिए (तुम) अमरेन्द्र, यम, वरुण आदि देवता-समूह में एक नहीं हो। अत्यन्त शूर बनकर (मेरा) सामना करनेवाले का साहस से मैं सामना करूँगा ॥ ४५१० ॥

—मैं क्या पूर्व में तुम्हारे पौरुष को नहीं जानता ? तुम्हें मान और अभिमान हैं क्या ? गिनती करने पर तुम मुझे नहीं जानते हो। तुम जैसे गुणहीनों में सत्त्वगुण कहाँ है ? (तुम) किस जाति के हो ? कैसे कहूँ ? तुम राजकुलाचार-रत (-पालन करनेवाले) हो ? पुण्यात्मा तापसियों के मानस-रूपी अटवियों में प्रवेश करो। मुझसे जूझने के लिए मेरी जोड़ के

सनकादि मुनि योगि जलधुलु सौरुमु; । ननुजेरि पोराडनायीडु गावु
काषाय वस्त्र संकलितुलै विगत । दोषुलै भवरोग दूरुलै पोयि
कूरलु गायलु गूळ्ळुगा गुडिचि । नीरसाहारुलै निष्टल डस्सि
घोराटवुललोन ग्रुम्मरुचुन्न । वारि लोपल बोयि वर्तितु गाक
कलह विक्रम शक्ति कडपट लेदु । तलपोसि येरुगुदु दगिलि नीलावु; ४५२०

नौगि नौंटिकाडवै युंडेडि नीकु । जगतिपै नी कपि सैन्यंबु गलिगॆ;
दिक्कॆव्वरुनु लेक तिरिगेडि नीकु । दिक्कय्यॆ निप्पुडी दिनकरात्मजुडु;
ॲक्कड गुरुडनि यॆरुगनि नीकु । नक्कटा ! गुरुडु विश्वामित्रुडय्यॆ;
नौक देशमुनु लेक युंडेडि नीकु । नकलंकमगु नयोध्यादेश मॊप्पॆ;
निवि नीकु बेट्टगा निच्चलो नुब्बि । तिवुरकु नींविक धृति पेंपु दूलि;
चलियिंचि मीनमै सकल वारिधुलु । सौलवक चौच्चिन जौत्तुगाकेमि ?
तलपु नीमीदिदि तप्पदु नाकु; । बलुकु लेटिकि ? निन्नु बट्टेद वॆदकि;
नलुवॊंद गूर्ममै नगमु क्रिंदिकिनि । सौलवक चौच्चिन जौत्तुगाकेमि ?

नहीं हो। सप्रयत्न वेदरूपी अद्रि की गुफाओं में रहो। मुझसे लड़ने के लिए मेरी जोड़ के नहीं हो। काषाय-वस्त्र-संकलित हो, विगत दोषवाले हो, भवरोगों से मुक्त हो, जाकर कंद-मूल फल आदि आहार रूप में ग्रहण कर, नीरस-आहार करते हुए, (आचार) निष्ठाओं के कारण थककर, घोर-अटवियों में संचरण करनेवालों के साथ जाकर रहो। (तुममें) कलह (रण) -विक्रम शक्ति नहीं है। सोच-सोचकर तुम्हारी सामर्थ्य को जानता हूँ ॥ ४५२० ॥

अकेले रहनेवाले तुम्हें (ही) जगत में यह कपिसैन्य प्राप्त हुआ न। बिना किसी आश्रय (आधार) के घूमनेवाले तुम्हें अब यह दिनकरात्मज (सुग्रीव) आधार बन गया न। कहीं भी (और किसी भी) गुरु को न जाननेवाले तुम्हें हाय ! विश्वामित्र गुरु बन गया न। (अपना कहने के लिए) किसी भी देश से रहित रहनेवाले तुम्हें अकलंक अयोध्यादेश संप्राप्त हुआ न। इन्हें पाकर तुम मन में अधिक फूल रहे हो। अब धृति (धैर्य) के उत्कर्ष को खोकर, (अधिक) कोशिश मत करो। संचलित होकर, मीन बनकर सकल वारिधियों में अथक रूप से प्रवेश करो तो करो। (अब) तुम पर मेरा विचार मेरे (अपने) लिए आवश्यक है। (ये सब वृथा) बातें क्यों ? ढूँढकर तुम्हें पकड़ लूंगा। खूबी से कूर्म बनकर, नग (पर्वत) के नीचे अथक रूप से प्रवेश करो तो करो। (अब) तुम पर मेरा विचार मेरे

तलपु नीमीदिदि तप्पदु नाकु; । वलुकु लेटिकि ? निन्नु वट्टेद वेंदकि;
यलिगि वराहंववै रसातलमु । सौलवक चौच्चिन जौत्तुगाकेमि ?
४५३०
तलपु नीमीदिदि तप्पदु नाकु; । वलुकु लेटिकि ? निन्नु वट्टेद वेंदकि;
त्रलमुन विकृतवेषमुन नेंदैन । सौलवक चौच्चिन जौत्तुगाकेमि ?
तलपु नीमीदिदि तप्पदु नाकु; । वलुकुलेटिकि ? निन्नु वट्टेद वेंदकि
कडुगुज्ज्वै नीवु कार्पण्यवृत्ति । पौडवडकुव सेसि पौडुगाकेमि ?
तलपु नीमीददि तप्पदुनाकु; । वलुकुलेटिकि? निन्नु वट्टेद वेंदकि
धारुणीसुर वेषधारि कुठारि । वै राजसंहारि वगुदु गाकेमि ?
तलपु नीमीदिदि तप्पदु नाकु; । वलुकुलेटिकि? निन्नु वट्टेद वेंदकि
यच्चैरुवैन रणांवुधिलोन । जेंच्चैर निन्नु मोचियु देलियाड
बरिकिंप नल वट-पत्रंबु गादु; । करमु भीषणमु नाकंकपत्रंबु;
दुरमुन ननु नीकु दौडरंग रादु । वर गर्वमुन नेंदु वालिन वाड"
४५४०
ननि पेर्चि पलिकेंडु नय्यतिकायु । घन गर्वमुनकु लक्ष्मणुडु नव्वुचुनु

(अपने) लिए आवश्यक है। (ये सब व्यर्थ) वातें क्यों ? ढूँढकर तुम्हें पकड़लूँगा। रुष्ट हो, वराह वन अथक रूप से रसातल में प्रवेश करो तो करो ॥ ४५३० ॥

(अव) तुम पर मेरा विचार मेरे लिए आवश्यक है। (ये सब) वातें क्यों ? ढूँढकर तुम्हें पकड़ लूँगा। हठ से विकृत वेष से कहीं भी अथक रूप से प्रवेश करो तो करो। (अव) तुम पर मेरा विचार मेरे लिए आवश्यक है। (ये सब) वातें क्यों ? ढूँढकर तुम्हें पकड़ लूँगा। अति बौना वनकर तुम कार्पण्यवृत्ति (कृपण स्वभाव) से औन्नत्य से अवनत हो जाओगे तो क्या ? (अव) तुम पर मेरा विचार मेरे लिए आवश्यक है। (ये सब कोरी) वातें क्यों ? ढूँढकर तुम्हें पकड़ लूँगा। धारुणीसुर, (ब्राह्मण) वेषधारी वन, कुठार (परशु) धारणकर, राजाओं का संहार करोगे तो क्या ? (अव) तुम पर मेरा विचार मेरे लिए आवश्यक है। (ये सब) वातें क्यों ? ढूँढकर तुम्हें पकड़ लूँगा। आश्चर्यप्रद रण-समुद्र में झट से तुम्हें ढोकर तैरते रहने के लिए सोचने पर यह वटपत्र नहीं है। मेरा कंकपत्र (बाण) अति ही भीषण है। युद्ध में तुम मेरा सामना नहीं कर सकते। (मैं तो) वर-गर्व से सुशोभित हूँ।" ॥ ४५४० ॥

—ऐसा विजृंभित हो कहनेवाले उस अतिकाय के महान् गर्व को (देख) लक्ष्मण हँसते हुए (बोला)—

लक्ष्मणातिकायुल द्वंद्व युद्धमु

"ओरि! निशाट! येनुंड राघवुनि। तो रणंबोनरिंप दोरकोन नेल?
ना देस जक्कनै नडतेम्मु; निन्नु। नादु बाणमुल भग्नंबु सेसेदनु"
अनि दानवुल गुंडे लविय नंदंद। घन गुणध्वनि सेसि कदिसिन वाडु
नारभसंबुन काश्चर्य मंदि। क्रूरास्त्र मोक्कटि गोनि यार्चि पट्टि
"निलु निलु लक्ष्मण! नीवु बालुडवु;। वल, दंतकुनि कंटे वालिन वाड;
ना वर शर घट्टनंबु सहिंप। नी वसुंधर योंडे, हिमगिरि योंडे,
रावणुंडेत्तिन रजताद्रि योंडे,। देवतलुन्न धात्री-धरं बोंडे
यंजक हरुनि विल्लडच्चि गर्वमुन। रंजिल्लु मीयन्न राघवुंडोंडे,
काक नन्ननि मोन गदिय शक्यंबे?। नीकु नामुंदर निलुवंग दरमे ४५५०
यी वर सायकं बिप्पुडु गिट्टि। त्रावेडु नीदु रक्तंबु सौमित्रि!"
यनि दुरहंकृति नाडिन नतडु। "दनुजुड! नीकु वृथा गर्वमेल?
पोर नीलावु जूपुदु गाक नाकु!। नी रित्त माटलिकेल नायेदुर?

लक्ष्मण और अतिकाय का द्वन्द्व युद्ध

"रे! निशाट (राक्षस)! जब मैं हूँ तब तुम्हें राघव (राम) से युद्ध करने का प्रयास क्यों? ठीक ढंग से मेरी ओर आओ। तुम्हें अपने बाणों से भग्न (टुकड़े) कर दूँगा।" (ऐसा) कह दानव का हृदय विदीर्ण हो जाए, ऐसा सर्वत्र महा-गुण (ज्या)-ध्वनि करके नियराने पर वह उस आटोप से आश्चर्य-चकित हो, एक क्रूर-अस्त्र को पकड़, सिंहनाद कर, (बोला)— "रुक-रुक रे लक्ष्मण! तुम बालक हो। मत (भिड़ो)। (मैं) अंतक (यमराज) से अधिक प्रतापशाली हूँ। मेरे वर-शर-घट्टन (श्रेष्ठ शरों के आघात) को सहने के लिए या तो यह वसुन्धरा, या हिमगिरि, या रावण द्वारा उठाया गया रजतपर्वत (कैलास गिरि), या देवताओं का निवास धात्रीधर (पर्वत), या भीत हुए बिना हर (शिव) के धनुष का खंडनकर गर्व से विराजमान तुम्हारा अग्रज राघव चाहिए। इन्हें छोड़ युद्धभूमि में मेरा सामना कर पाना (किसे) संभव है? तुम्हारे लिए मेरे सामना टिक पाना क्या संभव है? ।। ४५५० ।।
—हे सौमित्र! यह श्रेष्ठ बाण अभी तुम्हें लगकर तुम्हारे रक्त को पी जाएगा।" ऐसा दुरहंकार के कारण उसके कहने पर उसने (लक्ष्मण ने) कहा—"हे दनुज! तुम्हें वृथा गर्व क्यों? युद्ध में अपनी सामर्थ्य मुझे दिखा देना! ये रिक्त (व्यर्थ की) बातें मेरे समक्ष क्यों? हे निशाचर! तुम भी शस्त्र-अस्त्र-निचय के साथ इस प्रकार रथ पर आरूढ़ हो, उद्वृति

नीवुनु शस्त्रास्त्र निचयंबु तोड । नीविधंबुन रथ मेक्कि युद्वृत्ति
मानक यिटु पोटु मगवाडु वोलें । बूनि युन्नाड विप्पुडु निशाचरुड !"
यनवुडु गोपिंचि यतनिपै नेसें । दनचेति बाण मुद्धति वाडु दौडगि;
येसि यार्चिन दिवि निंद्रादि सुरुलु । ना समयंबुन नाश्चर्य पडग
वदलक राघवेश्वरु ननुजुंडु । नदि यर्ध चंद्र बाणाहति द्रुंचि
चैलुवार ब्रह्म व्रासिन व्रात यिक । वलदनि ता वुज वैचिन करणि
जटुलास्त्र मौक्कटि संधिंचि वानि । निटल स्थलमु गाड निपुणुडै येसें ४५६०

नेसिन रुद्रुनि येटुन वडकु । भासुरासुरपुर-प्रासाद मनग
जलिर्यिचि "नातोड समरंबु सेय । गलिगें वी" डनि यतिकायुंडु वेंचि
कडिमिमै नरदंबु गदिय दोलिंचि । तडयक यारामु तम्मुनि मीद
"व्रलमौक्कटियु दक्क जंपुदु" नन्न । चैलुवुन नौक्क निशित बाण मेसें;
"मूडंबकंबुल मूर्ति गाचिननु । बोडिमि दक्कितु वी" म्मन्न करणि
जटुल वेगंबुन संधिंचि मरियु । बटुतरंबुग मूडु बाणंबु लेसें;
"ननयंबु बेरुकुदु नैदु प्राणमुलु" । ननु माड्कि वेंडियु नैदम्मु लेसें;
"नेडु वार्धुलु सौच्चि यीदि पोयिननु । दौडनें चनि मीरि तुंतु" नन्नट्टि

को न छोड़ ऐसे वीर पुरुष के समान खड़े हो जाओ न !" ऐसा कहने पर अपने हाथ पर बाण का संधानकर उसने औद्धत्य से चलाया। चलाकर सिंहनाद करने पर, आकाश पर इन्द्र आदि सुरों के उस समय आश्चर्य-चकित होने पर, राघवेश्वर के अनुज ने अवश्य ही उसे अर्द्धबाण के आघात से तोड़कर, शोभा से अब ब्रह्मा का लेख नहीं चलेगा, ऐसा उसे शून्य करने (मिटाने) के समान, एक चटुल अस्त्र का संधानकर, निपुण बन उसके निटल-स्थल (ललाट) पर गड़ जाए, ऐसा चलाया ॥ ४५६० ॥

—चलाने पर रुद्र के आघात से कंपित होनेवाले भासुर-असुर-प्रासाद के समान, विचलित हो, 'यह सोच कि यह मुझसे समर करने में समर्थ बन गया न', अतिकाय ने विजृंभित हो, साहस से रथ को निकट चलाकर, अविलम्ब राम के अनुज पर 'हठ से मार डालूंगा' मानों इस शोभा से एक निशित-बाण चलाया। 'तीन नेत्रवाले मूर्ति (व्यक्ति) रक्षा करने आवें तो भी (तुम्हारी) सुघड़ता नष्ट कर दूंगा' इस प्रकार से चटुल-वेग से संधान कर पटुतर रूप से और तीन बाण चलाए। 'निरन्तर (तुम्हारे) पंचप्राणों को उखाड़ दूंगा' मानों ऐसे और पाँच बाण चलाए। 'सप्तसमुद्रों में पैठकर तैर जाओगे तो भी साथ ही आकर उत्कर्ष से मार डालूंगा' मानों

करणि नेंतयु भुजागर्वंबु मीरि । यिरवोंदगा दोंडि येडम्मुलेसें;
नवि वेग लक्ष्मणुंडंत लोपलनें । विविध खंडमुलु गाविंचि पेल्लार्चि
४५७०
यतिकायुपै नेसें नाग्नेय बाण; । मतडु माऱेसें सौरास्त्रंबु दोडिगि;
यारेंडु शरमुलु नडरि योंडोंटि । तो रणंबोनरिंचि तुनियलै रालै;
जेकोनि दनुजु डैषिक बाण मेसें । गाकुत्स्थ तिलकु डाकंपंबु नोंद;
नदि यैंद्रमुन द्रुंचें नडरि लक्ष्मणुडु; । अदि गनि दैत्युंडु याम्यास्त्र मेसें;
नदि द्रुंचें नतडु वायव्यास्त्र मेसि; । यदिगाक पेक्कम्मु लसुरपै नेय
नवि वानि मैमरु वट्टुताकि विऱिगि । भुवि मीद बडिन नप्पुडु लक्ष्मणुंडु
वेंडियु बेक्केय विसगुट सूचि । "कांडंबु लेमोको काडवु वीनि"
ननि यनि चिंतिंचि यलयुचुनुंडें; । "नेन लेनि यीमर्म मेऱिंगितु" ननुचु
नप्पुडातनितोड ननिलुंडु वच्चि । चेप्पें; "लक्ष्मण ! ब्रह्मचे वीडु वडसें
वरमु दा गोरि यी वज्र वर्मंबु । शरमु लेव्वियु वीनि जालवु नाट;
४५८०
बलु तुनियलु गाग ब्रह्मास्त्र मेसि । पोलियिंपु" मनवु डुप्पोंगि लक्ष्मणुडु

ऐसा कहने के समान भुजगर्व से अधिक उत्कर्षित हो स्थिरता से संधान कर सात बाण चलाए। उन्हें इतने में ही शीघ्रता से लक्ष्मण ने अनेक खंड-खंड करके अधिक सिंहनाद कर, ॥ ४५७० ॥

—अतिकाय पर आग्नेय बाण चलाया। उसने सौरास्त्र का संधान कर प्रति-अस्त्र चलाया। वे दोनों शर उत्कर्षित हो एक दूसरे से जूझकर तिनके-तिनके बन गए। दनुज ने लगकर ऐषिक बाण चलाया जिससे काकुत्स्थतिलक (लक्ष्मण) आकंपित हो जाए। उत्कर्षित हो लक्ष्मण ने उसे ऐन्द्र से टुकड़े कर दिया। उसे देख दैत्य ने याम्यास्त्र चलाया। उसे वायव्यास्त डाल टुकड़े कर दिया। उसके अतिरिक्त असुर पर अनेक बाण चलाए। वे भी उसके कवच से लगकर, टूटकर ज़मीन पर गिर पड़े। तब लक्ष्मण ने और भी कई बाण चलाए, उनके भी टूटते देख 'बाण इसके शरीर में गड़ते ही नहीं। क्या बात है?' ऐसा सोच चिंतित हो लक्ष्मण थका रह गया। 'इस अप्रतिम रहस्य को बताऊँगा' कहते हुए तब अनिल ने उसके पास आकर कहा—'हे लक्ष्मण ! इसने वर की इच्छा कर ब्रह्मा से वज्र-वर्म प्राप्त किया है। (इसके कारण) कोई भी शर इसके (शरीर) में गड़ नहीं सकता ॥ ४५८० ॥

—अनेक टुकड़े बन जाए ऐसा ब्रह्मास्त्र चलाकर संहार कर दो।' ऐसा

नदि समंत्रकमुगा नार्चुचु दोडगि । त्रिदशारि सुतु मीद देग गोनि येसें;
नेसिन ब्रह्मांड मॆल्लनु बगुल । वासवुंडदर देवतलु गंपिप
धरणि वडक दिक्तटमुलल्लाड । शरधुलु घूर्णिल्ल शैलमुल् वडक
धरणि चंद्रुलु गति दप्पंग जुक्क । लुरलंग रत्नपुंखोज्वलंबगुचु
प्रळयकालमु नाटि पावकु भंगि । नेलकोनि लोकमुल् निंडि मंडुचुनु
यमदंडमुनु बोलॆ ननिल वेगमुन । क्रममोप्प नॆंतयु गडु रभसमुन
नम्मेयि ब्रह्मास्त्र मरुदेर दैत्यु । डम्मुलु निगुडिप नवियु गैकोनक
वच्चुटयुनु शक्ति वैचें; वैचुटयु । जॆच्चॆर ना शक्ति जॆकोन कदियु
लावुन राग शूलंबुन बोडिचें; । ना विधंबुनु गोनकदि मीरिराग
४५९०

गद व्रेसें; वेसिन गदयुनु द्रोचि । यदि वच्चुटयु जूचि यडिदान व्रेसें;
नदि दाटि रा बरश्वायुधं बॆत्ति । वदलक व्रेय दीव्रंबुन नदियु
गडचि येतेरंग गडक गटारि । बोडिचें; नंदुन बोक बोरन राग
वलनोप्प मोल नुन्न वंकिनि बोडिचें; । ज्ञलमुन नदि मीरि चटुल वेगमुन

कहने पर फूलकर लक्ष्मण ने सिंहनाद करते हुए उसका समंत्रक संधान कर, त्रिदशारि-सुत पर प्रचंडता से चलाया। चलाने पर, समस्त ब्रह्मांड विदीर्ण हो जाए, वासव सहम जाए, देवता कंपित हो जाएँ, धरणी काँप जाए, दिक्तट तड़प उठें, शरधियाँ आलोड़ित हो जाएं, शैल काँप उठें, तरणि (सूर्य) और चंद्र पथभ्रष्ट हो जाएँ, तारे टूट गिरे, रत्न-पुंखों (-तीर की मूँठ) से उज्ज्वल बनते हुए, प्रलयकाल के पावक के समान, स्थिरता से (समस्त) लोकों में भरकर, प्रज्ज्वलित होते हुए, यमदंड के समान, अनिल वेग से, क्रम से अधिक रभस (वेग) से, उस प्रकार ब्रह्मास्त्र के आने पर दैत्य ने बाण चलाए तो उनकी परवाह न कर आने पर शक्ति को चलाया, चलाने पर झट उस शक्ति की भी परवाह न कर, समर्थता से आने पर (उसे) शूल से चुभोया। उस विधान की परवाह न कर उसके आगे बढ़ आने पर, ॥ ४५९० ॥

—गदा फेंक दी। डालने पर गदा को भी ढकेलकर उसके आते देख, करवाल से मारा। उसे भी पार कर आने पर परशु-आयुध उठाकर अवश्य डालने पर, उसे भी तीव्रता से पार कर आने पर, कटार से मारा, उससे भी न रुककर झट से आने पर, शोभा से अपनी कमर के वक्र कौक्षेयक से मारा। हठ से उसको भी पारकर चटुल वेग से,

अतिकायुडु लक्ष्मणुनिचे जच्चुट

बोव केतेंचिन बोडिचें बिडिकिटनु;। देवतल् दललूप दिविरि याशरमु
मंडित कोटीर मंडलि तोड। गुंडलंबुलतोड गूल्चें दच्छिरमु;
नट्टु वज्रहति रोहणाद्रिश्रृंगंबु। चट्टुलत गूलिन चाड्पुन बडिन
यतिकायु तल जूचि यति भीति बोंदि। हत शेषुलैन दैत्याधमुल् परचि
लंक जोच्चुटयु गेलंकुल गपुलु। नंकिंचि रेंतयु; नारामु तम्मु
डरुदेंचि श्रीरामु नडुगुल केरग। गरमु संतोषिंचि कौगिट जेर्चि, ४६००

विनुत्तिचि याकपिवीरुल तोड। ननयंबु हर्षिचें नवनीशु; डंत
ना दैत्यनाथुंडु नय्यतिकायु। डादिगा गल दैत्यु लावृ‍रु वडुट
विनि मूर्छ पालपडि वेगंबे तेलिसि। घनमुगा गन्नीरु ग्रम्म नंदंद
यति दुःखमुन जाल नडलुचु नुन्न। पति जेरि मयु पुत्रि पलिकें निट्लनुचु;
"नसुरेश! लोकंबु लन्निटिलोन। नसमान सत्त्वुडवैन नीकिट्लु
पाडिये शोकिंप? बंटवै नीवु। नाडेल तेच्चिचति नरनाथु देवि?
नोप्पिप नेरवै; तुचित कालंबु। दप्पे; नारामुनि दलपडु दैत्यु

अतिकाय का लक्ष्मण के हाथ मरना

—आ जाने पर मुष्टि से मारा। देवताओं के (प्रसन्नता से) सिर हिलाने पर, शीघ्रता से उस शर ने मंडित-कोटीर-मंडलि के साथ, कुंडलों के साथ उसके शिर को गिरा दिया। तब वज्र के आघात से रोहणाद्रि के श्रृंग के चट्टुलता से गिर पड़ने के समान, गिरे हुए अतिकाय के सिर को देख अतिभीत हो, हतशेष दैत्याधम भागकर लंका में घुस गए। (उसे) देख कपि अत्यन्त उल्लसित हुए। राम के अनुज ने आकर श्रीराम के चरण छुए। (उस पर) अधिक प्रसन्न हो, (उसे) गले लगाकर, ॥ ४६०० ॥

—विनुति (प्रशंसा) कर, उन कपिवीरों के साथ अवनीश (राजा राम) अनारत हर्षित हुए। तब वह दैत्यनाथ अतिकाय आदि छहों दैत्यों के गिरने (मरने) की बात सुनकर मूर्च्छित हुआ। शीघ्र होश में आकर, अधिकता से आँसुओं के घिर आने पर, जहाँ-तहाँ अति दुख से अधिक विकल बनने पर, पति के निकट जा मयपुत्री (मन्दोदरी) ने इस प्रकार कहा—"हे असुरेश! समस्त लोकों में असमान सत्त्ववाले हो। तुम्हें इस प्रकार शोक करना संगत है क्या? शूर के समान तुम नरनाथ की देवी क्यों लाए थे? (उसे) समझा नहीं सके। उचित समय भी बीत गया। उस राम का सामना करनेवाले दैत्यों के वापिस लौट आने की बात छोड़

लरुदेंतुरनु माट लवियु बोविड्वु;। सुरवैरि! याजिलो जूपु नी कडिमि"
ननु माट लालिंचि यात्म जिंतिंचि। वनित नंतःपुरवासंबु कनिचि
निनिचिन वगपुतो निट्टूर्पु वुच्चि। तन मंत्रिवरुलतो दशकंठु डनियें ४६१०
"गटकटा! तम्मुलु गादिलि सुतुलु। निटुवलें गूलि; रिंकेमन गलदु?
विबुधुल कैनन्नु विडिपिंप रानि। प्रबलंबुलगु नागपाश बंधमुलु
पासिर मायनो बलिमिनो मनुजु;। लास सेसिन जेल्ल ददि नाकु विजय
मारामु तम्मुनि नाजिलो गेलुचु। वीरुनि नेव्वनि वेंदकियु गान;
भयमेंन्नडुनु लेक परगु नीलंक। भयमुन बोंदें ना बलियुर वलन;
ना राम विभुनि पराक्रमंबुनकु। मेर येंय्यदि? यिट मीद नी लंक
यतनिचे बडकुंड नरसि येमऱक। प्रति दिनंबुनु गाव बंपुडी" यनुचु
नंतःपुरंबुन करिगि योंक्करुड। नंतरंगमुन नडलुचु नुंडें;
नप्पुडु चनुदेंचि या मेघनाधु। डप्पंक्ति कंठुतो ननियें नोंप्पार;
"ने नीकु गलुगंग निटु वगपेल?। दानवाधीश्वर! तगदु चिंतिप; ४६२०
बटुतरंबैन नाबाण संहतिकि। नेंटु सहिंपग जालु नीश्वरुंडैन?

दो। हे सुर-वैरी! युद्ध में अपना साहस दिखाओ।" ऐसी बातें सुनकर, मन में चिंतन कर, वनिता को अन्तःपुर में भेजकर, पूर्ण दुख से लम्बी साँस छोड़, दशकंठ ने अपने मन्त्रिवरों से कहा— ॥ ४६१० ॥

—"हाय! अनुज और लाड़ले पुत्र यों गिर गए। अब कहने को क्या है? विबुधों (देवताओं) के लिए असाध्य और प्रबल नागपाश के बंधनों से, माया से हो या बल से हो, मनुज विमुक्त हुए। अब विजय की आशा मेरे लिए असंभव है। उस राम के अनुज को युद्ध में जीतनेवाले वीर को खोजने पर भी नहीं पा रहा हूँ। निर्भय हो शोभित होनेवाली लंका को उन बलवानों से भय उत्पन्न हुआ है। उस विभुराम के पराक्रम की सीमा कहाँ है? अब आगे लंका उसके हाथ न पड़े, ऐसा प्रतिदिन सावधानी से रक्षा करते रहो।" (ऐसा) कहते अंतःपुर जाकर, एकांत में, मन ही मन व्याकुल होता रहा। तब मेघनाद आकर उस पंक्तिकण्ठ से मनोज्ञता से बोला—"मेरे रहते तुम्हें शोक करना क्यों? हे दानवाधीश्वर! (तुम्हें) चिंता नहीं करनी चाहिए ॥ ४६२० ॥

पटुतर मेरे बाण-संहति (आघात) को ईश्वर भी कैसे सहन कर सकेगा? उधर देखो, राम को (और) उसके अनुज को चटुल-अंबकों से

नट्टु चूडु रामुनि नातनि तम्मु । जट्टु लांबकमुल जर्जरितुल जेसि
यसुवुलु वेरि्कि यय्यगचरावळुल । वसुमति पै गूल्चि वच्चेद गडिमि;
विबुध कंटक ! नेडु विनुमु ना प्रतिन;। विबुध लोकेशुंडु विष्णुंडु यमुडु
शिखियुनु रुद्रुंडु सितकरार्कुलुनु । नखिल साध्युलु बलि यज्ञ वाटमुन
नेचि विजृंभिचु नेंड द्रिविक्रमुनि। जूचिन गति नन्नु जूतुरु गाक" !

इंद्रजित्तु रेंडव मारु युद्धमुनकु वेडलुट

यनि वीडुकोनि दिव्यमगु रथंबेक्कि। दनुजेन्द्र तनयु डेंतयु सोंपु मीरि
नडवंग नप्पुडु नाना मुखमुल । गडु वेगमुन नुर्वि गदलगा गदलि
वेडले रथंबुलु; वेडले नेनुगुलु; । वेडले गुर्र्रंबुलु; वेडले गाल्बलमु;
पुंडरीकंबुल बोलुपारु वारु । बुंडरीकाक्षुल बोलुपारु वारु ४६३०
बुंडरीकच्छाय बोलुपारु वारु । बुंडरीकोन्नति बोलुपारु वारु
बुंडरीकोग्रत बोलुपारु वारु । बुंडरीकमु शक्ति बोलुपारु वारु
नप्पुडुग्रत जतुरंग सैन्येमुल । नोप्पिरि दानवु लुग्राननमुल;
नार्पुलु बोब्बलु नतुल हुंकृतुलु । दर्पित सिंह नादस्फरणमुलु

जर्जरित कर, प्राण उखाड़कर (संहार कर) अगचर-अवलियों को, साहस से वसुमति पर गिराकर आऊँगा। हे विबुध-कंटक ! आज सुनो मेरी प्रतिज्ञा। विबुध-लोकेश (इन्द्र), विष्णु, यम, शिखि (अग्नि), रुद्र, सितकर (चंद्र), अर्क, अखिल साध्य (आदि) मुझे बलि की यज्ञशाला में विजृंभित होनेवाले त्रिविक्रम की भाँति देख लेंगे।"

इन्द्रजित का दूसरी बार युद्ध के लिए निकल पड़ना

—(ऐसा) कह बिदा लेकर, दनुजेन्द्रतनय दिव्य रथ पर आरूढ़ होकर, अधिक मनोज्ञता से चल पड़ा। तब नानामुखों से (चौरतफ़ से) रथ अतिवेग से चल पड़े जिससे उर्वी कंपित हो उठी। हाथी चल पड़े, घोड़े चल पड़े, पैदल सेना चल पड़ी। पुंडरीकों (कमल और श्वेतछत्र) के समान शोभित होनेवाले, पुंडरीकाक्ष (व्याघ्र और विष्णु) के समान शोभित होनेवाले, ॥ ४६३० ॥

—पुंडरीक (श्वेतछत्र) की छाया से शोभित होनेवाले, पुंडरीकों (के व्याघ्र के औन्नत्य से शोभित) होनेवाले, पुंडरीकों (आग्नेय दिशा का दिग्गज) की उग्रता से शोभित होनेवाले, पुंडरीक (व्याघ्र) की शक्ति से शोभित होनेवाले, ऐसे दानव तब उग्रता से, उग्र आननों से चतुरंगसेना में विलसित हुए। सिंहनाद, गर्जनाएँ, अतुल हुंकार, दर्पित सिंहनाद, नेमीरव,

नेमीरवंबुलु निस्साणरवमु। रामणीयकमु नुग्रंबुनै यमर
भासुर धावळातपत्र मॊप्पार। नासुधाकरु तोडि याकाश मनग
गमललोचनमुलु ग्राल नंदंद। प्रमदाजनमु चामरंबुलु वीव
बहु भूषण प्रभा पटलंबु वॆलुग। सहज वैभव महोज्ज्वलु डिंद्रजित्तु
चनुदेंचि रण महीस्थलमुन निलिचि। घन भुजु डत्यंत कौतूहलमुन
रक्त वस्त्रंबुल रक्त माल्यमुल। रक्त गंधंबुल राजितुंडगुचु ४६४०
वर मंत्रमुल हुतवहु ब्रतिष्टिंचि। शरमुलु दोमर चयमुलु वरुस
बरिधुलु सेसि यॊप्पग स्रुक्स्रुवमुलु। कर मॆधि लोहमुलुगा संघटिंचि
तनलोन निष्ठ युदात्तमै यॊप्प। दनुजेन्द्र तनयु डथर्वणोक्तमुगा
जदुरुडै नेय्यि लाजलु दाडि समिध। लोदवंग वेल्चुचु होमांत वेळ
गडगि कृष्णच्छाग कंठरक्तंबु। नडरेडु वह्नि बूर्णाहुति वेल्व
ननलुंडु वॊडसूपि हव्यमुल् गॊनियॆ; ननलुनि करुण ब्रह्मास्त्रंबु रथमु
धनुवुनु गवचंबु दद्दयु ब्रीति। गॊनि यार्चुकॊनुचु दिवकुलु पॆल्लगिल्ल
दानवुंडर्कॆंदु तारका समिति। तो नभंबगलंग दुर्दांतुडगुचु
रथ रथ्य केतु सारथुलतो नॆगसि। प्रथित वेगमुन नंबर वीथि डागि

निस्साणरव—(ये सब) रमणीय तथा उग्र हो शोभित हुए। भासुर-धवल-आतपत्र के शोभित होने पर, मानों उस सुधाकर से युक्त आकाश के सम होनेपर, कमललोचनों से विराजित प्रमदाजनो के जहाँ-तहाँ चामर डुलाने पर, बहुभूषण-प्रभा-पटल के प्रकाशित होने पर, सहज-वैभव से महोज्ज्वल बना इंद्रजित आया और रण-महीस्थल पर खड़ा हो गया। वह घन-भुजाओं वाला अत्यन्त कुतूहल से रक्त-वस्त्र, रक्त-माल्य, रक्त-गंधों से विराजित होते हुए, ॥ ४६४० ॥

—वर मन्त्रों से हुतवह (अग्नि) को प्रतिष्ठित कर, शरों और तोमरचयों को क्रम से परिधियाँ बनाकर, शोभा से, बड़ी इच्छा से, लोहे के स्रुक और स्रुवों को एकत्रकर, अपने (मन) में निष्ठा के उदात्त हो शोभित होने पर, दनुजेन्द्रतनय ने अथर्वण के अनुसार, स्थित हो, घी, खील, ताड़ की समिधाओं का हवन करते हुए, होम की अन्तिम-वेला में, सयत्न कृष्ण-छाग (काले बकरे) के कंठरक्त को प्रज्वलित वह्नि में पूर्णाहुति के रूप में हवन करने पर, अनल ने दिखाई पड़कर हव्य ग्रहण किए। अनल की करुणा (अनुग्रह) से ब्रह्मास्त्र, रथ, धनुष, कवच को अधिक प्रीति से प्राप्त कर, दिशाओं को विदीर्ण करते, सिंहनाद करते हुए, दानव अर्क-इन्दु-तारक-समिति से आकाश विदीर्ण हो जाए ऐसा दुर्दान्त बनते हुए, रथ-रथ्य-केतु सारथियों के साथ उछलकर, प्रथितवेग से अंबर में छिपकर, अगणित

यगणित विक्रमुडै यॊप्प बलिकॆं। दगियॆडु बुद्धिगा दन सेनतोड ४६५०
"दरलक निलिचि युद्धमु सेयु चुंडु; । डुरक येनुनु दिवि नुंडि घोरमुग
रण मॊनरिंचि याराम लक्ष्मणुल । गणुतिप किंत वेगमुन जंपॆदनु"
अनिन युत्साहवाक्यमु विनि पॆर्चि । दंनुजुलु सेनावितानंबुतोड
दरुचर सेनल दाकि यंदंद । परवसंबुन बॆक्कु भंगुल बोर
ना समयंबुन नादानवुंडु । भासुरंबुग दन प्रभ गाननीक
यादिवि नुंडि दिव्यास्त्रंबु लेय । नादानवुनि दॆस कगचरु लॆगसि
यगमुलु वैवंग नवि द्रुंचि गुंडॆ । लगलिंचि पॆक्कंड्र नवनिपै गूल्चि
वेगंबॆ यॊक्कॊक्क विषम बाणमुन । नेगुर दॊम्मंड्र नेड्गुर नेसॆं;
मऱियुनु गडिमिमै मर्कटेश्वरुलु । नॆऱयंग गिरि धरणीजंबु लॆत्ति
या यिंद्रजित्तुपै नर्डरिप नतडु । सायकंबुल वानि जतुरुडै त्रुंचि ४६६०
पदियु नॆन्मिदि तीव्र बाणंबु लेसॆ । मद मॆल्ल जॆड गंधमादनु; गडिमि
दीपिंप नलु दॊम्मिदिट रूपुमापॆ; । नेपार मैंदुनि नेडिट नॊंचॆ;
गदिसि पंचकमुन गजु बॊलियिंचॆ; । बदियिट भल्लूकपति गूलनेसॆ;

विक्रमवाला होता हुआ, उचित बुद्धि से विराजते हुए अपनी सेना से (यों) बोला— ॥ ४६५० ॥

—"न हटकर, खड़े रहकर, यों ही युद्ध करते रहिए। मैं भी आकाश से घोर रूप में रण करके, उन राम-लक्ष्मणों की गिनती (परवाह) किए बिना, अतिशीघ्र मार डालूँगा।" (ऐसा) कहने पर (उस) उत्साह वाक्य को सुनकर, विजृंभित हो, दनुज सेनावितान के साथ तरुचर-सेनाओं पर टूट पड़कर, जहाँ-तहाँ (सर्वत्र) परवश होकर, अनेक प्रकार से जूझते रहे। उस समय उस दानव ने भासुरता से (प्रकट रूप से) अपनी प्रभा को दिखाई पड़ने न देकर, उस आकाश से दिव्य अस्त्र चलाए। उस दानव की ओर अगचर उछलकर, अगों (पर्वतों) को डालने पर, उन्हें तोड़कर, वक्षों को विदीर्ण कर, अनेक (वानरों) को अवनि पर गिराकर, वेग से एक-एक विषम बाण से (एक साथ) पाँचों, नौओं, सातों को (मार) गिराया। तब साहस से मर्कटेश्वरों ने उत्कर्ष से गिरियों (और) धरणीजों को उठाकर उस इन्द्रजित पर फेंका तो उसने चतुर बन उन्हें सायकों (बाणों) से तोड़कर, ॥ ४६६० ॥

—गंधमादन पर दश और आठ (अठारह) तीव्रबाण चलाये जिससे उसका समस्त मद चूर हो गया। साहस के दीप्त होने पर (इन्द्रजित ने) नौ (बाणों) से नल को विरूप कर दिया, उत्कर्ष से मैन्द को सात (बाणों) से

नूटनु हनुमंतु नॊप्पिंचि मिंचें; । मूट गवाक्षुनि मॊगि गाड नेसें;
बदियिट हरिरोमु प्राणमुल् गॊनियें; । नद टणंगग रंभु नारिंट नेसें;
दगिलि यारिंट वेगदर्शि भंजिंचें । दॆगि सुषेणुनि नॆन्मिदिट नॊप्पिंचें;
ननयंबु बदिट सूर्यप्रभु नोंचें; । बनसुनि यंगंबु बदुमूट ग्रुच्चें;
घनतर बाणाष्टकंबुन गुमुदु । नॆनसि नीलुनि मुप्पदिटनु मुंचें;
मसलक मरि पॆक्कु मार्गणंबुलनु । रसिकत दूल दारातनूभवुनि
सुनिशितंबैन याशुगमुल मूट । दिनकर तनयु नैदिट निंद्रजालु ४६७०
गिरिभेदि रॆंटनु गॆडपि यात्रृषभु । निरुवदि शरमुल निल ग्रेळ्ळनेसें;
गेसरि बदुनालुगिंट दधिमुखुनि । भासुरंबगु बाणपंचकंबुननु
सुमुखुनि ग्रथनुनि सॊरिदि नारिंट । विमुखुनि नारिंट द्विविदु नेडिंट
शरभु नेडिंटनु शतबलि बदिट । सरि नॆन्मिदिट हरु सन्नादु मूट
नरुदुगा दक्किन यखिल यूथपुल । वरदिव्य शस्त्रास्त्र-वर्षंबु गुरिसि
कडु भिन्न-गात्रुल गाविंचि नेल । वडवैचि मरि गतप्राणुल जेसि
कॊंदरु नम्मुलु गॊनि काड नेसि । कॊंदरु-गद लॆत्तुकॊनि विट्टु व्रेसि
कॊंदरु शूलमुल् गॊनि तूरबॊडिचि । कॊंदरु शक्तुलु गॊनि निर्गुडिचि

पीडित किया, नियराकर पंचक (पाँच बाणों) से गज का संहार किया, दस (बाणों) से भल्लूकपति को मार गिराया, सौ से हनुमान को पीड़ित कर शोभित हुआ, तीन (बाण) गवाक्ष पर क्रम से धाँस दिए, दस से हरिरोम के प्राण लिए, गव का दमन हो जाए ऐसे रंभ पर छः बाण चलाए, लगकर छः से वेगदर्शी को मारा, सुषेण को आठ से पीड़ित किया, अनारत दस से सूर्यप्रभ का दमन किया, पनस के शरीर में तेरह (बाण) घुसेड़ दिए, घनतर बाणाष्टक से कुमुद को (तथा) विवर्द्धित हो नील को तीस (बाणों) से डुबो दिया। बिना विश्राम किए अनेक मार्गणों को चलाकर रसिकता छूट जाए ऐसा तारातनूभव को, सुनिशित तीन आशुगों से दिनकरतनय को, पाँच से इन्द्राजात को, ॥ ४६७० ॥

—गिरिभेदी को दो से गिरा देकर, उस ऋषभ को बीस शरों से पृथ्वी पर गिरा दिया। केसरी को चौदह से, दधिमुख को भासुर बाणपंचक से क्रम से सुमुख और क्रथन को छः से, द्विविद को सात से, शरभ को सात से, आठ से हर को, सन्नाद को तीन से, विरल रूप से शेष समस्त यूथपों (सेनापतियों) पर वर-दिव्य-शस्त्र-वर्षा बरसाकर, अधिक भिन्न (छिन्न)-गात्र वाले कर, पृथ्वी पर गिराकर, फिर (उन्हें) गतप्राण कर, कुछ पर बाण चलाकर, कुछ को गदाओं से खूब मारकर, कुछ को शूलों से भोंककर, कुछ पर शक्तियाँ खूब चलाकर, सबको इस प्रकार अवनी पर गिराकर, जहाँ-तहाँ

यंदऱ नीक्रिय नवनिपै गूल्चि । यंदंद पेर्चि तीव्रास्त्र घट्टनल
निग्रहिंचुचु नुंड नॆऱि निंद्रजित्तु । नुग्र बाणंबुल कोर्वनि कपुलु
गलग बाऱॆडु कपुल् कंपिंचु कपुलु । दलकॆडु कपुलुनु दागॆडु कपुलु
गलिगि यप्पुडु चूड गपिसेन कॆल्ल । प्रळय कालंबैन भंगियै तोचॆ;
दनुजेन्द्र तनयु डैंतयु नतिलेक । तनरु ब्रह्मास्त्रमंत्र प्रभावमुन
नुन्न वानर सेनयुनु जंपि वैचि । युन्नत जयमुन नुग्रुडै यार्चॆ;
गपि कोटि नॊच्चिन गडगि सौमित्रि । कुपितुडै यन्न गन्गॊनि विन्नविंचॆ
"देव ! ब्रह्मास्त्रंबु दीपिंप जेसि । रावण सहित मीराक्षस कोटि
नंतयु जंपॆद, नानति यिम्मु, । चिंतिंप नेटिकि जॆच्चॆर" ननुड
"वीनि मायल जेसि वीनि रूपंबु । गाननि यप्पुडु कडगि लोकमुलु
भस्मंबु सेयुचु ब्रह्मास्त्र मरुगु । विस्मयंबुग बलाविर्भाव मॊप्प;
गावुन वीनिकै कडगि लोकमुल । नीवेल काल्चॆदु निष्ठुर वृत्ति ?
नीराक्षसुडु ब्रह्म यिच्चिन वरमु । कारणंबुन जेसि कपिकोटि जंपॆ;
ननयंबु मनमिक नाब्रह्म वरमु । मनमुन नॊककॊंत मन्निप वलयु"

विजृंभित होकर, तीव्र अस्त्रों के आघातों से (वह प्रतिपक्षियों का) निग्रह करता रहा। क्रम से इन्द्रजित के उग्र बाणों को सह न सकनेवाले कपि, ।। ४६८० ।।
—विकल हो भागनेवाले कपि, कंपित होनेवाले कपि, तितर-बितर होनेवाले कपि, छिपनेवाले कपि—(इन सबसे) युक्त हो, देखने पर, वह समय समस्त कपि-सेना के लिए प्रलयकाल की भाँति दीख पड़ा। दनुजेंद्रतनय अत्यधिक अप्रतिम हो विजाजमान ब्रह्मास्त्र के मन्त्रप्रभाव से, वानरसेना का संहार कर, उन्नत-जय से उग्र बन सिंहनाद किया। कपिकोटि के पीड़ित होनेपर, सयत्न सौमित्र ने कुपित होकर, अग्रज को देख (यों) निवेदन किया— "हे देव ! ब्रह्मास्त्र को प्रदीप्त कर, रावण सहित इस समस्त राक्षसकोटि को मार डालूँगा। आदेश दीजिए झट से। चिंता करने की क्या आवश्यकता है ?" (ऐसा) कहने पर "इसकी मायाओं के कारण इसके स्वरूप के न दिखाई पड़ने पर, लगकर लोकों को भस्म करते हुए, बलाविर्भाव के शोभित होने पर ब्रह्मास्त्र चला जाएगा। अतः इस (एक राक्षस) के लिए तुम निष्ठुरवृत्ति से लोकों को क्यों जला दोगे ? ।। ४६९० ।।
—इस राक्षस ने ब्रह्मा के दिए वर के कारण से कपिकोटि का संहार किया। अब हमें उस ब्रह्मा के वर का थोड़ी देर तक मान करना चाहिए।"

इन्द्रजित्तु ब्रह्मास्त्रमुचे रामादुल मूर्छ नोंदिंचुट

ननुचुंड निंद्रजित्तारघुकुलुल । गनुदेरवनि मूर्छ गदुरंग नेसे;
गर्वितुंडगु दशकंठनंदनुडु । पर्विन नीलाभ्र पटलंबुगाग
नडरिंचु कार्मुकज्यानिनादंबु । लुड्डुगक वेसम्रोयु नुरुमुलु गाग
वडि बून्चि दैत्युडु वैचुचुनुन्न । बेडिदंपु शक्तुलु पिडुगुलु गाग
नगणित दिव्य शस्त्रावळि यंदु । मिगिलिन दीप्तुलु मेरुगुलु गाग
बोरि बोरि बुंखानुपुंखंबुलगुचु । नरुदेंचु बाणम्मु लतिवृष्टि गाग
गरुल नोप्पिन सेलकट्टिय लेल्ल । दरचुगा नाडु चातकमुलु गाग
गनक रत्न प्रभा कलितमौ चाप । मनुवोंद निंद्र शरासंबु गाग४७००
नसुरुलयंदुनु नगचरुलंदु । वेसग्रम्मु नेत्तुरु वेल्लुव गाग
बंबि हारमुलकु बासिन मौक्ति । कंबुलु नेरि वडगंड्लुनु गाग
नुरलिन मकुट महोज्ज्वल मणुलु । परगिन यिंद्र गोपंबुलु गाग
लालितंबगु काहळा निनादमुलु । वालिन केकारवंबुलु गाग
समधिक पटहोग्र सन्नाह रवमु । रमणीय मंडूकरावंबु गाग
नसमुन रघुपति हालिकुडै पेर्चि । यसुरेशु विपुल देह क्षेत्रमुननु

इन्द्रजित का ब्रह्मास्त्र से राम आदियों को मूर्च्छित करना

—(ऐसा) कहते समय इन्द्रजित ने उन रघुकुलवालों को ऐसी मूर्च्छा में डाल दिया कि वे आँखें भी खोल न सके। (तब) गर्वित बने दशकंठ-नंदन के व्याप्त नीलाभ्र-पटल के समान होकर, उत्कर्षित कार्मुक-ज्या (धनुष की डोरी) का निनाद अनारत मुखरित होनेवाले मेघगर्जन होने पर, झट सप्रयत्न दैत्य की चलायी भयंकर शक्तियाँ अशनियाँ होने पर, अगणित दिव्य शस्त्रावली की अधिक दीप्तियाँ बिजलियाँ होने पर, वार-बार पुंखानुपुंख हो (लगातार) आनेवाले बाणों के अतिवृष्टि (सम) होने पर, पंखवाले बाणों के चातक होने पर, कनक-रत्न-प्रभा-कलित चाप के शोभा से इन्द्रशरासन (इन्द्रधनुष) होने पर, ।। ४७०० ।।

—असुरों तथा अगचरों (के शरीरों) से झट फूट निकलनेवाले रक्त की बाढ़ होने पर, परिव्याप्त हारों से छूटे मोतियों के ओले सरिस होने पर, लुढक पड़े मकुटों के महोज्ज्वल मणियों के शोभित इन्द्रगोप होने पर, लालित काहल के निनादों की शोभित मयूर-ध्वनियाँ होने पर, समधिक-पटह-उग्र सन्नाह-रव के रमणीय मंडूक-रव होने पर, वह समय, पहली वर्षा के समय के समान ऐसा शोभित हुआ मानों दर्प से रघुपति, हालिक (किसान) बन विजृंभित हो, असुरेश की विपुलदेह रूपी क्षेत्र में अवश्य बाण रूपी बीज

नडरि लोकंबेल्ल नलरंग मुट्टि । विडुवक यम्मुलु वेंदवेट्टु कोरकु
वच्चिन तोलकरि वानकालंबु । नच्चुन नोप्पारे ना समयंबु;
"कान गदा यिक गडगि राघवुडु । मानक बाहु समग्रत मेरसि
कलनिकि नद्दशकंठुनि देच्चि । तलकोत कोसि युद्दंडत नुरिय
४७१०
दलपोयु" ननिन चंदमुन जित्तंबु । वेलय डेब्बदि रेंडु वेल्लुवलैन
वनचरवरुल भूवरुल जयिंचि । घनतर ज्यानाद कलितुडै मगुडि
यालंबु सालिंचि यायिंद्रजित्तु । डालंक लोनिकि नरिगे नव्वुचुनु;
मनुजेशु दुरवस्थ मदि विचारिंचि । कनुगोन जालक कन्नुलु मोगिंचि
कोनि तोलंगिन माड्कि ग्रुंकें नर्कुंडु । वनचरवर-मुख-वनजमुल् मुडुग;
गपि कोटिचे लंक गालुचो धूम । मुपमिप नीगति नुंडु नन्माड्कि
गडु नग्गलमुग लोकंबेल्ल निंडि । तडय केंतयु नंधतमसंबु ववें;

हनुमद्विभीषणुलु ब्रह्मास्त्रमु बारि बडक सैन्यमुनु वरीक्षिंचुट

नप्पुडु तोंडगि ब्रह्मास्त्र मंत्रंबु । नोप्प जपिपंग नोकटियु गाक
युन्न बिभीषणुंडुर्वर गूलि । युन्न सुग्रीवादि योधुल जूचि
"वनचरुलार ! गीर्वाणारिसुतुडु । वनरुह गर्भुनि वरमुन जेसि ४७२०

रोपने के लिए आया हो जिससे समस्त लोक हर्षित हों। ऐसा होने पर अब सयत्न राघव, न छोड़कर बाहु समग्रता (बाहुबल) से दीप्त हो, युद्ध-भूमि में उस दशकंठ को लाकर, उसका सिर काटकर, ।। ४७१० ।।
—उद्दंडता से दृढ़ता से दंवरी कराना चाहते हों। अतिविचित्र रूप से बहत्तर बाढ़ों के रूप में विलसित वनचर-वरों (तथा) भूवरों को जीतकर, घनतर-ज्या-नाद से कलित हो, युद्ध स्थगित कर, लौटकर वह इन्द्रजित हँसते हुए लंका में गया। मनुजेश (राम) की दुरवस्था के लिए मन में दुखी हो, न देख सक, आँखें मूंदकर, हट जाने के समान सूर्य अस्तंगत हुआ जिससे वनचर-वर-मुखी रूपी वनज मुरझा गए। कपिकोटि के हाथ लंका के जलते समय (उठने वाला) धुआँ मानों इस प्रकार फैलेगा, इस प्रकार अधिक अंधतमस (अन्धकार) समस्त लोक में घने रूप में व्याप्त हो गया।

हनुमान और विभीषण का ब्रह्मास्त्र का शिकार न बनकर, सेना का निरीक्षण करना

तब उपक्रम कर, ब्रह्मास्त्रमन्त्र को शोभा से जपने पर, (अपने को) कुछ भी (हानि) न होने पर विभीषण ने भूमि पर गिरे हुए सुग्रीव आदि योद्धाओं को देखकर (कहा) "हे वनचरो ! गीर्वाण-अरि-सुत के वनरुहगर्भ (ब्रह्मा) के वर के कारण से, ।। ४७२० ।।

पन्नियेयुटयुनु 'ब्रह्मास्त्र शक्ति। मन्निप दगु' ननि मनमुन दलचि
वंचिचि याराम वसुमतीनाथु। डिचुक सैचिनाडितियकानि
मरि यॊंडुगा" दनि महित वाक्यमुल। वॆरवॊप्प बलुकंग बिनि यंतलोन
वायुसूनुडु ब्रह्म वरमुन जेसि। या यिद्रजित्तु दिव्यास्त्र संततुल
जावकुंडुट विभीषणु तोड ननियॆ। "भाविंत मिप्पुडु भंडन भूमि
निट्टु पड्ड वारिलो नॆव्वरु गलरॊ। पटु बाण हतुलय्यु ब्रतिकिन वार"
लनि यिद्दरुनु गूडि यंधकारमुन। गॊनकॊनि मंडॆडु कॊरवुलु वट्टि
कॊनि कलनॆल्लनु ग्रुम्मरुनपुडु। ननयंबु ना संगरावनिलोन
नंदंद युडुगक याडु नट्टलुनु। ग्रंदुगा मांसमुल् गरचु भूतमुलु
बॆडिदंबुगा नार्चु बेताळमुलुनु। नडरॆडु रक्तंबुलानु डाकिनुलु४७३०
गंडलु गबळिचु कंक गृध्रमुलु। नॊंडॊंड यॆलुगिचु नुरु सृगालमुलु
गॆडसि नॆत्तुरुलु ग्रक्कॆडु भल्लूकमुलु। नुडुगक यंदंद यॊरलु कोतुलुनु
गुदिसि काळुलु दन्निकॊनु वलीमुखुलु। गदिसिन दंतमुल् गल प्लवंगमुलु
लावरि वडिन गोलांगूलमुलुनु। भाविपरानि रूपमुल वानरुलु
गीलाल वारि दोगिन यद्रिचरुलु। गेलिमै दूलि बृंगिन नगचरुलु

—चाहकर (ब्रह्मास्त्र) चलाने पर 'ब्रह्मास्त्र की शक्ति का मान करना चाहिए' ऐसा मन में सोचकर, (शत्रु की) वंचना कर, राम-वसुमतीनाथ ने थोड़ा उसको सहन किया है। इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं है।" ऐसे महित वाक्यों को शोभा से कहने पर, सुनकर, इतने में वायुसून ने ब्रह्मा के वर से उस इन्द्रजित के दिव्य-अस्त्र-समूहों से न मरने के कारण, विभीषण से कहा—"अब देखें कि भंडन (युद्ध)-भूमि में ऐसा गिरे हुए लोगों में, पटु बाणों से आहत होकर भी कितने लोग जीवित हैं ?" (ऐसा) कह दोनों मिलकर, अंधकार में, लगकर जलनेवाले अलावों को पकड़कर युद्धभूमि में घूमते रहे। तब सदा उस संगर-अवनी में जहाँ-तहाँ (सर्वत्र) रुके बिना (निरन्तर) नाचनेवाले रुंड, खूब मांस खानेवाले भूत, भीकरता से सिंहनाद करनेवाले बेताल, अधिक रक्त का पान करनेवाली डाकिनियाँ, ॥ ४७३० ॥

—मांस-पेशियों को निगलनेवाले कंकगृद्ध, परस्पर शब्द करनेवाले बड़े शृगाल, नियराकर रक्त उगलनेवाले भल्लूक, न रुककर जहाँ-तहाँ चीखने (कराहने) वाले वानर, सिकुड़कर पैरों से छटपटानेवाले वलीमुख, गड़े दाँत वाले प्लवंग, सामर्थ्य को खो गिर पड़े गोलांगूल, कल्पना से अतीत (विकृत) रूपवाले वानर, रक्तप्रवाह में ऊभचूभ अद्रिचर, लीला से धूल

नोंदिगि यूरक पडियुन्न वानरुलु । बदमु लाडक तोंट्रु पडु वनचरुलु
बदुर नेबंड्रनु ब्रदर सोक्कटनु । गुदुलु ग्रुच्चिन क्रिय गूलिन कपुलु
नंतंत दुत्तुमुरैन शैलमुलु । निर्तितलैन महीरुहमुलुनु
खंडंबुलैन राक्षसुल शूलमुलु । दंडिगा दुनुकलै धरबड्ड गदलु
निडंग सामजनिकरमुल समर । मंडलि बडियुन्न मरिवेरुगंदि ४७४०

कनुगोनि खिन्नुलै कडु दुःखमडर । ननिरि विभीषण हनुमंतु लपुडु;
"वलयु कार्यमु जांबवंतुनि नडुग । वलयु; गार्यबुल वलनातडेरुगु;
नतडुन्नयेंड निक नरयुद; मरसि । यतडु सेप्पिन त्रोव नरुगुद मनुचु
गलनेल्ल वेदकुचु गनुगोनि रपुडु । बलितंपु शरशय्य बडियुन्न वानि
गनि जांबवंतु डग्गरि दैत्यनाथु । डनियेनु वेंद्दयु नार्तुडै यपुडु;
"ब्रतिकि युन्नाडवे ? पलुकंग गलवे ? । यिदे ऋक्षराज! मम्मेरुगुदे ?"
यनिन

दानवु शरहति दर्पंबु दूलि । हीन स्वरमुन ऋक्षेशु डिट्लनियेः
"सर्व विशेषंबु विचारिंचि बुद्धि । बरिकिंचि नीवनि पलिकेद गानि
कन्नुल नम्मुलु गाडुट जेसि । सन्न दृष्टुलु, विभीषण! कानरावु;

में डूबे नगचर, सिकुड़कर यूँही पडे हुए वानर, चल न सक लड़खड़ाते वनचर, एक ही प्रदर (बाण) से दसों, पचासों को झुंड में गूँथने के समान गिर पड़े कपि, जहाँ-तहाँ चूर-चूर बने शैल, छोटे-छोटे टुकड़े बने महीरुह, खंड बने राक्षसों के शूल, खूब तिनके बन धरा पर गिरी गदाएँ, सामज-निकर (गजसमूह) के समर-भूमि में खूब भरे रहने पर और भी चकित (अथवा भीत) होकर, ।। ४७४० ।।

—देखकर, खिन्न हो, अधिक दुख के विवर्द्धित होने पर, तब विभीषण (तथा) हनुमान ने (यों) कहा—"होने वाले कार्य के बारे में जांबवान से पूछना चाहिए। आवश्यक कार्यों के विधान को वह जानता है। यह खोजें कि वह कहाँ है। उसे देख उसके कहे मार्ग (विधान) का अनुसरण करेंगे।" (ऐसा) कहते हुए, समस्त युद्धभूमि में खोजते हुए, भीकर शरशय्या पर पड़े हुए उस (जांबवान) को देखा। देखकर, जांबवान के निकट जाकर अधिक आर्त बन दैत्यनाथ (विभीषण) ने कहा—"जीवित तो हो ? बोल सकते हो ? हे ऋषभराज ! यह हमें जानते हो ?" (ऐसा) कहने पर, दानव (मेघनाद) के शराघात से दर्प को खोकर, हीन स्वर से ऋक्षेश ने यों कहा—"स्वर-विशेष का विचारकर, बुद्धि से देखकर कहता हूँ कि तुम हो। आँखों में वाणों के गड़ जाने से हे विभीषण ! कुछ नहीं

चेवुलकु निपुगा जेप्पुमु नाकु; । बवमान सूनुंडु ब्रदिकि युन्नाडे?"
४७५०

यनवुडु वेंड्रगंदि याजांबवंतु । कनियें विभीषणु डति संभ्रममुन;
"गडुवेंड्रगय्येंडु; घनुडैन रामु । नडुगक, लक्ष्मणु नडुगक, यिनजु
नडुगक, यंगदु नडुगक, यतनि । नडुगुट येतलंपगु ? ऋक्षराजु!"
यनुडु "विभीषण! हनुमंतुडोकडु । तनुवुतो नुंडिन दरुचरु लेल्ल
ब्रदुकुदु; रातडु ब्रदुक डेनियुनु । ब्रदिकि युंडिननैन ब्रदुकरु कपुलु"
ननुमाट विनि मुदंबंदि वायुजुडु । दनपेरु सेप्पि पादमुलकु म्रोक्कें;
म्रोक्किन नेंड्रिगि यिम्मुल ऋक्षराजु । तक्वक यात्ममुदंबुनु वोंदि
तनु बुनर्जातुगा दलपोसि यनियें । ननिल-नंदनु तोड नर्थि दीपिंप;
"दलपोय वायुनंदन! नीवु दक्क । गलुगुने योक्कडी कपुलकु दिक्कु!
अदि गान नी विप्पु डंबुधि दाटि । वदलक याहिमवंतंवु गडचि ४७६०

हेम कूटंबुनु ऋषभ पर्वतमु । नामेरुवुनु रजताद्रियु गडचि
श्वेताचलमु दाटि शीघ्रत मेंड्रसि । याततमगु लवणांबुधि गडचि
यरिगि शाकद्वीप मव्वलि केगि । तरगल नोप्पु सुधा वार्धि दाटि
चन्द्रशैल द्रोण शैल मध्यमुन । सांद्रदीधितुल नुज्ज्वलत वहिंचि

देख पा रहा हूँ। कर्णप्रिय रूप में कहो कि क्या पवमानसून जीवित ही है ?" ॥ ४७५० ॥

—ऐसा कहने पर चकित हो, अति संभ्रम से जांबवान से विभीषण ने कहा—"बड़ा आश्चर्य हो रहा है। महान् राम के बारे में न पूछकर, लक्ष्मण के बारे में न पूछकर, इनज के बारे में न पूछकर, अंगद के बारे में न पूछकर, उसके बारे में पूछने में हे ऋक्षराज ! तुम्हारा मतलब क्या है ?" (ऐसा) कहने पर (जांबवान ने कहा) —" हे विभीषण ! एक हनुमान जीवित रहेगा तो समस्त तरुचर जीवित रहेंगे। वह जीवित नहीं रहेगा तो जीवित रहते हुए भी कपि जिन्दा नहीं रहेंगे।" यह बात सुनकर मुदित होकर वायुज ने अपना नाम बताकर, चरणों में प्रणाम किया। प्रणाम करने पर (हनुमान को) जानकर, प्रेम से ऋक्षराज, आत्मा में मोद को प्राप्तकर (कहा—) "न रुककर उस हिमवान को पार कर, ॥ ४७६० ॥

—हेमकूट और ऋषभपर्वत, उस मेरु को तथा रजताद्रि को पारकर, श्वेताचल को पारकर, शीघ्रगति से दीप्त होकर, आतत-लवणांबुधि को पारकर, शाकद्वीप के उस पार जाकर, तरंगों से शोभित सुधावारिधि को

तिरमैन यायौषधीशैल मक्कि । करमॊप्प संजीव करणि विशल्य
करणियु संधान करणि सौवर्ण । करणियु नानाल्गु गलवौषधम्मु;
लवि तॆच्चि यीवानरावळि नॆल्ल । बवनतनूभव ! ब्रतुकंग जेसि
रागंबु नॊंदिपु रामलक्ष्मणुल । वेगंबे" यनवुड्डु विनि वायुजुंडु

आंजनेयु डोषधीशैलमु दॆच्चि रामादुल मूर्छ देलिचुट

ननि वीड्कॊनि सुवेलाचलं बॆक्कि । चतुरुडै पदमुलु सममुगा मॆट्टि
ललित शेषाभ वालमु मीदि कॆत्ति । नॆलकॊनि भुजमुलु निक्किंचि पॊंगि
४७७०

रामुनि दलचुचु रयमुन नॆगय । नामहनीयाद्रि यवनिलो ग्रुंगॆ;
दॆसलु गंपिंचॆ; दिर्दिर धात्रि दिरिगॆ। नसमानमैनट्टि यारभसमुन;
ततडट्टु लॆगसि यय्याकाश वीथि । नति भीषणंबैन यंबुधि दाटि
हरि चक्रमुनु बोलॆ नरुगुचु नड्डुम । दरमिडि पॆक्कु चोद्यमुलु सूचुचुनु
सांद्र फेनामृत जलनिधि दाटि । चन्द्रशैल द्रोण शैल मध्यमुन
दिरमैन यायोषधीशैल मॆक्कि । यरयुचु वच्चुचो नायोषधुलुनु
गामरूपुलु गान गपि शेखरुनकु । नेमियु बॊडसूप नीवय्यॆ दम्मु;

पारकर, चन्द्रशैल और द्रोणशैल के मध्य, सांद्र-दीधितियों के कारण उज्ज्वल बन, स्थिर बने उस औषधीशैल पर चढ़कर, अधिक मनोज्ञ संजीवकरणी, विशल्यकरणी, संधानकरणी, सौवर्णकरणी नामक चार औषधियों को लाकर, इस समस्त वानरावली को हे पवनतनूभव ! जीवित कर, वेग ही राम-लक्ष्मणों का प्रिय करो ।" ऐसा कहने पर, सुनकर वायुज,

आंजनेय का ओषधीशैल लाकर राम आदियों की मूर्च्छा दूर करना

—उससे विदा लेकर, सुवेलाचल पर चढ़कर, चरणों को समान रूप से टेककर, ललित-शेषाभ-वाल को ऊपर उठाकर, स्थिरता से भुजाओं को उचकाकर, फूलकर, ।। ४७७० ।।

—राम का स्मरण करते हुए, शीघ्र उछल पड़ा तो उस असमान रभस के कारण वह महनीय अद्रि पृथ्वी में धँस गई, दिशाएँ कंपित हो गईं, धात्री चक्कर खा गई । वह उस तरह उड़कर आकाश-वीथि से अतिभीषण अंबुधि को पारकर, हरिचक्र के समान जाते हुए, बीच में क्रम से अनेक विचित्रताओं को देखते हुए सांद्र फेन से युक्त अमृत-जलनिधि को पारकर, चंद्रशैल और द्रोणशैल के मध्य में स्थिर बने उस, ओषधीशैल पर चढ़कर, खोजने पर उन ओषधियों ने कामरूपवाले होने से अपने आपको कपिशेखर

ननिलनंदनुडुनु नवि गानकुंडि । तनलोन नंदंद तलपोसि चूचि
यति विनयंबुन नापर्वतंबु । नतुल गुणोदात्तुडै वेड दोडगॆ;
"प्रालेय गिरियुनु बर्जन्य गिरियु । गैलास गिरियुनु गैकोनकेनु ४७८०
ग्रन्नन वच्चिति, गार्यातुरुंड, । निन्नु नुद्देशिचि निखिलाद्रि नाथ;
नीयंदु निर्जरुल् नॆरि दाचियुन्न । यायौषधमु लॆव्वि ? यवि नाकु जूपु;
माराघवुनकु गार्यमु वुट्टि युन्न; । देरूपमुन नैन निच्चुट लॆस्स"
यनिन नगिगरि यट्टहासंबु सेसि । यनिल नंदनुतोड ननियॆ गर्विंचि;
"पॆलुच नीविटु वच्चि पॆक्कुलाडेदवु; । तलकक यी यौषधमुलु नन्नडुग
नीवॆंत वाडवु ? निन्नु देम्मनग । नेविधंबुन रामुडॆंतटि वाडु ?
चेकॊनि सुरलु दाचिन यौषधमुलु । नीकु निच्चुट कंटॆ नेरमि गलदॆ ?"
यनि गर्व माडिन ननिल नंदनुडु । किनुकतो ननियॆ नगिगरि तोड बॆंचि;
"ये निन्नु वलॆननि यिटु वेडुकॊनिन । दानि विचारिंप दगदॊको नीकु ?
नगलिंचि ना भुजायत शक्ति निन्नु । नगम ! मूलोन्मूलनंबुगा बॆरिकि ४७९०
यिदॆ कॊनिपोयॆद; नॆरुगनि रामु । हृदयंबुलो नप्पु डॆरिगॆदु गाक ?"

की नजरों से बचाए रखा। अनिलनन्दन ने भी उन्हें देख न पाकर, अपने में निरन्तर सोचकर, अतिविनय से अतुलगुणोद्दात्त होकर उस पर्वत से निवेदन किया—"प्रालेय गिरि की, पर्जन्यगिरि की, कैलासगिरि की परवाह किए बिना, ॥ ४७८० ॥

—मैं झट से कार्यातुर होने से, तुम्हारे पास आया हूँ। क्रम से तुम में निर्जरों की छिपाई ओषधियाँ कहाँ हैं ? उन्हें मुझे बता दो। हमारे राघव को उनकी आवश्यकता पड़ी है। अतः किसी भी रूप से हो, दे देना श्रेष्ठ है।" (ऐसा) कहने पर उस गिरि ने अट्टहास कर, गर्वित हो अनिलनन्दन से कहा—"अतिशयता से तुम यहाँ आकर बढ़बढ़ कर बातें करते हो ? विकल हुए बिना इन ओषधियों को माँगने के लिए तुम हो कितने (बडे) ? ले आने के लिए तुम से कहने के लिए वह राम ही कितना बड़ा है ? चाहकर देवताओं के छिपा लिए ओषधियों को तुम्हें देने से बढ़कर अपराध हो सकता है ?' ऐसा गर्व से बोलने पर अनिलदन्दन ने विजृंभित होकर क्रोध से उस गिरि से (यों) कहा—"मैंने चाहकर तुमसे निवेदन किया था तो तुमको उस पर विचार नहीं करना चाहिए ? हे नग ! अपनी भुजायत शक्ति से तुम्हें विदीर्ण कर, मूल दिखाई पड़े ऐसा उखाड़कर, ॥ ४७९० ॥

यनि भीषणंबुगा हनुमंतु डद्रि । ननुवारगा बट्टि यगिलिंचि पेर्चि
पेंद्रिकि गंधर्वुल बेंदरंग द्रोलि । गुरु तिड राकुंड गोनिराग दोडगे;
ननिल नंदनुडु सहस्र धारलनु । घनमुगा वेलुगु चक्रमु तोडि विष्णु
करणि नेतेर राक्षस वीरमुक्त । शरहति नोच्चि मूर्छल नुन्न कपुलु
वर महौषध वात वशतचे देलिसि । करमु संप्रीतितो गडगि यार्चुचुनु
ननिमोन बडिन दैत्यावळि गिट्टि । वनधि लोपल बारु वैचिरि चेलगि
हनुमंतुडुनु सुवेलाद्रि वे कडचि । चनुदेंचि याकपि सैन्यंबु नडुम
महनीयमैनट्टि मंदुल कोंड । मिहिर प्रतापुडै मेल्लनडिंचि
तपन वंशजुलकु दपन सुतादि । कपि मुख्युलकुनु नोक्कट ब्रयोगिंप ४८००
धीयुक्ति नट मूर्छ देलिसिरि वारु । ना यौषधमुल महत्त्वंबु वलन;
ननिलोन दुनकलैनट्टि देहमुलु । घनमैन संधान करणिचे गदिसे;
शरपुंज मुरुशस्त्र चयमु विशल्य । करणिचे नपुडूडि गंटुलु पूडे;
सौवर्ण करणिचे सकलांगकमुलु । सौवर्ण कांति नुज्ज्वलमुल मिंचे;
गलयंग संजीव करणिचे ब्राण । मुलु वच्चि चेलगुचु मुनुपटिकंटे

—यहीं ले जाऊँगा। जिस राम को नहीं जानते थे उस राम को अब हृदय से जान लोगे।' (ऐसा) कह भीषण रूप से हनुमान, अद्रि को ढंग से पकड़कर, विदीर्णकर, विजृंभित होकर, उखाड़कर, गन्धर्वों को धमका-भगाकर, साथ ले आने लगा, जिसे कोई पहचान न सके। अनिलनन्दन के सहस्रधाराओं से युक्त हो महत्तर रूप से प्रकाशित (सुदर्शन) चक्र के साथ विष्णु की भाँति आने पर, राक्षसवीरों के छोड़े बाणों के आघात से पीड़ित होकर, मूर्च्छित कपि, वर महौषध के वात-बश होश में आकर, अधिक संप्रीति से सिंहनाद करने लगे। युद्धभूमि में पड़े दैत्यसमूह के पास जाकर, विजृंभित हो (उन्हें) वनधि में फेंक दिया। हनुमान ने भी वेग से सुवेलाद्रि को पारकर, आकर, उस कपि-सैन्य के मध्य महनीय ओषधि-पर्वत को, मिहिर के समान प्रतापयुक्त होते हुए, धीरे से उतारा। तपन (सूर्य)-वंशवालों पर, तपनसुत (सुग्रीव) आदि कपिप्रमुखों पर एक साथ (ओषधियों का) प्रयोग करने पर, ॥ ४८०० ॥

—उन औषधों के महत्त्व से, धीयुक्ति से वे मूर्छा से होश में आ गए। युद्ध में टुकड़े-टुकड़े बने शरीर महान् संधानकरणी से जुड़ गए। शरपुंज तथा उरु-शस्त्र-चय विशल्यकरणी के कारण तब छूट गए और घाव भर गए। सौवर्णकरणी के कारण सभी अवयव सौवर्ण-कांति से उज्ज्वल हो भासित हुए। शोभा से संजीवकरणी से प्राणों के संचार से समस्त कपिवीर पूर्व

गडु नॉप्पिरॆंतयु गप्पि वीरुलॆल्ल । गडकतो निद्र मेल्कनिन चंदमुन;
नप्पुडु कपिवीरु लनिल नंदनुनि । नॊप्पार नग्गिंचिरुत्साह मॊदव;
ननिमोन जच्चिन यसुरुल गपुलु । वनधि नंतकु मुन्ने वैचुट जेसि
कदनंबुलोनि राक्षसु डॊक्कडैन । ब्रतुकुट लेद यप्पर मौषधमुल;
नंत सुग्रीवादुलैन वानरुलु । संतसंबुन सूर्य चंद्रुल भंगि४८१०
गरमॊप्पु रामलक्ष्मणुलकु म्रॊक्कि । यरुदार नुतियिंचि रनिलनंदनुनि;
नप्पुडु म्रॊक्कॆडु नांजनेयुनकु । नुप्पॊंग विबुधाळि युर्वीशु डनियॆ;
"मनकु वासवु नाज्ञ मन्निंप वलयु । ननयंबु; गावुन नमरुलु मॆच्च
नीयोषधीशैल मॆप्पटि चोट । वायूतनूभव ! वैचि र"म्मनुडु
मारुतात्मजु डसमान वेगमुन । नाराघवुडु मॆच्च नग्गिरींद्रंबु
नॆनय नॆप्पटि चोट निरवॊंद नुनिचि । चनुदेंचॆ रयमुन संगर स्थलिकि;
नंत सूर्योदयंबय्यॆ; राघवुनि । चिंत तोडने कूड जीकटि वासॆ;
नप्पुडु सुग्रीवु डारामचंद्रु । नॊप्पार गनुगॊनि युल्लास मॆसग
"वसुधेश! पॊलिसॆ रावणु बलंबॆल्ल । नसम साहस बलाहव केळि बालि;
गुदुलु ग्रुच्चिन क्रिय गुंभकर्णुंडु । मॊदलगु राक्षस मुख्युल वडिरि
४८२०

से अधिक शोभायमान हुए मानों निद्रा से जाग उठे हों। तब कपिवीरों ने उत्साह के उत्पन्न होने पर, शोभा से अनिलनन्दन की प्रशंसा की। युद्ध-भूमि में मरे हुए असुरों को इससे पूर्व ही कपियों के वनधि में डाल देने से, उन परम औषधों के बल से युद्धभूमि में एक भी राक्षस पुनर्जीवित नहीं हुआ। तब सुग्रीव आदि वानर प्रसन्नता से सूर्य और चन्द्र के समान, ॥ ४८१० ॥

—अधिक मनोज्ञ बने रामलक्ष्मणों को प्रणामकर, अनिलनन्दन की भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे। तब प्रणाम करनेवाले आंजनेय से उर्वीश ने कहा जिसे सुन विबुधावली फूल उठी—"हमें सतत वासव की आज्ञा को मानना चाहिए। अतः हे वायुतनूभव! अमर प्रशंसा करें, ऐसा इस ओषधीशैल को यथास्थान रखकर आओ।" (ऐसा) कहने पर, मारुतात्मज असमानवेग से, राघव सराहें ऐसा उस गिरींद्र को शोभा से यथास्थान स्थिरता से रखकर, संगरस्थल को शीघ्र आ गया। तब सूर्योदय हुआ, राघव की चिन्ता के साथ ही अन्धकार भी दूर हो गया। तब सुग्रीव ने रामचन्द्र को मनोज्ञता से देख उल्लास से फूलकर (कहा)—"हे वसुधेश! असम-साहस-बल से आहव (युद्ध)-केली में दबकर रावण का समस्त बल नष्ट हो गया। कुम्भकर्ण आदि प्रमुख राक्षस झुंड के झुंड गिर (मर) गए। ॥ ४८२० ॥

यदिगान दन सत्त्वमंतयु दग्गिे; । द्रिदशारि कय्यंबु तेंरुगोल्लडिक;
लंक गाल्पंग गोलांगूल बलमु । बंकजहित वंश ! पनुपु मीराल्रि"
यनुमाट विनि कपु लंदरु गूडि । "यिन मंडलमु ग्रुंकु टेप्पुडो" यनुचु

वानरुलु लंक गाल्चुट

दमकिंचु चुंडंग दरणि ग्रुंकुटयु । दममुनु बेंद्दयै दट्टमै पर्व
नप्पुडु कपिवीरु लधिक रोषमुन । नुप्पोंगि धीरत नुग्रुलै चेलगि
गुनिसि याडुचु मंडु कोरुवुलु वट्टि । कोनि जवंबुलु मीरु गुप्पिचि दाटि
वडि लंक मुट्टि या वाकिळ्ळवारु । कडु भयंबुन बारुगा लंक जोच्चि
"यारावणुनि पुरि यडरि काल्चुटकु । ना राम विभुनि कोपाग्नि येमिटिकि
नीयनलमु सालदे ?" यनु माड्कि । बायक लंक गाल्पंग जोच्चुटयु
ननलुडु दरिकोनि यंदंद येचि । विनुवीथि दाकि दिग्विवरमुल्
निंडे । ४८३०
नायग्नि बडबाग्नि यै धूम पटलि । तोयमै मिन्नंदि तोयधि बोले;
विस्मयंबुग माणि विततुलु सेंदर । भस्मंबुगा गाले ब्रासाद ततुलु;

अतः (रावण का) समस्त सत्त्व घट गया। त्रिदशारि (रावण) अब युद्ध करना भी नहीं चाहता। हे पंकजहितवंशवाले ! आज रात को लंका को जला देने के लिए गोलांगूल-बल (वानर-सेना) को भेजो।" यह बात सुनकर समस्त कपि मिलकर 'इनमंडल कब अस्त होगा' (ऐसा) सोचते,

वानरों का लंका जलाना

—चाहते रहने पर तरुणि (सूर्य) का अस्त होना और अन्धकार के अधिक निबिड होकर व्याप्त होने पर, तब कपिवीर अधिक रोष से फूलकर, धैर्य से उग्र हो, विजृंभित हो, नाचते हुए जलती हुई लूकाओं को पकड़कर, बड़े वेग से छलांग भरकर, पारकर, झट लंका को घेरकर, उन द्वारों पर रहनेवालों के (द्वारपालकों के) अति भय से भाग उठने पर, लंका में घुस गये। "उस रावण की पुरी को अतिशायता से जलाने के लिए उस रामविभु की क्या आवश्यकता है ? यह अनल पर्याप्त नहीं है क्या ?" मानों इस प्रकार लंका को जलाने लगे। अनल लगकर जहाँ-तहाँ विजृंभित हो, विनुवीथि (आकाश) को छूकर दिक्-विवरों में भर गया ॥ ४८३० ॥

—वह अग्नि बडवाग्नि होकर, धूमपटल के जल रूप होने पर आकाश तक फैलकर, तोयधि (समुद्र) के समान लगा। आश्चर्यप्रद रूप से

पोंडि पोंडिगा गालि पोंडवेल्ल नडगि। पुडमि गंपिप गोपुरमुलु गूलें;
ग्रक्कुन मंटलुग्रंबुगा नेंगय। नक्कजंबुग गालि यट्टळ्ळु व्रालें;
महनीय कांचन मंटपंबुलुनु। बहु-रत्नमय-गृह-पंक्तुलु गालें;
निंडिन सोंम्मुलु निंडि नट्लुंड। भंडारगृहमुलु भस्मंबु लय्यें;
वेंललिडगा रानि विविधांबरमुलु। दलप बेंक्कैन गंध द्रव्यमुलुनु
बहुविध रत्न कंबळ चयंबुलुनु। महनीय मरकत मौक्तिकादुलुनु
नगरु कुंकुम मलयज घनसार। मृगमदंबादिगा मेलि वस्तुवुलु
दऱगनि बहुविध धान्य-रासुलुनु। मऱियुनु गलिगिन महित वस्तुवुलु ४८४०

गड्डु नोंप्पु करि तुरंगमुल पक्कॆरलु। नेंड-नेंड ब्रोवुगा निडिनट्टि जोंळ्ळु
दोंरल ननेक वस्तुवुलु दैत्युलकु। गरकरि जित्तमुल् गंदंग गालें;
दडयक पैंडि कत्तळमुलु दोंडिगि। वडि नायुधमुलु दुर्वारुलै पूनि
'कपुल जंपेंद' मनि कडुगेंडु वारि। गपुलपै बऱतेंचि कदिसिन वारि
बोंलतुलतो सुखंबुन नुन्न वारि। दोंलगंग नेरक तूगेंडु वारि
बोंलिप गड्डुनिद्र पोयेंडु वारि। बालुर गोंनि भीति बाऱेंडु वारि
नालुगु देंसलकु नलि नेगुवारि। जाल रोदनमुलु सल्पेंडु वारि

मणि-विततियों के बिखर जाने पर, प्रासादततियों को भस्मकर जल उठा। चूर-चूर हो जलकर, औन्नत्य खोकर, पृथ्वी को कम्पित करते हुए गोपुर ढह गिरे। झट ज्वालाओं के उग्रता से फैलने पर, आश्चर्यप्रद रूप से जलकर मकान गिर पड़े। महनीय-कांचन-मंडप तथा बहुरत्नमय गृह-पंक्तियाँ जल गईं। भूरी सामग्री से भरे रहकर, भांडार-गृह भस्म हो गए। अमूल्य विविध-अम्बर (वस्त्र), सोचने पर अत्यधिक गंध-द्रव्य, बहुविधि-रत्न-कंबल (कालीन)-चय (समूह), महनीय मरकत-मौक्तिक-आदि, और अगरु-कुंकुम-मलयज (चन्दन), घनसार (कर्पूर), मृगमद (कस्तूरि) आदि श्रेष्ठ वस्तुएँ, अक्षय-बहुविध-धान्य-राशियाँ, और भी महित वस्तुएँ, ।। ८४४० ।।

—अधिक शोभित करि (और) तुरंगों के ज़ीन (झूलें), जहाँ-तहाँ राशियों में रखे कवच, और भी अनेक वस्तुएँ क्रूरता से दैत्यों के चित्तों को पीडित करती हुई जल गईं। अविलम्ब स्वर्ण-कवच पहनकर, झट दुर्निवार हो आयुध धारणकर, 'कपियों को मार डालेंगे' ऐसा कहते यत्न करनेवालों, (शय्याओं से) न हट सक ऊँघनेवालों, अधिक निद्रा में रत रहनेवालों, बच्चों को ले भय से भागनेवालों, चौतरफ़ क्रम से भागनेवालों, अधिक रोदन

विड्वक धनमुलु वेंडलंग बेट्टि । कडु संभ्रमंबुन गदिसेडु वारि
द्रोवलु गानक धूमंबु चेत । नावुलिंचुचु वडि नलदुरु वारि
नार्पंग नुरु मंदिराग्रंबु लेक्कि । नेर्पुन मरि दिग नेरनि वारि४८५०
गूडि निव्वेर गंदि गुमुरुलु गट्टि । वाड वाडल यंदु वनरेडु वारि
नप्पुडु चूड गालग्नि चंदमुन । निप्पुलु मंटलु नेरय नप्पुरमु
कालुचु नंदंद कडु रभसमुन । गालिचे नग्नि पेक्कंडू राक्षसुल;
ललनल मणि मेखलारवंबुलुनु । गलय जेन्नोंदु कंकण रवंबुलुनु
बोलुपारु रत्न नूपुर रवंबुलुनु । जेलगेंडु नाविपंची रवंबुलुनु
सुरुचिर मधुर वचोरवंबुलुनु । नरुदैन नृत्तगीतारवंबुलुनु
गर्रमिपु गुलुकु केकारवंबुलुनु । जरियिंचु चुंडु हंसल रवंबुलुनु
सोंपारु पंजर शुकरवंबुलुनु । निपारुटेंतयु निललोन गलिपि
सललितंबैनट्टि चंद्रिककंटे । देलुपुन नोंदिन दीधितुल् दरिगि
प्रणुतिकि नेक्किन पद्मरागादि । मणुलचे नोप्पिन महिमलु वासि
४८६०
कालेडि रवमुल गप्पेडि पोगल । व्रीलि पेल्लेगसेडि विस्फुलिंगमुल
नालंक लोपलि हर्म्यबुलेल्ल । जाल भीषणमुगा समसे नन्नियुनु

करनेवालों, न छोड़कर (घर के भीतर की) संपत्ति को बाहर निकालकर अति संभ्रम से नियरानेवालों, धूप के कारण मार्ग न पाकर, जंभाई लेते हुए झट दग्ध होनेवालों, (अग्नि को) बुझाने के लिए उरु-मन्दिरों के अग्र भागों पर चढ़कर, चतुरता से फिर उतर न सकनेवालों, ॥ ४८५० ॥

—चकित हो झुंड बाँधकर मुहल्ले-मुहल्ले में दुखी होनेवालों, (ऐसे राक्षसों से युक्त लंका नगर को) तब देखने में कालाग्नि के समान, अंगारे और ज्वालाओं के व्याप्त होने पर, उस पुर को जलाते हुए, अतिरभस (आटोप) से अग्नि ने कई राक्षसों को जला दिया। ललनाओं के मणि-मेखलाओं की ध्वनियाँ, शोभा से विराजित कंकण-रव, शोभित रत्ननूपरों के रव, परिव्याप्त विपंची-रव, सुरुचिर-मधुर-वचनों के रव, विरल (अद्वितीय) नृत्त-गीतों के रव, अधिक मनोज्ञ बने केका (मयूर-) रव, विहार करते हंसों के रव, शोभित पंजरस्थ शुकों के रव, (आदि की) अधिक शोभा को मिट्टी में मिलाकर, सललित चन्द्रिका की अपेक्षा श्वेत बनी दीधितियों (काँतियों) को खोकर, प्रसिद्ध बनी पद्मराग आदि मणियों से शोभित महत्त्व को खोकर, ॥ ४८६० ॥

—जलने की ध्वनियों, व्याप्त होनेवाले धूम्रों, टूटकर अधिक बिखरने वाले विस्फुलिंगों से (युक्त हो) लंका के भीतर के सभी हर्म्यों (भवनों)

गान सुखंबेल्ल ग्रागि नीरैरि । मानिनीमणु लभिमानंबु दूलि;
चंड तरंबैन शब्दंबुतोड । मंडुचु नुंडेडि मंटल तोड
नेरपैन तोरण निकरंबु लोप्पे । मेरुगुल वेलुगोंदु मेघंबु लनग;
विनुवारि गुंडेलु वीनुलु बगुल । ननयंबु बेट्टुगा ना पुरंबंदु
दरमिडि यंदंद दंदह्यमान । वरवधूरोदनंबुलु विन वच्चें;
गालि कालनि तम कट्टुलु द्रेंव्व । नीलिगि विडिवड नेरनि करुल
हयमुल क्रंदुन नालंक युंडे । रयमुन मुनु रघुरामु बाणाग्नि
दलकोनि जलचर ततुलु सम्मर्द । मुल ब्रघोषिंचु समुद्रंबु वोलें; ४८७०
बारेडु वारिनि बरतेंचुवारि । गूरिन वगलतो गुंदेडु वारि
नोंदिगेंडु वारिनि नोक कोंत गालि । विदिरिंचि कोनुचुनु वेडलेडु वारि
लंघिंचु वारि विलापिंचु वारि । संघंबुलै नीरु सल्लेडु वारि
बट्टि यामंटलो बड द्रोसि त्रोसि । नेट्टन नार्तुरु नेरयंग गपुलु;
अट्टु लंक विकलत नंद राघवुडु । पटुतर कोदंड पाणियै कदिसि
त्रिपुरमुल् साधिंप द्रिणयनु डलिगि । विपुल पिनाकंबु वीक म्रोयिंचु
करणि निर्विक्र विक्रम शालि रामु । डुरुतर ज्याघोष मोनरिंचुटयुनु
वसुधा तलंबुन वडि जुक्क लुरिलें; । वसुमति गंपिंचें; वार्धुलु गलगें;

के अति भीषणता से नष्ट होने पर, मानिनीमणियाँ (मानवती स्त्रियाँ), अभिमान के नष्ट होने पर राख बन गईं। चंडतर ध्वनि के साथ बलनेवाली ज्वालाओं के साथ विशाल तोरण-निकर ऐसा शोभित हुआ मानों वे चपलाओं से युक्त प्रकाशित मेघ हों। सुननेवालों के दिल और कान फट जाएँ, ऐसा लगातार भीकरता से उस पुर से क्रम से जहाँ-तहाँ (सर्वत्र) दंदह्यमान (जल रहे) वर-वधुओं के रोदन सुनाई पड़े। जले-अधजले (पूरी तरह से न जले) अपने बंधनों से मुक्त न हो पानेवाले करि और हयों के क्रंदनों से वह लंका युक्त रही, मानों शीघ्रगति से पूर्व में रघुराम की बाणाग्नि से परेशान जलचरततियों की भीड़ से गरजनेवाला समुद्र हो ॥ ४८७० ॥

—भागनेवालों, आनेवालों, अधिक वेदनाओं से व्यथित होनेवालों, सिकुड़नेवालों, कुछ हवा को हटाते हुए निकल पड़नेवालों, लाँघनेवालों, विलाप करनेवालों, झुंड बन पानी बिखेरनेवालों, (ऐसे राक्षसों को) पकड़कर उस अग्नि में ढकेल-ढकेलकर भीकरता से कपि सिंहनाद कर उठे। उस प्रकार लंका के विकल होने पर, राघव ने पटुतर-कोदंडपाणी हो, नियराकर, त्रिपुरों को जीतने के लिए त्रिनयन (शिव) के रुष्ट होकर, विपुल पिनाक के गर्व से मुखरित करने के समान, निर्वक्र विक्रमशाली राम ने उरुतर-ज्या-घोष

देस दर्पिरिन शशुलु; दिविजाद्रि यौरगे; । दैसल संधुलु त्रीले;
दिक्करुलु गूले;
त्रसमाक्षु डति विस्मयंबंदे, भूत । विसरंबु घूर्णिल्ले; विधि तल्ल-
डिल्ले; ४८८०

रयमुन रोद्रोंतराळंबु म्रोसे । भयमंदि रैंतयु बौलस्त्यु लेल्ल;
गोदंड रवमु रक्षोभटसिंह । नादंबु वीर वानरुल यार्पुलुनु
दिक्कु लौक्कट निंडे; दिविजारि पुरमु । दिक्कु गोपिचुचु दीव्रवेगमुन
गैलास शिखरंबु करणि जेन्नोंदु । नालंक गोपुरं बैदु बाणमुल
वडि नूरु तुनियलै वसुधपै गूल । वडनेसि मरियुनु बहु सायकमुल
तेसें गेहमुलपै; नेसें सौधमुल; । नेसें देरुलमीद; नेयुट सूचि
याराक्षसुलु पोरि कायत्त पडग । नाराव्रि वर्तिचें नति घोर लील;
नप्पुडु सुग्रीवु डखिल वानरुल । दप्पक चूचि युदग्रुडै पलिकें;
"लावु नोप्पारंग लंक वाकिडल । गावलि युंडु राक्षसु डव्वडैन
वेडलिन जंपुडु; वेरचिति रेनि । गडु दप्पु; सैरिप गपि वीरुलार!"
४८९०

क्रिया। (करने पर) झट वसुधातल पर नक्षत्र लुढक पड़े, वसुमति कंपित हुई, वारिधियाँ आलोड़ित हुईं, इन (सूर्य) और शशि दिशाओं में भटके गए, दिविज-अद्रि झुक गई, दिशाओं की संधियाँ टूट गईं, दिक्-करियाँ गिर पड़ीं, असमाक्ष (शिव) अति चकित हो गया, भूतसमूह घूर्णित हुआ, विधि (ब्रह्मा) विकल हो गया, ।। ४८८० ।।

—शीघ्रगति से रोदोन्तराल गूँज उठा, समस्त पौलस्त्य (रावण आदि राक्षस) अत्यधिक भीत हुए। कोदंड की ध्वनि, रक्षोभट-सिंहनाद, (तथा) वीर वानरों के गर्जन एक साथ दिशाओं में भर गए। दिविज-अरि (राक्षस) के पुर की ओर क्रुद्ध हो तीव्रवेग से, कैलास शिखर के समान सुशोभित उस लंका के गोपुर को पाँच बाणों से, झट सौ खंड कर वसुधा पर गिरा दिया और बहु-सायकों को गृहों पर चलाया, सौधों पर चलाया, रथों पर चलाया। (बाण) डालते (चलाते) देखकर राक्षसों के युद्ध के लिए सन्नद्ध होने पर, वह रात अतिघोर-लीला से प्रवर्तित हुई। तब सुग्रीव ने अखिल वानरों को अवश्य देखकर, उदग्र हो कहा—"सामर्थ्य के शोभित होने पर लंका के द्वारों की रक्षा करनेवाला कोई राक्षस (बाहर) निकल पड़े तो (उसे) मार डालो। भीत हो जाना बड़ा अपराध है। हे कपिवीरो! (उसे) सहन नहीं करूँगा" ।। ४८९० ।।

यनवुड्डु गपिवीरु लंदरु पेंचि । कनलुचु गुजमुलु घन शैलमुलुनु
जारु भीषण रणोत्साहुलै पूनि । वारक यक्कोट वाकिड्ल नुंडि
दर्पिंचि यार्चिन दरुचरावळुल । यार्पुलु सैरिप कसुर वल्लभुड्डु

कुंभ निकुंभुलु युद्धमुनकु वेडलुट

कुंभकर्णुनि कोडुकुल ननि कनिचें । गुंभ निकुंभुल घोर विक्रमुल;
बनिचें वेंडियुनु गंपनुनि ब्रजंघु । ननिकि दोडुग शोणिताक्षु यूपाक्षु;
नाराक्षसुलुनु गजाश्वरथंबु । लारसि युद्धति नडरि तो नडव
बरिघ गदा प्रास पट्टिस शूल । करवाल कुंत मुद्गर भिंडिवाल
शरशरासनमु लुज्ज्वल भंगि दाल्चि । गुरु शक्ति दानव कोट्टुलु नडव
जारु पताका निचयमुलु ग्राल । भूरि भूषण दीप्तिपुंजमुल् वेलुग
नधिक मैनट्टि तूर्यंबुलु म्रोय । गुधरंबु लगल दिक्कुलु निंडनार्चि
४९००
पखवडि गल्पांत पवन संघमुलु । दरमिडि कालांबुदंबुल दाकि
विरुच्चु तेरंगुन वीडेल्ल गाल्चि । यरिमुरि विहरिंचु नगचरावळुल
नुरुवडि दाकि महोग्रुलै निलिचि । तेरलिंचि नोंचि युदीर्ण विक्रमुलु

—कहने पर समस्त कपिवीर विजृंभित हो, क्रुद्ध होते हुए, कुज (वृक्ष) (तथा) घन-शैलों से चारु-भीषण-रण-उत्साह से युक्त हो, निरन्तर उस दुर्ग के द्वारों पर रहकर, दर्पित हो सिंहनाद करने लगे। तरुचर-समूह के सिंहनादों को सह न सक असुरवल्लभ ने—

कुम्भ-निकुंभ का युद्ध के लिए निकल पड़ना

—कुम्भकर्ण के पुत्र, घोर विक्रमवाले कुम्भ (और) निकुम्भ को युद्ध के लिए भेजा। (उनके अतिरिक्त) फिर कम्पन, प्रजंघ, शोणिताक्ष, यूपाक्ष को (उनके) साथ युद्ध में भेजा। वे राक्षस गज, अश्व, रथों के औद्धत्य के औन्नत्य से चल पड़े। परिघा, गदा, प्रास, पट्टिस, शूल, करवाल, कुंत, मुद्गर, भिंडिवाल, शर-शरासन (आदि) उज्ज्वलता से धारणकर, गुरु-शक्ति के साथ दानव-समूह चल पड़ा। चारु-पताका-निचयों के प्रकाशित होने पर भूरि-भूषणों के दीप्ति-पुंजों के दीप्त होने पर, अधिक (संख्या में) तूर्यों के बज उठने पर, कुधरों (पर्वतों) के विदीर्ण होने पर, दिशाओं को गर्जनाओं से भरकर, ॥ ४९०० ॥

—क्रम से कल्पांत-पवन-संघों के अतीव रूप से कालांबुदों से टकराकर (उन्हें) तोड़ (विखरा) देने के समान, समस्त गृहों को जलाकर, शीघ्रगति

वाकिड्ल यंदु दुर्वारुलै युन्न । याकपिसेनल नंदंद तोलि
यालंक वेंडलिप नगचरसेन । लोलि वीगुट सूचि 'योडकुं' डनुचु
नुरु बाहु सत्त्वपयोधुलै पेर्चि । हरि रोम केसरु लादिगा गल्गु
वानरु लादैत्य वर्गंबु तोड । मानक रोष समग्रुलै कदिसि
तरुलुनु गिरुलुनु दरुचुगा वैव । गरवालमुल नुरुगदल शूलमुल
बरिघ पट्टिसभिंडिवाल चक्रादि । वर शस्त्रमुल नोंचि वालिन नंत
वारु नखंबुल वक्षस्थलमुलु । जीरियु गर्ण नासिक लोलि द्रेंव्व४९१०
गडिमिमै बंड्लनु गऱचियु, दललु । पिडिकिळ्ळ बोडिचियु बेकोंनि यप्पु
डोक वानरुडु वच्चि योक दैत्यु बोडव । नोक दानवुडु वानि नुद्धृति बोडुचु;
नोक राक्षसुडु वच्चि योककपि जंप । नोककपि या दैत्यु नुग्रत जंपु;
नोक कपि सनुदेंचि योक दैत्यु बट्ट । नोक दैत्यु डाकपि नुरुवडि बट्टु;
नोक दैत्यु डोक कपि 'युद्धमि'म्मनिन । नोक कपि वानितो युद्धंबु सेयु
नेडपक येड्गुरु नेनमंड्रु गूडि । पिडिकिळ्ळ नोक्कनि बेरणगिप
नंदिदु गूलुदु रसुरुलु गपुलु; । नंदरु नुग्रुलै यार्चुचु बेर्चि

से विहार करनेवाले नगचर-समूहों पर अविलम्ब आक्रमण कर, महोग्र हो टिककर, पीछे ढकेल, दबाकर, उदीर्ण विक्रमवाले बन, (दुर्ग) द्वारों पर दुर्निवार बने हुए कपि-सेनाओं को जहाँ-तहाँ भगाकर, उस लंका से निकाल (भगा) दिया। नगचर-सेनाओं के क्रम से हटते देख 'मत डरो' कहते हुए उरु-बाहुबलसत्त्व के पयोधि बन, विजृंभित हो, हरिरोम, केसरी आदि वानर, उस दैत्यवर्ग से रोषसमग्र हो भिड़ गए। (और) तरु और गिरि अधिकता से फेंके तो (राक्षस) करवालों, उरु-गदाओं, शूलों, परिघाओं, पट्टिसों, भिंडिवालों, चक्रों आदि वर शस्त्रों से उन्हें रोककर प्रकाशित हुए। तब वे नखों से (राक्षसों के) वक्षस्थलों को चीरकर, कान और नासिकाएँ कट जाएँ, ॥ ४९१० ॥

—ऐसा साहस से दाँतों से कुतरकर, सिरों पर मुष्टिघात करने लगे। तब एक वानर के आकर एक दैत्य पर प्रहार करने पर, एक दानव उसे (वानर को) औद्धत्य से मारता। एक राक्षस के आकर एक कपि को मार डालने पर, एक कपि उस दैत्य को उग्रता से मार डालता। एक कपि के आकर एक दैत्य को पकड़ने पर, एक दैत्य अतिशीघ्र उस कपि को पकड़ लेता। एक कपि से 'युद्ध हो' (लड़ने के लिए आओ) कहता तो एक कपि उससे युद्ध करता। न छोड़कर सात-आठ लोग मिलकर एक को मुष्टियों से मार डालते। (इस प्रकार) इस ओर और उस ओर

यिरुवागु बोरंग निर्तितलैन। तरुमहीधर शृंग तरुचरांगमुल
गरिहयदनुजनिकाय कायमुल। वरशस्त्रमुल रणोर्वर घोरमय्ये;
गडिमिमै नप्पु डंगदुनितो बेर्चि। कडगि कंपनु डुग्र गदयेत्ति वैचे; ४९२०

नंगदुंडुनु नोच्चि यंतलो देलिसि। तुंग शैलमुन दैत्युनि व्रेयुटयुनु
नाकंपनुडु चूर्णमै नेल गलिसे। नाकपि-नायकु डार्चुचु नुंड;
नतडु सच्चिन शोणिताक्षुंडु गिनिसि। गति दर्प नरद मंगदुमीद बरपि
यक्षतास्त्रमु लेय नडरि यंगदुडु। राक्षसुडुन्न या रथमुपै कुरिकि
विल्लु द्रुंचुटयुनु वैस नोड्ड नम्मु। नुल्लसितासियु नुग्रत गोनुचु
नाकाशमुनकु नय्यसुर लंघिप। नाकपिवीरुंडु नतनितो नेगसि
याराक्षसुनि चेति यडिदबु बुच्चि। याराक्षसुनि व्रेय नतडु मूछिल्ले;
नंतकुडै राक्षसावळि दुनुम। नंतलोनने शोणिताक्षुंडु देलिसि
गद बुच्चिकोनुचु नंगदु मीद बार। गदिसे नप्पुडु तोडुगा व्रजवुडु;
यूपाक्षुडुनुगूड नोगि राग जूचि। येपुन द्विविदुडु नेचि मैंदुडु ४९३०

असुर और कपि मर जाते। सभी उग्र हो सिंहनाद करते हुए विजृंभित हो दोनों पक्षवालों के लड़ने पर, अत्यधिक तरु-महीधर-शृंग तथा तरुचर-अंग और करि-हय-दनुज-निकाय के काय और वर-शस्त्रों से रणभूमि घोर (भयंकर) हुई। साहस से विजृंभित तब कंपन ने लगकर उग्र गदा उठाकर अंगद पर डाल दिया॥ ४९२०॥

अंगद भी पीड़ित होकर, इतने में (शीघ्र) होश में आकर, तुंग-शैल लाकर दैत्य पर डाल दिया। उस कपिनायक के सिंहनाद करते समय अकंपन चूर्ण हो मिट्टी में मिल गया। उसके मरने पर शोणिताक्ष ने क्रुद्ध हो गतिहीन हो (अपने) रथ को अंगद पर चलाकर, अक्षत-अस्त्र चलाए। उत्कर्षित हो अंगद ने राक्षस के रथ पर छलांग भरकर, धनुष तोड़ दिया, तो झट मेखला से उल्लसित-असि को उग्रता से लेकर, आकाश की ओर वह असुर उछल पड़ा। वह कपिवीर भी उसी के साथ उछलकर, उस राक्षस के हाथ के खड्ग को लेकर (उसी से) राक्षस को दे मारा, तो वह मूर्च्छित हो गया। (अंगद) अंतक (यम) के समान राक्षसावली का संहार करने पर, इतने में ही शोणिताक्ष ने होश में आकर, गदा लेकर अंगद पर आक्रमण किया, तो प्रजंघ ने उसका साथ दिया। क्रम से यूपाक्ष को भी आते देख, दर्प से द्विविद (और) विजृंभित हो मैन्द॥ ४९३०॥

नायंगदुनकु दोडै कूडुकोनिरि; । आ यार्वुरकु घोरमय्ये रणंबु;
नप्पुडु वानरुलगमुलु गुरिय । जप्परिपुचुनु प्रजंघुडु दुंचे;
मुरियु ता मुव्वुरु मर्कटेश्वरुलु । दरुचुगा गिरुलुनु दरुलुनु नेत्ति;
करिरथाश्वमुलपै गडु बेट्टु ब्रेय । नरुदुगा नडुम यूपाक्षुंडु द्रुंचे;
विन विस्मयंबुगा द्विविद मैंदुलुनु । बेनगोनि वृक्षमुल् पेरिकि वैचुटयु
नवि यन्नियुनु शोणिताक्षुंडु नडुम । गविसि चूर्णमुलुगा गदगोनि व्रेसे;
गलकल ध्वनि योप्प गरवाल मेत्ति । जळिपिचु कोनुचु प्रजंघुंडु गदिय
मानैन योक नल्ल मद्दि म्रानेत्ति । वानिपै नडरिंचि वारक मरियु
बिडिकिट वृक्षंबु बेट्टुगा बोडुव । नडिदंबु वैचि यय्यसुर गोपिंचि
पिडुगुन कैनयैन पिडिकिट बोडिचे; । बोडिचिन वेस मूर्छ बोंदियु
दलिसि ४९४०

समधिक मुष्टि प्रजंघु मैंदुंडु । तमकिंचि पोडिचिन धरणिपै गूले;
बृथिविपै नट्टु तन पिनतंडि वडुट । प्रथितंबुगा जूचि रथ मट्टु डिगि;
यडिदंबु दाल्चि यूपाक्षुंडु नडव । विडुवनि यलुकतो द्विविदुंडु दाकि
वरमुष्टि चे वानि वक्षंबु बोडिचि । गुरु सत्त्वुडै पट्टुकोनुटयु नप्पु

—उस अंगद के सहायक हो जमा हो गए। उन छः लोगों में भयंकर रण हुआ। तब वानरों के पर्वत बरसाने पर, चुबलाते हुए प्रजंघ ने (उन्हें) तोड़ दिया। फिर उन तीनों मर्कटेश्वरों के अधिकता से गिरियों और तरुओं को उठाकर, करि, रथ अश्वों पर भीकरता से डालने पर, विरल रूप से बीच में ही (उन्हें) यूपाक्ष ने तोड़ दिया। सुनने में आश्चर्यप्रद रूप से द्विविद और मैंद के खींचातानी करके वृक्ष उखाड़कर डालने पर, उन सबको शोणिताक्ष ने बीच में गदा लेकर एक साथ चूर्ण कर दिया। कलकल ध्वनि के शोभित होने पर करवाल उठाकर, (उसे) चमकाते हुए प्रजंघ के नियराने पर, श्रेष्ठ काला शाल वृक्ष उठाकर, उत्कंपित हो उस पर फेंककर मुष्टि से वृक्ष पर भीकरता से प्रहार करने पर, उस असुर ने क्रुद्ध हो तलवार चलाकर और अशनि-सम मुष्टि से प्रहार किया। प्रहार करने पर झट मूर्च्छित होकर भी होश में आकर, ॥ ४९४० ॥

—समधिक मुष्टि से प्रजंघ को मैन्द ने चाहकर प्रहार किया तो वह धरणी पर गिर गया। इस प्रकार पृथ्वी पर अपने चाचा के प्रथित रूप से गिरते देखकर उधर रथ से उतरकर, खड्ग धारणकर यूपाक्ष चल पड़ा तो अनारत क्रोध से द्विविद के (उसका) सामना कर, वर-मुष्टि से वक्ष पर प्रहार कर, गुरुसत्त्व से पकड़ लेने पर, तब उसके अनुज शोणिताक्ष ने आकर, विततबल से शोभित हो, द्विविद की छाती पर मुष्टि से पीड़ित कर, अधिक

डतनि तम्मुडु शोणिताक्षुंडु वच्चि । वितत बलं बोप्प द्विविदुनि रोम्मु
बिडिकिट नोप्पिंचि पेनुमूर्छ बुच्चि । विडिपिंचुकोनि पोये वेग यूपाक्षु;
देलिसि मैंदुनि तोड द्विविदुंडु गूडि । सोलवक यूपाक्ष शोणिताक्षुलनु
नट्टु ताकि वारितो ननि सेयुनपुडु । चटुलत द्विविदु डाश्चर्यंबु गाग
नलमि युद्धति शोणिताक्षुनि बट्टि । यिलवेंचि प्रामें रूपेर्डपकुंड;
नडरि मैंदुंडु यूपाक्षुनि गिट्टि । बेडिदंबुगा दन विडिकिट बोडिचि ४९५०
चलमुन धीरुडै चंपे नुग्रमुग । नलिय नेम्मुलु मेनु नलि नलि गाग;
निल मीद गपुलचे निट्टि चंदमुन । नलुवुरु दानव नाथुलु वडिन
नेपऱि राक्षस लेल्लनु बऱव । गोपिंचि यप्पुडु कुंभुंडु वारि

कुंभ, निकुंभुल युद्धमु

'वेऱवकुं' डनि तन विंटि लावोप्प । मेरुगुटम्मुलतोड मेरुगुल तोडि
सुरचाप मन जाल शोभिल्लु विल्लु । परग ब्रत्यालीढ पादुडै निल्चि
तेंगगोनि येयुडु द्विविदुंडु भूमि । नगमु कैवडि गूलें नति घोर लील;
मुंदऱ ननुगु दम्मुनि पाटु जूचि । यंदंद मैंदुंडु नसम वेगमुन

मूर्च्छित कर दिया और झट यूपाक्ष को छुड़ा ले गया। होश में आकर मैन्द के साथ द्विविद (दोनों) मिलकर, न थककर यूपाक्ष और शोणिताक्ष का सामना कर उनसे जूझते रहे। (उस समय) द्विविद ने आश्चर्यप्रद रूप से झट औद्धत्य से शोणिताक्ष को पकड़, धरती पर डाल ऐसा रौंद दिया जिससे उसका रूप ही नष्ट हो गया। उत्कर्षित हो मैन्द ने यूपाक्ष के निकट जा भीकरता से अपनी मुष्टि से प्रहार कर, ॥ ४९५० ॥

—हठ से धीर बन उग्रता से उसको मार डाला जिससे उसकी हड्डियाँ तथा शरीर चूर-चूर हो गये। पृथ्वी पर कपियों से इस प्रकार चारों दानवनाथों के गिरने पर, दर्प को खोकर समस्त राक्षसों के भाग उठने पर, क्रुद्ध हो तब कुम्भ ने उनसे,

कुंभ और निकुंभ का युद्ध

—'मत डरो' कहते अपने धनुष की सामर्थ्य से शोभित हो, प्रकाशमान बाण की कांतियों से सुरचाप (इन्द्र धनुष) सम अधिक शोभित धनुष को पकड़, प्रत्यालीढ़ पाद हो खड़े होकर, ज्या खींचकर (बाण) चलाने पर, द्विविद भयंकर रूप से नग (पर्वत) के समान गिर पड़ा। पहले प्रिय अनुज के पतन को देख, जहाँ-तहाँ से मैन्द ने असम-वेग से कुंभ पर एक पर्वत डाल दिया। कुंभ के सात बाणों से कुधर (पर्वत) को तोड़कर,

गुंभुनिपै नोक्क कोंड वैचुटंयु । गुंभु डेनम्मुल गुधरंबु द्रुंचि
मर्रियु नोक्कम्मुन मैंदुनि नेय । नोर्रगे नय्यगचरुंडुर्वर मीद
धरमीद नी गति दन मेनमाम । लिरुवुरु गूलिन नेचि यंगदुडु ४९६०
कुंभुनिपै वैचे घोर भूधरमु । गुंभुडेदम्मुल गुधरंबु द्रुंचि
नेर्रि बाणमुलु मूट निटलम्मु नेसि । मर्रि पेक्कु शरमुल मर्मंबु लेय
नेरियुचु गुंभुपै नेगसि यंगदुडु । तरुवेत्तिवैचे; नत्तरुवुनु द्रुंचि
याकुंभुडंगदु नंददं मर्रियु । भीकर बाण संपीडितु जेय
नतडु मूर्छिल्लिन नारामुकडकु । नति वेगमुन वानरावळि पार्रि
यंतयु जेप्पिन नधिपति जांब- । वंतु डादिग गल वनचरोत्तमुल
बनिचिन वारलु बादप शिलल । दनुजुल नोंचुचु दरुम गुंभुंडु
वारि ननेक तीव्र प्रकांडमुल । वारक नोंप्पिंचि वारि वारिंचे;
नप्पुडु सुग्रीवु डाकपिवरुल । नप्परुसुन बड्डु यंगदु जूचि
कोपंबु मुडिवड गुंभुनि जूचि । येपारगा जौच्चि येन्न बेक्कन ४९७०
घन शैलमुलु नश्वकर्ण वृक्षमुलु । वनचरु लार्वग वैचि पेल्लार्चे;
नवि यन्नियुनु गुंभु डंतलो द्रुंचि । रविजुनि बेक्कु मार्गणमुल नोंप;

और एक बाण को मैन्द पर चलाने पर, वह अगचर वीर भूमि पर गिर पड़ा। इस प्रकार अपने दोनों मातुलों को धरा पर गिरते देख, विजृंभित हो अंगद ने, ॥ ४९६० ॥

—कुम्भ पर घोर-भूधर को डाल दिया। कुम्भ ने पांच बाणों से कुधर को तोड़कर, तीन पैने बाण निटल पर चलाकर, और अनेक शर मर्मस्थानों पर चलाये। तप्त होते हुए अंगद ने कुम्भ पर उछलकर तरु उठाकर डाल दिया। उस तरु को तोड़कर, कुम्भ के अंगद को सर्वत्र भीकर बाणों से संपीडित कर देने पर, वह मूर्च्छित हो गया। तब वानरावली ने अतिवेग से उस राम के पास जाकर सब कुछ बता दिया। (कहने पर) अधिपति (राजा राम) ने जांबवान आदि वनचरोत्तमों को भेजा। वे पादप और शिलाओं से दनुजों को पीड़ित करते हुए, उनका पीछा करने पर कुम्भ ने उन्हें अनेक तीव्र प्रकांडों से अविलम्ब पीड़ित कर उनका निवारण कर दिया। तब सुग्रीव ने उन कपिवरों तथा परुषता से गिरे अंगद को देखकर, क्रोध के बढ़ने पर, कुम्भ को देखकर, उत्कर्ष से, गिनती में अधिक (असंख्य)— ॥ ४९७० ॥

—महाशैल, अश्वकर्ण वृक्ष फेंककर अधिक सिंहनाद किया, जिससे वनचरों ने भी सिंहनाद किया। उन सबको झट से कुम्भ ने तोड़ दिया और

सुक्ककातनि विल्लु सुग्रीवु डौंडिसि। यक्कजंबुग वुच्चि यटु त्रुंचुटयुनु
दंतंबु दुनिमिन दरिमि पै वच्चु। दंति चंदंबुन दरिमि कुंभुंडु
कडु रोषमुन मंडि कडगि सुग्रीवु। बडवैतुनननि पारि पट्टुकोन्नप्पु
डिनजुंडु गुंभुंडु निभमुलु रेंडु। पेनगिन कैवडि बेनगि रुद्धतिनि
गर लाघवमु लोप्प घन शक्ति मेरसि। चरण घट्टनल भूस्थलमु ग्रक्कदल
बोगल चंदमुन नूर्पुलु ग्रम्मुचुंड। भिगिलिन ताकुल मिन्नेल्ल ब्रगुल;
नप्पुडु सुग्रीवु डाकुंभु बट्टि। त्रिप्पि यंबुधि वैचे देवतलावं;
दनुजु डावारिधितलमु घोषंबु। दनरार बडियें मंदर शैल मनग; ४९८०
बडियु नादनुजुंडु भानुजु जेर। गडक तोडुत महोग्रत नेगुदेंचि
बेडिदंबुगा रोम्मु बिडिकिट बोडुव। नेडयक व्रस्सि यायेम्मुलु दाक
गडिदि वज्रमु दाक गनकाद्रि वेडलु। मिडुगुरुलो यन मिडुगुरु लेगसें;
दानिकि गोपिंचि तरणि-नंदनुडु। दानवाधमु नुरस्स्थल मार जूचि
यच्चेरुवुग मुष्टि नमरिंचि पोडुव। जच्चे नुद्भट बाहु सत्त्वुंडु दूलि;

रविज को अनेक मार्गणों (बाणों) से पीड़ित करने पर, कमज़ोर न बनकर सुग्रीव ने उसके धनुष को आश्चर्यप्रद रूप से, झपट पकड़कर उसे तोड़ दिया। दाँत टूट जाने पर पीछा कर, आक्रमण करनेवाले दंति (गज), के समान, भगाकर कुम्भ ने अतिरोष से क्रुद्ध होकर, सप्रयत्न 'सुग्रीव को गिरा दूँगा' कह दौड़कर (सुग्रीव को) पकड़ लिया। इनज और कुंभ दो हाथियों के जूझने के समान औद्धत्य से जूझ पड़े। कर-लाघव से शोभित होकर, घन-शक्ति से दीप्त होकर, चरण-घट्टनों (पादाघातों) से भूस्थल के झट हिलने पर, धुएँ के समान लम्बी-साँसों के व्याप्त होने पर, अधिक आघातों से समस्त आकाश के विदीर्ण होने पर (जूझते रहे) तब सुग्रीव ने उस कुम्भ को पकड़कर घुमाकर अबुधि में डाल दिया जिससे देवताओं ने सिंहनाद किया। उस वारिधि के तल में घोष (ध्वनि) के शोभित होने पर वह मन्दर शैल के समान गिर गया ॥ ४९८० ॥

—गिरकर भी उस दनुज ने साहस से, महोग्र रूप से भानुज के पास आकर, भीकरता से वक्ष पर मुष्टिघात किया तो अविलम्ब हड्डियों पर लगने पर वे टूट गईं। कठोर वज्र के लगने से कनकाद्रि से निकलनेवाली चिन-गारियों के समान चिनगारियाँ निकल पड़ीं। उस पर क्रुद्ध होकर तरणि-नन्दन द्वारा दानवाधम के उरस्थल को ताककर, (लक्ष्य करके) आश्चर्यप्रद रूप से मुष्टि साधकर, आघात करने पर, वह उद्भट बाहुसत्त्ववाला लड़-खड़ाकर मर गया। उसके तब शान्त-पावक के समान, उष्णता (प्रताप)

वाडंत शांत पावकुडुनु बोलें । वेडिमि चेंडि पडुवेऽचि राक्षसुलु
पऽचिरि दिवियु भूभागंबु वगुल । नेंऽि दप्पि येंतयु नीरधि गलग;
नप्पुडु दमयन्न यवनि गूलुटयु; । निप्पुलु सेंदरेंडु नेंऽि चूड्कु लडर
गौलदिकि मीऽिन कोपंबु तोड । नलि निकुंभुडु सिंहनादंबु सेसि
कनकरत्न प्रभाकलितमै तनरि । यनयंबु गंधपुष्पार्चितंबैन ४९९०

परिघ द्रिप्पुटयुनु ब्रह्मांड मेंल्ल । नुरिलेंडु गति नुंडे नुग्रभागमुन;
नाश लेंल्लनु व्रीलि नट्लय्यें; वायु । पाशंबुलुनु देंगि पडु विधंबय्यें;
हनुमंतु डप्पु डुद्धति दैत्यु दाकि । यिनतनूभवुनकु नेंडसोच्चि पेचें;
घोराजि बरिघ निकुंभुंडु द्रिप्पि । मारुति वक्ष मुन्मत्तुडै व्रेसें;
व्रेसिन नत्युग्र विस्फुलिंगमुलु । भास मानंबुलै पर्वुचुनुंड
नुरमुलो बेंट्टिट्टिदो यन नपुडु । करमरुदुग बरिघमु तुमुरय्यें;
वालिन परिघंबु वाटुन नतडु । गालिचे दूलु वृक्षंबुनु बोलें;
दूलियु धैर्यंबु तोड निकुंभु । वालिन पिडिकिट वक्षंबु वोडिचें;
बोडिचिन नादैत्य-पुंगवु नुरमु । कडु व्रस्सि नेंत्तुरु ग्रम्मुदेंचुटयु
नतडु महानिलाहति महीजंबु । गति गंप मोंदियु ग्रम्मऽ देलिसि ५०००

खोकर गिर पड़ने पर, भीत होकर राक्षस भाग उठे, जिससे दिवि और भूभाग विदीर्ण हुए और क्रमहीन नीरधि अत्यधिक आलोड़ित हुई। तब अपने अग्रज को अवनि पर गिरते देख, अंगारे बिखेरनेवाली चितवनों के उत्कर्षित होने पर, अत्यधिक क्रोध से, निकुम्भ ने सिंहनाद करके, कनक-रत्न-प्रभा-कलित हो शोभित तथा निरन्तर गंध-पुष्पों से अर्चित, ॥ ४८९० ॥

—परिघा घुमाई, उस उग्रभाव से लगा मानों समस्त ब्रह्मांड विदीर्ण हो जाएगा। लगा दिशाएँ विदीर्ण हो जाएंगी। ऐसा लगा वायुपाश भी टूट गिरेंगे। तब हनुमान औद्धत्य से दैत्य का सामना कर, इनतनूभव की सहायता के लिए पहुँच विजृंभित हुआ। घोर युद्ध में निकुंभ ने परिघा घुमाकर, उन्मत्त बनकर, मारुति के वक्ष पर डाल दिया। डालने पर अत्युग्र विस्फुलिंग भासमान हो विकीर्ण हुए (और) उरस्थल पता नहीं कितना कठोर है, कि आश्चर्यप्रद रूप से परिघा चूर-चूर हो गई। श्रेष्ठ परिघा के आघात से हवा (के झोंके) से कंपित वृक्ष के समान कंपित होकर भी, धैर्य से निकुंभ के वक्ष पर श्रेष्ठ मुष्ठि का प्रहार किया। आघात करने पर उस दैत्यपुंगव के अधिक टूक-टूक हुए उर से रक्त छूट निकला। महा-अनिल के आघात से महीज (वृक्ष) की तरह कंपित होकर भी उसके फिर होश में आकर, ॥ ५००० ॥

हनुमंतु बट्टि युद्धति मीदि कॅत्त । दनुजु लार्चिरि वियत्तल मॅल्ल नद्रुव
गडुवेगमुनन्ने यक्कपिकुंजरुंडु । विडिपिंचु कॉनि रणोर्वीस्थलि कुरिकि
कडगि निकुंभ नुग्रत बिट्टु वॉडिचि । वडि बडवैचि यव्वसुमति मीद
विसरि यॅम्मुलु राल व्रेसि डॉम्मॅक्कि । दॅस लद्रुवग दल द्रुंचि पॅल्लार्चॆ;
ना रभसंबुन नवनियु मिन्नु । वारिधुलुनु दिशावलयंबु म्रोसॆ;
हत शेषराक्षसु लालंकलोनि । कतिरयंबुन जनि यारावणुनकु
गुंभ निकुंभादि गुरुसत्त्व धनुलु । कुंभिनि मीद नार्गुरु दैत्यवरुलु
गूलट सॅप्पिन गोपिंचि यसुर । वालिन खरुनि यावरतनूभवुनि
मकराक्षु बिलिचि "समग्र सैन्यमुल । ब्रकटंबुगा गूर्चि परगंग नीवु
राम लक्ष्मणुल, मर्कटमुल जंपि । रा मगटिमि" ननि रावणु डाड
५०१०

मकराक्षुडु युद्धमुनकु वॅडलुट

विनि महोत्साहुडै वेगंबॆ वाडु । दनतंड्रि पग दीर्प दनकब्बॆ ननुचु
मुदमंदि तन रॅंडु मूपु लुप्पॊंग । द्रिदशारि कप्पुडु धीरुडै म्रॊक्कि
वीड्कॊनि रथमॅक्कि वॅडलि कय्यंबु । वेड्कतो दनयॊद्दि वीरुल जूचि

—हनुमान को पकड़कर, औद्धत्य से ऊपर उठाने पर, दनुजों ने सिंहनाद किया जिससे समस्त वियत्तल विदीर्ण हो जाए। अति वेग से ही उस कपिकुंजर ने (अपने को) छुड़ाकर, रणभूमि पर कूदकर, लगकर निकुंभ पर उग्रता से भीकरता से प्रहारकर, झट वसुमती पर गिरा देकर, ऐसा फेंक दिया जिससे हड्डियाँ टूट गईं तब छाती पर चढ़कर, दिशाओं के विदीर्ण होने पर, उसका सिर काट डालकर अधिक सिंहनाद किया। उस रभस को देखकर अवनि और आकाश, वारिधियाँ और दिशावलय मुखरित हुए। हतशेष राक्षस लंका में शीघ्र चले गए और रावण को कुंभ-निकुंभ आदि गुरु-सत्वधनियों तथा छः दैत्यवरों का कुंभिनी (धरती) पर गिरने की (बात) बताई तो असुर रावण ने क्रुद्ध हो, श्रेष्ठ खर के उस वर-तनूभव मकराक्ष को बुलाकर कहा "समग्र (समस्त) सैन्यों को प्रकट रूप से एकत्र करके शोभा से तुम पौरुष से रामलक्ष्मणों तथा मर्कटों को मारकर आओ।" ॥ ५०१० ॥

मकराक्ष का युद्ध के लिए निकल पड़ना

(रावण की बात) सुनकर महोत्साह से युक्त हो वह शीघ्र ही यह सोचते कि पिता के वध का प्रतिशोध लेने का अवसर मिला है, मुदित होकर, दोनों कन्धों के फूलने पर, त्रिदशारि को तब धीर बन प्रणाम कर,

"मीरु समग्रत् मॅरसि युग्रतनु । बोरुडु कपुलतो बॉरि-बॉरि; नेनु
राम लक्ष्मणुल, मर्कटमुल नादु । भीम शराग्नुल भिन्नुल जेसि
येचेंद" ननवुडु नॅलमि दानवुलु । द्रोचि तो नडवंग दुश्शकुनमुलु
गलिगॆ बै; वकवि यॅल्ल गनियु नय्यसुर । तलकक तूर्य नादंबुलु सॅलग
नलि नार्चि कविसॆ वानर सेन मीद । निलयु नाकाशंबु निट्टट्टु पडग;
दरिमि वानरुलुनु दरुलुनु गिरुलु । दडचुगा वैचिरि दैत्युल मीद;
दानवुलुनु गदादंड कोदंड । मानितखड्गादि महित शस्त्रमुल ५०२०

वानि नन्निटिनि वडि द्रुंचि वैचि । वानरकोटि दीव्रत नॊंचि यार्चि;
रा समयम्मुन नम्मकराक्षु । डा सर्व कपुलपै नति वेग रथमु
बरपुचु गदिसि मुप्पदि नूरिट । नरुवदिटनु मरि यरुवदेनिट
निरुवदिटनु वैस निरुवदारिट । बरग नारिटनु बंड्रेंट रेंट
बदिट बदेनिट बदुनॆन्मिदिट । बदुमूट नाल्गिट बदु नालुगिट
दॆगगोनि मूट नैदिट नेडिट । नगलिचि तॊम्मिदि यम्मुल नेसॆ;
नवि सहिपग लेक यखिलवानरुलु । भुवि तल्लडिल्ल नप्पुडु पारुटयुनु

बिदा लेकर, रथ पर आरूढ़ होकर युद्ध के प्रति उत्साह से निकल पड़ा, अपने पास के वीरों को देखकर (कहा)—"आप समग्रता (पूरी तरह) से दीप्त होकर, बार-बार कपियों से उग्रता से लड़िए। मैं रामलक्ष्मणों को, मर्कटों को अपने भीमशरों की अग्नियों से खंड-खंडकर पीड़ित कर दूंगा।" ऐसा कहने पर प्रेम से (एक दूसरे को) ढकेलते हुए दानव चल पड़े तो कई दुश्शकुन हुए, तब सबको देखकर भी वह असुर विकल हुए बिना तूर्यनादों के मुखरित होने पर, सिंहनाद कर वानरसेना पर टूट पड़ा जिससे भूमि तथा आकाश विचलित हो जाएँ। पीछाकर वानरों ने भी अधिकता से तरु और गिरि दैत्यों पर फेंके। दानवों ने भी गदादंड, कोदंड, मान्य खड्ग, महित शस्त्रों से, ॥ ५०२० ॥

उन सबको झट काट देकर, वानरकोटि को तीव्रता से पीड़ित कर, सिंहनाद किया। उस समय पर, उस मकराक्ष ने उन सभी कपियों पर अतिवेग से रथ चलाते हुए, नियराकर, तीसों, सैकड़ों, साठों, और पैंसठों, बीसों, झट छब्बीसों, शोभा से छहों, बारहों, दोनों, दसों, पन्द्रहों, अठारहों, तेरहों, चारों, चौदहों, तीनों, पाँचों, सातों, नौओं बाणों का संधानकर चलाया जिससे वे (वानर) उखड़ जाएँ। उन्हें सह न सक समस्त वानर, भुवि को कंपित करते हुए भाग निकले।

मकराक्ष संहारमु

"हो! मीरु वेँरवकु; डोडकु" डनुचु। रामुडु विलुगोँनि राक्षसुल् बेँदर
जतुरंग बलमुल ज़ंपुट जूचि। यति कोपमुन मकराक्षुंडु वेँचि
यरदंबु वरपिंचि यारामुडासि। "खरसूति येनु राघवः मुन्नु नीवु ५०३०
पेँरिगि मातंड्रि जंपिन दान जित्त। मेँरियुचु नुंडे ना कितकालंबु;
नाकु नीतोडि रणंबब्बुटकुनु। जेकोँनि चिंतितु, जेकूरे नेडु;
तरलकु नीवु; मातंड्रि सूडुनकु। नेँरयंग बोराड निनु गॅटि नेनु;
दुरमोँनरिप नातो विट नैन। गरवालमुन नैन गदनैन" ननुडु
वानितो राघवेश्वरुडु गोपिंचि। "दानवाधम, यी वृथा गर्वमेल?
भासिल्लु नाबाहु बलमु सोँपार। गा समरंबुन खंडितु निन्नु"
ननिन रामुनि मकराक्षुंडु गिट्टि। घनमैन निशितांबकंबुल नेसेँ;
नेसिन नवि रामुडेंड द्रुंचि वैचेँ;। नासमयमुन ब्रह्मांडंबु दिशलु
निंडे नायिद्दर निष्ठुर चाप। दंड महागुणध्वनुलु पेँल्लडरि;
सुर खेचरादुलु चोद्यंबु नोँद। नरुदार नेयु रामास्त्रंबु लेँल्ल ५०४०

मकराक्ष का संहार

'ओ हो ! तुम डरो मत, मत डरो' कहते हुए राम ने धनुर्धारण कर, राक्षसों के भीत होने पर, चतुरंग बल का संहार किया, (उसे) देख अतिक्रोध से मकराक्ष ने विजृंभित हो, रथ चलवाकर, उस राम के निकट जाकर (कहा—) "हे राघव ! मैं खर का पुत्र हूँ। पूर्व में तुमने, ॥ ५०३० ॥

—उन्नत बन हमारे पिता का वध किया था। उससे इतने समय से मेरा चित्त दुखी हो रहा था। तुम्हारे साथ युद्ध करने के अवसर की चिन्ता कर रहा था। (वह) आज प्राप्त हुआ है। तुम (सामने से) हटो मत। हमारे पिता के वैर का प्रतिशोध लेने के लिए आज तुमसे जूझ पा रहा हूँ। मुझसे धनुष से या करवाल से या गदा से ही सही, युद्ध करो।" (ऐसा) कहने पर राघवेश्वर ने क्रुद्ध हो उससे (कहा) "हे दानवाधम ! यह वृथा गर्व क्यों ? भासमान मेरे बाहुबल के शोभित होने पर, तुम्हारा समर में खंडन कर दूंगा।" (ऐसा) कहने पर राम के निकट आकर मकराक्ष ने महान-निशित-अंबक चलाए। चलाने पर उन्हें वहीं का वहीं राम ने तोड़ दिया। उस समय पर ब्रह्मांड और दिशाएँ, उन दोनों के निष्ठुर-चापदंडों की महागुण-ध्वनियों के उत्कर्षित होने पर, भर गईं। सुर खेचर आदियों

नतिवेगमुन मकराक्षुंडु द्रुंचि । यतुल बाणंबुल नडरिंचुटयुनु
नवि राघवुडु द्रुंचि यामकराक्षु । विविध निष्ठुर शरावृतु जेय नतडु
नवि येल्ल गडगि यत्यंत रोषमुन । विविध खंडमुलु गाविंचि पेल्लार्चे;
गोपिंचि काकुत्स्थकुलुडु नद्दैत्यु । चापंबु वेस नोक्क शरमुन द्रुंचि
सारथि नेनिमिदि सायकंबुलनु । नारथंबुनु मरि यन्नि बाणमुल
विकलत्व मौनरिंप विरथुडै यपुडु । मकराक्षु डोक्क समग्र शूलंबु
वैचिन नदि वेग वच्चुट विभुडु । चूचि मूडम्मुल जूर्णंबु सेसें;
ननिमिषु लारामु नग्गिंचि रपुडु; । दनुजुंडु गिनिसि यादशरथात्मजुनि
बिडिकिट बोडुवंग बिट्टेगुदेर । नडुमनें याराम नरनायकुंडु
ननलास्त्रमुन हृदयमु गाड नेय । ननि मौन नम्मकराक्षुंडु गूलें;
५०५०

ब्रथितारुण प्रभाभासियै यंत । ब्रथमाद्रिपै दोचें बद्म-बांधवुडु;
हतशेष राक्षसु लालंक करिगि । यतडु सच्चुट सेप्प नारावणुंडु
कोपंबु जितयु गूडि चित्तमुन । नेपार ननियें नय्यिंद्रजित्तुनकु;
"रणमुन गपुलनु रामलक्ष्मणुल । क्षणमात्रमुन जंपगा जालु वाड

के चकित हो जाने पर विलक्षण रूप से राम के चलाए समस्त अस्त्रों को ॥ ५०४० ॥

—अतिवेग से खंडितकर, मकराक्ष अतुल बाणों से उत्कर्षित हुआ, (फिर) उन्हें राघव ने काट दिया, (और) मकराक्ष को विविध निष्ठुर शरों से आवृत कर दिया। उसने भी उन सबको सप्रयत्न अत्यन्त रोष से विविध खंड (टुकड़े-टुकड़े) कर अधिक सिंहनाद किया। क्रुद्ध हो काकुत्स्थकुल वाले ने उस दैत्य के धनुष को झट एक शर से काटकर, सारथी को आठ बाणों से, उस रथ को फिर उतने ही बाणों से विफल कर दिया, तो विरथ होकर तब मकराक्ष ने एक समग्र शूल को फेंक दिया, उस (शूल) के शीघ्रगति से आने पर विभु (राम) ने देखकर, तीन बाणों से चूर्ण कर दिया। तब अनिमिषों ने राम की प्रशंसा की। दनुज के क्रुद्ध हो दशरथात्मज पर भीकरता से मुष्टि प्रहार करने आने पर, बीच में ही राम-नरनायक ने अनलास्त्र को ऐसा चलाया कि वह हृदय में गड़ गया और युद्धभूमि में मकराक्ष गिर (मर) गया ॥ ५०५० ॥

प्रथित-अरुण-प्रभाभासी होकर तब प्रथमाद्रि (पूर्वगिरि) पर पद्म-बांधव दिखाई पड़ा। हतशेष राक्षसों के लंका में जाकर उसके मृत होने की (बात) करने पर, रावण ने, क्रोध और चिन्ता के मिलकर चित्त में बढ़ जाने पर, इन्द्रजित से कहा—"रण में कपियों तथा रामलक्ष्मणों को क्षणमात्र

वीवेकाकिक ना कॆव्वरु गलरु? । नी विटु निज वाहिनी समेतमुग
जनि यंदरनु जंपि चनुदेम्मु मुन्नु । ननिमिष कोट्टुल ननि जंपु करणि;
रणमुन गॆलिच संरंभंबु तोड । बणुतिप नेतॆम्मु प्रमद मॊप्पार"

इन्द्रजित्तु मूडवसारि युद्धमुन कलुगुट

ननवुडु निंद्रजित्तु आरावणुनकु । विनयंबुतो म्रॊक्कि वीड्कॊनि कदलि
वायु वेगमु गल वाजुल बून्चि । यायितंबैनट्टि यरदंबु नॆक्कि
शरदभ्रसंवृत-शैलंबु करणि । गुरुभुजुंडै वॆलि गॊडुगुल नीड ५०६०
रमणीय कंकण रणितमुल् मॊरय । रमणु लिम्मुल जामरम्मुलु वीव
नॊलसि मोमुन संगरोत्साह् लील । दळुकॊत्त नेतॆंचि, तल्लिकि म्रॊक्कि
जननि दीविपंग जनि तन पत्नि । दनयुल वीड्कॊनि तम्मुल चावु
दलपोसि कोपाग्नि दरिकॊन बेचि । यलघु दर्पंबुन नय्यिद्रजित्तु
मानक रोष समग्रत तोड । दानव कोट्टुलु दविलि सेविंप
घन काम रूपमुल् गल मंत्रिवरुलु । तनु गॊल्व नुत्तर द्वारंबु नंदु
नद्रुलगति देरु लरुवदि कोट्लु । भद्रगजंबुलु पदुमूडु कोट्लु
दुरगंबु लरयंग दुद नूरुकोट्लु । गुरुशक्ति नाल्गेसि कॊम्मुल कलुलु

में मार सकनेवाला तुम्हारे अतिरिक्त अब मेरा कौन है ? तुम अब निज-वाहिनी (अपनी सेना) के साथ जाकर, पूर्व में युद्ध में अनिमिष समूह को मार डालने के समान, सबको मारकर आ जाओ, रण में विजयी होकर, संरंभ से, प्रमोद के साथ, सराहनीय रूप से आ जाओ।"

इन्द्रजित का तीसरी बार युद्ध के लिए जाना

ऐसा कहने पर इन्द्रजित रावण को विनय से प्रणाम कर, बिदा लेकर चल पड़ा। वायुवेग से युक्त वाजियों को जुताकर, आयत (विशाल) रथ पर आरूढ़ होकर, शरदभ्र से संवृत शैल के समान, गुरु-भुजाओं वाला होता हुआ, श्वेत छत्रों की छाया में, ॥ ५०६० ॥

—रमणीय-कंकणों के रणितों के मुखरित होने पर, प्रेम से रमणियों के चामर डुलाने पर, मनोज्ञ-मुख पर संगरोत्साह-लीला के दीप्त होने पर, आकर, माता को प्रणाम किया। जननी के आसीसने पर, अपनी पत्नी तथा तनयों से विदा लेकर, अनुज की मृत्यु के बारे में सोचकर, कोपाग्नि के प्रज्वलित होने पर, अलघु (अधिक) दर्प से वह इन्द्रजित अनारत रोष-समग्रता से, दानवकोटियों के इच्छा से सेवाएँ करने पर, घन-कामरूपवाले मन्त्रिवरों के सेवाएँ करने पर, उत्तर द्वार से (निकल पड़ा।) पर्वत-सम साठ करोड़ रथों, तेरह करोड़ भद्र गजों, सौ करोड़ तुरगों, गुरु-शक्तियों से युक्त

नारय नौंक कोटि यडरितो नडव । भेरुंडमुलु वोलें बेंपु वहिंचि
चिलुक वन्नियलतो जेंलगु गुर्र्रमुलु । कौलदुलै नालुगु कोट्लु नडव ५०७०
वलुद निस्साणादि वाद्यमुल् म्रोय । गलनिकि वेंडलि लंकापुरिनुंडि
तनचुट्टसंख्यमै दैत्युलु गोलुव । घनतर भीषणाकारंबुतोड
वानर वीर दुर्वार नादमुल । मानैन रण-मही-मध्यंबु जोच्चि

इंद्रजित्तु होममु जेसि कृत्ति यनु शक्ति बडयुट

यरदंबु डिगि धीरुडै काचि युंड । दिरिगिरा दैत्युल देर्रगोंप्प निलिपि
गुरुतर वेदि त्रिकोणमै पेंद्द । परपोंदि दक्षिण प्रवणमै युन्न
भूरि श्मशानाग्नि पौलुपार देच्चि । धीरुडै बेदिलो दीपिप जेसि
रक्त वस्त्रंबुलु रक्तमाल्यमुलु । रक्त चंदन मनुरक्ति मै दाल्चि
दंडंबु नुपवीत ततियु मौंजियुनु । निडु मनंबुतो नेंर्र्यंग बूनि
यलवड नचट खट्वांग ध्वजंबु । निलिपि कपालंबु निष्ठतो नेंक्कि
परगंग गंकाल परिधि गाविंचि । तिरमुगा दक्षिण दिश स्रुक्स्रुवम्मु
५०८०
लिनुप पात्रल नुंचि येर्पड गृष्ण । तनुडैन वानि रक्तमुनु मांसमुनु

तथा चार दाँतोंवाले एक करोड़ करियों के उत्कर्षित हो चल पड़ने पर, भेरुंडों के समान औन्नत्य से युक्त हो, तोते के रंग से शोभित चार करोड़ घोड़ों के चलने पर, ॥ ५०७० ॥

—अधिकता से निस्साण आदि वाद्यों के मुखरित होने पर, लंकापुरी से रणभूमि की ओर चल पड़ा। अपने चौतरफ़ (घेरे) असंख्य दैत्यों के सेवाएँ करने पर, घनतर भीषण-आकार से, वानर वीरों के दुर्वार-नादों के आकर (स्थान) रणभूमि के मध्य प्रवेश कर,

इन्द्रजित का होम करके कृति नामक शक्ति को प्राप्त करना

—रथ से उतरकर, धीर बन, पहरा देने के लिए दैत्यों को ढंग से खड़ा करके, त्रिकोणवाली, अधिक विशाल (तथा) गुरुतर-वेदिका (बनाई), दक्षिण दिशा में स्थित भूरि श्मशानाग्नि को शोभा से लाकर, धीर बन, वेदिका में प्रदीप्त कर, रक्त वस्त्र, रक्त माल्य, रक्त चन्दन को अनुरक्ति से धारण कर, दंड, उपवीत-तति, मौंजी को हृदयपूर्वक धारणकर, ढंग से वहाँ खट्वांग-ध्वज को स्थापित कर, निष्ठा से कपाल पर आरूढ़ (आसीन) होकर, शोभा से कंकाल की परिधि बनाकर, स्थिरता से दक्षिण दिशा में स्रुक्, स्रुव को ॥ ५०८० ॥

बौरि-बौरि नवि निंड बोसि मौनंबु । धरियिंचि यप्पुडथर्वणक्रममु
दप्पक युंड मंत्रम लुच्चरिंचि । चौप्पड नपुडु स्रुक्स्रुवमुलु वट्टि
कमिय बावकुडुनु गरमोप्प दाडि । समिधलु दिललुनु सर्षपंबुलुनु
होमंबु सेयंग नुरतरंबगुचु । ना महा धूम मजांडंबु निंडे;
नायग्नि लोनुंडि यप्पुडु वेग । नायितंबैनट्टि- यरदंबु वेडले;
रयमुन नुग्र कराळ केशमुलु । भयदरूपंबु गपाल पात्रंबु
दळतळ मनु कोर दौडलु मेरय । मलग कार्चुचु नस्थिमालिक लमर
नेरमंट लौलिकेडु नेत्रंबु लोप्प । नुरक हासमु तोड नौकक्रुत्ति वेडलि
"पंपुमु पंपु मे पनियैन नन्नु । सौंपार जेसेद सुरवैरि!" यनुडु ५०९०
नाक्रुत्ति नेरगि यिंद्रारि शस्त्रमुलु । नाक्रुत्ति गौकोनि याकाशमुनकु
नरदंबु तोडन यरिगि वानरुल । दिरिगि येयुटकु नद्रुश्युडै युंडे;
नंतट ना रावणात्मजु सेन । यंतयु ग्रम्मरि यरिगे लंककुनु;
नट निंद्रजित्तुंडु नाकपिसेन । बट्टुतरशर परंपरल नोंप्पिप
वलिय दार्कोडि शिलावर्षंबु चेत । बलुदेस जेंडि पारु पक्षुलो यनग
छिन्नाभिन्नांगुलै चेदरिरि कोंद- । रुन्नतगति दप्पि युंडिरि कोंद;

—लौह पात्रों में रख, कृष्ण तनु वाले (व्यक्ति) के रक्त तथा मांस को बार-बार उनमें भरकर, मौन धारणकर, तब अथर्वण क्रम से नियमित मन्त्रों का उच्चारण कर, ढंग से तब स्रुक-स्रुवों को पकड़, पावक (अग्नि) खूब प्रज्वलित हो उठे, ऐसा शोभा से ताड़ की समिधाएँ, तिल, सर्षप (सरसों) से होम किया। (तब) उरुतर (बहुत अधिक) होते हुए वह महाधूम अजांड में भर गया। तब उस अग्नि में से शीघ्र विशाल एक रथ निकल पड़ा। शीघ्र ही उग्र-कराल-केश, भयद रूप, कपाल पात्र (से युक्त तथा) चमकनेवाली डाढ़ों के दीप्त होने पर, लार टपकाते हुए, अस्थिमालाओं से सजकर, लाल अग्निज्वालाओं को उगलनेवाली आँखों के शोभित होने पर, निरन्तर (अट्ट) हास के साथ एक कृत्ति निकल पड़ी (और कहा)—'जो भी कार्य हो मुझे भेज दो। हे सुर-वैरी! शोभा से उसे संपन्न करूँगी।" (ऐसा) कहने पर, ॥ ५०९० ॥

—उस कृत्ति को जानकर, इन्द्रारि ने शस्त्र तथा उस कृत्ति को ग्रहण किया, आकाश की ओर रथ के साथ जाकर, वानरों पर पुनः आक्रमण करने के लिए अदृश्य हो रहा। तब रावणात्मज की समस्त सेना पुनः लंका में चली गई। तब इन्द्रजित ने उस कपिसेना को पटुतर-शर-परम्पराओं से पीड़ित किया तो चौतरफ़ से लगनेवाले शिलावर्ष के कारण, अनेक दिशाओं में भागनेवाले पक्षी हों, ऐसा छिन्न-भिन्न अंगवाले हो कुछ बिखर गए,

ऱ्रैसगंग जेवुरु टेरुलतोड । वसुमतीधरमुलु वडि गूलु करणि
बडिरि रक्तंबुलु पयि पयि दौरुग । गुड्डुसुगा नय्येड गोंदरु कपुलु;
नप्पु डायम्मुल नंधकारंबु । गप्पि येव्वरिकिनि गान राकुंडे;
नंत वानर वीरु लंतरिक्षमुन । नंतर्हितुंडगु नायिद्रजित्तु ५१००

बौडगान जालक भूनभोंतरमु । वडि निंड बरतेंचु वाडि बाणमुल
नड्डमुलु देगुवारु नरुमैन वारु । गडि कंडलै नेल गलिसिन वारु
गडिमिमै नाजिकि गैकौन्न तरुलु । विडिचि यम्मुलु गाड वेंस जच्चुवारु
नडुनेत्ति बडु घोरनाराच समिति । पुडमितो गीलिप बौडवुलु सैडक
निलुवु सच्चिन वारु निखिलांगकमुल । बलु बाणमुलु गाड बडि पौरल्वारु
मातंग शवमुलु माटु गोन्वारु । जेतुल गिरुलेत्ति चेष्टिंचु वारु
दृष्टिकि दोपक तिरिगि विन्वीथि । दृष्टिंचि यौडुलु दीटेंडु वारु
नखिलाशुग प्रवाहमुलु पै दौरुग । मुख सरोजमुलकु मुरिय राकुंड
बौंदि मीदिकि नेत्ति भूरि सेतुवुल । चंदंबुगा ब्रकोष्टमु लौड्डुवारु
जिच्चर पिड्डुगुल चेलुवुन जदल । वच्चु कोललु गेल वडि द्रुंचुवारु ५११०

कुछ औन्नत्य की गति को खोकर पड़े रहे। शोभा से लाल रंग के झरनों के साथ वसुमती-धरों (पर्वतों) के झट गिरने के समान, रक्त के बहते रहने पर, कुछ कपि वर्तुलीभूत हो गिर पड़े। तब उन बाणों से अन्धकार छाकर, किसी को (कुछ) दिखाई नहीं पड़ रहा था। तब वानर वीर अन्तरिक्ष में अन्तर्हित बने उस इन्द्रजित को, ।। ५१०० ।।

—देख न सक, भूनभोंतर में झट भरकर आनेवाले पैने बाणों के कारण कमर टूटनेवाले, चूर-चूर बननेवाले, टुकड़े-टुकड़े हो मिट्टी में मिल जानेवाले, साहस से युद्ध करने के लिए ग्रहण किए तरुओं को छोड़कर, बाणों के धँस जाने से झट मरनेवाले, मध्यशिर पर गिरनेवाले घोर-नाराच-समिति के कारण पृथ्वी से सट जानेवाले, खड़े-खड़े मरनेवाले, निखिल अंगों में कई बाणों के लगने के कारण (जमीन पर) लोटनेवाले, मातंगों (गजों) के शवों की आड़ में छिपनेवाले, हाथों में गिरि उठाकर (बचने का) प्रयत्न करनेवाले, आँखों को (शत्रु के) न दीखने पर पुनः (पुनः) आकाश-वीथि की ओर देखकर, होंठ चबानेवाले, अखिल-आशुगों (बाणों) के प्रवाहों के ऊपर बह आने पर, मुख-सरोजों को बचाने के लिए, अपनी हथेलियों को उठाकर, भूरि-सेतुओं के समान (बाण-प्रवाह को) रोक लेनेवाले, प्रज्वलित

वालंपु वोंडुपुल वाल घातमुल । दूलिचु वारु नेत्तुट दोगु वारु
घोरांबकंबुलु गोंनियु धैर्यबु । लारंग निश्चलुलै युंडु वारु
ब्रेवुलु प्रोवुलै पृथिविपै बडग । नावुलितल तोड नधिक निद्रलनु
गनुमूयु वारुनु "गडगि रामुनकु । नवि ब्राण मीगंटि" मनि पल्कुवारु
"दुर्लक्ष्यु डित– डनि दोंडरंग नेडु । दुर्लभं" बनि ब्रह्म दूषिचु वारु
"ब्रह्म इच्चिन शक्ति बदिलुडै वीडु । ब्रह्मांडमुन गान बडकुन्न वाडु
ब्रह्म वरंबेंत ? ब्रह्मांडमेंत ? । ब्रह्म येंतटि वाडु पार्थिवेंद्रुनकु ?
दलपोय ननिलोन धरणीशु डेटि । कलुगडो" यनुवारु नै युंड मरियु
नुद्दंड कोदंड मोंकचोट मोरयु; । नुद्दाम शरजाल मोंकचोट निगुडु;
नोंक चोट दनु जेप्पु; नोंक चोट नार्चु; । नोंक चोट नर्दलिचु; नोंक चोट नव्वु; ५१२०
नोंक चोट हुंकार मोंनरिचु; निट्लु । सकल भीकर लील जरियिप नलिगि
युरुभुजुंडांजनेयुडु नंगदुंडु । शरभुंडु ऋषभुंडु जांबवंतुंडु

अशनि-पिंडों की भाँति आकाश से आनेवाले बाणों को हाथों से (पकड़कर) झट तोड़ देनेवाले, ।। ५११० ।।

—वाल (पूँछ) को उठाकर, और वाल के आघातों (उन बाणों) का निवारण करनेवाले, रक्त में ऊभ-चूभ होनेवाले, घोर-अम्बकों (बाणों) से आहत होकर भी धैर्य से निश्चल बने रहनेवाले, आँतों के राशि होकर पृथ्वी पर पड़ने से जंभाइयों से अधिक (दीर्घ) निद्रा से आंखें मूँदनेवाले, 'लगकर राम के लिए युद्ध में प्राण दे सके' ऐसा कहनेवाले, 'यह दुर्लक्ष्य (दुर्जेय) है, आज (इसके साथ) युद्ध करना दुर्लभ (असाध्य) है', ऐसा कहते ब्रह्मा को कोसनेवाले, 'ब्रह्मा की दी हुई शक्ति से सुरक्षित होकर, यह ब्रह्मांड में दिखाई नहीं पड़ रहा है। ब्रह्मा का वर ही कितना ? ब्रह्मांड ही कितना ? पार्थिवेंद्र (राजाराम) के लिए ब्रह्मा ही कितना ? सोचने पर, युद्ध में धरणीश (राजाराम) क्रुद्ध क्यों नहीं हो रहे हैं ?' ऐसा सोचने वाले (बने हुए थे सभी वानर)। ऐसे समय में उद्दंड कोदंड एक जगह मुखरित हो उठता, उद्दाम शर-जाल और एक जगह बरस पड़ता। एक जगह अपना नाम कहता, एक जगह सिंहनाद करता, एक जगह डाँट बताता, एक जगह हँस उठता, ।। ५१२० ।।

—एक जगह हुंकार करता। इस प्रकार सकल-भीकर-लीला से विचरण करने पर, क्रुद्ध हो उरु भुजाओंवाले आंजनेय, अंगद, शरभ, ऋषभ, जांबवान, गज, गवाक्ष, गंधमादन, विजय, नील, सुषेण, पनस आदि पटु

गजुडु गवाक्षुंडु गंधमादनुडु । विजयुंडु नीलुंडु वेस सुषेणुंडु
बनसुंडु मोदलुगा बटु पराक्रमुलु । वनचरु लंदरु वडि दरुल् गिरुलु
निगुडि याकसमेल्ल निंड वैचुटयु । मोगि वच्चु शरमुल मुरियलै चेंदरि
जडिय शतानिल चटुल वेगमुन । नुडगनि म्रोततो नुरुवडि वच्चि
याशकलमुलु पै नदंद तोरुग । नाशंबु गनिरि निगुडिचु निबिड
बाणमुल
मेरसिन कडिमिमै मेघनादुंडु । नेरयंग निगुडिचु निबिड बाणमुल
गोंदरु तुनियलै कूलिरि; भीति । नोंदि कोंदरु वारि रोदिगि
दिक्कुलकु
ब्रदर परंपरल् परपुचु निट्लु । पदि कोट्ल यगचरपतुल रूपणचि
५१३०
वेंडियु नेदिरिन वीर वानरुल । खंडिचे नतिचंद कांडसंततुल;
नतुल विक्रमुडैन हनुमंतु वालि- । सुतु शतबलि गवाक्षुनि नीलु नलुनि
बंधुर बलुडैन पनसुनि गुमुदु । गंधमादनु ऋक्ष कपि यूथपतुल
मरियु गोंदरु नुग्र मार्गणावळुल । नरिमुरि निश्चेष्टुलैयुंड नेसि
यादितेयुल गुंडे लविय नम्मेघ- । नादुंडु पटु सिंहनादंबु सेय
मनमुल भीतिल्लि मानमुल् दूलि । वनचरुल् दनवेंन्क वच्चि चोच्चुटयु

पराक्रमवाले समस्त वनचरों ने झट से तरु (और) गिरि फेंककर समस्त आकाश को भर दिया। (ऐसा फेंकने पर) क्रम से आनेवाले शर खंड-खंड होकर, शत-अनिल के चटुल वेग से, अत्यधिक ध्वनि से, शीघ्रगति से आकर, उन शकलों के जहाँ-तहाँ गिरने पर कई वानर नष्ट हो गए। दीप्त साहस से मेघनाद के चलानेवाले निबिड-बाणों से कुछ टुकटे-टुकड़े होकर गिर पड़े। भीत होकर कुछ भागकर दिशाओं में छिप गए। प्रदर-परम्पराओं को चलाते हुए इस प्रकार दस करोड़ अगचरपतियों के रूप का दमन कर, (संहार कर) ॥ ५१३० ॥

—फिर सामना करनेवाले वीर वानरों को अति चंड कांड-संततियों से खंडित किया। अतुल विक्रमवाले हनुमान, बालिसुत, शतबलि, गवाक्ष, नील, नल, बंधुर बल वाले पनस, कुमुद, गन्धमादन, ऋक्ष (आदि) कपियूथपतियों को और भी कुछ (अन्यों) को उग्र-मार्गण-अवलियों से अतिशीघ्र निश्चेष्ट कर दिया। आदितेयों (सूर्यवंशीयों) के हृदय विदीर्ण हो जाएँ, ऐसा मेघनाद ने पटु सिंहनाद किया। मन में भीत होकर, मान खोकर, वनचरों के अपने पीछे आकर घुस जाने से, सौमित्र ने रामचन्द को देख (कहा)—

सौमित्रियुनु रामचंद्रुनि जूचि । "भूमीश! यीमाय पोंदुन वीडु गर्विंचि यिब्भंगि गपि वीर बलमु । सर्वबु समयिंप समकट्टि नाडु; मनमितलो वीनि मडियिंप वलयु" । ननवुडु श्रीरामु डनुजन्मु जूचि "विनु ब्रह्म वरमुन विनुवीथि वीडु । तनुगान राकुंड दर्पिंचिनाडु; ५१४०

मनमेंत गिनिसिन मनकु लो बडडु; । विनुमु लक्ष्मण; नेडु वीडसाध्युंडु; अस्त्रंबुलेमियु नतनिपै गोलुप; । वस्त्रमुल् सेडिपोवु" ननि पल्कुचुंड ना समयंबुन ननिलुंडु वच्चि । भासुर मृदुवच– फणिति निट्लनियें; "विनु वीनि मायकु वेरवु भूनाथ; । तनर नाग्नेय मंत्रमु जपियिंचि नीवु बाणंबेय नेरिदप्पि कृत्ति । देवारि बासि यदृश्यमै पोवु"

श्री रामुडाग्नेयास्त्रमुचे निंद्रजित्तुनि माय देरल्चुट

ननि यथि विनिपिंचि यनिलुंडु सनग । जननाथु डाहव संरंभ मेसग मानितंबगु नग्निमंत्रपूतंबु । गा नम्मु संधिंचि कडकतो नेय गृत्ति यत्यद्भुत क्रिय निंद्रजित्तु । नत्तरि नेडबासि यरिगे नेंदेनि; नायिंद्रजित्तुंडु नवनि केतेंचि । यायेड गार्मुक ज्यानाद मडर

"हे भूमीश ! इस माया की सहायता से इसने, गर्वित होकर, इस प्रकार समस्त कपिवीर-बल का संहार करने का उपक्रम किया है । इतने में ही हमें इसका संहार कर देना चाहिए ।" ऐसा कहने पर श्रीराम ने अनुजन्म को देख कहा—"सुनो, ब्रह्मा के वर से विनुवीथि पर यह अदृश्य हो दर्पित हुआ है ।। ५१४० ।।

—हम कितना भी रुष्ट हो जाएँ, यह वश में नहीं आएगा । सुनो लक्ष्मण ! आज यह असाध्य (दुर्जेय) है । अस्त्र उस पर कुछ भी प्रभाव नहीं दिखाएँगे । अस्त्र ही नष्ट हो जाएंगे ।" ऐसा कहते समय, अनिल ने आकर, भासुर मृदुवच.फणिति (-विधान) से इस प्रकार कहा—"सुनो हे भूनाथ ! इसकी माया के कारण भीत मत बनो । शोभा से आग्नेय मन्त्र का जपकर तुम बाण चलाओगे तो, कृत्ति देवारी को छोड अदृश्य हो जाएगी ।"

श्रीराम का आग्नेयास्त्र से इन्द्रजित की माया को दूर करना

ऐसा चाहकर सुनाकर, अनिल के चले जाने पर, जननाथ (राजाराम) ने आहव (युद्ध) -संरंभ के उत्कर्षित होने पर, मान्य अग्निमन्त्र से पूत बनाकर बाण का संधान कर, लगकर, चलाने पर, (वह) कृत्ति अद्भुत रूप से

गडगिन नंत नाकपिकुलोत्तंसु । लडरिन यामूर्छ लंदंद तेलिसि ५१५०
वडि गूडुकोनि वच्चि वानिपै गविसि । कडिदियौ शैल शृंगमुनु वायुजुडु
गंड शैलमुलु नंगदुडु मैंदुडु । दडिमै घन पर्वतमुनु गजुंडु
जय मूलमैन वृक्षमुनु नीलुंडु । रयमुन नश्वकर्णबुनु नलुंडु
अवनीरुहंबुनु नर्क नंदनुडु । नविरळ शाखिनि नट बनसुंडु
गदिसि युग्रंबैन गद विभीषणुडु । गदुरुचु सालवृक्षमुनु संपाति
भूज महाशैलमुलु वलीमुखुलु । नाजांबवत्प्रमुखादि वीरुलुनु
नलि नार्चि मूडु बाणमुल लक्ष्मणुडु । गलयंग नूरंबकमुल राघवुडु
वानिपै नडरिप वाडंतवट्टु । नानांबकमुल जूर्णबु गाविंचि
यनलोग्रघोरंबुलैन बाणमुल । वनचर सेन पै वडि बेट्टु परपि
करलाघवंबोप्प गंदमादनुनि । बरुषोग्र शरमुल बदु नेन्मदिट ५१६०
नेडिंट मैंदुनि नेडिंट द्विविदु । नेडिंट हनुमंतु नेडिंट गुमुदु
वडि दोम्मिर्मिदिट नव्वालिनंदनुनि । गडिमि नन्निय सायकम्मुल नलुनि
नैदिट नीलु गवाक्षु नेडिंट । नादित्य नंदनु नरुवदेनिंट
बनसुनि निरुवदि पटु सायकमुल । नेनयंग दधिमुखु नेडु बाणमुल

तब इन्द्रजित को छोड़ कहीं चली गई। इन्द्रजित के अवनि पर आकर, उस समय कार्मुक-ज्यानाद कर उत्कर्षित होने पर, तब कपिकुलोत्तंस (कपिवंश के शिरोमणि) अधिक मूर्छा से जहाँ-तहाँ होश में आकर, ।। ५१५० ।।

—झट झुंड बाँधकर आकर, उसे घेरकर, महत्तर शैल-श्रृंग को वायुज ने, गंडशैलों को अंगद और मैन्द ने, महान् पर्वत को गज ने, जयमूल वृक्ष को नील ने, झट अश्वकर्ण (नामक वृक्ष) को नल ने, अवनीरुह को अर्कनन्दन ने अविरलशाखी (वृक्ष) को पनस ने, उग्रगदा को विभीषण ने, सालवृक्ष को सम्पाति ने, भूज (वृक्ष) (तथा) महाशैलों को (अन्य) वलीमुखों (तथा) जांबवान प्रमुख-आदि वीरों ने (उस पर) फेंका। सिंहनाद करके लक्ष्मण ने तीन बाण, शोभा से राघव ने सौ बाण उस पर चलाए। उसने उन नाना-अंबकों (बाणों) को चूर्ण करके, अनल-उग्र-घोर बाणों को वनचर सेना पर बड़ी भीकरता से चलाया। कर-लाघव की शोभा से गन्धमादन को अठारह परुष उग्र शरों से, ।। ५१६० ।।

—सात से मैन्द को, सात से द्विविद को, सात से हनुमान को, सात से कुमुद को, नौ से उस बालिनन्दन को, साहस से उतने ही सायकों से नल को, पाँच से नील को, गवाक्ष को सात से, आदित्यनन्दन को पैंसठ से, पनस को बीस पटु-सायकों से, शोभा से दधिमुख को सात बाणों से, शोभा से लक्ष्मण को पचहत्तर अंबकों से, वसुधेश (राजा राम) को पाँच सौ वर-सायकों से,

नैसग लक्ष्मणु डॆब्बदेनंबकमुल । वसधेशु नेनूरु वरसायकमुल
सायकत्रयमुन शतबलि नूरु । सायकंबुल विभीषणुनि नॊप्पिंचि
मरियु दक्किन ऋक्ष मर्कट वरुल । गूर प्राणमुलतोड गूलनेयुटयु
नप्पुडु हनुमंत डचल शृंगंबु । नुप्पोंगि यंगदुंडुरुगंड शिलयु
बनस विभीषणुल् बलुगदल् बलिमि । दनर संपाति युत्तालतालमुनु
नलुडु सालाश्व-कर्णमुलु नंदंद । नलिनाप्ततनयुडु नग परंपरलु
५१७०

शक्ति विक्रम कळाशालि नीलुंडु । शक्तियु ननलुंडु सप्त पर्णमुनु
खदिरंबु लंदि तक्कटि प्लवंगमुलु । बदपडि शतबलि बदरिवृक्षमुनु
सौमित्रि मूडुग्र सायकंबुलुनु । भूमीशुडुरु शरंबुलु नूरु वरुप
शरभुंडु ऋषभुंडु जांबवंतुंडु । नुरु भुजुंडगु गवयुडु सुषेणुंडु
वॆस गवाक्षुडु गज द्विविद मैंदुलुनु । नसमान विक्रमुलैन वानरुलु
गडु विक्रमंबुन घनगिरि तरुलु । नुडु वीथि गडवंग नॊक्क पॆल्लडर
दक्किन वारुनु दरु शैल ततुलु । नक्कजंबुग बॆचि यंदंद वैव
वानि दुत्तुमुरुगा वडि गूलनेसि । भानुनंदनु नॊक्क भयद भल्लमुन
वक्षंबु नॊप्पिप वडकॆ बॆनुगालि । वृक्षंबु चलियिंचु विधमुन नतडु;
नालोन ऋषभु गवाक्षु सुषेणु । वालिनंदनु जांबवंतुनि गुमुदु ५१८०

सायकत्रय से शतबलि को, सौ सायकों से विषीपण को पीड़ित किया। और शेष ऋषभ (तथा) मर्कटवरों को म्रियमाण (मरणासन्न) बनाकर गिरा दिया। तब हनुमान ने अचल-श्रृंग को, फूलकर अंगद ने उरु-गंडशिला को, पनस (तथा) विभीषण ने अनेक गदाओं को, बल से शोभित हो (लेकर), संपाति ने उत्ताल-ताल (वृक्ष) को, नल ने साल (तथा) अश्वकर्ण (वृक्षों) को, जहाँ-तहाँ नलिनाप्ततनय ने नग-समूह को,।। ५१७० ।।

—शक्तिविक्रमकलाशाली नील ने शक्ति को, अनल ने सप्तपर्ण (वृक्ष) को, शेष प्लवंगों ने खदिर (वृक्षों) को लेकर, तदनन्तर शतबलि ने बदरी वृक्ष को, सौमित्र ने तीन उग्र सायकों को, भूमीश ने सौ उरु-शरों को चलाया। शरभ, ऋषभ, जांबवान, उरुभुजवाले गवय, सुषेण, गवाक्ष, गज, द्विविद, मैन्द तथा असमान विक्रमवाले वानरों ने अधिक विक्रम से महान् गिरियों-तरुओं को आकाशवीथि पर एक साथ उत्कर्ष से फेंका। शेष लोगों ने भी आश्चर्यप्रद रूप से विजृंभित हो तरु-शैल-ततियों को जहाँ-तहाँ फेंका। (फेंकने पर) उन्हें चूर-चूर बना गिराकर, भानुनन्दन को एक भयद-भल्ल से वृक्ष पर (मारकर) पीड़ित किया तो वह प्रचंड वायु के आघात से

मारुतसुतु गंधमादनु नलुनि । नीरादिगा गल बीर वानरुल
विवशुलगा जेसि विविध बाणंबु । लवनीशुपै नेसि हस्त लाघवमु
विलसिल्ल लक्ष्मणु विलु द्रेंव नेसि । यलुक विभीषणु नदरंट नेसि
विलय कालांबुद विधमुन जेंलगि । पलुमारु गंजिचि पलिकें नेंतयुनु:;
"जूचिते ! रघुराम! सुग्रीव मुख्यु । लीचंदमुन गूलिरे नलिग नपुडु;
नरनाथ तनय! निन् नम्मिन यट्टि । बिरुदु वानर जाति पीचंबु लडगें"
ननुचु वेंडियु बेंचि यन्निशाचरुडु । घन बाण ततुल नक्कपिसेन मीद
नडरिचें घन भूधराभदेहमुल । नेंड लेक युंड; ननेक मार्गणमु
लटु लेसि "गेंलिचिति" ननि यार्चिकोनुचु । बटुगति लंक लोपलि केगि यंत
दन संगर क्रिय दशकंठु तोड । विनुतंबुगा जेंप्प विनि यतंडुब्बि ५१९०
"तनय! र"म्मनुचु दद्दयु गौगिलिंचि । कौनि "नाकु नीयट्टि कोडुकु गलगंग
बगवारिचे नाजि बडिन बांधवुल । पगनीग गांचिति; बासें नावगपु;
कडिदि वीरुडु कुंभकर्णुंडु मडिसें;। नडगें महाबलुंडगु प्रहस्तुंडु;
मृति बोंदें द्रिशिरुंडु मेटि वीरुंडु; । हतुडय्यें नतिकायुडालंबु लोन;

कम्पित होनेवाले वृक्ष के समान विचलित हो गया। इतने में ऋषभ, गवाक्ष, सुषेण, बालिनन्दन, जांबवान, कुमुद, ।। ५१८० ।।
—मारुतसुत, गन्धमादन, नल, नील आदि वीर वानरों को विवश बनाकर विविध बाण अवनीश पर चलाकर हस्त-लाघव से विलसित हुआ। लक्ष्मण के धनुष को तोड देकर, क्रोध से विभीषण पर मर्मांतक आघात कर, विलयकाल के अंबुद के समान विजृंभित हो, कई बार गरजकर यों बोला— "देखा है न ! रघुराम ! जब मैं क्रुद्ध हुआ तो सुग्रीव आदि प्रमुख इस प्रकार गिर गए न ! हे नरनाथतनय !" (ऐसा) कहते हुए और भी विजृंभित हो, उस निशाचर ने घन बाणसमूहों को उस कपिसेना पर चलाया जिससे उनके घनभूधर-सम देहों में कहीं जगह ही न रह गई। इस प्रकार अनेक मार्गण चलाकर 'जीत गया हूँ' ऐसा सिंहनाद करते हुए, पटुगति से लंका में जाकर तब अपनी संगर-क्रिया (युद्ध-विधान) दशकंठ को विनुत (सराहनीय) रूप से कही जिस पर, वह फूलकर, ।। ५१९० ।।
—'हे तनय ! आओ' कह अधिक आलिंगन कर (कहा—) 'मेरे तुम्हारे जैसा पुत्र होने से शत्रुओं द्वारा युद्ध में गिरे (मरे) बांधवों का प्रतिशोध ले सका। मेरा दुख दूर हो गया। साहसी वीर कुम्भकर्ण मृत हुआ, महाबलवाला प्रहस्त मर गया, श्रेष्ठवीर त्रिशिर मृत हो गया, युद्ध में अतिकाय निहत हो

बोडगनि भीकर भ्रुकुटियै विल्लु । वडि नैक्कुवेट्टि दुर्वार वेगमुन
ब्रळय कालमु नाडु बलु वृष्टि गुरियु । जलदंबु विधमुन शरवृष्टि गुरिसे;
गगनंबु निड नाघनुलु राघवुलु । नौगि नेसि रलुकतो नुग्र बाणमुल;
नमरारि यवि द्रुंचि यम्मुल सोन । दिमिरम्मु वरगिंचे दिक्कुलंदपुडु;
पृथु चंड कोदंड भीकर ध्वनियु । रथनेमि रवमुनु रथ तुरंगमुल;
खुरमुल म्रोतयु गुणमु निस्वनमु । नरुदार जरियिंचु नतनि रूपंबु
विन गान बडकुन्न विस्मयंबंदि । घन वीथि बरिकिंप ग्रम्मर नात
डखिलांबकंबुल नादाशरथुल । निखिलांगकम्मुलु निड नेयुटयु ५२३०

ना खरकरकुलुंडाराघवेन्द्रु । डा खर सूदनुं डपुडु कोपिंचि
वाडेयु मार्गणावळु लेंदु वच्चु । वाडि भल्लमु लंदु वडि नेसि येसि
या बाण जालंबु लंदंद तुनुम । नाबाहु बलशालि यगु निंद्रजित्तु
बहु विधंबुल देरु वरपुचु नेसे । बहुशरंबुल; नंत बार्थिव सुतुलु
कमिय बूचिन किंशुकंबुल तोडि । समत नोप्पिरि शरक्षत युतांगमुल;
गरमुग्रमैनट्टि कालमेघंबु । करणि नोप्पिन तन घन शरीरंबु
तेलिय कुंडग याम्य दिक्कुन नुंडि । पलिकै नय्यिंद्रारि पार्थिवेश्वरुल;

गिरा देनेवाले राघवों को देखकर, भीकर भ्रुकुटिवाला होता हुआ, धनुष का झट संधान कर, दुर्वार वेग से, प्रलयकाल के दिन अधिक वृष्टि करने वाले जलद के समान शरवृष्टि की। आकाश भर जाए, उन महान् राघवों ने क्रोध से ऐसे उग्र बाण चलाए। अमरारि ने उन्हें काट देकर, बाण-वर्षा से दिशाओं में तिमिर को फैला दिया। पृथु-चंड-कोदंड की भीकर ध्वनि और रथनेमी-रव, रथ-तुरंगों के खुरों की ध्वनि, गुण-निस्वन (धनुष-टंकार), अनुपम रूप से विचरनेवाला उसका रूप—(ये सब) सुनाई पड़कर, दिखाई न पड़ने से, विस्मित हो, आकाशवीथि पर निहारने से पुनः उसके अखिल-अम्बकों से दाशरथियों के निखिल-अंगकों को भर देने पर, ॥ ५२३० ॥

—खरकर (सूर्य) -कुलवाले राघवेन्द्र ने उस खरसूदन पर तब क्रुद्ध होकर, जिधर से उसके चलाए मार्गण आते हों, उसी ओर पैने भाले फेंक-फेंककर उन बाण-जालों को जहाँ-तहाँ काट देने पर, उस बाहुबलशाली इन्द्रजित ने बहुविधों से रथ चलाते हुए बहुशर चलाए। तब पार्थिवसुत (राजकुमार) शरक्षतयुक्त-अंगों से, अत्यधिक पुष्पित किंशुकों के समान लगे। अति उग्र कालमेघ के समान शोभित अपने घन शरीर को दिखाई पड़ने न देकर,

"नेक्कॅड बोयॅद ? डॅदु डागॅदरु ? । चिक्कितिरिट; मिम्मु जेरि कावंग
दिक्कॅव्वरिट मीद? दिविजुलटन्न । जुक्कवाली वंक जूड नोड्डुरु;
बक्क कोतुल नम्मि बवरम्मुनकुनु । मोक्कलम्मुन वच्चि मोस
पोयितिरि ५२४०

पट्टुतरंबैन नाबाणाग्नि शिखल । बॅट पॅट प्रेलक प्रिदिलि पो गलरॅ?
या बिभीषणुनि वाक्यमुलॅ निक्कुवमु । गा विनि ना शक्ति गान लेरैति;
रिदॅ मिमु दॅगटार्चि येचि यी प्रॉद्दॅ । कदलि ययोध्यलो गलवारि नॅल्ल
बरि मार्चि मिचि या भरत शत्रुघ्नु । लिरुवुर दॅगटार्चि येतॅंतु" ननग
गड्डु वॅरगंदिरि कपुलु नाकपुलु; । नडरु कोपंबुन ना इंद्रजित्तु
पडुमट दन पेरु पंतंबुलाडु; । दडयकुदीचिनि धनुवु म्रोयिंचु;
धीरुडै यट दूर्पु दिक्कुन नुंडि । घोरंपु शर वृष्टि गुरियिंचु मिंचि;
दक्षिणंबुन केगि धरणि ग्रक्कदल । नक्षीणशक्तिमै नडरि पॅल्लार्चु;
निब्भंगि दिरिग यनेक मार्गमुल । नब्भानुसून्वादुलरुदंदि चूड
शरमुलु विंटितो संधिंचिकोनुचु । बरुवडि वाडेयु बाणजालमुलु ५२५०

याम्यदिशा से उस इन्द्रारि ने पार्थिवेश्वरों से कहा—"कहाँ जाएँगे ? कहाँ छिपेंगे ? यहाँ फँस गए हैं। आपके पास आकर, रक्षा करनेवाला कौन है ? दिविज तो प्रतिकूल हो, इस ओर देख भी नहीं सकेंगे। दुर्बल वानरों पर भरोसा करके, युद्ध के लिए बड़े उमंग से आकर धोखा खा गए हैं। ॥ ५२४० ॥

—पट्टुतर मेरे बाणों की अग्निशिखाओं से पट-पट फूट न जाकर बच निकल सकेंगे ? उस विभीषण के वाक्यों को ही वास्तव मानकर मेरी शक्ति को देख (पहचान) न सके। यही तुम्हारा संहार करके विजृंभित हो आज ही निकल पड़कर, अयोध्या में स्थित सभी लोगों का संहार कर, उन भरत-शत्रुघ्न दोनों का संहार कर आऊँगा।" (ऐसा) कहने पर, —कपि और नाकप (देवता) अधिक चकित हुए। उत्कट कोप से वह इन्द्रजित पश्चिम में अपना नाम ले ललकारता, अविलम्ब उदीच्य (दिशा) में धनुष का टंकार करता, धीर बन तब पूर्व दिशा से घोर-शर वृष्टि कर विजृंभित होता, दक्षिण में जाकर धरणी अत्यधिक काँप उठे, ऐसा अक्षीण-शक्ति से विजृंभित हो अति सिंहनाद करता। इस प्रकार अनेक मार्गों से घूमकर, भानुसून आदि के आश्चर्य-चकित हो देखने पर, धनुष पर शरों का संधान कर, शीघ्रता से उसके द्वारा डाले जानेवाले बाणजालों को— ॥ ५२५० ॥

जनपतुल् द्रुंतुरु चटुलाबकमुल । ननिमिषुलाश्चर्यमंदि वीक्षिप;
नप्पुडु शतसंख्युलतनिचे गपुलु । कुप्पलु कुप्पले कूलुट सूचि
सौमित्रि कोपिंचि जनपतिकनिये; । "भूमीश! वीनिचे बोलिसिरि कपुलु
इदि येमि ? देव ! नीविट्लूरकुनिकि ! । यदि चूडुमा भुवि नेल्ल दिक्कुलनु
बडि पोर्लुचुन्नारु भल्लूकपतुलु; । मडिसिरनेकुलु मर्कटेश्वरुलु:
जगतीश ! निनु नम्मि सकल वानरुलु । मिगिलिन भक्तितो मेकोनि वच्चि
तगिलि यी यंद्रारि दारुणास्त्रमुल । नोगिलि नी नाममे नोडुवुचुन्नारु;
पगवाडु चेरि नी बलमेल्ल जंपे; । दगदिंक देगकुन्न द्रैलोक्यनाथ !
पग देग नलुगु नी बाणजालमुलु । गगनंबु दिक्कुलु गलयंग निंडि
निंडिन भक्तितो निजदिव्यतनुवु । लोंडोंड धरियिंचियुन्नवि; वानि ५२६०
गैकोनि रिपु जंपु कमलाप्तवंश! । नीकेदुरै पोर नेर्तुरे रिपुलु ?
इंत शांतमु दगुने नृपुलकुनु ? । जिंतिपवेल विचित्रंबु गाग ?
बरगिन नी बाहुबल पराक्रममु । दरुणार्कसमतेज! तलपोयवकट !

—जनपति चटुल-अंबुकों से ऐसा काट देते कि अनिमिष आश्चर्यचकित हो देखते। तब उसके द्वारा शतसंख्या में कपियों का ढेर के ढेर गिरते देखकर, सौमित्र क्रुद्ध होकर, जनपति से (यों) बोला—"हे भूमीश ! इसके हाथ कपि मर गए। यह क्या देव ! ऐसा चुप क्यों हैं ? यही देखो न, भुवि पर, समस्त दिशाओं में, गिरकर, भल्लूकपति लोट रहे हैं। अनेक मर्कटेश्वर मर गए है। हे जगदीश ! तुम पर भरोसा रखकर सकल वानर अति भक्ति से सहमत हो आकर, लगकर, इस इन्द्रारि के दारुण-अस्त्रों से विकल हो, तुम्हारा नाम ले रहे हैं। शत्रु ने लगकर तुम्हारे समस्त बल (सेना) का संहार कर दिया है। हे त्रैलोक्यनाथ ! अब साहस से काम न लेने पर लाभ नहीं होगा। शत्रुता को मिटाने के लिए क्रुद्ध बने तुम्हारे बाण-समूह गगन (और) दिशाओं में पूर्णरूप से भरकर, भरपूर भक्ति से सर्वत्र अपने दिव्य तनुओं को धारण किए हुए है। उन्हें— ॥ ५२६० ॥

—ग्रहणकर, हे कमलाप्तवंश वाले ! रिपु का संहार करो। रिपु तुम्हारे समक्ष आकर लड़ सकते हैं ? (नहीं।) नृपों को इतनी शान्ति उचित है ? विचित्र है, जो तुम इस पर विचार नहीं करते ! हे तरुणार्क समतेजवाले !

परमेश ! नायट्टि बंटु नी सेव । चिरभक्तिमै जेय जित नीकेल ?
यी निशाचरकीट मी इंद्रजित्तु । नेन चंपेद देव ! नी महत्त्वमुन;
निटमीद ब्रह्मास्त्र मे ब्रयोगिंचि । कुटिलराक्षसकोटिकुलमैल्लनडतु"
ननवुडु रघुरामुडनुजुनिकनियें: । "विनुमु लक्ष्मण ! योंक्क वीनिकै पूनि
चनुनें पल्वुर जंप ? संग्राममुनकु । जनुदेनिवारल समयिप दगुनें ?
यनिमिष ब्रह्म रुद्रादुलचेत । ननि जावडितडनि यब्जुंडिडिन
वरमु जेल्लिपंग वलसिये वीनि । निरवंद गाचिति; निक नुंडेनेनि
५२७०
वीनि जंपगजालु वीर वानरुल । नेन पंपेद; वारें हिंसितुरितनि
नटुकाक तक्किन नम्मेघनादु । डट निंद्रलोकंबुनंदु डागिननु
नट ब्रह्मलोकंबुनंदु डागिननु । नट रुद्रलोकंबुनंदु डागिननु,
धरणि दूरिन रसातलमु सोंच्चिननु । शरधिलो मुनिगिन जमुडु गाचिननु
दन तात यगु धात तन वेंन्क बेंट्टु । कोंनिनि ने बोनीक घोराजि द्रुंतु"
ननि पल्क रघुरामु नलुक वाडेंरिगि । यनि सेयनोल्लक या लंक जोंच्चि

शोभायमान अपने बाहुबल-पराक्रम पर हाय, विचार ही नहीं करते ? हे परमेश्वर ! मुझ जैसा सेवक चिर-भक्ति से तुम्हारी सेवा करता रहे तो तुम्हें चिन्ता क्यों ? इस निशाचर-कीट इन्द्रजित को हे देव ! तुम्हारे महत्व के कारण मैं ही मार डालूंगा। अब आगे मैं ब्रह्मास्त्र का प्रयोग कर कुटिल-राक्षस-कोटि-कुल का दमन कर दूंगा।" ऐसा कहने पर रघुराम ने अनुज से कहा—"सुनो लक्ष्मण ! एक इस (राक्षस) के लिए जानबूझकर अनेकों को मार डालना उचित है ? संग्राम में न आनेवालों को मार डालना चाहिए ? (नहीं) अनिमिष-ब्रह्मा-रुद्र आदियों से यह अनि (युद्ध) में नहीं मरेगा, ऐसा अब्जज (ब्रह्मा) के प्रदत्त वर का निर्वाह करना ही पड़ने से शोभा से इसे बचाए रखा है। अब (आगे) डटा रहेगा तो, ॥ ५२७० ॥

—इसे मार डाल सकनेवाले वीर-वानरों को मैं ही भेज दूंगा। वे ही उसे हिंसित (पीड़ित) करेंगे। ऐसा न होकर, बचकर वह मेघनाद उधर इन्द्रलोक में छिप जाए, उधर ब्रह्मलोक में छिप जाए, उधर रुद्रलोक में छिप जाए, धरणि में घुस जाए, रसातल में पैठ जाए, शरधि (समुद्र) में डूबे, यम (उसकी) रक्षा करे, उसके दादा धाता (ब्रह्मा) अपने पीछे छिपा लें तो न जाने देकर, (उसे) घोर-युद्ध में मार डालूंगा।" ऐसा कहने पर, रघुराम के क्रोध को वह (इन्द्रजित) जानकर, युद्ध करना न चाहकर, उस लंका में प्रवेशकर घोर निशाचर-कोटि (-समूह) के साथ जाकर, इन्द्रजित

घोर निशाचरकोटितो बोयि। या रावणुनितोड ननॆ निंद्रजित्तु;
"कट्टलक गपुलनु गय्यंबुनंदु। नेट्टन नेसिति नेलपै गूल;
मनुजुलनिद्दर मानमुलगॊंटि"। ननवुड्डु रावणुंडतनि गोपिंचि
"यिदि येमिपोक नी? विदि येमि राक?। यिदियेमि सेतगा नॆन्नि
चॆप्पॆदवु? ५२८०
ऒकपरियुनु जंपकूरक वच्चि। प्रकटिंचॆ 'दंदरु वडि' रनि नीवु;
वीवेचि नडचिन निखिललोकमुलु। भाविप नप्पुडे भस्ममै पोवु
नदिगान निदियॊक्क यधिकमटंचु। मदि दलंपकुमु सम्मदमुन नीवु;
मगटिमि रामलक्ष्मणुल वानरुल। दॆगटार्चि कानि ना दॆसकेगुदेकु"
मनवुड्डु "नौगाक!" यनि यिंद्रजित्तु। दनुजेंद्रु वीड्कॊनि तन मदिलोन
"नतिकाय कुंभकर्णादि दैतेय। पतुलॆल्ल मडिसिरिऽभंगि नुग्राजि;
गान ना रामलक्ष्मणुल ने रीति। नैननु गॆल्चॆद" ननि निश्चयिंचि

इंद्रजित्तु मायासीतनु दॆच्चि तल दरुगुट

सीतचंदमु गाग जॆलुवॊंद नॊक्क। नातिनि दन माय नाकेशवैरि
यट जेसि प्रीति मायासीत गॊनुचु। बट्टुबलसहितुडै पडुमट वॆडलॆ;
वानिकि गाक या वानरुलॆल्ल। नानाविधंबुल नलिकि पारुटयु ५२९०

ने उस रावण से कहा—"अधिक क्रोध से कपियों को युद्ध में झट जमीन पर गिरा दिया। दोनों मनुजों के मान (गौरव) का अपहरण किया।" ऐसा कहने पर रावण ने उस पर क्रुद्ध होकर (कहा)—"यह कैसा जाना? यह कैसा आना? यह कैसी करतूत है जो सराह कर कहते हो? ॥ ५२८० ॥
—एक बार भी न मारकर लौट आकर तुम कहते हो कि 'सब गिर गए हैं।' ऐसा होने से इसे अतिशय कार्य मानकर मन में मुदित मत बनो। पौरुष से राम-लक्ष्मण (तथा) वानरों का संहार किए विना मेरी ओर मत आओ।' ऐसा कहने पर "ऐसा ही हो" कहकर इन्द्रजित ने दनुजेन्द्र से विदा लेकर, अपने मन में यह निश्चय किया कि "अतिकाय, कुम्भकर्ण आदि सभी दैतेय-पति इसी प्रकार उग्र-युद्ध में मर गए। अतः उन राम-लक्ष्मणों को किसी भी रीति से जीत लूंगा।"

इन्द्रजित का माया-सीता को लाकर सिर काट देना

नाकेश-वैरी (इन्द्र का वैरी) ने सीता के समान ही शोभायमान एक स्त्री को अपनी माया से बनाकर, प्रीति से उस माया-सीता को साथ लेते हुए, पट्टु बल सहित हो पश्चिम की ओर से निकल पड़ा। उसका सामना न करसक समस्त वानरों का नाना विधियों से भीत हो भागने पर ॥ ५२९० ॥

हनुमंतुडपुडु महाशैलश्रृंग । मनुवारगा बट्टि यसुर माकोनग
नरुदार नडचुचो नय्यिंद्रजित्तु । नरदंबु मीद मायासीत गनियें;
वेक्कसंबुग रामविरहानलंबु । निक्किन नाहारनिद्रलु दोरगि
कडलेनि वग बोंदुगति गानबडग । वेडलु निट्टूर्पुल वेलवेल बारि
कडु गृशंबगु मेनु गमलपत्रमुल । नोंडुचु लोचनमुल नोलुकु बाष्पमुलु
जडगट्टि सीमंतसरणि जिक्कोंदवि । यडगोनि मलिनंबुलगु शिरोजमुलु
धरणिरजोलिप्ततनुतरांगमुलु । गरमु विन्ननि मोमु गरपल्लवंबु
गदिसिन चेक्कुनै गालि चे जाल । गदलेडु लतवोले गंपिचुचुन्न
या महीसुत जूचि "यकट ! वीडिक । नेमिसेयुनो रामहृदय-वल्लभनु ?
नी दीनदश नाकु नीक्षिप वलसें । हा दैवमा !" यनि हनुमंतु डडरि
५३००

घोर वानर वीर कोटितो गूडि । दारुणाकृति बेंचि तनमीद ननिकि
नडचुचो नावायु नंदनु गांचि । कडु ग्रूरुडै दशकंठ-नंदनुडु
"इदि येल वच्चेद वीसेन तोड ?। निदे चूडरा, सीत ! यी सीत कोरकु
नलजडि वडियेद; रटु कान दीनि । दल द्रेव्व नेसेद दविलि ये" ननुचु

—तब हनुमान ने महाशैल-श्रृंग को सुघड़ता से पकड़कर, असुर का सामना करने के लिए, शोभा से चलते हुए उस इन्द्रजित के रथ पर माया-सीता को देखा। अधिक बने राम-विरहानल से ऐंठकर, आहार-निद्राओं को छोड़कर, अपार-वेदना को पार करने का मार्ग दिखाई न पड़ने पर, निकलनेवाली लम्बी साँसों के कारण विवर्ण बनकर, अधिक कृश बने शरीर से, कमलपत्रों का धिक्कार करनेवाले लोचनों से उमड़नेवाले बाष्प (आँसू), जटाएँ बनकर, सीमन्त-मार्ग में उलझकर, घनीभूत (तथा) मलिन बने शिरोज, धरणी के रज से लिप्त (धूलिधूसरित) तनुतर (श्रेष्ठ शरीर) के अंगों (अवयवों) से युक्त हो, अधिक विवर्ण बने मुख (तथा) करपल्लवों से युक्त कपोल के साथ, पवन के कारण अधिक हिलनेवाली लता के समान कंपित होनेवाली उस महीसुता को देखकर "हाय ! यह राम की हृदय-वल्लभा के साथ आगे और क्या करेगा ? हाय दैव ! मुझे यह हीन दशा देखना पड़ा न !" (ऐसा) सोच हनुमान विजृंभित हुआ ॥ ५३०० ॥

—घोर वानर वीर कोटि से युक्त होकर, दारुण आकृति से विजृंभित होकर, अपने पर युद्ध के लिए आनेवाले उस वायुनन्दन को देखकर, अतिक्रूर हो दशकंठनन्दन ने (कहा)—"इस सेना के साथ यह क्यों आ रहे हो ? यही देख रे सीता को। इसी सीता के लिए विकल बन रहे हैं न, अतः लगकर इसके सिर को झट काट दूंगा।" (ऐसा) कहते हुए, शार्दूल के पास

गलगि शार्दूलंबु कड नुन्न हरिणि । पौलुपुन नयनांबुपूरंबु लौलुक
"हाराम ! हाराम !" यनु नार्तरवमु । लारंग जेयु मायासीत नौडिसि
तल वेंड्रुकलु वट्टि दट्टिंचि यीड्व । नलिगि या दैत्युतो ननियें वायुजुडु;
"तगुनें दुरात्मक ! दनुजुंडवैन । नगुदुवु गाकेमि, याविश्रवसुनि
मनुमड; विब्भंगि मनुकुलेश्वरुनि । वनित मुंदल बट्टि वारक तिगुव"
ननवुडु गरवाल मंकिंचि यसुर । तनरु मायासीत तल द्रेव्वनेसि
५३१०

"चनु मिक रामलक्ष्मणुलकु जेप्पु"। मन खिन्नुडै ननिल-नंदनुडु;
वसुधातलंबुन वडि नेत्तुरौल्क । नसिधार दैगिन मायासीत जूपि
हनुमंतु तोड निट्लनें निंद्रजित्तुः । "वनचरोत्तम ! रामु वनित नी सीत
घनतरंबैन नाकरवालमुननु । दुनिमिति, मीरणोद्योगंबुलिक
जिक्कें बौ" म्मंचु विजृंभिचि वलिकि । दिक्कुंभि कर्णमुल् दिशलुनु बगुल
संहार-घनघन-स्तनितमो यनग । सिंहनादमु सेय जित्तमुल् गलग
नप्पुडु रणमुलो ना यिंद्रजित्तु । दप्पक कनुगोनि तनरिन भीति
वनचरुल् वारंग वायुनंदनुडु । कनुगोनि पलिकें "नो कपिवीरुलार !

स्थित हरिणि के समान, नयनांबु-पूर (प्रवाह) के उमड़ने पर, 'हे राम ! हे राम !' कहते आर्तरव करनेवाली मायासीता के शिरोज खींच पकड़, डाँटकर खींचा। उस पर क्रुद्ध हो उस दैत्य से वायुज ने कहा—"हे दुरात्मक ! क्या (यह तुम्हारे लिए) उचित है ? दनुज हो तो सही किन्तु उस विश्रवसु के पौत्र हो। इस प्रकार मनुकुलेश्वर (राजाराम) की स्त्री के शिरोजों को पकड़ खींचने का साहस करते हो ?" ऐसा कहने पर, करवाल हिलाकर, असुर ने शोभायमान मायासीता के सिर को काट डालकर, ।। ५३१० ।।

—"जाओ, अब राम-लक्ष्मण से कह दो" कहने पर अनिलनन्दन खिन्न हो खड़ा रहा। असिधारा से कटकर वसुधातल पर गिरकर, रक्त से लथपथ माया-सीता को दिखाकर हनुमान से इन्द्रजित ने यों कहा—"हे वनचरोत्तम ! राम की स्त्री इस सीता को मेरे घनतर करवाल ने मार डाला। अब तुम्हारे रणोद्योग (रण के प्रयत्न) व्यर्थ हुए। जाओ।" ऐसा विजृंभित हो कहकर, दिक्कुंभि (दिग्गज) के कर्ण (तथा) दिशाएँ फट जाएँ, मानों संहार-घन-घन (प्रलयकाल-मेघ) का स्तनित (गरज) हो, ऐसा सिंहनाद किया। (तब) चित्तों के व्याकुल होने पर, रण में उस इन्द्रजित को अवश्य देखकर, व्याप्त भीति से वनचरों के भाग जाने पर वायुनन्दन ने (उन्हें) देखकर कहा—"हे कपि वीरो ! समर का विक्रम

समर विक्रममुलु सालिंचि पार। समयमे? यॆरुगरे समरधर्मंबु?
तलप बंधुल कॆल्ल दलवंपु गाग। गलन बारुट कंटे कष्टंबु गलदे?
५३२०
नडचॆद ने मुन्नु; ननु गूडि मीरु। कडिमि वाटिंतुरुगा!" कंचु बलुक,
नंदरु दरुवुलु नद्रि शृंगमुलु। नंदंद कैकॊनि हनुमंतु गूडि
रयमुन नार्चुचु राक्षस सेन। पयि वैचि; रंत ना पवमानसुतुडु
ज्रलमुन नॊक महाशैल मंकिंचि। यलुकतो वैवंग नानिशाचरुनि
सारथि रथ मील जन दोल नदियु। दारुण ध्वनि तोड धर गृंग बडियॆ;
नालोन वॆंडियु नगचरुल् दरुलु। शैल शृंगमुलु राक्षसुलपै वैव
दन सेन विरिगिन दशकंठसुतुडु। गनुगॊनि कोपिंचि कपियूथ-पतुल
बटु शूल मुद्गर प्रास खड्गमुलु। जटुल वेगंबुन समयिंचॆ; नपुडु
मारुतात्मजुडुनु मदिलोन गिनिसि। घोरविक्रम कळा कुशलुडै पेंचि
कडिमिमै गवियु राक्षसुल रूपडचि। वडि शिलातरु घोरवर्षमुल् गुरिसि
५३३०
यानिशाचर सेन नवलील दोलि। वानरावलि जूचि वायुनंदनुडु
"वनचरपतुलार! वसुधेशु देवि। दनुजाधमुडु संपॆ; दर्प्पे गार्यंबु;

छोड़कर, भाग जाने का समय है क्या? समर-धर्म को नहीं जानते हो? ऐसा युद्ध में भाग जाने की अपेक्षा जिससे सोचने पर समस्त सम्बन्धियों में अपमान हो, (अन्य) कोई कष्ट है क्या? ।। ५३२० ।।

—मैं आगे-आगे चलूँगा। मेरे साथ आप भी साहस का प्रदर्शन कीजिए।" ऐसा कहने पर सभी (वानरों) ने तरु, अद्रि-शृंगों को सर्वत्र हाथ में ले, हनुमान के साथ मिलकर, वेग से सिंहनाद करते हुए, राक्षस-सेना पर डाल दिया। तब उस पवमानसुत ने हठ से एक महाशैल को उठाकर, क्रुद्ध हो डालने पर, उस निशाचर के सारथी ने रथ को अलग हटकर चलाया, तो वह (महाशैल) भी दारुणध्वनि से ऐसा गिरा जिससे धरा धँस गई। इतने में तरुचरों के और भी तरु (तथा) शैल-शृंगों के राक्षसों पर डालने पर, अपनी सेना के टूट जाने पर (भीत हो भागने पर), उसे देख दशकंठ-सुत ने क्रुद्ध हो, कपियूथ-पतियों को पटु-शूल, मुद्गर, प्रास, खड्गों से चटुलवेग से संहार कर दिया। तब मारुतात्मज ने मन में क्रुद्ध हो, घोर-विक्रम-कला-कुशल हो, विजृंभित हो, साहस से, बढ़ आनेवाले राक्षसों का दमन कर, झट शिला-तरु की घोर वर्षा कर, ।। ५३३० ।।

—उस निशाचर-सेना को सरलता से भगाकर, (पुनः) वानर-समूह को देख वायु-नन्दन ने (कहा)—"हे वनचरपतियो! वसुधेश (राजा-राम) की देवी

समर मेटिकि निक ? जनकज वार्त । कमलाप्तकुलुन कौक्कट
नेरिंगिप
नरिगेद; नटमीद नारामु डेंद्दि । वेरवानतिच्चू, नाविधमु सेयुदमु;
मीरंदरुनु संभ्रमिपक युंडु; । डी राक्षसुडु क्रूरु; डेमरवलव"
दनि यटु मगुडिन हनुमंतु जूचि । तन मदि नप्पुडु दशकंठ-सुतुडु

इंद्रजित्तु निकुंभिळ यागमु सेयुट

"ई महाबलु डेगें; निट मीद दनकु । होम विघ्नमु सेय नोपरेव्वरुनु"
ननि निकुंभिळ केगि यचट निशाटु । डेनसिन निष्ठतो नेपु दीपिप
गल्लु नेत्तुरु पालु घन कच्छपमुल । बल्लुल बिल्लुल बलु सर्पमुलनु
गारु कोळ्ळनु मंचि गंधंबु देने । नारिकेळंबुल नल्लनि कोळ्ळ
५३४०
सूकरंबुल मरि सौरिदि केशमुल । गाकुल देल्लनि गर्दभंबुलनु
गारेनुपोतुल घन मेषमुलनु । नारु नालुगु रेंडु नरुवदि करुल
गोंड गोर्रेलु वेयि कोट्ल ळक्ष । मंडूकमुल गोटि माणिक्यमुलनु
मुत्यंपु जिप्पलु मूडर्बुदमुल । गात्यायनीदेवि कड निष्ठ निलिपि

को दनुजाधम ने मार डाला। कार्य बिगड़ गया है। अब समर (करना) क्यों ? जनकजा का समाचार कमलाप्तकुल को झट बताने जाऊँगा। उस पर वह किसी उपाय का आदेश देंगे। उस प्रकार करेंगे। आप सब बिना संभ्रमित हुए रहिए। यह राक्षस क्रूर है। असावधान मत बनिए।" (ऐसा) कह, मुड़ने पर हनुमान को देख, अपने मन में तब दशकंठसुत ने (सोचा)—

इन्द्रजित का निकुंभिल याग करना

—"यह महाबली चला गया। अब आगे मेरे होम का कौन विघ्न (उत्पन्न) कर सकता है ?" (ऐसा) सोच निकुंभिला जाकर वहाँ निशाट ने अधिक निष्ठा से, औन्नत्य के दीप्त होने पर, मदिरा, रक्त, दूध, घन-कच्छपों, छिपकलियों, बिल्लियों, अनेक सर्पों, काले मुर्गों को (तथा) अच्छे चन्दन को, मधु को, नारिकेलों को, जंगली मुर्गों को, ॥ ५३४० ॥

—सूकरों को, फिर क्रम से केशवाले कौवों को, सफेद गधों को, काले भैंसों को, घन-मेषों को, छ, चार, दो, साठ करियों, पहाड़ी भेड़ों को, हजार-करोड़-लाखों मंडूकों को, करोड़ माणिक्यों को (तथा) तीन अर्बुद सीपियों को कात्यायनी देवी के समक्ष निष्ठा के साथ रखकर, मन से

मनमुन निगमन मंत्रपूतमुग । ननलुनि रुधिर मांसादुल दनियि
होमंबु सेयुचु नुंडे; निय्येंडनु । रामुडा पडुमटि रभसमंतयुनु
विनि जांबवंतुनि वेगंबे पिलिचि । "विनवच्चे बडुमट विपुल घोषंबु;
हनुमंतुनकु नेंट्टि हानियैनदियो ? । घनमैन यट्टि या कलकलं बरय
जनुमु रयंबुन सैन्यंबु तोड" । ननिन ऋक्षेशुंडु नतिशीघ्र वृत्ति
बलुविडि भल्लूकपतु लुग्रबलुलु । गोलिचि यप्पुडु नूरु कोट्लु राग
५३५०

वडिगोनि पश्चिम द्वारंबु देसकु । नडचुचो गनियें नन्नडुम वायुजुनि;
वायुजुंडुनु जांबवंतुनि जूचि । या यिंद्रजित्तु कार्यं बेंरिगिचि
"यी वार्त रामुन केंरिगिंचि वत्तु; । ने वच्चु नंदाक ने नुन्न येंडनु
गाचि यावाकिट गदलक युंडु; । मेच्चिन पगवानि नेमरवलव"
दनि पंचि वच्चुचो ननति दूरमुन । हनुमंतु बोंडगनि याराघवुंडु
"इतनि मुख स्थिति येमोको: कार्य । गति दोचुचुन्नदि कनुगोन निप्पु;
डिदि येतेंरंगनि यिच्चच जिंतिप । गदिसि वायुजुडु राघवुनकु म्रोक्कि,
"देव ! येमेल्लनु दैंपुमै दान । वावलि तोड गय्यम्मोनरिप

निगमन (वेद)-पूत मन्त्रों से अनल को रुधिर-मांस आदियों से तृप्तकर, होम करता रहा। यहाँ राम ने उस पश्चिम (दिशा) के समस्त रभस (संरंभ) के बारे में सुनकर जांबवान को शीघ्र बुलाकर (कहा)—"पश्चिम की ओर विपुल घोष सुनाई पड़ा है। पता नहीं हनुमान को क्या हानि हुई है ? उस महा कलकल (हलचल) को जानने के लिए शीघ्र ही सैन्य को साथ लेकर जाओ।" (ऐसा) कहने पर ऋक्षेश (भल्लूकपति) अति-शीघ्र वृत्ति से, उसी क्षण सौ करोड़ उग्र बल वाले भल्लूकपतियों के सेवा करते आने पर, ॥ ५३५० ॥

—पश्चिम द्वार की ओर झट चल पड़ा तो बीच में वायुज को देख लिया। वायुज ने भी जांबवान को देखकर, उस इन्द्रजित का कार्य बताकर, (कहा)—"यह समाचार राम को बताकर आऊँगा। मेरे आने तक, मैं जहाँ हूँ, वहीं (सावधानी से) रक्षा करते हुए, उस द्वार पर अविचल हो रहो। विजृंभित शत्रु को भूलो मत (असावधानी मत बरतो)।" ऐसा आदेश देकर आते समय अनति (थोड़ी) दूर पर हनुमान को देखकर राघव ने कहा—"यह क्या इसकी मुख-स्थिति कार्य की गति (के बिगड़ने) को सूचित कर रही है। अब यह क्या विधान है।" (उसे) देख मन में चिन्ता करते रहने पर, वायुज ने नियराकर, प्रणामकर (कहा)—"हे देव ! हम सबके साहस से दानव-समूह के साथ युद्ध करते रहने पर, हमारे समक्ष

मामुंदरनें तेंच्चि मदि शंक लेक । भूमिजतल द्रुंचें बोरि निंद्रजित्तु;
डावाकिटिकिनि ऋक्षाधीशु बेट्टि । यी वार्त सेप्पंग नेनु वच्चितिनि"
५३६०

ननु वार्त सेवुललो नडरकमुन्नें । घनवात निहत वृक्षंबुनु बोलें
नतुलित शोकाग्नि यडरि दहिंप । धृति दूलि रविकुलाधिपुडु मूर्छिल्लि
यवनिपै बडियुन्न नतिभीति नोंदि । प्लवगवल्लभुलेल्ल बलविंचुचुंड
गैकोनि यपुडु लक्ष्मणु डन्न दोंडल । पैकि रादिगिच्चि संभ्रमचित्तुडगुचु

लक्ष्मणुनि शोकमु

"नक्कटा ! राम ! नी यट्टि युत्तमुन । किक्कळंकमु वुट्टेने यिट्टि चोट
दल पोयग "जयंबु धर्मबु नंदु । गल" दनु माट निक्कमु गाकपोयें ?
नदियें निक्कंबैन नकट ! नी यट्टि । सदय चित्तुन केल संताप मोंदवु ?
नीचेत रावणुनिकि जावु लेक । यी चंदमुन नुंड नेटिकि वच्चु ?
जानकिकेल यीचावु सिद्धिंचु ? । गान धर्ममु कंटें घन मधर्मंबु;
त्याज्यंबु गादनि तलपोय कट्टि । राज्यंबु विडिचि यरण्यंबुलंदु ५३७०

ही मन में किसी शंका के बिना, झट से इन्द्रजित ने भूमिजा के सिर को काट दिया । उस द्वार पर ऋक्षाधीश को रखकर, यह समाचार देने मैं आया हूँ ।। ५३६० ।।

—ऐसा समाचार कानों में प्रवेश करने से पहले ही घन-वात (महान् वायु) से निहत वृक्ष के समान, अतुलित शोकाग्नि के बढ़कर, जला देने पर, धैर्य को खोकर, रविकुलाधिप मूर्च्छित हो, अवनि पर गिर पड़े । तब अतिभीत हो सभी प्लवग-वल्लभ रोते रहे । तब लक्ष्मण ने अग्रज को जांघों पर ले लेकर, संभ्रम से युक्त चित्त से (यों कहा)—

लक्ष्मण-शोक

—"हाय ! हे राम ! तुम जैसे उत्तम (व्यक्ति) को इस जगह ऐसा कलंक (अहित) उत्पन्न हुआ न ! सोचने पर यह बात यथार्थ सिद्ध नहीं हुआ न कि 'धर्म में ही विजय है' । यदि वह बात सत्य है तो हाय ! तुम जैसे सदयचित्त (वाले) को संताप क्यों उत्पन्न होगा ? (और) तुम्हारे हाथ न मरकर रावण इस प्रकार कैसे रह सकेगा ? जानकी को ऐसी मृत्यु क्यों प्राप्त होगी ? अतः धर्म से अधर्म ही बड़ा है । त्याज्य नहीं है, ऐसा न समझकर, वैसे राज्य (अयोध्या) को छोड़कर अरण्यों में ।। ५३७० ।।

दिरुग वच्चिति; मिंदु दिरिगेंडु मनकु । बुरुषार्थमुलु सिद्धि वोंदुने ?
याधिप ?
यवनीश ! 'निर्धनुलगुवारु सेयु । विविध यत्नंबुलु वेंस निदाघमुन
नडरेंडु सेलयेरुलडगेंडु भंगि । जेंडिपोवु" ननि बुधुलु सेप्पंग विनमें ?
धनमु लार्जिचिन धर्मकामादु । लनुपमस्थिति तोड नधिप ! सिद्धिंचु;
नेसगंग नर्थंबु लेव्वानि कोंदवु, । वसुध वानिकि नेल्लवारु जुट्टम्मु
लर्थंबु गलवाडे यरयंग बुरुषु; । डर्थंबु गलवाडे यधिकुंडु जगति;
नर्थंबे विद्ययु; नर्थंबे नेर्पु; । नर्थंबे कीर्तियु; नर्थंबे भूमि;
यर्थंबे बलमुनु; नर्थंबे कुलमु; । नर्थंबे बलगंबु; नर्थंबे गुणमु;
नर्थंबे शीलंबु; नर्थंबे प्राण; । मर्थंबे पुण्यंबु; नर्थंबे भूमि;
यर्थंबे रूपुनु; नर्थंबे नीति; । यर्थबे ख्यातियु; नर्थंबे भूति; ५३८०
यर्थंबे गतियुनु; नर्थंबे मतियु; । नर्थंबे येरुकयु; नर्थंबे सुखमु;
नर्थंबे शुचियुनु; नखिल काम्यमुलु । नर्थ-संपन्नुन करचेति वरयु;
नधिकुलु वेद वेदांग पारगुलु । बुधुलु दूर्वंबुल बूताक्षतमुल
नर्थंबु गलवानि नमर बूजितु; । रर्थि मोक्षार्थुलै यडवुल नुंडु

—विचरण करने आए। हे अधिप ! यहाँ हम-घूमनेवालों को पुरुषार्थों की सिद्धि कैसे होगी ? हे अवनीश ! बुधजनों को यह कहते नहीं सुनते हैं क्या कि 'निर्धन लोगों के द्वारा किए जानेवाले विविध प्रयत्न झट निदाघ में विलसित झरनों के दब (सूख) जाने के समान व्यर्थ हो जाएँगे ? हे अधिप ! धन का आर्जन करने पर अनुपम स्थिति से धर्म, अर्थ, काम आदि प्राप्त होंगे। शोभा से जिसे अर्थ प्राप्त होगा, वसुधा के समस्त जन उसके सम्बन्धी होंगे। सोचने पर जिसके पास अर्थ है, वह (सच्चे अर्थों में) पुरुष है। जगत में अर्थवान (धनी) ही अधिक (उत्तम) है। अर्थ ही विद्या है, अर्थ ही कुशलता है, अर्थ ही कीर्ति है, अर्थ ही विकास (वृद्धि) है, अर्थ ही बल है, अर्थ ही कुल है, अर्थ ही परिवार है, अर्थ ही गुण है, अर्थ ही शील है, अर्थ ही प्राण है, अर्थ ही पुण्य है, अर्थ ही भूमि है, अर्थ ही रूप है, अर्थ ही नीति है, अर्थ ही ख्याति है, अर्थ ही भूति (ऐश्वर्य) है, ॥ ५३८० ॥

—अर्थ ही गति है, अर्थ ही मति है, अर्थ ही ज्ञान है, अर्थ ही सुख है, अर्थ ही शुचिता है। सोचने पर अखिल काम्य (इच्छित विषय) अर्थ-संपन्न (व्यक्ति) की हथेली में रहते हैं। अधिक (श्रेष्ठजन), वेद-वेदांग पारंगत (जन), बुधजन, दूर्वाओं से, पूत-अक्षतों से अर्थवान की शोभा से पूजा करते हैं। चाहकर मोक्षार्थी हो जंगलों में रहनेवाले मुनिपुंगव कन्दमूल भेंटकर,

मुनिपुंगवुलु कंदमूलंबु लिच्चि । धनवंतु लगुवारि दर्शितु रेलमि;
बायक मंगळ पाठकानीक । गायक कुलमुलु गलवानि बोगडु;
नुन्नत कुचमुलु नुरु नितंबमुलु । नन्नुव नडुमुलु नलसयानमुलु
बिंबोष्टमुलु जंद्रबिंबाननमुलु । नंबुज ललितंबुलगु लोचनमुलु
रोलंबकुल नील रुचिर धम्मिल्ल । लीलालकंबुलु लेत-सिग्गुलुनु
नोय्यारिवगलुनु नोर चूपुलुनु । दिव्य माटलु गाम दीमंबुलनग ५३९०

नेलयिंचु नेर्पुलु नेल जव्वनमुलु । गल कांत लर्थंबु गल वृद्धु नैन
मनमार गोलुतुरु महित भोगेच्छ;। धनहीनु नोल्लरु तरुणुनि नैन;
लेमिये नरकंबु; लेमिये रुद्र । भूमियु; लेमिये भूरि शोकंबु;
लेमिये रोगंबु; लेमिये मृतियु; । लेमिये पापंबु; लेमिये जरयु;
लेमिये कष्टंबु; लेमिये करवु; । लेमिये दैन्यंबु; लेमिये वगपु;
लेमिये सकल मालिन्यंबु दलप; । लेमिये सर्वंबु लेमि; गावुनन्नु
नच्चेरुवुग राज्यमंतयु विडिचि । वच्चिनप्पुडे कादे वच्चे नापदलु?
जानकि मरणंबु सैरिप जाल; । मानव-लोकेश ! मार्गणावळुल
विसुवक राक्षसान्वितमुगा लंक । मसलक यिक भस्मंबु सेसेदनु",

प्रेम से, धनवानों के दर्शन करते हैं। निरन्तर मंगल पाठ करनेवालों के समूह (तथा) गायक-कुल अर्थवान की प्रशंसा करते हैं। उन्नत-कुच, उरु-नितम्ब, स्निग्ध कटि, अलसगति, बिंबोष्ठ, चन्द्रबिंब-आनन, अंबुजसम ललित लोचन, रोलम्ब (भ्रमर)-कुल-सम-रुचिर-धम्मिल्ल-लीला-अलक, नूतन लज्जा, विलासयुक्त हाव, वक्र कटाक्ष, मधुर वचन, काम के धाम सम ॥ ५३९० ॥

—आचरण करने का प्रावीण्य, नव यौवन (आदि) से युक्त कान्ताएँ, अर्थ से युक्त वृद्ध की भी महितभोग की इच्छा से सेवाएँ करते हैं। तरुण होने पर भी धनहीन को नहीं चाहते। अभाव (दारिद्र्य) ही नरक है, अभाव ही रुद्रभूमि (श्मशान) है, अभाव ही भूरि-शोक है, अभाव ही रोग है, अभाव ही मृत्यु है, अभाव ही पाप है, अभाव ही जरा (वृद्धत्व) है, अभाव ही कष्ट है, अभाव ही अकाल है, अभाव ही दैन्य है, अभाव ही रुदन है, सोचने पर अभाव ही सकल मालिन्य है, अभाव ही सब कुछ का अभाव है। अतः आश्चर्यप्रद रूप से समस्त राज्य को जिस समय छोड़ आए तभी तो सभी विपत्तियाँ आई हैं न ? हे मानवलोकेश ! जानकी के मरण को सहन नहीं कर सकता। अब विलम्ब किए बिना मार्गण (बाण)-समूह से राक्षसान्वित लंका को, अथक बन, भस्म कर दूँगा।"

विभीषणुडु इंद्रजित्तुनि माय श्रीरामुलतो जेप्पुट

अनि लक्ष्मणुडु वल्क ना विभीषणुडु । दन मदि नूहिंचि धरणीशु
कनियें; ५४००

"ना यिंद्रजित्तु माययें कानि सीत । के यपायंबुनु निट्टु कादु; नम्मु;
खलुडैन या पंक्तिकंठुंडु दलचु । तलपु ने नेरुगुदु धरणीश ! विनुमु;
'जानकि नोप्पिंपु जनपति' कनुचु । ने नेन्नि चेप्पिन हितवुगा गोनडु;
जनकनंदन नेल चंपिचु नतडु ? । मनुजेश यिदि वानि माय गावलयु;
नट्टिद यैन नो यवनीशवर्य ! । नेट्टन बोलियवे निखिल लोकमुलु ?
निदि बोंकु; चिंतिप नेल ? यासीत । बदिलंबुगा जूचि प्रतिवार्त देत्तु"
ननि रामु ननुमति नव्विभीषणुडु । दन रूपमंतयु दाचि वेगमुन
नलि रूपु गैकोनि यसुरेशु वनमु । दलकक चोच्चि सीतनु गांचि मरलि
वच्चि या रामभूवरुनकु म्रोक्कि । यच्चपु भक्तितो नंतयु जेप्प
विनि "विभीषण ! यिट्टि विधमेल सेसे । ननि लोन निंद्रजि" त्तन
नातडनियें; ५४१०

विभीषण का इन्द्रजित की माया श्रीराम को बताना

ऐसा लक्ष्मण के कहने पर, वह विभीषण अपने मन में कल्पना कर धरणीश से बोला— ।। ५४०० ।।

—"यह तो उस इन्द्रजित की माया है । सीता को कोई खतरा नहीं है । (मेरी बात पर) विश्वास करो । हे धरणीश ! खल उस पंक्तिकंठवाले के विचार को मैं जानता हूँ । सुनो । मैं यह कहकर कि 'जानकी को समझाओ, जनपति (राम) को दिलाओ' ऐसा कितना भी समझाऊँ (वह) नहीं मानता था । (वैसा) वह जनकनन्दना को क्यों मरवाएगा ? हे मनुजेश ! यह उसकी माया ही हो सकती है । (अगर सीता का संहार) सच ही हो तो हे अवनीश-वर्य (राजाओं में श्रेष्ठ) ! निखिल लोक झट से नष्ट नहीं हो जाएँगे क्या ? यह झूठ है । चिन्ता करना क्यों ? उस सीता को सुरक्षित देखकर, प्रति-समाचार लाऊँगा ।" (ऐसा) कह, राम की अनुमति से विभीषण ने अपने समस्त रूप को छिपाकर, झट से सूक्ष्म रूप धारणकर, विकल हुए बिना असुरेश के वन में प्रवेशकर, सीता को देखकर, लौट आकर, राम-भूवर को प्रणामकर, स्वच्छ भक्ति से सब कुछ बताया । (बताने पर) सुनकर (राम ने पूछा)—"विभीषण युद्ध में इन्द्रजित ने इस प्रकार क्यों किया ?" उसने कहा— ।। ५४१० ।।

"दनुजु डासुर होम तात्पर्य बुद्धि । जनुटकुनै यिट्टि चंदंबु सेसें;
हनुमंतु डादिगा नगचर कोटि । मनमुलु गलचि यिम्माड्कि बुत्तेंचि
'तन होम विघ्नंबु तग जेयु वार । लनयंबु लेरिक' ननि निकुंभिळकु
नरिगिन वाडु वा; डचट होमंबु । परिसमाप्तमु गाग वटु निष्ट नेडु
तन होम तंत्रमितयु जिक्ककुंड । मनु युक्ति नवधान मति जेसें नेनि
देव दानवुलैन दृष्टिंचि निलिचि । या वीरवरु नेव्वरनि गेल्व जाल;
रटु गान नीलोन नसुर वेलिमिकि । वटुगति विघ्न मापादिप वलयु;
जनियेंद मेमिदे सैन्यंबु तोड; । मनुजेश ! पंपु लक्ष्मणु दोडु माकु;
सौमित्रि यनिलोन जंड कांडमुल । भूमि पै बडनेसि पोलियिंचि मिंचि
ने डिंद्रजित्तुनु नृपवर ! गेलुचु;। वाडु निकुंभिळ वनमु लोपलनु
५४२०

दपमु गैकोन्नाडु दशकंठ-सुतुडु; । तपमु निंडक मुन्न दंडिपकुन्न
ब्रह्म मेप्पिचि या परमेष्टि वलन । ब्रह्म शिरंबनु बाणंबु विल्लु
गवचंबु खड्गंबु गव दोनल् मरियु । नंविरळ मंत्र पूतास्त्रमुल् वडसि
कामगाश्वयुतंबु गमनीय केतु । भीमंबु मारुतस्फीत वेगंबु

—"दनुज ने आसुर होम की तात्पर्य-बुद्धि (करने की इच्छा) से जाने के लिए यह विधान किया है। हनुमान आदि नगचर-कोटि के मन को व्याकुलकर, इस प्रकार पठा देकर 'अब निरन्तर मेरे होम का विघ्न करने वाले कोई नही है' यह सोचकर वह निकुंभिला को गया हुआ है। वह आज पटुनिष्ठा से होम को परिसमाप्त करेगा, अपने होमतन्त्र को, किसी भी प्रकार पकड़ में आए विना, युक्ति से (तथा) अवधान-मति से पूरा करेगा तो देव-दानव भी (उसे) देखते हुए (समक्ष) खड़े रहकर, उस वीरवर को कोई भी युद्ध में जीत नहीं सकेंगे। अतः इस बीच में ही असुर के होम (यज्ञ) में पटुगति से विघ्न उपस्थित करना चाहिए। हे मनुजेश ! हम इसी सेना के साथ जाएंगे। लक्ष्मण को हमारे साथ भेजिए। युद्ध में चंड-कांडों (-बाणों) से सौमित्र (उसे) भूमि पर गिराकर, मार डालकर, विजृंभित हो आज इन्द्रजित को हे नृपवर ! जीत लेगा। वह निकुंभिला वन में ॥ ५४२० ॥

—तप में लीन है। दशकंठसुत के तप के पूर्ण होने से पहले (उसे) दंडित नहीं करेंगे, तो ब्रह्मा को प्रसन्नकर, उस परमेष्ठी से ब्रह्मशिर नामक बाण, धनुष, कवच, खड्ग, तूणीर-युग्म और अविरल-मन्त्र-पूत-अस्त्र प्राप्त कर, कामगामी-अश्वयुत, कमनीय-केतु से भीम (भयंकर बना), मारुत-स्फीत-वेग से युक्त रथ के उस अग्नि से निकलने पर, ढंग से उस रथ पर आरूढ़

नगु रथंबायग्नि यंदु वेलवडिन । दग ना रथंबेक्कि धनुवंदे नेनि
ना वासवाराति नालंबु लोन । देवासुरादुलु दृष्टिपलेरु;
वानिकि निम्मुल वर मिच्चु नप्पु । ड्डा नीरजासनुंडतनि नीक्षिंचि,
"नीवु निकुंभिळ नेंड्य होमंबु । गाविंचितेनि नेगति नजेयुडवु;
काविंचु होमंबु गडमगुनेनि । रावणात्मज ! नीवु रणमु लोपलनु
बगरुचे बडु" दनि पलिकिन वाडु । जगतीश! यटुकान समर यत्नंबु ५४३०
सेयिंचि ने डिंद्रजित्तु जंपिपु; । मायावि यगु वीडु मडिसिन जालु,
नमर कंटकुडगु नद्दशाननुडु । समरंबु लोपल जच्चिन वाडु"
अनि पल्क रघुरामुडपुडनुजन्मु । गनुंगोनि "यनघात्म! घनुडिंद्र जित्तु
घनतिरोहित तिग्मकरु भंगि निगि । घन माय दनगति गानराकुंड
जरियिंचु नव्वीरु शक्रादि सुरुलु । दुरमुन गडिमि मै दोंडरंग जाल;
रिम्मंत्रिवरुलतो निव्विभीषणुडु । नेंम्मि नय्यागंबु नीकु जूपेंडिनि;
होम मध्यंबुन नुग्र राक्षसुनि । सौमित्रि ! नीवेगि समयिपु वेग;
पटुतर भल्लूक बलमुल गूडि । चटुल विक्रमुडैन जांबवंतुंडु
घनतर विजय विक्रम धुरंधरुडु । हनुमंतुंडुनु दोड नरुगुदेंचेदरु"

होकर, धनुष हाथ में लेगा तो उस वासव-आराति (इन्द्रारि) का युद्ध में देव-असुर आदि भी सामना नहीं कर सकेंगे। उसे प्रेम से वर देते समय, उस नीरजासन ने उसे देखकर ऐसा कहा था कि—तुम शोभा से निकुंभिल याग करोगे तो सब प्रकार से अजेय बनोगे। 'करने का होम पूरा न होगा तो हे रावणात्मज ! तुम रण में शत्रुओं से मारे जाओगे'। हे जगदीश ! यह ऐसा है, अतः समर-यत्न, ।। ५४३० ।।

—करवाकर आज इन्द्रजित का संहार करवाओ। इस मायावी का मरना पर्याप्त है, समरकंटक उस दशानन वाले को समर में मरा जानो।" ऐसा कहने पर रघुराम ने अनुज को देखकर (कहा)—"हे अनघात्म ! इंद्रजित महान् है। घन-तिरोहित-तिग्मकर (सूर्य) के समान, आकाश में बड़ी माया से अपने विचरण की गति दिखाई न पड़े, ऐसा विचरनेवाले उस वीर का शक्र आदि सुर भी युद्ध में साहस से सामना नहीं कर सकते। इन मन्त्रिवरों के साथ यह विभीषण बड़े प्रेम से वह याग तुम्हें बताएगा। होम के मध्य में उग्र-राक्षस को हे सौमित्र ! तुम शीघ्र जाकर संहार कर दो। पटुतर-भल्लूक-सेनाओं को साथ लेकर चटुल विक्रमवाला जाम्बवान ओर घनतर-विजय-विक्रम-धुरन्धर हनुमान भी तुम्हारे साथ आएँगे।"

अनि पलिक रघुरामु डनुजन्मुनकुनु । वनधि यिच्चिन यट्टि वज्र
वर्मम्मु ५४४०

घनतर खड्गंबु गव दोनल् विल्लु । बेनुपोंदगा निच्चि प्रीतितो मरियु
वर भूषणंबुलु वलनोप्प निच्चि । यरुदैन पेमि निट्लनुचु दीविंचे;
"ननिशंबु जयमु श्रीहरि योनगूर्चु;। घनतर शुभमु शंकरु डिच्चु; नजुडु
नीकायुवु घटिंचु; निखिल देवतलु। गैकोनि दिशलंदु गातुरु निन्नु;
ननलुंडु ननिलुंडु . नभिरक्षणंबु । दनर जेयुदुरु मुंदरु वेंक नीकु"
ननवुडु लक्ष्मणुंडप्पु डुप्पोंगि । धनु वंदुकोनि तनुत्राणंबु दोडिगि
कव दोनल् धरियिचि खड्गंबु दाल्चि । विविध भूषणमुलु विलसितुं
डगुचु

नारामु गनुगोनि यति भक्ति म्रोक्कि । धीर वाक्यंबुल देरगोप्प बलिके;
"नलिनाकरमु लोन नलि मराळमुलु । गलगोन बडुनट्टि गतिगान बडग
ना तेल्ल गरुल वाणमु लिंद्रजित्तु । वेतूरि चनि नेडु वेस लंक बडुनु;
५४५०

विपुल तूलस्तोम विधमुन वानि। नृपवीर ! विशिखाग्नि नीरु सेसेदनु"
अनि यथोचितमुगा नारामुचन्द्रु । मनमार वीड्कोनि महित तेजमुन

ऐसा कहकर रघुराम ने अनुज को वनधि (समुद्र) के दिए वज्रवर्म, ।। ५४४० ।।

—घनतर खड्ग, तूणीर-युग्म, धनुष को शोभा से देकर और प्रीति से वर-भूषणों को सुघड़ता से देकर, विरल (अनुपम) प्रेम से ऐसा कहते आसीसा—"श्रीहरि तुम्हें अनवरत जय प्रदान करेगा। शंकर घनतर-शुभ प्रदान करेगा, अज तुम्हें आयु प्रदान करेगा, निखिल देवता चाहकर सभी दिशाओं में तुम्हें बचाएँगे। अनल और अनिल आगे और पीछे तुम्हारा अभिरक्षण शोभा से करेंगे।" ऐसा कहने पर लक्ष्मण खुशी से फूलकर, धनुष लेकर, तनुत्राण (ज्या) चढ़ाकर, तूणीर धारणकर, खड्ग धारणकर, विविध भूषणों से विलसित होकर, उस राम को देखकर, अतिभक्ति से प्रणामकर, धीर वाक्यों से ढंग से (यों) बोला—"नलिनाकर (सरोवर) में क्रम से मरालों के विकल हो विचरने के समान दीख पड़नेवाले मेरे श्वेत-पंख वाले बाण इन्द्रजित के शरीर में घुसकर जाकर झट लंका में गिरेंगे।।५४५०।।

—विपुल-तूल-(-रुई)-स्तोम (ढेर) के समान उसे हे नृपवीर ! विशिखों की अग्नि से नष्टकर दूँगा।" ऐसा (कह) यथोचित रूप से उस रामचन्द्र से हृदयपूर्वक रीति से बिदा लेकर महित तेज से,

लक्ष्मणुडु युद्धमुनकु वेडलुट

गरुडुनि नेक्किन कमलाक्षु पगिदि । गरुवलिसुतु नेक्कि करमोप्पु मिगिलि
पंबि गोलांगूलबलमुलु गोल्व । जांबवदादुलु सनुदेर गदिलि
बलुविडि नटकु मुप्पदि योजनमुलु । गल निकुंभिळ केगि घनतरंबुगनु
नुरु मदेभंबुलु नुत्तमाश्वमुलु । नरिदि रथंबुलु नलरु काल्बलमु
स्तोममै सवनंबु चुट्टुनु गाचि । भीममै येंदु नभेद्यमै तनरि
बलमु लन्नियु नलबलमेल्ल नुडिगि । यललु लेनट्टि या यंबुधि करणि
नुन्न राक्षस सेन नोप्पार जूचि । सन्नुत शस्त्रास्त्र संपन्नुडैन
सौमित्रितो विभीषणुडिट्टुलनियें: । "नी महा सैन्यंबु निषु परंपरल ५४६०
नेडल नेसिन गानि यिंद्रारि मनकु । बोडगानराडु; नी भूरि बाणमुल
दूलिपु मीसेन दोलि तोलि; पिदप । हालाहल भीलमैन शरालि
दोरकोन्न होमंबु दुदि मुट्टकुंड । दुरितात्मुडगु वानि द्रुंपुमु वेग"
मनवुडु सौमित्रि यत्युदग्रतनु । गनुगोनलंदग्नि कणमुलु दोरग
बलुतरंगुल बाण पंक्तुलु वरपें; । नलघु बलोदग्रुलै पेल्लु रेगि

लक्ष्मण का युद्ध के लिए निकल पड़ना

गरुड़ पर आरूढ़ कमलाक्ष (विष्णु) के समान, पवनपुत्र (के कन्धों) पर आरूढ़ होकर, अधिक शोभा से, परिव्याप्त गोलांगूल (वानर)-सेना के सेवाएँ करने पर, जांबवान आदि के निकल पड़ने पर, चलकर, शीघ्रता से वहाँ से तीस योजन पर स्थित निकुंभिला को चल पड़ा। घनतर रूप से उरु-मद-गज, उत्तम-अश्व, विरल (असमान) रथ, विराजमान पैदल सेना के घेरकर सवन (यज्ञ) के चौतरफ पहरा देते हुए, भीम (भयंकर) हो, अभेद्य (और) शोभित हो, समस्त सेना के बिना हलचल के निस्तरंग समुद्र के समान स्थित राक्षस-सेना के शोभायमान रहते देखकर, सन्नुत शस्त्र-अस्त्र-सम्पन्न सौमित्र से विभीषण ने यों कहा—"इस महासैन्य को बाण-परम्पराओं से, ।। ५४६० ।।

—दूर भगाये बिना इन्द्रारि हमें दिखाई नहीं पड़ेगा। सर्वप्रथम अपने भूरि-बाणों से इस सेना को विचलित कर दो। (उसके) बाद हालाहल के सम आभील (भयंकर) शराली (शर-समूह) से प्रारम्भ किए होम के परिपूर्ण होने से पहले उस दुरितात्मा को झट से मार डालो।" ऐसा कहने पर सौमित्र ने अति उदग्रता से, आँख की कोरों से अग्निकणों के

तरुचराधिपुलुनु दरुलुनु गिरुलु । बॊरि बॊरि वैचिरप्पुडु सॊंपु मिगिलि;
यसुरुलु नत्युग्रुलै वनचरुल । वॆस बरिघंबुलु विसरि वैचियुनु
गदलचे मोदियु गरवालमुलनु । विदळिंचियुनु बहु विधमुल जॆलगि
मर्यिनु बॆक्कैन महित शस्त्रमुल । नुरुक नॊप्पिचिरि युग्रतनिट्लु
मार्पडु नसुरुल मर्कटेश्वरुल । यार्पुल नालंक यट्टिट्टु पडग; ५४७०
नंत बोवक राक्षसावलि दर्मि । यॆंतयु गडिमि ननेक मार्गमुल
गपुल नॊप्पिप्पंग गपुलुनु गविसि । कुपितुलै राक्षस कोटि नॊप्पिप
विर्गि राक्षसुलॆल्ल वॆस निंद्रजित्तु । मरुगुन करिगिरि मदमॆल्ल दक्कि;
यालोन नॊक्कॊक्क याहुति बट्टि । यालोल कील महावह्नि नसुर
परगंग निन्नूट पदि याहुतुलकु । दॊरकॊनि यॊकनूट तॊम्मिदि वेल्चि
कडमयाहुतुलु नाकॆवडि वट्टि । विडुवक निष्ठतो वेल्चुचु नुंडि
युरुतर सत्त्वुलै युग्रत बॆंचि । धरणि गंपिप नत्तरुचरवरुलु
बलुविडि नेतॆंचि पै नार्चुटयुनु । गलुषत जित्तंबु गलगिन जेति
याहुति यटु वैचि यायिंद्रजित्तु । डाहवोन्मुखुडै महारोषमॆसग

उमड़ने पर, अनेक प्रकार की बाण-पंक्तियाँ चलाईं। अलघु-बल से उदग्र हो, अधिक विजृंभित हो, तरुचर-अधिपों ने तब अधिक शोभित हो, बार-बार तरु और गिरि फेंके। असुरों ने अत्युग्र हो, वनचरों पर झट परिघाएँ फेंककर, गदाओं से मारकर, करवालों से भगाकर, अनेक-विधियों से विजृंभित होकर, और भी अधिक महित शस्त्रों से (उन्हें) बहुत पीड़ित किया। इस प्रकार उग्रता से (परस्पर) मारनेवाले असुरों के तथा मर्कटेश्वरों के सिंहनादों से लंका कंपित हो उठी ॥ ५४७० ॥

—उतने से न जाने देकर राक्षसावली ने अधिक साहस से भगाकर, अनेक मार्गों से कपियों को पीड़ित किया तो कपियों ने भी कुपित हो टूट पड़कर राक्षसकोटि को पीड़ित किया। तब समस्त राक्षस हारकर, मद खोकर, इन्द्रजित की आड़ में गए। इस बीच एक-एक आहुति को हाथ में लेकर, आलोल-कीलाओं से युक्त महावह्नि में असुर ने शोभा से दो सौ दस आहुतियों में से लगकर एक सौ नौ का हवन कर, शेष आहुतियों को उस प्रकार पकड़ रख, एकाग्रता से, निष्ठा से, हवन करता रहा। तब उरुतर-सत्त्व से युक्त हो, उग्रता से विजृंभित हो, धरणी को कंपित करते हुए, उन तरुचरों के आकर, सिंहनाद करने पर, क्रोध से चित्त के विकल हो जाने पर, हाथ की आहुति को उधर डाल देकर, वह इन्द्रजित आहवोन्मुख हुआ। (होकर) महारोष के व्याप्त होने पर, नेत्रों में चिनगारियों के भर जाने

गन्नुल निप्पुलु ग्रम्मंग भीष। णोन्नति रथमॆक्कि युग्र कार्मुकमु ५४८०
धरियिंचि मिंचि युद्धति नेगुदेंचि। तरुचर सेनल दरिमि नॊप्पिप
दनुजेशु तम्मुडत्तरि रामु तम्मु। गॊनि पोयि वन मतिक्रूरुडै चॊच्चि
समधिकंबगु नील जलदंबु वोलॆ। गॊमराखचुन्न न्यग्रोधंबु क्रिंद
दॊडरि यायिंद्रजित्तुडु सेय जेय। गडम जिक्किन होम कर्मबु जूपि
"सौमित्रि! चूचिते समरंबु कॊरकु। होम मिक्कड दैत्युडुग्रत जेसि
बलि भूतमुल किच्चि पावकु वलन। गल शक्ति सहितुल गडगि जयिंचु;
दॊल्लियु निट्टु चेसि दुर्मद वृत्ति। बल्लिदुडै यनि बर्जन्यु गॆलिचॆ;
निप्पुडु निट्टु चूडु, मी होम वह्नि। नॊप्पार वॆडलुचुनुन्नदि यरद
मरुण नेत्रंबुल नरुण केशमुल। नरुण बस्त्रंबुल नरुण माल्यमुल
जडिगॊन्न नल्लनि सारथि तोड। गडु नॆर्रनगु तुरंगंबुल तोड; ५४९०
वाडु ग्रम्मर वच्चि वरहोम शक्ति। वेडिमि नॆंतयु वॆडलिचि मिंचि
यी रथंबॆक्किन निंद्रादुलैन। नारावणात्मजु ननि गॆल्वलेरु;
कान नितटि लोन गडगि सौमित्रि!। वानि नी पटुशर व्रातंबु चेत

पर, भीषणोन्नति से रथ पर आरूढ़ होकर, उग्र कार्मुक को, ।। ५४८० ।। —धारणकर, औद्धत्य से आकर, तरुचर सेनाओं को भगाकर पीड़ित किया। (तब) दनुजेश के अनुज ने उस राम के अनुज को ले जाकर, अतिक्रूर हो वन में प्रवेशकर, समधिकता से नीलजलद के समान शोभायमान न्यग्रोध (बरगद) के नीचे उस इन्द्रजित के द्वारा किए जाते हुए, शेष बचे हुए होमकर्म को दिखाकर (कहा)—"हे सौमित्री ! देखा न, समर के लिए यहीं पर दैत्य उग्रता से होम करके, भूतों को बलि देकर, पावक द्वारा प्राप्त शक्ति से अहितों (शत्रुओं) को लगकर जीत लेगा। पूर्व में भी ऐसा करके दुर्मद-प्रवृत्ति से बलवान बनकर पर्जन्य को जीत लिया। अब इधर देखो, इस होम-वह्नि से शोभा से रथ निकल रहा है जो अरुण नेत्र, अरुण केश, अरुण वस्त्र, अरुण माल्यों से उमड़ते काले सारथी के साथ, अधिक लाल तुरंगों से युक्त है ।। ५४९० ।।

—वह (इन्द्रजित) पुनः लौटकर वर होमशक्ति के ताप से निकालकर, उद्धत बनकर, इस रथ पर आरूढ़ होगा तो इन्द्र आदि भी उस रावणात्मज को युद्ध में जीत नहीं सकेंगे। अतः इतने में ही हे सौमित्र ! सप्रयत्न उसे अपने पटु शर-व्रात (-समूह) से मार डालो।" (ऐसा) कहने पर लक्ष्मण

बोलियिपु" मनुडु नुप्पोंगि लक्ष्मणुडु। तलकक कार्मुक ध्वनि सेलंगिप
गरवाल हस्तुडै कवचंबु दोडगि । यरुदार शिखिवर्णमगु रथंबक्कि
तनरूप सूपिन दशकंठु सुतुनि ।गनुगोनि सौमित्रि कडु नल्क बल्के;

लक्ष्मण, इंद्रजित्तुल परस्पराधिक्षेपणमु

"मायल बनियेमि ? मगवाड वेनि। नायेदुटिकि वच्चि ननुजूतु गाक!
निक्कंपु लावुन नीवु गय्यमुन । जक्क निल्वुमु; निनु जमु गूड बुत्तु
गपटंबु गैकोन्न गैकोनकुन्न । गपट राक्षस! निन्नु गडतेर्तु वेग"
मनवुडु लक्ष्मणु नार्यिद्रजित्तु । गनुगोनि रोषसंकलितुडै पलिकें;
५५००
"बालुंडवै यिट्टि पंतंबु लेल ? । यी लील निलुवु मीविंचुक दडवु;
लक्ष्मण ! निन्नु नालंबुन वीर । लक्ष्मिकि बैड बापि लावेडलिंचि
यसुवुलु नादु बाणावलि बैरिकि । वसुमति पै गूल्चि वारक वच्चि
काकुल ग्रद्दल गंडल दनिपि । भीकराकारत बेंपारु वाड;
नुरक ना कट्टिन युरग पाशमुलु । मरचिते लक्ष्मण ! मदिनितलोन"

फूलकर विचलित हुए बिना कार्मुक-ध्वनि को मुखरित करते हुए, करवाल को हाथ में ले, कवच पहनकर, विरल (असमान) शिखि (अग्नि)-वर्ण वाले रथ पर आरूढ़ होकर, अपना रूप दिखानेवाले दशकंठ-सुत को देखकर सौमित्र ने अति क्रोध से कहा—

लक्ष्मण-इन्द्रजित का परस्पर अधिक्षेपण

"मायाओं से क्या काम ? पुरुष हो तो मेरे सामने आकर मुझे देख लेना। सच्ची सामर्थ्य से तुम युद्ध के लिए ठीक ढंग से खड़े हो जाओ। तुम्हें यम के पास भेज दूंगा। हे कपटराक्षस ! कपट से काम लो या नहीं, तुम्हें झट मार डालूंगा।" ऐसा कहने पर लक्ष्मण को देख इन्द्रजित ने रोष-संकलित हो कहा— ।। ५५०० ।।

—"बालक होकर यह स्पर्धाएँ क्यों ? इसी प्रकार थोड़ी देर और ठहरो। हे लक्ष्मण ! तुम्हें युद्ध में वीरलक्ष्मी से दूर कर, सामर्थ्य से हीन कर, अपने बाण-समूह से प्राण छीन कर, वसुमति पर अवश्य गिराकर, कौवों और चीलों को (तुम्हारे) मांसखंडों से तृप्तकर, भीकर आकार से शोभित बनूंगा। हे लक्ष्मण ! सरलता से तुम्हें उरगपाशों से बांध दिया था। क्या उसे अभी मन से भूल गए ?" ऐसा लक्ष्मण से कहकर, उस विभीषण को देखकर इन्द्रारि ने अधिक क्रोध से कहा—"तुम चाचा हो न ! मैं प्रिय

यनि लक्ष्मणुनि बलिक यव्विभीषणुनि । गनुगोनि यिंद्रारि कडुनल्कबल्कॆ;
"बिनतंड्रि वट नीवु; प्रियमार नेनु । दनयुंड; ना कॆग्गु दलपंग दगुनॆ?
दुर्मतिवै कुलद्रोहंबु सेयु । धर्मघातुक ! नीकु दगवेल कलुगु?
नडरैन बंधुल नॊट्टि नीचुंडु । विडिचि शत्रुल बोयि वेडुने शरणु?
तगवु दप्पिन नैन दन वारि बासि । पगवारि सेविंचि ब्रदुकुटे ब्रदुकु?
५५१०
आ निशाचरनाथु डधिक तेजुंडु । नी निष्ठुरोक्तुलु नीतिगा गॊनुनॆ?
यन्न कोपिंचिन नट यिंटि मूल । नुन्न नेमगु ? नुंडकुन्न नेमगुनु ?
नीलावु बलिमिने निखिल देवतल । नालंबुलो गॆल्चॆना दशाननुडु ?
हितुडवै मर्ममहितुनकु जॆप्पि । यतनि चेतन चॆडु" मन विभीषणुडु
"ना वर्तनमु मेघनाद! यी वॆरुगु; । दी वृथा जल्पंबुलेल याडॆदवु ?
आतंड्रि कॊडुकैन यवनीति मतिकि । नीतियु धर्मंबु नीकेल कलुगु ?
बॊसग जे पट्टिन भुजगंबु पगिदि । वॆस ग्रूरुडगु बंधु विडुवंग वलयु;
बापात्मुडगु नट्टि पंक्तिकंधरुडु । ना पलुकुलु विन्न ना डितलगुनॆ ?
परधनंबुलकुनु बर कांतलकुनु । बरितापमुन बॊंदु पाप कर्मुलकु
दगवेल ? मेलेल ? धर्मंबु लेल ? । जगदेक हितमैन चरितंबु लेल ?
५५२०

पुत्र हूँ । मेरा अहित सोचना चाहिए ? (नहीं ।) हे धर्मघातक ! दुर्मति बन कुलद्रोह करनेवाले तुम्हें न्याय क्यों सूझेगा ? विपत्ति के आने पर संबंधियों को छोड़ कैसा भी नीच क्यों न हो, शत्रुओं के पास जाकर शरण माँगेगा ? न्याय-धर्म से छूटने पर भी अपने लोगों को छोड़ शत्रुओं की सेवा करते जीना भी कोई जीना है ? ।। ५५१० ।।

—वह निशाचरनाथ, अधिक तेजवाला (रावण) क्या तुम्हारी निष्ठुर उक्तियों को नीतियुक्त मान लेगा ? अग्रज क्रुद्ध हो गया तो घर के किसी कोने में पड़े रहते तो क्या होता ? न रहते तो क्या होता ? तुम्हारी शक्ति और सामर्थ्य के कारण ही से तो दशानन ने युद्ध में निखिल देवताओं को जीता क्या ? हितू बनकर, अहितू (शत्रु) को मर्म बताकर, उसी के हाथ नष्ट हो जाओ ।" (ऐसा) कहने पर विभीषण ने कहा—"हे मेघनाद! मेरे आचरण को तुम जानते ही हो । यह वृथा-जल्प (-वचन) क्यों कहते हो ? उस पिता के पुत्र (तथा) अवनीतिमतिवाले को नीति और धर्म क्यों होंगे ? अनुकूलता से हाथ में पकड़े भुजंग के समान, क्रूर सम्बन्धी को झट छोड़ देना चाहिए । पापात्मा दशकंधर यदि मेरी बातें सुन लेता तो आज इतना होता क्या ? परधन तथा पर-कान्ताओं के लिए परितप्त होनेवाले पापकर्मा

मग्नमौ नीमदि मदमु गर्वंबु । नग्नुलै कालपक यवियेल पोवु ?
दलकोनि यॆप्पु डधर्म वर्तनमें । कलिगि वर्तितुरु कडु ग्रोव्वि मीरु;
सुरल बाधितुरु; सुव्रतुलैन । परममुनींद्रुल बट्टि चंपुदुरु;
कावुन ना दशकंठुनि तोड । नीवुनु लंकयु निखिल बंधुवुलु
मानकिच्चकमाडु मंत्रुलु गूडि । सेनलु रामुचे जॆडुट सिद्धबु;
बुद्धि शून्युडवैति; स्फुटकाल पाश । बद्धुंड; वेमैन बल्किन बल्कु;
मिट मीद नीमाय लॆक्कवु; नीकु । वटमु क्रिंदिकि होम वांछ बोरादु;
चनरादु लंककु सौमित्रि दॊडरि; । चनवच्चु निक वेग जमुपुरि" कनग
प्रथमाद्रि पै वच्चु भानुनि पगिदि । बृथुगात्रु हनुमंतु बॆंपार नॆक्कि
यमरिन लक्ष्मणु ना विभीषणुनि । समरार्थुलगु नगचरुल वीक्षिंचि
५५३०
या रावणात्मजुंडप्पुडिट्लनियॆ । वारक रोष दुर्वारुडै पॆंचि;
"वीरुलै नाबाण वृष्टिकि मीरु । सैरिचॆदरु गाक ! समरोर्वि नेडु;
उडुगक नाविट नॊदवु बाणाग्नि । यडरि मिम्मंदरु नाहुति गॊनुनु;

(व्यक्तियों) को नीति-न्याय क्यों ? हित क्यों ? धर्म क्यों ? जगदेकहित (करनेवाले) चरित्र (इतिहास अथवा कथाएँ) क्यों ? ॥ ५५२० ॥

तुम्हारा हृदय मद और गर्व में मग्न है। नग्न करके जलाए बिना वे कैसे दूर होंगे ? जान-बूझकर, अधिक गर्वीले बनकर तुम लोग सदा अधर्म-आचरण ही करते हो। सुरों को पीड़ित करते हो, सुव्रतशाली परम मुनींद्रों को पकड़ कर मार डालते हो। अतः उस दशकंठ के साथ तुम और लंका के समस्त बांधव, निरन्तर मीठी बातें करनेवाले मन्त्री सेनाएं (सबका) मिलकर राम के हाथ नष्ट होना तथ्य है। बुद्धिशून्य बन गए हो, स्फुट-कालपाशबद्ध हो, जो चाहे कह लो। अब आगे तुम्हारी मायाएँ काम नहीं देंगी। वट के नीचे होम (करने) की वाँछा से जाना नहीं चाहिए। लंका को नहीं जाना चाहिए। सौमित्र से जूझकर अब शीघ्र यमपुरी को जा सकते हो।" प्रथमाद्रि (पूर्वाद्रि) पर उदित होनेवाले भानु के समान पृथुगात्रवाले हनुमान पर शोभा से आरूढ़ होकर विराजमान लक्ष्मण को, उस विभीषण को, समरार्थी नगचरों को देखकर, ॥ ५५३० ॥

—उस रावणात्मज ने तब रोष-दुर्निवार हो, विजृंभित हो यों कहा—"आज समरोर्वी (समरभूमि) में आप लोग वीर बनकर मेरी बाणवृष्टि को सहन कर लें। अक्षय रूप से मेरे धनुष से उत्पन्न होनेवाली बाणाग्नि विजृंभित

गरवाल पट्टिस घर्नभिडिवाल । शरजालमुल मिम्मु समयितु" ननुचु
रोदसी-कुहरंबु म्रोयंग सिंह । नादंबु सेयुचु नानाशुगमुल
वैस नेयुचुनु "बाहु विक्रम स्फूर्ति । नैसगु ना मुंदर नेव्वंडु निलुचु?"
ननवुडु लक्ष्मणुं डादैत्यु तोड । "दनुजाधमुड! यी वृथा गर्व मेल?
चेरक यडगि म्रुच्चिलि पोटु वौडुचु । टेरणंबुन बाडि? ये मगतनमु?

इन्द्रजिल्लक्ष्मणुल द्वंद्व युद्धमु

नीमाय लन्नियु निरसिंचि निलुवु; । नामार्गणमुल प्राणमुल हरिंतु"
ननवुडु गोपिंचि यतनिपै नेसे । घनकाल सर्प प्रकांड कांडमुल; ५५४०
ननि लक्ष्मणुनि गाडि यव्वल वेडलि । यवनी स्थलमु गाडें नद्भुतशक्ति;
मरियुनु वाडु लक्ष्मणदेवु मेन । गरुलाडगा बेक्कु कांडंबु लेय
वडि वच्चि ताकि यव्वल नुच्चि पार । वेडलु रौद्ररसंबु वेल्लिय पोले
गडु बेल्लु नेत्तुरंगंबुल वेडल । नडरंग राक्षसु लार्चुचु नुंड
जंकेलु नट्टहासमुलु सेयुचुनु । लंकेंद्र-तनयु डा लक्ष्मणु जेरि,
"नरनाथ सुत; नेडु नन्नाजि गदिसि । बिरुदवै यिटु विजृंभिचिन निन्नु

हो तुम सब लोगों को आहुति के रूप में लेगी। करवाल, पट्टिस, घन-भिडिवाल, और शरजालों से तुम्हारा संहार करूँगा।" (ऐसा) कहते हुए रोदसीकुहर को मुखरित करनेवाला सिंहनाद करते हुए, नाना-आशुगों को झट डालते हुए कहा कि "बाहुविक्रम-स्फूर्ति से विजृंभित मेरे समक्ष कौन खड़ा रह सकता है?" ऐसा कहने पर लक्ष्मण ने उस दैत्य से कहा—"हे दनुजाधम! यह वृथा गर्व क्यों? समक्ष न आकर चोरी-चोरी प्रहार करना किस रण में न्यायसंगत है? कैसा पौरुष है?

इन्द्रजित-लक्ष्मण का द्वन्द्वयुद्ध

—अपनी सभी मायाओं को छोड़ खड़े हो जाओ, मैं अपने मार्गणों से प्राणों का हरण कर दूँगा।" ऐसा कहने पर क्रुद्ध हो उस पर घनकालसर्प-प्रकांड कांडों को फेंका ॥ ५५४० ॥

—वे लक्ष्मण (के शरीर) में पैठकर, बाहर निकलकर, अद्भुत शक्ति से अवनीस्थल में घुस गए। फिर उसके लक्ष्मणदेव के शरीर विषम तीक्ष्ण धाराओं से अनेक कांड डालने पर, झट आकर, लगकर, उस पार निकल पड़े। रौद्ररस के बाढ़ के समान, अत्यधिक रक्त के (लक्ष्मण) के शरीर से निकलने पर विजृंभित हो राक्षस सिंहनाद करने लगे। भर्त्सनाएँ अट्टहास करते हुए, लंकेंद्रतनय ने उस लक्ष्मण के पास आकर (कहा)—"हे

दौलुत गत्तळमु दुत्तुनियलु सेसि । तल द्रुंचि वैचेद दारुणास्त्रमुल;
बेनुपेदि पडियुन्न प्रिय सहोदरुनि । निनु जूचु रामुडु ने डवश्यंबु"
ननि पल्क लक्ष्मणुं डा निशाचरुनि । गनुगोनि "यी वृथा गर्व मेमिटिकि?
बलुकुल बनियेमि बवरंबु लोन ? । दौलगक ना तोड दोडरुदु गाक: ५५५०

माट लाडक वह्नि मडियिंचु मड्कि । माट लाडक निन्नु मडियिंतु निपुडु
पनि लेनि पंतमुलू पलुकंगनेल" । यनुचु नुग्रास्त्रंबु लरि वोसि तिगिचि
घनतर भीषणाकारुडै पेर्चि । कनुगव गेंजाय गड्लु कौनंग
नमरंग गोपिंचि यर्कदीधितुलु । गमियंग दिक्कुलु गलयंग बर्व
विलयाग्नि कीललु विस्फुलिंगमुलु । गलगोन देरलैडु घनतर शक्ति
गलयम्मु संधिचि करकु रक्कसुनि । यलघु वक्षस्स्थल मटु काड नेय
दान दैत्युंडु रक्तमु ग्रक्कि मूर्छ । नूनि यंतन तेलिवि नोंदि पेल्लार्चि
वाडिमि मिगुल दीव्रंबुन नेसे । मूडु बाणमुल रामुनि तम्मुनुरमु;
नप्पुडु धीरुलै यधिक रौद्रमुन । निप्पुलु गन्नुल निव्वटिल्लंग
जेलगु नय्यिद्दरु सिंहनादमुलु । बलुविडि बरतेंचु बाणघट्टनलु ५५६०

नरनाथसुत ! आज, आजि (युद्ध) में मेरे निकट आकर, शूर हो इस प्रकार विजृंभित तुम्हारा, पहले कवच को चकनाचूर कर, दारुणास्त्रों से सिर काट डालूँगा । विकास को खोकर गिर पड़े हुए तुम्हें प्रिय सहोदर राम आज अवश्य देखेगा ।" ऐसा कहने पर लक्ष्मण ने उस निशाचर को देख कहा— "यह वृथा गर्व क्यों ? युद्ध में वचनों से क्या काम ? अलग न हटकर मेरा सामना तो करो ॥ ५५५० ॥

---चुपचाप वह्नि के जला देने के समान, बिना बात किए तुम्हारा संहार कर दूँगा । व्यर्थ के गर्व-वाक्य कहना क्यों ?" (ऐसा) कहते उग्र-अस्त्रों का खूब संधान कर, खींचकर, घनतर-भीषण-आकारवाला हो विजृंभित हो, नेत्रयुग्म में अरुणिमा फैल पड़ने पर, ढंग से क्रुद्ध हो, अर्क (सूर्य) की दीधितियाँ (प्रकाश) समस्त दिशाओं में फैल उठने पर, विलयाग्नि की कीलाएं (तथा) विस्फुलिंगों की एकत्र बनी घनतर शक्ति से युक्त बाण का संधानकर, क्रूर राक्षस का अलघु (विशाल) वक्षस्थल फट जाए ऐसा चलाया तो उससे दैत्य ने रक्त उगलकर, मूर्च्छित हो, इतने में होश में आकर, अधिक सिंहनाद कर, अति तीव्रता से तीन पैने बाण राम के अनुज के उर पर चलाया । तब धीर हो अधिक रौद्र से आँखो से चिनगारियों के फूटने पर, विजृंभित उन दोनों के सिंहनाद तथा वेग से आनेवाली बाण-घट्टनाएं, ॥ ५५६० ॥

तुरुगुण स्वनमुलु नॉक्कट नॅसग । नरय गालुनि यट्टहासंबु वोलॅं;
वॅलसिन लावुन विक्रमंबुननु । बॊलुपुन ब्रलमुन भूरि रौद्रमुन
ननिशंबु वॅलुगु चंद्रार्कुलु वोलॅ । दनरु चतुर्दंत दंतुलु वोलॅ
कोमरारु सिंगपु गॊदमलु वोलॅ । ग्रममॊप्प शंबर कामुलु वोलॅ
नमर द्रिनेत्रांधकासुरुल वोलॅ । रमण गुमार तारकुलुनु बोलॅ
नेपारु वृत्रासुरेंद्रुलु वोलॅ । रूपिंपगा गाल रुद्रुलु वोलॅ
बायनि जयकांक्ष ब्रबलुलै चॅलगि । या यिद्दरुनु बोरि रप्पुडु चूड;
गोपंबु नुद्दंड गुणघोष मॅसग । जापरथ ध्वज सहितंबु गाग
ना मेघनादुनि नम्मुल बिट्ट । सौमित्रि मुंचिन सॅरिप कतडु
प्रति सायकमु लेय बलुविडि द्रुंचि । विततंबुगा बाण वृष्टि गप्पुटयु ५५७०
नायिंद्रजित्तुंडु नलवॅल्ल बॊलिसि । या अस्त्रमुलकु मारॅन यस्त्रमुलु
नॅरि नेयनेरक निट्टूर्पु वुच्चि । तरिगॊनि चूड नत्तरि विभीषणुडु
सौमित्रि गनुगॊनि "जननाथतनय ! । नी मार्गणंबुल निर्विण्णुडगुचु
दशकंठसुतुडुन्न दश जूडु मिपुडु; । दशरथात्मज! रणस्थलि नीवु गॅल्वु"
मनवुडु नुग्रंबुलॅन बाणमुलु । गॊनि यंगकंबुलु ग्रुच्चि पोनेय

—उरु गुण-स्वन, एक साथ काल के अट्टहास के समान मुखरित हुए। विलसित सामर्थ्य, विक्रम, स्थिरता, हठ, भूरि रौद्र से सदा प्रकाशित होने वाले चन्द्र-अर्कों के समान, शोभायमान चतुर्दंतवाले दंतियों (हाथियों) के समान, तरुण सिंह-शावकों के समान, क्रम से शंबर और काम की भाँति, शोभा से त्रिनेत्र और अन्धकासुर की तरह, रमणीयता से कुमार और तारक (असुर) के समान, विजृंभित वृत्रासुर तथा इन्द्र की भाँति, तुलना करने में कालरुद्रों के समान, निरन्तर की जयकांक्षा से प्रबल हो, विजृंभित हो, तब उन दोनों ने युद्ध किया। क्रोध से उद्दंड गुण-घोष के मुखरित होने पर चाप-रथ-ध्वज सहित सौमित्र को मेघनाद के भयंकर बाणों के डुबो देने पर, उस (मेघनाद) ने भी सहन न कर प्रति बाण चलाए। झट से (लक्ष्मण द्वारा) उन्हें भग्नकर वितत रूप से बाणवृष्टि से ढँक देने पर, ।। ५५७० ।।

—वह इन्द्रजित समस्त शोभा को खोकर, उन अस्त्रों के प्रति अस्त्र क्रम से चला न सक, लम्बी साँस छोड़, देखता रह गया। उस अवसर पर विभीषण ने सौमित्र को देख (कहा)—"हे जननाथतनय ! तुम्हारे मार्गणों (बाणों) से निर्विण्ण बने दशकंठसुत की दशा को अब देखो। हे दशरथात्मज ! रणस्थल में अब विजय प्राप्त करो।" ऐसा कहने पर उग्र बाणों को लेकर अंगकों में गाड़ दिया। एक मुहूर्त भर के लिए मूर्च्छित

नीक मुहूर्तमु मूर्छ नोंदि वे तेलिसि । "यकट ! मुन् देवासुरादुल गेलिचि
परिकिप दैवंबु प्रतिकूलमैन । नरुनकु निट्टु नेडु ना कोडवलसे;
ननिलोन राक्षसु लंदरु बोलिसि । रिन वंशजुल चेत; निकनेटि ब्रदुकु?"
अनुचु कोपमुन नय्यमरकंटकुडु । जननाथसुतु जूचि ग्रल मग्गलिचि
"नरनाथ-नंदन ! ना विक्रमंबु । बरिकिचि नी विक बंटवै निलुवु"
५५८०

मनुचु नेडम्मुल नतनि नोंप्पिचि । हनुमंतु बदियिट नदरंट नेसि
वेंस विभीषणु मीद विशिखमुल् नूरु । मसलक निगुडिचि मरि विजृंभिचे;
गाकुत् स्थतिलकु डाकडिमि गैकोनक । नाकेन्द्ररिपु जूचि नव्वुचु बलिके;
"नधिकुंडु पंतंबु लाडक गेलुचु; । नधमुंडु पंतंबु लाडियु नोडु;
ननुचितस्थिति शूरुलगु वारु डाग । रनिलोन; वंचिचु टदि बंटुतनमे?
कुटिल युद्धमु सेयु क्रूरात्म! नीकु । बटुगति निहमुनु बरमुले" दनुच
दिनकरकर जाल तीव्रार्चु लडर । गनक पुंखंबुलु गलुगु बाणमुलु
वानिपै निगुडिचि वडि जोडु द्रुंचि । मे नुच्चि चनग नम्मेयिमरुवपुडु

होकर, झट होश में आकर (यह सोच कि) "हाय ! पूर्व में देव-असुर आदियों को जीतनेवाले मुझे, देखने पर दैव के प्रतिकूल होने पर, नर के हाथ से आज हारना पड़ा न ! इन-वंशजों के हाथ युद्ध में सभी राक्षस मृत हुए । अब जीना कैसा ?" क्रोध से उस अमरकंटक ने जननाथसुत को देख, अति हठ से (यों कहा)— "हे नरनाथनन्दन ! मेरे विक्रम को देख अब तुम शूर हो खड़े रहो ।" ॥ ५५८० ॥

—(ऐसा) कहते सात बाणों से उसे (लक्ष्मण को) पीड़ित कर, दस (बाणों) से हनुमान के मर्म को वेधकर, झट विभीषण पर लगातार सौ बाण चलाकर उद्धत हो विजृंभित हुआ। काकुत्स्थ-कुलतिलक उस साहस की परवाह न कर, नाकेन्द्ररिपु को देख हँसते हुए बोला—"अधिक (शौर्यवान) वीर, वचन न कह, (युद्ध करके) जीतता है। अधम (व्यक्ति) वीर वचन बोलकर भी हार जाता है। अनुचित स्थिति में शूर (व्यक्ति) युद्ध में छिपकर नहीं रहते। धोखा देना भी कहीं शूरता है ? कुटिलयुद्ध करनेवाले हे क्रूरात्मा ! पटुगति से तुम्हारे लिए इह (लोक) और पर (लोक) नहीं हैं।" (ऐसा) कहते हुए दिनकर-करजाल की तीव्र-अर्चियों से अधिक श्रेष्ठ (तथा) कनकपंखवाले बाणों का उस पर संधानकर चलाया। झट कवच तोड़कर, शरीर में घुसकर (उन बाणों के) चले जाने पर, वह कवच तब कालोग्र-सर्प के

कालोग्र सर्पंबु कंचुकं बनग । नालोकनाभीलमै नेल बडियॅ;
वाड्डु वेंडियु नोक्क वज्रांगि दोंडिगि । वाडि बाणंबुल वडि नेय नपुड्डु ५५९०
परुवडि नोंडोंरु बाण घातमुल । नुरुवडि वेलुवडु नुरु शोणितमुल
गैरिक निर्झर कलितंबुलैन । भूरि भूधरमुल पोलुपु गैकोनुचु
गरवेग शरवेग गतुल नेर्पुलनु । गरमोप्प बोरुचो गाराकु डुल्लि
पूचिन किंशुकंबुलु गनुपट्टु । ना चंदमुन नोप्पिरस्त्र घातमुल;
नमर गंधर्वादुलच्चेरुवंदि । समरंबु जूड ना समयंबु नंदु
गलभ वेष्टित मत्त गजलील मंत्रि । कलितुडै भीकरगति विभीषणुड्डु
विलु गुणध्वनि सेसि विपुल रोषमुन । वेलुगु मंटल तोडि विशिखंबु लेय
बिडुगुलु सरुचिन पृथुल भूजमुल । वडुवुन राक्षसुल् वसुधपै बडिरि;
अनलुंडु मोदलुगा नतनि मंत्रुलुनु । घनशूल पट्टिस खड्ग घातमुल
नेंगडि राक्षस कोटि नेलपै गलिपि; । रग चरावळि जूचि यव्विभीषणुड्डु ५६००
"निक नीतनि जंपु डिदरु बोंदिवि; । लंकेशु बलमन्न लावन्न नितडॅ;

कंचुक (केंचुली) के समान आलोकन में आभील बनकर ज़मीन पर गिर पड़ा। उसने भी फिर एक वज्रांगी (कवच) धारण कर, पैने बाणों को शीघ्रता से चलाया। तब ॥ ५५९० ॥

—बार बार परस्पर के बाण-घातों से झट निकलनेवाले उरु-शोणित के कारण गैरिक (गेरुए वर्ण के)-निर्झरों से कलित भूरि-भूधरों की शोभा से युक्त हुए। करवेग और शरवेग की गतियों के कौशल के साथ अधिक शोभा से जूझते समय, पके पत्तों के झड़कर (बिना पत्तों के होकर) फूले हुए किंशुकों के दीख पड़ने की तरह वे अस्त्रघातों से दिखाई पड़े। अमर गन्धर्व आदि आश्चर्यचकित हो समर को देखते रहे। उस समय कलभ-वेष्टित (हाथी के बच्चों से घिरे हुए) मत्तगज के समान मन्त्रियों से युक्त हो, भीकरगति से विभीषण ने धनुष-टंकार कर, विपुल रोष से, बलती ज्वालाओं से युक्त विशिख चलाए तो अशनिपात के आघात से पृथुल-भूजों (बड़े वृक्षों) के समान राक्षस वसुधा पर गिर पड़े। अनल आदि उसके मन्त्रियों ने घन-शूल-पट्टिस-खड्ग के आघातों से विजृंभित हो राक्षस कोटि को मिट्टी में मिला दिया। अगचर-अवली को देख विभीषण ने (कहा)— ॥ ५६०० ॥

—"अब सब घेर कर उसे मार डालो। लंकेश का बल और सामर्थ्य तो

यनि नीतडीलिगन नद्दशाननुडु । दन सेनतो गूड दा नीलिग नाडु;
मुनु ब्रहस्तुनि वज्रमुष्टि ब्रजंघु । डनुवानि सुप्तघ्नु डनुवानि मरियु
गुंभ निकुंभुल घोर विक्रमुल । गुंभ कर्णुनि महोग्रुनि नतिकायु
विकटु महा पार्श्वु वेलय धूम्राक्षु । मकराक्षु ग्रोधनु मरि शोणिताक्षु
यूपाक्षु द्रिशिरु महोदरु नग्नि । कोपुनि देवांतकुनि नरांतकुनि
खरु जंबुमालि नकंपनु मरियु । बरुष विक्रमुलैन पगतुर जंपि
याहव सागरं बवलील दाटि । बाहाबलंबुन बरगिति; रिक
समयंबु मीकु लक्ष्मणुनकु दाट । नमरंग निंद्रजित्तनु गोष्पदंबु
गोडुकु जंपग नाकु गूडदु; वीडु । चेंडु नुपायमु मीकु जेप्पेद विनुडु;
५६१०
हिंस गाविंचिन नेदिरिचे बंचि । हिंस सेयिंचिन निवि रेंडु सरियें;
इदि रामु कार्यार्थं; मिदि लोक हितमु; । नदि कान पातकंबैन गानिडु;
सौमित्रि चे नेनु जंपितु वीनि; । ने मायलुनु गोल्व विटमीद" ननिन
जांबवंतुडु ऋक्ष संघमुलु गोलुव । संबरं बगलंग नार्चि राक्षसुल
नग शृंग तरुषंड नख दंतमुलनु । बगतुर नवलील वालपडि जाच्चि
नोप्पिप गपुलचे नोगिलि राक्षसुलु । निप्पुलु सेंदरंग नेरि दारु घोर

यही है । युद्ध में यह गया तो (समझ लीजिए) अपनी सेना के साथ वह दशानन भी मर गया । पूर्व में (इससे पहले) प्रहस्त को, वज्रमुष्टिवाले प्रजंघ नामक को, सुप्तघ्न नामक को, और घोर-विक्रमवाले कुम्भ और निकुंभ को, कुम्भकर्ण को, महोग्र को, अतिकाय को, विकट को, महापार्श्व को, शोभित धूम्राक्ष को, मकराक्ष को, क्रोधन को और शोणिताक्ष को, यूपाक्ष को, त्रिशिर को, महोदर को, अग्निकोप को, देवांतक को, नरांतक को, खर को, जंबुमालि को, अकंपन को, और भी परुष-विक्रम वाले शत्रुओं का संहारकर आहव-सागर को आसानी से पार कर, बाहुबल से विराजित हुए । अब शोभा से इन्द्रजित नामक गोष्पद को पार करने का आप तथा लक्ष्मण के लिए यह अवसर है । मुझे पुत्र को नहीं मारना चाहिए । सुनो, आपको इसके भंग होने का एक उपाय बताता हूँ ।। ५६१० ।।

—हिंसा करना और दूसरे को आदेश देकर हिंसा कराना दोनों एक समान हैं । यह राम के कार्य के लिए है, यह लोकहित (कार्य) है, अतः पाप भी हो तो मैं इसे सौमित्र से मरवा दूँगा । अब आगे (इसकी) मायाएँ काम नहीं देंगी ।" (ऐसा) कहने पर जाम्बवान ने ऋक्ष-समूहों के सेवाएं करते रहने पर, ऐसा सिंहनाद कर कि अम्बर फट जाए, राक्षसों को नग-शृंगों (पर्वत की चोटियों) और तरुषंडों से तथा नख-दन्तों से शत्रुओं से सरलता

परशु मुद्गर शूल पट्टिस प्रास । परिघ शरासनपाणुलै बेरय
बौरि सुरासुरुलकु बोलॆ नय्यद्रि । चर निशाचरुलकु संग्राममय्यॆ;
हनुमंतुडा समयम्मुन नलिगि । घनुनि लक्ष्मणु डिंचि कालुनि पगिदि
नॊक्कॊक्क वाटुन नॊक्कॊक्क माटु । पॆक्कंड्र दैत्युल बृथिविपै गूल्चि ५६२०
शैल शृंगंबुल साल वृक्षमुल । लीलमै जंपि बलिलदुडुनै वेर्चॆ;
सरभसंबुन विभीषणु डंत नलुक । नुरुतर ज्याघोष मॊनररिचि मिंचि
तन मंत्रुलुनु दानु दद्दयु गडिमि । दनुजुल बॆक्कंड्र दरमिडि चंपि
करमॊप्पु कनक पुंख प्रदरमुलु । दॊरिगिंचॆ निंद्रजित्तुनि मेनु गाड;
दरमिडि वाडु नुदग्रुडै किनिसि । यरिदिशरंबु लेयग नवि वच्चि
पॊरि विभीषणुनुरंबुन नुच्चि पारि । धर गाड धरणियु दल्लडपडियॆ—
दुरमु विभीषणुतो निंद्रजित्तु । करमुग्रगति निट्लु काविचु चुंड
गनुगॊनि यपुडु लक्ष्मणुडु गोपिंचि । हनुमंतु नॆक्कि तीव्रास्त्र संततुलु
वडिमीरि राक्षसवरुनिपै नेय । गडु नॊच्चियुनु भयंकरमुगा नपुडु
मगुड वाडुज्ज्वल मार्गण पंक्ति । मिगुलंग लक्ष्मणुमीद बॆल्लेसॆ; ५६३०

से जूझकर, पैठकर, पीडित किया। कपियों से व्याकुल होकर, राक्षस, चिनगारियाँ बिखेर उठें ऐसा स्वयं भी घोर-परशु, मुद्गर, शूल, पट्टिस, प्रास, परिघा, शरासन (आदि) हाथ में लेकर विराजित हुए तो क्रम से सुर-असुरों के समान उन अद्रिचरों तथा निशाचरों में संग्राम हुआ। उस अवसर पर हनुमान क्रुद्ध हो, महान् लक्ष्मण को उतारकर, काल (मृत्यु) के समान, एक-एक प्रहार से, एक-एक बार अनेक दैत्यों को पृथ्वी पर गिराकर, ।। ५६२० ।।

—शैलश्रृंगों से तथा सालवृक्षों से सरलता से मारकर, बली होकर विजृंभित हुआ। रभस के साथ तब विभीषण ने क्रोध से उरुतर-ज्याघोष करके उद्धत बन, अपने मन्त्रियों के साथ स्वयं साहस से कई दनुजों को क्रम से मारकर, अधिक शोभायमान कनकपंख-प्रदरों को चलाया जो इन्द्रजित के शरीर में गड़ गए। क्रम से उसके भी उदग्र बन क्रुद्ध हो अनुपम शर चलाने पर, वे आकर क्रम से विभीषण के छाती से पार होकर धरा में गड़ गए जिससे धरणी कम्पित हो उठी। विभीषण से अति उग्रगति से इस प्रकार युद्ध करते समय (उसे) देखकर तब लक्ष्मण ने क्रुद्ध हो हनुमान पर आरूढ़ हो अधिक वेग से तीव्र अस्त्र-संततियाँ (-समूह) राक्षस-वर पर चलाए।

नडरि यय्यिद्दरु नतिकोपु लगुचु । गडिदि बाणंबु लुग्रत नेय नप्पु
डायंप तंडंबु लडरि योंडोरुल । कायंबु लंदंद कप्पिन नप्पु
डंबु धारल तोडि यंबुदंबुलनु । नंबुदंबुल तोडि यर्क चंद्रुलनु
बोलि; रामार्गणंबुलु वच्चु चुन्न । यालोनि वेग मेमनि चेप्प वच्चु?
दोडिगिन शरमुलु तोडिगिन यट्लु । विडुवरोको यनु विधमुन नुंडे;
नारेंडु तेरगुल यम्मुलु गगन । मारंग गप्पिन नडरे जीकट्लु;
वीर रसावेश विवशत नेरुग । रेरि योंडोरुल महाजि रंगमुन;
नायवसरमुन नच्चेरुवडर । वायुवु रणभूमि वर्तिपदय्ये;
ननलुंडु वेलुगोंदडय्ये; दिक्पतुलु । ननिमिष गंधर्व यक्ष किन्नरुलु
सकल देवतलुनु शरणंबु सोच्चि । चकितात्मुलगुचु लक्ष्मणु ब्रशंसिचि
५६४०

या लक्ष्मणुनकु जयंबुगा नपुडु । चाल दीवनलिच्चि सम्मदंबुननु
"नति लोक कंटकुंडैन या दैत्यु । मृतुनिगा जेयु सौमित्रि! नी" वनुचु
बलुकुचु नुंड ना भानुकुलुंडु । पेलुचु नार्चुचु गुणाभीलरावंबु
चेलगंग नायिंद्रजित्तुनु गिट्टि । बलुकांडमुलु मीद वर्गिचुटयुनु

अधिक पीड़ित होकर भी, भयंकर रूप से तब फिर से उसने अधिकता से लक्ष्मण पर उज्ज्वल मार्गण पंक्ति का प्रयोग किया ।। ५६३० ।।

—विजृंभित हो उन दोनों ने अतिक्रुद्ध होते हुए कठोर वाण उग्रता से चलाए । तब उन बाण-समूहों के विजृंभित हो एक दूसरे के शरीरों को सर्वत्र ढँक देने पर वे अंबुधाराओं से युक्त अंबुदों तथा अंबुदों से युक्त अर्क-चन्द्रों के सम थे । उन मार्गणों के आने के वेग के बारे में कैसे कहा जा सकता है ? वह विधान ऐसा था मानों शर का संधान करने और छोड़ने में अन्तर न हो । उन दोनों प्रकार के बाणों के गगन को ढँक देने से अन्धकार फैल गया । महाजि-रंग में वीररस के आवेश के वश होने के कारण वे एक दूसरे को जान न सके । उस अवसर पर आश्चर्यप्रद रूप से रण-भूमि में वायु का प्रसार नहीं हो रहा था । अनल प्रकाशित नहीं हुआ । दिक्पति, अनिमिष, गन्धर्व, यक्ष, किन्नर, (और) समस्त देवता भी, शरण में आकर, चकितात्मा होते हुए लक्ष्मण की प्रशंसाकर, ।। ५६४० ।।

—'उस लक्ष्मण को जय हो' ऐसा अनेक आशीर्वाद देकर, सम्मोद से 'अति-लोककंटक उस दैत्य को तुम मृत कर दो हे सौमित्र !' बोलते रहे। उस भानुकुलवाले ने अधिकता से सिंहनाद करते हुए गुण (ज्या) के आभील-रव के व्याप्त होने पर, उस इन्द्रजित के निकट जाकर, उस पर अनेक बाण

ना राक्षसुडु वेग यवि त्रुंचि वैचि । घोर नाराचमुल् गुरिसि पेल्लार्चे;
मदिलोन गोपिंचि मरियु लक्ष्मणुडु । गदिसि याशाखामृगंबुलार्वंगनु
व्रलमुन नोक यर्ध चंद्रबाणमुन । बलियुडै वानि चापमु द्रुंचि वैचि
पडग नेडिंटनु बडनेसि योकट । दडयक सारथि तल द्रेव्व नेसि
पदियिंट वक्षंबु वगुलंग नेसि । यदरंट नेसे रथ्यमुल नालिगिट;
नारावणुनि सुतुंडप्पुडु ताने । सारथि रथियुनै सौमित्रि गिट्टि ५६५०
नैट्टन नेयुचु निगुडु कोपमुन । नट्टहासमु सेय ना लक्ष्मणुंडु
नरदंबु गडपुचु ननिसेयु दैत्यु । नरुदार वीक्षिंचि यदरंट नेसे;
नावाडि यम्मुल नधिकंबु नोच्चि । रावणु सुतुडु मूर्छागति बोंदि
यंतलो देलिवोंदि यात्मलो बेंद्द । चिंतिंचि "यिदि येमि चित्रमो नरुडु
नन्नु नोंप्पिचें; नेन्नडु निट्टि देरुग । मुन्नु नेयाहवंबुल बोरु नपुडु;
काल मेव्वरिकिनि गडवरा" दनुचु । वालिन युष्ण निश्वासंबु लडर
जापंबु दिवियंग शरमु संधिप । नोपक परिपंथि नोप्पंग जूड
नेरक युंडिन निखिल देवतलु । नारामु तम्मुनि नग्गिंचि; रपुडु
वेल वेलनगु वानि विन्ननि मोमु । गलयंग गनुगोनि कपिवीरु लार्वं

चलाए। उस राक्षस ने उन्हें झट काट देकर, घोर-बाण बरसाकर, सिंहनाद किया। मन में कुपित होकर और भी निकट जाकर लक्ष्मण ने, शाखामृगों के सिंहनाद करते रहने पर, हठ से एक अर्द्धचन्द्र बाण से, बली हो, उसके चाप को तोड़ देकर, सात (बाणों) से केतन को गिराकर, एक से अविलम्ब सारथी के सिर को काट देकर, दस (बाणों) से वक्ष को फोड़ देकर, चार से रथ्यों का मर्मबेधन किया। तब रावणसुत ने स्वयं सारथी तथा रथी बनकर सौमित्र के निकट जाकर, ॥ ५६५० ॥

—भीकरता से (बाण) डालते हुए, विजृंभित क्रोध से अट्टहास किया। उस लक्ष्मण ने रथ चलाते हुए युद्ध करनेवाले दैत्य को चकित हो देखकर, मर्मबेधन किया। उन पैने बाणों से अधिक पीड़ित होकर, रावणसुत मूर्च्छित होकर, उतने में ही होश में आकर, आत्मा (मन) में अधिक चिन्तित हो (उसने सोचा)—"यह कैसी विचित्रता है कि नर ने मुझे पीडित किया। पूर्व में किसी भी आहव (युद्ध) में जूझते समय ऐसा कभी नहीं हुआ। कोई भी काल का अतिक्रमण नहीं कर सकता।" (ऐसा) सोचते समय अधिक उष्ण निश्वासों के निकलने पर, चाप निकालने (तथा) शर का संधान करने में असमर्थ हो, परिपंथी (शत्रु) को ठीक तरह देख न सका। तब समस्त देवताओं ने उस राम के अनुज की प्रशंसा की। तब हततेज बने उसके विवर्ण-मुख को पूरी तरह देखकर, कपिवीरों ने सिंहनाद

वीरुलु ग्रथनुंडु वेंस प्रमाथियुनु । मेरु सन्निभुडगु मेघ निस्वनुडु
५६६०

शरभुंडु ऋषभुंडु शैल शृंगमुलु । नरुदार निंद्रारि यरदंबु विरुग
नटु वैचुटयुनु रथ्यंबुल तोड । विटताटमै कूल विपुलकोपमुन
नसुर-नायक सुतुंडंतट बेंचि । वेंस विभीषणु राम विभुननुजन्मु
नुदुरुनु वक्षंबु नोनाट नेसें । वदलक मूडेसि वाडि बाणमुल;
नेसि गुणध्वनि येसकंबु गाग । जेसि चेंलंगिचें सिंहनादंबु;
नप्पुडु कोंपिंचि यधिक रौद्रमुन । निप्पुलु कन्नुल निव्वटिल्लंग
रावणु सुतुनि युरंबुच्चि पाऱ । गा बिभीषणु डेसें गांडंबु लैदु;
आतडु गोंपिंचि याग्नेय बाण । मा तंड्रि पयि नेय नदि राग जूचि
वारुणास्त्रंबेसें वडि लक्ष्मणुंडु; । नारेंडु नटु पोरि यवनिपै बडियें;
नुरागास्त्र मा दैत्यु डुग्रुडै येय । गरुडास्त्रमुन द्रुंचें गडगि लक्ष्मणुडु;
५६७०

तग गुबेरास्त्र मुद्धति नातडेय । नगणितंबुग द्रुंचें याम्य बाणमुन;
नतडु वेंडियुनु वायव्यास्त्र मेय । नतडदियुनु द्रुंचें नैंद्रास्त्र मेसि;
दानवुंडपुडु गंधर्वास्त्र मेय । दानि लक्ष्मणुडु रौद्रंबुन द्रुंचें;

किया। वीर ऋथन ने झट प्रमाथी और मेरु-सन्निभ मेघ-निस्वन, ।। ५६६० ।।

—शरभ, ऋषभ, ने शैल-शृंगों से आश्चर्यप्रद रूप से इन्द्रारि के रथ को तोड़ देकर, फेंक दिया। वह रथ्यों के साथ तितर-बितर हो गिर गया। विपुल क्रोध से असुरनायक-सुत ने तब विजृंभित हो, झट विभीषण को तथा रामविभु के अनुजन्म के ललाट पर और वक्ष पर अविलम्ब तीन-तीन पैने बाण चलाए। चलाकर अधिक गुण-ध्वनि कर, सिंहनाद किया। तब क्रुद्ध हो, रौद्र से, आँखों से चिनगारियों के फूट पड़ने पर, रावणसुत के वक्ष पारकर जाएं, विभीषण ने ऐसे पाँच बाण डाले। उसने क्रुद्ध हो उस पिता (पितृव्य) पर आग्नेय बाण चलाया, उसके आते देख झट लक्ष्मण ने वारुणास्त्र चलाया। वे दोनों (बाण) जूझकर (टकराकर) अवनी पर गिर गए। दैत्य के उग्र हो उरगास्त्र चलाने पर, सप्रयत्न लक्ष्मण ने गरुडास्त्र से उसे भग्न कर दिया। उद्धति से उसके कुबेरास्त्र चलाने पर, अगणित रूप से उसे याम्यबाण से खंडित कर दिया। उसने फिर वायव्यास्त्र चलाया, उसने उसे भी ऐंद्रास्त्र चलाकर खंडित कर दिया। दानव ने तब गन्धर्वास्त्र चलाया, उसे लक्ष्मण ने रौद्र (अस्त्र) से काट दिया।

ज्ञलमुन निट्टु वारु समरंबु सेय । ब्रळय कालमु नाटि भंगियै तोचें;
सौमित्रि रण परिश्रांति मान्चुटकु । ना मंदवायुवु लल्लन वीचें;
नंत लक्ष्मणुडु नायंतकु पगिदि । नंतकंतकु नुग्रुडै यिंद्र जित्तु

लक्ष्मणुनि चे निंद्रजित्तु मडियुट

नट्टु चूचि कार्मुकज्या निनादंबु । बट्टुशक्ति तो दिशा भागंबु वगुल
जैलगिंचि मेयि वेंचि सिंहनादंबु । सैलगिंचि देवेंद्रुचे गोन्न यट्टि
यारूढि मीरु नैंद्रास्त्रंबु दोडिगि । "यारामविभुडु धर्मात्मुडौनेनि,
देवि यासीत पतिव्रत येनि, । देवता करुण नादेस गल्गेनेनि, ५६८०
निंद्रादुलकु नेल्ल हितवगु नेनि । निंद्रजित्तुनि तल निम्महाशरमु
त्रेंचु गावुत" मनि दृष्टि संधिचि । मिंचि येयुटयुनु मिन्नेल्ल निंडि
पृथु दीर्घ निर्घात भीषणंबगुचु । ब्रथन विकासन प्रारंभमगुचु
बहु रत्न पुंख शोभायुतंबगुचु । विहगेंद्र सम जवाविर्भावमगुचु
नहि मुखानलकण व्यालोल मगुचु । नहिमांशु बिंब प्रभाभीलमगुचु
मंडुचु रुचुलतो महियु नाकसमु । निंडुचु नत्युग्र निग्रहोदग्र

हठ से उनके इस प्रकार युद्ध करते समय, वह प्रलयकाल की भाँति लगा। सौमित्री के रण-परिश्रान्ति (-थकान) को दूर करने के लिए मन्द पवन मन्दगति से चला। तब लक्ष्मण ने अंतक (यम) के समान, शनैः शनैः उग्र हो इन्द्रजित—

लक्ष्मण के हाथ इन्द्रजित का मरना

—की ओर देखकर, कार्मुक-ज्या-निनाद की पटुशक्ति से दिशाभाग के फट जाने, विजृंभित हो, शरीर को बढ़ाकर, सिंहनादकर, देवेन्द्र से प्राप्त किए ऐंद्रास्त्र का औद्धत्य से संधान कर, (यह कह कि) "वह रामविभु धर्मात्मा है तो, देवी वह सीता प्रतिव्रता है तो, देवताओं की करुणा मेरी ओर है तो ॥ ५६८० ॥

—समस्त इन्द्र आदियों को हित हो तो इन्द्रजित के सिर को यह महाशर काट दे।" (यह) कहकर, दृष्टि का संधान कर, उन्नति से (अस्त्र) चलाने पर, (वह) समस्त आकाश में भरकर, पृथुदीर्घ-निर्घात-भीषण होते हुए, प्रथन-विकसन-प्रारम्भ से युक्त होते हुए, बहुरत्नपुंख से शोभायुत होते हुए, विहगेन्द्र के समान जब (वेग) के आविर्भाव से युक्त हो, अहि-मुख के अनलकणों से व्यालोल होते हुए, अहिमांशु (सूर्य)-बिंब की प्रभाओं से आभील (भयंकर) होते हुए, बलते हुए, रुचियों के साथ महि और आकाश

गतुलमै बऱचि राक्षस-लोकनाथु । सुतुगिट्टि यंदंद सुरलु मिन्नंद
दनरिन यम्महोद्दंडास्त्र मतनि । यनुपम मणि कुंडलांचितंबैन
ललितारुणाक्षतालंकृतंबैन । तल बौमिडिकमुतो धर गूल द्रोचें
गलुष भावमुन लंका निधानंबु । ग्रलमुन नुग्रुडै साधिप गोरि५६९०
बलि यिच्चु कौऱकुनै पटु लुलायंबु । तल द्रुंचि वैचु विधंबच्चु वडग;
ननिलोन बडियुन्न यायिंद्रजित्तु । गनुगोनि जयलक्ष्मि गैकोनि दिशलु
गलयंग नपुडु शंखंबु पूरिंचि । विलु गुणध्वनि सेसि वेस लक्ष्मणुंडु
नलुवोप्प नुरु सिंहनादंबु सेय । जेलुवोंदे नप्सर स्त्रील लास्यमुलु;
वीनुलु सोगयिंचें विश्रुत श्रुतुल । मानैन गंधर्व मधुर गानमुलु;
नंत विभीषणुं डंतंत कैच्चु । संतोषमुन ग्रुच्चि सौमित्रि नैत्ति
यालिंगनमु सेसें नालंबु लोन । नालोन वनचरु लंदंद चेलग;
नंतलो हतशेषुलगु निशाचरुलु । नैंतयु भीतिल्लि येपेल्ल बौलिसि
वनचरुल् दोलंग वडि धृति दूलि । तनरारु पदहति धरणि गंपिप
गलगोनि चीकट्लु कन्नुल गविय । दललु वीडग नायुधंबुलु वैचि
५७००
चेंदिन भयमुन जेंडि पाऱि लंक । गोंदरु सोच्चिरि; कुधरशृंगमुल

को भरते हुए, अत्युग्र-निग्रह-उदग्र-गतियों से गतिमान होकर राक्षसलोकनाथ के सुत के निकट पहुँच, जहाँ-तहाँ देवताओं के प्रसन्न होने पर, शोभित उस महा-उद्दंड-अस्त्र ने उसके अनुपम-मणि-कुंडलों से अंचित, ललित अरुण अक्षतालंकृत सिर को शिरस्त्राण के साथ धरा पर गिरा दिया, क्रूरभाव से लंका-निधान को हठ से उग्रता से प्राप्त करने के लिए, ॥ ५६९० ॥

—वलि चढ़ाने के लिए पटु-लुलाय (महिष) का सिर काट डालने के समान था वह विधान। युद्ध में गिर पड़े हुए उस इन्द्रजित को देखकर जय-लक्ष्मी को ग्रहणकर शोभा से तब शंख बजाकर, धनुष की ज्याध्वनि कर झट लक्ष्मण के शोभा से महा-सिंहनाद करने पर, अप्सरस्त्रियों के लास्य सुशोभित हुए, विश्रुत-श्रुतियों में मान्य गन्धर्व मधुर गान कर्णपेय बने। तब विभीषण ने अधिकाधिक प्रसन्नता से निकट लेकर सौमित्र को, युद्ध-भूमि में ही, आलिंगन किया। इतने में (इस बीच) वनचर सर्वत्र विजृंभित हुए। इतने में हतशेष निशाचर अधिक भीत होकर, समस्त विकास को खोकर, वनचरों के भागने पर, धैर्य को खोकर, सुशोभित पद-हति से धरणी के कंपित होने पर, परिव्याप्त अन्धकार के आँखों में फैलने पर, शिरोजों के बिखरने पर, आयुध डाल देकर, ॥ ५७०० ॥

गोंदरैक्किरि; वार्धि गोंदरुवडिरि; । कोंदरु घनशैल गुहललो दूरि;
रनलुंडु तीवर्चिु लडरंग वेलिगे; । दिनकरुंडुज्ज्वलदीप्ति जेन्नोंदे;
जलधुलेडुनु नति स्वच्छंबुलय्ये; । गलय दिक्कुल कप्पु काविरि विरिसे;
गगन प्रसन्नत गलिगे; निष्कंप । मगुचु भूतल मोप्पे; नप्पुडेंतयुनु
बवनसूनुडु शतबलियुनु नलुडु । जवशालि पनसुंडु शरभुंडु ऋषभु
डतुल विक्रमशालि या वालिसुतुडु । नुतबलुंडगु सुषेणुं डर्कजुंडु
गजुडुनु गवयुंडु गंधमाधनुडु । विजयु लैनट्टि याद्विविद मैंदुलुनु
दक्किन वानरोत्तमुलु नेतेंचि । श्रोक्कि कीर्तिचिरि मुदितात्मुलगुचु;
नप्पुडु लक्ष्मणु नखिल देवतलु । नोंप्पार नुतियिंचि योगि बुष्प वृष्टि
५७१०

गुरिसिरि; वानर कोटि पेल्लार्चे; । बरिमळयुत मंद पवनंबु वीचे;
ना लक्ष्मणुडु विष्णु नंशंबु गान । नालंबु लोपल नतनिचे देगिन
कपट राक्षसुडुनु गायंबु बिडिचि । यपराब्धि ग्रुंकिन यर्कुडु वोले
विष्णु सायुज्यंबु वेलयंग नंदे; । नुष्णांशुकुलु कीर्तु लोगि दिशल्निड
सौमित्रि यट जयस्तंभंबु निलिप । रामुनि योद्दकु रयमुन जनियें

—भयभीत हो, टूटकर, भागकर कुछ लंका में घुस पड़े, कुछ कुधर (पर्वत)-शृंगों पर चढ़ गए, कुछ वारिधि में कूद पड़े, कुछ घन-शैल गुफाओं में घुस पड़े। तीव्र-अर्चियों के विजृंभित होने पर अनल बल उठा, दिनकर उज्ज्वल दीप्ति से शोभित हुआ। सातों जलनिधि अतिस्वच्छ बन गए। दिशाओं को ढंकनेवाली कालिमा दूर हुई, गगन प्रसन्न बना, भूतल निष्कंप बन शोभित हुआ। तब पवनसून, शतबलि, नल, जवशाली पनस, शरभ, ऋषभ, अतुल विक्रमशाली वालिसुत, नुतबलवाला सुषेण, अर्कज, गज, गवय, गन्धमादन, विजयी बने वे द्विविद (तथा) मैन्द और अन्य वानरोत्तमों ने आकर प्रणाम कर, मुदित मनवाले होते हुए प्रशंसाएं कीं। तब अखिल देवताओं ने लक्ष्मण की शोभा से प्रशंसा कर, क्रम से पुष्पवृष्टि ॥ ५७१० ॥

—की। वानरकोटि ने अधिक सिंहनाद किया, परिमल-युत मंद पवन चल पड़ा। उस लक्ष्मण के विष्णु के अंश होने पर, युद्ध में उससे मरे कपट राक्षस ने भी काया को छोड़कर, अपराब्धि में डूबे अर्क के समान, शोभा से विष्णुसायुज्य को प्राप्त किया। उष्णांशु-कुलवाले की कीर्तियाँ क्रम से दिशाओं में भर जाएँ, ऐसा वहाँ जयस्तम्भ की स्थापना कर, सौमित्र अतिशीघ्र राम के पास गया। सर्व वानर, विभीषण, वायुज अत्यधिकता से

सर्व वानर विभीषण वायुजुलुनु । बर्वि येंतयु दन्नु वलिसि येतेर;
वच्चि रामुनि पादवनरुहंबुलकु । नच्चुगा नेंड्रगिन नप्पुडुप्पोंगि
यलरि कौंगिट जेर्चि यानंद बाष्प । मुल तोड दौंडलपै मुदमोंप्प नुनिचि
पौंरि नंगमुल वीरपुलक लनंग । नरगरुुल् सौंरबाड्रिनट्टि बाणमुल
मुनुकोंनु ना दुःखमुन मेघनादु । डनिलोन गूलिन या संतसमुन ५७२०
नतिरयंबुन मूर्छ यंतलोपलनें । धृति नूलुकोंन दोन तेंलिवियु गलिगि
यावेळ रघुरामु डर्कसूनुनकु । ना विभीषणुनकु ननुजन्मु जूपि
"यायोधनंबुन नलवुमै नित । सेयुने यीतंडजेयुडै नेड्डु!
बहु दिव्य शस्त्रास्त्रपरुनिंद्रजित्तु । नहित भयंकरु ननिलोन जंपें;
नटुगान नाचेत ननि जच्चु निक । बटु शौर्य धनुडैन पंक्ति कंधरुडु;
नातनि विभवंबु नातनि बलिमि । यातनि सुतुनितो नट नेडु वौलिसें;
निखिल शस्त्रंबुल निपुणुडै मेंड्रसि । यखिल राक्षसुलकु नाधारमैन
कौडुकु चावुन केल्ल कोर्कुलु विडिचि । कडिमिमै नातोड गय्यंबु सेय
सर्वायुधोज्ज्वल सन्नद्धुडगुचु । गर्विचि दुर्वार गति वच्चें नेनि
चतुरंग बल दैत्य संघंबु तोड । विततहवक्षोणि विशिखजालमुल
५७३०

उसे घेरे रहे। (इस प्रकार) आकर राम के पद-वनरुहों में नत होने पर तब (प्रसन्नता से) फूलकर, प्रसन्न हो, आलिंगित कर, आनन्द-बाष्पों से युक्त हो, (अनुज को) जाँघों पर बिठाकर, मानों शरीर के वीररस से पुलकित होने के समान, विषम तीक्ष्ण धाराओं से गड़े हुए बाणों के कारण दुख से तथा युद्ध में मेघनाद के गिर जाने के आनन्द से ॥ ५७२० ॥

—झट मूर्च्छित हुए। उतने में ही धैर्य धारण कर, होश में आकर, उस समय रघुराम ने अर्कसून को (तथा) विभीषण को (अपने) अनुजन्म को दिखाकर (कहा)—"आयोधन (युद्ध) में यह अजेय होकर शोभा से इतना कर पाया न! बहु दिव्य-शस्त्र-अस्त्र-परायण अहित (शत्रु)-भयंकर इन्द्रजित को युद्ध में मार डाला न! यह ऐसा है, अतः अब पटु शौर्यधन वाला पंक्तिकंधर युद्ध में मेरे हाथ मरेगा। उसका वैभव, उसका बल, उसके सुत के साथ ही आज नष्ट हो गए। निखिल शस्त्रों से निपुण हो प्रकाशित होकर, अखिल राक्षसों के आधारभूत पुत्र की मृत्यु के कारण समस्त इच्छाओं को छोड़कर, साहस से मेरे साथ युद्ध करने के लिए सर्व-आयुधों से उज्ज्वल (तथा) सन्नद्ध हो, गर्व से, दुर्वार गति से आएगा तो चतुरंग बल (तथा) दैत्यसंघ के साथ, वितत-आहव-क्षोणि में विशिख जालों से तत्क्षण संहार कर, ॥ ५७३० ॥

बलुविडि दुनुमाडि बलि भूतमुलकु । नलवड गाविंतु नद्दशाननुनि"
ननि सुषेणुनि जूचि याराामु डनियें । "दनरु नोषधि शैल तटवनंबुननु
नुरुतर प्रभलतो नोप्पु विशल्य । करणि वे तेच्चि लक्ष्मण विभीषणुल
वानरावळि शरव्रणवेदनलनु । वानरोत्तम! पापवलयु नी" वनिन
नातंडु नत्तेरंगटु सेय वारु । वीतक्षतांगुलै वेस नुल्लसिल्लि;
रिनसूनु पनुपुन नेल्ल वानरुलु । मनमार गैसेसि महिततेजमुन
जंद्र दिवाकर सदृशुलौ राम । चंद्र सौमित्रुल सरिगोल्व नपुडु
रामलक्ष्मणुलुनु रवितनूजुंडु । यामिनीचर-वरुडगु विभीषणुडु
नुतबलुंडनिलसूनुडु सुषेणुंडु । शतमन्युमनुमडु जाबवंतुंडु
नीलुंडु मौदलगु निखिल यूथपुलु । पौलस्त्युलकु नेल्ल बट्टुगोम्मैन ५७४०
या वीरवरुनि चावधिकसम्मदमु । गाविंप संपूर्णकामुलै; रिटनु

इन्द्रजित्तु मरणमुनकु रावणुनि शोकमु

नंत नाराक्षसुलट लंककरिगि । येंतयु शोकंबुलैसग नव्वेळ

—उस दशानन को भूतों के लिए शोभा से बलि कर दूंगा।" (ऐसा) कह सुषेण को देख उस राम ने कहा—"शोभायमान ओषधी-शैल-तट के वन में, ।। ५७३२ ।।

वन में, उरु-तर प्रभाओं से शोभायमान विशल्यकरणि झट लाकर, लक्ष्मण, विभीषण तथा वानरावली की शर-व्रण-वेदनाओं को हे वानरोत्तम! तुम्हें दूर कर देना चाहिए।" (ऐसा) कहने पर, उसके उस विधान से करने पर, वे वीत-क्षतांग (घावों से मुक्त) हो, झट उल्लसित हुए। इनसून के आदेश पर समस्त वानरों ने मनभर अलंकार कर, महिततेज से चन्द्र-दिवाकर सदृश बने रामचन्द्र (तथा) सौमित्र की उचित सेवाएँ कीं। तब राम, लक्ष्मण तथा रवितनूज, यामनीचर (राक्षस) -वर विभीषण, नुतबलवाला अनिलसून, सुषेण, शतमन्यु का पोता जाम्बवान, नील आदि समस्त-यूथपों (सेनापति)ने समस्त पौलस्त्यों के आधार-स्वरूप ।। ५७४० ।।
—उस वीर-वर (मेघनाद) की मृत्यु को अधिक सम्मोद से मनाकर, इच्छा की पूर्ति कर ली। यहाँ (लंका में)

इन्द्रजित के मरण पर रावण का शोक

—तब वे राक्षस वहाँ लंका में जाकर अधिक शोक के बढ़ने पर, उस समय लोक-विद्रावण रावण को देखकर (बोले) —"हे देव! तुम्हारा पुत्र

रावणु लोकविद्रावणु गांचि । "देव ! नी पुत्तुंडु देवेंद्रवैरि
तन बाहुबलमुन दरिमि वानरुल । दुनुमाडि पेक्कंड्र दुरमुलोपलनु
दिविजुलच्चेरुवंद दिव्यास्त्रकोटि । नविरळंबुग वेंचि यंतट बोक
बलुविडि लक्ष्मणु प्राणमुल् गलग । बलुसायकंबुल ब्रौढुडै येसि
या मेघनादु डुदग्रविक्रमुडु । सौमित्रिचे जच्चे समरमध्यमुन"
ननवुडु रावणुंडधिकशोकमुन । मुनिगि पेंद्दयु ब्रौद्दु मूर्छिल्ल तेंलिसि
"हा वंशवर्धन ! हा महावीर ! । हा वीररणधुर्य ! हा शूरवर्य !
या शतमन्युनि नवलील गेलुचु । ना शौर्यमेव्वडुदग्रुडै यडचे ५७५०
बलसूदनादि दिक्पतुलु खेचरुलु । बलमरि नीवन्न बारुचुंडुदुरु;
नी युग्रशक्तिकि निलिचि निन्नेदिरि । यायोधनंबुन नडचेने नरुडु !
चटुलकोपंबुन जंडकोदंड । पटुबाणपाणिवै बवरंबुलोन
निलिचिन जमुडैन नी कोडु; नट्टि ।बलिमि येक्कडबोये बरिकिंप नेडु!
वक्रमै दैवंबु वलनुगाकुन्न । शक्रारि ! नीकंटे जमुडेक्कुडय्ये;
नक्कजंबुग मंदराचलंबैन । व्रक्कलु सेयु नी वाडि बाणमुलु;
रणभूमिलो नीवु रामलक्ष्मणुल । दृणलील गेलिचिति तिविरि पल्मारु:

देवेन्द्र-वैरी (इन्द्रजित) अपने बाहुबल से वानरों को भगाकर, युद्ध में कइयों का संहार कर, दिविजों के आश्चर्य चकित होने पर, अविरल रूप से दिव्यास्त्र-कोटि से विजृंभित हुआ। उतने से न जाने देकर, झट से लक्ष्मण के प्राण विकल हो जाएँ, ऐसा प्रौढ बनकर कई बाण चलाकर उदग्र विक्रमवाला वह मेघनाद समर-मध्य में सौमित्र के हाथ मर गया।" ऐसा कहने पर रावण अधिक शोक में डूबकर, देर तक मूर्च्छा में रह, होश में आकर (बोला) —"हे वंशवर्द्धन ! हे महावीर ! हे वीर-रण-धुरीण ! हे शूरवर ! उस शतमन्यु (इन्द्र) को सरलता से जीतनेवाले उस शौर्य का किसने उदग्र हो दमन किया'? ॥ ५७५० ॥

—बलसूदन (इन्द्र) आदि दिक्पति और खेचर तुम्हारा नाम सुनकर, बल-हीन हो भाग जाते रहते हैं। तुम्हारी उग्र शक्ति के समक्ष टिककर, तुम्हारा सामना कर, युद्ध में नर ने (तुम्हारा) दमन कर दिया ! चटुल-क्रोध से चंडकोदंड-पटु बाण-पाणि हो, युद्ध में (तुम) खड़े हो जाओ तो यम भी तुम से हार जाएगा। ऐसी तुम्हारी सामर्थ्य देखने (सोचने) पर आज कहाँ चली गई ? वक्र बन दैव (नियति) के प्रतिकूल होने पर हे शक्रारि (इन्द्र वैरी) ! तुम से यम अधिक (शक्तिशाली) हो गया न ! तुम्हारे पैने बाण आश्चर्यप्रद रूप से मंदराचल को बेध डालते हैं। रण-भूमि में तुमने सप्रयत्न कई बार, तृण के समान रामलक्ष्मणों को हरा दिया

ना महत्त्वमु दूलि, हा पुत्र! नीवु । सौमित्रिचे नेडु समसिते यकट !
यमरुलु मौनुलु नमरारि ! नीवु । समरोर्वि बडुटकु संतसिचेंदरु;
संहारघन घनस्तनितमैनट्टि । सिंहनादमु नीवु सेसिन बेंदरु ५७६०
निखिल लोकंबुलु; नीवजेयुडवु । निखिलनिर्जरुलकु; नी पेर्मि दक्कि
यल्पुनिगति गूलितक्कट! या ब्रह्म। कल्पन दप्पिपगा नेरवैति !
सचराचरमुलैन जगमुलीरेडु । सुचिर विक्रम! वीरशून्यमै तोचें;
नंदन ! नीलावु नम्मिन नन्नु । बृंदारकुलु नव्व बेंडबायदगुनें ?
चेंवुलार राक्षसस्त्री विलापमुलु । विविधभंगुल नेडुविन नाकु वलसें;
नी यौवराज्यंबु नीदु लंकयुनु । नी यिष्टबंधुल नी तल्लि नन्नु
दनय ! नी पत्नुल दनयुल डिंचि । चनजालिते ? येंदु जनितिवीवकट!
नाडंतकुनि गेल्चिनाडवालमुन । नेडेट्लु पोयितिवीवु तत्पुरिकि ?
बरलोककृत्यमुल् भक्तितो दनयु । डरय दंड्रिकि जेयुटदियेल्ल बोयि
ये नीकु जेयंगनिटुनेडु वलसें; । नेनिंकनेमंदु? नेमि चेयुदुनु ? ५७७०
रामलक्ष्मणुलुनु रवितनूजुंडु । यामिनीचरपालुडगु विभीषणुडु

था। उस महत्त्व को खोकर, हे पुत्र ! हाय, आज सौमित्र के हाथ (कैसे) मर गए ! हे अमरारि ! तुम्हारे समर-उर्वी (रणभूमि) में गिरने पर अमर और मौनी प्रसन्न हो जाएँगे। संहारघन (प्रलयकालीन मेघ) के घनस्तनित (भयंकर गर्जना) के समान तुम्हारे सिंहनाद करने पर, ॥ ५७६० ॥

—निखिल लोक भीत हो जाते हैं, समस्त निर्जरों के लिए तुम अजेय हो। अपने बडप्पन को खोकर अल्प के समान हाय ! गिरे न ! उस ब्रह्मा की कल्पना को निवारित न कर सके। हे सुचिर-विक्रमवाले ! सचराचर चौदह जग (आज) वीर-शून्य लग रहे हैं। हे नन्दन ! तुम्हारी सामर्थ्य पर विश्वास रखे मुझसे बिछुड़ना कहाँ उचित है ? इससे बृन्दारक (देवता) हँसेंगे। आज मुझे कानभर राक्षस-स्त्रियों के विलाप विविध प्रकारों से-सुनने पड़े न ! अपने यौवराज्य, अपनी लंका और अपने इष्ठ-बन्धुओं, अपनी माता तथा मुझे हे तनय ! अपनी पत्नियों, पुत्रों को छोडकर कैसे जा सके ? हाय, कहाँ चले गए ? उस दिन अन्तक (यम) को युद्ध में जीता था। आज उसकी पुरी में कैसे गए ? सोचने पर भक्ति से तनय का पिता के लिए परलोक-कृत्य (उत्तर क्रियाएँ) करना चाहिए, वह सब छोड़कर आज मुझे तुम्हारी (उत्तर क्रियाएँ) करनी पड़ीं न ! अब मैं क्या कहूँ ? क्या करूँ ? ॥ ५७७० ॥

—रामलक्ष्मण, रवितनूज, यामनीचरपाल विभीषण और भीम-विक्रम-लीला

भीमविक्रमलील बेंपोंदु कपुलु। ना मर्ममुलु दूर नाटियुन्नार;
लट्टि हृदयशल्यंबुलो पुत्र ! नेट्टन पेरुकक नीवेंदु जनिति ?
नापालि जयमय्यु ना तेजमय्यु। ना पुण्यफलमय्यु ना भाग्यमय्यु
ना पेंपुगतियय्यु ना कीर्तियय्यु। नेपार नो पुत्र ! येंचिनवेल्ल
नीववै युंडुदु; नीयट्टि कोडुकु। चाव जूचिति; निक जन्ममेमिटिकि ?
नी कष्ट-शोकाब्धि नेंडतेंगकीद। नाकु नेय्यदि तेप नलिनाप्ततेज !
निनुगोनि रामुनि निर्जितु बोर। ननि नम्मियुंडिति; बोलिसे;
नाशलन्नि दीरें; नकट ! येंनिक। नी शोक दावाग्नि नेरियंगजाल"
ननि यनि शोकिंचि यंदंद पोगिलि। मनसुडिदकयु ग्रम्मर मूर्छ नोंदि
५७८०

युन्न दशग्रीवु नुगुप्रभावु। नुन्नतात्मुलु मंत्रुलोय्यन देलुप
बलुरोषशोकमुल् बलिसि कन्बोमलु। पलुमरु मुडिवड बरवसंबोप्प
नेचिन किन्कमै नेदिक्कु सूचें। जूचिन दिक्कुन स्रुक्कि राक्षसलु
घनभीति बरव राक्षसलोकविभुडु। कनदुग्रदंतसंघट्टनरवमु
नतिभयंकर वृत्ति नप्पुडादिशलु। प्रतिरवंबोनरिपु बदिमुखंबुलनु

से उत्कर्षित कपियों ने मुझपर मर्मांतक बाण चलाए हैं। हे पुत्र ! ऐसे हृदयशल्यों को अनिवार्य रूप से उखाड़े बिना कहाँ चले गए ? मेरी जय, मेरा तेज, मेरा पुण्यफल, मेरा भाग्य, मेरे विकास की गति, मेरी कीर्ति हे पुत्र ! तुम्हीं हो। ये सब तुममें ही होकर (स्थित) रहते हैं। तुम जैसे पुत्र को मरते देखा है। अब यह जन्म (जीवन) किसलिए ? हे नलिनाप्त (सूर्य) -तेजवाले ! इस कष्ट-शोकाब्धि को निरन्तर पार करने के लिए मेरे लिए नौका कहाँ है ? विश्वास किए था कि तुम्हारे साथ (मिलकर) युद्ध कर राम को निर्जित कर सकूँगा। वह सब नष्ट हो गया। सभी आशाएँ नष्ट हो गईं। हाय, अब मैं इस शोक-दावाग्नि से निवृत्त नहीं हो सकूँगा।" ऐसा कह-कह शोक कर, सर्वत्र व्याकुल होकर, मन के कृशीभूत होने से फिर से मूर्च्छित हुआ। ॥ ५७८० ॥

—ऐसे उग्र प्रभाव वाले दशग्रीव को उन्नतात्मावाले मन्त्री झट होश में लाए। अधिक रोष-शोक के बढ़ने पर भौंहों में कई बार गाँठ पड़ने पर, बेबसी के बढ़ने पर, विजृंभित क्रोध से जिस दिशा में देखा, उस दिशा के राक्षस अधिक भीति से व्याकुल हो भाग उठे। तब राक्षसलोक-विभु ने, कनत् (ज्वालासम) -उग्र-दन्त-संघट्टन-रव (दाँत पीसने की ध्वनि) के अतिभयंकर-वृत्ति से तब दिशाओं में गुंजरित होने पर, दसमुखों के नेत्रद्वय से अग्निकणों के उमड़ने पर, अपने सभी मन्त्रिवरो को देखकर कहा—

गनुगवलंदग्निकणमुलु दौरुग । दन मंत्रिवरुल नंदरु जूचि पलिकें;
"विडुवनि तपमुन वेध मेंप्पिंचि । पडसिति शस्त्रास्त्रपंक्तुलु बेंक्कु;
लॅन्नडु नपजयंबेंरुग युद्धमुल; । नॅन्नडु ने शोकमेंरुग जित्तमुनः;
निरुपमस्थिति नोंप्पु नीलाभ्रमनग । बरमेष्टि मेंप्पिंचि पडसिन जोडु
गैकोनि रथमेंक्कि कदलितिनेनि । नाकनायकुडैन ननु गैल्वगलडे ? ५७९०
नलिनसंभवुचेत नाडेनुगोंन्न । विलुनम्मुलुनु मीरु वेगंब तेंडु;
वाडिमि मीरंगवडि गिट्टि कलन । नेडु ने गैलुतु ना नृपुलनु गपुल"
ननि पल्कि प्रळयकालाग्नियु बोलें । मनमुन जाज्वल्मानुडै मंडि
दिव्यवाद्यमुलतो दिक्कुलु म्रोय । नव्य बाहास्फालनंबु सेयुचुनु
ननिकि निट्लुग्रुडै यधिकरोषंबु । पॅनगोंन मर्डियुनु बेंचि यिट्लनियें;
"नेडु ना तम्मुल नेडु ना सुतुल । नेडु ना बंधुल नेडु ना भटुल
जंपेंनु सीतकें चनुदेंचि कडिमि । पेंपार रामुडभेद्युडै पेंचि;
या यिंद्रजित्तु मायासीत जंपें । ना युपायंबु निरर्थकंबय्यें;

रावणुडु सीतनु देंगवेय बोवुट

नेनिक निजमुगा निप्पुड पोयि । जानकि देंगटाचि ब्रलमु साधितु"

"अथक तप से वेधा (ब्रह्मा) को प्रसन्नकर कई शस्त्रास्त्र-पंक्तियों (समूह) को प्राप्त करके युद्धों में कभी अपजय को नहीं जानता। चित्त में कभी किसी शोक को नहीं जानता। परमेष्ठि (ब्रह्मा) को प्रसन्न कर प्राप्त, निरुपमस्थिति से शोभित नीलाभ्र के सम कवच ग्रहणकर, रथ पर आरूढ़ हो, चल पड़ूँ तो नाक (स्वर्ग) -नायक भी मुझे जीत सकेगा ? ॥ ५७९० ॥ —नलिनसम्भव से उस दिन मैंने जो धनुष-बाण प्राप्त किए थे, उन्हें आप शीघ्र लाइए। अधिक तेज से झट युद्ध में सामना कर, उन नृपों तथा कपियों को आज जीतूंगा।" (ऐसा) कह प्रलय-कालाग्नि के समान मन में जाज्वल्यमान हो प्रदीप्त हो, दिव्य वाद्यों के दिशाओं को मुखरित करने पर, नव्य-बाहास्फालन करते हुए, युद्ध के लिए अतिउग्र हो, अधिक रोष के व्याप्त होने पर विजृंभित हो, यों बोला—"सीता के लिए आकर, साहस उत्कर्ष से, राम ने अभेद्य हो विजृंभित होकर, आज मेरे अनुजों, आज मेरे सुतों, आज मेरे सम्बन्धियों, आज मेरे भटों को मार डाला। उस इन्द्रजित ने मायासीता को मार डाला। वह उपाय निरर्थक हुआ।

रावण का सीता को मार डालने के लिए जाना

मैं अब सचमुच अभी जाकर, जानकी का संहार कर, (अपने) हठ

ननि हस्तमुन जंद्रहासंबु वूनि । तनरिन पदहति धरणि गंपिंप ५८००
जनुचुंड वृद्धराक्षसमंत्रिवरुलु । दनरार नूहिंचि तमलोननिरि:
"दशरथात्मजुल नी दशकंधरुंडु । निशित बाणमुल निर्जिपलेडे ?
कैकोनकीतंडु कडिमिमै सकल । लोकपालुर नाजिलो मुन्नु गेलिचे;
नोलि मरुत्तुल नुग्राहवमुन । दोलेनु; नलुवल दोम्मंड्र नोडिचे;
नेनमंड्र वसुवुल नेपडगिचे; । घनततो दोम्मंड्र ग्रहमुल नडचे;
देगुव बन्निद्दुरादित्युल नोंचे । बग गेल्चे रुद्रुल बदियुनोक्कंड्र;
नरुदार गंधर्वयक्षराक्षसुल । नुरगुल गरुडुल नुग्रदानवुल
नतिभीति बोंदिचे; नारसिचूड । नितनिकि नरुलन नेंतटिवारु ?
तमकिंचि सति जंपदगदु" गा कनग । समवर्ति बोले ना समयंबुनंदु
लोकभयंकरालोकुडै तिविरि । नाकेशवैरि जानकि जंप गदिसे;
५८१०
नप्पुडप्पापात्मु नत्युग्रदृष्टि । कप्पुण्यवति स्रुक्कि यनद चंदमुन
नोंदिन भीतितो नुग्रग्रहंबु । मुंदर निलिचिन मोदंबु दक्कि
पडियुन्न रोहिणि पगिदि नम्मुग्ध । पडियुंडि रावणु भावंबु जूचि

का पालन करूँगा।" (ऐसा) कह, हाथ में चन्द्रहास धारणकर, शोभित पदाघात से धरणि के कंपित होने पर, ॥ ५८०० ॥

—जाते समय वृद्ध-राक्षस-मंत्रिवरों ने शोभा से सोचकर, अपने मन में यों कहा—"दशरथात्मजों को यह दशकंधर निशित बाणों से जीत नहीं सकता ? सकल लोकपालकों की परवाह न करके, साहस से इसने पूर्व में सबको जीता था। क्रम से मरुतों को उग्र-आहव (-युद्ध) में भगाया, नवब्रह्माओं का दमन किया, आठ वसुओं के उत्कर्ष का दमन किया, महत्ता से नौ ग्रहों का दमन किया, साहस से बारह आदित्यों को नत किया, स्पर्धा से एकादश रुद्रों को जीत लिया, अनुपम रूप से गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, उरग, गरुड़, उग्र दानव (आदि) को अतिभीत कर दिया। सोचकर देखने पर इसके लिए नर (की सामर्थ्य) ही क्या ? जानबूझकर सती को मारना नहीं चाहिए।" (ऐसा) सोचते समय, समवर्ती (यम) के समान, उस समय देखने में लोक-भयंकर बन, चाहकर, नाकेशवैरी (रावण) जानकी को मारने चल पड़ा ॥ ५८१० ॥

—तब उस पापात्मा की अत्युग्रदृष्टि से वह पुण्यवती (सीता) दुखी होकर, अनाथ की तरह, भीति को प्राप्त हो, उग्रग्रह के समक्ष खड़े होकर, मोद को खोकर पड़ी हुई रोहिणी के समान, वह मुग्धा पड़ी रही। रावण के भाव (विचार) को देख (जान) कर (उसने सोचा) —"हे दैव ! इस

"यी दुरात्मुनिचेत निट्टु चाववलसॆ। हा दैवमा!" यनि यतिभीति बॊंदि
"दुरमुन निंद्रजित्तुडु सच्चुटॆरिगि। सुरवैरि चंपवच्चुचुन्नवाडॊ?
काक या रामलक्ष्मणुल जयिंचि। चेकॊनि ननु जंप जेरुचुन्नाडॊ?
वीनिचे जावना विधि चॆर बॆट्टॆ!। नेनेमिसेयुदु निलमीदनिंक?
नक्कटा! दैवंब! यतिपुण्यधनुल। बॆक्कुसंकटमुल बॆट्टते तॆच्चि
रामाभिरामुल रामलक्ष्मणुल। नामीद पग!" नंचु नलिनायताक्षि
पलविंचि पलविंचि भावमध्यमुन। नॆलकॊन रघुरामु निजमूर्ति निलिपि ५८२०
परवशयै तूलिपडि मूर्छवोयॆ;। धरणिपै बडियुन्न धरणिज जूचि
धरणिजदॆस नल्गु दशकंठु जूचि। करमु शोकिंचि राक्षसुलॆल्ल गलय
हाहानिनादंबु लडरिंचि यप्पु। "डोहो! दुरंत मीयुग्रकृत्यंबु"
अनुचुंड नत्तरि नमरारि जेरि। घनुडु सुपार्श्वुंडु घननीतिधनुडु
वॆरवक दननीतिविभवंबु मॆरसि। तॆरगॊप्प नतनि बोधिंचुचु बलिकॆ;
"दात पुलस्त्युंडु; तंड्रि धर्मैक। नीतिज्ञुडुरुयशोनिधि विश्रवसुडु;
नीवु वेदागमनिधिवि; नी पॆंपु। भाविंपकेल दुर्भावुंडवयिति?

दुरात्मा के हाथ यों मरना पड़ा न।" ऐसा अति भीत होकर, "युद्ध में इन्द्रजित के मरने की बात जानकर, सुर-वैरी मारने के लिए आ रहा है? अथवा उन रामलक्ष्मणों को जीतकर, लगकर मुझे मार डालने पहुँच रहा है? इसके हाथ मरने के लिए क्या विधि ने मुझे बन्दी बनाया था? पृथ्वी पर अब मैं क्या करूँ? हाय! दैव! मुझपर शत्रुभाव के कारण (तुमने) अति पुण्यधनी, रामाभिराम रामलक्ष्मणों को अनेक संकटों में फँसा दिया न?" (ऐसा) कहते नलिनायताक्षी रो-रोकर, भावमध्य (हृदय) में रघुराम की मूर्ति को सुस्थिर कर, ॥ ५८२० ॥

—बेबस हो, लड़खड़ाकर, गिरकर मूर्च्छित हुई। धरणी पर पड़ी हुई धरणिजा को देखकर, धरणिजा के प्रति क्रुद्ध बने दशकंठ को देख, अधिक दुखी हो समस्त राक्षसों ने यह कहते कि 'ओहो! यह उग्रकृत्य दुरन्त है।' हाहकार किया। (ऐसा) कहते समय अमरारि के पास जाकर महान् तथा घननीतिधनवाले सुपार्श्व ने, भीत न बन, अपने नीति-वैभव से प्रकाशित होकर, ढंग से उसे बोध कराते हुए कहा—"(तुम्हारा) दादा पुलस्त्य था। (तुम्हारा) पिता धर्मैक-नीतिज्ञ तथा उरु यशोनिधि विश्रवसु था। तुम (स्वयं) वेद-आगम-निधि हो, अपने उत्कर्ष (बड़प्पन)

तगु नुत्तमस्त्रील दविलि वधिंप । नगणितंबगु दोष; मट्टुगान वलव
दी कोपमंतयु नॆल्लि युद्धमुन । गैकॊनि रामलक्ष्मणुलपै जूपु"
मनि चॆप्पि या चंद्रहासंबु वुच्चि । कॊनि सुपार्श्वुंडु दोड्कॊनि वच्चॆ
मगुड; ५८३०

नंत ना दशकंठुडधिकरोषमुन । जिंतिंचि विन्ननै चित्तंबुनंदु
मरपु वुट्टनि पुत्रमरणशोकमुन । मरुगुचु नास्थानमंटपंबुनकु
जनुदेंचि कॊलुवुंडि चट्टुलवेगमुन । तन मंत्रिवांधवततुल रप्पिंचि
कॊंदलमंदुचु गॊडुकुचंदंबु । मदि नुग्गडिचुक मौनत नुंडॆ ।

इन्द्रजित्तु भार्य सुलोचन शोकुमु

नंत:पुरंबुन नतिवलु गूडि । चिंतिपगा विनि शेषुनि पुत्रि
यैन सुलोचन यात्मेशु चावु । विनि चाल वगचूचु विवशत नॊंदि
पॊलुपॊंदगा बॆट्टप्रॊद्दुकु जॆलुलु । तॆलुपगा नॊक कॊंत तॆलिवॊंदि कुंदि
नानाविधंबुल नाथुनिगूर्चि । यानन्नंबदर ब्रलापिपदॊडगॆ:
"हा प्राणनायक ! हा जीवितेश ! । हा प्राणनाथ ! नीवाजिलो नॆंदिरि

के बारे में न सोच ऐसा दुर्भाववाले क्यों बने ? उत्तमस्त्रियों का चाहकर वध करने पर अगणित दोष होगा। अत: यह उचित नहीं है। यह सारा कोप कल युद्ध में रामलक्ष्मणों पर प्रदर्शित करो !" ऐसा कहकर उस चन्द्रहास को लेकर, सुपार्श्व साथ लेकर (रावण को) लौटा लाया ॥५८३०॥ तब वह दशकंठ, अधिक रोष से चिन्तित हो, विषण्ण वने चित्त में, न भूल सकनेवाले पुत्र-मरण-शोक से परितप्त होते हुए, आस्थान (दरवार) मंडप में आया, सभा करके चटुलवेग से अपने मन्त्री-वांधव-ततियों को बुलाकर, व्याकुल होते हुए, पुत्र के आचरण का मन में उल्लेख करते हुए, मौन रहा।

इन्द्रजित की पत्नी सुलोचना का शोक

अन्त:पुर में स्त्रियों के मिलकर चिन्ता करते सुनकर (आदि-) शेष की पुत्री सुलोचना आत्मेश (पति) की मृत्यु (के बारे में) सुनकर, अधिक दुखी होते हुए, विवश (बेहोश) होकर, देर के बाद सखियों के होश में लाने पर, तनिक होश में आकर, क्षुब्ध हो, नाना विधियों से नाथ के बारे में प्रलाप (विलाप) करने लगी जिससे (उसका) मुख विचलित हो उठा। "हे प्राणनायक ! हे जीवितेश ! हे प्राणनाथ ! युद्ध में तुम्हारा सामना

येपार निन्नु जयिंचेने नरुडु ? । चूपोप जालक जुलकगा जूचि ५८४०

पापपु ब्रह्म यी पट्ल निद्दरिनि । बापंग दगुने तात्पर्यंबुलेक ?
येप्पुडेक्कडिकैन नेगुचो बिलिचि । चेप्पिपोदुवु नन्नु सेममुप्पोंग;
नाकु जेप्पिन नीकु नाथ ! यी चावु । चेकूरुने शत्रुचेत नी लागु ?
मा तंड्रि नन्नु प्रेममु मीर नीकु । प्रीति रेट्टिपंग बेंड्लि गाविंचु
तरि 'नीवु जयकांक्ष दलचितिवेनि । सरवि गार्यंबुलु सतितोड देल्पि
यरिगिन नजहरादुलकजेयुडवु— । नरुलनगा नेंत नाकेशवैरि !'
यनुचु शिरोरत्नमप्पुडु ना चेति । कौनरंगनिच्चि नाकोक बुद्धि देल्पे;
'तनय! नी पति शत्रुतति मीद बोव । मानुगा दलपयि मणि निवाळिंचि
पंपिन बगदीर्चु बगतुल नेल्ल'; । निपुगा जेप्पिन नी माम माट
मरचि यिप्पुडु नीवु मरि वैरिदिव्य । शरवह्निचे रणस्थलिनि व्रालितिवि" ५८५०

अनि तन प्राणंबुलात्मेशुनकुनु । मुनुकोनि मदि धारबोसि याक्षणमे
तनयुल जूचि या तरलायताक्षि । "घनमैन शोकसागरमुन मुनिगि

कर शोभा से (एक) नर ने तुम्हें जीत लिया ? देख न सक (ईर्ष्यालु बन), हीन दृष्टि से, ॥ ५८४० ॥

—पापी-ब्रह्मा को बिना मतलब के हम दोनों को इस प्रकार अलग करना चाहिए था ? कभी कहीं भी जाते थे तो प्रसन्नता के साथ कहकर जाते थे। हे नाथ ! (अबकी बार भी) मुझसे कहकर जाते तो इस प्रकार शत्रु के हाथ मरते क्या ? मेरे पिता ने प्रेम से मेरा विवाह तुम्हारे साथ करते समय कहा था 'हे नाकेशवैरी ! तुम विजय की कांक्षा रखते हो तो क्रम से कार्यों के बारे में सती (पत्नी) से कहकर जाओगे तो अज-हर आदियों के लिए भी अजेय बनोगे। नर की हस्ती-ही क्या है ?' ऐसा कहते तब (एक) शिरोरत्न शोभा से मेरे हाथ देकर, मुझे एक उपाय बताया कि 'हे तनये ! तुम्हारे पति के शत्रुतति पर जाते समय शोभा से सिर पर मणि की आरती उतारोगी तो (वह) समस्त शत्रुओं को जीत लेगा।' ऐसा मनोज्ञता से कही गई अपने ससुर की बात भूलकर, अब तुम वैरी के दिव्य-शर-वह्नि से रणस्थल में गिर गए न !" ॥ ५८५० ॥

—(ऐसा) सोच प्रथमतः अपने प्राणों को मन में ही प्राणेश को समर्पित कर, उसी क्षण तनयों को देख उस तरलायताक्षी ने (कहा)—"महान् शोकसागर में डूबकर, जबकि विभीषण है, भीत होना क्यों ? वह अधिक तेज से

भीतिलनेल ? विभीषणुंडुंड ? । नातडु मन्निंचु नधिकतेजमुन:
वर्धिष्णुलै तनूभवुलार ! मीरु । वर्धिल्लुडेप्पुडु वरगुणोन्नतिनि:
नाकिक नुंडुट न्यायंबु गादु— । प्राकटंबुग बोदु प्राणेशुकडकु"
ननि मुदमंदुचु नन्निट रोसि । मनमुन गल वांछ ममत रेट्टिंप
नलयुचु सोलयुचु नुसुरुसुरनुचु । ललि दूलि यजपुष्पलतिकचंदमुन
जनि दशकंठुनास्थानंबु जेरि । तन कन्नुलनु बाष्पततुलनु दोरुग
मदिराक्षि येड्चुचु ममत रेट्टिंप । नोंदुगुचु मामतो नोय्यन बलिके—
"बतिवियोगंबैन पत्नि याक्षणमे । पतिनंटियेगुट परमधर्मबु: ५८६०
अट्टुगान बतिनंटि यरुगंगवलयु— । बट्टुबुद्धितोड ना पतिकळेबरमु
तेप्पिंपुमिप्पुडु तीव्रंबुगानु । तप्पक मदि भटततुल बांधबुल"
ननिन ना माटल नल्ल जितिंचि । मनुजाशनुंडु नामगुव किट्लनिये—
"विन्ननै याहवविमुखमध्यमुन । बन्नुगा बडियुन्न पडति! नी विभुनि
नेनु बो यडिगिन नित्तुरे वारु ? । कान नाचेतनु गादु मृगाक्षि !
नीमनसट्टुमीद— नेनेमि चेप्प ? । भाम! नीवेरुगनि पनियेमिकलदु ?
चेप्पिति नाकु दोचिनविधं" बनिन । नप्पद्मलोचन यतनिकिट्लनिये—

(तुम्हारा) मान करेगा। हे वर्द्धिष्णु तनूभवो ! तुम सदा वर-गुणोन्नति से वर्द्धित होते रहो। मेरा अब (आगे यहाँ) रहना न्याय (समुचित) नहीं है। प्रकट रूप से प्राणेश के पास जाऊँगी।" (ऐसा) कह मुदित होते हुए, सबसे विरक्त हो, मन में (पति के प्रति) वांछा और ममता के द्विगुणित होने पर, थकते-विकल होते, परम व्याकुल होते हुए, लड़खड़ाते हुए, अजपुष्प-लतिका की तरह जाकर, दशकंठ की सभा पहुँच, अपनी आँखों से बाष्पततियों के प्रवाहित होने पर, (वह) मदिराक्षी (सुलोचना) रोती हुई, ममता के द्विगुणित होने पर, सिकुड़ती हुई भामा (अपने ससुर से) झट बोली—"पतिवियोग को प्राप्त पत्नी का उसी क्षण पति के साथ चला जाना परमधर्म है ॥ ५८६० ॥

—अत: पति के साथ (मुझे) जाना चाहिए। पटुबुद्धि से भटततियों तथा बाँधवों को भेजकर शीघ्र मेरे पति के कलेबर (शरीर) को मँगाओ।" (ऐसा) कहने पर उन बातों पर सोचकर, मनुजाशन (राक्षस रावण) ने उस नारी-से यों कहा—"हे नारी रणमुख-मध्य में (रणभूमि के मध्य) पड़े हुए तुम्हारे पति के लिए, विषण्ण बन मेरे जाकर माँगने पर, वे देंगे क्या ? अत: हे मृगाक्षी ! यह मुझसे नहीं हो सकेगा। अब तुम्हारी इच्छा। हे भामा ! मैं क्या कहूँ ? ऐसा कौन-सा काम है जो तुम नहीं जानती हो। मुझे जैसा लगा वैसा कह दिया है।" (ऐसा) कहने पर उस

"गैलासनगमु वेगमें केलनेंति । फालाक्षुनकु नतिभयमु बुट्टिंचि
कंडकमै मूडुलोकमुलनु गेलिच । कडिमि गलिगन महाघनुडवु नीवु
सुरनाथु गेल्चिन शूरुनकिपुडु । नरुलेंतवारु ? वानरुलेंतवारु ?
५८७०

नरुललो हीन वानरुललो बडिन । गुरुसत्त्वशालि नीकोडुकु देहंबु
'तेलेनु ने' ननि धीरत्वमेंडलि । यी लील नन गालहेतुवो" यनुचु
"गरमोप्पगा बाह्यकर्मबुलकुनु । तरुणुलु पतिरहितंबैन नग्नि
सरवितो जन धर्मसरणियु गान । वेंड्रवक ने विन्नविंचिनमाट
नेंग्गुगा गोन कानतिच्चि नन्ननुपु । दिग्गुन जनि पति देच्चुकोवलयु"
नग्निन ना दशकंठुडतिव वीड्कोलुप । मानिनियुनु दन मामकु म्रोक्कि,
मेलुपैन दोलकरि मेरुपुचंदमुन । कलितमौ तन मेनि कांतिजालमुलु
तलकोनि भूनभोंतरमेल्लनिंड । जलरुहनेत्रि निश्चलबुद्धिचेत
विनुवीथि रा गपिवीरुलंदरुनु । मनमुन नाश्चर्यमग्नुलै चूड
वेंड्रगोंदुचुन्न यी वेलदुल मेटि । सुरपुरिनुंडि यी सुदतीललालम
५८८०

पद्मलोचना ने उससे यों कहा—"कैलास-नग (-पर्वत) को शीघ्रता से हाथ से उठाकर, फालाक्ष (शंकर) को अति भीतकर, साहस से तीन लोकों को जीतकर, साहसवाले महान् व्यक्ति हो तुम। सुरनाथ को जीत लेनेवाले शूर के लिए अब नरों की क्या हस्ती ? वानरों की क्या हस्ती ? ॥ ५८७०॥

—नरों के मध्य, हीन-वानरों के मध्य पड़े हुए गुरु-सत्त्वशाली तुम्हारे पुत्र की देह को 'मैं नहीं ला सकता' ऐसा धीरता को खोकर (तुम्हारा) इस प्रकार कहना कालहेतु (दुर्दैव) से है।" कहकर "बड़ी शोभा से बाह्यकर्मों के लिए, पति रहित होने पर, तरुणियों का क्रम से अग्नि के साथ जाना धर्म की पद्धति है, अत: निर्भीकता से मैं जिस बात का निवेदन करूँ उसे दोष न मानकर, आदेश देकर मुझे भेजो। झट जाकर पति (के शरीर) को पा लेना चाहिए।" (ऐसा) कहने पर उस दशकंठ ने नारी (सुलोचना) को बिदा किया, उस मानिनी ने भी अपने ससुर को प्रणाम किया, प्रथम वर्षा की स्थिर बनी चपला के समान कलित अपनी देह के कांतिजाल के लगकर भू-नभ के समस्त अन्तराल में भर जाने पर, जलरुह-नेत्री, निश्चलबुद्धि से विनुवीथी (आकाश मार्ग) से चली आई। समस्त कपिवीर मन में आश्चर्यमग्न हो देखकर चकित हो रहे। 'यह नारीरत्न, सुरपुरी से यह सुदतीललामा॥ ५८८०॥

देवतलंपिन दिविलक्ष्मि राम । देवुनि कड केगुदेंचेनो काक !
तनयुडु मृतुडैन दशकंधरुंडु । मनमुन रोषंबु मरि यितलेके
कक्कसंबुडिगि वेगमे सीत रथमु । नेक्किंचि मगुड नंपिचेनो काक !
काक वेरोक देवकांतयु निदु । रा गारणंबेमि रयमुन ननुचु
नंगद सुग्रीवुलांजनेयुंडु । संगरस्थलिनुन्न तरुचराधिपुलु
वेरवोप्प श्रीरामविभुडु लक्ष्मणुडु । दोरकोनि चोद्यमंदुचुनुंडि; रपुडु
परमपावनुडैन पवमानसुतुडु । वेरवुन नाकाश वीथि नेतेंचु
भामिनीमणि जूचि परग रामुनकु । दार्मसिपक वेग दग विन्नविंचे;
"ई मानवति मदिनेंचगा देव । भाम कादिदि रामपत्नियु गादु;
मानुगा बतिलेनि मगुवये कानि । दानिकि नदिगो प्रत्यक्षंबु गलदु ५८९०
अप्पडतुकयुन्न यरदंबुमीद । गप्पिन धूळि राघव ! विलोकिंपु

सुलोचन श्रीरामुनि नुतिंचुट

मनि" चूपुचुंड नय्यब्जाक्षि वेग । चनुदेंचि यरदंबु चय्यन डिग्गि
पुत्तडिबोम्मयो पोंसगंग मोदल । क्रोत्तगु मुत्तेमो कोंदमरायंचो

—देवताओं की भेजी यह दिविलक्ष्मी संभवतः रामदेव के पास आई हो। (अथवा) तनय के मृत होने पर दशकंधर ने संभवतः मन में रोष के तनिक भी न होने पर, कर्कशता को छोड़, शीघ्र ही सीता को रथ पर बिठाकर वापिस भेज दिया हो। नहीं तो किसी दूसरी देवकांता के शीघ्र यहाँ आने का क्या कारण है ?' (ऐसा) सोचते हुए अंगद, सुग्रीव, आंजनेय, और संगरस्थल में स्थित तरुचराधिप (और) ढंग से श्रीरामविभु, लक्ष्मण सयत्न चकित होते देखते रहे। तब परमपावन पवमान-सुत ने ढंग से आकाशवीथि से आनेवाली भामिनीमणि को देखकर, विलम्ब किए बिना झट उचितविधि से राम से निवेदन किया कि "यह मानवती मन में सोचने पर देवभामा नहीं है। यह राम की पत्नी भी नहीं है। यह तो पतिविहीन नारी ही है। उसके लिए वह प्रत्यक्ष (प्रमाण) है ।। ५८९० ।।
—उस नारी के धूलि से आच्छादित रथ को हे राघव ! देखो।"

सुलोचना का श्रीराम की स्तुति करना

ऐसा दिखाते समय वह अब्जाक्षी शीघ्र आकर रथ से झट उतरकर, मानों स्वर्णप्रतिमा हो, (अथवा) राजहंस का छौना हो, ऐसा पतली कमर के कंपित होते रहने पर, नेत्रद्वय से बाष्पकणों के झरने पर, सदा लड़खड़ाते

यनग सन्नपुनडुमसियाडुचुंड । गनुगवलनु बाष्पकणमुलु दोरुग
नंदद तूलुचु नसुरुसुरनुचु । मंदयानंबुन मगुव राघवुनि
गदिसि सागिलि नमस्कारंबु सेसि । मुदितहस्तंबुलु मुकुळिंचि नुदुट
"रविकुलांबुधिसोम! रामाभिराम! । प्रविमलगुणधाम! परराजभीम!
जलदसन्निभगात्र! सारसनेत्र ! । विलसित चारित्र ! विततपवित्र !
कलशाब्धि गांभीर्य! कनकाद्रि धैर्य । ललितोक्तिमाधुर्य! लावण्यधुर्य!
जननाथ ! नी पादसंसेवकतन । नेनयु ना पापंबुलेल्लनु बासे"
५९००

ननि विन्नविंचुचु नरनाथुनेदुट । विनयंबुतोनुन्न वेलदि नीक्षिंचि
मानवेंद्रुनि यनुमति मीद जेरि । भानुतनूजुडापडतिकिट्लनियें
"नेलनाग! नीवेव्व? रिचटिकि निपुडु । वेलयंग वच्चिनविधमेमि नेडु?
वेलदि! नी पेरेमि? विभुडुनीकेवडु ? । पौलुपोंदनेव्वनि पुत्रिवि नीवु ?
चेप्पुमेर्पड नीदु चेय्दि" यटन्न । नप्पुडप्पडति ता नश्रुवुलोलुक
"भानुज! विनु; भोगिपति नादु तंड्रि; । येनु सुलोचन; यदिय नापेरु;
नाकु नाथुडु मेघनादु; डा पुण्य । प्राकट बहु भोग भाग्यशीलुंडु

हुए, परम विकल होते हुए, मन्दगमन से (उस) नारी ने राघव के पास जा साष्टांग नमस्कार कर, (उस) स्त्री ने ललाट पर हाथ जोड़कर (कहा) —"हे रविकुलांबुधि-सोम ! हे रामाभिराम ! हे प्रविमल गुणाधाम ! हे परराज-भीम ! हे जलद-सन्निभगात्र (वाले) ! हे सारस नेत्र (वाले) ! हे विलसित चरित्रवाले ! हे वितत-पवित्र ! हे कलशाब्धि-गांभीर्य (वाले)! हे कनकाद्रि-धैर्य! हे ललितोक्तिमाधुर्य! हे लावण्यधुर्य ! हे जननाथ ! तुम्हारी पाद-संसेवा से मेरे समस्त पाप दूर हो गए ।" ॥ ५९०० ॥

ऐसा निवेदन करते हुए नरनाथ के समक्ष सविनय स्थित स्त्री को देखकर, मानवेन्द्र (राजा राम) की अनुमति पर, (उसके पास) पहुँच भानुतनूज ने उस स्त्री से यों कहा—"हे युवती ! तुम कौन हो ? अब यहाँ शोभा से आने का कारण क्या है ? हे नारी ! तुम्हारा नाम क्या है ? तुम्हारा विभु (पति) कौन है ? शोभा से तुम किसकी पुत्री हो ? अपना विधान खुलकर बताओ ।" ऐसा कहने पर, तब उस नारी ने आँसुओं के झरने पर (कहा) —"हे भानुज ! सुनो, भोगीपति (सर्पराज) मेरा पिता है, मैं सुलोचना हूँ । यही मेरा नाम है । मेरा नाथ मेघनाद है । वह पुण्यी प्राकट-बहुभोग भाग्यशील है, अधिक बाहाटोप वाला है, अधिक तेज-

नधिक बाहाटोपु डधिकतेजुंडु । क्रथन भीकरुडु नाकप-भंजनुंडु
कडिदिशूरुडु दशकंठनंदनुडु । कडक मंदोदरी गर्भसंभवुडु"
अनि चेंप्पि श्रीरामु नतिव वीक्षिंचि । मनमुन नतिशोकमग्नयै पलिके;
५९१०

"निट्टि शूरुनि राघवेंन्द्र! रणोर्वि । बट्टि चंपिति; कृपापरुलय्यु मीर
लेंट्लु चंपितिरय्य इनकुलाधीश! । पुट्टुने यिट्टुवंटि भूरि विक्रमुडु ?
पतिवियोगाग्निचे बडतुलु मदिनि । परितापमोंदरें पलुतेंरंगुलनु ?
अेंरुगवे सर्वज्ञ ! ये बति बासि । धरणि वैधव्यंबु दाल्पंग गलनें ?
शरणार्थिरक्षक ! सदयांतरंग । परिपूर्णहृदय! शोभनकृपापांग !
मरुगुसोंच्चिति गान मन्निंचुनट्टि । बिरुदु नी बिरुदु रूपिंप ना विभुनि
मरल ब्राणमुलिच्चि मन्निंचुनाकु । पुरुषभिक्षमु वेंट्टि भुवि नन्नु निलुपु"
मनुचु ब्रार्थिंचिन नवनीश्वरुंडु । घनदयापरमूर्ति गान नय्यिंति
पुरुषुनि ब्रदिकिंप बुद्धि नूहिंचु । टेंरिंगि मारुतियुनु मरि विन्नविंचें;
"निदि येमि राघव! येंरुगरे मीरु? । वदलक या ब्रह्म वरमु तप्पिंप
५९२०

वाला है, क्रथन (युद्ध) -भीकर है, नाकप (इन्द्र) का भजन करनेवाला है, साहसी शूर है, दशकंठ का नन्दन है, साहस से मन्दोदरी के गर्भ से उत्पन्न है।" ऐसा कह वह स्त्री श्रीराम को देखकर, मन में अतिशोकमग्न हो बोली— ।। ५९१० ।।

—"हे राघवेन्द्र ! ऐसे शूर को पकड़ रणभूमि में मार डाला। हे इन-कुलाधीश ! कृपालु होकर भी आपने कैसे मार डाला ? क्या ऐसा भूरि-विक्रमवाला उत्पन्न हो सकता है ? पतिवियोगाग्नि से स्त्रियाँ मन मे अनेक प्रकार से परितप्त नहीं होंगी ? हे सर्वज्ञ ! (इसे) नही जानते हो ? मैं पति से बिछुड़कर इस धरणी पर वैधव्य को सहन कर सकूँगी ? हे शर-णार्थिरक्षक ! हे सदयांतरंग (वाले)! हे परिपूर्णहृदय ! हे शोभनकृपापांग ! शरण में आई हूँ। (शरणागत की) मान करने की बिरुद है। अतः ऐसे अपने बिरुद को सार्थक कर, मेरे विभु को पुनः प्राण देकर मान करो। मुझे पुरुष-भिक्षा प्रदान कर, मुझे भुवि पर (जीवित) रखो।" ऐसा प्रार्थना करने पर अवनीश्वर (राज राम) के महा-दयापर-मूर्ति होने के कारण उस स्त्री के पुरुष को जीवित करने की मन में सोचते जानकर, मारुति ने फिर निवेदन किया—"यह क्या राघव ! आप नहीं जानते क्या ? अनिवार्य उस ब्रह्मा के वर को निरर्थक करना ।। ५९२० ।।

नीतिये मीरु मानिनिकिनि जेप्प ?। धातनु मन्निपदगुनु भूनाथ !"
यनि मारुतात्मजुडाडु वाक्यमुलु । अनविनि तलपोसि यपुडिट्टुलनियॆ
"जलजाक्षि! यिकोक्क जन्मंबुनदु । कलसेदु भुवि बेद्दकालंबुदाक
पेक्कु संपदलचे बेंपु सोंपार । नक्कजंबुग भोगमनुभवंबोंदि,
या मीद वैकुंठमंदु निर्वुरुनु । गामितारोन्नति गांतुरु गाक"
यनिन संतोषिंचि यतिदयापरुनि । विनयपूर्वकमुगा विनुतिप दोडगॆ—
"सदयांतरंग ! यो शरनिधिभंग । सदमलगुणधीर ! साधु सांगत्य !
परग ना पतिकळेबरमु देप्पिचु । पुरमुन कतिवेग बोवंगवलयु"
ननवुडु सुग्रीवुडपुडिट्टुलनियॆ । "वनजलोचन ! पतिव्रतवौदुवेनि
नी गब्बिपतितोड नी चदमेल्ल । तग बल्कुमिप्पुडु तडयक" यनिन
५९३०
गडुवेगमुन बोयि कदनरंगमुनु । दडयक चोच्चि या तरलायताक्षि
पडियुन्न तल जूचि पलुतेरंगुलनु । अडलुचु बति जेर नरिगियु दुःख
जलधिलो मुनिगि मूर्छग्रुबोंदि तेलिसि । पलुविधंबुल बडि प्राणेशुमीद
नेलुगेत्ति 'हा' यनि येड्चि धैर्यंबु । निलिपि सुस्थिरमुन निलिचि
या लेम

—नीति है क्या, जो आप मानिनी को कहने (वर देने) जा रहे हैं ? हे भूनाथ ! धाता (ब्रह्मा) का मान करना चाहिए।" ऐसा मारुतात्मज के वाक्य सुनकर, सोचकर तब ऐसा कहा—"हे जलजाक्षी ! और एक जन्म में (अपने पति से) मिलोगी, भुवि पर चिरकाल तक, अनेक सम्पदाओं से उत्कर्ष को पाकर, आश्चर्यप्रद रूप से भोगों का उपभोग कर, उसके बाद वैकुण्ठ में (तुम) दोनों (अपने) कामितों (इच्छाओं) की पूर्ति पूरी तरह करोगी।" (ऐसा) कहने पर, प्रसन्न होकर, (उस) अति दयालु (राम) की विनयपूर्वक विनुति (स्तुति) करने लगी—"हे सदयांतरंग (वाले) ! हे शरनिधि का भंग (करनेवाले) ! हे सदमलगुणधीर ! हे साधुसांगत्ये ! औचित्य से मेरे पति का कलेबर मँगाओ। अतिवेग से पुर में जाना है।" ऐसा कहने पर सुग्रीव ने तब यों कहा—"हे वनजलोचने ! यदि पतिव्रता हो तो अब अविम्ब अपने गर्वीपति से यह सारा विधान उचित बिधि से कहो।" (ऐसा) कहने पर ।। ५९३० ।।

—अतिवेग से जाकर, अविलम्ब रणभूमि में प्रवेशकर, वह तरलायताक्षी कट गिरे सिर को देख, अनेक प्रकार से दुखी होती हुई, पति के पास पहुँचकर, दुखजलधि में डूबकर, मूर्च्छित हो, होश में आकर अनेक प्रकार से गिरकर, प्राणेश पर गिरकर, उच्चस्वर से 'हाय' कह रोकर, धीरज धारण कर,

पलिकॆ सत्यप्रभाभासितयगुचु । "वलनॊप्पु ना मनोवाक्कायकर्म
मुलयंदु बतिभक्ति मॊनसितिनेनि । सललित धर्मसंचारंबुनंदु
पतियॆ दैवंबनि भावबुलोन । सततंबु व्रतमुगा सलुपुदुनेनि
चॆलगि न विभुनकु जीवंबु वच्चि । यलर नातो माटलाडुगा" कनुचु
अनि तमयात्म मर्यादलु कॊंत । यनिन गन्विच्चि दशास्यनंदनुडु
"नॆलत! चंपिनवाडु नी तंड्रि गाडॆ । तलपोय नॊरुलकु तरमॆ नन्गॆल्व ?
५९४०
निलिचि युद्धमु सेय निमिषमंदैन । बलुचिंतपड नीकु पनिलेदु विनुमु;
तनदु ऋणानुबंधमु गूडियुन्न । नॆनसियुंदुरु नरुलितुल गूडि;
वॆलयग योग वियोगमुल् ब्रह्म । वॆलयंग गल्पिचॆ वॆलदि! जीवुलकु
इट्टुगान मरि कालहेतुवु गान । कुटिलकुंतल ! यिट्लु कूलिति धरणि;
जनु" मनि कन्नुलु चय्यन मूय । गनि मदिलो जित गडलुकॊनंग
नप्पुडु बहुदु:खयै कॊंतसेपु । अप्पॊलतंदुंडकतिवेग वच्चि
श्रीरामविभुनकु जेतुलु मॊगिचि । या राम विनुतिचॆ नतिमोदमुननु;
नप्पुडु रघुरामु डंगदु बिलिचि । "यिप्पडुतुकपति निप्पिपु" मनिन

सुस्थिरता से खड़े होकर, उस स्त्री ने सत्यप्रभा-भासित होते हुए कहा–"शोभायमान अपने मनोवाक्-काय-कर्मों में पतिभक्ति से विलसित होऊँ, सललित धर्म-आचरण में, मन में, पति को ही दैव (भगवान) मानकर, सतत व्रत करती रही होऊँ तो उल्लसित हो, मेरा विभु जीवित होकर, मनोज्ञता से मेरे साथ बातें करेगा।" ऐसा कह अपनी आत्म-मर्यादाओं (आंतरंगिक विषयों) को कुछ-कुछ कहने पर दशास्यनन्दन ने आँख खोलकर (कहा), "हे युवती ! (जिसने मुझे) मारा है वह तुम्हारा पिता नहीं है क्या ? सोचने पर दूसरे मुझे जीत सकेंगे क्या ? ।। ५९४० ।।

—निमिष भर भी खड़े रहकर युद्ध कर सकेंगे? अधिक चिन्ता करने की तुम्हें आवश्यकता नहीं है। सुनो। अपने ऋणानुबंध के कारण नर स्त्रियों से मिले रहते हैं। हे स्त्री ! ब्रह्मा ने जीवों के लिए योग-वियोग शोभा से कल्पित किए हैं। यह ऐसा है अत: काल के कारण हे कुटिलकुंतले ! इस प्रकार धरणी पर गिर पड़ा। जाओ" कह झट आँखें बन्द कर लीं। (तो उसे) देख मन में चिन्ता के स्थिर होने पर, तब बहुत दुखी होकर, थोड़ी देर के बाद वह स्त्री वहाँ रहना न चाहकर, अतिवेग से आकर, श्रीरामविभु को हाथ जोड़कर, उस रामा ने अतिमोद से विनुति की। तब रघुराम ने अंगद को बुलाकर कहा 'इस स्त्री के पति को दिला दो।'

तरमिडि या रामधरणीशुनाज्ञ । तलनिडि या यिंति ध्वकळेबरमु
निच्चिन युरमुपै निडि राघवुनकु । नच्चपुभक्तितो नतिव वीड्कोलुप
५९५०
नतिवेगमुन पुरि कप्पुडे पोयि । यतिव मंदिरमुन कप्पुडेपोक
वामाक्षि पतिकळेबरमुंचदगिन । भूमिनि निल्पि कापुंडगा जेसि
यंत:पुरंबुन कट्टु चेर नरिगि । चिंतिंचि तनमदि जिंतिंचि मर्ग्रियु
दनपुत्रुलनु ब्रेम दग जेरदीसि । कनुगवलनु बाष्पकणमुलु दौरुग
शिरमु मूर्कोनि प्रेम जेक्किलि नौक्कि । करमर्थितो दन कौगिट जेर्चि
"सुतुलार ! मी मुद्दु चूडंग नाकु । हितवु मीऽग दैवमिय्यकपोयें;
महिमीदनुंड धर्ममुगादु तनकु; । सहगमनंबु निश्चयमुगा गूर्तु;
निक्कडनुंडुट यिदि बुद्धि कादु । तक्कक पौंडु पाताळंबुनकुनु:
स्थिरबुद्धि मीरादिशेषुनिर्यिंट । वेंऽवकुंडु" डटंचु वेगंबे पंपि,
कडुवेगमुन दशकंठु सन्निधिकि । गडगड वडकुचु गमलाक्षि पोयि
५९६०
विन्ननै वदनारविंदंबु वांचि । कन्नीरु विडिचि गद्गदकंठ यगुचु
गरमुलु मोगिचि यग्गपुभक्तितोड । बुरपुर बौक्कुचु बौलति मामकुनु

क्रम से उस राम-धरणीश की आज्ञा को सिर पर धारणर, उस स्त्री के पति के कलेवर को दिया । देने पर उसे छाती पर रख, स्वच्छ भक्ति से उस स्त्री ने राघव से बिदा ली ।। ५९५० ।।

—अतिवेग से पुरी को तभी जाकर, (वह) स्त्री तभी (अपने) मन्दिर (महल) में न जाकर, वामाक्षी (सुलोचना) ने पति-कलेबर को युक्त भूमि पर रख, पहरा रखवाया । फिर अंत:पुर में जाकर सोचकर, अपने मन में (पुन:) सोचकर, फिर अपने पुत्रों को प्रेम से निकट लेकर, नेत्रद्वय से वाष्पकणों के झरने पर, सिर सूँघकर, प्रेम से गाल दबाकर, अधिक इच्छा से आलिंगित कर (कहा)—"पुत्रो ! आप (लोगों) के लाड़-प्यार देखने का अवसर दैव न दे पाया । महि पर रहना मेरे लिए धर्म (-संगत) नहीं है । निश्चय ही सहगमन करूँगी । यहाँ रहना यह बुद्धि (की बात) नहीं है । निश्चय ही पाताल को जाइए । स्थिर बुद्धि से आप (लोग) आदिशेष के घर, बिना भीत हुए रह जाइए ।" ऐसा कहते (उन्हें) शीघ्र भेज, अतिवेग से दशकंठ के समक्ष, थर-थर काँपती हुई कमलाक्षी गई ।। ५९६० ।।

—विषण्ण हो, वदनारविंद को नतकर, आँसू बहा, गद्गद कण्ठ से, हाथ जोड़, अधिक भक्ति से, अनारत विकल हो, स्त्री (सुलोचना) ने ससुर से

बोयिन वृत्तांतमुनु विन्नविंचि । कायमु देच्चिन क्रममेरिंगिंचि
"रामचंद्रुनि दयारसमु, लक्ष्मणुनि । प्रेमातिशयमु, विभीषणु कूर्मि,
कपिकुंजरुल पराक्रममु, नामहिम । विपरीत" मनि चेप्प विनि रावणुंडु
विन्ननै मोमुन वेडुक लेक । तिन्ननि स्वरमुन देलिसि तेलियकये
यार्यिति तेगुवकु नार्यिति तेलिवि । कार्यिति समबुद्धि का महामहिम
कार्यिति पतिभक्ति कार्यिति वेग । गायमु देच्चिन क्रमशक्तियुक्ति
केमन जालक ये युत्तरंबु । कोमलिकीयक कौतुकुचुनुन्न
गनि सुलोचन "दैवकारणंबुनकु । मनमुन जितिंचि मरियेल यिक ?
५९७०

नाकानतीवय्य ! नाकेशवैरि ! । येकचित्तंबुन नेगेद निंक"
ननग व्याकुलचित्तुडै रावणुंडु । तनदु कोडलिमोमु तप्पक चूचि
या यिंति तेगुवयु नार्यिति तेलिवि । पायक यिक निल्व बट्टरादनुचु
"नेमि चेप्पुदु नीकु निंदीवराक्षि! । नीमदि पूनिक नी तेरंगेदियो ?
प्रियु सुताग्रजु जंपि भीतुलचेत । भयदु:खवार्धिलो बडियुन्नवाड—
नाकेमि तोच्चदु; नाति! यीमीद । नीकु दोचिन जाड नीवेगु" मनिन

(अपने राम के पास) जाने का वृत्तान्त निवेदित कर, काया को लाने के क्रम के बारे में बताकर "रामचन्द्र का दयारस, लक्ष्मण का प्रेमातिशय, विभीषण की ममता, कपिकुंजरों का पराक्रम, वह महिमा विलक्ष्ण है" ऐसा कहने पर, सुनकर रावण विषण्ण बने मुखपर बिना उत्साह के, स्पष्ट स्वर में, जानकर या अनजाने में उस स्त्री के साहस, उस स्त्री की समबुद्धि, उस महामहिमा का, उस स्त्री की पतिभक्ति, उस स्त्री की शीघ्रता, काया को लाने में (उसकी) क्रमशक्ति-युक्ति का कोई उत्तर उस कोमली को न दे सक, (रावण) हकलाता रहा। उसे देख सुलोचना ने (कहा) —"अब दैव कारण के लिए अधिक चिन्ता करना क्यों ? ॥ ५९७० ॥

—हे नाकेशवैरी ! मुझे आज्ञा दे दो। अब एकाग्रचित्त से जाऊँगी।" (ऐसा) कहने पर व्याकुल चित्त (वाला) हो रावण ने अपनी बहू के मुख को अवश्य देख, उस स्त्री के साहस और उस स्त्री की बुद्धि के बारे में सोच और यह कह कि अब इसे रोका नहीं जा सकता, (कहा) —"हे इन्दीवराक्षी ! तुम से क्या कहूँ ? पता नहीं, तुम्हारे मन का प्रयत्न, तुम्हारा विधान क्या है ? प्रिय सुताग्रज को मरवाकर, भीत हो, भय-दुख-वार्धि में पड़ा हुआ हूँ। मुझे कुछ भी नहीं सूझ रहा है। हे नारी ! अब आगे जैसा तुम्हें सूझे उस मार्ग से जाओ।" (ऐसा) कहने पर—

सुलोचन सहगमनमु सेयुट

तरलाक्षि म्रोक्कि संतसमंदि मदिनि। "गरमोप्प दनकु भाग्यमु गल्गे" ननुचु
गृहमुनकेगि कोकिलवाणि तनदु। सहवासुलौ पैक्कु सतुलु गोल्वंग
दशकंठुनानति दगु बांधवुलनु। दशदिशल् निंड मृदंग निस्साण
पटह भेरि शंख पटुळाहळादि। चटुलनादमुलु विच्चलविडि म्रोय ५९८०
सतत निश्चलकृतस्नानयै यपुडु। नतिवेगमुननु गार्यार्थियै यचट
सिरि पट्टुपुट्टंबु जेलुवोंदगट्टि। सरसत रत्नभूषणमुलु बेट्टि
पुव्वुलदंडलु बोलुपोंद वेसि। यव्वारिगा जुट्टि याणिमुत्तेमुल
सूचकंबोनरिचि सुंदरि नोसल। ब्राचुर्यगंधलेपनमु गाविंचि
तिरमोप्पगा निंद्रजित्तु देहंबु। गरमोप्पगा नलंकारंबोनर्चि
मंचिवस्त्रंबुलु महितभूषणमु। लंचित श्रृंगार मलवड जेसि
वरविमानंबुपै वरु देच्चिपेट्टि। वर वाद्यतूर्य रावंबुलु सेलग
त्रेताग्नुलुनु गोंचु दिरमुगा दैत्यु। लाततंबुग वेंट नरुगुदेरंग
वेनुकोनि वेदोक्त विधिपूर्वकमुग। मोनसि युत्तरभागमुन जिति पेंचि

सुलोचना का सहगमन करना

—तरलाक्षी ने प्रणामकर, मन में प्रसन्न हो, यह सोच कि 'अधिक शोभा से अपने को (पति के साथ जाने का) सौभाग्य प्राप्त हुआ', गृह जाकर, (वह) कोकिलवाणी अपने सहवासी अनेक सखियों के सेवाएँ करने पर, दशकंठ की आनति पर उचित बाँधवों को (साथ लेकर), मृदंग-निस्साण-पटह-भेरी-शंख, पटह-काहल-आदियों के चटुल-नादों के विशृंखलता से मुखरित होकर, दश दिशाओं में फैलने पर, ।। ५९८० ।।

—तब सतत निश्चल कृतस्नाना हो, अतिवेग से कार्यार्थी हो, वहाँ श्रीयुक्त कौशेयवस्त्र को सुन्दरता से धारणकर, सरसता से रत्नभूषण धारणकर, पुष्पमालाएँ शोभा से धारणकर, अपार श्रेष्ठ मोतियों को गूँथकर धारणकर, सुन्दरी ने ललाट पर प्रचुरता से गन्धलेपन कर, स्थिरता से इन्द्रजित की देह को मनोज्ञता से अलंकृत कर, श्रेष्ठ वस्त्र, महित भूषणों से अधिक अलंकार कर, वरविमान पर वर(इन्द्रजित) को लाकर रख, वर वाद्य-तूर्य-रवों के विवर्धित होने पर, त्रेताग्नियों को लेकर स्थिरता से दैत्यों के आतत रूप से चलने पर, (उनका) अनुगमन करती हुई, वेदोक्त विधि-पूर्वक,

यागतलैन मुत्तैदुलकपुडु । बागैन पसिडि शूर्पमुलु दानमुल ५९९०
निच्चि वस्त्रंबुलनेकंबुलोसगि । यच्चपुभक्तितो नाचितिमीद
बरग ब्रवेशिचि प्राणेशुनुरमु । करमथितो दन कौगिट जेचि
यनलंबु संधिप नायित्ति मेनु । पनिगोनि पतिसमर्पणमुगा जेसि
सकल देवतलुनु सन्नुतुल् सेय । ब्रकटंबुगा दन पतितोड गूडि
देवविमानंबु देरगोप्प नेक्कि । देवताकोटिलो देजरिल्लुचुनु
गडुवेड्क बुण्यलोकंबुन जेरि । पडति युंडेनु दन पतितोड गूडि;

रावणुडु युद्धमुनकु वडलुट

यंतट रावणुंडधिकरोषमुन । नंतयु मूलबलाळि रप्पिचि
व्रलमुनु बलमनु समरनैपुणियु । गल सैनिकुलनेल्ल गलय नीक्षिचि
"कपुलनु रामलक्ष्णुल मीरेगि । नेपमार निर्जिचि नेरि बगदीर्चि
रंडु; पों" डनवुडु रभसंबुतोड । नोंडोरुगडचुचु नुद्दंडवृत्ति ६०००
सामजघोटक स्यंदन सुभट । सामग्रितो युद्धसन्नद्धुलगुचु
वज्रसमानेक वरसाधनमुलु । वज्रांगुलादिगा वलयु वर्ममुलु

सप्रयत्न उत्तरभाग में चिता की व्यवस्था कराई। (उस समय) आगत सुहागिनों को तब श्रेष्ठ स्वर्ण-सूपों का दान ॥ ५९९० ॥

—देकर, अनेक वस्त्र देकर, अकृत्रिम भक्ति से, उस चिता पर शोभा से प्रवेशकर प्राणेश के उर को अधिक इच्छा से अपने आलिंगन में लेकर, अनल का संधान करने पर, उस स्त्री ने चाहकर (अपने) शरीर को पति को समर्पित कर दिया। सकल देवताओं की स्तुतियाँ करने पर, प्रकट रूप से अपने पति के साथ ढंग से देव विमान पर आरूढ़ होकर, देवताकोटि में प्रकाशित होते हुए, अति उत्साह से पुण्यलोक पहुँच अपने पति के साथ वह स्त्री रही।

रावण का युद्ध के लिए निकल पड़ना

तब रावण ने अधिक रोष से समस्त मूलबल-समूह को बुलाकर, हठ (दृढ़ता), बल तथा समर-नैपुण्य से युक्त सैनिकों को निहारकर (कहा) —"कपियों को, रामलक्ष्मणों को तुम लोग जाकर, दोष का उपशमन हो ऐसा निर्जित कर, प्रतिशोध लेकर आओ। जाओ" ऐसा कहने पर वे सरभस, एक दूसरे से बढ़ते हुए, उद्दंड-वृत्ति से ॥ ६००० ॥

—सामज (हाथी), घोटक, स्यंदन, सुभट, सामग्री से युद्ध-सन्नद्ध होते हुए, वज्रसम अनेक-वर-साधन वज्रांग आदि आवश्यक वर्म (कवच), अधिक

गरमोप्पगा भयंकरलील मेन । धरियिंचि मिंचि युद्धतुलयि पेंचि
करिघटाघींकार घंटिकानेक । तुरगोग्र हेषित दुंदुभिशंख
पटहढमामिका पणवादि वाद्य । पटुरभस ध्वज पट पटात्कार
रथनेमि शिंजिनीराव संकुलमु । मथितार्णव ध्वनि माड्कि घूर्णिल्ल
बलुधूळि जलराशिपट्टुगप्पंपु । गलनु सेयग नेगुकरणि बेल्लेगय
भूकंपमेसग नार्पुलुमिन्नुमुट्ट । भीकरगति नेचि पेंडबोब्बलिड्चु
बिकमुल् जंकेनल् पृथुतर घोर । हुंकारमुलुनु नोंडोरुल पंतमुलु
नंकिंचु नेलुगुलु नार्पुलु सेलग । नंकितमणिकुंडलानेकहार ६०१०
कंकण कोटीरकांतुलु निगुड लंकेशु । सैनिकुल् लंकवेल्वडिरि
घनसत्त्वमुल बेर्चु कपिकुलांबोधि । गनुगोनि बेगडोंदगा नुत्सहिंचि
कडकतो नपुडु लंका वार्धि वेडलु । बडबाग्निकोटुल भंगि शोभिल्लि;
यप्पुडु कपिवीरुलार्पुलु निगुड । नुप्पोंगि चेलगुचु नुडुपथंबविय
ग्रुंगि दिग्गजमुलु कुदिकिलबडग । निंगिकि लंघिंचि नेलकु दाटि
ब्रह्मांडमगलंग बाहुवुल् सरचि । ब्रह्मादि दिविजुलु परिकिंचि चूड

शोभा से, भयंकर विधान से शरीर पर धारणकर, बढ़-बढ़कर, उद्धत हो विजृंभित होकर, करिघटाओं के घींकार, अनेक घंटिकाओं का रव, उग्र तुरगों के हेषित, दुन्दुभि, शंख, पटह, ढमामिका, पणव आदि वाद्यों की ध्वनियाँ, पटु-रभस से युक्त ध्वजों के पटपट की आवाज़ें, रथनेमी तथा शिंजनी-रावों से संकुल बन, मथित-आर्णव की ध्वनि के समान घूर्णित होने पर, अधिक धूलि के युद्ध भूमि को जलराशि के समान करने के लिए खूब उड़ने पर, भू को (पृथ्वी) कंपित करते हुए, लम्बी सांसों के आकाश को स्पर्श कर लेने पर, भीकर गति से विजृंभित हो, सिंहनाद करते हुए, गर्वोक्तियाँ, धमकियाँ, पृथुतर घोर हुँकार, एक दूसरे से स्पर्धाएँ, चीख-पुकार, गर्जनाएँ (आदि) के व्याप्त होने पर, धारण किए मणिकुंडल, अनेक हार, ॥ ६०१० ॥

—कंकण, कोटीर की कांतियों के फैलने पर, लंकेश के सैनिक लंका से निकल पड़े। घनसत्त्व से विजृंभित कपिकुल-अंबोधि को देख, भीत करने के लिए उत्साहित हो, साहस से लंकावार्धि से निकल पड़नेवाली बड़बाग्नि-समूह के समान तब (वे) शोभित हुए। तब कपिवीरों ने सिंहनादों के फैलने पर, उमड़कर, विजृंभित होते हुए, उडुपथ (आकाश) के फट जाने पर, दबकर दिग्गजों के सिर उठाए बैठ जाने पर, आकाश को लांघकर, ज़मीन पर कूदकर, बाहुओं का आस्फालन कर जिससे ब्रह्माण्ड फट जाए, ब्रह्मादि दिविजों के निहारने पर,

मूलबल युद्धमु

गाटुककोंडलगति दनरारु। मेटिदैत्युल जूचि मिगिलिन कडक
गोंडलु दरुवुलु गोटानुकोट्लु। गंडशैलंबुलु गडुवडि बैरिकि
कोनि वच्चि ताकिरि क्रूरुलै; यंत। ननिलोन रघुरामुनस्त्रवैचित्रि
गनुगोनु वेड्डुक गमल बांधवुडु। जनुदेंचेनन बूर्वशैलाग्रमेक्के; ६०२०
वननिधि वननिधि वडि दाकुनट्लु। दनुजबलम्मुनु दरुचरबलमु
नोंडोंटि दलपडि युग्रत मेऱय। मेंडुगा गपिसेन मिगुलंग जूचि
यरदमुल् वऱपुचु हरुल दोलुचुनु। गरुल डीकोलुपुचु गविसि राक्षसुलु
मुनुमिडि नोंप्पिप, मोक्कलंबुननु। वनचरुल् दरुलेति वैवंग नपुडु
वाटुल व्रेटुल वडि नंदुनिदु। बोटुल नेटुल बोरि नंदुनिदु
गरवालमुल भयंकर वालमुलनु। गरदंडमुल गदाघनदंडमुलनु
बरशुल बरिघल बट्टिसंबुलनु। गिरुलनु दरुलनु गिरिश्रृंगमुलनु
दरुचरुल् वैवंग दनुजुलु वैव। धरणिपै शोणितधारलु दोरुग
गोंडलु वालयंत्रमुल। गोनि मीद वैव नाकोंडल नडुम
दुत्तुमुरै नेल दोरुग जक्रंबु। लेत्ति व्रेसियु गदलेत्ति मोदियुनु ६०३०

मूलबल का युद्ध

काजल के पर्वतों के समान शोभायमान श्रेष्ठ दैत्यों को देखकर, अधिक साहस से पर्वत, तरु, करोडों के करोड गंडशैल अतिशीघ्रता से उखाड़ लाकर, क्रूर बन (दैत्यों का) सामना किया। इतने में रघुराम के अस्त्र-वैचित्र्य को देखने के उत्साह से कमल-बांधव आकर पूर्वशैलाग्र पर आरूढ़ हुए (सूर्योदय हुआ) ॥ ६०२० ॥

मानों वननिधि (समुद्र) वननिधि से टकरा रहा हो, ऐसा दनुज सेना और तरुचरसेना एक दूसरे से जूझकर उग्रता से विलसित हुई। कपिसेना के अधिक बढ़ने पर, रथ चलाते हुए, अश्व चलाते हुए, करियों को टकराते हुए, टूट पड़कर राक्षसों ने प्रथमतः (कपियों को) पीडित किया। (तब) निर्ममता से वनचरों ने वृक्ष उठाकर फेंके। सर्वत्र मार-पीट के शिकार बन सर्वत्र युद्ध के प्रहारों के क्रम से करवाल और भयंकर-वाल, करदंड और गदाघनदंड, परशुओं, परिघाओं, पट्टिसों से और गिरियों, तरुओं, गिरिश्रृंगों को वनचरों और दनुजों ने (एक दूसरे पर) फेंके। (फेंकने पर) धरणी पेर शोणित की धाराएँ प्रवाहित होने पर, वनचरों के पर्वत तथा वालयन्त्र ले ऊपर फेंकने पर, उन पर्वतों के बीच चूर-चूर हो (दनुज) ज़मीन पर गिर पड़े तो (कुछ दनुजों ने) चक्र उठा फेंककर तथा गदाएँ उठाकर मारकर, ॥ ६०३० ॥

सरि बोरिरोंडोरुल् व्रलमुन गिट्टि । सुरलद्भुतंबंदि चूडंग; नपुडु
करुलनु हरुलनु घनरथंबुलनु । सरि दोलि कपुल राक्षसुलु नोप्पिप
वनचरेश्वरुडुनु वालिनंदनुडु । ननिलजुंडुनु नीलुडादिगा गलुगु
नगचर प्रमुखुलु नधिककरोषमुन । नगपादपमुल वानलु वेस गुरिय
बरियलै पडियेंडु बहुरथंबुलुनु । गरमुग्रगति गूलु करिसमूहमुलु
नरिमुरि गेंडयु वाहनमुलु नेल । कोरगु दानुवुलुने युंडंग गिनिस
रथरथ्यवेगंबु रथिकुलगिगप । रथमुलु वरपि सारथुलु बिट्टार्व
रथमुलु दम मनोरथमुलकरणि । बृथिवीतलंबेल्ल बेल्लुगा नद्रुव
गविसिन गडनोगल् करमुल बट्टि । यवलील विविकेति यवनिपै वैचि
तुरगमुल् दोलिन दोलगक कपुलु । तुरगंबुतो नेत्ति तुरगंबु व्रेसि
६०४०
करुल डीकोलिपिन गरुलपै गवसि । करि गरि दाटिंचि गमुलकु नुरिकि
डाकाल नोक्कनि डाकेल नोकनि । नाकेल नोक्कनि नाकाल नोकनि
गुदिचि रादिगिचियु गूलदन्नियुनु । नदरंटनेसियु नंट द्रोक्कियुनु
नदिमि नोच्चियु वीक नदर व्रेसियुनु । नदलिचि दिविकेत्ति यवनि
वैचियुनु

—समान रूप से जूझकर, हठ से एक दूसरे का सामना किया, जिसे चकित हो सुरों ने देखा। तब करियों, हरियों, महारथों को ठीक से चलाकर कपियों को राक्षसों ने पीडित किया। (तब) वनचरेश्वर और वालिनन्दन, अनिलज और नील आदि नगचर-प्रमुखों ने अधिक रोष से नग (पर्वत), पादपों की झट वर्षा की तो टूक-टूक हो गिरनेवाले वहुल रथों, अति उग्रगति से गिर-पड़नेवाले करिसमूहों, शीघ्रगति से मरनेवाले वाहनों (अश्वों) तथा ज़मीन पर गिरनेवाले दानवों से (रणभूमि के) युक्त होने पर, क्रुद्ध हो रथ और रथ्यवेगों को रथिकों के तीव्र करने पर, रथ चलाकर, सारथियों के अधिक सिंहनाद करने पर, रथों को अपने मनोरथों के समान, समस्त पृथ्वीतल अधिक फट जाए, ऐसा टूट पड़े। चरणों को हाथों से पकड़कर अनायास आकाश पर उठाकर जमीन पर पटक देकर, तुरंगों को चलाने पर, न हटकर कपि तुरंग को उठाकर तुरंग पर दे मारकर, ।। ६०४० ।।
—करियों से टकराने पर करियों पर टूटकर, करि को करि से टकराकर, (राक्षस) समूह पर कूद पड़कर, बाएँ पैर से एक को, बाएँ हाथ से एक को, उस हाथ से एक को, इस पैर से एक को, दबाकर, खींचकर, लात मार गिराकर, मर्मांतक प्रहार कर, कुचलकर, दबा झुकाकर, साहस छूट जाए ऐसा चपत मारकर, झकझोरकर आकाश में उठाकर, अवनि पर पटककर,

वेंक्कुविधंबुल बेंचि राक्षसुल । निक्कडक्कड सेयुनेंड बेंच्चु पेंरिगि
तुरगरिंखोद्धूतधूळि गप्पुटयु । दरुचराधिपुलुनु दानवाधिपुलु
नरुदैन या निबिडांधकारमुन । गरवालरोचुलु गंदुवल् सूप
वीरु वारुनु बोर वेंडलिन रक्त । धारामरीचुलु दरुचुगा गविसि
बलु रेणुवनु तमःपटलंबु नडप । ज्रलमेंक्कि कय्यंबु संदडियेंन
गुंजर रथकूल घोटकमकर । पुंजध्वजानेक भूरुह् सुभट ६०५०
करकांड कल्लोल खड्गपाठीन । करिकरोरगखेटकच्छपनिकर
विकलभूषणरत्न विसरविकीर्ण । शकलसैकत केशजाल शैवाल
जनित चामर फेनचयरक्तनदुलु । वनचरुल् दनुजुलु वडिदाटि दाटि
ताकुदु; रालोन दरुचरुल् गिनिस । वीक गोलेंम्मुलु विरुगनोंक्कियु
मोकाल मोचेत मुष्टिनंदंद । तांकिंचि पडद्रोसि तललु द्रोंक्कियुनु
बोंट्टलु सीरियु बोनीकपट्टि । चट्टुल वापियु जदिय व्रेसियुनु
गरुचियु विरुचियु गडकाळ्ळुवट्टि । जिरुजिरु द्रिप्पियु जिदिय वैचियुनु
बलुविडि दललोंगि बट्टि वेंड्रुकलु । पेंळपेंळमन बेंलच बेंरिकिवैचियुनु
निरुचेतलंदुनु निरुवुर बट्टि । पोंरिबोंरि दांकिंचि पोळ्ळुसेसियुनु

अनेक विधियों से विजृंभित होकर, राक्षसों को इधर-उधर कर देने पर, प्रचुरता से तुरग-रिंख-उद्धूत-धूलि छा गई। (तब) तरुचराधिप और दानवाधिप विरल उस निबिड-अन्धकार में करवाल-रोचियों के मार्ग दिखाने पर, दोनों के जूझने पर उत्पन्न रक्त-धारा-मरीचियों के अधिकता से फैलकर रेणु रूपी तमःपटल को दूरकर दिया तो हठपूर्वक अधिक युद्ध करने लगे। कुंजर (तथा) रथ (रूपी) कूल (तट), घोटक (रूपी) मकरपुंज, ध्वज (रूपी) अनेक भूरुह (वृक्ष), ।। ६०५० ।।

—करकांडकल्लोल (सुभटों के कट हाथ रूपी कल्लोलों से युक्त), खड्ग रूपी पाठीन (मत्स्य), करिकर (सूँड रूपी) उरग (सर्प), खेट (ढाल रूपी) कच्छपनिकर, विकल-भूषण-रत्न-विसर-विकीर्ण-शकल (कण रूपी) सैकत (रेत), केशजाल रूपी शैवाल-जनित (उत्पन्न), चामर रूपी फेन-चय से युक्त रक्त-नदियों को वनचर और दनुज झट पारकर (एक दूसरे का) सामना करते है। इतने में तरुचरों ने क्रुद्ध हो साहस से (दनुजों के) अस्थिपंजर को तोड़ दबाकर, कुहनियों और घुटनों से, मुष्टियों से जहाँ-तहाँ मार गिराकर, सिर कुचलकर, पेट चीरकर, न जाने देकर पकड़कर (उनका) नाशकर, (ज़मीन पर) पटक-पटक देकर, कुतरकर, तोड़कर, टाँग पकड़कर गोल घुमाकर (ज़मीन पर) पटक चूर-चूरकर, झट सिर पकड़ बालों को खींच-खींच सिर फोड़कर, दोनों हाथों में दो (राक्षसों) को पकड़, क्रम से टकराकर चूर-चूरकर,

नेऽसि रंध्रंबुल नेत्तुरुल् वेंडल । नुरुवडि बडद्रोचि युरमुलु सऽचि ६०६०
नखरदंतंबुल नासिकाकर्ण । मुखफालपट्टिकल् मुसरि त्रेंचियुनु
नोंप्पिचियुनु गपुल् नूर्वुरोक्कानि । नुप्पोंगि योक्कोकंडोनर नूर्वुरनु
बट्टि चंपियु जलपट्टि दानवुल । नट्टिट्टु पोनीक यवनिपै गूल्चि
चिंदरवंदर सेयंग, नप्पु । डंदरु वेस जूचि यधिकरोषमुन
धरणि गंपिंप दिक्तटमुलु वगुल । शरधुलु गलग मुज्जगमुलु बेंगड
दारुणाकारुलै तद्दयु बेंचि । भेरी मृदंग गंभीर वाद्यमुलु
सैलगिंच्चियु यक्कपिसेनपै गविसि । बलसूदनादि दिक्पतुलु भीतिल्ल
विकृतमस्तकमुलु विकृतहस्तमुलु । विकृत प्रकोष्ठमुल् विकृतोषमुलुनु
विकृतनखंबुलु विकृतमुखमुलु । विकृतगात्रमुलुनु विकृतनेत्रमुलु
विकृतहासमुलुनु विकृतनासमुलु । विकृतवक्षमुलुनु विकृतकक्षमुलु ६०७०
विकृतकर्णमुलुनु विकृतवर्णमुलु । विकृतपादमुलुनु विकृतनादमुलु
गल सैनिकुलु लयकालाभ्रपंक्ति । बलुविडि विडिवडि परतेंचुकरणि
बरिघगदाचक्रपट्टिस प्रास । परशुतोमर भिंडिवाल त्रिशूल

ऐसा गिराकर वक्षस्थल फोड़कर (शरीर के प्रत्येक) रंध्र से खून निकले, ॥ ६०६० ॥

—नख और दांतों से नासिका, कर्ण, मुख, फाल-पट्टिकाएं पकड़ विजृंभित हो कुतर डालकर, (ऐसा) पीड़ितकर सौ कपि एक को और एक-एक कपि सौ (राक्षसों) को पकड़ मारकर, हठ करके दानवों को (कहीं) जाने न देकर, अवनि पर गिराकर, तितर-बितर कर दिया। तब सब राक्षसों ने झट देख अधिक रोष से, धरणी कंपित हो, दिक्तट फट जाएं, शरधियां (समुद्र) क्षुब्ध हो जाएं, त्रिलोक विह्वल हो जाएं, ऐसा दारुण-आकारवाले हो, अधिक विजृंभित हो, भेरी-मृदंग (आदि) गम्भीर वाद्य बजाकर, उस कपिसेना पर टूट पड़कर, बलसूदन आदि दिक्पति भीत हो जाएं (ऐसा) विकृत मस्तक, विकृत हस्त, विकृत प्रकोष्ठ (मणिबंध-कलाई) विकृत ओष्ठ, विकृत नख, विकृत मुख, विकृत गात्र, विकृत नेत्र, विकृत हास, विकृत नास (नाक), विकृत वक्ष, विकृत कक्षाएं (कांख) ॥ ६०७० ॥

—विकृत कर्ण, विकृत पाद, विकृत नाद से युक्त सैनिक लयकाल की अभ्रपंक्ति के वेग से छूटकर आने के समान, परिघ, गदा, चक्र, पट्टिस, प्रास, परशु, तोमर, भिंडिवाल, त्रिशूल, करपत्र, कुंत, मुद्गर, यष्टिकणय,

करपत्रकुंत मुद्गर यष्टिकणय । करवाल खेटक क्रकचासिनाग मुखशिलीमुखचापमुसलायुधादि । निखिल साधनमुलु नेंड्रयंगबूनि नड्रकियु नडिचियु नलिय मोदियुनु । नुग्गवडि जिम्मियु नोंनर ग्रुम्मियुनु व्रेसियु बोंडिचियु वीक वैचियुनु । नेसियु गोंट्टियु नीरीति गपुल नोंप्पिप नैंतयु नोंच्चि भीतिल्लि । यप्पुडु तरुगिरुलवनिपैवैचि "मनकेल युद्धंबु ? मनकेल चलमु ? । निनकुलेश्वरुडेल ? यिनसूनुडेल? यडविलो गाय पंडाकुलु नमलि । कड्पु बोसुकयुंड गानक वच्चि ६०८०

मदि मदि निच्चट मडियंगनेल ? । पदपदं" डनि कपिपतुलु राघवुल विडिचि, धैर्यंबुलु विडिचि, राक्षसुलु । विड्वक चलमुन वेंनुवेंट दरुम सेतुवु दिक्कुकै चेंडि पारुनपुडु । वातूलसुत नील वालिनंदनुलु गनि, सेतुवट्टु दाटि ग्रक्कुननेंदु । जनकुंड मरलिप जनुदेंचि भीति वनचरुल् दनवेंन्क वच्चि चोंच्चुटयु । गनुगोंनि रामुडक्कपिवरुल् सेंलग

श्रीरामुडु मूलबलमुपै मोहनास्त्रमु वेयुट

दनुजुल मनमुलु तल्लडंबंद । धनुवंदुकोंनि गुणध्वनि सेसि यार्चि करलाघवमु चित्रगतुलोंप्प मेंड्रयु । शरमुलु वड्प निशाचरुल् बेंगडि

करवाल, खेटक, क्रकच, असिनागमुख, शिलीमुख, चाप, मुसल-आयुध-आदि समस्त साधनों को शोभा से धारणकर, काटकर, दबाकर, चूर-चूर हो ऐसा पीटकर, झट बिखेरकर, सींग मारकर, फेंककर, भोंककर मार-मारकर इस प्रकार कपियों को अधिक पीड़ित किया। (करने पर) अधिक पीड़ित हो, भीत होकर, तब तरु-गिरियों को अवनि पर फेंक देकर, (यह सोच कि) "यह हठ हमें क्यों ? इनकुलेश्वर क्यों ? इनसून क्यों ? जंगल में कच्चे फल (और) पके पत्ते चबाकर न रहकर (यहाँ) आकर ॥ ६०८० ॥

—जानबूझकर यहाँ मरना क्यों ? चलो चलो।" कह कपिपति राघवों को छोड़कर, धैर्य छोड़कर, राक्षसों के न छोड़ हठ से पीछा कर भगाने पर, सेतु की ओर, पराजित होकर दौड़ पड़े। (उसे) वातूलसुत, नील वालिनन्दन ने देखा, उधर सेतु को झट पारकर कहीं न जाने देकर, वापिस लौटा लाने आकर भय से (उन) वनचरों के अपने पीछे आकर खड़े देखकर राम ने, कपिवर उत्साहित हों,

श्रीराम का मूलबल पर मोहनास्त्र चलाना

(तथा) दनुजों के मन विकल हो जाएँ, (ऐसा) धनुष ग्रहणकर, गुण-ध्वनिकर, सिंहनाद कर, कर-लाघव (हस्त-कौशल) से चित्रगतियों से

तेरवुलु गानक तिरुगुडुपडुचु । देरलियु मरलियु दीव्रकोपमुन
धरणीशु गानराधरणीशुडेयु । शरमुल तरुचुन समरांगणमुन
रविकुलतिलकुंडु रभसंबुतोड । विविधभंगुल दन विलुविद्य मेंऽसि
६०९०

येसिन शरमुलनेकंबुलगुचु । गासिसेयुचु दाकगा दैत्यवरुलु
नडुमुलु देगियु नेन्नडिमिकि दौडलु । गडकंडलय्यु वक्षमुलु व्रस्सियुनु
वदनमुल् गाडियु वर्णमुल् सेदरि । पदमुलु दुनियलै बाहुवुल् विरिगि
गळमुलु दुनिसियु गरमुलु देगियु । दललविसियु दनुत्राणमुल् दाकि
शरमुलु मेयि नुच्चि चनग नेत्तुरुलु । दौरुग नंगमुल दुत्तुनियलै; रपुडु
कंडयु राक्षसुलु बेंग्गिलेंडु राक्षसुलु । बुडमिपै मूर्छल बोंदु राक्षसुलु
नोंगुलु राक्षसुलुनु नोरुलु देरचि । दिगुलोंदु राक्षसुल् धीरत सडलि
वारणंबुलवारु वाजुलवारु । देरुलवारुनै तिरुगुडुवडग
"नदे राघवुंडेसे; नदे रामुडेसे; । नदे डासे; निदे डासे; नदे यिदे"
यनुचु
वीक्षिपराकतिवेगंबु मेंऽसि । राक्षसबलमुलु रयमुन बऽव ६१००

शोभित हो कांतिमान शर चलाए। (उससे) निशाचर, मार्ग के न दीखने पर भटककर, फिर लौटकर तीव्रकोप से समरांगण में धरणीश (राजा राम) के चलाए बाणों की प्रचुरता से धरणीश को देख न पाए। रविकुल-तिलक ने रभस से विविध भंगिमाओं से अपनी धनुर्विद्या से प्रकाशित होकर, ॥ ६०९० ॥

—चलाए शरों के अनेक होकर, दैत्यवरों को पीड़ित करते लगने पर, (राक्षस) कमर टूटकर, जाँघ बीचों बीच कटकर, वक्ष कटकर, मुखों में (शर) धंसकर, वर्ण बिखरकर, चरण टूटकर, वाहु टूटकर, गले कटकर, हाथ कटकर, सिर चूर होकर, तनुत्राणों (कवचों) को लगकर, शरों के शरीर में घुस जाने पर, रक्त बह निकलने पर (राक्षसों के) अंग-अंग चकनाचूर हो गए। तब गिरनेवाले राक्षस, विह्वल बने राक्षस, पृथ्वी पर मूर्च्छित होनेवाले राक्षस, चिल्लानेवाले राक्षस, मुँह वाकर चिंतित होनेवाले राक्षस, धैर्य छूटे हाथियोंवाले, घोड़ों वाले, रथों वाले राक्षस चक्कर खा घूमने लगे। "यही राघव ने (बाण) चलाए, यही राम ने (बाण) चलाए, यही निकट आया, वही निकट आया, यही-वही" कहते (राम के) दीख न पड़, अतिवेग से प्रकाशित होने पर, राक्षस-बल वेग से भाग उठा ॥ ६१०० ॥

नंतलोनन राघवावनीनाथु। डेंतयु घनरोषमेसग वेंडियुनु
सम्मोहनास्त्रंबु संधिंचि पश्प। दम्मु दामेरुगक दानवुल् ब्रमसि
दानवुंडीतडु, तरुचरुंडितडु। दानिनि तेलियक दनुजुंडु दनुजु
गनि ताकुनप्पुडु गांधर्वशरमु। घनमहत्त्वमुन राक्षसुलकु जूड
नोक्कोक्कनिकि रामुडोक्कडे यगुचु। नोक्कोक्कनिकि रामुलोगि
बदुंड्रगुचु
नोक्कोक्कनिकि रामुलोगि नूर्वुरगुचु। नोक्कोक्कनिकि रामुलोगि
वेवुरगुचु
नोक्कोक्कनिकि रामुलोगि लक्षयगुचु। नोक्कोक्कनिकि रामुलोगि
गोटियगुचु
शतकोटियर्बुदसंख्यलु गडचि। यतुलितंबैन यय्याजिरंगमुन
मरि सर्वमुनु राममयमय्यें; नपुडु। गिरिकोनियुंड नीक्रिय नलकतोड
वडिनेयुनप्पुडु वारक गुडुसु। पडियुन्न रघुरामु पसिडिविल् सूचि
६११०
"समरसमाभीलचक्रियुग्रतनु । नमुचिपै नेसिननाटि चक्रंबो ?
किरणजालंबुल गिरिकोन्न भानु। परिवेषचक्रमो परिकिंप" ननुचु
दम मनंबुल नेंचि दैत्युलय्यंप। गमुलकु निलुवक कलगोनि परव
नमरारिसेनलो नप्पुडोक्कोक्क। निमुसंबुलोपल नेत्तुरुवान

—इतने में राघव-अवनीनाथ ने अति घन-रोष के उमड़ने पर फिर सम्मोहनास्त्र का संधान कर चलाया। (उसके कारण) दानव अपने आपको न जानकर, भ्रमित हुए, यह दानव है, यह तरुचर है, ऐसा न जानकर, दनुज ने दनुज का सामना किया। गाँधर्वशर के घनमहत्त्व से देखने पर राक्षसों को एक (राक्षस) के लिए राम एक ही होते हुए, एक के लिए क्रम से दस राम होते हुए, एक के लिए क्रम से सौ राम होते हुए, एक के लिए क्रम से हजार राम होते हुए, एक के लिए क्रम से लाख राम होते हुए, एक के लिए क्रम से करोड़ राम होते हुए, शतकोटि-अर्बुद संख्याओं को पारकर, अतुलित उस युद्धभूमि में फिर सर्व (सबकुछ) राममय हो गया। तब घेरकर इस प्रकार क्रोध से झट (शर) चलाने पर, निरन्तर वर्तुलीभूत बने रघुराम के सुवर्ण धनुष को देखकर, ॥ ६११० ॥

"पता नही यह समर-समाभील बने चक्री (विष्णु) का उग्रता से नमुचि पर फेंका गया चक्र है ? (अथवा) किरणजालों से घिरे हुए भानु का परिवेषचक्र है", (ऐसा) अपने मन में सोच, दैत्य उन अस्त्र-समूहों के

नानिन हरुलु पद्नालुगुवेलु । नेनुगुलोंक पदुनेनिमिदिवेलु
लक्ष तेरुलु रेंडुलक्षल वीर । राक्षसवीरुलु रणभूमि गेंडय
शरमुलरंबुलै चापंबुनेमि । करणियै गुणरवक्वणितंबु मेंरसि
किरणस्फुलिंगमुल् गिरिकोंन्न राम । करचापचक्रंबु कालचक्रंबु
गति नुल्लसिल्लंग गनुगोंनि पेंलुच । हतशेषदैतेयुलतिभीति बोंदि
कडुघोरमैन संगरभूमि विडिचि । वडि लंक जोंच्चिरि वनचरुलार्वः
६१२०

गालांतमुन गालकंधरुंडलुक । गेळि सल्पिननाटि क्रियनुंडेरणमु—
वलनैनयट्टि रावणु मूलबलमु । ज्रलमुन रघुपति समर्यिचुनपुडु
पदिवेल करुलु निर्वेदिवेल हरुलु । बदिपदुलरदमुल् पद्मंबु बलमु
नालंबुलोपल नतिदारुणमुग । गूलिन नोंकयट्ट गुनियुचुनाडु;
नट्टलु कोटाड नट्टिविकेंगसि । बेंट्टुगा नोंक तल पेंडबोंब्ब वेंट्टु;
नट्टिवि कोटाड नारामु विंट । गट्टिन योंक गंट खणिलनि म्रोयु;
मरगंटलुनु नादमानकीरेडु । मोंरसें नव्विभुचापमुन नरजामु;
भाविप राकुंड बदुनेडुगडिय । ला वीरवरुनि बाणासनविद्य

समक्ष ठहर न सके, व्याकुल हो भाग उठे। तब अमरारी की सेना में एक-एक निमिष में रक्त की वर्षा (धाराओं) में सने हुए चौदह हज़ार अश्व, अठारह हज़ार हाथी, लाख रथ, दो लाख वीर राक्षस वीर रणभूमि में मृत हुए। शर रथचक्र के पत्ते (अर) बन, चाप (धनुष) के नेमी के समान हो, गुणरव क्वणित हो प्रकाशित होकर, किरण-स्फुलिंगों से घिरा हुआ राम का चाप-चक्र कालचक्र के समान विलसित हुआ। (उसे) देख हतशेष दैतेय अति भीत हो अतिभयंकर बनी संगरभूमि को छोड़, वनचरों के सिंहनाद करते रहने पर, झट लंका में प्रविष्ट हुए ।। ६१२० ।।

—कालांत में (प्रलयकाल के समय) कालकंधर के क्रोध से केलि करने के समय के (जग के) समान था रण (भूमि)। रावण के अति शोभायमान मूलबल को हठ से रघुपति के संहार करते समय दस हजार करि, बीस हज़ार हरि, सैकड़ों रथ, (एक) पद्म (की संख्या में) सेना युद्ध में अति दारुण रूप से गिरने पर, एक धड़ इठलाकर चलता, ऐसे करोड़ धड़ इठलाते तो एक सिर भीकरता से दिवि की ओर उठकर चिल्ला उठता। ऐसे करोड़ सिरों के चिल्लाने पर, उस राम के धनुष पर बंधी एक घंटी 'खन्' कहकर मुखरित होती। उस विभु के चाप से चौदह घंटियों का यह नाद लगातार आधे पहर तक मुखरित होता रहा। सत्रह घंटे तक उस वीरवर

गिन्नर गंधर्व खेचर यक्ष । पन्नगामरवरुल् प्रणु तिंचिरेलमि;
ना रामचंद्रुंडु नप्पुडिपलर । शूरपुंगवुडैन सुग्रीवु जूचि ६१३०
"जगदेकभयदमीसम्मोहनास्त्र । मोगि ब्रयोगिंपनु नुपसंहारिंप
नेनोंडे दक्किन नीश्वरुंडोंडे । गानि नेपरुलोरुल् गारु लोकमुल;
गौशिकुंडिच्चिन घनशस्त्र महिम । कौशिकादुलकैन गन नशक्यंबु"
अनिन विभीषणुंडारामु जूचि । विनयसंभ्रममुलु वेलयनिट्लनिये;
"देव ! यी बलमुलु देवेंद्रुडादि । देवतलकुनैन देरलवेन्नडुनु;
बौलस्त्युनकु मूलबलमिदि नेल । पालय्ये; निक गूलु बंक्तिकंधरुडु;
तलकोनि नी पेंपु दलपुवुगाक ! । तलचि चूचिन नीकु दरमे येव्वरुनु ?"
ननिविभीषणुडाडिनट्टि वाक्यमुलु । विनियप्पुडारामविभुडात्मनलरे;

राक्षसस्त्रीलु रावणुनि निंदिंचुट

नंत नक्कड दानवांगनलेल्ल । नंतंत बेनुमूकलै लंकलोन
बोरि बोरि शोकाग्नि बोगुलुचु बलिकि । "ररय जगन्निंद्यमगु चरित्रंबु ६१४०

की बाणासन-विद्या की किन्नर, गन्धर्व, खेचर, यक्ष, पन्नग, अमरवरों ने क्रम से सराहना की। तब रामचन्द्र ने क्रम से शूरपुंगव सुग्रीव को देख (कहा)— ।। ६१३० ।।

—"जगदेक-भयद है यह सम्मोहनास्त्र क्रम, से इसका प्रयोग करने तथा इसका उपसंहार करने में मैं अथवा ईश्वर ही इन लोकों में कुशल हैं। कौशिक की प्रदत्त घन-शस्त्र-महिमा कौशिक (इन्द्र) आदि के भी कल्पनातीत है।" (ऐसा) कहने पर विभीषण ने उस राम को देख विनय-संभ्रमों के विलसित होने पर यों कहा—"हे देव ! ये सेनाएँ (मूलबल) देवेन्द्र आदि देवताओं से भी कभी क्षुब्ध नहीं होतीं। यह पौलस्त्य का मूलबल है। यह मिट्टी में मिल गया। अब पंक्तिकंधर गिर जाएगा। सोचकर अपने उत्कर्ष का विचार नहीं करते। 'सोच' देखने पर कौन तुम्हारी बराबरी कर सकता है ?" ऐसा विभीषण के कहे वाक्य सुनकर तब रामविभु आत्मा से प्रसन्न हुआ ।। ६१३८ ।।

राक्षस स्त्रियों का रावण की निन्दा करना

तब वहाँ लंका में समस्त दानव-अंगनाएँ जहाँ-तहाँ झुंड बाँधकर, पुनः पुनः शोकाग्नि से संतप्त होती हुई, बोली—"सोचने पर जगन्निंद्य चरित्रवाली ।। ६१४० ।।

ब्रायिडि मोमुनु बलित रोमंबु । लैयुन्नशिरमु नत्यायतोदरमु
विकृतवेषंबुनु विकृतयौवनमु । ग्रकचोग्रदंष्ट्रलु गलुगु शूर्पणख
सकलगुणोज्ज्वलु सत्त्वसंपन्नु । सकुमारु नुरुतेजु सुमुख नारामु
गंदर्प सुरुचिराकारु गामिंचे; । नंडनि पंटिकि नरुसाप दगुनें ?
यीलंकलोगल यैल्लराक्षसुलु । गालगोचरुलैन कारणंबुनत्तु
भानुवंशजुनकु बंक्तिकंठुनकु । ना निशाचरि सेसें नधिक वैरंबु;
तगवु चिंतिपक दानि माटलकु । बग गौनि तेंच्चेंनी पंक्तिकंधरुडु;
तनचावुनकें कादु धरणीशुदेवि । गौनिवच्चें राक्षसकुलमेल्ल जेरुप;
नितट सिद्धिचेंने सीत दनकु ! । नित तेंपुनकु दा नितडेल तौडगें ?
मारीचु नौक्कोल मडियिंचें; दंड । कारण्यमुन जंपें गनलि विराधु; ६१५०
निदि यैरिंगियु रामु नेंरुगलेडय्यें । मदिलोन गर्विचि मन रावणुंडु;
अनल समानंबुलगु सायकमुल । जननायकुडु जनस्थानंबुनंदु
बदनालुगुवेवुर बरिमार्चि रोष । मौदवंगनेंचि यत्युग्रबाणमुल
द्रिशिरु दूषणु खरु दृणलील जंपें; । दशकंठुडदियुनु दलपोयडय्यें;

—दीनता-पूर्ण मुख, पलित-रोम से युक्त शिर, अति-आयत (-विशाल) उदर, विकृत वेष, विकृत यौवन, क्रकच (आरी के समान) -उग्र दंष्ट्राएँ, (आदि से) युक्त शूर्पणखा सकल-गुणों से उज्ज्वल, सत्त्व-संपन्न, सुकुमार, उरु-तेजवाले, सुमुख उस राम पर जो कंदर्प-सुरुचिराकार वाला है, आसक्त हुई। अनुपलब्ध फल के लिए हाथ पसारना (कहाँ) उचित है ? इस लंका में सभी राक्षसों के कालगोचर होने के कारण, उस निशाचरी ने भानुवंशज तथा पंक्तिकंठवाले के मध्य अधिक वैर (उत्पन्न) किया। न्याय (औचित्य) न सोचकर, उसकी बातों पर इस पंक्तिकंधर ने वैर मोल लिया। अपनी ही मृत्यु के लिए नहीं, समस्त राक्षस-कुल को नष्ट करने के लिए धरणीश की देवी को लाया। इतने पर भी (क्या) उसे सीता प्राप्त हुई ? (नहीं) इतना साहस करने के लिए वह क्यों उद्यत हुआ ? (राम ने) एक बाण से मारीच को मार डाला, क्रुद्ध हो दंडकारण्य में विराध को मार डाला, ॥ ६१५० ॥

—यह जानकर भी, मन में गर्वित हो हमारा रावण राम (की समार्थ्य) को जान न सका। अनल समान सायकों से जननायक (राम) ने जनस्थान में चौदह हज़ार (राक्षसों) का संहार कर, रोष के उत्पन्न होने पर, विजृंभित होकर अति-उग्र-बाणों से त्रिशिर, दूषण, खर को तृण के

रुधिराशनुनि नतिक्रूरविक्रमुनि । नधिकयोजन बाहु ना कबंधकुनि
ग्रौंचवनंबुन गडतेर्चि पुच्चि । रंचितविक्रमुलैन दाशरथु;
लिट्टि राक्षसुल चावेंरिगियु दौडरें । नट्टि रामुनि गेल्व; नलवियें तनकु?
जगतीशुडगु रामचंद्रुतो बोर । मगटिमि गलिगिने मन रावणुनकु?
नवलील वालि नोक्कम्मुन गूल्चि । रविजु गिष्किंधकुराजु गाविचें;
गरिसहस्रंबुलग्गलमौ पेंक्कु । तुरगलक्षलु रथस्तोमकोट्लुनु
६१६०

गणनकु मिक्किलिगल कालुवलमु । नणुमात्रमुग जंपें नाजिरंगमुन;
नधिक पराक्रमु ना कुंभकर्णु । वधियिंचें नेंक्कटि वसुधेश्वरुंडु;
नट्टि पराक्रमंबदियेंल्ल गनियु । 'निट्टिवा' डनि रामु नेंरुगलेडय्यें;
ना मेटि नतिकायु ना यिंद्रजित्तु । सौमित्रि योंक्कडें समयिंचें नाजि;
निंकनैननु रामुनिट शरणनडु । लंक निंटिंटि विलापमुल् वुट्टें;
दम बंधुलील्गिरि; तम मगल् देगिरि; । तम सुतुल् मृतुलैरि; तम सहोदरुलु
हतुलैरि रणभूमि" ननि येंल्लवारु । नतिशोकमुनु बोंदि यडलुचुन्नारु;

समान मार डाला, दशकंठ इसका भी विचार कर न सका। रुधिराशन को, अतिक्रूर विक्रमवाले तथा योजनाधिक बाहुवाले उस कबंध को, क्रौंचवन में अंचित-विक्रमवाले दाशरथियों ने समाप्त कर दिया। ऐसे राक्षसों की मृत्यु के बारे में जानकर भी राम को जीतने के लिए (रावण) क्यों उद्यत हुआ ? यह क्या अपने (रावण) के बस की बात है ? हमारे रावण में जगदीश रामचन्द्र से लड़ने के लिए पौरुष है ? (राम ने) सरलता से एक बाण से बालि को गिराकर, रविज को किष्किंधा का राजा बनाया। करि-सहस्रों को, अगणित लाखों तुरंगों को, करोड़ों रथ-स्तोमों को, ॥ ६१६० ॥

—अनगिनत पैदल सेना को अणु के समान युद्धभूमि में मार डाला। अद्वितीय अवधेश्वर ने अधिक पराक्रमवाले उस कुंभकर्ण का वध किया। ऐसे समस्त पराक्रम को देखकर भी, यह जान न सका कि राम 'ऐसे (व्यक्ति) हैं।' उस श्रेष्ठ अतिकाय का, उस इन्द्रजित्त का युद्ध में अकेले सौमित्र ने ही शमन कर दिया। अब भी (राम की) शरण में नहीं जाता। लंका के घर-घर में विलाप उत्पन्न हुए। 'अपने बन्धु (रिश्तेदार) मर गए, अपने पति कट गिरे, अपने पुत्र मृत हुए, अपने सहोदर रणभूमि में (नि) हत हुए।' ऐसा कह सब लोग अति शोक

दुर्मतियुनु नीतिदूरुंड ग्रूर । कर्मुंडुनै नाडु कपटरूपमुन
सीत नीपुरिकि देच्चिननाटनुंडि । तोतेंचुचुन्नवि दुर्निमित्तमुलु;
दशकंठुंडिक नी दशरथसुतुनि । विशिखाग्नि गूलुट वैलय सिद्धंबु;
६१७०

अक्कटा! नीतिज्ञुडगु विभीषणुडु । पेक्कुभंगुल जेप्पे ब्रियमुन बुद्धि;
नतडु सेप्पिन बुद्धुलन्नियु नाडु । हितवुगा गैकोन्न नी लंक सेडुनै ?
कुलशैलपक्षमुल् गुलिशघातमुन । नलुकमै दुनुमाडुना पुरंदरुडो ?
मधुकैटभादुल मर्दिचुनट्टि । यधिकुडा विष्णुडो? यदयुडंतकुडो?
प्रळयकालमुनाटि फाललोचनुडों ? । यिल रामुडै पुट्टि यिट्टु
चंपदोडगे;
दशरथतनयुंडु दर्पंबु मेरसि । दशकंठु ननिलोन दग जंपुनपुडु
घनुलगु सुरलैन गंधर्वुलैन । मुनुलैन वीनिकि मुनु वरंबिच्चु
वनजसंभवुडु शर्वाणीशुडयिन । विनुडू राक्षसुलैन विडिपिंपगलरे?
वरमिच्चुनप्पुडा वनजसंभवुडु । नरुलचे जाकुंड नाडीडु गान
बर्रिकिपगा निजबंधुलतोड । धरणीशुचे जच्चु दशकंधरुडु; ६१८०

को प्राप्त कर उत्तप्त हो रहे हैं। दुर्मतिवाला, नीति-दूर तथा क्रूरकर्मा हो (रावण) कपटरूप से जिस दिन सीता को इस पुर में लाया था, तब से अपशकुन दिखाई पड़ रहे हैं। दशकंठ का इस दशरथसुत की विशिखाग्नि में गिर पड़ना निश्चित है ।। ६१७० ।।

—हाय! नीतिज्ञ विभीषण ने अनेक प्रकार से प्रेम से बुद्धि (की बातें) कही थीं। उसकी कही बुद्धि (की सभी बातों) को उस दिन हित के रूप में ग्रहण करता तो क्या आज यह लंका नष्ट होती ? (नहीं) पता नहीं यह (राम) क्रोध के मारे कुलशैलों के पक्षों को खंडित करनेवाला वह पुरन्दर (इन्द्र) है ? (अथवा) मधु-कैटभ आदि का मर्दन करनेवाला अधिक (बलशाली) वह विष्णु है ? सोचने पर (कहीं) अंतक (यम) तो नहीं है ? प्रलयकाल का फाललोचन है ? (इनमें से कोई संभवतः) पृथ्वी पर राम के रूप में जन्म लेकर इधर संहार करने लगा। दशरथ-तनय के दर्प से प्रकाशित होकर, युद्ध में दशकंठ को मार डालते समय, महान् सुर हों, गंधर्व हों, मुनि हों, इसे पूर्व में वर देनेवाला वनजसंभव शर्वाणीश ब्रह्मा हो, राक्षस हो, क्या वे बचा सकेंगे ? वर देते समय उस वनजसंभव ने नर के हाथ न मरने का वर नहीं दिया था अतः सोचने पर अपने बंधुजनों के साथ धरणीश के हाथ दशकंधर मर जाएगा ।। ६१८० ।।

इदि निजमॆट्लन्न निंद्रादि सुरल । मदि दय लेक पल्मारु नॊप्पिप
नी रावणुनि चेत नॆंतयु नॊच्चि । नीरजासनु गांचि निखिलदेवतलु
नभयंबु वेडिन ना चतुर्मुखुडु । शुभतरस्थिति वारि जूचि यिट्लनियॆ--
"नेबाधलुनु जेंदविटमीद मीकु । मी बुद्धि वर्तिंचि मीरुंडुडॆलमि"
ननि वारु दानु महादेवु कडकु । जनि प्रस्तुतिप ब्रसन्नुडै शिवुडु
कमलासनादुल गरुण वीक्षिंचि । 'यमररक्षार्थमै यखिल राक्षसुल
समरंबुलोपल जंपिचुकॊरकु । नमर निंदिर वुट्टु; ना सतीमणिकि
बतिययि प्रजल नापदलॊंदकुंड । सततंबु गाव दुर्जनुल राक्षसुल
जंपंग विष्णुंड जन्मिंचु बुडमि । निंपार' ननि यानतिच्चॆ; रामुंडॆ
यरयंग ना विष्णु; डा महीजात । परिकिंप निंदिर; भावंबु लोन ६१९०
दलपोय शिवुमाट दप्पदु गान । मलगनि शोकंबु मनकु बाटिल्लॆ
मनकु दिक्कॆव्वरु ? मन रावणुंडु । मननेरडिक नेडु मरुगंगनेल ?
मनकंदरकु दिक्कु मन विभीषणुडु । चनि रामचंद्रुनि शरणंबु सॊच्चॆ"
ननि पॆक्कु भंगुल नसुर कामिनुलु । पनवुचुंडग विनि पंक्तिकंधरुडु

—यह सच है । यह ऐसा है । मन में दयारहित होकर इन्द्र आदि सुरों को कई बार सताने पर, वे रावण से अधिक पीडित होकर, नीरजासन को देख समस्त देवताओं ने अभय का निवेदन किया तो उस चतुर्मुख (वाले) ने शुभतरस्थिति से उन्हें देख यों कहा—"अब आगे आपको कोई कष्ट नहीं होंगे। अपनी बुद्धि (के अनुकूल) से आचरण कर, आप प्रेम से रहिए।" (ऐसा) कहकर उनके साथ महादेव के पास जाकर प्रस्तुति की तो प्रसन्न हो शिव ने कमलासन आदियों को करुणा से देखकर—'अमरों की रक्षा के लिए, अखिल राक्षसों को समर में वध कराने के लिए, शोभा से इन्दिरा (लक्ष्मी) पैदा होंगी। उस सतीमणि के पति हो प्रजा को सतत आपत्तियों से बचाने के लिए, दुर्जन राक्षसों को मार डालने के लिए शोभासे पृथ्वी पर विष्णु जन्म लेंगे।' (ऐसी) आज्ञा दी। सोचने पर वह विष्णु ही राम है। विचारने पर मही-जाता (सीता) ही इन्दिरा है ॥ ६१९० ॥
—मन में विचारने पर शिव का वचन दुर्निवार है। इसलिए हमें दुर्निवार शोक संप्राप्त हुआ है। हमारे लिए शरण्य कौन है! हमारा रावण जीवित नहीं रह सकता, अब हमें क्षुब्ध होना क्यों? हम सबके लिए गति (शरण्य) हमारा विभीषण है। (वह) चलकर, रामचन्द्र की शरण में गया।" ऐसा अनेक प्रकार से असुर-कामिनियों के विलाप करते सुनकर पंक्तिकंधर

चिंतसमाकुलचित्तुडै यपुडु । वंत नोंदुचु गोंतवडि यूरकुंडि
चंडकालव्याळसमलील दोप । निडुकोपंबुन निट्टूर्पु वुच्चि
यवुडुलु दीटुचु नंदंद कन्नु । गवल निप्पुलु रालगा नुग्रुडगुचु
नुरुवडि नलिग युद्धोन्मत्तु मत्तु । सोरिदि विरूपाक्षु जूचि 'मीरेलमि
दंदडि सिंहनादमुलु दूर्यमुलु । नंदंद मोरयंग ननिकि नेतेर;"
डनि पलिक भयमुन ना निशाचरुलु । विनि यूरकुन्न ना विधमु वीक्षिंचि
६२००

"यालंबुनकु बेग यत्नंबुसेयु; । डेल युत्साहंबुलिट्टु दक्कियुंड"
ननिन वाररिगि पुण्याहकर्मंबु । लोनर्रिचि सन्नाहमोप्प नेतेंचि
याराक्षसेंद्रुनकु कवनतुलैन । ना राक्षसुल जूचि यतडल्क बल्कें;
"नानाटिकिब्भंगि ना बलंबेल्ल । हीनमय्यॆनु; भृत्युलेल्ल जच्चुटयु,
नमरेंद्र विक्रमुडैन या खरुडु, । नमित बलोदग्रडुगु निंदजित्तु,
ना कुंभकर्णुडु ना प्रहस्तुंडु । ना कुंभुडुनु शूरुडगु निकुंभुडु
भीमविक्रम विजृंभितुडतिकायु । डा महाकायुंडु ना महोदरुडु
ना सुरांतकुडुनु ना नरांतकुडु । भासुरयशुडकंपनुडु गंपनुडु
नाकाधिपतिनैन ननि नोर्चुवारु । नाकुनै पोलिसिरि, ना गर्वमडगें;

चिन्ता-समाकुलचित्त वाला हुआ। तब चिंतित होते हुए, कुछ देर चुप रह कर, चंडकाल-व्याल सम लीला के दीखने पर, पूर्णक्रोध से लम्बी आह छोड़कर, ओंठ काटते हुए, सर्वत्र नेत्रद्वय से चिनगारियों के फूटने पर, उग्र बन, झट क्रुद्ध हो, क्रम से युद्धोन्मत्त, मत्त, विरूपाक्ष को देखकर (बोला) —"आप उत्साह से बहुल सिंहनाद, तूर्य के सर्वत्र मुखरित होने पर युद्ध के लिए चल पड़िए।" ऐसा कहकर, भय के मारे उन निशाचरों के सुनकर चुप रह जाने के विधान को देखकर, ।। ६२०० ।।

—(फिर बोला) —"युद्ध के लिए शीघ्र यत्न कीजिए। आज यह क्या निरुत्साह से हो ?" (ऐसा) कहने पर, वे जाकर, पुण्याह-कर्म कर, सन्नाह की शोभा से आकर, उस राक्षसेंद्र के समक्ष अवनत हो रहे। उन राक्षसों को देखकर वह क्रोध से बोला—"रोज-रोज (क्रमशः) मेरी समस्त सेना इस प्रकार क्षीण हो गई। समस्त भृत्यों का मरना, अमरेंद्र विक्रमवाला वह खर, अमित बलोदग्र इन्द्रजित, वह कुंभकर्ण, वह प्रहस्त, वह कुंभ, शूर निकुम्भ, भीम विक्रम से विजृंभित अतिकाय, वह महाकाय, वह महोदर, वह सुरांतक, वह नरांतक, भासुर-यश वाला अकंपन, कंपन (ये सब), नाकाधिपति को भी युद्ध में सामना कर सकनेवाले, मेरे लिए मृत हुए।

नटुगान शत्रुल नंदर दुनिमि। पटुपराक्रममुन बगनीगुवाड; ६२१०
मीरि ना शरमुलु मिन्नुलु मुट्ट। नेरुलु जलधुलु नेरुगराकुंड
नखिलंबु गप्पुचु नच्चेरुवार। निखिल वानरुलनु नेडु निर्जितु;
नेपुन नल्क ने नेयु बाणम्मु। लापुंखमुग गाडि यगचरास्यमुलु
नाळमुल् गलिगिन नवपंकजमुल। वोलंग नेडाजिभूमिगैसेतु;
'मगलु दनूजुलु मरि सहोदरुलु। देंगि; रिक नॆव्वरु दिक्कु मा' कनुचु
लंकापुर स्त्रीलु ललि दूलि सोलि। यिक नी शोकाब्धि नॆट्टुलीदेदरु?
मार्तुर बौलियिंचि मरि पुरजनुल। यार्ति वापुदु; शोकमडचेद गडगि–
नेडाजि ब्रतिपक्ष निकरसैन्यमुल। वाडि वाणंबुल वडि द्रुंचिवैचि
करमॊप्प फेरव कंक गृध्रमुलु। बौरि विशाच प्रेत भूत जालमुलु
दनिवोव मांसरक्तंबुल दृप्ति यौनरितु"। ननुचु युद्धोन्मत्तु मत्तु ६२२०
नक्षीणबलु विरूपाक्षु वीक्षिंचि। "यी क्षणंबुन मीरु नॆल्ल राक्षसुलु
ननिकि नेतेंडु: नाकरदंबु देर। वनपुडु, नेडु ना पटु सायकमुलु
घनुलैन रामलक्ष्मणुल प्राणमुलु। गौनि वारि रुधिरमुल् ग्रोल गोरेडिनि;

मेरा गर्व नष्ट हो गया। ऐसा होने पर समस्त शत्रुओं का संहार कर, पटु पराक्रम से बदला लूंगा ॥ ६२१० ॥

—विजृंभित होकर, मेरे शरों के आकाश छू लेने पर, नदी-समुद्र जान न पड़े, ऐसा समस्त (सृष्टि) को आच्छादित करने पर, आश्चर्यप्रद रूप से आज समस्त वानरों को मार डालूंगा। विजृंभित हो, क्रोध से मेरे चलाए बाणों के आपुंख (अंतिम भाग तक) गड़कर, अगचरों के सिर, नालयुक्त नव-पंकजों के समान दीखें, आज युद्ध में ऐसा कर दूंगा। 'पति, तनूज, फिर सहोदर मरे। अब हमारी गति कौन है?' ऐसा कहती हुई लंकापुर की स्त्रियाँ लड़खड़ाकर आज इस शोकाब्धि को कैसे पार करेंगी? शत्रुओं का संहार कर, पुरजनों की आर्ति को दूर करूंगा। सप्रयत्न शोक को दूर करूंगा। आज युद्ध में प्रतिपक्ष के सैन्य-निकर को निशित बाणों से झट खंडित कर देकर, बड़ी शोभा से फेरव (सियार), कंक, गृध्र, फिर पिशाच, प्रेत, भूत-जालों को मांस और रक्तों से तृप्त कर दूंगा।" (ऐसा) कहते हुए, युद्धोन्मत्त, मत्त, ॥ ६२२० ॥

—अक्षीण बलवाले विरूपाक्ष को देखकर (कहा) —"इसी क्षण तुम समस्त राक्षस युद्ध के लिए आ जाओ। मेरे लिए रथ लाने भेज दो। आज मेरे पटु-सायक (-बाण) महान् राम लक्ष्मणों के प्राण ले, उनके रुधिर का

शतसंख्यलोक्कोक्क सायकंबुननु । मृति बोंदु गपिकोटिमीद नेसेदनु;
ननिकि बलाध्यक्षुलगुवारि जूचि । कोनिरंडु सेनल गूर्चुक वेग"

रावणुडु रेंडवसारि युद्धमुनकु वेडलुट

नन वारु पिलिपिंप नखिल राक्षसुलु । विनुवीथि यद्रुवंग वीक नार्चुचुनु
गरवाल चक्र भीकर भिंडिवाल । परशु शूल प्रास पट्टिस गदलु
मुसलंबुलुनु गाढ मुद्गरंबुलुनु । नेसगेडु शक्तुलनेक विचित्र
विविधायुधंबुलु वेलुग नेतेंचि । रविरळोत्साहंबुलडरंग नंत;
दनुजुलु नानास्त्रततुलतो गूड । दिनकर प्रभगल तेरु देच्चुटयु
६२३०.

रमणीय रत्नांशुराजि विराजि । तमुलैन कर्णावतंसंबुलमर
बदिकंठमुल रत्नपदकमुल् ग्राल । बदिमुखंबुल वितपंतमुल् दनर
महनीय केयूर मणिकंकणादि । बहुभूषणांकित बाहुदंडमुल
शरशरासन खड्ग चक्रासि परशु । परिघादि साधनप्रकरमुल् मेरय
'दिवजारि चेरबेट्टे दिनकरु नोकनि, । दिविनोक्क दिनमणि
दिरुगुचुन्नाडु;

पान करना चाहते हैं। एक-एक सायक से शतसंख्या में मर जाएँ, ऐसा कपिकोटियों पर बाण प्रयोग कर दूँगा। युद्ध के लिए बलाध्यक्षों को देख (चयन) कर, सेनाओं को समायत्त कर शीघ्र आओ"।

रावण का दूसरी बार युद्ध के लिए निकलना

—(ऐसा) कहने पर, उनके बुलवाने पर, अखिल राक्षस साहस से सिंहनाद करते हुए जिससे विनुवीथि (आकाश) फट जाए, करवाल, चक्र, भीकर भिंडिवाल, परशु, शूल, प्रास, पट्टिस, गदाएँ, मुसल, गाढ़-मुद्गर (तथा) अनेक विचित्र विविध-आयुधों के प्रकाशित होने पर, अविरल उत्साह से आए। तब दनुजों के नाना-अस्त्रततियों से युक्त हो, दिनकर-प्रभावाले रथ को लाने पर, ।। ६२३० ।।

—रमणीय रत्न-अंशु-विराजित कर्णावतंसों के विलसित होने पर, दसों कंठों में रत्नपदकों के शोभित होने पर, दसों मुखों से विचित्र अहंतापूर्ण वाक्यों के निकलते रहने पर, महनीय केयूर मणिकंकण आदि बहु भूषणों से अंकित (अलंकृत) बाहुदंडों में शर, शरासन, खड्ग, चक्र, असि, परशु, परिघा आदि साधन-प्रकरों के प्रकाशित होने पर, 'दिवजारि ने एक दिनकर को कारा में रखा, आकाश में एक दिनमणि घूम रहा है, सोचने पर मानों

तलप दक्किन भानुदशकमो' यनग । दलकौनि कोटीर दशकंबु वेलुग
नंत नादशकंठु डारथंबेक्कि । दंतिरथाश्वपदातुल नडव
बटुतर निस्साण भांकार वीर । भट सिंहनादादि बहुनिनादमुल
विलयकालाभीलवेळ घूर्णिल्लु । जलराशितो लंक सरिवोलुचुंडे;
नविरळ वंदिजनावलि विनुत । रवमुतोडुत नुत्तरद्वारमुननु ६२४०

बलुवडि वेलुवडि पौलस्त्यमुख्यु । डलुक युद्धोन्मत्तु ना विरूपाक्षु
मत्तुनि वीक्षिंचि महि व्रय्यवार । नौत्तिलि यार्चुचु नोलि ना लंक
वेडलंग रविदीप्ति वेलवेल बारे- । नडरि दिक्कुलु निंडे नंधकारंबु;
धरणि गंपिंचेः रथंबुलु विरिगे, । दुरगंबुलोरगे, नेत्तुरु वान गुरिसे-
गडु गीडु शकुनमुल् गानंग बडिन । गडिमि डिंपक दशकंधरुंडडरे-
लंकेशु नाना बलंबुल जूचि । पंकजगर्भांडभांडमुल् वगुल
निगुडु नार्पुलतोंड निखिल वानरुलु । नौगि वीकतो दाकिरुग्रदानवुल-
गलुषिंचि यालोन गपिसेन गिट्टि । बलमुलु नेरयंग बंतमुल् मेरय
गरकु राक्षसुलु नुग्रमुग नेयुदुरु । नेरकुलु दूरंग निशित वाणमुल-

---

शेष भानु-दशक हो' ऐसा लगकर दस किरीटों के चमकते रहने पर, तब वह दशकंठ वाला उस रथ पर आरूढ़ हो, दंति, रथ, अश्व, पदातियों के चल पड़ने पर, लंका (नगर) पटुतर निस्साणों के भांकार, वीर भटों के सिंहनाद आदि बहु निनादों से युक्त हो विलयकाल के आभील वेला में घूर्णित होने वाले जलराशि (समुद्र) की समता कर रहा था। अविरल वंदि जनावली के विनुत (प्रशंसित) रवों के साथ, उत्तर द्वार से ॥ ६२४० ॥

—बरज़ोरी निकलकर पौलस्त्य-मुख्य (रावण) के क्रोध से युद्धोन्मत्त, विरूपाक्ष (तथा) मत्त को देखकर, महि फटकर, अवनत हो जाए ऐसा सिंहनाद करते हुए, क्रम से उस लंका से निकलने पर रवि की दीप्ति विवर्ण हो गई, दिशाओं में फैलकर अंधकार भर गया, धरणि कंपित हो उठी, रथ टूट गए, तुरंग झुक गए, रक्त की वर्षा हुई, (इस प्रकार) अधिक अपशकुनों के दिखाई पड़ने पर भी, साहस न छोड़कर, दशकंधर विजृंभित हुआ। लंकेश के नाना बलों को देखकर, पंकज-गर्भांड-भांड टूट जाएँ, उद्धत सिंहनादों के साथ समस्त वानरों ने लगन के साथ, साहस से उग्र दानवों का सामना किया। क्रुद्ध हो, उतने में, कपिसेना के नियराकर, बल के विजृंभित होने पर, स्पर्धा के प्रकाशित होने पर, क्रूर राक्षस मर्मस्थानों में गड़ जाएँ ऐसा उग्रता से निशित बाण चलाते। अधिक विजृंभित हो साहस से मुसल, तोमर, शक्ति, मुद्गर, चक्र-विसर (समूह)

मुसल तोमर शक्ति मुद्गर चक्र। विसरमुल् वैतुरु वीक बॆल्लेचि ६२५०
यंकुश कुंत शूलादुल बॊडुतु। रंकिंचि ब्रेयुदुराभील गदल;
नडिदमुल् जळिपिंचि यलुक नंगमुलु। कडिकंडलुग जेसि कडिमि जूपुदुरु:
कपुलुनु गुपितुलै कडिमि वाटिंचि। विपुल शैलंबुल वृक्ष-जालमुल
बददंतनख वाल पाशहस्तमुल। नदयुलै या राक्षसावलि नॆल्ल
शिरलुमु नरमुलु जेतुलुमूतु। लुरमुल बाहुवुलोष्ठकंठमुलु
द्राचियु नॊंचियु दीव्र वैखरुलु। जिंचियु वंचियु जिदिमियु नदिमि
तरमिडि निब्भंगि दनुजुल नॊंप। दरुचरावळि जूचि दनुजेशुडपुडु
दारुणाकृति वत्स दंताश्वकर्ण। नाराच भल्लादि नानास्त्रवितति
नगचररुधिरंबु लवनिपै दॊरुग। निगुडिंचि यॊक्कॊक्क निशित बाणमुन
गपिपंचकंबुनु गपिसप्तकंबु। गपिनवकंबुनु गदनरंगमुन ६२६०
गुदुलु ग्रुच्चिनक्रिय गूलनेसियुनु। बदलक तरुचरुल् वैचु शैलमुलु
घनतरुल् शकलमुल्गा जेसि मरियु। गनलि येनम्मुल गंधमादनुनि
बदुनॆन्मिदिटनु बनसुनि मरियु। बदियिंट नीलु नेबदियिंट नलुनि

फेंक देते। अंकुश, कुंत, शूल आदि चुभोते, उल्लसित हो आभील गदाएँ फेंक देते ॥ ६२५० ॥

—खड्ग हिला-चलाकर, क्रोध से, अंगों को टुकड़े-टुकड़े कर अपनी सामर्थ्य प्रदर्शित करते। कपि भी कुपित हो सामर्थ्य से विपुल शैलों से, वृक्ष-समूहों से, पद, दंत, नख, वालपाश, हस्तों से अदय (निर्दय) हो, समस्त राक्षसावली के शिर, नस, हाथ, मुख, उर, बाहु, ओष्ठ, कंठों को कुतर देकर, पीडित कर तीव्र विधान से फाड़कर, झुकाकर, मसल देकर, दबाकर, इस प्रकार क्रम से दनुजों को हरा देने पर, तरुचरावली को देख तब दनुजेश ने दारुण-आकृति से वत्सदंत, अश्वकर्ण, नाराच, भल्ल आदि नानास्त्र-वितति से नगचरों के रुधिर को अवनि पर प्रवाहित किया। एक-एक निशित बाण से कपि पंचक (पाँच कपियों) को, कपिसप्तक को, कपि-नवक (नौ) को, युद्ध भूमि में ॥ ६२६० ॥

—ऐसा मार गिराया मानों बाण से गूँथ दिया हो। (तब भी) न छोड़कर तरुचरों द्वारा फेंके जानेवाले शैलों को, घन-तरुओं को शकल (टुकड़े) कर दिया। और भी क्रुद्ध हो पाँच बाणों से गंधमादन को, अठारह से

द्विविदु नार्रिटनु विनतुनेंडिट । बवननंदनुनि डेब्बदिट गवाक्षु
नैदुनैदुल मैंदु नैदिट गुमुदु । नैदिट गोमुखु नैदिट ऋषभु
नेडिट शरभु बदेडिट गजुनि । नेडिट गवयुनि नेडिट हरुनि
दरिमि यौक्कुम्मडि दारुनि ग्रथनु । जेरि मूट सायकाशीति नंगदुनि
दक्किन वनचरतति नेल गूल । बेक्कु बाणंबुल बेचि युग्रतनु
बेसनेसि मगटिमि वीकतो मेरय । नसुरेशु मुनुमुनु नंदंद कपुलु
नडुमुलु निशितबाणंबुल विरिगि । पडुवारु नेलनु बडि तूलुवारु
६२७०

नुरमुलु व्रय्यलै योगि गूलुवारु । जरणमुल् दुनियलै सरि म्रग्गुवारु
जेतुलु देगुवारु शिरमुलु वगिलि । भूतलंबुन बडि पोरलेडिवारु
गळमुलूचलुनु जंघलु द्रेव्व नोच्चिच । बलुविडि मूलगुचु बडि पोरलुवारु
नंगंबुलिवियवि यनि येंचराक । संगरांगणमुन जदिसिनवारु
बाणमुल् दाकिन बरचुचु नडुम । ब्राणमुल् वोयि युर्वर बडुवारु
नय्युंडि; रप्पुडय्यसुरेशु जूचि । चय्यन रणमुन सैरिंपलेक
वानरुल् बारिरि वसुध गंपिप । दानवेंद्रुडुनु दविलि वेन्वेंट

पनस को, दस से नील को, पचास से नल को, छः से द्विविद को, सात से विनत को, सत्तर से पवननन्दन को, पच्चीस से गवाक्ष को, पाँच से मैंद को, पाँच से कुमुद को, पांच से गोमुख को, सात से ऋषभ को, सत्रह से गज को, सात से गवय को, सात से हर को, पीछा कर एक साथ तार और क्रथन को तीन-तीन से (तथा) सायकाशीति (अस्सी बाणों) से अंगद को, (इस प्रकार) शेष वनचर-तति ज़मीन पर गिर जाए ऐसा विजृंभित हो, उग्रता से, झट (बाण) चलाकर पौरुष (तथा) साहस से प्रकाशित हुआ। (तब) असुरेश की सेना के अग्रभाग में जहाँ-तहाँ (सर्वत्र) कपि ऐसे थे जो कि निशित बाणों से कमरों के टूट जाने पर गिरनेवाले, ज़मीन पर गिरकर तड़पनेवाले, ।। ६२७० ।।

—वृक्षों के फट जाने से क्रम से गिरनेवाले, चरणों के कट जाने से गिर पड़नेवाले, हाथ कट जाने वाले, शिरों के फट जाने से भूतल पर गिरकर लोटनेवाले, यह फलाना अंग है, ऐसा पता न चले, इस प्रकार समरांगण में मसल दिए गए, बाणों के लगने से भागते हुए बीच में प्राणों के निकल जाने से ज़मीन पर गिर पड़नेवाले (ऐसे थे वानर)। तब उस असुरेश को देखकर, रण में उसे झट सह न सक, वानर ऐसे भाग खड़े हुए जिससे वसुधा काँप उठी। दानवेन्द्र भी लगकर पीछा करते झट आने पर, "क्यों भागते हो ? रुको, रुको" कहने पर, न रुककर भागनेवाली सेनाओं की

बलुवडि नेतेर "बाऱनेमिटिकि ?। निलुनिलु" डनि पल्कि निलुवक पारु
सेनल गाव सुषेणुनि नुनिचि। भानुसूनुडु वृक्षपाणियै नडचें
दरुशैलहस्तुलै तरुचरपतुलु। निरुगेलंकुल वेन्क नेपु दीपिंचि ६२८०
नडव नातडु सिंहनादंबु सेसि। तोंडरि कालाग्निरुद्रुनिविधंबुनन्नु
वृक्षताडनमुल वेस जंपि चंपि। वृक्ष शिलाघोर वृष्टि नंदंद
राक्षससेनपै रयमुन गुरिय। राक्षसवरुलु शिरंबुलु वगिलि
कुलिशोग्रहति भग्नकूटंबुलैन। कुलशैलमुल भंगि गूलिरिः मऱियु
रविनंदनुडु ग्रोधरक्ताक्षुडगचु। नवनिधराभीलहस्तुडै नडव

सुग्रीवुनिचे विरूपाक्षुडु मोंदलगु राक्षसवीरुलु मडियुट

नंत विरूपाक्षु डधिकरोषमुन। बंतंबु मेऱयंग बयि देरु वऱपि
विलु-गुणध्वनि सेसि विपुलनिर्घात। तुलितंबुलगु वाडितूपुल नेय
नवि लेक्कसेयक यरदंबु पैकि। रविजुंडु लंघिचि रथसूतहरुल
बृथिवीधरंबुन बृथुशक्तितोड। बृथिविपै बडनेय बृथिविकि नुऱिकि
विरथुडय्युनु दैत्यवीरुंडु विविध। शरमुलेयुचु बादचारियै निलुव
६२९०

रक्षा के लिए सुषेण को रख (नियुक्त) कर, भानुसून (सुग्रीव) वृक्ष हाथ में ले चल पड़ा। तरु (और) शैल हाथ में ले तरुचरपतियों के दोनों तरफ़ (और) पीछे औन्नत्य के दीप्त होने पर, ।। ६२८० ।।

—चलने पर, उसने सिंहनाद कर, लगकर कालाग्नि-रुद्र की भाँति, वृक्ष-ताड़नों से झट संहार करके, अति वेग से राक्षस-सेना पर सर्वत्र वृक्ष-शिलाओं की घोर-वृष्टि की। (तब) राक्षस-वर शिरों के फूटने पर, कुलिश (वज्र) के उग्र-आघात से भग्नकूट (टूटे शिखरों) वाले कुलशैलों के समान गिर पड़े। और भी (उसके बाद) रविनन्दन क्रोध से रक्ताक्ष होते हुए, अवनीधर (पर्वत) से युक्त होने से आभील (भयंकर) -हस्तवाला होता हुआ चलने पर,

सुग्रीव के हाथ विरूपाक्ष आदि राक्षसवीरों का मरना

—तब विरूपाक्ष ने अधिक रोष से, स्पर्धा से दीप्त हो (सुग्रीव) पर रथ चलाकर, धनुष के गुण (ज्या) की ध्वनि कर, विपुल-निर्घात (-कुलिश) -सम निशित बाण चलाए। उनकी परवाह न कर, रविज ने रथ पर लाँघकर, रथ-सूत-हरियों (-घोड़ों) को पृथ्वीधर (पर्वत) से पृथुशक्ति से पृथ्वी पर मार गिराया। (तब) पृथ्वी पर लाँघकर, विरथ होकर भी दैत्यवीर ने पैदल खड़े होकर शर चलाए ।। ६२९० ।।

नमरारि पनुपुन नखिलायुधमुलु । समकूर्चि मावतुल् समदसामजमु
देच्चिचन वेस नेक्कि दीकोल्पि कपुल । विच्चलविडि नेसि विक्रमंबेसग
नुग्रदानवुलार्व नुग्रबाणमुल । नुग्रांशुतनयुपै नुग्रत नेसे,
नक्कजंबुग विरूपाक्षुंडु मर्रियु । बेक्कायुधंबुल बेक्कु बाणमुल
वसमर्र नेयंग वसुध गंपिप । वेस बारु तनवारि वेर्रवकुंडनुचु
नलुकतो सुग्रीवुडतनि निर्जिप । दलपोय ग्रथनुडन् तरुचरोत्तमुडु
विपुल विक्रममुन वृक्षंबु वेर्रिकि । कुपितुडै येनुगु कुंभंबु वेव
दरुचुगा शोणितधारलु दोरुग । बिर्रिदिकि नोर्कविटि पेट्टोसरिंचि
यदि श्रोगग नेलकु नसुरुडु दाटि । कदुरुचु खेटक खड्गमुल् गोनुचु
मर्कटपति दाक माकोनि वानि । नर्कसूनुडु वैचे नतुलशैलमुन
६३००

नक्कोंड देगव्रेसे नडरि दानवुडु । रक्कसु बिडिकिट रविजुंडु वोडिचे
नालोन गरवाल मंकिचि यसुर । वालितम्मुनि नेसे वडि चेडकपुडु,
पिडिकिटि पोटुन बेलुच दानवुडु । नडिदंबु व्रेटुन नर्कनंदनुडु

—अमरारी (रावण) के आदेश से अखिल-आयुधों से सज्जित कर माहूतों के समद-सामज (मस्त हाथी) को ले आने पर, झट उस पर सवार होकर, सामना कर, विश्रृंखलता से कपियों को मार कर (या बाण चलाकर) विक्रम के बढ़ने पर, उग्र दानवों के सिंहनाद करने पर, उग्रांशुतनय पर उग्र बाण चलाए। आश्चर्यप्रद रूप से विरूपाक्ष के और अनेक आयुधों, बाणों को मर्मांतक रूप से चलाने पर, वसुधा को कंपित करते हुए भागनेवाले अपने लोगों को अभय प्रदान करते हुए, क्रोध से सुग्रीव ने उसे निर्जित करने की सोची। क्रथन नामक तरुचरोत्तम ने विपुल विक्रम से वृक्ष को उखाड़कर, क्रुद्ध हो, हाथी के कुम्भ पर दे मारा। (तो) अनारत शोणित की धाराओं के प्रवाहित होने पर, पीछे की ओर धनुष से निकलकर बाण जितनी दूर जाता है, उतनी दूर जाकर वह झुक (बैठ) गया तो असुर (विरूपाक्ष) ने (उस पर से) लाँघकर, विजृंभित हो, खेटक (ढाल) और खड्ग ले मर्कटपति का सामना किया। (उसका) सामना कर अर्कसून ने उस पर अतुल शैल डाल दिया ॥ ६३०० ॥

—विजृंभित हो दानव ने उस पर्वत को खंडित कर दिया, राक्षस को रविज ने मुष्टि से मारा, इतने में करवाल हिलाकर असुर ने, तेज को न खोकर, वालि के अनुज को दे मारा। मुष्टिघात से बली दानव (और) करवाल के आघात से अर्कनन्दन एक साथ गिर गए और एक साथ होश में आकर,

नॉक्कट ब्डियंत नॉक्कट दॅलिसि । यॉक्कलागुन बोरि रोगि नुक्कुमिगिलि;
यप्पुडु सुग्रीवुडरचेत न्रेय । दप्पिचुकॉनि हॆति दनुजुंडु व्रेसॅ,
गरवाल निहति कग्गति दप्प नुरिकि । करहॆति जडिसिपो गपिराजु व्रेसॅ;
मगटिमि नंतलो मल्लयुद्धमुन । मिगिलिन वॅरवुन मॅरसि पोरुचुनु
दिनवल्लभुल भंगि देजरिल्लुचुनु । गनलु कालाग्नुलकरणि मंडुचुनु
बलबिडौजुल माड्कि बाहुगर्वमुन । वॅलयुचु निरुवुरु विजयंबु गोर
नक्कजंबगु शक्ति नरचेत निनजु । मॉक्कलंबुन वाडु मूर्छिल्ल नेसि ६३१०
करवालहस्तुडै कपुलपै बारु । दरणिजुडालोन दन मूर्छ दॅलिसि
परतॅंचि निर्घातपातंबु तॅलुपु । नरचेत ना विरूपाक्षु वक्षंबु
नॅरलावुतो नेय नॅत्तुरु ग्रक्कि । यॉरलुचु धर गूलॅ नुग्रदानुवुडु,
तरुचरुल् सॅलगिरि; दानवुल् गलगि । तिरुगुडुवडिरंत दीनास्युलगुचु,
सुक्कि युद्धोन्मत्तु जूचि रावणुडु । तक्कनि कडकतो यॅतयु दोप बलिक
"गंटॅ या सुग्रीवु कडिमि ? मीयन्न । गंटॅ विरूपाक्षु ? गदनरंगमुन

एक साथ अधिक वीरता से जूझ पड़े। तब सुग्रीव के हथेली से मारने पर बचकर दनुज ने तलवार चलाई। करवाल-निहति (आघात) से तब बच निकल कर, कपिराज ने कर-हेति (हाथ रूपी करवाल) से ऐसा मारा कि वह (राक्षस) भीत हो जाए। तब पौरुष से मल्लयुद्ध में श्रेष्ठ विधि से दीप्त हो जूझते हुए, दिन-वल्लभों (सूर्यो) की भाँति प्रकाशित होते हुए, प्रज्जलित कालाग्नियों के समान बलते हुए बल (और) बिडौज के समान बाहुगर्व से विलसित होते हुए दोनों विजय की इच्छा से (लड़ते रहे तब) आश्चर्यप्रद शक्ति से हथेली से इनज को निर्ममता से वह मूर्च्छित कर, ॥ ६३१० ॥

—करवालधारी हो कपियों पर कूद पड़ा। तरणिज ने इतने में मूर्च्छा से होश में आकर, निर्घात-पात के समान हथेली से उस विरूपाक्ष के वक्ष पर बड़ी सामर्थ्य से प्रहार किया (तो) खून उगलकर, वह उग्रदानव चीखते हुए ज़मीन पर गिर पड़ा। तरुचर उत्साहित हुए, दानव दीनास्य (दीनमुख) वाले होते हुए, व्याकुल हो, लौट पड़े। कमज़ोर पड़ रावण ने युद्धोन्मत्त को देख दुर्निवार साहस के अधिकता से दीखने पर (यों) कहा—'देखा उस सुग्रीव के साहस को ? तुम्हारे अग्रज विरूपाक्ष को

बडिरनेकासुर भटुलुनु। वेक्कु मडिसे गुंजरमुलु; म्रग्गे नश्वमुलु—
विरिगे रथंबुलु विरिसे मूकलुनु। नुरुकुचु कपुलदे युब्बुचुन्नारु;
समयंबु नीकिदि समरंबु सेय। समरांगणंबुन सर्मयिपु रिपुल"
नन विनि यनि गूलिन यखिलेशुडैन। मनुजेशु गलयंग मदि निश्चयिंचि
६३२०

तरुचरानीकंबु दरियंग जोच्चि। शर गदा खड्गादि सकलायुधमुल
नडरि विरूपाक्षुननुजुंडु कपुल। गडिमिमै नोप्पिप गनि भानुसुतुडु
नगमेत्तिवैचिन नडुमने दानि। देगनेसे दनुजु; डादिनकरात्मजुडु
तनरु सालमुवैचे; दानि दानवुडु। दुनियलुगा मूडु तूपुल नेसि
लक्षिचि बाणजालमुलेयुचुंड। राक्षसुलदरंग रथमुपै कुरिकि
भानुसूनुडु वानि परिघायुधमुन। वानि केतुवु विल्लु वडि द्रुंचि वैचि
रथसूतु देगनेसि रथतुरंगमुल। बृथिविपै बडनेय बृथुलवेगमुन
बृथिविकि लंघिंचि पेलुच दानवुडु। पृथुगदापाणियै पृथिविपै निलुव
निरुवुरु बोराडिरिल चलियिंप। बरिघगदाभील बाहुवुल् मेरय

देखा ? अनेक असुर भट (सैनिक) कदनरंग (युद्धभूमि) में गिर गए, अनेक कुंजर मर गए, अश्व दब गए, रथ टूट गए, सेनाएँ तितर-बितर हो गईं, दौड़ते-भागते कपि फूल रहे हैं। समर करने के लिए यह तुम्हारे लिए समय है। समरांगण में रिपुओं का संहार कर दो।' (ऐसा) कहने पर सुनकर, युद्ध में गिर (मर) कर अखिलेश (समस्त सृष्टि के ईश) मनुजेश में लीन होने की मन में निश्चय कर, ॥ ६३२० ॥

—तरुचर-आनीक (-सेना) में घुस-पैठकर, शर, गदा, खड्ग आदि सकल आयुधों से विजृंभित हो, विरूपाक्ष के अनुज ने कपियों को साहस से पीड़ित किया। (उसे) देख भानुसुत ने नग (पर्वत) उठाकर डाल दिया तो उसे बीच में ही दनुज ने खंडित कर दिया। दिनकरात्मज ने शोभित साल (वृक्ष) (उठाकर) डाल दिया। तो उसे दानव ने तीन बाणों से टुकड़े कर दिया और लक्ष्य करके बाण चलाने लगा तो राक्षस भीत हो जाएँ ऐसा (उसके) रथ पर उछलकूद कर, भानुसून ने उसी के परिघा-आयुध से उसके केतु, धनुष को झट तोड़ देकर, रथ-सूत (सारथी) को काट देकर, रथ-तुरंगों को पृथ्वी पर पटक दिया तो पृथुलवेग से पृथ्वी पर लाँघकर बली दानव पृथु गदापाणि होकर पृथ्वी पर खड़ा हो गया। दोनों ऐसा लड़े जिससे पृथ्वी कंपित हो जाए। परिघा (तथा) गदा से आभील बने करों के दीप्त होने पर, कंठीरवों (सिंहों) के समान

गंठीरवंबुल करणि गर्जिलुचु । गंठमुल् वदनमुल् गरमुलंसमुलु ६३३०
जरणमुल् नखमुलु जानुजंघलुनु । नुरमुलु वेन्नुलु नूरुलु व्रेळ्ळु
बरुलु बिरुदुलु जब्बलु मध्यमुलुनु । शिरमुलु जेवुलु नासिकमुलोष्ठमुलु
वरुसतो नप्पुडु वडि दाकि ताकि । वेरवुलु चित्रमुल् वेस जेल्लुचुंड
सरिगाग नत्यंत साहसलील । निरुवुरु बोरिरनेकमार्गमुल;
नालोन नोंडोरुकंटे मुन् देलिसि । वडि नार्तुरेंतयु वसुध गंपिप;
दानुवुडुरुगदादंडंबु रेंडु । सेनलवारु नच्चेरुवंद द्रिप्पि
भानुजु बडवैव बडिलेचि वच्चि । भानुसूनुडु वैचे बरिघंबु द्रिप्पि:
दनुजांगनिहति दत्परिघंबु दुनिय । गनलुचु दनुजुंडु करवालमुननु
वनचरपतिवैव वडि दत्कृपाण । मिनजुंडु गोनि दीप्तुलेसग नंकिचि
६३४०

विकलमै घर डोल्ल व्रेसे दैतेयु । मकरकुंडल दीप्तिमयमस्तकंबु;
गनुगोनि बिट्टिगि राक्षसुलु रावणुनि । वेनुककु लंककु वेस बाटिरपुडु,
बलगर्वमैसग सुपार्श्वुडंगदुनि । बलुसेनपै गिट्टि पटुसायकमुल
वानरशिरमुलु वडि गूलनेसि । तोन हस्तंबुलु द्रुंचे गोंदरनु;

गरजते हुए, तब कंठ, वदन, कर, अंस (कंधे), ॥ ६३३० ॥

—चरण, नख, जानु, जंघा, उर, पृष्ठ, ऊरु, अंगुल, चूतड़, ऊर के ऊपर का भाग, कमर, सिर, कान, नासिका, ओष्ठ आदि को क्रम से झट मार-मार कर, विचित्र उपायों के विलसित होने पर, समविधि से अत्यन्त साहसलीला से अनेक प्रकार से दोनों लड़े। इतने में परिघा-गदा के आभील-आघात से वे एक साथ गिरते। गिरकर, उतने से साहस से एक दूसरे से पहले होश में आकर, झट ऐसा सिंहनाद करते कि वसुधा कंपित हो जाए। दानव ने उरु-गदा-दंड को ऐसा घुमाकर कि दोनों सेनाओं वाले चकित हो जाएँ, भानुज पर फेक दिया। गिरकर, उठकर, आकर, भानुसून ने परिघा घुमाकर डाल दिया। दनुज के अंग-निहति से वह परिघा चूर-चूर हो गई। क्रुद्ध होते हुए दनुज ने करवाल से वनचर-पति को मारा। इनज ने झट उस करवाल को ले, दीप्त होते हुए, चमकाकर, ॥ ६३४० ॥

—विकल हो, धरा पर लोट जाए ऐसा दैतेय (राक्षस) के मकर कुंडलमय मस्तक को काट दिया। (उसे) देख, टूटकर, तब राक्षस झट रावण की आड़ में लंका को भाग गए। बलगर्व से विजृंभित हो सुपार्श्व ने अगद

गोंदर बाहुवुल् घोर बाणमुल । नंदंद तुनुमाडेः नंत वानरुलु
ना निशाचरुनकु ननि बाऽ जूचि । वानि तेरिकि दाटि वालिनंदनुडु
पस येरुपड वानि परिघायुधंबु । वेंस बुच्चुकोनि नेल विवशुडै तूल
वडि व्रेसें; नट जांबवंतुडु नोक्क । वेंडद पाषाणंबु वीकतो नेत्ति
यरुदार नंकिंचि यरदंबु विरुग । हरुलु सूतुडु जाव नलुकतो वैचें;
दनुजुडालो देरि दशसायकमुल । गनलुचु नंगदु घनभुजंबेसि ६३५०
यंबकत्रयमुन नधिकरोषमुन । जांबवंतुनि नेसि चलनंबु नोंद
नेसें गवाक्षुनि निषुपंचकमुन; । ना समयंबुन नंगदुंडलिगि
करयुगंबुन बरिघमु द्रिप्पिवैव । धरणिपै मूर्छिल्लि दनुजुंडु वडिन
वानि चापमु द्रुंप वाडंत देलिसि । वानर वीरुनि वक्षंबु वगुल
बरशुवु गोनि व्रेय बलु मूर्छ नोंदि । सुरराजनंदनसूनुंडु देलिसि
वज्रसन्निभमुष्टि वडि गिट्टि पोडुव । वज्रंबुताकुन वसुधाधरंबु
वसुध गूलिनक्रिय वाडाजि गूलें । नेसग देवतालार्चि रेचि मिन्नद्रुव;
नंत राक्षसबलंबतिभीति बाऽ । नंतयु जूचि दशाननुंडनियें;

की अधिक सेना के निकट जा, पटु सायकों से वानर-शिरों को झट गिरा देकर, साथ ही कुछ के हाथ काट दिए। घोर-बाणों से जहाँ-तहाँ कुछ के बाहु काट दिए। तब वानरों को उस निशाचर के युद्ध से भागते देख, उसके रथ पर लांघकर वालिनन्दन ने, सामर्थ्य दिखाई पड़े ऐसा, उसके परिघा-आयुध को झट (अपने हाथ में) लेकर ऐसा झट मारा कि वह विवश हो ज़मीन पर गिर पड़ा। तब जांबवान ने एक विशाल पाषाण को साहस से उठाकर, अनुपम रूप से हिलाकर, रथ टूट जाए, हरि (अश्व) (और) सूत मर जाए, ऐसा क्रोध से डाल दिया। इतने में दनुज ने होश में आकर क्रुद्ध होते हुए दश-सायकों को अंगद के घन-भुजा पर चलाया, ॥ ६३५० ॥

—अधिक रोष से अंबक-त्रय से जांबवान को मारा, इषु-पंचक गवाक्ष पर चलाए, जिससे वह विचलित हो गया। उस पर अंगद ने क्रुद्ध हो, करयुग से परिघा को घुमाकर डाल दिया तो दनुज मूर्च्छित हो धरणी पर गिर पड़ा। गिरने पर (अंगद के) उसके धनुष को तोड़ देने पर, तब उसने होश में आकर परशु लेकर ऐसा चलाया कि वानर वीर का वक्ष फट गया। सुरराज-नन्दन (वालि) -सून ने अधिक मूर्च्छित हो, फिर होश में आकर, झट निकट जा, वज्र-सन्निभ-मुष्टि से मारने पर, वज्र की चोट से वसुधाधर (पर्वत) के वसुधा पर गिरने के समान, वह युद्ध में गिर पड़ा। विजृंभित हो देवताओं ने आकाश फट जाए, ऐसा सिंहनाद किया। तब

"बरुषविक्रमुडु सुपार्श्वुंडु मडिसें:। नुरुबाहुबलुडु युद्धोन्मत्तुडीलगें—
ननि गूलें ना विरूपाक्षुडु: मरियु। घनुलैन राक्षसुल् गडतेरिरिक
६३६०

बलसमन्वितुलैन पार्थिवसुतुल। बलुविडि गेलिचि ना बंधुलवलन
नेलकोन्न शोकाग्नि नेरियु नी लंक। गलवारि वगपेल्ल गडकतो दीर्तु,
नविरळक्षत्त्रधमैंकमूलंबु। नव जयोन्नत लक्ष्मण प्रकांडंबु
भानुनंदनमुख प्लवग शाखंबु। मानवपतिकीर्ति मंजरीकंबु
ब्रकट सीतानामफलभासुरंबु। सकलामराश्रितच्छायंबुनैन
रामद्रुमंबेनु रयमुन बेंरिकि। ना मनोदु:खंबुनकु मंदुसेसि
येसगेंद जगमुलो ने" नंचु नप्पु। डसुरेशुडधिकरोषायत्तुडगुचु

रावणुडु रामलक्ष्मणुलपै गवियुट

सारथिकनियें—"नी चतुरत मेंरसि। तेरु राघवुलपै दीव्रत बरपु;
वारि जंपेद नेडु; वाराजि बडिन। ता रेगुदुरु विच्चि तरुचरुल्
सेंदरि"

राक्षस-सेना के अतिभीति से भागने पर, सब कुछ देखकर दशानन ने कहा—"परुष विक्रमवाला सुपार्श्व मर गया, उरु-बाहुबलवाला युद्धोन्मत मर गया, वह विरूपाक्ष युद्ध में गिर गया, और भी महान् राक्षस काम आए,॥ ६३६० ॥

—अब बल-समन्वित पार्थिव-सुतों (राजकुमारों) को बरजोरी जीतकर मेरे सम्बन्धियों के (मरण के) कारण स्थिर बनी-शोकाग्नि का शमन हो तथा लंका में स्थित सभी लोगों का दुख दूर हो, ऐसा साहस से बदला लूंगा। अविरल-क्षत्रधर्मैक मूलवाले, नव-जयोन्नत लक्ष्मण (रूपी) प्रकांडवाले, भानुनन्दन-मुख (-आदि) प्लवग (रूपी) शाखाओं वाले, मानवपति (राम) की कीर्ति (रूपी) मंजरीक से युक्त, प्रकट सीता नामक फल से भासुर, सकल अमरों को आश्रय देने वाली छाया से युक्त राम-द्रुम को मैं झट उखाड़कर, अपने मनोदु:ख की चिकित्सा कर, मैं जगत् में शोभित हो जाऊंगा।" (ऐसा) कहते हुए तब असुरेश ने अधिक रोष से पूर्ण होकर,

रावण का राम-लक्ष्मणों से लड़ना

—सारथी से कहा—"अपनी चतुरता से प्रकाशित होकर, तीव्रगति से रथ को राम लक्ष्मणों पर चलाओ। आज उन्हें मार डालूंगा। उनके युद्ध में गिर पड़ने पर, बिखर कर, टूटकर तरुचर (अपने आप) चले जाएंगे।"

यनविनि लाडट्ल यरदंबु वरूप। घननेमिरवमुलुत्कटमुगा जैलग ६३७०
सायकासन घन ज्यानिनादंबु। ग्रोयंग निस्साणमुलु बोरुकलग
वंधिमागद सूत वरनुतुल् मिच। नंदंद निजसेन नार्पुलुप्पोंग
दरुचरसेनपै दारुणास्त्रंबु। लरुदार निगुडिचें नद्दशाननुडु;
अजनिर्मितंबुलौ ना बाणततुल। भुजबलंबुलु दूलि भूरेणुवेंसग
नेलगूलिरि पैल्लु निखिल प्लवंगु। ला लोन रघुरामुडनुजुंडु दानु
गोदंडपाणुलै कोपिंचि निलिचि;। रा दशाननुडुनु नलुक मार्कोनिग
नुडुवीथि यविंयग नुदधुलु गलग। गडुबेंच्चि दिक्कुंभिकर्णमुल् वगुल
नडरु रामुनि धनुर्ज्याघोषमुनकु। गडुमानसंबुलु गलगि राक्षसुलु
गुपितदशग्रीव कोदंडयुक्त। तपनोग्रसायक ध्वनिकि वानरुलु
भयमंदि धरणिपै बडिरि युक्कडगि। रयमार नालोन रामलक्ष्मणुलु ६३८०
रविसुधांशुल भंगि रागिलि कदिय। दिविजारि राहुप्रदीप्तुडै कविसें,
नंत ना लक्ष्मणुंडतितीव्रविशिख। संततुलेसें दशग्रीवु मीद,

(ऐसा) कहने पर सुनकर, उसने वैसा ही रथ चलाया। घन-नेमि-रवों के उत्कट रूप से मुखरित होने पर, ॥ ६३७० ॥

—सायकासन (धनुष) के घन-ज्या-निनाद के मुखरित होने पर, निस्साणों के बज उठने पर, वंदि-मागध-सूतों की वर प्रस्तुतियों के विवर्द्धित होने पर, सर्वत्र अपनी सेना के सिंहनादों के उमड़ने पर, दशानन ने तरुचर सेना पर अनुपम रूप से दारुणास्त्र चलाए। अज-निर्मित उन वाण समूहों से, भुजबल खोकर, भूरेणुओं (धूल) के उमड़ने पर निखिल प्लवंगों में अधिक (संख्यक) ज़मीन पर गिर गए। इतने में रघुराम अनुज के साथ कोदंडपाणि हो, क्रुद्ध हो, खड़े हो गए। उस दशानन ने क्रोध से सामना किया। आकाश फट जाए, उदधि क्षुब्ध हो जाएँ, दिक्कुंभि के कर्ण फट जाएँ, इस प्रकार विजृंभित राम के धनु:ज्या-घोष के कारण राक्षसों के मानस अधिक विकल हुए। कुपित-दशग्रीव के कोदंड से मुक्त तपन के समान उग्र-सायक-ध्वनि के कारण वानर पौरुष खोकर, भीत हो धरणी पर गिर गए। इतने में झट रामलक्ष्मणों ने, ॥ ६३८० ॥

रवि (और) सुधांशु के समान उल्लसित हो नियराने पर, दिविजारि राहुप्रदीप्ति से शोभित हुआ। तब लक्ष्मण ने दशग्रीव पर अति तीव्र-विशिख-संततियाँ चलाईं। नाकेशवैरी ने उन क्रूर बाणों को बीच में ही

नडुमने तेंगनेसे नाकेशवैरि । कडिदि बाणमुल: नुत्कटमुगा मरियु
नोक्कोक्क शरमेय नुग्रुडैवानि । नोक्कोक्क शरमुन नोगि द्रुंचिवैचि
मूडेसि शरमुलिम्मुल वडिनेय । मूडु मूडम्मुल मुरियलु सेसि
पद यम्मुलेसिन बदियिंट वानि । जिदुरुपलै धर जेंदरिपोनेसि
नूरेसि येसिन नूतनगतुल । नूरुनूरम्मुल नुग्गु गाविंचि
सौमित्रि नटु रणस्थलि जिक्कु वरचि । रामचंद्रुनितोड रणमुसेयुटकु
दनुजाधिनाथुडुद्धति नेगुदेर । गनुगोनि समवर्ति गनि पारु करणि
गनुकनि बेंदरि मर्कटुलनि बारु । गनि कन्नुगव गेंपुगदुर राघवुडु
६३९०

विल्लंदि दिविजुलु विनुतिप धरणि । दल्लडपड दार्के दानवेश्वरुनि;
मुखमुल गोपंबु मुडिवड नतडु । नखिललोकातिभयंकरंबुगनु
रामुनि दार्के ना रामरावणुलु । भीमाट्टहासमुल् बैरयिंचि मिंचि
सैन्यद्वयंबुन सरिनार्पुलैसग । नन्योन्य कार्मुक-ज्या-निनादमुलु
परुवडि दशदिशाभागंबुलंदु । मोरय बरस्परमुक्त बाणमुल
बरगंग नाकाशपथमेल्ल गप्पि । गुरुतरघोषमुल् घूर्णिल्ल जेय
नोडोंटितो दाकु नुग्रबाणमुल । मंडु मंटलु नभोमंडलि निंड

काट दिया। और उत्कट रूप से एक-एक शर चलाने पर, उग्र हो उन्हें एक-एक शर से क्रम से खंडित कर, झट तीन-तीन शर चलाने पर, तीन-तीन शरों से उन्हें खंडित कर, दस बाण चलाने पर, दस (बाणों) से उन्हें टूक-टूककर धरा पर गिराकर, सौ (बाण) चलाने पर नूतन गतियों से सौ-सौ बाणों को चूरकर, सौमित्र को उधर रणस्थल में व्याकुल कर, रामचन्द्र से युद्ध करने के लिए दनुजाधिनाथ उद्धत गति से चल पड़ा। उसे देख समवर्ती (यमराज) को देखकर भागने की तरह, संभ्रम से भीत हो युद्ध (भूमि) से मर्कटों को भागते देख नेत्रद्वय में अरुणिमा के उमड़ने पर राघव ने, ।। ६३९० ।।

—धनुष ले, दिविजों के प्रस्तुति करने पर, (और) धरणी के क्षुब्ध होने पर दानवेश्वर का सामना किया। मुखों पर क्रोध के बढ़ने पर उसने भी अखिल-लोक-अतिभयंकर रूप से राम का सामना किया। वे राम और रावण भीम अट्टहास कर, (एक दूसरे से) बढ़कर सैन्यद्वय में समान रूप से सिंहनादों के उमड़ने पर, अन्योन्य-कार्मुक-ज्मा-निनादों के शीघ्रता से दश-दिशाभागों में मुखरित होने पर, परस्पर-मुक्त (छोड़े गए)-बाणों के शोभा से समस्त आकाश मार्ग को आच्छादित कर गुरुतर-घोषों के घूर्णित करने पर, एक दूसरे से टकरानेवाले उग्रबाणों में बलने वाली ज्वालाओं के

सरिनॉप्पु निरुवुर शरलाघवमुल । गरलाघवंबुल करणि नॉडॊरुल
मॆच्चुचु नॉडॊरु मीरु वैचित्रि । कच्चॆरुवंदुचु ननि सेयुनपुडु
क्षोणीशुपै नॊक्क घोरतमिस्र । बाणंबु निगुडिचॆ बंक्तिकंधरुडु
६४००
आ कांडमरिन नखिल वानरुलु । जीकटि गप्पि निश्चेष्टितुलैरि;
अप्पुडु कन्नुल नलुक गॆंजाय । लॊप्पार रघुरामुडुग्रबाणमुलु
पदिपदुलेसिन बटुभल्ल समिति । द्रिदशारि वानिनि दॆगनेसि मरियु
निशित बाणमुलेय नृपुडर्धचंद्र । विशिखंबुलडरिचि वेगंबॆ त्रुंचि
यसुरेशु निखिलावयवमुलु दूर । नसदृशंबुग ननेकास्त्रमुल् वरपे;
रौद्रबाणंबंत रावणुंडेय । रौद्रबाणंबुन रघुरामुडेसॆ;
नवि रॆंडु नन्योन्यहतमुलै पडग । नवनीश दनुजेशुलालोन गिनुक
दिविरि यॊंडॊरुलेयु तीव्र बाणमुलु । दिवि निंड गप्पिन दिमिरंबु गप्पॆ;
रणमुलो नप्पुडु रयमुन म्रोयु । गुणरावमुलचेत घूर्णिल्लुचुन्न
युरुचापसागरयुगमुन नॆगयु । शरवीचुलॊगि बरस्परघट्टनमुल ६४१०
यिरियंग दैतेयविभुडु कोपिंचि । नरनाथुनुरमेसॆ नाराच-समिति;

नभोमंडलि में भर जाने पर, समरूप से शोभित होने वाले दोनों के शरलाघव, करलाघव के विधान को दोनों सराहते हुए, एक दूसरे से बढ़ जाने की विचित्रता पर चकित होते हुए, युद्ध किया (उस)समय, पंक्तिकंधर ने क्षोणीश पर एक घोर-तमिस्र-बाण चलाया, ।। ६४०० ।।

—उस काँड (बाण) के विजृंभित होने पर, अन्धकार से आच्छादित हो, अखिल वानर निश्चेष्टित हो(पथरा)गए। तब आँखों से क्रोध की लालिमा के शोभित होने पर रघुराम ने सौ उग्रबाण चलाए (तो) त्रिदशारी ने पटु-भल्लसमिति से उन्हें खंडित कर और भी निशित बाण चलाए। नृप (राजा राम) ने अर्द्धचंद्र-विशिख चलाकर, झट उन्हें काट देकर, असुरेश के निखिल-अवयवों में घुस जाएँ, ऐसे असदृश अनेक अस्त्र चलाए। तब रावण के रौद्र बाण चलाने पर रघुराम ने उस पर रौद्रबाण चलाया। वे दोनों अन्योन्य-हत हो (परस्पर टकराकर) गिर पड़े। (तव) अवनीश और दनुजेश इतने में क्रोध से लगकर, (दोनों के) परस्पर चलाए तीव्र बाणों ने आकाश को ढँक दिया, अन्धकार ने (सबको) ढँक दिया। रण में तब (उस समय) झट से मुखरित होने वाले गुणारवों से घूर्णित होने वाले उरु-चाप-सागर-युग में उठनेवाली शरवीचियाँ परस्पर-घट्टन (-टकराहट) से फैल गई, ।। ६४१० ।।

—फैल जाने पर दैतेय-विभु ने कुपित हो नरनाथ के उर पर नाराच समिति

नदियौप्पें नीलोत्पलावलि करणि । गदिसि रामुडु चंडकांडमुल् दौडिगि
कवचंबु सिंचि वक्षमु गाडनेय । दिविजारि यप्पुडैंतेनियु नौच्चि
यहिशिलीमुखमुल नडरिंप दोन । यहिमांशुकुलनाथुडवि द्रैव्वनेसें;
नासमयंबुन नमरेंद्रवैरि । या सुरसायकंबडरिंप बैक्कु
मुखमुल शार्दूल मुखमुलु नुष्ट्र । मुखमुलु सूकरमुखमुलु नुरग
मुखमुलु घनदंतिमुखमुलु गृध्र । मुखमुलु गरिवैरिमुखमुलु दनरु
घनशिलीमुखमुलु कडु बैक्कु निगुड । गनि वानि दुनियलुगा नेसि मरियु
जननाथु डाग्नेयसायकंबेय । गनुगोन नंदु नुल्कामुखास्त्रमुलु
महितविद्युन्मुख मार्गणंबुलुनु । ग्रहमुखंबुलु गलगु घनसायकमुलु ६४२०
मिहिर मुखंबुलु मैरयु बाणमुलु । दहनमुखंबुलु दनरु शस्त्रमुलु
नगुचु नच्चेरुवुगा नडरंग वानि । दैगनेसि यपुडु दैतेयवल्लभुडु
मयुनिचे बडसिन मायाशरंबु । रयमुन संधिंचि रामुपैनेसें;
नेसिन दाननेकंबुलगुचु । ब्रास तोमर गदा परिघंबुलडरें;
गांधर्वशरमंत घनकार्मुकमुन । संधिंचि निगुडिंचे जनलोकविभुडु

(बाण-समूह) का प्रयोग किया। वह नीलोत्पल-अवलि की भाँति शोभित हुआ। सन्नद्ध हो राम ने चंड-कांडों का संधान कर, कवच फाड़ देकर, वक्ष में गड़ जाएँ, (ऐसा बाण) प्रयोग किया। तब दिविजारि के अधिक पीड़ित हो अहि-शिलीमुखों (सर्प-बाणों) से विजृंभित होने पर, एक साथ अहिमांशु-कुल (सूर्यवंश)-नाथ ने उन्हें खंडित कर दिया। उस समय अमरेन्द्र-वैरी ने आसुर सायक का प्रयोग किया। (करने पर) कई मुखों से, शार्दूलमुख, उष्ट्रमुख, सूकरमुख, उरगमुख, घन-दंतिमुख, गृध्रमुख, करि-वैरि (सिंह) -मुख (आदि) से शोभित अनेक घनशिलीमुख बहुत अधिक संख्या में विजृंभित हुए। (उन्हें) देख उन्हें टुकड़े-टुकड़े कर फिर जननाथ ने आग्नेयसायक का प्रयोग किया। देखने पर उसमें से उल्कामुख वाले अस्त्र, महित विद्युन्मुखवाले मार्गण (अस्त्र), ग्रहमुख से युक्त घन-सायक, ॥ ६४२० ॥

—मिहिर-मुखों से प्रकाशित बाण, दहनमुखों से शोभित शस्त्र—होते हुए, आश्चर्य के बढ़ जाने पर, उन्हें खंडित कर तब दैतेयवल्लभ ने मय से प्राप्त मायाशर का झट संधानकर राम पर चलाया। चलाने पर वह अनेक होता हुआ प्रास, तोमर, गदा, परिघाओं के रूप में विजृंभित हुआ।

नादित्यतुलितंबुलैन चक्रंबु । ला दिव्यबाणंबुनंदनेकमुलु
जगमुलु भयमंद जनियिंचि रुचुलु । निगुडि याकसमेल्ल निंड बेल्लडरि
या मार्गणंबुन नडरि परिघ । तोमरादुलनेल्ल दुनियलु सेय
दशकंठुडंत ना धरणीशुमीद । निशित नाराचमुल् निगुडिंचे नलुक
बौरि बौरि बुंखानुपुंखमुल् गाग । बरगिंचे नृपुडुनु ब्रतिसायकमुलु;
६४३०

जगतीश दनुजेश शरपरंपरलु । गगन-भागंबेल्ल गप्पें: नालोन
नेंडसोच्चि लक्ष्मणुंडेडु बाणमुल । बडगयु विल्लोक्क पटुसायकमुन
सारथिशिरमोक्क शरमुन द्रुंचि । या रावणुनि वक्षमेंदिटनेसें;
नीलधराधर निभतुरंगमुल । गूलंग नेसें मार्कोनि विभीषणुडु;
विरथुडै दैतेयविभुडंतलोन । धरणिकि लंघिंचि तरुचरुल् बेंदर
भ्रूकुटि दशकविस्फुरितास्युडगुचु । भीकर शक्ति विभीषणुवैव
नडुमने मूडु बाणंबुल दानि । मिडुगुरुल् मंटलु मिंट बेल्लेगय
धरणि पै बडनेसें दरचरुलार्व । धरणीशुननुजुंडु दशकंठुडंत
गडुनलिग मयुनिचे गन्न या शक्ति । वडि विभीषणुमीद वैव नंकिप

तब जनलोक-विभु ने घनकार्मुक पर गांधर्व शर का संधान कर प्रयोग किया। उस दिव्यबाण से आदित्य-सम अनेक चक्र उत्पन्न होकर, जिससे जग भीत हो जाएँ, रुचियों (कांतियों) से विजृंभित हो, समस्त आकाश में भरकर, अधिक विजृंभित हो, उस मार्गण (मय से प्राप्त बाण) से उत्पन्न परिघा, तोमर आदि सभी को विखण्डित कर दिया। तब दशकंठ ने क्रोध से उस धरणीश पर निशित-नाराच चलाए। क्रम से उनके पुंखानुपुंख होने पर नृप ने प्रतिसायक चलाए ।। ६४३० ।।
—जगदीश और दनुजेश की शर-परम्पराओं ने समस्त गगनभाग को आच्छादित कर दिया। इतने में बीच में आकर लक्ष्मण ने सात बाणों से केतन, एक पटुसायक से धनुष, एक शर से सारथी का सिर काट देकर, रावण के वक्ष पर पाँच (बाण) चलाए। विभीषण ने सामना कर नील-धराधर-निभ (-सम)-तुरंगों को गिरा दिया। इतने में विरथ हो दैतेयविभु ने धरणी पर कूदकर, तरुचर भीत हो जाएँ, ऐसा दश-भ्रुकुटियों के विस्फारित बने आस्य (आनन) वाला होता हुआ, विभीषण पर भीकर शक्ति चलाई। बीच में ही उसे तीन बाणों से, चिनगारियों और ज्वालाओं के आकाश में अधिकता से बिखरने पर, तरुचरों के सिंहनाद करने पर, धरणीश के अनुज ने धरणी पर गिरा दिया। तब दशकंठ के अधिक क्रोध से, मय से गृहीत उस शक्ति को झट विभीषण पर डालने को उद्यत होने पर,

"शरणागतत्राण सद्धर्मपरुलु । शरणागतुल चावु सैतुरे "यनुचु ६४४०
दनुजेशु तम्मुनि दन वेन्क दिगिचि । कौनि रामुतम्मुडु क्रूरबाणमुलु
परगिचे; नप्पुडु पंक्तिकंधरुडु । "बिरुदवै वच्चि विभीषणु वेनुक

रावणुनि शक्तिचे लक्ष्मणुडु मूर्छिल्लुट

निडुकौंटि लक्ष्मण! यी शक्ति हतिकि । गडिमिमै नीवोर्तु गाकंचु" बलिकि
प्रळयकालादित्य परिवेष घोर । वलयमै दीपिप वडि द्रिप्पि वैचे;
नदि किंकिणीघंटिकानेक रवमु । लौदवंग श्रोयुचु नुदधुलु गलग
वडि गुलाचलमुलु वडकाड दिशल । बेडक दिवाकर-बिंबंबु गदल
बिडुगुल दौरुगंग बृथिवि गंपिप । नुडुपथंबवियंग नुडुपंक्ति सेदर
मिडुगुरुलेगयंग मिटवेल्मंट । लडरंग शेषजिह्वाकारमगुचु
रयमुन बरतेंचि, रामु 'डा लोक । भयद साधनमुचे ब्राणभयंबु
समकौनकुंडेडु सौमित्र' कनग । नमरुलु मिंट हाहाकृतुल् सेय ६४५०

यह कहते कि 'शरणागत-सद्धर्म-पर (शरणागत की रक्षा नामक सद्धर्म के पालन में रत) शरणागतों की मृत्यु को (कहीं) सहन कर सकेंगे?' ॥६४४०॥
—दनुजेश को अपने पीछे खींच लेकर, राम के अनुज ने क्रूर बाण चलाए। तब पंक्तिकंधर ने 'वीर बनकर विभीषण को (अपने) पीछे—

रावण की शक्ति के हाथ लक्ष्मण का मूर्च्छित होना

—रख (छिपा) लिया न हे लक्ष्मण ! इस शक्ति के आघात को साहस से सहन कर लो', ऐसा कहते हुए, प्रलय-काल के आदित्य के परिवेश के समान घोर-वलय रूप हो दीप्त होने पर, झट (उस शक्ति को) घुमाकर फेंक दिया। वह किंकणी-घंटिका (आदि) अनेक-रवों के उत्पन्न होने पर मुखरित होते हुए, उदधियों के क्षुब्ध होने पर, झट कुल-अचलों के कंपित होने पर, दिशाओं के कंपित होने पर, दिवाकर बिंब के विचलित होने पर बिजलियों के गिरने पर, पृथ्वी के कंपित होने पर, आकाश-पथ के विदीर्ण होने पर, उडु-पंक्ति के बिखर जाने पर, चिनगारियों के व्याप्त होने पर आकाश में बड़ी ज्वालाओं के विजृंभित होने पर, शेष के जिह्वा के आकार-युक्त हो, वेग से आकर राम के यह कहते रहने परक 'इस लोक-भयद साधन से सौमित्र को प्राणभय संप्राप्त न हो', (तथा) आकाश में अमरों के हाहाकार करने पर, ॥ ६४५० ॥

नेडनेड वडिनेयु निषुपंक्ति जदिपि । वडिवच्चि लक्ष्मणु वक्षस्थलंबु
भीकरतरशक्ति बेल्लुगा गाड । राकुमरुडु दूलि रणभूमि व्राल
गालावसानंबु गदिय बेंपेदि कूलु । महामेरुकुधरंबु पगिदि;
धरणिपै बडियुन्न तम्मुनि जूचि । दरिकोन्न शोकाग्नि दनचित्तमेरिय
गनुगव वाष्पमुल् ग्रम्म बै निगुडु । दनुजेश पटुवाणततुलु गैकोनक
पृथुतरवक्षंबु पेल्लुगा नाटि । पृथिवि गाडिनयट्टि भीकर शक्ति
बरुतेंचि वनचरपतुलेल्ल गूडि । पेरुक जालकयुन्न वेरिकि पोवैचि
यर्कजानिलसुतुलादिगा गलुगु । मर्कटेशुल जूचि मनुजेशुडनियै;
"शौर्यंबु सलिपेडि समयंबुगानि । कार्यंबुलडचु शोकपुवेळ गादु;
घनुलार! मीरु लक्ष्मणु गाचिकोनुडु । विनुडु ना पलिकेडु वीर प्रतिज्ञ
६४६०

वेनककु राज्यंबु विडुचुट, बंधु । जनुल् वायुट, वनस्थलुल ग्रुम्मरुट
बाणबाणासनपाणिनै युंडि । प्राणंबु दानैन पत्नि गोलपडुट;
कडिदि मायावि राक्षसुलतो ननिकि । दोडरुट मोदलैन दुःखंबुलेल्ल
घोराजिलो बापुकोनुवाड नेडु । दारुणकर्मु नीदशकंठु दुनिमि;

—जब-तब डाले जानेवाले बाण-समूह को नष्टकर, झट आकर लक्ष्मण के वक्षस्थल में उस भीकरतर शक्ति के अधिकता से गड़ जाने पर, राजकुमार, लड़खड़ाकर रणभूमि में कालावसान के नियराने पर औन्नत्य को खोकर गिर पड़नेवाले महाकुधर के समान, गिर गया। धरणी पर गिर पड़े हुए अनुज को देख, परिव्याप्त शोकाग्नि से अपने चित्त के विदीर्ण होने पर नेत्रद्वय में बाष्पों के उमड़ने पर, ऊपर से आक्रांत करने वाले दनुजेश के पटु-बाण समूहों की परवाह न कर, पृथुतर वक्ष में अधिकता से गड़कर, पृथ्वी में गड़ गई भीकर शक्ति को (वहाँ) आए हुए सभी वनचरपतियों के सब मिलकर भी उखाड़ न सकने पर, (उस शक्ति को) उखाड़ फेंक अर्कज, अनिलसुत आदि मर्कटेशों को देख मनुजेश ने कहा—"शौर्य प्रदर्शित करने का यह समय है, कार्य (कर्तव्य) का दमन कर देनेवाले शोक का समय नहीं है। हे महान व्यक्तियो ! आप लक्ष्मण की रक्षा कर लो। सुनो, यह मेरी वीर प्रतिज्ञा— ।। ६४६० ।।

—पूर्व में राज्य तज देना, बंधुजनों को छोड़ देना, वनस्थलियों में घूमना, बाण-बाणासन-पाणि होकर भी, प्राणसम पत्नी को खो देना, क्रूर मायावी राक्षसों से युद्ध के लिए उद्यत हो जाना आदि समस्त दुःखों का आज घोराजि (घोर युद्ध) में दारुण कर्म वाले इस दशकंठ का संहारकर बदला ले लूंगा। समर-उर्वी (युद्धभूमि) में इसका संहार करने के लिए अमित

समरोर्वि नीतनि जंपेंडिकोंडकु । नमित विक्रमुडैन या वालि गूल्चि
कपिसेनकै दिनकरतनूभवुनि । गपिराज्यपट्टबु गट्टिति ब्रीति;
जंडतरग्राहसंकुलंबगुचु । नोंडोंड मिन्नंदु नूर्मुलु गलिगि
कडलेनि वारधि गट्ट गार्विचि । कडचि वच्चिति महाकपिसेनतोड;
वच्चि लंकापुरवरमु वेष्टिंचि । यिच्चट सौमित्रिनिट्टु कोलुपडिति
ना दशाननुडेचि यालंबुलोन । ना दृष्टिमार्गंबुनकु वच्चेनेनि ६४७०

दृष्टिविषंबुन दीव्रसर्पंबु । दुष्टजंतुवु गाल्चु तेरगु सूपेदनु;
व्रदिकिपोनी निक बंक्तिकंधरुनि । व्रदरपरंपर पालु सेसेदनु;
गिरुलेक्कि नेडिक गिरिचरवरुलु । सोरिदि मारणकेळि जूतुर गाक;
लोकपालुर नेल्ल लोकमुल् नेडु । ना कार्मुक प्रौढि नलुवार जूचि
रणमुलोपल नेनु रघुरामुडगुट । प्रणुतविक्रमलील बरिकिंपनिडु;
सुरकंटकुडु डागि सुरलोकमुनकु । नरिगिन, नब्धिमध्यमुन ग्रुंकिननु,
धरणि दूरिन, रसातलमुन जोच्चिननु । बोरिवुत्तुगाकेल पोनित्तुनिक?
भुवि नर्ककुलमुन बुट्टितिनेनि । रवितेजुडगु दशरथु तनूजुंड
नैतिने, रामुडनैतिने निक । दैतेयपति रणस्थलि निलचेनेनि

विक्रमवाले उस वालि का वध, कपिसेना के लिए, कपिराज्य का दिनकर-तनूभव का, प्रेम से राजतिलक किया। चंडतर-ग्राह-संकुल होते हुए, सर्वत्र आकाशचुम्बी ऊर्मियों से युक्त अपार वारिधि पर सेतु बाँधकर, महाकपिसेना के साथ (उस समुद्र को) पार कर आया हूँ। आकर लंकापुर-वर को वेष्टित कर (घेरकर), यहाँ सौमित्र को इस प्रकार खो बैठा हूँ। वह दशानन विजृंभित हो, युद्ध में, मेरे दृष्टिमार्ग में आए तो, ॥ ६४७० ॥

—तीव्र सर्प के दृष्टि-विष से दुष्ट जन्तुओं को जला देने के विधान को प्रदर्शित करूँगा। अब पंक्तिकंधर को जीवित नहीं जाने दूँगा। प्रदर (बाण)-परम्परा का भागी बना दूँगा। गिरियों पर आरूढ़ हो आज अब गिरिचरवर क्रम से मारणकेलि को देखें। लोकपाल (तथा) समस्त लोक आज मेरी कार्मुक प्रौढ़ि को मनोज्ञता से देख, रण में मेरे रघुराम होने की प्रणुत (स्तुत्य)-विक्रमलीला को देखें। सुरकंटक छिपकर सुरलोक में चला जाए, अब्धिमध्य में डूब जाए, धरणि में घुस जाए, रसातल में पैठ जाए, तो भी वध कर दूंगा। जाने क्यों दूंगा? भुवि पर अर्ककुल में पैदा हुआ हूँ, रवितेज वाले दशरथ का पुत्र होऊँ, राम होऊं तो अब दैतेयपति रणस्थल में खड़ा रहा तो किसी भी प्रकार से अब निर्जित कर

नेविधंबुननैन निपुड निर्जितु; । रावणुंडय्येडि रामुडय्येडिनि ६४८०
निल रामरावणुलिरुवुरियुनिकि । गलुगंग नेरदी कदनरंगमुन"
ननुचु नाराचमुलंदंद तिगिचि । दनुजेशपै नेय दशकंधरुंडु
प्रतिशिलीमुखपरंपरलु पैबरप । नितरेतराशुगानेकसंघमुलु
मंडु मंटलु नभोमंडलि निंड । नोंडोंटितो दाकु नुग्ररावंबु
गुरुतर कोदंड गुणनिनादमुलु । बैरसें नोक्कट लोकभीकर गतुल;

रावणुडु विभीषणादुल माट दलंचि चिंतिचुट

नंत जर्जरितांगुडै रामु विशिख । संतानवेगंबु सैरिपलेक
गजवैरि गनि पारु गजमुचंदमुन । रजनीचरेंद्रुंडु रणभूमि विडिचि
कचभारमुलु वीड गमनीयरत्न । खचितभूषणमुलु गनुकनि बेंदर
जेरि योंडोरुवुल जेतुलु सरचि । बोरन नव्वुचु भूतंबुलावं
घनपादहति नेल गंपिप बारि । वनचरुलार्वग वडि लंक जोच्चि ६४९०
कोलुवुकूटंबुन गूर्चुंडि बुद्धि । दलपोसि तनकु मुंदर विभीषणुडु

दूंगा। रावण रहे (या) राम ! ॥ ६४८० ॥
—अब कदनरंग में, भुवि में राम-रावण दोनों का अस्तित्व (एक साथ) नहीं रहेगा।" (ऐसा) कहते निरन्तर नाराचों का संधानकर दनुजेश पर चलाया (तो) दशकंधर ने प्रतिशिलीमुख-परम्पराएं (समूह) चलाईं। इतरेतर-अनेक-आशुग-संघों के कारण बलने वाली ज्वालाओं के नभोमंडलि में भर जाने पर, (उनके) एक दूसरे से टकराने वाले उग्र-रव (तथा) गुरुतर कोदंड-गुण-निनाद (आदि) एक साथ लोकभीकर गति से व्याप्त हुए।

रावण का विभीषणादि की बातें सोचकर चिंतित होना

तब जर्जरित-अंग वाला बन, राम के विशिख-संतान (-समूह) के वेग को सहन न कर सक, गज-वैरि (सिंह) को देख भागनेवाले गज के समान, रजनीचरेन्द्र रणभूमि को छोड, कचभार के स्रस्त होने (खुल जाने) पर, कमनीय रत्न-खचित भूषणों के संभ्रम के कारण बिखर जाने पर, भूतों के मिलकर परस्पर हाथ (तालियाँ) बजाकर, अट्टहास करने पर, घनपादहति से भूमि के कंपित होने पर भागकर, वनचरों के सिंहनाद करते समय, झट लंका में घुसकर, ॥ ६४९० ॥
—सभाभवन में बैठकर, मन में सोचकर, अपने को पूर्व में विभीषण

चेंप्पिन बुद्धलु चित्तंबुलोन। नप्पुडु तलचुचु ना रामुडेयु
नेटुलु दलचुचु नेल्लंदु सुभट। कोटुलु गोनियाड गुंभकर्णुंडु
नतिकायुडुनु घनुडाइंद्रजित्तु। मृतुलौट दलपोसि मिगुल जित्तमुन
गविसिन शोकांधकारंबुवलन। नवशभावमु बोंदि यालोन देलिसि
यंत:पुरंबुन कंत नेतेंचि। यंतरंगमुन जिताक्रांतुडगुचु
दन सति राविचि तलवांचि पलिकें। "विनु रामु जगदेकविक्रमक्रमम्
एमनि चेंप्पुदु ? निदें नाकुनेंदुर। रामसहस्रमुल् रमणि! तोचेंडिनि
नेंक्कड जूचिन नीलंकलोन। नक्कड रघुरामुडै युन्नवाडु;
इंक जयोपायमेमियुलेदु। शंकरु चरणमुल् शरणंबु नाकु; ६५००
द्रिपुरंबु लेदेवु दिव्योग्र बाण। विपुलाग्नि तीऱ्ऱ्ये विस्मयं बेसग,
निंदुखंडंबुन ने देवु मकुट। मंदमै विलसिल्लु नभिनवस्फुरण,
दनर ने देवु हस्तमुल बिनाक। सुनिशित खड्ग त्रिशूलमुल् मेऱ्ऱयु,
ने देवुडखिललोकेशु, डे देवु,। डा दक्षु मर्दिंचि यागंबु सेंऱ्ऱिचें,
नलुकतो ने देवु डंधकासुरुनि। बोलियिंचें, ने देवु बोगडु वेदमुलु
दैलिय ने देवुंडु देवादिदेवु,। डेलमि ना देवुनि ने भजियिंतु"

के बताए नीति-वचनों को चित्त में तब स्मरण करते हुए, उस राम के आघातों का स्मरण करते हुए, सर्वत्र सुभट-कोटियों के सराहने पर कुम्भकर्ण, अतिकाय, महान् इन्द्रजित के मृत होने की बात सोचकर, चित्त में अधिक परिव्याप्त शोकांधकार-भाव से (रावण) अवश हो गया। उतने में होश में आकर अन्त:पुर में तब आकर, अंतरंग में चिन्ताक्रांत होते हुए, अपनी सती को बुलाकर सिर झुकाकर बोला— "सुनो, राम के जगदेक-विक्रम-क्रम को कैसे कहूँ ? हे रमणी ! यहीं मेरे समक्ष हजार राम दिखाई पड़ रहे हैं। इस लंका में जहाँ देखो, वहीं रघुराम ही (अवस्थित) हैं। अब जय (प्राप्त करने का) कोई उपाय नहीं है। शंकर के चरण ही मेरे लिए शरण्य हैं॥ ६५००॥

—जिस देव के दिव्य-उग्र-बाण-विपुलाग्नि से आश्चर्यप्रद रूप से त्रिपुर नष्ट हुए, जिस देव का मकुट (ललाट) इन्दुखंड के अभिनव-स्फुरण से सुन्दर हो विलसित है, जिस देव के हाथों में पिनाक, सुनिशित खड्ग, त्रिशूल शोभा से विराजमान हैं, जो देव अखिलेश है, जिस देव ने दक्ष का मर्दन कर याग को विनष्ट कर दिया, जिस देव ने क्रोध से अन्धकासुर का वध किया, वेद जिस की स्तुति करते हैं, जानने पर जो देव देवादिदेव है, प्रेम से उसी देव का भजन (भक्ति) करूँगा।" (ऐसा) कह कृत-स्नान हो, अग्रजन्म (ब्राह्मण) संतृप्त हों, ऐसा बहुविध दान देकर, मन से मद, दर्प, मान तजकर,

ननि कृतस्नानुडै यग्रजन्मुलकु । दनियंग बहुविध दानंबुलॊसगि
मदि लोन मद दर्पमानमुल् विडिचि । पदिलुडै सात्विकभावंबु पूनि
रक्तांबरंबुलु रक्तमाल्यमुलु । रक्तोपवीतमुल् रक्तगंधंबु
रक्ताक्षसूत्रमुल् राजिल्ल बरम । भक्तितो मन्त्रजपंबु सेयुचुन ६५१०
नीश्वरालयमुनकेतेंचि राक्ष । सेश्वरुंडचलितहृदयुडै यचट
दग वेदि गाविंचि दर्भांकुरंबु । लॊगि जेचि तनकुगा नुग्रदानवुल
'नन्निदिक्कुल नुंडु' डनि पंचि वेल्व। नुन्नंत नॆरिगि मन्दोदरि वच्चि
कनुकॊनि "यो पंक्तिकंधर! नीकु । जनुनॆ दीनुनिभंगि शौर्यबु विडुव?
नुरक नीवलिगिन नुदधुलु ग्रोय । वॆरचु; समीरंबु वीवंग वॆरचु;
ननलंडु तीव्रार्चुलडरिप नोडु । विनुवीथि नर्कुंडु वॆलुगु शंकिचु;
जगमुलु नीवन्न जलियिंचु; नेल । मगटिमि सॆडि यिट्टिमतमु गैकॊंटि
नॆंडित धैर्यंबु नीकु लेकुन्न । नाडेल तॆच्चिचति नरनाथु देवि ?
मारीचु माटलु मदिलोन नाडु । नेरमुलुग गॊंटि; नीति गावंटि;
नीति विचारिंचि नी चेटु सैप । कातत धर्मात्मुडगु विभीषणुडु ६५२०
तॊडरि पल्मारुनु 'दोषाचरेंद्र! । चॆडुन्नोवलेटिकि ? सीत नीपैनि

स्वस्थचित्त हो, सात्त्विक भाव धारणकर, रक्तांबर, रक्तमाल्य, रक्त-उपवीत, रक्तगंध, रक्त-अक्षसूत्र (जपमाला) से विराजित होते हुए, परमभक्ति से मन्त्र जप करते हुए, ।। ६५१० ।।

—ईश्वरालय में आकर, राक्षसेश्वर अचलित (निश्चल) हृदय से, वहाँ समुचित विधि से वेदिका बनाकर, क्रम से दर्भांकुर रख, अपने लिए (रक्षार्थ) उग्रदानवों को सब दिशाओं में रहने का आदेश देकर, होम करनेवाला ही था कि सब कुछ जानकर मन्दोदरी आई और देखकर (यों) बोली—"हे पंक्तिकंधर ! दीन के समान शौर्य को खो देना तुम्हारे लिए समुचित है ? सामान्य रूप से ही तुम क्रुद्ध बनोगे तो उदधि गरजने से डरता है, समीर चलने में डरता है, अनल तीव्र-अर्चियों से विजृंभित होने में डरता है, सूर्य आकाश में प्रकाशित होने में शंकालु बन जाता है। तुम्हारा नाम लेने पर जग संचलित हो जाते हैं। पौरुष के भंग हो जाने पर ऐसा विचार क्यों धारण किया ? आज तुम्हें इतना धैर्य नहीं है तो उस दिन नरनाथ की देवी को क्यों लाए थे ? मारीच के वचनों को उस दिन अपराध माना था, नीति नहीं माना था। नीति का विचार कर, तुम्हारा बुरा न सह सक, आतत-धर्मात्मा विभीषण, ।। ६५२० ।।

विडुचुट गडुमेलु, विडु' मंचु नीकु । विडुवक चेप्पडे? विनवैति गाक !
मातामहुडैन माल्यवंतुंडु । नीतिगा जेप्पिन नीवु गैकोंटे ?
तप्पक मी तल्लि तगवु सिंतिंचि । चेप्पिन माटलु सेवियोग्गि विटे ?
'जननाथुतो नेल शात्रवं' बनिन । गनलवे मरि कुंभकर्णु माटलकु ?
वलदनि चेप्पिनवारि वाक्यमुलु । तलकूडेने नेडु दनुजलोकेश !
भुजविक्रमंबेल्ल बोवंग विडिचि । निजमुगा मुनिवृत्ति नीवु गैकोंटि!
विद्रुंडे यनि नोडनेरुगवु राम । चंद्रु गेल्वकयुन्न जनुलेल्लनगरे ?
यनि चेसि गेल्तुगाकसुरेश! नीवु । ननदचंदमुलेल" यनि तूलवलुक
नेलकोन्न सिग्गुन निट्टूर्पु वुच्चि । "नेलत! नीमाटलु निजमगु : नैव

६५३०

रामचंद्रुनिकिक रमणि! ने वेरव । होमंबु गाविचि युद्धरंगमुन
जननाथसुतुलनु जंपेद : नीवु । चनु" मन्न म्रोक्कि बाष्पंबुलंदंद
तोरुग मंदोदरि दुःखिचि लोनि । करुगुचो नाडिन यार्द्रवाक्यमुलु
विनि सिग्गुपडि वेल्मि विडिचि रावणुडु । चनियें सेज्जकु : नंत

जननाथुडिचट

—का (तुम्हारे) समक्ष कई बार यह कह कि 'हे दोषाचरेन्द्र ! कुमार्ग क्यों ? आगे सीता को छोड़ देना अच्छा है, छोड़ दो, तुम्हें निरन्तर बुद्धि नहीं सिखाई थी ? (तुमने) सुना था ! मातामह माल्यवंत के नीति (की बातें) कहने पर तुमने स्वीकारा था ? तुम्हारी माता के न्याय का चिंतन कर कही बातों को कानों में जगह दी थी ? 'जननाथ से शत्रुता क्यों ?' कहने पर, कुम्भकर्ण की बातों पर क्रुद्ध नहीं हुए थे ? हे दनुजलोकेश ! (तुम्हें) मना करनेवालों के वाक्य आज बर आए न ! समस्त भुज-विक्रम को छोड़कर, तुमने सचमुच मुनिवृत्ति को ग्रहण किया न ! इन्द्र के हाथ भी हारना नहीं जानते थे, ऐसे तुम रामचन्द्र को नहीं जीतोगे तो लोग अपहास्य नहीं करेंगे ? हे असुरेश ! युद्ध कर जीतना चाहिए । अनाथ जैसा यह व्यवहार क्यों ?' ऐसा अपमान करते बोलने पर, स्थिर बनी लज्जा से लम्बी आह छोड़कर (लंकेश ने कहा) —"हे नारी ! तुम्हारी बातें सच हैं । फिर भी, ॥ ६५३० ॥

—हे रमणी ! अब रामचन्द्र से डरूँगा नहीं । होम करके युद्धरंग में जननाथ-सुतों का वध करूँगा । तुम चली जाओ ।" (ऐसा) कहने पर प्रणाम कर, निरन्तर बाष्पों के प्रवाहित होने पर, मन्दोदरी दुखी हो, भीतर चली गई । (उसके) कहे आर्द्र वाक्य सुन, लज्जित हो, हवन करना छोड़ रावण शय्या को गया । तब यहाँ जननाथ,

लक्ष्मणुनि मूर्छकु श्रीरामुडु शोकिंचुट

नेंडलुनेत्तुट दोगि यूर्पुल सडलि । पडियुन्न शेषाहिपति बोलियुन्न
यनुगुदम्मुनि जूचि यालोन धृतिकि । जोनुपनि मतितोड शोकिंपदोडगे
"निब्भंगि सौमित्रि यिलमीद नुंड । नेंब्भंगि ब्राणंबुलेनु निल्पुदुन ?
ललि रणंबोनरिप लावेट्लु गलुगु ? । बलुमुष्टि विल्लेट्लु पट्टंगवच्चु ?
गन्नुल बाष्पमुल् ग्रम्मंगनेट्लु । पन्नि पैबरतेंचु परिपंथि जूतु ?
ना कन्नलेदुटनु ना सहोदरुडु । ना कूमिबंधुंडु ना प्राणसखुडु ६५४०
नाकु ब्राणमुलिच्चि ननु डिंचिपोयें ? । नाकु सिग्गय्येंडि ना शौर्यमुनकु ?
नाकेल रणमिक? नाकेल जयमु ? । नाकेल राज्यंबु? नाकेल सीत ?
नाकेल शौर्यंबु? नाकेल ब्रदुकु ? । नाकु नीतोडिद नाकंबुगाक !
जयशालिवै मुन्नु शरभ शार्दूल । भयदाटवुललोन बाटिंचि तेंच्चि
यरुदैन तुच्छ दैत्याटविलोन । बरुनिकैवडि गाडुपरचिते नन्नु !
नुन्नतोन्नतशक्ति नोरंत प्रौद्दु । नन्नु गाचुटकु गाननभूमुलंदु
निद्रवोवेन्नडु नेडिट्लु दीर्घ । निद्रवोवुट नीकु नीतिये तंड्रि !

लक्ष्मण की मूर्च्छा पर श्रीराम का शोक करना

—शरीर के रक्त में लथपथ बन, साँसों से रहित हो, गिर पड़े हुए शेषाहिपति-सम प्रिय-अनुज को देख, उस अन्तर में धृतिहीन मति से यों शोक करने लगा—"इस प्रकार सौमित्र के ज़मीन पर पड़े रहते समय मैं किस प्रकार प्राणों को रख सकूँगा ? फिर रण करने के लिए सामर्थ्य कहाँ से आएगी ? दृढ़ मुष्टि से धनुष को कैसे पकड़ा जा सकेगा ? आँखों में बाष्पों के घुमड़ आने पर, व्यूह रचकर ऊपर आने (टूट पड़ने) वाले परिपंथी (शत्रु) को कैसे देख सकूँगा ? मेरी आँखों के सामने (मेरे देखते हुए) मेरा सहोदर, मेरा लाडला बन्धु, मेरा प्राणसखा, ।। ६५४० ।।
—मेरे लिए प्राण दे, मुझे छोड़ चला गया न ! मेरे शौर्य पर मुझे लज्जा हो रही है । अब मुझे रण क्यों ? मुझे जय क्यों ? मुझे राज्य क्यों ? मुझे सीता क्यों ? (इन सबकी आवश्यकता नहीं है ।) मुझे शौर्य क्यों ? मुझे जीवन क्यों ? मुझे तो तुम्हारे साथ ही नाक (स्वर्ग) चाहिए । जयशाली हो पूर्व में शरभ-शार्दूल (युक्त) -भयद-अटवियों का ध्यान रख, लाकर, अनुपम तुच्छ दैत्याटवि में अन्य (शत्रु) के समान मुझे क्षुब्ध कर दिया न ! उन्नत से उन्नत-शक्ति युक्त हो, दिन भर, मेरी रक्षा करने के

पलुमारु निब्भंगि बनवुचु बिलुव। नेलुगेत्ति 'यो' यनवेमि? लक्ष्मणुड !
यिक नेव्वरु गल ? रे नेंदु जोत्तु? । निंक बालयितिगा यी शोक वह्नि
शुभ लक्षणोपेत सुरुचिराकारु । डभिरामबलुडु नाकतिभक्तिपरुडु ६५५०
प्रियसहोदरुडु गंभीरुंडु समर । जयशालि ना प्राणसखुडु लक्ष्मणुडु
इतडु नातो गानकेतेंचे निप्पु । डितनितो नेगेद नेनिंद्रपुरिकि
गलरेंदु बंधुलु गलरेंदु नितु; । लिल निट्टिसोदरुलेक्कड गलरु ?
यत्नंबु सेसिन नवनिजबोलु । पत्नि नोंडोकचोट बडय जोप्पडुनु
निट्टि सद्गुणशीलुडिट्टि दयाळु । महाबलुंडिक नेंदु गलडु ?
तम्मुडन्मात्रमे तलपोसि चूड ! । निम्मुल ननु गोल्चु निम्महाभुजुडु;
इतडे ना पौरुषं; बितडे ना शांत;। मितडे ना कीर्तियु : नितडे ना स्फूर्ति;
यितडे ना शौर्यंबु: नितडे ना धैर्य : । मितडे ना नयमुनु; नितडे ना जयमु
भाविप ना पालि भाग्यंबु नितडे । पावनंबगु राज्यपदवियु नितडे"
यनि पेक्कु भंगुल नडलुचुनुंड । विनि सुषेणुडु राम विभु जूचि पलिकेः ६५६०

लिए, कानन-भूमियों में कभी सोते ही नहीं थे। हे तात ! आज ऐसी दीर्घ निद्रा तुम्हारे लिए उचित है ? कई बार इस प्रकार व्यथित होते हुए उच्च स्वर से तुम्हें बुलाने पर भी हे लक्ष्मण ! 'ओ' (जी) क्यों नहीं कहते हो ? अब मेरा कौन है ? मैं कहाँ जाऊँ ? अब तो शोकवह्नि का भागी बन गया हूँ। शुभलक्षण-उपेत (-युक्त), सुरुचिराकार वाला, अभिराम बली, मेरा अतिभक्तपर, ।। ६५५० ।।

—प्रिय सहोदर, गम्भीर, समर (में) जयशाली, मेरा प्राणसखा, (ऐसा) यह लक्ष्मण मेरे साथ कानन में आया, अब इसके साथ मैं इंद्रपुरी जाऊँगा। (ऐसे तो) सर्वत्र बन्धु हैं, स्त्रियाँ हैं, किन्तु दुनियाँ में ऐसा सहोदर कहाँ है ? यत्न करने पर अवनिजा के समान पत्नी को किसी जगह प्राप्त किया जा सकता है। (किन्तु) ऐसा सद्गुणशील, ऐसा दयालु, ऐसा महाबली अब और कहाँ है ? सोचकर देखने पर यह मात्र अनुज ही है ? (नहीं) यह महाभुज वाला प्रेम से मेरी सेवाएँ करता रहता है। यही मेरा पौरुष है, यही मेरी शक्ति है, यही मेरी कीर्ति है, यही मेरा शौर्य है, यही मेरा धैर्य है, यही मेरा नय और यही मेरी जय है। विचारने पर यह मेरे प्रति भाग्य है, पावन राज्यपद भी यही है।" ऐसा अनेक प्रकार से (राम को) व्याकुल

"निदि येमि देव! नीकित शोकिंप? । हृदयंबु गुंदिप किंदे चूडुमितनि:
नोंडल प्राणमुलु लेकुन्न नाननमु । कडु नोप्पियुंडने कळलु देरुचुनु ?
गन्नुलिंदीवर कमनीयकांति । जेन्नोंदि युंडुने चेलुवंबु मिगिलि ?
यंदंबुलैयुन्न वरचेतुलेलमि । गेंदामरल भंगि गेंजाय मेरसि"
यनि पलिकि रघुरामुनडलु वारिंचि । हनुमंतु गनुगोनि यतनितो ननियें;
"मुनु जांबवंतुंडु मुदमुतो जेप्प । विनिनाड वौषधविधमेल्ल देलिय;
बोलुचु महाद्रोण भूधरंबुननु । जेलुवोंदु दक्षिण शिखरंबुनंदु
बरिकिंप दीप्तुल बरगु विशल्य । करणियु, सौवर्ण करणियु, मरियु
संधानकरणियु, संजीवकरणि । बंधुरतर शुभप्रभ नोप्पुचुंडु;
नालुगौषधमुलु नलि देम्मु वेग । मी लक्ष्मणुनि प्राणमेत्तंगवलयु;
६५७०

बंबि देवासुरुल् बलुविडि तोल्लि । यंबुधि मथियिंचि यमृतंबु वडसि
यंदु दाचुट जेसि यमृतंबुवलन । नंदु जनिंचे ना यौषधलतलु;
लवणसमुद्रंबु लंघिंचिपोयि । यवल गुश द्वीपमवलील गडचि
वडिनेगि दुग्धार्णवमु नाक्रमिंचि । तडयक पोयि चंद्रद्रोणगिरुल

होते हुए, सुनकर सुषेण ने रामविभु को देखकर कहा— ॥ ६५६० ॥
"यह क्या देव ? तुम्हें इतना शोक क्यों ? हृदय को क्षुब्ध किए बिना इसे यहीं देखो । शरीर में प्राण न हों तो कलाओं से युक्त हो, आनन ऐसा शोभित रह सकेगा ? आँखें इंदीवर के समान कमनीय कान्ति से अधिक सौन्दर्ययुक्त हो शोभित रह सकेंगी ? हथेलियाँ शोभा से अरुण कमलों के सम ललाई से प्रकाशित होते हुए सुन्दर हैं ।" ऐसा कहकर रघुराम की व्याकुलता का निवारण कर हनुमान को देख उससे कहा—"पूर्व में जांबवान के मोद से कहते समय औषधियों के समस्त विधान को सुनकर जान लिया है । विराजमान महाद्रोण भूधर में सुशोभित दक्षिण शिखर पर देखने पर दीप्तियों से विलसित विशल्यकरणि, सौवर्णकरणि, और सन्धानकरणि, संजीवकरणि बंधुरतर शुभप्रभा से शोभित होती रहती हैं । चार औषधियों को झट ले आओ । इस लक्ष्मण के प्राणों का उद्धार करना चाहिए ॥ ६५७० ॥

—विजृंभित हो देवासुरों के पूर्व में वरजोरी अंबुधि का मंथन कर, अमृत प्राप्त कर, उसमें (पर्वतशिखर में) छिपा रखने से अमृत के कारण वहाँ औषधलताएँ उत्पन्न हुई । लवण-समुद्र लांघकर जाकर, आगे कुशद्वीप को सरलता से पारकर, झट जाकर, दुग्धार्णव को पारकर,

गंदु: देवेंद्रुनि यनुमतंबुननु। मंदरंबुनु बोलु महनीयतनुलु
गंधर्वुलोगि वानि गाचियुंड्डुरु:। गंधर्वुलकु नीकु गलुगु गय्यंबु;
तेरुवुन राक्षसुल् दिरुगुचुंड्डुरु;। वरुस मायावुलु: वारि नेमरकु
द्रोणाद्रिकवलीलतो नेगि यितनि। प्राणमॆत्तुमु रघुपति संतसिप
निरुमूडुलक्षलु निरुवदिवेलु। बरिकिंप निन्नूटपदियोजनमुलु
वायुनंदन! नीवु वायुवेगमुन। बोयिरम्मिमट ब्रोद्दु पोड्वक मुन्ने
६५८०;

भानुंडुवोडिचिन ब्रभ दूलि शक्ति। हीनंबुलै पोवु नी यौषधम्मु
लटमीद लक्ष्मणु नायुवॆत्तुटकु। घटियिल्लनेरदु, गान ना लोन
वानरोत्तम! नीवु वडि बोयिरम्मु। वानि लक्षणमुलु वलयु नीकॆरुग
हरित फलंबुलु नरुणपुष्पमुलु। नरुदार दॆल्लनि याकुल नमरु;
जननाथसुतु विभीषणु जांबवंतु। निनसूनु नंगदु नॆलमि वीड्कोनुमु"
अनि सुषेणुडु वल्क "नॊगाक" यन्न। यनिलनंदनु जूचि यवनीशुडनियॆ
बडियुन्न लक्ष्मणु प्राणंबुलॆत्ति। पडयुमु त्रिभुवन प्रख्यात कीर्ति;
ननुजुलु मुनु मुव्वुररय नाकिप्पु। डनिलनंदन। नल्वुरैरि नी तोड।"

अविलम्ब जाकर चन्द्रद्रोण गिरियों को देख सकोगे। देवेन्द्र की अनुमति से मन्दर-सम महनीय तनु वाले गन्धर्व क्रम से उसकी रक्षा करते रहते हैं। गन्धर्वो और तुममें युद्ध छिड़ जाएगा। मार्ग में राक्षस विचरते रहते हैं। क्रम से वे मायावी होते हैं। असावधान मत रहना। द्रोणाद्रि को सरलता से जाकर, इसके प्राणों का उद्धार करो जिससे रघुपति प्रसन्न हो जाएँ। हे वायुनन्दन! सोचने पर तुम छः लाख बीस हजार दो सौ दस योजन वायुवेग से जाकर, सूर्योदय से पहले ही आ जाओ॥ ६५८०॥

—भानु के उदय होने पर, प्रभा खोकर ये औषध शक्तिहीन हो जाते हैं। उसके बाद लक्ष्मण की आयु का उद्धार करना घटित नहीं हो सकता। अतः इतने में ही हे वानरोत्तम। तुम शीघ्र जाकर आओ। उन (औषधियों) के लक्षण तुम्हें जानने चाहिए। (वे) हरित फलों, अरुण पुष्पों, अनुपम श्वेत पत्रों से शोभित हो रहते हैं। जननाथसुत, विभीषण, जांबवान, इनसून, अंगद से प्रेम से विदा लो।" ऐसा सुषेण के कहने पर 'ऐसा ही हो' कहनेवाले अनिलनन्दन को देख अवनीश ने कहा—"गिर पड़े हुए लक्ष्मण के प्राणों का उद्धार कर, त्रिभुवन-प्रख्यातकीर्ति प्राप्त करो। हे अनिलनन्दन! पूर्व में मेरे तीन अनुज थे। सोचने पर तुम्हारे साथ चार हुए हैं।"

संजीवकरणिकै हनुमंतुडु द्रोणाद्रिकि बोवुट

नन विनि "नी बंटु हनुमंतुडुंड । निनकुलोत्तम ! नीकु नेल चिंतिप?
नी याज्ञ दलमोचि नृपसिंह वेग ! । ना येडुदीवुल कवल नुंडिननु !
६५९०
निनुडुदयाद्रिकि नेतेरकमुनु । कौनिवत्तु नौषधकुधर मे" ननुचु
नडुगुलकेरगिन हनुमंतुनेत्ति । नडु ग्रुच्चि यालिंगनमु सेसि विभुडु
"इंद्रुडु नी शिर, मिनुडु नीमुखमु । जंद्रुडु नी मदि, शक्ति नी पिरुदु,
लनिलुंडु नी वेन्नु, हरुडु नी वाल । मनलुंडु नी यंघ्रु, लजुडु नी बुद्धि,
वरुणुंडु नी शक्ति, वाणि नी वाणि । गरुडकेतनुडु नी घन बाहुयुगमु,
गुंजराननुडु नी कुक्षि रक्षितु; । रंजनासुत! वेग यरिगिर" म्मनिन
सरवि नर्कज विभीषण ऋक्षराज । पुरुहूतपौत्रुलप्पुडु वीडुकोल्प
मेदिनि वडि व्रय्यमेट्टिन नगमु । पादंबुलूदिन बलुवडि ग्रुंग
मेयिगालि मुन्नेरु, मिन्नेरु गलग । रयमुन लंकापुरमु गोपुरमुलु
वेसगूल गुप्पिंचि विनुवीथि कैगसि । लसित विद्युन्निभलांगूललतयु
६६००

संजीवकरणि के लिए हनुमान का द्रोणाद्रि जाना

(ऐसा) कहने पर सुनकर (हनुमान ने कहा) —"हे इनकुलोत्तम ! तुम्हारे सेवक हनुमान के रहते, तुम्हें चिन्ता करना क्यों ? हे नृपसिंह ! तुम्हारी आज्ञा को सिर पर धारण कर, झट (जाकर) चाहे सात द्वीपों के उस पार क्यों न हो, ॥ ६५९० ॥

—सूर्य के उदयाद्रि पर आने से पहले ही, मैं औषध-कुधर को ले आऊँगा।" (ऐसा) कहते हुए चरणों में नत होनेवाले हनुमान को उठाकर, कसकर आलिंगन कर, विभु (राम) (ने कहा) —"इन्द्र तुम्हारे सिर की, इन (सूर्य) तुम्हारे मुख की, चन्द्र तुम्हारे मन की, शक्ति तुम्हारे नितम्बों की, अनिल तुम्हारे पीठ की, हर (शिव) तुम्हारे वाल (पूँछ) की, अनल तुम्हारे अंध्रियों की, अज तुम्हारी बुद्धि की, वरुण तुम्हारी शक्ति की, वाणी तुम्हारी वाणी की, गरुडकेतनवाला (विष्णु) तुम्हारे घनबाहुयुग की, कुंजराननवाला (गणेश) तुम्हारी कुक्षि की रक्षा करेंगे। हे अंजनासुत ! शीघ्र जाकर आओ।" (ऐसा) कहने पर, क्रम से अर्कज, विभीषण, ऋक्षराज, पुरुहूत (इन्द्र) पुत्र के तब बिदा करने पर मेदिनी झट विदीर्ण हो जाए, बरजोरी चरण दबाने पर नग (पर्वत) के दब जाने पर, शरीर से निकले पवन से समुद्र और आकाश-गंगा

नुग्र बाहार्गळयुगळंबु नेत्ति । युग्रांशुपटुमंडलोदग्रलील
वदनंबु गड्डु समुज्ज्वललील वेलुग । बदकर्णसंकोचभंगि जेन्नगुचु
बहुपर्वतंबुलु बहुदेशमुलुनु । बहुनदीनदमुलु बहुवनंबुलनु
बुरमुलु सागरंबुलु गनुंगोनुचु । नरुदार दुहिनाद्रि नवलील गडचि
देरुलु घूर्णिल्लंग, दिग्भागमगल । नसहायशूरुडै हनुमंतुडरिगॆ ।
वेवुलवारलाविधमेल्ल जॆप्प । गा विनि विघ्नंबु गाविंचुकोरकु

कालनेमि वृत्तांतबु

नोंटिमै रावणुडोगि गालनेमि । यिटिकि नडुरेयि नेगुदेंचुटयु
भक्तितोडुत नर्घ्यपाद्यादुलिच्चि । नक्तंचरेश्वरुनुकु नातडनियॆ;
"नी मध्यरात्रि मीरिटकु विच्चेयु । टेमि कारण ? मानतिडु ना' कनिन
"ननि नेडु ना शक्ति हति मृतुंडैन । युनुजुनिकै रामुडट्टु तन्नु बनुप ६६१०
संजीवकरणिचे सौमित्र बडय । नंजनासुतुडिप्पुडरुगुचुन्नाडु;
चनि वेग हनुमंतु जंपु, कादेनि । विनु भानु गनुदाक विघ्नंबु सेयु,

---

के क्षुब्ध होने पर, शीघ्र लंकापुर के गोपुर ढह जाएँ ऐसा लाँघ कर, आकाश-वीथि में उड़कर, लसित-विद्युत्-निभ-गोलांगूल-लता को, (तथा) ।। ६६००।।

—उग्र-बाहु-रूपी अर्गलायुग को ऊपर उठाकर, उग्रांशु के पटु-मंडल के समान उदग्रलीला से वदन के अधिक समुज्ज्वल लीला से प्रकाशित होने पर, पद (तथा) कर्णों को कुंचित कर बहुपर्वत, बहुदेश, बहुनद-नदियाँ, बहुवन, पुर, सागर (आदि) को देखते हुए, अनुपम रूप से तुहिनाद्रि को सरलता से पारकर, दिशाओं के घूर्णित होने पर, दिग्भाग के विदीर्ण होने पर, असहायशूर बन हनुमान चला । गुप्तचरों के वह समस्त विधान बताने पर, सुनकर, विघ्न (उत्पन्न) करने के लिए, ।। ६६०६ ।।

कालनेमि का वृतान्त

—अकेले ही क्रम से रावण के आधी रात को कालनेमि के घर आने पर, भक्ति से अर्घ्य-पाद्य आदि देकर, नक्तंचरेश्वर से उसने कहा—"इस आधी रात को आपके यहाँ पधारने का क्या कारण है ? मुझे आज्ञा दीजिए ।" (ऐसा) कहने पर "युद्ध में आज मेरी शक्ति के आघात से मरे अनुज के लिए राम के भेजने पर, ।। ६६१० ।।

—संजीवकरणि से सौमित्र को प्राप्त करने (जीवित करने) अंजनासुत अब जा रहा है । जाकर झट हनुमान को मार डालो । नहीं तो

कलदु देवासुर कल्पितंबैन । नलिनाकारमु द्रोणनगसमीपमुन;
मदमुतो नोक महामकरि यंदुंडु । नदि देवतल मिगु; नगचरुंडेंत ?
या सरोवरमुन कनिलजुंडरुग । मोसपुच्चुमु: वेगमुग नेगु" मनिन
मनमुन नटनीतिमार्गबु देलिय । दनुजेशुतो नाडे दग गालनेमि;
"माया मृगाकृति मारीचुडरिगि । मायमैपोडे! या मतमु पो विडुवु;
घोराजि गूलिरि कुंभकर्णादि । वीर दानवुलेल्ल; विनुमिकनैन;
मनुजेशुनकु सीत मरलंग निच्चि । दनुजेश ! लंक नी तम्मुनकिच्चि
यरिगि मृडावासमैन कैलास । धरणीधरमुनंदु दपसिवैयुंडु ६६२०
कादेनि बिरुदुवै गदनरंगमुन । मेदिनीपति चेत मृति बोंदि मीद
नोनरंग विष्णुसायुज्यंबु नोंदु" । मनि पल्क गन्नुल नलुक गेंपेरुग
ना येड वेस जंद्रहासंबु वेरिक । व्रेय दलंचे; नाविध मातडेरिगि,
'यिदे चनुचुन्नाड ने" नंचु नचटु । कदलि मनोवेगगति लावु मेरसि
चनि चूत पुन्नाग चंपक क्रमुक । पनस चंदन जंबु पाटली वकुळ
कदलिका खर्जूर कर्पूर तरुलु । मोदलुगा गल भूजमुल सोंपु
मिगिलि

भानु को देखने तक विघ्न (उत्पन्न) करो। द्रोणनग के समीप देवासुर-कल्पित नलिनाकर है। उसमें मदयुक्त एक महामकरी है। वह देवताओं को निगल जाती है। (उसके लिए) नगचर कितना ? (उसकी गिनती ही क्या ?) उस सरोवर में जाने के लिए अनिलज को धोखे में डाल दो। शीघ्र जाओ।" (ऐसा) कहने पर, नीति-मार्ग (विधान) को जानते हुए, समुचित रूप से कालनेमि ने दनुजेश से कहा—"माया मृगाकृति से जाकर मारीच अदृश्य नहीं हो गया था ? उस मत (अभिप्राय) को छोड़ दो। कुम्भकर्ण आदि समस्त वीर दानव घोराजि में गिर गए (मर गए)। अब तो सुनो। हे दनुजेश ! मनुजेश को सीता लौटा देकर, लंका तुम्हारे (अपने) अनुज को देकर, जाकर मृड (शिव) के आवास कैलास-धरणीधर पर तपस्वी बनकर रहो ॥ ६६२० ॥

—नहीं तो वीर हो कदनरंग में मेदिनीपति के हाथ मरकर शोभा से विष्णु-सायुज्य को प्राप्त करो।" ऐसा कहने पर आँखों में क्रोध की अरुणिमा के उमड़ने पर, उसके प्रति चन्द्रहास को निकालकर, मार डालना चाहा। उस विधि को वह जानकर 'यही मैं जा रहा हूँ' कहते हुए, वहाँ से निकल कर मनोवेग की गति की सामर्थ्य से प्रकाशित होकर, जाकर, आम्र, पुन्नाग, चम्पक, क्रमुक, पनस, चन्दन, जम्बु, पाटली, वकुल, कदलिका, खर्जूर, कर्पूर-तरु आदि भूजों (वृक्षों) की अधिक शोभा से युक्त हो, बहुशिष्यगणों

बहुशिष्यगण वेद पठनमुल् सेलग । महनीय मणि दीप मालिकल् वेलुग
भासुर मंजरी फलहोम धूम । धूसरीकृत लतादुल जेन्नु मिगिलि
कलकंठ शुक नीलकंठ शारिकल । कलहंस कलरव कलकलंबेसग
हुतदान मंत्र स्वरोदीर्णमैन । कृतकाश्रममु द्रोणगिरि समीपमुन ६६३०

निर्मिंचि मुनिवोलें नियतितो गपट । निर्मलाकृति दाल्चि नेत्रमुल् मोगिचि
सन्नपुटेलुगुन जपमाल पूस । लेन्नुट मंत्रमै येंदिरिकि दोप
ना वनंबुन नुंड नाकाशवीथि । बोवुचो मारुतपुत्नुडीक्षिचि
"यिदि योक्क मुनिवनं, बित योप्पगुनें? । मिदि नाडुले: दिप्पुडेंदु वच्चितिनो ?
यक्कडि दुग्धाब्धि? यक्कडि मेरु । वेक्कडि मुनिवनंबिदि त्रोव दप्पे;
देरु विम्मुनींद्रुचे देलियंग नडिगि । यरिगेद गा" कंचु नवनि केतेंचि
वनपक्वफलमुलु वांछ बुट्टिंप । मुनिशापभयमुन मुट्ट नोड्चुनु
मुनि जेर जनुदेंचि म्रोक्कि केलमोगिचि । "मुनिनाथ! दुग्धसमुद्रंबुकडकु
मनुज नायक-शिखामणियैन राम । जननाथु पनुपुन जनुचुन्नवाड;

के वेदपठनों के शोभित होने पर, महनीय मणि-दीप-मालिकाओं के प्रकाशित होने पर, भासुर-मंजरी-फलों (तथा) होम-धूम से धूसरीकृत लतादियों से अधिक शोभित हो, कलकंठ, शुक, नीलकंठ, सारिका, कलहंस (आदि) के कलरवों के कलकल के बढ़ने पर, हुत-दान-मन्त्र-स्वरों से उदीर्ण बने कृतकाश्रम को द्रोणगिरि के समीप, ॥ ६६३० ॥

—निर्मित कर, मुनि की भाँति नियति से कपट-निर्मल-आकृति धारण कर, नेत्र मूँदकर, मन्द्रस्वर में जपमाला के मन के गिनना ही मन्त्र जैसा दीखे, ऐसा उस वन में (कालनेमि के) रहते (समय) आकाश-वीथि में जाते हुए मारुत-पुत्र ने देखकर (सोचा) —"यह एक मुनि-वन है, यह इतना शोभित कैसे है ? यह तब नहीं था । आज कहाँ से आ गया ? कहाँ का दुग्धाब्धि ? कहाँ का मेरु ? यह कहाँ का मुनिवन ? (मैं) रास्ता भटक गया हूँ। इस मुनीन्द्र से मार्ग जानकर (आगे) जाऊँगा।" (ऐसा) सोचते अवनि पर आकर, वन के पक्वफलों के वाँछा को उत्पन्न करने पर, मुनि के शापभय से (उन्हें) स्पर्श करने में डरते हुए, मुनि के पास पहुँच, नत होकर, हाथ जोड़कर, (कहा) —"मुनिनाथ ! दुग्ध-समुद्र के पास मनुज-नायक-शिखामणि राम-जननाथ के आदेश से जा रहा हूँ।

हनुमंतुडनुवाड; नधिकमौ तृष्ण । जनियिंचें; निच्चोट जलमुलु
गलवे ? ६६४०
चेंप्पवें ?" यनवुडु जिरुनव्वु नव्वि । "डप्पिवो मा कमंडलुवु तोयमुलु
द्रावु: मी फलमुलु दनियंग नमलु । नीविक नी रात्रि निद्रिंपु मिचट;
नगचरोत्तम ! यतीतनागतंबु । लगु मेरेलेरुगुदु नंतरंगमुन
रामु वंचिचि या रामुनि देवि । भूमिज जेंडगोनिपोयें रावणुडु;
अवनीशुडुनु वालि नवलील जंपि । लवणांबुनिधि गट्टि लंकपै विडिसि
यनिलोन गुंभकर्णादि राक्षसुल । दुनुमाडि यिंद्रजित्तुनु द्रुंचिवैचें:
बुत्रशोकंबुन बुट्टिन यलुक । रात्रिचरेंद्रुंडु रणभूमिलोन
मयुनिचे बडसिन महनीय शक्ति । रयमुन गोनि सुमित्रापुत्रु वैचें;
बडिन या सौमित्रि प्राणमुल् बडय । वडि नौषधमुलकु वच्चितिवीवु;
विनुमु नीविप्पुडु वे योजनंबु । लनिलनंदन! वच्चि तनिल वेगमुन
६६५०
नन्नु नधर्मात्मुनकु गानरादु । निन्नु नुत्तमुनिगा निश्चयिंचितिनि;
जगदेकहितमुगा जनियिंचें गान । जगतीशु पनि माकु समकूर्पवलयु;

हनुमान नामक (व्यक्ति) हूँ। अधिक तृष्णा उत्पन्न हुई है। यहाँ जल है क्या ? बताओ न।" ॥ ६६४० ॥

—ऐसा कहने पर मुस्कुरा कर (मुनि ने कहा) —"प्यास बुझाने के लिए मेरे कमंडल का तोय (पानी) पी लो—ये फल कुतरकर तृप्त हो जाओ। तुम अब आज रात को यहाँ सो जाओ। हे नगचरोत्तम ! अन्तरंग से अतीत और अनागत की सीमाओं को जानता हूँ। राम को धोखा देकर, उस राम की देवी भूमिजा को बन्दी बनाकर रावण ले गया। अवनीश ने भी वालि को सरलता से मारकर, लवणांबुनिधि (पर सेतु) बाँधकर, लंका पर धावा बोलकर, युद्ध में कुम्भकर्ण आदि राक्षसों का वधकर, इन्द्रजित का संहार कर दिया। पुत्र-शोक से उत्पन्न क्रोध से रात्रिचरेन्द्र ने रणभूमि में, मय से प्राप्त महनीय शक्ति को झट (हाथों में) ले सुमित्रापुत्र पर डाल दिया। गिर पड़े उस सौमित्र के प्राणों को प्राप्त (उद्धार) करने तुम झट औषधों के लिए आए हो। सुनो हे अनिलनन्दन ! तुम अब अनिलवेग से हजार योजन आए हो ॥ ६६५० ॥

—मुझे कोई अधर्मी देख नहीं सकता। (तुम देख पाए अतः) मैंने तुम्हें उत्तम (पुरुष) मान लिया है। जगदेक-हित के लिए (राम) उत्पन्न हुआ

दिव्यौषधंबुलु दीपिंचुनट्टि । दिव्यमंत्रमुलुपदेशितु नीकु
गंजाप्तुनुदयंबु गनि शक्ति मिगुल । संजीवनीमुख्यसकलौषधमुलु
गलवु मा वनमुन: गनुगोंनि यंदु । वलसिन यवि गोंचु वडि लंक करुगु
कनुरेप्पवेट्टेडु कंटे वेगमुन । जनियेंदु ना मंत्र सामर्थ्यमुननु"
ननवुडु गपटसंयमि जूचि पवन । तनयुंडु वल्कें "नो तापसाधीश !
यक्कड लक्ष्मणुंडब्भंगि नुंड । निक्कड नुचितमे यिटु नाकु निलुव?
फलमुलु नाकेल पतिपंपु कार्य । फलमुगा सौमित्रि बडयक मुन्न!
निद्र वोवुट नाकु नीतिये ? दीर्घ । निद्र गैकोनि रामनृपुतम्मुडुंड ! ६६६०

जलमु लल्पंबुलु सालबु; लेदे । नलिनाकरंबैन नदियैन" ननुडु
"नुन्नदि चेरुव नीक दिव्य सरसि । कन्नुलु मूसि या कमलाकरमुन
नमृतोपमानंबुलगु; निर्मलोद । कमुलु द्राविन दिव्य कायुंडवौदु:
दृग्गोचरमुलगु दिव्यौषधमुलु । दिग्गन जनु" मंचु देरुवु सूपुटकु
गपट संयमि शिष्यगणमु बंचुटयु । गपिवीरुडेतेंचि कनियें नक्कोलनु
माकंद मंदार माधवी वकुळ । शाकोट कुटज कुचंदन साल

है अत: हमें जगदीश का कार्य पूरा करना चाहिए। दिव्यौषधों को दीप्त करनेवाले दिव्यमन्त्रों का तुम्हें उपदेश देता हूँ। कंजाप्त (सूर्य) के उदय को देखकर, शक्ति के बढ़ जाने पर, संजीवनी-मुख्य (-आदि) सकलौषध जो हमारे वन में हैं, (उन्हें) देखकर, उनमें जो चाहिए उन्हें लेकर झट लंका में जाओ। मेरे मन्त्र-सामर्थ्य से पल भर में (तुम) पहुँच जाओगे।" ऐसा कहने पर कपटसंयमी को देख पवनतनय ने कहा—"हे तापसाधीश ! वहाँ लक्ष्मण के उस प्रकार रहते समय मेरा यहाँ रहना कहाँ उचित है ? पति (विभुराम) के आदेश-कार्य-फल रूपी लक्ष्मण को प्राप्त करने से पहले मुझे (अन्य) फल क्यों ? सो जाना (क्या) मेरे लिए नीति (-संगत) है जबकि रामनृप का अनुज दीर्घ निद्रा लेकर (पड़ा) है ? ॥ ६६६० ॥

—अल्प जल पर्याप्त नहीं होंगे। कहीं नलिनाकार अथवा नदी नहीं है ?" (ऐसा) कहने पर (कपटमुनि ने कहा) —"निकट ही एक दिव्य सरसी है। आँख मूँदकर उस कमलाकर में अमृतोपमान निर्मल-उदक पान करने पर दिव्यकाय वाला बन जाओगे। दिव्यौषध दृग्गोचर हो जाएँगे। झट जाओ।" (ऐसा) कहते मार्ग दिखाने के लिए कपट-संयमि के (अपने) शिष्यगण को भेजने पर, कपिवीर ने आकर उस सरोवर को देखा। (वह) माकंद, मन्दार, माधवी, वकुल, शाकोट, कुटज, कुचंदन, साल,

नीपार्जुनाशोक निंब कदंब । तापिंछ तरुलसत्तटमुल दानि
गमनीय कोमल कमल कल्हार । विमल कैरवमुल विलसिल्लुदानि
ललित कल्लोल डोलाकेळि देलु । कलनाद कलहंसगतुलोप्पुदानि
बट्टुहंस चंचु चुंबक बक क्रौंच । पटल कारंड प्रततुल दानि ६६७०

वेनुकोनि तमु बिलिच विरहुलमीद । बनिचिन गेलिच निर्भर वृत्ति गोन्न
विपुलाभिमानार्थ विततुलीकुन्न । गुपितुडै रतिराजु कोर्रुल बेट्टे
नन बक्वबंधंबुलै वाडि मिगिलि । मोनसिन कैरव-मुकुळाग्रशिखल
मूगि चलिपनि मोकरि तुम्मेदल । बागोप्प नोप्पुल बलसिन दानि
मरिकोन्नि येडलनु मकरंदमुलकु । देऽपि सूपक तम्मु द्रिप्पुचुनुन्न
कमलगेहांतर कमलकु ब्रीति । समरीति मंगळाचार गीतमुलु
नलि बाडु गायक नायकुलनग । मेलपुन नंदंद मृदुरीति म्रोयु
मधुपान रसमत्त मधुकरततुल । बधिराब्जपुट समीपमुलोप्पुदानि
गामु नुग्राक्षुचे ग्रम्मर बडय । गामिंचि तीरमाकंद बृंदंबु
ललरु नग्नुललोन नाज्यहोममुलु । चेलुवोंद नंदंद चेयुचंदमुन ६६८०

नीप, अर्जुन, अशोक, निम्ब, कदम्ब, तापिंछ (आदि) तरुओं से लसित तटों से युक्त था, कमनीय कोमल कमल, कल्हार (तथा) विमल कैरवों से विलसित था, ललित-कल्लोल-डोला केलि में मग्न (और) कलनाद से युक्त कलहंसों की गतियों से युक्त था, पट्टुहंसों के चंचुओं का चुंबन करनेवाले वक-क्रौंच-पटल (-समूह) (तथा) कारंडव-प्रततियों (-समूहों) से युक्त था ॥ ६६७० ॥

—लगकर अपने को बुलाकर विरहियों पर भेजने पर (उन्हें) जीतकर, निर्भर-वृत्ति से प्राप्त किए विपुल-अभिमान रूपी अर्थ-विततियों को न देने पर कुपित हो रतिराज ने मानों सूली पर चढ़ाया हो, ऐसी थीं (उस सरोवर में स्थित) पक्वबंध हो पैने बनकर, परिव्याप्त कैरव के मुकुलों की अग्रशिखाएँ । उन्हें घेरकर, विचलित न होनेवाले पुंभ्रमरों की शोभाओं से युक्त और कुछ स्थानों पर मकरन्द पान न करने देकर, अपने को घुमाने पर, कमल-गेहांतर (में स्थित) -कमला को प्रेम से समरीति से मंगलाचार गीत गानेवाले गायक-नायक (-श्रेष्ठ) की शोभा से, मृदुरीति से मुखरित मधुपानरस से मत्त मधुकरततियों के कारण वधिर बने अब्जपुटोंवाला था (वह सरसी) । उग्राक्ष से काम (मन्मथ) को पुनः प्राप्त करने की कामना कर तीरस्थ माकन्द मानों अग्नियों में शोभा से आज्य-होम सर्वत्र कर रहे हों, ॥ ६६८० ॥

जिलुकलु चंचुल जिंचिन दौरुगु । फलरस धारलु पर्णाग्रवीथि
दौलगक युरिलि चेंदोवललो दोरुगु । पौलुपेंतयुनु जूड बौसगेंडु दानि
फलरसंबुलु वच्चि पै बयि दौरुगु । नौलसि चेंदोवललो नुंडराकुन्न
दौलगु नुज्ज्वल होम धूमंबुलनग । नलु लाकरुंबुन नमरेंडु दानि
नाकंज पत्रंबुलनु पळ्ळेरमुल । शीकराक्षतमुलु चेलुवोप्प नुनिचि
कौलनप्पुडुत्फुल्ल कुवलय वलय । दळ विलोचनमुल दनराक कैंदुरु
चूचु तेंरंगुन शोभिल्लुदानि । जूचि डग्गर वच्चि सुखकेळि देलि
यडरु सम्मदमुन नानंद मंदि । कडु विस्मयंबंदि कन्नुलु मूसि
यक्कौलनिकि डिग्गि हनुमंतुडंत । नेक्कोन्न तृष्णतो नीरु द्रावंग
बौलुपार संसार भूरि वाराशि । मलयुचु वर्तिचु मायावधूटि
६६९०

विषयरसंबुलु वेड्कतो ग्रोलु । तृषितुनि गबळिंचु तेंरगु दीपिप
नुरवडि नंदुंडि योक महामकरि । हरिनाथु पादंबुललमि पट्टुटयु
दगिलिन यंघ्रुलुद्धतशक्ति दिगिचि । तिगुवजालक चाल धीरुडै निलिचि
यिदि येटिदो यनि येर्पड जूचि । मदि वायुसूनुंडु मकरिगा नेरिगि

—तोतों के चंचुओं से चीरे जाने के कारण झरनेवाली फलरसधाराएँ पर्णो के अग्र भाग पर से निरन्तर झरकर लाल कमलों पर गिरते रहने की शोभा से युक्त था (वह सरोवर)। फलरसों के आकर ऊपर झर पड़ने से, लाल कमलों में न रह सक, आकाश में उड़ने वाले भ्रमर मानों उज्ज्वल होम-धूम थे। कंजपत्र रूपी थालियों में शीकर रूपी अक्षतों को शोभा से रखकर, उत्फुल्ल-कुवलय-वलय-दल-विलोचनों से वह सरसी (हनुमान के) आगमन की प्रतीक्षा कर रही थी। इस प्रकार शोभायमान (सरसी को) देखकर, नियराकर, सुखकेलि में मग्न हो, अधिक सम्मोद से आनन्दित हो, अधिक आश्चर्यचकित हो, आँख मूँदकर, उस सरसी में उतरकर तब हनुमान ने अधिक उत्पन्न प्यास से जल पीना चाहा। शोभायमान संसार (रूपी) भूरि-वाराशि में विचरते हुए माया रूपी वधूटि- ॥ ६६९० ॥

—विषय रूपी रसों को उत्साह से पान करनेवाले तृषित (व्यक्ति) को निगल जाती है, ऐसे ही झट उस (सरोवर) में से एक महामकरी ने हरिनाथ (वानरपति) के चरणों को कसकर पकड़ लिया। (इस प्रकार) फँसे हुए अंध्रियों को उद्धत शक्ति से खींचकर भी, खींच (छुड़ा) न सक, अति धीर हो खड़े रहकर, उसे ध्यान से देखकर, मन से उसे मकरी जान

यंतकंतकु मदि नलुक रेट्टिप । नंतलो नतिनिष्ठुराकारुडगुचु
वेवेग रघुराम विजयवल्लरुल । कावालमै वालु ना त्रालमेत्ति
रागरसोद्रेक रावण योग । भोगसंचितपापमुलु डुल्चु पगिदि
वालमंकिंचि दुर्वारुडै विजय । लोलुडै मकरि पंडुलु डुल्लनेसे:

हनुमंतुनि मकरि म्रिंगुट

संतत मुनि वर शाप रोगमुन । कंत मीयौषधमनि म्रिंगु करणि
नरिमुरि मकरि महारोषमेत्ति । मेरसि या हनुमंतु म्रिंग जौच्चुटयु ६७००

"नक्कटा! रामुकार्यमु निल्वबडियें। निक्कड दीनिचे निट्टि चंदमुन
देगिपोदुनो! यिक देरगेदि?" यनुचु। दग विचारिंचि युद्धति वायुसुतुडु
"कडुपु लोपल जौच्चि कडतेर्तु" ननुचु। नौडिसि म्रिंगुचुनुन्न नूरकयुंडि
पदिलुडै यंधकूपमु बोनि मकरि। युदरंबु जौच्चे ना युरुबाहुबलुडु
नंत ना मकरियु नाहार बुद्धि। संतोषमुन बोये जलमध्यमुनकु:

कर, मन में अधिकाधिक क्रोध के द्विगुणित होने पर, इतने अति निष्ठुर-आकारवाला होता हुआ, अति वेग से, रघुराम की विजय-वल्लरियों का आधार बन शोभित अपनी पूँछ को उठाकर, राग-रस के उद्रेक से रावण-योग-भोग-संचित पापों को झटका देकर गिराने के समान, पूँछ हिलाकर, दुर्वार हो, विजय लोल बन, मकरी के दाँतों पर मारा जिससे वे (टूट) गिर जाएँ।

हनुमान को मकरी का निगल जाना

—संतत-मुनिवर के शाप रूपी रोग के अन्त के लिए यह औषध है, ऐसा मानकर निगलने के समान, अतिशीघ्रता से मकरी महारोष से प्रदीप्त हो हनुमान को निगलने लगी ॥ ६७०० ॥

—(तो) "हाय ! राम का कार्य रुक गया न ! यहाँ इसके कारण मर जाऊँगा क्या ? अब उपाय क्या है ?" (ऐसा) सोचते हुए, ठीक से विचार कर, औद्धत्य से वायुसुत ने ऐसा सोच कि "पेट में पैठकर, वध कर डालूँगा" पकड़ निगलते समय चुप रहकर, वह उरु-बाहुबल वाला सावधानी से अन्धकूप-सम मकरी के उदर में प्रविष्ट हो गया। तब वह मकरी भी आहार समझकर प्रसन्नता से जलमध्य में चली गई। तब वह वीरवर क्रोध से उसकी आँतों को ऐंठ कर, तोड़ देने लगा, तो विजृंभित साहस से वह महामकरी उदर में स्थित विषकबल के समान जीर्ण न होने

ता वीरवरुडंत नलुकतो दानि। प्रेवुलु नरमुलु पैनचि त्रेंचुचुनु नडरिन कडकतो नम्महामकरि। कडुपुलोपल विषकबळंबु वोलें नरुगक तिरुगुचु ननलंबु भंगि। जुरुवुच्च दौडगिन स्रुविक यम्मकरि वरुवट्लु वट्टेडु वदनगह्वरमु। तेरचि निल्पुटयु नत्तेरुवुन वच्चि ६७१०

क्रूरनक्र ग्राह घोर प्रवाह। वारि पै बडुटयु वायुनन्दनुडु पैनचि त्रेंचिन दानि प्रेवुलु मुद्द। गौनि वच्चि चेच्चेर गुत्तुक दुरिमें; नालोन मकरियु "नाहार मरुग। बोलदु पौ" म्मनि बुद्धि जिंतिंचि परवश यगुटयु बवननंदनुडु। दरि जेर्चि मकरिनुद्धति व्रच्चि वेडलि कोरि चूडग नौप्पें घोरांधकार। दारुण निर्मुक्त तरुणार्कु पगिदि; ब्रळयारुणोदग्र बडबाग्नि शिखलु। कलय बर्विन नाटि घन पयोराशि करणि नम्मकरि रक्तमुलतो बेरसि। यरुणमै कनुपट्टे नप्पुडासरसि; यंत ना मकरियु नमरियै यमरि। यंतरिक्षमुन नुद्यद्विमानमुन जलदंबु लोपल जपलत मानि। मेलपोंदु तिरमैन मेरपुचंदमुन निलिचि मारुतिचेत निज शापमुक्ति। गलिगिन मुदमंदि कपिमुख्यु जूचि ६७२०

पर, घूमते हुए, (पेट के भीतर) अनल की भाँति जला-देने लगने पर, क़मजोर बन गई। वह मकरी देह के भीतर के धैर्य को खोकर, प्यास की उत्कटता को सहन न कर सक, अधिक सूख जानेवाले वदन रूपी गह्वर को खोलकर रह गई। उस मार्ग से (बाहर) आकर, ।। ६७१० ।।

—क्रूर नक्र-ग्राह घोर-प्रवाह-वारि के ऊपर आ गिरने पर वायुनन्दन ने, ऐंठकर तोड़ दी गई उस (मकरी) की आंतड़ियों का पिंड ले आकर झट से (उसके) गले में ठूँस दिया। इतने में मकरी भी 'संभवतः आहार जीर्ण नहीं हो रहा है' ऐसा मन में विचार कर, परवश (बेहोश) होने पर, पवन नन्दन ने उसे किनारे लगकर, औद्धत्य से मकरी को फाड़कर, घोर-अन्धकार की दारुणता से विनिर्मुक्त तरुणार्क के समान शोभित हुआ। प्रलय-अरुण-उदग्र-बडबाग्नि शिखाओं के परिव्याप्त होने के समय के घन-पयोराशि की भाँति, उस मकरी के रक्त से भरकर, वह सरसी अरुण (लाल) हो दिखाई पड़ी। तब वह मकरी भी अमरी (देवांगना) बन, शोभित हो, अन्तरिक्ष में उद्यत्-विमान में, जलद के भीतर चपलता को छोड़ स्थिर बन विलसित चपला की भाँति खड़ी होकर, मारुति के द्वारा निजशापमुक्ति पाकर, मुदित हो, कपिमुख्य को देख, ।। ६७२० ।।

धान्यमालिनि तन शाप प्रकारमु हनुमंतुनितो देल्पुट

"यो कपिकुंजर! यो वानरेंद्र! । नी कतंबुन शापनिर्मुक्ति गंटिः
नेनिक बोयेद निंद्रलोकमुन । केनु नीकोक वार्त येरिंगिपवलयु"
ननि मुन्नु हनुमंतु ना कोलनिकि । बनिचिन कृतक तापसि जूपि पलिके;
"वानरोत्तम! मुनिवरुडु गाडितडु । वीनि नम्मकुमय्य! वीडु राक्षसुडु
च्चलमुन दानवेश्वरु नियोगमुन । बलियुडै निनु जंप बनिपूनि वच्चि
येनिंदुलो नुन्कि येरिंगि ना चेत । बूनि निन् जंपिप बुत्तेंचिनाडु;
वीडु वध्युडु नीकु वीनि नम्मकुमु । वीडोप्प डिट वीनि वेवेग चंपि
पोम्मौषधमुलकु भुजशक्ति मेरसि । यिम्मुल द्रोणाद्रिकिदे त्रोव नीकुः"
नन विनि हनुमंतुडाश्चर्यमंदि । वनित गनुंगोनि वलनोप्प बलिके
"मदिराक्षि! मुनु नीवु मकरिवै यिपुडु । त्रिदशभामिनिवैन तेरंगेमि ?"
यनिन ६७३०

"विनवय्य! पावनि! वीराग्रगण्य! । कनकाद्रि समधैर्य! गांभीर्यधुर्य!
धान्यमालिनि यन दनरु गन्धर्व । कन्यक; ना पूर्वकथ यरिंगितु;

धान्यमालिनी का अपना शाप विधान हनुमान को बताना

(बोली)—"हे कपिकुंजर! हे वानरेन्द्र! तुम्हारे कारण शाप-निर्मुक्ति पाई है। अब मैं इन्द्रलोक जाऊँगी। मुझे तुम्हें एक बात बतानी है।" (ऐसा) कह, पूर्व में हनुमान को उस सरोवर में भेजने वाले कृतक-तापसी को दिखाकर कहा—"हे वानरोत्तम! यह मुनिवर नहीं है। इसका विश्वास मत करो। यह राक्षस है। हठ से दानवेश्वर के नियोग से बली बन तुम्हें मार डालने के निश्चय से आकर, यहाँ मेरा रहना जानकर, मेरे हाथ तुम्हारा वध कराने के लिए (तुम्हें) भेजा है। यह तुम्हारे लिए वध्य है। इस पर विश्वास मत करो। यह योग्य (चरित्रवाला) नहीं है। यहाँ इसे अति शीघ्र मारकर, भुजशक्ति के प्रदीप्त होने पर औषधों के लिए जाओ। तुम्हारे लिए द्रोणाद्रि का मार्ग मनोज्ञता से यही है।" (ऐसा) कहने पर सुनकर हनुमान ने आश्चर्य-चकित हो, (उस) नारी को देखकर औचित्य से (यों) कहा—"हे मदिराक्षी! पूर्व में तुम मकरी थीं अब त्रिदश-भामिनी होने का विधान क्या है?", ॥ ६७३० ॥

—कहने पर (उसने कहा) —"सुनो हे पावनी! हे वीराग्रगण्य! कनकाद्रिसमधैर्यवाले! गांभीर्यधुर्य! (मैं) धान्यमालिनी नाम से शोभित

नखिल-लोकाराध्युडगु सदाशिवुडु। सुखगोष्ठि रजताद्रि शोभिल्लुचुंड
नरुदार ने बाडि याडि मेप्पिंचि। हरुचेत नसमानमगु विमानंबु
वडसि यिक्कोलनिलोपल जलक्रीड। लेडपक काविप नेगुदेंचुटयु
शांडिल्युडनु मुनि चनुदेंचि नन्नु। निंडिन प्रेमंबु नेलकोन जूचि
यालोन दनलोन नानन्दकेलि। नालोकनालोलुडयि तेलि तेलि
कोनकोनि तूकोन्न कोर्कुल व्रालि। मनसिज ज्वरमुन मानंबु दूलि
"येनु बुण्यात्मुंड; ने दपोधनुड। नेनेड येलनागलेड ? पो" म्मनक
यूनि नन् गामिचुचुन्न कन्नेरिगि। "येनेड? यी वेड? यी दृष्टियेड ?
६७४०

नीवु तपस्विवि—नीवु पुण्युडवु। भाविप निदितपः फल विघ्नकारि"
यन विनि मुनिनाथुडतिकामुडगुचु। ननु जूचि मदिलोनि नान वोविडिचि
"यिदि तप, फलसार मेलनाग! नाकु। निदि पुण्यफलसारमेलनाग ! नाकु:
निदि मोक्षसाधन मेलनाग! नाकु;। निदि स्वर्गसोपानमेलनाग ! नाकु"
ननिन "रजस्वल, नटु गान नेडु। मुनिनाथ! ननु नीकु मुट्टगारादु:

गन्धर्वकन्या हूँ। अपनी पूर्वकथा सुनाती हूँ। अखिल लोकाराध्य सदाशिव के रजताद्रि पर सुखगोष्ठी से शोभित रहते समय, अनुपम रूप से मैंने गाकर-नाचकर प्रसन्न कर, हर से असमान विमान प्राप्त किया (और) इस सरसी में निरन्तर जलक्रीड़ाएं करने के लिए आई। शांडिल्य नामक मुनि (यहाँ) आकर मुझे पूर्ण प्रेम से देखकर, इतने में अपने मन में आनन्दकेलि से आलोकन में मग्न होकर, (मन में) घिरी इच्छा (काम-वासना) के वशीभूत होकर, मनसिज-ज्वर के कारण मान (आत्मगौरव) को खोकर, यह न सोचकर कि, मैं पुण्यात्मा हूँ, मैं तपोधनी हूँ, मैं कहाँ ? सुन्दरियाँ कहाँ ? जाने दो', स्थिरता से (उसके) मेरे उपभोग की इच्छा करने को जानकर, (मैंने कहा)—"मैं कहाँ ? तुम कहाँ ? यह (कु) दृष्टि कहाँ की ? ।। ६७४० ।।

—तुम तपस्वी हो, तुम पुण्यी हो, सोचने पर यह तपःफलविघ्नकारी है।" (ऐसा) कहने पर सुनकर मुनिनाथ ने अति कामुक होते हुए, मुझे देख मान-मर्यादा (आन) को छोड़ देकर, (कहा)—"हे युवती ! यही मेरे लिए तपःफलसार है। हे युवती ! यही मेरे लिए पुण्यफलसार है। हे युवती ! यही मेरे लिए मोक्ष साधन है। हे युवती ! यही मेरे लिए

इम्मूडु दिवसंबु लेनु मीयिट। नेम्मितो वसियिंचि निजशुद्धि वोंद
मरि पोंदु" मनि गंधमादनंबुनकु। नेरि नेगि मुनियिंट निष्ठतो नुंड
दिक्कुलु साधिंचि तिविरि रावणुडु। नक्कोंड सवलुडै या रात्रि विडिसै:
ना पर्वताग्रंबुनंदु ने वाड। ना पाट विनि दशाननुडेगुदेंचि
तन सोंपु दन पेंपु दन प्रतापंबु। दन पेरु नेरिगिंचि तग
बुज्जगिंचि ६७५०

"वनित! नी रूप यौवन विलासमुलु। मुनुमिडि दुदमुट्ट मुट्टवे नन्नु"
ननिन 'बराधीन, नट्टगान नीवु। ननु मुट्टदग" दन्न नरभोजनुंडु
"नरय रजस्वललैन कामिनुलु। वरभामिनुलु सूवे भाम! ना मेच्चु
वनत! ननु गारिपवलदु, र" म्मनुचु। ननु प्रियोक्तुल देल्चि नातो रमिंप
नतिकायुडुदयिंचे नंत ना पुत्रु। नति वेगमुन दानवाग्रणिकिच्चि
दिवसत्रयंबुनु दीरिन पिदप। प्रविमलतनुशुद्धि वाटिंचि येनु
मुनिगणाधीश्वरु मुंदर निलुव। गनुगोनि नायुन्न गति विवेकिंचि,
"ना यिंटिलो नुंडि ननु डागुरिंचि। पोयि नीवेव्वनि वोंदिति प्रीति?

स्वर्ग-सोपान है।" कहने पर (मैंने कहा) —"हे मुनिनाथ! आज मैं रजस्वला हूँ। अतः तुम्हें मेरा स्पर्श नहीं करना चाहिए। ये तीन दिन मैं प्रेम से तुम्हारे घर रहूँगी। निज शुद्धि के पश्चात् मेरा उपभोग करो।" (ऐसा) कह गन्धमादन को जाकर, मुनि के घर निष्ठा से रहते समय, दिशाओं को जीतकर, उल्लसित हो, रावण ससैन्य उस पर्वत पर उस रात को ठहर गया (पड़ाव डाला)। उस पर्वताग्र पर मेरे गाने पर, मेरा गान सुनकर दशानन ने आकर अपनी शोभा, अपना औन्नत्य, अपना प्रताप, अपना नाम जताकर, उचित रूप से फुसलाकर, ॥ ६७५० ॥

—(कहा)—"हे नारी! अपने रूप-यौवन-विलासों की पराकाष्ठा से मेरा स्पर्श करो न।" कहने पर (मैंने कहा) —"(मैं) पराधीन हूँ। अतः तुम्हें मेरा स्पर्श नहीं करना चाहिए।" कहने पर नर-भोजन (करने वाले राक्षस) ने कहा—"हे भामा! सोचने पर रजस्वला कामिनियाँ तथा पर-भामिनियाँ मेरे लिए प्रिय हैं। हे वनिते! मुझे सताओ मत, आओ।" (ऐसा) कहते हुए मुझे प्रिय-युक्तियों से प्रसन्न कर मेरे साथ रमण (संभोग) किया। तो अतिकाय का जन्म हुआ। तब उस पुत्र को अतिवेग से दानवाग्रणी को देकर, दिवस-त्रय के बीत जाने पर, प्रविमल-तनु-शुद्धि प्राप्तकर, मैं मुनि-गणाधीश्वर के समक्ष खड़ी हो गई (तो उन्होंने मुझे) देखकर मेरी स्थिति पर विचार कर (कहा)—"मेरे घर में रहकर, मुझे

निति! नी यौव्वनमॅव्वंडु गोनियॅ? । जितिपकिट्लेल चेसितिवीवु ?
परम परिज्ञान भाव मार्गमुन । नरसि चूचिन नदि यट्टिद कादे
६७६०
परहितमेयूरु ? पडतुलेयूरु ? । गुरुशीलमेयूरु ? कॉम्मलेयूरु ?
जलजाक्षुलेयूरु ? सत्यमेयूरु ? । कलकंठुलेयूरु ? करुण येयूरु ?
वनजाक्षुलेयूरु ? वरुसलेयूरु ? । ननबोडुलेयूरु ? नच्चिकेयूरु ?
तरलाक्षुलेयूरु ? तगवुलेयूरु ? । परिकिंप सतुलकु बासलेयूरु ?
गति दप्प नडचिन कांतल जमुडु । नतिबाधलनु बॅट्टकतडेल मानु ?"
ननि तूल गोपिंचि यम्मुनीश्वरुडु । घनशापमिच्चॅनु गरुण वोविडिचि—
"यी सरोवरमुन नी विलासंबु । गासिगा बडि नीवु ग्राहिवै युंडु
मॅंदुनु गड्डु बुण्यहीनुडै निन्नु । बॉंदिनवाडुनु बुत्रमित्रादि
बलमुलतो गूड भस्ममै पोव । गलडिक नी पातकंबुन" ननुचु
शापमिच्चुटयुनु जलनंबु नॉंदि । या पुण्यनिधि म्रोल हस्तमुल्
मोगिचि ६७७०
"यो मुनिवल्लभ! यो मुनिचंद्र! । यो मुनिसिंहम ! यो मुनिश्रेष्ठ !
यी शाप जलराशि नेतेप गडतु । नी शापदावाग्नि नेनीट नार्तु ?

धोखा देकर, तुम प्रेम से किसके साथ रहीं ? हे नारी ! तुम्हारे यौवन को किसने प्राप्त किया ? सोचे बिना तुमने ऐसा क्यों किया ? परम-परिज्ञान के भाव-मार्ग से विचार कर देखने पर यह ऐसा ही है न ! ॥ ६७६० ॥
—परहित कहाँ ? पड़तियाँ (स्त्रियाँ) कहाँ ? गुरु-शील कहाँ ? नारियाँ कहाँ ? जलजाक्षियाँ कहाँ ? सत्य कहाँ ? कलकंठियाँ कहाँ ? करुणा कहाँ ? वनजाक्षियाँ कहाँ ? रिश्ते-नाते कहाँ ? युवतियाँ कहाँ ? विश्वास कहाँ ? तरलाक्षियाँ कहाँ ? न्याय (औचित्य) कहाँ ? सोचने पर स्त्रियों के वचन का (महत्त्व) कहाँ ? (न्याय की) गति को छोड़ आचरण करने वाली कांताओं को यमराज अधिक कष्ट दिए बिना क्यों रहेगा ?" ऐसा निन्दा कर, क्रुद्ध हो उस मुनीश्वर ने करुणा को छोड़ महान् शाप दिया कि "इस सरोवर में अपने विलास को खोकर, ग्राही (मकरी) बन पड़ी रहो। तुम्हारे साथ जिसने संभोग किया वह इस पातक के कारण आगे अति पुण्यहीन होकर पुत्र, मित्र आदि परिवार के साथ नष्ट हो जाएगा।" (ऐसा) कहकर शाप देने पर विचलित होकर, उस पुण्यनिधि के समक्ष हाथ जोड़कर, ॥ ६७७० ॥
—(मैंने) कहा—"मुनि-वल्लभ ! हे मुनिचन्द्र ! हे मुनिसिंह ! हे मुनि-श्रेष्ठ ! इस शाप-जलराशि को मैं किस नौका के सहारे पार करूँ ? इस

गर्णिपवे दयाकर! नन्नु" ननुचु। नुरुभीतिनोंदुचुनुन्न नन् जूचि
तिरमैन सुज्ञानदृष्टि नूहिंचि। परम कृपामूर्तिपरुडुनै पलिकॆ
"गामिनि! यींक कोंत कालंबुसनग। रामु कार्यार्थमै रानुन्नवाडु
हनुमंतुडिचटिकि; ननतनिचे नीकु। घनशाप निर्मुक्ति गलुगु बो"
म्मनुचु
बोयॆ गंगातीरमुनकु नम्मौनि;। पोयॆ शापं; बेनु बोयॆद निक"
ननि चॆप्पि दीविंचि या सरोजाक्षि। यनिलजु वीड्कोनि यरिगॆ
नद्दिविकि;

कालनेमि हननमु

नॆडपनि कडकतो निटगालनेमि। कड वच्चि निलिचॆ ना
कपिकुलोत्तमुडु;
नप्पुडप्पापात्मुडचलसमाधि। दप्पक युन्नचंदमुन गूर्चुंडि ६७८०
योंडलि पूरंबुतो नुरमॆल्ल विच्चि। नडुमु निक्किंचि याननमॊप्प वंचि
कपट चिंतावृत्ति गन्नुलु मूसि। जपमाल वरुस बूसलु त्रोसि त्रोसि
निक्कंपु जपमुगा नॆरि नोरु गदल। नक्किलि गनुविच्चि हनुमंतु जूचि
"यी युन्न मडुवेड! यी तडवेड!। पोयिन पनि यॆंत! प्रोद्दॆंतवोयॆ!

शाप-दावाग्नि को किस जल से बुझाऊँ? हे दयाकार, मुझ पर करुणा दिखाओ न।" (ऐसा) कहते अधिक भीत होनेवाली मुझे देख, स्थिर बनी ज्ञानदृष्टि से सोचकर, परमकृपामूर्तिपर होकर कहा—"हे कामिनी! कुछ समय बीतने के बाद हनुमान यहाँ राम के कार्यार्थ आनेवाला है। उससे तुम्हें घन-शाप-विनिर्मुक्ति प्राप्त होगी, जाओ।" कहकर वह मुनि गंगा-तीर को गया। शाप दूर हो गया। अब मैं जाऊँगी।" ऐसा कह आसीस कर, वह सरोजाक्षि अनिलज से बिदा लेकर दिवि को गई।

कालनेमि का हनन

—अचंचल प्रयत्न से कालनेमि के पास आकर वह कपिकुलोत्तम खड़ा रह गया। तब वह पापात्मा अचल समाधि में स्थिरता से रहने के समान बैठकर॥ ६७८०॥

—कुम्भक-क्रिया से छाती फुलाकर, कमर को सीधीकर, आनन को शोभा से फुलाकर, कपट-चिन्तावृत्ति से आँखें मूंदकर, जपमाला को फेरने के समान मन को सरकाते हुए, सच्चे जप के समान मुंह (जीभ) हिलाते बैठा रहा। आँखें खोलकर, हनुमान को देख (कहा)—"वह तालाब कहाँ? यह देरी

नीलसि नी मदिलोन नुपदेश वांछ । गलदेनि गुरुपूज गलदे येमैन
माकिप्पु" डनवुडु मारुतात्मजुडु । "नीकिदे गुरुपूज ! नेम्मि
गोम्म" नुचु
ब्रथन निष्ठुरुडु निर्भर वृत्ति वानि । पृथुबाहु मध्यंबुन बिडिकिट
बोडिचे;
नक्षणंबुन दैत्युडारूपमुडिगि । पक्षियै रणवीथि बावनि गदिसे:
गदियुटयुनु बट्टि कडिमि दीपिप । जदिपि रेक्कलु रेंडु सरि द्रुंचिवैचे
ना रूपमुडिगि मायाशक्ति मेरसि । धीरसिंहाकृति दिविरि लंघंचि
६७९०
गर्जिचि दष्ट्रल गडुनुग्रुडगुचु । दर्जिचि रणवीथि दर्पिचे नसुर;
यलयक हनुमंतुडक्कालनेमि । तल बिट्टुवगुल नुद्धत मुष्टि बोडिचे
बोडिचिन ना रूपु वोनिच्चि यसुर । कडगि सुग्रीवुडै कदिय नेतेंचि
"यिदि येमि ? मारुति! यिचट नेमिटिक? । बदपद ! लक्ष्मणु
प्राणमुल् वच्चे;
दौलगक नीविक द्रोणाद्रि करुग । वल: दौषधंबुलु वलदिक मनकु"

क्यों ? काम ही क्या (बड़ा) था ? कितना समय बीत गया ? यदि तुम्हारे मन में उपदेश की वांछा है तो हमारे लिए अब गुरुपूजा (की व्यवस्था) है क्या ?" ऐसा कहने पर मारुतात्मज ने कहा—"तुम्हारे लिए यही गुरुपूजा है। प्रेम से ले लो।" कहते हुए प्रथननिष्ठुर (युद्ध में भयंकर) (हनुमान ने) निर्भर-वृत्ति (दुर्निवार रूप) से उसके पृथु बाहुमध्य में मुष्टि से प्रहार किया। उसी क्षण दैत्य ने उस रूप को तजकर, पक्षी बन रणवीथि में पावनी का सामना किया। सामना करने पर साहस के दीप्त होने पर, (उसे) दबाकर दोनों पंख तोड़ दिए। उस रूप को छोड़, मायाशक्ति से प्रकाशित हो, धीर-सिंहाकृति को धारणकर, लांघकर, ॥ ६७९० ॥

—गरज कर, द्रष्टाओं के साथ अधिक उग्र बनते हुए, फटकारते हुए, असुर दर्प दिखाने लगा। न थककर हनुमान ने उस कालनेमि का सिर फट जाए ऐसा उद्धतमुष्टि से प्रहार किया। प्रहार करने पर, उस रूप को छोड़कर, असुर सयत्न सुग्रीव बनकर, नियराकर (बोला) —"यह क्या मारुती ! यहाँ क्यों (ठहरे हो) ? चलो चलो, लक्ष्मण के प्राण आ गए हैं। अब तुम्हें द्रोणाद्रि जाना नहीं है, हमें औषधों की आवश्यकता नहीं है।" ऐसा कहने पर, हनुमान ने उसे सुग्रीव मानकर, फिर नहीं है, ऐसा

ननवुडु हनुमंतुडतनि सुग्रीवु । डनि चूचि तेलिसि काडनि निश्चयिंचि
मलिगि राक्षसुनुरमदरंट व्रेय । निल गूलि मूर्छिल्लि यितलो देलिसि
यतडुनु शतशृंगुडै विल्लु दाल्चि । यतिशात शरमुल नडरि नोंप्पिप
मुष्टिघट्टनमुल मोगि बादहतुल । नष्टसत्त्वुनि जेसि नलि जिक्कुवरचि
यमितसत्त्वक्रीड नवलील दिगिचि । कमलनाळमु द्रेंचु गंधसिधुरमु ६८००

परुसुन राक्षसप्रवरु मस्तकमु । देरलिचि वेस नुल्चि त्रेंचिपोवैचि
नलि नेचि वेस सिंहनादंबु सेसि । तोलगक मारुति द्रोणाद्रि करिगि
नरिगि या गिरिमीद नौषधलतलु । परिकिंचि परिकिंचि पवननंदनुडु
बहुदिव्यलतिका-विभा-भासमान । महिमयु निर्मलमणिगण-प्रभल
दीपवृक्षंबुल दीप्तुलु र्बवि । दीपिंचु नक्कोंड द्रिम्मरि चूचि
"हितपुष्पगंधंबु लिवे लत" लनुचु । नतडु दग्गरि पोव नवि डागिपोयें;
नंत ना हनुमंतुडंतरंगमुन । जिंतिचि संतापचित्तुडै पलिकें;
"नो पर्वताधीश! यो यद्रिराज ! । यो पुण्यवर्तन ! यो गिरिचंद्र !
यनघुंडु रघुरामुडौषधंबुलकु । बनिचिन वच्चिति बनिपूनि येनु

निश्चयकर, क्रुद्ध हो, राक्षस के वक्ष पर मर्मातक प्रहार किया तो धरती पर गिरकर, मूर्च्छित हो, इतने में (शीघ्र) होश में आकर, वह भी शतशृंगवाला होकर, धनुष धारण कर, अति-शात (-निशित) -शरों से विजृंभित हो, सताने पर, मुष्टिघट्टनों से क्रम से, पादहतियों (लातों) से नष्ट-सत्त्व (कमज़ोर) कर, उलझाकर, अमित-सत्त्व की क्रीड़ा से सरलता से पकड़, कमल-नाल को तोड़ देनेवाले गन्धसिन्धुर (मत्त गज) ।। ६८०० ।।

—के समान, राक्षस-प्रवर के कण्ठ को ऐंठकर, तोड़कर फेंक दिया (और) विजृंभित हो, सिंहनाद कर, अविलम्ब मारुति द्रोणाद्रि गया । जाकर, उस गिरि पर औषधलताओं का परिशीलन करके पवननन्दन के बहु दिव्य-लतिका-विभा से भासमान महिमा (तथा) निर्मल मणिगण प्रभाओंवाले दीपवृक्षों की दीप्तियों से परिव्याप्त उस पर्वत पर घूम-घूमकर, 'हित-पुष्प-गन्ध यही है, (वे) लताएँ ये ही हैं' ऐसा कहकर निकट जाने पर वे छिप जाते । तब हनुमान ने अन्तरंग से चिन्तित हो, संतप्त चित्तवाला हो कहा—"हे पर्वताधीश ! हे अद्रिराज ! हे पुण्यवर्तन (वाले) ! हे गिरिचन्द्र ! अनघ रघुराम के औषधियों के लिए भेजने पर, उस कार्य से

निखिलोकमुलकु हितवैन पनिकि । नन्नेल वंचिप नगराज ! नीकु ?
नडरि नीयंदुन्न यौषधलतलु । पौडसूपु : वेवेग बो बनि गलदु;
इम्मुल निदि लोकहित कार्यमगुट । मिम्मु वेडेद मीरु मी प्रभावमुलु
दीपिंपुडी योषधीलतलार ! । चूपडी नाकु मी सुरुचिराकृतुल"
ननि पल्क वंचन नपुडु तेजमुलु । पौनुपड दनकवि पोडसूपकुन्न
"नगकुलोत्तम! नीवु ना राक सूचि । तगु प्रियंबौनरिप दग दूरकुनिकि"
ननि तन्नु ब्रार्थिचि यड्गुचुनुन्न । तनकु नौषधमुलु धरणीधरंबु
चूपकुंडुटयुनु जूचि येंतेनि । गोपिचि वानरकुल-वज्रपाणि
"येनेंत वेडिन नेल नी मनसु । नानदु नायेड नगकुलाधमुड !
तलकौनि ड्रालकु दयगलुगमन्न । गलुगुने गुणशून्य कठिनमूर्तुलकु"
ननि युग्रकोपाग्नुलंगरोममुल । गनदग्निकीललै क्रम्मनंदंद
रामुतो नेंदिरिन रावणाचलमु । नी मैयि बेरुकुदु निक ननुमाड्कि
दशयोजनमुल विस्तारंबु बंच । दशयोजनोन्नतत्वंबुनु गलुगु
नाभीलतर शैल मवलील बेरिकें । भूभागमगल नभोभागमद्रुव;

मैं आया हूँ। हे नगराज ! सभी लोकों का हित करनेवाले इस कार्य के लिए मुझे धोखे में क्यों डाल देते हो ? ।। ६८१० ।।
औन्नत्य से तुममें स्थित औषध-लताओं को दिखा दो। अतिशीघ्र जाने का कार्य है। इस (कार्य) के प्रेम से, लोकहित कार्य होने से, तुम से निवेदन कर रहा हूँ। हे औषधी-लताओ ! तुम अपने-अपने प्रभावों से दीप्त हो जाओ। मुझे अपनी सुरुचिराकृतियाँ दिखा दो।" ऐसा कहने पर धोखे से, तेज के दीप्त होने पर, उनके अपने को दिखाई न पड़ने पर (फिर कहा) —"हे नगकुलोत्तम ! मेरे आगमन को देखकर उचित प्रिय (कार्य) किए बिना चुप रहना ठीक नहीं है।" ऐसा प्रार्थना कर मांगने पर भी, अपने को धरणीधर के औषधियाँ न दिखाने पर अत्यधिक क्रुद्ध हो वानरकुल-वज्रपाणि ने (कहा) —"हे नगकुलाधम ! मैं कितना भी विनय करूँ तुम्हारा मन मेरे प्रति क्यों नहीं पसीजता ? गुणशून्य-कठिनमूर्ति शिलाओं में कहीं दया उत्पन्न होगी ?" (ऐसा) सोच अंग के रोम-रोम से उग्र-कोपाग्नियों के, बलती अग्नि की कीलाओं के समान, सर्वत्र व्याप्त होने पर, ।। ६८२० ।।
—मानों यह कहते कि राम का सामना करनेवाले रावण रूपी अचल को इस प्रकार उखाड़ दूंगा, दस योजन विस्तार और पंचदशयोजन औन्नत्य से युक्त आभीलतर शैल को सरलता से उखाड़ा, जिससे भूभाग और नभोभाग विदीर्ण हो गए।

चित्रसेनादुलु हनुम नड्डगिंचुट

नपुडागिरि सुरेंद्रुननुमति गाचु। तपनतेजुलु त्रयोदशकोटि संख्य
गल चित्रसेनादि गंधर्वपतुलु। बलशौर्यमुलु मीर बावनि जूचि
"यिदि दिव्यगणवास मिदि मेरुतुल्य। मिदि जगज्जीवनं; बिदि नीकु वलदु
नीकिदि दक्कदु, नेरि डिंचि पोम्मु। पोकुन्न ब्राणमुल् पोकुंड" वनुडु
गदनोग्रसमवर्ति कपिवीरुडलिगि। वदलनि कडिमिमै वारि वीक्षिंचि
बंधुरंबगु वालपाशंबुतोड। बंधिंचि बंधिंचि बलुविडि द्रिप्पि
यलुकमै गोंदर नब्धिलो वैचे। नलुकमै गोंदर नडरि कारिंचे ६८३०
नलुकमै गोंदर नदरंट व्रेसे। नलुकमै गोंदर नवनिपै गूल्चे;
ना महावीरुनुद्धति शक्ति जूचि। सोमिपरादनि स्रुक्कि केल् मोगिचि
"यो कपिकुंजर! यो वानरेंद्र!। यी कोंड गोनियेगु मेलमितो नीवु"
अनि वायुनंदनु नर्थिदीविंचि। विनुतिंचि गंधर्ववीरुलु दोलग
नधिकसत्त्वंबुन ननिलनंदनुडु। कुधरंबु बिट्टेत्तुकोनि मिंटि केगसि

चित्रसेनादियों का हनुमान को रोकना

तब सुरेन्द्र की अनुमति से उस गिरि की रक्षा करनेवाले तपन तेज (सूर्य तेज वाले) (और) त्रयोदशकोटि संख्या वाले चित्रसेन आदि गन्धर्वपति, बलशौर्यों के उभरने पर पावनी को देख (बोले) —"यह (पर्वत) दिव्यगणवास है, यह मेरुतुल्य है। यह जगज्जीवन है। यह तुम्हें नहीं चाहिए। तुम्हें यह प्राप्त नहीं होगा। उतार कर जाओ। नहीं तो प्राण नहीं बचेंगे।" कहने पर कदन में उग्र-समवर्ती सम कपिवीर ने क्रुद्ध हो अचंचल साहस से उन्हें देख, बंधुर वालपाश से (उन्हें) बाँध-बाँधकर बरज़ोरी घुमाकर, क्रोध से कुछ को अब्धि में डाल दिया, क्रोध से कुछ को खूब सताया, ॥ ६८३० ॥
—क्रोध से कुछ पर मर्मांतक प्रहार किए, क्रोध से कुछ को धरती पर गिरा दिया। उस महावीर की उद्धत शक्ति को देख, (इसे) जीता नहीं जा सकता, ऐसा (सोच और) कमजोर बन, (गन्धर्वों ने) हाथ जोड़ (कहा) —"हे कपिकुंजर! हे वानरेन्द्र! तुम इस पर्वत को लेकर मनोज्ञता से जाओ।" ऐसा वायुनन्दन को प्रेम से आसीस कर, विनुति (स्तुति) कर गन्धर्ववीर हट गए। (तो) अधिकसत्त्व से अनिलनन्दन ने कुधर को बलपूर्वक उठाकर, आकाश में उड़कर, अतिवेग से, भयंकर वृत्ति के दीख

कड़ुवेगमुन भयंकर वृत्ति दोप । नडरि जितारातियै सोंपु मिगिलि

भरतुनि स्वप्नमु

भूचर खेचराद्भुतवेगुडगुचु । नाचंदमुन बोवना मध्यरात्रि
भामित्र-मित्रुलु भरतु स्वप्नमुन । रामसौमित्रुलु रणमध्यमुननु
दलनूनियलतोड दनुवुलु डस्सि । बलहीनुलै क्रुस्सि पंकमध्यमुन
बडि पलविंचुचु बहुरोदनंबु । लुडुगक काविंचुचुन्न बिट्टुलिकि ६८४०
भरतुंडु मेल्कनि पापंपु गलकु । बरितपिंचुचु वैलुपलिकि नेतेंचि
कललोन रामलक्ष्मणुलुन्न तॆरगु । दलपोसि तलपोसि तलकुचुनुंड
दौडगि दानिकि दोडु दुर्निमित्तमुलु । गडगि पेंक्कुलु दोपगा भीतिनोंदि
"यिदि येमि पापमो! यिदि तॆरगों! ।यिदियिंक निटमीदनेमिगागलदो!
राम सौमित्रु लरण्यमध्यमुन । नेमैरो ! जानकि येमैनयदियो!
येन्नंग बदुनालुगेंड्लुनु निडु । चुन्नवि विनगरादोक वार्तयैन;
ना सत्यधनुलकु नायुदारुलकु । ना सदाचारुलकाकृतार्थुलकु
ने कीडु गाकुंड नेनु ना सुकृत । पाकमिच्चिचति" ननि भरतुंडु पलिकि

पड़ने पर, विजृंभित हो जित-आराति (विजित शत्रुओं वाला) होता हुआ, शोभा की अधिकता से,

भरत का स्वप्न

—भूचर (तथा) खेचरों के लिए अद्भुत वेग वाला होता हुआ उस प्रकार जा रहा था। उस मध्य रात्रि के समय, भरत को स्वप्न में भामित्र (सूर्य)-मित्र राम और सौमित्र रणमध्य में सिर पर तेल लगाए हुए, शरीरों से थककर, बलहीन बन, दबकर पंकमध्य में पड़े, निरन्तर बहुरोदन करते हुए दिखाई पड़े, तो अधिक चौंककर, ।। ६८४० ।।

—भरत जागकर दुःस्वप्न के लिए परिताप करते हुए, बाहर आकर, स्वप्न में राम-लक्ष्मण के विधान के बारे में सोच-सोचकर व्याकुल होता रहा। लगकर उसके साथ अनेक दुश्शकुनों के दिखाई पड़ने पर, भीत होकर, यह कह कि "यह कैसा पाप है! यह कैसा विधान है! अब आगे यहाँ क्या होने वाला है! पता नहीं अरण्यमध्य में रामलक्ष्मणों का क्या हुआ! जानकी का क्या हुआ! गणना करने पर चौदह वर्ष पूरे होने को आ रहे हैं, एक भी समाचार (उनके बारे में) सुनने में नहीं आया है। उन सत्यघनों का, उन उदार (पुरुषों) का, उन सदाचार (-सम्पन्नों) का, उन कृतार्थों का कोई अनभला न हो, ऐसा मैंने अपना सुकृत-पाक (पुण्यफल)

भाविंचि वेदतत्परुल भूसुरुल । वेवेग राविंचि वेदोक्तयुक्ति
सकलदानंबुल सकलधर्ममुल । सकलहोमंबुल शांति सेयिंचॆ
६८५०

नालोन हनुमंतुडाकाशवीथि । नालोल बालर्कुंडै वच्चि वच्चि
बलिसिन निष्ठतो भरतेशुडुन्न । पौलुचु नंदिग्रामपुरि जेर वच्चि
घन जटाभार वल्कलमुलतोड । घनघनश्यामुडै कमलाप्तकुलुडु
भरतुडारघुरामु भंगि दोचुटयु । गरमद्भुतंबंदि कपिमुख्युडपुडु
"सौमित्रि मृतुडैन जानकि डिंचि । रामुडॊक्कडिट्टु राबोलु"
"नडुगुदुनो" यंचु "नडुग बॊं" म्मनुचु । गडकतो दलपोसि
कपिकुलोत्तमुडु
"शरणागत त्राण सद्धर्म निरतु । डरयंग रघुरामुडभिरामुडु
तन सूनृतमु डिंचि तन पेरु डिंचि । तन कुलसति डिंचि तन
तम्मु डिंचि
यंगद सुग्रीवुलादिगा प्लवग । पुंगवकोटुल वोरिलो डिंचि
मॊनसि रावणु प्राणमुलतोड डिंचि । तन मेनु दॆच्चुने दशरथात्मजुडु?
६८६०

दे दिया है।" ऐसा भरत ने कहकर, सोचकर वेदतत्पर भूसुरों को अतिशीघ्र बुलाकर वेदोक्त-युक्ति (-विधान) से सकल दान, सकल धर्म (कृत्य), सकल होम (आदि) शान्ति (कर्म) कराए ॥ ६८५० ॥

—इतने में हनुमान आकाश-वीथि से आलोल (चंचल) -बालार्क (बाल सूर्य) के सम आ-आकर, दृढ़ निष्ठा से भरतेश जिस गाँव में शोभा से थे, उस नन्दिग्राम-पुरी आ पहुँचा, घन जटाभार-वल्कलों के साथ (तथा) घनाघन-श्याम हो कमलाप्तकुलवाले भरत का रघुराम की भाँति दिखाई पड़ने पर, अति चकित हो कपिमुख्य ने (सोचा) —"सौमित्र के मृत होने पर, जानकी को छोड़कर अकेला राम इधर कैसे आ सका।" (यह सोच कि) 'पूछूँ', फिर 'नहीं पूछूँगा' ऐसा धैर्य से सोचकर कपिकुलोत्तम ने (फिर सोचा) —"सोचने पर रघुराम शरणागत-त्राण-सद्धर्म-निरत है, अभिराम बलवाला है। अपने सूनृत (सत्य) को छोड़, अपने नाम (यश) को छोड़, अपनी कुलसती को छोड़, अपने अनुज को छोड़, अंगद-सुग्रीव आदि प्लवग-पुंगव-कोटियों (-समूहों) को युद्ध में छोड़, रावण को प्राणों के साथ छोड़, दशरथात्मज अपने शरीर को (यहाँ) लाएगा ? ॥ ८६६० ॥

मानव सामान्य मति जेसि रामु । ने नेल चूचिति नी पिन्न चूपु?
औलसि रामुनि बोलु नोक तपोधनुडु । कलिगिनाडितिय काबोलु" ननुचु
नतिवेगमुन लंक करिगेडु त्रोव । नतुल बलोदात्तुडै पोव बोव
गलगन्न भरतुडाकशंबु जूचि । यलघुडै चनुचुन्न हनुमंतु गांचि
"यिटु तोपनेलोको! यी दुर्ग्रहंबु ? । पटु बाणमुल दीनि बडनेयवलयु"
ननि शरचापंबुलाटोपमोप्प । घनसत्त्वुडप्पुडु कैकोन्न जूचि
काकुत्स्थतिलकु डाकर्णिचुकोलदि। नाकाशमुन नोक्क यशरीरि वलिकै
"नितनिदिक्कुन नीवु हितबुद्धि सेयु; । मीतडु मी बंधु: डीवलगलव;"
दनि योप्प बलिकिन यशरीरिपलकु ।विनि शरचापमुल् विडिचेना घनुडु
अंतना हनुमंतुडंबोधि गदिय । नंतलो राक्षसुलक्षीण बलुल ६८७०

माल्यवंतुडु हनुमंतुनितो बोरुट

नुदित बलोदग्रु लुग्रविक्रमुलु । पदिवेलकोटुलु बलिसि तन् गोलुव
रावणु पनुपुन रण जयस्फुरण । वाविरि नम्माल्यवंतुडु वच्चि

—मानव-सामान्य (साधारण मानव के समान) मति (बुद्धि) वाला मानकर मैंने राम को ऐसी छोटी नज़र से क्यों देखा ? संभवत: राम से मिलता-जुलता कोई दूसरा तपोधनी हुआ है। ऐसा ही है।" (ऐसा) सोचते हुए अतिवेग से लंका के मार्ग पर अतुल-बलोदात्त हो जाते रहने पर, स्वप्न से जागे भरत ने आकाश की ओर देख, अलघु हो जाते हुए हनुमान को देख, यह सोचा कि "न जाने यह दुष्टग्रह ऐसा क्यों दिखाई पड़ा ? पटु बाणों से इसे गिरा देना चाहिए।" आटोप के बढ़ने पर शर-चापों को उस घनसत्त्व वाले (भरत) को (हाथ में) लेते देख, काकुत्स्थकुल-तिलक सुने ऐसी एक अशरीरी (आकाशवाणी) आकाश से बोली —"इसकी ओर तुम हित-बुद्धि करो (मित्रभाव रखो)। यह तुम्हारा बन्धु (हितू) है, तुम क्रुद्ध मत बनो। ऐसा शोभा से कही गई अशरीरी के वचनों को सुनकर, उस महान् ने शरचाप छोड़ दिए। तब उस हनुमान के अंबोधि के निकट आने पर अक्षीण बल वाले राक्षस, ।। ६८७० ।।

माल्यवन्त का हनुमान से जूझना

जो उदित बलोदग्र थे, उग्रविक्रमवाले थे, ऐसे दस हज़ार करोड़ (राक्षसों) के दृढ़ता से सेवाएँ करते रहने पर, रावण के आदेश से, रण

ब्रदल नेदुर्पडि जलधिमध्यमुन । बोदिवि या हनुमंतु बोनीक कदिसॆ
गदिसिन नक्कोंड घनबाहुशक्ति । बदिलंबुगा बट्टि पवननंदनुड्ु
दाकिन, भुजबलदर्पमुल् मेरय । वीकतो राक्षसवीरुलु गदिसि
परशु तोमर चक्र पट्टिस प्रास । करवाल शूल मुद्गर भिंडिवाल
ततुल नोंप्पिप, नुद्धति बॆच्चु पेरिगि । यतुल विक्रमदक्षुडवि लॆक्कगोनक
यमरुलच्चॆरुवंद ननिलनंदनुड्ु । समरलीलाभील चट्टुल वालमुन
गडकतो नोंडिसि राक्षसवीरवरुल । वडि बट्टि चुट्टि यव्वनधिलो वैचॆ;
भंजिचॆ गोंदऱ बट्टुवालहतुल । भंजिचॆ गोंदऱ बरुषोग्रदृष्टि; ६८८०
गोंदऱ बडद्रोसॆ गोंदऱ व्रेसॆ । गोंदऱ गारिचॆ गोंदर नोंचॆ;
नंत रोषायत्तुडै माल्यवंतु । डंतकाकारुडै हनुमंतुमीद
नॆनय बाणमुलु वेयेसि येयुटयु । धनवालमुन वानि खंडिचि वैचि
यलुक विल् विऱिचि यल्लट्टु पाऱवैचि । बलुतोकचे गाळ्ळु बंधिचि येत्ति
वडि वैचुटयु माल्यवंतुंडु मगुडि । पोंडिचॆ नम्मारुतपुत्त्रु शूलमुन;
नदि लॆक्कसेयक यतडुन्न जूचि । यदरुलु सॆदरंग नत्युग्रशक्ति
नुरमु नोंप्पिचिन नुरुशोणितंबु । लुरुवडि दोरुगंग नोक्किकत निलिचि

में जय-स्फुरण (संभावना) से क्रम से माल्यवंत आकर, आकाश में सामना कर, जलधिमध्य में पकड़, उस हनुमान को जाने न देकर जकड़ लिया। निकट आने पर, उस पर्वत को घन बाहुशक्ति से सावधानी से पकड़ लेकर पवननन्दन ने सामना किया। राक्षसवीरों ने भुजबल-दर्प से प्रकाशित होने पर साहस से नियराकर, परशु, तोमर. चक्र, पट्टिस, प्रास, करवाल, शूल, मुद्गर, भिंडिवाल (आदि के) समूह से पीड़ित करने पर, औद्धत्य से बढ़कर, अतुल-विक्रम-में दक्ष (हनुमान) ने उनकी परवाह न कर, अमर चकित हो जाएँ ऐसा अनिलनन्दन ने समरलीला-आभील-चट्टुलवाल से सप्रयत्न राक्षस वीरवरों को झट पकड़-बाँध उस वनधि में डाल दिया। कुछ को पद-ताड़नों से मार डाला, कुछ को भयदनादों से मार डाला, ॥ ६८८० ॥

—कुछ को पट्टु-वाल-हतियों से मार डाला, कुछ को परुष-उग्र-दृष्टि से मार डाला, कुछ को ढकेल गिरा दिया, कुछ पर प्रहार किए. कुछ को व्याकुल किया, कुछ को दबा दिया। तब माल्यवन्त ने रोषायत्त बन, अंतक सम आकारवाला होता हुआ, हनुमान पर हजारों बाण चलाए। (हनुमान ने) घन-वाल से उनका खंडन कर, क्रोध से धनुष तोड़ देकर, उधर फेंक देकर, बली पूँछ से चरण बाँधकर, उठाकर, झट पटक दिया। माल्यवान

यलुकतो गपिवीरुडसमुन वानि । तल दाचि चनि वियत्तलमुन निलिचे
दलकोनि दिविजुलु तललूचि पोगड । दलदन्नुटयु वानि तल बिट्टु
वगिलि ६८९०
योलि गीलालंबुलोलुक लोदारि । यालोन मूर्छिलिल यंतलो देलिसि
"कदनरंगमुन निग्गद गदा नीकु । दुद" यंचु गद यल्लकतो बिट्टु वैचि
तडयक यदि ताकु तरि मंटलेगय । वडि जूचि यम्मालयवंतुडिट्लनिये
"नोरि वानरुड! यी युदधिलो नद्रि। बोरन बडवैचि पो निन्नु जंप;
मौनसेसि तोलिल समुद्रमध्यमुन । विनतात्मजुनि नेक्कि विष्णुंडुवच्चि
नातोड युद्धंबु नलि जेसि चेसि । भीतुडै चालक पेनुपेदि पोडे ?
लोकंबुलेरुगु नुल्लोकमीकडिमि; । नी कोर्वंगाराडु नेरु बोर नन्नु"
ननवुडु हनुमंतुडामाल्यवंतु । गनुगोनि पलिकें नुत्कटकोपुडगुचु
"युद्धमध्यमुन महोद्धति मेरसि । वृद्धराक्षस ! नीवु वेरवक नन्नु
गदिय नेव्वड" वनि कदियु नव्वीरु । मदभाषलकु नलिग माल्यवंतुडु
६९००

ने फिर उस मारुत-पुत्र को शूल से मारा। उसकी परवाह न कर, उसके स्थान को देखकर, मर्मातक रूप से अत्युग्रशक्ति से उर को पीड़ित करने पर, बरबस उरु-शोणित के प्रवाहित होने पर, थोड़ी देर खड़े रहकर, क्रोध से कपिवीर रोष से उसके सिर पर प्रहार कर जा, वियत्तल में खड़ा रहा। चाहकर दिविजों के सिर हिलाकर प्रशंसा करने पर, सिर पर लात मारने से उसका सिर अधिक फूटकर, ॥ ६८९० ॥

—क्रम से रक्त-प्रवाह के झरने पर, गिरकर उतने में मूर्च्छित हो, उतने में होश में आकर, यह कह कि 'कदनरंग में यह गदा ही तो तुम्हारा अन्त कर देगा न ?", गदा से अधिक क्रोध से प्रहार किया। अविलम्ब उसके लगने पर, ज्वालाओं के फूट पड़ते देख उस माल्यवान ने यों कहा—"रे वानर ! इस उदधि में झट अद्रि को डाल चला जा। (तब) तुझे नहीं मारूँगा। पूर्व में समुद्र-मध्य में विनतात्मज (गरुड़) पर आरूढ़ हो विष्णु आकर मेरे साथ युद्ध करके, भीत होकर शोभा खोकर चला नहीं गया था ? (इसे) लोक जानते हैं। मेरा साहस अलौकिक है। मेरे साथ तुम युद्ध नहीं कर सकते।" ऐसा कहने पर हनुमान ने उस माल्यवान को देखकर उत्कट कोप से कहा—"हे वृद्ध राक्षस ! युद्धमध्य महा-उद्धति से दीप्त हो निर्भीकता से मेरे साथ जूझने के लिए (तुम्हारी) बिसात ही क्या है ?" (ऐसा) कहते निकट आने वाले उस वीर के मद-वचनों से क्रुद्ध हो माल्यवान के, ॥ ६९०० ॥

घन चंद्रहासोग्रखड्ग मंकिंचि । हनुमंतु वक्षमुद्धति शक्ति वैव
नदि वज्रनिभकायुडगु नांजनेयु । विदितंबुगा दाकि वेंस बेल्लु
विर्रिगें;
ननिलजुडाखड्गहतिकिंत नोंच्चि । किनिसि निशाचरु गिट्टि
बिट्टलिगि
भूतभयंकराद्भुतवालमेत्ति । यातनि मेंड जुट्टि यलुकतो बट्टि
चेंलगि याकसमुन जिरजिर द्रिप्पि । यलघुविक्रमशीलुडब्धिलो वैचें;
वैचिन बडि माल्यवंतुडात्रोव । वे चनि पाताळ विवरंबु जोंच्चें
हतशेषराक्षसुलन्निदिक्कुलकु । धृतिदूलि पररचिरि दिविजुलुप्पोंग
गोंडंत गेंलुपुतो गोंडंतो नमर । मंडलि वोंगड धीमंडनुंडरिगें;

श्रीरामुडु लक्ष्मणुनिकै परितपिंचुट

बर्वंतदीप्ति प्रभातविभ्रांति । बर्विन भीतिमै भानुवंशजुडु
समर-लक्ष्मी-रति-श्रम निद्र नोंदु । क्रममुन जेंलुवुडै रणशय्यनुन्न
६९१०
तम्मुनि गनुगोंनि "तम्मुडा! नीवु । तम्मुडवैयुंड दपमूननैति;
निल जीवुलकु नेंल्ल निर्देवेगें ब्रोद्दु । पोंलुपेदि ना पालि प्रोद्दस्तमिंचें

—घन चन्द्रहास को उग्रता से चमकाकर, हनुमान के वक्ष पर उद्धत शक्ति से डालने पर, वह वज्रनिभ कायावाले आजनेय से लगकर झट टूट गया। उस खड्ग-प्रहार से अनिलज थोड़ा पीड़ित होकर क्रुद्ध हो निशाचर के निकट जाकर, अधिक क्रोध से, भूत-भयंकर-अद्भुत-वाले को उठाकर, उसके कंठ से लपेट कर, क्रोध से पकड़, विजृंभित हो, आकाश में (उसे) घुमा-घुमाकर, अलघुविक्रमशीलवाले ने अब्धि में डाल दिया। डालने पर गिरकर माल्यवान उसी मार्ग से झट जा पाताल-विवर में प्रविष्ट हुआ। हतशेषराक्षस, धृति खोकर सभी दिशाओं में भाग गए जिससे दिविज फूल उठे। पर्वत-सम विजय के साथ (तथा) पर्वत के साथ अमर-मंडली के प्रशंसा करने पर धीमंडन चला गया।

श्रीराम का लक्ष्मण के लिए परिताप करना

—पर्वत की दीप्ति से प्रभात होने की विभ्रांति के परिव्याप्त होने पर, भय से, भानुवंशज (राम) ने समर-लक्ष्मी-रति-श्रान्त हो सोए हुए (व्यक्ति) के समान शोभा से रण-शय्या पर स्थित, ॥ ६९१० ॥

—अनुज को देखकर (कहा) —"हे अनुज ! तुम्हारे जैसे अनुज के रहते मैं तप की निष्ठा नही ले सका। यह देखो, संसार के समस्त जीवों के

नरिमुरि नडविलो नालि गोलपडिति। नेंडय नेडाजिलो निन्नु गोलपडिति;
गेंडनाकुनैन दुष्कीर्तिपंकंबु। गडुग दिक्केव्वरु गलरु सौमित्रि !
मानपयोनिधि महनीयशीलु। ना नोचि कन्न युन्नतपुण्यशीलु
नेनु नीचे नम्मि यिच्चिन नकट ! । कानल गौनिपोयि कडतेर्चितन्न !
ये नेमि चेयुदु निटमीद' नन्न। नेनु सुमित्रतो नेमन नेर्तु ?
दुदि बोयि भरतशत्रुघ्नुलु नन्नु। गदिय नेतेंचि 'लक्ष्मणुडेडि' यनिन
नेमनि चेंप्पुदु ? नेमनि पोदु। ना मुखंबुननु दैन्यमु दोप निंक ?
देनिकि जिंतिप; देनिकि वगव। नेनु जिंतिचेंद निनु दीर्घचित; ६९२०
खलुडैन रावणुगतुलकु जेसि। तलपोसि मदि रोसि तमयन्न बासि
हितभृत्यवृत्तिमैं नी विभीषणुडु। चतुरुडै ननु वच्चि शरणंबु सोच्चें
जौच्चिन ब्रोति 'रक्षराज्यमेल्ल। निच्चिति नीं' कनि ये नूरडिंचि
पट्टंबु गट्टिति ब्रतिनतो, बलुकु। नेंट्टन निडिप नेर्पुलेदय्यें;
निदें वेगुचुनु वच्चें; निंक लक्ष्मणुडु। ब्रदुकडु नाकिक ब्राणमुल् वलदु;

लिए दिन निकल रहा है, शोभा रहित हो मेरे लिए दिन ढल रहा है। जल्दबाजी में वन में पत्नी को खो बैठा, आज युद्ध में तुम्हें खो दिया। हे सौमित्र ! मुझे संप्राप्त दुष्कीर्ति रूपी पंक को धो डालने के लिए मेरा कौन है ? माता सुमित्रा मुझे देखकर कहे कि 'मान-पयोनिधि, महनीय शीलवाले, तपस्या कर प्राप्त किए उन्नतपुण्यशीलवाले (लक्ष्मण) को तुम पर भरोसा रखकर (छोड़) दिया है। हे तात ! काननों में ले जाकर उसका काम तमाम कर दिया न। अब आगे मैं क्या करूँ ?' तो मैं क्या जवाब दूँ ? अन्त में (अयोध्या) जाने पर भरत-शत्रुघ्न मेरे पास आकर पूछें कि 'लक्ष्मण कहाँ ?' तो क्या कहूँ (उत्तर दूँ) ? मुख पर दैन्य (भाव) के झलकने पर अब मैं (अयोध्या) कैसे जाऊँ ? किसी के लिए चिन्ता नहीं करता, किसी के लिए दुखी नहीं होता, (किन्तु) तुम्हारे लिए दीर्घ चिन्ता करता हूँ ।। ६९२० ।।

—खल रावण के आचरण का विचार कर, मन में घृणा होने से, अपने अग्रज को छोड़, हित-भृत्य वृत्ति से यह विभीषण ने चतुरता से मेरे पास आकर मेरी शरण ली। (शरण में) आने पर मैंने प्रेम से यह कह 'समस्त रक्षोराज्य तुम्हें प्रदत्त किया है' उसे ढाढ़स बँधाया (और) प्रतिज्ञा कर (उसका) राजतिलक किया। उस वचन को पूरा करने की सामर्थ्य नहीं रही न ! यह दिन निकल रहा है। अब लक्ष्मण जीवित नहीं

दुरितदूरुडु वीनितोडिदे लोक । मरसि चूचिन निक नडलोर्वरादु;
शरणन्नवारि नेच्चट वीडरादु । धरणिपै क्षत्रियधर्मंबु गादु
तारु नोच्चिनननैन दम्माश्रयिंचु । वारल रक्षिपवलयु राजुलक;
नी विभीषणु गोंचु नी वेगि पुण्य । भावुडैनट्टि मा भरतुनितोड
नरय निक्कडिकार्यमंतयु जेप्पि । 'परगंग लंककु ब्रतिगाग नितनि
६९३०

वेलय नयोध्यकु विजयलग्नमुन । फलसिद्धि सोंपार पट्टंबु गट्टु
मनि येनु जेप्पिति' ननि योप्प जेप्पि । योनरंग नंदुंडि युचितंबुतोड
वानरेश्वर ! नीवु वालिनंदनुडु । सेनलगोंचु गिष्किधकु नरुगु"
डनि दैन्यपाटुतो नाड भीतिल्लि । वनचराधीशुंडु वलनोप्प गदिसि
"परिकिंचि चूड ब्रभातंबु गादु । नरनाथ ! यिप्पुडु नालव जामु
सोच्चे नितिय, वायुसूनुंडु निपुड । वच्चु; संतापिपवलदंचु देर्चे;
देर्चिन नेंतयु देलियक मस्रियु । बेर्चिन शोकाग्नि पेल्लुन मिगुल
बोरि बोरि भूमिपै बोरलुचु वगल । बुरपुर बोक्कचु भूवरतनयु

रहेगा। मुझे अब प्राण नहीं चाहिए। दुरित-दूर (पुण्यात्मा) इसी के साथ मेरा लोक है। सोच देखने पर अब अधिक व्यथा सही नहीं जाती। शरण में आए हुए को छोड़ना नहीं चाहिए। वह धरती पर क्षत्रिय धर्म नहीं है। राजाओं को स्वयं पीड़ित होकर भी आश्रय में आए हुए जन की रक्षा करनी चाहिए। हे वानरेश्वर ! इस विभीषण को लेकर तुम शीघ्र जाकर, पुण्य-स्वभाववाले हमारे भरत के साथ, यहाँ का समस्त कार्य बताकर, मेरे वचन कह दो कि 'लंका की जगह इसे, ।। ६९३० ।।

—शोभा से अयोध्या (राज्य देकर), विजयलग्न पर, फल-सिद्धि की संप्राप्ति हो, ऐसा राजतिलक करे। ऐसा (विभीषण को) सौंप देकर शोभा से वहाँ रहकर, औचित्य से तुम और वालिनन्दन सेनाओं को लेकर किष्किन्धा में जाओ।' ऐसी दीनता से बात करने पर भीत हो, वनचराधीश ने प्रेम से पास जाकर (कहा) "परिशीलन करने पर (यह) प्रभात नहीं है। हे नरनाथ ! अब तो मात्र चौथे पहर का प्रवेश (प्रारम्भ) हुआ है। वायुसून अभी आएगा। सन्ताप मत करो" कहकर सांत्वना दी। सांत्वना देने पर भी न जानकर, और अधिक बनी शोकाग्नि के कारण बार-बार भूमि पर लोटते हुए अधिक विकल होते हुए भूवरतनय (राजकुमार-राम कहने लगे) —"हे तात ! जनक की आज्ञा से मेरे अटवि में आते समय, तुम्हें आदेश न देने पर भी, मेरे पीछे आकर

"डन्न ! ने जनकाज्ञ नडविकेतेर । निन्नु बौम्मनकुन्न नीवु ना वेंनुक
जनुदेंचि यिडुमुल जालंग बडग । गनुगोनि मनमुन गरमु शोकिंतु;
६९४०
नेडु नीवोंरुचेत नीलावु दूलि । पोडिमि चेंडि यिट्लु भूमिपै नुंड
नेनेंट्लु ब्रदुकुदु ? नेमनि वगतु ? । ने निनु डिंचि येंट्लेगुदु बुरिकि
सीत नाकेटिकि ? जीवमेमिटिकि । नो तंड्रि ! नाकिक नुर्वि
येमिटिकि ?
ना तंड्रि पंचिन नाटनुंडियुनु । ना तंड्रिक्रिय नन्नु नरयुचुंडुदुवु;
ना विधि निनु नेडु नाकारिचेत । नीविधि निटु चेसें नीरसंबेंति
देशदेशमुल सतीजनंबुलुनु । देश देशमुलंदु दिविरि बांधवुल
नरसि कानगवच्चु नट्टि देशमुल । बरग दम्मुनि नेंदु बडयंगवच्चु ?"
ननि यचेतनुडगु ननुजुपै व्रालि । कनुगोनि दिक्कुलु कडुधैर्यमेंडलि
"यन्नरो! नीवु न 'न्न' न्ननि पिलुव । नेंन्नडु विनगल्गुनिक वीनुलकु ?
सीत सुमित्र गा स्थिरमति जूतु; । चूतु नन् दशरथक्षोणीशुगाग;
६९५०
नाततविषम घोरारण्य भूमि । ब्रीति नयोध्यग बेंपुन जूतु;

अनेक कष्टों को भोग, उसे सोच मन में अधिक दुखी होता हूँ। आज तुम अन्य (शत्रु) के हाथ सामर्थ्य खोकर, ऐसा भूमि पर पड़े रहोगे तो मैं कैसे जीवित रहूँ ? ।। ६९४० ।।

—क्या-क्या कहकर व्यथित बनूँ ? तुम्हें छोड़ पुरी को कैसे जाऊँ ? मुझे सीता किसलिए ? प्राण किसलिए ? हे तात ! अब उर्वि (राज्य) ही किसलिए ? मेरे पिता के भेजने के समय से लेकर मेरे पिता के समान मेरा लालन-पालन करते रहे। मेरी विधि (नियति) ने आज तुम्हारी विधि (गति) नाकारि के हाथ ऐसी कर दी है। देश-देशों में स्त्रीजनों को, देश-देशों में ढूँढ़कर बन्धुजनों को प्राप्त कर सकते हैं। (किन्तु) उन-उन देशों में अनुज को कहाँ प्राप्त किया जा सकता है ?" ऐसा कह अचेतन बन अनुज पर गिरकर, (सभी) दिशाओं में देखकर, अति धैर्य को खोकर (बोले) —"हे भाई ! तुम्हारे मुख से 'अग्रज' का सम्बोधन इन कानों से कब सुनूँगा ? सीता को स्थिरमति से सुमित्रा मानते थे, मुझे दशरथ-क्षोणीश (राजा) ही मानते थे ।। ६९५० ।।

—आतत-विषम-घोर-अरण्यभूमि को प्रेम से अयोध्या के समान मानते थे। कभी मुझसे अलग नहीं रहते थे। अब मुझे छोड़ जाना न्याय-संगत है

वॆप्पुडु नातोड नॆडबायकुंडु । दिप्पुडु पाडियॆ यॆडबाय नन्नु ?
बूवुलपान्पुन बॊंदिचु मेनु । नीवॆट्लु चेर्चित नेडु ऱा नेल ?
बडियु निद्रिचॆदु परिणाममॊंदु । पुडमिपै नंदन पॊलुपॊंद नीवु
पदुनालुगेंड्लुनु बायक निद्र । पदिलंबुगा डिचि परुवडि नडवि
नरसि नन् रक्षिचि याजिमध्यमुन । नरुल जंपक पोव नगुनय्य! निद्र?
निद्र नीविट्लुन्न निजमय्यॆ दीर्घ । निद्र मी यन्नकु नृपनंदनुंड !
मी यन्न कॆप्पुडु मिक्किलि भक्ति । सेयुदु नेडेल चिंतिपवकट !
मन्नन सेयुदु ममत ना माट । लिन्नियूहंबुलु नेल पॆट्टॆदवु ?
"रावणासुरु बट्टि रणमुलो गूल्चि । भूवर! यॆंतयु भूसुत गूर्तु" ६९६०
ननि नादु वीनुल कनलार बलुक । कुनिकिकि गतमेमि योपुण्यमूर्ति!
यिप्पुडु मेल्कनि "येमि श्रीराम! । तप्प बल्कग नीकु दगुनय्य" यनुचु
नॊप्पॆडि माटल नूऱड जेसि । तप्पक कनुविच्चि तग जूडु" मनुचु
रासुतु कॆंगेलु रमणमै दिगिचि । भासुरंबुग गंडपाळिक जेर्चि
"नन्नु देर्पवे" यनि नरनाथुडपुडु । मनमुन दॆलियक महिमीद वडियॆ;
बडियुन्न या रघुपति मूर्छ दॆलिपि । यडलु वारिंचि रय्यगचराधिपुलु;

क्या ? पुष्पशय्या को प्राप्त करने (योग्य) शरीर को आज पत्थरों पर कैसे रख सके ? हे नन्दन ! गिरकर भी सोनेवाले परिणाम को प्राप्त तुम सुशोभित हो । चौदह वर्ष तक सावधानी से निरन्तर निद्रा को छोड़कर क्रम से अरण्य में ध्यान से मेरी रक्षाकर, युद्ध-मध्य में शत्रुओं का संहार किए विना सो जाना उचित है ? हे नृपनन्दन ! तुम इसी प्रकार निद्रित रहोगे तो तुम्हारे अग्रज को सचमुच दीर्घनिद्रा (मृत्यु) प्राप्त होगी। अपने अग्रज के प्रति सदा भक्ति-भाव से रहते थे। हाय, आज उसकी चिन्ता क्यों नहीं करते ? ममता से मेरे वचन का सम्मान करते थे। आज इतना क्यों सताते हो ? 'रावणासुर को पकड़, रण में गिराकर, हे भूवर ! भूसुता को (तुम्हें) दिला दूँगा ।' ॥ ६९६० ॥

—मेरे कानों को मधुर लगे, ऐसे वचन क्यों नहीं कहते हो हे पुण्यमूर्ति ! अब जागकर 'हे श्रीराम ! यह क्या ? ऐसे अनुचित वचन कहना उचित है ?' कहते हुए, मनोज्ञ वचनों से (मुझे) सांत्वना देकर, अवश्य आँख खोलकर देखो ।" (ऐसा) कहते हुए, राजकुमार की हथेली को भासुर-रूप से अपनी गंड-पालिका (गंड-स्थल) पर रख, 'मेरा उद्धार करो न' कहते हुए, तब नरनाथ बेहोश हो धरती पर गिर पड़ा । गिरे हुए रघुपति की मूर्च्छा दूरकर, अगचराधिपों ने व्याकुलता दूर की ।

हनुम द्रोणाद्रि गोनिवच्चुट

अंत प्रभामंडलाभीलुडगुचु । नंतलो हनुमंतुडरुगुदेंचुटयु
देजंबु पेंपुन दृष्टिपराक । तेजोदिवाकर दीप्तुडैयुन्न
गपुलेल्ल गलगि युत्कट भीति बोंदि । विपुलतर भ्रांति विवशुलै तूल
नालोन गमलाप्तुडनि चूचि विभुडु । कालकालोदग्रगति निंड मंडि ६९७०
कपिवल्लभुनि नेल्ल कपुल वीक्षिंचि । "कपुलार! सूर्युनि गंटिरे मिट!
जेकोनि बहुपुण्यशीलंबुलंदु । माकुलंबुनकेल्ल महि गर्तयैन
यंधकारारााति यकट ! यी पद्म । बंधुंडु नेडु ना पगवानि गूडि
युदयिंचुचुन्नवाडुग्रत मिगिलि । यिदै पडि सौमित्रि यिब्भंगि नुंड;
नी सूर्यमंडलंबिलमीद गूल । नेसेद" ननुचु नहीनसाहसुडु
ब्रह्मांडकोटुलु भंगिप बूनि । ब्रह्मादुलदरंग ब्ळयकालंबु
नाडुग्रवृत्ति बिनाकि बिल्लंदि । वाडिमि मेरयु ना वडुवु दीपिप
नापूर्ण-भुज-नैपुणाटोपुडगुचु । ना पिनाकियु दाने यगुट देलपुचुनु
विल्लंदि भुज बलविस्फूर्ति मेरय । बेल्लु कोपिंचि संभृतवेगुडगुचु

हनुमान का द्रोणाद्रि ले आना

तब प्रभा-मंडल के समान आभील (भयंकर) वनकर, इतने में हनुमान आए। तेज की अधिकता से, तेजोदिवाकर-सम दीप्त उसे देख न सक सभी कपि विकल हो, अधिक भीत हो, विपुलतर रूप से भ्रान्ति-विवश हो लड़खड़ा उठे। इतने में विभु ने उसे देख, कमलाप्त (सूर्य) समझ, काल-कालोदग्रगति से पूर्ण हो, (क्रोध से) बलकर, ॥ ६९७० ॥

—कपिवल्लभ को (तथा) समस्त, कपियों को देखकर (कहा) —"हे कपियो! आकाश पर सूर्य को देखा न ? बहु पुण्यशील से सम्पन्न हमारे समस्त कुल (वंश) का महि पर कर्ता होकर भी यह अन्धकार-आराति (-शत्रु), यह पद्मबन्धु आज मेरे शत्रु का साथ देते हुए, सौमित्र के इस प्रकार पड़े रहने पर, उग्रता की अधिकता से उदित हो रहा है। इस सूर्यमंडल को आज पृथ्वी पर गिरा दूंगा।" (ऐसा) कहते हुए अहीन-साहस वाले (राम) ने ब्रह्मांड-कोटियों का भंजन करने, ब्रह्मा आदि के भीत हो जाने पर, प्रलयकाल के दिन पिनाकी (शिव) के उग्रवृत्ति से धनुष ग्रहणकर, पौरुष से दीप्त होने के विधान से प्रकाशित होकर, आपूर्ण-भुज-नैपुण्य के आटोप से, स्वयं पिनाकी होने की विधि को जताते हुए, धनुप हाथ में ले, भुज-वल-विस्फूर्ति से प्रकाशित होकर, अधिक क्रुद्ध हो,

जटुलरौद्रास्त्रंबु संधिप दिवुरु। पटुवृत्ति गनुगोनि भयमंदि कलगि ६९८०.
यसमानसत्त्वुडै यलुकतोनुन्न। वसुधेशुतो जांबवंतुडिट्लनियें:
"नगणितशक्तिमै नलुक दीपिंप। जगतीश! नीविटु शरमु संधिप
धृतिदूलि नलुगड देवगंधर्व। पतुलेल्ल भीतुलै पारुचुन्नार
लिदियेमि राघव! यिच्चलोनीवु। पदिलुंडवै चूचि भाविंपलेवु
वेलुगोंदु बहुदीपवृक्षदीधितुल। दोलुकाडु नुज्ज्वल द्रोणाचलंबु
गोनिवच्चुचुन्नाडु गुरुसत्त्वुडैन। यनिलसूनुडु गानि यर्कुडु गाडु;
भानुसन्निभुनकु बवनसूनुनकु। भूनाथ! येदुरुगा बुच्चु वानरुल"
ननुटयु रघुरामुडानतिच्चुटयु। हनुमंतुनकु नेदुररिगिरि कपुलु;
नाकाशमुननुंडि हनुमतुडंत। नाकोंड गोनिवच्चि यवनिपै डिंचि
जननाथुडगु रामचंद्रुनकर्थि। विनतुडै करमुलु वेरवोप्प मोगिचि ६९९०
"युर्वीश! ने बोयि योगि नौषधमुलु। पर्वतंबुन बेक्कुभंगुल वेदकि
पनिवडि कानक पर्वतंबेल्ल। गोनि यिटु वच्चितिं गुवलयाधीश!
यडरि मी याननति नटु पोवुनपुडु। नेडपनि कडकतो निटुवच्चुनपुडु
गडगि विघ्नमुलनेकमुलय्यें नडुम। दडयुट दप्पुगा दलपोय वलव"

संभृत-वेगवाला होते हुए, चटुल-रौद्रास्त्र का सधान करने उद्यत होने वाले उनकी पटुवृत्ति को देख, भीत हो, व्याकुल हो, ।। ६९८० ।।
—असमान सत्त्व से क्रोध से युक्त वसुधेश से जांबवान ने यों कहा—"हे जगदीश! अगणित शक्ति से क्रोध के दीप्त होने पर तुम्हारा इस प्रकार शर का शंधान करने पर, धैर्य खोकर चौतरफ समस्त देवगन्धर्वपति भीत हो भाग रहे हैं। यह क्या राघव? सावधानी से देखकर मन में सोच-विचार नहीं कर सकते हो? प्रकाशमान बहुदीप वृक्षों की दीधितियों से विलसित उज्ज्वल द्रोणाचल को गुरुसत्त्ववाला अनिलसून ला रहा है, वह अर्क नहीं है। हे भूनाथ! भानुसन्निभ पवनसून की अगवानी के लिए वानरों को भेजो।" (ऐसा) कहने पर, रघुराम की अनुमति देने पर, हनुमान की अगवानी करने कपि गए। हनुमान ने आकाश से तब उस पर्वत को लाकर, भूमि पर उतारकर, जननाथ रामचन्द्र के समक्ष प्रेम से विनत हो, ढंग से हाथ जोड़कर ।। ६९९० ।।
—(कहा) —"हे उर्वीश! हे कुवलयाधीश! मैं जाकर क्रम से पर्वत पर औषधियों के लिए कई प्रकार से ढूंढ़कर, (उन्हें) न पाकर, समस्त पर्वत को उठा लाया हूँ। विजृंभित होकर आपकी आनति (आदेश) से उधर जाते समय और दुर्निवार साहस से इधर आते समय बीच में कई विघ्न

दनवुडु रामुडा हनुमंतु जूचि । घनतरसंतोषकलितुडै पलिकें
"नीकेटि तप्पुलु? नीचेत निलिचें । गाकुत्स्थतिलकुल गौरवोन्नतुलु;
सुरुचिरशक्तिमै सुरलकुनैन । नरुदैनपनि सेसि" तनि प्रीतिनोंदें

संजीवकरणि चे लक्ष्मणुडु मूर्छ देरुट

ना समयंबुन नर्कतनूजु । डा सुषेणुनि जूचि यर्थि दीपिंप
"निक्कोंड दडयक यीवु वानरुलु । नेंक्कि महौषधुलेर्पड देंच्चि
भाविंचि लक्ष्मणु प्राणमुल् वडयु । वेवेग" ननवुडु विनि सुषेणुंडु ७०००
पनि बूनि यप्पुडु परवसंबोप्प । वनचरसहितुडै वडि गोंड नेंक्कि
"यमरेंद्रुडिक्कड नर्थितो दोंल्लि । यमृतपानमु सेसें नमरुलु दानु;
निचट विष्णुडु जगद्धितवृत्ति बूनि । यचलुडै निजचक्रहति द्रुंचि वैचें
नुरु राहु मस्तकंबुग्रुडै" यनुचु । दरुचरवरुलुकु दविलि चूपुचुनु
नोंगि बर्वतमुन महौषधुल् देंच्चि । तग ब्रयोगिंप नंतन वानि शक्ति
तगिलि नाटिन बाणततुलोलिवेंडलि । मगुडे ब्राणमुलु लक्ष्मणकुमारुनकु
नप्पुडु वानरु लानंदमंदि । नेंप्पटि पेंमितो निनवंश्युकडकु

उपस्थित हुए। विलम्ब को दोष मत मानिए।" ऐसा कहने पर राम उस हनुमान को देख घनतर-सन्तोष-कलित होते हुए कहा—"तुम में दोष कैसे? तुम्हारे कारण काकुत्स्थकुलतिलकों के गौरव और औन्नत्य स्थिर बने रहे। सुरुचिर शक्ति से तुमने सुरों के लिए भी असम्भव काम किया है।" (ऐसा) कह (राम) प्रसन्न हुआ।

संजीवकरणि से लक्ष्मण का होश में आना

उस समय अर्कतनूज ने सुषेण को देख इच्छा के प्रदीप्त होने पर, (कहा) —"तुम वानरों के साथ इस पर्वत पर अविलम्ब चढ़कर, महौषधियों को शोभा से लाकर, अतिशीघ्र लक्ष्मण के प्राणों का उद्धार करो।" ऐसा कहने पर सुनकर सुषेण ने, ॥ ७०० ॥

—सप्रयत्न तब उत्साह से वनचर-सहित हो झट पर्वत पर चढ़कर, यह कहते, 'अमरेन्द्र ने यहाँ पूर्व में प्रेम से अमरों के साथ अमृतपान किया था। यहाँ विष्णु ने जगद्धित वृत्ति धारण कर अचल हो निज-चक्रहति से उस राहु के मस्तक को उग्रगति से खंडित कर दिया।" तरुचरों को प्रेम से दिखाते हुए, क्रम से पर्वत की महौषधियाँ लाकर, समुचित रूप से प्रयोग करने पर तब उनकी शक्ति से, लगकर (सप्रयत्न), गड़े वाण समूह निकालकर लक्ष्मणकुमार के प्राण पुनः स्थापित हुए। तब वानरों के आनन्दित

जनुदेर गौगिट सौमित्ति जेर्चि । कनुगव हर्षाश्रुकणमुलु दौरुग
ना समीरजु जूचि "यतुलपुण्यात्म! । यी सुमित्रापुत्त्रु निच्चिति नाकु;
गाकुत्स्थकुलमित्त्रु गमनीयगात्त्रु । नीकतंबुन गंटि नेडु लक्ष्मणुनि;
७०१०

बडिन ना तम्मुनि प्राणंबुलेत्ति । पडसिति ना प्राणमुल् मगुड
ब्राणंबुलन नाकु बरिकिंप नितडे; । प्राणबंधुड वीवु परिकिंप नाकु;
दरुचरोत्तम! नीवु तलकौनिचेयु । पुरुषार्थ मौरुलकु बोलुने चेय ?
नुपकारमुनकु ब्रत्युपकारमेलमि । गपिवीर ! चेयुट गड्नुत्तमंबु;
नीकु ब्रत्युपकृति ने जेयनेर; । नी कापदलु लेवु निखिल लोकमुल"
ननि पलिक रघुरामुडंत सुषेणु । गनुगौनि कौनियाडि कौगिट जेर्प
मुदितात्मुडगुचु निम्मुल सुषेणुडु । नुदधि पौंगिन क्रिय नुब्बि या रामु
ननुमति रणमुलो नट बडियुन्न । वनचरोत्तमुल जीवमुलुनु वडसे;
नंत वानर वीरुलंतरंगमुल । संतोषमेसग ना शैलंबु गदिसि
सकल रत्नोज्ज्वल सानु श्रृंगमुल । नकलंकरुचि बौल्चु ना सौंपु सूचि
७०२०

होकर, यथापूर्व औन्नत्य से इनवंशवाले (राम) के पास आने पर, सौमित्र का आलिंगन कर, नेत्रद्वय से हर्ष-अश्रु-कणों के झरने पर, उस समीरज को देख (बोले) —"हे अतुल पुण्यात्मा ! मुझे इस सुमित्रापुत्र को दिया है। काकुत्स्थकुल के मित्र (सूर्य) (तथा) कमनीय गात्र वाले लक्ष्मण को आज तुम्हारे कारण (जीवित) देखा है, ॥ ७०१० ॥

—गिरे हुए अपने अनुज के प्राणों का उद्धार कराकर, अब मैंने अपने प्राण पुनः प्राप्त किए हैं। यह (लक्ष्मण) तो सोचने पर मेरे लिए प्राण है। सोचने पर तुम मेरे प्राण-बन्धु हो। हे तरुचरोत्तम ! सप्रयत्न तुम जो पुरुषार्थ करते हो क्या वे अन्यों के लिए सम्भव हैं ? हे कपिवीर ! उपकार का प्रेम से प्रत्युपकार करना बहुत उत्तम है। मैं तुम्हारा प्रत्युपकार नहीं कर सकता। (फिर भी) 'तुम्हारे लिए निखिल लोकों में आपदाएँ (विपत्तियाँ) नहीं हों।' ऐसा कहकर, तब रघुराम ने सुषेण को देखकर, सराहना कर, आलिंगन किया। मुदित-आत्मा वाला होता हुआ प्रेम से सुषेण ने, उदधि के उमड़ने की तरह उमड़कर, उस राम की अनुमति से, उधर रण (भूमि) में पड़े हुए वनचरोत्तमों को पुनर्जीवित किया। तब वानरवीर अन्तरंगों में आनन्द के उमड़ने पर, उस शैल के पास जाकर, सकल-रत्नों से उज्ज्वल-सानु-श्रृंगों से युक्त अकलंक-रुचि से विराजमान उसके सौन्दर्य के देखकर, ॥ ७०२० ॥

यवनीशुननुमति नगिगरि यॆक्कि । विविधस्थलंबुल वेड्कतो दिरिगि
परिपक्वफलमुल बरितृप्ति नॊंदि । पॆरलतेनियलानि पॆन्नीरु ग्रोलि
यवरोहणमु सेसि रंदरु; नंत । बवननंदनु जूचि पलिकॆ राघवुडु;
"ऎप्पटि चोटनॆ येर्पड बॆट्टु । मिप्पर्वताधीशु निक नी" वनुचु
रामुडु वनुप संरंभंबु मॆरसि । या महाशैलंबु ननिलनंदनुडु
नलघुडै कॊनिपोव नाकाशवीथि । जलधिमध्यमुन राक्षसुलु वीक्षिंचि
परचि यत्तॆरगॆल्ल बरुवडि दनकु । नॆरिगिंप नेर्पड नॆरिगि कोपिंचि
लंकाधिपति जयालंकारधनुल । शंकुकर्ण स्थूलजंघुलतोड
नट महानादुनि नट महावक्त्रु । नट जतुर्वक्त्रुनि नट मेघजित्तु
नट हस्तिकर्णु महावीर जैत्रु । गटुवाक्यशालि नुल्कामुखु बिलिचि
७०३०

"यलवु सॊंपुन मीरलड्डंबु दाकि । बलियु ना हनुमंतु बट्टितॆंडॊंडे;
गॊनिपोवुचुन्न या कुधरंबु वुच्चि । वनधिलोपल बारु वैचि रंडॊंडे;
नी रॆंडु तॆरगुल नेर्पड नॊकटि । धीरुलै चेसि यॆतॆंचिन जालु;
नच्चुगा नतनिकि नर्मिलि वॆलय । निच्चमै सवराज्यमिच्चॆद निपुडे"
ना विनि विपुलसेना सहस्रमुल । तो वारु वॆडलि बंधुर सत्त्वधनुलु

—अवनीश की अनुमति से, उस गिरि पर चढ़कर, उत्साह से विविध-स्थलों में घूमकर, परिपक्व-फलों से परितृप्त होकर, मधुकोश के मधु का पानकर, स्वच्छ जल पीकर, सभी उतर पड़े। तब पवननन्दन को देख राघव ने कहा—"अब तुम इस पर्वताधीश को यथास्थान रख दो।" ऐसा कहते राम के भेजने पर संरंभ से प्रकाशित हो, अनिलनन्दन ने उस महाशैल को (उठा) अलघु (महान्) हो आकाश-वीथि से उड़ चला। (उसे) जलधिमध्य से राक्षसों ने देखा। दौड़कर, वह सारा विधान शीघ्र (रावण को) बताया। (उसे) खूब जानकर, क्रुद्ध हो, लंकाधिपति ने जयालंकराधनी शंकुकर्ण (और) स्थूलजंघ को, महानाद, महावक्त्र, चतुर्वक्त्र, मेघजित, हस्तिकर्ण, महावीर जैत्र, कटुवाक्यशाली उल्कामुख को बुलाकर, ॥ ७०३० ॥

—(कहा) —"शक्ति की सुघड़ता से तुम लोग मार्ग रोककर, बली उस हनुमान को पकड़ लाओ अथवा ले जानेवाले उस कुधर (पर्वत) को लेकर, वनधि में फेंककर आओ। इन दोनों विधानों में कोई एक (कार्य) कर धीर बन आओ, बस है। ऐसा करके आनेवाले को प्रेम से अभी राज्य दे दूंगा।" ऐसा कहने पर सुनकर, विपुल-सेना-सहस्रों से निकल पड़कर वे बंधुर-सत्त्व-धनी दानव अमर वेषधारी हो, क्रोध से रणोदग्र (तथा) उग्रविक्रम वाले, क्षुरिका-असि-तोमर-शूल-कोदंड-परशु-कुंत आदि

दानवामर वेषधारुलै किनुक। नूनि रणोदग्रुलग्रविक्रमुलु
क्षुरिकासितोमर शूल कोदंड। परशु कुंतादि प्रमुख शस्त्रमुलु
धरियिंचि मिंचिन दर्पबु मेंड्रसि। गुरुतराहंकारहुंकारुलगुचु
गनुकनि गर्जिंचि कालमेघमुलु। पौनुपड सूर्युनि बौंदुवु चंदमुन
बौंदिवि या हनुमंतु बोनीक कदिसि। मदमुन बेंचि दुर्मतुलु बिट्टाचि
७०४०

"देवासुरुल मम्मु दृष्टिपकोरि! । पोवुचुन्नाडवु भुजशक्ति मेंड्रसि;
यी कोंड गौनुचु नीवेंट बोयें" दनिन। नाकपिवीरुडायसुरुल जूचि
विलय कालानल विस्फुलिंगमुलु। दौलकाड नुज्ज्वल दुर्जयाभील
कालचक्राकार घनवज्रकठिन। वालचक्रमु द्रिप्पि वडि नेय दौडगें;
नप्पुडा राक्षसुलडरि यॆंतयुनु। नोंप्पिप वायुतनूभवुंडलिगि
भंजिचें गोंदऱ बट्टुवालनिहति। भंजिचें गोंदऱ वरुषोग्रदृष्टि;
घनसत्त्वुडिब्भंगि गय्यंबुसेसि। विनुतविक्रम जयवृद्धि बॆंपोंदि
तोयजाप्तुडु पेंचि तुप्पल दूल। दोयदंबुल दौलगद्रोचु चंदमुन
राक्षसवीरुल रणवीथि नोंडिंचि। नक्षत्रवीथि नुन्नतशक्ति मेंड्रसि
७०५०

शस्त्र धारण कर, अधिक दर्प से प्रकाशित हो, उरुतर-अहंकार से युक्त हुंकार करते हुए, सप्रयत्न गर्जन कर, ढंग से कालमेघों के सूर्य को आच्छादित करने के समान, घेरकर उस हनुमान को जाने न देकर, नियराकर, मद से विजृंभित हो, दुर्मतियों ने अधिक सिंहनाद कर (कहा—) ।। ७०४० ।।

—"रे ! भुजशक्ति से प्रकाशित हुए (तुम), हम देवासुरों को देखे बिना जा रहे हो। इस पर्वत को लेकर तुम कहाँ जाओगे ?" ऐसा कहने पर, वह कपिवीर, उन असुरों को देखकर, विलय-काल अनल-विस्फुलिंगों के झरने पर, उज्ज्वल-दुर्जय-आभील-कालचक्र आकार वाले (तथा) घन-वज्र-कठिन वालचक्र को घुमाकर झट से (उन असुरों को) मार डालने लगा। तब उन राक्षसों के विजृंभित हो अधिक सताने पर, वायुतनूभव ने क्रुद्ध हो कुछ को पट्टुवाल-निहति से मार गिराया, कुछ को परुष-उग्रदृष्टि से मार गिराया, कुछ को पद-ताड़नों से मार गिराया, कुछ को भयदनादों से मार गिराया। घन-सत्त्व वाला (हनुमान) इस प्रकार रण करके, विनुत विक्रम की जयवृद्धि से शोभित हो, तोयजाप्त (सूर्य) के विजृंभित हो, तोयदों को बिखेर देने के समान, राक्षसवीरों का रणभूमि में दमनकर, नक्षत्र-वीथि में उन्नतशक्ति से प्रकाशित हो, ।। ७०५० ।।

पोवुचुनुंड ना भुजशक्ति जूचि । देवगंधर्वुलु दिविनुंडि यपुडु
पौरि बौरि नतनिपै बूवुल वान । गुरियुचुनुंडिरि कौलदिकग्गलमु
नंतलो हनुमंतु डतिवेगुडगुचु । नंतरिक्षंबुन नरिगि यक्कोंड
मुन्नुन्न चोटने मुदमोप्प बॆट्टि । ऋन्नन रघुरामुकडकु नेतेंचि
विनतुडै तनपोवु वृत्तांतमॆल्ल । विनुपिप श्रीराम विभुडु हर्षिंचि
या वायुनंदनु नालिगनंबु । गाविप गनुगोनि कपिवीरुलपुडु
वच्चि लंकापुरवरमॆल्ल गलय । जॆच्चॆर जेसिरि सिंहनादमुलु
भूरिदशाननु पुण्य चिह्नमुलु । बोरन नंदंद पोवुचंदमुन
दरिगि याकसमुन दारलॊंडोंड । यरिगि पोवग जॊच्चॆ; नट वेगॆ ब्रॊद्दु;
दारुणस्फुटरोष दैत्यगर्वांध । कारंबुतो नंधकारंबु विरिसॆ; ७०६०
नलि मीर वानरानन सरोजात । मुलतो सरोजातमुलु विकसिंचॆ;
दनुपॆंपु पो द्रूलु दनुजास्य कैर । वमुलतो भुवि गैरवम्मुलु मॊगिडॆ;
भानुवंशधीशु बहुळ प्रताप । भानुतो भानुंडु प्राग्दिश दोचॆ;
जानकी-विभुडंत सौमित्रि जूचि । यूनिन संतोषमुल्लंबु निंड
"सदमलगुणशील ! सौमित्रि! नीवु । ब्रदिकिति; ना पालि
भाग्यमॆट्टिदियो !"

—जा रहा था। उसकी भुजशक्ति देखकर, देवगंधर्वो ने तब अधिकता से पुनः पुनः पुष्पवृष्टि की। तब अतिवेग वाला होता हुआ हनुमान ने अंतरिक्ष से जाकर, उस पर्वत को पूर्वस्थान पर ही मोद के साथ रख, झट रघुराम के पास आकर, विनत हो, गमन का पूरा वृत्तांत सुनाया (तो) विभु श्रीराम के हर्षित हो, उस वायुनन्दन का आलिंगन करने पर, समस्त कपिवीरों ने उसे देखा। फिर समस्त लंकापुर-वर क्षुब्ध हो, ऐसा झट सिंहनाद किया। भूरि (महान्) दशानन के पुण्यचिह्न झट सर्वत्र मिट रहे हों, इस प्रकार कुंचित हो आकाश में नक्षत्र क्रमशः मिट जाने लगे। तब पौ फटी। दारुण-स्फुट-रोष-युक्त दैत्य-गर्वांधकार के साथ अंधकार भी छँट गया, ॥ ७०६० ॥

—शोभायुक्त वानर-आनन-सरोजातों के साथ सरोजात विकसित हुए। अपने गौरव का तिरस्कार करनेवाले दनुज-आस्य-कैरवों के साथ भुवि पर कैरव मुरझा गए। भानुवंशाधीश के बहुल-प्रताप-भानु-सा प्राग्दिशा में भानु दिखाई पड़ा। तब जानकी-विभु ने सौमित्र को देखकर स्थिर आनन्द के हृदय में भर जाने पर (कहा)—"हे सदमलगुणशील वाले ! सौमित्र ! तुम जीवित हो गए। यह मेरा सौभाग्य है।" (ऐसा) कहकर प्रशंसायुत-अतुल वाक्यों को सुनकर लक्ष्मण ने विभुराम को प्रणाम कर

यनि यनि कोंनियाडु नतुल वाक्यमुलु। विनि लक्ष्मणुडु रामविभुनकु म्रोक्कि
"देव! प्राकृतुडवे? देव! दीनुडवे?। देव ! निर्धनुडवे ? देव ! यल्पुडवे ?
यी भंगि नानति यीनेल नीकु। ब्राभवंबुनु बेंपु बरकिप मरचि ?
मुनु दंडकारण्य मुनुलकु साधु। जनुलकिच्चिन प्रतिज्ञलु विचारिंचि,
यिच्चलो मिमु नम्मि यी विभीषणुडु। वच्चिन निच्चिन वरमु र्जितिंचि ७०७०
यिनुडस्तशिखरिकि नेगकमुन्न। यनि रावणुनि जंपु मखिललोकेश!"
यनवुडु रघुरामु "डौगाक" यनुचु। घनरण विक्रम क्रम शक्ति मेरसें;
नंत नावृत्तांतमंतयु नेरिगि। येंतयु र्जितिंचि यिच्चलो गलगि

रावणुडु शुक्रुनिवद्द मोरवेट्टुट

विक्रम क्रम शक्ति विडिचि रावणुडु। शुक्रु सन्निधि केगि सुक्कुचु म्रोक्कि
"चुट्टाल भृत्युल सुतुल सोदरुल। नेंट्टन रघुरामु निशित बाणाग्नि
दरिकोंनि कालिचि दग्धुल जेसि। परगि यमोघमै प्रळयाग्नि पगिदि

(कहा)—"हे देव ! तुम प्राकृत (जड़) हो क्या ? हे देव ! तुम दीन हो ! हे देव ! तुम निर्धन हो ? हे देव ! तुम अल्प (क्षुद्र) हो ? (नहीं) अपने प्राभव (प्रतिभा) और गौरव को भूलकर इस प्रकार क्यों कहते हो ? पूर्व में दंडकारण्य के मुनियों (तथा) साधुजनों को प्रदत्त प्रतिज्ञाओं के बारे में विचार कर, मन में आप पर विश्वास कर इस विभीषण के आने पर प्रदत्त वर का विचारकर, ।। ७०७० ।।

—हे अखिललोकेश ! इन (सूर्य) के अस्तगिरि जाने से पहले युद्ध में रावण का संहार करो।" ऐसा कहने पर रघुराम 'ऐसा ही हो' कहते हुए घनरण-विक्रमक्रम-शक्ति से प्रकाशित हुए। तब वह समस्त वृतांत जानकर, अधिक चिन्ता कर, मन में व्यथित हो,

रावण का शुक्र से निवेदन करना

—विक्रमक्रम-शक्ति को छोड़ रावण शुक्र के पास जाकर, दुखी होते हुए, प्रणाम कर (बोला) —"रघुराम की निशित-बाणाग्नि, मेरे सम्बन्धियों, भृत्यों, सुतों (तथा) सहोदरों को जलाकर, दग्ध करके, व्याप्त हो, अमोघ प्रलयाग्नि के समान है। (वह) दुर्निवार है। युद्ध में सब

नुन्नदि; मान्पराकुन्नदि; पोर । नन्निथु देगटारे; नन्नियु बोलिसे;
नेनु ब्राणमुलतो नेब्भंगि निलुतु ? । नानति यि" म्मन्न नाशुक्रुडनियें;
"नलधुसंगरमुन नरुल साधिप । गल वुपायंबुलु; गलगनेमिटिकि?
ने विघ्नमुलुलेक यीवु होमंबु । गाविंचु पुण्यंबु गलिगिन जालु; ७०८०
भीमसंग्राम गंभीरमुलगुचु । होमाग्निमुखमुन नुंडि नीकडकु
नुरु रथाश्वंबुलु नुग्रखड्गमुलु । शरचापकवचमुल् चनुदेंचु वेग;
नवि साधनमुलुगा नरुल साधिपु । मवि नीकु जयसिद्धु" लनुचु नातनिकि
होममंत्रमुलेल्ल नुपदेशमिच्चि । होमकृत्यमुलेल्ल नोगि नेर्परिचि
पो "म्मन वीड्कोनिपोयि रावणुडु । क्रम्मिन कडकतो गडुनुग्रुडगुचु
बुरवप्ररक्षकु भूरिसत्त्वुलनु । बरिकिंचि चतुरंग बलमुल बनिचि
यवधानतत्परुडयि वेग लंक । गवनुलु वेर्यिचि कलय शोधिंचि
यंत विद्युज्जिह्वुडनु महावीरु । नंतकाकारु नुद्गत शूरु बिलिचि
"नीवु नी बलमुतो नेलकोनि नगरु । गावु; मेमरकुमु; कदलकु" मनुचु
बनिचि यनुष्ठानपद्धति बोंदि । चनि मृत्युवक्त्रबु जन जोच्चु भंगि ७०९०

समाप्त हो गए, सब कुछ नष्ट हो गया। मैं प्राणों के साथ किस प्रकार रह सकूँगा ? आज्ञा दीजिए (बताइए)।" कहने पर उस शुक्र ने कहा— "अलघु (बड़े) संगर में नरों को जीतने के उपाय हैं। व्याकुल क्यों होते हो ? बिना किसी विघ्न के, तुम्हें होम करने का पुण्य मिल जाए तो पर्याप्त है। ॥ ७०८० ॥

—होमाग्नि-मुख से झट तुम्हारे पास भीम-संग्राम में गम्भीर-उरु रथाश्व, उग्र खड्ग, शर-चाप-कवच आएंगे। उनको साधन बनाकर, नरों को जीत लो। वे तुम्हें विजय प्रदान करेंगे।" (ऐसा) कहते हुए उसे समस्त होम मन्त्रों का उपदेश देकर, समस्त होमकृत्यों की व्यवस्था बताकर, 'जाओ' कहने पर, रावण (उनसे) बिदा लेकर चला गया। (फिर) व्याप्त साहस से अति उग्र होते हुए, पुर-वप्र-रक्षकों को जो भूरि सत्त्ववाले थे, सावधान कर, चतुरंग-सेनाओं को भेजकर, अवधान-तत्पर हो, झट लंका के पुरद्वारों (की रक्षा) की व्यवस्था कर, सब कुछ शोध (परीक्षण) कर, तब विद्युज्जिह्व नामक महावीर को जो आतंक-आकार वाला था, उद्धत-शूर था, बुलाकर (कहा) —"तुम अपनी सेनाओं के साथ स्थिरता से नगर की रक्षा करो। मत हटो।" (ऐसा) कहते हुए भेजकर, अनुष्ठान की पद्धति को अपनाकर, जाकर मृत्यु-वक्त्र में प्रविष्ट होने के समान, ॥ ७०९० ॥

रावणुडु पाताळ होमसु चेयुट

बातालगुह जोच्चिच पदिलुडै निलिचि। याततहोमकृत्यमुनकु दगिन रक्तवस्त्रंबुलु रक्तमाल्यमुलु। रक्त चंदन मनुरक्तुडै ताल्चि बंधुर दक्षिण प्रवणवेदिककु। गंधपुष्पाक्षतल् गरमोप्प निच्चि या होमवेदिलो नग्नि संधिंचि। होममंत्रमुलेल्ल नोगि नुच्चरिंचि वेरवोप्प ना होमवेदिलो गलय। बरिकिंचि निशितास्त्रपरिधुलु जेर्चि श्रीवृक्षभल्लात सितमुख्य समिध। ला वृत्ति गैकोनि यंतट मरियु नोज सर्षपमुलु नोनर दूर्वमुलु। लाजलु दग गुग्गिलंबुनु नगरु नेयि देनिय गल्लु नेत्तुरु बेरुगु। बायसान्नमुलु दर्भलु ब्रवाळमुलु दगरुलु मीलु ग्रद्दलु वराहमुलु। नोगि निवि मोदलुगा नोप्प वेल्चुचुनु नाश्चर्यकरमैन या महावेदि। निश्चलित ध्याननिरतुडै युंडे; ७१००

बलुविडि रावणु पापंबुलेल्ल। गलसि पेल्लेगसिन कैवडि दोप ना महागुहनुंडि यप्पुडत्युग्र। धूमंबुलुरुतरस्तोमंबुलगुचु बट्टुतर निर्घात पवन संघात। चट्टुलंबुलै निक्कि ब्रदल बर्वुटयु

रावण का पाताल होम करना

—पातालगुफा में प्रवेशकर, सावधान हो रहकर, आतत-होमकृत्य के लिए उचित रक्तवस्त्र, रक्तमाल्य, रक्तचंदन को अनुरक्ति से धारणकर, बंधुर-दक्षिण-प्रवण-वेदिका को अधिक शोभा से गन्ध-पुष्प-अक्षत देकर (अलंकृत कर) उस होमवेदी में अग्नि का संधान कर, समस्त होम मंत्रों का क्रम से उच्चारण कर, ढंग से उस होमवेदी का अच्छी तरह परिशीलन कर, निशित-अस्त्रों की परिधाएँ संवार कर, श्रीवृक्ष, भल्लात, सित आदि समिधाओं की आवृत्ति लेकर, तब क्रम से सर्षप, शोभा से दूर्वाएँ, लाजा (खील), उचित गुग्गिल और अगरु, घी, मधु, ताड़ी, रक्त, दही, पायसान्न (खीर), दर्भ, प्रवाल, भेड, मछली, गीध, वराह आदि का शोभा-क्रम से हवन करते हुए, आश्चर्यप्रद उस महावेदी के (समक्ष) निश्चल-ध्यान-निरत हो रहा। ॥ ७१०० ॥

—बरजोरी रावण के समस्त पाप मिलकर अधिकता से ऊपर उठे हों, ऐसा उस महागुफा से तव अत्युग्र धूम उरुतरु-स्तोम (समूह) होते हुए, पटुतर-निर्घात-पवन-संघ-चटुल हो ऊपर उठकर, आकाश में व्याप्त हुआ तो दिविज भीत हुए, मुनि भीत हुए, दिक्पति भीत हुए, कपि भीत हुए। उन महाधूमों को तब देखकर रावणानुज (विभीषण) ने राम से कहा—"युद्ध-भूमि में तुम्हारा सामना कर, ठहर न सक पाकर आज रावण ने शुक्र की

वेंड्रचिरि-दिविजुलु वेंड्रचिरि मुनुलु। वेंड्रचिरि दिक्पतुल्; वेंड्रचिरि कपुलु
ना होमधूमंबुलप्पुडु चूचि। रामुतो ननियें ना रावणानुजुडु;
"नेलकोनि यनिमीन निनुदाकि येंदुट। निलुवनेरक पोयि नेडु रावणुडु
शुक्रानुमति निट्लु सुरुचिर गरिम। विक्रमशालियै वेवेग निपुडु
कपट कर्मारंभ गंभीर वृत्ति। विपुलजयार्थियै वेल्चुचुन्नाडु;
अवधरिंचितें पौगलाकसंबुननु। निवुडुचुनुन्नवि निंडि योंडोंड;
होमंबु निर्विघ्नयोगमै यितडु। कामिंचुतेंरगुन गडमुट्टेनेनि ७११०
रावणु लोकविद्रावणु बोर। देवासुरुलकैन देगि गेल्वरादु;
कावुन होमविघ्नमु सेयवलयु। वे वेग वानरवीरुल बनुपु;"
मनवुडु रघुरामु "डगुगाक" यनुचु। वनिचिन बनिपूनि बलुविडि गडगि
गुरुबलाढ्युडु गवाक्षुंडु दारुंडु। शरभुडु ग्रथनुंडु शतबलि नलुडु
गवयुंडु मैंदुंडु गंधमादनुडु। बवमानसूनुंडु बनसुडंगदुडु
गुमुदुंडु ज्योतिर्मुखुंडु गोमुखुडु। ग्रममुन वीरादिगा गल कपुलु
पदिकोट्लुलुद्भट प्रथन विक्रमुलु। विदित प्रतापुलु विपुलकोपनुलु
गगनमार्गमुन लंककु नेगुदेंचि। यगणिताहंकारुलै पेंच्चु पेंरिगि
पदघट्टनमुल भूभागंबु वगुल। जदिय दिग्गजमुलु व्रदलु ग्रक्कदल
नार्पुलु बोंब्बलु नदर बेंल्लडरि। दर्पितनिर्भरोत्साहसाहसुलु ७१२०

अनुमति से इस प्रकार सुरुचिर-गरिमा (तथा) विक्रमशाली हो अति शीघ्रता से अब कपट-कर्म की आरम्भ-वृत्ति से विपुल जयार्थी हो हवन कर रहा है। देखा है न, आकाश में सर्वत्र व्याप्त हो धुआँ फैल रहा है। (यह) होम निर्विघ्नयोग से, इसकी इच्छा के अनुसार समाप्त हुआ तो, ॥ ७११० ॥

—लोक-विद्रावण रावण को युद्ध में देवासुर भी जीत नहीं सकते। अत: होम का विघ्न करना चाहिए। अति शीघ्रता से वानर वीरों को भेजो।" ऐसा कहने पर रघुराम ने 'ऐसा ही हो' कहते (कपियों को) भेजा। कार्य-व्यस्त हो, बरजोरी प्रयत्नशील हो, गुरु-बलाढ्य गवाक्ष, तार, शरण, क्रथन, शतबली, नल, गवय, मैंद, गन्धमादन, पवमान-सून, पनस, अंगद, कुमुद, ज्योतिर्मुख, गोमुख, आदि दस करोड कपि, जो उद्भट-प्रथन-विक्रमशाली थे, विदित प्रताप वाले थे, विपुल कोप वाले थे, गगनमार्ग से लंका में आकर, अगणित-अहंकारी हो, अधिक विजृंभित हो, पद-घट्टनों से भूभाग के विदीर्ण होने पर, दिग्गजों के दब जाने पर, आकाश के हिल जाने पर, सिंहनाद और गर्जनाओं के अधिक विजृंभित होने पर, उन दर्पित-निर्भर-उत्साह तथा साहस वालों ने, ॥ ७१२० ॥

नलिदाकि रावणुनगरि कापुन्न । बलियुर बेंक्कंड्र् बट्टि चेंडाडि
क्रूरुलै दौवारिकुल बट्टि चंपि । भूरिसत्त्वमुन दल्पुलु वीडदन्नि
नगरुद्दविडि जोंच्चि नगरूपधरुलु । नगचरुल् वडि दशाननु रोयुवारु
बृथुरथशाललु बिरुदुलै चोंच्चि । रथमुलु विरुग नुर्वर व्रेयुवारु
गजशाललोंगि जोंच्चि घनमुष्टिहतुल । गजमस्तकमुलु व्रक्कलु सेयुवारु
हयशाललोंगि जोंच्चि हयशरीरमुलु । भयदोग्ररवमुल बडव्रच्चुवारु
सोंरिदि शालल जोंच्चि जोडुपक्केरलु । दरमिडि चिंचि चिंदरलाडुवारु
व्रलमोंप्प नायुधशालल जोंच्चि । कलय शस्त्रास्त्रमुल् खंडिंचुवारु
नेचि बंडारपुटिड्लो जोंच्चि । राचि यर्थमुलु सूरलु सल्लुवारु
नुरुसत्त्वगतुलोंप्प नुप्पोंगि पोंगि । वरुस दोरणमुलु वडि द्रेंचुवारु ७१३०
बसिडि गोपुरमुलु भर्महर्म्यमुलु । वेंस नुर्वि गूल बल्विडि द्रोयुवारु
गट्टलक गोंदर गनि "जगद्द्रोहि । बट्टितें" डनि पट्टि बाधिंचुवारु
वनितलु सुतुलुनु वापोव गन्न । जननुलड्डमुराग सदनमुल् सोंच्चि
नेंट्टन वेंलिकीड्चि नेंरसि राक्षसुल । दट्टिंचि तललूड दाटिंचुवारु
वासिमै निंभंगि वनचरुल् गूडि । गासिवेंट्टुचुनुंडगा भीतिनोंदि

आक्रमण कर रावण की नगरी की रक्षा करनेवाले कई बली (राक्षसों) को पकड़ छिन्न-भिन्न कर दिया, क्रूर बन दौवारिकों (द्वारपालों) को पकड़ कर मार डाला, भूरिसत्त्व से लात मारकर दरवाजे तोड़ दिए । नगर में शीघ्र प्रवेश कर, नगरूप-धारी नगचरों में कुछ ऐसे थे जो झट दशानन को खोज रहे थे, पृथुरथशालाओं में वीर बन प्रवेश कर रथों को ज़मीन पर पटक दे रहे थे, क्रम से गजशालाओं में प्रवेश कर, घन-मुष्टि-हृतियों (आघातों) से गजमस्तकों को टुकड़े कर रहे थे, क्रम से हय-शालाओं में प्रवेश कर, हय-शरीरों को भयद-उग्र-नखों से फाड़ दे रहे थे, क्रम से शालाओं में प्रवेश कर, कवचों को क्रम से फाड़ कर बिखेर दे रहे थे, हठ से आयुधशालाओं में प्रवेशकर शस्त्र-अस्त्रों को खंडित कर दे रहे थे । विजृंभित हो भांडार-गृहों में प्रवेश कर वहाँ की सामग्री को बिखेर डाल रहे थे, उरु-सत्त्वगतियों से शोभित हो उमड़-उमड़ कर, क्रम से तोरणों को झट तोड़ दे रहे थे, ।। ७१३० ।।

—स्वर्ण-गोपुरों, भर्म्य (स्वर्ण) हर्म्यों (सौधों) को झट बलपूर्वक ज़मीन पर गिरा दे रहे थे, अतिक्रोध से कुछ (राक्षसों) को देखकर यह कह कि 'जगद्रोही को पकड़ लाओ' पकड़कर सता रहे थे, नारियों और सुतों के रोदन करने पर, जननियों के मार्ग रोकने पर घरों में प्रवेश कर, झट बाहर

दीनदशातुरस्थिति दूलपोयि । दानवु वीड़ु विध्वस्तमै कलगे;
हरिपीडितानेकहयहेषितमुलु । गरिघटानेक भीकर बृंहितमुलु
वृद्ध बालांगनाविल विलापमुलु । सिद्ध विक्रम कपिसिंहनादमुलु
गलय बर्विन लंक कल्पांतकाल । मुल बेर्चु बडबाग्निमुखमुखार्चुलकु
नुलिकि वापोवु पयोधि चंदमुन । गोलदि कग्गलमुगा घूर्णिल्ल
दोडगे; ७१४०

नंत सूर्योदयंबय्ये; रावणुनि । नंतट बरिकिंचि यतडुन्नचोटु
कानक चिंतिंचि कडुसंभ्रममुन । वानरुल् वेदकंग वारि वीक्षिंचि
चतुरतमै विभीषणु पत्नि सरम । पतिहितंबात्मलो भाविंचि यपुडु
विडिनंगदुनकु रावणुडुन्नचोटु । चिडिमुडिपाटुतो जेसन्न जूपे;
जूपुटयुनु जूचि सुभटदंभोळि । कोपिंचि यप्पुडग्गुहवातनुन्न
शिलनुग्गुगा दन्नि चेच्चेर जोच्चि । यलघुविक्रमकळायतकेलि वालि
पोलुपोंद भुजसत्त्वमुन बेंपु मीरि । कलगि राक्षसुलेल्ल गडुभीति बोंद
जनि होमनियति निश्चलुडैन वानि । घनमंत्रतंत्रसंगतुडैन वानि
रावणु समरविद्रावणु गांचि । "रावणु बोडगंटि; रंडु रं"डनिन

निकालकर राक्षसों को फटकार कर, सिर काट डाल रहे थे । इस प्रकार वनचरों के एक साथ सताते रहने पर, दानव का स्थान (लंकानगर) भीत हो, दीन-दशातुर-स्थिति से अपमानित हो, विध्वस्त हो व्यथित हो गया । हरि (कपि)-पीडित-अनेक-हय-हेषित, करिघटाओं के अनेक भीकर-बृंहित, वृद्ध (तथा) बाला-अंगनाओं के अखिल-विलाप, सिद्ध-विक्रमवाले कपियों के सिंहनाद (आदि) के खूब व्याप्त होने पर लंका, कल्पांत-काल में विजृंभित बड़बाग्नि मुख के मुखार्चियों के कारण तप्त होने वाले पयोधि के समान अधिकता से घूर्णित होने लगी ।। ।। ७१४० ।।

—तब सूर्योदय हुआ । सब जगह परिशीलन कर भी, रावण जहाँ था, उस स्थान को न जानकर चिंतित होकर, अरि-संभ्रम से वानरों के खोजते रहने पर, उन्हें देखकर, चतुरता से विभीषण की पत्नी सरमा ने पतिहित को मन में सोचकर, तब झट अंगद को इशारा करके सकपकाकर वह स्थान बताया जहाँ रावण था । दिखाने पर देखकर, सुभट-दंभोली (-इन्द्र) ने क्रुद्ध होकर तब उस गुफा के पास स्थित शिला चूर हो जाए, ऐसा लात मारकर, झट से प्रविष्ट होकर, अलघु-विक्रम-कलायत-केली से विराजमान होकर भुजसत्त्व से विजृंभित होकर, व्याकुल हो समस्त राक्षसों के भीत होने पर, जाकर, होम-नियति में निश्चल बने हुए (तथा) घन-मन्त्र-तन्त्र-संगत (-मग्न) बने हुए अमर-विद्रावण रावण को देखा । (देखकर) "रावण

ननिलतनूभवुंडादिगा गलुगु । वनचराधिपुलेल्ल वडि गूड मुट्टि ७१५०
यग्गुहारक्षकुलैन राक्षसुल । नुग्गुनूचमु सेसि नुतशक्ति मेरसि
योक्कड वेल्चुचुनुन्न यद्दनुजु । नक्कड बोडगनि यलुक दीपिंप
"दोडेव्वरुनु लेक तुदि नोंटिपडियें । दोडु वेलुत" मनि दोरकोनि कपुलु
सोरिदि नव्वेदिक चुट्टुलनुन्न । परिधुलु समिधलु बहुकलशमुलु
हस्तिकुक्कुट जंबुकाश्वोष्ट्र शुनक । मस्तकंबुलु घृतमधुपात्रततुलु
नरिमुरि बुच्चि होमाग्निलो वैचि। नेरसि यार्चिरि दैत्यनिकरंबु बेदर;
नप्पुडु पापात्मुनंगंबुलंदु । निप्पुलु सल्लियु निगुडि यंदंद
गुंडंबुलो मंडु कोरवुलु वट्टि । योंडोंड व्रेयुचु नुंडिरि कपुलु;
चेति स्रुक्स्रुवमुलु चैनसि रा दिगिच। वातूलसुतुडु रावणुनेसि डासे;
नित्तेरंगुन गपुलेचि कारिंप । जित्तंबुलो निष्ठ चेदरंगनीक ७१६०
किनियक कदियक कृतनिष्ठ नुंडे । गोनकोनि निद्रिंचु कोंडचंदमुन;

अंगदुडु मंदोदरिनि रावणुनोद्द कीड्चुकोनि वच्चुट

संगरक्रमकलासंगुडभंगु । डंगदुंडंगद नंचितांगदुडु

को देख लिया। आओ आओ।" कहने पर अनिल तनूभव आदि समस्त वनचराधिप झट एकत्र हुए, ॥ ७१५० ॥

—उस गुफा के रक्षक राक्षसों को चूर-चूरकर, नुत (प्रशंसित) शक्ति से प्रकाशित होकर, निरन्तर हवन करनेवाले उस दनुज को वहाँ देखकर, क्रोध के दीप्त होने पर, "किसी के साथ न होने पर अन्त में अकेला पड़ गया है। इसका भी हवन कर देंगे।" कहते लगकर, क्रम से उस वेदिका के चौतरफ स्थित परिधियाँ, समिधाएँ, अनेक कलश, हस्ति-कुक्कुट-जंबुक-अश्व-उष्ट्र-शुनक के मस्तक, घृत (तथा) मधुपात्रों के समूह को शीघ्र लेकर, होमाग्नि में डालकर सिंहनाद किया जिससे दैत्य-निकर (-समूह) भीत हो जाए। तब उस पापात्मा के अंगों पर अंगारे फेंककर, विजृंभित हो सर्वत्र (होम-) कुंड में जलते हुए मुराड़ों को लेकर कपि (रावण को) सर्वत्र मारते रहे। हाथ के स्रुक्स्रुवों को बलात् खींच लेकर, वातूलसुत ने उसे दे मारा। इस प्रकार कपियों के विजृंभित हो सताने पर भी, चित्त में निष्ठा को विचलित न होने देकर, ॥ ७१६० ॥

—क्रुद्ध न होकर, संकुचित हुए बिना निष्ठा लिए रहा, मानों सप्रयत्न सोया हुआ पर्वत हो।

अंगद का मन्दोदरी को रावण के पास खींच लाना

संगर-विक्रम-कला-संग (-मग्न), अभंग (दुर्जेय) (तथा) (बाहुओं)

नंत:पुरंबुन करिगि या दैत्यु । कांतानिवासंबु गरमर्थि जोच्चि
परिकिंचि रोहिणि बासिन चंद्रु । दरुणपल्लवशय्य दग जेर्चु करणि
गंदिन मुखचंद्रु गरपल्लवमुन । बोंदिंचि वगलचे बोगिलेंडिदानि
"घोरावहंबुन गुंभकर्णादि । वीरुलु सुतुलुनु विषमविक्रमुलु
नुक्किरंदरु; विभुंडोक्कड चिक्के। नेक्कटि रघुरामुनितडेमि गेलुचु ?"
ननि यनि रावणु नपजयंबुनकु । दन बंधुवुलु दानु दलकेंडुदानि
जित्तंबुलो निंद्रजित्तु चावुनकु । नोत्तिलि येड्चुचुन्नट्टिदानि
रमणीयमणिमंदिरमुन गोल्वुन्न । रमणि मन्दोदरि राजास्य गदिसि
७१७०

योलसिनगति राहुवोंडिसि पट्टुटकु । जलदिंदुमंडलचंद्रिक वोले
दिगिच्चिन बेडमरु दिरुगु वेगमुन । मृगनेत्रमोगमुन मेरुगुलु सेदर
नेरुगमितो गूड हृदयंबु गलगु । तेरगुन नलिवेणि दिगिचि पट्टुय्यु
गम्म सौरभमुलु गलुगु संफुल्ल । धम्मिल्लमल्लिकादाममुल् नलग
गेडगूडि रावणु कीर्तिपुष्पमुलु । गडिबोयि भुवि रालु कैवडि दोप
सेसमुत्तियमुल् सेलुवंबु वासि । गासिल्लि वसुधपै गनुकनि राल

में अंचित अंगद (भूषण) वाला अंगद अन्त:पुर में जाकर, उस दैत्य के कान्ता-निवास (स्थान) में इच्छा से प्रविष्ट हुआ। वहाँ रोहिणी से बिछुड़े चन्द्र को तरुण-पल्लव शय्या पर औचित्य से पहुँचा दिया हो, इस प्रकार सूजकर लाल बने मुखचन्द्र को, करपल्लव पर टिकाकर, वेदनाओं से व्यथित होनेवाली, "घोर-आहव (युद्ध) में कुंभकर्ण आदि वीर, विषम-विक्रम वाले सभी सुत मर गए। विभु (पति) अकेला फँस गया। अद्वितीय रघुराम को यह क्या जीतेगा ?" ऐसा सोच-सोच रावण की अपजय को (जानकर) अपने संबंधियों के साथ व्याकुल होनेवाली, मन में इन्द्रजित की मृत्यु के कारण अधिक रोदन करनेवाली, रमणीय-मणि-मंदिर (-भवन) में विराजमान रमणी मन्दोदरी को देखा। (देखकर) (उस) राजास्या (चन्द्रमुखी) के निकट जाकर, ॥ ७१७० ॥

—अलिवेणी (सुन्दर वेणी वाली) को पकड़ खींचने पर उस (मन्दोदरी) का, राहु के हाथ ग्रस्त चलत्-इन्दु-मंडल-चन्द्रिका के समान, उलटा घूम जाने के वेग में, मृगनेत्री के मुख के चमत्कृत हो जाने पर, अज्ञात (विपत्ति) के कारण हृदय विकल हो गया। (मन्दोदरी के) सुगन्ध से युक्त संफुल्ल-धम्मिल्ल के मल्लिका-दाम भुवि पर ऐसे गिरने लगे मानों रावण के कीर्तिपुष्प सौभाग्य खोकर गिर रहे हों। मांग के मोती सौन्दर्य खोकर पीडित हो, वसुधा पर संभ्रम से गिरने लगे, मानों शोभा खोकर रावण की

वलनेदि चैंडिन रावणु राज्यलक्ष्मि । चेलुवुन नेरि दप्पि सीमंतवीथि
गृतकंपु दैत्यलक्ष्मी-मुखांभोज । श्रितचंचरीकमुल् सेंदरु चंदमुन
नालोल - लोलमुखांभोजनील । नीलालकंबुलु नेरि दप्पि चैदर
नुरुमंगळंबुलै यौप्पेडि नात्म । वरभूषणमुलु रावणु लक्ष्मि चेवुल
७१८०

नुंडनि कैवडि नोंडोंड कर्ण । कुंडलंबुलु विडि कुंभिनि बडग
दनुजेशुनपकीर्तिधारलो यनग । गनुगव गाटुक कन्नीरु दोरुग
नोगि दैत्यपतिकि महोल्कलु डुल्लु । पगिदि भूषणमणिप्रकरमुल् डुल्ल
वरधर्म निर्मलावरणंबु दोरुग । निरवेदि रावणु निहपरोन्नतुलु
चलियिंचु तेरगुन जनुकट्टु दोलगि । चलियिप नुन्नत स्तनकलशमुलु
कोमरेदि सुरवैरिगुणवल्लि नुलियु । क्रममुन नेंतयु गौदीगै नुलिय
निर्मलुडगु रामनृपतिचे देगिन । कर्मबंधमुलु राक्षसलोकपतिकि
वदलु नीक्रियननु वडुवुन नीवि । वदलुचु मेखलावलि वीडुचुंड
ब्रमदराक्षसराज्य पदसंधि रोसि । विमलवर्णावलि वीडुचंदमुन
नुदितरावंबुलै योंडोंटि गडव । बदनूपुरमुलूडिपडि म्रोयुचुंड ७१९०

राज्यलक्ष्मी की शोभाहीन सीमंतवीथि से गिर रहे हों। कृतक (कपटी) दैत्यलक्ष्मी के मुखांभोज (मुख कमल) के आश्रित चंचरीकों के बिखरकर उड़ जाने के समान (मन्दोदरी के) आलोल-लोल-मुखांभोज के नील-नील-अलक बिखर गए। उरु-मंगलप्रद शोभित होनेवाले वर-भूषण रावण की लक्ष्मी के कानों में, ॥ ७१८० ॥

—रहना न चाहने के समान (मन्दोदरी के) कर्ण-कुण्डल टूटकर गिर पड़े। नेत्रद्वय से काजलयुक्त अश्रु ऐसे ढरक रहे थे मानों दनुजेश की अपकीर्ति की धाराएँ हों। मानों दैत्यपति के लिए महा-उल्काएँ गिर रही हों, इस प्रकार भूषणों के मणि-प्रकर (अपशकुन सूचक) गिर रहे थे। वर-धर्म का निर्मल-आवरण हट जाने पर, शोभा को खोकर रावण की इह-परलोक की उन्नतियाँ विचलित हो गई हों, ऐसा कंचुक के हट जाने पर (मन्दोदरी के) स्तन-कलश विचलित हुए। मनोज्ञता खोकर सुर-वैरी की गुणवल्ली (गुण-लता) मसल दी गई हो, ऐसा (मन्दोदरी की) तनुलता मसल गई। निर्मल राम-नृपति के कारण कटकर (राक्षसलोकपति के) कर्मबंधन मानों मुक्त हो जाएँगे, ऐसा नीवि के ढीली हो जाने पर मेखलावली छूट पड़ी। प्रमद-राक्षस-राज्य-पदसंधि चटककर विमल-वर्णावली को छोड़ देने के समान, (मन्दोदरी के) चरण-नूपुर छूटकर गिरकर मुखरित हुए ॥ ७१९० ॥

वैरचि राक्षसवधूवितति शोकिंप । जेरनुन्न निर्जरस्त्रीलुत्सहिंप
नीरसंबुन बट्टि यीडिचि तेच्चै । वारक राक्षसेश्वरुनि मुंदरिकि
नंत मंदोदरि यात्मेशु जूचि । यंतरंगमुन शोकाग्नुलु निगुड
"निद्रु गेलिचिन सत्वमेक्कड बोये? । जंद्रहासमु वाडि समसेने नेडु ?
फाल लोचनुतोड ब्रमथुलतोड । गैलासमैत्तिन गर्वमेंदडगे ?
मूडुलोकंबुलु मुनुमिडि गैलिचि । नेडेल तूलेंदु नी पेमि विडिचि ?
यिद्रजित्तुडु नन्नु निट बारवैचि । यिंद्रलोकंबुन केगक युन्न
नन्निट्लु चूचुने ? ना कोडुकुन्न । निन्नीचदुर्दश येनु बोंदुदुने ?
सिग्गु लज्जयु लेनि चैनटिवो! नन्नु । बगिंगचुचुन्नारु पगतुलिब्भंगि !
नी होममेटिकि? निष्ठ येमिटिकि । नाहुतुल् निन्नु बूर्णाहुति जेसे ७२००
बटुबुद्धिवै रामु बाणाग्नि बडुमु । कुटिल क्रियलकिक गौलदिगादुडुगु"
मन विनि दशकंठुडलुक दीपिंप । दन चेति याहुति धरणिपै वैचि
युरुतरंबगु निष्ठुरकोपाग्नि । बौरि धूमतोरणंबुलु वोनि बोमलु
मुडिवड समवर्ति मूर्तियै पेचि । कडकमै नत्युग्रखड्गमंकिंचि

—भीत हो राक्षस-वधू-वितति (राक्षस-स्त्री-समूह) के शोक करने पर, बन्दी बनी निर्जर-स्त्रियों के उत्साहित होने पर, अंगद क्रोध से राक्षसेश्वर के समक्ष, अवारित रूप से (मन्दोदरी को) घसीट लाया। तब मन्दोदरी ने आत्मेश को देखकर, अन्तरंग में शोकाग्नियों के प्रज्वलित होने पर (यों कहा)—"इन्द्र को जीतनेवाला (वह) सत्त्व कहाँ गया? क्या आज चन्द्रहास (की धार) कुंठित हो गई? फाललोचन के साथ (और) प्रमथों के साथ कैलास को उठाया था, वह गर्व कहाँ गया? पूर्व में तीनों लोकों को जीता था, आज अपने गौरव को खोकर क्यों अपमानित होते हो? यदि इन्द्रजित मुझे यहाँ ऐसा छोड़ इन्द्रलोक न जाता तो क्या वह मुझे ऐसा (इस दशा में) देख सकता था? यदि मेरा पुत्र होता तो मैं इस नीच-दुर्दशा को प्राप्त होती? लज्जा और अभिमान से रहित दुष्ट हो क्या? शत्रु इस प्रकार मेरा अपमान कर रहे हैं न? तुम्हारा होम किस लिए? निष्ठा किस लिए? आहुतियों ने तुम्हारी पूर्णाहुति कर दी है। ॥ ७२०० ॥

पटु-बुद्धिशाली होकर राम की बाणाग्नि में जा गिरो। कुटिल क्रियाओं का अवसर नहीं है। (इन्हें) छोड़ दो।" (ऐसा) कहने पर सुनकर, दशकण्ठ क्रोध के दीप्त होने पर, अपने हाथ की आहुति को पृथ्वी पर फेंककर, उरुतर-निष्ठुर-उग्र-कोपाग्नि के कारण धूमतोरण के समान गाँठ पड़ी (तनी हुई) भौंहों के साथ, समवर्ती के रूप से विजृंभित हो,

यतुलरत्नांगदु नंगदु व्रेसि । विततविक्रमुडिति विडिपिंचि पुच्चे;
वीडिन नेंरिवेणि वेंन्नुन जार । वाडिन मोमुतो वगलु दूलुचुनु
नंतःपुरंबुन करिगें दैत्येशु । कांत चिंतिचुचु गडु जिन्नवोयि;
यप्पुडु हनुमंतुडत्युग्रमुष्टि । दप्पक दशकंठु तल बिट्टु वोंडिचें;
ना वालिसूनुडु नंतलो देंलिसि । रावणु व्रेसि विक्रमकेलि व्रालें;
दोरंपुनेंत्तुट दोगि येंतयुनु । ग्रूरुडै जेवुरु गोंड चन्दमुन ७२१०
नतिघोर कोपाट्टहासंबु लेसग । नतुलसत्त्वोदात्तुडै दशाननुडु
नंगदु गदव्रेसें; ननिलनंदनुनि । भंगिचें निशितासि बटुशक्ति मेंरसि;
नलुनि नारसमुन नलुवोंप्प नोंचे; । नलवुन गजु नोंचें नंकुशनिहति;
मोंगि नीलु दंडिचें मुसलघातमुन । दग शक्ति शतबलिदर्पबु मापें;
बवितुल्यमुद्गरप्रदरमुल् वुच्चि । द्विविदुनि मैंदुनि व्रेसें; व्रेयुटयु
वानरवरुलु दुर्वारुलै तमदु । सेनल जोंच्चिरच्चेंरुवुगा; नप्पु
डनिलसूनुडु राघवाधीशुकडकु । जनि म्रोंक्कि हस्तांबुजंबुलु मोंगिचि
"रामावनीश्वर ! राक्षसेश्वरुनि। होमबु जेंडिचिति; मोंप्प वच्चितिमि"

साहस से अत्युग्र-खड्ग खींचकर, अतुल-रत्नांगद वाले अंगद को मारकर, वितत विक्रम वाले ने स्त्री (मन्दोदरी) को छुड़ा दिया। खुली हुई काली वेणी के पीठ पर फैल जाने पर, उदास मुख के साथ व्यथित होती हुई दैत्येश की कान्ता चिंतित होती हुई, मुँह छोटा करके अन्तःपुर में चली गई। तब हनुमान ने अत्युग्र मुष्टि से दशकण्ठ के सिर पर कठोर प्रहार किया। उस वालिसून ने भी उतने में होश में आकर रावण पर प्रहार कर विक्रम-केलि से विराजमान हुआ। अत्यधिक रक्त में ऊभचूभ हो, अधिक क्रूर वन, गेरुए पर्वत के समान, ।। ७२१० ।।

—अति-घोर-कोप के अट्टहास के साथ उमड़ने पर, अतुल-सत्त्वोदात्त बन दशानन ने अंगद पर गदा का प्रहार किया। निशित-असि की पटुशक्ति से प्रकाशित होकर अनिलनन्दन को पीड़ित किया। शोभा से नाराच से नल का दमन किया, अंकुश-निहति से गज का दमन किया, मुसल-घात से नील को दण्डित किया, उचित शक्ति से शतबलि के दर्प को मिटा दिया, पवि-तुल्य मुद्गर-प्रदर डालकर द्विविद और मैंद को मारा। मारने पर वानर-वर दुर्वार बन अपनी सेनाओं में जा प्रविष्ट हुए। तब अनिलसून ने राघवाधीश के पास जाकर, प्रणामकर, हस्तांबुज जोड़कर (कहा)—"हे राम-अवनीश्वर! राक्षसेश्वर के होम को बिगाड़ दिया। शोभा से (लौट) आए हैं।" ऐसा कहते सुन राम अतरंग में निरन्तर हर्षित हुए। वहाँ दैत्यपति भी

यनवुडु विनि रामुडंतरंगमुन । ननयंबु हर्षिंचे; नट दैत्यपतियु
गडुवेगमुन बोयि घनशोकवह्निन । नुडुकुचुनुन्न मन्दोदरि जूचि ७२२०

"यतिव! नी मनमुन नक्कटा! दैव— । कृत्यमुनकित शोकिंपनेमिटिकि ?
ननिसीन नेडु रामावनीनाथु । दुनिमेद; नटुगाक दुरमुलो नतडु
ननु समयिंचिन नलिनायताक्षि! । जनकनन्दन जंपि, साहसंबोप्प
वेवेग नग्नि प्रवेशंबु सेयु; नी" । वनुटयु निंति निजनाथु जूचि;

मन्दोदरि रावणुनिकि श्रीरामुनि माहात्म्यमु देल्पुट

"यो दशानन! नीकु युद्धमध्यमुन । रादु जयिंपग रघुरामदेवु;
नी वोक्कडवे येल ? नेरसि राघवुनि । देवासुरुलकैन दीरदु गेलुव;
नीमदि राजुगा निर्णयिंपकुमु । रामचंद्रुडु पुराणपूरुषुडु;
आमेटि तोल्लि मत्स्यावतारमुन । सोमकु निर्जिंचि श्रुतुलुद्धरिंचे;
घनमंथशैलंबु गमठमै यतडु । दनवीपु गुदुरुगा धरियिंचे दोल्लि;
भूमि वराहमै पोलुपोंदनेत्ति । रामुडु मुन्नु हिरण्याक्षु जंपे ७२३०
नतडु नृसिंहुडै यलुकमै दोल्लि । पतितु दैत्युनिजंपि प्रह्लादु गाचे;

अतिवेग से जाकर, घन-शोक-वह्नि में तप्त होती हुई मन्दोदरी को देखकर, ।। ७२२० ।।

—(बोला)—"हे नारी ! हाय ! दैवकृत के लिए मन में इतना शोक करना क्यों ? युद्धभूमि में आज राम-अवनीनाथ को मार डालूँगा । ऐसा न होकर युद्ध में वह मेरा संहार करेगा तो हे नलिनायताक्षी ! जनकनन्दना को मार डालकर, साहस के शोभित होने पर, तुम अग्नि-प्रवेश करो ।" (ऐसा) कहने पर नारी ने निजनाथ को देखकर,

मन्दोदरी का रावण को श्रीराम का माहात्म्य बताना

—(कहा)—"हे दशानन ! युद्ध-मध्य में तुम रघुराम-देव को जीत नहीं सकोगे । तुम एक ही क्यों ? देवासुर भी राघव को जीत नहीं सकते । अपने मन से राम को (केवल साधारण) राजा मत समझो । रामचन्द्र पुराण-पुरुष है । उस श्रेष्ठ व्यक्ति ने पूर्व में मत्स्यावतार में, सोमक का संहार कर, श्रुतियों का उद्धार किया । पूर्व में कमठ बन घन-मन्थ-शैल को अपनी पीठ पर सुघड़ता से धारण किया । शोभा से वराह बन भूमि को उठाकर, राम ने पूर्व में हिरण्याक्ष का वध किया ।। ७२३० ।।

—वह पूर्व में क्रोध से नृसिंह बन, पतित-दैत्य का वध कर प्रह्लाद की रक्षा की । रूठकर उसने वामनावतार में, चाहकर बलि से निवेदन (याचना)

नलिगि यातडु वामनावतारमुन। बलि नर्थिमै वेडि बंधिचे दोलि;
जमदग्निरामुडै जन्मिचि यतडु। विमलशौर्युनि गार्तवीर्युनि द्रुंचे;
लोलंबु लेरुग भूलोकमंतयुनु। ना कश्यप ब्रह्मकर्थितो निच्चे;
सन्नुतगति विरोचनु जंपिवैचे। मुन्नु मायारूपमुखुनि निर्जिचे;
जलधिमध्यंबुन जरणघातमुन। बलुविडि राक्षसपतुल रूपडचे;
लवणासुरुनि जंपे ललि बार्ष्णिहतुल। जवमार नी रामचंद्रुंडु मोदल;
नधिकुडै यातड यादिकालमुन। मधुकैटभादुल मर्दिचे नेसगि;
तनसत्त्वमंतयु दलकोन वच्चि। निनु जंपनिप्पुडु निष्ठमै बूनि
दिशल देजंबुलु दीपिप मेरसि। दशरथेश्वरुनकु दनयुडै पुट्टे; ७२४०
ना महामहिमु नत्यद्‌भुत क्रियल। नेमनि चेप्पुदु नेनु वाक्रुच्चि ?
यलघु विक्रम कळायतशक्ति मेरसि। बलियुडै यातडु बाल्यंबुनंदु
गौशिक प्रमुखदिक्पतुलेल्ल बोगड। गौशिकुंडोनरिचु क्रतुवु रक्षिचे;
शतसहस्त्रायुत संख्यलु गडव। नतनिचे बडसे दिव्यास्त्रसंततुलु;
जनकुडु मेच्च नार्जवमोप्प निलिचि। घनशक्ति विरिचे शंकरु
शरासनमु;
दैवयोगंबुन दनकु बट्टंपु। देविगा बूनि वैदेहि गैकोनियै;

कर, उसे बाँध डाला। जमदग्नि-राम (परशुराम) हो जन्म लेकर उसने विमलशौर्य वाले कार्तवीर्य का वध किया। लोक जान ले ऐसा समस्त भूलोक, उस कश्यप ब्रह्मा को प्रेम से दे दिया। सन्नुतगति से विरोचन को मार डाला। पूर्व में (उसने) मायारूपमुख का वध किया। जलधिमध्य में चरण के आघात से बरजोरी राक्षसपतियों को मिटा दिया। इस रामचन्द्र ने पूर्व में अतिशक्ति से बार्ष्णिहतियों से लवणासुर का वध किया। समधिक (शक्तिशाली) बन, उसी ने आदिकाल में विजृंभित हो मधु-कैटभ-आदियों का मर्दन किया। अपने समस्त सत्त्व को एकत्र कर, तुम्हारा वध करने के लिए, अब निष्ठा धारण कर, दिशाओं को तेज से दीप्त करते हुए, दशरथेश्वर का पुत्र हो जन्म लिया॥ ७२४० ॥

उस महामहिम की अद्‌भुत क्रियाओं का मैं कहाँ तक वाक् से वर्णन करूँ ? अलघु-विक्रम-कला की आयत शक्ति से दीप्त हो, बली बन उसने बाल्य में कौशिक (इन्द्र) आदि समस्त दिक्पतियों के प्रशंसा करने पर, कौशिक के क्रतु (यज्ञ) की रक्षा की। शतसहस्र संख्याओं से परे दिव्य-अस्त्र-संततियाँ उससे (कौशिक से) प्राप्त कीं। जनक के सराहने पर, आर्जव (ऋजुता) की शोभा से खड़े होकर, घन-शक्ति से शंकर शरासन को तोड़ दिया। दैवयोग से अपनी राजमहिषी के रूप में वैदेही को ग्रहण

सोमिंचि निजबल स्फुरणंबु सूपि । रामुडाभार्गवरामु भंगिंचें;
दन तंड्रि पनुपुन दपमोप्पबूनि । मुनिवृत्ति वनवासमुनकु नेतेंचें;
सन्नुतशक्तिमै जंपे विराधु । बन्नुगा बेचि शूर्पणख शिक्षिंचें;
नडुगुल ना दंडकारण्य भूमि । गडु बुण्यभूमिगा गाविंचें नतडु;
७२५०

खरदूषणादि राक्षसवीरवरुल । धर गूल्चें मरि चतुर्दशसहस्रमुल;
मारीचु दुनुमाडे माय बोनीक । घोररूपु गबंधु गूलंग नेसें;
नी गोंट्टुतनमेल्ल निलिपि धट्टिंचि । लागोप्प निन्नु वालमुन बंधिंचि
चतुरब्धि जलमुल ज्रलमुन मुंचि । यतुलसत्त्वक्रीड नडरि कारिंचि
विडिचिन या वालि वेस नोक्ककोल । बडनेसि सुग्रीवु बट्टंबु गट्टें;
नलवुमै दनदु बाणाग्निकीललनु । जलनिधि निंकिंचें जगमुलु मेच्चें;
गलनिलोपल गुंभकर्णु खंडिंचें । ज्रलमुन नखिलराक्षससमेतमुग;
समरंबुलोपल जंपे लक्ष्मणुडु । नमर, नत्यतिकायु नय्यिंद्रजित्तु;
नलुगडेन्नडुनु रामावनीनाथु; । डलिगिन निलुवरिंद्रादुलु नेदुट;
मदिमदि नुंडि या मनुजेशुदेवि । द्रिदशारि! वंचन दे नीकु जनुने ?
७२६०

किया । बढ़कर, निजबल-स्फुरण (स्तूर्ति) को प्रदर्शित कर, राम ने उस भार्गवराम (परशुराम) को विजित किया । अपने पिता के आदेश से शोभा से तप को स्वीकार कर मुनिवृत्ति से वनवास के लिए आया । सन्नुत शक्ति से विराध का वध किया, ढंग से विजृंभित हो शूर्पणखा को दण्डित किया । चरणों (चरण-स्पर्श) से दण्डकारण्य को उसने अतिपुण्य भूमि बनाया ॥ ७२५० ॥ —खरदूषण आदि चतुर्दशसहस्र राक्षस वीर-वरों को धरा पर गिरा दिया । माया के प्रभाव से जाने न देकर मारीच का संहार किया । घोर रूप वाले कबन्ध को गिरा दिया । तुम्हारे समस्त पौरुष को कुंठित कर, शोभा से तुम्हें अपनी पूँछ से बाँधकर, चतुरब्धि-जल में हठ से डुबोकर, अतुलसत्त्व-क्रीड़ा से विजृंभित हो (तुम्हें) सताकर छोड़नेवाले उस वालि को झट एक बाण से गिराकर, सुग्रीव का राजतिलक किया । जग सराहे, ऐसा अपनी बाणाग्निकीलाओं से सरलता से जलनिधि को सुखा दिया । युद्ध में कुंभकर्ण को हठ से अखिल राक्षसों के साथ खण्डित कर दिया । युद्ध में लक्ष्मण ने शोभा से उस अतिकाय को (तथा) उस इन्द्रजित को मार डाला । राम-अवनीनाथ कभी क्रुद्ध नहीं होता । क्रुद्ध हुआ तो इन्द्र आदि उसके समक्ष टिक नहीं सकते । हे त्रिदशारि ! उस मनुजेश की देवी को धोखे से लाना क्या तुम्हारे लिए उचित था ? ॥ ७२६० ॥

नीवेंरुंगवे रामु नित्यसत्त्वम्मु ! । नीवेंरुंगवे रामनृपु महत्त्वम्मु ?
रामु सत्त्वस्थिति रावण ! नीकु । नेमि पापमुननो येरुग जोप्पडदु;
नीविक रघुरामु निष्ठुर बाण । पावक ज्वालल भस्समै पडक
जनकनंदनतोड सकलराज्यंबु । नेनय राघवुनकु निम्मु वेवेग;
मरलि तपोवृत्ति मनमरण्यमुल । जरियित; मितिय चालु
भोगमुलु;
नीवु दीरिन नाकु नीतोड गूड । बावकु मुखमुन बडि कालरादु;
मुन्नु मा जनकुंडु मुदिमियु जावु । नन्नु वोंदकयुंड नाकिच्चे वरमु;
वरभोगमेनोल्ल; वलवदीत्रोव । तरमु गादिक, दुस्तरमु तद्वरमु;
सरमकु नोंडे, ना जनकजकोंडे । वरुवुडनै येनु वर्तिप वलसें"
ननवुडु दशकंठुडा कलकंठि । गनुगोनि पलिकें नुत्कटकोपुडगुचु
७२७०
"नितेल चिंतिप नेलनाग! नीकु ? । नितकु वच्चितिने येनु नेडु ?
चुट्टाल भृत्युल सुतुल सोदरुल । नेट्टन जंपिचि नेडिक नाकु
देवदानवभयोद्वृत्ति बोनाडि । यी वट्टि प्राणंबुलेल रक्षिप ?
दुरमुन निंद्रजित्तु वंटि कोडुकु । बरुलचे जंपिचि ब्रदुकनेमिटिकि ?
गरुडोरगामर गंधर्ववरुल । बोरिगोंटि; जेरिचिति वुण्यगेहिनुल;

—राम के नित्यसत्त्व को तुम नहीं जानते हो ? राम-नृप के महत्व को तुम नहीं जानते हो ? हे रावण ! पता नहीं तुम्हें किस पाप के कारण राम की सत्त्वस्थिति समझ में नहीं आती । आगे रघुराम के निष्ठुर बाणों की पावक ज्वालाओं में भस्म होकर गिरने से पहले तुम जनकनन्दना के साथ सकल राज्य राघव को अतिशीघ्र दे दो । हम अरण्यों में फिर तपोवृत्ति के लिए चले जाएँगे । ये भोग अब पर्याप्त हो गए है । यदि तुम्हारा अन्त हो जाए तो मुझे तुम्हारे साथ अग्नि में गिर नहीं मरना चाहिए । पूर्व में मेरे पिता ने मुझे वर दिया था कि जरा और मृत्यु मुझे प्राप्त नहीं कर सकेंगे । वर-भोगों को मैं नहीं चाहती । यह मार्ग समुचित नहीं है । उनका वर दुस्तर है । (मुझे) या तो सरमा की अथवा उस जनकजा की सेविका बन रहना पड़ेगा ।" ऐसा कहने पर दशकण्ठ ने उस दशकण्ठी को देखकर उत्कट कोप वाला होता हुआ कहा— ॥ ७२७० ॥

—"हे सुन्दरी ! अब तुम्हें चिन्ता करना क्यों ? क्या मेरी दशा इतनी (हीन) हो गई है ? सम्बन्धियों, भृत्यों, सुतों, सहोदरों को क्रूरता से मरवाकर, आज आगे मुझे देव-दानवों को भय उत्पन्न करनेवाली वृत्ति को छोड़कर, इन अल्प प्राणों की रक्षा करना क्यों ? युद्ध में इन्द्रजित जैसे पुत्रों

दपसुल जंपिति; दरुणि ! येनिक । दपसिनै पोयिन दपसुलु नगरे ?
कावु नी माटलु; कार्यबु तैरगु । भाविंपनेरवु पद्मायताक्षि !
ये नेल्लभंगुल निक राघवुल । बोनीक चंपुदु; भूमिज नीय
नारूढबलुडनै; यट्टुगाक येनु । श्रीरामु शरमुलचे जत्तुनेनि
नाकवासुलु मेच्च ना कोरुचुन्न । वैकुंठमेदुरुगा वच्चुनिच्चटिकि;
७२८०
ललन! नीवेटिकि ? लंकयेमिटिकि । दलकौन्न मुक्तिसत्पथमु गैकोंदु;
नेलनाग ! नीविक नेनु लेकुन्न । गल पुण्यलक्षण कळलेल्ल बासि
कमलबंधुडु लेनि कमलिनि वोले । गोमरारु शशिलेनि कुमुदिनि वोले
रेराजु लेनट्टि रेयुनु बोले । शारिक लेनि पंजरमुनु बोले
नेनयु गोयिल लेनि येलमावि वोले । दिनमणिलेनि या दिनमुनु बोले
नुंडुमु नी" वन्न नोंडाड वेरचि । युंडे मन्दोदरि युदरि लज्जिञ्चि;

रावणुडु मूडव सारि युद्धमुनकु वेडलुट

यंत दशग्रीवुडाहवोद्योग । संतोष पोषितोत्साहुडै मेरसि

को अन्यों से (शत्रुओं से) मरवाकर जीना क्यों ? गरुड-उरग-अमर-गन्धर्व-श्रेष्ठों को जीत लिया है, पुण्य-गृहिणियों को भ्रष्ट किया है, तपस्वियों को मार डाला है। हे तरुणी ! (ऐसा) मैं आगे तपस्वी बनकर जाऊँ तो तपस्वी (मेरा) उपहास नहीं करेंगे ? ये बातें नहीं होने की। हे पद्मायताक्षी ! (तुम) कार्य के विधान को नहीं सोच सकतीं ! अब मैं सब विधियों से राघवों को जाने न देकर आरूढ़ बलवाला मैं मार डालूँगा। भूमिजा को नहीं दूँगा। ऐसा न होकर, मैं श्रीराम के शरों से मर जाऊँगा तो नाकवासियों के सराहने पर, मैं जिस वैकुंठ की इच्छा कर रहा हूँ, वह यहाँ समक्ष आ जाएगा ॥ ७२८० ॥

हे नारी ! (उस हालत में) तुम क्यों ? लंका क्यों ? (आवश्यकता नहीं रहेगी।) इच्छित मुक्तिसत्पथ को प्राप्त करूँगा। हे सुन्दरी ! आगे मैं नहीं रहा तो तुम समस्त पुण्यलक्षण-कलाओं (सौभाग्य-चिह्नों) से रहित हो, कमलबन्धु (सूर्य-) हीन कमलिनी की तरह, सुशोभायमान शशिहीन कुमुदिनी की तरह, निशानाथ से रहित रात्रि के समान, शारिका से रहित पिंजड़े के समान, कोयल से रहित आम्रवृक्ष के समान, दिनमणि से रहित दिन के समान, रह जाना।" (ऐसा) कहने पर प्रत्युत्तर देने में डरकर, मन्दोदरी तप्त होकर, लज्जित हो रह गई।

रावण का तीसरी बार युद्ध के लिए निकल पड़ना

तब दशग्रीव ने आहव-उद्योग के सन्तोष से पोषित उत्साह से दीप्त हो,

यादित्युलडर ब्रह्मांडभांडंबु । भेंदिल्ल बटुरणभेरि वेयिंचि
कलह विक्रम कळाकलितुडै तिविरि । बलमुल बन्निप बडवाळ्ळ बनिचि
युदयार्कबिंब समुज्ज्वल प्रभल । बदिकिरीटंबुलु पदिलमै योप्प
७२९०
विनुतरत्न प्रभा विद्योतमान । घनकुंडलंबुल गर्णंबुलडर
नायतभुजशाखलन्नियु रत्न । केयूर कंकणांकितमुलै तनर
निरवोंद डाकाल निंद्रादिभयद । बिरुद भीषण गंडपेंडरमोप्प
गरमुलन्निट भीकर चन्द्रहास । शर शरासन गदा चक्रादुलमर
बटुरोषदृष्टि प्रभावह्नुलेंदु । जटुलंबुलै पर्व जनुदेंचि यपुडु
स्फुट बंधबंधुर षोडशचक्र । घटितकोटि द्वयघंटिकाराव
भयदोग्रसंफुल्ल भल्लूकचर्म । हयसहस्रोदग्रमगु रथंबेक्कि,
काकुत्स्थु शरमुल गडतेरि मीद । वैकुंठरथ मेक्कु वडुवु दीपिप
नेलकोनि रथकळानिधि कालकेतु । डलघुबलोदारु डातेरु गडप
दीपिंचु वेन्नेलतेटलै मीद । नेपारु गोडगुलनेकंबुलोप्प, ७३००
मंडित मार्तांडमंडल चंद्र । मंडलकबळनोन्मद समुद्योग

आदित्य त्रस्त हो जाएँ, ब्रह्मांड-भांड विदीर्ण हो जाएँ, ऐसा पटु रणभेरी बजवाकर, कलह-विक्रम की कला से कलित हो, चाहकर सेनाओं को एकत्र करने के लिए भटों को भेजा । उदयार्क बिंब के समान समुज्ज्वल प्रभाओं वाले दस किरीटों को सावधानी से रखकर, ।। ७२९० ।।

—विनुत-रत्नों की प्रभाओं से विद्योतमान-घन कुण्डलों के कर्णों में विलसित होने पर, आयत (विशाल) भुजारूपी समस्त शाखाओं के रत्न-केयूर-कंकणांकित हो विराजने पर, शोभा से इन्द्र आदि के लिए भयद-बिरुद भीषण वीरकंकण के बाएँ पैर में शोभित होने पर, सभी हाथों में भीकर चन्द्रहास, शर, शरासन, गदा, चक्रादियों के सजने पर, पटु रोष दृष्टि की प्रभा-वह्नियों के सर्वत्र चटुलता से व्याप्त होने पर, आकर, तब स्फुट-बन्ध-बन्धुर-षोडश चक्र, कोटि-द्वय घंटिकाराव से युक्त भयद-उग्र-संफुल्ल भल्लूक चर्म (की जीन) से युक्त उदग्र सहस्र हयों वाले रथ पर आरूढ़ हुआ मानों काकुत्स्थ के शरों से समाप्त होकर (मरकर) वैकुंठ के रथ पर आरूढ़ होने की गति-दीप्ति प्राप्त कर रहा हो । स्थिरता से रथ-कलानिधि कालकेतु अलघु बलोदार हो, उस रथ को चला रहा था । दीप्त निर्मल चन्द्रिकाएं हों ऐसा शोभित अनेक छत्र विराज रहे थे ।। ७३०० ।।

मंडित-मार्तांड-मंडल (तथा) चन्द्रमण्डल को कवलित करने के उन्मद-समुद्योग वाले राहुत्रय के समान वैभव से आकाश को चूमते हुए साहसी राहु

राहुत्रयमु वोलें रहि मिन्नुमुट्टि । साहसराहुमस्तक सुप्रशस्त
बिरुदध्वजंबुलाभीलमै मूडु । दरलंग बटपट ध्वनुलतो वेंडलें;
भेरि मृदंगादि भीमगंभीर । भूरिभांकृतुल नंभोधुलुप्पोंग
नुप्पोंगु कडकल नुर्वि गंपिप । नप्पुडु करुलुनु हरुलु देरुलुनु,
बलसमुद्भट महाभटकदंबमुलु । बलुविडि वेंडलें दिग्भागंबु निंड;
प्रळयकालमु नाटि भानुलभंगि । दलकोंनि वेंडलिरुदग्रुलै खड्ग
रोमुंडु वृश्चिकरोमुंडु सर्प । रोमुंडु नग्निवर्णुडु गय्यमुनकु;
नप्पुडंभोनिधुलन्नियु गलगें; । नप्पुडु लोकंबुलन्नियु बेंदरें;
नप्पुडु दिग्दंतुलन्नियु व्रालें; । नप्पुडु कुलगिरुलन्नियु वडकें; ७३१०

नेंडपनि कडकतो निब्भंगि वेंडल । नुडुवीथि सुरलु दारोंडोंड निंडि
रावणोद्यगसंरंभंबु सूचि । "देवारि यिट क्रिद देवदेवारि
योधुलपै बेंचि युद्वृत्ति नेंत्ति । क्रोधिंचि मिंचि पेकोंनि पोवुनाडु
नीरीति यी भावमीरणोद्योग । मी रोष मीवेषमेंन्नडु लेदु;
नेडु लक्ष्मणसमन्वितुनि राघवुनि । बोडिमितो दाकि पोराडकुन्ने !"
यनि रत्नमय विमानारूढुलगुचु । ननिमिषुलनिमिषुलै चूचुचुंड

के मस्तक (के चिह्न) से सुप्रशस्त बने तीन बिरुद ध्वजों के आभील बन फट-फट (की ध्वनियों से फहराने का अनुकरण) (रथ) चल पड़ा। भेरी-मृदंग आदि भीम गम्भीर भूरि-भांकृतियों से अंबोधियों के उमड़ने पर, उमड़ते साहस से उर्वी को कंपाते हुए तब करि, हरि (हय), रथ और बल-समुद्भट-महाभट-कदंब (समूह) बरज़ोरी दिग्भागों को भरकर निकल पड़े। प्रलयकाल के समय के भानुओं के समान अधिक उदग्र बन खड्गरोम, वृश्चिकरोम, सर्परोम, अग्निवर्ण युद्ध के लिए निकल पड़े। तब समस्त अंबोधियाँ क्षुब्द हुईं, तब समस्त लोक भीत हुए, तब समस्त दिग्दन्तियाँ झुक गईं, तब समस्त कुलगिरियाँ काँप उठीं ।। ७३१० ।।

—दुर्निवार साहस से इस प्रकार (रावण के) निकलने पर, उडुवीथि (आकाश) में देवता सर्वत्र भर गए और रावण के (युद्ध के लिए) उद्योग-संरभ को देखकर (सोचा)—"देवारि के पूर्व में देवदेवारि (इन्द्र) के योद्धाओं पर विजृंभित हो उद्वृत्ति से, क्रोध के बढ़ जाने पर, चढ़ जाते समय भी यह रीति, यह भाव, यह रणोद्योग, यह रोष, यह वेष कहीं नहीं (देखा) था। आज लक्ष्मण समन्वित राघव का साहस से सामना कर (क्यों) नहीं लड़ेगा !" (ऐसा) सोचते हुए रत्नमय विमानों पर आरूढ़ हो, अनिमिष (देवता) अनिमिष (अपलक) बन देखते रहे। (तब) निकट आकर वानर-बल (-सेना)

रासि वानर बलारण्यंबु गालप । गा सोंपुतो वच्चु कार्चिच्चु पगिदि
नडतेंचु नसुर सेनासहस्रमुल । बोंडगनि कपिवीरपुंगवुलेल्ल
नंगदुतो गूडि यट्टहासमुलु । वोंग नुप्पोंगि यूर्पुलु निंगि मुट्ट
दरमैन तरुलु नुद्धतमैन गिरुलु । गिरिश्रृंगमुलु गोनि गिरिसमाकृतुल
७३२०

दरमिडि बलुवडि दनुजसैनिकुल । दरुम नय्यिरुवागु दाकें नोंडोंटि
नक्षीणबलमु लेपारंग दाकु । दक्षिणोत्तरसमुद्रमुल चंदमुन;
नप्पुडु दानवुलासेनमीद । मुप्पिरिगोनि रोषमुलु मंडुचुंड
नार्पुलु जंकेलु नतुल हुंकृतुलु । नेर्पुलु गडकलु निंड नोंडोंड
कटमदोत्कट दतिघटल डीकोल्पि । पटु जवाश्वंबुल बलुविडि दोलि
यलवोप्प नरदंबु लर्रिमुर्रि वर्रपि । नलुगड गाल्वुर नलि गविर्यिचि
करवाल मुसल मुद्गर भिंडिवाल । परशु तोमर शर प्रास चक्रमुल
गनुकनि वैचियु गाडु वोंडिचियु । दुनिमियु मेरमियु दूलनेसियुनु
व्रच्चियु मोदियु वसुध गूल्चियुनु । ग्रुच्चियु गपुल बेकोंनि विदळिप
मोनसि वानर वीरमुख्युलु गडिमि । गिनिसि युद्भट रणक्रीडमै गदिसि
७३३०

युर्रिकि समीपमंदुन्न शैलमुलु । दरुचैन गिरिश्रृंगततुलु वृक्षमुलु

रूपी अरण्य को जला देने के लिए शोभा से आनेवाले दावानल के समान आनेवाले असुर-सेना-सहस्रों को देखकर समस्त कपिवीर-पुंगवों ने अंगद के साथ अट्टहासों से उमड़कर, सिंहनादों के आकाश को छू लेने पर, बड़े-बड़े वृक्षों, उद्धत गिरियों-गिरिश्रृंगों को लेकर गिरिसम-आकृतियों से, ।।७३२०।।

—क्रम से बरज़ोरी दनुजसैनिकों का पीछा किया। वे दोनों पक्ष सर्वत्र अक्षीण बलों के विजृंभित होने पर दक्षिण-उत्तर समुद्रों के समान जूझ पड़े। तब दानवों ने उस सेना पर त्रिगुणित रोषों से जलते हुए, सिंहनादों, धमकियों, अतुल हुंकृतियों, चतुरताओं, साहस से भरकर, सर्वत्र कट-मदोत्कट दंति-घटाओं को टकराकर, पटुजवाश्वों को बरजोरी चलाकर, शोभा से रथों को जल्दबाज़ी से चलाकर, चारों तरफ़ पैदल (सेनाओं) को (आक्रमण के लिए) भेजकर, करवाल-मुसल-मुद्गर-भिंडिवाल-परशु-तोमर-शर-प्रास-चक्रों को फेंककर, चुभ जाएं ऐसा चलाकर, काटकर, रौंदकर, गिराकर, चीरकर, प्रहारकर, वसुधा पर गिराकर, चुभोकर, (इस प्रकार) कपियों को विदलित किया। तब वानरवीर-मुख्य, साहस से क्रुद्ध हो, उद्भट-रण-क्रीड़ा से (राक्षस सेना के) निकट पहुँचकर, ।। ७३३० ।।

शिललु मॅंडुगबट्टि चॅलरेगि व्रेसि । तलमीरि गुर्रपुदळमुंल कुरिकि
युदितोग्रसत्त्वंबुलॉप्प गुप्पिंचि । कुदियंग रौतुल गूलदन्नियुनु
गरमुग्रुलै करिघटलपै गविसि । सॉरिदि शैलमुलॅत्ति जोदुलु बॅलुच
गुंभमध्यंबुल ग्रुंग नेनुगुल । गुंभिनि नॉक्कट गूलनेयुदुरु;
रथमुलतोड सारथुल रथ्यमुल । रथुल नॉक्कट नॅत्ति रणमध्यवीथि
बॅलुकुर नंदंद पृथिवि गंपिप । नलुवुन नट्टु व्रेसि नलिय जेयुदुरु;
धरणीधरंबुल दरुकदंबुमुल । नुरवडि गाल्वुर नुरुक मोदुदुरु;
करतुरु पंड्लनु; गरतलाग्रमुल । जरतुरु; पदमुल जदिय ब्रामुदुरु;
व्रत्तुरुज्ज्वलनखावलुल; वालमुल । मॉत्तुदुः रलतुरु मुष्टिघट्टनल; ७३४०

बनस नीलांगद प्रमुखुलु मरियु । वनचरवरुलु दुर्वारुलै यॅगसि
तनियनि कडिमि नुद्दंड दानवुल । मॉनलपै नाकसंबुन नुंडि निंडि
भूरिधाराधरंबुलु लयवेल । घोरनिर्घातमुल् गुरियुचंदमुन
गुरुशैलपाषाणकोट्टुलंदंद । कुरिय नुद्भट रणक्षोणि नॅल्लॅडल
गूलु नेनुंगुलु गुंभमध्यमुल् । व्रालु मावुतुलु बॅव्रालु टॅक्कॅमुलु
विरुगु विड्लुनु गूलु वीरराक्षसुलु । नॉरलु नश्वमुलु बॅनॉरगु रावुतुलु

दौड़कर, समीपस्थ शैलों, विरल गिरि-श्रृंगततियों, वृक्षों, शिलाओं को खूब पकड़कर, विजृंभित हो प्रहारकर, अश्वदल पर छलांग मारकर, उदित-उग्र सत्त्वों के शोभित होने पर कूदकर, घुड़सवारों को ऐसा लात मारते कि वे सिकुड़कर नीचे गिर जाते। अधिक उग्र बन करिघटाओं पर टूटकर, क्रम से शैलों को उठाकर (वे) योद्धा अधिकता से कुंभमध्यों पर ऐसा डाल देते कि हाथी एक दम कुंभिनी पर गिर पड़ते। सारथियों, रथ्यों, रथियों के साथ एकदम उठाकर रणमध्यवीथि में सर्वत्र भूमि के कंपित हो जाने पर पटककर मार डालते। धरणीधरों (पर्वतों) से तरु-कदंबों (समूहों) से झट पैदल सैनिकों (पर प्रहार करते), दाँतों से नोच लेते, करतलाग्रों से चपेटा मारते, चरणों से कुचलकर पीस डालते, ॥ ७३४० ॥

—उज्ज्वल नखावलियों से चीर डालते, पूँछों से प्रहार करते, मुष्टिघट्टनों से मारते। पनस, नील, अंगद आदि और अन्य वनचर वीर दुर्निवार हो, ऊपर उठकर, आकाश में व्याप्त होकर, अपार साहस से उद्दण्ड दानवों की सेनाओं पर, लयकाल के निर्घातों के बरसने के समान भूरि-धराधरों (बड़े पर्वतों) को बरसाते। गुरु-शैल (तथा) पाषाण कोटियों के सर्वत्र बरसने पर, उद्भट-रण-क्षोणि में सर्वत्र गिरनेवाले हाथी, कुंभमध्य में गिर पड़नेवाले

जद्रियु रथंबुलु समयु सारथुलु । जिदियु पीनुंगुलु जेंदरु मांसमुलु
बड्डु किरीटंबुलु बगुलु मस्तकमु । लडरु नेत्तुरुलु बेल्लवियु गात्रमुलु
दोलकाड्डु प्रेवुलु दुनियु खड्गमुलु । गलिगि यप्पुडु रणांगणमोप्पे जूड
बहुभोगपर्जन्य भाग्यंब पोले । महिताभ्र - मातंगमदसिक्तमगुचु ७३५०
नतिरौद्र रुद्रविहारंबपोले । हतगजासुर पिशाचानंदमगुचु
नक्षीणरामकटाक्षंब पोले । ब्रेक्षण हृष्ट विभीषणंबगुचु
गलियुगांत्योद्यग्रकालंब पोले । बलशून्य विध्वस्तबहुधर्ममगुचु
गतदोषसंफुल्लकमलिनि वोले । श्रितशिलीमुखपुंड्रीकौघमगुचु
जारु शुभोदारु सदनंब पोले । नारक्तघनमार्गणाकीर्णमगुचु
स्थिरपुण्य - मूलनदीभर्त बोले । हरिसत्त्वनिर्मथिताभीलमगुचु
ननघक्रमागम यागंब पोले । ननिमिषलोकर्चिताभीष्टमगुचु

महावत, उन पर टूट गिरनेवाले ध्वज, टूटनेवाले धनुष, गिर मरनेवाले वीर राक्षस, लोटनेवाले अश्व, उन पर गिरनेवाले अश्वारोही, पिस जानेवाले रथ, मृत होनेवाले सारथी, रौंदे जानेवाले शव, बिखरनेवाले मांस (के खण्ड), गिरनेवाले किरीट, फूटनेवाले मस्तक, फूट बहनेवाला रक्त, अधिक छिन्न-भिन्न होनेवाले शरीर, छितरनेवाली आँतें, टूटनेवाले खड्ग, (आदि) भरे हुए थे। (इनसे) युक्त हो तब रणांगण देखने में (ऐसा) शोभित हुआ मानो बहुभोग (विलसित) पर्जन्य (इन्द्र और मेघ) के भाग्य (संपत्ति) के समान महित-अभ्र-मातंग (ऐरावत, श्वेत गज) के मद से सिक्त था ।। ७३५० ।।

अतिरौद्र रुद्र-विहार (कैलास और श्मशान) की भाँति हत (मृत) गजासुर (एक राक्षस और गज एवं असुर) तथा पिशाचों को आनन्द दे रहा था। अक्षीण-राम-कटाक्ष के समान प्रेक्षण-हृष्ट-विभीषण (देखने में भयंकर, देखकर सन्तुष्ट बना विभीषण) था। कलियुग के अन्त के उदग्र-काल के समान बलशून्य-विध्वस्त-बहुधर्मवाला था। गतदोष-(निर्मल)-संफुल्ल कमलिनी के समान आश्रित शिलीमुख (भ्रमर और बाण)-पुंडरीक (कमल और श्वेत-छत्र)-औघ (-समूह) था। चारु शुभोदार सदन की भाँति आरक्त (अनुरक्त और रक्त से सींचा हुआ) घन-मार्गणों (-बाण और याचक) से आकीर्ण (पूर्ण) था। स्थिर-पुण्यमूल-नदीभर्ता (समुद्र) के समान हरि (साँप और कपि)-सत्व से निर्मथित होने के कारण आभील था। अनघ क्रम के आगम (वेद विहित)-याग की भाँति अनिमिष (देवताओं के)-आलोक (अवलोक) की चिन्ता का अभीष्ट (इच्छित)

नौप्पु ना रणमुलो नुग्रभावमुन । कुप्पतिल्लुचु सुरलोगि जूचुचुंड
दौडगि नेत्तुट दौप्पदोगि लो गलय । बड़ियुन्न प्रेवुलु पवडंपु बोदलु
रथमुलु यानपात्रमु; लूडिपडिन । रथ चक्रततुलु गूर्ममुल मौत्तमुलु;
७३६०

मौगिनुन्न शवमुलु मौसळ्ळुलु; गलय । देगिपड्डु भुजमुलु दीर्घसर्पमुलु;
नायुधरजमिस्मु; हस्तिसमूह । मायतशैलंबु; लतुलदंष्ट्रमुलु;
तिमितिमिंगिलमुलु; दीर्घघोटकमु । गमुलु समुल्लोक कल्लोलततुलु;
विविधाश्वलाललु वेलिनुर्वुलंदु: । धवळातपत्रसंततुलु हंसमुलु;
बहुकिरीट प्रभल् बडबाग्निशिखलु । महिमीद जेंदरिन मांसमुल्
मणुलु;
ब्रीत निशाचर प्रेतभेताळ । भूताट्टहासमुल् भूरि घोषमुलु
जंद्रुडु रघुरामचंद्रुडव्विभुनि । सांद्रहासद्युतुल् चंद्रिकलगुचु
नडरेडु रक्ताब्धि यब्धितो दौरसि । युडुवीथितो रासि युप्पोंगुचुंडे;
नप्पुडु हनुमंतु डसुरेशुमीद । नुप्पोंगि कवियु नुद्योगंबु सूचि
यचल निभाकारु डतिबलोन्नतुडु । रुचिर खड्गुडु खड्गरोमुंडु
गिनिस ७३७०

था। ऐसा शोभित उस रण में उत्पन्न उग्रभाव को देवताओं के क्रम से देखते रहने पर, रक्त में ऊभचूभ हो, (रक्त-प्रवाह के भीतर) पड़ी हुई आंतिड़ियाँ प्रवालों की झाड़ियाँ थीं, रथ नावें थीं, छूटकर गिर पड़े हुए रथ-चक्र-समूह कूर्मों के समूह थे, ।। ७३६० ।।

—क्रम से पड़े हुए शव मकर थे, कट पड़े हुए दीर्घभुज सर्प थे, आयुधों का चूर्ण सैकत था, हस्तिसमूह आयत (विशाल) शैल था, अतुल दंष्ट्राएँ तिमि और तिमिंगल थीं, दीर्घ-घोटकों के समूह समुल्लोक-कल्लोल (चंचल तरंगों की)-ततियाँ (समूह) थीं, विविध अश्वों की लार सफ़ेद फेन थी, धवल-आतपत्र (-छत्र)-संततियाँ (समूह) हंस थीं, बहुकिरीट-प्रभाएँ बाड़बाग्नि की शिखाएँ थीं, महि पर बिखर पड़े मांसखंड मणि थे, प्रीत निशाचर-प्रेत-बेताल-भूतों के अट्टहास भूरि गर्जनाएँ थीं। रघुरामचन्द्र ही चन्द्र था, उस विभु की सांद्र-हास की द्युतियां ही चन्द्रिका थी। (इस प्रकार) विलसित रक्ताब्धि अब्धि (समुद्र) की समता करते हुए, उडुवीथि (आकाश) को छूकर उमड़ रहा था। तब हनुमान के उमड़कर असुरेश पर टूट पड़ने का उद्योग करते देख अचल निभाकार, अतिबलोन्नत, रुचिर खड्ग वाले खड्गरोम ने क्रुद्ध होकर, ।। ७३७० ।।

खड्गरोमादि राचसुलु वानर वीरुलतो पोरि मडियुट

"यंदेंदु गडगेद ? वंदेलनीकु ? । निंदुरमनिलज ! येनुन्नवाड !"
ननवुडु गुप्पिंचि यतनिपै कुरिकि । तनुरोमशितखड्गधारल मुनिगि
योक भंगि वेडलि महोग्रुडै निगुडि । प्रकट सत्त्वोन्नति बवमानसुतुडु
कुलशैलमुनु बोलु कोंड जे बूनि । पेलुच नार्चुचु वच्चि पृथिवि गंपिप
वानिपै नुरुवडि वैचें; वैचुटयु । दानि वाडुरुरोमधाराभिहतिनि
खंडिचि प्लवगुल खंडिचिकोनुचु । दंडि नप्पवमानतनयु दाकुटयु
बावनियुनु महापर्वतंबेत्ति । वेवेग दानववीरुपै वैव
गुलिशधाराहति गूलु शैलंबु । पोलुपुनु गूलें नप्पुडु रक्कसुंडु;
सर्परोमुडु तीव्रसर्पोग्रुडगुचु । दर्पिचि कडकमै दाकि यंगदुनि
दनुरोमसर्पसंततुल नोप्पिप । घनमैन कडिमि नंगदुडु गोपिंचि ७३८०

ग्रद्दन लयकालकालुडै मंडि । यद्दैत्यु मस्तकंबरचेत व्रेय
दनुजुनि शिरमटु तद्दयु बगिलि । घनरक्तधारलोक्कट ग्रम्मुचुंड
रोषाग्नुलोलुकुचु रोमसर्पमुल । भीषणाकारुडै पेंचि यद्दनुजु

खड्गरोम आदि राक्षसों का वानर-वीरों से लड़कर मर जाना

—(कहा), "उधर किधर प्रयत्न कर रहे हो ? उधर तुम्हें क्यों ? हे अनिलज ! इधर आओ । मैं हूं।" ऐसा कहने पर छलांग भरकर, उस पर कूदकर, (उसके) तनुरोमों की शित (पैनी) खड्गधाराओं में डूबकर, एक (किसी) प्रकार से निकलकर, महोग्र हो तनकर प्रकट-सत्त्वोन्नति से पवमानसून ने कुलशैल-सम पर्वत को हाथ में लेकर, अधिक सिंहनाद करते हुए आकर, पृथ्वी के कंपित होने पर उस पर झट डाल दिया । डालने पर वह, उरु-रोम-धाराभिहति से (उस पर्वत को) खण्डित कर, प्लवगों को खण्डित करते हुए तीव्रता से उस पवमानतनय से टकराया । पावनी के भी महापर्वत को उठाकर अतशीघ्रता से दानववीर पर डाल देने से, कुलिश-धारा-हति से गिरनेवाले शैल के समान तब राक्षस गिर गया । सर्परोम, ने तीव्र-सर्पो से उग्र बनता हुआ, दर्पित हो साहस से सामना कर अंगद को तनुरोम-सर्प-संततियों से पीड़ित किया । महान् साहस से अंगद क्रुद्ध होकर, ॥ ७३८० ॥

—झट लयकाल का काल (पुरुष) बन, जलकर, उस दैत्य के मस्तक को हथेली से मारा तो उधर दनुज का शिर फूटकर घन-रक्त-धाराएँ एकदम प्रवाहित हुई । रोषाग्नियों के उमड़ने पर रोमसर्पो से भीषणाकार हो विजृंभित हो उस दनुज ने अंगद के अंग पर मर्मांतक रूप से प्रहार किया ।

डंगदुनंगंबुलदरंट नेय । नंगदुंडधिकरोषायत्तुडगुचु
नसुर शिरोमध्यमतिघोरमुष्टि । बसचेंड दाटिचि पडवैचि व्रोक्कि
तल द्रुंचि वैचि युद्धतशक्ति वानि । बलुविडि निर्गतप्राणु गाविंचें;
भीषणरणकळाभीलु नन्नीलु । रोषिंचि वृश्चिकरोमुंडु दाकि
घनविष ज्वाललोक्कट बिक्कटिल्ल । दनुरोम वृश्चिकततुल नंदंद
येचि नोंप्पिप सहिंपक नीलु । डाचि यद्दानवुनात्म गैकोनक
विरथुलै राक्षसवीरुलु परव । नुरुसालतरुवुन नुरवडि व्रेसें; ७३९०

व्रेसिन ननुजुडावृक्षंबु द्रुंचें । गासिल्लि विषरोमकंटकाग्रमुल;
द्रुंचिन गनुगोंनि तोरंपु गडिमि । नंचित जयशीलु डा नीलुडलिगि
घोर बाहाशक्ति गुशलुडै पेर्चि । भूरिशाखल नोप्पु भूजंबु वैरिकि
कोनि वच्चि वानि वक्षोवीथि व्रेसि । यनिमिषुलुप्पांग हृतजीवु जेसें;
भग्नारि वीरु डभग्नप्रतापु । डग्निवर्णुडु कडु नाग्रहवृत्ति
वडि महाटवुल दुर्वारत बेंचि । कडगि युग्रत नेर्चु कांचिच्चु करणि
नगणितस्फुट वह्नुलंगंबुलंदु । निगुडिंचि कोतुल नीरु सेयुचुनु
ब्रळयाग्निनयुनु बोलि परतेंचुचुंड । नलुकमै वीक्षिंचि यवनीश्वरुंडु

अंगद ने अधिक रोषायत्त (चित्त वाला) होता हुआ, असुर के शिरोमध्य भाग पर अति-घोर-मुष्टि से प्रहार कर, गिराकर, कुचलकर, सिर तोड़ देकर, उद्धत-शक्ति से बहिर्गत-प्राण (निर्जीव) कर दिया। भीषण-रण-कला में आभील उस नील पर रुष्ट होकर वृश्चिकरोम ने आक्रमण किया (और) एकदम घन-विष-ज्वालाओं के व्याप्त होने पर, तनु-रोम वृश्चिक-ततियों से जहाँ-तहाँ पीड़ित करने पर, सहन न कर नील ने उस दानव की परवाह न कर, विरथ हो राक्षस भाग जाएँ, ऐसा उरु-साल तरु को झट फेंक दिया ।। ७३९० ।।

—फेंकने पर दानव ने उस वृक्ष को विषरोमकंटकाग्रों से तोड़ दिया। तोड़ देने पर देखकर, अधिक साहस से अंचित-जयशील नील ने रुष्ट होकर, घोर-बाहुशक्ति से कुशल बन, विजृंभित हो, भूरिशाखाओं से शोभित भूज (वृक्ष) को उखाड़कर ले आकर, उसके वक्षस्थल पर डालकर, उसे हतजीव कर दिया, जिससे अनिमिष फूल उठे। भग्नारि-वीर (शत्रुभंजक), अभग्न (अकुंठित)-प्रतापवाले अग्निवर्ण के अधिक आग्रह (क्रोध)-वृत्ति से, झट महाटवियों में दुर्वारता से विजृंभित हो, लगकर उग्रता से जला देनेवाले दावानल की भाँति, अंगों में अगणित-स्फुट-वह्नियों के फैलकर, कपियों को भस्म कर देते हुए प्रलयाग्नि के समान आते देखकर, क्रोध से देखकर

बलिमुख प्रमुखुल परिभवक्रममु। दिलकिंचि करुणाविधेयुंडु गान
दलपुन नोर्वक दनुजुनुग्रतकु। दलयूचि दशकंठु तम्मुन कनियें; ७४००
"नो विभीषण! नाकु नूहिंप दैलिय। दी वच्चुचुन्नवाडेव्वडो चूड;
ना रावणु बंप ननिसेय गोरि। धीरुडै यनलुडेतेंचुचुन्नाडो ?
वीडोक राक्षसवीरुडो ? काक। वीडेव्व ? डेर्पड विनुपिपु नाकु!"
ननवुडु "देव ! वीडग्निवर्णुडु; । दनमेनि मंटलु दरिकोलिप वीडु
पर्वतंबुलनैन भस्मंबु सेयु; । गर्व दुर्वारु; डखंडविक्रमुडु"
ननिन नच्चेरुवंदि यर्कवंशजुडु। घनमैन वानि युग्रत जूचि यलिगि
वासवसुतुडंत वरुणास्त्रमेसे; । नेसिन नदि मिंट नेंडमीक निंडि
कप्पारु मेघमुल् गप्पि यार्भटमु। लुप्पोंग जडिवानलुडुगक कुरिसि
यलवेदि मंटल नार्चि पेल्लार्चि। खलु नग्निवर्णु नोक्कट नेल गूल्चे;
नालंबुलो नप्पुडग्निवर्णुडु। गूलुट गनुगोनि क्रूरुडै पेर्चि ७४१०
कोपंबु पेर्मि नक्षुल निप्पुलुरल। जूपुल लयकाल सूर्युडै मंडि
रामु गनुंगोनि राक्षसेश्वरुडु। "राम! नन्नेरुगवे ? रणमध्यवीथि

अवनीश्वर ने बलि आदि (राक्षस) प्रमुखों के परिभव-विक्रम को देखनेवाला करुणा-विधेय होने के कारण, मन से सहन न कर दनुज की उग्रता के कारण सिर हिलाकर, दशकण्ठ के अनुज से कहा— ॥ ७४०० ॥

—"हे विभीषण ! मुझे सोच-देखने पर भी समझ में नहीं आ रहा है कि यह आनेवाला कौन है। उस रावण के भेजने पर युद्ध करना चाहकर, धीर बन, वह अनल ही तो नहीं आ रहा है ? यह क्या कोई राक्षस वीर है ? नहीं तो यह कौन है ? मुझे सविवरण सुनाओ।" ऐसा कहने पर (विभीषण ने कहा)—"हे देव ! यह अग्निवर्ण है। अपने शरीर पर आग उभाड़कर यह पर्वतों को भी भस्म करता है। गर्व-दुर्वार है, अखण्ड-विक्रम वाला है।" (ऐसा) कहने पर अर्कवंशज (राम) चकित हुए। उसकी महान् उग्रता को देख रुष्ट हो वासवसुत (सुग्रीव) ने वरुणास्त्र डाल दिया। चलाने पर उसने (अस्त्र ने) आकाश में अन्तर दिए बिना भरकर, छत के समान मेघों को आच्छादित कर, संभ्रम के व्याप्त होने पर, निरन्तर मूसलधार वर्षा की। शोभा दूरकर, ज्वालाओं को बुझाकर, अधिक सिंहनाद कर, खल अग्निवर्ण को एकदम ज़मीन पर गिरा दिया। युद्ध में तब अग्निनर्ण के गिरते देख, क्रूर हो, विजृंभित हो, ॥ ७४१० ॥

—क्रोध की अधिकता से, आँखों से अंगारों के उमड़ने पर, देखने में लयकाल सूर्य के समान बलकर, राम को देखकर, राक्षसेश्वर ने (कहा)—"हे राम !

ग्रूर निष्ठुर वज्र घोर दुर्वार। धारा विदारितोद्धतकुलाचलुडु
देवेंद्रुडुद्वृत्ति देवसंघमुल। तो वच्चि येदिरिन द्रुंतु नेनाजि!
निन्नेल कैकोंदु? नीचकापेय। सन्नाहमे नन्नु साधिंचु नहह!
पदिलुडै मगपाडि पाटिंतु गाक! । तुदिमुट्ट नन्नु नेदर्कोंदु गाक!
त्रोचि शस्त्रास्त्रपंक्तुल नोंतुगाक! । येचि नी लावु नाकेरिगितु गाक!"
यनवुडु रघुरामु डादुरात्मकुनि। चैनटिमाटलु विनि चिरुनव्वु नव्वि
गंधसिंधुरमु घींकारमालिंचु। सिंधुरांतकमत्तसिंहंब पोलै
नूरकुंडुंट्यु महोग्रुडै किनिसि। या रामु तम्मुडय्यमरारि दाकि
७४२०

घोर नाराचमुल् गुरिय दद्बाण। धारल द्रुंचि यातनि लेक्कगोनक
येंतयु द्रोचि पेल्लेचि लंकेंद्रु। डंतकाकारुडै यरिमि पै दरिमि
भानुपै नडचु स्वर्भानुचंदमुन। भानुवंशाधीशुपै नप्पुडडरि
दारुण स्फुट वज्रधारानुकारि। नाराच ततुल नन्नरनाथु गप्पे;
गप्पिन नप्पुडाकाकुत्स्थुडलिगि। निप्पुलु रालेडु निष्ठुरास्त्रमुल

मुझे (मेरी सामर्थ्य को) नहीं जानते हो? रणमध्यवीथि में क्रूर-निष्ठुर-वज्र की घोर-दुर्वार-धारालों से विदारित-उद्धत-कुलाचल (कुल पर्वतों) वाले देवेन्द्र के उद्वृत्ति से देवसंघों के साथ आकर सामना करने पर भी युद्ध में (उसका) संहार कर दूँगा। तुम्हारी परवाह क्यों करूँगा? अहह, नीच कापेय (कपियों का)-सन्नाह (संरंभ, तैयारी) मुझे विजित करेगा? सावधानी से पौरुष से काम लो। अन्त तक मेरा सामना करो। दबाकर शस्त्रास्त्र-पंक्तियों से पीड़ित करो। विजृंभित हो अपनी सामर्थ्य मुझे बताओ।" ऐसा कहने पर रघुराम उस दुरात्मा के दुष्ट वाक्यों को सुनकर, मुस्कुराकर, गन्धसिंधुर (मत्तगज) के घींकार को सुननेवाले सिंधुरांतक-मत्त-सिंह के समान, चुप रहा। (तब) महोग्र हो, क्रुद्ध बन, उस राम के अनुज ने अमरारि का सामना कर, ॥ ७४२० ॥

—घोर नाराच बरसाए। (बरसाने पर) तद्वाण-धाराओं को खण्डित कर, उसकी (लक्ष्मण की) परवाह न कर, (उसे) अत्यधिक दबाकर, अधिक विजृंभित हो, लंकेंद्र ने अन्तक-आकारवाला बन, दबाकर-पीछाकर, भानु पर आक्रमण करनेवाले स्वर्भानु (राहु) की भाँति, भानुवंशाधीश (लक्ष्मण) पर अत्यधिकता से, दारुण-स्फुट-वज्र-धाराओं की-सी नाराचततियों से उस नरनाथ (लक्ष्मण) को ढक दिया। ढक देने पर, तब काकुत्स्थ (लक्ष्मण) ने रुष्ट हो, अंगारे

नुग्रुडै येयंग युद्ध मध्यमुन । निग्रहिंपग जोच्चें नैरसि रावणुड्डु;

इंद्रुडु मातलिचे श्रीरामुनकु रथमु बंपुट

ना समयंबुन ननियें मातलिकि । वासवुडारामवल्लभु जूचि
"देवहितार्थमै तिविरि राघवुडु । पोवक दनुजुतो बोरुचुन्नाडु;
वाडै पदातियै वसुधनुन्नाडु । वाडु रथस्थुडै वालु चुन्नाडु;
ऍंदु लोकोन्नतुंडितडु दुःखमुल । डिदि यक्कुमतिकि दिगुवनुन्नाडु ७४३०
वेद पल्लवमुल विहरिंचु सौख्य । वेदि कर्कश रणवीथि नुन्नाडु;
कमला मनोरथगतुल नुन्नतुल । नैमकॅडु सुखि नेल निलुचुन्नवाडु
इनकुलाधिपुनकु नी दिव्यरथमु । गौनिपौम्मु वेवेग गुंभिनि" कनुडु
ननिलमनोवेगमलरु नश्वमुल । गनकदंडाबद्ध घनकेतनमुल
महनीय रुचिरोरुमणि कदंबमुल । महितमै बालार्कमहिम दीपिप
दनरारु रथमु मातलि यॉप्पु मिगुल । गौनि वच्चि वेड्कतो गुंभिनि निलिपि,
या रामु मुंदर हस्तमुल् मौगिचि । यारूढ बलशालियै विन्नविंचें;

बरसानेवाले निष्ठुर अस्त्रों को उग्रता से चलाया। (चलाने पर तब) प्रकाशित हो रावण युद्धमध्य में निग्रह करने लगा।

इन्द्र का मातलि द्वारा श्रीराम के लिए रथ भेजना

उस रामवल्लभ को देखकर उस समय वासव (इन्द्र) ने मातलि से कहा—"देव-हितार्थ राघव दनुज के साथ जूझ रहा है। वह पदाति (पैदल) बन वसुधा पर खड़ा है। वह (रावण) रथ में विराजमान है। सब तरह लोकोन्नत है यह (राम)। यह दुखी बन उस कुमति से निम्न (स्थान) पर है ।। ७४३० ।।

वेद-पल्लवों पर विहार करनेवाला सौख्यवेदी कर्कशरणवीथि पर है। कमला के मनोरथ की गतियों के औन्नत्य को खोजनेवाला सुखी (अब) जमीन पर खड़ा है। अपने दिव्यरथ को इनकुलाधिप के लिए अतिशीघ्र कुंभिनी पर ले जाओ।" (ऐसा) कहने पर अनिल-मनोवेग से शोभित अश्वों, कनकदण्ड से आबद्ध-घन-केतनों, महनीय-रुचिर-उरु-मणि-कदंबों (समूहों) से महित बन, बालार्कमहिमा से दीप्त हो विराजित रथ को मातलि ने बड़ी शोभा से ले आकर, कुंभिनी पर ठहराकर, उस राम के समक्ष हाथ जोड़कर, आरूढ़ बलशाली हो निवेदन किया—"हे देव ! हे

"देव! राघव! धराधीश! समस्त। -देवताराध्य! वंदित भक्तसाध्य!
शर चाप कवचादि सन्नाह रथमु। बुरुहूतुडिदे नीकु बुत्तेंचिनाडु;
काकुत्स्थ! नीविक गौशिकु पनुपु। गैकोनि यी वज्रकवचंबु वूनि
७४४०

यी दिव्यरथमेक्कि यी यायुधमुल। नी दुर्मदांधुनि नेदिरि सांधिपु;
मेनु सारथिगाग निद्रुंडु सकल। दानवावलि गेल्चें धरणीश! तोल्लि"
यनवुडु विनि रामुडव्विभीषणुनि। यनुमतितो गूड नारथंबुनकु
वलगोनि वच्चि युज्ज्वलतनुप्रभलु। पोलयंग, नीरेडु भुवनंबुललर,
व्रदल नोक्कट बर्वं जयजयध्वनुलु। पोंदिवि शाखामृगंबुलु
नुरुवडि गमलाप्तु डुदयाद्रि जेक्कु। करणि ना रथमेक्कें गमलाप्तकुलजु
डप्पुडु नभमेल्ल नल्लाडुचुंड। नुप्पतिल्लुचुनुंडे नोंडोंड निंडि
शरदभ्र-संध्याभ्र-चय समानमुलु। गरुडोरगामरगण - विमानमुलु;
सरिचूचु सुरलु खेचरुलु गिन्नरुलु। परमसम्मदमुनु भयमु नुप्पोंग
"निदि पर्वतद्वंद्व; मिदि यब्धियुगळ। मिदि पावकद्वंय; मिदि
नभोयुगमु; ७४५०

राघव! हे धराधीश! हे समस्त देवताराध्य! हे वंदित भक्त साध्य! शरचाप कवच आदि के सन्नाह (संरंभ) से युक्त रथ को पुरुहूत (इन्द्र) ने यही तुम्हारे लिए भेजा है। हे काकुत्स्थ! अब तुम कौशिक के आदेश को स्वीकार, यह वज्रकवच धारण कर, ॥ ७४४० ॥

—इस दिव्य रथ पर आरूढ़ होकर, इन आयुधों से इस दुर्मदांध का सामना कर जीत लो। हे धरणीश! मेरे सारथी बने रहने पर इन्द्र ने पूर्व में सकल दानवावली को जीता था।" ऐसा कहने पर सुनकर राम ने उस विभीषण की अनुमति से, उस रथ के पास शोभा से आकर, उज्वल-तनु प्रभाओं के विलसित होने पर, चौदह भुवनों के प्रसन्न होने पर, आकाश में एक साथ जयजय ध्वनियों के व्याप्त होने पर, शाखामृगों के आकाश छूते उछलकूद (हर्ष की अभिव्यक्ति) करने पर, शीघ्रता से कमलाप्त (सूर्य) के उदयाद्रि पर आरूढ़ होने के समान कमलाप्त-कुलज उस रथ पर आरूढ़ हुआ। तब समस्त आकाश के कंपित होने पर सर्वत्र भरकर, शरदभ्र-संध्याभ्र-चय (समूह) सम गरुड़-उरग-अमर-गण के विमान झुंड बाँधे हुए थे। ठीक तरह से देखनेवाले सुर, खेचर, किन्नर अधिक सम्मोद तथा भय के उमड़ने पर (सोचने लगे कि)—"यह पर्वतद्वन्द्व है, यह अब्धियुगल है, यह पावकद्वय है, यह नभोयुग (युग्म) है, ॥ ७४५० ॥

कदिसि पोराडंग गविसॆंबो नेडु; । इदि समानस्कंध; मॆट्लौको !"
यनुचु
गंपिप जगमुलाकंपिप गिरुलु । गंपिप निरुवागु गंपिप गडगि
रण जयोदग्रुलै रामरावणुलु । रणजय व्यग्रुलै रामरावणुलु
कदिसिन, दृष्टि निर्घातपातमुल । जदिसिन मॆरुगुलु ज्रदलिपै जॆंदर
जॆलगॆ सेनल रॆंट सिंहनादमुलु; । गलगॆ नाकादि लोकंबुलन्नियुनु;
ना मेटि विलुकाड्रु नन्योन्य विजय । कामुलै रथचित्रगतुलॊप्पु मॆरय
दिनकरानलकल्प दीर्घ निर्घात । घनशातशरसमुत्करपरंपरल
गरमुलु गळमुलु गक्षमुलु भुजमु । लुरमुलु निटलंबु लूरुलु बरुलु
नेसि नॊप्पिंचुचु निरुवुरु गदिसि । त्रासुलै दॊरसि विलासुलै बॆरसि
यंपकय्यमु सेयुनप्पुडॊंडॊरुल । सॊंपु बॆंपुनु दॆंपु जूड नच्चॆरुवु; ७४६०
फलित विक्रम सम प्रारंभुलगुचु । 'दॊलगक चेतुलु दॊनलयम्मुलकु
जाचिरि तिविचिर संधिचिरेय । बूचिरि येचिरि पॊम्मंचु दॆलिय
राकुंडॆ; नप्पुडारामरावणुल । भीकर कर शराभीलवेगमुलु
गणनल क्रममुलु गडचि यंदंद । रणचंड कोदंड रवि मंडलमुल
ब्रॆंखच्चरांशुल बॆर्चि पुंखानु । पुंखंबुलगुट्यु बॊंकु गार्विचि

—आज मिलकर जूझने आये न ! यह समान स्कंध है । पता नहीं क्या होनेवाला है !" (ऐसा) कहते हुए वे कंपित हुए । जगत् के आकंपित होने पर, गिरियों के कंपित होने पर, दोनों पक्षवालों के कंपित होने पर, लगकर, रण-जयोदग्रबन राम (और) रावण, रण-जय-व्यग्र बन राम-रावण, जूझ पड़े । दृष्टि रूपी निर्घात-पातों से निकले अंगारों के आकाश पर बिखर पड़ने पर, दोनों सेनाओं में सिंहनाद परिव्याप्त हुए । नाक (स्वर्ग) आदि सभी लोक क्षुब्ध हुए । वे श्रेष्ठ धनुर्धारी, अन्योन्य-विजय के कामी (इच्छुक), रथचित्रगतियों की शोभा के प्रकाशित होने पर, दिनकर (तथा) अनल-कल्प (सम) दीर्घ-निर्घात (वज्र)-घन-शात-शर-समुत्कर परंपराओं से कर, कंठ, कक्षा, भुज, उर, निटल, ऊरु, पसलियाँ (आदि को) पीड़ित करते हुए, दोनों भिड़ते हुए, त्रस्त हो, (दूसरे को) त्रस्त करते हुए, बाणयुद्ध करते समय दोनों की मनोज्ञता, औन्नत्य, साहस देखने में आश्चर्यप्रद थे ।। ७४६० ।।

—फलित-विक्रम-सम-प्रारंभ वाले होते हुए (जब वे बाण चलाते तो) यह समझ में नहीं आ रहा था कि "कब हाथ तरकस में रखते, कब बाण निकालते, कब संधान करते, कब बाण छोड़ते ।" तब उन राम-रावणों के भीकर-कर-शरों का आभील-वेग गणना के क्रम को पार कर गया । वे

बाणबाणासन प्रौढलक्षीण । तूणीरुलेयुचो दोंडरि योंडोरुल
ब्रतिसेसि योंकटिकि बदियिटि वेनुक । नुतशक्ति दानिकि नूरिटि वनुक
वेनुकोनि दानिकि वेयिटि वेनुक । बनुगोनि दानिकि बदिवेलु वेनुक
नुडुगक दानिकि नोक लक्ष वेनुक । मुडुवक दानिकि मरि कोटि वेनुक
नेसिन शरमु मुन्नेसिन शरमु । रासि योंक्कट दाकु रामरावणुल; ७४७०

रावणुनि बाणमुलकु रामुडु प्रतिबाणमुलु वेयुट

नलिनप्पुडमरारि नारि सारिंचि । तलकोंनि देवगंधर्वबाणमुलु
परुवडि नेयंग बरतेंचुचुनिकि । बरिकिंचि चूचि यप्परमास्त्रवेदि
तडयक देवगंधर्वबाणमुलु । वडिनेसि पोंडिसेसे वसुधेशु; डंत
नलुकमै रावणुंडा रामुमीद । बलुविडि राक्षसबाणमेयुटयु
मिडिग्रुड्लु निडुदलै मेरयु कोरलुनु । सुडिगोन्न करकु जुंजुरु वेंड्रुकलुनु
नसदृशोन्नति मिचुनट्टि कायमुलु । बोंसग दानवरूपमुलतोड निगुड
गनुगोंनि रघुकुलाग्रणि यल्क मदिनि । दनरंग वैष्णवास्त्रमु ब्रयोगिंचि
तरणिदीधिति यंधतमसंबुनडचु । करणि राक्षसबाणगौरवंबडचे;

(बाण) रणचंड-कोदंड रूपी रविमंडल से लगातार किरणों के निकलने की बात को असत्य सिद्ध करते । बाण-बाणासन-प्रौढ तथा अक्षय-तूणीर वाले वे बाण-प्रयोग करते तो दोनों बराबरी से एक के पीछे दस (शर), नुतशक्ति से उसके पीछे सौ (शर), लगकर उसके पीछे हजार, चाहकर उसके पीछे दस हजार, न छोड़कर उसके पीछे एक लाख, न रुककर उसके पीछे एक करोड़ (इस प्रकार प्रतिशर) चलाते । ये सभी शर एक साथ राम-रावणों को लगते ।। ७४७० ।।

रावण के बाणों का राम द्वारा प्रतिबाण चलाना

तब अमरारि ने प्रत्यंचा साधकर, देवगंधर्व बाण चलाए। (उन बाणों के) आने की गति का परिशीलन कर, देखकर, उस परमास्त्र-वेदी ने अविलंब झट देवगंधर्व-बाण चलाकर वसुधेश ने (रावण के बाणों को) चूर कर दिया । तब क्रोध से रावण ने राम पर बरजोरी राक्षसबाण चलाया । वह उभरी आँखें, विशाल प्रकाशमान दाढ़ें, खुरदरे तथा घुंघराले बालों तथा असदृशता से उन्नत शरीरों से मुक्त दानव-रूपों से उभर पड़ा । (तो उन्हें) देखकर रघुकुलाग्रणी ने मन में क्रोध के व्याप्त होने पर वैष्णवास्त्र का प्रयोग कर, तरणि (सूर्य) की दीधिति (प्रकाश)

नंत रावणुडुरगास्त्रंबु विंट। नेंतयु संधिंचि येसें; नेयुटयु
ना महाबाणमुनंदु बाणमुलु। भीमसर्पबुलै पेंचि यंदंद ७४८०
पदियु निर्वदियुनु बंड्रेंडु रेंडु। बदुमूडु मूडुनु बदुनेनु नेनु
दललतो दललपै दळतळरुचुलु। गल महामणुलतो गडकमै बेंचि
गरुडवाहनुडनि काकुत्स्थुमीद। बरवसंबुन वच्चु पापदंडनग
ग्रदल नत्युज्ज्वलज्वाल लेल्लेडल। वेंदचल्लुचुनु वच्चु विधमु वीक्षिंचि
काकुत्स्थकुल - भर्त गारुडास्त्रंबु। गैकोनि संधिंचि कडिमि नेयुटयु
गडुकोनि गारुडाकार बाणमुलु। वडिनंदु ब्रभविंचि वसुध गंपिंप
वरपक्षसंघात वात विधूत। धरणीधरंबुलै तडयक निगुडि
नडुमन त्रुंचे नन्नागबाणमुल। नुडुवीथि सुरलुंडि युप्पोंगि यार्व;
वेंडियु ना दैत्यविभुनिपै नग्नि। कांडंबु निगुडिंचे गाकुत्स्थुडलिगि;
यदि धूमविस्फुलिंगाक्रांतदिशमु। नदि शिखादग्धासुराधीशवनमु
७४९०
नगुचु नेतेर सुरराति युग्र। मगु वारुणास्त्रमुद्धति नेयुटयुनु

के अंधतमस का दमन करने के समान, राक्षसबाण के गौरव का दमन किया। तब रावण ने उरगास्त्र (सर्पबाण) का धनुष पर संधान कर चलाया। चलाने पर उस महाबाण से निकलकर बाण भीमसर्प बन विजृंभित हो सर्वत्र, ॥ ७४८० ॥

—दस भी, बीस भी, बारह, दो, तेरह, तीन, पन्द्रह, पाँच सिरों (फणियों) से, फणियों पर उज्ज्वल कांतियुक्त महामणियों के साथ सप्रयत्न विजृंभित हो, काकुत्स्थ को गरुडवाहन मान कर अतिरोष से (उसपर) टूट पड़ने वाला सर्प-समूह हो, ऐसा आकाश में अत्युज्ज्वल ज्वालाओं को सर्वत्र बिखेरते हुए आनेवाले विधान को देखकर, काकुत्स्थकुल-भर्ता ने गारुडास्त्र को लेकर, संधान कर समर्थता से चलाया। उसमें से झट गरुड-आकार के बाण उद्भूत हो, वसुधा कंपित हो ऐसा वर-पक्ष-संघात (श्रेष्ठ पंखों के संघर्ष) से वात-विधूत (पवन से विचलित) धरणीधर (पर्वत) वाले बन, अविलंब तनकर, बीच में ही उन नागबाणों को, आकाशवीथि में, देवताओं के फूलकर सिंहनाद करने पर, खंडित कर दिया। और भी क्रुद्ध होकर काकुत्स्थ ने उस दैत्यविभु पर अग्निकांड (अग्निबाण) चलाया। वह (बाण) धूम-विस्फुलिंगों से दिशाओं को आक्रांत करनेवाला, वह शिखाओं (ज्वालाओं)से दग्ध किए असुराधीश-वन वाला था, ॥ ७४९० ॥

—(ऐसा) होते हुए आने पर सुरराति (रावण) ने उग्र वारुणास्त्र को उद्धति से चलाया। (चलाने पर) घन-समूह (मेघ-समूह) ने आकाश को आच्छादित

घनसमूहंबुलाकसमॅल्ल गप्पि । पॉनर शंपाजालमुल वान गुरिसि
यनल सायकमु पॅंपडच्चि गर्जिल्ल । गनुगॉनि रामु डाकांडंबु मीद
वायव्यशरमेसि वारिंचॅ; दनुजु । डायॅंड दंतिमुखास्त्रंबु बरपॅ;
दान बॅक्कगु दंतिततिगळद्बहुळ । दान जंबालित धात्रियै कदिय
श्रीरामुडुनु नारसिंहास्त्रमेसॅ; । बोरन दद्बाणमुन सिंहचयमु
दारुणतर सटाधारितसकल । नीरद निवहमै निजघोरनाद
चलितदिग्विरदमै चटुलत निगुडि । कुलिशोग्रनखमुल गुंभमुल् व्रच्चि
हस्तिसंतति द्रुंचॅ; नय्यॅड सुरलु । प्रस्तुति सेसि रा पार्थिवोत्तमुनि;

रावणुडु श्रीरामुनिपै शूलमु वेयुट

गलुषिंचि यप्पुडु कल्पांतवह्नि । तुलितमै मंटलु दॉलकाडुचुंड, ७५००
नालोक लोकभयंकराकार । शूलंबु गॉनि रामु जूचि रावणुडु
वसुमति गंपिप वारिधुल् गलग । दॅसल नेल्लंदु ब्रतिध्वनुल् सॅलग
बिट्टुलिक भूतमुल् बॅदर गट्टल्क । दट्टिंचि सिंहनादमु सेसि पलिकॅ;

कर, शोभा से शंपाजालों को बरसाकर, अनल-सायक के प्रताप का दमन कर, गरज उठा। (उसे) देख राम ने उस कांड (बाण) पर वायव्यशर चलाकर, निवारण किया। उस अवसर पर दनुज ने दंति-मुखास्त्र चलाया। उससे अनेक दंति-तति (-समूह) (अपने) गंड-स्थलों से (निकले) दान (मद-जल) से धात्री को जंबालित (कीचड से युक्त) करते हुए (श्रीराम पर) आक्रमण करने चली। श्रीराम ने भी नारसिंहास्त्र चलाया। उस बाण से (उद्भूत) सिंह-चय ने दारुणतर रूप से विदारित-सकल-नीरद-निवह (समूह) बन, अपने घोर-नाद (गर्जना) से दिग्विरदों (दिग्गजों) को विचलित करते हुए, चटुलता से बढ़कर, कुलिश-उग्र-नखों से कुंभस्थल चीरकर हस्ति-संतति का संहार किया। उस अवसर पर देवताओं ने उस पार्थिवोत्तम की प्रस्तुति की।

रावण का श्रीराम पर शूल चलाना

—क्रुद्ध हो तब कल्पांत-वह्नि सम बन, ज्वालाओं के छलकते रहने पर, ॥ ७५०० ॥

—आलोक-लोक-भयंकराकार वाले शूल को ले राम को देखकर, रावण ने वसुमति के कंपित होने पर, वारिधियों के क्षुब्ध होने पर, दिशाओं में सर्वत्र प्रतिध्वनियों के व्याप्त होने पर, अधिक चौंककर भूतों के भीत होने

"बन्नुगा राम ! यी पट्टुशूलवह्निन। निन्नु नी तम्मुनि नीरु गाविंचि
पोर निन्नेदिरिंचि पोराडिचन्न। वारि नारुल बाष्पवारि वारिंतु;
जूडुमु नी" वंचु शूलमंकिंचि। योडक रामुपै नंकिंचि वेंव
दानिपै रामुडुदग्रुडै किनिसि। वानलु कल्पांतवह्निन पै गुरियु
पुरुहूतुपगिदि नद्भुतशितास्त्रमुलु। गुरियंग नदि दान गुदियक वानि
नुऱक नीरुग जेसि युग्रवेगमुन। वऱतेंचुगति जूचि भानुवंशजुडु
देवेंद्रुडर्थि बुत्तेंचिन शक्ति। वाविरि गेकोनि वैचे; वैचुटयु ७५१०
नदि निर्गणद्घंटिकारावमगुचु। नदि विस्फुरत्पावकारंभमगुचु
नदि यक्षसुरखेचरानंदमगुचु। नदि राक्षसालोकनाभीलमगुचु
वऱलु मनोवेग-वायुवेगमुल। बऱतेंचु शूलंब भस्मंबु सेसें;
नप्पुडु रावणुंडलुक चित्तमुन। मुप्पिरि गोनग गार्मुकदशकंबु
धरियिंचि पेर्चि युदग्रुडै यार्चि। शरवृष्टि मुंचिन जननाथसुतुडु
तानेक कोदंडधरुडय्यु दुनिमे। वानि यस्त्रमुलेल्ल वारनि कडिमि;
मदमु मत्सरमुनु मानंबु ज्ञलमु। गदुर गन्नुल निप्पुकलु निव्वटिल्ल
रावणुडेंतयु रघुरामुमीद। वाविरि नम्मुल वानलु गुरिसि

पर, अधिक क्रोध से फटकार कर सिंहनाद कर, कहा— "ठीक ढंग से हे राम ! इस पट्टशूल-वह्नि से तुम्हें और तुम्हारे अनुज को भस्म कर, युद्ध में तुम्हारा सामना कर, लड़कर, मरे हुए (मेरे) लोगों की नारियों की बाष्प-वारि का निवारण करूँगा। देख लो तुम।" कहते हुए, शूल को उठाकर, भीत न होकर, राम पर फेंक दिया। उस पर राम ने उदग्र बन क्रुद्ध हो कल्पांत-वह्नि पर वर्षा बरसानेवाले पुरुहूत (इंद्र) की भाँति अद्भुत-शित-अस्त्र बरसाए। वह (शूल) उससे संकुचित न होकर, उन्हें सरलता से भस्म कर, उग्रवेग से आने लगा। उस गति को देख भानुवंशज ने देवेंद्र के प्रेम से भेजी शक्ति को लेकर क्रम से फेंका। फेंकने पर, ॥ ७५१० ॥
—वह निर्गल[1] (बेरोकटोक)-घंटिकाओं का आरव (ध्वनि) करते हुए, वह विस्फुरत्-पावक-आरंभ वाली होती हुई, वह यक्ष-सुर-खेचरों को आनन्द प्रदान करती हुई, वह राक्षसों के आलोकन में आभील होती हुई, (उस शक्ति ने) मनोवेग तथा वायुवेग से आनेवाले शूल को भस्म कर दिया। तब रावण ने मन में क्रोध के त्रिगुणीभूत होने पर, कार्मुक-दशक धारण कर विजृंभित हो, उदग्र हो, सिंहनाद कर, (राम को) शर-वृष्टि में डुबो दिया। जननाथ ने स्वयं एक कोदंड को धारण करने पर भी, उसके सभी अस्त्रों को दुर्निवार साहस से खंडित कर दिया। मद, मत्सर, मान, हठ के बढ़ने पर, आँखों से चिनगारियों के फूटने पर, रावण ने अधिकता

१. अर्गला-रहित।

कुदियनि कोपंबु कौलदिकि मिगुल । बदियिट मातलि बदियिट हरुल
विकलसत्त्वुल जेसि विषमास्त्रमोकट । ब्रकटंबुगा द्रुंचे बटुकेतनंबु; ७५२०
विपुल चिताभर विवशुलै तूलि । कपुलु नाकपुलु नोक्कट विन्ननैरि;
भुवनमुलु शंकिंचे; बुधुडु वेधिंचे । जवमुन रोहिणीशकटंबुनंदु;
बटुतर तेजंबु भयदंबुगाग । नट विशारवकु वच्चे नंगारकुंडु;
चटुलोग्रतर भंगि जलधुलुप्पोंग । नटदूर्मिमालिकल् नभमंदि पोरलें;
नेगयु नौवनिल निष्ठुर शिखलु । पोगल चंदमुगाग बोगयंग दोडगे;
नुग्रांशु बिंबंबु नोरयुचु वच्चि । युग्रदीप्तुलतो महोल्कलु डुल्लें;
नविरळतरतेज मट्टु मारुपडग । रवियुनु गड्डु मंदरश्मियै तोचें;

श्रीरामुन कगस्त्युडादित्य हृदय मुपदेशिंचुट

नलि नप्पुडेंचि मैनाकंबुवोलें । दलगक यंदंदु दशकंठुडेयु
शरवेगगति जूचि जनलोकनाथु । डरुदंदि चिंतिप नट नगस्त्युंडु
चनुदेंचि या रामचंद्रु नीक्षिंचि । "विनु महाभुजबलवीर !
यो राम ! ७५३०

से रघुराम पर क्रम से बाण-वर्षा की। कम न बने क्रोध से अधिक समर्थ बन दस (बाणों) से मातलि, दस से हर (अश्व) को विकल-सत्त्व बनाकर, एक विषम-अस्त्र से प्रकट रूप से पटुकेतन को खंडित कर दिया ॥ ७५२० ॥

—(उससे) कपि और नाकप विपुल-चिंता-भार से विवश हो लड़खड़ाकर, एकदम विवर्ण बने। भुवन शंकित हुए। बुध रोहिणी में पहुँचकर व्यथित करने लगा। पटुतर तेज के भयद बनने पर अंगारक तब विशाखा में आया। चटुल-उग्रतर भंगिमा से जलधियों के उमड़ने पर नटत् (नाचने वाली) ऊर्मि-मालिकाएँ नभ को छूकर व्याप्त हुईं। ऊपर उठनेवाले औरवानल-निष्ठुर-शिखाओं के धूम्र के समान अग्नि व्याप्त होने लगी। उग्रांशु (सूर्य)-बिंब से टकराती हुई, उग्रदीप्तियों के साथ महान् उल्काएँ गिरने लगीं। अविरलतेज की आड़ में पड़ जाने पर रवि भी अधिक मंद-रश्मि वाला (तेजोहीन) हो दिखाई दिया।

श्रीराम को अगस्त्य का आदित्यहृदय का उपदेश देना

—तब विजृंभित हो मैनाक की तरह न हटकर दशकंठ के द्वारा निरंतर चलाए जानेवाले शरों की वेग-गति को देखकर जनलोकनाथ चकित हो, चिंतित हुआ। तब अगस्त्य आए, रामचंद्र को देखकर कहा— "सुनो, महाभुजबल-वीर! हे राम! ॥ ७५३० ॥

विततंबुगा नाजि विजयंबु सेयु । नतिगोप्यमगुचुन्नयट्टि मंत्रंबु
नेलमितो नादित्यहृदयंबु हृदय । मलर ननुष्टिपुमवनीशतिलक !
यिम्महाजपमुन निप्पुडे नीवु । सम्मदंबडरंग शत्रुगेल्चेदवु;
इदियायुर्वोनरिंचु; निदि दुःखमणचु । निदि सर्वमंगळहेतुभूतंबु;
वेलय सुरासुरविनतुडै पोलुचु । जलजाप्तु बूजिप जनु नीकु नधिप!
यी लोकलोचनुंडेल्ललोकमुल । जाल रश्मुलु निंड जरियिंचुचुंडु;
ब्रह्मयु विष्णुंडु फाललोचनुडु । ब्रह्मकल्पादिनि भानुडैनाडु;
मदि सर्वदेवतामयुनिगा नेरिगि । कदनंबुनंदु नी कमलबांधवुनि
नेव्वडु कीर्तिंचु निपुसोंपार, । नव्वीरुनकु गल्गु नाहव विजय"
मनुचु नम्मुनिवरुंडाश्रमंबुनकु । जनुटयु ना सौरजपमाचरिंचि ७५४०
यप्पुडत्युन्नतुडै राघवेंद्रु । डुप्पोंगि रावणोद्योगंबु सूचि
घोरावलोकनाग्नुलु मंडुचुंड । भूरि धूम्रायत भ्रुकुटि निक्किंचि
पेरिगि रावणुरथाभीलघोटमुल । नुरुतरास्त्रंबुल नुग्रक नोंप्पिंचि
वरशरत्रयमु रावणु ललाटमुन । सरि ग्रुच्चि युरुरक्तसंसिक्तु जेसे;
नप्पुडु रक्तसिक्तांगुडै चूड । नोप्पे लंकेश्वरुंडोगि रामचंद्र

—वितत रूप से युद्ध में विजय प्रदान करनेवाला अतिगोप्य मंत्र, आदित्य-हृदय का प्रेम से, हृदय प्रसन्न हो, ऐसा हे अवनीशतिलक! अनुष्ठान करो। इसके महाजप के कारण अभी तुम सम्मोद की अधिकता से शत्रु को जीत लोगे। यह आयुप्रद है, यह दुख का दमन करता है, यह सर्वमंगलहेतुभूत है। हे अधिप! सुरासुर-विनत बने शोभित जलजाप्त की पूजा करना तुम्हारे लिए उचित है। यह लोकलोचन वाला (सूर्य) समस्त लोकों में अधिक रश्मियाँ भरते हुए विचरण करता है। ब्रह्मा और विष्णु (तथा) फाललोचन ब्रह्मकल्पादि में भानु हुए हैं। मन में (सूर्य को) सर्वदेवतामय जानकर, युद्ध में इस कमलबांधव का, शोभा से जो कीर्तन करता है, उस वीर को आहव-विजय प्राप्त होता है।" (ऐसा) कहते हुए वह मुनिवर आश्रम को गए। (तब) वह सौरजप करके, ॥ ७५४० ॥
—तब अत्युन्नत हो, राघवेंद्र फूल उठे। रावण के उद्योग (प्रयत्न) को देख, घोर-अवलोकन रूपी अग्नियों के बलते रहने पर, भूरि-धूम्र-आयत रूपी भ्रुकुटि को तानकर, बढ़कर (शक्तिसंपन्न बन), रावण के रथ के आभील-घोटकों को उरुतर अस्त्रों से पीडित कर, वर शरत्रय को रावण के ललाट पर ठीक गाड़कर (उसे) उरु-रक्त-संसिक्त किया। तब रक्तसिक्त-अंग वाला हो लंकेश्वर देखने में (ऐसा) शोभित हुआ मानों रामचन्द्र के

शर-वसंतागम-समय-संफुल्ल । तरुणारुणाशोक तरुव चंदमुन;
गुपितुडै यंत रक्षोभर्त रामु । विपुलवक्षंबेसे वेयि बाणमुल;
"नधम प्रयुक्तंबुलै सुरद्रोह । विधि कोर्सरिपक विषशक्ति मेरसि
निर्मलगुणयुक्ति नेडि बेडबासि । धर्मंबु विडिचि युद्धतशक्ति निगुडि
चनुदेंचि राघवेश्वरुनि नोंप्पिचि । चन नधोगति गाक सद्गति
गलदे ?" ७५५०

यनिन चंदंबुन नद्दशाननुनि । धनबाणमुलु वच्चि काकुत्स्थु गाडि
जगदद्भुतंबुगा जनि भूमि दूरि । तगुलक निगुडि पाताळंबु सोच्चें;
नुरुशरक्षतमुल नुरक पेल्लुब्बि । तोरुगु नेत्तुट दोप्पदोगि राघवुडु
ब्रळयकालाभील-पावक-ज्वाल । ललवुमै निट्लुंडु नन निंडि मंडि
मंडु चिच्चरकंटि मंटलुमिंट । नोंडोंड पर्वु कालोग्रुडो यनग
जंडतेजमुन ब्रचंडमार्तंड । मंडलकिरण समानासमान
मानित शरपरंपर लोलि बरपि । मानगर्वमु दोंटि मदमुनु नुडिपि
यनिसेय गालुसेयाडकयुंड । दनुवेल्ल जर्जरितंबुगा जेसि
पर्वेंडु रघुरामु बाणवेगमुन । निर्विण्णुडै युंडे निल्चि रावणुडु;

शर रूपी वसंतागम के समय संफुल्ल-तरुण-अरुण-अशोक-तरु हो। तब रक्षोभर्ता (राक्षसराज) ने कुपित हो राम के विपुलवक्ष पर हज़ार बाण चलाए। "अधम (व्यक्ति) से प्रयुक्त होकर, सुरद्रोह की विधि से विचलित न होकर, विषम शक्ति से दीप्त होकर, निर्मलगुण (गुण, प्रत्यंचा)-युक्ति से बिछुड़कर, धर्म को छोड़, उद्धत शक्ति से तनकर, आकर, राघवेश्वर को पीडित करने पर, अधोगति के अतिरिक्त (कहीं) सद्गति हो सकती है ?" ॥ ७५५० ॥

—मानों इस प्रकार उस दशानन के महान् बाण आकर, काकुत्स्थ के (शरीर में) गड़कर, जगदद्भुत रूप से बाहर निकलकर, भूमि में प्रवेशकर, न रुककर, तनकर, पाताल में घुस गए। उरु-शर-क्षतों से अधिकता से उमड़ने वाले रक्त में ऊभचूभ हो राघव, ऐसा बलकर यह बता रहे हों कि प्रलयकाल की आभील-पावक-ज्वालाएँ ऐसी होती हैं। अरुण नेत्रों में बलने वाले अग्निकणों के आकाश में भर जाने पर वे उग्र-काल के समान थे। (तब) चंडतेज से प्रचंड-मार्तंड-मंडल की किरणों के समान-असमान (तथा) मान्य शरपरंपराओं को क्रम से चलाकर मानगर्व (तथा) पूर्व के मद को दूर कर युद्ध किया तो (रावण) हाथ पैर हिला न सका। समस्त शरीर को जर्जरित कर जानेवाले रघुराम के बाणवेग के कारण रावण निर्विण्ण हो

दशरथसुतुडु प्रतापभास्करुडु । दशकंठु जूचि युदग्रुडै पलिकें; ७५६०

रामरावणुल परस्पराधिक्षेपणमु

"नेलरा! रावण! यिट्लु निर्विण्ण । शीलुडवै युंड जेष्टलु मऱचि?
'योडनेन्नडु' ननि युग्राहवमुल । नाडुदु बीरंबु, लवि येंदु बोयें?
बैरिगि मी यन्न गुबेरु गारिंचि । पऱनि चंदमुन बुष्पकमु देच्चुटयु
मऱि यरण्यमुलंदु ममु डागुरिंचि । चेऱगोनि लंककु सीत देच्चुटयु
निवि वीरकृत्यंबुले दशग्रीव! । यवि पौरुषमुलनि येल गर्विप?
वडि बुराकृतदोषवशुडवै चिक्कु । पडि नेडु ना दृष्टिपथमुन बडिति;
पडितिगाकिक नी प्राणमुल् गोनक । विडुतुने? निन्नेल विडुतुने लंक?
हरिहर ब्रह्मादुलड्डमैरेनि । बोरिगोंदु; बोनीनु; बोर साधितु;
रावण! नेडु नी रक्तमांसमुलु । सेविप जेयुदु जेलगि भूतमुल;
गष्टचित्तुड वतिकामातुरुडवु । दुष्टबुद्धिवि सुरद्रोहिवि गान ७५७०
वदिलमै निलुवक पाऱितेनियुनु । बोदिवि निन जंपुट पुण्यंबु नाकु;
नासन्नमृत्युडवैन नीतोड । नीसुमाटलु वलक निंक नेमिटिकि?

(निर्वेद को प्राप्त हो) खड़ा रहा। (तब) प्रतापभास्कर दशरथसुत ने दशकंठ को देखकर उदग्र हो, कहा— ॥ ७५६० ॥

राम-रावणों का परस्पर अधिक्षेपण

—"क्यों रे रावण! इस प्रकार चेष्टाएँ (अंग-संचालन) भूलकर निर्विण्ण-शील हो क्यों खड़े हो? 'कभी नहीं हारता' ऐसा उग्र-आहवों (युद्धों) में जो दंभपूर्ण वाक्य कहे थे, वे कहाँ गए? बढ़कर अपने अग्रज कुबेर का अपमान करके, पराए (व्यक्ति) के समान पुष्पक लाना और अरण्यों में हमें धोखा देकर सीता को लंका में लाना, क्या ये वीरकृत्य हैं? हे दशग्रीव! इन्हें पौरुष (पूर्णकृत्य) मानकर क्यों गर्व करते हो? झट पुराकृत दोष-वश हो, फँसकर आज मेरे दृष्टिपथ में आए हो। आए हो न! अब तुम्हारे प्राण लिए बिना छोड़ूँगा क्या? तुम्हें और लंका को क्यों छोड़ूँगा? हरि-हर-ब्रह्मा भी बीच में आएँ तो भी मार डालूँगा, जाने नहीं दूँगा। युद्ध में जीत लूँगा। हे रावण! आज विजृंभित भूतों को तुम्हारे रक्तमांस खिला दूँगा। क्रूरचित्त वाले हो, अतिकामातुर हो, दुष्टबुद्धि हो, सुरद्रोही हो अतः, ॥ ७५७० ॥

—सावधानी से खड़े न रहकर, भाग जाओगे तो भी पकड़कर तुम्हें मार डालना मेरे लिए पुण्य (का कार्य) है। आसन्न-मृत्यु बने

नी विक्रमंबुनु नी भुजाबलमु । नी वैभवंबुनु नेडु वापेदनु;
गलन नी तम्मुनि खरुडनुवानि । बोलियिंचुटेरुगवे भुवनभीकरुनि ?
निक नोक्कटि नीकु नेरिंगितु विनुमु। शंकिप वलवदु; जनकज निच्चि
शरणनु गाचेद समरंबु सेय । नुरुजयंबेदि ? नीकोटमि गाक !
यायुवु वरशक्ति नधिकंबु वडसि । मायाविधंबुलु मरि पेक्कुलेरिंगि
समरोग्र शस्त्रास्त्र सामग्रि गलिगि । यमरेंद्रुडादिगा नखिल दिक्पतुल
मूडुलोकम्मुलु मुनु गेलिचयुन्न । वाडि वीरुनि निन्नु वधियिंतु नेडु ।"
अनुचुन्न रघुरामु नत्युग्रभाष । लवलार्चुलै तन्नु नडरि काल्चुटयु ७५८०

नलुकमै नुलुकुचु नद्दशाननुडु । बलियुडा जानकीपति जूचि पलिकें;
"दुरमुन गोंदरु तुच्छराक्षसुल । बेरिगि चंपितिननि पेर्चेदु कडगि
नन्नेरुंगवु नीवु; ना लावुकोलदि । मुन्नेरुंगवु; नेनु मुनुमिडि तोल्लि
यतिलोक कृतुलैन यक्ष गंधर्व । पतुल देवतल दिक्पतुल बेक्कंड्र
बलुविडि गारिंचि भंगिंचि नोंचि । चेलगि वर्तितु विश्रृंखलवृत्ति;
समबल प्रौढि विचारिंपकेनु । समरंबुलो निन्न सरकु सेयुदुने ?

(मरने ही वाले) तुम्हारे साथ अब मुझे ईर्ष्यायुक्त वचन कहना क्यों ? तुम्हारे विक्रम को, तुम्हारे भुजबल को, तुम्हारे वैभव को आज नष्ट कर दूंगा। युद्ध में तुम्हारे अनुज खर नाम वाले का, भुवन भीकर का वध करना नहीं जानते हो ? अब एक और (बात) तुम्हें बताता हूँ, सुनो। शंका मत करो। जनकजा देकर शरण मांग लो, रक्षा करूंगा। समर करोगे तो तुम्हें अपजय के अतिरिक्त विजय कहाँ ? आयु, वरशक्ति (श्रेष्ठ शक्ति या वरों से प्राप्त शक्ति) अधिकता से प्राप्त कर, फिर अधिक माया-विधानों को जानकर, समर में उग्र शस्त्र-अस्त्र-सामग्री से युक्त हो। पूर्व में अमरेंद्र आदि अखिल दिक्पतियों को, तीन लोकों को जीतेनेवाले श्रेष्ठ वीर हो न, (ऐसे) तुम्हारा आज वध कर दूंगा।" (ऐसा) कहनेवाले रघुराम की भाषाएँ (वचन) अनल की अर्चियाँ बन, बढ़बढ़ कर (अपने को) जला देने पर, ॥ ७५८० ॥

—क्रोध से आशंकित होते हुए उस दशानन ने बली जानकीपति को देखकर कहा— "युद्ध में कुछ तुच्छ राक्षसों का अतिशयता से वध किया, यह कह सप्रयत्न विजृंभित होते हो। तुम मुझे नहीं जानते हो। मेरी सामर्थ्य के आधिक्य को नहीं जानते हो। मैंने पूर्व में अतिलोक-कृति अनेकों यक्ष-गंधर्वपतियों, देवताओं, दिक्पतियों को बरजोरी अपमानित कर, भंग कर, पीडित कर, विजृंभित हो विश्रृंखलता से आचरण किया है।

निन्नु नीतम्मुनि नेडाजि जंपि । कन्नुलपंडुवुगा जूचि कानि
यी लंक जौरनेनिक ने" नंचु मिंचि । कालाग्निकल्पुडै कडगि रावणुडु
महियु नाकसमुनु मंड राघवुनि । बहुदिव्य शस्त्रास्त्रपंक्तुल बौदिवे;
बौदिविन गोपिंचि भूपालुडेसे । बौदिगौनि प्रतिबाणमुलु सहस्रम्मु
७५९०
लप्पुडु रघुरामुडधिकसंतोष । मुप्पोंग रट्टिंचि युरुपराक्रममु
चॆनटियौ ताटक जीरिननाडु । मुनि यिच्चु दिव्यास्त्रमुल मदि दलप
दलपुलोननॆ वच्चि तम मूर्तुलॊप्प । विलसित जयलिंग विस्फुलिंगमुल
नमरदिव्यास्त्रंबुलवि वेलुंगुटयु । समुचितस्थिति वानि संधिंचि मिंचि
कोंडपै बिडुगुलु गुरियुचंदमुन । जंडत सव्यापसव्यंबुलेसि
तनियक मरियु नुद्धतशक्ति मीर । घनबाणचय वृष्टि गप्पि नॊप्पिंचि
कडकमै बोराडगा बोडसूड । नडुमीक दशकंठु नलि जिक्कु वरिचे;

रावणुडु मूर्छिल्लुट

ना रामु शरहति नवशुडै दनुजु । डा रथमध्यंबुनंदु व्रालुटयु

समबल-प्रौढता का विचार न करके क्या मैं समर में तुम्हारी परवाह करूँगा ? तुम्हें (और) तुम्हारे अनुज को आज युद्ध में मार डालकर, नेत्रपर्व रूप में देखे बिना इस लंका में अब प्रवेश नहीं करूँगा।" (ऐसा) कहते हुए, बढ़कर, कालाग्नि-कल्प (-सम) हो, सप्रयत्न रावण ने महि तथा आकाश के जल जाने पर राघव को बहुदिव्य शस्त्र-अस्त्र-पंक्तियों से परिवेष्टित कर दिया। कर देने पर क्रुद्ध हो भूपाल (राम) ने सहस्र प्रतिबाण चलाए ।। ७५९० ।।

—तब रघुराम ने अधिक संतोष (आनंद) के उमड़ने पर, द्विगुणित-उरु-पराक्रम से दुष्ट ताडका का संहार करने के दिन मुनि (विश्वामित्र) के दिए दिव्यास्त्रों का मन में स्मरण किया। स्मरण करते ही आकर वे अपने-अपने रूपों में शोभित हो, उन अमर दिव्यास्त्रों के विलसित जयलिंग-विस्फुलिंगों के साथ प्रकाशित होने पर, समुचित स्थिति से उनका संधान कर, बढ़कर, पर्वत पर गाज गिरने के समान चंडता से सव्य-अपसव्यों से (बाण) चलाकर, संतृप्त न होकर और भी उद्धत शक्ति के बढ़ने पर घन-बाण-चय-वृष्टि से आच्छादित कर, पीडित कर, साहस से युद्ध किया। देखने के लिए भी अवकाश न देकर दशकंठ को उलझा दिया।

रावण का मूर्च्छित होना

उस राम के शरहति (बाणों के आघात) से अवश बन दनुज रथमध्य में गिर गया। (उसे) देख, भीत हो कालकेतु घोराजि (भयंकर

गनुगोनि भीतुडै कालकेतुंडु । गोनिपोयॆ नरदंबु घोराजि वॆडल;
सुरलप्पुडॆंतयु जूचि यार्वग । दरुचरयूथमुल् दग नुत्संहिप ७६००
नोलसिन लावुमै नोककोंत वडिकि । बलशालि राक्षसपति मूर्छदेरि
प्रथन विक्रम सम प्रारंभुडगुचु । रथमुपै निलिचि सारथि जूचि पलिकॆ;
"ओरि! रामुडु नव्व उरुकीति द्रॆव्व। दॆरितयॆड दव्वु दॆत्तुरे" यनिन
"नोडिन वाडनै योंडॆ नी पगतु । गूडिनवाडैन कोनिराक गादु;
रथिकुसंकटमु सारथि गन्नचोट । रथमु मरल्चुट रणधर्ममॆंदु;
नट्टुगान दॆच्चिति" ननवुडुवानि । पटुविवेकमुनकु बलुमारु मॆच्चि
परमसम्मदमुन बसदनंबिच्चि । सुरवैरि यप्पुडु सूतु नीक्षिंचि
"रामुडुन्नाडदॆ ! रणमध्यवीथि । रामुनि रथमुपै रथमु बोनिम्मु"
नावुडु नरदमन्नरनाथु गदिय । द्रोव नक्कालकेतुडु बिट्टु वरपॆ;
दशकंठु दरनमुद्धति राग जूचि । दशरथसुतुडुमातलि जूचि पलिकॆ; ७६१०
"नदॆ! रावणुनि रथमरुदॆंचुचुन्न; । ददॆ ! मनरथमुनुनट बोवनिम्मु;
दृष्टि चलिपक तीव्र बाणमुल । दृष्टिच्चि वॆरवक तिरुगुडु वडक

युद्ध) से निकालकर रथ को ले गया। तब सुरों ने अधिक सिंहनाद किए और तरुचर-यूथ (समूह, सेना) अति उत्साहित हुआ ।। ७६०० ।।

उत्तम सामर्थ्य के कारण थोड़ी देर के बाद बलशाली राक्षसपति होश में आया। प्रथन (युद्ध)-विक्रम के सम-प्रारंभवाला होता हुआ रथ पर खड़े होकर सारथी को देखकर बोला— "रे! राम के उपहास करने पर, (मेरी) उरु-कीर्ति के नष्ट होजाने पर, रथ को इतनी दूर क्यों लाया है?" (ऐसा) कहने पर (उसने कहा)— "(युद्ध में) हारकर अथवा तुम्हारे शत्रु से मिलकर (स्वामीद्रोह करके) मैं ऐसा (रथ) नहीं लाया हूँ। रथिक के संकट को सारथी जब देख लेता है तब रथ को लौटा लेना सर्वत्र रणधर्म है। ऐसा होने से (रथ) यहाँ लाया हूँ।" ऐसा कहने पर उसके पटु-विवेक की कई बार सराहना कर, परम सम्मोद से पुरस्कार देकर, सुरवैरी ने तब सूत को देखकर (कहा)— "वही राम है न! रणमध्य-वीथि में राम के रथ के पास अपना रथ जाने दो।" ऐसा कहने पर रथ को कालकेतु ने बड़ी शीघ्रता से नरनाथ (राम) के पास चलाया। दशकंठ के रथ को उद्धत गति से आते देख, दशरथ-सुत ने मातली को देख कहा— ।। ७६१० ।।

—"वही रावण का रथ आ रहा है। हमारे रथ को भी उधर ही जाने दो। दृष्टि को विचलित किए विना, तीव्र बाणों को देख भीत हुए विना,

वदलक कुदियक वरुस बग्गमुलु । पदिलंबुगा बट्टि परपु रथ्यमुल;
मातलि! हयमुल मनसु नीवेरुगु; । दाततरथवेग मति विचित्रमुग
सारथ्यमोनर्रिपु; सकलंबु नीवु । नेरनियदि लेदु; नीकेमि चेप्प ?"
ननवुडु नपसव्यमगुत्तोव नात । डनिमिषारातिपै नरदंबु वरप
लोककंटकुडु त्रिलोक भीकरुडु । भूकंपमेसग नद्भुतशितास्त्रमुलु
रथमुपै गप्पि सारथि जिक्कु वरिचि । रथवाहमुल नोंचि रौद्रंबु मिचि
कांडमोक्कट विल्लु खंडिचि पेक्कु । कांडंबुलेसि राघवुनि नोंप्पिचें;
नोंप्पिप नोंच्चिच मनोवीथि नलुक । मुप्पिरिगोन नुग्रमूर्तियै कडगि
७६२०
देवेंद्रुडथि बुत्तेंचिन विल्लु । वाविरि रामभूवरुडेक्कुवेट्टि
नेरसिन घनशिंजिनीनादमुल । बरियलै ब्रह्मांडभांडंबु वगुल
दानवगर्वांधतमसंबुलणप । भानुभासुरमुलै परगु बाणमुलु
शतमुलु वेलु लक्षलु गोट्लु मरियु । शतकोटुलर्बुदसंख्यलु गडचि
वासव प्रमुखगीर्वाणुलुप्पोंग । नीसुन निंद्रारि नेसें; नेयुटयु
"गडु बापकर्मुंडु गण्टुडस्थिरुडु । वेंडमायमुल प्रोवु; वीनिलो नुनिकि

न भटककर, न छोड़कर, संकुचित हुए बिना लगाम को, क्रम से सावधानी से पकड़कर रथ्यों (अश्वों) को चलाओ। हे मातली! हयों के मन को तुम जानते हो। आतत-रथ-वेग के साथ अतिविचित्र रूप से सारथ्य करो। ऐसा कुछ नहीं जो तुम नहीं जानते हो। तुम्हें क्या बताऊँ?" ऐसा कहने पर अपसव्य मार्ग से उसने अनिमिष-आराति (देवताओं के शत्रु-रावण) पर रथ चलाया। लोक-कंटक, त्रिलोक-भीकर (रावण) ने, भूकंप उत्पन्न हो ऐसा अद्भुत-शित-अस्त्र चलाकर, (राम के) रथ को आच्छादित कर, सारथी को उलझाकर, रथवाहों (अश्वों) को पीडित कर, रौद्र में अधिक बन, एक बाण से धनुष को खंडितकर, अनेक बाण चलाकर, राघव को पीडित किया। पीडित करने पर, पीडित होकर, मनोवीथि (मन) में क्रोध के त्रिगुणीभूत होने पर; उग्रमूर्ति बन, सप्रयत्न, ॥ ७६२० ॥ —देवेंद्र के प्रेम से भेजे धनुष का राम-भूवर ने संधान किया। (करने पर) उत्पन्न घन-शिंजनी-नादों से दरारें पड़कर ब्रह्मांड-भांड विदीर्ण हो गया, दानवगर्व के अंधतमस का दमन करने के लिए भानुभासुर (सूर्य के समान प्रकाशमान) हो विलसित बाणों को जो शत, सहस्र. लाख, करोड़ और शतकोटि, अर्बुद-संख्याओं को पारकर चुके थे, वासव आदि गीर्वाणों के फूलने पर, ईर्ष्या से इंद्रारि पर चलाए। चलाने पर, यह सोचकर कि 'यह अधिक पापकर्म वाला है, क्रूर है, अस्थिर है, वक्र मायाओं की राशि है,

धर्मप्रयुक्तमै दनरेंडि मनकु । धर्मबुगा" दनि तलपोसि रोसि
पोवुपोलिक नुच्चि पोवुचुनुंडु । रावणु गौनि काडि रामु बाणम्मु
"लेंडलेदु; रावणुंडिलगूलुनिक; । नडलकुंडिटमीद" ननि मुदंबोदव
धरणिकि सुरलकु धरणिनंदनकु । बौरि बौरि नेरिंगिप बोवुचंदमुन
७६३०

नौक कौन्नि धरणिकि नौक कौन्नि दिविकि । नौक कौन्नि लंककु
परुवडि बोवु
बावकोग्र प्रभाभासमानमुलु । रावणु गौनि काडि रामुबाणमुलु
नेरसि यित्तेरगुन निबिडंबुलगुचु । नरिमुरि जडिगौन्न यंपवानलकु
देरलक मरलक दिविजारि दिविरि । धरणीशु नुरुशरोत्करमुल नोंचे;
घनबाहु विक्रमक्रम कलापमुल । बेंनगिरिब्भंगि नभेद्यविक्रमुलु
समसत्त्व समवेग समबाणविभव । समसमरारंभ चतुरुलै कदिसि;
बलमुल नेर्पुल बाहुगर्वमुल । दुलदूगि यिद्दरु दुरमुलोपलनु
नेरसिर्न किनुकलु निडि यौंडोंड । चेरविडि पोराडु सिंगंबुलनग
नेडहोरात्रंबुलेपु दीपिंप । रूढि बोराडिरारूढ विक्रमुलु;
अत्तरि रावणुनरदंबु मीद । नेत्तुरु वर्षिंचे निल्चि मेघमुलु ७६४०

इस (के शरीर) में रहजाना धर्मप्रयुक्त हो शोभित होने वाले हमारे लिए धर्म (उचित) नहीं है' घृणा कर, चले जाने के समान, रावण के शरीर में घुसकर, राम के बाण पार निकल जाते। (ऐसे निकल जाते) मानों यह कह कि "अब देर नहीं है, अब रावण धरा पर गिर जाएगा, अब आगे भीत मत वनो" धरणी को, सुरों को, धरणीनंदना (सीता) को पुनः पुनः बताने जारहे हों ।। ७६३० ।।

—(इस प्रकार) राम के पावक-उग्र-प्रभा-भासमान बाण रावण के आर-पार हो कुछ धरणी में, कुछ दिवि को, और कुछ लंका को शीघ्रता से निकल जाते। इस प्रकार घने बनकर, शीघ्रता से मूसलधार बाण-वर्षा से घिरकर, क्षुब्ध न बनकर, पीछे न लौटकर, दिविजारि ने लगकर धरणीश को उरु-शरोत्करों (प्रचंड बाणों) से पीड़ित किया। इस प्रकार अभेदविक्रम वाले (राम-रावण) घन-बाहु-विक्रम-क्रम-कलाप से जूझकर, समसत्त्व, समवेग, सम-बाण-विभव, सम-समरारंभ-चतुर हो लड़ते रहे। बल, चातुर्य, बाहुगर्व में सम बन दोनों आरूढ-विक्रम वाले युद्ध में अधिक क्रोध से पूर्ण हो, सर्वत्र मानों क़ैद से मुक्त सिंह हों, ऐसा उत्कर्ष के दीप्त होने पर, सात अहोरात्र (दिन रात) स्थिरता से लड़ते रहे। उस अवसर पर, खड़े रहकर मेघों ने रावण के रथ पर रक्त की वर्षा की ।। ७६४० ।।

घनरथाश्वमुल तोकल निप्पुलुरिलें; । निनरुचिच्छायलनेकंबुलय्यें;
"निलुववु, चच्चेंदु नेडु नी" वनुचु । बलिकें रावणु जूचि बलिसि
भूतमुलु;
"गेलिचेंदु राघवक्षितिप! नी' वनुचु । वलनोप्प नाकाशवाणि भाषिचें;
दनकेंन दुर्निमित्तमुलट्टु चूचि । यनिमिषारातियु नास वोविडिचि
धृतिपेंपु दीपिंप दिविरि काकुत्स्थु । नतिशातशरमुल नडरि नोंप्पिंचि
करवालमुलु महागदलु शूलमुलु । बरिघलु शक्तुलु प्रासमुल् वेंचें;
वेंचिन वानिपें वज्रसन्निभमु । लें चंडकालानलाकृतुलेंन
सांद्रार्धचंद्रास्त्रचय मेंसि राम । चंद्रुंडु नडुमन चक्कु गाविंचें;
ना रावणुंडप्पत्युदग्रतनु । घोर नाराचमुल् गुरियिंचें मरियु;
ज्वलमुन राघवेश्वरुडुनु वानि । नलि नर्धचंद्र बाणमुलेसि त्रुंचें;
७६५०
नारीति निरुवुरु नन्योन्यसमर । धीरुलें जयकांक्ष देंगि पोरुचुंड
समरंबुलो नद्रिचर निशाचरुलु । दमतम युद्धसाधनमुलु गोंनुचु
रणविचक्षणुलेंन रामरावणुल । रणकेळि गनुगोंचु रणकेळि मेंरचि
परुवडि जित्ररूपंबुलो यनग । नरुदंदि चूडंग नद्दशाननुडु

—घन-रथाश्वों की पूँछों से अंगारे झर उठे, इन-रुचि (सूर्य-प्रकाश) की अनेक छायाएँ हुईं। भूतों ने बली बनकर रावण को देखकर कहा— "बच नहीं सकोगे, आज तुम मर जाओगे।" आकाशवाणी ने प्रेम से कहा— "हे राघव-क्षितिप (-राजा)! तुम जीतोगे।" अपने लिए हुए दुर्निमित्तों (अपशकुनों) को उधर देख, अनिमिष-आराति ने भी आशा छोड़कर, धृति के आधिक्य के दीप्त होने पर, सप्रयत्न काकुत्स्थ को अतिशात शरों से विजृंभित हो सताया। करवाल, महागदाएँ, शूल, परिघाएँ, शक्तियाँ, प्रास (आदि) फेंके। फेंकने पर उन्हें वज्र-सन्निभ और चंडकालानल आकृतियों वाले सांद्र-अर्द्धचंद्र-अस्त्र-चय चलाकर, रामचंद्र ने बीच में ही चूर कर दिया। उस रावण ने तब अति-उदग्रता से घोर-नाराच बरसाए और हठ से राघवेश्वर ने उन्हें क्रम से अर्द्धचंद्र बाण चलाकर खंडित कर दिया ॥ ७६५० ॥

इस प्रकार दोनों के अन्योन्य-समर में धीर बन जयकांक्षा से लगकर युद्ध करते समय, समर (भूमि) में अद्रिचर (और) निशाचर अपने-अपने युद्ध-साधनों को (हाथ में) लेकर, रण-विचक्षण राम-रावणों की रणकेलि को देखते हुए (स्वयं) रणकेलि को भूलकर, पुनः पुनः आश्चर्य से ऐसे दिखाई पड़ रहे थे मानों चित्र रूप थे। वह दशानन अपनी मृत्यु को

तन चावु निक्कंबु दार्नेरिगियुनु । गिनिसि रामुडु दन गेलुपेरिगियुनु
नेंतयु गडकतो निरुवुरु ज्ञलमु । लंतकंतकु नेक्कुडे पोरुतन्निनि
गनलि कालानलकल्पुडै रोष । मुन गन्नुगवल निप्पुकलुप्पतिलग
निद्रारि रथकेतुविल गूल्चे राम । चंद्रुंडु निशिताधंचंद्रबाणमुन;
ना रावणुंडुनु नधिकरोषमुन । घोर बाणमुल नेक्कोनि रथाश्वमुल
मातलि नेयु ना मार्गण निहतु । लाततांबुज नाळहतुल चंदमुन ७६६०
ना राघवेंद्रुनि ना तुरंगमुल । सारथि नोंप्पिप जालकयुंड
हासंबुलुनु नट्टहासमुल् सेलग । वासिग गपुलु रावणुनि मार्कोनिन
दरुचरसेनपै दनमाय मेंड्रसि । सुरकंटकुडु महाशुगवृष्टि गुरिसें;
गुरिसिन दद्बाणकोटुलचेत । दरुचरुल् जडिसि; रत्तड्रि रामविभुडु
सारथि रथ रथ्यसहितुगा दैत्यु । भूरिमार्गणमुल बोंदिवि नोंप्पिप
दशरथसुतुनिपै दशकंधरुंडु । विशिख जालंबुल वृष्टिगा नपुडु
कुरिसिन गनुगोनि घोर बाणमुल । नरुदुगा संधिंचि यमरुलु वोंगड
नतनि नाकाशंबु नवनीतलंबु । नतिरयंबुन रामुडम्मुल गप्पें;
बगलेल्ल नम्मुल पंदिरि नीड । नोंगि रात्रि शरदीप्ति नुडुगक युंडि

स्वयं तथ्य मान कर, क्रुद्ध राम अपनी विजय को जानकर, अत्यधिक प्रयत्न से दोनों के अधिकाधिक हठ के साथ लड़ते समय, क्रुद्ध हो कालानलकल्प बन, रोष के कारण नेत्रद्वय में चिनगारियों के उत्पन्न होने पर रामचंद्र ने निशित-अर्द्धचंद्र बाण से इंद्रारि के रथ के केतन को धरा पर गिरा दिया। वह रावण भी अधिक रोष से घोर बाणों का संधान कर, रथ के अश्वों तथा मातलि पर (बाण) चलाने लगा। वे मार्गण-निहतियाँ (बाण-प्रहार) आतत-अंबुज-नाल-हतियों (-प्रहारों) के समान होकर, ॥ ७६६० ॥

—राघवेंद्र के तुरंगों (तथा) सारथी को पीड़ित न कर सके। हास और अट्टहास के विजृंभित होने पर शोभा से कपियों ने रावण का सामना किया तो तरुचर सेना पर अपनी माया से दीप्त होकर सुरकंटक (रावण) ने महा-आशुग-वृष्टि की। बरसाने पर तद्बाण-कोटियों से तरुचर भीत हुए। उस अवसर पर रामविभु ने सारथी-रथ-रथ्यों के साथ दैत्य को भूरि-मार्गणों से घेर कर पीड़ित किया। (तब) दशरथसुत पर दशकंधर ने विशिख-जालों की वृष्टि की। तब (उसे) देखकर घोर-बाणों का अनुपम रूप से संधान कर, अमरों की प्रशंसा करने पर, उसके (रावण के) आकाश और अवनीतल को अतिशीघ्र राम ने बाणों से ढँक दिया। सारा दिन बाणों के वितान की छाया में, रात को शरदीप्ति के अनारत

तनरु महेंद्रमंदरमहीधरमु । लोनरु धैर्यबुन नोप्पुचंदमुन ७६७०
नलि दिरंबै निल्चि नभमुतो नभमु । जलधितो जलधियु सरि बोरु करणि
"रामरावणुल संग्रामंबुतोड । रामरावणुल संग्रमंबै पोलु"
ननुटकु दगि महोदग्रकोपमुलु । दनरार निरुवुरु दर्मकिंचि पोर
जलद-गर्जित-धनुर्ज्याघोषमुलनु । गलहनिष्ठुर-शर-घट्टनध्वनुल
जितवर्मसमरोग्रसिंहनादमुल । जतुररथाश्वहेषाविरावमुल
नुदधुलु घूर्णिल्लें; नुल्कलु डुल्लें; । द्रिदशुलुप्पोंगिरिः दिक्कुलल्लाडें;
बेंगडें भूतंबुलु; पृथिवि गंपिंचें; । दिगिभंबुलूटाडें; दिरिगें लोकमुलु
नगमुलु वडकें; बन्नगभर्त दलकें; । नगणित प्रौढि निट्लरिमि पोराडि
कडकलु विडिचि युग्रतलुडिंग कोंत । दडविट्रुनु बाहुदर्पमुल् सडलि
घनबाणसंधानगतुलुज्जगिंचि । कनुगोंनुचुंडिरि कलय नोंडोरुल; ७६८०
देमलि पैपयिनि फूत्कृतुलु नार्पुलुनु । जेमटल वर्‍दलु जिरुतहुंकृतुलु
नलयिकयुनु घटिकार्धान देरि । मलुगनि व्रलमुलु मर्‍यियु ब्रेरेप

रहकर, शोभित महेंद्र और मंदर महीधरों के धैर्य की शोभा के समान, ॥ ७६७० ॥

—स्थिर हो खड़े आकाश के साथ आकाश, जलधि के साथ जलधि के जूझने की तरह, 'राम-रावण के संग्राम के साथ राम रावण का संग्राम ही तुलनीय है'[1] कहने योग्य महोदग्र क्रोध के साथ दोनों के औत्सुक्य के साथ लड़ने पर, जलद-गर्जन सम धनुर्ज्याघोष, कलह-निष्ठुर-शर-घट्टन की ध्वनियाँ, जितवर्म-समर-उग्र सिंहनाद, चतुर-रथाश्व-हेषाविराव (हिन-हिनाहट की ध्वनि) के कारण उदधियाँ घूर्णित हुईं, उल्काएँ टूट गिरीं, त्रिदश फूल उठे, दिशाएँ विकंपित हुईं, भूत भीत हुए, पृथिवी कंपित हुई, दिगिभ चकराने लगे, लोक घूम उठे, नग कंपित हुए, पन्नग-भर्ता (आदिशेष) क्षुब्ध हुआ। इस प्रकार अगणित प्रौढ़ता के साथ लड़-लड़कर, साहस छोड़, उग्रता छोड़, थोड़ी देर दोनों बाहुदर्प के ढीले पड़ जाने पर, घन-बाण-संधान-गतियों को छोड़कर, एक दूसरे को निहारते रहे ॥ ७६८० ॥

—फुरसत पाकर (थोड़ी देर बाद) बाहरी फूत्कार, सिंहनाद, श्रमजल की बाढ़, अल्प हुंकार, थकान (आदि) से अर्द्ध-घटिका के समय में (फिर)

१ रामरावणयोर्युद्ध रामरावणयोरिव

नत्युग्रनिग्रह व्यग्रुलै कदिसि । रत्यंत कालकालाकृति नप्पु;

श्रीरामुडु रावणुनि करशिरंबुल दुेगनेयुट

डलवु धैर्यंबुनु नलुक दीपिंप । ब्रळयकालमुनाटि फालाक्षुपगिदि
घनशातकर्तरी क्रकच भल्लंबु । निनवंशवल्लभुंडेसग संधिंचि
'यरुदरु' दन द्रुंचेनद्दशाननुनि । शिरमुलु पदियुनु जेतुलिरुवंदियु;
'द्रुंचुट बोंकोको! त्रुंचिति!' ननुचु । द्रुंचिन रामुडद्भुतमंदि चूड
गरवाल मुसल मुद्गर भिंडिवाल । शरचाप केयूर चयमुल दनरु
करमुलिरुवंदियुनु घनकिरीटमुल । शिरमुलु पदियुनु जेंच्चेर मोलचें;
मोलचिन गोंपिंचि मोगि द्रुंचें मरियु । दललु जेतुलु बेंचि दशरथात्मजुडु
७६९०

तललुद्धविडि द्रुंचु तरि ग्रिंद मोलचु । दलल किरीटमुल् तद्बाणततुलु
दाकि म्रोयुट चेंवि दाकक मुन्न । ताकु नत्तललनुदग्रहासमुलु;
तरमिडि त्रेंव्विन तललोलि मोलव । बरमेष्ठिचे दोलिलि पडयुचो वरमु
गलकरंबुलतोड गनुकनि मोलव । बलियुडै यीतडु वडसेनो यनग

स्वस्थ होकर, कम न होने वाले हठ के और अधिक प्रेरित करने पर अत्युग्र-निग्रह में व्यग्र हो, अत्यंत-काल-कालाकृति से भिड़ गए। तब,

श्रीराम का रावण के कर-शिर खंडित कर डालना

—सामर्थ्य, धैर्य और क्रोध के दीप्त होने पर, प्रलयकाल के फालाक्ष (शिव) के समान घन-शात-कर्तरी-क्रकच-भल्ल का इनवंश-वल्लभ ने सुघड़ता से संधान कर, 'अनुपम अनुपन' कहने पर उस दशानन के दस सिर, बीस हाथ काट डाले। काट डालने पर राम के यह कहते कि 'काट तो डाला था। क्या काटना झूट था ?' चकित हो देखते रहने पर, करवाल, मुसल, मुद्गर, भिंडिवाल, शर, चाप, केयूर-चय (-समूह) से शोभित बीसों कर और घन-किरीटों वाले सिर झट से उग आए। उग आने पर क्रुद्ध हो फिर विजृंभित हो दशरथात्मज ने सिर और हाथ काट डाले ॥ ७६९० ॥

वेग से सिर काटते समय नीचे से उग आने वाले सिरों के किरीटों के तद्बाणततियों से लगकर मुखरित होना कानों में आने से पहले ही उन सिरों के उदग्रहास कानों में पड़ता। क्रम से काट डाले गये सिरों के क्रम से उग आने पर, पूर्व में परमेष्ठी (ब्रह्मा) से प्राप्त वर के कारण कोलाहल के साथ उग आने पर, ऐसा लगता कि बली हो इसने (पुनः सिर) प्राप्त

दल लोलि मौलतेर दडव गुत्तुकल । नलि गाडि रामु बाणमुलुंडे नोलि;
मोगि ड्रेंचु तललु नम्मुलतोन मीदि । कोंगय द्रोचुचु दिविकेगयु नत्तललु
दोंतुल कुत्तुकल् द्रुंचुनस्त्रमुलु । नेंतयु रम्यमै येसगें जूपरकु
फलित सौरभ राम बाणोत्पलमुल । गलय रावण शिरःकमलसंततुलु
रमणमै रक्त धारासूत्रततुल । ग्रममोप्प नेत्तुलु गट्टि वेल्पुलकु
बोलुपोंद नाकाश पुष्पलाविकुडु । सोलवक पलुमरु जूपुचंदमुन; ७७००

दनुजाधिपति गोंतदडवु चूड्कुलकु । निनकुलाधीश्वरुंडेयुचो मरियु
द्रेंवि रालेडु नेंड लेंव्वनि तललु । ग्रुव्वनिपेरुलै कोमरोप्प नप्पु
डनिमिषावलि येल्ल नच्चेरुवंदि । कनुगोन नद्दशकंधरुंडमरें;
ललि शिरोमालिकालंकृतुंडैन । प्रलयावसरघोर भैरवु पगिदि;
ना वेळ रघुरामुडाग्रहव्यग्र । भावुडै रणबलप्रौढि दीपिंप
लक्षिंचि दृढमुष्टि लाघवगतुल । दक्षुडै रावणु तललु बाहुवुलु
देंचु ग्रम्मरु मोलतेंचु वेंडियुनु । द्रेंचु ग्रम्मरु मोलतेंचु; निब्भंगि

किए हों। सिरों के क्रम से उग आने पर कंठों में क्रम से राम के बाण गड़े हुए थे। क्रम से काट डाले गए सिरों को बाणों के ऊपर उठा देते समय, आकाश में उठने वाले वे सिर, कंठों की पंक्तियों को काट डालने वाले अस्त्र, ये देखने वालों को अत्यंत रम्य दीख रहे थे, मानों फलित-सौरभ से युक्त राम-बाण रूपी उत्पलों के साथ रावण के शिर रूपी कमल-संततियाँ (समूह) रमणीय होकर रक्तधारा रूपी सूत्र-ततियों के साथ क्रम की शोभा से युक्त थीं। इनकी राशियाँ बनाकर शोभा से आकाश रूपी पुष्प-लाविक मानों न थककर कई बार देवताओं को दिखा रहा हो।॥ ७७०० ॥

—कुछ देर तक दनुजाधिपति ऐसा दिखाई पड़ा। इनकुलेश्वर के बाण चलाते रहने पर कट गिरनेवाले अनंत सिरों के, न गूँथी मालाओं के सम (हार में न गूंथे फूलों के समान) मनोहर होने पर, समस्त देवता समूह के आश्चर्यचकित हो देखने पर, तब दशकंधर शिरोमालिकालंकृत (मुंडमाल से अलंकृत) प्रलय के अवसर के घोर भैरव की भाँति शोभित हुआ। उस समय रघुराम आग्रह (क्रोध) की व्यग्रता से युक्त भाव वाला होकर, रणबल-प्रौढ़ता के दीप्त होने पर, लक्ष्य कर (निशाना बाँधकर) दृढ़ मुष्टि से लाघव गतियों से दक्ष (समर्थ) हो, रावण के सिर (तथा) बाहु काट देते, (वे) फिर उग आते, फिर काट देते, (वे) फिर

गरमुलु शिरमुलु गाकुत्स्थतिलकु । शरपरंपरलचे जटुलवेगमुन
देगुटलु मोलुचुटलु देलियराकुंडे । नगचरावलिकि नय्यनिमिषावलिकि,
नालोन रघुरामुनम्मुल द्रेस्सि । रालुचुनुन्न या रावणु तलल् ७७१०

आवुलिपवु; नोव्व; वलसमुल् गावु; । लावु दूलवु; निजोल्लासमुल् सेंडवु;
गाजुवारवु; मिडुकवु; रेप्पवेय; । वोजदप्पवु; वैरमुडुगवेंतयुनु;
बगयोंडे बोममुडिपाटोंडे निडु । नगवोंडे नापोंडे नलुवुचूपोंडे
बलुकोंडे मेच्चोंडे बेवडि बोरु । नलवोंडे धृतियोंडे हंकृतियोंडे
गलुगनि तललेदु घनरणभूमि । तलमुन बडियुन्न तललो नेंदु;
नेनग वेगर्वमेरोषदृष्टि । यानग वागर्वमारोषदृष्टि
मोलतेंचु तललंदु मोगि नुर्वि गूलु । तललंदु सममुलै तलकोनुचुंड
दानवाधीश्वरु तललु बाहुवुलु । भूनभोंतरमुलद्भुतमुगा निंडे;
निंडुट गनुगोनि निंड गोपिंचि । वेंडियु ना रामविभुडेयुचुंडे;
द्रेंचिन करमुलु द्रेव्विन तललु । द्रुंचिन करमुलु दुनिगिन तललु ७७२०

उग आते । इस प्रकार करों (और) सिरों का काकुत्स्थतिलक की शर परंपराओं से चटुलवेग से कटना और उग आना अगचरावली तथा अनिमिषावली की समझ में नहीं आ रहा था । इतने में रघुराम के बाणों से कटकर, गिरनेवाले रावण के वे सिर, ।। ७७१० ।।

—न जंभाते हैं, न पीड़ित होते हैं, न थकते हैं, न सामर्थ्य खोते हैं, न निज-उल्लास से हटते हैं, न कांतिहीन होते हैं, न परितप्त होते हैं, न पलक मारते हैं, न उत्साह खोते हैं, (और) वैर को बिलकुल नहीं तजते हैं। घन-रणभूमि-स्थल में पड़े हुए सिरों में ऐसा कोई सिर नहीं था जिसमें वैर अथवा तनी हुई भौंहें अथवा पूर्णहास्य अथवा सिंहनाद अथवा अनुग्रहपूर्ण दृष्टि अथवा वाणी अथवा प्रशंसा अथवा युद्ध की सुघड़ता अथवा धृति अथवा हुंकृति न हो। जो हास, जो गर्व, जो रोषदृष्टि उदित होनेवाले सिरों पर थी, वही हास, वही गर्व, वही रोषदृष्टि क्रम से गिरनेवाले सिरों पर भी समरूप लक्षित हो रही थी। (ऐसे समय) दानवाधीश्वर के सिर और बाहु अद्भुत रूप से भू-नभोंतर में भर गए। (इस प्रकार) भर जाते देख अधिक क्रुद्ध हो वह रामविभु और भी (बाण) चलाता रहा। कटे हाथ, कटे सिर (फिर) कटे हाथ, कटे सिर, ।। ७७२० ।।

बलुवडि पुट्टिन बाहुदंडमुल । नलमि यप्पुडु वट्टि यद्दशाननुडु
गणुतिपरानि वेगमु लावु मेऱसि । रणरोषदृष्टिमै रामुपै वेंचे
नऱिमुऱि दशकंठुडंदंद वैव । वऱतेंचि शिरमुलु बाहुदंडमुलु
गुवलयहितवृत्ति कुशलुडै कळल । नविरलाकृति जगदानंदुडगुचु
गमनीय वानर ग्रह मध्यवीथि । रमणमै नोप्पेडु रघुरामचंद्रु
गनि चंद्रुडनुबुद्धि गमलषंडमुलु । घनराहुकोट्टुल गडकतो गूडि
यडरि यन्योन्यसहायमुल् वडसि । वडि बेंचि ताकु कैवडि दाकुचुंडे;
शिरमुलु गरमुलु जेलगि येतेंचु । वरुसलु चूडंग वर्णिप नोप्पे;
श्रीराम-विजयलक्ष्मी विवाहमुन । कारणदेवतलर्थि शोभिल्लु
बल्लवरत्न दर्पणतोरणमुलु । तेल्लमै कट्टिन तेऱगु दीपिप; ७७३०

दरिगेडु तललु नुद्दाम बाहुवुलु । गुरिसेडि शरमुलु घूककाकादि
खगमुलु जगमुलाकंपिप बेंचि । गगनमंडलमेल्ल गलगोन निंडे
गुरुतरंबै जमुकोलुवुकूटमुन । गरमुग्रमगु मेलुकट्लन वरगि;

—(और) बरजोरी उदित बाहुदंडों को दबाकर पकड़, उस दशानन ने अगणित वेग (तथा) सामर्थ्य से प्रकाशित हो, रणरोषदृष्टि से राम पर (उन करों तथा सिरों को) फेंका। जल्दबाजी से दशकंठ के सर्वत्र फेंकने पर, आए हुए सिर (और) बाहुदंड झट विजृंभित हो ऐसे लग रहे थे मानों कुवलय-हितवृत्ति में कुशल हो, (समस्त) कलाओं से अविरल-आकृति से जगदानन्दकर होते हुए, कमनीय-वानर-ग्रह-वीथि के मध्य रमणीयता से विराजमान रघुराम-चंद्र को देख, चंद्र ही समझकर कमल-षंड (रावण के मुख), घन-राहु-कोटियाँ (रावण के बाहु)[1] सप्रयत्न एकत्र होकर, अन्योन्य-सहाय्य प्राप्त कर, आक्रमण कर रहे हों। सिरों और करों के विजृंभित हो आने का क्रम देखने में वर्णनीय हो विलसित हुआ। वह क्रम ऐसा लगा मानों श्रीराम और विजयलक्ष्मी के विवाह के अवसर पर कारण-देवताओं के प्रेम के शोभित होने पर पल्लव-रत्न तथा दर्पण-तोरणों को स्वच्छता से बांधने का विधान हो।॥ ७७३० ॥

—कटते हुए सिर, उद्दाम बाहुओं से बरसने वाले शर, घूक (उल्लू), काक आदि खग जगों को आकंपित करते हुए समस्त गगन मंडल में शोभायमान रूप से ऐसे भर गए मानों गुरुतर बनी यम की सभा का अधिक उग्र बन

---

1 केतु और राहु के एक साथ

यिदि दिव, मिदि रात्रि, यिदि संध्य यनुट। त्रिदशुलकैननु देलियराकुंडे;

रावणुनि करशिरमुलु मरल मोलचुटकै श्रीरामुडु चिंतिंचुट

प्रथित बाणासन बाणदीप्तुलनु। प्रथनंबुलो बट्टपगलयि तोचें;
नप्पुडु रघुरामुडादैत्यु गेलुचु। चोप्पितयेननु जोप्पडकुनिकि
गनुगोनि शरसंधिगतुलु पालिंचि। तनलोन बलुमारु दलपोय दोडगे;
"देरलक शिरमुलु त्रेंचि वेसरिति,। दोरकोनि करमुलु द्रुंचि वेसरिति;
नेसगु मर्मंबुल नेसि वेसरिति;। विसुवक पलुमारु व्रेसि वेसरिति;
नेब्भंगि देगटारडी दुष्ट चित्तु;। डेब्भंगि देगटार्तु निद्दुरात्मकुनि?"
७७४०

ननि यनि तलपोसि यलयुट सूचि। जननाथु तो विभीषणुडर्थि वलिकें;
"वनजात-जातुनि वरमुन जेसि। यिनकुलाधीश्वर! यीतनि नाभि
नमृतमुन्नदि कुंडलाकृति गलिगि। यमृतत्त्वमूलमै यदि चंपनीदु;
दानवुतललु नुद्दंडबाहुवुलु। मानक नीवेन्नि मारुलेसिननु

बन (फैला हुआ) वितान हो। त्रिदशों को भी यह समझ में नहीं आ रहा था कि यह दिव (दिन) है, यह रात है अथवा यह संध्या है।

रावण के करशिरों के पुनः उग आने पर श्रीराम का चिंतित होना

प्रथित (प्रख्यात)-बाणासन के बाणों की दीप्तियों के कारण प्रथन (युद्धभूमि) में दिन-दहाड़े के समान लगा। तब रघुराम उस दैत्य को जीतने का किंचित् भी उपाय न सूझने के कारण, वेखकर, शर-संधि-गतियों (शर-संधान करने के विधान) से विरत होकर, अपने आप में कई बार सोचने लगा— "अविराम गति से सिर काट कर तंग आ गया, लगकर कर काट कर ऊब गया, शोभित मर्मो (स्थानों) पर (बाण) चलाकर ऊब गया, न थककर कई बार (बाण) चलाकर ऊब गया हूँ। किसी भी प्रकार से यह दुष्टचित्त वाला मरता नहीं है। इस दुरात्मा को किस प्रकार मारूँ?" ।। ७७४० ।।

—ऐसा कह सोचकर, (राम के) थक जाते देख जननाथ से विभीषण ने चाहकर कहा— "हे इनकुलाधीश्वर! वनजात-जात (ब्रह्मा) के वर के कारण से, इसकी नाभि में अमृत है। कुंडलाकृति से युक्त, अमृतत्त्व का मूल है वह, जो इसे मरने नहीं देता। न छोड़ तुम कितने ही बार बाण चलाओ (फिर भी) दानव के सिर तथा उद्दंड बाहु उग आते रहेंगे, (वे)

मौलतेंचुचुंडु; नुग्मूलमुल् गावु; । तलकडु दीन नद्दनुजवल्लभुडु;
तरिमि यिम्मेंयि नीवु तललु बाहुवुल । नरकुचुन्नाडवु नरनाथ! कडगि;
तुदियेदि दीनिकि ? दौरकौनि नीवु । चदुरोप्प नाग्नेयशरमेयुमिक;
ना नाभिविवरमूलामृतंबिगुरु; । दान दानवपति दानु लोदारु;
निगिडेडु भवदीय निष्ठुरास्त्रमुल । देंगि मरि चेतुलु द्रिदशारितललु
दुरमुलोपल नूटतोंम्मिदिमारु । लरुवुगा मौलतेंचु नंतट बौलियु"
७७५०

ननवुडु विनि लक्ष्मणाग्रजुंडतनि । विनय नयज्ञान विश्वास भक्ति
भावशुद्धिकि नात्म बलुमारु मेंच्चि । देवतलुप्पोंग दिविजारि ग्रुंग
ग्रुंगनि धर्मबु गौंनलु सागंग । गंगादि नदुलेल्ल गलक देरंग
देरनि चित्तंबु देरि राघवुडु । घोरंबुगा धनुर्गुणमु म्रोयिंचि
कनलेंडि दीर्घनिर्घातमुल् गुरियु । ननलास्त्रमरिवोसि यलवोंप्प नेसि
या रावणुनि नाभियंदुन्न यमृत । मारूढ शरवह्नि काहुति सेसि:
मरि नूटतोंम्मिदि मारुलु द्रुंचे । दरिगोंनि रावणु तललु बाहुवुलु;
निरुपमास्त्रंबुन नृपकुलाधिपुडु । परिकिंप मरि नूटपदियवमारु
ओक्कशिरंबुनु नोंगि गरद्वयमु । दक्कंग दक्किन तललु बाहुवुलु

उन्मीलित नहीं होंगे। इससे यह दनुज-वल्लभ विचलित नहीं होता। हे नरनाथ! इस प्रकार तुम सप्रयत्न सिर (और) बाहु काट डाल रहे हो। इसका अंत कहाँ? अब लगकर तुम ढंग से आग्नेय शर चलाओ। (उससे) उस नाभि-विवर के मूल का अमृत सूख जाएगा। उससे दानव-पति स्वयं परास्त हो जाएगा। विजृंभित आपके निष्ठुर अस्त्रों से त्रिदशारि के सिर और हाथ युद्ध में एकसौ नौ बार कटकर अनुपम रूप से उग आएंगे। तब वह मृत होगा।" ।। ७७५० ।।

—ऐसा कहने पर सुनकर लक्ष्मणाग्रज ने उसके विनय-नय-ज्ञान-विश्वास-भक्ति (आदि) की भाव-शुद्धि के कारण आत्मा (मन) में कई बार सराह कर, चित्त में स्वस्थ बनकर घोर रूप से धनुष के गुण को निनादित किया जिससे देवता फूल उठें, दिविजारि दब जाए, न दबनेवाला धर्म अंकुरित हो जाए, गंगा आदि नदियाँ निथर जाएँ। प्रज्वलित दीर्घ निर्घातों को बरसनेवाले अनलास्त्र का संधान करके शोभा से चलाकर, उस रावण की नाभि में स्थित अमृत को आरूढ-शर-वह्नि की आहुति बनाकर, फिर रावण के सिर (और) बाहु एकसौ नौ बार काट डाले। निरुपम-अस्त्र से नृपकुलाधिप ने, देखने पर, फिर एकसौ दसवें बार एक सिर और क्रम से कर द्वय के अतिरिक्त शेष सिर और बाहु काट डाले।

दॆगनेसॆ; नेसिन द्रिदशुलु सॆलगि । रगचरवरु लार्चिरंदंद पॆर्चि; ७७६०
तललॊगि दॆगि रक्तधारलु धात्रि । नॊलुकग दिवि कुब्बि यॊप्पॆ रावणुडु
लोकमुलू गाल्चि यालोल कीलमुलु । पॆंकॊनि मंडॆडि प्रळयाग्नि पगिदि;
दनुवुन घनरक्तधारलु निंड । दनुजेशु तनुवुपॆ दलयॊप्पॆ जूड
नरुणातपच्छायलडरु नस्ताद्रि । बरगॆडु भानुबिबुंबु चंदमुन;
नप्पुडु रावणुंडा विभीषणुनि । दप्पक चूचि युदग्रुडॆ यलिगि
"यॆव्वरु नॆरुगनि यिट्टि ना मर्मं । मिव्वसुधेशुनकॆरिगिंचॆ वीडु;
वीनि द्रुंचॆद" नंचु विपुलोग्रशक्ति । पूनि वॆचुटयु नभोवीथिनुंडि
यर्रिमुर्रि निगुडि कालाग्नि चंदमुन । नॆरमंट लुमियुचु नेतॆंचुचुंड
ना रामवल्लभुंडचलुडॆ घोर । नाराचमुल दानि नडुमने त्रुंचॆ;
जडिगॊनि रघुरामु शरवृष्टि पर्वि । युडुगकुंडुटयु नंदुंडराकुन्न ७७७०
वलनेदि राक्षसेश्वरु कोपवह्नि । पॊलुपरु बॆडबासि पोवुचंदमुन
बोयॆ रावणु देहमुन नुन्नतेज । मायवसरमुन नद्भुतंबगुचु;

काट डालने पर त्रिदश और नगचरवरों ने विजृंभित हो सर्वत्र सिंहनाद किया। ॥ ७७६० ॥

—क्रम से सिरों के कटकर रक्तधाराओं के धात्री पर गिरते समय दिवि तक फूलकर रावण, लोकों को जलाकर आलोल-कीलाओं से बढ़-बढ़कर बलने वाली प्रलय-अग्नि के समान (और) अरुण-आतप-छायाओं से प्रकाशित होकर अस्ताद्रि पर विराजमान भानुबिंब के समान, शोभित हुआ। तब रावण ने उस विभीषण को अवश्य देख उदग्र बन, क्रुद्ध हो (यह सोच कि) "मेरे मर्म को जिसे कोई नहीं जानता था, इसने इस वसुधेश को बताया। इसका संहार कर दूँगा", विपुल-उग्रशक्ति को धारण कर फेंका। (वह शक्ति) नभोवीथि से शीघ्रगति से तनकर, कालाग्नि के समान लाल ज्वालाओं को विकीर्ण करते, आती रही। राम-वल्लभ ने अचल बन घोर-नाराचों से उसे बीच में ही खंडित कर दिया। झड़ी बांधकर रघुराम की शरवृष्टि के बरसकर, न रुकने पर, वहाँ (रावण के शरीर में) न रह सककर, ॥ ७७७० ॥

—शोभा खोकर, राक्षसेश्वर की कोप-वह्नि-शोभा खोकर छोड़ जाने के समान रावण की देह में स्थित तेज, उस अवसर पर अद्भुत रूप से निकल गया। सिर और हाथों के कट जाने पर दशकंठ, एक सिर और

दलल जेतुलु द्रैव्वि दशकंठुडोक्क । तलयु जेदोयियै दर्पिंचि यपुडु
वीररसंपु बॅम्वॅल्लिचंदमुन । दोरमै तोरुगु नेत्तुट दोप्प दोगि
तडबड नेत्तुट दडिसि रणोर्वि । बडियुन्न तललुनु वाहुदंडमुलु
वानि जंचुल जिचु वरपक्षिगणमु । बूनि योक्कट जूचि भूनाथु जूचि,
जड्डिगोनि तनदैन सटलेल्ल बेरुक । गोपिंचि पैवडु घोराहिकरणि
मीसंबुलूचिन मिगुल गोपिंचि । शासिप गडगिन जमुनि चंदमुन
मेड्रसि लोकमुलेल्ल मिंग्रेडि रीति । नुड्रक कोपिंचि महोग्रुडै तोंटि
७७८०

यन्निचेतुल गल या सत्त्वमेल्ल । नुन्न चेतुल रेंट नुग्रमै तोप
नासुरवरुडट्टहासंबु सेसि । प्रास तोमर शूल परशु खड्गमुल
शरमुल सुरियल शक्तुल गदल । नुरुवडि व्रेसियु नुड्रक वैचियुनु
बोडिचियु नडिचियु बोनीक१रामु । नुडुगक नोंप्पिचि युग्रुडै येचि
देवतल् भयमंद देगि महारणमु । गाविचुचुंडै नक्कजमैन कडिमि;
गडकयु लावुनु गर्वबु मिगुल । नडरि धीरत बोरु नमरारि जूचि
मातलि भीतुडै मरि रामु ननियै । "नी तडवेटिकि निनकुलाधीश!

हस्त-द्वय से दर्पित होकर तव वीररस के महान प्रवाह के समान, अधिकता से बहनेवाले रक्त में ऊभचूभ होकर, लड़खड़ाकर रक्त में भीगकर, रणोर्वी (रणभूमि) में पड़े हुए सिरों और बाहुदंडों को, उन्हें चंचुओं से चीर डालनेवाले वर-पक्षिगणों को ध्यान से देखकर, भूनाथ को देखकर, निरंतर अपने सभी केशों (अयाल) को नोचने पर, बंधनों से मुक्त हो गरजनेवाले सिंह की भाँति, शोभायमान अपनी समस्त दाढ़ों को उखाड़ने पर, क्रुद्ध हो आक्रमण करनेवाले घोर-अहि के समान, मूँछें खींचने पर अधिक क्रुद्ध हो, दंडित करनेवाले यम के समान दीप्त हो, समस्त लोकों को निगल जाने की रीति से क्रुद्ध हो, महोग्र हो, पूर्व में— ।। ७७८० ।।

—समस्त हाथों में स्थित सत्त्व के दो हाथों में ही उग्र हो दीखने पर, आसुर-वर ने अट्टहास कर, प्रास-तोमर-शूल-परशु-खड्गों से, शरों, कटारों, शक्तियों, गदाओं को झट से चलाकर, फेंककर, चुभोकर, दबाकर, राम को न जाने देकर, अनारत पीडित कर, उग्र बन विजृंभित हो, देवता भीत हो जाएं ऐसा आश्चर्यप्रद साहस से महारण करता रहा। साहस, सामर्थ्य, गर्व के अधिक विवर्द्धित होने पर, धैर्य से जूझनेवाले अमरारि को देखकर मातलि ने भीत हो फिर राम से कहा—"हे इनकुलाधीश!

तललु बाहुवुलु निद्दनुजाधिपतिकि । मोलचुनो! क्रम्मर मोलवक मुन्ने
येडपक ब्रह्मास्त्रमेसि यी नीचु । बडवैतु काक! दोर्बल शक्ति मेरसि"
यनवुडु विनि रामुडभिरामबलुडु । विनुत विक्रम भुजाविभव निर्भरुडु
७७९०
विदितमौ शस्त्रास्त्रवेदियु गान । "निदि वेळ ब्रह्मास्त्रमेत्तंग" ननुचु
भूदेवदेव तपोधनवेद । वैदिककर्म प्रवर्तनल् दलचि
तन प्रतापंबुनु दर्पंबु मेरसि । धनुवु म्रोयिंचुचु धरणि गंपिप
गौशिककृतमैन क्रतुवेळकु दनकु । गौशिकुडिच्चिन गैकोन्नयट्टि
यक्षयब्रह्मास्त्रडुप्पुम दलचि । दक्षत वेदमंत्रमुलुच्चरिंचि
तिरमुगा नरिवोसि तेग निड दिगिचि । परग ब्रत्यालीढपादुडै निलिचि
देवेंद्रुडादिगा दिविजुलुप्पोंग । देवारियुरमुपै दृष्टि संधिंचि
येसे; नेयुटयु बेल्लेचि या बाण । मासुरालोककीलाभीलमगुचु
वसुवुलु केलकुल वनजात-मित्र । वसुवुलग्रंबुन वासवादुलुनु
बिरुद मुंदर महापृथुलमारुतमु । गरुल नुज्ज्वलदिव्यकळलेल्ल
वेलुग ७८००

यह विलम्ब क्यों ? पता नहीं, कहीं इस दनुजाधिपति के फिर से सिर और बाहु उग आएँ। फिर से उग आने से पहले ही, न छोड़, दोर्बल-शक्ति से दीप्त होकर, ब्रह्मास्त्र चलाकर इस नीच को गिरा दो न।" ऐसा कहने पर सुनकर राम अभिराम बल से युक्त, विनुत विक्रम-भुजा-विभव-निर्भर, ॥ ७७९० ॥

—(तथा) विदित शस्त्रास्त्रवेदी होने के कारण यह सोच कि 'यह ब्रह्मास्त्र चलाने का समय है' भूदेव, देव, तपोधन (तथा) वेद, वैदिक-कर्म-कृत्यों का स्मरण कर, अपने प्रताप तथा दर्प से प्रकाशित हो, धनुष का टंकार करते हुए, धरणी को कंपित करते हुए, कौशिक-कृत क्रतु के समय कौशिक के देने पर ग्रहण किए गए अक्षय ब्रह्मास्त्र का तब स्मरण कर, दक्षता से वेदमंत्रों का उच्चारण कर स्थिरता से (अस्त्र का) संधान कर, पूरी-तरह से खींचकर, प्रत्यालीढ पाद वाला हो खड़े रहकर, देवेन्द्र आदि दिविजों के फूलने पर, देवारि के उर पर दृष्टि साध कर, चलाया। चलाने पर, अधिक विजृंभित हो वह बाण आसुरलोक को कीलाओं से आभील करते हुए, वसुओं को पार्श्वभाग में, वनजातमित्र (सूर्य) (तथा) वसुओं को अग्रभाग में, वासव आदियों को पृष्ठ भाग में, महापृथुल मारुत को आगे कर, पंखों में उज्ज्वल दिव्यकलाओं के प्रकाशित होने पर— ॥ ७८०० ॥

सहजंबुलै पेर्चि संततामोघ । महितमै देदीप्यमानमै सकल
शाखामृगाभीष्ट सफलमै चतुर । लेखावलोकनालीढमै निगुडि
निलुवक विलयाभ्रनिर्घोष घोष । मुलु पर्व राक्षसमुख्युलु वेंदर
जयजय ध्वनुलतो ज्रदलग्रक्कदल । रयमुन रावणोरस्थलि गाडि

ब्रह्मास्त्रमुचे रावणुडु मडियुट

यय्यिंद्रयमवरुणादुलचेत । ब्रय्यनि मर्ममुल् व्रच्चि रावणुनि
प्राणमुल् गोनि युच्चि पाऱि या दिव्य । बाणंबु वेस महीभागंबु गाडे;
"नी कूतु जेऱपट्टि नीचभावमुन । गैकोन दलचिन खलुनि प्राणमुलु
कैकोंटि ने" ननि कदिसि भूस्थलिकि । ब्राकटंबुग जेप्प वऱचेनो यनग
महि गाडि पऱतेंचि मगुडि राघवुनि । महित तूणीरमुन्मदवृत्ति जोच्चे;
नलि ब्रह्ममनुमनि नाटि चंपुटकु । गलिगिन दोषंबु गडतेर्चुकोनग
७८१०

नेचंदमुन नेंदु नितरंबु लेमि । चूचि राघवुमवुॅ सोच्चेनो यनग
राघवास्त्राक्षतरक्तांबुधार । लोघंबुलै पर्व नोऱलुचु नंत
गुलिशधाराहति गुंभिनि गूलु । कुलशैलमुनु बोलि कूलै रावणुडु;

—सहज ही विजृंभित हो, सतत-अमोघ-महित हो, देदीप्यमान वन, सकल शाखामृगों के अभीष्ट को सफल करते हुए, चतुर लेखावलोकन-आलीढ़ होते हुए तनकर, न रुककर, विलय-अभ्र के निर्घोषों के व्याप्त होने पर, राक्षस-प्रमुखों के भीत होने पर, जय-जय-ध्वनियों से आकाश के विचलित हो जाने पर शीघ्रता से रावण के उरस्थल में गड़कर,

ब्रह्मास्त्र से रावण का मरना

—उस इंद्रयम वरुण आदियों से न बिधे मर्मों को बेधकर, रावण के प्राणों को लेकर, जाकर, वह दिव्य बाण झट महीभाग में गड़ गया। महि (भूमि) में गड़कर मानो निकट जाकर भूस्थली (भूमाता) को प्रकट रूप से यह कहने गया हो कि 'तुम्हारी पुत्री को वन्दी बनाकर नीच भाव ग्रहण करना चाहनेवाले खल के प्राण मैंने लिए है' और फिर वापिस लौटकर राघव के महित-तूणीर में उन्मद-वृत्ति से प्रविष्ट हुआ। (यह ऐसा था) मानों ब्रह्मा के पौत्र को मार डालने से प्राप्त दोष को दूर कर लेने का, ।। ७८१० ।।

—किसी भी प्रकार से अन्य (उपाय) के न होने से राघव की आड़ में प्रविष्ट हुआ हो। राघव के अस्त्र के क्षतों (घावों) से रक्तांबुधाराओं के

ना दैत्यु भूरिदेहातिपातमुन । भूदेवि यप्पुडद्भुतमुगा ग्रुंगॆ;
ग्रुंगॆ शैलंबुलु; ग्रुंगॆ दिक्करुलु; । ग्रुंगॆ भुजंगंबु; ग्रुंगॆ गूर्मंबु;
दलकिरि सप्तपातालवल्लभुलु; । दलकिरि हतशेषदनुजपुंगवुलु;
गिरिचरुलार्चिरि; कीर्तिचि रमर । वरुलु गिन्नरुलु दिग्वरुलु खेचरुलु;
ना रघुरामुपै नप्सरस्त्रीलु । बोरन गुरिसिरि पुष्पवर्षमुलु;
दिव्यदुंदुभुलुनु दिव्यकाहळुलु । दिव्यशंखंबुलु दिवि निंड म्रोसॆ;
शीतलपरिमळाश्लिष्टवायुवुलु । वीतॆंचॆ; दिक्कुलु विमलंबुलय्यॆ; ७८२०
सुरमुनिखेचर शोकंबडंचि । परिकिंचि सकल भूभारंबु डिंचि
यभिमतजयशीलुडै पेंचि राम । विभुडंत दनचेति विल्लॆक्कुडिंचि,
यानंदमयचित्तुडगुचु ना विल्लु । जानकीविभुडु लक्ष्मणु चेतिकिच्चॆ;
सकल वानरुलुनु सकलखेचरुलु । सकलदिक्पतुलुनु सकल भूपतुलु
सकलभूतंबुलु सकल देवतलु । सकल गंधर्वुलु सकलसन्मुनुलु
सकलपन्नगुलुनु सकल सिद्धुलुनु । सकललोकंबुलु सन्नुतुल् सेय
ननिमीन गर्वांधु नंधकासुरुनि । दुनुमाडि विलसिल्लु धूर्जटिवोलॆ
रामुडु लोकाभिरामुडै विजय । धामुडै नवसुधाधामुडै योप्पॆ;

ओघ (बाढ़) वन प्रवहित होने पर, तव कुलिश-धाराहति से कुंभिनी पर गिरनेवाले कुलशैल के समान रावण चिल्लाते हुए गिर गया। उस दैत्य के भूरिदेह के अतिपात से तब भूदेवी अद्भुत रूप से दब गई, शैल दब गए, दिक्करि दब गए, भुजंग (आदिशेष) दब गया, कूर्म दब गया, सप्त पातालों के वल्लभ (अधिपति) क्षुब्ध हुए, हतशेष-दनुजपुंगव क्षुब्ध हुए, गिरिचरों ने सिंहनाद किए, अमरवरों, किन्नरों, दिग्वरों, खेचरों ने कीर्तन किया (प्रशंसा की), उस रघुराम पर अप्सरा-स्त्रियों ने झड़ी बाँधकर पुष्पवर्षा की। दिव्यदुंदुभियाँ और दिव्यकाहल, दिव्यशंख आकाश भर में मुखरित हुए। शीतल-परिमल से आश्लिष्ट वायु वह उठी, अर्थात् रावण की मृत्यु से प्रकृति भी प्रसन्न हुई। दिशाएँ विमल बनीं, ।। ७८२० ।।

—सुर-मुनि-खेचरों के शोक का दमन कर, सकल भूभार को उतार कर, अभिमत (अभीष्ट) जयशील होकर, विजृंभित होकर, रामविभु ने तव अपने हाथ के धनुष की प्रत्यंचा ढीली कर, आनन्दमयचित्त वाला होता हुआ तब उस धनुष को जानकी-विभु ने लक्ष्मण के हाथ में दिया। सकल वानर और खेचर, सकल दिक्पति ओर सकल भूपति, सकल भूत, सकल देवता, सकल गंधर्व, सकल सन्मुनि, सकल पन्नग और सकल सिद्ध (पुरुष) और सकल लोकों के सन्नुतियाँ करते रहने पर, युद्धभूमि में

नंत विभीषणुंडधिकशोकमुन । संतापमंदुचु समरमध्यमुन
नलघुडै पडियुन्न यग्रजु जूचि । पलुमारु नेलुगेत्ति पलविप दोडगॆ; ७८३०

"नाहवोदग्र सुरासुर भयद । बाहुवुल् पक्षुलपालय्यॆ नेडु;
सुरुचिर मृदुशय्य सॊंपॊंदु मेनु । परुषसंगरभूमि बडियॆने नेडु !
अहितांधकार बालार्क बिंबमुलु । महिगूलॆने नेडु मणिकिरीटमुलु!
विनय विक्रमनय विख्यातुलंदु । निनु बोलरॆव्वरु; नीयंतवाडु
कडपट नरयंग 'गण्टुंडु खलुडु । बॆडिदुंड वी' डन बृथिवि बेर्पडिति;
तप्पुट तप्पनि तलपोयवैति; । चॆप्पिनमाटलु चॆवि बॆट्टवैति;
विम्मैन नयमार्गमॆरुगलेवैति; । विम्मन्न जानकि नी नेरवैति;
मतनंबुन 'ना रामु मर्त्युगा नीवु । चिंतिपवलदन्न' जेकॊनवैति;
नी मानगर्वमुल् निन्निंत चेसॆ; । नेमनि शोकिंतु नेनिंक नीकु ?
वलदु रामुनि तोडि वैरंबु; विडुवु । च्चलमॊप्पदन नीकु जाटने तॊल्लि? ७८४०

निरुपमनयनिधी ! नी यट्टि सुकृति । परसति दलिगा भाविंप वलदे ?

गर्वांध अंधकासुर का संहार कर विलसित धूर्जटि की भाँति राम लोकाभिराम बन, विजयधाम बन, नवसुधाधाम बन शोभित हुए । तब विभीषण अधिक शोक से संतप्त होते हुए, समरमध्य (स्थल) में ।।७८३०।।

—अलघु हो पड़े हुए अग्रज को देखकर कई बार उच्चस्वर में विलाप करने लगा— "आहव में उदग्र (तथा) सुरासुरों के लिए भयद बाहु आज पक्षियों के हाथ पड़े न ! सुरुचिर-मृदु शय्या पर शोभित होने वाला शरीर आज परुष संगर भूमि में गिर गया न ! अहित (शत्रुरूपी)-अंधकार के लिए बालार्क-बिंब सम मणिकिरीट महि पर गिर गए न ! विनय-विक्रम-नय विख्याति में कोई तुम्हारा सानी नहीं है । तुम जैसा व्यक्ति अंत में सोचने पर, पृथ्वी पर 'क्रूर, खल, उद्धत' कहलाया न ! (नीति से) च्युत होने को गलत नहीं सोचा, (मेरी) कही बातों को कान में नहीं धरा न ! मनोज्ञ नय-मार्ग को जान न पाए न ! 'दे दो' कहने पर जानकी को नहीं दे सके न ! मंत्रणा के समय कहने पर कि 'तुम राम को मर्त्य मत समझो' नहीं माना । तुम्हारे मान (अभिमान) (तथा) गर्व ने तुम्हारी यह दशा की । अब तुम्हारे लिए क्या कहकर शोक करूँ ? तुमसे पहले ही प्रकट रूप में कहा था न कि 'राम से वैर उचित नही है, । (वैर) छोड़ दो, हठ मत करो । ।। ७८४० ।।

जगतिलो दगवु विचारिंपबैति; । तगिलि ना माटलु तलकूडें नेडु?"
अनि यनि शोकिंचु; नन्न नेरमुलु । मनमुन जिंतिंचु; मरियु शोकिंचु;

पडियुन्न पतिवद्दकु रावणांगनल आगमनमु

नंत मंदोदरि यादिगा दनुज । कांतलु गूडि लंकापुरि वेंडलि
यड्गुल केंजायलवनिपै दोरुग, । दडबडि मेखलादाममुल् सडल,
नड्गौनुलसियाड, नलसयानमुलु । मेंरय, लोयलतल मेंयिदीगेंलुलिय,
हारमुल् देंगिराल, नश्रुपूरमुलु । तोरंबुलै योंल्क, दोंलग बय्येंदलु,
वीडिन वेणुलु वेंन्नुल नोंरय, । वाडिन मोमुलु वरुवट्लु वट्ट
मोंकमुलु नुरमुलु मोंगि मोदिकोंनुचु । ब्रकटरोदनमुलु बहुविलापमुलु
गुदियक रोदसीकुहरंबु निंड । गदिरेंडि शोकाग्नि ग्रागुचु वच्चि ७८५०
विरिगिन रथमुलु विकलभावमुन । बरियलै पडिन कपालकुंभमुलु
दुनिसिन चेतुलु दुनियलै पडिन । तनुवुलु नुरुमैन दंतिदंतमुलु
जिदिसिन तललु विच्छिन्नंबुलैन । गदलुनु बोंडियैन घनकंकटमुलु

—हे निरुपम नयनिधी ! तुम जैसे सुकृति को परस्त्री को माता के समान मानना चाहिए न ? जगत में न्याय (औचित्य) का विचार नहीं कर सके । लगकर आज मेरी बातें सार्थक हुईं ।" ऐसा कहते शोक करता, अग्रज के अपराधों का मन में विचार करता और फिर शोक करता ।

गिर पड़े हुए पति के पास रावण की अंगनाओं का आगमन

तब मंदोदरी आदि दनुज-कांताएँ मिलकर, लंकापुरी से निकलकर, (अपने) चरणों की अरुण-छायाओं (कांतियों) के अवनि पर बिखरने पर, लड़खड़ाकर मेखलाओं के दामों (हारों) के ढीले पड़ जाने पर, पतली कमरों के विचलित होने पर, अलसयान (मंदगमन) के दीप्त होने पर, तराई पर स्थित लताओं के समान तनुलताओं के हिलते रहने पर, हारों के टूट गिरने पर, अश्रुपूरों के मालाओं के समान झरने पर, आंचलों के खिसक जाने पर, बिखरी वेणियों के पीठ पर फैलने पर, मुरझाए मुखों के और अधिक सूख जाने पर, क्रम से मुख और उर पीट लेते हुए, प्रकट रोदन (और) बहुविलापों के, संकुचित न हो (प्रचुरता से) रोदसी-कुहर में भर जाने पर, व्याप्त शोकाग्नि से तप्त होती हुई आईं । ॥ ७८५० ॥
—आकर, टूटे रथ, विकलभाव से खंड-खंड बन पड़े हुए कपालकुंभ, कटे हाथ, कट कर पड़े हुए तनु, चूर बने हाथी-दाँत, टूटे सिर, विच्छिन्न बनी गदाएँ, चूर बने बड़े कंकट (कवच), कटे कलेजे, उद्धत मस्तक, फूटे गले,

देंगिन गुंडियलु नद्धृतमस्तकमुलु । बगिलिन गळमुलु भग्नशस्त्रमुलु
ब्रेवुल प्रोवुलु बिशितखंडमुलु । जीवमुल् विडिचियु जेलुवोंदु करुलु
हयमुल चिद्रूपलु नद्रि श्रृंगमुलु । बयिबयि बडिन कबंध बृंदमुलु
निलुवक पार्रेडि नेत्तुरुटेर्ल । गलिसि मेंड्रुग बारु करटितुंडमुलु
नड्डंबु निड्पुलै यद्रुल क्रिंद । ग्रुड्डुलु वेलुवड गूलिन भट्लु
जेकोनि शवमुल जिरुमुर्राडु । काकघूकानेक कंक गृध्रमुलु
रामशरक्षतरक्तपानमुलु । सोमपानमुलनि सोलु भूतमुलु ७८६०

रामुनि गिकुर्रिंचि राक्षसेश्वरुडु । भूमिज देच्चुट बोगडु भूतमुलु
शिरमुलु पदियुनु जेतुलिर्वदियु । नरुदार नोक रित्त यट्ट बोंदिचि
"दैतेयकुलनाथ ! तगदु रामनुकु । सीतनि'म्मनि बुद्धि चेप्पु भूतमुलु
गोति बोंदुलु सोच्चि कोतुलै वच्चि । ब्रातिगा गरटि कबंधमुल् देच्चि
वडि बेर्चि घनरक्त वार्धिलो वैचि । कडकतो सेतुवु गट्टु भूतमुलु
"नारायणुड नेनु; नाकुलु मीरु; । मीरु राक्षसु"लनि मेरलु सेसि
पनिवडि करटकबंधंबु देच्चि । घनत ब्रेवुलु शेषुगा जेसि चुट्टि
कोरि रक्ताब्धिलो गोनि तेच्चि वैचि । धीरतमिंचि मथिंचु भूतमुलु

भग्न शस्त्र, आंतड़ों की राशियाँ, पिशित-खंड, प्राण छोड़कर भी मनोज्ञ बने हाथी, हयों के टुकड़े, अद्रि-श्रृंगों के नीचे पड़े हुए कबंध-वृंद, न रुककर बहनेवाली ख़ून की नदियों में प्रचुरता से बहनेवाले हाथी के सूंड, पर्वतों के नीचे चौड़े और लंबे बन (दब जाने के कारण), आँखों के बाहर निकल आने पर गिरे सिपाही, लगकर शवों को नोच खाने के लिए खींचातानी करनेवाले अनेक काक, घूक, कंक (और) गृध्र, राम के शरों (के आघात से हुए) क्षतों के रक्तपान को सोमपान मानकर, मस्त बने भूत, ॥ ७८६० ॥

—राम को धोखा देकर, राक्षसेश्वर के भूमिजा को ले आने की प्रशंसा करनेवाले भूत, दस सिर और बीस हाथों को अनुपम रूप से एक खाली रुंड को लगाकर, यह कह कि "हे दैतेयकुलनाथ ! उचित नहीं है, राम को सीता दे दो" नीति जतानेवाले भूत, मर्कटों के शरीरों में प्रवेशकर, मर्कट बन आकर, क्रम से हाथी के सूंड लाकर, शीघ्र विजृंभित हो महान्-रक्त-वारिधि में डालकर, सप्रयत्न सेतु बाँधनेवाले भूत, "मैं नारायण हूँ, आप देवता हैं, आप राक्षस हैं" ऐसा नियम बनाकर, सप्रयत्न हाथी के सूंड लाकर, प्रचुरता से आँतों को आदि शेष के समान लपेटकर, चाहकर रक्त-अब्धि में डालकर, धैर्य से बढ़कर मंथन करने वाले भूत, इंद्र की तरफ़ देखकर यह कह कि "हमारे राम के बाणों से

"मा रामु बाण निर्मथित मांसमुल । कोरादे नीनाक ? मेल यिच्चेदवु
सौलवक मेकनंजुळ्ळकु" ननुचु । नलि निद्रुदेस जूचि नव्वुभूतमुलु;
७८७०

"मदि जेव गलिगि कुमार तारकुलु । गदिसिन संगरांगणमु जूचितिमि;
अदयुलै विषकंधरांधकासुरुलु । गदिसिन संगरांगणमु जूचितिमि;
त्रिदशेंद्रवृत्रुलु देंगुवमै मेंड्रसि । कदिसिन संगरांगणमु जूचितिमि;
ई मांसखंडंबु ली कबंधंबु । ली महारक्तंबु ली वितचवुलु
बौडगान मे" मनि पौंगि यौंडौंड । यडरुचु दौंडरुचु नाडु भूतमुलु
रविकुलाधिपुडैन रामु विक्रममु । दिवुटमै गडगि कीर्तिचु भूतमुलु
"नी रामु विक्रमंबेटि विक्रममु ? । घोराहवंबुलु कोट्लु सलिपि
वरमांस रक्तप्रवाहमुल् वड्रपि । परितृप्ति गाविंचु पंक्तिकंधरुनि
ननिमौन देंगटार्चे; नाचवुलिक । मनकेंदु गल" वनि मरुगु भूतमुलु
नुरुतर ध्वजदंडयुगळमुल् निलिपि । पौरि बौरि ब्रेवुलु पौंदौंद मुडिचि
७८८०

परम सम्मदमुन ब्रमदलु दारु । सरसडोलाकेळि सलुपु भूतमुलु
नैम्मुलु नम्मुलु नैडगलग द्रोसि । यिम्मैन चोट्ल नैलमितो निलिचि

निर्मथित मांस (खंडों) के लिए अपना स्वर्ग दे दो न ? न थककर बकरी के मांस-खंडों के लिए क्यों देते हो ?" हँसने वाले भूत, ।। ७८७० ।।

—"मन में पौरुष से युक्त कुमार और तारकासुर के भिड़े संगरांगण को देखा है। अदय बन विषकंधर (शिव) और अंधकासुर के भिड़े संगरांगण को देखा है। त्रिदशेंद्र तथा वृत्र के साहस से दीप्त होकर भिड़े संगरांगण को देखा है। (किन्तु) ये मांसखंड, ये कबंध, यह महारक्त, ये विचित्र रुचियाँ कहीं देखा नहीं है।" ऐसा कहते फूलकर सर्वत्र विजृंभित होते खेलनेवाले भूत, रविकुल के अधिप राम के विक्रम का चाहकर, लगकर गान करनेवाले भूत, "इस राम का विक्रम भी कैसा (जो) करोड़ों घोर-आहव (युद्ध) कर, श्रेष्ट मांस-रक्त के प्रवाहों को बहाकर, (हमें) परितृप्त करनेवाले पंक्तिकंधर को युद्ध-भूमि में मार डाला। वे स्वाद अब हमें कहाँ प्राप्त होंगे" यह कहते विकल होनेवाले भूत, उरुतर-ध्वजों के दंड-युगल खड़ा करके, पुनः पुनः आंतड़ों को मनोज्ञता से (रस्सियों के समान) बांधकर, ।। ७८८० ।।

—परम-सम्मोद से (अपनी) प्रमदाओं के साथ स्वयं सरस डोलाकेलि करनेवाले भूत, हड्डियाँ और बाणों को अलग करके, मनोज्ञ स्थानों में

प्रियमॊप्प ब्रियुलुनु ब्रियलुनु गूडि । प्रियरक्तपान संभृतकेलि देलि
"चॆलुवॊप्प रामुडु सीततो गूलि । वॆलयुगा" कंचु दीविंचु भूतमुलु
गलिगि भयंकराकारमैयुन्न । कलहरंगमु जॊच्चि कडुजोद्यमंदि
पनवुचु नेड्चुचु बति बेरुकॊनुचु । जनुदॆंचि यंदु राक्षसवधूजनमु
तुनिसि नॆत्तुट दॊप्प दोगिन केलु । तनुपारु किसलयतल्पंबु गाग
नकलंकतरमुलै यडरि पै बर्वु । मकुट रत्नारुण मंडल प्रभलु
तनुवॆक्क गप्पिन दद्दयु नॊप्पु । घनधातुवस्त्रनिकायंबु गाग
नलवड बर्वि सर्वांगंबुलंदु । दलकॊन्न मॆदडु चंदनचर्च गाग ७८९०

जतुरसंघट्टनजातास्थिरजमु । प्रतिलेनि पुष्पपरागंबु गाग
दाल समुत्तालदंडमुल् विरिगि । व्रालि तूलॆडु रथध्वजसमूहमुलु
गोमल विमल दुकूलखंडमुलु । वेमरु बॆवीचु वीवनल् गाग
नंतंत जुट्टुनु नवनिपै नुन्न । दंतावळोरुमुक्ताफलावळुलु
वरुसतो बडिसिपो वैचिन जॆदरि । करमॊप्प मल्लिकाकळिकलु गाग
नरुदुगा बर्विन या रामचंद्रु । शरचंद्रिकलचेत संतापमंदि

प्रेम से खड़े रहकर, प्रेम से प्रिय और प्रियाओं के मिलकर, प्रियरक्तपान-संभृत-केलि में ऊभचूभ होकर, (यह कहते कि) "शोभा से राम सीता के साथ मिलकर विराजमान हो" आसीसने वाले भूतों से युक्त बने (और) भयंकराकार वाले कलहरंग (युद्धभूमि) में प्रवेश कर, अति आश्चर्य-चकित हो, विकल होती हुई, रोती हुई, पति का नाम लेती हुई आकर वहाँ राक्षस-वधूजनों ने धारुणी पर पड़े हुए दशकंधर को देखा जो कटकर खून में लथपथ बने हाथ के शोभायमान किसलय-तल्प बनने पर, अकलंक-तर हो प्रचुरता से (शरीर के) ऊपर व्याप्त मकुट के रत्नारुण-मंडल की प्रभाओं के शरीर को आच्छादित कर, शोभित घन-धातुवस्त्र (कवच)-निकाय होने पर, शोभा से व्याप्त हो, सर्व-अंगों में लगी हुई मज्जा के चंदन-चर्चा (-लेप) होने पर, ।। ७८९० ।।

—चतुर-संघट्टन से जात (उत्पन्न)-अस्थिरज के अनुपम पुष्पपराग होने पर, ताल-समुत्ताल (ताड़ के समान ऊंचे)-दंडों के टूटने पर, झुककर नीचे गिरनेवाले रथ-ध्वज-समूह के कोमल (तथा) विमल दुकूल-खंडों के कई बार झलनेवाले व्यजन होने पर, सर्वत्र चौतरफ़ धरती पर स्थित उरु-दंतावलियों के मुक्ता-फल-समूह के क्रम से बिखेर देने पर, व्याप्त सुंदर मल्लिका-कलिकाएँ होने पर, अनुपम रूप से व्याप्त रामचंद्र की शर-चंद्रिकाओं से संतप्त होकर, वीरलक्ष्मी की घन-विरहाग्नि से विकल

वीर लक्ष्मी-घन-विरहाग्नि ग्रागि । धारुणि बडियुन्न दशकंठु गनिरि;
कनियंत शोकाब्धि करडुल देलि । दनुजेशुपै बडि दानवांगनलु

मंदोदरी विलापमु

पनव मंदोदरि पतिमीद व्रालि । तनरिन शोकाब्धि दरियिंपलेक
कलसि बाष्पंबुलु कन्नुल दौरुग । बलुमारु नेलुगेत्ति पलविंप दोडगें; ७९००
"हा राक्षसेश्वर! हा वीरवर्य ! । हा रणालंकार! हा नाथ!" यनुचु
नलतयु बलुवगलडलु दीपिंप । बलुमारु बलविंचि पति जूचि पलिकें;
"लंकेश! नेडु नी लंकलोपलिकि । शंकिप किनरश्मिजालमुल् सोच्चें;
'नेंडरय्येंनिपुड' नि यिंद्रादिसुरलु । नुडुवीथि जेलरेगि युब्बुचुन्नारु;
अमराधिपति गेल्चि यनलुनि गेल्चि । शमनुनि गेल्चि राक्षसराजु गेल्चि
पाशहस्तुनि गेल्चि पावमानु गेल्चि । यीशानसखु गेल्चि यीशानु गेल्चि
नी लावु लावुगा निखिल लोकमुल । वालुदु; वेंदु दुर्वारुंडवीवु;

बना हुआ था। देखकर तब शोकाब्धि की तरंगों में डूबकर, दनुजेश पर गिरकर दानवांगनाओं ने,

मंदोदरी का विलाप

—विलाप किया। मंदोदरी पति पर गिरकर, व्याप्त शोकाब्धि को पार न कर सक, आँखों से बाष्पों के झरने पर, ऊँचे स्वर से कई बार (यों) विलाप करने लगी, ॥ ७९०० ॥

—"हे राक्षसेश्वर! हे वीरवर! हे रणालंकार! हे नाथ!" कहते हुए थकान तथा अधिक व्यथाओं के (तथा) विकलताओं के दीप्त होने पर विलाप कर पति को देख कहा— "हे लंकेश! आज तुम्हारी लंका में बिना किसी शंका के इनरश्मिजाल ने प्रवेश किया। 'अब अवसर प्राप्त हो गया (बला टल गई)' कहकर इंद्र आदि सुर उडुवीथि पर विजृंभित हो फूल रहे हैं। अमराधिपति को जीतकर, अनल को जीतकर, शमन को जीतकर, राक्षसराज को जीतकर, पाशहस्त वाले को जीतकर, पवमान को जीतकर, ईशान-सखा को जीतकर, ईशान को जीतकर, अपनी सामर्थ्य को ही सामर्थ्य मानकर निखिल लोकों में विराजमान होते थे। सर्वत्र तुम दुर्वार रहे। आज तुम्हें ऐसी दुर्दशा क्यों हुई? तुम से बली उत्पन्न

नीकिट्टि दुर्दश नेडेल कलिगॆ ? । नीकंटॆ बलियुरु नॆंचिरे कलुग ?
'धारुणीसुत निम्मु; तगदु; राघवुडु। नारायणुडु गानि नरुडु
गाडात'
डनि नीकु जॆप्पिति; नकट! ना पलुकु। विनवैति! नी विधि विननेल
यिच्चु ? ७९१०

दपमाचरिंचुचु दशकंठ! तॊल्लि । विपुलैकनिष्ठतो विदितंबुगाग
नीविद्रियंबुल नॆरि निग्रहिंचि; । ता वैरमुन निप्पुडवि येमरिंचि
जनकज दॆप्पिच समरंबुलोन । निनवंश्युचे निन्नु निट्लु चंपिचॆ;
सुरलकु नॆब्भंगि जॊररानि लंक । नुरुवडि हनुमंतुडॊक्कडे चॊच्चॆ;
गलगक जलराशि गट्ट वानरुल । कलविये ? सुरलु वीरंटि नेनपुडे;
तरमिडि या जनस्थानंबुनंदु । खरदूषणादि राक्षसुल बॆक्कंड्र
बलुविडि नॊक्कंडॆ पटुबाहुशक्ति । नलि रेगि चंपिनाटिनुंडियुनु
दलकुदु रामुनि दलचि निन् जूचि; । तलकुटलॆल्लनु दलकूडॆ नेडु;
धर्मतत्पर यरुंधति कंटॆ नित्य । निर्मलमति रोहिणीदेविकंटॆ
भूरिगुणोज्ज्वल भूदेविकंटॆ । सैरणगल पुण्यसाध्वि जानकिनि ७९२०

हो सका क्या ? 'धारुणीसुता (सीता) को दे दो। (सीता को बंदी बनाना) उचित नहीं है। राघव तो नारायण है, वह (मात्र) नर नहीं है।' ऐसा तुमसे कहा था। हाय ! मेरी बात नहीं सुनी। तुम्हारी नियति (तुम्हें) कैसे सुनने देती ? ॥ ७९१० ॥

—हे दशकंठ ! पूर्व में तप करते हुए विपुलैक-निष्ठा से, विदित रूप से इन इंद्रियों का क्रम से निग्रह किया था। उस वैर को मन में रखकर, अब उन्होंने तुम्हें असावधान बनाकर, जनकजा को (तुम से) लिवा लाकर, समर में इन-वंश के हाथ तुम्हें इस प्रकार मरवा डाला है। किसी भी प्रकार से सुर भी प्रवेश न कर सकें, ऐसी लंका में शीघ्रता से हनुमान ने अकेले ही प्रवेश किया। व्याकुल हुए बिना जलराशि (पर पुल) बाँधना वानरों के बस की बात है ? तभी मैं ने कहा था कि ये सुर हैं। क्रम से उस जनस्थान में खरदूषण आदि कई राक्षसों को बरज़ोरी अकेले ही पटु बाहुशक्ति से विजृंभित हो जिस दिन मार डाला था, तभी से राम का विचार कर और तुम्हें देख विकल बन जाती थी। मेरी समस्त व्याकुलता आज बर आई न ! धर्मतत्परमति वाली अरुंधती की अपेक्षा, नित्यनिर्मलमति वाली रोहिणीदेवी की अपेक्षा, भूरि-गुणोज्ज्वला भूदेवी की अपेक्षा, सहनशीला पुण्यसाध्वी जानकी को, ॥ ७९२० ॥

दॆगि तॆच्चिनप्पुडे देवि कोपाग्नि । बॊगिलिनाडवु गदे भुवनंबुलॆरुग?
गॆकॊनि यॆव्वडेकर्मंबु सेयु । ना कर्मफलमु वाडंदकपोव;
डतिनीतिपरुडैन या विभीषणुन । कतुलसौख्यमु गल्गॆ ननधात्मुडगुट
नेपुन लोकंबुलॆल्ल गारिंचु । पापिकि दुरवस्थ पाटिल्लॆ नीकु;
गलदु सीतादेविकंटॆ सौभाग्य । कलितलु बॆक्कंड्रु कामिनीमणुलु;
कामांधकारंबु कन्नुल गप्पि । नी मदि दॆलियंग नेरवु गाक !
कुलरूप दाक्षिण्यगुणगणाकेळि । दलप वैदेहि ना तरमु गादॆंदु;
नाकंटॆ नॆक्कुडो, नातोड सरियॊ; । नी कानमिकि जॆप्पनेरगाकेनु;
मृत्युवॊक्कोक्क निमित्तंबु वलन । सत्यंबुगलुगुट सकलजीवुलकु;
नॆडरैन मृत्युवु निट जेर दॆच्चु । वडुवुन दॆच्चिति वैदेहि नीवु;
७९३०

भाग्यंबुगल सीत पति तोड गूडि । योग्यमौ सुखलीलनॊंदि पॆंपॊंदॆ;
नाथ! भाग्यमु लेनि ननु जूडु दुःख । पाथोधिलोपल बडि मुनिगॆदनु;
बॊलुपार नी तोड बुष्पकंबॆक्कि । ललितंबुलैन लीलाविहारमुलु
सलिपिति मंथर शैलंबुनंदु । गलधौतगिरियंदु गनकाद्रियंदु

—जिस समय लाए थे; (उसी समय उस) देवी की कोपाग्नि से, जगत्-जाने ऐसा, दग्ध हो गए थे न ? चाहकर जो (व्यक्ति) जो कर्म करेगा, उस कर्मफल को वह पाए बिना नहीं रहेगा । अनघात्मा वाला होने के कारण अतिनीतिपर उस विभीषण को अतुलसौख्य प्राप्त हुआ । प्रचुरता से समस्त लोकों को सतानेवाले पापी को मिलनेवाली दुस्थिति तुम्हें प्राप्त हुई । सीतादेवी की अपेक्षा सौभाग्य-कलित कई कामिनीमणियाँ हैं । (इस बात को) कामांधकार से, आँखें बंद हो जाने से तुम अपने मन से नहीं जान सके थे । कुल, रूप, दाक्षिण्यगुण-गण की केलि (लीला) से सोचने पर वैदेही मेरी समता नहीं कर सकती । मुझसे अधिक है (अथवा) मुझसे समान है, तुम्हारी दृष्टि के लिए मैं कुछ नहीं कह सकती । एक एक निमित्त (कारण) से सकल जीवों का मृत्यु होना सत्य है । दूर बनी मृत्यु को यहाँ लाने के समान तुम वैदेही को यहाँ लाए हो । ॥ ७९३० ॥
—भाग्यवाली सीता, पति के साथ मिलकर योग्य-सुखलीला को प्राप्त हो वर्द्धित हो रही है । हे नाथ ! भाग्यहीन मुझे देखो, दुख-पाथोधि (दुख रूपी समुद्र) में गिर डूब रही हूँ । मनोज्ञता से तुम्हारे साथ पुष्पक पर आरूढ हो मंथरशैल पर, कलधौतगिरि पर, कनकाद्रि पर, आतत-नंदन-उद्यान में, प्रीति से अनेक और देशों में ललित-लीलाविहार कर चुकी हूँ । हाय ! उन सब लीलाओं को मुझे निगल जानेवाली विधि (नियति) ने

नाततनंदनोद्यानंबुनंदु । ब्रीतिमै मरियुनु बेक्कु देशमुल;
नक्कटा ! या लीललन्नियु नन्नु । द्रेक्कोन्न विधि कडतेर्चेंने नेडु !
'मयुडु ना तंड्रि; ना मगडु रावणुडु;। प्रियपुत्रुडाहवप्रियुडिंद्रजित्तु'
डनि गर्वमुननुंटि; ननिलोन राम । जननाथुचे नीवु 'सच्चुटेनेरुग;
बिडुगडच्चिन गूलु पृथ्वीधरंबु । वडुवुन जूर्णमै वसुधपै बडिति;
मृत्युवुनकु नीवे मृत्युवैयुंडि । मृत्युवु पालैते मेदिनि गूलि ? ७९४०

वैरुल सतुलकु वैधव्यमित्तु; । नी रामलकु गलगे नेडाफलंबु"
अनि येड्चु; बलविंचु; नसुरेशु मोमु । गनुगोनि वर्णिंचु; गन्नीरु निंचु;
दोंडलपै दलयिडु; दोरुगु कन्नीट । गडुगु नाननधूळि; गडु जिन्न बोवु;
गोलिचि केलु कोंगेलिलो दार्चु । वालु डेंदमु गंद वगचु; नात्मेशु
तलयेत्ति डाकेल धरियिंचि चूचु; । दलयूचु; वलचेयि धरणि
बोरल्चु;
'बोये बो' म्मनु; 'रामभूपालुडित । सेयुने ? नेनेमि सेयुदुनिक ?"
ननि यलमट बोंदु; नवनिपै बोरलु; । दन दिक्कुलेमिकि दद्दयु वगचु;

आज पूरा (समाप्त) कर दिया न ! 'मय मेरा पिता है, मेरा पति रावण है, प्रिय पुत्र आहव-प्रिय इंद्रजित है' ऐसा सोच गर्व से थी। युद्ध में राम जननाथ के हाथ तुम्हारे मरने की बात नहीं जानती थी। गाज के दबाने पर गिरने वाले पृथ्वीधर (पर्वत) के समान चूर्ण हो वसुधा पर गिर पड़े न ! मृत्यु के लिए तुम्हीं मृत्यु बने रहे थे, (आज) मेदिनी (धरती) पर गिरकर मृत्यु के वश में हो गए न ! ।।७९४०।।

—वैरियों की सतियों को वैधव्य देते थे, तुम्हारी रामाओं को आज वह फल मिला न।" (ऐसा) कहते रोती, प्रलाप करती, असुरेश के मुख को देख वर्णन करती, आँसू भरती, जांघों पर सिर रखती, झरने वाले आँसुओं से (रावण) के आनन की धूल धो डालती, अधिक खिन्न हो जाती, (रावण का) हाथ अपने अरुण हाथ में लेती, हृदय व्यथित हो जाए, ऐसा रो उठती। आत्मेश का सिर उठाकर, बाएँ हाथ में धरकर देखती, सिर हिलाती, दाहिना हाथ धरणी पर पटकती, "चल बसे न !" "रामभूपाल ने इतना किया न ? अब मैं क्या करूँ ?" कहकर व्यथित होती, धरती पर लोटती, अपनी अनाथदशा पर अधिक विलाप करती, अपार शोकाग्नि में लगकर इस प्रकार निरंतर दग्ध होने वाली भाभी[1] को देखकर (उनके) चरणों

---

1 तेलगु में, बड़ी साली को, और अपने से बड़े भाई व बड़े साले की पत्नी को भाभी ही कहते हैं।

दुदिलेनि शोकाग्नि दौंडरि यिब्भंगि। वदलक कालेंडि वदिनेनु जूचि
यड्डुगुलपै बडि यंतलो नप्पु। डडलिन्मडिपग ननें विभीषणुडु;
"वडितोड बेर्चु रावण पयोराशि। पडतुक! रघुरामु बाणाग्नि
निगिरे; ७९५०

बरतेंचि राघवप्रळयमारुतमु। सरस रावणपारिजातंबु गूल्चें;
गमि विच्चिच पारु राघव-नागवैरि। समद-रावण-सामजंबुनु जंपें;
नतुलित-निशित-रामामोघ बाण। शतकोटि रावणशैलंबु दुनिमें;
बलुविडि राघव भयददावाग्नि। नलि दशाननकाननमु नीरु सेसें;
बडतुक! राघवापरपयोराशि। गडगि रावणदिवाकरुडस्तमिंचें;
खरतरामोघ-राघव नीलमेघ। शरवृष्टि रावणसप्तार्चि नार्चें"

श्रीरामुडु विभीषणुनोदार्चि रावणुनकु प्रेतकृत्यंबुल जेयिंचुट

ननि पेंक्कुभंगुल नडलुचुनुन्न। घनु विभीषणु जूचि काकुत्स्थुडनियें;
"नी वनितल येड्पुलिक वारिंपु; मीवुनु शोकिंपनिटमीद नुडुगु;
परिगोनि शूरुलु बवरंबुलोन। बरुलचे जत्तुरु; पगल जंपुदुरु;

पर गिरकर, तब मन में वेदनाओं के बढ़ने पर विभीषण ने कहा— "हे नारी! पौरुष से विजृंभित रावण-पयोराशि रघुराम की बाणाग्नि से सूख गया। ॥ ७९५० ॥

—आकर राघव-प्रलयमारुत ने रावण-पारिजात (वृक्ष) को गिरा दिया। समूह बिखरकर भाग जाए ऐसा राघव-नागवैरी (सिंह) ने समद-रावण-समाज (गज) को मार डाला। राम के अतुलित-निशित-बाण (रूपी) शतकोटि (वज्र) ने रावण-शैल का वध कर दिया। बरजोरी राघव (रूपी) भयद दावाग्नि ने दशानन-कानन को भस्म कर दिया। हे नारी! राघव (रूपी) अपर-पयोराशि (दक्षिण समुद्र) में सप्रयत्न रावण-दिवाकर अस्त हुआ। खरतर-अमोघ-राघव-नीलमेघ की शरवृष्टि ने रावण-रूपी सप्तार्चि को बुझा दिया।"

श्रीराम का विभीषण को सान्त्वना देकर रावण के लिए प्रेतकृत्य (उत्तर क्रियाएं) करवाना

—ऐसा अनेक प्रकार से विकल बनने वाले महान् विभीषण को देख काकुत्स्थ ने कहा— "इन स्त्रियों के रोदन का निवारण करो। तुम भी अब आगे शोक मत करो। प्रतिरोधकर शूर युद्ध में अन्यों (शत्रुओं) के हाथ

जयमिद्दरिकि लेदु समरंबुलोन; । जयपराजयमुलस्खलितमुल् गावु; ७९६०
सकल सुपर्वुल साधिंचेनितडु; । सकल दिक्पालुर साधिंचेनितडु;
एकांगवीरु; डहीनसाहसुडु; । लोकैकजितुडु; त्रिलोकभीकरुडु;
नी यन्न रणमुन मिक्किलि कडिमि । जेयुट दॆलिय जूचिति कादॆ येनु ?
नी चंदमुन निलिचि यॆव्वंडु पोरु! । नी चंदमुन दुदि नॆव्वंडु चच्चु !
नी लावु नी चावु नॆव्वरु वडय । जालुदुरक्कटा ! जयमेमिसेयु ?
ननघ! मीयन्न कृतार्थुंडु; वगव । बनिलेदु; धैर्यवु पाटिंचि नीवु
कडकतो नग्निसंस्कारादिविधुलु । तडयक जेयु मी दनुजाधिपतिकि"
ननवुडु भीतुडै या विभीषणुडु । घनभक्तियुक्तिमै गरमुलु मोगिचि
"यॆक्कडि संस्कार? मीतडु नाकु । नॆक्कडि तोबुट्टु? वितडुना पगर;
नी देवि दॆच्चिन नीचुंडु, कष्टु; । डी दुष्टचित्तुनकॆक्कडि विधुलु ? ७९७०
परवधूजनुल संस्पर्शबुसेयु । पुरुषुलधोगति बॊंदि कूलुदुरु;
अट्टिवारल मुट्ट नर्हंबु गादु । गट्टिगा गनुगॊनगा; दट्टुगान

मरते हैं, अन्यों को मार डालते हैं। दोनों के लिए समर में विजय नहीं है। जय (और) पराजय अस्खलित नहीं है। ॥ ७९६० ॥

—इसने सकल-सुपर्वो को जीत लिया था। इसने सकल दिक्पालकों को जीत लिया था। (यह) एकांग वीर है, अहीन-साहस वाला है, लोकैक-विजयी है, त्रिलोक-भीकर है। तुम्हारे अग्रज का रण में अधिक साहस प्रदर्शित करते मैंने देखा नहीं? इस प्रकार टिककर कौन लड़ सकता है? इस प्रकार अंत में कौन मरता है? हाय, ऐसी सामर्थ्य, ऐसी मृत्यु को कौन प्राप्त कर सकता है? (इस दशा में) विजय क्या कर सकता है? हे अनघ! तुम्हारा अग्रज कृतार्थ है। शोक करने की आवश्यकता नहीं है। धैर्य धारण कर तुम सप्रयत्न इस दनुजाधिपति के अग्नि-संस्कार आदि विधियों को अविलंब करो।" ऐसा कहने पर भीत होकर, उस विभीषण ने घन-भक्ति-युक्ति से हाथ जोड़कर (कहा)— "कहाँ का संस्कार? यह कहाँ का मेरा सहोदर है? यह मेरा शत्रु है, तुम्हारी देवी को लाने वाला नीच है, क्रूर है। इस दुष्टचित्त वाले को कहाँ की (उत्तर-) विधियाँ? ॥ ७९७० ॥

—पर-वधूजनों का संस्पर्श करनेवाले पुरुष अधोगति को प्राप्त कर पतित हो जाते हैं। ऐसे लोगों का स्पर्श नहीं करना चाहिए। ठीक ढंग से देखना भी नहीं चाहिए। अतः मैं इस पापकर्मा को छू नहीं सकता।

नी पापकर्मुनि ने मुट्टुटकुनु । नोप; वैदिक विधिकुचितुंडु गाडु;"
अनुटयु नम्माटलंतरंगमुन । जूनिपि विभीषणु जूचि राघवुडु
"अनघ! नी चेप्पिनदंतयु निजमु; । दनुजाधिपति निक दगदु दूषिप;
गडकतो समरगंगा प्रवाहमुन । गडिगिकोन्नडीगि गल कल्मषमुल;
नच्चुगा ना पनुलन्नियु नय्ये; । जच्चिननपिम्मट जनदु वैरंबु;
परुवडि नितनिकि बरलोकविधुलु । करमर्थि जेयुमु कडकतो नीवु"
अनवुडु 'नौगाक' यनि विभीषणुडु। तन बुद्धि वैदिक धर्मंबु बूनि
यचटिकि नग्नित्रयंबु देप्पिचि । यचलमानसुडयि यग्रजन्मुनकु ७९८०
गरमोप्प नग्निसंस्कारादुलेन । परलोकविधुलेल्ल भक्तितो जेसि
चनुदेंचि या रामचंद्रु नंघ्रुलकु । विनतुडैयुन्न नव्विमलात्मु जूचि
प्रियभाषणंबुल बेह्द मन्निचि । दय पेंपु मीर नातनि नूरडिंचि
धरणीशुडप्पुडु तम्मुनि जूचि । निरुपमकारुण्यनिरतुडै पलिकें;

विभीषणुनि लंकापट्टाभिषेकमु

"नीविक लंकलोनिक बोयि पुण्य । भावु विभीषणु बट्टंबु गट्टि

यह वैदिक विधियों के लिए उचित नहीं है।" कहने पर उन बातों को अंतरंग में रखकर, विभीषण को देखकर राघव ने कहा— "हे अनघ ! तुम ने जो कहा, वह सब सच है। अब आगे दनुजाधिपति का दूषण नहीं करना चाहिए। समर-गंगा प्रवाह में (इसने) सप्रयत्न अपने कल्मषों को धो डाला है। ठीक तरह से मेरे सभी काम पूरे हो गए। मरने के बाद वैर उचित नहीं है। तुम सप्रयत्न शीघ्रता से इसके लिए अधिक चाह से परलोक-विधियों (उत्तरक्रियाओं) को संपन्न करो।" ऐसा कहने पर "ऐसा ही हो" कहकर विभीषण ने अपने मन में वैदिक धर्म को अपना कर, वहाँ अग्नित्रय को मँगवाकर, अचल-मानस वाला हो (निष्ठा से), अग्रजन्म को, ।। ७९८० ।।

—अधिक शोभा से अग्नि-संस्कार आदि समस्त परलोक-विधियों को भक्ति से करके, आकर, रामचंद्र की अंध्रियों (चरणों) में विनत हुआ। उस विमलात्मा वाले को देख, प्रियभाषणों से अधिक सम्मानित कर, अधिक दया से उसे सान्त्वना देकर, धरणीश ने तब अनुज को देखकर, निरुपम-कारुण्य-निरत हो कहा—

विभीषण का लंका पर पट्टाभिषेक

—"तुम अब लंका में जाकर, पुण्यभाव वाले विभीषण का राजतिलक कर आओ। जाओ।" ऐसा कहने पर राघवानुज प्रेम से लंका में जाकर

रम्मु; पो" म्मनवुडु राघवानुजुडु । नेम्मितो लंकलोनिकि बोयि यपुडु
तडयक तरुचरोत्तमुलनु बनिचि । कडक समुमुद्रोदकमुल देप्पिचि
वारि पुरोहितवरुल रप्पिचि । वारि सज्जनमंत्रिवरुल रप्पिचि
भूरि मंगळतूर्यमुलु म्रोय नतनि । नारूढ नियतितो नभिषिक्तु जेसि
नंचित मंगळाचारमुल् मेऽय । नंचित सिंहासनासीनु जेसि ७९९०
करमोप्प नतनि लंकाराज्यमुनकु । बरमसम्मदमुन वट्टंबु गट्टि
"येंदाक रविचंद्रु, लेंदाक धरणि, । येंदाक गुलगिरु, लेंदाक नभमु:
नेंदाक जलनिधु, लेंदाक दिशलु, । नेंदाक राघवाधीशु कीर्तनमु
नारूढमुग जेल्लु नंदाक नेलु । मी राज्य" मनि यप्पुडेलमि दीविंचि,
"परग रक्षोराज्यभरणमेंव्वरिकि । बरिकिंचि नडपुट परमदुर्लभमु,
दीनि नेमऽक वर्तिपुमु; नित्य । मैन धर्ममुसेयु" मनि योप्प बलिकें;
नंत विभीषणुंडक्षीण राज्य । संतोषमुनु बोंदि चतुरमानसुडु
तडयक मंगळद्रव्यमुल् मंचि । तोडवुलंबरमुलु दोरंपुमणुलु
गोनि लक्ष्मणुनि गोलिचि कोमरोप्प वच्चि । जननाथुनकु निच्चि
सद्भक्ति म्रोक्कें;
नलवुमै रघुरामुडवियेल्ल बुच्चि । येलमितो मातलिकिच्चि
वीड्कोलिपें; ८०००

तब, विलंब किए बिना, तरुचरोत्तमों को भेजकर, सप्रयत्न समुद्रोदकों को मँगवाकर, उनके (राक्षसों के) पुरोहितवरों को बुलवाकर, उनके सज्जन-मंत्रिवरों को बुलवाकर, भूरि-मंगल-तूर्यों के बजने पर, उसे (विभीषण को) आरूढ नियति से अभिषिक्त कर, अंचित (पूज्य) मंगलाचारों के दीप्त होने पर, अंचित सिंहासानासीन कर, ।। ७९९० ।।

—बड़ी शोभा से उसे लंका राज्य के लिए परम सम्मोद से राजतिलक कर, "जब तक रवि चंद्र, जब तक धरणी, जब तक कुलगिरियाँ, जब तक नभ, जब तक जलनिधियाँ, जब तक दिशाएँ, जब तक राघवाधीश का कीर्तन (गुणगान) आरूढरूप से अवस्थित रहेंगे तब तक तुम राज्यपालन करते रहो।" ऐसा प्रेम से आसीस कर, "रक्षोराज्य का भरण सोच देखने पर किसी के लिए भी परमदुर्लभ है। इसे असावधान हुए बिना चलाओ, नित्य-धर्म का आचरण करो" ऐसा शोभा से बोला। तब विभीषण ने अक्षीण राज्य (प्राप्ति के)-आनन्द को प्राप्त कर, (उस) चतुर मानस वाले ने अविलंब मंगलद्रव्य, श्रेष्ठ आभरण, अंबर, बड़ी-बड़ी मणियाँ लेकर, लक्ष्मण की सेवा कर, शोभा से आकर, जननाथ को

मातलि रथमॆक्कि महनीय महिम । नाततरथवेगुडै पोयॆ दिविकि;
दतनंतरंब यद्धरणिवल्लभुडु । मदिलो विचारिंचि मारुति जूचि
"जनकपुत्रिकि मन जयमु सेमंबु । विनुपिंपु लंककुवेग वो" म्मनुडु
चनि हनुमंतुडु संतोषमॊदव । घनवेगमुन लंक गडकतो जॊच्चि
या रामु विजयंबु नात्म जिंतिंचु । ना रामु सति नशोकारामवीथि
गनि, म्रॊक्कि "वच्चिति गल्याणि!" यनुचु । विनतुडै पलिकॆनु विनयंबु तोड;
"संतोषमॆंतयु जानकि ! नीवु । चिंतिंचुपगिदिने सिद्धिंचॆ नीकु;
देवि! नी पति रामदेवुंडु वच्चि । रावणु लोक विद्रावणु जंपॆ;
दॊडरि यनेकुल दुष्ट राक्षसुल । बॊडिसेसि समरमद्भुतमुगा जेसि,
तम्मुडु सौमित्रि तनुगॊल्व बरम । सम्मदंबुन रामचंद्रुडुन्नाडु" ८०१०
अनि चॆप्पि या देवि यडलार्चि तॊल्लि । पनिवच्चि याडिन बासलु दलचि,
"जलजाक्षि! नी पति जलधि बंधिंचु; । ललन ! नी नाथुंडु लंकपै विडियु;

प्रदान कर, सद्भक्ति से प्रणाम किया। शोभा से उन सबको लेकर, प्रेम से उन्हें मातलि को देकर विदा कर दिया, ॥ ८००० ॥

—मातलि रथ पर आरूढ होकर, महनीय महिमा से, आततरथ-वेग से दिवि को चला गया। तदनंतर उस धरणीवल्लभ ने मन में विचार कर मारुति को देखकर (कहा)— "जनकपुत्री को हमारी विजय (और) कुशल सुनाओ। शीघ्र लंका में जाओ।" (ऐसा) कहने पर, जाकर हनुमान (मन में) हर्ष के उत्पन्न होने पर, महान् वेग से सप्रयत्न लंका में प्रवेश कर, उस राम की विजय का मन में चिंतन करनेवाली उस राम की सती को अशोकाराम-वीथि में देखकर, प्रणाम कर, "आया हूँ कल्याणी!" कहकर, विनत हो, विनय से (यों) बोला— "हे जानकी! तुम जैसा सोच रही थीं, वैसा ही तुम्हें आनन्द प्राप्त हुआ। हे देवी! तुम्हारे पति रामदेव ने आकर लोक विद्रावण रावण को मार डाला है। लगकर अनेक दुष्ट राक्षसों को चूर्णकर, अद्भुत रूप से समर कर, अनुज सौमित्र के सेवा करने पर परम सम्मोद से रामचंद्र अवस्थित हैं।" ॥ ८०१० ॥

—ऐसा कहकर उस देवी की वेदना को दूरकर, पूर्व में काम पर आकर कहे वचन को स्मरण कर, (कहा)— "हे जलजाक्षी! तुम्हारा पति जलनिधि को बाँधेगा, हे ललना! तुम्हारा नाथ लंका पर आक्रमण

रमणि! नी रमणुंडु रावणु द्रुंचु; । गमलाक्षि ! नी भर्त गैकोनु निन्नु
ननि विन्नविंचिति नथि नाडिचट, । वनित ! ना वचनमुल्
वच्चेनन्नियुनु;
बनिविनियेद निक बतिपालिकेनु; । बनुलाननि" म्मन्न ववनजु जूचि
रावणु मरणंबु रघुरामु जयमु । भाविंचि भाविंचि पडति हर्षिंचि
"तेगि नी प्रतापंबु दीपिप राम । जगतीश्वरुडु वच्चि साधिंचे गाक!
घनदैत्यगर्वांधकारमीलंक । जनजोच्चि परुलकु साधिप दरमे ?
नी धैर्यगांभीर्य निरवद्य शौर्य । माधुर्यपर्यायमहिमलेमंदु ?
नेमनि वर्णितु नेनु नी चरित ? । मेमनि पोगड्डु नेनु नी कडिमि ?
८०२०

नूत्नभूषण-जगन्नुत वस्त्र-हेम । रत्नसंपदलतो राज्यमिच्चिननु
बरग नी चेसिन पौरुषंबुनकु । वरिकिप सरिगादु पवमान-तनय!
संतोषमंदिति जाल नी वलन । नंतरंगबुन" ननि सीतवलुक,
हनुमंतुडत्यंतहर्षंबु दनदु । मनमुन बेनगोन मरियु निट्लनिये;
"नन्नु मीरिटु करुणादृष्टि जूचि । मन्निंचि याडिन माटले चालु;

करेगा, हे रमणी ! तुम्हारा रमण रावण का वध करेगा, हे कमलाक्षी ! तुम्हारा पति तुम्हें स्वीकारेगा। ऐसा उस दिन यहाँ चाहकर निवेदन किया था। मेरे सभी वचन वर आए। अब मैं पति के पास जाऊँगा। काम हो तो आज्ञा दो।" (ऐसा) कहने पर पवनज को देखकर रावण के मरण, रघुराम की विजय को सोच-सोचकर, नारी (सीता) हर्षित हुई (और कहा)— "साहस कर तुम्हारे प्रताप के दीप्त होने पर राम-जगदीश्वर ने आकर (कार्य को) सिद्ध किया न ! घन-दैत्त-गर्व-अंधकार वाली इस लंका में प्रवेश कर विजय प्राप्त करना अन्यों के वस की बात है? तुम्हारे धैर्य-गांभीर्य, निरवद्य-शौर्य, माधुर्य-पर्याय की महिमाओं का कैसे वर्णन करूँ? तुम्हारे चरित्र का मैं क्या वर्णन करूँ? तुम्हारे साहस की मैं कैसे प्रशंसा करूँ? ॥ ८०२० ॥

—हे पवमानतनय ! नूत्न-भूषण, जगन्नुत वस्त्र, हेम, रत्न, संपदाओं से युक्त राज्य देने पर भी, सोचने पर वह तुम्हारे किए पौरुष (-युक्त कार्य) के समान नहीं हो सकता। तुम्हारे कारण अंतरंग में अत्यंत आनंदित हुई हूँ।" ऐसा सीता के कहने पर, हनुमान ने अपने मन में अत्यंत हर्ष के बढ़ जाने पर यों कहा— "आपका इस प्रकार करुणा (पूर्ण) दृष्टि से देखकर, समादर कर कहे वचन ही पर्याप्त हैं। सोचने पर देवेंद्रपद

भाविप देवेंद्रपदमुनकंटें । ने वस्तुवुलकंटें निदि घनंबरय"
ननि पल्क मरियुनु नम्महीपुत्रि । हनुमंतु गनुगोनि यतनितो ननियें;
"वलमुनु शौर्यंबु बाहुविक्रममु । नलघुतेजंबुनु नंचित क्षमयु
श्रुतमु नौदार्यंबु सुस्थिरत्वंबु । सततंबु निश्चलस्वामिभक्तियुनु
विनयंबु मौदलैन विश्रुतगुणमु । लनुपमस्थितिनोंप्पु ननघ ! नी"
कनिन ८०३०
गड्भीकराकृतुल् गलिगि यद्देवि । कडनुन्न राक्षसांगनल नीक्षिंचि
"या पापकर्मुनि याज्ञ वार्टिचि । यी पापमतुलु नीकेंग्गुसेयुदुरु;
घनमुष्टिनिहतुल गडतेर्चिपुत्तु" । ननवुडु जानकि हनुमंतु जूचि
"येसिनवाडुंड निषुवेमि सेयु ? । दासीवधंबेंदु दगदु चिंतिंप;
दौलिल ने जेसिन दुष्कर्मफलमु । लेल्लनु गंटि; वीरेमि सेयुदुरु ?
अनघचारित्र ! पापात्मुलंदैन । घनुलु दयाबुद्धि गलिगि युंड्दुरु;
गान नी राक्षसकांतल जंप । वानरोत्तम! नीकु वल" दन्न नलरि
"निर्मलगुणरत्ननिधिवि नीवरय । धर्मपत्निवि गागदगुदु रामनकु;
भूनाथुकडकिक बोवंग नाकु । नानति यि" म्मनन्न नद्देवि पलिकें
"भावंबु दाननि पट्टिति व्राण । मे वानरोत्तम! यितकालंबु; ८०४०

की अपेक्षा (तथा) अन्य वस्तुओं की अपेक्षा यही बढ़कर है।" ऐसा कहने पर और उस महीपुत्री ने हनुमान को देखकर, उससे कहा— "हे अनघ! वल, शौर्य, बाहुविक्रम, अलघुतेज, अंचित क्षमा, श्रुत, औदार्य, सुस्थिरतेज, सतत-निश्चल स्वामि-भक्ति, विनय आदि विश्रुतगुण अनुपमस्थिति से तुम्हें प्राप्त हों।" (ऐसा) कहने पर, ॥ ८०३० ॥
—अधिक भीकर आकृतियों से युक्त हो, उस देवी के पास स्थित राक्षस-अंगनाओं को देखकर, (कहा—) "उस पापकर्मा की आज्ञा मानकर, इन पापमति वालों ने तुम्हें हानि पहुँचाई है। घन-मुष्टि-निहतियों से मार डालूँगा।" ऐसा कहने पर जानकी ने हनुमान को देखकर (कहा)— "चलाने वाले के रहने पर इषु (बाण) क्या करेगा? सोचने पर दासीवध कदापि उचित नहीं है। पूर्व में अपने किए सभी दुष्कर्मों का फल पाया है। इन्होंने क्या किया है? हे अनघ चरित्र वाले! पापात्माओं पर भी महान् (व्यक्ति) दयाबुद्धि से युक्त हो रहते हैं। अतः हे वानरोत्तम! तुम्हें इन रासक्षकांताओं को नहीं मारना चाहिए।" (ऐसा) कहने पर प्रसन्न हो (हनुमान ने कहा)— "निर्मलगुणरत्ननिधि वाली तुम सोचने पर राम के लिए धर्मपत्नी होने उपयुक्त हो। भूनाथ के पास जाने के लिए अब मुझे आज्ञा दे दो।" कहने पर वह देवी

तन्नु जूडक यिक दडवोर्वजाल । नुन्नरूपनि तेल्पु मुर्वीशुनकुनु;
बो'' म्मनि दीविंप भूमिनंदनकु । नेम्मितो म्रोक्कुचु निपुणमानसुडु
चनुदेंचि या रामजगतीश्वरुनकु । विनतुडै पावनि वेस विन्नविंचे;
"देव! नी सेमंबु, देव! नी जयमु । देवितो जेप्पिन देवि हर्षिंचे;
वनजातनेत्र 'देवर जूडवलयु । नदि विन्नपमु सेयु' मनिपंचे नन्नु"

रामाज्ञ चे विभीषणुडु सीतनु दोड्कोनि वच्चुट

ननिन निचुकतडवात्म जिंतिंचि । जननाथुडाविभीषणु जेर बिलिचि,
"जनकज मंगळस्नानंबु सेय । बनिचि दिव्यांबराभरणमाल्यमुलु
वेलय गैसेयिंचि वेड्क निक्कडिकि । बोलतुक दोड्तेम्मु पो'' म्मन्न नतडु
संतसंबुन नेगि सरमादुलैन । यंत:पुरस्त्रीलकंतयु जेप्पि
"जनकज देंड"न्न संप्रीति वारु । चनि भूमिजकु म्रोक्कि सद्भक्ति
तोड ८०५०
"देवि! नी पति रामदेवुंडु पिलिचि । या विभीषणुतोड नानति यिच्चि

बोली— "हे वानरोत्तम ! (राम को ही) अपना भाव (आत्मा) मानकर, इतने समय तक प्राणों को रोक रखा है । ॥ ८०४० ॥

—उर्वीश (राजा राम) को बता दो कि अब अधिक देर तक उन्हें देखे बिना मुझसे रहा नहीं जाता (अब) जाओ ।" कहकर आसीसने पर, भूमिनन्दना को प्रेम से प्रणाम करते हुए, निपुण-मानसवाला (हनुमान) (वहाँ से) आया, उस राम-जगदीश्वर को विनत हो, पावनी ने झट से निवेदन किया— "हे देव ! तुम्हारा कुशल, हे देव ! तुम्हारी जय (का समाचार) देवी को बताने पर देवी हर्षित हुईं । वनजात-नेत्र वाली (जानकी) ने यह कह मुझे भेजा कि 'प्रभु के दर्शन करने चाहिए' यह निवेदन करो ।"

राम की आज्ञा से विभीषण का सीता को ले आना

—(ऐसा) कहने पर, थोड़ी देर आत्मा (मन) में विचार कर, जननाथ ने विभीषण को निकट बुलाकर (कहा)— "जनकजा को मंगलस्नान करने भेज कर, दिव्य-अंबर-आभरण-माल्यों से शोभा से अलंकृत कर, उत्साह से यहाँ (उस) नारी को लिवा लाओ, जाओ ।" कहने पर वह आनन्द से जाकर, सरमा आदि अंत:पुर की स्त्रियों को सबकुछ बताकर, (कहा)– "जनकजा को लाओ ।" कहने पर उन्होंने संप्रीति से जाकर भूमिजा को प्रणाम कर, सद्भक्ति से (कहा)— ॥ ८०५० ॥

पुत्तेंचुटयु मम्मु बुत्तेंचे; नीवु । चित्तंबुलोपल जेल्वु वाटिंचि
यभिमतमंगळायतुडैन राम । विभुडुन्न चोटिकि वेंचेयवलयु;
नी वेषमेटिकि नेलनाग! नीकु ? । नोवु कल्याणिवि नीरेरुहाक्षि!"
यनि मंगळस्नानमर्थि जेयिंचि । तनुलतातन्विकि दडियोत्तुलोत्ति,
दिव्यांबरंबुल, दिव्यमाल्यमुल । दिव्यभूषणमुल देवि गैसेसि,
यसमानमहिमतो नसुर कामिनुलु । पसिडिपल्लकियंदु बडतुक नुंचि
तोडितेंच्चुटयु जूचि तोरंपुभक्ति । गड्नोप्पुमिगुल राक्षसकुलेश्वरुडु
प्रकटराज्यमुनकु फालपट्टमुनु । नकलंकनियतिकि हस्तवेत्रमुनु
धरियिंचि यत्यंत धन्यत बोंदि । परमानुरक्तुडै बंटुनै कडगि ८०६०
मुंदर राक्षसमुख्युलु नडव । संदडि जडियुचु जतुरुडै वच्चि
यनतिदूरंबुन नद्देवि नुनिचि । चनुदेंचि या विभीषणुडु रामुनकु
जेच्चेर विनतुडै चेतुलु मोगिचि । "तेंच्चिचति, विच्चेसे देवि" नावुडुनु
अतिहर्षरोषदैन्याविष्टुडगुचु । मतिनित चिंतिचि मनुजवल्लभुडु
"पिलिचि तें" म्मनुडु विभीषणुंडरिगि । योलसिन कडकतो
नुचितसंवेदि

"हे देवी ! तुम्हारे पति रामदेव ने बुलाकर, उस विभीषण को आदेश देने पर, उन्होंने हमें भेजा । तुमको चित्त में प्रसन्नता मानकर, अभिमत-मंगलायत रामविभु जहाँ हैं, वहाँ पधारना चाहिए । तुम्हें यह वेष क्यों ? हे लतांगी । हे नीरोरुहाक्षी ! तुम तो कल्याणी हो ।" (ऐसा) कह प्रेम से मंगलस्नान कराकर, तन्वी की तनुलता (शरीर) को पोंछकर, दिव्यांबर, दिव्यमाल्य, दिव्यभूषणों से देवी को अलंकृत कर, असमान महिमा से असुरकामिनियों के सुवर्ण-पालकी में स्त्री (सीता) को बिठाकर, साथ ले आने पर, (उन्हें) देख, स्थिर भक्ति से अधिक शोभित हो, राक्षस-कुलेश्वर ने राज्य के चिह्न रूपी फालपट्ट तथा अकलंकनियति के चिह्न रूपी वेत्र को हाथ में धारण कर, अत्यंत धन्यता को प्राप्त कर, परम-अनुरक्त हो, सेवक बन, सप्रयत्न, ।। ७८६० ।।

—आगे-आगे रासक्ष-प्रमुखों के चलने पर, कोलाहल होने से भीत होते हुए, चतुर हो आकर, अनति-दूर पर, उस देवी को ठहराकर, (अकेले) आकर, उस विभीषण ने झट राम के (समक्ष) विनत हो, हाथ जोड़कर (कहा)—" लाया हूँ, देवी पधारी हैं ।" ऐसा कहने पर अतिहर्ष-रोष-दैन्य से आविष्ट होते हुए, मन में थोड़ा विचार कर, मनुजवल्लभ ने (कहा)— "लिवा लाओ ।" कहने पर उचित संविद्वाला वह परमपावन विभीषण जाकर शोभित प्रयत्न से उस पावन-चरित्र वाली देवी

पावनचरित नप्परमपावनुड्ु । देवि जानकि दोडितेंच्चुचो गदिसि
घनवेत्रहस्तुडै कपुल राक्षसुल । गनुगोनि यदयुडै ऋंद व्रेयुटयु
ना महाकलकलंबप्पुडालिंचि । रामुड्ु राक्षसराजु नीक्षिंचि,
"योहो विभीषण! युचितमे नीकु । नूहिंपगा निट्टियुग्रकृत्यमुलु ?
वितवारेव्वरु वीरिलो मनकु ? । नित नोंप्पितुरे यिब्भंगि गडगि ?
८०७०

वलवदु वारिप; वच्चि यंदरुनु । गलसि चूतुरु गाक! कलदे यिंदेग्गु?
कालदेशांतर क्रममुन जेडनि । यीलु बोक्कटि मरु; गिंतिय काक
येनसिन कोटलु निड्लुनु देरलु । वनितल केंदु नावरणमुल् गावु;
व्यसनंबुलंदु विवाहंबुलंदु । नैसगु कय्यमुलंदु निष्टुलयंदु
दलकोनि चेल्लु नुत्सवमुलयंदु । वलवदावरणमुल् वारिजाक्षुलकु;
नेनिदुनुन्नाड; निदि रणभूमि; । गान नेग्गेमियु गादु; रानिम्मु;"
अनिन विभीषणुंडाराघवुंडु । पनिच्चिन तेरगुन बद्माक्षि देच्चे;
नप्पुडु कल्याणि कवनीतनूज । कुप्पोंगु संतोषमुल्लंबु निंडि
वेलिकि नेतेंचिन विधमुन जेमट । गलय दनूलत ग्रम्मि देवार,
राकासुधाकर रामचंद्राव । लोकनामृत पावनलोलयै, तेलि ८०८०

जानकी को साथ ले आने लगा तो निकट घेर लेने वाले कपियों (तथा) राक्षसों को घन-वेत्र को हाथ में लेकर, अदयता से रुलाते मारने पर उत्पन्न महा कल-कल को तब सुनकर राम ने राक्षसराज को देखकर (कहा)— "ओहो विभीषण ! सोचने पर ऐसे उग्रकृत्य तुम्हारे लिए उचित हैं ? इनमें हमारे लिए अजनबी व्यक्ति कौन हैं ? इस प्रकार इन्हें सताना चाहिए था ? (नहीं) ।। ८०७० ।।

—(उन्हें) निवारित नहीं करना चाहिए । सभी लोग मिलकर (सीता को) देख लें । इसमें क्या हानि है ? काल-देशान्तर-क्रम में नष्ट न होनेवाला पातिव्रत्य ही गोपन की वस्तु है। इतना ही है, विलसित दुर्ग, गृह, परदे (आदि) वनिताओं के लिए कदापि आवरण नहीं हैं । व्यसनों में, विवाहों में, युद्धों में, इष्टों (मित्रों) में, उत्सवों में वारिजाक्षियों को आवरण नहीं चाहिए । मैं यहाँ हूँ, यह रणभूमि है। अतः कोई हानि (बुरा) नहीं है। आने दो ।" (ऐसा) कहने पर विभीषण उस राघव के आदेशानुसार पद्माक्षी को लाया । तब कल्याणी अवनी-तनूजा (सीता) ने, उमड़ने वाले आनन्द के हृदय में भरकर, बाहर निसृत होने के समान, समस्त तनुलता पर स्वेद के फैल जाने पर, राकासुधाकर

चिर विरहाग्नुल जॆच्चॆर नार्चि । परमानुरागसंभरितात्म यगुचु
नेचिन कोर्कुल नॆलमि दीपिंप । जूचे जूडदनाक; चूचि राघवुनि
नवनत - वदनयै, यश्रुपूरमुलु । धवळविलचनोत्पलमुल दोरुग,
भयमुन ब्रियमुनु बैपाटु सिग्गु । बयिबडुचुंड नप्पडतुक युंडॆ;
नप्पुडु रघुरामुडात्मलो गोप । मुप्पोंग दप्पक युग्मलि जूचि,
"मानंबे प्राणंबु महितवृत्तुलकु; । मानाभिरक्षण मति जित सेसि,
मानिनि! विनुमु ना महित वर्तनकु । ने निन्नु दॆच्चिति; नितियै कानि,
यिति! नी दॆस नाकु नितकु मिगुल । नंतरंगंबुन नासक्ति लेदु;
काकुत्स्थ कुलजुलु गांभीर्यधनुलु । लोकरक्षणकृतुलु लोकैकनुतुलु;
वारि वंशंबुन वच्चि जन्मिंचि । भूरि वृत्तोन्नति बोकार्चॆनंड्रु; ८०९०
पगवानियिंटिलोपल नुन्ननिन्नु । दगिलि वरिंचुट धर्मंबु गादु;
'आलि गोल्पडिपोयि यक्कटा ! । मगुडु देलेडितं' डनु तिट्टुपाटुनकु
वॆरचि तॆच्चिति गानि वेलदि! निन्नोल्ल; नॊरुपैन चोटुल नुंडु पो"
म्मनिन

रामचन्द्र के अवलोकन के अमृतपान में लीन होकर, ऊभचूभ होकर, ॥ ८०८० ॥

—चिर-विरहाग्नियों को झट बुझाकर, परम-अनुराग से संभरित हृदय वाली हो, उत्कट इच्छाओं के प्रदीप्त होने पर, यह न सोच कि ऐसा नहीं देखना चाहिए, (राम को) देखा । राघव को देखकर, अवनतवदन वाली होकर, धवल-विलोचन-उत्पलों से अश्रुपूर के झरने पर, भय, प्रीति, लज्जा से अभिभूत होकर, वह नारी खड़ी रही । तब रघुराम ने मन में क्रोध के उमड़ने पर, रमणी को अवश्य देखकर (कहा)— "महित-वृत्ति वालों के लिए मान (आत्मसम्मान) ही प्राण है । मान के अभिरक्षण का मन में चिंतन कर, हे मानिनि ! सुनो, अपने महित-वर्तन (आचरण) के कारण मैं तुम्हें लाया हूँ । इतना ही है, किंतु हे नारी ! तुम्हारे प्रति मेरे अंतरंग में किंचित् भी आसक्ति नहीं है । काकुत्स्थकुलज गंभीरता के धनी हैं, लोक-रक्षण-तत्पर हैं, लोकैक-विनुत (-प्रशंसित) हैं । उनके वंश में जन्म लेकर, (यदि मैं तुम्हें ग्रहण करूँ तो) लोग कहेंगे कि भूरि-वृत्ति के औन्नत्य को छोड़ दिया है, ॥ ८०९० ॥

—शत्रु के घर में रही हुई तुम्हारा चाहकर वरण करना (स्वीकारना) धर्म नहीं है । 'हाय, पत्नी को खो बैठकर पुनः उसे ला न सका' इस निंदा से भीत होकर हे नारी ! तुम्हें लाया (छुड़ाया) हूँ । (मैं)

जननाथु परुषभाषासायकमुलु । गोनि काडि नोप्पिप गुवलयनेत्र
यप्पटि संतोषमंतयु मरचि । चेप्प नोराडक चेष्टलु दक्कि
तापंबु बोंदि युत्तलमंदि कुंदि । कोपिंचि वगचि डग्गुत्तिक वेट्टि,
जलजाप्तकुलु रामचंद्रु जूचि । येलनाग येड्चुचु निट्लनि पलिके;
"देव! नाचित्तंबु देलियदे नीकु? । नीवु सर्वज्ञ मनीषिवि गावे ?
ननु देच्चि ना पिन्ननाटनुंडियुनु । बेंचिचि रक्षिंचि गांभीर्यंबु निंचि
यी नीचभाषल नेल नोप्पिप ? । नेनेड? नीवेड? यीमाटलेड? ८१००
भूदेविकडुपुन बुट्टिति; जनकु । डादट ननु बेंचे; नंतटिमीद
नृपशिरोमणिवैन नी देविनैति; । जपलवधूवृत्ति सैचुने नाकु ?
मगवारु नम्मनि मगुवल नाडु । तगवुन नाडेदु तगवु वोविडिचि;
नम्मनिवाडवु नाडुनन्नरय । बोम्मनि हनुमंतु बुत्तेंचुनपुडे
चेप्पि पुत्तेंचिन जैनटि प्राणमुल । नप्पुडे विडुवने यडियासलुडिगि"
यनि लक्ष्मणुनि जूचि "यनघ ! मीयन्न । यनुमानमुडिगि नन्नाडुचुन्नाडु
तगुने यीक्रिय नाड दरमे न तरमे । तगनिमाटलु नीकु दगदनदगदे ?
कलपुण्यगुणमुल गडचन्न प्रोड; । वोलसि नीयेरुगनि युचितंबु लेदु

तुम्हें नहीं चाहता । उचित स्थानों पर जाकर रह जाओ ।" (ऐसा) कहने पर जननाथ के परुष-भाषा (वचन) रूपी सायकों के गड़कर पीड़ित करने पर, कुवलयनेत्र वाली (सीता) उस समय के समस्त आनन्द को भूलकर, अवाक् (एवं) स्तंभित हो, तप्त होकर, विलख कर, क्रुद्ध हो, रोदन कर, गद्‌गदकंठ से जलजाप्तकुल वाले रामचंद्र को देखकर, तन्वंगी रोती हुई यों बोली— "हे देव ! मेरे चित्त को तुम नहीं जानते हो ? तुम सर्वज्ञ मनीषी नहीं हो ? मुझे लाकर मेरे बचपन से पालकर, रक्षाकर, गंभीरता को भरकर, इन नीच भाषाओं (वचनों) से पीड़ित करना क्यों ? मैं कहाँ ? तुम कहाँ ? ये बातें कहाँ ? ॥ ८१०० ॥

—भूदेवी के गर्भ से उत्पन्न हुई हूँ । जनक ने लाड़ से मुझे पाला-पोसा । उस पर नृपशिरोमणि तुम्हारी पत्नी बनी । मैं चपल वधू वृत्ति को सहन कर सकूँगी ? स्त्रियों पर विश्वास न रखनेवाले पुरुषों के समान, न्याय तजकर, क्यों ऐसा बोलते हो ? विश्वास न करते तो उसी दिन जब मुझे खोजने के लिए हनुमान को भेजा था, तभी कहलाकर भेजते तो तभी दुराशाओं को छोड़, इन दुष्ट प्राणों को छोड़ देती ।" (ऐसा) कह लक्ष्मण को देख (कहा) —"हे अनघ ! तुम्हारा अग्रज संदेह छोड़ (निस्संकोच भाव से) मुझे दूषित कर रहा है । इस प्रकार कहना उचित है ? क्या मैं इन्हें सह सकती हूँ ? मना करना तुम्हारे लिए उचित नहीं है ? समस्त

ना वर्तनमु जूड ना यंदु गलदे । भाविंप गल्मषभावमितॅन ?

सीत यग्निप्रवेशमु

शंकिपवलदु; विचारंबुसेसि । यिक मीनिश्चयमिट्टिदयेनि ८११०
यिक्कड सौदवेर्चु; डिंदर जूड । स्रुक्कक यनलंब सोच्चेद; जोच्चि
पावकुमुखमुन बतिकिक बरम । पावनुरालनै ब्रह्मादिसुरल
मेच्चिचि मिम्मेल्ल मेच्चिचि भूमि । जोच्चेद" ननवुडु स्रुक्कि लक्ष्मणुडु
रामु गनुंगोनि रामुकन्नेरिगि । भूमिज कप्पुडद्भुतमुगा देच्चि
सौद वेर्चुटयु महीसुत सीत प्रीति । सौदजूचि प्रणमिल्लि सौदचुट्टु-
दिरिगि
यभिनुतुलोनरिंचि यग्निदेवुनकु । नभिमुखियै निल्चि हस्तमुल् मोगिचि
"धर्मदेवतलार ! धर्मबुलार ! । निर्मलमतुलार ! नियतात्मुलार !
जगदधिपतुलार ! चंद्रार्कुलार ! । निगमसाधकुलार ! निगमंबुलार !
संचितोन्नतुलार ! सर्वज्ञुलार ! । पंचभूतमुलार ! परहितुलार !
नरवरुलार ! किन्नरवरुलार ! । सुरवरुलार ! भूसुरवरुलार ! ८१२०

पुण्यगुणों से युक्त प्रौढ हो । ऐसा कोई औचित्य नहीं जो तुम नही जानते हो । मेरे वर्तन (आचरण) को देखने पर, सोचने पर मुझमें तनिक भी कल्मषभाव है क्या ?

सीता का अग्निप्रवेश

—शंका मत करो । विचार कर, यदि ऐसा ही तुम्हारा निश्चय (निर्णय) है तो ॥ ८११० ॥

—यहाँ चिता जलाओ । इतने लोगों के देखते हुए, व्याकुल हुए बिना अनल में प्रवेश करूँगी । प्रवेश कर पावक के मुख से पति के लिए परम पावन बन, ब्रह्मा आदि सुरों को प्रसन्न कर, आप सबको प्रसन्न कर, भूमि में प्रवेश कर जाऊँगी ।" ऐसा कहने पर व्याकुल होकर लक्ष्मण ने राम को देख, राम की दृष्टि (संकेत) को जानकर, भूमिजा के लिए तब अद्भुत रूप से लाकर चिता लगाई । महीसुता सीता प्रीति से चिता को देखकर, प्रणाम कर, चिता की प्रदक्षिणा कर, अभिनुतियाँ कर, अग्निदेव के अभिमुख हो खड़ी रहकर, हाथ जोड़कर, (बोलीं) —"हे धर्मदेवताओ ! हे धर्मो ! हे निर्मलमतिवालो ! हे नियतात्माओ ! हे जगदधिपतियो ! हे चन्द्रार्को ! हे निगमसाधको ! हे निगमो ! हे संचित-उन्नतिवालो ! हे सर्वज्ञो ! हे पंचभूतो ! हे परहित करनेवालो ! हे नरवरो ! हे किन्नरवरो ! हे सुरवरो ! हे भूसुरवरो! ॥ ८१२० ॥

करुणाढ्युलार! दिक्पतुलार! विमत। हरुलार! पापसंहरुलार! येनु
घन मनोवाक्काय कर्मंबुलंदु। बनिगोंन रामभूभर्तकु दप्प;
दप्पिन नी यग्नि धरियिंपलेक। यिप्पुड नीरोंदु निदरु जूड;"
ननियोप्प बलुकुचु नम्महीपुत्रि। तनचित्तमुननुन्न तात्पर्यमोप्प
गनुगोनि ब्रह्मांडकटकंबु निंडि। यनुपमाकारंबुलै पेंचि पेंचि
योंडोंट शिखल महोदग्रमगुचु। मंडेडु नग्निलो मानिनि सोच्चें;
नावंतयुनु गंददा पूवुबोडि। पावकसरसिलो वदिलमै निलिचि;
करचरणाननकमलंबुलोप्प। वरकुचद्वय चक्रवाकंबुलोप्प
नवबाहुवल्ली मृणाकंबु लोप्प। प्रविमल त्रिवळीतरंगंबुलोप्प
महितलोलन्नेत्रमत्स्यंबुलोप्प। सहज नीलालक शैवालमोप्प ८१३०
गमलिनि तेंऽगुन गरमोप्पुचुन्न। कमलाक्षि गनुगोनि कपुलु राक्षसुलु
शोकिप दोंडगिरि; सुरसिद्धसाध्य। लोकंबुलेल्ल नाक्रोशिपदोंडगें;
ना मरुत्तनयुंडु नर्कनंदनुडु। सौमित्रियुनु विभीषणुडंगदुंडु
दरुचरयूथपुल् दानवाधिपुलु। सरमादुलैन राक्षसवधूजनुलु

—हे करुणाढ्यो! हे दिक्पतियो! हे विमत को हरनेवालो! हे पापसंहारको! मैं घनमनोवाक्-कार्य-कर्मों में, चाहकर रामभूभर्ता को नहीं भूलती। यदि भूली होऊँ तो इस अग्नि को धारण (सहन) न कर सकूँ, इतने लोगों के देखते हुए अभी भस्म वन जाऊँगी।" ऐसा शोभा से कहती हुई, वह महीपुत्री अपने चित्त के तात्पर्य (भाव) के व्यक्त होने पर, देखकर, ब्रह्मांड-कटक में भरकर, अनुपमाकार हो विजृंभित होकर, सर्वत्र शिखाओं से महोदग्र होते हुए वलने वाली अग्नि में मानिनी ने प्रवेश किया। पावक-सरसी में खड़ी रहकर भी वह पुष्पांगी तनिक भी नहीं मुरझाई। कर-चरण-आनन (रूपी) कमलों के शोभित होने पर, वर-कुच-द्वयरूपी चक्रवाक के शोभित होने पर, नव-बाहु-वल्लीरूपी मृणालों के शोभित होने पर, प्रविमल त्रिवली रूपी तरंगों के शोभित होने पर, महित-लोल-नेत्ररूपी मत्स्यों के शोभित होने पर, सहज-नील-अलक-रूपी शैवाल के शोभित होने पर, ॥ ८१३० ॥

—कमलिनी के समान अधिक शोभित होनेवाली कमलाक्षी को देखकर कपि और राक्षस शोक करने लगे। समस्त सुर-सिद्ध-साध्य-लोक आक्रोश करने लगा। वह मरुत्-तनय, अर्कनन्दन, सौमित्री और विभीषण, अंगद, तरुचर-यूथप (-सेनापति), दानवाधिप, सरमा आदि राक्षस वधूजन अधिक शोक से संतप्त होते रहे। अधिपति निर्विण्ण बना रहा। तब हर, वाग्वर

नधिकशोकंबुन नडलुचुनुंडि; । रधिपति निर्णिणुडै युंडै; नंत
हरुडु वाग्वरुडुनु नखिलदिक्पतुलु । गरुडगंधर्वुलु खचरवल्लभुलु
वरविमानस्थुलै वच्चिरंदरुनु । बरग ब्रत्युत्थानपरुडैन रामु
वीक्षिचि, "वेदांतवेद्युंड, वखिल । साक्षिवि, कर्तवु, संविदाकृतिवि,
निर्वाणपरुडवु, नित्यपूर्णुडवु, । सर्वसंवेदिवि, जगदेकनिधिवि,
यक्षीणपुण्युंड, वव्यक्तपरुड, । वक्षरत्रयमूर्ति, वाद्यंतपतिवि, ८१४०

भुवनंबुलब्धुलु भूतमुल् नदुलु । सवनंबुलद्रुलु जंतुसंततुलु
दरुवुलु देरुवुलु दंत्रमुल् विधुलु । सुरलु नक्षत्रमुल् श्रुतुलु शास्त्रमुलु
गनुगोन वेलु लक्षलु गोट्लु गणन । ननुपम शतकोटुलरसि येव्वरुनु
गडगानरोक्कोक्क कमलजांडमुन । बडि; यट्टि ब्रह्मांडपंक्तुलु गलसि
नीकुक्षिनुंडु; वानिकि लेक्कलेदु; । नीकड गानंग नेर्तुरे योरुलु ?
भवदीयमायाप्रभावंबु देलिय । भवदीयुलकु गाक परुलकु वशमे ?
योकनि जंपिति; गेल्चि; तोकडु निन् गेलिचे; ।
नोकडु साध्युडु; नीकु नोकडेक्कुडनुचु
स्तुतिनिंदलवि निन्नुसोकवेन्नडुनु; । नतिमहत्त्वोन्नतुलट्टिवि नीकु;
दासभावंबुन दक्क नोंडोकट । नी संविदाकृति नित्यदुर्घटमु;

(ब्रह्मा), अखिल-दिक्पति, गरुड़-गन्धर्व, खचर-वल्लभ सभी वर विमानस्थ हो आए। शोभा से प्रत्युत्थान करनेवाले राम को देखकर (बोले) —"(तुम) वेदांतवेद्य हो, अखिलसाक्षी हो, कर्ता हो, संविदाकृतिवाले हो, निर्वाणपर हो, नित्यपूर्ण हो, सर्वसंवेदी हो, जगदेकनिधि हो, अक्षीणपुण्य वाले हो, अव्यक्तपर हो, अक्षरत्रयमूर्ति हो, आद्यंतपति हो, ॥ ८१४० ॥

—भुवन, अब्धियाँ, भूत, नदियाँ, सवन, अद्रियाँ, जंतु-संततियाँ, तरु, मार्ग, तंत्र, विधियाँ, सुर, नक्षत्र, श्रुतियाँ, शास्त्र (आदि) देखने में सहस्र, लक्ष, कोटियाँ, गणना में अनुपम शतकोटियाँ-सोचकर कोई जिनका एक-एक कमलजांड (ब्रह्मांड) में अन्त नहीं पा सकते, ऐसी ब्रह्मांड-पंक्तियाँ (समूह) मिलकर तुम्हारी कुक्षि में रहते हैं। उनकी कोई गिनती नहीं है। अन्य कोई तुम्हारा अन्त (पार) पा सकते हैं ? भवदीय-मायाप्रभाव को जानना भवदीयों के अतिरिक्त अन्यों के वश में है ? (नहीं)। एक को मारा, (एक को) जीता, किसी ने तुम्हें जीता, कोई (तुम्हारा) साध्य (बस में) है, तुमसे कोई बढ़कर है, ऐसी स्तुति-निंदाएँ तुम्हारा स्पर्श ही नहीं कर सकती हैं। ऐसी हैं तुम्हारी अतिमहत्त्व-उन्नतियाँ। दासभाव के अतिरिक्त और किसी से तुम्हारी संविदाकृति को जानना दुर्घट (कठिन)

नरनाथ ! नीवादिनारायणुंड; । वरय ना जानकि यय्यादिलक्ष्मि;
८१५०
लोकैकरक्षणलोलत नीवु । काकुत्स्थुडनग ब्रख्यातुंडवैति;
निन्नेल मरचिति ? निष्ठुरवह्नि । नुन्न जानकि जूचुचुंडुट दगदु;
पिलिपिंचि कैकोम्मु; प्रीति मन्निपु; । वलवदुपेक्षिप वनजाक्षि निंक"

अग्निदेवुडु सीतनु श्रीरामुनि कोप्पगिंचुट

ननि पेक्कुभंगुल नखिलदेवतलु । गनुगोनि पलुकुचो गडगि पावकुडु
"वनित सेमर्पदु; वाडदुमोमु; । तनुवल्लि गंददु; तलकंदितयुनु;
बोलति धरिंचिन पुष्पमालिकलु । नलगवु; तेरलदु नाति मैपूत"
यनुचु दैत्युलु गपुलंदंद निक्कि । कनुगोंचु नडलुचु गळदश्रुलगुचु
"जगतीशुडीपुण्यसति नित पलुक । दग" दंचु "नी तेंपु तग" दंचुनुंड
गोमलि दगनेत्तिकोनि वच्चि प्रीति ।रामसन्निधि निलिप रामुतो ननिये;
"नीवे दैवंबुनु; नीवे प्राणंवु; । नीवे चुट्टंबुनु; नीवे सर्वंबु ८१६०
गा नुंडु; नोंडोकगति जित्तवृत्ति । गानदी कल्याणि; कडुमद्दरालु;

है। हे नरनाथ ! तुम आदिनारायण हो, सोचने पर यह जानकी आदि-लक्ष्मी है। ॥ ८१५० ॥
—लोकैक-रक्षण-लोलता (तत्परता) से तुम काकुत्स्थ के रूप में प्रख्यात हुए हो। अपने आपको क्यों भूल गए ? निष्ठुर-वह्नि में स्थित जानकी को देखते रहना उचित नहीं है। बुलवाकर स्वीकारो। प्रीति से आदर करो। (अब) आगे वनजाक्षी की उपेक्षा करना उचित नहीं है।"

अग्निदेव का सीता को श्रीराम को सौंपना

—ऐसा अनेक भाँतियों से अखिल देवताओं के (राम को) देख, कहते समय पावक के सयत्न (यह कहने पर कि) "वनिता स्वेदित नहीं हो रही है, मुख कुम्हला नहीं रहा है, तनुलता नहीं मुरझा रही है, किंचित् भी विकल नहीं हो रही है, स्त्री (सीता) के धारण किए पुष्पमालिकाएँ चूर-चूर नहीं हुई हैं, नारी का अंगराग नहीं छूटा है", दैत्य (और) कपियों के सर्वत्र उचक कर देखते हुए, संतप्त होते हुए, गलदश्रुवाले होते हुए, (यह कहते रहे कि) 'जगदीश को इस पुण्यसती के प्रति ऐसा नहीं कहना चाहिए,' "यह साहस उचित नहीं है,"। (पावक ने) कोमली (सीता) को उचित रीति से उठाकर, प्रीति से राम की सान्निधि (पास) में रख, राम से (यों) कहा—"(यह नारी) तुम्हीं को दैव, तुम्हीं को प्राण, तुम्हीं को सर्वस्व, ॥८१६०॥

रावणुपनुपुन राक्षसस्त्रीलु । वेवुरु वेवेल विधमुल वच्चि
तरिमि नोंप्पितुरु; दारुणक्रियल । वेंरपितु; रलतुरु; वेंड्डु पेट्टुदुरु;
इन्नियुनु जेयंग नेंतयु साध्वि । तन्नित मरुवदु; तलकदेंतयुनु;
नीयंदे चित्तंबु निलिपि सर्वबु । नीयधीनमु सेसि निल्चें नी यिंति;
कैकोंम्मु नेंम्मि नीकमलाक्षि निंक; । गैकोंनकुंडुट गादु धर्मंबु"
अनि पावकुडु पल्क ना रामविभुडु । दनमदि नोंक्किंत तडवु चिंतिंचि
यादिदेवुंडु ब्रह्मादुलु विनग । ना देवसभलोन नप्पुडिट्लनियें;
"नी यिंति देंस बापमितयु लेदु; । नायेंड दप्पदुन्नतचित्तुरालु;
वेंरपुनु भक्तियु विमलशीलंबु । नेंरुकयु धैर्यबु नीयिंतियंदु ८१७०
गल; देंरुंगुदु; नटुगाक दैत्युनकु । मेंलतुक गदियरामियु नेंरुंगुदुनु;
'अधिगत बहुदोषुडगु दशग्रीवु । डधिक बलोन्मत्तुडै कोंनिपोयि
तन विनोदारामतरुमध्यसीम । नुनिचिन जानकि नूरक तेंच्चें
निलमीद रघुरामु; डिट्टिकामुकुडु । गलडें ? दुष्कीर्तिकि गलगडेंमियुनु'
ननि लोकमुन बुट्टु नपवादमुनकु । जनकज निब्भंगि शासिपवलसें;

—मानकर रहती है। यह कल्याणी अन्य प्रकार की चित्तवृत्ति को नहीं जानती, अति मुग्धा है। रावण के आदेश पर, हज़ारों राक्षसस्त्रियाँ, हज़ारों विधियों से दबाकर सताती हैं, दारुण क्रियाओं से भीत करती है, थका देती हैं, वंचना करती हैं, इतना करने पर भी साध्वी अपने को तनिक भी नहीं भूलती है, तनिक भी विकल नहीं होती है। यह नारी तुम्हीं में चित्त को स्थिर करके, सर्वस्व तुम्हारे अधीन करके रह गई है। अब प्रेम से इस कमलाक्षी को ले लो। न स्वीकारना धर्म नहीं है।" ऐसा पावक के कहने पर उस रामविभु ने अपने मन में थोड़ी देर सोचकर, आदिदेव, ब्रह्मा आदि सुनें, ऐसा उस देवसभा में तब यों कहा— "इस नारी में कोई पाप नहीं है। यह उन्नतचित्त वाली मेरे प्रति दोष नहीं करती है। इस नारी में भय, भक्ति, विमलशील, ज्ञान, धैर्य, ॥ ८१७० ॥

—(आदि गुण) हैं। (यह मैं) जानता हूँ। यही नहीं, दैत्य का इस नारी के निकट न आ सकना भी जानता हूँ। 'अधिगत बहुदोषवाला दशग्रीव ने अधिक बलोन्मत्त हो ले जाकर, अपनी विनोदाराम-तरु-मध्यसीमा (मध्यप्रांत) में रख लिया। उस जानकी को पृथ्वी पर रघुराम ने यूँही (परीक्षा किए बिना) ले लिया। ऐसा कामुक भी कहीं है? दुष्कीर्ति के कारण बिलकुल क्षुब्ध नहीं होता।' ऐसा लोक में उत्पन्न होनेवाले अपवाद (अफ़वाह) के कारण जनकजा को इस प्रकार शासित (दंडित)

गल शंकलन्नियु गडतेरें; निक । मेलतुक गैकोंटि; मी माट विंटि;"
ननि समीपंबुन ना देवि नुंड । वनिचि राघवुडु चूपरु सूडनोप्पे
दिविनुंडि रोहिणिदेवियुयु दानु । नविरळप्रभ नोप्पुनमृतांशु भंगि;
नप्पुडु सकललोकाराध्यचरणु । डोप्पु महोल्लासमुल्लंबु निंड
श्रीमहादेवुडाश्रितकल्पतरुवु । रामु गनुंगोनि रागिलि पलिकें;
८१८०

"नेव्वडुद्योगिंचु नितटिपनिकि ? । नेव्वडु साधिंचु नी जगद्धितमु ?
लोककंटकुडु द्रिलोकभीकरुडु । नाकादिलोक प्रणामसाधकुडु
रावणु डखिल विद्रावणबलुडु; । रावणु मर्दिपरादेव्वरिकिनि;
वीनितो बगगोनि वीनिपै विडिसि । वीनि निव्विधि जंपि वीनि गाल्पिचि
बलविक्रमक्रमप्रौढिम मेरय । गलरें लोकमुन नेक्कडनैन मगलु ?
आ रावणुनि जंपितनघ ! नीवलन । नीरेडु भुवनमुलिटमीद ब्रदिकें;
मी तंड्रि दशरथमेदिनीनाथु । डेतेंचे दिविनुंडि यी योप्पुसूड;
नदे विमानारूढुडै युन्नवाडु । त्रिदशगणाधीशदीप्तुडै वाडे;

करना पड़ा। अवस्थित सभी शंकाएं दूर हुई हैं। अव नारी को ग्रहण किया है। आपकी बात सुनी (मान ली) है।" (ऐसा) कह देवी को समीप रहने का आदेश देकर राघव देखने वालों के लिए ऐसा शोभित हुआ मानों आकाश में रोहिणीदेवी के साथ अविरल प्रभाओं से शोभित अमृतांशु (चन्द्र) हो। तव सकल लोकाराध्य चरणवाले श्रीमहादेव ने हृदय में महोल्लास के भर जाने पर, आश्रित-कल्पतरु राम को देखकर राग से कहा— ॥ ८१८० ॥

—"किसने इतने (महान्) कार्य का उद्योग किया है ? कौन (इस प्रकार) जगत्-हित की सिद्धि (सम्पन्न) करेगा ? लोककंटक, त्रिलोक भीकर, नाकादि लोकों के प्रणाम का साधक, (और) अखिल-विद्रावण वलवाला है रावण। (ऐसे) रावण का मर्दन करना किसी के वस की वात नहीं है। इससे वैर (मोल) लेकर, इस पर चढ़ाई कर, इसे इस प्रकार मारकर, इसे जलाकर, कहीं लोक में (अन्य) पुरुष बलविक्रम-क्रम-प्रौढता में प्रदीप्त हो सकते हैं ? हे अनघ ! उस रावण को मार डाला है। तुम्हारे कारण अब आगे चौदह भुवन जी उठे। इस शोभा को देखने के लिए आपके पिता दशरथ-मेदिनीनाथ (-राजा) दिवि से पधारे हैं। वही विमानारूढ़ होकर हैं, वही त्रिदश-गणाधीशों से दीप्त हैं। उस जगद्धितकृत्यवाले सत्यनिधि

या जगद्धितकृत्युडगु सत्यनिधिकि । बूजानमस्कारमुलु सेय वोम्मु"
अनवुडु रघुरामुडभिरामशीलु । डनुजन्मयुक्तुडै यवनीशुनकुनु ८१९०
निंडिन प्रेमंबु निष्ठयु निगुड । दंडप्रणाममुल् दग जेयुटयुनु
जित्तसम्मदमुन जेनिड ग्रुच्चि । यॆत्ति कौगिट जेर्चि यिनवंशुडनियॆ;
"कैकेयिमाटलाकर्णिंचि निन्नु । लोकरक्षणकळालोलु गानलकु
बुच्चिति; दगवित पोलिपनैति; । निच्चलो शुभकर्ममॆरुगलेनैति;
निन्नु बट्टमुगट्टि नीवु राज्यंबु । कन्नुलपंडुवुगा जेयुचुंड
जूचि लोकंबुलु सुखियिंचुचुनिकि । जूचु पुण्यमु नाकु जॊप्पडदय्यॆ;
बुत्रशोकंबुन बोयिन नाकु । सुत्रामलोकंबु सॊर बूट गलदे ?
या तापमॆप्पुडु नंतरंगमुन । नाततस्फुटवह्निये मंडुचुंडु;
नमरलोकंबुन नारनिचिच्चु । शमियिंचॆ नेडु नी सन्निधि जेसि;
कमलाप्तसमतेज ! कमलाभिराम !। कमलाप्तवंशमक्षरकीर्तुलॊप्प ८२००
नीवयोध्यकु बोयि निखिलधर्ममुलु । भाविंचि मदिबॆट्टि पट्टंबु बूनि
'रामुडु लोकाभिरामु' डन् नुतुल । तो महियेलुमु तुदमुट्ट" ननुचु
सौमित्रि गनुगॊनि "सौमित्रि ! नीवु । रामुनि वॆनुक नरण्यभूमुलकु

को पूजा (तथा) नमस्कार करने जाओ।" ऐसा कहने पर अभिरामशील-वाले रघुराम ने अनुजन्मयुक्त हो, अवनीश (राजा-दशरथ) को ॥ ८१९० ॥
—पूर्ण प्रेम और निष्ठा के प्रकाशित होने पर, उचितरीति से दंड-प्रणाम किया। (करने पर) चेतोसम्मोद से हाथभर उठा लेकर, आलिंगन में लेकर इनवंशवाले ने कहा—"कैकेई की बातें सुनकर, तुम्हें लोकरक्षणकला-कुशल को काननों में भेजा। न्याय का विचार नहीं किया। मन में शुभ कर्म को जान न सका। तुम्हारा राजतिलक कर, नेत्रपर्व के रूप में तुम्हारे राज्य करते देखकर, लोकों के सुखी बनते देखने का पुण्य मुझे प्राप्त नहीं हुआ। पुत्र शोक से जाने वाले मुझे सुत्राम (इन्द्र) -लोक में प्रवेश करने का अधिकार कहाँ ? वह ताप सर्वदा अंतरंग में आतत-स्फुट-वह्नि होकर जलता रहता है। अमरलोक में न बुझने वाली ज्वाला आज तुम्हारी सन्निधि के कारण बुझ गयी। हे कमलाप्ततेजवाले ! हे कमलाभिराम! कमलाप्त-वंश की अक्षर-कीर्तियों की शोभा बढ़े, (ऐसा) ॥ ८२०० ॥
—तुम अयोध्या को जाकर, निखिल धर्मों की सोचकर, मन रखकर, राजपद-ग्रहणकर, 'राम लोकाभिराम है' ऐसी प्रस्तुतियों के साथ अन्त तक मही पर शासन करो।" (ऐसा) कहते हुए सौमित्र को देखकर (कहा) —"हे

जनुदेंचि युत्तमसाहसक्रियल । ननघुडै वर्तिंचि; ततुलपुण्युडवु;
मेलकुव निटमीद मीयन्न मनसु । नलगकुंडग नीवु नडवुमी" यनुचु
दनकर्थि म्रोक्कि यौदल वांचियुन्न । जनकनंदन जूचि जननाथुडनियें;
"बरम पातिव्रत्यपदशुद्धि नीकु । सरियेंव्व ? रुत्तमसाध्विवि नीवु;
विनु रामुडाडिन निष्ठुरोक्तुलकु । गिनियकु; नोव्वकु; कोड्पडियुंडु;
घनकीर्तियुतुल राघवु बोलु सुतुल । गनुमु; पुण्यमुलेल्ल गैकोनिमनुमु;"
अनि मुव्वुरनु मेप्पुललर दीविंचि । तनलोन मोदिंचे दशरथेश्वरुडु;
८२१०

चंद्रशीतलु रामजननाथचंद्रु । निंद्रादिदेवतलेल्ल वीक्षिंचि
"मनुजुंडवै नीवु माकुगा वच्चि । जनियिंचि राक्षसक्षयमु गाविंचि,
यी भंगि दुःखंबुलिन्नियु नोर्चि । भूभारमेंतयु बुच्चि पोवेंचि,
मम्मिट रक्षिंचि मा जीवनमुलु । नेम्मितो माकिच्चि निलुकडलोसगि
पुच्चुचुन्नाडवु; पुण्यात्म ! वरमु । लिच्चेद; मडुगुमभीष्टंबुलेलमि"
ननवुडु रामु डायमरवरुल जूचि । तनलोन जिरुनव्वु दळुकोत्तबलिके;
"निर्पोद मीकृप नेल्ल काम्यमुलु । संपूर्णमुलु माकु जगमुलयंदु;

सौमित्र ! तुमने राम के पीछे-पीछे अरण्यभूमियों में आकर उत्तमसाहस-क्रियाओं से अनघ हो आचरण किया। (तुम) अतुलपुण्यवाले हो। सावधानी से आगे भी तुम्हारे अग्रज के मन को दुखी बनाए बिना तुम आचरण करते रहो।" कहते हुए, अपने को चाहकर प्रणामकर, सिर झुकाए खड़ी जनकनन्दना को देखकर जननाथ ने कहा—"परम-पातिव्रत्य-पदशुद्धि में तुम्हारे समान कौन है ? तुम उत्तम साध्वी हो। राम ने तुम्हारे प्रति जो निष्ठुर-उक्तियाँ कही हैं, उनसे रुष्ट मत होना, पीड़ित न होना, अपमानित हुए बिना रहना। घन-कीर्तियुत (तथा) राघव के सम पुत्रों को जन्म दो। समस्त पुण्यों को लेकर जीवित रहो।" ऐसा तीनों को प्रशंसायुक्त रूप से आसीसकर, अपने में दशरथेश्वर मुदित हुआ ।। ८२१० ।।

—चन्द्र-शीतल राम-जननाथ-चन्द्र को इन्द्र आदि समस्त देवताओं ने देखकर (कहा)—"मनुज बन तुम हमारे लिए आकर, जन्म लेकर, राक्षसक्षय करके, इस प्रकार इतने दुखों को सहकर, समस्त भूभार को दूरकर, यहाँ हमारी रक्षाकर, हमारे जीवन प्रेम से हमें देकर, प्रेम से हमें अस्तित्व प्रदान कर, भेज रहे हो। हे पुण्यात्मा ! वर देंगे, प्रेम से अभीष्ट माँग लो।" ऐसा कहने पर राम ने उन अमरों को देखकर, अपने मन्दहास के झलकने पर कहा—"शोभा से आपकी कृपा से जगों में समस्त काम्य हमारे लिए

दमतम भूमुल दम मंदिरमुल । दम बंधुजनमुल दम तनूभवुल
दम कळत्रादुल दगवोप्प विडिचि । समरंबुलोपल सकल वानरुलु
देगि तम्मुडापक तिविरि ना कोरकु । बगरतो बोराडि प्राणमुल् विडिचि
८२२०
युन्नारु; कपिवीरुलुन्नतात्मकुलु; । नन्नु मन्निचुट नाकिडु वीरि"
ननवुडु विनि दिव्यु "लौगाक" यनुचु । "वनचर प्राणमुल् वच्चु गा"
कनिरि,
अनि महादेवुंडु नब्जसंभवुडु । ननघुलय्यिंद्रादुलेन दिक्पतुलु
मुनुलुनु सुरलु निम्मुल नुतिचुचुनु । जन दशरथुडुनु जनियें नद्दिविकि;
ननिलोन देगिपड्ड यगचरुलेल्ल । घननिद्र मेल्कनु कैवडि दोप
नमरुल वरशक्ति नद्भुतंबैसग । समरोर्विनप्पुडु सप्राणुलगुचु
जनुदेंचि या रामचंद्रुनि वेड्क । गनुगोनि हर्षिंचि कलयक्रोक्कुटयु
दनरार नंदर दयतोड जूचि । जनलोकनाथुडु संतोषमोंदे;
नंत विभीषणुंडारामुतोड । नेंतयु भक्तितो नेर्पड बलिकें;
"देव ! राघव ! धराधीश ! नीविंक । वेवेग लंककु वेंचेसि, यचट ८२३०
नविरळमतितोड नभिषेकमिप्पु । डवधरिंपग वेळ" यनिन राघवुडु

संपूर्ण हैं । अपनी-अपनी भूमियों (देशों), अपने मन्दिरों, अपने बन्धुजनों, अपने तनूभवों, अपने कलत्र-आदियों को औचित्य रहित हो छोड़कर, समर में सकल वानर, साहस से, अपनी परवाह न कर, मेरे लिए शत्रुओं से लड़कर प्राण छोड़े हुए हैं ॥ ८२२० ॥

—कपिवीर उन्नत-आत्मावाले हैं । मेरा आदर करना अर्थात् इन्हें मुझे (वापिस) दीजिए ।" ऐसा कहने पर सुनकर दिव्यों ने "ऐसा ही हो" कहकर, कहा कि "वनचरों के प्राण आ जाएँ" । (ऐसा) कह महादेव, अब्जसम्भव, अनघ इन्द्र आदि दिक्पति, मुनि, सुर प्रेम से स्तुति करते हुए गए, दशरथ भी दिवि को गया । युद्ध में कट गिरे समस्त अगचर महान् निद्रा से जाग उठने के समान दीखने पर, अमरों की वरशक्ति के अद्भुत (तत्त्व) के व्याप्त होने पर, समर-उर्वी में तब सप्राण हुए । (होकर) आकर उस रामचन्द्र को उत्साह से देखकर, हर्षित हो, मिलकर (एक साथ) प्रणाम किया । शोभा से सबको दयापूर्ण दृष्टि से देखकर जननाथ प्रसन्न हुआ । तब विभीषण ने उस राम से अधिक भक्तिभाव प्रकट होने पर कहा—"हे देव ! हे राघव ! हे धराधीश ! तुम्हारा अब लंका में झट पधार कर, वहाँ ॥ ८२३० ॥

वर जटाघनभार वल्कलयुतुडु । भरतुडक्कड दपोभरमुन नुंड
ननि जूडक माकु ननुचितंबिचट । जतुरभोग क्रमसमुचित क्रियलु"
अनुटयु नुचितज्ञुडगु विभीषणुडु । घनभक्तियुक्तिमै गडक दीपिप
गनकपात्नंबुल गंधाक्षतमुलु । घनरत्नभूषण कनकांवरमुलु
बुण्यनादमुलतो बुण्युलतोड । बुण्यचिह्नमुलतो बुण्यभामिनुल
बनिचि तेंप्पिचि निर्भरभाग्यधनुडु । विनयाभिरति विनुवीथि नंदंद
सुरदुंदुभुलु म्रोय सुरलु नुतिप । सरस नच्चरलु सेसलुनिड जल्ल
रामलक्ष्मणुलकु राजीवनेत्र । भूमिनंदनकु नप्पुडु गट्टनिच्चें;
नंत रामुडु निश्चलानंदुडगुचु । नेंतयु प्रियमंदि यिपोंद बलिकें; ८२४०

"गडु बेंद्दकार्यमुल् गलवु मार्किक । दडयुट गा; दयोध्यकु बोववलयु"
ननुटयु रामुनि नाविभीषणुडु । गनुगोनि भक्तितोगरमुलु मोगिचि,
"भीषणरणकेळि बेंचि रावणुडु । रोषिंचि मुनु गुबेरुनि गेल्चिकोंन्न
पुष्पकंबुन्नदि; पुरुहूतलोक । पुष्पकक्रममहाद्भुतवेगमदियु;
नेलमि ना पुष्पकमेंक्कि सम्मदमु । वेलय नयोध्यकु वेंचेयवलयु;"

—अविरलमति से अब अभिषिक्त होने की वेला (समय) है।" कहने पर राघव ने कहा—"वर-जटा-घनभार-वल्कलयुत भरत के वहाँ तपोभार से रहते समय, उसे देखे बिना यहाँ चतुर भोगक्रम की समुचित क्रियाओं से रहना हमारे लिए अनुचित है।" कहने पर उचितज्ञ विभीषण ने घनभक्ति-युक्ति से प्रयत्न के दीप्ति होने पर, कनकपात्रों में गंधाक्षत, घनरत्नभूषण-कनकांबर पुण्यनादों, पुण्य (पुरुषों) के साथ, पुण्यचिह्नों के साथ पुण्यभामिनियों को बुलवाकर, निर्भर भाग्यधनी (विभीषण) ने विनयाभिरति से विनुवीथि में सर्वत्र सुरदुंदुभियों के मुखरित होने पर, सुरों के प्रशंसा करने पर, समीप से अप्सराओं के लाजाएँ (खील) बिखेरने पर, राम लक्ष्मण को, राजीवनेत्र वाली भूमि-नन्दना को तब धारण करने के लिए दिया। तब राम ने निश्चलानन्दवाला होता हुआ, अधिक प्रीत होकर प्रेम से कहा— ॥ ८२४० ॥

—"हमारे लिए अधिक महान् कार्य करने हैं। अब हमें विलम्ब नहीं करना चाहिए, अयोध्या को जाना चाहिए।" (ऐसा) कहने पर राम को देखकर उस विभीषण ने भक्ति से हाथ जोड़कर, (कहा)—"भीषण रणकेलि में विजृंभित हो रावण ने रुष्ट होकर, पूर्व में कुबेर को जीतकर पुष्पक प्राप्त किया है। पुरुहूतलोक (इन्द्रलोक) के पुष्पक-क्रम (समान) से महाद्भुत वेगवाला है वह। प्रेम से उस पुष्पक पर आरूढ़ होकर,

ननविनि रघुरामुडनुमतिंचुटयु । जनि महासंभ्रमसंप्रीतुलोप्प
नरिदि वैभवमुल नमरु पुष्पकमु । गरमर्थि देच्चे राक्षसकुलेश्वरुडु;
"रावणु लोकविद्रावणु शक्ति । भाविंचि येंतयु भयमुन बोंदि
यरिमुरि गदलुपननिलुंडु गदिय । वेरचुनो दीपमुल् वेरचुनो कदल !"
नन रत्नदीपंबुलचलरूपमुल । बोनर मंदानिलंबुलनोप्पुदानि ८२५०
घनविमानोदर कलित पुष्पमुल । गोनकोन्नगंधमुल् ग्रोल नेतेंचि
युलिकि लोपलजोरकुन्न तुम्मेदल । चेलुवुन दीप्तुल चेन्नग्गलिचु
ना विमलद्वार हरिनीलमणुल । भाविंप नेंतयु भासिल्लु दानि,
दलकोनि तोटल दमपिन्ननाडु । वलपिंचि तमु बासि वच्चिन जूचि,
पोगुलुचु षट्पदंबुलतोड वच्चि । मोगिनुन्न मल्लिकामुकुळंबुलनग,
ना नीलमणुलतो नलवड ग्रुच्चि । मानैन मौक्तिकमणुलोप्पुदानि,
त्रिभुवनंबुलयंदु दिरिगेडिगंग । यभिमतविश्रांतिकै युन्नकरणि
खचित हंसावळि कमलदुकूल । रचित वितानंबु राजिल्लुदानि,
"नेंप्पुडु वच्चुनो यिंदु श्रीरामु ? । डेप्पुडु चूतुमो येमु राघवुनि ?"

सम्मोद के विलसित होने पर, अयोध्या को पधारना चाहिए।" (ऐसा) कहने पर सुनकर, रघुराम के अनुमति (स्वीकृति) देने पर, जाकर, महासंभ्रम (तथा) संप्रीतियों के विराजने पर, अनुपम वैभवों से शोभित पुष्पक को अधिक प्रेम से राक्षसलोकेश्वर लाया। (पुष्पक में) मानों रावण की लोक विद्रावण शक्ति को सोचकर, अधिक भीत होकर, जल्दबाज़ी से चंचल बनाने में अनिल भीत हुआ हो या दीप ही हिलने में भीत हुए हों, इस प्रकार रत्नदीप अचल रूप में विराजमान थे, वह मन्दानिलों से शोभित था, ॥ ८२५० ॥

—(उस) घन-विमान के उदर के कलित पुष्पों की विलसित गन्धों का पान करने आकर, आशंकित हो भीतर प्रवेश न करनेवाले भ्रमरों की मनोज्ञ दीप्तियों के सौंदर्य से विवर्द्धित थीं, (ऐसी थीं) उन विमल द्वारों पर की हरि-नील-मणियाँ। उनसे वह अधिक भासित (प्रकाशित) था। चाहकर उद्यान-वनों में अपने (मल्लिकाओं के) बाल्यकाल में प्रेम उत्पन्न कर, अपने को छोड़कर आने पर, देखकर, व्यथित होते हुए, षट्पदों (छः पैरों से अथवा भ्रमरों के रूप में) से घिरे हुए मल्लिका-मुकुल हों, (इस प्रकार) उन नीलमणियों से शोभा से गूँथकर सुशोभित मौक्तिक-मणियों से विराजित था वह। मानों त्रिभुवनों में घूमने वाली गंगा अभिमत (अभीष्ट) -विश्राम ले रही हो, इस प्रकार हंसावली से खचित विमल दुकूलों से रचित वितानों से विराजित था वह। 'इसमें श्रीराम कब पधारेंगे ? हम कब राघव को

ननि यनि चिंतिंचि यमरकन्यकलु । तनुवुलुज्ज्वल मणिस्तंभमुल् सेंचि ८२६०
निलिचिन चेंलुवुन निर्मलस्तंभ । मुल मणिपुत्रिकल् मौगिनुन्नदानि,
जेकोनि वसुधपैं सृष्टि रक्षिप । वैकुंठपति रामवल्लभुडैन
बौलुचु वैकुंठंबु पुष्पकंबैन । चेंलुवुन नैंतयु जेलगौंडि दानि
गनुगौनि, यप्पुडा काकुत्स्थतिलकु । डनुरक्तितो राक्षसाधीशु जूचि,
"रा विभीषण ! वीरु रावणेदग्र । पावकु नार्चिन पटुपयोदमुलु;
वीरि नाराधिपु; वीरि बूजिपु; । वीरि संभाविपु विपुलसंपदल"
ननि वानरुल जूपि यर्थि दीपिंप । वनिचिन राक्षसपति विभीषणुडु
धनमुलंबरमुलु दगुभूषणमुलु । गनकमुल् देप्पिंचि कडुप्रीति मेंरसि
जनपति सन्निधि संभ्रमंबोप्प । वनचरपतुलकु वरुसतो निच्चें;

श्रीरामुडु पुष्पकविमानमेक्कि ययोध्यकु जनुट

बति रामुडपुडु पुष्पकमु नर्चिंचि । सतियु दम्मुडु दानु सद्भक्तियुक्ति ८२७०

देखेंगे ?' ऐसा सोचकर, अमर-कन्यकाएँ (अपने) शरीरों को उज्ज्वल मणिस्तंभों से टिकाकर, ।। ८२६० ।।

—सुन्दरता से खड़ी हों, ऐसी थीं निर्मल स्तम्भों की मणि-पुत्रिकाएँ (स्तम्भ स्त्रियों के रूप में खचित थे) । सप्रयत्न वसुधा पर सृष्टि की रक्षा करने के लिए वैकुंठपति के रामवल्लभ बनने पर, मनोज्ञ वैकुंठ ही पुष्पक बना हो, ऐसी मनोज्ञता से युक्त था वह । (ऐसे पुष्पक को) देखकर, तब उस काकुत्स्थकुल-तिलक ने अनुरक्ति से राक्षसाधीश को देखकर (कहा)—"आओ विभीषण ! ये (वानर) रावणरूपी उदग्र-पावक को बुझानेवाले पटु-पयोद हैं । इनकी आराधना करो, इनकी पूजा करो, इन्हें विपुल संपदाओं से संभावित (सम्मानित) करो ।" (ऐसा) कह वानरों को दिखाकर, इच्छा के दीप्त होने पर, भेजने पर, राक्षसपति विभीषण ने धन, अम्बर, उचित भूषण, कनक मँगवाकर, अधिक प्रीति के प्रकाशित होने पर, जनपति की सन्निधि में, संभ्रम से शोभित होकर, वनचरपतियों को क्रम से दिया ।

श्रीराम का पुष्पक विमान चढ़कर अयोध्या को जाना

पति राम तब पुष्पक की अर्चना कर, सती और अनुज के साथ सद्भक्तियुक्ति से कृतकृत्य होकर, ।। ८२७० ।।

—प्रदक्षिणापूर्वक आकर, अतिहर्ष से उस विमान पर आरूढ हुआ । आरूढ होकर, सुग्रीव आदि हितुओं (तथा) वानरों को अवश्य

गृतकृत्युडै प्रदक्षिणमुगा वच्चि । यतिहर्षमुन नेक्कॅ नव्विमानंबु;
नेक्कि सुग्रीवादि हितुल वानरुल । दक्कक वीक्षिंचि दशरथात्मजुडु
"मीरु सेसिनयट्टि मित्रकार्यमुलु । नेररु सुरलैन निष्ठतो जेय;
नेल्लतेजंबुलु नेल्लसौख्यमुलु । नेल्लयशंबुलु नेनु मी वलन
बडसिति; बुण्युलु बरमपावनुलु । गडुधन्युलगुदुरु; कपुलार! यिक
बोंडु मी मी देशमुलकु" नावुडुनु । निंडारु वेडुक नृपु जूचि कपुलु
"धरणीश! मेमयोध्यकु गोल्चि वच्चि । परमानुरक्ति मी पट्टंबु जूचि,
निरुपमचरितुल नी सहोदरुल । भरतशत्रुघ्नुल बरमपावनुल
जूचि, मी तल्लुल जूचि, मी पुरमु । चूचि, भागीरथि जूचि वच्चेदमु"
अनवुडु विनि रामुडंतरंगमुन । ननयंबु हर्षिचि या विभीषणुनि ८२८०

भानुजु नंगदु बवनजु नीलु । माननीयात्मुल मरियु बेक्कंड्र
वनचर-मुख्युल वात्सल्यमोप्प । नेनय नापुष्पकमेक्क बंचुटयु
धरणीशु मन्नन दग नुत्सहिंचि । परमपावनुलु पुष्पकमेक्किरंत;
द्रिजटादिसतुलु धात्रीजकु म्रोक्कि । निजगृहंबुलकंत नेम्मितो जनिरि;
दशरथात्मजु जूचि दानवेश्वरुडु । विशदंबुगा बल्कॅ "विनुमु श्रीराम!

देखकर दशरथात्मज ने (कहा)—"आपने जो मित्र कार्य किए हैं, वे सुर भी निष्ठा के साथ नहीं कर सकते। समस्त तेज, समस्त सुख, समस्त यश मैंने तुमसे पाए हैं। (हम) पुण्यों, परमपावन (और) अधिक धन्य बने हैं। हे कपियो! अब अपने-अपने देशों में जाइए।" ऐसा कहने पर पूर्ण उत्साह से नृप को देख कपियों ने (कहा)—"हे धरणीश! हम अयोध्या में आपकी सेवा कर, परम-अनुरक्ति से आपके राजतिलक को देखकर, निरुपम-चरित्रवाले आपके सहोदर, परम पावन भरत-शत्रुघ्न को देखकर, आपकी माताओं को देखकर, आपके पुर को देखकर, भागीरथी को देख आएँगे।" ऐसा कहने पर सुनकर राम अंतरंग में अनारत हर्षित होकर, उस विभीषण को, ॥ ८२८० ॥

—भानुज, अंगद, पवनज, नील, माननीयात्मावाले अन्य कई वनचर-प्रमुखों को, वात्सल्य के शोभित होने पर उस पुष्पक में चढ़ने के लिए आदेश देने पर, धरणीश की मान्यता से उचित रूप से उत्साहित होकर, (वे) परम-पावन (वानर) तब पुष्पक में आरूढ़ हुए। त्रिजटा आदि सतियाँ धात्रीजा को प्रणामकर तब अत्यन्त प्रेम से निजगृहों में गईं। दशरथात्मज को देख दानवेश्वर ने विशद रूप से कहा—"सुनो हे श्रीराम! हम लोगों में से इस पुष्पक में कितने ही (लोग) चढ़ें, सललित रूप से पर्याप्त स्थान है।

यॆलमि नी पुष्पकमॆंदर्रॆक्किननु । सललितंबुग जोटु चालि वॆंडियुनु
नॊकमूल गडमयै युंडु नेनूटि । ककलंक महिमतो" नन मुदंबंदि
धरणीशुडप्पुडु तरुचरासुरुल । गरुण बुष्पकमॆक्कगा नाननिच्चॆ;
नप्पुडापुष्पकंबाकाशवीथि । नॊप्पॆडि वेडुक युप्पोंग नॆगसि
घनमनोवेगंबु गैकॊनि निगुडि । घिनुवीथि दिव्युलु विनुतिप वॆर्चि ८२९०
पर्विन प्रभलतो भानुर्विबंबु । पूर्वपश्चिमपथंबुल बोक मगुडि
दक्षिणंबुननुंडि तगनुतरमुन । कक्षीणगति बोवु नाकृति दोप
बोवनप्पुडु नित्यपुण्युंडु राम । देवुंडु जानकीदेवितोननियॆ;

श्रीरामुडु सीतकु राक्षसवीरुल विक्रममु दॆल्पुट

"शुकवाणि! जानकि! चूचितेलंक । यकलंककलक्ष्मुल नमरुचुन्नदियु;
गमलाक्षि! यिदि विश्वकर्म निर्मिप । गॊमरु दीपिंचॆ द्रिकूटमध्यमुन;
नीलंक निम्मुल नेलु पुण्यंबु । चालक पॊलिसॆ दुर्जनुडु रावणुडु"
अनि रक्तमांसमज्जास्थितंडमुल । घनमैन समरभागमु जूपि विभुंडु
"कदन विक्रमशक्ति गडगि येतॆंचि । मदिराक्षि ! यिक्कड मडिसॆ रावणुडु;

और भी एक कोने में अकलंक महिमा से पाँच सौ के लिए जगह रहती है।" (ऐसा) कहने पर मुदित होकर, धरणीश ने तब तरुचर (और) असुरों को करुणा से पुष्पक में चढ़ने की अनुमति दी। तब वह पुष्पक आकाश-वीथि में, शोभायमान उत्साह के उमड़ने पर, उड़कर, घन-मनोवेग को धारण कर, ऊँचे तनकर, विनुवीथि में दिव्यों (देवताओं) के विनुतियाँ करने पर, विजृंभित हो, ॥ ८२९० ॥

—व्याप्त प्रभावों से, भानुर्बिंब के पूर्व से पश्चिम पथ में न जाकर, फिर दक्षिण से उत्तर (दिशा) की ओर अक्षीणगति से जाने की आकृति (विधान) के दीखने पर, (चलता) गया। तब नित्य पुण्यवाले रामदेव ने जानकी देवी से कहा—

श्रीराम का सीता को राक्षसवीरों का विक्रम बताना

—हे शुकवाणी ! जानकी ! देखा है लंका को जो अकलंक-लक्ष्मियों (संपदाओं) से विराज रही है। हे कमलाक्षी ! यह विश्वकर्मा के निर्मित करने पर त्रिकूट (पर्वतों) के मध्य शोभित हुई है। इस लंका पर मनोज्ञता से शासन करने का पुण्य न होने से दुर्जन रावण मर गया।" (ऐसा) कह रक्त-मांस-मज्जा-अस्थि-तंडों (समूहों) से घने बने

घनसत्त्वुडै कुंभकर्णुंडु दौडरि। यनि घोरमुग जेसि यक्कड गूलॆ;
नहितुडै नीलु ब्रहस्तुंडु दाकि। बहुसत्त्वुडिक्कड भस्ममै पॊलिसॆ; ८३००
शूरत बवमानसुतुडु धूम्राक्षु। नारूढबलु द्रुंचॆ नतिव! यिक्कडनु;
भेदिंचियिचट नभेद्युडै मेघ। नादुंडु ममुगट्टॆ नागपाशमुल;
धृतियु लावुनु बॆच्चि तॆंगुवमै बोरि। यतिकायु सौमित्रि यक्कड गूल्चॆ;
नलघुडु मकराक्षुडक्षीणबलुडु। बलमेदि यिक्कड बडियॆ बोराडि;
भग्नारिवीरु डभग्नप्रतापु। डग्निवर्णुंडु गूलॆ नय्यॆड नतिव!
कडिमिमै बोराडि गर्वंबु लावु। नॆडलि यकंपनुंडिक्कड गूलॆ;
नलुकमै सौमित्रि या यिंद्रजित्तु। नलवॊप्प दॆगटाचॆ नय्यॆड नबल!
यनुपमबलुडगु नम्महाकायु। दुनिमॆ निय्यॆड नंगदुडु सरोजाक्षि!
तरिमि यिय्यॆड महोदर महापार्श्वु। लरिमि चच्चिरि महोदग्रविक्रमुलु;
क्रूरुलै देवांतकुडु नरांतकुडु। पोराडि यिक्कड बौलिसिरिद्दरुनु; ८३१०
इदॆ पयोनिधिमीद नेपुदीपिप। गदिसि माकट्टिन घनसेतुवबल!
इदॆ गंधमादनं; बिदॆ पुण्यतीर्थं; । मिदॆ सदाशिवसमाहित निवासंबु;

समरभाग को दिखाकर विभु ने कहा—"कदन-विक्रमशक्ति से प्रयत्नशील बन आकर हे मदिराक्षी! यहाँ रावण मर गया। घन-सत्त्ववाला होकर कुंभकर्ण लगकर घोर रूप से युद्ध करके यहाँ गिर गया। अहितू बन नील से टकराकर बहुसत्त्ववाला प्रहस्त यहाँ भस्म हो मर गया।॥ ८३०० ॥

—शूरता से पवमानसुत ने आरूढ़बलवाले धूम्राक्ष का हे नारी! यहाँ संहार किया। बेधकर यहाँ अभेद्य बन मेघनाद हमें नागपाशों से बाँध डाला। धृति तथा सामर्थ्य से विजृंभित होकर, साहस से लड़कर, अतिकाय को सौमित्र ने वहाँ (मार) गिराया। अलघु, अक्षीणबल-वाला मकराक्ष बल खोकर, लड़कर यहाँ गिर गया। हे नारी! भग्नारि-वीर, अभग्न-प्रतापवाला अग्निवर्ण वहाँ गिर गया। साहस से लड़कर गर्व और सामर्थ्य को खोकर अकंपन यहाँ गिर गया। हे अबला! क्रोध से सौमित्र ने उस इन्द्रजित को उचित विधि से उस स्थान पर मार डाला। हे सरोजाक्षी! अनुपम बलवाले उस महाकाय को इस स्थान पर अंगद ने मार डाला। इस स्थान पर महोदग्र विक्रमवाले महोदर, महापार्श्व आक्रमण कर मर गए। क्रूर बन देवांतक और नरांतक दोनों यहाँ लड़कर मर गए॥ ८३१० ॥

—हे अबला! यही पयोनिधि पर शोभा के दीप्त होने पर, लगकर हमारा बनाया सेतु है। यही गन्धमादन है। यही पुण्यतीर्थ है। यही सदाशिव-समाहित निवास है। हे कमलाक्षी! पड़नेवाला

कमलाक्षि ! यी तोचु कांचनाचलमु । रमणीयमिदिय हिरण्यनाभंबु;
पवमानसूनुंडु पडति ! निन् वेदक । जवमोप्प लंककु जनुदेंचुनप्पु
डतनिकि नातिथ्यमर्थि गाविंचु । मति नब्धि वेडलें नी महितशैलंबु"
ननि चेप्पुचुनु राग ना राघवुनकु । घनतरभीषणाकारंबुतोड
नेतेंचि दशकंठुडेंदुट दोचुटयु । भीतिल्लि यपुडु विभीषणुकनियें;
"जलजजुंडादिगा सकलदेवतलु । पलुमारु गोनियाड बंक्तिकंधरुनि
दुनिमिति नाजिलो दोर्बलशक्ति । नैनय ना रावणुडेतेंचि यिचट
कदियुचु ना कन्नुगवम्रोलनिलिचें; । निदिचित्र ! मेर्पड नेंरिगिपु"
मनुडु ८३२०

"जननाथ ! या ब्रह्मसंततियंदु । जनिर्यिचनट्टि दुर्जनुनि रावणुनि
देंगटार्चि; तट्टगान देव ! या हत्य । दगिलि येतेंचि मुंदट दोचें मीकु;
गडक नी पापमिक्कड बापि वेग । कडचिपोयिन गानि कादु कार्यंबु;
अवनीश ! नीयात्म नब्जसंभवुनि । दविलि तलंपुमु; तलचिन नतडु
नतिमुदंबुन वच्चि यमरुलु दानु । मतमेंरिगिचेंडि मनुवंशतिलक !"
यनवुडु बुष्पकमवनिकि डिंचि । तन मदिलोपल दात्पर्यमोप्प,
भूमीशुडप्पुडंबुजभवु नेंलमि । गार्मिचि तलप नक्कडिकेगुदेंचें

रमणीय कांचनाचल है । यही हिरण्यनाभ है, हे नारी ! पवमानसून के तुम्हें खोजने के लिए वेग से लंका को आते समय, उसे प्रेम से आतिथ्य प्रदान करने के लिए अब्धि से यह महितशैल बाहर निकल आया था ।" ऐसा कहते हुए आते समय उस राघव को घनतर-भीषण-आकार से आकर दशकंठ के समक्ष दिखाई पड़ने पर, भीत हो तब विभीषण से कहा—"जलजज (ब्रह्मा) आदि सकल देवताओं के कई बार प्रशंसा करने पर पंक्तिकंधर को युद्ध में दोर्बल-शक्ति से मार डाला । शोभा से वह रावण आकर यहाँ नियराते हुए मेरे नेत्रद्वय के समक्ष खड़ा रह गया । यह विचित्र है । समझाकर बताओ ।" कहने पर ॥ ८३२० ॥

—"हे जननाथ ! उस ब्रह्मा की संतति में उत्पन्न दुर्जन रावण को मार डाला था । ऐसा होने से हे देव ! उस हत्या का फल लगकर यहाँ आपके समक्ष दिखाई पड़ा है । प्रयत्न से इस पाप से यहाँ (मुक्त) होकर, शीघ्र (यहाँ से) गए बिना काम नहीं बनेगा । हे अवनीश ! अपने मन में लगकर अब्जसंभव का स्मरण करो । स्मरण करने पर वह अतिमोद से आकर, देवताओं के साथ हे मनुवंशतिलक ! उपाय बताएगा ।" ऐसा कहने पर पुष्पक को अवनी पर उतारकर अपने मन में तात्पर्य के शोभित

नखिल दिक्पालुरु नखिलदेवतलु । नखिल संयमुलुनु नंदंद कौलुव;
प्रेम नट्लेतेंचि प्रियपूर्वकमुग । रामुतो बलिकें ना राजीवभवुड्;
"देव! राघव! येमि तेंड्गुन नन्नु । रार्विचि" तनवुड्ु रघुवल्लभुंडु
८३३०

तन मनंबुन दोचु तत्क्रमंबेल्ल । विनिर्पिप नातडु विस्मयंबंदि,
"देव! दैत्युडु नाडु तेजंबुनंदु । नी वसुमति बुट्टि यिन्नि पापमुलु
नुरुतरंबुग जेसि युग्रत मेंड्रसि । परिकिंप बिदप निष्पापुडै पोलिसें;
धरणिपै विप्रुंडु दन कुलक्रममु । लरसि ता निलुवक यन्यवर्तनमु
लरयुचु नतुल दोषाचारुडैन । गुरुदूषकुंडैन गुलशिक्षुडैन
नारय गोब्रह्महत्यादि घोर । दारुणकर्मुडै तनरुवाडैन
वधकु नर्हुंडु गाडु वसुधपै नेन्नि । विधमुलनैनन‌ु विवरिंचि चूड;
नट्टि दुर्जनुनकु नट्टि क्रूरुनकु । नट्टि पापात्मुनकाज्ञयेमनिन
नतनि कुलंबुनकंत्यंबु सेसि । पति तन भूमिलोपल नुंडनीक
तग वेंडलिचुटे दंडंबु सुम्मु । जगतीश! यिपुडु विश्रवसुपुत्तुंडु ८३४०
मोक्षंबु गोरि नी मुंदट निलिचें; । मोक्षकामुनि जेयु मुदमु दीपिंप;

होने पर, भूमीश ने तब अंबुज-भव (ब्रह्मा) का, प्रेम से कामना कर स्मरण किया तो अखिल दिक्पाल, अखिल देवता, अखिल संयमियों के सर्वत्र सेवाएँ करने पर, (ब्रह्मा) वहाँ आया। प्रेम से ऐसा आकर, उस राजीव-भव ने प्रेमपूर्वक राम से कहा—"हे देव! राघव! किस विधान से मुझे बुलवाया है?" ऐसा कहने पर रघुवल्लभ के, ॥ ८३३० ॥

—अपने मन में भासित होनेवाले तत् समस्त क्रम को सुनाने पर वह (ब्रह्मा) विस्मित हुआ (और बोला)—"हे देव! दैत्य (रावण) मेरे तेज से इस वसुमति पर जन्म लेकर, उरुतर रूप से इतने पाप करके, उग्रता से प्रकाशित होकर, देखने पर बाद में निष्पाप हो (राम बाण के कारण) मर गया। सोचने पर अतुल-दोषाचारवाला होने पर (अथवा) गुरु दूषक होने पर (अथवा) कुल में शिक्षा (दंड) के पात्र होने पर (अथवा), सोचने पर गो-ब्रह्महत्या-आदि घोर-दारुण कर्म कर विराजित होने पर भी, वसुधा पर कितने ही प्रकार से विवरण कर देखने पर, ब्राह्मण वध के लिए अर्ह नहीं है। वैसे दुर्जन को, वैसे क्रूर को, वैसे पापात्मा को आज्ञा यह है कि उसके कुल का अन्त करके, पति (राजा) को अपनी भूमि (देश) में रहने न देकर, उचित रूप से निष्कासित करना ही दंड है। हे जगदीश! अब विश्रवसु का पुत्र, ॥ ८३४० ॥

भाविंचि नीपेर भवुनि प्रतिष्ठ । गाविपु मुन्नीटिकट्टपै नोप्प
रमणमै नोक मुहूर्तमुलोन" ननुचु । ग्रममोप्प देलिपि याकमलजुंडरिगॆ

श्रीरामुडु लिंग प्रतिष्ठ सेयुट

नावेळ रघुरामुडासन्नुडैन । पावनि वीक्षिंचि पलिकॆ निट्लनुचु;
"सन्नुत बलशौर्य ! साहसधुर्य ! । पन्नगाशनवेग ! परमानुराग !
मा कार्यमीडेर्चि ममु नुद्धरिंचि । मा कीर्ति नॆगडिंचि ममु ब्रोचितीवु;
विनयविक्रमधैर्य विख्यातुलंदु । निनु बोलरॆव्वरु निखिललोकमुल;
गावुन निपुडोक्क कार्यमीडेर्पु; । माविधमॆट्लन नदि यॆरिगिंतु;
नगचराधीश ! यत्यंत वेगमुन । नगणित फलराशियगु काशि डासि
करमोप्प नोक्क लिंगमु गोनि तॆम्मु; । परगंग निन्नूटपदियोजनमुलु ८३५०

गलदिच्चटिकि; रॆंडु गडियललोन । निलुवक चनुदॆम्मु; नीवाहवमुन
धरमीद बडिन ना तम्मुनि कोरकु । निरुमूडुलक्षलु निरुवदिवेलु

—मोक्ष की कामना करके तुम्हारे सामने खड़ा है। मोद के दीप्त होने पर (उसे) मोक्षकाम कर दो। सोचकर अपने नाम पर समुद्र की वेला पर, एक रमणीय मुहूर्त में, शोभा से भव (शिव) की प्रतिष्ठा कर दो।" (ऐसा) कहते हुए शोभा से (लिंग प्रतिष्ठा के) क्रम को बताकर वह कमलज चला गया ॥ ८३४३ ॥

श्रीराम का लिंगप्रतिष्ठा करना

उस समय रघुराम ने आसन्न बने (निकट स्थित) पावनी को देखकर इस प्रकार कहा—"हे सन्नुत बलशौर्यवाले ! हे साहसधुर्य ! हे पन्नगाशन (वायु अथवा गरुड़) -वेगवाले ! हे परम-अनुरागवाले ! हमारे कार्य को सम्पन्न करके हमारा उद्धार करके, हमारी कीर्ति की वृद्धि करके, तुमने हमारी रक्षा की। विनय-विक्रम-धैर्य की विख्याति में निखिल लोकों में कोई तुम्हारा सानी नहीं है। अतः अब एक कार्य संपन्न करो। वह विधि (पद्धति) कैसी है, वह समझाऊँगा। हे नगचराधीश ! अत्यन्त वेग से अगणित-फल-राशि काशी के निकट जाकर, अधिक शोभा से एक (शिव) लिंग को ले आओ। दो सौ दस योजन, ॥ ८३५० ॥

—है यहाँ से। दो घड़ियों में, (वहाँ) रुके बिना आ जाओ। तुम आहव में धरा पर गिर पड़े मेरे अनुज के लिए छः लाख बीस हज़ार दस योजन पवनवेग से जाकर औषध-पर्वत को झट लाकर, फिर यथास्थान पर स्थिरता

बदियोजनंबुलु बवनवेगमुन । गदलि मंदुलकोंड ग्रक्कुन दॆंच्चि
तिरुग नॆप्पटि चोट दिरमुगा नुनिचि । यरुगुदॆंचितिवप्पुडरजामुलोन;
नदिगान नीकिदि यधिकमे" यनिन । मुदमुन नुप्पोंगि म्रोक्कि
वीड्कोनुचु
नरिगि यप्पुडु महेंद्राचलंबॆक्कि । युरुतरशक्तिमै युंकिचि यॆगसि
घनतरंबगु काशिकापुरिडासि । यनघतरंगिणि ना गंग ग्रुंकि
काशिकानिलयुनि घनु विश्वनाथु । नीशु दयालोलु हितपरिपालु
गनि म्रोक्कि नुतिसेसि कदलि या घनुडु । घनबुद्धि नॊक्क लिंगमुनु
गॆकॊनुचु
नधिकवेगंबुन नरुदॆंचुचुंडे । बुधजनविनुतुडाभूमीशुडपुडु ८३६०

हनुमंतु राककु नट्टु चूचि चूचि । "तनरंग निट मुहूर्तमु चेर वच्चॆं;
जनुदेरडदेमो ? राक्षसुडॆव्वडेन । जॆनकिन जगडबु सेयुचुन्नाडो ?
येमि कार्यमो ?" यनियिच्च र्जितिचि । "यी मुहूर्तमुदप्पकिट लिंग-
मॊकटि
नॆनय ब्रतिष्ठितुनिसुकचे" ननुचु । जननाथुडट समस्थलमुन करिगि
करमुल नॊक्कलिंगमु गाग निसुक । गरमॊप्प जेसिन गंजाक्षि सीत

से रखकर, तब आधे पहर (समय) में आए थे । अतः यह तुम्हारे लिए बड़ा (काम) है क्या ?" (ऐसा) कहने पर, मोद से फूलकर, प्रणामकर, बिदा लेकर, जाकर, तब महेन्द्राचल पर चढ़कर, उरुतर शक्ति से तैयार होकर, उड़कर, घनतर काशिकापुरी के निकट पहुँच, अनघ-तरंगिणी उस गंगा में डुबकी लगाकर, काशिका-निलयवाले महान् विश्वनाथ, ईश, दयालोल, हितपरिपालक को देख, प्रणामकर नुति (प्रस्तुति) कर, निकल कर, वह महान् (हनुमान) घन-बुद्धि (महित बुद्धि) से एक (शिव) लिंग को लेकर अधिक वेग से आता रहा । बुधजन-विनुत उस भूमीश ने (राम) तब, ।। ८३६० ।।

—हनुमान के आगमन के लिए उधर देख-देख (प्रतीक्षा कर) (सोचा)— 'शोभा से यहाँ मुहूर्त निकट आ रहा है । पता नहीं क्यों नहीं आ रहा है ? किसी राक्षस के छेड़ने पर झगड़ा तो नहीं कर रहा है ? पता नहीं क्या कार्य है ?" ऐसा मन में विचार कर "यह मुहूर्त टल न जाए ऐसा शोभा से सिकता से एक लिंग की प्रतिष्ठा करूँगा ।" (ऐसा) सोचते हुए, जननाथ तब समस्थल पर जाकर, हाथों से सिकता का एक लिंग शोभा से बनाया (राम के लिंग बनाने पर) कंजाक्षी-सीता ने उस नगजा-अधिनाथ

नंदि गाविंचे ना नगजाधिनाथु। मुंदर निसुकचे; मौगि रामविभुडु
ना यॅड बूज सेय गडंगुनंत। वायुवेगंबुन वायुनंदनुडु
नरुदेंचि रघुरामुनडुगुलकेंरगि। धरणीशुडुचिन दर्पकाराति
गनुगोनि खिन्नुडै कळवळंबंदि। तनुवु गंपिप गद्गदकंठुडगुचु
नंजनासुतुडप्पुडनियॅ रामुनकु। "कंजाप्तकुलनाथ! काशिकि नन्नु
८३७०

बनिचिनि बनिपूनि ब्रह्मादिसुरलु। गनुगोन नचटि लिंगमुनु देंच्चितिनि;
ननु बंपि यिच्चट नगजाधिनाथु। नुनुपंग नीतिये युर्वीशचंद्र!
यनुवोंद ने देर नर्हुंडगानो?। मनमुन ना मीद मक्कुव लेदो?"
यनुडु रामुडु मंदहासंबु सेसि। हनुमंतु जूचि यिट्लनियॅ "नाकरय
दम्मुललो नोक्क तम्मुडवीवु; । नेंम्मितो नीमीद नेय्यंबु घनमु;
'ई मुहूर्तमु दप्प नी' ननि शिवुनि। गामिंचि यिसुकचे गाविंचितेनु;
नंतलोनन नीवु नरुगुदेंचितिवि; । संतोषमय्यॅ; नीश्वरु नव्वलिकि
देंमलिंचि नी तॅच्चु देवुनि निलुपु। ममरुलु वोंगडंग" ननिन वायुजुडु
मुदमंदि तनवालमुन नीशुजुट्टि। कदलिंचि कदलिंचि कदलिपलेक,

(शिव) के समक्ष सिकता से एक नन्दि बनाया। उस अवसर पर क्रम से राम-विभु के पूजा करने लगने पर, वायुवेग से वायुनन्दन आकर, रघुराम के चरणों में विनत होकर, धरणीश के बनाए दर्पक-आराति (मन्मथ का शत्रु-शिव) को देख, खिन्न वन, विकल होकर, तनु के कंपित होने पर गद्गद कंठवाला होता हुआ अंजनासुत ने तब राम से कहा— "हे कंजाप्तकुलनाथ! काशी को मुझे ॥ ८३७० ॥

—भेजने पर सप्रयत्न, ब्रह्मादि सुर देखें, ऐसा वहाँ के लिंग को लाया हूँ। हे उर्वीशचन्द्र! मुझे भेजकर यहाँ नगजाधिनाथ की प्रतिष्ठा करना नीति है? शोभा से मैं (लिंग) लाने में अर्ह नहीं हूँ? मन में मुझपर ममता नहीं है?" (ऐसा) कहने पर राम ने मन्दहास कर, हनुमान को देखकर यों कहा—"सोचने पर मेरे अनुजों में तुम एक अनुज हो। प्रेम से तुम पर स्नेह अधिक है। 'इस मुहूर्त को टलने नही दूंगा' ऐसा शिव के प्रति इच्छा रख, मैंने सिकता से (लिंग) बनाया। इतने में तुम आ गए। प्रसन्नता हुई। ईश्वर को हटाकर तुम्हारे लाए देव (शिवलिंग) को प्रतिष्ठित करो जिसकी अमर प्रशंसा करें।" (ऐसा) कहने पर वायुज ने प्रसन्न होकर, अपने वाल से ईश को लपेट कर, हिला-हिलाकर, हिला न

मदिलोन शंकिंचि मरियु नुंकिंचि । मेंदलिप जालक मिगुल जिंतिंचि
८३८०

"यक्कटा ! मुन्नु द्रोणाचलंबेनु । दक्कक यगलिंचि तनर देच्चितिनि;
भुजगकंकणुतोड भूतालितोड । रजताद्रिनेत्तिन रावणुनकुनु
नेत्तंग नलविगाकेंसगु सौमित्रि । नेत्तिति निंद्रादुलेल्ल गीर्तिप;
दट्टुकुन मेरुमंदरमुलनैन । बोंटवेल जिम्मुदु भूरिसत्त्वमुन,
निदि कडु ब्रेगय्ये नी रीति; नाकु । बदिलंबु दप्पेनो ? भानुवंशजुनि
गिनिसि ये दूर बल्किन पापमुननों ? । कनुगोन नट्टुगाक काशीशु निटकु
जेकोनि येनु देच्चिन पापमुननों ? । काकुन्न निदियेल घनमगु" ननुचु
बदिलंबुगा दनबलमेल्ल गूर्चि । त्रिदशुलु वेरगंद दिव्रिरि वेंडियुनु
नगचरेश्वरुडु दैन्यमुतोड नभवु । नगलिपलेक बाहासत्वमेडलि
पट्टुरक्तमुलु ग्रक्कि प्राणमुल् गलगि । यट मूर्छतोड नय्यवनिपै द्रेळ्ले;
८३९०

ना समयंबुन ना रामविभुडु । भासुर मृदुकर पद्ममुल् साचि
हनुमंतुनेत्त नोय्यन मूर्छदेलसि । जननाथवरुनकु साष्टांगमेरगि

सक, मन में शंकित हो और भी सन्नद्ध हो, हिला न सक, अधिक चिंतित हो, ।। ८३८० ।।

—(सोचा)—"हाय ! पूर्व में मैं द्रोणाचल को अवश्य उखाड़कर शोभा से लाया था । भुजगकंकण (शिव) के साथ, भूताली के साथ रजताद्रि को उठानेवाले रावण के लिए भी उठाने में असाध्य हो शोभित सौमित्र को उठाया था जिसका इन्द्र आदि समस्त (देवताओं) ने कीर्तन (प्रशंसा) किया । भूरिसत्त्व से झट से मेरु-मन्दरों को भी अंगूठे से फेंक दे सकता हूँ । यह इस प्रकार अति भारी बन गया । क्या मेरी जागरूकता नष्ट हो गई (अथवा) यह भानुवंशज (राम) को रुष्ट हो दूषित करने का फल है ? समझ नहीं पाता अथवा काशीश (शिव) को मेरे सप्रयत्न यहाँ लाने का पाप है ? नहीं तो यह (मेरे लिए) भारी क्यों पड़ेगा ?" (ऐसा) कहते हुए सावधानी से अपने समस्त वल को जुटाकर, त्रिदश चकित हो जाएँ, सप्रयत्न पुनः नगचरेश्वर अभव (शिव) को उखाड़ न सक, दैन्य के साथ, बाहुसत्त्व को खोकर, पट्टुरक्त उगलकर, प्राणों के क्षुब्ध होने पर, उधर मूर्च्छित होकर अवनी पर गिर पड़ा ।। ८३९० ।।

—उस समय उस रामविभु ने भासुर-मृदु-करपद्म फैलाकर हनुमान को उठाने पर धीरे से मूर्च्छा से होश में आकर, जननाथ को साष्टांग प्रणाम कर,

"जय भूमिजास्वांत-जलज-षट्चरण ! । जय घोरकुटिलराक्षसचय-हरण !
जय खंडितोद्दंडशर्वकोदंड ! । जय शोषिताब्धि प्रचंडोरुकांड !
जय रावणोन्नतशैलामरेंद्र ! । जय भक्तहितपूर्णसत्कृपासांद्र !
जय निर्मलात्म ! सज्जनकल्पभूज ! । जय पद्मबांधवशतकोटितेज !
नी महिमंबुलु नेर्तुरे तेलिय । नामहेश्वरुडैन नमरेज्युडैन
नागेंद्रुडैन ना नाकेंद्रुडैन । वागीशुडैननु वसुधातलेंद्र !
ए निन्नु नेरुगंग नेंतटिवाड ! । नेनिन्नु गोनियाड नेंतटिवाड !
बेलनै मीरुनिलिपन यीशु नेरुग । कीलील देमलिप नेंचिनयट्टि ८४००

ना तप्पुलोगोनि नन्नुमन्निंचि । यी तरि मी याज्ञ ने देच्चिनट्टि
यी यीशुनकु वेरवेरिगिंपु" मनुचु । बायनि भक्तितो ब्रणुतिचुचुन्न
हनुमंतु जूचि यिट्लनिये राघवुडु; । "मनमुन नीवेल मरिगेदविट्लु ?
नीवु देच्चिन काशिनिलयु निच्चोट । बावनि ! युनुपु; मी भवुनकु मुनुपु
प्रीति बूज नोनर्चि पिदप ना यीशु । नाततभक्तितो नर्चितु; सकल
भूजनंबुलु निट्लु पूज गावितु; । रा जाह्नवीजलंबवनिलो जनमु

(हनुमान ने कहा)—"जय भूमिजा-स्वान्त-जलज-षट्चरणे ! जय घोर-कुटिल राक्षस-चय का हरण करनेवाले ! जय खंडितोद्दंड-शर्वकोदंड वाले ! जय शोषिताब्धि-प्रचंड-उरु-कांडवाले ! जय रावणरूपी उन्नत-शैल के लिए अमरेन्द्र ! जय भक्तहित-पूर्ण-सत्कृपासांद्रा ! जय निर्मलात्मा! सज्जन कल्पभूजा ! जय पद्म-बांधव-शतकोटितेज ! हे वसुधातलेन्द्र (राजा) ! तुम्हारी महिमाओं को वह महेश्वर अथवा अमरेज्य अथवा नागेन्द्र अथवा नाकेन्द्र अथवा वागीश भी जान सकते हैं क्या ? मैं जानने में कितना हूँ ? (मेरी सामर्थ्य क्या है ?) मैं तुम्हारी प्रशंसा करने में कितना हूँ ? नादान हो आपके द्वारा प्रतिष्ठित ईश को न जानकर, इस प्रकार उखाड़ना चाहने वाले ।। ८४०० ।।

—मेरे दोष को मन में रख लेकर, मुझे क्षमाकर, इस अवसर पर आपकी आज्ञा से मेरे लाए इस ईश (शिवलिंग) के विधान को बताओ।" (ऐसा) कहते हुए अचलभक्ति से प्रणुति करनेवाले हनुमान को देखकर राघव ने यों कहा—"मन में तुम इस प्रकार क्यों क्षुब्ध होते हो ? तुम्हारे लाए काशी-निलय (शिव) को हे पावनी ! यहाँ रखो (प्रतिष्ठित करो) । इस भव (शिवलिंग) को प्रथमतः प्रीति से पूजा करने के बाद मेरे ईश

तेंच्चि नीतेंच्चिनदेवुन कथि । जेंच्चेर निट नभिषेकंबु सेय
नतडोर्नर्चिन ब्रह्महत्यादुलघमु । लतनि बोंदवु; कीर्तुललर सिद्धिंचु;
नतुलित - पुत्र - पौत्राभिवृद्धियुनु । नतुलभोगंबुलु नमरंग गलुगु"
ननि पल्क हनुमंतुडतिमुदंबंदि । मनमुन संतोषमग्नुडै पोंगे; ८४१०
बरमात्मुडट नुमापति ब्रतिष्टिंचि । युरुभक्ति दग षोडशोपचारमुल
गरमोप्प मुनुमुन्न काशिकावासु । दरणिवंश्युडु सोंपु दनरार बूज
गाविंचि पिदप दा गाविंचु शिवुनि । भाविंचि यर्चिंचे बरमहर्षमुन,
रमण बूवुलवान रघुरामु मीद । नमरुलु गुरियिंचिरगचरुल् चेलग;
नंत विभीषणुंडधिपतिकनियें । संतोषमुप्पोंग "जगदीश ! यिप्पु
डी कट्टतेरुवुगा नेव्वरिकैन । राकुंड जेयुमो राम ! लंककुनु"
नावुडु हर्षिंचि नलिनाप्तकुलजु । डा विभीषणु जूचि "यौगाक" यनुचु

श्रीरामुडु सेतुमहिमनु देलुपुट

नडरंग नट गोन्नि यडुगुलु मरलि । नडुसेतुमीद नुन्नतितोड निलिचि

की आतत-भक्ति से (लोग) अर्चना करेंगे। सकल भूजन इस प्रकार पूजा करेंगे। अवनी में वह जाह्नवीजल लाकर, तुम्हारे लाए देव (शिव जी) को प्रीति से झट यहाँ अभिषेक करने पर, उस (व्यक्ति) के किए ब्रह्महत्या आदि अघ प्राप्त नहीं होंगे। शोभा से कीर्तियाँ प्राप्त होंगी। अतुलित पुत्र-पौत्र-अभिवृद्धि और अतुल भोग शोभा से प्राप्त होंगे।" ऐसा कहने पर हनुमान अति मुदित होकर, मन में आनन्द-मग्न हो फूल उठा ॥ ८४१० ॥

परमात्मा (राम) ने वहाँ उमापति की प्रतिष्ठा की, उरुभक्ति से उचित षोडशोपचार अधिक शोभा से पहलेपहल काशिकावास (शिव जी) की तरणिवंशज ने मनोज्ञता के शोभित होने पर पूजा करके बाद में अपने प्रतिष्ठित शिव की भावना का परमहर्ष से अर्चना की। रमणीयता से रघुराम पर अमरों ने पुष्पवृष्टि की जिससे अगचर उल्लसित हुए। तब विभीषण ने आनन्द के उमड़ने पर अधिपति से कहा—"हे जगदीश ! अब इस बाँध को मार्ग बनाकर कोई लंका में न आ सके, हे राम ! ऐसा करो।" ऐसा कहने पर हर्षित होकर नलिनाप्तकुलज ने उस विभीषण को देख कहा "ऐसा ही हो"।

श्रीराम का सेतुमहिमा बताना

विशिष्टता से वहाँ कुछ कदम पीछे लौटकर, मध्यसेतु पर उन्नति से खड़े होकर, पूर्व में उग्रता से कपियों के बनाए विपुल बंधन (जोड़) मानों

कपुलुग्रमुग मुनु गट्टिनयट्टि । विपुलबंधमुलेल्ल वीडनो यनग
दन सहोदरु चेति धनुवंदि पुच्चु । कौनि वेगमुन धनुष्कोटि गाविंचि
८४२०

"परदारागमनंबु ब्रह्महत्ययुनु । गुरुजनद्रोहंबु गोगणवधयु
सोदरीरतियुनु सुर ग्रोलुटयुनु । वेददूषणमुनु वित्तापहृतियु
सुंदरीच्छेदंबु जोरसंगममु । मंदिरदहनंबु मांसभक्षणमु
मोदलैन पातकंबुलु सेसियैन । गदिसि यिच्चट नवगाहंबु सेय
बुरुषमुख्युनकब्बु बुण्यसंघंबु; । नरुदार नायुवु नारोग्यमेपुडु
बरहिताचार सौभाग्यसंपदलु । जिरकीर्तुलुनु वेग चेकूरु" ननुचु
ना राघवेश्वरुंडपुडु पुष्पकमु । नारूढगतिनेक्कि यधिकमोदमुन
नमरुलु दीविप नगचरुल् वोगड । नमरंग नेप्पटियट्ल पुष्पकमु
घनवेगमुन जन गगनमार्गमुन । मनुकुलेश्वरुडंत महिपुत्रिकनियें;
"हिमकर-बिंबास्य ! यिदे विभीषणुडु । ममु गन्नचोटु सम्मदमुन वच्चि;
८४३०

इक्कड गुशतल्पमेनु गैकोंटि; । निक्कडनुंडिति नेकतंबुगनु;
पूनि ब्रह्मास्त्रमद्भुतशक्ति मेरसि । येनु वयोधिपै निक्कड दोडुग
नदुलतो नन्नदीनाथुंडु वच्चि । मुदमुतो ननु गांचि म्रोक्किन चोटु;

छूट जाएँ ऐसा, अपने सहोदर के हाथ से धनुष को ग्रहणकर, वेग से धुष्नकोटि का निर्माण किया (और कहा)— ॥ ८४२० ॥

—"परदारागमन, ब्रह्महत्या और गुरुजनद्रोह, गोगणवध और सहोदरी के साथ रति और सुरापान करना और वेद दूषण, अन्य वित्त का अपहरण, सुन्दरी (-हत्या), चोर-संगम, मन्दिर- (गृह) दहन, मांस-भक्षण आदि पातक करके भी, यहाँ आकर अवगाहन (स्नान) करने पर (उस) पुरुषमुख्य को पुण्यसंघ प्राप्त होंगे। विरल रूप से सदा आयु, आरोग्य, परहित-आचार, सौभाग्यसंपदाएँ, चिरकीर्तियाँ वेग से उपलब्ध होंगी।" ऐसा कहते हुए उस राघवेश्वर ने तब पुष्पक पर आरूढगति से चढ़कर, यथापूर्व रूप से पुष्पक के घनवेग से गगनमार्ग से जाने पर, मनुकुलेश्वर ने तब महीपुत्री से (यों) कहा—"हे हिमकर-बिंब (चन्द्र)-आस्ये (आनन वाली)! यही वह स्थान है जहां विभीषण ने सम्मोद से आकर हमें देखा था, ॥ ८४३० ॥

—यहाँ मैंने कुशतल्प ग्रहण किया था। यहाँ अकेले (लेटा) था। सयत्न अद्भुत शक्ति से दीप्त होकर ब्रह्मास्त्र का मैंने यहाँ पयोधि पर सन्धान

अलघुविक्रमशक्ति नम्मु संधिंचि । जलजास्य ! यिक्कड जंपिति वालि;

बुष्कल बहुफलाद्भुतकाननंबु । गिष्किंध गंटे सुग्रीवु पट्टणमु,"
अनि यनि तेल्पुचो नालोलनेत्र । जनकनंदन रामचंद्रुतो ननियें;
"जननाथ ! सुग्रीवु सतुलतो गूड । विनुडयोध्यकु बोव वेड्क वुट्टेंडिनि"
ननवुडु पुष्पकंबय्येड निलिपि । जनपति यनिचिन जतुरुडै यरिगि
ताराधिनाथुंडु ताराद्रिकीर्ति । तारापथंबुन दारादिसतुल
जेलुवोंद दोड्तेर सीतकु म्रोक्कि । येलमि बुष्पकमेक्किरपार वारु; ८४०

नैंतयु बदिलमै येपु दीपिंप । नंत नेप्पटि माडिक नरिगे बुष्पकमु;
नालोन रघुरामुडा ऋश्यमूक । शैलंबु डग्गरि ज्ञानकि जूचि
"हितवानरानीकमी ऋश्यमूक । मतिलोक; मीगिरिनर्थितो दोल्लि
यलवड मर्मबुलरसि लो मेरसि । चेलुव ! सुग्रीवुतो जेलिमि सेसितिनि ;
आसन्न रविकिरणासक्त कमल । भासुरोदरमु बंपा सरोवरमु
निदे चूचिते ! योप्पु नी पुण्यसरसि । मृदुलतीरंबुन मेलत निन् बासि
बहु दुःखमुल बोंद बवमानसुतुडु । महितपुण्यात्मुंडु ममु वच्चिकांचि

किया था (तो) नदियों के साथ नदी-नाथ ने आकर, मोद से मुझे देखकर प्रणाम किया था, यह वह स्थान है। अलघु विक्रमशक्ति से बाण का सन्धान कर हे जलजास्ये ! यहाँ वालि को मार डाला था। देखा है न किष्किंधा को, सुग्रीव के पट्टण को जो पुष्कल-बहुफलों से अद्भुत कानन वाला है।" ऐसा बताते समय आलोलनेत्र वाली जनकनन्दना ने रामचन्द्र से कहा—"हे जननाथ ! सुनिए, सुग्रीव को सतियों के साथ अयोध्या जाने का उत्साह उत्पन्न हुआ है।" ऐसा कहने पर पुष्पक को उस स्थान पर खड़ा करके, जनपति के भेजने पर चतुर हो जाकर, ताराधिनाथ (सुग्रीव) ताराद्रिकीर्ति से तारापथ (आकाशमार्ग) से तारा आदि सतियों के शोभित होने पर, साथ लाने पर, वे सीता को प्रणाम कर, प्रेम से पुष्पक पर शोभा से आरूढ हुई। ॥ ८४० ॥

—अधिक सुरक्षित हो औन्नत्य के दीप्त होने पर, तब यथापूर्व रूप से पुष्पक गया। इतने में रघुराम ने उस ऋष्यमूक शैल के निकट जाने पर, जानकी को देखकर (कहा)—"यह ऋष्यमूक हितवानरानीक (हितू-वानर-सेना से युक्त) (और) अतिलोक (अलौकिक) है। इस गिरि पर चाहकर पूर्व में शोभा से मर्मों को अंतरंग में जानकर हे सुन्दरी ! सुग्रीव से मैत्री की। देखा [illegible]न-रविकिरण-आसक्त कमल भासुरोदरवाले पंपा सरोवर

हृदयपद्ममुनकु निपु वुट्टिंचि । मदिराक्षि ! कान्पिचें मर्कटेश्वरुनि;
नोंदवुकाननमुलु नोंप्पुचुनुन्न । ददें शबर्याश्रम मब्जायताक्षि !
यलिगि यिक्कड महाहवकेळि ब्रालि । बलशालियैन कबंधु जंपितिनि;
८४५०

निनु जेंरगोंनिपोवु नीचु रावणुनि । गनुगोंनि पोनीक कडिमिमै दाकि
मिन्नकय्यसुरतो मेंरसि पोराडि । युन्नतायुवु जटायुवु गूलें निचट;
नदें या जनस्थानमब्जायताक्षि ! । पोंदलु वनंबुल बोंलुपोंदे जाल;
नदें शूर्पणख नुग्रुडै मुक्कु सेंवुलु । गुदियग सौमित्रि गोसिन तावु;
अदें चूडु खरदूषणादिराक्षसुलु । मदमेंत्ति चनुदेंचि मडिसिन चोटु;
नीयेंड नन्नोंगि नेंलयिचुचुंडे । मायामृगाकृति मारीचुडेचि;
मदिराक्षि! यिक्कड मडि वाडु मडिसें । निदें पंचवटि सूडुमिदें पर्णशाल;
पटुमाय निक्कड बंक्तिकंधरुडु । कुटिलुडै म्रुच्चिलि कोंनिपोयें निन्नु;
नदें सुतीक्ष्णाश्रममाश्रमरत्न; । मदें यगस्त्याश्रमंबब्जायताक्षि !
यदें शरभंगुनि याश्रममिति ! । यदें यत्रिमौनि पुण्याश्रमभूमि; ८४६०

को। शोभायमान इस पुण्यसरसी के मृदुलतीर पर हे नारी ! तुमसे बिछुड़कर बहुदुखों को प्राप्त किया था। (तब) महित पुण्यात्मा पवमान-सुत ने आकर हमें देख, हृदयपद्म में मनोज्ञता (आनन्द) उत्पन्न कर, हे मदिराक्षी ! यहाँ मर्कटेश्वर (सुग्रीव) से भेंट कराई। हे अब्ज-आयत-अक्षियोंवाली ! विलसित काननों से शोभायमान वही शबरी-आश्रम है। रुष्ट हो यहाँ महा-आहव-केलि में विराजित होकर, बलशाली कबंध को मार डाला ।। ८४५० ।।

तुम्हें बन्दी बनाकर ले जानेवाले नीच रावण को देख, (उसे) जाने न देकर, साहस से आक्रमण कर, चुप न रहकर, उस असुर से, दीप्त हो, लड़कर, उन्नत-आयुवाला जटायु यहीं मर गया। हे अब्जायताक्षी ! यह वह जनस्थान है जो विलसित वनों से मनोज्ञ बना था। यह वही स्थान है जहाँ सौमित्र ने उग्रता से शूर्पणखा के नाक-कान काट दिए थे। वह देखो, खरदूषणादियों के मस्त बन आकर मरने का स्थान। इसी स्थान पर मुझे क्रम से मायामृगाकृति से मारीच विजृंभित हो सताता रहा। हे मदिराक्षी ! यहाँ फिर वह मर गया। यही है पंचवटी, यही है देखो पर्णशाला। पटु माया से यहाँ पंक्तिकंधर ने, कुटिल बन, धोखा दे तुम्हें ले गया। वह सुतीक्ष्णाश्रम है जो आश्रमरत्न है। हे अब्जायताक्षी! वही अगस्त्याश्रम है। हे नारी ! यही शरभंग का आश्रम है। यही अत्रिमौनी का पुण्याश्रम भूमि है ।। ८४६० ।।

यदे नीकु ननसूय यंगरागमुलु । हृदयरागमुतोड निच्चिन चोटु;
अदे चित्रकूटाद्रि; यक्कड नन्नु । बदिलुडै भरतुंडु प्रार्थिंचि चनियें;
बिमलकाननमुल विलसिल्लुचुन्न । यमुन यल्लदे कंटे यनतिदूरमुन;
मुदमोप्प बहुदिव्यमुनुलु सेविंप । नदे चूचिते गंग यमलतरंग;
योदविन कौलकुल नुद्यानततुल । नदे श्रृंगिबेरमोप्पारुचुन्नदियु;
नदे गुहुंडेतेंचि यर्थितो मनल । गदिसि कांचिनयट्टि कमनीयभूमि;
नदे सरयूनदि यधिकयूपमुल । बोंदिगोन्न तटमुल बोदलुचुन्नदियु;
नदे ययोध्यापुरमब्जाक्षि ! म्रोक्कु; । मदे कान्तवच्चे नायतपुण्यराशि"
यनि भूमिजकु रामुडर्थितो जूप । घनमैन वेड्कल गपुलु राक्षसुलु
बहुरत्नकांचन प्रासादततुल । बहुतोरणंबुल बहुपताकलनु ८४७०

बहुवारणंबुल बहुतुरंगमुल । बहुरथोत्करमुल भटकदंबमुल
नमितवैभवमुल नतुलमै योप्पि । यमरावतियु बोलेनमरु नप्पुरमु
निनिच्चिन वेड्कल नेंड्रि निक्कि निक्कि । कनुगोन दोडगिरि कडकतो;
नंत

—यही वह स्थान है जहाँ तुमको अनसूया ने अंगरागों को हृदयराग के साथ दिया था। वही चित्रकूटाद्रि है। वहाँ सावधान हो, मेरी प्रार्थना कर भरत चला गया था। वही थोड़ी दूर पर देखा है न विमल काननों से विलसित यमुना को। वही देखा न अमलतरंगवाली गंगा को, जिसकी मुदित हो बहुदिव्य मुनि सेवा कर रहे हैं। वही विवर्द्धित सरसियों तथा उद्यानततियों से श्रृंगिबेरपुर शोभित हो रहा है। वही कमनीयभूमि है जहाँ गुह (केवट) ने आकर इच्छा से हमारे निकट आकर, (हमारे) दर्शन किए हैं। वही सरयूनदी है जो अधिकयूपोंवाले तटों से विलसित हो रही है। हे अब्जाक्षी ! वही अयोध्यापुर है। वही आयतपुण्यराशि (अयोध्या) दिखाई पड़ रही है, प्रणाम करो।" ऐसा भूमिजा को राम ने चाहकर दिखाने पर, अधिक उत्साह से कपि, राक्षस बहुरत्न-कांचन (निर्मित) प्रासादततियों, बहुतोरणों, बहुपताकाओं को, ॥ ८४७० ॥

—बहुवारणों, बहुतुरंगों, बहुरथोत्करों, भट-कदंबों (समूहों) (के साथ) अमित वैभवों से अतुल (अतुलनीय) हो, शोभित होकर, अमरावती के समान विराजमान उस पुर को विजृंभित उत्साहों से क्रम से उचक-उचक कर, सप्रयत्न देखने लगे। तब,

भरद्वाजुनि आतिथ्यमु

बदुनालुगेंड्लुनु बरिपुर्णमैन । वदलकप्डु शुभकृद्वत्सरमंदु
मदिलोन नुप्पोंगि माघमासमुन । बदपडि या शुद्ध पंचमिनाडु
अश्रांतशुभतेजुडगु भरद्वाजु । नाश्रमोपरिवीथि ना विमानंबु
धीयुक्ति रामुंडु दिवि निलिपि डिगि । मायाश्रमंबुनकथि नेतेंचि,
यम्मुनिपादंबुलंदु मोदंबु । ग्रम्म फालस्थलि गदिर्यिचि म्रोक्कि
मुनिचेत दीवनल् मुदमोप्प बडसि । विनयरसावेशविवशुडे पलिके;
"नेनु मीदगु सेममेमियु नरय । गान; गानकु बोयि कालंबु दडसे; ८४८०

गलवु कदा मीकु गंदमूलमुलु । फलमुलु जलमु; लपायंबुलेक
येल्ल तेरंगुल नेप्पुडु चेंडक । चेल्लुगदा मीकु शिष्टकृत्यमुलु ?"
अनवुडु मुनिनाथुडारामचंद्रु । विनयवाक्यंबुलु विनि संतसिलि
"निखिललोकाराध्य ! नीवु जन्मिंचि । निखिललोकंबुलु निष्ठ बालिंप
गलवे संकटमुलु, गलवे दुःखमुलु, । गलवे बाधलु पुण्यकर्मुलकेंदु ?
नित्यसत्योन्नत ! नी प्रसादमुन । नत्यंतसुखुलमै यखिलधर्ममुलु

भरद्वाज का आतिथ्य

चौदह वर्षों के परिपूर्ण होने पर, न छोड़कर (लगकर) तब शुभकृत वत्सर में, मन में फूलकर माघमास में, तदनन्तर उस शुद्ध पंचमी के दिन, अश्रांत-शुभतेजवाले भरद्वाज के आश्रम के उपरि-वीथि पर उस विमान को धीयुक्ति से राम ने दिवि (आकाश) पर रोककर, उतरकर, उस आश्रम में इच्छा से आकर, उस मुनि के पादों (चरणों) में, मोद के व्याप्त होने पर, फ़ालस्थल को रखकर, प्रणाम किया, मुनि द्वारा आसीसों को मोद की शोभा से प्राप्तकर, विनयरस के आवेश से विवश हो बोला— "मैं आपके क्षेम (कुशल) के बारे में कुछ ध्यान न दे सका। काननों में जाकर बहुत विलम्ब हो गया ।। ८४८० ।।

—आपके लिए कन्दमूल, फल और जल (पर्याप्त) है न ? आपके शिष्टकृत्य किसी अपाय (खतरे) के बिना, सब तरह से, सर्वदा, भ्रष्ट हुए बिना, संपन्न हो रहे हैं न !" ऐसा कहने पर मुनिनाथ ने उस रामचन्द्र के विनयवाक्यों को सुनकर प्रमुदित होकर, (कहा)— "हे निखिल लोकाराध्य! तुम्हारे जन्म लेकर, निखिल लोकों को निष्ठा से पालन करने पर, संकट (विपत्तियाँ) हो सकते हैं ? दुख हो सकते हैं ? पुण्यकर्मवालों को बाधाएँ (कष्ट) हो सकती हैं ? हे नित्यसत्योन्नतिवाले ! तुम्हारे प्रासाद से

सलुपुचु वेदोक्तसमुचित क्रियलु । सलुपुचु दपमुलु सलुपुचुंड्डुमु;
नीविदु विच्चेसि नैम्मि ने बनुप । गा वीडुकौनिपोयि क्रम्मर निदु
विच्चेयु नीलोनि वृत्तांतमेल्ल । नच्चुगा बौडगंटि नध्यात्मदृष्टि;
नरय नीचेसिन यद्भुतक्रियल । नरिदि यनुष्ठिप नादिव्युलकुनु; ८४९०
नीवरण्यमुलकु निष्ठ दीपिप । बोवुट मोदलुगा भोगंबुलुडिगि
घनजटाभार वल्कलमुलु दाल्चि । पनिवडि भरतुंडु भक्ति वाटिंचि
नी पादुकलयंदु निखिलराज्यंबु । रूपिंचि निलिपे नारूढमानसुडु;
चेंप्प नक्कजमैन चित्तानुरक्ति । नेंप्पुडु नी राककेंदुरु वीक्षिचु;
नीवु नी तम्मुनि नेय्यंबु दलचि । वेवेग पोयि भाविपगावलयु;
वनवासमुन डस्सि वच्चिनवाड । वनघ ! मा याश्रमंबंदु नेडुंडि
भूपाल ! नीवेंल्लि प्रौद्दुन गदलि । मापंपु गैकोनि मरि पोम्मु; विदु
गावितु" ननि चेंप्पि घनतपोमहिम । नावेळ रामुडत्याश्चर्यमंद
ना महामुनिवरुंडात्मलोपलनु । गामधेनुवु गुतुकमुतोड दलप
मिलमिल मेंदलेंडि मृदुतरान्नमुनु । फलमुलु घृतमु सूपमुलपूपमुलु
८५००

(हम) अत्यन्त सुखी बन, अखिल धर्मो का आचरण करते हुए, वेदोक्त समुचित क्रियाएँ करते हुए, तप करते रहते हैं। तुम यहाँ पधार कर, प्रेम से मेरे भेजने पर, बिदा लेकर, जाकर पुनः यहाँ पधारने के मध्य (काल) के समस्त वृतान्त को अध्यात्म -(दिव्य) दृष्टि से ठीक ढंग से देख लिया है, सोचने पर तुमने जो अद्भुत-क्रियाएँ (-कार्य) की हैं, वे उन दिव्यों के लिए भी करने में असाध्य हैं ॥ ८४९० ॥

—तुम्हारे, निष्ठा के दीप्त होने पर, अरण्यों को जाने से लेकर, भोगों को छोड़कर, घन-जटा-भार-वल्कल धारणकर, लगकर भरत ने भक्ति मानकर, तुम्हारी पादुकाओं में निखिल राज्य को रूपित कर, आरूढ मानसवाले ने (मन को) स्थिर किया। कहने में अद्भुत चित्तानुरक्ति से सदा तुम्हारे आगमन की प्रतीक्षा करता रहता है। तुम्हें अपने अनुज के स्नेह की सोचकर, अतिशीघ्र जाकर (उसका) सम्मान करना चाहिए। हे अनघ! वनवास से थककर आए हो। हमारे आश्रम में आज रहकर हे भूपाल! तुम परसों प्रातः निकलकर, हमारा आदेश लेकर फिर निकल जाओ। भोज (की व्यवस्था) करूँगा।" ऐसा कह घनतपोमहिमा से उस समय राम अत्याश्चर्य (चकित) हो जाएँ, ऐसा उस महामुनिवर ने आत्मा (मन) में कामधेनु का कौतुक से स्मरण किया (तो) टिमटिमाते चमकनेवाला मृदुतर-अन्न, फल, घृत, सूप, अपूप, ॥ ८५०० ॥

सौरिदि गुंडमुनंदु सौद बेर्चि मिगुल। दरिकौल्प ननलमुदग्रमै मंड
नरलेनि भक्तितो ना गुहुंडपुडु। धरणीशुडगु रामु दलपुलो निलिपि
यय्यग्निलो जौर नरुगुदेरंग। नय्येड हनुमंतुडड्डमै निलिचि
"युड्डुगक तन व्रतंबौनर जैल्लिचि। पुडमिरेडिदे वच्चु, बौंकुगादेल्लि; ८५३०

पदपडिनग्निलो बडिन श्रीरामु। पदमुलया' नंचु वलिकिन नात
डनिलजुनकु म्रोक्कि या रामुराक। कनुचर - सहितुडै हर्षबु नौंदे;
बरग नग्गुहुडु संभाविप नरिगि। युरुपुण्यनिधि सरयूनदि दाटि
पोव नंदिग्राममुन भरतुंडु। पावनचरितुंडु भावंबुलोन
"ना रामलक्ष्मणु लवनिनंदनयु। नेरीतिनुन्नारौ ? येमैनवारौ ?
येन्निन पदुनालुगेंड्लुनुनय्ये; । ग्रन्नन रामुडिक्कडिकि राडेमौ ?
मोसपोयिति; नाडे मुनिवृत्ति रामु। भासुरकोमलपादपद्ममुलु
ना सुमित्रापुत्रुडर्थितो गौलिचि। यासमीऽग दोन यरिगिनरीति
नरुगलेनैति ! ने नारामुबासि। धरणि ने विधमुन दनुवु धरिंतु ?
'बदुनालुगेंड्लुनु बरिपूर्णमैन। सदयुडै रघुपति सनुदेकयुन्न ८५४०

(गर्त) में चिता सजाकर, (उसे) अधिक प्रज्ज्वलित कर, अनल के उदग्र हो बलने पर, निष्कलंक भक्ति से उस गुह ने तब धरणीश राम को मन में स्थित कर, उस अग्नि में प्रवेश करने आने पर, उस अवसर पर हनुमान बीच में आ खड़े हुए (और कहा)— "न छोड़कर अपना व्रत शोभा से पूरा करके पृथ्वीपति अभी आ रहा है। यह झूठ नहीं है ॥ ८५३० ॥
—इसके बाद भी अग्नि में प्रवेश करोगे तो श्रीराम के चरणों की क़सम।" ऐसा बोलने पर उसने अनिलज को प्रणाम किया, उस राम के आगमन पर, अनुचरसहित हर्षित हुआ। शोभा से उस गुह के संभावित करने पर जाकर, उरु-पुण्यनिधि (हनुमान) सरयू नदी पारकर गया। (उस समय) नन्दिग्राम में पावन चरित वाला भरत भाव (मन में) (सोच रहा था कि)—"पता नहीं, वे राम-लक्ष्मण और अवनिनन्दना किस रीति से है ? (उनका) क्या हो गया होगा ? गिनती करें तो चौदह वर्ष पूरे हो गए। झट से राम यहां क्यों नहीं आता ? धोखा खा गया। उसी दिन मुनिवृत्ति से राम के भासुर कोमल-पाद-पद्मों की इच्छा से सेवा करते, बड़ी आशा के साथ, (राम के) साथ जिस तरह वह सुमित्रा-पुत्र गया था, (उस तरह) जा न सका। मैं राम से बिछुड़कर धरणी पर किस प्रकार शरीर को धारण करूँगा ? 'चौदह वर्ष परिपूर्ण होने के बाद सदय होकर रघुपति न आवें तो ॥ ८५४० ॥

घनमैन सौंद बेर्चि कडकतो जौत्तु'। ननि निश्चयंबुगा नाडिन प्रतिन
हितमति रित्तवोनित्तुने" यनुचु। मतिनिश्चयमुसेसि मंत्रुलकनियें;
"शात्रव मदहारि शौर्यसंपन्नु। बात्रु शत्रुघ्नुनि बट्टंबुगट्टु;
डेनग्निलो जौच्चि येगेंद रामु। गानंग" ननिन नाघनु जूचि यपुडु
शत्रुघ्नुडिट्लनु; "जगतीतलेश!। धात्रि नाकेल? यी तनुवु नाकेल?
नी पादमुलु गौल्चि नीतोड गूडि। येपारगा नेनु नेगुदेंचेंदनु"
अनि कृत निश्चयुलैन वारलनु। गनुगौनि भीतुलै कलगिरंदरुनु;

हनुम भरतुनकु राघवुलसेममेरिंगिंचुट

ना समयंबुन नधिकवेगमुन। ना समीरात्मजुंडरुदेंचि भरतु
गनुगौनि विनतुडै करमुलु मोगिंचि। कौनि निल्व गाकुत्स्थकुलुडिट्टु-
लनियें;
"नीकुलंबेय्यदि ? नीकु बेरेमि ?। चेकौनि यिटकु वच्चिनपनियेमि ?
८५५०
येव्वंड? वेंदुंडि येंट केगेंद" निन। नव्वसुधेशुतो ननिलजुंडनियें;
"गपि नेनु, रघुरामु गादिलिबंट;। दपनकुलांभोजतपनुडुन्नतुडु

—बड़ी चिता जलाकर सप्रयत्न (उसमें) प्रवेश करूँगा' ऐसा निश्चित रूप से कही प्रतिज्ञा को हितमति से खाली जाने दूंगा ?" (ऐसा) कहते हुए मति से निश्चय कर मन्त्रियों से बोला—"शत्रुओं के मद का हरण करने वाला, शौर्यसम्पन्न, पात्र (योग्य) शत्रुघ्न का राजतिलक करो। मैं अग्नि में प्रवेश कर राम को देखने जाऊँगा।" (ऐसा) कहने पर उस महान् (व्यक्ति) को देखकर तब शत्रुघ्न यों बोला—"हे जगतीतलेश! (यह) धात्री मुझे क्यों ? यह शरीर मुझे क्यों ? तुम्हारे चरणों की सेवाकर, तुम्हारे साथ मिलकर शोभा से मैं भी आ जाऊँगा।" ऐसा कृतनिश्चय बने उन्हें देख सभी भीत हो व्याकुल हुए।

हनुमान का भरत को राघवों का कुशल बताना

—उस समय अधिक वेग से उस समीरात्मज के आकर भरत को देखकर, विनत हो, हाथ जोड़कर, खड़े रह जाने पर काकुत्स्थकुलवाले (भरत) ने यों कहा—"तुम्हारा कुल क्या है ? तुम्हारा नाम क्या है ? चाहकर यहाँ आने का क्या काम है ? ॥ ८५५० ॥

—कौन हो ? कहाँ से कहाँ जाओगे ?" (ऐसा) कहने पर उस वसुधेश से अनिलज ने कहा—"मैं कपि हूँ। रघुराम का लाडला सेवक हूँ। तपनकुल

तन पुण्यचरितमुत्तमुलॆल्लमॆच्च । वनवाससमयंबु वलनॊप्प दीर्चि
सौमित्रियुनु दानु जनकनंदनयु । रामुंडु वच्चि यरण्यमुल विडिचि
नॆम्मितो मुंदर नी सेममरसि । रम्मन्न वच्चिन राक यी राक ।"
यनवुडु भरतुडत्यंतहर्षमुन । गौनकौनि पुलर्किचि कोर्कि दीपिंप
"रा पुण्यवत्सल ! रा कपिश्रेष्ठ ! । रा पवनात्मज ! र" म्मंचु दिगिचि
नरनाथसुतुडु वानरनाथसुतुनि । गरमु सम्मदमुन गौगिट जेर्चि
गजमाल्यमणुलिच्चि गजमुलनिच्चि । गजराजगमनल गरमर्थिनिच्चि
कनकांबरंबुल गड्डु वेड्क निच्चि । विनुतभूषणमुलु वॆलयंग निच्चि
तगु पट्टणमुलिच्चि धनकोट्लिच्चि । यगणितगुणधीरुडनियॆ मारुतिकि; ८५६०

"नडवुलकरिगि रामावनीविभुडु । दडसिनकालंबु दलपनच्चॆरुवु !
ऎंदॆंदु वर्तिचॆ ? नॆंदॆंदु बोयॆ ? । नॆंदुन्नवाडिप्पुडिनकुलेश्वरुडु ?
नीवु राघवुनकु निजदूतवगुट । नीविधंबंतयु नॆरिगिंपुमनघ !
यिच्चलोपल नम्म नीपलुकेनु; । वच्चुट् निक्कमा वनचराधीश!"

(सूर्यवंश) (रूपी) अंभोज के लिए तपन (सूर्य) (राम) (और) उन्नत (मनवाले) ने अपने पुण्य चरित्र को सभी उत्तमजन सराहें, (ऐसा) वनवास समय को शोभा से पूर्णकर, सौमित्रि, जनक-नन्दना के साथ स्वयं राम ने आकर जंगलों में पड़ाव डालकर प्रेम से कहा प्रथमतः तुम्हारा (भरत का) कुशल जानकर आओ। कहने पर, यह मेरा आगमन है।" ऐसा कहने पर भरत ने अत्यन्त हर्ष से, सयत्न पुलकित होकर इच्छा के प्रदीप्त होने पर कहा—"आओ हे पुण्यवत्सल! आओ कपि श्रेष्ठ! आओ पवनात्मज! आओ" कहते हुए, निकट लेकर, नरनाथसुत ने वानरनाथसुत को अधिक सम्मोद से आलिंगित कर, गजमाल्यमणियाँ देकर, गजों को देकर, गजराज-गमनाओं को प्रेम से देकर, अधिक उत्साह से कनकांबर (स्वर्ण वस्त्र) देकर, विनुत भूषणों को शोभा से देकर, ॥ ८५६० ॥
—उचित पट्टण (नगर) देकर, धन-कोटियाँ देकर, अगणित गुणधीर (भरत) ने मारुति से कहा—"जंगलों में जाकर राम-अवनीविभु ने जो विलम्ब किया, वह सोचने में आश्चर्यप्रद है। कहाँ-कहाँ विचरण किया ? कहाँ कहाँ गया ? अब इनकुलेश्वर कहाँ है ? हे अनघ ! तुम राघव के निजदूत होने से यह सारा विधान बताओ। मन में मैं तुम्हारी बात पर विश्वास नहीं करता। हे वनचराधीश ! क्या राम का आना सत्य है ?" ऐसा कहने पर सुनकर, हँसकर, उस विमलात्मा (वाले) (हनुमान) ने श्रेष्ठ

यनवुडु विनि, नव्वि यव्विमलात्मु । डैनसिन भक्तितो नेपॅंड बलिकॅ;
"मी तंड्रि दशरथमेदिनीश्वरुडु । भूतल राज्यप्रभुत्वंबु मान्पि
यडविकि जनुमन्न नन्नरेश्वरुडु । जडलु वल्कलमुलु शांतुडै ताल्चि
भानुप्रभाभासि पादचारमुन । जानकी लक्ष्मण सहितुडै वेंडलि
चित्तसम्मदमुन जित्रकूटाद्रि । नुत्तममुनि गोष्टि नुन्नचो नीवु ८५७०
भूराज्यमोल्लक पोयि मी यन्न । नाराधनमु सेसि यर्थि बिल्चुटयु
बति राकयुन्न दत्पादुकायुगळ । मतिभक्ति युक्तिमै ननुरक्ति नडिगि
तलमोचिकोनि वच्चि धारुणीराज्य । फलभोगमुडिगि तपस्विवैतिचट!
गुटिल दानव बल क्रूर दुर्गमुन । कट राघवुडु दंडकारण्यमुनकु
जनि शरभंगुनाश्रम भूमि निलिचि । मुनुलु नूरड बल्कि मुदमोप्प
बोयि
या जनस्थानंबुनंदुन्न दैत्य । राजु चेल्लेलि बट्टि राजसंबोप्प
नलिमीर ना शूर्पणख मुक्कुसेवुलु । गोलदिकि मोदलंट गोसिपोवैचि,
खरदूषणादि राक्षसुल बेक्कंड्र । नरभोजनुल बदुनाल्गुवेवुरनु
जंपि यक्कड बर्णशाललोनुंड । दैंपुमै राक्षसाधिपुडु प्रेरेप
मारीचुडनियेडि मायावि योकडु । भूरिमृगाकृति बोंडसूपुटयुनु
८५८०

भक्ति के प्रकट होने पर कहा—"आपके पिता दशरथ-मेदिनीश्वर के भूतल के राज्यप्रभुत्व से मनाकर जंगल जाने के लिए कहने पर, वह नरेश्वर (राजा-राम) जटाओं, वल्कलों को शांत हो धारण कर, भानु-प्रभाभासी (राम) पैदल ही जानकी और लक्ष्मण सहित हो निकलकर, चित्त के सम्मोद से चित्रकूटादि में उत्तम मुनिगोष्ठि में रहा। रहने पर तुम ॥ ८५७० ॥
—भूराज्य को न चाहकर, जाकर अपने अग्रज की आराधना कर, प्रेम से बुलाने पर, पति (राम) के न आने पर, तत्-पादुकायुगल को अति-भक्ति-युक्ति से अनुरक्ति से माँगकर, सिर पर धारणकर आकर. धारुणीराज्य-

मृगनेत्र सीत या मृगमु वीक्षिंचि। "मृगमॊप्पु; नाकु नी मृगमु-
देवलयु"
ननवुडु शरचापहस्तुडै दानि। वॆनुकॊनि रामभूविभुडॊगिनेय
गूलॆडुनप्पुडाकुटिलराक्षसुडु । "हा लक्ष्मणा!" यनु नार्त रावमुन
नारूढि जीरिन नतिव भीतिल्लि। या राघवानुजु ननुप नच्चटकु
मुनिवेषधारियै मुद्दिय नॆत्ति। कॊनिपोवु रावणु गूडि पोनीक
घनुडु जटायुवु गनि यड्डपडिन। ननिमोन भंजिंचि यतनि निर्जिंचि
दनुजाधिपति समुद्रमु दाटिपोयि। तन लंकलोनि युद्यानंबुनंदु
सीता महादेवि जॆच्चॆर नुनिचि। याततजयशालियै युंडॆ; नंत
मायामृगमु जंपि मरि रामचंद्रु। डायासपडि खिन्नुडै वच्चिवच्चि
सौमित्रि बॊडगॊनि "जानकि डिंचि। येमिटिकिट वच्चितो" वंचु
वगचि ८५९०

यतडु दानुनु गूडि या पर्णशाल। कतिभयंबुन वच्चि यंदुलो सीत
बॊडगानकिरुवुरु भूरिशोकमुन। बडि यॆति वॆदकुचु बहुदुर्गमुलनु
बोवुचो रावणु भुजशक्ति दूलि। वाविरि लो दारि वसुधपै गूलि
युन्न जटायुवु नॊय्यन गदिसि। यन्नीचदुर्दश नद्दशाननुडु

—(दिखाई पड़ने पर) मृगनेत्रवाली सीता ने उस मृग को देखकर (कहा)—"यह मृग शोभायमान है। मेरे लिए इस मृग को लाना चाहिए।" ऐसा कहने पर शरचाप-हस्तवाला हो, उसके पीछे पड़, रामविभु के क्रम से (बाण) डालने पर, गिरते समय उस कुटिल राक्षस ने "हा लक्ष्मणा!" कहते आर्तराव से आरूढि से बुलाने पर, नारी (सीता) ने भीत होकर, उस राघवानुज को भेजा। वहाँ पर (पर्णशाला में) मुनिवेषधारी बन, मुग्धा (सीता) को उठा ले जानेवाले रावण को जाने न देकर महान् जटायु ने उसे रोका। (रोकने पर), युद्ध में पीड़ित कर, उसे जीतकर, दनुजाधिपति समुद्र को पारकर जाकर, अपनी लंका के उद्यान में सीता महादेवी को झट रख, आतत जयशाली हो रहा। तब मायामृग को मारकर फिर रामचन्द्र थककर, खिन्न हो आकर, सौमित्र को देखकर, "जानकी को छोड़ तुम यहाँ क्यों आए हो ?" कहते दुखी होकर ॥ ८५९० ॥

—उसके साथ स्वयं, उस पर्णशाला में अति शीघ्र आकर, उसमें सीता को न पाकर, दोनों भूरिशोक में डूबकर, नारी को खोजते हुए, वहुदुर्गों (वनों) में से जाते समय, रावण की भुजशक्ति के कारण डगमगाकर, क्रम से हारकर, वसुधा पर गिर पड़े हुए जटायु के पास झट पहुँचकर, उस दशानन के (उसकी) वह नीच दुर्दशा कर, सीता को लंका ले जाने की बात उससे

गाविंचि सीत लंककु नेत्तिकोनुचु । बोवुट यतनिचे बोलंग नेरिगि
या विहंगाधीशु नचट दहिंचि । पोवुचु वनदुर्गभूमुलु गडचि
मुंदट ना ऋश्यमूकंबुगांचि । यंदु सुग्रीवुनकै वालि जंपि
तारतो नाचंद्रताराकंमुगनु । ना राज्यमंतयु नातनिकिच्चें;
निच्चिन सुग्रीवुडेंतयु मेच्चि । विच्चलविडि सीत वेदकंडिकोरकु
लक्षल रेंडेसि लक्षल गपुल । नक्षीण बलुल महायशोधनुल ८६००

बदिदिक्कुलकु बंप बड्चि वानरुलु । वदलक वेदकंग वच्चि संपाति
"सीतयुन्नदि लंक; र्जितिपवलव; । दीतेरंगिट्टुसेयुडिटमीद" ननिन
जलराशि नूरु योजनमुलेदाटि । नलिगि यशोकवनंबुलोनुन्न
वैदेहिगनि यानवालु नेनिच्चि । या देवि माणिक्यमर्थि निच्चुटयु
नदि देच्चि यिच्चिन नवनिवल्लभुडु । मुदमंदि विस्मयंबुनु बोंदि यपुडु
सकल शाखामृगसहितुडै पोयि । यकलंकविक्रमुंडब्धि बंधिन्चि
लंकपैविडिसि यलंकृतशक्ति । लंकेशु जंपि कळंकंबुलुडिपि
यव्यय श्रीयुक्ति ना लंक बुण्य । भव्यु विभीषणु बट्टंबु गट्टि,
पावनात्मकुलैन ब्रह्मादिसुरल । चे वरंबुलु गोनि चेलुवग्गलिच्चि

स्पष्ट रूप से जानकर, उस विहंगाधीश का वहाँ दहन (-संस्कार) किया, (करने के बाद) जाते हुए वन-दुर्गभूमियों को पारकर, पहले उस ऋश्यमूक को देखकर, उसमें सुग्रीव के लिए वालि का वधकर, तारा के साथ वह समस्त राज्य आचंद्र-तारार्क (जब तक चन्द्र, तारा और अर्क रहें तब तक-सदा के लिए) उसे देदिया । देने पर सुग्रीव अधिक प्रसन्न होकर, मनमाने ढंग से सीता को खोजने के लिए, लाखों, दो लाखों कपियों को जो अक्षीण बलवाले थे, महायशोधन थे, ।। ८६०० ।।

—दसदिशाओं में भेजा । (भेजने पर) जाकर वानर, न छोड़कर खोजने पर (चप्पा-चप्पा छान मारने पर), आकर संपाति के 'सीता लंका में है, चिन्ता मत करो, अब आगे इस तरह करो' कहने पर सौ योजन जलराशि को शीघ्र पार कर, कृश बन अशोकवन में स्थित वैदेही को देखकर, मेरे चिह्न (अभिज्ञान) को देने पर, उस देवी के चाहकर माणिक्य देने पर, उसे ला देने पर अवनि-वल्लभ (राजा-राम) मुदित हो, विस्मय को भी प्राप्तकर, तब सकल-शाखामृग सहित हो आए, अकलंक-विक्रमवाले (राम) ने अब्धि को बाँधकर, लंका पर आक्रमण किया, अलंकृत शक्ति से लंकेश का वध कर, कलंकों को दूरकर, अव्यय-श्रीयुक्ति से उस लंका पर पुण्य-भव्य विभीषण का पट्टाभिषेक किया, पावनात्मक ब्रह्मा आदि सुरों से वर

हितमति सुरलतो नेगुदेंचुटयु । नतिभक्ति मी तंड्रि यड्गुल
कॆरगि ८६१०

यनलमुखंबुन नतिशुद्धयैन । जनकज गैकोनि सम्मदंबॊप्प
ख्याति पॆंपोंद ना कपुलु राक्षसुलु । ब्रीति सुग्रीव विभीषणांगदुलु
बलसि तन् गॊलुव बुष्पकमॆक्कि वच्चि । फलितविक्रमयशोभरितुडै
विभुडु
आ भरद्वाज संयमि याश्रमसुन । ब्राभव स्फुरण मॊप्पग नुन्नवाडु
चंदन चंद्रिका सम चारुकीर्ति; । यिदॆल्लभंगुल नेलि विच्चेयु"
ननवुडु भरतेशुडतनि वाक्यमुल । जनितानुरागुडै शत्रुघ्नु जूचि
"तडयक नीवयोध्यापुरंबुनकु । गडुवेगमुन बोयि कडक दीपिंप
नायत मंगळायतनमै यॊप्पु । नी युत्सवमु वीट नॆल्ल जाटिंपु;
गॊनकोनि मन रामु कॊलुवुकूटमुन । घनसेतुबंधादि कथलु व्रायिंपु;
देवगेहमुलु भूदेवगेहमुलु । नीवु सन्निधिनुंडि नॆरय वाटिंपुडु ८६२०

वर रत्न तोरणध्वज परंपरलु । पुरवीथुलंदॆल्ल भूषिंप बंपु;
तरुणुल बिलिपिंचि तगिन मुत्तॆमुल । वॆरवार म्रुग्गुलु वॆट्टिंप बंपु;

प्राप्त कर, शोभा से विवर्द्धित होकर, हितमति से सुरों के साथ आने पर, अति भक्ति से आपके पिता के चरणों में अवनत हो, ।। ८६१० ।।

—अनलमुख में अतिशुद्ध बनी जनकजा को स्वीकार कर, सम्मोद के शोभित होने पर, ख्याति के बढ़ने पर, प्रीति से नाकप (देवता), राक्षस, सुग्रीव, विभीषण, अंगद आदि के घेरकर अपनी सेवाएं करते रहने पर, पुष्पक पर आरूढ़ हो आकर, फलित (सफल बने)-विक्रम तथा यश से संभरित हो हो विभु (राम) उस भरद्वाज-संयमी के आश्रम में प्राभव-स्फुरण की शोभा से चंदन-चन्द्रिका-सम चारुकीर्ति युक्त हो स्थित है। परसों हर प्रकार से यहाँ पधारेगा।" ऐसा कहने पर भरतेश ने उसके वाक्यों से अनुराग के उत्पन्न होने पर शत्रुघ्न को देखकर (कहा)—"अविलम्ब तुम अयोध्यापुर को अतिशीघ्र जाकर, साहस के दीप्त होने पर, आयत-मंगलायतन हो शोभित इस उत्सव की समस्त नगर में घोषणा कर दो। सप्रयत्न हमारे राम के सभामन्दिर में सेतुबंधन आदि कथाएं लिखवा दो। देवगेहों, भूदेवगेहों को तुम सन्निधि (निकट) में रहकर अलंकृत करो ।। ८६२० ।।

—समस्त पुरवीथियों को वर-रत्न-तोरण-ध्वज-परम्पराओं से विभूषित करने भेजो। तरुणियों को बुलाकर उचित मोतियों से उचित विधि से

ललित वस्तुवुल निंड्लकु नेंल्लबंपु । कलय बौरुल नेंल्ल गैसेंय बंपु;
श्रीरामविभुडु वेंचेसिन शुभमु । चेरुव नृपुलकु जेंप्पंग बंपु;
करितुरगादुल क्रंदु गानीक । परुवडि जतुरंग बलमुलु गौलुव,
नेंम्मि मंत्रुलतोड नीवु वेगमुग । नम्मल गौलिचि र" म्मनि पनुचुटयु
ननघुडु शत्रुघ्नुडत्यंतवेग । मुन नयोध्यकु बोयि मुदमु दीपिंप
गरमौप्प राघवागमन मंगळमु । वरुसतो निज बंधुवरुलकु जेंप्पि
कौसल्यतो जैंप्पि कैकतो जेंप्पि । या सुमित्रादेवि कथितो जेंप्पि
भरतुंडु दनुबिल्चि पनिचिन भंगि । बुरमु सर्वबुनु भूषिपजेसि ८६३०
'यदि यिदिलेदु का' दनकुंड निंडु । चदुरौप्प नगरुलु चक्क जेयिंचि
चंदनकर्पूर जलमुलु गूर्चि । यंदंद मुंगिळ्ळ नर्थि जल्लिंचि
पुरवीथुलंदु नौप्पुग नवरत्न । वरतोरणंबुलु वरुस गट्टिंचि

भरतुडु वसिष्टादुलतो श्रीरामु नेंदुरुकोंनुट

यनघमानसुलैन या वसिष्टादि । मुनुलु बुरोहितुल् मुनिपुण्यसतुलु
जननुलु बंधुलु सचिवुलु हितुलु । वनितलु वौरुलु वरवृद्ध - जनुलु

रंगोलियाँ सजाने भेजो। समस्त गृहों में ललित वस्तुओं को भेजो। शोभा से समस्त पुरजनों को अलंकृत होने के लिए भेज दो। श्रीराम विभु के पधारने के शुभ (समाचार) को निकटस्थ नृपों को जताने (दूतों को) भेजो। करि तुरगादियों को विकल न बना, झट चतुरंग-बलों (सेनाओं) के सेवाएँ करने पर, प्रेम से मंत्रियों के साथ तुम वेग से माताओं के दर्शन कर आओ।" ऐसा भेजने पर अनघ शत्रुघ्न अत्यन्त वेग से अयोध्या को जाकर मोद के दीप्त होने पर, अधिक शोभा से राघव के आगमन के मंगल (समाचार) को क्रम से अपने बन्धु (संबंधी) -वरों को बताकर, कौसल्या को बताकर, कैकेई को बताकर, सुमित्रादेवी को प्रेम से बताकर, भरत के अपने को बुलाकर भेजे (आदेश दिए) विधान से समस्त पुर को विभूषित कर, ॥ ८६३० ॥

—'यह नहीं, वह नहीं' ऐसा न कहकर पूर्ण सुन्दरता से अन्त:पुरों को अलंकृत कराकर, चन्दन-कर्पूर-जल को एकत्र कर, सर्वत्र आँगनों में चाहकर जल बिखेरवाकर, पुर-वीथियों में शोभा से नवरत्न-वरतोरणों को क्रम से बँधवाकर,

भरत का वसिष्ठादियों के साथ श्रीराम की अगवानी करना

—अनघमानसवाले वसिष्ठादि मुनि-पुरोहित, मुनियों की पुण्यसतियाँ, जननियाँ, बन्धु,[1] सचिव, हितू, वनिताएँ, पौर (नागरिक), वर वृद्धजन

---

[1] रिश्तेदार

गोंदरंदलमुल गोंदरश्वमुल । गोंदरु रथमुल गोंदरेनुगुल
नेक्कि येतेर बेंपेक्कि शत्रुघ्नु । डेक्कुडु महिमतो नेलमि दीपिप
बंचमहावाद्यपटुरवंबेसग । नंचितगति वच्चे नन्न युन्नेडकु;
दल्लुलु दम्मुडु दानु सेनयुनु । वेल्लियै भरतुंडु वेड्कतो गदलि
येनय राघवुनकु नेदुरेगुचोट । हनुमंतुडनियै नुदात्तुडै भरतु ८६४०
"नदे चूडु राघवुंडाभरद्वाजु । सदनंबुनंदुंडि चनुदेंचुवाडु;
अदे चूडु पुष्पकं; बदे चूडु रामु; । डदे चूडु कपिसेन; यदेवच्चे जूडु;
सरयू प्रवाह मुज्ज्वलशक्ति दाटु । तरुचरकलकलोद्धतपटुध्वनुलु"
नन विनि भरतेशुडव्विमानंबु । गनुगोनि युब्बि गद्गदकंठुडगुचु
गन्नंत दव्वुल गडुभक्ति म्रोक्कि । यन्नकु साष्टांगमक्कड नेरगि
युदयाद्रिपैनुन्न युदयार्कुपगिदि । बदिदिक्कुलनु ब्रभापटलंबु बर्वं
बुष्पकारूढुडै पोलुपारुचुन्न । निष्पापु रघुरामु नेरिजेरि म्रोक्के;
नंत ना पुष्पकं बवनिकि डिंचि । येंतयु हर्षिंचि यिनकुलेश्वरुडु
नोंडोंड काविंचे नोनर दल्लुलकु । दंडप्रणाममुल् दानु लक्ष्मणुडु;
बरुवडि वारुनु बरग दीपिंचि । परिरंभणमुल संभाविंचिरेलमि
८६५०

(आदि) के कुछ पालकियों, कुछ अश्वों कुछ रथों, कुछ हाथियों पर आरूढ़ होकर, आने पर, अधिक शोभित हो, शत्रुघ्न अधिक महिमा की वृद्धि के दीप्त होने पर, पंचमहावाद्यों के पटुरवों के व्याप्त होने पर, अंचितगति से अग्रज के पास आया। जननियाँ, अनुज के साथ (और) स्वयं सेना के महाप्रवाह होने पर भरत के उत्साह से निकलकर, शोभा से राघव की अगवानी करने जाते समय, हनुमान ने उदात्त वन भरत से कहा— ॥ ८६४० ॥

"वह देखो, राघव उस भरद्वाज के सदन से निकल रहा है। वह देखो पुष्पक, वह देखो राम, वह देखो कपिसेना, वे ही (सुनने में) आयीं देखो, सरयू प्रवाह को उज्ज्वल शक्ति से पार करनेवाले तरुचरों के कलकलोद्धत पटु ध्वनियाँ।" (ऐसा) कहने पर सुनकर भरतेश ने उस विमान को देखकर, फूलकर, गद्गद् कंठवाला होता हुआ, दूर से देखते ही अधिक भक्ति से प्रणामकर, वहीं अग्रज को साष्टांग (प्रणाम) कर, उदयाद्रि पर स्थित उदयार्क की तरह दस दिशाओं में प्रभा-पटल के व्याप्त होने पर, पुष्पकारूढ़ हो विराजमान होनेवाले अनघ रघुराम के निकट पहुँच प्रणाम किया। तब उस पुष्पक को अवनि पर उतारकर, अधिक हर्षित हो, इनकुलेश्वर ने स्वयं लक्ष्मण के साथ माताओं को शोभा से दंडप्रणाम

भरतशत्रुघ्नुलु भक्तितो राम । धरणिवल्लभुनकु धरणिनंदनकु
जतुरतवॆलय लक्ष्मणुनकु ब्रीति । गृतमतुल् मरियु म्रॊक्किरि
पुण्यधनुलु;
भरतशत्रुघ्नुल बरग दीविंचि । परिरंभणमुल संभाविचिरॊप्प;
नत्तरि सीतामहादेवि प्रीति । नत्तलकॆल्ल नायत भक्ति म्रॊक्कॆ;
म्रॊक्किन कोडलि मोगि गौगलिंचि । यॊक्कट दीविंचिरोलि नंदरुनु;
रामलक्ष्मणुलुनु रागिल्लि म्रॊक्कि । रा महामुनिवर्युडगु वसिष्ठुनकु;
नम्मुनि दीविंचि यालिगनंबु । नॆम्मि गाविंचॆ ना नृपनंदनुलनु;
रूपिंचि भरतशत्रुघ्नुलु प्रीति । नापूर्णहृदयुलै यप्पुडु वच्चि
तम तल्लुलकु म्रॊक्कि तगुभक्ति दौलक । विमलात्मुलै रामुवॆनुकनुन्नट्टि
या विभीषणुनकु नर्कसूनुनकु । ना वालिसुतुनकु नट मुख्युलैन ८६६०

कपुलकु ब्रियमुलु गाविंचि वारि । विपुलसम्मदमुन वॆसगौगिलिंचि
"यनघुलु निजभृत्युलै मीरु गलुग । घनकीर्ति जयमुलु गनियॆ राघवुडु;
जॆलुलु भृत्युलुनुनै चित्तंबुलित । गलसिन बंधुवुल् गलरॆ मा" कनुचु,
नॆकॊलंदुलु गानि हृदयसम्मदमु । गैकॊनुचुंडिरि; कडकतो नंत

किया। शोभा से उन्होंने भी बार-बार आसीस कर, प्रेम से परिरंभण कर संभावित किया ।। ८६५० ।।

—भक्ति से राम-धरणिवल्लभ को, धरणिनन्दना को, चतुरता के विलसित होने पर, कृतमति और पुण्यधनी भरत-शत्रुघ्न ने प्रीति से प्रणाम किया। (उन्होंने भी) भरत शत्रुघ्नों को शोभा से आसीस, शोभा से परिरंभणों से संभावित किया। उस अवसर पर सीता-महादेवी ने आयत भक्ति से सभी सासों को प्रणाम किया। प्रणाम करनेवाली बहू को क्रम से गले लगाकर, सभी ने एक साथ आसीसा। रामलक्ष्मणों ने अनुराग से महामुनिवर्य (मुनिवर) वसिष्ठ को प्रणाम किया। उस मुनि ने आसीस कर प्रेम से उन नृपनन्दनों का आलिगन किया। सुन्दरता से भरत-शत्रुघ्न प्रीति से आपूर्ण हृदय वाले बनकर तभी आकर अपनी जननियों को प्रणाम कर, उचित भक्ति से युक्त होकर राम के पीछे खड़े उस विभीषण को, अर्कसून को, उस वालिसुत को (और) वहाँ प्रमुख, ।। ८६६० ।।

—कपियों को प्रिय करके, उन्हें विपुलसम्मोद से झट गले लगाकर (बोले)— —"(आप जैसे) अनघ निजभृत्यों के होनेपर राघव ने घन कीर्ति और विजय को प्राप्त किया। सखा और भृत्य होकर, इतने आत्मीय बने अन्य और कौन रिश्तेदार हैं हमारे लिए ?" (ऐसा) कहते हुए अपार हृदय सम्मोद

दल्लुलु बांधवुल् दम्मुलु गपुलु । वेंल्लियै बलमुलु वेड्क दो नडव
देजंबु मॆरय नन्दिग्रामपुरमु । राजशिरोमणि रामुंडु सॊच्चॆ;
नंत बुष्पकमुनकर्चनलिच्चि । यॆंतयु भक्तितो निनकुलेश्वरुडु
"तलचिनप्पुडु रम्मु; धननाथुनॊद्द । नलकलोपलनुंडु" मनुचु वीड्कॊलिपॆ;
भरतुडप्पुडु रामुपज्जकु जेरि । करमॊप्प गरमुलु गडुभक्ति मॊगिचि
"मी पादुकलयंदु मेदिनीभार । मेपार नुनिचि येंनित गालंबु ८६७०
नवधानमतितोड नालस्यमुडिगि । यवनीश! यी राज्यमरसिति नॊप्प"
ननि चॆंप्पि पादुकलर्थि नॊप्पिंचि । विनतुडै यत्यंतविनयंबु मॆरसि
"वेंलय नयोध्यकु वेंचेयवलयु; । नॊलसिन मुनिवेषमुचितंबु गादु;
राजमंडनमुलु रमणमै बूनु; । डी जटाभारंबु लीवल्कलमुलु
मानुडु मी" रन्न मनुजवल्लभुडु । पूनिक निंडुट बुद्धिलो दलचि
"यगुगाक" यनवुडु नप्पुडु गदिसि । तगु नेपॆरुलु वच्चि तात्पर्यमॊप्प
नॊलसिन कडकतो नुरुजटाबंध । मुलु वीड्व नभ्यंगमुलु नार्चरिंचि
तम्मुलु दानु नुत्सवजलस्नान । मिम्मुल गाविंचि यिनकुलेश्वरुडु

को प्राप्त किया। सप्रयत्न तब माताएँ, बांधव, अनुज, कपि प्रवाह बन, सेनाओं के उत्साह से साथ चलने पर, तेज के प्रकाशित होने पर, राजशिरोमणि राम ने नन्दिग्रामपुर में प्रवेश किया। तब पुष्पक की अर्चनाएँ कर अधिक भक्ति से इनकुलेश्वर ने (यह) कहते विदा किया कि "स्मरण करने पर आ जाओ। धननाथ के पास अलका (नगरी) में रह जाओ।" तब भरत राम के निकट पहुँचकर, अधिक शोभा से, अतिभक्ति से हाथ जोड़कर (बोला)—"आपकी पादुकाओं पर मेदिनीभार को शोभा से रखकर मैंने इतने समय तक, ॥ ८६७० ॥

—अवधानमति से, आलस्य को छोड़ हे अवनीश ! इस राज्य की देखभाल की।" ऐसा कहकर चाहकर पादुकाएँ सौपकर, विनीत हो, अत्यन्त विनय से प्रकाशित होकर, (कहा)—"शोभा से अयोध्या को पधारना चाहिए। शोभित यह मुनिवेष उचित नहीं है। राज-मंडनों (-अलंकार) को रमणीयता से धारण कीजिए। आप इस जटाभार को, इन वल्कलों को छोड़ दीजिए।" (ऐसा) कहने पर मनुज-वल्लभ ने प्रयत्न के पूर्ण होने पर, मन में सोचकर "ऐसा ही हो" कहने पर तब उचित कुशल (व्यक्तियों) ने निकट आकर विलसित यत्न से उरु जटा बन्ध को दूरकर, अभ्यंग (स्नान) कराकर, अनुजों के साथ स्वयं उत्सव-जल-स्नान इच्छा से कराया, इनकुलेश्वर ने अकलंकचित्त हो प्रकट

प्रकट दिव्यांबराभरणमाल्यमुलु । नकलंकचित्तुडै यमर गैसेसे;
धरणीतनूजकु दशरथांगनलु । करमु प्रियंबुन गैसेसिरेलमि ८६८०
सुदतुलु दारादि सुग्रीवसतुलु । मुदमोप्प श्रृंगारमुलु सेसिरप्पु;
डालोन हनुमंतुडर्थि दोड्तेर ।वेलसंख्यलु चेंचु विलुकांड्रु गोलुव
ललित जटावल्कलंबुलतोड । गोलदिमीरिन वेड्क गुहुडेगुदेंचि
जव्वादिपिल्लुलु जमरवालमुलु । मव्वंपुगजदंतमौक्तिकंबुलनु
गिटिदंत वेणु मौक्तिकमुलु सर्प । निटलसंभवमणुल् निबिड शार्दूल
नखमुलु भेरुंडनखमुलु सिंह । नखमुलु कृष्णाजिनंबुलु मिगुल
नाणेमौ गोरोचनमुनु गस्तूरि । वीणेलु देनियल् विविधंबुलैन
फलमुल कावळ्ळु भयभक्तुलात्म । मौलव गानुकलुगा मुंदर बेट्टि
पोंडगांचि यानंदमुन राघवुनकु । दडयक साष्टांगदंडंबु बेट्टि,
निटलाग्रहस्तुडै निलुचुन्न गुहुनि । जटिलत्वमीक्षिंचि जनलोक विभुडु
८६९०
तनकृपाजलनिधि नातनि नोललार्चि । चनविच्चि,
यमृतभाषलनिट्टुलनिये;
"सुरुचिरतेज! चेंचुलराज! नीदु । पिरिगोन्न भक्तियु बेंपुनु देंपु

दिव्यांबर-आभरण-माल्यों से शोभा से अलंकृत कर लिया। धरणीतनूजा का दशरथ की अंगनाओं ने अधिक प्रेम से शोभा से अलंकार किया ॥ ८६८० ॥

—इतने में हनुमान के इच्छा से साथ ले आने पर, हजार संख्याओं में चेंचु[1] धनुर्धरों के सेवा करने पर, ललित-जटा-वल्कलों के साथ, अधिक उत्साह से गुह आया। गन्ध बिलाव, चमरवाल, श्रेष्ठ गजदंतमौक्तिक, किटि-दन्त, वेणुमौक्तिक, सर्प-निटल-सम्भव मणियाँ, निबिड शार्दूल के नख, भेरुंड-नख, सिंह-नख, कृष्णाजिन, अधिक स्वच्छ गोरोचन और कस्तूरि, वीणाएँ, शहद, विविध फलों के कावड, (आदि) को आत्मा में भय-भक्तियों के अंकुरित होने पर, उपहार-स्वरूप समक्ष रखकर, देखकर, आनन्द से अविलम्ब राघव को साष्टांग प्रणामकर, निटलाग्र पर हाथ रख खड़े गुह के जटिलत्व को देख जनलोक विभु ने, ॥ ८६९० ॥

—अपनी कृपा जलधि में उसे ऊभचूभकर, लाड़कर, अमृत भाषाओं (वचनों) से यों कहा—"हे सुरुचिर तेजवाले ! चेंचुओं के राजा ! तुम्हारी घनीभूत भक्ति और औन्नत्य, साहस को शोभा से इस वायुसुत के द्वारा सुना

1 एक जंगली जाति।

सोंपार नी वायुसुतुनिचे विंटि; । निपुणा मालोन नीवु नोक्कडवु;
गान ना जडलु वल्कलमुलु विडिचि । पूनुमु मायट्ल भूपचिह्नमुलु''
अनि यानतिच्चिन नरिगि वल्कलमु। लुनु जटापटलंबुलुनु वेग विडिचि,
सुमहितोदकमुल सुस्नातुडगुचु । विमलांगुडै रामविभुनि सन्निधिकि
वच्चिन जूचि दिव्यमुलैनयट्टि । मेच्चुलसोम्मुलु मेलिमवस्त्रमुलु
नेट्टन नोसगिन नेरय गैसेसि । दट्टंपुभक्ति भूधवु गोल्चियुंडे;
नंत शत्रुघ्नुनि याज्ञ सुमंत्रु । डेंतयु रयमुन हितसमाहितुडु
बहुरत्न निर्मलप्रभ नोप्पुमिगुल । महितार्क बिंब समंचितरथमु
८७००

गोनिवच्चि यट रघुकुलभर्त येंदुर । नुनिचिन श्रीरामुडुन्नतात्मकुडु

श्रीरामुडयोध्या जेरुट

तल्लुल चरणपद्ममुलकु म्रोक्कि । येल्लवारुनु नेलुगेत्ति दीविंप
ननघुंडु सुमुहूर्तमगुट भाविंचि । मुनिवसिष्ठुडु दनमुंदट नेक्क
बृथुकीर्तुलिपेंक्क पृथिवि पेंपेंक्क । रथमेक्के जनमनोरथमेक्कु करणि;
निरुपमतर भक्ति निरतुडै चेरि । भरतुंडु धवळातपत्त्रंबु बट्ट
ना सुमित्रा - पुत्त्रुलर्थि निद्दरुनु । नासन्नुलै पट्ट नालवट्टमुलु

है। शोभा से तुम हममें एक हो। अतः उन जटाओं (तथा) वल्कलों को छोड़, हमारी तरह भूप-चिह्न धारण करो।'' ऐसा आदेश देने पर जाकर, वल्कल और जटापटल को शीघ्र छोड़, सुमहितोदकों से सुस्नात होते हुए, विमलांग वाला हो रामविभु की सन्निधि में आने पर, (उसे) देखकर, दिव्य और प्रशंसनीय आभरण, श्रेष्ठ वस्त्र झट प्रदान करने पर, शोभा से अलंकृत होकर, घनीभक्ति से भूधव की सेवा करता रहा। तब शत्रुघ्न की आज्ञा से हितसमाहित सुमन्त अतिशीघ्र बहुरत्न निर्मल प्रभा से अधिक शोभायमान, महित-अर्क-बिंब- समंचित रथ को, ॥ ८७०० ॥

—ले आकर, वहाँ रघुकुलभर्ता के समक्ष रखने पर उन्नतात्मक श्रीराम

श्रीराम का अयोध्या पहुँचना

—माताओं के चरण-पद्मों को प्रणाम कर, सभी के उच्चस्वर से आसीसने पर अनघ ने सुमुहूर्त होने की सोचकर, मुनिवसिष्ठ के अपने से पहले (रथ पर) आरूढ़ होने पर, पृथु कीर्तियों के विवर्द्धित होने पर, पृथ्वी के उन्नत होने पर, जनमनोरथ पर आरूढ होने की तरह रथ पर आरूढ हुआ। निरुपम-तर-भक्ति-निरत हो निकट रह, भरत के धवल-आतपत्र के धारण करने पर,

नारूढ पंच महावाद्यरवमु । तो रासि देवदुंदुभुलोलि म्रोय
विनुवीथि सुरपुष्प वृष्टुलु गुरिय । जनुलेल्ल जय जय शब्दंबुलिडग
नतुल रथारूढुडै महोदार । गतुलोप्प वेनुक राक्षस-भर्त नडव
बरुवडि जतुरंग बलमुलु नडव । वरुसतो निजबंधुवर्गंबु नडव ८७१०
गैलकुल गदिसि सुग्रीवादिकपुलु । बलुवारणमुलेक्कि पदिलुलै नडव
घनसेतुबंधादि कथलुग्गडिंचि । पैनुपोंद वरवंदिबृंदमुल् नडव
जननुलु दारादिसतुलु जानकियु । घनरथंबुलमीद गरमोप्प रागं
नडचे नयोध्यकानन्द कंदळितु । लैडनैड दीविंप हितपुरोहितुलु;
करि बृंहितंबुलुत्कटतरध्वनुलु । दुरगहेषितमुलु दोरंबुलैन
भेरिरवंबुलु बृथुलखड्गोग्र । धाराघट्टनध्वनुलु बेल्लेसग
नक्षीणकल्याणुडगु रामविभुडु । नक्षत्रपरिवृत नवचंद्रु भाति
दिव्यंबु दीपिप देजंबु मैरसि । यय्योध्यापुरंबथितो जोच्चें;
नप्पुडु संतोषमंतरंगमुल । नुप्पोंग बहुमंगळोन्नतुल् मैरसि
पल्लवहस्तलु बल्लवाधरलु । बल्लवारुण पाद पल्लवोज्ज्वललु ८७२०

उन दोनों सुमित्रापुत्रों के चाहकर, निकट रह, छत्र धारण करने पर, आरूढ़ पंचमहावाद्यों के रव के साथ मिलकर क्रम से देवदुंदुभियों के मुखरित होने पर, विनुवीथि से सुरके-पुष्पवृष्टियों के बरसने पर, समस्त लोगों के जय-जयकार करने पर, अतुल-रथारूढ़ होकर, महोदार-गतियों के शोभित होने पर, पीछे-पीछे राक्षस-भर्ता के चलने पर, बार-बार चतुरंग-सेनाओं के चलने पर, क्रम से निज बन्धुवर्ग के चलने पर, ।। ८७१० ।।

—पार्श्वों में निकटता से सुग्रीव आदि कपियों के कई वारणों पर आरूढ़ हो, ढंग से चलने पर, घन सेतुबन्ध आदि कथाओं का उल्लेखकर अधिक शोभा से वर-वंदिवृंदों के चलने पर, माताएँ, तारा आदि सतियाँ और जानकी के घनरथों पर अधिक शोभा से आने पर, स्थान-स्थान पर हित पुरोहितों के आनन्द-कन्दलित (हृदयवाले) हो आसीसने पर (राम) अयोध्या के लिए चल पड़ा । करियों के बृंहित, उत्कट-रथ-ध्वनियाँ, तुरग-हेषित के अधिक होने पर, भेरी रव, पृथुल-खड्ग-उग्र-धाराग्र-घट्टन की ध्वनियों के अधिक परिव्याप्त होने पर, अक्षीण कल्याणवाला रामविभु ने नक्षत्र परिवृत नवचन्द्र की भाँति, माधुर्य के दीप्त होने पर, तेज से प्रकाशित होकर, उस अयोध्यापुर में प्रेम से प्रवेश किया । तब अन्तरंगों में आनन्द के उमड़ने पर, बहुमंगलोन्नतियों के प्रकाशित होकर, पल्लव से हाथोंवाली, पल्लव-अधरोंवाली, पल्लव जैसे अरुण पाद-पल्लवों से उज्ज्वल बनी (नारियाँ) ।। ८७२० ।।

हरिमध्य सममध्यलमृतांशुमुखुलु । गरिराजगमनलु गमललोचनलु
नलिनीलकुंतललबुजगंधु । लैलदीगबोडु लिपैक्क नंदंद
कैसेसि चनुदेंचि कामिनीमणुलु । प्रासादगोपुर प्रततुल नुंडि
पुण्यावलोकनंबुल बुण्यसतुलु । पुण्यपुष्पाक्षतंबुलु सल्लुचुंड
मेडलपैनुन्न मीनाक्षुलोलि । ब्रोडलै तमतम बोटुलतोड
"नीसुन बिन्ननाडीपुण्यधनुडु । सेसिन चेतलु सॆप्प नच्चेरुवु !
तनु नेदिर्चिन मात्र दाटक जंपे; । ननघुडै कौशिकु यागंबु गाचे;
सर्पकंकणु महाचापंबु विरिचे; । दर्पिंचि जमदग्नितनयु भंगिंचे;
नहितलोकांतकुंडंतटिपनुलु । सहजशूरुडु गान जनें गाक चेय!
नम्मुद्दु प्रायंबुनंदु गानलकु । बौम्मन्न दपसियै पोयै वेडुकनु; ८७३०
बोयि जगद्धितपुण्यकृत्यमुलु । सेयनेव्वडु चालु जेव दीपिंप ?
वनधि बंधिंचि रावणु बोर द्रुंचि । दनुजुल बेक्कंड्र धरणिपै गूल्चे;
दनतंड्रिपनुपुन दविलि कानलकु । मुनिवृत्ति जनुनाटि मुद्दुचंदंबु
नी पेद्दचंदंबु निन्नि चंदमुल । दीपिंचुचुन्नवि तेलिय जूचितिरे ?
पर्जन्यु नवलील भर्जिंचि सुरल । दर्जिंचि भुजशक्ति दर्पिंचिनट्टि

—हरिमध्य (सिंह की कटि)-सम मध्य (कमर) वाली, अमृतांशु जैसे मुखवाली, करिराज-गमनाएँ, कमललोचनवाली, अलिनीलकुंतलवालियाँ, अंबुजगंधियाँ, लतांगियाँ, शोभा से सर्वत्र अलंकृत हो आकर, कामिनीमणियों के प्रासादों की गोपुर प्रततियों से, पुण्यावलोकनों से पुण्यसतियों के पुण्य-पुष्प-अक्षतों के बिखेरते रहने पर, अट्टालिकाओं पर स्थित मीनाक्षी क्रम से प्रौढाएँ होकर, अपनी-अपनी सखियों के साथ (बोलने लगीं) —"स्पर्धा भाव से बचपन में इस पुण्यधनी के किए कार्यों का वर्णन करना आश्चर्यप्रद है। अपना सामना करने मात्र से ताड़का का संहार कर दिया, अनघ हो कौशिक के याग की रक्षा की। सर्पकंकणवाले (शिव) के महाचाप को खंडित कर दिया, दर्पित हो जमदग्नितनय को अपमानित किया। अहितलोक के अंतक सहजशूर होने के कारण ऐसे काम कर सका, नहीं तो कर सकेगा क्या ? उस प्यारी अवस्था में (किशोर प्राय में) जंगलों में जाने के लिए कहने पर तपस्वी बनकर उत्साह से गया ॥ ८७३० ॥

—जाकर, जगद्धित कृत्यों को सामर्थ्य के दीप्त होने पर कौन कर सकता है ? वनधि को बाँधकर, युद्ध में रावण का संहार कर, कई दनुजों को धरणी पर गिरा दिया। अपने पिता के आदेश पर लगकर जंगलों में मुनिवृत्ति से जाने के समय वह प्यारा विधान, यह बड़प्पन इतने प्रकारों से दीप्त हो रहे हैं। ठीक तरह से देख लिया है न ? पर्जन्य को सरलता से

या मेघनादु नुग्राजिलो जंपे । सौमित्रि गंटिरे चपलाक्षुलार !
पडति ! रावणुडतिपापात्मुडैन । विडिचि लंकापुरीविभुडय्यें नितुडु;
वनजाक्षि! यीतडु वालिसोदरुडु; । वनित ! यी पुण्युंडु वालिनंदनुडु;
तडयक यंबुधि दाटि या सीत । बोडगांचि वच्चिन पुण्यात्मुडितडु;
कलकंठि! यवलील गंधि बंधिंचि । नलि लंकपै रामु नडपिंचें नितडु;
८७४०
नीरेरुहासन ! निखिलौषधमुल । बोर लक्ष्मणुप्राणमुलु देच्चेंनितडु"
अनि तन्नु दम्मुनि नसुरनु गपुल । गोंनियाडुचुन जेंप्पिकोंनुचुंड वच्चि
नगरु ब्रवेशिंचि नलिनाप्तकुलुडु । जगदेकनिधि रामचंद्रुडु दानु
भरत शत्रुघ्नुल बनिचि दैत्येंद्र । तरुचर प्रमुखुल दगु मंदिरमुल
विडियिंचि यिष्टान्न विविधभोज्यमुलु । कडकतो बुत्तेंचे गारुण्यमोप्प;
सुरुचिरमति नंत सुग्रीवुतोड । बरमसम्मदमुन भरतुडिट्लनियें;
"नेंल्लि रेपभिषेकमिनवंशमणिकि । नेंल्लतेरंगुलायितमु चेसितिमि;
संगति जतुरब्धि जलमुलु वलयु; । गंगादितीर्थोदकंबुलु वलयु;
देंप्पिपु" भनवुडु दिननाथतनयु । डप्पुडु परमहर्षांचितुडगुचु

पीड़ित कर, सुरों को धमकाकर, भुजशक्ति से दर्पित होनेवाले उस मेघनाद को उग्र-आजि (-युद्ध) में मारनेवाले सौमित्र को हे चपलाक्षियो ! देखा है न ! हे नारी ! रावण के अति पापात्मा होने के कारण उसे छोड़ यह (विभीषण) लंकापुरी का विभु बन गया है । हे वनजाक्षी ! यह वालि का सहोदर है । हे वनिता! यह पुण्यी वालिनन्दन है । अविलम्ब अंबुधि पारकर उस सीता को देख आने वाला पुण्यात्मा यह है । हे कलकंठी ! अनायास समुद्र को बाँधकर, क्रम से लंका पर राम को चलाया इसने ।। ८७४० ।।
—हे नीरेरुहासने ! युद्ध के समय निखिलौषधों से लक्ष्मण के प्राण लाए इसने ।" ऐसा अपनी और अनुज की, असुर की, कपियों की सराहना करते, वर्णन करते समय आकर नगर में प्रवेश कर, नलिनाप्तकुलवाले जगदेकनिधि रामचन्द्र ने स्वयं भरत-शत्रुघ्न को भेजकर, दैत्येंद्र-तरुचर-प्रमुखों को उचित मन्दिरों में ठहराकर, कारुण्य की शोभा से, इष्टान्न-विविध भोज्यों को सयत्न भेजा । तब सुरुचिरमति से परमसम्मोद से सुग्रीव से भरत ने यों कहा—"इनवंशमणि के परसों या कल के अभिषेक के लिए सब तरह से व्यवस्था की है । औचित्य से चतुरब्धि-जल चाहिए, गंगा आदि के तीर्थोदक चाहिए । मंगाओ ।" ऐसा कहने पर दिननाथ-तनय ने तब परमहर्षांचित होते हुए उचित विधान से गज, जांबवान, सुषेण, अलघुविक्रमवेगवाले वेगदर्शी को, ।। ८७५० ।।

वलनोप्प गजु जांबवंतु सुषेणु । नलघुविक्रमवेगुडगु वेगदर्शि ८७५०
गमनीय नवरत्न कलशंबुलिच्चि । क्रममुन दीर्थोदकमुलु दे बनिचे;
नलु गवाक्षुनि वायुनंदनु ऋषभु । गलय समुद्रोदकमुलु दे बनिचे;
बनिचिन गडिमिमै ब्लवग वल्लभुलु । विनुवीथि नत्यंतवेगुलै पोयि

श्रीराम पट्टाभिषेकमु

युरुवडि मरुनाटि युदयकालमुन । 'करुदरु' दन देच्चिरखिलोदकमुलु;
चेतोविनिर्मलशिष्टु वसिष्टु । गौतम जाबालि कश्यप कण्व
वाम देवादुलौ वरमुनीश्वरुल । सामादि बहुवेद चतुरबोधकुल
भरतुंडु रप्पिचि भयभक्तुलोप्प । वरमसम्मद वचोभंगुलु मेरय
"श्रीरामुनकु नभिषेकंबु सेयु । डारूढनियतितो" ननि पलक वारु
बूनि मंगळतूर्यमुलु म्रोयुचुंड । जानकीरामुल ञदुरोप्प देच्चि
रमणीयतरमैन रत्नपीठमुन । गोमरोप्प निरुवुर गूर्चुंड बनिचि ८७६०
मानित वेदोक्त मंत्रपूर्वकमु । गा नभिषेकंबु गरमर्थि जेय
ना रामुनौदल नापूर्ण वारि । धार डग्गरुनप्डु तग जूडनोप्पे;
गीर्वाणमुख्युलु गीर्तनल् सेय । पार्वतीसहितुडै प्रणुतिप नोप्पु

—कमनीय-नवरत्न-कलशों को देकर, क्रम से तीर्थोदक लाने भेजा। नल, गवाक्ष, वायुनन्दन, ऋषभ को मनोज्ञता से समुद्रोदक लाने भेजा। भेजने पर साहस से प्लवगवल्लभ विनुवीथि से अत्यन्त वेगवाले हो जाकर,

श्रीराम का पट्टाभिषेक

—बहुलता से, दूसरे दिन उदयकाल में 'अनुपम है, अनुपम है' (ऐसा लोगों के) कहने पर अखिल-उदक लाए। चेतस्-विनिर्मल-शिष्ट वसिष्ठ, गौतम, जाबालि, कश्यप, कण्व, वामदेव आदि वर मुनीश्वरों, सामादि-बहुवेद-चतुर-बोधकों को भरत ने बुलाया (और) भय-भक्तियों के शोभित होने पर, परम-सम्मद (मोदयुक्त) वचनों की भंगिमाओं के प्रकाशित होने पर, कहा कि "श्रीराम का आरूढ़नियति से अभिषेक कीजिए।" कहने पर वे सप्रयत्न मंगलतूर्यों के मुखरित होते समय, जानकी और राम को ढंग से लाकर, रमणीयतर-रत्नपीठ पर शोभा से बैठने के लिए दोनों को आदेश देकर, ॥ ८७६० ॥

—मानित (मान्य) वेदोक्त मंत्रपूर्वक अभिषेक को अधिक इच्छा से करने पर उस राम के मस्तक पर आपूर्ण-वारि की धारा आ पड़ते समय देखने में बहुत उचित लगा, वह गीर्वाण-प्रमुखों के गान करने पर, पार्वती सहित हो

नंगजहरुमौळि नमलमै तौरुगु । गंगानदियु बोलें गमनीयमगुचु;
ना तीर्थधारलु नंघ्रुल कौलिकि । भूतलंबुन निंडि पौलुपारें जूड
हरिपादमुन बुट्टि यय्यादिगंग । धरणिपै बरगुविधंबच्चुपडग;
बरिकिप रामभूपालकुंडपुडु । हरुडु विष्णुडु दान यन माड्कि नुंडें;
मरि पट्टभद्रुडें मनुजवल्लभुडु । नैरय बट्टमुतोडि निटलंबुतोड
सरस जटारुणच्छायल मानि । करसौप्पु शशिरेख गंगवीचिकल
सरिदाटि नुदुटिकि जारिन नौप्पु । हरुनिचंदमुन नलरें जूपरकु; ८७७०

गरुड वियच्चर गंधर्ववरुलु । सुरसिद्ध साध्युलु सौरिदिमै नपुडु
ब्रदल नुत्सव पटु जय जय ध्वनुलु । गुदियक यंदंद घोषिंचिरेंलमि;
नप्पुडच्चर लोलि नाडिरि प्रीति; । नप्पुडु पुत्तेंचें नमरवल्लभुडु
पारिजातामल प्रसवमालिकयु । हारंबु ब्रियमुन ननिलुनिचेत;
नमित मंगळमूर्तियैन राघवुडु । गौमरौप्प वानि गैकौनियें वीक्षिंचि;
वसुधयैंतयु सस्यवतियय्यें नपुडु; । गुसुमफलंबुलु गौमरौप्पे दरुलु;
घनतरगंधमुल् गांचें बुष्पमुलु । विनुतिप दिक्कुलु विमलंबुलय्यें;

प्रशंसनीय बने अंगज-हर (शिव) की मौलि पर से झरनेवाली गंगा नदी के समान कमनीय लग रहा था। वे तीर्थ-धाराएँ चरणों से झरकर, भूतल में भरकर प्रवाहित हुईं। वह देखने में ऐसा लगा मानों हरि के पाद (चरण) में उत्पन्न उस आदिगंगा के धरणी पर प्रवाहित होने के विधान का रूप हो। फिर पट्टभद्र (पट्टभिषिक्त) हो, मनुज-वल्लभ शोभित पट्ट से युक्त निटल (ललाट) से देखने वालों को, सरसता से जटा-अरुण-छायाओं (आभाओं) को छोड़, अधिक शोभित शशिरेखा के, गंगा की लहरियों को ढंग से पारकर, ललाट पर खिसक आने पर शोभित हर के समान शोभित हुए ॥ ८७७० ॥

—तब क्रम से गरुड़-वियच्चर-गन्धर्व-वरों, सुर-सिद्ध-साध्यों (आदि) ने आकाश पर, उत्सव-पटु-जय-जय- ध्वनियों को विपुल रूप से, सर्वत्र, शोभा से मुखरित किया। तब क्रम से अप्सराओं ने नृत्य किया। तब अमर-वल्लभ ने अनिल के हाथ पारिजात-अमल-प्रसव-मालिका और हार प्रेम से भेजा। अमित-मंगलमूर्ति वाले राघव ने शोभा से उन्हें देखकर स्वीकारा। तब वसुधा अधिक सस्यवती हुई। तरुओं पर कुसुम और फल अधिक शोभित हुए। पुष्पों ने घनतर-गन्धों को प्राप्त किया। सराहनीय रूप से दिशाएँ विमल बन गईं। तब रघुराम ने अक्षीण वैभव के

नप्पुडु रघुरामुडक्षीणविभव । मोप्प भूसुरुलकु नुन्नतात्मुलकु
ननुपमतरभक्ति यंतरंगमुन । गोनकोनि मुप्पदिकोट्ल धनमु
लक्षगुर्रंबुलु लक्षयेनुगुलु । लक्षगोवुलु निच्चे ललि सोंपुमीर; ८७८०
ललित दिव्यांबरालंकारततुलु । बोलुपोंदु कांचन पुष्पमालिकयु
गोलदि मीरिन प्रियोक्तुल जेर बिलिचि । येलमि सुग्रीवुनकिच्चे बेंपोंद;
घनवज्रवैडूर्य कलितांगदंबु । लनघुडंगदुनकु नर्थितो निच्चे;
महितोरुकेयूरमकुटंबुलोप्प । सहजपुण्युडु विभीषणुनकु निच्चे;
नमित बलोदात्तुडगु वायुजुनकु । गमनीयरत्नकंकणयुगंबिच्चे;
नालोलरुचिनिचयानूनमैन । नीलहारमु ब्रीति नीलुनकिच्चे;
वलनोप्प नवरत्नवरहारमोकटि । नलुनकु निच्चे नानंदमुप्पोंग;
नंबर मणि भूषणादि वस्तुवुलु । जांबवंतुनकिच्चे सम्मदंबोदव;
नभिमतवेदियै यंदर जूचि । विभुडु वानरुलकु वीरु वारनक
प्रकट दिव्यांबराभरण माल्यंबु लकलंकमहिमतो नंदरकिच्चे; ८७९०
शारद निर्मल चंद्रिकानून । हारंबु सीतकु नर्थितो निच्चे;
धरणिज हारंबु दा वेंचिकोनक । करमुल धरियिंचि काकुत्स्थमोमु

विलसित होने पर भूसुरों तथा उन्नत-आत्मावालों को अन्तरंग में अनुपमतर भक्ति के अंकुरित होने पर तीस करोड़ धन, लाख घोड़े, लाख हाथी, लाख गाएँ शोभा से प्रदान किया ।। ८७८० ।।

—सुग्रीव को प्रिय-उक्तियों से निकट बुलाकर, प्रेम से ललित-दिव्य-अम्बर-अलंकार-ततियाँ (तथा) शोभित कांचन-पुष्प-मालिका दी। अनघ अंगद को प्रेम से घन वज्र-वैडूर्य-कलित अंगद (कवच) दिया। सहज पुण्यवाले विभीषण को शोभा से महित-उरु-केयूर (तथा) मुकुट दिए। अमित बलोद्दात्त वायुज को कमनीयरत्न-कंकण-युग (जोड़ी) दी। प्रीति से नील को आलोल-रुचि-निचय से आनून (सम) बना नीलहार दिया। नल को आनन्द के उमड़ने पर ढंग से एक नवरत्नवरहार दिया। सम्मद के उत्पन्न होने पर जांबवान को अंबर-मणि-भूषणादि वस्तुएँ दीं। अभिमतवेदी (अभिलाषा को जानकर) बन, सबको देखकर विभु ने वानरों को यह-वह न कह, प्रकट-दिव्य-अम्बर-आभरण-माल्यों को अकलंकमहिमा से सबको दिया ।। ८७९० ।।

—सीता को चाहकर शारद-निर्मल-चन्द्रिका-आनून (-सम) हार दिया। धरणिजा ने उस हार को स्वयं न पहनकर, हाथों में धारण कर काकुत्स्थ के मुख को देखा। देखने पर नारी की दृष्टि को जानकर, उस चतुरात्मक

जूचें; जूचुटयुनु सुदति चूपेंड्रिगि । या चतुरात्मकुंडनुमतिचुटयु
दन कृपारसधार दनर हार । मनिलजु कंठंबुनदोप्प बेट्टे;
ना निर्मलोदारहारंबु बूनि । या निर्मलात्मकुडनिलनंदनुडु
शारदाभ्रावलि सरि जुट्टियुन्न । मेरुवु तेंड्रगुन मेंड्रसे जूड्कुलकु;
नंत वसिष्ठुनियनुमति रामु । डंतःपुरंबुन करिगि तल्लुलकु
वरुसतो म्रोक्क दीवनलिच्चि; रपुडु । धरणीतनूज यत्तलकेल्ल भक्ति
सेलगंग म्रोक्किन "श्रीदेविठेव । नल सरस्वति भाति नगजात रीति
बतिभक्तिमतियु सौभाग्यंबु गांति । यतुलकीर्तियुनु बेंपलरंग गलिगि
८८००

यिनचंद्रुलन गांति नेंनयु पुत्रुलुनु । गनुमु नी" वनि प्रेम गौगिट जेर्चि
दीविंप रघुकुलाधिपुडु वेडुकलु । गाविंचु भोजनागारंबुनकुनु
जनुदेंचि हितुलनु सकल बांधवुल । ननुजुल रविजादुलैन वानरुल
ना विभीषणमुख्युलगु दैत्यवरुल । बावनात्मकु गुहु बरग राविंचि
युचितासनंबुल नुंडंग बनिचें । सुचरित्नु नंजनासूनुनि दनदु
पोत्तुन वेडुक भुजियिंपुमनियें । नत्तरि जाल नेय्यमु दिय्यममर;

के अनुमति देने पर, अपनी कृपा रस-धारा से शोभित होने पर वह हार अनिलज के कंठ में शोभा से डाला। वह निर्मल-उदार हार धारणकर, वह निर्मलात्मा वाला अनिलनन्दन देखने में ऐसे प्रकाशित हुआ कि शारदाभ्रावलि से ठीक तरह से घिरे हुए मेरु (पर्वत) के समान हों। तब वसिष्ठ की अनुमति से राम अन्तःपुर में जाकर माताओं को क्रम से प्रणाम करने पर (उन्होंने) आसीसा, तब धरणी-तनूजा के सभी सासों को भक्ति (-भाव) के विलसने पर प्रणाम करने पर (यह कह कि) "श्रीदेवी के समान, उधर सरस्वती की भाँति, नगजाता की तरह, पतिभक्तियुतमति, सौभाग्य, काँति, अतुलकीर्ति और औन्नत्य की शोभा से युक्त हो, ।। ८८०० ।।

—इन-चन्द्र हों ऐसी कांति से विराजमान पुत्रों को जन्म दो" प्रेम से गले लगाकर आसीसा। (तब) रघुकुलाधिप उत्सवप्रद भोजनागार को आकर, हितुओं, सकल-बाँधवों, अनुजों, रविज आदि वानरों, उस विभीषण-प्रमुख दैत्यवरों, पावन आत्मावाले गुह को ढंग से बुलाकर, उचित आसनों पर रहने (बैठने) का आदेश दिया। सुचरित्रवाले अंजनासून को अपने पार्श्व में बैठकर खाने को कहा। उस अवसर पर अधिक स्नेह और माधुर्य के विलसित होने पर, शोभा से उस अवसर पर, युवतियों के सोने

नेनयंग नव्वेळ नेलतलु देच्चि । कनकपु बळ्ळेमुल् ग्रममोप्प नुनिचि
परग बायसमु सूपमुलपूपमुलु । वरुगुलु वडियमुल् वांछ बुट्टिंचु
कूरलु बच्चळ्ळु गोमरोंदुसिगर । लूरुगायलुनु शाल्योदनंबात्म
दनिपेंडु सद्योघृतमु वितरुचुल । बेनुपोंदु फलमुलु पेमितो निडग ८८१०

निनकुलाधीश्वरुंडिपुरेट्टिप । "ननिलज! भुजियिपु" मनुचु दानोक्क
कबळंबु गोनिन नक्कपिकुलोत्तमुडु । प्रबलमौ भक्ति नप्पळ्ळेरंबेत्ति
तलमीद निडुकोनि तनर नाडुचुनु । जेलगुचु "नो कपिशेखरुलार !
रंडु; रामुनि पळ्ळेरमु प्रसादंबु । दंडिगा दोरके नंदरकु ने" डनुचु
मुनिवृक्ष मेक्कि यिम्मुल दानि दळमु । लनुवोंदगा द्रुंचि या प्रसादमुन
नोनररिचि संतोषमुल्लंबुनिड । घनभक्ति नोसगे ना कपिनायकुलकु;
वारुनु दानुनु वांछलुदीर । नारूढि दृप्तुलैरा प्रसादमुन;
ननिशंबु नदिमोदल् हरि वासरमुन । मुनिवृक्षपर्णमुल् मुख्यबुलय्ये;
नंत ना रघुरामु डंजनासुतुनि । संततभक्तिकि संतोषमंदि
परपैन वेरीक पळ्ळेरंबुननु । धरणीशचंद्रुंडु दानारगिंचि ८८२०

की थालियों को लाकर क्रम से रखने पर, शोभा से पायस (खीर), सूप, अपूप, सूखे साग, वटक, वांछा को उत्पन्न करनेवाले साग, चटनियाँ, शोभायमान शिखरियाँ और अचार, शाल्योदन, आत्मा को तृप्त करनेवाला सद्योघृत, विचित्र रूचियों (स्वादों) से विवर्द्धित फल (इन सबको) प्रेम से देने पर, ।। ८८१० ।।

—इनकुलाधीश्वर ने प्रेम के द्विगुणित होने पर "हे अनिलज ! खाओ" कहते हुए, स्वयं एक कबल (निवाला) लिया। (लेने पर) उस कपिकुलोत्तम ने, प्रबल भक्ति से उस थाली को उठाकर सिर पर रखकर, शोभा से नाचते हुए, उल्लसित होते हुए, (कहा)— "हे कपिशेखरो ! आओ, राम की थाली में, सभी के लिए, प्रचुरता से प्रसाद मिल गया है।" मुनि (अगस्त्य) वृक्ष पर आरूढ़ होकर प्रेम से उसके दलों (पत्तों) को शोभा से तोड़कर, उसमें प्रसाद रख (बाँटने के लिए), आनन्द के हृदय में भर जाने पर, उन कपिनायकों को घनभक्ति से दिया। उस प्रसाद से उनके साथ स्वयं भी, वाँछाएँ बर आवें, आरूढ़ि से तृप्त हुए। तब से लेकर अनिश (सदा) हरि वासर (पारण के दिन) पर मुनिवृक्षपर्ण प्रधान बने। तब वह रघुराम अंजनासुत की संतत भक्ति के कारण संतुष्ट हुआ,

जलमुल नौगि वार्चि जतनंबु मीर । ललितसुगंधमाल्यमुलौप्प मुडिचि
कर्पूरतांबूल गंधाक्षतंबु । लर्पिप दयमीऱ नंदऱ कप्पु
डिनकुलोत्तमुडिच्चे नेल्लवस्तुवुलु; । मनमार नप्पुडु महिम पेंपलर
सकलभृत्यामात्यसहितुडै वेड्क । नकलंकचित्तुडै यट गोलुवुंडे
नप्पुडु सौमित्रि ननुरक्तितोड । नौप्प निद्रादेवि योगि बोंदुटयुनु
गोलुवुलोपलनु गाकुत्स्थुनि येदुट । गलकल नव्विन गमलाप्तकुलुडु
जनकजयुनु विभीषणुडु सुग्रीवु । डुनु मारुतात्मजुडुनु वालिसुतुडु
नल नील शरभ सन्नाद तारादि । बलिमुखुल् शत्रुघ्न भरतुलु भीति
दललु वंचिरि यप्डु तमयंदु जेंदि । ललि मीडिनट्टि कळंकमुल् दलचि;
यंदऱु नट्लुंड नलुक चित्तमुन । जेंद लक्ष्मणु जूचि श्रीरामुडनिये;
८८३०
"दगवु वोविडिचि यास्थानंबुनंदु । नगुटेमि निष्कारणमुग सौमित्रि?"
यनवुडु भयमंदि या लक्ष्मणुंडु । तन करंबुलु मोड्चि तगनिट्टुलनिये;
"वनवासमुनकु देवर गोल्चि वच्चि । वनमुल नुन्नचो वच्चे नी निद्र;
वच्चिन 'बदनाल्गु वत्सरंबुलुनु । नच्चुगा जेरकु" मन निद्र सनिये;

विशाल एक ओर थाली में घरणीशचन्द्र (राजाओं में चन्द्र) ने स्वयं भोजन किया ।। ८८२० ।।

—(भोजन करके) क्रम से जल से आचमन कर, प्रयत्न के दीप्त होने पर, ललित-सुगन्ध-माल्यों से शोभा से (अपने आपको) सजाकर, कर्पूर-तांबूल गन्धाक्षत समर्पित करने पर तब दया की अधिकता से सबको इनकुलोत्तम ने सभी वस्तुएँ दीं। मन भर तब महिमा के औन्नत्य के व्याप्त होने पर सकल-भृत्य-अमात्य-सहित हो, उत्साह से, अकलंक चित्त वाला हो, सभा जमाए रहा। तब सौमित्र के अनुरक्ति से निद्रादेवी के वश में हो जाने पर, सभा में, काकुत्स्थ के समक्ष (लक्ष्मण) खिलखिलाकर हँस पड़ा। (हँसने पर) कमलाप्त कुलवाले ने और जनकजा भी, विभीषण, सुग्रीव, मारुतात्मज और वालिसुत, नल, नील, शरभ, सन्नाद, तारा आदि वलिमुख (वानर), शत्रुघ्न-भरत ने भीति से तब अपने में अति को प्राप्त कलंकों के बारे में सोच सिर झुका लिया। सबके ऐसा रहने पर मन में रुष्ट हो लक्ष्मण को देख श्रीराम ने कहा— ।। ८८३० ।।

—"हे सौमित्र ! न्याय (औचित्य) को छोड़ सभा में, निष्कारण हँसने का क्या कारण है ?" ऐसा कहने पर भीत होकर उस लक्ष्मण ने अपने हाथ जोड़कर उचित रूप से यों कहा—"वनवास के समय प्रभु की सेवा करते आकर वनों में रहते समय यह निद्रा आई। आने पर 'ठीक ढंग से चौदह वर्ष

बदुनालुगेंड्लुनु बरग निड्डुटयु । वदलक यिप्पुडु वच्चे ना निद्र,
यदि कारणंबुगा नवनीशतिलक! । यिदि येनु नव्विति; निदियें नातप्पु;
नीवु सहिंपुमो निखिलाधिनाथ ! । देव देवेश ! यो दीनमंदार !"
यनवुडु नंदरु नात्मललोन । ननुमानमुलु वासि यलरिरेंतयुनु;
निर्मलकारुण्यनिधि रामुडंत । नर्मिलि निडार नंदरु जूचि
"यॆल्ल तेरंगुल नॆल्ल कार्यमुल । नॆल्ल धर्मंबुल नेमरकॆपुडु ८८४०
गोनकोनि चेयुडी कोर्कि दीपिप । ननुवोंद" ननुचु नत्यादरंबॊप्प
"बों' डनि कडकतो बुद्धुलु गरपि । यॊंडोंड प्रियमुल नूरड बलिकि
यनिलज सुग्रीवुलादिगा गपुल । दनुजु विभीषणुदग वीड्कोलुप
गिष्किंधकॆलमि सुग्रीवादि कपुलु । निष्कळंकात्मुलै नॆम्मितो जनिरि;
चनियें लंककु विभीषणुडर्थि दन्नु । दनुजुलु गोलुव नुत्सवकेळि देलि
रामुडु मरि यौवराज्यंबुनंदु । सौमित्रि भरतुल जतुरमानसुल
दग ब्रतिष्ठिंचि याततराज्यभूति । दगिलि सुखिंचुचु दान सीतयुनु
सकल भोगंबुल सौख्यंबु नोंदि । यकलंकचित्तुडै यनवरतंबु
वेदोचिताचार विमलमार्गमुन । नादि राजन्युल नंदरु गडचि

मुझे संप्राप्त मत करो' कहने पर निद्रा चली गई। चौदह वर्षों के पूरी तरह पूर्ण होने पर अब वह निद्रा पुनः आई। हे अवनीश तिलक ! उस कारण से मैं हँस पड़ा। यही मेरा दोष है। हे निखिल-अधिनाथ ! हे देवदेवेश ! हे दीनमंदार ! तुम (इसे) सहन (क्षमा) करो।" ऐसा कहने पर सभी, आत्माओं में सभी संदेहों से मुक्त हो, अधिक प्रसन्न हुए। निर्मल कारुण्यनिधि राम ने तब प्रेम से भरकर, सबको देखकर (कहा) "सब तरह से, सब कार्यों को, समस्त धर्मों को, असावधान बने बिना, ॥ ८८४० ॥

—लगकर इच्छाओं के दीप्त होने पर उचित विधि से कीजिए।" (ऐसा) कहते हुए अति-आदर के शोभित होने पर, 'जाओ' कहकर सप्रयत्न बुद्धियाँ (नीति की बातें) सिखाकर, जब-तब सान्त्वनाप्रद प्रिय-वाक्य कह, अनिलज, सुग्रीव आदि कपियों, दनुज विभीषण को उचित ढंग से बिदा करने पर, सुग्रीव आदि कपि निष्कलंक आत्मावाले हो, प्रेम से किष्किंधा को गए। उत्सव-केलि में ऊभचूभ हो, चाहकर दनुजों के अपनी सेवाएँ करने पर विभीषण लंका को गया। फिर राम यौवराज्य (पद) पर चतुर मानसवाले सौमित्र-भरतों को उचित रूप से प्रतिष्ठित कर, आतत-राज्य-भूति में लग्न होकर सुखी होते हुए, सीता के साथ स्वयं सकलभोगों के सौख्य को प्राप्तकर, अकलंकचित्त से अनारत वेदोचित विमलमार्ग पर,

पूजितानुष्ठानमुलु नश्वमेध । वाजपेयादिक वरयागततुलु ८८५०
सौलवक चेयुचु सुरल भूसुरुल । नेलमि रक्षिचुचु नेपु दीपिंप
निंडारु धर्मैकनिष्ठतो बदुनों । कोंडु वेलेंड्लु दा नुर्वि बालिंचे;
बालिचि येलुचो ब्रजलु दुःखमुल । दूलरु; दुरितमुल् दुर्भिक्षततुल
गलुग वेय्येंडलनु; गालदोषमुल । जलियिपवेन्नडु सत्यधर्ममुलु;
परहिताचार तात्पर्यंबुलेल्ल । बुरुषुलयंदुनु बोलुपारुचुंडु
ननि यंध्रभाष भाषाधीशनिभुडु । विनुतकाव्यागम विमलमानसुडु
पालिताचारुडपार धीशरधि । भूलोकनिधि गोनबुद्धभूविभुडु
दम तंड्रि विट्ठलरधणीशुपेर । गमनीयतरधैर्यकनकाद्रि पेर
बनुगौन नरिगंडभैरवु पेर । घनु पेर, मीसरगंडनि पेर
नलघु निश्चलदयायत बुद्धि पेर । ललितसद्गुणगणालंकारु पेर ८८६०
नाचंद्रतारार्कमै योप्पुमिगिलि । भूचक्रमुन नतिपूज्यमै वेलय
नसमानललितशब्दार्थसंगतुल । रसिकमै चेलुवोन्द रामायणमुन
बरग नलंकारभावनल् निंड । गरमोप्पु नी युद्धकाडंबु जेप्पे :
नारूढि नार्षेयमै यादिकाव्य । मै रसिकानन्दमै येल्लनाडु

पूर्व के समस्त राजन्यों से बढ़कर, पूजित-अनुष्ठान, अश्वमेध-वाजपेय-आदि वर-याग-ततियों को, ।। ८८५० ।।

—अथक रूप से करते हुए, सुरों-भूसुरों की प्रेम से रक्षा करते हुए, औन्नत्य के दीप्त होने पर, पूर्ण धर्मैकनिष्ठा से ग्यारह हज़ार वर्ष उर्वी पर शासन किया। शासन कर, पालन करते समय प्रजा दुःखों से विकल नहीं होती, कहीं भी दुरित, दुर्भिक्षततियाँ नहीं होतीं, सत्यधर्म कालदोषों से कभी विचलित नहीं होते। सभी पुरुषों में परहित-आचार के तात्पर्य शोभित होते रहते हैं।

इस प्रकार आन्ध्रभाषा के भाषाधीश (ब्रह्मा) के समान, विनुत-काव्यागम-विमल-मानस (श्रेष्ठ काव्य और शास्त्रों के ज्ञाता), आचारवान्, अपार-बुद्धि-सिन्धु, भूलोक-निधि गोन बुद्ध-भूपति ने, अपने पिता विट्ठल धरणीश के नाम पर, जो कमनीयतर धैर्य के कनकाद्रि हैं, ।। ८८६० ।।

—दृढ़ता से अरिगंडभैरव (शत्रुभयंकर), महात्मा, मीसरगंड (प्रतापशाली), अलघु-निश्चल-दया के आयतबुद्धिवाले हैं, ललित सद्गुणगणालंकार हैं, आचन्द्र-तारार्क-विलसित होनेवाली, भूलोक में अतिपूज्य हो शोभित होने के लिए अनुपम ललित-शब्दार्थ-संगति से युक्त रसमय रामायण में अलंकार (और) भावों से परिपूर्ण, अतिरम्यता से प्रस्तुत इस युद्धकाण्ड की रचना की। सुप्रसिद्ध आर्षग्रन्थ, आदिकाव्य, रसिकों को आनन्द

निव्वसुमति नोप्प नी पुण्यचरित । मेव्वरु सदिविन नेव्वरु विनिन
सामादि बहुवेदचयधामराम । नामचिंतामणि नव्यभोगमुलु
परहिताचारमुल् प्रभुविचारमुलु । परिपूर्णशक्तुलु प्रकटराज्यमुलु
निर्मलकीर्तुलु नित्यसौख्यमुलु । धर्मैकनिष्ठलु दानाभिरतुलु
नायुरारोग्यंबु लधिकसंपदलु । बायक पाटिल्लु; बापक्षयंबु
वरपुत्रलाभंबु वैरिनाशनमु । सरिनोप्पु; धनधान्यचय समृद्धियुनु
८८७०

ने विघ्नमुलु लेक यिड्ललो नधिक । लावण्यवतुलैन ललनल पोन्दु
गोड्कुलतो नेप्डु गूडियुंडुटयु । नेडगाग नापदलेल्ल बायुटयु
सम्मदंबुन बंधुजनुल गूडुटयु । निम्मुल गाम्यंबु लेडकुंडुटयु
नन्नलुदम्मुलु नभिवृद्धि बोन्दि । मन्ननतो गूडि मलसियुंडुटयु
सततंबु देवतासंतर्पणंबु । बितृगणतृप्तियु बेम्पोन्दुचुंडु;
निदि मोक्षसाधनं, बिदि पापहरमु । निदि दिव्य, मिदिभव्य, मिदियु
श्रीकरमु;
रमणीयलील नी रामायणंबु । ग्रममोप्प बूजिप गल्गु बुण्यमुलु;

देने वाले (तथा) सदा इस वसुमति (भूमि) पर शोभायमान होनेवाले इस पुण्यचरित्र को जो भी पढ़ें, जो भी सुनेंगे, उन्हें सामादि वहुवेद-समूहों का धाम, राम-नाम-चिन्तामणि, नव्यभोग, परहित (करनेवाले) आचार, श्रेष्ठ विचार, परिपूर्ण शक्तियाँ, प्रकटराज्य (सुख), निर्मल कीर्तियाँ, नित्यसुख, धर्मनिष्ठा, दान में आसक्ति, ।। ८८७० ।।

—आयु, आरोग्य, अधिक सम्पत्ति, अवश्य ही प्राप्त होंगे। पापक्षय, वरपुत्रलाभ, वैरि-नाश समुचित रूप से होगा। बिना किसी प्रकार की विघ्न-बाधाओं के धनधान्य की समृद्धि, घरों में लावण्यवती ललनाओं का सहवास, सदा पुत्रों के साथ मिलकर रहना, सारी विपत्तियों का दूर हो जाना, सम्मोद के साथ वन्धुजनों से मिले रहना, प्रेम से कामनाओं की पूर्ति होना, सहोदरों की अभिवृद्धि (उन्नति) पाकर बड़े स्नेह के साथ मिलजुल कर रहना, सतत देवताओं का संतृप्त रहना, पितृगण की तृप्ति में वृद्धि, (आदि) से वे सम्पन्न होंगे। यह (ग्रन्थ) मोक्ष-साधक है, यह पापाहर है, यह दिव्य है, यह भव्य है, यह श्रीकर है। रमणीयलीला (विधान) से इस रामायण को नियम से पूजा करने पर पुण्य प्राप्त होगा। लिखने वालों को वर-शुभ-उन्नति और इन्द्रलोक-वास प्राप्त होगा।

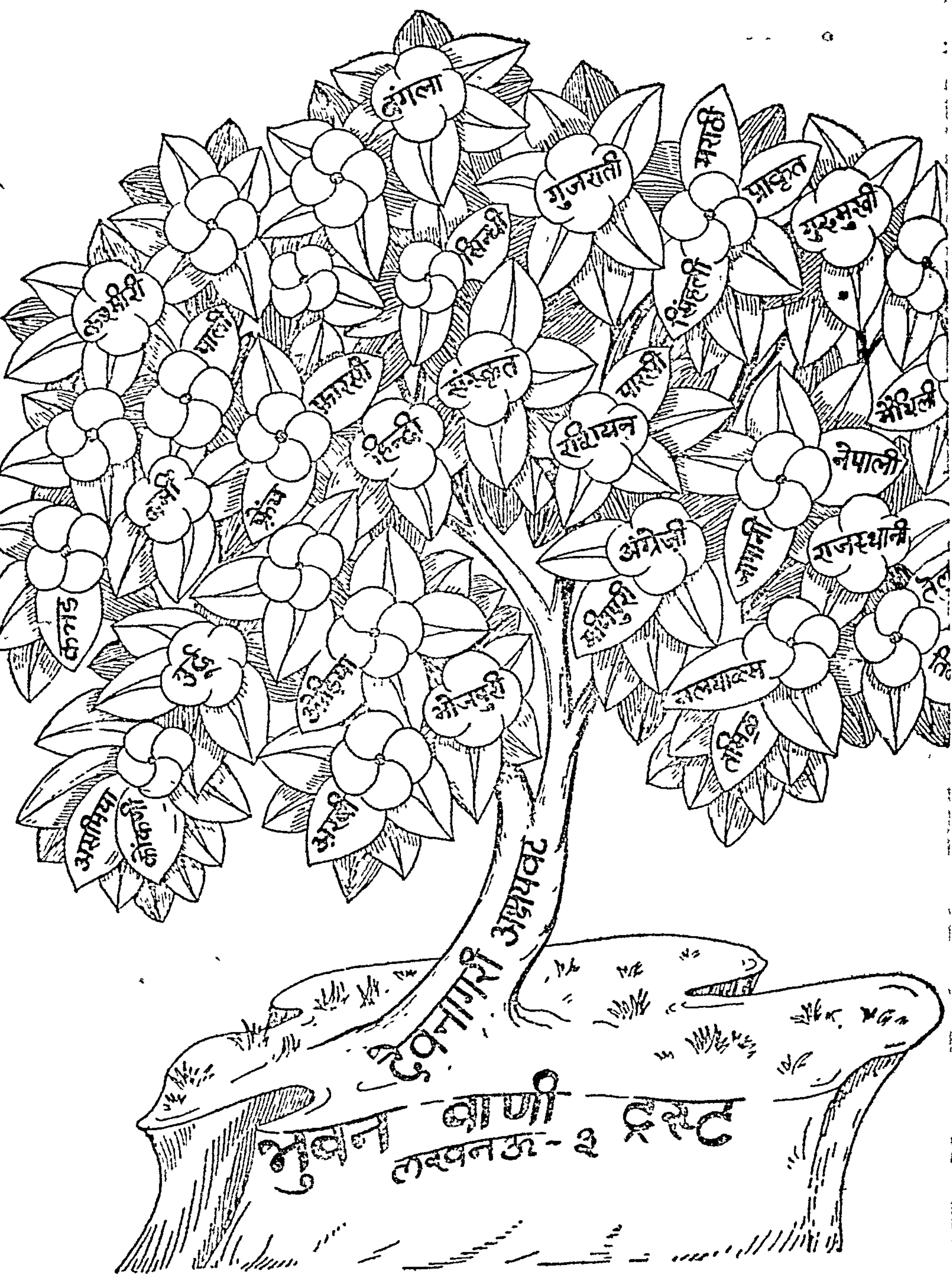
व्रासिन वारिकि वरशुभोन्नतुलु। वासवलोकनिवासंबु गलुगु;
नैन्दाक गुलगिरु लैन्दाक जलधु। लैन्दाक रविचंद्रुलैन्दाक दार
लैन्दाक वेदंबु लैन्दाक दिशलु। नैन्दाक भुवनंबु लेपुदीपिंचु
नंदाक नीकथ यक्षरानन्द। संदोह-दोहळाचारमै परगु ८८८१

युद्धकाण्डमु समाप्तमु

जब तक कुलपर्वत, जब तक जलधि (समुद्र), जब तक रविचन्द्र, जब तक तारे, जब तक वेद, जब तक दिशाएं, जब तक भुवन (लोक) विशिष्टता से प्रकाशमान रहेंगे, तब तक यह कथा, अक्षर (शाश्वत) आनन्द-सन्दोह (समूह) का निवास-स्थान होकर विराजमान रहेगी ॥ ८८८१ ॥

॥ युद्धकाण्ड समाप्त ॥

'प्रत्येक क्षेत्र, प्रत्येक संत की बानी ।
सम्पूर्ण विश्व में घर-घर है पहुँचानी ।।'



प्रतिष्ठाता— नन्दकुमार अवस्थी